प्रस्तावना.

चरितं रघुनाथस्य शतकोटिप्रविस्तरम् ।

एकैकमक्षरं पुंसां महापातकनाशनम् ॥

यह बात सब शास्त्र, पुराण और ग्रंथोंमे प्रसिद्ध है और सर्व साधारणको विदित है कि, प्रभुका अवतार केवल भूमिका भार उतारने और दुष्टोंको दंड दे, भक्तजनोंकी रक्षाके लियेही नहीं है. किंतु अपने पवित्र विचित्र चरित्र जगतमें फैलाकर, जगतका कल्याण करनेके लियेभी है. क्योंकि जो प्रभुको केवल भूमिका भार उतारना और दुष्टोंको दंड दे, भक्तजनोंकी रक्षा करनाही मंजूर होता तो, प्रभु मनुष्यदेह बिना धारण किये केवल इच्छामात्रसे ही कर देते; क्योंकि प्रभु सर्वशक्तिमान् हैं. परंतु प्रभुको केवल वही काम करना नहीं था; किंतु जगतके उद्धारकेलिये अपना यशभी पृथ्वीपर फैलाना था. जिसको सुन सुनकर लोग शुद्धांतःकरण हो होकर, भगवत्पदको प्राप्त हो जाँय. कहा है—श्रीरामचन्द्रजीका चरित्र सौ करोड़ श्लोकोंसे वाल्मीकि मुनिने गाया है. जिसके एक एक अक्षरके सुननेसे मनुष्योंके महापाप नाश हो जाते हैं.

यदपि वाल्मीकि मुनिने सौ करोड़ रामचरित बनाया था, परंतु वह इधर उधर बँट जानेसे भूतलपर केवल चौबीस हजार २४००० ही बाकी रहा. जो अभी वाल्मीकीय रामायणके नामसे प्रसिद्ध है यदपि वह रामायण अतिसुंदर और सर्वप्रकारके कविताके लक्षण व गुणोंसे तथा भगवद्गुणोंसे युक्त है, तथापि वह केवल उन्हीं लोगोंके लिये कल्याणकारी तथा हितकारी है कि जो संस्कृतभाषा अच्छीतरह जानते हैं; परंतु जैसा अभी कलियुगके जीवोंके लिये वारंवार उपदेश करना चाहिये और भक्तिरस बखाना चाहिये, वैसा ठौर ठौर पद पदमें नहीं दिखाया है. अतएव परम दयालु सर्वगुणनिधान परमोपकारी सर्वविद्याविचक्षण **श्रीगोसाईंजीने** लोगोंका कल्याण सुलभ रीतिसे हो जाय इस मनसासे यह **रामचरितमानस** प्रगट किया है, जिसके पद पद अक्षर अक्षरमें भक्तिरसामृत टपकता हुआ प्रत्यक्ष दिखाई देता है. यदपि जगतका कल्याण कर्मकांड और ज्ञानकांडसे भी हो सक्ता है, तथापि आधुनिक जीवोंकी रुचि जैसी भक्तिकी ओर है वैसी दूसरी तर्फ नहीं है. और इस कराल कलिकालमें भक्तिही प्रधान है; क्योंकि भक्तिसे कई अधम पापी इस समयमेंभी हरिभक्त होकर भगवत्पदको प्राप्त हुये हैं. इस बातको विचार कर, भक्तिरससे भराहुआ यह रामचरितमानस निर्माण किया है. इस ग्रंथका नाम मानस रखनेका कारण एक तो यह है, कि, यह रामायण महादेवजीने अपने मानस यानी मनमें धारण किया था, जिससे इसका नाम मानस रक्खा गया. फिर समय पाकर महादेवजीने पार्वतीसे कहा, ऐसेही काकभुशुंडीने कितने एक समयतक अपने मानसमें रक्खा, फिर अवसर पाकर गरुड़जीसे कहा. फिर याज्ञवल्क्य योगीने प्रयागराजमें भरद्वाजको अधिकारी पा, उनसे कहा. और तुलसीदासजीको अधिकारी देखकर, इनके गुरु नरहरिदासजीने अपने मानसमें रहा हुआ रामचरित गोसाईंजीसे कहा. येही चार संवाद इस ग्रंथमें हैं. दूसरा कारण इसका नाम मानस रखनेका यह है कि इसके और मानससरोवरके सब धर्म बराबर मिलते हैं जैसे—मानससरोवरके सुन्दर जीने हैं, ऐसे इस ग्रंथके सात कांड हैं, सोही सात जीने हैं. चौपाइयां हैं सोही मनोहर

सीढ़ियां हैं. छद हैं सोही जीनेके बीच बीचकी चौड़ी सीढ़ियां हैं. दोहे हैं सोही छोटी छोटी सीढ़ियां हैं. सोरठे हैं सोही पायंदाजे हैं. भक्तिरसामृत है सोही निर्मल जल है. जिसे साधु व संतजनरूपी हंस सदा पीते रहते हैं जैसे अमृतके पीनेसे मनुष्य रोगरहित होकर अजर व अमर हो जाता है. ऐसेही इस भक्तिरसामृतके पीने यानी इसमें तत्पर होनेसे सर्व आधि, व्याधि व सब प्रपंचसे मुक्त होकर, निर्वाणपदको प्राप्त हो जाता है. जैसे मानससरोवरकी शोभाके लिये उसके तटपर कई तरह तरहके फले फूले वृक्ष शोभायमान है. ऐसे इसमें जो अनेक प्रकारके छंद, अलंकार और गुण वगैरः हैं, सोही वृक्षोंकी भांति शोभायमान हैं इस लोकातीत भक्तिरसमय काव्यकी जितनी महिमा की जाय उतनीही थोड़ी है; क्योंकि कहां तो यह अपूर्व काव्य और कहां अल्पज्ञ मनुष्यकी मंदमति. तथापि अपनी रसनाको पावन करने और जन्म सुधारनेकेलिये अपनी बुद्धिके अनुसार इसके अर्थज्ञानके लिये और मतलब समझनेके लिये प्रयत्न अवश्य करना चाहिये; क्योंकि अर्थज्ञान विना केवल मूलमात्रका पढ़ना पशुके समान भार ढोना है. अतएव संतजनशिरोमणि महात्मा रामचरणदासजी और ऐसे ऐसे औरभी कई महात्माओंने इसकी अनेक टीका बनाई हैं, जिनसे मनुष्योंको इसके अर्थका परिज्ञान होता है, परंतु उन टीकाओंमें कहीं तो विस्तार बहुत कर दिया है और कहीं सुगम समझकर छोड़ दिया है और इसके शिवाय अभी जो पुस्तकें बंबईके छापेमें छपी हैं, उनमें जो क्षेपककथा हैं, उनका भाषांतर पहिले भाषांतरोंमें नहीं है और अभी कोई एकाध पुस्तक ऐसी ही छपी है कि जिसमें क्षेपक कथाओंकाभी भाषांतर है; परंतु उसमेंभी आठवां **लवकुशकांड** कि जो अभी थोड़े वर्षोंमें बंबईमें छपकर प्रसिद्ध हुआ है, जिसे आजतक कोई नहीं जानता था: उसका भाषांतर बिलकुल नहीं है और इसमें तो उसका भाषांतरभी है. इसके शिवाय इस भाषांतरमें औरभी कई तरहकी खुबियां रक्खी गई हैं. पहले तो भाषांतरही मूलाक्षरके अनुसार किया गया है. जिससे सबको मूलके अनुसार अर्थज्ञान होवे और मूल समझनेमें कठिनता नहीं पड़े दूसरा जो जो कथा दूसरे पुराण और इतिहास वगैरः की जो रामायणमें नहीं लिखी है और नाममात्र आ गया है, उसको एक रेखा खैंचकर उसके नीचे टिप्पणकी तरह बारीक अक्षरोंमें लिख दिया है. और जहां भाषांतरमें कठिन शब्द आ गये हैं, उनकी टिप्पणभी नीचे लिख दी है और कहीं २ जहां बहुत जरूरत देखी है, वहां शंका समाधानभी लिख दिया है. और जहां कहीं साहित्यका विषय आ गया है, तो वहभी टिप्पणीकी तरह नीचे बारीक अक्षरोंमें लिखकर जता दिया है. और भाषांतरकी भाषाभी ऐसी सरल हिंदी रक्खी गई है कि जो सर्व साधारणकी समझमें आ जाय. न तो कहीं फारसीके अप्रचलित शब्द दिये हैं और न संस्कृतके कठिण शब्द दिये हैं, किंतु जो सर्वसाधारण प्रचलित शब्द हैं कि जो हमेशा बोलचालमें आते हैं, बहुधा वेही शब्द वर्तावमें लाये गये हैं.

कितने लोग कहते हैं कि—गोसाईंजीने यह ग्रंथ काव्य बनानेकी मनसासे नहीं रचा. किंतु रुक्मिनी विवाहकी तरह सीतास्वयंवर मात्र रचा था. जिसमें सिताके स्वयंवरसे ले, भरतके मिलनेतकका चरित्र है. परंतु यह कहना उनका हमें ठीक नहीं दिखाई देता; क्योंकि जो गोसाईंजीको उतनाही बनाना मंजूर होता, तो वे फिर इतना बड़ा ग्रंथ काहेको निर्माण करते? और

---

१ पांव पोंछनेके लिये फरसके नजदीकही जो कपडा या टाट वगैरः का टुकड़ा रक्खाजाता है.

जहांसे प्रारंभ किया होता वहां मंगलभी जरूर रखते. और इसमें कोई ऐसा प्रमाणभी नहीं मिल-ता कि जिससे यह वार्ता सत्य मान लीजाय. इससे हमारा सिद्धांत तो यही है कि, यह ग्रंथ बालकांडसेही प्रारंभ किया गया है. यह नहीं कि पहले तो सीतास्वयंबर लिखा गया और फिर रामायणका प्रारंभ किया गया.

इस रामायणका जो जन आश्रय लेता है उसके सब मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं और सकल संताप शांत होकर शांति मिल जाती है, क्योंकि यह भूमिपर विद्यमान साक्षात् मूर्तिमान् कल्पवृक्षही है. जैसे कल्पवृक्षके स्तंभ, शाखा, पुष्प, फल औ पत्र वगैरः हैं, ऐसे इसकेभी सब अंग समग्र विद्यमान हैं. कल्पवृक्षके स्तंभ हैं. ऐसे इसके सात कांड हैं, सोही स्तंभ हैं. दोहे हैं सोही छोटी छोटी शाखा हैं. सोरठे हैं सोही लचलची टहनियां हैं. चौपाइयां हैं, सोही पत्र हैं. छंद हैं, सोही नवीन पल्लव हैं. सुन्दर अक्षर हैं सोही फूल हैं. रसीली कविता है सोही सुगंध है. अ-नेक प्रकारके अर्थ हैं सोही मीठे फल हैं. सगुण और निर्गुण ये छे स्वरूप हैं, सोही बीज हैं. भक्ति, ज्ञान और वैराग्य हैं सोही अमृतमय रस है; जिसे सुबुद्धि श्रोतालोक चाखकर अजर व अमर हो जाते हैं यानी भक्ति, ज्ञान, वैराग्यका अनुभव करके जन्म मरणसे छूटकर मोक्षपदको प्राप्त होते हैं अतएव गोसाईजीने उत्तरकांडके अंतमें कहा है कि, जो मनुष्य रामायणका विचार करता है, उसकी पंचपर्वा अविद्या निवृत्त हो जाती है और शुद्धांतःकरण हो, रामधामको चला जाता है.

छंद-रघुबंश भूषण चरित यह नर करहिँ सुनहिँ जे गावहीं ॥ ❋
कलिमल मनोमल धोइ बिनुश्रम रामधाम सिधावहीं ॥ ❋
शतपंच चौपाई मनोहर जानि जे नर उर धरैं ॥ ❋
दारुण अविद्या पंचजनित विकार श्रीरघुपति हरैं ॥ ❋

इसी मनोरथसे मैंने यह पूर्ण परिश्रम गौड़ज्ञातीय श्रीयुत **हरिप्रसाद भगीरथजी** कि जो विद्याकी उन्नति और लोकहित करनेमें दृढ बद्धपरिकर हैं, उनकी प्रेरणासे किया है. सो जो सुज्ञ सुजनलोग कि जो गुण अवगुणको विलगानेमें दूध व जलको विलग करनेवाले (हंस) के समान हैं, वे इस भाषांतरको एकवेर अवलोकन कर, मेरे श्रमको सफल करें और कहीं भ्रांतिमूलक रह गया हो उसे सुधार लेवें.

पंडित बलदेवात्मज योधपुरमहाराजाश्रित संस्कृत पाठशालाध्यापक पंडित रामकर्ण शर्मा.

विज्ञापन.—

सर्व सुजन जनोंसे सविनय यह प्रार्थना है कि, हमने यह तुलसीकृत रामायणका भाषांतर बड़े परिश्रम और मिहनतसे सब क्षेपक कथा आठवे **लवकुशकांड** केसाथ सरल हिंदुस्तानी भाषामें योधपुरनिवासी पंडित रामकर्णजीद्वारा बनवाकर और श्रीसुमेरपुरनिवासी पंडित **रामभद्र** द्वारा शुद्ध करवाकर आप लोगोंकी सेवामें अर्पण किया है, सो आपलोग हमारे इस परिश्रमको सफल क-रने लिये इसे आद्योपांत दृष्टिगोचर करैं और टिप्पणमें बाहिरकी कथा लिखी हैं, तथा शंकासमाधान व साहित्यशास्त्रसंबंधी विषय लिखा है, उसकी ओरभी निगाह डालें. इस पुस्तकमें आप लोगोंके

सुबीतेके लिये टीकाभी मूलके बहुत नजदीक रख दी गई है. यानी दो दो चौपाइयोंके नीचे टीका रक्खी गई है और उससेभी ज्यादा सुबीता रहनेके लिये मूल व टीकामें बराबर अंग लगादिये गये हैं और कागजभी बहुत मजबूत जाड़ा व चिकना लगाया गया है. कि पुस्तक बहुत वर्षोंतक बनी रहै. पुस्तक मजबूत रहनेकेलिये, खर्चका कुछभी ख्याल नहीं किया गया है. सो आपलोग इसे अवलोकन कर, हमारे अनुपम परिश्रमको सफल करैं.

श्रीमद्राजसुकैरवद्विजपतिः शार्दूलसिंहाभिधो ॥
ब्रह्मण्यः क्षितिपालमौलिमुकुटालंकारशोभाप्रदः ॥
तद्भ्राता च जवानसिंह इति यो विख्यातनामा भुवि ॥
जीवेतां शरदां शतं नरपती तौ सिंहविक्रीडितौ ॥ १ ॥
श्रीमद्गौडकुलाब्धिशीतकिरणो भागीरथस्यात्मजो ॥
विख्यातोऽस्ति हरिप्रसाद इति यो मुम्बापुरे भारते ॥
तेनेदं कलिकालकल्मषहरं भाषान्तराभूषितं ॥
श्रीरामायणनामकं सुगतिदं प्रख्याप्यते सन्मुदे ॥ २ ॥

दोहा—श्रीशोभाके पुंज बड़, शारदूल नृपराज ॥
सिंह जवान सु जानिये, भ्राता उडुगणराज ॥ १ ॥
परमरम्य ढुंढारमहँ, ग्राम सलेमाबाद ॥
जन्मभूमि जाकी लसै, चहुँदिशि सदा अबाद ॥ २ ॥
प्रभुपदपंकजरजनिरत, धर्म धुरंधर धीर ॥
हरिप्रसाद भगीरत्थपै, करो कृपा रघुबीर ॥ ३ ॥
हरिप्रसादसुत शोभते, नृजवल्लभशिरताज ॥
रामभद्र आशीसते, दिन दिन सुन्दर साज ॥ ४ ॥
गौड़ सलेमा बादके, **हरिप्रसाद** के बैन ॥
शोध्यो पंडित **रामभद्रने**, श्रीसुमेरपुर ऐन ॥ ५ ॥

प्रकाशक हरिप्रसाद भगीरथजी.

अथ तुलसीदासकृत प्रभाती.

श्री जागिये रघुनाथ कुँवर पंछीबन बोलैं ॥ टेक ॥ शशिकिरन सीतल भई चकई पिय मिलन गई त्रिविध मंद चलत पवन पल्लव द्रुम डोलैं ॥ १ ॥ प्रात भानु प्रगट भयो रजनीको तिमिर गयो भृंग करत गुंजगान कमलन दल खोलैं ॥ २ ॥ ब्रह्मादिक धरत ध्यान सुरनरमुनि करत गान जागनकी बेर भई नयनपलक खोलैं ॥ ३ ॥ तुलसीदास अति अनंद निरखीकै मुखारविन्द दीनको देत दान भूषण बहु मोलैं ॥ ४ ॥ १ ॥ रुणुक झुणुक चलति चाल जनकनंदिनी ॥ टेक ॥ दामिनिद्युति चपलगात चरण धरत डगमगात मधुर बचन तोतरी त्रिताप दुःख भंजनी ॥ १ ॥ शोभत शुभ नीलबसन मंदहास मधुर दसन झलकत उरमाल जाल जगतदेव बंदिनी ॥२॥ ॥ नूपुर पग बजत जात मानों सामवेद करत गान क्षुद्रघंटी रुचिरनाद उरअनंदिनी ॥ ३ ॥ मंगल सब करत गान शारद शशि संग फिरत देखो अति राजति मिथिलेशनंदिनी ॥ ४ ॥ जगतमातु सखिन संग बिहरति बहु करति रंग बालानंद छबि निरखि निरखी भवनिकंदिनी ॥ ॥ ५ ॥ २ ॥ जागिये कृपानिधान जानराय रामचंद्र जननी कहे बार बार भोर भयो प्यारे ॥ राजिवलोचन बिशाल प्रीतबापिका मराल ललित कमल बदन उपर मदन कोटि वारे ॥ अरुण उदित बिगत शबरी शशांक किरन हीन दीन दीप ज्योति मलिन द्युति समूह तारे ॥ मनो ज्ञानघन प्रकाश बीते सब भव विलास आस त्रास तिमिर तोष तरणि तेज जारे ॥ बोलत खग निकर मुखर मधुर कर प्रतीत सुनो श्रवण प्राणजीवन धन मेरे तुम बारे ॥ भने बेद बंदि मुनिवृंद सूत मागधादि बिरद बदत जै जै जै जति कैटभारे ॥ बिकसत कमलावली चले पुंज चंचरीक गुंजत कल कोमल धनु त्यागे कंजन्यारे ॥ मनो बिराग पाय सकल शोकरूप गृह बिहाग भृत्य प्रेममत्त फिरत गुणत गुण तिहारे ॥ सुनत बचन प्रिय रसाल जागे अतिसै दयाल भागे जंजाल बिपुल दुखकदंब टारे ॥ तुलसिदास अति अनंद देखिकै मुखारबिंद छूटे भ्रम परम फंद मंद द्वंद भारे ॥ ६ ॥ ४ ॥

तुलसीदासकृतरामायणमाहात्म्यम्

॥ श्रीगणेशायनमः ॥ ॥ अथरामायणमाहात्म्यप्रारंभः ॥ ॥ दोहा ॥ ॥ गुरुहरिहरगणईशधी, सुमिरौंतुलसीदास ॥ करतगोपालमाहात्म्यश्री, रामायणसुखरास ॥ १ ॥ चौपाई ॥ रामायणसुरतरुकीछाया ॥ दुखभयदूरिनिकटजोआया ॥ सप्तकांडस्तंभसोहाई ॥ दोहालघुसाखाछबिछाई ॥ सुचिसोरठासीटकाकांडे ॥ पत्रीबहुचौपाईजोडे ॥ छंदनकीसोभाअतिरूरी ॥ जनुनवीनअंकुरछबिपूरी ॥ अक्षरसुमनरहेगहगाई ॥ अतिअद्भुतसुगन्धकबिताई ॥ बिविधप्रकारअर्थसोईफल ॥ श्रोतासुमतिस्वादजानैभल ॥ भक्तिज्ञानवैराग्यसरसरस ॥ बीजदोयनिर्गुणसगुणअस ॥ मुनिभुशुंडशिवप्रथमहिंगाई ॥ सोइगाईजगहितगुसांई ॥ १ ॥ दोहा ॥ तुलसिदासरामायण, नहिकरतेअनुसार ॥ कलिकेकुटिलजीवप, कोकरतोनिस्तार ॥ २ ॥ चौपाई ॥ रामायणसुरधेनुसमाना ॥ दायकअभिमतफलकल्याना॥ गुणसमूहकविसकैकौनगनि ॥ जासुप्रभावसरिसचिंतामनि ॥ रामअयनरामायनआही ॥ बरनिपारपावैकोताही ॥ रामायणअद्भुतफुलवारी ॥ रामभ्रमरभूषितरुचिभारी ॥ श्रीरामायणजेहिघरमाहीं ॥ भूतप्रेततहँभूलिनजाहीं ॥ नहींगमितहांदरिद्रहूकेरी ॥ तहँश्रीमहावीरकीफेरी ॥ यंत्रमंत्रसगुनोतीजेती ॥ रामायणमहंजानियेतेती ॥ प्रीतिकरैरामायणमाहीं ॥ तेहिसमभागवंतकोउनाहीं ॥ २ ॥ दोहा ॥ रामायणसमनहिंकोऊ, सबउपमाउपमेय ॥ उपमाभाषाऔरकी, कैसेकोउकबिदेय ॥ ३ ॥ चौपाई ॥

१ छोटी रजनियां हैं.

॥ त्रेतामहँभयेवाल्मीकमुनि ॥ तेकलियुगभयेतुलसिदासपुनि ॥ सतकरोरिरामायणभाषी ॥ इनग्रंथिसारसुसक्षमराखी ॥ प्रथमकांडव्हैबालरसीला ॥ जन्मविवाहरामकीलीला ॥ द्वितियअयोध्याकांडप्रकासा ॥ पितुआज्ञारघुबरबनवासा ॥ पुनिअरण्यकिषकिंधाभाष्यौ ॥ तहँसुग्रीवशरणमहँराख्यो ॥ सुन्दरसुन्दरकांडसुहावन ॥ युद्धकांडमहँमारेउरावन ॥ सप्तमउत्तरपरमअनूपा ॥ उत्तरप्रभुकीशत्रुरूपा ॥ तुलसीकृतरामायणयेती ॥ विविधप्रकारकथाहैकेती ॥ ३ ॥ दोहा ॥ जगवारिधिकोपारनहिं, ऐसोहैफलाव ॥ तुलसीदासकृपाकरि, रचिरामायणनाव ॥ ४ ॥ चौपाई ॥ श्रीरामायणस्वर्गनिसेनी ॥ भक्तजननकहँआनँददेनी ॥ श्रीरामायणसदगुणमाता ॥ अज्ञजाहिपढ़िहोहि सुज्ञाता ॥ पापसमूहतूलकीरासी ॥ रामायणधनंज्यकानसी ॥ मोहपुंजतमकिरनितमारी ॥ कामअग्निकहँशीतलबारी ॥ रामायणशशिकिरनिसोहाई ॥ संतचकोरनकहँसुखदाई ॥ धन्यधन्यश्रीतुलसिदासधनि ॥ जगहितरामायणराखीभनि ॥ नीचउंचजेतेनरनारी ॥ श्रीरामायणसबकहँप्यारी ॥ रामायणसोंनेहलगावें ॥ अधन अपत्यसो वित सुत पावें ॥ ४ ॥ दोहा ॥ ॥ रामायणसोंनेहकिय, सिद्धहोतसबकाय ॥ हैसबकोकल्याणदा, पढ़िसुनिलहुविश्राम ॥ ५ ॥ ॥ चौपाई ॥ निगमादिकतड्ब्रह्मकमंडल ॥ रामायणस्थितगंगाजल ॥ भागीरथसमतुलसिदासपुनि ॥ भाषाप्रचुरकीनजगमुनि ॥ होतरहैयकठांवरामायण ॥ तेहिंमगआवतपापपरायण ॥ कछुककानमहंपरिगइबाता ॥ चलतपंथकहुंभयोपपाता ॥ गिरतहिंतुरतछूटितनगयऊ ॥ तहँअद्भुतइकअचरजभयऊ ॥ ताहिलेनआयेयमदूता ॥ निजपासनबांध्योमजबूता ॥ अतिआतुरहरिजनतहंआए ॥ छीनिलीन्हबहुत्रासदिखाए ॥ रामायणसुचिसुनियहकाना ॥ लैजेहँबैठारिविमाना ॥ ५ ॥ दोहा ॥ ॥ रामायणपरतापसों, गयापरपदनसाथ ॥ दूतचलेयमकेसदन, खीझतमींजतहाथ ॥ ६ ॥ चौपाइ ॥ निजदूतनदेखेविलखाता ॥ पूंछीभानुतनकुशलाता ॥ किनतुमकहँदीन्होदुखभाई ॥ चारचतुरतुमदेहुबताई ॥ कहकिंहतुमसोंमहराजा ॥ पूंछततुमहिनआवतलाजा ॥ कोउयकमृत्युलोकबड़भागी ॥ तुलसीदासभयेअनुरागी ॥ रामकथारामायणभाषी ॥ सोलोगनघरघरधरिराखी ॥ जेजविविधभांतिकेपापी ॥ मांसाहारीऔरसुरापी ॥ तेसबमिलिरामायणसुनिहैं ॥ कहिहैंलिखिहैंपढ़िहैंगुनिहैं ॥ तनहिंएहसदनतुह्मारे ॥ सत्यसत्यनृपवचनहमारे ॥ ६ ॥ दोहा ॥ लेहुपासएआपने, राखहुअपनेपास ॥ अमलतुह्मारोउठोअब, सुनियमभयेउदास ॥ ७ ॥ चौपाई ॥ ॥ अपनीव्यथाकहेनहिंपाए ॥ तबलगिदूतऔरतहँआए ॥ कहनलगेरविसुतसोंरोई ॥ तवचाकरीनहमसोंहोई ॥ जगमेंकहुंन हुकुमतिहारा ॥ यहसुनियमचकिरहेउविचारो ॥ अहोदूतमोहिकहौबुझाइ ॥ किनदीन्होममहुकुमउठाइ ॥ कहाकहौंकछुकहीनजाई ॥ तुलसिदासयकभयोगुसांई ॥ तिनकीरामायणजगव्यापी ॥ तेइँकीन्हेपवित्रसबपापी ॥ गएहमएकअधमग्रहमाहीं ॥ अतिदुखभयोजातकहिनाहीं ॥ तहँदेखेउंयककपिबलवाना ॥ उग्ररूपसमसोहनुमाना ॥ ७ ॥ ॥ दोहा ॥ पापिनकोगहँकीभयो, तबहमभयेअतिदीन ॥ शरणशरणतवशरणहै, अस्तुतिबहुविधिकीन ॥ ८ ॥ चौपाई ॥ ॥ तबतौव्हैप्रसन्नकपिराई ॥ हमसनपुनिपरतीतिकराई ॥ धरीहोयरामायणजहँवा ॥ कबहूंभूलिनजायहुतहँवा ॥ जेश्रोतावक्तारामायन ॥ कबहूँमतिजायहुतेहिआयन ॥ असहमसोंकपिसपथकराई ॥ तबछूटनपायोसुनुराई ॥ सुनियमराजबहुतघबराये ॥ निकटबोलायदूतसमुझाये ॥ नामरूपगुणकथारामकी ॥ कियेउनफेरीतौनधामकी ॥ अजामीलकीसुरतिकरौजू ॥ औरनकछुचितमांझधरौजू ॥ थकिसेरहेदूतसुनिबानी ॥ धनिधनिरामायणमहरानी ॥ ८ ॥ ॥ दोहा ॥ रामायणतेजश्वरी, सतभाषाशिरमौर ॥ यमपुरजाकोशोरहै, समताकोनहिंऔर ॥ ९ ॥ चौपाई ॥ ॥ पातकमहालग्योकिनहोई ॥ रामायणसुनिरहैनकोई ॥ चाहैचा

१ स्वर्ग. २ अग्नि. ३ सूर्य.

रोगउजीसाधन ॥ कररामायणकोआराधन ॥ रामायणसुनिपापपराने ॥ जिमिहिमकृतुमहँमसक
नसाने ॥ कलियुगतरनउपायनकोई ॥ रामभजनरामायणदोई ॥ कथारामायणकीजहँहोई ॥ सोगृह
धरणीतिजानकोइ ॥ सोघरतीर्थरूपसमभासै ॥ तहांगयेसमपातकनासै ॥ पापवासदेहीमहँतबलग ॥
श्रीरामायणसुनैनजबलग ॥ उदैपुरानीपुण्यहोयजब ॥ रामायणमहँमनलागेतब ॥ ९ ॥ दोहा ॥
रामायणकसुनतही, छूटिजातप्रेतत्त्व ॥ जाकेपंढसुनेते, सुझतहैपरतत्त्व ॥ १० ॥ चौपाई ॥ कोजा
नरामायणकोरस ॥ यहताहैसंतनकीसरवस ॥ बनजसनेहीअलिगनजेसे ॥ भक्तनप्रियरामायणतैसे ॥
त्यागिभक्तजनग्रंथअनेकू ॥ धारणकियरामायणयेकू ॥ भक्तनकहहैभक्तिअनूपा ॥ रसिकजननकहँहरैस
रूपा ॥ ज्ञानमइतिनकहजेज्ञानी ॥ तुलसीतारनतरनबखानी ॥ कामक्रोधरुजबससंसारा ॥ ओषधरामा
यणअनुसारा ॥ रामायणमहनेहनजाको ॥ जीवतशवसमजानियताको ॥ रामायणजाकहँप्रियनाहीं ॥
वृथाजन्मताकाजगमाहीं ॥ १० ॥ दोहा ॥ ॥ रामायणअमृतकथा, लेतनताकोस्वाद ॥ तिनकोनिश्चैजा
निय, हंपूरदनुजाद ॥ ११ ॥ चौपाई ॥ ॥ रामायणविधिकहौंविशारद ॥ सनत्कुमारसोंभाषीनारद ॥ स
निनिधानमुनजाकाई ॥ सहजमुक्तिपावैनरसोई ॥ कार्तिकमाघचैत्रचितलाई ॥ नवदिनसुनैकथासु
नदाई ॥ ब्राह्ममुहूर्तसमयहुवजबहीं ॥ कर्मकरशौचादिकतबहीं ॥ करैदंतधावनउटजीरा ॥ मज्जनकरै
धरमनधीरा ॥ पुनिरामायणपुस्तकअरचै ॥ प्रेमसहितगंधादिकचरचै ॥ ॐनमोनारायणमंत्र भनीजै ॥
तीनआहुतीहोमकरीजै ॥ मनवचकर्मपापतनकरे ॥ छूटिजातनहिंआवततेरे ॥११॥ ॥ दोहा ॥ याविधि
रामायणविधिहिं, जकरिहिहिंचितलाय ॥ रामधामतेजाइहैं, संसृतिदुखहिंमिटाय ॥ १२ ॥ चौपाई ॥
जोकछुकारजकहकोउजाई ॥ सुमिरिचलैसोयहचौपाई ॥ प्रविशिनगरकीजैसबकाजा ॥ हृदैराखिकोश
लपुरराजा ॥ जोविदेशचाहैकुशलाई ॥ तोयहसुमिरिचलैचौपाई ॥ रथचढ़िसियासहितदोउभाई ॥ च
लनगहिंअवधहिसिरनाई ॥ भूतपिशाचजाहिजबलागै ॥ यहसोरठापढ़ेसोभागै ॥ १२ ॥ सोरठा ॥ बंदौं
पवनकुमार, खलवनपावकज्ञानघन ॥ जासुहृदयआगार, बसहिरामशरचापधर ॥ १ ॥ चौपाई ॥
शत्रुनिवारणचैहजोभाई ॥ भावसहितजपुयहचौपाई ॥ जाकेसुमिरनतेरिपुनासा ॥ नामशत्रुहनवेदप्र
कासा ॥ यहचौपाईजपैजोकोई ॥ अन्नआदिदुखताहिनहोई ॥ विश्वभरनपोषनकरजोई ॥ ताकरनामभरत
असहोई ॥ जोउत्सवचहविविधिप्रकारा ॥ करुयहचौपाईअनुसारा ॥ जबतेरामब्याहिघरआए ॥ नितनव
मंगलमोदबधाए ॥ जोचाहैजगमहँजयभाई ॥ अस्थिरव्हैजपुयहचौपाई ॥ सखाधर्ममयअसरथजाके ॥
जीतनकहँनकतहुँरिपुताके ॥ हैबहुभांतिकार्यजगमाहीं ॥ रामायणसेसबव्हैजाहीं ॥ १३ ॥ दोहा ॥ सक
लभांतिमनकामना, यहदोहादातार ॥ रामायणमहँखोजिकहि, करुयाकोअनुसार ॥ १३ ॥ बहुशोभाजु
समाजसुख, कहतनबनैखगेश ॥ बरणैशारदशेषपुनि, सोरसजानमहेश ॥ १४ ॥ चौपाई ॥ बरणौंएककरु
चिरइतिहासा ॥ तुलसिदासजोकीनतमासा ॥ द्राविड़अरुकासीमहिपाला ॥ कहुँएकत्ररहेकछुकाला ॥
अतिसप्रीतिबढ़ीदुहूमाहीं ॥ मनमैंकपटलेशकछुनाहीं ॥ गर्भवतीदोऊनृपनारी ॥ चलीबातदुहहुनकहि
डारी ॥ द्राविड़कहीबातसुखरासी ॥ सुनइनृपतिकासीकेबासी ॥ जन्मैतवसुतसुताहमारे ॥ अथवाममसु
तसुतातिहारे ॥ असससंयोगहोइजोनाहू ॥ हमतुमकरहिंविवाहउछाहू ॥ सोहैंकरियहबातदृढाई ॥ संततप्री
तिरहीअबभाई ॥ सुखदसमयआयोजबकोऊ ॥ निजनिजभवनगयेनृपदोऊ ॥ १४ ॥ सोरठा ॥ कन्याभ
इदुहुओर, जानीजातनदैवगती ॥ कहिपठयोसुतमोर, द्रविड़दूतकासीगये ॥ २ ॥ चौपाई ॥ यहछलहो
तभयांजिहिंलाई ॥ सोवहहेतुकहौंमैंगाई ॥ द्राविड़पतिनिजगृहआयोजब ॥ रानीसोंअसकहतभयोतब ॥
जोहोइकन्यादुहुँओरा ॥ तौमैंभणतजुबबरजोरा ॥ सुनिरानीराजासुखबानी ॥ मनमहँबहुतभांतिभय
मानी ॥ उपरोहितकहँलिहिसिबुलाई ॥ नृपदुरायपहबातबुझाई ॥ ममअहिवाततुह्मारेहाथा ॥ नहिंतौप्रभु
मैंहोबअनाथा ॥ रानीद्रव्यदीन्हनहिंथोरी ॥ भइमायाबसद्विजमतिभोरी ॥ सेवकसेवकायनिवसकीन्हेसि ॥

आदरमानदानबहुदीन्हेसि ॥ १५ ॥ ॥दोहा ॥ ॥ सेवकएकदीन्हेतेहिं, बाराणसीबसाय ॥ तेहितेपाइरि खबरिसब, तबयहुकीहिसिउपाय ॥ १५ ॥ चोपाई ॥ ॥ पुत्रनामधरिगुप्तरखायो ॥ द्वादशवर्षनद्वारि खायो ॥ बिदुषनकहेउनकोऊपेखे॥ब्याहसमैसबकोऊदेखे ॥ मित्रमिलनहितचितअनुराग्यो ॥ नेगीपठ यव्याहपुनिमांग्यो ॥ अतिआनंदचलेमगवेगी ॥कासीनृपपहंआयेनेगी॥ नृपमनमुजितपत्रिकाबांचि ॥लैआवौबरातरँगराची ॥आयौव्याहनद्राविड़राजा॥ खुलीबातउपजीअतिलाजा॥क्रोधातरकासीअ नीसा ॥ कहकटिहौंद्राविड़करसीसा ॥ यहसुनिद्राविड़अधिकडरानेउ ॥ निजछलसमुझिसमुझि छितानेउ ॥ १६ ॥ दोहा ॥ अतिसभीतअतिदीनव्है, गयेजहँतुलसीदास ॥ पाहिपाहिकहिपायपरि कहेउकरांदुखनास ॥ १६ ॥चौपाई ॥ तबकासीनृपकहँबोलवायो ॥ तुलसीदासहितकरसमुझायो । सुतकहिसुताजोव्याहनआयो ॥ होयपुत्रतौहोयबधायो ॥ जोयहपुत्रहोयमहाराजा ॥ करहिंविवाहस जिसबसाजा ॥ तुलसिदासवेदीविरचाई ॥ तहँगणेशगवरीपधराई ॥ सिंहासनपधरिरामायण । नवदिनभरकीन्हीपारायण ॥ जोकन्याबरवेषबनायो ॥ ताहीकोसन्मुखबैठायो ॥ बक्ताआपसोश्रे ताभई ॥ दुनियांतहंदेखनसबगई ॥ कथासमस्तजबबांचिसुनाई ॥ तासुसीसकरधरेउगुसांई ॥ १७ दोहा ॥ अरुयहचौपाइपढ़ी , रामैसुमिरिप्रसन्य ॥ तिहिंअवसरवरव्हैगयो, श्रीरामायणधन्य ॥ १७ । ॥ चौपाई ॥ पढिमंत्रमहामणिविषयव्यालके ॥ मेटतकठिनकुअंकभालके ॥ रामायणजबकहीगुसांई । प्रगटनहितकासीफिरआई ॥ आदरकीन्हनपंडितकाउ ॥ कहाजोहमसोंकरेउपाऊ ॥ जहिंस्थानक तहँजाहू ॥ पोथीअबनदेखाबहुकाहू ॥ श्रीआनंदकाननब्रह्मचारी ॥ हर्षसिरमोरममहिमाभारी ॥ जोय कोवेआदरकरिहैं ॥ तौहमसबलैसीशहिधरिहैं ॥ गएआनंदकाननपहंततपर ॥ करतप्रशंसपसन्नप रस्पर ॥ पोथीकीचरचापुनिकीन्ही ॥ देखनहेतसोलैधरिलीन्ही ॥ कछुदिनपढीसहितअनुरागन ॥ गं गोसाईंपोथीमांगन ॥ १८ ॥ दोहा ॥ पोथीदइअरुअसकहेउ, होइआदरलोक ॥ निजप्रमाणकरिलिखि दियो,यकअद्भुतअश्लोक ॥ १८ ॥ श्लोक ॥ आनंदकाननेह्यस्मिंजंगमस्तुलसीतरुः॥कवितामंजरीयस्य रामभ्रमरभूषिता ॥ १ ॥ छंद ॥ धनिधन्नितुलसीदासजिनजगहेतरामायणभनी ॥ माहात्म्यअमितनकहि सकौंरसविषयमहँमोमतिसनी ॥ निजबुद्धिकेअनुसारकहिगोपालसतगुरुकीदया ॥ रघुवीरयशकीअधि कताश्रीसंतजनकरिहहिंमया ॥ १ ॥ दोहा ॥ श्रीमततुलसीदासजी, व्हैप्रसन्नबरदेहु ॥ रामायणमाह त्म्यसों, हरिजनकरहिंसनेहु ॥१९॥ संवतबसुनभनंदको १८०८, मार्गसुक्रगुरुवार ॥ एकादशिकहंकीन है, अपनीमतिअनुसार ॥ २० ॥ रामकोटश्रीअवधपुर, स्वामीरामप्रसाद ॥ तिनकीमहिमाकोकहै, वि श्वविदितमरजाद ॥ २१ ॥ तिनतेगादीपांचई, सोस्वामीमैंदास॥ लषणपुरीममजन्मक्षिती, रामनगरकेपा स ॥२२॥ भोजनगरप्रसिद्धद्विज, उत्तमपूरनदास ॥ तस्यात्मजगोपालकृत, यहमाहात्म्यइतिहास॥२३

॥ इतिश्रीद्विजगोपालदासकृतरामायणमाहात्म्यं संपूर्णम् ॥

॥ हनुमानजीको आसन देनेको ॥

॥ दोहा ॥

रामायणतुलसीकृते, कहीकथाअनुसार ॥
आसनलीजेप्रेमहित, आइयपवनकुमार ॥ १ ॥

॥ कवित्त ॥

भूतग्रह प्रेतग्रह मरी और मसानग्रह गोत्रपर गोत्रग्रह बाहरके घरके ॥
जिन्द जम जाहिर जहूर जेऊ कोऊ ग्रह ब्रह्मराक्षसादि सब परके अमरके ॥
[illegible]

श्रीगोस्वामितुलसीदासचरितामृत.

गुरुवन्दना.

चौपाई ॥ श्रीगुरुपदनखमणिगणजोती ॥ सुमिरत दिव्य दृष्टि हिय होती ॥ दलन मोह तम शेष प्रकाशू ॥ बड़े भाग्य उर आवहिं जासू ॥ ॥ श्रीशास्त्री उमापतिकी वन्दना ॥ कवित्त॥दोऊको प्रबल यश गावत सकल जग दोऊको शील कहि गुणगण बखानी है ॥ दोऊ नाम धाम पूरण करत आस दोऊ दास दारिद हरण वरदानी है ॥ भणि भुवनेश यश विलशात देश देश सेवत नरेश दोऊ पद जानै ज्ञानी हैं ॥ उमापतिजूसों उमापतिसों फरक एतो उत बाम हैं भवानी इत दाहिनी भवानी हैं ॥ १ ॥ वार्तिक ॥ श्रीमहामहोपाध्याय पूज्यपाद श्रीउमापतिजीकी जो कछु स्तुति की जाय सो थोड़ी अतएव विश्राम पावते हैं. अब इस पुस्तकका वृत्तान्त लिखते हैं, इसका नाम गोस्वामिचरितामृत है. इसके पढ़नेका बहुत माहात्म्य है, जैसे कि नाभाजीने कहा है

दोहा ॥ अग्रदास आज्ञा दई, हरिभक्तन गुण गाव ॥भवसागरके तरनको, नाहिन और उपाव ॥ तैसेही तुलसीदासने कहा है ॥ दोहा ॥ सबै कहावत रामके, सबै रामकी आस॥राम कराहिं जे आपनो, तेहिं भजु तुलसीदास॥वार्तिक ॥इन प्रमाणोंसे यह सिद्ध हुआ कि भक्तसेवन सबसे अधिक है और श्रीतुलसीदासजीका माहात्म्य तौ बहुत है तथापि स्वामी रामानन्दजी तथा श्रीमहंत रामप्रसादकी कवितावद्ध लिखते हैं; ॥ दोहा ॥ श्रीसमुद्र श्रीब्रह्मरत, जगतगुरू जगवन्द ॥ श्रीगोसांइ रस राममय, श्रीमत रामानन्द ॥ कवित्त ॥ जिनको सतिभाव प्रभाव सदा शुभ रामहिंको पदपंकज नीको॥ मानों विराग उपासना प्रेमको नेमको है इनहीं शिर टीको ॥ रति रामहिंसों मति रामहिंमों ध्यान धरे सियपीको॥दक्ष मनों गृह पूरण अक्ष प्रत्यक्ष स्वरूप गोसांइहिजीको ॥१॥ चारिभ्रि वृत्तसों सात्विकरूप मनो नभ निर्मल कांति कहीको॥पातक-पुंज शिराहि विलोकत दीनदयालु विषयरस फीको ॥ पूजामें अंग प्रसंगमें कान सो ध्यान धरै रघुनन्दन सीको ॥ चक्षुमें रूप धरे हरिपक्ष प्रत्यक्ष स्वरूप गोसांइहिजीको ॥२॥ वेदको विधान लय पूरण पुराणमत मानत प्रमाण साधु सिद्ध सब ठाईंके॥ प्रेमरस भीने पद परम प्रवीने कहि दीने हैं अखेर कवि भेद जहां ताईंके ॥ दया पर लावै बरसावै प्रेम पूरो जल हियो हुलसावै जो पाहनके नाईंके॥स्वामीके चरित्र और बापुरो बखानैं कौन वृत्त यह बांटे परी तुलसी गोसाईंके ।३। ॥ दोहा ॥ श्रीहनुमंत प्रसंग शुभ, प्रथम चरित विस्तार॥लख्यो गोसाईं दरशरस, विदित सकल संसार॥१॥वार्तिक॥ श्रीगोसाईंजी सरजूपारी ब्राह्मण अनन्यरामोपासक षट्शास्त्री थे; और इन्होंकी जन्मभूमि मुकाम राजापुर जिले प्र-यागराज है. सम्वत् १५८३ में उत्पन्न हुये और सम्वत् १६८० में मुकाम कासीजीमें स्वर्गवास लिया. अब चरित्र लिखतेहैं कि-ये गोसांईंजी अपनी धर्मपत्नीमें अति प्रेम रखतेथे, एक दिन वह स्त्री अपने मातापिताके घर गई, तो गोसांईजीभी वहां पहुँचे, तब उसने कहा कि-ऐसा प्रेम श्रीरामजीमें होता तौ अच्छा था, उसी वक्त श्रीगोसांई-जीके विराग उत्पन्न हुवा और प्रभातमें उठकर कासीजीमें चले गये और रामभजन करने लगे, और वहां यह नियम था कि जब प्रभातमें उठकर दिशा जंगलसे लौटते थे तब शौचका जल, जो लोटेमें बचता था उसको एक बबूलके वृक्षमें नित्य डालते थे. ऐसे एकदिन उसवृक्षसे एक प्रेत निकल आया, और बोला कि नित्य जलदानसे हम अति प्रसन्न हैं, तुम वरदान मांगो, तब गोसांईजीने रामदर्शन मांगा तब प्रेतने कहा यह सामर्थ्य मेरेमें नहीं है; परंतु तुमको उपाय बतलाता हूं कि कासीजीमें एकजगह रामकथा होती है, वहांपर एक कोढ़ीका रूप धर श्रीहनुमान्जी नित्य कथा-श्रवणको आते हैं; सो उनको मिलो, तुम्हारा काम होजायगा यह सुन, गोसांईजी वहां गये और चलते वखत रस्तेमें हनुमान्जीके पांव पडे और कहा कि--आप हनुमान्जी हैं मेरे दीनपर दया कीजिये. तब हनुमान्जीने दर्शन दे कहा वरदान मांगो, तब इन्होंने रामदर्शन मांगा, तब हनुमान्जीने कहा कि चित्रकूटमें मिलैगा.

इसकेबाद एकदिन श्रीगोसांईजीके स्थानपर नाभाजी गयेसो मुलाकात नभई, इसवास्ते गोसांईजी नाभाजीके आश्रममें गये उन्होंने बड़े आदरसे लिया और संतमंडलीमें अच्छे ऊंचे आसनपर बिठाया और विधिपूर्वक पूजन किया, और स्तुति किया.

छन्द—छप्पै—त्रेता काव्य निबन्ध सहस चौबिस रामायण ॥ यक अक्षर उद्धरे ब्रह्महत्या पारायण॥अब भक्तन सुख-हेत बहुरि लीला विस्तारी ॥ रामचरित रसमत्त अनत निशिदिन व्रतधारी ॥ दोहा ॥ संसारपारके पार कहँ, सुगमरूप नौका लयो ॥ कलि कुटिल जीव निस्तारहित, वाल्मीकि तुलसी भयो ॥ (वार्त्तिक) इसको सुनकर गोसांईजीने कहा कि यह पदवी गुप्त राखिये और पीछे एक श्रीकृष्णमन्दिरमें दर्शनको गये, तब सब संतोंने जो प्रणाम किया, और गोसां-ईजीने यह काव्य पढ़ा ॥ दोहा ॥ काह कहौं छबि आपकी, भले बने बृजनाथ ॥ तुलसी मस्तक जब नवै, धनुषबाण लेव हाथ ॥ (वार्तिक) ॥यह सुन श्रीकृष्ण भगवान्ने मुरली मुकुट छिपाकर धनुषबाण हाथमें ले रामरूपसे दर्शन दिया, तब गोसांईजीने दंडवत् किया, यह अमृतलीला देखकर सब संतोंने, गोसांईजीको धन्यवाद और संतोंके शिरताज कहा इसके बाद एकदिन दक्षिणदेशके राजाके यहांसे एक प्रतिमा रामजीकी अयोध्याजीमें स्थापनके लिये श्रीवृन्दावनमें आई

और एक रामानन्य ब्राह्मणके वश्यहो रामजीने वहीं रहनेको हुकुम दिया, तो रामघाटपर मन्दिर बनने लगा; तब सब सन्तोंने गोसांईजीसे पूंछा कि–येह भगवान्‌को क्या नाम होयगा ? तब गोसांईजीने कहा, यह अयोध्याजीके रामलला है यह सुन उन संतोंने पुजारी लोकोंसे पूंछा तो यथार्थ वही नाम निकला. वह मंदिर आजभी रामघाटपरहै; ऐसे धनुपलीला होनेके बाद, कोई कोई कृष्णोपासक गोसाईंजीसे ईर्षाभाव मानने लगे, तब गोसाईंजीने उनको समझाया और यह चौपाई तथा कवित्त तथा दोहा पढा ॥चौपाई॥ राम सदा सेवकरुचि राखी ॥ वेद पुराण सन्त सुर साखी ॥कवित्त॥ प्रभु सत्य करी प्रल्हादगिरा प्रगटे नरकेहरि खम्भमहां ॥ झखराज ग्रस्यो गजराज कृपा ततकाल विलम्ब न कीन तहां॥ श्रुति शाखि है राखी है पाण्डुबधू पट लूटत कोटिन भूप जहां॥तुलसी भजु शोच विमोचनको जनको प्रण राम न राख्यो कहां ॥दोहा॥ ऐसे साहेब रामको, क्योंकर दीजै पीठि ॥ तुलसी जाके आपुते, सेवककी रुचि मीठि ॥ (वार्त्तिक) ऐसे उपदेश सुन सब सन्तोंने श्रीगोसाईंजीको अनेकानेक धन्यवाद दे नमस्कार किया.

और एक कान्यकुब्ज ब्राह्मण नन्ददास नामके गोसाईंजीके गुरुभाई कन्नौजके पास रहते थे और ये महात्मा बड़े कृष्णोपासक थे, संसारके प्रपंचसे भिन्न थे, इसपर उनके कुटुम्बवालोंने बहुत रोंका; परन्तु उन्होंने भजनभाव नहीं छोड़ा, तब वोह लोग अधर्म किये कि एक मरी गाय रातके बखत उनके दरवाजेपर रख गये और प्रातःकाल हुवा तब सब लोगोंने यह पुकारा किया कि नन्ददासने गऊ मारी है, यह देख नन्ददास अति घबराये. पीछे द्विभुजमुरलीधर श्रीकृष्णके शरण गये. बारंबार प्रार्थना करी कि महाराज ! आपके शिवाय दूसरा कौन रक्षण करेगा ? मर्यादा आपहीकी है. यह सुन कृष्ण भगवान्‌ने उसीवक्त उस मरी गायको जिला दिया, तब वोह लोगभी नन्ददासको महात्मा समझके वैरभाव छोड़ दिये, उन्हीं नन्ददासने सुना कि श्रीगोसाईंजी वृन्दावनमें आये है, तो इनको दर्शन अवश्य करना चाहिये, यह विचार कर श्रीगोसाईंजीके पास आये और बड़े प्रेमसे कुछ कृष्णभगवान् सम्बंधी कविता सुनाया तो तुलसीदासने अति प्रसन्न हो कहा कि कुछ रामलीला सुनावो, तब इन्होंने उत्तर दिया कि महाराज मैं तो जिसके नामपर बिक गयाहूं उसीका यश गाऊं यही आपभी आशीर्वाद दीजिये,क्योंकि मेरा नाम नन्ददास रक्खाहै. दशरथदास क्यों नहीं रक्खा ? यह सुन गोसाईंजी नन्ददासका दृढ प्रेम देख बहुत खुश भये, प्रशंसा करनेलगे कि वाह इसीतरह आपनी उपासनामें दृढ प्रेम रखकर खूब भजन किया करो, ऐसे एक दिन वृन्दावनके महन्तने गोसाईंजीसे श्रीअयोध्यापुरीका माहात्म्य पूंछा. तब गोसाईंजीने कहा ॥

चौपाई॥ यद्यपि सब वैकुण्ठ बखाना । वेद पुराण विदित जग जाना ॥ अवध सरिस प्रिय मोहिं नहीं सोऊ । यह प्रसंग जानै कोउ कोऊ ॥ वार्त्तिक ॥ और ऐसा कहा कि तमाम सभाको आनन्दसे मगन कर दिया इसीतरह बहुत दिन वृन्दावनमें महात्माओंसे सत्संग करके श्रीअयोध्यापुरीमें आये और रातदिन रामभजनमें तत्पर हो बहुधा यही दोहा कहतेथे ॥दोहा॥ सम्पति सारे जगतकी, स्वासा सम नाहिं होय ॥ सो स्वासा रघुनाथ बिन, तुलसी वृथा न खोय ॥ वार्त्तिक ॥ ऐसे भगवत्‌की नित्य लीला करते बड़े प्रेममें मगन रहते थे. एक दिन कलिकालका अनुभव, जीवहिंसा, छल, कपट, पाखंड इत्यादि पुरीमें देखनेमें आये तौ गोसाईंजीने मुक्तिपुरी अयोध्याजीमें यह अनर्थ देख बडा रंज मान, रामजीकी विनय की, कि महाराज ! यह अनर्थ मेरेसे देखा नहीं जाता. तब श्रीरामजीने कासीजी जानेकी आज्ञा दिया और कहा कि– उस पुरीके रक्षक शिवजी है, वहां कालकर्मकृत गुण दोष नहीं लगता यह सुन गोसांईंजी कासीपुरीमें आये और भाषा रामायणकी चर्चा चलाया, कि जहां देखो वहां रामायणही हो रही है, यह देख वहांके शास्त्रीलोग गोसाईंजीसे शास्त्रार्थ करनेको आये और बोले कि भाषाका क्या प्रमाण है ! तब गोसाईंजीने कहा कि हमारा दोहा सुनो ॥ दोहा ॥ हरिहर यश सुर नर गिरा, बरणहिं सन्त सुजान ॥ हांडी हाटक चारु चिर, रांधे स्वाद समान॥यह सुन उन्होंने कहा शास्त्रका प्रमाण दीजिये, तब गोसाईंजीने कहा मैं वादविवाद नहीं करताहूं, मतलब कहि देताहूं. यह सुन उनलोगोंने दण्डिराज स्वामी मधुसूदनाचार्यसे हकीकत कही, उन्होंने गोसाईजीको धन्यवाद दे यह श्लोक पढ़ा ॥श्लोक॥ परमानन्दपत्रोयं जंगमस्तुलसीतरुः॥ कवितामंजरी यस्य रामभ्रमरभूषितः ॥वार्त्तिक॥ जिसका अर्थ यह है कि परम आनन्दरूप पत्ते हैं जिसके, कवितारूप है मंजरी जिसकी और रामरूप भ्रमरसे भूषित ऐसा जंगम अर्थात् चलनेवाला गोसाईंजीरूप एक यह तुलसीका वृक्ष है. ऐसे कह स्वामीजीने कहा कि उनके पास जायकर माफ मांगो, तब यह सुन वे शास्त्रीलोग गोसाईंजीके पास आये और बोले कि महाराज ! हम लोग बड़े अज्ञानी हैं, हमारा अपराध माफ करो, यह सुन गोसाईंजीने सबको समझा दिया.

ऐसे एकदिन गोसाईंजी रामजीके ध्यानमें थे. इतनेमें भैरवजी महाभयंकर रूप धर आते भये जिससे ये डरके कासी छोंडके चले जांय तो इतनेमें भैरवजी क्या देखते हैं कि तुलसीदासके पीछे हनुमानजी खडे हैं, ऐसे देख भैरवजी पीछे लौट गये, इतनेमें गोसाईंजी ध्यानसे जागे तो आगे एक ब्राह्मण देखा तो उससे पूंछा–तुम कौन हौ । तब इन्होंने कहा कि हम तुम्हारे पुराने व्यवहारी हैं, तब गोसाईंजीने हनुमान्‌जीको जान साष्टांग दण्डवत् की और विनय की कि महाराज ! आज किधर दया की, तब हनुमान्‌जी बोले आज तुमको त्रास दिखानेके लिये भैरवजी आये थे, इसवास्ते मैं आया था, और अब मुझको देखकर चलेगये, अब नहीं आवेंगे. यह सुन गोसाईंजीके प्रेमके

आंशू बहने लगे और हनुमान्जी अन्तर्धान हो गये.

ऐसे श्रीगोसाईंजी परमानन्दपूर्वक काशीमें रहते भये, एकरोज गोसाईंजीके राममन्दिरमें चोरी करनेके लिये चोर आवते भये तो जिधरकी बाजू जाते हैं उधर श्रीराम लक्ष्मण नजर आते हैं, ऐसे रात व्यतीत होगई. प्रातःकाल हुवा, और सन्तलोग उठे देखे तो उनसे पूंछे तुम कौन हो? उन्होंने आपना आनेका प्रयोजन यथार्थ कह दिया. इसपर गोसाईंजीने बहुत खुशहो, यह कवित्त पढा

(कवित्त) अति सुन्दर रूप अनूप महाछवि कोटि मनोज लजावनहारे ॥ उपमा न कहू सुखमाके मन्दिर मन्दरहूंके बचावनहारे ॥ दिननायकहूं निशिनायकहूं मदनायकके मदनावनिहारे ॥ शॉवर गौर किशोर बशे चित्त चोरनहूंके चोरावनहारे ॥ (वार्तिक) ऐसे कह गोसाईंजीने उन चोरोंको बहुतसा धन दे उत्तम रीतिसे उपदेश दिया कि जिससे वे लोग कृतार्थ भये.

और एकदिन माघके महीनेमें प्रातःकाल श्रीगोसाईंजी गंगाजीमें कटिपर्यन्त जलमें खडे जप करतेथे, उसीवक्त एक वेश्या आई और बोली की, है इसके आत्मा जराभी प्यारा नहीं है, कारण मारे शीतके दंत किडकिडाता है. यह बात गोसाईंजीको मालूम होगई. पीछे गोसाईंजी जलके बाहर हो जरासा जल कपडोंमें छिनक धोती पहरने लगे कि इतनेमें कोई एक छांटा उस वेश्याके अगपर पडा उसी वक्त उसके उत्तम ज्ञान, भक्ति, वैराग्य और दिव्यदृष्टि होगई, जिससे संपूर्ण यमयातना और नरक देखने लगी, तब तो बहुत घबराई और गोसाईंजीके शरण आई, तब इन्होंने ऐसा उपदेश दिया कि वह वेश्या सब प्रपंच छोंड और सर्वस्व दान कर रामभजनमें मगन होगई जिससे मुक्तरूप होगई.

और एक पण्डित ब्राह्मण काशीजीके उसपार रहते थे, उनकी जमीन गंगाजीके प्रवाहमें डूब गई तो जोविका हत भई ऐसा समझ गोसाईंजीके शरण आये. तब गोसाईंजीने गंगाजीकी स्तुति करके उस ब्राह्मणकी जमीन छुटवा दिया कि पहलेसे तिगुनी जमीन निकली, तब तो उस ब्राह्मणने अतिप्रसन्न हो गोसाईंजीको भगवद्रूप मान, कोटिशः धन्यवाद दिया.

और काशीजीमें एक बडे प्रतिष्ठित पण्डित रहते थे सो उन्होंने गोसाईंजीकी प्रतिष्ठा देख बडा संताप किया, और गोसाईंजीके पास आय विनयकर कहा कि आप काशीजीसे निकल जांय यह बरदान हमको दीजिये, तब गोसाईंजीने कहा बहुत अच्छा और विश्वनाथजीके मन्दिरमें गये और यह कवित्त पढा ॥ (कवित्त) सुरसरि सेइ त्रिपुरारि हौं तिहारे गांव रामहीको नाम लैलै उदर भरत हौं ॥ तुलसी न देवैं भोग लेत काहूसों न कछु लिख्यो न भलाई भालसों करत हौं ॥ इतने पर जो करै राउर जोर करवाको रद देव दरबार गुदरत हौं ॥ पायकै उराहनो उराहन न दीजै मोहिं कालिकेश काशीनाथ कहे निबरत हौं ॥ (वार्तिक) ॥ ऐसे कह चित्रकूटको चल दिये. यह बात जानकर विश्वनाथजीको मन्दिर बन्द होगया, और बडे क्रोधसे वाणी हुई कि तुलसीदास निकल गये इसीसे मन्दिर बन्द है, उनके लाये बिना नही खुलैगा, और नहीं लावोगे तो सबको नाश कर देऊंगा ऐसी शिववाणी सुन वोह लोग गोसाईंजीको पांव पड़के बुलाय लाये और मन्दिर खुल गया, तब सब लोग गोसाईंजीको बहुशः धन्यवाद देते भये.

और एक काशीजीमें महानिंदकाधिराज नास्तिक साहूकार रहता था, सो कोई दिन मर गया और स्मशानको गया और पीछेसे उसकी औरत रोतीहुई आतीथी कि इतनेमें रास्तेमें गोसाईंजी मिले तो इन्होंके पांव पडी तब इन्होंने आशीर्वाद दिया कि सौभाग्यवती हो. यह सुन उसने कहा, महाराज, मेरा पति तो स्मशान पहुंच गया मेरा तो सौभाग्यरूप वृक्षको मूल उखड गया, तब गोसाईंजीने उसकी लहास मंगवाय उसके कानमें कहा कि–सीताराम कहो इतना सुनतेही वह साहूकार उठ बैठा और गोसाईंजीके चरणोंमें पड गया, क्षमा मांगी तब गोसाईंजीने प्रसन्न हो मंत्रोपदेश दे कृतार्थ किया.

और जबसे गोसाईंजीने उस साहूकारको जिलाया तबसे हजारों आदमी दर्शनको आने लगे यहांतक कि कोई बखत अवकाश न रहा, इसवास्ते गोसाईंजी एक गुफामें जा बैठे और जब बहुत आदमी इकट्ठे होतेथे तब दर्शन देतेथे उन दिनोंमें गोसाईंजीके परम भक्त तीन लडके कोई गृहस्थके थे, उन्होंने तीनदिनतक दर्शन न पानेसे प्राण छोंड़ दिया, पीछे गोसाईंजीको हाल मालूम हुवा तब गोसाईंजीने रामजीका चरणोदक उनके मुखमें डाल दिया, तब डालतेके साथही वे तीनों लडके उठके खडे होगये और गोसाईंजीके चरणोंपर पडे उन्होंने आशीर्वाद दे कृतार्थ किया.

और एक वक्त श्रीकाशीपुरीमें वैष्णवोंका और योगियोंका बडा शास्त्रार्थ हुवा, निदान योगी लोगोंकी पराजय हुई उसपर उनके गुरुने अपने योगबलसे दिल्लीके बादशाहको मयतख्त उठा मंगाया और बादशाहसे कहा कि–वैष्णवोंके कंठी माला सब छीन लिये जांय इसपर उसने कंठी माला छीननेके लिये आपने सूबेदारको हुकुम दिया कि वोह लगा छीनने, कि इतनेमे सूबेदारको साथ ले वह योगी गोसाईं तुलसीदासके पास चला कि बस सब लोगोंके पांव बंध गये, आगे देखते क्या हैं कि एक महाभयंकर पर्वताकार पुरुष मारनेको आता है, इसको देखतेही भगदर मचगई और वह योगी अचेत होगया और पीछे होस हुवा तो रामजीकी स्तुति किया, तब आकाशवाणी हुई कि तू तुलसीदासकी शरणमें जा, ऐसे सुन वह योगी दौड़के इनके पांव पड़ा और माफ मांगी, तब गोसाईंजीने दयादृष्टिसे देखा तो वह योगी आनन्दित होगया और अपने घर आया, और कंठी माला फेर दिया.

और एक दफे श्रीगोसाईजीने यह दोहा पढ़ा ॥ दोहा—शरदरैन विनु चन्द्रमा, सवै न अमृत नीर ॥ तुलसी जनक कुमारि बिनु, जे सुमिरत रघुबीर ॥ वार्तिक ॥ और जनकपुरको चल दिये चलते चलते रास्तेमें एक मैथिल ब्राह्मणोंकी सभामें गये, वे लोग बड़े आदरसे लिये और विनयकर अपनी बिपत्ति कहने लगे कि—महाराज ! श्रीरामचन्द्रके विवाहमें हालापुर आदि बारह ग्राम, हम लोगोंको दान मिले थे, जिसका(दानपत्र) ताम्रपत्रमें लिखा हुवाहै और उसपर हनुमान्‌जीकी साक्षी है,सो इसवक्तमें कलिराजके प्रभावसे पटनाके सूबेदार यमनराजने छीन लिये,हमारी जीविका जाती रही, ऐसे महादीन होय उन मैथिल ब्राह्मणोंने वह दानपत्र गोसाईंजीके हाथमें दिया, उन्होंने वहपत्र अपनी छातीमें लगाया और आनन्दमें मग्न होकर कहा कि और कहे इसपत्रका हमको दर्शन दुर्लभ है.ऐसे कह गोसाईंजी पारायणकी विधीसे रामायण कहने लगे और यह नियम किया कि जबतक श्रीहनुमान्‌जी प्रसन्न हो इन ब्राह्मणोंके ग्राम न दिलावैंगे तबतक आसनसे नहीं उठूंगा, ऐसे निर्जल गोसाईंजी छेरोज बैठे रहे, तब हनुमान्‌जीने ब्राह्मणका वेष कर हाथमें कन्द,मूल, फलोंसे भरी हुई थाली ले,गोसाईंजीके पास आय कहा कि—इसको प्रसाद पाइये, ऐसा व्रत न करना चाहिये, कलियुगमें अन्नगत प्राण हैं, ऐसे सुन गोसाईंजीने कहा कि—हम तो तब उठेंगे जब हनुमान्‌जी उन ब्राह्मणोंके ग्राम दिलावेंगे. यह सुन हनुमान्‌जीने दो अपने लोम दिये और कहा कि—एक छोडनेसे अंगार लगैगा, और दूसरेसे शांति होगी और अन्तर्ध्यान होगये. तब गोसाईंजीने उन मैथिल ब्राह्मणोंको दोनों लोम दे हकीकत कह दिया,वोह लोग पटना शहरमें गये,उस यमनराजसे बोले,हमारे ग्राम माफीके हैं देदो,उसने न दिया,तब इन्होंने अंगारवाला लोम छोंडा कि लगा पटना भय सूबेदारके मकानके जलने जिससे चारों तरफ हाय हाय होगया, निदान वह सूबेदार शरणमें आया और सब ग्राम माफकर दिये,तब इन्होंने शान्तिकारक लोम छोड दिया सब अग्नि शांत होगये, और तुलसीदासके चरणोंमें पड़े जो आजभी वे माफी खाते हैं पीछे गोसाईंजी कासीजीमें आते भये.

और एक दिन कासीजीमें एक आदमी आकाशमार्गमें देखनेमें आया, हजारों आदमी इकट्ठे होगये, इतनेमे गोसाईजीभी आये,इनके देखते उधरसे दण्डप्रणाम और इधरसे "जय सीतारामकी" धुनी भई और इतनेमें एक विमान आया उसोमें एक पुरुष चतुर्भुजी रूप हो वैकुंठमें गया,और वह पुरुष उतर पडा,और गोसाईंजीके साथ हो आश्रममें आया,इन्होंने बड़ा आदर सन्मान किया,तब सब लोग पूंछने लगे तुम कौन हो?उन्होंने कहा कि मै ब्राह्मणहूं.बलखंडी मेरा नाम है और यह प्रेत है मेरा और इसका यह कौल भया,कि तुम मेरेको गोसाईंजीके दर्शन करा देव मैं तुमको धन बताताहूं. यह सुन मैंने कहा कि बहुत अच्छा है, ऐसे कह मैं इसको यहां ला गोसाईंजीके दर्शन करा दिया, अब वह वैकुंठ गया,और मैं चाहता हूं कि चित्रकूटके गुप्त तीर्थोंको गोसाईंजीको साथ ले उद्धार करूं यह सुन गोसाईंजी अति प्रसन्न हो बलखण्डीके साथ चित्रकूटमें सब तीर्थोंको शोध शोध प्रकट कर फिर कासीजीमें आये,जिन तीर्थोंको आजदिनभीलोगदर्शस्पर्श करतेहैं.

इस दफे गोसाईंजी बहुत काल कासीजीमें रहे और नित्य रामदर्शनके लिये उत्कंठित रहतेथे,कि इतनेमें हनुमान्‌जी इनको दृढ़ विश्वास देख चित्रकूट जानेकी आज्ञा दिया,और कहा उधर तुमको रामदर्शन होगा,ऐसे सुन गोसाईंजी चित्रकूटको चले और रास्तेमें श्रीशिवजीने एक दंडीको वेष धर तुलसीदाससे कहा तुम किधर जाते हो?उन्होंने कहा राम दर्शनके लिये. तब शिवजीने कहा तुम्हारा मनोरथ पूरा नहीं होगा एसे कह अपना स्वरूप दिखाया,तब गोसाईंजीने कहा अब मेरेको रामदर्शनभी होगा और यह चौपाई पढ़ी ॥ चौपाई ॥ जापर कृपा न करैं त्रिपुरारी॥ सो न पाव नर भक्ति हमारी ॥ (वार्तिक) इसपर शिवजी अति आनन्द हो (एवमस्तु) कह अंतर्धान होगये, और गोसाईंजी चर्नार गढ़के किलेमें पहुँचे,तौ वहांका राजा बहुत खुश हो मिलने चाहा कि इतनेमें दिल्लीके बादशहाके यहां कैद होगया. यह सुन गोसाईंजीके दया लगी,तब एक हनुमान्‌जीका मंत्र लिखा कि जिसके लिखनेमात्रसे बादशाहको ऐसा मालुम हुवा कि उलट पलट हुवा जाताहै, तो उसी वक्त राजाको कैदखानेसे छुडवाय दरबारमें बुलाय बड़े प्रेमसे बैठाय बहुतसा धनदे बिदा कर दिया;और एकवक्त विंध्याचलकीतराईमें दोराजावोंसे यह करार हुवा कि हमारेतुम्हारे लड़की लड़का होगा तो बिवाह करैंगे, ऐसे ईश्वरकी इच्छासे दोनोंके लडकीही भई तब एक कुछ जातमें कमतीथा उसने अपनी छोकरीको छोकरा बनाया, कि निदान उनको विवाह हो गौना आया, जब मालूम हुवा कि दोनों छोकरीही हैं, तब उस लड़कीने अपने पिताको पत्र लिखा कि जैसी मैं हूं ऐसेही यहभी है, यह जान वह राजा अति क्रोध कर उसका सब राज छीन लिया और शिर काटनेको विचार किया तब वह राजा अपनी लड़की ले गोसाईंजीके शरण आया. तब गोसाईंजीने श्रीरामजीको तीर्थ प्रसाद दे और दोनों राजावोंको बुलाय कहा कि यह लडका है तब उस राजाने परीक्षा किया और लड़काही ठहरा तब तो बड़ा आनन्द हुवा. तब गोसाईंजीने यह दोहा कहा ॥ दोहा ॥ तुलसी रघुवर सेवतहिं, मिटिगे कालो काल ॥ नारि पलटि सो नर भयो, ऐसे दीन दयाल ॥

और इसके बाद श्रीगोसाईंजी चित्रकूट पहुंच रामघाटपर वास करतेथे और नित्य यही इच्छा कि कब रामजीका दर्शन होगा.ऐसे एकदिन श्रीरामजीने दर्शन देदिया. तब गोसाईंजी परमप्रेममें मग्न हो चरणोंमें गिर यह दोहा पढ़ा॥

॥ दोहा ॥ यह शोभा समाजसुख, को कहिसकै खगेश ॥ बरणैं शारद शेष श्रुति, सो सुख जान महेश ॥ (वार्तिक) इसके पीछे हनुमान्‌जीने स्तुति और फूलोंकी बरसात करी. इसके पीछे श्रीरामचन्द्रने श्रीमुखसे कहा कि–गोसाईंजी तुम हमको ध्यानमें देखाकरो. यह कह अंतर्धान होगये; तब गोसाईंजीने यह दोहा पढ़ा ॥ दोहा ॥ रामघाट मन्दाकिनी, भई विमानन भीर ॥ तुलसिदास चन्दन घिसैं, तिलक देत रघुवीर ॥ और इस स्थानपर बहुत दिन रहकर इसी आनंदमें बहुत कुछ भक्तिभाव कहा है.

और एक चित्रकूटके पास दरिद्री ब्राह्मण रहताथा, सो एकदिन बहुत कायल हो चिता लगाय जलना चाहा. तब सब लोगोंने बहुत समझाया परंतु न माना, तब गोसाईंजी समझाने लगे और द्रव्यकी निंदा किया, तब उस ब्राह्मणने कबित्त पढ़ा ॥ कबित्त ॥ द्रव्यहीते देवपूजा धर्म द्रव्यहीते द्रव्यहीते काम कर्म दाम बिन पुरुष निकाम है ॥ बिना द्रव्य दारा सुत भ्राता पितु सब अरिसे लगत विधिहूकी गति बाम है ॥ बिना द्रव्य दुर्जन न जीतो जाइ आदर न कादर कहावै सुधि बुधि सब खाम है ॥ बिना द्रव्य कहौ कौनकी दशा है नीकी मेरे जान द्रव्यहीमें राम है ॥ वार्तिक ॥ ऐसे गोसाईंजीने उस ब्राह्मणको हठ देख दरिद्रमोचनी शिलाको दर्शन कराके बड़ा धनी बना दिया, जिसके वंशमें आजदिनभी सब धनी होते हैं.

ऐसे जब गोसाईंजीकी अद्भुतलीला जाहिर होने लगी तब दिल्लीके बादशाहने बुलवाया और गोसाईंजीभी गये. तब बादशाहने हुकुम दिया कि दरबारमें लावो, यह सुन गोसाईंजी दरबारमें गये. तब बादशाहने कहा करामात दिखावो, तब तुलसीदासजीने कहा मेरे पास करामात काहेकी ? मैं तो राम राम कहकर पेट भरता हूं तब उसने हुकुम दिया कि कैद करो. जब गोसाईंजी कैद होगये तब रामजी तथा हनुमान्‌जीकी स्तुति शुरू किया—

(कबित्त)

कानन भूधर वारि बयारि दवा दुःख व्याधि महा अरि घेरे ॥ संकट कोटि तहां तुलसी जहँ मात पिता सुत बन्धु न नेरे ॥
रखि हैं तहँ राम कृपा करिकै हनुमान्‌से सेवक हैं जिनकेरे ॥ नाक रसातल भूतलमें रघुनायक एक सहायक मेरे ॥ १ ॥
जबहीं यमराज रजायसुते मोहिं लै चलिहैं भट बांधि नटैया ॥ सांसत घोर पुकारत आरत कौन सुनै बहुबार डटैया ॥
एक कृपाल तहां तुलसी दशरत्थके नंदन बंदि कटैया ॥ तात न मात न स्वामि सखा सुत बन्धु विशाल बिपत्ति बटैया॥२॥
जहां यमयातन घोर नदी भट कोटि जलच्चर दन्त कटैया ॥ धार भयंकर वार न पार न बोहित नाव न मीत खेवैया ॥
तुलसी जहँ मात पिता न सका नहिं कोउ कहूं अवलंब देवैया॥तहां बिन कारण राम कृपाल विशाल भुजा गहि काढ़ि लेवैया३

स्तुति हनुमान्‌जीकी.

तोहिं न ऐसी बूझिये हनुमान् हठीले ॥ साहेब कहूं न रामसे तुम ले न उसीले ॥ तेरे देखत सिंहके शिशु मेंढुक लीले॥ जानतहौं कलि तेरऊ मनों गुणगण कीले ॥ हांक सुनत दशकण्ठके भये बंधन ढीले ॥ सो बल गयो किधौं भये अब गर्व गहीले ॥ सेवकको परदा फटै तुम समरथ शीले ॥ अधिक आपुते आपुनो सनमान सहीले ॥ सांसति तुलसीदासकी लखि सुयश तुही ले॥ तिहूंकाल तिनको भलो जे राम रंगीले॥ १ ॥ वार्तिक ॥ ऐसे गोसाईंजी जब पद बना चुके तब एकाएकी महातेज प्रतापसहित श्रीहनुमानजी प्रकट भये, और असंख्य वानरीसेनाभी उत्पन्न भई, और पहले सब कैदी छोंड़ दिये. पीछे चौकी पहारेवाले सिपाहियोंको तमाचा दांत नखोंसे घायल करके निकाल दिया, और बादशाही मकानोंके दरवाजे, खंभे, कंगूरे शीशा,कपड़े,बिछौने,मच्छरदानी आदि सब तोड़ फोड़ डाला और बूढ़ा,जवान,लड़का, लड़की, औरत, मरद और बेगमोंको जहां जिधर पाया तिधर मार पीट कूट काट करदी, कि जिससे चारों तरफ "हाय हाय त्राहि त्राहि" मच गया; तब बादशाह मय बेगमोंको हाथ जोड़के गोसाईंजीके शरण आया, और बोला मेरा अपराध माफ कीजिये, मैंने जो किया, तिसका फल यथार्थ पाया. अब रामजीके खैरातमें हमारी जान बक्स कीजिये, मेरे बाल बच्चे सब मरते हैं, सो यह आफत मिटाइये. यह सुन गोसाईंजीने बादशाही महलोंपर निंगाह की तो देखते क्या हैं, कि प्रलयके समान उपद्रव हो रहा है; तब दयालु गोसाईंजीने हनुमान्‌जीकी विनय किया, परंतु उपद्रव शांत न हुवा,तब गोसाईंजीने यह विष्णुपद बनाया.

विष्णुपद.

मंगलमूरति मारुतिनंदन ॥ सकलअमंगलमूलनिकंदन ॥ पवनतनय सन्तन हितकारी ॥ हृदय बिराजत अवधविहारी ॥ मात पिता गुरु गणपति शारद ॥ शिवासमेत शंभु शुक नारद ॥ चरण वंदि विनवौं सबकाहू॥देहु रामपद भक्ति निबाहू ॥ वंदौं राम लषण वैदेही ॥ जे तुलसीके परमसनेही ॥ वार्तिक ॥ इसपर हनुमान्‌जी अन्तर्धान होगये और बादशाहने श्रीगोसाईंजीकी बड़ी धूमधामसे सेवा पूजा कर, चरणोदक ले, सब महलोंपर छिनकाया और रुपया,अशर्फी, जवाहिरात नावोंमें भर सामने लायके कहा-आप इसको ग्रहण करो.तब गोसाईंजीने कहा;कि-हम क्या करैंगे? और यह दोहा पढ़ा ॥ दोहा ॥ तीन टूक कौपीनमें, अरु भाजी बिनलौन ॥ तुलसी रघुवर उर बसें, इन्द्र बापुरो कौन ॥ (वार्तिक परंतु गोसाईंजीने यह आज्ञा दई, कि यह स्थान श्रीहनुमान्‌जीके चरणकमलोंसे पवित्र हुवा, तुम्हारे रहने लायक नहीं है; यह सुनकर उत्तरतरफ यमुनाके किनारे 'आपने लडकेके नामसे शाहजहांबाद बसाया और उसीमें रहने लगे और

गोसाईंजीसे यह मांगन मांगा कि–कभी कभी दयाकरके दर्शन दिया करो. तब गोसाईंजीने कहा इसकी कुछ चि
ऐसे कह चल दिया।

इसके बाद रास्तेमें आते थे, कि एक अहीर मिला और दूध दही ला, आगे रख,दंडवत् कर बोला कि–हे प्र
रामजीने बनमें कोल भिल्लोंके फल, मूल, दल, ग्रहण किये तैसे आपभी ग्रहण करो। इसपर गोसाईंजीने खुश ह
कि, वही रामजीका भजन किया करो और दूध दही ले लिया और वह अहीर अनन्य रामोपासक हुवा, कि
भक्तिमार्ग चलाया.

और गोसाईंजी वृंदावन पहुंचे रामघाटपर जाय, दंडवत् कर, ठहरे; इतनेमें ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्या
ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र बैरागी इत्यादि सब लोक आने लगे और गोसाईंजीने सबसे जयराम सीताराम
परंतु वोह लोक कृष्णोपासक थे इससे आदरपूर्वक उन्होंने यथार्थ उत्तर न दिया और न राम राम किया। इसपर
ईंजीने यह दोहा पढ़ा ॥ दोहा ॥ आंक ढांक सब कहत हैं, आंब बारा अरु कैर ॥ तुलसी वृजके लोकते, कह
बैर ॥ (वार्तिक) यह सुन वृन्दावनके महन्तने कहा कि–रामजी तौ चौदह कलासे हैं, और इसपर प्रमाण
कहा हैं (अन्ये चांशकलाः प्रोक्ताः कृष्णस्तु भगवान् स्वयमिति) अर्थ अन्य अवतार अंश कलावोंसे भये हैं और
तो स्वयं भगवान् है, यह सुन गोसाईंजीने यह दोहा पढा ॥ दोहा ॥ जो जगदीश तो अति भलो, जो मही
भाग ॥ तुलसी चाहत जन्मभरि, रामचरण अनुराग ॥ (वार्तिक) यह सुन सब लोक गोसाईंजीको अनन्य
सक जान बहुत खुष भये और बोले, कि महाराज ! आप कृष्णके नित्य लीला विहारोंके स्थान कुंज लताभवनोंमें
तब गोसाईंजीने कहा कि, यह रामघाटभी कृष्णभूमिही है इससे यहांसे जाना न होगा, तब सबोंने कहा कि, यह
जांयगे और अपने २ स्थानोंसे गोसाईंजीके वास्ते घी, शक्कर, मैदा, दूध, दही इत्यादि भोगके लिये भेज दि
गोसाईंजीने सब सामान लौटा दिया, और कहा कि हम जूंठे पदार्थ नहीं खाते। तब उन्होंने बाजारसे नवीन र
मोल लेके भेज दिया, तब फिर गोसाईंजीने वही कहकर फेर दिया। तब वोह लोक आये और बोले कि, आप
चीजें लौटा दिया। जूंठी और अशुद्ध बनादिया. इसका कारण क्या है ? तब गोसाईंजीने कहा–चलो। तब सब
वनवासी लोक जहांसे जो सामान लायाथा, उसने वोह जगह बताया, तब गोसाईंजीने कहा कि–देखो, तब
देखते क्या हैं कि, दरएक एक दुकानपर बालकृष्णरूप भगवान् हाथोंसे काढ़ २ के सब पदार्थ खा रहे हैं।
सब लोग प्रेमसे मग्न हो गोसाईंजीके चरणोंपर पड़गये और गोसाईंजी रामघाटपर आयकर यह दोहा पढ़ा ॥ द
तुलसी मथुरा राम हैं, जो जानैं करि दोय ॥ युग अक्षरके मध्यमों, ताके मुखमें सोय ॥ वार्तिक ॥ ऐसे कुछर
ठहर कर, सबको सुख दे, फिर चित्रकूटमें आये और श्रीरामजीकी नित्यलीला करने लगे.

और एक स्वामी नंदलाल श्रीरामजीके उपासक संदीलामें रहते थे, सो कोई वक्त अयोध्याजी जाते थे, स
खोटी पठानोंकी बस्ती मलिहाबाद पहुँचे, कि बस आतेके साथही कोई पठानने बुलाया, ये न गये. तब उसने प
हुकुम दे दिया; उसी वक्त पठानोंने स्वामी नंदलालजीको घेर लिया. धड़ पकड़ शुरू हुई और उस पठानके
कैजारी होगई. और स्वामीके पास आय अपना कशूर माफ कराया. तब स्वामीजीने कहा रामजी भला करैं
वक्त वह पठान अच्छा होगया. और स्वामीजीनेभी जरा आगे चलके मुकाम किया. वहां भगवानकी आरती
वक्त घंटा शंख बजाया इसपर बहुत पठानोंके लडके मारनेको आये कि उनमेंसे एक छोकड़ा स्वामीजीकी त
बोला कि–कोई उनसे बोलो मत. तब स्वामीजीने उसको आशीर्वाद दिया कि जिसका नाम संजरखां हुवा, और
गढ़ी आजदिनभी मौजूद है; इस्के पीछे स्वामीजी रामायण वांचने लगे कि एक भाट ठठोलियेने दोठौ आटेकी
कपड़ेमें लपेट पुस्तकपर चढ़ा दिया; उसी बक्तसे वह भाट दिवाना होगया और उसी जवारमें स्वामीजीके एक
ब्राह्मणभोजन किया,ईश्वरीच्छासे ब्राह्मण जास्ती हो गये और सामान कमती पडी, तौ दौडके स्वामीजीसे सब ह
तब स्वामीजीने एक अंगौछा दिया, और कहा कि तू डर मत. इस कपडेको पकान्नके ऊपर छोंड देने; राम
अच्छा करैंगे. उसने वैसाही किया; जिससे सबको भोजन पूरा हो गया. पीछे अयोध्याजी होकर, तुलसीदासके
लिये चित्रकूटमें गये. छे महीना रहे. तब गोसाईंजीने स्वामीनन्दलालजीको अपनी हस्तलिखित एक रामरक्षा औ
रामकी मूर्ति दिया. जिस मूर्तिका नाम रामसुन्दर था.

और फिर गोसाईंजीने अयोध्यामें आय,एक दाक्षिणात्य ब्राह्मणसे सुवर्णमयी अयोध्यापुरीको वर्णन किया, त
कहा कि प्रत्यक्षमें आदर्शका क्या काम है ? सुवर्णकी होती दीखती क्यों नहीं? तब गोसाईंजीने कहा कि यहांका
कर, पत्थर, या ईंट ले आवो. तब वह ब्राह्मण एक ईंट उठा लाया. तौ देखता क्या है कि सुवर्णकी ईंट हो गई. त

रास्तेमें एक बुढ़ी मिली, उसने पूंछा कि, तुम कौन हो ? तब क्रोध कर बोला कि, मैं ब्राह्मण हूं, दक्षिण देशसे आया हूं. सुवर्णमयी अयोध्यापुरी देखनेके लिये. परंतु दीखती नहीं, तब उस बुढ़ीने कहा कि–तुम यहांके कंकर पत्थर उठा लावो. तब वोह मारे गुस्साके आपनी चद्दरमें बहुतसे कंकर पत्थर भर लाया. और जमीनमें डाल दिया. तो सब सोना देखनेमें आया और बुढ़ी अंतर्धान होगई. तब उस ब्राह्मणने माना कि मेरेको श्रीअयोध्यापुरीने दर्शन दिये और अपनेको धन्य माना.

और एक दफे श्रीअयोध्यापुरीमें सिंहदरवाजेपर एक मुक्तामणि साधु रहते थे, सो उन्होंने शयनके वक्तका एक भजन बनाया.(विष्णुपद–राग–बिहाग) सैन करहु रघुबीर पियारे ॥ हौं पठई आई कौशल्या बड़े भूप उठि सदन सिधारे॥ युगुल याम यामिनि बीती है नैनन नींद भरे रतनारे ॥ प्रफुलित शरद कोकनद मानों मन्द समीर मलयकर धारे ॥ रतनजटित मणिमय मन्दिरमहँ रचि शुचि शोभित जनकसुतारे ॥ मग जोवत सहचरी सियाकी सैन उचित सब सौंज संवारे ॥ अति आलस बस भये हैं भरतयुत लषणलाल रिपुहन उजियारे ॥ सुनत सकल दै पान बिदा करि उठे दास मुक्तामणि वारे (वार्तिक)इसको सुन गोसाईजी अतिप्रसन्न हो बड़े प्रेमसे उनके पास आय भक्तसे अतिभक्त अपना स्वरूप बना दिया.

ऐसे कुछदिन गोसाईजी अयोध्याजीमें रहकर संतोंके साथ नीमखारको चले. सो पहिले रवानाहीमें ठहरे. जहां मान्धाताने रावणको हरायाथा और वहांसे सूकरखेतमें आये; जो अयोध्याजीसे बारह १२ कोश है, जहां बराहअवतार भया था. जिनके घुरघुराहट शब्दसे घाघरा नदी प्रकट हुई. और यहांहीपर गुरु नृसिंहदाससे श्रीगोसाईजीने ज्ञान पाया.और यहांसे पसकामें ठहर सियाबार गांवमें ठहरे, जिसमें श्रीसीताजीका धाम था, जहांपर आज दिनभी एक सियाकूप बना है. जिसका जल अति मीठाहै,मुसाफिर लोगोंको आनन्द देता है; और यहांसे श्रीलक्ष्मणजीकी पुरी लखनऊमें आये और हनुमान्‌जीका दर्शन कर कुछ रोज रहे भजनभाव किया. जैसे कि हिन्दीमें लिखा है (छन्द) कहुँ दीननको प्रतिपाल करै ॥ कहुं साधुनको मन मोद भरै ॥ कहुं लषणलालके चरित बंचै ॥ कहुं प्रेममगन व्है आपु नचै ॥ कहुं रामायण शुभगान रचै ॥ कहुं उत्साह कुलाहल और मचै ॥ कहुं आरत जनको दुःख हरै ॥ कहुं अज्ञानपर ध्यान धरै ॥ १ ॥ वार्तिक ॥ और गोसाईजीने लखनऊमें एक गरीब भाटको अपने प्रतापसे कवि और बड़ा धनी बना दिया; और उसके वंशमें आजतक सब कवितामें निपुण होते हैं.

और एक वक्त गोसाईजी लालाभीखम सिंहके मिलनेको मडियानेको चले, सो लखनऊसे तीन कोशपर चनहटमें जाय सुना कि लालासाहब बड़े कवि हैं; परंतु इस वक्त झगड़ेमें हैं यह सुन गोसाईजीने कहा कि झगड़ेमें कुछ रामचर्चा नहीं होगी. इसीसे मलिहाबाद चलेगये, वहांपर परम वैष्णव एक भाटको एक रामायण दिया. जिसको पायकर वह पाठ करते २ कृतार्थ होगया. जो प्रति आजदिनतक मलिहाबादमें मौजूद है.

और गोसाईजी मलिहाबादसे चलकर बिठूर जानेके लिये रसूलाबादके पास कोटरा गांवमें पहुंचे. जहांपर अनन्य माधवदास रहते थे. यह बड़े महात्मा रामजीके परमभक्त थे. कोई दिन अपने ननिहाल कोटरा गांवमें आये. सो मामाने खरिहाने रखानेके लिये भेज दिया, तब यह महात्माजीने विचार किया कि–अन्नदानका बडा माहात्म्य है. और सब अन्न साधुसंतों गरीबोंको दे दिया. और पीछे डरे कि घरवाले लोक मुझको मारैंगे और एक पुराने इमलीके कोलमें छिप कर भगवान्‌का ध्यान कररहे. और इधर सब लोक ढूंढने लगे इतनेमें इनको माता रोतीहुई उसी इमलीके पास आई, तब अनन्य माधवदास बाहर निकल मातासे कहा कि–हे मातः ! इस संसारमें कोई किसीका लड़का और माता पिता सुख देनेवाला नहीं है. अकेले रामजी सबको सुख देनेवाले हैं और यह पद कहा कि–

(विष्णुपद)ऐसा शोच न करिये माता ॥ देवलोक सुर देह धरी जिन किन पाई कुशलाता ॥ पराक्रमी भीषमसों को भा दानी करणसों दाता ॥ जिनके चक्र चलत हैं अजहूं धरी न भई बिलाता ॥ मृत्यु बांधि रावण बशि राखी भरो गर्व उर हाथा ॥ तेऊ उड़ि २ भये कालवश ज्यों तरुवरके पाता ॥ सुनु जननी अब सावधान व्है परम पुरातन बाता ॥ भणिमाधव माधवके सेवक कौन काहि सों नाता ॥(वार्तिक)इसतरहे माताको समझाकर, रामभजनमें मगन रहे. जिनका ठाकुरद्वारा आजदिनभी बना है. ऐसे माधवदासके पास गोसाईजीने एक पद बनाकर सुनाय, बैठ गये.(विष्णुपद)मैं हरि पतितपावन सुने ॥ हौं पतित तुम पतितपावन दोउ बान न बने ॥ व्याध गणिका गज अजामिल साखि निगमागम भने ॥ और पतित अनेक तारे जात सो कापै गने ॥ जाति नाम अजान लीन्ह्यो नरक यमपुर मने ॥ दास तुलसी शरण आयो राखलिये अपने ॥ (वार्तिक) ॥ यह पद सुन अनन्य माधवदासने जाना कि गोसाईजी आये. सो उठके बड़े प्रेमसे मिले और बहुत आनन्दसे अपना बनाया पद सुनाया.(पद) तबते कहा पतित नर रह्यो ॥ जबते गुरु उपदेश दीन्ह्यो नाम नौका लह्यो ॥ लोह जैसे परसि पारस नाम कंचन कह्यो ॥ उभरि आयो बारह बानी मोल महँ गे गह्यो ॥ क्षीर नीरते भयो न्यारो नरकते निरबह्यौ ॥ मूळ माखन हाथ आयो त्यागि सरबर मह्यो ॥ अनन्य माधवदास तुलसी भव जलधि निरबह्यो ॥ (वार्तिक) ऐसे दोनोंजन भगवद्गुणानुवाद कहते सुनते रहे.

और श्रीगोसाईजी एक वक्त सन्डीलामें गये और एक ब्राह्मणके घरको पयाण किया, तब उसकी औरतने कहा इधर

उतरनेकी जागा नहीं है. यह सुन गोसाईंजी हंसकर, रामबागमें उतर पड़े और यहां जब वह ब्राह्मण आया और सुना कि, गोसाईंजी मेरे मकानसे लौट गये, उसी वक्त दौड़के गोसाईंजीके पांव पडा और क्षमा मांगी, तब इन्होंने कहा कि–हम जिस कामको गयेथे सो काम होगया. कारण तुम्हारे घरमें कृष्णजीका सखा मनसुखा अवतार लेवैगा और गोसाईंजीने उस लड़केका जो जो माहात्म्य कहा सो देखनेमें आया. सो लिखते हैं कि–इसके कुछ दिन बाद ब्राह्मणके घरमें पुत्र उत्पन्न भया, जो बड़ा सुन्दर और तेजवान् था. ब्राह्मणोंने उसका नाम बंशीधर रक्खा. ऐसे कुछ दिनके बाद एक कोढ़ी ब्राह्मण जगन्नाथजीके दर्शनको जाताथा. उसको जगन्नाथजीने सपनेमें कहा कि, तू वहां न जा. सन्दीलामें एक लड़का बंशीधर मिसिर है. अगर वह अपना भोग लगाया हुआ प्रसाद् तुझको देवै, तो तेरा रोग मिट जाय, लेकिन सपनेकी समझकर उस ब्राह्मणको बोध न हुवा. फिर आगे चला. दूसरी रातमें क्या देखता है कि जगन्नाथजी कहते हैं कि–तुझे संदीला जानेकी आज्ञा हुई है. तुम इसी वक्त वहां जाव, क्योंकि हम जब श्रीकृष्णलीला करते थे. तब वह हमारे साथ था, मनसुखा उसका नाम है और अब उसने ब्राह्मणके घरमें जन्म लिया है. बंशीधर नाम है. सो तुम वहां जाना तब मनसुखा नाम लेकर पुकारना. सुनतेही लड़का आयगा, तब उससे आपना हाल कहना. और उसका दिया हुवा प्रसाद् लेना, ऐसे कह उस ब्राह्मणके घरका पताभी बतादिया. तब उस कोढ़ी ब्राह्मणको निश्चय भया. और राहमेंसे लौट कर संदीलामें आया और जो पता सपनेमें सुनाथा, उसी जरियेसे उस ब्राह्मणके दरवाजे पर पहुंच गया, तब उसने मनसुखा नाम लेकर पुकारा. उस वक्त वह लड़का अपने घरमें दूध, भात, खा रहा था. जूंठे बाहर निकल आया. और पूछाके मुझको किसने पुकाराहै? इतनेमें वह कोढ़ी ब्राह्मण दौडकर पांवोंपर गिर पड़ा, और अपना हाल कहा जिसवास्ते आयाथा. तब उस लडकेने कहा कि जल्दी कुछ मिठाई लावो. तब वह ब्राह्मण बताशे लाया, उसमेंसे दो बताशे उसने खाय लिये और बाकीके उस ब्राह्मणको देदिये वे इसने खाये सब रोग दूर हो गया. फिर उसने ब्राह्मणसे कहा कि अब यहांसे तुम चले जावो, और किसीसे जिक्र नहीं करना. और आप अपने घरमें चला गया; और लड़कपनके बाद जब सायना हुवा तब श्रीकृष्णजीकी लीला बड़े प्रेमसे गाया करता था, और कभी कभी प्रेमसे नाचताभी था, और दुनियांके कोई व्यवहारसे वास्ता नहीं रखताथा और जब किसीसे बात चीत करताथा, तब यह उपदेश कहिताथा.

चौपाई ॥ सुत वित नारि भवन परिवारा ॥ दुखरूपी तोहिं सब संसारा ॥ जेहिं तू मगन सो काम न ऐहैं ॥ अजहुं जलावत तबहुं जलै हैं ॥

॥ कबित्त ॥ जिन्हें तू मगन तिन्हें देख जगतके निकारिबेको जीता है ॥

सपनेकी संपदा सुलभ साथ सबहीके सोई हित लाग्यो हरिनाथ अनहीता है ॥

कहै मिसिर बंशीधर कबहूं न आई मति जैसे चहूं ठहूं ठहराई गावै गीताहै ॥

चेत नहीं परैगो पै तरी ताको चलो अब सीताराम जपि लेउ जनम जात बीता है ॥

॥ दोहा ॥ हरे चरहिं तापहिं बरे, फरे पसारहिं हाथ ॥ तुलसी स्वारथ मीठ सब, परमारथ रघुनाथ ॥

तुलसी विलंब न कीजै, भजलीजे रघुबीर ॥ तन तरकसते जात हैं, स्वास सारखे तीर ॥

काशी बसि बुध तन तजै, हठ तन तजै प्रयाग ॥ तुलसी जो फल सो सुलभ, राम नाम अनुराग ॥ बार्तिक ॥ इसी तरह भजन भावके आनन्दमें रताथा और पिछले दोहेका मतलब रामनाम अनुराग अपनेमें देखा दिया. कि एकदिन मुकाम संदीलामें स्वामी दयालदासजीके ठाकुरद्वारेमें रहस था. उसमें अच्छे २ महात्मा साधुसंत बैठेथे. और बंशीधरभी गयाथा. उस वक्त रहसधारियोंने श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्दकी रहसलीला खूब रूबरू दर्शाई, जिससे सब सभा खुश होगई; और बंशीधर प्रेममें मगन बैठा था. इतनेमें रहसधारियोंने यह विष्णुपद गाया, जिसमें श्रीकृष्णचन्द्रका तथा राधिकाजीका वैराग्य वर्णन है.

(पद) सुधि करत कमलदलनयननकी ॥ वे दिन बिसरि गये मोहनको बांह उसीसे सयननकी ॥ (बार्तिक) इसपर बंशीधरको संभार न हो सका, उसीध्यानमें अपना दहिना हाथ फैलाकर प्राण छोड़ दिया. यह हाल देखकर सबोंने धन्य धन्य कहा. और उसी समय खैराबादमें रामजीके सभामंडपमें सिद्धाहलवाई रामायण बांचता था. सो उसने श्रोतागणोंसे कहा कि इस वक्त संदीलाके रहसमें बंशीधर मिसिरने भगवानूके प्रेममें मगन हो अपना प्राण छोड़ विमानमें सवार हो भगवानूके लोकको जाता है. यह संदीलामें रहताथा. ऐसे ऐसे लोग संसारमें कभी कभी जन्म लेते है. मगर इनकी पहिंचान सबको नही मिलती. इसी तरह एक ब्राह्मणका लडका मुरलीधर था. हमेशः मुरली बजा श्रीकृष्णजीके सामने भजन करता था और दिन रात प्रेमके रंगमें रंगा रहिता था, एक बखत हाकिमने उसको पकड बुलाया कि हमको अपना गाना सुनावो. मुरलीधरने कहा कि हम कथिक नहीं हैं. श्रीकृष्णजीके सामने गातेहैं और किसीके सामने मंजूर नहीं है. इसपर हाकिमने खफा होकर कैद करने तथा सखी बनानेका हुकुम दे दिया. तब मुरलीधरने कहा कि हमको बन्धनमें रहना मंजूर नहीं है और श्रीकृष्णचन्द्रका ध्यान करके उसी जगह देह छोड दी.

एक बक्त गोसाईंजी तुलसीकी माला लिये जप कर रहेथे. इतनेमें कवि गंग अपने कविताई और धनके मदसे मतवाला बन सामने आया, भक्तिभावका तिरस्कार कर एक कबित्त बोला जिसका मतलब यह था कि, हाथी कौन माला रखता है जिससे पेट भरता है. यह सुन गोसाईंजीने कहा कि, हम तो इसी मालाको अपना उद्धार जानते हैं और हाथीकी बात तुम जानो. यह कह चौपाई पढ़ी ॥ चौपाई ॥ उमा बचन समुझि न बोलहीं ॥ सुधा होय विष कर्मते डोलहिं (बार्तिक) यह सुन कवि गंग हस्तिनापुर (दिल्ली) आया और कबित्त बनाकर बादशाहके सामने पढ़ा, उसमें कुछ बेगमकी बावत बुरी थी सो सुन उसपर बादशाहने नाराज हो हाथीके पांवके नीचे कवि गंगको दबवाके मरवा डाला. सच है महात्माके साथ जो कोई बुराई करताहै, उसको मारडालती है. जैसे कामदेवने शिवजीसे बुराई करी वही बुराई उसके जानकी दुसमन भई.

इसके पीछे गोसाईंजी नीमखारमें बहुत रोज रहकर मिसिरिखमें आये. तब वहां एक राजा आया और गोसाईंजीको प्रणाम किया; तब इन्होंने पूंछा कि, तुम कहां रहते हो ? उसने कहा-मेरा स्थान रामपुर है. इसपर ये बहुत खुश हुए और बोले कि, तुम लोग धन्य हो जो कि,रामपुरमें रहते हो. तब राजा बोला महाराज ! इस बक्तमें मैं यमनराजसे बहुत पीडित हूं अगर आप चलैं तो दुख दूर होनेका संभव है. यह सुन गोसाईंजी उसके साथ चल दिये. रामपूर पहुंचे तब उन्होंने एक अपनी लकड़ी जो बंशीवटसे लाये थे, सो दिया और कहा कि-इसको अपने गांवमें स्थापन करो. कुछ दिनके बाद इसमें पत्ते होजांयगे. सो अगहन सुदी पंचमीके रोज दरसाल रहस कराया करो. सब तुम्हारा दुख दूर हो जायगा. उस राजाने वैसेही किया. तबसे कोई हाकिमने दांद न किया.

फिर गोसाईंजी रामपूरसे लौट, खैराबादमें परमरामभक्त सिद्धा हलवाईसे भेंटकर, नांवमें सवार हो घाघराके रास्तेसे श्रीअयोध्यापुरीमें आये, और विचार किया कि प्रदक्षिणाकी रीतसे अयोध्याजीकी परिक्रमा करनी चाहिये और सब जगा बड़े प्रेमसे आनन्दपूर्वक फिरते भये.

एकवार देशमें कै दस्तकी बिमारी होगई, सो सैंकडों आदमी मरने लगे त्राहि त्राहि पुकारके सब लोग गोसाईंजीको शरण आये और यह कहते भये ॥ लगियेनाथ गोहार और बल कछु न विशाता॥राखैं हरिके दास किसिरजनहार विधाता ॥ (बार्तिक) यह उन लोगोंको दुःख देख अति दया उत्पन्न भई और उसी प्रेममें हनुमान्‌जीकी स्तुति करी.

(कबित्त) रचिबेको विधि जैसे पालिबेको हरि जैसे मारिबेको हर जैसे ज्यायवेको सुधा पाणि भो ॥
धरिबेको धरणि तरणि तम दलिबेको शोखिबेको कृशानु पोशिवेको हिम भानु भो ॥
खल दुःख देखिबेको सुजन परितोषिबेको मांगिबो मलिनताको मोदक सुदान भो ॥
आरतकी आरतिको निवारिबेको तिहूंपुर तुलसीको साहेब हठीलो हनुमान भो ॥

(बार्तिक) यह सुनतेही श्रीहनुमान्‌जीकी दयासे सब बीमारी हवाके माफक उडगई,और फिर कोई बीमार न भया. सब बड़ी खुशीसे जयजयकार करते अपने घर गये.

और एक बक्त मीराबाई तुलसीदासके पास गई और कहा कि महाराज मेरेको मेरा गुरु और माता, पिता, पति इत्यादि भगवद्भजन नहीं करने देते, सो मैं आपकी आज्ञा चाहती हूं. यह सुन गोसाईंजीने यह कहा. (पद.)जिनको प्रिय न राम वैदेही ॥ त्यागिय तिन्हैं कोटि बैरीसम यद्यपि परमसनेही ॥ तज्यो पिता प्रहलाद विभीषण बंधु भरत महतारी ॥ हरि हित गुरु बलि बृजवनितन पति भये सब मंगलकारी ॥ ताते नेह रामहीके मनियत नेह जलां लौ ॥ अंजन कहा आंखि जो फूटै बहुतो कहौं कहां लौ ॥ तुलसी सोई अपनो सकल विधि पूज्य प्राणते प्यारो ॥ जाते होय सनेह रामपद इतनो मतो हमारो (बार्तिक) इसको सुन मीराबाई प्रेममें मगन होगई और जास्ती भक्तिभाव बढ़ाया

और एक बक्त कोई ब्राह्मण गोसाईंजीके पास आया और बोला कि महाराज ! मेरेको धन मिलै. तब इन्होंने कहा राम राम किया करो, धन मिलेगा. ऐसे वह राम राम कहना शुरू किया. थोडे दिनोंमें श्रीहनुमान्‌जी ब्राह्मणको रूप रख एक थालमें अशर्फी भरके कपडेसे ढांक उस ब्राह्मणको दिया. और चले गये. पीछे वह ब्राह्मण गोसाईंजीके पास आया. तब इन्होंने कहा कि तुमको यह धन श्रीहनुमान्‌जीने दिया है; इसीसे आनन्दमें रहोगे

और कोई समयमें जहांगिरशाह बादशाहसे गोसाईंजीसे भेंट भई और उसने इन्होंसे कहा के काशीका इलाखा आप सेवा पूजाके निर्वाहार्थ लीजिये. इन्होंने कहा कि हमको नहीं चाहिये.

(दो०) अर्ब खर्बलौं द्रव्य है, उदय हस्तलौं राज ॥ जो तुलसी निज मरण है, तो आवै केहि काज ॥ (बार्तिक) यह सुन बादशाहने कहा कि हमारे बापके बक्तमें बीरबल, सूरदास आदि १४ रत्न थे, सो सूरदास आते थे और जो कुछ दिया जाताथा सो ग्रहण करते थे तुम क्यों नहीं लेते ? यह सुन गोसाईंजीने जवाब दिया कि, सूरदास चन्द्रवंशके उपासक थे, और चन्द्रमामें जो दृष्टि लागता है उसको ठंढकके सबबसे अन्यभी सब पदार्थ दीखते हैं और हम सूर्यवंशके उपासक हैं, सो सूर्यमें दृष्टि लगानेसे दूसरा कुछ नहीं दीखता शिवाय सूर्यके. यह सुन बादशाह खूब राजी होकर बोला

मैं आपके समान दूसरा त्यागी देखनेको कौन बोलै सुनाभी नहीं और प्रणाम करके काशीजीसे दिल्लीको गया और एक वक्त एक ब्राह्मणने गोसाईंजीके पास आय ऐसा हठ किया कि, महाराज! मेरेको एक रोजमें श्रीरामजीका दर्शन करा दीजिये. इन्होंने बहुत तरहकी उपासनाकी रीतैं बताया. परन्तु उसने एकभी न माना, तब गोसाईंजीने कहा कि, जा तुम एक वृक्षके ऊपर चढ़ नीचे त्रिशूल गाड़के ऊपरसे त्रिशूलके ऊपर कूदो दर्शन हो जायगा, तब उसने वैसाही किया; परंतु उस वृक्षके ऊपर चढ़ गया तब घबड़ाके नीचे आया. फिर विचार करके चढ़ा फेर उतरा. यही हाल उसका है, इतनेमें एक मुसाफिर आया और हाल पूंछा, तब उसने कहा कि मेरेको गोसाईंजीने एक ज्ञान बताया है सो करते बनता नहीं. यह सुन उस मुसाफिरने उस ब्राह्मणको कुछ द्रव्य दे राजीकर और आप खुद उस झाड़के ऊपर चढ श्रीमहात्मा गोसाईंजीका स्मरण कर उस त्रिशूलके ऊपर कूद पडा. तब बीचहीमें श्रीरामजीने उसको दर्शन दे दिया और वह त्रिशूल मोमकी तरहँ नरम होगया, तब वह मुसाफिर झट दौडके गोसाईंजीके शरण आय पांव पडा, तब गोसाईंजीने उसकी बडी प्रशंसा कर अच्छा उपदेश दिया, जिससे उसको मोक्ष होगया; इति. ऐसे २ गोसाईंजीके अपार चरित हैं, उनको निःशेष कोई कहने सक्ता नहीं; तथापि यह एक दिक्मात्र किया है. (इति श्रीगोस्वामि तुलसीदास चरितामृतं संपूर्णम् ॥)

यह पुस्तक छोटेलाल लक्ष्मीचन्दने श्रीमहाराज परम उदार सुयश विस्तार श्री १०५ स्वामी परमहंस सीताशरणजीकी आज्ञासे शहर मुम्बई हरिप्रसाद भगीरथको छापनेको दिया.

हरिप्रसाद भगीरथजी.
कालकादेवीरोड, बम्बई.

॥ महाक्षौहिणीसंख्या ॥

सद्वयंनिधिवेदाक्षिचन्द्राक्ष्यग्निहिमांशुभिः ॥ महाक्षौहिणिकाप्रोक्तासंख्यागणितकोविदैः ॥ १ ॥

(१३२१२४९००)

अक्षौहिणीसंख्याचक्रम्।

नाम	रथ	गज	घोड़े	पैदल	जोड़
पत्ति	१	१	३	५	१०
सेनामुख	३	३	९	१५	३०
गुल्म	९	९	२७	४५	९०
गुण	२७	२७	८१	१३५	२७०
वाहिनी	८१	८१	२४३	४०५	८१०
पृतना	२४३	२४३	७२९	१२१५	२४३०
चमू	७२९	७२९	२१८७	३६४५	७२९०
अनकिनी	२१८७	२१८७	६५६१	१०९३५	२१८७०
अक्षौहिणी	२१८७०	२१८७०	६५६१०	१०९३५०	२१८७००

॥ अथ तुलसीकृतरामायणकी विषयानुक्रमणिका प्रारंभः ॥

अरण्यकाण्डम् ३.

उत्तरकाण्डम् ७.

लवकुशकाण्डम् ८.

हरिप्रसाद भगीरथजीका, संस्कृत और भाषा पुस्तकालय

ठिकाना—कालबादेवीरोड—रामवाड़ी, मुंबई.

॥ श्रीः ॥

श्रीरमारमणो विजयते।

अथ

श्रीयुतगोस्वामितुलसीदासकृत-

रामायणम्।

बालकाण्डम्।

पण्डित-रामश्यामविरचित

तत्त्वदीपिकाटीकासहित।

जिसे

पण्डित-रामभद्रजीने शुद्ध किया.

वही

गौड़ब्राह्मण हरिप्रसाद भगीरथजीने

बम्बईमें

"गणपत कृष्णाजी" छापखानेमें छपवायकर प्रसिद्ध किया.

शके १८२६. सवत् १९६० सन् १९०४.

॥ बालकाण्डम् ॥

चौपाई—प्रथम कांड है बाल रसीला। जन्म बिवाह रामकी लीला॥
प्रीति करै रामायणमाहीं। तेहि सम भाग्यवन्त कोउ नाहीं॥

चौपाई—श्रीरामायण जेहि घरमाहीं। भूत प्रेत तैंह ढोहि न जाहीं॥
नहिं गति तहां दरिद्रहकेरी। तहँ श्रीमहावीरकी फेरी॥

हरिप्रसाद भगीरथजीका, संस्कृत और भाषा पुस्तकालय.
ठिकाना—कालकादेवीरोड़—रामवाडी, मुंबई.

॥ श्रीगजानन ॥

श्रीतुलसीदासकृतरामायणे

❀ बालकाण्डप्रारंभः ❀

दोहा–शिवाजन्म शिवलग्न सिय, रामोत्पत्ति विवाह ॥
कुंभकर्णरावणजनन, बालकाण्डके माँह ॥ १ ॥

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि॥मङ्गलानां च कर्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ॥१॥भवानीशङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ॥ याभ्यां विना न पश्य-

श्रीगणेशाय नमः ॥ यस्य संस्मरणादेव सिद्ध्यन्ति सुमनोरथाः ॥ तस्मै गुणगणाढ्याय गणाधिपतये नमः ॥ १ ॥ अमन्दानन्दसन्दोहदोग्धारं परमेश्वरम् ॥ कारणं सर्ववस्तूनां वन्दे श्रीरघुनन्दनम् ॥ २ ॥ मणिखचिताद्भुतपीठे वामाङ्कारूढसीतया सहितम् ॥ वन्दे विराजमानं रामं सचिवैः सहोदरैः सेव्यम् ॥ ३ ॥ पृथिव्याद्यष्टरूपाय विरूपाक्षाय शम्भवे ॥ भूतिभूषितदेहाय भूतेशाय नमोऽस्तु ते ॥ ४ ॥ यस्य प्रसादाद्भवसिन्धुसेतुः श्रीरामभद्रो ऽभवदक्षिगोचरः ॥ कवेस्तुलस्याख्यविशुद्धबुद्धेस्तं रामदूतं शिरसा नमामि ॥ ५ ॥

ग्रंथके आरंभमें निर्विघ्न परिसमाप्ति होनेके लिये गोसाईं तुलसीदासजी त्रिविध मंगलाचरणमेंसे नमस्कारात्मक मंगलाचरण करते हैं. कई कुतर्की ऐसे कहते हैं कि–ग्रंथके आरंभमें मंगल करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि मंगल करनेसेही समाप्ति होती है यह कोई पक्का नियम नहीं है. देखिये बाणभट्टने कादंबरी नाम ग्रंथमें खूब अच्छीतरह मंगलाचरण किया है पर वह ग्रंथ पूरा न होने पाया; इससे पहलेही उसका बनानेवाला कवि कालधर्मको प्राप्त हुआ और ग्रंथ अपूर्ण रहगया. तथा नास्तिकोंके बनाये हुए कुसुमाञ्जलि आदि ग्रंथोंमें कहीं मंगलका नाम निशानतक नहीं है पर वे समाप्त हुए हैं. इससे निश्चित होता है कि, मंगल और समाप्तिके परस्पर कुछभी कार्यकारणभाव नहीं है. इसलिये निर्विघ्न ग्रंथकी समाप्तिके लिये मंगल करना चाहिये यह कहना व्यर्थ है. ऐसे कुतर्कोंका समाधान यह है कि, हरएक ग्रंथमें मंगल पाया जाता है और सब शिष्ट पुरुष मंगलाचरण करते आये हैं, इसलिये मंगलाचरण व्यर्थ नहीं है. और कादंबरी आदि ग्रंथ, मंगल होनेपरभी समाप्त नहीं हुए उसका कारण यह है कि, उनके विघ्न तौ प्रबल थे और मंगल कम हुआथा इससे वे ग्रंथ समाप्त नहीं हुए और नास्तिकोंके ग्रंथ जो मंगल किये विना समाप्त हुए हैं उसका कारण यह है कि, उन लोगोंके पूर्वजन्मके मंगलका संस्कार बना हुआथा जिससे इस जन्ममें मंगल न करनेपरभी उनके ग्रंथ समाप्त हो गये हैं. अथवा उनके बिलकुल विघ्नही नहींथे जिससे उनके ग्रंथ समाप्त होगये. पर जिनके विघ्न हैं उनको तौ विघ्नकी निवृत्तिके वास्ते अवश्य मंगल करनाही चाहिये. और यदि किसीके स्वयं विघ्न नहीं हैं

न्ति सिद्धाः स्वान्तस्थमीश्वरम् ॥२॥ वन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शंकररूपिणम् ॥ यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चन्द्रः सर्वत्र वन्द्यते॥३॥सीतारामगुणग्रामपुण्यारण्यविहारिणौ ॥ वन्दे विशुद्धविज्ञानौ कवीश्वरकपीश्वरौ ॥ ४ ॥ उद्भवस्थितिसं-

तथापि विघ्नके भ्रमसे मंगल किया गया तो उसमें हानि क्या है ? कुछ न कुछ लाभ अवश्यही है. इसलिये मंगल करना व्यर्थ नहीं है. वो मंगल तीन प्रकारका है, आशीर्वादात्मक, नमस्कारात्मक और वस्तुनिर्देशात्मक. जैसे प्रथम सोरठा–" जेहिसुमिरत "इत्यादि यह आशीर्वादात्मक मंगल है. और नमस्कारात्मकका उदाहरण यही–" वर्णानां " इत्यादि श्लोक हैं. और वस्तुनिर्देशात्मक कुमारसंभव और माघकाव्यके प्रथम श्लोकमें देखलीजियेगा. तिनमेंसे यहां नमस्कारात्मक मंगलाचरण किया गया है. " वर्णानांअर्थसंघानां " इत्यादि मंगलवादका विस्तार बहुत बड़ा है सो यहां केवल दिक्प्रदर्शनमात्र किया है. अधिक देखना हो तो दिनकरी आदि ग्रंथोंमें देख लेना.

इस रामचरित्र मानसके प्रारंभमें श्रीतुलसीदासजी महाराज अपने इष्ट देवताके अंशरूप सरस्वती और गणपतिको वंदन करते है.

सरस्वती और गणेशजी कि, जो अकारादि तिर्सठ[1] वर्णोंके, वाच्यादि त्रिविध[2] अर्थसमुदायके, शृंगारादि[3] नव रसोंके, गायत्र्यादि[4] अनेक छंदोंके व सर्व प्रकारके मंगलोंके कर्ता हैं तिनको मैं प्रणाम करता हूं ॥ १ ॥ अब इस ग्रंथके मुख्य कारणरूप श्रीशिवपार्वतीको विश्वास और श्रद्धारूप मानकर वंदन करते है. पार्वती और महादेवजी कि, जो श्रद्धा और विश्वासरूप है तिनको मैं प्रणाम करता हूं कि जिन (श्रद्धा और विश्वास) के[5] विना सिद्धपुरुषभी अपने हृदयस्थित परमेश्वरको नहीं देख सकते हैं ॥ २ ॥ ग्रंथके आचार्य श्रीशिवजीको प्रणाम कर श्रीगुरुदेवको नमस्कार करते है. साक्षात् शिवस्वरूप और शिष्योंके समस्त संशय निवारण करनहारे ज्ञानमय श्रीगुरुदेवको मैं सदा वंदन करताहूं कि, जिन (शंकर) का आश्रय पानेसे द्वितीयाका चंद्रमा टेढ़ा होनेपरभी सब जगत्में वंदन किया जाता है. ऐसेही जिसको गुरुका आश्रय मिल जावे वह चाहो कुटिल क्यों न हो, गुरुप्रतापसे सबके वंदनीय हो जाता है ॥ ३ ॥ सीता और रामचंद्रजीके गुणसमूहरूप पवित्र वनमें विहार करनेवाले, अतिशय शुद्ध निर्मल ज्ञानवाले, कवीश्वर वाल्मीकि और कपीश्वर हनुमान्को प्रणाम करता हूं. वाल्मीकि तो शतकोटि रामचरित्रके वर्णन करनेसे विहार करनेवाले कहे गये. और हनुमान् जहां रामचरित्र पढ़ा

---

१ अ आ आ ३ इ ई ई ३ उ ऊ ऊ ३ ऋ ॠ ॠ ३ लृ ए ए ३ ऐ ऐ २ ओ ओ २ औ औ २ ये इकीस तो स्वर, क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म ये पचीस स्पर्श, य र ल व ये चार अंतस्थ, श ष स ह, ये ऊष्म, कुं खुं गुं घुं, ये चार यम, अनुस्वार, विसर्ग, जिह्वामूलीय, उपध्मानीय, और प्लुत लृ ३ ये तिर्सठ वर्ण पाणिनिशिक्षामें लिखे हैं. २वाच्य लक्ष्य और व्यङ्ग्य ये तीन प्रकारके अर्थ काव्यप्रकाशमें लिखे हैं. ३ शृंगार,हास्य, करुण, अद्भुत, वीर, भयानक, बीभत्स, रौद्र और शांत ये नव रस साहित्यशास्त्रोंमें प्रसिद्ध हैं और कहीं कहीं भक्तिरसको दशवां गिना है. ४ गायत्री, उष्णिक्, बृहती, पंक्ति आदि छंद वेदमें आते हैं और लोकमें शार्दूलविक्रीडित, द्रुतविलंबित, शिखरिणी आदि वर्णछंद तथा आर्या आदि मात्राछंद प्रसिद्ध हैं. तथा अनुष्टुप् आदि छंद लोकवेद दोनोंमें आते हैं. ऐसेही भाषामें कवित्त, दोहा, छप्पय, पद्धरी, कंद आदि छंद प्रसिद्ध हैं. ५ जैसे श्रद्धा और विश्वास विना परमेश्वरका ज्ञान नहीं होता ऐसे शिवपार्वतीकी कृपा विना ब्रह्मज्ञान नहीं होता.

हारकारिणीं क्लेशहारिणीम् ॥ सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम् ॥ ॥ ५ ॥ यन्मायावशवर्ति विश्वमखिलं ब्रह्मादिदेवाः सुरा यत्सत्त्वादमृषैव भाति सकलं रज्जौ यथाऽहेर्भ्रमः ॥ यत्पादप्लवमेव भाति हि भवाम्भोधेस्तितीर्षावतां वन्देऽहं तमशेषकारणपरं रामाख्यमीशं हरिम् ॥ ६ ॥ नानापुराणनिगमागमसम्मतं यद्रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि ॥ स्वान्तःसुखाय तुलसी रघुनाथगाथाभाषानिबन्धमतिमञ्जुलमातनोति ॥ ७ ॥

जाता है वहां श्रवण करनेको आते हैं इसवास्ते विहार करनेवाले कहेगये ॥ ४ ॥ रामचंद्रजीकी वल्लभा (प्रिया) सीता कि जो जगत्की उत्पत्ति, स्थिति, व संहार करती हैं तथा सर्व क्लेशोंका हरण करके सर्व प्रकारका कल्याण करती हैं यानी चार[1] प्रकारकी मुक्ति देती हैं तिनको मैं प्रणाम करताहूं ॥ ५ ॥ अपने इष्टदेव श्रीरामचंद्रजूका परात्परत्व, सर्वेश्वरत्व, जगत्कारणत्व, बंधमोक्षप्रदत्व और परम कारुणिकत्व दिखलाते उनको वंदन करते हैं—मै श्रीरामनाम परमेश्वर हरि भगवान्को प्रणाम करताहूं कि—यह सकल जगत् जिनकी मायाके आधीन है. तथा ब्रह्मादिक देवताभी जिनकी मायाके वशवर्ती हो रहे हैं और जिनके सत्त्वसे अर्थात् अधिष्ठानसत्तासे यह सब जगत् मिथ्या होनेपरभी सत्यसा प्रकाशै है. जैसे रज्जुमें सर्पकी भ्रांति होती है वह मिथ्या होनेपरभी रज्जुरूप अधिष्ठानकी सत्यतासे सत्यसी प्रकाशती है. ऐसे ईश्वररूप अधिष्ठानकी सत्यताके हेतु मिथ्या होनेपरभी यह जगत् सत्यसा भासता है. तथा जिनका चरणकमल संसाररूप सागरको पार होना चाहते हुए पुरुषोंके वास्ते एक अलौकिक नौकारूप है, उन सबके कारणभूत प्रकृतिसेभी पर श्रीरामचंद्रजीको मैं प्रणाम करताहूं ॥ ६ ॥ अनेक पुराणं[2], वेदं[3], व शास्त्रके[4] संमत जो चरित्र वाल्मीकि मुनिने अपने रामचरित्रमें कहे हैं उनका तथा दूसरे ग्रंथोमेभी[5] जो कुछ रामचरित्र वर्णन किया गया है उसको देखकर सर्व शास्त्रोंमेंसे संग्रह करके मैं तुलसीदास नाम भगवानका भक्त अपने अंतःकरणको प्रसन्न करनेके लिये रामचंद्रजीकी कथारूप यह अतिसुंदर भाषाका निबंध (ग्रंथ) निर्माण करताहूं ॥ ७ ॥ मंगलाचरणके श्लोक देववाणीमें लिखनेसे कदाचित् कविने यह बात दिखायी होवे तो कुछ असंभव नहीं कि—मैंने जो यह भाषाका ग्रंथ लिखा है इससे लोगोंके मनमें ऐसी भ्रांति न हो जावे कि तुलसीदास संस्कृत कविता नहीं जानते थे. अथवा देववाणीको मंगलरूप जानकर प्रारंभमें लिखी हो तो भी संभव है.*

सोरठा—जेहि सुमिरत सिधि होइ, गणनायक करिवरबदन ॥
करौ अनुग्रह सोइ, बुद्धिराशि शुभगुणसदन ॥ १ ॥

---

१ सालोक्य, सारूप्य, सायुज्य और सामीप्य, भगवान्के साथ एक लोकमें रहना यह सालोक्य, भगवान्के समानरूप हो यह सारूप्य, भगवानमें मिल जाना यह सायुज्य, और भगवानके समीपमें रहना यह सामीप्य मुक्ति कहलाती है. २ पुराण अठारह हैं. तिनमें छः पुराण सात्त्विक, छः राजस और छःतामस हैं. सात्त्विक पुराण—वैष्णव, नारदीय,भागवत, गरुडपुराण, पद्मपुराण और वाराह. राजसपुराण—ब्रह्मांड, ब्रह्मवैवर्त, मार्कंडेय, भविष्य, वामन और ब्राह्म. तामसपुराण—मत्स्य, कूर्म, लिंगपुराण, शिवपुराण, स्कंदपुराण और अग्निपुराण. ३ वेद ४—ऋक्, यजुष्, साम और अथर्वन्. ४ आगम शास्त्र छः—मीमांसा, वेदांत, न्याय, वैशेषिक, योग और सांख्य. ५ और दूसरे ग्रंथ तंत्र आदि. तंत्र—नारदपंचरात्र, ब्रह्मयामल, विष्णुयामल, रुद्रयामल इत्यादि. इतिहास—महाभारत औरभी उपपुराण आदि जानना. * अथवा भाषाके षट्लक्षणोंमें संस्कृतभी चाहिये.

मूक होइ बाचाल, पंगु चढ़ै गिरिवर गहन ॥
जासु कृपा सुदयाल, द्रवौ सकलकलिमलदहन ॥ २ ॥

जिनका स्मरण करतेही कार्यसिद्धि हो जाती है तथा जो बुद्धिके भांडार व श्रेष्ठ गुणोंके धाम है वे गजराजके सदृश मुखवाले गणपति हमपर कृपा करो ॥ १ ॥ जिन परमदयालुकी कृपासे मूक पुरुष विविध प्रकारकी वाणीसे संपन्न हो जाता है. जैसे ध्रुव. तथा पंगु पुरुष जिनकी कृपासे अतिगहन उत्तम पर्वतपर चढ़ जाता है. जैसे सूर्यके सारथी अरुण. वे संपूर्ण कलिकालके मलको जलानेवाले हरि हमपर कृपा करो ॥ २ ॥

नीलसरोरुहश्याम, तरुण अरुणबारिजनयन ॥ *
करौ सो मम उर धाम, सदा क्षीरसागरशयन ॥ ३ ॥ *
कुंदइंदुसम देह, उमारमण करुणाअयन ॥ *
जाहि दीनपर नेह, करौ कृपा मर्दनमयन ॥ ४ ॥ *

जो श्याम कमलके समान श्याम बरन हैं. तथा जिनके नवीन रक्त कमलके समान अरुण नयन हैं. और जो सदा क्षीरसागरके बीच शयन करते हैं वे हरि भगवान् मेरे हृदयमें निवास करें। ॥ ३ ॥ कामदेवको मर्दन करनेवाले महादेव कि जिनका शरीर कुंदके पुष्पके तथा चंद्रमाके समान शुभ्र (सफेद) है. तथा जिनका दीनजनोंपर अत्यंत स्नेह है, वे करुणाके आस्पद पार्वतीरयण हमपर कृपा करो ॥ ४ ॥

बंदौं गुरुपदकंज, कृपासिंधु नररूप हरि ॥ *
महामोहतमपुंज, जासु बचन रविकरनिकर ॥ ५ ॥ *

गुरु कि जिनके बचन महामोहरूप अंधकारपटलके लिये साक्षात् सूर्यकी किरणोंके समूहरूप है उन कृपासिंधु मनुष्यमूर्ति हरिके चरणकमलोंको मैं प्रणाम करता हूं ॥ ५ ॥

वंदौं गुरुपदपद्मरागा ॥ सुरुचि सुवास सरस अनुरागा ॥ १ ॥ *
अमियमूरिमय चूरण चारू ॥ शमन सकलभवरुजपरिवारू ॥ २ ॥ *

गुरुको वंदन कर उनके चरणोंकी रजको नमस्कार करते है, कि मैं गुरुके चरणकमलोंकी रजको प्रणाम करता हूं. कैसी है वो धूलि कि जिसकी सुन्दर रुचि कहे इच्छा है, और कमलपक्षमें रुचि कहे कांति, जानना. सुन्दर जिसकी वास कहे संस्कार है. और कमलपक्षमें वास कहे गंध जानना. फिर कैसी है कि रस कहे प्रीति संयुक्त है. कमलपक्षमें रससंयुक्त जानना, और अनुराग कहे स्नेहसहित है. कमलपक्षमें अनुराग कहे अरुणता लिये हैं ॥ १ ॥ फिर कैसी है कि जो मानों तमाम संसाररूप रोगके दलका नाश करनेके लिये साक्षात् सजीवन जड़का सुन्दर चूर्ण है. जैसे सजीवनके चूर्णसे रोग नष्ट हो जाते हैं ऐसे गुरुचरणकी रजसे भवरोग मिट जाता है ॥ २ ॥

सुकृत शंभुतन बिमल बिभूती ॥ मंजुल मंगलमोदप्रसूती ॥ ३ ॥ *
जनमनमंजुमुकुरमलहरणी ॥ किये तिलक गुणगणबशकरणी ॥ ४ ॥ *

और सुकृतरूप महादेवके शरीरकी विमल विभूतिरूप है. जैसे महादेव विभूतिसे शोभायमान लगते हैं ऐसे गुरुचरणरजसे पुण्य शोभायमान लगते हैं. तथा सुन्दर मंगल और आनन्दकी जन्मभूमिही है ॥ ३ ॥ और भक्तलोगोंके मनरूप दर्पणके मलको दूर करनेके लिये खड़िया मिट्टीके समान है. जैसे आईना चाक मिट्टीसे साफ होता है ऐसे लोगोंके मन इससे निर्मल हो जाते है. जिसका तिलक लगानेसे सब गुणगण वश हो जाते हैं. जैसे वशीकरण चूर्णका तिलक लगानेसे सब लोग वश हो जाते हैं ॥ ४ ॥

श्रीगुरुपदनखमणिगणजोती ॥ सुमिरत दिव्य दृष्टि हिय होती ॥ ५ ॥ *
दलन मोहतम हंसप्रकासू ॥ बड़े भाग्य उर आवहिं जासू ॥ ६ ॥ *

नखोंका वर्णन करते हैं जो मनुष्य श्रीगुरुचरणके नखरूप मणिगणकी ज्योतिका मनमें स्मरण करता है उस मनुष्यके हृदयमें दिव्य दृष्टि प्राप्त होजाती है ॥ ५ ॥ श्रीगुरुचरणको सूर्यरूपसे वर्णन करते है. कि इस चरणरूप सूर्यका प्रकाश जिसके हृदयमें आ जाता है उसका मोह और अज्ञान तुरंत नष्ट होजाता है, परंतु आता उसीके हृदयमें है कि जिसके बड़े भाग्य हैं ॥ ६ ॥

उघरहिँ बिमल बिलोचन हियके ॥ मिटहिँ दोष दुख भवरजनीके ॥ ७ ॥
सूझहिँ रामचरित मणि माणिक ॥ गुप्त प्रकट जहँ जो जेहि खानिक ॥ ८ ॥

इस सूर्यके उदय होतेही हृदयके निर्मल नेत्र खुल जाते हैं और संसाररूप रात्रीके दुःख और दोष मिट जाते हैं ॥ ७ ॥ और रामचंद्रजीके चरित्ररूप मणि तथा माणिक जो जहां जिस खानमें गुप्त और प्रगट है वे सब दीखने लग जाते हैं ॥ ८ ॥

दोहा–यथा सुअंजन आँजि दृग, साधक सिद्ध सुजान ॥
कौतुक देखहि शैल बन, भूतल भूरिनिधान ॥ १ ॥

जैसे सुजान साधक लोग सिद्ध होनेके लिये नेत्रोंमें सुंदर सिद्धांजन आँजके पर्वत, वन और पृथ्वीके अनेक स्थलोंमें अनेक प्रकारके कौतुक देखते हैं. ऐसे जो मनुष्य गुरुपदरजको नेत्रोंमें लगाता है उसे रामचंद्रजीके पर्वत कहे वेद पुराणादिमेंके, वन कहे संसारमेंके और पृथ्वी कहे संतसभामेंके सारे चरित्र दीखने लग जाते है ॥ १ ॥

गुरुपदरज मृदु मंजुल अंजन ॥ नयनअमिय दृगदोषबिभंजन ॥ १ ॥
तेहि करि बिमल बिबेक बिलोचन ॥ बरणौं राचमरित भवमोचन ॥२॥

श्रीगुरुनारायणके चरणकमलोंकी रज स्वच्छ नयनामृत अंजनके समान है; क्योंकि उससे दृष्टिके सर्वदोष निवृत्त होजाते हैं ॥ १ ॥ अतएव मैंभी उससे अपने ज्ञानरूपी नेत्रको साफ करके संसारसे छुड़ानेवाला रामचरित वर्णन करता हूं ॥ २ ॥

बंदौं प्रथम महीसुरचरणा ॥ मोहजनित संशय सब हरणा ॥ ३ ॥
सुजनसमाज सकलगुणखानी ॥ करौं प्रणाम सप्रेम सुबानी ॥ ४ ॥

मैं प्रथम ब्राह्मणोंके चरणारविंदोंको प्रणाम करता हूं कि जो मोहजनित सकल संदेहोंको

१ (शं.) श्रीगोसांईजीनें अनेक वन्दना करके पुनः 'बन्दौं प्रथम महीसुर चरणा' क्यों कहा; (उ.) वर्णोंमें प्रथम कही आदि ब्राह्मण है !

त्वरित दूर कर देते है ॥ ३ ॥ फिर सर्व गुणोंकी खानि श्रीसत्पुरुषोंकी समाजको प्रीतिके साथ सुंदर वाणीसे स्तुति करके प्रणाम करता हूं ॥ ४ ॥

साधुचरित शुभ सरिस कपासू ॥ निरस विशद गुणमय फल जासू॥५॥
जो सहि दुख परछिद्र दुरावा ॥ बंदनीय जेहि जग यश पावा ॥ ६ ॥

सत्पुरुषोंका चरित्र सर्वोत्तम और कपासके सदृश है; क्योंकि जैसे कपासका फल रसरहित, उज्ज्वल और गुणमय यानी तंतुमय है. ऐसे सत्पुरुषोंका चरित्रभी निरस कहे शुद्धवैराग्ययुक्त, विशद कहे शुद्धज्ञानमान् और गुणमय कहे सर्वगुणसंपन्न है ॥ ५ ॥ जैसे कपास कातना, तनना आदि अनेक प्रकारके दुःख सहकर दूसरोंके छिद्र यानी इंद्रियोंकी निर्लज्जताको ढकतीहै ऐसे संतलोगभी अनेक प्रकारके दुःख सहकर दूसरोंके छिद्र यानी अवगुण छिपाते है. और इसीसे जिन्होंने जगतमें सर्वोत्तम यश पाया है तिन्हें मैं वंदन करताहूं ॥ ६ ॥

मुदमंगलमय संतसमाजू ॥ ज्यों जग जंगम तीरथराजू ॥ ७ ॥
रामभक्ति जहँ सुरसरिधारा ॥ सरस्वति ब्रह्मविचारप्रचारा ॥ ८ ॥ *

सत्पुरुषोंकी समाज परम आनंदमय और मंगलरूप है, फिर कैसी है कि मानों जगतमें चलता फिरता दूसरा तीर्थराज यानी प्रयागही है ॥ ७ ॥ जैसे प्रयागमें त्रिवेणी बहती है ऐसे यहां रामचंद्रजीकी भक्ति है सो तो गंगाकी धारा है. और ब्रह्मविचारका प्रचार है सो सरस्वतीका प्रवाह है ॥ ८ ॥

विधिनिषेधमय कलिमलहरणी ॥ कर्मकथा रविनंदिनि बरणी ॥ ९ ॥
हरिहरकथा बिराजति बेनी ॥ सुनत सकल मुदमंगलदेनी ॥ १० ॥ *

विधिनिषेधमय कर्मकांडकी कथा है सोही इसमें कलिकालके मलको मिटानेवाली यमुनारूपसे वर्णन की जाती है ॥ ९ ॥ जिसमें दो तीन चार नदियां और मिल जायँ उसे वेणी कहते हैं. सो प्रयागमें जो प्रवाह है उसकी त्रिवेणीसंज्ञा है. संतसमाजमें वेणी क्या है सो कहते हैं कि हरि और हरकी जो कथा है सोही यहां वेणी विराजमान है कि जिसके सुननेसे सर्व प्रकारके मंगल और आनन्द प्राप्त हो जाते है ॥ १० ॥

बट विश्वास अचल निजधर्मा ॥ तीरथराज समाज सुकर्मा ॥ ११ ॥
सबहिँ सुलभ सबदिन सबदेशा ॥ सेवत सादर शमन कलेशा ॥ १२ ॥

यहां अपने धर्ममें जो दृढ़ विश्वास है सोही अक्षय वट है यह सुन्दरकर्म करनेवाला संतसमाजरूप तीर्थराज तो ॥ ११ ॥ सबको सब दिन सब देशोंमें अतिसुलभ है और प्रयागराजका प्राप्त होना तो बड़ा कठिन है. विना भाग्य प्राप्त नहीं होता. जैसे प्रयागराजके सेवनसे सर्व क्लेश कटजाते है ऐसे आदरके साथ सेवन करनेसे यह सर्व क्लेशोंको मिटा देता है ॥ १२ ॥

अकथ अलौकिक तीरथराऊ ॥ देइ सद्य फल प्रगट प्रभाऊ ॥ १३ ॥

अतएव सन्तसमाजरूप तीर्थराज एक अकथनीय और अलौकिक तीर्थ है. जो इसके निकट जाता है उसको यह उसीक्षण फल देता है, इसकी यह महिमा प्रसिद्धही है ॥ १३ ॥

दोहा–सुनि समुझहिँ जन मुदितमन, मज्जहिँ अति अनुराग ॥ ❋
लहहिँ चारिफल अछततनु, साधुसमाज प्रयाग ॥ २ ॥ ❋

जो लोग प्रसन्नचित्त होकर बड़े अनुरागके साथ प्रयागराजमें जाकर स्नान करते है वे तो मरनेके अनन्तर मोक्षको पाते है और जो इस संतसमाजरूप प्रयागमें जाकर सुनते है, समझते हैं कहे मनन करते है, मुदित मन कहे निदिध्यासन करते है. अति अनुराग कहे साक्षात् होकर मज्जहिं कहे मग्न हो जाते है वे इसी शरीरके विद्यमान रहते इसी शरीरसे चारों फल यानी धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष वा +सालोक्य, सार्ष्टि, सामीप्य और सारूप्य इन चतुर्विध मोक्षोंको प्राप्त हो जाते है ॥ २ ॥

मज्जनफल देखिय ततकाला ॥ काक होहिँ पिक बकहु मराला ॥ १ ॥ ❋
सुनि आश्चर्य करहि जनि कोई ॥ सतसंगतिमहिमा नहिँ गोई ॥ २ ॥ ❋

संतसमाजमें मज्जन यानी मग्न होनेका फल तुरंत देख लीजिये, कव्वा कोकिला हो जाता है और बगुला हंस हो जाता है ॥ १ ॥ इस बातको सुनकर किसी आदमीको आश्चर्य नहीं करना चाहिये; क्योंकि सत्संगतिकी महिमा कहीं छिपी हुई नहीं है ॥ २ ॥

वालमीकि नारद घटयोनी ॥ निजनिजमुखन कही निजहोनी ॥ ३ ॥ ❋
जलचर थलचर नभचर नाना ॥ जे जड़ चेतन जीव जहाना ॥ ४ ॥ ❋

देखो, बाल्मीकि कौन थे और किस दरजेको पहुँचे. नारद कौन थे और कैसे हुए. अगस्त्यमुनि कौन थे और कैसे प्रबल हुए. सो इन लोगोंने अपनी २ होनी अपने २ मुखसे कही है. वाल्मीकि मुनिने अपनी होनी रामचन्द्रजीसे कही कि मैं पहले बहलिया था और मुशाफिरोंको लूट कुटुम्बका पोषण करताथा, एकदिन सप्तर्षि आ निकले उनको मारने चला तो उन्होंने कहा कि तू अपने घर जाकर यह तो पूंछ आ कि मैं तुम्हारे वास्ते पाप करता हूं सो तुम पापमें मेरे साझी होवोगे या नहीं? घरवालोंने जवाब दिया कि पापमें साझी कौन होवे? तब तुरंत इसने आकर ऋषियोंको प्रणाम किया और कहा कि महाराज! मुझको इस पापसे बचाओ, तब ऋषियोंने मुझको राममन्त्रका उपदेश किया, परंतु मुझ जड़बुद्धिको वैसा स्मरण न रहा जिससे "मरामरा" ऐसा उलटा मन्त्र जपने लगा. उसीके प्रभावसे मैं आजदिन प्राचेतस हुवा हूं. और मेरे घर साक्षात् परब्रह्म पधारे हैं. नारदजीने अपनी होनी वेदव्यासजीसे कही है कि–मैं पूर्वजन्ममें दासीपुत्र था वहां सत्संगति हो जानेसे मैं साक्षात् ब्रह्माजीका पुत्र हुआ हूं. अगस्त्यजीने महादेवसे कहा है कि–हमारे पिता मित्रावरुणके रंभा अप्सराके देखनेसे चित्तमें विकार हुआ जिससे वीर्य स्खलित हुआ. वह उन्होंने घटमें धर रक्खा उससे मेरी उत्पत्ति है. जिससे मैं घटजन्मा कहलाता हूं. ऐसा निकृष्टजन्मा होनेपरभी मैं सत्संगतिके प्रभावसे महात्मा मुनि हुआ हूं ॥ ३ ॥ जगत्में जो जड़ और चेतन नानाप्रकारके जलचर, स्थलचर और आकाशचारी जीव है ॥ ४ ॥

मति कीरति गति भूति भलाई ॥ जब जेहि जतन जहां जेहिँ पाई ॥ ५ ॥
सो जानब सतसंगप्रभाऊ ॥ लोकहु बेद न आन उपाऊ ॥ ६ ॥ ❋

+ सालोक्य आदि मुक्तियोंके अर्थ प्रथम लिख आये हैं. १ भगवान्के जैसा ऐश्वर्य पाना.

और जिसने जब जहां जिस उपायसे जो बुद्धि, कीर्ति, अच्छी गति, संपदा और भलाई पायी है ॥ ५ ॥ वह सब सत्संगका प्रताप जानो, क्योंकि लोक और वेदमें इसके सिवाय दूसरा कोई उपाय नहीं है ॥ ६ ॥

बिनु सतसंग बिबेक न होई ॥ रामकृपाबिनु सुलभ न सोई ॥ ७ ॥ *
सतसंगति मुदमंगलमूला ॥ सोइ फल सिधि सबसाधन फूला ॥ ८ ॥ *

सत्संगके विना ज्ञान नहीं होता और प्रभुकी कृपा विना वह सत्संगति एकाएक मिल नहीं सक्ती ॥ ॥ ७ ॥ सत्संगति सब मंगल और आनन्दरूप वृक्षका मूल यानी जड़ है. सिधि यानी सत्पुरुषोंका जो सिद्धान्त है सोही इसका फल है, और जो मोक्षके साधन हैं सोही फूल हैं ॥ ८ ॥

शठ सुधरहिँ सतसंगति पाई ॥ पारस परसि कुधातु सुहाई ॥ ९ ॥ *
बिधिबश सुजन कुसंगति परहीं ॥ फणिमणिसमनिजगुण अनुसरहीं ॥ १० ॥

जैसे लोहा पारसको परस सुन्दर धातु यानी कंचन होजाता है, ऐसे सत्संगति पाकर शठ पुरुष सुधर जाते हैं ॥ ९ ॥ कदाचित् दैवयोगसे सुजन पुरुष कभी कुसंगतिमें जा पड़ते है तोभी सर्पकी मणिके समान अपने गुणकोही धारण करते है. जैसे सर्पमें विष रहनेपरभी मणि विषको नहीं लेती ऐसे सुजन पुरुष दुष्टोंके अवगुण धारण नहीं करते ॥ १० ॥

बिधि हरि हर कबि कोबिद बानी ॥ कहत साधुमहिमा सकुचानी ॥ ११ ॥
सो मोहिसँन कहिजात न कैसे ॥ शाकवणिक मणिगणगुण जैसे ॥ १२ ॥

सत्पुरुषोंकी महिमा ऐसी अपार है कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश और कवि (वाल्मीकि) कोविद (बृहस्पति) और सरस्वतीभी उसको कहते सकुचाते है ॥ ११ ॥ वह महिमा मैं किसीकदर कह नहीं सकता. जैसे कि साग बेचनेवाला बनिया रत्नके गुण नहीं कह सकता ॥ १२ ॥

दोहा—बंदौं संत समानचित, हित अनहित नहिँ कोउ ॥ *
अंजलिगत शुभ सुमन जिमि, सम सुगंध कर दोउ ॥ ३ ॥ *
संत सरलचित जगतहित, जानि सुभाव सनेहु ॥ *
बालबिनय सुनि करि कृपा, रामचरणरति देहु ॥ ४ ॥ *

सबमें समदृष्टि रखनेवाले सत्पुरुषोंको मैं प्रणाम करता हूं; कि जिनके हित और अनहित यानी भला बुरा कुछभी नहीं है. जैसे अंजलिमें रहे हुए सुगंधित पुष्प दोनों हाथोंको बराबर सुगंधित करते है, एकको ज्यादा और एकको कम नहीं करते. ऐसे सत्पुरुष सबको एकसा देखते हैं ॥ ३ ॥ तुलसीदासजी प्रार्थना करते है कि—हे सत्पुरुषो ! मैं आपको सरल स्वभाव, जगतके हितकारी और स्वाभाविक स्नेह रखनेवाले जानकर विनय करता हूं सो मुझ अज्ञके विनयको सुनकर मुझपर कृपा करो और मुझे रामचंद्रके चरणोंमें प्रीति देओ ॥ ४ ॥

बहुरि बंदि खलगण सतिभाए ॥ जे बिनु काज दाहिने बाँए ॥ १ ॥ *
परहित हानि लाभ जिन्हकेरे ॥ उजरे हर्ष बिषाद बसेरे ॥ २ ॥ *

सत्पुरुषोंको वंदन करके अब दुष्टजनोंको प्रणाम करते हैं; कि मैं फिर सत्यभावसे खलसमूह-

को वंदन करता हूं; कि जो निष्कारण दाहिने कहे मित्रोंके लियेभी बाँए कहे टेढ़े हो जाते है ॥ १ ॥ जो दूसरोंके नुकशानको तौ अपना लाभ और फायदेको अपना नुकशान मानते है. किसीका घर उजार होता है तो वे लोग बड़े खुश होते हैं और बस जाता है तौ बड़ा रंज मानते है॥ २ ॥

हरिहरयशराकेशराहुसे ॥ परअकाज भट सहसबाहुसे ॥ ३ ॥ ❋
जे परदोष लखहिं सहसाखी ॥ परहित घृत जिनके मन माखी ॥ ४ ॥ ❋

शिव और विष्णुके सुयशरूप चंद्रमाके लिये तौ वे राहुके तुल्य है और दूसरोंका काम बिगाड़नेमें वे सहस्रबाहु (कार्तवीर्य) के समान सुभट है ॥ ३ दूसरोंके दोषोंको देखनेके लिये वे सहस्राक्ष यानी इंद्ररूपही है. और दूसरोंका हित है सो तौ उनके मनरूप मक्खीके लिये मानों घृतही है.जैसे मक्खी घृतसे मरजाती है ऐसे परहित देखकर उनका मन मुरझा जाता है ॥ ४ ॥

तेज कृशानु रोष महिषेशा ॥ अघ अवगुणधनधनिक धनेशा ॥ ५ ॥ ❋
उदयकेतु अनहित सबहीके ॥ कुंभकर्णसम सोवत नीके ॥ ६ ॥ ❋

जिनका तेज अग्निके समान अति प्रचंड और क्रोध यमराजाके समान अतिदारुण है. जो पाप और अवगुणरूप धनके तो साक्षात कुबेरही हैं ॥ ५॥ और सब लोगोंके वास्ते जिनका उदय केतुके उदयके समान है. अर्थात जैसे केतुके उदयमें अवश्य उपद्रव होता है ऐसे खलोंके उदयमें जरूर उपद्रव होता है. अतएव उनलोगोंका तौ कुंभकर्णकी नाईं सदा सोते पड़ा रहनाही अच्छा है ॥ ६ ॥

परअकाजलगि तनु परिपरहीं ॥ जिमि हिमउपल कृषीदल गरहीं ॥ ७ ॥❋
बंदौं खल जस शेष सरोषा ॥ सहसबदन बर्णै परदोषा ॥ ८ ॥ ❋

जैसे पाला खेतीका नाश करनेके वास्ते आपभी गल जाता है पर खेतीका जरूर विध्वंस कर देता है. ऐसे खल लोगभी पराये बिगाड़के वास्ते अपना शरीर त्याग देते है, पर पराया बिगाड़ जरूर करते है ॥७॥शेषजीके सरीखा अति उत्कृष्ट जिनका क्रोध है ऐसे शेषजीके समान गुणवाले खललोगोंको मैं वंदन करताहूं. शेषजी तौ रामचन्द्रजीके गुण वर्णनके लिये सहस्र मुख धारण करते हैं और खल लोग पराया दोष कहनेके लिये हजार मुखकी सामर्थ्य रखते हैं ॥ ८ ॥

पुनि प्रणवौं पृथुराजसमाना ॥ परअघ सुनै सहसदश काना ॥ ९ ॥ ❋
बहुरि शक्रसम बिनवौं तेहीं ॥ संतत सुरानीकहित जेहीं ॥ १० ॥ ❋
वचनवज्र जेहिं सदा पियारा ॥ सहसनयन परदोष निहारा ॥ ११ ॥ ❋

फिर पृथुराजाके समान गुणवाले खल लोगोंको मैं वंदन करताहूं कि जो परनिंदा सुननेके लिये दश सहस्र कानोंकी सामर्थ्य रखते है, पृथुनेभी भगवान्का चरित्र सुननेके लिये दश हजार कान भगवान्से माँगे थे, यह कथा भागवतके ४ स्कंधमें है ॥ ९ ॥ इंद्रके सदृश जो खल लोग हैं उनसे मैं विनती करता हूं. इंद्र जो है उनको सदा सुर कहे देवताओंकी अनीक कहे सेना अति प्रिय है. और खल लोगोंको सुरा कहे मदिराका अनीक कहे समूह अतिप्रिय है ॥ १० ॥ जैसे इंद्रको वज्र सदा प्रिय है ऐसे दुष्ट पुरुषोंको वचनरूप वज्र सदा प्रिय लगता है.और खल लोग पराया दोष देखनेमें सहस्रनयन यानो इंद्ररूप हैं ॥ ११ ॥

दोहा-उदासीन अरि मित्रता, सुनत जराहिंखलरीति ॥ ❋
जानु पाणियुग जोरिकरि, बिनती करौं सप्रीति ॥ ५ ॥ ❋

खल लोगोंकी यह रीति है कि- जब वे उदासीन, बैरी वा मित्र हर किसीका भला सुनते है तब सुनतेही अपने आप जल जाते है. अतएव दोनों हाथ पैर जोड़ कर प्रीतिके साथ मैं उनसे प्रार्थना करता हूं ॥ ५ ॥

मैं आपनि दिशि कीन्ह निहोरा ॥ तिन निजओर न लाउब भोरा ॥ १ ॥
बायस पालिय अतिअनुरागा ॥ होहि निरामिष कबहुँ कि कागा ॥ २ ॥ ❋

मैंने तो अपनी ओरसे अच्छी तरह निहोरे कर लिये है पर वे तो भूलकरभी अपनी ओर नहीं लावेंगे अर्थात् मेरी विनती अंगीकार नहीं करेंगे ॥ १ ॥ चाहो कव्वेको भले बड़ी प्रीतिके साथ पालो पर क्या वह कव्वा कभी निरामिष हो सक्ता है, यानी महादुर्गंधि सड़े जानवरके मांसका खाना छोड़ देगा ? कभी नहीं ॥ २ ॥

बंदौं संत असज्जन चरणा ॥ दुखप्रद उभय बीच कछु बरणा ॥ ३ ॥ ❋
बिछुरत एक प्राण हरि लेहीं ॥ मिलत एक दारुण दुख देहीं ॥ ४ ॥ ❋

मैं सत्पुरुष और खल दोनोंके चरणोंको प्रणाम करता हूं. यद्यपि वे दोनों दुःखदायी है तथापि उन दोनोंके बीचमे कुछ फर्क है ॥ ३ ॥ एक यानी सत्पुरुष तो बिछुरनेके समय प्राण ले लेते है और एक यानी खल मिलनेके समय महादारुण दुःख देते है ॥ ४ ॥

उपजहिं एकसंग जलमाहीं ॥ जलज जोंक जिमि गुण बिलगाहीं ॥ ५ ॥ ❋
सुधा सुरासम साधु असाधू ॥ जनक एक जग जलधि अगाधू ॥ ६ ॥ ❋

यद्यपि कमल और जोंक दोनों जलमें एक साथ पैदा होते है पर जैसे उनके गुण अलग अलग है ऐसे सत्पुरुष और खलोंके गुण अलग अलग है ॥ ५ ॥ यद्यपि अमृत और मदिराका पिता अगाध समुद्र एकही है तथापि जगत्में उनके गुण अलग अलग है, ऐसे साधु और असाधुमें फर्क है. साधु अमृतके समान है और असाधु मदिराके तुल्य है ॥ ६ ॥

भल अनभल निज निज करतूती ॥ लहत सुयश अपलोक बिभूती ॥ ७ ॥ ❋
साधु सुधाकर सुरसरि साधू ॥ गरल अनल कलिमलसरि व्याधू ॥ ८ ॥ ❋
गुण गवगुण जानत सबकोई ॥ जो जेहि भाव नीक तेहि सोई ॥ ९ ॥ ❋

यद्यपि भले और बुरे दोनों अपनी अपनी करतूतिसे एकही साथ पैदा हुए हैं तथापि जो भले है वे तो सुयशकी विभूतिको प्राप्त होते हैं और जो बुरे हैं वे अपयशकी विभूतिको प्राप्त होते है ॥ ७ ॥ अमृत, चन्द्रमा, गंगा और साधु ये तो गुणरूप हैं और विष, अग्नि, कर्मनाशानदी, और व्याध (शिकारी) ये अवगुणरूप है ॥ ८ ॥ सो गुण अवगुणको सबकोई जानते हैं, परंतु उनमेंसे जिसको जो अच्छा लगता है उसके लिये वोही अच्छा है ॥ ९ ॥

दोहा-भलो भलाई पै लहहि, लहहि निचाई नीच ॥ ❋
सुधा सराहिय अमरता, गरल सराहिय मीच ॥ ६ ॥ ❋

जो भला है वो भलाई करके ही शोभा पाता है और जो नीच है वो बुराईसेही शोभा पाता है. देखो, अमृत तो अमर करनेसे सराहा जाता है और जहर तत्काल मारनेसे सराहा जाता है ॥ ६ ॥

खल अघ अगुण साधु गुणगाहा ॥ उभय अपार उदधिअवगाहा ॥१॥❀
तेहिते कछु गुण दोष बखाने ॥ संग्रह त्याग न बिनु पहिंचाने ॥ २ ॥❀

खल लोगोंने तो समुद्रकी नांई अघ और अवगुण ग्रहण किये हैं और साधु पुरुषोंने समुद्रवत् दया आदि शुभगुण धारण किये हैं इसीसे ये दोनों गुण और अवगुणके अथाह अपार समुद्र है ॥ १ ॥ और इसीसे मैंने कुछ गुण दोष बतलाये है; क्योंकि पहिंचाने विना गुण दोषका त्याग और संग्रह नहीं हो सक्ता ॥ २ ॥

भलेउ पोंच सब विधि उपजाये ॥ गणि गुण दोष बेद बिलगाये ॥३॥❀
कहहिँ बेद इतिहास पुराना ॥ विधिप्रपंच गुणअवगुणसाना ॥ ४ ॥❀

भले और बुरे सब विधाताने पैदा किये है. और उनके गुण दोषका निश्चय करके वेदने उनको अलग २ किया है ॥ ३ ॥ यह बात वेद, पुराण और इतिहास सब कहते है कि-विधाताका सब प्रपंच गुण अवगुणसे मिला हुआ है ॥ ४ ॥

दुख सुख पाप पुण्य दिन राती ॥ साधु असाधु सुजाति कुजाती ॥५॥❀
दानव देव ऊँच अरु नीचू ॥ अमिय सजीवनि माहुर मीचू ॥ ६ ॥ ❀

जैसे सुख और दुःख, पुण्य और पाप, रात और दिन, साधु और असाधु, सुजाति और कुजाति ॥ ॥ ५ ॥ देवता और दानव, ऊंच और नीच, अमृत और जहर, संजीवनी और मृत्यु ॥ ६ ॥

माया ब्रह्म जीव जगदीशा ॥ लक्ष अलक्ष रंक अवनीशा ॥ ७ ॥ ❀
काशी मग सुरसरि क्रमनाशा ॥ मरु मालव महिदेव गवाशा ॥८॥ ❀
स्वर्ग नरक अनुराग बिरागा ॥ निगमागम गुणदोष बिभागा ॥९॥ ❀

माया और ब्रह्म, जीव और परमेश्वर, लक्ष्य और अलक्ष्य, दरिद्री और राजा, ॥ ७ ॥ काशी और मगध देश, गंगा और कर्मनाशा, मरुदेश (मारवाड़) और मालवदेश, ब्राह्मण और चांडाल ॥ ८ ॥ स्वर्ग और नरक, प्रीति और वैराग्य, यह गुण दोषका विभाग वेद और शास्त्रोंने अच्छीतरह दिखाया है जिसे सब लोग जानते है ॥ ९ ॥

दोहा-जड़ चेतन गुणदोषमय, विश्व कीन्ह करतार ॥ ❀
संत हंस गुण गहहिँ पय, परिहरि बारिबिकार ॥ ७ ॥ ❀

यद्यपि विधाताने यह जड़ चेतनरूप जगत् गुणदोषमय बनाया है तथापि संतलोग तो जैसे हंस जलको छोड़कर दूधको ग्रहण करते हैं ऐसे दोषको तजकर गुणही ग्रहण करते हैं ॥ ७ ॥

अस बिवेक जब देहिँ बिधाता ॥ तब तजि दोष गुणहिँ मन राता ॥१॥❀
काल स्वभाव कर्म बरिआई ॥ भलेउ प्रकृतिबश चूक भलाई ॥ २ ॥ ❀

जब विधाता कृपाकर ऐसा विवेक देवेगा तब दोषोंका तज कर मन गुणमें आसक्त हो जायगा ॥ ॥ १ ॥ कदाचित् काल कर्म और स्वभावके बलात्कारसे भले आदमीभी प्रकृतिबश होकर चूक जाते हैं ॥ २ ॥

सो सुधारि हरिजन जिमि लेहीं ॥ दलि दुख दोष बिमल यश देहीं ॥ ३ ॥
खलउ करहिँ भल पाइ सुसंगू ॥ मिटहिँ न मलिन स्वभाव अभंगू ॥ ४ ॥

तो हरिभगवान्के भक्त उस भूलको सुधार लेते है और उनके दोष व दुःखको टालकर उनको अति उज्ज्वल यश देते है. जैसे कि हरि भगवान् अपने भक्तलोगोंकी भूलको सदाकालसे सुधारते आये हैं और उनको यश देते आये है. अथवा उस भूलको वे लोग अपने आप सुधार लेते है जैसे हरिभक्त लोग अपनी भूलको अपनेआप सुधार लेते है और फिर दोष व दुःखोंको टालकर बिमल यश पाते है ॥ ३ ॥ चाहे खल लोगभी सुसंगति पाकर भले अच्छे काम करें पर उनका असली मैलापन तो कभी मिट नहीं सक्ता ॥ ४ ॥

लखि सुबेष जगबंचक जेऊ ॥ बेषप्रताप पूजियत तेऊ ॥ ५ ॥ *
उघरहिँ अंत न होइ निबाहू ॥ कालनेमि जिमि रावण राहू ॥ ६ ॥ *

जो धूर्तशिरोमणि सुन्दर वेष बनाये दीख पड़ते हैं और उस वेषके प्रभावसे पूजेभी जाते है ॥ ५ ॥ पर आखिर वह कपट उघरही जाता है, अंततक नहीं निबह सक्ता. जैसे कालनेमि, राहु और रावण यद्यपि इन्होंने छलसे साधुका वेष बना लियाथा पर निर्बाह नहीं हुआ. तुर्तही कपट खुल गया. हनूमानजी संजीवनी लेने गये तब कालनेमिने हनुमानको छलनेके लिये संन्यासीका रूप धारण किया था पर हनुमानजीने उसके कपटको जान लिया तिसीसे उसे मारडाला. राहु अमृत पान करनेके लिये देवताओंकासा वेष बनाकर सूर्यचंद्रके बीचमें जा बैठाथा, जब अमृत पीने लगा तब सूर्यचंद्रके इशारा करनेसे प्रभुने सुदर्शनचक्रसे उसका सिर उड़ा दिया. रावणने सीताहरणके समय पंचवटीमे संन्यासीका रूप धारण किया था पर आखिर उसको अपना राक्षस रूप धारण करना पड़ा॥ ६ ॥

किये कुबेष साधुसनमानू ॥ जिमि जग जामवंत हनुमानू ॥ ७ ॥ *
हानि कुसंग सुसंगति लाहू ॥ लोकहु बेद बिदित सबकाहू ॥ ८ ॥ *

साधु पुरुष चाहे कुवेष बनाये रहे तोभी उनका तो जगत्में सन्मानही होता है जैसे जाम्बवान् और हनूमान् ॥ ७ ॥ लोक और वेदमेंभी यही बात है और सबलोगभी जानते हैं कि कुसंगति करनेसे हानि होती है और सत्संगति करनेसे लाभ होता है ॥ ८ ॥

गगन चढ़ै रज पवनप्रसंगा ॥ कीचइ मिलइ नीच जलसंगा ॥ ९ ॥ *
साधु असाधु सदन शुकसारी ॥ सुमिरहिँ राम देहिँ गणगारी ॥ १० ॥ *

देखिये जब धूलि पवनकी संगति करती है तब ऊपर आकाशमें चढ़ जाती और जब नीचे बहनेवाले जलकी संगति करती है तब कीचड़में मिल जाती है॥९॥तोता और सारिकाभी जब साधुके घरमें रहती हैं तो रामनामका स्मरण करती हैं और असाधुके घरमें रहती हैं तो गारियां देती है ॥ १० ॥

धूम कुसंगति कारिख होई ॥ लिखिय पुराण मंजु मसि सोई ॥ ११ ॥ *
सोइ जल अनलअनिलसंघाता ॥ होइ जलद जगजीवनदाता ॥ १२ ॥ *

चेतनकी प्रकृति तो संगतिसे बदलतीही है पर अचेतनकीभी प्रकृति संगतिसे बदल जाती है. जैसे लकड़ी कंडा आदिकी कुसंगति पाकर धूम कारिख अर्थात तवे और कड़ाहके नीचे जो स्याही लगी रहती है वह होता है कि—जिससे नेत्र दुःख पाते हैं और तेलकी सुसंगति पाकर काजल और सुन्दर स्याही बनता है कि जिससे नेत्र शोभायमान होतेहैं और पुराण वगैरः उत्तम पवित्र ग्रंथ लिखे जाते है ॥ ११ ॥ और वही धूम यज्ञके भीतर घृत आदि शाकल्य पदार्थकी सुसंगति पानेसे जल अग्नि और पवनकी सहायतासे बादलरूप होकर सब जगतको जीवन यानी जल देता है. यज्ञसे वर्षा होती है सो गीताजीमें लिखा है " अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यान्यादन्नसम्भवः । यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः " ॥ १२ ॥

दोहा—ग्रह भेषज जल पवन पट, पाइ कुयोग सुयोग ॥ *
होइ कुवस्तु सुबस्तु जग, लखहिँ सुलक्षणलोग ॥ ८॥ *
सम प्रकाश तम पक्ष दुहुँ, नामभेद विधि कीन्ह ॥ *
शशिपोषक शोषक समुझि, जग यश अपयश दीन्ह ॥ ९ ॥ *
जड चेतन जग जीव जे, सकल राममय जानि ॥ *
बंदौं सबके पदकमल, सदा जोरि युग पानि ॥ १० ॥ *
देव दनुज नर नाग खग, प्रेत पितर गंधर्व ॥ *
बंदौं किन्नर रजनिचर, कृपा करहु अब सर्व ॥ ११ ॥ *

ग्रह (सूर्य चंद्र आदि) औषध, जल, वायु, और वस्त्र ये कुयोग और सुयोगको पाकर जगतमें कुबस्तु और सुबस्तु हो जाते हैं अर्थात इनका भला संबंध रहता है तब ये भले होजाते हैं और बुरेका सम्बन्ध रहता है तब बुरे हो जाते है. इस बातको विद्वान् लोग अच्छी तरह जानते हैं ॥ ८ ॥ यद्यपि दोनों पक्षोंमे चंद्रमाका प्रकाश बराबर है तथापि बिधाताने उनके नाममें फर्क रख दिया है. तिसका कारण यह है कि जो पक्ष चंद्रमाका पोषक है उसका नाम शुक्लपक्ष रखकर जगतमें उसका यश बढ़ाया है. और जो पक्ष चंद्रमाको क्षीण करनेवाला है उसका नाम कृष्णपक्ष रखकर जगतमें उसको अपयश दिया है. तात्पर्य यह कि भला काम करनेसे भला नाम मिलता है और बुरा करनेसे बुरा नाम पाता है ॥ ९ ॥ गोसाईंजी भिन्न भिन्न रीतिसे सबके स्वरूप कह उनसे विनयकर अब सबको रामरूप जानकर बन्दन करते हैं कि, जगतमें जो जड़ चेतन जीव हैं वे सब राममय हैं ऐसे जानकर दोनों हाथ जोड़कर मैं प्राणीमात्रके चरणकमलोंको सदा प्रणाम करता हूं ॥ १० ॥ मैं देवता, दानव, नर, नाग, पक्षी, प्रेत, पितर, गंधर्व, किन्नर और राक्षस आदि सर्व प्राणीमात्रको वंदना करताहूं सो ये सब अब मुझपर कृपा करें ॥ ११ ॥

आकर चारलाख चौरासी ॥ जाति जीव नभ जलथलबासी ॥ १ ॥ *
सियाराममय सब जग जानी ॥ करौं प्रणाम जोरि जुगपानी ॥ २ ॥ *

जो चारों खानिके[1] चौरासी ८४ लाख थलचर नभचर और जलचर जीवजाति हैं ॥ १ ॥ उन सबको और जगत् मात्रको सीतारामभय जानकर दोनों हाथ जोड़कर मैं प्रणाम करता हूं ॥ २ ॥

जानि कृपा करि किंकर मोहूं ॥ सब मिलि करहु छांड़ि छल छोहू ॥ ३ ॥
निजबुधिबलभरोस मोहिं नाहीं ॥ ताते बिनय करौं सबपाहीं ॥ ४ ॥ ❀

मुझको ये सब अपना किंकर यानी दास जानकर निष्कपट होकर मिलकर मेरेऊपर कृपा करो ॥ ३ ॥ मुझको मेरी बुद्धिके बलका भरोसा नहीं है इसलिये मैं सबसे बारंबार विनय करता हूं ॥ ४ ॥

करन चहौं रघुपतिगुणगाहा ॥ लघु मति मोरि चरित अवगाहा ॥ ५ ॥ ❀
सूझ न एकौ अंग उपाऊ ॥ मम मति रंक मनोरथ राऊ ॥ ६ ॥ ❀

मैं रामचन्द्रजीके गुणोंको ग्रहण करना चाहता हूं, परंतु मेरी बुद्धि तो अति तुच्छ है और प्रभुका चरित्र अति अथाह है ॥ ५ ॥ काव्यके अनेक अंग हैं और मुझको उनमेंका एकभी नहीं सूझता; क्योंकि मेरी बुद्धि अति रंक कहे कंगाल है और मैं जो मनोरथ करता हूं वह राजा यानी बहुत बड़ा है सो यह बात कैसे बनेगी ? अर्थात् रंक और राजाका मेल कैसे मिलेगा ? ॥ ६ ॥

मति अतिनीच ऊँचि रुचि आछी ॥ चहिय अमिय जग जुरै न छाछी ॥ ७ ॥
क्षमिहहिँ सज्जन मोरि ढिठाई ॥ सुनिहहिँ बालबचन मन लाई ॥ ८ ॥ ❀

मेरी बुद्धि तो अति नीच है और चाह बड़ी ऊंची और अच्छी है सो यह संयोग कैसे बनेगा ? चाहिये तो अमृत और जगमें छाछभी नहीं मिले तो ऐसी ढिठाई आदमीको नहीं करनी चाहिये ॥ ७ ॥ परंतु मैंने बिना बिचारे जो ऐसी ढिठाई करी है सो संत लोग मेरा अपराध क्षमा करेंगे और मेरे बचनको बालकके बचनसा जानकर मन लगाकर सुनेंगे; ॥ ८ ॥

ज्यों बालक कहे तोतरि बाता ॥ सुनहिँ मुदित मन पितु अरु माता ॥ ९ ॥
हँसिहहिँ क्रूर कुटिल कुबिचारी ॥ जे परदूषणभूषणधारी ॥ १० ॥ ❀

क्योंकि बालक जो तोतरी बात कहता है उसे सुनकर उसके माता पिता मनमे बड़े प्रसन्न होते हैं ॥ ९ ॥ सो सज्जन पुरुष तो मेरा बचन बड़े प्रेमसे सुनेंगे और जो पराये दूषणरूप आभूषण धारण करनेवाले हे वे खोटे विचारवाले कुटिल खल मेरा वचन सुनकर हँसेंगे ॥ १० ॥

निजकबिता केहि लाग न नीकी ॥ सरस होउ अथवा अतिफीकी ॥ ११ ॥
जे परभणित सुनत हर्षाहीं ॥ ते बर पुरुष बहुत जग नाहीं ॥ १२ ॥ ❀

अपनी कविता चाहो सरस हो या निरस हो पर वह किसको अच्छी नहीं लगती ॥ ११ ॥ परंतु जो लोग दूसरोंकी कविता सुनकर मनमें आनन्द मानते हैं ऐसे सत्पुरुष जगत्में बहुत नहीं हैं ॥ १२ ॥

---

[1] चार खान—स्वेदज, अंडज, उद्भिज्ज और जरायुज. जो पसीनेसे पैदा होते हैं वे स्वेदज. जूं लीख वगैरह.जो अंडेसे पैदा होते हैं वे अंडज, चिड़िया वगैरः, जो जमीनको फाडकर निकलते हैं वे उद्भिज्ज, घास पात बेल बूटी वगैर जो झोरीसे पैदा होते हैं वे जरायुज,मनुष्य गाय भेंस वगैरः. चौरासी लाख जीव योनि इस हिसाबसे धर्मशास्त्रमें लिखी है "स्थावरं विंशतेर्लक्षं जलजं नवलक्षकं, कूर्मश्च रुद्रलक्षं च दशलक्षं च पक्षिणः । त्रिंशल्लक्षं पशूनां च चतुर्लक्षं च वानराः॥ ततो मनुष्यतां प्राप्य ततः कर्माणि साधयेत् ॥" स्थावर यानी तृण वृक्ष आदि बीस लाख २०००००.जलचर मछली आदि नव ९०००० लाख, कूर्म यानी कछुए चूहे वगैरः पृथ्वीको खोदकर रहनेवाले ग्यारह लाख ११००००,पक्षी दश १००००००लाख, चौपाये तीस३००००००लाख, और वानर चार४०००००लाख. मनुष्य चौरासीसे अलग हैं.

जग बहु नर सुरसरिसम भाई ॥ जे निजबाढ़ बढ़हिँ जल पाई ॥ १३ ॥ ❀
सज्जन सुकृत सिंधुसम कोई ॥ देखि पूरविधु बाढ़हिँ जोई ॥ १४ ॥ ❀

हे भाई! जगत्में गंगाके समान आदमी तौ बहुत है कि जो पराया जल पाकर अपने बाढ़ बढ़ते हैं यानी ग्रंथचुंबक पंडित तौ बहुत है कि जो इधर उधरसे पराये ग्रंथोंमेंसे विषय चुरा कर अपना नाम प्रसिद्ध करते है कि हमने अमुक अमुक ग्रंथ लिखे॥ १३ ॥ परंतु समुद्रके जैसे सुकृती सज्जन पुरुष तौ जगत्में बिरलेही हैं कि—जो पूर्ण चंद्रमाको देखकर बढ़ते हैं.

दोहा—भाग छोट अभिलाष बड़, करउँ एक विश्वास ॥ ❀
पैहहिँ सुख सुनि सुजनजन, खल करिहैं उपहास ॥ १२ ॥ ❀

मेरा भाग्य तौ बहुत छोटा है और चाह बहुत बड़ी है; पर मुझको एक बातका पक्का भरोसा है कि संतजन तौ मेरी बाणीको सुनकर अवश्य सुख पावेंगे; क्योंकि इसमें रामचन्द्रजीके चरित्रका वर्णन है, और खललोग अवश्य हाँसी करेंगे ॥ १२ ॥

खलपरिहास होइ हित मोरा ॥ काक कहहिँ कलकंठ कठोरा ॥ १ ॥ ❀
हंसहिँ बक दादुरहु चातकी ॥ हँसहिँ मलिनखल बिमल बातकी॥२॥ ❀

यदि खललोग मुझको हँसेंगे तौ मेरा उससे भलाही होगा; क्योंकि कव्वे कोकिलाको कठोरस्वर कहाही करते हैं ॥ १ ॥ और बगुले हंसको और मेंडक पपीहेको हँसतेही है ऐसे मलीन मनवाले खल रामचंद्रजीकि निर्मल यशका वर्णन करनेवाले सत्पुरुषोंको हँसतेही हैं ॥ २ ॥

कबितरसिक न रामपद नेहू ॥ तिन्हकहँ सुखद हासरस एहू ॥ ३ ॥ ❀
भाषा भणित मोरि मति भोरी ॥ हँसिबेयोग हँसे नहिँ खोरी ॥ ४ ॥ ❀

जो लोग केवल कविताके रसिक है और रामचन्द्रजीके चरणोंमे स्नेह नहीं है उनको सुख देनेके लिये तौ यह ग्रंथ एक अद्भुत हास्यरसका नमूना होगा ॥ ३ ॥ अव्वल तौ भाषाकी कविता, तत्रापि अति भोली मेरी बुद्धि, इसलिये यह हँसनेयोग्य ही है फिर इसको हँसें तौ इसमें बुराई क्या है? ॥ ४ ॥

प्रभुपदप्रीति न सामुझि नीकी ॥ तिन्हहिँ कथा सुनि लागहि फीकी ॥५॥ ❀
हरिहरपदरति मति न कुतरकी ॥ तिन्हकहँ मधुर कथा रघुबरकी ॥६॥ ❀

जिनकी प्रभुके चरणकमलोंमें प्रीति नहीं है और जिनकी समझ अच्छी नहीं है उनको यह कथा सुनकर फीकी लगेगी ॥ ५ ॥ परंतु जिनकी शिव विष्णुके चरणोंमें परम प्रीति है और जिनकी बुद्धि कुतर्कवाली नहीं है उनको तौ प्रभुकी कथा बहुत मीठी लगेगी ॥ ६ ॥

रामभक्तिभूषित जिय जानी ॥ सुनिहहिँ सुजन सराहि सुबानी ॥ ७ ॥ ❀
कबि न होउँ नहिँ चतुर प्रबीना ॥ सकलकलासबविद्याहीना ॥ ८ ॥ ❀

मैं जानताहूं कि—सुजन लोग तौ अपने मनमें मेरी बाणीको रामचन्द्रजीको भक्तिसे अलंकृत जानकर, 'यह बाणी बहुत अच्छी है' ऐसे सराह सराह कर सुनेंगे ॥ ७ ॥ परंतु मैं न तौ कवि हूं और न

मेरेमें चतुराई और प्रवीणता है. मैं तो सर्व कला* और विद्याओंसे हीन हूं ॥ ८॥

आखर अर्थ अलंकृति नाना ॥ छंदप्रबंध अनेक बिधाना ॥ ९ ॥ ❋
भावभेद रसभेद अपारा ॥ कबित दोष गुण बिबिध प्रकारा ॥ १० ॥ ❋
कबित बिबेक एक नहिँ मोरे ॥ सत्य कहौं लिखि कागज कोरे ॥ ११ ॥❋

‡ काव्यमें आखर(अक्षर)कहे वर्ण अर्थात् शब्द और अर्थ इनके अलङ्कार अर्थात् शब्दालंकार,यमक, अनुप्रास आदि और अर्थालंकार उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा और अर्थान्तरन्यास आदि अनेक प्रकारके है. और छंदकी रचनाभी अनेक प्रकारकी हैं. छंद दो प्रकारके हैं. वर्णछंद और मात्राछंद. वर्णछंद-अनुष्टुप्, शिखरिणी,हरिणी, वसन्ततिलका और गंडक आदि और मात्राछंद आर्या,गीति और उपगीति आदि अनेक प्रकारके हैं ॥ ९ ॥ त्योंही § भावके और †रसके भेदोंका भी कछु पार नहीं है. और कविताके गुण

---

* कला चौंसठ६४हैं–गीत १ वाद्य २ नृत्य ३ नाटक करना ४ आलेख्य (लिखना) ५ विशेषीछेद्य (हीराको वेधना) ६ तंडुलकुसुमबलिविकाराः (चॉवल पुष्प सुमास इनके रंग निकालना) ७ पुष्पास्तरण(फूल बिछाना) ८ दशनवसनांगरागाः (दांत, वस्त्र और अंगको रँगना) ९ मणिभूमिकाकर्म (मणियोंकी भूमि रचना) १० शयनरचना ११ उदकवाद्य (जलतरंगका वाद्य) १२ उदकवाघ (जल ताड़न करना) १३ चित्रयोगाः (चितेरेका काम) १४ माल्यग्रथनविकल्पाः (माला पोहना) १५ शेखरापीडयोजनं (मुकुट आदि बनाना) १६ नेपथ्ययोगाः (कटिवस्त्रमें धागा डारना) १७ कर्णपत्रभंगाः (कानमें गहना पहनाना) १८ गंधयुक्ति (अतर निकालना) १९ भूषणयोजन २० ऐंद्रजाल २१ कौचुमारयोगाः (बहुरूपिया यानी अनेक स्वांग बनाना) २२ हस्तलाघव (पटा खेलना आदि) २३ भोज्यविकार (भोजनकी सामग्री बनाना) १४ पानकरसरागासवयोजन (पीनेके योग्य शरवत व शिरका वगैरह बनाना) २५ सूचीवाणकर्म (सीउना और तीरंदाजी करना)२७सूत्रक्रीडा (लट्टू चकरी वगैरः फेरना) २७ वीणाडमरूवाद्यानि (वीणा व डमरू बजाना) २८ प्रहेलिका (पहेली) २९ प्रतिमाला (दूसरेकी बोलीका अनुकरण करना) ३०दुर्वाचकयोगाः (छल करना) ३१ पुस्तकवाचन ३२ नाटिकाख्यायिकादर्शन ३३ काव्यसमस्यापूर्ति ३४ पट्टिका वेत्रवान् विकल्पाः (नेवार बेत और डोरीसे माचे वगैरः बिनना) ३५ तर्ककर्म ३६ तक्षण (बढ़ईका काम) ३७ वास्तुविद्या (थवईका काम) ३८ रौप्यरत्नपरीक्षा ३९ धातुवाद (सोनारका काम) ४० मणिरागाकारज्ञानं (मणियोंके रंगको पहिचानना) ४१ वृक्ष आयुर्वेद ४२ मेष कुक्कुट लावयुद्ध विधि ४३ शुकसारिकाप्रलापकं ४४ उत्सादनं (बैरीको किसी कदर निकाल देना) ४५ केशमार्जन कौशल ४६ अक्षरमुष्टिकाकथन (मुट्ठीमेंकी वस्तु बतादेना) ४७ म्लेच्छितविकल्पाः (म्लेछोंकी भाषा जानना और उनके विविध पदार्थ बनाना) ४८ देशभाषाज्ञान ४९ पुष्पशकटिकाज्ञानं (फूलोंके रथ आदि बनाना) ५० यत्रमात्रिका (कठपुतरी नचावना) ५१ धारणमात्रिकासंवाचयं (धारणा और वचनमें प्रवीणता) ५२ मानसी काव्यक्रिया (पराये मनका हाल जानना) ५३ अभिधानकोष ५४ छंदोज्ञान ५५ क्रियाविकल्पाः (अनेक उपायोंसे कार्यसिद्धि करना) ५६ छलितयोगाः ५७ वस्त्रगोपनं ५८ द्यूतविशेषाः ५९ आकर्षक्रीडा ६० बालक्रीड़न ६१ वैनयिकी (विनयसे राजा आदिको प्रसन्न करना) ६२ वैजयिकी (विजय स्पष्ट करना अथवा देवताओंको वश करना) ६३ वैयासिकी विज्ञान (पुराण इतिहासका जानना) ६४ + विद्या १८. ऋग्वेद १ सामवेद २ अथर्ववेद ३ यजुर्वेद ४ शिक्षा ४ कल्प ६ व्याकरण ७ निरुक्त ८ छंद ९ ज्योतिष १० पुराण ११ न्याय १२ मीमांसा १३ धर्मशास्त्र १४ गांधर्ववेद १५ आयुर्वेद १६ स्थापत्य (शिल्पका काम) १७ धनुर्वेद (शस्त्रविद्या) १८ इति. ‡ काव्यस्य लक्षणं काव्यप्रकाशे "तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलङ्कृती पुनः क्कापि" इति ।

§ भाव आठ. स्तंभ १ स्वेद २ रोमांच ३ स्वरभंग ४ कंप ५ विवर्ण ६ अश्रु ७ प्रलाप ७ ये आठ भाव हैं. हाव दश १०–लीला १ विलास २ विक्षिप्त ३ विभ्रम ४ किलकिंचित ५ मोट्टायित ६ कुट्टमित ७ बिब्बोक ८ ललित ९ विहित १० ये दश हैं. भावका लक्षण–"निर्विकारात्मके चित्ते भावः प्रथमविक्रिया" हावका लक्षण–"भ्रूनेत्रादिविकारैस्तु संभोगेच्छा प्रकाशकः। भाव एवाल्पसंलक्ष्य विकारो हाव उच्यते" † रस ९ हैं. करुण १ रौद्र २ वीर ३ भयानक ४ बीभत्स ५ हास्य ६ अद्भुत ७ शृंगार ८ शान्त ९ रसका लक्षण–" भावानामनुभावानां विभावानां च संश्रयात्। जायते यः पदार्थस्तु तमाहुर्मुनयो रसम्"

दोषभी अनेक प्रकारके हैं ॥ १० ॥ मैं सत्य कहता हूं कि मेरेमें एकभी कविता बनानेका विवेक नहीं है. केवल कोरा कागज मिलगया है सो जैसा मनमें आवेगा वैसाही लिखे देताहूं ॥ ११ ॥

दो॰ भणित मोर सबगुणरहित, बिश्वबिदित गुण एक ॥ ❋
सो बिचारि सुनिहहिँ सुमति, जिन्हके बिमल बिबेक ॥ १३॥ ❋

मेरी कविता सर्वगुणरहित है परंतु इसमें एक बड़ा भारी गुण (प्रभुका चरित्र) है कि जिसको सब जगत् जानता है सो उस बातको विचार कर सुबुद्धिलोग कि जिनके विमल विवेक है वे मेरी बाणीको अवश्य सुनेंगे ॥ १३ ॥

इहिमहँ रघुपतिनाम उदारा ॥ अतिपावन पुराण श्रुतिसारा ॥ १ ॥ ❋
मंगलभवन अमंगलहारी ॥ उमासहित जेहि जप त्रिपुरारी ॥ २ ॥ ❋

क्योंकि मेरी इस वाणीमें परम उदार और परम पवित्र वेद व पुराणोंका सारभूत साक्षात् रामचन्द्रजीका नाम है ॥ १ ॥ रामनाम लेनेसे सब अमंगल मिट जाते है; क्योंकि वो मंगलका धाम है और इसीसे पार्वतीके साथ महादेवजीभी जिसका निरंतर जप करते है ॥ २ ॥

भणित बिचित्र सुकबिकृत जोऊ ॥ रामनामबिनु सोह न सोऊ ॥ ३ ॥
बिधुबदनी सबभांति सँवारी ॥ सोह न बसन बिना बर नारी ॥ ४ ॥ ❋

जो कविता अति बिचित्र और महाकविकी बनाई हुईभी होवे परंतु यदि उसमें रामका नाम न हो तो वह कभी शोभा नहीं पाती ॥३॥ जैसे चंद्रमुखी स्त्री सब प्रकारसे बन ठन कर तैयार होनेपरभी वस्त्रविना शोभा नहीं पाती ॥ ४ ॥

सबगुणरहित कुकबिकृत बानी ॥ रामनामयशअंकित जानी ॥ ५ ॥ ❋
सादर कहहिँ सुनहिँ बुध ताही ॥ मधुकरसरिस संत गुणग्राही ॥ ६ ॥ ❋

और चाहे उस वाणीमें कविताका एकभी गुण न होवै और उसका बनानेवाला महाकुकवि होवै तथापि जिसके अंदर रामनाम होता है उस वाणीको भ्रमरके समान गुणग्राही विद्वान् संतलोग प्रभुके नाम व यशसे चिन्हित जानकर आदरके साथ कहते हैं और सुनते हैं ॥ ५ ॥ ६ ॥

यदपि कबितगुण एको नाहीं ॥ रामप्रताप प्रगट यहिमाहीं ॥ ७ ॥ ❋
सोइ भरोस मोरे मन आवा ॥ केहिं न सुसंग बड़ापन पावा ॥ ८ ॥ ❋

यद्यपि इसमें कविताका एकभी गुण नहीं है तथापि इसमें प्रभुका प्रताप खूब प्रगट करके दिखाया है ॥ ७ ॥ और मेरे मनमेंभी इसी बातसे भरोसा आता है कि मेरी बाणीको संतलोग सुनेंगे, क्योंकि सत्संगति करनेसे किसने बड़ापन नहीं पाया है ? ॥ ८ ॥

धूमउ तजै सहजकरुआई ॥ अगर प्रसंग सुगंध बसाई ॥ ९ ॥ ❋
भणित भदेस बस्तु भलि बरणी ॥ रामकथा जगमंगलकरणी ॥ १० ॥ ❋

धूम स्वभावसेही करुआ होता है पर वहभी अगरके प्रसंगसे अपनी करुआई छोड़ देता है और सुगंधमय हो जाता है ॥ ९ ॥ ऐसेही मेरी वाणी तो बहुत भद्दी है पर इसमें जिस वस्तुका वर्णन

है वह बहुत अच्छी है यह सब जानते है; क्योंकि रामचन्द्रजीकी कथा जगत्का मंगल करनेवाली है ॥ १० ॥

छंद–मंगलकरणि कलिमलहरणि तुलसी कथा रघुनाथकी ॥ ❋
गति क्रूर कविता सरितकी ज्यों परम पावन पाथकी ॥ ❋
प्रभुसुयशसंगति भणित भलि होइहि सुजनमनभावनी ॥ ❋
भवअंगभूति मसानकी सुमिरत सुहावनि पावनी ॥ १ ॥ ❋

तुलसीदासजी कहते हैं कि, रघुनाथजीकी कथा मंगल करनेवाली और कलिकालके मलका हरण करनेवाली है. जैसे नदीकी गति टेढ़ी होती है ऐसे कविताकीभी गति अति टेढ़ी है, परंतु जैसे जलके प्रसंगसे नदी परम पवित्र गिनी जाती है ऐसे कविताकी टेढ़ी गति होनेपरभी प्रभुके सुयशकी संगतिसे मेरी भद्दी कविताभी अच्छी हो जायगी और सज्जन पुरुषोंके मनको अच्छी लगेगी. देखो श्मशानकी विभूति महादेवजीके अंगका स्पर्श होनेसे परम पवित्र और स्मरण करनेसे कल्याणकारिणी समझी जाती है ॥ १ ॥

दोहा–प्रिय लागिहि अति सबहिं मम, भणित रामयशसंग ॥ ❋
दारु बिचार कि करइ कोउ, बंदिय मलयप्रसंग ॥ १४ ॥ ❋
श्याम सुरभि पय बिशद अति, गुणद करहिं तेहि पान ॥ ❋
गिराग्राम सियरामयश, गावहिं सुनहिं सुजान ॥ १५ ॥ ❋

रामचन्द्रजीके यशके प्रसंगसे मेरी कविताभी सब लोगोंको प्रियही लगेगी. यद्यपि चंदन काष्ठ है पर क्या कोई आदमी यह विचार करता है ? कि—यह काष्ठ है. प्रत्युत उस विचारको छोंड़कर मलयके प्रसंगसे उसको अच्छा मानते हैं ॥ १४ ॥ यद्यपि श्याम गौ, स्वरूपसे अति मलिन होती है तथापि उसका दूध अति उज्वल और गुणकारी होता है, इसवास्ते सब लोग पीते हैं. ऐसेही यद्यपि मेरी वाणी तो अति ग्रामीण है तथापि उसमें सीतारामका अति पावन यश है इससे सुज्ञलोग उसको गावेंगे और सुनेंगे ॥ १५ ॥

मणिमाणिकमुक्ता छबि जैसी ॥ अहि गिरि गजशिर सोह न तैसी ॥ १ ॥
नृपकिरीट तरुणीतनु पाई ॥ लहहिं सकल शोभा अधिकाई ॥ २ ॥ ❋

मणि, माणिक और मुक्ता इनकी जैसी शोभा है तिस शोभाको ये अपने उत्पत्तिस्थान जो सर्प, पर्वत और हाथी उनके मस्तकमें नहीं पाते ॥ १ ॥ किन्तु राजाके मुकुटमें और तरुणी स्त्रीके शरीरमें अति अधिक सकल शोभा पाते हैं ॥ २ ॥

तैसेहिं सुकविकवित बुध कहहीं ॥ उपजहिं अनत अनत छबि लहहीं॥३॥
भक्तिहेतु बिधिभवन बिहाई ॥ सुमिरत शारद आवति धाई ॥ ४ ॥ ❋

ऐसेही सुकवि विद्वान् लोग जो कविता बनाते हैं वह वहीं शोभा नहीं पाती किन्तु दूसरे ठौर शोभा देती है, क्योंकि कविताका यह धर्मही है कि वह उपजती तो दूसरी जगह है और

१ जो सर्पके सिरमें उपजती है. २ जो पर्वतमें पैदा होता है. ३ जो हाथीके मस्तकमें पैदा होता है.

शोभा दूसरी जगह पाती है ॥ ३ ॥ जब कोई कवि कविता करना चाहता है तब वह प्रथम शारदाको स्मरण करता है और उसका स्मरण करतेही वह अपने भक्तकी भक्तिके हेतु तुर्त ब्रह्मलोकको छोंड़कर दौड़कर अपने भक्तके पास आती है ॥ ४ ॥

रामचरितसर बिनु अन्हवाये ॥ सो श्रम जाइ न कोटि उपाये ॥ ५ ॥ ❋
कवि कोबिद अस हृदय बिचारी ॥ गावहिँ हरिगुण कलिमलहारी ॥६॥ ❋

सो यदि रामचरित्ररूप तलावमें उसको न्हिला देते हैं तब तो उसके दौड़कर आनेका श्रम मिट जाता है और जो उसको इस सरोवरमें नहीं न्हिलाते तब तौ दूसरे करोड़ों उपाय करनेसेभी उसका श्रम नहीं मिटता ॥ ५ ॥ अतएव उत्तम कविलोग मनमें ऐसाही विचार रखकर कलिकालके बिकराल मल मिटानेवाले हरिके गुण गाते है ॥ ६ ॥

कीन्हे प्राकृतजनगुणगाना ॥ शिर धुनि गिरा लागि पछिताना ॥ ७ ॥ ❋
हृदय सिंधु मति सीपसमाना ॥ स्वाती शारद कहहिँ सुजाना ॥ ८ ॥ ❋
जो बर्षै बर वारि बिचारू ॥ होइ कबित मुक्तामणि चारू ॥ ९ ॥ ❋

यदि जो कोई कवि शारदाको बुलाकर उसको प्रभुके चरितरूप सरोवरमें न्हिलाये विना प्राकृत पुरुषका गुण गान करने लग जाता है तब वह अंबा शिर धुन धुन कर पछताने लगती है ॥ ७ ॥ विद्वानलोग कहते है कि शारदाकी कृपा बिना कविता बनही नहीं सकती; क्योंकि हृदय है सो तौ समुद्र है, और बुद्धि है सो सीपके सदृश हैं, और शारदा स्वातीनक्षत्रके समान है ॥ ८ ॥ सो जो शारदा कृपा करके विचाररूप सुन्दर पानी बरसै तब तौ कवितारूप सुन्दर मोती पैदा हो सक्ते हैं और जो वह कृपा न करे तौ नहीं हो सक्ते ॥ ९ ॥

दोहा–युक्ति बेधि पुनि पोहिये, रामचरित बर ताग ॥ ❋
पहिरहिँ सज्जन बिमल उर, शोभा अति अनुराग ॥ १६ ॥ ❋

कविको चाहिये कि कवितारूप मुक्ताको युक्तिसे बेध कर फिर प्रभुके चरित्ररूप सुन्दर धागेके भीतर पोहै, कि जिससे सज्जन लोग उसको अपने हृदयमें पहरें यानी उस कविताको हृदयमें धारण करें. कि जिससे शोभा और अतिशय अनुराग बढ़े ॥ १६ ॥

जे जन्मे कलिकाल कराला ॥ करतब वायस बेष मराला ॥ १ ॥ ❋
चलत कुपंथ बेदमग छांड़े ॥ कपटकलेवर कलिमलभांड़े ॥ २ ॥ ❋

इस कराल कलिकालके अंदर जे जन्मे हैं कि जिनकी करनी तौ कागकीसी है और वेष हंसकासा है ॥ १ ॥ और जे वेदके मार्गको छोंड़कर कुपंथ पाखंडके मार्ग चलते हैं, जे कपटकी मूर्ति और कलिकालके मैलोंके भांड़ेही हैं ॥ २ ॥

बंचक भक्त कहाइ रामके ॥ किंकर कंचन कोह कामके ॥ ३ ॥ ❋
तिनमहँ प्रथम रेख जग मोरी ॥ धिक धर्मध्वज धंधक धोरी ॥ ४ ॥ ❋

जे महाछली और कहनेको तौ रामचन्द्रजीके भक्त और वास्तवमें कंचन, क्रोध और कामदेवके किंकर हैं ॥ ३ ॥ तुलसीदासजी कहते हैं कि, उन लोगोंके बीचमें जगतमें मेरी पहली लीक है यानी

ऐसे लोगोंकी गिनतीमें मुझको पहले गिनना चाहिये. जो ऐसे धर्मध्वज यानी धर्मका ढोंग रखने-वाले पाखंडी प्रपंचमें अग्रणी हैं उनको धिक्कार है ॥ ४ ॥

जो अपने अवगुण सब कहऊं ॥ बाढै कथा पार नहिं लहऊं ॥ ५ ॥ ❋
तातें मैं अति अल्प बखाने ॥ थोरेमहँ जानिहहिँ सयाने ॥ ६ ॥ ❋

इससे जो मैं तेरे तमाम अवगुण कहूं तब तो कथा बढ़ जाय और पार नहीं आवे ॥ ५ ॥ इससे मैंने मेरे अवगुण बहुत कम कहे हैं. जे सुज्ञलोग हैं वे थोरेमेंही समझ लेंगे ॥ ६ ॥

समुझि बिबिध बिधि बिनती मोरी ॥ कोउ न कथा सुनि देइहि खोरी ॥ ७ ॥
एतेहु पर करिहहिँ जे शंका ॥ मोहिते अधिक ते जड़ मतिरंका ॥ ८ ॥

जो मैं यह अनेक प्रकारसे विनती करता हूं सो इस मेरी विनतीको समझकर, और मेरी कथा सुन-कर कोईभी मुझे खोरि नहीं देगा ॥ ७ ॥ और इतना करनेपरभी जो शंका करेंगे उनको तो मुझसेभी अधिक मूर्ख और बुद्धिहीन समझना चाहिये ॥ ८ ॥

कवि न होउँ नहिं चतुर कहाऊं ॥ मतिअनुरूप रामगुण गाऊं ॥ ९ ॥ ❋
कहँ रघुपतिके चरित अपारा ॥ कहँ मति मोरि निरत संसारा ॥ १० ॥ ❋

मैं न तो कवि हूं और न चतुर कहलाता हूं. मैं अपनी बुद्धिके अनुसार प्रभुके गुण गाता हूं ॥ ॥ ९ ॥ कहां तो प्रभुके अपार चरित और कहां संसारमें आसक्त मेरी बुद्धि ! ॥ १० ॥

जेहि मारुत गिरि मेरु उड़ाहीं ॥ कहहु तूल केहि लेखे माहीं ॥ ११ ॥ ❋
समुझत अमित रामप्रभुताई ॥ करत कथा मन अति कदराई ॥ १२ ॥ ❋

जिस पवनसे सुमेरुगिरि पर्वत उड़जाता है कहो उसके सामने तूल यानी कपास कौनसी गिन-तीमें है ?॥ ११ ॥ यद्यपि यह मेरा मन रामकी अपार प्रभुताको समझता है तथापि प्रभुकी कथा करते अत्यंत कदराता है ॥ १२ ॥

दोहा–शारद शेष महेश बिधि, आगम निगम पुरान ॥ ❋
नेति नेति कहि जासुगुण, करहिँ निरंतर गान ॥ १७ ॥ ❋

जिस प्रभुके गुणोंको शारदा, शेष, महादेव, ब्रह्मा, वेद, पुराण और शास्त्र ये सारे 'नेति नेति' कह कर निरंतर गाते हैं ॥ १७ ॥

सब जानत प्रभुप्रभुता सोई ॥ तदपि कहे बिन रहा न कोई ॥ १ ॥ ❋
तहाँ बेद असकारण राखा ॥ भजनप्रभाव भांति बहु भाखा ॥ २ ॥ ❋

यद्यपि प्रभुकी प्रभुताईको सब कोई जानते हैं पर बिना कहे कोईभी नहीं रहा ॥ १ ॥ तहां वेदने ऐसा हेतु रक्खा है कि भजनका प्रभाव अनेकभांतिहै सो अनेक प्रकारकी भाषाओंसे कहा जाता है ॥ २ ॥

एक अनीह अरूप अनामा ॥ अज सच्चिदानन्द परधामा ॥ ३ ॥ ❋
व्यापक विश्वरूप भगवाना ॥ तेइँ धरि देह चरित कृत नाना ॥ ४ ॥ ❋

जो एक यानी अद्वितीय, अनीह यानी चेष्टारहित, रूप और नामरहित, अजन्मा, सच्चि-

दानंदस्वरूप, परमधाम, ॥ ३ ॥ सर्वव्यापक, सर्वरूप और षड्गुणैश्वर्यसम्पन्न परब्रह्म हैं उन्होंने मनुष्यदेह धारण करके अनेक चरित्र किये हैं ॥ ४ ॥

सो केवल भक्तन हितलागी ॥ परम कृपालु प्रणतअनुरागी ॥ ५ ❋
जेहि जनपर ममता अरु छोहू ॥ तेहि करुणा करि कीन्ह न कोहू ॥ ६ ॥

प्रणतानुरागी यानी भक्तवत्सल प्रभुका जो अवतार है सो केवल भक्तनके हितके लिये है; क्योंकि प्रभु परमदयालु, व शरणागतरक्षक और सौंदर्य, सौशील्य, औदार्य, गाम्भीर्य, सौलभ्य, वात्सल्य आदि गुणोंसे परिपूर्ण है ॥ ५ ॥ फिर प्रभु कैसे हैं कि अपने निज भक्तजनोंपर कृपा और ममता है उनपर सदा करुणाही करते हैं पर क्रोध कभी नहीं करते ॥ ६ ॥

गई बहोरि गरिबनेवाजू ॥ सरल सबल साहिब रघुराजू ॥ ७ ॥ ❋
बुध बर्णहिं हरियश अस जानी ॥ करहिं पुनीत सुफल निजबानी ॥ ८ ॥

और गई वस्तुको पीछी फेरनेवाले अर्थात् बिगड़ीको सुधारनेवाले और गरीबनिवाज हैं, सरल स्वभाव हैं, सबल हैं. और सबके साहिब ऐसे रघुराज है ॥ ७ ॥ विद्वान् लोग ऐसे जानकर हरिका यश बर्णन करके अपनी वाणीको सुफल और पवित्र करते हैं ॥ ८ ॥

तेहि बल मैं रघुपतिगुणगाथा ॥ कहिहौं नाइ रामपद माथा ॥ ९ ॥ ❋
मुनिन्ह प्रथम हरिकीरति गाई ॥ तेहि मग चलत सुगम मोहिं भाई ॥ १० ॥

मैंभी उसी बलसे प्रभुके चरणोंमें शिर नवाकर प्रभुके गुणोंकी कथा कहता हूं ॥ ९ ॥ हे भाइयो! मुनि वाल्मीकि आदि ऋषियोंने पहले हरि भगवानकी कीर्ति गायी है इसवास्ते तिस रस्ते चलनेसे मुझकोभी बड़ी सुगमता रहेगी ॥ १० ॥

दोहा–अति अपार जे सरितबर, ज्यों नृप सेतु कराहिं ॥ ❋
चढ़ि पिपीलिका परमलघु, बिनु श्रम पारहि जाहिं ॥ १८ ॥ ❋

जैसे एक बड़ी भारी नदी है उसपर राजाने भारी पुल बँधा दिया है तो उस रस्तेसे चढ़कर बहुत छोटी चींटीभी बिना परिश्रम नदी पार चली जाती है ॥ १८ ॥

यहि प्रकार बल मनहिं दृढ़ाई ॥ करिहौं रघुपतिकथा सुहाई ॥ १ ॥ ❋
व्यास आदि कबिपुंगव नाना ॥ जिन्ह सादर हरिचरित बखाना ॥ २ ॥

इसतरह पूर्वऋषियोंके बर्णन किये हुए चरित्रके बलसे मैं अपने मनको दृढ़ करके प्रभुकी सुहावनी कथा करूंगा ॥ १ ॥ वेदव्यास आदि जो अनेक कविराज हुए हैं कि जिन्होंने आदरपूर्वक प्रभुके चरित्र बर्णन किये हैं ॥ २ ॥

चरणकमल बंदौं सबकेरे ॥ पुरवहु सकल मनोरथ मेरे ॥ ३ ॥ ❋
कलिके कबिन करौं परणामा ॥ जिन बर्णे रघुपतिगुणग्रामा ॥ ४ ॥ ❋

उन सबके चरणकमलोंको मैं वंदन करता हूं सो वे मेरे समस्त मनोरथ परिपूर्ण करो ॥ ३ ॥ जिन्होंने प्रभुके गुणग्रामका बर्णन किया है उन कलिकालकेभी कविलोगोंको मैं प्रणाम करता हूं ॥ ४ ॥

जे प्राकृत कबि परम सयाने ॥ भाषा जिन्ह हरिचरित बखाने ॥ ५ ॥

भये जे अहहिँ जे होइहैं आगे ॥ प्रणवौं सबहिँ कपट छल त्यागे ॥ ६ ॥

जे प्राकृतभाषाके परम सुजान कवीश्वर हैं, जिन्होंने भाषामें हरिभगवानके चरित्रका बर्णन किया है ॥ ५ ॥ ऐसे जे कवि अभी विद्यमान हैं जे पूर्वकालमें हुए हैं और जे आगे होवेंगे उन सबको मैं कपट और छल छोड़कर प्रणाम करता हूं ॥ ६ ॥

होउ प्रसन्न देहु बरदानू ॥ साधुसमाज भणितसनमानू ॥ ७ ॥ ❋
जो प्रबंध बुध नहिँ आदरहीं ॥ सो श्रम बादि बाल कवि करहीं ॥ ८ ॥

सो वे सब मेरे ऊपर प्रसन्न होओ और मुझको बरदान देओ कि जिससे मेरी कविता सत्पुरुषोंकी समाजमें आदर पा जावे ॥ ७ ॥ जिस ग्रंथका विद्वानलोग आदर नहीं करते उस ग्रंथके बनानेका परिश्रम करना वृथा है. और उस कविको अज्ञ समझना चाहिये ॥ ८ ॥

कीरति भणित भूति भलि सोई ॥ सुरसरिसम सबकहँ हित होई ॥ ९ ॥
राम सुकीरति भणित भदेसा ॥ असमंजस अस मोहिँ अँदेसा ॥ १० ॥

कीर्ति, कविता और संपदा वही अच्छी है कि, जो गंगाके समान सबके लिये हितकारी होवै ॥ ९ ॥ कवि कहता है कि मुझको इसी बातका अंदेशा है कि रामचंद्रजीकी कीर्ति तौ अति सुंदर है और मेरी कविता अति भद्दी है सो यह बात ठीक नहीं ॥ १० ॥

तुम्हरी कृपा सुलभ सोउ मोरे ॥ सिअनि सुहावनि टाट पटोरे ॥ ११ ॥
करहु अनुग्रह अस जिय जानी ॥ बिमल यशहिँ अनुहरइ सुबानी ॥ १२ ॥

हे सत्पुरुषो ! यद्यपि अंदेशा तौ है पर आपकी कृपासे वोभी सुलभ हो जायगी. देखिये जैसे टाट बहुत खराब होता है पर वहभी यदि रेश्मी धागेसे सिया जाय तौ शोभायमान हो जाता है ऐसे मेरी वाणी तौ टाटके समान है पर प्रभुका यश रेशमके समान है सो उससे मेरी वाणीभी शोभायमान हो जायगी ॥ ११ ॥ मनमें ऐसा जानकर मुझपर कृपा करो कि जिससे मेरी वाणी प्रभुका निर्मल यश बर्णन करनेके योग्य हो जावै ॥ १२ ॥

दोहा–सरल कबित कीरति बिमल, सोइ आदरहिँ सुजान ॥ ❋
सहजबैर बिसराइ रिपु, जो सुनि करहिँ बखान ॥ १९ ॥ ❋
सो न होइ बिनु बिमलमति, मोहिँ मतिबल अति थोर ॥ ❋
करहु कृपा हरियश कहौं, पुनि पुनि करउँ निहोर ॥ २० ॥ ❋
कबि कोबिद रघुबरचरित, मानस मंजु मराल ॥ ❋
बालबिनय सुनि सुरुचि लखि, मोपर होहु कृपाल ॥ २१ ॥ ❋

जो सरल कविता होती है और निर्मल कीर्ति होती है उसका सुज्ञलोग तौ आदर करतेही हैं पर जे बैरी हैं वेभी उसको सुनकर अपना स्वाभाविक बैर त्याग देते हैं और उसकी प्रशंसा करते हैं ॥ १९ ॥ परंतु ऐसी सरल कविता बिशद् बुद्धि विना बन नहीं सक्ती और मेरा बुद्धिबल तौ अतिही अल्प है इसवास्ते मैं बारंबार बिनती करता हूं कि हे सज्जनो ! मैं हरिका यश

कहता हूं सो आप लोग कृपा करो ॥ २० ॥ जो रामचन्द्रजीके चरित्ररूप मानससरोवरमें शुद्धस्वरूप हंसोंकी भांति सदा विहार करते हैं वे कविकोविद लोग मुझ बालककी बिनतीको सुन, मेरी सच्ची प्रीतिको देखकर मुझपर दया करो ॥ २१ ॥

सोरठा–बंदौं मुनिपदपंकज, रामायण जिन निर्मयो ॥ ❋
सखर सकोमल मंजु, दोषरहित दूषणसहित ॥ ६ ॥ ❋
बंदौं चारिउ वेद, भववारिधि बोहितसरिस ॥ ❋
जिनहिँ न सपनेहुँ खेद, बर्णत रघुपति बिशद यश ॥ ७ ॥ ❋
बंदौं बिधिपदरेणु, भवसागर जिन कीन्ह यह ॥ ❋
संत सुधा शशि धेनु, प्रगटे खल बिष वारुणी ॥ ८ ॥ ❋

जिन्होंने रामायण नाम अति सरस ग्रंथ रचा है उन महामुनि वाल्मीकिके चरणकमलोंको मैं प्रणाम करता हूं. कैसी है रामायण कि जो सखर कहे खर नाम राक्षसकरके सहित है. और कोमलता यानी मृदुता करके सहित है. खर नाम कठोरकाभी है तासों यहां विरोधाभास अलंकार जानना. फिर कैसी है ? सुन्दर है और दूषण नाम राक्षसकरके सहित है. और दोष कहे अविमृष्ट विधेयांश आदि काव्यदोष तिनकरके रहित है. यहांभी विरोधाभास है ॥ ६ ॥ संसारसमुद्रको पार होनेके लिये नौकाके समान जो चारों वेद हैं तिनको प्रणाम करता हूं कि जिनको रघुनाथजीके उज्ज्वल यशका वर्णन करते स्वप्नमेंभी खेद नहीं होता ॥ ७ ॥ मैं विधाताके चरणोंकी रजको प्रणाम करता हूं. कि जिन्होंने यह संसारसागर पैदा किया, समुद्रमेंसे तौ अनेक रत्न प्रगट हुए हैं. इसमें ऐसी चीज कौन है, तब कहते हैं कि सत्पुरुष हैं सोही तौ इस संसारमें अमृत हैं. गौ है सोही चन्द्रमा है. और जो खल (दुष्ट) हैं वेही इसमें विष और वारुणीरूप प्रगट हुए हैं ॥ ८ ॥

दोहा–विबुधविप्रबुधगुरुचरण, बंदि कहौं कर जोरि ॥ ❋
होय प्रसन्न पुरवहु सकल, मंजु मनोरथ मोरि ॥ २२ ॥ ❋

तुलसीदासजी कहते हैं कि–मैं देवता, ब्राह्मण, पंडित और गुरुके चरणोंको बंदन करताहूं. और हाथ जोड़कर कहता हूं कि आप सब लोग मुझपर प्रसन्न होकर मेरे शुभ मनोरथ पूर्ण करो ॥ २२ ॥

पुनि बंदौं शारद सुरसरिता ॥ युगुल पुनीत मनोहरचरिता ॥ १ ॥ ❋
मज्जन पान पाप हर एका ॥ कहत सुनत इक हर अबिबेका ॥ २ ॥ ❋

फिर मैं शारदा और गंगाके युगलको प्रणाम करता हूं कि जिनका चरित्र अतिपवित्र है ॥ १ ॥ एक यानी गंगा तौ नहाने और पान करनेसे पापोंको दूर हटा देती है और एक यानी शारदा कहने और सुननेसे अज्ञानको निवृत्त कर देती है ॥ २ ॥

गुरु पितु मातु महेश भवानी ॥ प्रणवौं दीनबंधु दिनदानी ॥ ३ ॥ ❋
सेवक स्वामि सखा सियपीके ॥ हित निरूप सबबिधि तुलसीके ॥ ४ ॥ ❋

उपदेश करनेके लिये गुरुरूप और शिक्षा करनेके लिये मातापितारूप महादेव पार्वतीको मैं वंदन करता हूं कि जो दीन पुरुषोंके प्रिय बंधु हैं और दिन कहे उत्तम अवसरके देनेहारे हैं ॥ ३ ॥

फिर कैसे हैं कि जो प्रभुके सदा तो सेवक हैं. मनुष्य नाट्यके समय स्वामीभी हैं, और ब्रह्मा विष्णु म-हेशस्वरूपसे सखारूपभी हैं. और तुलसीदासके तौ सब भांति निरुपाधिक हितकारी हैं ॥ ४ ॥

कलि बिलोकि जगहित हर गिरिजा ॥ साबर मंत्रजाल जिन सिरजा ॥ ५ ॥
अनमिल आखर अर्थ न जापू ॥ प्रगट प्रभाव महेशप्रतापू ॥ ६ ॥ *

जिन महादेव पार्वतीने इस कराल कलिकालको देखकर शाबरमंत्रोंका समुदाय प्रगट किया है ॥ ॥ ५ ॥ कि जिन मंत्रोंमें न तौ अक्षरोंकी मिलावट है और न अर्थकी संगति है और न कोई जपकी विधि है. परंतु केवल महादेवजीके प्रतापसे वे अपने प्रभावको प्रगट कर भूतआदिकी बाधाको शांत कर देते हैं ॥ ६ ॥

सो महेश मोपर अनुकूला ॥ करौं कथा मुदमंगलमूला ॥ ७ ॥ *
सुमिरि शिवाशिव पाइ पसाऊ ॥ बरणौं रामचरित चितचाऊ ॥ ८ ॥ *

जिन्होंने जगतके कल्याणके अर्थ ऐसे २ काम किये हैं वे सदाशिव मुझपर अनुकूल होओ कि जि-नके प्रतापसे मैं आनंद और मंगलकी मूल कारण प्रभुकी कथा बनाऊं ॥ ७ ॥ महादेव और पार्वतीका स्मरण कर उनकी कृपाको पाकर मैं बड़े चित्तके चावके साथ प्रभुके चरित्रका वर्णन करता हूं ॥ ८ ॥

भणित मोरि शिवकृपा बिभाती ॥ शशिसमाज मिलि मनहुँ सुराती ॥ ९ ॥
जो यह कथा सनेहसमेता ॥ कहिहहिँ सुनिहहिँ समुझि सचेता ॥ १० ॥
होइहहिँ रामचरण अनुरागी ॥ कलिमलरहित सुमंगलभागी ॥ ११ ॥ *

शिवजीकी कृपासे मेरी वाणी कैसी शोभायमान होगी कि मानों नक्षत्रमंडलसहित चंद्रमाको पाकर, सुन्दर रात्रि शोभायमान होती है ॥ ९ ॥ जो लोग सावधान होकर इस कथाको स्नेहसे कहेंगे, सुनेंगे और समझेंगे ॥ १० ॥ वे रामचन्द्रजीके चरणोंके परम अनुरागी हो जायँगे और कलि कालके मलसे रहित होकर सुन्दर मंगलके भागी हो जायँगे ॥ ११ ॥

दोहा–सपनेहुँ साँचेहु मोहिं पर, जो हरगौरि पसाउ ॥ *
तौ फुर होइ जो कहउँ सब, भाषाभणितप्रभाउ ॥ २३ ॥ *

जो स्वप्नमेंभी मुझपर शिवपार्वतीकी सच मुच कृपा होगी तौ मैं जो कुछ भाषा कवितामें कहूंगा उस सबका प्रभाव सत्य होगा अर्थात् मेरे मुखसे जो वाणी निकसेगी वो सब सत्य होगी ॥ २३ ॥

बंदौं अवधपुरी अतिपावनि ॥ सरयू सरि कलिकलुषनशावनि ॥ १ ॥ *
प्रणवौं पुरनरनारि बहोरी ॥ ममता जिनपर प्रभुहिं न थोरी ॥ २ ॥ *

प्रथम तौ मैं अतिपावन श्रीअयोध्याजीकों प्रणाम करता हूं, फिर कलिकालके कल्मष मि-टानेवाली सरयूनदीको वंदन करता हूं ॥ १ ॥ फिर उस नगरके रहनेवाले नरनारियोंको प्रणाम करता हूं कि जिनपर प्रभुकी ममता कुछ कम नहीं थी ॥ २ ॥

सियनिंदक अघओघ नसाये ॥ लोक बिशोक बनाइ बसाये ॥ ३ ॥ *
बंदौं कौसल्या दिशि प्राची ॥ कीरति जासु सकल जग माची ॥ ४ ॥ *

देखिये सीताकी निंदा करनेवाला धोबी महापापी था पर उसकेभी पापपुंजका नाश करके प्रभुने उसको परमानंदका धाम श्रीवैकुंठवास दिया ॥ ३ ॥ मैं कौसल्यारूप पूर्व दिशाको प्रणाम करता हूं कि जिसका सुयश तमाम जगतमें फैल रहा है ॥ ४ ॥

प्रगटे जहँ रघुपति शशि चारू ॥ विश्वसुखद खलकमल तुषारू ॥ ५ ॥ *
दशरथराउ सहित सबरानी ॥ सुकृत सुमंगलमूरति खानी ॥ ६ ॥ *

जैसे पूर्व दिशामें चंद्रमा प्रगट होता है ऐसे जिस कौसल्यामें, जगतको सुख देनेवाले और खलरूप कमलोंके लिये तुषार (बर्फ) रूप श्रीरामचंद्रजी प्रगट हुए तिन कौसल्याको मेरा प्रणाम है ॥ ५ ॥ सुकृतकी मूर्ति और सुमंगलकी खानि श्रीदशरथराजाको सब रानियोंके साथ मैं प्रणाम करता हूं ॥ ६ ॥

करौं प्रणाम कर्ममनबानी ॥ करहु कृपा सुतसेवक जानी ॥ ७ ॥ *
जिनहिँ बिरचि बड़ भयउ बिधाता ॥ महिमाअवधि राम पितुमाता ॥८॥ *

मन, बचन, कायासे प्रणाम करता हूं सो वे मुझे अपने पुत्रका सेवक जानकर मुझपर कृपा करो ॥ ७ ॥ जिनको उत्पन्नकर विधाताभी बड़ा हुआ है, वे रामके माता पिता महिमाके परम अवधि हैं ॥८॥

सोरठा—बंदौं अवधभुवाल, सत्यप्रेम जेहि रामपद ॥ *
बिछुरत दीनदयाल, प्रियतनु तृणइव परिहरेउ ॥ ९ ॥ *

हम अयोध्याके पति श्रीदशरथजीको प्रणाम करते हैं कि जिनका प्रभुके चरणोंमें वास्तविक प्रेम था; क्योंकि जिस समय दीनदयालु श्रीरामका वियोग हुआ उसी क्षण उन्होंने अपने प्यारे शरीरको तृणकी तरह त्याग दिया ॥ ९ ॥

प्रणवौं परिजनसहित बिदेहू ॥ जाहि रामपद गूढ़ सनेहू ॥ १ ॥ *
योग भोगमहँ राखेउ गोई ॥ राम बिलोकत प्रगटेउ सोई ॥ २ ॥ *

अपने कुटुम्बसहित जनकराजाको मैं प्रणाम करता हूं, कि जिनको प्रभुके चरणोंमें परमगूढ़ स्नेह था ॥ १ ॥ यद्यपि राजा जनकने अपना योग, भोगके अन्दर खूब छिपा रक्खा था पर प्रभुके दर्शन होतेही वह प्रगट हो आया ॥ २ ॥

प्रणवौं प्रथम भरतके चरणा ॥ जासु नेम व्रत जाइ न बरणा ॥ ३ ॥ *
रामचरणपंकज मन जासू ॥ लुब्धमधुप इव तजै न पासू ॥ ४ ॥ *

मैं प्रथम[2] भरतके चरणोंको प्रणाम करता हूं कि जिनके नेम और व्रत वर्णन नहीं किये जाते ॥ ॥ ३ ॥ और उनका मन प्रभुके चरणकमलोंका सामीप्य कैसे नहीं छोड़ता था कि जैसे लोभी भौंरा कमलका पास नहीं छोड़ता ॥ ४ ॥

---

१ एक धोबीकी स्त्री अपने नैहर जा बैठी.पीछे तीन दिनोंमें घर आई तब उस धोबीने झिड़ककर अपनी स्त्रीसे कहा कि मैं राम नहीं हूं कि जिसने ग्यारह महीना राक्षसके घरमें रही हुई स्त्रीको घरमें रखलिया, मैं तुझको कभी नहीं रक्खूंगा तेरी इच्छा हो वहां चलीजा. ऐसे धोबीने कहा सो बात प्रभुने अपने कानोंसे सुनी तब लक्ष्मणको साथ देकर सीताको तो गंगापार ऋषियोंके आश्रममें भेज दिया,और उस धोबीको अपराध माफ़ कर उसको वैकुंठवास दिया.

२ तीनों भाइयोंमें प्रथम. अथवा रामभक्तोंमें प्रथम.

बंदौं लक्ष्मणपदजलजाता ॥ शीतल सुभग भक्तसुखदाता ॥ ५ ॥ ❋
रघुपतिकीरति बिमल पताका दंडसमान भयो यश जाका ॥ ६ ॥ ❋

अब मैं लक्ष्मणके चरणकमलोंको वंदन करता हूं कि जो बड़े शीतल, सुन्दर और भक्त-लोगोंको सुख देनेवाले हैं ॥ ५ ॥ जिन लक्ष्मणका यश रामचन्द्रजीकी उज्ज्वल कीर्तिरूप पताकाके लिये दंडके समान हुआ है ॥ ६ ॥

शेषसहस्रशीस जगकारण ॥ जो अवतरेउ भूमिभयटारण ॥ ७ ॥ ❋
सदा सो सानुकूल रह मोपर ॥ कृपासिंधु सौमित्रि गुणाकर ॥ ८ ॥ ❋

भूमिका भय मिटानेके लिये और जगत्का कल्याण करनेके कारण जो साक्षात् सहस्रशिरवाले शेषजीका अवतारही हुआ था ॥ ७ ॥ वे गुणोंकी खानि और कृपासिंधु श्रीसुमित्रानंदन लक्ष्मण मुझपर सदा सानुकूल रहो ॥ ८ ॥

रिपुसूदनपदकमल नमामी ॥ शूर सुशील भरतअनुगामी ॥ ९ ॥ ❋
महाबीर बिनऊँ हनुमाना ॥ राम जासु यश आपु बखाना ॥ १० ॥ ❋

मैं शत्रुघ्नके चरणकमलोंको प्रणाम करता हूं कि जो बड़ा शूर, वीर, सुशील और भरतके अनुगामी है ॥ ९ ॥ मैं महावीर श्रीहनुमानजीसे प्रार्थना करता हूं कि जिनका यश प्रभुने अपने श्रीमुखसे बखाना है ॥ १० ॥

सोरठा–बंदौं पवनकुमार, खलबन पावक ज्ञानघन ॥ ❋
जासु हृदयआगार, बसहिँ राम शरचापधर ॥ १० ॥ ❋

मै पवननंदन श्रीहनुमानको प्रणाम कहता हूं कि जो दुष्टजनरूप बनको भस्म करनेके लिये अग्निस्वरूप और ज्ञानघन है, फिर कैसे है कि जिनके हृदयागारमें धनुष बाण धारण करनेहारे श्रीरामचन्द्रजी सदा निवास करते है ॥ १० ॥

कपिपति ऋक्ष निशाचरराजा ॥ अंगदादि जे कीशसमाजा ॥ १ ॥ ❋
बंदौं सबके चरण सुहाये ॥ अधम शरीर राम जिन पाये ॥ २ ॥ ❋

कपिपति श्रीसुग्रीव और रिच्छराज जाम्बवान्, राक्षसोंका राजा बभीषण और अंगद् वगैरह वानरसमूह ॥ १ ॥ कि जिन्होंने वानर व राक्षसका अधम शरीर पाकर रामचन्द्रजीको पाया है; उन सबके सुन्दर चरणकमलोंको मैं प्रणाम करताहूं ॥ २ ॥

रघुपतिचरणउपासक जेते ॥ खग मृग सुर नर असुर समेते॥ ३ ॥ ❋
बंदौं पदसरोज सबकेरे ॥ जे बिनुकाम रामके चेरे ॥ ४ ॥ ❋

जो जो पक्षी, मृग, देवता, दैत्य और मनुष्यसमेत प्रभुके चरणकमलोंके उपासक हैं ॥ ३ ॥ और जो निष्कारण प्रभुके चरणोंके चेरे हैं उन सबके चरणारविंदोंको मैं प्रणाम करताहूं ॥ ४ ॥

शुक सनकादि आदिमुनि नारद ॥ जे मुनिवर विज्ञानविशारद ॥ ५ ॥ ❋
प्रणऊं सबहिँ धरणि धरि शीशा ॥ करहु कृपा जन जानि मुनीशा ॥६ ॥❋

जो शुकदेवजी, सनक, सनंदन, सनत्कुमार, सनातन और नारद आदि साक्षात् ब्रह्मज्ञानमें

निपुण मुनीश्वर है ॥ ५ ॥ उन सबको मैं पृथ्वीपर शिर टेककर प्रणाम करताहूं. सो वे लोग मुझे अपना जन जानकर मुझकर कृपा करो ॥ ६ ॥

जनकसुता जगजननि जानकी ॥ अतिशय प्रिय करुणानिधानकी ॥ ७ ॥
ताके युगपदकमल मनाऊं ॥ जासु कृपा निर्मल मति पाऊं ॥ ८ ॥ ❋

जगत्जननी जनककी कन्यारूप श्रीजानकीजी कि जो करुणानिधान श्रीरामचन्द्रजीकी अतिशय प्रिया है ॥ ७ ॥ तिनके चरणकमलोंके युगुलको मैं बारंबार मनाताहूं कि जिनकी कृपासे मैं, निर्मल बुद्धि पाऊं ॥ ८ ॥

पुनि मन बचन कर्म रघुनायक ॥ चरणकमल बंदौं सबलायक ॥ ९ ॥ ❋
राजिवनयन धरे धनुसायक ॥ भक्तबिपतिभंजन सुखदायक ॥ १० ॥ ❋

फिर प्रभुके चरणकमलोंको मैं मन बचन कायसे प्रणाम करताहूं कि जो सब लायक है ॥ ९ ॥ कैसे है प्रभु ? कि कमलकेसे सुन्दर जिनके नेत्र हैं, जो धनुषबाण धारण किये हैं और भक्तलोगोंकी बिपत्तिके मिटानेवाले तथा सुखके देनेहारे हैं ॥ १० ॥

दोहा-गिरा अर्थ जलबीचि सम, कहियत भिन्न न भिन्न ॥ ❋
बंदौं सीतारामपद, जिनहिँ परमप्रिय खिन्न ॥ २४ ॥ ❋

जो सीता और राम, बाणी और अर्थके समान, तथा जल व तरंगके समान भिन्नरूप व अभिन्नरूपसे बर्णन किये जाते हैं तिन सीतारामके चरणोंको मै प्रणाम करता हूं कि जिन सीतारामको खिन्न यानी दीन दुःखी पुरुष अति प्रिय लगते हैं ॥ २४ ॥

बंदौं रामनाम रघुबरके ॥ हेतु कृशानु भानु हिमकरके ॥ १ ॥ ❋
बिधि हरिहरमय बेद प्राणसो ॥ अगुण अनूपम गुणनिधानसो ॥ २ ॥ ❋

मैं प्रभुके **रामनाम** को वंदन करताहूं कि जो अग्नि, सूर्य और चन्द्रमाका कारणरूप है तहां 'रकार' तो अग्निका कारण है 'आकार' सूर्यका और 'मकार' चंद्रमाका कारण है ॥ १ ॥ फिर वो मंत्र कैसा है ब्रह्मा, विष्णु, महेश एतद्रूप है, वेदका तो साक्षात् प्राणही है, और अवगुण कहे सत्त्व, रज, तमोगुण करके रहित है और अनुपम कहे उपमारहित यानी अद्वितीय है और गुणोंका निधान यानी धामही है ॥ २ ॥

महामंत्र जोइ जपत महेशू ॥ काशी मुक्तिहेतु उपदेशू ॥ ३ ॥ ❋
महिमा जासु जान गणराऊ ॥ प्रथम पूजियत नामप्रभाऊ ॥ ४ ॥ ❋

रामनाम महामंत्र है, अतएव महादेव सदा इसका जप करते है और काशीवास करनेवाले लोगोंको मुक्त करनेके लिये महादेव इसी मन्त्रका उपदेश करते हैं ॥ ३ ॥ इस मन्त्रकी महिमा गणेशजी खूब अच्छीतरह जानते है; क्योंकि इसी नामके प्रभावसे गणेशजी सबसे प्रथम पूजे जाते है ॥ ४ ॥

१ एक समय ब्रह्माजीने देवताओंसे कहा कि-पहले किसकी पूजा करें ? ऐसे जब देवता आपसमें लड़ने लगे तब ब्रह्माजीने कहा कि जो सबसे पहले पृथ्वीप्रदक्षिणा कर आवेगा उसकी पूजा प्रथम होगी यह बात सुन स्वामिकार्तिक मयूरपर सवार हो पृथ्वीप्रदक्षिणा करनेको चले तब गणेशजीके मनमें बड़ी चिन्ता हुई कि अब क्या करें ? यह बात कैसे बने ? तब नारदजीने गणेशजीसे कहा कि तुम रामनाम लिखकर उसे प्रदक्षिणा करलो सो तुम्हारे पृथ्वीप्रदक्षिणा होजायगी क्योंकि रामनाम व्यापक है तासों सर्व ब्रह्मांड उसमें आगये; गणेशजीने वैसाही किया फिर स्वामि कार्तिकने आकर गणेशजीको आगे बैठा देख यहांके समाचार सुन मनमें धीरज धरा.

जान आदिकवि नामप्रतापू ॥ भयउ शुद्ध करि उलटा जापू ॥ ५ ॥ *
सहसनामसम सुनि शिवबानी ॥ जपि जेंई शिवसंग भवानी ॥ ६ ॥ *

और इस नामका प्रभाव वाल्मीकि मुनिभी अच्छीतरह जानते है, क्योंकि वे इस मंत्रका उलटा जप करनेसे महापवित्र ऋषिका शरीर पाये है ॥ ५ ॥ एक समय पार्वतीजी विष्णुसहस्रनामका पाठ कर रहीं थीं इतनेमे महादेवजीने उनसे कहा भोजन करने चलो उन्होंने कहा पाठ पूर्ण होनेपर चलूंगी. महादेवजीने कहा 'रामनाम' 'सहस्रनाम'हीके समान है. महादेवजीके मुखसे ये बचन सुनकर पार्वतीजीने रामनामका जप कर शिवजीके संग भोजन किया ॥ ६ ॥

हर्षे हेतु हेरि हरहीको ॥ किय भूषण तियभूषण तीको ॥ ७ ॥ *
नामप्रभाव जान शिव नीके ॥ कालकूट फल दीन्ह अमीके ॥ ८ ॥

तब पार्वतीजीके हृदयमें रामनामकी ओर अतिशय प्रीति देखकर महादेवजी अति प्रसन्न हुए और रामनामके प्रभावसे उसे अपनी अपेक्षा अधिक पवित्र जानकर स्त्रियोंमे रत्नरूप श्रीपार्वतीजीको अपना भूषण बनाया यानी अर्द्धांगी करी ॥ ७ ॥ रामनामका प्रभाव शिवजीही अच्छीतरह जानते है, क्योंकि कालकूट यानी विषनेभी उनको अमृतका फल दिया है[1] ॥ ८ ॥

दोहा-वर्षाऋतु रघुपतिभगति, तुलसी शालि सुदास ॥ *
रामनाम वर वर्ण युग, श्रावण भादों मास ॥ २५ ॥ *

रामचन्द्रजीकी भक्ति है सोही तौ वर्षाऋतु है और परम दास जो तुलसीदास है सोही चावल हैं, और रामनामके जो दो सुन्दर अक्षर है सोही श्रावण और भादों दो महीने है, जैसे शालि यानी धानके केवल वर्षाऋतु और श्रावण भाद्रपदकी वर्षाका आधार है ऐसे तुलसीदासके प्रभुकी भक्ति और रामनामका आधार है ॥ २५ ॥

आखर मधुर मनोहर दोऊ ॥ वर्ण बिलोचन जनजिय जोऊ ॥ १ ॥ *
सुमिरत सुलभ सुखद सबकाहू ॥ लोकलाहु परलोक निबाहू ॥ २ ॥ *

राम ये दोनों अक्षर अतिशय मधुर और परम रम्य है और सर्व वर्णोंके ऊपर रहनेसे उन सबके नेत्ररूप है तथा जन यानी भक्तलोगोंके रामका स्वरूप देखनेके लिये तौ साक्षात् जीवके नेत्ररूपही हैं जिसके रामनामरूप नेत्र नहीं वह अंधा है ॥ १ ॥ रामनाम स्मरण करते बड़ा सुलभ है और सबको सुख देनेवाला है. इसका जप करनेसे लोकमें तौ लाभ और परलोकमें निर्वाह हो जाता है ॥ २ ॥

कहत सुनत सुमिरत सुठि नीके ॥ रामलषणसम प्रिय तुलसीके ॥ ३ ॥ *
बर्णत बर्ण प्रीति बिलगाती ॥ ब्रह्मजीवसम सहजसँघाती ॥ ४ ॥ *

चाहे इसको कहो, चाहे सुनो, चाहे स्मरण करो. यह नाम सर्व प्रकारसे बहुत अच्छा है. तुलसीदासजी कहते है कि मेरे तौ रामनाम, राम और लक्ष्मणके बराबर प्रिय हैं. क्योंकि रकार रामरूप है और मकार लक्ष्मणरूप है ॥ ३ ॥ जो इन दोनों वर्णोंको भिन्न भिन्न बर्णन करते हैं तौ प्रीतिमें अन्तर आता है; क्योंकि इनके आकार स्थान वगैरह सब अलग अलग हैं सो जब एकका बर्णन करते

---

[1] जब देवता और दैत्योंने समुद्रमथन किया तब समुद्रमेंसे विष प्रगट हुआ उससे सारा संसार जलने लगा तब महादेवने करुणा करके विषपान किया सो वह जहर उनको अमृतरूप हुआ और महादेवका नीलकंठ नाम पड़ा.

हैं तब छूट जाता है इसलिये इन दोनोंका वर्णन ऐसी रीतिसे करना चाहिये कि जिसमें दोनोंका साथ वर्णन हो सके और विशेषणभी ऐसे कहने चाहिये कि जो दोनों अक्षरोंके घटक हों, क्योंकि ये दोनों वर्ण ब्रह्म और जीवके समान सहजसँघाती हैं. इसमेंश्रुति प्रमाण है–" द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते । एकस्तयोः स्वादति पिप्पलान्नं अन्यो निरन्नोऽपि बलेन भूयान् " ॥ ४ ॥

नरनारायणसरिस सुभ्राता ॥ जगपालक विशेष जनत्राता ॥ ५॥ ❀
भक्ति सुतिय कल कर्ण विभूषण ॥ जगहित हेतु बिमल विधु पूषण ॥६॥ ❀

ये दोनों वर्ण नरनारायणके समान सुन्दर भाई हैं कभी अलग नहीं होते जैसे नरनारायण जगत्का पालन करने परभी अपने भक्तजनोंकी विशेषकरके रक्षा करते हैं ऐसे ये वर्णभी जगत्पालक होनेपरभी अपनेको हृदयमें रखनेवालोंकी विशेष रक्षा करते हैं ॥ ५ ॥ फिर कैसे हैं भक्तिरूप सुन्दरीके कानोंके सुन्दर आभूषणरूप हैं और जगत्के कल्याणके निमित्त साक्षात् सूर्यचन्द्ररूप हैं ॥ ६ ॥

स्वादु तोषसम सुगति सुधाके ॥ कमठ शेषसम धर वसुधाके ॥ ७ ॥ ❀
जनमनमंजु कंज मधुकरसे ॥ जीह यशोमति हरि हलधरसे ॥ ८ ॥ ❀

फिर कैसे हैं कि सुगति कहे मोक्षरूप सुधा (अमृत) के स्वाद और सन्तोषरूप हैं. रामनामके स्मरणसे सुगतिको स्वाद और सन्तोष प्राप्त होता है और पृथ्वीको धारण करनेके लिये ये दोनों शेष और कमठके समान है ॥ ७ ॥ भक्तलोगोंके मनरूप मनोहर कमलोंके लिये ये साक्षात् भ्रमररूप और जीभरूप यशोदाको प्रसन्न करनेके लिये साक्षात् रामकृष्ण मूर्तिही हैं ॥ ८ ॥

दोहा–एकछत्र इक मुकुटमणि, सब बर्णनपर जोउ ॥ ❀
तुलसी रघुवर नामके, बर्ण बिराजत दोउ ॥ २६ ॥ ❀

तुलसीदासजी कहते हैं कि रघुवरके नामके दोनों अक्षर तमाम अक्षरोंके सर्वोपरि हैं क्योंकि वर्णमालामेंभी देख लीजिये एक वर्ण यानी रकार तो सब बर्णोंके ऊपर छत्ररूप होकर रहता है और एक यानी मकार सब वर्णोंके ऊपर मुकुटमणि होकर रहता है ॥ २६ ॥

समुझत सरस नाम अरु नामी ॥ प्रीति परस्पर प्रभु अनुगामी ॥ १ ॥ ❀
नाम रूप दोउ ईश उपाधी ॥ अकथ अनादि सुसामुझ साधी ॥ २ ॥ ❀

नामीसे नामकी महिमा अधिक है सो कहते हैं. साधारण रीतिसे समझकर देखते हैं तब तो नाम और नामी दोनों बराबरही दीख पड़ते हैं. क्योंकि इन दोनोंकी परस्पर प्रीति स्वामी और सेवककीसी है अतएव नाम और रूप इन दोनोंको परमेश्वरको लखानेके लिये मुख्य लक्षण कहे हैं ॥ १ ॥ नाम और रूपकी महिमा अपार है इसीसे इनको अकथनीय और अनादि कहते हैं सो इस बातका निरूपण शुद्ध ब्रह्मज्ञानवाले स्वायंभुव, कपिल, नारद और शुकप्रभृतिने किया है ॥ २ ॥

को बड़ छोट कहत अपराधू ॥ सुनि गुणभेद समुझि हैं साधू ॥ ३ ॥ ❀
देखिय रूप नामआधीना ॥ रूपज्ञान नहिँ नामविहीना ॥ ४ ॥ ❀

इन दोनोंमें कौन बड़ा और कौन छोटा ? यह कहते अपराध लगता है इसलिये कुछ कह नहीं

सके ॥ ३ ॥ तथापि आगे जो गुण वर्णन किये जाते हैं उनसे जो फर्क है उसे संतलोग समझ लेंगे. रूप नामके आधीन प्रत्यक्ष देखा जाता है, क्योंकि नामके बिना रूपका ज्ञान नहीं होता ॥ ४ ॥

रूपविशेष नाम बिनु जाने ॥ करतलगत न परहिँ पहिँचाने ॥ ५ ॥ *
सुमिरिय नाम रूप बिनु देखे ॥ आवत हृदय सनेह बिशेखे ॥ ६ ॥ *

चाहे कोई बिना जानी चीज हाथमें धरी क्यों न होवे पर नाम जाने बिना वह पहिँचानी नहीं जा सक्ती ॥ ५ ॥ और रूपको बिना देखे नामका बेशक स्मरण कर सकते हैं और स्नेहके द्वारा वह हृदयमेंभी आ जाता है ॥ ६ ॥

नामरूपगति अकथ कहानी ॥ समुझत सुखद न जात बखानी ॥ ७ ॥ *
अगुण सगुणबिच नाम सुसाखी ॥ उभयप्रबोधक चतुर दुभाखी ॥ ८ ॥ *

अतएव हम कहते हैं कि नाम और रूपकी गति बड़ी अकथनीय कहानी है. चाहे उसको समझनेसे वो सुख जरूर देती है पर कहनेमें तो कभी नहीं आ सकती ॥ ७ ॥ और नाममें रूपसे विशेष गुण हैं; क्योंकि नाम अगुण कहे समस्त व्यापारशून्य परब्रह्म और सगुण कहे षडैश्वर्यादि गुणसम्पन्न, नृसिंह वामन वराह आदि विग्रहात्मक ब्रह्म इन दोनोंके बीचमें साक्षी अर्थात् नामसे अगुण और सगुण दोनों स्वरूप जाने जातेहैं. जैसे चतुर दुभाषी पुरुष दोनोंकी भाषा बोलकर दोनोको समझा देता है और उनका स्वरूपज्ञान करवा देता है ऐसे नाम दोनोंका स्वरूपज्ञान करवा देता है ॥ ८ ॥

दोहा–रामनाम मणि दीप धरु, जीह देहरी द्वार ॥ *
तुलसी भीतर बाहिरौ, जो चाहसि उजियार ॥ २७ ॥ *

तुलसीदासजी कहते हैं कि–हे जन ! जो तू बाहर और भीतर उजाला चाहता है तो मुखरूप द्वारकी जीभरूप देहलीपर रामनामरूप मणिके दीपकको धर; जैसे देहलीपर दीपक धरनेसे दोनों तर्फ यानी बाहर और भीतर उजाला हो जाता है, ऐसे मनुष्यशरीररूप घरके मुखरूप द्वारकी जीभरूप देहलीपर रामनामरूप दीपक रखनेसे यानी जीभसे रामनाम लेनेसे अन्तःकरण और बाह्येंद्रिय सबमें प्रकाश यानी ज्ञान प्राप्त हो जाता है ॥ २७ ॥

नाम जीह जपि जागहिँ योगी ॥ बिरति बिचार प्रपंचबियोगी ॥ १ ॥ *
ब्रह्मसुखहिँ अनुभवहिँ अनूपा ॥ अकथ अनामय नाम न रूपा ॥ २ ॥ *

आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी और ज्ञानी इन चारों प्रकारके भक्तोंकी सिद्धि रामनामके आधीन है सो कहते हैं कि वैराग्यवान्, विचारशील और प्रपंचरहित, योगीजन जिस नामका जीभसे जप करके सदा जागते रहते हैं.यानी सावधान रहते हैं. सो गीतामेंभी कहा है "या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी" ॥ १ ॥ और अकथनीय, अनूपम, अनामय और नामरूपरहित ब्रह्मानंदका साक्षात् अनुभव करते हैं ॥ २ ॥

जाना चहहिँ गूढ़गति जेऊ ॥ नाम जीह जपि जानहिँ तेऊ ॥ ३ ॥ *
साधक नाम जपहिँ लय लाये ॥ होहिँ सिद्ध अणिमादिक पाये ॥ ४ ॥ *

जो मनुष्य परम गूढ़ तत्त्वको जानना चाहते हैं वे जीभसे रामनामका जप कर उस तत्त्वको

जान लेते है ॥ ३ ॥ और साधक यानी सिद्धिकी कामनावाले पुरुष प्रभुमें लयलीन होकर जो रामनामका जप करते हैं तौ वे अवश्य सिद्ध हो जाते हैं और अणिमादिक सिद्धियोंको प्राप्त हो जाते हैं. अणिमादि कुल २३ सिद्धियां हैं. जैसे अणिमा १ महिमा २ लघिमा ३ गरिमा ४ प्राप्ति ५ प्राकाम्य ६ ईशिता ७ वशिता ८ ये आठ सिद्धियां तौ भगवत्संबंधी हैं. दश गुणसंबंधी हैं जैसे अनूर्मिमत्व १ दूरश्रवण २ दूरदर्शन ३ मनोजव ४ कामरूप ५ परकायप्रवेशन ६ स्वच्छंदमृत्यु ७ देवानां सहक्रीडानुदर्शन ८ यथासंकल्पसंसिद्धि ९ आज्ञा अप्रतिहतागति १० पुनि पांच क्षुद्रसिद्धियां हैं जैसे त्रिकालज्ञता १ द्वंद्वका अभाव २ परचित्तादिअभिज्ञता ३ अग्नि, सूर्य जल और विष वगैरहको रोक देना ४ और अपराजय ५ ॥ ४ ॥

जपहिं नाम जन आरत भारी ॥ मिटहिँ कुसंकट होहिँ सुखारी ॥ ५ ॥ ❋
रामभक्त जग चारि प्रकारा ॥ सुकृती चारिउ अनघ उदारा ॥ ६ ॥ ❋

जो महा आर्त लोग रामनाम जपते हैं उनका महा बिकट संकट मिट जाता है और वे सुखी हो जाते हैं ॥ ५ ॥ जगत्में प्रभुके चार प्रकारके ये भक्त हैं कि ज्ञानी, जिज्ञासु, अर्थार्थी और आर्त सो ये चारोंही सुकृती, निष्पाप और उदार हैं ॥ ६ ॥

चहुँ चतुरनकहँ नाम अधारा ॥ ज्ञानी प्रभुहिं विशेष पियारा ॥ ७ ॥ ❋
चहुँयुग चहुँश्रुति नाम प्रभाऊ ॥ कलिविशेष नहिं आन उपाऊ ॥ ८ ॥ ❋

क्योंकि इन चारोंही चतुरोंको प्रभुके नामका आधार है तथापि ज्ञानी पुरुष तौ प्रभुके अत्यंतही प्यारा है. तहां प्रमाण गीता अध्याय७ श्लोक १६ "आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरच भरतर्षभ ॥ अ० ७ श्लोक १७ तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एक बुद्धिर्विशिष्यते" ॥ ७ ॥ नामका प्रभाव चारों युगोंमें और चारों वेदोंमें प्रसिद्ध है. तहांभी कलियुगमें तौ विशेष करके यही उपाय है, दूसरा हैही नहीं ॥ ८ ॥

दोहा—सकल कामनाहीन जे, रामभक्तिरसलीन ॥ ❋
नाम सुप्रेम पीयूषह्रद, तिनहु किये मन मीन ॥ २८ ॥ ❋

जो भक्तलोग सर्व कामनाओंकिकरके रहित हैं और रामचंद्रजीके भक्तिरसमें लयलीन हैं वेभी रामनामके प्रेमरूप अमृतमय ह्रदमें अपने मनको मीनरूप करके बास कराते हैं ॥ २८ ॥

अगुण सगुण दोउ ब्रह्मस्वरूपा ॥ अकथ अगाध अनादि अनूपा ॥ १ ॥ ❋
मोरे मत बड़ नाम दुहूँते ॥ किय जेहि युग निजबश निजबूते ॥ २ ॥ ❋

निर्गुण और सगुण ये दोनों ब्रह्मके स्वरूप अकथनीय, अगाध, अनादि और अनुपम हैं ॥ १ ॥ तथापि मेरे मतमें तौ दोनोंकी अपेक्षा नाम बड़ा है; क्योंकि उसने अपनी सामर्थ्यसे दोनोंको अपने वश कर लिया है ॥ २ ॥

प्रौढ़सुजन जन जानहिं जनकी ॥ कहहु प्रतीतिप्रीति रुचि मनकी ॥ ३ ॥ ❋
एक दारुगत देखिय एकू ॥ पावक युगसम ब्रह्मबिवेकू ॥ ४ ॥ ❋

तुलसीदासजी कहते हैं कि जो प्रौढ़ कहे महाविद्वान् और सुजन लोग हैं उनके मनकी बात तौ वे जानें. मैं जो यह कहता हूं सो तौ मेरी प्रतीति कहे भरोसा और मनकी रुचिके अनुसार कहता हूं ॥ ३ ॥ जैसे अग्नि जगत्में दो प्रकारका है. एक तौ काष्ठमें व्याप्त होकर अप्रत्यक्षरूपसे

रहता है और दूसरा प्रत्यक्षरूप है, ऐसेही ब्रह्मके स्वरूपको विचारकर देखते हैं तो वोभी दो प्रकारका दीख पड़ता है ॥ ४ ॥

उभय अगम युग सुगम नामते ॥ कहउँ नाम बड़ ब्रह्म रामते ॥ ५ ॥ *
व्यापक एक ब्रह्म अविनाशी ॥ जड़ चेतन घन आनँदराशी ॥ ६ ॥ *

एक तो निर्गुण और एक सगुण ये परमेश्वरके दोनों स्वरूप सब प्रकारसे अगम्य है पर नामके प्रभावसे दोनों सुगम हो जाते है. अतएव मैं परब्रह्मस्वरूप श्रीरामचंद्रसे नामको बड़ा कहता हूं ॥ ५ ॥ सर्वव्यापक, एक, अविनाशी, आनंदकी ढेरी जड़ और चेतन सबमें व्याप्त है ॥ ६॥

अस प्रभु हृदय अछत अविकारी ॥ सकलजीव जग दीन दुखारी ॥७॥ *
नाम निरूपण नाम जतनते ॥ सोउ प्रगटत जिमि मोलरतनते ॥८॥ *

निर्विकार सच्चिदानंदस्वरूप परब्रह्म प्रभु, अंतर्यामि रूपसे सबके हृदयमें विराजते है तथापि जगतमें सब जीव दीन और दुःखी देख पड़ते है, कारण यह कि उस परब्रह्मको वे जीव जानते नहीं जिससे दीन और दुःखी रहते है ॥ ७ ॥ और जब नामके द्वारा उसका निरूपण किया जाता है और नामरूप यत्न किया जाता है तब वोही अव्यक्तरूपसे रहे हुए प्रभु हृदयके भीतर प्रगट हो जाते है. जैसे रत्नका मूल्य रत्नमें रहता है, पर पारखीके बिना उसकी पहिचान नहीं होती और उसका मोल प्रगट नहीं होता. ऐसे प्रभुके हृदयमें विराजनेपरभी जबलों नामद्वारा उनको नहीं पहिचान लेते तबलों उनके स्वरूपका ज्ञान नहीं होता और दुःख नहीं मिटता अर्थात् नामहीसे स्वरूपज्ञान होता है और उससे दुःखकी निवृत्ति और परमानन्दकी प्राप्ति होती है ॥ ८ ॥

दोहा–निर्गुणते इहि भांति बड़, नामप्रभाव अपार ॥ *
कहउँ नाम बड़ रामते, निजविचारअनुसार ॥ २९ ॥ *

तुलसीदासजी कहते है कि–इसतरह नामका प्रभाव प्रभुके निर्गुण स्वरूपसेभी बहुत बड़ा है और उसकी महिमा अपार है. श्रीरघुनाथजीसेभी नाम बड़ा है यह मैं मेरे विचारके अनुसार कहता हूं सो सुनो ॥ २९ ॥

राम भक्तहित नरतनुधारी ॥ सहि संकट किय साधु सुखारी ॥ १ ॥ *
नाम सप्रेम जपत अनयासा ॥ भक्त होहिँ मुदमंगलवासा ॥ २ ॥ *

रामचन्द्रजीको भक्तोंका हित करनेके लिये मनुष्यदेह धारण करनी पड़ी और वहां अनेक संकट सहने पड़े तब भक्तलोगोंका संकट कटा और वे सुखी हुए ॥ १ ॥ और नामका प्रभाव ऐसा है कि–जिसका प्रेमसहित जप करतेही भक्तोंके सब संकट कट जाते हैं. खेद मिट जाता है. आनंद और मंगलका निवास हो जाता है ॥ २ ॥

राम एक तापसतिय तारी ॥ नाम कोटिखल कुमति सुधारी ॥ ३ ॥ *
ऋषिहित राम सुकेतुसुताकी ॥ सहितसेन सुत कीन्ह बिबाकी ॥ ४ ॥ *

रामचन्द्रजीने तो एक ऋषिकी स्त्रीका उद्धार किया और नामके प्रभावसे कई करोड़ों दुर्बुद्धि खल सुधरे हैं और सुधरते जाते हैं ॥ ३ ॥ रामचन्द्रजीने तो एक ऋषि (विश्वामित्रजी) के लिये ताटकाको और उसके पुत्र (मारीच) को सेनाके साथ पराजित किया ॥ ४ ॥

सहित दोष दुख दास दुरासा ॥ दलइ नाम जिमि रवि निशि नासा ॥५॥
भंजेउ राम आपु भवचापू ॥ भवभयभंजन नामप्रतापू ॥ ६ ॥ ❋

और नाम, मात्र भक्तजनोंके तमाम दोष, दुःख और दुराशाओंका नाश करता है. जैसे सूर्य रात्रिका नाश करते है ऐसे नाम अज्ञानको मिटा देता है ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजीने तौ खुद जाकर केवल भव यानी महादेवजीके धनुषकोही तोड़ा था. और नामका प्रभाव भव यानी संसारके भयको तोड़ देता है ॥ ६ ॥

दंडक बन प्रभु कीन्ह सुहावन ॥ जन मन अमित नाम किय पावन ॥७॥
निशिचरनिकर दलेउ रघुनंदन ॥ नाम सकल कलिकलुष निकंदन ॥८॥

प्रभुने तौ केवल दंडकबनकोही सुहावना बनाया था. और नाम असंख्यात लोगोंके मनको पवित्र करता है ॥ ७ ॥ रामचन्द्रजीने तौ राक्षसोंके कुलका संहार किया था और नाम कलियुगके तमाम कल्मषों (पापों) को नाश करता है ॥ ८ ॥

दोहा—शबरी गीध सुसेवकनि, सुगति दीन्ह रघुनाथ ॥ ❋
नाम उधारे अमित खल, वेदविदित गुणगाथ ॥ ३० ॥ ❋

रामचन्द्रजीने तौ केवल शबरी और गिद्ध जटायुको परम गति दी कि जो आपके परम सेवक थे. और नामने कई खलोंका उद्धार किया है सो नामकी महिमा वेदमेंभी प्रसिद्ध है ॥ ३० ॥

राम सुकंठ बिभीषण दोऊ ॥ राखे शरण जान सबकोऊ ॥ १ ॥ ❋
नाम अनेक गरीब निवाजे ॥ लोक बेद बर बिरद बिराजे ॥ २ ॥ ❋

यह बात सब कोई जानते है कि—रामचन्द्रजीने बिभीषण और सुग्रीव इन दोनोंकोहीअपने शरण राखे ॥ १ ॥ और नामने कई गरीब दीनोंपर कृपा करी है सो यह नामका सुयश लोक और वेद दोनोंमे विराजमान है ॥ २ ॥

राम भालुकपिकटक बटोरा ॥ सेतुहेतु श्रम कीन्ह न थोरा ॥ ३ ॥ ❋
नाम लेत भवसिंधु सुखाहीं ॥ करहु बिचार सुजन मनमाहीं ॥ ४ ॥ ❋

रामचन्द्रजीने समुद्रमें सेतु बांधनेके लियेभी कुछ परिश्रम कम नहीं किया था. बड़ी भारी बानर और रीछोंकी सेना इकठी करी थी ॥ ३ ॥ और नामका प्रभाव ऐसा है कि जिसको लेतेही संसारसमुद्र सूख जाता है. सो हे सुज्ञलोगो ! आप मनमें इस बातका विचार कर लीजिये ॥ ४ ॥

राम सकुल रण रावण मारा ॥ सीयसहित निजपुर पगु धारा ॥ ५॥ ❋
राजा राम अवध रजधानी ॥ गावत गुण सुर मुनिबर बानी ॥ ६ ॥ ❋

रामचन्द्रजी तौ खुद लंकामें जा रणमें रावणको कुटुंबके साथ मार, सीताके साथ पीछे अपनी पुरी अयोध्या पधारे ॥ ५ ॥ तहां राजा तो राम और राजधानी अयोध्या हुई, तिसका गुण सारे देवता और मुनि अपनी उत्तम वाणीसे गाते हैं ॥ ६ ॥

सेवक सुमिरत नाम सप्रीती ॥ बिनुश्रम प्रबल मोहदल जीती ॥ ७ ॥ ❋
फिरत सनेहमग्न सुख अपने ॥ नामप्रसाद शोच नहिँ सपने ॥ ८ ॥ ❋

और भक्तलोग तौ प्रीतिके साथ नामका स्मरण करनेसे विना परिश्रम प्रबल मोहरूप रावणको

काम क्रोध आदि दलके साथ जीतकर अपने आनन्द मन सुख चैनसे विचरते है. नामके प्रभावसे उनके मनमें किसी बातका स्वप्नमेंभी सोच नहीं है ॥ ८ ॥

दोहा–ब्रह्म रामते नाम बड़, बरदायक बरदानि ॥ ❀
रामचरित शतकोटिमहँ, लिय महेश जिय जानि ॥ ३१ ॥ ❀

जब महादेवजीने अपने मनमें नामको ब्रह्म और राम दोनोंसे बड़ा और बर देनेवाले ब्रह्मादिकोंकोभी बर देनेवाला जाना है तभी तौ उन्होने शतकोटि रामायणमेंसे रामनामको लेलिया है ॥ ३१ ॥

नामप्रसाद शंभु अविनाशी ॥ साज अमंगल मंगलराशी ॥ १ ॥ ❀
शुक सनकादि सिद्ध मुनि योगी ॥ नामप्रसाद ब्रह्मसुखभोगी ॥ २ ॥ ❀

नामके प्रभावहीसे तौ महादेवजी अविनाशी और अमंगलके साज रखनेपरभी मंगलके धाम बने हैं ॥ १ ॥ शुकदेवजी सनकादिमुनि औरभी सिद्ध मुनि और योगी नामके प्रभावहीसे ब्रह्मानंदको भोग रहे है ॥ २ ॥

नारद जानेउ नामप्रतापू ॥ जगप्रिय हरिहर अरु प्रिय आपू ॥ ३ ॥ ❀
नाम जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू ॥ भक्तशिरोमणि भे प्रल्हादू ॥ ४ ॥ ❀

फिर नामका प्रभाव नारदजी जानते है. जो खुद नामके प्रभावसे विष्णु और महादेवके तथा जगत्के परम प्रिय हुए है ॥ ३ ॥ नामका जप करनेसे प्रल्हादपर प्रभुने परम अनुग्रह किया है. जिससे वह प्रह्लाद भक्तोंमे शिरोमणि हुआ है ॥ ४ ॥

ध्रुव सगलानि जपेउ हरिनामू ॥ पायेउ अचल अनूपम ठामू ॥ ५ ॥ ❀
सुमिरि पवनसुत पावन नामू ॥ अपने बश करि राखेउ रामू ॥ ६ ॥ ❀

ध्रुवजीने यद्यपि प्रभुका नाम ग्लानिसहित लिया था तथापि वे उसके प्रभावसे अचल और अनुपम सर्वोत्तम ध्रुवपद पाये हैं ॥ ५ ॥ हनुमानजीने प्रभुके पावन नामका जप करनेके प्रभावसे श्रीरामचन्द्रजीको अपने बश कर रक्खा है ॥ ६ ॥

अपर अजामिल गज गणिकाऊ ॥ भये मुक्त हरिनाम प्रभाऊ ॥ ७ ॥ ❀
कहउँ कहाँलगि नाम बड़ाई ॥ राम न सकहिँ नामगुण गाई ॥ ८ ॥ ❀

औरभी दूसरे कई अजामिल, गजराज, और गणिका आदि हरिके नामके प्रभावसे मोक्षको प्राप्त हुए है (अजामिलकी कथा भागवतके षष्ठस्कंधमें है. वह अंतसमयमें पुत्रके नामके बदले नारायणका नाम ले मुक्त हुवा था. गजराजको ग्राहने पांवमें पकड़ लिया था. उसने पहले तौ बहुत पराक्रम किया आखिर बिलकुल डूबने लगा तिलभर सूंढ़ जलसे बाहिर रही तब वो प्रभुके शरण गया और प्रभुका नाम ले पुकारा कि, हे नारायण ! हे आदिपुरुष! मेरी रक्षा करो. तब प्रभुने गरुड़की गति कम जान तुरंत उसके पास जा उसको ग्राहके फंदसे छुँड़ाया)

---

१ ध्रुव राजा उत्तानपादका पुत्र था. आर उत्तानपाद स्वायंभुव मनुका पुत्र था. उत्तानपादके दो रानियां थीं सुरुचि और सुनीति, जिसमें ध्रुव सुनीतिका पुत्र था. एक समय ध्रुव राजाकी गोदमें चढ़ने लगा तब सुरुचि जो राजाकी प्रिय रानी थी उसने ध्रुवसे कहा कि–हे पुत्र ! तू राजाकी गोदमें चढ़नेके योग्य नहीं हैं; क्योंकि तू मेरे गर्भमें नहीं आया.तू जिसके गर्भमें आया है और जिसका स्तनपान कर बड़ा हुआ उसका पुत्र राजगद्दीके योग्य नहीं.सुरुचिका वचन सुन ध्रुवजीको बड़ा क्रोध हुआ. माता सुनीतिसे आज्ञा ले वनमें गया. मथुराजीमें जा तपस्या करी.छह महीनेमें नामके प्रभावसे प्रसन्न हो प्रभुने उसे ध्रुवपद दिया.

यह कथा श्रीमद्भागवतके अष्टमस्कंधमें है ॥ ७ ॥ तुलसीदासजी कहते हैं कि नामकी बड़ाई मैं कहाँलों कहूं? आप रामचन्द्रजीभी नामके गुण अपार होनेसे कह नहीं सकते तब दूसरेकी कौन चलावे? ॥८॥

दोहा-रामनामको कल्पतरु, कलि कल्याणनिवास ॥ ❋
जो सुमिरत भये भांगते, तुलसी तुलसीदास ॥ ३२ ॥ ❋

इस कराल कलिकालमें रामनाम जो है सो कल्याणका निवास कल्पवृक्ष है. तुलसीदासजी कहते है कि जिसका स्मरण करनेसे भांगके समान महा अपावन मैं तुलसीके जैसा परम पवित्र भगवद्दास बन गया हूं. अथवा उत्तरार्धकी ऐसे योजना करनी. भाग्यवशसे जिसका स्मरण करके तुलसीदास तुलसीके समान भगवत्प्रिय हुआ. भाग्यबिन भगवत्स्मरण नहीं बन सकता ॥ ३२ ॥

चहुँयुग तीनिकाल तिहुँलोका ॥ भए नाम जपि जीव विशोका ॥ १ ॥ ❋
वेद पुराण संतमत एहू ॥ सकल सुकृतफल रामसनेहू ॥ २ ॥ ❋

चारों युग, तीनों काल और तीनों लोकोंमें जितने जीव शोकरहित और मोक्षगामी हुए हैं वे सब नामका जप करके हुए है ॥ १ ॥ वेद, पुराण और संतजन इन सबका मत और सिद्धांत यही है कि-रामचन्द्रजीमें प्रेम और स्नेह होना यही पुण्यका फल है ॥ २ ॥

ध्यान प्रथम युग मख युग दूजे ॥ द्वापर परितोषक प्रभु पूजे ॥ ३ ॥ ❋
कलि केवल मलमूल मलीना ॥ पाप पयोनिधि जनमन मीना ॥ ४ ॥ ❋

तहांभी प्रथम युग (कृतयुग) में तो ध्यान. दूसरे (त्रेता) युगमें यज्ञ, याग और तीसरे (द्वापर) युगमें प्रभु पूजन करनेसे प्रसन्न होते है ॥ ३ ॥ परंतु यह कलिकाल तो महाकराल और केवलपापोंका मूल व महाकल्मषरूप है. यह कलिकाल पापका समुद्ररूप है और इस समयके लोगोंके जो मन है सोही उसमें मगर और मछलियां है ॥ ४ ॥

नाम कामतरु काल कराला ॥ सुमिरत शमन सकल जगजाला ॥ ५ ॥ ❋
रामनाम कलि अभिमतदाता ॥ हित परलोक लोक पितु माता ॥ ६ ॥ ❋

इस कराल कालमे प्रभुका जो नाम है सोही कल्पवृक्ष है, जिसका स्मरण करतेही संसारके सब जाल कट जाते हैं ॥ ५ ॥ इस कलिकालमें तो केवल रामनामही मनोवांछित फल देनेवाला है. माता पिताके समान इस लोकमें हित करनेवाला तथा परलोकमें हित करनेवाला यही है ॥ ६ ॥

नहिँ कलि कर्म न भक्ति बिवेकू ॥ रामनाम अवलंबन एकू ॥ ७ ॥ ❋
कालनेमि करि कपट निधानू ॥ राम सुमति समरथ हनुमानू ॥ ८ ॥ ❋

तुलसीदासजी कहते हैं कि इस कलिकालमें न तो वैदिक और स्मार्त कर्म रहे हैं. न भक्ति है. न विवेक है. केवल एक रामनामकाही सहारा है ॥ ७ ॥ कपटका भंडार कलियुग तो कालनेमी दैत्यके समान है. और उसका नाश करनेके लिये रामचन्द्रजीकी भक्ति और स्मृति समर्थ हनुमानके तुल्य है ॥ ८ ॥

दोहा-रामनाम नरकेसरी, कनककशिपु कलिकाल ॥ ❋
जापकजन प्रह्लादजिमि, पालहिँ दलि सुरसाल ॥ ३३ ॥ ❋

रामचन्द्रजीका नाम तो नृसिंहमूर्ति है और कलिकाल हिरण्यकशिपु दैत्य है. और नाम लेनेवाले

भक्त प्रह्लाद हैं नृसिंह भगवान्ने हिरण्यकशिपुको मार प्रह्लादका पालन किया ऐसे भगवन्नाम कलिकालका नाश कर अपने भक्तोंका पालन करता है ॥ ३३ ॥

भाव कुभाव अनख आलसहूं ॥ नाम जपत मंगल दिशि दशहूं ॥ १ ॥ ❀
सुमिरि सो नाम रामगुण गाथा ॥ करौं नाइ रघुनाथहिं माथा ॥ २ ॥ ❀

चाहे प्रभुका नाम भावसे लो चाहे कुभावसे लो, चाहे ईर्षासे लो, चाहे आलससे लो, नामका जप करनेसे तो सदा सर्वदा सब ओरसे कल्याणही है ॥ १ ॥ उस नामका स्मरण कर, प्रभुको शिर नवाकर मैं रामचन्द्रजीके गुणोंकी कथा करता हूं ॥ २ ॥

मोरि सुधारहिं सो सब भाँती ॥ जासु कृपा नहिं कृपा अघाती ॥ ३ ॥ ❀
राम सुस्वामि कुसेवक मोसे ॥ निज दिशि देखि दयानिधि पोसे ॥ ४ ॥ ❀

यद्यपि मैं कुछ नहीं जानता हूं तथापि वो मेरी बाणीको सब प्रकारसे सुधारेंगे, क्योंकि प्रभुकी कृपाकी अभिलाषा स्वयं कृपाभी रखती है. सोभी उससे नहीं अघाती अर्थात् तृप्त नहीं होती ॥ ३ ॥ रामचन्द्रजी जैसे अच्छे स्वामी और मेरे जैसा खराब सेवक तथापि दयानिधि प्रभु अपनी ओर निहारकर मेरा पोषण करेंगे ॥ ४ ॥

लोकहु बेद सुसाहेब रीती ॥ बिनय सुनत पहिंचानत प्रीती ॥ ५ ॥ ❀
धनी गरीब ग्राम नर नागर ॥ पंडित मूढ़ मलीन उजागर ॥ ६ ॥ ❀

लोक और वेदमें अच्छे स्वामीकी यही रीति है कि वह अपने दासकी बिनती सुनतेही उसकी प्रीतिको पहिंचान लेता है ॥ ५ ॥ जगत्में यह रीति है कि धनवान्, गरीब, गँवार, नागर (चतुर), पंडित, मूर्ख, मैला सभाचातुर ॥ ६ ॥

सुकवि कुकवि निजमति अनुसारी ॥ नृपहिं सराहत सब नर नारी ॥ ७ ॥ ❀
साधु सुजान सुशील नृपाला ॥ ईशअंशभव परम कृपाला ॥ ८ ॥ ❀

सुकवि कुकवि ये सब हरेक नर नारी अपनी २ बुद्धिके अनुसार राजाकी प्रशंसा कियाही करते हैं ॥ ७ ॥ तिनमें जो अच्छा विद्वान् है सो तौ अच्छी तरह करेगा और जो मूर्ख होगा तौ वह वैसे करेगा; परंतु जो राजा साधु यानी सदाचार पालनेवाला, सुज्ञ, सुशील, परम दयालु और परमेश्वरके अंशसे पैदा भया हुआ है ॥ ८ ॥

सुनि सन्मानहिं सबहिं सुबानी ॥ भणित भक्ति मतिगतिपहिंचानी ॥ ९ ॥ ❀
यह प्राकृत महिपाल सुभाऊ ॥ जानिशिरोमणि कोसलराऊ ॥ १० ॥ ❀
रीझत राम सनेह निसोते ॥ को जग मंद मलिनमति मोते ॥ ११ ॥ ❀

वो अपनी स्तुति सुनकर अवश्य अच्छी मधुर बाणीसे सबका सन्मान करता है पर उसकी वाणी, भक्ति, बुद्धि और गतिको पहिंचानकर सबको यथायोग्य फल देती है ॥ ९ ॥ यह स्वभाव तौ प्राकृत यानी साधारण राजाओंकाही है. तहां कोसलराज रामचन्द्रजी तौ ज्ञानियोंमें शिरोमणि हैं. सो मोपर अवश्य कृपा करेंगे ॥ १० ॥ प्रभु अखंड स्नेहसे रीझते हैं और मेरे जैसा मंदमति और मलिन दूसरा कौन है? अर्थात् कोई नहीं है. तासों प्रभु मुझपर कैसे रीझेंगे ? ॥ ११ ॥

दोहा–शठ सेवककी प्रीति रुचि, रखिहहिँ राम कृपालु ॥ ❀
उपल किए जलयान जेहिँ, सचिव सुमति कपि भालु ॥ ३४ ॥ ❀

अथवा प्रभु रामचन्द्र दयालु हैं. सो मुझ शठ सेवककी प्रीति और रुचि आपसे अवश्य राखेंगे; क्योंकि प्रभुने पहलेभी कृपा करके पत्थरकी नाव और वानर और रीछोंको सुबुद्धि मंत्री बनाये हैं ॥ ३४ ॥

मोहुँ कहावत सब कहत, राम सहत उपहास ॥ ❀
साहेब सीतानाथसे, सेवक तुलसीदास ॥ ३५ ॥ ❀

मुझको कोई पूंछता है कि—तू कौन है? तब मैं कहता हूं कि–मैं रामचन्द्रजीका दास हूं. सो सुनकर मेरे कहनेसे सब कोई मुझको रामचन्द्रजीका दास कहते है. यद्यपि इससे प्रभुकी हँसी होती है क्योंकि सीतापतिसे तो स्वामी और मेरे जैसा दास तथापि प्रभु अपनी ओर देखकर सब कुछ सहते है ॥ ३५ ॥

अति बड़ि मोरि ढिठाई खोरी ॥ सुनि अघ नरकहुँ नाक सिकोरी ॥१॥❀
समुझि सहमि मोहिँ अपडर अपने ॥ सो सुधि राम कीन्ह नाहिँ सपने ॥२॥

तुलसीदासजी आत्मनिवेदन करते है. मैं ऐसा मंदमति और मलिन होके जो रामचन्द्रजीका दास कहता हूं यह मेरी बड़ी ढिठाई और ऐब है कि जिसको सुनकर नरक और पापभी नाक सिकोरते हैं यानी घिनाते हैं ॥ १ ॥ जिस ढिठाई और ऐबको समझकर डरके मारे मुझे अपने आपही डर लगता है. उसकी प्रभुने स्वप्नमेंभी सुध नहीं करी ॥ २ ॥

सुनि अवलोकि सुचित चखु चाही ॥ भक्ति मोरि मति स्वामि सराही ॥३॥❀
कहत नसाइ होइ अति नीकी ॥ रीझत राम जानि जनजीकी ॥ ४ ॥ ❀

जो प्रभु सुध करते तो मेरे मनमें उद्वेग अवश्य होता इससे यह निश्चय होता है कि प्रभुने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया. चाहे आपने किसीके मुहसे सुनभी ली है और देखभी ली है. तथापि उदारदृष्टि प्रभुने उसे सुनी अनसुनी करके मेरी भक्ति और बुद्धिकी प्रशंसा करी है, इससे मैं जानता हूं कि प्रभुने मुझे अंगीकार कर लिया है ॥ ३ ॥ चाहे कहनेमें कोई नसाई कहे बुरा हो या बहुत अच्छा हो. प्रभु तो केवल जनके मनकी प्रीतिको जानकेही रीझते हैं ॥ ४ ॥

कहत न प्रभु चित चूक कियेकी ॥ करत सुरत सबबार हियेकी ॥ ५ ॥ ❀
जेहि अघ बधेउ ब्याधजिमि बाली ॥ फिरि सुकंठ सोइ कीन्ह कुचाली ॥६॥

चाहे किसी समय भक्तिमें चूक पड़जाय तोभी प्रभु उस अपराधको अपने दिलमें नहीं रखते. प्रभु सदा सर्वदा अपने सेवकके हृदयकी सुरति यानी निगाह करते हैं ॥ ५ ॥ देखभी ली है. तथापि उदारदृष्टि प्रभु उसे सुनी अनसुनी करके अर्थात् प्रभु प्रीतिकी ओर ध्यान देते हैं अपराधकी तर्फ ध्यान नहीं देते. प्रभुने जिस अपराधसे व्याधकी भांति बालिको मारा था. सुग्रीवनेभी फिर वोही कुचाल करी. बालिमें भाईकी स्त्रीको घरमें डालनेका अपराध था और उसीसे उसे मारा था.

वोही अपराध सुग्रीवने किया यानी बालिकी स्त्री ताराको घरमें डाल लिया जिसपरभी प्रभुने कुछ ध्यान नहीं दिया ॥ ६ ॥

सोइ करतूति बिभीषणकेरी ॥ सपनेहुँ सो न राम हिय हेरी ॥ ७ ॥ ❋
ते भरतहिँ भेटत सनमानेँ ॥ राजसभा रघुबीर बखानेँ ॥ ८ ॥ ❋

कि वोही अपराध बिभीषणने किया था. उसने मंदोदरी रावणकी स्त्रीको घरमें डाल लियाथा, पर प्रभु उस अपराधको स्वप्नमेंभी हृदयमें नहीं लाये ॥ ७ ॥ भरतसे मिलनेके समय प्रभुने उनका बड़ा सत्कार किया और राजसभामेंभी उनकी बहुत प्रशंसा करी ॥ ८ ॥

दोहा–प्रभु तरुतर कपि डारपर, ते किय आपसमान ॥ ❋
तुलसी कहूँ न रामसे, साहिब शीलनिधान ॥ ३६ ॥ ❋
राम निकाई रावरी, है सबहीको नीक ॥ ❋
जो यह सांची है सदा, तौ नीके तुलसीक॥ ३७ ॥ ❋
इहिबिधि निज गुण दोष कहि, सबहिँ बहुरि शिर नाइ ॥ ❋
बरणौं रघुबर बिशद यश, सुनि कलिकलुष नसाइँ ॥ ३८ ॥ ❋

देखो प्रभुका बड़ापन–प्रभु तौ पेड़के तले विराजे हैं और वानर पेड़की डारके ऊपर चढ़े हैं. प्रभुके कार्यमें लगनेसे उनको ऊंच नीचकी सुरति नहीं रहीथी. वानरोंको प्रभुने अपनी बराबरके बनाये. तुलसीदासजी कहते हैं कि–मेरे जानमें तौ रामचन्द्रजीके जैसा शीलका निधि स्वामी कहींभी नहीं है ॥ ३६ ॥ हे रघुनाथ! आपकी निकाई सब ऊंच नीच जीवोंके लिये अच्छी है. ऐसे सब कोई कहते हैं सो जो यह बात सदा सच है तौ फिर तुलसीदासभी अच्छाही है ॥ ३७ ॥ इस प्रकार अपने गुण अवगुण कह फिर सबको शिर नवाकर मैं रामचन्द्रजीका निर्मल यश वर्णन करताहूं. जिसके सुननेसे कलियुगके कल्मष (पाप) नष्ट हो जाते हैं ॥ ३८ ॥

याज्ञवल्क्य जो कथा सुहाई ॥ भरद्वाज मुनिवरहिँ सुनाई ॥ १ ॥
कहिहौं साई संवाद बखानी ॥ सुनहु सकल सज्जन सुख मानी ॥ २ ॥ ❋

याज्ञवल्क्य मुनिने जो सुन्दर कथा भरद्वाज मुनिको सुनाईथी ॥ १ ॥ वोही संवाद मैं वर्णन करके कहूंगा सो सब सज्जन लोग मनमें सुख मान कर सुनें ॥ २ ॥

शंभु कीन्ह यह चरित सुहावा ॥ बहुरि कृपा करि उमहिँ सुनावा ॥३॥ ❋
सो शिव काकभुशुंडिहिँ दीन्हा ॥ रामभक्त अधिकारी चीन्हा ॥ ४ ॥ ❋

रामचन्द्रजीका यह सुन्दर चरित्र महादेवजीने बनाकर अपनेपास रक्खा सो अवसर देख, कृपा कर वो चरित्र पार्वतीको सुनाया ॥ ३ ॥ और वोही चरित्र महादेवजीने काकभुशुंडि ऋषिको रामचन्द्रजीका भक्त व इसका अधिकारी जानकर सुनाया ॥ ४ ॥

तेहिसन याज्ञवल्क्य पुनि पावा ॥ तिन्ह पुनि भरद्वाज प्रति गावा ॥ ५ ॥
ते श्रोता वक्ता समशीला ॥ समदर्शी जानहिँ हरिलीला॥ ६ ॥ ❋

उन काकभुशुंडि ऋषिसे याज्ञवल्क्य मुनिने पाया और याज्ञवल्क्यने भरद्वाज मुनिसे कहा

॥ ५ ॥ ये जितने श्रोता और वक्ता हुए वे सब समशील समदर्शी थे. और प्रभुकी लीलाको अच्छीतरह जानते थे ॥ ६ ॥

जानहिँ तीनिकाल निजज्ञाना ॥ करतलगत आमलकसमाना ॥ ७ ॥ *
औरौ जे हरिभक्त सुजाना ॥ कहहिँ सुनहिँ समुझहिँ बिधि नाना ॥८॥ *

ये लोग अपने ज्ञानके प्रभावसे भूत, भविष्यत, वर्तमान, तीनों कालकी बातको हथेलीमेंके आंवरेकी भांति जानते थे ॥ ७ ॥ औरभी जो भगवानके भक्त और सुज्ञानी है, वे सब प्रभुकी लीलाको अनेक प्रकारसे कहते है, सुनते है और समझते है ॥ ८ ॥

दोहा—मैं पुनि निजगुरुसन सुनी, कथा रुचिर कुरुखेत ॥ *
समुझ नहीं तस बालपन, तब अति रहेउँ अचेत ॥ ३९॥ *
श्रोता बक्ता ज्ञाननिधि, कथा रामकी गूढ़ ॥ *
किमि समुझै यह जीव जड, कलिमलग्रसित बिमूढ़ ॥ ४०॥ *

मैंने यह सुन्दर. कथा कुरुक्षेत्रमें मेरे गुरुके पास सुनीथी; पर उस समय जैसी गुरुने कही वैसी मेरी समझमें नहीं आयी, उसका कारण यह था कि, मेरी अवस्था बहुत छोटी थी. बचपनके कारण उस समय मैं बिलकुल नासमझ था ॥ ३९ ॥ अव्वल तौ इसके श्रोता और वक्ता ज्ञानके निधि है. दूसरा रामचन्द्रीजीकी कथा परमगूढ़ार्थ है. अब कहो यह बिचारा कलियुगके पापोंसे गिला हुआ जड़ जीव इस कथाको किस प्रकार समझ सके ? ॥ ४० ॥

तदपि कही गुरु बारहिँ बारा ॥ समुझि परी कछु मतिअनुसारा ॥ १ ॥ *
भाषाबंध करब मैं सोई ॥ मोरे मन प्रबोध जेहि होई ॥ २ ॥ *

तौभी गुरुने मुझको यह कथा वारंवार कही रही जिससे कुछ मेरी बुद्दिके अनुसार मेरी समझमें आगयी ॥ १ ॥ अब मैं वोही कथा भाषाके प्रबंधमें करूंगा, जिससे मेरे मनको प्रबोध (ज्ञान) हो जावै ॥ २ ॥

जस कछु बुधिविवेकबल मोरे ॥ तस कहिहौं हिय हरिके प्रेरे ॥ ३ ॥ *
निजसंदेहमोहभ्रमहरणी ॥ करौं कथा भवसरितातरणी ॥ ४ ॥ *

जैसा कुछ मेरी बुद्धिसंबंधी विवेकका बल है, वैसा मनमें प्रभुकी प्रेरणा होनेसे मैंभी बर्णन करूंगा ॥ ३ ॥ जिससे मेरे मनका मोह, भ्रम और संदेह मिट जाय ऐसे, संसाररूप दरियासे पार होनेके लिये नौकारूप भगवत्कथा मैं वर्णन करता हूं ॥ ४ ॥

बुधविश्राम सकलजनरंजनि ॥ रामकथा कलिकलुषविभंजनि ॥ ५ ॥ *
रामकथा कलिपन्नगभरणी ॥ पुनि विवेकपावककहँ अरणी ॥ ६ ॥ *

रामचन्द्रजीकी कथा विद्वान्लोगोंको आराम देनेवाली, सब लोगोंके मनको राजी करनेवाली और कलिकालके पापोंको नाश करनेवाली है ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजीकी कथा कलियुगरूप सर्पके लिये भरणी कहे गरुडमंत्र अथवा मयूरीरूप है. और विवेकरूप अग्निको उत्पन्न करनेके लिये साक्षात अरणी (लकड़ी) रूप है ॥ ६ ॥

रामकथा कलि कामद गाई ॥ सुजनसजीवनमूरि सुहाई ॥ ७ ॥ ❋
सोइ वसुधातल सुधातरंगिनि ॥ भवभंजिनि भ्रमभेकभुअंगिनि ॥ ८ ॥ ❋

रामचन्द्रजीकी कथा कलियुगके क्लेश दूर करनेके लिये कामधेनुरूप है और सुजन पुरुषोंके लिये सुहावनी संजीवनी जड़ी है ॥ ७ ॥ तथा वह पृथ्वीतलविषे अमृतकी नदी है. संसार (जन्ममरण) को मिटानेवाली तथा भ्रमरूप मेंडुकको निगलनेके लिये सर्पिणीरूप है ॥ ८ ॥

असुरसेनसम नरकनिकंदिनि ॥ साधुबिबुधकुलहित गिरिनंदिनि ॥ ९ ॥ ❋
संतसमाजपयोधिरमासी ॥ विश्वभारधर अचल क्षमासी ॥ १० ॥ ❋

फिर राककथा दैत्योंकी सेनाका संहार करनेके लिये और संत और देवताओंके कुलका हित करनेके लिये प्रत्यक्ष दुर्गास्वरूप है. नरकका नाश करनेवाली है ॥ ९ ॥ सत्पुरुषोंकी समाजरूप समुद्रविषे लक्ष्मीके जैसी, और जगत्का भार धारण करनेके वास्ते अचल पृथ्वीके समान है ॥ १० ॥

यमगणमुहमसि जग यमुनासी ॥ जीवनमुक्तिहेतु जनु कासी ॥ ११ ॥ ❋
रामहिं प्रिय पावनि तुलसीसी ॥ तुलसिदासहित हिय हुलसीसी ॥१२॥ ❋

यमराजके गणोंके मुंहमें श्याही लगानेके लिये मानों वो जगतमें यमुनाके समान है. और जीवन्मुक्तिके लिये मानों वह काशीपुरीरूप है ॥ ११ ॥ रामचन्द्रजीको प्यारी और पवित्र तुलसीपत्रके समान है. और तुलसीदासके लिये तौ मानों वह हृदयका हुलासरूपही है ॥ १२ ॥

शिवप्रिय मेकलशैलसुतासी ॥ सकलसिद्धिप्रद संपतिराशी ॥ १३ ॥ ❋
सद्गुण सुरगण अंब अदितिसी ॥ रघुवरभक्ति प्रेमपरिमितिसी ॥ १४ ॥ ❋

महादेवजीको प्रिय लगनेमें वो मेकल नाम पर्वतकी कन्या नर्मदाके समान है, सब सिद्धियोंकी देनेवाली और संपदाकी पुंज है ॥ १३ ॥ जैसे अदिति देवताओंके गणकी माता हैं ऐसे रामकथा सद्गुणोंकी माता है. और रामचन्द्रकी भक्ति और प्रेमकी मानों परमावधिही है ॥ १४ ॥

दोहा–रामकथा मंदाकिनी, चित्र कूट चित चारु ॥ ❋
तुलसीसुभग सनेहवन, सियरघुवीरविहारु ॥ ४१ ॥ ❋

रामचन्द्रजीकी कथा तौ मंदाकिनी नाम नदी है, और चित्त सुन्दर चित्रकूट नाम पर्वत है. तुलसीदासजी कहते है कि जो सुन्दर प्रेम है सोही वन है, जिसमें सीताराम विहार करते हैं ॥ ४१ ॥

रामचरित चिन्तामणि चारू ॥ सन्त सुमति तिय सुभगसिंगारू ॥१॥ ❋
जगमंगल गुणग्राम रामके ॥ दानि मुक्ति धन धर्म धामके ॥ २ ॥ ❋

रामचन्द्रजीका चरित्ररूप जो चिन्तामणि रत्न है सो सत्पुरुषोंकी सुबुद्धिरूप स्त्रीका सुन्दर सिंगार है ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीके गुणोंके समुदाय जगतका मंगल करनेवाले और धन, धर्म, काम और मोक्षके देनेवाले हैं ॥ २ ॥

सद्गुरु ज्ञान बिराग योगके ॥ बिबुधबैद भवभीमरोगके ॥ ३ ॥ ❋
जननि जनक सिय राम प्रेमके ॥ बीज सकल व्रत धर्म नेमके ॥ ४ ॥ ❋

ज्ञान, वैराग और योगके सद्गुरु और संसाररूप महाभयंकर रोगके पक्के वैद्य है ॥ ३ ॥ सीता और रामचंद्रजीसंबंधी प्रेमके मातापिता और सब व्रत धर्म और नियमोंके बीजरूप है ॥ ४ ॥

शमन पाप सन्ताप शोकके ॥ प्रियपालक परलोक लोकके ॥ ५ ॥ ❀
सचिव सुभट भूपतिबिचारके ॥ कुंभज लोभ उदधिअपारके ॥ ६ ॥ ❀

पाप, संताप और शोचके मिटानेवाले, और इस लोक वा परलोकके प्यारे पालनेवाले हैं ॥ ५ ॥ विचाररूप राजाके वे अच्छे सुभट और मंत्री है. और लोभरूप अपार समुद्रको शोषनेके लिये अगस्त्यमुनि है ॥ ६ ॥

काम कोह कलिमल करि गणके ॥ केहरिशावक जनमनबनके ॥ ७ ॥ ❀
अतिथिपूज्य प्रियतम पुरारिके ॥ कामद घन दारिद दवारिके ॥ ८ ॥ ❀

भक्तजनोंके मनरूप वनमें रहनेवाले काम, क्रोध और कलिकल्मषरूप हाथियोंके यूथको नाश करनेके लिये सिंहके बच्चोंके समान है ॥ ७ ॥ महादेवजीके परमपूज्य और अतिप्रिय अतिथिके जैसे है. और दरिद्ररूप दावानलको शांत करनेके लिये मनवांछित कामना पूर्ण करनेवाले सघन घनरूप है ॥ ८ ॥

मंत्र महामणि विषय व्यालके ॥ मेटत कठिन कुअंक भालके ॥ ९ ॥ ❀
हरण मोहतम दिनकरकरसे ॥ सेवक शालिपाल जलधरसे ॥ १० ॥ ❀

विषयरूप सांपका विष मिटानेके वास्ते मंत्र और महामणिके तुल्य है और ललाटपटलके महादारुण खोटे अंकोंको मिटानेवाले ॥ ९ ॥ तथा मोहरूप अन्धकारको मिटानेके लिये सूर्यकी किरणोंके जैसे और अपने दासरूप शालि (चांवलों) को पालनेके लिये मेघके समान है ॥ १० ॥

अभिमतदानि देवतरुवरसे ॥ सेवत सुलभ सुखद हरिहरसे ॥ ११ ॥ ❀
सुकविशरदनभ मन उडुगणसे ॥ रामभक्त जनजीवनधनसे ॥ १२ ॥ ❀

मनवांछित फल देनेमें कल्पवृक्षके जैसे और सेवा करनेमें विष्णु और महादेवके जैसे बड़े सुलभ और सुखदायी हैं ॥ ११ ॥ सुकविलोगोंके मनरूप शरदऋतुसंबंधी स्वच्छ आकाशमें वे तारामंडलके तुल्य विराजते हैं, भक्तजनोंका जीवन धन हैं ॥ १२ ॥

सकल सुकृत फल भूरि भोगसे ॥ जगहित निरुपधि साधुलोगसे ॥ १३ ॥ ❀
सेवकमनमानस मरालसे ॥ पावन गंगतरंगमालसे ॥ १४ ॥ ❀

समस्त सुकृतोंके जो अनेक फल हैं उनके भोगके समान हैं और जगतको हित करनेके लिये वे उपाधिरहित साधु पुरुषोंके जैसे हैं ॥ १३ ॥ भक्तजनोंके मनरूप मानससरोवरके हंस और पवित्र करनेके लिये गंगाकी लहरोंकी पंक्तिके सदृश हैं ॥ १४ ॥

दोहा–कुपथ कुतर्क कुचालि कलि, कपट दम्भ पाखण्ड ॥ ❀
दहन रामगुणग्राम इमि, ईंधन अनल प्रचण्ड ॥ ४२ ॥ ❀
रामचरित राकेशकर, सरिस सुखद सबकाहु ॥ ❀
सज्जन कुमुद चकोर चित, हित बिशेष बड़ लाहु ॥ ४३ ॥ ❀

कुपंथ, कुतर्क, कुचाल, कलि, कपट, दंभ, और पाखंडरूप ईंधनको भस्म करनेके लिये रामचन्द्रजीका गुणसमुदाय प्रचंड अग्निके समान है ॥ ४२ ॥ रामचन्द्रजीका चरित, चंद्रमाकी किरणोंके समान है, जो सब किसीको सदा सुख देता रहता है, सज्जन जन हैं वेही रात्रिविकासी कमल हैं, उनके चित्त हैं सोही चकोर है, कि जिसका सेवन करनेसे उनको बड़ा हित और लाभ मिलता है ॥ ४३ ॥

कीन्ह प्रश्न जेहि भांति भवानी ॥ जिहि बिधि शंकर कहा बखानी ॥१॥ *
सो सब हेतु कहत मैं गाई ॥ कथाप्रबन्ध बिचित्र बनाई ॥ २ ॥ *

पार्वतीने जिस प्रकार प्रश्न किया था और महादेवजीने जिसतरह वर्णन किया था ॥ १ ॥ वो सब कारण मैं विचित्र कथाका प्रबन्ध रचकर वर्णन करके कहता हूं, सो सुनिये ॥ २ ॥

जिन यह कथा सुनी नहिं होई ॥ जनि आश्चर्य करैं सुनि सोई ॥ ३ ॥ *
कथाअलौकिक सुनहिँ जे ज्ञानी ॥ नाहिँ आश्चर्यकराहिँ अस जानी ॥४॥ *

जिन्होंने यह कथा न सुनी हो वे लोग इस कथाको सुनकर आश्चर्य न करैं ॥ ३ ॥ क्योंकि जो ज्ञानीलोग है और अलौकिक कथाको सुनते है, वे ऐसा समझकर कदापि आश्चर्य नहीं करते ॥ ४ ॥

रामकथाकी मिति जग नाहीं ॥ अस प्रतीति तिनके मनमाहीं ॥ ५ ॥ *
नानाभांति राम अवतारा ॥ रामायण शतकोटि अपारा ॥ ६ ॥ *

क्योंकि उन लोगोंके मनमें इस बातका पक्का भरोसा बँध रहा है कि रामचन्द्रजीकी कथाकी समाप्ति तो जगत्में हैही नहीं ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजीके अवतार कई तरहसे हुए हैं और रामायणभी अपार हैं. रामचरितकी संख्या शतकोटि है ॥ ६ ॥

कल्पभेद हरिचरित सुहाये ॥ भांति अनेक मुनीशन गाये ॥ ७॥ *
करिय न संशय अस उर आनी ॥ सुनिय कथा सादर रति मानी ॥ ८॥ *

कल्पभेद होनेसे प्रभुके सुहावने चरित्र मुनिराजोंने अनेक प्रकारसे गाये हैं. किसीने किसी कल्पका चरित्र कहा है और किसीने किसीका. अतएव कथाओंमें फर्क पड़ता है ॥ ७ ॥ ऐसा समझकर संशय नहीं करना चाहिये. इसलिये मैं जो कहता हूं सो मनमें प्रीति रखकर आदरपूर्वक सुनिये ॥ ८ ॥

दोहा–राम अनन्त अनन्तगुण, अमित कथा बिस्तार ॥ *
सुनिआश्चर्य न मानिहहिँ, जिनके बिमल बिचार ॥ ४४ ॥ *

राम आप अनन्त हैं और उनके गुण अनन्त हैं और उनकी कथाका विस्तारभी अपार है. इसलिये जिनके मनमें निर्मल विचार है वे तौ इस कथाको सुनकर आश्चर्य मानेंगेही नहीं और दूसरोंकी मैं कहता नहीं ॥ ४४ ॥

इहिविधि सब संशय करि दूरी॥शिर धरि गुरुपदपंकजधूरी ॥ १ ॥ *
पुनि सबहीं बिनवौं कर जोरी ॥ करत कथा जेहिँ लाग न खोरी ॥ २॥ *

इस तरह सब संदेह मिटाय, गुरुके चरणकमलोंकी रज शिरपर धर ॥ १ ॥ हाथ जोड़ फिर मैं सबसे विनती करता हूं, और कथा कहता हूं, कि जिसतरह मुझको किसी तरहकी खोड़ न लगे ॥ २ ॥

सादर शिवहिँ नाय अब माथा ॥ बरणौं बिशद रामगुणगाथा ॥ ३ ॥ *
सम्वत सोरहसै यकतीसा ॥ करौं कथा हरिपद धरि शीसा ॥ ४ ॥ *

अब मैं आदरके साथ शिवजीको दंडवत कर रामचन्द्रजीके गुणोंकी निर्मल कथा कहता हूं ॥ ३ ॥ मैंने हरि भगवानके चरणोंमे मस्तक रखकर संवत् सोलहसौ इकतीस १६३१ में ॥ ४ ॥

नौमी भौमवार मधुमासा ॥ अवधपुरी यह चरित प्रकासा ॥ ५ ॥ *
जेहि दिन रामजन्म श्रुति गावहिँ ॥ तीरथ सकल तहां चलि आवहिँ॥६॥ *

चैत्र शुदी नवमी मंगलवारके दिन अयोध्यापुरीके भीतर यह चरित्र कहा ॥ ५ ॥ कि जिस दिनको वेद, प्रभुका जन्मदिन कहते हैं. उस दिन सब जगहके तीरथ वहां चले आते हैं ॥ ६ ॥

असुर नाग खग नर मुनि देवा ॥ आय करहिँ रघुनायकसेवा ॥ ७ ॥ *
जन्ममहोत्सव रचहिँ सुजाना ॥ करहिँ राम कल कीरति गाना ॥ ८ ॥ *

देवता, दैत्य, नाग, मनुष्य, पशु, पक्षी और मुनि ये सब वहां आकर प्रभुकी सेवा करते हैं ॥ ॥ ७ ॥ सुज्ञलोग प्रभुका भारी जन्ममहोत्सव करते हैं और प्रभुके मनोहर चरित्र गाते हैं ॥ ८ ॥

दोहा–मज्जहिँ सज्जनवृन्द बहु, पावन सरयूनीर ॥ *
जपहिँ राम धरि ध्यान उर, सुन्दर श्याम शरीर ॥ ४५ ॥ *

सत्पुरुषोंके गण परम पवित्र सरयूके जलमें नहाते हैं और सुन्दर साँवरी मूर्तिको हृदयमें रखकर रामनामका जप करते हैं ॥ ४५ ॥

दरश परश मज्जन अरु पाना ॥ हरै पाप कह बेद पुराना ॥ १ ॥ *
नदी पुनीत अमित महिमा अति ॥ कहि न सकै शारदाबिमलमति॥२॥ *

सरयूमैया दर्शन, स्पर्शन, स्नान और पान आदिसे सब तरह पापोंका नाश करती है. यह बात वेद और पुराण कहते हैं ॥ १ ॥ उस परमपावनी माता सरयूकी महिमा अति अपार है, जिसे खुद विमल बुद्धिवाली शारदाभी कह नहीं सकती ॥ २ ॥

रामधामदा पुरी सुहावनि ॥ लोक समस्त बिदित जगपावनि ॥ ३ ॥ *
चारि खानि जगजीव अपारा ॥ अवध तजे तनु नहिँ संसारा ॥ ४ ॥ *

रामचन्द्रजीके धामको देनेवाली अर्थात् मोक्षपुरी अयोध्या अतिरमणीय है, जिस जगपावनी पुरीकी महिमा सब लोकोंमें प्रसिद्ध है ॥ ३ ॥ जगतमें चार खानके अपार जीव हैं. चार खान–स्वेदज, अंडज, उद्भिज्ज और जरायुज. तिनकी चौराशी लाख जीवयोनी हैं. वे सब अयोध्यामें शरीर त्यागनेपर फिर पीछे संसारमें नहीं आते ॥ ४ ॥

सबबिधि पुरी मनोहर जानी ॥ सकलसिद्धिप्रद मंगलखानी ॥ ५ ॥ *

बिमलकथाकर कीन्ह अरम्भा ॥ सुनत नसाहिँ काम मद दम्भा ॥ ६ ॥❋

इस पुरीको सब प्रकारसे मनोहर, सब सिद्धियोंकी देनेवाली और मंगलकी खान जान ॥ ॥ ५ ॥ मैंने निर्मल कथाका प्रारंभ कर दिया है. सो इसको सुनतेही काम, मद और दंभ ये सब नाश हो जायँगे ॥ ६ ॥

रामचरितमानस यह नामा ॥ सुनत श्रवण पाइय बिश्रामा ॥ ७ ॥ ❋
मनकर बिषय अनल बन जरई ॥ होइ सुखी जो यहि सर परई ॥ ८ ॥ ❋

इस ग्रंथका नाम रामचरितमानस है कि जिसको कानसे सुनतेही आराम आजाता है ॥ ७ ॥ मनके विषयरूप दावानलसे जलता हुआ जो वनरूप मनुष्य इस सरोवरमें आकर पड़ जाता है वह उसी क्षण सुखी हो जाता है ॥ ८ ॥

रामचरितमानस मुनिभावन ॥ बिरचेउ शम्भु सुहावन पावन ॥ ९ ॥ ❋
त्रिविध दोषदुखदारिददावन ॥ कलि कुचालिकलिकलुषनशावन ॥१०॥❋

यह सुन्दर रामचरितमानस प्रथम महादेवजीने निर्माण कियाथा जो मुनिलोगोंके मनको अच्छा लगनेवाला और परम ॥ ९ ॥ तीनों प्रकारके दोष, दुःख और दरिद्रको भस्म करनेवाला और कलियुगकी कुचालोंका और उसके संबंधी पापोंका नाश करनेवाला है ॥ १० ॥

रचि महेश निजमानस राखा ॥ पाइ सुसमय शिवासन भाषा ॥ ११ ॥ ❋
ताते रामचरित मानस बर ॥ धरेउ नाम हिय हेरि हर्षि हर ॥ १२ ॥ ❋
कहौं कथा सोइ सुखद सुहाई ॥ सादर सुनहु सुजन मन लाई ॥ १३ ॥ ❋

महादेवजीने यह रामचरितमानस रचकर अपने मनमें रख छोड़ा सो अच्छा अवसर पाकर उन्होंने पार्वतीसे कहा ॥ ११ ॥ इसीसे उस ग्रंथका नाम महादेवजीने मनमें विचार कर, प्रसन्न हो, "रामचरितमानस" रक्खा ॥ १२ ॥ वोही सुखदायी सुहावनी कथा मैं कहता हूं सो हे सुजनो ! आपलोग मन लगाके आदरपूर्वक इस कथाको सुनो ॥ १३ ॥

दोहा—जस मानस जेहि बिधि भयो, जग प्रचार जेहि हेतु ॥ ❋
अब सोइ कहौं प्रसंग सब, सुमिरि उमावृषकेतु ॥ ४६ ॥ ❋

यह रामचरितमानस जैसा और जिसतरह पैदा हुआ है, और जिस कारणसे जगत्में इसका प्रचार हुआ है, सो सब प्रसंग महादेव पार्वतीका स्मरण करके अब मैं कहता हूं ॥ ४६ ॥

शम्भुप्रसाद सुमति हिय हुलसी ॥ रामचरितमानस कबि तुलसी ॥ १ ॥❋
करउँ मनोहर मतिअनुहारी ॥ सुजन सुचित सुनि लेहु सुधारी ॥ २ ॥ ❋

कवि तुलसीदासजी कहते हैं कि—महादेवजीकी कृपासे अब मेरी सुन्दर बुद्धि रामचरितमानसकी ओर, मनमें हुलस गयी है. सो मेरी बुद्धिके अनुसार सुन्दर रामचरितमानस बनाऊंगा. सो हे सुजनो ! आप लोग इसे सुचित्त होकर सुनिये और कहीं कसर रहजाय तो उसे सुधार लीजिये ॥ १ ॥ २ ॥

सुमति भूमिथल हृदय अगाधू ॥ बेद पुराण उदधि घन साधू ॥ ३ ॥ ❋

वर्षहिँ रामसुयश बरबारी ॥ मधुर मनोहर मंगलकारी ॥ ४ ॥ ❋

इस प्रबंधका नाम रामचरितमानस होनेका करण एक तो यह है कि-यह प्रबंध कुछ दिन महादेवजीके मानस यानी मनमें रहा इसलिये इसका नाम मानस हुआ. और गोसाईंजी दूसरा कारण और लिखते हैं कि-यह प्रबंध मानससरोवरके जैसा है; इसलिये इसका नाम रामचरितमानस होना आवश्यक है. सो मानससरोवरका रूपक दिखलाते हैं. जो गंभीर हृदयके भीतर सुबुद्धि है वो तो भूतल है. वेद और पुराण समुद्र हैं. संतलोग बादल हैं ॥ ३ ॥ वे रामचन्द्रजीका सुयशरूप निर्मल नीर बरसते हैं. जो अतिशय मधुर, मनोहर और मंगलका मूलकारण है ॥ ४ ॥

लीला सगुण जो कहहिँ बखानी ॥ सोइ स्वच्छता करै मलहानी ॥ ५ ॥ ❋
प्रेम भक्ति जो वर्णि न जाई ॥ सोइ मधुरता शीतलताई ॥ ६ ॥ ❋

सगुण ब्रह्मकी लीलाओंका वर्णन है वोही उस जलकी स्वच्छता है, जिससे मल यानी पापोंका नाश होजाता है ॥ ५ ॥ प्रभुमें जो अकथनीय भक्ति और प्रीति है वोही इसमें मधुरता ओर शीतलताई है ॥ ६ ॥

सो जल सुकृतशालिहित होई ॥ रामभक्त जगजीवन सोई ॥ ७ ॥ ❋
मेधामहिगत सो जल पावन ॥ सिमिटि श्रवण मगु चलेउ सुहावन ॥ ८ ॥ ❋

यही जल सुकृतरूप शालि (चावलों) को बढ़ानेवाला और प्रभुके भक्तजनोंका जीवन आधार है ॥ ७ ॥ जैसे पृथ्वीपर पड़ा हुआ जल सिमट सिमटकर नारे खोरेद्वारा तालाव, और सरोवरोंमें जाता है. ऐसे सुमतिरूप पृथ्वीपर पड़ाहुआ रामचन्द्रजीका यशरूप जल सिमट सिमटकर कानोंद्वारा पवित्र मनरूप मानससरोवरमें जाता है ॥ ८ ॥

भरेउ सुमानस सुथल थिराना ॥ सुखद शीत रुचि चारु चिराना ॥ ९ ॥ ❋

जिससे खूब अच्छीतरह भरा हुआ यह सुथल स्थिर सरोवर चिराना यानी कुछ समय बीतनेके बाद जैसा शरदऋतु आजानेसे सरोवरका जल स्वच्छ होजाता है ऐसे ईश्वरमें निष्ठा लगजानेसे यह रामचरितमानस सबके लिये सुखदायी शीतल, रोचक और सुन्दर होजाता है ॥ ९ ॥

दोहा-सुठि सुन्दर संवाद बर, बिरचेउ बुद्धि बिचारि ॥ ❋
ते यहि पावन सुभग सर, घाट मनोहर चारि ॥ ४७ ॥ ❋

बुद्धिमें अच्छीतरह बिचार करके जो इसमें सुन्दर चार संवाद रक्खें गये हैं वेही इस पवित्र सुन्दर सरोवरके मनोहर चार घाट हैं. चार संवाद-पहिला महादेव पार्वतीका १, दूसरा काकभुशुंडिऋषि और गरुड़का २, तीसरा याज्ञवल्क्य और भरद्वाजका ३, और चौथा तुलसीदास और उनके गुरुका ४ ॥ ४७ ॥

सप्त प्रबन्ध सुभग सोपाना ॥ ज्ञाननयन निरखत मन माना ॥ १ ॥ ❋
रघुपतिमहिमा अगुण अबाधा ॥ बर्णब सोइ बर बारि अगाधा ॥ २ ॥ ❋

सात प्रबंध कहे कांड हैं वोही सुन्दर सात सोपान कहे सीढ़ी हैं. सो यह रामचरितमानस ज्ञानरूप

नेत्रसे प्रत्यक्ष दीख पड़ता है. जिससे मनमें बड़ी प्रीति और प्रतीति होती है ॥ १ ॥ जो अलौकिक गुणवाली और बाधारहित रामचन्द्रजीकी महिमा है वोही इसमें अगाध सुन्दर जल है ॥ २ ॥

रामसीययश सलिलसुधासम ॥ उपमा बीचिबिलास मनोरम ॥ ३ ॥ ❋
पुरइनि सघन चारु चौपाई ॥ युक्ति मंजुमणि सीप सुहाई ॥ ४ ॥ ❋

रामचन्द्रजी और सीताके यशका वर्णन तो अमृतके समान सुन्दर जल है और वर्णनके भीतर जो उपमा है वोही सुन्दर तरंगोंका विलास है ॥३॥ जो सुन्दर चौपाइयां है वोही सघन पुरइनि कहे कमल-वेलि [कमोदिनी] छारही है. कविकी जो सुमति है. वोह सुन्दर सीप है जो उसमें युक्ति है वोही सुन्दर मौक्तिक (मोती) है ॥ ४ ॥

छन्द सोरठा सुन्दर दोहा ॥ सोइ बहुरंग कमलकुल सोहा ॥ ५ ॥ ❋
अर्थ अनूप सुभाव सुभासा ॥ सोइ पराग मकरन्द सुबासा ॥ ६ ॥ ❋

जो अच्छे २ छंद, दोहा और सोरठा है वोही रंग रंगका कमलबन शोभ रहा है ॥५॥ जो अनुपम अर्थ है वोही पराग (कमलकी धूरि) है. सुन्दर भाव कहे भावना है वोही मकरन्द (पुष्परस) है. जो अच्छी भाषा है वोही सुगंध है ॥ ६ ॥

सुकृतपुंज मंजुल अलिमाला ॥ ज्ञान बिराग बिचार मराला ॥ ७ ॥ ❋
ध्वनि अवरेव कवित गुणजाती ॥ मीन मनोहर ते बहुभाँती ॥ ८ ॥ ❋

जैसे कमलके पराग मकरन्द और सुगन्धिमें भ्रमर रँज जाते है ऐसे यहां सुकृती जनोंका समुदाय है सोही सुन्दर भ्रमरपंक्ति है. मानसमें हंस हैं सो यहां ज्ञान, वैराग्य और विचार है सोही हंस है ॥ ७ ॥ मानसमें मीन होते है सो यहां कविताके जो चार भेद है ध्वनि, अवरेव, गुण और जाति, सोहीं यह अनेक प्रकारकी मनोहर मछलियां है ॥ ८ ॥

१ध्वनि काव्यमें व्यंग्यको कहते हैं,व्यंग्यके व्यंजक धर्मको व्यंजनावृत्ति कहते है. व्यंजनावृत्ति दो प्रकारकी है शाब्दी और आर्थी. शाब्दी दो प्रकारकी है,शब्दमूला और लक्षणामूला. शब्दमूला लक्षणाका लक्षण कहते हैं. जहां अनेकार्थ-शब्द संयोग वगैरह शक्तिग्राहक नियमोंसे एक अर्थमें नियम हो चुके उसके अनंतर दूसरे अर्थकी प्रतीति होनी वह शब्दमूला व्यंजना कही जाती है ॥ जैसे-दुर्गालंघितदेह, मनसिजकहँ मूर्छित करन । भोगिवृंदपर नेह,करहु कृपा सो गौरिपति ॥ यहां प्रकरणसे गौरी कहनेसे गौरीपति कहे उमा नाम रानी, उसका पति कहे वल्लभ. अर्थात् उमावल्लभ राजाका अर्थ जाना जाता है. उसके अनंतर जो महादेवविषयक दूसरा अर्थ प्रतीत होताहै सो व्यंजनावृत्तिसे जाना जाता है. शब्दार्थके नियामक बहुत हैं. जैसे-संयोग, विप्रयोग, साहचर्य, विरोधिता, अर्थ, प्रकरण, लिंग, अन्यपदका सामीप्य, सामर्थ्य, औचित्य, देश, काल, व्यक्ति, स्वर और चेष्टा आदि. उदाहरण-संयोगसे " शंखचक्रसहित हरि. " यहां शंख चक्रके संयोगसे हरिशब्दसे विष्णुकाही बोध होगा,इंद्र अश्व कपि आदिका नहीं.वियोग-शंखचक्ररहित हरि, यहांभी वियोगसे उसीका बोध होगा. साहचर्य-"भीम और अर्जुन" यहां भीमशब्दके साथ रहनेसे अर्जुन शब्दसे पांडव अर्जुनका बोध होगा,सहस्रार्जुनका नहीं.विरोधिता-"कर्ण और अर्जुन" यहां कर्णसे सूतपुत्रका बोध होगा,कान वगैरहका नहीं.अर्थ-"स्थाणुको वंदन करता हूं"यहां शिवजोका बोध होगा.कटे हुए सूखे वृक्षका नहीं.प्रकरण-"देव सब जानते हैं" यहां देवशब्दसे आपका बोध होगा, देवताका नहीं. लिंग (चिन्ह)-"मकरध्वज कोपित हुआ."यहां कामदेवका बोध होताहै, समुद्रका नहीं. अन्यपदका सामीप्य-"देव पुरारि" यहां पुरारिशब्दसे महादेवका बोध होताहै. नगरके नाश करनेवाले किसी अन्यका नहीं.सामर्थ्य-"मधुसे मदमत्त कोकिल" यहां मधुशब्दसे वसंतका बोध होताहै, मद्यविशेषका नहीं; क्योंकि कोकिलको मदमत्त करनेकी सामर्थ्य वसंतहीमें है, मद्यमें नहीं. औचित्य-"प्यारीका मुख तुम्हारी रक्षा करो."यहां मुखशब्दसे सन्मुख होनेका बोध होताहै,मुखका नहीं. देश-"आकाशमें चंद्र शोभित है." यहां चंद्रशब्दसे चांदका बोध होताहै,कपूर आदिका नहीं. काल(समय)-रातके समय किसोने कहा कि"चित्रभानु लाओ"यहां

जैसे मानसमें अनेक जलजंतु हैं ऐसे यहां धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, ज्ञान, विज्ञान, विचारकर कहेंगे सो ॥ ९ ॥ तथा शृंगार करुण, अद्भुत, वीर, भयानक, बीभत्स, रौद्र और शान्त ये नवरस. जप, तप, योग और वैराग्य येही बड़े बड़े सुन्दर जलचर जीव है ॥ १० ॥

सुकृती साधु नामगुणगाना ॥ ते विचित्र जलबिहँगसमाना ॥ ११ ॥ ❋
सन्तसभा चहुँदिशि अमराई ॥ श्रद्धा ऋतु बसन्तसम गाई ॥ १२ ॥ ❋

मानसमें तरह तरहके विचित्र जलपक्षी है ऐसे यहां सुकृती और साधुजन जो नाम और गुणका गान करते है वेही अद्भुत जलके पखेरू है ॥ ११ ॥ संत लोगोंकी सभा है सोही इस सरोवरके चारों ओर सुन्दर अमराई (बगीचा) है. श्रद्धा है सोही सुन्दर वसंतऋतु है ॥ १२ ॥

भक्तिनिरूपण बिबिधविधाना ॥ क्षमा दया द्रुम लतावितानाा ॥ १३ ॥ ❋
संयम नियम फूल फल ज्ञाना ॥ हरिपदरति रस वेद बखाना ॥ १४ ॥ ❋

अनेक प्रकारका भक्तिका निरूपण, क्षमा और दया है सोही वृक्ष और लताओंका विस्तार है ॥ ॥ १३ ॥ संयम और नियम पुष्प हैं. ज्ञानरूप फल है, हरि भगवान्के चरणोंमें प्रीति है सोही मधुर रस है, जिसकी वेद आप प्रशंसा करते है ॥ १४ ॥

औरौ कथा अनेक प्रसंगा ॥ तेइ शुक पिक बहुवर्ण बिहंगा ॥ १५ ॥ ❋

औरभी दूसरे जो अनेक प्रसंग और कथायें है वोही इस मानसमें शुक कोकिल आदि रंग रंगके पक्षी है ॥ १५ ॥

दोहा–पुहुपबाटिका बाग बन, सुख सुविहंग विहारु ॥ ❋
माली सुमन सनेह जल, सींचत लोचन चारु ॥ ४८ ॥

इस सरोवरके चारों तर्फकी उपरोक्त फुलवारियां बाग और वनके भीतर आनंदरूप तोता मैना

चित्रभानु शब्दसे अग्नि समझा जायगा, सूर्य नहीं. व्यक्ति (लिंग)–" रथाङ्गं भाति " यहां रथाङ्ग शब्द नपुंकलिंग होनेसे रथाङ्गशब्दसे पहियेका बोध होता है, चक्रवाकका नहीं, यह उदाहरण भाषामें नहीं फब सकता; क्योंकि भाषामें पुल्लिंग और स्त्रीलिंग दोही है, नपुंसकलिंग नहीं है; इस लिये भाषामें यह उदाहरण देना ठीक है; जैसे " बाटमें छिरकाव हो रहा है " यहां पुल्लिंगसे मार्गका बोध होता है, दीपककी बाटका नाहीं. स्वरके उदाहरण वेदमेंही मिलते हैं· पर कई एक कहते हैं कि लोकमेंभी उदात्तादि और काकु आदि स्वरसे अर्थका बोध होता है. जैसे–"हमारे पाससे पासकोगे" यहां काकूक्ति कहनेसे ऐसा अर्थबोध होता है कि क्या हमारे पाससे तुम पा सकोगे ? अर्थात् नहीं पा सकोगे. काकूक्तिसे निषेधका बोध होता है और सीधा उच्चारण करनेसे पाना जाना जाता है इस लिये स्वरभी अर्थके बोधमें नियामक है. चेष्टा–" इतने बड़े स्तनवाली " यहां हाथकी चेष्टासे अर्थका बोध होता है. ऐसे अर्थके बोधमें अनेक कारण हैं. लक्षणामूला व्यंजना उसे कहते हैं जिससे लक्षणाके प्रयोजनकी प्रतीति होवे. जैसे–" गंगायां घोषः " यहां जलप्रवाह आदि अर्थको बोधित कर अभिधावृत्ति सफल हुई. और तट आदि अर्थ बोधित करके लक्षणावृत्ति विरत हो चुकी. उसके अनंतर जिस वृत्तिसे शीतत्व पावनत्व आदि गंगाका अतिशय जाना जाता है उस वृत्तिको लक्षणामूला व्यंजना कहते हैं. आर्थी व्यंजनाभी पांच प्रकारकी है.जैसे–वक्त वाक्य प्रस्ताव देश काल वैशिष्ट्यमें १ बोद्धव्य वैशिष्ट्यमें २ अन्यसन्निधि वैशिष्ट्यमें ३ काकुवैशिष्ट्यमें ४ चेष्टावैशिष्ट्यमें ५ यह पांचही प्रकारकी आर्थी व्यंजना वाच्यार्थ लक्ष्यार्थ और व्यंग्यार्थके भेदसे जुदी जुदी तीन प्रकारकी होनेसे कुल पन्द्रह प्रकारकी होती है. अवरेव कहे अलंकार दो प्रकारके हैं, शब्दालंकार और अर्थालंकार. शब्दालंकार अनुप्रास यमक आदि और अर्थालंकार उत्प्रेक्षा आदि अनेक हैं.काव्यके गुण मधुर ओज आदि अनेक हैं. और काव्यकी जाति तीन प्रकारकी है. उत्तम मध्यम और अधम.इनके लक्षण साहित्यशास्त्रोंमें बड़े विस्तारसे लिखे हैं सो वहां देख लेना. अवकाश न रहनेसे यहां छोड़ दिये गये हैं.

चातक आदि पक्षी कलोलैं कर रहे है; सुन्दर मन है सोही माली है. वो नेत्ररूपी घड़े भरभर कर स्नेहरूपी जल सींचा करता है ॥ ४८ ॥

जे गावहिँ यह चरित सँभारे ॥ ते यहि ताल चतुर रखवारे ॥ १ ॥ ❋
सदा सुनहिँ सादर नर नारी ॥ ते सुरवर मानस अधिकारी ॥ २ ॥ ❋

जो मनुष्य सावधान हो इस चरित्रको गाते है और इसकी चौकशी रखते है कि इसमें कहीं गप्प सप्प तो नहीं मिला दिया है, वे इस सरोवरके पक्के रखवारे है ॥ १ ॥ जो स्त्री पुरुष इसको सदा आदरपूर्वक सुनते है, वेही इस देवतामय सर्वोत्तम मानससरोवरके अधिकारी होते है ॥ २ ॥

अतिखल जे विषयी बक कागा ॥ इहिसर निकट न जाहिँ अभागा ॥३॥ ❋
शंबुकभेकसियारसमाना ॥ इहां न विषयकथारस नाना ॥ ४ ॥ ❋

जो महादुष्ट और विषयी पुरुष है वे काक और बकके समान हैं; वे अभागे कदापि इस सरोवरके निकट नहीं जासकते ॥ ३ ॥ घोंघे, मेंडक और सियारके जैसी जो नाना प्रकारके रसवाली विषयसंबंधी कथायें है सो इसमें नहीं है ॥ ४ ॥

तेहि कारण आवत हिय हारे ॥ कामी काक बलाक बिचारे ॥ ५ ॥ ❋
आवत इहिसर अति कठिनाई ॥ रामकृपाबिनु आइ न जाई ॥ ६ ॥ ❋

और इसीसे कामी पुरुषरूपी बिचारे कव्वे और बगुले हृदयमें हार मानकर इसके निकट नहीं आते ॥ ५ ॥ और इस सरोवरपर आते कठिनताभी बहुत रहती है. सो प्रभुकी कृपाविना किसी तरह आया नहीं जा सकता ॥ ६ ॥

कठिन कुसंग कुपंथ कराला ॥ तिनके बचन ब्याघ्र हरि ब्याला ॥ ७ ॥ ❋
गृह कारज नाना जंजाला ॥ तेइ अति दुर्गम शैल बिशाला ॥ ८ ॥ ❋

महादारुण जो कुसंग है सोही महाभयानक मार्ग है. और उन कुसंगियोंके जो वचन हैं सो तो मानों बाघ सिंह, और सांपही हैं ॥ ७ ॥ अनेक प्रकारके घरके धंदे और जंजाल हैं वोही यहां अति दुर्गम बड़े बड़े पर्वत हैं ॥ ८ ॥

बन बहुबिषय मोह मद माना ॥ नदी कुतर्क भयंकर नाना ॥ ९ ॥ ❋

मोह, मद और मान हैं सोही यहां महाविषम गहन बन है. अनेक प्रकारकी भयंकर कुतर्कनां है सोही बड़ी बेगवाली महानदी है ॥ ९ ॥

दोहा–जे श्रद्धाशम्बलरहित, नहिँ संतनकर साथ ॥ ❋
तिनकहँ मानस अगम अति, जिनहिँ न प्रिय रघुनाथ ॥४९॥ ❋

उस मार्गमें खानेको खर्च न होवे तो और साथ न होवे तो वह मार्ग बहुत कठिन हो जाता है. ऐसे इस मार्गमेंभी जिनके पास श्रद्धारूप खर्च नहीं है और संत लोगोंका साथ नहीं है. तथा रामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रीति नहीं है उनके लिये यह मानस अति अगम और विषम है ॥ ४९ ॥

जो करि कष्ट जाइ पुनि कोई ॥ जातहिँ नींद जुड़ाई होई ॥ १ ॥ ❋
जड़ता जाड़ विषम उर लागा ॥ गयहु न मज्जन पाव अभागा ॥ २ ॥ ❋

और कदाचित् कोई कष्ट करके उसके पास चला भी जाता है तो जातेही उसे नींदरूप जुड़ाई (सर्दी) लग जाती है अर्थात् हरिकथा सुनतेही नींद घेर लेती है ॥ १ ॥ जब हृदयमें जड़तारूपी महादारुण जाड़ा लगता है तब वह अभागा वहां जानेपरभी स्नान करने नहीं पाता ॥ २ ॥

करि न जाइ सर मज्जन पाना ॥ फिरि आवै समेत अभिमाना ॥ ३ ॥ ❁
जो बहोरि कोउ पूँछन आवा ॥ सरनिंदा करि ताहि सुनावा ॥ ४ ॥ ❁

भाग्यविना उस सरोवरमें नतो स्नान किया जाता है और न पान किया जाता है. मारे अभिमानके वहांसे पीछे ऐसेके ऐसे लौट आते हैं ॥ ३ ॥ जो कदाचित् कोई पूछनेको आता है कि तुम मानससरोवरपर गयेथे सो वहां न्हाये धोये वा जल पिया? क्यों वो कैसा है? सो हमेंभी तो कहो. तब वह अभागा खल आप न न्हाया और न स्वाद लिया जिसे तो एक ओर रहने दीजिये, प्रत्युत वह नीच उसको उस सरोवरकी निंदा करके सुनाता है ॥ ४ ॥

सकल बिघ्न व्यापहिं नहिं तेहीं ॥ राम कृपा करि चितवहिँ जेहीं ॥ ५ ॥ ❁
सोइ सादर सर मज्जन करहीं ॥ महाघोर त्रयताप न जरहीं ॥ ६ ॥ ❁

और प्रभु रामचन्द्रजी जिसपर कृपादृष्टि करके देखते हैं उसे कोईभी विघ्न नहीं व्यापता ॥ ५ ॥ अतएव वोही जन उस सरोवरमें आदरपूर्वक मज्जन करता है. जिससे उसके महाघोर तीनों प्रकारके तापों (अध्यात्म, अधिदैव, अधिभूत) की जलन नहीं रहती ॥ ६ ॥

ते नर यह सर तजहिं न काऊ ॥ जिनके रामचरित भल भाऊ ॥ ७ ॥ ❁
जो नहाइ चह इहि सर भाई ॥ सो सतसंग करै मन लाई ॥ ८ ॥ ❁

जिसके रामचन्द्रजीके चरित्रमें अच्छी भावना और भक्ति है वे मनुष्य इस सरोवरको कदापि नहीं छोड़ते ॥ ७ ॥ हे भाई! जो कोई इस सरोवरमें नहाना चाहे उसको मन लगाकर सत्संग करना चाहिये ॥ ८ ॥

आस मानस मानस चख चाही ॥ भइ कविबुद्धि बिमल अवगाही ॥ ९ ॥
भयो हृदय आनंद उछाहू ॥ उमगेउ प्रेम प्रमोद प्रबाहू ॥ १० ॥ ❁

जब यह भक्तजन ऐसे अलौकिक मानससरोवरको मनरूप दृष्टिसे देख, अर्थात् मनमें ज्ञानदृष्टिसे विचार कर इसमें अवगाहन करता है यानी मज्जन करता है तब उस कवि यानी ज्ञानी पुरुषकी बुद्धि निर्मल हो जाती है ॥ ९ ॥ हृदयमें आनंद और उच्छाह भर जाता है. सो वह आनंद और उच्छाह मेरे मनमें भर गया है ॥ १० ॥

चली सुभग कवितासरितासों ॥ राम बिमलयशजलभरितासों ॥ ११ ॥ ❁
सरयूनाम सुमंगलमूला ॥ लोकबेदमत मंजुल कूला ॥ १२ ॥ ❁
नदी पुनीत सुमानसनंदिनि ॥ कलिमलतृणतरुमूलनिकंदिनि ॥ १३ ॥ ❁

जैसे मानससरोवर भर जानेसे उसमेंसे उमँग कर प्रवाह निकला है सोही सरयूनदी हुई है ऐसे यहांभी मेरे हृदयमें जो प्रेम और प्रमोद भर रहा है उसमेंसे उमँगकर जो प्रवाह कहे वाणीकी धारा निकली है सोही सुन्दर कवितारूप नदी है. उसमें रामचन्द्रजीका निर्मल यशरूप जल भरा हुआ है ॥ ११ ॥ उ-

सका सरयू नाम है. मंगलकी मूल है. लोक और वेदके परम मान्य जो मत हैं सोही मनोहर दोनों कवितारूप सरयूनदीके तट हैं ॥ १२ ॥ जैसे सरयूनदी मानससरोवरसे निकली है इसलिये अक्षरार्थ देखकर योगरूढ नाम सरयू रक्खा गया है. क्योंकि सरयूका अर्थ यह कि "जो सरोवरसे निकले वो सरयू" ऐसे कवितारूप नदीभी रामचरितरूप मानससे निकली है इसलिये इसका नामभी सरयू रक्खा गया है. सो ये दोनों मानसकी कन्या कवितारूप नदी और सरयू परम पवित्र हैं. जैसे सरयू तृण वृक्ष मूलको बहाती है ऐसे यह कलिकालके कल्मषको नाश कर देती हैं ॥ १३ ॥

दोहा-श्रोता त्रिविध समाज पुर, ग्राम नगर दुहुँ कूल ॥ ❋
सन्तसभा अनुपम अवध, सकलसुमंगलमूल ॥ ५० ॥ ❋

तीन प्रकारके श्रोता गणोंकी जो समाज है सोही इस सरयूनदीके दोनों तटोंपर पुर, गाँवे और नगैर बस रहे हैं. और सब सुमंगलोंकी मूलकारण जो संत लोगोंकी सभा है सोही इस सरयूके किनारे सुहावनी अयोध्यापुरी है ॥ ५० ॥

रामभक्ति सुरसरि तहँ जाई ॥ मिली सुकीरति सरयु सुहाई ॥ १ ॥ ❋
सानुज राम समर यश पावन ॥ मिलेउ महानद शोण सुहावन ॥ २ ॥ ❋

सरयूमें आकर गंगा मिली है. सो यहां रामचन्द्रजीकी कीर्तिरूप सुहावनी सरयूमें रामचन्द्रजीकी भक्तिरूप गंगा आकर मिली है ॥ १ ॥ और सरयूमें शोण नाम महानद मिला है सो यहां लक्ष्मणसहित रघुनाथजीका संग्रामसंबंधी जो पवित्र यश है सोही शोण महानद है. सो इसमें आकर मिला है॥२॥

युगबिच भक्ति देवधुनिधारा ॥ सोहति सहित सुबिरति बिचारा ॥ ३ ॥ ❋
त्रिविधतापत्रासक त्रिमुहानी ॥ रामस्वरूपसिंधुसमुहानी ॥ ४ ॥ ❋

सरयू और शोणनदके बीच गंगाजीकी धारा शोभायमान है. सो यहां वैराग्य और विचाररूप सरयू व शोण नदके बीच भक्तिरूप गंगाजी उनके साथ शोभायमान लगती हैं ॥ ३ ॥ जैसे गंगा सरयू और शोण इन तीनोंके संगमको त्रिमुहानी कहते हैं वो त्रिमुहानी तीनों तापोंको दूर करती है ऐसे यहां भक्ति, वैराग्य और विचार (ज्ञान) रूप त्रिमुहानी तीनों प्रकारके तापोंको मिटा देती है. जैसे वो त्रिमुहानी समुद्रमें जा मिलती है ऐसे यहां भक्ति,ज्ञान,वैराग्यरूप त्रिमुहानी रामचन्द्रजीके स्वरूपरूप समुद्रमें जाकर समा जाती है ॥ ४ ॥

मानसमूल मिली सुरसरिहीं ॥ सुनत सुजन मन पावन करिहीं ॥ ५ ॥ ❋
बिच बिच कथा बिचित्र बिभागा ॥ जनु सरितीर तीर बन बागा ॥ ६ ॥ ❋

मानससे प्रगट भयी हुई सुन्दर कवितारूप सरयूनदी कि जो भक्तिरूप गंगासे मिली हुई है उसको सुन सुनकर अर्थात् भावभक्तिसे रामचन्द्रजीके चरित्रवाली कविता वा कथा सुनकर सुजनलोग अपने मनको पवित्र करते हैं ॥ बीच बीचमें जो विचित्र विचित्र कथाविभाग है सो मानों नदीके तटपरके बाग बगीचे और बन है ॥ ६ ॥

---

१ जिसमें पांच घरसे ले सौतक घर हों वह पुर कहलाता है. २ जिसमें सौ घरोंसे हजारतक घर हों वह गाँव. ३ और हजारसे ले असंख्यात घर जिसमें हों उसे नगर कहते हैं.

उमामहेशविवाहबराती ॥ ते जलचर अगणित बहुभांती ॥ ७ ॥ ❀
रघुवरजन्म अनन्द बधाई ॥ भँवर तरंग मनोहरताई ॥ ८ ॥ ❀

महादेव और पार्वतीके बिबाह और बरातकी जो कथा है सो मानों असंख्यात अनेक प्रकारके जलजंतु है ॥ ७ ॥ रामचन्द्रजीके जन्मसंबंधी जो आनंद हैं सोही भँवर है. और बधाई है सोही मानों तरंगोंकी छटा है ॥ ८ ॥

दोहा–बालचरित चहुँबंधुके, बनज बिपुल बहुरंग ॥ ❀
नृपरानी परिजन सुकृत, मधुकर बारि बिहंग ॥ ५१ ॥ ❀

चारों भाइयोंके जो बालचरित्र है सोही बरन बरनके सुंदर विशाल कमल हैं. और राजा दशरथ और रानी कौसल्याके जो सुकृत है सोही भ्रमर हैं. और कुटुंबके लोगोंके जो सुकृत हैं सोही जलपक्षी हैं ॥ ५१ ॥

सीयस्वयम्बरकथा सुहाई ॥ सरित सुहावनि सो छबिछाई ॥ १ ॥ ❀
नदी नाव बटु प्रश्न अनेका ॥ केवट कुशल उतर सबिबेका ॥ २ ॥ ❀

सीताके स्वयंवरकी जो सुहावनी कथा है सोही मानों सुंदर सुहावनी नदी है, जिसकी छबि चारों ओर छा रही है ॥ १ ॥ बटु कहे ब्रह्मचारी अर्थात् श्रोता लोगोंके जो अनेक प्रश्न हैं सोही इस नदीमे नाव हैं. और विवेकके साथ जो उनके अच्छे उत्तर हैं सोही चतुर केवट (नाविक) है. अथवा बटु यानी ब्रह्मचारी रामलक्ष्मण विषय जो प्रश्न हैं सो तो नाव हैं. जैसे— " कहहु नाथ सुंदर दोउ बालक ॥ मुनिकुलतिलक कि नृपकुलपालक " इन प्रश्नोंके उत्तर जो हैं सोही नाविक हैं जैसे— " ये प्रिय सबहिं जहां लगि प्रानी " ॥ २ ॥

पुनि अनुकथन परस्पर होई ॥ पथिकसमाज सोह सरि सोई ॥ ३ ॥ ❀
घोरधार भृगुनाथरिसानी ॥ घाट सुबन्ध राम बरबानी ॥ ४ ॥ ❀

और प्रश्नोत्तरके अनंतर जो फिर परस्पर अनुकथन है सोही नदीके तटपरके पथिक (मुसाफिर) लोगोंकी सुंदर समाज है. अथवा फिर घर घरमें जो लोगोंमें अनुकथन हुआ है सोही नदीपरके मुसाफिर हैं. जैसे— " बर्णत छबि जहँ तहँ सब लोगू " ॥ ३ ॥ परशुरामजीका जो भारी रोष है सो बड़ी तेज घोर धारा (प्रवाह) है. रामचन्द्रजीकी जो मधुर वाणी है सोही मानों उस प्रवाहको रोकनेके लिये अच्छे घाट बांधे हैं ॥ ४ ॥

सानुज रामबिबाहउछाहू ॥ सो शुभ उमँग सुखद सबकाहू ॥ ५ ॥ ❀
कहत सुनत हर्षहिँ पुलकाहीं ॥ ते सुकृती जन मुदित नहाहीं ॥ ६ ॥ ❀

लक्ष्मणसहित रामचन्द्रजीके विवाहका जो उत्सव है सोही सब किसीको सुख देने वाला सुंदर उमँगना है ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजीके विवाहके समाचार कहते और सुनते हुए लोग जो हर्षित होते हैं और पुलकित होते हैं सोही मानों भक्तजन आनंदित होकर नहाते हैं; स्नान करनेसे चित्त प्रसन्न होता है और शरीरके रोम खड़े हो जाते हैं सो यहां प्रभुके विवाहके समाचार सुनने और कहनेसे होता है. इसलिये सुनने और नहानेको स्नानके बराबर कहा ॥ ६ ॥

रामतिलकहित मंगल साजा, पर्वयोग जनु जुरेउ समाजा ॥ ७ ॥ ❀

काई कुमति केकयीकेरी ॥ परी जासु फल बिपति घनेरी ॥ ८ ॥ *

रामचन्द्रजीके राजतिलकके लिये जो तैयारी हुई है और लोग इकठे हुए हैं सोही मानों पर्वणीका योग जानकरके यात्री लोगोंकी समाज जुड़ी है ॥ ७ ॥ तहां कैकयीकी कुमति है सोही काई है, जिसका फल बड़ी भारी कठिन विपत् है ॥ ८ ॥

दोहा-शमन अमित उतपात सब, भरतचरित जप याग ॥ *
कलिअघ खल अवगुण कथन, ते जलमल बक काग ॥ ५२ ॥ *

सर्व प्रकारके अपार उत्पात मिटानेके लिये जप, याग वगैरह किये जाते हैं सो यहां कैकेयीके किये हुए उपद्रवको मिटानेके लिये भरतका चरित्र है सोही जप और यज्ञ है. जो कलियुगके अघ कहे पापोंका वर्णन है सोही यहां जलका मल (फेन) है. और जो दुष्टोंके अवगुणोंका वर्णन है सोही यहां बगुले और कव्वे हैं ॥ ५२ ॥

कीरति सरित छहूं ऋतु रूरी ॥ समय सुहावनि पावनि भूरी ॥ १ ॥ *
हिम हिमशैलसुताशिवब्याहू ॥ शिशिर सुखद प्रभुजन्मउछाहू ॥ २ ॥ *

प्रभुकी कीर्तिरूपी सरयूनदी छहो ऋतुओंमें बहुतही अच्छी है, जो समय समयपर अर्थात् हरवक्त सुहावनी लगती है. और परम पावन है. जैसे हिमालयकी कन्या पार्वती और महादेवका विवाह है सो तो हेमन्तऋतु है. प्रभुके जन्मका उत्सव है सोही सुखदायी शिशिरऋतु है ॥ १ ॥ २ ॥

बर्णन रामविवाहसमाजू ॥ सो मुद मंगलमय ऋतुराजू ॥ ३ ॥ *
ग्रीषम दुसह रामबनगवनू ॥ पंथकथा खर आतप पवनू ॥ ४ ॥ *

रामचन्द्रजीके विवाहके समयका आनन्दमय और मंगलमय जो समाजका वर्णन है सोही वसंतऋतु है ॥ ३ ॥ रामचन्द्रजीके दुःसह वनवासका वर्णन है सोही दुःसह ग्रीष्मऋतु है और मार्गमें जानेकी जो कथा है सोही कठोर धूप और पवन हैं अर्थात् लूएं हैं ॥ ४ ॥

वर्षा घोर निशाचर रारी ॥ सुरकुलशालिसुमंगलकारी ॥ ५ ॥ *
रामराजसुख विनय बड़ाई ॥ विशद सुखद सोइ शरद सुहाई ॥ ६ ॥ *

राक्षसोंके साथ जो घोर युद्ध हुआ है सोही वर्षा ऋतु है. जो वर्षा देवकुलरूपी शालि (चाँवलों) का मंगल करनेवाली और परवरिश करनेवाली है ॥५॥ रामचन्द्रजीके राजका सुख, विनय व बड़ाई है सोही निर्मल सुखदायी सुहावनी शरद ऋतु है ॥ ६ ॥

सतीशिरोमणि सियगुणगाथा ॥ सोइ गुण अमल अनूपम पाथा ॥७॥ *
भरतसुभावसुशीतलताई ॥ सदा एकरस बर्णि न जाई ॥ ८ ॥ *

पतिव्रताओंमें शिरोमणि श्रीसीताजीके गुणोंका जो अनुपम वर्णन है सोही जलकी निर्मलता और स्वच्छता आदि गुण हैं ॥ ७ ॥ भरतका स्वभाव है सोही जलकी शीतलता है. जो सदा ऐसा एकरस है कि जिसको वर्णन नहीं कर सकते ॥ ८ ॥

दोहा-अवलोकनि बोलनि मिलनि, प्रीति परस्पर हास ॥ *
भायप भलि चहुँबंधुकी, जलमाधुरी सुबास ॥ ५३ ॥ *

चारों भाइयोंका जो परस्परमें देखना बोलना और मिलना है सोही जलकी त्रिविध मधुरता है. और जो उनकी परस्परकी प्रीति, हँसना और अच्छा भायप है सोही जलकी सुंदर तीन प्रकारकी सुगंध है ॥ ५३ ॥

आरति बिनय दीनता मोरी ॥ लघुता ललितसुबारि न खोरी ॥ १ ॥ ❋
अद्भुत सलिल सुनत गुणकारी ॥ आस पियास मनोमलहारी ॥ २ ॥ ❋

मेरी जो आर्तता, विनती और दीनता है सोही उस पवित्र जलमें सुंदर हलुकाई है और जलमें हलकापन होना यह कोई खोड़ नहीं गिनीजाती, किंतु गुण गिना जाता है ॥ १ ॥ वह जल तौ पीनेसे प्यास बुताता है और बाहिरका मल दूर करता है और यह जल तौ बड़ा अद्भुत है; क्योंकि इसके सुनतेही गुण होता है. आशारूपी प्यास मिट जाती है और मनके भीतरका मैल हर जाता है ॥ २ ॥

राम सुप्रेमहिँ पोषत पानी ॥ हरत सकलकलिकलुषगलानी ॥ ३ ॥ ❋
भवश्रमशोषक तोषक तोषा ॥ शमन दुरित दुख दारिद दोषा ॥ ४ ॥ ❋

यह जल रामचन्द्रजीके प्रेमको पोषता है और कलिकरालके कल्मषकी सर्व ग्लानिको मिटा देता है ॥ ३ ॥ संसारके परिश्रमको शोषित कर देता है और संतोषकोभी संतुष्ट कर देता है. दुःख दारिद्र्य और दुरित (पाप) के सब दोषोंको शांत कर देता है ॥ ४ ॥

काम क्रोध मद मोह नशावन ॥ विमल विवेक बिराग बढ़ावन ॥ ५ ॥ ❋
सादर मज्जन पान कियेते ॥ मिटहिँ पाप परिताप हियेते ॥ ६ ॥ ❋

काम, क्रोध, मद और मोह नाश हो जाते है. निर्मल विवेक और वैराग्य बढ़ जाता है ॥ ५ ॥ इस जलका आदरके साथ मज्जन और पान करनेसे अर्थात् सुनने और मनन करनेसे हृदयके सब संताप और पाप मिट जाते हैं ॥ ६ ॥

जिन यह बारि न मानस धोये ॥ ते कायर कलिकालविगोये ॥ ७ ॥ ❋
तृषित निरखि रविकरभव बारी ॥ फिरहिँ मृगा जिमिजीव दुखारी ॥ ८ ॥ ❋

जिन्होंने इस जलसे मनको स्वच्छ नहीं कर लिया उन कायर पुरुषोंको कलिकालने बिगोय लिया है अर्थात् अपने गुलाम बना लिया है ॥ ७ ॥ जो लोग इस रामन्द्रजीकी कीर्तिरूप नदीको छोड़ दूसरे प्रसंगोंमें पड़ते हैं वे जीव ऐसे दुःख पाते हैं कि मानों प्यासा हरिण सूरजकी किरणोंसे चमकती हुई खारी जमीनको देख, वहां जल भरा जान, इधरका उधर भटकता फिरता है. अर्थात् मृगतृष्णासे भूला फिरता है ॥ ८ ॥

दोहा–मतिअनुहारि सुबारि बर, गुणगण मन अन्हवाइ ॥ ❋
सुमिरि भवानी शंकरहिँ ,कह कवि कथा सुहाइ ॥ ५४ ॥ ❋
भरद्वाज जिमि प्रश्न किय, याज्ञवल्क्य मुनिपाय ॥ ❋
प्रथम मुख्य संवाद सोइ , कहिहौं हेतु बुझाय ॥ ५५ ॥ ❋
अब रघुपतिपदपङ्करुह, हिय धरि पाइ प्रसाद ॥ ❋
कहौं युगलमुनिवर्य्यकर, मिलन सुभग संवाद ॥ ५६ ॥ ❋

कवि कहता है कि-मैं मेरी बुद्धिके अनुसार मेरे मनको गुणगणरूप सुन्दर जलके अन्दर न्हिलाकर शिवपार्वतीका स्मरण करके सुहावनी कथा करता हूं ॥ ५४ ॥ याज्ञवल्क्यमुनिको पाकर भरद्वाज मुनिने जैसे प्रश्न किया था वैसे मैंभी पहले वोही मुख्य संवाद कारण समझकर कहूंगा ॥ ५५ ॥ अब मैं श्रीरघुनाथजीके चरणकमलोंको हृदयमें रखकर, उनका प्रसाद पाकर, दोनों मुनीश्वरोंके मिलनेका सुन्दर संवाद कहता हूं ॥ ५६ ॥

भरद्वाजमुनि बसहिँ प्रयागा ॥ जिनहिँ रामपद अति अनुरागा ॥ १ ॥❋
तापस शमदमदयानिधाना ॥ परमारथपथ परम सुजाना ॥ २ ॥ ❋

भरद्वाज मुनि प्रयागके भीतर विराजते हैं कि जिनकी प्रभुके चरणोंमें बड़ी प्रीति है ॥ १ ॥ वे ऋषि बड़े तपस्वी हैं और दया, शम (इंद्रियनिग्रह) और दम (मनोनिग्रह) के परम निधान हैं. और परमार्थपथ यानी मोक्षमार्गके विषयमें बड़े जानकार हैं ॥ २ ॥

माघ मकरगत रबि जब होई ॥ तीरथपतिहिँ आव सबकोई ॥ ३ ॥ ❋
देव दनुज किन्नर नर श्रेणी ॥ सादर मज्जहिँ सकल त्रिवेणी ॥ ४ ॥ ❋

जब माघके महीनेमें सूर्यनारायण मकर संक्रांतिके आते हैं तब सब लोग प्रयागराजकी यात्राको वहां आते हैं ॥ ३ ॥ देवता, दानव, किन्नर और मनुष्यसमूह ये सब आदरके साथ वहां जाते हैं और त्रिवेणीमें न्हाते हैं ॥ ४ ॥

पूजहिँ माधवपदजलजाता ॥ परसि अक्षयबट हर्षित गाता ॥ ५ ॥ ❋
भरद्वाजआश्रम अतिपावन ॥ परमरम्य मुनिवरमनभावन ॥ ६ ॥ ❋

माधव भगवान्के चरणकमलोंकी पूजा करते हैं और अक्षयवटका स्पर्श करके रोमांचित हो जाते है ॥ ५ ॥ तहां भरद्वाज मुनिका अति पवित्र आश्रम है जो अति रमणीय और मुनिराजोंके मनको बड़ा अच्छा लगता है ॥ ६ ॥

तहां होइ मुनिऋषयसमाजा ॥ जाहिँ जे मज्जन तीरथराजा ॥ ७ ॥ ❋
मज्जहिँ प्रात समेत उछाहा ॥ कहहिँ परस्पर हरिगुणगाहा ॥ ८ ॥ ❋

जो मुनि और ऋषि प्रयागराजमें स्नान करनेको जाते हैं उन लोगोंका भरद्वाजमुनिके आश्रममें समाज हुआ करता है ॥ ७ ॥ सब लोग प्रात समयमें जाकर बड़े उछाहके साथ तीर्थराजमें स्नान करते हैं और पीछे आपसमें हरि भगवान्के गुणोंकी कथा कहा करते हैं ॥ ८ ॥

दोहा-ब्रह्मनिरूपण धर्मबिधि, बरणहिँ तत्त्वबिभाग॥ ❋
कहहिँ भक्ति भगवन्तकी, संयुत ज्ञान बिराग ॥ ५७ ॥ ❋

वहां जो संतसमाज जुड़ता है उसमें ब्रह्मनिरूण होता है, धर्मका विभाग और तत्त्वोंका विभाग कहा जाता है. और ज्ञान व वैराग्यके साथ भगवान्की भक्तिका वर्णन करते हैं ॥ ५७ ॥

यहि प्रकार भरि मकर नहाहीं ॥ पुनि सब निज निज आश्रम जाहीं॥ १ ॥
प्रतिसम्बत अस होइ अनन्दा ॥ मकर मज्जि गवनहिँ मुनिवृन्दा ॥ २ ॥❋

इसतरह मकरसंक्रांतितक सब लोग न्हाते हैं और फिर सब लोग अपने अपने आश्रमोंको

जाते हैं ॥ १ ॥ प्रयागराजमें हरसाल ऐसा आनन्द होता है. मकरस्नान करके सब मुनिवृंद पीछे अपने अपने आश्रमोंको चले जाते हैं ॥ २ ॥

एकबार भरि मकर नहाये ॥ सब मुनीश आश्रमन सिधाये ॥ ३ ॥ ❋
याज्ञवल्क्य मुनि परम विवेकी ॥ भरद्वाज राखेउ पद टेकी ॥ ४ ॥ ❋

एक समय मकरसंक्रांतिमें न्हाकर सब मुनीश्वर अपने अपने आश्रमोंको रवाने हुए ॥ ३ ॥ उस समय भरद्वाजमुनिने पांव पकड़कर महाज्ञानी याज्ञवल्क्यमुनिको अपने आश्रममें रक्खा ॥ ४ ॥

सादर चरणसरोज पखारे ॥ अति पुनीत आसन बैठारे ॥ ५ ॥ ❋
करि पूजा मुनिसुयश बखानी ॥ बोले अति पुनीत मृदुबानी ॥ ५ ॥ ❋

आदरके साथ उनके चरणारविंद धोये और परम पवित्र आसनपर बिठाये ॥ ५ ॥ फिर पूजा करके मुनिने उनका सुयश वर्णन किया; तदनन्तर अति कोमल व पवित्र बाणीसे भरद्वाज मुनिने कहा ॥ ६ ॥

नाथ एक संशय बड़ मोरे ॥ करतल वेदतत्त्व सब तोरे ॥ ७ ॥ ❋
कहत मोहिँ लागत भय लाजा ॥ जो न कहौं बड़ होइ अकाजा ॥ ८ ॥ ❋

कि–हे नाथ ! मेरे एक बड़ा सन्देह है और आपको सब वेदोंके तत्त्व करामलकवत् हैं इसलिये कृपा करके मेरे मनका संदेह दूर करो ॥ ७ ॥ भरद्वाज कहते है कि–हे मुनि ! मुझको कहते तौ बड़ी लाज और भय आता है और जो न कहूं तौ उससे मेरा बड़ा बिगाड़ होता है ॥ ८ ॥

दोहा–सन्त कहहिँ अस नीति प्रभु, श्रुति पुराण मुनि गाव ॥ ❋
होइ न बिमल बिवेक उर, गुरुसन किये दुराव ॥ ५८ ॥ ❋

हे प्रभु ! संतलोग ऐसे कहते हैं और नीतिभी ऐसीही है तथा वेद और पुराणोंमेंभी ऐसाही कहा है और मुनिलोगभी ऐसेही कहते हैं कि–गुरुके पास दुराव [कपट] करनेसे हृदयमें निर्मल ज्ञान नहीं होता ॥ ५८ ॥

अस विचारि प्रगटहुँ निजमोहू ॥ हरहु नाथ करि जनपर छोहू ॥ १ ॥ ❋
रामनामकर अमित प्रभावा ॥ सन्त पुराण उपनिषद गावा ॥ २ ॥ ❋

ऐसे विचार कर मैं मेरा अज्ञान आपके सामने प्रगट करता हूं,सो हे नाथ ! मुझ दासपर कृपा करके उसे दूर करो ॥ १ ॥ रामनामका प्रभाव अमित यानी अपार है सो यह बात सन्त, पुराण और उपनिषद सब कोई गाते हैं ॥ २ ॥

सन्तत जपत शम्भु अविनाशी ॥ शिव भगवान ज्ञानगुणराशी ॥ ३ ॥ ❋
आकर चारि जीव जग अहहीं ॥ काशी मरत परमपद लहहीं ॥ ४ ॥ ❋

इस रामनामको केवल सन्त लोगही नहीं जपते हैं किंतु ज्ञान व गुणोंके भंडार भगवान् अविनाशी श्रीशिवजीभी सदा जपते रहते हैं ॥ ३ ॥ भरद्वाज कहते हैं कि–हे मुनि ! जगत्में जो चारप्रकारकी खानिके जीव हैं वे काशीमें मरकर जो परम पदको प्राप्त होते है ॥ ४ ॥

सोपि राममहिमा मुनिराया ॥ शिव उपदेश करत करि दाया ॥ ५ ॥ ❋

राम कवन प्रभु पूंछौं तोहीं ॥ कहहु बुझाय कृपानिधि मोहीं ॥ ६ ॥ ❋

यहभी रामचन्द्रजीके नामकाहो प्रभाव है; क्योंकि काशीमें जो मरता है उसको मृत्युके समय शिवजी दया करके रामनामका उपदेश करते हैं जिससे वह मोक्षको चला जाता है ॥ ५ ॥ भरद्वाज कहते हैं कि-हे मुनि ! मैं आपसे पूंछताहूं कि वे राम कौन है ? कि जिनकी ऐसी महिमा है; सो हे कृपानिधि ! मुझको समझाकर कहो ॥ ६ ॥

एक राम अवधेशकुमारा ॥ तिनकर चरित विदित संसारा ॥ ७ ॥ ❋
नारिबिरह दुख लहेउ अपारा ॥ भयउ रोष रण रावण मारा ॥ ८ ॥ ❋

हे प्रभु ! एक राम तो दशरथजीके पुत्र है कि जिनका चरित्र सारे संसारमें प्रसिद्ध है ॥ ७ ॥ सो उनका चरित तो सब कोई जानते है कि, उन्होंने स्त्रीके विरहसे भारी दुःख पाया और फिर क्रोधवश होकर युद्धमें रावणको मार डाला ॥ ८ ॥

दोहा-प्रभु सोइ राम कि अपर कोउ, जाहि जपत त्रिपुरारि ॥ ❋
सत्यधाम सर्वज्ञ तुम, कहहु बिबेक बिचारि ॥ ५९ ॥ ❋

हे प्रभु ! आप जिन रामकी महिमा कहते हो सो वह राम क्या वही है ? या कोई दूसरा है ? कि जिसका महादेवजी सदा ध्यान करते रहते है. हे मुनि ! आप सत्यके घर और सर्वजान हो सो विवेकसे विचार कर मुझको कहो ॥ ५९ ॥

जैसे मिटै मोह भ्रम भारी ॥ कहहु सो कथा नाथ बिस्तारी ॥ १ ॥ ❋
याज्ञवल्क्य बोले मुसुकाई ॥ तुमहिँ बिदित रघुपतिप्रभुताई ॥ २ ॥ ❋

हे नाथ ! जिसतरह मेरा यह भारी भ्रम और अज्ञान मिट जाय वैसे विस्तारपूर्वक मुझे वही कथा कहो ॥ १ ॥ भरद्वाज मुनिका यह प्रश्न सुनकर याज्ञवल्क्यने हँसकर कहा कि-हे मुनि ! आप प्रभुकी प्रभुताको खूब अच्छी तरह जानते हो ॥ २ ॥

रामभक्त तुम मन क्रम बानी ॥ चतुराई तुम्हारि मैं जानी ॥ ३ ॥ ❋
चाहहु सुनै रामगुण गूढ़ा ॥ कीन्हेउ प्रश्न मनहुँ अतिमूढ़ा ॥ ४ ॥ ❋

हे मुनि ! आप मन, वचन, कायासे प्रभुके पूर्ण भक्त हो सो आपकी चतुराई मैंने जानली है ॥ ३ ॥ आप प्रभुके अतिगुप्त गुण सुनना चाहते हो जिससे आपने मानों महामूर्खकी भांति यह प्रश्न किया है ॥ ४ ॥

तात सुनहु सादर मन लाई ॥ कहौं रामकी कथा सुहाई ॥ ५ ॥ ❋
महामोह महिषेश बिशाला ॥ रामकथा कालिका कराला ॥ ६ ॥ ❋

याज्ञवल्क्य कहते हैं कि-हे तात ! मैं प्रभुकी सुन्दर कथा कहता हूं सो आप मन लगाकर आदरसहित हो सुनिये ॥ ५ ॥ जो महाअज्ञान है सोही तो विशाल महिषासुर है और जो रामचन्द्रजीकी कथा है सोही कराल कालिका है अर्थात् जैसे कालिकाने महिषासुरका नाश किया ऐसे रामकथा अज्ञानका नाश करती है ॥ ६ ॥

रामकथा शशिकिरणसमाना ॥ सन्तचकोर करहिँ जेहिँ पाना ॥ ७ ॥ ❋
ऐसे संशय कीन्ह भवानी ॥ महादेव तब कहा बखानी ॥ ८ ॥ ❋

रामचन्द्रजीकी कथा चंद्रमाकी किरणोंके सदृश है कि जिसको सन्तरूप चकोर सदा पिया करते है. जैसे चकोर चंद्रकिरण पीते है ऐसे सन्त रामकथामृत पीते है ॥ ७ ॥ यही शंका पार्वतीजीने की है, तब शंकरजीने जो कहा है ॥ ८ ॥

दोहा–कहौं सो मति अनुहार अब, उमा शम्भुसंवाद ॥ ❋
भयउ समय जेहि हेतु जिहि, सुनि मुनि मिटहिँ विषाद ॥ ६० ॥ ❋

सो जैसी मेरी बुद्धि है उसके अनुसार अब मैं शिवपार्वतीका संवाद कहता हूं सो सुनो. हे मुनि ! वह संवाद किस वक्त और किसवास्ते हुआ था वह कहता हूं सो सुनो कि जिसके सुननेसे आपका विषाद यानी रंज बिलकुल मिट जायगा ॥ ६० ॥

एकबार त्रेतायुगमाहीं ॥ शम्भु गये कुम्भज ऋषिपाहीं ॥ १ ॥ ❋
संग सती जगजननी भवानी ॥ पूजे ऋषि अखिलेश्वर जानी ॥ २ ॥ ❋

एक समय त्रेतायुगमें महादेवजी अगस्त्यमुनिके पास पधारे ॥ १ ॥ उस समय जगन्माता श्रीसती भवानीकोभी साथ ले गये थे. मुनि अगस्त्यने उनको सर्वेश्वर जानकर अच्छीतरह पूजा करी ॥ २ ॥

रामकथा मुनिवर्य्य बखानी ॥ सुनी महेश परमसुख मानी ॥ ३ ॥ ❋
ऋषि पूँछी हरिभक्ति सुहाई ॥ कही शम्भु अधिकारी पाई ॥ ४ ॥ ❋

मुनिराजने रामचन्द्रजीकी जो कथा कही वह सुनकर महादेवजी परम आनंदको प्राप्त हुए ॥ ३ ॥ तब अगस्त्यजीने प्रभुकी सुहावनी भक्तिके विषयमें प्रश्न किया तो अधिकारी पाकर महादेवजीने ऋषिसे भक्तिका स्वरूप निरूपण किया ॥ ४ ॥

कहत सुनत रघुपतिगुणगाथा ॥ कछु दिन तहां रहे गिरिनाथा ॥ ५ ॥ ❋
मुनिसन बिदा मांगि त्रिपुरारी ॥ चले भवन सँग दक्षकुमारी ॥ ६ ॥ ❋

और प्रभुके गुणोंकी कथा कहते और सुनते शिवजी वहां कुछ दिन बिराजे ॥ ५ ॥ फिर महादेवजी अगस्तिजीसे आज्ञा मांग पार्वतीको संग ले अपने घरको चले ॥ ६ ॥

तेहि अवसर भंजन महिभारा ॥ हरि रघुबंश लीन्ह अवतारा ॥ ७ ॥ ❋
पिताबचन तजि राज्य उदासी ॥ दण्डकबन बिचरत अविनासी ॥ ८ ॥ ❋

उस अवसरमें पृथ्वीका भार उतारनेके लिये प्रभुने रघुराजाके वंशमें अवतार लिया था ॥ ७ ॥ सो पिताके वचनसे राज्य छोड़कर आप उदासीन होकर अविनाशी प्रभु दंडकारण्यवनमें विचर रहे थे ॥ ८ ॥

दोहा–हृदय बिचारत जात हर, केहिबिधि दर्शन होइ ॥ ❋
गुप्तरूप अवतरेउ प्रभु, गये जान सबकोइ ॥ ६१ ॥ ❋

उसवक्त महादेवजी अपने मनमें विचार करते हुए जा रहे थे कि, अब प्रभुके दर्शन कैसे होवें ?

अभी प्रभुने तो गुप्तरूपसे अवतार लिया है और जो मैं चला जाऊं तो सब कोई जान जावें इसलिये जाना तो ठीक नहीं ॥ ६१ ॥

सोरठा-शंकर उर अतिक्षोभ, सती न जानहिँ मर्म सोइ ॥ ❋
तुलसी दर्शनलोभ, मन डर लोचन लालची ॥ ११ ॥ ❋

महादेवजीके मनमें दर्शनोंके लिये बड़ा क्षोभ रहा था पर पार्वतीको इस भेदकी खबर नहीं पड़ी. तुलसीदासजी कहते हैं कि-महादेवजीको दर्शनका बड़ा लोभ था पर बात प्रगट हो जानेके हेतु मनमें बहुत डरे जिससे प्रभुके पास नहीं पधारे और उसीसे उनके नेत्रोंको दर्शनकी बड़ीही उत्कंठा हुई ॥ ११ ॥

रावण मरण मनुजकर यांचा ॥ प्रभु बिधिबचन कीन्ह चहैं सांचा ॥ १ ॥ ❋
जो नहिँ जाउँ रहे पछितावा ॥ करत बिचार न बनत बनावा ॥ २ ॥ ❋

महादेवजीने मनमें विचार किया कि रावणने अपनी मृत्यु मनुष्यके हाथ मांगी है और प्रभु-नेभी ब्रह्माजीका वचन सत्य करना चाहा है ॥ १ ॥ अब जो न जाऊं तो पछितावा रहता है और जो जाऊं तो भेद खुल जाय. अब क्या करना चाहिये ? ऐसे महादेवजीने बहुत विचार किया पर कुछ तजवीन नहीं बैठी ॥ २ ॥

यहि बिधि भये शोचवश ईशा ॥ ताही समय जाइ दशशीशा ॥ ३ ॥ ❋
लीन्ह नीच मारीचहिँ संगा ॥ भयउ तुरत सोइ कपटकुरंगा ॥ ४ ॥ ❋

महादेवजी इस तरह विचार कर रहे थे इतनेमें रावण मारीचके आश्रममें गया ॥ ३ ॥ उस नीचको साथ ले दंडकारण्यमें आया और वह मारीच तुरंत मायासे हरिणरूप बना ॥ ४ ॥

करि छल मूढ़ हरी बैदेही ॥ प्रभुप्रताप उर बिदित न तेही ॥ ५ ॥ ❋
मृग बधि बंधुसहित हरि आये ॥ आश्रम देखि नयन जल छाये ॥ ६ ॥ ❋

उसे देख सीता लुभायमान हुई, तिसके कहनेसे प्रभु हरिणके पीछे वनमें पधारे. इधर उस मूर्ख रावणने छल करके सीताका हरण किया. यदि वह प्रभुका प्रभाव जानता होता तो कभी सीताको नहीं ले जाता; पर वह अपने मनमें प्रभुके प्रतापको नहीं जानता था ॥ ५ ॥ फिर हरिणको मार-कर लक्ष्मणके साथ प्रभु पीछे आश्रममें पधारे. वहां सीताको न देखकर आश्रमको देखतेही नेत्रोंमें जल भर आया ॥ ६ ॥

बिरहबिकल नरइव रघुराई ॥ खोजत बिपिन फिरत दोउ भाई ॥ ७ ॥ ❋
कबहूँ योग बियोग न जाके ॥ देखा प्रगट बिरहदुख ताके ॥ ८ ॥ ❋

सो वे प्रभु सीताविरहसे मनुष्यकी नाईं विव्हल हो रहे हैं और दोनों भाई सीताको ढूंढ़ते जंगलमें भटकते फिरते हैं ॥ ७ ॥ याज्ञवल्क्य कहते हैं कि-हे मुनि ! जिसके योग और वियोग कुछभी कभी नहीं है उस परमात्माके विरहका दुःख हमने प्रत्यक्ष देखा ॥ ८ ॥

दोहा-अति बिचित्र रघुपतिचरित, जानहिँ परम सुजान ॥ ❋
जे मतिमन्द बिमोहबश, हृदय धरहिँ कछु आन ॥ ६२ ॥ ❋

रामचन्द्रजीका चरित्र अत्यंत विचित्र है जिसे जो परम सुज्ञानी लोग है वेही जानते हैं और जो मंदबुद्धि व अज्ञानवश है वे अपने मनमें कुछ औरका औरही लाते हैं॥ ६२ ॥

शम्भु समय तेहि रामहिँ देखा॥ उपजा हिय अतिहर्ष विशेखा॥ १॥ ❀
भरि लोचन छबिसिंधु निहारी॥ कुसमय जानि न कीन्ह चिन्हारी॥२॥❀

महादेवजीको रामचन्द्रजीका उस समयमें दर्शन हुआ और प्रभुके दर्शन होतेही उनके हृदयमें बड़ा आनंद उत्पन्न हुआ॥ १॥ शिवजीने नेत्र भरकर शोभाके सागर श्रीरामचन्द्रजीको देखा पर अवसर न जानकर पहिचान नहीं की॥ २॥

जय सच्चिदानन्द जगपावन॥ अस कहि चले मनोजनसावन॥ ३॥ ❀
चले जात शिव सतीसमेता॥ पुनि पुनि पुलकित कृपानिकेता॥ ४॥ ❀

केवल हे सच्चिदानन्दमूर्ति! हे जगत्को पवित्र करनेहारे प्रभु! आपकी जय हो ऐसे कहकर महादेव चल दिये॥ ३॥ महादेवजी सतीके साथ जा रहे थे तहां शिवजी बारंबार रोमांचित होते जाते थे॥ ४॥

सती सो दशा शम्भुकी देखी॥ उर उपजा संदेह विशेखी॥ ५॥ ❀
शंकर जगतबन्द्य जगदीशा॥ सुर नर मुनि सब नावत शीशा॥ ६॥ ❀

सो महादेवकी यह दशा देखकर सतीके मनमें इस बातसे बड़ा सन्देह उत्पन्न हुआ॥ ५॥ सतीने अपने मनमें विचार किया कि, महादेव सब जगत्के वंदनीय हैं और जगत्के स्वामी है और देवता, मनुष्य व मुनि सब कोई इनको प्रणाम करते है॥ ६॥

तिन नृपसुतहिँ कीन्ह परणामा॥ कहि सच्चिदानन्द परधामा॥ ७॥ ❀
भये मग्न छबि तासु बिलोकी॥ अजहुँ प्रीति उर रहति न रोकी॥ ८॥ ❀

सो इन्होंने 'हे सच्चिदानन्द! हे परधाम! आपकी जय हो' ऐसे कहकर राजाके पुत्रको प्रणाम किया यह क्या बात है? ॥ ७॥ और उनकी छबि देखकर ऐसे आनन्दमग्न हो गये है कि अबतक उनके मनकी प्रीति रोकी नहीं रहती॥ ८॥

दोहा-ब्रह्म जो व्यापक बिरज अज, अकल अनीह अभेद॥ ❀
सो कि देह धरि होइ नर, जाहि न जानत वेद॥ ६३॥ ❀

पार्वतीके मनमें ऐसा सन्देह हुआ कि- जो सर्वव्यापक, मायारहित, अजन्मा, कलारहित, अनीह व भेदरहित, साक्षात् परब्रह्म है और जिसको स्वयं वेदभी नहीं जानते, क्या वह परब्रह्म देहधारी मनुष्य हो सकता है? ॥ ६३॥

विष्णु जो सुरहित नरतनुधारी॥ सोउ सर्वज्ञ यथा त्रिपुरारी॥ १॥ ❀
खोजत सो कि अज्ञ इव नारी॥ ज्ञानधाम श्रीपति असुरारी॥ २॥ ❀

यदि विष्णु भगवान्ने देवताओंके हित करनेके लिये मनुष्यशरीर धारण किया है तो वेभी महादेवके जैसे सर्वज्ञही हैं॥ १॥ फिर मूर्खकी नाईं स्त्रीको ढूंढते क्यों फिरते हैं? क्यों कि दैत्योंके वैरी श्रीलक्ष्मीपति हरि ज्ञानके धाम हैं॥ २॥

शम्भुगिरा पुनि मृषा न होई ॥ शिव सर्वज्ञ जान सब कोई ॥ ३ ॥ ❋
अस संशय मन भयउ अपारा ॥ होइ न हृदय प्रबोध प्रचारा ॥ ४ ॥ ❋

और महादेवजीका वचनभी झूंठा नहीं हो सक्ता; क्योंकि यह बात सब कोई जानते हैं कि महादेवजी सर्वज्ञ हैं ॥ ३ ॥ ऐसे सतीके मनमें बड़ा भारी सन्देह उपजा, किसी कदर उनके हृदयमें ज्ञानका प्रचार नहीं हो सका ॥ ४ ॥

यद्यपि प्रकट न कहेउ भवानी ॥ हर अन्तर्यामी सब जानी ॥ ५ ॥ ❋
सुनहु सती तव नारिसुभाऊ ॥ संशय अस न धरिय उर काऊ ॥ ६ ॥ ❋

यद्यपि यह मनकी बात सतीने महादेवजीसे प्रगट नहीं कही, तथापि महादेवजीने वह सब बात जान ली; क्योंकि आप तो अंतर्यामीही हैं ॥ ५ ॥ सतीके मनकी बात जानकर महादेवजीने सतीसे कहा कि-हे सती ! सुनो. तुम्हारा स्त्रीकासा स्वभाव है जिससे तुम्हारे मनमें सन्देह हुआ है सो ऐसा सन्देह मनमें कदापि मत रखना ॥ ६ ॥

जासु कथा कुंभज ऋषि गाई ॥ भक्ति जासु मैं मुनिहिँ सुनाई ॥ ७ ॥ ❋
सोइ मम इष्टदेव रघुबीरा ॥ सेवत जाहि सदा मुनिधीरा ॥ ८ ॥ ❋

क्योंकि जिसकी कथा अगस्त्य मुनिने गायी रही और जिसकी भक्ति मैंने उनको सुनायी थी ॥ ७ ॥ और धीर मुनिलोग जिसका सदा सेवन करते हैं वे मेरे इष्टदेव रामचन्द्र येही हैं ॥ ८ ॥

छंद-मुनि धीर योगी सिद्ध सन्तत बिमलमन जेहि ध्यावहीं ॥ ❋
कहि नेति निगम पुराण आगम जासु कीरति गावहीं ॥ ❋
सोइ राम व्यापक ब्रह्म भुवननिकायपति मायाधनी ॥ ❋
अवतरे अपने भक्तहित निजतंत्र नित रघुकुलमनी ॥ २ ॥ ❋

धीर मुनि, योगी और सिद्ध लोग स्वच्छ अन्तःकरणसे निरंतर जिनका ध्यान करते हैं और वेद, पुराण व शास्त्र आदि 'नेति नेति' कहकर जिनका यश गाते हैं वेही साक्षात् परब्रह्म स्वतंत्र होनेपरभी अपने भक्त लोगोंके हितके लिये रघुकुलमणि श्रीरामचन्द्रस्वरूप धारण करके प्रगट हुए हैं; कि जो साक्षात् मायाके अधिपति हैं तथा चौदह लोकसमूहके स्वामी व सर्वव्यापक हैं और नित्य यानी सदा अखंडस्वरूप हैं ॥ २ ॥

सोरठा-लाग न उर उपदेश, यदपि कहेउ शिव बार बहु ॥ ❋
बोले बिहँसि महेश, हरिमायाबल जानि जिय ॥ १२ ॥ ❋

यद्यपि शिवजीने सतीको कई बेर समझाया पर उनके हृदयमें एकभी उपदेश नहीं लगा तब महादेवजी अपने मनमें प्रभुकी मायाका बल जान हँसकर बोले ॥ १२ ॥

जो तुम्हरे मन अति संदेहू ॥ तौ किन जाइ परीक्षा लेहू ॥ १ ॥ ❋
तबलगि बैठि रहौं बटछाहीं ॥ जबलगि तुम ऐहौ मोहिं पाहीं ॥ २ ॥ ❋

कि-हे सती ! जो तुम्हारे मनमें अत्यंतही संदेह है तो तुम खुद जाकर परीक्षा क्यों नहीं ले लेती हो ? ॥ १ ॥ जबतक तुम पीछी मेरे पास आओगी तबतक मैं यहीं बटके पेड़की छायामें बैठा रहूंगा ॥ २ ॥

जैसे जाइ मोह भ्रम भारी ॥ करहु सो यत्न विवेक बिचारी ॥ ३ ॥ ❋
चलीं सती शिवआयसु पाई ॥ करहिँ विचार करौं का भाई ॥ ४ ॥ ❋

जिस तरह तुम्हारा यह भारी भ्रम और अज्ञान मिट जाय वो उपाय विवेक विचार कर क्यों नहीं करती हो ? ॥ ३ ॥ महादेवकी ऐसी आज्ञा पाकर सती वहांसे चलीं सो मनमें विचार करने लगीं कि अब मैं यहां कौनसी माया करूं ? ॥ ४ ॥

उहां शम्भु अस मन अनुमाना ॥ दक्षसुताकहँ नहिं कल्याना ॥ ५ ॥ ❋
मोरेहु कहे न संशय जाहीं ॥ विधि बिपरीत भलाई नाहीं ॥ ६ ॥ ❋

इधर सती तो ऐसा विचार करती हैं और उधर महादेवने अपने मनमें ऐसा अनुमान किया कि सतीके लिये इस वक्त ठीक नहीं है ॥ ५ ॥ जब मेरे कहनेसेभी संदेह नहीं मिटा तो इससे विदित होता है कि सतीका दैव अनुकूल नहीं है इसमें किसी कदर भलाई नहीं है ॥ ६ ॥

होइहि सोइ जो राम रचि राखा ॥ को करि तर्क बढ़ावहि शाखा ॥ ७ ॥ ❋
अस कहि जपन लगे हरिनामा ॥ गईं सती जहँ प्रभु सुखधामा ॥ ८ ॥ ❋

और होगा तो वही जो प्रभुने रच रक्खा है तो फिर तर्कना करके इस बातकी शाखायें कौन बढ़ावे ? यानी इसमें हमारा विचार करना वृथा है ॥ ८ ॥ ऐसे कहकर शिवजी तो प्रभुके नामका जप करने लगे और सती वहां गयीं कि जहां सुखके धाम श्रीरामचन्द्रजी विराजे थे ॥ ८ ॥

दोहा–पुनि पुनि हृदय बिचार करि, धरि सीताकर रूप ॥ ❋
आगे होइ चलि पंथ तेहि, जेहि आवत नरभूप ॥ ६४ ॥ ❋

सती बारंबार मनमें विचार कर और सीताका रूप धरकर, जिस रास्ते रामचन्द्रजी आरहे थे उसी मार्गमें आगे होकर चलीं ॥ ६४ ॥

लक्ष्मण दीख उमा कृतवेषा ॥ चकित हृदय भ्रम भयउ विशेषा ॥ १ ॥ ❋
कहि न सकत कछु अतिगंभीरा ॥ प्रभुप्रभाव जानत मतिधीरा ॥ २ ॥ ❋

लक्ष्मणजी सीताका वेष बनाये सतीको देखकर मनमें चकित हुए और उनके मनमें बड़ा भ्रम हुआ ॥ १ ॥ परंतु अति अथाह होनेके कारण कुछ कहा नहीं; क्योंकि वे धीरबुद्धि लक्ष्मण प्रभुका प्रभाव जानते थे ॥ २ ॥

सतीकपट जानेउ सुरस्वामी ॥ समदर्शी सबअन्तर्यामी ॥ ३ ॥ ❋
सुमिरत जाहि मिटै अज्ञाना ॥ सोइ सर्वज्ञ राम भगवाना ॥ ४ ॥ ❋

देवताओंके पति समदर्शी प्रभुनें सतीका कपट तुरंत जान लिया; क्योंकि आप तो सबके अंतर्यामी हैं ॥ ३ ॥ कवि कहता है कि—जिनका स्मरण करनेसे अज्ञानपटल दूर हो जाता है सोई सब जाननेवाले भगवान् रामजी हैं ॥ ४ ॥

सती कीन्ह चह तहां दुराऊ ॥ देखहु नारिसुभावप्रभावू ॥ ५ ॥ ❋
निजमायाबल हृदय बखानी ॥ बोले बिहँसि राम मृदु बानी ॥ ६ ॥ ❋

उन्हीं सर्वज्ञ भगवान् रामचन्द्रके पास सतीने कपट करना चाहा. देखो ! स्त्रीके स्वभावकी

कैसी महिमा है ॥ ५ ॥ प्रभुने अपने मनमें अपनी मायाके बलको बखानकर हँसकर कोमल वाणीसे कहा ॥ ६ ॥

जोरि पाणि प्रभु कीन्ह प्रणामू ॥ पितासमेत लीन्ह निज नामू ॥ ७ ॥ ❋
कहेउ बहोरि कहां वृषकेतू ॥ बिपिन अकेलि फिरहु केहि हेतू ॥ ८ ॥ ❋

और प्रभुने हाथ जोड़ पिताके साथ अपना नाम लेकर सतीको प्रणाम किया ॥ ७ ॥ और फिर कहा कि—क्यों महादेवजी कहां है ? तुम आज वनमें अकेली क्यों फिरती हो ? ॥ ८ ॥

दोहा—रामबचन मृदु गूढ़ सुनि, उपजा अति संकोच ॥ ❋
सती सभीत महेशपहँ, चलीं हृदय बड़ शोच ॥ ६५ ॥ ❋

रामचन्द्रजीके ऐसे अति कोमल और गूढ़ार्थ बचन सुनकर सतीके मनमें बड़ा संकोच हुआ और मनमें बड़ा शोक करतीं हुई भयके साथ महादेवजीके पास चलीं ॥ ६५ ॥

मैं शंकरकर कहा न माना ॥ निजअज्ञान रामपहँ आना ॥ १ ॥ ❋
जाइ उतर अब देहौं काहा ॥ उर उपजा अति दारुण दाहा ॥ २ ॥ ❋

सतीने मनमें विचार किया कि मैंने महादेवका कहना नहीं माना मैं अपना अज्ञान रामपर लाई ॥ १ ॥ अब मैं महादेवके पास जाकर क्या कहूंगी ? ऐसे सतीके मनमें अति प्रचंड संताप पैदा हुआ ॥ २ ॥

जाना राम सती दुख पावा ॥ निजप्रभाव कछु प्रकट जनावा ॥ ३ ॥ ❋
सती दीख कौतुक मग जाता ॥ आगे राम सहित सिय भ्राता ॥ ४ ॥ ❋

प्रभुने जब जाना कि सती दुःख पाती है तब आपने अपना प्रभाव कुछ प्रगट करके दिखाया ॥ ३ ॥ कि जिससे सतीने मार्गमें जाते जाते कौतुक देखा कि आगे सीता और लक्ष्मणके साथ प्रभु जा रहे है ॥ ४ ॥

फिरि चितवा पाछे प्रभु देषा ॥ सहित बंधु सिय सुंदर वेषा ॥ ५ ॥ ❋
जहँ चितवति तहँ प्रभु आसीना ॥ सेवहिं सिद्ध मुनीश प्रबीना ॥ ६ ॥ ❋

तब सतीने पीछे फिरकर देखा तौ वहांभी सीता और लक्ष्मणके साथ सुन्दर वेष बनाये प्रभु विराजमान हो रहे है ॥ ५ ॥ आखिर यह हुआ कि जिधर देखती हैं वहीं प्रभु विराजे हैं और सिद्ध व चतुर मुनिराज उनकी सेवा कर रहे हैं ॥ ६ ॥

देखे शिव विधि बिष्णु अनेका ॥ अमित प्रभाव एकते एका ॥ ७ ॥ ❋
वन्दत चरण करत प्रभुसेवा ॥ बिबिधबेष देखे सब देवा ॥ ८ ॥ ❋

प्रभुके जितने स्वरूप दिखायी देते थे उन सबके पास एकेक ब्रह्मा, विष्णु, महेश दीख पड़ते थे. ऐसे अनेक ब्रह्मा, विष्णु, महेश दीख पड़े; कि जिनका प्रभाव एकसे एक अधिक था ॥ ७ ॥ और अनेक प्रकारके वेष बनाये हुए सब देवताओंको प्रभुके चरणोंमें बन्दन करते और प्रभुकी सेवा करते देखा ॥ ८ ॥

दोहा—सती बिधात्री इन्दिरा, देखे अमित अनूप ॥ ❋
जेहि जेहि बेष अजादि सुर, तेहि तेहि तनुअनुरूप ॥ ६६ ॥ ❋

और सती, ब्रह्माणी व लक्ष्मीभी असंख्यात व अनुपमरूप देखीं, कि, जो जिस जिस वेषमें ब्रह्मादिक देवता थे उसी वेषके अनुसार स्वरूप धारण कर रही थीं ॥ ६६ ॥

देखे जहँ तहँ रघुपति जेते ॥ शक्तिन सहित सकल सुर तेते ॥ १ ॥ ❋
जीव चराचर जे संसारा ॥ देखे सकल अनेक प्रकारा ॥ २ ॥ ❋

जहां तहां जितनी प्रभुकी मूर्तियां देखीं उतनेही अपनी अपनी शक्तियां यानी स्त्रियोंके साथ तमाम देवताओंके स्वरूप देखे ॥ १ ॥ केवल ब्रह्मा, विष्णु, महेशही नहीं किंतु संसारमें जो नाना प्रकारके स्थावर जंगम जीव है वे सब देखे ॥ २ ॥

पूजहिँ प्रभुहिँ देव बहु बेषा ॥ रामरूप दूसर नहिँ देषा ॥ ३ ॥ ❋
अवलोके रघुपति बहुतेरे ॥ सीतासहित न वेष घनेरे ॥ ४ ॥ ❋

और वे सब देवता अनेक प्रकारके बेष बनाये प्रभुका पूजन करते हैं. ऐसे सतीने प्रभुके जहां तहां अनेक स्वरूप देखे परंतु प्रभुका बेष तौ एकसाही देखा, कहीं दूसरा बेष देखनेमें नहीं आया ॥ ३ ॥ रामचन्द्रजीके स्वरूप तौ सीताके साथ अनंत देखे परंतु बेष बहुतसे नहीं देखे ॥ ४ ॥

सोइ रघुबर सोइ लक्ष्मण सीता ॥ देखि सती अति भई सभीता ॥ ५ ॥ ❋
हृदय कम्प तनु सुधि कछु नाहीं ॥ नयन मूँदि बैठीं मगमाहीं ॥ ६ ॥ ❋

जहां देखती है तहां वही राम, वही लक्ष्मण और वही सीता है; कि, जिन्हे देखकर सती मनमें बहुत भयभीत हुई ॥ ५ ॥ सतीका हृदय कांपने लगा, शरीरकी बिलकुल सुध नहीं रही. अतएव वह आंख मूंदकर रास्तेमें बैठ गयीं ॥ ६ ॥

बहुरि बिलोकेउ नयन उघारी ॥ कछु न दीख तहँ दक्षकुमारी ॥ ७ ॥ ❋
पुनि पुनि नाइ रामपद शीशा ॥ चलीं तहां जहँ रहे गिरीशा ॥ ८ ॥ ❋

फिर आंख खोलके देखा तौ सतीको वहां कुछभी नहीं दिखाई दिया ॥ ७ ॥ तब वह बारंबार प्रभुके चरणोंमें शिर नवाकर वहां गयीं; कि, जहां महादेव बिराजे थे ॥ ८ ॥

दोहा—गई समीप महेश तब, हँसि पूंछी कुशलात ॥ ❋
लीन्ह परीक्षा कवन बिधि, कहहु सत्य सब बात ॥ ६७ ॥ ❋

जब सती महादेवजीके पास गयीं तब महादेवजीने हँसकर कुशल पूँछा और कहा कि—हे सती! सब बात सच कहो कि तुमने किस तरह परीक्षा ली ॥ ६७ ॥

सती समुझि रघुबीरप्रभाऊ ॥ भयबश शिवसन कीन्ह दुराऊ ॥ १ ॥ ❋
कछु न परीक्षा लीन्ह गुसाईं ॥ कीन्ह प्रणाम तुम्हारिहि नाईं ॥ २ ॥ ❋

रामचन्द्रजीका प्रभाव समझकर सतीने भयके मारे महादेवसे वह बात छिपा ली ॥ १ ॥ और कहा कि—हे स्वामी! मैंने तो कुछभी परीक्षा नहीं ली. जैसे आपने प्रणाम किया था वैसेही मैंनेभी प्रणाम किया ॥ २ ॥

जो तुम कहा सो मृषा न होई ॥ मोरे मन प्रतीति अस सोई ॥ ३ ॥ ❋
तब शंकर देखेउ धरि ध्याना ॥ सती जो कीन्ह चरित सब जाना ॥ ४ ॥ ❋

सतीने कपट रखकर महादेवजीसे कहा कि–हे प्रभु ! जो आपने फरमाया वो कभी झूंठा नहीं हो सक्ता है. सो इस बातका भरोसा मेरे मनको पक्का पक्का हो गया है ॥ ३ ॥ पार्वतीने असली बात नहीं कही तब महादेवजीने ध्यान धरकर देखा कि, जिससे सतीने जो चरित्र किया था वह सब शिवजीको बिदित हो गया ॥ ४ ॥

बहुरि राममायहिँ शिर नावा ॥ प्रेरि सतिहिं जेहिँ झूंठ कहावा ॥ ५ ॥ ❃
हरिइच्छा भावी बलवाना ॥ हृदय विचारत शम्भु सुजाना ॥ ६ ॥ ❃

फिर महादेवने रामचन्द्रजीकी मायाको प्रमाण किया कि जिसने सतीकी बुद्धिको प्रेरकर उससे झूंठ कहवाया ॥ ५ ॥ सुजान शिवजी सतीका कपट जानकर मनमें विचार करने लगे कि, प्रभुकी इच्छा कि, जिसे भावी कहते है वह बड़ी बलवान् है ॥ ६ ॥

सती कीन्ह सीताकर वेषा ॥ शिव उर भयउ बिषाद बिशेषा ॥ ७ ॥ ❃
जो अब करौं सतीसन प्रीती ॥ मिटै भक्तिपथ होइ अनीती ॥ ८ ॥ ❃

सतीने जो सीताका स्वांग किया उससे महादेवके मनको बड़ा खेद हुआ.कारण यह कि सीता प्रभुकी अर्द्धांगी है सो माताके समान हुई उसका वेष धरनेसे महादेवके मनमें विचार हुआ ॥ ७ ॥ कि, जो मैं अब सतीके साथ प्रीति करूंगा तौ भक्तिका मार्ग नष्ट हो जायगा और महान् अन्याय होगा॥८॥

दोहा–परम प्रेम नहिँ जाइ तजि, किये प्रेम बड़ पाप ॥ ❃
प्रकट न कहत महेश कछु, हृदय अधिक सन्ताप ॥ ६८ ॥ ❃

सतीके साथ महादेवके बड़ी प्रीति थी सो वह प्रीति छोंड़ीभी नहीं जा सक्ती और जो प्रेम करें तौ उसमें बड़ा पाप होवे; इसवास्ते महादेवने प्रगटमें तौ कुछभी नहीं कहा; पर मनमें उनके बड़ा संताप हुआ ॥ ६८ ॥

तबहिँ शंभु प्रभुपद शिर नावा ॥ सुमिरत रामहृदय अस आवा ॥ १ ॥ ❃
यहि तनु सतिहि भेंट मोहिँ नाहीं ॥ शिव संकल्प कीन्ह मनमाहीं॥२॥❃

तब महादेवने प्रभुके चरणकमलोंमें शिर नवाकर प्रभुका स्मरण किया सो स्मरण करतेही शिवजीके मनमें ऐसा आया ॥ १ ॥ कि, इस शरीरसे तौ मेरे सतीसे भेंट होनी नहीं है; इसलिये इस शरीरसे मैं सतीसे नहीं मिलूंगा. ऐसा शिवजीने अपने मनमें संकल्प कर लिया ॥ २ ॥

अस विचारि शंकर मतिधीरा ॥ चले भवन सुमिरत रघुबीरा ॥ ३ ॥ ❃
चलत गगन भइ गिरा सुहाई ॥ जय महेश भलि भक्ति दृढ़ाई ॥ ४ ॥ ❃

धीर बुद्धि शिवजी ऐसा बिचार कर प्रभुका स्मरण करते घरको चले ॥ ३ ॥ महादेवजीके चलते समय सुन्दर आकाशवाणी हुई कि–हे महादेव ! आपकी जय हो आपने भक्तिको खूब दृढ़ किया ॥४॥

अस प्रण तुम बिन करै को आना ॥ रामभक्त समरथ भगवाना ॥ ५ ॥❃
सुनि नभगिरा सतीउर शोचू ॥ पूँछा शिवहिँ समेत सकोचू ॥ ६ ॥ ❃

हे शिवजी ! आपविना दूसरा कौन मनुष्य ऐसा प्रण कर सकता है ? और आप तौ रामचन्द्र-जीके परम भक्त, समर्थ भगवान् हो ॥ ५ ॥ ऐसी आकाशवाणी सुनकर सतीके मनमें बड़ा शोक हुआ और उसने बड़े संकोचके साथ महादेवसे पूंछा ॥ ६ ॥

कीन्ह कवन प्रण कहहु कृपाला ॥ सत्यधाम प्रभु दीनदयाला ॥ ७ ॥ ❃
यदपि सती पूँछा बहु भांती ॥ तदपि न कहेउ त्रिपुर आराती ॥ ८ ॥ ❃

कि-हे कृपाल ! आपने क्या प्रण किया है सो हमें कहो; हे प्रभु ! आप सत्यधाम और दीनदयालु हो ॥ ७ ॥ यद्यपि सतीने कई तरहसे पूँछा, पर महादेवने वह बात बिलकुल नहीं कही ॥ ८ ॥

दोहा--सती हृदय अनुमान किय, सब जाना सर्वज्ञ ॥ ❃
कीन्ह कपट मैं शंभुसन, नारि सहज जड़ अज्ञ ॥ ६९ ॥ ❃

सतीने अपने मनमें अनुमान किया कि मैंने जो महादेवसे कपट किया था सो सब महादेवने जान लिया है; क्योंकि आप सर्वज्ञ हैं. देखो, स्त्री स्वभावहीसे कैसी जड़ और मूर्ख होती है ॥ ६९ ॥

सोरठा--जल पयसरिस बिकाइ, देखहु प्रीतिकि रीति भलि ॥ ❃
बिलग होइ रस जाइ, कपट खटाई परतही ॥ १२ ॥ ❃

भला, प्रीतिकी सुन्दर रीति तौ देखो कि, जल जब दूधसे मित्रता करता है यानी उसके शामिल रहता है तब तो वह दूधके बराबर बिकता है परंतु जब उसी दूधके अंदर खटाई पड़ जाती है तब वह दूध फट जाता है यानी दूध और पानी जुदे जुदे हो जाते हैं और स्वादभी चला जाता है.ऐसे मित्रतारूप दूधमें कपटरूप खटाई पड़ जाती है तब दिल फट जाते हैं और प्रेमभी चला जाता है ॥ १२ ॥

हृदय शोच समुझत निजकरणी ॥ चिन्ता अमित जाइ नहिँ बरणी ॥१॥
कृपासिन्धु शिव परम अगाधा ॥ प्रकट न कहेउ मोर अपराधा ॥ २ ॥ ❃

सती अपने किये कामको समझ कर दिलमें बड़ा सोच करती हैं जिससे उनके मनमें ऐसी भारी चिन्ता हुई है कि जो कहनेमें नहीं आ सक्ती ॥ १ ॥ सती अपने मनमें फिकर करने लगीं कि कृ-पाके सागर श्रीशिवजी परम गंभीर हैं इसलिये प्रभुने मेरा अपराध प्रगट नहीं कहा है पर जान सब लिया है इसमें शक नहीं ॥ २ ॥

शंकररुख अवलोकि भवानी ॥ प्रभु मोहिँ तजेउ हृदय अकुलानी ॥३॥
निजअघ समुझि न कछु कहि जाई ॥ तपै अँवांइव उर अधिकाई ॥४॥ ❃

फिर महादेवजीकी रुख देखकर सतीने जान लिया कि प्रभुने मेरा परित्याग कर दिया है इस बातसे वह मनमें बड़ी व्याकुल हुई ॥ ३ ॥ परंतु अपना अपराध समझ कर कुछ कह नहीं सकी; भीत-रही भीतर भट्टीकी तरह हृदयमें अधिक अधिक संतप्त होने लगीं ॥ ४ ॥

सतिहिँ सशोच जानि वृषकेतू ॥ कहेउ कथा सुंदर सुखहेतू ॥ ५ ॥ ❃
बरणत पंथ बिबिध इतिहासा ॥ विश्वनाथ पहुँचे कैलासा ॥ ६ ॥ ❃

सतीको शोकसे व्याकुल जानकर महादेवने उसके सुखके लिये कई सुन्दर कथायें कहीं ॥ ५ ॥ रास्तेमें अनेक प्रकारके इतिहास कहते २ सदाशिव कैलास पहुँचे ॥ ६ ॥

तहँ पुनि शंभु समुझि प्रण आपन ॥ बैठ बटतर करि कमलासन ॥ ७ ॥ ❋
शंकर सहज स्वरूप सँभारा ॥ लागि समाधि अखंड अपारा ॥ ८ ॥ ❋

फिर वहां महादेव अपने प्रणको समझकर कमलासन करके बटके तले बिराजे ॥ ७ ॥ महादेवने सहजहीमें अपने स्वरूपका ध्यान किया जिससे अखंड और अपार समाधि लगगयी ॥ ८ ॥

दोहा–सती बसहिं कैलास तब, अधिक शोच मनमाहिं ॥ ❋
मर्म न कोऊ जान कछु, युगसम दिवस सिराहिं ॥ ७० ॥

उस समय सती कैलासमें रहती थी और मनमें बड़ा सोच करती थी उसके दिन युग २ के समान बीतते थे परंतु उसका भेद किसीने कुछभी नहीं जाना था ॥ ७० ॥

नित नव शोच सती उर भारा ॥ कब जैहहुँ दुखसागर पारा ॥ १ ॥ ❋
मैं जो कीन्ह रघुपतिअपमाना ॥ पुनि पतिबचन मृषा करि जाना॥२॥ ❋

सतीके मनमें नितनया बड़ा भारी सोच हो रहा था और कहतीथीं कि, मैं कब इस दुःखसागरसे पार उतरूंगी ? ॥ १ ॥ मैंने जो रामचन्द्रजीका अपमान किया और फिर पतिके बचनको झूंठा करके जाना ॥ २ ॥

सो फल मोहिं बिधाता दीन्हा ॥ जो कछु उचित रहा सो कीन्हा ॥ ३ ॥ ❋
अब बिधि अस बूझिय नहिं तोहीं ॥ शंकर बिमुख जिआवहुमोहीं॥४॥❋

उसका फल बिधाताने मुझे यह दिया है, बिधाताने जो कुछ उचित था वही किया है ॥ ३ ॥ ऐसे सोच करके सती मनहीं मनमें बिधातासे प्रार्थना करती हैं कि–हे बिधाता ! अब तुझको ऐसा करना न चाहिये कि, तू मुझको शंकरसे बिमुख करके जिवावै अर्थात् शंकरसे बिमुख होनेपर जीनेसे मरना अच्छा है ॥ ४ ॥

कहि न जाइ कछु हृदय गलानी ॥ मनमहँ रामहिं सुमिरि सयानी ॥५॥
जो प्रभु दीनदयालु कहावा ॥ आरतहरण वेद यश गावा ॥ ६ ॥ ❋

सतीके मनकी ग्लानि कुछ कहनेमें नहीं आसकती. वह सुजान सती मनहीं मनमें रामका स्मरण करने लगीं ॥ ५ ॥ जो प्रभु दीनदयालु कहलाते हैं और जो वेद प्रभुका ऐसा यश गाते हैं कि प्रभु आर्ति मिटानेवाले हैं ॥ ६ ॥

तौ मैं बिनय करौं कर जोरी ॥ छूटै वेगि देह यह मोरी ॥ ७ ॥ ❋
जो मोरे शिवचरण सनेहू ॥ मन क्रम बचन सत्यव्रत येहू ॥ ८ ॥ ❋

तौ मैं हाथ जोड़कर प्रभुसे विनती करती हूं कि मेरा यह शरीर तुरंत छूट जाय ॥७॥ जो मेरा शिवजीके चरणारविंदोंमें सच्चा स्नेह है और जो मन बचन कायासे मेरा यही सच्चा प्रण है ॥ ८ ॥

दोहा– तौ समदर्शी सुनिय प्रभु, करौ सो बेगि उपाइ ॥ ❋
होइ मरण जेहि बिनहिं श्रम, दुस्सह बिपति बिहाइ ॥ ७१ ॥ ❋

तौ हे समदर्शी प्रभु ! मेरा कहना सुनों, और जल्दी वो उपाय करो कि, जिससे बिना परिश्रम मेरा मरण शीघ्र हो जावे और यह दुस्सह संकट कट जावे ॥ ७१ ॥

यहिबिधि दुखित प्रजेशकुमारी ॥ अकथनीय दारुण दुख भारी ॥ १ ॥ *
बीते सम्बत सहस सतासी ॥ तजी समाधि शम्भु अविनाशी ॥ २ ॥ *

इसतरह दक्षकी कन्या सती बड़ी दुखी थी उसका दारुण दुःख ऐसा भारी था कि जिसको कह नहीं सकते ॥ १ ॥ ऐसे दुख पाते सतीके ८७००० सत्तासी हजार वर्ष बीत गये तब बिनाश रहित श्रीशिवजीने समाधि छोंडी ॥ २ ॥

रामनाम शिव सुमिरण लागे ॥ जानेउ सती जगतपति जागे ॥ ३ ॥ *
जाइ शंभुपद बन्दन कीन्हा ॥ सन्मुख शंकर आसन दीन्हा ॥ ४ ॥ *

और सदाशिव रामनामका स्मरण करने लगे तब सतीने जानाकि, अब जगत्पति श्रीशंभु समाधिमेंसे उठे हैं ॥ ३ ॥ महादेवके निकट जाकर उसने चरणोंमें प्रणाम किया, तब महादेवने सतीको अपने सामने आसन दिया ॥ ४ ॥

लगे कहन हरिकथा रसाला ॥ दक्ष प्रजेश भयो तेहिँ काला ॥ ५ ॥ *
देखा बिधि बिचारि सबलायक ॥ दक्षहिँ कीन्ह प्रजापति नायक ॥ ६ ॥ *

और रसभरी सुंदर प्रभुकी कथा कहने लगे उस अवसरमें ब्रह्माजीने दक्षको प्रजापतिकी पदवी दी॥ ॥ ५ ॥ ब्रह्माजीने सब प्रकारसे विचारकर और उसे सब प्रकारसे योग्य देखकर दक्षको प्रजापतियोंका पति बनाया ॥ ६ ॥

बड़ अधिकार दक्ष जब पावा ॥ अति अभिमान हृदय तब आवा ॥ ७ ॥ *
नाहिँ कोउ अस जन्मेउँ जगमाहीं ॥ प्रभुता पाइ जाहि मद नाहीं ॥ ८ ॥ *

जब दक्षको बड़ा भारी अधिकार मिला तो उसके मनमें बहुतसा अभिमान छा गया ॥ ७ ॥ कवि कहता है कि–जगतमें ऐसा तो कोई पैदाही नहीं हुआ है कि जिसके प्रभुता पाकर मद यानी घमंड नहीं होवै ॥ ८ ॥

दोहा–दक्ष लिये मुनि बोलि सब, करन लगे बड़ याग ॥ *
नेवते सादर सकल सुर, जे पावत मख भाग ॥ ७२ ॥ *

दक्षप्रजापति सब मुनियोंको बुलाकर बड़ा भारी यज्ञ करने लगा, जो देवता यज्ञके अंदर भाग पाते हैं उन तमाम देवताओंको आदरसहित नेवता दिया ॥ ७२ ॥

किन्नर नाग सिद्ध गन्धर्वा ॥ बधुनसमेत चले सुर सर्वा ॥ १ ॥ *
विष्णु विरंचि महेश बिहाई ॥ चले सकल सुर यान बनाई ॥ २ ॥ *

दक्षकी यज्ञ देखनेको तमाम देवता, किन्नर, नाग, सिद्ध और गंधर्व सब अपनी २ स्त्रियोंको संग लेकर चले ॥ १ ॥ ब्रह्मा, विष्णु और महेश इन तीनों देवताओंको छोंड़कर बाकी सब देवता सवारियां सज २ कर चले ॥ २ ॥

सती बिलोके गगन बिमाना ॥ जात चले सुन्दर बिधि नाना ॥ ३ ॥ *
सुर सुन्दरी कराहिँ कल गाना ॥ सुनत श्रवण छूटहिँ मुनि ध्याना ॥ ४ ॥ *

सतीने आकाशके अंदर जाते हुए अनेक प्रकारके बिमान देखे कि, जो अत्यंत सुंदर थे ॥ ३ ॥

उन विमानोंमे बैठी हुई देवांगना मधुर स्वरसे गान कर रहीं थीं कि, जिसको सुनकर मुनिलोगोंके ध्यान छूट जाते थे ॥ ४ ॥

पूंछेउ तब शिव कहेउ बखानी ॥ पितायज्ञ सुनिकै हर्षानी ॥ ५ ॥ ❋
जो महेश मोहिं आयसु देहीं ॥ कछु दिन जाइ रहौं मिस एहीं ॥ ६ ॥ ❋

ऐसे आकाशमार्गमे जाते हुए विमानोंकी भीड़ देखकर सतीने महादेवजीसे पूँछा तब महादेवजीने वर्णन करके सब समाचार कहे तब पिताके घर यज्ञ है ये समाचार सुनकर सती बहुत प्रसन्न हुई ॥ ॥ ५ ॥ और उसने अपने मनमें विचार किया कि जो महादेवजी मुझको आज्ञा देवें तौ मैं इसी मिषसे जाकर कुछ दिन पिताके घर रहूं ॥ ६ ॥

पतिपरित्याग हृदय दुख भारी ॥ कहै न निजअपराध विचारी ॥ ७ ॥ ❋
बोली सती मनोहर बानी ॥ भयसंकोचप्रेमरससानी ॥ ८ ॥ ❋

यद्यपि पतिने अपना परित्याग कर दिया जिसका उसके मनमें बड़ा भारी दुःख था पर वह अपना अपराध विचार कर कुछ कह नहीं सकती थी ॥ ७ ॥ फिर सतीने भय, संकोच, प्रेम व रसभरी मनोहर बाणीसे महादेवजीसे कहा कि– ॥ ८ ॥

दोहा–पिताभवन उत्सव परम, जो प्रभु आयसु होइ ॥ ❋
तौ मैं जाउँ कृपायतन, सादर देखन सोइ ॥ ७३ ॥ ❋

हे प्रभु ! मेरे पिताके घर बड़ा भारी उत्सव है सो जो मुझको आज्ञा होवे तौ हे कृपानिधान ! मैं वो यज्ञ देखनेके लिये आदरके साथ मेरे पिताके घर जाऊं ॥ ७३ ॥

कहेउ नीक मोरे मन भावा ॥ यह अनुचित नहिँ नेवत पठावा ॥१॥ ❋
दक्ष सकल निजसुता बुलाई ॥ हमरे बैर तुम्हैं बिसराई ॥ २ ॥ ❋

सतीके ये वचन सुनकर शिवजीने सतीसे कहा कि–हे सती ! तूने जो कहा है वह बहुत ठीक है मेरे मनकोभी यह बात बहुत अच्छी लगी है; पर यह बात ठीक नहीं कि जो तुमको बुलानेके लिये नेवता नहीं भेजा ॥ १ ॥ दक्षने अपनी तमाम बेटियोंको बुलाया है उनमें सिर्फ एक तुमकोही जो नहीं बुलाया सो केवल हमारे बैरके कारण तुमको नहीं बुलाया है ॥ २ ॥

ब्रह्मसभा हमसन दुख माना ॥ तेहिते अजहुँ करहि अपमाना ॥ ३ ॥ ❋
जो बिनु बोले जाहु भवानी ॥ रहै न शील सनेह न कानी ॥ ४ ॥ ❋

महादेवजी बैर होनेका कारण कहते हैं, एक समय भारी ब्रह्मसभा हुई थी वहां इसने हमसे बड़ा दुःख मान लिया था और उसीसे अबतक हमारा अपमान करता है ॥ ३ ॥ सो हे सती ! जो तुम बिना बुलाये वहां जाओगी तौ तुम्हारा शील, स्नेह वगैरे कुछभी नहीं रहेगा ॥ ४ ॥

यदपि मित्र प्रभु पितु गुरु गेहा ॥ जाइय बिनु बोलेहु न सँदेहा ॥ ५ ॥ ❋
तदपि बिरोध मान जहँ कोई ॥ तहां गये कल्याण न होई ॥ ६ ॥ ❋

यद्यपि यह बात प्रसिद्ध है कि मित्र, प्रभु, पिता और गुरुके घर बिना बुलायेभी जाना चाहिये इसमें कोइ संदेह नहीं है ॥ ५ ॥ तथापि जहां जानेसे कोई विरोध मानता हो तौ वहां जानेसे कल्याण कभी नहीं होगा ॥ ६ ॥

भांति अनेक शम्भु समुझावा ॥ भावीबश न ज्ञान उर आवा ॥ ७ ॥ *
कह प्रभु जाहु जो बिनहिँ बुलाये ॥ नहिँ भलि बात हमारे भाये॥८॥*

यद्यपि महादेवने सतीको अनेक प्रकारसे समझाया पर भावीके बश होनेसे उसके मनमें नहीं आया यानी एकभी बात नहीं बैठी ॥ ७ ॥ महादेवने कहा कि–जो तुम बिना बुलाये जाओगी तौ हमारे दिलमें तौ यह बात अच्छी नहीं है ॥ ८ ॥

दोहा– कहि देखा हर यतन बहु, रहै न दक्षकुमारि ॥ *
दिये मुख्य गण संग तब, बिदा किये त्रिपुरारि ॥ ७४ ॥ *

महादेवने कई उपाय करके देख लिया पर सतीने किसी प्रकारसे न माना तब अपने बहुतसे मुख्य मुख्य गण संग देकर सतीको बिदा किया ॥ ७४ ॥

पिता भवन जब गई भवानी ॥ दक्षत्रास बहु न सनमानी ॥ १ ॥ *
सादर भलेहि मिली यक माता ॥ भगिनी मिलीं बहुत मुसकाता ॥२॥ *

जब सती पिता (दक्ष) के घर गयी तब दक्षके डरके मारे किसीने उसका सत्कार नहीं किया ॥ १॥ या तौ एक माता आदरके साथ भलेही उससे मिली या उसकी बहिनें हँसकर उससे मिलीं ॥ २ ॥

दक्ष न कछु पूँछी कुशलाता ॥ सतिहिँ बिलोकि जरे सबगाता ॥ ३ ॥ *
सती जाइ देखेउ तब यागा ॥ कतहुँ न दीख शंभु कर भागा ॥ ४ ॥ *

दक्षने तौ बिलकुल आदर सत्कार नहीं किया और तौ सब बात रही पर उसको कुशलतक नहीं पूछा उलटा सतीको देखकर उसके तमाम अंग जलने शुरू हो गये ॥३॥ फिर सतीने जाकर उस समय यज्ञको देखा तौ वहां कहीं महादेवका भाग नजर नहीं आया ॥ ४ ॥

तब चित चढ़ेउ जो शंकर कहेऊ ॥ प्रभु अपमान समुझि उर दहेऊ ॥५॥*
पाछिल दुख न हृदय अस व्यापा ॥ जस यह भयउ महापरितापा ॥६॥*

तब जो महादेवने कहा था वह सब चित्त पर चढ़ा यानी महादेवके कहने पर भरोसा आया, और प्रभु (महादेव) का अपमान समझकर हृदयमें जलने लगी ॥ ५ ॥ सतीके मनमें पिछला दुःख ऐसा नहीं हुआ था जैसा कि यह महा परिताप हुआ ॥ ६ ॥

यद्यपि जग दारुण दुख नाना ॥ सबते कठिन जाति अपमाना ॥७॥ *
समुझि सो सतिहिँ भयो अति क्रोधा ॥ बहुबिधि जननी कीन्ह प्रबोधा ॥८॥

और आज दिनभी यही बात है कि जगत्में अनेक प्रकारके दारुण दुःख हैं परंतु जाति अपमान सबसे कठिन है ॥ ७ ॥ यह बात समझ कर सतीको बड़ा क्रोध हुआ उस समय उसकी माताने उसको अनेक प्रकारसे समझाया ॥ ८ ॥

दोहा–शिवअपमान न जाइ सहि, हृदय न होत प्रबोध ॥ *
सकलसभहिँ हठि हटकि तब, बोली बचन सक्रोध ॥ ७५ ॥ *

परंतु उससे शिवजीका अपमान सहा नहीं गया अतएव उसके हृदयमें कुछभी प्रबोध नहीं हुआ. फिर सब सभाको बलात्कारसे हटक कर सतीने क्रोधके साथ ये वचन कहे ॥ ७५ ॥

सुनहु सभासद सकल मुनिंदा ॥ कही सुनी जिन शंकर निंदा ॥ १ ॥ ❋
सो फल तुरत लहब सबकाहू ॥ भलीभांति पछिताव पिताहू ॥ २ ॥ ❋

सती बोली कि–हे सभासदो ! हे समस्त मुनिराजो ! सुनो. जिन लोगोंने महादेवकी निंदा कानोंसे सुनी है और जिन्होंने मुखसे कही है ॥ १ ॥ वे सब उसका फल तुरंत पावेंगे और पिताभी अच्छीतरह पछतावेगा ॥ २ ॥

सन्तशम्भुश्रीपतिअपवादा ॥ सुनिय जहां तहँ अस मर्यादा ॥ ३ ॥ ❋
काटिय जीभ जो बूत बसाई ॥ श्रवण मूंदि नहिं चलिय पराई ॥ ४ ॥ ❋

जहां सत्पुरुष, महादेव और विष्णु भगवानकी निंदा सुन पड़े वहांकी यह मर्याद है ॥ ३ ॥ कि जो अपनी सामर्थ्य हो तब तो उसकी जीभ काट लेनी चाहिये और जो बस न चलै तो कान मूंदिके वहांसे निकल जाना चाहिये और आप तो नहीं गये ॥ ४ ॥

जगदातम महेश त्रिपुरारी ॥ जगतजनक सबके हितकारी ॥ ५ ॥ ❋
पिता मन्दमति निन्दत तेही ॥ दक्षशुक्रसम्भव यह देही ॥ ६ ॥ ❋

जो महादेव जगत्के आत्मा, जगतपिता और सबके हितकारी हैं ॥ ५ ॥ उन महेशकी यह मंदमति मेरा पिता दक्ष निंदा करता है और यह मेरा शरीर इसके शुक्रसे पैदा हुआ है ॥ ६ ॥

तजिहौं तुरत देह तेहि हेतू ॥ उर धरि चंद्रमौलि वृषकेतू ॥ ७ ॥ ❋
अस कहि योगअग्नि तनु जारा ॥ भयउ सकलमख हाहाकारा ॥ ८ ॥ ❋

इसलिये इस शरीरको मैं रखनाही नहीं चाहती. अब मैं तो प्रभु चंद्रशेखर महादेवका हृदयमें ध्यान धरके तुरंत इस देहको त्याग दूंगी ॥ ७ ॥ ऐसे कहकर सतीने अपना शरीर योगानलसे भस्म करदिया तब तमाम यज्ञमें बड़ा हाहाकार शब्द हुआ ॥ ८ ॥

दोहा–सतीमरण सुनि शम्भुगण, लगे करन मख खीश ॥ ❋
यज्ञ विध्वंस बिलोकि भृगु, रक्षा कीन्ह मुनीश ॥ ७६ ॥ ❋

सतीका मरण देखकर महादेवके गण यज्ञका विध्वंस करने लगे तब भृगुमुनिने यज्ञका विध्वंस होता देखकर तुरंत अपने प्रभावसे यज्ञकी रक्षा करी ॥ ७६ ॥

समाचार जब शंकर पाये ॥ बीरभद्र करि कोप पठाये ॥ १ ॥ ❋
यज्ञ बिध्वंस जाइ तिन्ह कीन्हा ॥ सकलसुरन्ह विधिवत फलदीन्हा ॥ २ ॥ ❋

जब महादेवको सतीके मरणकी खबर मिली तब महादेवने कोप करके बीरभद्र गणको भेजा ॥ १ ॥ उसने जाकर तमाम यज्ञका विध्वंस किया और सब देवताओंको उसका यथायोग्य फल दिया ॥ २ ॥

भइ जग बिदित दक्षगति सोई ॥ जस कछु शम्भुबिमुखकी होई ॥ ३ ॥ ❋
यह इतिहास सकल जग जाना ॥ ताते मैं संक्षेप बखाना ॥ ४ ॥ ❋

यह बात जगत्प्रसिद्ध है कि दक्षकी गति वैसीही हुई कि जैसी कुछ गति महादेवसे विमुख

पुरुषोंकी हुआ करती है ॥ ३ ॥ यह दक्षप्रजापतिका इतिहास सब जगत् जानता है इससे मैंने यह कथा बहुत संक्षेपसे कही है ॥ ४ ॥

सती मरत हरिसन बर माँगा ॥ जन्म जन्म शिवपद अनुरागा ॥ ५ ॥ *
तेहि कारण हिमगिरि गृह जाई ॥ जन्मी पारवतीतनु पाई ॥ ६ ॥ *

सतीने मरते मरते विष्णु भगवानसे वरदान मांगा कि हे प्रभु ! मेरी जन्मजन्ममें महादेवजीके चरणोंमें प्रीति बनी रहे ॥ ५ ॥ अतएव वह सती हिमाचलके घर जाकर पार्वती शरीर पाकर जन्मी ॥ ६ ॥

जबते उमा शैलगृह आई ॥ सकल सिद्धि सम्पति तहँ छाई ॥ ७ ॥ *
जहँ तहँ मुनिन सुआश्रम कीन्हे ॥ उचित बास हिमभूधर दीन्हे ॥ ८ ॥ *

जबसे पार्वती हिमाचलके घर आयी तभीसे उसके घरमें सब सिद्धि और संपदा छा गयी ॥ ७ ॥ जहां तहां हिमाचलके भीतर मुनिलोगोंने सुन्दर आश्रम बनाये और हिमाचलनेभी उनको उनके योग्य वास दिया ॥ ८ ॥

दोहा—सदा सुमन फलसहित सब, द्रुम नव नानाजाति ॥ *
प्रकटी सुन्दर शैलपर, मणि आकर बहुभांति ॥ ७७ ॥ *

जिनमें सदा फल और फूल लगे हुए है ऐसे कई जातिके नये नये समस्त वृक्ष शोभायमान होने लगे. उस पर्वत पर अनेक प्रकारकी मणियोंकी सुन्दर खानें प्रगट हुईं ॥ ७७ ॥

सरिता सर पुनीत जल बहई ॥ खग मृग मधुप सुखी सब रहई ॥ १ ॥ *
सहजबैर सब जीवन त्यागा ॥ गिरिपर सकल करहिँ अनुरागा ॥ २ ॥ *

तलाव और नदियोंमें स्वच्छ पवित्र जल बहने लगा. पक्षी, चौपाये और भ्रमर सब परम आनंदित रहते हैं ॥ १ ॥ सब जीवमात्रने स्वाभाविक वैर त्याग दिया है यानी सिंह और हरिण, सर्प और नकुल ये सब शामिल रहने लगे है और परस्पर पर्वतपर प्रीति रखते हैं ॥ २ ॥

सोह शैल गिरिजा गृह आये ॥ जिमि नर रामभक्तिके पाये ॥ ३ ॥ *
नित नूतन मङ्गलगृह तासू ॥ ब्रह्मादिक गावहिँ यश जासू ॥ ४ ॥ *

पार्वतीके घर आनेसे पर्वत कैसे शोभायमान हुआ है कि मानों मनुष्य रघुनाथजीकी भक्ति पाकर शोभायमान होता है ॥ ३ ॥ उसके घर नित नये मंगलाचार होने लगे हैं और ब्रह्मादिक देवता उसका यश गाते हैं ॥ ४ ॥

नारद समाचार सब पाये ॥ कौतुक हिमगिरिगेह सिधाये ॥ ५ ॥ *
शैलराज बड़ आदर कीन्हा ॥ पद पखारि बर आसन दिन्हा ॥ ६ ॥ *

जब नारदजीको ये सब समाचार मिले तब वे बड़े कौतुकके साथ हिमाचलके घर सिधारे ॥ ५ ॥ हिमाचलने उनका बड़ा सत्कार किया और पांव पखारकर सुंदर आसन दिया ॥ ६ ॥

नारिसहित मुनिपद शिर नावा ॥ चरणसलिल सब भवन सिँचावा ॥ ७ ॥
निजसौभाग्य बहुत गिरि बरणा ॥ सुता बोलि मेली मुनिचरणा ॥ ८ ॥ *

और अपनी स्त्री मेनाके साथ मुनि नारदजीके चरणोंमें दंडवत् करके चरणारविंदोंका जल अपने सारे घरमें छिरका ॥ ७ ॥ पर्वतने नारदजीके आनेसे अपनेको बड़ा धन्य माना और कहा कि, आज मैं बड़ा बड़भाग हूं; क्योंकि मुझे आज आपके दर्शन हुए, फिर कन्या (पार्वती) को बुलाकर मुनिके चरणोंमें धरी ॥ ८ ॥

दोहा–त्रिकालज्ञ सर्वज्ञ तुम, गति सर्वत्र तुम्हारि ॥ ❋
कहहु सुताके दोष गुण, मुनिवर हृदय बिचारि ॥ ७८ ॥ ❋

और हिमाचलने कहा कि–हे मुनिवर ! आप भूत भविष्य वर्तमान तीनों कालके ज्ञाता हो, आप सर्वज्ञ हो, आपकी गति सर्वत्र है सो आप अपने मनमें विचारकर मुझे इस कन्याके गुण दोष कहो ॥ ७८ ॥

कह मुनि बिहँसि गूढ़ मृदुबानी ॥ सुता तुम्हारि सकल गुणखानी ॥१॥ ❋
सुन्दरि सहजसुशील सयानी ॥ नाम उमा अंबिका भवानी ॥ २ ॥ ❋

हिमाचलके पूंछनेपर नारदजीने हँसकर कोमल और गूढ़वाणीसे कहा कि– हे गिरिराज ! आपकी कन्या सर्वगुणोंकी खान है ॥ १ ॥ यह सुंदरी स्वभावहीसे बहुत सुशील और सयानी है; इसके नाम उमा, अंबिका और भवानी आदि कई है ॥ २ ॥

सबलक्षणसंपन्न कुमारी ॥ होइहि सन्तत पियहिँ पियारी ॥ ३ ॥ ❋
सदा अचल यहिकर अहिवाता ॥ यहिते यश पैहहिँ पितु माता ॥ ४ ॥ ❋

यह आपकी कन्या सर्वलक्षणसम्पन्न है सो पतिको अत्यंतही प्रिय होगी ॥ ३ ॥ इसका सौभाग्य सदा अचल रहेगा और इससे तुम दोनों माता पिता जगतमें यश पाओगे ॥ ४ ॥

होइहि पूज्य सकल जगमाहीं ॥ यहि सेवत कछु दुर्लभ नाहीं ॥ ५ ॥ ❋
यहिकर नाम सुमिरि संसारा ॥ तिय चढ़िहहिँ पतिव्रत असिधारा ॥ ६ ॥

यह तुम्हारी कन्या सारे संसारमें पूज्य होगी. इसकी सेवा करनेपर कुछभी बात दुर्लभ नहीं रहेगी ॥ ५ ॥ संसारमें इसका नामस्मरण करके स्त्रियां खड्गकी धारके समान अतितीक्ष्ण पतिव्रतधर्मपर चढ़ेंगीं यानी पतिव्रतधर्म धारण करेंगीं ॥ ६ ॥

शैल सुलक्षण सुता तुम्हारी ॥ सुनहु जे अब अवगुण दुइ चारी ॥ ७ ॥ ❋
अगुण अमान मातु पितु हीना ॥ उदासीन सब संशय छीना ॥ ८ ॥

हे पर्वतराज ! आपकी कन्या अत्यंतही सुलक्षणी है पर इसमें जो दो चार अवगुण हैं वे मैं कहता हूं ॥ ७ ॥ इसको पति निर्गुण, प्रमाणरहित, पिता माता जिसके नहीं है ऐसा, उदासीन, सब संदेह रहित, ॥ ८ ॥

दोहा–योगी जटिल अकाम मन, नगन अमंगल बेष ॥ ❋
अस स्वामी इहि कहँ मिलिहि, परी हस्त अस रेख ॥ ७९ ॥ ❋

योगी, जटाधारी, निष्कामचित्त, नग्न और अमंगल वेषवाला मिलेगा: क्योंकि इसके हाथमें रेखा ऐसीही पड़ी है ॥ ७९ ॥

सुनि मुनिगिरा सत्य जिय जानी ॥ दुख दम्पतिहिँ उमा हरखानी ॥१॥ ❀
नारदहू यह भेद न जाना ॥ दशा एक समुझत बिलगाना ॥ २ ॥ ❀

नारदजीकी यह बाणी सुन अपने मनमें उस वाणीको सत्य समझकर हिमाचल और मेनाके मनमें तौ बड़ा शोच हुआ और पार्वती प्रसन्न हुई ॥ १ ॥ इस बातकी खबर नारदजीकोभी नहीं पड़ी कि उनकी दशा तौ एकसी है पर इनको समझ अलग २ है ॥ २ ॥

सकल सखी गिरिजा गिरि मयना ॥ पुलक शरीर भरे जल नयना ॥३॥ ❀
होइ न मृषा देवऋषि भाखा ॥ उमा सो बचन हृदय धरि राखा ॥४॥ ❀

सब सखियां, पार्वती, हिमाचल और मेना इनके शरीर पुलकित हो गये और नेत्रोंमे जल भर आया ॥ ३ ॥ नारदजीका कहना झूठ नहीं हो सक्ता है सो ये नारदजीके वचन पार्वतीने अपने हृदयमें धर राखे ॥ ४ ॥

उपजेउ शिवपद कमल सनेहू ॥ मिलन कठिन मन यह संदेहू ॥ ५ ॥ ❀
जानि कुअवसर प्रीति दुराई ॥ सखि उत्संग बैठि पुनि जाई ॥ ६ ॥ ❀

यद्यपि पार्वतीका शिवजीके चरणकमलोंमें पूर्ण स्नेह उत्पन्न हुआ, पर महादेवका मिलना कठिन है इस बातका उसके मनमें बड़ा संदेह रहा ॥ ५ ॥ पार्वतीने अवसर न समझकर अपनी प्रीति छिपा ली और पीछी जाकर सखीकी गोदमें जा बैठी ॥ ६ ॥

झूंठि न होइ देवऋषि बानी ॥ शोचीहँ दम्पति सखी सयानी ॥ ७ ॥ ❀
उर धरि धीर कहैं गिरिराऊ ॥ कहहु नाथ का करिय उपाऊ ॥ ८ ॥ ❀

हिमाचल, मेना और सयानी सखियां शोच करती हैं कि नारदजीके बचन झूंठे नहीं हो सक्ते ॥७॥ फिर मनमें धीरज धरकर हिमाचलने नारदजीसे कहा कि—हे नाथ ! कहो, इसका क्या उपाय किया जाय ? ॥ ८ ॥

दोहा—कह मुनीश हिमवंत सुनु, जो बिधि लिखा लिलार ॥ ❀
देव दनुज नर नाग मुनि, कोउ न मेटनहार ॥ ८० ॥ ❀

तब नारदजीने कहा कि—हे पर्वत ! सुनो जो विधाताने लिलारमें लिख दिया है उसको तौ देवता दानव, मनुष्य, मुनि और नाग कोई मेटनेवाला हैही नहीं ॥ ८० ॥

तदपि एक मैं कहौं उपाई ॥ सोइ करै जो दैव सहाई ॥१॥ ❀
जस बर मैं बर्णेउँ तुमपाहीं ॥ मिलिहि उमीहँ कछु संशय नाहीं ॥ २ ॥ ❀

तथापि मैं एक उपाय बतलाता हूं सो जो दैव सहाय करै तौ वह उपाय लगभी जाय ॥ १ ॥ मैंने तुम्हारे पास जैसे वरका वर्णन किया है, पार्वतीको वर तौ वैसाही मिलेगा इसमें तौ कुछ संदेह हैही नहीं ॥ २ ॥

जे जे बरके दोष बखाने ॥ ते सब शिवपहँ मैं अनुमाने ॥ ३ ॥ ❀
जो बिबाह शंकरसन होई ॥ दोषौ गुणसम कह सबकोई ॥ ४ ॥ ❀

परंतु मैंने वरके जो २ अवगुण कहे हैं वे सब मैं जानता हूं कि, शिवजीमें मिलते है ॥ ३ ॥ सो जो यह पार्वती शिवजीसे ब्याही जाय तब तौ ये दोषभी गुणोंके बराबर हो जावें ॥ ४ ॥

जो अहिसेज शयन हरि करहीं ॥ बुध कछु तिनकहँ दोष न धरहीं ॥५॥ ❋
भानु कृशानु सर्बरस खाहीं ॥ तिनकहँ मन्द कहत कोउ नाहीं ॥ ६ ॥ ❋

सो यह बात सब कोई कहते हैं और जानते हैं. देखो, जो विष्णु भगवान् शेषशय्यामें पौढ़ते हैं तौ उनको कोईभी विद्वान् कुछभी दोष नहीं लगाता ॥ ५ ॥ और सूरज और अग्नि सर्व रस खाते हैं पर उनको कोईभी मंद यानी अधम नहीं कहता ॥ ६ ॥

शुभ अरु अशुभ सलिल सब बहही ॥ सुरसरि कोउ न अपावनि कहही ॥७॥
समरथकहँ नहिं दोष गुसाईं ॥ रबिपावकसुरसरिकी नाईं ॥ ८ ॥ ❋

गंगाके जलमें शुभ और अशुभ सब कुछ बहता है पर गंगाको कोईभी अपवित्र नहीं कहता ॥ ७ ॥ इसलिये मैं कहता हूं कि—सूरज, अग्नि और गंगाकी नाईं समरथको कुछभी दोष नहीं है ॥ ८ ॥

दोहा--जो असि ईर्षा करहिँ नर, जड़ विवेक अभिमान ॥ ❋
परहिँ कल्पभरि नरकमहँ, जीव कि ईशसमान ॥ ८१ ॥ ❋

और जो जड़ मनुष्य विवेकका अभिमान रखकर बड़ोंसे ईर्षा रखते हैं वे कल्प यानी हजार १००० चौकड़ीतक नरकमें पड़े रहते हैं. क्या जीव ईश्वरके बराबर हो सकता है? ॥ ८१ ॥

सुरसरि जलकृत वारुणि जाना ॥ कबहुँ न संत करहिं तेहि पाना ॥ १ ॥ ❋
सुरसरि मिले सुपावन जैसे ॥ ईश अनीशहिँ अन्तर तैसे ॥ २ ॥ ❋

यदि कोई आदमी गंगाजलसे मदिरा बनावे तौ उस मदिराको गंगाजलसे बनी जानकर संतलोग कभी नहीं पीवेंगे ॥ १ ॥ परंतु वही मदिरा यदि गंगाके प्रवाहमें डालदी जाय और वह गंगामें मिल-जाय तौ जैसे वह पवित्र हो जाती है ऐसेही ईश्वर और जीवमें फर्क है. अर्थात् जीव अवगुणसे दूषित हो जाता है, परमेश्वर अवगुणसे दूषित नहीं होता ॥ २ ॥

शंभु सहजसमरथ भगवाना ॥ इहि विवाह सबबिधि कल्याना ॥ ३ ॥ ❋
दुराराध्य पै अहहिँ महेशू ॥ आशुतोष पुनि किये कलेशू ॥ ४ ॥ ❋

महादेव स्वभावसे समर्थ और भगवान् हैं इसलिये उनके साथ विवाह होनेसे सब प्रकारसे कल्याण होगा ॥ ३ ॥ परंतु एक बात है कि, महादेवका आराधन करना अति कठिन है. तथापि जो क्लेश किया जाय यानी बड़ी बड़ी तपस्या की जाय तौ वे तुरत प्रसन्न हो जाते हैं ॥ ४ ॥

जो तप करै कुमारि तुम्हारी ॥ भाविउ मेटि सकैं त्रिपुरारी ॥ ५ ॥ ❋
यद्यपि बर अनेक जगमाहीं ॥ यहिकहँ शिव तजि दूसर नाहीं ॥ ६ ॥ ❋

जो तुम्हारी कन्या तपस्या करै तौ महादेव विधिके अंकभी मिटा सकते हैं ॥ ५ ॥ यद्यपि जगतमें अनेक वर हैं पर इसके लिये तौ शिवजीको छोड़कर दूसरा एकभी नहीं है ॥ ६ ॥

बरदायक प्रणतारतिभंजन ॥ कृपासिन्धु सेवक मनरंजन ॥ ७ ॥ ❋
इच्छित फल बिनु शिव आराधे ॥ लहै न कोटि योग जप साधे ॥ ८ ॥ ❋

क्योंकि महादेव कृपाके सागर वर देनेवाले और शरणागतोंका संकट मिटानेवाले व भक्तलोगोंके मनको राजी रखनेवाले है ॥ ७ ॥ इसीसे मैं कहता हूं कि, शिवजीका आराधन किये बिना दूसरे भले करोड़ों योग जप तप क्यों न साधो पर मनवांछित फल नहीं मिलेगा ॥ ८ ॥

दोहा-अस कहि नारद सुमिरि हरि, गिरिजहिं दीन्ह अशीश ॥ ❀
होइहि सब कल्याण अब, संशय तजहु गिरीश ॥ ८२ ॥ ❀

ऐसे कह, भगवान्का स्मरण कर, नारदजीने पार्वतीको आशीस दी और हिमाचलसे कहा कि-हे गिरिराज ! अब तुम्हारा सबप्रकारसे कल्याण होगा. तुम किसी बातका संदेह मत करो ॥ ८२ ॥

कहि अस ब्रह्मभुवन मुनि गयऊ ॥ आगिल चरित सुनहु जस भयऊ १❀
पतिहिं इकांत पाय कह मयना॥नाथ न मैं समुझेउँ मुनि बयना ॥ २ ॥❀

नारदजी तो ऐसे कहकर ब्रह्मलोकको सिधारे. अब आगे जैसा चरित्र हुआ है वो मैं कहता हूं सो सुनो ॥ १ ॥ फिर पतिको एकान्तमें पाकर मेनाने कहा कि-हे नाथ ! मुनिके बचन मेरी समझमें नहीं आये ॥ २ ॥

जो घर बर कुल होइ अनूपा ॥ करिय विवाह सुता अनुरूपा ॥ ३ ॥ ❀
नतु कन्या बरु रहै कुमारी ॥ कन्त उमा मम प्राणपियारी ॥ ४ ॥ ❀

इसलिये मैं कहती हूं कि जो घर, बर और कुल बहुत अच्छा होवे और बराबरीका बर होवे तो उसके साथ अपनी बेटीका ब्याह करना चाहिये ॥ ३ ॥ और जो ऐसा बर न मिले तो चाहे मेरी कन्या कुमारी भले रहजावे पर हीन वरको कन्या नहीं देनी चाहिये; क्योंकि हे कान्त ! यह पार्वती मुझको प्राणोंसेभी प्यारी है ॥ ४ ॥

जो न मिलिहि वर गिरिजहिं योगू ॥ गिरिजड सहज कहहिं सब लोगू५❀
सो बिचारि पति करहु विवाहू ॥ जेहि न बहोरि होइ उर दाहू ॥ ६ ॥ ❀

जो पार्वतीको इसके योग्य बर नहीं मिला तो सब लोग यही कहेंगे कि पर्वत स्वभावसेही जड़ होता है ॥ ५ ॥ सो इसे बरकी क्या खबर ? इस बातका विचार करके हे स्वामी ! आप इसका विवाह करो; कि, जिससे फिर मनको संताप न होवे ॥ ६ ॥

अस कहि परी चरण धरि शीशा ॥ बोले सहित सनेह गिरीशा ॥ ७ ॥ ❀
बरु पावक प्रगटै शशिमाहीं ॥ नारदबचन अन्यथा नाहीं ॥ ८ ॥ ❀

ऐसे कह पतिके चरण शिरपर धर मेना पृथ्वीपर पड़ी तब स्नेहके साथ हिमाचलने कहा ॥ ७ ॥ कि-चाहे चंद्रमामें अग्नि पैदा होजावे कि, जो न होनेकी बात है वो होजावे परंतु नारद मुनिके बचन अन्यथा नहीं हो सक्ते ॥ ८ ॥

दोहा-प्रिय शोच परिहरहु सब, सुमिरहु श्रीभगवान ॥ ❀
पारबती जिन निर्मयउ, सोइ करिहहिं कल्यान ॥ ८३ ॥ ❀

हिमाचलने कहा कि-हे प्रिया ! तू सब शोच त्याग दे, श्रीभगवान्का स्मरण कर, जिसने पार्वतीको रचा है वही कल्याण करेगा ॥ ८३ ॥

अब जो तुमहिँ सुताकर नेहू ॥ तौ अस जाइ सिखावन देहू ॥ १ ॥ ❋
करै सो तप जेहि मिलहिँ महेशू ॥ आन उपाय न मिटहिं कलेशू ॥२॥ ❋

जो तुमको अपनी कन्यापर परम प्रीति है तौ तुम जाकर अब उसको ऐसी शिक्षा दो ॥ १ ॥ कि वो तपस्या करै; कि जिस तपस्याको करनेसे उसको महादेव वर मिलें. हे प्यारी ! इसके सिवाय दूसरे उपायसे कभी क्लेश नहीं मिटेगा ॥ २ ॥

नारदबचन सत्य सब हेतू ॥ सुन्दर सब गुणनिधि वृषकेतू ॥ ३ ॥ ❋
अस विचारि तुम तजि सब शंका ॥ सबहिँभांति शंकर अकलंका ॥४॥ ❋

नारदजीके वचन सबप्रकारसे सत्य है और महादेव सबप्रकारसे सुन्दर और गुणोंके भंडार है ॥ ३ ॥ ऐसे विचार कर तुम सब संदेह त्याग दो, क्योंकि महादेव सबप्रकारसे दूषणरहित है ॥ ४ ॥

सुनि पतिबचन हर्ष मनमाहीं ॥ गई तुरत उठि गिरिजापाहीं ॥ ५ ॥ ❋
उमहिँ बिलोकि नयन भरि बारी ॥ सहित सनेह गोद बैठारी ॥ ६ ॥ ❋

पतिके ऐसे वचन सुन, मनमें खुश हो, मेना उठकर तुरंत पार्वतीके पास गई ॥ ५ ॥ पार्वतीको देखतेही उसके नेत्रोंमें जल भर आया, फिर स्नेहके साथ पार्वतीको अपनी गोदमें बिठाया ॥ ६ ॥

बारहिंबार लेति उर लाई ॥ गद्गदकण्ठ न कछु कहि जाई ॥ ७ ॥ ❋
जगतमातु सर्वज्ञ भवानी ॥ मातु सुखद बोली मृदु बानी ॥ ८ ॥ ❋

बारंबार उसको छातीमें लगाया. मेनाका प्रेमके कारण कंठ गद्गद हो गया; जिससे वो कुछ न कह सकी ॥ ७ ॥ उस समय जगत्की माता और सर्वज्ञ पार्वतीने अपनी मातासे सुखकारी कोमल वाणी कही ॥ ८ ॥

दोहा–सुनहु मातु मैं दीख अस, सपन सुनाऊं तोहिँ ॥ ❋
सुन्दर गौर सुविप्रवर, अस उपदेशेउ मोहिँ ॥ ८४ ॥ ❋

पार्वती बोली कि–हे माता ! मैंने एक सपना देखा है वो मैं आपको सुनाती हूं सो आप सुनो. मुझको एक सुन्दर गौरवर्ण श्रेष्ठ ब्राह्मणने स्वप्नके भीतर ऐसा उपदेश किया है कि–॥ ८४ ॥

करहु जाइ तप शैलकुमारी ॥ नारद कहा सो सत्य बिचारी ॥ १ ॥ ❋
मातु पितहिँ पुनि यह मत भावा ॥ तप सुखप्रद दुख दोष नसावा ॥२॥ ❋

'हे पार्वती ! नारदजीने जो कहा है उसे सत्य समझकर तू जाकर तपस्या कर ॥ १ ॥ यह बात तेरे माता पिताकोभी अच्छी लगेगी; क्योंकि तपस्यासे सुख होता है और दुख व दोष मिटजाते है ॥ २ ॥

तपबल रचैं प्रपंच विधाता ॥ तपबल विष्णु सकल जगत्राता ॥ ३ ॥ ❋
तपबल शम्भु करहिँ संहारा ॥ तपबल शेष धरहिँ महिभारा ॥ ४ ॥ ❋

ब्रह्माजी तपोबलसे जगत्को रचते हैं और विष्णु तपके प्रभावसे जगत्की रक्षा करते हैं ॥ ३ ॥ महादेव तपकी सामर्थ्यसे जगत्का संहार करते हैं. शेषजी तपोबलसे पृथ्वीका भार उठाते हैं ॥ ४ ॥

तपअधार सब सृष्टि भवानी ॥ करहु जाइ तप अस जिय जानी ॥ ५ ॥ ❋

सुनत वचन विस्मत महतारी ॥ सपन सुनायेउ गिरिहिँ हँकारी ॥ ६ ॥❋

हे पार्वती ! तमाम सृष्टि तपस्याके आधार है ऐसा जीमें जान, वनमें जाकर तुम तपस्या करो ' ॥ ५ ॥ पार्वतीके ये वचन सुनकर मेनाको बड़ा आश्चर्य हुआ. उसने हिमाचलको बुलाकर स्वप्नके समाचार सुनाये ॥ ६ ॥

मातु पितहिँ बहुविधि समुझाई ॥ चली उमा तपहित हरषाई ॥ ७ ॥ ❋

प्रिय परिवार पिता अरु माता ॥ भये बिकल मुख आव न बाता ॥ ८ ॥❋

फिर पार्वती, माता पिताको अनेक प्रकारसे समझाकर बड़े आनंदके साथ तप करनेको चली ॥ ७ ॥ जिस समय पार्वती तप करनेको चली तब प्रिय परिवार माता और पिता सब बड़े व्याकुल हुए. मुंहसे बाणी निकल नहीं सकी ॥ ८ ॥

दोहा—वेदशिरा मुनि आय तब, सबहिँ कहा समुझाइ ॥ ❋

पारबतीमहिमा सुनत, रहे प्रबोधहिं पाइ ॥ ८५ ॥

पार्वती तप करने गयी तब वेदशिरा नाम मुनिने आकर सबसे समझाकर कहा, सो पार्वतीकी महिमा सुनकर सबोंने ज्ञान पाकर धीरज धरी ॥ ८५ ॥

उर धरि उमा प्राणपतिचरणा ॥ जाइ विपिन लागी तप करणा ॥ १ ॥ ❋

अति सुकुमारि न तनु तपयोगू ॥ पतिपद सुमिरि तजेउ सब भोगू ॥ २ ॥

पार्वती, प्राणपति श्रीशिवजीके चरणोंका हृदयमें ध्यान धर, वनमें जा, तपस्या करने लगी ॥ १ ॥ यद्यपि पार्वती अति सुकुमारी होनेके कारण उसका शरीर तपस्या करनेके योग्य नहीं था तथापि पतिके चरणकमलोंका स्मरण करके उसने सब भोग तज दिये ॥ २ ॥

नित नव चरण उपज अनुरागा ॥ बिसरी देह तपहिं मन लागा ॥ ३ ॥❋

संबत सहस मूल फल खाये ॥ शाक खाइ शतवर्ष गँवाये ॥ ४ ॥ ❋

प्रभुके चरणोंमें उसका नितनया स्नेह बढ़ने लगा और तपस्यामें ऐसा मन लग गया कि, देहकी सुध भूल गयी ॥ ३ ॥ हजार वर्षतक तो फल मूल खाये और सौ वर्ष शाक खाकर बिताये ॥ ४ ॥

कछु दिन भोजन बारि बतासा ॥ किये कठिन कछु दिन उपवासा ॥ ५ ॥

बेल पात महि परे सुखाई ॥ तीनि सहस संबत सो खाई ॥ ६ ॥ ❋

कितनेएक दिन जल पान किया और कुछ दिन पवन भक्षण किया, और कुछ दिन महाकठिन उपवासही किये ॥ ५ ॥ और तीन हजार वर्षतक पृथ्वीपर पड़ेहुए सूखे पत्ते और बेलपत्र खाया ॥ ६ ॥

पुनि परिहरेउ सुखानेउ पर्णा ॥ उमा नाम तब भयेउ अपर्णा ॥ ७ ॥ ❋

देखि उमहिँ तपखिन्न शरीरा ॥ ब्रह्मगिरा भइ गगन गँभीरा ॥ ८ ॥ ❋

फिर सूखे पत्ते खानेभी छोड़ दिये तबसे पार्वतीका नाम पर्ण (पत्ती) न खानेसे अपर्णा हुआ ॥७॥ पार्वतीको तपस्यासे अति क्षीणशरीर देखकर आकाशमें अति गंभीर ब्रह्मवाणी हुई ॥ ८ ॥

दोहा—भयउ मनोरथ सुफल तव, सुनु गिरिराजकुमारि ॥ ❋

परिहरु दूसह कलेश सब, अब मिलिहहिँ त्रिपुरारि ॥ ८६ ॥ ❋

कि—हे गिरिराजकुमारी ! सुन. तेरा मनोरथ सुफल हुआ सो तू दुःसह क्लेश करना छोड़ दे अब तुझको तुरंतही महादेवजी मिल जायंगे ॥ ८६ ॥

अस तप काहु न कीन्ह भवानी ॥ भये अनेक धीर मुनि ज्ञानी ॥ १ ॥ ❋
अब उर धरहु ब्रह्मबर बानी ॥ सत्य सदा सन्तत शुचि जानी ॥ २ ॥ ❋

हे पार्वती ! यद्यपि कई ज्ञानी धीर मुनि हुए है पर ऐसी तपस्या आजतक किसीने नहीं की है ॥ १ ॥ अब तुम ब्रह्माजीकी इस श्रेष्ठ वाणीको अपने मनमें रक्खो, और उस वाणीको सदा निरंतर सत्य और निष्कपट जानो ॥ २ ॥

आवै पिता बुलावन जबहीं ॥ हठ परिहरि घर जायहु तबहीं ॥ ३ ॥ ❋
मिलहिँ तुमहिँ जब सप्तऋषीशा ॥ जानेहु तब प्रमाण बागीशा ॥ ४ ॥ ❋

जब तुम्हारे पिता तुमको बुलानेको आवें तब तुम हठ छांड़कर घर चली जाइयो ॥ ३ ॥ तुमको जब सप्तऋषि मिलेंगे तब इस श्रेष्ठ वाणीको प्रमाण जानना ॥ ४ ॥

सुनत गिरा बिधि गगनबखानी ॥ पुलक गात गिरिजा हरषानी ॥ ५ ॥ ❋
उमाचरित मैं सुन्दर गावा ॥ सुनहु शम्भुकर चरित सुहावा ॥ ६ ॥ ❋

आकाशके अंदर विधाताकी कही ऐसी वाणी सुनकर पार्वतीका शरीर रोमांचित हुआ और वह मनमें बहुत खुश हुई ॥ ५ ॥ याज्ञवल्क्यजी कहते है कि—पार्वतीका जो सुन्दर हाल था वो तौ मैंने कहा. अब महादेवजीका परम रम्य चरित्र कहताहूं सो सुनो ॥ ६ ॥

जबते सती जाइ तनु त्यागा ॥ तबते शिवमन भयउ बिरागा ॥ ७ ॥ ❋
जपहिँ सदा रघुनायकनामा ॥ जहँ तहँ सुनहिँ रामगुणग्रामा ॥ ८ ॥ ❋

जबसे सतीने जाकर अपना शरीर त्याग दिया तबसे महादेव मनमें बड़े वैराग्ययुक्त हुए ॥ ७ ॥ सो वे सदा रामचन्द्रजीके नामका जप करते रहते हैं और जहां तहां प्रभुका गुणग्राम (समूह) सुनते रहते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—चिदानन्द सुखधाम शिव, बिगत मोह मद काम ॥ ❋
बिचरहिँ महि धरि हृदय हरि, सकललोकअभिराम ॥ ८७ ॥ ❋

साक्षात् चिदानन्दमूर्ति, सुखके धाम, और मोह, मद व कामरहित श्रीशिवजी सब लोकोंमें आतरमणीय मूर्ति श्रीरामचन्द्रजीके स्वरूपको हृदयमें रखकर पृथ्वीपर विचरते है ॥ ८७ ॥

कतहुँ मुनिन उपदेशहिँ ज्ञाना ॥ कतहुँ रामगुण करहिँ बखाना ॥ १ ॥ ❋
यदपि अकाम तदपि भगवाना ॥ भक्तबिरहदुखदुखित सुजाना ॥ २ ॥ ❋

कहीं तौ महादेव मुनिलोगोंको ज्ञानका उपदेश करते हैं और कहीं रामचन्द्रजीके गुणोंको वर्णन करते हैं ॥ १ ॥ यद्यपि षड्गुणैश्वर्यसम्पन्न श्रीमहादेवजी सर्वथा निष्काम हैं तथापि भक्त जो सती तिनके दुःखसे आप बड़े दुखी हैं; क्योंकि आप बड़े सुजान हैं ॥ २ ॥

यहि बिधि गयउ काल बहु बीती ॥ नित नव होइ रामपद प्रीती ॥ ३ ॥ ❋
नेम प्रेम शंकरकर देखा ॥ अविचल हृदय भक्तिकी रेखा ॥ ४ ॥ ❋

इसीतरह महादेवको बहुतसा समय व्यतीत होगया है तथापि प्रभुके चरणोंमे तौ महादेवकी प्रीति सदा नितनयी होती रहती है ॥ ३ ॥ जब प्रभुने शंकरका पक्का प्रेम और प्रण देखा और हृदयके अंदर दृढ़ भक्तिकी रेख यानी वासना देखी ॥ ४ ॥

प्रगटे राम कृतज्ञ कृपाला ॥ रूपशीलनिधि तेज बिशाला ॥ ५ ॥ ❋
बहुप्रकार शंकरहिँ सराहा ॥ तुम बिनु अस ब्रत को निरबाहा ॥ ६ ॥ ❋

तब परम कृपालु और कृतज्ञ श्रीरामचन्द्र कि जो विपुल तेज, रूप व शीलके भंडार हैं वे प्रगट हुए ॥ ५ ॥ और प्रभुने महादेवकी अनेकप्रकारसे प्रशंसा करी कि आप विना ऐसा प्रण कौन निबाह सकता है? ॥ ६ ॥

बहुबिधिरामशिवहिं समुझावा ॥ पारवतीकर जन्म सुनावा ॥ ७ ॥ ❋
अतिपुनीत गिरिजाकी करणी ॥ बिस्तरसहित कृपानिधि बरणी ॥ ८ ॥ ❋

रघुनाथजीने महादेवको अनेकप्रकारसे समझाया और पार्वतीके जन्मके समाचार सुनिये ॥ ७ ॥ और पार्वतीका जो अति पवित्र कर्तव्य रहा वो सब विस्तारपूर्वक कृपानिधि श्रीरामचन्द्रजीने महादेवसे कहा ॥ ८ ॥

दोहा—अब बिनती मम सुनहु शिव, जो मोपर निजनेहु ॥ ❋
जाइ बिबाहहु शैलजहिं, यह मोहिँ माँगे देहु ॥ ८८ ॥ ❋

प्रभुने कहा कि—हे शिव! अब आप मेरी एक बिनती सुनो. जो मुझपर आपका पक्का प्यार है तौ आप जाकर पार्वतीको व्याह करो. मैं आपसे प्रार्थना करताहूं सो मुझे यह वरदान दो ॥ ८८ ॥

कह शिव यदपि उचित अस नाहीं ॥ नाथबचन पुनि मेटि न जाहीं ॥ १ ॥
शिर धरि आयसु करिय तुम्हारा ॥ परम धर्म यह नाथ हमारा ॥ २ ॥

प्रभुके ऐसे वचन सुनकर महादेवने कहा कि—यद्यपि ऐसा करना योग्य तौ नहीं है पर स्वामीकी आज्ञाभी तौ मेटी नहीं जासकती ॥ १ ॥ हे प्रभु! मै आपकी आज्ञाको शिरपर धरकर करूंगा. हे नाथ! आपकी आज्ञा पालना यह तौ हमारा मुख्य धर्म है ॥ २ ॥

मातु पितागुरु प्रभुकी बानी ॥ बिनहिँ बिचार करिय शुभ जानी ॥ ३ ॥ ❋
तुम सबभांति परमहितकारी ॥ आज्ञा शिरपर नाथ तुम्हारी ॥ ४ ॥ ❋

माता और पिता, गुरु, स्वामी इनके वचन बे विचार शुभ जानकर करने चाहिये ॥ ३ ॥ हे नाथ! आप हमारे सब प्रकारसे परमहितकारी हो इसलिये आपकी आज्ञा हमारे शिरपर है ॥ ४ ॥

प्रभु तोषेउ सुनि शंकरबचना ॥ भक्ति बिवेक धर्मयुत रचना ॥ ५ ॥ ❋
कह प्रभु हर तुम्हार प्रण रहेऊ ॥ अब उर राखेउ जो हम कहेऊ ॥ ६ ॥ ❋

जिन वचनोंमें भक्ति, विवेक और धर्मकी रचना मिलीहुई है ऐसे महादेवके वचन सुनकर प्रभु परम प्रसन्न हुए ॥ ५ ॥ प्रभुने कहा कि हे शिव! आपका प्रण निबह गया है सो अब जो हमने कहा है वह अपने हृदयमें धारण करो ॥ ६ ॥

अन्तर्ध्यान भये अस भाषी ॥ शंकर सोइ मूरति उर राषी ॥ ७ ॥ ❋

तबहिं सप्तऋषि शिवपहँ आये ॥ बोले प्रभु अस बचन सुहाये ॥ ८ ॥ ❋

ऐसे कहकर प्रभु अंतर्ध्यान हुए.तब महादेवने वही मूर्ति अपने हृदयमें धारण करी ॥ ७ ॥ उस समय सप्तऋषि महादेवके पास आये तब उनसे महादेवने सुहावने ऐसे वचन कहे ॥ ८ ॥

दोहा–पारवतीपहँ जाइ तुम, प्रेमपरीक्षा लेहु ॥ ❋
गिरिहिं प्रेरि पठवहु भवन, दूर करेहु संदेहु ॥ ८९ ॥ ❋

कि–हे ऋषियो ! तुम पार्वतीके पास जाओ और उसके प्रेमकी परीक्षा लो और हिमाचलको प्रेरकर पार्वतीको घर भेज दो और उसका संदेह मिटा दो ॥ ८९ ॥

ऋषिन गौरि देखि तहँ कैसी ॥ मूरतिवन्त तपस्या जैसी ॥ १ ॥ ❋
बोले मुनि सुनु शैलकुमारी ॥ करहु कवन कारण तप भारी ॥ २ ॥ ❋

महादेवजीकी आज्ञा पाय, सप्तऋषियोंने वहां जाकर पार्वतीको कैसी देखी कि मानों मूर्तिमान् तपस्याही गढ़ी है ॥ १ ॥ फिर पार्वतीके निकट जाकर ऋषियोंने कहा कि–हे पार्वती ! सुन. तू ऐसी भारी तपस्या क्यों करती है ? ॥ २ ॥

केहि आराधहु का तुम चहहू ॥ हमसन सत्य मर्म सब कहहू ॥ ३ ॥ ❋
सुनत ऋषिनके बचन भवानी ॥ बोलीं गूढ़ मनोहर बानी ॥ ४ ॥ ❋

तू किसका आराधन करती है ? और क्या चाहती है ? तू हमसे जो सच्ची बात हो वह कह दे॥३॥ ऋषियोंके ऐसे बचन सुनकर पार्वतीने बड़ी गूढ़ी और मनोहर वाणी कही ॥ ४ ॥

कहत मर्म मन अति सकुचाई ॥ हँसिहहु सुनि हमारि जड़ताई ॥ ५ ॥ ❋
मन हठ परा न सुनै सिखावा ॥ चहत बारिपर भीति उठावा ॥ ६ ॥ ❋

पार्वती बोलीं कि–हे महामुनि ! मर्मकी बात कहते मेरा मन बहुत सकुचाता है; क्योंकि मेरी मूर्खताकी बात सुनकर आप हँसोगे ॥ ५ ॥ मेरा मन बहुत हठमें पड गया है अतएव किसीकी शिक्षाभी नहीं मानता. और हठभी ऐसा असंभव है कि मानों वह पानीपर भीत उठाना चाहता है ॥ ६ ॥

नारद कहा सत्य सोइ जाना ॥ बिनु पंखन हम चहहिं उडाना ॥ ७ ॥ ❋
देखिय मुनि अविवेक हमारा ॥ चाहत पति शंकर अविकारा ॥ ८ ॥ ❋

जो नारदजीने कहा था उसीको सत्य समझकर हम विना पर उड़ना चाहती हैं ॥ ७ ॥ हे मुनिराज ! आप हमारा अज्ञान तो देखिये कि मैं साक्षात् विकाररहित शिवजीको पति चाहती हूं ॥ ८ ॥

दोहा–सुनत बचन बिहँसे ऋषय, गिरिसंभव तव देह ॥ ❋
नारदकर उपदेश सुनि, कहहु बसेउ को गेह ॥ ९० ॥ ❋

पार्वतीके ये वचन सुनकर ऋषि हँसे और बोले कि–तेरा शरीरभी तो पर्वतसेही पैदा हुआ है. जब पर्वत जड है तो तू जड कैसे न होवेगी ? और तू कह, कि नारदजीका उपदेश सुनकर कौन घरमें बसा है ? ॥ ९० ॥

दक्षसुतन्ह उपदेशिनि जाई ॥ तिन फिरि भवन न देखा आई ॥ १ ॥ ❋
चित्रकेतुकर घर उन घाला ॥ कनककशिपुकर पुनि अस हाला ॥ २ ॥ ❋

देख, नारदजीने हर्यश्व नाम दक्षके दश हजार पुत्रोंको और फिर दूसरी दफे हजार पुत्रोंको

जाकर ऐसा उपदेश दिया कि उन्होंने पीछा आकर घर देखाही नहीं ॥ १ ॥ और चित्रकेतु राजाके घरका विध्वंसभी उन्हींने किया है. तथा हिरण्यकशिपुका जो ऐसा हाल यानी विध्वंस हुआ सोभी नारदजीकाही प्रताप है ॥ २ ॥

नारदशिख जु सुनहिं नर नारी ॥ अवशि भवन तजि होहिं भिकारी ॥ ३॥
मन कपटी तन सज्जन चीन्हा ॥ आपसरिस सबहीं चह कीन्हा ॥ ४ ॥ ❋

जो नरनारी नारदजीकी शिक्षा सुनते है वे अवश्य घर छोड़कर भिखारी हो जाते है ॥ ३ ॥ नारद मनमें बड़ा मैला है और ऊपरसे बड़ा सज्जन शरीर दीखता है. वो सबको आपके जैसे बनाना चाहता है ॥ ४ ॥

तिनके बचन मानि बिश्वासा ॥ तुम चाहहु पति सहज उदासा ॥ ५ ॥ ❋
निर्गुण निलज कुबेष कपाली ॥ अकुल अगेह दिगम्बर व्याली ॥ ६ ॥ ❋

और तुमभी उन्हींके वचनपर भरोसा रखकर स्वभावहीसे उदासीन पति चाहती हो ॥ ५ ॥ अरे ! महादेवके स्वरूपका तू विचार तौ कर. वो तौ निर्गुण, निलज, बदपोशाक, कपाल धारण करनेहारा, कुलहीन, जिसके घरका ठिकाना नहीं, दिगम्बर और सांपोंके गहने पहननेवाला है ॥ ६ ॥

कहहु कवन सुख अस बर पाये ॥ भल भूलिहु ठगके बौराये ॥ ७ ॥ ❋
पंच कहें शिव सती बिबाही ॥ पुनि अवडेरि मरायनि ताही ॥ ८ ॥ ❋

सो तूही कह ऐसे बरको पाकर कौनसा सुख मिलेगा ? तू अच्छे ठगके धोखेमें आयी. तू शिवजीको जो पति चाहती है सो बिलकुल बेसमझकी बात है ॥ ७ ॥ क्योंकि शिवजीने पंचोंके कहनेसे लिहाजके मारे सतीको व्याह तौ लिया परंतु गृहस्थका बखेड़ा निबह नहीं सका तब फिर पीछी किसी कदर उसे मरवायो ॥ ८ ॥

दोहा--अब सुख सोवत शोच नहिं, भीख मांगि भव खाहिं ॥ ❋
सहज एकाकिनके भवन, कबहुँ कि नारि खटाहिं ॥ ९१ ॥ ❋

अब वे सुखसे सोते हैं और उनको कोई तरहका शोच नहीं है. आनंदसे अपनी भीख मागकर खाते है. सो तू विचार कर ले कि, जो मनुष्य सहजहीसे अकेला रहता है उसके घरमें क्या स्त्री खटा सक्ती है ? ॥ ९१ ॥

---

१ चित्रकेतु राजाकी ऐसी कथा है कि—राजाके एक करोड़ रानियां थीं पर किसीके पुत्र नहीं हुआ. राजाको इस बातकी बडी चिंता थी. एक दिन अंगिराऋषि इनके घर आये. उनसे प्रार्थना करी तब ऋषिने पुत्र दिया पर कहदिया कि, तेरे जो पुत्र होगा वह हर्ष व शोकका देनेवाला होगा. ऐसे कह यज्ञावशेष हवि पटरानी कृतद्युतिको दिया उसके पुत्र हुआ. तब दूसरी रानियोंके और इसके आपसमें द्वेष बढ़गया जिससे उन रानियोंने जहर देकर बालकको मार डाला. तब बड़ा दुःख हुआ. राजा शोकमें बूड़ रहा था तब नारद और अंगिराऋषि आये. वहां नारदजीने राजाको समझाया और पुत्रको सजीवित करके कहा कि, ये तेरे माता पिता रोते हैं तू इसका दुःख मिटादे. तब जीवने पीछा जबाब दिया कि, ये कौनसे जन्ममें मेरे माता पिता थे ? मैं तो जहां जाता हूं वहीं माता पिता आगे मिलते हैं तो मेरे कर्मानुसार संसारमें भटकता फिरता हूं. न तौ कोई माता है और न कोई पिता है. सब अपने २ कर्मानुसार इकट्ठे होजाते हैं और बिछुर जाते हैं ऐसे कहकर जीव चला गया तब नारदजीने ऐसा उपदेश दिया कि, वह राज छोड़कर तप करनेको वनमें चला गया.

२ हिरण्यकशिपुकी कयाधू नाम स्त्री थी उसको पकड़कर इंद्र ले जाताथा उसे नारदजीने छुड़ाली और अपने आश्रममें रक्खी. गर्भमें प्रल्हाद था उसे ऐसा उपदेश दिया कि वह परमवैष्णव होगया. बापका कहना नहीं माना तब पिता हिरण्यकशिपुने उसे मारना चाहा तब विष्णु भगवान्‌ने नृसिंहावतार धारण कर उसको मारा और दैत्योंका कुल खपाया.

अजहुँ मानहु कहा हमारा ॥ हम तुमकहँ बर नीक बिचारा ॥ १ ॥ ❋
अति सुंदर शुचि सुखद सुशीला ॥ गावहिं वेद जासु यश लीला ॥ २ ॥ ❋

सप्तर्षि कहते है कि–अबभी तू हमारा कहना मान ले. हमने तेरे वास्ते बहुत अच्छा वर सोचा है. ॥ १ ॥ जो वर अतिशय सुन्दर, पवित्र, सुख देनेवाला, सुशील, जिसके यशकी लीला वेद गाते है ॥ २ ॥

दूषणरहित सकलगुणरासी ॥ श्रीपति पुरवैकुंठनिवासी ॥ ३ ॥ ❋
अस बर तुमहिं मिलाउब आनी ॥ सुनत बिहँसि कह बचन भवानी ॥ ४ ॥

दूषणरहित, सर्वगुणनिधान, लक्ष्मीका पति, वैकुंठ लोकमें रहनेवाला है ॥ ३ ॥ ऐसा वर हम तुमको आन मिला देंगे फिर तू इस बैरागीके पीछे क्यों पड़ी है? ऋषियोंके ये वचन सुन हँसकर पार्वतीने कहा ॥ ४ ॥

सत्य कहहु गिरिभव तनु एहा ॥ हठ न छूट छूटै बरु देहा ॥ ५ ॥ ❋
कनकौ पुनि पखानते होई ॥ जारेउ सहज न परिहर सोई ॥ ६ ॥ ❋

कि–हे मुनिराज! आपने जो कहा कि, तेरा यह शरीर पर्वतसे पैदा हुआ है सो यह आपने सच कहा है. और इसीसे मैं कहती हूं कि चाहे मेरा यह शरीर भले छूट जाय पर मेरा हठ नहीं छुटेगा ॥ ५ ॥ सो यह बात जो पत्थरसे पैदा होता है उसमें देखीही जाती है, देखिये, सुवर्णभी पत्थरसे पैदा होता है चाहे उसको जला दो पर वह अपने स्वभावको कभी नहीं छोड़ेगा ॥ ६ ॥

नारदवचन न मैं परिहरऊं ॥ बसौ भवन उजरौ नहिं डरउँ ॥ ७ ॥ ❋
गुरुके बचन प्रतीति न जेही ॥ सपनेहुँ सुगम न सुखसिधि तेही ॥ ८ ॥ ❋

तौ फिर नारदजीके वचन कैसे छोड़ सकती हूं? चाहे घर बसे या उजरे; मैं नहीं डरती ॥ ७ ॥ जिसको गुरुके वचनपर विश्वास नहीं है उसको स्वप्नमेंभी सुखकी सिद्धि सुगम नहीं होती अर्थात् स्वप्नमेंभी सुख नहीं मिलता ॥ ८ ॥

दोहा–महादेव अवगुणभवन, विष्णु सकलगुणधाम ॥ ❋
जेहिकर मन रम जाहिसन, ताहि ताहिसन काम ॥ ९२ ॥ ❋

चाहे महादेव अवगुणोंके घर रहें और विष्णु सब गुणोंके भवन रहो; परंतु असली बात तो यह है कि, जिसका मन जिसके साथ रम रहा है उसको उसीसे काम है ॥ ९२ ॥

जो तुम मिलतेउ प्रथम मुनीशा ॥ सुनतिउँ शिख तुम्हारि धरिशीशा ॥ १ ॥
अब मैं जन्म शम्भुहित हारा ॥ को गुण दोषहि करै बिचारा ॥ २ ॥ ❋

हे मुनिराज! जो आप पहले मिल जाते तौ मैं आपकी शिक्षाको सुनकर उसको शिरसे धारण करती ॥ १ ॥ पर अब तौ क्या होवे, क्योंकि मैंने मेरा जन्म तौ महादेवके लिये गँवादिया; अब गुणदोषका विचार कौन करै? ॥ २ ॥

जो तुम्हरे हठ हृदय बिशेषी ॥ रहि न जाइ बिनु किये बरेषी ॥ ३ ॥ ❋
तौ कौतुकिअन्ह आलस नाहीं ॥ बर कन्या अनेक जगमाहीं ॥ ४ ॥ ❋

पार्वतीने ऋषियोंसे कहा कि–जो तुम्हारे मनमें अत्यंतही हठ है और जो तुमसे वर ढूंढे

विना रहा नहीं जाता ॥ ३ ॥ तौ मेरा कहना सुनो, जो कौतुकी होते है उनको आलस्य तौ होताही नहीं सो आप कहीं दूसरी जगह पधारो और वहां यह तजबीज लगाओ; क्या जगत्में वर और कन्या हम एकही हैं ? जिससे आप यहां इतना हठ करते हो; जगत्में वर और कन्या बहुतही है ॥ ४ ॥

जन्मकोटिलगि रगर हमारी ॥ बरौं शम्भु नतु रहौं कुमारी ॥ ५ ॥ *
तजौं न नारदकर उपदेशू ॥ आप कहहिँ शतबार महेशू ॥ ६ ॥ *

और हमारी तौ इसी जन्ममें क्या करोड़ो जन्मोंतक यही आड़ है कि वरूंगी जब तौ महादेवकोही वरूंगी; नहीं तौ चाहे कौंरी भले रह जाऊं ॥ ५ ॥ चाहे खुद महादेव आप आकर सौ बेर क्यों न कह देवें ? पर नारदजीका उपदेश कभी नहीं छोडूंगी ॥ ६ ॥

मैं पा परौं कहै जगदम्बा ॥ तुम गृह गवनहु भयउ बिलम्बा ॥ * ७ ॥ *
देखि प्रेम बोले मुनि ज्ञानी ॥ जय जय जय जगदंब भवानी ॥ ८ ॥ *

पार्वती कहती है कि–हे मुनि ! मैं आपके चरणोंमें गिरती हू.आप कृपा करके अपने घर पधारो. आपको बहुत देरी हो गयी है ॥ ७ ॥ पार्वतीका ऐसा दृढ़ प्रेम देखकर ज्ञानी मुनि बोले कि–हे जगदंबा भवानी ! आपकी जय हो ! जय हो ! ! जय हो ! ! ! ॥ ८ ॥

दोहा–तुम माया भगवान शिव, सकलजगतपितुमात ॥ *
नाइ चरण शिर मुनि चले, पुनि पुनि हर्षित गात ॥ ९३ ॥ *

हे भवानी ! आप तौ मायास्वरूप हो और महादेव भगवान् हैं. आप दोनों सब जगत्के माता पिता हो ऐसे कह चरणोंमें शिर नवाकर सप्तर्षि वारंवार पुलकित शरीर होकर वहांसे चले ॥ ९३ ॥

जाइ मुनिन हिमवन्त पठाये ॥ करि बिनती गिरिजहिँ गृह लाये ॥ १ ॥ *
बहुरि सप्तऋषि शिवपहँ जाई ॥ कथा उमाकी सकल सुनाई ॥ २ ॥ *

मुनियोंने जाकर हिमाचलको पार्वतीके पास भेजा और हिमाचल बिनती करके पार्वतीको घर ले आया ॥१॥ फिर सप्तऋषि शिवजीके पास गये. और वहां जाकर पार्वतीकी सारी कथा सुनायी ॥२॥

भये मगन शिव सुनत सनेहा ॥ हर्षि सप्तऋषि गवने गेहा ॥ ३ ॥ *
मन थिर करि तब शम्भु सुजाना ॥ लगे करन रघुनायक ध्याना ॥४॥ *

पार्वतीका वचन सुनकर शिवजी परमानन्दमग्न हुए और सप्तर्षि आनन्दित होकर अपने घर गये ॥ ३ ॥ उस समय सुजान शिवजी मनको स्थिर करके रामचन्द्रजीका ध्यान करने लगे ॥ ४ ॥

तारक असुर भयेउ तेहिकाला ॥ भुज प्रताप बल तेज बिशाला ॥ ५ ॥ *
तेहिँ सब लोक लोकपति जीते ॥ भये देव सुख सम्पति रीते ॥ ६ ॥ *

उस समयमें तारक नाम दैत्य प्रगट हुआ कि जिसकी भुजाका प्रताप, बल और तेज बड़ा विपुल था ॥ ५ ॥ उसने सब लोक और लोकपालोंको जीत लिया था. और देवता सुख व संपदाहीन होगये थे ॥ ६ ॥

अजर अमर सो जीति न जाई ॥ हारे सुर करि बिबिधि लराई ॥ ७ ॥ ❋
तब बिरंचिसन जाइ पुकारे ॥ देखे बिधि सब देव दुखारे ॥ ८ ॥ ❋

वो दैत्य अजर और अमर था इसलिये वो किसीसे जीता नहीं जा सकता था. जब देवता लोग उससे कई बेर युद्ध कर करके हार गये ॥ ७ ॥ तब ब्रह्माजीके पास जाकर पुकारे तौ ब्रह्माजीने सब देवताओंको दुखी देखकर ॥ ८ ॥

दोहा—सबसन कहा बुझाइ बिधि, दनुजनिधन तब होइ ॥ ❋
शम्भुशुक्रसम्भूत सुत, इहि जीतै रण सोइ ॥ १४ ॥ ❋

सबसे समझाकर कहा कि—वह दैत्य तौ तब मारा जायगा जब महादेवके वीर्यसे पुत्र पैदा होगा, और वही इसको युद्धमें जीतेगा ॥ १४ ॥

मोर कहा सुनि करहु उपाई ॥ होइहि ईश्वर करिहि सहाई ॥ १ ॥ ❋
सती जो तजी दक्षमख देहा ॥ जनमी जाइ हिमाचलगेहा ॥ २ ॥ ❋

ब्रह्माजीने देवताओंसे कहा कि—तुम सुनकर मेरा कहा उपाय करो सो तुम्हारा काम बन जायगा, और परमेश्वर तुम्हारे काममें मदद देगा ॥ १ ॥ सतीने जो दक्षके यज्ञमें अपना शरीर त्याग दिया था वह अब हिमाचलके घर जाकर पैदा हुई है ॥ २ ॥

तेहिँ तप कीन्ह शंभु पति लागी ॥ शिव समाधि बैठे सब त्यागी ॥ ३ ॥ ❋
यदपि यहै असमंजस भारी ॥ तदपि बात यक सुनहु हमारी ॥ ४ ॥ ❋

और उसने शंभु पति मिलनेके वास्ते बड़ा कठिन तप किया है और महादेव सब छोंड़ छांड़कर समाधि लगाकर बैठे हैं ॥ ३ ॥ सो यद्यपि यह बात है तौ बड़ी बेजा तथापि मैं तुमको एक बात कहताहूं सो सुनो ॥ ४ ॥

पठवहु काम जाइ शिवपाहीं ॥ करै क्षोभ शंकर मनमाहीं ॥ ५ ॥ ❋
तब हम जाइ शिवहिँ शिर नाई ॥ करवाउब बिबाह बरिआई ॥ ६ ॥ ❋

तुम जाकर महादेवकेपास कामदेवको भेजो सो वह वहां जाकर महादेवके मनमें क्षोभ उत्पन्न करे ॥ ५ ॥ जब महादेवके मनमें कुछ विकार उत्पन्न होगा तब हम उनके पास जा, शिर नवाकर, बलात्कारसे विवाह कर देंगे ॥ ६ ॥

यहि बिधि भले देवहित होई ॥ मति अति नीक कही सब कोई ॥ ७ ॥ ❋
अस्तुति सुरन्ह कीन्ह अति हेतू ॥ प्रगटेउ बिषम बाण झषकेतू ॥ ८ ॥ ❋

इसतरह तौ भले देवताओंका हित होजावे और दूसरा तौ कोई उपाय दिखता नहीं. यह बात सुनकर सब किसीने कहा कि, यह सलाह तौ बहुत अच्छी है ॥ ७ ॥ फिर देवताओंने बड़ी प्रीतिके साथ कामदेवकी स्तुति करी तब मकरध्वज कामदेव प्रगट हुआ, कि जिसके बाण बड़े विषम हैं ॥ ८ ॥

दोहा—सुरन कही निज बिपति सब, सुनि मन कीन्ह बिचार ॥ ❋
शंभु बिरोध न कुशल मोहिँ, बिहँसि कहेउ अस मार ॥ १५ ॥ ❋

देवताओंने अपनी आपदाके सब समाचार कहे उन्हें सुनकर कामदेवने अपने मनमें विचार करके हँसकर ऐसे कहा कि-महादेवजीसे विरोध करनेसे मुझको कुशल तौ है नहीं ॥ ९५ ॥

तदपि करब मैं काज तुम्हारा ॥ श्रुति कह परम धर्म उपकारा ॥ १ ॥ *
परहित लागि तजै जो देही ॥ सन्तत सन्त प्रशंसहिं तेही ॥ २ ॥ *

तथापि आपका काम मैं जरूर करूंगा; क्योंकि श्रुति (वेद) कहते है कि उपकार करनेके बराबर दूसरा कोईभी धर्म नहीं है ॥ १ ॥ जो मनुष्य दूसरेके भलेके वास्ते अपना शरीर त्याग देते है तौ सज्जनलोग उनकी सदा प्रशंसा करते हैं ॥ २ ॥

अस कहि चलेउ सबहिं शिर नाई ॥ सुमन धनुषकर सहित सहाई ॥ ३ ॥ *
चलत मार अस हृदय बिचारा ॥ शिव बिरोध ध्रुव मरण हमारा ॥ ४ ॥ *

ऐसे कह, सबको शिर नवाकर, हाथमें पुष्पमय धनुष ले, सब सहायोंके साथ कामदेव वहांसे चला ॥ ३ ॥ जातेसमय कामदेवने अपने मनमें ऐसा विचार किया कि महादेवके विरोधसे मरना तौ जरूर है तौ फिर डरना क्यों ? ॥ ४ ॥

तब आपन प्रभाव बिस्तारा ॥ निजबश कीन्ह सकल संसारा ॥ ५ ॥ *
कोपेउ जबहिं बारिचरकेतू ॥ क्षणमहँ मिटे सकल श्रुतिसेतू ॥ ६ ॥ *

ऐसा विचार कर, उसने जातेही अपना प्रताप फैलाया कि जिससे सारा संसार एकदम उसके वश होगया ॥ ५ ॥ जब कामदेवने कोप किया तौ एक क्षणभरमें सब वेदकी मर्याद टूट गयी ॥ ६ ॥

ब्रह्मचर्य व्रत संयम नाना ॥ धीरज धर्म ज्ञान विज्ञाना ॥ ७ ॥ *
सदाचार जप योग बिरागा ॥ सभय विवेककटक सब भागा ॥ ८ ॥ *

ब्रह्मचर्य चान्द्रायण आदि व्रत, अनेक प्रकारके संयम, धीरज, धर्म, ज्ञान (शास्त्रजन्यपरोक्षज्ञान), विज्ञान (साक्षात्कार ज्ञान), ॥ ७ ॥ सदाचार, जप, योग और वैराग्य यह सारी ज्ञानकी फौज भयभीत होकर भाग गयी ॥ ८ ॥

छंद-भागे विवेक सहायसहित सो सुभट संयुग महि मुरे ॥ *
सद्ग्रन्थ पर्वतकन्दरनमहँ जाइ तेहि अवसर दुरे ॥ *
होनिहार का करतार को रखवार जग खरभर परा ॥ *
दुइमाथ केहि रतिनाथ जेहि कहँ कोपिकर धनु शर धरा ॥ ३ ॥ *

ज्ञान अपने सहायोंके साथ भाग गया; क्योंकि उसके जो संयम, व्रत, योग, वैराग्य आदि सुभट थे वे सब उससमय युद्धमेंसे भागकर सद्ग्रंथरूप पर्वतोंकी गुफाओंके अंदर जाकर छिप गये थे. यानी ज्ञान वैराग्य आदि सब ग्रंथोंमें लिखे रह गयेथे. प्रत्यक्ष देखनेमें नहीं आते थे. उस समय 'हे कर्तार ! प्रभु ! क्या होना है ! और कौन बचावेगा ?' यह खरभराहट सब जगतमें पड़ गयी और लोग कहने लगे कि-अरे ! दो माथे किसके हैं कि जिसपर क्रोध करके कामदेवने अपने हाथमें धनुषबाण लिये हैं ? ॥ ३ ॥

दोहा—जे सजीव जग अचर चर, नारि पुरुष अस नाम ॥ *
ते निज निज मर्याद तजि, भये सकल बश काम ॥ ९६ ॥ *

जगत्में जो स्थावर जंगम चेतन मात्र थे और जिनका स्त्री-पुरुष ऐसा नाम था वे सब अपनी अपनी मर्यादको छोड़कर कामदेवके वश होगये ॥ ९६ ॥

सबके हृदय मदन अभिलाषा ॥ लता निहारि नवहिँ तरुशाषा ॥ १ ॥ *
नदी उमँगि अंबुधिकहँ धाई ॥ संगम करहिँ तलावतलाई ॥ २ ॥ *

सबके मनमें कामदेव ऐसा व्याप्त होगया कि कुछ कहनेमें नहीं आता लताओंको देखकर वृक्षोंकी शाखायें नवने लगीं ॥ १ ॥ नदियां उमँग २ कर समुद्रकी ओर दौड़ने लगीं. तालाव और तलाइयां संगम करने लगीं ॥ २ ॥

जहँ अस दशा जड़नकी बरणी ॥ को कहिसकै सचेतनकरणी ॥ ३ ॥ *
पशु पक्षी नभजलथलचारी ॥ भये कामबश समय बिसारी ॥ ४ ॥ *

जहां जड़ पदार्थोंकीभी यह दशा है वहां सचेतन जीवोंकी करनी तौ कौन कह सकता है ? ॥ ३ ॥ जितने नभचर, थलचर, जलचर, पशु पक्षी हैं वे सब समय भूलकर कामके वश हो गये है ॥ ४ ॥

मदनअन्ध व्याकुल सबलोका ॥ निशि दिन नहिँ अवलोकहिँ कोका ५
देव दनुज नर किन्नर व्याला ॥ प्रेत पिशाच भूत बेताला ॥ ६ ॥ *

सब लोग कामान्ध और व्याकुल हो गये है, चकवा रात्रिमें स्त्रीके पास नहीं जाता यह मर्यादा है पर वहभी रात्रि और दिनको देखना भूल गया ॥ ५ ॥ देवता, दानव, मनुष्य, किंपुरुष, सर्प, प्रेत, पिशाच, भूत, और बेताल ॥ ६ ॥

इनकी दशा न कहेउँ बखानी ॥ सदा कामके चेरे जानी ॥ ७ ॥ *
सिद्ध बिरक्त महामुनि योगी ॥ तेपि कामबश भये बियोगी ॥ ८ ॥ *

इनकी दशा तौ कहीही नहीं जा सकती; क्योंकि ये तौ सदाके कामके चेले हैं तौ फिर उस समयकी दशा तौ कैसे कही जाय ? ॥ ७ ॥ जो सिद्ध, विरक्त, महामुनि, योगी थे वेभी योग साधना तौ भूल गये और कामके वश होगये ॥ ८ ॥

छंद—भये कामबश योगीश तापस पामरनकी को कहै ॥ *
देखहिँ चराचर नारिमय जे ब्रह्ममय देखत रहै ॥ *
अबला बिलोकहिँ पुरुषमय जग पुरुष सब अबलामयं ॥ *
दुइ दण्ड भरि ब्रह्मांड भीतर कामकृत कौतुक अयं ॥ ४ ॥ *

जहां योगीराज और तपस्वी लोगभी कामके वश होगये वहां पामर यानी तुच्छ पुरुषोंकी तौ बात कौन कहे ? जो ब्रह्म यानी चराचर जगत्को ब्रह्ममय देखते रहे वेभी सब चराचर जगत्को कामवश होकर स्त्रीमय देखने लगे. स्त्रियां तौ सब जगत्को पुरुषमय देखती हैं और पुरुष

सब जगत्को स्त्रीमय देखने लगे है. कामदेवका कियाहुआ यह कौतुक ब्रह्मांडके भीतर दो घड़ीतक अखंड बना रहा ॥ ४ ॥

सोरठा–धरी न काहू धीर, सबके मन मनसिज हरे ॥ ❋
जेहि राखे रघुबीर, ते उबरे तेहि कालमहँ ॥ १४ ॥ ❋

कामदेवने सबके मन ऐसे हर लिये कि किसीके मनमें धीरज नहीं रही; उस अवसरमें वेही बचे कि जिनको प्रभुने बचा लियाथा ॥ १४ ॥

उभय घरी अस कौतुक भयऊ ॥ जबलगि काम शंभुपहँ गयऊ ॥ १ ॥ ❋
शिवहिँ बिलोकि सशंकेउ मारू ॥ भयउ यथास्थित सब संसारू ॥२॥ ❋

जबलों कामदेव महादेवजीके पास गया तबलों दो घड़ीतक ऐसा कौतुक हुआ ॥१॥ महादेवके देखतेही कामदेव मनमें डरा और सब लोग पीछे यथास्थित होगये ॥ २ ॥

भये तुरत जग जीव सुखारे ॥ जिमिमद उतरिगये मतवारे ॥ ३ ॥ ❋
रुद्रहिं देखि मदन भय माना ॥ दुराधर्ष दुर्गम भगवाना ॥ ४ ॥ ❋

जगत्के सब जीव जंतु तुरंत कैसे सुखी होगये कि जैसे मतवारेका मद उतरनेपर वह सुखी हो जाता है ॥ ३ ॥ महादेवको देखकर कामदेव मनमें डरा; क्योंकि भगवान् महादेवजीका तेज अग्निके समान दुराधर्ष है और वे तो गहन वनके समान अति दुर्गम हैं ॥ ४ ॥

फिरत लाज कछु कहि नहिँ जाई ॥ मरण ठानि मन रचेसि उपाई ॥५॥ ❋
प्रगटेसि तुरत रुचिर ऋतुराजा ॥ कुसुमित नव तरुराज बिराजा ॥ ६ ॥ ❋

उसको महादेवके आगे फिरते ऐसी लज्जा आती थी कि कुछ कह नहीं सकते; परंतु आखिर उसने मनमें मरना विचार कर उपाय रचा ॥ ५ ॥ उपाय रचतेही तुरंत सुन्दर वसंतऋतु प्रगट हुई, जिसमें सुन्दर फूलेहुए नवीन अच्छे अच्छे वृक्षराज शोभायमान हो रहे है ॥ ६ ॥

बन उपबन बापिका तड़ागा ॥ परम सुभग सब दिशाबिभागा ॥ ७ ॥ ❋
जहँ तहँ जनु उमँगत अनुरागा ॥ देखि मुयेहु मन मनसिज जागा॥८॥ ❋

वन, उपवन, बावली और तालाव इनसे दिशाओंके सब प्रान्त परम रमणीय हो रहे हैं ॥ ७ ॥ जहां तहां मानों प्रेम उमग रहा है कि जिसको देखकर मानों मुर्दोंके मनमेंभी कामदेव जाग गया है तब सजीवकी तो बातही क्या ? ॥ ८ ॥

छंद–जागेउ मनोभव मुए मन बन सुभगता न परै कही ॥ ❋
शीतल सुगंध सुमंद मारुत मदन अनलसखा सही ॥ ❋
बिकसे सरन्हि बहुकंज गुंजत पुंज मंजुल मधुकरा ॥ ❋
कलहंस पिक शुक सरस रव करि गान नाचहिँ अप्सरा ॥ ५ ॥

वन और उपवनोंकी ऐसी रमणीयता बढ़ी है कि, जिसको देखकर मुर्दोंके मनमेंभी कामदेव जाग गया है अतएव वह कही नहीं जाती; जैसे अग्निका मित्र वायु है ऐसे कामानलका सखा शीतल सुगंध मंद बयार है सो वो चलने लगी. सरोवरोंमें अनेकप्रकारके कमल खिल रहे हैं.

उनपर बैठेहुए भ्रमरोंके झुंड मधुर २ गुंज रहे है; हंस,कोकिला, तोता, मैना ये सब सुन्दर मधुर स्वरसे गान कर रहे हैं. अप्सरायें नृत्य कर रही हैं ॥ ५ ॥

दोहा–सकल कला करि कोटि बिधि, हारेउ सेनसमेत ॥ *
चली न अचल समाधि शिव, कोपेउ हृदयनिकेत ॥ ९७ ॥ *

कामदेव अपनी सब कलाकौशलता करोड़ों तरहसे करके सेनासहित हार गया तथापि महादेवकी अखंड समाधि नहीं डिगी तब तो उसको बड़ा क्रोध हुआ ॥ ९७ ॥

देखि रसाल बिटप बर शाखा ॥ तेहिपर चढ़ेउ मदन मन माखा ॥ १ ॥ *
सुमनचाप निजशर सन्धाने ॥ अति रिस ताकि श्रवणलगि ताने ॥२॥ *

सो एक सुन्दर आमकी प्रफुल्लित डारको देखकर मनमें क्रोध करता हुआ कामदेव उसके ऊपर चढ़ा ॥ १ ॥ पुष्पमय धनुषमें अपना बाण साधा और बड़ा रोष कर आंखके कानतक धनुषको खैंचा ॥ २ ॥

छांड़े बिषम बिशिख उर लागे ॥ छूटि समाधि शम्भु तब जागे ॥ ३ ॥ *
भयेउ ईशमन क्षोभ बिशेखी ॥ नयन उघारि सकल दिशि देखी ॥ ४ ॥ *

और अपने विषम बाणको छोंड़ा सो वह सीधा महादेवजीके हृदयके भीतर जा लगा, तब महादेवजीकी समाधि छूट गयी और भोलानाथ जाग गये ॥ ३ ॥ महादेवजीके मनमें बड़ा क्षोभ हुआ तब अपने आंख उघारकर चारों तर्फ देखा ॥ ४ ॥

सौरभ पल्लव मदन बिलोका ॥ भयेउ कोप कम्पेउ त्रयलोका ॥ ५ ॥ *
तब शिव तीसर नयन उघारा ॥ चितवत काम भयउ जरि छारा ॥६॥ *

तौ एक आमके कोमल पल्लवपर बैठा हुआ कामदेव नजर आया. उसको देखतेही आपको बड़ा क्रोध हुआ जिससे तीनों लोक कांपने लगे ॥ ५ ॥ तब महादेवजीने अपना तीसरा नेत्र उघाड़कर कामदेवकी ओर देखा सो दृष्टि पड़तेही कामदेव जल बल भस्म होगया ॥ ६ ॥

हाहाकार भयउ जग भारी ॥ डरपे सुर भये असुर सुखारी ॥ ७ ॥ *
समुझि कामसुख शोचहिँ भोगी ॥ भये अकंटक साधक योगी ॥ ८ ॥ *

उससमय जगतमें बड़ा भारी हाहाकार हुआ; देवता तौ इस बातसे डरे और दैत्य बड़े प्रसन्न हुए ॥ ७ ॥ कामी लोग कामसुखको कामाधीन समझकर उसके देवताका नाश होनेसे शोच करने लगे. साधक योगीलोग वैरी कामके जलनेसे निष्कंटक हुए ॥ ८ ॥

छंद–योगी अकंटक भये पतिगति सुनत रति मूर्च्छित भई ॥ *
रोदति बदति बहुभांति करुणा करति शंकरपहँ गई ॥ *
अतिप्रेम करि बिनती बिबिधबिधि जोरि कर सन्मुख रही ॥ *
प्रभु आशुतोष कृपालु शिव अबला निरखि बोले सही ॥ ६ ॥ *

योगीजन निष्कंटक हुए; पर अपने पति कामदेवकी यह दशा सुनकर उसकी स्त्री रति मूर्छित होगयी. फिर सचेत होकर रोती विलापती अनेक प्रकारसे करुणा करती महादेवके पास गयी. वहां जाकर उसने बड़े प्रेमके साथ महादेवजीसे अनेक प्रकारसे प्रार्थना करी. फिर हाथ जोड़कर

महादेवके सामने खडी हुई. तब तुरंत प्रसन्न होनेवाले प्रभु रतिको रोती देख, दया करके बोले ॥६॥

दोहा–अबते रति तव नाथकर, होइहि नाम अनंग ॥ ❀
बिनु बपु व्यापहि सबहिँ पुनि, सुनु निगमिलनप्रसंग ॥ ९८ ॥

कि–हे रति ! अबसे तेरे पतिका नाम अनंग होगा (अनंग उसे कहते है जिसके शरीर न होवे) और यह शरीर विनाही सबमें व्याप सकेगा. अब तू इससे कैसे मिलेगी वो प्रसंग कहता हूं सो सुन ॥ ९८ ॥

जब यदुबंश कृष्णअवतारा ॥ होइहि हरण महा महिभारा ॥ १ ॥ ❀
कृष्णतनय होइहि पति तोरा ॥ बचन अन्यथा होइ न मोरा ॥ २ ॥ ❀

जब भूमिका भारी भार उतारनेके लिये यादवकुलमें श्रीकृष्णअवतार होगा ॥ १ ॥ तब वहां तेरा पति श्रीकृष्णका पुत्र होगा. प्रभु कहते है कि–हे रति ! मेरे वचनमें फर्क नहीं पड़ेगा ॥ २ ॥

रति गवनी सुनि शंकरबानी ॥ कथा अपर अब कहौं बखानी ॥ ३ ॥ ❀
देवन समाचार जब पाये ॥ ब्रह्मादिक वैकुण्ठ सिधाये ॥ ४ ॥ ❀

महादेवके ये वचन सुनकर रति वहांसे चली गयी. अब दूसरी कथा कहता हूं सो सुनो ॥ ३ ॥ जब ब्रह्मादिक देवताओंको ये समाचार मिले तब वे सब वैकुंठको चले ॥ ४ ॥

सब सुर विष्णुबिरंचिसमेता ॥ गये जहां शिव कृपानिकेता ॥ ५ ॥ ❀
पृथक पृथक तिन कीन्ह प्रशंसा ॥ भये प्रसन्न चन्द्रअवतंसा ॥ ६ ॥ ❀

वहांसे विष्णुभगवानको साथ ले ब्रह्मा और विष्णुभगवानके साथ सब देवता वहां गये कि जहां दयानिधि श्रीशिवजी विराजते थे ॥ ५ ॥ उन्होंने जाकर महादेवकी अलग अलग स्तुति करी; जिससे चंद्रशेखर प्रभु परम प्रसन्न हुए ॥ ६ ॥

बोले कृपासिंधु वृषकेतू ॥ कहहु अमर आयहु केहि हेतू ॥ ७ ॥ ❀
कह बिधि तुम प्रभु अन्तर्यामी ॥ तदपि भक्तिबश बिनवौं स्वामी ॥ ८ ॥ ❀

और वे कृपासिंधु प्रभु कृपा करके बोले कि–हे विष्णु आदि देवताओ ! कहो,आप क्यों आये हो? ॥ ७ ॥ तब ब्रह्माजीने कहा कि–हे प्रभु ! आप अन्तर्यामी हो सो आपसे कौन बात छिपी है ? तथापि हे स्वामी ! भक्तिवश होकर जो मैं विनती करता हूं सो सुनो ॥ ८ ॥

दोहा–सकल सुरनके हृदय अस, शंकर परम उछाह ॥ ❀
निजनयनन देखा चहहिँ, नाथ तुम्हार बिबाह ॥ ९९ ॥ ❀

हे प्रभु ! सब देवताओंके मनमें इस बातका परम उत्साह है कि, हम महादेवजीका व्याह देखें सो ये सब अपनी आंखोंसे आपका विवाह देखना चाहते हैं ॥ ९९ ॥

यह उत्सव देखिय भरि लोचन ॥ सो कछु करिय मदनमदमोचन ॥ १ ॥ ❀
काम जारि रतिकहँ बर दीन्हा ॥ कृपासिन्धु यह अति भल कीन्हा ॥ २ ॥ ❀

हे कामदेवके मदको छुड़ानेवाले प्रभु ! जिसतरह हमलोग इस उत्सवको नेत्रभर कर देखें ऐसा कुछ उपाय करो ॥ १ ॥ ब्रह्माजीने कहा कि–हे कृपासिन्धु ! आपने कामदेवको भस्म करके जो रतिको वरदान दिया वह बहुत अच्छा किया ॥ २ ॥

सांसति करि पुनि करहिँ पसाऊ ॥ नाथ प्रभुनकर सहजसुभाऊ ॥ ३ ॥
पारवती तप कीन्ह अपारा ॥ करहु तासु अब अंगीकारा ॥ ४ ॥ ❀

हे नाथ ! प्रभुनका यह सहजस्वभावही है कि वे शासन करके फिर तुरंत कृपा कर देते हैं ॥ ३ ॥ हे नाथ ! पार्वतीने आपके वास्ते बड़ी भारी तपस्या की है सो अब आप उसको अंगीकार करो ॥ ४ ॥

सुनि विधिबचन समुझि प्रभुबानी ॥ ऐसो होउ कहा सुख मानी ॥ ५ ॥ ❀
तब देवन दुन्दुभी बजाई ॥ बर्षि सुमन जय जय सुरसाँई ॥ ६ ॥ ❀

ब्रह्माजीके वचन सुन, मनमें सुख मान, उनका अभिप्राय समझकर प्रभुने मधुर वाणीसे कहा कि–हे ब्रह्माजी ! ऐसाही होगा ॥ ५ ॥ तब देवताओंने दुंदुभी (नगारा) बजाई. फूल बरसाये और कहा कि–हे सुरनाथ ! आपकी जय हो ! जय हो ! ! ॥ ६ ॥

अवसर जानि सप्तऋषि आये ॥ तुरतहि बिधि गिरिभवन पठाये ॥ ७ ॥ ❀
प्रथम गये जहँ रहीं भवानी ॥ बोले बचन मधुर छलसानी ॥ ८ ॥ ❀

अवसर समझकर उसवक्त वेही सप्तऋषि आये, उन्हें देखकर ब्रह्माजीने उनको तुरंत हिमाचलके घर पठाया ॥ ७ ॥ वे ऋषि पहले वहां गये, जहां पार्वती विराजी थीं. पार्वतीके पास जाकर उन्होंने कपट-भरी मधुर वाणी कही ॥ ८ ॥

दोहा–कहा हमार न सुनेहु तब, नारदकर उपदेश ॥ ❀
अब भा झूंठ तुम्हार प्रण, जारेउ काम महेश ॥ १०० ॥ ❀

कि–हमने पहले तुझसे जो कहा था वह हमारा कहना तूने नारदजीके उपदेशसे नहीं माना था परंतु अब तुम्हारा प्रण बिलकुल झूंठा गया है; क्योंकि महादेवजीने कामदेवको जला दिया है ॥ १०० ॥

सुनि बोली मुसकाय भवानी ॥ उचित कहेउ मुनिबर बिज्ञानी ॥ १ ॥ ❀
तुम्हरे जान काम हर जारा ॥ अबलगि शंभु रहे सविकारा ॥ २ ॥ ❀

सप्तर्षियोंके ये समाचार सुन, हँसकर पार्वतीने कहा कि–हे महाज्ञानी मुनिराजो ! आपने ठीक कहा ॥ १ ॥ आपकी समझमें तौ यह बात रही कि महादेवजीने कामदेवको अब भस्म किया अर्थात् अबतक महादेवजी विकारसहित थे ॥ २ ॥

हमरे जान सदाशिव योगी ॥ अज अनवद्य अकाम अभोगी ॥ ३ ॥ ❀
जो मैं शिव सेयेउँ अस जानी ॥ प्रीतिसमेत कर्म मन बानी ॥ ४ ॥ ❀

परंतु हमारी समझमें तौ महादेवजी सदाके योगी, अजन्मा, दूषणरहित, निष्काम और भोगरहित हैं ॥ ३ ॥ जो मैंने महादेवको ऐसे समझकर, मन कर्म और वाणीसे प्रीतिके साथ सेवा की है ॥ ४ ॥

तौ हमार प्रण सुनहु मुनीशा ॥ करिहहिँ सत्य कृपानिधि ईशा ॥ ५ ॥ ❀
तुम जो कहा हर जारेउ मारा ॥ सो अति बड़ अबिबेक तुम्हारा ॥ ६ ॥ ❀

तौ हे मुनिराजो ! सुनो, कृपानिधान श्रीशिवजी हमारा प्रण अवश्य सत्य करेंगे ॥ ५ ॥ और आपने जो कहा कि महादेवने कामदेवको भस्म कर दिया है सो वह आपकी बड़ी भूल है ॥ ६ ॥

तात अनलकर सहजसुभाऊ ॥ हिम तेहि निकट जाइ नहि काऊ ॥ ७ ॥
गये समीप सो अवशि नसाई ॥ जिमि सँपाति निजपक्ष गँवाई ॥ ८ ॥ *

क्योंकि, हे मुनि ! अग्निका यह सहजस्वभाव है कि, हिम यानी बर्फ या सर्दी किसी कदर उसके निकट नहीं जा सक्ती ॥ ७ ॥ और जो उसके समीप जाता है अवश्य वो नाश हो जाता है; जैसे संपातिने[1] सूरजके समीप जाकर अपनी पंख गँवाया ॥ ८ ॥

दोहा--हिय हरषे मुनिबचन सुनि, देखि प्रीति बिश्वास ॥ *
चले भवानिहिँ नाइ शिर, गये हिमाचलपास ॥ १०१ ॥ *

पार्वतीकी अतिशय प्रीति और भरोसा देख, उनके वचन सुनकर मुनि मनमें बड़े प्रसन्न हुए. और पार्वतीको सिर नवाकर वहांसे चले सो हिमाचलके पास गये ॥ १०१ ॥

सब प्रसंग गिरिपतिहिँ सुनावा ॥ मदनदहन सुनि अति दुख पावा॥१॥ *
बहुरि कहेउ रतिकर बरदाना ॥ सुनि हिमवन्त बहुत सुख माना ॥ २ ॥ *

सप्तर्षियोंने हिमाचलको कामदहनका सब प्रसंग सुनाया, सो कामदेवके; जलनेके समाचार सुनकर हिमाचल बड़ा दुखी हुआ ॥ १ ॥ तब ऋषियोंने फिर रतिके वरदानके समाचार कहे सो सुनकर हिमाचलने बड़ा सुख माना ॥ २ ॥

हृदय बिचारि शंभुप्रभुताई ॥ सादर मुनिबर लिये बुलाई ॥ ३ ॥ *
सुदिन सुनखत सुघरी सुहाई ॥ बेगि वेदबिधि लगन धराई ॥ ४ ॥ *

हिमाचलने महादेवजीकी प्रभुताको मनमें विचारके मुनिराजोंको आदरके साथ बुलाया ॥३॥ फिर शुभ दिन, शुभ नक्षत्र, व शुभ घड़ी देखकर जल्दी वेदकी रीतिसे शुभ लग्न धराया ॥ ४ ॥

पत्री सप्तऋषिन सोइ दीन्ही ॥ गहि पद बिनय हिमाचल कीन्ही ॥ ५ ॥ *
जाइ बिधिहिँ तिन दीन्ह सो पाती ॥ बांचत प्रीति न हृदय समाती॥६॥ *

और वह पत्री सप्तऋषियोंको दी और ऋषियोंके पांव पकड़कर हिमाचलने प्रार्थना करी ॥ ५ ॥ तब सप्तर्षियोंने वह पत्री ले जाकर ब्रह्माजीको दी उस पत्रीको पढ़कर ब्रह्माजीके हृदयमें आनन्द समाता नहीं था ॥ ६ ॥

लगन बांचि अज सबहिँ सुनाई ॥ हर्षे मुनि सब सुरसमुदाई ॥ ७ ॥
सुमनवृष्टि नभ बाजन बाजे ॥ मंगलकलश दशहु दिशि साजे ॥ ८ ॥ *

ब्रह्माजीने लग्न पढ़कर सबको सुनाया तब सब देववृंद और मुनि परम प्रसन्न हुए ॥ ७ ॥ फूलोंकी वर्षा हुई. आकाशमें बाजे बजने लगे. दशों दिशाओंमें मंगलके कलश साजे गये ॥ ८ ॥

---

१ संपाति और जटायु ये दोनों भाई थे. इनको उड़नेका बड़ा घमंड था. एक समय ये दोनों सूरजकेसाथ उड़ने लगे. ऊपर जाते जाते ये इतने ऊंचे चले गये कि गंगा वगैरे नदियां दूरके कारण पतले धागेसी दीखने लगीं. फिर सूरजकी गर्मीसे जटायु व्याकुल होगया तब संपातिने अपने पंखोंसे छाया करके उसको बचा लिया परंतु सूरजकी गर्मीसे संपातिके पंख जलगये जिससे संपाति तो विंध्यपर्वतके ऊपर निशाकर मुनिके आश्रममें पड़ा और जटायु दंडकारण्यमें गिरा सो रामचन्द्रजीसे पंचवटीमें मिला था और सीताके वास्ते रावणके हाथ मारा गया था. संपाति हनूमान् आदि वानरोंको मिला था. इसने सीताका पता बतलाया था.

दोहा-लगे सँवारन सकल सुर, बाहन बिबिध बिमान ॥ ❋
होहिँ सगुन मंगल सुभग, करहिँ अप्सरा गान ॥ १०२ ॥ ❋

देवतालोग नाना प्रकारके विमान और वाहन सँवारने लगे. शुभकारी मांगलिक शकुन हो रहे है. अप्सरायें गान कर रही हैं ॥ १०२ ॥

शिवहिँ शम्भुगण करहिँ सिंगारा ॥ जटा मुकुट अहिमौर सँवारा ॥ १ ॥ ❋
कुण्डल कंकण पहिरे ब्याला ॥ तन बिभूति पट केहरि छाला ॥ २ ॥ ❋

महादेवके गण महादेवके श्रृंगार साज रहे है, जटाका तो मुकुट बनाया है, सर्पका मौर बनाया है ॥ १ ॥ सर्पोंकेही कुंडल और कंकण पहिराये हैं, शरीरमें विभूति रमाई है, बाघांबरका वस्त्र बनाया है ॥ २ ॥

शशि ललाट सुन्दर शिर गंगा ॥ नयन तीनि उपवीत भुजंगा ॥ ३ ॥ ❋
गरल कण्ठ उर नरशिरमाला ॥ अशिववेष शिवधाम कृपाला ॥ ४ ॥ ❋

लिलारमें चन्द्रमाको सजाया है, शिरपर गंगा शोभायमान है, तीन नेत्र है, सर्पका यज्ञोपवीत है ॥ ३ ॥ कंठमें जहरका नील चिन्ह शुशोभित है, हृदयमें मुंडमाला पहिरे है. यद्यपि, आपका वेष तो बड़ा अमंगल है तथापि दयालु प्रभु आप बड़े मंगलरूप है ॥ ४ ॥

कर त्रिशूल अरु डमरु बिराजा ॥ चले वृषभ चढ़ि बाजहिँ बाजा ॥ ५ ॥ ❋
देखि शिवहिँ सुरत्रिय मुसकाहीं ॥ बरलायक दुलहिनि जग नाहीं ॥ ६ ॥ ❋

हाथमें त्रिशूल और डमरु विराजमान है, प्रभु बैलपर सवार होकर चले. उसवक्त बाजे बजने लगे है ॥ ५ ॥ महादेवजीका स्वरूप देखकर देवांगना मुसक्याती है कि इस वरके लायक दुलहिनि तो सारे जगत्‌मेंभी नहीं होगी ॥ ६ ॥

विष्णुविरंचि आदि सुरव्राता ॥ चढ़िचढ़ि बाहन चले बराता ॥ ७ ॥ ❋
सुरसमाज सबभांति अनूपा ॥ नहिँ बरात दूलहअनुरूपा ॥ ८ ॥ ❋

ब्रह्मा विष्णु आदि सब देवगण अपने २ वाहनोंपर सवार हो होकर बरातमें चले ॥ ७ ॥ देवताओंकी समाज सबप्रकारसे सुन्दर थी पर दूलहके योग्य बरात नहीं थी ॥ ८ ॥

दोहा-विष्णु कहा अस बिहँसि तब, बोलि सकल दिशिराज ॥ ❋
बिलग बिलग होइ चलहु सब, निज निज सहित समाज ॥ १०३ ॥ ❋

तब विष्णु भगवान्‌ने सब लोकपालोंको बुलाकर हंसकर ऐसे कहा कि, सब लोग अपनी २ समाजके साथ अलग २ होकर चलो ॥ १०३ ॥

बरअनुहार बरात न भाई ॥ हँसी करैहहु परपुर जाई ॥ १ ॥ ❋
बिष्णुबचन सुनि सुर मुसुकाने ॥ निज निज सेन सहित बिलगाने ॥ २ ॥ ❋

क्योंकि, हे भाइयो ! बरात दूलहके योग्य नहीं है सो तुम लोग दूसरेके नगरमें जाकर हँसी कराओगे ॥ १ ॥ विष्णु भगवान्‌के वचन सुनकर सब देवता मुसकाये और अपनी २ सेनाको अपने २ साथ लेकर अलग २ हो गये ॥ २ ॥

मनहीं मन महेश मुसकाहीं ॥ हरिके व्यंग बचन नहिँ जाहीं ॥ ३ ॥ *
अति प्रिय बचन सुनत हरिकेरे ॥ भृंगी प्रेरि सकल गण टेरे ॥ ४ ॥ *

महादेवजी मनही मनमें मुसक्याते हैं और मनहीमें कहते है कि-विष्णुके व्यंग वचन तो कभी जातेही नहीं ॥ ३ ॥ विष्णु भगवानके परम प्रिय वचन सुनकर महादेवजीने भृंगी नाम गणको प्रेरकर अपने सब गणोंको बुला लिया ॥ ४ ॥

शिवअनुशासन सुनि सब आये ॥ प्रभुपदजलज शीश तिन नाये ॥ ५ ॥
नाना बाहन नाना वेषा ॥ बिहँसे शिवसमाज निज देषा ॥ ६ ॥ *

महादेवजीकी आज्ञा सुनकर सब गण महादेवजीके पास चले आये और उन्होंने प्रभुके चरणकमलोंमें शिर नवाया ॥ ५ ॥ महादेवजी अपनी समाजको देखकर हँसे; क्योंकि उसमें कई प्रकारके तो वाहन है और कई प्रकारके उनके वेष हैं ॥ ६ ॥

कोउ मुखहीन बिपुल मुख काहू ॥ बिनुपद कर कोउ बहुपद बाहू ॥ ७ ॥ *
बिपुलनयन कोउ नयनबिहीना ॥ हृष्ट पुष्ट कोउ अतितनु क्षीना ॥ ८ ॥ *

कसीके तो मुखही नहीं है, किसीका बड़ा विशाल मुख है, किसीके तो हाथ और पांवही नहीं हैं और किसीके अनेक हाथ पांव है ॥ ७ ॥ किसीके बड़े विपुल नेत्र है और किसीके नेत्र हैही नहीं. कोई तो बड़ा मोटा ताजा है और कोई अति दुबला पतला है ॥ ८ ॥

छंद-तनुक्षीण कोउ अतिपीन पावन कोउ अपावन तनु धरे ॥ *
भूषण कराल कपाल कर सब सद्य शोणित तनु भरे ॥ *
खर श्वान सुअर शृगाल मुख गण बेष अगणित को गनैं ॥ *
बहु जिनिसि प्रेत पिशाच योगिनि भांति बर्णत नहिं बनैं ॥ ७ ॥ *

कोई तो बहुतही दुबला पतला और कोई बड़ा मोटा ताजा है. किसीका शरीर तो महा अपवित्र और किसीका शरीर परम पवित्र है. सब गणोंने विकराल गहने पहरे हैं और उनके हाथोंमें ताजे लोहूसे भरेहुए खप्पर धरे हुए हैं. गणोंके मुख देखते हैं तो किसीका मुंह तो गधेका, किसीका कुत्तेका, किसीका सुअरका, और किसीका सियारका है. और उनके वेष तो इतने अपार हैं कि, उनको कोई गिनही नहीं सकता. और प्रेत, पिशाच व योगिनी वगैरः गण इतनी अनेक जातिके हैं कि, उनकी जातियोंको गिनते २ पार आही नहीं सकता ॥ ७ ॥

सोरठा-नाचहिँ गावहिँ गीत, परम तरंगी भूत सब ॥ *
देखत अति बिपरीत, बोलहिँ बचन बिचित्र बिधि ॥ १५ ॥ *

बड़े लहरी भूत सब नाचते हैं, गीत गाते हैं, बड़े विपरीत दीखते हैं. और अनेक प्रकारके विचित्र बचन बोलते हैं ॥ १५ ॥

जस दूलह तस बनी बराता ॥ कौतुक बिबिध होहिँ मग्गु जाता ॥ १ ॥ *
इहां हिमाचल रचेउ बिताना ॥ अति बिचित्र नहिँ जाइ बखाना ॥ २ ॥

जैसा दूलह है वैसीही बरात बनी है. वहां मार्गमें जाते अनेक प्रकारके कौतुक हो रहे हैं ॥ १ ॥

यहां हिमाचलने बड़ा सुन्दर वितान (मंडप) बनाया है जो ऐसा अद्भुत और विचित्र है कि कुछ कहा नहीं जाता ॥ २ ॥

शैल सकल जहँलगि जगमाहीं ॥ लघु बिशाल नहिँ बर्णि सिराहीं ॥३॥ ❋
बन सागर सब नदी तलावा ॥ हिमगिरि सबकहँ नेवत पठावा ॥ ४ ॥ ❋

जगत्में जहांलों छोटे बड़े पहाड़ हैं कि जिनको गिन नहीं सकते ॥ ३ ॥ उन सबको और बन समुद्र, नदियां व तलाव इन सबको हिमाचलने बुला भेजा ॥ ४ ॥

कामरूप सुन्दर तनुधारी ॥ सहित समाज सहित बर नारी ॥ ५ ॥ ❋
गये सकल तुहिनाचलगेहा ॥ गावहिँ मंगल सहित सनेहा ॥ ६ ॥ ❋

तब पर्वत, व समुद्र वगैरः सब अपनी इच्छानुसार सुन्दर स्वरूप धारण करके अपना रमणीय रमणियोंके और समाजके साथ॥५॥हिमाचलके घर आये हैं और स्नेहके साथ सुन्दर मंगल गा रहे हैं॥६॥

प्रथमहिँ गिरि बहु गृह सँवराये ॥ यथायोग जहँ तहँ सब छाये ॥ ७ ॥ ❋
पुरशोभा अवलोकि सुहाई ॥ लागै लघु बिरंचिनिपुणाई ॥ ८ ॥ ❋

सब लोगोंके आनेसे पहलेही हिमाचलने बहुतसे घर सँवारकर तैयार कर रक्खे थे, उनमें सब लोग जहां तहां यथायोग्य ठहर गये ॥ ७ ॥ उस समय पुरकी सुहावनी सुन्दर शोभा देखकर ब्रह्माजीकी चतुरताभी तुच्छ मालूम होती थी ॥ ८ ॥

छंद–लघु लागि विधिकी निपुणता अवलोकि पुरशोभा सही ॥ ❋
बन बाग कूप तड़ाग सरिता सुभग सब सक को कही ॥ ❋
मंगल बिपुल तोरण पताका केतु गृह गृह सोहहीं ॥ ❋
बनिता पुरुष सुन्दर चतुर छबि देखि मुनिमन मोहहीं ॥ ८ ॥ ❋

यह बात सही है कि–पुरकी शोभा देखकर ब्रह्माजीकी निपुणता तुच्छ प्रतीत होती थी. बन, बाग, कुएं, तालाव और नदियां ये सब ऐसे शोभायमान लगते थे कि जिनके विषयमें कोई कुछ कहही नहीं सकता. घरघरमें मंगलकलश, बड़े २ तोरण, ध्वजा, पताका, शोभायमान हो रही हैं. और स्त्री पुरुष ऐसे सुन्दर और निपुण हैं कि जिनकी छबि देखकर मुनिलोगोंके मन मोहित होते हैं ॥ ८ ॥

दोहा–जगदम्बा जहँ अवतरी, सो पुर बर्णि न जाइ ॥ ❋
ऋद्धि सिद्धि सम्पति सकल, नित नूतन अधिकाइ ॥ १०४ ॥ ❋

जहां जगत्जननीने अवतार लिया है वह पुर वर्णन किया नहीं जा सकता;क्योंकि वहीं ऋद्धि,सिद्धि और सर्वप्रकारकी संपदा नित नयी अधिक अधिक होती जाती हैं ॥ १०४ ॥

नगरनिकट बरात जब आई ॥ पुरशोभा खरभर अधिकाई ॥ १ ॥ ❋
करि बनाव सजि बाहन नाना ॥ चले लेन सादर अगवाना ॥ २ ॥ ❋

जब बरात नगरके समीप आयी तब खरभराहट होनेसे नगरकी शोभा और ज्यादा बढ़ी ॥ १ ॥ सब लोग ननाव बनाय, अनेक प्रकारके बाहन साजकर आदरसहित अगवानी लेनेको चले ॥ २ ॥

हिय हर्षे सुरसेन निहारी ॥ हरिहिं देखि अति भये सुखारी ॥ ३ ॥ ❋
शिवसमाज जब देखन लागे ॥ बिड़रि चले बाहन सब भागे ॥ ४ ॥ ❋

सो सामने आती देवताओंकी सेनाको देखकर मनमें बड़े प्रसन्न हुए, और विष्णु भगवान्‌को देखकर तौ अत्यंतही प्रसन्न हुए ॥ ३ ॥ जब वे महादेवकी समाज देखने लगे तब तौ वे लोग बिड़र चले और उनके सब वाहन भाग गये ॥ ४ ॥

धरि धीरज तहँ रहे सयाने ॥ बालक सब लै जीव पराने ॥ ५ ॥ ❋
गये भवन पूंछहिं पितु माता ॥ कहहिं बचन भयकंपित गाता ॥ ६ ॥ ❋

उनमें जो समझदार आदमी थे वे तौ धीरज धरकर वहां ठहरे और जो नादान थे वे तौ सब जी ले भागे ॥ ५ ॥ सो अपने २ घर पहुंचे तब उनके माता पिताने पूंछा कि—कहो तुम भागकर क्यों आयेहो? तब वे भयसे कांपतेहुए अपने माता पितासे कहने लगे ॥ ६ ॥

कहिय कहा कहि जाइ न बाता ॥ यमकर धार किधौं बरियाता ॥ ७ ॥ ❋
बर बौराह बरद असवारा ॥ ब्याल कपाल विभूषण छारा ॥ ८ ॥ ❋

कि—क्या कहें ? कुछ बात कही नहीं जाती; क्या वह बरात है के कोई यमराजकी धाड़ है ? ॥ ७ ॥ बावला तौ वर है. बैलकी सवारी है. सांप, खप्पर और भस्मी आभूषण है ॥ ८ ॥

छंद—तन छार व्याल कपाल भूषण नगन जटिल भयंकरा ॥ ❋
सँग भूत प्रेत पिशाच योगिनि बिकट मुख रजनीचरा ॥ ❋
जो जियत रहहि बरात देखत पुण्य बड़ तिनकर सही ॥ ❋
देखिहि सो उमाबिबाह घर घर बात अस लरिकन कही ॥ ९ ॥ ❋

दूलहके शरीरपर सांप, कपाल और भस्मी आभूषण बने हैं. नग्न स्वरूप है. माथेपर जटा बढ़ रही है. भयंकर स्वरूप है और उसके संग बड़े विकराल मुखवाले भूत, प्रेत, पिशाच, योगिनी, और राक्षस है. इस बरातको देखकर जो जीते बचेंगे उनको बड़े पुण्यवान् समझने चाहिये; क्योंकि, वेही पार्वतीके विवाहको देखेंगे. यह बात लड़कोंने आकर घर घरमें कही ॥ ९ ॥

दोहा—समुझि महेशसमाज सब, जननि जनक मुसकाहिँ ॥ ❋
बाल बुझाये बिबिधबिधि, निडर होउ डर नाहिँ ॥ १०५ ॥ ❋

लड़कोंके माता पिता सब महादेवजीकी समाजको समझकर मुसकाये और अपने लड़कोंको अनेक प्रकारसे समझाया कि, हे पुत्रो ! तुम डरो मत; क्योंकि यह कोई डरकी बात नहीं है ॥ १०५ ॥

लै अगवानि बरातहिं आये ॥ दिये सबहिँ जनवास सुहाये ॥ १ ॥ ❋
मयना शुभ आरती सँवारी ॥ संग सुमंगल गावहिँ नारी ॥ २ ॥ ❋

ऐसे कह लोग अगवानी ले बरातियोंको ले आये. सबको अच्छे सुंदर जनवासे दिये ॥ १ ॥ मेनाने अच्छी सुंदर आरती तैयार करी, उसके साथ स्त्रियां मंगलके गीत गाने लगी हैं ॥ २ ॥

कंचन थार सोह बर पानी ॥ परिछन चलीं हरहिं हरषानी ॥ ३ ॥ ❀
बिकटवेष जब रुद्रहिं देषा ॥ अबलन उर भय भयउ विशेषा ॥ ४ ॥ ❀

मेनाके हाथमें सोनेका सुन्दर थार शोभायमान हो रहा है जिससे सुशोभित वह मेना आनंदित होकर महादेवको परिछन करने चली ॥३॥ जब बड़े बिकट रूपवाले महादेवको देखा तो उन स्त्रियोंके मनमें बड़ा भय उत्पन्न हुआ ॥ ४ ॥

भागि भवन पैठीं अतित्रासा ॥ गये महेश जहां जनवासा ॥ ५ ॥ ❀
मयना हृदय भयउ दुख भारी ॥ लीन्ही बोलि गिरीशकुमारी ॥ ६ ॥ ❀

सो डरके मारे भागकर सब स्त्रियां अपने २ घरोंमें जा घुसीं और महादेवजी वहां पधारे कि जहां जनवास था ॥ ५ ॥ मेनाके मनमें इस बातसे बड़ा भारी दुःख हुआ सो उसने अपनी कन्या पार्वतीको बुलाया ॥ ६ ॥

अधिक सनेह गोद बैठारी ॥ श्याम सरोज नयन भरि बारी ॥ ७ ॥ ❀
जेहिँ बिधि तुमहिँ रूप अस दीन्हा ॥ तेहिँ जड़ बर बावर कस कीन्हा ॥८॥

और बड़े स्नेहसे अपनी गोदमें बिठाया. स्नेहके कारण मेनाके श्याम कमलकेसे नेत्रोंमे जल भर आया ॥ ७ ॥ और कहा कि–जिस विधाताने तुमको ऐसा स्वरूप दिया उस विधाताने तुमको ऐसा जड़ और बावला वर कैसे देदिया ॥ ८ ॥

छंद–कस कीन्ह बर बौराह बिधि जिन तुमहिँ सुन्दरता दई ॥ ❀
जो फल चहिय सुरतरुहिँ सो बरबश बबूरहिँ लागई ॥ ❀
तुमसहित गिरिते गिरौं पावक जरौं जलनिधिमहँ परौं ॥ ❀
घर जाउ अपयश होउ जग जीवत विवाह न हो करौं ॥ १० ॥ ❀

जिस विधाताने तुमको ऐसा सुन्दर स्वरूप दिया है उसने ऐसा बावला वर कैसे दिया है ? जो फल कल्पवृक्षके लगाना चाहिये वह फल बबूरके जबर्दस्ती कैसे दे दिया. मेना कहती है कि–चाहे मैं तुम्हारे साथ पर्वतपरसे गिरकर मरजाऊं; चाहे आगमें जल जाऊं; चाहे समुद्रमें बूड़ जाऊं; चाहे घर जाता हो तो चला जाओ; चाहे जगत्में मेरा अपयश होता हो तो भले हो जाओ; पर मैं तो मेरे जीतेजी कभी इससे तेरा व्याह नहीं करूंगी ॥ १० ॥

दोहा–भईं बिकल अबला सकल, दुखित देखि गिरिनारि ॥ ❀
करि बिलाप रोदति बदति, सुतासनेह सँभारि ॥ १०६ ॥ ❀

बेटीके स्नेहको संभारकर विलाप कर करके रोती और कहती दुखी मेनाको देखकर सब स्त्रियां विह्वल हो गयीं ॥ १०६ ॥

नारदकर मैं कहा बिगारा ॥ भवन मोर जिन बसत उजारा ॥ १ ॥ ❀
अस उपदेश उमहिँ जिन दीन्हा ॥ बौरे बरहिं लागि तप कीन्हा ॥ २ ॥ ❀

मेना कहने लगी कि–मैंने नारदका क्या बिगाड़ा था ? कि जिससे उसने मेरे बसतेहुए घरको उजाड़ दिया ? ॥ १ ॥ जिसने पार्वतीको ऐसा उपदेश दिया कि जिससे पार्वतीनेभी बावले वरके वास्ते तपस्या करी ॥ २ ॥

साँचेहु उनके मोह न माया ॥ उदासीन धन धाम न जाया ॥ ३ ॥ ❀
परघरघालक लाज न भीरा ॥ बांझ कि जान प्रसवकी पीरा ॥ ४ ॥ ❀

लोग जो यह बात कहते हैं कि, नारदजीके मोह माया कुछभी नहीं है सो सच बात है. वो तौ सचमुच उदासीन है; उनको न तौ घर है, न धन है और न स्त्री है ॥ ३ ॥ उनको न तौ किसी बातकी लाज है और न लिहाज है; वो तौ पराये घर बिगारने जानते हैं. यह बात सच है कि वंध्या स्त्री प्रसवकी पीड़ाको क्या जाने ? अर्थात् नारदके घर बार हैही नहीं उसे गृहस्थके दुःखका क्या सुध है ? ॥ ४ ॥

जननिहिँ बिकल बिलोकि भवानी ॥ बोली युत विवेक मृदु बानी ॥५॥ ❀
अस बिचारि सोचहु जनि माता ॥ सो न टरै जो रचै बिधाता ॥ ६ ॥ ❀

ऐसे माताको विव्हल देखकर पार्वतीने विवेकभरी कोमल वाणीसे कहा ॥ ५ ॥ कि–हे माता ! आप ऐसा विचार करके शोच मत करो; क्योंकि विधाताने जो रच रक्खा है वो तौ टलही नहीं सकता ॥ ६ ॥

करम लिखा जो बाउर नाहू ॥ तौ कत दोष लगाउब काहू ॥ ७ ॥ ❀
तुमसन मिटहिँ कि बिधिके अंका ॥ मातु व्यर्थ जनि लेहु कलंका ॥८॥ ❀

जो मेरे करममेंही बावला वर लिखा है तौ फिर आप किसी दूसरेको दोष क्यों लगाती हो ? ॥ ७ ॥ तुमसे विधाताके लिखे अंक मिट तौ सकतेही नहीं; फिर हे मातः ! नाहक यह कलंक अपने ऊपर क्यों लेती हो ? ॥ ८ ॥

छंद–जनि लेहु मातु कलंक करुणा परिहरउ अवसर नहीं ॥ ❀
दुख सुख जो लिखा लिलार हमरे जाब जहँ पाउब तहीं ॥ ❀
सुनि उमाबचन बिनीत कोमल सकल अबला सोचहीं ॥ ❀
बहुभांति बिधिहिँ लगाइ दूषण नयन बारि बिमोचहीं ॥ ११ ॥ ❀

हे मातः ! आप यह कलंक अपने ऊपर मत लेओ. तुम करुणा छोड़दो; क्योंकि अभी अवसर नहीं है. हमारे लिलारमें जो सुख दुःख लिखा है वो तौ मैं जहां जाऊंगी वहीं पाऊंगी. फिर यह शोच क्यों ? पार्वतीके ऐसे विनीत और कोमल वचन सुन सब स्त्रियां शोच करने लगीं और विधाताको अनेक २ दूषण लगाके नेत्रोंसे आंसू बहाने लगीं ॥ ११ ॥

दोहा–तेहि अवसर नारदसहित, औ ऋषि सप्त समेत ॥ ❀
समाचार सुनि तुहिनगिरि, गवने तुरत निकेत ॥ १०७ ॥ ❀

ये समाचार सुनकर हिमाचल, नारद और सप्तऋषियोंके साथ उस समय तुरंत घरको गये ॥ १०७ ॥

तब नारद सबहीं समुझावा ॥ पूरब कथाप्रसंग सुनावा ॥ १ ॥ ❀
मयना सत्य सुनहु मम बानी ॥ जगदम्बा तव सुता भवानी ॥ २ ॥ ❀

तब नारदजीने सबको समझाया और पिछली कथाका सारा प्रसंग सुनाया ॥ १ ॥ नारद-

जीने मेनासे कहा कि-हे मेना ! मैं जो सच्ची वाणी कहता हूं सो सुनो. हे मेना ! तेरी बेटी पार्वती जगत्की माता है ॥ २ ॥

अज अनवद्य शक्ति अविनाशिनि ॥ सदा शंभुअर्धंगनिवासिनि ॥ ३ ॥ ❋
जगसंभवपालनलयकारिणि ॥ निज इच्छा लीलावपु धारिणि ॥ ४ ॥ ❋

यह तेरी कन्या अजन्मा, दूषणरहित, नाशरहित और सदा शिवजीके अर्द्धांगमें विराजनेवाली शक्तिस्वरूप है ॥ ३ ॥ यही जगत्को पैदा करके पालती है और जगत्का संहार करती है और अपनी इच्छासे अनेक लीलाशरीर धारण करती है ॥ ४ ॥

जनमी प्रथम दक्षगृह जाई ॥ नाम सती सुन्दर तनु पाई ॥ ५ ॥ ❋
तहउँ सती शंकरहिँ बिबाहीं ॥ कथा प्रसिद्ध सकल जगमाहीं ॥ ६ ॥ ❋

पहले यह दक्षके घर जाकर जन्मी थी वहां उसने सुन्दर शरीर धारण करके सतीनाम पाया था॥५॥ वहांभी सतीने शंकरके साथ पाणिग्रहण किया था. सो यह कथा सारे जगत्में प्रसिद्ध है ॥ ६ ॥

एकबार आवति शिवसंगा ॥ देखेउ रघुकुलकमलपतंगा ॥ ७ ॥ ❋
भयउ मोह शिवकहा न कीन्हा ॥ भ्रमवश बेष सीयकर लीन्हा ॥ ८ ॥ ❋

एकबार सती शिवजीके साथ आ रही थी सो वहां इसने रामचन्द्रजीको आते देखा ॥ ७ ॥ तहां इसके मनपर मोह छा गया सो महादेवजीके कहनेपरभी इसका मोह नहीं मिटा जिससे शिवजीका कहना न मानकर इसने अज्ञानवश होकर सीताका स्वांग बनाया ॥ ८ ॥

छंद--सियबेष सती जो कीन्ह तेहि अपराध शंकर परिहरी ॥ ❋
हरबिरह जाइ बहोरि पितुके यज्ञ योगानल जरी ॥ ❋
अब जनमि तुम्हरे भवन निजपतिलागि दारुण तप किया ॥ ❋
अस जानि संशय तजहु गिरिजा सर्वदा शंकरप्रिया ॥ १२ ॥ ❋

सतीने जो सीताका वेष बनाया उसी अपराधके कारण महादेवने सतीको त्याग दिया. तब उसने महादेवके विरहसे विव्हल होकर फिर पिताके यज्ञमें जाकर अपने शरीरको योगानलसे जला दिया. अब वह तुम्हारे घरमें आकर जन्मी है सो यहांभी इसने अपने पति महादेवजीके लिये महा कठिन तपस्या की है सो इस बातको समझकर तुम अपने मनका संदेह छोड़ो; क्योंकि पार्वती महादेवकी सदा सर्वदा प्यारी है ॥ १२ ॥

दोहा–सुनि नारदके बचन तब, सबकर मिटा बिषाद ॥ ❋
क्षणमहँ ब्यापेउ सकलपुर, घर घर यह संबाद ॥ १०८ ॥ ❋

नारदके ये वचन सुनकर सब लोगोंके मनका विषाद मिट गया और एक क्षणभरमें सारे नगरमें यह बात घर घर फैल गयी ॥ १०८ ॥

तब मयना हिमवंत अनन्दे ॥ पुनि २ पारवतीपद बन्दे ॥ १ ॥ ❋
नारि पुरुष शिशु युवा सयाने ॥ नगरलोग सब अति हरषाने ॥ २ ॥ ❋

तब मेना और हिमाचल दोनों बड़े आनन्दित हुए, और बारंबार पार्वतीके चरणकमलोंको

वंदन करने लगे ॥ १ ॥ बालक, जवान, सारे नरनारी, सयाने और नगरके सब लोग इस बातसे बड़े खुश हुए ॥ २ ॥

लगे होन पुर मंगल गाना ॥ सजे सबहिँ हाटक घट नाना ॥ ३ ॥ ❀
भांति अनेक भई जेवनारा ॥ सूपशास्त्र जस कछु व्यवहारा ॥ ४ ॥ ❀

पुरके अंदर मंगलगीत होने लगे. सबोंने अनेक प्रकारके कंचनके मंगल कलश सजाये ॥ ३ ॥ और जैसा कुछ सूपशास्त्र यानी रसोंईदारीका व्यवहार है वैसे अनेकप्रकारकी जेवनार हुई ॥ ४ ॥

सो जेवनार कि जाइ बखानी ॥ बसहिँ भवन जेहि मातु भवानी ॥ ५ ॥ ❀
सादर बोले सकल बराती ॥ विष्णु विरंचि देव सब जाती ॥ ६ ॥ ❀

क्या वह जेवनार वर्णन करनेमें आसकती है कि जिस घरके अंदर जगत्जननी भवानी विराज रही है ? ॥ ५ ॥ ब्रह्मा, विष्णु और सब जातिके देवता कि, जो बरातमें आये थे, उन सबको आदरके साथ बुलाया ॥ ६ ॥

बिबिधि पाँति बैठी जेवनारा ॥ लगे परोसन निपुण सुआरा ॥ ७ ॥ ❀
नारिवृन्द सुर जेंवत जानी ॥ लागीं देन गारि मृदु बानी ॥ ८ ॥ ❀

बराती लोग अनेकप्रकारकी पंक्ति लगाकर भोजनको बैठे तब चतुर रसोंईदार परोसने लगे ॥ ७ ॥ जब देवतालोग भोजन करने लगे तब स्त्रियां यूथके यूथ मिल कोमल वाणीसे गारी देने लगीं ॥ ८ ॥

छंद-गारी मधुर सुर देहिँ सुन्दरि ब्यंग बचन सुनावहीं ॥ ❀
भोजन करहिँ सुर अति बिलंब विनोद सुनि सुख पावहीं ॥ ❀
जेंवत बढयो जो अनन्द सो मुख कोटिहू न परै कह्यो ॥ ❀
अँचवाइ दीन्हे पान गमने बास जहँ जाको रह्यो ॥ १२ ॥ ❀

जो सुंदर स्त्रियां मधुर स्वरसे गारियां गाती है और व्यंग वचन सुनाती हैं तौ देवता बड़े विलंबके साथ भोजन करते हैं और विनोदके वचन सुनकर परम सुख पाते हैं. भोजन करते समय जो आनंद बढ़ा था वह करोड़ों मुखोंसेभी कहा नहीं जा सकता. फिर आनंदपूर्वक भोजन करके अँचवाकर पान दिया तब सब लोग अपने अपने डेरोंको गये ॥ १२ ॥

दोहा-बहुरि मुनिन हिमवन्तकहँ, लगन जनाई आइ ॥ ❀
समय बिलोकि बिबाहकर, पठये देव बुलाइ ॥ १०९ ॥ ❀

फिर सप्तर्षियोंने हिमाचलके पास आकर लग्नका समय कहा तौ विवाहका समय देखकर हिमाचलने देवताओंको बुला भेजा ॥ १०९ ॥

बोलि सकल सुर सादर लीन्हें ॥ सबहिँ यथोचित आसन दीन्हें ॥ १ ॥ ❀
बेदी वेद विधान सँवारी ॥ सुभग सुमंगल गावहिँ नारी ॥ २ ॥ ❀

हिमाचलने सब देवताओंको आदरसहित बुलाकर यथायोग्य आसन दिये ॥ १ ॥ वेदकी विधिसे वेदी तैयार की गयी और स्त्रियां सुंदर मंगल गीत गाने लगीं ॥ २ ॥

सिंहासन अतिदिव्य सुहावा ॥ जाइ न बरणि बिरंचि बनावा ॥ ३ ॥ *
बैठे शिव विप्रन शिर नाई ॥ हृदय सुमिरि निजप्रभु रघुराई ॥ ४ ॥ *

वहां जो एक दिव्य सिंहासन रक्खा गया था वह ऐसा सुहावना था कि, जिसका वर्णन नहीं कर सकते; क्योंकि वह स्वयं ब्रह्माजीने बनाया था ॥ ३ ॥ उसपर महादेवजी ब्राह्मणोंको नमस्कार कर हृदयमें अपने प्रभु श्रीरामचंद्रजीका स्मरण कर विराजे ॥ ४ ॥

बहुरि मुनीशन उमा बुलाई ॥ करि शृंगार सखी लै आई ॥ ५ ॥ *
देखत रूप सकल सुर मोहैं ॥ बरणै छबि अस जग कवि को है ॥ ६ ॥ *

फिर सप्तर्षियोंने पार्वतीको बुलाया तौ शृंगार करके सखियां उसे ले आयीं ॥ ५ ॥ पार्वतीकी छबि देखतेही सब देवता मोहित होगये. तुलसीदासजी कहते है कि--जगतमें ऐसा कवि कौन है कि जो पार्वतीकी छबिको वर्णन करे ? ॥ ६ ॥

जगदम्बिका जानि भववामा ॥ सुरन मनहिँ मन कीन्ह प्रणामा ॥७ ॥*
सुन्दरतामर्याद भवानी ॥ जाइ न कोटिहु बदन बखानी ॥ ८ ॥ *

महादेवजीकी अर्द्धांगी श्रीपार्वतीजीको जगदंबा जानकर देवताओंने मनही मनमें प्रणाम किया ॥ ७ ॥ जगत्‌जननी पार्वती सुन्दरताकी मर्याद है इसलिये करोड़ों मुखोंसेभी उनका वर्णन नहीं हो सकता ॥ ८ ॥

छंद--कोटिहु बदन नहिँ बने बरणत जगजननि शोभा महा ॥ *
सकुचहिँ कहत श्रुति शेष शारद मंदमति तुलसी कहा ॥ *
छबिखानि मातु भवानि गवनी मध्य मंडप शिव जहां ॥ *
अवलोकि सकहिँ न सकुचि पतिपद कमल मन मधुकर तहां ॥१३॥

जगत्‌जननी पार्वतीकी महाछबि करोड़ों मुखोंसे वर्णन करनेपरभी वर्णन नहीं की जाती कि, जिसके स्वरूपको वर्णन करते श्रुति, शेषजी और शारदाभी सकुचती है तौ मंदबुद्धि तुलसीकी कहां चली ? वह छबिकी खान माता भवानी मंडपके बीच वहां गयी कि जहां महादेव विराजते थे; परंतु वहां वह संकोचके मारे पतिके चरणकमलोंको निहार न सकी; इससे अपने मनरूप भ्रमरको चरणकमलोंमें लगाके रही ॥ १३ ॥

दोहा--मुनिअनुशासन गणपतिहिँ, पूजे शम्भु भवानि ॥ *
कोउ सुनि संशय करै जनि, सुर अनादि जिय जानि ॥ ११० ॥ *

महादेव और पार्वतीने मुनिकी आज्ञासे गणपतिकी पूजा करी. कोई आदमी इस बातको सुनकर संदेह करेंगे कि, गणेशजी तौ पार्वतीके पुत्र हैं सो गणपतिकी पूजा कैसे करी ? सो उनको इस बातका संदेह नहीं करना चाहिये; क्योंकि देवता अनादि हैं सो यह बात उनको अपने मनमें जान लेनी चाहिये ॥ ११० ॥

जस विवाहकी बिधि श्रुति गाई ॥ महामुनिन सो सब करवाई ॥ १ ॥ *
गहि गिरीश कुश कन्या पानी ॥ शिवहि समर्पी जानि भवानी ॥ २ ॥*

वेदमें जैसी विवाहकी रीति कही है वो सब रीति सप्तर्षियोंने करवाई ॥ १ ॥ हिमाचलने कुशसहित हाथमें कन्याका हाथ लेकर भवानीके स्वरूपको जानकर महादेवजीको दी ॥ २ ॥

पाणिग्रहण जब कीन्ह महेशा ॥ हिय हर्षे तब सकल सुरेशा ॥ ३ ॥ *
बेदमंत्र मुनिबर उच्चरहीं ॥ जय जय जय शंकर सुर करहीं ॥ ४ ॥ *

जब महादेवजीने पार्वतीका पाणिग्रहण किया तब सब लोकपाल मनमें बड़े प्रसन्न हुए ॥ ३ ॥ श्रेष्ठ मुनिलोग वेदके मंत्र उच्चारण करने लगे. और देवता "हे शंकर ! आपकी जय ! जय ! ! जय ! ! !" ऐसे करने लगे ॥ ४ ॥

बाजहिँ बाजन बिबिध बिधाना ॥ सुमनवृष्टि नभ भै बिधि नाना ॥५॥ *
हरगिरिजाकर भयउ बिवाहू ॥ सकल भुवन भरि रहा उछाहू ॥ ६ ॥ *

अनेक प्रकारके बाजे बाज रहे है. अनेक प्रकारके फूल आकाशसे बरस रहे है ॥ ५ ॥ महादेवजी और पार्वतीका विवाह हुआ तब सब लोकोंमें उछाह भर गया ॥ ६ ॥

दासी दास तुरँग रथ नागा ॥ धेनु बसन मणि वस्तु बिभागा ॥ ७ ॥ *
अन्न कनक भाजन भरियाना ॥ दायज दीन्ह न जाइ बखाना ॥ ८ ॥ *

हिमाचलने दासी, दास, घोड़े, रथ, हाथी, गौ, वस्त्र, मणि (रत्न) और अनेक प्रकारकी चीजें ॥ ७ ॥ व अन्न भरे अनेक बासन तथा सुवर्णसे लदे हुए अनेक वाहन, छकरा आदि दायज दिया कि जिसको कुछ कह नहीं सकते ॥ ८ ॥

छंद–दायज दियो बहुभांति पुनि कर जोरि हिमभूधर कह्यो ॥ *
का देउँ पूरणकाम शंकर चरणपंकज गहिरह्यो ॥ *
शिव कृपासागर श्वशुरकर परितोष सब भांतिन कियो ॥ *
पुनि गहेउ पदपाथोज मयना प्रेमपरिपूरण हियो ॥ १४ ॥ *

हिमाचलने अनेक प्रकारका दायज देकर फिर हाथ जोड़के कहा कि–हे प्रभु ! आप पूर्णकाम हो सो आपको मैं क्या देऊं ? मेरी क्या सामर्थ्य ? ऐसे कह महादेवजीके चरणकमलोंको धर रहा; तब कृपासिंधु महादेवजीने अपने श्वशुरको सर्व प्रकारसे प्रसन्न किया,तो फिर मेना कि जिसका हृदय प्रेमसे परिपूर्ण हो रहा था उसने आकर महादेवजीके चरणकमल धरे ॥ १४ ॥

दोहा–नाथ उमा मम प्राणसम, गृहकिंकरी करेहु ॥ *
क्षमेहु सकल अपराध अब, होइ प्रसन्न बर देहु ॥ १११ ॥ *

और कहा कि–हे नाथ ! यह पार्वती मेरे प्राणोंके समान प्यारी है इसे आप अपने घरकी दासी करो और जो अपराध होवे सो क्षमा करके अब प्रसन्न होकर इसे यही वरदान देओ ॥ १११ ॥

बहुबिधि शंभु सासु समुझाई ॥ गवनी भवन चरण शिर नाई ॥ १ ॥ *
जननी उमा बोलि तब लिन्ही ॥ लै उछंग सुन्दर शिख दीन्ही ॥ २ ॥ *

महादेवजीने अपनी सासकोभी अनेकप्रकारसे समझाया तब वहभी प्रणाम करके अपने घर गयी॥१॥ मेनाने पार्वतीको बुलाकर अपनी गोदीमें बिठायी और उसे अच्छी शिक्षा दी कि हे पार्वती ! तू सदा महादेवके चरणोंकी पूजा करियो ॥ २ ॥

करेहु सदा शंकरपदपूजा ॥ नारिधर्म पतिदेव न दूजा ॥ ३ ॥ ❋
बचन कहति भरि लोचनबारी ॥ बहुरि लाइ उर लीन्ह कुमारी ॥ ४ ॥ ❋

क्योंकि स्त्रीका मुख्य यही धर्म है कि, पतिको परमेश्वर समझकर उसकी सेवा करनी. स्त्रीके लिये पतिके सिवाय दूसरा कोई परमेश्वर नहीं है उसके तो वही परमेश्वर है ॥ ३ ॥ ऐसे कहते २ उसके नेत्रोंमें जल भर आया तब फिर उसने कन्याको अपनी छातीसे लगाया ॥ ४ ॥

कत बिधि सृजी नारि जगमाहीं ॥ पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं ॥ ५ ॥ ❋
भै अतिप्रेमविकल महतारी ॥ धीरज कीन्ह कुसमय बिचारी ॥ ६ ॥ ❋

मेनाने कहा कि—विधाताने जगत्‌में स्त्री क्यों रची ? क्योंकि वो सदा पराधीन रहती है और पराधीनको सुपनामेंभी सुख नहीं है ॥ ५ ॥ मेना प्रेमके वश होकर विकल हो गयी; पर अवसर न समझकर पीछी धीरज धरी ॥ ६ ॥

पुनि पुनि मिलति परति गहि चरणा ॥ परम प्रेम कुछ जाइ न बरणा ७ ❋
सब नारिन मिलि भेंटि भवानी ॥ जाइ जननिउर पुनि लपटानी ॥ ८ ॥ ❋

पार्वतीभी बारंबार मातासे मिलती है और चरण धर धर कर चरणोंमे गिरती है. उसका ऐसा अत्युत्कट प्रेम है कि कुछ कहा नहीं जाता ॥ ७ ॥ फिर सब स्त्रियोंसे मिल भेंटकर भवानी जाकर माताके हृदयमें लिपट गयी ॥ ८ ॥

छंद—जननिहिँ बहुरि मिलि चलीं उचित अशीश सबकाहूँ दई ॥ ❋
फिरि फिरि बिलोकति मातुतन तब सखी लै शिवपहँ गई ॥ ❋
याचक सकल सन्तोषि शंकर उमा सह भवनहिँ चले ॥ ❋
सब अमर हरषे सुमन बरषि निशान नभ बाजहिँ भले ॥ १५ ॥ ❋

पार्वती फिर मातासे मिलकर चली तब सब किसीने पार्वतीको उचित आशिष दी. पार्वती वहांसे रवाने होनेपरभी पीछी फिर फिर कर माताके शरीरके सामने देख रही थी; तिसे लेकर सब सखियां शिवजीके पास गयीं. महादेवजी सब याचकगणोंको बहुतसा द्रव्य दे उन्हें प्रसन्न कर पार्वतीके साथ घरको चले तब सब देवता प्रसन्न हुए. पुष्पोंकी बरसात हुई. आकाशमें अच्छे बाजे बजने लगे ॥ १५ ॥

दोहा—चले संग हिमवन्त तब, पहुँचावन अतिहेतु ॥ ❋
बिबिधभांति परितोष करि, बिदा कीन्ह वृषकेतु ॥ ११२ ॥ ❋

तब हिमाचल बड़े प्यारके साथ महादेवजीको पहुँचाने चला सो चला चला कितनीएक दूर आगया. तब महादेवजीने उसे अनेक प्रकारसे प्रसन्न करके पीछा बिदा किया ॥ ११२ ॥

तुरत भवन आये गिरिराई ॥ सकल शैल सर लिये बुलाई ॥ १ ॥ ❋
आदर दान बिनय बहुमाना ॥ सबकर बिदा कीन्ह हिमवाना ॥ २ ॥ ❋

हिमाचल पीछा तुरंत घरपर आया वहां सब पर्वत और तालावोंको बुलाया ॥ १ ॥

उनका बड़ा आदर सन्मान कर अनेक प्रकारके द्रव्य दे, बड़े विनयके साथ उनका मानकर हिमाचलने सबको बिदा किया ॥ २ ॥

जबहि शम्भु कैलासहिँ आये ॥ सुर सब निज निज धाम सिधाये ॥ ३ ॥
जगत मातु पितु शम्भु भवानी ॥ तेहि श्रृँगार न कहौं बखानी ॥ ४ ॥ ❋

जब महादेवजी कैलास पधारे तब सब देवता अपने २ घरोंको चले ॥३॥ महादेवजी और पार्वतीकी जो श्रृंगारकी कथा है वो मैं वर्णन करके नहीं कहता; क्योंकि वे जगतके माता पिता है, सो उनके श्रृंगारकी कथा कहनी अयोग्य है ॥ ४ ॥

करहिँ बिबिधबिधि भोगबिलासा ॥ गणनसमेत बसहिँ कैलासा ॥ ५ ॥❋
हरगिरिजाबिहार नित नयऊ ॥ इहिबिधि बिपुल काल चलि गयऊ ॥ ६ ॥

वे दोनों प्रभु अनेक प्रकारसे भोगविलास करते गणोंके साथ कैलासमे विराज रहे हैं ॥ ५ ॥ महादेवजी और पार्वतीका विहार नित नया हो रहा है. ऐसे बहुतसा समय बीत गया ॥ ६ ॥

तब जनमे षटबदन कुमारा ॥ तारकअसुर समर जिन मारा ॥ ७ ॥ ❋
आगम निगम प्रसिद्ध पुराना ॥ षटमुखजन्म कर्म जग जाना ॥ ८ ॥ ❋

तब छः मुखवाले बालक यानी स्वामिकार्तिक जन्मे; जिन्होंने तारक नाम दैत्यको मारा ॥ ७ ॥ स्वामिकार्तिकके जन्मकी कथा वेद, शास्त्र, पुराण, सर्वत्र प्रसिद्ध हैं अतएव उनके जन्म व कर्मको सब जगत् जानता है ॥ ८ ॥

छंद–जग जान षटमुख जन्म कर्म प्रताप पुरुषारथ महा ॥ ❋
तेहिहेतु मैं वृषकेतुसुतकर चरित संक्षेपहिं कहा ॥ ❋
यह उमाशम्भुबिबाह जे नर नारि कहहिँ जे गावहीं ॥ ❋
कल्याण कार्य बिवाह मंगल सर्वदा सुख पावहीं ॥ १६ ॥ ❋

स्वामिकार्तिकके जन्म, कर्म, प्रताप और महान् पुरुषार्थको सब जगत् जानता है इसीलिये उसका चरित्र मैंने बहुत संक्षेपसे कहा है. महादेव पार्वतीका यह विवाहका चरित्र जो नरनारी गाते हैं और कहते हैं वे हरएक कल्याणके कार्यमें और विवाह व मंगलकार्यमें सदा सुख पाते हैं ॥ १६ ॥

दोहा–चरितसिन्धु गिरिजारमण, वेद न पावहिँ पार ॥ ❋
बरणै तुलसीदास किमि, अति मतिमन्द गँवार ॥ ११३ ॥ ❋

पार्वतीरमण श्रीशिवजीके चरित्ररूप समुद्रका जब वेदभी पार नहीं पासक्ते तब अतिमंदबुद्धि और गँवार तुलसीदास तो उसको वर्णन करके कैसे पार पा सके ? ॥ ११३ ॥

शम्भुचरित सुनि सहजसुहावा ॥ भरद्वाज मुनि अतिसुख पावा ॥ १ ॥ ❋
बहु लालसा कथापर बाढ़ी ॥ नयन नीर रोमावलि ठाढ़ी ॥ २ ॥ ❋

महादेवजीका स्वभावसे सुन्दर चरित्र सुनकर भरद्वाज मुनिने बड़ा सुख पाया ॥१॥ उनकी कथापर अत्यंतही लालसा (चाह) बढ़ी. नेत्रोंमें जल भर आया. रोम खड़े होगये ॥ २ ॥

प्रेमबिबश मुख आव न बानी ॥ दशा देखि हरषे मुनि ज्ञानी ॥ ३ ॥ ❀
अहो धन्य तव जन्म मुनीशा ॥ तुमहिँ प्राणसम प्रिय गौरीशा ॥ ४ ॥ ❀

और ऐसे प्रेमवश होगये कि, मुंहसे बाणी बंद होगयी. भरद्वाजकी यह दशा देखकर ज्ञानी मुनि याज्ञवल्क्य बड़े प्रसन्न हुए ॥ ३ ॥ और याज्ञवल्क्यने कहा कि—अहो ! हे मुनिराज ! आपका जन्म बड़ा धन्य है; क्योंकि पार्वतीपति आपको प्राणोंसेभी प्यारे हैं ॥ ४ ॥

शिवपदकमल जिनहिँ रति नाहीं ॥ रामहि ते सपनेहुँ न सुहाहीं॥५॥ ❀
बिनुछल विश्वनाथपद नेहू ॥ रामभक्तकर लक्षण येहू ॥ ६ ॥ ❀

जिनकी महादेवजीके चरणकमलोंमें प्रीति नहीं है वे रामचन्द्रजीको स्वप्नमेंभी नहीं सुहाते ॥ ५ ॥ और रघुनाथजीके परम भक्तका यही लक्षण है कि जो परमभक्त होता है उसका महादेवजीके चरणोंमे निष्कपट स्नेह रहता है ॥ ६ ॥

शिवसम को रघुपतिव्रतधारी ॥ बिनुअघ तजी सती असि नारी ॥ ७ ॥ ❀
प्रण करि रघुपतिभक्ति दृढाई ॥ को शिवसम रामहिँ प्रिय भाई ॥ ८ ॥ ❀

महादेवजीके जैसा रामचन्द्रजीका व्रत धारण करनेवाला यानी भक्त दूसरा कौन है? कि जिन्होंने सती जैसी स्त्री विना अघ (अपराध) त्याग दी ॥ ७ ॥ महादेवजीने प्रण करके रघुनाथजीकी भक्ति कैसी दृढ़ करी कि, जिसको कुछ कह नहीं सकते. अतएव मैं कहता हूं कि, हे भाई ! महादेवजीके जैसा रामचन्द्रजीको प्रिय कौन है ? कोईभी नहीं ॥ ८ ॥

दोहा—प्रथम कहेउँ मैं शिवचरित, बूझा मर्म तुम्हार ॥ ❀
शुचि सेवक तुम रामके, रहित समस्त बिकार ॥ ११४ ॥ ❀

अव्वलही जो मैंने आपसे महादेवजीका चरित्र कहा इससे मैंने आपका तत्व जान लिया है. आप रामचन्द्रजीके परमपवित्र सेवक हो आपमें कोई विकार नहीं है ॥ ११४ ॥

मैं जाना तुम्हार गुण शीला ॥ कहौं सुनहु अब रघुपतिलीला ॥ १ ॥ ❀
सुनु मुनि आजु समागम तोरे ॥ कहि न जाय जस सुख मन मोरे ॥२॥

मैंने आपके गुण व शील जान लिये हैं. अब मैं आपसे रामचन्द्रजीकी कथा कहता हूं सो सुनो।१। हे मुनि ! सुनो. आज आपके समागमसे जैसा मेरे मनको सुख हुआ है वो कहा नहीं जाता ॥ २ ॥

रामचरित अति अमित मुनीशा ॥ कहि न सकहिँ शतकोटि अहीशा ३
तदपि यथामति कहौं बखानी ॥ सुमिरि गिरापति प्रभु धनु पानी ॥ ४ ॥

हे मुनिराज ! रामचन्द्रजीका चरित अति अपार है. यानी सौ कोटि रामयण है जिसे शेष-

---

१ (शंका) सतीने सीताका रूप धारण कर रास्तेमें रामजीकी परीक्षा लिया. पीछे शिवजीके पूंछनेपर संकोचसे सत्य हाल न कहा, सो अघ तौ यह प्रसिद्धही है, फिर गोसांईजीने "विनुअघ तजी सती असि नारी" यह कैसे कहा? ।(उ०) विनुअघ (अघरहित) ऐसा शंकरका विशेषण है--अर्थात् शंकरजी निष्पाप हैं. अथवा, विनुअघ (अघरहित) यह व्रतका विशेषण है--अर्थात् अघरहित, रामजीकी परमभक्तिको धारी (धारण किया) अथवा यहां अघ शब्द अपराध तथा पापका वाचक नहीं है,किंतु अघ शब्द दुःखवाचक है अर्थात् शिवजीके सती त्यागनेमें कुछु दुःख नहीं भया, इसवास्ते विनुअघ कहा; क्योंकि, "दुखो भयों वियोग प्रभु तोरे" ऐसे यह भक्तिविरह कहा और सतीविरह नहीं

जीभी नहीं कह सकते; वहां मनुष्यकी कौन चली ? ॥ ३ ॥ तथापि जैसा मैंने सुना है वैसा वाणीके पति, धनुष धारण करनहारे श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण करके मैं मेरी बुद्धिके अनुसार वर्णन करके कहता हूं सो सुनो ॥ ४ ॥

शारद दारुनारिसम स्वामी ॥ राम सूत्रधर अन्तरयामी ॥ ५ ॥ ❋
जेहिपर कृपा करहिँ जन जानी ॥ कविउरअजिर नचावहिँ बानी ॥६॥❋

हे मुनि ! शारदा यानी सरस्वती तो कठपुतलीके समान है और अन्तर्यामी श्रीरामचंद्रजी सूत्रधारके जैसे है ॥ ५ ॥ सो प्रभु जिसको अपना जन (भक्त) जानकर जिसपर कृपा करते है उसीको कवि बनाकर उसके हृदयरूप आंगनमें वाणीरूप कठपुतलीको नचाते है अर्थात् जिसपर प्रभुकी कृपा होती है वही कवि हो जाता है और उसीके हृदयमें सरस्वती विराजती है ॥ ६ ॥

प्रणवउँ सोइ कृपालु रघुनाथा ॥ बरणौं विशद जासु गुणगाथा ॥ ७ ॥ ❋
परमरम्य गिरिवर कैलासू ॥ सदा जहां शिवउमानिवासू ॥ ८ ॥ ❋

जिनके गुणोंकी कथा बड़ी उज्वल है उन परम दयालु श्रीरामचंद्रजीको मैं वंदन करता हूं ॥ ७ ॥ कैलास नाम पर्वतराज बड़ा रमणीक है कि जहां सदा सर्वदा महादेव पार्वती विराजते है ॥ ८ ॥

दोहा-सिद्ध तपोधन योगिजन, सुरकिन्नर मुनिवृन्द ॥ ❋
बसहिँ तहां सुकृती सकल, सेवहिँ शिव सुखकन्द ॥ ११५ ॥ ❋

वहां (कैलासमें) सिद्ध, तपस्वी, योगी, देवता और किन्नरोंके गण व तमाम सुकृती लोग निवास करते है और सुखके कारण श्रीशिवजीकी सदा सेवा करते है ॥ ११५ ॥

हरिहरबिमुख धर्मरत नाहीं ॥ ते नर तहां न सपनेहुँ जाहीं ॥ १ ॥ ❋
तेहि गिरिपर बटबिटप बिशाला ॥ नित नूतन सुन्दर सबकाला ॥ २ ॥ ❋

जो लोग विष्णु और महादेवसे विमुख हैं और जो धर्मरत नहीं हैं वे लोग वहां स्वप्नमेंभी नहीं जासकते ॥ १ ॥ उस पर्वतके ऊपर एक सुन्दर विशाल वटका पेड़ है कि जो सदा नित नया और सब कालमें सुन्दरही रहता है ॥ २ ॥

त्रिबिध समीर सुशीतल छाया ॥ शिवबिश्रामबिटप श्रुति गाया ॥ ३ ॥ ❋
एकबार तेहितर प्रभु गयऊ ॥ तरु बिलोकि उर अति सुख भयऊ ॥ ४ ॥❋

शीतल, सुगंध, मंद बयार चला करती है; बहुत ठंढी छाया है. जिस महादेवजीके विश्रामवृक्षका वेदमेंभी भली भांति वर्णन किया है ॥ ३ ॥ एक बेर महादेवजी उसके तले पधारे सो उस पेड़को देखकर आपके हृदयमें परम आल्हाद हुआ ॥ ४ ॥

निजकर डालि नागरिपुछाला ॥ बैठे सहजहिँ शम्भु कृपाला ॥ ५ ॥ ❋
कुन्दइन्दुदरगौर शरीरा ॥ भुज प्रलम्ब परिधन मुनिचीरा ॥ ६ ॥ ❋

तब अपने हाथसेही बाघांबर डालकर दयालु प्रभु सहजस्वभावसे विराजे ॥ ५ ॥ प्रभुका स्वरूप कैसा है कि, कुन्द (मोगरा) चंद्रमा और शंखके जैसा गौर शरीर है; लंबी भुजाएँ है;मुनिलोगोंके जैसे चीर पहिरनेको हैं ॥ ६ ॥

तरुणअरुणअम्बुजसम चरणा ॥ नखद्युति भक्तहृदयतमहरणा ॥ ७ ॥ ❋
भुजग भूति भूषण त्रिपुरारी ॥ आनन शरदचन्द्रछबिहारी ॥ ८ ॥ ❋

नवीन शुर्ख कमलके जैसे कोमल चरण हैं और उनके नखोंकी कांति भक्त लोगोंके हृदयांधकारको दूर करती है ॥ ७ ॥ और त्रिपुरासुरके शत्रु शंकरके सांप और विभूतिही आभूषण है. और मुखकमल शरदऋतुके पूर्ण चंद्रमाकी छबिको छीननेवाला है ॥ ८ ॥

दोहा–जटा मुकुट सुरसरित शिर, लोचन नलिन बिशाल ॥ ❋
नीलकण्ठ लावण्यनिधि, सोह बाल बिधु भाल ॥ ११६ ॥ ❋

शिरपर जटा मुकुट शोभायमान है; तिसमें गंगाजी विराजमान है. और बड़े विशाल नेत्रकमल है. नीलकंठ यानी गलेमें नीला वर्ण है. लावण्य यानी रूपके भंडार है. लिलारमें द्वितीयाका चांद सुशोभित हो रहा है ॥ ११६ ॥

बैठे सोह कामरिपु कैसे ॥ धरे शरीर शान्तरस जैसे ॥ १ ॥ ❋
पारवती भल अवसर जानी ॥ गईं शम्भुपहँ मातु भवानी ॥ २ ॥ ❋

उस बटके तले विराजेहुए कामदेवके शत्रु प्रभु कैसे शोभायमान लगते है कि मानों शान्तरसही शरीर धारण किये शोभायमान हो रहा है ॥ १ ॥ पार्वतीजी अच्छा अवसर समझकर जगत्जननी भवानी महादेवजीके पास गई ॥ २ ॥

जानि प्रिया आदर अति कीन्हा ॥ बाम भाग आसन हर दीन्हा ॥ ३ ॥ ❋
बैठीं शिवसमीप हरषाई ॥ पूरबजन्मकथा चित आई ॥ ४ ॥ ❋

महादेवजीने प्रिय पार्वतीको आई जानकर उनका बड़ा आदर किया और अपनी बाईं ओर उनको बैठनेको आसन दिया ॥ ३ ॥ पार्वतीजी प्रसन्न होकर महादेवजीके पास बैठीं तब उनको अपने पूर्व जन्मकी कथा याद आ गयी ॥ ४ ॥

पति हियहेतु अधिक अनुमानी ॥ बिहँसि उमा बोलीं प्रियबानी ॥ ५ ॥ ❋
कथा जो सकललोकहितकारी ॥ सोइ पूंछन चहै शैलकुमारी ॥ ६ ॥ ❋

सो प्रभुके हृदयमें अपनी ओरका अतिशय स्नेह जानकर हंसके पार्वतीने मधुर वाणीसे कहा ॥ ५ ॥ जो कथा सब लोगोंके हितकारी है वोही कथा पूंछना चाहती हुई पार्वती बोलीं ॥ ६ ॥

विश्वनाथ ममनाथ पुरारी ॥ त्रिभुवन महिमा विदित तुम्हारी ॥ ७ ॥ ❋
चर अरु अचर नाग नर देवा ॥ सकल करहिँ पदपंकज सेवा ॥ ८ ॥ ❋

कि–हे मेरे प्राणपति ! हे विश्वनाथ ! हे प्रभु ! हे त्रिपुर दैत्यके शत्रु ! आपकी महिमा त्रिलोकीमे जाहीर है ॥ ७ ॥ सारे चराचर जीव जंतु, नाग, नर और देवता कुल आपके चरणकमलोंकी सेवा करते हैं ॥ ८ ॥

दोहा–प्रभु समर्थ सर्वज्ञ शिव, सकलकलागुणधाम ॥ ❋
योगज्ञानबैराग्यनिधि, प्रणत कल्पतरु नाम ॥ ११७ ॥ ❋

हे शिवजी ! आप प्रभु हो, समर्थ हो, सर्वज्ञ हो, सब कलाओंके और गुणोंके घर हो, आप

योग, ज्ञान और वैराग्यके भंडार हो और आपका नाम शरणागत पुरुषोंके लिये कल्पवृक्षके समान सब कामना पूर्ण करनेवाला है ॥ ११७ ॥

जो मोपर प्रसन्न सुखराशी ॥ जानिय सत्य मोहिँ निजदासी ॥ १ ॥ ❋
तौ प्रभु हरहु मोर अज्ञाना ॥ कहि रघुनाथकथा बिधि नाना ॥ २ ॥ ❋

हे सुखस्वरूप प्रभु ! जो आप मुझपर प्रसन्न हो और मुझको अपनी सच्ची दासी समझते हो ॥ १ ॥ तौ हे प्रभु ! अनेकप्रकारसे रामचन्द्रजीकी कथा कहकर मेरा अविवेक दूर करो ॥ २ ॥

जासु भवन सुरतरुतर होई ॥ सह कि दरिद्रजनित दुख सोई ॥ ३ ॥ ❋
शशिभूषण अस हृदय बिचारी ॥ हरहु नाथ मम मतिभ्रम भारी ॥ ४ ॥ ❋

हे प्रभु ! जिसका घर कल्पवृक्षके तले होवे तौभी क्या वह दरिद्रजनित दुःखको सह सकता है? ॥ ३ ॥ हे चंद्रशेखर प्रभु ! आप अपने मनमें ऐसा विचार कर हे नाथ ! मेरी बुद्धिका भारी भ्रम मिटाओ ॥ ४ ॥

प्रभु जे मुनि परमारथबादी ॥ कहहिँ रामकहँ ब्रह्म अनादी ॥ ५ ॥ ❋
शेष शारदा बेद पुराना ॥ सकल करहिँ रघुपतिगुण गाना ॥ ६ ॥ ❋

हे प्रभु! जो परमार्थवादी मुनि हैं वे सब रामको अनादि परब्रह्म कहते हैं ॥ ५ ॥ शेषजी, शारदा, वेद व पुराण येभी सब रामचन्द्रजीके गुण गान करते हैं ॥ ६ ॥

तुम पुनि रामनाम दिनराती ॥ सादर जपहु अनँगअराती ॥ ७ ॥ ❋
राम सो अवधनृपतिसुत सोई ॥ की अज अगुण अलखगति कोई ॥ ८ ॥ ❋

और हे कामरिपु ! आपभी रातदिन आदरसहित रामनाम जपते रहते हो ॥ ७ ॥ सो वह राम वही है कि जो अयोध्याके पति दशरथके पुत्र हुए हैं ? अथवा अजन्मा, निर्गुण और अलक्ष्यगति राम कोई दूसरा है ? सो मुझे सत्य २ कहो ॥ ८ ॥

दोहा—जो नृपतनय तौ ब्रह्म किमि, नारिबिरह मति भोरि ॥ ❋
देखि चरित महिमासुनत, भ्रमति बुद्धि अति मोरि ॥ ११८ ॥ ❋

जो दशरथका पुत्र है वही राम है तो वह परब्रह्म किसतरह हो सक्ता है ? क्योंकि उसकी बुद्धि तो स्त्रीके विरहसे व्याकुल हो गयी थी. उनके चरित्रको देख, उनकी महिमा सुनते मेरी बुद्धि अत्यंत भ्रममें पड़ जाती है ॥ ११८ ॥

जो अनीह व्यापक बिभु कोऊ ॥ कहहु बुझाइ नाथ मोहिँ सोऊ ॥ १ ॥ ❋
अज्ञ जानि रिस जनि उर धरऊ ॥ जेहि बिधि मोह मिटै सोइ करउ ॥ २ ॥

हे प्रभु ! जो कोई राम अनीह कहे चेष्टारहित व्यापक और विभु हैं वोही हे नाथ ! मुझे समझाकर कहो ॥ १ ॥ मुझे अज्ञानी जानकर आप मनमें बिलकुल क्रोध मत लाना जिसतरह मेरा अज्ञान मिटे वही उपाय करना ॥ २ ॥

मैं बन दीख रामप्रभुताई ॥ अतिभय बिकल न तुमहिँ सुनाई ॥ ३ ॥ ❋
तदपि मलिन मन बोध न आवा ॥ सो फल भली भांति हम पावा ॥ ४ ॥ ❋

यद्यपि मैंने रामचन्द्रजीकी प्रभुताई वनमें देख ली थी परंतु आपके भयसे विव्हल होनेके कारण आपको नहीं सुनायी ॥ ३ ॥ तथापि मेरे मलीन मनमें ज्ञान नहीं उपजा सो उसका फल मैंने अच्छीतरह पा लिया ॥ ४ ॥

अजहूं कछु संशय मन मोरे ॥ करहु कृपा बिनऊं कर जोरे ॥ ५ ॥ ❋
प्रभु तब मोहिं बहुभांति प्रबोधा ॥ नाथ सो समुझि करहु जनि क्रोधा६ ❋

और अबभी मेरे मनमें कुछ थोड़ासा संदेह रह गया है इसवास्ते मैं हाथ जोड़कर आपसे विनती करती हूं सो मुझपर कृपा करो ॥ ५ ॥ हे नाथ ! उस वक्त आपने मुझको बहुततरहसे समझाया था सो उस बातको याद करके मुझपर क्रोध मत करना ॥ ६ ॥

तबकर अस बिमोह मोहिं नाहीं ॥ रामकथापर रुचि मनमाहीं ॥ ७ ॥ ❋
कहहु पुनीत राम गुणगाथा ॥ भुजगराजभूषण सुरनाथा ॥ ८ ॥ ❋

क्योंकि उस वक्तकासा असाध्य अज्ञान अब मेरेमें नहीं है; क्योंकि, अब मेरे मनमें रामचन्द्रजीकी कथापर बड़ी रुचि है ॥ ७ ॥ सो हे सर्पविभूषण ! हे सुरस्वामिन् ! कृपा करके मुझे रामचन्द्रजीकी पवित्र कथा कहो ॥ ८ ॥

दोहा-बंदौं पद धरि धरणि शिर, बिनय करौं कर जोरि ॥ ❋
वर्णहु रघुबर बिशद यश, श्रुतिसिद्धांत निचोरि ॥ ११९ ॥ ❋

मैं पृथ्वीपर शिर धरकर आपके चरणोंको वंदन करती हूं और हाथ जोड़के विनय करती हूं सो आप वेदके सिद्धान्तका निचोरी यानी सारांश लेकर मुझे रामचन्द्रजीका उज्ज्वल यश कहो ॥ ११९ ॥

यदपि योषिता अनअधिकारी ॥ दासी मन क्रम बचन तुम्हारी ॥ १ ॥ ❋
गूढ़ौ तत्त्व न साधु दुरावहिं ॥ आरत अधिकारी जहँ पावहिं ॥ २ ॥ ❋

यदपि मैं स्त्री हूं अतएव इस बातकी अधिकारिणी नहीं हूं तथापि हे प्रभु ! मन, कर्म वचनसे आपकी दासी हूं सो मुझको तौ कहनाही पड़ेगा ॥ १ ॥ क्योंकि सत्पुरुषोंका यह स्वभाव है कि जहां उनको आर्त अधिकारी मिलता है वहां वे महागूढ़ तत्त्वकोभी नहीं छिपाते ॥ २ ॥

अति आरत पूंछौं सुरराया ॥ रघुपतिकथा कहहु करि दाया ॥ ३ ॥ ❋
प्रथम सो कारण कहहु बिचारी ॥ निर्गुण ब्रह्म सगुण बपुधारी ॥ ४ ॥ ❋

हे सुरराज ! मैं अत्यंत आर्त होकर पूछती हूं सो कृपा करके मुझे रामचन्द्रजीकी कथा कहो ॥ ३ ॥ प्रथम तौ मुझे विचार कर इसका कारण कहो कि निर्गुण ब्रह्ममें सगुणस्वरूप क्यों धारण किया ॥ ४ ॥

पुनि प्रभु कहहु रामअवतारा ॥ बालचरित पुनि कहहु उदारा ॥ ५ ॥ ❋
कहहु यथा जानकी बिबाहा ॥ राज तज्यो सो दूषण काहा ॥ ६ ॥ ❋

फिर रामचन्द्रजीके अवतारकी कथा कहो, फिर उनके उदार बालचरित्र कहो ॥ ५ ॥ जानकीका विवाह कैसे हुआ सो वह कथा कहो. और उन्होंने राज्य त्याग दिया सो राज्यमें क्या दूषण था कि जिससे त्याग दिया सो वह कहो ॥ ६ ॥

बन बसि कीन्हेउ चरित अपारा ॥ कहहु नाथ जिमि रावण मारा ॥ ७ ॥ ❋

राज बैठि कीन्ही बहुलीला ॥ सकल कहहु शंकर सुखशीला ॥ ८ ॥ ❋

और वनमें रहकर जो अपार चरित्र किये हैं सो हे नाथ ! वे चरित्र कहो और रावणको किसतरह मारा सो कहो ॥ ७ ॥ हे सुखशील शंकर ! रामचन्द्रजीने राजगद्दीपर बैठकर जो जो लीलायें करी है सो सब मुझे कहो ॥ ८ ॥

दोहा—बहुरि कहहु करुणायतन, कीन्ह जो अचरज राम ॥ ❋
प्रजासहित रघुबंशमणि, किमि गवने निजधाम ॥ १२० ॥ ❋

हे करुणानिधान ! रघुनाथजीने जो जो आश्चर्यकारी काम किये है सो सब मुझे कहो और राज करनेके अनंतर सारी प्रजाके साथ रघुनाथजी निजधाम कैसे पधारे सो कहो ॥ १२० ॥

पुनि प्रभु कहहु सो तत्त्व बखानी ॥ जेहि बिज्ञानमगन मुनि ज्ञानी ॥१॥❋
भक्ति ज्ञान बिज्ञान बिरागा ॥ पुनि सब बरणहु सहित बिभागा ॥ २ ॥ ❋

हे प्रभु ! फिर मुझे उस तत्त्वको वर्णन करके कहो कि जिस तत्त्वज्ञानमें ज्ञानी मुनि सदा लयलीन रहते है ॥ १ ॥ फिर ज्ञान, विज्ञान, भक्ति और वैराग्य वे सब जुदे जुदे विभागके साथ वर्णन करके कहो ॥ २ ॥

औरौ रामरहस्य अनेका ॥ कहहु नाथ अति बिमल बिबेका ॥ ३ ॥ ❋
जो प्रभु मैं पूँछा नहिँ होई ॥ सोउ दयालु राखहु जनि गोई ॥ ४ ॥ ❋

हे नाथ ! औरभी जो अनेक रामचन्द्रजीके रहस्य है वे सब मुझे कहो कि जिससे अत्यंत निर्मल ज्ञान हो जाय ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! औरभी जो कुछ मेरे पूछनेमें बाकी रह गया होवे यानी मैंने जो आपसे नहीं पूंछा होवे सो वहभी हे दयालु प्रभु ! कृपा करके कहदेना, छिपा मत रखना ॥ ४ ॥

तुम त्रिभुवनगुरु बेद बखाना ॥ आन जीव पामर का जाना ॥ ५ ॥ ❋
प्रश्न उमाके सहजसुहाये ॥ छलबिहीन सुनि शिव मन भाये ॥ ६ ॥ ❋

हे प्रभु ! यह बात वेद कहता है कि आप त्रिलोकीके गुरु हो सो आपके सिवाय दूसरा पामर (तुच्छ) जीव इस बातको क्या जाने ? ॥ ५ ॥ पार्वतीके ये सहजसुहावने निष्कपट प्रश्न सुनकर शिवजीके मनको बड़े अच्छे लगे ॥ ६ ॥

हरहिय रामचरित सब आये ॥ प्रेम पुलकि लोचन जल छाये ॥ ७ ॥ ❋
श्रीरघुनाथरूप उर आवा ॥ परमानन्द अमित सुख पावा ॥ ८ ॥ ❋

महादेवजीके हृदयमें सारे रामचन्द्रजीके चरित स्मरण आगये. प्रेमसे शरीर पुलकित हो गया. नेत्रोंमें जल भर आया ॥ ७ ॥ और शंकरके हृदयमें श्रीरामचन्द्रजीका रूप आया, जिससे परमानन्द और बेप्रमाण सुख पाया ॥ ८ ॥

दोहा—मग्न ध्यानरस दण्डयुग, पुनि मन बाहिर कीन्ह ॥ ❋
रघुपतिचरित महेश तब, हर्षित बरणै लीन्ह ॥ १२१ ॥ ❋

दो घड़ीतक तो महादेवजी ध्यानरससे मग्न रहे फिर मनको उससे बाहिर निकालकर महादेवजी आनंदित होकर रामचन्द्रजीका चरित्र वर्णन करने लगे ॥ १२१ ॥

झूंठौ सत्य जाहि बिनु जाने ॥ जिमि भुजंग बिनु रज्जु पहिंचाने ॥ १ ॥ ❋
जेहि जाने जग जाइ हेराई ॥ जागे यथा स्वप्नभ्रम जाई ॥ २ ॥ ❋

महादेवजीने कहा कि-हे पार्वती ! बिना जाने झूंठा पदार्थभी सत्यसा मालूम हो जाता है जैसे रज्जु यानी रस्सीको पहिंचाने बिना रस्सीही सर्परूप दीख पड़ती है ॥ १ ॥ और जिन (राम) को जाननेपर यह संसार हेराई यानी त्यागनेके योग्य दीखने लग जाता है; जैसे कि जागनेपर स्वप्नका भ्रम मिट जाता है ॥ २ ॥

बंदौ बालरूप सोइ रामू ॥ सबबिधि सुलभ जपत जस नामू ॥ ३ ॥ ❋
मंगलभवन अमंगलहारी ॥ द्रवौ सो दशरथअजिरबिहारी ॥ ४ ॥ ❋

उसी बालकरूप रामको मै प्रणाम करता हूं कि,जिसका नाम जप करते समय सब प्रकारसे सुलभ है ॥ ३ ॥ जो मंगलके धाम और अमंगलके मिटानेवाले दशरथके आंगनमें खेलनेवाले राम हैं वे मुझपर कृपा करो ॥ ४ ॥

करि प्रणाम रामहिँ त्रिपुरारी ॥ हरषि सुधासम गिरा उचारी ॥ ५ ॥ ❋
धन्य धन्य गिरिराजकुमारी ॥ तुमसमान नहिँ कोउ उपकारी ॥ ६ ॥ ❋

ऐसे महादेवजीने रामको प्रणाम करके खुश होकर अमृतसी मधुर वाणीसे कहा ॥५॥ कि हे पार्वती ! तू जगतमें बड़ी धन्य है; तुम्हारे जैसा दूसरा कोईभी उपकारी नहीं है ॥ ६ ॥

पूंछेहु रघुपतिकथाप्रसंगा ॥ सकललोकपावनि जसि गंगा ॥ ७ ॥ ❋
तुम रघुवीरचरणअनुरागी ॥ कीन्हेउ प्रश्न जगतहितलागी ॥ ८ ॥ ❋

क्योंकि तुमने गंगाके समान सारे संसारको पावन करनेवाला रामचन्द्रजीकी कथाका प्रसंग पूंछा है ॥ ७ ॥ तुम रामचन्द्रजीके चरणोंके परमप्रेमी भक्त हो. तुमने जो यह प्रश्न किया है सो केवल जगत्के हितके लिये किया है ॥ ८ ॥

दोहा-रामकृपाते पार्वती,सपनेहुँ तव मनमाहिँ ॥ ❋
शोक मोह संदेह भ्रम, मम बिचार कछु नाहिँ ॥ १२२ ॥ ❋

हे पार्वती ! मैं तो मेरे विचारसे यों जानता हूं कि, रामचन्द्रजीकी कृपासे तुम्हारे मनमें स्वप्नमें भी शोक मोह, संदेह व भ्रम कुछभी नहीं है ॥ १२२ ॥

तदपि अशंका कीन्हेउ सोई ॥ कहत सुनत सबकर हित होई ॥ १ ॥ ❋
जिन हरिकथा सुनी नहिँ काना ॥ श्रवणरन्ध्र अहिभवनसमाना ॥ २ ॥ ❋

तथापि तुमने वही शंका की है कि जिसके कहने व सुननेसे सबका भला होवे ॥ १ ॥ जिन्होंने रामचन्द्रजीकी कथा कानोंसे नहीं सुनी है उनके कानोंके छिद्र सांपके बिलके समान हैं ॥ २ ॥

नयनन सन्तदरश नहिँ देखा ॥ लोचन मोरपंखकर लेखा ॥ ३ ॥ ❋
ते शिर कटुतूमरसम तूला ॥ जे न नमत हरिगुरुपदमूला ॥ ४ ❋

जिन्होंने नेत्रोंसे सत्पुरुषोंके दर्शन नहीं किये हैं उनके नेत्र मोरपंखके समान गिने जाते हैं ॥ ३ ॥

जो शिर भगवान्के और गुरुके चरणारविंदोंके मूलमें नहीं नवते उन मस्तकोंको कडुए तुंबोंके समान समझना ॥ ४ ॥

जिन हरिभक्ति हृदय नहिं आनी ॥ जीवत शवसमान ते प्रानी ॥ ५ ॥ ❋
जे नहिँ करहिँ रामगुणगाना ॥ जीह सो दादुरजीहसमाना ॥ ६ ॥ ❋

जिन्होंके हृदयमें भगवान्की भक्ति नहीं है वे प्राणी जीतेहुए मुर्दोंके समान है ॥ ५ ॥ जो जीव रामचन्द्रजीके गुण गान नहीं करते उनकी जीभ मेंडककी जीभके समान है ॥ ६ ॥

कुलिशकठोर निठुर सोइ छाती ॥ सुनि हरिचरित न जो हरषाती ॥७॥ ❋
गिरिजा सुनहु रामके लीला ॥ सुरहित दनुज बिमोहनशीला ॥ ८ ॥ ❋

जो हृदय हरि भगवान्के चरित्र सुनकर हर्षित नहीं होता उसे वज्रसेभी महाकठोर निष्ठुर समझना चाहिये ॥ ७ ॥ हे पार्वती ! देवताओंका हित करनेवाली और दैत्योंको मोहित करनेवाली श्रीरामचन्द्रजीकी लीला (कथा) कहता हूं सो सुनो ॥ ८ ॥

दोहा– रामकथा सुरधेनु सम, सेवत सब सुख दान ॥ ❋
सन्तसभा सुरलोकसम, को न सुनै अस जान ॥ १२३ ॥ ❋

हे पार्वती ! रामचन्द्रजीकी कथा तो कामधेनुके समान है और सत्पुरुषोंकी सभा देवलोकके तुल्य है कि जो सेवा करनेसे सबको सुख देती है. ऐसेजानता हुआ कौन पुरुष श्रवण न करे ? ॥ १२३ ॥

रामकथा सुन्दर करतारी ॥ संशय बिहग उड़ावनहारी ॥ १ ॥ ❋
रामकथा कलिबिटपकुठारी ॥ सादर सुनु गिरिराजकुमारी ॥ २ ॥ ❋

रामचन्द्रजीकी कथारूप सुन्दर करतारी संदेहरूप पक्षियोंको उड़ानेवाली है अर्थात् जैसे तारीका शब्द सुननेसे पक्षी उड़ जाते है ऐसे रामकथा सुननेसे संदेह मिट जाते हैं ॥ १ ॥ हे पार्वती ! रामचन्द्रजीकी कथा कलियुगरूप पेड़को काटनेके लिये साक्षात् कुठाररूप है इसलिये तू ध्यान देकर उसे सुन ॥ २ ॥

रामनामगुणचरित सुहाये ॥ जन्म कर्म अगणित श्रुति गाये ॥ ३ ॥ ❋
यथा अनन्त राम भगवाना ॥ तथा कथा कीरति गुण नाना ॥ ४ ॥ ❋

रामचन्द्रजीके नाम गुण व सुहावने चरित्र तथा जन्म व कर्म अपार हैं सो वेदमें गाये हैं ॥ ३ ॥ जैसे प्रभु राम अनन्तरूप हैं ऐसे उनकी कथा किर्ति और गुणभी अनन्त हैं ॥ ४ ॥

तदपि यथाश्रुति जस मति मोरि ॥ कहिहौं देखि प्रीति अति तोरी ॥५॥ ❋
उमा प्रश्न तव सहजसुहाई ॥ सुखद सन्त सम्मत मुहिं भाई ॥ ६ ॥ ❋

तथापि जैसा मैंने सुना है और जैसी मेरी बुद्धि है उसके अनुसार तेरी अतिशय प्रीति देखकर कहूंगा ॥ ५ ॥ हे पार्वती ! तेरा प्रश्न सहजसुन्दर, सुखदायी, सत्पुरुषोंके परममान्य, और मेरे मन भावता है ॥ ६ ॥

एक बात नहिँ मोहिँ सुहानी ॥ यदपि मोहबश कहेउ भवानी ॥ ७ ॥ ❋
तुम जो कहाराम कोउ आना ॥ जेहि श्रुतिगाव धरहिँ मुनिध्याना ॥८॥ ❋

हे पार्वती ! तुमने जो एक बात कही वो तो मुझको बिलकुल नहीं सुहायी. चाहे तुमने वो बात अज्ञानवश होकरभी कही हो ॥ ७ ॥ तुमने जो कहा था कि जिसको वेद गाते है और मुनिलोग जिसका ध्यान धरते हैं वो राम क्या कोई दूसरा है ? ॥ ८ ॥

दोहा–कहहिँ सुनहिँ अस अधम नर, ग्रसे जो मोहपिशाच ॥ ❋
पाखण्डी हरिपदबिमुख, जानहिँ झूंठ न सांच ॥ १२४ ॥ ❋

हे पार्वती ! ऐसी बात तो कौन नीच आदमी कहते हैं और सुनते है कि जो मोहरूप पिशाचसे ग्रसेहुए हैं. पाखंडो हैं, हरिके चरणोंसे विमुख हैं और जो झूठ सांच नहीं समझते हैं अथवा " झूठ जानहिं, सांच न" अर्थात् झूंठे देहादिको तो ज्ञान है और न सांच यानी सत्य जो आत्मा तिसका ज्ञान नहीं ॥ १२४ ॥

अज्ञ अकोविद अन्ध अभागी ॥ काई विषय मुकुर मन लागी ॥ १ ॥ ❋
लम्पट कपटी कुटिल विशेखी ॥ सपनेहुँ सन्तसभा नहिं देखि ॥ २ ॥ ❋

जो अज्ञ यानी मूर्ख हैं, जिनको किसी बातका विवेक नहीं है, जिनके बुद्धिरूप नेत्र नहीं हैं, अभागे हैं, जिनके मनरूप दर्पणपर विषयरूप काई लगी हुई है ॥ १ ॥ स्त्रीलम्पट है, कपटी और जो महाकुटिल हैं, और जिन्होंने स्वप्नमेंभी सत्पुरुषोंकी सभा नहीं देखी है ॥ २ ॥

कहहिँ ते वेदअसम्मत बानी ॥ जिनहिँ न सूझ लाभ नहिं हानी ॥ ३ ॥ ❋
मुकुर मलिन अरु नयनबिहीना ॥ रामरूप देखहिँ किमि दीना ॥ ४ ॥ ❋

तथा जिनको लाभ और हानि नहीं दीखती है वे लोग ऐसी वेदविरुद्ध वाणी कहते हैं॥३॥ जिनका मनरूप दर्पण मलिन है और जिनके ज्ञानरूप नेत्र नहीं हैं वे पामर जीव प्रभुके स्वरूपको कैसे देख सकते हैं ? ॥ ४ ॥

जिनके अगुण न सगुण विवेका ॥ जल्पहिँ कल्पित बचन अनेका ॥ ५ ॥
हरिमायाबश जगतभ्रमाहीं ॥ तिनहिँ कहत कछु अघटित नाहीं ॥ ६ ॥

जिनको अगुण और सगुणका विवेक नहीं है. और जो कपोलकल्पित अनेक प्रकारके वचन बोलते हैं ॥ ५ ॥ तथा जो प्रभुकी मायाके वश होकर जगतमें भ्रमण करते हैं वे लोग जो कुछ कहैं तो उसमें कुछ असंभव नहीं है ॥ ६ ॥

बातुल भूतबिबश मतवारे ॥ ते नहिँ बोलहिँ बचन संभारे ॥ ७ ॥ ❋
जिन कृत महामोह मद पाना ॥ तिनकर कहा करिय नहिँ काना ॥८॥ ❋

क्योंकि जो बादीमें आ जाता है जो भूतके विवश हो जाता है और जो मद्य पीकर मतवारा हो जाता है ये सब कभी सँभालकर वचन नहीं बोलते हैं किंतु आया सो बक दिया ॥ ७ ॥ ऐसेही जिन्होंने महामोहरूप मद्य पी लिया है वे जो कुछ बकें उसको कानोंमें नहीं करना चाहिये यानी सुनना नहीं चाहिये ॥ ८ ॥

सोरठा–अस निजहृदय बिचारि, तजि संशय भज राम पद ॥
सुनु गिरिराजकुमारि, भ्रमतमरविकर बचन मम ॥१६॥ ❋

हे पार्वती ! तू अपने मनमें ऐसा विचार करके संशयको छोड़कर रामचन्द्रजीके चरणोंका भजन कर. और हे पार्वती ! भ्रमरूप तमको मिटानेके लिये साक्षात् सूर्यकी किरणोंके जैसा मेरा वचन सुन ॥ १६ ॥

सगुणहिँ अगुणहिँ नहिँ कछु भेदा॥गावहि मुनि पुराण बुध वेदा॥१॥
अगुण अरूप अलख अज जोई ॥भक्तप्रेमबश सगुण सो होई ॥ २ ॥ *

यह बात वेद, पुराण और सारे विद्वान् और मुनि कहते हैं कि सगुण और निर्गुणमें कुछ भेद नहीं है ॥ १ ॥ जो प्रभु अगुण, अरूप, अलक्ष्य और अजन्मा है वही भक्तोंक प्रेमके वश होकर सगुण हो जाता है ॥ २ ॥

जो गुणरहित सगुण सो कैसे ॥ जल हिमउपल बिलग नहिँ जैसे ॥ ३ ॥ *
जासु नाम भ्रमतिमिरपतंगा ॥ तेहि किमि कहिय बिमोहप्रसंगा ॥ ४ ॥ *

कदाचित् कहो कि, निर्गुण है वो सगुण कैसे हो सक्ता है ? तहां सुनो कि जैसे जल और हिमका पत्थर यानी बर्फ ये दोनों जुदे नहीं हैं किंतु एकही हैं परंतु इनके स्वरूपमें बहुत फर्क है यानी जलमें कोई आकार नहीं है और बर्फमें सब आकार हैं ऐसे प्रभुके स्वरूपविषे जानना ॥ ३ ॥ जिन रामचंद्रजीका नाम भ्रमतिमिर यानी अज्ञानरूप अंधकारका नाशक पतंग यानी सूर्यरूप है तिनके कहो मोहका प्रसंग कैसे कहना अर्थात् कभी नहीं ॥ ४ ॥

राम सच्चिदानन्द दिनेशा ॥ नहिँ तहँ मोहनिशालवलेशा ॥ ५ ॥ *
सहजप्रकाशरूप भगवाना ॥ नहिँ तहँ पुनि विज्ञान बिहाना ॥ ६ ॥ *

सच्चिदानन्द स्वरूप श्रीरामचंद्रजी सूर्यरूप हैं सो वहां मोहरूप रात्रिका लवलेशही कहां ? ॥ ५ ॥ प्रभु श्रीरघुनाथजी सहजप्रकाशरूप हैं सो वहां फिर ज्ञानरूप प्रातःकाल हो ही नहीं सकता; क्योंकि जहां सदा सूर्यका प्रकाश है वहां न तो रात्रि होती है और न प्रभात होता है ऐसे ही श्रीरामचन्द्रजी नित्यज्ञानमय हैं सो वहां न तो अज्ञानरूप रात्रि है और न वहां ज्ञानरूप प्रभात है ॥ ६ ॥

हर्ष बिषाद ज्ञान अज्ञाना ॥ जीवधर्म अहमिति अभिमाना ॥ ७ ॥ *
राम ब्रह्म व्यापक जग जाना ॥ परमानन्द परेश पुराना ॥ ८ ॥ *

हर्ष (खुशी) विषाद (रंज) ज्ञान, अज्ञान, अहंकार[1] और अभिमान[2] ये तो सब जीवके धर्म हैं; परमेश्वरके नहीं ॥ ७ ॥ और रामचन्द्रजी तो साक्षात् परब्रह्म, व्यापक, परमानन्दस्वरूप, परमेश्वर और अनादि हैं सो यह बात सारा जगत् जानता है ॥ ८ ॥

दोहा–पुरुष प्रसिद्ध प्रकाशनिधि, प्रगट परावरनाथ ॥ *
रघुकुलमणि मम स्वामि सोइ, कहि शिव नायउ माथ ॥ १२५ ॥ *

हे पार्वती ! जो, " पुरुष " इस नामसे सांख्यशास्त्रमें प्रसिद्ध हैं, जो प्रकाशनिधि और सारे उच्च नीच जीवजन्तुके प्रगट स्वामी हैं, वेही रघुकुलमणि श्रीरामचन्द्रजी मेरे स्वामी हैं. तुलसीदासजी कहते हैं कि ऐसे कहकर महादेवजीने प्रभुको सिर नवाया ॥ १२५ ॥

---

१ स्त्री, पुत्र, धन, आदि मेरे हैं. २ मैं महाविद्वान् हूं.

निजभ्रम नहिँ समुझहिँ अज्ञानी॥प्रभुपर मोह धरहिँ जड़ प्रानी॥१॥ ❀
यथा गगन घनपटल निहारी ॥ झम्पेउ भानु कहहिँ कुबिचारी ॥ २ ॥ ❀

ये जड़ अज्ञानी प्राणी अपने भ्रमसे मनमें नहीं समझकर अपना भ्रम प्रभुपर डालते हैं ॥ १ ॥ तहां दृष्टांत देते हैं कि जैसे आकाशमें गहरे बादलका पटल देखकर मूर्खलोग कहते हैं कि सूर्य ढक गया. परंतु यह विचार नहीं करते कि, सूर्य कहां ढका है हमारी आंखके आड़में बादल आगये हैं इससे सूर्य नहीं दीखता; वास्तवमें सूर्य ढका नहीं है ॥ २ ॥

चितवत लोचन अंगुलि लाये ॥ प्रगट युगल शशि तेहिके भाये ॥ ३ ॥ ❀
उमा रामविषयिक अस मोहा ॥ नभ तम धूम धूरि जिमि सोहा ॥ ४॥❀

जो आदमी आंखके आगे अंगुली लगाकर देखता है तो उसके भाये चाहे दो चांद भले हों पर वास्तवमें चांद एकही है ॥ ३ ॥ हे पार्वती ! रामचन्द्रजीके विषे जो मोह करना सोभी ऐसेही है. जैसे आकाशमें अंधेरा, धूम, या धूलि कुछभी नहीं है परंतु जैसे ये सब आकाशमें प्रतीत होते हैं ऐसेही रामके विषे जानो ॥ ४ ॥

विषय करण सुर जीवसमेता ॥ सकल एकते एक सचेता ॥ ५ ॥ ❀
सबकर परमप्रकाशक जोई ॥ राम अनादि अवधपति सोई ॥ ६ ॥ ❀

अध्यात्म, अधिदैव और अधिभूत यह त्रिविध सृष्टि है. तहां अध्यात्म इंद्रियको कहते हैं सो इंद्रियां दश हैं. अधिदैव देवताको कहते हैं सो दशों इंद्रियोंके दश देवता हैं. अधिभूत गोलकको कहते हैं ये सब और विषय शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, और जीव ये सब इकठे एकसे एक सचेतन हैं अर्थात् इनमेंका यदि एकभी पदार्थ न होवे तो कार्यसिद्धि होवे नहीं. जैसे आंख और चक्षु इंद्रिय हैं परंतु सूर्य देवता विना दीख सके नहीं. सूर्य और आंख हैं परंतु चक्षुइंद्रिय न होवे तो दीखे नहीं. चक्षु और सूर्य है परंतु आंख गोलक न होवे तो दीखे नहीं इससे कहा है कि ये सब एकसे एक सचेतन है ॥ ५ ॥ परंतु हे पार्वती ! इन सबका जो परमप्रकाश है वही अनादि अयोध्यापति राम है ॥ ६ ॥

जगतप्रकाश्य प्रकाशक रामू ॥ मायाधीश जान गुणधामू ॥ ७ ॥ ❀
जासु सत्यताते जड़ माया ॥ भास सत्य इव मोहसहाया ॥ ८ ॥ ❀

जगत् तो प्रकाश्य अर्थात् प्रकाशित होनेवाला और राम प्रकाशक यानी प्रकाशित करनेवाले है. हे पार्वती ! वे गुणोंके धाम श्रीराम मायाके स्वामी हैं सो तू जान ॥ ७ ॥ जिस प्रभुकी सत्यतासे अर्थात् चैतन्यशक्तिसे यह जड़ यानी अचेतन माया मोहकी सहायता पाकर अर्थात् अज्ञानसे सत्यके जैसी यानी चैतन्यसी भासती है वह अयोध्यापति राम हैं ॥ ८ ॥

दोहा-रजत सीपमहँ भास जिमि, यथा भानुकर बारि ॥ ❀
यदपि मृषा तिहुँकाल सोइ, भ्रम न सकै कोउ टारि ॥ १२६ ॥ ❀

जैसे सीपमें रजत (रूपा) और सूर्यकी किरणोंमे जल भ्रांतिसे भासता है सो वह यद्यपि तीनों कालमें असत्य है परंतु वह भ्रम किसीसे मिटाया नहीं जा सक्ता ऐसेही यह प्रकृति यानी प्रकृ-

तिसे बनाहुआ शरीर जड़ है परंतु अज्ञानके कारण ईश्वरकी चैतन्यशक्तिसे चैतन्यसा भासता है. शरीरका चैतन्यरूपसे प्रतीत होना यद्यपि मिथ्या है तथापि वो मिथ्या भ्रम प्रभुकी कृपा हुए विना नहीं मिटता ॥ १२६ ॥

यहि बिधि जग हरिआश्रित रहई ॥ यदपि असत्य देत दुख अहई ॥ १ ॥ *
ज्यों सपने शिर काटै कोई ॥ बिनु जागे दुख दूरि न होई ॥ २ ॥ *

इसीतरह जगत् हरिके आश्रित रहता है सो जानो शरीरमें चैतन्य भ्रांति (सुख दुःखका भोक्ता 'मैं हूं' ऐसा अहंकार) होनी यद्यपि मिथ्या है परंतु जबलों वह रहती है तबलों दुःख दियेही जाती है ॥ १ ॥ जैसे किसीका स्वप्नमें शिर काटा जाय तो वह शिर काटनेका दुःख जागे विना कभी दूर नहीं होता किंतु जागनेपरही मिटता है ऐसे यह जड़में चैतन्यभ्रांतिभी जबलों नहीं मिटती तबलों वह दुःख बनाही रहता है ॥ २ ॥

जासु कृपा अस भ्रम मिटि जाई ॥ गिरिजा सोइ कृपालु रघुराई ॥ ३ ॥ *
आदि अन्त कोउ जासु न पावा ॥ मतिअनुमान निगम अस गावा ॥ ४ ॥ *

वो दुःख प्रभुकी कृपासे मिटता है सो कहते है. हे पार्वती ! जिसकी कृपासे यह ऐसा भारी भ्रम मिट जाता है वह दयालु श्रीरामचन्द्रजी वही है कि जो अयोध्यापतिके पुत्र है ॥ ३॥ उस प्रभुका आदिअन्त किसीने नहीं पाया है. वेदनेभी अपनी बुद्धिके अनुसार ऐसे गाया है सो सुनो ॥ ४ ॥

बिनु पद चलै सुनै बिनु काना ॥ कर बिनु कर्म करै बिधि नाना ॥ ५ ॥ *
आननरहित सकलरसभोगी ॥ बिनु बाणी बक्ता बड़ योगी ॥ ६ ॥ *

उसके पांव नहीं है और चलता है. कान नहीं है और सुनता है. हाथ नहीं हैं और अनेक प्रकारके कर्म करता है ॥ ५ ॥ मुख नहीं है और सब रस खाता है. वाणी नहीं है और बड़े बड़े योगी जनोंको उपदेश करता है जैसे ब्रह्माजीको चतुःश्लोकी भागवतका उपदेश किया इत्यादि ॥ ६ ॥

तनु बिनु परस नयन बिनु देषा ॥ ग्रहै घ्राण बिनु बास अशेषा ॥ ७ ॥ *
अस सबभांति अलौकिक करणी ॥ महिमा जासु जाय नहिँ बरणी ॥ ८ ॥ *

त्वचा नहीं है और स्पर्श करता है. आंखें नहीं है और देखता है. घ्राणइंद्रिय नहीं है और सब गंध ग्रहण करता है ॥ ७ ॥ ऐसे परमेश्वरकी करणी सब प्रकारसे अलौकिक है जिसकी महिमा वर्णन करनेमें नहीं आ सक्ती ॥ ८ ॥

दोहा–जेहि इमि गावहिँ बेद बुध, जाहि धरहिँ मुनि ध्यान ॥ *
सोई दशरथसुत भक्तहित, कोशलपति भगवान ॥ १२७ ॥ *

जिनके स्वरूपको वेद और विद्वान्लोग इसतरह वर्णन करते हैं, जिनका मुनिलोग ध्यान धरते हैं वेही प्रभु भक्तोंका हित करनेके लिये अयोध्यापति श्रीदशरथके पुत्र हुए हैं ॥ १२७ ॥

काशी मरत जन्तु अवलोकी ॥ जासु नामबल करौं बिशोकी ॥ १ ॥ *
सोइ प्रभु मोर चराचरस्वामी ॥ रघुबर सबउरअन्तरयामी ॥ २ ॥ *

महादेवजी कहते हैं कि–हे पार्वती ! काशीमें मरतेहुए जीवोंको देखकर जिनके नामके बल प्रता-

पसे मैं उनका शोक मिटा देता हूं " अर्थात् दुःखक्लेश मिटा देता हूं " ॥ १ ॥ वेही प्रभु मेरे और चरा-चरके स्वामी है जो प्रभु तमाम प्राणीमात्रके अंतर्यामी और सबके घटघटमें विराजते हैं ॥ २ ॥

बिबशहु जासु नाम नर कहहीं ॥ जन्म अनेक संचित अघ दहहीं ॥ ३ ॥ ❋
सादर सुमिरण जो नर करहीं ॥ भवबारिधि गोपद इव तरहीं ॥ ४ ॥ ❋

विवश होनेपरभी जिसका नाम लेनेसे यह मनुष्य अनेक जन्मोंके पूर्वसंचित पापोंको भस्म कर देता है ॥ ३ ॥ उस प्रभुका जो आदरपूर्वक स्मरण करते हैं वे मनुष्य इस संसारसागरको गौके खुरके खड्डेकी भांति तुरंत तिर जाते है ॥ ४ ॥

राम सो परमात्मा भवानी ॥ तहँ भ्रम अति अविहित तव बानी ॥ ५ ॥ ❋
अस संशय आनत उरमाहिं ॥ ज्ञान बिराग सकल गुण जाहीं ॥ ६ ॥ ❋

हे पार्वती ! जिसका नाम लेनेसे मनुष्य संसारसे पार उतर जातेहै वही परमात्मा राम हैं उसमें भ्रम-रूप तेरा कहना अत्यन्तही अनुचित है ॥ ५ ॥ क्योंकि, मनमें इस बातका संदेह लातेही ज्ञान, वैराग्य और सारे गुण दूर चले जाते हैं ॥ ६ ॥

सुनि शिवके भ्रमभंजन बचना ॥ मिटि गइ सब कुतर्ककी रचना ॥ ७ ॥ ❋
भइ रघुपतिपदप्रीतिप्रतीती ॥ दारुण असम्भावना बीती ॥ ८ ॥ ❋

महादेवजीके ऐसे भ्रम मिटानेवाले वचन सुनकर पार्वतीके मनमें जो कुतर्ककी रचना थी वो सब मिट गयी ॥ ७ ॥ और रामचन्द्रजीके चरणकमलोंमें दृढ़ प्रीति होगयी, पक्का भरोसा आगया व महाकठिन असंभावना मिट गयी ॥ ८ ॥

दोहा—पुनि पुनि प्रभुपद कमल गहि, जोरि पंकरुह पानि ॥ ❋
बोलीं गिरिजा बचन बर, मनहुँ प्रेमरससानि ॥ १२८ ॥ ❋

उस समय बारंबार महादेवके चरणकमलोंको पकड़ करकमल जोड़कर पार्वतीने ऐसे मधुर बचन कहे कि, मानों वे प्रेमरससे भरपूर भरेहुए थे ॥ १२८ ॥

शशिकरसम सुनि गिरा तुम्हारी ॥ मिटा मोहशरदातप भारी ॥ १ ॥ ❋
तुम कृपालु सब संशय हरेउ ॥ राम स्वरूप जानि मोहिँ परेऊ ॥ २ ॥ ❋

पार्वती बोलीं कि—हे प्रभु ! चंद्रमाकी किरणोंके जैसी आपकी शीतल बाणी सुनकर शरदऋतुके महाप्रचंड धूपके जैसा मेरा महामोह मिटा ॥ १ ॥ हे दयालु प्रभु ! आपने कृपा करके मेरा सन्देह मिटा दिया कि जिससे मेरेको रामचन्द्रजीका स्वरूप जान पड़ा ॥ २ ॥

नाथकृपा अब गयउ विषादा ॥ सुखी भइउँ प्रभुचरणप्रसादा ॥ ३ ॥ ❋
अब मोहिँ अपनि किंकरि जानी ॥ यदपि सहजजड नारि अयानी ॥ ४ ॥ ❋

हे नाथ ! आपकी कृपासे अब मेरा वो विषाद मिट गया है. आपके चरणोंकी कृपासे अब मैं सुखी होगयी हूं ॥ ३ ॥ यद्यपि मैं स्त्रीजाति सहजजड़ अज्ञान हूं तथापि हे प्रभु ! अब आप मुझे अपनी दासी समझके— ॥ ४ ॥

प्रथम जो मैं पूंछा सो कहहू ॥ जो मोपर प्रसन्न प्रभु अहहू ॥ ५ ॥ ❋

राम ब्रह्म चिन्मय अविनाशी ॥ सर्वरहित सबउरपुरवाशी ॥ ६ ॥ *

हे प्रभु ! जो आप मुझपर प्रसन्न हो तौ कृपा करके मुझे वही प्रसंग कहो कि जो मैंने पहले आपसे पूंछा है ॥ ५ ॥ हे नाथ ! रामचन्द्रजी ! साक्षात् परब्रह्म, चैतन्यस्वरूप, नाशरहित सर्वप्रपंचरहित और सबके घटमें बिराजनेवाले सर्वव्यापक है ॥ ६ ॥

नाथ धरेउ नरतनु केहि हेतू ॥ मोहिँ समुझाइ कहहु वृषकेतू ॥ ७ ॥ *

उमावचन सुनि परमबिनीता ॥ रामकथापर प्रीति पुनीता ॥ ८ ॥ *

तो हे नाथ ! उन्होंने मनुष्यशरीर क्यों धारण किया ? सो मुझे समझा कर कहो ॥ ७ ॥ ऐसे पार्वतीके परम विनीत बचन सुन, और प्रभुकी कथापर परमपवित्र प्रीति देखकर- ॥ ८ ॥

दोहा--हिय हर्षे कामारि तब, शंकर सहजसुजान ॥ *

बहुबिधि उमाहिँ प्रशंसि पुनि, बोले कृपानिधान ॥ १२९ ॥ *

सहजसुजान श्रीमहादेवजी मनमें बड़े प्रसन्न हुए और पार्वतीकी अनेक तरह प्रशंसा करके कृपानिधि बोले कि-॥ १२९ ॥

सोरठा--सुनु शुभकथा भवानि, रामचरित मानस विमल ॥ *

कहा भुशुंडि बखानि, सुना बिहगनायक गरुड़ ॥ १७ ॥ *

सोइ संवाद उदार, जेहि बिधि भा आगे कहब ॥ *

सुनहु रामअवतार, चरित परम सुन्दर अनघ ॥ १८ ॥ *

हरिगुणनाम अपार, कथा रूप अगणित अमित ॥ *

मैं निजमतिअनुसार, कहौं उमा सादर सुनहु ॥ १९ ॥ *

हे पार्वती ! जिसमें अति सुहावनी सुंदर कथायें है ऐसा परम निर्मल रामचरित मानस मैं तुमसे कहता हूं सो सुनो. जो काकभुशुंडीने वर्णन किया है और पक्षिराज गरुडजीने सुना है ॥ १७ ॥ वही परम उदार संवाद मैं तुमको कहूंगा जैसे वो पहले हुआ है सो तुम सचेत होकर रामचन्द्रजीके अवतारका परम रम्य पवित्र चरित्र सुनो ॥ १८ ॥ हे पार्वती ! प्रभुके नाम व गुण अपार है और उनके रूप व कथाओंका कुछ शुमारही नहीं है; क्योंकि वे अगणित और अपरिमित हैं सो मैं मेरी बुद्धिके अनुसार कहता हूं सो तुम आदरके साथ सुनो ॥ १९ ॥

सुनु गिरिजा हरिचरित सुहाये ॥ बिपुल बिशद निगमागम गाये ॥ १ ॥ *

हरि अवतार हेतु जेहि होई ॥ इदमित्थं कहि जाइ न सोई ॥ २ ॥ *

हे पार्वती ! तुम प्रभुके सुहावने चरित्र सुनो जो अपार उज्ज्वल चरित्र वेद, व पुराणोंमें गाये हैं ॥ १ ॥ प्रभुका अवतार जिसवास्ते होता है उस सबको यह इसीलिये हुआ है ऐसे तो कोई कहही नहीं सकता ॥ २ ॥

राम अतर्क्य बुद्धि मन बानी ॥ मत हमार अस सुनहु भवानी ॥ ३ ॥ *

तदपि सन्त मुनि वेद पुराना ॥ जस कछु कहहिँ स्वमतिअनुमाना ॥ ४ ॥ *

क्योंकि रामचन्द्रजीका स्वरूप मन, बुद्धि व बाणीसे अगोचर है. हे पार्वती ! हमारा तो ऐसा

भत है सो सुनो ॥ ३ ॥ यद्यपि प्रभुका स्वरूप मन बुद्धिसे पर है तथापि वेद, पुराण, मुनि और संत लोग जैसा कुछ अपनी बुद्धिके अनुसार कहते है ॥ ४ ॥

तस मैं सुमुखि सुनावउँ तोहीं ॥ समुझि परै जस कारण मोहीं ॥ ५ ॥ ❋
जब जब होइ धर्मकी हानी ॥ बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी ॥ ६ ॥ ❋

और जैसा कुछ अवतार लेनेका कारण मेरी समझमें आया है वैसा हे सुमुखी ! मैं तुमको सुनाता हूं सो सुनो ॥ ५ ॥ जब २ धर्मकी हानि होती है और अभिमानी नीच दैत्य बढ़ जाते है ॥ ६ ॥

करहिँ अनीति जाइ नहिँ बरणी ॥ सीदहिँ बिप्र धेनु सुर धरणी ॥ ७ ॥ ❋
तब तब प्रभु धरि बिबिध शरीरा ॥ हरहिँ कृपानिधि सज्जनपीरा ॥ ८ ॥ ❋

और वे लोग महाअनीति करते है अर्थात् अन्यायके मार्ग चलते है कि, जिसके विषयमें कुछ कह नहीं सक्ते और उससे गौ, ब्राह्मण, देवता व पृथ्वी ये सब दुःखी होजाते है ॥ ७ ॥ तब तब कृपानिधि प्रभु अनेक प्रकारके शरीर धरकर पृथ्वीपर प्रगट होते हैं और सत्पुरुषोंका दुःख मिटाते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—असुर मारि थापहिँ सुरन्हि, राखहिँ निजश्रुतिसेतु ॥ ❋
जग बिस्तारहिँ बिशद यश, रामजन्मकर हेतु ॥ १३० ॥ ❋

प्रभु अवतार लेकर दैत्योंको मार, देवतानको स्थापित करते हैं और अपनी बांधीहुई वेदकी मर्यादाको सुरक्षित कर जगतमें अपना निर्मल सुयश फैलाते हैं. ऐसे एक तौ प्रभुके अवतार लेनेका कारण यह है ॥ १३० ॥

सोइ यश गाइ भक्त भव तरहीं ॥ कृपासिंधु जनहित तनु धरहीं ॥ १ ॥ ❋
रामजन्मके हेतु अनेका ॥ परम बिचित्र एकते एका ॥ २ ॥ ❋

और दूसरा कारण यह है कि, प्रभु अवतार ले जो चरित्र करते हैं उस सुयशको गायकर भक्तलोग संसारसे पार उतरते हैं ॥ १ ॥ कृपासिंधु प्रभु भक्तलोगोंके हितके लिये देह धारण करते हैं तौ सो प्रसिद्धही है और दूसरेभी प्रभुके अवतार लेनेके अनेक कारण है जो एकसे एक बड़े विचित्र हैं ॥ २ ॥

जन्म एक दुइ कहौं बखानी ॥ सावधान सुनु सुमति भवानी ॥ ३ ॥ ❋
द्वारपाल हरिके प्रिय दोऊ ॥ जय अरु बिजय जान सबकोऊ ॥ ४ ॥ ❋

उनमेंसे एक दो अवतारके कारण मैं तुमको कहता हूं सो हे सुबुद्धि भवानी ! सचेत होकर सुनो॥३॥ प्रभुके दो परमप्रिय द्वारपाल हैं जिनके नाम जय और विजय हैं सो तौ सब कोई जानतेही हैं ॥ ४ ॥

बिप्रशापते दोनौं भाई ॥ तामस असुरदेह तिन पाई ॥ ५ ॥ ❋
कनककशिपु अरु हाटकलोचन ॥ जगत बिदित सुरपतिमदमोचन ॥ ६ ॥ ❋

विप्र (सनत्कुमारादि) के शापसे उन दोनों भाइयोंको तमोगुणी दैत्यदेह मिली ॥ ५ ॥ सो वे दोनों हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष नामके दैत्य जगद्विख्यात हुए जिनका नाम लेतेही इन्द्रादि देवताओंके छक्के छूटते थे ॥ ६ ॥

बिजयी समरबीर बिख्याता ॥ धरि बराहबपु एक निपाता ॥ ७ ॥ ❋

होइ नरहरि बपु दूसर मारा ॥ जन प्रहलाद सुयश बिस्तारा ॥ ८ ॥ ❋

वे दोनों बड़े विजय करनेवाले और रणबांकुरे थे जिनमेंसे एक (हिरण्याक्ष) को तौ प्रभुने वराहस्वरूप धारण करके मारा ॥ ७ ॥ और दूसरेको नृसिंह अवतार धरकर मारा और अपने भक्त प्रह्लादका सुयश जगतमें फैलाया ॥ ८ ॥

दोहा–भये निशाचर जाइ ते, महाबीर बलवान ॥ ❋
कुम्भकरण रावण सुभट, सुर विजयी जगजान ॥ १२१ ॥ ❋

वे दोनों सुभट फिर जाकर महावीर और बली रावण व कुंभकरण नाम राक्षस हुए जिन देवविजयी राक्षसोंको सारा जगत् जानता है ॥ १२१ ॥

मुक्त न भये हते भगवाना ॥ तीन जन्म द्विजवचन प्रमाना ॥ १ ॥ ❋
एकबार तिनके हित लागी ॥ धरेउ शरीर भक्त अनुरागी ॥ २ ॥ ❋

यद्यपि हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष भगवान्के हाथसे मारे गये तथापि उनकी मुक्ति नहीं हुई जिसका कारण यह था कि, सनत्कुमारोंका बचन था कि तीन जन्मसे तुम्हारा उद्धार होगा सो उसको प्रमाण करना पड़ा ॥ १ ॥ महादेवजी कहते हैं कि–हे पार्वती ! एक कल्पमें तौ भक्तानुरागी प्रभु रामने कुंभकरणके हितके लिये शरीर धारण कियाथा ॥ २ ॥

कश्यप अदिति तहां पितुमाता ॥ दशरथ कौशल्या बिख्याता ॥ ३ ॥ ❋
एक कल्प इहिबिधि अवतारा ॥ चरित पवित्र किये संसारा ॥ ४ ॥ ❋

सो वहां पिता माता कश्यप और अदिति, दशरथ व कौशल्या नामसे प्रगट हुए अर्थात् दशरथजी कश्यपका अवतार थे और कौशल्या अदितिका अवतार थी ॥ ३ ॥ एक कल्पमें तौ प्रभुने इसतरह अवतार लेकर संसारमें परम पवित्र चरित्र किये थे ॥ ४ ॥

एक कल्प सुर देखि दुखारे ॥ समर जलन्धर सन सब हारे ॥ ५ ॥ ❋
शम्भु कीन्ह संग्राम अपारा ॥ दनुज महाबल मरै न मारा ॥ ६ ॥ ❋
परम सती असुराधिप नारी ॥ तेहिबल ताहि न जीत पुरारी ॥ ७ ॥ ❋

अब दूसरा कारण कहते हैं–एक कल्पमें प्रभुने इसवास्ते अवतार लिया था कि देवता जलन्धरसे युद्धमें हार जानेसे महादुःखी होगये ॥ ५ ॥ उन्हें देखकर महादेवजी उससे भारी संग्राम किया परंतु वह महाबली दैत्य किसीतरह मारा न मरा ॥ ६ ॥ क्योंकि उसकी स्त्री वृंदा परम सती (पतिव्रता) थी उसके धर्मके प्रतापसे उस दैत्यको महादेवजी जीत नहीं सके ॥ ७ ॥

दोहा–छल करि टारेउ तासु ब्रत, प्रभु सुर कारज कीन्ह ॥ ❋
जब तेइँ जानेउ मर्म तब, शाप कोप करि दीन्ह ॥ १२२ ॥ ❋

तब प्रभुने कपट करके उसका सतीत्व (पातिव्रत्य) खंडित करके देवताओंका कार्य किया. जब वृंदाको इस कपटकी खबर पड़ी तब उसने क्रोध करके भगवान्को शाप दिया. (यह कथा पद्मपुराणान्तर्गत कार्तिकमाहात्म्यमें सविस्तर है. सो वहां देख लेना) ॥ १२२ ॥

तासु शाप हरि कीन्ह प्रमाना ॥ कौतुकनिधि कृपालु भगवाना ॥ १ ॥ ❋
तहां जलन्धर रावण भयऊ ॥ रण हति राम परमपद दयऊ ॥ २ ॥ ❋

उस वृंदाके शापको प्रभुने प्रमाण किया; क्योंकि दयालु प्रभु कौतुकोंके भंडार हैं ॥ १ ॥ सो उस कल्पमें जलंधर रावण हुआ जिसे युद्धमें मारकर प्रभुने परम पद दिया ॥ २ ॥

एक जन्मकर कारण एहा ॥ जेहि लगि राम धरी नरदेहा ॥ ३ ॥ ❋
प्रति अवतार कथा प्रभुकेरी ॥ सुनि सुनि बरणी कबिन घनेरी ॥ ४ ॥ ❋

हे पार्वती ! प्रभुके एक जन्म लेनेमें यह कारण था कि जिसके वास्ते प्रभुने मनुष्यदेह धारण किया था ॥ ३ ॥ प्रभुके जितने अवतार हुए हैं उन तमाम अवतारोंकी कथा कविलोगोंने सुन सुन कर खूब बढ़ाकर बर्णन की है ॥ ४ ॥

नारद शाप दीन्ह यक बारा ॥ कल्प एक तेहिलगि अवतारा ॥ ५ ॥ ❋
गिरिजा चकित भई सुनि बानी ॥ नारद विष्णुभक्त मुनि ज्ञानी ॥ ६ ॥ ❋

एक बेर नारदजीने शाप दिया था सो एक कल्पमें उसीके लिये अवतार हुआ था ॥ ५ ॥ 'नारदजीने शाप दिया' यह बात सुनकर पार्वतीजी चकित हुई और बोली कि—हे प्रभु ! नारदमुनि तो भगवान्के परम भक्त हैं और बड़े ज्ञानी हैं ॥ ६ ॥

कारण कवन शाप मुनि दीन्हा ॥ का अपराध रमापति कीन्हा ॥ ७ ॥ ❋
यह प्रसंग मोहिँ कहहु पुरारी ॥ मुनिमन मोह सो अचरज भारी ॥ ८ ॥ ❋

सो नारदजीने प्रभुको शाप क्यों दिया ? प्रभुने नारदजीका क्या अपराध किया ? ॥ ७ ॥ हे प्रभु ! मुझे यह प्रसंग कहो; क्योंकि नारदमुनिके मनमें मोह हुआ यह बात सुनकर मुझको बड़ा आश्चर्य होता है ॥ ८ ॥

दोहा—बोले विहँसि महेश तब, ज्ञानी मूढ़ न कोई ॥ ❋
जेहि जस रघुपति करहिँ जब, सो तस त्यहि क्षण होई ॥ १३३ ॥ ❋

तब हँसकर महादेवजीने कहा कि-हे पार्वती ! जगतमें ज्ञानी और मूर्ख कोईभी नहीं है; क्योंकि रामचन्द्रजी जिस वक्त जिसको जैसा करते हैं उस समय वह वैसाही हो जाता है ॥ १३३ ॥

सोरठा—कहौं रामगुण गाथ, भरद्वाज सादर सुनहु ॥ ❋
भवभंजन रघुनाथ, भजु तुलसी तजि मान मद ॥ २० ॥ ❋

याज्ञवल्क्य मुनि भरद्वाजसे कहते हैं कि—हे भरद्वाज ! मैं रामचन्द्रजीके गुणोंकी कथा कहता हूं सो तुम ध्यान देकर सुनो. गोसांईजी अपने आप कहते हैं कि—हे तुलसी ! प्रभु भवभंजन यानी संसारसे छुड़ानेवाले हैं इसलिये तू मान और मदको छोड़कर प्रभुकी सेवा कर ॥ २० ॥

हिमगिरि गुहा एक अति पावनि ॥ वह समीप सुरसरित सुहावनि ॥ १ ॥ ❋
आश्रम परम पुनीत सुहावा ॥ देखि देवऋषि मन अतिभावा ॥ २ ॥ ❋

एक बहुत सुन्दर हिमालयकी पवित्र गुफा है उसके पास सुहावनी माता गंगा बह रही है ॥ १ ॥ उस गुफामें एक परम पवित्र आश्रम था उसको देखकर नारदजीका मन बड़ा प्रसन्न हुआ और उनके मनको वो बहुत अच्छा लगा ॥ २ ॥

निरखि शैल सरि बिपिन बिभागा ॥ भयउ रमापति पद अनुरागा ॥ ३ ॥ ❋

सुमिरत हरिहिँ श्वासगति बांधी ॥ सहज बिमल मन लागि समाधी ॥ ४ ॥ ❋

पर्वत, नदी और बनकी बहार देखकर नारदजीके मनमें प्रभुके चरणोंमें अतिशय प्रेम उत्पन्न हुआ ॥ ३ ॥ जिससे हरि याद आगये और प्रभुका स्मरण होतेही उन्होंने श्वासकी गति रोंकी जिससे तुरंत उनके सहज निर्मल मनमें समाधि लग गयी ॥ ४ ॥

मुनिगति देखि सुरेश डराना ॥ कामहिँ बोलि कीन्ह सन्माना ॥ ५ ॥ ❋
सहित सहाय जाहु मम हेतू ॥ चलेउ हर्षि हिय जलचरकेतू ॥ ६ ॥ ❋

नारदजीकी ऐसी दृढ़ समाधि दशा देखकर इंद्र डरा जिससे कामदेवको बुलाकर सन्मान करके कहा ॥५॥ कि-हे कामदेव ! तू मेरेवास्ते अपने सहायक लोगोंको साथ लेकर जा और नारदजीका तप खंडित कर. ऐसे इंद्रकी आज्ञा शिर चढ़ा कर मनमें प्रसन्न होकर कामदेव वहांसे चला ॥ ६ ॥

सुनासीर मनमहँ अतित्रासा ॥ चहत देवऋषि मम पुरवासा ॥ ७ ॥ ❋
जे कामी लोलुप जगमाहीं ॥ कुटिल काकइव सबहिँ डराहीं ॥ ८ ॥ ❋

और यहां इंद्रके मनमें इस बातका बड़ा डर था कि, नारद तपस्या करके मेरा पद लेना चाहता है ॥ ७ ॥ कवि कहता है कि- जगतमें जो पुरुष कामी, लालची और कुटिल होते हैं वे कव्वेकी माफक सबसे डरतेही रहते हैं ॥ ८ ॥

दोहा-सुख हाड़ ले भाग शठ, श्वान निरखि मृगराज ॥ ❋
छीनि लेइ जनि जान जड़, तिमि सुरपतिहिँ न लाज ॥ १३४ ॥ ❋

इंद्रने जो नारदजीकी तपस्या देखकर मनमें शंका मानी तहां दृष्टांत कहते हैं कि-जैसे शठ श्वान (कुत्ता) सिंहको देखकर अपने पासकी सूखी हड्डीको लेकर इस डरके मारे भागता है कि शायद यह सिंह मेरे पासकी हड्डी छीन न लेवे ऐसे मूर्ख इंद्रको नारदजीके पास कामदेवको भेजते बिलकुल लाज न आयी ॥ १३४ ॥

तेहि आश्रमहिँ मदन जब गयउ ॥ निजमाया बसन्त निर्मयऊ ॥ १ ॥ ❋
कुसुमित बिबिध बिटप बहुरंगा ॥ कूजहिँ कोकिल गुंजहिँ भृंगा ॥ २ ॥ ❋

जब कामदेव उस आश्रममें गया तो वहां अपनी माया फैलायी. वसंतऋतुमें- ॥ १ ॥ रंग रंगके अनेक वृक्ष फूले फूले शोभायमान होने लगे. उनपर कोकिला मधुर स्वरसे बोलने लगीं. और गुंजाहट करने लगे ॥ २ ॥

चली सुहावनि त्रिबिधि बयारी ॥ कामकृशानु बढ़ावनहारी ॥ ३ ॥ ❋
रम्भादिक सुरनारि नबीना ॥ सकल कुसुमशर कला प्रबीना ॥ ४ ॥ ❋

और कामाग्निको बढ़ानेवाली सुहावनी शीतल, सुगंध, मंद, त्रिविध बयार बहने लगी ॥ ३ ॥ रंभाआदि नवयौवना अप्सरा कि जो सब कामकलाओंमें प्रवीण थीं ॥ ४ ॥

करहिँ गान बहुतान तरंगा ॥ बहु बिधि क्रीड़हिँ पानि पतंगा ॥ ५ ॥ ❋
देखि सहाय मदन हर्षाना ॥ कीन्हेसि पुनि प्रपंच बिधि नाना ॥ ६ ॥ ❋

वे अनेक प्रकारकी तानें मूर्छनायें व लयके साथ गान करने लगीं और अनेक प्रकारसे हाथोंसे

गेंदका खेल खेलने लगीं ॥ ५ ॥ कामदेव इसतरहकी सहायता देखकर मनमें बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने औरभी अनेक प्रकारके प्रपंच किये ॥ ६ ॥

कामकला कछु मुनिहिँ न व्यापी ॥ निजभय डरेउ मनोभव पापी ॥ ७ ॥ ❋
सीम कि चापि सकै कोउ तासू ॥ बड़ रखवार रमापति जासू ॥ ८ ॥ ❋

कामदेवने बहुत कुछ कोशिश की परंतु मुनिके मनमें कुछभी कामकला नहीं व्यापी तब तो वह पापी कामदेव मनमें डरा ॥ ७ ॥ कवि कहता है कि–जिसके विष्णु भगवान्से बड़े रखवारे हैं क्या उसकी सीमाकोभी कोई दबा सक्ता है? अर्थात् उसकी हद्दमेंभी कोई नहीं जा सक्ता ॥ ८ ॥

दोहा– सहित सहाय सभीत अति, मानि हानि मन मैन ॥ ❋
गहेसि जाइ मुनिबरचरण, कहि सुठि आरत बैन ॥ १३५ ॥ ❋

कामदेवने इस बातसे अपने मनमें अपनी बड़ी हानि मानी अतएव अपने सहायक लोगोंको साथ ले अति भय खाय, मुनिके पास जाकर नारदजीके पाँव पकड़े और अतिसुन्दर आर्त वचन कहे॥१३५॥

भयउ न नारद मन कछु रोषा ॥ कहि प्रिय बचन काम परितोषा ॥ १ ॥ ❋
नाइ चरण शिर आयसु पाई ॥ गयउ मदन तब सहित सहाई ॥ २ ॥ ❋

यद्यपि कामदेवने नारदजीका बड़ा अपराध किया था तथापि नारदजीके मनमें कुछभी क्रोध नहीं हुआ. अतएव नारदजीने प्रिय वचन कहकर कामदेवजीको प्रसन्न किया ॥ १ ॥ तब कामदेव नारदजीके चरणोंमें शिर नवाय उनसे आज्ञा पाकर अपने सहायोंके साथ इंद्रके पास गया ॥ २ ॥

सुनि सुशीलता आपनि करणी ॥ सुरपति सभा जाय सब बरणी ॥ ३ ॥ ❋
सुनि सबके मन अचरज आवा ॥ मुनिहिँ प्रशंसि हरिहिँ शिर नावा ॥ ४ ॥ ❋

इंद्रकी सभामें जाकर कामदेवने नारदजीकी सुशीलता और अपना सारा कर्तव्य इंद्रसे कहा ॥ ३ ॥ कामदेवके वचन सुनकर सब लोगोंके मनमें बड़ा अचरज हुआ और उन्होंने नारदजीकी प्रशंसा करके प्रभुको शिर नवाया ॥ ४ ॥

तब नारद गवने शिवपाहीं ॥ जीति काम अहमिति मनमाहीं ॥ ५ ॥ ❋
मारचरित शंकरहिँ सुनावा ॥ अतिप्रिय जानि महेश सिखावा ॥ ६ ॥ ❋

कामदेवको जीतनेसे नारदजीके मनमें बड़ा अहंकार आगया जिससे महादेवजीके पास गये ॥ ५ ॥ जाकर नारदजीने कामदेवको जीतनेके सब समाचार महादेवजीको सुनाये तब महादेवजीने नारदजीको अपना अति प्रिय जन जानकर शिक्षा दी ॥ ६ ॥

बार बार बिनवउँ मुनि तोहीं ॥ जिमि यह कथा सुनायउ मोहीं ॥ ७ ॥ ❋
तिमि जनि हरिहिँ सुनावहु कबहूं ॥ चलेहु प्रसंग दुरायहु तबहूं ॥ ८ ॥ ❋

कि–हे नारदजी ! मैं आपसे बारंबार बिनती करके कहता हूं सो सुनो. जैसे आपने यह कथा मुझको कही है ॥ ७ ॥ ऐसे कभी भूलकरभी यह कथा विष्णु भगवान्को मत सुनाना. जो कदाचित् प्रसंग चल जाय तौभी आप इसबातको छुपाही लेना ॥ ८ ॥

दोहा-शम्भु दीन्ह उपदेश हित, नहिँ नारदहिँ सुहान ॥ ❋
भरद्वाज कौतुक सुनहु, हरिइच्छा बलवान ॥ १३६ ॥

महादेवजीने जो नारदजीको परम हित उपदेश किया वो उनको नहीं सुहाया. यह याज्ञवल्क्य मुनि कहते है कि-हे भरद्वाज ! अब जो कौतुक हुआ वो मैं कहता हूं सो सुनो. असल बात है कि, हरिकी इच्छा बड़ी बलवान् है ॥ १३६ ॥

राम कीन्ह चाहैं सोइ सोई ॥ करै अन्यथा अस नहिँ कोई ॥ १ ॥ ❋
शम्भुबचन मुनि मनहिँ न भाये ॥ तब बिरंचिके लोक सिधाये ॥ २ ॥ ❋

जो प्रभु करना चाहते हैं वही होताहै उसको अन्यथा यानी औरतरह कर देवे ऐसा जगतमें कोई-भी नहीं है ॥ १ ॥ महादेवजीके बचन नारदजीके मनको अच्छे नहीं लगे जिससे वे पहले ब्रह्मलोकको गये ॥ २ ॥

एकबार करतल बर बीणा ॥ गावत हरिगुण गान प्रबीणा ॥ ३ ॥ ❋
क्षीरसिंधु गवने मुनिनाथा ॥ जहँ बसि श्रीनिबास श्रुतिमाथा ॥ ४ ॥ ❋

फिर एक बेर हाथमें सुंदर वीणा लिये प्रवीण नारदजीके प्रभुके गुण गाते हुए ॥ ३ ॥ क्षीरसमुद्र गये कि जहां उपनिषद्गम्य, श्रीलक्ष्मीपति (विष्णु) भगवान् सदा बिराजते है ॥ ४ ॥

हर्षि मिले उठि रमानिकेता ॥ बैठे आसन ऋषिहिँ समेता ॥ ५ ॥ ❋
बोले बिहँसि चराचरराया ॥ बहुत दिनहिँ कीन्ही मुनिदाया ॥६॥ ❋

प्रभु नारदजीको आये देखकर उठे; बड़े आनंदके साथ उनसे मिले. फिर ऋषिके साथ एक आसनपर बिराजे ॥ ५ ॥ चराचरके स्वामी प्रभु हँसकर बोले कि-हे मुनिराज ! अबकी तो आपने बहुत दिनोंसे दया की ॥ ६ ॥

काम चरित नारद सब भाषे ॥ यद्यपि प्रथम बरजि शिव राषे ॥ ७ ॥ ❋
अति प्रचंड रघुपतिकी माया ॥ जेहिँ न मोह अस को जग जाया॥८॥ ❋

यद्यपि महादेवजीने पहले नारदजीको बरज दिया था तौभी मारे घमंडके नारदजीने प्रभुके आगे सारा कामदेवका चरित्र कहा ॥ ७ ॥ याज्ञवल्क्य मुनि कहते हैं कि-हे मुनि ! प्रभुकी माया बड़ी प्रबल है. जगतमें ऐसा कौन पैदा हुआ है कि जिसको मायाजनित मोह नहीं है ? ॥ ८ ॥

दोहा- रूख बदन करि बचन मृदु, बोले श्रीभगवान ॥ ❋
तुम्हरे सुमिरणते मिटहिँ, मोह मार मद मान ॥ १३७ ॥ ❋

प्रभुने अपना मुख रूखा करके कोमल वाणीसे नारदजीसे कहा कि-हे मुनि ! इसमें क्या बड़ी बात है ? आपका स्मरण करनेसेभी मोह, कामदेव, मद और मान मिट जाते हैं ॥ १३७ ॥

सुनु मुनि मोह होइ मन ताके ॥ ज्ञान बिराग हृदय नहिँ जाके ॥ १ ॥ ❋
ब्रह्मचर्य ब्रत रत मतिधीरा ॥ तुमहि कि करै मनोभव पीरा ॥ २ ॥ ❋

हे मुनि ! सुनो; जिसके हृदयमें ज्ञान और वैराग्य नहीं होता उसके मनमें मोह होताहै ॥ १ ॥ आप

तौ बड़े ब्रह्मचर्यव्रतमें रत यानी तत्पर और धीरबुद्धि हो, आपको कामदेव क्या दुःख दे सक्ता है ? ॥ २ ॥

नारद कहेउ सहित अभिमाना ॥ कृपा तुम्हारि सकल भगवाना ॥ ३ ॥ ❋
करुणानिधि मन दीख बिचारी ॥ उर अंकुरेउ गर्वतरु भारी ॥ ४ ॥ ❋

तब नारदजीने अहंकारके साथ भगवान्से कहा कि–हे प्रभु ! आपकी कृपासे यह सब बात है॥३॥ करुणानिधि प्रभुने मनमें विचार करके देखा कि, नारदजीके हृदयमें तौ बड़ा भारी गर्वरूप वृक्ष अंकुरित हो गया है ॥ ४ ॥

बेगि सो मैं डारिहौं उपारी ॥ प्रण हमार सेवकहितकारी ॥ ५ ॥ ❋
मुनिकर हित मम कौतुक होई ॥ अवशि उपाय करब मैं सोई ॥ ६ ॥ ❋

सो जो मैं अभी इसको निष्फल न कर दूंगा तौ पीछे बड़ा कठिन होगा. इसलिये इसको तौ मैं अभी तुरंत उखारही डारूंगा, क्योंकि भक्तलोगोंका भला करना यह तौ हमारा प्रणही है ॥ ५ ॥ प्रभुने मनमें विचार किया कि,जिससे मुनिका तौ भला होवे और मेरेको, भी कौतुक होवे ऐसा उपाय अब मैं अवश्य करूंगा। ॥ ६ ॥

तब नारद हरिपद शिर नाई ॥ चले हृदय अहमिति अधिकाई ॥ ७ ॥ ❋
श्रीपति निजमाया तब प्रेरी ॥ सुनहु कठिन करणी तेहिकेरी ॥ ८ ॥ ❋

प्रभुके विचारको न जानकर नारदजी मनमें बड़ा अभिमान रखतेहुए प्रभुके चरणोंमें शिर नवाकर वहांसे चले ॥ ७ ॥ उसवक्त प्रभुने अपनी माया प्रेरी सो अब उसकी महाकठिण करनी कहता हूं सो सुनो ॥ ८ ॥

दोहा–बिरचेउ मगमहँ नगर तेहिँ ॥ शतयोजन विस्तार ॥ ❋
श्रीनिवासपुरते अधिक, रचना बिबिधि प्रकार ॥ १३८ ॥ ❋

प्रभुने अपनी मायासे जिस रास्ते नारदजी जाते थे उसी मार्गमें एक बहुत सुन्दर नगर रचा; जो सौ योजन लंबा चौड़ा था और उसकी अनेक प्रकारकी विचित्र विचित्र रचना वैकुंठसेभी बहुत अधिक सुन्दर थी ॥ १३८ ॥

बसहिँ नगर सुंदर नरनारी ॥ जनु बहु मनसिज रति तनुधारी ॥ १ ॥ ❋
तहिपुर बसै शीलनिधि राजा ॥ अगणित हय गज सेन समाजा ॥ २ ॥ ❋

उस नगरके अंदर जो सुन्दर स्त्री पुरुष रहते थे वे ऐसे स्वरूपवान् थे कि, मानों रति और कामदेवही अनेक शरीर धारण करके वहां आ बसे थे ॥ १ ॥ वहां शीलनिधि नाम राजा आनंदसे राज करता निवास करता था. उसके पास असंख्यात हाथी व घोड़ोंकी सेनाका समाज था ॥ २ ॥

शत सुरेश सम बिभव बिलासा ॥ रूप तेज बल नीति निबासा ॥ ३ ॥ ❋
बिश्वमोहनी तासु कुमारी ॥ श्री बिमोह जेहि रूप निहारी ॥ ४ ॥ ❋

उसका वैभव और भोगविलास सौ इंद्रोंके समान था. वह राजा रूप, तेज, बल और नीतिका भंडार था ॥ ३ ॥ उसके विश्वमोहनी नाम कन्या थी जिसका रूप देखकर लक्ष्मीजी खुद मोहित होती थीं ॥ ४ ॥

सो हरिमाया सबगुणखानी ॥ शोभा तासु कि जाइ बखानी ॥ ५ ॥ *
करै स्वयम्बर सो नृप बाला ॥ आये तहँ अगणित महिपाला ॥ ६ ॥ *

वो साक्षात् प्रभुकी मायाही थी; अतएव सर्व गुणोंकी खान राजकन्याकी छबि किसतरह वर्णन की जासके ? ॥ ५ ॥ उस राजकन्याने स्वयंबरकी तैयारी करी थी जिसमें कई एक असंख्यात राजा वहां आये थे ॥ ६ ॥

मुनि कौतुकी नगर तेहि गयऊ ॥ पुरबासिन सन बूझत भयऊ ॥ ७ ॥ *
सुनि सब चरित भूपगृह आये ॥ करि पूजा नृप मुनि बैठाये ॥ ८ ॥ *

ये कौतुकी मुनि (नारद) उस नगरके भीतर गये. वहां जाकर नगरके लोगोंसे पूंछा कि, यह भीड़ भाड़ क्यों है ? ॥ ७ ॥ तब नगरके लोगोंने वहांका सब हाल कहा उसे सुनकर नारदजी राजाके घर आये. राजाने नारदजीको आये देखकर पूजा करके आसनपर बिठाया ॥ ८ ॥

दोहा–आनि देखाई नारदहिँ, भूपति राजकुमारि ॥ *
कहहु नाथ गुण दोषसब, यहिकर हृदय बिचारि ॥ १३९ ॥ *

राजाने राजकन्याको लाकर नारदजीको दिखाया और कहा कि–हे मुनि ! इस कन्याके सब गुण दोष आप अपने मनमें विचारके कहो ॥ १३९ ॥

देखि रूप मुनि बिरति बिसारी ॥ बड़ीबार लगि रहे निहारी ॥ १ ॥ *
लक्षण तासु बिलोकि भुलाने ॥ हृदय हर्ष नहिँ प्रगट बखाने ॥ २ ॥ *

नारदजी उस कन्याका रूप देखकर वैराग्य भूल गये जो कितनी एक देरतक उसकी ओर देखते रहे ॥ १ ॥ उसके लक्षण देखकर नारदजी सुध भूल गये. मनमें बड़े खुश हुए परंतु प्रगटमें उन्होंने कुछ नहीं कहा ॥ २ ॥

जो यहि बरै अमर सो होई ॥ समरभूमि तेहि जीत न कोई ॥ ३ ॥ *
सेवहिँ सकल चराचर ताही ॥ बरै शीलनिधि कन्या जाही ॥ ४ ॥ *

नारदजीने मनही मनमें विचार किया कि जिस पुरुषको यह कन्या बरे वह पुरुष अमर हो जावे और उसे रणभूमिमें कोईभी जीत नहीं सके ॥ ३ ॥ जिस मनुष्यको यह शीलनिधिकी कन्या वरै उसकी तमाम चराचर जीवजन्तु सेवा करैं ॥ ४ ॥

लक्षण सब बिचारि उर राखे ॥ कछुक बनाइ भूपसन भाखे ॥ ५ ॥ *
सुता सुलक्षणि कहि नृप पाहीं ॥ नारद चले शोच मनमाहीं ॥ ६ ॥ *

ऐसे इसके लक्षण दीख पड़ते हैं सो यह बात प्रगट नहीं करनी चाहिये. ऐसा विचार करके नारदजीने वे लक्षण तो अपने मनमें रख लिये और कुछ नवीन बात बनाकर नारदजीने राजासे कहा ॥ ५ ॥ कि–हे राजन् ! आपकी कन्या बहुत सुलक्षणी है. बस, इतनाहीं तो कहा और कुछभी नहीं कहा और आप मनमें ऐसा बिचार करतेहुए चले ॥ ६ ॥

करौं जाइ सोइ यतन बिचारी ॥ जेहि प्रकार मोहिँ बरै कुमारी ॥ ७ ॥ *
जप तप कछु न होइ यहि काला ॥ हे बिधि मिलै कवन बिधि बाला ॥ ८ ॥ *

कि, अब मैं जाकर विचारकर कोई ऐसा उपाय करूं कि, जिससे मुझको यह कन्या वरे ॥ ७ ॥ नारदजीने विचार किया कि अब इसवक्त कुछ जप तप तो होही नहीं सकता. अब हे विधाता! यह राजकन्या मुझको कैसे मिले ? ॥ ८ ॥

दोहा– यहि अवसर चाहिय परम, शोभा रूप बिशाल ॥ ❀
जो बिलोकि रीझे कुँवरि, तब मेलै जयमाल ॥ १४० ॥ ❀

नारदजीने विचार किया कि इस वक्त तो बहुत सुन्दर स्वरूप और अच्छी शोभा होनी चाहिये कि जिसको देखकर यह कन्या रीझकर गलेमें जयमाल पहिरा देवे ॥ १४० ॥

हरिसन मांगौं सुंदरताई ॥ होइहि जात गहरु अतिभाई ॥ १ ॥ ❀
मोरेहित हरिसम नहिँ कोऊ ॥ यहि अवसर सहाय सो होऊ ॥ २ ॥ ❀

ऐसे विचारसे नारदजीके मनमें यह बात आई कि विष्णुभगवान्से मैं सुन्दरता मांगूं सो इससे मेरा प्रयोजन सिद्ध हो जायगा परंतु जानेआनेमेंभी तो बड़ा विलम्ब होगा. अब क्या करें ? ॥ १ ॥ फिर विचार किया कि मेरे तो प्रभुके जैसा हितकारी दूसरा कोईभी नहीं है सो अब इस अवस-रमें वही सहाय होगा ॥ २ ॥

बहुविधि विनय कीन्ह तेहि काला ॥ प्रगटेउ प्रभु कौतुकी कृपाला ॥ ३ ॥ ❀
प्रभु बिलोकि मुनि नयन जुडाने ॥ होइहि काज हिये हर्षाने ॥ ४ ॥ ❀

ऐसे विचार करके नारदजीने उस समय प्रभुसे प्रार्थना करी तब कौतुकी कृपालु प्रभु वहां प्रगट हुए ॥ ३ ॥ प्रभुके दर्शन होतेही मुनिके नेत्र शीतल होगये. और मनमें बड़े प्रसन्न हुए कि, अब काम बन जायगा ॥ ४ ॥

अति आरत कहि कथा सुनाई ॥ करहु कृपा प्रभु होउ सहाई ॥ ५ ॥ ❀
आपन रूप देहु प्रभु मोहीं ॥ आन भांति नहिँ पावहुँ ओहीं ॥ ६ ॥ ❀

नारदजीने अति आतुर होकर सब कथा प्रभुको सुनायी और कहा कि, हे प्रभु ! कृपा करो और इस काममें आप मेरे सहायक होओ ॥ ५ ॥ हे प्रभु ! आप मुझे अपना (हरिका) रूप देओ; क्योंकि औरतरह मुझको यह कन्या नहीं मिलेगी ॥ ६ ॥

जेहि बिधि नाथ होइ हित मोरा ॥ करौ सो बेगि दास मैं तोरा ॥ ७ ॥ ❀
निजमायाबल देखि विशाला ॥ हिय हँसि बोले दीनदयाला ॥ ८ ॥ ❀

हे नाथ ! जिस तरह मेरा भला हो, वो उपाय जल्दी करो. हे प्रभु ! मैं आपका दास हूं सो आप नहीं करोगे तो फिर करेगाही कौन ? ॥ ७ ॥ प्रभु दीनदयालु अपनी मायाका प्रबल बल देखकर मनही मनमें हँसे और बोले कि– ॥ ८ ॥

दोहा–जेहिविधि होइहि परम हित, नारद सुनहु तुम्हार ॥ ❀
सोइ हम करब न आन कछु, बचन न मृषा हमार ॥ १४१ ॥ ❀

हे नारद ! जिसतरह तुम्हारा भला होगा वह मैं कहता हूं सो सुनो और हम वही उपाय करेंगे. और कदापि नहीं करेंगे और तुम यह बात जानतेही हो कि हमारा वचन झूंठा नहीं होता ॥ १४१ ॥

कुपथ मांग रुजब्याकुल रोगी ॥ वैद्य न देइ सुनहु मुनि योगी ॥ १ ॥ *
यहि बिधि हित तुम्हार मैं ठयऊ ॥ कहि अस अन्तरहित प्रभु भयऊ ॥ २ ॥ *

हे योगी मुनि ! सुनो, रोगातुर पुरुष जो कुपथ्य मांगे तौ उसे वैद्य लोग कदापि कुपथ्य नहीं देते ॥ १ ॥ इसीतरह मैंनेभी तुम्हारा हित करना विचारा है, ऐसे कहकर प्रभु अंतर्धान होगये ॥ २ ॥

मायाबिवश भये मुनि मूढ़ा ॥ समुझी नहिँ हरिगिरा निगूढ़ा ॥ ३ ॥ *
गमने तुरत तहां ऋषिराई ॥ जहां स्वयम्बरभूमि बनाई ॥ ४ ॥ *

और मुनि नारद मायाके विवश होनेसे महामूर्ख हो रहे थे इसलिये यह गुप्त हरिकी गिरा (वाणी) समझमें नहीं आई ॥ ३ ॥ सो वे ऋषिराज (नारद) तुरंत वहां गये जहां स्वयंवरके लिये भूमि तैयार की गयी थी ॥ ४ ॥

निज निज आसन बैठे राजा ॥ बहु बनाव करि सहित समाजा ॥ ५ ॥ *
मुनिमन हर्ष रूप अति मोरे ॥ मोहिँ तजि आन बरिहि नहिँ भोरे ॥ ६ ॥ *

वहां सभामें सब राजा लोग अपनी २ समाजके साथ अनेक प्रकारके बनाव करकरके अपने अपने आसनोंपर बैठे ॥ ५ ॥ मुनिके मनमें इस बातकी बड़ी खुशी थी कि मेरा सबमें बढ़कर रूप है इसलिये मुझको छौँड़िके यह कन्या दूसरेको भूलकेभी नहीं बरेगी ॥ ६ ॥

मुनिहितकारण कृपानिधाना ॥ दीन्ह कुरूप न जाइ बखाना ॥ ७ ॥ *
सो चरित्र लखि काहु न पावा ॥ नारद जानि सबहिँ शिर नावा ॥ ८ ॥ *

परंतु मुनिका हित करनेके वास्ते प्रभुने नारदको जो कुरूप दिया था वो कहनेमें नहीं आसक्ता ॥ ७ ॥ परंतु प्रभुकी मायासे इस बातकी किसीको खबर न पड़ी. सब लोगोंको उनका स्वरूप नारद-जीकाही दीखा जिससे सब लोगोंने उनको दंडवत किया ॥ ८ ॥

दोहा–रहे तहां दुइ रुद्रगण, ते जानहिँ सब भेउ ॥ *
बिप्रबेष देखत फिरहिँ, परम कौतुकी तेउ ॥ १४२ ॥ *

वहां दो महादेवजीके गण बैठे थे वे यह सब भेद जानते थे और वे बड़े कौतुकी थे जिससे ब्राह्मणका वेष बनाकर वह कौतुक देखते फिरते थे ॥ १४२ ॥

जेहि समाज बैठे मुनि जाई ॥ हृदय रूप अहमिति अधिकाई ॥ १ ॥ *
तहँ बैठे महेशगण दोउ ॥ बिप्रबेष गति लखै न कोऊ ॥ २ ॥ *

मुनि अपने मनमें रूपका बड़ा घमंड रखतेहुए जाकर जिस समाजमें बैठे थे ॥ १ ॥ उसी समाजमें ये महादेवके गण ब्राह्मणका वेष बनाये बैठे थे जो किसीके लक्ष्यमें नहीं आते थे ॥ २ ॥

करहिँ कूट नारदहिँ सुनाई ॥ नीकि दीन्ह हरि सुन्दरताई ॥ ३ ॥ *
रीझिहि राजकुँवरि छबि देखी ॥ इनहिँ बरहि हरि जानि बिशेषी ॥ ४ ॥ *

वे गण नारदजीको सुना २ कर ठट्ठा करते थे कि, हरिने नारदजीको रूप तो बहुत अच्छा दिया ॥ ३ ॥ राजकुँवरि इनकी छबि देखतेही रीझ जायगी. इनका हरिकासा स्वरूप देख हरि जानकर इन्हींको बरेगी ॥ ४ ॥

मुनिहिं मोह मन हाथ पराये ॥ हँसहिं शम्भुगण अति सचुपाये ॥ ५ ॥ ❋
यदपि सुनहिं मुनि अटपटि बानी ॥ समुझि न परै बुद्धि भ्रमसानी ॥ ६ ॥ ❋

परंतु मुनि तो इस ठट्ठाको बिलकुल नहीं समझे; क्योंकि उनका मन परवश पड़ा हुआ था जिसंसे वे मोहमें पड़े हुए थे. गण ज्यों ज्यों नारदजीको देखते है त्यों त्यों हँसते है और सचुपाते हैं ॥ ५ ॥ यद्यपि नारदजी अटपटी बानी सुनते है तथापि वो उनके समझमें नहीं आती; क्योंकि उनकी बुद्धि भ्रमित हो रही थी ॥ ६ ॥

काहु न लखा सो चरित बिशेखी ॥ सो स्वरूप नृपकन्या देखी ॥ ७ ॥ ❋
मर्कटबदन भयंकर देही ॥ देखत हृदय क्रोध भा तेही ॥ ८ ॥ ❋

वो चरित किसीके समझमें नहीं आया था. या तो वह भेद गणोंके समझमें आया था या वह नारदजीका स्वरूप (वानरका मुख) राजकन्याको दिखलाई दिया था ॥ ७ ॥ नारदजीकी ओर राजकन्याने देखा तो उनका स्वरूप उसको कैसा दिखायी दिया कि बन्दरकासा मुख है और महा डरावनी देह थी कि, जिसको देखतेही उस कन्याके मनमें अत्यंत क्रोध हुआ ॥ ८ ॥

दोहा—सखी संग लै कुँवरि तब, चलि जनु राजमराल ॥ ❋
देखत फिरै महीप सब, करसरोज जयमाल ॥ १४३ ॥ ❋

जब नारदजीका स्वरूप देखकर उसको क्रोध हुआ तो बरनेकी तो बातही कहां रही? सो वह कन्या नारदजीको छोड़कर अपनी सहेलियोंके साथ राजहंसकीसी चालसे सब राजाओंको मोहित करतीहुई करकमलमें जयमाल लिये सब राजाओंको देखती फिरने लगी ॥ १४३ ॥

जेहि दिशि बैठे नारद फूली ॥ सो दिशि तेहिँ न बिलोकेउ भूली ॥ १ ॥ ❋
पुनि २ मुनि उकसहिं अकुलाहीं ॥ देखि दशा हरगण मुसुकाहीं ॥ २ ॥ ❋

हे मुनि! जिस दिशामें फूलेहुए नारदजी बैठे थे उस दिशाको तो उसने भूलकेभी नहीं देखी ॥ १ ॥ तथापि नारदजी प्रभुकी मायाके वश होकर बारंबार उसकते रहे और व्याकुल होते रहे. जिस दशाको देखकर महादेवजीके गण मुसक्याने लगे ॥ २ ॥

धरि नृपतन तहँ गयउ कृपाला ॥ कुँवरी हर्षि मेली जयमाला ॥ ३ ॥ ❋
दुलहिनि लै गये लक्ष्मिनिवासा ॥ नृपसमाज सब भयउ निरासा ॥ ४ ॥ ❋

वहां प्रभु राजाका शरीर धारण करके पधारे जिसको देखतेही राजकन्याने प्रसन्न होकर प्रभुके गलेमें वरमाल पहिरा दी ॥ ३ ॥ जब प्रभु दुलहिनको लेकर चले गये तब वह सब राजसमाज निरास होगया ॥ ४ ॥

मुनि अति बिकल मोहमति नाठी ॥ मणि गिरि गई छूटि जनु गांठी ॥ ५ ॥ ❋
तब हरगण बोले मुसकाई ॥ निजमुख मुकुर बिलोकहु जाई ॥ ६ ॥ ❋

मुनिकी बुद्धि मोहमें बिलकुल नष्ट हो गयी जिससे मुनि ऐसे विव्हल हुए कि, कुछ कहा नहीं जाता, मानो गांठसे खुलकर रत्न गिर गया हो ऐसे मुनि व्याकुल होगये ॥ ५ ॥ तब मुसक्याकर महादेवके गण बोले कि—हे मुनि! आप जाकर अपना मुंह दर्पणमें देखो ॥ ६ ॥

अस कहि दोउ भागे भय भारी ॥ वदन दीख मुनि बारि निहारी ॥७॥❋
वेष बिलोकि क्रोध अति बाढ़ा ॥ तिनहिँ शाप दीन्हा अति गाढ़ा ॥८॥❋

ऐसे कहकर वे दोनों गण डरके मारे भाग गये, नारदजीने जल देखकर उसमें जाकर अपना मुंह देखा ॥ ७ ॥ तहां अपना वानरका रूप देखकर नारदजीको बड़ा क्रोध हुआ, जिससे मुनिने उन दोनों गणोंको महाघोर शाप दिया ॥ ८ ॥

दोहा– होहु निशाचर जाय तुम, कपटी पापी दोउ ॥ ❋
हँसे हमहिँ सो लेहु फल, बहुरि हँसेहु मुनि कोउ ॥ १४४ ॥ ❋

नारदजीने कहा कि–हे पापी कपटियो ! तुम दोनों जाकर राक्षस होओ, तुम जो हमको हँसे हो तिसका फल लेवो. फिर किसी मुनिको हँसना तुमने क्या समझा ? ॥ १४४ ॥

पुनि जल दीख रूप निज पावा ॥ तदपि हृदय सन्तोष न आवा ॥ १ ॥❋
फरकत अधर कोप मनमाहीं ॥ सपदि चले कमलापतिपाहीं ॥ २ ॥ ❋

नारदजीने फिर जलमें मुंह देखा तहां अपना वही पूर्वरूप (मुनिका रूप) देखा परंतु उनके हृदयमें संतोष नहीं आया ॥ १ ॥ होंठमें फरक रहे हैं; मनमें बड़ा गुस्सा भरा हुआ है; सो वहांसे उठकर सीधे विष्णु भगवानके पास गये ॥ २ ॥

देहौं शाप कि मरिहौं जाई ॥ जगत मोर उपहास कराई ॥ ३ ॥ ❋
बीचहि पन्थ मिले दनुजारी ॥ संग रमा सोइ राजकुमारी ॥ ४ ॥ ❋

मार्गमें जाते मनमें विचार करते जाते हैं कि, प्रभुने जगत्में मेरी हँसी कराई है सो या तो मैं उनको शाप दूंगा या मैं मर जाऊंगा ॥ ३ ॥ तहां मार्गमेंही लक्ष्मी और उसी राजकन्याको साथ लिये प्रभु मिल गये ॥ ४ ॥

बोले मधुर बचन सुरसाँई ॥ मुनि कहँ चले बिकलकी नाँई ॥ ५ ॥
सुनत बचन उपजा अति क्रोधा ॥ मायाबश न रहा मन बोधा ॥ ६ ॥ ❋

प्रभुने नारदजीसे मधुर वाणीसे कहा कि–हे मुनि ! आज आप बिकलकी भांति कहां जाते हो ? ॥ ५ ॥ प्रभुके बचन सुनतेही नारदजीको बड़ा क्रोध उपजा. मायावश होनेसे उनके मनमें विवेकका लेशभी न रहा ॥ ६ ॥

परसम्पदा सकहु नहिँ देखी ॥ तुम्हरे ईर्षा कपट बिशेखी ॥ ७ ॥ ❋
मथत सिन्धु रुद्रहिँ बौरायहु ॥ सुरन प्रेरि बिषपान करायहु ॥ ८ ॥ ❋

जिससे मुनिने कहा कि–हे प्रभु ! आप दूसरेको संपदा देख नहीं सकते. महाराज ! आपके ईर्षा और कपट इतना है कि, कुछ कहा नहीं जाता ॥ ७ ॥ समुद्रमथनके समय महादेवजीको बावला बनाके देवताओंको प्रेरकर आपने उनको विष पिलाया ॥ ८ ॥

दोहा–असुर सुरा विष शंकरहिँ, आपु रमा मणि चारु ॥ ❋
स्वारथसाधक कुटिल तुम, सदा कपटव्यवहारु ॥ १४५ ॥ ❋

तुम सदाके कपटी हो. देखो समुद्रमथनमें दैत्योंको तौ मदिरा, महादेवको विष (जहर)

और आपको सुन्दर कौस्तुभ मणि और लक्ष्मी. इसीमें समझ लो तुम्हारे जैसा खुद मतलबी और कुटिल कोई नहीं है. तुम्हारा व्यवहार सदा कपटसंयुक्त रहता है.तुम्हारे कपट विना बात नहीं॥१४५॥

परम स्वतंत्र न शिरपर कोई ॥ भावै मनहिँ करहु तुम सोई ॥ १ ॥ *
भलेहिँ मन्द मन्दहिँ भल करहु ॥ बिस्मय हर्ष न हिय कछु धरहू ॥ २ ॥ *

तुम खुद मुख्तियार हो. तुम्हारे शिरपर तो कोई हैही नहीं कि जिसका तुमको भय लगे; इसलिये जो आपके मनमें जँचता है वही आप करते हो ॥ १ ॥ आप भलेको बुरा कर देते हो और बुरेको अच्छा बना देते. आप अपने मनमें उस बातका आश्चर्य या हर्ष कुछ नहीं करते ॥ २ ॥

डहकि डहकि परचेउ सबकाहू ॥ अति अशंक मन सदा उछाहू ॥ ३ ॥ *
कर्मशुभाशुभ तुमहिँ न बाधा ॥ अबलगि तुमहिँ न काहू साधा ॥ ४ ॥ *

आपने डहका डहकाके सबको परीक्षा लिया है. आपके मनमें किसीकी शंका तो हैही नहीं और उसीसे आप सदा मगन रहते हो ॥ ३ ॥ न कोई आपके शुभ अशुभ कर्मकी बाधा है जिससे आप डरो और न किसीने अबतक आपको साधा यानी शिक्षा दिया है ॥ ४ ॥

भले भवन अब बायन दीन्हा ॥ पावहुगे फल आपन कीन्हा ॥ ५ ॥ *
बंचेहु मोहिँ जवन धरि देहा ॥ सोइ तनु धरहु शाप मम येहा ॥ ६ ॥ *

पर अबकी बेर आपने अच्छे घर नेवता दिया है सो अबके तो आप अपनी करनीका फल पाओ-हीगे ॥ ५ ॥ ऐसे कहकर नारदजीने शाप दिया कि—आपने मुझको जौन देह धारण करके छला है आप वही देह पाओगे यह मेरा शाप है ॥ ६ ॥

कपिआकृति तुम कीन्ह हमारी ॥ करिहहिँ कीश सहाय तुम्हारी ॥ ७ ॥ *
मम अपकार कीन्ह तुम भारी ॥ नारिबिरह तुम होब दुखारी ॥ ८ ॥ *

और आपने हमारा वानरका रूप बना दिया था सो वे बन्दर तुम्हारी सहाय करेंगे ॥ ७ ॥ और आपने मेरा बड़ा भारी तिरस्कार किया है इसलिये आप स्त्रीके विरहसे दुखी होओगे ॥ ८ ॥

दोहा— शाप शीश धरि हर्षि हिय, प्रभु सुरकारज कीन्ह ॥ *
निजमायाकी प्रबलता, कर्षि कृपानिधि लीन्ह ॥ १४६ ॥ *

नारदजीने जो शाप दिया उसे शिरपर चढ़ाकर मनमें हर्षित होके प्रभुने देवताओंका कारज साधा और कृपानिधान प्रभुने कृपा करके नारदजीके मनमेंसे अपनी मायाकी प्रबलता खैंच लीनी॥१४६॥

जब हरिमाया दूरि निवारी ॥ नहिँ तहँ रमा न राजकुमारी ॥ १ ॥ *
तब मुनि अति सभीत हरिचरणा ॥ गहे पाहि प्रणतारतिहरणा ॥ २ ॥ *

जब प्रभुने अपनी माया समेट ली तब नारदजी देखते हैं तो न तो वहां लक्ष्मी है और न कोई राजकुँवारी है ॥ १ ॥ उस समय नारदजी मनमें बहुत डरे और 'हे शरणागतवत्सल प्रभु ! मेरी रक्षा करो' ऐसे कहकर प्रभुके चरणोंमें पड़े ॥ २ ॥

मृषा होहु मम शाप कृपाला ॥ मम इच्छा कह दीनदयाला ॥ ३ ॥ *
मैं दुर्बचन कहेउँ बहुतेरे ॥ कह मुनि पाप मिटहिँ किमि मेरे ॥ ४ ॥ *

फिर कहा कि–हे प्रभु ! मेरा शाप मिथ्या हो जाओ, मैंने यह क्या किया ? तब दीनदयालु प्रभु बोले कि–हे नारद ! यह मेरी इच्छासे हुआ है इसमें तेरा अपराध नहीं है ॥ ३ ॥ तब मुनिने कहा कि–मैंने आपको बहुतसे दुर्वचन कहे हैं सो मेरे वे पाप कैसे मिटेंगे सो कहो ॥ ४ ॥

जपहु जाइ शंकर शतनामा ॥ होइहि हृदय सुरत बिश्रामा ॥ ५ ॥
कोउ नहिँ शिवसमान प्रिय मोरे ॥ अस प्रतीति त्यागहु जनिभोरे ॥ ६ ॥

तब प्रभुने कहा कि–आप तौ अब जाकर महादेवजीके सौ नामका जप करो सो आपका मन तुरंत संतुष्ट हो जायगा ॥ ५ ॥ मेरे महादेवजीके बराबर दूसरा कोई प्यारा नहीं है सो यह प्रतीति आप भूलकेभी मत त्यागना ॥ ६ ॥

जेहिपर कृपा न करहि पुरारी ॥ सो न पाव मुनि भक्ति हमारी ॥ ७ ॥❀
अस उर धरि महि बिचरहु जाई ॥ अब न तुमहिँ माया नियराई ॥८॥❀

हे मुनि ! जिसपर महादेवजी कृपा नहीं करते वह कदापि हमारी भक्ति नहीं पा सकता ॥७॥ आप अपने मनमें इस बातको रख, जाकर पृथ्वीमें विचरो. अब कभी आपके पास माया नहीं आवेगी ॥८॥

दोहा– बहुबिधि मुनिहिँ प्रबोधि प्रभु, तब भये अंतर्ध्यान ॥ ❀
सत्यलोक नारद चले, करत रामगुणगान ॥ १४७ ॥ ❀

प्रभुने मुनिको अनेक प्रकारसे समझाया और जब उनके मनको तसल्ली हुई तब प्रभु अंतर्धान हुए. नारदजी प्रभुके गुण गातेहुए सत्यलोकको सिधारे ॥ १४७ ॥

हरगण मुनिहिँ जात पथ देषी ॥ बिगत मोह मन हर्ष बिशेषी ॥ १ ॥ ❀
अति सभीत नारदपहँ आये ॥ गहि पद आरत बचन सुनाये ॥ २ ॥ ❀

महादेवजीके गणोंने नारदजीको रास्ते जाते देखा तौ उस वक्त नारदजीका मन बड़ाही प्रसन्न था और उसके मनमें मोहका लेशभी नथीं था ॥ १ ॥ तब वे गण भयभीत होकर नारदजीके पास आये और चरण धरकर आर्त वचन सुनाया ॥ २ ॥

हरगण हम न बिप्र मुनिराया ॥ बड़ अपराध कीन्ह फल पाया ॥ ३ ॥ ❀
शापानुग्रह करहु कृपाला ॥ बोले नारद दीनदयाला ॥ ४ ॥ ❀

कि–हे मुनिराज ! हम ब्राह्मण नहीं है; हम महादेवजीके गण हैं और जो हमने आपका भारी अपराध किया उसका फल पा चुके है ॥ ३ ॥ परंतु हे दयालु ! आप बड़े हो सो कृपा करके हमारे शापकी अनुग्रह करो. गणोंके ये वचन सुनकर दीनदयालु नारदजी बोले ॥ ४ ॥

निशिचर जाइ होउ तुम दोऊ ॥ बैभव बिपुल तेज बल होऊ ॥ ५ ॥ ❀
भुजबल बिश्व जितब तुम जहियाँ ॥ धरिहैं बिष्णु मनुजतनु तहियाँ॥६॥❀

कि–तुम दोनों जाकर राक्षस होओगे तहां तुम्हारा वैभव, बल और तेज बड़ा विशाल होगा ॥ ५ ॥ और जब तुम सब जगतको अपने भुजबलसे जीत लेओगे तब विष्णु भगवान् मनुष्यशरीर धारण करेंगे ॥ ६ ॥

समरमरण हरिहाथ तुम्हारा ॥ होइहहु मुक्त न पुनि संसारा ॥ ७ ॥ ❀

चले युगल मुनिपद शिर नाई ॥ भये निशाचर कालहिँ पाई ॥ ८ ॥ ❋

उसने तुम्हारा युद्ध होगा; तहां रणमें तुम विष्णुजीके हाथसे मारे जाओगे तिससे तुम्हारी मुक्ति होगी; फिर तुम आवागौनमें नहीं आओगे ॥ ७ ॥ नारदजीके ये बचन सुनकर वे दोनों रुद्रगण नारदजीके चरणोंमें शिर नवाकर चले सो समय पाकर वे दोनों राक्षस हुए ॥ ८ ॥

दोहा–एककल्प यहि हेतु प्रभु, लीन्ह मनुजअवतार ॥ ❋
सुररंजन सज्जनसुखद, हरि भंजन भूभार ॥ १४८ ॥ ❋

एक कल्पमें प्रभुने इस हेतुसे मनुष्यअवतार धारण किया था; कि, जो देवताओंको राजी रखनेवाले, सज्जन लोगोंको सुख देनेवाले, और भूमिका भार उतारनेवाले है ॥ १४८ ॥

यहिविधि जन्म कर्म हरिकेरे ॥ सुन्दर सुखद विचित्र घनेरे ॥ १ ॥ ❋
कल्प कल्प प्रति प्रभु अवतरहीं ॥ चारु चरित नानाविधि करहीं ॥ २ ॥ ❋

इसतरह प्रभुके सुन्दर और सुखकारी जन्म व कर्म अनेक और बड़े विचित्र है ॥ १ ॥ प्रभु कल्प कल्पमें अवतार लेकर अनेकप्रकारके विचित्र सुन्दर चरित्र करते है ॥ २ ॥

तब तब कथा मुनीशन गाई ॥ परमविचित्र प्रबन्ध बनाई ॥ ३ ॥ ❋
बिबिध प्रसंग अनूप बखाने ॥ करहिँ न सुनि आश्चर्य सयाने ॥ ४ ॥ ❋

जब जब प्रभुने अवतार ले चरित्र किये है तब तब मुनिलोगों (वाल्मीकिआदि) ने बड़े सुन्दर विचित्र प्रबंध यानी ग्रंथ बनाके प्रभुकी कथा गाई है ॥ ३ ॥ और उन कथाओंमें कई अद्भुत प्रसंग कहे हैं परंतु जो समझदार मनुष्य है, वे उनको सुनकर अचरज नहीं करते ॥ ४ ॥

हरि अनंत हरिकथा अनन्ता ॥ कहहिँ सुनहिँ बहुबिधि श्रुतिसन्ता ५
रामचंद्रके चरित सुहाये॥ कल्प कोटिलगि जाहिँ न गाये ॥ ६ ॥ ❋

क्योंकि प्रभु अनंतरूप हैं और प्रभुकी कथा अनंत हैं, जिसे वेद तौ अनेक प्रकारसे कहते है और संतलोग सुनते है ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजीके सुन्दर चरित्र अपार है, चाहे उनको कोटिकल्पतक क्यों न गाते रहो ? पर उनका पार नहीं सकता ॥ ६ ॥

यह प्रसंग मैं कहा भवानी ॥ हरिमाया मोहहिँ मुनि ज्ञानी ॥ ७ ॥ ❋
प्रभु कौतुकी प्रणतहितकारी ॥ सेवत सुलभ सकलदुखहारी ॥ ८ ॥ ❋

हे पार्वती ! यह प्रसंग मैंने इसवास्ते कहा है कि, प्रभुकी माया बड़ी बलवान् है वह ज्ञानी मुनि लोगोंकोभी मोहित कर देती है ॥ ७ ॥ हे भवानी ! प्रभु बड़े कौतुकी हैं. शरणागतोंके हितकारी है. सेवा करनेसे प्रभु तुरत प्रसन्न हो जाते है और सारे दुःख मिटा देते है ॥ ८ ॥

सोरठा–सुर नर मुनि कोउ नाहिँ, जेहि न मोह माया प्रबल ॥ ❋
अस बिचारि मनमाहिँ, भजिय महामायापतिहिँ ॥ २१ ॥ ❋

हे पार्वती ! जगत्में ऐसा कोई देवता, मनुष्य या मुनि नहीं है कि, जिसके मायाजनित प्रबल अज्ञान नहीं है सो मनमें ऐसा विचार कर महामायाके पति श्रीरघुनाथजीका भजन करना चाहिये ॥ २१ ॥

अपर हेतु सुनु शैलकुमारी ॥ कहौं बिचित्र कथा बिस्तारी ॥ १ ॥ ❀
जेहि कारण अज अगुण अनूपा ॥ ब्रह्म भये कोशलपुरभूपा ॥ २ ॥ ❀

हे पार्वती ! अब अवतार होनेका दूसरा कारण कहता हूं सो सुन. यह कथा बड़ी विचित्र और बहुत लंबी है ॥ १ ॥ जिसवास्ते अजन्मा, निर्गुण, और अद्वितीय, प्रभु अयोध्याके राजा हुए है ॥ २ ॥

जो प्रभु बिपिन फिरत हम देषा ॥ बन्धुसमेत किये मुनिबेषा॥३ ॥ ❀
जासु चरित अवलोकि भवानी ॥ सतीशरीर रहिउ बौरानी ॥ ४ ॥ ❀

जिन प्रभुको भाई लक्ष्मणजीके साथ मुनिका वेष बनाय वनमें फिरते हमने देखा था ॥ ३ ॥ जिसका चरित देखकर हे पार्वती ! तू सतीके शरीरमें बिलकुल बावली हो गयी थी ॥ ४ ॥

अजहुँ न छाया मिटी तुम्हारी ॥ तासु चरित सुनु भ्रमरजुहारी ॥ ५ ॥ ❀
लीला कीन्ह जो तेहि अवतारा ॥ सो सब कहिहौं मतिअनुसारा ॥ ६ ॥ ❀

जिस भ्रमकी छाया अबतक तुम्हारी मिटी नहीं है उस प्रभुका चरित्र मैं कहता हूं सो सुन, जिसके सुननेसे रज्जुगत सर्पकी भ्रांतिकी नाई यह संसारका भ्रम मिट जाता है ॥ ५ ॥ उस अवतारमें प्रभुने जो लीला करी है वो सब मेरी बुद्धिके अनुसार कहता हूं सो सुन ॥ ६ ॥

भरद्वाज सुनि शंकरबानी ॥ सकुचि सप्रेम उमा मुसकानी ॥ ७ ॥ ❀
लगे बहुरि बरणै वृषकेतू ॥ सो अवतार भयेउ जेहि हेतू ॥ ८ ॥ ❀

याज्ञवल्क्य मुनि कहते है कि–हे भरद्वाज ! महादेवजीके ये वचन सुनकर पार्वती प्रेमसे संकुचित होके मुसक्याई ॥ ७ ॥ फिर महादेवजी वो कथा वर्णन करने लगे कि, वो अवतार जिस कारणसे हुआ था ॥ ८ ॥

दोहा–सो मैं तुमसन कहौं सब, सुनु मुनीश मन लाइ ॥ ❀
रामकथा कलिमनहरणि, मंगलकरणि सुहाइ ॥ १४९ ॥ ❀

हे मुनिराज ! वो सब कथा मैं तुमसे कहता हूं सो मन लगाके सुनो; क्योंकि रामचन्द्रजीकी कथा कलियुगके मलको मिटानेवाली और सुहावनी व मंगल करनेवाली है ॥ १४९ ॥

स्वायम्भुव मनु अरु शतरूपा ॥ जिनते भै नरसृष्टि अनूपा ॥ १ ॥ ❀
दम्पतिधर्म आचरण नीका ॥ अजहुँ गाव श्रुति जिनकी लीका ॥ २ ॥ ❀

स्वायंभुव मनु और शतरूपा उनकी स्त्री कि जिनसे यह सर्वोत्तम मानवी सृष्टि हुई ॥ १ ॥ वे दोनों स्त्री भरतार धर्माचरणमें बड़े तत्पर और अच्छे थे; जिनकी लीक यानी बड़ाई वेदमें अबतक गाई जाती है ॥ २ ॥

नृप उत्तानपादसुत तासू ॥ ध्रुव हरिभक्त भये सुत जासू ॥ ३ ॥ ❀
लघु सुत नाम प्रियव्रत जाही ॥ वेद पुराण प्रशंसत ताही ॥ ४ ॥ ❀

उनके उत्तानपाद नाम पुत्र हुआ. उनके प्रभुका परमभक्त ध्रुव नाम पुत्र हुआ ॥ ३ ॥स्वायंभुव मनुके उत्तानपादसे छोटा प्रियव्रत नाम पुत्र हुआ जिसको वेद और पुराण प्रशंसा करते हैं ॥ ४ ॥

देवहूति पुनि तासु कुमारी ॥ जो मुनि कर्दमकी प्रिय नारी ॥ ५ ॥ ❋
आदिदेव प्रभु दीनदयाला ॥ जठर धरेउ जेहि कपिल कृपाला ॥ ६ ॥ ❋

उसी स्वायंभुव मनुके देवहूति नाम कन्या हुई जो कर्दमजीकी प्रिय स्त्री थी ॥ ५ ॥ जिस देवहूतिने अपने उदरमें दीनदयालु कृपालु प्रभु कपिलदेवको धारण किया था ॥ ६ ॥

सांख्यशास्त्र जिन प्रगट बखाना ॥ तत्त्वविचारनिपुण भगवाना ॥ ७ ॥ ❋
तेहिं मनु राज कीन्ह बहुकाला ॥ प्रभुआयसु बहुविधि प्रतिपाला ॥ ८ ॥ ❋

कि जिन तत्त्वविचारमें निपुण कपिल भगवान्ने सांख्यशास्त्रको खुलासा करके वर्णन किया है ॥ ७ ॥ उन स्वायंभुव मनुने प्रभुकी आज्ञासे अनेक वर्षोंतक अनेक प्रकारसे प्रजाका पालन किया ॥ ८ ॥

सोरठा–होइ न विषय विराग, भवन बसत भा चौथपन ॥ ❋
हृदय बहुत दुख लाग, जन्म गयउ हरिभक्ति बिन ॥ २२ ॥ ❋

मनुको घरमें रहते २ चतुर्थाश्रम आगया परंतु विषयोंमें वैराग्य उत्पन्न नहीं हुआ तब उनके हृदयमें इस बातका बड़ा दुःख हुआ जिससे उन्होंने विचार किया कि अहो ! मैंने मेरा जन्म वृथा गवाँ दिया; क्योंकि भगवान्की भक्ति नहीं करी ॥ २२ ॥

बरबश राज्य सुतहिँ तब दीन्हा ॥ नारिसमेत गमन बन कीन्हा ॥ १ ॥ ❋
तीरथबर नैमिष बिख्याता ॥ अतिपुनीत साधकसिधिदाता ॥ २ ॥ ❋

ऐसे विचारकर मनु बलात्कारसे अपने पुत्रोंको राज्य देकर अपनी रानीके साथ वनमें चला गया ॥ १ ॥ सो अति पवित्र और प्रसिद्ध नैमिषारण्य नाम वनमें आया; कि जहां रहनेसे साधक पुरुषोंकी तपस्या और कामना सिद्ध हो जाती है ॥ २ ॥

बसहिँ तहां मुनि सिद्ध समाजा ॥ तहँ हिय हर्षि चले मनुराजा ॥ ३ ॥ ❋
पन्थ जात सोहहिं मतिधीरा ॥ ज्ञान भक्ति जनु धरे शरीरा ॥ ४ ॥ ❋

जिस नैमिषारण्यमें बड़े बड़े मुनि और सिद्धोंकी समाजें रहती हैं वहां मनु महाराज मनमें बड़े प्रसन्न हो करके आये ॥ ३ ॥ मार्गमें जातेहुए मनु शतरूपा कैसे शोभायमान होरहे हैं कि, मानों मूर्तिमान् ज्ञान और भक्तिही जा रहे हैं ॥ ४ ॥

पहुँचे जाइ धेनुमतितीरा ॥ हर्षि नहाने निर्मल नीरा ॥ ५ ॥ ❋
आये मिलन सिद्ध मुनि ज्ञानी ॥ धर्मधुरन्धर नृपऋषि जानी ॥ ६ ॥ ❋

वे दोनों गोमती नदीपर आये. वहां उन्होंने प्रसन्न होकर निर्मल जलमें स्नान किया ॥ ५ ॥ मनुसे मिलनेके वास्ते वहां कई सिद्ध मुनि और ज्ञानी लोग आये क्योंकि वे लोग जानते थे कि यह राजऋषि धर्ममें बड़ा निपुण है ॥ ६ ॥

जह तहँ तीरथ रहे सुहाये ॥ मुनिन सकल सादर करवाये ॥ ७ ॥ ❋
कृश शरीर मुनिपट परिधाना ॥ सन्तसभा नित सुनहिँ पुराना ॥ ८ ॥ ❋

जहां तहां जो सुहावने पवित्र तीर्थ थे वे सब मुनिलोगोंने आदरके साथ करवाये ॥ ७ ॥

महाराज मनु तपस्या करनेसे शरीरसे दुबले पतले होगये हैं, मुनिवस्त्र पहिरे हैं और नित्य सत्पुरुषोंकी सभामें आकर कथा पुराण सुनते है ॥ ८ ॥

दोहा–द्वादश अक्षर मंत्रवर, जपहिं सहित अनुराग ॥ ❀
वासुदेवपदपंकरुह, दम्पतिमन अतिलाग ॥ १५० ॥ ❀

दोनों स्त्री भरतार भगवान्‌जीके चरणकमलोंमें चित्त लगाकर बड़े अनुरागके साथ द्वादशाक्षर मंत्र राजका जप करते हैं ॥ १५० ॥

करहिं अहार शाक फल कन्दा ॥ सुमिरहिं ब्रह्म सच्चिदानन्दा ॥ १ ॥ ❀
पुनि हरिहेतु करन तप लागे ॥ बारिअहार मूल फल त्यागे ॥ २ ॥ ❀

शाक, फल, मूल, कंद आहार करते हैं और सच्चिदानंदस्वरूप प्रभुका सदा स्मरण करते हैं ॥ १ ॥ फिर वे दोनों मूल फल खाना छोडकर केवल जलपान करके प्रभुके कारण तपस्या करने लगे ॥ २ ॥

उर अभिलाष निरंतर होई ॥ देखिय नयन परम प्रिय सोई ॥ ३ ॥ ❀
अगुण अखण्ड अनन्त अनादी ॥ जेहिं चिंतहिं परमारथबादी ॥ ४ ॥ ❀

कवि कहता है कि–जिसके हृदयके भीतर जिसकी निरंतर अभिलाषा रहती है वह उस परम प्रिय पदार्थको नेत्रोंसे अवश्य देख लेता है ॥ ३ ॥ जो गुणरहित अखंडस्वरूप आदि व अंतरहित है और परमार्थवादी जिसका सदा चिंतवन करते हैं ॥ ४ ॥

नेति नेति जेहि वेद निरूपा ॥ चिदानंद निरुपाधि अनूपा ॥ ५ ॥ ❀
शम्भु विरंचि विष्णु भगवाना ॥ उपजहिं जासु अंशते नाना ॥ ६ ॥ ❀

तथा जिसे वेद नेति २ कहकर निरूपण करते हैं; जो चिदानंदस्वरूप उपाधिरहित व अद्वितीय है ॥ ५ ॥ और जिसके अंशसे अनेक ब्रह्मा, विष्णु महेश उपजते हैं ॥ ६ ॥

ऐसे प्रभु सेवकबश अहहीं ॥ भक्तहेतु लीलातनु गहहीं ॥ ७ ॥ ❀
जो यह बचन सत्य श्रुति भाषा ॥ तौ हमार पूजहि अभिलाषा ॥ ८ ॥ ❀

वे सर्वशक्तिमान् प्रभु भक्तवश हैं और भक्तोंके लिये लीलासे भक्तेच्छानुसार स्वरूप धारण करते है ॥ ७ ॥ स्वायंभुव मनु और शतरूपा कहते है कि–जो यह वचन वेदमें सत्य कहा हुआ है तो प्रभु हमारी आशा पूर्ण करेंगे ॥ ८ ॥

दोहा– यहिबिधि बीते बर्ष षट, सहस बारि आहार ॥ ❀
सम्बत सप्तसहस्र पुनि, रहे समीर अधार ॥ १५१ ॥ ❀

इसप्रकार तपस्या करते करते केवल जलके आधार छः ६००० सहस्र वर्ष व्यतीत होगये तब उन्होंने फिर सात ७०००हजार वर्षतक पवन भखकर और कठिन तपस्या करी ॥ १५१ ॥

वर्ष सहसदश त्यागेउ सोऊ ॥ ठाढ़े रहे एकपद दोऊ ॥ १ ॥ ❀
बिधि हरि हर तप देखि अपारा ॥ मनुसमीप आये बहु बारा ॥ २ ॥ ❀

फिर पवन भखनाभी त्याग दिया और दश १०००० हजार वर्षतक दोनों दंपती एक पांवसे खड़े रहकर तपस्या करने लगे ॥ १ ॥ याज्ञवल्क्यजी कहते हैं कि–मनुकी ऐसी कठिन तपस्या देखकर ब्रह्मा, विष्णु, और महेश मनुके पास कई वेर आये ॥ २ ॥

मांगहु बर बहुभांति लुभाये ॥ परम धीर नहिँ चलहिँ चलाये ॥ ३ ॥ ❀
अस्थिमात्र होय रह्यो शरीरा ॥ तदपि मनागपि नहिँ मन पीरा ॥ ४ ॥ ❀

और उनको 'वर मांग, वर मांग' ऐसे कई तरहका लोभ दिखाया परंतु वे परम धीर किसी कदर नहीं डिगे ॥ ३ ॥ यद्यपि उनके शरीरमें सिर्फ हड्डियां मात्र बाकी रह गयीं थीं तथापि उनके मनमें रंचहू पीर यानी दुःख नहीं था ॥ ४ ॥

प्रभु सर्वज्ञ दास निज जानी ॥ गति अनन्य तापस नृप रानी ॥ ५ ॥ ❀
मांगु मांगु बर भै नभबानी ॥ परम गँभीर कृपामृतसानी ॥ ६ ॥ ❀

प्रभु श्रीराम सर्व जान हैं सो उन तापस राजा रानीको अनन्यगति व निजभक्त जानके ॥ ५ ॥ आकाशवाणीद्वारा बोले कि—हे राजन् ! वर मांग, वर मांग. याज्ञवल्क्यजी कहते हैं कि—हे मुनि ! जब परम गंभीर और कृपामृतसे भरी आकाशवाणी हुई ॥ ६ ॥

मृतकजिआवनि गिरा सुहाई ॥ श्रवणरन्ध्र होय उर जब आई ॥ ७ ॥ ❀
हृष्ट पुष्ट तन भयेउ सुहाये ॥ मानहुँ अबहिँ भवनते आये ॥ ८ ॥ ❀

और यह मृतक पुरुषोंको जिलानेवाली सुन्दर वाणी राजारानीके कर्णरंध्र (छिद्र) से यानी कर्णद्वारा हृदयमें आई ॥ ७ ॥ तब तो उन दोनोंका शरीर ऐसा हृढ़ पुष्ट होगया कि मानों वे अभी घर छोड़के आये हैं ॥ ८ ॥

दोहा—श्रवण सुधासम बचन सुनि, पुलकप्रफुल्लित गात ॥ ❀
बोले मनु करि दण्डवत, प्रेम न हृदय समात ॥ १५२ ॥ ❀

भगवानजीके अमृतसे मधुर वचन सुनकर दोनों फूले अंग नहीं समाते थे; रोमावली गाढ़ी होनेसे शरीर प्रफुल्लित हो रहा था ऐसे परम आनन्द मगन होकर मनुने दंडवत् करके कहा कि ॥ १५२ ॥

सुनु सेवक सुरतरु सुरधेनू ॥ बिधिहरिहर बन्दित पदरेनू ॥ १ ॥ ❀
सेवत सुलभ सकलसुखदायक ॥ प्रणतपाल सचराचरनायक ॥ २ ॥ ❀

हे भक्तोंके कल्पवृक्ष ! हे भक्तोंके मनोरथ पूर्ण करनेको कामधेनुस्वरूप हे प्रभु! जिनकी चरणरजको ब्रह्मा विष्णु,महेश सदा वंदन करते हैं वे आप कृपा करके मेरी विनती सुनो॥१॥हे शरणागतोंके पालक प्रभु ! आप सेवा करनेपर अति सुलभ हो. हे सारे संसारको सुख देनहारे प्रभु ! आप तमाम चराचर जगत्के मालिक हो ॥ २ ॥

जो अनाथहित हमपर नेहू ॥ तौ प्रसन्न होय यह बर देहू ॥ ३ ॥ ❀
जो स्वरूप बस शिव मनमाहीं ॥ जेहि कारण मुनि यत्न कराहीं ॥ ४ ॥ ❀

हे अनाथ पुरुषोंके हित करनहारे प्रभु ! जो हमपर आपकी प्रीति है तो प्रसन्न होकर कृपा करके हमें यही वरदान दो कि—॥ ३ ॥ जो आपका स्वरूप महादेवजीके मनमें बसता है, जिस स्वरूपके वास्ते मुनिलोग अनेक यत्न (कोशिशें) करते है ॥ ४ ॥

जो भुशुंडिमनमानसहंसा ॥ सगुण अगुण जेहि निगम प्रशंसा ॥ ५ ॥ ❀
देखहिँ हम सो रूप भरि लोचन ॥ कृपा करहु प्रणतारतिमोचन ॥ ६ ॥ ❀

जो स्वरूप काकभुशुंडिके मनरूप मानससरोवरका हंसरूप है, जिस स्वरूपको वेद सगुण व निर्गुण उभयस्वरूप कहता है ॥ ५ ॥ हे शरणागतोंके संकट मिटानेहारे प्रभु! उस स्वरूपको हम हमारे नेत्र भरके देखें ऐसी कृपा हमपै करो ॥ ६ ॥

दम्पतिबचन परमप्रिय लागे ॥ मृदुल बिनीत प्रेमरसपागे ॥ ७ ॥ ❋
भक्तवत्सल प्रभु कृपानिधाना ॥ विश्वबास प्रगटे भगवाना ॥ ८ ॥ ❋

प्रेमरससे भरेहुए राजा रानीके ये कोमल और प्रेमरूपी रससे पागेहुये बचन प्रभुको बहुत प्रिय लगे ॥ ७ ॥ जिससे भक्तवत्सल और कृपानिधि भगवान्‌जी कि जो सारे संसारमें व्यापक है वे प्रभु कृपा करके उनके सामने प्रगट भए ॥ ८ ॥

दोहा—नीलसरोरुह नीलमणि, नील नीरधर श्याम ॥ ❋
लाजहिं तनशोभा निरखि, कोटि कोटिशत काम ॥ १५३ ॥ ❋

प्रभुका स्वरूप कैसा है कि नीलकमल, नीलमणि और श्याम सघन घनके समान श्यामवर्ण है. जिस स्वरूपकी छबि निरखकर कोट्यानकोटी कामदेव लजाते है ॥ १५३ ॥

शरदमयंकबदन छबिसीवा ॥ चारु कपोल चिबुक दरग्रीवा ॥ १ ॥ ❋
अधर अरुण रद सुन्दर नासा ॥ बिधुकरनिकरबिनिन्दकहासा ॥ २ ॥ ❋

शरदऋतुकी पूर्णिमाके चंद्रमाकासा सुन्दर शोभायमान मुखारविंद है, जो छबिकी परमावधि है, सुन्दर कपोल यानी गाल और चिबुक यानी डाढ़ी है, शंखसी त्रिवलीवाली सुन्दर ग्रीवा यानी कंठ है ॥ १ ॥ बिंबके फलसे अरुण अधर हैं, जिनके शोभायमान सुन्दर कुंदसे दांत हैं, सुन्दर नाक और चंद्रमाकी किरणोंके समूहका तिरस्कार करनेवाला सुन्दर हास्य है ॥ २ ॥

नव अम्बुज अम्बकछबि नीकी ॥ चितवन ललित भावती जीकी ॥ ३ ॥ ❋
भृकुटि मनोजचापछबिहारी ॥ तिलक ललाटपटल द्युतिकारी ॥ ४ ॥ ❋

नवीन कमलकेसे नेत्रोंकी छबि सबसेही अच्छी है और प्रभुकी चितवन कहे निगाह ऐसी ललित यानी सुन्दरी है कि जो सदा मनको सुहावनी लगती है ॥ ३ ॥ भृकुटीका बनाव ऐसा है कि जो कामदेवके धनुषकी छबिकोही छीनता है और ललाटपटलके मध्यमें देदीप्यमान तिलक शोभायमान है ॥ ४ ॥

कुण्डल मकर मुकुट शिरभ्राजा ॥ कुटिल केश जनु मधुपसमाजा ॥ ५ ॥ ❋
उर श्रीवत्स रुचिर बनमाला ॥ पदिकहार भूषण मणिजाला ॥ ६ ॥ ❋

कानोंमें मकराकृत कुंडल सुशोभित हैं, मस्तकपर रत्नजटित मुकुट विराज रहा है और प्रभुके कुटिल यानी घूंघरुवाले मुखके पास केश कैसे शोभायमान लगते हैं कि कमलके पास मानों भौंरोंका झुंड शोभायमान होरहा है ॥ ५ ॥ हृदयके बीच श्रीवत्सका चिन्ह सुन्दर, वनमाला, पदिक (हीरावोंका) और अनेक रत्नोंके आभूषण शोभायमान हो रहे हैं ॥ ६ ॥

केहरिकन्धर चारु जनेऊ ॥ बाहुविभूषण सुन्दर तेऊ ॥ ७ ॥ ❋
करिकर सरिस सुभग भुजदण्डा ॥ कटि निषंग कर शर कोदण्डा ॥ ८ ॥ ❋

केसरी (सिंह) कीसी मोटी गर्दन है. सुन्दर यज्ञोपवीत धरे हैं, और बाहुवोंमें सुन्दर

आभूषण यानी भुजबंध बंधेहुए है ॥ ७ ॥ हाथीकी सूंड़से सुन्दर भुजदंड है, कमरमें तरकस बंधे है, हाथमें धनुषबाण धरे है ॥ ८ ॥

दोहा-तड़ितबिनिन्दक पीतपट, उदर रेख बर तीनि ॥ ❋
नाभि मनोहर लेति जनु, यमुनभँवरछबि छीनि ॥ १५४ ॥ ❋

बिजलीकी छबि छीननेहारे पीले पीतांबर पहिरे है, उदरमें सुन्दर तीन रेखा क्या हैं मानों-त्रिलोकीके रूपकी सीमा हैं और सुन्दर नाभि तो मानों यमुनाजीके भँवरकी शोभाकोही छीन रही है ॥ १५४ ॥

पदराजीव बर्णि नहिँ जाहीं ॥ मुनिमनमधुप बसहिँ जेहिँ माहीं ॥ १ ॥ ❋
बामभाग शोभित अनुकूला ॥ आदिशक्ति छबिनिधि जगमूला ॥ २ ॥ ❋

प्रभुके चरणकमलोंका तो वर्णन होही नहीं सकता कि जिनके बीच मुनि लोगोंके मनरूप भ्रमर सदा निवास करते हैं ॥ १ ॥ प्रभुकी बाँइओर छबिकी निधि और जगतकी मूल कारण अनुकूल आदिशक्ति विराजमान हो रही है ॥ २ ॥

जासु अंश उपजहिँ गुणखानी ॥ अगणित उमा रमा ब्रह्मानी ॥ ३ ॥ ❋
भृकुटिबिलास जासु जग होई ॥ रामबामदिशि सीता सोई ॥ ४ ॥ ❋

कि जिसके अंशसे गुणोंकी खान असंख्यात लक्ष्मी, पार्वती और सावित्री प्रगट होती हैं ॥ ३ ॥ जिसके केवल भृकुटिविलाससे यह जगत पैदा होता है वह सीता प्रभुके बाएँ भागमें शोभायमान हो रही है ॥ ४ ॥

छबिसमुद्र हरिरूप बिलोकी ॥ यकटक रहे नयनपट रोंकी ॥ ५ ॥ ❋
चितवहिँ सादर रूप अनूपा ॥ तृप्ति न मानहिँ मनु शतरूपा ॥ ६ ॥ ❋

राजा रानी शोभाके सागर श्रीरामचन्द्रजीके स्वरूपको देखकर नेत्रोंके पर्दोंको रोंककर यकटक देखते रहे ॥ ५ ॥ मनु और शतरूपा प्रभुके अनुपम स्वरूपको आदरसहित देखते है पर मनमें तृप्ति नहीं मानते यानी देखते २ अघाते नहीं है ॥ ६ ॥

हर्षबिबश तनुदशा भुलानी ॥ परे दण्ड इव गहि पद पानी ॥ ७ ॥ ❋
शिर परसेउ प्रभु निजकरकंजा ॥ तुरत उठायो करुणा पुंजा ॥ ८ ॥ ❋

राजारानी ऐसे आनंदके वश होगये कि शरीरकी सुध जाती रही. केवल प्रभुमें मन रहनेसे उधरकीही सुध रही जिससे हाथोंसे प्रभुके चरण धरकर चरणोंमें दंडवत् गिरे ॥ ७ ॥ प्रभुने उनकी निष्कपट प्रीति देखकर अपने करकमलसे उनके शिरको स्पर्श कर करुणानिधान प्रभुने उनको तुरंत पृथ्वीपरसे उठा लिया ॥ ८ ॥

दोहा-बोले कृपानिधान पुनि, अति प्रसन्न मोहिँ जानि ॥ ❋
माँगहु बर जोइ भाव मन, महादानि अनुमानि ॥ १५५ ॥ ❋

ऐसे आदर करके फिर कृपानिधि प्रभुने प्रसन्न होकर कहा कि-हे प्रभु ! तुम मुझे अपने ऊपर अत्यंत प्रसन्न समझो. और मुझको महाउदार समझकर जो तुम्हारा जी चाहे वही बर मांगो ॥ १५५ ॥

सुनि प्रभुबचन जोरि युग पानी ॥ धरि धीरज बोले मृदु बानी ॥ १ ॥ ❋

नाथ देखि पदकमल तुम्हारे ॥ अब पूजे सब काम हमारे ॥ २ ॥ *

प्रभुके बचन सुन दोनों हाथ जोड़कर मनमें धीरज धरके मनुने मधुरवाणीसे कहा ॥ १ ॥ कि–हे नाथ ! आपके चरणकमलोंके दर्शन करके अब मेरे सब मनोरथ पूर्ण होगये है ॥ २ ॥

एक लालसा बड़ि मनमाहीं ॥ सुगम अगम कहि जात सो नाहीं ॥ ३ ॥ *

तुमहिँ देत अति सुगम गुसाँई ॥ अगम लागि मोहिँ निज कृपणाई ॥ ४ ॥ *

मनु कहते हैं कि–हे प्रभु ! मेरे मनमें एक बातकी बड़ी चाहना है कि, जो आपके देखते तो सुगम है और हमारी ओर देखते बड़ी कठिन है अतएव वो कही नहीं जाती ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! आपके देते तो वह बहुत सुगम है, परंतु मेरी कृपणता यानी तुच्छता देखकर मुझे वो बहुत कठिन मालूम होती है ॥ ४ ॥

यथा दरिद्र बिबुध तरु जाई ॥ बहु सम्पति माँगत सकुचाई ॥ ५ ॥ *

तासु प्रभाव न जाने सोई ॥ तथा हृदय मम संशय होई ॥ ६ ॥ *

जैसे जन्मका दरिद्री कल्पवृक्षके तले जाकर ज्यादा संपदा मांगते मनमें सकुचाता है ॥ ५ ॥ क्योंकि यह उसका प्रभाव नहीं जानता. ऐसही हे प्रभु ! मेरे मनमेंभी मांगते संदेह होता है ॥ ६ ॥

सो तुम जानहु अंतरयामी ॥ पुरवहु मोर मनोरथ स्वामी ॥ ७ ॥ *

सकुच बिहाइ माँगु नृप मोहीं ॥ मोरे नहिँ अदेय कछु तोहीं ॥ ८ ॥ *

जैसे कल्पवृक्ष सब मनवांछित देनेको समर्थ है ऐसे आपभी सब देनेको समर्थ हो; परंतु मेरा मन मांगते संकुचित होता है; सो हे प्रभु ! आप जानतेही हो; क्योंकि आप अंतर्यामी हो सो हे प्रभु ! कृपा करके मेरा मनोरथ पूर्ण करो ॥ ७ ॥ मनुके ऐसे वचन सुनकर प्रभुने कहा कि–हे राजन् ! आप संकोच छांड़कर जो आपको मांगना हो सो मुझसे मांगो; क्योंकि मेरे आपको न देनेलायक कुछभी नहीं है ॥ ८ ॥

दोहा–दानिशिरोमणि कृपानिधि, नाथ कहौं सतभाव ॥ *

चाहौं तुमहिँ समान सुत, प्रभुसन कवन दुराव ॥ १५६ ॥ *

प्रभुके ऐसे करुण बचन सुनकर मनुने कहा कि–हे दान देनेवालोंमे शिरोमणि ! हे कृपानिधि प्रभु ! मैं आपको सत्यभावसे कहता हूं कि, मैं आपके जैसा पुत्र चाहता हूं सो कृपा करके देओ. मालिकके पास छिपाना क्या ? वहां तो जैसा हो वैसा कह देनाही चाहिये ॥ १५६ ॥

देखि प्रीति सुनि बचन अमोले ॥ एवमस्तु करुणानिधि बोले ॥ १ ॥ *

आपसरिस खोजौं कहँ जाई ॥ नृप तव तनय होब मैं आई ॥ २ ॥ *

मनुके अमूल्य बचन सुन उसकी प्रीति देखकर करुणानिधान प्रभुने कहा कि–हे राजन् ! 'एवमस्तु' यानी ऐसाही होगा ॥ १ ॥ प्रभुने कहा कि–अब मैं मेरे जैसा पुत्र तो कहां जाकर ढूंढू ? हे राजन् ! इसलिये हमही आकर तेरे पुत्र होवेंगे ॥ २ ॥

शतरूपहिँ बिलोकि कर जोरे ॥ देबि मांगु बर जो रुचि तोरे ॥ ३ ॥ *

जो बर नाथ चतुरनृप माँगा ॥ सोइ कृपालु मोहिँ अति प्रिय लागा ४ *

फिर शतरूपाको हाथ जोड़े खड़ी देखकर प्रभुने कहा कि–हे देवि ! जो तेरी इच्छा हो सो वर तू

मांग ॥ ३ ॥ प्रभुके ऐसे प्रिय बचन सुनकर शतरूपाने कहा कि– हे नाथ ! जो वरदान इस विचक्षण राजाने मांगा है वह वरदान हे प्रभु !मुझको बहुत प्यारा लगा है ॥ ४ ॥

प्रभु परन्तु सुठि होति ढिठाई ॥ यद्यपि भक्तिहित तुमहिं सुनाई ॥ ५ ॥ ❋
तुम ब्रह्मादिजनक जगस्वामी ॥ ब्रह्म सकलउरअंतरयामी ॥ ६ ॥ ❋

हे प्रभु ! यद्यपि आपको यह हमारा कहना भक्तिके कारण बहुत अच्छा लगता है परंतु वास्तवमें तौ यह पक्की ढिठाईही है ॥ ५ ॥ क्योंकि आप ब्रह्मादिक देवताओंके पिता हौ, जगत्के स्वामी हौ, और साक्षात परब्रह्मरूप सारे संसारके हृदयके अंतर्यामी हौ ॥ ६ ॥

अस समुझत मन संशय होई ॥ कहा जो प्रभु प्रमाण पुनि सोई ॥ ७ ॥ ❋
जे निजभक्त नाथ तव अहईं ॥ जो सुख पावहिं सो गति लहईं ॥ ८ ॥ ❋

सो जब ऐसा समझते हैं तब तौ हमारे मनमें संदेहही होता है कि–यह बात कैसे होगी ? परंतु हे प्रभु ! आपने जो कहा है यह तौ फिर प्रमाणही है; उसमें तो संदेहही क्या ? ॥ ७ ॥ हे नाथ ! मै एक दूसरा बर और मांगती हूं सो कृपा करके देओ. हे प्रभु ! जो आपके निजभक्त हैं और वे जो सुख और गति पाते हैं ॥ ८ ॥

दोहा–सोइ सुख सोइ गति सोइ भगति, सोइ निजचरण सनेहु ॥ ❋
सोइ बिवेक सोइ रहनि प्रभु, मोहिं कृपा करि देहु ॥ १५७ ॥ ❋

वोही सुख, वोही गति, वोही भक्ति, वोही आपके चरणोंमें स्नेह, वोही विवेक, और वोही रहनि हे प्रभु ! मुझे कृपा करके देओ ॥ १५७ ॥

सुनि मृदु गूढ़ रुचिर बररचना ॥ कृपासिन्धु बोले मृदु बचना ॥ १ ॥ ❋
जो कछु रुचि तुम्हरे मनमाहीं ॥ मैं सो दीन्ह सब संशय नाहीं ॥ २ ॥ ❋

शतरूपाकी ऐसी सुकोमल गूढ़ार्थ सुन्दर और सुहावनी बचनरचना सुनकर कृपासिंधु प्रभुने कोमल बचन कहे ॥ १ ॥ कि– हे माता ! आपके मनमें जो कुछ प्रीति है सो सब मैंनेही दी है इसमें कुछभी संदेह नहीं है ॥ २ ॥

मातु विवेक अलौकिक तोरे ॥ कबहुँ नमिटिहि अनुग्रह मोरे ॥ ३ ॥ ❋
बन्दिचरण मनु कहेउ बहोरी ॥ अवर एक बिनती प्रभु मोरी ॥ ४ ॥ ❋

हे माता ! आपका लौकिक साक्षात्कार ज्ञान मेरे अनुग्रहसे कभी निवृत्त नहीं होगा ॥ ३ ॥ प्रभु ऐसे शतरूपाको कह रहे थे इतनेमें प्रभुके चरणोंको वंदन करके फिर मनुने कहा कि– हे प्रभु ! मेरी एक और विनती है सो सुनो ॥ ४ ॥

सुतविषयक तव पदरति होऊ ॥ मोहिं बरु मूढ कहै किन कोऊ ॥ ५ ॥ ❋
मणि बिनु फणि जिमि जल बिन मीना॥मम जीवन तिमि तुमहिं अधीना६

आप पुत्र होओ तहां आपके चरणकमलोंमे मेरी पुत्रविषयक प्रीति होनी चाहिये. चाहे इस बरके मांगनेसे मुझे कोई मूर्ख क्यों न कहे ? पर मेरी तौ यही प्रार्थना है ॥ ५ ॥ हे प्रभु ! जैसे मणि बिना फणी यानी सर्प, और जल बिना मछली, ऐसे मेरा जीना तौ आपकेही आधीन है ॥ ६ ॥

अस बर माँगि चरण गहि रहेऊ ॥ एवमस्तु करुणानिधि कहेऊ ॥ ७ ॥ ❀
अब तुम मम अनुशासन मानी ॥ बसहु जाइ सुरपतिरजधानी ॥ ८ ॥ ❀

मनु ऐसा बरदान मांगकर चरण पकड़कर रह गया. तब करुणानिधि प्रभुने कहा कि–हे मनु! 'एवमस्तु' यानी ऐसाही होगा ॥ ७ ॥ प्रभुने कहा कि–हे मनु! अब तुम मेरी आज्ञा मानकर स्वर्गमें जाकर रहो ॥ ८ ॥

सोरठा–तहँ करि भोग विलास, तात गये कछु काल पुनि ॥ ❀
होइहहु अवधभुआल, तब मैं होब तुम्हार सुत ॥ २३ ॥ ❀

प्रभुने मनुसे कहा कि– हे तात! वहां कुछ काल भोग विलास करनेके अनंतर कुछ समय बीतनेके बाद फिर तुम अयोध्याके राजा (दशरथ)होओगे तहां मैं आपका पुत्र होऊंगा ॥ २३ ॥

इच्छामय नरबेष सँवारे ॥ होइहौं प्रकट निकेत तुम्हारे ॥ १ ॥ ❀
अंशनसहित देह धरि ताता ॥ करिहौं चरित भक्तसुखदाता ॥ २ ॥ ❀

आप अयोध्यापति होओगे तहां हे तात! आपके घर मैं इच्छामय मनुष्यवेष बनाके मेरे अंशोंके साथ मनुष्यदेह धरके प्रगट होऊंगा और वहां भक्तोंके सुख देनहारे अनेक चरित्र करूंगा ॥ १ ॥ २ ॥

जे सुनि सादर नर बड़भागी ॥ भव तरिहहिँ ममता मद त्यागी ॥ ३ ॥ ❀
आदिशक्ति जेहिँ जग उपजाया ॥ सोउ अवतरहि मोरि यह माया॥४॥❀

जो बड़भागी मनुष्य उनको आदरसहित सुनेंगे वे ममता और मदको त्यागकर संसारसे पार उतर जायंगे ॥ ३ ॥ प्रभु कहते है कि– हे तात! यह मेरी माया आदिशक्ति कि जिससे जगत् पैदा हुआ है वहभी मेरे साथ अवतार लेवेगी ॥ ४ ॥

पुरउब मैं अभिलाष तुम्हारा ॥ सत्य सत्य प्रण सत्य हमारा ॥ ५ ॥ ❀
पुनि पुनि अस कहि कृपानिधाना ॥ अन्तरध्यान भये भगवाना ॥ ६ ॥❀

प्रभुने कहा कि– हे राजन्! मैं आपकी अभिलाषा पूर्ण करूंगा यह हमारा प्रण सत्य! सत्य!! सत्य!!! है ॥ ५ ॥ याज्ञवल्क्यने कहा कि–कृपानिधान भगवान् मनुसे बारंबार ऐसे कहकर अंतर्धान होगये ॥ ६ ॥

दम्पति उर धरि भक्ति कृपाला ॥ तेहि आश्रमहिँ बसे कछु काला ॥७॥ ❀
समय पाय तनु तजि अनयासा ॥ जाइ कीन्ह अमरावति बासा ॥ ८ ॥❀

प्रभुके जानेके बाद राजा रानी प्रभुकी भक्ति हृदयमें रखकर कुछ कालतक उसी आश्रममें रहे ॥ ७ ॥ फिर अवसर पाकर बिना खेदके शरीरको त्यागकर वे दोनों इंद्रकी पुरी अमरावतीमें जा बसे ॥ ८ ॥

दोहा–यह इतिहास पुनीत अति, उमहिँ कहेउ वृषकेतु ॥ ❀
भरद्वाज सुनु अपर पुनि, रामजन्मकर हेतू ॥ १५८ ॥ ❀

याज्ञवल्क्य मुनि कहते हैं कि–हे भरद्वाज! यह परम पवित्र इतिहास महादेवजीने पार्वतीको कहा था सो मैंने तुमसे कहा. अब दूसरा फिर रामचन्द्रजीके अवतार लेनेका कारण कहता हूं सो सुनो॥१५८॥

सुनु मुनि कथा पुनीत पुरानी ॥ जो गिरिजापति शम्भु बखानी ॥ १ ॥ *
बिश्वबिदित यक केकयदेशू ॥ सत्यकेतु तहँ बसै नरेशू ॥ २ ॥ *

हे मुनि भरद्वाज ! जो पुरानी और पवित्र कथा महादेवजीने पार्वतीसे कही है वो कथा मैं कहता हूं सो सुनो ॥ १ ॥ जगत्जाहिर एक कैकय नाम देश है. वहां सत्यकेतु नाम राजा राज करता था ॥ २ ॥

धर्मधुरन्धर नीतिनिधाना ॥ तेज प्रताप शील बलवाना ॥ ३ ॥ *
तेहिके भये युगुल सुत बीरा ॥ सबगुणधाम महारणधीरा ॥ ४ ॥ *

वह राजा धर्ममें बड़ा पक्का नीतिका भंडार था. उस महाबली राजाका तेज और प्रताप बहुत बड़ा था और उसका स्वभाव बहुत अच्छा था ॥ ३ ॥ उसके शूर वीर दो पुत्र हुए थे, कि, जो सब गुणोंके घर और बड़े रणधीर थे ॥ ४ ॥

रजधानी जेठे सुत आही ॥ नाम प्रतापभानु अस ताही ॥ ५ ॥ *
अपर सुतहिँ अरिमर्द्दन नामा ॥ भुजबल अतुल अचल संग्रामा ॥६॥ *

उनमें बड़े पुत्रको राजधानी मिली थी जिसका नाम प्रतापभानु था ॥ ५ ॥ और दूसरे पुत्रका नाम अरिमर्दन था. उसकी भुजाओंका बल बेतोल और वह कभी संग्राममेंसे भागा नहीं था ॥ ६ ॥

भाइहि भाइहि परम सुरीती ॥ सकल दोष छल बर्जित प्रीती ॥ ७ ॥ *
जेठ सुतहिं राज्य नृप दीन्हा ॥ हरिहित आपु गवन बन कीन्हा ॥ ८ ॥ *

उन दोनों भाइयोंके बीचमें बड़ी प्रीति थी, कि जिसमें किसी तरहका कपट व दोष नहीं था. और उनका बरताव आपसका बहुत अच्छा था ॥ ७ ॥ राजा सत्यकेतु अपने बड़े पुत्र प्रतापभानुको राज देकर आप हरिका आराधन करनेके लिये बनमें चला गया ॥ ८ ॥

दोहा–जब प्रतापरबि भयउ नृप, फिरी दुहाई देश ॥ *
प्रजापाल अति बेदबिधि, कतहुँ नहीं अघलेश ॥ १५९॥ *

जब प्रतापभानु राजा हुआ और देशमें उसकी दुहाई फिरी तब कहीं पापका लेश न रहा; क्योंकि राजा प्रतापभानु वेदकी रीतिसे प्रजाका पालन करता था ॥ १५९ ॥

नृपहितकारक सचिव सुजाना ॥ नाम धर्मरुचि शुक्रसमाना ॥ १ ॥ *
सचिव सयान बन्धु बलबीरा ॥ आपु प्रतापपुंज रणधीरा ॥ २ ॥ *

राजाके पास जो मंत्री था वहभी बड़ा सुजान और राजाका हितकारी था. उसका धर्मरुचि नाम था और शुक्राचार्यजीके जैसा वह नीतिनिपुण था ॥ १ ॥ राजाका मंत्री बड़ा बुद्धिमान्, भाई बड़ा बली और वीर, और आप प्रतापका पुंज और बड़ा रणधीर था ॥ २ ॥

सेन संग चतुरंग अपारा ॥ अमित सुभट सब समर जुझारा ॥ ३ ॥ *
सेन बिलोकि राउ हरषाना ॥ अरु बाजे गहगहे निशाना ॥ ४ ॥ *

उसके पास अपार चतुरंगिणी यानी हाथी, घोड़े रथ व प्यादोंकी भारी सेना थी. उसके पास

असंख्यात जोद्धार थे कि जो सबके सब संग्रामके अंदर बड़े जुझार थे ॥ ३ ॥ सेनाको देखकर राजा बडा प्रसन्न हुआ उसवक्त गहगहे बाजे बजने लगे ॥ ४ ॥

बिजयहेतु सब कटक बनाई ॥ सुदिन शोधि नृप चलेउ बजाई ॥ ५ ॥ ❋
जहँ तहँ परीं अनेक लराई ॥ जीते सकल भूप बरिआई ॥ ६ ॥ ❋

राजा प्रतापभानुने दिग्विजय करनेके लिये अपनी सब सेना तैयार करी. फिर अच्छा शुभ दिन देखकर बाजे बजाकर राजा दिग्विजय करनेको चला ॥ ५ ॥ राजा प्रतापभानुके जहां तहां अनेक लड़ाइयां हुई पर उन सबमें राजाने बलात्कारसे सब राजाओंको जीत लिया ॥ ६ ॥

सप्तद्वीप भुजबल बश कीन्हा ॥ लै लै दण्ड छाँड़ि नृप दीन्हा ॥ ७ ॥ ❋
सकल अवनिमण्डल तेहि काला ॥ एक प्रतापभानु महिपाला ॥ ८ ॥ ❋

राजाने अपने भुजबलके प्रतापसे सातों द्वीप अपने वश कर लिये और जिन जिन राजाओंको पकड़ा था उन उनसे दंड यानी कर ले ले कर सबको पीछा छोड़ दिया ॥ ७ ॥ उसवक्त सारे भूमंडल-पर एक प्रतापभानु राजा रहा था और सब उसके मताहत थे ॥ ८ ॥

दोहा—स्ववश विश्व करि बाहुबल, निजपुर कीन्ह प्रवेश ॥ ❋
अर्थ धर्म कामादि सुख, सेवहिँ सबै नरेश ॥ १६० ॥

राजा प्रतापभानु अपने भुजबलसे सारे जगत्को अपने वशकर अपने पुरमें प्रवेश करके अर्थ, धर्म और काम आदि सारे सुख भोगने लगा ॥ १६० ॥

भूप प्रतापभानु बल पाई ॥ कामधेनु भै भूमि सुहाई ॥ १ ॥ ❋
सब दुखवर्जित प्रजा सुखारी ॥ धर्मशील सुन्दर नर नारी ॥ २ ॥ ❋

राजा प्रतापभानुके बलको पाकर पृथ्वी सुन्दर कामधेनु बन गयी अर्थात् जैसे कामधेनु सब का-मना पूर्ण करती है ऐसे सब कामना पृथ्वी पूरने लगी ॥ १ ॥ प्रजाके सारे दुःख मिट गये, प्रजा सुखी होगयी; सब स्त्रीपुरुष सुन्दर और धर्मनिष्ठ होगये ॥ २ ॥

सचिव धर्मरुचि हरिपद प्रीती ॥ नृपहितहेतु सिखावत नीती ॥ ३ ॥ ❋
गुरु सुर सन्त पितर महिदेवा ॥ करै सदा नृप सबकी सेवा ॥ ४ ॥ ❋

मंत्री धर्मरुचि भगवान्के चरणोंका परमभक्त था सो वह राजाके हितकेलिये प्रजाको नीतिका पथ सिखाता था ॥ ३ ॥ राजा प्रतापभानु हमेशा गुरु, ब्राह्मण, देवता, संत और पित्रीश्वर इन सब-की सदा सेवा करता था ॥ ४ ॥

भूपधर्म जे वेद बखाने ॥ सकल करै सादर सुख माने ॥ ५ ॥ ❋
दिन प्रति देइ बिबिधबिधि दाना ॥ सुनै शास्त्र बर वेद पुराना ॥ ६ ॥ ❋

वेदमें जो राजाओंके धर्म कहे हैं वे सब वह सुख मानकर आदरके साथ पालता था ॥ ५ ॥ हमे-शा वह अनेकप्रकारके दान देता था और वेद पुराण व उत्तम शास्त्र सुनता था ॥ ६ ॥

नाना वापी कूप तड़ागा ॥ सुमनबाटिका सुन्दर बागा ॥ ७ ॥ ❋
बिप्रभवन सुरभवन सुहाये ॥ सब तीरथन बिचित्र बनाये ॥ ८ ॥ ❋

उसने तमाम तीर्थोंमें कई विचित्र अनेक कूए, बावड़ी, तालाव, फुलवाड़ियां, सुन्दर सुहावने बाग ब्राह्मणोंके रहनेके मकान और मंदिर बनवाये ॥ ७ ॥ ८ ॥

दोहा–जहँलगि कहे पुराण श्रुति, एक एक सब याग ॥ ❋
बार सहस्र सहस्र नृप, किये सहित अनुराग ॥ १६१ ॥ ❋

वेद और पुराणोंमें जहांतक यज्ञ याग कहे है वे सब जुदे जुदे यज्ञ याग राजा प्रतापभानुने बड़ी प्रीतिके साथ हजार हजार दफे किये थे ॥ १६१ ॥

हृदय न कछु फलअनुसंधाना ॥ भूप विवेकी परम सुजाना ॥ १ ॥ ❋
करै जो धर्म कर्म मन बानी ॥ वासुदेवअर्पित नृप ज्ञानी ॥ २ ॥ ❋

जितने यज्ञ याग किये थे वे सब परमेश्वरार्पण किये थे; हृदयमें फलका अनुसंधान बिलकुल नहीं किया गया था; क्योंकि वह राजा बड़ा विवेकी और ज्ञानी था ॥ १ ॥ वह ज्ञानी राजा मन, कर्म व वाणीसे जो कुछ धर्म करता था वह सब ईश्वरार्पण करता था ॥ २ ॥

चढ़ि वर बाजि बार यक राजा ॥ मृगयाकर सब साजि समाजा ॥ ३ ॥ ❋
बिन्ध्याचल गँभीर बन गयऊ ॥ मृग पुनीत बहु मारत भयऊ ॥ ४ ॥ ❋

एकवेर वह राजा श्रेष्ठ घोड़ेपर सवार हो सब शिकारका सामान सजकर ॥ ३ ॥ विंध्याचलके महाघोर गंभीर वनमें चला गया सो वहां जाकर इसने बहुतसे पवित्र हरिण मारे ॥ ४ ॥

फिरत बिपिन नृप दीख बराहू ॥ जनु बन दुरेउ शशिहिं ग्रसि राहू ॥५॥ ❋
बड़ बिधु नहिं समात मुखमाहीं ॥ मनहुँ क्रोधवश उगिलत नाहीं ॥६॥ ❋

फिर वनमें फिरते फिरते राजा प्रतापभानुने एक शूकर देखा जो ऐसा शोभायमान लगता था कि मानों राहु चंद्रमाको निगलकर वनमें छिप गया है. यह उत्प्रेक्षा अलंकार है. सो यहां शूकरकी जो चंद्रमाके जैसी सुफेद और गोल दो दाढ़े है उनकी तो चंद्रमाकी उत्प्रेक्षा करी है और राहु श्यामवर्ण होनेसे शूकरको बनाया है ॥ ५ ॥ यद्यपि राहु चंद्रमाको निगल गया है तथापि वह चंद्रमा मुखकी अपेक्षा बड़ा है इसवास्ते वह मुखमें समाता नहीं है, मानों इसी कारणसे वह क्रोध करके उसको पीछा उगलता नहीं है. यानी मुहमें पकडा हुआ है ॥ ६ ॥

कोल कराल दशनछबि गाई ॥ तन विशाल पीवर अधिकाई ॥ ७ ॥ ❋
घुरघुरात हयआरव पाये ॥ चकित बिलोकत कान उठाये ॥ ८ ॥ ❋

उस शूकरकी दाढ़ें ऐसी विकराल थीं कि जिसको कुछ कह नहीं सकते. यह तो उसकी दाढ़ोंकी छबि कही है और उसका शरीर बहुत बड़ा और बहुत पुष्ट था ॥ ७ ॥ वह शूकर राजा प्रतापभानुके घोड़ेकी टापोंकी पटपटाहट पाकर कान उठाकर घुरघुराहट करता चकित होकर देखने लगा ॥ ८ ॥

दोहा–नीलमहीधरशिखरसम, देखि बिशाल बराह ॥ ❋
चपरि चलेउ हय सुटुकि नृप, हांकि न होइ निबाह ॥ १६२ ॥ ❋

राजा प्रतापभानु नीलपर्वतके शिखरके समान उस बड़े वराहको देखकर चपरि कहे हठ

करके घोड़ेको सड़का मारकर चल दिया; क्योंकि वहां घोड़ेको हांकनेसे थोड़ाही निर्वाह हो सकता था ॥ १६२ ॥

आवत देखि अधिकरव बाजी ॥ चला बराह मरुतगति भाजी ॥ १ ॥ ❋
तुरत कीन्ह नृप शरसन्धाना ॥ महिमिलि गयउ बिलोकत बाना ॥ २ ॥ ❋

बड़े शब्दवाले घोड़ेको आता देखकर वह शूकर पवनके वेग भाग चला ॥ १ ॥ तब राजाने उसे भागता देखकर तुरंत तीर चढ़ाया जिसे देखतेही वह वराह जमीनके साथ मिल गया ॥ २ ॥

लगि तकि तीर महीश चलावा ॥ करि छल सुअर शरीर बचावा ॥ ३ ॥ ❋
प्रकटत दुरत जाइ मृग भागा ॥ रिसबश भूप चलेउ संग लागा ॥ ४ ॥ ❋

राजाने बहुत ताकताकके तीर चलाया पर उस शूकरने छल करके अपना शरीर बचा लिया ॥ ३ ॥ वह शूकर कभी प्रगट दीखता है, कभी छिप जाता है ऐसे भागता २ दूर चला गया; जिसके पीछे पीछे राजाभी क्रोधवश होकर साथ साथ बहुत दूर चला गया ॥ ४ ॥

गयउ दूरि बन गहन बराहू ॥ जहँ नाहीं जग बाजि निबाहू ॥ ५ ॥ ❋
अति अकेल बन बिपुल कलेशू ॥ तदपि न मृगमग तजै नरेशू ॥ ६ ॥ ❋

वह शूकर भागा २ गहन वनमें बहुत दूर चला गया कि, जहां हाथी और घोड़ोंका निर्वाह नहीं होता था ॥ ५ ॥ आखिर वह राजा सब सेनाको छोड़कर अकेला उस महाकठिन भारी जंगलके भीतर जा पड़ा तथापि उस राजाने उस शूकरका पीछा नहीं छोड़ा ॥ ६ ॥

कोल बिलोकि भूप बड़धीरा ॥ भागि पैठ गिरिगुहा गँभीरा ॥ ७ ॥ ❋
अगम देखि नृप अति पछिताई ॥ फिरेउ महाबन परेउ भुलाई ॥ ८ ॥ ❋

वह शूकर बड़े धीर राजाको पीछे आता देखकर भागकर एक गंभीर पर्वतकी गुफामें पैठ गया ॥ ॥ ७ ॥ वहां तो राजा किसी कदर जा नहीं सका; क्योंकि वह जगह बड़ी दुर्गम थी तिसे देखकर राजा मनमें बहुत पछताया; निदान मनमें हार मानकर राजा पीछा लौटा. तहां उस भारी जंगलके भीतर भूल पड़ा. किसी कदर उसको पीछा रास्ता नहीं मिला ॥ ८ ॥

दोहा–खेदखिन्न प्यासा क्षुधित, राजा बाजिसमेत ॥ ❋
खोजत व्याकुल सरित सर, जल बिनु भयउ अचेत ॥ १६३ ॥ ❋

राजा घोड़ेके साथ खेदसे खिन्न हो भूख व प्यासके मारे व्याकुल होकर तालाव या नदीको ढूंढ़ रहा था; तहां जलके विना वह अचेत हो गया था ॥ १६३ ॥

फिरत बिपिन आश्रम यक देषा ॥ तहँ बस नृपति कपट मुनिबेषा ॥ १ ॥ ❋
जासु देश नृप लीन्ह छुड़ाई ॥ समर सेन तजि गयेउ पराई ॥ २ ॥ ❋

जंगलमें भटकते २ राजा प्रतापभानुने एक आश्रम देखा कि, जहां एक राजा कपटसे मुनिको वेष बनाकर रहता था ॥ १ ॥ जिसका देश राजा प्रतापभानुने छुड़ा लिया था, जब उस राजाकी सेना रणभूमिको छोड़कर भाग गयी ॥ २ ॥

समय प्रतापभानुकर जानी ॥ आपन अति असमय अनुमानी ॥ ३ ॥ ❋

गयेउ न गृह मन बहुत गलानी ॥ मिला न राजहिं नृप अभिमानी ॥ ४ ॥

तब वह प्रतापभानुके अच्छे दिन समझ और अपने बुरे दिन जानकर ॥ ३ ॥ युद्धभूमिसे लौटकर पीछा घरपर नहीं गया, क्योंकि उसके मनमें इस बातकी बड़ी ग्लानि रही और उसीसे वह अभिमानी राजा प्रतापभानुसेभी जाकर नहीं मिला ॥ ४ ॥

रिसि उर मारि रंकजिमि राजा ॥ बिपिन बसै तापसके साजा ॥ ५ ॥ ❀
तासु समीप गवन नृप कीन्हा ॥ यह प्रतापरवि तेहि तब चीन्हा ॥ ६ ॥ ❀

फिर मनही मनमें रिसको मारकर रंक (गरीब) की तरह वह राजा तपस्वीका वेष बनाकर वनमें रहने लगा ॥ ५ ॥ जब प्रतापभानु उसके पास गया तब उस कपटी मुनिने उसे तुरंत पहिचान लिया कि यह प्रतापभानुही है ॥ ६ ॥

राउ तृषित नहिँ तेहिं पहिचाना ॥ देखि सुवेश महामुनि जाना ॥ ७ ॥ ❀
उतरि तुरगते कीन्ह प्रणामा ॥ परम चतुर न कहेऊ निज नामा ॥ ८ ॥ ❀

परंतु राजा प्रतापभानु उसवक्त प्यासके मारे व्याकुल हो रहा था इससे उसने उसे नहीं पहिचाना किंतु उसका सुन्दर बनाव देखकर राजाने उसे कोई बड़ा तपस्वी जाना ॥ ७ ॥ जिससे घोड़ेसे उतरकर राजाने उसे प्रणाम किया परंतु वह बड़ा चतुर था जिससे उसने अपना नाम उसको नहीं बताया ॥ ८ ॥

दोहा–भूपति तृषित बिलोकि तेइँ, सरवर दीन्ह देखाइ ॥ ❀
मज्जन पान समेत हय, कीन्ह नृपति हरषाइ ॥ १६४ ॥ ❀

उस मुनिने राजाको प्यासा देखकर तुरंत सरोवर दिखाया, तिसे देखकर राजाने खुश होकर घोड़के साथ स्नान करके जल पान किया ॥ १६४ ॥

गै श्रम सकल सुखी नृप भयऊ ॥ निज आश्रम तापस लै गयऊ ॥ १ ॥ ❀
आसन दीन्ह अस्त रवि जानी ॥ पुनि तापस बोला मृदु बानी ॥ २ ॥ ❀

राजाका सारा परिश्रम जाता रहा और राजा सुखी हो गया. तब वह तापस राजाको अपने आश्रममें ले गया ॥ १ ॥ वहां आसन देकर राजाको आसनपर बिठाया-फिर सूर्यास्तका समय जानकर उस तपस्वीने मधुर वाणीसे कहा कि– ॥ २ ॥

को तुम कस बन फिरहु अकेले ॥ सुन्दर युवा जीवपर हेले ॥ ३ ॥
चक्रवर्तिके लक्षण तोरे ॥ देखत दया लागि अति मोरे ॥ ४ ॥ ❀

" आप कौन हो, और वनमें अकेले कैसे फिरते हो ? तुम्हारी सुन्दर युवा अवस्था है सो तुम प्राणोंपर क्यों खेलते हो ? ॥ ३ ॥ तुम्हारे सब लक्षण मुझको चक्रवर्तीके दीख पड़ते है अतएव तुमको देखकर मुझको बड़ी दया आती है ॥ ४ ॥

नाम प्रतापभानु अवनीशा ॥ तासु सचिव मैं सुनहु मुनीशा ॥ ५ ॥ ❀
फिरत अहेरहिँ परेउँ भुलाई ॥ बड़े भाग्य देखेउँ पद आई ॥ ६ ॥ ❀

उस कपटी मुनिके ऐसे कोमल बचन सुनकर राजा प्रतापभानुने कहा कि–हे मुनिराज !

सुनिये, प्रतापभानु नाम जो राजा है उसका मैं मंत्री हूं ॥ ५ ॥ मैं शिकारको निकला था; तहां वनमें भूल गया था; पर मेरे कोई अच्छे भाग्य थे जिससे आपके चरणोंका दर्शन हो गया है ॥ ६ ॥

हमकहँ दुर्लभ दर्श तुम्हारा ॥ जानत हौं कछु भल होनहारा ॥ ७ ॥
कह मुनि तात भयउ अँधियारा ॥ योजन सत्तरि नगर तुम्हारा ॥ ८ ॥ ❀

हे मुनि ! हमको आप लोगोंका दर्शन दुर्लभ है तथापि वे आपके दर्शन हुए जिससे मैं जानता हूं कि–अब कुछ हमारा अवश्य भला होनेवाला है ॥ ७ ॥ राजाके ऐसे वचन सुनकर मुनिने कहा कि–हे राजन् ! अब तो गहिरा अंधियारा हो गया है और आपका नगरभी यहांसे कोई सत्तर ७० योजन दूर है ॥ ८ ॥

दोहा–निशा घोर गम्भीर बन, पन्थ न सूझ सुजान ॥ ❀
बसहु आजु अस जानि तुम, जायहु होत बिहान ॥ १६५ ॥ ❀
तुलसी जस भवितव्यता, तैसे मिलै सहाइ ॥ ❀
आपु न आवै ताहिपै, ताहि तहां ले जाइ ॥ १६६ ॥ ❀

मुनि कहता है कि–हे सुजान राजन्! यह रात बड़ी भयावनी और जंगल बड़ा गहन है, और अंधकारके आगे मार्ग बिलकुल दिखायी नहीं देता; इसलिये आज तो तुम इस बातका विचार करके यहीं रह जाओ और कल भोर होतेही चले जाना ॥ १६५ ॥ तुलसीदासजी कहते है कि–जैसा होनहार होता है उसवक्त वैसेही सहाय मिलते है. होनहार ऐसा प्रबल है कि, आप चलते भुगतनेवालेके पास नहीं जाता किंतु जिसे भुगतना है उस खुदको वहां ले जाके पहुंचा देता है ॥ १६६ ॥

भलेहि नाथ आयसु धरि शीशा ॥ बाँधि तुरग तरु बैठ महीशा ॥ १ ॥ ❀
नृप सबभांति प्रशंसेउ ताही ॥ चरण बन्दि निजभाग्य सराही ॥ २ ॥ ❀

राजा प्रतापभानुने भवितव्यताके वश होकर उसकी आज्ञा शिरपर चढ़ाके कहा कि–हे नाथ ! बहुत अच्छा ऐसे कहकर अपने घोड़ेको एक पेड़में बांधकर आप एक वृक्षके तले जा बैठा ॥ १ ॥ राजाने उसकी सब तरहसे प्रशंसा करी और उसके चरणोंको वंदन करके अपने भाग्यकीभी उसके दर्शन होनेके हेतु तारीफ की ॥ २ ॥

पुनि बोलेउ मृदु गिरा सुहाई ॥ जानि पिता प्रभु करौं ढिठाई ॥ ३ ॥ ❀
मोहिँ मुनीश सुतसेवक जानी ॥ नाथ नाम निज कहहु बखानी ॥४॥ ❀

फिर राजा प्रतापभानुने सुहावनी मधुर वाणीसे कहा कि–हे मुनि ! मैं आपको अपना पिता समझके ढिठाई करता हूं सो आप माफ करना ॥ ३ ॥ हे मुनिराज ! मुझको आप अपना पुत्र और सेवक समझकर मुझे आप आपना नाम खुलासा करके कहो ॥ ४ ॥

तेहिन जान नृप नृपहिँ सो जाना ॥ भूपहृदय सो कपट सयाना ॥५॥ ❀
बैरी पुनि क्षत्री पुनि राजा ॥ छल बल कीन्ह चहै निज काजा ॥ ६ ॥ ❀

यद्यपि राजाने उसे नहीं पहिंचाना था पर उसने राजाको पहिंचान लिया था. इसलिये उस विवेकी राजाने अपना सारा कपट अपने मनके भीतरही रक्खा; बाहिर किंचिन्मात्रभी नहीं

जताया ॥ ५ ॥ अव्वल तो वैरी, दूसरा जातका क्षत्री, तीसरा राजा, सो उसने अपने मतलबके लिये उसवक्त छल बल करना चाहा ॥ ६ ॥

समुझि राजसुख दुखित अराती ॥ अँवा अनलइव सुलगै छाती ॥ ७ ॥ ❀
सरल बचन नृपके सुनि काना ॥ बयर सँभारि हृदय हरषाना ॥ ८ ॥ ❀

राजा प्रतापभानुके राजसुखको समझकर वह वैरी मुनि बड़ा दुःखी हुआ और उसकी छाती भीतरसे भट्टीकी अग्निकी भांति सुलगने लगी यानी उसका हृदय जलने लगा ॥ ७ ॥ वह कपटी मुनि राजाके सीधे साधे सरल बचन कानोंसे सुनकर अपने वैरको याद करके मनमें बड़ा खुश हुआ ॥ ८ ॥

दोहा–कपटबोरि बाणी मृदुल, बोलेउ युक्तिसमेत ॥ ❀
नाम हमार भिखारि अब, निरधन रहित निकेत ॥ १६७ ॥ ❀

और कपटभरी कोमल वाणी बोलकर उसने बड़ी युक्तिके साथ कहा कि–हे राजन् ! अब तो हमारा नाम भिखारी है. न तो हमारे पास कुछ माल असबाब है और न हमारे रहनेको घर है ॥ १६७ ॥

कह नृप जे बिज्ञाननिधाना ॥ तुम सारिखे गलित अभिमाना ॥ १ ॥ ❀
सदा अपनपौ रहहिँ दुराये ॥ सब बिधि कुशल कुबेष बनाये ॥ २ ॥ ❀

मुनिके ऐसे छलमिश्रित बचन सुनकर राजाने कहा कि–हे मुनि ! जो आप जैसे निरभिमानी ज्ञानके निधान हैं ॥ १ ॥ वे सदा अपने आपको छिपाये रखते हैं और सब प्रकारसे कुशल मानी चतुर होनेपरभी कुवेष बनाये रहते है ॥ २ ॥

तेहिते कहहिँ संत श्रुति टेरे ॥ परम अकिंचन प्रिय हरिकेरे ॥ ३ ॥ ❀
तुमसम अधन भिखारि अगेहा ॥ होत बिरंचि शिवहिँ सन्देहा ॥ ४ ॥ ❀

और इसीसे संत और वेद पुकारके कहते है कि–जो परम अकिंचन यानी जो कुछभी संग्रह नहीं रखते वे प्रभुको परम प्यारे है ॥ ३ ॥ हे मुनि ! आप जैसे निष्किंचन भिखारी और स्थलरहित महात्माओंको देखकर महादेवजी और ब्रह्माजीकोभी संदेह होता है कि, शायद यह हमारा स्थान न ले लेवे ॥ ४ ॥

योसि सोसि तव चरण नमामी ॥ मोपर कृपा करिय अब स्वामी ॥ ५ ॥ ❀
सहजप्रीति भूपतिकी देषी ॥ आप बिषय बिश्वास बिशेषी ॥ ६ ॥ ❀

आप जो हो सो हो मुझे इससे क्या प्रयोजन है ? मै आपके चरणोंको नमस्कार करता हूं सो हे प्रभु ! अब मुझपर आप कृपा करो ॥ ५ ॥ उस कपटी मुनिने राजाकी स्वाभाविक प्रीति और आपके विषे विशेष भरोसा देखकर ॥ ६ ॥

सब प्रकार राजहिँ अपनाई ॥ बोलेउ अधिक सनेह जनाई ॥ ७ ॥ ❀
सुनु सतिभाव कहौं महिपाला ॥ इहाँ बसत बीते बहु काला ॥ ८ ॥ ❀

राजाको सब तरहसे अपना कर बड़ा स्नेह जानकर उस मुनिने कहा कि– ॥ ७ ॥ हे राजन् ! मैं जो तुझको सत्यभावसे कहता हूं सो तू सुन. मुझको यहां रहते बहुत वर्ष बीत गये हैं ॥ ८ ॥

दोहा–अबलगि मोहिँ न मिलेउ कोउ, मैं न जनायेउँ काहु ॥ ❀
लोकमान्यता अनलसम, करि तप कानन दाहु ॥ १६८ ॥ ❀

न तौ अबलों कोई मुझको मिला है और न मैंने अपना प्रभाव किसीको बतलाया है; क्योंकि लोकोंकी मान्यता तपस्वीकी तपस्याको तुरंत भस्म कर देती है; जैसे अग्नि सारे बनको एक क्षणभरमें भस्म कर देता है ऐसे लोकमान्यता तपस्याको क्षीण कर देती है ॥ १६८ ॥

सोरठा–तुलसी देख सुबेष, भूलहिँ मूढ न चतुर नर ॥ ❀
सुन्दर केकी पेख, बचन सुधासम अशन अहि ॥ २४ ॥ ❀

तुलसीदासजी कहते हैं कि–अच्छे वेषको देखकर बड़े बड़े चतुर और होश्यार आदमीभी भूल जाते हैं और मूर्ख हो जाते है. जैसे देखो मयूरकी वाणी कैसी अमृतसी मधुर होती है पर उसका आहार सांप है सो इस बातका आदमीको अवश्य विचार रखना चाहिये कि केवल मीठी वाणी सुनकर डहँकना नहीं चाहिये ॥ २४ ॥

ताते गुप्त रहौं जगमाहीं ॥ हरि तजि किमपि प्रयोजन नाहीं ॥ १ ॥ ❀
प्रभु जानत सब बिनहिँ जनाये ॥ कहहु कवन सिधि लोक रिझाये ॥ २ ॥ ❀

मुनि कहता है कि–हे राजन्! इसवास्ते मैं जगत्में गुप्तरूपसे रहता हूं. मेरे प्रभुको त्यागकर दूसरा कुछभी प्रयोजन नहीं है ॥ १ ॥ सो यह सारी बात परमात्मा विनाही जनाये अच्छीतरह जानता है फिर कहो कि, लोगोंको रिझानेसे क्या प्रयोजन है? ॥ २ ॥

तुम शुचि सुमति परम प्रिय मोरे ॥ प्रीति प्रतीति मोहि पर तोरे ॥ ३ ॥ ❀
अब जो तात दुरावौं तोहीं ॥ दारुण दोष बढ़ै अति मोहीं ॥ ४ ॥ ❀

हे राजन्! तुम अंतःकरणसे परम शुद्ध हो. तुम्हारी बुद्धि बहुत निर्मल है और मेरेमें आपकी पक्की प्रीति और पक्का भरोसा है और मेरे तुम परम प्रिय हो ॥ ३ ॥ सो हे तात! अब जो मैं तुमसे कपट रक्खूं तो मुझको अवश्य महा भारी अपराध लगे ॥ ४ ॥

जिमिजिमि तापस कथै उदासा ॥ तिमि तिमि नृपहिँ होइ बिश्वासा ॥ ५ ॥
देखा स्वबश कर्म मन बानी ॥ तब बोला तापस बकध्यानी ॥ ६ ॥ ❀

ज्यों ज्यों वह तपस्वी उदासीन बनकर बातें कहता है त्यों त्यों उस राजाका भरोसा उसपर पक्का हो जाता है ॥ ५ ॥ जब उस कपटी मुनिने जान लिया कि, अब तो यह मन वचन कायासे सब तरहसे मेरे वश है तब वह बगुलाकासा ध्यान धरनेवाला मुनि बोला कि– ॥ ६ ॥

नाम हमार एकतनु भाई ॥ सुनि नृप बोलेउ पुनि शिर नाई ॥ ७ ॥ ❀
कहहु नामकर अर्थ बखानी ॥ मोहिँ सेवक अति आपन जानी ॥ ८ ॥ ❀

हे भाई! हमारा नाम "एकतनु" है. मुनिकी बात सुनकर शिर नवाकर, राजाने फिर उस मुनिसे पूंछा कि– ॥ ७ ॥ हे मुनि! आप मुझको अपना सेवक और घरेलू जानकर अपने नामका अर्थ खुलाशा करके कहो ॥ ८ ॥

दोहा–आदि सृष्टि उपजी जबै, तब उतपति भइ मोरि ॥ ❋
नाम एकतनु हेतु तेहि, देह न धरी बहोरि ॥ १६९ ॥ ❋

राजाके ऐसे साधारण वचन सुनकर उस कपटी मुनिने कहा कि–हे राजन्! जब अव्वलही अव्वल सृष्टि पैदा हुई थी तब मैं पैदा हुआ था. और इसीसे मेरा एकतनु नाम पड़ा; क्योंकि मैंने उस पहले शरीरके सिवाय आजतक फिर दूसरा शरीर धारण नहीं किया है ॥ १६९ ॥

जनि आश्चर्य करहु मनमाहीं ॥ सुत तपते दुर्लभ कछु नाहीं ॥ १ ॥ ❋
तपबलते जग सृजै विधाता ॥ तपबल विष्णु भये परित्राता ॥ २ ॥ ❋

मुनि कहता है कि, हे पुत्र! तुम इस बातका आश्चर्य मत करो; क्योंकि तपस्यासे कछुभी दुर्लभ नहीं है ॥ १ ॥ तपस्याके बलसे ब्रह्माजी जगतको रचते है, तपस्याके प्रतापसे विष्णु जगतकी रक्षा करते है ॥ २ ॥

तपबल शम्भु करहिँ संहारा ॥ तपते अगम न कछु संसारा ॥ ३ ॥ ❋
भयउ नृपहिँ सुनि अति अनुरागा ॥ कथा पुरातन कहै सो लागा ॥ ४ ॥ ❋

तपस्याके प्रतापसे महादेव जगतका संहार करते है. संसारके भीतर कुछभी वस्तु तपस्यासे अलभ्य नहीं है ॥ ३ ॥ ऐसी २ बातें सुनकर राजाकी बड़ी प्रीति बढ़ी; तब वह प्राचीन कथा कहने लगा है ॥ ४ ॥

कर्म धर्म इतिहास अनेका ॥ करै निरूपण बिरति बिबेका ॥ ५ ॥ ❋
उद्भव पालन प्रलय कहानी ॥ कहेसि अमित आश्चर्य बखानी ॥ ६ ॥ ❋

उसने कई धर्म और कर्मविषयक इतिहास कहे और वैराग्य और विवेकका निरूपण किया ॥ ५ ॥ तथा जगतकी उत्पत्ति, स्थिति, संहारविषयक बड़ी अद्भुत कथायें वर्णन करके कहीं ॥ ६ ॥

सुनि महीश तापसबश भयऊ ॥ आपन नाम कहन तब लयऊ ॥ ७ ॥ ❋
कह तापस नृप जानौं तोहीं ॥ कीन्हेउ कपट लागु भल मोहीं ॥ ८ ॥ ❋

उन्हें सुनकर राजा तपस्वीके वश होकर अपना नाम कहने लगा ॥ ७ ॥ तब उस कपटी मुनिने कहा कि, हे राजन्! मैं तुमको जानता हूं आपने जो कपट किया वह मुझे बहुत प्रिय लगा है ॥ ८ ॥

सोरठा–सुनु महीश अस नीति, जहँ तहँ नाम न कहहिँ नृप ॥
मोहिँ तोहिँ पर प्रीति, परम चतुरता निरखि तव ॥ २४ ॥ ❋

हे राजन्! सुनो. नीतिशास्त्रका यह सिद्धांतही है कि, राजालोगोंको अपना नाम हरकहीं नहीं कहना चाहिये. सो आपकी बड़ी बिचक्षणता देखकर मेरी आपपर बड़ी प्रीति बढ़ रही है ॥ २४ ॥

नाम तुम्हार प्रतापदिनेशा ॥ सत्यकेतु तव पिता नरेशा ॥ १ ॥ ❋
गुरुप्रसाद सब जानिय राजा ॥ कहिय न आनहिँ जानि अकाजा ॥ २ ॥ ❋

हे राजन्! आपका नाम प्रतापभानु है और आपके पिताका नाम सत्यकेतु था ॥ १ ॥

हे राजन् ! हम लोग गुरुकी कृपासे सब कुछ जानते हैं; पर दूसरेको नहीं कहते; क्योंकि उससे उसका बिगाड़ हो जाता है ॥ २ ॥

देखि तात तव सहज सुधाई ॥ प्रीति प्रतिति नीति निपुणाई ॥ ३ ॥ ❋
उपजि परी ममता मन मोरे ॥ कहेउँ कथा निज बूझे तोरे ॥ ४ ॥ ❋

हे तात! आपकी स्वाभाविक सरलता और प्रीति प्रतीति नीति व निपुणता देखकर ॥ ३ ॥ मेरे मनमें आपके विषे पूरी ममता उत्पन्न होगयी जिससे तुम्हारे पूँछनेपर यह सारी मेरी कथा मैंने कही है और आपको फिरभी कहूंगा ॥ ४ ॥

अब प्रसन्न मैं संशय नाहीं ॥ माँगु जो भूप भाव मनमाहीं ॥ ५ ॥ ❋
सुनि सुवचन भूपति हर्षाना ॥ गहि पद विनय कीन्ह बिधि नाना ॥ ६ ॥ ❋

हे राजन् ! अब मैं तुम्हारे ऊपर सब तरहसे प्रसन्न हूं. इसमें कुछभी संदेह नहीं है सो जो आपके मनको अच्छा लगे वही बर मांगो ॥ ५ ॥ मुनिके ऐसे सुहावने वचन सुनकर राजा बड़ा प्रसन्न हुआ और मुनिके चरण धरकर उसने अनेकप्रकार मुनिसे विनय किया ॥ ६ ॥

कृपासिन्धु मुनि दरशन तोरे ॥ चारिपदारथ करतल मोरे ॥ ७ ॥ ❋
प्रभुहिं तथापि प्रसन्न बिलोकी ॥ माँगि अगम बर होउँ अशोकी ॥ ८ ॥ ❋

और कहा कि-हे कृपासिंधु मुनि ! आपके दर्शनके प्रतापसे चारों पदार्थ (धर्म,अर्थ, काम, व मोक्ष) मेरी मूठीमें है ॥ ७ ॥ तथापि आपको प्रसन्न देखकर मैं आपसे एक बड़ा अलभ्य वर मांगता हूं कि, जिससे मैं शोकरहित हो जाऊं ॥ ८ ॥

दोहा-जरामरणदुखरहित तन, समर न जीतै कोउ ॥ ❋
एकछत्र रिपुहीन महि, राज कल्प शत होउ ॥ १७० ॥ ❋

हे मुनि ! आपकी कृपासे मेरा शरीर जरा मृत्यु और दुःखरहित हो जावे, और युद्धमें मुझे कोईभी जीतने न पावे, और पृथ्वी निष्कंटक एकछत्र सौ कल्पतक राज होवे ऐसा वरदान देओ ॥ १७० ॥

कह तापस नृप ऐसइ होऊ ॥ कारण एक कठिन सुनु सोऊ ॥ १ ॥ ❋
कालौ तव पद नाइहि शीशा ॥ एक विप्रकुल छांड़ि महीशा ॥ २ ॥ ❋

राजाके वचन सुनकर उस कपटी मुनिने कहा कि-हे राजन् ! ऐसाही होगा; परंतु इसमें एक महा भारी कठिन कारण है सो वह सुनो ॥ १ ॥ हे राजन् ! मेरे वरदानके प्रतापसे साक्षात् काल (मौत) भी आपके चरणोंमें शिर नमावेगा, परंतु एक ब्राह्मणका कुल बाकी रह जायगा अर्थात् वह आपके वश नहीं होगा ॥ २ ॥

तपबल विप्र सदा बरियारा ॥ तिनके कोप न कोउ रखवारा ॥ ३ ॥ ❋
जो विप्रन बश करहु नरेशा ॥ तौ तव बश विधि विष्णु महेशा ॥ ४ ॥ ❋

क्योंकि, ब्राह्मण लोग तपस्याके बलसे सदा बलवान् हैं अतएव उनके कोपसे बचानेवाला दुनियामें कोईभी नहीं है ॥ ३ ॥ सो हे राजन् ! जो आप ब्राह्मणोंको ताबे कर लेओ तब तौ ब्रह्मा, विष्णु, महेश, ये सब आपके वश हो जाँय ॥ ४ ॥

चलन ब्रह्मकुलसे बरि आई ॥ सत्य कहौं दोउ भुजा उठाई ॥ ५ ॥ ❀
बिप्रशाप बिनु सुनु महिपाला ॥ तोर नाश नहिं कवनिहुँ काला ॥ ६ ॥ ❀

हे राजन् ! मैं मेरी दोनों भुजा उठाकर सत्य वचन कहता हूं कि ब्राह्मणके कुलके आगे आपका जोर नहीं चलेगा ॥ ५ ॥ हे राजन् ! सुनो. ब्राह्मणके शापविना आपका नाश किसी समयमें किसी सूरतसे नहीं होगा ॥ ६ ॥

हर्षे राउ बचन सुनि तासू ॥ नाथ न होइ मोर अब नासू ॥ ७ ॥ ❀
तव प्रसाद प्रभु कृपानिधाना ॥ मोकहँ सर्वकाल कल्याना ॥ ८ ॥ ❀

मुनिके वचन सुनकर राजा बड़ा प्रसन्न हुआ और बोला कि, महाराज ! अब मेरा नाश कभी नहीं होगा ॥ ७ ॥ हे कृपानिधान प्रभु ! आपकी कृपासे अब मुझको हरवख्त कल्याणही है ॥ ८ ॥

दोहा–एवमस्तु कहि कपटमुनि, बोला कुटिल बहोरि ॥ ❀
मिलब हमार भुवाल जनि, कहहु तो मोरि न खोरि ॥ १७१ ॥ ❀

यह कुटिल और कपटी मुनि एवमस्तु कहकर फिर बोला कि–हे राजन् ! दूसरा यहभी याद रखना कि, हमारा और आपका जो मिलाप हुआ है यह बात किसीसे मत कहना. जो कहोगे और उससे जो आपका अकाज होवै तौ फिर उसमें हमारा दोष नहीं है ॥ १७१ ॥

ताते मैं तोहिं बरजौं राजा ॥ कहे कथा तव परम अकाजा ॥ १ ॥ ❀
छठें श्रवण यह परत कहानी ॥ नाश तुम्हार सत्य मम बानी ॥ २ ॥ ❀

हे राजन् ! इसीसे मै आपको बरजता हूं. जो आप यह किसीको कहोगे तौ आपका बड़ा अकाज होगा ॥ १ ॥ हे राजन् ! मेरी यह वाणी सत्य जानो कि ज्योंही यह बात छठे कानमें पड़ी त्योंही तुरंत आपका नाश हो जायगा ॥ २ ॥

यह प्रकटे अथवा द्विजशापा ॥ नाश तोर सुनु भानुप्रतापा ॥ ३ ॥ ❀
आन उपाय निधन तव नाहीं ॥ जो हरि हर कोपहिँ मनमाहीं ॥ ४ ॥ ❀

हे प्रतापभानु राजन्!सुनो.आपका नाश दो तरहसे होगा,यातौ इस बातके प्रगट करनेसे या ब्राह्मणोंके शापसे ॥ ३ ॥ दूसरी तरह आपका नाश नहीं होगा. चाहे महादेवजी और विष्णु भगवान्भी आपके ऊपर अपने मनमें कोप क्यों न करैं विन इन उपायोंके आपका नाश नहीं होगा ॥ ४ ॥

सत्यनाथ पद गहि नृप भाषा ॥ गुरु द्विज कोप कहहु को रोषा ॥ ५ ॥ ❀
राखै गुरु जो कोप बिधाता ॥ गुरुबिरोध नहिँ कोउ जगत्राता ॥ ६ ॥ ❀

कपटी मुनिके ऐसे कुटिल वचन सुनकरभी राजाको चेत नहीं हुआ जिससे उसके चरण धरके राजाने कहा कि–हे नाथ ! सत्य है; कहो, ब्राह्मण और गुरुका कोप होनेपर कौन बचाता है? कोईभी नहीं ॥५॥ यदि विधाता कोप कर जायँ तौ उससे गुरु बचा सकता है पर गुरुसे विरोध होनेपर जगतमें बचानेवाला कोईभी नहीं है ॥ ६ ॥

जो न चलब हम कहे तुम्हारे ॥ होइ नाश नहिँ शोच हमारे ॥ ७ ॥ ❀

एकहि डर डरपत मन मोरा ॥ प्रभु महिदेव शाप अति घोरा ॥ ८ ॥ ❀

राजा कहता है कि–जो हम आपके कहनेके अनुसार नहीं चलेंगे और उससे जो हमारा नाश हो जाय तो इस बातका हमको फिकरभी नहीं है ॥ ७ ॥ हे मुनि ! मेरा मन तो एकही (ब्राह्मणोंके शापसे) भयभीत होता है; क्योंकि ब्राह्मणोंका शाप बड़ा भयानक है ॥ ८ ॥

दोहा–होहिँ बिप्र बश कवन बिधि, कहहु कृपा करि सोउ ॥ ❀
तुम तजि दीनदयालु निज, हितू न देखौं कोउ ॥ १७२ ॥ ❀

ब्राह्मणोंके शापसे डरकर राजा उस मुनिसे पूँछता है कि–हे मुनिराज ! ब्राह्मणलोग किसतरह वश होवैं सो आप मुझे कृपा करके कहो. हे दीनदयालु ! आपको छांडिके दूसरा कोईभी आप जैसा मेरा भला चाहनेवाला मुझे नहीं दीखता ॥ १७२ ॥

सुनु नृप बिबिधि यतन जगमाहीं ॥ कष्टसाध्य पुनि होहिँ कि नाहीं १ ❀
अहै एक अति सुगम उपाई ॥ तहाँ परन्तु एक कठिनाई ॥ २ ॥ ❀

राजाके ऐसे सीधे वचन सुनकर उस कुटिलने कहा कि–हे राजन् ! सुनो. जगत्में अनेक उपाय है पर वे सब कष्टसाध्य हैं; इसीसे वे बनसकें या नहीं सो इसमें मैं कुछ कह नहीं सकता ॥ १ ॥ परंतु एक बहुतही सीधा उपाय है, पर एक बातकी कठिनताई तो उसमेंभी है ॥ २ ॥

मम आधीन युक्ति नृप सोई ॥ मोर जाब तव नगर न होई ॥ ३ ॥ ❀
आजु लगे अरु जबते भयऊँ ॥ काहूके गृह ग्राम न गयऊँ ॥ ४ ॥ ❀

परंतु हे राजन् ! उसकी कुंजी मेरेपास है पर उसमेंभी यह कठिनता रह गयी कि, मेरा जाना आपके नगरमें नहीं हो सकता ॥ ३ ॥ क्योंकि, मैं जबसे पैदा हुआ हूं तबसे आजलों किसीके घर या गांव नहीं गयाहूं ॥ ४ ॥

जो न जाब तव होइ अकाजू ॥ बना आइ असमंजस आजू ॥ ५ ॥ ❀
सुनि महीप बोले मृदु बानी ॥ नाथ निगम अस नीति बखानी ॥ ६ ॥ ❀

और जो न जाऊं तो तेरा बड़ा अकाज होता है सो यह तो आज बड़ी दुविधा आ पड़ी ॥ ५ ॥ उस कपटी मुनिके ऐसे मोहने वचन सुनकर राजाने बड़ी सुकोमल वाणीसे कहा कि– हे नाथ ! वेदमें ऐसी नीति कही है ॥ ६ ॥

बड़े सनेह लघुनपर करहीं ॥ गिरि निजशिरन सदा तृण धरहीं ॥ ७ ॥ ❀
जलधि अगाध मौलि बह फेणु ॥ सन्तत धरणि धरत शिर रेणू ॥ ८ ॥ ❀

कि, जो बड़े आदमी होते है सो छोटे आदमियोंपर सदा स्नेह किया करते हैं. देखिये, पर्वत अपने शरणागत तृणको सदा सर्वदा अपने शिखरपर धारण करते हैं ॥ ७ ॥ और महागंभीर समुद्र फेन (झाग) को अपने शिरपर धरता है. तथा पृथ्वी रजको सदा अपने शिरपर धारण करती है ॥ ८ ॥

दोहा–अस कहि गहे नरेश पद, स्वामी होहु कृपालु ॥ ❀
मोहिँ लागि दुख सहिय प्रभु, सज्जन दीनदयालु ॥ १७१ ॥ ❀

ऐसे कहकर राजाने उसके पांव पकडे और कहा कि-हे स्वामी ! आप मुझपर कृपा करो. हे प्रभु ! मेरे वास्ते आप इतना संकटभी सहो पर मेरा काज करो; क्योंकि सत्पुरुष दीन दयालु होते हैं ॥ १७३ ॥

जानि नृपहिँ आपन आधीना ॥ बोला तापस कपट प्रबीना ॥ १ ॥ ❀
सत्य कहौं भूपति सुनु तोहीं ॥ जगमहँ नहिँ दुर्लभ कछु मोहीं ॥ २ ॥ ❀

राजाको बिलकुल अपने आधीन जानकर उस महाकपटी मुनिने कहा ॥ १ ॥ कि-हे राजन् ! सुन. मैं तुझको सत्य कहता हूं जगतमें जो पदार्थ है वो कोईभी पदार्थ मुझको दुर्लभ नहीं है ॥ २ ॥

अवसि काज मैं करिहौं तोरा ॥ मन क्रम बचन भक्त तैं मोरा ॥ ३ ॥ ❀
योग युक्ति तप मंत्र प्रभाऊ ॥ फलै तबहिँ जब करिय दुराऊ ॥ ४ ॥ ❀

हे राजन् ! मैं तेरा काम अवश्य करूंगा; क्योंकि तू मेरा मन, कर्म और वचनसे पूर्ण भक्त है ॥ ३ ॥ परंतु यह बात निश्चित है कि योग, युक्ति, तपस्या, व मंत्र, इनका प्रभाव तभी सफल होता है कि, जब ये गुप्त किये जाते हैं. इसलिये जो यह अपनी बात है इसकी किसीको खबर न पड़नी चाहिये ॥ ४ ॥

जो नरेश मैं करउँ रसोई ॥ तुम परसहु मोहिँ जान न कोई ॥ ५ ॥ ❀
अन्न सो जोइ जोइ भोजन करई ॥ सोइ सोइ तव आयसु अनुसरई ॥ ६ ॥ ❀

हे राजन् ! जो मैं रसोई करूं वो आप परोसो तौ काम बन जाय पर मैंने कहा था कि इस बातकी किसीको खबर न पड़नी चाहिये; मेरेको कोईभी जानने न पावै ॥ ५ ॥ हे राजन् ! वो अन्न जो जो लोग खावेंगे वे सब आपके बश हो जांयगे और आपकी आज्ञा मानेंगे ॥ ६ ॥

पुनि तिनके गृह जेवैं जोइ ॥ तव बश होइ भूप सुनु सोई ॥ ७ ॥ ❀
जाइ उपाय रचहु नृप येहू ॥ सम्बत भरि संकल्प करेहू ॥ ८ ॥ ❀

हे राजन् ! सुनो, केवल वेही आपके बश होवेंगे इतनही नहीं किंतु जो उनके घर भोजन करेंगे वेभी आपके बश हो जायंगे ॥ ७ ॥ सो हे राजन् ! आप तौ जाकर यही उपाय करो. इस बातका आप बारह महीनेका संकल्प पक्का करलो सो आपका काम बन जायगा ॥ ८ ॥

दोहा—नित नूतन द्विज सहस शत, बरेहु सहित परिवार ॥ ❀
मैं तुम्हरे संकल्प लगि, दिनहिँ करब जेवनार ॥ १७४ ॥ ❀

हमेशा नित नये एक लक्ष ब्राह्मणोंको परिवारसहित बुलाके आप भोजन कराओ सो जबलों आपका संकल्प पूर्ण न होगा तबलों उनकेलिये दिनहोमें रसोई तैयार करदिया करूंगा ॥ १७४ ॥

इहिबिधि भूप कष्ट अति थोरे ॥ होइहहिँ सकल बिप्र बश तोरे ॥ १ ॥ ❀
करिहहिँ बिप्र होम मख सेवा ॥ तेहि प्रसंग सहजहिँ बश देवा ॥ २ ॥ ❀

उस कुटिल मुनिने कहा कि— हे राजन् ! इसतरह सब ब्राह्मण आपके थोड़ेसे परिश्रमसे बश हो जायंगे ॥ १ ॥ और बश भयेहुए ब्राह्मण जो होम यज्ञ सेवा करेंगे उस प्रसंगसे सब देवता आपके सहज साजमें वश हो जायंगे ॥ २ ॥

और एक तोहिँ कहौं लखाऊ ॥ मैं यहि वेष न आउब काऊ ॥ ३ ॥ *
तुम्हरे उपरोहितकहँ राया ॥ हरि आनब मैं करि निज माया ॥ ४ ॥ *

इसमें एक बात फिर लक्ष्य देनेके लायक है वो मैं आपसे कहता हूं सो सुनो. मैं आपके यहां इस वेषसे कभी नहीं जाऊंगा किंतु ऐसा उपाय रचूंगा कि ॥ ३ ॥ आपके पुरोहितको तो मैं अपनी माया-करके हरकर यहां ले आऊंगा ॥ ४ ॥

तपबल तेहि करि आपु समाना ॥ रखिहौं इहाँ बर्ष परमाना ॥ ५ ॥ *
मैं धरि तासु बेष सुनु राजा ॥ सब बिधि तोर सँवारब काजा ॥ ६ ॥ *

और उसको मेरे तपबलके प्रभावसे मेरे जैसा बनाकर एक वर्षभर यहां रक्खूंगा ॥ ५ ॥ हे राजन्! सुनो. फिर मैं उसका रूप धारण करके आपके यहां रहूंगा और आपके सारे काम सब तरहसे संवार दूंगा ॥ ६ ॥

गै निशि बहुत शयन अब कीजे ॥ मोहिँ तोहिँ भूप भेंट दिन तीजे ७ *
मैं तपबल तोहिँ तुरंग समेता ॥ पहुँचैहौं सोवतहिँ निकेता ॥ ८ ॥ *

ऐसे राजा प्रतापभानुको पके धोखेमें लाकर उसने कहा कि-हे राजन्! अब रात्रि बहुत चली गयी है सो अब आप शयन करिये. हे राजन्! अब मेरा और आपका मिलना आजसे तीसरे जिन होगा ॥ ७ ॥ हे राजन्! मैं आपको घोड़ेके साथ मेरे तपोबलसे सोतेही सोते घर पहुंचा दूंगा ॥ ८ ॥

दोहा-मैं आउब सोइ बेष धरि, पहिचानेहुँ तब मोहिँ ॥ *
जब एकान्त बुलाइ सब, कथा सुनाऊँ तोहिँ ॥ १७५ ॥ *

मैं आऊंगा तब वोही रूप धरकर आऊंगा. सो आऊं तब मुझे ऐसे पहिचान लेना कि जब मैं यहांकी कथा एकान्तमें बुलाकर आपको सब सुना दूंगा ॥ १७५ ॥

शयन कीन्ह नृप आयसु मानी ॥ आसन जाइ बैठ छल ज्ञानी ॥ १ ॥ *
श्रमित भूप निद्रा अति आई ॥ सो किमि सोव सोच अधिकाई ॥ २ ॥ *

मुनिकी आज्ञा पाकर राजा लेट गया तब वो कपटी मुनिभी जाकर अपने आसनपर जा बैठा ॥ १ ॥ राजा थका हुआ था. इसलिये उसको तो घोरनिद्रा आगयी और उस कपटीके मनमें तो बड़ा शोच था सो वह तो कैसे सोवे? और नींदभी कैसे आवे? ॥ २ ॥

कालकेतु निश्चर तहँ आवा ॥ जेहिँ शूकर होइ नृपहिँ भुलावा ॥ ३ ॥ *
परम मित्रतापस नृपकेरा ॥ जानै सो अति कपट घनेरा ॥ ४ ॥ *

थोड़ी देरके बाद कालकेतु नाम राक्षस वहां आया कि, जिसने शूकरका रूप धर राजाको भुलाया था ॥ ३ ॥ वह राक्षस उस कपटी मुनिका परम मित्र था वह बड़ा कपटी था और बहुत घना कपट करना जानता था ॥ ४ ॥

तेहिके शत सुत अरु दश भाई ॥ खल अति अजय देवदुखदाई ॥ ५ ॥ *
प्रथमहिँ भूप समर सब मारे ॥ बिप्र सन्त सुर देखि दुखारे ॥ ६ ॥ *

उसके सो १०० पुत्र थे और दश १० भाई थे. वे महादुष्ट अजय थे. तथा देवताओंको सदा दुःख दिया करते थे ॥ ५ ॥ जिससे गौब्राह्मण देवता और संत लोगोंको दुःखी देखकर राजा प्रतापभानुने युद्धके भीतर पहले उन सब दुष्टोंको मार डाला था ॥ ६ ॥

तेहिँ खल पाछिल बयर संभारा ॥ तापस नृप मिलि मन्त्र बिचारा ॥ ७ ॥ ❋
जेहि रिपुक्षय सोइ रचेसि उपाऊ ॥ भावीवश न जान कछु राऊ ॥ ८ ॥ ❋

उस पिछले बैरको याद करके दुष्ट कालकेतु राक्षसने तापस राजासे मिलकर सलाह विचारी ॥ ७ ॥ और जिसतरह शत्रु (राजा प्रतापभानु) का नाश हो जाय वही उपाय रचा. पर भावीवश होनेसे राजाको इस बातकी खबर नहीं पड़ी ॥ ८ ॥

दोहा—रिपु तेजसी अकेल अति, लघु करि गनिय न ताहु ॥ ❋
अजहुँ देत दुख रवि शशिहिँ, शिर अवशेषित राहु ॥ १७६ ॥ ❋

जो तेजस्वी शत्रु होवे उसे अकेला समझकर कदापि छोटा करके नहीं गिनना चाहिये. देखो; राहुका केवल शिर मात्र शेष रह गया था जिससे वह अबलों सूरज और चंद्रमाको दुःख देता है ॥ १७६ ॥

तापस नृप निज सखहिँ निहारी ॥ हर्षि मिलेउ उठि भयउ सुखारी ॥ १ ॥
मित्रहिँ कहि सब कथा सुनाई ॥ यातुधान बोला सुख पाई ॥ २ ॥ ❋

वो तपस्वी राजा अपने मित्र राक्षसको आया देख, प्रसन्न होकर उठकर उससे मिला और बड़ा सुखी हुआ ॥ १ ॥ और अपने मित्र राक्षसको वहांकी सारी कथा कहकर सुनाई, जिसे सुन-कर सुख पाकर वह बोला कि— ॥ २ ॥

अब साधेउँ रिपु सुनहु नरेशा ॥ जो तुम कीन्ह मोर उपदेशा ॥ ३ ॥ ❋
परिहरि शोच रहहु तुम सोई ॥ बिनु औषधिहिँ व्याधि बिधि खोई ॥ ४ ॥ ❋

हे राजन्! सुन; अब मैं शत्रूको हरसूरतसे साध लूंगा. जो तुमने मुझको उपदेश किया है उस तरह सब कुछ कर लूंगा ॥ ३ ॥ तुम इस बातकी रंचहू चिंता मत करो. तुम निःशंक सो जाओ; क्योंकि विधाताने विनाही औषध अपना रोग मिटा दिया है ॥ ४ ॥

कुलसमेत रिपुमूल बहाई ॥ चौथे दिवस मिलब मैं आई ॥ ५ ॥ ❋
तापस नृपहिँ बहुत परितोषी ॥ चला महाकपटी अतिरोषी ॥ ६ ॥ ❋

अब मैं तीन दिनोंमें शत्रुको कुलसमेत निर्मूल कर बहाके चौथे दिन आकर तुमसे मिलूंगा ॥ ५ ॥ वो महाकपटी और क्रोधी राक्षस तपस्वी राजाको अनेक प्रकारसे प्रसन्न करके वहांसे चला ॥ ६ ॥

भानुप्रतापहिँ बाजि समेता ॥ पहुँचायेसि सोवतहिँ निकेता ॥ ७ ॥ ❋
नृपहिँ नारिपहँ शयन कराई ॥ हयगृह बांधेसि बाजि बनाई ॥ ८ ॥ ❋

सो पहले तो राजा प्रतापभानुको घोड़ेके साथ सोतेही सोते घर पहुंचा दिया ॥ ७ ॥ राजाको तो ले जाकर उसकी रानीके पास लिटा दिया और घोड़ेको ले जाकर घुड़सालमें बांध दिया ॥ ८ ॥

दोहा– राजाके उपरोहितहिँ, हरि लै गयउ बहोरि ॥ ❋
लै राखेसि गिरिखोहमहँ, माया करि मतिभोरि ॥ १७७ ॥ ❋

और फिर राजाके पुरोहितको वहांसे उठाकर हर ले गया सो ले जाकर एक पर्वतकी कंदरामें रख दिया. और मायासे उसकी बुद्धि भ्रमा दी ॥ १७७ ॥

आपु बिरचि उपरोहितरूपा ॥ परा जाय तेहि सेज अनूपा ॥ १ ॥ ❋
जागेउ नृप अनु भयउ बिहाना ॥ देखि भवन अति अचरज माना २ ❋

वह राक्षस आप पुरोहितका रूप बनाके उसी पुरोहितके घर जाकर उसकी सुन्दर सेजके अंदर जा सोया ॥१॥ राजा प्रतापभानुकी आंख खुली, जिसके कुछ देरीके बाद प्रभात हुआ था. राजाने जागतेही अपना भवन देखकर मनमें बड़ा अचरज माना ॥ २ ॥

मुनिमहिमा मनमहँ अनुमानी ॥ उठेउ गवहिँ जेहि जान न रानी ॥३॥ ❋
कानन गयउ बाजिचढ़ितेही ॥ पुर नर नारि न जानेउ केही ॥ ४ ॥ ❋

और मनमें उस मुनिकी महिमाको जान, राजा वहांसे उठकर चुपकासा ऐसा निकला कि रानीकोभी राजाके जानेकी खबर नहीं पड़ी ॥ ३ ॥ वहांसे निकल कर उसी घोड़े पै सवार होकर राजा वनमें चला गया जिसकी किसी नगरके नरनारीको खबर नहीं पड़ी ॥ ४ ॥

गये यामयुग भूपति आवा ॥ घर घर उत्सव बाजु बधावा ॥ ५ ॥ ❋
उपरोहितहिँ दीख जब राजा ॥ चकित बिलोकि सुमिरि सोइ काजा ६ ❋

फिर दो पहर बीतनेके बाद राजा वहां आया तब घरघरमें उत्सव होने लगे और बधाई होकर बाजे बाजने लगे ॥ ५ ॥ जब राजाने उस पुरोहितको देखा तो उसी कामको स्मरण करके चकित होकर राजा उसकी तर्फ देखने लगा ॥ ६ ॥

युगसम नृपहिँ गये दिन तिनी ॥ कपटीमुनि नृपमति हरि लीनी ॥ ७ ॥ ❋
समय जानि उपरोहित आवा ॥ नृपहिँ मतो सब कहि समुझावा ॥८॥ ❋

उस कपटी मुनिने राजाकी बुद्धि ऐसी हर लीनी कि, जो तीन दिन बीते सो मानों उसके लिये तीन युगोंके बराबर होगये ॥ ७ ॥ फिर समय जानकर वह पुरोहितरूप राक्षस वहां आया और अपना सारा विचार राजाको कहकर समझा दिया ॥ ८ ॥

दोहा– नृप हर्षे पहिँचानि गुरु, भ्रमबश रहा न चेत ॥ ❋
बरे तुरत शत सहस बर, बिप्र कुटुम्बसमेत ॥ १७८ ॥ ❋

गुरुको पहिंचान कर राजा बड़ा प्रसन्न हुआ. राजाको भ्रमके वश हो जानेके कारण कुछभी चेत नहीं रहा. जिससे उसने उसके कहनेके अनुसार एक लक्ष १००००० ब्राह्मणोंको कुटुंबके साथ भोजन करनेको बुलाया ॥ १७८ ॥

उपरोहित जेवनार बनाई ॥ छरस चारि बिधि जस श्रुति गाई ॥ १ ॥ ❋
मायामय तेंइ कीन्ह रसोंई ॥ ब्यंजन बहु गनि सकै न कोई ॥ २ ॥ ❋

पुरोहितने अपने हाथोंसे भोजनकी तैयारी करी. जिसमें छःहों रससंयुक्त चारही प्रकारके

(भक्ष्य, भोज्य, चोष्य, लेह्य.) भोजन तैयार किये जैसे कि वेद वा सूपशास्त्रमें कहे गये है ॥ १ ॥ उसने रसोईमें जितनी तैयारी करी वो सब मायामय करी और व्यंजन इतने प्रकारके किये थे कि, जिनको कोई गिनही नहीं सकता ॥ २ ॥

बिबिध मृगनकर आमिष राँधा ॥ तेहिमहँ बिप्रमांस खल सांधा ॥ ३ ॥ ❋
भोजनकहँ सब बिप्र बुलाये ॥ पद पखारि सादर बैठाये ॥ ४ ॥ ❋

और अनेकप्रकारके पशुओंके मांस रांधकर तैयार किये गये थे, जिनके अंदर उस खलने ब्राह्मणका मांस मिला दिया था ॥ ३ ॥ राजाने भोजन करनेके लिये सब ब्राह्मणोंको बुलाया और पांव पखारके उनको आदरपूर्वक बिठाया ॥ ४ ॥

परसन लाग जबहिं महिपाला ॥ भइ अकाशवाणी तेहिकाला ॥ ५ ॥ ❋
बिप्रवृन्द उठि २ गृह जाहू ॥ है बड़ि हानि अन्न जनि खाहू ॥ ६ ॥ ❋

जब राजा वह तैयारी लेकर परोसने लगा उसवक्त आकाशवाणी हुई कि—॥५॥ 'हे विप्रो ! आप लोग उठ उठकर अपने अपने घर चले जाओ. तुम यह अन्न मत खाओ; क्योंकि इसमें बड़ी हानि है॥६॥

भयउ रसोंई भूसुरमासू ॥ सब द्विज उठे मानि बिश्वासू ॥ ७ ॥ ❋
भूप बिकलमति मोह भुलानी ॥ भावीबश न आव मुख बानी ॥ ८ ॥ ❋

कारण यह है कि, यह रसोंई ब्राह्मणके मांससे तैयार की गयी है इसलिये तुम मत जेंवो.' ऐसी आकाशवाणी सुनकर सब ब्राह्मण उसका भरोंसा मानकर उठ खड़े हुए ॥७॥ उसवक्त राजाकी बुद्धि बिलकुल विकल हो गयी और मोहसे ऐसी भ्रमित होगयी कि, भावीके वश होनेसे मुंहसे कुछ कहाही नहीं गया ॥ ८ ॥

दोहा—बोले बिप्र सकोप तब, नहिँ कछु कीन्ह बिचार ॥ ❋
जाइ निशाचर होउ नृप, मूढ़ सहित परिवार ॥ १७९ ॥ ❋

जब राजा पीछा कुछ न बोला तब वो कृत्य राजाका समझकर क्रोध करके ब्राह्मणलोग बोले कि—हे राजन् ! तूने कुछभी विचार नहीं किया. इस लिये हे मूर्ख ! तू जाकर अपने परिवारके साथ राक्षस हो ! ॥ १७९ ॥

क्षत्रिबन्धु तैं बिप्र बुलाई ॥ घालै लिये सहित समुदाई ॥ १ ॥ ❋
ईश्वर राखा धर्म हमारा ॥ जैहसि तैं समेत परिवारा ॥ २ ॥ ❋

हे क्षत्रबंधु नीच ! तूने तो तमाम कुटुंबके साथ सब ब्राह्मणोंको नाश करनेके लिये बुलाया था ॥ १ ॥ परंतु प्रभुने हमारी टेंक रक्खी और हमारा धर्म बचाया. जो भोजन तूने हमारे लिये तैयार किया है वो भोजन कुटुंबके साथ तू करेगा ॥ २ ॥

सम्बत मध्य नाश तव होऊ ॥ जलदाता न रहहि कुल कोऊ ॥ ३ ॥ ❋
नृप सुनि शाप बिकल अतित्रासा ॥ भइ बहोरि बर गिरा अकासा ॥ ४ ॥ ❋

हे राजन् ! एक वर्षके भीतर तेरा नाश हो जायगा तेरे कुलमें कोई जल देनेवालाभी पीछे

न रहेगा ॥ ३ ॥ राजा ब्राह्मणोंका ऐसा दुसह शाप सुनकर बड़ा घबराया और डरा तब फिर वो सुन्दर आकाशवाणी हुई कि– ॥ ४ ॥

विप्रहु शाप विचारिन दीन्हा ॥ नहिँ अपराध भूप कछु कीन्हा ॥ ५ ॥ ❋
चकित विप्र सब सुनि नभबानी ॥ भूप गये जहँ भोजनखानी ॥ ६ ॥ ❋

'हे ब्राह्मणो ! तुमनेभी जो यह शाप राजाको दिया है सो विचारकर नहीं दिया है क्योंकि, इसमें राजाका कुछभी अपराध नहीं है' ॥ ५ ॥ ऐसी आकाशवाणी सुनकर सब ब्राह्मण चकित रह गये तब राजा वहां गया कि, जहां भोजनकी तैयारी होती थी ॥ ६ ॥

तहँ न अशन नहिँ विप्रसुआरा ॥ फिरेउ राउ मन शोच अपारा ॥७॥ ❋
सब प्रसंग महिसुरन सुनाई ॥ त्रसित परेउ अवनी अकुलाई ॥ ८ ॥ ❋

वहां जाकर राजा देखता है तो न तो वहां कोई भोजनकी तैयारी है और न रसोंई करनेवाला कोई ब्राह्मण है. तब तो राजा मनमें बड़ा शोच करता हुआ पीछा लौटा ॥ ७ ॥ और पिछला सारा हाल उन ब्राह्मणोंको कह सुनाया और त्रास खाकर घबराकर राजा पृथ्वीपर पड़ गया ॥ ८ ॥

दोहा–भूपति भावी मिटै नहिँ, यदपि न दूषण तोर ॥ ❋
किये अन्यथा होइ नहिँ, बिप्रशाप अतिघोर ॥ १८० ॥

राजाको ऐसे अति आकुल देखकर ब्राह्मणोंने कहा कि–हे राजन् ! होनहार किसीका मिटाया नहीं मिट सकता. तौभी इसमें तुम्हारा कुछभी अपराध नहीं है. तथापि जो ब्राह्मणोंका महाघोर शाप है वो तो किसीतरह अन्यथा होही नहीं सकता ॥ १८० ॥

अस कहि सब महिदेव सिधाये ॥ समाचार पुरलोगन पाये ॥ १ ॥
शोचहिँ दूषण दैवहिँ देहीं ॥ बिरचत हंस काक किय जेहीं ॥ २ ॥ ❋

ऐसे कहकर सब ब्राह्मण चले गये. और नगरके लोगोंको इस बातकी खबर हुई ॥ १ ॥ तब वे शोच करने लगे और दैवको दूषण देने लगे कि–हे विधाता ! यह तूने क्या किया ? हंसको रचते २ कव्वा कैसे बना दिया ? ॥ २ ॥

उपरोहितहिँ भवन पहुँचाई ॥ असुर तापसिहिँ खबरि जनाई ॥ ३ ॥ ❋
तेहिँ खल जहँ तहँ पत्र पठाये ॥ सजि सजि सेन भूप सब आये ॥ ४ ॥ ❋

फिर उस राक्षसने पुरोहितको घर पहुंचा कर उस कपटी मुनिको जाकर खबर दी ॥ ३ ॥ तब उस दुष्ट कपटी राजा कि जो राजा प्रतापभानुसे हार कर बनमें जा बैठा था उसने जहाँ तहाँ पत्र भेजे कि–तुम लोग इसवक्त अपनी २ सेना सज कर राजा प्रतापभानुके ऊपर चढ़ आओ; क्योंकि अब उसको ब्राह्मणोंका शाप हो गया है उसके दिन बुरे आगये हैं सो अपनी विजय होगी. ये समाचार सुन सब राजा अपनी २ सेना सज कर प्रतापभानुपर चढ़ आये ॥ ४ ॥

घेरिन्हि नगर निशान बजाई ॥ बिबिधभांति नित होति लराई ॥ ५ ॥ ❋
जूझे सकल सुभट करि करणी ॥ बन्धुसमेत परेउ नृप धरणी ॥ ६ ॥ ❋

और धौंसा देकर नगरको घेर लिया. और हमेशा अनेक तरहकी लड़ाइयां होने लगीं ॥ ५ ॥

सब सुभट अपनी २ करतूती दिखाके जूझ जूझकर मर गये. निदान राजाभी अपने भाईके साथ मर कर जमीनपर गिर गया ॥ ६ ॥

सत्यकेतुकुल कोउ न बाँचा ॥ विप्रशाप किमि होइ असांचा ॥ ७ ॥ ❋
रिपुहिँ जीति नृप नगर बसाई ॥ निज निज पुर गे जय यश पाई ॥८॥ ❋

आखिरको यह दशा हुई कि, सत्यकेतुके कुलमें कोईभी बाकी न रहा. कवि कहता है कि– भला, ब्राह्मणोंका शापभी कहीं झूंठा हो सक्ता है ? ॥ ७ ॥ ऐसे वे राजा अपने शत्रु प्रतापभानुको जीतकर वहां नया नगर बसाय, जय यश पाय अपने २ नगरोंको सिधारे ॥ ८ ॥

दोहा–भरद्वाज सुनु जाहि जब, होत बिधाता बाम ॥ ❋
धूरि मेरुसम जनक यम, ताहि ब्यालसम दाम ॥ १८१ ॥ ❋

याज्ञवल्क्यमुनि कहते है कि–हे भरद्वाज ! सुनो, जब जिससे विधाता प्रतिकूल हो जाता है, तब उसके रजका कण मेरु पर्वतके बराबर और पिता यमराजके समान और पुष्पोंकी माला (अथवा रस्सी,) सांपके सदृश हो जाती है ॥ १८१ ॥

काल पाइ मुनि सुनु सोइ राजा ॥ भयउ निशाचर सहित समाजा ॥१॥ ❋
दश शिर ताहि बीस भुजदण्डा ॥ रावण नाम बीर बरिबण्डा ॥ २ ॥ ❋

हे मुनि ! सुनो, वह प्रतापभानु राजा समय पाकर अपने कुटुंबके साथ राक्षस हुआ ॥ १ ॥ जिसका नाम रावण हुआ. उसके दश शिर और बीस भुजदंड हुए. राक्षस रावण बड़ा वीर और जोरावर हुआ ॥ २ ॥

भूपअनुज अरिमर्दन नामा ॥ भयउ सो कुम्भकर्ण बलधामा ॥ ३ ॥ ❋
सचिव जो रहा धर्मरुचि जासू ॥ भयउ बिमात्र वन्धु लघु तासू ॥ ४ ॥ ❋

राजा प्रतापभानुका छोटा भाई अरिमर्दन मरकर बलका धाम रावणका छुटभैया कुंभकर्ण नाम राक्षस हुआ ॥३॥ और धर्मरुचि नाम जो उसका मंत्री था वह रावणका विमात्र छुटभैया हुआ ॥ ४ ॥

नाम बिभीषण जेहि जग जाना ॥ विष्णुभक्त विज्ञाननिधाना ॥ ५ ॥ ❋
रहे जे सुत सेवक नृपकेरे ॥ भये निशाचर घोर घनेरे ॥ ६ ॥ ❋

जिसका नाम बिभीषण था, जिसे सारा जगत् जानता है कि, जो विष्णु भगवान्‌का परमभक्त और विज्ञानका निधान था ॥ ५ ॥ और जो प्रतापभानुके पुत्र और नौकर थे वे महाघोर बहुतसे राक्षस हुए ॥ ६ ॥

कामरूप खल जिनिसि अनेका ॥ कुटिल भयंकर बिगतबिबेका ॥ ७ ॥ ❋
कृपारहित हिंसक सब पापी ॥ बर्णि न जाइं बिश्वपरितापी ॥ ८ ॥ ❋

जो राक्षस कामरूप यानी मनवांछित रूप धारण करनहारे, खल, कुटिल, भयंकर, विवेकहीन और अनेक भांतिके थे ॥ ७ ॥ उनके दयाका लेश नहीं था. बड़े हिंसक, महापापी, और सबके सब ऐसे जगतके दुःखदायी थे कि जिसका कुछ वर्णन नहीं कर सकते ॥ ८ ॥

दोहा—उपजे यदपि पुलस्त्यकुल, पावन अमल अनूप ॥ *
तदपि महीसुरशापबश, भये सकल अघरूप ॥ १८२ ॥ *

यद्यपि वे महापवित्र निर्मल और सर्वोत्तम पुलस्त्य ऋषिके वंशमें पैदा हुए थे तथापि वे सब ब्राह्मणोंके शापके कारण महापापरूप हुए ॥ १८२ ॥

कीन्ह बिबिध तप तीनौं भाई ॥ परमउग्र सो बर्णि न जाई ॥ १ ॥ *
गयउ निकट तप देखि बिधाता ॥ माँगहु बर प्रसन्न मैं ताता ॥ २ ॥ *

उन तीनों भाईयोंने अनेकप्रकारसे महाघोर तपस्या करी कि जिसके विषयमें कुछ कहा नहीं जाता ॥ १ ॥ उनकी तपस्याको देखकर ब्रह्माजीने उनके पास जाकर कहा कि—हे तात! मैं तुम्हारी तपस्या देखकर बहुत प्रसन्न हुआ हूं सो जो तुम्हारी इच्छा हो वही वर मांगो ॥ २ ॥

करि बिनती पद गहि दशशीशा ॥ बोलेहु बचन सुनहु जगदीशा ॥ ३ ॥ *
हम काहूकर मरहिँ न मारे ॥ बानर मनुज जाति दुइबारे ॥ ४ ॥ *

ब्रह्माजीके ऐसे करुण वचन सुनकर पांव पकड़कर विनती करके रावणने मधुर बचनसे कहा कि—हे जगदीश! सुनिये ॥ ३ ॥ हमको जो आप वर देते हो तो हम यह वरदान मांगते हैं कि—'हम वानर और मनुष्यके सिवाय दूसरे किसीके हाथ न मरें' यह वर हमें दो ॥ ४ ॥

एवमस्तु तुम बड़ तप कीन्हा ॥ मैं ब्रह्मा मिलि तोहिँ बर दीन्हा ॥ ५ ॥
पुनि प्रभु कुम्भकर्णपहँ गयऊ ॥ तेहि बिलोकि मन बिस्मय भयऊ ॥ ६ ॥

रावणके वचन सुनकर ब्रह्माजीने पीछा "एवमस्तु" कहा और फिर कहा कि—हे रावण! तुमने बड़ी तपस्या की जिससे मैंने यह वरदान तुमको दिया है. और मैं खुद ब्रह्मा तुम्हारे पास चलके आया हूं ॥ ५ ॥ फिर ब्रह्माजी कुंभकर्णके पास गये उसे देखकर ब्रह्माजी मनमें अचंभे रह गये कि, यह क्या? ॥ ६ ॥

जो यह खल नित करब अहारा ॥ होइहि सब उजारि संसारा ॥ ७ ॥ *
शारद प्रेरि तासु मति फेरी ॥ माँगेसि नींद मास षटकेरी ॥ ८ ॥ *

ब्रह्माजीने विचार किया कि—जो यह नीच हमेशा आहार करेगा तो मैं जानता हूं कि, यह सारा संसार अवश्य उजार हो जायगा ॥ ७ ॥ इसलिये इसे तो वरदानके मिषसे धोखा देना चाहिये. ऐसा विचारके सरस्वतीको प्रेरकर उसकी बुद्धि फेर दी. जिससे उसने ब्रह्माजीसे छः महीनेकी नींद मांगी ॥ ८ ॥

दोहा—गयउ बिभीषणपास तब, कहा पुत्र बर माँग ॥ *
तेहिँ माँगे भगवन्तपद, कमल अमल अनुराग ॥ १८३ ॥ *

फिर बिभीषणके पास जाकर ब्रह्माजीने कहा कि—हे पुत्र! वर माँग, तब उसने ब्रह्माजीसे यह वरदान मांगा कि—हे प्रभु! मेरा सदा सर्वदा भगवानके चरणकमलोंमें फलाभिसन्धानरहित अनुराग बना रहे ॥ १८३ ॥

तिनहिँ देइ बर ब्रह्म सिधाये ॥ हर्षित ते अपने गृह आये ॥ १ ॥ *

मयतनुजा मन्दोदरिनामा ॥ परम सुन्दरी नारि ललामा ॥ २ ॥ ❋

ऐसे ब्रह्माजी तीनोंही राक्षसोंको वरदान देकर ब्रह्मलोक सिधारे तब ये तीनों राक्षस प्रसन्न होकर अपने घर आये ॥ १ ॥ मयदैत्यकी कन्या कि, जिसका मंदोदरी नाम था वह अत्यंतही सुन्दर और स्त्रियोंके अन्दर रत्नके समान थी ॥ २ ॥

सोइ मय दीन्ह रावणहिँ आनी ॥ भई सो यातुधानपतिरानी ॥ ३ ॥ ❋
हर्षित भयउ नारि भलि पाई ॥ पुनि दोउ बन्धु बिबाहेसि जाई ॥ ४ ॥ ❋

जिसे लाकर मयदैत्यने रावणको दी. सो वह मंदोदरी रावणकी पट्टरानी हुई ॥ ३ ॥ अच्छी उत्तम स्त्रीको पाकर रावण बड़ा खुश हुआ. फिर दोनों लुटभैयोंकेभी जाकर विवाह किया ॥ ४ ॥

(क्षेपक.) सानन्दानि वृकदन्तकुमारी ॥ सो मय कुम्भकर्णकी नारी ॥ १ ❋
नगदन्ती केहरिमखजाई ॥ सो वल्लभा बिभीषण पाई ॥ २ ॥ ❋

वृकदन्तकी कन्या जो सानन्दनी नाम थी वह कुंभकर्णकी स्त्री हुई ॥ १ ॥ और केहरिमखकी कन्या जो नगदन्ती नाम थी वह बिभीषणकी स्त्री हुइ ॥ २ ॥ (इति)

गिरि त्रिकूट यक सिन्धुमँझारी ॥ बिधिनिर्मित दुर्गम अतिभारी ॥ ५ ॥ ❋
सोइ मय दानव बहुरि सँवारा॥ कनकरचित मणिभवन अपारा ॥ ६ ॥ ❋

समुद्रके बीच एक त्रिकुटाचल नाम पर्वत है जो ब्रह्माजीकी रचनामें एक बड़ा भारी भूमिस्थल है ॥ ५ ॥ उसी पर्वतको मयदैत्यने फेरि खूब अच्छीतरह सँवार उसपर एक बड़ा भारी सुवर्णका नगर रचा है जिसमें रत्नोंके महल जगमगाते है ॥ ६ ॥

भोगवती जस अहिकुलबासा ॥ अमरावति जस शक्रनिबासा ॥ ७ ॥ ❋
तिनते अधिक रम्य अतिबंका ॥ जगबिख्यात नाम तेहिँ लंका ॥ ८ ॥ ❋

वह नगरी ऐसी सुन्दर है कि, जैसी नाग लोगोंके रहनेकी पुरी भोगवती और इंद्रके रहनेकी पुरी अमरावती ॥ ७ ॥ उस नगरीकी शोभा तो वैसीही है कि, जैसी भोगवती और अमरावतीकी. परंतु बंकाईमें वह उनसेभी बहुत बढ़कर है. जिसका नाम लंकाकरके सारे जगत्में विख्यात है ॥ ८ ॥

दोहा–खाई सिंधु गँभीर अति, चारिउ दिशि फिर आव ॥ ❋
कनककोट मणिखचित दृढ़, बर्णि न जाय बनाव ॥ १८४ ॥ ❋
हरिप्रेरित जेहि कल्प जोइ, यातुधानपति होय ॥ ❋
शूर प्रतापी अतुल बल, दलसमेत बश सोय ॥ १८५ ॥ ❋

अथाह समुद्रकी तो उसके चारों तर्फ फिरती खाई है और रत्नजटित कनकका उसके मजबूत कोट (शहरपनाह) है कि जिसकी बनावटको कुछ कह नहीं सकते ॥ १८४ ॥ हरि भगवान्‌की प्रेरणासे जिस कल्पमें जो शूर, वीर, प्रतापी, महाबलशाली राक्षसोंका राजा होता है वही उसमें जाकर अपनी फौजके साथ रहा करता है और वह पुरी उसीके आधीन रहती है ॥ १८५ ॥

रहे तहाँ निशिचर भट भारे ॥ ते सब सुरन समर संहारे ॥ १ ॥ ❋
अब तहँ रहहिँ शक्रके प्रेरे ॥ रक्षक कोटि यक्ष पतिकेरे ॥ २ ॥ ❋

वहां जो पहले भारी राक्षसोंके भट रहते थे उन सबको मारकर देवताओंने लंकाके भीतर अपना अमल कर लिया है ॥ १ ॥ और अब वहां इंद्रने प्रेरकर कुबेरके करोड़ों भट रक्षाके लिये भेजे हैं सो वे वहां रहते हैं ॥ २ ॥

दशमुख कबहुँ खबरि अस पाई ॥ सेन साजि गढ़ घेरेसि जाई ॥ ३ ॥ ❀
देखि बिकट भट अति कटकाई ॥ यक्ष जीव लै गये पराई ॥ ४ ॥ ❀

जब रावणको ऐसी खबर मिली तब उसने अपनी सेना साजकर उस लंका गढ़को जाकर घेर लिया ॥ ३ ॥ तब भीतरके यक्ष, बाहिरकी ओर बिकट भट और भारी कटकको देखकर जीव लेकर पलायमान होगये ॥ ४ ॥

फिरि सब नगर दशानन देषा ॥ गयउ शौच सुख भयउ विशेषा ॥ ५ ॥ ❀
सुन्दर सहज अगम अनुमानी ॥ कीन्ह तहां रावण रजधानी ॥ ६ ॥ ❀

फिर रावणने जाकर उस नगरको चारों तरफसे देखा जिसे देखतेही रावणका सारा शोच जाता रहा और परम आनंद प्राप्त हुआ ॥ ५ ॥ उस गढ़को सब प्रकारसे सुन्दर और स्वाभाविक दुर्गम जानकर रावणने वहां अपनी राजधानी जमा दी ॥ ६ ॥

जेहि जस योग बाँटि गृह दीन्हे ॥ सुखी सकल रजनीचर कीन्हे ॥ ७ ॥ ❀
एकबार कुबेरपहँ धावा ॥ पुष्पकयान जीति लै आवा ॥ ८ ॥ ❀

जो जिस मकानके लायक थे उन्हें वैसेही घर बाँटके दे दिये और सब राक्षसोंको रावणने प्रसन्न किया ॥ ७ ॥ एक बेर रावण कुबेरके पास गया सो वहां कुबेरको जीतकर उसके पाससे पुष्पक विमान ले आया ॥ ८ ॥

(क्षेपक) तब कुबेर निजकुटुँबसमेता ॥ अलकापुरी बशाइ सचेता ॥ १ ॥ ❀
आपु गये सुरपतिके तीरा ॥ सकल व्यवस्था कही अधीरा ॥ २ ॥ ❀

जब रावणने कुबेरकी लंकापुरी छीन ली तब उस महाज्ञानी कुबेरने अपने कुटुम्बके साथ रहनेके लिये अलका नाम पुरी कैलासमें बसायी ॥ १ ॥ फिर वह कुबेर खुद इंद्रके पास गया और वहां जाके धीरज न रहनेके कारण वहांका सब हाल कहा ॥ २ ॥

सुनि सुरेश सब देव बुलाये ॥ हनि निशान लंकहिँ चढ़ि आये ॥ ३ ॥ ❀
दशमुख लै निकसा कटकाई ॥ होइ इन्द्रते लगी लराई ॥ ४ ॥ ❀

सो हाल सुनकर इंद्रने तमाम देवताओंको बुलाके लंकापर चढ़नेकी तैयारी करी. फिर धोंसा देवे सब देवता लंकापर चढ़ आये ॥ ३ ॥ तब रावणभी अपनी सेना लेकर गढ़से बाहिर निकला. तहां रावण और इंद्रका परस्पर युद्ध होने लगा ॥ ४ ॥

अस्त्र शस्त्र छूटै बिधि नाना ॥ अगणित असुर होइँ बिन प्राना ॥ ५ ॥ ❀
बासव कोपि बज्र यक मारा ॥ गिरा मूर्छि तब अवनिमँझारा ॥ ६ ॥ ❀

अनेक प्रकारके अस्त्र और शस्त्र चलने लगे और असंख्यात राक्षस मरने लगे ॥ ५ ॥ उस वक्त इंद्रने क्रोध करके वज्रका एक प्रहार किया जिससे वह रावण मूर्छित होकर जमीनपर गिर गया ॥ ६ ॥

निज गजते तनु मर्दन लाग्यो ॥ मानहुँ श्रमित जानि अनुराग्यो ॥ ७ ॥ ❀
कुम्भकरण तब भिरेउ प्रचारी ॥ व्याकुल भये अदितिसुतभारी ॥ ८ ॥ ❀

जब रावण पृथ्वीपर पड़ गया तब इंद्र अपने हाथीसे उसका शरीर मर्दन करने लगा तौ उस रावणको वह गजराजका मर्दन ऐसा अच्छा मालूम हुआ कि, मानों थका हुआ आदमी मर्दन करनेसे खुश होता है ॥ ७ ॥ रावणकी यह दशा देखकर कुंभकर्ण ललकार कर इंद्रसे भिड़ा. उस वक्त तमाम देवता बड़े भारी व्याकुल हुए ॥ ८ ॥

रविसुत सैन बिचल निज जानी ॥ झपटि दंड मारेउ उर तानी ॥ ९ ॥ ❀
रावणअनुज दंड गहि लयऊ ॥ सहजै निजमुख मेलत भयऊ ॥ १० ॥ ❀
राखि उदर शठ सोवन लागा ॥ षट महिना बीते पुनि जागा ॥ ११ ॥ ❀

अपनी सेनाको ऐसे चलायमान होती जानके यमराजने झट झपट कर उसके हृदयमें खैंचके कालदंडका प्रहार किया ॥ ९ ॥ तब कुंभकर्णने यमराजका दंड पातेही अपने हाथसे पकड़ लिया और सहजहीसे वह दंड अपने मुंहमें धर लिया ॥ १० ॥ उस दंडको अपने उदरमें रखकर वह शठ सोने लगा सो सोगया. जब छह महीने बीते तब वह नींदसे पीछा जागा ॥ ११ ॥

दोहा–भयो तासु उर दाह तब, उगिलि दिहिसि यमदण्ड ॥ ❀
तमकि लीन महिशेष पुनि, मारेहु दण्ड प्रचण्ड ॥ १ ॥ ❀

जब वह नींदमेंसे उठा तब उसका हृदय जलने लगा तब उसने वह यमदंड पीछा उगल दिया. फिर यमराजने अपना दंड लेके क्रोध करके उसके ऊपर उस प्रचंड दंडका सख्त प्रहार किया ॥ १ ॥

लागत शिर त्यहि पीर न ब्यापी ॥ भयो नींदबश पुनि खल पापी ॥ १ ॥ ❀
तब हरि हने दण्ड अधिकाई ॥ सोवत सो अधिकहु सचुपाई ॥ २ ॥ ❀

सो वह प्रहार उसके शिरमें लगा था; पर उसके तौ उसकी कुछभी पीर नहीं हुई, जिनस उस पापी खलको फिर नींद आगयी ॥ १ ॥ तब यमराजने बड़े जोरसे दंडका प्रहार किया जिससे वह खल बड़े चोपके साथ निद्रा लेने लगा; क्योंकि उसके तौ वह दंडका प्रहार मानों परिश्रम मिटानेका साधन बन पड़ा था ॥ २ ॥

मुरछाते तब रावण जागा ॥ पुनि देवनते जूझन लागा ॥ ३ ॥ ❀
नख भुजदण्ड धनुष शर लीन्हे ॥ मारि बिबुध सब ब्याकुल कीन्हे ॥ ४ ॥ ❀

उस वक्त मूर्छासे रावण जागा और फिर पीछा देवतानके साथ युद्ध करने लगा ॥ ३ ॥ बीसहू भुजदंडोंमें धनुष व बाण धारण करके रावणने मार सब देवताओंको व्याकुल कर दिया ॥ ४ ॥

लखि दिग्गज चिक्करि ढिग आये ॥ धनुष बाण सब काटि बहाये ॥ ५ ॥ ❀
गहेसि तिन्हैं तब भुजा पसारी ॥ मारे द्विरदन दशन प्रचारी ॥ ६ ॥ ❀

रावणका अद्भुत पराक्रम देखके दिग्गज हाथी चिंघाड़तेहुए रावणके निकट आये. तिन्हें देखकर रावणने अपने धनुष बाण तौ सब फेंक दिये ॥ ५ ॥ और उन्हें बांह पसारकर पकड़ा तब हाथियोंनेभी दांतोंसे रावणको प्रचार कर रावणपर दांतोंका प्रहार किया ॥ ६ ॥

दशमुखके उर लागहिँ कैसे ॥ शिलामाँझ बिन फर शर जैसे ॥ ७ ॥ ❀
लखि रावणतनकी कठिनाई ॥ तब सब दिग्गज चले पराई ॥ ८ ॥ ❀

सो वह दिग्गज हाथियोंके दांतोंका प्रहार रावणकी छातीमे कैसा लगता था कि मानों शिलामें विना फलका बाण आकर लगा है ॥ ७ ॥ रावणके शरीरकी ऐसी भारो कठिनता देखकर सब दिग्गज हाथी वहांसे भाग चले ॥ ८ ॥

धनद इन्द्र तब गे विधिपासा ॥ शीश नाइ सब हाल प्रकासा ॥ ९ ॥ ❀
कह बिरंचि सुनु शक्र सुजाना ॥ रावण है तपबल बलवाना ॥ १० ॥ ❀

तब कुबेर और इंद्र दोनोंने ब्रह्माजीके पास जा शिर नवाकर वहांका सब हाल कहा ॥ ९ ॥ तब ब्रह्माजीने इंद्रसे कहा कि— हे सुजान इंद्र ! सुनो; रावणके तपस्याका बड़ा बल है और वह स्वभावसेभी महाबलवान् है ॥ १० ॥

त्यहिते तुम जनि करहु लराई ॥ गिरि खोहनमाँ जाहु पराई ॥ ११ ॥ ❀
सुरनसहित सुमिरहु करतारा ॥ बिन हरि को दुख मेटनहारा ॥ १२ ॥ ❀

इसलिये तुम उससे युद्ध मत करो. अभी तुम भागकर पर्वतकी कंदराओंमें जा घुसो ॥ ११ ॥ और वहां बैठकर देवताओंके साथ परमेश्वरका स्मरण करो सो तुम्हारा सब संकट कट जायगा; क्योंकि परमेश्वरके विना दूसरा दुःख मिटानेवाला कौन है ? ॥ १२ ॥

स्रष्टा बचन सुनत मन माने ॥ देवनते तब आइ बखाने ॥ १३ ॥ ❀
सीख पुरन्दरकी लहि काना ॥ सबहुन गिरि बन कीन पयाना ॥ १४ ॥ ❀

ब्रह्माजीके बचन सुनतेही इंद्रके वह बात मनमें पक्की बैठ गयी जिससे उसने आकर ये समाचार सब देवताओंसे कहे ॥ १३ ॥ इंद्रकी शिक्षा सुनकर सब देवता युद्ध छोंड़ २ कर पर्वत और वनोंमें चले गये ॥ १४ ॥

जाय दशानन सेन समेता ॥ शोधेसि देवनकेर निकेता ॥ १५ ॥ ❀
जो सुरपुर घर मारग पावा ॥ तिन्हैं पकरि निजलंकहिँ आवा ॥ १६ ॥ ❀

तब रावणने सेनाको साथ लेकर उनके स्थानपर जाकर तमाम देवताओंके घर ढूंढ़े ॥ १५ ॥ सो जो देवता नगरमें, घरमें या मार्गमे पा गया उन्हें तो वह पकड़कर अपने लंकागढ़में ले आया ॥ १६ ॥

रावण लंकहिँ गा सुनि काना ॥ बसे अमर पुनि निज निज थाना ॥ १७ ॥ ❀
जब देवताओंने कानोंसे यह बात सुनी कि-रावण लंकाको चला गया है. तब सब देवता पीछे आकर अपने २ स्थानमें रहने लगे ॥ १७ ॥ ॥ (इति)

दोहा—कौतुकही कैलास पुनि, लीन्हेसि जाइ उठाइ ॥ ❀
मनहुँ तौलि निजबाहुबल, चला अधिक सुख पाइ ॥ १८६ ॥ ❀

फिर रावणने जाकर कौतुकही कौतुकमें कैलास पर्वतको उठा लिया. वो कैलास पर्वतको उठाना

क्या था ? मानों उसने उससे अपने भुजाओंका बल तौला था. कैलासके उठ जानेसे मनमें बड़ा सुख मानकर वहांसे चला ॥ १८६ ॥

सुख सम्पति सुत सेन सहाई ॥ जय प्रताप बल बुद्धि बड़ाई ॥ १ ॥ ❁
नित नूतन सब बाढ़त जाई ॥ जिमि प्रतिलाभ लोभ अधिकाई ॥ २ ॥ ❁

रावणके घरमें सदा सुख, संपदा, पुत्र, सेना, सहाय, जय, प्रताप, बल, बुद्धि और बड़ाई ॥१॥ ये सब कैसे नितनये बढ़तेथे जाते जैसे कि, नितनया लाभ होनेसे लोभ अधिक बढ़ता जाता है ॥ २ ॥

अतिबल कुम्भकर्ण अस भ्राता ॥ जेहिकहँ नहिँ प्रतिभट जग जाता ॥३॥
करि मदपान सोव षट मासा ॥ जागत होइ तिहूँ पुर त्रासा ॥ ४ ॥ ❁

इसके कुम्भकर्णके ऐसा महाबली भाई था जिसकी जोड़ीका जगत्में कोईभी प्रतिभट पैदा नहीं हुआ था ॥ ३ ॥ वह कुंभकर्ण मदपान करके छः महीना सोया पड़ा रहता था और जागता तब तीनों लोकोंमें हाहाकार मच जाता था ॥ ४ ॥

जो दिन प्रति अहार करु सोई ॥ बिश्व बेगि सब चौपट होई ॥५॥ ❁
समर धीर नहिँ जाइ बखाना ॥ तेहि सम अधिक न कोउ बलवाना ॥६॥ ❁

कवि कहता है कि- जो वह हमेशा आहार करता तो यह सारा जगत् तुरंत चौपट यानी उजार हो जाता ॥५॥ वह युद्धमें ऐसा धीर था कि, जिसके विषयमें कुछ कहही नहीं सकते. उसके जैसा व अधिक दूसरा कोई बलवान् नहीं था ॥ ६ ॥

बारिदनाद जेठ सुत तासू ॥ भटमहँ प्रथम लीक जग जासू ॥ ७ ॥ ❁
जेहि न होइ रण सन्मुख कोई ॥ सुरपुर नितहिँ परावन होई ॥ ८ ॥ ❁

रावणके सबसे बड़ा पुत्र मेघनाद नाम था. जगत्के अंदर सुभटोंकी गिनतीमें उसका नाम अव्वल गिना जाता था ॥ ७ ॥ जिसके सामने रणके बीच कोई नहीं हो सकता था और जिसके भयके मारे देवलोकमें सदा भगावटही बनी रहती थी ॥ ८ ॥

दोहा-कुमुख अकंपन कुलिशरद, धूम्रकेतु अतिकाय ॥ ❁
एक एक जग जीति सक, ऐसे सुभटनिकाय ॥ १८७ ॥ ❁

मेघनादके सिवाय कुमुख, अकम्पन, वज्रदंष्ट्र, धूम्रकेतु और अतिकायआदि एक एक योधा ऐसे थे कि जो सारे जगत्को जीत सकैं ऐसे उसके पास सुभटोंका दल था ॥ १८७ ॥

कामरूप जानहिँ सब माया ॥ सपनेहुँ जिनके धर्म न दाया ॥ १ ॥ ❁
दशमुख बैठि सभा यकवारा ॥ देखि अमित आपन परिवारा ॥ २ ॥ ❁

लंकामें जितने राक्षस थे वे सब इच्छानुसार रूप धारण कर सकते थे; सब माया जानते थे; जिनके स्वप्नमेंभी धर्म और दयाका लेश नहीं था ॥ १ ॥ एक समय रावण सभामें बैठा था. तहां अपने अपरिमित परिवार ॥ २ ॥

सुतसमूह जन परिजन नाती ॥ गनै को पार निशाचर जाती ॥ ३ ॥ ❁
सेन बिलोकि सहज अभिमानी ॥ बोला बचन क्रोध मद सानी ॥ ४ ॥ ❁

पुत्रसमूह लोग कुटुंबके लोग और सम्बन्धी कि,जो सब राक्षसजाति थे उनको देखा जिनको गिन-कर कौन मनुष्य पार पा सकता है ? ॥ ३ ॥ ऐसी अपनी अपरिमित सेनाको देखकर स्वाभाविक अ-भिमानी राजा रावण क्रोध और मदयुक्त वाणी बोला कि- ॥ ४ ॥

सुनहु सकल रजनीचरयूथा ॥ हमरे बैरी बिबुधबरूथा ॥ ५ ॥ ❀
ते सन्मुख नहिँ करहिँ लराई ॥ देखि सकल रिपु जाहिँ पराई ॥ ६ ॥ ❀

हे राक्षसोंके यूथो ! तुम सब सुनो. देवताओंका वृन्द हमारा बैरी है सो तुम जानतेही हो ॥ ५ ॥ वे पहले तौ सन्मुख आकर लड़े थे पर अब वे सन्मुख आकर तौ लड़ते नहीं.आपनको देखतेही वे सब शत्रु पलायमान हो जाते हैं ॥ ६ ॥

तिनकर मरण एक बिधि होई ॥ कहौं बुझाइ सुनहु अब सोई ॥ ७ ॥ ❀
द्विज भोजन मख होम सराधा ॥ सबकर जाइ करहु तुम बाधा ॥ ८ ॥ ❀

उनकी मृत्यु एक तरहसे हो सक्ती है वह मैं अब तुमको समझाकर कहता हूं सो सुनो ॥ ७ ॥ जो तुम देवताओंका नाश करना चाहते हो तौ तुम जाकर ब्राह्मणभोजन, यज्ञ, होम और श्राद्धके भी-तर बाधा डालो ॥ ८ ॥

दोहा-सुधाक्षीण बलहीन सुर, सहजहिँ मिलिहहिँ आइ ॥ ❀
तब मारिहौं कि छांड़िहौं, भलीभांति अपनाइ ॥ १८८ ॥ ❀

जिससे देवता खानेको न मिलनेसे भूंखके मारे क्षीणशरीर व बलहीन होकर सहजमेंही आकर आपनसे मिलेंगे उस वक्त चाहे तौ उनको मार डालेंगे, चाहे अच्छीतरह अपना कर छोड़ देंगे ॥ १८८ ॥

मेघनादकहँ पुनि हँकरावा ॥ दीन्ह सीख बर बयर बढ़ावा ॥ १ ॥ ❀
जे सुर समरधीर बलवाना ॥ जिनके लरिबेको अभिमाना ॥ २ ॥ ❀

रावणने सब राक्षसोंको यह आज्ञा देके फिर मेघनादको बुलाके कहा और वही शिक्षा दी कि, जो सब राक्षसोंको दी थी और देवताओंसे उसने खूब अच्छीतरह बैर बढ़ा दिया ॥ १ ॥ और मेघनादसे कहा कि, हे पुत्र ! जो देवता समरधीर और बलवान् हैं तथा जिनको लड़नेका अभिमान है ॥ २ ॥

तिनहिँ जीति रण आनिसि बाँधी॥उठि सुत पितुअनुशासन साधी ॥ ३॥
इहिबिधि सबहीं आज्ञा दीन्हा ॥ आपुन चलेउ गदाकर लीन्हा ॥ ४ ॥ ❀

उनको रणमें जीतकर बांधके ले आ. पिताकी आज्ञा सुनकर मेघनाद उठ खड़ा हुआ ॥ ३ ॥ इस तरह रावण सबको आज्ञा देकर आपभी गदा हाथमें लेकर चला ॥ ४ ॥

चलत दशानन डोलत अवनी ॥ गर्जत गर्भ स्रवत सुररवनी ॥ ५ ॥ ❀
रावण आवत सुनेउँ सकोहा ॥ देवन तकेउ मेरुगिरिखोहा ॥ ६ ॥❀

रावणकी सेनाके साथ रवाने होनेके समय पृथ्वी छातसी हिलने लगी और उसके गर्जते समय देव-ताओंकी स्त्रियोंके गर्भ गिरने लगे ॥ ५ ॥ जब देवताओंने सुना कि,रावण क्रोध करके आता है. तब वे मेरु पर्वतकी कंदराओंकी तर्फ ताके यानी मेरुकी गुफाओंमें जा घुसे ॥ ६ ॥

दिगपालनके लोक सिधाये ॥ सूने सकल दशानन पाये ॥ ७ ॥ ❀
पुनि पुनि सिंहनाद करि भारी ॥ देइ देवतन गारि प्रचारी ॥ ८ ॥ ❀
रण मदमत्त फिरै जग धावा ॥ प्रतिभट खोजत कतहुँ न पावा ॥ ९ ॥ ❀

रावण दिक्पालोंके लोकोंमे गया तो वेभी उसको बिलकुल सूने मिले; क्योंकि उसके खौफसे सब छोड़ २ कर भाग गये थे ॥ ७ ॥ तब बारंबार भारी सिंहनाद कर देवताओंको गालियां दे अनेक प्रकारसे ललकार कर मदमत्त रावण रणके निमित्त जगतमें फिरने लगा. रावणने बहुत तलाश की कि, कहीं प्रतिभट मिले; पर कहीं नहीं मिला ॥ ८ ॥ ९ ॥

(क्षेपक)

दोहा–सप्तद्वीप नवखण्डलगी, सप्तपताल अकाश ॥ ❀
कंपमान धरणी धकत, सरितपतिन मन त्रास ॥ २ ॥ ❀

सप्तद्वीप, नौखंड, सातों पाताल, और आकाश तमाम ठौर रावण जा आया पर कहीं कोईभी नहीं मिला उसके भयसे पृथ्वी कांपने लगी और समुद्र मनमें त्रसित होगये ॥ २ ॥

नारद मिले कहेसि मुसुकाई ॥ देव कहां मुनि देहु दिखाई ॥ १ ॥ ❀
सुनत अनख नारदहिँ न भावा ॥ श्वेतद्वीप तेहि सुरत पठावा ॥ २ ॥ ❀

रावणके घूमते २ मार्गमें नारदजी आ मिले तब हंसकर रावणने नारदजीसे कहा कि–हे मुनि ! देवता कहां है ? उनको तो बता दो ॥ १ ॥ रावणके ऐसे हँसीके बचन सुनकर नारदजीके मनमें अच्छे नहीं लगे जिससे उन्होंने उसको तुरंत श्वेतद्वीप भेज दिया ॥ २ ॥

सागर उतरि पार सो गयउ ॥ नारिवृन्द तहँ देखत भयउ ॥ ३ ॥ ❀
तिन्हसन कहेउ पतिनपहँ जाहू ॥ कहेउ कि आव निशाचरनाहू ॥ ४ ॥ ❀

समुद्रके पार होकर वह वहां गया. वहां जाकर उसने कई स्त्रियोंके झुंड देखे ॥ ३ ॥ उन्हें देखकर रावणने उन स्त्रियोंसे कहा कि– तुम तुम्हारे पतियोंके पास जाओ और उनसे कहो कि, राक्षसोंका राजा रावण आया है ॥ ४ ॥

तब मैं तिनहिँ जीति संग्रामा ॥ लै जैहौं तुमकहँ निजधामा ॥ ५ ॥ ❀
सुनत बचन यक जरठ रिसानी ॥ धाइ चरण गहि गगन उड़ानी ॥ ६ ॥ ❀

वे मेरेपास आवेंगे तब उनको युद्धके अंदर जीतकर फिर तुमको मैं मेरे घर ले जाऊंगा ॥ ५ ॥ रावणके ऐसे बचन सुनकर एक बुढियाको गुस्सा आगया जिससे वह दौड़कर रावणका पांव पकड़कर उसको लिये २ आकाशमें उड़गयी ॥ ६ ॥

गइ अंबर धरि धरि झकझोरा ॥ डारेसि सिंधुमध्य अतिजोरा ॥ ७ ॥ ❀

आकाशमें जा उसे खूब पकड़ २ झकझोर कर बड़े जोरसे समुद्रके बीच डाल दिया ॥ ७ ॥

दोहा–गयो पताल अचेत व्है, मरै न बिप्रप्रसाद ॥ ❀
सावधान उठि चलेउ पुनि, हिये, न हर्ष विषाद ॥ ३ ॥ ❀

सो वह रावण अचेत होकर पातालमें जा गिरा पर ब्रह्माजीकी कृपासे नहीं मरा. फिर सावधान

हो उठकर चला. उसके मनमें बेचेत व सचेत होनेका बिलकुल हर्ष और विषाद (रंज) नहीं था ॥ ३ ॥

जीतेसि नागनगर सब झारी ॥ गयो बहुरि बलिलोक सुरारी ॥ १ ॥ ❀
वैरोचनसुत आदर दयऊ ॥ कुशल बूझि तब बोलत भयउ ॥ २ ॥ ❀

पातालके भीतर जाकर उसने तलाश करके तमाम नागलोकका विजय किया. फिर वह देववैरी बलिराजाके लोक (सुतललोक) में गया ॥ १ ॥ विरोचनके पुत्र बलिने उसको बड़ा आदर दिया और कुशल पूंछा ॥ २ ॥

तव प्रसाद सब आनँद होई ॥ सुर सन्मुख होइ सकत न कोई ॥ ३ ॥ ❀
तुमहुँ निजशत्रुहिँ गहि लीजै ॥ चलि महिलोक राज निज कीजै ॥ ४ ॥ ❀

तब पीछा रावणने कहा कि—महाराज ! आपकी कृपासे मेरे सब बातका आनंद है. कोईभी देवता मेरा सामना नहीं कर सकता ॥ ३ ॥ तुमभी अपने शत्रुको पकड़ लो और पृथ्वीमें चलकर अपना राज करो ॥ ४ ॥

कह बलि कनककशिपुके मण्डन ॥ पहिरि लेहु तुम सुत दुखखण्डन ॥५॥ ❀
लाग उठावन उठा न सोई ॥ याही पौरुषते जय होई ॥ ६ ॥ ❀

तब बलिने रावणसे कहा कि—हे दुःखभंजन पुत्र ! एकबेर तुम हिरण्यकशिपुके कुंडल तौ पहिन लो. फिर मैं तुम्हारे साथ चलूंगा ॥ ५ ॥ बलिके बचन सुनकर रावण वह कुंडल उठाने लगा पर किसीतरह नहीं उठा सका; तब बलिने कहा कि—हे तात ! क्या इसी पुरुषार्थसे जय होगा ? ॥ ६ ॥

जिन ये भूषण अंगन धारे ॥ ते भट गे इक क्षणमा मारे ॥ ७ ॥ ❀
तेहिते भवन जाहु लै प्राना ॥ चला तुरत मनमाहि लजाना ॥ ८ ॥ ❀

हे पुत्र ! जो गहने तुमसे उठते नहीं हैं वे गहने जिन्होंने शरीरपर धारण किये थे वे भट एक क्षणके भीतर मारे गये ॥ ७ ॥ इसलिये हे पुत्र ! तुम जी लेकर यहांसे जल्दी भाग जाओ नहीं तौ मारे जाओगे. यह वचन सुनकर रावण मनमें लज्जित होकर वहांसे चला ॥ ८ ॥

वामन रावण आवत जाना ॥ किये देवऋषिसन अपमाना ॥ ९ ॥ ❀
खेलत रहे नगर शिशुनाना ॥ निजबल तिनहिँ दीन्ह भगवाना ॥ १० ॥ ❀

वामन भगवान्‌ने रावणको आता देखा और जाना कि नारदजीका अपमान किया था, इसलिये इसका पीछा अपमान करना चाहिये ॥ ९ ॥ ऐसा विचारके प्रभुने नगरके अनेक बालक कि जो अपनी खुशीसे खेल रहे थे उनको अपनी सामर्थ्य दी ॥ १० ॥

धाइ धरा तिन पुर लै आये ॥ नगर नारि नर देखन धाये ॥ ११ ॥ ❀
बीसबाहु दशकंधर भाई ॥ बिधि यह गढ़नि कहांकी आई ॥ १२ ॥ ❀

तब उनमेंसे दौड़कर एक बालकने रावणको पकड़ लिया. फिर वे उसको अपने नगरमें ले आये तब नगरके तमाम नर नारी उसे देखने दौड़े ॥ ११ ॥ इसके दश शिर और बीस भुजा देखके सब लोग कहने लगे कि—हे भाइयो ! हे विधाता ! यह अद्भुत रचना कहांसे आई ? ॥ १२ ॥

राखिनि बाँधि खिझावहिँ भारी ॥ नाम न कहै सहै बरु मारी ॥ १३ ॥ ❀
मारत लात जात गरिआवत ॥ निजनिजद्वारे फिरैं देखावत ॥ १४ ॥ ❀

ऐसे कह अचंभित होकर उन्होंने उसे बांधकर वहां रख लिया. उन्होंने उसको बहुत कुछ सिखाया पर उसने अपना नाम बिलकुल नहीं बतलाया. उन्होंने नाम पूंछनेके वास्ते पीटा तौ मारभी सह ली पर नाम तौ बिलकुल नहीं बतलाया ॥ १३ ॥ हरेक आदमी गलीमें आता जाता गालियां देता लात मारता है और सब लोग उसे बंदरकी भांति पकड़कर अपने २ दरवाजे ले जाकर दिखाते फिरते है कि, यह अजब जानवर कहांसे आया ? ॥ १४ ॥

वामन दीख बहुत सकुचाना ॥ तब छुड़ाइ दिय कृपानिधाना ॥ १५ ॥ ❀
चला तुरन्त निशाचरनाहा ॥ लाज शंक कछु नाहिँ मनमाहा ॥ १६ ॥ ❀

फिर वामन भगवान्‌को देखकर तौ वह मनमें बहुतही सकुचाना. तब कृपानिधान प्रभुने उसे कृपा करके उनसे छुड़ा दिया ॥ १५ ॥ उनके बंधनसे छूटतेही वह राक्षसराज बड़ी जल्दीसे चला पर उसके मनमें लाज और शंकाका लेशभी नहीं था ॥ १६ ॥

दोहा—अति निर्लज्ज दयारहित, हिंसापर अतिप्रीति ॥ ❀
रामबिमुख दशकन्ध शठ, तापर चाहत जीति ॥ ४ ॥ ❀
भरद्वाज सुनु जाहि जब, होइ बिधाता बाम ॥ ❀
मणिहुँ काच होइ जाइ तब, लहै न कौडी दाम ॥ ५ ॥ ❀

वह दशकंधर रावण बड़ा निर्लज्ज, दयाहीन, अत्यंतही सिंसारत और रामचन्द्रजीसे विमुख था तिसपरभी वह शठ विजय करना चाहता था; सो यह कब हो सक्ता है ? ॥ ४ ॥ याज्ञवल्क्य मुनि कहते है कि—हे भरद्वाज ! सुनो, विधाता जब जिससे प्रतिकूल हो जाता है तब उसके पासकी मणिभी काच हो जाती है. उसका दाम एक छदामकी कौड़ीभी नहीं मिल सक्ती. तात्पर्य यह है कि—रावणने बहुत कुछ तपस्या की थी परंतु वामन भगवान्‌की बेमर्जी हुई तब उसकी तपस्या वहां कुछ काम न आयी ॥ ५ ॥

जहँ कहुँ फिरत देव द्विज पावै ॥ दण्ड लेइ बहुत्रास दिखावै ॥ १ ॥ ❀
इहि आचरण फिरै दिन राती ॥ महामलिन मन खल उतपाती ॥ २ ॥ ❀

इधर उधर फिरताहुआ रावण जहां कहीं देवता और ब्राह्मणको पाता तब उससे दंड लेकर उसे बड़ी त्रास दिखाता है ॥ १ ॥ इसतरहका आचरण करता हुआ वह महापापी, मलिन मन, खल, उत्पाती, रावण रात दिन फिरा करता था ॥ २ ॥

बहुरि तुरत पम्पापुर आवा ॥ बालि नाम कपिपति जेहिँ ठावा ॥ ३ ॥ ❀
अवलोकेसि यक सरवर शोभा ॥ जिहिँ मन महा मुनिन्ह कर लोभा ॥४॥

फिर वह रावण घूमता २ तुरंत पंपा सरोवरके पास किष्किंधा नाम नगरीमें आया कि, जहां वानरोंका राजा वालि नाम वानर रहता था ॥ ३ ॥ उसने यहां आके उस सरोवरकी शोभा देखी कि, जिसकी शोभाको देखकर मुनि लोगोंके मन लुभायमान होते थे ॥ ४ ॥

तहां कपीश करै निजध्याना ॥ दशकन्धरहिँ देखि मुसुकाना ॥ ५ ॥ ❀
जाइ ठाढ़ भा तहँ रजनीशा ॥ ठोंकि बाहु गर्जत भुज बीशा ॥ ६ ॥ ❀

वहां बैठा हुआ वानरोंका राजा वालि अपना ध्यान कर रहा था तहां रावण चला आया

तिसे देखकर वह मनमें हँसा; पर ध्यान करता था इसवास्ते कुछ न बोला ॥ ५ ॥ तब रावण वहां जा खड़ा हुआ. अपनी बीसों भुजा ठोंककर गरजना करने लगा ॥ ६ ॥

तब कपीश चितवा मुसकाई ॥ ध्यान कि अवसर रिस बिसराई ॥ ७ ॥ ❁
तब रावण बोला करि क्रोधा ॥ बकध्यानी कपि शठ बिन बोधा ॥ ८ ॥ ❁
नाम तोर सुनि आयउँ धाई ॥ दे कपि युद्ध छाँड़ि कदराई ॥ ९ ॥ ❁

तब वालिने हँसकर उसकी ओर देखा पर ध्यानका समय था इसलिये उसने उसवक्त गुस्सा नहीं किया ॥ ७ ॥ तब रावणने क्रोध करके कहा कि—हे बककी भांति ध्यान करनेवाले अज्ञानी शठ बन्दर ! ॥ ८ ॥ मैं तेरा नाम सुनकर दौड़कर आया हूं सो हे कपि ! तू कायरपना छोड़कर मुझे युद्ध दे ॥ ९ ॥

दोहा—मोहिँ जीते बिनु समर सुनु, वृथा ध्यान तव कीश ॥ ❁
कटकटाइ कह रजनिचर, रदन तीनसै बीश ॥ ६ ॥

रावणने अपने तीन सौ बीस दांत कटकटायके वालिसे कहा कि—हे वानर ! सुन. मुझको संग्राममें जीते विना तेरा ध्यान वृथा है ॥ ६ ॥

रहु अंजुलि मैं देहुँ सप्रीती ॥ ठाढ़ होउ जायहु मुहिँ जीती ॥ १ ॥ ❁
तब निशिचरपति उठा रिसाई ॥ दे कपि युद्ध छांड़ि कदराई ॥ २ ॥ ❁

रावणके ऐसे कठोर वचन सुनकर वालिने कहा कि—हे रावण ! ठहर. मैं अभी प्रीतिके साथ अंजलि दे लेता हूं, इतनी देर तू खड़ा रह. फिर मुझको जीतके जाना ॥ १ ॥ तब रावण क्रोधमें होकर उठा और बोला कि—हे कपि ! मैंने जो कहा सो सुनता नहीं कि, कायरपन छोड़कर मुझे युद्ध दे ॥ २ ॥

तबहिँ कीशपति मनहिँ बिचारा ॥ शिव बल दीन्ह मरै नहिँ मारा ॥ ३ ॥
बालि कहा हठि करिय न रारी ॥ दशकन्धर घर जाहु बिचारी ॥ ४ ॥ ❁

तब वालिने मनमें विचार किया कि, इसको महादेवने बल दिया है इसलिये यह मारनेसे तो मरेगा नहीं इसीलये इसको समझाकर निकाल देना चाहिये ॥ ३ ॥ ऐसा विचारके वालिने कहा कि—हे रावण ! तुम नाहक हठ करके हमसे युद्ध क्यों करते हो ? विचार करके अपने घर क्यों नहीं चले जाते ? ॥ ४ ॥

बल तुम्हार ऐसोइ है भाई ॥ अजय चारि दिशि मैं सुनि पाई ॥ ५ ॥ ❁
इहिबिधि बालि बहुत समुझावा ॥ कवनिहुँ भांति बोध नहिँ आवा ॥ ६ ॥ ❁

हे भाई ! तुम्हारा बल ऐसाही है. मैंने सुन लिया कि, आपने चारों दिशाओंमें बिजय कर लिया है. तुम कहीं हारे नहीं हो ॥ ५ ॥ इसतरह वालिने उसको बहुत समझाया पर किसीतरह उसके मनमें प्रबोध नहीं हुआ ॥ ६ ॥

तब सकोप उठि झपटि कपीशा ॥ दृढ़ गहि कांख चापि दशशीशा ॥ ७ ॥ ❁
अंजुलि दीन रविहिँ मन बानी ॥ अँचई सप्त उदधि कर पानी ॥ ८ ॥ ❁

तब वालिने क्रोधके साथ उठ, झटझपट कर मजबूत पकड़कर रावणको कांखमें दबा लिया ॥ ७ ॥ फिर मन और वाणीसे उसने सूर्यको अर्घ दिया. और सातों समुद्रके जलसे आचमन किया ॥ ८ ॥

जपा आदिशंकर मन बानी ॥ तिहिँ क्षण संध्या बंदि सिरानी ॥ ९ ॥ ❋
बालिहिँ बिसरि गई सुधि तासू ॥ यहिबिधि बिगत भये षट मासू ॥ १० ॥ ❋

फिर वह मन व वाणीसे आदिकारण श्रीशिवजीका जप करने लगा. उसवक्त संध्या वंदन तौ होही चुका था ॥ ९ ॥ वालि जप करनेको बैठा उसवक्त वह उस बातको बिलकुल भूल गया था कि, मेरी कांखमें रावण दबा हुआ है सो कोई छः महीने निकल गये ॥ १० ॥

ते कलेशवश करै उपाई ॥ तहँ न चलै कछु आतुरताई ॥ ११ ॥ ❋
बहु प्रस्वेद कखरिमहँ जामा ॥ अती कुवास तहाँ भइ धामा ॥ १२ ॥ ❋

पर रावणका कुछ वश न चला, कि वह कांखसे छूट जावे. रावण कांखके अंदर दबा हुआ क्लेशवश होकर कुछ उपाय करताही रहा पर वहां उसकी आतुरता बिलकुल नहीं चली ॥ ११ ॥ बहुत समय बीत जानेसे कांखके भीतर बहुत पसीना जम गया, तिससे उस जगह बड़ी भारी दुर्गंध बढ़ गई ॥ १२ ॥

कलमलाइ रिस दसननि काटा ॥ कचकर जीव मनहुँ भ्रम चाटा ॥ १३ ॥ ❋
एक दिवस रबिअंजुलि साजा ॥ काँखते निसरि दशानन भाजा ॥ १४ ॥ ❋

उस दुर्गंधके भीतर पड़ा हुआ वह रावण कलमलाके क्रोध करके दांतोंसे कांखमें काटा; तब वालिको मानों ऐसा भ्रम हुआ कि, शायद बगलके केशके कीड़ेने तौ नहीं काटा है ? ॥ १३ ॥ एक दिन वालिने सूर्यको हाथ जोड़कर अंजलि दी तब हाथ पसारनेसे कांखमेंसे निकल कर रावण भागा ॥ १४ ॥

तब पुनि धरि कपीश सो बाँधा ॥ ले आयो अंगदके राँधा ॥ १५ ॥ ❋
बीश भुजा दश शीश सुधारा ॥ चरण दोउ धरि पुनि उर पारा ॥ १६ ॥ ❋

तब वालिने उसको पकड़कर फिर बांध लिया और लिये २ अंगदके पास लाकर छोड़ दिया ॥ १५ ॥ सुन्दर बीस भुजा, दश शिर और दो पांववाले रावणको देखकर अंगदने उसके दोनों पैर पकड़के फिर उसको उलटा लटका लिया ॥ १६ ॥

थरि समेट झूमरि सम कीन्हा ॥ बाँधि शेजपर शोभा दीन्हा ॥ १७ ॥ ❋
अंगद खेलि लात शिर मारा ॥ किलकिलाइ किलके किलकारा ॥ १८ ॥ ❋

उसको पकड़ समेटकर झूमरीके जैसा बनाकर अपने पलंगके पायेमें बांध दिया. तहां वह रावण ऐसी भारी शोभा देता था कि, जिसको कुछ कह नहीं सकते ॥ १७ ॥ अंगदने खेलते २ रावणके शिरमें लात मारी जिससे वह किलकिलाके जोरसे किलकारा ॥ १८ ॥

दोहा– तारा चीन्हा रावणहिँ, तेहिँ क्षण दीन छोंड़ाइ ॥ ❋
जाहु तुरत लंकेश गृह, बहुरि धरहिँ कपिराइ ॥ ७ ॥ ❋

ताराने जब रावणको पलंगके पायेमें बंधा देखा तौ उसने उसी क्षण उसको छुड़ा दिया और कहा कि–हे लंकेश ! तुम यहांसे जल्दी अपने घरको चले जाओ नहीं तौ वालि आपको फिर पकड़ लेगा ॥ ७ ॥

पुनि रावण आवा तिहिँ ठावा ॥ सहसबाहु जहँ रास बनावा ॥ १ ॥ ❋
जलक्रीड़ा जु कराहिँ सब नारी ॥ बिबिधभांति शोभा अति भारी ॥ २ ॥ ❋

फिर रावण वहां आया जहां सहस्रबाहु (कार्तवीर्य) अपनी रानियोंके साथ क्रीड़ा कर रहा था ॥ १ ॥ वहां सब स्त्रियां राजाके साथ अनेक प्रकारसे जलक्रीड़ा कर रही थीं जिसकी छबि बड़ी भारी अनेकप्रकारकी दीख पड़ती थी ॥ २ ॥

आवा रासमँडल जहँ रेवा ॥ सुर नर नाग करहिँ सब सेवा ॥ ३ ॥ ❋
जाइ दीख रावण सुख नाना ॥ हर्ष समेत हृदय सुख माना ॥ ४ ॥ ❋

यह सहस्रार्जुनका रासमंडल नर्मदा नदीके तीरपर बनाहुआ था वहां आया, जहां देवता मनुष्य और नाग सब सेवा करते थे ॥ ३ ॥ वहां जाकर रावणने अनेक प्रकारके सुख देखे और उनको देखकर बड़ी खुशीके साथ उसने अपने मनमें बड़ा आनंद माना ॥ ४ ॥

तहँ लंकेश जाइ शिव देखा ॥ मनहुँ बिरचि रचे बहु रेखा ॥ ५ ॥ ❋
तुलसी कमलपत्र सब आना ॥ बिल्वपत्र अरु पुष्प प्रमाना ॥ ६ ॥ ❋

वहां जाकर रावणने शिवजीके दर्शन किये, जो शिवजीका स्वरूप मानों खुद विधातानेही बड़ी चतुराईसे बनाया है ॥ ५ ॥ महादेवजीकी पूजा करनेके लिये रावणने तुलसीपत्र, कमल, बिल्वपत्र और दूसरी किस्मके कई फूल और दल बटोरके इकट्ठे किये ॥ ६ ॥

जाके जल क्षोभेउ दशशीशा ॥ पढ़ै मंत्र सुमिरै गौरीशा ॥ ७ ॥ ❋
निलज अशंक आव पुनि तहँवां ॥ कर भुजकेलि सहसभुज जहँवां ॥ ८ ॥ ❋

फिर रावणने जाकर नर्मदाका जल क्षोभित किया यानी उसमें उसने स्नान किया. फिर मंत्र पढ़ पढ़कर महादेवजीकी पूजा करके शिवजीका स्मरण किया ॥ ७ ॥ तदनंतर वह निर्लज्ज और निःशंक रावण वहां आया कि, जहां सहस्रार्जुन हजार हाथोंसे क्रीड़ा कर रहा था ॥ ८ ॥

दोहा–क्षोभेउ जल भुजबीस बल, बूड़न लगी समाज ॥ ❋
सहसबाहु अति क्रोध मन, मोहिँ समान को आज ॥ ८ ॥ ❋

रावणने अपने बीस हाथोंसे जलको क्षोभित किया जिससे सहस्रार्जुनका समाज बूड़ने लगा. तब सहस्रार्जुनने बड़ा क्रोध किया और कहा कि, आज यह जगतमें मेरे जैसा बली दूसरा कौन है ? ॥ ८ ॥

जाइ दीख तहँ रावण ठाढ़ा ॥ जासु बिपुल भुजबल जल बाढ़ा ॥ १ ॥ ❋
मायाप्रबल महाबल भारी ॥ लंकेश्वरकहँ धरिसि प्रचारी ॥ २ ॥ ❋

इतनेमें जिसकी बिपुल भुजाके बलसे नर्मदाका नीर बढ़ा था वह रावण वहां जा खड़ा हुआ ॥ १ ॥ महाबली और मायावी रावणको देखकर सहस्रार्जुनने ललकार कर झटझपट कर उसे पकड़ लिया ॥ २ ॥

निरखि तियन आचरज बिशाला ॥ बाँधिराखि कछु दिन हयशाला ॥ ३ ॥ ❋
लज्जित दुष्ट भ्रष्ट करि रहई ॥ रिसि उर मारि कष्ट बहु सहई ॥ ४ ॥ ❋

सहस्रार्जुनकी रानियोंने उस अनोखे अद्भुत स्वरूपको देखकर मनमें बड़ा आश्चर्य किया और अचरजके वास्ते सहस्रार्जुनने कुछ दिन उसको घुड़शालमें बांध रक्खा ॥ ३ ॥ तब वहां तो वह

हुए लज्जित होनेसे चुप मनाके पड़ा रहा. रिसको मनही मनमें मारकर वहां बहुत कुछ दुःख-भी सहता रहा ॥ ४ ॥

सकल आइ देखहिं नर नारी ॥ मारहिं लात हँसैं दै गारी ॥ ५ ॥ ❋
नाम न कहै रहै सकुचाना ॥ बहु विधि पूंछे नृपति सुजाना ॥ ६ ॥ ❋

जब रावण घुड़शालके भीतर बंधा पड़ा था तब नगरके सब नरनारी आ आकर उसे देखते थे और लात मार गाली देदेकर हँसते थे ॥ ५ ॥ वहां जितनी कठिनता पड़ी वह सब उसने सही; पर अपना नाम किसी तरहसे नहीं कहा. यद्यपि उस सुजान राजा सहस्रार्जुनने उससे अनेक प्रकारसे पूंछा पर उसने संकोचके मारे अपना नाम बिलकुल नहीं बतलाया और संकोचके साथ रहने लगा ॥ ६ ॥

नृत्य करैं रंभादिक नारी ॥ दशहुँ माथ दश दीपक बारी ॥ ७ ॥ ❋
मुनि पुलस्त्य तब जाइ छुडावा ॥ पुनि नलशाप आय तिहिँ पावा ॥८॥ ❋

वहां रावणकी यह दशा हुई कि,रंभादिक अप्सरा उसके दशों शिरोंपर दश दीपक जलाकर हमेशा नाच करतीं थीं ॥ ७ ॥ ऐसे कुछ दिन बीत गये तब पुलस्त्य मुनिने जाकर वहांसे छुड़ाया. फिर रावणने आकर नलकूबरसे शाप पाया ॥ ८ ॥

(क्षेपक) लज्जित ह्वै कुलगुरुढिग गयऊ ॥ निजवृत्तान्त सुनावत भयऊ ॥१॥ ❋
कह कबि नर हरि दियेउ बराई॥ तेहिते तुम बर बिजय न पाई॥२॥ ❋

रावण महा लज्जित होकर अपने कुलगुरुके पास गया. वहां जाकर उसने अपना सारा वृत्तान्त गुरुको सुनाया ॥ १ ॥ रावणका हाल सुनकर शुक्राचार्यजीने कहा कि–हे रावण ! तूने ब्रह्माजीसे वर-दान मांगनेके समय नर बानर दो जातिको बराइ दिया यानी छोड़ दिया जिससे बरदान पानेपरभी उससे बिजय नहीं पाया है ॥ २ ॥

तासु शोच चित धरहु न ताता ॥ मैं जो कहौं करहु सो बाता ॥ ३ ॥ ❋
अब तुम निजउर शिवपद धरहू ॥ जप तप जाल भालमख करहू ॥ ४ ॥ ❋

सो हे तात ! तुम इस बातको मनमें शोच मत रक्खो. मैं तुमसे जो बात कहता हूं वो तुम करो ॥ ३ ॥ अब तुम महादेवजीके चरणकमलोंको अपने हृदयमें रक्खो. अब तुम जप तपको छोड़कर अपने मस्तकोंका यज्ञ करो ॥ ४ ॥

अभिमत बर शंकरसे लीजै ॥ बिश्व सुबश करि पुनि सुख कीजै ॥ ५ ॥ ❋
सुनि तुरतै गा सिन्धुसमीपा ॥ लाग करन तप दनुजमहीपा ॥ ६ ॥ ❋

मस्तकयज्ञ करके महादेवसे मनवांछित बर पाकर तुम सारे संसारको फिर अपने आधीन करके संसारको सुख करो ॥ ५ ॥ शुक्राचार्यजीके बचन सुनकर वह राक्षसराज तुरंत समुद्रके समीप जाकर महाघोर तपस्या करने लगा ॥ ६ ॥

बीस सहस्र बर्ष तप कीन्हा ॥ भालयज्ञमें पुनि मन दीन्हा ॥ ७ ॥ ❋
बर्ष पांच शत निजकर नीचा ॥ हुने शीश पावकके बीचा ॥ ८ ॥ ❋

बीस २०००० हजार वर्षतक अखंड तपस्या करके फिर उसने मस्तकयज्ञका विचार किया ॥ ७ ॥ उस नीचने पांच सौ बर्षतक अग्निके अंदर अपने हाथसे अपने शिर होमे ॥ ८ ॥

यहिबिधि मखकृत देखि पुरारी ॥ कहेसि मांगुवर रुचि अनुहारी ॥ ९ ॥ ❋
सुनि बाणी बोला दशभाला ॥ अजर अमर मोहिँ करहु कृपाला ॥ १० ॥ ❋

रावणको ऐसे यज्ञ किये देखकर महादेवजीने उससे कहा कि—हे रावण ! जो तेरी इच्छा हो वही वर मांग ॥ ९ ॥ महादेवजीकी मधुर बाणी सुनकर रावण बोला कि—हे दयालु प्रभु ! मुझे कृपा करके अजर और अमर करो ॥ १० ॥

कह शंकर सुनु बचन हमारे ॥ बिधिके अंक टरहिँ नहिँ टारे ॥ ११ ॥ ❋
तेहिते तप कीन्ह्यो जो भारी ॥ तव तन बल होई अधिकारी ॥ १२ ॥ ❋

तब महादेवजीने कहा कि—हे रावण ! हमारे वचन सुनो. यह बात निश्चय है कि विधाताके अंक टारनेपरभी नहीं टरते ॥ ११ ॥ हे रावण ! तूने जो महाघोर तपस्या करी इससे तेरा शरीर महाबली होगा ॥ १२ ॥

शीश समर्पि दियो तुम मोही ॥ एकते कोटि दीन्ह मैं तोहीं ॥ १३ ॥ ❋
शिव बर अचल पाइ मन भावा ॥ हर्षसहित निज मन्दिर आवा ॥ १४ ॥ ❋

और तूने शिर काटके मेरे अर्पण कर दिया इससे मैंने तुझको एक शिरकी एवजमें एक करोड़ शिर दिये ॥ १३ ॥ इसतरह शिवजीका मन भावता अचल बर पाकरके वह राक्षसराज आनंदके साथ अपने घर लौट आया ॥ १४ ॥

दोहा—मारग जात दीख अति, अनुपम सुन्दरि नारि ॥ ❋
चन्दन पुष्प पत्र कर, पूजन चलि त्रिपुरारी ॥ ९ ॥ ❋

एक समय मारगमें जाते रावणने एक बहुत सुन्दर अनुपम स्त्री देखी. जो महादेवकी पूजा करनेको हाथमें चंदन पुष्प व पत्र लिये जा रही थी ॥ ९ ॥

देखि उर्बशी मन सकुचानी ॥ तब रावण बोला मृदु बानी ॥ १ ॥ ❋
को तुम नारि गमन कहँ कीन्हा ॥ लज्जावश तिहि उतर न दीन्हा ॥ २ ॥ ❋

रावणको देखकर उर्वशी मनमें बड़ी सकुचायी. तिसे देखकर रावण मधुर बाणीसे बोला कि— ॥ ॥ १ ॥ हे सुन्दरी ! तू कौन है ? और कहां गयी थी ? रावणके पूछनेपरभी उसने लाजके मारे पीछा उत्तर नहीं दिया ॥ २ ॥

मन मदमत्त बिचार न करेऊ ॥ धनपतिपुत्रबधूकर धरेऊ ॥ ३ ॥ ❋
चीन्हि ताहि पुनि शंका आई ॥ घाटि कर्म कीन्ही पछिताई ॥ ४ ॥ ❋

तब उस मदोन्मत्त मनवाले रावणने कुछभी विचार न करके कुबेरके पुत्र (नलकूबर) की वहूका हाथ पकड़ा; यद्यपि उर्वशी अप्सरा है इस लिये वो नलकूबरकी वहू नहीं हो सकती; क्योंकि अप्सरा सर्वसाधारण स्त्री हैं तथापि उस दिन नलकूबरके लिये नियत हो जानेसे वह उसकी वहू मानी गयी. कारण देवलोककी अप्सराओंका यह नियमही है कि जिस दिन जिसके लिये शृंगार किया उस दिन वही उसका पति हुवा इससे उसको पति मान पतिव्रताके धर्मसे मानती हैं ॥ ३ ॥ उसे पहिंचानकर रावणके मनमें बड़ी शंका हुई और तुच्छ काम करनेसे वह मनमें बहुत पछताया ॥ ४ ॥

मन पछिताय शोच उर भयऊ ॥ लंकेश्वर लंकाकहँ गयऊ ॥ ५ ॥ ❋
बिकल उर्बशी अलकहिँ आई ॥ नलकूबरसन बात जनाई ॥ ६ ॥ ❋

रावण मनमें पछता कर हृदयमें बड़ा शोच करता हुआ फिर लंकाको सिधारा ॥ ५ ॥ उर्वशीने घबराकर अलकापुरीमें आकर वहांके सारे समाचार नलकूबरसे कहे ॥ ६ ॥

दीन्ह शाप तिन क्रोध अपारा ॥ रावणबंश होइ क्षयकारा ॥ ७ ॥ ❋
चली शाप लंकाकहँ आई ॥ दशकन्धर बैठा जिहिँ ठाई ॥ ८ ॥ ❋

तब उसने भारी क्रोध करके रावणको शाप दिया कि–' रावणके कुलका नाश हो जाओ' ॥ ७ ॥ नलकूबरका दिया हुआ शाप चला चला रावणके पास लंकामें आया. जहां वह आनंदपूर्वक बैठा था ॥ ८ ॥

आगे आइ ठाढ़ि भइ शापा ॥ निरखि दशानन अति भय काँपा ॥ ९ ॥ ❋

वह शाप रावणके आगे आकर खड़ा हुआ तिसे देखकर रावण भयभीत होकर थरथर कांपने लगा ॥ ९ ॥

दोहा–शापहिँ अंगीकार करि, मनमहँ कीन्ह बिचार ॥ ❋
दण्ड ऋषिनसे लीन्ह नहिँ ,रोषेउ लंकभुआर ॥ १० ॥ ❋

शापको अंगीकार करके रावणने मनमें विचार किया कि, मैंने अबतक ऋषियोंसे दंड नहीं लिया है सो अवश्य लेना चाहिये ऐसा विचार कर रावणने ऋषियोंपर बड़ा क्रोध किया ॥ १० ॥

दूत चारि पठये ऋषिआश्रम ॥ निरखि बिसरि गे मुनि अधिआतम ॥१॥
तिनसन तब पूछहिँ मुनि हाला ॥ कहहु कुशल लंकेशभुआला ॥ २ ॥ ❋

और ऋषियोंके आश्रमोंमें चार दूत भेजे तिन्हें देखकर मुनिलोग ब्रह्मज्ञान भूल गये ॥ १ ॥ उन दूतोंसे मुनिलोगोंने वहांका हाल पूंछा और कहा कि– कहो, राजा रावण प्रसन्न तो है ? ॥ २ ॥

कुशल तासु यह सुनहु मुनीशा ॥ कर तुमसन चाहत दशशीशा ॥ ३ ॥ ❋
सुनि सो बचन महाभय पाई ॥ करहिँ बिचार बिरति बिसराई ॥ ४ ॥ ❋

तब दूतोंने ऋषियोंसे कहा कि–हे मुनिराजो ! उसका कुशल तो यह है सो आप सुनो. रावण आप लोगोंसे दंड लेना चाहता है ॥ ३ ॥ दूतोंके ये बचन सुनकर मुनिलोग मनमें बड़े भयभीत हुए और बैराग्य भूलकर विचार करने लगे कि– ॥ ४ ॥

जेहि दरबार नीति नहिं भाई ॥ खलमण्डली जुरी तहँ आई ॥ ५ ॥ ❋
कछु बिन दिये नहीं गति आछी ॥ घट भरि रुधिर दिये तन पाछी ॥ ६ ॥

हे भाइयो ! जिस दरबारमें नीतिका नाम नहीं है और जहां आकर दुष्टोंकी चंडाल चौकड़ी जुड़ी है ॥ ५ ॥ सो यहां कुछभी दिये बिना तो छुटकारा नहीं होगा और अच्छी गति होनी नहीं है इसलिये आपन अपने शरीरको छूरेसे कांछकर उस रुधिरसे घड़ा भरके दे देओ ॥ ६ ॥

दूतन्ह सौंपि कहा मुनि ज्ञानी ॥ भूपहिँ कहेउ जाइ यह बानी ॥ ७ ॥ ❋

ऐसा विचार कर वैसाही कर अपने रुधिरसे घट भरकर महाज्ञानी मुनियोंने वह घट दूतोंको सौंप दिया और मुनिलोगोंने दूतोंसे कहा कि—तुम जाकर राजाको यह समाचार कह देना ॥ ७ ॥

दोहा—घट उघरत क्षय होइहहु, सहित सकल परिवार ॥ ❀
दूत तुरत घट ले गये, लंकापति दरबार ॥ ११ ॥ ❀

कि—हे रावण ! जो तू इस घड़ेको खोलेगा तो तेरे कुटुंबके साथ तेरा नाश हो जायगा. ये बचन सुनकर दूत तुरंत उस घड़ेको ले रावणके दरबारमें चले गये ॥ ११ ॥

रावण घट लखि परम हुलासा ॥ तब दूतन मुनिबचन प्रकासा ॥ १ ॥ ❀
सुनि मुनिशाप उपज उर दाहू ॥ बोला घट लै उत्तर जाहू ॥ २ ॥ ❀

रावण घड़ेको देखकर मनमें बड़ा प्रसन्न हुआ तब दूतोंने मुनिलोगोंके पिछले सब समाचार कहे ॥ १ ॥ मुनिलोगोंका शाप सुनकर, रावणके मनमें बड़ा संताप हुआ. फिर विचारके रावणने कहा कि—तुम इस घड़ेको लेके उत्तरमें चले जाओ ॥ २ ॥

यत्नसमेत धरणि धरि एहू ॥ जानि न पाव बात यह केहू ॥ ३ ॥ ❀
लै घट जनक नगरते गये ॥ गाड़त क्षेत्रमध्य तहँ भये ॥ ४ ॥ ❀

तहां बड़े यत्नके साथ इसको पृथ्वीपर रखकर चले जाओ; पर इस बातकी किसीको खबर न पड़नी चाहिये ॥ ३ ॥ वे दूत मुनिलोगोंके रुधिरसे भरा हुआ घड़ा लेकर जनक राजाके नगरमें आये. वहां आकर एक खेतके बीचमें वह घड़ा गाड़ दिया ॥ ४ ॥

शम्भुसभा श्रुतिवादमँझारा ॥ प्रथमैं रहा जनकते हारा ॥ ५ ॥ ❀
तेहि गसते तहँ कुंभ पठावा ॥ दूत गाड़ि मिथिलापुर आवा ॥ ६ ॥ ❀

महादेवजीकी सभामें एक समय वेदविषयमें विवाद हुआ था उस विवादमें यह रावण जनकसे प्रथम हार गया था ॥ ५ ॥ वह गस रखकर रावणने वह घड़ा वहां भेजा. दूत वहां जाकर घड़ा गाड़कर मिथिलापुरी पीछे चले आये ॥ ६ ॥

याज्ञवल्क्य पुनि कह मुनिपाहीं ॥ अवर कथा सुनहु चितमाहीं ॥ ७ ॥ ❀
जबते दूत रुधिरघट धरेऊ ॥ तबते काल अचानक परेऊ ॥ ८ ॥ ❀

याज्ञवल्क्यमुनि भरद्वाजसे कहते है कि—हे मुनि ! अब मैं दूसरी कथा कहता हूं सो मन लगाके सुनो ॥ ७ ॥ जबसे दूत जनकपुरीमें रुधिरका घड़ा धर आये तबसे वहां अचानक काल पड़ा ॥ ८ ॥

सर सरिता नद सूखन लागे ॥ पशु पक्षी व्याकुल व्है भागे ॥ ९ ॥ ❀
अनजलरहित प्रजा अस कहहीं ॥ दैवाधीन जगत गति अहहीं ॥ १० ॥ ❀

नदियां, तालाव और नद सब सूख गये और पशु व पक्षी सब घबराकर भाग गये ॥ ९ ॥ अन्नजलरहित सारी प्रजा ऐसे कहने लगी कि, जगतकी गति अब तो बिलकुल दैवाधीन है, अर्थात् जो परमेश्वर बचावेगा तो प्रजा बचेगी नहीं तो अब कोई बचनेकी सूरत नहीं है ॥ १० ॥

शोचहिँ एक एकके पाहीं ॥ काहु घड़ी पल गुदरत नाहीं ॥ ११ ॥ ❀
कछु हम कीन्ह पापकी करणी ॥ दैव न बर्ष बुंद इक धरणी ॥ १२ ॥ ❀

सब लोग आपसमें एक एकके पास शोच करते है और कहते है कि, अब तो किसीका घड़ी और पलभी गुजारा नहीं होगा ॥ ११ ॥ प्रजाके लोग आपसमें कहते है कि—आपनने कोई महापाप किया है जिससे पृथ्वीपर विधातानि पानीकी एक बूंदभी नहीं बरसायी ॥ १२ ॥

मात तात अबला सुत छीजे ॥ रे रे दैव कहो कह कीजे ॥ १३ ॥ ❀
कहाँ जाइँ हम करिय पुकारा ॥ तबहिँ उमा यक मंत्र विचारा ॥ १४ ॥ ❀
प्रजा पंच भूपतिपहँ आये ॥ धीरज दीन जनक समुझाये ॥ १५ ॥ ❀

माता, पिता, स्त्री और पुत्र सब दुख पाते है. अरे रे दैव ! कहो अब हम क्या करें ? ॥ १३ ॥ और किधर जांय ? अब हम किसके पास जाकर पुकारें ? ऐसे अतिशय विह्वल उन प्रजावोंने हे पार्वती! एक सलाह विचारी ॥ १४ ॥ सो प्रजामें जो अच्छे प्रतिष्ठित पंच आदमी थे वे राजा जनकके पास आये और उन्होंने राजासे सब हाल कहा तब राजा जनकने धीरज देकर उनको समझाया ॥ १५ ॥

दोहा– बचन सुना भूपति जनक, मुनिवर लिये बुलाय ॥ ❀
सुनहु विप्र वंदित सकल, कीजे कौन उपाय ॥ १२ ॥ ❀

प्रजाके वचन सुनकर राजा जनकने श्रेष्ठ मुनिलोगोंको बुलाया और राजाने प्रार्थना करी कि—हे सर्वपूज्य महाराज ! सुनिये. अब यहां क्या उपाय करना चाहिये ? ॥ १२ ॥

शतानंद तब कहहिँ बिचारी ॥ यज्ञ करहु नृप बर्षहिँ बारी ॥ १ ॥ ❀
जनक यज्ञरचना तहँ ठयऊ ॥ चामीकरहल कर्षत भयऊ ॥ २ ॥ ❀
प्रगट अवनिते ऋषयकुमारी ॥ कन्या कहि लीन्ही उरधारी ॥ ३ ॥ ❀

तब शतानंद (गौतम ऋषिका पुत्र जो जनकका पुरोहित था) उसने विचार कर राजासे कहा कि—हे राजन् ! आप यज्ञ करो; सो प्रभुने किया तो जल जरूर बरसेगा ॥ १ ॥ तब जनकने यज्ञकी तैयारी करी. सुवर्णका हल बनवाकर जमीनको शुद्ध करनेके लिये हल चलाया ॥ २ ॥ तहां पृथ्वीमेंसे एक ऋषिकन्या पैदा हुई. राजाने उस कन्याको अपनी बेटी बनाके छातीसे लगा ली ॥ ३ ॥

दोहा–सुनि नृप कीन्ही युक्ति सोइ, जोतत अजिरमँझार ॥ ❀
प्रगट्यो सिंहासन सुभग, अद्भुत तेज अपार ॥ १३ ॥ ❀
चार सखी चारों तरफ, लीन्हें मुरछल हाथ ॥ ❀
मध्य बिराजत भूमिजा, रूपराशि शुभ गाथ ॥ १४ ॥ ❀
वेदवती रिपुबधनहित, तजन होत महिअंश ॥ ❀
एकरूप व्है प्रगट भइ, आदिशक्ति निमिबंश ॥ १५ ॥ ❀

शतानंदने जो युक्ति बतलाई थी राजाने वोही उपाय किया. खेतमें सोनेका हल चलाया तहां एक परम अद्भुत सिंहासन प्रगट हुआ जो बड़ा तेजवान् और अत्यंतही सुन्दर था ॥ १३ ॥ उस सिंहासनके चारों तर्फ चार सखियां हाथोंमें मुरछल लिये खड़ी थीं और सिंहासनके बीच रूपराशि श्री धरणीकी कन्या सीता बिराज रही थी, जिनकी पवित्र कथा है ॥ १४ ॥ वेदवती नाम

ऋषिकन्या जो हिमालयमें तपस्या करती थी वही शत्रुको मरवानेके लिये अपना शरीर त्याग कर आदिशक्तिके साथ एक रूप हो करके पृथ्वीके अंशसे निमिराजाके वंशमें प्रगट हुई ॥ १५ ॥

देखि विदेह बिनय तब ठानी ॥ भई तुरत कन्या लघु जानी ॥ १ ॥ ❀
सखिनसहित सिंहासन सोई ॥ अन्तर्द्धान गयो तब होई ॥ २ ॥ ❀

जनक राजाने कन्या प्रगट हुई तिसे देखकर बड़ा बिनय किया तब वह कन्या राजाके देखते देखते तुरंत लघु यानी बालकरूप होगयी ॥ १ ॥ और सखियोंके साथ वह सिंहासन अंतर्धान हो गया ॥ २ ॥

रोदन सुनत सुनयना रानी ॥ लीन उठाय गोद सुख मानी ॥ ३ ॥ ❀
सुनि पुरजन सब भये सुखारी ॥ देखन उठि धाये नरनारी ॥ ४ ॥ ❀

सुनयना रानीने उस कन्याका रुदन सुनकर बड़े आनंदके साथ उसको गोदमें उठा लिया ॥ ३ ॥ यह बात सुनकर नगरके सब लोग बड़े प्रसन्न हुए और उस कन्याको देखनेके लिये नगरके सब नर-नारी उठ दौड़े ॥ ४ ॥

भूपति दान दीन बिधि नाना ॥ यथामनोरथ जाकर जाना ॥ ५ ॥ ❀
दिन दिन कन्या बर्द्धत कैसे ॥ शुक्लपक्षकर चन्दा जैसे ॥ ६ ॥ ❀

राजाने अनेक प्रकारके दान दिये. जिसका जो मनोरथ था उसका वह मनोरथ पूर्ण किया ॥ ५ ॥ हररोज वह कन्या कैसे बढ़ती है कि, जैसे शुक्लपक्षके चन्द्रमाकी कला बढ़ती है ॥ ६ ॥

छठी बारहों अन्नपरासन ॥ कीन नरेश निगम अनुशासन ॥ ७ ॥ ❀
नामकरणदिन नाम कढ़ावा ॥ बुधन जानकी नाम बतावा ॥ ८ ॥ ❀
नाम जानकी परम पुनीता ॥ नारद आइ कहा पुनि सीता ॥ ९ ॥ ❀

राजाने छठीका उत्सव, बारहवां और अन्नप्राशनका उत्सव वेदकी रीतिसे बड़ी धूम धामसे किया ॥ ७ ॥ नामकरणका मुहूर्त निकालकर विद्वानोंने उस दिन उसका जानकी[1] नाम रक्खा ॥ ८ ॥ दूसरे मुनिलोगोंने तो इसका परम पवित्र जानकी नाम रक्खा था; पर नारदजीने आकर फिर इसका नाम सीता[2] कहा ॥ ९ ॥

छंद–कहि पुनि सीता परम पुनीता आदि ज्योतिकी शक्ति सही ॥ ❀
नृप नीतिनिधाना परम सुजाना आदि मध्य अवसान नहीं ॥ ❀
भवउद्भवकरणी पालन हरणी नेति नेति यह बेद कहै ॥ ❀
तव कृत्य प्रकाशी भुजा बिलाशी तीनिलोकमहँ पूरि रहै ॥ १ ॥ ❀

नारदजीने राजा जनकसे कहा कि– महाराज ! यह सीता परम पावन है. यह साक्षात् ! ज्योतिःस्वरूप आदिनारायणकी शक्ति है. हे परम सुजान ! नीतिनिधान ! राजन् ! इसका न तो आदि है, न मध्य है और न अंत है. यही तो संसारको पैदा करती है, यही पालती है, और यही संहार

१ जानकी नाम रखनेका तात्पर्य यह था कि–जनकको बेटी. २ और सीता नाम रखनेका तात्पर्य यह था कि–हलके नीचेकी जो लोहेकी नोक होती है उसे सीता कहते हैं और यह कन्या उससे पैदा हुई इसवास्ते इसका नाम सीता रक्खाहै.

करती है. बेदभी इसका स्वरूप नेति नेति करके कहता है पर साक्षात् नहीं कह सकता. हे राजन् ! आपके कार्यको प्रकाशित करनेवाली और भुजबलको बढानेवाली यह कन्या अपनी शक्तिसे त्रिलोकीमें व्याप रही है ॥ १ ॥

दोहा-सकल कथा नृप जनकसों, नारद कही बखानि ॥ ❋
सकलसुलक्षणि लक्ष्मिगुण, जगदम्बा जिय जानि ॥ १६ ॥ ❋

नारदजीने पिछली सारी कथा वर्णन करके राजा जनकसे कही और कहा कि-हे राजन् ! यह आपकी कन्या सर्वसुलक्षणी जगत्जननी और गुणोंसे लक्ष्मीके जैसी होगी. यह आप अपने मनमें निश्चय करके जानो ॥ १६ ॥

जनक सविनय कहत कर जोरे ॥ नाथ मनोरथ पूजे मोरे ॥ १ ॥ ❋
चरण पखारि सुथल बैठारी ॥ विनय कीन अस्तुति बिस्तारी ॥ २ ॥ ❋

तब जनक राजाने हाथ जोड़के विनयके साथ कहा कि- हे नाथ ! आपकी कृपासे मेरे मनोरथ पूर्ण हुए ॥ १ ॥ राजाने नारदजीके चरण धोय, अच्छे आसनपर बिठाय, विनय करके अस्तुति करी ॥ २ ॥

परम हुलाश बचन शुभ भाखा ॥ चरणोदक ले माथे राखा ॥ ३ ॥ ❋
धन्य धन्य कहि सुताप्रभाऊ ॥ मुनि अस प्रीति कीन नहिँ काऊ ॥ ४ ॥ ❋

बड़े हुलाशके साथ राजाने बड़े अच्छे बचन कहे और उनके चरणोंका जल ले शिरपर चढ़ाया ॥ ॥ ३ ॥ अपनी बेटीका प्रभाव सुनकर राजाने अपने तईं धन्य धन्य करके कहा और बोला कि-हे मुनि ! ऐसी प्रीति तौ अपने किसीपै नहीं की है ॥ ४ ॥

जो तुम कृपा कीन पगुधारे ॥ मिटे अमंगल दोष हमारे ॥ ५ ॥ ❋
अब मुहिँ भा भरोस मुनिनाथा ॥ भयौं धन्य मैं गुणगण गाथा ॥ ६ ॥ ❋

हे प्रभु ! जो आप दया करके पधारे, इससे हमारे सारे दोष और अमंगल मिट गये हैं ॥ ५ ॥ हे मुनिराज ! अब मुझको पक्का भरोसा हुआ कि, मैं आज सच मुच बड़भागी हुआ हूं और मेरे गुणगण गानेके योग्य हुए है ॥ ६ ॥

साधु विदेहराज श्री जाकी ॥ उपमा और कहौं नृप काकी ॥ ७ ॥ ❋
तुम उपमा उपमेय और सब ॥ जहाँ प्रगट भइ कुजा आइ अब ॥ ८ ॥ ❋

राजा जनकके ऐसे प्रीतिके बचन सुनकर नारदजीने कहा कि-हे जनकराजा ! तू बड़ा बड़भागी है जिसके घर साक्षात लक्ष्मीजी आकर प्रगट हुई उसकी उपमा मै और दूसरे किस राजाकी कहूं ? ॥ ७ ॥ हे राजन् ! तुम्हारे घर आकर साक्षात् सीता प्रकटी सो अब तुमही तौ उपमान हो और तुमही उपमेय हो अर्थात् तुमको किसीकी उपमा दें सो ऐसा कोई हैही नहीं कि जिसकी उपमा देवें. (यहां अनन्वय अलंकार दिखाया है) ॥ ८ ॥

दोहा- योग भोगमें गोइ मन, कियो न प्रकट प्रभाव ॥ ❋
भये बिदेह बिदेह सुनि, मुनि पुनि कह्यउ सति भाव ॥ १७ ॥ ❋

हे विदेहराज ! सुनो. तुमने योग और भोग दोनोंमें मनको छुपा रक्खा है. आजतक तुमने

अपना प्रभाव प्रगट नहीं किया है. यह सुन बिदेह सचे बिदेह यानी जीवन्मुक्त हुए. नारदजीने फिर कहा कि–यह बात मैं तेरे सत्यभावसे कहता हूं ॥ ७ ॥

सुररंजन भंजन खलहेता ॥ प्रगट भई नृप तव संकेता ॥ १ ॥ ❀
सकललोकपति प्रभु सुखराशी ॥ मिली इन्हे बर जो अबिनाशी ॥ २ ॥ ❀

हे राजन् ! यह आदिशक्ति देवताओंको राजी करनेके लिये और दुष्टोंका नाश करनेके लिये आपके घरमें प्रगट हुई है ॥ १ ॥ सब लोगोंका पति, सुखका राशि और अविनाशी जो प्रभु है वे इसे बर मिलेंगे ॥ २ ॥

सुनि ऋषिबचन माल गुहि लीन्ही ॥ सो निजउर सिय धारण कीन्ही ॥ ३ ॥
औरौ लक्षण युक्तिसमेता ॥ कहि मुनिबर गे ब्रह्म निकेता ॥ ४ ॥ ❀

नारदजीके बचन सुनकर सीताने उन बचनोंकी माला गूंथ ली और उस मालाको सीताने अपने हृदयमें धारण कर ली अर्थात् सीताने नारदजीके बचन मनमें रख लिये ॥ ३ ॥ नारदजी औरभी सीताके कई लक्षण युक्तिके साथ कहकर ब्रह्मलोकको सिधारे ॥ ४ ॥

जनक बन्धुजा सखिन समेता ॥ खेलै जहँ तहँ रूप निकेता ॥ ५ ॥ ❀
बाल वृद्ध यौवन नर नारी ॥ लागहिँ सबहि प्राणते प्यारी ॥ ६ ॥ ❀

वह रूपकी धाम सीता जनकके भाईकी बेटियोंके और सखियोंके साथ जहां तहां खेला करती है ॥ ५ ॥ तिसे देखकर बालक, वृद्ध और युवा, स्त्री, और पुरुष बड़े खुश होते है और वह सबको प्राणोंसे प्यारी लगती है ॥ ६ ॥

पुनि नृप निपुण पढ़न बैठाई ॥ अचिर काल सब विद्या पाई ॥ ७ ॥ ❀
यह चरित्र भाष्यों भवसेतू ॥ अब सुनु सियास्वयम्बरहेतू ॥ ८ ॥ ❀

फिर राजाने उसको पढ़ाना शुरू किया तो यह थोड़ेही दिनोंमें सब विद्या पढ़ गई ॥ ७ ॥ याज्ञवल्क्य मुनि कहते है कि–हे मुनि ! संसारसे पार उतरनेके लिये सेतुरूप यह चरित्र तो मैंने कहा. अब सीताके स्वयंवर होनेका कारण कहता हूं सो सुनो ॥ ८ ॥

दोहा–एकसमय मिथिलेश अति, शंकरको तप कीन ॥ ❀
आप कह्यो हर माँगु बर, तब नृप बोलय दीन ॥ १८ ॥ ❀
नाथ इष्ट जो आपकर, ज्यहिँ श्रुति नेति बखान ॥ ❀
तेहि देखौं भरि नयन मैं, यह बर देहु न आन ॥ १९ ॥ ❀
सुनि शिव दीन्ह्यो धनुष जो, मिला रहै बिब साथ ॥ ❀
कह्यो कि पूज्यो यहीते, मिली आय मम नाथ ॥ २० ॥ ❀

एक समय जनकराजाने महादेवकी बड़ी भारी तपस्या करी तब महादेवने खुद आकर कहा कि–हे राजन् बर मांग, तब राजा बोला कि–॥ १८ ॥ हे नाथ ! जो आपका इष्टदेव है और जिसे वेद–नेति नेति कहकर पुकारता है. उसे मैं नेत्र भरकर देखूं मुझे यह बर देओ. मेरेको दूसरा बर नहीं चाहिये ॥ १९ ॥ राजाके ये बचन सुनकर महादेवने अपना वो धनुष जनक राजाको दिया कि, जो विवा

दके वास्ते ब्रह्माजीके हाथ मिला था. और कहा कि, तुम इसको पूजते रहना सो इसीसे तुम्हारे पास आकर मेरे स्वामी तुमको मिल जायंगे ॥ २० ॥

सुनि बिदेह प्रभुहित अनुरागे ॥ नित्य नेम करि पूजन लागे ॥ १ ॥ ❁
यक दिन सिय सेवाढ़िग जाई ॥ लीलै लीन्ह्यो धनुष उठाई ॥ २ ॥ ❁

महादेवजीके हितकारी बचन सुनकर राजा जनक बहुत प्रसन्न हुआ और नित्य नेम करके हमेशा उसकी पूजा करने लगा ॥ १ ॥ एक दिन सीताने सेवाके निकट जाकर खेलही खेलमें उस धनुषको उठालिया ॥ २ ॥

देखि जनक अति अचरज माना ॥ त्यहि क्षण तहाँ कठिन पणठाना ॥ ३ ॥
जो लेई शिवचाप चढ़ाई ॥ सो नृप मम कन्या बरि पाई ॥ ४ ॥ ❁

यह बात देखकर जनकराजाने मनमे बड़ा अचरज माना और उसी क्षण उसने वहां यह प्रण कर लिया कि — ॥ ३ ॥ जो राजा महादेवजीके इस धनुषको चढ़ा लेगा वही मेरी कन्याको वरेगा ॥ ४ ॥

लिये बोलि कारीगर भूरी ॥ रंगभूमि बिरची तिन रूरी ॥ ५ ॥ ❁
चहुँ दिशि चामीकरअस्थाना ॥ तासु मध्य मणिमय संचाना ॥ ६ ॥ ❁

फिर राजाने अच्छे बहुतसे कारीगरोंको बुलाया उन्होंने बहुत सुन्दर रंगभूमि रच दिया ॥ ५ ॥ जिसके चारों तर्फ तो सोनेके स्थान थे और बीचमें रत्न व मणियोंका मकान था ॥ ६ ॥

दशसहस्र मिलि मल्ल बिशाला ॥ लावत भये धनुष मखशाला ॥ ७ ॥ ❁
देश देश प्रति पत्र पठाये ॥ सुनि सुनि भूप अनेकन आये ॥ ८ ॥ ❁

उस यज्ञशालामें दश हजार मल्ल इकट्ठे होकर उस महान् धनुषको लाये ॥ ७ ॥ फिर राजाने सब देशोंमें सीताके स्वयंवरके लिये लिख लिखकर पत्र भेजे. स्वयंवरके समाचार सुन सुनकर कई राजका वहां आ इकट्ठे हुए ॥ ८ ॥

बन उपबन पंथ पुर निकेता ॥ उतरे निज निज सेनसमेता ॥ ९ ॥ ❁
कहि सुकथा ऋषिराउ सिधाये ॥ बहुरि दूत लंकापुर आये ॥ १० ॥ ❁

जिसको जहां सुभीता पड़ा वहीं वन, उपवन, नगर, मारग और डेरोंमें अपनी अपनी सेनाके साथ उतरे ॥ ९ ॥ तब नारदजी वहां आये. सारी कथा कहकर पीछे चले गये सो दूत बनकर लंकापुरीमें पहुंचे ॥ १० ॥

सुनि दशमुख बाणासुर आवा ॥ प्रथमैं निज २ पौरुष गावा ॥ ११ ॥ ❁
रावण धर्‌यो धनुष तब जाई ॥ बहुबिधि बल करि रहा उठाई ॥ १२ ॥ ❁

स्वयंवरके समाचार सुनकर रावण और बाणासुर येभी वहां आये उन्होंने आकर अव्वल तो अपने मुँहसे अपनी अपनी पुरुषार्थकी खूब प्रशंसा करी ॥ ११ ॥ फिर रावणने जाकर वह धनुष हाथमें लिया और कई तरहसे जोर किया और उठाने लगा ॥ १२ ॥

उठा न नेकु चप्यो कर गाढ़े ॥ अति बल कीन कढ़ा तब काढ़े ॥ १३ ॥ ❁
सभामध्य करि कपट बहाना ॥ जात भये निज २ अस्थाना ॥ १४ ॥ ❁

चारि ठांव हारा लंकेशा ॥ देवनको बहुत देत कलेशा ॥ १५ ॥ ❋

पर वह धनुष वहांसे किंचिन्मात्रभी नहीं उठा. उलटा हाथ जोरसे दब गया. फिर रावणने खूब अच्छीतरह बल किया तब हाथ निकला ॥ १३ ॥ तब सभाके बीच किसी बातका झूंठा बहाना लेकर अपने अपने स्थानको चले गये ॥ १४ ॥ रावण देवताओंको बड़ा दुःख देता था पर चार ठौर तौ वहभी हार गया था एक (तौ बलिके यहां बालकोंके पास १, दूसरा वालिके पास २, तीसरा सहस्रार्जुनके पास ३, और चौथा जनकके यहां ४) ॥ १५ ॥ ॥ इति ॥

रबि शशि पवन वरुण धनुधारी ॥ अग्नि काल यम सब अधिकारी ॥ १ ॥ ❋
किन्नर सिद्ध मनुज सुर नागा ॥ हठि सबहींके पंथहिं लागा ॥ २ ॥ ❋

सूरज, चंद्रमा, पवन, वरुण, कुबेर, अग्नि, काल और यमराज इन सब लोकपालोंको तथा किन्नर सिद्ध, मनुष्य, देवता और नाग इनको हठकर वह नीच सबके पीछे पड़ा था ॥ १ ॥ २ ॥

ब्रह्मसृष्टि जहँलगि तनुधारी ॥ दशमुखवशवर्ती नर नारी ॥ ३ ॥ ❋
आयसु करहिँ सकल भयभीता ॥ नवहिँ आइ नित चरण विनीता ॥ ४ ॥ ❋

जहांलों ब्रह्माजीकी देहधारी सृष्टि है वहांलों सब स्त्रीपुरुषोंको रावणने अपने आधीन कर लिया था ॥ ३ ॥ सब लोग भयभीत होकर रावणकी आज्ञा पालते है और नित २आ आकर विनयके साथ चरणोंमे सिर नवाते हैं ॥ ४ ॥

दोहा–भुजबल बिश्व बश्य करि, राखेसि कोउ न स्वतंत्र ॥ ❋
मण्डलीकमणि रावण, राज करै निजमंत्र ॥ १८९ ॥ ❋
देव यक्ष गन्धर्व नर, किन्नर नागकुमारि ॥ ❋
जीत बरीं निजबाहुबल, बहु सुन्दर बर नारि ॥ १९० ॥ ❋

रावणने अपने भुजबलसे सबको वश कर लिया उसके राजमें कोई स्वतंत्र नहीं रहा था. मंडलीक राजाओंका मुकुटमणि रावण केवल अपनी राहसे राज करता था. उसमें किसी दूसरेका दाखल नहीं था ॥ १८९ ॥ देव, यक्ष, गंधर्व, मनुष्य, किन्नर और नागकन्या कि, जो बहुत सुन्दर और अच्छी स्त्री थी, उन सबको अपने भुजबलसे जीतकर रावणने वर लिया था ॥ १९० ॥

इन्द्रजीतसन जो कछु कहेऊ ॥ सो सब जनु पहिले करि रहेऊ ॥ १ ॥ ❋
प्रथमहिँ जिनकहँ आयसु दीन्हा ॥ तिन्हकहँ चरित सुनहु जो कीन्हा ॥ २ ॥ ❋

रावणने इंद्रजीतसे जो कुछ कहा रहा वह तौ मानों उसने पहलेही सब कर रक्खा था. अर्थात् आज्ञा होतेही वह काम तुरंत हो जाता. उसमें कुछभी देर नहीं होती ॥ १ ॥ हे भरद्वाज! रावणने पहले जिनको जो आज्ञा दी थी उन्होंने जो किया वह उनका चरित्र मैं कहता हूं सो सुनो ॥ २ ॥

देखत भीमरूप सब पापी ॥ निशिचरनिकर देवपरितापी ॥ ३ ॥ ❋

यह धनुष मेरे गुरु शंकरजीका है इससे मैं नहीं उठा सका ऐसे कपट बहानाकरके रावण व बाणासुर गये. कपट क्या सो कहते हैं कि–रावणको कैलास उठानेमें तथा बाणासुरको युद्ध मांगनेमें शंकर गुरु न थे क्या? इसीसे कवीने कपट बहाना कहा.

करहिँ उपद्रव असुरनिकाया ॥ नानारूप धरहिँ करि माया ॥ ४ ॥ ❋

देखतेही वे सब पापी राक्षसगण बड़े भयंकररूप लगते थे और देवताओंको दुख देते थे ॥ ३ ॥ वे राक्षसगण ठौर ठौर अनेक प्रकारके उपद्रव करते थे और माया करके अनेक रूप धारण करते थे ॥४॥

जेहि बिधि होइ धर्म निर्मूला ॥ सो सब करहिँ बेदप्रतिकूला ॥ ५ ॥ ❋
जेहि जेहि देश धेनु द्विज पावहिँ ॥ नगर ग्राम पुर आगि लगावहिँ ॥६॥ ❋

जिसतरह धर्मका नाश होवे ऐसे सब उपाय करते थे. वेदसे बिलकुल विरुद्ध चलते थे ॥ ५ ॥ जिस जिस देशमें गौ, ब्राह्मणको पाते वहीं आग लगा देते. ऐसे उन्होंने कई शहर, गांव और पुर जला दिये ॥ ६ ॥

शुभ आचरण कतहुँ नहिँ होई ॥ वेद विप्र गुरु मान न कोई ॥ ७ ॥ ❋
नहिँ हरि भक्ति यज्ञ जप दाना ॥ सपनेहुँ सुनिय न बेद पुराना ॥ ८ ॥ ❋

कहींभी पुण्यका आचरण नहीं होता था. कोईभी वेद, ब्राह्मण और गुरुको नहीं मानता था ॥ ७ ॥ न कहीं हरिभक्ति, यज्ञ, जप और दान हो रहा था. वेद और पुराण स्वप्नमेंभी कहीं सुनायी नहीं देते थे ॥ ८ ॥

छंद—जप योग बिरागा तप मख भागा श्रवण सुनै दशशीसा ॥ ❋
आपुन उठि धावै रहै न पावै धरि सब घालै खीसा ॥ ❋
अस भ्रष्ट अचारा भा संसारा धर्म सुनिय नहिँ काना ॥ ❋
तेहि बहुबिधि त्रासै देश निकासै जो कह बेद पुराना ॥ १७ ॥ ❋

वह रावण जहां कहीं जप, योग, वैराग्य, तप या यज्ञभाग, कानोंसे सुनता वहीं वह आप उठकर दौड़कर जाता. और यही हुक्म देता कि, बस कुछभी रहने न पावे और आप खुद अपने हाथोंसे सबका सत्यानाश कर देता. इसतरह सब संसार आचारभ्रष्ट हो गया था. कहींभी धर्मकी बात कानसे सुनाई नहीं देती थी और जो कोई वेद और पुराणकी बात करता उसे वह अनेक प्रकारकी त्रास देता और देशसे निकाल देता ॥ १७ ॥

सोरठा—बर्णि न जाय अनीति, घोर निशाचर जो करहिँ ॥ ❋
हिंसापर अतिप्रीति, तिनके पापहिँ कवन मिति ॥ २६ ॥ ❋

वे निशाचर जो महाघोर अनीति करने लगे वह कही नहीं जाती. उन्होंकी हिंसापर बड़ी प्रीति थी. फिर कहो उनके पापका प्रमाण कैसे हो सके ? कि इतना है ॥ २६ ॥

बाढ़े बहु खल चोर जुआरी ॥ जे लम्पट परधन परनारी ॥ १ ॥ ❋
मानहिँ मातु पिता नहिँ देवा ॥ साधुनसों करवावहिँ सेवा ॥ २ ॥ ❋

जो पराया धन खानेवाले परस्त्री भोगनेवाले, लंपट, चोर, जुआरी और दुष्ट थे वे उसके राजमें खूब बढ़े ॥ १ ॥ न तो कोई माता पिताको मानता है और न कोई किसी देवताको जानता है. दुष्ट लोग साधु पुरुषोंके पास नौकरी करवाते हैं ॥ २ ॥

जिनके यह आचरण भवानी ॥ ते जानहुँ निशिचरसम प्रानी ॥ ३ ॥ ❋
अतिशय देखि धर्मकी हानी ॥ परम सभीत धरा अकुलानी ॥ ४ ॥ ❋

महादेवजी कहते हैं कि–हे पार्वती ! जिनका ऐसा आचरण होवे उन प्राणियोंको राक्षसके बरोबरही समझना चाहिये ॥ ३ ॥ धर्मकी अत्यंतही हानि देखकर पृथ्वी बहुत डरी और घबरायी ॥ ४ ॥

गिरि सरि सिंधु भार नहिं मोही ॥ जस मोहिं गरुअ एक परद्रोही ॥ ५ ॥
सकल धर्म देखहिं विपरीता ॥ कहि न सकै रावणभयभीता ॥ ६ ॥ ❀

पृथ्वी कहने लगी कि–मुझको पर्वत, नदियां और समुद्रका भार इतना नहीं लगता कि, जितना एक परद्रोहीका भार लगता है ॥ ५ ॥ पृथ्वीने सारे धर्म विपरीत हुए देखे पर रावणके डरके मारे कुछभी कह नहीं सकी ॥ ६ ॥

धेनुरूप धरि हृदय बिचारी ॥ गई तहाँ जहँ सुरमुनिझारी ॥ ७ ॥ ❀
निजसन्ताप सुनायेसि रोई ॥ काहूते कछु काज न होई ॥ ८ ॥ ❀

तब वह पृथ्वी गौका रूप धर, मनमें विचार कर वहां गयी जहां सारे देवता और मुनिलोग इकठे हुए बैठे थे ॥ ७ ॥ वहां जा, रो रोकर उसने अपने दुःखके समाचार कहे पर किसीसे कुछभी कार्य नहीं हुआ ॥ ८ ॥

छंद–सुर मुनि गन्धर्वा मिलि करि सर्वा गये बिरंचिके लोका ॥ ❀
संग गोतनुधारी भूमि विचारी परमबिकल भय शोका ॥ ❀
ब्रह्मा सब जाना मन अनुमाना मेरो कछु न बसाई ॥ ❀
जाकरि तैं दासी सो अविनाशी हमरो तोर सहाई ॥ १८ ॥ ❀

तब सब देवता गंधर्व और मुनि मिलकर महादेवजीके पास गये. वहां महादेवजीको साथ लेकर ब्रह्मलोक गये. तहां गौका शरीर धारण किये, भय और शोकसे परम विकल विचारी पृथ्वीभी साथ थी. ब्रह्माजीने उनको देखतेही सब जानलिया और मनमें अनुमान किया कि, इसमें मेरा तौ कुछचल नहीं सकता; मैं क्या करूं ? फिर पृथ्वीसे कहा कि–हे पृथ्वी ! मुझसे तौ इसमें कुछ नहीं हो सकता; पर तू भगवान्के शरण जा; क्योंकि, जिसकी तू दासी है वो अविनाशी प्रभु तेरा संकट अवश्य मिटावेंगे. हे पृथ्वी ! तेरा और सहायक वोही है ॥ १८ ॥

सोरठा–धरणि धरहु मन धीर, कह बिरंचि हरिपद सुमिरि ॥ ❀
जानत जनकी पीर, प्रभु भंजहि दारुण बिपति ॥ २७ ॥ ❀

ब्रह्माजीने पृथ्वीसे कहा कि–हे पृथ्वी ! तू मनमें धीरज रख और प्रभुके चरणोंका स्मरण कर; क्योंकि प्रभुको अपने भक्तके दुःखकी खबर होतेही वे महाकठिन बिपतकोभी एक क्षणभरमें मिटा देते है ॥ २७ ॥

बैठे सुर सब करहिं बिचारा ॥ कहँ पाइय प्रभु करिय पुकारा ॥ १ ॥ ❀
पुर बैकुंठ जान कह कोई ॥ कोइ कह पयनिधिमहँ बस सोई ॥ २ ॥ ❀

ब्रह्माजीके बचन सुनकर सब देवता बैठकर विचार करने लगे कि, अब कहां जाकर प्रभुसे पुकार करें ? कौन जाने प्रभु कहां पावेंगे ? ॥ १ ॥ तहां किसीने तौ वैकुंठ जानेकी कही और किसीने कहा कि, प्रभुका निवासस्थान तौ क्षीरसमुद्र है वहां चलना चाहिये ॥ २ ॥

जाके हृदय भक्ति जसि प्रीती ॥ प्रभु तेहि प्रगट सदा यह रीती ॥ ३ ॥ ❀
तेहि समाज गिरिजा मैं रहेऊँ ॥ अवसर पाय वचन यह कहेऊं ॥ ४ ॥ ❀

हे पार्वती ! तब मैंने मनमें विचारा कि, प्रभुकी यह सदाकी रीति है कि, जिसके हृदयमें जैसी भक्ति और प्रीति है उसके लिये प्रभु वहीं वैसेही प्रत्यक्ष है ॥ ३ ॥ हे उमा ! उस समाजके बीच मैंभी बैठा था सो अवसर पाकर मैंने यह बचन कहा कि— ॥ ४ ॥

हरि व्यापक सर्वत्र समाना ॥ प्रेमते प्रगट होहिँ मैं जाना ॥ ५ ॥ ❀
देश काल दिशि विदिशिहुँमाहीं ॥ कहहु सो कहाँ जहाँ प्रभु नाहीं ॥ ६ ॥

प्रभु सर्वत्र बराबर व्यापक है इसलिये जहां प्रभुकी प्रेमसे भक्ति की जाती है वहीं प्रभु प्रगट हो जाते है. यह मैं निश्चय जानता हूं कि—प्रभु प्रेमसे प्रगट होते है ॥ ५ ॥ तुम कहो कि ऐसा देश, काल, दिशा और विदिशा कौन है ? कि जहां प्रभु नहीं हैं ॥ ६ ॥

अग जग मय सब रहित विरागी ॥ प्रेमते प्रभु प्रगटहिँ जिमि आगी ॥ ७ ॥ ❀
मोर बचन सबके मनमाना ॥ साधु साधु करि ब्रह्म बखाना ॥ ८ ॥ ❀

प्रभु सर्व चराचरमय है और उनसे रहित व अलगभी है, परंतु जहां चाहो वहीं प्रभु प्रेमसे प्रगट हो जाते है जैसे आग काठमें दिखायी नहीं देती परंतु घिसनेसे प्रगट हो जाती है ऐसे प्रभु सर्वत्र न दीख-नेपरभी प्रेमसे प्रगट होजाते है ॥ ७ ॥ मेरा यह बचन सबके मनको अच्छा लगा और ब्रह्माजीने साधु साधु कहकर उसकी (मेरी) प्रशंसा की ॥ ८ ॥

दोहा—सुनि बिरंचि मन हर्ष तन, पुलक नयन बह नीर ॥ ❀
अस्तुति करत स जोरि कर, सावधान मतिधीर ॥ १९१ ॥ ❀

मेरे बचन सुनकर ब्रह्माजीके मनमें बड़ा आनंद हुआ शरीर रोमांचित हो गया. नेत्रोंमेंसे जल बहने लगा. ऐसे भक्ति व प्रेमसे परिपूर्ण हो; हाथ जोड़, सचेत हो, धीरमति ब्रह्माजीने प्रभुकी अस्तुति करी ॥ १९१ ॥

छंद—जय जय सुरनायक जनसुखदायक प्रणतपाल भगवन्ता ॥ ❀
गोद्विजहितकारी जय असुरारी सिंधुसुताप्रियकान्ता ॥ ❀
पालन सुरधरणी अद्भुतकरणी मर्म न जानै कोई ॥ ❀
जो सहजकृपाला दीनदयाला करौ अनुग्रह सोई ॥ १९ ॥

ब्रह्माजीने कहा कि— हे देवताओंके स्वामी ! प्रभु ! जय ! जय ! ! आपकी जय होवे. हे भक्तलो-गोंके सुखदाता ! आपकी जय होवे. हे शरणागतोंके पालक ! प्रभु ! भगवान् ! आपकी जय होवे. हे गौब्राह्मणके हितकारी ! प्रभु ! आपकी जय होवे. हे दैत्योंके बैरी ! प्रभु ! आपकी जय होवे. हे लक्ष्मीके प्रिय पति ! आपकी जय होवे. जो हमेशा देवता और गौवनकी रक्षा करता है, जिसके अद्भुत चरित्रोंका भेद किसीके जाननेमें नहीं आ सकता, जो स्वभावसे कृपालु और दीनदयालु हैं वो प्रभु मेरेऊपर कृपा करो ॥ १९ ॥

जय जय अविनाशी सब घटवासी ब्यापक परमानन्दा ॥
अभिगत गोतीता चरित पुनीता मायारहित मुकुंदा ॥
जेहिलागि बिरागी अति अनुरागी बिगतमोह मुनिबृन्दा ॥
निशि वासर ध्यावहिँ हरिगुण गावहिँ जयति सच्चिदानन्दा ॥ २० ॥

हे अविनाशी! घट घटके वासी! व्यापक! परमानन्दस्वरूप! आपकी जय होवे. जिनका स्वरूप सर्वत्र प्रचारवाली इंद्रियोंसे परम अगोचर है. और जिनके चरित्र परम पवित्र है तथा जो माया यानी अविद्यासे रहित यानी पर हैं. ऐसे हे मुकुंद! प्रभु! आपकी जय होवे. जिनको प्राप्त होनेके लिये बड़े २ वैराग्यवान् महामुनिलोगोंके गण मोहको त्याग कर बड़ी प्रीतिसे रात दिन ध्यान लगाये रहते हैं और प्रभुके गुण गाते है ऐसे हे सच्चिदानन्दस्वरूप! आपकी जय होवे ॥ २० ॥

जेहिँ सृष्टि उपाई त्रिबिध बनाई संग सहाय न दूजा ॥
सो करहु अघारी चिंत हमारी जानिय भक्ति न पूजा ॥
जो भवभयभंजन जनमनरंजन गंजन बिपतिबरूथा ॥
मन बच क्रम बानी छांड़ि सयानी शरण सकल सुरयूथा ॥ २१ ॥

जिन्होंने बिना किसी दूसरे सहायके सृष्टि रचकर उसे राजस, तामस और सात्विक रूपसे तीन प्रकारकी बना दी है, वे पापोंके नाश करनहारे प्रभु हमारी सुध लेओ; हे प्रभु! हम लोग भक्ति और पूजा कुछभी नहीं जानते है सो आप अपनी ओर निहारो. जो प्रभु संसारके भय मिटानेवाले, भक्तलोगोंके मनको राजी करनहारे, और संकटकी कटक तोड़नेहारे है उन प्रभुनके हम सब देवगण अपनी सयानप छोड़कर मन कर्म बचनसे शरण आये है ॥ २१ ॥

शारद श्रुति शेषा ऋषय अशेषा जाकहँ कोउ न जाना ॥ *
जेहि दीन पियारे बेद पुकारे द्रवो सो श्रीभगवाना ॥ *
भववारिधिमन्दर सबबिधिसुन्दर गुणमन्दिर सुखपुंजा ॥ *
मुनि सिद्ध सकल सुर परमभयातुर नमत नाथपदकंजा ॥ २२ ॥ *

शारदा, वेद, शेषजी और तमाम ऋषि इनमेंसे कोईभी परमेश्वरको जान नहीं सकता और जिन्हें दीन जन बड़े प्यारे हैं. यह बात वेद पुकार २ कर कहते हैं. वे श्रीभगवान् रघुनाथजी हमपर कृपा करो. हे संसाररूप समुद्रको मथनेके लिये मन्दराचल रूप! हे सब प्रकारसे सुन्दर! गुणोंके धाम! सुखके निधान प्रभु! ये सब मुनि, सिद्ध व देवता परम भयातुर होकर आपके चरणकमलोंको प्रणाम करते है सो आप इनकी रक्षा करो ॥ २२ ॥

दोहा— जानि समय सुर भूमि मुनि, बचन समेत सनेह ॥ *
गगन गिरा गम्भीर भइ, हरणि शोक सन्देह ॥ १९२ ॥ *

ऐसे देवता मुनि और पृथ्वीके स्नेह संयुक्त बचन सुन अच्छा अवसर जानकर शोक व संदेहका मिटानेवाली आकाशमें गंभीर वाणी हुई ॥ १९२ ॥

जनि डरपहु मुनि सिद्ध सुरेशा ॥ तुमहिँ लागि धरिहौं नरबेशा ॥ १ ॥ ❋
अंशनि सहित मनुजअवतारा ॥ लेहौं दिनकरबंश उदारा ॥ २ ॥ ❋

कि–हे मुनि सिद्ध और देवताओ! तुम मत डरो. तुम्हारेवास्ते मैं मनुष्यशरीर धारण करूंगा ॥ १ ॥ मैं मेरे अंशोंके साथ सूर्यवंशके अंदर परम उदार मनुष्य अवतार धारण करूंगा ॥ २ ॥

कश्यप अदिति महातप कीन्हा ॥ तिनकहँ मैं पूरब बर दीन्हा ॥ ३ ॥ ❋
ते दशरथकौशल्यारूपा ॥ कोशल पुरी प्रगट नरभूपा ॥ ४ ॥ ❋

कश्यप और अदितिने पहले महाकठिन तपस्या की थी उनको हम बरदान दे चुके ॥३॥ सो अभी दशरथ और कौशल्यारूपसे अयोध्यामें राजा रानी प्रगट हुए है ॥ ४ ॥

तिनके गृह अवतरिहौं जाई ॥ रघुकुलतिलक सो चारिउ भाई ॥ ५ ॥ ❋
नारदवचन सत्य सब करिहौं ॥ परमशक्तिसमेत अवतरिहौं ॥ ६ ॥ ❋

अब मै उनके घर जाकर अवतार लेऊंगा. वहां हम रघुवंशियोंके मुकुटमणि चार भाई होवेंगे ॥ ५ ॥ मैं नारदजीका वचन सब सत्य करूंगा. मैं मेरी परमशक्तिके साथ वहां प्रगट होऊंगा ॥ ६ ॥

हरिहौं सकल भूमिगरुआई ॥ निर्भय होहु देवसमुदाई ॥ ७ ॥ ❋
गगन ब्रह्मवाणी सुनि काना ॥ तुरत फिरे सुर हृदय जुड़ाना ॥ ८ ॥ ❋

हे देवगण! तुम सब निर्भय रहो. मैं अवतार लेकर भूमिका सम्पूर्ण भार उतारूंगा ॥ ७ ॥ आकाशमेंसे ऐसी परमेश्वरकी वाणी कानोंसे सुनकर, सब देवता वहांसे पीछे लौटे और मनमें बड़े प्रसन्न हुए ॥ ८ ॥

तब ब्रह्मा धरणिहिँ समुझावा ॥ अभय भई भरोस जिय आवा ॥ ९ ॥ ❋

तब ब्रह्माजीने पृथ्वीको समझाया कि–हे पृथ्वी! अब तू निर्भय हुई. यह सुन पृथ्वीकेभी मनमें भरोसा आया ॥ ९ ॥

दोहा–निजलोकहिँ बिरंचि गे, देवन यहै शिखाइ ॥ ❋
बानरतनु धरि रणिध महँ, हरिपद सेवहु जाइ ॥ १९३ ॥ ❋

ब्रह्माजीभी देवताओंको यह शिक्षा देकर ब्रह्मलोक सिधारे कि–तुम सब वानरका शरीर धारण कर पृथ्वीमें जाकर प्रभुके चरणोंकी सेवा करो ॥ १९३ ॥

गये देव सब निजनिजधामा ॥ भूमिसहित पाये बिश्रामा ॥ १ ॥ ❋
जो कछु आयसु ब्रह्मै दीन्हा ॥ हर्षे देव बिलम्ब न कीन्हा ॥ २ ॥ ❋

ब्रह्माजीके वचन सुनकर सब देवता अपने अपने घर गये उनको और पृथ्वीको इस बातसे विश्राम मिल गया ॥ १ ॥ जो कुछ आज्ञा ब्रह्माजीने दी थी वह काम देवताओंने बड़ी खुशीसे किया उसमें जराभी विलम्ब नहीं किया ॥ २ ॥

---

१ कोई समयमें कश्यपऋषि और देवमाता अदितिने तपस्या करके विष्णुजीसे वरदान मांग लिया कि–जब जब तुम जन्म लेओगे तब तब माता पिता हम होवैं. इसीसे सोई कौसल्या दशरथ होते भये. यहांभी दशरथ कौसल्यामें इनका अंश दिखलाके पूर्व वरदान सिद्ध किया है.

बनचर देह धरी क्षितिमाहीं ॥ अतुलित बल प्रताप तिनपाहीं ॥ ३ ॥ ❋
गिरि तरु नख आयुध सब बीरा ॥ हरिमारग चितवहिँ रणधीरा ॥ ४ ॥ ❋
गिरि कानन जहँ तहँ भरि पूरी ॥ रह निज निज अनीक रुचि रूरी ॥ ५ ॥

देवताओंने पृथ्वीपर आ वानरशरीर धारण किये जिनका बल और प्रताप तुलना करनेमें नहीं आता था ॥ ३ ॥ और वे सबके सब नख वृक्ष व पहाड़ही शस्त्र रखते थे वे सब रणधीर प्रभुनकी राह देखते थे ॥ ४ ॥ वे सब वानर जहां तहां जंगल और पर्वतोंमें भरपूर होकर अपनी २ सेना बनाके अपनी २ इच्छानुसार रहेते थे ॥ ५ ॥

(क्षेपक) हरिहित सदल बिबिध हर्षाई ॥ धरत भये कपिवपु जग आई ॥ १ ॥ ❋
जो अवतार सबनके कहऊं ॥ बाढ़ै ग्रंथ पार नहिँ लहऊं ॥ २ ॥ ❋

सो रामचन्द्रजीके हेतु देवताओंने अपनी बिचित्र सेनाको साथ ले परमानंदके साथ जगत्में आ वानरशरीर धारण किये थे ॥ १ ॥ कवि कहता है कि–जो मै सब वानरोंके अवतारोंकी कथा कहूं तौ ग्रंथ बढ़ जाय फिर अन्त न पावूं ॥ २ ॥

यह सब चरित सुना बिबुधारी ॥ जन्मतहीं हत करब बिचारी ॥ ३ ॥ ❋
बसत सकल मम बश रबिबंशी ॥ ते का शकिहैं मोहिँ बिध्वंशी ॥ ४ ॥

जब रावणने यह सारा चरित्र सुना तब बिचार किया कि, इनको जन्मतेही मार डालेंगे ॥ ३ ॥ क्यों-कि, जितने सूर्यवंशी राजा है वे सब मेरे आधीन है सो वे मेरा विध्वंस क्या कर सकते है ? ॥ ४ ॥

तद्यपि सजग रहे का हानी ॥ दिये असुर करि कछु तहँ थानी ॥ ५ ॥ ❋
उतपति मरण आदि कछु होई ॥ करि सम्मत पहुँचावैं सोई ॥ ६ ॥ ❋

तथापि सावधान रहना चाहिये इसमें हानि क्या है ? ऐसा विचार कर उसने कुछ थोड़ेसे राक्षसोंका वहां थाना रख दिया ॥ ५ ॥ सो वहां सूर्यवंशके भीतर जो कोई जन्मे वा मरे उसकी वे राक्षस रावणके पास खबर पहुंचा दिया करें ॥ ६ ॥

भये दिलीप भूप जब आई ॥ जानि असुर सब दिये उठाई ॥ ७ ॥ ❋
सुनि रावण बल देखन आवा ॥ द्विज लखि सब रानिन बैठावा ॥ ८ ॥ ❋

ऐसे होते होते जब दिलीप राजा हुआ तब उससे उनको खबरनिवेस जानकर वहांसे उनका थाना उठा दिया ॥ ७ ॥ राक्षसोंने जाकर रावणसे कहा. सो समाचार सुनकर रावण दिलीपका बल देखनेको ब्राह्मणका बेष बनाके आया. तब उसे ब्राह्मण जानकर सब रानियोंनें आसनपर बिठाया ॥ ८ ॥

पूजत पद प्रगटेसि निजरूपा ॥ भागीं भवन भीरु मणिभूपा ॥ ९ ॥ ❋
तब रावण सरयूतट आयो ॥ अर्चत तंडुल नृपति चलायो ॥ १० ॥ ❋

और चरणोंकी पूजा करी उस वक्त उसने अपना राक्षसरूप प्रगट किया तिसे देखकर वे सहज डरयुक्त रानियां भागकर राजभवनमें चली गयीं ॥ ९ ॥ तब रावण वहांसे उठकर सरयूनदीके तटपर आया. क्योंकि उस वक्त राजा दिलीप भगवत्सेवा कर रहा था उस समय कहीं वनमें एक

बाघ गौको पकड़ कर ले जाता था उस बाघसे गौको छुड़ानेके लिये दिलीपने वहां बैठे बैठेही चाँवल चलाये जिससे वह गौ बचगई ॥ १० ॥

पूंछा लोगनते तब कहेऊ ॥ धेनुहिँ हरि इक मारन चहेऊ ॥ ११ ॥ ❋
सुमिरत सपदि शालि हौं प्रेरे ॥ शत शर व्है लागे हरिकेरे ॥ १२ ॥ ❋

जो लोग पासमें बैठे थे उनको तो इस बातकी खबर नहीं थी जिससे उन लोगोंने पूंछा कि–आपने चाँवल क्यों फेंके? तब दिलीपने जबाब दिया कि–एक बाघ गौको मारना चाहता था ॥ ११ ॥ सो गौके पुकारतेही मैंने जो जल्दीसे चाँवल फेंके वे चाँवल उस बाघसे सैंकड़ों तीररूप होकर लगे ॥ १२ ॥

सुनि दशमुख मन अचरज आवा ॥ देखा जाय मृतक बन पावा ॥ १३ ॥
समुझि प्रताप गयो निजधामा ॥ नृपते हाल कहा नृपबामा ॥ १४ ॥ ❋

दिलीपकी यह बात सुनकर रावणके मनमें बड़ा बिस्मय हुआ. तब रावणने बनमें जाकर देखा तो वहां उसने बाघको मरा पड़ा देखा ॥ १३ ॥ दिलीपका प्रताप देख, मनमें समझ कर रावण पीछा अपने घरको सिधारा. जब राजा घर आया तब रानियोंने रावणका हाल दिलीपसे कहा ॥ १४ ॥

दोहा–रावणकृत सुनि अवधपति, चंगुल भरि जल लीन ॥ ❋
पवनमंत्र पढ़ि क्रोधयुत, दक्षिण दिशि तजि दीन ॥ २१ ॥ ❋
भये बिशिख दशलाख लखि, कह नृप लंकहिँ जाहु ॥ ❋
सहित त्रिकूट समुद्रमहँ, बोरि फिरहु तेहि नाहु ॥ २२ ॥ ❋

अयोध्यापति दिलीपने रावणका चरित्र सुन, हाथमें चुल्लुभर जल ले कुपित हो, पवनका मंत्र पढ़ दक्षिण दिशाकी ओर छोड़ा ॥ २१ ॥ जल छोड़तेही दश लाख बाण पैदा हुए; उन्हें देखकर राजाने उन बाणोंसे कहा कि–तुम लंकागढ़ जाओ. वहां जो त्रिकूट नाम पर्वत है उसे उसके राजा रावणके साथ समुद्रमें डुबाकर पीछे चले आओ ॥ २२ ॥

सोरठा–चले पवनगति मोरी, जाते उलटावन लगे ॥ ❋
मयतनया कर जोरि, दीन दोहाई नृपतिकी ॥ १ ॥ ❋
इहाँ न कोउ नृप आहि, सुनि आये महिपालढ़िग ॥ ❋
अकनि कह्यो गुरुपाहिं, वै सुनि रहौ चुपाइ अब ॥ २ ॥ ❋

राजाकी आज्ञा पाकर वे बाण पवनके बेगको हटाकर लंकामें गये और वहां जातेही त्रिकूट पर्वतको उलटाने लगे. तब मंदोदरीने हाथ जोड़कर उनको राजा दिलीपकी दुहाई दी ॥ १ ॥ और कहा कि–यहां तो कोई राजा नहीं है. मंदोदरीके ये बचन सुनकर वे बाण पीछे राजाके पास आये. और वहांके सब समाचार सुनाये. तिन्हें सुनकर दिलीपने गुरु बसिष्ठजीके पास जाकर सब हाल कहा तब गुरुने कहा कि–अभी आप चुप रह जाइये ॥ २ ॥

इमि दससहस बर्ष चलि गयऊ ॥ रघुराजा तब परचो दयऊ ॥ १ ॥ ❋
मारुतबाण दहन गृह लागे ॥ बनिता बिनय बचन सुनि त्यागे ॥ २ ॥ ❋

इसतरह दश हजार वर्ष बीत गये उसके बाद रघुराजाने परीक्षा दिया ॥ १ ॥ रघुने पवनास्त्र चलाया जिससे रावणके घर ढहने लगे तब मंदोदरीने बहुत कुछ विनय किया और प्रार्थना करी जिसे सुनकर छोड़ दिया ॥ २ ॥

बहुरि भये अज अवनिप कानन ॥ माँझ देखि रण रच्यो दशानन ॥३॥ ❋
अनिल अस्त्रते कटकसमेता ॥ दीन ताहि पहुँचाय निकेता ॥ ४ ॥ ❋
तेजवान लखि रहा चुपाई ॥ तेहि पाछे भे दशरथ राई ॥ ५ ॥ ❋

फिर रघुके अज नाम पुत्र हुआ उसे मंगलके भीतर अकेला देखकर रावणने युद्धकी तैयारी करी ॥ ॥ ३ ॥ तब अजने पवनके बाणसे रावणको उसकी सेनाके साथ लंकापुरी पहुँचाय दिया ॥ ४ ॥ रावणभी उसे महातेजस्वी देखकर चुप रह गया. उसके अनंतर दशरथजी राजा हुए ॥ ५ ॥

दोहा–दश सहस्र रविकर लखै, दशौं दिशा रथ जाहि ॥ ❋
दशशिररिपु प्रगटै सुवन, कहिये दशरथ ताहि ॥ २३ ॥ ❋
सुनि रावण निजदूतमुख, माँगि पठायो दंड ॥ ❋
हरिशर प्रेरे भूप कहि, जड्यो कपाट प्रचंड ॥ २४ ॥ ❋

दशरथ शब्दकी व्युत्पत्ति करते है. जिसका तेज सूरजकी दश हजार किरणोंके समान लख पड़े और जिसका रथ दशोंदिशामें जासके तथा जिसका पुत्र दशशिर यानी रावणका वैरी होवे उसे दशरथ कहना चाहिये ॥ २३ ॥ रावणने अपने दूतके मुखसे समाचार सुन, दशरथजीसे दंड यानी कर मंगाया तब दशरथजीने पवनास्त्र चलाकर उसके घरके मजबूत कपाट जड़ दिये ॥ २४ ॥

जो रावण पट लेइ उघारी ॥ तौ हम कर देई बिन रारी ॥ १ ॥ ❋
मंदिरद्वार गये सब मूंदी ॥ रहा उघारि असुरपति खूंदी ॥ २ ॥ ❋

और उस दूतसे कहा कि–तू जाकर रावणसे कहदे कि, जो तू किंवार उघार लेगा तौ हम तुझको युद्ध किये बिना कर दे देंगे ॥ १ ॥ ये बचन सुन दूत पीछा गया. रावणके मकानके जो द्वार मूंदि गये थे उनको उघाड़नेके लिये रावणने बहुत कुछ परिश्रम किया पर उससे कुछभी नहीं हुआ ॥ २ ॥

टसक्यो पट न भटन मुख मोरे ॥ मिली मार्ग मयजा कर जोरे ॥ ३ ॥ ❋
तब रावण मन बात बिचारी ॥ बिपिन जाइ कीन्हिसि तप भारी ॥ ४ ॥ ❋

किवार ऐसे दृढ़ जड़ गये कि. बिलकुल टसकेभी नहीं. बड़े २ जोधा थे वे सब पीछे हट गये. फिर मंदोदरीने बहुत कुछ प्रार्थना करी तब किंवार खुले और मार्ग मिला ॥ ३ ॥ दशरथजीका ऐसा अद्भुत सामर्थ्य देखकर रावणने मनमें विचार किया. और वनमें जाकर महाघोर तपस्या करी ॥ ४ ॥

वरं ब्रूहि ब्रह्मा जब भाषा ॥ बोला तब दशमुख अभिलाषा ॥ ५ ॥ ❋
दशरथनृपबीरजते सोई ॥ जगमें पुत्र न प्रगटै कोई ॥ ६ ॥ ❋

जब ब्रह्माजीने रावणके पास आकर "वरं ब्रूहि" (वर मांग) ऐसा कहा तब बड़ी अभिलाषाके साथ रावण बोला ॥ ५ ॥ कि–हे ब्रह्माजी ! दशरथजीके वीर्यसे जगतमें कोईभी पुत्र नहीं होना चाहिये ॥ ६ ॥

सुनि स्रष्टा मनमें दुख माना ॥ एवमस्तु कहि कीन पयाना ॥ ७ ॥ *
तब दशमुख कोशलपुर गयऊ ॥ कौशल्यै हरि लावत भयऊ ॥ ८ ॥ *

रावणकी यह बात सुनकर ब्रह्माजीके मनमें बड़ा क्लेश हुआ तथापि आप एवमस्तु कहकर वहांसे चल दिये ॥ ७ ॥ तब रावण कोसलपुर गया और वहांसे कौसल्याको हर ले आया ॥ ८ ॥

सहित मँजुषा सागर जाई ॥ राघव मच्छ दिहिसि सौंपाई ॥ ९ ॥ *
चतुरानन धरि रावण रूपा ॥ लाये मांगि सुता सोइ भूपा ॥ १० ॥ *

कौसल्याको पेटीमें बंद कर समुद्रमें जा राघव नाम महामच्छको धरोहरकी तरह सौंप दी ॥ ९ ॥ तब ब्रह्माजी रावणका रूप धारण कर वहां जा उस राजकन्याको पीछा मांग लाये ॥ १० ॥

बनमें धरि बिधि गे निजलोका ॥ तहँ सुमंतु पट खोलि बिलोका ॥ ११ ॥
कन्याते बोले मृदु बानी ॥ तुम हो किनकी सुता सयानी ॥ १२ ॥ *

उस कन्याको बंदकी बंद बनमें धरकर ब्रह्माजी तो अपने सत्यलोकको सिधारे और वो कन्या पेटीके अंदर वहीं धरी रही. तहां सुमंतुने पट खोलकर देखा तो उसके अंदर कन्या मिली ॥ ११ ॥ उसे देखकर सुमंतुने मधुर वाणीसे उस कन्यासे पूंछा कि– हे सयानी ! तू किसकी बेटी है ?॥ १२ ॥

तब कौसल्या गिरा उचारी ॥ हम हैं कोशलराजकुमारी ॥ १३ ॥ *
नहिँ जाना को बनमें लावा ॥ सुनि सुमंतु तुरते उठवावा ॥ १४ ॥ *

तब कौसल्या बोली कि– मैं कोसल देशके राजाकी बेटी हूं ॥ १३ ॥ मुझको इस बातकी तो खबर नहीं है कि, मुझको यहां वनमें कौन ले आया ? कौसल्याके वचन सुनकर सुमंतु उसे उठाकर तुरंत ॥ १४ ॥

लै आये कौशलपुर तामा ॥ रोदन होत रहे नृप धामा ॥ १५ ॥ *
जाय मँजूषा भूपहिँ दीन्हा ॥ जेहि बिधि मिला सो बर्णन कीन्हा ॥१६॥ *

कोसल नगरमें ले आया. जहां उस कन्याके लिये राजभवनमें भारी रुदन हो रहा था ॥१५॥ सुमंतुने जाकर वह पेटी राजाको दी और जिसतरह वह पेटी मिली थी वे सब समाचार कहे ॥ १६ ॥

बोले नृप तुम को हौ ताता ॥ कह सुमंतु सुनिये प्रभु बाता ॥ १७ ॥ *
अवधपुरी नृप दशरथ नामा ॥ धर्मधुरंधर सब गुणधामा ॥ १८ ॥ *

तब कोसलराजने कहा कि–हे तात ! आप कौन हो ? तब सुमंतुने कहा कि– हे प्रभु ! मेरी बात सुनो ॥ १७ ॥ अयोध्या नाम एक बहुत सुन्दर पुरी है. उसमें दशरथ नाम राजा राज करता है. जो धर्ममें पक्के धुरंधर और सब गुणोंके घर हैं ॥ १८ ॥

बलनिधि नयनिधि रघुकुलदीपा ॥ तासु सचिव हम अहैं महीपा ॥ १९ ॥ *
सुनि राजा बोला कहि धन्या ॥ तव नृपका बरिहौं मैं कन्या ॥ २० ॥ *

राजा दशरथ बलका निधि, विनयका भंडार और रघुकुलके दीपक हैं. महाराज ! उनके हम मंत्री हैं ॥ १९ ॥ सुमंतुकी ऐसी सुहावनी वाणी सुनकर राजाने कहा कि– आज मैं धन्य हुआहूं. हे सुमंतु ! अपनी यह कन्या तुम्हारे राजासे व्याहूंगा ॥ २०

तुरतै नाऊ बिप्र पठावा ॥ नृपके टीका आइ चढ़ावा ॥ २१ ॥ ❋
चली बरात बिपुल नरनाहा ॥ बड़ी धूमसे भयो बिबाहा ॥ २२ ॥ ❋

ऐसे कह राजाने तुरंत ब्राह्मण और नाऊको बुलाकर राजा दशरथके टीका आन चढ़ाया ॥ २१ ॥ राजा दशरथकी बरात रवाने हुई और बड़ी धूमधामसे व्याह हुआ ॥ २२ ॥

बिदा कराइ फिरे सब धामा ॥ मग खरादि रोंक्यो सुनि नामा ॥ २३ ॥ ❋
कौशल्यै लय मुनिथल राख्यो ॥ शिव बरदान अभय गुरु भाष्यो ॥२४॥ ❋
आप समर करि असुर बिड़ार्‍यो ॥ देखि बिजय सुर जयति उचार्‍यो ॥२५॥

दशरथजीको बिदा करके सब लोग पीछे अपने घर लौटे कि, मार्गमें आते दशरथजीका नाम सुनकर खर आदि राक्षसोंने रोंका ॥ २३ ॥ तब दशरथजीने कौसल्याको मुनिके आश्रममें पहुँचाया और युद्धकी तैयारी करी तब गुरु वशिष्ठजीने कहा कि, आप निर्भय रहो आपको शिवजीका वरदान भया हुआ है ॥ २४ ॥ दशरथजीने युद्धमें असुरोंको मार भगाया दशरथजीकी बिजय देख देवतालोगोंने 'जय जय' शब्द कहा ॥ २५ ॥

दोहा—तहँ बिरधासनसुतसुता, नाम सागरा आनि ॥ ❋
दीन्हीं व्याहि सुमंतु कहँ, सुभग गर्गकुल जानि ॥ २५ ॥ ❋

तहां विरधासनके पुत्रकी कन्या सागराको लाकर सुमंतुको अच्छा गर्गवंशी जानकर व्याह दी ॥२५॥

दीन्ह्यो दायज बिबिधप्रकारा ॥ भये मुदित मुनिसहित भुवारा ॥ १ ॥ ❋
पुनि है बिदा निलय निज आये ॥ बहुबिधि दान याचकन पाये ॥२॥ ❋

अनेक प्रकारका दायज दिया तिससे मुनि और राजा सब प्रसन्न हुए ॥ १ ॥ फिर बिदा हो सबलोग अपने २ घर आये. तहां याचकोंको अनेक प्रकारके दान दिये ॥ २ ॥

तब केकयी सुमित्रा परणी ॥ तिन पाछे व्याही बहु घरणी ॥ ३ ॥ ❋
करहिं सदा सेवा सब रानी ॥ पालैं भूप प्रजहिं सनमानी ॥ ४ ॥ ❋

फिर दशरथजीने सुमित्रा और कैकेयीका पाणिग्रहण किया. उसके बाद फिर बहुतसी रानियां व्याहीं. (वाल्मीकि लिखते हैं कि—दशरथजीके ३५० रानियां थीं) ॥ ३ ॥ सब रानियां तनमनसे दशरथजीकी सेवा करतीं थीं. राजा प्रजाका बड़ा सन्मान रखता था और धर्मसे उनका पालन करता था ॥ ४ ॥

॥ इति ॥

यह सब रुचिर चरित मैं भाषा ॥ अब सो सुनहु जो बीचहिं राषा ॥५॥ ❋
अवधपुरी रघुकुलमणि राऊ ॥ बेदबिदित तेहिं दशरथ नाऊ ॥ ६ ॥ ❋
धर्मधुरंधर गुणनिधि ज्ञानी ॥ हृदय भक्तिमति सारँगपानी ॥ ७ ॥ ❋

महादेवजी कहते हैं कि, हे पार्वती ! यह सब प्रसंगप्राप्त सुन्दर चरित्र हमने तुमसे कहा अब जो चरित्र बीचमें रह गया था वह हम कहते हैं सो सुनो ॥ ५ ॥ अयोध्याके पति राजा दशरथजी बड़े धर्मात्मा और ज्ञानी थे. उनका नाम वेदमेंभी प्रसिद्ध है ॥ ६ ॥ गुणोंके भंडार राजा दशरथजीके हृदयमें भगवान्‌की परम भक्ति थी ॥ ७ ॥

दोहा-कौशल्यादि नारि प्रिय, सब आचरण पुनीत ॥ ❋
पतिअनुकूल प्रेम दृढ़, हरिपदकमल बिनीत ॥ १९४ ॥ ❋

कौसल्या आदि रानियां राजाको परम प्रिय थीं उनका आचरण सब प्रकारसे परमपवित्र था. पतिके बड़ी अनकूल थीं. पतिके चरणोंमें उनकी दृढ़ प्रीति थी और प्रभुके चरणकमलोंकी परम भक्त थीं ॥ १९४ ॥

एकबार भूपति मनमाहीं ॥ भै गलानि मोरे सुत नाहीं ॥ १ ॥ ❋

एकबेर राजा दशरथजीके मनमें बड़ी ग्लानि हुई कि–हमारे पुत्र नहीं है सो हम बड़े अभागी हैं ॥ १ ॥

(क्षेपक) नवसहस्र सम्बत चलि गयऊ ॥ तब नृपके मन बिस्मय भयऊ ॥१॥
त्रय पन गे चौथो अब जाता ॥ हमैं पुत्र नहिँ दीन बिधाता ॥ २ ॥ ❋

नौ हजार वर्ष बीत गये तब राजाके मनमें बड़ा विस्मय हुआ ॥ १ ॥ देखो हमारी आयुके तीन भाग चले गये है और चौथापन आ गया है तौभी हमको विधाताने पुत्र नहीं दिया ॥ २ ॥

बिन बालक सुख कौने काजा ॥ सकल जानि दुखकेर समाजा ॥ ३ ॥ ❋
जलबिन सर जिमि गृह बिन दीपा ॥ तिमि बिन अंगज मलिन महीपा ४

पुत्र विना सुख किस कामका? पुत्र विना सारी समाज दुःखकी खान है ॥ ३ ॥ ऐसे जान कर राजा मुर्झा गया और मलिन होगया और सोचने लगा कि, जैसे जल विना सरोवर व दीपक विना घर शोभा नहीं पाता ऐसे गृहस्थी पुत्र विना शोभा नहीं पाता ॥ ४ ॥

यहिविधि करि बिचार मनमाहीं ॥ आये गुरु बशिष्ठके पाहीं ॥ ५ ॥ ❋

मनमें ऐसा विचार कर राजा दशरथ गुरु बशिष्ठके पास आये ॥ ५ ॥ ॥ इति ॥

गुरु गृह गये तुरत महिपाला ॥ चरण लागि करि बिनय बिशाला ॥ २ ॥ ❋
निज दुखसुख नृप गुरुहिँ सुनायो ॥ कहि बशिष्ठ बहुबिधि समुझायो ॥ ३ ॥ ❋
धरहु धीर होइहहिँ सुत चारी ॥ त्रिभुवन बिदित भक्तभय हारी ॥ ४ ॥ ❋

गुरु वसिष्ठजीके घर जाय उनके चरणोंमे पड़कर राजा दशरथजीने बड़ी विनय किया ॥ २ ॥ राजाने अपना सुख, दुःख गुरुको सुनाया. तब वसिष्ठजीने अनेक प्रकारसे कह कर समझाया ॥ ३ ॥ और कहा कि– आप धीरज धरो आपके चार पुत्र होवेंगे; जो जगत उजागर और भक्तोंका भय मिटानेवाले होंगे ॥ ४ ॥

शृङ्गीऋषिहिं बशिष्ठ बुलावा ॥ पुत्रलागि शुभ यज्ञ करावा ॥ ५ ॥ ❋
भक्तिसहित मुनि आहुति दीन्हे ॥ प्रगटे अग्नि चरू कर लीन्हे ॥ ६ ॥ ❋

वसिष्ठजीने शृंगी (ऋष्यशृंग) ऋषिको बुलाकर उनके हाथ शुभयज्ञ करवाया. ऋष्यशृंग ऋषि रोमपादके दामाद थे. ये ऋषि पहले व्यवहारसे बिलकुल अनजान थे. इनके बिवाह होनेका सबब यह हुआ था. रोमपादके राजमें बर्षा नहीं हुई तब राजाने ब्राह्मणोंको बुलाकर पूँछा तब उन्होंने कहा कि– ऋष्यशृंग ऋषि आपके राजमें आवें तो वर्षा होवे तब वेश्याओंको भेज ऋषिको लुभाय राजमें बुलवाया. ऋषिके आतेही बरषा हुई. राजाने अपनी शान्ता नाम कन्या ऋष्यशृंगको व्यादही तबसे वे वहीं रहने लगे. उनको वहांसे बुलाकर उनके हाथ यज्ञ

करवाया ॥ ५ ॥ मुनिने भक्तिके साथ आहुति दी तब अग्नि चरु हाथमें ले प्रगट हुआ ॥ ६ ॥

जो बशिष्ठ कछु हृदय बिचारा ॥ सकलकाज भा सिद्ध तुम्हारा ॥ ७ ॥ ❋
यह हवि बाँटि देहु नृप जाई ॥ यथायोग्य जेहि भाग बनाई ॥ ८ ॥ ❋

और उसने कहा कि– महाराज ! वसिष्ठजीने जो कुछ मनमें विचारा था वो सब आपका कार्य सिद्ध हुआ ॥ ७ ॥ हे राजन् ! तुम जाकर इस हवि यानी खीरके यथायोग्य भाग बनाके जो जिस भागके योग्य होवे उसे बांटकर दे दो ॥ ८ ॥

दोहा–तब अदृश्य पावक भये, सकल सभहिँ समुझाय ॥ ❋
परमानंद मगन नृप, हर्ष न हृदय समाय ॥ १९५ ॥ ❋

ऐसे कह सब सभाको समझाकर वे अग्नि अंतर्धान होगये. उस वक्त राजा दशरथजी परमानन्दमें मग्न हो फूले; अंग नहीं समाते थे और आनंद हृदयमें समाता नहीं था ॥ १९५ ॥

तबहिँ राउ प्रियनारि बुलाई ॥ कौशल्यादि तहां चलि आई ॥ १ ॥ ❋
अर्ध भाग कौशल्यहिँ दीन्हा ॥ उभय भाग आधे करलीन्हा ॥ २ ॥ ❋

तब राजाने अपनी प्यारी रानियोंको बुला भेजा. कौसल्या आदि सब रानियां वहां चली आईं॥ १ ॥ तहां उस हविमेंसे आधा भाग तो कौसल्याको दिया और पीछे जो आधा रहा उसके दो भाग किये॥२॥

कैकेयीकहँ सो नृप दयऊ ॥ रहेउ सो उभय भाग पुनि भयऊ ॥ ३ ॥ ❋
कौशल्या कैकेयी हाथ धरि ॥ दीन्ह सुमित्रहिँ मन प्रसन्न करि ॥ ४ ॥ ❋

तिनमेंसे एक भाग कैकेईको दिया. एक भाग जो बाकी रहा उसके फिर दो भाग किये ॥ ३ ॥ वे दोनों भाग कौसल्या और कैकेयीके हाथमें दे मनको प्रसन्न कर राजा दशरथने सुमित्राको दिवाये ॥४॥

यहिविधि गर्भसहित सब नारी ॥ भयउ हृदय हर्षित सुख भारी ॥ ५ ॥ ❋
जादिनते हरि गर्भहिँ आये ॥ सकल लोक सुख संपति छाये ॥ ६ ॥ ❋

इसतरह वे तीनों रानियां गर्भवती हुईं जिससे दशरथजीके मनमें बड़ा हर्ष हुआ और भारी सुख माना ॥ ५ ॥ जिस दिनसे हरि गर्भमें आये उसी दिनसे तमाम लोगोंमें सुख और संपदा छा गयी ॥ ६ ॥

मन्दिरमहँ सब राजहिँ रानी ॥ शोभा शील तेजकी खानी ॥ ७ ॥ ❋
सुखयुत कछुक काल चलि गयऊ ॥ जेहि प्रभु प्रकट सो अँवसर भयऊ ॥ ८ ॥

घरमें सब रानियां शोभा देने लगीं; जो शोभा, शील और तेजकी खान थीं ॥ ७ ॥ ऐसे आनंदपूर्वक कुछ काल व्यतीत हुआ तब वो शुभ समय आया कि, जिस समयमें प्रभु प्रगट हुए थे ॥ ८ ॥

दोहा–योग लग्न ग्रह बार तिथि, सकल भये अनुकूल ॥ ❋
चर अरु अचर हर्षयुत, रामजन्म सुखमूल ॥ १९६ ॥ ❋

प्रभुके जन्मके समय योग, लग्न, ग्रह, वार, तिथि, ये सबके सब अनुकूल हुए. और सारा चराचर जगत् आनंदमग्न हुआ; क्योंकि प्रभुका जन्मही सुखका मूल है ॥ १९६ ॥

नवमी तिथि मधु मास पुनीता ॥ शुक्लपक्ष अभिजित हरिप्रीता ॥ १ ॥ ❋
मध्य दिवस अति शीत न घामा ॥ पावन काल लोक बिश्रामा ॥ २ ॥ ❋

प्रभुका जन्म हुआ तब नवमी तिथि, पवित्र चैत्र मास, शुक्ल पक्ष, अभिजित् नक्षत्र ॥१॥ मध्यान्ह समय, न तो ज्यादा सर्दी और न ज्यादा गर्मी. वो समय ऐसा पवित्र और अच्छा था कि जिससे सब लोगोंको आराम मिले ॥ २ ॥

रामजन्मकुंडली. भरतजन्मकुंडली. लक्ष्मणशत्रुघ्नजन्मकुंडली.
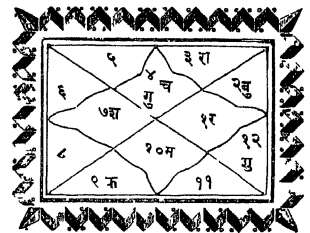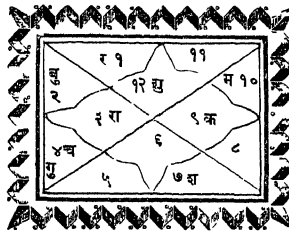
शीतल मन्द सुरभि बह बाऊ ॥ हर्षित सुर सन्तन मन चाऊ ॥ ३ ॥ ❋
बन कुसुमित गिरिगण मणियारा ॥ स्रवहिं सकल सरितामृत धारा ॥ ४ ॥

शीतल, सुगंध, मंद, त्रिविध बयार चलने लगी; देवता और संतलोग बड़े प्रसन्न हुए. उनके मनमें बड़ा हौंसिला हुआ ॥ ३ ॥ वन फूलोंसे प्रफुल्लित हो पर्वतसमूह रत्नमय हो गये. तमाम नदियोंमें अमृतकी धारा बहने लगी ॥ ४ ॥

सो अँवसर बिरंचि जब जाना ॥ चले सकल सुर साजि बिमाना ॥ ५ ॥ ❋
गगन बिमल संकुल सुरयूथा ॥ गावहिं गुण गन्धर्व बरूथा ॥ ६ ॥ ❋

जब ब्रह्माजीने यह अवसर जाना तब सब देवताओंको साथ ले विमानमें बैठ प्रभुके पास चले ॥ ॥ ५ ॥ उस समय निर्मल आकाशके भीतर देवताओंके वृंदकी भारी भीड़ हुई; विमानोंसे आकाश छा-गया. गंधर्वलोग प्रभुके गुण गाने लगे ॥ ६ ॥

वर्षहिं सुमन सुअंजलि साजी ॥ गहगह गगन दुन्दुभी बाजी ॥ ७ ॥ ❋
अस्तुति करहिं नाम मुनि देवा ॥ बहुविधि लावहिं निज निज सेवा ॥ ८ ॥ ❋

देवता हाथ जोड़ फूल बरसाने लगे. आकाशमें गहगहे दुंदुभी बाजे बजने लगे ॥ ७ ॥ नाग, मुनि और देवता स्तुति करते हैं. सब लोग अनेक प्रकारकी भेंटें लालाकर धरते हैं और सेवा करते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—सुरसमूह बिनती करी, पहुँचे निज निज धाम ॥ ❋
जग निवास प्रभु प्रगटेउ, अखिललोकबिश्राम ॥ १९७ ॥ ❋

देवगण विनती करके पीछे अपने २ घरको सिधारे. सब लोगोंको सुख देनेवाले जगन्निवास प्रभु दशरथजीके घर प्रगट हुए ॥ १९७ ॥

॥ श्रीरामजन्म तथा बाललीला ॥
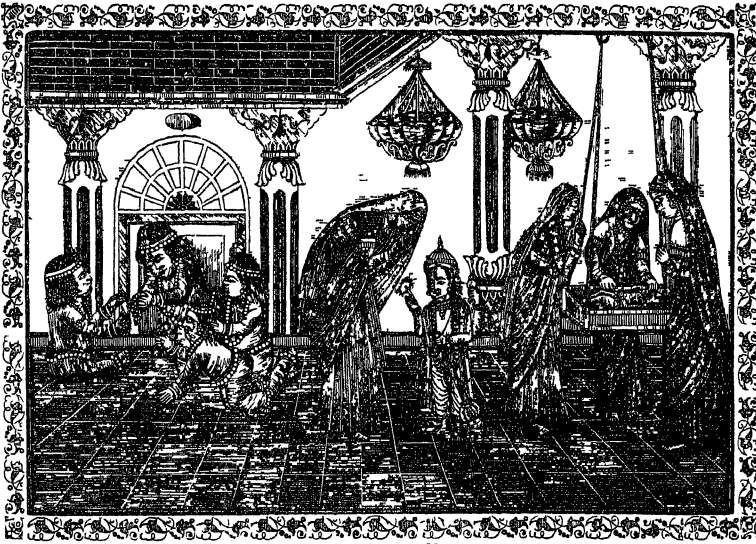
छंद–भये प्रगट कृपाला दीनदयाला कौशल्याहितकारी ॥ ❋
हर्षित महतारी मुनिमनहारी अद्भुतरूप निहारी ॥ ❋
लोचन अभिरामा तनु घनश्यामा निज आयुध भुज चारी ॥ ❋
भूषण बनमाला नयन बिशाला शोभासिंधु खरारी ॥ २३ ॥ ❋

जब कृपाके सागर कौसल्याके हितकारी दीनदयालु प्रभु प्रगट हुए तब उनका अद्भुतस्वरूप देखकर माता कौशल्या परम प्रसन्न हुई. कैसा है वह स्वरूप सो कहते हैं. सुन्दर नेत्र है, मेघसा श्याम शरीर है, चारों भुजाओंमें अपने चारों शस्त्र (शंख, चक्र, गदा व पद्म) धरे है, वनमाला पहिने है, सब अंगोंमें आभूषण सजे हैं बड़े विशाल नेत्र है, शोभाके सागर और खर नाम राक्षसके वैरी है, जिसकी शोभाको देखकर मुनिलोगोंके मन मोहित हो जाते है उस स्वरूपका दर्शन कर ॥ २३ ॥

कह दुहुँ कर जोरी अस्तुति तोरी केहिबिधि करौं अनन्ता ॥ ❋
मायागुणज्ञानातीत अमाना वेद पुराण भनन्ता ॥ ❋
करुणासुखसागर सबगुणआगर जेहिँ गावहिँ श्रुतिसंता ॥ ❋
सो मम हित लागी जन अनुरागी प्रगट भये श्रीकंता ॥ २४ ॥ ❋

दोनों हाथ जोड़ कौसल्याने कहा कि–हे अनन्त प्रभु ! मैं आपकी स्तुति कैसे करूं ? क्योंकि वेद और पुराणभी ऐसे कहते है कि, प्रभुका स्वरूप मायाके गुणोंसे पर इंद्रियजन्य ज्ञानसे अगोचर और प्रमाणका विषय नहीं है तब मुझ स्त्री जातिकी कहां चली? हे प्रभु ! मैं तो ऐसे जानती हूंकि, जिसे श्रुति और संतलोग गाते हैं वे करुणा व सुखके सागर, सब गुणोंके आगर, भक्तानुरागी, लक्ष्मीपति, प्रभु मेरा हित करनेके लिये प्रगट हुए हैं ॥ २४ ॥

ब्रह्मांड निकाया निर्मित माया रोम रोम प्रति बेद कहै ॥ ❋
मम उर सो बासी यह उपहासी सुनत धीरमति थिर न रहै ॥ ❋
उपजा सब ज्ञाना प्रभु मुसकाना चरित बहुत विधि कीन्ह चहै ॥ ❋
कहि कथा सुनाई मातु बुझाई जेहि प्रकार सुत प्रेम लहै ॥ २५ ॥ ❋

कौशल्याने बड़े अचंभेके साथ कहा कि–हे प्रभु ! वेद ऐसे कहते है कि, आपके रोमरोममें मायासे रचेहुए अनेक ब्रह्मांडसमूह पड़े रहते हैं सो वे आप मेरे उदरमें कैसे रहे ? इस बातकी मुझे बड़ी हाँसी आती है. केवल मैंही नहीं,बड़े २ धीर पुरुषोंकी बुद्धिभी यह बात सुनकर थिर नहीं रहती. जब कौसल्याको ज्ञान प्राप्त हो गया तब प्रभु हँसे कि–देखो इसको किस वक्तमें ज्ञान प्राप्त हुआ है अभी इसको ज्ञान नहीं होना चाहिये; क्योंकि अभी मुझको बहुत चरित्र करने है. कवि कहते हैं कि–उस वक्त प्रभु अनेक प्रकारके चरित्र करना चाहते थे इस लिये माताको अनेक प्रकारकी कथा सुनाय ऐसे समझाय बुझाय दिया कि, जिसतरह उसके मनमें पुत्रका प्रेम पैदा हो गया ॥ २५ ॥

माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तात यह रूपा ॥ ❋
कीजै शिशुलीला अतिप्रियशीला यह सुख परम अनूपा ॥ ❋
सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना होय बालक नरभूपा ॥ ❋
यह चरित जे गावहिँ हरिपद पावहिँ ते न परैं भवकूपा ॥ २६ ॥ ❋

प्रभुकी प्रेरणासे कौसल्याकी बुद्धि दूसरी ओर डोल गयी तिससे वह फिर बोली कि–हे तात! आप यह स्वरूप तज दो. बालकस्वरूप धारण कर अतिशय प्रिय स्वभाववाली बाललीला करो. यह सुख मुझको बहुत अच्छा लगता है. माताके ऐसे वचन सुन प्रभुने बालकस्वरूप धारण कर रुदन करना शुरू किया. महादेवजी कहते है कि–हे पार्वती ! जो मनुष्य इस चरित्रको गाते है वे मनुष्य अवश्य भगवत्पदको प्राप्त हो जाते है; कभी संसाररूप कूएँमे नहीं गिरते ॥ २६ ॥

दोहा–विप्र धेनु सुर संत हित, लीन्ह मनुज अवतार ॥ ❋
निज इच्छा निर्मित तनु, माया गुण गोपार ॥ १९८ ॥ ❋

प्रभुने गौ, ब्राह्मण, देवता और संत लोगोंका हित करनेके लिये अपनी इच्छासे शरीर धारण कर मनुष्यअवतार लिया था; क्योंकि प्रभु मायाके गुणोंसे पर और इंद्रियोंके अगोचर है ॥ १९८ ॥

सुनि शिशुरुदन परम प्रिय बानी ॥ सम्भ्रम चलि आईं सब रानी ॥ १ ॥ ❋
हर्षित जहँ तहँ धाईं दासी ॥ आनँदमग्न सकल पुरवासी ॥ २ ॥ ❋

परम माधुर्य वात्सल्य रसमय बालकका रुदन सुन, सब रानियां बड़े संभ्रमके साथ वहां चलीं आई ॥१॥ दासियां प्रसन्न होकर जहां तहां दौड़ीं.सब नगरके लोग पुत्रकी बधाई सुन आनंदमग्न होगये॥२॥

दशरथ पुत्रजन्म सुनि काना ॥ मानहुँ ब्रह्मानंद समाना ॥ ३ ॥ ❋
परम प्रेम मन पुलक शरीरा ॥ चाहत उठन करत मतिधीरा ॥ ४ ॥ ❋

दशरथजीने जब अपने कानोंसे पुत्रजन्मके समाचार सुने तब वे ऐसे आनंदमग्न हुए कि, मानों ब्रह्मानन्दकोही पा लिया है ॥ ३ ॥ दशरथजीके मनमें अतिशय प्रेम बढ़ा. शरीरके रोम खड़े होगये. यद्यपि प्रेमके मारे दशरथजी उठना चाहते थे तथापि बुद्धिमें धीरज धरकर मनको बश रक्खा॥ ४॥

जाकर नाम सुनत शुभ होई ॥ मोरे गृह आवा प्रभु सोई ॥ ५ ॥ ❋
परमानंद पूरि मन राजा ॥ कहा बुलाइ बजावहु बाजा ॥ ६ ॥ ❋

दशरथजीने मनमें विचारा कि, जिसका नाम सुननेसे भला हो जाता है वह प्रभु मेरे घर आये, इससे बढ़कर क्या बड़ाभाग्य होगा ? ॥ ५ ॥ राजाका मन परमानन्दसे पूर्ण हो गया. राजाने मंत्रियोंको बुलाकर कहा कि– बधाईके बाजे बजाओ ॥ ६ ॥

गुरु बसिष्ठ कहँ गयेउ हँकारा ॥ आये द्विजन सहित नृप द्वारा ॥ ७ ॥ ❋
अनुपम बालक देखि न जाई ॥ रूपराशि गुण कहि न सिराई ॥ ८ ॥ ❋

फिर गुरु वसिष्ठजीको बुला भेजा तब वे ब्राह्मणोंको साथ लेकर राजाके दरवाजेपर आ उपस्थित हुए ॥ ७ ॥ वसिष्ठजीने आकर उस बालकको देखा तो वह बालक ऐसा अद्वितीय है कि, जिसकी तर्फ देखा नहीं जा सकता. वो ऐसा रूपकी राशि है कि जिसको वर्णन करते२पार नहीं पा सकते ॥८॥

दोहा–तब नांदीमुख श्राद्ध करि, जातकर्म सब कीन्ह ॥ ❋
हाटक धेनु बसन मणि, नृप बिप्रनकहँ दीन्ह ॥ १९९ ॥ ❋

तब नांदीमुख श्राद्ध करके सब सांगोपांग जातकर्म संस्कार किया. राजाने ब्राह्मणोंको सुवर्ण, घी, वस्त्र और रत्न आदि अनेक दान दिये ॥ १९९ ॥

ध्वज पताक तोरण पुर छावा ॥ कहि न जाय जेहि भाँति बनावा ॥१॥ ❋
सुमनवृष्टि आकाशते होई ॥ ब्रह्मानंदमगन सब कोई ॥ २ ॥ ❋

ध्वजा, पताका और तोरणोंसे नगर छा गया. उस वक्त जिस तरहका बनाव बना था वो किसी भांति कहनेमें नहीं आ सक्ता ॥ १ ॥ आकाशमेंसे फूलोंकी बरषा हुई. नगरके सब कोई ब्रह्मानंदके समान मगन होगये ॥ २ ॥

वृन्द वृन्द सब चलीं लुगाई ॥ सहजशृँगार किये उठि धाई ॥ ३ ॥
कनककलश मंगल भरि थारा ॥ गावत पैठहिं भूपदुआरा ॥ ४ ॥ ❋

स्त्रियां, यूथके यूथ मिल सहजशृंगार कर जहां बैठीं थीं वहांसे उठ दौड़कर उत्सव देखनेको चलीं ॥ ३ ॥ कंचनके कलश और मांगलिक द्रव्यसे भरेहुए थार हाथोंमें ले लेकर गातीं हुई स्त्रियां राजद्वारमें जाती है ॥ ४ ॥

करि आरती निछावरि करहीं ॥ बार बार शिशुचरणन परहीं ॥ ५ ॥ ❋
मागध सूत बंदि गुणगायक ॥ पावन गुण गावहिं रघुनायक ॥ ६ ॥ ❋

आरती कर न्यौछावर करती हैं और बारंबार बालकके चरणोंपर गिरती है ॥ ५ ॥ मागध, सूत, बंदीजन और दूसरेभी गुण गानेवाले कविलोग प्रभुके पवित्र गुण गाते है ॥ ६ ॥

सर्बस दान दीन्ह सब काहू ॥ जेहि पावा राखा नहिं ताहू ॥ ७ ॥ ❋
मृगमदचन्दनकुंकुमकीचा ॥ मची सकल बीथिन बिचबीचा ॥ ८ ॥ ❋

और अपार धन पाते हैं. उस वक्त सब किसीने सर्वस्व दान कर दिया था. वहां जिसको जो कुछ मिला था उसने वहीं वो दे दिया था. किसीने कुछभी अपने पास नही रक्खा था ॥ ७ ॥ और तमाम गलियोंके बीचमें कस्तूरी चंदन और केसरका कीच मच गया था ॥ ८ ॥

दोहा–गृह गृह बाज बधाव शुभ, प्रगट भये सुखकन्द ॥ ❋
हर्षवंत सब जहँ तहँ, नगरनारिनरवृन्द ॥ २०० ॥ ❋

जब आनंदकन्द प्रभु प्रगट हुए तब घर २ में शुभ बधाई बँटने लगी और बाजे बजने लगे. नगरमें जहां तहां सब स्त्रीपुरुष आनंदमय हो रहे थे ॥ २०० ॥

केकयसुता सुमित्रा दोऊ ॥ सुंदरसुत जन्मत भईं सोऊ ॥ १ ॥ ❋

वह सुख सम्पति समय समाजा ॥ कहि न सकैं शारद अहिराजा ॥२॥ ❋

फिर थोड़ेही अर्सेसे जब कैकेयी और सुमित्रानेभी सुन्दर पुत्र उत्पन्न किये ॥ १ ॥ तब तौ वहां ऐसा आनंद, सुख और संपदाका समाज बढ़ा कि, जिसको शारदा और शेषजीभी वर्णन नहीं कर सकते ॥ २ ॥

अवधपुरी सोहै इहि भांती ॥ प्रभुहिँ मिलन आइ जनु राती ॥ ३ ॥ ❋
देखि भानु जनु मन सकुचानी ॥ तदपि बनी सन्ध्या अनुमानी ॥ ४ ॥ ❋

प्रभुके जन्मोत्सवके समय अयोध्यामें जो गुलाल अबीर उड़ा तिससे दिनभी रात्रिसा दिखायी देने लगा. तहां उत्प्रेक्षा करते है—गुलाल अबीर उड़नेसे जो अंधियारा छा गया उससे वह अयोध्या ऐसी शोभा देने लगी कि, मानों अयोध्याकी शोभा देखनेको रात्रिही आई ॥ ३ ॥ पर आगे सूरजको देखकर मानो मनमें सकुचा गयी तौभी वह संध्यारूप बन गयी ॥ ४ ॥

अगर धूप जनु बहु अँधियारी ॥ उड़ै अबीर मनहुँ अरुणारी ॥ ५ ॥ ❋
मन्दिर मणिसमूह जनु तारा ॥ नृपगृह कलश सो इंदु उदारा ॥ ६ ॥ ❋

क्योंकि, उसमें संध्याके सब लक्षण अनुमान होते थे. नगरीके भीतर जो अगरका धूप है वोही तौ मानों गाढ़ अंधकार है. और जो अबीर उड़ता है मानों वही उसमें लाली है ॥ ५ ॥ घरोंमे जो अनेक प्रकारके रत्न है वेही मानों तारागण है. राजभवनपर जो कलश चढ़ा हुआ है वही मानों उदार चंद्रमा है ॥ ६ ॥

भवन बेदधुनिअनि मृदुबानी ॥ जनु खग मुखर समय सुख सानी ॥ ७ ॥ ❋
कौतुक देखि पतंग भुलाना ॥ एकमास तेहिँ जात न जाना ॥ ८ ॥ ❋

घरमें जो ब्राह्मणलोग मधुर वाणीसे वेदध्वनि करते हैं वेही मानो संध्यासमयके पक्षी सुखमय रसभरी वाणी बोल रहे है ॥ ७ ॥ इस कौतुकको देखकर सूरजभी मोहित हो गया; जिससे एक महीनेतक वहीं ठहरा रहा. अपनी गति भूल गया ॥ ८ ॥

दोहा--मास दिवसका दिवस भा, मरम न जानै कोइ ॥ ❋
रथसमेत रवि थाकेउ, निशा कौन बिधि होइ ॥ २०१ ॥ ❋

एक महीनेका जो दिन हुआ इसका भेद किसीने नहीं जाना. सूरज नारायण अपने रथके साथ वहां थंभ गये थे. अब रात्रि किस तरह होवे ? ॥ २०१ ॥

यह रहस्य काहू नहिं जाना ॥ दिनमणि चले करत गुण गाना ॥ १ ॥ ❋
देखि महोत्सव सुर मुनि नागा ॥ चले भवन बर्णत निजभागा ॥ २ ॥ ❋

इस रहस्य बातकी किसीको खबर नहीं पड़ी. प्रभुके गुण गातेहुए सूर्यनारायणभी वहांसे चले ॥ १ ॥ प्रभुके जन्मका महोत्सव देखकर सब देवता, मुनि और नाग प्रसन्न हो अपनी २ भाग्यको धन्यवाद देते सराहते अपने २ घर सिधारे ॥ २ ॥

औरो एक कहौं निजचोरी ॥ सुनु गिरिजा अति दृढ़ मति तोरी ॥ ३ ॥ ❋
काकभुशुण्डिसंग हम दोऊ ॥ मनुजरूप जानै नहिँ कोऊ ॥ ४ ॥ ❋

१ शंका—तुलसीदासजीने कैसे जाना ? उ० भगवत्कृपासे. [निरूहमप्यूहति पंडितो जनः] अर्थात् भगवत्कृपासे विद्वान् अतर्क्यकोभी जानता है.

महादेवजी कहते हैं कि–हे उमा! तेरी मति अत्यंत दृढ़ है इसलिये एक औरभी चरित्र मैं तुझसे कहता हूं सो सुन; जिसमें हमारी चोरी है ॥ ३ ॥ काकभुशुंडि और मैं ऐसे हम दोनों मनुष्यरूप धारण कर संग संग वहां गये, जिसकी किसीको खबर नहीं पड़ी ॥ ४ ॥

परमानन्द प्रेम सुख फूले ॥ बीथिन फिरहिं मगन मन भूले ॥ ५ ॥ ❋
यह सब चरित जान पै सोई ॥ कृपा रामकी जापर होई ॥ ६ ॥ ❋

वहां हम दोनों परमानन्दमें मग्न हो प्रेम और सुखके मारे फूले २ गलियोंमें फिरते थे, हमारा मन ऐसा मगन हो गया था कि, हमको उस समय किसी बातकी सुध नहीं थी ॥ ५ ॥ परंतु हे पार्वती! यह सब चरित्र वोही जान सकता है कि, जिसपर प्रभुकी कृपा होती है ॥ ६ ॥

तेहि अवसर जो जेहि बिधि आवा ॥ दीन्ह भूप जो जेहि मन भावा ॥ ७ ॥ ❋
गज रथ तुरग हेम गो हीरा ॥ दीन्हे नृप नानाबिधि चीरा ॥ ८ ॥ ❋

उस समय वहां जो जिसतरह आया था और जिसने जो मनमे चाहा था, दशरथजीने उसको वही दिया ॥ ७ ॥ राजाने हाथी, घोड़े, रथ, सुवर्ण, गौ, हीरा यानी रत्न और वस्त्र आदि अनेक प्रकारके दान दिये ॥ ८ ॥

दोहा–मन सन्तोष सबनके, जहँ जहँ देहिं अशीश ॥ ❋
सकल तनय चिरजीवहू, तुलसिदासके ईश ॥ २०२ ॥ ❋

राजा दशरथजीने सबका मन संतुष्ट किया, जिससे जहां तहां लोग आशीश देते हैं कि–हे राजन्! आपके सब पुत्र चिरंजीव रहैं. तुलसीदासजी कहते है कि–जो दास तुलसीदासके स्वामी है ॥ २०२ ॥

कछुक दिवस बीते यहि भांती ॥ जात न जानहिँ दिन अरु राती ॥ १ ॥ ❋
नामकरणकर अवसर जानी ॥ भूप बोलि पठये मुनि ज्ञानी ॥ २ ॥ ❋

कुछ दिन इसतरह बीते कि, रात और दिनकीभी खबर नहीं पड़ती थी ॥ १ ॥ जब नामकरण-संस्कार करनेका समय आया तब राजाने ज्ञानी मुनि वसिष्ठजीको बुला भेजा ॥ २ ॥

करि पूजा भूपति अस भाषा ॥ धरिय नाम जो मुनि गुणि राषा ॥ ३ ॥ ❋
इनके नाम अनेक अनूपा ॥ मैं नृप कहब स्वमति अनुरूपा ॥ ४ ॥ ❋

गुरुका सत्कार करके दशरथजीने ऐसे कहा कि–हे मुनि! आपने जो नाम विचार रक्खे हों वेही इनके नाम धरिये ॥ ३ ॥ राजाके ऐसे बचन सुन वसिष्ठजी बोले कि– महाराज! इनके नाम कई हैं और एक एकसे अनुपम हैं सो मैं मेरी बुद्धिके अनुसार कहता हूं सो सुनिये ॥ ४ ॥

जो आनन्दसिंधु सुखराशी ॥ सीकरते त्रैलोक्य सुपाशी ॥ ५ ॥ ❋
सो सुखधाम राम अस नामा ॥ अखिल लोकदायक बिश्रामा ॥ ६ ॥ ❋

जो आनंदका समुद्र सुखका पुंज अपने वंशसे त्रिलोकीके सुपास करनेवाला है ॥ ५ ॥ व सब लोगोंको आराम देनेवाला सुखका धाम है उसका नाम तो राम ऐसा होगा ॥ ६ ॥

बिश्वभरण पोषण करु जोई ॥ ताकर नाम भरत अस होई ॥ ७ ॥ ❋
जाके सुमिरणते रिपुनाशा ॥ नाम शत्रुहन बेद प्रकाशा ॥ ८ ॥ ❋

जो जगतका भरण यानी धारण पोषण अर्थात् पालन करनेवाला है उसका नाम भरत ऐसा होगा

॥ ७ ॥ जिसका स्मरण करनेसे शत्रुओंका नाश हो जाय उसका नाम शत्रुघ्न ऐसा होगा. जो वेदमें प्रसिद्ध है ॥ ८ ॥

दोहा–लक्ष्मणधाम रामप्रिय, सकल जगतआधार ॥ ❋
गुरु बसिष्ठ तेहिँ राखेउ, लक्ष्मण नाम उदार ॥ २०३ ॥ ❋

जो लक्ष्मण यानी सुलक्षणोंका घर, रामचन्द्रजीका प्यारा और सब जगत्का आधार है उसका नाम गुरु वसिष्ठजीने लक्ष्मण ऐसा रक्खा, जो परम उदार है ॥ २०३ ॥

धरे नाम गुरु हृदय बिचारी ॥ वेदतत्त्व नृप तव सुत चारी ॥ १ ॥ ❋
मुनिजन धन सर्बस शिव प्राना ॥ बालकेलिरस तेहिँ सुख माना ॥ २ ॥ ❋

गुरु वसिष्ठजीने अपने मनमें पक्का विचार करके ये नाम रक्खे और दशरथजीसे कहा कि-महाराज ! ये आपके चारों पुत्र वेदके तत्वरूप हैं ॥ १ ॥ ये आपके पुत्र मुनिलोगोंके सर्वस्व धन हैं और महादेवजीके तौ प्राणमही है. गुरुके ऐसे बचन सुन, इनकी बाललीलाका आनंद देख दशरथजीने अपने मनमें बड़ा सुख माना ॥ २ ॥

बारहिते निजहित पति जानी ॥ लक्ष्मण रामचरण रति मानी ॥ ३ ॥ ❋
भरत शत्रुहन दोनों भाई ॥ प्रभुसेवक जस प्रीति बढ़ाई ॥ ४ ॥ ❋

लक्ष्मण बचपनसेही रामचन्द्रजीको अपने स्वामी और हितकारी जानकर उनके चरणोंमे बड़ी प्रीति रखने लगे ॥ ३ ॥ ऐसेही भरत और शत्रुघ्न ये दोनों भाई साथ साथ रहने लगे. लक्ष्मण और रामचन्द्रजी साथ रहे इसका कारण यह था कि, कौसल्याके हाथ जो हविका अंश सुमित्राको मिला उससे लक्ष्मणजी पैदा हुए थे और शत्रुघ्न भरतके साथ रहे इसका कारण यह था कि, सुमित्राको जो अंश कैकेयीके हाथ मिला था उससे शत्रुघ्न जन्मे थे. यद्यपि लक्ष्मण और रामके आपसमें बड़ी प्रीति थी तथापि भरत और शत्रुघ्नभी प्रभुके परम भक्त थे, इनकोभी प्रभुमें लक्ष्मणके जैसीही प्रीति थी ॥ ४ ॥

श्याम गौर सुन्दर दोउ जोरी ॥ निरखहिँ छबि जननी तृण तोरी ॥ ५ ॥
चारिउ शीलरूपगुणधामा ॥ तदपि अधिक सुखसागर रामा ॥ ६ ॥ ❋

श्याम और गौर वर्ण दोनों सुन्दर जोड़ी देख, उनकी छबि निरख मातायें दृष्टि लगनेकी शंकासे तृण तोडती थीं ॥ ५ ॥ यद्यपि सब चारों भाई शील रूप और गुणके धाम है तथापि राम तौ उनमें सबकी अपेक्षा अधिक गुण और सुखका सागरही हैं ॥ ६ ॥

हृदय अनुग्रह इन्दुप्रकासा ॥ सूचित किरण मनोहर हासा ॥ ७ ॥ ❋
कबहुँ उछंग कबहुँ बर पालन ॥ मातु दुलारहिँ कहि प्रिय लालन ॥ ८ ॥ ❋

उन सब भाईयोंके हृदयमें बड़ी दया है. उनका चन्द्रमाकासा प्रकाश यानी कांति है. जो सुन्दर हास्य है वो चंद्रमाकी किरणोंको सूचित करता है अर्थात् चंद्रमाकी किरणोंके जैसा मनोहर हास्य है ॥ ७ ॥ कभी तौ माता गोदमें ले हलरावतीं हैं और कभी मणिजटित रेशमसे गुथे पालनोंमें आनंदभरी प्रिय लालन कह कह कर झुलातीं हैं ॥ ८ ॥

दोहा--व्यापक ब्रह्म निरंजन, निर्गुण बिगत बिनोद ॥ ❀
सो अज प्रेमभक्तिबश, कौसल्याकी गोद ॥ २०४ ॥ ❀

कबि कहते हैं कि–जो प्रभु सर्वत्र व्यापकस्वरूप, निरंजन अर्थात् दोषरहित, निर्गुण, चेष्टारहित, अजन्मा व परब्रह्म हैं वेही प्रेम व भक्तिके बश होकर कौसल्याकी गोदमें विराजे हैं ॥ २०४ ॥

काम कोटि छबि श्याम शरीरा ॥ नीलकंज बारिद गंभीरा ॥ १ ॥ ❀
अरुणचरणपंकज नख जोती ॥ कमल दलन बैठे जनु मोती ॥ २ ॥ ❀

करोड़ों कामदेवोंकीसी मनोहर छबि है, श्याम कमल और सघन घनके समान श्यामल शरीर है ॥ १ ॥ अरुण चरणकमलोंके बीच नखोंकी ज्योति कैसी शोभायमान हो रहीहै कि मानों कमलदलके बीच मोती बिराज रहे है ॥ २ ॥

रेख कुलिश ध्वज अंकुश सोहैं ॥ नूपुरधुनि सुनि मुनिमन मोहैं ॥ ३ ॥ ❀
कटि किंकिणी उदर त्रय रेखा ॥ नाभि गँभीर जानु जेहिँ देखा ॥ ४ ॥ ❀

चरणोंके भीतर रेखामय वज्र, ध्वजा व अंकुश शोभायमान हो रहे हैं; नूपुरकी ध्वनि सुन मुनिलोगोंके मन मोहित होते हैं ॥ ३ ॥ कमरमें किंकिणीका शब्द होता है; उदरमें सुन्दर तीन रेखा शोभायमान हो रही हैं; नाभि ऐसी गंभीर और सुन्दर है कि, जिसने देखी है वही उसकी सुन्दरताको जाने. हम नहीं कह सकते ॥ ४ ॥

भुज बिशाल भूषणयुत भूरी ॥ हिय हरिनख शोभा अतिरूरी ॥ ५ ॥ ❀
उर मणिहार पदिककी शोभा ॥ बिप्र चरण देखत मन लोभा ॥ ६ ॥ ❀

विशाल भुजाओंमें बहुतसे गहने पहिरे हैं, हृदयमें बाघके नखकी बहुत अच्छी शोभा बन रही है ॥ ५ ॥ वक्षःस्थलके बीच मणियोंका हार और पदक यानी हीरा शोभायमान हो रहे हैं तथा भृगुऋषीके चरणका चिन्ह हृदयमें ऐसा शोभायमान लगता है कि,जिसको देखतेही मन लुभायमान हो जाता है ॥ ६ ॥

कम्बुकंठ अतिचिबुक सुहाई ॥ आनन अमित मदन छवि छाई ॥ ७ ॥ ❀
दुइ दुइ दशन अधर अरुणारे ॥ नासा तिलक को बरणै पारे ॥ ८ ॥ ❀

शंखकीसी कंठके भीतर तीन रेखा पड़ रही हैं. बहुतही सुहावनी सुंदर चिबुक (दाढ़ी) है. मुखारविंदके भीतर असंख्यों कामदेवोंकी छबि छा रही है ॥ ७ ॥ दो दो दांत आये हैं; लाल ओष्ठ हैं; नासिका और तिलककी शोभा तो ऐसी है जिसको कोई कहही नहीं सकता ॥ ८ ॥

सुन्दर श्रवण सुचारु कपोला ॥ अति प्रिय मधुर सु तोतरि बोला ॥ ९ ॥ ❀
नील कमल दोउ नयन बिशाला ॥ बिकट भृकुटि लटकत बरमाला १० ❀

सुन्दर कपोल व मनोहर कान हैं. अतिशय प्रिय और मधुर तोतरी वाणी है ॥ ९ ॥ नील कमलके जैसे सुन्दर विशाल दुइ नेत्र हैं. बड़ी विकट भ्रुकुटी हैं. सुन्दर माला पैरोंतक लंबी लटक रही है ॥ १० ॥

चिक्कण कच कुंचित गभुआरे ॥ बहु प्रकार रचि मातु सँवारे ॥ ११ ॥ ❀
पीत झँगुलिया तन पहिराये ॥ जानु पाणि बिचरत महि भाये ॥ १२ ॥ ❀

रूप सकहिं नहिं कहि श्रुति शेषा॥ सो जाने सपनेहुँ जिन्ह देषा॥१३॥❋

बहुत सचिक्कण, टेढ़े और बाल अवस्थाके घूंघरुवाले बाल हैं जिनको माता अनेक प्रकारसे रचि रचिके संवारती है ॥ ११ ॥ पीली झुंगुलिया शरीरमें माताने पहिराया है. घुटनो और हाथोंके बल पृथ्वीपर आनंदसे विचर रहे है ॥ १२ ॥ जिस स्वरूपको वेद और शेषजीभी कह नहीं सकते उस स्वरूपको वही जान सकता है कि, जिसने प्रभुके स्वरूपको स्वप्नमेंभी देखा है; विना देखे उसका अनुभव नहीं हो सकता ॥ १३ ॥

दोहा–सुखसन्दोह मोहपर, ज्ञान गिरा गोतीत ॥
दम्पति परम प्रेमबश, करि शिशुचरित पुनीत ॥ २०५ ॥ ❋

सुखके पुंज, मोह कहे अविद्यासे पर,ज्ञान वाणी और इंद्रियोंसे अगोचर, प्रभु श्रीरामचन्द्रजी,राजा रानीके अतिशय प्रेमोंके वश होकर अतिपवित्र बाललीला करते हैं ॥ २०५ ॥

(क्षेपक) यहिविधि बालचरित प्रभु करहीं॥ देखि लोग उर आनँद भरहीं१❋
यक दिन एक सलूका आवा ॥ नृपके द्वारे कीश नचावा ॥ २ ॥ ❋

इसतरह प्रभु बाललीला करते हैं जिसे देख २ कर लोग मनमें आह्लादित होते हैं ॥ १ ॥ एक दिन एक बन्दर नचानेवाला आया, उसने राजद्वारपर बंदरको नचाया ॥ २ ॥

देखि राम ठानी मचलाई ॥ कहैं कि मोहिं कपि देहु मँगाई ॥ ३ ॥ ❋
भूप मँगाय देन बहु लागे ॥ तदपि न लेत रुदत पुनि आगे ॥ ४॥ ❋
तब नृप भाष्यो गुरुते जाई ॥ सुनि बसिष्ठ बोले हरषाई ॥ ५ ॥ ❋

तिसे देखकर रामचन्द्रजीने मचलाई करी और कहा कि–मुझे बन्दर मँगा दो ॥ ३ ॥ तब राजाने बहुतसे बन्दर मँगाये और देने लगे तौभी प्रभुने वे बन्दर नहीं लिये और फिर पिताके आगे रोने लगे ॥ ४ ॥ तब राजाने जाकर गुरु वसिष्ठजीसे कहा. सो समाचार सुनकर वसिष्ठजीने आनंदित होकर कहा ॥ ५ ॥

दोहा–जेहि हित रोवत रामजी, सो मर्कट है आन ॥ ❋
सुनौ नृपति सो रहत जहँ, तुमते करौ बखान ॥ २६ ॥ ❋

कि–महाराज ! जिस बन्दरके लिये रामचन्द्र रोते हैं वो बन्दर दूसरा है. हे राजन् ! वो बन्दर जहां रहता है वो मैं तुमसे कहता हूं सो सुनो ॥ २६ ॥

केशरिसुवन नाम महवीरा ॥ रहत सदा पंपासरतीरा ॥ १ ॥ ❋
है रविसुत कीशनकर राजा ॥ तहाँ रहत नित सहित समाजा ॥ २ ॥ ❋

केसरी नाम वानरका पुत्र महावीर नाम वानर सदा पंपासरोवरके तीरपर रहता है उसे बुलाकर रामको देओ ॥ १ ॥ उसको बुलानेकी युक्ति यह है सो सुनो. सूर्यका पुत्र सुग्रीव नाम वानर बानरोंका राजा है. सो वह अपनी समाजके साथ हमेशा पंपासरोवरके तीरपर रहता है ॥ २ ॥

दूत पठाय लेहु तुम आनी ॥ तुमसन कहौं सत्य मम बानी ॥ ३ ॥ ❋
तुरत भूपभट भूरि पठाये ॥ सकल सुकंठ पास चलि आये ॥ ४ ॥ ❋

सो आप सुग्रीवके पास दूत भेजकर उसे यहां बुलाओ. मैं आपसे यह सच्ची बात कहता हूं ॥३॥

तब राजाने तुरंत अपने दूत भेजे. वे राजाकी आज्ञा होतेही चले सो सीधे सुग्रीवके पास आये ॥ ४ ॥

जो नृप कह्यो सो बर्णन कीन्हा ॥ सुनि सुकण्ठ तुरतै कपि दीन्हा ॥ ५ ॥
लै आये मंदिर हरषाई ॥ देखि राम उर लीन लगाई ॥ ६ ॥ ❀

राजाने दूतोंसे जो बात कही थी वह सब बात दूतोंने सुग्रीवसे कही तब सुग्रीवने दूतोंकी बात सुनकर तुरंत हनुमानको उनके हवाले कर दिया ॥ ५ ॥ उसे ले बड़े आनंदके साथ दूत पीछे राजमंदिरमें आये तिन्हें देख बानरको अपने पास लेकर रामचन्द्रजीने उसे अपनी छातीसे लगाया ॥ ६ ॥

हनूमानके अति सुख भयऊ ॥ मिलि लघुरूप तहाँ होय गयऊ ॥ ७ ॥ ❀
जहँ जहँ खेलैं राम सुरंगा ॥ तहँ तहँ कपि राखैं निजसंगा ॥ ८ ॥ ❀

प्रभुके छातीसे लगानेसे हनूमानके मनमें बड़ा आनंद हुआ. रामचन्द्रजीसे मिला उस समय हनूमानने अपना स्वरूप बहुत छोटा कर लिया ॥ ७ ॥ सो अब जहां २ रामचन्द्रजी खेलनेको जावें और खेलें तहां तहां इस बानरको अपने साथका साथ राखते थे ॥ ८ ॥ ॥ इति ॥

यहिबिधि राम जगत पितु माता ॥ कोशलपुरबासिन सुखदाता ॥ १ ॥ ❀
जिन रघुनाथचरण रति मानी ॥ तिनकी यह गति प्रगट भवानी ॥ २ ॥ ❀

महादेवजीने कहा कि—हे उमा ! इसतरह जगत्के मातापितारूप श्रीरामचन्द्रजी कोसलपुरके रहनेवाले लोगोंको सदा सुख देते रहे ॥ १ ॥ हे पार्वती ! जिन लोगोंकी रघुनाथजीके चरणोंमें परम प्रीति है उनकी यह गति होवे इसमे आश्चर्यही क्या ? भगवद्भक्तिका फल सदा प्रगट है ॥ २ ॥

रघुपतिबिमुख यतन कर कोरी ॥ कवन सकै भवबन्धन छोरी ॥ ३ ॥ ❀
जीव चराचर बश कै राषै ॥ सो माया प्रभुसो भय भाषै ॥ ४ ॥ ❀

जो प्रभुके चरणोंसे विमुख हैं वे चाहे करोड़ों उपाय क्यों न करें ? पर किसी कदर कोईभी भवबंधनसे छुटा नहीं सकता ॥ ३ ॥ यह माया कि जो सारे चराचर जीवमात्रको अपने बशमें रखती है वहभी प्रभुके आगे जाती त्रास खाती बोलती है ॥ ४ ॥

भृकुटिबिलास नचावै ताही ॥ अस प्रभु छाँड़ि भजिय कहु काही ॥ ५ ॥ ❀
मन क्रम बचन छाँड़ि चतुराई ॥ भजतहिँ कृपा करै रघुराई ॥ ६ ॥ ❀

प्रभु उस मायाको अपनी भृकुटीके बिलासमात्रसे नचाते हैं ऐसे प्रभुको छोड़कर कहो दूसरे किसको भजें ? ॥ ५ ॥ जो मनुष्य अपनी चतुराईको त्यागकर मन, बचन, कर्मसे प्रभुका भजन करते हैं उनपर प्रभु तुरंत कृपा करते हैं ॥ ६ ॥

यहिबिधि शिशु बिनोद प्रभु कीन्हा ॥ सकल नगरबासिन्ह सुख दीन्हा ७ ❀
लै उछंग कबहूँ हलरावैं ॥ कबहुँ पालने घालि झुलावैं ॥ ८ ॥ ❀

प्रभुने इसतरह बाललीला करके सब नगरनिवासियोंको सुख दिया ॥ ७ ॥ कभी तो प्रभुके गोदमें लेकर हलराते हैं और कभी पालनेमें घालकर झुलाते हैं ॥ ८ ॥

दोहा-प्रेममगन कौशलसुता, निशि दिन जात न जान ॥
सुतसनेहबश मातु अति, बालचरित कर गान ॥ २०६ ॥

कौसल्यापुत्रके प्रेमसे आनंदमगन हो रही थी उसको रात और दिन बीतनेकीभी सुध नहीं थ
माता कौसल्या पुत्रके स्नेहके बश होकर सदा प्रभुके बालचरित्र गाया करती थी ॥ २०६ ॥

एकबार जननी अन्हवाये ॥ करि सिंगार पलँगा पौढ़ाये ॥ १ ॥
निजकुल इष्टदेव भगवाना ॥ पूजाहेतु कीन्ह पकवाना ॥ २ ॥

एक बेर माताने प्रभुको न्हिलाय धुलाय, सिंगार कराय, पलंगपर लिटाया ॥ १ ॥ फिर अपने
लके इष्टदेव भगवानकी पूजा करनेके लिये पकवान बनाये ॥ २ ॥

करिपूजा नैवेद्य चढ़ावा ॥ आपु गई जहँ पाक बनावा ॥ ३ ॥
बहुरि मातु तहवाँ चलि आई ॥ भोजन करत दीख रघुराई ॥ ४ ॥

प्रभुकी पूजा करके आगे नैवेद्य धरा, उस समय कौसल्या उठकर वहां गयी जहां पाक तैयार हो
था ॥ ३ ॥ फिर कौसल्या उठकर वहां चली आयी जहां नैवेद्य चढ़ाया था. आगे आकर कौसल्या क
देखती है कि रामचन्द्रजी भोजन कर रहे हैं ॥ ४ ॥

गइ जननी शिशुपहँ भयभीता ॥ सोवत बालक तहाँ पुनीता ॥ ५ ॥
बहुरि आइ देखा सुत सोई ॥ हृदय कम्प मन धीर न होई ॥ ६ ॥

तब कौसल्या भयभीत होकर अपने पुत्रके पास गई. वहां जाकर देखती है तो महापावन प्रभु न
दमें सो रहे हैं ॥ ५ ॥ फिर पीछा आकर देखा तो वोही पुत्र उसीतरह जेंव रहा है. इस आश्चर्यको दे
कर कौसल्याका हृदय कांपने लगा. मनमें धीरज नहीं आया ॥ ६ ॥

इहाँ उहाँ दुइ बालक देषा ॥ मति भ्रम मोरि कि आन विशेषा ॥ ७ ॥
देखि राम जननी अकुलानी ॥ प्रभु हँसि दीन मधुर मुसकानी ॥ ८ ॥

यहां और वहां दोनों ठौर दो बालक देखकर कौसल्याने मनमें बिचार किया कि, यह क्या हुअ
क्या मेरी बुद्धिमें भ्रम हो गया है ? या कुछ यह औरही वृत्तान्त है ? ॥ ७ ॥ यह चरित्र देखकर रामचन
जीकी माता बहुत घबराई. तब प्रभुने मधुर मुसकरा कर हंस दिया ॥ ८ ॥

दोहा-दिखरावा मातहिँ निज, अद्भुतरूप अखंड ॥
रोम रोम प्रति लागेउ, कोटि कोटि ब्रह्माण्ड ॥ २०७ ॥

फिर प्रभुने माताको अपना वो अद्भुत और अखंड स्वरूप दिखलाया. जिस स्वरूपके रोम रो
करोड़ों ब्रह्मांड रम रहे है ॥ २०७ ॥

अगणित रवि शशि शिव चतुरानन ॥ बहु गिरि सरित सिंधु महि कानन ॥
काल कर्म गुण दोष सुभाऊ ॥ सो देखा जो सुना न काऊ ॥ २ ॥

कौसल्याने प्रभुके स्वरूपमें असंख्य सूर्य. चंद्र. ब्रह्मा. महादेव और अनेक पर्वत नदियां सम

देखी माया सब बिधे गाढ़ी ॥ अति सभीत जोरे कर ठाढ़ी ॥ ३ ॥ ❀
देखा जीव नचावै जाही ॥ देखी भक्ति जो छोरै ताही ॥ ४ ॥ ❀

सब प्रकारसे अति कठिन प्रभुकी मायाको देखकर कौसल्या अति भयभीत हो हाथ जोड़ खड़ी रही ॥ ३ ॥ कौसल्याने प्रभुकी वो माया देखी, जो जीवोंको नचाती है. फिर जीवोंको देखा जिनको वह नचाती है और प्रभुकी भक्ति देखी जो जीवको बंधनसे छुड़ा देती है ॥ ४ ॥

तनु पुलकित मुख बचन न आवा ॥ नयन मूँदि चरणन शिर नावा ॥५॥ ❀
विस्मयवंत देखि महतारी ॥ भये बहुरि शिशु रूप खरारी ॥ ६ ॥ ❀

यह आश्चर्य देखकर कौसल्याका शरीर पुलकित हो गया मुखसे बोल न निकला आंखे मूंदके कौसल्याने प्रभुके चरणोंमें शिर नवाया ॥ ५ ॥ ऐसे माताको अति विस्मय युक्त देखकर प्रभु पीछे बालकरूप बन गये ॥ ६ ॥

अस्तुति करि न जाय भय माना ॥ जगत पिता मैं सुत करिजाना॥७॥ ❀
हरि जननिहिं बहुबिधि समुझाई ॥ यह जनि कतहुँ कहसि सुनु माई ॥८॥ ❀

कौसल्या प्रभुका प्रभाव देखकर डर गयी जिससे उससे प्रभुकी स्तुतिभी नहीं की गयी. केवल कौसल्याने इतना मात्र कहा कि–हे जगत्के पिता प्रभु ! मैंने आपको पुत्र करके जाना सो मेरा अपराध माफ कीजिये ॥ ७ ॥ माताके ऐसे वचन सुन प्रभुने माताको अनेक प्रकारसे समझाया और कहा कि-हे माता ! यह बात कभी किसीको मत कहना ॥ ८ ॥

दोहा–बार बार कोशलसुता, बिनय करै कर जोरि ॥ ❀
अब जनि कबहुँ न व्यापै, प्रभु मोहिं माया तोरी ॥ २०८ ॥ ❀

कौसल्यामाताने बारंबार हाथ जोड़कर प्रार्थना करी कि–हे प्रभु ! अब कभी मुझको आपकी माया न व्यापै ऐसी कृपा करो ॥ २०८ ॥

(क्षेपक)

दोहा–यक दिन यक शिशु अंधको, डारी रज प्रभु पृष्टि ॥ ❀
वरहन दै रघुनाथ तेहि, देखरायो दै विष्टि ॥ २७ ॥ ❀

एक दिन अंधक लड़केने प्रभुकी पीठपर धुर डारी उसको उलाहना देनेके लिये गये तौ वह अंधा कैसे समझै तब उसको दृष्टि देकर प्रभुने कहा कि–अरे देख हमारी पीठ पर धुर डारी है ॥ २७ ॥

क्षेपक–एकदिवस यक बानिक आवा ॥ बेंचन हितनग नृपहिं देखावा ॥१॥
लै रघुनाथ कूपमें डारा ॥ देव वहै हँसि भूप उचारा ॥ २ ॥ ❀

एक दिन एक व्योपारी आया उसने बेंचनेके लिये राजाको एक नगीना दिखाया ॥ १ ॥ उस नगीनाको लेकर प्रभुने कूएँके भीतर डाल दिया तब उस व्योपारीने हँसकर कहा कि–महाराज ! हमें हमारा नगीना दीजिये ॥ २ ॥

तुरतै वृक्ष कूपते जामा ॥ लागे लाल अमोलिक तामा ॥ ३ ॥ ❀
फरत झरत पुनि लागत भारी ॥ लै लै जात सकलनरनारी ॥ ४ ॥ ❀

इतना कहतेही थोड़ी देरके बाद कूएँमेंसे वो नगीनासे वृक्ष पैदा हुआ कि तिसमें अमूल्य ताम्रवर्ण लाल लगे ॥ ३ ॥ वो पेड़ बारंबार फलता है और झड़ता है और बारंबार नये नये लाल लगते हैं; जिन्हें नगरके सब नरनारी ले लेकर जाते है ॥ ४ ॥

सात दिवस मैं लूटि बिशेषी ॥ पुनि सो बिटप परा नहिँ देखी ॥ ५ ॥ ❋
यह लीला लखि भूपति साहू ॥ चकित रहे मन परम उछाहू ॥ ६ ॥ ❋

इसतरह सात दिनतक बराबर लूट हुई. फिर वह वृक्ष गुप्त होगया; कहीं देखनेमे नहीं आया ॥ ५ ॥ राजा और नगरके सेठ लोग प्रभुकी यह लीला देखकर चकित रह गये और उनके मनमें बड़ा उत्साह हुआ ॥ ६ ॥ ॥ इति ॥

बालचरित हरि बहुबिधि कीन्हा ॥ अति अनन्द दासन कहँ दीन्हा ॥ १ ॥ ❋
कछुक काल बीते सब भाई ॥ बड़े भये परिजन सुखदाई ॥ २ ॥ ❋

प्रभुने अनेक प्रकारके बालचरित्र करके अपने दासलोगोंको अतिशय आनन्द दिया ॥ १ ॥ कुछ समय बीतनेके बाद वे सब भाई बड़े हो अपने कुटुंबके लोगोंको सुख देने लगे ॥ २ ॥

चूड़ाकरण कीन्ह गुरु आई ॥ बिप्र दक्षिणा पुनि बहु पाई ॥ ३ ॥ ❋
परम मनोहर चरित अपारा ॥ करत फिरत चारिउ सुकुमारा ॥ ४ ॥ ❋

तब वसिष्ठजीने आकर चूड़ाकरण (मुंडन) संस्कार किया. तहां ब्राह्मणोंको बहुतसी दक्षिणा मिली ॥ ३ ॥ वे चारोंही सुन्दर कुँवर अति मनोहर अपार चरित्र करते विचरते हैं ॥ ४ ॥

मन क्रम बचन अगोचर जोई ॥ दशरथ अजिर बिचर प्रभु सोई ॥ ५ ॥
भोजन करत बुलावत राजा ॥ नहिँ आवहिँ तजि बालसमाजा ॥ ६ ॥ ❋

जो प्रभु मन, कर्म व वचनसे अगोचर है वेही प्रभु दशरथजीके आंगनमें विचर रहे हैं ॥ ५ ॥ जब राजा दशरथ भोजन करने बैठते हैं तब उनको बुलाते है; पर अपने वयस्य यानी एक उमरवाले बालकोंके समाजको छोड़कर नहीं आते है ॥ ६ ॥

कौसल्या जब बोलन जाई ॥ ठुमुकि ठुमुकि प्रभु चलहिँ पराई ॥ ७ ॥ ❋
निगम नेति शिव अन्त न पावा ॥ ताहि धरै जननी हठि धावा ॥ ८ ॥ ❋

जब कौसल्या बुलानेको जाती है तब प्रभु ठुमुकि ठुमुकि चालसे दौड़ आते हैं ॥ ७ ॥ जिसे वेद नेति नेति कहकर पुकारते है और जिसका शिवजीनेभी पार नहीं पाया है उस परब्रह्मको दौड़कर माता बलात्कारसे पकड़ती है ॥ ८ ॥

धूसर धूर भरे तनु आये ॥ भूपति बिहँसि गोद बैठाये ॥ ९ ॥ ❋

धूरमें खेलनेसे जो धूर लगी है तिससे धूसर शरीर प्रभु पधारे हैं तिन्हें देख हँसकर राजा उन्हें गोदमें ले भोजन करता है ॥ ९ ॥

दोहा--भोजन करत चपल चित, इत उत अँवसर पाइ ॥ ❋
भाजि चले किलकात मुख, दधि ओदन लपटाइ ॥ २०९ ॥

वे चंचलचित्त प्रभु भोजन करते २ ही इधर उधर मौका देखकर मुखसे किलकारी करते भाग जाते हैं. जिस समय उनके मुंहमें दही और भात लिपटाइ रहे है ॥ २०९ ॥

(क्षेपक) यक दिन एक बधिक चलि आवा ॥ अद्भुत पक्षी नृपाहिँ देखावा ॥ १
देखि राम लै दीन उड़ाई ॥ बोला खल सोइ देहु मँगाई ॥ २ ॥ ❀

एक दिन एक बधिक (पक्षियोंको पकड़नेवाला व्याध) वहां चला आया उसने एक अद्भुत पक्षी राजाको दिखाया ॥ १ ॥ पक्षीको ले रामचन्द्रजीने उड़ा दिया. तब उस बधिकने कहा कि, मुझे मेरा वोही पक्षी मंगा दो ॥ २ ॥

सुनि प्रभु तासु पक्ष महि गारा ॥ भा तरु तुरत जमै जल डारा ॥ ३ ॥ ❀

बधिकका यह वचन सुन प्रभुने उसका एक पर जमीनमें गाड़ दिया और पानी सींच दिया. थोड़ी देरमें अंकुर निकल कर वृक्ष जम गया ॥ ३ ॥

दोहा--लागत फल फूटत तुरत, निकसत उडत बिहंग ॥ ❀
बैठत महलन पर घरन, धावत बालक संग ॥ २८ ॥ ❀
पुरबासिन पाले सकल, देखे बिहँग अनूप ॥ ❀
सुनि सुनि तहँ तहँ लै लै गये, देश देशके भूप ॥ २९ ॥ ❀
बधिकै दीन्हीं दर्बि बहु, भा सबके सुखसोत ॥ ❀
यह प्रभुता कछु बहुत नहिँ, इच्छाते जग होत ॥ ३० ॥ ❀

उस पेड़में फल लगे. फिर फल फूटे तो उनमेंसे निकल निकलकर हजारों पक्षी उड़ने लगे. वे पक्षी उड़ उड़कर महलोंपे और घरोंपे बैठते है. और उन्होंके साथ बालक दौड़ने लगे ॥ २८ ॥ तिन्हें पकड़ अद्भुत अनुपम स्वरूप देख नगरके सब लोगोंने पाले. और दूसरे मुल्कोंके राजाभी यह बात सुन २ कर वहांसे अपने २ मुल्कोंमें ले गये ॥ २९ ॥ प्रभुने बधिकको बहुत कुछ द्रव्य दिया. सब लोग बड़े प्रसन्न हुए. महादेवजी कहते है कि--प्रभुकी यह प्रभुता कुछ ज्यादा नहीं है; क्योंकि उनकी इच्छासे तो यह जगतही पैदा होता है ॥ ३० ॥ ॥ इति ॥

बालचरित अति सरल सुहाये ॥ शारद शेष शम्भु श्रुति गाये ॥ १ ॥ ❀
जिनकर मन इनसन नहिँ राता ॥ ते जग बंचित किये बिधाता ॥ २ ॥ ❀

प्रभुके बालचरित्र अतिशय सरल और सुहावने है जिन्हें शारदा, शेष भगवान्, महादेव और वेद गाते है ॥ १ ॥ जिनका मन प्रभुके गुणोंसे नहीं रांचा है उन पुरुषोंको विधाताने जगत्में वंचित यानी ठगाये हुए बनाये हैं ऐसा समझना चाहिये ॥ २ ॥

भये कुमार जबहिँ सब भ्राता ॥ दीन्ह जनेऊ गुरु पितु माता ॥ ३ ॥ ❀
गुरुगृह गये पठन रघुराई ॥ अल्प काल विद्या सब पाई ॥ ४ ॥ ❀

जब सब भाई कुमार अवस्थाको प्राप्त हुए तब माता, पिता और गुरुने सलाह करके यज्ञोपवीत दिया ॥३॥ तब वे सब विद्या पढ़नेकेलिये गुरुके घर गये. वहां थोड़े दिनोंमें सारी विद्या पढ़ ली॥४॥

जाकी सहज श्वास श्रुति चारी ॥ सो हरि पढ़ यह कौतुक भारी ॥ ५ ॥ ❋
विद्या विनय निपुण गुण शीला ॥ खेलहिँ खेल सकल नृप लीला ॥ ६ ॥ ❋

महादेवजी कहते हैं कि–हे उमा ! जिसकी सहज श्वाससे चारों वेद प्रगट हुए हैं वे प्रभु विद्या पढ़ते हैं यह एक बड़ी कौतुककी बात है ॥ ५ ॥ वे विद्या और विनयमें निपुण, गुणशील सब भाई राजाओंके खेल खेलते हैं ॥ ६ ॥

करतल बाण धनुष अति सोहा ॥ देखत रूप चराचर मोहा ॥ ७ ॥ ❋
जिन बीथिन बिहरहिँ सब भाई ॥ थकित होहिँ सब लोग लुगाई ॥ ८ ॥ ❋

और शस्त्रविद्या सीखते हैं. हाथमें धनुष बाण अत्यंत शोभायमान है. जिस स्वरूपको देखकर चराचरका मनमोहित होता है ॥ ७ ॥ जिन गलियोंके बीच वे सब भाई हैं वहांके सब नरनारी देखते २ थकित हो जाते हैं ॥ ८ ॥

(क्षेपक) यक दिन राम पतंग उडाई ॥ देवलोक सो पहुँची जाई ॥ १ ॥ ❋
तहँ हरिसुतजयन्तकी नारी ॥ अति बिचित्र त्यहि चंग निहारी ॥ २ ॥ ❋

एक दिन रामचन्द्रने पतंग उड़ाई सो वह उड़ती २ ठेठ देवलोकमें जा पहुँची ॥ १ ॥ सो वहां इंद्रके पुत्र जयंतकी स्त्रीने वो अद्भुत और विचित्र पतंग देखकर पकड़ी ली ॥ २ ॥

दोहा--मनमें किहिसि बिचार इमि, जासु गुणी असि आहि ॥ ❋
सो पूरुष कस होइ धौं, हँसि गहि लीन्हेसि ताहि ॥ ३१ ॥ ❋

जयंतकी स्त्री मनमें ऐसा विचार करती थी कि, जिसकी ऐसी विचित्र पतंग है कौन जाने वह पुरुष कैसा होगा ? उसे अवश्य देखना चाहिये, ऐसे हँसकर उसने पतंग पकड़ ली ॥ ३१ ॥

तब प्रभु हनूमानते भाखी ॥ देखौ क्यहिँ पतंग गहि राखी ॥ १ ॥ ❋
तुरत पवनसुत जाइ निहारी ॥ देहु छांड़ि पुनि गिरा उचारी ॥ २ ॥ ❋

तब प्रभुने हनुमानसे कहा कि-जाओ देखो यह पतंग किसने पकड़ रक्खी है ? ॥ १ ॥ हनुमानने उसी वक्त जाकर जयंतकी स्त्रीको पतंग पकड़े देखकर कहा कि इस पतंगको छोड़ दे ॥ २ ॥

बोली जासु चंग यह आही ॥ दर्शन तासु कीन हम चाही ॥ ३ ॥ ❋
ताहिते याको हम गहेऊ ॥ आइ अनिलसुत प्रभुते कहेउ ॥ ४ ॥ ❋

तब जयंतकी स्त्रीने कहा कि-- जिसकी यह पतंग है उस पुरुषको मैं देखना चाहती हूं ॥ ३ ॥ और इसीसे हमने यह पकड़ी है तब हनुमानने आकर प्रभुसे ये समाचार कहे ॥ ४ ॥

सुनि हरि कहा कहउ तुम जाई ॥ चित्रकूट महँ देब देखाई ॥ ५ ॥ ❋
हनूमान चलि तासों भाषा ॥ दिहिसि छांड़ि मन करि अभिलाषा ॥ ६ ॥ ❋

---

१ बृहदारण्यकोपनिषदि "एतस्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतदृग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वांगिरस इतिहासः पुराणं श्लोको व्याख्यानान्यनुमानानि प्रमाणभूतानि " अर्थ–ऐसा बृहदारण्य उपनिषदमें कहा है कि, यह महान् ईश्वरके सहज स्वाभाविक श्वासही ए ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, इतिहास, महाभारतआदि पुराण १८, श्लोक, व्याख्यान, अनुमान, सब प्रमाणीभूत हैं. अर्थात् ईश्वरके श्वासावोंसेही यह सम्पूर्ण (वाङ्मय) होता है. ऐसे प्रभु नर लीलाका अनुसरण करके विद्या पढ़ते हैं सो यहभी एक कौतुकी प्रभुका महान् कौतुकही समझना चाहिये; इससे जो आधुनिक कोई कहते हैं कि, वेद पौरुषेय यानी मनुष्यकृत हैं तथा पुराण गप्पाष्टक हैं. वे सब परास्त हुये.

सो सुनकर प्रभुने कहा कि– तुम जाकर कह दो कि, हम तुमको चित्रकूट पर्वतमें दर्शन देंगे ॥ ५ ॥ हनुमानने जाकर उससे कहा तब उसने मनमें प्रभुके दर्शनकी अभिलाषा रखकर पतंगको छोड़ दिया ॥ ६ ॥

तब रघुनाथ खैंचि सो लीन्हा ॥ निशि गृह आय बियारू कीन्हा ॥ ७ ॥❋

प्रभुने उसे खैंचलिया. फिर रातको घर आकर प्रभुने बियारू यानी शामका भोजन किया ॥ ७ ॥

॥ इति ॥

दोहा–कोशलपुरबासी नर, नारि वृद्ध अरु बाल ॥ ❋
प्राणहुँते प्रिय लागहीं, सबकहँ राम कृपाल ॥ २१० ॥ ❋

अयोध्यावासी सब स्त्री पुरुष वृद्ध और बालकोंको कृपालु प्रभु प्राणोंसेभी प्यारे लगते थे ॥ २१० ॥

बन्धु सखा सब लेहिँ बुलाई ॥ बन मृगया नित खेलहिँ जाई ॥ १ ॥
पावन मृग मारहिँ जिय जानी ॥ दिन प्रति नृपहि देखावहि आनी ॥ २ ॥
जे मृग रामबाणके मारे ॥ ते तनु तजि सुरलोक सिधारे ॥ ३ ॥ ❋

प्रभु हमेशा अपने भाई और मित्रोंको बुलाकर हररोज शिकारको वनमें जाते हैं ॥ १ ॥ और मनमाने पवित्र हरिणोंको मार मारकर राजाके पास लाकर दिखाते हैं ॥ २ ॥ जो हरिण रामचन्द्रजीके बाणसे मरते है वे सब देह त्यागकर स्वर्गको जाते है ॥ ३ ॥

(क्षेपक)

यक दिन सूकर बन आवा ॥ घुरघुराय प्रभुसन्मुख धावा ॥ १ ॥ ❋
गहि पद पटक्यो भूमि भुजासू ॥ छूटत भयो दिव्य बपु तासू ॥ २ ॥

एक दिन एक शूकर बनमें आ निकला. वो घुरघुराकर प्रभुके सन्मुख दौड़ा ॥ १ ॥ तब प्रभुने अपनी भुजासे उसका पांव पकड़कर पृथ्वीपर पटका. सो पड़तेही उसका वह शरीर तो छूट गया और उसे दूसरा दिव्य शरीर मिल गया ॥ २ ॥

अस्तुति करि अस बचन उचारा ॥ पूरब प्रभु मैं रह्यो भुवारा ॥ ३ ॥ ❋
एक दिवस तव जन लखि पावा ॥ बश अभिमान न शीश नवावा ॥ ४ ॥❋

उसने स्तुति करके ऐसा बचन कहा कि–हे प्रभु ! मैं पूर्व जन्ममें राजा था ॥ ३ ॥ एक दिन मुझको आपका भक्त मिल गया उसे अभिमानके मारे मैंने प्रणाम नहीं किया ॥ ४ ॥

निन्दा करि निजमन्दिर आयों ॥ तेहि अपराध कोलतनु पायों ॥ ५ ॥❋
अब तव दरश दूरि दुख भयऊ ॥ अस कहि परमधामकहँ गयऊ ॥ ६ ॥❋

उलटी उसकी निंदा करी. फिर मैं घर चला आया. उस अपराधसे मैं शूकरका शरीर पाया हूं ॥ ५ ॥ हे प्रभु ! अब आपके दर्शनोंसे मेरा दुःख दूर हुआ है. ऐसे कहकर वो परम धामको पहुंचा ॥ ६ ॥

दोहा–एक दिवस यक सिंहने, बधी बिप्रकी गाय ॥ ❋
गरजत डोलै पुरनिकट, कोई पास न जाय ॥ ३२ ॥ ❋

एक दिन एक सिंहने ब्राह्मणकी गौ मार डाली और वह गरजता हुआ नगरीके समीपमें डोला करै पर डरसे कोईभी उसके पास नहीं जाय ॥ ३२ ॥

सुनि रघुपति कसि कटि पट बाँधा ॥ धनुष चढ़ाय पाणिशर साँधा ॥१॥ ❋
मुदित जाइ सन्मुख ललकारा ॥ खल हो सजग तोंहि मैं मारा ॥ २ ॥ ❋

यह बात सुन रामचन्द्रजीने कसकर करम बांधी, और धनुष चढ़ाय हाथमें बाण ले. शरका संधान कर हर्षित हो उसके सन्मुख जा प्रभुने ललकारके कहा कि—रे खल ! संचेत हो. तुझको मैं मारता हूं ॥ १ ॥ २ ॥

इतना सुनि सन्मुख सो धावा ॥ पंचबाण मुख मारि गिरावा ॥ ३ ॥ ❋
तुरत भयो सो गंध्रबरूपा ॥ बिनती करि निजहाल निरूपा ॥ ४ ॥ ❋

इतनी बातके सुनतेही वह दौड़कर सन्मुख आया. तिसके मुहमें पांच बाण मारके उसको धरतीपर गिरा दिया ॥ ३ ॥ तब वह तुरंत गंधर्वरूप हो गया और बिनती करके उसने अपना सारा वृत्तान्त कहा ॥ ४ ॥

महाराजमैं गंध्रब अहऊं ॥ इन्द्रसभा नित गावत रहऊं ॥ ५ ॥ ❋
एक दिवस नारद तहँ आये ॥ नाथचरित तव बरणि सनाये ॥ ६ ॥ ❋

गंधर्वने कहा कि—महाराज ! मैं गंधर्व हूं. इंद्रकी सभामे हमेशा गाया करता था ॥ ५ ॥ एक दिन नारदजी वहां आये. उन्होंने वहां हे नाथ ! आपके चरित्र वर्णन करके सुनाये ॥ ६ ॥

तेहि समाजमैं हँस्यो ठठाई ॥ सुनि मुनि बोले बचन रिसाई ॥ ७ ॥ ❋

उस समाजमें मैं बैठा था सो मैं ठठाकर हँसा. तब मेरा हँसना सुनकर क्रोध करके नारदजीने कहा कि— ॥ ७ ॥

दोहा—सिंहनादसम करत शठ, होउ जाइ हरि हार ॥ ❋
मरि हैं निजकर राम जब, तब होई उद्धार ॥ ३३ ॥ ❋
यहि तन पायों अमित दुख, अब सब नाशे शोक ॥ ❋
अस कहि पद शिर नाइकै, जात भयो निजलोक ॥ ३४ ॥ ❋

रे शठ ! तू सिंहनादके समान शब्द करता है इसलिये तू वनमें जाकर सिंह होगा परंतु जब तुझको रामचन्द्रजी अपने हाथोंसे मारेंगे तब तेरा उद्धार होगा ॥ ३३ ॥ सो इस शरीरसे मै महादारुण अपार दुख पाया हूं. हे प्रभु ! अब मेरा सब शोच निवृत्त हुआ ऐसे कह चरणोंमें शिर झुकाकर वह अपने लोकको चला गया ॥ ३४ ॥ ॥ इति ॥

अनुज सखा सँग भोजन करहीं ॥ मातु पिता आज्ञा अनुसरहीं ॥ ४ ॥ ❋
जेहिबिधि सुखी होहिं पुरलोगा ॥ करहिँ कृपानिधि सोइ संयोगा ॥ ५ ॥ ❋

अपने छोटे भाई और वयस्योंके साथ प्रभु भोजन करते हैं. माता पिताकी आज्ञाका अनुसरण करते हैं ॥ ४ ॥ जिसतरह नगरके लोग सुखी होते हैं, कृपानिधान प्रभु वोही तजवीज बनाते हैं ॥ ५ ॥

बेद पुराण सुनहिं मन लाई ॥ आपु कहहिँ अनुजहिँ समुझाई ॥ ६ ॥ *
प्रातकाल उठिकै रघुनाथा ॥ मातु पिता गुरु नावहिँ माथा ॥ ७ ॥ *

आप मन लगाके वेद और पुराण सुनते हैं और छुटभय्योंको आप समझाकर कहते है ॥६॥ प्रातःकालमें उठकर प्रभु माता पिता और गुरुको दंडवत करते है ॥ ७ ॥

आयसु माँगि करहि पुरकाजा ॥ देखि चरित हर्षहिँ मन राजा ॥८॥ *

फिर उनसे आज्ञा लेकर पुरका काम करते है. प्रभुका चरित्र देखकर राजा दशरथजी मनमें बडे खुश होते है ॥ ८ ॥

(क्षेपक) एक दिवस प्रभु सरयूमाहीं ॥ अनुज सखन युतमुदितनहाहीं १
असुर एक रावणकर प्रेरा ॥ मगररूप धरि मुखमें गेरा ॥ २ ॥ *

एक दिन प्रभु अपने छुटभय्ये और वयस्योंके साथ आनंदसे सरयूमे स्नान कर रहे थे ॥ १ ॥ वहां रावणका भेजा हुआ एक राक्षस आया वह मगरका रूप बनाकर प्रभुको निगल गया ॥ २ ॥

निकसे सपदि ताहि हरि मारी ॥ सुनि पुरजन सब भये सुखारी ॥ ३ ॥ *
जिन जिनके बालक त्याहिँ खाये ॥ दीन्हे काढ़ि मनहुँ धरि आये ॥ ४ ॥ *

प्रभु तुरंत उसे मारकर उसके उदरसे बाहिर निकसे यह चरित्र सुनकर नगरके सब लोग सुखी हुए ॥ ३ ॥ उस नगरके जिन जिनके बालक खाये थे उन सब बालकोंको प्रभु बाहिर काढ़ि लाये. मानों पकड़के ले आये ॥ ४ ॥

मातन दीन्ह्यो दान अपारा ॥ गुरुप्रसाद कल्याण हमारा ॥ ५ ॥ *
यह चरित्र सुनकर माताओंने अनेक प्रकारके अपार दान दिये और कहा कि—गुरुकी कृपासे हमारा कल्याण हुआ है ॥ ५ ॥ ॥ इति ॥

दोहा—व्यापक अकल अनीह अज, निर्गुण नाम न रूप ॥ *
भक्तहेतु नानाबिधिहि, करत चरित्र अनूप ॥ २११ ॥ *

यद्यपि प्रभु सर्वव्यापक, कलारहित यानी पूर्ण, अनीह कहे चेष्टारहित, अजन्मा, निर्गुण और नामरूपरहित है. तथापि भक्तोंके लिये प्रभु अनेक प्रकारके अनुपम चरित्र करते है ॥ २११ ॥

(क्षेपक) यकदिन सखिनसहित रघुबीरा ॥ खेलत भे सरयूके तीरा ॥ १ ॥
बिहगरूप धरि रावण आवा ॥ घात पाय शठ चहत उठावा ॥ २ ॥

एक दिन अपने सखाओंके साथ प्रभु सरयूके तटपर खेल रहे थे ॥ १ ॥ तहां पक्षीका रूप धरकर रावण आया. सो वह शठ छिद्र पाकर प्रभुको उठाना चाहता था ॥ २ ॥

जानि राम बिनफर शर मारा ॥ गिरा जाय निज लंकमँझारा ॥ ३ ॥ *
सात दिवस पर मूर्च्छा जागी ॥ समुझि प्रताप लाज उर लागी ॥ ४ ॥ *
प्रभुने रावणको पहिंचानकर बिना फलकका तीर मारा जिससे वह मूर्छित होकर लंकामें

जा गिरा ॥ ३ ॥ सात दिनोंसे उसकी मूर्छा खुली तब प्रभुका प्रताप समझकर वो मनमें बहुत श-र्माया ॥ ४ ॥ ॥ इति ॥

यह सब चरित कहा मैं गाई ॥ आगिल कथा सुनहु मन लाई ॥ १ ॥ ❋
विश्वामित्र महामुनि ज्ञानी ॥ बसहिं बिपिन शुभ आश्रम जानी ॥ २ ॥ ❋

महादेवजी कहते हैं कि- हे पार्वती ! मैंने यह पिछला सब चरित्र वर्णन करके कहा. अब आगेका चरित्र कहता हूं सो मन लगाके सुनो ॥ १ ॥ महामुनि ज्ञानी विश्वामित्रजी वनमें एक अच्छासा आ-श्रम देखकर दक्षिण दिशामें रहते थे ॥ २ ॥

तहँ जप यज्ञ योग मुनि करहीं ॥ अति मारीच सुबाहुहिं डरहीं ॥ ३ ॥ ❋
देखत यज्ञ निशाचर धावहिँ ॥ करहिँ उपद्रव मुनि दुख पावहिँ ॥४॥ ❋

वहां वे मुनि जप, तप, यज्ञ और योग करते थे. पर वहां मारीच और सुबाहु नाम राक्षसको बहुत डरते थे ॥ ३ ॥ यज्ञको देखतेही वे राक्षस दौड़कर आते, और उपद्रव करते जिससे मुनि बड़ा दुःख पाया करते थे ॥ ४ ॥

गाधितनय मनचिन्ता व्यापी ॥ हरि विन मरहिँ न निशिचर पापी ५ ❋
तब मुनिवर मन कीन्ह बिचारा ॥ प्रभु अवतरेउ हरण महिभारा ॥६॥ ❋

एक दिन बैठे २ विश्वामित्रजीके मनमें आया कि, ये पापी राक्षस प्रभुके विना नहीं मरेंगे ॥ ५ ॥ तब मुनिने मनमें विचार किया कि, अभी प्रभुने पृथ्वीका भार उतारनेके लिये पृथ्वी-पर अवतार लिया है ॥ ६ ॥

यहि मिसि देखौं प्रभुपद जाई ॥ करि बिनती आनौं दोउ भाई ॥ ७ ॥ ❋
ज्ञान विराग सकलगुणअयना ॥ सो प्रभु मैं देखब भरि नयाना ॥ ८ ॥ ❋

सो इसी मिषसे जाकर प्रभुके चरणोंके दर्शन करूं. और विनती करके दोनों भाइयोंको ले जाऊं ॥ ७ ॥ जो प्रभु ज्ञान, वैराग्य और सब गुणोंके धाम हैं उन प्रभुको मैं नेत्र भरके देखूंगा ॥ ८ ॥

(क्षेपक) क्वारकृष्णऋषि दिवस सिधाये ॥ नौमी दिनकोशलपुरआये ॥ १ ॥ ❋

आश्विन बदी ७ के दिन मुनि रवाने हुए सो नवमीके दिन अयोध्या आये ॥ १ ॥ ॥ इति ॥

दोहा-- बहु बिधि करत मनोरथ, जात न लागी बार ॥ ❋
करि मज्जन सरयू जल, गये भूपदरबार ॥ २१२ ॥ ❋

अनेक प्रकारसे मनमें मनोरथ करतेहुए मुनि चले जिससे उनको अयोध्या पहुंचते कुछभी देरी नहीं लगी. अयोध्या आ सरयूमें न्हाय मुनि राजाके द्वार आये ॥ २१२ ॥

मुनिआगमन सुना जब राजा ॥ मिलन गयउ लै विप्रसमाजा ॥ १ ॥ ❋
करिदण्डवत मुनिहिँ सनमानी ॥ निजआसन बैठारे आनी ॥ २ ॥ ❋

जब राजाने मुनि विश्वामित्रजीका आगमन सुना तो ब्राह्मणोंकी समाज साथ ले उनसे मिलनेको गये ॥१॥ दंडवत् करके मुनिका सत्कार किया, अपना आसन मंगवाके उसपर मुनिको बिठाया ॥२॥

चरण पखारि कीन्ह अतिपूजा ॥ मोसम धन्य आजु नहिँ दूजा ॥ ३ ॥ ❋
बिबिधभांति भोजन करवावा ॥ मुनिबरहृदय हर्ष अति छावा ॥ ४ ॥ ❋

चरण पखारकर बड़ी प्रीतिसे विधिपूर्वक पूजा करी और कहा कि–हे मुनि ! आज मेरे जैसा बड़भाग्य जगत्में दूसरा कोई नहीं है; क्योंकि आप मेरे घर पधारे ॥ ३ ॥ ऐसे कह उनको अनेक प्रकारके भोजन करवाये. मुनिके मनमें राजाकी भक्ति देखकर बड़ा आनंद हुआ ॥ ४ ॥

पुनि चरणन मेले सुत चारी ॥ राम देखि मुनि बिरति बिसारी ॥ ५ ॥ ❋
भये मगन देखत मुखशोभा ॥ जनु चकोर पूरण शशिलोभा ॥ ६ ॥ ❋

फिर राजाने अपने चारों पुत्रोंको लाकर चरणोंमें डाल दिये, तहां रामचन्द्रजीका दर्शन करके मुनि वैराग्य भूल गये ॥ ५ ॥ प्रभुके मुखकी शोभा देखतेही मुनि मगन होगये; मानों पूर्ण चंद्रमाको देखकर उसके लोभसे चकोर जैसे मगन हो जाता है ॥ ६ ॥

तब मन हर्ष बचन कह राऊ ॥ मुनि अस कृपा कीन्ह नहिँ काऊ ॥ ७ ॥ ❋
केहि कारण आगमन तुम्हारा ॥ कहहु सो करत न लाउब बारा ॥ ८ ॥ ❋

तब मनमें आनंदित होकर राजाने यह बचन कहा कि– हे मुनि ! जैसी कृपा आपने अभी की है ऐसी कृपा आजतक कभी नहीं की थी ॥ ७ ॥ महाराज ! आपका पधारना इधरकी ओर किस कारणसे हुआ है ? सो कहो; क्योंकि इसके करनेमें मैं विलम्ब नहीं करूंगा ॥ ८ ॥

असुरसमूह सतावहिँ मोहीं ॥ मैं याचन आयउँ नृप तोहीं ॥ ९ ॥ ❋
अनुजसमेत देइ रघुनाथा ॥ निशिचरबध मैं होब सनाथा ॥ १० ॥ ❋

तब विश्वामित्रजीने दशरथसे कहा कि–मुझे राक्षसगण सताते है,इसलिये हे राजन् ! मैं आपके पास माँगनेको आया हूं ॥ ९ ॥ लक्ष्मणके साथ मुझे रामचन्द्रजीको देवो. राक्षसोंके मरनेसे मैं सनाथ होऊंगा ॥ १० ॥

दोहा–देहु भूप मन हर्ष करि, तजहु मोह अज्ञान ॥ ❋
धर्म सुयश नृप तुमहुँकहँ, इनकहँ अतिकल्यान ॥ २१३ ॥ ❋

महाराज ! आप मनमें आल्हादित होकर मुझे राम लक्ष्मण देके आप मोह और अज्ञानको तज दो. हे राजन् ! इससे आपको तो धर्म और सुयश मिलेगा और इनका कल्याण होगा ॥ २१३ ॥

सुनि राजा अतिअप्रिय बानी ॥ हृदयकम्प मुखद्युति कुम्हिलानी ॥ १ ॥ ❋
चौथेपन पायउँ सुत चारी ॥ बिप्रबचन नहिँ कहेउ बिचारी ॥ २ ॥ ❋

ऐसी अति अप्रिय बानी सुनकर दशरथजीका हृदय कांपने लगा. और मुखकी कांति मलिन होगयी ॥ १ ॥ दशरथजीने शोकाकुल हो विश्वामित्रजीसे कहा कि–हे मुनि ! मेरे ये चार पुत्र चौथेपनमें हुए हैं सो आपसे यह बचन विचारके नहीं कहा ॥ २ ॥

माँगहु भूमि धेनु धन कोषा ॥ सर्बश देउँ आजु सह रोषा ॥ ३ ॥ ❋
देह प्राणते प्रिय कछु नाहीं ॥ सोउ मुनि देउँ निमिष यकमाहीं ॥ ४ ॥ ❋

जो आपको चाहिये सो पृथ्वी, गौ, धन, खजाना मांग लो. आप जो कुछ मांगोगे वो सब

मेरा सर्वस्व मैं आपको सहरोष यानी क्रोधके साथ दे दूंगा ॥ ३ ॥ महाराज! देह और प्राणोंसे प्यारा तो जगत्में दूसरा कुछभी नहीं है. यदि वो आप मांगोगे तो वहभी आपको एक क्षणभरमें दे दूंगा४

सब सुत प्रिय मोहिँ प्राणकि नाईं ॥ राम देत नहिँ बनै गोसाईं ॥ ५ ॥ ❋
कहँ निशिचर अति घोर कठोरा ॥ कहँ सुन्दर सुत परम किशोरा ॥ ६ ॥ ❋

हे स्वामी! यद्यपि मेरे तो सब पुत्र प्राणोंके माफकही है तथापि यह राम मुझको सब पुत्रोंसे बहुत प्यारा है इसलिये इसको तो देते नहीं बनता ॥ ५ ॥ कहां तो महाघोर कठोर राक्षस और कहां अति सुकुमार किशोर अवस्थाके मेरे सुन्दर बालक? ॥ ६ ॥

सुनि नृपगिरा प्रेमरससानी ॥ हृदय हर्ष माना मुनि ज्ञानी ॥ ७ ॥ ❋
तब वसिष्ठ बहुबिधि समुझावा ॥ नृपसंदेह नाशकहँ पावा ॥ ८ ॥ ❋

राजाकी ऐसी प्रेमरसभरी बाणी सुनके ज्ञानी मुनि विश्वामित्रजीके मनमें बड़ा आनंद हुआ ॥ ७ ॥ राजाने विश्वामित्रजीसे बिलकुल नाहीं कर दीनी तब वसिष्ठजीने राजा दशरथको अनेक प्रकारसे समझाया; जब राजाके मनका संदेह मिटा ॥ ८ ॥

अति आदर दोउ तनय बुलाये ॥ हृदय लाइ बहुभांति सिखाये ॥ ९ ॥ ❋
मेरे प्राणनाथ सुत दोऊ ॥ तुम मुनि पिता आन नहिँ कोऊ ॥ १० ॥ ❋

तब उन्होंने बड़े आदरके साथ अपने दोनों पुत्रोंको बुलाया. छातीसे लगाके उनको अनेक प्रकारसे शिक्षा दी ॥ ९ ॥ और मुनि विश्वामित्रजीसे दशरथजीने कहा कि– हे मुनि! ये दोनों पुत्र मेरे प्राण है सो अब आप जानों. अब तो इनके माता और पिता आपही हो. अब इनके आपके सिवाय दूसरा कोईभी नहीं है ॥ १० ॥

दोहा–सौंपे भूपति ऋषिहिँ सुत, बहुबिधि देइ अशीश ॥ ❋
जननीभवन गये प्रभु, चले नाइ पद शीश ॥ २१४ ॥ ❋

राजाने अनेक प्रकारसे आशिष देकर अपने पुत्र मुनिको सौंप दिये. तब प्रभु माताके घरमें जा माताके चरणोंको प्रणाम कर मुनिके साथ हो लिये ॥ २१४ ॥

सोरठा–पुरुषसिंह दोउ बीर, हर्षि चले मुनिभयहरण ॥ ❋
कृपासिंधु मतिधीर, अखिल विश्वकारणकरण ॥ २८ ॥ ❋

वे दोनों पुरुषसिंह वीर, मुनिका भय मिटानेको प्रसन्न होकर चले. जो कृपाके समुद्र, धीर बुद्धिवाले और सारे संसारके कारण और करण हैं ॥ २८ ॥

(क्षेपक) दुवादशीदिन पारण करिकै ॥ पुरवासिनको धीरज धरिकै ॥ १ ॥
जननिजनकपद शीश नवाई ॥ पाइ अशीश चले हर्षाई ॥ २ ॥ ❋
चलत दीन हनुमानैं छोरी ॥ कछु दिनमें बन मिलब बहोरी ॥ ३ ॥

द्वादशीके दिन पारण कर, पुरके लोगोंको धीरज दे, माता पिताको शिर नवाय, उनसे

---

१ कारण वह कहलाता है जिससे वस्तु पैदा हो जैसे घटका कारण मिट्टी. २ करण वह कहलाता है जिसके द्वारा कर्ता कार्यको सिद्ध करे. जैसे घटको करण दंड चक्र आदि.

आशिष पाय, प्रसन्न होकर चले. प्रभु विश्वामित्रजीके साथ पधारे तब हनुमानको छोड़ दिया और उससे कहा कि—कितनेएक दिनोंके बाद हम फिर बनमें आकर मिलेंगे ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ॥इति॥

अरुण नयन उर बाहु विशाला ॥ नीलजलज तनु श्याम तमाला ॥१॥ ❋
कटि पट पीत कसे बर भाथा ॥ रुचिर चाप सायक दुहुँ हाथा ॥ २ ॥ ❋

दोनों भाई मुनिके साथ जाते हैं, तहां उनके लाल नेत्र है. बड़ा विशाल वक्षःस्थल और भुजा हैं. नील कमल और तमालके सदृश श्याम वर्ण है ॥ १ ॥ कमरमें पीतपटसे सुन्दर भाथा यानी तरकस कसे हुए है. दोनों हाथोंमें सुन्दर धनुष बाण धरे है ॥ २ ॥

श्याम गौर सुन्दर दोउ भाई ॥ विश्वामित्र महानिधि पाई ॥ ३ ॥ ❋
प्रभु ब्रह्मण्य देव मैं जाना ॥ मोहिं हित पिता तजेउ भगवाना ॥ ४ ॥ ❋
चले जात मुनि दीन्ह दिखाई ॥ सुनि ताड़का क्रोध करि धाई ॥ ५ ॥ ❋

श्याम और गौर सुन्दर स्वरूप हैं. रूपके महानिधि दोनों भाइयोंको पाकर विश्वामित्रजी मनमें विचार करने लगे कि, प्रभुको आज मैंने पक्के ब्रह्मण्यदेव जाने. देखो, प्रभुने मेरेवास्ते अपने पिताको त्याग दिया है ॥ ३ ॥ ४ ॥ मार्गमें जाते २ ताड़का नाम राक्षसीका बन आया, तब विश्वामित्रजीने राम लक्ष्मणको ताड़का दिखा दी. इन तीनोंको आते देख वह राक्षसी क्रोधकर दौड़कर इनके सन्मुख आई ॥ ५ ॥

(क्षेपक) परिवादिवस ताड़का धाई ॥ रामहिं मुनिवर दीन देखाई ॥१॥
रुँकि गे प्रभु अवलोकत नारी ॥ द्विजद्रोहीबध दोष न मारी ॥ २ ॥ ❋

परीवाके दिन ताड़का दौड़कर आई तिसे मुनिने रामचन्द्रजीको दिखा दी ॥ १ ॥ पर प्रभु स्त्रीको देखकर रुँक गये; तब विश्वामित्रजीने कहा कि— हे राम! ब्राह्मणसे द्रोह करनेवालेको मारनेमें बिलकुल पाप नहीं है ॥ २ ॥

बैरोचनजा दीरघजिव्हा ॥ सुरपति त्यहि मार्यो लखि लिव्हा ॥ ३ ॥ ❋
भृगुभामिनि निश्चरहितकारी ॥ नारायण त्यहिं आपु सँहारी ॥ ४ ॥ ❋

बलिकी कन्या दीर्घजिह्वा नाम राक्षसीको इंद्रने उसका अन्याय देखकर मारा है ॥ ३ ॥ फिर राक्षसोंको भला करनेवाली भृगुकी स्त्रीको खुद् नारायणने अपने हाथसे मारा है ॥ ४ ॥

परशुराम गंजी निजमाता ॥ तिमि तुम याहि हतौ गतिदाता ॥ ५ ॥ ❋
गुरुआयसु सुनि नीतिनिधाना ॥ बरजि त्रोणते काढ्यो बाना ॥ ६ ॥ ❋

परशुरामजीने अपनी माताको मारा है; ऐसे हे गतिके देनहारे प्रभु! आपभी इसे मारो ॥ ५ ॥ नीतिके निधि प्रभुने गुरुकी आज्ञा सुन ताड़काको रोककर अपने तरकससे तीर निकाला ॥ ६ ॥

एकहि बाण प्राण हरि लीन्हा ॥ दीन जानि तेहिं निजपद दीन्हा ॥ ६ ॥ ❋
तब ऋषि निजनाथहिं जिय चीन्हा ॥ विद्यानिधिकहँ विद्या दीन्हा ॥७॥ ❋
जाते लागि न क्षुधा पिपासा ॥ अतुलित बल तनु तेज प्रकासा ॥ ८ ॥ ❋

प्रभुने एकही बाणसे उसके प्राण हर लिये. पर उसे दीन जानकर अपना पद दे दिया ॥ ६ ॥ तब विश्वामित्रजीने अपने स्वामीको मनमें पहिँचानकर विद्याके भंडार प्रभुको एक अलौकिक विद्या दीनी ॥ ७ ॥ जिससे भूँख और प्यास नहीं लगे तथा शरीरका बल तेज और प्रकाश अपरिमित हो जाय ॥ ८ ॥

दोहा–आयुध सकल समर्पिके, प्रभु निजआश्रम आनि ॥ ❋
कन्द मूल फल भोजन, दिये भक्तहित जानि ॥ २१५ ॥ ❋

विश्वामित्रजीने प्रभुको तमाम अस्त्र शस्त्र दिये. फिर अपने आश्रममें ला उन्हें भक्तोंके हितकारी जानकर कंद, मूल, फल, खानेको दिये ॥ २१५ ॥

प्रात कहा मुनिसन रघुराई ॥ निर्भय यज्ञ करहु तुम जाई ॥ १ ॥ ❋
होम करण लागे मुनिझारी ॥ आपु रहे मखकी रखवारी ॥ २ ॥ ❋

प्रातःकाल होतेही प्रभुने मुनिसे कहा कि– आप निर्भय होकर यज्ञ कीजियेगा ॥ १ ॥ तब सब मुनि महाराज तौ यज्ञ होम करने लगे और आप उसकी रक्षामें रहे ॥ २ ॥

सुनि मारीच निशाचर कोही ॥ ले सहाय धावा मुनिद्रोही ॥ ३ ॥ ❋
बिनु फर बाण राम तेहि मारा ॥ शत योजन गा सागरपारा ॥ ४ ॥ ❋

मुनि विश्वामित्रजी यज्ञ करते है ये समाचार सुन मुनिलोगोंसे द्रोह रखनेवाला महाक्रोधी मारीच नाम राक्षस अपने सहायोंको साथ ले दौड़कर आया ॥ ३ ॥ प्रभुने उसके बिना फलका बाण मारा; जिससे वह समुद्रके पार सौ १०० योजनमें जा पड़ा ॥ ४ ॥

पावकशर सुबाहु पुनि मारा ॥ अनुज निशाचरकटक सँहारा ॥ ५ ॥ ❋
मारि असुर द्विजनिर्भयकारी ॥ अस्तुति करहिँ देव मुनिझारी ॥ ६ ॥ ❋

फिर प्रभुने सुबाहुके अग्निबाण लगाया जिससे वह मर गया. लक्ष्मणने राक्षसोंकी सेनाका संहार किया ॥ ५ ॥ ब्राह्मणोंको अभय देनहारे हरिने राक्षसोंका बध किया तब देवता और मुनि लोग स्तुति करने लगे ॥ ६ ॥

तहँ पुनि कछु दिवस रघुराया ॥ रहे कीन्ह विप्रनपर दाया ॥ ७ ॥ ❋
भक्तिहेतु बहु कथा पुराना ॥ कहैं विप्र यद्यपि प्रभु जाना ॥ ८ ॥ ❋

प्रभु ब्राह्मणोंपर दया करके वहां कुछ दिन और बिराजे ॥ ७ ॥ यद्यपि प्रभु सब कुछ जानते थे तथापि ब्राह्मणोंने अपनी भक्तिसे प्रभुको अनेक कथा और पुराण सुनाये ॥ ८ ॥

तब मुनि सादर कहा बुझाई ॥ चरित एक देखिय प्रभु जाई ॥ ९ ॥ ❋
धनुषयज्ञ सुनि रघुकुलनाथा ॥ हर्षि चले मुनिबरके साथा ॥ १० ॥ ❋

तब विश्वामित्रजीने समझाकर रामचन्द्रजीसे आदरके साथ कहा कि- हे प्रभु ! जो इच्छा हो तौ चलकर एक चरित्र और देखें ॥ ९ ॥ जनकके यहां धनुषयज्ञ है. ये समाचार सुन, प्रसन्न हो प्रभु विश्वामित्रजीके साथ चले ॥ १० ॥

आश्रम एक दीख मगमाहीं ॥ खग मृग जीव जन्तु तहँ नाहीं ॥ ११ ॥ ❋

पूंछा मुनिहिँ शिला प्रभु देषी ॥ सकल कथा ऋषि कही बिशेषी ॥ १२ ॥❁

मार्गमें जाते प्रभुने एक आश्रम देखा जिससे भीतर पशु पक्षी आदि कोईभी जीव जन्तु नहीं था ॥ ११ ॥ तहां एक शिला पड़ी देखकर प्रभुने मुनिसे पूंछा कि–यह क्या है? तब विश्वामित्र-जीने उसकी सब कथा कही ॥ १२ ॥

(क्षेपक) यक दिन इन्द्र सुरनते कहेऊ ॥ मम त्रियते बर त्रिय कहुँ चहेऊ ॥१॥
देवन रबि रबि शशिहिँ बतायो॥अधिक अहल्या तहँ सुनि पायो॥२॥

एक दिन इंद्रने देवताओंसे कहा कि–तुमने कहीं मेरी स्त्रीसे अधिक रूपवती स्त्री देखी है? ॥ १ ॥ तब देवताओंने सूरजका नाम बताया कि, यह बात आप सूरजसे पूंछो; क्योंकि वो सारे संसारको जानते है. तब सूरजने चंद्रमाका नाम लिया. तब चंद्रमाने इंद्राणीकी अपेक्षा अहल्याको अधिक रूपवती बतायी ॥ २ ॥

सुनि मुनि गे तमचुरसम बानी ॥ गौतमबपु बासव रति ठानी ॥ ३ ॥ ❁
कहेउ गंग छल तुम्हरे गेहा ॥ भवन आइ लखि कह बचनेहा ॥ ४ ॥ ❁

तब इंद्र चंद्रमाको साथ ले गौतमजीके आश्रममें गया; चंद्रमा वहां जाकर मुर्गेकीसी बाणी बोला तिसे सुन भोर हुआ जान मुनि स्नान करनेको गंगाजी पधारे. तहां पीछे गौतमजीका स्वरूप बनाय इंद्रने अहल्याके साथ भोग किया ॥ ३ ॥ गंगाजीने जातेही गौतमजीसे कहा कि–हे मुनि! आपके घरमें छल हुआ है सो जल्दी जाओ. तब घरपर आकर गौतमजीने वो सब चरित्र देखकर ये बचन कहे ॥ ४ ॥

यक भगहित आयो तुम हमरे ॥ होइँ सहस भग सब तन तुम्हरे ॥ ५ ॥ ❁
कहेउ अहल्या तैं पविरूपा ॥ व्है सब कष्ट सहौ सुरभूपा ॥ ६ ॥ ❁

हे इंद्र! तू हमारे यहां एक भगके लिये आया है पर तेरे सारे शरीरमें सहस्र भग होजायँगे ॥ ५ ॥ फिर अहल्यासे कहा कि–तू शिलारूप होकर सब कष्ट सह ॥ ६ ॥

बिनय सुनत बोले हरि चरणा ॥ छुवत तोर होइ निस्तरणा ॥ ७ ॥ ❁
इन्द्रस्तुति सुनि कह मुनि भाषी ॥ धनुधुनि सुनि होइहैं सब आंखी ॥८॥❁

मुनिके बचन सुन अहल्याने बिनय किया तब गौतमजीने कहा कि–हे पापिनी! तेरा उद्धार तौ प्रभुके चरण छूतेही हो जायगा ॥ ७ ॥ फिर इंद्रकी स्तुति सुन मुनिने कहा कि–प्रभु धनुष तोड़ेंगे तब धनुषका शब्द सुनतेही तेरे भगोंके नेत्र बन जायंगे. तब तेरा सहस्राक्ष नाम होगा ॥ ८ ॥ ॥इति ॥

दोहा–गौतमनारी-शापबश, उपलदेह धरि धीर ॥ ❁
चरणकमलरज चाहती, कृपा करहु रघुबीर ॥ २१६ ॥

विश्वामित्रजीने रामचन्द्रजीसे कहा कि–हे प्रभु! शापसे शिलारूप भयी हुई गौतमजीकी स्त्री अहल्या धीरज धरकर आपके चरणकमलोंकी रज चाहती है सो हे रघुवीर! इसपर कृपा करो ॥ २१६ ॥

छंद–परसत पदपावन शोकनशावन प्रगट भई तपपुंज सही ॥ ❁
देखत रघुनायक जनसुखदायक सन्मुख होइ कर जोर रही ॥ ❁

अतिप्रेम अधीरा पुलकशरीरा मुख नहिँ आवै बचन कही ॥ ❋
अतिशय बड़भागी चरणन लागी युगुलनयन जलधार बही ॥ २७ ॥

शोचके मिटानेवाले प्रभुके पवित्र चरणकमल छूतेही वो तपकी राशि अहल्या तुरंत प्रगट हुई. भक्तजनोंके सुख देनहारे प्रभुके देखतेही वो हाथ जोड़ सामने खड़ी रही. प्रेमके मारे उसकी धीरज बिलकुल जाती रही. शरीर रोमांचित होगया; मुखसे बचन निकल नहीं सके, दोनों नेत्रोंमेंसे आंसूकी धारा बहने लगी. इसतरह प्रेमबश होकर वो बड़भागिनी प्रभुके चरण लगी ॥ २७ ॥

धीरज मन कीन्हा प्रभुकहँ चीन्हा रघुपतिकृपा भक्ति पाई ॥ ❋
अति निर्मलबानी अस्तुति ठानी ज्ञानगम्य जय रघुराई ॥ ❋
मैं नारि अपावन प्रभु जगपावन रावणरिपु जनसुखदाई ॥ ❋
राजिवलोचन भवभयमोचन पाहि पाहि शरणहिँ आई ॥ २८ ॥ ❋

प्रभुको चीन्ह, मनमें धीरज धर, प्रभुकी कृपासे उनकी भक्ति पाय अतिनिर्मल बाणीसे प्रभुकी स्तुति करने लगी कि–हे ज्ञानगम्य ! प्रभु ! आपकी जय हो. हे रावणके बैरी ! हे भक्तलोगोंके सुखकारी ! हे कमलनयन ! हे भवभयके मिटानेहारे प्रभु ! मैं स्त्रीजाति परम अपावन हूं और आप जगत्को पवित्र करनेवाले हो सो हे प्रभु ! मुझे पवित्र करो. हे प्रभु ! मैं आपके शरण आगयी हूं सो मुझे पाहि पाहि कहे बचाओ बचाओ ॥ २८ ॥

मुनि शाप जो दीन्हा अतिभल कीन्हा परमअनुग्रह मैं माना ॥
देखेउँ भरि लोचन हरि भवमोचन यहै लाभ शंकर जाना ॥ ❋
बिनती प्रभु मोरी मैं मतिभोरी नाथ न बर मागों आना ॥ ❋
पदकमलपरागा रस अनुरागा मम मन मधुप करै पाना ॥ २९ ॥ ❋

मुनिने जो शाप दिया वो बहुतही अच्छा किया. मैं वो मुनिका बड़ा अनुग्रह मानती हूं; क्योंकि उसीके प्रतापसे संसारसे छुड़ानेवाले प्रभुके मैंने नेत्र भरके दर्शन किये है. मुझको जो यह लाभ मिला है सो शिवजीही जानते है. हे प्रभु ! मेरी एक बिनती है; हे नाथ ! मैं बिलकुल मतिकी भोरी हूं; मैं आपसे दूसरा बर कुछभी नहीं मांगती. मेरी यही प्रार्थना है कि, मेरा मनरूप भ्रमर आपके चरणकमलके परागसहित रसको सदा अनुरागके साथ पान किया करै ॥ २९ ॥

जेहि पद सुरसरिता परमपुनीता प्रकट भई शिव शीस धरी ॥ ❋
सोइ पदपंकज जेहि पूजत अज मम शिर धरेउ कृपालु हरी ॥ ❋
यहिभांति सिधारी गौतमनारी बारबार हरिचरण परी ॥ ❋
जो अतिमनभावा सो बर पावा गइ पतिलोक अनन्दभरी ॥ ३० ॥ ❋

जिस चरणसे परमपवित्र गंगाजी प्रगट हुई है; जिन गंगाको शिवजी अपने शिरपर धारण करते हैं और जिस चरणको ब्रह्माजी पूजते हैं. उसी चरणकमलको हे दयालु प्रभु ! मेरे शिरपर धरो. इसतरह गौतमजीकी स्त्री अहल्या प्रभुसे प्रार्थना करके बारंबार प्रभुके चरणोंमें गिरी.

फिर प्रभुसे आज्ञा पाकर वहांसे सिधारी. अहल्या अपना मन चाहा बरदान पाय,आनंदित हो, अपने पतिके लोकको गई ॥ ३० ॥

दोहा–अस प्रभु दीनबन्धु हरि, कारणरहित कृपाल ॥ ❋
तुलसिदास शठ ताहि भज, छाँड़ि कपट जंजाल ॥ २१७ ॥ ❋

तुलसीदासजी कहते हैं कि–हे शठ मन ! जो प्रभु ऐसे दीनबंधु और निष्कारण दयालु हैं तौ तू कपटका जंजाल छोड़कर उन्हींका भजन कर ॥ २१७ ॥

चले राम लक्ष्मण मुनिसंगा ॥ गये जहां जगपावनि गंगा ॥ १ ॥ ❋
अनुजसहित प्रभु कीन्ह प्रणामा ॥ बहु प्रकार सुख पायहु रामा ॥ २ ❋

राम और लक्ष्मण मुनिके संग चले २ वहां गये कि, जहां जगपावनी गंगा थी ॥ १ ॥ प्रभुने लक्ष्मणके साथ गंगाजीको प्रणाम किया, और वहां अनेक सुख पाये ॥ २ ॥

(क्षेपक) पुनि सुरसरि उतपति रघुराई ॥ कौशिकसन पूँछा शिर नाई ॥१॥ ❋
कह मुनि प्रभु तव कुल यक राजा ॥ नाम सगर तिहुँ लोक बिराजा ॥२॥ ❋

फिर रामचन्द्रजीने शिर नवाकर विश्वामित्रजीसे गंगाकी उत्पत्तिकी कथा पूँछी ॥ १ ॥ तब विश्वामित्रजीने कहा कि–हे राम ! आपके वंशमें एक सगर नाम राजा हुआ था. जो त्रिलोकीमें अपने नामसे प्रसिद्ध था ॥ २ ॥

तेहिके युग भामिनि सुकुमारी ॥ प्रथम केशिनी सुमति पियारी ॥ ३ ॥ ❋
सब प्रकार सम्पति सुरभ्राजा ॥ सुतबिहीन मन बिस्मय राजा ॥ ४ ॥ ❋

उसके सुकुमारी दो रानियां थीं. एकका नाम केशिनी और दूसरी प्यारीका नाम सुमति था ॥ ३ ॥ राजाके घरमें देवताओंकीसी सब प्रकारकी संपत्ति थी; पर उसके पुत्र नथीं था जिससे वह मनमें सदा बिस्मित रहा करता था ॥ ४ ॥

एक समय भामिनि दोउ साथा ॥ गये बन तनयहेतु रघुनाथा ॥ ५ ॥ ❋
सघन सफल तरु सुन्दर नाना ॥ तहँ भृगु मुनि तपतेजनिधाना ॥ ६ ॥ ❋

हे राम ! एक दिन वह अपनी दोनों रानियोंको साथ लेकर पुत्रके लिये तप करनेको बनमें चले ॥ ५ ॥ वहां अनेक प्रकारके फल सहित सघन सुन्दर वृक्षोंसे शोभायमान, आश्रमके भीतर तप और तेजके निधि भृगु ऋषि रहते थे ॥ ६ ॥

दोहा–सहित नारि नृप मुदित मन, रहे वर्ष शतएक ॥ ❋
कीन्हे तपबल देखि भृगु, अस्तुति कीन्ह अनेक ॥ ३५ ॥ ❋

राजा प्रसन्न होकर अपनी रानियोंके साथ वहां सौ १०० वर्षलों रहा और तपस्या करी. राजाने भृगुकी तपस्याका बल देखकर भृगुऋषिकी अनेक प्रकारसे स्तुति करी ॥ ३५ ॥

कहि निजदुख प्रणाम नृप कीन्हा ॥ दै अशीश तब मुनिवर दीन्हा ॥१॥ ❋
नृप रानीसन मुनि अस भाषा ॥ लेहु स्वबर जो जेहि अभिलाषा ॥२॥ ❋

राजाने अपना दुःख निवेदन कर भृगुको प्रणाम किया. तब आशीश देकर भृगुऋषिने बरदान

दिया ॥ १ ॥ मुनिने राजा और रानियोंसे ऐसा कहा कि–जिसकी जो इच्छा हो वही वर मांगो ॥२॥

सुनि मुनि बचन शीश तिन नावा ॥ देहु नाथ जो अति मनभावा॥३॥ ❀
एकही कह्यो एक सुत होना ॥ दूसरि साठ सहस गुण लोना ॥ ४ ॥ ❀

मुनिके ऐसे प्रिय बचन सुन उन्होंने प्रणाम किया और कहा कि–हे नाथ! जो आपको अच्छा लगे वही वरदान देओ ॥ ३ ॥ तब भृगु ऋषिने एक रानीसे कहा कि– तेरे एक पुत्र होगा. दूसरीसे कहा कि–तेरे बड़े गुणवान् साठ हजार ६०००० पुत्र होवेंगे ॥ ४ ॥

हर्षित भयो सुभग बर पाई ॥ पाणि जोरि चरणन शिर नाई ॥ ५ ॥ ❀
सहित भामिनी अवधहि आये ॥ हर्ष सहित कछु दिवस गँवाये ॥ ६ ॥ ❀

ऐसे अच्छे बर पाकर राजा बड़ा प्रसन्न हुआ. हाथ जोड़कर उसने चरणोंमें शिर नवाया ॥५॥ फिर राजा सगर अपनी रानियोंको साथ ले अयोध्यामें आया.वहां बड़े आनंदके साथ कुछ दिन बिताये।६।

जानि सुघरि सुन्दरि सुखदाई ॥ नाम केशि असमंजस जाई ॥ ७ ॥ ❀
सुमति प्रसव यक तुम्बरि सोई ॥ भये सुत प्रकट कहे मुनि जोई ॥ ८ ॥❀

जब न्सुदर और सुखकारी शुभ घड़ी और शुभ दिन आया तब केशिनी नाम रानीके असमंजस नाम पुत्र हुआ ॥ ७ ॥ सुमति नाम रानीके एक तुम्बी पैदा हुई. उसमेंसे उतनेही पुत्र प्रगट हुए जितने मुनिने कहे थे ॥ ८ ॥

निरखे सुत हर्षित सब होई ॥ मंगलचार किये सबकोई ॥ ९ ॥ ❀
हर्षसहित दिये दान नरेशू ॥ पूजि विप्र गुरु गौरि गणेशू ॥ १० ॥ ❀
घृतघट सुन्दर बिबिध मँगाये ॥ ते सब सुत नृप तिनमहँ नाये ॥ ११ ॥❀

पुत्रोंको देखकर सब लोग बड़े हर्षित हुए. सब किसीने मंगलचार किये ॥ ९ ॥ राजाने आनंदके साथ अनेक दान दिये. ब्राह्मण गुरु गौरी और गणपतिकी पूजा करी ॥ १० ॥ साठहजार पुत्रोंको पालनेके लिये राजाने यह तजबीज करी कि, बहुत सुन्दर विचित्र घृतके घड़े मँगवाये उनमें उन सब पुत्रोंको रख दिये ॥ ११ ॥

दोहा–यहिबिधि भये सकल सुत, पूजे सब मनकाम ॥ ❀
जाइ दिवस निशि हर्षबश, सुनहु राम घनश्याम ॥ २ ॥ ❀

पुत्र होनेसे राजाके मनके सब मनोरथ पूरे हुए. हे घनश्याम राम ! सुनो. राजा सगरके रात दिन परम आनंदमें जाने लगे ॥ २ ॥

पुरजन सब घर घरिनि नरेशू ॥ अति आनँद तन मिटा अँदेशू ॥१॥❀
बालकेलि कर भये कुमारा ॥ लीला करैं अगम संसारा ॥ २ ॥ ❀

पुरके लोगोंके घर घरमें आनंद छा गया. राजा बड़ा आनंदमगन हुआ. राजाके मनका अंदेशा मिट गया ॥ १ ॥ वे राजकुमार बाललीला कर फिर कुमारअवस्थाको पाय, संसारमें कभी नहीं देखी ऐसी अद्भुत लीला करने लगे ॥ २ ॥

होइ सो काज सकल मन चीते ॥ यहि सुख बसत बहुत दिन बीते ॥ ३ ॥
सरयूनदी अवध जो अहई ॥ विमल सलिल उत्तरतट बहई ॥ ४ ॥ ❋

राजा मनमें जो काम विचारता है वह काम उसी वक्त होताही नजर आता है. इसतरह आनंदपूर्वक रहते बहुत दिन बीत गये ॥ ३ ॥ जिसका अतिनिर्मल जल है ऐसी सरयूनदी अयोध्याजीके उत्तरकी ओर बहुतही निकट बहती है ॥ ४ ॥

प्रजालोकके बालक नाना ॥ नित उठि तहाँ करैं अस्नाना ॥ ५ ॥ ❋
असमंजस तहँ तरनी आनी ॥ तिनहिँ चढ़ाइ बोरि निजपानी ॥ ६ ॥ ❋

सो प्रजा लोगोंके बहुतसे बालक इकट्ठे हो, नित उठ, वहां जाया करैं और उसमें स्नान किया करैं ॥ ५ ॥ वहां सरयूमें राजाका पुत्र असमंजस एक नौका लाया सो नित्य जो बालक स्नान करनेको जावें उन्हें नौकामें बैठाय, बीचमें ले जाय अपने हाथसे नदीमें डुबाय दिया करता था ॥ ६ ॥

भये प्रजा सब परम दुखारी ॥ बालकबध सुनि सुनहु खरारी ॥ ७ ॥ ❋
सकल गये जहँ बैठ नृपाला ॥ बोले बचन नाइ पद भाला ॥ ८ ॥ ❋

तब तौ बालकोंका वध सुन सब प्रजा दुःखी होगये. विश्वामित्रजी कहते हैं कि—हे राम! सुनो ॥ ७ ॥ प्रजाके लोग दुःखी होकर राजाके पास गये और राजाके चरणोंमें शिर नवाकर बोले ॥ ८ ॥

तुम नृप चहहु प्रजाप्रतिपाला ॥ सुत तुम्हार भा सबकर काला ॥ ९ ॥ ❋
तजब देश सब सुनहुँ नरेशू ॥ बिना तजे नहिँ मिटै कलेशू ॥ १० ॥ ❋

कि— हे राजन्! आप तौ प्रजाको प्रतिपाल करना चाहते हो और आपका पुत्र सबका काल (मृत्यु) हुआ है ॥ ९ ॥ हे राजन्! सुनो. हम सब लोग देश छोंड़कर चले जायंगे; क्योंकि देश छोंड़े बिना हमारा दुःख मिटनेका नहीं है ॥ १० ॥

दोहा—तव सुत कीन्हे पाप बहु, मारे बालकवृन्द ॥ ❋
तुमकहँ प्राणसमान यह, सकल प्रजनकहँ मन्द ॥ ३७ ॥

आपके पुत्रने महाघोर पाप किये हैं. हमारे कई बालकोंको मार डाला है. आपके तौ वह प्राणोंके जैसा प्यारा है और सब प्रजाके लिये वह बहुतही बुरा है ॥ ३७ ॥

प्रजागिरा सुनि धीरज दीन्हा ॥ सुतहिँ देशते बाहर कीन्हा ॥ १ ॥ ❋
असमंजस तब कीन बिचारा ॥ जियत अबहि ले आनुं कुमारा ॥ २ ॥ ❋

प्रजाकी पुकार सुन राजाने उनको धीरज दिया और अपने पुत्रको देशसे निकाल दिया ॥ १ ॥ तब असमंजसने बिचार किया कि—अब प्रजाको सब बालकोंको पीछा जीता लेआना चाहिये ॥ २ ॥

तिनहिँ लागि सरयूके तीरा ॥ गे असमंजस अति मतिधीरा ॥ ३ ॥ ❋
लै बालक आगे करि तबहीं ॥ आय दीन सब सरयू जबहीं ॥ ४ ॥ ❋

ऐसा बिचार कर महाधीरबुद्धि असमंजस मरेहुए बालकोंको बाहिर लानेके लिये सरयूके तीर पर गया ॥ ३ ॥ जब सरयूने सब बालकोंको असमंजसके आगे ला हाजिर किये ॥ ४ ॥

तब लरिकनको आज्ञा दीन्हा ॥ आपुहि जाइ तपस्या कीन्हा ॥ ५ ॥ ❋
बहुत प्रकार सुतहिँ समुझावा ॥ कवनेहुँ भांति रहन नहिँ पावा ॥ ६ ॥ ❋

तब लड़कोंको अपने २ घर जानेकी आज्ञा दी और आप वनमें जा तपस्या करने लगा ॥ ५ ॥ जब राजा सगरने असमंजसका ऐसा प्रभाव देखा तब उसने उसको बहुत कुछ समझाया; पर वह किसी तरह रहने न पाया ॥ ६ ॥

तासु तनय जगविदित प्रभाऊ ॥ गुणनिधि अंशुमान तेहिँ नाऊ ॥ ७ ॥ ❋
बसत हृदय नृपके सो कैसे ॥ फणि मणि मीन सलिल रह जैसे ॥ ८ ॥ ❋

असमंजसके गुणोंका सागर अंशुमान् नाम पुत्र हुआ; जिसका सुयश सारे संसारमें विख्यात है ॥ ७ ॥ वो राजाके मनमें कैसे रहता था? कि जैसे सर्पकी मणि सर्पके पास रहती है और मछली जलके भीतर रहती है ॥ ८ ॥

गये प्रजा सब निज निज धामा ॥ भय बिलोकि मन गुण बिश्रामा ॥ ९ ॥ ❋
बहुरि नृपति मन कीन्ह बिचारा ॥ आइ भयो पन चौथ हमारा ॥ १० ॥ ❋

असमंजसके वनमें जानेके अनंतर सब प्रजा अपने अपने घर गये. राजा सगर अंशुमान्के गुणोंको देख मनमें बड़ा खुश होते भया. फिर एक दिन राजाने मनमें विचार किया कि, अब तो हमारा चौथापन आगया है सो कुछ परलोकका साधन करना चाहिये ॥ ९ ॥ १० ॥

हित मंत्री गुरु सुतहु बुलाये ॥ हिमगिरि विन्ध्यमध्य तब आये ॥ ११ ॥
रुचिर वेदिका एक बनाई ॥ देखत बनै बर्णि नहि आई ॥ १२ ॥ ❋
मख अरम्भ छाँड़े तब तुरगा ॥ वेगवन्त जिमि देखिय उरगा ॥ १३ ॥ ❋

ऐसा विचार कर अपने तमाम मंत्री, गुरु, बंधु और पुत्रोंको बुलाय हिमालय और विंध्यपर्वतके बीचमें आये ॥ ११ ॥ एक सुन्दर यज्ञ करनेको वेदी बनाई. जो देखतेही बनि आवे पर वर्णन करनेमें नहीं आती थी ॥ १२ ॥ राजाने यज्ञका प्रारंभ किया. तब घोड़ेको छोड़ा वो घोड़ा सांपके जैसा वेगवाला दिखाई देता था ॥ १३ ॥

दोहा–सुरपति सुनि भय दारुणहि, मनमहँ करि अनुमान ॥ ❋
आन तुरँग तब लीन्हेउ, मर्म न काहु जान ॥ ३८ ॥ ❋

इंद्रने यज्ञ करनेके समाचार सुने तब उसके मनमें बड़ा दारुण भय उपजा. इंद्र मनमें सोच विचार कर चुपकेसे घोड़ेको चुरा ले गया, जिसका भेद किसीने नहीं पाया ॥ ३८ ॥

राखेहु आनि कपिल मुनिपाही ॥ कोउ न जान काहुहि गम नाहीं ॥ १ ॥ ❋
जुगवत रहे जे सुभट सयाने ॥ तुरँग लेत तिनहु नहि जाने ॥ २ ॥ ❋

इंद्रने घोड़ेको ले जाकर कपिलमुनिके पास छोड़ दिया. इस बातकी किसीको खबर नहीं पड़ी ॥ १ ॥ जो श्रेष्ठ सुभट उस घोड़ेकी रक्षा करते थे उनकोभी घोड़ा लेजानेकी खबर न रही ॥ २ ॥

तिन सब आय कही नृपपाहीं ॥ महाराज हम कहत डराहीं ॥ ३ ॥ ❋
लीन्ह तुरँग को जान न कोई ॥ कहा करिय जो आयसु होई ॥ ४ ॥ ❋

तब उन्होंने आकर सब समाचार राजासे कहे. रक्षक पुरुषोंने कहा कि-महाराज! हम आपसे कहते डरते हैं पर हमको कहनाही पड़ता है सो सुनो ॥ ३ ॥ आप जिस घोड़ेसे यज्ञ करना चाहते हो उस घोड़ेको तौ कोई ले गया. हमको क्या किसीको खबर नहीं पड़ी. अब हम क्या करें? जो आज्ञा हो वैसाही करें ॥ ४ ॥

सुनत बचन नृप बिस्मय पाये ॥ सकल सुतनकहँ तुरत बुलाये ॥ ५ ॥ ❋
जाहु तुरँग तुम हेरहु जाई ॥ सकल चले चरणन शिर नाई ॥ ६ ॥ ❋

पहरादारोंके बचन सुन राजाको बड़ा विस्मय हुआ. राजाने तुरंत अपने तामाम पुत्रोंको बुलाया ॥ ५ ॥ और कहा कि-जाओ तुम घोड़ेको ढूंढो. तब सबके सब राजाके चरणोंको प्रणाम कर घोड़ेकी तलाशीमें चले ॥ ६ ॥

सुरपतिसम देखिय सब बीरा ॥ सकल धनुर्धर अति रण धीरा ॥ ७ ॥ ❋
तिनहिं चलत धरणी अकुलाई ॥ बलि पशु जीव भये सब आई ॥ ८ ॥ ❋

जो सब वीर इंद्रके समान दीख पड़ते थे और सब बड़े धनुर्धर तथा युद्धके बीच बड़े रणधीर थे ॥ ७ ॥ उन्हें रवाने होते देख पृथ्वी घबराई, कि जो सबके सब एक साथ बलिदानके पशु होगये थे अर्थात् मारे गये थे ॥ ८ ॥

सुमन वाटिका उपवन बागा ॥ सरित कूप वापिका तड़ागा ॥ ९ ॥ ❋
नगर गाँव मुनीश थल नाना ॥ गिरिकन्दर कानन अस्थाना ॥ १० ॥ ❋

उन राजपुत्रोंने, फुलवाड़ियां, बाग, बगीचे, नदियां कूएँ, बावलियां, तालाव,नगर, गाँव,मुनिलोगोंके आश्रम, पर्वतोंकी कंदरा, वन व सब स्थान ढूंढे ॥ ९ ॥ १० ॥

दोहा-यहिविधि खोजे तुरँग तिन, आये भूपति पाहिं ॥ ❋
चरणन माथहि नाइ कहि, खोज अश्वकी नाहिं ॥ ३९ ॥

इसतरह घोड़ेको ढूंढनेके लिये बहुत परिश्रम कर वे राजाके पास आय चरणोंमें शिर नवाकर बोले कि-हे पिता! घोड़ेको तौ कहीं पता नहीं लगता ॥ ३९ ॥

खोदहु महि सुत पुनर पठाये ॥ चले सकल पूरब दिशि आये ॥ १ ॥ ❋
तिनके कर जिमि कुलिशसमाना ॥ योजन भरि खोदहिं बलवाना ॥ २ ॥ ❋

तब राजा सगरने कहा कि-जो पृथ्वीके ऊपर पता नहीं लगता तौ जाओ पृथ्वीको खोदो. ऐसे कह उनको फिर भेजा, तब वे सब चले २ पूर्व दिशामें आये ॥ १ ॥ उनके हाथ वज्रके समान थे, जिनसे उन बलवानोंने एक एक योजन पृथ्वी खोदी ॥ २ ॥

देखि अतुल बल देव डराने ॥ मरिहहिं कहि बिरंचि सनमाने ॥ ३ ॥ ❋
शोधत महि पताल सब आये ॥ दिग्गज देखि एक शिर नाये ॥ ४ ॥ ❋

उनका ऐसा अपरिमित बल देखकर देवता डरे; देवताओंने जा ब्रह्माजीसे प्रार्थना करी तब ब्रह्माजीने सन्मान कर देवतानसे कहा कि-ये मर जायँगे. ब्रह्माजीके बचन सुन देवताओंको धीरज आया ॥ ३ ॥ वे राजपुत्र पृथ्वीको खोदते २ सबके सब पातालमें आये वहां दिग्गजको देख उन्होंने शिरसे प्रणाम किया ॥ ४ ॥

तिन पूंछा सब कथा सुनाये ॥ बहुरि सकल दक्षिण दिशि आये ॥ ५ ॥ ❀
यहि बिधि पुनि दूसर गज देषा ॥ अति उतंग गज बिमल बिशेषा ॥६॥ ❀

और पूंछा तब दिग्गजने सारे समाचार कहे. तब वे फिर दक्षिण दिशामें आये ॥ ५ ॥ उसीतरह फिर दूसरा दिग्गज देखा, जो घड़ा ऊंचा और बड़ा निर्मल था ॥ ६ ॥

ताहू बहु प्रणाम तिन कीन्हे ॥ चले सुनत पश्चिम चित दीन्हे ॥ ७ ॥ ❀
तीसर देखि प्रदक्षिण कीन्ही ॥ पुनि उत्तर दिशि शोधहिँ लीन्ही ॥ ८॥ ❀

उसकोभी प्रणाम कर उसके समाचार सुन पश्चिमदिशामें आये ॥ ७ ॥ तीसरे दिग्गजको देख प्रणाम किया. फिर उत्तरदिशा शोधनेको गये ॥ ८ ॥

दिग्गज श्वेत निरखि सुख पाये ॥ सकल कपिल मुनिपहँ पुनि आये॥९॥ ❀
खोजत मही पार नहिँ पावा ॥ शोभा चहुँ दिशि जलधि सोहावा ॥ १० ॥

वहां एक श्वेत वर्ण दिग्गजको देखकर बड़े सुखी हुए फिर वे सब कपिलमुनिके पास आये ॥ ९ ॥ पृथ्वीको ढूंढ़ते २ कुछ पता नहीं लगा. पृथ्वीके चारोंओर सुहावना समुद्र शोभा देने लगा. तात्पर्य—यह है कि—सगरके पुत्रोंके खोदनेसे समुद्र पृथ्वीके चारोंओर फैल गया और बढ़ गया. इसीसे इसका नाम सागर पड़ा है ॥ १० ॥

दोहा—देखे न आइ तुरँग तब, बाँधा मुनिबरबास ॥ ❀
बोले बचन सकोप करि, भा चह सबकर नास ॥ ४० ॥ ❀

राजपुत्रोंने कपिलदेवजीके आश्रममें आकर देखा तो वहां घोड़ा बधा मिला. तिसे देख वे राजपुत्र क्रोध करके बोले, क्योंकि उन सबको नाश होना था इसलिये उन्होंने कपिलदेवजी-पर क्रोध किया ॥ ४० ॥

खोदा महि हम चारिउ कोधा ॥ रे रे दुष्ट बहुत तोहिँ शोधा ॥ १ ॥ ❀
कोउ कह चोर दीख बहु होई ॥ यहि सम छली और नहिँ कोई ॥२ ॥ ❀

राजपुत्र बोले कि—अरे रे दुष्ट ! हमने चारोंओरसे पृथ्वी खोदी और तुझको बहुत ढूंढ़ा तबभी कहीं पता नहीं लगा था अब हम तुझको ढूंढ़ते २ हैरान होगये ॥ १ ॥ कोई बोला कि—चोर तो बहुत देखे हैं; पर इसके जैसा कपटी चोर दूसरा कोईभी नहीं होगा ॥ २ ॥

परधन लै पताल पुनि आयो ॥ तस्कर मुनिबरबेष बनायो ॥ ३ ॥ ❀
कोउ कहै यह मुनिवर नाहीं ॥ समुझि देखि लक्षण मनमाहीं ॥ ४ ॥ ❀

क्योंकि पराया धन लेकर फिर पातालमें चला आया और यहांभी इस चोरने कैसी होश्यारी की है, कि मुनिका वेष बना लिया है ॥ ३ ॥ कोई बोला कि—यह श्रेष्ठ मुनि नहीं है. इसके लक्षण देखकर मनमें समझ लो ॥ ४ ॥

कोउ कह बकतक कीन्ह अपारा ॥ अहो दुष्ट लै तुरँग हमारा ॥ ५ ॥ ❀
सुनत बचन मुनि चितवा जबहीं ॥ भये भस्म सब क्षणमें तबहीं ॥ ६ ॥ ❀

कोई बोला कि—अरे दुष्ट ! हमारा घोड़ा लेकर अब तू बगुलेकी भांति तप करनेको बैठा है.

॥ ५ ॥ राजपुत्रोंके ऐसे असंगत बचन सुनकर ज्योंही कपिलमुनिने उनकी ओर देखा त्योंही वे सब एक क्षणमें भस्म होगये ॥ ६ ॥

उमा बचन जेहि समुझि न बोला ॥ सुधा होइ बिष तिक्तम ओला ॥७॥ ❋
पावक जानि धरहिँ कर प्रानी ॥ जरहिँ काह नहिँ अतिअभिमानी॥८॥ ❋

महादेवजी कहते हैं कि– हे पार्वती ! जो आदमी समझकर नहीं बोलता, उसके लिये अमृत जहर हो जाता है, और ओला कडुआ हो जाता है ॥ ७ ॥ जो प्राणी अभिमानसे अग्निको जानकर उसमें हाथ रखते हैं तो क्या वे नहीं जलते ? ॥ ८ ॥

जानि गरल जे संग्रह करहीं ॥ सुनहु राम ते काहे न मरहीं ॥९॥ ❋
क्रोध करे बिन किये विचारा ॥ भये सकल तेहिते जरि क्षारा ॥ १० ॥ ❋
इहाँ नृपति अँशुमान बुलाये ॥ नहिँ आये सब तिनहिँ पठाये ॥ ११ ॥ ❋

हे राम ! सुनो, जो जानके जहर खाते हैं क्या वे नहीं मरते ? ॥ ९ ॥ उन्होंने बिना बिचारे क्रोध किया तिससे वे जल कर खाक होगये ॥ १० ॥ जब पुत्र पीछे नहीं आये तब सगरने अपने नाती अंशुमान्को बुलाया और भेजा ॥ ११ ॥

दोहा– दीन्हा नृपति अशीश तब, अतिहित बारहिँ बार ॥ ❋
बेगि फिरहु लै तुरँग सुत, मेरे प्राण अधार ॥ ४१ ॥

राजा सगरने बड़े हितके साथ अंशुमान्को बारंबार आशिष दे कहा कि– हे पुत्र ! घोड़ा लेकर पीछा शीघ्र आना. तू मेरे प्राणोंका आधार है ॥ ४१ ॥

चलेउ नाइ पद शीश कुमारा ॥ विष्णुभक्त हित कुलउजियारा ॥ १ ॥ ❋
जहँ तहँ देखि मुनिनके धामा ॥ पूंछि खबरि करि दण्डप्रणामा ॥ २ ॥ ❋

राजा सगरकी आज्ञा पाय उनके चरणोंको प्रणाम कर अंशुमान् वहांसे चला; जो विष्णु भगवान्का परम भक्त और कुलका दीपक था ॥ १ ॥ जहां तहां इस अंशुमान्ने मुनि लोगोंके आश्रम देखकर उनको दंडवत् प्रणाम कर समाचार पूंछे ॥ २ ॥

पन्नग अहिसन पाइ अशीशा ॥ चहुँ दिग्गजकहँ नायउ शीशा ॥ ३ ॥ ❋
यहिबिधि शोधत मगमहँ जाता ॥ मिले गरुड़ सुमतीकर भ्राता ॥ ४ ॥ ❋

फिर नाग और सर्पोंसे आशिष पाकर चारों दिग्गज हाथियोंके पास जा उनको शिर नवाया ॥ ३ ॥ इसतरह ढूंढ़ता २ अंशुमान् जा रहा था, तिसे मार्गमें सुमतिका भाई गरुड़ मिला जो असमंजसका मामा था ॥ ४ ॥

चरण परत तब आशिष दयऊ ॥ जरे सकल जेहि बिधि सो कहेऊ ॥५ ॥ ❋
सुनतहिँ बचन शोच भयो भारी ॥ लिये खगेश दीख थल बारी ॥ ६ ॥ ❋

अंशुमान्ने उसे दंडवत् किया तब उसने आशीर्वाद दिया और जिसतरह उसके चचे भस्म होगये थे वे सब समाचार कहे ॥ ५ ॥ चचोंके जलनेके समाचार सुन उसके मनमें बड़ा भारी शोच हुआ. अंशुमान्ने जलांजलि देनी चाही तब गरुड़ने उसे जलका स्थल दिखाया ॥ ६ ॥

अंशुमान तहँ मज्जन कीन्हा ॥ क्रमक्रम सबहिं जलांजलि दीन्हा ॥ ७ ॥ ❋
बहुरि गरुड़ बोले सुनु ताता ॥ मैं तोहिँ कहौं करिय यक बाता ॥ ८ ॥ ❋

अंशुमान्ने उसमें स्नान कर सबको अनुक्रमसे जलांजलि दी ॥ ७ ॥ फिर गरुड़ने अंशुमान्से कहा कि– हे पुत्र ! मैं जो तुझसे एक बात कहता हूं सो तू अवश्य करियो ॥ ८ ॥

सोरठा– करु सुत सोइ उपाय, गंगा आवहिँ अवनिमहँ ॥ ❋
दर्शनते अघ जाय, मज्जन कीन्हे परमसुख ॥ ३ ॥ ❋

हे पुत्र ! तू वो उपाय जरूर करियो जैसे गंगा पृथ्वीपर आजायँ. गंगा माता ऐसी हैं कि उनके दर्शन करतेही सब पाप निवृत्त हो जाते है और स्नान करनेसे तौ मोक्षसुख प्राप्त हो जाता है ॥ ३ ॥

षष्टि सहस तरिहैं येही बिधि ॥ गंगा पाय परम पावन निधि ॥ १ ॥ ❋
सुनि अस बचन हृदय मन भाये ॥ सहित गरुड़मुनिबरपहँ आये ॥ २ ॥ ❋

गरुड़जीने कहा कि– हे पुत्र ! ये साठ हजार तेरे चचे कपिलमुनिके कोपानलसे भस्म हुए है सो इनका उद्धार इस जलसे नहीं होगा; किंतु गंगाके जलसे होगा. क्योंकि गंगाजी परम पावननिधि है सो गंगाजीको पृथ्वीपर ला उससे इनकी भस्मको बुड़ावेगा तब इनका उद्धार होगा. गंगाजीके बिना इनका उद्धार नहीं होगा ॥ १ ॥ गरुड़जीके बचन सुन अंशुमान् मनमें बड़ा प्रसन्न हुआ और गरुड़जीके साथ कपिलमुनिके पास आया ॥ २ ॥

तब खगेश मुनिचरणन नायउ ॥ पूरब कथा सकल मुनि गायउ ॥ ३ ॥ ❋
आयसु देइ तुरँग मुनि दीन्हा ॥ हर्षि हृदय निजअश्वहिँ चीन्हा ॥ ४ ॥ ❋

गरुड़ और अंशुमान्ने मुनिको प्रणाम किया तब कपिलदेवजीने पिछला सब हाल अंशुमान्से कहा ॥ ३ ॥ कपिलमुनिने जानेकी आज्ञा दे उसे घोड़ा दे दिया. अंशुमान् अपने घोड़ेको पहिँचानकर मनमें बड़ा प्रसन्न हुआ ॥ ४ ॥

नगरसमीप गरुड़ पहुँचाई ॥ गये भवन निज तब रघुराई ॥ ५ ॥ ❋
इहाँ तुरँग लै नृप शिर नाई ॥ षष्टि सहस मुनि कथा सुनाई ॥ ६ ॥ ❋

हे राम ! तब गरुड़ उसे बातकी बातमें नगरके समीप पहुँचाय अपने घर गये ॥ ५ ॥ अंशुमान्ने सगरके पास आ दंडवत प्रणाम कर घोड़ा दे, वहांकी साठ हजार चचों और कपिलमुनिकी कथा कही ॥ ६ ॥

बिस्मय हर्ष बिबश नृप भयऊ[1] ॥ कीन्हा यज्ञ दान बहु दयऊ[2] ॥ ७ ॥ ❋
बहु बिधि नृपति राज पुनि कीन्हा ॥ प्रजालोककहँ अति सुख दीन्हा ॥ ८ ॥ ❋

राजाको इस बातसे बड़ा विस्मय और आनन्द हुआ फिर उसने अपना यज्ञ समाप्त करके ब्राह्मणोंको अनेक दान दिये ॥ ७ ॥ राजाने फिर अनेक प्रकारसे राज किया. प्रजाके लोगोंको बड़ा सुख दिया ॥ ८ ॥

दोहा– अंशुमानहित राज दै, निजमन हरिपद लाग ॥
गयउ सगर तपकाज बन, हृदय अधिक अनुराग ॥ ४२ ॥

---

१ साठ हजार पुत्रोंके जलनेको सुनि विस्मित हुवा. २ अंशुमान्का प्रताप समुझि आनन्दित हुवा.

फिर राजा सगर अंशुमानको राज दे, प्रभुके चरणोंमें चित्त लगाय, मनमें बड़ी प्रीति रखता हुआ तपस्या करनेको बनमें गया ॥ ४२ ॥

तासु तनय दिलीप नृप भयऊ ॥ बन तपहेतु उत्तर दिशि गयऊ ॥ १ ॥ ❀
वहाँ अगम तप कीन्ह नृपाला ॥ भये कालबश गय कछु काला ॥ २ ॥ ❀

उसके दिलीप नाम पुत्र हुआ. जब दिलीप राजके योग्य हुआ तब उसे राज दे अंशुमान् तप करनेको उत्तर दिशाकी ओर बनमें गया ॥ १ ॥ वहां जाकर अंशुमान्ने बड़ी कठिन तपस्या करी; फिर कुछ काल व्यतीत होनेपर वह कालके बश होगया ॥ २ ॥

कहहुँ कवन दिलीपप्रभुताई ॥ सेवैं सकल नृपति जेहिँ आई ॥ ३ ॥ ❀
जुगवत जिहिँ नित सुरपति रहहीं ॥ महिमा तासु सुकवि किमि कहहीं ॥ ४ ॥

जब दिलीप राजा हुआ तब ऐसी प्रभुता बढ़ी कि जिसे कुछ कह नहीं सकते, सब राजा आकर दिलीपकी सेवा करते थे ॥ ३ ॥ जिसकी मरजीमें खुद इंद्र हमेशा रहता था; उसकी महिमा कवि किस तरह कह सकें ? ॥ ४ ॥

भूप भगीरथ सुत भयो जासू ॥ पितुसम प्रीति अधिक उर तासू ॥ ५ ॥ ❀
तिनहिँ बोलि नृप दीन्हेउ राजू ॥ आप चले उठि तपके काजू ॥ ६ ॥ ❀

दिलीपके भगीरथ नाम पुत्र हुआ. जो पितासे कुछ कम नहीं था. उसके हृदयमें प्रीति बहुत ज्यादे थी ॥ ५ ॥ उसे बुलाय राज दे राजा दिलीप आप तपस्या करनेको चला ॥ ६ ॥

मनमहँ करत पंथ अनुमाना ॥ सुरसरि आव तजउँ नहिँ प्राना ॥ ७ ॥ ❀
निज मनु तनु दीन्हेउ तिमि देऊ ॥ फिर निजनगरके नाम न लेऊ ॥ ८ ॥ ❀

दिलीपने मारगमें जाते मनमें ऐसा बिचार किया कि, या तो गंगाजीको यहां ले आऊं नहीं तो मैं मेरे प्राण तज दूंगा ॥ ७ ॥ जैसे मनुने अपना शरीर दे दिया था ऐसे मैंभी मेरा शरीर दे दूंगा, पर गंगाके आये बिना पीछा नगरको नहीं लौटूंगा ॥ ८ ॥

सोरठा—यहिबिधि करत बिचार, नृप कीन्हेउ तब प्रबल तप ॥ ❀
बीते कछु यक काल, देह तजी कोउ प्रगट नहिँ ॥ ४ ॥ ❀

इस तरहका बिचार कर राजाने बड़ी प्रबल तपस्या करी, तथापि कुछ काल बीतनेके बाद राजाका शरीर पड़ गया. गंगाजी प्रगट नहीं हुई ॥ ४ ॥

जेहि सुरसरिलगि तजि तन भूपा ॥ सो तजि मूढ पियहिँ जल कूपा ॥ १ ॥
यहाँ भगीरथ अस मन भयऊ ॥ पितु न आव बहुदिन चलि गयऊ ॥ २ ॥

जिस गंगा जीकेलिये राजा दिलीपने अपना शरीर त्याग दिया था उस गंगाजीको छोड़कर जो लोग कूएका जल पीते हैं उनके जैसा मूर्ख दुन्यामेंभी कोई नहीं है ॥ १ ॥ यहां भगीरथने मनमें विचार किया कि, यह क्या हुआ ? राजाको गये बहुत दिन होगये अबतक वे पीछे क्यों नहीं आये ? ॥ २ ॥

काकुत्स्थ नाम तनय यक रहेऊ ॥ दीन्हा राजनीति बहु कहेऊ ॥ ३ ॥ ❀

कहि तब पूर्वकथा सुतपाहू ॥ दीन्ह अशीश चले नरनाहू ॥ ४ ॥ ❋

भगीरथके ककुत्स्थ नाम पुत्र था. उसे राज दे अनेक प्रकारकी राजनीति सिखाय, पिछली सारी कथा कह, पुत्रको आशीर्वाद दे, राजा भगीरथ तप करनेको चला ॥ ३ ॥ ४ ॥

निकसत नगर शकुन भल पाये ॥ अतिहि निबिड़ बन जहँ नृप आये ॥५॥
देखि भगीरथ बन सुख पावा ॥ सुरसरिहित तपकहँ मन लावा ॥ ६ ॥ ❋

राजाके नगरसे बाहिर निकलतेही बहुत अच्छे शकुन हुए. तिससे मनमें अति प्रसन्न हो राजा महा सघन बनमें तपस्या करनेको गया ॥ ५ ॥ उस सघन बनको देखकर राजाका चित्त प्रसन्न होगया. गंगाजीके वास्ते उसने तपस्या करनेका पक्का विचार कर लिया ॥ ६ ॥

एक चरण दोउ भुजा उठाये, ॥ रविसन्मुख चितवहिँ मनलाये ॥ ७ ॥❋
बर्ष सहस बीते यहि भांती ॥ जात न जाने दिन अरु राती ॥ ८ ॥ ❋

फिर एक पांवसे खड़ा हो, दोनों भुजा उठाय, प्रभुमें मन लगाय, सूरजके सामने दृष्टि दे तपस्या करने लगा ॥ ७ ॥ सो इसके इसतरह तप करते २ एक हजार वर्ष बीत गये रात और दिनकी कुछ सुध न रही ॥ ८ ॥

देखि उग्र तप अज चलि आये ॥ बोले बचन नृपहिँ मन भाये ॥ ९ ॥ ❋
चहहु नृपति जो ले बर कामा ॥ बोले नृप करि अजहिँ प्रणामा ॥१०॥❋
जो माँगौं सो जानत अहहू ॥ सो मन माँगन प्रभु किन कहहू ॥ ११॥❋

भगीरथकी ऐसी उग्र तपस्या देख ब्रह्माजीने वहां आ उसके मनभावते बचन कहे ॥ ९ ॥ ब्रह्माजीने कहा कि–हे राजन्! तेरी जो इच्छा हो वही बर मांग. तब ब्रह्माजीको प्रणाम करके राजाने कहा कि–॥ १० ॥ हे प्रभु ! मैं जो मांगना चाहता हूं सो आप जानतेही हो, इसलिये हे प्रभु ! मेरे मनचाहे बर मांगनेकी जरूरत क्या है ? ॥ ११ ॥

दोहा–तदपि कहौं प्रभु देहु बर, सब सन्तनकहँ वृद्धि ॥ ❋
दूसर माँगौं जोरि कर, गंगा आवहि निद्धि ॥ ४३ ॥ ❋

तथापि हे प्रभु ! जो आपके मेरे मुंहसे कहलानेकी इच्छा है तौ मैं आपसे कहता हूं सो सुनो. एक तौ यह बरदान देओ कि, सब सत्पुरुषोंकी उन्नति होवे और दूसरा बरदान मैं हाथ जोड़के यह मांगता हूं कि, गंगाजी मेरे पास आ जावे ॥ ४३ ॥

एवमस्तु कहि पुनि बिधि कहही ॥ सुरसरि देव राखी को सकही ॥ १ ॥ ❋
छूटि जाहि पुनि तुरत रसातल ॥ फिरहि न नृपति बहुरि सुनु भूतल ॥ २ ॥

ब्रह्माजीने "एवमस्तु" कह कर फिर राजासे कहा कि–हे राजन् ! गंगाको आकाशसे पड़नेपर धारण कौन करेगा ? गंगाको धारण करनेवाला जरूर चाहिये ॥ १ ॥ क्योंकि, जो वह आकाशसे गिरनेपर छूट जायगी तौ सीधी पातालमें चली जायगी, और पातालमें गये पीछे वह पीछी पृथ्वी पर नहीं आ सकेगी ॥ २ ॥

तेहिते कहौं एक तोहिँ पाही ॥ अति दयालु शंकर सबकाहीं ॥ ३ ॥ ❋

सोइ शंकर रखि देवसरि आजू ॥ उनहिँ जपे तब होइ है काजू ॥ ४ ॥ ❋

इससे एक बात मैं तुझसे कहता हूं सो सुन. महादेव परम दयालु है उनके सब बराबर है ॥ ३ ॥ वे महादेव इस गंगाको धारण कर सकेंगे. सो जो तू तपस्या कर महादेवको प्रसन्न करै तो तेरा काम बन जाय ॥ ४ ॥

अस कहि बिधि अन्तरहित भये ॥ बहुरि भगीरथ शिवपहँ गये ॥ ५ ॥ ❋
बिबुधवर्ष अंगुष्ठ अधारा ॥ बार बार शिवनाम उचारा ॥ ६ ॥ ❋

ऐसे कहकर ब्रह्माजी अंतर्धान हुए, तब भगीरथ फिर शिवजीके पास गया ॥ ५ ॥ वहां जा देवताओंके एक वर्षभर अंगूठेके आधार खड़ा हो बारंबार महाहेवजीके नामका जप करने लगा ॥ ६ ॥

शिव दयालु प्रकटे तब आई ॥ हाथ जोरि नृप विनय सुनाई ॥ ७ ॥ ❋
मैं राखब सुरसरि कह ईशा ॥ बहुरि रमापति ध्यान करीशा ॥ ८ ॥ ❋

तब दयालु प्रभु शिवजी तुरंत प्रगट हुए. प्रभुके दर्शन कर हाथ जोड़ राजाने बड़ा विनय किया ॥ ७ ॥ तब महादेवजीने कहा कि-हे राजन्! गंगाको हम हमारे शिरपर धारण करेंगे. ऐसे कह महादेव फिर रामचन्द्रजीका ध्यान करने लगे ॥ ८ ॥

दोहा-उहाँ देवसरि शिवबचन, सुनि मन कीन्ह बिचार ॥ ❋
जाउँ रसातल शिवसहित, जात न लावों बार ॥ ४४ ॥ ❋

गंगाजीने महादेवका बचन सुनकर मनमें विचार किया कि-देखें. महादेवजी मुझको कैसे धारण करते हैं. मैं महादेवजीको साथ लेकर पातालमें चली जाऊंगी इसमें रंचहू देरी नहीं लगाऊंगी ॥ ४४ ॥

अन्तरयामी शिवहु उपाई ॥ निजशिर जटा सो अगम बनाई ॥ १ ॥ ❋
इहाँ भगीरथ अस्तुति कीन्ही ॥ सुनि मृदु गिरा छाँड़ि बिधि दीन्ही ॥२॥ ❋

महादेव तो अंतर्यामी है; घट घटकी जानते हैं. उन्होंने अपनी जटा ऐसी अगम बनाई कि जिसके भीतर गंगाका पता लगना कठिन था ॥ १ ॥ फिर भगीरथने ब्रह्माजीकी स्तुति करी तब राजाकी कोमल बाणी सुनकर ब्रह्माजीने उसे अपने पाससे छोड़ी ॥ २ ॥

छूटे शोर भयउ जग भारी ॥ चकित देव अहि दिग्गज चारी ॥ ३ ॥ ❋
सुरसरि पुनि हरजटा समानी ॥ बर्ष एक तहँ रही भवानी ॥ ४ ॥ ❋

ब्रह्मलोकसे गंगाके छूटतेही जगतमें बड़ा भारी शोर हुआ. गंगाको गिरती देखकर देवता, नाग और चारों दिग्गज चकित रह गये ॥ ३ ॥ फिर वहां गंगा महादेवजीकी जटामें समा गयी सो एक वर्षलों उस जटाके भीतरही रही ॥ ४ ॥

कौतुक देखि सकल सुर हरषे ॥ कह जय जयति सुमन बहु बरषे ॥ ५ ॥ ❋
बहुरि भगीरथ सुमिरण कीन्हा ॥ डारि जटा शिव बुन्दक दीन्हा ॥ ६ ॥ ❋

यह कौतुक देखकर सब देवता बड़े प्रसन्न हुए और 'जय जय' शब्द कहकर फूल बर-

साने लगे ॥ ५ ॥ फिर भगीरथने महादेवजीका स्मरण किया तब शिवजीने अपनी जटामेंसे एक बूंद डाल दीनी ॥ ६ ॥

तेहिते भईं तीनि पुनि धारा ॥ एक गई नभ एक पतारा ॥ ७ ॥ ❋
गइ नभ सोइ कि भइ अघनाशिनि ॥ देवन धरा नाम मन्दाकिनि॥८॥ ❋

उसमेंसे फिर तीन धारा हुईं. सो एक तौ आकाशमें गई और एक पातालमें गई ॥ ७ ॥ जो पापसंहारनी धारा आकाशमें गयी रही उसका नाम देवताओंने मंदाकिनी रक्खा ॥ ८ ॥

दोहा—दूसरि गई पताल तब, नाम प्रभावति हरण दुख ॥ ❋
तीसरि भइ गंगा सोई, सब सन्तनको करण सुख ॥ ४५ ॥ ❋
जलप्रवाह निरखत नृपति, उर अति भयउ अनन्द ॥ ❋
जैसे उमड़त सिन्धु तब, पूर्णकला लखि चन्द ॥ ४६ ॥ ❋

दुःखकी मिटानेवाली जो दूसरी धारा पातालमें गई उसका नाम प्रभावती रक्खा गया. संत जनोंके सुख करनहारी जो तीसरी धारा पृथ्वीपर आई उसका नाम गंगा पड़ा ॥ ४५ ॥ जलका प्रवाह देखतेही राजाके मनमें ऐसा भारी आनंद हुआ जैसे पूर्णकल पूर्णिमाके चंद्रमाको देखकर समुद्र उमड़ता है ॥ ४६ ॥

आय भगीरथ पुनि शिर नाये ॥ बोली सुरसरि बचन सहाये ॥ १ ॥ ❋
वेगवन्त नृप रथ लै आनु ॥ तुरत तुरँग शुभ गति जिमि भानु ॥ २ ॥ ❋

भगीरथने आकर गंगामाताको प्रणाम किया तब वो मैया सुहावने बचनसे बोली ॥ १ ॥ कि–हे राजन्! जल्दी बेगवाला रथ ले आओ उसके घोडे ऐसे अच्छे चलनेवाले और बेगवाले हों कि जैसे सूरजके घोड़े ॥ २ ॥

तेहि रथ चढ़ि नृप चलु मम आगे ॥ चलिहौं मैं तव पाछे लागे ॥ ३ ॥ ❋
सुनि नृप दिव्य तुरँग रथ आना ॥ चले हृदय सुमिरत भगवाना ॥ ४॥ ❋

उस रथपर चढ़कर आप मेरे आगे आगे चलो सो मैं तुम्हारे पीछे पीछे चलूंगी ॥ ३ ॥ गंगाके ऐसे बचन सुन राजा तुरंत दिव्य घोड़े जोड़ रथ ले आया. फिर भगवान्का मनमें स्मरण कर वहांसे चला ॥ ४ ॥

चली अग्र करि नृपहिँ सुरसरी ॥ देवन मुदित सुमनझरि करी ॥ ५ ॥ ❋
चलत तेज कछु बरणि न जाई ॥ टूटहिँ गिरि तरु शैल सुहाई ॥ ६ ॥ ❋

राजाके रथके पीछे पीछे गंगा मैया चली तब देवताननें हर्षित होकर पुष्पोंकी वर्षा करी ॥ ५ ॥ सुहावनी गंगाजीका प्रवाह ऐसा तेज जाता था कि जिसका कुछ वर्णन नहीं कर सकते. जो प्रवाहमें आगया वो पहाड़ पेड़ पर्वत टूटताही नजर आया ॥ ६ ॥

करैं कुलाहल बिधि बहु भाँती ॥ कमठ नक्र झष व्याल सोमाती ॥ ७ ॥ ❋
मज्जन करहिँ देव तहँ आई ॥ सुनि गति सिद्ध रहे सब छाई ॥ ८ ॥ ❋

गंगाके भीतर जो कछुए, मगर, मच्छ और सांप थे वे अनेक प्रकारसे कोलाहल करते थे

॥ ७ ॥ देवता वहां आ आ स्नान करते थे. सिद्धलोग गंगाजीका आना सुन सब उसके तीर तीर छा गये थे ॥ ८ ॥

सोरठा–तर्पण कर मन लाय, हर्ष हृदय नहिँ जात कहि॥ ❋
दर्शनते अघ जाय, तरैं सकल मुनिजन कहैं ॥ २ ॥ ❋
मज्जन करि हरखाय, सुर अजादि सनकादि ऋषि ॥ ❋
पान करत अघ जाय, अस मन सब कोऊ कहैं ॥ ३ ॥ ❋

मन लगाय गंगाजीमें तर्पण करनेसे जो उनके हृदयमें आनंद हुआ वह कुछ कहा नहीं जाता. गंगाजीको देखकर सब मुनिलोग कहने लगे कि–जिसके दर्शन करनेसे पाप निवृत्त हो जाते हैं और सब तरहके पापी तर जाते है. वह मैया हमको मिलगयी सो हम तो संसारसे पार उतर गये हैं ॥ २ ॥ ब्रह्मादि देवता और सनत्कुमार आदि ऋषि जिसमें स्नान कर परम आनंदित होते है उस मैयाका जल पान करनेसे पाप निवृत्त हो जिसमें कहनाही क्या ? ऐसे सब कोई अपने मनमें कहते थे ॥ ३ ॥

करै जो मज्जन जप मन लाई ॥ तिनकी महिमा कहि न सिराई ॥ १ ॥❋
रथपर जात सोह नृप कैसे ॥ तेजवन्त रवि देखिय जैसे ॥ २ ॥ ❋

जो मनुष्य मन लगाके उसमें स्नान करते है और स्मरण करते है, उन पुरुषोंकी महिमाको कहकर पार नहीं पा सकते ॥ १ ॥ रथपर बैठकर जाता हुआ राजा भगीरथ कैसे शोभा देता था ? कि मानों तेजवान् सूरजही जा रहा है ॥ २ ॥

नाँघत शैल सुहावन देशा ॥ पाछे सुरसरि अग्र नरेशा ॥ ३ ॥ ❋
हरिद्वारसमीप जब आये ॥ तीर्थ देखि सुरसरि मन लाये ॥ ४ ॥ ❋

ज्यों ज्यों वो राजा पर्वत और अच्छे २ देशोंको नाँघकर आगे जाता था त्यों त्यों पीछे २ वो गंगाभी चली जाती थी ॥ ३ ॥ जब चला २ राजा भगीरथ हरिद्वारके पास आया तब तीर्थभूमि देखकर गंगाका मन बड़ा प्रसन्न हुआ ॥ ४ ॥

तीर्थ निरखि मन भयो सुख भारी ॥ आदि प्रयाग पहुँचि अघहारी ॥ ५ ॥
तहँ मज्जन कीन्हे दुख जाई ॥ बहुरि देवसरि काशी आई ॥ ६ ॥ ❋

तीर्थको देखकर उसके मनमें बड़ा भारी सुख हुआ. ऐसे वह पापनाशिनी आदि प्रयागमें पहुँची ॥ ५ ॥ जहां स्नान करनेसे सब दुख मिट जाते है. वहांसे चली २ फिर वो गंगा काशीमें आई ॥ ६ ॥

सो शिवपुरी सहजसुखदाई ॥ बर्णि न जाइ मनोहरताई ॥ ७ ॥ ❋
अबसे तीर्थ बिबिधबिधि जानी ॥ गई तहाँ किमि कहौं बखानी ॥ ८ ॥ ❋
मग लोगनकहँ करत सनाथा ॥ जाइ चली इहिबिधि रघुनाथा ॥ ९ ॥ ❋

वो शिवजीकी पुरी ऐसी स्वभावसे सुखकारी है, कि जिसकी मनोहरताको कुछ वर्णन नहीं कर सकते ॥ ७ ॥ जहां कई तीर्थ पवित्र होनेके लिये आ बसे हैं. उस काशीपुरीकी महिमा किसतरह कोई कह सकता है ? वहां वो गंगाजी गयीं ॥ ८ ॥ हे राम ! ऐसे मार्गमें लोगोंको सनाथ करती हुई गंगाजी राजाके रथके पीछे २ चली ॥ ९ ॥

दोहा-मिली जाइ पुनि उदधिमहँ, उदधि हृदय सुख मान ॥ ❀
लागे कहन भगीरथहिँ, तुमसम धन्य न आन ॥ ४७ ॥ ❀

सो आखिर समुद्रमें जाकर मिली. गंगाजीके मिलनेसे समुद्रने मनमें सुख मानकर राजा भगीरथसे कहा कि-हे राजन् ! आपके जैसा दूसरा कोईभी जगत्में बड़भाग्य नहीं है ॥ ४७ ॥

कीन्हो अस जो करहि न कोई ॥ तप महिमा बल कस नहिँ होई ॥ १ ॥
सगर सुतनय तरे ततकाला ॥ हर्षवन्त तब भयो नृपाला ॥ २ ॥ ❀

हे राजन् ! जैसा आपने किया है ऐसा न तौ किसीने किया और न कोई करेगा. आपके जैसी तपस्याकी महिमा और बल किसीका नहीं है. " अर्थात् तपोबलकी महिमासे सब साध्य ही है क्यों न हो ? " ॥ १ ॥ गंगाजीके जातेही तत्काल सगरके पुत्रोंका उद्धार होगया. तब राजा भगीरथ बड़ा प्रसन्न हुआ ॥ २ ॥

औरौ रहे जे कुलमहँ कोऊ ॥ तिनके संग तरे अब सोऊ ॥ ३ ॥ ❀
तुम समान नृप अवर न भयऊ ॥ जग बिख्यात अचल यश लयऊ ॥ ४ ॥
सकल सुरन्ह तहँ संग बिधाता ॥ नृपसन आय कही सब बाता ॥ ५ ॥ ❀
धन्य भगीरथ जग यश लयऊ ॥ तुमसमान नृप अवर न भयऊ ॥ ६ ॥ ❀

केवल सगरके पुत्रही नहीं किंतु उनके कुलमें औरभी जो कोई थे वेभी उनके साथ तिर गये ॥ ३ ॥ उस समय देवताओंको साथ ले राजाके पास आ ब्रह्माजीने राजा भगीरथसे सब माहात्म्ययुक्त बात कही कि-हे राजन् ! आपके जैसा जगत्विख्यात राजा आजतक दूसरा कोई नहीं हुआ है. आपने जगत्में अचल यश पाया है ॥ ४ ॥ ५ ॥ हे भगीरथ ! तुम बड़े धन्य हो. आपने जगत्में सच्चा यश पाया है; तुम्हारे जैसा दूसरा कोईभी राजा नहीं हुआ है ॥ ६ ॥

आपनि सत्य प्रतिज्ञा कियऊ ॥ सम्मत वेद जनन सुख दयऊ ॥ ७ ॥ ❀
गंगासागर सब कोइ कहहीं ॥ अघउलूक देखत रवि डरहीं ॥ ८ ॥ ❀

तुमने अपना प्रण सत्य किया है. तुमने लोगोंको वेदसम्मत सुख दिया है ॥ ७ ॥ इस तीर्थको सब कोई गंगासागर नामसे कहेंगे. इस सूर्यरूप तीर्थको देखकर पापरूप उल्लू डर जांयगे ॥ ८ ॥

भागीरथी नाम अरु कहहीं ॥ सुनि सुर सिद्ध नाग यश लहहीं ॥ ९ ॥ ❀
अस बिधि कहि निजलोकहिँ आये ॥ यहाँ भगीरथ अति सुख पाये ॥ १० ॥

इस गंगाका नाम तुम्हारे नामसे भागीरथी प्रसिद्ध होगा. तुम्हारा यश सुनकर देवता, सिद्ध और नाग यश पावेंगे ॥ ९ ॥ ऐसे कहकर ब्रह्माजी अपने सत्यलोक सिधारे. यहां भगीरथ अति आनंद पाय सुखसे राज करने लगा ॥ १० ॥

छंद-पाये अमित सुख बहुरि पूजा सुरसरिहिँ मन लाइकै ॥ ❀
तब दीन्ह आशिष मुदित गंगा नृपभवन सुख पाइकै ॥

यहि भांति सुनि गंगाकथा तब राम रुचि चरणन नये ॥ *
कह दास तुलसी राम लषणहिँ महामुनि आशिष दये ॥ १ ॥ *

राजा भगीरथ गंगाजीके लानेसे बड़ा सुखी हुआ. फिर उसने मन लगाके गंगाजीकी पूजा करी. तब गंगाजीने प्रसन्न हो भगीरथको आशिष दी सो ले राजा भगीरथ आनंदित हो अपने घर आया. तुलसीदासजी कहते है कि—इसतरह गंगाजीकी कथा सुन रामचन्द्रजीने गंगाजीके चरणोंमें बड़ी प्रीतिसे प्रणाम किया तब महामुनि विश्वामित्रजीने राम लक्ष्मणको आशिष दी ॥ १ ॥

दोहा–कौशिक आशिष अमियसम, पाय हर्ष रघुराज ॥ *
प्रभुसंशय सब इमि गई, लवा निरखि जिमि बाज ॥ ४८ ॥ *
आशिष सुधासमान सुनि, हरषे श्रीरघुनाथ ॥ *
प्रभु सुख पाइ कहेउ पुनि, वेगि चलिय मुनिनाथ ॥ ४९ ॥ *

अमृतके सदृश विश्वामित्रजीकी आशिष पाकर रामचन्द्रजी बड़े प्रसन्न हुए और प्रभुके सब संदेह इस कथाके सुननेसे ऐसे चले गये कि, जैसे बाजको देखकर लवा (एक किस्मकी चिड़िया) चली जाती है ॥ १५ ॥ अमृतजैसी मुनिकी आशिष सुन श्रीरामचन्द्रजीने प्रसन्न हो सुख पाय फिर विश्वामित्रजीसे कहा कि– हे मुनिराज ! वेग चलिये ॥ १६ ॥

रामनामते संशय जाई ॥ देह धरे कर यह फल भाई ॥ १ ॥ *

कवि कहता है-अहो भाइयो ! देखिये देह धारणका इसी माफक फल है कि, जिन रामचन्द्रजीके नाम लेनेसे सम्पूर्ण प्रपंचसम्बंधी सन्देह मिट जाते है उसी प्रभुका ऐसा सन्देह हुआ ॥१॥ ॥ इति ॥

गाधिसुवन सब कथा सुनाई ॥ जेहि प्रकार सुरसरि महि आई ॥ १ ॥ *
तब प्रभु ऋषिन समेत अन्हाये ॥ बिबिध दान महिदेवन पाये ॥ २ ॥ *

विश्वामित्रजीने रामचन्द्रजीको वो सब कथा सुनायी; जिस तरह गंगाजी पृथ्वीपरआयी थी ॥ १ ॥ फिर प्रभुने गंगाजीमे ऋषियोंके साथ स्नान कर ब्राह्मणोंको अनेक प्रकारके दान दिये ॥ २ ॥

हर्षि चले मुनिवृन्द सहाया ॥ वेगि विदेहनगर नियराया ॥ ३ ॥ *
पुररम्यता राम जब देखी ॥ हर्षे अनुजसमेत बिशेखी ॥ ४ ॥ *

गंगाजीमें न्हाय दान दे, मुनिलोगोंके समुदायके साथ चले चले प्रभु आनंदके साथ तुरंतही विदेह राजाके नगरके निकट आ पहुंचे ॥ ३ ॥ जब प्रभुने नगरकी छबि देखी तौ लक्ष्मणके साथ आप बड़े प्रसन्न हुए ॥ ४ ॥

बापी कूप सरित सर नाना ॥ सलिल सुधा सम मणि सोपाना ॥ ५ ॥ *
गुंजत मंजु मत्त रस भृङ्ग ॥ कूजत कल बहु बरण बिहंगा ॥ ६ ॥ *
बरण बरण बिकसे जलजाता ॥ त्रिविध समीर सदा सुखदाता ॥ ७ ॥ *

उस नगरके अंदर जो अनेक बावली, कुए, नदियां और तालाव थे उस सबका जल अमृतके जैसा मधुर था. और मणियोंकी उनकी सीढ़ियां थीं ॥ ५ ॥ प्रफुल्लित कमलोंपर बैठेहुए रससे मदोन्मत्त

भौरे गुंज रहे है. बरन बरनके पक्षी मधुर बाणी बोल रहे हैं ॥ ६ ॥ रंग रंगके कमल डहडहा रहे हैं. सदा सुख देनेवाली शीतल, सुगंध, मंद त्रिविध बयार चल रही है ॥ ७ ॥

दोहा- सुमनबाटिका बाग बन, बिपुल बिहंग निवास ॥ ❀
फूलत फलत सुपल्लवित, सोहत पुरचहुँपास ॥ २१८ ॥ ❀

फुलवाड़ियां, बाग व बगीचोंके अंदर बहुतसे पक्षी कलोलें कर रहे है. पुरके चारों ओर फूले फले सुपल्लवित वृक्ष शोभायमान हो रहे है ॥ २१८ ॥

बनै न वर्णत नगरनिकाई ॥ जहाँ जाइ मन तहाँ लुभाई ॥ १ ॥ ❀
चारु बजार बिचित्र अटारी ॥ मणिमय विधि जनु स्वकर सवाँरी ॥ २ ॥ ❀

नगरकी सुन्दरता कुछ वर्णन नहीं की जाती. जहां जाकर देखते है वहीं मन लुभायमान हो जाता है ॥ १ ॥ सुन्दर बाजार है और अच्छी रत्नमय विचित्र अटारियां है, मानों विधातानेही अपने हाथसे सँवार कर तैयार करी है ॥ २ ॥

धनिक बणिक बर धनदसमाना ॥ बैठे सकल बस्तु लै नाना ॥ ३ ॥ ❀
चौहट सुन्दर गली सुहाई ॥ सन्तत रहहिँ सुगन्ध सिँचाई ॥ ४ ॥ ❀

कुबेरके जैसे धनाढ्य सेठलोगोंकी कोठियां बनी हुई है. जिनमें सब प्रकारकी चीजें लिये अनेक व्योपारी बैठे अपना धंधा कर रहे है ॥ ३ ॥ सुन्दर और सुहावनी गलियां व चौके है जिनमें निरंतर सुगंधित जलसे छिरकाव हो रहा है ॥ ४ ॥

मंगलमय मन्दिर सबकेरे ॥ चित्रित जनु रतिनाथ चितेरे ॥ ५ ॥ ❀
पुर नर नारि सुभग श्रुति संता ॥ धर्मशील ज्ञानी गुणवंता ॥ ६ ॥ ❀

सब लोगोंके घर कैसे मंगलरूप हो रहे है मानों कामदेव चितेरेने उनमें चित्र लिखकर चित्रित किये है ॥ ५ ॥ नगरके सब नर नारी बड़े सुन्दर पवित्र भलेमानुस धर्मात्मा ज्ञानमान् और गुणवान् हैं ॥ ६ ॥

अति अनूप जहँ जनकनिबासू ॥ बिथके बिबुध बिलोकि बिलासू ॥ ७ ॥ ❀
होत चकित चित कोट बिलोकी ॥ सकल भुवन शोभा जनु रोकी ॥ ८ ॥ ❀

जहां जनक राजाके महल थे वह स्थल तो अत्यंतही अनुपम था जिसकी शोभाको देखकर देवता लोगभी मोहित होते थे ॥ ७ ॥ शहरपनाहको देखकर सब लोग चित्तमें ऐसे चकित होते थे कि- मानों उसने सब लोकोंकी शोभा अपने भीतरही रोक राखी है ॥ ८ ॥

दोहा-धवल धाम मणि पुरट पट, सुघटित नानाभांति ॥ ❀
सियनिबास सुन्दर सदन, शोभा किमि कहि जाति ॥ २१९ ॥ ❀

उस नगरके भीतर मणियोंके और सुवर्णके सुन्दर किवाड़े और अनेक प्रकारके सुधासे धुले धौले घर हैं तिसमेंभी जो सीताके रहनेका महल था वो तो सबसे सुन्दर था उसकी शोभा किसी कदर कहनेमें नहीं आ सकती ॥ २१९ ॥

सुभग द्वार सब कुलिश कपाटा ॥ भूप भीर नट मागध भाटा ॥ १ ॥ ❀

बनी बिशाल बाजि गजशाला ॥ हय गज रथ संकुल सबकाला ॥ २ ॥ ❀

अच्छे सुन्दर सब फाटक हैं उनमें हीरेके किंवाड़ जगमगा रहे हैं राजद्वारपर नट,मागध और भाटें-की भीड़ हो रही है ॥ १ ॥ बड़ी बड़ी विशाल हाथी और घोड़ोंकी शालायें बनरही हैं जो हाथी घोड़े और रथोंसे सदा संकुल रहा करती हैं ॥ २ ॥

शूर सचिव सेनप बहुतेरे ॥ नृपगृहसरिस सदन सबकेरे ॥ ३ ॥ ❀
पुर बाहिर सर सरित समीपा ॥ उतरे जहँ तहँ बिपुल महीपा ॥ ४ ॥ ❀

बहुतसे शूर, सुभट, मंत्री और सेनापति है जिन सबनके घर राजाके महलोंसे कुछ कम नहीं हैं ॥३॥ नगरीके बाहिर तालाव और नदियोंके समीप जहां तहां बहुतसे राजा उतर रहे है ॥ ४ ॥

देखि अनूप एक अँबराई ॥ सब सुबास सब भांति सुहाई ॥ ५ ॥ ❀
कौशिक कहेउ मोर मन माना ॥ इहाँ रहिय रघुबीर सुजाना ॥ ६ ॥ ❀

वहां एक बहुत सुन्दर अमराई (बगीचा या हरियाई) है जो सब प्रकारसे सुहावनी और सुगंधमय है ॥ ५ ॥ उसे देखकर विश्वामित्रजीने कहा कि–हे राम सुजान ! हमारे मनमें तो यहां रहनेकी जँचती है सो कहो तो यहीं रहें ॥ ६ ॥

भलेहि नाथ कहि कृपानिकेता ॥ उतरे तहँ मुनि वृन्दसमेता ॥ ७ ॥ ❀
विश्वामित्र महामुनि आये ॥ समाचार मिथिलापति पाये ॥ ८ ॥ ❀

तब कृपानिधान प्रभुने कहा कि–हे नाथ ! बहुत अच्छा. प्रभुका मन देख विश्वामित्रजी मुनिग-णोंके साथ वहां उतरे ॥ ७ ॥ जब जनक राजाको यह खबर मिली कि, महामुनि विश्वामित्रजी आये हैं ॥ ८ ॥

दोहा--संग सचिव शुचि भूरि भट, भूसुर बर गुरु ज्ञाति ॥ ❀
चले मिलन मुनिनायकहिँ, मुदित राउ इहि भांति ॥ ❀

तब वह अपने पवित्र मंत्री बहुतसे जोधा उत्तम उत्तम ब्राह्मण गुरु और जातिवालोंको साथ ले मनमें प्रसन्न हो विश्वामित्रजीसे मिलनेके लिये आया ॥ २२० ॥

कीन्ह प्रणाम धरणि धरि माथा॥ दीन्ह अशीश मुदित मुनिनाथा॥१॥ ❀
विप्रवृन्द सब सादर बन्दे ॥ जानि भाग्य बड़ राउ अनन्दे ॥ २ ॥ ❀

जनक राजाने विश्वामित्रजीके पास आ पृथ्वीपर शिर धर प्रणाम किया तब महामुनि विश्वामित्रजीने प्रसन्न होकर उसको आशीर्वाद दिया ॥ १ ॥ तब राजाने दूसरे तमाम ब्राह्मण समूहोंको आदरके साथ वंदन किया. राजा अपना बड़ा भाग्य समझकर परम आनंदको प्राप्त हुआ ॥ २ ॥

कुशल प्रश्न कहि बारहिँ बारा ॥ विश्वामित्र नृपहिँ बैठारा ॥ ३ ॥ ❀
तेहि अवसर आये दोउ भाई ॥ गये रहे देखन फुलवाई ॥ ४ ॥ ❀

तब विश्वामित्रजीने बारंबार क्षेम कुशल पूछ राजाको आसनपर बिठाया ॥ ३ ॥ उस समय राम लक्ष्मणभी वहां चले आये पहले वे फुलवाड़ियां देखने चले गये थे ॥ ४ ॥

श्याम गौर मृदु बयस किशोरा ॥ लोचन सुखद विश्वचितचोरा ॥ ५ ॥❀

उठे सकल जब रघुपति आये ॥ विश्वामित्र निकट बैठाये ॥ ६ ॥ ❀

जिनका श्याम और गौरवर्ण है, कोमल किशोर अवस्था है, जिनका स्वरूप नेत्रोंको आनंद देनेवाला और जगत्के चित्तको चुरानेवाला है ॥ ५ ॥ प्रभुके पधारतेही सब उठ खड़े हुए तब विश्वामित्रजीने उनको अपने पास बिठाया ॥ ६ ॥

भये सब सुखी देखि दोउ भ्राता ॥ बारि बिलोचन पुलकित गाता ॥ ७ ॥ ❀
मूरति मधुर मनोहर देषी ॥ भयउ बिदेह बिदेह बिशेषी ॥ ८ ॥ ❀

दोनों भाइयोंको देखकर सब लोग सुखी हुए आनंदके मारे सबके नेत्रोंमें जल भर आया. शरीर पुलकित होगया ॥ ७ ॥ प्रभुकी अति मधुर मनोहर मूर्ति देखकर राजा विदेह अतिशय विदेह होगया यानी सुध भूल गया ॥ ८ ॥

दोहा—प्रेममगन मन जानि नृप, करि बिबेक धरि धीर ॥ ❀
बोलेउ मुनिपद नाइ शिर, गदगदगिरा गंभीर ॥ २२१ ॥ ❀

राजा जनक अपने मनको आनंदमगन जान मनमें धीरज धर विवेक कर मुनिके चरणोंमें शिर नवाकर गद्गद (लड़खड़ाती) और गंभीर बाणीसे बोला कि—॥ २२१ ॥

कहहु नाथ सुन्दर दोउ बालक ॥ मुनिकुलतिलक कि नृपकुल पालक ॥ १ ॥
ब्रह्म जो निगम नेति कहि गावा ॥ उभय बेष धरि सोइ कि आवा ॥ २ ॥

हे नाथ ! कहिये. ये दोनों सुन्दर बालक मुनिकुलके भूषण हैं या राजपुत्र है? ॥ १ ॥ या जिस परब्रह्मको वेद नेति नेति कहकर पुकारते है वही प्रभु दो स्वरूप धरकर पधारे है क्या ? ॥ २ ॥

सहजबिरागरूप मन मोरा ॥ थकित होत जिमि चंद्र चकोरा ॥ ३ ॥ ❀
ताते प्रभु पूँछौं सतिभाऊ ॥ कहहु नाथ जनि करहु दुराऊ ॥ ४ ॥ ❀

हे नाथ ! मेरा सहज वैराग्यवाला मन इनको देखकर जैसे चंद्रमाको देखकर चकोरका चित्त मोहित होता है ऐसे मोहित होता है ॥ ३ ॥ इसलिये हे प्रभु ! मैं आपसे शुद्धभावसे पूछता हूं सो आप मुझे जो सच हो सो कहो. मेरे पास किसी तरहका दुराह (कपट) मत करो ॥ ४ ॥

इनहिँ बिलोकत अति अनुरागा ॥ बरबश ब्रह्मसुखहिँ मन लागा ॥ ५ ॥ ❀
कह मुनि बिहँसि कहेहु नृप नीका ॥ बचन तुम्हार न होइ अलीका ॥ ६ ॥

इनको देखकर मेरा मन अति अनुरक्त हो गया है. मानों बलात्कारसे ब्रह्मसुखमें लयलीन हो गया है ॥ ५ ॥ जनकके ये बचन सुन, हँसकर मुनि विश्वामित्रजीने राजासे कहा कि—हे राजन् ! यह बात ठीक है; तुम्हारा बचन झूंठा नहीं होता ॥ ६ ॥

ए प्रिय सबहिँ जहाँ लगि प्राणी ॥ मन मुसकाहिँ राम सुनि बाणी ॥ ७ ॥ ❀
रघुकुलमणि दशरथके जाये ॥ मम हितलागि नरेश पठाये ॥ ८ ॥ ❀

जगत्में जितने प्राणी हैं उन सबको ये परम प्रिय लगते हैं. मुनिके ये बचन सुन प्रभु मनमें मुसकाने ॥ ७ ॥ मुनिने कहा कि—ये रघुकुलमणि दशरथजीके पुत्र हैं. उन्होंने मेरे हितके लिये मेरे साथ भेजे हैं ॥ ८ ॥

दोहा– राम लषण दोउ बन्धु बर, रूपशील बल धाम ॥ ❀
मख राखेउ सब साखि जग, जीति असुर संग्राम ॥ २२२ ॥ ❀

राम और लक्ष्मण ये दोनों भाई बड़े श्रेष्ठ हैं. रूप, शील और बलके घर हैं. इन्होंने रणमें असुरोंको मार हमारे यज्ञकी रक्षा करी है सो इस बातको सारा जगत् जानता है ॥ २२२ ॥

मुनि तव चरण देखि कह राऊ ॥ कहि न सकौं निज पुण्यप्रभाऊ ॥ १ ॥ ❀
सुन्दर श्याम गौर दोउ भ्राता ॥ आनँदहूके आनँद दाता ॥ २ ॥ ❀

तब राजा जनकने कहा कि– हे मुनि ! आपके चरणोंको निहार कर जो मेरे पुण्यका प्रभाव बड़ा है उसे मैं कह नहीं सकता ॥ १ ॥ ये दोनों भाई श्याम, सुन्दर, गौरवर्ण, आनंदकेभी आनंद देनेवाले हैं ॥ २ ॥

इनकी प्रीति परस्पर पावनि ॥ कहि न जाइ मन भाव सुहावनि ॥ ३ ॥ ❀
सुनहु नाथ कह मुदित बिदेहू ॥ ब्रह्म जीव इव सहज सनेहू ॥ ४ ॥ ❀

इनकी जो परस्परकी प्रीति है वो ऐसी पवित्र, सुहावनी और मनभावनी है कि जिसके विषयमें कुछ कह नहीं सकते ॥ ३ ॥ राजाने प्रसन्न होकर कहा कि– हे नाथ ! सुनिये, इनका परस्परका स्वाभाविक स्नेह जीव और ईश्वरकासा है ॥ ४ ॥

पुनि पुनि प्रभुहिँ चितव नरनाहू ॥ पुलक गात उर अधिक उछाहू ॥ ५ ॥ ❀
मुनिहिँ प्रशंसि नाइ पद शीशा ॥ चले लिवाइ नगर अवनीशा ॥ ६ ॥ ❀

ज्यों २ राजा बारंबार प्रभुकी ओर देखता है त्यों २ उसका शरीर रोमांचित होता है और मनमें बड़ा उछाह बढ़ता जाता है ॥ ५ ॥ राजा मुनिकी प्रशंसा कर चरणोंमें शिर नवाय, मुनिको अपने नगरमे लिवाय ले चले ॥ ६ ॥

सुन्दर सदन सुखद सब काला ॥ तहाँ बास लै दीन्ह भुवाला ॥ ७ ॥ ❀
करि पूजा सबबिधि सेवकाई ॥ गयेउ राउ गृह बिदा कराई ॥ ८ ॥ ❀

तहां एक बहुत सुन्दर घर कि, जो सब समयमें सुखदायी था उसमें ले जाय, राजाने मुनिको बास दिया ॥ ७ ॥ राजाने सब प्रकारसे पूजा कर अच्छीतरह सेवा करी. फिर मुनिसे बिदा हो अपने घर गये ॥ ८ ॥

दोहा– ऋषय संग रघुवंशमणि, करि भोजन बिश्राम ॥ ❀
बैठे प्रभु भ्राता सहित, दिवस रहा भरि याम ॥ २२३ ॥ ❀

रघुकुलमणि श्रीरामचन्द्र ऋषिलोगोंके साथ भोजन कर आराम ले, भाई लक्ष्मणके साथ विराजे जिस वक्त एक प्रहर दिन बाकी रहा था ॥ २२३ ॥

लषण हृदय लालसा बिशेषी ॥ जाइ जनकपुर आइय देषी ॥ १ ॥ ❀
प्रभु भय बहुरि मुनिहिँ सकुचाहीं ॥ प्रकट न कहाहिँ मनहि मुसुकाहीं २ ❀

१अर्थात् इस लोकमें तीन प्रकारके पुरुष हैं जैसे जीवन्मुक्त १, मुमुक्षु २ और विषयी ३. सो एसबको आनन्ददाता हैं. जैसे जीवन्मुक्तोंको ब्रह्ममय आनन्द, मुमुक्षुवोंको जिनका दर्शन संसारसे छुटनेकी औषधरूप, विषयियोंको उत्तमरूप होनेसे आनन्दके आनन्ददाता कहा.

उस समय लक्ष्मणके मनमें इस बातकी बड़ी अभिलाषा हुई कि, जाकर जनक राजाका नगर देख आवें ॥ १ ॥ पर प्रभुका डर और मुनिका संकोच, जिससे वह प्रगट कुछ नहीं कह सके; मनही मनमें मुसुकाते रहे ॥ २ ॥

राम अनुज मनकी गति जानी ॥ भक्त बछलता हिय हुलसानी ॥ ३ ॥ ❋
परम बिनीत सकुचि मुसुकाई ॥ बोले गुरु अनुशासन पाई ॥ ४ ॥ ❋

प्रभुने लक्ष्मणके मनकी बात जान ली तिससे प्रभुके मनमें भक्तवत्सलता प्रकट हुई अर्थात् प्रभुने उसका मनोरथ पूर्ण करना चाहा ॥ ३ ॥ सो बड़े बिनयके साथ गुरुके पास आय, मुसुकाय, विश्वामित्रजीकी आज्ञा पाय, सकुचते २ प्रभुने विश्वामित्रजीसे कहा ॥ ४ ॥

नाथ लषण पुर देखन चहहीं ॥ प्रभु सकोच डर प्रकट न कहहीं ॥ ५ ॥ ❋
जो राउर अनुशासन पाऊँ ॥ नगर दिखाइ तुरत लै आऊँ ॥ ६ ॥ ❋

कि—हे नाथ ! लक्ष्मण नगर देखना चाहते है; पर आपके संकोच व डरसे प्रगट नहीं कहते ॥ ५ ॥ सो जो आपकी आज्ञा मिल जाय तो इसको नगर दिखाकर पीछा तुरंत ले आऊं ॥ ६ ॥

सुनि मुनीश कह बचन सप्रीती ॥ कस न राम राखहु तुम नीती ॥ ७ ॥ ❋
धर्मसेतुपालक तुम ताता ॥ प्रेम बिबश सेवकसुखदाता ॥ ८ ॥ ❋

प्रभुके वचन सुन मुनिने प्रेमके साथ रामचन्द्रजीसे कहा कि—हे राम ! तुम वेदकी मर्यादाको कैसे नहीं रखते ? अर्थात् रखतेही हो. शिष्यका धर्म यह है कि, गुरुको विना पूँछे नहीं जाना ॥ ७ ॥ हे तात ! आप धर्मकी मर्यादाके पालनेवाले हो. आप प्रेमके आधीन हो और भक्तलोगोंके सुख करनेवाले हो ॥ ८ ॥

दोहा—जाइ देखि आवहु नगर, सुखनिधान दोउ भाइ ॥ ❋
करहु सुफल सबके नयन, सुन्दर बदन दिखाइ ॥ २२४ ॥ ❋

हे राम ! तुम दोनों भाई सुखके भंडार हो सो नगरमें जाय, अपनी मनोहर मूर्तिको दिखाय सब नगरनिवासी लोगोंके नेत्र सफल करके पीछे शीघ्र आओ ॥ २२४ ॥

मुनिपदकमल बन्दि दोउ भ्राता ॥ चलेलोकलोचनसुखदाता ॥ १ ॥ ❋
बालक वृन्द देखि अति शोभा ॥ लगे संग लोचन मन लोभा ॥ २ ॥ ❋

मुनिसे आज्ञा पा उनके चरणकमलोंको वंदन कर लोगोंके नेत्रोंके सुख देनहारे दोनों भाई डेरेसे चले ॥ १ ॥ प्रभुके बाहिर निकलतेही बालक गण उनकी अतिशय शोभा देख नेत्रोंसे और मनसे लुभायमान हो उनके संग होलिये ॥ २ ॥

पीत बसन परिकर कटि भाथा ॥ चारु चाप शर सोहत हाथा ॥ ३ ॥ ❋
तनु अनु हरत सुचन्दन खोरी ॥ श्यामल गौर मनोहर जोरी ॥ ४ ॥ ❋

पीलापट और दुपट्टा है. कमरमें तरकसे कसे हुए हैं. हाथोंमें सुन्दर धनुषबाण धरे हैं ॥ ३ ॥ श्रेष्ठ, सुगंधित, चंदनकी खौर शरीरमें शोभायमान हो रही है. मधुर मनोहर श्यामल गौर जोड़ी है ॥ ४ ॥

केहरि कन्धर बाहु विशाला ॥ उर अति रुचिर नागमणि माला ॥ ५ ॥ ❀
सुभग श्रवण सरसीरुह लोचन ॥ बदन मयंक तापत्रयमोचन ॥ ६ ॥ ❀

सिंहकेसे कंधे है; बड़ी विशाल भुजा है; हृदयमें बहुत सुन्दर नागमणियाँ यानी गजमुक्तावोंकी माला पहिरे है ॥ ५ ॥ सुन्दर कान है; कमलकेसे विशाल और सुन्दर नेत्र हैं; चंद्रमाके जैसा मनोहर मुखारविंद है, जिसके दर्शन करनेसे तीनों ताप मिट जाते है ॥ ६ ॥

कानन कनक फूल छबि देहीं ॥ चितवत चितहिं चोर जनु लेहीं ॥ ७ ॥ ❀
चितवनि चारु भृकुटि बर बाकी ॥ तिलक रेख शोभा जनु चाकी ॥ ८ ॥ ❀

कानोंमें सुवर्णके कर्णफूल शोभ रहे है. जो देखतेही मानों चित्तको चुरा लेते है ॥ ७ ॥ सुन्दर विचित्र देखना है. टेढ़ी सुन्दर भौंह है. ललाटमें तिलककी रेखा ऐसी शोभा देती है कि, मानों त्रिभुवनकी शोभा उसमें छाप दीनी है ॥ ८ ॥

दोहा– रुचिर चौतनी सुभग शिर, मेचक कुंचित केश ॥ ❀
नख शिख सुन्दर बन्धु दोउ, शोभा सकल सुदेश ॥ २२५ ॥ ❀

मनोहर मस्तकविषे सुन्दर चौकसिया ताज शोभायमान है. श्याम, सचिक्कण, घुँघरूवाले बाल है. दोनों भाई नखसे ले शिखातक एकसे सुन्दर हैं. तमाम अंग बहुत सुन्दर और शोभायमान है ॥ २२५ ॥

देखन नगर भूपसुत आये ॥ समाचार पुरबासिन पाये ॥ १ ॥ ❀
धाये धाम काम सब त्यागे ॥ मनहुँ रंक निधि लूटन लागे ॥ २ ॥ ❀

जब नगरके लोगोंको समाचार मिले कि, राम लक्ष्मण नगर देखनेको आये है ॥ १ ॥ तब वे अपने २ घरका काम छोंड़ २ कर ऐसे दौड़े कि, मानों जन्मके दरिद्री निधि (कुबेरका भंडार) लूटने लगे है ॥ २ ॥

निरखि सहज सुन्दर दोउ भाई ॥ होहिँ सुखी लोचन फल पाई ॥ ३ ॥ ❀
युवती भवन झरोखन लागीं ॥ निरखहिँ रामरूप अनुरागीं ॥ ४ ॥ ❀

सहज सुन्दर दोनों भाइयोंको देख अपने नेत्रोंका फल पाय सब लोग सुखी हुए ॥ ३ ॥ स्त्रियां अपने घरोंके झरोखोंमें बैठ अनुरागके साथ प्रभुका स्वरूप निरखने लगीं ॥ ४ ॥

(क्षेपक)

दोहा–फिरकीसी थिरकी फिरैं, फिरिकिन प्रति नव नारि ॥ ❀
शिरकिन तजि रघुनाथ छबि, निरखैं पलक बिसारि ॥ ५० ॥ ❀

नगरके भीतर नवीन तरुण स्त्रियां फिरकियोंमें खिरकीके जैसी थिरक २ फिर रही हैं. और शिरको यानी चिकोंको छोंड़कर और पलकें बिसारके प्रभुकी छबि निरख रही हैं ॥ ५० ॥ ॥ इति ॥

कहहिँ परस्पर बचन सप्रीती ॥ सखि इन कोटि काम छबि जीती ॥ ५ ॥ ❀
सुर नर असुर नाग मुनि माहीं ॥ शोभा अस कहुँ सुनियत नाहीं ॥ ६ ॥ ❀

प्रभुकी छबि निरख स्त्रियां प्रेमसे परस्पर कहती हैं कि–हे सखी ! इन्होंने तो अपनी छबिसे

करोड़ों कामदेवोंकी छबि जीत लीनी है ॥ ५ ॥ देवता, दैत्य, मनुष्य, नाग और मुनि सब है पर ऐसी शोभा तौ किसीके भीतर नहीं सुनी ॥ ६ ॥

विष्णु चारि भुज बिधि मुख चारी ॥ बिकट बेष मुख पञ्च पुरारी ॥ ७ ॥❋
अपर देव अस को जग आही ॥ यह छबि सखि पटतरिये जाही ॥ ८ ॥❋

ब्रह्मा, विष्णु, और महेश, इनको इनके बराबर कहें सो वोभी नहीं कह सकतीं क्योंकि उनके स्वरूप तौ बड़े विकट है; जैसे विष्णुके चार भुजा है. ब्रह्माके चार मुख है. महादेवके पांच मुख है ॥ ७ ॥ इनके सिवाय दूसरा देवता ऐसा कौन है जिसको हे सखी ! इस छबिकी उपमा देवें ? ॥ ८ ॥

दोहा–बय किशोर सुषमासदन, श्याम गौर सुख धाम ॥ ❋
अंग अंग पर वारिये, कोटि कोटि शत काम ॥ २२६ ॥ ❋

देखो, परम शोभाको घर, इनकी किशोर अवस्था है. श्याम और गौर वर्ण है, सुखके स्थान हैं. हे सखी ! इनके एक एक अंगपर कोट्यानकोटि कामदेवोंको वारना चाहिये ॥ २२६ ॥

कहहु सखी अस को तनु धारी ॥ जो न मोह यह रूप निहारी ॥ १ ॥ ❋
कोउ सप्रेम बोली मृदु बानी ॥ जो मैं सुना सो सुनहु सयानी ॥ २ ॥ ❋

तब दूसरी बोली कि–हे सखी ! कहो जगत्में ऐसा कोई शरीरधारी है जिसको इनका स्वरूप देखकर मोह न होवै ॥ १ ॥ तब कोई एक सखी प्रेमसहित कोमल वाणी बोली कि–हे सखी ! जो मैंने सुना है वो मैं तुमसे कहती हूं सो सुनो ॥ २ ॥

ये दोउ नृप दशरथके ढोटा ॥ बाल मरालनके कल जोटा ॥ ३ ॥ ❋
मुनि कौशिक मखके रखवारे ॥ जिन रण अजय निशाचर मारे ॥ ४ ॥❋

ये दोनों राजा दशरथके पुत्र है. यह जोरी बाल राजहंसोंके जैसी बहुत सुन्दर है ॥ ३ ॥ इन्होंने विश्वामित्रजीके यज्ञकी रक्षा करी है. इन्होंने संग्राममे अजय राक्षसोंको मारा है ॥ ४ ॥

श्याम गात कलकंज बिलोचन ॥ जो मारीच सुभुज मदमोचन ॥ ५ ॥ ❋
कौशल्या सुत सो सुखखानी ॥ नाम राम धनु सायक पानी ॥ ६ ॥ ❋

जिनका श्याम शरीर और कमलकेसे सुन्दर नेत्र हैं. जिसने मारीच और सुबाहु नाम राक्षसोंका मद नाश किया है वो सुखकी खान कौसल्याका पुत्र है. राम नाम है. हाथमें धनुषबाण धरे हैं ॥ ५ ॥ ६ ॥

गौर किशोर बेष बर काछे ॥ कर शर चाप रामके पाछे ॥ ७ ॥ ❋
लक्ष्मण नाम राम लघु भ्राता ॥ सुनु सखि तासु सुमित्रा माता ॥ ८ ॥ ❋

जिनको गौर वर्ण है किशोर अवस्था है अच्छी पोषाक है हाथमें धनुष बाण लिये रामके पीछे खड़े हैं ॥ ७ ॥ यह रामका छुटभय्या है. लक्ष्मण नाम है. सखी ! यह सुमित्राका पुत्र है ॥ ८ ॥

दोहा–बिप्र काज करि बन्धु दोउ, मग मुनिबधू उधारि ॥ ❋
आये देखन चापमख, सुनि हरषीं सब नारि ॥ २२७ ॥ ❋

ये दोनों भाई विश्वामित्रजीका कार्य सिद्ध कर मार्गमें गौतमकी नारि अहल्याका उद्धार कर अब धनुषयज्ञ देखने आये हैं यह कथा सुनकर सब स्त्रियां परम प्रसन्न हुईं ॥ २२७ ॥

देखि राम छबि कोउ यक कहई ॥ योग्य जानकी यह बर अहई ॥ १ ॥*
जो सखि इनहिँ देखि नरनाहू ॥ प्रण परिहरि हठि करहिँ बिबाहू ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीकी शोभा देखकर किसी एक स्त्रीने कहा कि–सीताके योग्य बर तौ यही है ॥ १ ॥ हे सखी ! जो राजा जनक इसे देख लेता तौ अपना प्रण छांड़के हठकर अवश्य इसको सीता ब्याह देगा ॥ २ ॥

कोउ कह इन भूपति पहिँचाने ॥ मुनि समेत सादर सनमाने ॥ ३ ॥ *
सखि परन्तु प्रण राउन तजई ॥ बिधिबश हठि अबिबेकहि भजई ॥ ४ ॥*

किसीने कहा कि–राजाने इनको देख लिया है मुनि विश्वामित्रजीके साथ इनका आदरके साथ सन्मान किया है ॥ ३ ॥ पर हे सखी ! राजा अपना प्रण नहीं छोंड़ता क्योंकि उसमें दैववशसे हठकर मूर्खता घुस रही है ॥ ४ ॥

कोउ कह जो भल अहै बिधाता ॥ सबकहिँ सुनिय उचित फलदाता ॥५॥
तौं जानकिहिं मिलिहि बर एहू ॥ नाहिन आली यह सन्देहू ॥ ६ ॥ *

कोई सखी बोली कि–सुनिये. जो विधाता अनुकूल और सबको उचित सुख देनेवाला होगा तौ अवश्य जानकीको यह वर मिलेगा. हे सखी ! इसमें कोई संदेह नही है ॥ ५ ॥ ६ ॥

जो बिधिबश अस बनै सँयोगू ॥ तौ कृतकृत्य होंइ सब लोगू ॥ ७ ॥ *
सखि हमरे अति आरतिताते ॥ कबहुँक ए आवहिँ यहि नाते ॥ ८ ॥ *

जो दैववशसे यह संयोग बन जाय तौ हम सब लोग कृतार्थ हो जावें ॥ ७ ॥ हे सखी ! जो सीताका इनके साथ व्याह हो जाय तौ उस संबंधसे और हमारी आरतताके कारणभी कभीकभी प्रभु यहां अवश्य आवेंगे ॥ ८ ॥

दोहा–नाहित हमकहुँ सुनहु सखि, इन्हकर दर्शन दूरि ॥ *
यह संघट तब होइ जब, पुण्य पुरा कृत भूरि ॥ २२८ ॥ *

यदि ऐसा न हुआ तब तौ हे सखी ! सुनो, इनके दर्शन हमको दुर्लभही रहेंगे पर संयोग तब बने कि जब अपने पिछले पुण्य पूर्ण होवें ॥ २२८ ॥

बोली अपर कहे सखि नीका ॥ यह बिबाह अतिहित सबहीका ॥ १ ॥ *
कोउ कह शंकर चाप कठोरा ॥ ये श्यामल मृदुगात किशोरा ॥ २ ॥ *

इतनेमें दूसरी बोली कि–हे सखी ! तूने यह बात बहुत अच्छी कही यह व्याह सबका हितकारी है ॥ १ ॥ कोई बोली कि–महादेवजीका धनुष महा कठोर है और ये अतिसुकुमार श्यामल किशोर शरीर हैं ॥ २ ॥

सब असमंजस अहै सयानी ॥ यह सुनि अपर कहै मृदुबानी ॥ ३ ॥ *
सखि इनकहँ कोउ२अस कहहीं ॥ बडप्रभाव देखत लघु अहहीं ॥ ४ ॥*

सो यह बात तो होनी है सखी ! कठिनही दीख पड़नी है यह सुनकर दूसरी मधुर वाणीसे बोली ॥ ३ ॥ कि–हे सखी ! इनके विषयमें कोई २ आदमी ऐसे कहते है कि, यद्यपि ये दीखनेमें बहुत छोटे पड़ते हैं पर इनका प्रभाव बहुत बड़ा है ॥ ४ ॥

परसि जासु पदपंकजधूरी ॥ तरी अहल्या कृत अघ भूरी ॥ ५ ॥ ❋
सो कि रहै बिनु शिवधनु तोरे ॥ यह प्रतीति परिहारिय न भोरे ॥ ६ ॥ ❋

जिनके चरणकमलकी रजको स्पर्श कर गौतमकी नारी पापरूपिणी अहल्या अपने गहन पापसे तरी ॥ ५ ॥ क्या वे महादेवजीके धनुषको तोड़े बिना रहेंगे ? यह प्रतीति भूलकरभी नहीं छोड़ना चाहिये ॥ ६ ॥

जेहिँ बिरंचि रचि सीय सँवारी ॥ तेहिँ श्यामल बर रचेउ बिचारी ॥ ७ ॥ ❋
तासु बचन सुनि सब हरषानी ॥ ऐसेइ होउ कहहिँ मृदुबानी ॥ ८ ॥ ❋

जिस विधाताने सीताको सँवार कर पैदा करी है उसीने यह साँवरा वर विचारके रचा है ॥ ७ ॥ उसके ऐसे बचन सुन सब सखियां खुश हुईं और कोमल वाणीसे बोलीं कि–ऐसे ही होवे ॥ ८ ॥

दोहा–हिय हरषहिँ बर्षहिँ सुमन, सुमुखि सुलोचनि वृन्द ॥ ❋
जाहिँ जहाँ जहँ बंधु दोउ, तहँ तहँ परमानन्द ॥ २२९ ॥ ❋

सुमुखि, सुनयनी स्त्रियां यूथके यूथ मिल मनमें आनंदित हो फूल बरसाय रहीं है. जहां जहां वे दोनों भाई जाते है वहां वहां परमानंद छा जाता है ॥ २२९ ॥

पुर पूरब दिशि गे दोउ भाई ॥ जहां धनुष मख भूमि बनाई ॥ १ ॥ ❋
अति बिस्तार चारु गच ढारी ॥ बिमल बेदिका रुचिर सँवारी ॥ २ ॥ ❋

वे दोनों भाई नगरकी शोभा देखते देखते नगरके पूर्व भागमें गये जहां धनुषयज्ञके लिये रंगभूमि तैयार की गयी थी ॥ १ ॥ वहां बहुत लम्बी चौडी सुन्दर गच ढारके बीचों बीच सुन्दर निर्मल वेदी सँवार कर बनाई है ॥ २ ॥

चहुँ दिशि कंचन मंच बिशाला ॥ रचे जहां बैठहिँ महिपाला ॥ ३ ॥ ❋
तेहि पाछे समीप चहुँ पासा ॥ अपर मंच मण्डली बिलासा ॥ ४ ॥ ❋

और उसके चारों ओर सुवर्णके विशाल मंचान बनाये हैं. जिनपर आकर राजा लोग बैठते हैं ॥ ३ ॥ उसके पीछे उसके पासही चारोंतर्फ एक दूसरी मंचानकी मंडली उससे कुछ ऊंची बनी है ॥ ४ ॥

कछुक ऊंच सब भांति सुहाई ॥ बैठहिँ नगरलोग जहँ आई ॥ ५ ॥ ❋
तिनके निकट बिशाल सुहाये ॥ धवल धाम बहु बर्ण बनाये ॥ ६ ॥ ❋

जो सब प्रकारसे बहुत सुन्दर है. जहां आकर नगरके लोग बैठते हैं ॥ ५ ॥ उसके निकट बहुत लम्बे चौड़े सुहावने रंग रंगके सुफेद मकान बनाये हैं ॥ ६ ॥

जहँ बैठी देखहिँ पुरनारी ॥ यथा योग्य निज कुल अनुहारी ॥ ७ ॥ ❋
पुर बालक कहि२मृदु बचना ॥ सादर प्रभुहिँ दिखावहिँ रचना ॥ ८ ॥

जहां बैठी हुई नगरकी स्त्रियां यथायोग्य अपने २ कुलकी मर्यादके अनुसार धनुषयाग देखा करती हैं ॥ ७ ॥ नगरके बालक जो प्रभुके साथ थे वे कोमल वाणीसे कह कहकर आदरपूर्वक वहांकी रचना प्रभुको दिखा रहे है ॥ ८ ॥

दोहा-सब शिशु इहि मिस प्रेमबश, परसि मनोहर गात ॥ ❋
तनु पुलकहिं अति हर्ष हिय, देखि देखि दोउ भ्रात ॥ १३० ॥ ❋

हे राम ! इधर देखो, कोई कहता है इधर देखो, ऐसे दिखलानेके मिषसे सब बालक प्रभुके सुन्दर शरीरको परसकर प्रेमबश होते हैं. दोनों भाइयोंको देख देखकर उनके शरीरके रोम खड़े हो रहे हैं. और हृदयमें परमानन्द छा रहा है ॥ २३० ॥

शिशु सब राम प्रेमबश जाने ॥ प्रीति समेत निकेत बखाने ॥ १ ॥ ❋
निज निज रुचि सब लेहिँ बुलाई ॥ सहित सनेह जाहिँ दोउ भाई ॥ २ ॥

ऐसे सब बालकोंको प्रभुने प्रेमबश जानकर प्रीतिके साथ सब भवनोंकी रचना जुदी जुदी बखानी ॥ १ ॥ अपनी २ रुचिके अनुहार सब बालक बुलाते है तहां आप दोनों भाई बड़े स्नेहके साथ उनके समीप जाते हैं ॥ २ ॥

राम देखावहिँ अनुजहिँ रचना ॥ कहि मृदु मधुर मनोहर बचना ॥ ३ ॥ ❋
लव निमेषमहँ भुवननिकाया ॥ रचै जासु अनुशासन माया ॥ ४ ॥ ❋

रामचन्द्रजी लक्ष्मणको कोमल, मधुर मनोहर वचन कह कहकर वहांकी रचना दिखाते हैं ॥ ३ ॥ जिन प्रभुकी आज्ञासे माया प्रकृति एक क्षण और पलकमें चौदह लोक रचती है ॥ ४ ॥

भक्तहेतु सोइ दीनदयाला ॥ चितवत चकित धनुष मखशाला ॥ ५ ॥ ❋
कौतुक देखि चले गुरुपाहीं ॥ जानि विलंब त्रास मनमाहीं ॥ ६ ॥ ❋

वे दीन दयालु प्रभु भक्तोंके हेतु धनुषयज्ञकी शालाको चकित होकर देखते है ॥ ५ ॥ ऐसे वहांका सब कौतुक देख विलंब हुआ जान मनमें डरते हुए प्रभु गुरुके पास आये ॥ ६ ॥

जासु त्रास डरकहँ डर होई ॥ भजन प्रभाव देखावत सोई ॥ ७ ॥ ❋
कहि बातें मृदु मधुर सुहाई ॥ किये बिदा बालक बरिआई ॥ ८ ॥ ❋

महादेवजी कहते है कि, जिनके भयसे खुद डर यानी कालभी डरता है वे प्रभु अपने भजनका प्रभाव दिखा रहे है ॥ ७ ॥ प्रभुने बालकोंको अनेक तरहकी कोमल सुहावनी मीठी बातें कहकर बलात्कारसे बिदा किया ॥ ८ ॥

दोहा-सभय सप्रेम बिनीत अति, सकुच सहित दोउ भाइ ॥ ❋
गुरुपदपंकज नाइ शिर, बैठे आयसु पाइ ॥ २३१ ॥ ❋

फिर प्रेम और भय सहित वे दोनों भाई संकोचके साथ विनयपूर्वक ऋषिके पास आये तब प्रणाम कर ऋषिकी आज्ञा पा उनके पास बैठ गये ॥ २३१ ॥

निशि प्रबेश मुनि आयसु दीन्हा ॥ सबहीं संध्याबंदन कीन्हा ॥ १ ॥ ❋
कहत कथा इतिहास पुरानी ॥ रुचि रजनी युगयाम सिरानी ॥ २ ॥ ❋

संध्या हुई जानकर मुनिने सबको आज्ञा दी तब सबोंने संध्यावंदन किया ॥ १ ॥ फिर सब मुनि एकत्र हो इतिहास और पुराणोंकी कथा कहने लगे सो कहते २ आधी रात चली गयी ॥ २ ॥

मुनिबर शयन कीन्ह तब जाई ॥ लगे चरण चापन दोउ भाई ॥ ३ ॥ ❋
जिनके चरण सरोरुहलागी ॥ करत बिबिध जप योग बिरागी ॥ ४ ॥ ❋

तब मुनिश्रेष्ठ विश्वामित्रजी जाकर पौढ़े, दोनों भाई उनके पांव चापने लगे ॥ ३ ॥ जिनके चरणकमलोंके लिये बड़े बड़े योगीश्वर अनेक प्रकारके जप तप और योग करते हैं ॥ ४ ॥

ते दोउ बंधु प्रेम जनु जीते ॥ गुरुपदकमल पलोटत प्रीते ॥ ५ ॥ ❋
बार बार मुनि आज्ञा दीन्हा ॥ रघुबर जाइ शयन तब कीन्हा ॥ ६ ॥ ❋

वे दोनों भाई मानों प्रेमके बश हो गुरुके चरणकमलोंको प्रीतिपूर्वक चाप रहे थे ॥ ५ ॥ जब मुनिने बारंबार आज्ञा दी तब रामचन्द्रजीने शयन किया ॥ ६ ॥

चापत चरण लषण उर लाये ॥ सभय सप्रेम परम सुख पाये ॥ ७ ॥ ❋
पुनि पुनि प्रभु कह सोवहु ताता ॥ पौढ़े धरि उर पदजलजाता ॥ ८ ॥ ❋

जब प्रभु लेट गये तब लक्ष्मण प्रभुके चरणोंकी सेवा करने लगा. प्रभुके चरण चापते समय लक्ष्मणने प्रभुके चरणोंको प्रेम और भयके साथ अपने हृदयमें लगा करके परम आनंद पाया ॥ ७ ॥ तब प्रभुने बारंवार लक्ष्मणसे कहा कि–हे तात ! अब पौढ़ जाओ. तब लक्ष्मण प्रभुके चरणकमलोंको अपने हृदयमें रखकर लेट गया ॥ ८ ॥

दोहा–उठे लषण निशि बिगत सुनि, अरुणशिखाधुनि कान ॥
गुरुते पहिले जगतपति, जागे राम सुजान ॥ २३२ ॥ ❋

बिहान होनेके पहले मुर्गेका शब्द कानोंसे सुनतेही रात बीती जानकर लक्ष्मण झट उठ खड़ा हुआ. इतनेमें जगतके पति सुजान श्रीरामचन्द्रजीभी गुरुसे पहले जागे ॥ २३२ ॥

सकल शौच करि जाइ नहाये ॥ नित्य बिबाह गुरुहिँ शिर नाये ॥ १ ॥ ❋
समय जानि गुरुआयसु पाई ॥ लेन प्रसून चले दोउ भाई ॥ २ ॥ ❋

सब शौच कर जाकर स्नान किया. फिर नित्य क्रिया कर गुरुको प्रणाम किया ॥ १ ॥ पुष्प लानेका समय जान गुरुसे आज्ञा पा दोनों भाई पुष्प लेनेको चले ॥ २ ॥

भूप बाग बर देखेउ जाई ॥ जहँ बसन्त ऋतु रहै लोभाई ॥ ३ ॥ ❋
लागे बिटप मनोहर नाना ॥ बरण बरण बर बेलि बिताना ॥ ४ ॥ ❋

इन्होंने जाकर राजाकी अच्छी बाग देखा. जिसे देखकर बसंतऋतुभी लुभाय जाता था ॥ ३ ॥ अनेक सुन्दर पेड़ लगे हुए हैं. कई रंगरंगकी बेलियोंके बितान छा रहे हैं ॥ ४ ॥

नव पल्लव फल सुमन सुहाये ॥ निजसम्पति सुरतरुहिँ लजाये ॥ ५ ॥ ❋
चातक कोकिल कीर चकोरा ॥ कूजत बिहँग नचत कल मोरा ॥ ६ ॥ ❋

नवीन पल्लव फल और पुष्पोंसे वृक्ष ऐसे शोभायमान लगते हैं कि जिनकी संपदाको देखकर

कल्पवृक्ष लजाते है ॥ ५ ॥ पपीहे कोकिला, तोते, और चकोर आदि पक्षी मधुर २ कूजते है. मयूर मनोहर रीतिसे नाचते हैं ॥ ६ ॥

मध्य बाग सर सुभग सुहावा ॥ मणि सोपान बिचित्र बनावा ॥ ७ ॥ ❋
बिमल सलिल सरसिज बहुरंगा ॥ जल खग कूजत गुंजत भृंगा ॥ ८ ॥ ❋

बागके बीचमें एक बहुत सुन्दर सुहावना सरोवर है, जिसमें मणियोंकी सुन्दर सीढ़ियां बन रहीं हैं ॥ ७ ॥ निर्मल जलके भीतर बरन बरनके कमल खिल रहे है. जलपक्षी कलोलें कर रहे है. और भौंरे गुंज रहे हैं ॥ ८ ॥

दोहा—बाग तड़ाग बिलोकि प्रभु, हर्षे बन्धु समेत ॥ ❋
परम रम्य आराम यह, जो रामहिं सुख देत ॥ २२३ ॥ ❋

बाग और बागके भीतरका तालाव देखकर प्रभु लक्ष्मणके साथ बड़े प्रसन्न हुए. कवि कहता है कि इस आराम यानी बागको परम रमणीय कहना चाहिये कि जो रामको आराम देती थी ॥ २३३ ॥

चहुँ दिशि चितै पूंछि माली गन ॥ लगे लेन दल फूल मुदित मन ॥ १ ॥ ❋
तेहि अँवसर सीता तहँ आई ॥ गिरिजापूजन जननि पठाई ॥ २ ॥ ❋

उस बागको चारों तर्फसे देख, मालियोंसे पूंछा, फिर प्रसन्नचित्त हो दल और फूल लेने लगे ॥ १ ॥ उस समय उस बागके भीतर सीता चली आयी थी. पार्वतीकी पूजा करनेको माताने उसे भेजी थी ॥ २ ॥

संग सखी सब सुभग सयानी ॥ गावहिं गीत मनोहर बानी ॥ ५ ॥ ❋
सर समीप गिरिजा गृह सोहा ॥ बरणि न जाय देखि मन मोहा ॥ ४ ॥ ❋

उसके साथ सब सुन्दर सयानी सखियां थीं. जो मनोहर वाणीसे मंगलके गीत गा रहीं थीं ॥ ३ ॥ उस सरोवरके पास गौरीका मंदिर था. जो ऐसा सुन्दर और मनको मोहित करनेवाला था कि जिसका कुछ वर्णन नहीं कर सकते ॥ ४ ॥

मज्जन करि सर सखी समेता ॥ गई मुदित मन गौरि निकेता ॥ ५ ॥ ❋
पूजा कीन्ह अधिक अनुरागा ॥ निज अनुरूप सुभग बर मांगा ॥ ६ ॥ ❋

उस सरोवरमें सखियोंके साथ स्नान कर सीता मनमें आह्लादित होकर पार्वतीके मंदिरमें गयी ॥ ५ ॥ बड़ी प्रीतिसे पार्वतीकी पूजा करी. और उसने अपने योग्य सुन्दर पति वर मांगा ॥ ६ ॥

एक सखी सियसंग बिहाई ॥ गई रही देखन फुलवाई ॥ ७ ॥ ❋
तेहिं दोउ बन्धु बिलोकेउ जाई ॥ प्रेम बिबश सीतापहँ आई ॥ ८ ॥ ❋

एक सखी सीताका संग छोड़कर फुलवारी देखनेको गयी रही ॥ ७ ॥ वहां वह दोनों भाइयोंको देख, प्रेमबश हो दौड़ी २ सीताके पास आयी ॥ ८ ॥

दोहा—तासु दशा देखी सखिन, पुलक गात चल नैन ॥ ❋
कहु कारण निज हर्ष कर, पूछहिं सब मृदु बैन ॥ २३४ ॥ ❋

उसका शरीर पुलकित और नेत्र चंचल हो रहे थे. सो उसकी वो दशा देखकर सखियोंने

उससे कोमल वाणीसे पूंछा कि–हे सखी ! तू किस बातसे खुश हुई है ? सो हमें कह ॥ २३४ ॥

देखन बाग कुँवर दोउ आये ॥ बय किशोर सब भांति सुहाये ॥ १ ॥ ❋
श्याम गौर किमि कहौं बखानी ॥ गिरा अनयन नयन बिनु बानी॥२॥❋

तब उस सखीने कहा कि–दो राजपुत्र अभी बाग देखनेको आये हैं. उनकी किशोर अवस्था है. वे सब प्रकारसे सुन्दर है ॥ १ ॥ श्याम और गौरवर्ण है. मैं उनको कैसे बखान कर कहूं ? क्योंकि जो बोलनेवाली वाणी है वो तो देख नहीं सकती और जो देखनेवाले नेत्र है वे बोल नहीं सकते. यह दस्तूर है कि जो जिसका अनुभव करता है वो उसे प्रगट कर सकता है. वाणी कह सकती है पर देखनेका अनुभव नहीं कर सकती. और नेत्र देख सकते हैं पर कह नहीं सकते ॥ २ ॥

सुनि हरषीं सब सखी सयानी ॥ सिय हिय अति उत्कण्ठा जानी॥ ३ ॥❋
एक कहहिँ नृपसुत ते आली ॥ सुने जे मुनि सँग आये काली ॥ ४ ॥❋

यह बात सुन सीताके मनमें अति उत्कंठा जानकर सब सुजान सखियां बहुत प्रसन्न हुईं ॥ ३ ॥ तिनमेंसे एक सखी बोली कि–हे सखी ! ये राजकुँवर वेही है कि, जिनके विषयमें आपनने सुना था कि, कल दो राजकुँवर मुनि विश्वामित्रजीके संग आये है ॥ ४ ॥

जिन्ह निजरूप मोहनी डारी ॥ कीन्हे स्ववश नगर नरनारी ॥ ५ ॥ ❋
बरणत छबि जहँ तहँ सब लोगू ॥ अवशि देखिये देखन योगू ॥ ६ ॥ ❋

जिन्होंने अपने रूपकी मोहिनी डालकर नगरके सब स्त्री पुरुषोंको अपने वश कर लिया है ॥ ५ ॥ और जिनकी छबिकी महिमा सब लोग जहां तहां वर्णन करते हैं, उनको चलकर अवश्य देखना चाहिये क्योंकि वे देखनेके योग्यही हैं ॥ ६ ॥

तासु बचन अतिसियहि सुहाने ॥दरश लागि लोचन अकुलाने ॥ ७ ॥ ❋
चली अग्र करि प्रिय सखि सोई ॥ प्रीति पुरातन लखै न कोई ॥ ८ ॥ ❋

उस सखीका बचन सीताको बहुतही अच्छा लगा और प्रभुके दर्शनके लिये उसके नेत्र व्याकुल हो गये ॥ ७ ॥ तब वह सब प्यारी सखियोंको आगे कर प्रभुके दर्शनको चली; पर सीताके प्राचीन प्रेमका भेद किसीने नहीं जाना ॥ ८ ॥

दोहा–सुमिरि सीय नारदबचन, उपजी प्रीति पुनीत ॥ ❋
चकित बिलोकति सकल दिशि, जनु शिशु मृगी सभीत ॥ २३५ ॥

नारदजीके बचनको स्मरण आजानेसे सीताके मनमें निष्कपट प्रीति पैदा हुई. और वह चकित होकर चारों ओर ऐसे देखने लगी कि–मानों भयभीत होकर बाल हरिणी देख रही है ॥ २३५ ॥

कंकण किंकिणि नूपुर ध्वनि सुनि ॥ कहत लषण सन राम हृदय गुनि॥१॥
मानहुँ मदन दुन्दुभी दीन्ही ॥ मनसा बिश्व विजय कहँ कीन्ही ॥ २ ॥ ❋

---

१ एक समय सीता माता गौरीका पूजन करने जातीं थीं तहां मार्गमें नारदजी मिले तब दंडवत् कर सीताने नारदजीसे कहा कि–महाराज ! मैं देवीकी पूजा करने जाती हूँ. तब नारदजीने आशीर्वाद देकर कहा कि–हे सीता! इसी गिरिजा बारीमें तुम्हारे पति श्रीरामचन्द्र तुम्हें मिलेंगे; तब सीताने पूंछा कि–मैं उन्हें कैसे चीन्हूंगी ? तब नारदजीने कहा कि–इस बगीचेमें जिसे देखनेसे तुह्मारा मन लुभायमान हो जाय उसीको तुम तुम्हारे पति जानियो.

सखियोंके साथ सीताके आनेसे कंकण, किंकिणी और नूपुरोंकी रणरणाहट और झंझनाहट सुन, मनमें निश्चय कर रामचन्द्रजीने लक्ष्मणसे कहा ॥ १ ॥ कि–हे लक्ष्मण ! यह गहनोंका शब्द क्या सुन पडता है मानो कामदेवने धौंसा दिया है. मानों कामदेवने जगतको विजय करनेकी इच्छा करी है ॥ २ ॥

अस कहि फिरि चितये त्यहि ओरा ॥ सियमुख शशि भये नयन चकोरा ३
भये बिलोचन चारु अचंचल ॥ मनहुँ सकुच निमि तजेउ दृगंचल॥४॥ ❀

ऐसे कहकर रामचन्द्रजीने फिर उधरकी तर्फ देखा तो नेत्ररूप चकोरोंके लिये चंद्ररूप श्रीसीताजीका मुख दीख पड़ा ॥ ३ ॥ सीताजीके मुखचंद्रकी ओर निहारतेही रामचन्द्रजीके चंचल सुन्दर नयन कैसे स्थिर हो गये हैं कि मानों निमिराजाने उनका परस्परका प्रसंग देख. संकोचके कारण नेत्रप्रांतको त्याग दिया है. अर्थात् पलकोंका पर्दा पड़ना बंद हो गया ॥ ४ ॥

देखि सीय शोभा सुख पावा ॥ हृदय सराहत बचन न आवा ॥ ५ ॥ ❀
जनु बिरंचि सब निज निपुणाई ॥ बिरचि बिश्वकहँ प्रकट दिखाई ॥ ६ ॥

सीताको देखकर रामचन्द्रजीने बड़ा सुख पाया. केवल मनमें सराहते रहे पर मुंहसे कुछ कह नहीं सके ॥ ५ ॥ सीताका स्वरूप क्या है मानों विधाताने सीताको रचकर अपनी सारी चतुराई जगतको प्रगट करके दिखाई है ॥ ६ ॥

सुन्दरता कहँ सुन्दर करई ॥ छबिगृह दीपशिखा जनु बरई ॥ ७ ॥ ❀
सब उपमा कबि रहे जुठारी ॥ केहि पटतरिय बिदेह कुमारी ॥ ८ ॥ ❀

वो सुन्दरताईकोभी सुन्दर कर रही है मानों छबिरूप घरके भीतर दीपककी शिखा देदीप्यमान हो रही है ॥ ७ ॥ कवि लोग उसके लिये ढूंढ़ २ कर सब उपमा जुठार कर रह गये; पर कोईभी उपमा नहीं दे सके तुलसीदासजी कहते हैं कि–उस सीताके लिये अब हम किसकी उपमा देवें ? ॥ ८ ॥

दोहा–सियशोभा हिय बरणि प्रभु, आपनि दशा बिचारि ॥ ❀
बोले शुचि मन अनुजसन, बचन समय अनुहारि ॥ २३६ ॥ ❀

प्रभु सीताकी शोभाको मनमें बखान, अपनी दशाको विचार साफ दिल हो, छुटभैय्या लक्ष्मणसे उस समयके अनुसार बचन बोले कि– ॥ २३६ ॥

तात जनकतनया यह सोई ॥ धनुषयज्ञ जेहि कारण होई ॥ १ ॥ ❀
पूजन गौरि सखी लै आई ॥ करति प्रकाश फिरति फुलवाई ॥ २ ॥ ❀

हे भाई ! जिसके लिये धनुषयज्ञ होता है वो जनककी कुमारी सीता तो यही है ॥ १ ॥ यह गौरी पूजने को सखियोंको संग लेकर आई है फुलवारीको प्रकाशित करती इधर उधर फिरती है ॥ २ ॥

जासु बिलोकि अलौकिक शोभा ॥ सहज पुनीत मोर मन छोभा ॥ ३ ॥ ❀

---

१ निमिराजाका शरीर वसिष्ठजीके शापसे पड गया तब यज्ञ समाप्त होनेपर ऋषियोंने देवतानसे कहा कि, राजाको जिलादो तब राजा निमिने कहा कि मैं शरीरका संबंध नहीं चाहता, मुझे मत जिलाओ. तब देवतानने निमिसे कहा कि–अच्छा, तू सब प्राणीमात्रके नेत्रोंकी पलकोंपर रहाकर. तबसे वह पलकोंपर रहने लगा. इसीसे पलकका नाम निमिष पड़ा.

सो सब कारण ज्ञान बिधाता ॥ फरकहिँ सुभग अंग सुनु भ्राता ॥ ४ ॥

जिसकी अलौलिक शोभाको देखकर मेरा सहज पवित्र मन क्षोभित हो गया है ॥ ३ ॥ इसका क्या कारण है ? वो तो सब विधाता जाने परंतु हे भाई ! सुनो, मेरे शुभकारी अंग फरक रहे हैं ॥४॥

रघुबंशिन कर सहज स्वभाऊ ॥ मन कुपंथ पग धरै न काऊ ॥ ५ ॥ ❋

मोहिँ अतिशय प्रतीति जिय केरी ॥ जेहिँ सपनेहुँ परनारि न हेरी ॥ ६ ॥

रघुवंशियोंका यह सहज स्वभाव है कि उनका मन कभी कुपंथके मारगमें पांव नहीं रखता ॥ ५ ॥ मेरे मनमें इस बातका पक्का भरोसा है. हे भाई ! सुनो, जिन्होंने स्वप्नमेंभी परस्त्रीका मुख नहीं देखा है ॥ ६ ॥

जिनके लहहिँ न रिपु रण पीठी ॥ नहिँ लावहिँ परतिय मन डीठी ॥ ७॥

मंगल लहहिँ न जिनके नाहीं ॥ ते नर बर थोरे जगमाहीं ॥ ८ ॥ ❋

जिनकी पीठ रणमें शत्रुगण नहीं पाये हैं जो परस्त्रीकी ओर मन और दृष्टि नहीं लगाते ॥ ७ ॥ जिनके घरसे याँचक लोग निरास हो नहीं जाते ऐसे उत्तम पुरुष जगतमें बहुत कम हैं ॥ ८ ॥

दोहा–करत बतकही अनुजसन, मन सियरूप लुभान ॥ ❋

मुख सरोज मकरन्द छबि, करत मधुप इव पान ॥ २३७ ॥ ❋

ऐसे लक्ष्मणसे बातें करते करते रामचन्द्रजीका मन सीताके स्वरूपको देख लुभायमान होगया. तिससे वे सीताके मुखकमलके मकरन्द यानी पुष्परसकी छबिके भ्रमरके समान पान करने लगे अर्थात् आदरसहित सीताका मुख देखने लगे ॥ २३७ ॥

चितवत चकित चहूं दिशि सीता ॥ कहँ गये नृपकिशोर मनचीता ॥ १ ॥

जहँ बिलोकि मृग शावकनयनी ॥ जनु तहँ बरष कमल सित श्रेनी ॥ २ ॥ ❋

सीता चकित हो चारों तर्फ देखती है कि वे मनचीते (मनभावने) राजकुमार कहां गये ? ॥ १ ॥ वो बालमृगनयनी जिधरको तिरछे कटाक्षोंसे देखती है मानो वहां श्वेतकमलोंकी मालाकी माला बर्ष रही हैं ॥ २ ॥

लताओट तब सखिन लखाये ॥ श्यामल गौर किशोर सुहाये ॥ ३ ॥ ❋

देखि रूप लोचन ललचाने ॥ हर्षे जनु निज निधि पहिँचाने ॥ ४ ॥ ❋

सीताकी ऐसी अभिलाषा देख सखियोंने लताकी ओटमें वो श्यामल गौर किशोर मनोहर जोरी सीताको दिखाई ॥ ३ ॥ प्रभुका स्वरूप देख सीताके नेत्र ऐसे ललचाने और लुभायमान व प्रसन्न हुए कि मानों अपना निधि (खजाना) पा लिया अथवा अपने लक्ष्मीके निधि श्रीभगवान् अपने स्वामीको पहिचान लिया है ॥ ४ ॥

थके नयन रघुपति छबि देषी ॥ पलकनहूँ परिहरी निमेषी ॥ ५ ॥ ❋

अधिक सनेह देह भई भोरी ॥ शरद शशिहिँजनु चितव चकोरी ॥६॥ ❋

प्रभुकी छबि देखते देखते नेत्रभी थकित होगये पलकोंनेभी निमेषको त्याग दिया है ॥५॥ अत्यंत स्नेहके कारण देहकीभी सुध भूल गयी है वो प्रभुको स्नेहसे कैसे देखती है कि मानों चकोरी शरदऋतुके चन्द्रमाको देख रही है ॥ ६ ॥

लोचनमग रामहिं उर आनी ॥ दीन्हे पलक कपाट सयानी ॥ ७ ॥ ❋
जब सिय सखिन प्रेमबश जानी ॥ कहि नसकहिं कछु मन सकुचानी॥८

फिर उस सुजान सीताने रामचन्द्रजीको नेत्रोंके मार्गसे अपने हृदयमें लाके पलकरूप किवार लगा दिये अर्थात् नेत्र मूंदके प्रभुका ध्यान करने लगी ॥ ७ ॥ जब सखियोंने सीताको प्रेमवश जान-लिया तब वो सीता उनसे कुछभी कह नहीं सकी प्रत्युत मनमें कुछ सकुचा गयी ॥ ८ ॥

दोहा—लताभवनते प्रगट भे, तेहि अवसर दोउ भाइ ॥ ❋
निकसे जनु युग बिमल बिधु, जलद पटल बिलगाइ ॥ २३८ ॥ ❋

उस समय दोनों भाई लताभवनसे बाहिर आये सो कैसे शोभायमान लगते थे? कि मानों दो निर्मल पूर्ण चंद्र मेघपटलको छोड़कर बाहिर निकस आये है ॥ २३८ ॥

शोभासींव सुभग दोउ बीरा ॥ नील पीत जलजात शरीरा ॥ १ ॥ ❋
काकपक्ष शिर सोहत नीके ॥ गुच्छा बिच बिच कुसुमकलीके ॥ २ ॥ ❋

वे दोनों सुन्दर वीर शोभाकी सीमा है; नीलकमल और पीतसरोजकेसे उनके मनोहर शरीर है ॥ १ ॥ सिरपर सुन्दर काकपक्ष शोभायमान होरहे है. मारवाड़में काकपक्षका प्रचार बहुतर है; काकपक्षको मारवाड़ीलोग पट्टा कहते है और अवधमें जुल्फ कहते है काकपक्ष नाम इस लिये रक्खा गया है कि कव्वेके परोंके जैसे ये शिरपर दोनों ओर दिखते है बीच बीचमें फूलोंकी क-लियोंके गुच्छे लस रहे है ॥ २ ॥

भाल तिलक श्रमबिन्दु सुहाये ॥ श्रवण सुभग भूषण छबि छाये ॥ ३ ॥ ❋
बिकट भृकुटि कच घूंघरवारे ॥ नवसरोजलोचन रतनारे ॥ ४ ॥ ❋

ललाटके भीतर सुन्दर तिलक और परिश्रमसे हुए जलबिंदु शोभायमान हैं सुन्दर कानोंके भीतर कुंडलोंकी छबी छा रही है ॥ ३ ॥ टेढ़ी भौंहैं और घूंघरवारे बाल है, नवीन कमलकेसे रत-नारे सुन्दर नेत्र है ॥ ४ ॥

चारु चिबुक नासिका कपाला ॥ हास बिलास लेत जनु मोला ॥ ५ ॥ ❋
मुखछबि कहि न जाहि मोहि पाहीं ॥ जो बिलोकि बहु काम लजाहीं ॥ ६ ॥

सुन्दर चिबुक (डाढ़ी), नासिका, कपोल और हासका विलास है. जो मानों मनको मोलही लिये जाता है ॥ ५ ॥ कवि कहता है कि—मुखकी छबि तो मुझसे कहीही नहीं जा सकती क्यों कि उसको देखकर अनेक कामदेव लजाते हैं ॥ ६ ॥

उर मणिमाल कम्बु कल ग्रीवा ॥ कामकलभकर भुज बलसींवा ॥ ७ ॥ ❋
सुमनसमेत बाम कर दोना ॥ सांवर कुंवर सखी सुठि लोना ॥ ८ ॥ ❋

वक्षःस्थलमें मणियोंकी माला पहिरे हैं, शंखके जैसी मनोहर गर्दन है, कामदेवरूप कलभ यानी हाथीके बच्चेकी सूंड़ भुजदंड हैं. जो पराक्रमकी सीमा यानी हद्द हैं ॥ ७ ॥ दोनों भाई बाएं हाथोंमें फूलोंसे भरे हुए दोना लिये हुए हैं. तिनमें हे सखि! सॉंवरा कुँवर तो अतिही सलोना है ॥ ८ ॥

दोहा—केहरि कटि पट पीतधर, सुषमाशीलनिधान ॥ ❋
देखि भानुकुलभूषणहिँ, बिसरा सखिन अपान ॥ २३९ ॥ ❋

सिंहकीसी सूक्ष्म कटिपर पीले पीतांबर पहिरे हैं, जो परम शोभा और शीलके भंडार हैं. उन सूर्यवंशके भूषण श्रीरामचन्द्रजीको देखकर सखियां अपनपौ भूल गयीं ॥ २३९ ॥

धरि धीरज एक सखी सयानी ॥ सीतासन बोली गहि पानी ॥ १ ॥ ❋
बहुरि गौरिकर ध्यान करेहू ॥ भूपकिशोर देखि किन लेहू ॥ २ ॥ ❋

उनमेंसे एक सुजान सखी धीरज धर, सीताका हाथ पकड़ सीतासे बोली ॥ १ ॥ कि—हे सीता ! पार्वतीका ध्यान फिर करना. अभी राजकुँवरोंको क्यों नहीं देख लेती है ? ॥ २ ॥

सकुचि सीय तब नयन उघारे ॥ सन्मुख दोउ रघुबंश निहारे ॥ ३ ॥ ❋
नख शिख देखि रामकी शोभा ॥ सुमिरि पिता प्रण मन अति छोभा ॥ ४ ॥ ❋

तब सकुचकर सीताने नेत्र उघारे. सोंहीं दोनों राजकुमारोंको देखा ॥ ३ ॥ नखसे ले शिखालों रामकी शोभा निहार अपने पिताके प्रणको याद कर सीताके मनमें बड़ा क्षोभ हुआ ॥ ४ ॥

परबश सखिन लखी जब सीता ॥ भई गहरु सब कहहिँ सभीता ॥ ५ ॥ ❋
पुनि आइब इहि बिरियां काली ॥ अस कहि मन बिहँसी यक आली ॥ ६ ॥ ❋

जब सखियोंने सीताको परबश हुई लखा तब सब सभीत होकर कहने लगीं कि बहुत विलम्ब हो गया है ॥ ५ ॥ यहां कल इसवक्त फिर आवेंगी ऐसे कहकर एक सखी मनहीं मनमें हँसी ॥ ६ ॥

गूढ़ गिरा सुनि सिय सकुचानी ॥ भयउ बिलम्ब मातुभय मानी ॥ ७ ॥ ❋
धरि बड़ धीर राम उर आनी ॥ फिरी आप प्रण पितुवश जानी ॥ ८ ॥ ❋

सखीकी ऐसी गूढ़ार्थ बाणी सुनकर सीता सकुचानी. वास्तवमें देरी हुई जान माताका भय मान, बड़ा धीरज धर, रामचन्द्रजीको हृदयमें लाय, अपना प्रण पिताके अधीन जानकर वह वहांसे पीछी फिरी ॥ ७ ॥ ८ ॥

दोहा—देखनमिसु मृग बिहँग तरु, फिरति बहोरि बहोरि ॥ ❋
निरखि निरखि रघुबीरछबि, बाढ़ी प्रीति न थोरि ॥ २४० ॥ ❋

हरिण, पक्षी और पेड़ोंको देखनेके मिससे वो बारंबार फिरती है. रघुनाथजीकी छबि निरख निरख कर उसके मनमें बहुत प्रीति बढ़ी है. कुछ कम नहीं है ॥ २४० ॥

जानि कठिन शिवचाप बिसूरति ॥ चली राखि उर श्यामल मूरति ॥ १ ॥ ❋
प्रभु जब जात जानकी जानी ॥ सुखसनेहशोभागुणखानी ॥ २ ॥ ❋

महादेवजीके धनुषको महाकठोर जान प्रभुके स्वरूपको अतिसुकुमार मान वह सीता साँवरी मूर्तिको हृदयमें रख चिंता करती हुई वहांसे चली ॥ १ ॥ प्रभुने जब सुख, स्नेह, शोभा और गुणकी खान सीताको जाते देखा ॥ २ ॥

परमप्रेममय मृदु मसि कीन्ही ॥ चारु चित्रभीतर लिखि लीन्ही ॥ ३ ॥ ❋
गई भवानी भवन बहोरी ॥ बन्दि चरण बोली कर जोरी ॥ ४ ॥ ❋

तब उत्कट प्रेमरूप कोमल सुन्दर श्याही बनाके अपने हृदयपटपर उसका सुन्दर चित्र लिख लिया ॥ ३ ॥ सीता फिर पार्वतीके मंदिरमें जाय, उसके चरणोंको वन्दन कर हाथ जोड़ बोली ॥ ३ ॥

जय जय जय गिरिराजकिशोरी ॥ जय महेशमुखचन्द्रचकोरी ॥ ५ ॥ *
जय गजवदन षडानन माता ॥ जगतजननि दामिनिद्युति गाता ॥ ६ ॥ *

कि-हे गिरिराजकन्या ! जय ! जय ! ! जय ! ! ! आपकी जय हो. हे महादेवके मुखचन्द्रकी चकोरी ! आपकी जय हो ॥ ५ ॥ हे गणपति और स्वामि कार्तिककी माता ! आपकी जय हो. जिसके शरीरकी दामिनसी दमक है ऐसी हे जगज्जननी ! आपकी जय हो ॥ ६ ॥

नहिँ तव आदि मध्य अवसाना ॥ अमित प्रभाव वेद नहिँ जाना ॥ ७ ॥ *
भव भव विभव पराभव करिणि ॥ बिश्वबिमोहनि स्ववशबिहारिणि ॥ ८ ॥ *

हे माता ! आपका आदि, मध्य व अंत, कुछभी नहीं है. आपकी महिमा अपार है, जिसे वेदभी नहीं जानते ॥ ७ ॥ आप जगत्की उत्पत्ति, स्थिति, संहार करनेहारी हो. आप जगत्को मोहित कर अपनी इच्छासे विहार कर रही हो ॥ ८ ॥

दोहा-पतिदेवतासुतीयमहँ, मातु प्रथम तव रेष ॥ *
महिमा अमित न कहि सकहिँ, सहस शारदा शेष ॥ २४१ ॥ *

हे माता ! उत्तम पतिव्रता स्त्रियोंके बीच आप पहिली गिनी जाती हो. आपकी महिमा अपार है. अतएव हजारों शारदा (सरस्वती) और शेषभी आपकी महिमा कह नहीं सकते ॥ २४१ ॥

सेवत तोहिँ सुलभ फल चारी ॥ बरदायिनि त्रिपुरारिपियारी ॥ १ ॥ *
देवि पूजि पदकमल तुम्हारे ॥ सुर नर मुनि सब होहिँ सुखारे ॥ २ ॥ *

हे वर देनहारी ! हे त्रिपुरारि कहे श्रीशिवजीकी प्यारी ! आपकी सेवा करनेसे चारों फल (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष.) सुलभ है ॥ १ ॥ हे देवि ! आपके चरणकमल पूज कर सब देवता, मुनि और मनुष्य सुखी होते है ॥ २ ॥

मोर मनोरथ जानहु नीके ॥ बसहु सदा उरपुर सबहीके ॥ ३ ॥ *
कीन्हेउँ प्रगट न कारण तेही ॥ अस कहि चरण गहे वैदेही ॥ ४ ॥ *

आप मेरा मनोरथ अच्छी तरह जानती हो. क्योंकि, आप सदा सबके घट घटमें विराजती हो ॥ ३ ॥ अतएव मैंने अपना मनोरथ आपके आगे प्रगट नहीं किया है. ऐसे कहकर सीताने पार्वतीके चरण धरे ॥ ४ ॥

बिनयप्रेमबश भई भवानी ॥ खसी माल मूरति मुसुकानी ॥ ५ ॥ *
सादर सिय प्रसाद उर धरेऊ ॥ बोली गौरि हर्ष हिय भरेऊ ॥ ६ ॥ *

पार्वती सीताके विनय और प्रेमके बश है गई. उसके गलेकी माला खसी और मूर्ति मुसुकानी ॥ ५ ॥ खसी हुई मालाको प्रसाद मानकर सीताने आदरसे हृदयपर धारण करली तब मनमें आनंदित होकर देवी बोली ॥ ६ ॥

सुनु सिय सत्य अशीश हमारी ॥ पूजिहि मन कामना तुह्मारी ॥ ७ ॥ *
नारदबचन सदा शुचि सांचा ॥ सो बर मिलिहि जाहि मन रांचा ॥ ८ ॥ *

कि-हे सीता ! हमारी सच्ची आशिष सुन, तेरी मनकामना पूर्ण होवेगी ॥ ७ ॥ नारदजीका वचन हमेशा निष्कपट और सत्य रहता है सो तुझे वोही वर मिलेगा जिसमें तेरा मन आसक्त हो गया है॥८॥

छंद-मन जाहि रांचो मिलिहि सो वर सहजसुन्दर सांवरो ॥ ❋
करुणानिधान सुजान शील सनेह जानत रावरो ॥ ❋
यहि भांति गौरिअशीश सुनि सियसहित हिय हर्षित अली ॥ ❋
तुलसी भवानिहिँ पूजि पुनि पुनि मुदित मन मन्दिर चली ॥३१॥ ❋

हे सीता ! जिसमें तेरा मन लग गया है वही सहजसुन्दर साँवरा वर तुझे मिलेगा; क्योंकि करुणानिधान सुजान प्रभु तेरे शील और स्नेहको जानते हैं. इस प्रकार पार्वतीको आशिष सुन सीताके साथ सब सखियां परम प्रसन्न हुईं. तुलसीदासजी कहते हैं कि-पार्वतीको बारंबार पूजकर सीता मनमें प्रसन्न हो अपने घरको चली ॥ ३१ ॥

सोरठा-जानि गौरि अनुकूल, सिय हिय हर्ष न जाय कहि ॥ ❋
मंजुल मंगलमूल, बाम अंग फरकन लगे ॥ २९ ॥ ❋

पार्वतीको अनुकूल जानकर जो सीताके मनमें आनंद हुआ वो कहा नहीं जाता. सीताके सुन्दर मंगलके मूल शुभसूचक बाएं अंग फरकने लगे ॥ २९ ॥

हृदय सराहत सीयलुनाई ॥ गुरुसमीप गवने दोउ भाई ॥ १ ॥ ❋
राम कहा सब कौशिकपाहीं ॥ सरलस्वभाव छुआ छल नाहीं ॥ २ ॥ ❋

और इधर सीताकी शोभाको सराहते हुए दोनों भाई गुरुके पास गये ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीने सरल स्वभावसे गुरुके पास वहांका सब वृत्तान्त कह दिया, बिलकुल छलको छुआभी नहीं ॥ २ ॥

सुमन पाइ मुनिपूजा कीन्ही ॥ पुनि अशीश दोउ भाइन दीन्ही ॥ ३ ॥ ❋
सुफल मनोरथ होइँ तुम्हारे ॥ राम लषण सुनि भये सुखारे ॥ ४ ॥ ❋

पुष्प पाकर मुनिने परमेश्वरकी पूजा करी. फिर दोनों भाइयोंको आशीर्वाद दिया ॥ ३ ॥ कि-हे पुत्रो ! तुम्हारे मनोरथ सुफल होवैं. वो आशीर्वाद सुन राम लक्ष्मण दोनों भाई खुश हुए ॥ ४ ॥

करि भोजन मुनि बर बिज्ञानी ॥ लगे कहन कछु कथा पुरानी ॥ ५ ॥ ❋
बिगत दिवस मुनि आयसु पाई ॥ संध्या करन चले दोउ भाई ॥ ६ ॥ ❋

फिर भोजनकर ज्ञानी मुनि विश्वामित्रजी कुछ पुरातन कथा कहने लगे ॥ ५ ॥ जब दिन चला गया और संध्या हुई तब मुनिकी आज्ञा पाय दोनों भाई संध्या करने चले ॥ ६ ॥

प्राची दिशि शशि उगेउ सुहावा ॥ सियमुखसरिस देखि सुख पावा॥७॥ ❋
बहुरि विचारकीन्ह मनमाहीं ॥ सीय बदनसम हिमकर नाहीं ॥ ८ ॥ ❋

पूर्वदिशामें सुहावना चंद्रमा उदय हुआ जिसे देख सीताके मुखके सदृश जान प्रभु परम सुख पाय आनंदित हुए ॥ ७ ॥ फिर प्रभुने अपने मनमें विचार किया कि, चंद्रमा सीताके मुखके सदृश तो नहीं हो सकता; क्योंकि- ॥ ८ ॥

दोहा-जन्म सिन्धु पुनि बन्धु विष, दिन मलीन सकलंक ॥ ❀
सियमुखसमता पाव किमि, चन्द्र बापुरो रंक ॥ २४२ ॥ ❀

इसका जन्म जड़ समुद्रसे है और भाई विष (जहर) है दिनमें यह मलिन हो जाता है. और इसमें कलंक जुदा है. इसलिये यह बिचारा रंक चंद्रमा सीताके मुखकी तुल्यता कैसे पा सकता है ? ॥ २४२ ॥

घटै बढ़ै बिरहिनिदुखदाई ॥ ग्रसै राहु निजसन्धिहिँ पाई ॥ १ ॥ ❀
कोकशोकप्रद पंकजद्रोही ॥ अवगुण बहुत चंद्रमा तोही ॥ २ ॥ ❀

दूसरा यह हमेशा घटता है और बढ़ता है. विरही लोगोंको दुःख न्याराही देता है. और अपना मौका पाकर राहु इसे जुदाही ग्रस जाता है ॥ १ ॥ चक्रवाकोंको इससे बड़ा दुःख होता है. यह कमलोंका पक्का बैरी है. इसलिये हे चन्द्रमा ! तू किसी कदर सीताके मुखकी बराबरी नहीं कर सकता; क्योंकि तेरेमें अवगुण बहुत हैं ॥ २ ॥

बैदेही मुख पटतर दीन्हे ॥ होइ दोष बड़ अनुचित कीन्हे ॥ ३ ॥ ❀
सियमुखछबि बिधुब्याज बखानी ॥ गुरुपहँ चले निशा बड़ि जानी ॥४॥ ❀

जो हम तुझको सीताके मुखकी उपमा देदेवे तो अनुचित काम करनेसे हमको बड़ा अपराध होवे ॥ ३ ॥ चंद्रमाके छलसे सीताके मुखकी छबिका वर्णन कर रात्रि आई जानकर, प्रभु गुरुके पास आये ॥ ४ ॥

करि मुनिचरणसरोज प्रणामा ॥ आयसु पाई कीन्ह विश्रामा ॥ ५ ॥ ❀
बिगत निशा रघुनायक जागे ॥ बन्धु बिलोकि कहन अस लागे ॥ ६ ॥ ❀

मुनि विश्वामित्रजीके चरणोंको प्रणाम कर आज्ञा पाय, प्रभुने आराम किया ॥ ५ ॥ रात्रि बीती तब प्रभु जागे. भाईको देखकर ऐसे कहने लगे ॥ ६ ॥

उगेउ अरुण अवलोकहु ताता ॥ पंकज लोक कोक सुखदाता ॥७॥ ❀
बोले लषण जोरि युग पाणी ॥ प्रभुप्रभावसूचक मृदु बाणी ॥ ८ ॥ ❀

कि-हे भाई ! देख. कमल, लोक और चक्रवाकोंको सुख देनेवाला सूर्य उदय हो गया है ॥ ७ ॥ तब दोनों हाथ जोड़कर लक्ष्मणने प्रभुके प्रभावको सूचन करनेवाली, कोमल बाणी कही ॥ ८ ॥

दोहा-अरुणोदय सकुचे कुमुद, उडुगणज्योति मलीन ॥ ❀
जिमि तुम्हार आगमनसुनि, भये नृपति बलहीन ॥ २४३ ॥ ❀

लक्ष्मण बोला कि-हे प्रभु ! सूर्योदय होनेसे रात्रिविकासी कमल कैसे सकुच गये हैं. और तारागण कैसे छबिछीन हो गये कि, जैसे आपके यहां आनेके समाचार सुन राजा बलहीन हो गये हैं ॥ २४३ ॥

नृप सब नखत करहिँ उजियारी ॥टारि न सकहिँ चापतम भारी॥१॥ ❀
कमल कोक मधुकर खग नाना ॥ हरषे सकल निशा अवसाना ॥ २ ॥ ❀

हे प्रभु ! ये सब राजारूपी नक्षत्र कुछ २ प्रकाश करते है पर इस धनुषरूपी भारी अंधकारको हटा

नहीं सकते ॥ १ ॥ हे प्रभु ! जैसे रात्रि बीतनेपर सूर्योदय होनेसे कमल, चक्रवाक, भ्रमर और बहुत तरहके पक्षी ये सब प्रसन्न होते है ॥ २ ॥

ऐसेहिँ प्रभु सब भक्त तुम्हारे ॥ होइहहिँ टूटे धनुष सुखारे ॥ ३ ॥ ❋
उदय भानु बिनु श्रम तम नाशा ॥ दुरे नखत जग तेज प्रकाशा ॥ ४ ॥ ❋

ऐसेही हे प्रभु ! इस धनुष टूटनेपर आपके सब भक्तजन प्रसन्न होवेंगे ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! सूर्यके उदय होतेही जैसे विनाश्रम अंधकारका नाश हो जाता है और जगत्में तेज और प्रकाश फैलतेही सब नक्षत्र छिप जाते है ॥ ४ ॥

रबि निजउदयब्याज रघुराया ॥ प्रभु प्रताप सब नृपन दिखाया ॥ ५ ॥ ❋
तव भुजबलमहिमा उदघाटी ॥ प्रगटी धनुबिघटन परिपाटी ॥ ६ ॥ ❋

ऐसेही हे प्रभु ! आपके उदय और प्रतापसे हो जाता है. सो यह बात आपने सब राजाओंको सूरजके उदयके मिससे दिखायी है ॥५॥ हे प्रभु ! आपने अपने भुजबलकी महिमा प्रसिद्ध करनेके लिये धनुष तोड़नेकी तजवीज निकाली है ॥ ६ ॥

बन्धुबचन सुनि प्रभु मुसुकाने ॥ होइ शुचि सहज पुनीत अन्हाने ॥७॥ ❋
नित्य क्रिया करि गुरुपहँ आये ॥ चरणसरोज सुभग शिर नाये ॥ ८ ॥ ❋

लक्ष्मणके ऐसे बचन सुन प्रभु मुसुकुराये फिर शौचसे निपट सहज पवित्र जलमें न्हाये ॥ ७ ॥ अपने नित्यकर्म करके गुरुके पास आये वहां आ गुरुके चरणकमलोंको सुन्दर शिर नवाया ॥ ८ ॥

शतानन्द तब जनक बुलाये ॥ कौशिक मुनिपहँ तुरत पठाये ॥ ९ ॥ ❋
जनकबिनय तिन आय सुनाई ॥ हर्षे बोलि लिये दोउ भाई ॥ १० ॥ ❋

उस समय जनक राजाने अपने पुरोहित शतानन्दको बुलाकर तुरंत विश्वामित्रजीके पास भेजा ॥ ९ ॥ तब शतानन्दने विश्वामित्रजीके पास आ जनक राजाकी बिनती सुनाई. सो सुनकर विश्वामित्रजीने प्रसन्न हो दोनों भाइयोंको अपने पास बुलाया ॥ १० ॥

दोहा–शतानन्दपद बन्दि प्रभु, बैठे गुरुपहँ जाइ ॥ ❋
चलहु तात मुनि कहेउ तब, पठवा जनक बुलाइ ॥ २४४ ॥ ❋

प्रभु यानी रामचंद्रजी शतानंदके चरणोंको प्रणाम कर गुरु विश्वामित्रजीके पास जा बैठे. तब मुनि विश्वामित्रजीने रामचंद्रजीसे कहा कि–हे तात ! चलो. जनक राजाने बुला भेजा है ॥ २४४ ॥

सीयस्वयम्बर देखिय जाई ॥ ईश काहि धौं देहि बडाई ॥ १॥ ❋
लषण कहा यश भाजन सोई ॥ नाथ कृपा तव जापर होई ॥ २ ॥ ❋

सीताके स्वयंवरको चलकर देखिये कि, परमेश्वर किसको बड़ाई देवे? ॥ १ ॥ यह सुनकर लक्ष्मणने कहा कि–हे नाथ ! यश यानी कीर्तिका पात्र वही होगा कि जिसपर आपकी कृपा होगी ॥ २ ॥

हर्षे सुनि सब मुनिबरबानी ॥ दीन्ह अशीश सबहिँ सुख मानी ॥ ३ ॥ ❋
पुनि मुनिवृन्दसमेत कृपाला ॥ देखन चले धनुषमखशाला ॥ ४ ॥ ❋

लक्ष्मणका यह सुन्दर बचन सुनकर सब मुनिजन प्रसन्न हुए और सुख मान आनन्दित हो-

कर सबोंने लक्ष्मणको आशीर्वाद दिया ॥ ३ ॥ मुनिजनोंके समूहके साथ दयालु रामचंद्रजी धनुष्यज्ञकी सभा देखनेको खाने हुए ॥ ४ ॥

रंगभूमि आये दोउ भाई ॥ अस सुधि सब पुरबासिन पाई ॥ ५ ॥ ❀
चले सकल गृहकाज बिसारी ॥ बालक युवा जरठ नर नारी ॥ ६ ॥ ❀

जब सब नगरनिवासी लोगोंको ये समाचार मिले कि दोनों भाई रंगभूमिमें आगये है ॥ ५ ॥ तब नगरके सब बालक तरुण और वृद्ध स्त्रीपुरुष अपने २ घरके धंधे छोड़ २ कर देखनेको चले ॥ ६ ॥

देखा जनक भीर भइ भारी ॥ शुचि सेवक सब लिये हँकारी ॥ ७ ॥ ❀
तुरत सकल लोगनपहँ जाहू ॥ आसन उचित देहु सबकाहू ॥ ८ ॥ ❀

जब जनकने देखा कि, बहुत भारी भीड़ हो गयी है तब उसने अपने तमाम शुचि (पवित्र) सेवकोंको बुलालिया ॥ ७ ॥ और उनसे कहा कि--तुम सब समस्त लोकोंके पास तुरंत जाओ और सबको यथायोग्य आसन देकर बिठाओ ॥ ८ ॥

दोहा--कहि मृदु बचन बिनीति तिन, बैठारे नरनारि ॥ ❀
उत्तम मध्यम नीच लघु, निज निज थल अनुहारि ॥ २४५ ॥ ❀

जनक राजाकी इस आज्ञाको पाकर उन नौकरोंने कोमल और विनययुक्त बचन कह २ कर सब उत्तम मध्यम, नीच और क्षुद्र स्त्रीपुरुषोंको अपने २ स्थलके अनुसार बैठा दिया ॥ २४५ ॥

राजकुँवर तेहि अवसर आये, मनहुँ मनोहरता छबि छाये ॥ १ ॥ ❀
गुण सागर नागर बर बीरा ॥ सुन्दर श्यामल गौर शरीरा ॥ २ ॥ ❀

उस समय राजा दशरथजीके कुँवर राम लक्ष्मण वहां आये. कैसे है वे राजकुमार ? कि-जो मानों सुंदरता और छबि यानी लावण्यसे छाये अर्थात् व्याप्त भये हुए हैं अथवा मानों उन राजकुँवरोंके आनेसे सभामें सुंदरता और छबि छा गयी थी ॥ १ ॥ फिर कैसे है ? कि जो गुणोंके सागर है, अति चतुर हैं, उत्तम वीर हैं तथा श्याम और गौर मनोहर शरीर धरे हैं ॥ २ ॥

राजसमाज बिराजत रूरे ॥ उडुगणमहँ जनु युग बिधु पूरे ॥ ३ ॥ ❀
जिनके रही भावना जैसी ॥ प्रभु मूरति देखी तिन तैसी ॥ ४ ॥ ❀

और राजाओंकी समाज यानी सभाके बीचमें कैसे सुंदर विराजमान हैं ? कि मानों तारा, मंडलके बीचमें दो पूर्ण चंद्रमा विराजे है ॥ ३ ॥ उस समय प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी मूर्ति उन लोगोंको वैसीही दिखायी दी कि जिन लोगोंके मनमें जैसी भावना थी ॥ ४ ॥

---

१ यहां उत्प्रेक्षा अलंकार है.२उत्प्रेक्षा अलंकार है.३ श्रीकृष्णचंद्र कंसकी मल्लभूमिमें पधारे उस समय सबकी भावनाके अनुसार सबको श्रीकृष्णका स्वरूप दिखायी दिया सो श्रीमद्भागवतके दशमस्कंधके ४३ अध्यायमें श्लोक १७ मल्लानामशनिर्नृणां नरवरः स्त्रीणां स्मरो मूर्तिमान् गोपानां स्वजनोऽसतां क्षितिभुजां शास्ता स्वपित्रोः शिशुः॥ मृत्युर्भोजपतेर्विराडविदुषां तत्वं परं योगिनां वृष्णीनां परदेवतेति विदितो रंगं गतः साग्रजः ॥ दश प्रकारके अधिकारी होनेसे भगवान्का स्वरूप दशरसरूपसे दिखायी दिया. मल्लोंको वज्ररूप, मनुष्योंको नरोंमें श्रेष्ठ, स्त्रियोंको मूर्तिमान् कामदेव, गोपोंको स्वजन, दुष्टराजानको शिक्षा देनेवाला, अपने मातापिताको बालकरूप. कंसको मृत्युरूप, अज्ञानियोंको विकल अथवा विराट्रूप, योगीजनोंको परमतत्वरूप, भक्तजनोंको परम दैवतरूप, दृष्टि आये. इन दश वाक्योंमें दशही रस जुदे जुदे क्रमसे कहे गये हैं. सो वे इस क्रमसे रौद्र १, अद्भुत २, शृंगार ३, हास्य ४, वीर ५, करुणा ६, भयानक ७, बीभत्स ८, शांत ९, प्रेमभक्ति १०, सो यहांभी ऐसेही हुआ यानी श्रीराम लक्ष्मणके दर्शनसे सब रस अभिव्यक्त हुए.

देखहि भूप महारणधीरा ॥ मनहुँ बीर रस धरे शरीरा ॥ ५ ॥ ❀
डरे कुटिल नृप प्रभुहिँ निहारी ॥ मनहुँ भयानक मूरति भारी ॥ ६ ॥ ❀

उसीका स्पष्ट रीतिसे वर्णन करते हैं. जो महारणधीर राजा थे वे प्रभुको ऐसे देखते थे कि मानों शरीर धारण किये अर्थात् मूर्तिमान् वीररसही विद्यमन है ॥५॥ और जो कुटिल राजा थे वे प्रभुको देखकर ऐसे डरे कि मानों प्रभु भारी भयानक रसकी मूर्तिही है ॥ ६ ॥

रहे असुर छल जो नृपबेषा ॥ तिन प्रभु प्रगट कालसम देषा ॥ ७ ॥ ❀
पुर बासिन देखे दोउ भाई ॥ नरभूषण लोचन सुखदाई ॥ ८ ॥ ❀

जो दैत्य कपटकर राजाका वेष बनाकर वहां विद्यमान थे उन्होंने प्रभुको प्रत्यक्ष कालके बराबर देखा ॥ ७ ॥ नगरके रहनेवाले लोगोंने नेत्रोंने सुख देनेवाले दोनों भाइयोंको ऐसे देखा कि मानों मनुष्योंके अलंकारही हैं ॥ ८ ॥

दोहा–नारि बिलोकहिँ हरषि हिय, निज निज रुचिअनुरूप ॥ ❀
जनु सोहत शृंगार धरि, मूरति परम अनूप ॥ २४६ ॥ ❀

रसलक्षणं काव्यप्रकाशे " कारणान्यथ कार्याणि सहकारीणि यानि च । रत्यादेः स्थायिनो लोके तानि च नाट्यकाव्ययो –विभावा अनुभावाश्च कथ्यन्ते व्यभिचारिणः । व्यक्तः स तैर्विभावाद्यैः स्थायीभावो रसः स्मृतः " इति ॥ विभाव अनुभाव और व्यभिचारी, इन तीनोंके संयोगसे अभिव्यक्त यानी व्यंजनावृत्तिसे व्यंजित अर्थात् अनुभवका विषय जो रति आदि स्थायी भाव उसे रस कहते है. विभावका लक्षण–रति आदि स्थायी भाव अर्थात् स्त्री आदि विषे प्रेम आदिके कारण अर्थात् स्त्री आदि जो आलंबन हैं तथा रति आदिके उत्पन्न होनेपर चंद्रोदय, वसंत आदि जो उद्दीपन हैं वे यदि काव्य और नाटकमें ग्रथित किये जांय तो विभाव कहे जाते हैं. अनुभावका लक्षण उसीके कार्य जो कटाक्ष, भुजोत्क्षेप व काकूक्ति आदि हैं उनको अनुभाव कहते हैं. व्यभिचारीका लक्षण–रति आदिके उत्पन्न होने वा शीघ्र प्रतीति होनेमें जो निर्वेद आदि सहकारी हैं वे व्यभिचारी कहाते है. विभावआदिका विभाग–स्त्री आदि आलंबन तथा चंद्रोदय. वसन्त उद्यान और कोकिलाकूजित आदि उद्दीपन अनन्त हैं. अनुभावभी कायिक, वाचिक और मानसिक भेदसे तीन प्रकारका है; तहां कटाक्ष, भुजोत्क्षेप आदि कायिक, काकूक्ति आदि वाचिक तथा खेद आदि मानसिक अनुभाव हैं; तिनको भरत सात्विक भाव कहे हैं सो वे आठ हैं–स्तंभ, खेद, रोमांच, स्वरभंग, वेपथु विवर्णता, अश्रु और प्रलय. व्यभिचारी वा संचारी तेतीस हैं सो काव्यप्रकाशमें कहे हैं–निर्वेद १ ग्लानि २ शंका ३ असूया ४ मद ५ श्रम ६ आलस्य ७ दैन्य ८ चिन्ता ९ मोह १० स्मृति ११ धृति १२ व्रीड़ा १३ चपलता १४ चित्तहर्ष १५ आवेग १६ जड़ता १७ गर्व १८ विषाद १९ उत्सुकता २० निद्रा २१ अपस्मार २२ सुप्त २३ प्रबोध २४ अमर्ष २५ आकृतिगोपन २६ उग्रता २७ मति २८ व्याधि २९ उन्माद ३० मरण ३१ त्रास ३२ और वितर्क ३३. इनसे अभिव्यक्त रस नव हैं. शृंगार, हास्य, करुण, अद्भुत, रौद्र, वीर, भयानक, बीभत्स और शांत इनके क्रमसे नवही स्थायीभाव हैं–रति, हास, शोक, विस्मय, क्रोध उत्साह, भय, जुगुप्सा और निर्वेद. तहां शृंगार रसके मुख्य दो भेद हैं;संभोग और विप्रलंभ. संभोग शृंगारके परस्पर आलिंगन, चुंबन,अधरपान आदि अनेक भेद हैं परंतु प्रधानतासे उसको एक प्रकारका मानते हैं. विप्रलंभ शृंगारके अभिलाष, विरह, ईर्ष्या, प्रवास और शापके कारण पांच भेद हैं. ऐसेही दूसरे रसोंकोभी जानो.

१ तहां प्रथम वीर रस दिखाते हैं. वीररसका रंग गौर है. उत्साह स्थायीभाव है, रामचंद्रजी आलंबन हैं, उनके ताटकावधआदि चरित्र उद्दीपन हैं, रणमें धैर्य रखना आदि अनुभाव हैं. और गर्वआदि व्यभिचारी हैं, २ भयानक रसका नीलवर्ण है, भय स्थायीभाव है कंप स्वरभंग, चिंता, मोह,विषाद आदि व्यभिचारी हैं, रामचंद्रजी आलंबन हैं. उनके चरित्र सुबाहुवधआदि उद्दीपन हैं. सो यथायोग्य अपनी बुद्धिसे जान लेना. इन दोनों स्थलोंमें उत्प्रेक्षा अलंकार है. प्रथममें वीररसतासे उत्प्रेक्षा है. दूसरेमें भयानक रससे उत्प्रेक्षा है. ३ कालसम कहनेसे रौद्ररस बोधित होता है इसका वर्ण अतिरक्त स्थायीभाव, क्रोध व्यभिचारी, शंका, श्रम, उग्रता आदि आलंबन, उद्दीपन और अनुभाव आदि यथायोग्य जानो. उपमा अलंकार. ४ लोचनसुखदायी और नरभूषण कहनेसे अद्भुत रस बोधित होता है. इसका पीत और पिंगलवर्ण है. विस्मय स्थायीभाव, है, रामचंद्रजी आलंबन हैं. अद्भुत स्वरूप उद्दीपन है, लोचनोंको सुख देना आदि अनुभाव है. वितर्क, हर्ष आदि व्यभिचारी हैं, उत्प्रेक्षा अलंकार.

स्त्रियें अपने मनमें आनंदित होकर प्रभुको अपनी अपनी रुचिके अनुसार ऐसे देखती है कि, मानों शृंगाररसही अति अनुपम स्वरूप धारण करके शोभायमान हो रहा है ॥ २४६ ॥

विदुषन प्रभु बिराटमय दीसा ॥ बहु मुख कर पग लोचन शीसा ॥ १ ॥
जनक जाति अवलोकहिँ कैसे ॥ स्वजन सगे प्रिय लागहिँ जैसे ॥ २ ॥ ❋

विद्वान् लोगोंको प्रभुका स्वरूप अनेक मुख, अनेक हाथ, अनेक पांव, अनेक नेत्र और अनेक शिखाला विराट्रूप दिखायी दिया अर्थात् पंडितोंने प्रभुको विराट्रूपसे देखा ॥ १ ॥ जनकराजाके जातिवाले प्रभुको किस प्रकारसे दिखतेथे ? कि जैसे अपने स्वजन और संबंधी लोग प्यारे लगते है ॥ २ ॥

सहित विदेह बिलोकहिँ रानी ॥ शिशु सम प्रीति न जात बखानी ॥ ३ ॥
योगिन परमतत्वमय भासा ॥ शान्त शुद्ध सम सहज प्रकासा ॥ ४ ॥ ❋

जनक राजाके साथ रानी प्रभुको अपने पुत्रके समान देखती थी कि, जिसकी प्रीति वर्णन करनेमें नहीं आ सकती ॥ ३ ॥ योगीजनोंको प्रभुका स्वरूप शांत, शुद्ध, समत्व, प्रकाश और परम तत्वमय प्रतीत होताथा ॥ ४ ॥

हरि भक्तन देखेउ दोउ भ्राता ॥ इष्टदेव इव सबसुखदाता ॥ ५ ॥ ❋
रामहिँ चितवभाव जेहिँ सीया ॥ सो सनेह सुख नहिँ कथनीया ॥ ६ ॥ ❋

हरिभगवानके भक्त लोगोंने दोनों भाइयोंको किस प्रकारसे देखा कि जैसे सर्व सुख देनेवाले अपने इष्टदेवको देखा करते हैं ॥ ५ ॥ जानकी जिस भावसे रामचन्द्रजीको देखतीथी वह स्नेहमिश्रित आनंद अकथनीय है अर्थात् वह वाणीके अगोचर है ॥ ६ ॥

---

१ दोहेमें शृंगाररस प्रगट है. शृंगार रसका श्याम वर्ण है. रति स्थायीभाव है. रामचंद्रजी आलंबन हैं. वसंतआदि उद्दीपनहैं. भ्रुजोत्क्षेप, कटाक्षआदि अनुभाव हैं. रघुनाथजीको जो स्त्रियां देखती हैं वे मुग्धा, मध्या और प्रौढ़ा तीन प्रकारकी हैं सो वे अपनी २ रुचिके अनुसार देखती हैं तहां मुग्धा शृंगाररसकी मूर्ति देखती हैं तासों वे केवल चक्षुसंभोगका सुख पाती हैं, मध्या परम शृंगारकी मूर्ति देखती हैं तासों वे परस्परसंभोग सुखको चाहती हैं, प्रौढ़ा अनुपम शृंगारकी मूर्ति देखती हैं तासों वे अनुपम संभोगका सुख पाती है. मुग्धालक्षणं साहित्यदर्पणे– "प्रथमावतीर्णयौवनं मदनविकृतिरतौ धामा, कथिता मृदुश्रमाने समधि फल जावती मुग्धा" दोहा–प्रथम प्राप्त यौवन मदन, विकृति रतीमें वाम । मृदुलमान लज्जा घनी, कहिय सु मुग्धा भाम ॥ मध्या लक्षण–"मध्या विचित्रसुरता प्ररूढस्मरयौवना । ईषत्प्रगल्भवचना मध्यमव्रीडिता मता" दोहा–सुरत विचित्रा अरु बहुत, स्मर यौवन संचार । कछु प्रगल्भवाणी मधम, लज्जा मध्या नार ॥ प्रगल्भालक्षण–"स्मरान्धा गाढतारुण्यसमस्तरतिकोविदा । भावोन्नतादरव्रीडा प्रगल्भाक्रान्तनायिका" दोहा–कामान्धा अतिशय बहुत, तरुण निपुण रतिमांझ । भावोन्नत ईषत्त्रपा,तीसरी नायकताज॥ यहां उल्लेख अलंकार है.

२ यहां बीभत्सरस बोधित होता है. उसका काला वर्ण है, जुगुप्सा स्थायीभाव है, विराट्रूप आलंबन है, अनेक हाथ अनेक पांव आदिका होना उद्दीपन है, ग्लानि व्यभिचारी है. पंडितंमन्य पुरुषोंके मनमें ग्लानि इस प्रकारसे आयी कि, यह क्या स्वरूप जिसके किसी अंगका ठिकाना नहीं जिधर देखते हैं उधरही सब अंग दीखतेही हैं यह स्वरूप तो बड़ा निंद्य है इसतरह बीभत्स रसका बोध होता है. ३ यहां हास्यरस द्योतित होता है. क्योंकि सज्जन और सम लोगोंके साथ सदा हास्य हुआही करता है इसका वर्ण पांडुर है. हास स्थायीभाव है और रहे विभाव, अनुभाव और संचारी सो प्रसंगानुसार जानलेना. उपमा अलंकार. ४ यहां करुणरस बोधित होता है. क्योंकि बालकोंपर मातापिताकी दया होतीही है. इसका वर्ण शुद्ध बैंजनी है, शोक स्थायीभाव है, सो इस प्रकारसे कि ए कोमलशरीर धनुष कैसे उठावेंगे इत्यादि विभाव,अनुभाव और संचारी प्रसंगानुसार समझलेना. ५ यहां शुद्ध शांत रस जाना जाता है. इसका वर्ण शुद्ध श्वेत है, स्थायीभाव निर्वेद है. और रहे विभाव, अनुभाव और संचारी सो प्रकृतानुसार जानो. ६ यहां रामचंद्रजोविषे हरिभक्त लोगोंकी रति जानी जाती है. रामचंद्रजी आलंबन हैं.

उर अनुभवति न कहि सक सोऊ ॥ कवन प्रकार कहै कबि कोऊ ॥ ७ ॥ ❋
जेहि बिधि रहा जाहि जस बाऊ ॥ तेहिँ तस देखेउ कोशलराऊ ॥ ८ ॥ ❋

अतएव वह सीताभी अपने चित्तमें उसका अनुभव अवश्य करती है परंतु कह नहीं सकती कि, यह रस इस प्रकारका है तब वह रस कविके गोचर किस प्रकार होवे और कोई कवि उस रसको किस प्रकारसे वर्णन कर सके ? ॥ ७ ॥ निष्कर्ष यह है कि, उस समयमें जिसका जिस प्रकारका भाव रहा उसने कोशलराज यानी रामचन्द्रजीको वैसाही देखा ॥ ८ ॥

दोहा--राजत राजसमाजमहँ, कोशलराजकिशोर ॥ ❋
सुन्दर श्यामल गौर तन, बिश्वबिलोचनचोर ॥ २४७ ॥ ❋

राजाओंकी सभाके बीचमें सुंदर श्याम और गौर शरीर धरे हुए सर्व जगतकी दृष्टी चुरानेवाले अवधनाथके कुमार राम लक्ष्मण विराजमान हो रहे थे ॥ २४७ ॥

सहजमनोहरमूरति दोऊ ॥ कोटि काम उपमा लघु सोऊ ॥ १ ॥ ❋
शरदचन्दनिन्दक मुख नीके ॥ नीरज नयन भावते जीके ॥ २ ॥ ❋

उस समय स्वभावसे सुंदर स्वरूपवाले वे दोनों भाई ऐसे शोभायमान लगते थे कि, यदि करोड़ कामदेवोंकी उपमा दी जाय तो वहभी तुच्छही प्रतीत होवे ॥ १ ॥ सुंदरमुख शरदऋतुके चंद्रमाकी निंदा करनेवाला है अर्थात् मुख चंद्रमाकी अपेक्षा अतिसुंदर है. कमलकेसे जो नेत्र है वे मनको अति सुहावने है ॥ २ ॥

चितवनि चारु मारमदहरणी ॥ भावत हृदय जाय नहिँ बरणी ॥ ३ ॥ ❋
कल कपोल श्रुति कुंडल लोला ॥ चिबुक अधर सुन्दर मृदु बोला ॥ ४ ॥ ❋

कामदेवका मद उतारनेवाली सुंदर चितवनि (दृष्टि) मनमेंही भावती है, परंतु वर्णन करनेमें नहीं आ सकती ॥ ३ ॥ सुंदर कपोलोंपर कानोंके कुंडल डोल रहे हैं. सुंदर चिबुक (डाढ़) और अधर ओष्ठ है; कोमल वाणी है ॥ ४ ॥

कुमुदबन्धुकर निन्दक हासा ॥ भृकुटी बिकट मनोहर नासा ॥ ५ ॥ ❋
भालबिशाल तिलक झलकाहीं ॥ कचबिलोकि अलि अवलि लजाहीं ॥ ६ ॥

कुमुद कहे रात्रिविकासी कमलोंका बंधु जो चंद्रमा तिसकी किरणोंकी निंदा करनेवाला हास्य है. टेढ़ी भृकुटी और सुंदर नासिका है ॥ ५ ॥ बड़े ललाटोंके बीच सुंदर तिलक झलक रहे है. केशोंको देखकर भ्रमरोंकी पंक्ति लजाती है ॥ ६ ॥

पीत चौतनी शिरन सुहाई ॥ कुसुमकली बिच बीच बनाई ॥ ७ ॥ ❋

---

१ यहां चोर पदको कहकर तुलसीदासजीने अलौकिक चमत्कार दिखाया है. यथा जो चोर होता है वह राजाके सन्मुख कभी नहीं आसका, और यह राजाओंकी सभाके बीचमें विराजमान हैं. दूसरा राजपुत्र चोरोंको दंड देता है और यह आप राजपुत्र होकर चोर हैं. तीसरा चोर होता है वह तमामकी चीज नहीं चुरा सकता और इन्होंने सबके नेत्र चुराये. चौथा चोर होता है वह आंखसे दीखनेवाली चीज चुराता है और इन्होंने खुद आंखेही चुरायीं. पांचवां चोर होता है वह प्रायः सुंदर नहीं होता और यह सबकी अपेक्षा सुंदर हैं. छठा चोर होता है वह कुछ अवस्था पाकर चोरी करना सीखता है. और यह किशोरअवस्थामेंही ऐसे पक्के चोर हुए, सो कौन जाने बड़े होंगे तब क्या करेंगे? यहां उपमानकी अपेक्षा उपमेयकी विशेषता कहनेसे व्यतिरेक अलंकार जानो. तिसका लक्षण-व्यतिरेको विशेषः स्यादुपमानोपमेययोः ॥

रेखा रुचिर कम्बु कल ग्रीवा ॥ जनु त्रिभुवनसुषमाकी सीवा ॥ ८ ॥ *

सिरपर पीली चौतनी (टोपी) शोभायमान हो रही है. उनमें बीच बीचमें फूलोंकी कलियां लगायी गई है ॥ ७ ॥ शंखके समान सुंदर गलेमें तीन रेखा कैसी सुंदर दीखती है ? कि, मानों त्रिलोकीकी परमशोभाकी सीमाही है ॥ ८ ॥

दोहा--कुंजर मणि कंठा कलित, उर तुलसीकी माल ॥ *
वृषभकन्ध केहरिठवनि, बलनिधि बाहु बिशाल ॥ २४८ ॥ *

सुंदर गजमोतीनके कंठा गलेमें पहरे है. वक्षःस्थलपर तुलसीकी माला पहिरे है, वृषभकेसे पुष्ट और उच्च कंधे हैं. सिंहकीसी चाल है. बलकी भंडार बड़ी विशाल भुजायें है ॥ २४८ ॥

कटि तूणीर पीत पट बाँधे ॥ कर शर धनुष बामकर काँधे ॥ १ ॥ *
पीत यज्ञउपबीत सुहाई ॥ नख शिक मंजु महा छबि छाई ॥ २ ॥ *

पीतांबरसे कमरमें तरकस बांधे है. हाथमें तीर है और सुंदर बाएं कंधेपर धनुष है ॥ १ ॥ पीतवर्ण यज्ञोपवीत (जनेऊ) शोभ रहा है. नखोंसे ले शिखापर्यंय सुंदर महाछबि छा रही है ॥ २ ॥

देखि लोग सब भये सुखारे ॥ यकटक लोचन टरहिँ न टारे ॥ ३ ॥ *
हरषे जनक देखि दोउ भाई ॥ मुनिपदकमल गहे तब जाई ॥ ४ ॥ *

रामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीके ऐसे अति मनोहर स्वरूपको देखकर सब लोग सुखी हुए.सबके नेत्र इकटक उन्हींको देखते है हटानेपरभी पीछे नहीं हटते ॥ ३ ॥ जनक राजा दोनों भाइयोंको देखकर अति आनंदको प्राप्त हुआ तब जाकर मुनि विश्वामित्रजीके चरणकमल पकड़ लिये ॥ ४ ॥

करि बिनती निजकथा सुनाई ॥ रंगअवनि सब मुनिहिँ दिखाई ॥ ५ ॥ *
जहँ जहँ जाहिँ कुँवर बर दोऊ ॥ तहँ तहँ चकित चितव सब कोऊ ॥ ६ ॥ *

फिर विनती करके अपने पणकी सब कथा कह सुनाई और मुनि विश्वामित्रजीको सब रंगभूमि दिखायी ॥ ५ ॥ जहां जहां वे दोनों उत्तम राजकुमार जाते है वहां वहां सब कोई चकित होकर देखते हैं ॥ ६ ॥

निज निज रुचि रामहिँ सब देषा ॥ कोऊ न जान कछु मर्म बिशेषा ॥ ७ ॥
भलि रचना नृपसन मुनि कहेऊ ॥ राजा मुदित परम सुख लहेऊ ॥ ८ ॥ *

सब लोगोंने अपनी २ रुचिके अनुसार रामचंद्रजीको देखा परंतु असली भेद किसीने नहीं जाना कि, यह क्या है ? ॥ ७ ॥ फिर मुनि विश्वामित्रजीने जनक राजासे कहा कि--हे राजन् ! यह रचना आपने बहुत अच्छी की. मुनिके ये बचन सुनकर जनकने अति आनंदित होकर परम सुख पाया ॥ ८ ॥

दोहा-- सब मंचनते मंच यक, सुन्दर बिशद बिशाल ॥ *
मुनिसमेत दोउ बन्धु तहँ, बैठारे महिपाल ॥ २४९ ॥ *

फिर राजा जनकने उन दोनों भाइयोंको मुनि विश्वामित्रजीके साथ वहां एक मंचपर बिठाया कि, जो मंच सब मंचोंकी अपेक्षा सुंदर, उज्ज्वल और विशाल था ॥ २४९ ॥

प्रभुहिँ देखि सब नृप हिय हारे ॥ जनु राकेशउदय भय तारे ॥ १ ॥ ❋
अस प्रतीति तिनके मनमाहीं ॥ राम चाप तोरब शक नाहीं ॥ २ ॥ ❋

प्रभुको मंचपर विराजमान देखतेही सब राजा अपने हृदयमें हार गये अर्थात् बेउम्मेद होगये. प्रभुको देखकर राजा कैसे निस्तेज हुए कि, मानों राकेश यानी चंद्रमाके उदय होनेसे तारे छबिहीन हो जाते हैं ॥ १ ॥ उन सब राजाओंके मनमें देखतेही ऐसी प्रतीति होगयी कि, रामचन्द्रजी बेशक धनुष तोड़ डारेंगे ॥ २ ॥

बिनु भंजेहु भवधनुष बिशाला ॥ मेलिहि सीय रामउर माला ॥ ३ ॥ ❋
अस बिचारि गवनहु घर भाई ॥ जय प्रताप बल तेज गँवाई ॥ ४ ॥ ❋

जो रामचंद्रजी महादेवके इस विशाल धनुषको नहीं तोड़ेंगे तौभी सीता रामचंद्रजीके हृदयमें वरमाला अवश्य पहिरा देगी ॥ ३ ॥ विवेकी राजाओंने इस बातका निश्चय कर राजाओंसे कहा कि–हे भाइयो ! ऐसा विचार करके अपने अपने घर चले जाओ. अपना जय, प्रताप, बल और तेज क्यों गवांते हो ? ॥ ४ ॥

बिहँसे अपर भूप सुनि बानी ॥ जे अबिबेकअन्ध अभिमानी ॥ ५ ॥ ❋
तोरेउ धनुष ब्याह अवगाहा ॥ बिनु तोरे को कुँवरि बिबाहा ॥ ६ ॥ ❋

यह बचन सुनकर दूसरे राजा कि, जो अविवेक यानी मूर्खतासे अंधे और अभिमानी थे वे हँसे और बोले कि– ॥ ५ ॥ धनुष तोड़नेपरभी व्याह होना मुश्किल है सो विना तोड़े कुँवरिको कौन व्याह सकता है ? ॥ ६ ॥

एकबार कालहु किन होई ॥ सियहित समर जितब हम सोई ॥ ७ ॥ ❋
यह सुनि अपर भूप मुसुकाने ॥ धर्मशील हरिभक्त सयाने ॥ ८ ॥ ❋

चाहे कालभी क्यों न हो पर सीताके वास्ते एकबार तौ हम संग्राममें उसकोभी जीतेंगे ॥ ७ ॥ यह बाणी सुनकर दूसरे राजा कि, जो धर्मात्मा हरि भगवानके भक्त और समझदार थे वे मुसुकराये और बोले कि– ॥ ८ ॥

सोरठा–सीय बिबाहब राम, गर्व दूर करि नृपनकर ॥ ❋
जीति को सक संग्राम, दशरथके रणबांकुरे ॥ ३० ॥ ❋

रामचंद्रजी राजाओंके गर्वको दूर करके सीताका पाणिग्रह करेंगे. इन रणबाँके दशरथजीके कुँवरोंको संग्राममें कौन जीत सक्ता है ? ॥ ३० ॥

वृथा मरहु जानि गाल बजाई ॥ मनमोदक नहिँ भूँख बुताई ॥ १ ॥ ❋
सिख हमार सुनि परम पुनीता ॥ जगदम्बा जानहु जिय सीता ॥ २ ॥ ❋

तुम लोग वृथा गाल बजाकर यानी झूठा बकवाद करके क्यों मरते हो ? क्योंकि मनके लड्डु खानेसे भूख नहीं मिटती ॥ १ ॥ अरे मूर्खो ! हमारी परम पवित्र शिक्षा सुनकर सीताको अपने मनमें जगदम्बा (जगत्की माता) जानो ॥ २ ॥

जगतपिता रघुपतिहिँ बिचारी ॥ भरि लोचन छबि लेहु निहारी ॥ ३ ॥ ❋
सुन्दर सुखद सकलगुणराशी ॥ ये दोउ बन्धु शम्भुउरबाशी ॥ ४ ॥ ❋

और श्रीरामचंद्रजीको जगत्के पिता यानी कर्ता विश्वंभर जानकर अपने नेत्र भर इनकी छवि अर्थात् शोभाको देखना हो तो भली भांति देखलेउ ॥ ३ ॥ और ये दोनों भाई परम सुन्दर, सबको सुख देनेवाले, सर्व गुणोंके निधान है और महादेवजीके मनमें सदा विराजते है अर्थात् महादेवजीभी सदा इनका ध्यान करते है ॥ ४ ॥

सुधासमुद्र समीप बिहाई ॥ मृगजल निरखि मरहु कत धाई ॥ ५ ॥ ❋
करहु जाय जाकहँ जोइ भावा ॥ हम तो आजु जन्मफल पावा ॥ ६ ॥ ❋

इसवास्ते हम कहते है कि–तुम अपने पास जो अमृतका सागर विद्यमान है उसे छोड़कर मृगतृष्णाके जलको देख दौड़कर क्यों मरते हो ? अर्थात् रामचंद्रजीकी भक्तिको त्यागकर अन्यविषयोंमें मत पड़ो ॥ ५ ॥ जिनको जो अच्छा लगे वे जाकर भले वैसा करो, हम तो रामचंद्रजीसे विरुद्ध कुछभी नहीं करेंगे; क्योंकि, हमने तो जन्म लेनेका फल आज (रामचंद्रजीके दर्शनसे) पाया है ॥ ६ ॥

अस कहि भले भूप अनुरागे ॥ रूप अनूप बिलोकन लागे ॥ ७ ॥ ❋
देखहिँ सुर नभ चढ़े बिमाना ॥ बर्षहिँ सुमन करहिँ कल गाना ॥ ८ ॥ ❋

जो बड़े और उत्तम राजा थे वे ऐसे कहकर रामचंद्रजीके साथ प्यार करने लगे और उनके अनुपम स्वरूपको देखने लगे ॥ ७ ॥ जिस समय भले राजा रामचंद्रजीकी स्तुति करते थे और दुष्टोंको मना करते थे व रामचंद्रजीके दर्शनसे अपने जन्मको सफल मान रहे थे उस समय देवतालोगभी विमानोंमें बैठ आकाशमें आ प्रभुके दर्शन कर फूलोंकी बरषा करते मधुर स्वरसे गान करने लगे ॥ ८ ॥

दोहा–जानि सुअवसर सीय तब, पठवा जनक बुलाइ ॥ ❋
चतुर सखी सुन्दर सकल, सादर चलीं लिवाइ ॥ २५० ॥ ❋

उस समय बहुत अच्छा अवसर समझकर जनक राजाने सीताको बुला भेजा तो जो मनोहर और विचक्षण सखियां है वे सब इकट्ठी होकर आदरके साथ सीताको लेकर रंगभूमिमें ले चलीं ॥ २५० ॥

सियशोभा नहिँ जाइ बखानी ॥ जगदम्बिका रूपगुणखानी ॥ १ ॥ ❋
उपमा सकल मोहिँ लघु लागी ॥ प्राकृत नारि अंग अनुरागी ॥ २ ॥ ❋

सीताजी जब रंगभूमिको चली है उस समयकी शोभा किसीसे वर्णन नहीं की जाती थी; क्योंकि वह जगत्की माता और गुणोंकी खानि है ॥ १ ॥ कवि कहता है कि– मैं सीताजीको उपमा देनेके वास्ते बहुत विचार करता हूँ कि, कोई उपमा मुझको ऐसी मिले कि मैं सीताजीको देऊं परंतु नहीं मिलती. कारण यह कि, जो उपमा देखता हूं वही मुझको सीताजीके लिये लघु अर्थात् तुच्छ लगती है; क्योंकि,संसारमें जितनी उपमा हैं वे सब प्राकृत अर्थात् साधारण स्त्रियोंके अंगोंके विषे अनुराग किये हैं यानी सब उपमा साधारण स्त्रियोंके अंगोंको दी गयी हैं. अब इस अलौकिक मूर्तिके लिये उपमा कहाँसे लाऊं ? ॥ २ ॥

सीय बर्णि तेहिँ उपमा देई ॥ को कवि कहै अयश को लेई ॥ ३ ॥ ❋
जो पटतरिय तीयसम सीया ॥ जग अस युवति कहाँ कमनीया ॥ ४ ॥ ❋

सीताका वर्णन कर उसको उपमा दे कुकवि कहाकर कौन कवि उत्तम कवियोंमें अपनी अपकीर्ति करावे? जो झूठी उपमा देता है वह अवश्य कुयशका पात्र होता है ॥ ३ ॥ यदि साधारण स्त्रियोंके समान सीताजीको उपमा देवें तो जगतमें ऐसी सुंदर स्त्री कहां है? कि जिसकी सीताजीको उपमा देवें ॥ ४ ॥

गिरा मुखर तन अर्ध भवानी ॥ रति अति दुखित अतनु पति जानी ॥ ५ ॥
बिष बारुणी बन्धु प्रिय जेही ॥ कहिय रमासम किमि वैदेही ॥ ६ ॥ ❋

जो देवताओंको स्त्रियोंमेंसे किसीकी उपमा देवें सो वहभी बन नहीं सकती; क्योंकि वे सब सदोष हैं और माताजी निर्दोष है. तथा जो सरस्वतीकी उपमा देवें सो वह तो घटे नहीं; क्योंकि सरस्वतीवाचाल है और जो पार्वतीजीकी उपमा देवें तो वहभी संभवे नहीं, क्योंकि वह अर्द्धांगी है अर्थात् उसका आधा शरीर पुरुषके चिन्हसंयुक्त है. और कामदेवकी स्त्री रतिकी उपमा देवें तो सो वह अपने पतिको शरीरहीन जानकर सदा अत्यंत दुःखी रहती है ॥ ५ ॥ और जो सीताजीको लक्ष्मीजीकी उपमा देवें सोभी नहीं बन सकती, क्योंकि उनके विष तो प्यारा भाई है और वारुणी प्यारी बहन है अरु सीताजीके तो कोईभी ऐसा दुष्ट भाई बहन नहीं है इसलिये हम यह बात अवश्य कह सकते हैं ॥ ६ ॥

जो छबिसुधापयोनिधि होई ॥ परमरूपमय कच्छप सोई ॥ ७ ॥ ❋
शोभारजु मन्दर शृंगारू ॥ मथै पाणिपंकज निज मारू ॥ ८ ॥ ❋

कि, यदि वक्ष्यमाण सामग्री तैयार होनेपर समुद्र मथनेसे जो दूसरी लक्ष्मी उत्पन्न होवे तो कदाचित् संकोचके साथ सीताजीके बराबर उस लक्ष्मीको कविलोग कहभी सकते हैं परंतु न तो वह बात बन सके और न सीताजीको उपमा देनी संभवे. तथा यदि छवि अर्थात् कांतिरूपी तो क्षीरसमुद्र होवे और उसमें कच्छपकी ठौर परम रूप होवे, शोभा रसरी बनायी जावे, शृंगार रस मंदर पर्वत बनाया जावे, और कामदेव अपने हस्तकमलसे उस समुद्रको मथे ॥ ७ ॥ ८ ॥

दोहा-यहि विधि उपजै लक्ष्मि जब, सुंदरता सुखमूल ॥ ❋
तदपि सकोचसमेत कवि, कहहिँ सीयसम तूल ॥ २५१ ॥ ❋

जब इस तरहकी सामग्री तैयार होनेपर जो सुंदरता और सुखकी मूल कारण ऐसी लक्ष्मीजी उत्पन्न होवे तौभी कविलोग उसकी सीताजीके समान और तुल्य तो संकोचके साथही कहेंगे. तात्पर्य यह है कि-जो इसप्रकार लक्ष्मी उत्पन्न होवे तो सीताजीकी उपमा उसको किसी कदर देवें तो दे सके परंतु सीताजीको उसको उपमा नहीं दे सकते. कारण उपमेयकी अपेक्षा उपमान सदा अधिक गुण हुआ करता है. सो सीताजी उपमा तो हो सकती हैं परंतु उपमेय नहीं हो सकतीं; कारण सीताजी उसकी अपेक्षा अति सुंदर और मनोहर हैं ॥ २५१ ॥

---

१ काव्यलिंग अलंकार.

चलीं संग लै सखी सयानी ॥ गावत गीत मनोहर बानी ॥ १ ॥ ❀
सोह नवल तन सुन्दरि सारी ॥ जगतजननि अतुलित छबि भारी ॥ २ ॥ ❀

जो सयानी सखियां हैं वे मनोहर बाणीसे मधुर गीत गातीं सीताजीको संग लेकर रंगभूमिको चलीं ॥ १ ॥ जगन्माता श्रीसीताजीकी मनोहर मूर्तिपर सुंदर सारी शोभायमान हो रही थी और वह छवि ऐसी भारी थी, कि उसको तुलना नहीं हो सकती ॥ २ ॥

भूषण सकल सुदेश सुहाये ॥ अंग अंग रचि सखिन बनाये ॥ ३ ॥ ❀
रंगभूमि जब सिय पगु धारी ॥ देखि रूप मोहे नर नारी ॥ ४ ॥ ❀

और सखियोंने जहां जैसा चाहिये वैसेही सीताजीके अंग अंगमें सब सुंदर गहने परनाये ॥ ३ ॥ जब सीताजी रंगभूमिमें पधारीं उस समय उनका रूप देखकर सब नगरके नर नारी मोहित हो गये ॥ ४ ॥

हर्षि सुरन दुंदुभी बजाई ॥ बर्षि प्रसून अप्सरा गाई ॥ ५ ॥ ❀
पाणिसरोज सोह जयमाला ॥ अवचक चितै सकल महिपाला ॥ ६ ॥ ❀

देवताओंने प्रसन्न होकर दुंदुभि बजाये और फूलोंकी बरषा की, अप्सरायें गाने लगीं ॥ ५ ॥ श्री-सीताजीके करकमलमें शोभायमान जयमालको देख सब राजा लोग औचक यानी अज्ञानके बश होकर सीताजीकी ओर देखने लगे ॥ ६ ॥

सीय चकित चित रामहिँ चाहा ॥ भये मोहबश सब नरनाहा ॥ ७ ॥ ❀
मुनिसमीप बैठे दोउ भाई ॥ लगे ललकि लोचन निधि पाई ॥ ८ ॥ ❀

उस समय सीताजीने तो चकितचित्त होकर केवल रामचंद्रजीकोही चाहा था जिससे और सब राजालोग मोहके बश होगये ॥ ७ ॥ श्रीसीताजीके नेत्र मुनि (विश्वामित्रजी) के पास बैठेहुए दोनों भाइयोंको देख और अपना निधि पाकर ललकि लगे अर्थात् यकटक देखने लगे ॥ ८ ॥

दोहा–गुरुजनलाज समाज बड़ि, देखि सीय सकुचानि ॥ ❀
लगी बिलोकन सखिनतन, रघुबीरहिँ उर आनि ॥ २५२ ॥ ❀

फिर सीताजी बड़ी समाजको देखकर गुरुजन अर्थात् गुरु, पिता आदि बड़े लोगोंकी लाजके मारे सकुचा कर रामचंद्रजीकी मनोहर मूर्तिको हृदयमें रखकर अपनी सखियोंकी ओर देखने लगीं ॥ २५२ ॥

रामरूप अरु सियछबि देषी ॥ नर नारिन परिहरेउ निमेषी ॥ १ ॥ ❀
शोचहिँ सकल कहत सकुचाहीं ॥ बिधिसन बिनय करहिँ मनमाहीं ॥ २ ॥

रामचंद्रजीका रूप और सीताजीकी छबि देखकर नगरके स्त्रीपुरुषोंने पलकका परित्याग कर-दिया ॥ १ ॥ तमाम लोग मनमें शोच करते हैं. और बाहिर कहते सकुचाते हैं इसवास्ते विधातासे अपने मनहींमनमें विनति करते हैं कि– ॥ २ ॥

---

१ यद्यपि उत्तर कांडमें लिखा है कि, स्त्री स्त्रीके रूपसे मोहित नहीं होती; जैसे 'मोहै न नारि नारिके रूपा' और उससे यहां विरोध आता है; तथापि वह कथन प्राकृत स्त्रियोंके विषयमें है, साक्षात् परमेश्वरी श्रीसीताजीके विषयमें नहीं तिससे विरोध नहीं आता.

हरु बिधि बेगी जनकजड़ताई ॥ मति हमारि अस देहु सुहाई ॥ ३ ॥ ❋
बिनु बिचार प्रण तजि नरनाहू ॥ सीय रामकर करै बिबाहू ॥ ४ ॥ ❋

हे विधाता ! तू जनक राजाकी मूर्खताको जल्दी हर ले और उसको हमारे जैसी अच्छी बुद्धि दे दे ॥ ३ ॥ कि–जिससे वह राजा विचार विना किये अपनी प्रतिज्ञाको (जो धनुषको चढ़ावे उसे अपनी कन्या देऊं इसे) त्यागकर सीता और रामचन्द्रजीका ब्याह कर देवे ॥ ४ ॥

जग भल कहहि भाव सबकाहू ॥ हठ कीन्हे उर अन्तर दाहू ॥ ५ ॥ ❋
यह लालसा मगन सब लोगू ॥ बर साँवरो जानकीयोगू ॥ ६ ॥ ❋

इस बातसे राजाको सब कोई भला कहेंगे; क्योंकि यह बात सब लोग चाहते है और जो यह बात नहीं मानेगा और हठ करेगा तो अंतमें पछतावेगा और हृदयमें संताप रह जायगा ॥ ५ ॥ उस समय सब लोग इसी लालसामें मगन हो रहे थे और कहते थे कि, सांवरा यानी रामचन्द्रजी सीताजीके लिये योग्य बर हैं ॥ ६ ॥

तब बंदीजन जनक बुलाये ॥ बिरुदावली कहत चलि आये ॥ ७ ॥ ❋
कह नृप जाइ कहहु प्रण मोरा ॥ चले भाट हिय हर्ष न थोरा ॥ ८ ॥ ❋

तब जनक राजाने बंदीजनों (चारण, भाट आदि जस गानेवालों) को बुलाया तो वे बंशकी बिरुदावली गाते वहां चले आये ॥ ७ ॥ तब राजा जनकने उनसे कहा कि– तुम जाकर मेरा जो प्रण है कि, जो धनुषको चढ़ावे वह मेरी कन्या सीताको पावे यह सब लोगोंसे कह दो. राजाके ये बचन सुनकर भाटलोग मनमें बहुत प्रसन्न होकर वहांसे रंगभूमिमें गये ॥ ८ ॥

दोहा–बोले बन्दी बचन बर, सुनहु सकल महिपाल ॥ ❋
प्रण बिदेहकर कहहिं हम, भुजा उठाइ बिशाल ॥ २५३ ॥ ❋

और वहां जाकर बंदीजनोंने सुंदर बचन कहे कि–ओ तमाम राजालोगो ! हम हमारी विशाल भुजा उठाकर जो जनक राजाका प्रण कहते हैं वह आप लोग सुनो ॥ २५३ ॥

नृप भुजबल बिधु शिव धनु राहू ॥ गरुअ कठोर बिदित सबकाहू ॥ १ ॥ ❋
रावण बाण महाभट भारे ॥ देखि शरासन गवहिँ सिधारे ॥ २ ॥ ❋

सब राजाओंकी भुजाओंका जो बल है वह तो मानों चंद्रमा है और जो यह महादेवजीका धनुष है सो मानों राहु है और यह धनुष जैसा भारी और कठोर है सो उस बातको सब कोई जानतेही हैं ॥ १ ॥ कि, जिस धनुषको देखकर बड़े भारी भट जो रावण और बाणासुर जैसे थे वेभी अपने गाँवको सीधे चले गये. अथवा गँवहिं कहे चुपकेसे चले गये. परंतु जिसको तोड़नेका नाम नहीं लिया ॥ २ ॥

सोइ पुरारिकोदण्ड कठोरा ॥ राज समाज आजु जेइ तोरा ॥ ३ ॥ ❋
त्रिभुवनजय समेत बैदेही ॥ बिनहिँ बिचार बरै हठ तेहि ॥ ४ ॥ ❋

वही यह महादेवजीका कठोर धनुष है सो जो पुरुष आज इस राजाओंकी सभाके बीचमें तोड़ डाले ॥ ३ ॥ उसीको यह सीता त्रिलोकीकी विजयके साथ विचार किये विना बलात्कारसे बरे अर्थात् पतित्वेन स्वीकार करे ॥ ४ ॥

सुनि प्रण सकल भूप अभिलाषे ॥ भट मानी अतिशय मन माषे ॥ ५ ॥
परिकर बाँधि उठे अकुलाई ॥ चले इष्टदेवन शिर नाई ॥ ६ ॥ ❀

यह प्रण सुनकर तमाम राजाओंके मनमें अभिलाषा तो हुई कि हम धनुषको तोड़ें परंतु उनमें भी जो भटपनका मान रखनेवाले थे वे तो मनमें अत्यंत गुस्से हुए ॥ ५ ॥ और कमर कसकर हड़-बड़ा कर उठे और अपने अपने इष्ट देवोंको प्रणाम करके धनुष तोड़नेको चले ॥ ६ ॥

तमकि ताकि तकि शिवधनु धरहीं ॥ उठैं न कोटि भांति बल करहीं ॥ ७ ॥
जिनके कछु बिचार मनमाहीं ॥ चापसमीप महीप न जाहीं ॥ ८ ॥ ❀

वहां जाकर तमकि तमकि कर और तकतककर शिवजीके धनुषको पकड़ते है और करोड़ों तरहसे बल करते है परंतु किसीसे नहीं उठता ॥ ७ ॥ अतएव जिन राजाओंके मनमें कुछ विचार था वे तो उस धनुषके निकटही नहीं गये ॥ ८ ॥

दोहा– तमकि धरहिँ धनु मूढ नृप, उठैं न चलहिँ लजाइ ॥ ❀
मनहुँ पाइ भटबाहुबल, अधिक अधिक गरुआइ॥ २५४ ॥ ❀

वहां जो मूर्ख राजा थे वे तमकी तमकी कर उस धनुषको पकड़ते थे परंतु जब उनसे उठाया नहीं गया तब लज्जित होकर अपने २ घरको रवाना हुए. धनुष क्यों नहीं उठा तहां उत्प्रेक्षा कहते है कि, मानों वह धनुष बड़े २ योधाओंके भुजबलको पाकर अधिक अधिक भारी होता जाता था ॥ २५४ ॥

भूप सहस दश एकहि वारा ॥ लगे उठावन टरै न टारा ॥ १ ॥ ❀
डिगै न शम्भुशरासन कैसे ॥ कामीबचन सतीमन जैसे ॥ २ ॥ ❀

यद्यपि उस धनुषको एकही बार अर्थात् एकही साथ अथवा एकही दिनमें दश सहस्र राजा उठाने लगे परंतु वह बहुत हटानेपरभी उस स्थानसे नेकहू नहीं हटा ॥ १ ॥ वह महादेवजीका धनुष राजाओंसे किसप्रकार नहीं हटाया गया, तहां उपमा देते हैं कि, जैसे कामी अर्थात् लंपट पुरुषोंके वचनोंसे पतिव्रताका मन चलायमान नहीं होता॥ २ ॥

सब नृप भये योग उपहासी ॥ जैसी बिनु बिराग संन्यासी ॥ ३ ॥ ❀
कीरति बिजय वीरता भारी ॥ चले चाप कर सरबस हारी ॥ ४ ॥ ❀

जैसे संन्यासी वैराग्य विना उपहासके योग्य होता है ऐसे वहां सभामें जितने राजा थे वे सब उपहासके योग्य हुए॥ ३ ॥ सब राजा धनुषके हाथ अर्थात् धनुषके द्वारा कीर्ति, विजय और बड़ी वीरतारूप सर्वस्वको हारकर वहांसे चले ॥ ४ ॥

श्रीहत भये हारि हिय राजा ॥ बैठे निजनिज जाइ समाजा ॥ ५ ॥ ❀
नृपन बिलोकि जनक अकुलाने ॥ बोले बचन रोष जनु साने ॥ ६ ॥ ❀

सो श्रीहत अर्थात् छबिहीन होकर मनमें हार मान, सब राजा अपनी २ समाजमें जाकर बैठ गये ॥ ५ ॥ इसप्रकार सब राजाओंको हार खाये हुए देखकर जनकराजा घबराया और मानों क्रोधसे मिलेहुए बचन कहने लगा कि– ॥ ६ ॥

द्वीप द्वीपके भूपति नाना ॥ आये सुनि हम जो प्रण ठाना ॥ ७ ॥ ❋
देवदनुज धरि मनुजशरीरा ॥ बिपुल बीर आये रणधीरा ॥ ८ ॥ ❋

जो हमने प्रण किया था वह सुनकर द्वीप द्वीपके कई राजा आये है ॥ ७ ॥ और जो रणधीर, महावीर देवता और दैत्य है वेभी मनुष्यशरीर धर धरकर आचुके है ॥ ८ ॥

दोहा–कुँवरि मनोहरि विजय बड़ि,कीरति अति कमनीय ॥ ❋
पावनहार बिरंचि जनु, रचेउ न धनुदमनीय ॥ २५५ ॥ ❋

परंतु मैं मानता हूं कि, इस धनुषको तोड़नेवाला और मनोहर कुँवारी व बड़ी विजय तथा अति सुंदर कीर्तिको पानेवाला मनुष्य ब्रह्माजीने सृष्टिमें रचाही नहीं[1] अर्थात् जो पुरुष इस धनुषको तोड़े उसको ये तीनों बातें मिलें ॥ २५५ ॥

कहहु काहि यह लाभ न भावा ॥ काहु न शंकर चाप चढ़ावा ॥ १ ॥ ❋
रहा चढ़ाउब तोरब भाई ॥ तिल भरि भूमि न सकेउ छुड़ाई ॥ २ ॥ ❋

जनक राजा यह कहता है कि–कहो यह लाभ किसको अच्छा नहीं लगता परंतु किसीने महादेवजीके धनुषको नहीं चढ़ाया इससे यही ज्ञात होता है कि, इसको चढ़ानेकी किसीकी सामर्थ्य नहीं है ॥ १ ॥ अरे भाइयो ! धनुषको चढ़ाना और तोड़ना तौ दूर रहा परंतु कोईभी तिलभर पृथ्वीभी नहीं छुड़ाय सका यानी किसीसे तिलभरभी नहीं सरकाया गया ॥ २ ॥

अब जनि कोउ माखै भट मानी ॥ बीरबिहीन मही मैं जानी ॥ ३ ॥ ❋
तजहु आश निजनिज गृह जाहू ॥ लिखा न बिधि बैदेहिबिबाहू ॥ ४ ॥ ❋

राजा जनक कहता है कि–अब कोईभी राजा यह न कहे कि, हम भट है और भटपनका अभिमान न राखे; क्योंकि इससे मैंने जानलिया है कि, अब पृथ्वीपर कोई भट नहीं है ॥ ३ ॥ हे राजाओ! अब आप लोग आस छोंड़ २ कर अपने २ घर चले जाओ, क्योंकि विधाताने सीताका विवाह लिखाही नहीं है, इसको हम क्या करें ॥ ४ ॥

सुकृत जाय जो प्रण परिहरऊं ॥ कुँवरि कुँवारि रहौ का करऊं ॥ ५ ॥ ❋
जो जनतेउ बिनु भट महि भाई ॥ तौ प्रण करि होतेउ न हँसाई ॥ ६ ॥ ❋
जनकबचन सुनि सब नरनारी ॥ देखि जानकी भये दुखारी ॥ ७ ॥ ❋
सुनतहिँ लषण कुटिल भइँ भौंहें ॥ रदपट फरकत नयन रिसौंहें ॥ ८ ॥ ❋

जनक कहता है कि–जो मैं मेरा प्रण छोड़ देऊं तब तौ मेरा सुकृत चला जाय, और प्रण छोंड़े विना कुँवारीका विवाह हो नहीं सकता; खैर कुँवरि क्वांरी रहे तौ रहो इसका मैं क्या करूं ? ॥ ५ ॥ हे भाइयो ! जो मैं यह बात जान लेता कि, पृथ्वी वीरहीन हो गयी है तौ मै ऐसा प्रण कभी नहीं करता कि, जिस प्रणके करनेसे मेरा और सब लोगोंका उपहास हुआ ॥ ६ ॥ जनक राजाके ये बचन सुनकर और सीताको देखकर नगरके सब नर नारी दुखी होगये ॥ ७ ॥ परंतु लक्ष्मणने ज्योंही जनकके ये बचन सुने त्योंही उनकी भृकुटी क्रोधसे तिरछी हो आई ओंठ फड़कने लगे और नेत्रोंमें गुस्सा भर आया ॥ ८ ॥

1 वास्तवमें ब्रह्माजीने रामचंद्रजीको नहीं रचा है उसी अभिप्रायसे जनकका कथन है.

दोहा–कहि न सकत रघुबीरडर, लगे बचन जनु बाण ॥ ❀
नाइ रामपदकमल शिर, बोले गिरा प्रमाण ॥ २५६ ॥ ❀

यद्यपि लक्ष्मणजीको ये जनकके बचन बाणसे लगे तथापि रामचंद्रजीके डरसे कुछभी कह नहीं सके; निदान रामचंद्रजीके चरणारविंदोंमे शिर नवाकर लक्ष्मणजीने यथार्थ वचन कहे ॥ २५६ ॥

रघुबंशिन महँ जहँ कोउ होई ॥ तेहि समाज अस कहै न कोई ॥ १ ॥ ❀
कही जनक जस अनुचित बानी ॥ विद्यमान रघुकुलमणि जानी ॥ २ ॥ ❀

जिन सभाके बीच रघुबंशियोंमेंसे कोईभी बैठा हो उस सभामें कोईभी आदमी ऐसी अनुचित बाणी नहीं कह सकता ॥ १ ॥ कि, जैसी अयोग्य बाणी राजा जनकने रघुवंशियोंके मुकुटमणि श्रीरामचंद्रजूको विराजमान जानके इस समाजमें कही ॥ २ ॥

सुनहु भानुकुलपंकजभानू ॥ कहौं सुभाव न कछु अभिमानू ॥ ३ ॥ ❀
जो राउरअनुशासन पाऊँ ॥ कन्दुक इव ब्रह्माण्ड उड़ाऊँ ॥ ४ ॥ ❀
काचे घट जिमि डारौं फोरी ॥ सकौं मेरु मूलक इव तोरी ॥ ५ ॥ ❀
तव प्रताप महिमा भगवाना ॥ का बापुरो पिनाक पुराना ॥ ६ ॥ ❀

ऐसे सब लोगोंको सुनाकर लक्ष्मणजीने श्रीरामचंद्रजीसे कहा कि–हे सूर्यवंशरूप कमलोंके सूर्य रामचंद्रजी ! मैं जो कुछ कहता हूं वह कुछ अभिमान करके नहीं कहता किंतु अपने स्वभावसेही कहता हूं सो आप सुनिये ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! जो मुझको आपकी आज्ञा मिल जाय तौ मैं ब्रह्मांडको गेंदकी तरह आकाशमें उड़ा देऊं अथवा पटक कर काचे घड़ेकी नाईं उसे चूर चूर कर डारूं क्योंकि, मैं सुमेरु पर्वतकोभी मूलीकी नांई उखाड़ कर तोड़ सकताहूं ॥ ४ ॥ ५ ॥ सो हे प्रभु ! आपके प्रतापके प्रभावके सामने बिचारा पुराना पिनाक धनुष क्या चीज है ? ॥ ६ ॥

नाथ जानि अस आयसु होऊ ॥ कौतुक करौं बिलोकिय सोऊ ॥ ७ ॥ ❀
कमलनाल इमि चाप चढ़ावौं ॥ शतयोजन प्रमाण लै धावौं ॥ ८ ॥ ❀

हे नाथ ! ऐसे जानकर जो मुझे आज्ञा हो जावे तौ मैं यह कौतुक करूं सो यहभी एक कौतुक आप देखें तौ सही, यह कौतुक कैसा होता है ? ॥ ७ ॥ हे प्रभु ! जो मुझे आज्ञा मिल जाय तौ मैं इस धनुषको कमलके नालकी नांई चढ़ा लूं और हाथमें लेकर सौ १०० योजनतक बराबर दौड़ा चला जाऊं ॥ ८ ॥

दोहा–तोरौं छत्रकदंड जिमि, तव प्रताप बल नाथ ॥ ❀
जो न करौं प्रभुपद शपथ, पुनि न धरौं धनु हाथ ॥ २५७ ॥ ❀

हे प्रभु ! जो मुझको आज्ञा हो जावे तौ मैं इस धनुषको आपके प्रतापके प्रभावसे छत्रक (जो चौमासेमें सुफेद छतरीसा पौधा होता है उस) की झांझीकी नांई तुरंत तोड़ डालूं. हे नाथ ! जो मैं वह नहीं करूं तौ मुझे आपके चरणोंकी शपथ (सौगंध) है कि मैं फिर हाथमें धनुष न लेऊं ॥ २५७ ॥

लषण सकोप बचन जब बोले ॥ डगमगानि महि दिग्गज डोले ॥ १ ॥ ❀
सकल लोक सब भूप डराने ॥ सिय हिय हर्ष जनक सकुचाने ॥ २ ॥ ❀

जब लक्ष्मणने क्रोधसहित वचन कहे तब पृथ्वी डगमगाने लगी और दिग्गज हाथी हिलने लगे ॥ १ ॥ तमाम लोग और सब राजा डरने लगे परंतु सीताके मनमें इस बातसे बड़ा आनंद हुआ. जनक राजाने अनुचित वचन कहे थे इसलिये वह सकुचाया ॥ २ ॥

गुरु रघुपति सब मुनि मनमाहीं ॥ मुदित भये पुनि पुनि पुलकाहीं ॥ ३ ॥ ❋
सैनहिँ रघुपति लषण निवारे ॥ प्रेम समेत निकट बैठारे ॥ ४ ॥ ❋

और रामचन्द्रजीके गुरु विश्वामित्रजी और सब मुनि बहुत आल्हादित हुए और उनके आनंदके वश बारंबार रोमांच हुए ॥ ३ ॥ उस समय रामचन्द्रजीने लक्ष्मणजीको सैन करि निवारणकरके प्रीति-सहित अपने समीप बैठा लिया ॥ ४ ॥

विश्वामित्र समय शुभ जानी ॥ बोले अति सनेह मृदु बानी ॥ ५ ॥ ❋
उठहु राम भंजहु भवचापू ॥ मेटहु तात जनकपरितापू ॥ ६ ॥ ❋

विश्वामित्रजीने अच्छे अवसरको जानकर परम प्रीति सहित यह कोमल वाणी कही कि—॥ ५ ॥ हे प्यारे राम ! उठो और महादेवजीके धनुषको तोड़कर जनकराजाका संताप मिटाओ ॥ ६ ॥

सुनि गुरुबचन चरण शिर नावा ॥ हर्ष बिषाद न कछु उर आवा ॥ ७ ॥ ❋
ठाढ़ भये उठि सहज सुभाये ॥ ठवनि युवा मृगराज लजाये ॥ ८ ॥ ❋

गुरुके वचन सुनकर रामचन्द्रजीने गुरुके चरणोंमें शिर नवाया उस समय आपके मनमें न तो किसी प्रकारका हर्ष हुआ और न किसी प्रकारका विषाद (रंज) हुआ ॥ ७ ॥ स्वभावसे सुंदर श्रीरामचन्द्रजी उठ खड़े हुए कि, जिनकी अतिधीर मंद गतिको देखकर सिंहभी लज्जा-यमान होता था ॥ ८ ॥

दोहा—उदित उदयगिरि मंचपर, रघुबर बालपतंग ॥ ❋
बिकसे सन्तसरोज सब, हर्षे लोचनभृंग ॥ २५८ ॥ ❋

जिस समय रामचन्द्रजीरूप बालसूर्य मंचरूप उदयाचलपर उदित हुए उस समय सब सत्पुरुषरूप कमल प्रफुल्लित हुए और उन्होंके नेत्ररूप भ्रमर हर्षित हुए ॥ २५८ ॥

नृपनकेरि आशानिशि नाशी ॥ बचननखअवली न प्रकाशी ॥ १ ॥ ❋
मूढ़ महीप कुमुद सकुचाने ॥ कपटी भूप उलूक लुकाने ॥ २ ॥ ❋

और दुर्बुद्धि राजाओंके मनमें सीता मिलनेकी आशारूप जो रात्रि थी वह नष्ट हो गयी और उनके वचनरूप नक्षत्रोंकी पंक्ति प्रकाशहीन हो गयी अर्थात् मोहके वश जो कहते थे वे बंद होगये ॥ १ ॥ मूर्ख राजारूप रात्रिविकाशी कमल सिकुड़ गये. देवता, दैत्य कपटसे राजाओंका वेष बनाकर जो आये थे उनरूप उलूक सब छिप गये ॥ २ ॥

भये बिशोक लोक मुनि देवा ॥ बर्षहिँ सुमन जनावहिँ सेवा ॥ ३ ॥ ❋
गुरुपद बन्दि सहित अनुरागा ॥ राम मुनिन सन आयसु माँगा ॥ ४ ॥ ❋

लोग, मुनि और देवता ये सब शोकरहित हुए और उन्होंने फूल बरसाय २ अपनी सेवा प्रगट दिखायी ॥ ३ ॥ फिर रामचन्द्रजीने प्रीतिसहित गुरुके चरणारविंदोंमें प्रणाम करके सब मुनि-लोगोंसे आज्ञा मांगी ॥ ४ ॥

सहजहिँ चले सकल जगस्वामी ॥ मत्त मंजु कुंजर वर गामी ॥ ५ ॥ ❀
चलत राम सबपुरनरनारी ॥ पुलक पूरि तन भये सुखारी ॥ ६ ॥ ❀

उसने आज्ञा पाकर मदवाले मनोहर गजराजके समान मंद गतिवाले सकल ब्रह्मांडके पति श्रीरामचंद्रजी स्वभावहीसे धनुष तोड़नेको चले ॥ ५ ॥ जिस समय रामचंद्रजी धनुष तोड़नेको चले उस समय समस्त नगरके नरनारीनके शरीर रोमांचित होगये और सब सुखी होगये ॥ ६ ॥

बन्दि पितर सुर सुकृत सँभारे ॥ जो कछु पुण्य प्रभाव हमारे ॥ ७ ॥ ❀
तौ शिवधनु मृणालकी नाईं ॥ तोरहिँ राम गणेश गुसांईं ॥ ८ ॥ ❀

और उन लोगोंने पित्रीश्वर और देवताओंको प्रणाम करके अपने २ पुण्यको स्मरण किया और अपने २ मनमें कहा कि, जो कुछ हमारे पुण्यका प्रभाव है ॥ ७ ॥ तौ हे गुसांई अर्थात वाणीके पति गणेशजी ! रामचंद्रजी इस शिवजीके धनुषको कमलनालकी तरह तोड़ डालें ॥ ८ ॥

दोहा-रामहिं प्रेमसमेत लखि, सखिन समीप बुलाइ ॥ ❀
सीता मातु सनेहबश, बचन कहै बिलखाइ ॥ २५९ ॥ ❀

उस समय जानकीजीकी माता सुनयनाने रामचंद्रजीको प्रेमसहित देख, अपनी सखियोंको अपने निकट बुलाय, स्नेहके बश हो, शोचसंयुक्त होकर ये बचन कहे ॥ २५९ ॥

सखि सब कौतुक देखनहारे ॥ जेउ कहावत हितू हमारे ॥ १ ॥ ॥ ❀
कोउ न बुझाय कहइ नृपपाहीं ॥ ये बालक अस हठ भल नाहीं ॥ २ ॥ ❀

कि-हे सखी ! जो हमारे हितकारी कहलाते है वे सब कौतुक देखनेवाले है ॥ १ ॥ क्योंकि कोई-भी राजा जनकके पास समझाकर यह बात नहीं कहता कि, ये दोनों भाई बालक है इसवास्ते ऐसा हठ करना अच्छी बात नहीं है ॥ २ ॥

रावण बाण छुआ नहिँ चापा ॥ हारे सकल भूप करि दापा ॥ ३ ॥ ❀
सो धनु राजकुँवरकर देहीं ॥ बाल मराल कि मन्दर लेहीं ॥ ४ ॥ ❀

जिस धनुषको रावण और बाणासुरने क्षोभके मारे छूआभी नहीं और जिसके आगे दर्प अर्थात् अभिमान कर कर सब राजालोग हारगये ॥ ३ ॥ वह धनुष राजा जनक राजकुमारके हाथमें देता है यह बात अच्छी नहीं है. क्या बालहंस मंदराचलको उठा सकता है? ॥ ४ ॥

भूपसयानप सकल सिरानी ॥ सखि बिधिगति कछु जाइ न जानी ॥ ५ ॥
बोली चतुर सखी मृदु बानी ॥ तेजवन्त लघु गणिय न रानी ॥ ६ ॥ ❀

हे सखि ! राजाकी समझ तौ सब चली गयी. अब कौन जाने विधाताको क्या करना है ? सो विधाताकी गती कुछ जानी नही जा सकती ॥ ५ ॥ उस समय चतुर सखीने कोमल बाणीसे रानीको कहा कि-हे रानी ! तेजवानको छोटा नहीं समझना चाहिये ॥ ६ ॥

कहँ कुम्भज कहँ सिंधु अपारा ॥ सोखेउ सुयश सकल संसारा ॥ ७ ॥ ❀
रविमंडल देखत लघु लागा ॥ उदय तासु त्रिभुवनतम भागा ॥ ८ ॥ ❀

क्योंकि कहां तो छोटेसे शरीरवाले अगस्त्य मुनि और कहां अपार समुद्र ? परंतु अपने तेजके प्रभावसे अगस्त्यने उस महासागरको सुखा दिया सो यह अगस्त्य मुनिकी सुख्याति सब जगतमें प्रसिद्धी है ॥ ७ ॥ यद्यपि सूर्यमंडल देखनेमें छोटासा दिखायी देता है परंतु जब वह उगता है तब तमाम त्रिलोकीका अंधकार नष्ट हो जाता है ॥ ८ ॥

दोहा–मंत्र परम लघु जासु बस,बिधि हरि हर सुर सर्व ॥ ❀
महामत्त गजराजकहँ, बशकर अंकुश खर्व ॥ २६० ॥ ❀

मंत्र बहुत छोटा होता है परंतु उसके आधीन ब्रह्मा, विष्णु और महेश आदि सब देवता रहते है. फिर देखो हाथी कितना बड़ा होता है परंतु छोटासा अंकुश उस मदमत्त बड़े गजराजको बशमें कर लेता है ॥ २६० ॥

काम कुसुम धनु सायक लीन्हे ॥ सकल भुवन अपने बश कीन्हे ॥ १ ॥ ❀
देवि तजिय संशय जिय जानी ॥ भंजब धनुष राम सुनु रानी ॥ २ ॥ ❀

और कामदेव कोमल पुष्पमय धनुषबाण लेकर सब लोकोंको अपने वश करता है ॥ १ ॥ इस बातको आप अपने मनमें जानकर संदेहको छोड़ दो कि, राम धनुषको कैसे तोड़ेंगे ? हे रानी ! जो मैं कहती हूँ वह आप सुनो कि, रामचंद्रजी निश्चय धनुषको तोड़ डारेंगे ॥ २ ॥

सखीबचन सुनि भइ परतीती ॥ मिटा बिषाद बढ़ी अति प्रीती ॥ ३ ॥ ❀
तब रामहिँ बिलोकि बैदेही ॥ सभय हृदय बिनवति जेहि तेही ॥ ४ ॥ ❀

सखीके ये बचन सुनकर रानीके मनमें विश्वास आगया; बिषाद (रंज) मिट गया और परम प्रीति बढ़ी ॥ ३ ॥ तब सीताजी रामचंद्रजीको देखकर मनमें डरीं और जिस तिससे विनती करने लगीं ॥ ४ ॥

मनहीं मन मनाय अकुलानी ॥ होहु प्रसन्न महेश भवानी ॥ ५ ॥ ❀
करहु सुफल आपनि सेवकाई ॥ करि हित हरहु चाप गुरुआई ॥ ६ ॥ ❀

---

१ एक समय इंद्र और वृत्रासुरके युद्ध हुआ, इंद्रकी ओर सब देवता और वृत्रासुरके पक्षमें सब दैत्य आये. महाघोर युद्ध हुआ. देवता हार गये तब उन्होंने जाकर भगवान्से प्रार्थना की तब प्रभुने आज्ञा की कि तुम दधीचि ऋषिकी हड्डियोंसे वज्र बनाकर वृत्रासुरको मारो. इंद्रने वैसेही किया जब वृत्रासुर मर गया तो दैत्योंकी सेना सब तितर बितर हो गयी उनमेंसे कालकेय नाम राक्षसोंका गण भाग कर समुद्रमें जा बैठा,कितनेएक पातालमें चले गये, फिर कालकेय राक्षसगणने विचार किया कि–देवताओंका नाश किस प्रकार होवे?विचार करते २ उनके मनमें यह विचार आया कि देवताओंका मूल यज्ञ, तप आदि धर्म है और उस धर्मके मूल ब्राह्मण हैं इसलिये ब्राह्मणोंका नाश होनेसे धर्मका नाश होगा. और धर्मके नाशसे देवता निर्मूल हो जावेंगे. ऐसा विचार कर वे ब्राह्मणोंको मारने लगे. सो वसिष्ठजीके आश्रममें १९७ च्यवन ऋषिके आश्रममें १०० और भरद्वाज मुनिके आश्रममें २० ऋषि, ऐसे कितनेएक ऋषियोंको खा गये. तब दुखी होकर ऋषियोंने भगवान्से प्रार्थना की कि, हम कालकेय नाम राक्षसगणसे दुखी हैं वे समुद्रमें रहकर हमारा नाश किये जाते हैं. तब भगवान्ने आज्ञा की कि,तुम्हारा दुःख मैंने जान लिया है.विना समुद्रके सूखे तुम्हारा दुःख नहीं मिटेगा परंतु मैं तो समुद्रको सुखा नहीं सकता; क्योंकि वह लक्ष्मीका पिता है इसवास्ते तुम अगस्त्यजीके पास जाकर उनसे बिनती करो सो वे तुम्हारा दुःख दूर करेंगे. तब वे अगस्त्यजीके निकट गये और प्रार्थना की कि- हे प्रभु ! हे मुनि !आपने वातापि और इल्वल-को मारकर ब्राह्मणोंका दुःख दूर किया फिर विंध्याचलको बढ़ते रोंककर जगत्को सुखी किया सो हमाराभी दुःख दूर कर हमें सुखी करो.तब अगस्त्यजी समुद्रको पी गये समुद्र सुखगया. तब देवताओंने उनको मारकर ऋषियोंकी रक्षा की. और राक्षस भागकर पातालमें चले गये.

और मनही मनमें घबराकर महादेव पार्वतीको मनाने लगीं कि–हे भवानी शंकर! आप प्रसन्न होओ ॥ ५ ॥ हे प्रभु! आप अपनी सेवाको सफल करो. मेरा हित विचार कर धनुषकी गुरुताको हरो ॥ ६ ॥

गणनायक बरदायक देवा ॥ आजु लगे कीन्ही तव सेवा ॥ ७ ॥ ❀
बार बार बिनती सुनि मोरी ॥ करहु चापगुरुता अति थोरी ॥ ८ ॥ ❀

हे वर देनेवाले गणेश देव! मैंने आजहीके दिनके वास्ते आपकी सेवा की है ॥ ७ ॥ सो बारंबार मेरी विनतीको सुनकर इस धनुषकी गरुआईको बहुत कम कर दो ॥ ८ ॥

दोहा–देखि देखि रघुबीरतन, सुर मनाव धरि धीर ॥ ❀
भरे बिलोचन प्रेमजल, पुलकावली शरीर ॥ २६१ ॥ ❀

रामचंद्रजीकी मनोहर मूर्तिको देख देखकर और मनमें धीरज धरकर श्रीसीताजी देवताओंको मनाती है उस समय उनके नेत्रोंमें प्रेमसे जल भर आया है और शरीरमें रोमांच हो आये हैं ॥ २६१ ॥

नीके निरखि नयन भरि शोभा ॥ पितुप्रण सुमिरि बहुरि मन क्षोभा ॥ १ ॥
अहह तात दारुण हठ ठानी ॥ समुझत नहिँ कुछ लाभ न हानी ॥ २ ॥ ❀

रामचंद्रजीकी छबिको भली भांति नेत्रभर निहारके फिर पिताजीके प्रणको याद करके सीताजीके मनमें क्षोभ हुआ ॥ १ ॥ और क्षोभवश होकर सीताजीने अपने मनमें कहा कि– अहह!! हे पिता! आपने बड़ा कठिन हठ किया आप, नफे नुकशानमें बिलकुल नहीं समझते ॥ २ ॥

सचिव सभय सिख देइ न कोई ॥ बुध समाज बड़ अनुचित होई ॥ ३ ॥ ❀
कहँ धनु कुलिशहु चाहि कठोरा ॥ कहँ श्यामल मृदुगात किशोरा ॥ ४ ॥ ❀

देखिये तौ राजाके पास कई सचिव है परंतु भयके मारे कोईभी राजाको शिक्षा नहीं देता. सो यह पंडितोंकी सभामें बड़ी अयोग्य बात होती है ॥ ३ ॥ चाहि यानी निश्चय करके कहां तौ बज्रसेभी अति कठिन महादेवजीका धनुष और कहां किशोर अवस्थावाला इनका कोमल श्यामल शरीर? ॥ ४ ॥

बिधि केहि भांति धरौं उर धीरा ॥ सिरससुमन किमि बेधिहि हीरा ॥ ५ ॥
सकल सभाकी मति भइ भोरी ॥ अब मोहिँ शंभु चाप गति तोरी ॥ ६ ॥

हे विधाता! अब मैं मनमें धीरज किस प्रकार धरूं? सिरसके फूलसे हीरा किस प्रकार बेधा जासके? ॥ ५ ॥ हे महादेवजीके धनुष पिनाक! इस सभामें बैठेहुए सब सभासदोंकी बुद्धि भुलाय रही है सो अब मुझको तेरी गति है ॥ ६ ॥

निजजड़ता लोगनपर डारी ॥ होहु हरुअ रघुपतिहिँ निहारी ॥ ७ ॥ ❀
अति परिताप सीय मनमाहीं ॥ लव निमेष युगसम शत जाहीं ॥ ८ ॥ ❀

सो तू रामचंद्रजीको ओर देखकर अपनी गुरुता तौ लोगोंपर डालदे और तू आप हलका हो जा ॥ ७ ॥ इसप्रकार सीताके मनमें बड़ा संताप हो रहा है और उसका एक एक पल और क्षण सौ सौ १०० युगोंके समान बीत रहे हैं ॥ ८ ॥

दोहा—प्रभुहिँ चितै पुनि चितै महि, राजत लोचन लोल ॥ ❀
खेलत मनसिज मीन युग, जनु बिधु मंडल डोल ॥ २६२ ॥ ❀

श्रीसीताजी रामचंद्रजीकी ओर देखकर फिर पृथ्वीकी ओर देखतीं है उस समय उनके चंचल नेत्र कैसे शोभा देते है कि– मानों कामदेव दो मछलियोंका रूप धरकर चंद्रमंडलरूप हिंडोलेमें खेलता यानी झूलता है ॥ २६२ ॥

गिरा अलिनि मुख पंकज रोकी ॥ प्रगट न लाज निशा अवलोकी ॥१॥ ❀
लोचनजल रहु लोचनकोना ॥ जैसे परमकृपणकर सोना ॥ २ ॥ ❀

सीताजीकी लज्जाका वर्णन करते है. लाजरूप रात्रिको देखकर सीताजीकी वाणीरूप भौंरे उनके मुखरूप कमलमें रुक रहनेसे प्रगट न हो सके अर्थात् स ताजीकी वाणी लाजके मारे मुखमें किस प्रकार रुक रही कि जैसे रात्रिमें भौंरे कमलमें रुक रहनेसे प्रगट नहीं हो सकते ॥ १ ॥ और नेत्रोंका जल नेत्रोंके कोनोंमें कैसे रहा कि, जैसे महा कंजूसका सोना यानी धन घरके कोनोंमे रहता है ॥ २ ॥

सकुची व्याकुलता बड़ि जानी ॥ धरि धीरज प्रतीति उर आनी ॥ ३ ॥ ❀
तन मन बचन मोर पन सांचा ॥ रघुपति पद सरोज मन रांचा ॥ ४ ॥ ❀

सीताजी अपनी भारी व्याकुलताको समझकर सकुच गयीं और धीरज धरकर मनमें इस प्रकार विश्वास लायीं ॥ ३ ॥ कि–जो मेरा पन तन, मन और वचनसे सच्चा है और जो मेरा मन राम-चंद्रजीके चरणकमलोंमें रांचा हुआ है ॥ ४ ॥

तौ भगवान सकलउरबाशी ॥ करिहहिँ मुहिँ रघुपतिकी दासी ॥५॥ ❀
जेहिकर जेहिपर सत्य सनेहू ॥ सो तेहिँ मिलत न कछु संदेहू ॥ ६ ॥ ❀

तब तौ सर्व जगत्के अंतर्यामी भगवान् मुझको अवश्य श्रीरामचंद्रजीकी दासी करेंहींगे, और जो मेरे मनमे अंतर होगा तौ कुछभी होना नहीं है परंतु मेरा मन दृढ़ है इसवास्ते सब हो जायगा ॥ ५ ॥ जिसका जिसपर सच्चा स्नेह होता है उसको वह मिलही जाता है इसमें कुछभी संदेह नहीं है ॥ ६ ॥

प्रभुतन चितै प्रेमप्रण ठाना ॥ कृपानिधान राम सब जाना ॥ ७ ॥ ❀
सियहिँ बिलोकि तकेउ धनु कैसे ॥ चितव गरुड़ लघु व्यालहिँ जैसे ॥ ८ ॥ ❀

इस प्रकार सीताजीने प्रभुकी मूर्तिको देखकर जो प्रीतिसे पण किया वह सब कृपानिधान श्रीरा-मचंद्रजीने जान लिया ॥ ७ ॥ सीताजीके अभिप्रायको जानकर उनकी ओर देखकर प्रभु धनुषकी ओर कैसे तके कि–जैसे गरुड़ छोटे सांपकी ओर देखता है ॥ ८ ॥

दोहा—लषण लखेउ रघुवंशमणि, ताकेउ हरकोदंड ॥ ❀
पुलकि गात बोले बचन, चरण चापि ब्रह्मण्ड ॥ २६३ ॥ ❀

---

१ रामचरणजी लिखते हैं कि– मानों कामदेव दो मछलियोंका रूप धरकर चंद्रमंडल डोल अर्थात् सुधा कुंडमें कल्लोल करता है. तहां मुख चंद्रमंडल है. नेत्र सुधाकुंड है और पुतलियां मछलियां हैं.

जब लक्ष्मणने जाना कि—श्रीरामचंद्रजीने महादेवजीके धनुषकी तर्फ देखा है तौ तुरंत रोमांचित हो चरणोंसे ब्रह्मांडको दबाकर ये बचन कहे ॥ २६३ ॥

दिशकुंजरहु कमठ अहि कोला ॥ धरहु धरणि धरि धीरन डोला ॥ १ ॥ *
राम चहहिं शंकरधनु तोरा ॥ होउ सजग सुनि आयसु मोरा ॥ २ ॥ *

कि—हे दिग्गजो ! हे कमठ ! हे शेषनाग ! हे वराह ! आप धीरज धरकर पृथ्वीको धारण करो. डोलो मत ॥ १ ॥ क्योंकि, अभी श्रीरामचंद्रजी महादेवजीके धनुषको ताड़ना चाहते है सो तुम सब मेरी आज्ञा सुनकर सावधान हो जाओ ॥ २ ॥

चापसमीप राम जब आये ॥ नर नारिन सुर सुकृत मनाये ॥ ३ ॥ *
सबकर संशय अरु अज्ञानू ॥ मन्दमहीपनकर अभिमानू ॥ ४ ॥ *

जब रामचन्द्रजी धनुषके निकट आये तब नगरके नर नारियोंने अपने सुकृतका स्मरण किया और देवताओंको मनाया ॥ ३ ॥ सब लोगोंका संदेह कि, देखें विधाता क्या करता है रामचंद्रजी धनुषको तोड़ सकेंगे वा नहीं ? और सबका अज्ञान कि, यह बालक है. यह क्या धनुषको तोड़ेगा? तथा मंदराजाओंका अभिमान ॥ ४ ॥

भृगुपतिकेरि गर्वगरुआई ॥ सुरमुनिबरनकेरि कदराई ॥ ५ ॥ *
सियकर शोच जनकपछितावा ॥ रानिनकर दारुण दुखदावा ॥ ६ ॥ *

परशुरामजीका गर्व और गौरव, देवता और उत्तम मुनिलोगोंकी कायरता ॥ ५ ॥ सीताका शोच, जनकका पछतावा और रानियोंका महाकठिन दुःखानल ॥ ६ ॥

शम्भुचाप बड़ बोहित पाई ॥ चढ़े जाइ सब संग बनाई ॥ ७ ॥ *
रामबाहुबल सिंधु अपारा ॥ चहत पार नहिं कोउ कनहारा ॥ ८ ॥ *

ये सब महादेवजीके धनुषरूप बड़ी नौकाको पाकर संग बनाकर उसपर जा चढ़े ॥ ७ ॥ सो ये सब इस नावमें बैठकर यह चाहते थे कि—हम रामचन्द्रजीके भुजबलरूप अपार समुद्रको पार उतर जावें परंतु वहां कोईभी कर्णधार यानी मल्लाह नहीं था कि उससे पार उतार देवे ॥ ८ ॥

दोहा—राम बिलोके लोग सब, चित्र लिखेसे देषि ॥ *
चितई सीय कृपायतन, जानी बिकल बिशेषि ॥ २६४ ॥ *

रामचंद्रजीने उस समय देखा तौ सब लोग चित्रमें लिखे हुए हों ऐसे दिखायी दिये. फिर कृपानिधान श्रीरामने सीताकी तर्फ देखा तौ उसेभी अत्यंत बिकल जानी ॥ २६४ ॥

देखी बिपुल बिकल बैदेही ॥ निमिष बिहात कल्पसम तेही ॥ १ ॥ *
तृषित बारि बिनु जो तनु त्यागा ॥ मुये करै का सुधा तड़ागा ॥ २ ॥ *

रामचंद्रजीने सीताको अत्यंत विकल देखा कि उसका एक २ क्षण कल्प (१००० युगोंकी चौकड़ी) के समान बीतता था ॥ १ ॥ यदि प्यासा मनुष्य जलविना मर जाय और मरे पीछे यदि अमृतका तालाव प्राप्त होजाय तौ उसको क्या करना है ? ॥ २ ॥

का बर्षा जब कृषी सुखाने ॥ समय चूक पुनि का पछिताने ॥ ३ ॥ *
अस जिय जानि जानकी देषी ॥ प्रभु पुलके लखि प्रीति विशेषी ॥ ४ ॥ *

जब खेती सूख गयी और फिर वर्षा हुई तौ वह किस कामकी ? ऐसेही समय चूक जानेके अनंतर

यदि पछतावा किया जाय तौ उससे क्या होना है ? ॥ ३ ॥ श्रीरामचन्द्रजी अपने मनमें ऐसे जान श्रीसीताजीकी ओर देख उनकी अतिशय प्रीतिको जानकर पुलकावलीयुक्त भये ॥ ४ ॥

सीता स्वयवर ।

गुरुहिँ प्रणाम मनहिँ मन कीन्हा ॥
अति लाघव उठाइ धनु लीन्हा ॥ ५ ॥
दमकेउ दामिनि जिमि घन लयऊ ।
पुनि धनु नभमंडल सम भयऊ ॥ ६ ॥

और मनमें सोचा कि, अब देरी करना ठीक नहीं है ऐसे विचार कर गुरु विश्वामित्रजीको मनही मनमें प्रणाम कर बड़ी फुरतीके साथ उस धनुषको उठा लिया ॥ ५ ॥ तब वह धनुष रामचन्द्रजीके घनश्याम स्वरूपमें कैसे शोभित हुआ कि, मानों सघन मेघके मध्य दामिनी दमकके लीन होगयी है और जब आपने उसको खैंचा तब वह धनुष पीछा आकाशमंडलके समान विशाल भया ॥ ६ ॥

लेत चढ़ावत खैंचत गाढ़े ॥
काहु न लखा देख सब ठाढ़े ॥ ७ ॥
तेहि क्षण मध्य राम धनु तोरा ॥
भरेउ भुवन धुनि घोर कठोरा ॥ ८ ॥

यद्यपि देव, दानव, मनुष्य, मुनि आदि सब खड़े खड़े उसे देख रहे थे परंतु इस बातकी किसीको खबर नहीं कि, रामचन्द्रजीने किस समय तौ धनुष लिया, किस वक्त चढ़ाया और किस कालमें उसको गाढ़ी तरहसे खैंचा ॥ ७ ॥ जिस समय सब लोग इंद्रजालके समान उस आश्चर्यको देख रहे थे उसी क्षणमें रामचन्द्रजीने धनुषको तोर डारा कि, जिसकी महाघोर कठोर ध्वनिसे सब लोक भर गये यानी गुंज उठे ॥ ८ ॥

छंद– भरि भुवन घोर कठोर रव रबिबाजि तजि मारग चले ॥ ❀
चिक्करहिँ दिग्गज डोल महि अहि कोल कूरम कलमले ॥ ❀
सुर असुर मुनि कर कान दीन्हे सकल बिकल बिचारहीं ॥ ❀
कोदंड खंडेउ राम तुलसी जयति वचन उचारहीं ॥ ३२ ॥ ❀

धनुषभंगके महाघोर कठोर शब्दसे चौदह लोक भर गये. सूर्यके घोड़े मारग छोड़कर भाग चले. दिग्गज हाथी चिंघाड़ने लगे. पृथ्वी डिगमगाने लगी. शेष, वराह और कच्छप ये सब कलमलाने लगे. देवता, दैत्य और मुनि इन्होंने कान फूटनेके डरसे कानोंमें हाथ दिये. सब लोग

विह्वल होकर सोचने लगे. तुलसीदास कहते है कि–जिस समय रामचन्द्रजीने धनुषको तोड़ा उस समय सब लोग जय जय शब्द कहने लगे ॥ ३२ ॥

सोरठा– शंकर चाप जहाज, सागर रघुबर बाहुबल ॥ ❀
बूड़ी सकल समाज, चढ़े जे प्रथमहिँ मोहबश ॥ ३१ ॥ ❀

रामचन्द्रजीके भुजबलरूप सागरको पार करनेके लिये जो सारी समाज अज्ञानबश हो पहले महादेवजीके धनुषरूप जहाजपर चढ़ी थी वह ज्यों की त्यों बूड़ गयी ॥ ३१ ॥

प्रभु दोउ खंड चाप महि डारे ॥ देखि लोग सब भये सुखारे ॥ १ ❀
कौशिक रूप पयोनिधि पावन ॥ प्रेम बारि अवगाह सुहावन ॥ २ ॥ ❀

श्रीरामचंद्रजीने धनुषके दोनों टुकडे पृथ्वीपर डाल दिये उन्हें देखकर सब लोग परम आनंदित भये ॥ १ ॥ विश्वामित्रजीका जो स्वरूप है सोही तौ पवित्र क्षीरसमुद्र है, प्रेम है सोही जल है, जो नहानेमें बड़ा सुखदायी है ॥ २ ॥

रामरूप राकेश निहारी ॥ बढ़ी बीचि पुलकावलि भारी ॥ ३ ॥ ❀
बाजे नभ गहगहे निशाना ॥ देवबधू नाचहिँ करि गाना ॥ ४ ॥ ❀

रामचंद्रजीका स्वरूप है सोही पूर्ण चंद्र है जिसको देखकर उनके शरीरमें पुलकावलिरूप भारी लहरें उठीं. जैसे चंद्रमाको देखकर समुद्रमें लहरें उठतीं है ऐसे प्रभुको निहारकर विश्वामित्रजीके शरीरमें पुलकावली छागयी ॥ ३ ॥ आकाशमें गहरे बाजे बजने लगे. देवांगना गान कर करके नाचने लगीं ॥ ४ ॥

ब्रह्मादिक सुर सिद्ध मुनीशा ॥ प्रभुहिँ प्रशंसहिँ देहिँ अशीशा ॥ ५ ॥ ❀
बर्षहिँ सुमन रंग बहुमाला ॥ गावहिँ किन्नर गीत रसाला ॥ ६ ॥ ❀

ब्रह्मादिक देवता, सिद्ध और मुनीश्वर प्रभुकी प्रशंसा करते है; आशीर्वाद देते है ॥ ५ ॥ और अनेक प्रकारके रंगरंगके पुष्पमालाओंकी वर्षा करते है. किन्नर सुंदर मधुर गीत गा रहे है ॥ ६ ॥

रही भुवन भरि जय जय बानी ॥ धनुष भंग धुनि जात न जानी ॥ ७ ॥ ❀
मुदित कहहिँ जहँ तहँ नरनारी ॥ भंजेउ राम शम्भु धनु भारी ॥ ८ ॥ ❀

यद्यपि तमाम लोकोंमें जय जय बानी भर रही थी तथापि धनुषभंगकी घोर ध्वनिके आगे जानी नहीं जाती थी, अथवा जय जय बानीके आगे धनुषभंगकी ध्वनि जानी नहीं जाती थी. यद्वा धनुषभंगकी ध्वनि, जा कहिये जमदग्निके तन कहिये तनय (परशुरामजी) ने जानी ॥ ७ ॥ जहां तहां स्त्री पुरुष आनंदित होकर कह रहे हैं कि–रामचंद्रजीने विशाल महादेवजीके धनुषको तोड़ दिया ॥ ८ ॥

दोहा–बन्दी मागध सूत गण, बिरद बदहिँ मति धीर ॥ ❀
करहिँ निछावरि लोग सब, हय गज धन मणि चीर ॥ २६५ ॥ ❀

धीर बुद्धिवाले बंदी, मागध (कलावंत) और सूत (पौराणिक) गण यश गा रहे हैं. सब लोग रामचन्द्रजीके ऊपर घोड़ा, हाथी, धन, रत्न और वस्त्र निछावर कर रहे है ॥ २६५ ॥

झांज मृदंग शंख सहनाई ॥ भेरि ढोल दुन्दुभी सुहाई ॥ १ ॥ ❀
बाजहिँ बहु बाजने सुहाये ॥ जहँ तहँ युवतिन मंगल गाये ॥ २ ॥ ❀

झांझ, मृदंग, शंख, सहनाई, भेरी, ढोल और दुंदुभी आदि अनेक प्रकारके सुंदर बहुतसे बाजे बज रहे है जहां तहां तरुण स्त्रियां मंगल गा रही हैं ॥ १ ॥ २ ॥

सखिन सहित हर्षित अति रानी ॥ सूखत धान परा जनु पानी ॥ ३ ॥ *
जनक लहेउ सुख शोच बिहाई ॥ पैरत थके थाह जनु पाई ॥ ४ ॥ *

जनक राजाकी रानी सखियोंके साथ कैसी अति आनंदित भयी है कि, मानों सूखतेहुए धानोंपर आकर जल बरसा ॥ ३ ॥ जनक राजाने शोचको त्यागकर कैसे सुख पाया कि मानों पैरतेहुए मनुष्यको थकनेपर थाह मिल गया ॥ ४ ॥

श्रीहत भये भूप धनु टूटे ॥ जैसे दिवस दीप छबि छूटे ॥ ५ ॥ *
सिय हिय सुख बरणिय केहि भांती ॥ जनु चातक पाये जल स्वाती ॥ ६ ॥

धनुषके टूटनेपर दूसरे राजा कैसे छबिहीन भये कि, जैसे दिवसमें दीपक तेजहीन हो जाते है ॥ ५ ॥ कवि कहता है कि–सीताजीके हृदयके सुखका तो हम किस प्रकार वर्णन कर सकें मानों वर्षभरकी प्यासी चातकीको स्वाती नक्षत्रका जल मिला ॥ ६ ॥

रामहिँ लषण बिलोकत कैसे ॥ शशिहिँ चकोर किशोरक जैसे ॥ ७ ॥ *
शतानन्द तब आयसु दीन्हा ॥ सीता गमन रामपहँ कीन्हा ॥ ८ ॥ *

उस समय रामचंद्रजीको लक्ष्मणजी कैसे देखते है जैसे चकोरका बच्चा पूर्ण चंद्रमाको देखता है ॥७॥ उस मंगलके समय पुरोहित शतानंदने आज्ञादी तब सीताजी उनकी आज्ञासे रामचंद्रजीके निकट गयी ॥८॥

दोहा–संग सखी सुन्दरि चतुर, गावहिँ मंगल चार ॥ *
गवनी बालमरालगति, सुषमा अंग अपार ॥ २६६ ॥ *

श्रीसीताजीके साथमें सुंदर चतुर सखियां मंगलाचारके गीत गा रही थीं उनके साथ श्रीसीताजी गयीं कि,जिनकी बालक राजहंसकीसी धीमी २ चाल है और अंगोंमें अपार छबि छा रही है ॥२६६॥

सखिन मध्य सिय सोहति कैसी ॥ छबिगण मध्य महाछबि जैसी ॥ १ ॥
कर सरोज जयमाल सुहाई ॥ विश्व विजय शोभा जनु छाई ॥ २ ॥ *

सखियोंके बीचमें सीताजी कैसे शोभायमान होती है कि, जैसे छबिके वृंदमें महाछबि शोभायमान हो अथवा नक्षत्रमंडलमें चंद्रमा शोभायमान हो. यद्वा अनेक मणिनके मध्य चिंतामणि रत्न देदीप्यमान हो ॥ १ ॥ जिस समय सीताजीने अपने हस्तकमलमें सुंदर जयमाल ली उस समय विश्वके विजयकी शोभा मानों उसी वरमालपर छा गयी ॥ २ ॥

तन सकोच मन परम उछाहू ॥ गूढ प्रेम लखि परै न काहू ॥ ३ ॥ *
जाइ समीप राम छबि देखी ॥ रहि जनु कुँवरि चित्र अवरेखी ॥ ४ ॥ *

यद्यपि सीताजीके मनमें तो बड़ा उत्साह है तथापि शरीरमें ऐसा संकोच है कि– वह गुप्त प्रेम किसीके लक्ष्यमें नहीं आता ॥ ३ ॥ जब रामचन्द्रजीके निकट जाकर उनकी छबि निहारी तब तो वह कुँवरी (सीताजी) मानों चित्रमें लिखी हो ऐसी निश्चल हो गयी ॥ ४ ॥

चतुर सखी लखि कहा बुझाई ॥ पहिरावहु जयमाल सुहाई ॥ ५ ॥ *
सुनत युगुल कर माल उठाई ॥ प्रेम बिवश पहिराइ न जाई ॥ ६ ॥ *

चतुर सखियोंने सीताजीकी यह दशा देख समझाकर सीताजीसे कहा कि– अब यह सुन्दर

जयमाल पहिरा दो ॥ ५ ॥ सखियोंका यह बचन सुनतेही सीताजीने श्रीरामचंद्रजीको जयमाल पहिरानेके लिये यद्यपि दोनों हाथोंसे जयमाल उठाई तथापि प्रेमके कारण यह पहिरायी नहीं गयी ॥ ६ ॥

सोहत जनु युग जलज सनाला ॥ शशिहिँ सभीत देत जयमाला ॥७॥ *
गावहिँ छबि अवलोकि सहेली ॥ सिय जयमाल रामउर मेली ॥८॥ *

जब सीताजी दोनों हाथोंसे जयमालको उठाकर रामचन्द्रजीको पहराने लगीं तब कैसी शोभा बनी सो कहते है कि. मानों नालसहित दो कमल चन्द्रमाको भयसहित जयमाल देते शोभायमान हो रहे हैं. भुजा जो है सो नाल हैं, करकमल जो है सो कमल है, अंगुली दल है, श्री रामचन्द्रजीका मुख चंद्रमा है, चन्द्रमासे कमल संकुचित हो जाता है इसलिये सभीत विशेषण दिया है ॥ ७ ॥ इस सुंदर शोभाको देखकर सहेलियां गान करने लगीं इतनेमें सीताजीने रामचन्द्रजीके वक्षःस्थलमें जयमाल पहिरायी ॥ ८ ॥

सोरठा—रघुवरउर जयमाल, देखि देव बरषहिँ सुमन ॥
सकुचे सकल भुआल, जनु बिलोकि रबि कुमुदगण ॥ ३२ ॥ *

रामचन्द्रजीके हृदयपर विराजमान जयमालको देखकर देवताओंने फूल बरसाये और सब राजा ऐसे संकुचित हुए कि, मानों रात्रिविकासी कमलगण सूर्यको देखकर संकुचित हो जाते है ॥ ३२ ॥

पुर अरु व्योम बाजने बाजे ॥ खल भये मलिन साधु सब गाजे ॥ १ ॥ *
सुर किन्नर नर नाग मुनीशा ॥ जय जय सब कहि देहिँ अशीशा ॥ २ ॥ *

उस समय नगर और आकाशमें अनेकप्रकारके बाजे बजने लगे. दुष्ट सब मलिन व्है गये. सब साधुलोग गर्जना करने लगे ॥ १ ॥ देवता, किन्नर, मनुष्य नाग और मुनीश्वर ये सब जय जय वाणी कहकर आशिष देने लगे ॥ २ ॥

नाचहिँ गावहिँ बिबुधबधूटी ॥ बार बार कुसुमावलि छूटी ॥ ३ ॥ *
जहँ तहँ बिप्रबेदधुनि करहीं ॥ बन्दी बिरदावलि उच्चरहीं ॥ ४ ॥ *

देवांगना नाचने और गाने लगीं बारंबार फूलोंकी वर्षा होने लगी ॥ ३ ॥ जहां तहां ब्राह्मण वेदघोष करने लगे. बंदीलोग यश गाने लगे ॥ ४ ॥

महि पाताल नाक यश व्यापा ॥ राम बरी सिय भंजेउ चापा ॥ ५ ॥ *
करहिँ आरती पुरनरनारी ॥ देहिँ निछावरि वित्ति बिसारी ॥ ६ ॥ *

सो वह विरद (यश) पृथ्वी, पाताल और स्वर्ग सब ठौर फैल गया कि, रामचंद्रजीने धनुषको तोड़ा जिससे सीताजीने रामचंद्रजीको बरा ॥ ५ ॥ नगरकी नर नारी आरती करती है और अपनी औकातसे बाहिर व्हैके न्योछावर देते हैं ॥ ६ ॥

सोहत सीय रामकी जोरी ॥ छबि शृंगार मनहुँ यक ठौरी ॥ ७ ॥ *
सखी कहहिँ प्रभुपद गहु सीता ॥ करति न चरण परम अति भीता ॥ ८ ॥ *

सीता और रामचंद्रजीकी जोड़ी कैसी शोभा देती है कि, मानों छबि और शृंगार दोनों एक ठौर

विराजमान हुए है ॥ ७ ॥ सखियां श्रीसीताजीसे कहती है कि-हे सीता ! आप प्रभु श्रीरामचंद्रजीके चरण छुओ परंतु सीताजी अत्यंत भयके मारे चरणस्पर्श नहीं करती. सो अब कहते है ॥ ८ ॥

दोहा-गौतमतियगति सुरति करि, नहिँ परसति पद पानि ॥ ❋
मग बिहँसे रघुवंशमणि, प्रीति अलौकिक जानि ॥ २६७ ॥ ❋

गौतम ऋषिकी स्त्री अहल्याकी गतिका स्मरण करके सीताजीने अपने हाथसे चरणस्पर्श नहीं किया; उसे जान सीताजीकी अलौकिक प्रीतिको लखकर रघुवंशमणि श्रीरामचंद्रजी मनमें मुसुकुराये ॥ २६७ ॥

तब सिय देखि भूप अभिलाषे ॥ क्रूर कपूत मूढ़ मन माषे ॥ १ ॥ ❋
उठि उठि पहिरि सनाह अभागे ॥ जहँ तहँ गाल बजावन लागे ॥ २ ॥ ❋

जब सीताजीने रामचंद्रजीको बरमाल पहिरायी तब सीताजीको देखकर उन राजाओंके मनमें सीताजीकी भारी अभिलाषा हुई और मनमें बड़े गुस्से हुए कि, जो क्रूर कुपुत्र अर्थात् जारजात और मूर्ख थे. जो विष्णुसे द्वेष करता है वह जारजात कहलाता है उसमें प्रमाण " यः पुत्रः पितरं द्वेष्टि तं विद्यादन्यरेतसम् ॥ यो विष्णुं वै नरो द्वेष्टि तं विद्यादन्यरेतसम् " ॥ १ ॥ वे अभागे अपने २ पंचोंसे उठ उठ कवच वख्तर झिलमें टोप पहिन जहां तहां कोलाहल करने लगे ॥ २ ॥

लेहु छड़ाइ सीय कह कोऊ ॥ धरि बांधहु नृप बालक दोऊ ॥ ३ ॥ ❋
तोरे धनुष काज नहिँ सरई ॥ जीवत हमहिँ कुँवरि को बरई ॥ ४ ॥ ❋

किसीने कहा कि-सीताको छुड़ा लो और इन दोनों राजपुत्रोंको पकड़कर बांध लो ॥ ३ ॥ धनुष तोड़नेसे काम नहीं सरेगा. हमारे जीते जी कुंवरिको कौन बर सकता है ? ॥ ४ ॥

जो बिदेह कछु करै सहाई ॥ जीतहु समर सहित दोउ भाई ॥ ५ ॥ ❋
साधु भूप बोले सुनि बानी ॥ राजसमाजहिँ लाज लजानी ॥ ६ ॥ ❋

यदि जनक राजा इनकी कुछ मदद करै तौ इसकोभी दोनों भाईके साथ युद्धमें जीतलो ॥ ५ ॥ ये बचन सुनकर अच्छे राजा बोले कि-अरे मूढ़ो ! तुमने राजसमाजकी अच्छी लाज लजाई ॥ ६ ॥

बल प्रताप बीरता बड़ाई ॥ नाक पिनाकहिँ संग सिधाई ॥ ७ ॥ ❋
सोइ शूरता कि अब कहुँ पाई ॥ अस बुधि तौ बिधि मुह मसि लाई ॥ ८ ॥

केवल तुम्हारा बल, प्रताप, वीरपण और बड़प्पनही पिनाकके साथ नहीं गया किंतु इसके साथ तुम्हारी नाकभी चली गई है ॥७॥ तुम्हारी शूरवीरता तौ वही है कि-जो पहले थी अथवा अब कहींसे और पा ली है? तुम्हारी ऐसी बुद्धि है इसीलिये विधाताने सचमुच तुम्हारे मुहमें श्याही लगायी है॥८॥

१ जैसे अहल्या प्रभुके चरणोंको स्पर्श करि परमपद तथा प्रभुके वियोगको प्राप्त भई वैसेही हमकोभी होगा, यानी चरण छूनेसे फिर मेरा अरु प्रभुका वियोग होगा. २ अथवा तुह्मारी शूरता, वीरता, श्रेष्ठता, बल, ये सब पिनाकके साथ नाक कहे स्वर्गको सिधारे. अर्थात् जैसे पिनाक देहको छोड़ स्वर्ग गया ऐसेही ए पूर्वोक्त सब गुण दुष्ट राजाओंके देहको छोड़ स्वर्ग गये.

दोहा-देखहु रामहिँ नयनभरि, तजि ईर्षा मद मोहु ॥ *
लषण रोष पावक प्रबल, जानि शलभ जनि होहु ॥ २६८ ॥ *

अबभी हमारा कहना मानो. ईर्षा, मद और अज्ञानको छोड़कर नेत्र भरकर रामचंद्रजीको देखो. लक्ष्मणके क्रोधको प्रबल अग्निसमान जानते बूझते पतंगे क्यों बनते हो ? ॥ २६८ ॥

वैनतेय बलि जिमि चह कागू ॥ जिमि शश चहहि नागअरिभागू ॥ १ ॥ *
जिमि चह कुशल अकारणकोही ॥ सुख सम्पदा चहहि शिवद्रोही ॥ २ ॥ *

हे राजालोगो ! तुम्हारा लालच ऐसा है कि-जैसे गरुड़की बलिको काग चाहे. जैसे सिंहके भागको शश (खरगोश) चाहे ॥ १ ॥ जैसे विना सबब क्रोध करनेवाला कुशल चाहे. जैसे शिवजीसे द्रोह करनेवाला सुख और संपदा चाहे ॥ २ ॥

लोभी लोलुप कीरति चहई ॥ अकलंकिता कि कामी लहई ॥ ३ ॥ *
हरिपद बिमुख परमगति चाहा ॥ तस तुम्हार लालच नरनाहा ॥ ४ ॥ *

जैसे लोभी और लोलुप यश चाहे, जैसे लंपट पुरुष निष्कलंकता चाहे ॥ ३ ॥ जैसे हरिभगवान्‌के चरणारविंदसे विमुख पुरुष परम पद चाहे परंतु क्या वे अपने वांछित फलको पा सकते हैं? कदापि नहीं. हे राजालोगो ! आप लोगोंका लालचभी वैसाही है ॥ ४ ॥

कोलाहल सुनि सीय सकानी ॥ सखी लिवाइ गईं जहँ रानी ॥ ५ ॥ *
राम सुभाय चले गुरुपाहीं ॥ सियसनेह बर्णत मनमाहीं ॥ ६ ॥ *

जब राजाओंका कोलाहल सुनकर सीताजी सकाईं तब सखियां सीताजीको रानीके पास लेगयीं ॥ ५ ॥ तब रामचन्द्रजीभी सीताको सीधे सुभाय स्नेहका अपने मनमें वर्णन करतेहुए गुरु विश्वामित्रजीके पास चले गये ॥ ६ ॥

रानिनसहित शोचवश सीया ॥ अब धौं बिधिहि कहा करणीया ॥ ७ ॥ *
भूपबचन सुनि इत उत तकहीं ॥ लषण राम डर बोलि न सकहीं ॥ ८ ॥ *

रानियोंके साथ सीता बड़ी शोचवश होरही है कि अब विधाताको क्या कर्तव्य है? ॥ ७ ॥ राजाओंके वचन सुनकर लक्ष्मणने इधर उधर देखा तो सही परंतु रामचन्द्रजीके भयसे कुछ कहा नहीं ॥ ८ ॥

दोहा-अरुण नयन भृकुटी कुटिल, चितवत नृपन सकोप ॥ *
मनहुँ मत्त गजगण निरखि, सिंहकिशोरहि चोप ॥ २६९ ॥ *

लाल जिनके नेत्र हैं ऐसे लक्ष्मणजी टेढ़ी भौहें चढ़ाकर सब राजाओंको क्रोधसहित कैसे देखते हैं कि- मानो शेरका बच्चा मदमत्त हाथियोंके झुंडको देखकर चोपसहित होजाता है ॥ २६९ ॥

खरभर देखि बिकल नरनारी ॥ सबमिलि देहि महीपन गारी ॥ १ ॥ *

तमाम स्त्री पुरुष राजाओंकी खरभर देखकर विकल हुए और राजाओंको गाली देने लगे ॥ १ ॥

(क्षेपक)यहिबिधि बिकल भईं सबबाला ॥ अब सुनु परशुरामकर हाला ॥ १ ॥

इसतरह सब स्त्रियां घबरा गयीं सो वह कथा तो मैंने कही अब परशुरामजीका हाल कहता हूं सो सुनो ॥ १ ॥

छन्द--गाधिराजकी सुता रूपकेशी अस नामा ॥
भृगुसुत ऋचीक हजार अश्व दे बरी ललामा ॥
भृगु बोले बर माँगु उभय सुत दीजै देवा ॥
यक हमकहँ यक पिताहिँ भले करि यज्ञ करेवा ॥ १ ॥

भृगुऋषीके पुत्र ऋचीक ऋषिने हजार १००० श्यामकर्ण अश्व देकर गाधि राजाकी रूपकेशी नाम सुंदर कुँवरिको बरा. जब उस रूपकेशीने मुनिकी अच्छी तरह सेवा की तब मुनिने प्रसन्न होकर कहा कि—बर मांग. तब उसने कहा कि—हे स्वामी ! आप दो पुत्र बरदान दीजियेगा. सो एक तो मुझको और दूसरा मेरे पिताको. अपनी स्त्रीकी यह प्रार्थना सुनकर मुनिने भली भांति यज्ञ किया ॥ १ ॥

हबिकर करि द्वै भाग कह्यो याको तुम खायो ॥ ❀
होई सुत हित द्विजप्रकृति मातुके नृपगुण गायो ॥ ❀
देत भाग गा बदलि बहुरि तपसी बर मांग्यो ॥ ❀
सोई भये जमदग्नि जननिके कौशिक रांग्यो ॥२॥ ❀

और यज्ञ अवशिष्ट हविके उसने दो भाग किये और कहा कि, यह भाग तो तू खा सो तेरे ब्राह्मण स्वभाववाला पुत्र होगा और तेरी माताके क्षत्रिय[1] प्रकृतिवाला पुत्र होगा. परंतु यह भाग देते समय बदलगया. इसलिये ऋषिने नदीसे पीछा आकर अपनी स्त्रीसे कहा कि— तूने यह क्या किया? तेरे तो घोर क्षत्रिय प्रकृतिवाला पुत्र होगा. और तेरा भाई ब्राह्मणप्रकृतिवाला होगा. मुनिके ये बचन सुन उसने फिर मुनिसे प्रार्थना करी कि—मेरे ऐसा पुत्र नहीं होना चाहिये. तब मुनिके वरदानसे उसके जमदग्नि नाम पुत्र हुए और उसकी माताके विश्वामित्र पुत्र हुए ॥ २ ॥

तिनको सदल बशिष्ठ जिमायो नन्दिनिबलते ॥ ❀
गौ मांगत गे हारि भयो तापस त्यहि चलते ॥ ❀
तपप्रभाव ऋषिराव ऋषिनमें प्रगट कहाये ॥ ❀
रच्यो स्वर्ग मखहेत माँगि रामै जे लाये ॥ ३ ॥ ❀

उन विश्वामित्रजीको वसिष्ठ मुनिने अपनी गौ नंदिनी नाम कामधेनुकी कन्याके प्रभावसे सेनासहित भोजन कराया; और अच्छी महिमानदारी की. वसिष्ठजीके पास यह अलौकिक रत्न देखकर विश्वामित्रजीने उनसे वह गौ मांगी, परंतु उन्होंने किसी प्रकार न दी. आखिर वे मांगते २ हार गये तब युद्धको कमर बांधी, निदान उसी हठसे तपस्वी भये. और तपस्याके प्रभावसे ऋषियोंमें नामी ऋषिराज कहलाये. जो विश्वामित्रजी स्वर्गके वास्ते यज्ञ रचकर रामचन्द्रजीको दशरथजीसे मांग ले गये थे ॥ ३ ॥

जमदग्निहिँ परसेन रेणुका सुता बिबाही ॥ ❀
भे सुत शतमें बड़े परशुधर विष्णुकलाही ॥ ❀
यक दिन तिनकी मातु चित्रसेनहिँ लखि मोही ॥ ❀
कह्यो पिता शिर काटु केहूं नाहिँ काट्यो ओही ॥ ४ ॥ ❀

[1] शमोदमस्तपः शौचं शांतिरार्जवमेव च॥२तेजः क्षमा धृतिः शौर्यं युद्धे चाप्यपलायनं॥दानमीश्वरभावश्च क्षात्रकर्म स्वभावजं.

जमदग्निने प्रसेनकी पुत्री रेणुकाके साथ व्याह किया. उनके सौ पुत्र हुए. तिनमें परशुरामजी भगवानके कलावतार और सबसे बड़े थे. एक दिन उनकी माता जल लेनेको नदीपर गयी थी वहां चित्रसेन नाम गंधर्वको जलक्रीडा करते देखकर मोहित होगयी. तब जमदग्निने अपने पुत्रोंसे कहा कि-इसे मार डालो. परंतु ऋषिका कहना किसीने नहीं किया ॥ ४ ॥

होउ सकल जड़रूप राम मुनि शीश निपाता ॥ ❃
बर लै चेतन बंधु करे ज्याई पुनि माता ॥ ❃
यक दिन सहसबाहु हरी गो राम हत्यो त्यहि ॥ ❃
पितुअरि भो सुत तासु तेहीते बिपुलबार महि ॥ ५ ॥ ❃
बिन क्षत्रिनकी करी बरी बिप्रनकहँ सोई ॥ ❃
रहि महेन्द्रगिरिमध्य सिंधुते सुनत चलोई ॥ ६ ॥ ❃

तब मुनिने शाप दिया कि-तुम सब जडरूप हो जाओ. फिर परशुरामजीने मुनिकी आज्ञा मानकर माताका शिर उड़ादिया और भाइयोंकोभी मार डाला. तब मुनिने परशुरामजीसे कहा कि-वर मांग. तब उन्होंने मुनिके वरदानसे अपने भाई और माताको पीछा जिलाया. एक दिन सहस्रार्जुन आकर जमदग्निकी गौको जबर्दस्ती लेकर चला गया, तो परशुरामजी उसे मारकर गौ पीछी ले आये. फिर उसके पुत्रने निर्जन बनमें आकर जमदग्निको मार डाला. उस बैरसे उन्होंने पृथ्वीको इकीस बेर निक्षत्री किया और ब्राह्मणोंको पृथ्वी देकर आप समुद्रके बीच महेंद्रगिरि नाम पर्वतपर रहने लगे सो धनुषभंगका शब्द सुनतेही वहांसे चले ॥ ५ ॥ ६ ॥

इत नृप मूढ़नकी गलमँदरी ॥ मिटन न पाई जबतक सगरी ॥ १ ॥ ❃

जबतक इधर मूर्ख राजाओंका सारा कोलाहल शांत होने न पाया इतनेमें वेभी वहां आ पहुंचे ॥ १ ॥ ॥ इति ॥

तेहि अवसर सुनि शिवधनुभंगा ॥ आये भृगुकुलकमल पतंगा ॥ २ ॥ ❃

महादेवजीके धनुषका भंग सुनकर उस अवसरमें भृगुकुलरूप कमलोंको प्रफुल्लित करनेके लिये साक्षात् सूर्यरूप श्रीपरशुरामजी वहां पधारे ॥ २ ॥

देखि महीप सकल सकुचाने ॥ बाजझपट जनु लवा लुकाने ॥ ३ ॥ ❃
गौर शरीर भूति भलि भ्राजा ॥ भाल बिशाल त्रिपुण्ड्र बिराजा ॥ ४ ॥ ❃

उनको देखतेही सब राजा कैसे संकुचित भये मानों बाजकी झपट देखकर लवा (एक किस्मकी चिड़िया यानी बटेर) छिप जाता है ॥ ३ ॥ परशुरामजीके स्वरूपका वर्णन करते हैं- उनके गौर शरीरपर सुंदर विभूति शोभायमान होरही; है विशाल ललाटमें त्रिपुंड्र लगाया हुआ शोभायमान है ॥ ४ ॥

शीश जटा शशि बदन सुहावा ॥ रिसिबश कछुक अरुण होइ आवा ॥ ५ ॥
भृकुटी कुटिल नयन रिसि राते ॥ सहजहिँ चितवत मनहुँ रिसाते ॥ ६ ॥

शिरपर जटा बढ़ रही है; चन्द्रमाकासा सुहावना सुन्दर मुखारविंद है; परंतु क्रोधके कारण कुछ ललाई झलक रही है ॥ ५ ॥ टेढ़ी भौंहे और क्रोधसे भरे हुये नेत्र लाल हो रहे है, उनका सहजस्वभावसेही देखना ऐसा है कि—मानों क्रोधसे व्याप्त हो रहे हैं ॥ ६ ॥

वृषभकन्ध उर बाहु बिशाला ॥ चारु जनेउ माल मृगछाला ॥ ७ ॥ ❀
कटि मुनिबसन तूण दुइ बाँधे ॥ धनु शर कर कुठार कल काँधे ॥ ८ ॥ ❀

वृषभकेसे पुष्ट कंधे है; विशाल बाहु और वक्षःस्थल है, सुन्दर यज्ञोपवीत माला और मृगछाला धारण करे है ॥ ७ ॥ कमरमें मुनि बसन यानी वल्कलसे दो तरकस बँधे हुए है; हाथमें धनुष और बाण हैं कंधेपर सुन्दर परशु शोभायमान है; ॥ ८ ॥

दोहा—शान्तबेष करणी कठिन, बरणि न जाइ स्वरूप ॥ ❀
धरि मुनितनु जनु बीररस, आये जहँ सब भूप ॥ २७० ॥ ❀

मुनिका वेष तो शांत है और करणी बड़ी कठिन है. इसीवास्ते वह स्वरूप वर्णन करनेमें नहीं आसकता. जहां सब राजालोग बैठे थे वहां परशुरामजीका आना कैसा मालूम हुआ कि— मानों वीररस मुनिका शरीर धारण करके आया है ॥ २७० ॥

देखत भृगुपतिबेष कराला ॥ उठे सकल भयबिकल भुआला ॥ १ ॥ ❀
पितुसमेत कहि कहि निज नामा ॥ लगे करन सब दण्डप्रणामा ॥ २ ॥ ❀

परशुरामजीका विकराल वेष देखतेही सब राजा घबराकर उठे ॥ १ ॥ और पिताके साथ अपना अपना नाम ले लेकर दंडवत् प्रणाम करने लगे ॥ २ ॥

जेहि सुभाय चितवहिँ हित जानी ॥ सो जाने जनु आयु खुटानी ॥ ३ ॥ ❀
जनक बहोरि आय शिर नावा ॥ सीय बुलाय प्रणाम करावा ॥ ४ ॥ ❀

परशुरामजी जिसे अपना प्यारा समझकर जिसकी ओर सहजसुभाव देखते है वह तो अपने मनमे ऐसे मान लेता है कि—आज मेरी तो आयु आ चुकी ॥ ३ ॥ फिर जनक राजाने आकर दंडवत् प्रणाम किया और सीताको बुलाकर मुनिको प्रणाम कराया ॥ ४ ॥

आशिष दीन्ह सखी हरषानी ॥ निजसमाज लै गईं सयानी ॥ ५ ॥ ❀
विश्वामित्र मिले पुनि आई ॥ पदसरोज मेले दोउ भाई ॥ ६ ॥ ❀

मुनिने सीताजीको आशीर्वाद दिया तब सयानी सखियां हर्षित होकर अपनी समाजके अन्दर ले गयीं ॥ ५ ॥ फिर विश्वामित्रजी आकर मिले और उन्होंने दोनों भाइयोंको मुनिके चरणारविंदोंमें डाल दिया ॥ ६ ॥

राम लषण दशरथके ढोटा ॥ दीन्ह अशीस जानि भल जोटा ॥ ७ ॥ ❀
रामहिँ चितय रहे थकि लोचन ॥ रूप अपार मारमदमोचन ॥ ८ ॥ ❀

और कहा कि—ये राम लक्ष्मण दशरथके पुत्र आपको प्रणाम करते हैं. विश्वामित्रजीके ये बचन सुन अच्छी जोड़ी देखकर उन्होंने उनको आशीर्वाद दिया ॥ ७ ॥ रामचन्द्रजीको देखते देखते मुनिके नेत्र थक रहे; क्योंकि प्रभुका अपार रूप कामदेवके मदको मोचन करनेवाला है ॥ ८ ॥

दोहा–बहुरि बिलोकि बिदेहसन, कहहु कहा अति भीर ॥ ❀
पूंछत जान अजानजिमि, व्यापेउ कोप शरीर ॥ २७१ ॥ ❀

जिनके शरीरमें क्रोध व्याप रहा था ऐसे परशुरामजीने फिर जनकराजाकी ओर देखकर जाननेपरभी अनजानकी भांति जनकराजासे कहा कि– हे राजा ! कहो यह बहुतसी भीड़ क्यों हो रही है ? ॥ २७१ ॥

समाचार कहि जनक सुनाये ॥ जेहि कारण महीप सब आये ॥ १ ॥ ❀
सुनत बचन फिरि अनत निहारे ॥ देखे चापखण्ड महि डारे ॥ २ ॥ ❀

तब जनकराजाने वे सब समाचार कह सुनाये कि, जिसवास्ते सब राजा लोग आये थे ॥ १॥ जनकके बचन सुनतेही मुनिने फिर दूसरी तर्फ देखा तौ पृथ्वीपर पड़े हुए धनुषके टुकडे देखे ॥ २ ॥

अति रिसि बोले बचन कठोरा ॥ कहु जड़ जनक धनुष केहिँ तोरा॥३॥❀
बेगि दिखाउ मूढतनु आजू ॥ उलटौं महि जहँलगि तव राजू ॥ ४ ॥ ❀

और देखतेही भारी क्रोध करके कठोर वचन बोले कि–हे जड़ (मूर्ख) जनक कह, यह धनुष किसने तोड़ा ? ॥ ३ ॥ हे मूर्ख ! या तौ जिसने धनुष तोड़ा है उसे जल्दी बतादे नहीं तो जहांतक तेरा राज है वहांतककी सब पृथ्वीको उलटपुलट कर दूंगा ॥ ४ ॥

अतिडर उतर देत नृप नाहीं ॥ कुटिल भूप हरषे मनमाहीं ॥ ५ ॥ ❀
सुर मुनि नाग नगर नर नारी ॥ शोचहिं सकल त्रास उर भारी ॥ ६ ॥ ❀

राजा जनकने डरके मारे कुछभी जबाब नहीं दिया. उसे देखकर कुटिल राजा मनमें बहुत प्रसन्न हुए ॥ ५ ॥ देवता, मुनि, नाग और नगरके स्त्री-पुरुष ये तमाम हृदयमें बहुत भयभीत होकर शोच करने लगे ॥ ६ ॥

मन पछिताति सीयमहतारी ॥ बिधि सवाँरि सब बात बिगारी ॥ ७ ॥ ❀
भृगुपतिकर सुभाव सुनि सीता ॥ अर्ध निमेष कल्पसम बीता ॥ ८ ॥ ❀

सीताजीकी माता मनमें पछताने लगी कि–हाय ! बिधाताने सुधार कर तमाम बात पीछी बिगाड़दी ॥७॥ सीताजीने परशुरामजीका स्वभाव सुना तौ उनका आधाक्षण कल्पके बराबर बीतने लगा ८

दोहा–सभय बिलोके लोग सब, जानि जानकी भीर ॥ ❀
हृदय न हर्ष विषाद कछु, बोले श्रीरघुबीर ॥ २७२ ॥ ❀

सब लोगोंको भयसहित देख और सीताजीकी विपत्को जानकर, जिनके मनमें हर्ष और विषाद कुछभी नहीं है ऐसे श्रीरामचंद्रजी बोले ॥ २७२ ॥

नाथ शम्भुधनुभंजनहारा ॥ होइहि कोउ यक दास तुम्हारा ॥ १ ॥ ❀
आयसु कहा कहिय किन मोही ॥ सुनि रिसाय बोले मुनि कोही ॥ २ ॥❀

---

१ अथवा हे जनक ! किसने यह जड़ यानी महाकठोर अथवा चेतनारहित धनुष तोड़ा ? अथवा किस जड़ यानी मुर्खने यह धनुष तोड़ा २ अथवा जड़ यह जनक राजाका विशेषण है.३ अथवा परशुरामजीहोने अति रिसवश होनेसे जड़वत् कठोर बचन कहा ४ अथवा सात्विक रीतिसे जनक राजाको जड़ यानी महा विरक्त कहा क्योंकि विषयी पुरुषोंकी दृष्टिसे महा विरक्तभी जड़वत् प्रतीत होता है. और तत्त्वसेभी महाविरक्तकी जड़संज्ञा वेदान्तमें कही है.कारण दोनों निर्द्वंद्व होते हैं.

कि-हे नाथ ! महादेवजीके धनुषको तोड़नेवाला तो कोई एक आपकाही दास होगा ॥ १ ॥ आपकी क्या आज्ञा है सो आप मुझे क्यों नहीं फरमाते ? यह बचन सुनकर क्रोध करके क्रोधी मुनि परशुरामजी बोले, कि सुनो ॥ २ ॥

सेवक सो जो करै सेवकाई ॥ अरिकरणी करि करिय लराई ॥ ३ ॥ ❋

सुनहु राम जेहि शिवधनु तोरा ॥ सहसबाहुसम सो रिपु मोरा ॥ ४ ॥ ❋

सेवक वही कहलाता है जो सेवा करता है और वैरीका काम करके तो लड़ाईही करनी चाहिये ॥ ३ ॥ हे राम ! सुनो. जिसने महादेवजीका धनुष तोड़ा है वह तो मेरा सहस्रार्जुनके जैसा परम शत्रु है ॥ ४ ॥

सो बिलगाइ बिहाइ समाजा ॥ नतु मारे जैहैं सब राजा ॥ ५ ॥ ❋

सुनि मुनिबचन लषण मुसुकाने ॥ बोले परशुधरहिं अपमाने ॥ ६ ॥ ❋

इसवास्ते या तो वह समाजको छोड़कर जल्दी अलग हो जावे नहीं तो उसके अपराधसे बिचारे सब राजा मारे जायँगे ॥ ५ ॥ परशुरामजीके ये बचन सुनकर लक्ष्मणजी मुसकाये और उनका अनादर करके बोले कि-॥ ६ ॥

बहु धनुहीं तोरेउँ लरिकाई ॥ कबहुँ न अस रिसि कीन्ह गुसाई ॥ ७ ॥ ❋

यहि धनुपर ममता केहि हेतू ॥ सुनि रिसाय कह भृगुकुलकेतू ॥ ८ ॥ ❋

हे मुनि ! हमने बचपनमें तो ऐसे २ बहुतसे धनुष[1] तोड़े तब तो आपने ऐसा क्रोध कभी नहीं किया था ॥ ७ ॥ अब इस धनुषपर आपकी ममता क्यों है ? यह बचन सुनकर क्रोध करके परशुरामजीने कहा कि-॥ ८ ॥

दोहा--रे नृपबालक कालबश, बोलत तोहिँ न सँभार ॥ ❋

धनुहींसम त्रिपुरारिधनु, बिदित सकल संसार ॥ २७३ ॥ ❋

अरे ! राजकुमार ! तू संभाल कर नहीं बोलता सो तू क्या कालके बश तो नहीं हो गया है ? यह महादेवजीका धनुष कि जिसको तमाम संसार जनता है, क्या वह दूसरे धनुषोंके बराबर ही है ? ॥ २७३ ॥

लषण कहा हँसि हमरे जाना ॥ सुनहु देव सब धनुष समाना ॥ १ ॥ ❋

का क्षति लाभ जीर्ण धनु तोरे ॥ देखा राम नयेके भोरे ॥ २ ॥ ❋

छुवत टूट रघुपतिहिँ न दोषू ॥ मुनि बिनुकाज करिय कत रोषू ॥ ३ ॥ ❋

तब लक्ष्मणने हँसकर परशुरामजीसे कहा कि-हे मुनि ! सुनो, हमारी समझमें तो सब धनुष बराबरही हैं ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीने तो इस धनुषको नयेके भरोसे देखा था, सो यदि वह पुराना धनुष टूट गया तो इसमें क्या हानि लाभ हुवा ? ॥ २ ॥ हे मुनि ! यह धनुष टूट गया, इसमें रामचन्द्रजीका रंचभी अपराध नहीं है; क्योंकि यह तो छूतेही टूट गया, इसको रामचंद्रजी क्या करें ? फिर आप नाहक क्रोध क्यों करते हो? ॥ ३ ॥

---

१ दशरथजी और परशुरामजीके परस्पर मित्रता थी जिससे परशुरामजी राजाओंको जीत उनके धनुष ला दशरथजीके यहां रखते, उन धनुषोंको ये खेलते खेलते तोड़ डालते इससे लक्ष्मणका कथन है कि पहले तो हमने आपके धनुष बहुत तोड़े हैं.

(क्षेपक)

छंद–तव जननीकर पाप पाप त्रिपुरासुरकेरा ॥ ❀
अपर नृपनकर पाप चाप चित चेति सबेरा ॥ ❀
रघुपतिभुजतीरथविषे तजेसि प्राण रतिहेतु त्यहिँ ॥ ❀
बिन समुझे रघुनाथपर करत रोष परितोष नहिँ ॥ १ ॥ ❀

हे मुनि ! यह धनुष महापापी था; क्योंकि इसमें आपकी माताके वधका पाप, दूसरा त्रिपुरासुर नाम दैत्यके वधका पाप और तीसरा निक्षत्री पृथ्वी करनेमें जो राजा मारे गये उनका पाप ऐसे अनेक पाप भरे हुए थे इसलिये इस धनुषने अपने मनमें विचार किया कि–यदि मैं रामचंद्रजीकी भुजारूप तीर्थमें जाकर मेरे प्राणोंका त्याग करूं तो मेरा सर्व पाप निवृत्त होजाय. ऐसे इसने अपने उद्धारके अर्थ अपनी खुशीसे देहका परित्याग किया है सो हे मुनि ! आप विना समझे रामचंद्रजीपर क्रोध क्यों करते हो ? संतोष क्यों नहीं रखते? ॥ १ ॥ ॥ इति ॥

बोले चितय परशुकी ओरा ॥ रे शठ सुनेसि प्रभाव न मोरा ॥ ४ ॥ ❀
बालक जानि बधौं नहिँ तोहीं ॥ केवल मुनि जड़ जानेसि मोहीं ॥ ५ ॥ ❀
बालब्रह्मचारी अतिकोही ॥ बिश्वबिदित क्षत्रियकुलद्रोही ॥ ६ ॥ ❀

लक्ष्मणके ये बचन सुन, अपने परशुकी ओर देखकर परशुरामजी बोले कि–अरे शठ ! तूने मेरा प्रभाव नहीं सुना ॥ ४ ॥ हे मूर्ख ! मैं तुझको केवल बालक जानकर नहीं मारता हूं. अरे जड़ ! क्या तू मुझको सिर्फ मुनिही जानता है ? ॥ ५ ॥ हे मूर्ख ! मैं सिर्फ मुनिही नहीं हूं. मै महा क्रोधी बाल ब्रह्मचारी हूं. मैं क्षत्रियकुलका बैरी हूं. यह बात सब जगत् जानता है ॥ ६ ॥

भुजबल भूमि भूपबिनु कीन्हे ॥ बिपुल बार महिदेवन दीन्हे ॥ ७ ॥ ❀
सहसबाहुभुजछेदनहारा ॥ परशु बिलोकु महीपकुमारा ॥ ८ ॥ ❀

मैंने अपने भुजबलसे पृथ्वीको निक्षत्री करके बहुत बेर ब्राह्मणोंको दिया है ॥ ७ ॥ हे राजकुमार ! सहस्रार्जुनकी हजार भुजा काटनेवाले मेरे इस परशुको देख ॥ ८ ॥

दोहा–मातु पितुहिँ जनि शोचबश, करसि महीपकिशोर ॥ ❀
गर्भनके अर्भकदलन, परशु मोर अतिघोर ॥ २७४ ॥ ❀

हे राजपुत्र ! तू अपने माता पिताको शोचवश मतकर. अभिप्राय यह है कि–मैं तुझको मार डालूंगा तो तेरे माता पिता शोग करेंगे. मेरा यह परशु बड़ा भयंकर है. इसने कितनेही गर्भमेंके बालकोंको मारा है ॥ २७४ ॥

बिहँसि लषण बोले मृदुबानी ॥ अहो मुनीश महाभट मानी ॥ १ ॥ ❀
पुनि पुनि मोहिँ दिखाव कुठारा ॥ चहत उडावन फूँकि पहारा ॥ २ ॥ ❀

ये बचन सुन हँसकर लक्ष्मणने कोमल वाणीसे कहा कि–अहो ! मुनिराज ! आप तो बड़ा भटपनका मान रखते हो ॥ १ ॥ आप जो मुझको बारंबार परशु दिखाते हो सो क्या फूंकसे पहाड़ उड़ाना चाहते हो ? ॥ २ ॥

इहाँ कुम्हड़बतिया कोउ नाहीं ॥ जो तर्जनि देखत मरि जाहीं ॥ ३ ॥ ❋
देखि कुठार शरासन बाना ॥ मैं कछु कहा सहित अभिमाना ॥ ४ ॥ ❋

यहां कोई कुम्हड़ेकी बतिया (कच्चा छोटा फल) नहीं है जो तर्जनी (अंगूठेके पासकी अंगुली) अंगुलि देखतेही मर जाय यानी संकुचित हो जाय ॥ ३ ॥ और मैंने तो आपके पास परशु, धनुष और बाण देखे जिससे यह कुछ अभिमानके साथ बचन कहे है ॥ ४ ॥

भृगुकुल समुझि जनेउ बिलोकी ॥ जो कछु कहहु सहौं रिस रोंकी ॥ ५ ॥
सुर महिसुर हरिजन अरु गाई ॥ हमरे कुल इनपर न सुराई ॥ ६ ॥ ❋

अब आपका जनेऊ देखकर मैंने जान लिया है कि,आप भृगुवंशी हो सो अब आप जो कुछ कहेंगे वह सब मै क्रोधको रोंक कर सह लूंगा ॥ ५ ॥ हमारे कुलके लोग देव, ब्राह्मण, हरिभक्त और गौ इनपर शूरवीरपन नहीं जनाते ॥ ६ ॥

बधे पाप अपकीरति हारे ॥ मारतहूं पाँ परिय तुम्हारे ॥ ७ ॥ ❋
कोटि कुलिशसम बचन तुम्हारा ॥ वृथा धरहु धनु बाण कुठारा ॥ ८ ॥ ❋

कारण यह कि, इनको मारनेसे तो पाप और हारनेसे अपयश होता है. इसवास्ते आपको मारनेपरभी हमको तो आपके पावोंमें गिरनाही चाहिये ॥ ७ ॥ हे मुनि! आपका तो बचनही करोड़ों वज्रोंके बराबर है इसवास्ते आप धनुष, बाण और परशुको तो नाहक धारण करते हो ॥ ८ ॥

दोहा–जो बिलोकि अनुचित कहेउँ, सुनहु महामुनि धीर ॥ ❋
सुनि सरोष भृगुवंशमणि, बोले गिरा गँभीर ॥ २७५ ॥ ❋

हे धीरमहामुनि ! आप सुनिये. जिन शस्त्रोंको देखकर मैंने आपको अयोग्य बचन कहे. लक्ष्मणके ये बचन सुनकर परशुरामजी क्रोधसहित यह गंभीर वाणी बोले– ॥ २७५ ॥

कौशिक सुनहु मन्द यह बालक ॥ कुटिल कालबश निजकुलघातक ॥ १ ॥
भानुबंशराकेशकलंकू ॥ निपट निरंकुश अबुध अशंकू ॥ २ ॥ ❋

हे विश्वामित्रजी ! सुनिये. यह बालक बड़ा मूर्ख और कुटिल है. इसकी मौत नजदीक आ गयी है. यह अपने कुलका नाश करनेवाला है ॥ १ ॥ यह सूर्यवंशरूप चंद्रमामें कलंकरूप है. यह अत्यंतही निरंकुश है. इस मूर्खको किसीकी शंका नहीं है ॥ २ ॥

कालकवर होइहि क्षणमाहीं ॥ कहौं पुकारि खोरि मोहिँ नाहीं ॥ ३ ॥ ❋
तुम हटकहु जो चहहु उबारा ॥ कहि प्रताप बल रोष हमारा ॥ ४ ॥ ❋

मैं आपको पुकार कर कहता हूं कि–यदि यह चुप नहीं रहेगा तो अभी क्षणभरमें कालका कवल हो जायगा यानी मर जायगा. फिर आप मुझको उलाहना देंगे तो उसमें मेरा अपराध नहीं है ॥ ३ ॥ यदि आप इसको उबारना चाहते हो तो हमारा प्रताप, बल और क्रोध कहकर इसको हटक दो ॥ ४ ॥

लषण कहेउ मुनि सुयश तुम्हारा ॥ तुमहिँ अछत को बरणै पारा ॥ ५ ॥ ❋
अपने मुख तुम आपनि करणी ॥ बार अनेक भांति बहु बरणी ॥ ६ ॥ ❋

मुनिका यह बचन सुनकर लक्ष्मणने कहा कि–हे मुनि ! आपके बिराजते आपका सुयश

वर्णन करके कौन पार पा सकता है ? ॥ ५ ॥ क्योंकि आप अपनेही मुखसे अपना सुयश खूब अच्छी तरह कई बार बहुत वर्णन कर चुके हो ॥ ६ ॥

नहिँ संतोष तौ पुनि कछु कहहू ॥ जनिरिस रोंकि दुसह दुख सहहू ॥७॥ ❀
वीरवृत्ति तुम धीर अछोभा ॥ गारी देत न पावहु शोभा ॥ ८ ॥ ❀

और जो इतना कहनेपरभी आपको संतोष नहीं हुआ हो तौ फिर औरभी कुछ कह लीजिये. आप क्रोधको रोंक कर असह्य दुःख मत सहना ॥ ७ ॥ हे मुनि ! आपकी वीरपुरुषोंकी वृत्ति है .आप क्षोभ-रहित और धीर पुरुष हो सो गाली देते हुए आप शोभा नहीं पाते ॥ ८ ॥

दोहा-शूर समर करणी करहिँ, कहि न जनावहिँ आपु ॥ ❀
विद्यमान रण पाइ रिपु, कायर कथहिँ प्रलापु ॥ २७६ ॥ ❀

जो शूरवीर होते है वे काम करके दिखा देते है परंतु अपने मुहसे कहकर नहीं जनाते. शत्रुको संग्राममें मौजूद पाकर तौ बकवाद वे करते हैं कि, जो कायर होते है ॥ २७६ ॥

तुमकहँ काल हाँकि जनु लावा ॥ बार बार मोहिँ लागि बुलावा ॥ १ ॥ ❀
सुनत लषणके बचन कठोरा ॥ परशु सुधारि धरेउ कर घोरा ॥ २ ॥ ❀

आपको मानों कालने हो बुलाकर यहाँ लाया है.और आप मेरे वास्ते वारंवार कालको बुलाते हो ॥ १ ॥ ऐसे लक्ष्मणके कठोर बचन सुनतेही परशुरामजीने घोर परशुको सुधार कर अपने हाथमें लिया ॥ २ ॥

अब जनि देहु दोष मोहिँ लोगू ॥ कटुवादी बालक बधयोगू ॥ ३ ॥ ❀
बाल बिलोकि बहुत मैं बांचा ॥ अब यह मरणहार भा सांचा ॥ ४ ॥ ❀

और कहा कि-हे लोगो ! अब मुझको दोष मत देना, क्योंकि यह कडुआ बोलनेवाला बालक मारनेके योग्य है ॥ ३ ॥ मैंने तौ इसे बालक देखकर बहुत बचाया था परंतु अब तौ यह सचमुच मर-नेके योग्य हो गया है ॥ ४ ॥

कौशिक कहा क्षमिय अपराधू ॥ बालदोषगुण गणहिँ न साधू ॥ ५ ॥ ❀
कर कुठार मैं अकरणकोही ॥ आगे अपराधी गुरुद्रोही ॥ ६ ॥ ❀

मुनिके ये बचन सुनकर विश्वामित्रजीने कहा कि-आप इसका अपराध माफ कीजिये; क्योंकि संतलोग बालकके गुण अवगुणोंको नहीं गिनते ॥ ५ ॥ विश्वामित्रजीके ये बचन सुनकर परशुरा-मजीने कहा कि-अव्वल तौ मैं बे सबब क्रोध करनेवाला, दूसरा हाथमें परशु, तीसरा गुरुद्रोही अ-पराधी सामने खड़ा है ॥ ६ ॥

उतर देत छांड़ौं बिनु मारे ॥ केवल कौशिक शील तुम्हारे ॥ ७ ॥ ❀
नतु यहि काटि कुठार कठोरे ॥ गुरुहिँ उऋण होतेउँ श्रम थोरे ॥ ८ ॥ ❀

चौथा पीछा जबाब देता है कि इसको जो मैं विना मारे छोड़ता हूँ सो हे विश्वामित्रजी ! फकत आपके मुलाहजेसे छोड़ता हूं ॥ ७ ॥ नहीं तौ इसको कठोर कुठार यानी परशुसे काटकर थोड़े ही परिश्रममें गुरु (महादेवजी) के ऋणसे मैं उरिण हो जाता ॥ ८ ॥

दोहा–गाधिसुवन कह हृदय हँसि, मुनिहिँ हरिअरै सूझ ॥ ❋
अजगव खण्डेउ ऊख जिमि, अजहुँ न बूझ अबूझ ॥ २७७ ॥ ❋

विश्वामित्रजीने हँसकर अपने मनमें कहा कि–मुनिको अबतक हराही हरा सूझता है. महादेवजीका पिनाक धनुष ऊखकी तरह तोड़ दिया है तौभी अबतक बूझ अबूझही हो रहे है ॥ २७७ ॥

कहेउ लषण मुनि शील तुम्हारा ॥ को नहिँ जान विदित संसारा ॥ १ ❋
मातहिँ पितहिँ उऋण भये नीके ॥ गुरुऋण रहा शोच बड़ जीके ॥२॥ ❋

लक्ष्मणने कहा कि–हे मुनि ! आपका स्वभाव जगत जाहिर है सो उसे कौन नहीं जानता? ॥ १ ॥ आप माता पिताके ऋणसे तौ अच्छीतरह उरिण हो चुके परंतु अब गुरुका ऋण बाकी रहा सो उसका दिलमें बड़ा शोच है ॥ २ ॥

सो जनु हमरे माथे काढ़ा ॥ दिन चलि गयो ब्याज बहु बाढ़ा ॥ ३ ॥ ❋
अब आनिय व्यवहरिया बोली ॥ तुरत देउँ मैं थैली खोली ॥ ४ ॥

सो मैं जानता हूं कि. शायद हमारे ऊपर निकाला दीखे है और उसको तौ दिनभी बहुत हो गये इसलिये उसका ब्याज बहुत बढ़ गया होगा ॥ ३ ॥ सो इसका हिशाब करनेके लिये ब्यौहरिया यानी मालिकको आप बुला लेवें सो मैं थैली खोलकर आपको वो ऋण तुरंत चुका दूं ॥ ४ ॥

सुनि कटु बचन कुठार सुधारा ॥ हा हा कहि सब लोग पुकारा ॥ ५ ॥ ❋
भृगुवर परशु देखावहु मोही ॥ बिप्र बिचारि बचौं नृपद्रोही ॥ ६ ॥ ❋

लक्ष्मणके ये कटु बचन सुनकर परशुरामजीने अपना परशू सुधार कर तैयार किया उस समय तमाम लोग 'हा हा' शब्द कहकर पुकारने लगे ॥ ५ ॥ तब फिर लक्ष्मणने कहा कि–हे परशुरामजी ! आप मुझको बारंबार परशु दिखाते हो परंतु राजविद्रोही आपको मैं फकत ब्राह्मण जानकर छोड़ता हूं ॥ ६ ॥

मिले न कबहुँ सुभट रण गाढ़े ॥ द्विज देवता घरहिके बाढ़े ॥ ७ ॥ ❋
अनुचित कहि सब लोग पुकारे ॥ रघुपतिसैनहिँ लषण निवारे ॥ ८ ॥ ❋

हे मुनि ! आपको संग्राममें कहीं दृढ़ सुभट नहीं मिला इसीसे आप इतना जोर खाते हो लोकमें यह रीतिही है कि ब्राह्मण और देवता घरमेंही बलवान् होते हैं ॥ ७ ॥ लक्ष्मणके ऐसे बचन सुनकर सब लोग 'यह बात अनुचित है' ऐसे कहकर पुकारने लगे तब रामचन्द्रजीने लक्ष्मणको इशारेसे ही मनाकर दिया ॥ ८ ॥

दोहा–लषणउतर आहुतिसरिस, भृगुबरकोप कृशानु ॥ ❋
बढ़त देखि जलसम बचन, बोले रघुकुलभानु ॥ २७८ ॥ ❋

लक्ष्मणके बचन तौ आहुतिके सरीखे और परशुरामजीका कोप आगके समान अतएव वह अतिशय बढ़ने लगा तिसे देखकर रामचन्द्रजीने जलके समान शीतल बचन कहे. जैसे अग्नि आहुतिसे बढ़ जाती है तब जलसे शीतल करते हैं ऐसे प्रभुने सांत्व वचनसे कोपको शान्त किया ॥ २७८ ॥

नाथ करहु बालकपर छोहू ॥ शुद्ध दूध मुख करिय न कोहू ॥ १ ॥ *
जो पै प्रभुप्रभाव कछु जाना ॥ तौ कि बराबर करत अयाना ॥ २ ॥ *

प्रभु बोले कि–हे नाथ ! आप बालकपर कृपा करो. अभी तौ इसके ओठोंका दूधभी नहीं सूखा है अतएव इसको ज्ञान नहीं है सो आपको इसपर क्रोध नहीं करना चाहिये ॥ १ ॥ यदि यह आपका थोड़ा बहुतभी प्रताप जानता तौ क्या यह मूर्ख आपसे बराबरी करता ? ॥ २ ॥

जो लरिका कछु अनुचित करहीं ॥ गुरु पितु मातु मोदमन भरहीं ॥ ३ ॥ *
करिय कृपा शिशु सेवक जानी ॥ तुम समशील धीर मुनि ज्ञानी ॥ ४ ॥ *

किसी समय लड़का अनुचितभी कर बैठता है तोभी गुरु और माता पिता तौ उससे मनमें खुशही होते है ॥ ३ ॥ हे मुनि ! आप समशील, धीरजवान् और ज्ञानी हो सो इसको अपना सेवक और बालक जानकर इसकर कृपा करो ॥ ४ ॥

रामबचन सुनि कछुक जुड़ाने ॥ कहि कछु लषण बहुरि मुसुकाने ॥ ५ ॥ *
हँसत देखि नखशिख रिस ब्यापी ॥ राम तोर भ्राता बड़ पापी ॥ ६ ॥ *

रामचन्द्रजीके बचन सुनकर मुनि कुछ शीतल हुए इतनेमें लक्ष्मणजी कछु कहकर फिर मुसुकुराये ॥ ५ ॥ लक्ष्मणको हँसते देखतेही तौ मुनिके शरीरमें नखसे ले चोटीतक गुस्सा व्यापगया और मुनिने कहा कि–हे राम ! तेरा भाई बड़ा पापी है ॥ ६ ॥

गौर शरीर श्याम मनमाहीं ॥ कालकूटमुख पय मुख नाहीं ॥ ७ ॥ *
सहजटेढ़ अनुहरै न तोहीं ॥ नीच मीचसम लखै न मोहीं ॥ ८ ॥ *

यद्यपि इसका शरीर तौ गौरवर्ण है परंतु मनमें बड़ा मैला है और तूने कहा था कि-यह शुद्ध दूधमुख है सो हे राम ! यह तौ पयमुख नहीं है किंतु विषमुख है;क्योंकि जहरसे सारे बचन बोलता है ॥ ७ ॥ यह तौ स्वभावसेही बड़ा टेढ़ा है इसकी और तेरी प्रकृति एकसी किसी कदर नहीं है और आश्चर्यकी बात तौ यह है कि,यह नीच मीचके सदृश जो मैं खड़ा हूं तिसकीभी कान नहीं रखता ॥ ८ ॥

दोहा–लषण कहेउ हँसि सुनहु मुनि, क्रोध पापकर मूल ॥ *
जेहि बश जन अनुचित करहिँ, चरहिँ बिश्वप्रतिकूल ॥ २७९ ॥ *

ऋषिके ये बचन सुनकर लक्ष्मणने हँसकर कहा कि–हे मुनि ! सुनो. क्रोध पापका मूल है; क्योंकि यह मनुष्य जिसके वश होकर अनेक प्रकारके अनुचित कर्म करता है और जगतसे उलटा चलता है ॥ २७९ ॥

मैं तुम्हार अनुचर मुनिराया ॥ परिहरि कोप करिय अब दाया ॥ १ ॥ *
टूटचाप नहिँ जुरहि रिसाने ॥ बैठिय होइहि पाँय पिराने ॥ २ ॥ *

लक्ष्मणने कहा कि–हे मुनिराज ! मैं आपका अनुचर हूं पर आप क्रोधको तज कर अब दया करो ॥१॥ क्योंकि टूटा हुआ धनुष अब क्रोध करनेसे पीछा जुड़ नहीं सकता. आपके पांव दुखते होंगे सो आप बैठ जाइये ॥ २ ॥

जो अतिप्रिय तौ करिय उपाई ॥ जोरिय कोउ बड़ गुणी बलाई ॥ ३ ॥ ❋
बोलत लषणहिँ जनक डराहीं ॥ मष्ट करहु अनुचित भल नाहीं ॥ ४ ॥ ❋

और जो यह धनुष आपको अत्यंतही प्यारा है तो जो कोई इसको जोड़ देवे ऐसे बड़े गुणी आदमीको बुलाकर जुड़ानेका कोई उपाय करें ॥ ३ ॥ लक्ष्मणके ये बचन सुनकर जनक राजा बहुत डरा और उसने कहाभी कि अब चुप रहो अनुचित करना ठीक नहीं है ॥ ४ ॥

थर थर कांपहिँ पुरनरनारी ॥ छोट कुमार खोट अतिभारी ॥ ५ ॥ ❋
भृगुपति सुनि सुनि निर्भय बानी ॥ रिस तनु जरै होय बलहानी ॥ ६ ॥ ❋

इधर नगरके नरनारी थर थर कांप रहे है और कह रहे है कि–छोटे कुंवर बड़े खोटे हैं ॥ ५ ॥ और परशुरामजी ज्यो ज्यों लक्ष्मणकी निर्भय बाणी सुनते है त्यों त्यों उनका शरीर क्रोधसे जला जाता है और बल क्षीण होता जाता है ॥ ६ ॥

बोले रामहिँ देइ निहोरा ॥ बचै बिचारि बन्धु लघु तोरा ॥ ७ ॥ ❋
मन मलीन तनु सुन्दर कैसे ॥ बिषरसभरा कनकघट जैसे ॥ ८ ॥ ❋

फिर परशुरामजीने रामको बतला कर कहा कि–हे राम ! मैं सिर्फ आपका छोटा भाई समझ कर इसको छोड़ता हूं ॥ ७ ॥ और यह मनमें मैला होनेपरभी कैसा सुन्दर शरीर है कि जैसे विषके रसके भरा हुआ सुवर्णका घड़ा हो ॥ ८ ॥

दोहा–सुनि लक्ष्मण बिहँसे बहुरि, नयन तरेरे राम ॥ ❋
गुरुसमीप गवने सकुचि, परिहरि बाणी बाम ॥ २८० ॥ ❋

यह बचन सुनकर लक्ष्मण फिर हँसा तब रामचन्द्रजीने टेढ़ी नजरसे देखा. रामचन्द्रजीकी इच्छा न देखकर लक्ष्मण टेढ़ी बाणी बोलते थे सो छोड़कर गुरु (विश्वामित्रजी) के समीप सकुच कर चले गये ॥ २८० ॥

अतिबिनीत मृदु शीतल बाणी ॥ बोले राम जोरि युग पाणी ॥ १ ॥ ❋
सुनहु नाथ तुम सहजसुजाना ॥ बालकबचन करिय नहिँ काना ॥ २ ॥ ❋

उस समय रामचन्द्रजी दोनों हाथ जोड़ बड़ी विनीत कोमल व शीतल मधुर बाणीसे बोले कि– ॥ १ ॥ हे नाथ ! सुनो. आप स्वभावसे सुज्ञानी हो इसवास्ते आप बालकके बचनोंको कानमें मत करो यानी उसपर ध्यान मत दो ॥ २ ॥

बर्रै बालक एकसुभाऊ ॥ इनहिं न सन्त बिदूषहिं काऊ ॥ ३ ॥ ❋
तेहिँ नाहीं कछु काज बिगारा ॥ अपराधी मैं नाथ तुम्हारा ॥ ४ ॥ ❋

क्योंकि बर्रा (एक किस्मका जहरीला जीव) और बालकका एकसा स्वभाव होता है अतएव सन्तलोग इनमें किसी तरहका दोषभाव नहीं लगाते ॥ ३ ॥ हे नाथ ! इसने आपका कुछ कामभी नहीं बिगाड़ा है जो आपका अपराधी हूं तो मैंही हूं ॥ ४ ॥

कृपा कोप बध बन्ध गुसाईं ॥ मोपर करिय दासकी नाईं ॥ ५ ॥ ❋
कहिय बेगि जेहि बिधि रिसि जाई ॥ मुनिनायक सोइ करिय उपाई ॥ ६ ॥

हे स्वामी ! जो आपके कृपा, कोप, बंध वा मारना वगैरः करना हो तो दासकी भांति मुझपर कीजिये ॥ ५ ॥ हे मुनिराज ! जिस तरह आपका क्रोध जल्दी शान्त हो जावे वह कौन उपाय है सो हमें बताओ कि, जिससे वही उपाय किया जाय ॥ ६ ॥

कह मुनि राम जाइ रिस कैसे ॥ अजहुँ बन्धु तव चितव अनैसे ॥ ७ ॥ *
यहिके कण्ठ कुठार न दीन्हा ॥ तौ मैं कहा कोप करि कीन्हा ॥ ८ ॥ *

रामचन्द्रजीके ये बचन सुनकर मुनिने कहा कि–हे राम ! यह रिस कैसे शान्त होवे ? क्योंकि तेरा भाई अबलों मेरी ओर बुरी दृष्टिसेही देखता है ॥ ७ ॥ और जो मैंने इसके कण्ठपर कुठारका प्रहार नहीं किया तौ क्रोध करकेभी मैंने क्या किया ? ॥ ८ ॥

दोहा–गर्भ स्रवहिँ अवनिपरमणि, सुनि कुठारगति घोर ॥ *
परशु अछत देखौं जियत, बैरी भूपकिशोर ॥ २८१ ॥ *

अहो ! बड़ी आश्चर्यकी बात है कि, जिस कुठारकी घोर गतिको सुनकर राजाओंकी रानियोंके गर्भ पड़जाते थे उस परशुकी मौजूदगीमें मैं मेरे बैरी राजपुत्रको जीता देखता हूं यह क्या बात है ? ॥ २८१ ॥

बहैं न हाथ दहै रिस छाती ॥ भा कुठार कुंठित नृपघाती ॥ १ ॥ *
भयउ बाम बिधि फिरेउ सुभाऊ ॥ मोरे हृदय कृपा कस काऊ ॥ २ ॥ *

यह क्या हुआ ? क्रोधसे छाती जली जाती है और हाथ नहीं चलता और यह राजाओंका मारनेवाला कुठारभी कुंठित हो गया ॥ १ ॥ इससे तौ मालूम होता है कि–दैवही प्रतिकूल हो गया है जिससे मेरा स्वभावही बदल गया है. नहीं तौ मेरे हृदयमें किसी प्रकारकी कृपा कैसे आ सक्ती है ? ॥ २ ॥

आजु दैव दुख दुसह सहावा ॥ सुनि सौमित्रि बिहँसि शिर नावा ॥ ३ ॥ *
बाउ कृपामूरति अनुकूला ॥ बोलत बचन झरत जनु फूला ॥ ४ ॥ *

आज यह सब दुसह दुख विधाताने सहवाया है. परशुरामजीके ये बचन सुनकर लक्ष्मणने हंसकर प्रणाम किया और कहा कि– ॥ ३ ॥ धन्य हो महाराज आप, आप कृपाकी मूर्तिही हो, आपकी बड़ाई कहांलों करें ? अनुकूल बचन कहनेपरभी आप पीछे ऐसे बचन कहते हो कि, मानों फूल झड़ रहे हैं ॥ ४ ॥

जोपै कृपा जरै मुनिगाता ॥ क्रोध भये तनु राखु बिधिता ॥ ५ ॥ *
देखु जनक हठिबालक एहू ॥ कीन्ह चहत जड़ यमपुर गेहू ॥ ६ ॥ *

हे मुनि ! जब कृपा रखनेपरभी आपका शरीर जला जाता है तब क्रोध उत्पन्न भये पीछे तौ आपका शरीर शायद विधाता रक्खे तबही रहे क्योंकि कृपा शीतल होती है उससेभी यदि आपका शरीर जलता है तौ क्रोध तौ अग्निस्वरूप है उसके उत्पन्न होनेपर शरीर किस प्रकार बच सके?॥ ५ ॥ लक्ष्मणके ये बचन सुनकर परशुरामजीने कहा कि–हे जनक राजा ! देख,इस बालकको तू हटक दे; क्योंकि यह मूर्ख यमराजकी नगरीमें घर बनाना चाहता है यानी मरना चाहता है. जो आप हटक दोगे तब तौ ठीक नहीं तौ मैं मार डारूंगा ॥ ६ ॥

बेगि करहु किन आँखिन ओटा ॥ देखत छोट खोट नृपढोटा ॥ ७ ॥ ❋
बिहँसे लषण कहा मुनिपाहीं ॥ मूदिय आँखि कतहुँ कोउ नाहीं ॥ ८ ॥ ❋

इसको तुम मेरी आंखसे बचा क्यों नहीं लेते ? क्योंकि यह छोटा राजकुँवर बड़ी बुरी दृष्टिसे देखता है ॥ ७ ॥ मुनिके ये वचन सुनकर लक्ष्मण हँसा और बोला कि–हे मुनि ! आप अपनी आंख बंद कर लीजिये फिर आपके भावसे किधरभी कोईभी नहीं है ॥ ८ ॥

दोहा–परशुराम तब रामप्रति, बोले वचन सक्रोध ॥ ❋
शम्भुरासन तोरि शठ, करसि हमार प्रबोध ॥ २८२ ॥ ❋

लक्ष्मणके ऐसे कटु वचन सुनकर परशुरामजी क्रोधित होकर रामचन्द्रजीसे कहने लगे कि–हे शठ ! महादेवजीके धनुषको तोड़कर अब हमकोभी प्रबोध देता है ? ॥ २८२ ॥

बन्धु कहै कटु सम्मत तोरे ॥ तू छल बिनय करसि कर जोरे ॥ १ ॥ ❋
करु परितोष मोर संग्रामा ॥ नाहित छांडु कहाउब रामा ॥ २ ॥ ❋

यह तेरा भाई जो हमको कटु वचन कहता है सो सब तेरी राहसे कहता है और तू हाथ जोड़कर हमसे छलके साथ विनय करता है ॥ १ ॥ सो या तौ तू मुझसे संग्राम करके मुझको प्रसन्न कर या तू तेरा रामनाम कहलाना छोड़ दे ॥ २ ॥

छल तजि करहु समर शिवद्रोही ॥ बन्धुसहित नतु मारौं तोही ॥ ३ ॥ ❋
भृगुपति तमकि कुठार उठाये ॥ मन मुसुकाहिँ राम शिर नाये ॥ ४ ॥ ❋

हे शिवजीके द्रोही ! या तौ तू छल छोड़कर हमसे युद्ध कर नहीं तौ तेरे भाईके साथ तुझको मार डालूंगा ॥ ३ ॥ ऐसे कहकर परशुरामजीने क्रोधसे कुठारको उठाया उस समय रामचन्द्रजी शिर नवाय मुसुकराये ॥ ४ ॥

गुनहु लषणकर हमपर रोषू ॥ कतहुँ सुधाइहुते बड़ दोषू ॥ ५ ॥ ❋
टेढ़ जानि शंका सबकाहू ॥ बक्र चन्द्रमहिँ ग्रसै न राहू ॥ ६ ॥ ❋

और कहा कि–अपराध तौ लक्ष्मणका और क्रोध हमपर यह क्या बात है ? परंतु जगत्में जो कहते है कि–कहीं सीधा रहनेसेभी बड़ी खराबी होती है सो यह बात सत्य है ॥५॥ टेढ़ा जानकर सब कोई डर जाते है और सीधेको हर कोई दबाता है. देखो, राहुभी पूर्ण चन्द्रमाको ग्रसता है पर टेढ़े चन्द्रमाको कभी नहीं ग्रसता ॥ ६ ॥

राम कहेउ रिसि तजिय मुनीशा ॥ कर कुठार आगे यह शीशा ॥ ७ ॥ ❋
जेहि रिसि जाइ करिय सोइ स्वामी ॥ मोहिँ जानि आपन अनुगामी ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजीने मुनिको क्रोध बढ़ता देखकर कहा कि–हे मुनीश ! आप क्रोधको त्याग दीजिये; लीजिये यह कुठार तौ आपके हाथमें है और मेरा शिर आपके आगे है अब जहांसे काटना हो वहांसे काट डालिये ॥ ७ ॥ हे स्वामी ! मुझको आपका सेवक जानकर जिस तरह आपका क्रोध शांत हो वही उपाय करो ॥ ८ ॥

दोहा–प्रभुहिँ सेवकहिँ समर कस, तजहु बिप्रबर रोष ॥ ❋
बेष बिलोकि कहेसि कछु, बालकहूँ नहिँ दोष ॥ २८३ ॥ ❋

हे विप्रवर ! आप क्रोध क्यों नहीं छोड़ते, भला मालिक और नोकरके संग्राम कैसे हो सक्ता है ? और जो कुछ लक्ष्मणने आपको कह दिया सो आपको पहँचाना नहीं जिससे कह दिया था; क्योंकि आपका वेष देखकर उसको भ्रांति हो गयी थी इसमें बालककाभी क्या दोष है ? आदमी हमेशा चूकही जाते है ॥ २८३ ॥

देखि कुठारबाणधनुधारी ॥ भै लरिकहिँ रिस बीर बिचारी ॥ १ ॥ *
नाम जान पै तुमहिँ न चीन्हा ॥ बंशसुभाव उतर तेहिँ दीन्हा ॥ २ ॥ *

हे प्रभु ! आपको कुठार और धनुष बाण धरे हुए देखकर कोई बीर पुरुष है ऐसे जानकर लड़केको रोष आगया था ॥ १ ॥ क्योंकि आपका नाम तो जानता था परंतु आपको पहँचानता नहीं था तिससे उसने वंशके स्वभावके अनुसार उत्तर दिया था ॥ २ ॥

जो तुम अउतेउ मुनिकी नाईं ॥ पदरज शिर शिशु धरत गुसाईं ॥ ३ ॥ *
क्षमहु चूक अनजानतकेरी ॥ चहिय विप्रउर कृपा घनेरी ॥ ४ ॥ *

हे प्रभु ! जो आप मुनिकी तरह आते तौ यह बालक आपके चरणरजको शिरसे धारण करता ॥ ३ ॥ यह अनजान था इससे चूक पड़ गयी है सो आप क्षमा करो. ब्राह्मणोंके अन्तःकरणमें तौ बड़ी कृपा होनी चाहिये ॥ ४

हमहिँ तुमहिँ सरिवरि कस नाथा ॥ कहहु तौ कहां चरण कहँ माथा ॥५॥
राममात्र लघु नाम हमारा ॥ परशुसहित बड़ नाम तुम्हारा ॥ ६ ॥ *

हे नाथ ! हमारी और आपकी बराबरी कैसे हो सक्ती है ? फरमावें,चरण तौ कहां और शिर कहां? शिर और पांव बराबर कभी नहीं हो सक्ते. आप तौ शिर हो और हम पांव है ॥ ५ ॥ दूसरा मेरा नाम तौ केवल दो अक्षरोंका "राम" इतनाही है और आपका नाम तौ "परशुराम" इतना बड़ा लंबा चौंड़ा है ॥ ६ ॥

देव एकगुण धनुष हमारे ॥ नवगुण परम पुनीत तुम्हारे ॥ ७ ॥ *
सब प्रकार हम तुमसन हारे ॥ क्षमहु बिप्र अपराध हमारे ॥ ८ ॥ *

हे देव ! हमारे धनुषमें तौ सिर्फ एकही गुण यानी डोरी है और आपके नव गुण ? यानी नौ डोरीवाला परम पवित्र यज्ञोपवीत है ॥ ७ ॥ अब विचारें कहां तौ एक गुण और कहां नौ गुण? हे विप्र ! हम आपसे सब प्रकारसे हारे. अब आप हमारा अपराध क्षमा करो ॥ ८ ॥

दोहा--बार बार मुनि बिप्र बर, कहा रामसन राम ॥ *
बोले भृगुपति सरुष होइ, तुहूँ बन्धुसम बाम ॥ २८४ ॥ *

रामचन्द्रजीने बारंबार परशुरामजीसे मुनि ! विप्रवर ! इत्यादि बचन कहे जिससे वे क्रोधित होकर बोले कि–हे राम ! तू भी तेरे भाईके जैसे ठेढ़ा ही है ॥ २८४ ॥

निपटहिँ द्विज करि जानेहु मोहीं ॥ मैं जस बिप्र सुनाऊँ तोहीं ॥ १ ॥ *
चाप स्रुवा शर आहुति जानू ॥ कोप मोर अति घोर कृशानू ॥ २ ॥ *

हे राम ! क्या तू मुझको बिलकुल ब्राह्मण ही समझता है ? जैसा मैं ब्राह्मण हूं वैसा मैं तुझ-

से कहता हूं सो सुन ॥ १ ॥ ब्राह्मणके पास सुवा वगैरः होते है सो मेरे पास यह धनुषही तो सुवा है बाण आहुति है मेरा महाघोर जो क्रोध है वह अग्नि है ॥ २ ॥

समिध सेन चतुरंग सुहाई ॥ महामहीप भये पशु आई ॥ ३ ॥ ❀
मैं यहि परशु काटि बलि दीन्हा ॥ समरयज्ञ जग कोटिन कीन्हा ॥ ४ ॥ ❀

सुन्दर चतुरंगिणी सेना होमनेकी समिधियां हैं. बड़े बड़े राजा उसमें पशु होकर आये हैं ॥ ३ ॥ मैंने इस परशुसे काटि काटिकर बहुतसी बलि दी है और जगतमें युद्धरूप कई करोड़ों यज्ञ किये है॥४॥

मोर प्रभाव विदित नहिँ तोरे ॥ बोलसि निदरि विप्रके भोरे ॥ ५ ॥ ❀
भंजेउ चाप दाप बड़ बाढ़ा ॥ अहमिति मनहुँ जीति जग ठाढ़ा ॥ ६ ॥ ❀

तू मेरे प्रभावको नहीं जानता इसीसे ब्राह्मणके भ्रमसे अनादर करके मुझको ये बचन कहता है ॥ ५ ॥ तूने जो धनुष तोड़ डारा जिससे तेरे घमंड बहुत बढ़ गया है और ऐसा अहंकार आगया है कि–मानों मैं जगत्को जीतकर खड़ा हूं ॥ ६ ॥

राम कहा मुनि कहहु बिचारी ॥ रिसि अति बड़ि लघु चूक हमारी ॥ ७ ॥ ❀
छुवतहि टूट पिनाक पुराना ॥ मैं केहि हेतु करौं अभिमाना ॥ ८ ॥ ❀

परशुरामजीके ये बचन सुनकर रामचन्द्रजीने कहा कि–हे मुनि! आप विचार कर कहो क्योंकि हमारा अपराध तौ बहुत कम है और आपका क्रोध बहुत बढ़ रहा है ॥ ७ ॥ आप फर्मात हो कि, धनुष तोड़नेसे तुझको अभिमान आ गया है सो मैं इस बातका किस हेतुसे अभिमान करूं? क्योंकि यह पुराना पिनाक धनुष तौ छूतेही टूट गया इसमें न तौ कोई अभिमानकी बात है और न हमारा इतना बड़ा अपराध है ॥ ८ ॥

दोहा–जो हम निदरहिँ बिप्र बर, सत्य सुनहु भृगुनाथ ॥ ❀
तौ अस को जग सुभट जेहि, भयबश नावहिँ माथ ॥ २८५ ॥ ❀

हे भृगुनाथ! जो हम विप्रवर कहकर आपका अनादर करते है तौ पीछे सची बात सुनो आप जानते हो कि, जगत्में ऐसा कौन सुभट है कि जिससे डरकर हम लोग उसको शिर झुकावें ॥ २८५ ॥

देव दनुज भूपति भट नाना ॥ समबल अधिक होउ बलवाना ॥ १ ॥ ❀
जो रण हमहिँ प्रचारय कोऊ ॥ लरहिँ सुखेन काल किन होऊ ॥ २ ॥ ❀

हे मुनि! देवता, दैत्य, राजा वा और कोई सुभट चाहे हमारे बराबर बलवाला हो चाहे अधिक बलवाला होवे ॥ १ ॥ जो कोई हमको रणमें बुलावे तौ हम उससे अनायास लड़ेंगे. चाहे ललकारनेवाला खुद काल क्यों न हो ॥ २ ॥

क्षत्रियतनु धरि समर सकाना ॥ कुलकलंक तेहिँ पामर जाना ॥ ३ ॥ ❀
कहौं सुभाव न कुलहिँ प्रशंसी ॥ कालहु डरहिँ न रण रघुबंसी ॥ ४ ॥ ❀

जो मनुष्य क्षत्रियशरीर पाकर युद्धमें डर जाय उसको कुलमें कलंकरूप और पामर समझना चाहिये ॥ ३ ॥ मैं जो यह बात कहता हूं सो वंशकी प्रशंसा करके नहीं कहता हूं किंतु स्वभावसे कहता हूं कि रघुवंशी रणमें कालसेभी नहीं डरते ॥ ४ ॥

बिप्रबंशकी अस प्रभुताई ॥ अभय होय जो तुमहिँ डराई ॥ ५ ॥ ❀
सुनि मृदु गूढ़ बचन रघुपतिके ॥ उघरे पटल परशुधर मतिके ॥ ६ ॥ ❀

हे मुनि! ब्राह्मणकुलकी यह प्रभुता तौ सदा बनिही है कि–जो आपसे डरता रहता है वह सदा निर्भय होता है ॥ ५॥ रामचन्द्रजीके ऐसे कोमल और गूढ़ार्थ बचन सुनकर परशुरामजीकी बुद्धिके कपाट खुल गये ॥ ६ ॥

राम रमापतिकर धनु लेहू ॥ खैंचहु मोर मिटै सँदेहू ॥ ७ ॥ ❀
देत चाप आपुहि चढ़ि गयऊ ॥ परशुराममन बिस्मय भयऊ ॥ ८ ॥ ❀

जिससे रामचन्द्रजीको पुरुषोत्तम स्वरूप जानकर परशुरामजीने कहा कि–हे राम! यह विष्णुभगवानका धनुष लेवो और खींचो जिससे मेरा संदेह निवृत्त होजाय ॥ ७ ॥ ऐसे कहकर परशुरामजीने विष्णुभगवानका धनुष रामचन्द्रजीके हाथमें दिया सो वह धनुष हाथमें देतेही अपने आप चढ़ गया तब तौ परशुरामजीके मनमें बड़ा आश्चर्य हुआ ॥ ८ ॥

दोहा–जाना रामप्रभाव तब, पुलकफुल्लितगात ॥ ❀
जोरि पाणि बोले बचन, प्रेम न हृदय समात ॥ २८६ ॥ ❀

और उन्होंने रामचन्द्रजीका प्रभाव जान लिया जिससे आनंदके मारे उनका शरीर पुलकित होकर प्रफुल्लित हो गया और प्रेम हृदयके अंदर नहीं समया. उस अवसरमें हाथ जोड़कर परशुरामजीने कहा कि–॥ २८६ ॥

जय रघुबंशबनजबनभानू ॥ गहनदनुजकुलदहनकृशानू ॥ १ ॥ ❀
जय सुरबिप्रधेनुहितकारी ॥ जय मदमोहकोहभ्रमहारी ॥ २ ॥ ❀

हे रघुकुलरूप कमलवनको प्रफुल्लित करनेके लिये सूर्य! आपकी जय हो. हे गहन दानवकुलको भस्म करनेके लिये अग्निस्वरूप! आपकी जय हो ॥ १ ॥ हे देव ब्राह्मण गौवनके प्रतिपालक! आपकी जय हो. हे मद, मोह, क्रोध और भ्रमके मिटानेहारे! आपकी जय हो ॥ २ ॥

बिनयशील करुणागुणसागर ॥ जयति बचनरचना अति नागर ॥ ३ ॥ ❀
सेवकसुखद सुभग सब अंगा ॥ जय शरीर छबि कोटि अनंगा ॥ ४ ॥ ❀

हे विनयशील! हे कृपासिन्धु! हे गुणोंके सागर! हे वचनरचनामें अति प्रवीण! आपकी जय हो ॥ ३ ॥ हे भक्तजनोंको सुख देनेहारे! आपकी जय हो. जिनके सर्व अवयव अतिकमनीय हैं और करोड़ों कामदेवोंके समान जिसके शरीरकी छबि है ऐसे सुन्दरस्वरूप हे प्रभु! आपकी जय हो ॥ ४ ॥

करौं कहा मुख एक प्रशंसा ॥ जय महेशमनमानसहंसा ॥ ५ ॥ ❀
अनुचित बहुत कहेउँ अज्ञाता ॥ क्षमहु क्षमामन्दिर दोउ भ्राता ॥ ६ ॥ ❀

मेरे मुख एक है इसवास्ते मैं आपकी क्या प्रशंसा करूं? क्योंकि सहस्र मुखवाले शेषजीभी आपके गुणोंकी प्रशंसा करते २ पार नहीं पाये हैं. हे महादेवके मनरूप मानसरोवरके हंस! आपकी जय हो ॥ ५ ॥ हे प्रभु! मैंने अनजानमें बहुत कुछ अनुचित बचन कहे हैं सो हे क्षमाके धाम प्रभु! आप दोनों भाई मेरे अपराधोंको मुआफ करो ॥ ६ ॥

कहि जय जय जय रघुकुलकेतू ॥ भृगुपति गये बनहिं तपहेतू ॥ ७ ॥ ❋
अपभय कुटिल महीप डराने ॥ उठि उठि कायर गवहिं पराने ॥ ८ ॥ ❋

हे रघुकुलके केतुरूप ! आपकी जय हो. जय हो. जय हो. कवि कहता है कि—परशुरामजी ऐसे कह कर तपस्या करनेके वास्ते वनमें चले गये ॥ ७ ॥ उस समय कुटिल राजा तो आपनेही डरसे डर गये और जो कायर थे वे सब उठ उठ कर भाग गये ॥ ८ ॥

दोहा—देवन दीन्ही दुन्दुभी, प्रभुपर बर्षहिं फूल ॥ ❋
हरषे पुरनरनारि सब, मिटा मोहमय शूल ॥ २८७ ॥

इस अच्छे अवसरको पाकर देवताओंने दुंदुभि बजाई और प्रभुपर फूलोंकी बरसा करी. तमाम नगरके नरनारी बड़े प्रसन्न हुए. सबका मोह भय दुःख दूर हो गया ॥ २८७ ॥

अति गहगहे बाजने बाजे ॥ सबहिं मनोहर मंगल साजे ॥ १ ॥ ❋
यूथ यूथ मिलि सुमुखि सुनयनी ॥ करहिं गान कल कोकिलबयनी ॥ २ ॥

जब परशुरामजी सिधारे और कुटिल नृप पलायमान हो गये तब जनकराजाके पुरमें अति गह गहे बाजे बाजने लगे सब लोगोंने अपने २ घरोंमें मंगलकी साभा साजी ॥ १ ॥ जिनकी कोकिलाकीसी मधुर वाणीहै, सुन्दर जिनके नेत्र है और सुन्दर जिनके मुख हैं ऐसी नगरकी स्त्रियां यूथके यूथ मिल, सुन्दर गान कर रही है ॥ २ ॥

सुख बिदेहकर बर्णि न जाई ॥ जन्मदरिद्र मनहुँ निधि पाई ॥ ३ ॥ ❋
बिगतत्रास भइ सीय सुखारी ॥ जनु बिधुउदय चकोरकुमारी ॥ ४ ॥ ❋

उस समयका जनक राजाका सुख कुछ कहा नहीं जा सक्ता; क्योंकि मानों जन्मदरिद्रीको निधि मिल गयी हो तौ उसका सुख जैसे अकथनीय होता है वैसे वह सुख अकथनीय था ॥ ३ ॥ सीताका त्रास मिट गया और वह कैसी सुखी हुई कि मानों चन्द्रमाके उदय होनेसे चकोरकी कन्या आल्हादित होती है ॥ ४ ॥

जनक कीन्ह कौशिकहिं प्रणामा ॥ प्रभुप्रसाद धनु भंजेउ रामा ॥ ५ ॥ ❋
मोहिं कृतकृत्य कीन्ह दोउ भाई ॥ अब जो उचित सो कहिय गुसांई ॥ ६ ॥

ऐसे परम आनंदित होकर राजा जनकने विश्वामित्रजीको प्रणाम किया और कहा कि—हे प्रभु ! आपकी कृपासे रामने धनुष तोड़ा है ॥ ५ ॥ इन दोनों भाइयोंने मेरी प्रतिज्ञा पूर्ण करके आज मुझको कृतकृत्य किया है सो हे स्वामो ! अब क्या करना योग्य है सो कहो ॥ ६ ॥

कह मुनि सुनु नरनाह प्रबीना ॥ रहा बिबाह चाप आधीना ॥ ७ ॥ ❋
टूटतही धनु भयेउ बिबाहू ॥ सुर नर नाग बिदित सबकाहू ॥ ८ ॥ ❋

जनकके ये वचन सुनकर मुनिने कहा कि—हे राजा ! बिवाह तौ केवल धनुषके आधीन था ॥ ७ ॥ सो धनुष टूटतेही वह तौ होही चुका है सो इस बातको देवता, मनुष्य और नाग सब कोई जानते है ॥ ८ ॥

दोहा— तदपि जाइ तुम करहु अब, यथा बंशव्यवहार ॥ ❋
बूझि बिप्र कुलवृद्ध गुरु, बेदबिदित आचार ॥ २८८ ॥ ❋

तोभी हे राजा ! अब तुम जाकर वैसा करो जैसा तुम्हारे कुलका व्यवहार है. सो तुम जाओ. ब्राह्मण, कुल, वृद्ध और गुरुनको पूछकर वेदविहित रीतिसे इनका विवाह करो ॥ २८८ ॥

दूत अवधपुर पठवहु जाई ॥ आनै नृप दशरथहिँ बुलाई ॥ १ ॥ ❀

मुदित राउ कहि भलेहिँ कृपाला ॥ पठये दूत अवध तेहि काला ॥ २ ॥ ❀

प्रथम तो तुम अयोध्याको दूत भेजो. जो जाकर राजा दशरथको बुला लावें ॥ १ ॥ विश्वामित्रजीके ये बचन सुनकर आनंदके साथ जनकने कहा कि—हे दयालु ! बहुत अच्छा. और उसी समय अवधको दूत भेजे ॥ २ ॥

बहुरि महाजन सकल बुलाये ॥ आइ सबन सादर शिर नाये ॥ ३ ॥ ❀

हाट बाट मन्दिर पुर बासा ॥ नगर सँवारहु चारिहु पासा ॥ ४ ॥ ❀

फिर राजा जनकने तमाम महाजनोंको बुलाया. सबने आकर आदरसहित राजाको प्रणाम किया ॥ ३ ॥ राजाने उनको हुकम दिया कि—आप लोग जाओ चौहटे, बाजार, मार्ग, घर और देवालय जो नगरके चारों ओर है उनको अच्छीतरह संवारो और साजो ॥ ४ ॥

हर्षि चले निज निज गृह आये ॥ पुनि परिचारक बोलि पठाये ॥ ५ ॥ ❀

रचहु बिचित्र बितान बनाई ॥ शिर धरि बचन चले सचुपाई ॥ ६ ॥ ❀

राजाकी यह आज्ञा पाकर सब लोग अपने २ घर आये और उन्होंने वैसाही किया. फिर राजाने अपने सेवकोंको बुलाया ॥ ५ ॥ और उनको कहकर भेजा कि—तुम लोग जाओ अनेक प्रकारके चित्र विचित्र वितान (मंडप) बनाओ. ये लोगभी राजाकी आज्ञा शिरपर धर बड़े चोपके साथ चले ॥ ६ ॥

पठये बोलि गुणी तिन्ह नाना ॥ जे बितानबिधिकुशल सुजाना ॥ ७ ॥ ❀

बिधिहिँ बन्दि तिन्ह कीन्ह अरंभा ॥ रचे कनककदलीके थंभा ॥ ८ ॥ ❀

फिर उन्होंने देशदेशके कई गुणी शिल्पकारोंको बुला भेज २ कर बुलाया, कि जो वितान बनानेमें बड़े चतुर और होश्यार थे ॥ ७ ॥ उन्होंनेभी वहां आकर विधाताको वंदन करके वितान बनाना प्रारंभ किया. तहां सुवर्णकदलीके खंभ बनाये ॥ ८ ॥

दोहा—हरित मणिनके पत्र फल, पद्मरागके फूल ॥ ❀

रचना देखि बिचित्र अति, मन बिरंचिकर भूल ॥ २८९ ॥ ❀

पन्नेके पत्ते और फल बनाये. माणिकके फूल बनाये. उन कारीगरोंने ऐसे विचित्र रचना रची कि जिसको देखकर ब्रह्माजीके मनमेंभी भ्रम हो गया ॥ २८९ ॥

बेणु हरितमणिमय सब कीन्हे ॥ सरल सपर्ण परहिँ नहिँ चीन्हे ॥ १ ॥ ❀

कनककलित अहिबेलि बनाई ॥ लखि नहिँ परै सुवर्ण सुहाई ॥ २ ॥ ❀

मंडपमें जितने बांस थे उतने सब पन्नोंके बनाये गये थे, वे बांस ऐसे सीधे और इकरंगे थे कि पहँचाने नहीं जाते थे कि ये असली है या नकली ॥ १ ॥ और उनको बांधनेके वास्ते सुवर्णकी नागवेलि बनायी गयी थी वोभी ऐसी सुन्दर और इकरंगी थी कि किसीकदर पहिचानी नहीं जाती थी ॥ २ ॥

तेहिके रचि पचि बंध बनाये ॥ बिच बिच मुक्तादाम सुहाये ॥ ३ ॥ ❋
माणिक मरकत कुलिश पिरोजा ॥ चीरकोर पचि रचेउ सरोजा ॥ ४ ॥ ❋

उसको कस कसके और पच्चीकारी करके (गूंथके) बंध बनाये थे. बीच बीचमें सुन्दर मोतियोंकी मालायें लगायी गयी थीं ॥ ३ ॥ माणिक, नीलमणि, हीरा और पिरोजा इनके चीर चीर कर और पच्ची कर कर कमल बनाये थे ॥ ४ ॥

किये भृङ्ग बहुरंग बिहंगा ॥ गुंजहिँ कूजहिँ पवनप्रसंगा ॥ ५ ॥ ❋
सुरप्रतिमा खम्भन गढ़ि काढ़ि ॥ मंगल द्रव्य लिये सब ठाढ़े ॥ ६ ॥ ❋
चौके भांति अनेक पुराये ॥ सिन्दुरमणिमय सहज सुहाये ॥ ७ ॥ ❋

मणियोंके भ्रमर और अनेक प्रकारके विचित्रवर्ण पक्षी बनाये गये थे. जो पवनके सहारे गुंजते थे और मधुर बोलते थे ॥ ५ ॥ खंभोंके अन्दर खोद खोद कर देवताओंकी प्रतिमायें बनायीं गई थीं. जो सब मांगलिक पदार्थ लिये खड़ी थीं ॥ ६ ॥ और नीचे मणिमय भूमिमें सहज सुन्दर गज-मोतियोंके अनेक प्रकारके चौक पुराये है ॥ ७ ॥

दोहा--सौरभ पल्लव सुभग सुठि, किये नीलमणि कोर ॥ ❋
हेमबौर मरकतघवँरि, लसत पाटमय डोर ॥ २९० ॥ ❋

नीलमणिको चीरकोर कर सुन्दर और श्रेष्ठ आमके पत्ते बनाये गये थे. सुवर्णके बौर और नीलमणिकी छोटी छोटी अंबियोंकी गुहरियोंके गुच्छे बनाकर रेशमकी डोरीमें गूंथकर लटकाये गये थे ॥ २९० ॥

रचे रुचिर बर बन्दनवारे ॥ मनहुँ मनोभवफंद सँवारे ॥ १ ❋
मंगलकलश अनेक बनाये ॥ ध्वज पताक पट चमर सुहाये ॥ २ ॥ ❋

जो सुन्दर अच्छी बन्दनवारें बनायी गयी थीं वे ऐसी मालूम होती थीं कि, मानों कामदेवने अपने फंद ही सँवार रक्खे है ॥ १ ॥ अनेक मांगलिक कलश बनाये गये थे, चारों ओर ध्वजा पताका अमूल्य वस्त्र और चमर शोभायमान हो रहे थे ॥ २ ॥

दीप मनोहर मणिमय नाना ॥ जाइ न बर्णि बिचित्र बिताना ॥ ३ ॥ ❋
जेहि मण्डप दुलहिनि बैदेही ॥ सो बरणै अस मति कबि केही ॥ ४ ॥ ❋

और प्रकाशके वास्ते अनेक मणिमय मनोहर दीप बनाये गये थे. वह मंडप ऐसा विचित्र बना कि- जिसका बर्णन किया नहीं जा सकता ॥ ३ ॥ कवि कहता है कि--जिस मंडपके तले दुलहिनि सीताजी बैठी थी उस मंडपका वर्णन करे ऐसी बुद्धि किस कविकी है ! अर्थात् कोई-भी कवि उसका वर्णन नहीं कर सक्ता ॥ ४ ॥

दूलह राम रूपगुणसागर ॥ सो बितान तिहुँ लोकउजागर ॥ ५ ॥ ❋
जनकभवनकी शोभा जैसी ॥ गृह गृह प्रति पुर देखिय तैसी ॥ ६ ॥ ❋

रूप और गुणोंके सागर श्रीरामचन्द्रजीसे दूल्हे जिस मंडपमें विराजे थे वह मंडप त्रिलोकीमें बड़ा उजागर है ॥ ५ ॥ जैसी जनकके घरकी शोभा थी वैसी शोभा नगरमेंभी घरघरमें दीख रही थी ॥ ६ ॥

जेहिँ तिरहुति तेहि समय निहारी ॥ तेहि लघु लगे भुवन दशचारी ॥ ७ ॥
जो सम्पदा नीचगृह सोहा ॥ सो बिलोकि सुरनायक मोहा ॥ ८ ॥ ❀

उस समय तिरहुत (जनकका देश) को जिसने देखा था उसको चौदहहू लोक तुच्छ मालूम होते थे ॥ ७ ॥ उस समय जनकके नगरमें नीचके द्वार जो शोभा थी उसको देखकर इंद्र आप मोहित होता था ॥ ८ ॥

दोहा– बसै नगर जेहि लक्ष्मि करि, कपटनारिबरबेष ॥ ❀
तेहि पुरकी शोभा कहत, सकुच शारदा शेष ॥ २९१ ॥ ❀

जिस नगरके भीतर साक्षात् लक्ष्मीजी कपटसे सुन्दर स्त्रीका वेष बनाकर विराजती थीं उस पुरकी शोभा कहते २ शारदा और शेषजीभी संकुचित होते है तब औरकी तो बात ही क्या ? ॥ २९१ ॥

पहुँचे दूत रामपुर पावन ॥ हर्षे नगर बिलोकि सुहावन ॥ १ ॥ ❀
भूपद्वार तिन खबरि जनाई ॥ दशरथ नृप सुनि लिये बुलाई ॥ २ ॥ ❀

जनक राजाके दूत पवित्र अयोध्यापुरीको पहुँचे उस सुन्दर नगरीको देखकर दूत बड़े प्रसन्न हुए ॥ १ ॥ फिर डेवढ़ीपर जाकर उन्होंने राजाको इत्तिला करवायी. दशरथजीनेभी इत्तिला पातेही उनको अपने पास बुलाया ॥ २ ॥

करि प्रणाम तिन्ह पाती दीन्ही ॥ मुदित महीप आप उठि लीन्ही ॥ ३ ॥
बारि बिलोचन बाँचत पाती ॥ पुलक गात आई भरि छाती ॥ ४ ॥ ❀

दूतोंने प्रणाम करके दशरथजीको पत्रिका दी तब राजा दशरथने आनन्दित होकर अपने आप उठकर ली ॥ ३ ॥ पत्रिकाको पढ़तेही दशरथके नेत्रोंमें जल भर आया. शरीर पुलकित हो गया और छाती भर आयी ॥ ४ ॥

राम लषण उर करबर चीठी ॥ रहिगये कहत न खाटी मीठी ॥ ५ ॥ ❀
पुनि धरि धीर पत्रिका बांची ॥ हरषी सभा बात सुनि सांची ॥ ६ ॥ ❀

राम लक्ष्मणकी सुन्दर चिट्ठी हाथमें लेकर आनंदके मारे दशरथजी ज्योंके त्यों रह गये. अच्छी या बुरी कुछ नहीं कही ॥ ५ ॥ फिर धीरज धर पत्रीको पढ़ समाचार जान व्याहकी बात सांची जानकर सब सभा हर्षित हुई ॥ ६ ॥

(क्षेपक)

॥ जनकपत्रिका ॥

छंद–स्वस्ति श्री श्रीपत्री शुभस्थानजी ॥ कोशलपुर धुर पहुँचै नृपकर कानजी ॥ लिखी बिदेहनगरते बिश्वामित्रकी ॥ मिलि बांचने अशीस सहित सुर पित्रकी ॥ कुशल क्षेम तव तनय अहैं सम नाथजू ॥ तिन हूंकेर प्रणाम चरण धरि माथ जू ॥ रौरे पुण्य प्रताप अचल मम मख करी ॥ तारिनि पदरज डारि अहल्या अघभरी ॥ धनुषयज्ञ पुरजनक

१ अभी उस देशको तराई कहते हैं. वह नेपालसे वरली तर्फ है. जहां अभी दरभंगाका राज है.

जुरे नृप भूरि जू ॥ गज इव पंज क राम सो डारयो तूरि जू ॥ सीताहु जयमाल तिन्हें पहिरायहू ॥ भृगुपति करि अभिवादन बनहिं सिधाय हू ॥ अब शुभ साजि बरात आइ सुत परणिये ॥ सुनि नृप मुद जस लह्यो सो कैसे बरणिये ॥ जिमि काहूके क्षेत्र छीनि सब लै लये ॥ न्है प्रसन्न तिनसहित ग्राम कैयो दये ॥ १ ॥

स्वस्तिश्री शुभस्थाने कोशलपुर धुरे विदेह नगरसे लिखी विश्वामित्रकी श्रीपत्री राजाके कान पहुँचे. तथा देवता और पितृसहित मेरा आशिष बंचना. हे नाथ! आपके पुत्र यहां कुशल क्षेम है. उनकेभी आपके चरणोंमें शिर धरके प्रणाम अवधारना. आपके पुण्यप्रतापसे राम लक्ष्मणने मेरे यज्ञको अविघ्न समाप्त करवाया. फिर पापिनी अहल्याका अपने चरणोंकी रजसे उद्धार कर जनकपुर पधारे. यहां धनुषयज्ञ था इसवास्ते बहुतसे राजा इकठे हो रहे थे. उस धनुषको रामने जैसे हाथी कमलनालको तोड़े वैसे तोड़ डारा. प्रतिज्ञा पूर्ण होनेसे सीताने रामको जयमाल पहिरा दी. धनुषका भंग सुन परशुरामजी आये रहे सो वेभी रामको प्रणाम कर तप करनेके हेतु बनको चले गये हैं. अब आप सुन्दर बरात तैयार कर यहां पधार अपने पुत्रोंको विवाहो. ये समाचार सुनकर राजाको ऐसा आनंद हुआ कि, जैसे अपराधके कारण किसीके खेत ले लिये हों उनको उन खेतोंके साथ औरभी कई एक गांव दिये होवे ॥ १ ॥ ॥ इति ॥

खेलत रहे तहां सुधि पाई ॥ आये भरत सहित दोउ भाई ॥ ७ ॥ *
पूंछत अति सनेह सकुचाई ॥ तात कहांते पाती आई ॥ ८ ॥ *

भरत और शत्रुघ्न जहां खेल रहे थे वहां उनको पत्री आनेकी खबर मिलि तौ खबर होते ही वे दोनों भाई दौड़कर वहां आये ॥ ७ ॥ और बड़े स्नेहसे संकोचके साथ पूंछा कि–हे तात ! यह पत्री कहांसे आयी है ? ॥ ८ ॥

दोहा--कुशल प्राणप्रिय बन्धु दोउ, अहहिं कहहु केहि देश ॥ *
सुनि सनेहसाने बचन, बाँची बहुरि नरेश ॥ २९२ ॥ *

हे तात ! प्राणोंसेभी प्यारे हमारे दोनों भाई कुशल तौ हैं ? और फरमावें वे अभी कौन देशमें है ? ऐसे स्नेहभरे बचन सुनकर राजाने वह पत्रिका पीछी पढ़ कर सुनायी ॥ २९२ ॥

सुनि पाती पुलके दोउ भ्राता ॥ अधिक सनेह समात न गाता ॥ १ ॥ *
प्रीति पुनीत भरतकी देषी ॥ सकल सभा सुख लहेउ विशेषी ॥ २ ॥ *

पत्री सुनकर दोनों भाइयोंके शरीर पुलकित हो गये और ऐसा अतिशय स्नेह बढ़ा कि, शरीरमें नहीं समाया ॥ १ ॥ भरतकी ऐसी पवित्र प्रीति देखकर सारी सभाको और ज्यादा सुख हुआ ॥ २ ॥

तब नृप दूत निकट बैठारे ॥ मधुर मनोहर बचन उचारे ॥ ३ ॥ *
भैया कुशल कहहु दोउ बारे ॥ तुम नीके निजनयन निहारे ॥ ४ ॥ *

तब राजाने उन दूतोंको अपने पास बिठाकर सुन्दर मधुर बचन कहे कि ॥ ३ ॥ हे भैया ! हमारे दोनों बालक कुशल तौ हैं ? तुमने अपनी आंखोंसे उनको अच्छी तरह देखा है ? ॥ ४ ॥

श्यामल गौर धरे धनु भाथा ॥ वय किशोर कौशिक मुनि साथा ॥ ५ ॥❁
पहिँचानेहुँ तुम कहहु सुभाऊ ॥ प्रेमबिवश पुनि पुनि कह राऊ ॥ ६ ॥ ❁

उनके श्याम और गौर शरीर है. धनुष और तरकस धारण करे है. किशोर यानी सोलह वर्षके भीतर उनकी उमर है. विश्वामित्रजी उनके साथ हैं ॥ ५ ॥ हे भैया ! जो तुम उनको पहचानते हो तो उनका स्वभाव कैसा है वो हमें कहो. राजाने प्रेमवश होकर बारंबार ऐसे कहा ॥ ६ ॥

जादिनते मुनि गये लिवाई ॥ तबते आजु साँचि सुधि पाई ॥ ७ ॥ ❁
कहहु बिदेह कवनबिधि जाने ॥ सुनि प्रिय बचन दूत मुसुकाने ॥ ८ ॥ ❁

राजा कहता है कि–जिस दिनसे विश्वामित्रजी उनको ले गये थे तबसे सच्ची खबर तौ हमको आज मिली है ॥ ७ ॥ तुम कहो; राजा जनकने उनको कैसे पहिंचाना ? दशरथजीके ऐसे प्रिय बचन सुनकर दूत मुसुकराये ॥ ८ ॥

दोहा–सुनहु महीपति मुकुटमणि, तुमसम धन्य न कोउ ॥ ❁
राम लषण जिनके तनय, विश्वबिभूषण दोउ ॥ २९३ ॥ ❁

और बोले कि–हे राजाओंके मुकुटमणि ! सुनो. आपसा धन्य पुरुष जगत्में आज दूसरा कोईभी नहीं है; क्योंकि जिनके संसारके अलंकाररूप राम लक्ष्मण जैसे दो पुत्र है उनके भाग्यकी महिमा कौन कह सक्ता है ? ॥ २९३ ॥

पूँछन योग न तनय तुम्हारे ॥ पुरुषसिंह तिहुँपुर उजियारे ॥ १ ॥ ❁
जिनके यश प्रतापके आगे ॥ शशि मलीन रबि शीतल लागे ॥ २ ॥ ❁

हे राजा ! आपके पुत्र पूँछनेके योग्य नहीं है, क्योंकि वे पुरुषसिंह तीनों लोकोमें स्वयमेव प्रसिद्ध है ॥ १ ॥ जिनके यशके आगे चंद्रमा तौ मलिन दीख पड़ता है और प्रतापके सामने सूर्य शीतल लगता है ॥ २ ॥

तिनकहँ कहिय नाथ किमि चीन्हे ॥ देखिय रबिहिँ कि दीपकलीन्हे ॥ ३ ॥❁
सीयस्वयम्बर भूप अनेका ॥ सिमिटे सुभट एकते एका ॥ ४ ॥ ❁

हे नाथ ! उनके लिये आप कहते हो कि–जनक राजाने उनको कैसे पहिंचाना. क्या सूर्यभी दीपक लेकर देखा जाता है ? ॥ ३ ॥ हे नाथ ! सीताके स्वयंबरमें एकसे एक सुभट ऐसे कई राजा इकठे हुए थे ॥ ४ ॥

शम्भु शरासन काहु न टारा ॥ हारे सकल भूप बरियारा ॥ ५ ॥ ❁
तीन लोकमहँ जे भट मानी ॥ सबकी शक्ति शम्भुधनु बानी ॥ ६ ॥ ❁

पर महादेवजीके धनुषको कोईभी नहीं हटा सका. तमाम बड़े बली राजा बल करकर हार गये ॥ ५ ॥ त्रिलोकीके भीतर जो भटपनका मान रखते है उन सबकी सामर्थ्य महादेवजीके धनुषने तोड़ दी ॥ ६ ॥

सकैं उठाइ सुरासुर मेरू ॥ तेउ हिय हारि गये कर फेरू ॥ ७ ॥ ❁
जेहिँ कौतुक शिवशैल उठावा ॥ सोउ तेहि सभा पराभव पावा ॥ ८ ॥❁

जो देवता और दैत्य मेरु पर्वतको उठा सकते है वेभी धनुषपर हाथ फेर हृदयके भीतर हार मानकर पीछे चले गये ॥ ७ ॥ जिस रावणने खेलही खेलमें महादेवजीका कैलासपर्वतउठालिया था वहभी उस सभामें पराभव पाकर गया था ॥ ८ ॥

दोहा--तहां राम रघुबंशमणि, सुनिय महा महिपाल ॥ ❋
भंजेउ चाप प्रयास बिनु, जिमि गज पंकजनाल ॥ २९४ ॥ ❋

हे महाराज ! सुनिये. वहां आकर रघुकुलमणि श्रीरामचन्द्रजीने विनाही परिश्रम जैसे हाथी कमलनालको तोड़ देता है वैसे धनुषको तोड़ दिया ॥ २९४ ॥

सुनि सरोष भृगुनायक आये ॥ बहुतभांति तिन आंखि दिखाये ॥ १ ॥❋
देखि रामबल निजधनु दीन्हा ॥ करि बहु बिनय गवन बन कीन्हा ॥२॥❋

धनुषका भंग सुनकर परशुरामजी बड़े क्रोधसहित होकर आये और उन्होंने अनेकप्रकारसे आँख दिखायी ॥ १ ॥ परंतु निदान रामचन्द्रजीका बल देखकर उन्होंने अपना धनुष रामचन्द्रजीको दे दिया. फिर बहुत विनय करके बनमें चले गये ॥ २ ॥

राजत राम अतुल बल जैसे ॥ तेजनिधान लषण पुनि तैसे ॥ ३ ॥ ❋
कम्पहिँ भूप बिलोकत जाके ॥ जिमि गज हरि किशोरके ताके ॥ ४ ॥ ❋

जैसे रामचन्द्रजी अपरिमित बलसे शोभित हैं ऐसे लक्ष्मणभी वैसाका वैसाही तेजका भंडार है ॥ ३ ॥ जैसे सिंहके बालकके देखनेसे हाथी कंपायमान हो जाते है ऐसे लक्ष्मणकी नजर पड़ते ही सब राजा थरथर कांपने लगते हैं ॥ ४ ॥

देव देखि तव बालक दोऊ ॥ अवनि आंखतर आव न कोऊ ॥ ५ ॥ ❋
दूतबचनरचना प्रिय लागी ॥ प्रेम प्रताप बीररस पागी ॥ ६ ॥ ❋

हे देव ! आपके दोनों बालकोंको देखे पीछे फिर पृथ्वीमें कोईभी आंखके तले नहीं आता अर्थात् जगत्में दूसरा ऐसा कोई सुंदर ही नहीं है जिसको देखनेके लिये आंख पसारे ॥ ५ ॥ प्रेम, प्रताप और वीररससे भरी दूतोंकी बचनरचना दशरथजीको बहुतही प्रियलगी ॥ ६ ॥

सभासमेत राउ अनुरागे ॥ दूतन देन निछावरि लागे ॥ ७ ॥ ❋
कहि अनीति ते मूंदहिँ काना ॥ धर्म बिचारि सबहिँ सुख माना ॥ ८ ॥❋

तमाम सभाके साथ दशरथजी बहुत प्रसन्न हुए और आनन्दसे दूतोंको न्योछावर देने लगे ॥ ७ ॥ तब दूतोंने दशरथजीसे कहा कि–यह बड़ा अन्याय है. हम कभी नहीं लेंगे;क्योंकि हम बेटीके बापके तर्फके है सो हम लेवें के देवें ? ऐसे कहकर उन्होंने अपने कान मूंद लिये. धर्मशास्त्रमें कहा है कि–अधर्मकी बात कानसे नहीं सुननी ऐसे दृढ़ धर्मको विचार कर सबोंने सुख माना ॥ ८ ॥

दोहा–तब उठि भूप वशिष्ठकहँ,दीन्ह पत्रिका जाइ ॥ ❋
कथा सुनाई गुरुहिँ सब, सादर दूत बुलाइ ॥ २९५ ॥ ❋

तब उठकर दशरथजीने वह पत्रिका जाकर वसिष्ठजीको दी. और आदरसहित दूतोंको बुलाकर गुरुको उनके मुंहसे सब बात सुनायी ॥ २९५ ॥

सुनि बोले मुनि अति सुख पाई ॥ पुण्यपुरुषकहँ महि सुख छाई ॥ १ ॥ ❀
जिमि सरिता सागरमहँ जाहीं ॥ यद्यपि ताहि कामना नाहीं ॥ २ ॥ ❀

सब समाचार सुनकर वसिष्ठजी अति आनन्दित होकर बोले कि—हे राजा ! पुण्य पुरुषके लिये सब पृथ्वी सुखसे व्याप्त है ॥ १ ॥ यद्यपि समुद्रके किसीप्रकारकी कामना नहीं है तथापि जैसे नदियां सिमिट २ कर समुद्रमें जाती है ॥ २ ॥

तिमि सुख सम्पति बिनहिँ बुलाये ॥ धर्मशीलपहँ जाहिँ सुभाये ॥ ३ ॥ ❀
तुम गुरु बिप्र धेनु सुर सेवी ॥ तस पुनीत कौसल्या देवी ॥ ४ ॥ ❀

ऐसे धर्मात्मा पुरुषके कोई कामना नहीं होती तथापि उनके पास सुख और संपदा विना बुलाये-ही स्वभावसे चली जाती है ॥ ३ ॥ हे राजा ! जैसे आप गुरु, ब्राह्मण, गौ और देवताओंके सेवक हो ऐसे कौशल्या देवी परम पवित्र और धर्मिष्ठ है ॥ ४ ॥

सुकृती तुम समान जगमाहीं ॥ भयउ न है कोउ होनेउ नाहीं ॥ ५ ॥ ❀
तुमते अधिक पुण्य बड़ काके ॥ राजन रामसरिस सुत जाके ॥ ६ ॥ ❀

हे राजा ! आपके जैसा सुकृति जगतमे न तौ कोई हुआ, न है और न होगा ॥ ५ ॥ हे राजा ! आ-पसे बढ़कर पुण्य किसके है कि, जिनके राम जैसा पुत्र है ॥ ६ ॥

बीर बिनीत धर्मब्रतधारी ॥ गुणसागर बालक बर चारी ॥ ७ ॥ ❀
तुमकहँ सर्बकाल कल्याना ॥ सजहु बरात बजाइ निशाना ॥ ८ ॥ ❀

केवल रामही सुपूत हों और दूसरे कुपूत होवें तौ फिर दुःख हो जावे पर नहीं, आपके चारोही पुत्र बड़े वीर, बिनयवाले, धर्मको प्रतिज्ञा रखनेवाले, गुणोंके सागर और रामके जैसेही उत्तम है ॥ ७ ॥ आपके लिये तौ सदा कल्याणही है सो आप धोंसा हेकर बरातको तैयार करो ॥ ८ ॥

दोहा—चलहु बेगि सुनि गुरुबचन, भलेहि नाथ शिर नाइ ॥ ❀
भूपति गवने भवन तब, दूतहिँ बास दिवाइ ॥ २९६ ॥ ❀

'जल्दी चलो' ऐसे गुरुके बचन सुनकर दशरथजी 'हे नाथ ! बहुत अच्छा' ऐसे कहकर अपने घरको सिधारे और दूतोंका अच्छे स्थानमें डेरा करवा दिया ॥ २९६ ॥

राजा सब रनिवास बुलाई ॥ जनकपत्रिका बाँचि सुनाई ॥ १ ॥ ❀
सुनि सन्देश सकल हर्षानी ॥ अपर कथा सब भूप बखानी ॥ २ ॥ ❀

फिर जनाने घरमें जाकर राजाने सब रनिवासको बुलाकर जनकराजाकी पत्रिका पढ़कर सुनायी ॥ १ ॥ ये समाचार सुनकर सब रानियां बहुत प्रसन्न हुईं. तब राजाने वहांकी और सब बात मुंहसे कहकर सुनायी ॥ २ ॥

प्रेमप्रफुल्लित राजहिँ रानी ॥ मनहुँ शिखिनि सुनि बारिदबानी ॥ ३ ॥ ❀
मुदित अशीस देहिँ गुरुनारी ॥ अति आनंदमग्न महतारी ॥ ४ ॥ ❀

राजाकी रानियां उस वक्त कैसे प्रेमसे फूलीं. अंग नहीं समाती थीं तथा शोभती थीं कि मानों मयूरनी बादलकी गरज सुनकर आल्हादित होती हैं ॥ ३ ॥ उस समय गुरुजनोंकी स्त्रियां आनन्दित होकर जो आशिष देती है तिससे रामकी मातायें परमानन्दमें मग्न हो गयीं ॥ ४ ॥

लेहिं परस्पर अति प्रिय पाती ॥ हृदय लगाइ जुड़ावहिं छाती ॥ ५ ॥ ❋
रामलषणकी कीरति करणी ॥ बारहिं बार भूपवर बरणी ॥ ६ ॥ ❋

वे सब रानियां उस अतिशय प्रियपातीको परस्परमें लेती है और उसको हृदयमें लगा लगाकर छातीको शीतल करती है ॥ ५ ॥ राजा दशरथजीने रानियोंके सामने राम और लक्ष्मणकी कीर्ति और करनी बारंबार कही ॥ ६ ॥

मुनिप्रसाद कहि द्वार सिधाये ॥ रानिन्ह तब महिदेव बुलाये ॥ ७ ॥ ❋
दिये दान आनन्दसमेता ॥ चले विप्र बर आशिष देता ॥ ८ ॥ ❋

यह सब मुनि विश्वामित्रजीका प्रताप है ऐसे कहकर आप राजसभामें पधारे. उस समय रानियोंने ब्राह्मणोंको बुलाया ॥ ७ ॥ और उनको आनन्दके साथ अनेक दान दिये, तिससे वे उत्तम ब्राह्मण आशिष देते हुए पीछे घरको चले ॥ ८ ॥

सोरठा–याचक लिये हँकारि, दीन्ह निछावरि कोटि बिधि ॥ ❋
चिर जीवहु सुत चारि, चक्रवर्ति दशरत्थके ॥ ३३ ॥ ❋

रानियोंने याचकोंको बुलाकर जो करोड़ों प्रकारकी न्योछावर दीनी तिससे आनन्दित होकर उन्होंने आशिष दी कि–चक्रवर्ती राजा दशरथके चारों पुत्र चिरंजीव रहो ॥ ३३ ॥

कहत चले पहिरे पट नाना ॥ हरषि हने गहगये निशाना ॥ १ ॥ ❋
समाचार सब लोगन पाये ॥ लागे घर घर होन बधाये ॥ २ ॥ ❋

ऐसे अशीस दे अनेक प्रकारके नवीन २ वस्त्र पहन २ कर वे अपने घरोंको सिधारे. इधर आनन्दसे अनेक प्रकारके गहगहे बाजे बजने लगे ॥ १ ॥ जब सब लोगोंको इस बातकी खबर मिली तो सब नगरके लोगोंके घर घरमें बधाई होने लगी ॥ २ ॥

भुवन चारि दश भरेउ उछाहू ॥ जनक सुता रघुबीर बिबाहू ॥ ३ ॥ ❋
सुनि शुभ कथा लोग अनुरागे ॥ मग गृह गली सँवारन लागे ॥ ४ ॥ ❋

सीता और रामके विवाहका उत्साह केवल अयोध्या और मिथिलामेंही नहीं था. किंतु चौदह लोक उससे भर गये थे ॥ ३ ॥ रामके विवाहकी बात सुनकर सब लोग बहुत प्रसन्न हुए और राजमार्ग, घर व गलियां सँवारने लगे ॥ ४ ॥

यद्यपि अवध सदैव सुहावनि ॥ रामपुरी मंगलमय पावनि ॥ ५ ॥ ❋
तदपि प्रीतिकी रीति सुहाई ॥ मंगलरचना रची बनाई ॥ ६ ॥ ❋

यद्यपि अवध सदा सुहावनी है, तहांभी रामचन्द्रजीकी पुरी अयोध्या तो परम पावन और मंगलमयही है ॥ ५ ॥ तथापि प्रीतिकी रीतिसे उसमें सुहावनी सुन्दर मंगलकी रचना करी है ॥ ६ ॥

ध्वज पताक पट चामर चारू ॥ छावा परमविचित्र बजारू ॥ ७ ॥ ❋
कनककलश तोरण मणिजाला ॥ हरद दूब दधि अक्षत माला ॥ ८ ॥ ❋

सुन्दर ध्वजा, पताका, वस्त्र और सुंदर चमरोंसे बड़ी विचित्र रीतिसे बजारको छाया है ॥ ७ ॥ सुवर्णके कलश द्वारपर धरे हैं. तोरण बांधे हैं. मणियोंकी जालियां बनायीं हैं. हरद, दूर्वा, दही, अक्षत, फूलोंकी माला वगैरः सब मंगलकी सामान सजी है ॥ ८ ॥

दोहा—मंगलमय निज निज भवन, लोगन रचे बनाई ॥ ❀
बीथी सींची चतुर सब, चौंके चारु पुराई ॥ २९७ ॥ ❀

लोगोंने अपने २ घर मांगलिक पदार्थोंसे साज कर मंगलमय बनाये हैं; उनमेंभी जो हाथके चतुर थे उन्होंने सब गलियोंको छिड़क कर उनमें सुन्दर चौकें पुराये हैं ॥ २९७ ॥

जहँ तहँ यूथ यूथ मिलि भामिनि ॥ सजि नव सप्त सकल द्युति दामिनि ॥ १ ॥
बिधुबदनी मृगशावकलोचनि ॥ निज स्वरूप रतिमान विमोचनि ॥ २ ॥

जिनकी बिजलीसी दमक है, चंद्रमाकासा सुन्दर मुख है, हरिणके बच्चोंकेसे नेत्र हैं, जो अपने स्वरूपसे रति (कामदेवकी स्त्री) का मान छुड़ा सकती है, ऐसी सुन्दर स्त्रियां सोलह शृंगार सजकर जहां तहां यूथके यूथ मिलकर मनोहर वाणीसे मांगलिक गीत गा रही हैं ॥ १ ॥ २ ॥

गावहिँ मंगल मंजुल बानी ॥ सुनि कल रव कलकंठ लजानी ॥ ३ ॥ ❀
भूपभवन किमि जाइ बखाना ॥ बिश्वविमोहन रचेउ बिताना ॥ ४ ॥ ❀

जिनकी गायनसंबंधी वाणीको सुनकर मनोहर मधुरस्वरवाली कोकिलाभी लज्जायमान होती हैं ॥ ३ ॥ राजभवनकी शोभा तौ कैसे कही जाय, क्योंकि विश्वको मोहित करनेवाला मंडप उसमें बना हुआ है ॥ ४ ॥

मंगलद्रव्य मनोहर नाना ॥ राजत बाजत बिपुल निशाना ॥ ५ ॥ ❀
कतहुँ बिरद बन्दी उच्चरहीं ॥ कतहुँ बेदध्वनि भूसुर करहीं ॥ ६ ॥ ❀

अनेक प्रकारके सुन्दर मांगलिक द्रव्य धरे शोभ रहे हैं. गहगहे बाजे बज रहे हैं ॥ ५ ॥ कहीं बंदी जन बिरद बोल रहे हैं. कहीं ब्राह्मण लोग वेदध्वनि कर रहे हैं ॥ ६ ॥

गावहिँ सुन्दरि मंगल गीता ॥ लै लै नाम राम अरु सीता ॥ ७ ॥ ❀
बहुत उछाह भवन अति थोरा ॥ मानहुँ उमँगि चला चहुँ ओरा ॥ ८ ॥ ❀

कहीं सुन्दर स्त्रियां राम और सीताका नाम ले लेकर मंगलके गीत गा रही है ॥ ७ ॥ उस समय उत्साह तौ बहुत बढ़ गया था और उत्साहदृष्टिसे वह घर बहुत छोटा था; मानों इसीसे वह उत्साह उमँग कर चारों तर्फ बाहिर फैल गया था ॥ ८ ॥

दोहा—शोभा दशरथभवनकी, को कबि बरणै पार ॥ ❀
जहाँ सकल सुरशीशमणि, राम लीन्ह अवतार ॥ २९८ ॥ ❀

जिस घरमें सर्व देवताओंके मुकुटमणि श्रीरामचन्द्रजीने अवतार लिया था, उस दशरथजीके भवनकी शोभाको वर्णन करके कौन कवि पार पा सक्ता है ? ॥ २९८ ॥

भूप भरत पुनि लिये बुलाई ॥ हय गज स्यन्दन साजहु जाई ॥ १ ॥ ❀
चलहु बेगि रघुबीरबराता ॥ सुनत पुलक पूरे दोउ भ्राता ॥ २ ॥ ❀

फिर राजा दशरथने भरतको बुलाकर कहा कि—हे पुत्र ! जाकर हाथी, घोड़े, रथ वगैरः सब साजकर बरातके वास्ते तैयार करो ॥ १ ॥ और रामकी बरात शीघ्र चले. राजाके ये बचन सुनकर दोनों भाई पुलकित गात्र हुए ॥ २ ॥

भरत सकल सोहनी बुलाये ॥ आयसु दीन्ह मुदित उठि धाये ॥ ३ ॥ ❋
रुचि रुचि जीन तुरग निज साजे ॥ बर्ण बर्ण बर बाजि बिराजे ॥ ४ ॥ ❋

भरतने सबके ओहदेदारोंको बुलाकर आज्ञा दी कि– सब अपनी २ तैयारी करो. भरतको आज्ञा पाकर सब लोग आनन्दित होकर उठ कर दौड़े ॥ ३ ॥ अच्छे सुन्दर २ जीन कस २ कर घोड़ोंको सजाया, जिससे वे रंग रंगके मनोहर घोड़े भली भांति शोभा देने लगे ॥ ४ ॥

सुभग सकल सुठि चंचल करणी ॥ हय जिमि जरत धरत पगु धरणी ॥५॥
नाना भांति न जाहिँ बखाने ॥ निदरि पवन जनु चहत उड़ाने ॥ ६ ॥ ❋

बरातमें जितने घोड़े थे वे सब बड़े सुन्दर और श्रेष्ठ थे. शरीरपर बड़ी तेजी थी और पृथ्वी-पर पांव रख कर ऐसा जल्दी उठाते थे कि, मानों जलतेहुए लोहेपर ही पांव रक्खा है ॥ ५ ॥ घोड़े कई प्रकारके थे कि,जिनका वर्णन नहीं कर सक्ते; वे ऐसे तेज थे कि मानों पवनको उल्लंघ कर उड़ना चाहते थे ॥ ६ ॥

तिनपर छयल भये असवारा ॥ भरतसरिस सब राजकुमारा ॥ ७ ॥ ❋
सब सुन्दर सब भूषणधारी ॥ कर शर चाप तूण कटि भारी ॥ ८ ॥ ❋

उनपर छयल यानी सौखीन युवा राजकुमार सवार हुए जो सब भरतके समान शोभायमान लगते थे ॥ ७ ॥ बरातमें जितने राजकुमार थे वे सब बड़े सुन्दर आभूषण पहने हुए, हाथमें धनुषबाण लिये और कमरमें भारी तर्कस कसे हुए थे ॥ ८ ॥

दोहा--छरे छबीले छयल सब, शूर सुजान नवीन॥ ❋
युग पदचर असवारप्रति, जे असिकलाप्रवीन ॥ २९९ ॥ ❋

ऐसे सुजान, तरुण व शूर वीर छरे यानी चुने अथवा छड़े छबीले सब छयल घोड़ोंपर सवार हुए. तहां एक एक सवारके साथ दो दो पैदल रक्खे गये कि, जो पटेतीमें परम प्रवीण थे यानी बड़े तलवारबहादूर थे ॥ २९९ ॥

बाँधे बिरद बीर रण गाढ़े ॥ निकसि भये पुरबाहिर ठाढ़े ॥ १ ॥ ❋
फेरहिँ चतुर तुरँग गति नाना ॥ हर्षहिँ ध्वनि सुनि पणव निशाना॥२॥❋

जिन्होंने अनेक विरद बांधे है यानी सुयश किये है; ऐसे रणबांकुरे वीर निकसि निकसिकर पुरसे बाहिर खड़े हुए है ॥ १ ॥ चतुर घोड़ोंको अनेक प्रकारकी चालोंसे फिरा रहे है. जो घोड़े, ढोल और बाजोंका शब्द सुनकर खुश होते है और उन्हींकी आवाजके साथ पांव रखते है ॥ २ ॥

रथ सारथिन विचित्र बनाये ॥ ध्वज पताक मणि भूषण छाये ॥ ३ ॥ ❋
चँवर चारु किंकिणिध्वनि करहीं ॥ भानुयानशोभा अपहरहीं ॥ ४ ॥ ❋

सारथियोंने अनेक प्रकारके चित्र विचित्र रथ तैयार किये हैं. उनमें ध्वजों, पताका और मणियोंके आभूषण लगाये हैं ॥ ३ ॥ सुन्दर चँवर शोभायमान हो रहे हैं. किंकिणी ध्वनि कर रहो हैं. वे रथ ऐसे शोभायमान लगते थे कि, मानों सूर्यके रथकी शोभाको छीन रहे थे ॥ ४ ॥

श्यामकर्ण अगणित हय होते ॥ ते तिन्ह रथन सारथिन जोते ॥ ५ ॥ ❋
सुन्दर सकल अलंकृत सोहैं ॥ जिनहिं बिलोकत मुनिमन मोहैं ॥ ६ ॥ ❋

जो बहुतसे श्यामकर्ण घोड़े थे, वे उन रथोंमें सारथियोंने जोड़े थे ॥ ५ ॥ अलंकारोंसे शोभायमान वे सुन्दर घोड़े ऐसे शोभायमान लगते थे कि, जिनको देखकर मुनिलोगोंका मनभी डिग जाता था ॥ ६ ॥

जे जल चलहिं थलहिँकी नाँई ॥ टाप न बूड़ बेग अधिकाई ॥ ७ ॥ ❋
अस्त्र शस्त्र सब साज बनाई ॥ रथी सारथिन लिये बुलाई ॥ ८ ॥ ❋

जो घोड़े जलके अन्दर थलके बराबर चलते थे क्योंकि बेग अधिक होनेसे उनकी टापभी जलके भीतर नहीं बूड़ती थी ॥ ७ ॥ रथोंके अंदर सब अस्त्र शस्त्र और साज सजकर सारथियोंने अपने २ रथियोंको बुला लिया ॥ ८ ॥

दोहा—चढ़ि चढ़ि रथ बाहर नगर, लागी जुरन बरात ॥
होत सगुन सुन्दर सुखद, जो जेहि कारज जात ॥ ३०० ॥ ❋

रथोंपर चढ़ चढ़ कर लोग नगरके बाहर आ रहे हैं और वहां बरात जुड़ रही है. वहां चलते समय जो जिस कार्यके वास्ते जाते थे, उनको सुख देनेवाले सुन्दर शकुन होने लगे ॥ ३०० ॥

कलित करिवरन परीं अँबारी ॥ कहि न जाइ जेहि भांति सँवारी ॥ १ ॥ ❋
चले मत्तगज घण्ट बिराजे ॥ मनहुँ सुभग सावनघन गाजे ॥ २ ॥ ❋

सुन्दर गयंदोंपर जो सोनेकी अंबारियां कसी हुई थीं वे ऐसी सँवारी हुई थीं कि जिनका वर्णन नहीं कर सक्ते ॥ १ ॥ घण्टा जिनके बज रहे हैं, ऐसे मदमत्त गजराज चलते हुए कैसी शोभा देते हैं कि मानों सुन्दर सावनकी घटा गाज रही है ॥ २ ॥

बाहन अपर अनेक बिधाना ॥ शिबिका सुभग सुखासन याना ॥ ३ ॥ ❋
तिन्ह चढ़ि चले बिप्र बर वृन्दा ॥ जनु तनु धरे सकल श्रुति छन्दा ॥ ४ ॥ ❋

औरभी अनेक प्रकारके सुन्दर वाहन, पालकी, सुखपाल वगैरः सवारियां तैयार की गयीं थीं ॥ ३ ॥ उनपर चढ़ कर चलते हुए ब्राह्मणोंके समूह कैसे अच्छे लगते थे कि, मानों वेदोंके तमाम छंदही मूर्ति धारण करके विराजमान होरहे हैं ॥ ४ ॥

मागध सूत बन्दि गुणगायक ॥ चले यान चढ़ि जो जेहि लायक ॥ ५ ॥ ❋
बेसर ऊंट वृषभ बहु जाती ॥ चले बस्तु भरि अगणित भाँती ॥ ६ ॥ ❋

गुण गानेवाले मागध (वंश वर्णन करनेवाले) सूत (पुराणकथक) और बंदीजन जो जिस सवारीके लायक था वह उस सवारीपर चढ़ कर चला ॥ ५ ॥ खच्चर, ऊँट और बैलोंमें अनेक प्रकारके अपरिमित पदार्थ भर भर कर उनको रवाना किया ॥ ६ ॥

कोटिन कांवरि चले कहारा ॥ बिबिध बस्तु को बरणै पारा ॥ ७ ॥ ❋
चले सकल सेवकसमुदाई ॥ निज निज साज समाज बनाई ॥ ८ ॥ ❋

कहार लोग करोड़ों काँवरोंमें अनेक प्रकारकी चीजें ले लेकर चले कि, जिसका कोईभी वर्णन

नहीं कर सक्ता ॥ ७ ॥ औरभी तमाम सेवक समुदाय अपनी २ सामग्री तैयार कर अपनी २ मंडली बनाकर रवाने हुए ॥ ८ ॥

दोहा-सबके उर निर्भर हरष, पूरित पुलक शरीर ॥ ❋
कबहिँ देखिहैं नयनभरि, राम लषण दोउ बीर ॥ ३०१ ॥

सब लोगोंके हृदयमें अतिशय आनंद व्याप रहा है और शरीर पुलकित हो रहे है और कह रहे हैं कि-हम राम लक्ष्मण दोनों भाइयोंको नेत्र भरकर कब देखेंगे? ॥ ३०१ ॥

गरजहिँ गजघण्टा ध्वनि घोरा ॥ रथरव बाजि हिंस चहुँ ओरा ॥ १ ॥ ❋
निदरि घनहिँ घुमराहिँ निशाना ॥ निज पराव कछु सुनिय न काना ॥२॥

इस चलाचलीमे हाथियोंकी गरज उनके घंटोंकी घोर ध्वनि रथोंकी गरगराहट और घोड़ोंकी हिंस ये चारों तर्फ व्याप रहे थे ॥ १ ॥ बादलको निदर कर बाजे बाज रहे है जिसमें अपना वा पराया कोई शब्द कानसे सुनायी नहीं देता था ॥ २ ॥

महाभीर भूपतिके द्वारे ॥ रज होइ जाइँ पखान पँवारे ॥ ३ ॥ ❋
चढ़ीं अटारिन देखहिँ नारी ॥ लिये आरती मंगलथारी ॥ ४ ॥ ❋

राजद्वारपर इतनी भारी भीड़ थी कि छोटे छोटे पत्थर और कंकर धूलि बने जाते थे ॥ ३ ॥ उस समय हाथमें मंगलार्थ आरतीका थार लिये स्त्रियां अटारियोंपर चढ़कर देख रही थीं ॥ ४ ॥

गावहिँ गीत मनोहर नाना ॥ अति अनन्द नहिँ जाइ बखाना ॥ ५ ॥ ❋
तब सुमन्त दुइ स्यन्दन साजी ॥ जोते रविहयनिन्दक बाजी ॥ ६ ॥ ❋

और सुन्दर अनेकप्रकारके गीत गा रही थीं. कवि कहता है कि- उस समय ऐसा अतिशय आनंद बढ़ रहा था कि-जिसका वर्णन किसी कदर नहीं हो सक्ता ॥ ५ ॥ तब सुमन्तने दो रथ तैयार किये उनमें ऐसे घोड़े जोड़े कि, जिनके आगे सूर्यके घोड़े अपनेको निन्दित समझने लगे ॥ ६ ॥

दोउ रथ रुचिर भूपपहँ आने ॥ नहिँ शारद प्रति जाहिँ बखाने ॥ ७ ॥ ❋
राजसमाज एकरथ साजा ॥ दूसर तेजपुंज अति भ्राजा ॥ ८ ॥ ❋

सुमन्त दोनों रथ तैयार कर राजाके पास लाया जिनका सरस्वतीभी वर्णन नहीं कर सक्ती ॥ ७ ॥ तिनमें एक रथमें तो राजसमाज सजाया गया था और दूसरा रथ तेजके पुंजसे बड़ा प्रकाशमान हो रहा था ॥ ८ ॥

दोहा-तेहि रथ रुचिर बशिष्ठकहँ, हर्षि चढ़ाइ नरेश ॥ ❋
आपु चढ़ेउ स्यंदन सुमिरि, हर गुरु गौरि गणेश ॥ ३०२ ॥ ❋

उस दूसरे रथपर राजाने आनंदित होकर वसिष्ठजीको चढ़ाया और आपभी महादेव, गुरु, पार्वती और गणेशजीका स्मरण करके पहले रथपर चढ़े ॥ ३०२ ॥

सहित बसिष्ठ सोह नृप कैसे ॥ सुरगुरुसंग पुरंदर जैसे ॥ १ ॥ ❋
करि कुलरीति बेदबिधि राऊ ॥ देखि सबहिँ सबभांति बनाऊ ॥ २ ॥ ❋

वसिष्ठजीके साथ दशरथ कैसे शोभायमान लगते है कि,मानों बृहस्पतिके साथ इंद्र शोभायमान हो रहे है ॥ १ ॥ फिर राजाने अपने कुलकी रीति करके वेदकी विधि करी. तदनंतर सब तरहसे सबको तैयारी देखी ॥ २ ॥

सुमिरि राम गुरुआयसु पाई ॥ चले महीपति शंख बजाई ॥ ३ ॥ *
हरषे बिबुध बिलोकि बराता ॥ बर्षहिं सुमन सुमंगलदाता ॥ ४ ॥ *

फिर परमेश्वरका स्मरण कर, गुरुसे आज्ञा पाय, शंख बजाकर, राजा रवाने हुये ॥ ३ ॥ बरातको रवाने हुई देखकर देवता प्रसन्न हुए और सुमंगलके देनेवाले फूल बरसाने लगे ॥ ४ ॥

भयउ कोलाहल हय गज गाजे ॥ व्योम बरात बाजने बाजे ॥ ५ ॥ *
सुर नर नारि सुमंगल गाई ॥ सरस राग बाजहिं सहनाई ॥ ६ ॥ *

इधर तो हाथी और घोड़ोंकी गरजसे बड़ा कोलाहल होने लगा. उधर आकाश और बरातमें बाजे बजने लगे ॥ ५ ॥ देवता और मनुष्योंकी स्त्रियां सुमंगल गाने लगीं. सुन्दर रागसे सहनाइयां बजने लगीं ॥ ६ ॥

घण्ट घण्टि ध्वनि बर्णि न जाई ॥ सरौं करैं पायक फहराई ॥ ७ ॥ *
करहिं विदूषक कौतुक नाना ॥ हासकुशल कल गान सुजाना ॥ ८ ॥ *

हाथियोंके घंट और रथोंकी घंटियोंकी ध्वनिके विषयमें तो कुछ कहही नहीं सकते. जिनके ऊपर मल्लकेसे दंड करते लहराते हुए झंडे फहरा रहे है ॥ ७ ॥ विदूषक यानी भांड़लोग मार्गमें अनेक प्रकारके कौतुक (तमाशे) कर रहे है. जो हांसीमें बड़े निपुण और सुन्दर गानमें बड़े विचक्षण हैं ॥ ८ ॥

दोहा—तुरग नचावहिं कुँवर बर, अकनि मृदंग निशान ॥ *
नागर नट चितवहिं चकित, डिगहिं न तालबिधान ॥ ३०३ ॥ *

उत्तम राजकुँवर मृदंग और बाजोंकी ध्वनि सुनकर उसपर घोड़ोंको नचाते जाते है और तालकी गतिको नहीं चूकते हैं. जिसको चतुर नटभी चकित होकर देखते हैं ॥ ३०३ ॥

बनै न बर्णत बनी बराता ॥ होइँ सगुन सुन्दर शुभदाता ॥ १ ॥ *
चारा चाष बाम दिशि लेई ॥ मनहुँ सकल मंगल कहि देई ॥ २ ॥ *

बरात ऐसी बनी है कि, जो वर्णन करनेमें नहीं आती, उस समय शुभदायी सुन्दर शकुन होने लगे ॥ १ ॥ बाईं ओर चारा चुगाता हुआ चाष यानी नीलकंठ पक्षी दिखायी दिया कि, जो मानों सर्व मंगलको कहे देता था ॥ २ ॥

दाहिन काग सुखेत सुहावा ॥ नकुलदर्श सबकाहूँ पावा ॥ ३ ॥ *
सानुकूल बह त्रिबिध बयारी ॥ सघट सवाल आव बर नारी ॥ ४ ॥ *

दाहिनी तर्फ अच्छे खेतके अन्दर सुन्दर कौआ दीख पड़ा और न्यौलाभी सबकी नजरमें आया ॥ ३ ॥ तीन प्रकारकी सानुकूल वायु पीछेसे बहने लगी. गोदीमें बालक लिये घड़ा शिरपर उठाये सामने सुन्दर सौभाग्यवती स्त्री आयी ॥ ४ ॥

लोवा फिरि फिरि दर्श दिखावा ॥ सुरभी सन्मुख शिशुहिं पिआवा ॥ ५ ॥

मृगमाला दाहिनि दिशि आई ॥ मंगलगण जनु दीन दिखाई ॥ ६ ॥ ❋

लोमरी (लोखरी) बारंबार दृष्टि पड़ी. गौ अपने बछेरेको दूध पिलाती सन्मुख नजर आयी ॥ ५ ॥ हरिणोंकी माला जो दाहिनी ओर आयी वह ऐसी मालूम होती थी कि,मानो मूर्तिमान् मंगलोंका झुंड दिखायी दिया ॥ ६ ॥

क्षेमकरी कह क्षेम विशेषी ॥ श्यामा बाम सुतरुतर देषी ॥ ७ ॥ ❋
सन्मुख आयउ दधि अरु मीना ॥ कर पुस्तक दुइ बिप्र प्रबीना ॥ ८ ॥ ❋

क्षेमकरी (एक किस्मकी चिड़िया) विशेष क्षेमको कह रही थी और श्यामा (एक किस्मकी चिड़िया—कलचिड़ी) बाईं ओर अच्छे वृक्षपर बैठी दीख पड़ी ॥ ७ ॥ सामने दही और मछली आयीं, और पुस्तक हाथमें लिये प्रबीण दो ब्राह्मण नजर आये ॥ ८ ॥

दोहा—मंगलमय कल्याणमय, अभिमतफलदातार ॥ ❋
जनु सब सांचे होनहित, भये सगुण यकबार ॥ ३०४ ॥ ❋

मंगलमय, कल्याणमय और मनवांछित फल देनेवाले ये सब शकुन मानों सच्चे होनेके वास्तेही यहां एक साथ हुए थे ॥ ३०४ ॥

मंगल शकुन सुगम सब ताके ॥ सगुण ब्रह्म सुन्दर सुत जाके ॥ १ ॥ ❋
रामसरिस बर दुलहिनि सीता ॥ समधी दशरथ जनक पुनीता ॥ २ ॥ ❋

जिनके साक्षात् सगुण ब्रह्म सुन्दर पुत्र हैं उनके तमाम मंगल और शकुन सदा सुलभहो हैं ॥ १ ॥ रामसरीखा तो दूलह, सीतासरीखी दुलहिनि, दशरथ और जनक जैसे पवित्र संबंधी (समधी)हैं ॥ २ ॥

सुनि अस व्याह सगुन सब नाचे ॥ अब कीन्हें बिरंचि हम साँचे ॥ ३ ॥ ❋
यहिबिधि कीन्ह बरात प्रयाना ॥ हय गज गाजहिं हनहिं निशाना ॥ ४ ॥ ❋

इस विवाहको सुनकर सब शकुन नांचने लगे कि– अब विधाताने हमको सच्चे किये; क्योंकि यहां जो हम जायँगे वे सब सच्चे होवेंगे ॥ ३ ॥ इसतरह बरात रवाने हुई. घोड़े और हाथी गाजने लगे. बाजे बजने लगे ॥ ४ ॥

आवत जानि भानुकुलकेतू ॥ सरितन जनक बँधाये सेतू ॥ ५ ॥ ❋
बीच बीच बर बास बनाये ॥ सुरपुरसरिस सम्पदा छाये ॥ ६ ॥ ❋

दशरथजी पधारते हैं, ये शुभ समाचार सुनकर राजा जनकने नदियोंके पूल बँधवा दिये ॥ ५ ॥ बीच बीचमें अच्छे डेरे तैयार करवाये जिनमें अमरावती पुरीके समान संपदा छा रही थी ॥ ६ ॥

अशन शयन बर बसन सुहाये ॥ पावहिं सब निज निज मनभाये ॥ ७ ॥ ❋
नित नूतन लखि सुख अनुकूले ॥ सकल बरातिन मन्दिर भूले ॥ ८ ॥ ❋

जिन डेरोंमें सबकोई अपने २ मन माने खान पान पलंग और सुन्दर वस्त्र पाते थे ॥ ७ ॥ डेरोंमें नित अनुकूल सुख देखकर तमाम बराती अपने २ घर भूल गये ॥ ८ ॥

दोहा—आवत जानि बरात बर, सुनि गहगहे निशान ॥ ❋
सजि गज रथ पदचर तुरग, लेन चले अगवान ॥ ३०५ ॥ ❋

गहगहे बाजे सुन सुन्दर बरातको आतो जानकर लोग हाथी, घोड़े, रथ और प्यादे लोगोंको तैयार कर अगवानी लेनेको सामने चले ॥ ३०५ ॥

कनककलश कल कोपर थारा ॥ भाजत ललित अनेक प्रकारा ॥ १ ॥ ❋
भरे सुधासम सब पकवाना ॥ भांति भांति नहिँ जाहिँ बखाना ॥ २ ॥ ❋

सुवर्णके कलश, सुन्दर, कटोरे, थार, और अनेक प्रकारके सुन्दर पात्र ॥ १ ॥ अमृतके समान स्वादु नानाप्रकारके पक्वान्नोंसे भरे हुए हैं कि जिनका वर्णन नहीं कर सकते ॥ २ ॥

फल अनेक बर बस्तु सुहाई ॥ हर्षि भेंटहित भूप पठाई ॥ ३ ॥ ❋
भूषण बसन महामणि नाना ॥ खग मृग हय गज बहुबिध याना ॥ ४ ॥ ❋

अनेक प्रकारके सुन्दर फल तथा औरभी अनेक प्रकारकी कई सुन्दर चीजें राजा जनकने भेंटके वास्ते बड़े आनन्दके साथ भेजीं ॥ ३ ॥ फिर अनेक प्रकारके आभूषण. वस्त्र, अमूल्य रत्न, तथा पक्षी चौपाये, हाथी, घोड़े व कई तरहकी सवारियां ॥ ४ ॥

मंगल सगुण सुगन्ध सुहाये ॥ बहुतभांति महिपाल पठाये ॥ ५ ॥ ❋
दधि चिउरा उपहार अपारा ॥ भरि भरि कांवरि चले कहारा ॥ ६ ॥ ❋

मंगलमय शकुन और अनेक प्रकारके सुन्दर सुगन्धके पदार्थ राजाने भेजे ॥ ५ ॥ दही और चिउ-रा आदि अपार उपहारोंसे कावरें भर भर कहारलोग चले ॥ ६ ॥

अगवानिन जब दीख बराता ॥ उर आनन्द पुलक भर गाता ॥ ७ ॥ ❋
देखि बनाव सहित अगवाना ॥ मुदित बरातिन हने निशाना ॥ ८ ॥ ❋

जब अगवानियोंको बरात दीख पड़ी, तब उनका हृदय आनंदसे भर गया और शरीर पुलकित हो गया ॥ ७ ॥ बने ठने अगवानियोंको आते देखकर बरातियोंनेभी आनन्दित होकर बाजे बजाये ॥ ८ ॥

दोहा–हरषि परस्पर मिलनहित, कछुक चले बगमेल ॥ ❋
जनु आनन्दसमुद्र दुइ, मिलत बिहाय सुबेल ॥ ३०६ ॥ ❋

परस्पर मिलनेके वास्ते आनन्दित होकर दोनों ओरसे कछुक बगमेल कर कैसे चले है, किमानों दो आनंदके समुद्र अपनी वेला (मर्याद) को छोड़कर मिलनेको उमड़े है ॥ ३०६ ॥

बर्षि सुमन सुरसुन्दरि गावहिँ ॥ मुदित देव दुन्दुभी बजावहिँ ॥ १ ॥ ❋
बस्तु सकल नृप राखी आगे ॥ बिनय कीन्ह तिन्ह अति अनुरागे ॥ २ ॥

देवांगना फूल बरसायके सुन्दर गीत गा रही है. देवता आनंदित होकर दुंदुभी बजाते हैं ॥१॥ उस समय अगवानोंने आकर तमाम वस्तु ला २ कर राजाके आगे धरी और बड़े प्रेमके साथ बहुत विनय किया ॥ २ ॥

प्रेमसमेत राउ सब लीन्हा ॥ भै बकसीस याचकन दीन्हा ॥ ३ ॥ ❋
करि पूजा मान्यता बड़ाई ॥ जनवासेकहँ चले लिवाई ॥ ४ ॥ ❋

दशरथजीने वो सब प्रेमके साथ लिया और बकशीश होकर वो सब पीछा याचकोंको दे दिया॥३॥

भगवानोंने दशरथजीका सत्कार करके बड़ी मान्यता और बड़ाई करी. फिर उनको जनवासे लिवाय ले चले ॥ ४ ॥

बसन बिचित्र पांवड़े परहीं ॥ नृप दशरथ तापर पग धरहीं ॥ ५ ॥ ❋
देखि धनद धनमद परिहरहीं ॥ बर्षि सुमन सुर जय जय करहीं ॥६॥ ❋

चित्र विचित्र वस्त्रोंके पांवड़े पड़ रहे हैं तिनपर दशरथजी अपना पांव रखते हैं ॥ ५ ॥ उस वैभवको देखकर कुबेर अपने धनके मदको त्याग देता है और देवता फूल बरसाय २ जय जय शब्द करते हैं ॥ ६ ॥

अति सुन्दर दीन्हेउ जनवासा ॥ जहँ सबकहँ सबभांति सुपासा ॥७॥ ❋
जानी सिय बरात पुर आई ॥ कछु निजमहिमा प्रगट जनाई ॥ ८ ॥ ❋
हृदय सुमिरि सब सिद्धि बुलाई ॥ भूपपहुनई करन पठाई ॥ ९ ॥ ❋

राजाने बरातियोंको जनवासा ऐसा सुन्दर दिया कि, जहां सबको सब तरहका आराम था ॥ ७ ॥ सीताजीनेभी बरात नगरमें आई जानकर कछुक अपनी महिमा प्रगट करके जनाई ॥ ८ ॥ यानी तमाम सिद्धियोंका हृदयमें स्मरण कर उनको बुलाकर दशरथजीकी पहुनचार करनेको पठाया ॥ ९ ॥

दोहा–सियआयसु शिर सिद्धि धरि, गईं जहां जनवास ॥ ❋
लिये सम्पदा सकल सुख, सुरपुरभोगविलास ॥३०७॥ ❋

सीताकी आज्ञा शिरपर धरकर तमाम सिद्धियां, संपदा, समस्त सुख और स्वर्गके भोगविलास साथ लेकर जनवासेमें गयीं ॥ ३०७ ॥

निज निज बास बिलोकि बराती ॥ सुरसुख सकल सुलभ सब भाँती ॥१॥ ❋
बिभवभेद कछु काहु न जाना ॥ सकलजनक कर करहिँ बखाना ॥२॥ ❋

बरातियोंने अपने २ डेरे देखे तो उनके भीतर देवताओंके सर्व सुख सर्व प्रकारसे सुलभ दीख पड़ते थे ॥ १ ॥ तथापि वह विभव कैसे प्राप्त हुआ था उसका भेद तो किसीने नहीं जाना जिससे सब लोगोंने जनक राजाकीही प्रशंसा करी ॥ २ ॥

सियमहिमा रघुनायक जानी ॥ हर्षे हृदय हेतु पहिँचानी ॥ ३ ॥ ❋
पितुआगमन सुनत दोउ भाई ॥ हृदय न अति आनन्द समाई ॥ ४ ॥ ❋

परंतु रामचन्द्रजीने वो भेद जान लिया था. जिससे उसका कारण जानकर प्रभु मनमें बड़े प्रसन्न हुए ॥ ३ ॥ पिताका आना सुनकर दोनों भाइयोंको ऐसा आनन्द हुआ कि, वह हृदयके भीतर नहीं समाया ॥ ४ ॥

सकुचत कहि न सकत गुरुपाहीं ॥ पितु दर्शन लालच मनमाहीं ॥ ५ ॥ ❋
बिश्वामित्र बिनय बड़ि देषी ॥ उपजा उर सन्तोष बिशेषी ॥ ६ ॥ ❋

यद्यपि वे मनमें पितासे मिलना चाहते थे, परंतु संकोचके कारण गुरुके पास कुछ कह नहीं

सकते थे ॥ ५ ॥ राम लक्ष्मणका ऐसा बड़ा विनय देखकर विश्वामित्रजीके मनमें बड़ा संतोष उत्पन्न हुआ ॥ ६ ॥

हर्षि बन्धु दोउ हृदय लगाये ॥ पुलक अंग लोचन जल छाये ॥ ७ ॥ ❀
चले जहाँ दशरथ जनवासे ॥ मनहुँ सरोवर तकेउ पियासे ॥ ८ ॥ ❀

जिससे आनन्दित होकर दोनों भाइयोंको मुनिने छातीसे लगाया और प्रेमसे मुनिका शरीर पुलकित हो गया और नेत्रोंमें जल भर आया ॥ ७ ॥ मुनि दोनों कुँवरोंको साथ लेकर दशरथजीके जनवासेको कैसे चले; कि, मानों प्यासा आदमी सरोवरको जाता है ॥ ८ ॥

दोहा-भूप बिलोके जबहिँ मुनि,आवत सुतनसमेत ॥ ❀
उठे हर्षि सुखसिन्धुमहँ, चले थाहसी लेत ॥ ३०८ ॥ ❀

जब राजाने पुत्रोंसहित मुनि विश्वामित्रजीको आते देखा, तब वे उठकर आनन्दमें मग्न हो मानों सुखसागरके भीतरकी थाह लेते हों ऐसे चले ॥ ३०८ ॥

मुनिहिँ दण्डवत कीन्ह महीशा ॥ बार बार पदरज धरि शीशा ॥ १ ॥ ❀
कौशिक राउ लिये उर लाई ॥ कहि अशीश पूँछी कुशलाई ॥ २ ॥ ❀

राजाने बारंबार मुनिके चरणकमलोंकी रज शिरपर धरकर मुनिको दंडवत् प्रणाम किया ॥ १ ॥ विश्वामित्रजीने प्रेमके साथ दशरथको छातीसे लगाया और आशिष देकर कुशल पूंछा ॥ २ ॥

पुनि दंडवत करत दोउ भाई ॥ देखि नृपति उर सुख न समाई ॥ ३ ॥ ❀
सुत हिय लाइ दुसह दुख मेटे ॥ मृतक शरीर प्राण जनु भेंटे ॥ ४ ॥ ❀

फिर दोनों भाइयोंने पिताको दंडप्रणाम किया. उस समय उनको देखकर दशरथके हृदयमें सुख ऐसा बढ़ा कि, उसको समानेकी जगह न रही ॥ ३ ॥ दशरथजीने अपने पुत्रोंको हृदयमें लगाकर अपना दुसह दुःख कैसे मिटाया कि, मृतक शरीरने मानों प्राणोंको भेंटलिया है ॥ ४ ॥

पुनि वशिष्ठपद शिर तिन नाये ॥ प्रेममुदित मुनिवर उर लाये ॥ ५ ॥ ❀
बिप्रवृन्द बंदे दुहुँ भाई ॥ मनभावति अशीश तिन्ह पाई ॥ ६ ॥ ❀

फिर राम लक्ष्मणने वसिष्ठजीको प्रणाम किया; तब श्रेष्ठमुनि वसिष्ठजीने प्रेमसे आनन्दित होकर उनको छातीसे लगाया ॥ ५ ॥ फिर दोनों भाइयोंने दूसरे ब्राह्मणसमुदायको प्रणाम कर उनसे मनभावती आशिष पाई ॥ ६ ॥

भरत सहानुज कीन्ह प्रणामा ॥ लिये उठाइ लाइ उर रामा ॥ ७ ॥ ❀
हरषे लषण देखि दोउ भ्राता ॥ मिले प्रेमपरिपूरणगाता ॥ ८ ॥ ❀

फिर शत्रुघ्नके साथ भरतने रामको प्रणाम किया, तब प्रभुने उन दोनों भाइयोंको उठाकर छातीसे लगाया ॥ ७ ॥ दोनों भाइयोंको देखकर लक्ष्मण बहुत प्रसन्न हुए और उनसे मिले जिससे उनका शरीर प्रेमसे पूर्ण यानी पुलकित होगया ॥ ८ ॥

दोहा-पुरजन परिजन जातिजन, याचक मंत्री मीत ॥ ❀
मिले यथाबिधि सबहिँ प्रभु, परम कृपालु बिनीत ॥ ३०९ ॥ ❀

परम दयालु और अति विनीत श्रीरामचन्द्रजी पुरके लोग, अपने परिचारक लोग, कुटुंबके लोग, याचक, मंत्री और मित्र इन सबोंके साथ यथायोग्य मिले ॥ ३०९ ॥

रामहिँ देखि बरात जुड़ानी ॥ प्रीतिकि रीति न जाइ बखानी ॥ १ ॥ ❋
नृपसमीप सोहहिँ सुत चारी ॥ जनु धन धर्मादिक तनुधारी ॥ २ ॥ ❋

रामचन्द्रजीका दर्शन करके सब बरात शीतल हो गयी और जो उसकी प्रीतिकी रीति थी वह तो कहनेमें नहीं आ सक्ती ॥१॥ राजा दशरथजीके चारों पुत्र कैसे शोभा देते थे कि, मानों मूर्तिमान् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये चारों पुरुषार्थ विद्यमान बिराज रहे है ॥ २ ॥

सुतनसहित दशरथकहँ देषी ॥ मुदित नगर नर नारि बिशेषी ॥ ३ ॥ ❋
सुमन बर्षि सुर हनहिँ निशाना ॥ नाकनटी नाचहिँ करि गाना ॥ ४ ॥ ❋

दशरथजीको पुत्रोंसहित देखकर नगरके सब नरनारी विशेष प्रसन्न हुए ॥ ३ ॥ देवताओंने फूलोंकी बरसा करके बाजे बजाये और स्वर्गकी अप्सरायें गान करती हुई नृत्य करने लगीं ॥ ४ ॥

शतानन्द अरु विप्र सचिवगन ॥ मागध सूत बिदुष बन्दीजन ॥ ५ ॥ ❋
सहित बरात राउ सनमाना ॥ आयसु माँगि चले अगवाना ॥ ६ ॥ ❋

तब पुरोहित शतानन्द और ब्राह्मण, मंत्रीलोग, मागध, सूत, विद्वान् और बंदी लोग ॥ ५ ॥ ये सब और अगवानलोग बरातियोंके साथ राजाका सन्मान कर दशरथसे आज्ञा मांगकर पीछे चले ॥ ६ ॥

प्रथम बरात लगनते आई ॥ ताते उर प्रमोद अधिकाई ॥ ७ ॥ ❋
ब्रह्मानन्द लोग सब लहहीं ॥ बढ़हु दिवस निशि बिधिसन कहहीं ॥ ८ ॥ ❋

बरात लगनके दिनसे पहले आगयी जिससे मिथिलाके लोगोंके हृदयमें बहुत अधिक आनन्द उपजा ॥ ७ ॥ सब लोग ब्रह्मानन्दके समान सुख पा रहे है जिससे विधातासे प्रार्थना करते है कि, हे विधाता ! आप रात दिनको बढ़ा दो ॥ ८ ॥

दोहा–राम सीय शोभाअवधि, सुकृतअवधि दोउ राज ॥ ❋
जहँ तहँ पुरजन कहहिँ अस, मिलि नरनारिसमाज ॥ ३१० ॥ ❋

जहां तहां नगरके नरनारियोंकी सभा जुड़ती है वहीं नगरके लोग ऐसे कहते है कि, राम और सीता तो शोभाकी परम सीमा है और जनक और दशरथ ये दोनों राजा सुकृतकी परम सीमा है ॥ ३१० ॥

जनकसुकृतमूरति बैदेही ॥ दशरथसुकृत राम धरि देही ॥ १ ॥ ❋
इनसम काहु न शिव आराधे ॥ काहु न इनसमान फल साधे ॥ २ ॥ ❋

जनक राजाका सुकृत तो सीताका स्वरूप धरकर प्रगट हुआ है और दशरथजीका सुकृत रामका स्वरूप धर प्रगट हुआ है ॥ १ ॥ इनके बराबर किसीने महादेवजीका आराधन नहीं किया है. इनके समान किसीको फल नहीं मिला है ॥ २ ॥

इन सम कोउ न भयउ जगमाहीं ॥ है नहिँ कतहूँ होनेउ नाहीं ॥ ३ ॥ ❋
हम सब सकल सुकृतकी राशी ॥ भये जग जन्मि जनकपुरबाशी ॥ ४ ॥ ❋

इनके सदृश जगतमें न तो कोई हुआ, न कोई है और न कोई होगा ॥ ३ ॥ जनकराजाके नगरमें रहनेवाले सब हम लोगभी तो पुण्यकी राशिही है; जो संसारमें जन्म लेकर जनकराजाके नगर-निवासी हुए है ॥ ४ ॥

जिन जानकीरामछबि देखी ॥ को सुकृती हमसरिस बिशेषी ॥ ५ ॥ ❀
पुनि देखब रघुबीरबिबाहू ॥ लेब भली बिधि लोचनलाहू ॥ ६ ॥ ❀

जिन हम लोगोंने सीता और रामकी छबि नेत्रोंसे निहारी है, तिन हमारे जैसा वा हमसे बढ़कर जगतमें सुकृती कौन है ? ॥ ५ ॥ क्योंकि हम लोग तो फिर रामचन्द्रजीका विवाह देखकर हमारे नेत्रोंका लाभ भलीभांति लेंगे ॥ ६ ॥

कहहिँ परस्पर कोकिलबयनी ॥ यह बिबाह बड़ लाभ सुनयनी ॥ ७ ॥ ❀
बड़े भाग बिधि बात बनाई ॥ नयनअतिथि होइ हैं दोउ भाई ॥ ८ ॥ ❀

जिनकी कोकिलासी मधुर वाणी है ऐसी सुन्दर स्त्रियां आपसमें कहती है कि—हे सखियो ! जो यह विवाह होगा तो इससे सबको बड़ा लाभ होगा ॥७ ॥ आपके जरूर बड़े भाग्य है जिससे विधाताने यह बात बनाई है. अब ये दोनों भाई ससुरालमें आया करेंगे जिससे बारंबार अपने नेत्रोंके अतिथि होवेंगे यानी आपनको बारंबार दर्शन होवेंगे ॥ ८ ॥

दोहा—बारहिँ बार सनेहबश, जनक बोलाउब सीय ॥ ❀
लेन आइहहिँ बन्धु दोउ, कोटिकामकमनीय ॥ ३११॥ ❀

क्योंकि जनक राजा स्नेहके वश होकर बारंबार सीताको बुलावेंगे, तब सीताको लेनेके लिये करोड़ों कामदेवोंके समान सुन्दर जिनका स्वरूप है ऐसे ये दोनों भाई यहां आया करेंगे ॥ ३११ ॥

बिबिध भांति होइहि पहुनाई ॥ प्रिय न काहि अस सासुर माई ॥ १ ॥ ❀
तब तब राम लषणहिँ निहारी ॥ होइहहिँ सब पुरलोग सुखारी ॥ २ ॥ ❀

और यहांभी अनेक प्रकारकी महिमानी हुआ करेगी. हे सखियो ! ऐसा ससुराल किसको प्रिय नहीं लगता ? ॥१॥ ज्यों ज्यों राजाका स्नेह अधिक देखेंगे और राजा बुलावेंगे तब तब ये दोनों भाई यहां आवेंगे, जिनको देखकर सब नगरके नर नारी सुखी होवेंगे ॥ २ ॥

सखि जस रामलषणकर जोटा ॥ तैसेइ भूपसंग दुइ ढोटा ॥ ३ ॥ ❀
श्याम गौर सब अंग सुहाये ॥ ते सब कहहिँ देखि जे आये ॥ ४ ॥ ❀

हे सखी ! जैसा राम लक्ष्मणका जोड़ा है ऐसाही एक दूसरा जोड़ा दशरथजीके साथ और है ॥ ३ ॥ वोभी ऐसाही श्याम और गौर वर्ण है, सब अंग अति सुन्दर हैं, सो यह बात वे कहते है जो देखकर आये है ॥ ४ ॥

कहा एक मैं आजु निहारे ॥ जनु बिरंचि निजहाथ सँवारे ॥ ५ ॥ ❀
भरत राम एकहि अनुहारी ॥ सहसा लखि न सकहिँ नरनारी ॥ ६ ॥ ❀

यह सुनकर एकने कहा कि— हां, सत्य है, मैंने आज देखे हैं, वे ऐसेही सुन्दर है. मानों विधाताने उनको अपने हाथसे सँवार कर बनाया है ॥ ५ ॥ तिनमें एक कि जिसका नाम भरत है वो तो रामके ही अनुहार है, कि जिसको यकायक नर नारी पहँचान नहीं सकते ॥ ६ ॥

लषण शत्रुसूदन इकरूपा ॥ नखशिखते सब अंग अनूपा ॥ ७ ॥ ❋
मन भावहिँ मुख वर्णि न जाहीं ॥ उपमाकहँ त्रिभुवन कोउ नाहीं ॥८॥ ❋

और एकका नाम शत्रुघ्न है जो लक्ष्मणके अनुहार है. जिसके सब अंग नखसे ले शिखातक अति अनुपम है ॥ ७ ॥ वे मनको बड़े भावते हैं पर मुखसे कह नहीं सक्ते कि, वे ऐसे हैं. और उनको किसीकी उपमा देवें सो उपमाके लिये त्रिलोकीमें कोई है ही नहीं. फिर किसके सदृश बतावें ? ॥ ८ ॥

छंद–उपमा न कोउ कह दास तुलसी कतहुँ कबि कोबिद कहैं ॥ ❋
बल बिनय बिद्या शील शोभा सिन्धु इनसम ये अहैं ॥ ❋
पुरनारि सकल पसारि अँचल बिधिहिँ बचन सुनावहीं ॥ ❋
ब्याहिय सु चारिउ भाइ यहिपुर हम सुमंगल गावहीं ॥ ३३ ॥ ❋

तुलसीदास कहते हैं कि–इस विषयमें बड़े २ विद्वान् कवि कहते हैं कि–इनको उपमा देवें ऐसा कहीं कोईभी पदार्थ है ही नहीं. बल, विनय, विद्या, शील और शोभाके समुद्र इन राजकुमारोंके सदृश तो ये ही हैं. (अनन्वय अलंकार है) अतएव नगरकी तमाम स्त्रियां अपने २ अंचल (झोला) पसार२ कर विधाताको बचन सुनाती है यानी प्रार्थना करती हैं कि–ये चारों मनोहरमूर्ति भाई इसी पुरीमें व्याहे जाँय और हम इनके सुमांगलिक गीत गावें ॥ ३३ ॥

सोरठा–कहहिँ परस्पर नारि, बारि बिलोचन पुलक तन ॥ ❋
सखि सब करब पुरारि, पुण्यपयोनिधि भूप दोउ ॥ ३४ ॥ ❋

नगरकी स्त्रियां प्रेमसे नेत्रोंमे जल ला, पुलकित शरीर होकर परस्पर कहती हैं कि, हे सखी ! महादेव अपने सकल मनोरथ पूर्ण करेंगे; क्योंकि ये दोनों राजा पुण्यके समुद्र हैं ॥ ३४ ॥

यहिबिधि सकल मनोरथ करहीं ॥ आनँद उमँगि उमँगि उर भरहीं ॥ १ ॥
जे नृप सीयस्वयम्बर आये ॥ देखि बन्धु सब तिन सुख पाये ॥ २ ॥ ❋

इसप्रकार सब लोग मनोरथ करते हैं और उमँग उमँगकर हृदयको आनंदसे भर रहे हैं ॥ १ ॥ सीताजीके स्वयंवरमें जो राजा आये थे वे सब इन चारों भाइयोंको देखकर परमानंदको प्राप्त हुए ॥ २ ॥

कहत रामयश बिशद बिशाला॥ निज निज भवन गये महिपाला ॥ ३ ॥❋
गये बीति कछु दिन यहि भांती ॥ प्रमुदित पुरजन सकल बराती ॥ ४ ॥ ❋

और रामचन्द्रजीका उज्ज्वल और विशाल जस वर्णन करते अपने अपने घर गये ॥ ३॥ इस तरह आनन्दके साथ कितनेएक दिन व्यतीत हुए. जहां देखिये तहां नगरके लोग और बराती लोग आनन्दसे छा रहे हैं ॥ ४ ॥

मंगलमूल लगन दिन आवा ॥ हिमऋतु अगहन मास सुहावा ॥ ५ ॥ ❋
ग्रह तिथि नखत योग बर बारू॥ लगन शोधि बिधि कीन्ह बिचारू॥६॥❋

ऐसे रहते रहते मंगलका मूलकारण लग्नदिन आ गया; जो लग्नदिन सुन्दर हिमऋतुमें

मगसिर (अगहन) मासको अति उत्तम समझकर ॥५॥ ग्रह, तिथि, नक्षत्र योग, शुभवार और लग्नशुद्धि देखकर विधाताने अच्छी तरह विचार करके ॥ ६ ॥

पठै दीन नारदसन सोई ॥ गुणी जनकके गणकन जोई ॥ ७ ॥ ❋
सुनि सकल लोगन यह बाता ॥ कहहिँ ज्योतिषी अपर बिधाता ॥ ८ ॥ ❋

नारदजीके हाथ जनकके यहां भेजा था. जनकके गुणी ज्योतिषियोंने भी वही लग्नदिन ठहराया ॥ ७ ॥ यह बात सुनकर सब लोग कहने लगे कि, ये तो ज्योतिषी क्या है मानों दूसरे विधाता ही हैं ॥ ८ ॥

दोहा–धेनुधूलि बेला बिमल, सकलसुमंगलमूल ॥ ❋
बिप्रन कहेउ बिदेहसन, जानि समय अनुकूल ॥ ३१२ ॥ ❋

निर्मल गोधूलिसमयको समस्त सुमंगलोंका मूल व अनुकूल समय समझकर ब्राह्मणोंने जनकको गोधूलि लग्न कहा ॥ ३१२ ॥

उपरोहितहिँ कहेउ नरनाहा ॥ अब बिलम्बकर कारण काहा ॥ १ ॥ ❋
शतानन्द तब सचिव बुलाये ॥ मंगलकलश साजि सब ल्याये ॥ २ ॥ ❋

राजा जनकने अपने पुरोहित शतानन्दसे कहा कि–अब देरी क्यों है? ॥ १ ॥ तब शतानन्दने सब सचिवोंको बुलाया तो शतानन्दकी आज्ञानुसार वे सब मंगल कलश साजकर ले आये ॥ २ ॥

शंख निशाण पणव बहु बाजे ॥ मंगलकलश सुगुन सब साजे ॥ ३ ॥ ❋
सुभग सुआसिनि गावहिँ गीता ॥ करहिँ बेदधुनि बिप्र पुनीता ॥ ४ ॥ ❋

और अनेक प्रकारके शंख, ढोल व निशान आदि बाजे बजने लगे. मंगलकलश और सब सुगुन तैयार किये गये ॥ ३ ॥ सुन्दर सौभाग्यवती स्त्रियां मंगल गीत गा रही हैं. ब्राह्मणलोग पवित्र वेद-ध्वनि कर रहे है ॥ ४ ॥

लेन चले सादर यहि भांती ॥ गये जहाँ जनवास बराती ॥ ५ ॥ ❋
कोशलपतिकर देख समाजू ॥ अतिलघु लगे तिनहिँ सुरराजू ॥ ६ ॥ ❋

इसप्रकार पुरोहित वगैरः सब सचिव आदरसहित बरातको लेने चले, सो जहां बरातियोंका जनवासा था वहां गये ॥ ५ ॥ उन्होंने जाकर दशरथजीकी समाजको देखा तो उसके सामने देवताओंका राजाभी उनको अति तुच्छ दीखने लगा ॥ ६ ॥

भयउ समय अब धारिय पाउँ ॥ यह सुनि परा निशानन घाऊ ॥ ७ ॥ ❋
गुरुहिँ पूँछि करि कुलबिधि राजा ॥ चले संग मुनि साज समाजा ॥ ८ ॥

इन्होंने दशरथजीसे प्रार्थना करी कि–समय आगया है सो अब आप पधारियेगा. यह बचन सुनते ही निशानोंपर डंका पड़ा ॥ ७ ॥ राजा दशरथजी गुरु वसिष्ठजीको पूँछ, अपने कुलकी रीति कर मुनि लोगोंको साथ ले बरातको सजकर जनवासेसे ब्याहन चले ॥ ८ ॥

दोहा–भाग्य बिभव अवधेशकर, देखि देव ब्रह्मादि ॥ ❋
लगे सराहन सहसमुख, जानि जन्म निज बादि ॥ ३१३ ॥ ❋

दशरथजीके भाग्यके वैभवको देखकर ब्रह्मादिक देवता अपने जन्मको वृथा समझकर शेषजीको सराहने लगे. कारण यह कि, शेषजीके सहस्रमुख हैं इससे वे उसको कुछ वर्णन कर सक्ते हैं और हमारे चार वा एक मुख हैं जिससे हम उनसे बहुत कम हैं ऐसे विचारसे ब्रह्मादिकोंने शेषजीको सराहा ॥ ३१३ ॥

सुरन सुमंगलअवसर जाना ॥ वर्षहिँ सुमन बजाइ निशाना ॥ १ ॥ ❋
शिव ब्रह्मादिकबिबुधबरूथा ॥ चढ़े बिमानन नाना यूथा ॥ २ ॥ ❋

देवताओंने बड़ा सुमंगल अवसर जानकर निशान (बाजे) बजाये और फूलोंकी वर्षा करी ॥ १ ॥ शिव और ब्रह्मादिक देवताओंकी सेनाके अनेक यूथ विमानोंमें चढ़ २ कर वहां आयेहैं ॥ २ ॥

प्रेमपुलक तन हृदय उछाहू ॥ चले बिलोकन रामबिबाहू ॥ ३ ॥ ❋
देखि जनकपुर सुर अनुरागे ॥ निज निज लोक सबहिँ लघु लागे ॥४॥ ❋

प्रेमके कारण उनका शरीर पुलकित हो रहा है. हृदयमें उच्छाह व्याह रहा है. ऐसे देवतालोगभी रामचन्द्रजीका विवाह देखनेको चले हैं ॥ ३ ॥ जनकका नगर देखकर सब देवता बड़े प्रसन्न हुए और सब अपने २ लोकको तुच्छ समझने लगे ॥ ४ ॥

चितवहिँ चकित बिचित्र बिताना ॥ रचना सकल अलौकिक नाना ॥५॥
नगर नारि नर रूपनिधाना ॥ सुघर सुधर्म सुशील सुजाना ॥ ६ ॥ ❋

उस अलौकिक विचित्र वितान (मंडप) को चकित होकर देखते हैं कि, जिसके अंदर सब तरहकी कई अलौकिक रचना बनी हुई है ॥ ५ ॥ और नगरके नर नारीनको देखते हैं सो वे रूपके निधान बड़े सुघर यानी चतुर, बड़े धर्मिष्ठ, सुशील और बड़े ज्ञानी है ॥ ६ ॥

तिनहिँ देखि सब सुर नर नारी॥ भये नखत जनु बिधु उजियारी ॥७॥ ❋
बिधिहिँ भयउ आश्चर्य बिशेषी ॥ निजकरणी कछु कतहुँ न देषी ॥ ८ ॥ ❋

उनको देखकर सब देव और देवांगना कैसे मंदतेज हो गये हैं कि, मानों चंद्रमाके उजालेमें नक्षत्र क्षीणतेज हो जाते हैं ॥ ७ ॥ और विधातानेभी चारों ओर देखा परंतु कहीं अपनी करनी कुछभी न देखी तौ उनकोभी बड़ा आश्चर्य हुआ. कारण यह कि, वहां जो तैयारी हुई थी सो सीताजीकी प्रेरणासे अष्टादश सिद्धियोंके द्वारा हुई थी. ब्रह्माजीका कुछ काम नहीं था ॥ ८ ॥

दोहा–शिव समुझाये देव सब, जनि आश्चर्य भुलाहु ॥ ❋
हृदय बिचारहु धीर धरि, सियरघुबीरबिबाहु ॥ ३१४ ॥ ❋

देवतालोग चकित होगये तब महादेवजीने सब देवताओंको समझाया कि, तुम भूलकेभी आश्चर्य मत करो और धीरज धरकर हृदयमें विचार करो कि, यह सीतारामका बिवाह है इसमें जो हो सो ही थोड़ा ॥ ३१४ ॥

जिनकर नाम लेत जगमाहीं ॥ सकल अमंगलमूल नशाहीं ॥ १ ॥ ❋
करतल होहिँ पदारथ चारी ॥ ते सिय राम कहेउ कामारी ॥ २ ॥ ❋

जगत्में जिनका नाम लेतेही तमाम अमंगलके मूल नष्ट हो जाते हैं ॥ १ ॥ और चारों

पदार्थ यानी धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, वा सायुज्य[1], सार्ष्टि[2], सामीप्य[3], सालोक्य[4] रूप चतुर्विध मोक्ष हस्तगत हो जाता है. महादेवजीने कहा कि—हे देवो वे ये सीता और राम है ॥ २ ॥

यहि बिधि शंभु सुरन समुझावा ॥ पुनि आगे बर बसह चलावा ॥ ३ ॥ ❀
देवन देखे दशरथ जाता ॥ महामोद मन पुलकित गाता ॥ ४ ॥ ❀

इसप्रकार शिवजीने देवताओंको समझाकर फिर अपने उत्तम बैलको आगे बढ़ाया ॥ ३ ॥ देवताओंने दशरथजीको जाते देखा तो उनका मन परमानन्दमें मग्न हो गया और शरीर पुलकित हो गया ॥ ४ ॥

साधुसमाज संग महिदेवा ॥ जनु तनु धरे करहिँ सुख सेवा ॥ ५ ॥ ❀
सोहत साथ सुभग सुत चारी ॥ जनु अपवर्ग सकल तनुधारी ॥ ६ ॥ ❀

और राजाके संग जो साधुसमाज और ब्राह्मण लोग थे वे कैसे मालूम होते थे कि, मानों साक्षात् सुखही देह धारण करके राजाकी सेवा कर रहे है ॥ ५ ॥ राजाके साथ सुन्दर चारों पुत्र कैसे शोभायमान हो रहे है सो मानों चतुर्विध मोक्षही मूर्तिमान् शोभायमान है ॥ ६ ॥

मरकत कनक बरन बर जोरी ॥ देखि सुरन भय प्रीति न थोरी ॥ ७ ॥ ❀
पुनि रामहिँ बिलोकि हिय हरषे ॥ नृपहिँ सराहि सुमन तिन बरषे ॥ ८ ॥

नीलमणि और सुवर्णके समान रंगवाले सुन्दर जोटेको देखकर देवताओंका प्रेम कुछ कम नहीं हुआ था ॥ ७ ॥ फिर रामचन्द्रजीकी ओर देखकर देवता मनमें बड़े प्रसन्न हुए. राजा दशरथकी प्रशंसा करके फूल बरसाने लगे ॥ ८ ॥

दोहा—रामरूप नखशिखसुभग, बारहिँ बार निहारि ॥ ❀
पुलक गात लोचन सजल, उमासमेत पुरारि ॥ ३१५ ॥ ❀

नखसे ले चोटीतक सुन्दर रामचन्द्रजीके स्वरूपको बारंबार निहार कर पार्वतीके साथ महादेवजीके नेत्र सजल हो गये और शरीर पुलकित हो गया ॥ ३१५ ॥

केकिकण्ठद्युति श्यामल अंगा ॥ तड़ितबिनिन्दक बसन सुरंगा ॥ १ ॥ ❀
ब्याहबिभूषण बिबिध बनाये ॥ मंगलमय सबभांति सुहाये ॥ २ ॥ ❀

मयूरके कंठके समान कांतिवाले, सुन्दर श्याम शरीरपर बिजुलीकी छबि छीननवाले, सुन्दर सुरंग वस्त्र शोभायमान है ॥ १ ॥ विवाहसंबंधी अनेकप्रकारके मांगलिक आभूषण सब प्रकारसे लसाये है ॥ २ ॥

शरद बिमल बिधुबदन सुहावन ॥ नयन नवल राजीवलजावन ॥ ३ ॥ ❀
सकल अलौकिक सुन्दरताई ॥ कहि न जाय मनहीं मन भाई ॥ ४ ॥ ❀

शरदऋतुके निर्मल चन्द्रमाके समान सुन्दर मुखारविन्द है और नेत्रोंकी छटाके आगे नवीन कमल लज्जायमान होता है ॥ ३ ॥ जितनी सुन्दरता है उतनी सब अलौकिक है जिससे वह मनको तो अच्छी लगती है पर कही नहीं जा सक्ती ॥ ४ ॥

---

१ एकरूप हो जाना. २ भगवान्‌के बराबर ऐश्वर्य पा जाना. ३ सदा निकट रहना. ४ एक लोकमें रहना.

बन्धु मनोहर सोहहिँ संगा ॥ जात नचावत चपल तुरंगा ॥ ५ ॥ ❋
राजकुँवर बर बाजि नचावहिँ ॥ वंशप्रसंसक बिरद सुनावहिँ ॥ ६ ॥ ❋

और रामचन्द्रजीके साथ सुन्दर छोटे भाई चंचल घोड़ोंको नचाते जा रहे है ॥ ५ ॥ और दूसरेभी राजकुमार अपने २ सुंदर घोड़ोंको नचा रहे है. वंशकी प्रशंसा करनेवाले भाटलोग उनको बिरद सुना रहे हैं ॥ ६ ॥

जेहि तुरंगपर राम बिराजे ॥ गति बिलोकि खगनायक लाजे ॥ ७ ॥ ❋
कहि न जाइ सबभांति सुहावा ॥ बाजिबेष जनु काम बनावा ॥ ८ ॥ ❋

जिस घोड़ेपर रामचन्द्रजी सवार हुए थे उस घोड़ेकी चालको देखकर खुद गरुड़ लजाते थे ॥ ७ ॥ वह ऐसा सुन्दर था कि–सब प्रकारसे कहनेमें नहीं आसक्ता था, मानों कामदेवही तौ घोड़ेका वेष बनाकर नहीं आया था ?॥ ८ ॥

छंद–जनु बाजिबेष बनाइ मनसिज रामहित अति सोहहीं ॥ ❋
अपने सुबय बल रूप गुण गति सकल भुवन बिमोहहीं ॥ ❋
जगमगति जीन जड़ाव जोति सुमोति माणिक मणि लगे ॥ ❋
किंकिणि ललाम लगाम ललित बिलोकि सुर नर मुनि ठगे ॥३४॥❋

मानों कामदेवही तौ रामचन्द्रजीके वास्ते घोड़ेका वेष बनाकर अत्यन्त शोभायमान नहीं हो रहा था? क्योंकि वह अपनी सुंदर अवस्था, बल, रूप, गुण और गतिसे संपूर्ण लोगोंको मोहित करता था, उसकी जड़ाऊ जीन ज्योतिसे जगमगाती थी, सुन्दर मोती और माणिक उसमें लगे हुये थे. सुन्दर किंकिणी और मनोहर लगामको देखकर देवता मुनि और मनुष्य ठगे जाते थे ॥ ३४ ॥

दोहा–प्रभु मनसहिँ लयलीन मन, चलत बाजि छबि पाव ॥ ❋
भूषण उडुगण तडित घन, जनु बर बरहि नचाव ॥ ३१६ ॥ ❋

प्रभुकी मनसाहीमें जिसका मन लय लीन है ऐसा वह घोड़ा चलता हुआ कैसी छबि पाता था कि, मानों नक्षत्रमंडल और बिजुलीसे शोभायमान मेघ सुंदर मोरको नचा रहा है ॥ ३१६ ॥

जेहि बर बाजि राम असवारा ॥ तेहि शारदहू न बरणै पारा ॥ १ ॥ ❋
शंकर रामरूप अनुरागे ॥ नयन पंचदश अति प्रिय लागे ॥ २ ॥ ❋

जिस घोड़ेपर रामचन्द्रजी सवार हुए थे उसका वर्णन करके शारदा भी पार नहीं पा सकती ॥ १ ॥ महादेवजी श्रीरामचंद्रजीके स्वरूपको देखकर अति प्रसन्न हुए और उनको अपने पंद्रह नेत्र प्रिय लगे ॥ २ ॥

हरि हित सहित राम जब जोहे ॥ रमासमेत रमापति मोहे ॥ ३ ॥ ❋
निरखि रामछबि बिधि हरषाने ॥ आठहि नयन जानि पछिताने ॥ ४ ॥❋

और विष्णुभगवान्ने हितके साथ जब अपना रामरूप देखा तौ वेभी लक्ष्मीजीके साथ मोहित हो गये ॥ ३ ॥ ब्रह्माजीभी रामचन्द्रजीकी छबिको देखकर परम प्रसन्न हुए; परंतु अपने आठही नेत्र समझकर पछताने लगे ॥ ४ ॥

सुरसेनपउर बहुत उछाहू ॥ बिधिते डेवढ़े लोचनलाहू ॥ ५ ॥ ❀
रामहिँ चितव सुरेश सुजाना ॥ गौतमशाप परम हित माना ॥ ६ ॥ ❀

प्रभुके दर्शन करके स्वामिकार्तिकके मनमें बड़ा उच्छाह हुआ, क्योंकि उनके नेत्र ब्रह्माजीसे डेवढ़े यानी बाहर हैं; इससे उनको ब्रह्माजीकी अपेक्षा डेवढ़ा नेत्रोंका लाभ हुआ ॥ ५ ॥ इंद्रके हजार नेत्र गौतम ऋषिके शापसे हुए है इससे उस सुज्ञानीने प्रभुके दर्शन करके गौतमऋषिके शापको बड़ा अच्छा समझा ॥ ६ ॥

देव सकल सुरपतिहिँ सिहाहीं ॥ आजु पुरन्दरसम कोउ नाहीं ॥ ७ ॥ ❀
मुदित देवगण रामहिँ देषी ॥ नृपसमाज दुहुँ हर्ष बिशेषी ॥ ८ ॥ ❀

उस समय संपूर्ण देवता इंद्रकी प्रशंसा करने लगे कि– इंद्रके बराबर जगत्में दूसरा कोई नहीं है ॥ ७ ॥ देवतालोग रामचन्द्रजीके दर्शन करके बड़े प्रसन्न हुए है. उस समय देवताओंको जो आनन्द हुआ था उसकी अपेक्षा राजाओंके दोनों दलोंमें विशेष आनन्द हुआ ॥ ८ ॥

छन्द–अतिहर्ष राजसमाज दुहुँ दिशि दुन्दुभी बाजहिँ घनी ॥ ❀
बर्षहिँ सुमन सुर हरषि कहि जय जयति जय रघुकुलमनी ॥ ❀
यहि भांति जानि बरात आवत बाजने बहु बाजहीं ॥ ❀
रानी सुआसिनि बोलि परिछन हेतु मंगल साजहीं ॥ ३५ ॥ ॥

राजाओंके दोनों समाजोंमे उत्कट आनंद छा रहा है. दोनों ओर सघन बाजे बाज रहे है. देवता-लोग हे रघुकुलमणी 'जय ! जय ! ! जय ! ! !' ऐसे कह कहकर आनन्दसे फूल बरसा रहे है. इस प्रकार बरातको आती जानकर अनेक प्रकारके बाजे बजने लगे. रानी सौभाग्यवती स्त्रियोंको बुलाकर परिछनके निमित्त मंगलका साज सजने लगीं ॥ ३५ ॥

दोहा–सजि आरती अनेक बिधि, मंगल सकल सँवारि ॥ ❀
चलीं मुदित परिछन करन, गजगामिनि बर नारि ॥ ३१७ ॥ ❀

अनेक प्रकारसे आरतीको सजि, तमाम मंगल पदार्थ तैयार कर सुन्दर गजगामिनी कामिनियां हर्षित होकर परिछन करनेको चलीं ॥ ३१७ ॥

बिधुबदनी मृगशावकलोचनि ॥ सब निजतन छबि रतिमदमोचनि ॥ १ ॥
पहिरे बरण बरण बर चीरा ॥ सकल बिभूषण सजे शरीरा ॥ २ ॥ ❀

वहां जितनी स्त्रियां थीं उन सबका चंद्रमाके सदृश सुन्दर मुख था, हरिणके बच्चेके तद्वत् उनके नेत्र थे और वे सब अपने शरीरकी कांतिसे रति (कामदेवकी स्त्री) के मदको मोचन करनेवाली थीं ॥ १ ॥ रंग रंगके सुन्दर वस्त्र पहिने थे. शरीरपर सब आभूषण सजे हुए थे ॥ २ ॥

सकल सुमंगल अंग बनाये ॥ करहिँ गान कलकण्ठ लजाये ॥ ३ ॥ ❀
कंकण किंकिणि नूपुर बाजहिँ ॥ चाल बिलोकि कामगज लाजहिँ ॥ ४ ॥

सबोंने अपने शरीरपर सुमंगल साजे थे और ऐसा मधुर गान करती थीं कि जिसको सुनकर कोकिला लजाती थीं ॥ ३ ॥ उनके मधुर गानके साथ कंकण, किंकिणी और नूपुर बाज रहे हैं. उनकी चालको देखकर स्वयं कामदेव और गजराजभी शर्माता है ॥ ४ ॥

बाजहिँ बाजन बिबिध प्रकारा ॥ नभ अरु नगर सुमंगलचारा ॥ ५ ॥ ❋
शची शारदा रमा भवानी ॥ जे सुरतिय शुचि सहजसयानी ॥ ६ ॥ ❋

अनेक प्रकारके बाजे बाज रहे है. आकाश और नगरमें चारों ओर सुन्दर मंगलाचार हो रहा है ॥ ५ ॥ इंद्राणी, सरस्वती, लक्ष्मी और पार्वती आदि जो पवित्र और स्वभावसे सयानी देवांगना हैं ॥ ६ ॥

कपट नारि बर बेष बनाई ॥ मिलीं सकल रनिवासहिं आई ॥ ७ ॥ ❋
करहिँ गान कल मंगल बानी ॥ हर्षबिबश सबकाहु न जानी ॥ ८ ॥ ❋

वे सब कपटसे सुन्दर स्रीका वेष बनाकर रनिवासके साथ आ मिलीं ॥ ७ ॥ और मधुर स्वरसे मंगल गाने लगीं. इस बातकी किसीको खबर नहीं पड़ी; क्योंकि वहां जो लोग थे वे सब ऐसे आनंदके वश हो गये थे कि, उनको अपने स्वरूपकाभी भान नहीं रहा. तब दूसरेको तौ कैसे पहिंचान सकें ? ॥ ८ ॥

छंद--को जान केहि अनन्दबश सब ब्रह्मबर परिछन चली ॥ ❋
कल गान मधुर निशान बर्षहिँ सुमन सुर शोभा भली ॥ ❋
आनन्दकन्द बिलोकी दूलह सकल हिय हर्षित भई ॥ ❋
अम्भोज अम्बक अम्बु उमँगि सुअंग पुलकावलि छई ॥ ३६ ॥ ❋

आनन्दके बश होनेसे उस समय कौन किसको पहिंचानता था ? सब साक्षात् परब्रह्म श्रीरामचन्द्रजीको परिछन चलीं थीं. मधुर स्वरसे सुन्दर गान हो रहा था. बाजे बाज रहे थे. देवता फूल बरसा रहे थे. सुन्दर शोभा बन रही थी. आनन्दकन्द दूलह श्रीरामचंद्रजीको देखकर सब स्रियां मनमें परम प्रसन्न होती थीं. उनके कमलकेसे सुन्दर नेत्रोंमे जल उमंगि आया था और सुन्दर शरीरमें पुलकावली छा गयी थी ॥ ३६ ॥

दोहा--जो सुख भा सियमातुमन, देखि राम बर बेष ॥ ❋
सो न सकहिँ कहि कल्पशत, सहस शारदा शेष ॥ ३१८ ॥ ❋

रामचन्द्रजीके सुन्दर स्वरूपको देखकर सीताकी माताके मनमें जो सुख हुआ, उस सुखको हजारों शारदा और शेषजी सैंकड़ों कल्पोंमेंभी नहीं कह सक्ते ॥ ३१८ ॥

नयन नीर हठि मंगल जानी ॥ परिछन करहिँ मुदित मन रानी ॥ १ ॥ ❋
बेदबिहित अरु कुलब्यवहारू ॥ कीन्ह भली बिधि सब परिचारू ॥ २ ॥ ❋

रानीके नेत्रोंमें आनन्दके कारण जो जल आगया उसे मंगलका समय जानकर उसने रोंकलिया और प्रसन्नमन होकर परिछन करने लगीं ॥ १ ॥ तदनंतर वेदकी रीतिके और कुलके व्यवहारके अनुसार अच्छा तरह सब परिचार किये ॥ २ ॥

पंच शब्द धुनि मंगल गाना ॥ पट पांवड़े परहिँ बिधि नाना ॥ ३ ॥ ❋
करि आरती अर्घ तिन दीन्हा ॥ राम गवन मंडप तब कीन्हा ॥ ४ ॥ ❋

पांच प्रकारके शब्दोंकी धुनि यानी वेदध्वनि, बंदिजनध्वनि, जयध्वनि, शंखध्वनि और

बाजाओंकी ध्वनि होने लगी. मांगलिक गान होने लगा. अनेक प्रकारके चित्रविचित्र कपड़ोंके पांवड़े पड़ने लगे ॥ ३ ॥ उन स्त्रियोंने आरती करके अर्घ दिया तब रामचन्द्रजी मंडपमें पधारे ॥ ४ ॥

दशरथसहित समाज बिराजे ॥ बिभव बिलोकि लोकपति लाजे ॥ ५ ॥ ❋
समय समय सुर बर्षहिं फूला ॥ शांति पढ़हिं महिसुर अनुकूला ॥ ६ ॥ ❋

राजाके साथ दशरथजी विराज रहेथे उनका वैभव देखकर इंद्रादिक लोकपाल लजाते थे ॥ ५ ॥ समय समयपर देवता फूल बरसाते हैं. ब्राह्मणलोग अनुकूल शांतिपाठ कर रहे हैं ॥ ६ ॥

नभ अरु नगर कोलाहल होई ॥ आपन पर कछु सुनै न कोई ॥ ७ ॥ ❋
यहि बिधि राम मंडपहिं आये ॥ अर्घ देइ आसन बैठाये ॥ ८ ॥ ❋

आकाश और नगरके भीतर बड़ा कोलाहल हो रहा है. जिसके आगे किसको अपना या पराया कुछभी सुनायी नहीं देता है ॥ ७ ॥ इसप्रकार रामचन्द्रजी मंडपमें पधारे. तहां पुरोहितने अर्घ देकर उनको आसनपर बिठाया ॥ ८ ॥

छंद--बैठारि आसन आरती करि निरखि बर सुख पावहीं ॥ ❋
मणि बसन भूषण भूरि वारहिँ नारि मंगल गावहीं ॥ ❋
ब्रह्मादि सुरबर बिप्रबेष बनाइ कौतुक देखहीं ॥ ❋
अवलोकि रबिकुलकमलरबिछबि सुफल जीवन लेखहीं ॥ ३७ ॥ ❋

आसनपर बिठलाय, आरती कर, दूलहको निरख कर, सब लोग सुख पाते है और दूलहपर अनेक प्रकारके रत्न, वस्त्र, आभूषण, वार रहे है. स्त्रियां मंगल गा रही है. ब्रह्मादिक देवता ब्राह्मणका वेष बनाकर वहां कौतुक देख रहे है. सूर्यवंशरूप कमलोंको प्रफुल्लित करनेके लिये सूर्यरूप श्रीरामचन्द्रजीकी छबिको देखकर अपने जीवनको सफल मानते है ॥ ३७ ॥

दोहा–नाऊ बारी भाट नट, रामनिछावरि पाइ ॥ ❋
मुदित अशीशहिँ नाइ शिर, हर्ष न हृदय समाइ ॥ ३१९ ॥ ❋

नाऊ, बारी, भाट और नट ये लोग रामचन्द्रजीकी न्यौछावरको पाकर प्रणाम करके आनंदपूर्वक आशिष देने लगे. उनके हृदयमें आनंद नहीं समाया ॥ ३१९ ॥

मिले जनक दशरथ अति प्रीती ॥ करि बैदिक लौकिक सब रीती ॥ १ ॥ ❋
मिलत महा दोउ राज बिराजे ॥ उपमा खोजि खोजि कबि लाजे ॥ २ ॥

जनक और दशरथजी वैदिक और लौकिक सब रीति करके बड़े प्रेमके साथ परस्पर मिले ॥ १ ॥ दोनों महाराजाओंके मिलनेके समय जो छबि छाई थी उसकी उपमाको ढूंढ़ते २ कविलोग शर्मा गये ॥ २ ॥

लही न कतहुँ हारि हिय मानी ॥ इनसम ए उपमा उर आनी ॥ ३ ॥ ❋
समधी देखि देव अनुरागे ॥ सुमन बर्षि यश गावन लागे ॥ ४ ॥ ❋

परंतु कहीं नहीं मिले, तब हृदयमें हार मानकर उन्होंने हृदयमें निश्चय कर लिया कि,

इनको उपमा देनेके वास्ते इनके बराबर तो येही है. (अनन्वय अलंकार) ॥ ३ ॥ इन दोनों समधियोंको देखकर देवता बड़े प्रसन्न हुए और फूल बरसा कर जस गाने लगे ॥ ४ ॥

जग बिरंचि उपजावा जबते ॥ देखे सुने ब्याह बहु तबते ॥ ५ ॥ ❋
सकल भांति सम साज समाजू ॥ सम समधी देखे हम आजू ॥ ६ ॥ ❋

देवतालोग कहने लगे कि–विधाताने जबसे जगतको पैदा किया है तबसे हमने कई ब्याह देखे है और सुने है ॥ ५ ॥ परंतु सब तरहसे बराबरका साज और बराबरका समाज तथा बराबरके समधी तो आजही देखे है ॥ ६ ॥

देवगिरा सुनि सुंदर सांची ॥ प्रीति अलौकिक दुहुँ दिशि मांची ॥ ७ ॥ ❋
देत पांवड़े अर्घ सुहाये ॥ सादर जनक मण्डपहिँ ल्याये ॥ ८ ॥ ❋

ऐसे देवताओंकी सांची और सुन्दर वाणी सुनकर दोनों तर्फ अलौकिक प्रीति बढ़ी ॥ ७ ॥ सुन्दर पांवड़े और अर्घ देते हुए राजा जनक आदरसहित दशरथजीको मंडपमें ले आये ॥ ८ ॥

छंद--मण्डप बिलोकि बिचित्र रचना रुचिरता मुनिमन हरे ॥ ❋
निजपाणि जनक सुजान सबकहँ आनि सिंहासन धरे ॥ ❋
कुलइष्टसरिस बसिष्ठ पूजे बिनय करि आशिष लही ॥ ❋
कौशिकहिं पूजत परम प्रीति कि रीति तौ न परै कही ॥ ३८ ॥ ❋

जिस मंडपके भीतर दशरथजी पधारे वह मंडप ऐसा था कि, जिसकी विचित्र रचना और सुन्दरताको देखकर मुनिलोगोंके मन मोहित होते थे. वहां महाज्ञानी राजा जनकने अपने हाथोंसे लाला कर सब लोगोंके वास्ते सिंहासन धरे. अपने कुलके इष्टके समान वसिष्ठजीकी पूजा करी और विनय करके उनसे आशिष पायी और विश्वामित्रजीकी पूजा करते समय जो अतिशय प्रीति थी उसकी रीति तो कहनेमें नहीं आ सक्ती ॥ ३७ ॥

दोहा–बामदेव आदिक ऋषय, पूजे मुदित महीश ॥ ❋
दिये दिव्य आसन सबहिँ, सबसन लही अशीश ॥ ३२० ॥ ❋

राजा जनकने वामदेव आदि ऋषियोंकी आनंदपूर्वक पूजा करी और सबको दिव्य आसन दिये और उन सबोंसे आशिष ली ॥ ३२० ॥

बहुरि कीन्ह कोशलपतिपूजा ॥ जानि ईशसम भाव न दूजा ॥ १ ॥ ❋
कीन्ह जोरि कर बिनय बड़ाई ॥ कहि निजभाग्य बिभव बहुताई ॥ २ ॥ ❋

फिर जनक राजाने दशरथजीको परमेश्वरके समान समझकर उनकी फिर पूजा करी. जनकका दशरथजीके भीतर परमेश्वरकेसिवा दूसरा भाव नहीं था ॥ १ ॥ जनकने हाथ जोड़कर और अपने भाग्यके वैभवकी बहुलताको कहकर बड़ा विनय किया और बड़ाई करी ॥ २ ॥

पूजे भूपति सकल बराती ॥ समधी सम सादर सब भांती ॥ ३ ॥ ❋
आसन उचित दये सबकाहू ॥ कहौं कहा मुख एक उछाहू ॥ ४ ॥ ❋

राजा जनकने तमाम बरातियोंकी समधीके समान आदरसहित सब प्रकारसे पूजा करी ॥ ३ ॥

सबको यथायोग्य आसन दिये. कवि कहता है कि- मैं उस उत्सवको क्या कहूं? क्योंकि मेरे मुख एकही है ॥ ४ ॥

सकल बरात जनक सनमानी ॥ दान मान बिनती बरबानी ॥ ५ ॥ ❀
बिधि हरि हर दिशिपति दिनराऊ ॥ जे जानहिँ रघुबीरप्रभाऊ ॥ ६ ॥ ❀

राजा जनकने तमाम बरातका दान, मान, विनती और मधुर वाणीसे अच्छीतरह सत्कार किया ॥ ५ ॥ ब्रह्मा, विष्णु, महेश, लोकपाल और सूर्य वगैरः देवता कि जो प्रभुके प्रभावको जानते है ॥ ६ ॥

कपट बिप्रबरबेष बनाये ॥ कौतुक देखहिँ अति सचुपाये ॥ ७ ॥ ❀
पूजे जनक देवसम जाने ॥ दिये सुआसन बिन पहिँचाने ॥ ८ ॥ ❀

वे कपटसे सुन्दर ब्राह्मणका वेष बनाकर वहां आये और अति चोपके साथ कौतुक देखने लगे ॥ ७ ॥ उनकोभी जनकने देवताओंके समान जानकर पूजा करी और बिना पहिंचानेही सुन्दर आसन दिये ॥ ८ ॥

छंद-पहिँचान को केहि जान सबहिँ अपान सुधि भोरी भई ॥ ❀
आनन्दकन्द बिलोकि दूलह उभय दिशि आनँद मई ॥ ❀
सुर लखे राम सुजान पूजे मानसिक आसन दये ॥ ❀
अवलोकि सरल सुभाव प्रभुको बिबुध मन प्रमुदित भये ॥ ३९ ॥ ❀

वहां कौन किसको पहिंचानता था और जानता था, क्योंकि सब लोग अपनी २ सुधभी भूल गये थे तो दूसरेको कैसे पहँचाने? आनन्दकन्द दूलहको देखकर दोनों ओर आनंद छा गया था. सुजान रामचन्द्रजीने देवताओंको पहँचानकर उनकी मानसी पूजा करी और उनको मानसिक आसन दिये. ऐसे प्रभुका सरल स्वभाव देखकर ब्रह्मादि देवता मनमें बड़े प्रसन्न हुये ॥ ३९ ॥

दोहा-रामचन्द्रमुखचन्द्र छबि, लोचन चारु चकोर ॥ ❀
करत पान सादर सकल, प्रेम प्रमोद न थोर ॥ ३२१ ॥ ❀

लोगोंके नेत्ररूप सुन्दर चकोर रामचन्द्रजीके मुखचन्द्रकी छबिका आदरसहित पान करने लगे. जैसे चकोर चंद्रकिरणको पीकर आल्हादित होता है ऐसे सबोंके नेत्र रामचन्द्रजीके मुखकी शोभाको आदरसहित देखकर आल्हादित हुए. सब लोगोंके हृदयमें प्रेम और आनंद कुछ कम नहीं था ॥ ३२१ ॥

समय बिलोकि बसिष्ठ बुलाये ॥ सादर शतानन्द मुनि आये ॥ १ ॥ ❀
बेगि कुँवरि अब आनहु जाई ॥ चले मुदित मुनि आयसु पाई ॥ २ ॥ ❀

समय देखकर मुनि वसिष्ठजीने शतानन्दजीको बुलाया. वसिष्ठजीकी आज्ञा सुनकर आदरसहित शतानन्द मुनि आये ॥ १ ॥ वसिष्ठजीने उनसे कहा कि-अब आप जाकर कुँवरिको जल्दी लाओ. यह आज्ञा पाकर शतानन्द मनमें आनंदित होकर चले ॥ २ ॥

रानी सुनि उपरोहित बानी ॥ प्रमुदित सखिन समेत सयानी ॥ ३ ॥ ❀

बिप्रबधू कुलवृद्ध बुलाई ॥ करि कुलरीति सुमंगल गाई ॥ ४ ॥ ❋

रानीके पास जाकर शतानंदने सीताजीके बुलानेको कहा, सो पुरोहितकी बानी सुनकर सुजान रानीने हर्षित होकर सखियोंके साथ सीताको बुलाया ॥ ३ ॥ फिर ब्राह्मणोंकी स्त्रियां और कुलवृद्ध स्त्रियोंको बुलाकर कुलकी रीति करी और सुमंगल गाये ॥ ४ ॥

नारिवेष जे सुरवर बामा ॥ सकल सुभाय सुन्दरी श्यामा ॥ ५ ॥ ❋
तिनहिँ देखि सुख पावहिँ नारी ॥ बिनु पहिँचान प्राणते प्यारी ॥ ६ ॥ ❋

ब्रह्मादिक देवताओंकी स्त्रियां जो कपटसे स्त्रीका वेष बनाय, श्यामा यानी सोलह वर्षकी अवस्था वाली सुन्दर सुन्दरियां बनी थीं ॥ ५ ॥ उनको देखकर रानीने बड़ा सुख पाया. यद्यपि रानीने उनको पहिँचाना नहीं था, तथापि उसको वे प्राणसे प्यारी लगती थीं ॥ ६ ॥

बारबार सनमानहिँ रानी ॥ उमा रमा शारद सम जानी ॥ ७ ॥ ❋
सीय सँवारि समाज बनाई ॥ मुदित मण्डपहिँ चली लिवाई ॥ ८ ॥ ❋

अतएव रानी उनको पार्वती, लक्ष्मी और सरस्वतीके समान जानकर बारंबार सत्कार करती थी ॥ ७ ॥ ऐसे सीताको साज समाज बनाकर आनंदित हो सखियां सीताको मंडपकी ओर ले चलीं ॥ ८ ॥

छंद- चलि ल्याइ सीतहिँ सखी सादर सजि सुमंगल भामिनी ॥ ❋
नव सप्त साजे सुन्दरी सब मत्त कुंजर गामिनी ॥ ❋
कलगान सुनि मुनि ध्यान त्यागहिँ काम कोकिल लाजहीं ॥ ❋
मंजीर नूपुर कलित कंकण तालगति बर बाजहीं ॥ ४० ॥ ❋

जिनकी मदमत्त गजराजकीसी चाल है ऐसी सोलह श्रृंगारसे सजी हुई सब सुन्दर सखियां सीताके सुमंगल साजकर उसको आदरसहित मंडपकी ओर लिवाई चलीं; उस वक्त जो वे मधुर स्वरसे गान करती थीं उसको सुनकर मुनिलोग ध्यानको त्याग बैठे. काम और कोकिला लजा गयी और उस गानके साथ मंजीर, नूपुर और सुन्दर कंकण, इनकी ध्वनि सुन्दर तालकी चालपर हो रही थी॥ ४० ॥

दोहा-सोहत बनितावृन्द महँ, सहज सुहावनि सीय ॥ ❋
छबिललनागण मध्य जनु, सुषमा अति कमनीय ॥ ३२२ ॥ ❋

स्वभावसे मनोहरमूर्ति सीता स्त्रियोंके झुंडमें कैसे शोभा देती हैं कि, मानों छबिरूप स्त्रियोंके समूहमें एक अति सुन्दर परम शोभा शोभायमान है ॥ ३२२ ॥

सियसुन्दता बर्णि न जाई ॥ लघुमति बहुत मनोहरताई ॥ १ ॥ ❋
आवत जानि बरातिन सीता ॥ रूपराशि सबभांति पुनीता ॥ २ ॥ ❋

सीताकी सुन्दरता कहनेमें नहीं आसक्ती; क्योंकि बुद्धि तो बहुत अल्प है और सुन्दरता बहुत है ॥ १ ॥ रूपकी राशि और सब प्रकारसे पवित्र सीताजीको आती जानकर सब बरातियोंने अपने मनही मनमें प्रणाम किया ॥ २ ॥

सबहिँ मनहिँ मन कीन प्रणामा ॥ देखि राम भये पूरणकामा ॥ ३ ॥ ❋
हर्षे दशरथ सुतनसमेता ॥ कहि न जाइ उर आनँद जेता ॥ ४ ॥ ❋

रामचन्द्रजी सीताजीको देखकर पूर्ण काम हुए यानी उनका मनोरथ पूर्ण हुआ ॥ ३ ॥ दशरथजी पुत्रोंके साथ बड़े प्रसन्न हुए और उनके मनमें जितना आनंद था वह कहनेमें नहीं आ सकता ॥ ४ ॥

सुर प्रणाम करि बर्षहिँ फूला ॥ मुनि अशीश ध्वनि मंगलमूला ॥ ५॥ ❋
गान निशान कुलाहल भारी॥ प्रेम प्रमोद नगरनर नारी ॥ ६ ॥ ❋

देवता प्रणाम करके फूल बरसाने लगे. मुनिलोग मंगलकी मूल कारण आशिष देकर वेदध्वनि करने लगे ॥ ५ ॥ गान हो रहा है, बाजे बाज रहे हैं, जिनका बड़ा भारी कोलाहल मच रहा है. नगरके नर नारी प्रेमानंदमें मग्न हो रहे है ॥ ६ ॥

यहि बिधि सीय मण्डपहिँ आई ॥ प्रमुदित शान्ति पढ़हिँ मुनिराई ॥ ७ ॥
तेहिँ अवसर करि बिधि व्यवहारू ॥ दुहुँ कुलगुरु सब कीन्ह अचारू ॥८॥

इसतरह सीताजी मंडपमे आयी उस समय मुनिलोग आनंदित होकर शांतिपाठ करने लगे ॥ ७ ॥ उस समय दोनों कुलगुरुओंने अपने २ कुलके व्यवहारके अनुसार सब रीति भांति करके सब आचार किये ॥ ८ ॥

छंद--आचार करि गुरु गौरि गणपति मुदित बिप्र पुजावहीं ॥ ❋
सुर प्रकट पूजा लेहिँ देहिँ अशीस अति सुख पावहीं ॥ ❋
मधुपर्क मंगल द्रव्य जो जेहिँ समय मुनि मनमें चहैं ॥ ❋
भरे कनक कोपर कलश सब कर लिये परिचारक रहैं ॥ ४१ ॥ ❋
कुलरीति प्रीति समेत रवि कहि देत सब सादर किये ॥ ❋
यहि भांति देव पुजाइ सीतहिँ सुभग सिंहासन दिये ॥ ❋
सिय राम अवलोकन परस्पर प्रेम काहु न लखि परै ॥ ❋
मन बुद्धि बरबाणी अगोचर प्रगट कबि कैसे करै ॥ ४२ ॥ ❋

ब्राह्मणलोग सब आचार करके गुरु, पार्वती और गणेश, इनको पुजाने लगे. उस समय देवता प्रगट होकर साक्षात् पूजा लेकर पीछी आशिष देते है और सुख पाते हैं. मुनि मधुपर्क यानी पूजाके लिये जिस समय जो मंगल द्रव्य मनमें चाहते है, उसी समय उसी वस्तुसे भरेहुए सुवर्णके और चांदीके कटोरे, कलश, हाथोंमें लिये परिचारक सदा हाजिर रहते हैं ॥ ४१ ॥ कुलकी रीतिमें कहीं पूछना पड़ता है तब प्रीतिके साथ सूर्य कह देते थे. इससे वहां जो कुछ किया गया वह सब आदरके साथ किया गया. इसप्रकार देवताओंको पूजा कर सीताको पुरोहितने सुन्दर सिंहासन दिया. सीताजी और रामचन्द्रजीके परस्पर देखनेमें जो प्रेम वह ऐसा गूढ़ था कि, किसीके जाननेमें नहीं आ सक्ता था. कारण यह कि, वह प्रेम मन, बुद्धि और वाणीके अगोचर था; इसीवास्ते कोई कवि उसको किसी कदर प्रगट नहीं कर सक्ता ॥ ४२ ॥

दोहा–होम समय तनु धरि अनल, अतिहित आहुति लेहिँ ॥ ❋
बिप्र बेष धरि बेद सब, कहि बिबाह बिधि देहिँ ॥ ३२३ ॥ ❋

होमके समय अग्निजी मूर्ति धारण करके बड़े प्रेमके साथ आहुति लेते थे और चारों वेद ब्राह्मणोंका रूप धरकर विवाहकी रीति कह देते थे ॥ ३२३ ॥

सीयमातु किमि जाइ बखानी ॥ जनक पाटमहिषी जग जानी ॥ १ ॥ ❋
सुयश सुकृत सुख सुन्दरताई ॥ सब समेटि बिधि रची बनाई ॥ २ ॥ ❋

जिसको सब जगत् जानता है उस जनककी पटराणी सीताकी माता सुनयनाका बर्णन कैसे हो सके ? ॥ १ ॥ क्योंकि विधाताने सब सुजस, सुकृत, सुख और सुन्दरताको समेट कर उसीको बनायी है ॥ २ ॥

समय जानि मुनिबरन बुलाई ॥ सुनत सुआसिनि सादर ल्याई ॥ ३ ॥ ❋
जनक बाम दिशि सोह सुनयना ॥ हिमगिरि संग बनी जनु मयना ॥ ४ ॥

समय जानकर मुनिराजोंने सुनयनाको बुलाया, तो वह उनकी आज्ञा सुनतेही आदरसहित सुवासिनियोंको संग लेकर वहां आयी ॥ ३ ॥ जनक राजाके बाएं अंगकी तर्फ वह सुनयना कैसे शोभा देती थी कि, मानों हिमालयके संग मयना (पार्वतीकी माता) शोभायमान हो रही है ॥ ४ ॥

कनककलश मणिकोपर रूरे ॥ शुचि सुगन्ध मंगलजलपूरे ॥ ५ ॥ ❋
निज कर मुदित राउ अरु रानी ॥ धरे रामके आगे आनी ॥ ६ ॥ ❋

जो कंचनके कलश और मणियोंके सुंदर प्याले पवित्र सुगंधी मंगल जलसे भरकर तैयार किये गये थे ॥ ५ ॥ वे राजा और रानीने अपने हाथोंसे प्रेमके साथ रामके आगे लाकर धरे ॥ ६ ॥

पढ़हिँ बेद मुनि मंगल बानी ॥ गगन सुमन झरि अवसर जानी ॥ ७ ॥ ❋
बर बिलोकि दम्पति अनुरागे ॥ पाँय पुनीत पखारन लागे ॥ ८ ॥ ❋

अवसर जानकर मुनिलोग मंगल बाणीवाले वेदके मंत्र पढ़ने लगे. देवता आकाशसे फूल बरसाने लगे ॥ ७ ॥ दूलह श्रीरामचंद्रजीको देखकर राजा रानी बड़े प्रसन्न हुए और प्रीतिसे पांव पखारने लगे ॥ ८ ॥

छंद–लागे पखारन पाँय पंकज प्रेम तनु पुलकावली ॥ ❋
नभ नगर गान निशान जैधुनि उमँगि जनु चहुँदिशि चली ॥ ❋
जे पदसरोज मनोजअरिउरसर सदैव बिराजहीं ॥ ❋
जे सुकृत सुमिरत बिमलता मन सकल कलिमल भाजहीं ॥ ४३ ॥

जिस समय वे प्रेमसे रामके पदपंकज पखारने लगे, उस समय आनंदसे उनके शरीरमें पुलकावली छा गयी. आकाशमें और नगरमें गान होने लगा. बाजे बजने लगे और जयध्वनि मानों उमँग कर चारों ओर बाहिरको चली. कैसे हैं वे चरणकमल कि, जो महादेवजीके हृदयरूप

सरोवरमें सदैव विराजमान रहते है. जो सुकृति लोगोंके स्मरण करनेपर मनके सकल कलिकालके मलोंको दूर करके अंतःकरण निर्मल कर देते है ॥ ४३ ॥

जे परसि मुनि बनिता लही गति रही जो पातकमई ॥ ❀
मकरन्द जिनको शम्भु शिर शुचिता अवधि सुर वरणई ॥ ❀
करि मधुप मन मुनि योगि जन जे सेइ अभिमत गति लहैं ॥ ❀
ते पद पखारत भाग्यभाजक जनक जय जय सब कहैं ॥ ४४ ॥ ❀

जिनको छूकर महा पापिनी गौतम ऋषिकी स्त्री अहल्या परम गतिको प्राप्त हुई. जिनके मकरंदरूप श्रीगंगाजीको शंभु सदा शिरपर धारण करते है कि-जिन गंगाजीको देवतालोग पवित्रताकी परमावधि कहकर वर्णन करते है. जिनमें मुनिलोग और योगीलोग अपने मनको भ्रमरके समान लगाकर मनवांछित गति यानी मोक्षको पाते है, उन चरणारविंदोंको भाग्यनिधि राजा जनक पखारने लगे. तब सब लोग जय २ शब्द करने लगे ॥ ४४ ॥

बर कुँवरि करतल जोरि शाखोच्चार दोउ कुलगुरु करैं ॥ ❀
भयो पाणिग्रहण बिलोकि बिधि सुर मनुज मुनि आनँद भरैं ॥ ❀
सुख मूल दूलह देखि दम्पति पुलक तनु हुलसैं हिये ॥ ❀
करि लोकबेदबिधान कन्यादान नृपभूषण दिये ॥ ४५ ॥ ❀

फिर दूलह और दुलहनके हाथ जुड़वाकर दोनों कुलगुरुओंने दोनों ओरका शाखोच्चार किया. वसिष्ठजीने दूलहका और शतानन्दने दुलहिनीका शाखोच्चार किया. वसिष्ठजीने नारायणसे ले दशरथपर्यंत शाखोच्चार किया. श्रीरामविवाहका शाखोच्चार-श्रीमन्नारायणकी नाभिसे कमल कमलसे ब्रह्मा १ ब्रह्मासे मरीचि २ मरीचिसे कश्यप ३ कश्यपसे सूर्य ४ सूर्यसे वैवस्वतमनु ५ वैवस्वत मनुसे इक्ष्वाकु ६ इक्ष्वाकुसे विकुक्षि ७ विकुक्षिसे पुरंजय ८ पुरंजयसे अनेनाः ९ अनेनाःसे पृथु १० पृथुसे विश्वरंधि ११ विश्वरंधिसे चन्द्र १२ चंद्रसे युवनाश्व १३ युवनाश्वसे शावस्त १४ शावस्तसे बृहदश्व १५ बृहदश्वसे कुवलयाश्व १६ कुवलयाश्वसे दृढाश्व १७ दृढाश्वसे हर्यश्व १८ हर्यश्वसे निकुंभ १९ निकुंभसे बर्हणाश्व २० बर्हणाश्वसे कृशाश्व २१ कृशाश्वसे सेनजित् २२ सेनजित्से दूसरा युवनाश्व २३ युवनाश्वसे मांधाता २४ मांधातासे पुरुकुत्स २५ पुरुकुत्ससे यौवनाश्व २६ यौवनाश्वसे हारीत २७ हारीतसे त्रसदस्यु २८ त्रसदस्युसे अनरण्य २९ अनरण्यसे दूसरा हर्यश्व ३० हर्यश्वसे अरुण ३१ अरुणसे निबंधन ३२ निबंधनसे त्रिशंकु ३३ त्रिशंकुसे हरिश्चंद्र ३४ हरिश्चंद्रसे रोहित ३५ रोहितसे हरित ३६ हरितसे चंप ३७ चंपसे सुदेव ३८ सुदेवसे विजय ३९ विजयसे भरुक ४० भरुकसे वृक ४१ वृकसे बाहुक ४२ बाहुकसे सगर ४३ सगरसे असमंजस ४४ असमंजससे अंशुमान् ४५ अंशुमान्से दिलीप ४६ दिलीपसे भगीरथ ४७ भगीरथसे श्रुत ४८ श्रुतसे नाभ ४९ नाभसे अपर ५० अपरसे सिंधुद्वीप ५१ सिंधुद्वीपसे अयुतायु ५२ अयुतायुसे ऋतुपर्ण ५३ ऋतुपर्णसे सर्वकाम ५४ सर्वकामसे सुदास ५५ सुदाससे सौदास ५६ सौदाससे अश्मक ५७ अश्मकसे नारीकवच ५८ नारीकवचसे दशरथ ५९ दशरथसे ऐडबिड़ ६० ऐडबिड़से विश्वसह ६१ विश्वसहसे खट्वांग ६२ खट्वांगसे दीर्घबाहु ६३ दीर्घबाहुसे दूसरा दिलीप ६४ दिलीपसे रघु ६५ रघुसे अज ६६ अजसे

दूसरे दशरथ ६७श्रीमन्महाराजाधिराज सार्वभौमाधिपति श्रीराजा दशरथजीसे चतुर्व्यूहावतार चार पुत्र श्रीरामचंद्र १ भरत २ लक्ष्मण ३ शत्रुघ्न ४ वर चिरंजीव ॥

सीताजीका शाखोच्चार– श्रीमन्नारायणसे कमल, कमलसे ब्रह्मा १ ब्रह्मासे मरीचि २ मरीचिसे कश्यप ३ कश्यपसे सूर्य ४ सूर्यसे वैवस्वत मनु ५ वैवस्वत मनुसे निमि ६ निमिसे मिथि ७ मिथिसे जनक ८ जनकसे उदावसु ९ उदावसुसे नन्दिवर्धन १० नन्दिवर्धनसे सुकेतु ११ सुकेतुसे देवरात १२ देवरातसे बृहद्रथ १३ बृहद्रथसे महावीर १४ महावीरसे सुधृति १५ सुधृतिसे धृष्टकेतु १६ धृष्टकेतुसे हर्यश्व १७ हर्यश्वसे मरु १८ मरुसे प्रतीन्धक १९ प्रतीन्धकसे कीर्तिरथ २० कीर्तिरथसे देवमीढ़ २१ देवमीढ़से विबुध २२ विबुधसे महीध्रक २३ महीध्रकसे कीर्तिरात २४ कीर्तिरातसे महारोमा २५ महारोमासे स्वर्णरोमा २६ स्वर्णरोमासे ऱ्हस्वरोमा २७ ऱ्हस्वरोमासे दो पुत्र सीरध्वज और कुशध्वज २ तिनमें सीरध्वज कि जिनको जनक आदि भी कहते है तिनके दो कन्या है एक तो पृथ्वीसे उत्पन्न सीता १और दूसरी सुनयनासे जन्मी हुई उर्मिला२.छोटे भाई कुशध्वजके भी दो कन्या है. मांडवी १ और श्रुतकीर्ति २ कन्या चिरंजीव ॥ ऐसे सीता रामका पाणिग्रहण हुआ तिसे देखकर विधाता (ब्रह्माजी) देवता, मनुष्य और मुनि ये सब परमानन्दमग्न हुए. राजा रानी सुखके मूल दूलह श्रीरामचंद्रजीको देखकर पुलकित शरीर हुए और हृदयमें हुलसे ऐसे राजाओंमें मुकुटमणि राजा जनकने वेद और लोककी रीति करके कन्यादान दिया ॥ ४५ ॥

हिमवन्त जिमि गिरिजा महेशहिँ हरिहिँ श्री सागर दई ॥ ❋
तिमि जनक रामहिँ सिय समर्पी विश्व कल कीरति नई ॥ ❋
किमि करौं बिनय बिदेह कीन्ह बिदेह मूरति साँवरी ॥ ❋
करि होम बिधिवत गाँठि जोरी होन लागीं भांवरी ॥ ४६ ॥ ❋

जैसे हिमाचलने महादेवजीको पार्वती दीनी और समुद्रने जैसे विष्णु भगवानको लक्ष्मी दीनी, ऐसे जनक राजाने रामचंद्रजीको सीता समर्पण कर जगत्में अच्छी नई सुख्याति पाई. अब जो जनक विदेह राजा विनय करै तौ वह किसतरह कर सक्ता है? क्योंकि उसको तौ सुन्दर साँवरी मूर्तिने सचमुच विदेह बना दिया था. यानी प्रेमके कारण वह अपने शरीरकी सुध भूल गया था. फिर सावधान होकर राजाने विधिपूर्वक होम किया. तदनन्तर गांठ जोरी. फिर भाँवरी होने लगीं ॥ ४६ ॥

दोहा–जयधुनि बन्दी बेदधुनि, मंगल गान निशान ॥ ❋
सुनि हर्षहिँ बर्षहिँ बिबुध, सुरतरुसुमन सुजान ॥ ३२४॥ ❋

भाँवरी होते समय लोग जयध्वनि करने लगे. बंदी बिरद उच्चारने लगे. ब्राह्मण वेदध्वनि करने लगे. मंगल गान होने लगा. बाजे बजने लगे. जिस पंचविध ध्वनिको सुनकर सुज्ञानी देवता हर्षित हो कल्पवृक्षोंके फूल बरसाने लगे ॥ ३२४ ॥

कुँवरि कुँवर कल भाँवरि देहीं ॥ नयन लाभ सब सादर लेहीं ॥ १ ॥ ❋
जाइ न बरणि मनोहर जोरी ॥ जो उपमा कछु कहिय सो थोरी ॥ २ ॥ ❋

कुँवर और कुँवरि सुंदर भांवरी देते है जिसको देखकर सब लोग आदरसहित अपने नेत्रोंका लाभ लेते है ॥ १ ॥ वह सुन्दर जोड़ी वर्णन करनेमें नहीं आ सक्ती; क्योंकि उसको जो कुछ उपमा दे वह सब थोड़ीही है ॥ २ ॥

राम सीय सुन्दर परिछाहीं ॥ जगमगाहिँ मणिखंभनमाहीं ॥ ३ ॥ ❀
मनहुँ मदन रति धरि बहुरूपा ॥ देखहिँ रामबिबाह अनूपा ॥ ४ ॥ ❀

उनके भांवरी खाते समय मणियोंके खंभोके अंदर जो रामचन्द्रजीकी सीताकी सुन्दर परछाई जगमगाती है ॥ ३ ॥ वो ऐसीमालूम होती है कि—मानों कामदेव और रति अनेक स्वरूप धारण करके रामचन्द्रजीके अनुपम विवाहको देखने आये है ॥ ४ ॥

दरश लालसा सकुच न थोरी ॥ प्रगटत दुरत बहोरि बहोरी ॥ ५ ॥ ❀
भये मगन सब देखनहारे ॥ जनकसमान अपान बिसारे ॥ ६ ॥ ❀

परछाईमें जो रति कामदेवकी उत्प्रेक्षा की है, तहां उनके बारंबार प्रगट होनेमें और छिपनेमें उत्प्रेक्षा करते है. जो खंभोंके अंदर रति और कामदेवकी मूर्तियां हैं, उनके प्रभुके दर्शनकी बड़ी लालसा है; परंतु अपने स्वरूपको प्रभुके स्वरूपसे न्यून जानकर उनको संकोचभी कम नहीं होता है. जिससे वे बारंबार प्रगट होते है और छिपते हे ॥ ५ ॥ जो देखनेवाले थे वे सब आनंदमग्न हो गये. जैसे जनक अपनपौ भूल गया था, वैसे और भी सब लोग अपनपौ भूल गये ॥ ६ ॥

प्रमुदित मुनिन भांवरी फेरी ॥ नेगसहित सब रीति निबेरी ॥ ७ ॥ ❀
रामसीयशिर सिन्दुर देहीं ॥ शोभा कहि न जात बिधि केहीं ॥ ८ ॥ ❀

मुनि लोगोंने आनंदके साथ भांवरी फिराये. तदनंतर सब नेग चुका कर सब रीति भांति निबेरी ॥ ७ ॥ जिस समय रामचंद्रजी सीताके ललाटमें सिंदूरका तिलक करने लगे उस समयकी शोभा किसी तरह कही नहीं जाती ॥ ८ ॥

अरुण पराग जलज भरि नीके ॥ शशिहिँ भूषि अहि लोभ अमीके ॥ ९ ॥ ❀
बहुरि बसिष्ठ दीन्ह अनुशासन ॥ बर दुलहिनि बैठे इक आसन ॥ १० ॥ ❀

कई एक सत्कवि कहते है कि—यह (लुप्तोपमा) है सो ऐसे है कि—श्यामसर्प अमृतके लोभसे कमलमें अच्छी तरह अरुण पराग भरकर चंद्रमाको भूषित करता है यानी पूज रहा है. यहां रामचंद्रजीका हाथ है सो तो श्याम सर्प है. हथेली है सो कमल है. अंगुली पखुरियां है. अरुण पराग सिंदूर है और सीताजीका मुख है सो चंद्र है ॥ ९ ॥ फिर वसिष्ठजीकी आज्ञासे दोनों वर और दुलहिनि एक आसनपर बैठे ॥ १० ॥

छंद—बैठे बरासन राम जानकि मुदित मन दशरथ भये ॥ ❀
तन पुलकि पुनि पुनि देखि अपने सुकृत सुरतरु फल नये ॥ ❀
भरि भुवन रहा उछाह रामबिबाह भा सबही कहा ॥ ❀
केहिभांति बरणि सिरात रसना एकमुख मंगल महा ॥ ४७ ॥ ❀

जब राम और सीता दोनों सुंदर एक आसनपर बैठे, तब दशरथजी मनमें बड़े प्रसन्न हुए अपने पुण्यरूप कल्पवृक्षके जो नये नये फल लगे है, उन्हें देखकर दशरथजी प्रेमसे बारंबार पुलकित गात हो रहे है. जिस वक्त सब लोगोंने कहा कि–रामचंद्रजीका विवाह हो गया. उस समय तमाम लोकोंमें उच्छाह व्याप्त हो गया. कवि कहता है कि–हम उस उच्छाहको स्वजिह्वासे वर्णन करके कैसे पार पा सकें; क्योंकि हमारे मुख तो एक, मंगल बहुत बड़ा, इसवास्ते हम तो उसको वर्णन करके पार नहीं पा सक्ते ॥ ४७ ॥

तब जनक पाइ बसिष्ठ आयसु ब्याह साजि सँवारिकै ॥ ❃
माण्डवी श्रुतकीर्ति उर्मिला कुँवरि लई हँकारिकै ॥ ❃
कुशकेतु कन्या प्रथम जो गुण शील सुख शोभामई ॥ ❃
सब रीति प्रीति समेत करि सो ब्याहि नृप भरतहिँ दई ॥ ४८ ॥ ❃

उस समय वसिष्ठजीकी आज्ञा पाकर जनक राजाने व्याहके साज तैयार करके अपनी मांडवी, श्रुतकीर्ति और उर्मिला नाम तीनों कन्याओंको पुकार कर बुलाया. तहां कुशकेतुकी मांडवी नाम कन्या कि जो गुण, शील, सुख और शोभाकी पुंज थी, उसको सब रीति भांति करके प्रीतिके साथ राजा जनकने भरतको व्याह दी ॥ ४८ ॥

जानकी लघु भगिनि जो सुन्दरि शिरोमणि जानिकै ॥ ❃
सो जनक दीन्ही ब्याहि लषणहिँ सकल बिधि सनमानिकै ॥ ❃
जेहि नाम श्रुतकीरति सुलोचनि सुमुखि सबगुणआगरी ॥ ❃
सो दई रिपुसूदनहिँ भूपति रूपशीलउजागरी ॥ ४९ ॥ ❃

और सीताकी छोटी बहन उर्मिला नाम जो आपकी कन्या थी, उसको सब स्त्रियोंमें शिरोमणि जानकर जनक राजाने सब प्रकारसे सन्मान करके लक्ष्मणको परणाय दीनी. सब गुणोंकी खानि जो श्रुतकीर्ति नाम कुशकेतुकी कन्या थी, उस सुमुखी सुलोचनाको रूप और गुणोंसे अति उजागर जानकर राजा जनकने शत्रुघ्नको व्याह दीनी ॥ ४९ ॥

अनुरूप बर दुलहिनि परस्पर लखि सकुचि हिय हर्षहीं ॥ ❃
सब मुदित सुन्दरता सराहहिँ सुमन सुरगण बर्षहीं ॥ ❃
सुन्दरी सुन्दर बरण सह सब एक मण्डप राजहीं ॥ ❃
जनु जीव अरु चारिउ अवस्था बिभुन सहित बिराजहीं ॥ ५० ॥ ❃

जैसे चाहिये वैसे सब प्रकारसे योग्य चारों दूलह दुलहिन परस्पर देखते है तो सकुचते हैं; पर मनमें बड़े प्रसन्न होते है. सब लोग उनकी सुंदरताको देखकर आनंदित होकर प्रशंसा करते हैं. देवता लोग फूल बरसाते हैं. वे सब दुलहिन अपने अपने दूलहोंके साथ एकही मंडपमें कैसे विराजमान हो रही है कि– मानों चार प्रकारके जीव यानी नित्य, मुक्त, मुमुक्षु और बद्ध ये अपनी चारों अवस्था यानी जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीया इनके देवता यानी विभु, विश्व, तैजस और प्राज्ञ इनके साथ विराज रहे हैं अथवा मानों चार प्रकारके देवताओंके साथ

चारों अवस्था और जीव ये शरीररूप मंडपमें शोभायमान हो रहे है. यहां चारों कुंवर देवतारूप है, कुंवरियां अवस्थारूप है और जीव राजा दशरथरूप है ॥ ५० ॥

दोहा-मुदित अवधपति सकल सुत, वधुनसमेत निहारि ॥ ❀
जनु पाये महिपालमणि, क्रियनसहित फल चारि ॥ ३२५ ॥ ❀

दशरथजी अपने सब पुत्रोंको बहुओंके साथ देखकर कैसे प्रसन्न हुए कि- मानों राजाने क्रिया-ओंके साथ चारों फल यानी धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष पा लिये है ॥ ३२५ ॥

जस रघुबीरब्याहबिधि बरणी ॥ सकल कुँवर ब्याहे तेहि करणी ॥ १ ॥ ❀
कहि न जाइ कछु दाइज भूरी ॥ रहा कनक मणि मंडप पूरी ॥ २ ॥ ❀

जैसी रामचन्द्रजीके ब्याहकी विधि कही है उसी रीतिसे सब कुँवर व्याहे गये ॥ १ ॥ राजा जनकने जो कुछ दाइजा दिया था वह इतना ज्यादे था कि कुछ कहनेमें नहीं आसक्ता. जिस मंडपमें दूलह बैठे थे, वह मंडप सुवर्ण और रत्नोंसे खूब अच्छी तरह भर गया ॥ २ ॥

कम्बल बसन बिचित्र पटोरे ॥ भांति भांति बहुमोल न थोरे ॥ ३ ॥ ❀
गज रथ तुरग दास अरु दासी ॥ धेनु अलंकृत कामदुहासी ॥ ४ ॥ ❀

अनेक प्रकारके कीमती दुशाले, चित्रविचित्र वस्त्र और रेशमी कपड़े वहां कुछ कम नहीं थे ॥ ३ ॥ घोड़े, हाथी, रथ, दास और दासियां तथा सुवर्णकी मालासे आभूषित की हुई कामधेनुसी सुन्दर गायें वगैरः अनेक पदार्थ यौतुकमें दिये गये ॥ ४ ॥

बस्तु अनेक करिय किमि लेखा ॥ कहि न जाइ जानहिँ जिन देखा ॥ ५ ॥
लोकपाल अवलोकि सिहाने ॥ लीन्ह अवधपति सब सुख माने ॥ ६ ॥ ❀

कवि कहता है कि- वहां वस्तुओंका कुछ पता नहीं था. कई वस्तु लायीं गयीं थीं इसका लेखा कैसे हो सके ? इसीवास्ते हम कहते है कि- जिन्होंने वे चीजें देखी है वेही तो उनको जान सक्ते है. बाकी उनके सिवाय दूसरा कोईभी कह नहीं सक्ता ॥ ५ ॥ जिन वस्तुओंको देखकर लोकपालभी सिहा गयेथे. वे सब वस्तु दशरथजीने बड़े आनंदके साथ लीनी ॥ ६ ॥

दीन्ह याचकन जो जेहि भावा ॥ उबरा सो जनवासहिँ आवा ॥ ७ ॥ ❀
तब कर जोरि जनक मृदु बानी ॥ बोले सब बरात सनमानी ॥ ८ ॥ ❀

और उनमेंसे जो चीज जिसको पसंद हुई वही चीज याचकलोगोंको दी गयी. ऐसे देते २ जो कुछ अवशेष रहा वो जनवासे भेजा गया ॥ ७ ॥ तब जनकराजा सब बरातियोंको भली भांति सन्मान कर, हाथ जोड़ कोमल वाणीसे बोले कि- ॥ ८ ॥

छंद-सनमानि सकल बरात सादर दान बिनय बड़ायकै ॥ ❀
प्रमुदित महा मुनिवृन्द बन्दे पूजि प्रेम लगायकै ॥ ❀
शिर नाइ देव मनाइ सबसन कहत कर संपुट किये ॥ ❀
सुर साधु चाहत भाव सिन्धु कि तोष जलअंजलि दिये ॥ ५१ ॥ ❀

राजा जनकने तमाम बरातियोंका दान, विनय और बड़ाईके साथ आदरसहित सन्मान किया. और आनंदके साथ प्रीति लगाकर बड़े २ मुनिसमुदायको पूजा कर बंदन किया. देवता

ओंको शिरसे प्रणाम कर, अच्छीतरह मनाइके वस्त्रसहित करसंपुट किये (हाथ जोड़े). और कहा कि-- देवता और साधु लोग केवल भक्तिही चाहते है. वे द्रव्यसे प्रसन्न नहीं होते. केवल भक्तिसेही प्रसन्न होते है. देवता और साधु जनोंके सामने जो हम लोग भेंट अर्पण करते हैं वह कितनी ? और उससे वे क्या प्रसन्न होंगे ? यदि समुद्रको कोई जलांजलि देवे तौ उससे वह क्या प्रसन्न होगा ? इसवास्ते केवल भक्ति ही प्रसन्न करनेका साधन है; अन्य नहीं ॥ ५१ ॥

कर जोरि जनक बहोरि बन्धुसमेत कोशलरायसों ॥ ❋
बोले मनोहर बयन सानि सनेह शील सुभायसों ॥ ❋
सम्बन्ध राजन रावरे हम बड़े अब सबबिधि भये ॥ ❋
यह राज साजसमेत सेवक जानबी बिनुगथ लिये ॥ ५२ ॥ ❋

राजा जनकने हाथ जोड़ अपने भाई कुशध्वजके साथ राजा दशरथसे फिर स्नेह और शीलसे मिले हुए बड़े मनोहर बचन अपने स्वभावसे कहे कि--हे राजन् ! आज हम राउरेके संबंध होनेसे सब प्रकारसे बड़े हुए हैं. यह जो मेरा राजसमाज है, उसके साथ मुझको अपना विना मोलका सेवक जानियेगा ॥ ५२ ॥

ये दारिका परिचारिका करि पालबी करुणामयी ॥ ❋
अपराध क्षमिवो बोलि पठये बहुत हौं ढीठी दयी ॥ ❋
पुनि भानुकुलभूषण सकल सनमान बिधि समधी किये ॥ ❋
कहि जात नहिँ बिनती परस्पर प्रेमपरिपूरण हिये ॥ ५३ ॥ ❋

और जो ये मेरी चार कन्या हैं, तिनको अपनी परिचारिका यानी दासियां समझकर इनका पालन करियेगा. मैंने जो आपको बुला भेजा यह बड़ा ढीठपण किया है. सो हे करुणामय ! वो मेरा अपराध क्षमा करो. जनकके ऐसे कोमल बचन सुनकर दशरथजीने फिर अपने समधियोंका सब प्रकारसे सन्मान किया, जो उनके परस्पर विनती होती थी वो कहनेमें नहीं आसक्ती. उनके हृदय परस्परकी प्रीतिसे प्रेमपरिपूर्ण हो गये थे॥ ५३ ॥

वृंदारकागण सुमन बर्षाहिँ राउ जनवासहिँ चले ॥ ❋
दुन्दुभीधुनि बेदध्वनि नभ नगर कौतूहल भले ॥ ❋
तब सखिन मंगल गान करत मुनीशआयसु पाइकै ॥ ❋
दूलह दुलहिनिनसहित सुन्दरि चलीं कुहवर ल्याइकै ॥ ५४ ॥ ❋

जब राजा दशरथ जनवासेको रवाने हुए तब देवतालोग फूल बरसाने लगे. दुंदुभी बजने लगे. वेदध्वनि होने लगी. आकाश और नगरमें अच्छे अच्छे कौतुक होने लगे. उस समय वसिष्ठजीकी आज्ञा पाकर सखियां सुंदरमंगलगान करतीं हुई चारों दूलह दुलहिनोंको साथ लेकर कुहवरको भवनके भीतर गयीं ॥ ५४ ॥

दोहा--पुनि पुनि रामहिँ चितव सिय, सकुचति मन सकुचैन ॥ ❋
हरति मनोहर मीनछबि, प्रेमपियासे नैन ॥ ३२६ ॥ ❋

जिस समय सीताजी रामचंद्रजीकी ओर बारंबार देखती है और सकुचाती हैं, पर मन नहीं सकुचाता है. उस समय प्रेमके प्यासे सीताजीके चंचल नेत्र मनोहर मछलीकी छबिको हरण करते थे ॥ ३२६ ॥

श्याम शरीर सुभाय सुहावन ॥ शोभा कोटि मनोज लजावन ॥ १ ॥ ❀
जावकयुत पदकमल सुहाये ॥ मुनिमन मधुप रहत जहँ छाये ॥ २ ॥ ❀

प्रभुका श्याम शरीर स्वभावसेही अति सुन्दर है कि जिसकी शोभाको देखकर करोड़ों कामदेव लजाते हैं ॥ १ ॥ महाउर जिनमें लगा हुआ है ऐसे प्रभुके सुहावने चरणकमल ऐसे रमणीय हैं कि, जहां मुनि लोगोंके मनरूप भ्रमर सदा छाये रहते है ॥ २ ॥

पीत पुनीत मनोहर धोती ॥ रहत बाल रवि दामिनि ज्योती ॥ ३ ॥ ❀
कल किंकिणि कटिसूत्र मनोहर ॥ बाहु बिशाल बिभूषण सुंदर ॥ ४ ॥ ❀

प्रभुकी पवित्र पीली धोती ऐसी सुन्दर लग रही है कि--मानों वह बाल सूर्य और दामिनकी दमकको छीन रही है ॥ ३ ॥ कटिमें सुन्दर किंकणी और कटिसूत्र शोभा देते है और विशाल भुजामें सुन्दर अलंकार राज रहे है ॥ ४ ॥

पीत जनेउ महाछबि देई ॥ कर मुद्रिका चोर चित लेई ॥ ५ ॥ ❀
सोहत ब्याहसाज सब साजे ॥ उर आयत सब भूषण राजे ॥ ६ ॥ ❀

पीत यज्ञोपवीत बड़ा शोभायमान हो रहा है और प्रभुके हाथमें जो मुद्रिका है, वह ऐसी रमणीय है कि, जिसके देखनेसे सबके मन चुरा लिने जाते है ॥ ५ ॥ प्रभु सब विवाहसंबंधी साज सजे हुए शोभायमान हो रहे हैं और विशाल वक्षःस्थलमें सब आभूषण देदीप्यमान हो रहे हैं ॥ ६ ॥

पीत उपरना कांखा सोती ॥ दुहुँ आचरन लगे मणि मोती ॥ ७ ॥ ❀
नयनकमल कल कुण्डल काना ॥ बदन सकल सौंदर्य्यनिधाना ॥ ८ ॥ ❀

प्रभुके पीला उपरना कांखा सोती पड़ा हुआ है कि, जिस उपरनेके अंचरोंपर मणि और मोती लगे हुए है ॥ ७ ॥ कमलकेसे सुन्दर नेत्र है. कानोंमें सुन्दर कुंडल डोल रहे है. मुखारविंद संपूर्ण सुन्दरताका निधान ही है ॥ ८ ॥

सुन्दर भृकुटि मनोहर नासा ॥ भालतिलक शुचि रुचिर निबासा ॥ ९ ॥ ❀
सोहत मौर मनोहर माथे ॥ मंगलमय मुकतामणि गाथे ॥ १० ॥ ❀

सुन्दर भृकुटि और मनोहर नासिका है. विशाल भालमें पवित्र और सुन्दर तिलक शोभायमान है ॥ ९ ॥ मणि मुक्तासे गुंथा हुआ मंगलमय मनोहर मौर मस्तकपर शोभायमान हो रहा है ॥ १० ॥

छंद--गाथे महामणि मौर मंजुल अंग सब चित चोरहीं ॥ ❀
पुरनारि सुन्दर वर बिलोकहिँ निरखि छबि तृण तोरहीं ॥ ❀
मणि बसन भूषण वारि आरति करहिँ मंगल गावहीं ॥ ❀
सुर सुमन बर्षहिँ सूत मागध बन्दि सुयश सुनावहीं ॥ ५५ ॥ ❀

शिरपर अमूल्य मणियोंका जड़ाऊ सुन्दर मौर बँधा हुआ है. तमाम अंग अपनी सुन्दरताके

कारण मनको चुराते है, नगरकी स्त्रियां सुन्दर दुलहिनी दुलहोंकी छबिको देखकर दृष्टि न लगे इस-वास्ते तृण तोड़तीं है. और उनपर मणि, वस्त्र और आभूषण वारती है. आरती करती हैं और मंगल गाती है। देवता फूल बरसाते है. सूत, मागध और बंदीजन सुयश सुनाते है ॥ ५५ ॥

कुहबरहिँ आने कुँवर कुँवरि सुआसिनिन सुख पाइकै ॥ ❋
अति प्रीति लौकिक रीति लागीं करन मंगल गाइकै ॥ ❋
लहकौरि गौरि शिखाव रामहिँ सीयसन शारद कहैं ॥ ❋
रनिवास हास बिलाश रसबश जनमको फल सब लहैं ॥ ५६ ॥ ❋

सुवासिनियां सुख पाकर कुँवर कुँवरियोंको कुहबरके भवनमें लाकर अति प्रीतिसे मंगल गातीं हुई सब लौकिक रीति कर रहीं है तहां पार्वतीजी तौ रामचंद्रजीको लहकवरि सिखाती है कि-आप ऐसे कवर देहु और सरस्वती सीताजीको सिखाती है कि-तुम ऐसे कवर देहु, ऐसे कहकर पार्वतीजी रामचन्द्रजीका हाथ पकड़कर सीताको कवर दिलाती है और सरस्वती सीताजीका हाथ पकड़कर रामचन्द्रजीको कवर दिलाती है. तहां रनिवास हास्यविलास करती है और आनंदके बश होकर अपने जनमका फल पाती है ॥ ५६ ॥

निजपाणिमणिमहँ देखि प्रतिमूरति स्वरूपनिधानकी ॥ ❋
चालति न भुजवल्ली बिलोकनि बिरहबश भइ जानकी ॥ ❋
कौतुक बिनोद प्रमोद प्रेम न जाइ कहि जानहिँ अली ॥ ❋
वर कुँवरि सुन्दर सकल सखिन लिवाइ चनवासहिँ चली ॥ ५७ ॥ ❋

लहकवरि लेनेको सीताजी प्यारमें हाथ डालती है, तब उनके हाथकी मुद्रिकाके नगमें जो स्वरूपनिधान प्रभुका प्रतिबिंब पड़ता है, तिसे देखकर सीताजी अपनी भुजवल्लीको च-लाती नहीं है;क्योंकि जो भजवल्ली हिले तौ वह साँवरी सुन्दर मूर्ति दीखनी बंद हो जाय.उस विरहके बश होकर सीताजी ज्यों की त्यों मग्न बैठ रही है. कवि कहता है कि-उस समयका जो कौतुक, विनोद, आनन्द और प्रेम था वह कहा नहीं जा सक्ता. उसको तौ वेही सखियां जानती है कि, जो उस समय वहां हाजिर थीं. ऐसे २ अनेक उच्छाह देखनेसे परमानन्द मग्न वे सखियां मनोहर मूर्ति सब दूलह दुलहिनोंको जनवासेको लिवा ले चलीं ॥ ५७ ॥

तेहि समय सुनिय अशीश जहँ तहँ नगर नभ आनँद महा ॥ ❋
चिर जियहु जोरी चारु चारिउ मुदित मन सबहीं कहा ॥ ❋
योगीन्द्र सिद्ध मुनीश देव बिलोकि प्रभु दुन्दुभि हनी ॥ ❋
चले हर्षि वर्षि प्रसून सब निज लोक जय जय जय भनी ॥ ५८ ॥ ❋

उस समय जहां तहां आशिष सुन पड़ती थी. आकाश और नगरमें परमानन्द छा रहा था और सब लोग खुश होकर ऐसे कहते थे कि--ये सुन्दर चारोंही जोरियां प्रभुकी कृपासे चिरंजीव रहो और योगिराज, सिद्ध मुनिराज और देवतालोगोंने प्रभुको देखकर दुंदुभि बजाये और सब लोग आनंदसे फूल बरसाय 'जय जय जय' शब्द करके अपने २ स्थानोंको चले ॥ ५८ ॥

दोहा—सहित बधूटिन कुँवर सब, तब आये पितुपास ॥ ❀
शोभा मंगल मोद भरि, उमगेउ जनु जनवास ॥ ३२७॥ ❀

फिर सब कुँवर बहुओंके साथ अपने पिताके पास आये. तब शोभा, मंगल और आनंदसे भरकर मानों जनवास उमँग उठा था ॥ ३२७ ॥

पुनि जेवनार भयउ बहु भांती ॥ पठये जनक बुलाइ बराती ॥ १ ॥ ❀
परत पाँवड़े बसन अनूपा ॥ सुतनसमेत गवन किय भूपा ॥ २॥ ❀

फिर अनेक प्रकारकी जेवनार हुई. जनकने सब बरातियोंको बुला भेजा ॥ १ ॥ अनुपम वस्त्रोंके पांवड़े पड़ने लगे. राजा दशरथजी अपने चारों पुत्रोंके साथ वहां पधारे ॥ २ ॥

सादर सबके पाँव पखारे ॥ यथायोग्य पीढ़न बैठारे ॥ ३ ॥ ❀
धोये जनक अवधपतिचरणा ॥ शील सनेह जाहि नहिँ बरणा ॥ ४ ॥ ❀

जनकराजाने बड़े आदरके साथ सबके पांव पखारे और सबको यथायोग्य आसनोंपर बिठाया ॥ ३ ॥ फिर राजाने दशरथजीके चरण धोये. राजाके शील और स्नेहको कवि कहता है कि—हम कह नहीं सकते ॥ ४ ॥

बहुरि रामपदपंकज धोये ॥ जे हरहृदयकमलमहँ गोये ॥ ५ ॥ ❀
तीनों भाइ रामसम जानी ॥ धोये चरण जनक निजपानी ॥ ६ ॥ ❀

फिर राजाने रामचंद्रजीके चरणकमल पखारे कि, जो महादेवजीके हृदयकमलमें सदा गुप्त रहा करते है ॥ ५ ॥ तदनन्तर राजाने तीनों भाइयोंको रामचन्द्रजीके बराबर जानकर उनके चरण-कमल अपने हाथोंसे पखारे ॥ ६ ॥

आसन उचित सबहिँ नृप दीन्हे ॥ बोलि सूपकारी सब लीन्हे ॥ ७ ॥ ❀
सादर लगे परन पनवारे ॥ कनककील मणिपर्ण सँवारे ॥ ८ ॥ ❀

राजाने सबको यथायोग्य आसन दिये. सब रसोंईदारोंको बुला लिया ॥ ७ ॥ फिर आदरके साथ पनवारे पड़ने लगे कि—जिनमें हरितमणि (पन्ना) के तो पत्र है और सुवर्णकी कीलें लगी हुई है ॥८॥

दोहा—सूपोदन सुरभी सरपि, सुन्दर स्वादु पुनीत ॥ ❀
क्षणमहँ सबके परसिगे, चतुर सुआर बिनीत ॥ ३२८ ॥ ❀

वहां जो चतुर और विनीत रसोंईदार थे उन्होंने सबको सुन्दर, स्वाडु और पवित्र दाल भात और गौका घृत एक क्षणभरमें परोस दिया ॥ ३२८ ॥

पंच कवल करि जेंवन लागे ॥ गारिगान सुनि अति अनुरागे ॥ १ ॥ ❀
भांति अनेक परे पकवाना ॥ सुधासरिस नहिँ जाहिँ बखाना ॥ २ ॥ ❀

तदनन्तर सब लोग पंचग्रासी आपोशन करके जेंवने लगे. तहां जो सुन्दर गारियां गायीं जातीं थीं, तिन्हें सुनकर वे अति प्रसन्न होते थे ॥ १ ॥ फिर अमृतके समान स्वादिष्ठ अनेक प्रकारके पक-वान परोसे गये, जिनका हम किसी कदर वर्णन नहीं कर सक्ते ॥ २ ॥

परसन लगे सुआर सुजाना ॥ ब्यंजन बिबिध नाम को जाना ॥ ३ ॥ ❀

चारि भांति भोजनबिधि गाई ॥ एक एक बिधि बर्णि न जाई ॥ ४ ॥ ❀

तदनंतर सुजान रसोईदार अनेक प्रकारके व्यंजन परोसने लगे कि-जिनके नामोंको कौन आदमी जान सक्ता है ॥ ३ ॥ पाकशास्त्रमें भक्ष्य, भोज्य, चोष्य और लेह्य, ऐसे चार प्रकारके भोजन कहे है. तहां जनकके जेवनारमें एक एक भोजन इतने प्रकारका था कि, जिसका वर्णन नहीं कर सक्ते ॥ ४ ॥

छरस रुचिर व्यंजन बहु जाती ॥ एक एक रस अगणित भांती ॥ ५ ॥ ❀
जेंवत देहिँ मधुरध्वनि गारी ॥ लै लै नाम पुरुष अरु नारी ॥ ६ ॥ ❀

और छही रसोंके जो अनेक प्रकारके सुन्दर व्यंजन बनाये गये थे, उनमें एक एक रस इतने प्रकारका था कि जिसको गिन नहीं सक्ते ॥ ५ ॥ ऐसे बराती भोजन कर रहे है. तहां पुरुष और औरतोंका नाम ले ले कर मधुर ध्वनिसे सखियां गारी गा रही है ॥ ६ ॥

(क्षेपक) बधू बिलोकि लगीं गरि आवन ॥ सुनहुँ राम दूलह मनभावन ॥ १ ॥

स्त्रियां बरातियोंको जेवते देखकर गारी देने लगीं. तिनमेंसे एक सखी बोली कि, हे मनभावन दूलह राम ! सुनो ॥ १ ॥

दोहा- बने फिरत जो आपके, गुरुही बिश्वामित्र ॥ ❀
तौ क्यहि बिधि रघुनाथ तुम, कारज करौ पबित्र ॥ १ ॥ ❀

जो आपके गुरु बने फिरते है सो तौ वेश्याके मित्र है. फिर हे रघुनाथ ! आपसे पवित्र कार्य कैसे बन सकेगा ? क्योंकि यह रीति है कि, जैसा गुरु होता है वैसाही शिष्य हुआ करता है ॥ १ ॥

जनकसुताके जनकको, जनक कहत सब आहु ॥ ❀
कौन कौनके जनक ए, याको करहु निबाहु ॥ २ ॥ ❀

और तुम सब जानकीके पिताको जनक (पिता) कहते हो तौ हम आपसे पूंछती है कि-ये कौन२ के पिता है ? इसका निर्वाह करो यानी जबाब दो ॥ २ ॥

सुनियत अजके सुत दशस्यंदन ॥ दशस्यंदनके भे अज नन्दन ॥ १ ॥ ❀
यह अवरेख परी क्यहि भांती ॥ समुझि परत अस सकल बराती ॥ २ ॥ ❀
मुदित होयँ सब सुनि इमि गारी ॥ अमुकै परसौ कहैं पुकारी ॥ ३ ॥ ❀

हम सुनती है कि-दशरथ अजके पुत्र है और बाजे लोग यह भी कहते है कि-दशरथके अज (जन्मरहित राम) पुत्र हुआ ॥ १ ॥ सो यह बात कैसे, और हमको तौ जैसे राम और राजाके विषयमें गड़बड़ दीखती है वैसे बराती भी ऐसेही समझ पड़ते हैं ॥ २ ॥ ऐसे उनकी गारियोंको सुनकर सब लोग खुश होते हैं और पुकार पुकार कहते हैं कि-अमुक मिठाई अमुक व्यंजन अमुक २ परोसो ॥ ३ ॥ ॥ इति ॥

समय सुहावन गारि बिराजा ॥ हँसत राउ सुनि सहित समाजा ॥ ७ ॥ ❀
यहि बिधि सबहीं भोजन कीन्हा ॥ आदरसहित आचमन लीन्हा ॥ ८ ॥ ❀

समय समयपर सुहावनी गारियां देते सुनकर राजा दशरथजी समाजके साथ हँसते है ॥ ७ ॥ इस तरह सब लोगोंने भोजन किया. तदनन्तर आदरके साथ आचमन लिया ॥ ८ ॥

दोहा—देइ पान पूजे जनक, दशरथ सहित समाज ॥ ❋
जनवासे गवने मुदित, सकलभूपशिरताज ॥ ३२९ ॥ ❋

जनक राजाने फिर तांबूल देकर समाजके साथ दशरथजीका बड़ा सत्कार किया, तब सब राजाओंके सिरताज श्रीदशरथजी मुदित होकर जनवासे पधारे ॥ ३२९ ॥

(क्षेपक) निशा निरखि सब सोवन लागे ॥ बड़े प्रात कोशलपति जागे ॥ १ ॥
कीन्हे याचक सकल सुखारी ॥ यथा अभ्र दै खेतन बारी ॥ २ ॥ ❋

रात्रि आयी देखकर सब लोग शयन करने लगे. तहां दशरथजी बड़े भोरमें जागे ॥ १ ॥ जैसे बादल खेतोंमे पानी बरसा कर किसानोंको सुखी करता है, ऐसे दशरथजीने याचकोंको मनवांछित देकर सबको सुखी किया ॥ २ ॥

त्यहि अवसर नृपमंत्री आये ॥ करन कलेवा भूप बुलाये ॥ ३ ॥ ❋
उठे कुँवर पितुआयसु पाई ॥ चढ़ि चढ़ि घोड़न चले सिधाई ॥ ४ ॥ ❋

उस अवसरमें जनक राजाके मंत्रियोंने आकर कहा कि—राजाने कुमारोंको कलेवा करनेको बुलाया है ॥ ३ ॥ मंत्रियोंके बचन सुनकर दशरथजीने आज्ञा दी, तब पिताकी आज्ञा पाकर खड़े हुए और घोड़ोंपर चढ़ चढ़कर रवाने हुए ॥ ४ ॥

कोइ अरबी जंगली पहारी ॥ चिर चैंचक चंपा खंधारी ॥ ५ ॥ ❋
कोइ कबुली अँबोज कोइ कच्छी ॥ बोत मेमना मुंजी लच्छी ॥ ६ ॥ ❋

यहां अनेक प्रकारके घोड़े थे. कोई तो अरबी, जंगली पहाड़ी, चिर, चैंचक, चंपा और कंधारी है ॥ ५ ॥ कोई काबुली, कंबोजी, कच्छी, बोत, मेमना, मुंजी और लच्छी है ॥ ६ ॥

कोइ किसमी भुठार फुलवाई ॥ गर्रा गूंठ ज्ञुमिल दरियाई ॥ ७ ॥ ❋
श्यामकर्ण कुम्मैत पठानी ॥ टांघन तुरकी पँचकल्यानी ॥ ८ ॥ ❋

कोई किसमिसी, भुठार, फुलवाई, गर्रा, गूंठ, ज्ञुमिल और दरियाई है ॥ ७ ॥ कोई श्यामकर्ण, कुम्मैत, पठानी, टांघन, तुरकी और पंचकल्यानी हैं ॥ ८ ॥

मुस्की सबुज इराको पोषे ॥ पीन नवीन बिशाल अदोषे ॥ ९ ॥ ❋
सकल अलंकृत चलनि सुठीका ॥ सबते तुरग रामकर नीका ॥ १० ॥ ❋

कोई मुसकी, सबुज और इरानी हैं कि—जो सब बड़े, मोटे, ताजे, नये, विशाल, दूषणरहित ॥ ९ ॥ और आभूषणोंसे सजे हुए हैं. और बहुत सुन्दर जिनकी चाल है. यद्यपि सब घोड़े एकसे एक अच्छे थे; परंतु उनमें भी जिसपर रामचन्द्रजी सवार थे वो घोड़ा सबसे अच्छा था ॥ १० ॥

बिश्वबिमोहन हेतु बिचारेउ ॥ बाजिबेष जनु मनसिज धारेउ ॥ ११ ॥ ❋
पहिरे पट भूषण तनमाहीं ॥ चपल तुरंग नचावत जाहीं ॥ १२ ॥ ❋

मानों जगत्को मोहित करनेका विचार कर कामदेवने ही घोड़ेका स्वरूप धारण किया था ॥ ११ ॥

अनेक प्रकारके वस्त्र और आभूषन शरीरपर सजे हुए प्रभु चंचल घोड़ेको नचाते जा रहे है ॥ १२ ॥

मनहुँ मेघयुत उडुगणदामा ॥ जात नचावत अति अभिरामा ॥ १३ ॥ ❋
देखैं जहँ तहँ लोग लुगाई ॥ कहैं जात हैं चारिउ भाई ॥ १४ ॥ ❋

उस समयकी शोभा कुछ कही नहीं जाती. मानों बिजुली और तारामंडल करके युक्त मेघ अति सुन्दर रीतिसे मयूरको नचाता जा रहा है ॥ १३ ॥ जहां तहां लोग लुगाई उनको देखते है. वहां कहते है कि, ये चारों भाई जाते है ॥ १४ ॥

पहुँचे जब सब जनकअगारे ॥ कनकपलँग रानिन बैठारे ॥ १५ ॥ ❋
बहु बिधिके भोजन धरि आगे ॥ नेग पाइ निज जेंवन लागे ॥ १६ ॥ ❋

जब ये सब जनक राजाके घर पहुँचे तब रानियोंने इनको सत्कार करके सुवर्णके पलंगपर बिठाया ॥ १५ ॥ और अनेक प्रकारके भोजनके पदार्थ उनके सामने धरे. जब रानियोंने नेग दे दिया तब अपना नेग पाकर भोजन करने लगे ॥ १६ ॥

अँचवन करि बैठे तिनपासा ॥ लगीं करन तिय हासबिलासा ॥ १७ ॥ ❋
एक सखी बोली तुव माई ॥ क्यहि हित सुत जनमें हबि खाई ॥ १८ ॥ ❋

आचमन करके सब भाई उनके पास बैठे. तब वे स्त्रियां उनसे हँसी ठठ्ठा करने लगीं ॥ १७ ॥ एक सखी बोली कि—हे राम ! तुम्हारी माताने पुत्र होनेके वास्ते हवि (खीर) क्यों खाया ? ॥ १८ ॥

कह्यो राम बूझत कत येहू ॥ निकट नरेश परीक्षा लेहू ॥ १९ ॥ ❋
अपर बसन करष्यो निजओरा ॥ मिले चोर तुम सब चितचोरा ॥ २० ॥

तब रामचन्द्रजीने जवाब दिया कि—यह बात मुझसे क्यों पूछती हो, जो तुमको संदेह हो तो राजाजी निकटही है सो तुमहीं जाकर परीक्षा करलो ॥ १९ ॥ दूसरी सखीने प्रभुका अंचल अपनी ओर खींचकर कहा कि—तुम सब पक्के चोर इकठे हुए हो, क्योंकि अन्य चोर तो केवल बाहिरी वस्तु चुराता है और आपने हमारा चित्त भी चुरा लिया है ॥ २० ॥

त्यहिक्षण लक्ष्मीनिधिकी नारी ॥ सिद्धि नाम ले सखिन सिधारी ॥ २१ ॥
सहजानंदिनि मदनमंजरी ॥ चन्द्रकला कमलाक्षि अंजरी ॥ २२ ॥ ❋

ऐसे सखियां प्रभुसे हास विलास करती थीं. उस अवसरमें लक्ष्मीनिधिकी स्त्री सिद्धी भी अपनी सखियोंको संग लेकर वहां आयी ॥ २१ ॥ उसके साथ जो सखियां थीं उनके नाम सहजानंदिनी, मदनमंजरी, चन्द्रकला, कमलाक्षी, अंजरी, ॥ २२ ॥

चन्द्रमुखी चन्द्रावलि योगा ॥ बिमला उतकर्षिणि प्रियभोगा ॥ २३ ॥ ❋
चित्रा चितरेखा ईशाना ॥ कृपा कांचनी सत्या ज्ञाना ॥ २४ ॥ ❋

चंद्रमुखी, चंद्रावली, योगा, विमला, उत्कर्षिणी, प्रियभोगा, ॥ २३ ॥ चित्रा, चित्ररेखा, ईशाना, कृपा, कांचनी, सत्या, ज्ञाना, ॥ २४ ॥

सुदकंसा चन्द्राननि हंसी ॥ सुधामुखी सुखमंजु प्रशंसी ॥ २५ ॥ *
माधुर्य्या उज्ज्वल बिशदाक्षी ॥ चारुशीला अतिशीला साक्षी ॥ २६ ॥ *

सुदकंसा, चंद्राननी, हंसी, सुधामुखी, सुखमंजु, प्रशंसी, ॥ २५ ॥ माधुर्या, विशदाक्षी, उज्ज्वला, चारुशीला, अतिशीला, साक्षी ॥ २६ ॥

औरौ अली अनेक अनूपा ॥ सहित सिद्धि आई भल भूपा ॥ २७ ॥ *
रघुपतिछबि अवलोकि जुड़ानी ॥ बोलीं बिहँसि हासकी बानी ॥ २८ ॥ *

औरभी अनेक अनुपम सखियां सिद्धिके साथ आयीं ॥ २७ ॥ वहां आ, प्रभुकी छबिको निहार कर सबकी सब शीतल हो गयीं. फिर हँसकर हँसीकी बाणी बोलीं कि– ॥ २८ ॥

सुनियत लाल काम अति नीका ॥ तव अंबनि कीन्ह्यो त्यहि पीका ॥२९॥
हम चितचोर सासुपहँ आयो ॥ तुमहीं देखत बदन दुरायो ॥ ३० ॥ *

लाल ! हम सुनती थीं कि– कामदेव बहुत सुन्दर है, उसको आपकी माताओंने अपना प्रिय बनाया है ॥ २९ ॥ सो हमारे चित्तको चुरानेवाले आपके सासके पास आनेसे निश्चय हो गया कि, वह बात सत्य है; क्योंकि आपको देखतेही उसने अपना मुंह छिपा लिया अर्थात् आपकी शोभासे लज्जित हो उसने मुंह छिपाया ॥ ३० ॥

बोली सिद्धि रावरे भगिनी ॥ ऋषि किमि बरी हरी नतु गमनी ॥ ३१ ॥*
कह्यो लषण जस लिख्यो लिलारा ॥ तैसे होत टरत नहिँ टारा ॥ ३२॥*

फिर सिद्धि बोली कि–आपकी बहन (शांता) ऋषिसे क्यों ब्याही गयी ? क्या वह उसे हर ले गया था ? नहीं, वो खुद चली गयी थी ॥ ३१ ॥ लक्ष्मणने कहा कि–जैसा लिलारमें लिखा हुआ होता है वैसा ही होता है. वह टारनेपरभी टर नहीं सकता ॥ ३२ ॥

हम नरेशसुत जनक योगीशा ॥ भयो ब्याह भावीवश दीशा ॥ ३३ ॥ *
कबते राजकुमार कहाये ॥ पाल्यो ऋषै ऋषै उपजाये ॥ ३४ ॥ *

हम राजकुमार और जनक योगिराज, हमारा और इनका संबंध क्या ? परंतु भावीके बशसे ब्याह हुआ सो यह दीखताही है ॥ ३३ ॥ सब सखियोंने लक्ष्मणसे कहा कि–तुम राजकुमार कबसे कहलाये. क्योंकि ऋषिनेही तौ तुमको पाला है और ऋषिनेही पैदा किया है ॥ ३४ ॥

हलते भल तापस सब दिनसे ॥ लेवो लाल हमहुँ शिखि तुमसे ॥ ॥३५॥ *
बोली कलावती सिधिभगिनी ॥ लक्ष्मीनिधिकी सारि सुलगिनी ॥ ३६ ॥*

तब लक्ष्मणने जबाब दिया कि–हलसे तौ सर्वकालमें तपस्वी अच्छेही हैं. सीताजी हलसे प्रगट हुई हैं सो प्रसिद्धही है. लक्ष्मणके ये बचन सुनकर सखियोंने कहा कि–लाल ! तुमसे हम भी सीख लेंगी ॥ ३५ ॥ फिर अति स्नेहवती कलावती नाम सखी बोली–जो सिद्धिकी बहन और लक्ष्मीनिधिकी सारी थी ॥ ३६ ॥

दोहा-इक कुमार पुनि मुनिनसँग, रहि यहि रसकी बात ॥ ❀
सिख्यो कहां ऋषितियनपहँ, की दारकढिग तात ॥ १ ॥ ❀
कहेउ शत्रुहन सत्य पर, तमहुँ कुमारी आहु ॥ ❀
तुम कहँ पायो ज्ञान यह, की कोउ करि असनाहु ॥ २ ॥ ❀

प्रथम तौ तुम क्वांरे और दूसरा तुम मुनिलोगोंके संग रहते हो; इसवास्ते हम तुमसे पूंछती है कि, हे तात ! यह बात तुमने कहांसे सीखी ? क्या यह बात ऋषियोंकी स्त्रियोंके पास, अथवा बालकोंके पास तौ नहीं सीखी है ? ॥ १ ॥ सखियोंकी यह बात सुनकर शत्रुघ्नने कहा कि-यह बात सत्य है, पर तुमभी तौ क्वांरी ही हो. तुमने यह ज्ञान कहांसे पाया ? क्या तुमने कोई आसना तौ नहीं करी है ? जिससे यह बात जानती हो ॥ २ ॥

बोली चन्द्रकला कर टेकी ॥ तुम साधुनके बंधु बिबेकी ॥ १ ॥ ❀
रौरेको रस हास न चाही ॥ परस्वारथी संतगति आही ॥ २ ॥ ❀

तब चंद्रकला नाम सखी हाथ टेककर बोली कि-हे शत्रुघ्न ! आप साधु पुरुषोंके बंधु और बड़े विवेकी हो ॥ १ ॥ इसवास्ते आपको हास्यरसकी बातें नहीं करनी चाहिये, क्योंकि आप दूसरोंके स्वार्थ सिद्ध करनेवाले और सत्पुरुषोंके शरणरूप हो ॥ २ ॥

हमहूँ सुनि असनेह तुम्हारा ॥ दरशहेत द्वारे पगु धारा ॥ ३ ॥ ❀
लइउ चीन्हि बिनकहे पतीजै ॥ तन धनते सेवा अब कीजै ॥ ४ ॥ ❀

तब शत्रुघ्नने कहा कि-हम भी आपका स्नेह सुनकर दर्शनके लिये आपके द्वारपर आये हैं ॥ ३ ॥ सो अब तुम हमें पहिंचान लेओ और हमारा बिना कहे विश्वास कर, अब तनधनसे हमारी सेवा करो ॥ ४ ॥

सर्पडसितको जो नहिँ झारै ॥ लगै दोष नतु मंत्र बिसारै ॥ ५ ॥ ❀
यहिबिधि बदि बातैं सुख लेवैं ॥ निज निज रुचि सब रामैं सेवैं ॥ ६ ॥ ❀

जो आदमी सर्पसे डसेहुएको नहीं झारता अर्थात् जहर नहीं मिटाता उसे अवश्य दोष लगता है, सो चाहे तौ वह झारे, चाहे मंत्रको भुलावे यानी झारना छोड़ देवे ॥ ५ ॥ इस प्रकार अनेक बातें कह कहकर सखियां सुख ले रहीं हैं और अपनी २ रुचिके अनुसार रामकी सेवा कर रहीं है ॥ ६ ॥

कहेउ सिद्धि हम नारि अपावन ॥ पर यक गुणहूँ दीन जगजावन ॥ ७ ॥
ज्यहिते नेह करैं अनुरागी ॥ सर्बसु जाहु सकैं नहिँ त्यागी ॥ ८ ॥ ❀

उस समय सिद्धिने कहा कि-हम स्त्रीजाति स्वभावसे परम अपवित्र है; परंतु विधाताने हमको एक बड़ा भारी गुण दिया है ॥ ७ ॥ हम जिससे स्नेह करती है और प्रेम रखती हैं चाहो हमारा सर्वस्व चला जाय, परंतु हम कभी उसका त्याग नहीं करतीं ॥ ८ ॥

तिमि तुमते ठानी हम प्रीती ॥ करौ निबाह समुझि निजरीती ॥ ९ ॥ ❀
कह प्रभु मोहिँ सनेहसमाना ॥ प्रिय न कछू यह जान जहाना ॥ १० ॥ ❀

हमने तुमसे तिस रीतिसे प्रीति करनी विचारी है; सो आप अपनी रीति समझकर उस प्रीतिको निबाहो ॥ ९ ॥ सखियोंके ये बचन सुनकर प्रभुने कहा कि–मेरे स्नेहके बराबर दूसरा कुछभी प्रिय नहीं है. यह बात सब जगत् जानता है ॥ १० ॥

तुम प्रिय प्राणसरिस मोहिँ मासे॥ माँगि बिदा गवने जनवासे ॥ ११॥ ❀
बोली बहुरि जीति हम लीन्हा ॥ दिलह फेरि मुख हम तजि दीन्हा ॥ १२॥
यहिबिधि बातन सबन हराई ॥ जनवासे आये सब भाई ॥ १३ ॥ ❀

हे सखियो ! तुम मुझको मेरे प्राणोंके समान और लक्ष्मीसी प्यारी हो. ऐसे कहकर बिदा मांगकर सब भाई जनवासेको चले ॥ ११ ॥ फिर सखियां बोलीं कि–हमने तुमको जीतलिया है; क्योंकि मुख फेरके हमने तुमको बिदा कर दिया है ॥ १२ ॥ ऐसे बातों ही बातोंमें सबको हराकर सब भाई जनवासे आये ॥ १३ ॥ ॥॥ इति ॥

नित नूतनमंगल पुरमाहीं ॥ निमिषसरिस दिन यामिनि जाहीं ॥ १ ॥
बड़े भोर भूपतिमणि जागे ॥ याचक गुणगण गावन लागे ॥ २ ॥ ❀

नगरके अंदर नित नये मंगल हो रहे है. रात दिन क्षणके समान व्यतीत हो रहे हैं ॥ १ ॥ राजा दशरथजी बड़े तड़के जागे. उस समय याचक लोग उनके गुणगण गाने लगे ॥ २ ॥

देखि कुँवर बर बधुनसमेता ॥ किमि कहिजात मोद मन जेता ॥ ३ ॥ ❀
प्रातक्रिया करि गे गुरुपाहीं ॥ महा प्रमोद प्रेम मनमाहीं ॥ ४ ॥ ❀

सुन्दर कुवँरोंको बहुओंके साथ देखकर दशरथजीके मनमें जितना आनंद हुआ वह किस तरह कहा जाय ॥ ३ ॥ राजा दशरथ प्रातःकालके नित्यकृत्यसे पहुंच कर मनमें बड़े हर्ष और प्रेममें मग्न होकर गुरुके पास गये ॥ ४ ॥

करि प्रणाम पूजा कर जोरी ॥ बोले गिरा अमिय जनु बोरी ॥ ५ ॥ ❀
तुम्हरी कृपा सुनिय मुनि राजा ॥ भयउ आजु मम पूरण काजा ॥ ६॥ ❀

तहां गुरुको प्रणाम कर, हाथ जोड़ पूजा कर, मानों अमृतभरी बाणी बोले ॥ ५ ॥ कि–हे मुनि-राज ! सुनो. आपकी कृपासे आज मेरा काज पूर्ण हुआ है ॥ ६ ॥

अब सब बिप्र बुलाइ गुसांई ॥ देहु धेनु सब भांति बनाई ॥ ७ ॥ ❀
सुनि गुरु करि महिपालबड़ाई ॥ पुनि पठये मुनिवृन्द बुलाई ॥ ८ ॥ ❀

हे स्वामी ! अब सब ब्राह्मणोंको बुलाकर सब तरहसे तैयार करके उनको गौदान दीजिये ॥ ७ ॥ राजाकी यह बात सुनकर गुरु वसिष्ठजीने राजाकी बड़ाई करके मुनिगणोंको बुलानेके लिये बुला भेजा ॥ ८ ॥

दोहा–बामदेव अरु देवऋषि, बालमीकि जाबालि ॥ ❀
आये मुनिबरनिकर तब, कौशिकादि तपशालि ॥ ३३० ॥ ❀

तब वामदेव, नारद, बाल्मीकि, जाबालि और महातपस्वी विश्वामित्र आदि अनेक मुनि-राजोंके वृंद आये ॥ ३३० ॥

दण्डप्रमाण सबहिँ नृप कीन्हा ॥ पूजि सप्रेम बरासन दीन्हा ॥ १ ॥ ❋
चारि लक्ष बर धेनु मँगाई ॥ कामसुरभिसम शील सुहाई ॥ २ ॥ ❋

राजाने सबको दंडवत् प्रणाम किया. फिर प्रेमसहित पूजा कर सबको सुन्दर आसन दिये ॥ १ ॥ तदनन्तर कामधेनुके जैसी सुन्दर सुशील चार लाख गायें मँगायी ॥ २ ॥

सब बिधिसकल अलंकृत कीन्ही ॥ मुदित महीप ऋषिनकहँ दीन्ही ॥३॥ ❋
करत बिनय बहुबिधि नरनाहू ॥ लहेउ आजु जग जीवनलाहू ॥ ४ ॥ ❋

सबतरह सब गौवनको अलंकृत कर राजाने आनंदित होकर ऋषियोंको दी ॥ ३ ॥ और अनेक प्रकारसे विनय किया कि—महाराज ! आज मैं जगत्में जीनेका लाभ पाया हूं ॥ ४ ॥

पाइ अशीम महीश अनन्दा ॥ लिये बोलि पुनि याचकवृन्दा ॥ ५ ॥ ❋
कनक बसन मणि हय गज स्यंदन ॥ दिये बूझि रुचि रबिकुलनंदन ॥ ६॥

यह सुन ऋषियोंने आशीर्वाद दिया सो आशिष पाकर राजा परम आनंदको प्राप्त हुआ. फिर याचक लोगोंको बुलाकर ॥ ५ ॥ उनको पूंछ पूंछकर उनकी इच्छाके अनुसार सुवर्ण, वस्त्र, रत्न, घोड़े, हाथी, व रथ वगैरः पदार्थ दिये ॥ ६ ॥

चले पढ़त गावत गुणगाथा ॥ जय जय जय दिनकरकुलनाथा ॥ ७ ॥ ❋
यहिबिधि रामबिबाहउछाहू ॥ सकै न बरणि सहसमुख जाहू ॥ ८ ॥ ❋

वे लोग मनवांछित पदार्थ पाकर 'हे सूर्यवंशके स्वामी ! आपकी जय हो, जय हो, जय हो.' ऐसे राजाके गुणोंकी गाथा गाते और पढ़ते रवाने हुए ॥ ७ ॥ इसतरह रामचन्द्रजीके विवाहका उत्साह हुआ कि, जिसको स्वयं शेषजीभी वर्णन नहीं कर सक्ते ॥ ८ ॥

दोहा—बार बार कौशिकचरण, शीस नाइ कह राउ ॥ ❋
यह सब सुख मुनिराज तव, कृपाकटाक्षप्रभाउ ॥ ३३१ ॥ ❋

दशरथजीने बारंबार विश्वामित्रजीके चरणोंमे शिर नाय कर कहा कि—हे मुनिराज ! यह सब सुख आपके कृपाकटाक्षके प्रभावसे हुआ है ॥ ३३१ ॥

जनक सनेह शील करतूती ॥ नृप सब भांति सराहि बिभूती ॥ १ ॥ ❋
दिन उठि बिदा अवधपति माँगा ॥ राखहिँ सहित जनक अनुरागा ॥२॥ ❋

राजा दशरथने जनक राजाके स्नेह, शील, करतूति और विभूतिके विषयमें सब प्रकारसे प्रशंसा की ॥ १ ॥ फिर एक दिन उठाकर दशरथजीने राजा जनकसे बिदा मांगी, तब जनकने बड़े प्रेमके साथ उनको वहीं रक्खा. बिदा नहीं दीनी ॥ २ ॥

नित नूतन आदरअधिकाई ॥ दिन प्रति सहसभांति पहुनाई ॥ ३ ॥ ❋
नित नव नगर अनन्द उछाहू ॥ दशरथगवन सोहाइ न काहू ॥ ४ ॥ ❋

वहां नित नये अधिकाधिक सन्मान होते हैं. दररोज हजारों तरहसे पहुनचार हो रहा है॥३॥नगरमें नित नया आनन्द और उत्सव हो रहा है. दशरथजीका जाना किसीको अच्छा नहीं लगता ॥ ४ ॥

बहुत दिवस बीते यहि भाँती ॥ जनु सनेहरज्जु बँधे बराती ॥ ५ ॥ ❋
कौशिक शतानन्द तब जाई ॥ कही बिदेहनृपहिँ समुझाई ॥ ६ ॥ ❋

इसतरह उनको वहां रहते २ बहुतसे दिवस बीत गये. मानों जनकने स्नेहरूप रस्सीसे बरातियोंको बांध लिया था, इसीसे वो वहांसे सरक नहीं सके थे ॥ ५ ॥ तब विश्वामित्रजी और शतानन्दने जाकर जनकसे समझाकर कहा ॥ ६ ॥

अब दशरथकहँ आयसु देहू ॥ यद्यपि छाँड़ि न सकहु सनेहू ॥ ७ ॥ ❋
भलेहि नाथ कहि सचिव बुलाये ॥ कहि जय जीव शीस तिन नाये॥८॥❋

कि–यद्यपि आप स्नेहके कारण उनको छोड़ नहीं सकते, पर अब आप दशरथको आज्ञा दे दीजियेगा ॥ ७ ॥ तब जनकने उन ऋषियोंसे 'हे नाथ ! बहुत अच्छा.' ऐसे कहकर अपने मंत्रियोंको बुलाया, तब उन्होंने आकर, हे नाथ ! आपकी जय हो, आप चिरंजीव रहो. ऐसे कहकर प्रणाम किया ॥ ८ ॥

दोहा–अवधनाथ चाहत चलन, भीतर करहु जनाव ॥ ❋
भये प्रेमबश सचिव सुनि, विप्र सभासद राव ॥ ३३२ ॥ ❋

जनक राजाने उनसे कहा कि–भीतर जाकर खबर करदो कि–राजा दशरथजी जाना चाहते है. यह बात सुनकर मंत्री, ब्राह्मण, सभासद और राव ये सब बड़े प्रसन्न हुए ॥ ३३२ ॥

पुरबासी सुनि चली बराता ॥ पूंछत बिकल परस्पर बाता ॥ १ ॥ ❋
सत्य गवन सुनि सब बिलखाने ॥ मनहुँ साँझ सरसिज सकुचाने ॥२॥❋

बरात जाती है ये समाचार सुनकर नगरके लोग विकल होकर परस्पर पूछते है कि–क्या यह बात सच्ची है ? ॥१॥ जब यह सुना कि–हां, यह बात सत्य है "बरात रवाने होगी," तब तो सब लोग बड़े उदास हुए. मानों सांझके समय कमल सकुच जाय वो दशा उनकी हो गयी ॥ २ ॥

जहँ जहँ आवत बसे बराती ॥ तहँ तहँ सीध चला बहु भांती ॥ ३ ॥ ❋
बिबिध भांति मेवा पकवाना ॥ भोजनसाज न जाइ बखाना ॥ ४ ॥ ❋

बराती लोगोंने आते समय जहां जहां डेरे किये थे, वहां वहां अनेक प्रकारके सीधे यानी सामान जाने लगा ॥ ३ ॥ अनेक प्रकारके मेवे, पकवान और भोजनके साधन भेजे कि, जिनका वर्णन नहीं कर सके ॥ ४ ॥

भरि भरि बस्तु अपार कहारा ॥ पठये जनक अनेक सुआरा ॥ ५ ॥ ❋
तुरँग लाख रथ सहस पचीसा ॥ सकल सँवारे नख अरु शीसा ॥ ६ ॥ ❋

फिर अपार चीजें भर भर कर अनेक कहार लोगोंको व कई रसोईदारोंको पठाया ॥ ५ ॥ राजा जनकने एक लक्ष घोड़े और पचीस हजार रथ नखसे ले शिरकत अच्छीतरह साजकर तैयार किये ॥ ६ ॥

मत्त सहस दश सिंधुर साजे ॥ जिनहिँ देखि दिशिकुंजर लाजे ॥ ७ ॥ ❋
कनक बसन मणि भरि भरि याना ॥ महिषी धेनु बस्तु बिधि नाना ॥८॥

दश हजार मदमत्त हाथी तैयार किये कि, जिनको देखकर दिग्गज हाथी लजाते थे ॥ ७ ॥

सुवर्ण, वस्त्र और रत्न भरभर कर कई यान तैयार किये थे और भैंसी, गायें और अनेकप्रकारकी चीजें तैयार करीं ॥ ८ ॥

दोहा–दायज अमित न सकिय कहि, दीन्ह विदेह बहोरि ॥ ❋
जो अवलोकत लोकपति, लोकसम्पदा थोरि ॥ ३३३ ॥ ❋

जनक राजाने फिर जो अपरिमित दायज दिया था, उसको कौन कह सक्ता है ? क्योंकि जिस दायजेको देखनेसे लोकपालोंके लोकको संपदाभी थोरी मालूम होने लगी थी ॥ ३३३ ॥

सब समाज यहि भांति बनाई ॥ जनक अवधपुर दीन्ह पठाई ॥ १ ॥ ❋
चलिहि बरात सुनत सब रानी ॥ बिकल मीनगण जनु लघु पानी ॥ २ ॥ ❋

इसतरह सब समाज बनाकर राजा जनकने अयोध्यापुरीको भेज दिया ॥ १ ॥ बरातका जाना सुनकर सब रानियां बहुत घबरायीं. मानों थोड़े पानीमें मछलियोंका गण बिकल हो रहा है ॥ २ ॥

पुनि पुनि सीय गोद कर लेहीं ॥ देइँ अशीश सिखावन देहीं ॥ ३ ॥ ❋
होइहहु संतत पियहिँ पियारी ॥ चिर अहिवात अशीश हमारी ॥ ४ ॥ ❋

रानियां बारंबार सीताको गोदीमें लेती है और आशिष दे देकर शिक्षा देती है ॥ ३ ॥ हे पुत्री ! तू सदा पतिको प्रिय हो. हमारा यही आशीर्वाद है कि, तेरा सौभाग्य सदा बना रहै ॥ ४ ॥

सासु ससुर गुरु सेवा करहू ॥ पतिरुख लखि आयसु अनुसरहू ॥ ५ ॥ ❋
अति सनेहबश सखी सयानी ॥ नारिधर्म सिखवहिँ मृदु बानी ॥ ६ ॥ ❋

हे पुत्री ! तू सास, ससुर आर गुरुनकी सेवा करियो और पतिकी रुख यानी इशारा देखकर उनकी आज्ञाको मानियो ॥ ५ ॥ परम स्नेहके बश होकर सयानी सखियां सीताको कोमल बाणीसे स्त्रियोंके धर्म सिखाती हैं ॥ ६ ॥

सादर सकल कुँवरि समुझाई ॥ रानिन बार बार उर लाई ॥ ७ ॥ ❋
बहुरि बहुरि भेटहिँ महतारी ॥ कहहिँ बिरंचि रची कत नारी ॥ ८ ॥ ❋

रानियोंने आदरके साथ सब कुँवरियोंको समझाकर बारंबार अपनी छातीसे लगायी ॥ ७ ॥ माता सुनयना बारंबार सीतासे भेटती है और कहती है कि–विधाताने स्त्रीको क्यों पैदा किया ? ॥ ८ ॥

दोहा–तेहिँ अवसर भाइनसहित, राम भानुकुलकेतु ॥ ❋
चले जनक मन्दिर मुदित, बिदा करावनहेतु ॥ ३३४ ॥ ❋

उस समय सूर्यकुलके केतुरूप श्रीरामचन्द्रजी बिदा करानेके लिये भाइयोंको साथ लेकर आनंदके साथ जनकके भवन पधारे ॥ ३३४ ॥

चारिउ भाइ सुभाय सुहाये ॥ नगर नारि नर देखन धाये ॥ १ ॥ ❋
कोउ कह चलन चहत हैं आजू ॥ कीन्ह बिदेह बिदाकर साजू ॥ २ ॥ ❋

जब स्वभावसे सुन्दर चारों भाई बिदा लेनेको जनकके भवन चले, तब नगरके नर नारी

देखनेको दौड़े ॥ १ ॥ उनमें कोई तो कहता है कि-आज ये जाना चाहते है. जनक राजाने बिदा करनेकी तैयारी कर ली ॥ २ ॥

लेहु नयनभरि रूप निहारी ॥ प्रिय पाहुने भूपसुत चारी ॥ ३ ॥ ❋
को जानै केहि सुकृत सयानी ॥ नयन अतिथि कीन्हे बिधि आनी ॥ ४ ॥

इसवास्ते इन प्यारे पाहुने चारों राजकुमारोंको देखकर नेत्र भरकर इनके रूपको निहार लो ॥ ३ ॥ हे सखी ! कौन जाने किस पुण्यके प्रभावसे विधाताने इनको यहां लाकर अपने नेत्रोंके अतिथि बनाये है ॥ ४ ॥

मरणशील जिमि पाव पियूषा ॥ सुरतरु लहै जन्मकर भूँषा ॥ ५ ॥ ❋
पाव नारकी हरिपद जैसे ॥ इनकर दर्शन हमकहँ तैसे ॥ ६ ॥ ❋

जैसे मरणशील मनुष्यको अमृत मिल जाय, जैसे जन्मके भूखेको कल्पवृक्ष मिल जाय ॥ ५ ॥ जैसे नारकी जीवको हरिपद मिल जाय, ऐसे आपनको यह इनका दर्शन मिला है ॥ ६ ॥

निरखि रामशोभा उर धरहू ॥ निज मनफणि मूरति मणि करहू ॥ ७ ॥ ❋
यहि बिधि सबहिँ नयनफल देता ॥ गये कुँवर सब राजनिकेता ॥ ८ ॥ ❋

हे सखियो ! रामचन्द्रजीकी शोभाको देखकर अपने हृदयमें धरो. रामचन्द्रजीकी छबिको अपने मनरूप सर्पके शिरकी मणि बना दो ॥ ७ ॥ इसप्रकार सबको नेत्रोंका फल देतेहुए चारों राजकुमार राजभवनमें गये ॥ ८ ॥

दोहा-रूपसिंधु सब बन्धु लखि, हर्षि उठीं रनिवासु ॥ ❋
कराहिँ निछावर आरती, महामुदित मन सासु ॥ ३३५ ॥ ❋

रूपके सागर चारों भाइयोंको देखकर सब रनिवास खुश होकर उठीं और सब सास मनमें परम आल्हादित होकर निछावर व आरती करने लगीं ॥ ३३५ ॥

देखि रामछबि अति अनुरागीं ॥ प्रेमबिबश पुनि पुनि पद लागीं ॥ १ ॥ ❋
रही न लाज प्रीति उर छाई ॥ सहजसनेह बर्णि किमि जाई ॥ २ ॥ ❋

रामचन्द्रजीकी छबिको निहारकर सबोंने बड़ा प्यार किया और प्रेमबश होकर बारंबार पाँवोंमें परीं ॥ १ ॥ उनके हृदयमें ऐसी प्रीति छा गयी कि, लाज वगैरः कुछभी न रही. उनका वह स्वाभाविक स्नेह किसी कदर बर्णन किया नहीं जा सक्ता ॥ २ ॥

भाइनसहित उबटि अन्हवाये॥ छरस अशन अतिहेतु जिंवाये ॥ ३ ॥ ❋
बोले राम सुअँवसर जानी ॥ शील सनेह सकुचमय बानी ॥ ४ ॥ ❋

फिर उबटन करके सब भाइयोंके साथ रामचन्द्रजीको न्हिलाया. तदनन्तर बड़े प्रेमके साथ सबको षट्रस भोजन करवाया ॥ ३ ॥ अच्छा अवसर जानकर रामचन्द्रजीने शील और स्नेहसे भरी संकोचभरी बाणीसे कहा कि- ॥ ४ ॥

राउ अवधपुर चहत सिधाये ॥ बिदा होनहित हमहिँ पठाये ॥ ५ ॥ ❋

मातु मुदित मन आयसु देहू ॥ बालक जानि करब नित नेहू ॥ ६ ॥ ❋

राजा दशरथजी अयोध्या जाना चाहते है और बिदा होनेके लिये हमको आपके पास पठाया है ॥ ५ ॥ इसलिये प्रसन्नमन होकर हमको आज्ञा दिजिये और हमको बालक जानकर सदा स्नेह बनाये रखना ॥ ६ ॥

सुनत बचन बिलखेउ रनिवासू ॥ बोलि न सकहिँ प्रेमबश सासू ॥ ७ ॥ ❋
हृदय लगाइ कुँवरि सब लीन्ही ॥ पतिन सौंपि बिनती अति कीन्ही ॥ ८ ॥ ❋

यह बचन सुनकर सारा रनवास घबरा गया और सास तौ प्रेमबश होनेके कारण कुछ बोल सकीही नहीं ॥ ७ ॥ फिर सब कुँवरियोंको छातीसे लगा कर पतियोंको सौंपी और बहुतसी बिनती करी ॥ ८ ॥

छंद–करि बिनय सिय रामहिँ समर्पी जोरि कर पुनि पुनि कहै ॥ ❋
बलि जाउँ तात सुजान तुमकहँ बिदित गति सबकी अहै ॥ ❋
परिवार पुरजन मोहिँ राजहिँ प्राणप्रिय सिय जानिबी ॥ ❋
तुलसी सुशील सनेह लखि निजकिंकरी करि मानिबी ॥ ५९ ॥ ❋

रानी सुनयना बहुतसा बिनय कर, सीता रामचन्द्रजीको अर्पण कर, हाथ जोड़, बारंबार कहने लगी कि–हे तात! हे सुजान! आपकी बलिहारी जाऊं. आप सबकी गतिको जानते हो. यह सीता परिवारको, पुरके लोगोंको, मुझको और राजाको प्राणोंसेभी प्रिय लगती है. सो इस बातको जानकर और इसका सुशील और स्नेह देखकर आप इसको अपनी दासी करके मानना ॥ ५९ ॥

सोरठा–तुम परिपूरणकाम, ज्ञानिशिरोमणि भावप्रिय ॥ ❋
जनगुणग्राहक राम, दोषदलन करुणायतन ॥ ३५ ॥ ❋

हे राम! आप पूर्णकाम हो. आपके किसी प्रकारकी लालसा नहीं है. आप ज्ञानके मुकुटमणि हो. आपको भक्ति बड़ी प्रिय है. आप लोगोंके गुणोंके ग्राहक हो. हे करुणानिधान! दोषोंका नाश करनेवाले आपही हो ॥ ३५ ॥

अस कहि रही चरण गहि रानी ॥ प्रेमपंक जनु गिरा समानी ॥ १ ॥ ❋
सुनि सनेहसानी बर बानी ॥ बहुबिधि रामसासु सनमानी ॥ २ ॥ ❋

ऐसे कहकर रानी पांव पकड़कर बैठ रही और उसकी बाणी तौ मानों प्रेमरूप कीचड़के अन्दर समाही गयी थी ॥ १ ॥ स्नेहभरी मधुर बाणी सुनकर रामचन्द्रजीने सास सुनयनाका अनेक प्रकारसे सत्कार किया ॥ २ ॥

राम बिदा माँगत कर जोरी ॥ कीन्ह प्रणाम बहोरि बहोरी ॥ ३ ॥ ❋
पाइ अशीश बहुरि शिर नाई ॥ भाइनसहित चले रघुराई ॥ ४ ॥ ❋

फिर हाथ जोड़कर रामचन्द्रजीने बारंबार प्रणाम करके बिदा मांगी ॥ ३ ॥ रानीको आशिष पाकर फिर शिर नाइ कर प्रभु भाइयोंके साथ वहांसे चले ॥ ४ ॥

मंजु मधुर मूरति उर आनी ॥ भईं सनेह शिथिल सब रानी ॥ ५ ॥ ❋
पुनि धीरज धरि कुँवरि हँकारी ॥ बार बार भेटहिँ महतारी ॥ ६ ॥ ❋

प्रभुकी सुन्दर और मधुर सांवरी मूर्तिको हृदयमें आनकर सब रानियां स्नेहसे शिथिल होगयीं ॥ ५ ॥ फिर धीरज धरकर रानियोंने कुँवरियोंको बुलाया और उनसे बारंबार मिलीं ॥ ६ ॥

पहुँचावहिँ फिरि मिलहिँ बहोरी ॥ बढ़ी परस्पर प्रीति न थोरी ॥ ७ ॥ ❋
पुनि पुनि मिलति सखिन बिलगाई ॥ बालबत्स जनु धेनु लवाई ॥ ८ ॥ ❋

माता उसको पहुँचाती है और फिर मिलती है. उस समय उनकी परस्परकी प्रीति कुछ कम नहीं बढ़ी थी ॥ ७ ॥ सखियोंको बिलगा कर माता जो बारंबार सीतासे मिलती है, वह कैसी मालूम होती है कि, मानों नवीन बियानी गौ बाल बछरीसे मिल रही है ॥ ८ ॥

दोहा–प्रेमबिबश नरनारि सब, सखिनसहित रनिवास ॥ ❋
मानहुँ कीन्ह बिदेहपुर, करुणाबिरह निवास ॥ ३३६ ॥ ❋

नगरके तमाम नर नारी और सखियोंसहित सारे रनवासने उस समय जनकके नगरको मानों करुणा और विरहका धाम बना दिया था ॥ ३३६ ॥

शुक सारिक जानकी जिआये ॥ कनकपिंजरन राखि पढ़ाये ॥ १ ॥ ❋
व्याकुल कहहिँ कहां बैदेही ॥ सुनि धीरज परिहरै न केही ॥ २ ॥ ❋

सीताने जिन शुक और सारिकाओंको पाला था और सुवर्णके पिंजरोंमें रखकर पढ़ाया था ॥ १ ॥ वे सीताको जाती देखकर व्याकुल होकर कहते हैं कि–हे सीते ! तू कहां जाती है ? इस बचनको सुनकर किसका धीरज चला न जाय ? ॥ २ ॥

भये बिकल खग मृग यहि भांती ॥ मनुजदशा कैसे कहि जाती ॥ ३ ॥ ❋
बन्धुसमेत जनक तब आये ॥ प्रेम उमँगि लोचन जल छाये ॥ ४ ॥ ❋

जहां पक्षी और चौपायेभी इसतरह विह्वल हो गये थे, वहां मनुष्योंकी दशा कैसे कही जाय ? ॥ ३ ॥ उस समय भाईके साथ जनकराजा वहां आया, तहां प्रेम उमंग जानेसे उनके नेत्रोंमें जल भर गया ॥ ४ ॥

सीय बिलोकि धीरता भागी ॥ रहे कहावत परम बिरागी ॥ ५ ॥ ❋
लीन्ह राउ उर लाइ जानकी ॥ मिटी महामर्याद ज्ञानकी ॥ ६ ॥ ❋

और सीताको देखकर उनका धीरजभी जाता रहा. जगतमें जनक राजा जो बड़े विरक्त कहलाते थे, सो केवल कहनेमात्र रह गये ॥ ५ ॥ राजाने सीताको अपनी छातीसे लगाया, उस वक्त राजाके ज्ञानकी बड़ी मर्याद नष्ट हो गयी; यानी जनक मोहके बश होगये ॥ ६ ॥

समुझावत सब सचिव सयाने ॥ कीन्ह बिचार अनवसर जाने ॥ ७ ॥ ❋
बारहिँ बार सुता उर लाई ॥ सजि सुन्दरि पालकी मँगाई ॥ ८ ॥ ❋

सयाने सब सचिवोंने राजाको समझाया, तब अवसर न जानकर राजाने पीछा विचार करके धीरज धरा ॥ ७ ॥ फिर सीताको बारंबार छातीसे लगा कर और उसको साज कर राजाने एक सुन्दर पालकी मँगायी ॥ ८ ॥

दोहा-प्रेमबिबश परिवार सब, जानि सुलगन नरेश ॥ ❀
कुँवरि चढ़ाई पालकी, सुमिरे सिद्धि गणेश ॥ ३३७ ॥ ❀

सीताके जानेके समय सब परिवारको प्रेमबश देख, और अच्छा लग्न जानकर सिद्धि गणेशका स्मरण करके राजाने कुँवरिको पालकीपर चढ़ाया ॥ ३३७ ॥

बहुबिधि भूप सुता समुझाई ॥ नारिधर्म कुलरीति सिखाई ॥ १ ॥ ❀
दासी दास दिये बहुतेरे ॥ शुचि सेवक जे प्रिय सियकेरे ॥ २ ॥ ❀

राजाने सीताको अनेक प्रकारसे समझायी और उसको स्त्रियोंके धर्म व कुलकी रीति सिखायी ॥ १ ॥ और बहुतसी दासियां और दास दिये कि, जो सीताके प्यारे पवित्र सेवक थे ॥ २ ॥

सीय चलत ब्याकुल पुरवासी ॥ होइँ सगुन शुभ मंगलरासी ॥ ३ ॥ ❀
भूसुर सचिव समेत समाजा ॥ संग चले पहुँचावन राजा ॥ ४ ॥ ❀

सीताके चलते समय नगरके सब नर नारी घबरा गये और मंगलके पुंज शुभ शकुन होने लगे ॥ ३ ॥ राजा जनक ब्राह्मण व मंत्रियोंके समाजके साथ पहुंचानेको चला ॥ ४ ॥

रथ गज बाजि बरातिन साजे ॥ सुनि गहगहे बाजने बाजे ॥ ५ ॥ ❀
दशरथ बिप्र बोलि सब लीन्हे ॥ दान मान परिपूरण कीन्हे ॥ ६ ॥ ❀

बरातियोंने रथ, हाथी और घोड़े साज कर तैयार किये. यह सुनकर गहगहे बाजे बजने लगे ॥ ५ ॥ उस समय दशरथजीने सब ब्राह्मणोंको बुलाकर दान व मानसे उनको परिपूर्ण किया ॥ ६ ॥

चरणसरोजधूरि धरि शीसा ॥ मुदित महीपति पाइ आशीसा ॥ ७ ॥ ❀
सुमिरि गजानन कीन पयाना ॥ मंगलमूल सगुन भये नाना ॥ ८ ॥ ❀

फिर राजा दशरथजीने उनके चरणकमलोंकी धूलि शिरपर धरकर आनंदके साथ उनसे आशिष पायी ॥ ७ ॥ फिर गणपतिका स्मरण करके प्रयाण किया, तब मंगलके मूलकारण अनेक शकुन हुए ॥ ८ ॥

दोहा-सुर प्रसून बर्षहिँ हरषि, करहिँ अप्सरा गान ॥ ❀
चले अवधपति अवधपुर, मुदित बजाइ निशान ॥ ३३८ ॥ ❀

जिस समय अयोध्याके राजा धौंसा देकर आनन्दके साथ अवधको चले, उस समय देवता खुश होकर फूल बरसाने लगे और अप्सरा गान करने लगीं ॥ ३३८ ॥

नृप करि बिनय महाजन फेरे ॥ सादर सकल माँगने टेरे ॥ १ ॥ ❀
भूषण बसन बाजि गज दीन्हें ॥ प्रेम पोषि ठाढ़े सब कीन्हें ॥ २ ॥ ❀

राजा दशरथजीने विनय करके नगरके प्रतिष्ठित पुरुषोंको पीछा लौटनेको कहा और सब याचक लोगोंको आदरसहित बुलाया ॥ १ ॥ फिर उनको वस्त्र, आभूषण, घोड़े व हाथी दिये और प्रेमपूर्वक पोष कर उन सबको ठाढ़े किये ॥ २ ॥

बार बार बिरदावलि भाखी ॥ फिरे सकल रामहिँ उर राखी ॥ ३ ॥ ❀
बहुरि बहुरि कोशलपति कहहीं ॥ जनक प्रेमबश फिरा न चहहीं ॥ ४ ॥ ❀

वे लोग बारंबार बिरदावली कहकर प्रभुको हृदयमें रखकर पीछे लौटने लगे ॥ ३ ॥ दशरथजी जनकसे बारंबार पीछा फिरनेको कहते हैं, पर राजा जनक प्रेमवश होनेके कारण पीछा फिरना नहीं चाहते ॥ ४ ॥

पुनि कह भूपति बचन सुहाये ॥ फिरिय महीप दूरि बड़ि आये ॥ ५ ॥ ❀
राउ बहोरि उतरि भये ठाढ़े ॥ प्रेमप्रबाह बिलोचन बाढ़े ॥ ६ ॥ ❀

तब दशरथजीने फिर सुन्दर बचन कहे कि- हे राजा ! अब आप पीछे लौट जाइये; क्योंकि बड़े दूर चले आये हो ॥ ५ ॥ तब भी जनक पीछा नहीं फिरे, तब दशरथजी रथसे उतर खड़े हो गये. दोनों ओर प्रेमके कारण नेत्रोंमें जलका प्रवाह बढ़ने लगा ॥ ६ ॥

तब बिदेह बोले कर जोरी ॥ बचन सनेहसुधा जनु बोरी ॥ ७ ॥ ❀
करौं कवनबिधि बिनय सुहाई ॥ महाराज मोहिं दीन्ह बड़ाई ॥ ८ ॥ ❀

तब जनक राजाने हाथ जोड़ मानों स्नेह व अमृतभरी बाणी कही ॥ ७ ॥ कि–महाराज ! मैं आपका सुहावना सुन्दर बिनय किस प्रकार कर सकूं ? क्योंकि मुझको जो बड़ाई मिली है वह सब आपनेही दी है । ८ ॥

दोहा--कोशलपति समधी जनक, सनमाने सब भांति ॥ ❀
मिलन परस्पर बिनय अति, प्रीति न हृदय समाति ॥ ३३९ ॥ ❀

जनकके ये बचन सुनकर दशरथजीने अपने समधी जनकका सब प्रकारसे बड़ा सन्मान किया और बिनयके साथ परस्पर मिलनेमें ऐसी प्रीति बढ़ी कि, हृदयके अन्दर किसी कदर समा नहीं सकी ॥ ३३९ ॥

मुनिमण्डली जनक शिर नावा ॥ आशिरबाद सबहिँ सन पावा ॥ १ ॥ ❀
सादर पुनि भेंटे जामाता ॥ रूप शील गुणनिधि सब भ्राता ॥ २ ॥ ❀

फिर जनक राजाने मुनिमंडलीको प्रणाम करके सबसे आशीर्वाद पाया ॥ १ ॥ तदनंतर रूप, शील और गुणोंके भंडार अपने दायाद सब भाइयोंके साथ सादर फिर मिले ॥ २ ॥

जोरि पंकरुहपाणि सुहाये ॥ बोले बचन प्रेम जनु छाये ॥ ३ ॥ ❀
राम करौं केहि भांति प्रशंसा ॥ मुनि महेश मन मानस हंसा ॥ ४ ॥ ❀

राजा जनकने सुन्दर करकमल जोड़कर मानों प्रेमभरे वचन कहे कि–॥ ३ ॥ हे मुनि और महादेवके मनरूप मानससरोवरके हंस ! हे राम ! मैं आपकी प्रशंसा किस प्रकार करूं ? ॥ ४ ॥

करहिँ योग योगी जेहि लागी ॥ कोह मोह ममता मद त्यागी ॥ ५ ॥ ❀
ब्यापक ब्रह्म अलख अबिनाशी ॥ चिदानन्द निर्गुण गुणराशी ॥ ६ ॥ ❀

जिसके वास्ते योगीलोग क्रोध, मोह, ममता और मदको त्यागकर योगका आराधन करते हैं ॥ ५ ॥ जो सर्वव्यापक परब्रह्म है, जो किसीके लक्ष्यमें नहीं आता, जो अविनाशी चिदानंदरूप निर्गुण व गुणोंका पुंज है ॥ ६ ॥

मनसमेत जेहिँ जान न बानी ॥ तरकि न सकहिँ सकल अनुमानी ॥ ७ ॥

महिमा निगम नेति करि कहहीं ॥ जो तिहुँकाल एकरस रहहीं ॥ ८ ॥ ❋

जिसको मन और बाणी नहीं जानती और तमाम अनुमान करनेवाले अर्थात् तर्कशास्त्री जिसके विषयमे तर्क नहीं कर सक्ते ॥ ७ ॥ वेदभी जिसकी महिमाको नेति नेति कहकर गाता है, जो तीनों कालमें सदा एकरस यानी निर्विकार रहता है ॥ ८ ॥

दोहा–नयनबिषय मोंकहँ भयउ, सो समस्त सुखमूल ॥ ❋
सबहिँ लाभ जग जीवकहँ, भये ईश अनुकूल ॥ ३४० ॥ ❋

वह सर्व सुखका मूल कारण साक्षात् परब्रह्म मेरे नेत्रगोचर हुआ, अब मैं मेरे भाग्यकी बात क्या कहूं ? पर यह सच है कि, जब परमेश्वर अनुकूल होता है, तब जीवको जगत्में सब लाभ मिल जाते है ॥ ३४० ॥

सबहिँ भांति मोहिँ दीन्ह बड़ाई ॥ निजजन जानि लीन्ह अपनाई ॥ १ ॥ ❋
होइँ सहस दश शारद शेखा ॥ करहिँ कल्प भरि कोटिक लेखा ॥ २ ॥ ❋

राजा जनक कहते है कि–मुझको आपने सब प्रकारसे बड़ाई दीनी और मुझको अपना जन जानकर अपनाय लिया ॥ १ ॥ इससे मैं कहता हूं कि–हे प्रभु ! यदि दश हजार शारदा और शेष प्रगट होकर करोंड़ो कल्पोंतक हिशाब करें ॥ २ ॥

मोर भाग्य राउर गुणनाथा ॥ कहि न सिराहिँ सुनिय रघुनाथा ॥ ३ ॥ ❋
मैं कछु कहौं एक बल मोरे ॥ तुम रीझहु सनेह सुठि थोरे ॥ ४ ॥ ❋

तौभी हे रघुनाथ ! मेरे भाग्यको और आपके गुणोंकी कथाको कहकर कभी पार नहीं पा सक्ते ॥ ३ ॥ क्या मैं कुछ यह कह सकता हूं कि–मेरे उपासना व ज्ञान वगैरःका बल है. मेरे तौ एक भी बल नहीं है, तथापि हे प्रभु ! आपका बड़प्पन ऐसा है कि ,आप थोड़ेसे निष्कपट स्नेहसे प्रसन्न हो जाते हो ॥ ४ ॥

बार बार मांगौं कर जोरे ॥ मन परिहरै चरण जनि भोरे ॥ ५ ॥ ❋
सुनि बर बचन प्रेम जनु पोषे ॥ पूरणकाम राम परितोषे ॥ ६ ॥ ❋

हे प्रभु ! मैं हाथ जोड़कर बारंबार यही प्रार्थना करता हूं कि, मेरा मन कदापि भूलकर भी आपके चरणोंका परित्याग न करै ॥ ५ ॥ मानों प्रेमसे पुष्ट राजाके अच्छे बचन सुनकर जिनके किसी प्रकारकी कामना नहीं है, ऐसे प्रभु प्रसन्न हुए ॥ ६ ॥

करि बर बिनय ससुर सनमाने ॥ पितु कौशिक बसिष्ठसम जाने ॥ ७ ॥
बिनती बहुरि भरतसन कीन्ही ॥ मिलि सुप्रेम पुनि आशिष दीन्ही ॥ ८ ॥

ऐसे ससुर यानी जनकका वर यानो रामचन्द्रजीने विनय करके बड़ा सन्मान किया और उनको अपने पिता दशरथ व विश्वामित्रजी और वसिष्ठजीके समान जानकर सत्कार किया ॥ ७ ॥ फिर राजाने भरतसे बहुतसा विनय किया और उनसे भेंटकर बड़े प्यारके साथ आशिष दी ॥ ८ ॥

दोहा–मिले लषण रिपुसूदनहिँ, दीन्ह अशीस महीश ॥
भये परस्पर प्रेमबश, फिरि फिरि नावहिँ शीश ॥ ३४१ ॥ ❋

फिर राजाने लक्ष्मण और शत्रुघ्नसे मिलकर उनको आशिष दी. उस समय दोनों ओरके समधी परस्पर प्रेमवश होकर बारंबार शिर नवाते थे ॥ ३४१ ॥

बार बार करि बिनय बड़ाई ॥ रघुपति चले संग सब भाई ॥ १ ॥ ❋
जनक गहे कौशिकपद जाई ॥ चरणरेणु शिर नयनन लाई ॥ २ ॥ ❋

रामचन्द्रजीभी राजा जनककी बारंबार बड़ाई और विनय करके सब भाइयोंके साथ वहांसे रवाने हुए ॥ १ ॥ फिर जनक राजाने जाकर विश्वामित्रजीके चरण गहे और उनके चरणोंकी रज शिर व नेत्रोंमें लगायी ॥ २ ॥

सुनु मुनीश सब दर्शन तोरे ॥ अगम न कछु प्रतीति मन मोरे ॥ ३ ॥ ❋
जो सुख सुयश लोकपति चहहीं ॥ करत मनोरथ सकुचत अहहीं ॥४॥ ❋

और राजाने कहा कि-हे मुनीश ! सुनो. मेरे मनको यह पक्का भरोसा है कि-आपके दर्शनके प्रभावसे मुझको कुछभी दुर्लभ नहीं है ॥ ३ ॥ जिस सुख और सुयशको लोकपाल चाहते है, पर मनमें मनोरथ करते सकाते है कि-यह सुख और सुयश हमको मिले वा नहीं ॥ ४ ॥

सो सुख सुयश सुलभ मोहिँ स्वामी ॥ सब बिधि तव दर्शन अनुगामी॥५॥
कीन्ह बिनय पुनि पुनि शिर नाई ॥ फिरे महीपति आशिष पाई ॥ ६ ॥ ❋

वह सुख और सुयश हे स्वामी ! आज आपके दर्शनके प्रभावसे मुझको सबतरह सुभल होगया है ॥ ५ ॥ राजाने बारंबार शिर नवा कर ऋषिसे बड़ा विनय किया, तब विश्वामित्रजीने जो आशिष दी उसे पाकर वे पीछे फिरे ॥ ६ ॥

चली बरात निशान बजाई ॥ मुदित छोट बड़ सब समुदाई ॥ ७ ॥ ❋
रामहिँ निरखि ग्राम नरनारी ॥ पाइ नयनफल होहिँ सुखारी ॥ ८ ॥ ❋

धौंसा देकर बरात रवाने हुई उस वक्त छोटे बड़े सब समुदाय बड़े प्रसन्न हुए ॥ ७ ॥ मार्गमें गांवके नर नारी रामको देखकर अपने नेत्रोंका फल पाकर सुखी होते है ॥ ८ ॥

दोहा- बीच बीच बर बास करि, मगलोगन सुख देत ॥ ❋
अवधसमीप पुनीत दिन, पहुँची आय जनेत ॥ ३४२ ॥ ❋

बीच बीचमें अच्छे डेरे करके मार्गमें लोगोंको सुख देती हुई बरात अच्छे शुभ दिन अवधके समीप आ पहुंचो ॥ ३४२ ॥

हने निशान पणव बहु बाजे ॥ भेरि शंख धुनि हय गज गाजे ॥ १ ॥ ❋
झांझ मृदंग डिमडिमी सुहाई ॥ सरस राग बाजै सहनाई ॥ २ ॥ ❋

तब अनेक प्रकारके बाजे और ढोल बजने लगे. भेरी और शंखकी ध्वनि होने लगी. हाथी और घोड़े गाजने लगे ॥ १ ॥ झांझ, मृदंग, सुन्दर डिमडिमी और सहनाई ये सुन्दर रसीले राग लिये बाजने लगे ॥ २ ॥

पुरजन आवत अकनि बराता ॥ मुदित सकल पुलकावलि गाता ॥ ३ ॥ ❋
निज निज सुन्दर सदन सँवारे ॥ हाट बाट चौहट पुरद्वारे ॥ ४ ॥ ❋

'बरात आती है' ये समाचार सुनकर नगरके लोग सब आनंदित हुए. उनके शरीर पुलकावलीसे व्याप्त होगये ॥ ३ ॥ बरात आनेके समाचार सुनकर सब लोगोंने अपने २ सुन्दर घर सँवारे और हाट बाट चौहट व शहरके दरवाजे सजाये गये ॥ ४ ॥

गली सकल अरगजा सिँचाई ॥ जहँ तहँ चौके चारु पुराई ॥ ५ ॥ ❀
बनी बजार न जाय बखाना ॥ तोरण केतु पताक बिताना ॥ ६ ॥ ❀

सब गलियां अरगजासे सीचीं गयीं. जहां तहां सुन्दर चौक पुराये गये ॥ ५॥ और बजारके भीतर जो तोरण, केतु, ध्वजा, पताका लगायीं गयीं उनको तो कहही नहीं सक्ते ॥ ६ ॥

सफल पूगफल कदलि रसाला ॥ रोपे बकुल कदम्ब तमाला ॥ ७ ॥ ❀
लगे सुभग तरु परसत धरणी ॥ मणिमय आलवाल कल करणी ॥ ८ ॥ ❀

घरोंके दरवाजोंपर फलसहित सुपारीके पेड़, कदली, आम, बकुल, कदम्ब और तमालके वृक्ष रोपे गये ॥ ७ ॥ सुन्दर वृक्ष फल फूलके बोझसे पृथ्वीको छूने लगे है. उनके मणिमय थालावांकी सुन्दर रचना बनी है ॥ ८ ॥

दोहा-बिबिधभांति मंगल कलश, गृह गृह रचे सँवारि ॥ ❀
सुर ब्रह्मादि सिहाहिँ सब, रघुबरपुरी निहारि ॥ ३४३ ॥ ❀

घर घरमें अनेक प्रकारसे मंगलकलश सँवार कर तैयार किये गये है. ऐसे सब प्रकारसे सजी हुई अयोध्यापुरीको देखकर देवता और ब्रह्मा आदि सब देवता सिहाने लगे ॥ ३४३ ॥

भूपभवन तेहि अवसर सोहा ॥ रचना देखि मदनमन मोहा ॥ १ ॥ ❀
मंगल शकुन मनोहरताई ॥ ऋधि सिधि सुख संपदा सुहाई ॥ २ ॥ ❀

उस अवसरमें राजाका भवन ऐसा शोभायमान लगता था कि-जिसकी विचित्र रचनाको देखकर कामदेवका भी मन मोहित हो गया था ॥ १ ॥ मंगल, शकुन, मनोहरता, ऋद्धि, सिद्धि, सुख और सुन्दर संपदा ॥ २ ॥

जनु उछाह सब सहजसुहाये ॥ तनु धरि धरि दशरथगृह आये ॥ ३ ॥ ❀
देखनहेतु राम बैदेही ॥ कहहु लालसा होइ न केही ॥ ४ ॥ ❀

स्वभावसे सुन्दर उछाह ये सब मानों शरीर धरकर दशरथजीके घर आये थे ॥ ३॥ कहो सीता और रामको देखनेकी लालसा किसके नहीं हुई थी ? ॥ ४ ॥

यूथ यूथ मिलि चलीं सुआसिनि ॥ निजछबि निदरहिँ मदनबिलासिनि ॥ ५ ॥
कलश सुमंगल सजीं आरती ॥ गावहिँ जनु बहुवेष भारती ॥ ६ ॥ ❀

सुवासिनियां यूथके यूथ मिलकर चलीं जातीं थीं कि, जो अपनी छबिसे रतिका मान मोचन करती थीं ॥ ५ ॥ सुमंगल कलश सजकर आरती करतीं गान करतीं थीं. उस समय ऐसा मालूम होता था कि, मानों सरस्वती अनेक वेष बनाये शोभायमान हो रही हैं ॥ ६ ॥

भूपतिभवन कुलाहल होई ॥ जाइ न बरणि समय सुख सोई ॥ ७ ॥ ❀
कौशल्यादि राममहतारी ॥ प्रेमबिबश तनदशा बिसारी ॥ ८ ॥ ❀

राजभवनमें भारी कोलाहल हो रहा था. उस समयका सुख वर्णन किया नहीं जा सक्ता ॥ ७ ॥ कौसल्या आदि रामकी मातायें प्रेमके बश होनेसे अपने शरीरकी सुध भूल गयीं ॥ ८ ॥

दोहा–दिये दान बिप्रन बिपुल, पूजि गणेश पुरारि ॥ ❀
प्रमुदित परम दरिद्र जनु, पाइ पदारथ चारि ॥ ३४४ ॥ ❀

फिर गणपति और महादेवजीका पूजन करके उन्होंने ब्राह्मणोंको अनेक दान दिये और वे ऐसी आ-ल्हादित हुईं कि, मानों जन्मदरिद्रीने चारों पुरुषार्थ पा लिये है ॥ ३४४ ॥

प्रेमप्रमोद बिबश सब माता ॥ चलहिँ न चरण शिथिल सबगाता ॥१॥ ❀
रामदरशहित अति अनुरागीं ॥ परिछनसाज सजन सब लागीं ॥ २ ॥ ❀

सब मातायें प्रेमके बश हो रही है. सब अंग शिथिल हो जानेके कारण एक पग भी चल नहीं सक्ती है ॥ १ ॥ परंतु रामचन्द्रजीके दर्शनके हेतु सब बड़े प्रेमके साथ परिछनका साज सजने लगीं हैं ॥ २ ॥

बिबिध बिधान बाजने बाजे ॥ मंगल मुदित सुमित्रा साजे ॥ ३ ॥ ❀
हरद दूब दधि पल्लव फूला ॥ पान पूगफल मंगलमूला ॥ ४ ॥ ❀

अनेक प्रकारके बाजे बज रहे है. उस समय सुमित्राने बड़े आनंदके साथ मंगल द्रव्य सजकर तैयार किये है ॥ ३ ॥ हरदी, दूर्वा, दही, पल्लव, पुष्प, पान, सुपारी, मंगलमय मूल ॥ ४ ॥

अक्षत अंकुर रोचन लाजा ॥ मंजुल मंजरि तुलसि बिराजा ॥ ५ ॥ ❀
छुहे पुरटघट सहजसुहाये ॥ मदनशकुनि जनु नीड़ बनाये ॥ ६ ॥ ❀

अक्षत, अंकुर, गोरोचन, धानकी खील, सुन्दर तुलसीकी मंजरी ॥ ५ ॥ और हरिद्रा आदि मंगल द्रव्योंसे संस्कृत (रंगे), सहजसुन्दर सुवर्णके घट ये सब तैयार किये गये; सो वे घट कैसे मालूम होते थे कि, मानों कामदेवरूप पखेरूने अपने रहनेके लिये घोंसले बनाये है ॥ ६ ॥

शकुन सुगंध न जाहिँ बखानी ॥ मंगल सकल सजाहिँ सब रानी ॥७॥ ❀
रची आरती बिबिधबिधाना ॥ मुदित करहिँ कल मंगलगाना ॥ ८ ॥ ❀

अनेक प्रकारके सुगंधित पदार्थ और शकुन इतने तैयार किये गये कि, जिनका वर्णन नहीं हो सक्ता. मंगलके सब पदार्थ सब रानियां साज रहीं हैं ॥७॥ अनेक प्रकारसे आरती तैयार करी हैं और आनंदयुक्त हो, सुन्दर मांगलिक गीत गातीं हैं ॥ ८ ॥

दोहा–कनकथार भरि मंगलनि, कमल कर लिये मात ॥ ❀
चलीं मुदित परिछन करन, पुलक प्रफुल्लित गात ॥ ३४५ ॥ ❀

सब मातायें प्रेमसे पुलकावलि होनेके कारण प्रफुल्लित गात्र होकर मंगलद्रव्योंसे भरे हुए सुवर्णके थार हस्तकमलोंमें लिये आनंदित होकर परिछन करनेको चलीं ॥ ३४५ ॥

धूप धूम नभ मेचक भयऊ ॥ सावन घन घमंड जनु छयऊ ॥ १ ॥ ❀
सुरतरु सुमन माल सुर बर्षाहिँ ॥ मनहुँ बलाकअवलि मन कर्षहिँ ॥ २ ॥ ❀

उस समय धूपके धूमसे जो आकाश श्याम हो गया था, वह ऐसा मालूम होता था कि,

मानों सावनकी अंधियारी घटा छा रही हैं ॥ १ ॥ देवता कल्पवृक्षके फूलोंकी जो बरसा करते है वह ऐसी मालूम होती है कि, मानों बकपांती मनको मोहित कर रही है ॥ २ ॥

मंजुल मणिमय बन्दनबारा ॥ मनहुँ पाकरिपु चाप सँवारा ॥ ३ ॥ ❋
प्रकटहिँ दुरहिँ अटनपर भामिनि ॥ चारु चपल जनु दमकहिँ दामिनि ४

मणियोंकी सुन्दर बन्दनवार ऐसी शोभायमान होती थी कि, मानों इन्द्रने अपने धनुष सँवार कर तैयार किया है ॥ ३ ॥ अँटारियोंपर जो स्त्रियां प्रगट होती है और छिपती हैं वे ऐसी मालूम होती है कि, मानों सुन्दर चपल दामिन दमक रही है ॥ ४ ॥

दुन्दुभिधुनि घन गरजहिँ घोरा ॥ याचक चातक दादुर मोरा ॥ ५ ॥ ❋
शुचि सुगन्ध बहु बर्षहिँ वारी ॥ सुखी सकल लखि पुर नरनारी ॥ ६ ॥ ❋

जो दुंदुभी बजते है वे ऐसे मालूम होते है कि, मानों घोर बादल गाज रहे है, जो याचक लोग बिरदावली कह रहे है, वे ऐसे मालूम होते है कि, मानों मेघकी गरज सुनकर पपीहे मेंडक और मयूर बोल रहे है ॥ ५ ॥ जो पवित्र सुगंधिजलका खूब छिरकाव होता है वह ऐसा प्रतीत होता है कि, मानों पानी बरस रहा है. उसको देखकर नगरके सब नरनारी किसानोंके जैसे अति सुखी हुए है ॥ ६ ॥

समय जानि गुरु आयसु दीन्हा ॥ पुर प्रबेश रघुकुलमणि कीन्हा ॥७॥ ❋
सुमिरि शंभुगिरिजा गणराजा ॥ मुदित महीपति सहित समाजा ॥८॥ ❋

अच्छा समय जानकर गुरु (वसिष्ठजी) ने आज्ञा दी, तब दशरथजीने पुरमें प्रवेश किया ॥७॥ प्रवेश करते समय महादेव, पार्वती और गणपतिका स्मरण करके दशरथजी अपनी समाजके साथ बडे प्रसन्न हुए ॥ ८ ॥

दोहा--होहिँ शकुन बर्षहिँ सुमन, सुर दुन्दुभी बजाइ ॥ ❋
बिबुधबधू नाचहिँ मुदित, मंजुल मंगल गाइ ॥ ३४६ ॥ ❋

शुभ शकुन होते है, देवता दुंदुभी बजाकर फूल बरसाते है, अप्सरा मनोहर गीत गा गाकर आनन्दसे नृत्य कर रहीं है ॥ ३४६ ॥

मागध सूत बन्दि नट नागर ॥ गावहिँ यश तिहुँलोकउजागर ॥ १ ॥ ❋
जयधुनि बिमल बेद बर बानी ॥ दश दिशि सुनिय सुमंगल सानी ॥ २ ॥❋

मागध, सूत, बंदी और चतुर नट, ये सब त्रिलोकीमें उजागर राजाके यशको गा रहे हैं ॥ १ ॥ सुमंगलसे भरी जयध्वनि और निर्मल वेदवाणी दशों दिशाओंमें सुनायी देती है ॥ २ ॥

बिपुल बाजने बाजन लागे ॥ नभ सुर नगर लोग अनुरागे ॥ ३ ॥ ❋
बने बराती बर्णि न जाहीं ॥ महामुदित मन सुख न समाहीं ॥ ४ ॥ ❋

अनेक प्रकारके सघन बाजे बजने लगे हैं, जिससे आकाशमें देवता और नगरमें लोग बहुत खुश हुए हैं ॥ ३ ॥ बराती ऐसे बने हुए थे कि, जिनका बर्णन नहीं कर सक्ते. वे ऐसे सुखी थे कि, उनका सुख मनमें नहीं समाता था ॥ ४ ॥

पुरबासिन तब राउ जुहारे ॥ देखत रामहिँ भये सुखारे ॥ ५ ॥ ❋
करहिँ निछावरि मणिगण चीरा ॥ बारि बिलोचन पुलक शरीरा ॥ ६ ॥ ❋

पुरके लोगोंने राजाके दर्शन करके उनसे जुहार किया और रामको तो देखतेही सुखी हो गये ॥ ५ ॥ वे लोग अनेक प्रकारके रत्न व वस्त्र निछावर कर रहे हैं. उनके नेत्रोंमें जल भर रहा है. शरीरमें रोमांच हो रहे है ॥ ६ ॥

आरति करहिँ मुदित पुरनारी ॥ हर्षहिँ निरखि कुँवर बर चारी ॥ ७ ॥ ❋
शिबिका सुभग उघारि उघारी ॥ देखि दुलहिनिन होहिँ सुखारी ॥ ८ ॥ ❋

नगरकी स्त्रियां प्रसन्न होकर आरती कर रहीं है और चारों सुन्दर कुंवरोंको देखकर आनन्दमग्न हो रही हैं ॥ ७ ॥ सुन्दर पालकीको उघार उघार कर दुलहिनोंको देख देखकर सुखी होती है ॥ ८ ॥

दोहा–यहि बिधि सबहीं देत सुख, आये राजदुआर ॥ ❋
मुदित मातु परिछनि करहिँ, बधुनसमेत कुमार ॥ ३४७ ॥ ❋

ऐसे सबको सुख देतेहुए प्रभु राजद्वारपर पधारे. तब मातायें प्रसन्न मन हो बहुओंके साथ अपने कुँवरोंकी परिछन करने लगीं ॥ ३४७ ॥

करहिँ आरती बारहिँ बारा ॥ प्रेम प्रमोद कहै को पारा ॥ १ ॥ ❋
भूषण मणि पट नाना जाती ॥ करहिँ निछावरि अगणित भांती ॥ २ ॥ ❋

वे बारंबार आरती करती है. सो उनके प्रेम और परमानन्दको कहकर कौन आदमी पार पा सक्ता है ? ॥ १ ॥ अनेक प्रकारके आभूखन, रत्न और वस्त्र निछावर कर रही है; जिसकी रीति कहनेमे नहीं आ सक्ती ॥ २ ॥

बधुनसमेत देखि सुत चारी ॥ परमानन्द मगन महतारी ॥ ३ ॥ ❋
पुनि पुनि सीय राम छबि देखी ॥ मुदित सुफल जगजीवन लेखी ॥ ४ ॥ ❋

चारों पुत्रोंके बहुओंके साथ देखकर माता परमानन्दमग्न हो गयीं ॥ ३ ॥ राम और सीताकी छबिको बारंबार निहार कर वह अपने जीवनको जगत्में सुफल मानने लगीं और प्रसन्न हुई ॥ ४ ॥

सखी सीयमुख पुनि पुनि चाही ॥ गान करहिँ निज सुकृत सराही ॥ ५ ॥ ❋
बर्षहिँ सुमन क्षणहिँ क्षण देवा ॥ नाचहिँ गावहिँ लावहिँ सेवा ॥ ६ ॥ ❋

सखियां सीताजीके मुखको बारंबार देखकर गान करती हैं और अपने पुण्यकी प्रशंसा करती हैं कि, हम बड़ी पुण्यवान् हैं; क्योंकि हमको सीताजीके मुखकमलके दर्शन हुए ॥ ५ ॥ देवता क्षण क्षणमें फूल बरसाते हैं, नाचते है, गाते है और प्रभुको अपनी सेवा जनाते हैं ॥ ६ ॥

देखि मनोहर चारिउ जोरी ॥ शारद उपमा सकल ढँढोरी ॥ ७ ॥ ❋
देत न बनहिँ निपट लघु लागी ॥ यकटक रहीं रूप अनुरागी ॥ ८ ॥ ❋

सुन्दर चारों जोरियोंको देखकर शारदाने तमाम उपमा ढूंढ मारी ॥ ७ ॥ पर एकभी देते नहिं

बनी; क्योंकि उनके सामने सब उपमा अति तुच्छ लगने लगीं थीं. अतएव शारदा प्रभुके रूपमें अनुराग करके यकटक देखती रह गयी ॥ ८ ॥

दोहा–निगम नीति कुल रीति करि, अरघ पाँवडे देत ॥ ❋
बधुनसहित सुत परछि सब, चली लिवाय निकेत ॥ ३४८ ॥ ❋

वेदकी विधि और कुलकी रीति करके अर्घ पांवड़े देती हुई रानियां अपने पुत्रोको बहुओंके साथ परछि कर अपने भवनको लिवाले चलीं ॥ ३४८ ॥

चारि सिंहासन सहज सुहाये ॥ जनु मनोज निजहाथ बनाये ॥ १ ॥ ❋
तिनपर कुँवरि कुँवर बैठारे ॥ सादर पाँय पुनीत पखारे ॥ २ ॥ ❋

वहां जो चार सिंहासन तैयार किये गये थे, वे ऐसे सहज सुन्दर थे कि, मानों कामदेवने अपने हाथोंसेही बनाये है ॥ १ ॥ उनपर कुँवर और कुँवरियोंको बिठाकर आदरके साथ उनके पवित्र पांव पखारे ॥ २ ॥

धूप दीप नैवेद्य बेद बिधि ॥ पूजे वर दुलहिनि मंगल निधि ॥ ३ ॥ ❋
बारहिँ बार आरती करहीं ॥ ब्यजन चारु चामर शिर ढरहीं ॥ ४ ॥ ❋

फिर धूप, दीप और नैवेद्य आदि पूजाकी सामग्री लाकर मंगलनिधि चारों दूलह और दुलाहिनों- की वेदकी विधिसे पूजा करी ॥ ३ ॥ रानियां बारंबार आरती करती है. उस समय उनके शिरपर सुन्दर व्यजन और चँवर ढुरने लगे है ॥ ४ ॥

बस्तु अनेक निछावरि होहीं ॥ भरीं प्रमोद मातु सब सोहीं ॥ ५ ॥ ❋
पावा परम तत्त्व जनु योगी ॥ अमृत लही जनु सन्तत रोगी ॥ ६ ॥ ❋

अनेक प्रकारकी चीजें न्योछावर हो रही है, सब मातायें आनंदमें मग्न होकर कैसी शोभायमान हो रही हैं ॥ ५ ॥ कि, मानों योगीने परम तत्त्वको पा लिया है. मानों निरंतर रोगग्रस्त पुरुषने अमृत पा लिया है ॥ ६ ॥

जन्मरंक जनु पारस पावा ॥ अन्धहिँ लोचन लाभ सुहावा ॥ ७ ॥ ❋
मूक बदन जस शारद छाई ॥ मानहुँ समर शूर जय पाई ॥ ८ ॥ ❋

मानों जन्मदरिद्रीने पारस पा लिया है. मानों अंधे आदमीको सुन्दर नेत्र मिल गये हैं ॥ ७ ॥ मानों मूक आदमीके मुखमें सरस्वती आ विराजी है और मानों शूरवीर पुरुषने युद्धमें जय पा लिया है ॥ ८ ॥

दोहा–यहि सुखते शत कोटि गुण, पावहिँ मातु अनंद ॥ ❋
भाइन सहित बिबाहि घर, आये रघुकुलचंद ॥ ३४९ ॥ ❋
लोकरीति जननी करहिँ, बर दुलहिनि सकुचाहिँ ॥ ❋
मोद बिनोद बिलोकि बड़, राम मनहिँ मुसुकाहिँ ॥ ३५० ॥ ❋

इनको जो सुख होता है, उससे सौकरोड़ गुना सुख उनकी माताओंने पाया कि, जिस समय प्रभु अपने भाइयोंके साथ ब्याह करके घरपर पधारे ॥ ३४९ ॥ मातायें जो लोकरीति करतीं

है, तिससे दूलह और दुलहिनी सकुचातीं है. और विनोदका बड़ा आंनद देखकर प्रभु मनमें मुसकुराते है ॥ ३५० ॥

देव पितर पूजे बिधि नीकी ॥ पूजी सकल बासना जीकी ॥ १ ॥ *
सबहिँ बन्दि माँगहिँ बरदाना ॥ भाइनसहित राम कल्याना ॥ २ ॥ *

फिर देवता और पित्रीश्वरोंकी अच्छी तरह पूजा करी, जिससे उनके मनकी वासना परिपूर्ण हुई ॥ १ ॥ रानियां सब देवतानको वंदन करके उनसे वरदान मांगतीं है कि, भाइयोंके साथ रामका सदा कल्याण बना रहे ॥ २ ॥

अन्तरहित सुर आशिष देहीं ॥ मुदित मातु अंचल भरि लेहीं ॥ ३ ॥ *
भूपति बोलि बरातिन लीन्हे ॥ यान बसन मणि भूषण दीन्हे ॥ ४ ॥ *

देवता अन्तर्हित होकर आशिष देते है और मातायें अंचल भर भर आनन्दके साथ लेती है ॥३॥ राजा दशरथजीने सब बरातियोंको बुलाकर उनको अनेक प्रकारकी सवारियां, वस्त्र, रत्न और आभूषण आदि दिये ॥ ४ ॥

आयसु पाइ राखि उर रामहिँ ॥ मुदित गये सब निज निज धामहिँ ॥५॥
पुरनरनारि सकल पहिराये ॥ घर घर बाजहिँ अनँद बधाये ॥ ६ ॥ *

फिर राजाकी आज्ञा पाकर, रामको अपने हृदयमें रखकर सब लोग खुश होकर अपने अपने घर गये ॥ ५ ॥ राजाने नगरके तमाम स्त्री पुरुषोंको पहिरावनी दी. घर घरमें आनंदकी बधाई बजने लगीं ॥ ६ ॥

याचकजन याचहिँ जोइ जोई ॥ प्रमुदित राउ देइँ सोइ सोई ॥ ७ ॥ *
सेवक सकल बजनियां नाना ॥ पूरण किये दान सनमाना ॥ ८ ॥ *

याचकलोग आकर जो जो वस्तु मांगते है राजा वही २ वस्तु बड़ी प्रीतिके साथ देता है ॥ ७ ॥ सब सेवक लोग और कई प्रकारके बजंत्री लोग दान व सन्मानसे परिपूर्ण किये गये है ॥ ८ ॥

दोहा--देहिँ अशीश जुहारि सब, गावहिँ गुणगणगाथ ॥ *
तब गुरु भूसुर सहित गृह, गमन कीन्ह नरनाथ ॥ ३५१ ॥ *

सब लोगोंने जुहार करके राजाको आशिष दी और उनके गुणगणोंकी कथा वर्णन करी, तब राजा अति प्रसन्न होकर गुरु वसिष्ठजी और ब्राह्मणोंके साथ महल पधारे ॥ ३५१ ॥

जो बशिष्ठ अनुशासन दीन्हा ॥ लोकबेदबिधि सादर कीन्हा ॥ १ ॥ *
भूसुरभीर देखि सबरानी ॥ सादर उठीं भाग्य बड़ जानी ॥ २ ॥ *

वसिष्ठजीने जो कुछ आज्ञा दी थी, राजाने आदरके साथ उसीके अनुसार सब लोक व वेदरीति करी ॥ १ ॥ ब्राह्मणोंकी भीड़ देखकर रानियां अपने बड़े भाग्य समझकर सबकी सब उठ खड़ी हुईं ॥ २ ॥

पाँय पखारि सकल अन्हवाये ॥ पूजि भलीबिधि भूप जेंवाये ॥ ३ ॥ *
आदर दान प्रेम परितोषे ॥ देत अशीस चले मन तोषे ॥ ४ ॥ *

राजाने सब मुनीश्वरोंके चरण धोये, स्नान करवाया, फिर अच्छी तरह पूजन करके उनको भोजन करवाया ॥ ३ ॥ फिर अनेक प्रकारके दान दे, प्रेम व आदरसे सबको प्रसन्न किया, जिससे वे मनमें प्रसन्न हो आशिष देते हुए वहांसे चले ॥ ४ ॥

बहुबिधि कीन्ह गाधिसुतपूजा ॥ नाथ मोहिँ सम धन्य न दूजा ॥ ५ ॥ ❋
कीन प्रशंसा भूपति भूरी ॥ रानिनसहित लीन पग धूरी ॥ ६ ॥ ❋

फिर राजा दशरथने अनेक प्रकारसे विश्वामित्रजीकी पूजा करी और कहा कि, हे नाथ ! मेरे जैसा बड़भाग्य दूसरा कोई नहीं है ॥ ५ ॥ राजाने विश्वामित्रजीकी बड़ी प्रशंसा करी और रानियोंके साथ उनके चरणोंकी रज शिरपर लीनी ॥ ६ ॥

भीतर भवन दीन बर बासू ॥ मन जुगवत रह नृप रनिवासू ॥ ७ ॥ ❋
पूजे गुरुपदकमल बहोरी ॥ कीन बिनय मन प्रीति न थोरी ॥ ८ ॥ ❋

महलके भीतर मुनिको सुन्दर वास दिया. तहां राजा और रानी उनके मनहींको देखते रहे ॥ ७ ॥ फिर गुरु वसिष्ठजीके चरणकमलोंकी पूजा करी और मनमें बड़ी प्रीति रखकर उनसे विनय किया ॥ ८ ॥

दोहा—बधुनसमेत कुमार सब, रानिनसहित महीश ॥ ❋
पुनि पुनि बन्दत गुरुचरण, देत अशीस मुनीश ॥ ३५२ ॥ ❋

बहुओंके साथ चारों कुँवर और रानियोंके साथ राजा इन्होंने बारंबार गुरुके चरणारविंदोंको प्रणाम किया. मुनिने पीछी आशिष दी ॥ ३५२ ॥

बिनय कीन उर अति अनुरागे ॥ सुत सम्पदा राखि सब आगे ॥ १ ॥ ❋
नेग माँगि मुनिनायक लीन्हा ॥ आशिरबाद बहुत बिधि दीन्हा ॥ २ ॥ ❋

राजा दशरथजीने पुत्र और सारी सम्पदा गुरुके आगे रख,मनमें बड़ी प्रीति लाकर गुरुसे विनती करी ॥ १ ॥ तब मुनिराजने अपना नेग मांगकर लिया और अनेक प्रकारके आशीर्वाद दिये ॥ २ ॥

उर धरि रामहिँ सीयसमेता ॥ हर्षि कीन्ह गुरु गमन निकेता ॥ ३ ॥ ❋
बिप्र बधू कुल वृद्ध बुलाई ॥ चीर चारु भूषण पहिराई ॥ ४ ॥ ❋

गुरु वसिष्ठजी, राम औ सीताको मनमें रखकर हर्षित हो, अपने स्थानको पधारे ॥ ३ ॥ फिर रानियोंने ब्राह्मणोंकी स्त्रियोंको और कुलकी बूढ़ी स्त्रियोंको बुलाकर उसको सुन्दर वस्त्र और आभूषण पहिराये ॥ ४ ॥

बहुरि बुलाइ सुआसिनि लीन्हा ॥ रुचि बिचारि पहिरावनि दीन्हा ॥५॥ ❋
नेगी नेग योग सब लेहीं ॥ रुचि अनुरूप भूप मणि देहीं ॥ ६ ॥ ❋

फिर सुवासिनियोंको बुलाकर उनकी रुचिके अनुसार पहिरावनी दीनी ॥ ५ ॥ सब नेगवाले लोग अपने २ योग्य नेग लेते हैं और राजा उनकी इच्छानुसार नेग देते है ॥ ६ ॥

प्रिय पाहुने पूज्य जे जाने ॥ भूपति भलीभांति सनमाने ॥ ७ ॥ ❋
देव देखि रघुबीरबिबाहू ॥ बर्षि प्रसून प्रशंसि उछाहू ॥ ८ ॥ ❋

राजाने जिनको पूजनेके योग्य और अपने प्यारे पाहुने समझे, उनका अच्छीतरह सत्कार किया ॥ ७ ॥ देवतालोग रामचंद्रजीके ब्याहके उत्सवको देखकर फूल बरसाते है और उत्सवकी प्रशंसा करते है ॥ ८ ॥

दोहा–चले निशान बजाइ सुर, निज निज पुर सुख पाइ ॥ ❋
कहत परस्पर रामयश, हर्ष न हृदय समाइ ॥ ३५३ ॥ ❋

देवतालोग परस्पर प्रभुका यश कहतेहुए सुख पाकर, निशान बजाकर अपने २ नगरको रवाने हुए. उससमय वे ऐसे आनंदमग्न थे कि, उनके हृदयमें आनंदका समाना कठिन हो गयाथा ॥ ३५३ ॥

सब बिधि सबहिँ मुदित नरनाहू ॥ रहा हृदय भरि पूरि उछाहू ॥ १ ॥ ❋
जहँ रनिवास तहाँ पगु धारे ॥ सहित बधूटिन कुँवर निहारे ॥ २ ॥ ❋

राजाने सब लोगोंको सब प्रकारसे प्रसन्न किया और आपके हृदयमेभी भरपूर उच्छाह छागया ॥ १ ॥ राजा आनंदित होकर रनवासमें गया. वहां बहुओंके साथ अपने कुँवरोंको देख ॥ २ ॥

लिये गोद करि मोदसमेता ॥ को कहिसकै उभय सुख जेता ॥ ३ ॥ ❋
बधू सप्रेम गोद बैठारी ॥ बार बार हिय हर्षि दुलारी ॥ ४ ॥ ❋

बड़े आनन्दके साथ उनको अपनी गोदीमें लिया, उस समय दशरथजीको जितना सुख हुआ उसे कौन कह सक्ता है ? ॥ ३ ॥ राजाने प्रेमके साथ दुलहिनोंको गोदीमे बिठाया और बारंबार मनमें खुश होकर उनको दुलारी यानी प्यार किया ॥ ४ ॥

देखि समाज मुदित रनिवासू ॥ सबके उर आनन्दबिलासू ॥ ५ ॥ ❋
कह्यो भूप जिमि भयउ बिबाहू ॥ सुनि सुनि हर्ष होत सबकाहू ॥ ६ ॥ ❋

यह समाज देखकर रानियां ऐसी प्रसन्न हुईं कि, मानों आनन्दने उनके हृदयमें आकर निबासही कर दिया है ॥ ५ ॥ रानियोंकी ऐसी प्रेमकी दशा देखकर राजाने जिसतरह विवाह हुआ था, वह सब कथा कही. उसे सुन सुनकर सब किसीको परम आनन्द होता था ॥ ६ ॥

जनकराजगुण शील बड़ाई ॥ प्रीति रीति सम्पदा सुहाई ॥ ७ ॥ ❋
बहु बिधि भूप भाट जिमि बरणी ॥ रानी सब प्रमुदित सुनि करणी ॥ ८ ॥

जनक राजाके गुण, शील, बड़ाई, प्रीतिकी रीति और सुन्दर सम्पदाका ॥ ७ ॥ दशरथजीने ऐसे अनेक प्रकारसे वर्णन किया कि, जैसे भाट लोग किया करते है. जनक राजाकी ऐसी अच्छी करतूति सुनकर सब रानियां बड़ी प्रसन्न हुईं ॥ ८ ॥

दोहा–सुतनसमेत नहाइ नृप, बोलि लिये गुरु ज्ञाति ॥ ❋
भोजन कीन्ह अनेकबिधि, घरी पांच गइ राति ॥ ३५४ ॥ ❋

राजा दशरथने पुत्रोंके साथ स्नान कर, गुरु और ज्ञातिके लोगोंको बुलाकर, अनेक प्रकारसे भोजन किया. इतनेमें पांच घड़ी रात बीत गयी ॥ ३५४ ॥

मंगलगान करहिँ बर भामिनि ॥ भइ सुखमूल मनोहर यामिनि ॥ १ ॥ ❋
अँचै पान सबकाहुन पाये ॥ स्रग सुगन्धभूषित छबि छाये ॥ २ ॥ ❋

सुन्दर स्त्रियां मंगल गीत गा रही हैं, जिससे वह मनोहर रात सुखकी मूल हो रही है ॥ १ ॥ आचमन करके सब लोगोंने पान खाये है, तदनन्तर फूलोंकी मालायें पहना कर, अतर लगाया गया है. सब लोग पहने हुए है जिससे सुन्दर छवि छा रही है ॥ २ ॥

रामहिँ देखि रजायसु पाई ॥ निज निज भवन चले शिर नाई ॥ ३ ॥ *
प्रेम प्रमोद बिनोद बड़ाई ॥ समय समाज मनोहरताई ॥ ४ ॥ *

फिर रामचन्द्रजीका दर्शन कर, राजाकी आज्ञा पा, दंडवत् कर सब लोग अपने२ घरोंको सिधारे ॥ ३ ॥ उस समयका प्रेम, परमानन्द, विनोद, बड़ाई, समय, समाज और मनोहरता ॥ ४ ॥

कहि न सकहिँ शत शारद शेषू ॥ बेद बिरंचि महेश गणेशू ॥ ५ ॥ *
सो मैं कहौं कवनबिधि बरणी ॥ भूमिनाग शिर धरै कि धरणी ॥ ६ ॥ *

ये ऐसे बड़े हुए थे कि,जिनको खुद वेद, शारदा, शेषजी, शास्त्र, ब्रह्माजी, महादेव और गणपति भी नहीं कह सक्ते; तब दूसरेकी तो कौन चलाई ! ॥ ५ ॥ उसको मैं वर्णन करके कैसे कह सकूं. क्या पृथ्वीपर फिरनेवाला क्षुद्र सांप पृथ्वीको अपने शिरपर उठा सक्ता है ? ॥ ६ ॥

नृप सब भांति सबहिँ सनमानी ॥ कहि मृदु बचन बुलाई रानी ॥ ७ ॥ *
बधु लरिकिनी परघर आई ॥ राखेहु नयन पलककी नाई ॥ ८ ॥ *

राजाने सबका सब प्रकारसे सत्कार करके अपनी रानियोंको बुलाकर कोमल वाणीसे कहा कि- ॥ ७ ॥ ये सब बहुआं लड़कियां है और दूसरे घर आई है. इसलिये तुम इनको आंखको जैसे पलक रखती है ऐसे रखना ॥ ८ ॥

दोहा-लरिका श्रमित उनींदबश, शयन करावहु जाइ ॥ *
अस कहि गे बिश्रामगृह, रामचरण चित लाइ ॥ ३५५ ॥ *

और ये लड़केभी थके हुए है और उनींदे है, इसलिये जाकर इनको शयन कराओ. दशरथजी ऐसे कह रामचंद्रजीके चरणोंमें चित्त लगाकर अपने विश्रामघरमें पधारे ॥ ३५५ ॥

भूपवचन सुनि सहजसुहाये ॥ जटित कनकमणि पलँग डसाये ॥ १ ॥ *
सुभग सुरभिपयफेनुसमाना ॥ कोमल कलित सुपेदी नाना ॥ २ ॥ *

रानियोंने स्वभावसे रमणीय राजाके बचन सुनकर मणियोंके जड़ाऊ सोनेके पलँग बिछवाये ॥ १ ॥ उन पलँगोंपर अति सुन्दर कोमल मनोहर और कामधेनुके दूधके फेनके सदृश सुफेद बिछावती करवाई ॥ २ ॥

उपबरहन बर बरणि न जाहीं ॥ स्रग सुगन्ध मणि मन्दिरमाहीं ॥ ३ ॥ *
रतन दीप सुठि चारु चँदोवा ॥ कहत न बनै जान जेहिँ जोवा ॥ ४ ॥ *

उनपर तकिये ऐसे सुन्दर है कि, जिनका हम वर्णन नहीं कर सक्ते. और मणिमय घरके अन्दर फूलोंकी माला और अतरकी सुगन्ध छा रही है ॥ ३ ॥ सुन्दर रत्नोंके दीपक हैं, सुन्दर चँदवा बँधा हुआ है. ऐसी तैयारी बनी कि, कुछ कहनेमें नहीं आ सक्ती. जिसने देखी है वही उसको जान सक्ता है ॥ ४ ॥

सेज रुचिर रचि राम उठाये ॥ प्रेमसमेत पलँग पौढ़ाये ॥ ५ ॥ ❀
आज्ञा पुनि भाइनकहँ दीन्ही ॥ निज निज सेज शयन तिन कीन्ही ॥ ६ ॥

ऐसी सुन्दर सेज तैयार कर रामको उठाय माताने प्रेमके साथ प्रभुको पलँगपर पौढ़ाया ॥ ५ ॥ फिर प्रभुने भाइयोंको आज्ञा दी, तब वेभी अपने २ पलँगोंपर जा सोये ॥ ६ ॥

देखि श्याम मृदु मंजुल गाता ॥ कहहिँ सप्रेम बचन सब माता ॥ ७ ॥ ❀
मारग जात भयानक भारी ॥ केहि विधि तात ताड़का मारी ॥ ८ ॥ ❀

प्रभुका सुन्दर कोमल श्याम शरीर देखकर सब मातायें प्रेमसे ये बचन कहने लगीं कि-॥ ७ ॥ हे तात ! आपने जाते समय महाभयावनी ताड़काको कैसे मारी ? ॥ ८ ॥

दोहा--घोर निशाचर बिकट भट, समर गनैं नहिँ काहु ॥ ❀
मारे सहित सहाय किमि, खल मारीच सुबाहु ॥ ३५६ ॥ ❀

और जो संग्राममें किसीको कुछभी नहीं समझते ऐसे महाघोर विकट दुष्ट राक्षस मारीच और सुबाहुको सेनाके साथ आपने कैसे मारा ? ॥ ३५६ ॥

मुनिप्रसादबल तात तुम्हारे ॥ ईश अनेक करबरे टारे ॥ १ ॥ ❀
मखरखवारी करि दुहुँ भाई ॥ गुरुप्रसाद सब बिद्या पाई ॥ २ ॥ ❀

कौसल्या कहती है कि-हे तात ! मुनिकी कृपाके बलसे प्रभुने आपके तमाम विघ्न टाल दिये हैं ॥ १ ॥ तुम दोनों भाइयोंने यज्ञकी रक्षा करके गुरुकृपासेही सब विद्यायें पायी है ॥ २ ॥

मुनितिय तरी लगत पगधूरी ॥ कीरति रही भुवन भरि पूरी ॥ ३ ॥ ❀
कमठ पीठ पबि कूट कठोरा ॥ नृपसमाजमहँ शिवधनु तोरा ॥ ४ ॥ ❀

और आपके चरणरजका स्पर्श होतेही जो मुनि गौतम ऋषिकी स्त्री अहल्याका उद्धार हुआ कि, जो सुख्याति तमाम त्रिलोकीमें व्याप रही है, वहभी मुनिकी कृपाकाही प्रताप है ॥ ३ ॥ कच्छपकी पीठ, वे वज्रकूटके सदृश कठोर महादेवजीका धनुष जो आपने राजाओंकी सभाके बीचमें तोड़ा ॥ ४ ॥

बिश्व बिजय यश जानकि पाई ॥ आये भवन ब्याहि सब भाई ॥ ५ ॥ ❀
सकल अमानुष कर्म हमारे ॥ केवल कौशिककृपा सुधारे ॥ ६ ॥ ❀

जिसके तोड़नेसे विश्वको विजय करनेके यशके साथ आपको सीता मिली है और तुम सब भाई जो ब्याह कर घर आये हो ॥ ५ ॥ यहभी मुनिकी कृपाकाही प्रभाव है. ऐसे २ मनुष्योंसे न बनसके जैसे ये सब हमारे काम केवल मिश्वामित्रजीकी कृपासेही सुधरे है ॥ ६ ॥

आजु सुफल जग जन्म हमारे ॥ देखि तात बिधुबदन तुम्हारे ॥ ७ ॥ ❀
जे दिन गये तुमहिँ बिनु देखे ॥ ते बिरंचि जनि पावहिँ लेखे ॥ ८ ॥ ❀

हे तात ! आज तुम्हारे मुखचन्द्रके देखनेसे जगतमें हमारा जन्म सफल हुआ है ॥ ७ ॥ जो दिन तुमको बिना देखे गये हैं. विधाता उन दिनोंको हमारी आयुके लेखेमें न गिने ॥ ८ ॥

दोहा-राम प्रतोषी मातु सब, कहि बिनीत बर बैन ॥ ❀
सुमिरि शंभु गुरु बिप्र पद, किये नींदबश नैन ॥ ३५७ ॥ ❀

माताओंके ऐसे प्रिय वचन सुनकर रामचन्द्रजीने सुन्दर विनीत वचन कहकर सब माताओंको प्रसन्न किया. फिर महादेवजी, गुरु और ब्राह्मणोंके चरणकमलोंका स्मरण करके अपने नेत्रोंको नींदवश किये ॥ ३५७ ॥

नींदहु बदन सोह सुठि लोना ॥ मनहुँ सांझ सरसीरुह सोना ॥ १ ॥ ❋
घर घर करहिँ जागरण नारी ॥ देहिँ परस्पर मंगलगारी ॥ २ ॥ ❋

नींदमेंभी प्रभुका वह सलोना सुन्दर मुख कैसे शोभा देता है कि, मानों सांझके समय संकुचित कमल शोभायमान हो रहा है ॥ १ ॥ घर घरमे स्त्रियां जागरण करती हैं और परस्पर मंगलमय गारी देती है ॥ २ ॥

पुरी बिराजति राजत रजनी ॥ रानी कहहिँ बिलोकहु सजनी ॥ ३ ॥ ❋
सुन्दरि बधू सासु लै सोई ॥ फणिपति जनु शिरमणि उर गोई ॥ ४ ॥ ❋

उससे अयोध्या पुरी और रात्रि दोनों शोभायमान हो रही है, तिनको देखकर रानियां कहती हैं कि–हे सजनी! देख, रात्रि और नगरी कैसी अच्छी शोभा देती है ॥ ३ ॥ और नगरकी स्त्रियां कहती है कि–सासुआं अपनी सुन्दर बहुओको लेकर कैसे सोयी है कि मानों नागिनियोंने अपने शिरकी मणियां अपने हृदयके भीतर छिपा ली है ॥ ४ ॥

प्रात पुनीत काल प्रभु जागे ॥ अरुणचूड़ बर बोलन लागे ॥ ५ ॥ ❋
बंदी मागध गुणगण गाये ॥ पुरजन द्वार जुहारन आये ॥ ६ ॥ ❋

जब प्रातःकालमें सुन्दर कुक्कुट (मुर्गे) बोलने लगे, तब पवित्र समयमें रामचन्द्रजी जागे ॥ ५ ॥ उस समय बंदी और मागध लोग गुण गाने लगे. पुरके लोग जुहार करनेको डेवढ़ीपर आये ॥ ६ ॥

बन्दि बिप्र सुर गुरु पितु माता ॥ पाइ अशीस मुदित सब भ्राता ॥ ७ ॥ ❋
जननिन सादर बदन निहारे ॥ भूपतिसंग द्वार पगु धारे ॥ ८ ॥ ❋

फिर सब भाइयोंने ब्राह्मण, देवता, गुरु, माता और पिता, इनको नमस्कार करके उनसे आनंदपूर्वक आशिष ली ॥ ७ ॥ माताओंने अति आदरके साथ अपने पुत्रोंके मुखकमल देखे तब चारों भाई पिताके संग द्वारपर पधारे ॥ ८ ॥

दोहा–कीन्ह शौच सब सहजशुचि, सरित पुनीत नहाइ ॥ ❋
प्रातक्रिया करि तातपहँ, आये चारिउ भाइ ॥ ३५८ ॥ ❋

सहजपावन इन चारों भाइयोंने शौच करके पवित्र नदी यानी सरयूमें स्नान किया. तदनन्तर अपने प्रातःकालके नित्य नेमसे पहुँचकर चारों भाई पिताके निकट आये ॥ ३५८ ॥

भूप बिलोकि लिये उर लाई ॥ बैठे हर्षि रजायसु पाई ॥ १ ॥ ❋
देखि राम सब सभा जुड़ानी ॥ लोचनलाभ अवधि अनुमानी ॥ २ ॥ ❋

राजाने उनको देखतेही अपनी छातीसे लगाये. फिर राजाकी आज्ञा पाकर वे बड़े हर्षके साथ राजाके समीप बैठे ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीके दर्शन कर सब सभा प्रसन्न हुई और अनुमान किया कि, नेत्रोंके लाभकी जो परमावधि कहते हैं सो येही है ॥ २ ॥

पुनि बसिष्ठ मुनि कौशिक आये ॥ आसन सुभग मुनिन बैठाये ॥ ३ ॥❋
सुतन समेत पूजि पद लागे ॥ निरखि राम दोउ उर अनुरागे ॥ ४ ॥ ❋

फिर वहां वसिष्ठजी और विश्वामित्रजी मुनि आये, तिन्हें राजाने सुन्दर आसन देकर बिठाये॥३॥ फिर पुत्रोंके साथ राजाने उनकी पूजा करी. पाँवोंमें परे. तहां रामचन्द्रजीको देखकर दोनों मुनि मनमें बड़े प्रसन्न हुए ॥ ४ ॥

कहहिँ बसिष्ठ धर्म इतिहासा ॥ सुनहिँ महीप सहित रनिवासा ॥ ५ ॥ ❋
मुनि मन अगम गाधिसुतकरणी ॥ मुदित बशिष्ठ बिपुल बिधि बरणी ॥६॥

तहां बसिष्ठजी धर्मसंबंधी इतिहास कहते है. राजा और रानी ध्यान देकर सुनते है ॥ ५ ॥ जिसको मनभी नहीं पहुंच सके ऐसी मुनि विश्वामित्रजीकी करतूति वसिष्ठजीने बड़े आनंदके साथ अनेक प्रकारसे विस्तारपूर्वक राजासे कही ॥ ६ ॥

बोले बामदेव सब साँची ॥ कीरति कलित लोक तिहुँ माँची ॥ ७ ॥ ❋
सुनि आनन्द भयउ सबकाहू ॥ राम लषण उर अधिक उछाहू ॥ ८ ॥ ❋

उस समय वामदेव ऋषि बोले यह बात सब सच्ची है; क्योंकि इनकी सुन्दर कीर्ति त्रिलोकीमें फैल रही है ॥ ७ ॥ विश्वामित्रजीका चरित्र सुनकर सबकोही परम आनन्द हुआ. तत्रापि राम लक्ष्मणके हृदयमें तो सबसेही अधिक आनन्द हुआ ॥ ८ ॥

दोहा-मंगल मोद उछाह नित, जाहिँ दिवस यहि भांति ॥ ❋
उमँगी अवध अनंद भरि, अधिक अधिक अधिकाति ॥ ३५९॥ ❋

ऐसे नितनये मंगल, आनन्द और उत्सव हो रहे हैं. नित्य प्रति ऐसे आनन्दसे दिन गुजर रहे है. अवध आनन्दसे भरकर ऐसी उमगी कि, प्रतिदिन अधिकसे अधिक बढ़तीही रही ॥ ३५९ ॥

सुदिन साधि करकंकण छोरे ॥ मंगल मोद बिनोद न थोरे ॥ १ ॥ ❋
नित नव सुख सुर देखि सिहाहीं ॥ अवध जन्म याचहिँ बिधिपाहीं॥२॥❋

अच्छा मुहूर्त देखकर कंकण छोरे उस वक्त मंगल, आनंद और विनोद कुछ कम नहीं रहा ॥ १ ॥ यद्यपि देवताओंको स्वर्गमें सब प्रकारके सुख उपस्थित हैं, तौभी अवधके नितनये सुखको देखकर सिहाने लगे और विधातासे प्रार्थना करने लगे कि, हे विधाता ! हमको अवधमें जन्म दे ॥ २ ॥

विश्वामित्र चलन नित चहहीं ॥ राम सप्रेम बिनयबश रहहीं ॥ ३ ॥ ❋
दिन दिन सद्गुण भूपति भाऊ ॥ देखि सराह महामुनि राऊ ॥ ४ ॥ ❋

यद्यपि विश्वामित्रजी नित्य जाना चाहते हैं, तथापि प्रभुके प्रेम और विनयके वश होकर ठहर रहे हैं ॥ ३ ॥ हमेशा राजाके अच्छे सद्गुन और उसका भाव देखकर महामुनि विश्वामित्रजी राजाकी प्रशंसा करते हैं ॥ ४ ॥

माँगत बिदा राउ अनुरागे ॥ सुतनसमेत ठाढ़ भै आगे ॥ ५ ॥ ❋
नाथ सकल सम्पदा तुम्हारी ॥ मैं सेवक समेत सुत नारी ॥ ६ ॥ ❋

जब विश्वामित्रजीने राजाकी स्तुति करके राजासे बिदा मांगी, तब राजा पुत्रोंके साथ प्रीतिपूर्वक उनके सामने खड़ा हुआ ॥ ५ ॥ और बोला कि–हे नाथ ! यह सब सम्पदा आपकीही है. मै तो पुत्र और स्त्रियोंके साथ आपका सेवक हूं ॥ ६ ॥

करब सदा लरिकनपर छोहू ॥ दरशन देत रहब मुनि मोहू ॥ ७ ॥ ❋
अस कहि राउ सहित सुत रानी ॥ परेउ चरण मुख आव न बानी ॥८॥ ❋

इसलिये हे प्रभु ! लड़कोंपर सदा दयाभाव रखना और मुझकोभी हे मुनि ! दर्शन देते रहना ॥ ७ ॥ ऐसे कहकर रानियां और पुत्रोंके साथ राजा मुनिके चरणोंपर पड़ा यानी दंडवत् की. उस समय प्रेमके मारे मुखसे वाणी न आ सकी यानी कुछ कह नहीं सके ॥ ८ ॥

दीन्ह अशीस बिप्र बहु भांती ॥ चले न प्रीति रीति कहि जाती ॥ ९ ॥ ❋
राम सप्रेम संग सब भाई ॥ आयसु पाइ फिरे पहुँचाई ॥ १० ॥ ❋

मुनि विश्वामित्रजीने अनेक प्रकारके आशीर्वाद दिये और रवाने हुए. उस समय जो उन्होंने प्रीति की रीति दिखायी वह किसी कदर कही नहीं जा सकती ॥ ९ ॥ सब भाइयोंके साथ प्रभु उन्हें पहुंचवन गये थे, सो प्रेमके साथ उनकी आज्ञा पाकर पहुँचाकर पीछे लौटे ॥ १० ॥

दोहा–रामरूप भूपतिभगति, ब्याहउछाह अनन्द ॥ ❋
जात सराहत मनहिँ मन, मुदित गाधिकुलचन्द ॥ ३६० ॥ ❋

गाधिकुलके चंद्र श्रीविश्वामित्रजी रामचन्द्रजीका स्वरूप, राजाकी भक्ति, ब्याहका उत्सव और आनन्द इनकी मनही मनमे सराह करते हुए आनन्दपूर्वक चले ॥ ३६० ॥

वामदेव अरु कुलगुरु ज्ञानी ॥ बहुरि गाधिसुत कथा बखानी ॥ १ ॥ ❋
सुनि सुनि सुयश मनहिँ मन राऊ ॥ बरणत आपन पुण्यप्रभाऊ ॥ २ ॥ ❋

रघुकुलके कुलगुरु महाज्ञानी वसिष्ठ और वामदेव ऋषिने विश्वामित्रजीकी कथा फिर कही ॥ १ ॥ सो विश्वामित्रजीका सुयश सुनकर राजा दशरथजी मनही मनमें अपने पुण्यके प्रभावकी प्रशंसा करने लगे ॥ २ ॥

बहुरे लोग रजायसु भयऊ ॥ सुतनसमेत नृपति गृह गयऊ ॥ ३ ॥ ❋
जहँ तहँ रामब्याह यश गावा ॥ सुयश पुनीत लोक तिहुँछावा ॥ ४ ॥ ❋

फिर लोगोंको घर जानेकी आज्ञा दे आप भी पुत्रोंसहित राजभवन पधारे ॥ ३ ॥ जहां तहां रामचन्द्रजीके ब्याहका यश गाया जाता है. जिससे राजा दशरथजीकी सुख्याति तीनों लोकोंमें छा गयी है ॥ ४ ॥

आये ब्याहि राम घर जबते ॥ बसे अनन्द अवध सब तबते ॥ ५ ॥ ❋
प्रभु बिबाह जस भयउ उछाहा ॥ सकहिँ न बरणि गिरा अहिनाहा ॥ ६ ॥

जबसे प्रभु ब्याह कर घर पधारे तबसे सब आनन्दोंने आकर अवधके भीतर निवास कर दिया ॥ ५ ॥ कवि कहता है कि–प्रभुके विवाहका जैसा उत्सव हुआ उसको स्वयं शारदा और शेषजी भी कह नहीं सकते. तब आन पुरुषकी कौन सामर्थ्य ? ॥ ६ ॥

कविकुलजीवन पावन जानी ॥ राम सीय यश मंगलखानी ॥ ७ ॥ ❀
तेहिते मैं कछु कहा बखानी ॥ करण पुनीत हेतु निजबानी ॥ ८ ॥ ❀

यद्यपि ऐसे है तथापि श्रीरामचन्द्रजूका और सीताजूका सुयश मंगलकी खानि परम पवित्र और कविकुलका तौ साक्षात् जीवन ही है ॥ ७ ॥ इस बातको जानकर मैंने केवल मेरी वाणी पवित्र करनेके लिये यह चरित्र कुछ वर्णन करके कहा है. कविपनके अभिमानसे नहीं कहा है ॥ ८ ॥

छंद–निजगिरा पावन करण कारण रामयश तुलसी कह्यो ॥ ❀
रघुबीरचरित अपार बारिधि पार कबि कवने लह्यो ॥ ❀
उपबीत ब्याह उछाह मंगल सुनहिँ सादर गावहीं ॥ ❀
बैदेहि रामप्रसादते जन सर्बदा सुख पावहीं ॥ ६० ॥ ❀

तुलसीदासजी कहते हैं कि–मैंने जो यह प्रभुके यशका वर्णन किया है, सो केवल मेरी वाणीको पवित्र करनेके वास्ते किया है, अन्य अभिप्रायसे नहीं; क्योंकि रामचन्द्रजीके चरित्ररूप अपार समुद्रको वर्णन करके कौन कवि पार हो सक्ता है ? सो जो मनुष्य प्रभुके उपवीततक जन्ममहोत्सवको तथा ब्याहके मंगलमय उत्सवको आदरके साथ गाते है, वे लोग सीता और रामकी दयासे सदा सुख पाते है ॥ ६० ॥

सुनि गाय कहौ गिरीशकन्या धन्य अधिकारी सही ॥ ❀
नित प्रीति अनुपम सुनत हरिगुण भक्ति अनुपम लेतही ॥ ❀
रघुबीरपद अनुराग जल लोभाग्नि बेगि बुझावई ॥ ❀
यह जानि तुलसीदास मन क्रम बचन हरि गुण गावई ॥ ६१ ॥ ❀

महादेवजी कहते है कि–हे पार्वती ! जो मनुष्य वक्ता मिलनेपर प्रभुके चरित्र सुनते है और श्रोता मिलनेपर कहते है और आप इकट्ठे बैठे रहते है उस वक्त गाते रहते है वेही तौ बड़-भाग्य है और वेही भक्तिके सच्चे अधिकारी है तथा जो मनुष्य हमेशा अनुपम प्रीतिसे हरिभगवानके गुण सदा सुनते रहते है वेही प्रभुकी अनुपम भक्तिको पाते है और वेही प्रभुके चरणसंबंधी प्रेमरूप जलसे लोभरूप अग्निको तुरंत बुझा देते है इसी बातको जानकर यह प्रभुका चेरा तुलसीदास मन, कर्म और बचनसे सदा हरिके गुण गाता रहता है ॥ ६१ ॥

दोहा–कठिनकालमलग्रसित तनु, साधन कछुक न होइ ॥ ❀
यह बिचारि बिश्वास करि, हरि सुमिरे बुधि सोई ॥ ३६१ ॥ ❀

यह शरीर तौ महादारुण कलिकालके मैलोंसे ग्रसित हो रहा है और न कोई शरीरको शुद्ध करने-वाला साधन बनता है. अरे मन ! ऐसा विचार कर प्रभुका भरोसा रख, जो मनुष्य प्रभुका स्मरण करता है वही मनुष्य ज्ञानको पा सकता है ॥ ३६१ ॥

सोरठा–मन हरिपद अनुराग, करहु त्यागि नाना कपट ॥ ❀
महामोहनिशि जाग, सोवत बीते काल बहु ॥ ३६ ॥ ❀

सियरघुबीरबिबाह, जे सप्रेम सादर सुनहिँ ॥ ❋
तिनकहँ सदा उछाह, मंगलायतन रामयश ॥ ३७ ॥ ❋

इति श्रीरामचरित्रमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमलविज्ञान-
वैराग्यसन्तोषसम्पादनो नाम श्रीगोस्वामितुलसीदासजी-
कृतबालकांडः प्रथमः सोपानः समाप्तः ॥

हे मन ! अनेक प्रकारके कपटोंको छांडकर प्रभुके चरणकमलोंमे प्रीति कर; अरे मूढ़ ! तेरे महा-मोहरूप रात्रिमें सोते बहुत काल व्यतीत हो गया है, सो अब तो जाग ॥ ३६ ॥ जो मनुष्य आदरस-हित प्रेमपूर्वक सीतारामके विवाहको सुनते है, उनके सदा उत्सव बने रहते है; क्योंकि रामचन्द्रजीका यश मंगलका धामही है ॥ ३७ ॥

इति श्रीरामचरित्रमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमलविज्ञानवैराग्य-
संतोषसम्पादननामकस्य श्रीगोस्वामितुलसीदासकृतबालकांडस्य
रामश्यामकृतभाषायां प्रथमः सोपानः ॥ १ ॥

दोहा–जासु उदय भ्रमतमनिकर, रहत न एकौ ठौरे ॥
भज मन शठ तेहिं कपट तज, हरिप्रसाद नहिँ और ॥ १ ॥

राम राम जप रे सजन, सजन न ताबिनु तोर ॥
रामकर्ण करु भज प्रभू, जाइहि काल मरोर ॥ २ ॥

इदं पुस्तकं भगीरथात्मजहरिप्रसादशर्मणा
मोहमयीराजधान्यां "गणपत कृष्णाजी"
मुद्रणालये मुद्रापितम्।

[मुंबई]

॥श्रीः॥

श्रीरमारमणो विजयते।

अथ

श्रीयुतगोस्वामितुलसीदासकृत-

रामायणम्।

अयोध्याकाण्डम्।

पण्डित-रामश्यामविरचित

तत्त्वदीपिकाटीकासहित।

जिसे

पण्डित-रामभद्रजीने शुद्ध किया.

वही

गौड़ब्राह्मण हरिप्रसाद भगीरथजीने

बम्बईमें

" गणपत कृष्णाजी " छापखानेमें छपवायकर प्रसिद्ध किया.

शके १८२६. सवत् १९६०. सन १९०४.

श्रीरामपंचायतनम्.

अयोध्याकाण्डम् ।

चौपाई-द्वितिय अयोध्याकाण्ड प्रकाशा । पितुआज्ञारघुवर बनवासा ॥
श्रीरामायण स्वर्गनिसेनी । भक्तजननकहँ आनँददेनी ॥ १ ॥

चौपाई-ऊँच नीच जेते नर नारी । श्रीरामायण सबकहँ प्यारी ॥
रामायणोसों नेह लगावैं । अधम अपत्य सो चित सुत पावैं ॥२॥

हरिप्रसाद भगीरथजीका, संस्कृत और भाषा पुस्तकालय.
ठिकाना-कालकादेवीरोड़, रामवाड़ी-मुंबई.

॥ श्रीगजानन ॥

श्रीतुलसीदासकृतरामायणम्

॥ ❀ अयोध्याकांडप्रारम्भः ❀ ॥

दोहा—सीताराम विलास करि, पुनि बन कीन पयान ॥
राजगमन सुरराजपुर, अवधकाण्डमें जान ॥ १ ॥

वामांके च विभाति भूधरसुता देवापगा मस्तके भाले बालविधुर्गले च गरलं यस्योरसि व्यालराट् ॥ सोऽयं भूतिविभूषणः सुरवरः सर्वाधिपः सर्वदा शर्वः सर्वगतः शिवः शशिनिभः श्रीशंकरः पातु माम् ॥ १ ॥ प्रसन्नतां यो न गतोऽभिषेकतस्तथा न मम्लौ वनवासदुःखतः॥ मुखाम्बुजं श्रीरघुनन्दनस्य मे सदास्तु तं मंजुलमंगलप्रदम् ॥२॥ नीलाम्बुजश्यामलकोमलांगं सीतासमारोपितवामभागम् ॥ पाणौ महासायकचारुचापं नमामि रामं रघुवंशनाथम् ॥ ३ ॥

यह अयोध्याकांड रामचरितमानसका दूसरा सोपान है. इस कांडमें रामके राजतिलकसे ले भरतके पीछे नंदिग्राम आनेतककी कथा है. इसकी कविता कुछ कठिन विशेष है. गोसांईजी द्वितीय सोपानके आरंभमें महादेवजीके वर्णनपूर्वक आशीरात्मक मंगल करते है. श्री कहे अणिमादि अष्टसिद्धि और सर्वैश्वर्य, तद्विशिष्ट सुखकारी श्रीशिवजी मेरी सदा सर्वदा रक्षा करो. कैसे है शिवजी कि, जिनके बाएं अंक (गोद) विषे तौ पार्वतीजी विराजमान है और गंगाजी शिरपर शोभायमान है. ललाटपटलमें बालचंद्र अर्थात् द्वितीयाका चंद्रमा और कंठमें गरल कहे विष और वक्षःस्थलमें नागराज विरजमान है. तथा जिनके सर्व अंगविषे भस्म रम रही है. सोही आभूषण है. और चंद्रमाके सदृश गौर उज्वल जिनके शरीरकी कांति है, वे सर्वव्यापक देवताओंमे श्रेष्ठ और सब देवताओंके स्वामी व सबके संहार करनहारे श्रीशिवजी हमारा पालन करो ॥ १ ॥ श्रीरामचन्द्रजीका मुखारविंद हमे सदा परम मंगल देता रहो. कैसा है वह मुखारविंद कि, जो राज्याभिषेकके सुखसे तौ प्रफुल्लित और प्रसन्न नहीं हुआ था. और वनवासके दुःखसे जो म्लान नहीं हुआ था. वो सब जगत्से स्तुति किया जाता प्रभुका मुख हमारा कल्याण करै ॥ २ ॥ जिनका नीलकमलके सदृश कोमल श्यामल शरीर है, जिनके बाएं भागमें सीताजी विराज रही है, जिनके हाथमें बड़े बड़े बाण और सुन्दर धनुष हैं, उन रघुकुलपति श्रीरामचन्द्रजीको मैं प्रणमा करता हूं ॥ ३ ॥

दोहा—श्रीगुरुचरणसरोजरज, निजमनमुकुर सुधारि ॥ ❀
बरणौं रघुबर बिमल यश, जो दायक फल चारि ॥ १ ॥

श्रीगुरुदेवके चरणकमलकी रजसे मेरे मनरूप दर्पणको स्वच्छ करके मैं प्रभुके निर्मल यशको वर्णन करता हूं. जो चारों फल (धर्म, अर्थ, काम, व मोक्ष) का देनेवाला है ॥ १ ॥

जबते राम ब्याहि घर आये ॥ नित नव मंगल मोद बधाये ॥ १ ॥ ❋
भुवन चारि दश भूधर भारी ॥ सुकृत मेघ बरषहिँ सुख बारी ॥ २ ॥ ❋

जबसे रामचन्द्रजी व्याह कर घरपर आये, तबसे वहां नितनये मंगल आनंद और बधाई होने लगीं ॥ १ ॥ चौदह लोकरूपी पर्वतोंपर सुकृतरूपी बादल सुखरूपी जल खूब बरसने लगे (अर्थात् चौदहों लोकोंमें सुख फैल गया) ॥ २ ॥

ऋधि सिधि सम्पति नदी सुहाई ॥ उमँगि अवधअम्बुधिकहँ आई॥ ३ ॥ ❋
मणिगण पुर नर नारि सुजाती ॥ शुचि अमोल सुन्दर सब भांती ॥ ४ ॥

सो वह सुखरूपी जल पर्वतरूपी लोकोंसे सिमट २ कर नीचे उतरा, जिससे ऋद्धि, सिद्धि और संपदारूपी सुन्दर नदियां बहनेलगीं. सो वे उमँग उमँग बहतीं २ आखिर अयोध्यारूपी समुद्रमें आ मिलीं. (अर्थात् सारे संसारकी ऋद्धि,सिद्धि और संपदा सब अयोध्यामें आ गयीं) ॥ ३ ॥ समुद्रमें रत्न होते है. सो इस पुरीमें अच्छी जातिवाले जो स्त्री पुरुष है सोही मानों रत्न है. जो सब प्रकारसे साफ, अमोल और सुन्दर है ॥ ४ ॥

कहि न जाइ कछु नगर विभूती ॥ जनु इतनी विरंचिकरतूती ॥ ५ ॥ ❋
सब बिधि सब पुरलोग सुखारी ॥ रामचन्द्रमुखचन्द्र निहारी ॥ ६ ॥ ❋

उस पुरीका वैभव कुछ कहनेमें नहीं आता. वहांका वैभव देख ऐसी प्रतीति होती थी कि, मानों ब्रह्माकी करतूति इतनी ही है ॥ ५ ॥ वहांके सब लोग रामचन्द्रजीके मुखचंद्रको निहार कर सदा सब प्रकारसे सुखी रहते थे ॥ ६ ॥

मुदित मातु सब सखी सहेली ॥ फलित बिलोकि मनोरथबेली ॥ ७ ॥ ❋
राम रूप गुण शील स्वभाऊ ॥ प्रमुदित होहिँ देखि मुनिराऊ ॥ ८ ॥ ❋

रामचन्द्रजीकी माता कौसल्या और सखियां सहेलियां सब अपने मनोरथरूप बेलिको सफल हुई देखकर आनंदके मारे फूली अंग नहीं समातीं थीं ॥ ७ ॥ और मुनिलोगोंके समान जितेंद्रिय राजा दशरथजी रामचन्द्रजीका रूप, गुण, शील और स्वभाव देखकर मनमें बड़े प्रसन्न होते थे ॥ ८ ॥

दोहा— सबके उर अभिलाष अस, कहहिँ मनाइ महेश ॥ ❋
आप अछत युवराजपद, रामहिँ देहिँ नरेश ॥ २ ॥ ❋

सब लोगोंके मनमें ऐसी अभिलाषा (चाह) थी कि, राजा दशरथजी अपने बैठे २ रामको युवराजपद दे देवें तो ठीक. और इसके लिये वे लोग मनमें महादेवजीको मना कर उनसे प्रार्थनाभी करते थे ॥ २॥

(क्षेपक)

दोहा—इक दिन बिश्वाबसु तहां, कियो गान गन्धर्ब ॥
सुनि प्रसन्न व्है स्वपुर त्यहिँ, कह्यो रहन हित सर्ब ॥ १ ॥ ❋

त्यहिँ कह इन्द्रनिदेशविन, मैं न रहि सकत अन्त ॥ ❀
कह्यो केकयी बसत है, हमरे वल सुरकन्त ॥ २ ॥ ❀

एक दिन वहां विश्वावसु गंधर्वने आकर गान किया. उसका गाना सुन दशरथजी प्रसन्न हुए और सब लोगोंके हितके लिये अपने नगरमे रहनेके लिये उस गंधर्वसे कहा ॥ १ ॥ तब उसने राजासे कहा कि–राहाराज ! मैं इंद्रकी आज्ञा विना दूसरी जगह नहीं रह सकता. तब केकेयीने विश्वावसु गंधर्वसे कहा कि, हमारे बल देवतानके स्वामी इंद्रादि रहते है ॥ २ ॥

हमरे आवत रिस करत, अस तुम गये मोटाय ॥ ❀
पठई पत्रिका बाणकर, लषि नृप रहे चुपाय ॥ ३ ॥ ❀
मनमें समुझे केकयी, लिखि पठये बच बंक ॥ ❀
हमरिउ लागी घात जब, हमहूँ देब कलंक ॥ ४ ॥ ❀

तिनके पास आते तुम इतना रोष क्यों करते हो ? हां, तुम ऐसे मोटे हो गये हो ? तुमको ऐसा घमंड आगया है ? विश्वावसुको ये समाचार कह एक चिठी लिखा. केकयीने बाणके हाथ वह पत्री इंद्रके पास भेजी जिसे देखकर एक दफे तो इंद्र चुप रह गया ॥ ३ ॥ फिर वो अपने मनमें समझा कि, ये टेढ़े बचन केकयीने लिख भेजे है. कि " कभी हमारी घात लगेगी अर्थात् अवसर मिलेगा तब हमभी तुम्हें कलंक देवेंगे " ॥ ४ ॥

लिखि पठयो बिश्वावसुहिँ, कऱ्यो जो काहे भूप ॥ ❀
यह सत्योपाख्यानकी, मैं कहि कथा अनूप ॥५ ॥ ❀

ऐसे समझ, इंद्रने विश्वावसुको लिख भेजा कि–जो राजा दशरथजी कहें सो करना. यह मनोहर कथा सत्योपाख्यानमें है सो वहांसे लेकर मैंने कही है ॥ ५ ॥

(क्षेपक) यहि बिधि द्वादश बर्ष बीती ॥ एक समयकी सुनिये रीती ॥ १ ॥ ❀
केकयनृपसुत केकयनामा ॥ अवध आइ कह्यो नृपते कामा ॥ २ ॥ ❀

इसतरह बारह बरस बीत गये. अब एक दिनका हाल सुनिये ॥ १ ॥ केकयदेशके राजाके पुत्र केकय नाम भरतके मातुलने अयोध्या आकर दशरथजीसे कहा कि– ॥ २ ॥

खरमुख देश हमार उजारा ॥ त्यहि हित दीजै भरत कुमारा ॥ ३ ॥ ❀
गुरुनिदेश सुनि भरतहिँ दीन्हा ॥ केकयसुवन गमन तब कीन्हा ॥ ४ ॥ ❀

हे महाराज ! खरमुख नाम दैत्यने हमारा देश उजारदिया है. इसलिये हमें राजकुमार भरतको दीजिये ॥ ३ ॥ तब वसिष्ठजीने दशरथजीसे कहा कि–आप भरतको दे दीजिये. सो गुरुकी आज्ञा सुन दशरथजीने भरतको राजा केकयको सौंप दिया. तब भरत उसके साथ केकयदेश गया ॥ ४ ॥

बिदा होतपर राम लषण दोउ ॥ सचिव सुवन सँग सुखानन्द सोउ ॥ ५ ॥ ❀
गे कछु दूरि पठय फिरि आये ॥ सानुज भरत नगर नियराये ॥ ६ ॥ ❀

भरत रवाने हुए तब राम लक्ष्मण और सचिव (मंत्री) का पुत्र सुखानन्द ॥ ५ ॥ उनके

संग संग कुछ दूरतक गये. इधर राम लक्ष्मण और सुखानन्द भरतको भेज पीछे अयोध्याको लौटे और भरत शत्रुघ्नके साथ केकय देशके निकट पहुँचा ॥ ६ ॥

केकय चलि आगे लय गयऊ ॥ लखि आनन्द सबन सुख भयऊ ॥ ७ ॥ ❃
विप्रनते तब होम करावा ॥ खरमुख सुनत सयन लै धावा ॥ ८ ॥ ❃

केकय राजा भरतको अपने साथ ले आगे बढ़ा. तिसे देखकर सब देवताओंको परम आनंद हुआ ॥ ७ ॥ राजा केकयने जाकर ब्राह्मणोंसे यज्ञ करवाना शुरू किया. यज्ञप्रारंभके समाचार सुनतेही खरमुख राक्षस सेना ले दौड़कर आया ॥ ८ ॥

भरत समर करि मार्‍यो ताही ॥ निर्भय भये देश जस चाही ॥ ९ ॥ ❃
नेहविवश व्है मातुलकेरे ॥ रहत तहाँ सो चरित निबेरे ॥ १० ॥ ❃

भरतने युद्ध कर उसको मार, देशको जैसा चाहिये वैसा निर्भय किया ॥ ९ ॥ फिर मामाके स्नेहके वश हो भरत वहां कुछ दिन रहा. और अनेक चरित्र किये ॥ १० ॥

दोहा–वर्ष अठारहकी सिया, सत्ताइसके राम ॥ ❃
कीन्ही मन अभिलाष तब, करनोहै सुरकाम ॥ १ ॥ ❃

अठारह वर्षकी तो सीता और सत्ताईस वर्षके रामचन्द्र हुए. तब इन्होंने (रामने) मनमें चाहा कि, अपनेको देवतानका काम करना है ॥ १ ॥

(क्षेपक) अति आनंद अवधपुरबासी ॥ भ्रातनसहित देखि सुखराशी ॥ १ ॥ ❃
एक बार जानकीसमेता ॥ बैठे प्रभु निज रुचिरनिकेता ॥ २ ॥ ❃

हे पार्वती ! अयोध्यापुरीके रहनेवाले लोग सुखके धाम श्रीरामचन्द्रजीको भाइयोंके साथ देखकर बड़े आनंदमगन रहते थे ॥ १ ॥ एक समय प्रभु अपने सुन्दर महलमें सीताजीके साथ विराज रहे थे ॥ २ ॥

भुज प्रलंब उर नयन बिशाला ॥ पीत बसन तन श्याम तमाला ॥ ३ ॥ ❃
कोटि मनोज देखि छबि मोहा ॥ सीताकर चामर बर सोहा ॥ ४ ॥ ❃

कैसे है प्रभु कि, जिनकी लंबी भुजा, विशाल नेत्र और वृक्षःस्थल, पीतांबर पहने, तमालके जैसे श्याम शरीर ॥ ३ ॥ और जिनकी छबिको देखकर करोड़ों कामदेव मोहित हो जाते है, उन प्रभुके पास विराजमान सीताजीके हाथमें चमर शोभायमान हो रहा है ॥ ४ ॥

त्यहि अवसर नारद मुनि आये ॥ सुरहित लागि बिरंचि पठाये ॥ ५ ॥ ❃
तेजपुंज करतल बर बीणा ॥ हरिगुणगण गावत लय लीना ॥ ६ ॥ ❃

उस समय नारदजी वहां आये, उनको ब्रह्माजीने देवताओंके कामके लिये भेजा था ॥ ५ ॥ जो तेजके पुंज मुनि हाथमें बीणा लिये उसे छेड़, हरिभगवानके गुणगण गाते हुए उसमें लयलीन हो रहे थे ॥ ६ ॥

देखि राम सहसा उठि धाये ॥ करत दण्डवत मुनि उर लाये ॥ ७ ॥ ❃
सादर निजआसन बैठारे ॥ जनकसुता तब चरण पखारे ॥ ८ ॥ ❃

तिन्हें देख रामचन्द्रजी झट उठकर दौड़े. मुनिके सोंहीं जा दंडवत् प्रणाम किया. तब मुनिने उठाकर छातीसे लगाये ॥ ७ ॥ प्रभुने नारदजीको आदरपूर्वक अपने आसनपर बिठाया, तब सीताने मुनिके पांव पखारे ॥ ८ ॥

तेहि चरणोदक भवन सिँचावा ॥ जगपावन हरि शीश चढ़ावा ॥ ९ ॥ ❀
सुनु मुनि विषयनिरत ये प्रानी ॥ हम सारिखे देहअभिमानी ॥ १० ॥ ❀

चरणोंका जल अपने सारे घरमें छिरका और जगत्को पवित्र करनेवाले प्रभुने अपने शिरपर चढ़ाया ॥ ९ ॥ और विनती करी कि–हे मुनि ! सुनिये. जो हमारे जैसे देहाभिमानी और विषयरत प्राणी है ॥ १० ॥

तिनकहँ सतसंगति जब होई ॥ करहिँ कृपा जापर प्रभु सोई ॥ ११ ॥ ❀
ताकहँ मुनि नाहिंन भव आगे ॥ जेहि बिनुहेतु संत प्रिय लागे ॥ १२ ॥ ❀
ताते नारद मैं बड़भागी ॥ यद्यपि गृह कुटुम्बअनुरागी ॥ १३ ॥ ❀

उनको सत्संगति तभी मिलती है जब प्रभु उनपर कृपा करते है अर्थात् प्रभुकी कृपा विना सत्संगति नहीं हो सकती ॥ ११ ॥ हे मुनि ! जिस पुरुषको संत लोगोंपर निष्कारण प्रीति है उनके लिये फिर आगे संसारका काम नहीं है अर्थात् जिनकी सत्पुरुषोंमें प्रीति है, वे जन्ममरणरूप संसारसे मुक्त हो जाते है ॥ १२ ॥ हे नारदजी ! यद्यपि मैं घर और कुटुंबमें आसक्त हो रहा हूं तथापि आपके दर्शन हुए इससे मैं बड़भागी हूं ॥ १३ ॥

दोहा–सुनि प्रभुबचन मधुर प्रिय, करि बिचार मुनि धीर ॥ ❀
परम कृपालु लोकहित,कस न कहौ रघुबीर ॥ १ ॥ ❀

प्रभुके मधुर और प्रिय बचन सुन, मनमें धीरज धर, बिचार कर, नारदजीने कहा कि–हे प्रभु ! आप परमदयालु हो, सो आप ऐसे जगतके हितकारी बचन कैसे न कहोगे अर्थात् आपको ऐसे बचन अवश्य कहने चाहिये ॥ १ ॥

कह मुनि तव महिमा रघुराया ॥ मैं जानौं कछु तुम्हरी दाया ॥ १ ॥ ❀
बचन कहेउ प्राकृतकी नाईं ॥ यामें नहिँ कछु घटेउ गोसाईं ॥ २ ॥ ❀

मुनि नारदने कहा कि– हे रघुराज ! आपकी महिमाको आपकी दयासे मैं कुछ जानता हूं ॥ १ ॥ आपने जो यह बचन साधारण मनुष्यकी तरह कहा सो लोककी मर्यादा रखनेके वास्ते है. हे स्वामी ! इसमें आपका कुछ घट थोराही जाता है ॥ २ ॥

प्रभु यह तुमहिँ सदा बनि आई ॥ निजलघुता जनकेरि बड़ाई ॥ ३ ॥ ❀
सहजस्वभाव प्रणतअनुरागी ॥ नरतनु धरेउ दासहित लागी ॥ ४ ॥ ❀

हे प्रभु ! यह आपको सदा बन पड़ी है कि, अपनी तौ लघुता करनी और दासकी बड़ाई करनी ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! यह तौ आपका सहजस्वभाव है कि, शरणागत भक्तजनोंपर प्रीति रखना और इसी कारणसे भक्तजनोंका हित करनेके लिये आपने यह मनुष्यदेह धारण किया है ॥ ४ ॥

माया गुण गो ज्ञान अतीता ॥ अजित नाम सो दासन जीता ॥ ५ ॥ ❀

जेहि प्रभु सम अतिशय कोउ नाहीं ॥ व्यापक अज समान सब पाहीं ॥६॥

हे प्रभु ! आपका स्वरूप गुण यानी विषय इन्द्रियजन्य ज्ञान और मायासे पर है. अतएव आपका नाम अजित है पर दास लोग आपको जीत लेते हैं ॥ ५ ॥ हे प्रभु ! मुझको इस बातसे बड़ा आश्चर्य होता है कि, जिस प्रभुके बराबर जगत्‌में कोई नहीं है. तब अधिक तो कहांसे हो ? जो सर्वव्यापक, अजन्मा और सबके पास समरीतिसे विराजनेवाला ॥ ६ ॥

उदर चराचर मेलि जो शोवा ॥ अस्तनपानलागि सो रोवा ॥ ७ ॥ ❋
नाम रूप वपु वर्ण न भेदा ॥ अविगत अकल नेति कह बेदा ॥ ८ ॥ ❋

और जो इस सारे चराचर प्रपंचको अपने उदर (पेट) में लेकर शयन करता है, वह प्रभु स्तनपानके लिये रुदन करै यह एक बड़ी अचरजकी बात है ॥ ७ ॥ जो नाम, रूप, शरीर, वर्ण और भेदरहित है. तथा जिसको वेद निर्दूषण, उपाधिरहित और नेति नेति कहकर वर्णन करते हैं ॥ ८ ॥

निर्मम मुक्त निरामय जोई ॥ दशरथसुत कहि गाइय सोई ॥ ९ ॥ ❋
जप तप योग यज्ञ व्रत दाना ॥ बिमल बिराग ज्ञान बिज्ञाना ॥ १० ॥ ❋

और जो ममतारहित, सब तरहके प्रपंचसे मुक्त और विकाररहित, परब्रह्म है, जो किसी समय दशरथका पुत्र कहला कर गाया जाता है ॥ ९ ॥ जिसको प्राप्त होनेके लिये मुनि लोग जप, तप, योग, यज्ञ, व्रत, दान, निर्मल वैराग्य, ज्ञान और विज्ञान आदि ॥ १० ॥

करहिँ यत्न मुनि पावहिँ कोई ॥ देखा प्रगट भक्तवश सोई ॥ ११ ॥ ❋
हठवश शठ बहु साधन करहीं ॥ भक्तिहीन भवसिन्धु न तरहीं ॥ १२ ॥ ❋

अनेक उपाय कर रहे हैं तिनमेंसे कोई बिरले मुनि जिसको पाते है उसी प्रभुको मैंने आज प्रत्यक्ष भक्ताधीन देखा ॥ ११ ॥ चाहे कोई शठ भले हठके वश हो अनेक दूसरे साधन करैं पर भगवान्‌की भक्ति किये विना तो किसी कदर इस भवसागरको पार नहीं उतर सकते ॥ १२ ॥

दोहा--जानि सकहु ते जानहू, निर्गुण सगुण स्वरूप ॥ ❋
मम हियपंकज भृंग इव, बसहु राम नररूप ॥ २ ॥ ❋

प्रभुके निर्गुण और सगुण स्वरूपको जो जान सकते हों वे जानो मेरे तो उन स्वरूपसे कुछभी प्रयोजन नहीं है. हे प्रभु ! मेरी तो यही प्रार्थना है कि, आपका यह मनुष्यस्वरूप मेरे हृदयकमलके भीतर भ्रमरकी भांति सदा निवास करै ॥ २ ॥

ब्रह्मभवन मैं रह्यउँ कृपाला ॥ गावत तव गुण दीन दयाला ॥ १ ॥ ❋
अस इच्छा उपजी मनमाहीं ॥ देखेउँ चरण बहुत दिन नाहीं ॥ २ ॥ ❋

हे दीनदयाल ! कृपाल ! प्रभु ! मैं आपके गुणगण गाता ब्रह्मलोकमें रहता था ॥ १ ॥ तहां मेरे मनमें ऐसी इच्छा हुई कि, प्रभुके चरणकमलोंके दर्शन किये बहुत दिन हुए हैं सो चलो दर्शन करैं ॥ २ ॥

यद्यपि प्रभु सर्वत्र समाना ॥ सगुण रूप मोरे मन माना ॥ ३ ॥ ❋

अवध चलत बिरंचि मोहिँ जाना ॥ कीन्ही विनय लागि मम काना ॥४॥

हे प्रभु ! यद्यपि तौ सब ठौर बराबर व्यापक हो तथापि मेरे मनको आपका सगुणस्वरूप बहुत प्रिय लगता है ॥ ३ ॥ ब्रह्माजीने मेरे मनकी बात जानली. मुझको अयोध्याकी तर्फ रवाँन होता जानकर उन्होंने मुझको कानमें कह, मेरे द्वारा प्रार्थना करी है ॥ ४ ॥

प्रभु जानत सब अन्तर्यामी ॥ भक्तबछल बिनती यह स्वामी ॥ ५ ॥ ❀
जेहि हित लागि मनुजअवतारा ॥ नाथ ताहि अब करिय सँभारा ॥ ६ ॥

हे प्रभु ! आप जानतेही हो, क्योंकि सबके अंतर्यामी हो, घट घटकी जानते हो. तथापि हे भक्तवत्सल प्रभु ! वो विनती यह है सो सुनिये ॥ ५ ॥ "हे नाथ ! जिसके लिये आपने मनुष्यअवतार धारण किया है, अब उस कामकी सँभाल कीजिये" ॥ ६ ॥

सुनत बचन रघुपति मुसुकाने ॥ मुनि अजहूँ बिरंचि भय माने ॥ ७ ॥ ❀
कह्यउ तात ब्रह्महिँ समुझाई ॥ कछु दिन गये देखिहैं आई ॥ ८ ॥ ❀

नारदजीके ये बचन सुन प्रभु मुसकाने और कहा कि–हे नारदजी ! अबतक ब्रह्माजी डरतेही है ॥ ७ ॥ प्रभुने नारदजीसे कहा कि–हे नारदजी ! आप जाकर ब्रह्माजीसे समझाकर कह देना कि–कुछ दिन बीतनेके बाद हम आकर आपसे मिलेंगे ॥ ८ ॥

बार बार चरणन शिर नाई ॥ ब्रह्मानन्द न हृदय समाई ॥ ९ ॥ ❀
रामरूप उर धरि मुनि नारद ॥ चले करत गुणगान बिशारद ॥ १० ॥ ❀

प्रभुके ऐसे वचन सुन, नारदजीने प्रभुके चरणोंमें बारंबार दंडवत् किया और शिर नवाया. उस समय नारदजी ब्रह्मानंदमें ऐसे मगन हो गये कि, उनके हृदयमें वो आनंद समाता नहीं था. ॥ ९ ॥ फिर वो परम विचक्षण नारदजी रामचन्द्रजीके स्वरूपको अपने हृदयमें रख प्रभुके गुण गाते वहांसे चले ॥ १० ॥

तब रघुपति सीतहिँ समुझाई ॥ पूर्वकथा सबहेतु सुनाई ॥ ११ ॥ ❀
सुरहित लागि सो करिय उपाई ॥ जाइय बन परिहरि ठकुराई ॥ १२ ॥ ❀

तब रामचन्द्रजीने सीताको समझाया. पिछली सारी कथा कही और उसके सब कारण सुनाये ॥ ११ ॥ प्रभुने कहा कि– अब देवताओंका कार्य करनेके लिये वो उपाय करना होगा कि, जिसतरह उनका काम सधे और उसके लिये ठकुराई यानी राज छोड़कर वनमें जाना होगा ॥ १२ ॥

दोहा–जग संभव अस्थिति प्रलय, जाकी भृकुटिबिलास ॥ ❀
सो प्रभु यत्न बिचारत, क्यहि बिधि निश्चरनास ॥ ३ ॥ ❀

कवि कहता है कि–जिसकी भृकुटिके विलाससे अर्थात् भ्रूभंगमात्रसे जगत्के सृष्टि स्थिति संहार होते है, वे प्रभु मनमें उपाय सोचते हैं कि, राक्षसोंका संहार कैसे करें ? ॥ ३ ॥ ॥ इति ॥

एक समय सब सहित समाजा ॥ राजसभा रघुराज बिराजा ॥ १ ॥ ❀
सकलसुकृतमूरति नरनाहू ॥ रामसुयश सुनि अतिहि उछाहू ॥ २ ॥ ❀

एक दिन राजा दशरथजी अपनी सारी समाजके साथ राजसभामें विराजे थे ॥ १ ॥ जो साक्षात सुकृतकी मूर्ति थे, उनके मनमें रामचन्द्रजीका सुयश सुनकर बड़ा आनंद रहता था ॥ २ ॥

नृप सब रहहिँ कृपा अभिलाषे ॥ लोकप रहहिँ प्रीतिरुख राखे ॥ ३ ॥ ❋
त्रिभुवन तीनि काल जगमाहीं ॥ भूरि भाग दशरथसम नाहीं ॥ ४ ॥ ❋

दूसरे सब राजा उनकी कृपादृष्टि चाहा करते थे और लोकपाल (इंद्र आदि) भी हमेशा उनको प्रीतिकी रुख रखते थे ॥ ३ ॥ तीनों लोकोंमें और तीनों कालमें दशरथजीके जैसा बड़भाग्य न तो कोई हुआ न है, और न होगा ॥ ४ ॥

मंगलमूल राम सुत जासू ॥ जो कछु कहिय थोर सब तासू ॥ ५ ॥ ❋
राउ स्वभाव मुकुर कर लीन्हा ॥ बदन बिलोकि कुमुट सम कीन्हा ॥ ६ ॥

जिनके मंगलके मूल आनंदकन्द श्रीरामचन्द्रजी पुत्र थे, उनके लिये जो कुछ कहै वह सब थोड़ाही है ॥ ५ ॥ एक दिन राजाने सहजस्वभावसे हाथमें दर्पण लिया और अपने मुखको देखकर मुकुटको बराबर सीधा किया ॥ ६ ॥

श्रवणसमीप भये सित केशा ॥ मनहुँ चौथपन अस उपदेशा ॥ ७ ॥ ❋
लागि श्रवण जनु कहत बुढाई ॥ रामहिँ राज्य देहु किन जाई ॥ ८ ॥ ❋

उन्होंने अपने कानके पास श्वेत केश देखे. तब उनके मनमें ऐसी आई कि, ये श्वेत केश क्या भये है मानों चतुर्थाश्रम यानी बुढ़ापा ऐसा (कवि कहता है कि) उपदेश करता है ॥७॥ कानोंके पास जाकर मानों बुढापा दशरथजीके कानमें यह बात कहता है कि–महाराज ! आप रामको युवराज पदवी क्यों नहीं देते ? ॥ ८ ॥

नृप युवराज रामकहँ देहू ॥ जीवन जन्म सुफल करि लेहू ॥ ९ ॥ ❋

हे राजा ! रामको युवराजपद दीजिये और अपने जीवन और जन्मको सुफल कर लीजिये ॥ ९ ॥

दोहा–अस बिचारि उर आनि नृप, सुदिन सुअवसर पाइ ॥ ❋
तन पुलकित मन मुदित अति, गुरुहिँ सुनायउ जाइ ॥ ४ ॥ ❋

दशरथजीने अपने आप मनमें ऐसा विचार कर, इस विचारको अपने हृदयमें रख, अच्छा दिन और अच्छा समय पाय मनमें आल्हादित व प्रेमसे पुलकित शरीर हो गुरु वसिष्ठजीके पास जाकर ये समाचार सुनाये ॥ ४ ॥

कहेउ भुआल सुनिय मुनिनायक ॥ भये राम सब बिधि सब लायक ॥ १ ॥ ❋
सेवक सचिव सकल पुरबासी ॥ जे हमारि अरि मित्र उदासी ॥ २ ॥ ❋

राजा दशरथजीने वसिष्ठजीसे कहा कि–हे मुनिराज ! सुनिये. रामचन्द्र सब प्रकारसे सबबातके लायक हो गये हैं ॥ १ ॥ हमारे चाकर, नौकर, मंत्री और सब नगरके लोग तथा जो हमारे वैरी, मित्र और उदासीन है वेभी सब रामसे खुश है ॥ २ ॥

सबहिँ राम प्रिय जेहि बिधि मोहीं ॥ प्रभु अशीस जनु तनु धरि सोहीं ॥ ३ ॥
बिप्र सहित परिवार गुसाईं ॥ करहिँ छोह सब रौरेहि नाईं ॥ ४ ॥ ❋

जैसे राम मुझको प्रिय लगता है ऐसे वो सबको प्रिय लगता है. रामके गुणोंके विषयमें क्या कहूं, मानों आपका आशीर्वादही शरीर धरकर शोभायमान हो रहा है ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! जैसे आप उसपर कृपा रखते हो, ऐसे सब ब्राह्मण लोग अपने कुटुंबके साथ उसपर दयाभाव रखते है ॥ ४ ॥

जे गुरुचरणरेणु शिर धरहीं ॥ ते जनु सकल विभव वश करहीं ॥ ५ ॥ ❀
मोहिँ समान अरु भयउ न दूजे ॥ सब पायउँ प्रभुपदरज पूजे ॥ ६ ॥ ❀

मैं जानता हूं कि, जो लोग गुरुके चरणोंकी रजको शिरपर धारण करते है. मानों वे सब वैभवको अपने वश कर लेते है ॥ ५ ॥ मैं जानता हूं कि, मेरे जैसा दूसरा कोई भाग्यशाली नहीं हुआ होगा, सो यह सब हे स्वामी ! आपको चरणरज पूजनेका प्रताप है. मैं जो कुछ पाया हूं सो सब आपके चरणोंकी रज पूजनेसे पाया हूं ॥ ६ ॥

गुणसागर नागर श्रुति गाये ॥ बड़े भाग्य मोरे गृह आये ॥ ७ ॥ ❀
जेठे राम सकल हितकारी ॥ सकल सराहत पुर नर नारी ॥ ८ ॥ ❀

जो गुणोंके सागर परम उजागर श्रीरामचन्द्र है कि, जिनको श्रुति आप गाती है वे मेरे बड़भाग्यसे मेरे घर आये अर्थात् जन्मे है ॥ ७ ॥ मेरा ज्येष्ठ पुत्र राम सब जगत्का हित करनेवाला है कि, जिसकी नगरके सारे नर नारी प्रशंसा करते है ॥ ८ ॥

अब अभिलाष एक मन मोरे ॥ पूजिहि नाथ अनुग्रह तोरे ॥ ९ ॥ ❀
मुनि प्रसन्न लखि सहजसनेहू ॥ कहेउ नरेश रजायसु देहू ॥ १० ॥ ❀

हे नाथ ! अब मेरे मनमें एक बातकी अभिलाषा और है, सो वह भी आपकी कृपासे पूर्ण होजायगी ॥ ९ ॥ मुनिको प्रसन्न लख, और स्वाभाविक प्रीतिको देख, राजाने कहा कि– आज्ञा दीजिये ॥ १० ॥

दोहा–राउर राजन नाम यश, सब अभिमतदातार ॥ ❀
फलअनुगामी महिपमणि, मनअभिलाष तुम्हार ॥ ५ ॥ ❀

हे राजा ! जब आपका नाम और यशभी सब मनवांछित फल देनेवाला है, तब आपके मनोरथ पूर्ण होवे जिसमे तो कहना ही क्या ? हे राजाओंके मुकुटमणि ! हे महाराज ! आपके मनकी अभिलाषा सफल होनेवाली है सो सफल होगी ॥ ५ ॥

सब विधि गुरु प्रसन्न जिय जानी ॥ बोलेउ राउ बिहँसि मृदु बानी ॥ १ ॥ ❀
नाथ राम करिये युवराजू ॥ कहिय कृपा करि करिय समाजू ॥ २ ॥ ❀

वसिष्ठजीके ऐसे बचन सुन, सबतरहसे मनमें गुरुको प्रसन्न जान, हँसकर राजाने मधुर वाणीसे कहा कि– ॥ १ ॥ हे नाथ ! रामको युवराजपद दीजिये और कृपा करके आज्ञा कीजिये और समाज यानी दरबार कीजिये ॥ २ ॥

मोहिँ अछत अस होउ उछाहू ॥ लहहिँ लोग सब लोचनलाहू ॥ ३ ॥ ❀
प्रभु प्रसाद शिव सबै निबाहीं ॥ इहै लालसा इक मनमाहीं ॥ ४ ॥ ❀

मेरे जीतेजी यह महोत्सव हो जाय और सब लोग अपने नेत्रोंका लाभ ले लेवें ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! मेरे मनमें इस बातकी पूरी अभिलाषा है सो मैं जानता हूं कि, आपकी कृपासे शिवजी सब कुछ निबाह देंगे ॥ ४ ॥

पुनि न शोच तनु रहै कि जाऊ ॥ जेहि न होइ पाछे पछिताऊ ॥ ५ ॥ ❋
सुनि मुनि दशरथवचन सुहाये ॥ मंगलमूल मोद अति पाये ॥ ६ ॥ ❋

एक यह काम होजाय तौ पीछे चाहे मेरा शरीर रहे चाहे जाय. फिर मुझको किसी बातकी चिंता नहीं है और इस बातकी मेरे मनमें अभिलाषा यों लग रही है कि, जिससे पीछे मुझको किसी बातका पछतावा न रहे ॥ ५ ॥ मंगलके मूल दशरथजीके सुहावने बचन सुन वसिष्ठजी बहुत प्रसन्न हुए ॥ ६ ॥

सुनि नृप जासु विमुख पछिताहीं ॥ जासु भजन बिनु जरनि न जाहीं ॥७॥ ❋
भये तुम्हार तनय सो स्वामी ॥ राम पुनीत प्रेम अनुगामी ॥ ८ ॥ ❋

और बोले कि–महाराज ! सुनिये. जिससे विमुखलोग पछताते है और जिसको भजन किये विना हृदयका संताप नहीं मिटता ॥ ७ ॥ वह स्वामी राम तुम्हारा पुत्र हुआ है. जो परमपवित्र प्रेमके बश है ॥ ८

दोहा--बेग बिलम्ब न करिय नृप, साजिय सबै समाज ॥ ❋
सुदिन सुमंगल तबहिँ जब, राम होहिँ युवराज ॥ ६ ॥ ❋

हे राजा ! जो आपने विचारा है वह जल्दी करो. उसमें विलम्ब मत करो. सब समाज जल्दी तैयार करो. और अच्छा दिन और मंगलमय घड़ी तौ वही है कि, जिस समय रामचन्द्र युवराज होंगे ॥ ६ ॥

मुदित महीपति मन्दिर आये ॥ सेवक सचिव सुमन्त बुलाये ॥ १ ॥ ❋
कहि जयजीव शीश तिन नाये ॥ भूप सुमंगल बचन सुनाये ॥ २ ॥ ❋

गुरुके बचन सुन दशरथजी बहुत प्रसन्न हुए. फिर घर आ, सुमंत्रके हाथ सब नौकर और मंत्रियों-को बुलाया ॥ १ ॥ उन्होंने राजाके पास आ, "जयजीव" (आपकी जय हो और आप चिरंजीव रहो) ऐसे कह शिर झुकाया, तब राजाने उनसे बड़े सुन्दर मंगलमय बचन कहे ॥ २ ॥

प्रमुदित मोहिँ कहेउ गुरु आजू ॥ रामहिँ राज देहु युवराजू ॥ ३ ॥ ❋
जो पांचहिँ मत लागे नीका ॥ करहु हर्षि हिय रामहिँ टीका ॥ ॥ ४ ॥ ❋

राजाने कहा कि–आज प्रसन्न होकर गुरु वसिष्ठजीने मुझको आज्ञा दी है कि "आज रामको राज दो और उसे युवराज बना दो" ॥ ३ ॥ सो जो यह बात पंचलोगोंको अच्छी लगे तौ चित्तमें प्रसन्न होकर रामका राज्याभिषेक करो ॥ ४ ॥

मंत्री मुदित सुनत प्रिय बानी ॥ अभिमतबिरव परेउ जनु पानी ॥ ५ ॥ ❋
बिनती सचिव करहिँ कर जोरी ॥ जियहु जगतपति बरष करोरी ॥ ६ ॥ ❋

राजाकी ऐसी प्रिय बाणी सुनकर मंत्री सब ऐसे प्रसन्न हुए कि, मानों सूखते हुए पौधेपर

वांछित जल बरसा ॥ ५ ॥ तब मंत्रियोंने हाथ जोड़ राजासे विनती करी कि–हे राजा ! आप करोड़ बरषलों जीते रहो. आपको प्रभु चिरायु करै ॥ ६ ॥

जग मंगल भल काज विचारा ॥ वेगिहिँ नाथ न लाइय बारा ॥ ७ ॥
नृपहिँ मोद सुनि सचिव सुभाषा ॥ बढ़त विटप जनु लही सुशाषा ॥८॥ ❀

आपने यह जगत्का मंगलकारी काम बहुत अच्छा बिचारा. हे नाथ ! इस कामको अब आप शीघ्र करिये. इसमें विलम्ब न करिये ॥ ७ ॥ मंत्रियोंकी ऐसी अच्छी वाणी सुन राजा बहुतही प्रसन्न हुआ. मानों अच्छी शाखाओंको पाकर वृक्ष बढ़ने लगा ॥ ८ ॥

दोहा–कहेउ भूप मुनिराजकर, जो जो आयसु होइ ॥ ❀
राम राज्य अभिषेकहित, बेगि करहु सोइ सोइ ॥ ७ ॥ ❀

राजाने मंत्रियोंका मत अभिमत समझकर मंत्रियोंसे कहा कि–गुरु वसिष्ठजी जो कुछ कहे और जो जो आज्ञा करैं वो सब सामान रामके राज्याभिषेकके लिये जल्दी तैयार करो ॥ ७ ॥

हर्षि मुनीश कहेउ मृदु बानी ॥ आनहुँ सकल सुतीरथपानी ॥ १ ॥ ❀
औषध मूल फूल फल नाना ॥ कहे नाम गनि मंगल जाना ॥ २ ॥ ❀

गुरु वसिष्ठजीने तब प्रसन्न हो मधुर वाणीसे उनको कहा कि–प्रथम तौ सब तीर्थोंका पवित्र जल लाओ ॥ १ ॥ फिर जो जो औषध, मूल, फल फूल आदि मांगलिक पदार्थ थे उनके नाम गिन गिनकर गुरु वसिष्ठजीने कहे ॥ २ ॥

चामर चर्म बसन बहुभांती ॥ रोमपाट पट अगणित जाती ॥ ३ ॥ ❀
मणिगण मंगल बस्तु अनेका ॥ जो जग योग भूपअभिषेका ॥ ४ ॥ ❀

उनके सिवा चामर (चँवर), मृगचर्म, अनेक प्रकारके कपड़े, दुसाला और अनेक भांतिके रेशमी कपड़े ॥ ३ ॥ अनेक प्रकारके रत्न और दूसरी अनेक मांगलिक चीजें कि, जो जगत्में राज्याभिषेकके योग्य थीं, वे सब लानेके वास्ते वसिष्ठजीने उनसे कहा ॥ ४ ॥

वेदविहित कहि सकल बिधाना ॥ कहेउ रचहु पुर बिबिध बिताना ॥ ५ ॥ ❀
पनस रसाल पूगफलकेरा ॥ रोपहु बीथिन पुर चहुँफेरा ॥ ६ ॥ ❀

वेदकी रीतिके अनुसार सब तैयारी करनेकी आज्ञा दे. फिर वसिष्ठजीने कहा कि–नगरीके भीतर अनेक प्रकारके वितान (चंदवा वा मंडप) बनाओ ॥ ५ ॥ और पुरीके भीतर गली गलीमें चारों ओर पनस (कटहर) आम, सुपारी और केलेके खंभ रोपो ॥ ६ ॥

रचहु मंजु मणि चौकैं चारू ॥ कहेउ बनावन बेगि बजारू ॥ ७ ॥ ❀
पूजहु गणपति गुरुकुल देवा ॥ सब बिधि करहु भूमिसुरसेवा ॥ ८ ॥ ❀

और मणियोंके अच्छे सुन्दर चौक पुराओ और बाजारको सजकर जल्दी तैयार करो ॥ ७ ॥ गणपति गुरु और कुलदेवताकी पूजा करो और सब प्रकारसे ब्राह्मणोंकी टहल करो ॥ ८ ॥

दोहा–ध्वज पताक तोरण कलश, सजहु तुरँग रथ नाग ॥ ❀
शिर धरि मुनिबर बचन सब, निज निज काजहिँ लाग ॥ ८ ॥ ❀

ध्वजा, पताका, तोरण और कलश घर घरमें साजो. घोड़े, रथ और हाथियोंको साजकर तैयार करो. मुनिकी आज्ञा सुन, शिरपर धर सब लोग अपने २ काममे लगे ॥ ८ ॥

"सुनत सुमन्त मनहिँ हरषाना ॥ जीवन जन्म सुफल कर जाना ॥ १ ॥ ❋
जहँ तहँ धावन कोटि पठाए ॥ मंगलद्रव्य सकल लै आए ॥ २ ॥ ❋

"गुरुकी आज्ञा सुन सुमंत मनमें बहुत प्रसन्न हुआ. उसने अपने जीवन और जन्मको सुफल करके माना ॥ १ ॥ जहां तहां करोड़ों हलकारोंको भेजा. वे मंगलके सब पदार्थ ले आ हाजिर हुए ॥ २ ॥

कनककलश सजि धरे दुवारे ॥ गज रथ तुरँग अनेक सँवारे ॥ ३ ॥ ❋
बहुविधि बांधे बंदनवारा ॥ ध्वज पताक मणि बसन अपारा ॥ ४ ॥ ❋

कंचनके कलश तैयार करके द्वारपर धरे और अनेक प्रकारके घोड़े, हाथी व रथ सँवार कर तैयार किये गये ॥ ३ ॥ अनेक प्रकारकी वंदनवारें बांधी गई. ध्वजा, पताका लटकाई गईं और अनेक रत्न और वस्त्र तैयार किये गये ॥ ४ ॥

बनेहुँ नगर नहिँ बरणन जाई ॥ सकल लोक शोभा पुर छाई" ॥ ५ ॥ ❋
जेहिँ मुनीश जो आयसु दीन्हा ॥ सोजनु काज प्रथम तेहिँ कीन्हा ॥६॥ ❋

नगरी साजकर ऐसी बनाई गई है कि, जो वर्णन नहीं की जा सकती, मानों सब लोकोंकी शोभा उसी नगरीमे छा रही है" ॥ ५ ॥ गुरु वसिष्ठजीने जिसे जो आज्ञा दी, मानों वो काम उन्होंने पहलेहीसे कर लिया था ॥ ६ ॥

बिप्र साधु सुर पूजत राजा ॥ करत रामहित मंगलकाजा ॥ ७ ॥ ❋
सुनत राम अभिषेक सुहावा ॥ बाजे गहगह अवध बधावा ॥ ८ ॥ ❋

राजा दशरथ ब्राह्मण, संत और देवताओंकी पूजा करते है और रामचन्द्रजीके लिये मंगलकार्य कर रहे है ॥ ७ ॥ रामचन्द्रजीके राजतिलकके शुभ समाचार सुन अयोध्यामें बाजे बजने लगे और बधाई होने लगीं ॥ ८ ॥

राम सीय तनु शकुन जनाये ॥ फरकहिँ मंगल अंग सुहाये ॥ ९ ॥ ❋
पुलकि सप्रेम परस्पर कहहीं ॥ भरतआगमनसूचक अहहीं ॥ १० ॥ ❋

राम और सीताके शरीरमें शुभ शकुन होने लगे अर्थात् सुन्दर मंगलकारी अंग फरकने लगे ॥ ९ ॥ तिससे पुलकित शरीर हो प्रेमसे वे दोनों आपसमें कहने लगे कि—जो ये शुभशकुन होते हैं सो भरतके आनेके सूचक (जनानेवाले) होंगे ॥ १० ॥

भये बहुत दिन अति अवसेरी ॥ शकुन प्रतीति भेंट प्रियकेरी ॥ ११ ॥ ❋
भरत सरिस प्रिय को जगमाहीं ॥ यहै शकुन फल दूसर नाहीं ॥ १२ ॥ ❋
रामहिँ बन्धुशोच दिन राती ॥ अंडन्ह कमठ हृदय जेहि भाँती ॥ १३ ॥ ❋

भरतको गये बहुत दिन होगये हैं और बहुत दिनोंसे राह देखते हैं, सो इन शकुनोंसे तो प्यारे भाई भरतकी भेंट प्रतीति होती है ॥ ११ ॥ मेरे भरतके जैसा प्यारा जगतमें दूसरा कौन

है ? इसलिये इन शकुनोंका फल दूसरा कभी नहीं होगा ॥ १२ ॥ रामचन्द्रजीको रात दिन भाइ-योंका ऐसा शोच रहता था कि–जैसा कछुएके मनमें अंडोंका फिकर रहता है (कछुआ पानीके किनारेपर अंडे देता है. वे धूपकी गर्मीसे पकते है. वे दूर रहनेसे कछुएको उनका बड़ा फिकर रहता है) ॥ १३ ॥

दोहा–तेहिँ अवसर मंगल परम, सुनि हरषेउ रनिवास ॥ ❀
शोभित लखि बिधु बढ़त जनु, बारिधि बीचि बिलास ॥ ९ ॥ ❀

उस समय वे परममंगलके समाचार सुन सारे रनिवासमें ऐसा आनन्द हुआ कि, मानों प्रकाशमान पूर्ण चंद्रमाको देखकर समुद्रकी तरंगोंकी शोभा बढ़ने लगी है ॥ ९ ॥

प्रथम जाइ जेहिँ बचन सुनावा ॥ भूषण बसन भूरि तेहिँ पावा ॥ १ ॥ ❀
प्रेम पुलकि तन मन अनुरागीं ॥ मंगलसाज सजन सब लागीं ॥ २ ॥ ❀

रनिवासमें जाकर जिसने राजतिलकके समाचार सबसे पहले सुनाये उसको रनिवासके भीतरसे बहुतसे गहने और वस्त्र आदि पारितोषिक मिला ॥ १ ॥ रानियोंके शरीरमें प्रेमसे पुल-कावली छागयी. मन आनन्दमगन हो गया और सब प्रभुके लिये मंगलकी सामा सजने लगीं ॥ २ ॥

चौकें चारु सुमित्रा पूरी ॥ मणिमय बिबिधभांति अति रूरी ॥ ३ ॥ ❀
आनँदमगन राममहतारी ॥ दिये दान बहु बिप्र हँकारी ॥ ४ ॥ ❀

सुमित्राने अनेक प्रकारके बहुत सुन्दर मणियोंके मनोहर चौक पूरे ॥ ३ ॥ रामचन्द्रजीकी माता कौसल्याने आनन्दमगन हो बहुतसे ब्राह्मणोंको बुला बुलाकर उन्हें अनेक प्रकारके दान दिये ॥ ४ ॥

पूजेउ ग्रामदेव सुर नागा ॥ कहेउ बहोरि देन बलिभागा ॥ ५ ॥ ❀
"बार बार गणपतिहिँ निहोरा ॥ कीजिय सफल मनोरथ मोरा ॥ ६ ॥ ❀

गांवके देवता, नाग और देवतानकी पूजा करी और उनको फिर दुबारा बलिदान देनेको बोली ॥ ५ ॥ बारंबार गणेशजीसे प्रार्थना करी कि–हे गजानन ! मेरा मनोरथ सफल कीजिये ॥ ६ ॥

भूपहृदय प्रभु प्रेरहु जाई ॥ मत दृढ़ होहि जो जियमें आई ॥ ७ ॥ ❀
जो कछु इच्छा करि मनमाहीं ॥ सो फुर होहि आन कछु नाहीं" ॥ ८ ॥ ❀

हे प्रभु ! आप जाकर राजाकी बुद्धिको प्रेर दो कि, जिससे उनके मनमें जो बात जँची है वो पक्की हो जावे ॥ ७ ॥ हे प्रभु ! मैं आपसे बारंबार यही प्रार्थना करती हूं कि, राजाने जो कुछ मनमें इच्छा की–है वो सत्य हो जानी चाहिये. इसके सिवाय दूसरा मैं आपसे कुछ नहीं माँगती ॥ ८ ॥

जेहि बिधि होइ रामकल्याना ॥ देहु दया करि सो बरदाना ॥ ९ ॥ ❀
गावहिँ मंगल कोकिलबयनी ॥ बिधुबदनी मृगशावकनयनी ॥ १० ॥ ❀

जिस तरह रामका भला होवे वोही वरदान दया करके मुझे दीजिये ॥ ९ ॥ कौसल्या इस तरह देवताओंको मनाती है और सुहागन स्त्रियां मंगलके गीत गातीं हैं, जिनकी कोकिला

कीसी मधुर वाणी है, चन्द्रमाकासा सुन्दर मुखारविंद है और हरिणके बच्चेकेसे विशाल और सुन्दर नेत्र हैं ॥ १० ॥

दोहा—रामराजअभिषेक सुनि, हिय हर्षे नर नारि ॥ ❋
लगीं सुमंगल सजन सब, विधिअनुकूल बिचारि ॥ १० ॥ ❋

रामचन्द्रजीके राजतिलकके समाचार सुन नगरके सब नर नारी मनमें प्रसन्न हुए और नगरकी स्त्रियां विधाताको अनुकूल समझकर सब प्रकारके सुमंगल सजने लगीं ॥ १० ॥

तब नरनाह वसिष्ठ बुलाये ॥ रामधाम सिख देन पठाये ॥ १ ॥ ❋
गुरुआगमन सुनत रघुनाथा ॥ द्वार आइ नायउ पद माथा ॥ २ ॥ ❋

तब दशरथजीने वसिष्ठजीको बुलाके रामचन्द्रजीको शिक्षा देनेके लिये रामचन्द्रजीके महल भेजे ॥ १ ॥ गुरु आते हैं ये समाचार सुनतेही रामचन्द्रजी दौड़कर द्वारपर आये और चरणोंमें शिर नवाया ॥ २ ॥

सादर अर्घ देइ घर आने ॥ सोरह भांति पूजि सनमाने ॥ ३ ॥ ❋
गहे चरण सियसहित बहोरी ॥ बोले राम कमल कर जोरी ॥ ४ ॥ ❋

आदरके साथ अर्घ देकर रामचन्द्रजी उन्हें अपने महलमें ले आये, और षोड़शोपचारसे पूजन करके उनका सन्मान किया ॥ ३ ॥ फिर सीताके साथ गुरुके चरण धर हाथ जोड़कर प्रभुने गुरुसे कहा कि— ॥ ४ ॥

सेवकसदन स्वामिआगमनू ॥ मंगलमूल अमंगलदमनू ॥ ५ ॥ ❋
यदपि उचित अस बोलि सप्रीती ॥ पठइय नाथ काज अस नीती ॥६॥❋

हे महाराज! सेवकके घरपर जो स्वामीका पधारना है सो मंगलका मूल और अमंगलका नाश करनेवाला है ॥ ५ ॥ हे नाथ! यद्यपि स्वामीके पधारनेसे सेवकका भला है, तथापि उचित तो ऐसा है कि, सेवकको अपने पास बुलाकर उसे कामके लिये भेजना चाहिये; क्योंकि राजनीतिका व्यवहार ऐसाही है ॥ ६ ॥

प्रभुता तजि प्रभु कीन्ह सनेहू ॥ भयउ पुनीत आजु मम गेहू ॥ ७ ॥ ❋
आयसु होय सो करिय गुसांई ॥ सेवक लहै स्वामिसेवकाई ॥ ८ ॥ ❋

हे प्रभु! आपने अपनी प्रभुताको त्यागकर जो मुझपर स्नेह किया है, इससे आज मेरा घर परम पावन हुआ है ॥ ७ ॥ हे स्वामी! अब हमें जो आज्ञा हो सो करैं. जिसतरह यह आपका सेवक अपने स्वामीकी सेवापै पहुंचे वैसे आज्ञा कीजिये ॥ ८ ॥

दोहा—सुनि सनेह साने बचन, मुनि रघुबरहिँ प्रशंस ॥ ❋
राम कस न तुम कहहु अस, हंसबंशअवतंस ॥ ११ ॥ ❋

रघुनाथजीके ऐसे स्नेहभरे बचन सुनकर मुनि बसिष्ठजीने रामचन्द्रजीकी बड़ी प्रशंसा करी और कहा कि—हे राम! आप ऐसे कैसे न कहो? अर्थात् आप ऐसे धर्मात्मा हो; क्योंकि आप सूर्यवंशके आभूषण हो ॥ ११ ॥

बरणि राम गुण शील स्वभाऊ ॥ बोले प्रेम पुलकि मुनिराऊ ॥ १ ॥ ❋
भूप सजेउ अभिषेकसमाजू ॥ चाहत देन तुमहिँ युवराजू ॥ २ ॥ ❋

रामचन्द्रजीके गुण, शील और स्वभावकी, बखान कर प्रेमसे पुलकित हो वसिष्ठजीने रामचन्द्र-जीसे कहा कि- ॥ १ ॥ राजा दशरथने राज्याभिषेकके लिये सामा सजकर तयार कर लीनी है वे आपको युवराजपदवी देना चाहते है ॥ २ ॥

राम करहु सब संयम आजू ॥ जो विधि कुशल निबाहै काजू ॥ ३ ॥ ❋
गुरुसिख देइ राउपहँ गयऊ ॥ रामहृदय अस बिस्मय भयऊ ॥ ४ ॥ ❋

इसलिये हे राम ! आप आज सब संयम और नियम धारण करो. जो विधाता चाहै तौ सब काम आनन्दपूर्वक सिद्ध हो जाय ॥ ३ ॥ ऐसे कह सब नियम बताकर गुरु वसिष्ठजी दशरथजीके पास आये. उस समय रामचन्द्रजीके मनमें इस तरहका अचरज हुआ कि, यह क्या बात है कि सबको छोड़कर हमें युवराजपदवी देते है ॥ ४ ॥

जनमे एकसंग सब भाई ॥ भोजन शयन केलि लरिकाई ॥ ५ ॥ ❋
कर्णबेध उपवीत बिबाहा ॥ संग संग सब भयउ उछाहा ॥ ६ ॥ ❋

हम सब भाई एक साथ जनमे है और हम सब साथही भोजन करते है, साथही सोते है, साथही बचपनके खेल खेलते है ॥ ५ ॥ और हमारे कर्णवेध, यज्ञोपवीत और बिबाह ये सब उच्छवभी साथ साथ ही हुए है ॥ ६ ॥

बिमल वंश यह अनुचित एका ॥ अनुज बिहाय बड़ेहि अभिषेका ॥ ७ ॥ ❋
प्रभु सप्रेम पछितानि सुहाई ॥ हरत भरतमनकी कुटिलाई ॥ ८ ॥ ❋

सो और तौ इस कुलमें सब रीतियां अच्छी है, पर इस निर्मल कुलमें यह रीति तौ उचित नहीं है कि, छोटे भाईको छोड़कर बड़ेको राज देना ॥ ७ ॥ प्रभुका यह प्रेमसहित सुहावना पछताना भरतके मनकी कुटिलताको बिलकुल दूर करता था ॥ ८ ॥

दोहा-तेहिँ अवसर आये लषण, मगन प्रेम आनंद ॥ ❋
सनमाने प्रिय बचन कहि, रबिकुलकैरव चंद ॥ १२ ॥ ❋

उस समय प्रेम और आनन्दमें मगन लक्ष्मण वहां आये, तिनको रघुकुलरूपी रात्रिविकाशी कमलवनको प्रफुल्लित करनेके लिये चन्द्ररूप श्रीरामचन्द्रजीने प्रिय वचन कहकर बड़ा सत्कार किया ॥ १२ ॥

बाजहिँ बाजन बिबिधबिधाना ॥ पुर प्रमोद नहिँ जाइ बखाना ॥ १ ॥ ❋
भरतआगमन सकल मनावहिँ ॥ आवहिँ बेगि नयन फल पावहिँ ॥ २ ॥

अनेक प्रकारके बाजे बाजते हैं, नगरमें आनन्द ऐसा छा गया है कि, जिसका कुछ वर्णन नहीं कर सकते ॥ १ ॥ उस समय सब लोग भरतके आनेके लिये उत्कंठित हो देवताओंको मनाते थे कि, जो इस समय भरत शीघ्र आ जायँ तौ वहभी अपने नेत्रोंका लाभ ले लेवैं ॥ २ ॥

हाट बाट घर गली अथाई ॥ कहहिँ परस्पर लोग लुगाई ॥ ३ ॥ ❋

कालिह लगन भल केतिक बारा ॥ पूजिहि बिधि अभिलाष हमारा ॥ ४ ॥

हाट (बाजार), रास्ता, घर, अथाई और गलियोंमें लोगोंकी बड़ी भीड़ हो रही थी. सब स्त्रीपुरुष परस्पर जहां तहां ये बातें कहते हैं कि–॥ ३ ॥ कल अच्छा शुभ लग्न किस वक्त है? हमारी अभिलाषाको विधाता कल किस वक्त पूर्ण करेंगे ॥ ४ ॥

कनकसिंहासन सीयसमेता ॥ बैठहिँ राम होइ चितचेता ॥ ५ ॥ ❋
सकल कहहिँ कब होइहि काली ॥ विघ्न मनावहिँ देव कुचाली ॥ ६ ॥ ❋

कल किस वक्त रामचन्द्रजी सीताके साथ सुवर्णके सिंहासनपर विराजेंगे कि, जिनको देखकर मनोरथ पूर्ण होवे ॥ ५ ॥ सब लोग यह बात कहते हैं कि, यह कल कब होगा? और हम कब प्रभुको राजगद्दीपर विराजे देख हमारे नेत्र सफल करेंगे? और कुचाली देवता उस वक्त विघ्नोंको मनाते थे ॥ ६ ॥

तिनहिँ सोहात न अवधबधावा ॥ चोरहिँ चाँदनि राति न भावा ॥ ७ ॥
शारद बोलि बिनय सुर करहीं ॥ बारहि बार पाँय लै परहीं ॥ ८ ॥ ❋

क्योंकि उनको वह अयोध्याकी बधाई अच्छी नहीं लगती थी. जैसे कि, चोरको चांदनीरात अच्छी नहीं लगती ॥ ७ ॥ इसलिये प्रभुके अभिषेकमें विघ्न करनेके लिये देवताओंने सरस्वतीको बुलाकर उससे प्रार्थना करी और बारंबार उसके चरणोंमे गिरे ॥ ८ ॥

दोहा--बिपति हमारि बिलोकि बड़ि, मातु करिय सोइ आज ॥ ❋
राम जाहिँ बन राज तजि, होइ सकल सुरकाज ॥ १३ ॥ ❋

और हाथ जोड़ शारदासे विनती करी कि, हे माता! हमारा बड़ा भारी संकट देखकर आज आप वोही उपाय करो कि, जिसतरह रामचन्द्रजी राजको तजकर बनमें चले जावें, हे माता! रामके वनमें जानेसे देवताओंके सब काम बन जायंगे ॥ १३ ॥

सुनि सुर बिनय ठाढ़ि पछिताती ॥ भइँउ सरोजबिपिन हिमराती ॥ १ ॥ ❋
देखि देव पुनि कहहिँ बहोरी ॥ मातु तोहिँ नहिँ थोरिउ खोरी ॥ २ ॥ ❋

देवताओंकी ऐसी विनती सुनकर शारदा खड़ी खड़ी पछताने लगी. उस समय सरस्वतीकी यह दशा होगयी कि–मानों कमलवनकी दशा हिमऋतुमें हो जाती है. जैसे हिमऋतुमें कमल कुम्हला जाते है, ऐसे शारदा कुम्हला गई ॥ १ ॥ शारदाकी ऐसी म्लान दशा देखकर देवतानने फिर सरस्वतीसे कहा कि–हे माता! इसमें आपको थोडीभी खोड़ नहीं लगेगी ॥ २ ॥

बिस्मयहर्षरहित रघुराऊ ॥ तुम जानहुँ रघुबीरस्वभाऊ ॥ ३ ॥ ❋
जीव कर्म बश दुखसुखभागी ॥ जाइय अवध देवहितलागी ॥ ४ ॥ ❋

क्योंकि रामचन्द्रजीके न तौ हर्ष है और न शोच है. सो प्रभुका स्वभाव तू जानती ही है ॥ ३ ॥ कर्मोंके वश होकर सुख दुख पाना सो तौ जीवोंके लिये है. परमेश्वर तौ स्वतंत्र है वह कर्मोंके आधीन नहीं है इसलिये हे माता! अब आप देवतानका हित करनेके लिये अयोध्यापुरी शीघ्र जाओ ॥ ४ ॥

बार बार गहि चरण सकोची ॥ चली बिचारि बिबुध मति पोची ॥ ५ ॥ ❋

ऊंच निवास नीच करतूती ॥ देखि न सकहिँ पराइ बिभूती ॥ ६ ॥ ❀

ऐसे कहकर देवताओंने बारंबार चरण गहे; तब संकुचित हो सरस्वती वहांसे चली.पर उसने अपने मनमें विचार किया कि–देवताओंकी यह सलाह बिलकुल खराब है ॥ ५ ॥ सरस्वतीने अपने मनमें कहा कि–चाहे आदमी किसी सबबसे ऊंचे दर्जेको पहुंच जाय तथापि जिनकी करनी नीचे दर्जेकी है वे पराये मनुष्यका वैभव कदापि नहीं देख सकते और देखते है तो देखते ही जल बल भस्म हो जाते है ॥ ६ ॥

आगिल काज बिचारि बहोरी ॥ करिहैं चाल कुशल कवि मोरी ॥ ७ ॥ ❀
हर्षि हृदय दशरथपुर आई ॥ जनु ग्रहदशा दुसह दुखदाई ॥ ८ ॥ ❀

सरस्वतीने मनमें विचारा कि–देवताओंने जो यह काम मुझको सौंपा है. वह बिलकुल पोंचा है. सो चाहे मेरे इस कामको कवि यानी ज्ञानी लोग भला नहीं कहेंगे, पर उसके आगेके कामको विचार कर विचक्षण कविलोग मेरी चाह करेंगे. प्रभु वनमें जा रावणका बध और समुद्रमे सेतुकी रचना इत्यादि अनेक चरित्र करेंगे. तिन चरित्रोंको गा गाकर लोग संसारसे पार उतरेंगे. प्रभुके चरित्रोंका प्रबंध बनानेके लिये मेरी भी चाह रहेगी ॥ ७ ॥ ऐसे विचार कर मनमे आल्हादित होकर वह सरस्वती दशरथजीकी नगरीमें आई. उसवक्त वह वहां आती ऐसी दीख पड़ती थी कि, मानों कोई दुखदायी दुसह ग्रह मूर्तिमान् चली आती है ॥ ८ ॥

दोहा–नाम मन्थरा मन्दमति, चेरि कैकयीकेरि ॥ ❀

अयश पिटारी ताहि करि, गई गिरा मति फेरि ॥ १४ ॥ ❀

सरस्वतीने वहां आ कैकेयीकी दासी मंदबुद्धि मंथरा नाम कुब्जाकी बुद्धिको फेरकर उसे कुजसकी पिटारी बनाय आप वहांसे पीछी लौट गई ॥ १४ ॥

देखि मन्थरा नगर बनावा ॥ मंगल मंजुल बाजु बधावा ॥ १ ॥ ❀
पूंछिसि लोगन्ह काह उछाहू ॥ रामतिलक सुनि भा उर दाहू ॥ २ ॥ ❀

नगरके भीतर शुभ मंगलकृत्य हो रहे है, बाजे बाज रहे है, बधाई हो रही है, ऐसा नगरका अद्भुत बनाव देखकर मंथराने लोगोंसे पूंछा कि–आज यह किसबातका उत्सव है ? तब उन्होंने मंथरासे कहा कि–तुझे मालूम नहीं ? कल रामचन्द्रजीका राजतिलक है. उसका यह उत्सव है. ये समाचार सुन उसके हृदयमें जलन पैदा हो गयी ॥ १ ॥ २ ॥

करै बिचार कुबुद्धि कुचाली ॥ होइ अकाज कवन बिधि काली ॥ ३ ॥ ❀
देखि लागि मधु कुटिल किराती ॥ जिमि गँव तकै लेउँ केहि भांती ॥ ४ ॥ ❀

जिससे वह कुबुद्धि और कुचाली मंथरा मनमें विचार करने लगी कि–अब कलका कल बिगाड़ किसतरह होजाय ? ॥ ३ ॥ जैसे कोई कुटिल भिल्लिनी मधु यानी शहदके छत्तेको देखकर चुपकेसे दांव ताकती है कि, मैं इसे कैसे लेऊं ऐसे वो दासी दांव ताकने लगी ॥ ४ ॥

भरतमातुपहँ गइ बिलखानी ॥ का अनमनि हँसि हँसि कह रानी ॥ ५ ॥ ❀
उतर न देइ सो लेइउसांसू ॥ नारिचरित करि ढारति आंसू ॥ ६ ॥ ❀

वह नीच बिलखवदन होकर भरतकी माता कैकेयीके पास गई,तब कैकेयीने हँस हँसकर उससे पूंछा कि-हे मंथरा ! आज तू अनमनी क्यों है ? ॥ ५ ॥ तथापि उसने कैकेयीको पीछा कुछ भी उत्तर नहीं दिया लंबी लंबी श्वास लेने लगी और त्रियाचरित करके आंसू बहाने लगी ॥ ६ ॥

हँसि कह रानि गाल बड़ तोरे ॥ दीन्ह लषण सिख अस मन मोरे ॥ ७ ॥ ❀
तबहुँ न बोलि चेरि बड़ि पापिनि ॥ छांड़ै श्वासकारि जनु साँपिनि ॥ ८ ॥ ❀

तब रानीने हँसकर कहा कि-तू बड़बोली बहुत है कुछ किसीसे कहा होगा और उसीसे कहीं लक्ष्मणने तुझको शिक्षा दी होगी. मेरे मनमें तौ यह बात जँचती है ॥ ७ ॥ तौ भी वो महापापिनी दासी पीछी कुछ न बोली और ऐसे उसास छांड़ने लगी कि-मानों काली सर्पिणीही क्रोधित हो रही है ॥ ८ ॥

दोहा-सभय रानि कह कहसि किन, कुशल राम महिपाल ॥ ❀
भरत लषण रिपुदमन सुनि, भा कुबरीउर शाल ॥ १५ ॥ ❀

तब भयभीत होकर रानीने कहा कि-अरे ! तू कहती क्यों नहीं ? रामचन्द्र,राजा दशरथजी,भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न ये सब प्रसन्न तौ है ?कैकेयीके ये बचन सुन कुब्जाके मनमें बड़ा दुःख पैदा हुआ. रामका नाम पहले लेनेसे कैकेयीका स्नेह रामपर राजा करते भी ज्यादा है. इस विचारसे उसके मनमें सालसा खड़ा हो गया ॥ १५ ॥

का सोवत सुहागअभिमानी ॥ निकट महाभय तू न डरानी ॥ १ ॥ ❀
कत सिख देहि हमहिं कोउ माई ॥ गाल करब केहिकर बल पाई ॥ २ ॥ ❀

मंथराने केकयीको बहकाने लिये सरस्वतीकी प्रेरणासे कहा कि-तू अपने मनमें सौभाग्यका घमंड रखकर क्यों सोयी पड़ी है ? हाय ! महा घोर भय तेरे बहुत निकट आगया है, तिसपर भी तू बिलकुल नहीं डरती है ॥ १ ॥ हे माता ! हमको कोई क्यों शिक्षा देवे ? और हम किसके बलसे गाल बजावें ? ॥ २ ॥

रामहिं छांड़ि कुशल केहि आजू ॥ जाहि नरेश देत युवराजू ॥ ३ ॥ ❀
भा कौसल्यहिँ बिधि अति दाहिन ॥ देखत गर्ब रहत उर नाहिन ॥ ४ ॥ ❀

रामको छोड़कर आज जगतमें किसका भला होना है ? जिसे राजा दशरथ युवराजपदवी देते हैं ॥ ३ ॥ आज कौसल्याको विधाता बहुत अनुकूल हो गया है, जिसको देखतेही मनमें घमंड हरनेका तौ काम ही क्या ? ॥ ४ ॥

देखहु कस न जाइ सब शोभा ॥ जो अवलोकि मोर मन क्षोभा ॥ ५ ॥ ❀
पूत बिदेश न शोच तुम्हारे ॥ जानतिहै बश नाह हमारे ॥ ६ ॥ ❀

अरी ! तू जाकर सब शोभाको क्यों नहीं देखती है ? जिसको देखकर मेरा मन क्षोभित हो गया है ॥ ५ ॥ हे रानी ! तेरा पुत्र तौ विदेशसेवन करता है, तिसपर भी तुझको उसका शोच नहीं आता ? तू अपने जीमें जानती है कि, राजा हमारे वशमे हैं ॥ ६ ॥

नींद बहुत प्रिय सेज तुराई ॥ लखहु न भूप कपट चतुराई ॥ ७ ॥ ❀
सुनि प्रिय बचन कुटिल मन जानी ॥ झखी रानि तब रहि अरगानी ॥ ८ ॥ ❀

पुनि अस कबहुँ कहसि घरफोरी ॥ तौ धरि जीह कढावों तोरी ॥ ९ ॥ ❀

पर हे रानी ! वो आपके वशमे नहीं है. आपको इस बातकी क्या खबर ? क्योंकि आप तो अपने रुईभरे गुलगुले बिछौनेवाली प्यारी सेजसे काम रखती हो. उसपर पड़ी २ खूब नींद लेती हो. आपको राजाके कपटकी चतुराईकी क्या मालूम ? ॥ ७ ॥ कूबरीके मुखसे प्रिय बचन सुन, उसे कुटिलचित्त जानकर, रानी कैकेयीने क्रोध किया, तो वह कूबरी भी चुप हो अलग जा बैठी ॥ ८ ॥ कैकेयीने कुब्जासे कहा कि—हे घरफोरी ! जो कभी फिर ऐसा कहेगी तो धरकर तेरी जीभ कढ़ा डालूंगी ॥ ९ ॥

दोहा--काने खोरे कूबरे, कुटिल कुचाली जानि ॥ ❀
तियबिशेष पुनि चेरि कहि, भरतमातु मुसुकानि ॥ १६ ॥ ❀

काने, खोरे और कूबरे, ये हमेशा कुटिल और कुचाली होते हैं. तिसमें भी स्त्रीजाति और फिर उसमें दासी. सो इसका तो कहना ही क्या ? ऐसे मनमें जान, कैकेयी मुसकायी और बोली ॥ १६ ॥

प्रियबादिनि सिख दीन्हिउँ तोहीं ॥ सपनेहुँ तोपर कोप न मोहीं ॥ १ ॥ ❀
सुदिन सुमंगलदायक सोई ॥ तोर कहा फुर जादि न होई ॥ २ ॥ ❀

कि—हे प्रियवादिनी ! मैंने तुझको यह शिक्षा दी है. बाकी, तुझपर तो मुझे स्वप्नमेभी गुस्सा नहीं आता ॥ १ ॥ हे मंथरा ! अच्छा शुभ और सुमंगलकारी दिन वही होगा कि जिस दिन तेरा कहना (रामका राज्याभिषेक) सत्य होगा ॥ २ ॥

जेठ स्वामि सेवक लघु भाई ॥ यह जिनकर कुलरीति सदाई ॥ ३ ॥ ❀
रामतिकल जो सांचेहु काली ॥ मांगु देउँ मनभावत आली ॥ ४ ॥ ❀

हमारे सूर्यवंशियोंकी यह सदाकी रीति है कि—बड़ा भाई तो राजका मालिक होता है और छुटभैया उसकी सेवा करते है ॥ ३ ॥ हे सखी ! जो सचमुच कलका कलही रामका राजतिलक है, तो जो तेरे मनमें इच्छा हो सोही मांग. तू जो मांगेगी वोही मैं तुझे दूंगी ॥ ४ ॥

कौशल्यासम सब महतारी ॥ रामहिँ सहजस्वभाव पियारी ॥ ५ ॥ ❀
मोपर करहिँ सनेह बिशेषी ॥ मैं करि प्रीति परीक्षा देषी ॥ ६ ॥ ❀

अरी आली ! रामचन्द्रको सब मातायें सहजस्वभावसे कौसल्याके जैसी प्रिय लगती हैं. जैसी कौसल्या, वैसी ही सब; किसीमें वो दुर्भाव नहीं रखता ॥ ५ ॥ तिसमें भी मुझसे तो वह बहुत ही स्नेह रखता है. मैने जांच कर उसकी प्रीतिकी परीक्षा कर लीनी है ॥ ६ ॥

जो बिधि जन्म देइ करि छोहू ॥ होहिँ राम सिय पूत पतोहू ॥ ७ ॥ ❀
प्राणते अधिक राम प्रिय मोरे ॥ तिनके तिलक क्षोभ कस तोरे ॥ ८ ॥ ❀
अस प्रिय बचन सुनायो मोहीं ॥ कहु मंथरा देहुँ का तोहीं ॥ ९ ॥ ❀

जो विधाता कृपा करके फिर कहीं जन्म देवे तो वहां मुझे राम तो पुत्र और सीता बहू मिलै. यही मेरी प्रार्थना है ॥७॥ रामचन्द्र मुझको प्राणोंसेभी प्यारे हैं. उसके राजतिलक होनेमें तेरे मनमें यह क्षोभ कैसे

हुआ ?॥ ८ ॥ हे मंथरा ! तूने मुझको ऐसे प्रिय बचन सुनाये. कह, अब मैं तुझे क्या देऊं? मांग ॥ ९ ॥

दोहा-भरतशपथ तोहिँ सत्य कहु, परिहरि कपट दुराव ॥ ❀
हर्षसमय बिस्मय करसि, कारण मोहिं सुनाव ॥ १७ ॥ ❀

तुझको भरतकी शपथ है, तू कपट और छलको छांड़कर सत्य कह दे, कि आनंदके समयमें तेरे मनमें क्षोभ कैसे हुआ ? इसका जो कारण हो वो मुझे सुनाव ॥ १७ ॥

सुनत बचन मंथरा रिसानी ॥ बोली बचन कपटछलसानी ॥ १ ॥ ❀
एकहि वार आश सब पूजी ॥ अब कछु कहब जीभ करि दूजी ॥ २ ॥ ❀

कैकेयीके ये बचन सुन मंथरा गुस्सा हुई और कपट व छलभरी वाणी बोली कि- ॥ १ ॥ अब मैं क्या कहूं ? मेरी तो एकही बारमें सब आशा पूर्ण होगयी. क्या अब मैं कुछ दूसरी जीभ करके कहूंगी ? ॥ २ ॥

फोरै योग कपार अभागा ॥ भलो कहत दुख रौरेहु लागा ॥ ३ ॥ ❀
कहइ झूंठ फुर बात बनाई ॥ सो प्रिय तुमहिँ करुइ मैं माई ॥ ४ ॥ ❀

मेरा यह अभागा कपाल फोरनेके लायक है; क्योंकि भली कहते आपको बुरी लगी ॥ ३ ॥ जो कोई झूंठी बातको सच बनाके आपके सामने कहता है, वह आपको प्यारा लगता है और मैं ऐसे नहीं कहती; इसीसे आपको करुई लगती हूं ॥ ४ ॥

हमहुँ कहब अब ठकुरसुहाती ॥ नाहिं तो मौन रहब दिनराती ॥ ५ ॥ ❀
करि कुरूप विधि परबश कीन्हा ॥ बाचाशाल हमैं तिन्ह दीन्हा ॥ ६ ॥ ❀

अब हम भी ठाकुरको सुहाती बातें कहेंगी या नहीं तो हमेशा चुप रहेंगी ॥ ५ ॥ विधाताने कुरूप देकर हमें परवश तो किया ही है, परंतु उसमें भी हमें वाणीका साल ऐसा बुरा दिया है कि-जिसको कुछ कह ही नहीं सकतीं ॥ ६ ॥

कोउ नृप होउ हमैं का हानी ॥ चेरि छांड़ि अब होब कि रानी ॥ ७ ॥ ❀
जारै योग स्वभाव हमारा ॥ अनभल देखि न जाइ तुम्हारा ॥ ८ ॥ ❀
ताते कछुक बात अनुसारी ॥ क्षमहु देबि बड़ चूक हमारी ॥ ९ ॥ ❀

चाहे हमारे भाये कोई राजा होवे; हमें इससे क्या पंचायत है ? हमारी इसमें कोई हानि नहीं है. क्या अब हम दासीपन छाँड़कर रानी हो सकतीं हैं ? कभी नहीं. फिर बेफाइदे पंचायत क्यों ?॥ ७ ॥ हमारा स्वभावही जलानेके योग्य है; क्योंकि हमसे तुम्हारा बुरा कभी देखा नहीं जा सकता ॥ ८ ॥ इससे हमने कुछ बात कही थी, सो हे देवी ! आप माफ करना. हमारेमें बड़ी भारी चूक पड़ी ॥ ९ ॥

दोहा-गूढ कपट प्रिय बचन सुनि, तीय अधरबुधि रानि ॥ ❀
सुरमायावश बैरिणिहिँ, सुहृद जानि पतिआनि ॥ १८ ॥ ❀

मंथराके गूढ़ार्थ और कपटभरे प्रियबचन सुनकर कैकेयीकी बुद्धि भी फिर गई; क्योंकि

स्त्रियोंकी बुद्धि अधरबुद्धि यानी तुच्छ होती है. इससे वह कैकेयी देवताओंकी मायाके वश होकर वैरन (मंथरा) को सुहृद समझकर पतियाइ गई ॥ १८ ॥

सादर पुनि पुनि पूंछति ओही ॥ शबरीगान मृगी जनु मोही ॥ १ ॥ ❋
तस मति फिरी अहै जस भावी ॥ रहसी चेरि घात भलि फावी ॥ २ ॥ ❋

मंथराके वाग्जालमें फँसकर कैकेयी आदरके साथ बारंबार मंथराको कैसे पूंछती है कि, मानों शबरी (भिलिनी) के गानसे हरिणी मोहित है गई है ॥ १ ॥ उस समयकी जैसी भवितव्यता थी वैसी ही उसकी बुद्धि फिर गई. तब मंथरा मनमें प्रसन्न हुई कि, मेरी घात तो खूब (फबी मैंने जैसा चाहा था वैसाही हुआ) ॥ २ ॥

तुम पूंछहु मैं कहत डराऊं ॥ धरेहु मोर घरफोरी नाऊं ॥ ३ ॥ ❋
सजि प्रतीति गढ़ि बहुबिधि छोली ॥ अवध साढ़साती जनु बोली ॥ ४ ॥ ❋

ऐसे मनमें कह, उसने कैकेयीसे कहा कि—आप पूछतीं हो पर मैं कहती बहुत डरती हूं क्योंकि आपने मेरा नाम घरफोरी रक्खा है ॥ ३ ॥ मंथरा ऐसे कई तरह गढ़ि छोलि कहे सुधार सँवार कर रानीके मनमें पक्की प्रतीति कराके मानों अयोध्यापुरीकी शनैश्चरकी साढ़साती दुःखदायिनी दशा हो ऐसे बोली ॥ ४ ॥

प्रिय सियराम कहा तुम रानी ॥ रामहिँ तुम प्रिय सो फुर बानी ॥ ५ ॥ ❋
रहे प्रथम अब सो दिन बीते ॥ समय पाइ रिपु होहिँ पिरीते ॥ ६ ॥ ❋

हे रानी ! आपने जो कहा कि ' राम और सीता मुझको बहुत प्यारे लगते है ' और रामको आप बहुत प्रिय लगती हो, सो यह बात सच है ॥ ५ ॥ पर पहले जो दिन थे, अब वे दिन गये है. अवसर पाकर प्यारे भी शत्रु हो जाते है ॥ ६ ॥

भानु कमलकुल पोषनहारा ॥ बिनुजल जारि करै सो क्षारा ॥ ७ ॥ ❋
जर तुम्हारि चह सवति उपारी ॥ रूँधहु करि उपाइ बर बारी ॥ ८ ॥ ❋

देखिये, सूर्य कमलवनको पोषनेवाला है पर वह भी जल न हो तो उसे जलाकरभस्मकर देता है ॥ ७ ॥ तुम्हारी सौत कौसल्या तुम्हारी जड़ उखाड़ना चाहती है सो जो तुमसे हो सके तो उपायरूप अच्छी बारी यानी आलबाल (वृक्षकी जड़ जमनेके लिये चबूतरा) बनाके उसे रोंको ॥ ८ ॥

दोहा– तुमहिँ न शोच सुहागबल, निजबश जानहुँ राव ॥ ❋
मन मलीन मुँह मीठ नृप, राउर सरल स्वभाव ॥ १९ ॥ ❋

तुमको तो सौभाग्यके बल किसी बातका शोच हैही नहीं. तुम अपने मनमें राजाको अपने अधीन समझती हो, पर राजा मनका बड़ा मैला और मुंहपर मीठा है. आपका बिलकुल सीधा स्वभाव है. सीधा मनुष्य कुटिल मनवाले मनुष्यकी बातको क्या जाने ? ॥ १९ ॥

चतुर गँभीर राममहतारी ॥ बीच पाइ निजकाज सँवारी ॥ १ ॥ ❋
पठये भरत भूप ननिऔरे ॥ राममातुमत जानब रौरे ॥ २ ॥ ❋

देखो. रामकी माता कौसल्या कैसी गंभीर और चतुर है, उसने मौका पाकर अपना काम कैसा

सुधार लिया है ॥ १ ॥ राजाने भरतको जो नानाके घर पठाया है, सो यह आप पक्की समझ लेना कि, यह काम कौसल्याकी संमति (राय) से हुआ है ॥ २ ॥

सेवहिँ सकल सवति मोहिँ नीके ॥ गर्बित भरतमातु बल पीके ॥ ३ ॥ ❋
शाल तुम्हार कौशिलहिँ माई ॥ चतुर कपट नहिँ परत लखाई ॥ ४ ॥ ❋

कौसल्याके मनमें और तो कोई दुःख नहीं है, सिर्फ एक आपका साल है, क्योंकि वो जानती है कि और तौ सब सौतें मेरी सेवा करती है केवल एक कैकेयी पतिके बल गर्व (घमंड) युक्त होकर मेरी सेवा नहीं करती ॥ ३ ॥ यह दुःख उसके मनमें पूरा पूरा है, पर हे माई ! वो चतुर बहुत है, इसलिये उसका कपट लख नहीं पड़ता ॥ ४ ॥

राजहिँ तुमपर प्रीति विशेषी ॥ सवति स्वभाव सकै नहिँ देषी ॥ ५ ॥ ❋
रचि प्रपंच भूपहिँ अपनाई ॥ रामतिलकहित लगन धराई ॥ ६ ॥ ❋

राजाकी आपके ऊपर परम प्रीति है, सो सपत्नीभावसे वह देख नहीं सकती ॥ ५ ॥ अतएव उसने प्रपंच रच, राजाको अपनाय कर, रामके राजतिलकके लियेएका एक लग्न धरवा लिया है ॥ ६ ॥

यहि कुल उचित रामकहँ टीका ॥ सबहिँ सुहाइ मोहिँ सुठि नीका ॥ ७ ॥ ❋
आगिल वात समुझि डर मोहीं ॥ दैव देब फल सो फिरि ओहीं ॥ ८ ॥ ❋

यद्यपि रामकी राजतिलक होना इस कुलको रीतिसे उचित है और यह बात सबको अच्छी लगती है और मुझको भी पसंद है ॥ ७ ॥ पर कौसल्याके मनका मनोरथ जान आगेकी बात समझकर मुझको डर लगता है. मैं जानती हूं कि, जो कपट करेगा उसका फल फिर कर विधाता उसीको देगा ॥ ८ ॥

दोहा--रचि पचि कोटिक कुटिलपन, कीन्हेसि कपट प्रबोध ॥ ❋
कहेसि कथा शत सौति कर, जाते बढ़ै बिरोध ॥ २० ॥ ❋

अनेक प्रकारसे करोड़ों कुटिलता रच पचकर कूबरीने छलभरा उपदेश किया और सैंकड़ो सपत्नियोंकी विरोधकी बातें कहीं कि जिससे आपसमे विरोध बढ़े ॥ २० ॥

भावीबश प्रतीति उर आई ॥ पूँछि रानि निजशपथ दिवाई ॥ १ ॥ ❋
कां पूंछहु तुम अजहुँ न जाना ॥ हित अनहित निज पशु पहिँचाना ॥ २ ॥

भवितव्यता बल रानी कैकेयीके हृदयमें मंथराकी बातोंमे पक्का भरोसा आगया. तिससे उसने अपनी शपथ (सौगंद) दिलाके कूबरीसे पूँछा ॥ १ ॥ तब कुटिल कूबरीने कैकेयीसे कहा कि–तुम क्या पूँछती हो ? क्या तुम अब भी नहीं समझी हो ? अपने भले बूरेको तौ पशु भी पहिँचान लेता है ॥ २ ॥

भये पाख दिन सजत समाजू ॥ तुम सुधि पायहु मोसन आजू ॥ ३ ॥ ❋
खाइय पहिरिय राज तुह्मारे ॥ सत्य कहे नहि दोष हमारे ॥ ४ ॥ ❋

रामके राजतिलककी साभा तैयार होते पन्द्रह दिन हो गये हैं. जिसमें तुमको आज खबर पड़ी है, सोभी मेरे कहनेसे ॥ ३ ॥ तुमको तौ किसी बातकी सुध ही नहीं है. तौ भी हमें इस

बातसे क्या जरूर है? मैं तो आपके राज आनन्द करती हूं, खूब खाती हूं और अच्छे वस्त्र व आभूषण पहिरती हूं और हमको यह बात जरूर रखनी चाहिये कि, किसीकी चुगली न करना. परंतु हम जो सच्ची बात कहेंगी, उसमें हमारा दोष नहीं गिना जाता ॥ ४ ॥

जो असत्य कछु कहब बनाई ॥ तौ विधि देइहि हमहिं सजाई ॥ ५ ॥ ❀
रामहिं तिलक काल्हि जो भयऊ ॥ तुमकहँ विपतिवीज विधि भयऊ ॥६॥

जो हम कुछभी झूंठ बनाके कहेंगी, तो विधाता हमको जरूर दंड देगा ॥ ५ ॥ ऐसी पक्की प्रतीति कराके कुबरीने कहा कि–जो कल रामका राज्याभिषेक हो जायगा तो तुम जानो कि तुम्हारे लिये विधाताने आपदका बीज बो दिया है ॥ ६ ॥

रेखा खैंचि कहौं बल भाषी ॥ भामिनि भइउ दूधकी माषी ॥ ७ ॥ ❀
जो सुतसहित करहु सेवकाई ॥ तौ घर रहहु न आन उपाई ॥ ८ ॥ ❀

मैं लकीर खींचकर और पैज लगाके कहती हूं कि–हे रानी! अब तुम दूधकी मक्खीके जैसे अलग कर दी जाओगी ॥ ७ ॥ हां, जो तुम भरतके साथ उसकी सेवा करोगी तो जरूर घरमे रहने पाओगी. बाकी इसके सिवा दूसरा कुछ भी उपाय नहीं है ॥ ८ ॥

दोहा– कद्रू बिनतहिं दीन दुख, तुमहिं कौसल्या देव ॥ ❀
भरत बन्दिगृह सेइहैं, राम लषण कर नेव ॥ २१ ॥ ❀

जैसे सर्पोंकी माता कद्रूने गरुड़की माता विनताको दुख दिया, ऐसे कौसल्या तुम्हें दुख देवेगी और भरत कारागार (जेलखाने) में पड़ा रहेगा और लक्ष्मण सब प्रकारसे सुख चैन करेगा, क्योंकि उसके और रामके परस्पर बड़ी प्रीति है ॥ २१ ॥

केकयसुता सुनत कटु बानी ॥ कहि न सकै कछु सहमि सुखानी ॥ १ ॥
तनु पसेव कदली जनु कांपी ॥ कुबरी दशन जीह तब चापी ॥ २ ॥ ❀

कुबरीकी ऐसी कटु बाणी सुनकर कैकेयी कुछ कह नहीं सकी. सहमि कहे दुखी होकर सूख गयी ॥ १ ॥ कैकेयीके शरीरमें पसीना आगया. शरीर कदलीकी भांति कांपने लगा. तब तो कुबरीने अपनी जीभ दांतोंके बीच दबाई ॥ २ ॥

कहि कहि कोटिक कपट कहानी ॥ धीरज धरहु प्रबोधि सिरानी ॥ ३ ॥
कीन्हेसि कठिन पढ़ाइ कुपाठू ॥ जिमि न नवै फिरि उकठ कुकाठू ॥ ४ ॥

अनेक प्रकारकी कपटभरी करोड़ों कहानियां कह कहकर रानी कैकेयीको समझाया और कहा कि–अबतक तो क्या हुआ है? तू धीरज रख सब कुछ हो जायगा ॥ ३ ॥ रानीको कुठार पढ़ाकर उसने ऐसी कठिण कर दी कि, उसमें नम्रताका लेश नहीं रहा. जैसे उकटा हुआ खराब काठ टूट जाता है पर पीछा नवता नहीं. वो दशा कैकेयीकी हो गयी ॥ ४ ॥

---

१ एक दिन सर्पोंकी माता कद्रू और गरुड़की माता विनताके परस्परमें विवाद हुआ. ये दोनों कश्यपजीकी स्त्रियां थीं. उनमेंसे विनताने कहा कि–सूर्यके घोड़ेकी पूंछका रंग सुफेद है और कद्रूने कहा कि–नहीं; उसका रंग काला है. आपसमें विवाद होनेसे दोनोंने शर्त करी कि–जो झूठो होवे वह उसकी दासी बनके सौतके पास रहे. ऐसा ठहराव कर दोनों घोड़ेको देखने चलीं. तहां कद्रूने अपने पुत्र सांपोको आगे भेज दिया सो वे जाकर उसकी पूंछमें लिपट गये जिससे वो पूंछ श्याम दीखने लगी. तिसे देख विनता उस कपटको न समझकर उसकी दासी बनके रही.

फिरा कर्म प्रिय लागि कुचाली ॥ बकिहिँ सराहत मनहुँ मराली ॥ ५ ॥ ❋
सुनु मंथरा बात फुर तोरी ॥ दहिन आँख नित फरकत मोरी ॥ ६ ॥ ❋

कैकेयीका कर्म (भाग्य) फिर गया था, जिससे उसे वह कुचाली मंथरा बड़ी प्रिय लगने लगी. अतएव वह उसकी बारंबार प्रशंसा करने लगी. पर वो प्रशंसा कैसी मालूम होती थी कि, मानों हंसिनी बगुलीकी श्लाघा कर रही है ॥ ५ ॥ कैकेयी बोली कि–हे मंथरा ! सुन यह तेरी बात सच है; क्योंकि मेरी दाहिनी आंख हमेशा फरकती है ॥ ६ ॥

दिन प्रति देखौं राति कुसपना ॥ कहौं न तोहिँ मोहबश अपना ॥ ७ ॥ ❋
कहा करौं सखि शुद्ध सुभाऊ ॥ दाहिन बाम न जानौं काऊ ॥ ८ ॥ ❋

और रात्रिमें हमेशा खोटे २ सुपने देखती हूं. पर मैं अपने अज्ञानसे तुझको कभी नहीं कहती ॥ ७ ॥ कैकेयीने कहा कि–हे सखी ! मैं करूं क्या ? मेरा स्वभाव बहुत सरल है. मैं दहना या बायाँ कुछ नहीं जानती ॥ ८ ॥

दोहा–अपने चलत न आजुलगि, अनभल काहुक कीन्ह ॥ ❋
केहि अघ एकहि वार मोहिँ, दैव दुसह दुख दीन्ह ॥ २२ ॥ ❋

मैंने तो मेरे चलते आजतक किसीका बुरा नहीं किया है. फिर यह दैव मुझको एक साथ किस अपराधसे यह भारी दुसह दुःख देना चाहता है ? ॥ २२ ॥

नैहर जन्म भरब बरु जाई ॥ जियत न करब सवतिसेवकाई ॥ १ ॥ ❋
अरिबश दैव जिआवत जाही ॥ मरण नीक तेहिँ जियब न चाही ॥ २ ॥ ❋

चाहे मैं नैहरमें जाकर जन्मभर अपना निर्वाह करूंगी, पर अपने जीते जी सवतिकी नौकरी तो कभी नहीं करूंगी ॥ १ ॥ जिसको विधाता वैरीके आधीन जिलाता है उसके लिये तो जीनेसे मरना ही भला है ॥ २ ॥

दीन बचन कह बहुबिधि रानी ॥ सुनि कुबरी तियमाया ठानी ॥ ३ ॥ ❋
अस कस कहहु मानि मन ऊना ॥ सुख सुहाग तुम कहँ दिन दूना ॥ ४ ॥ ❋

रानी कैकेयीने ऐसे बहुत प्रकारके दीन बचन कहे. उन्हें सुनकर कूबरीने अपना स्त्रीचरित्र फैलाया ॥ ३ ॥ और कहा कि–हे रानी ! आप ऐसे कैसे कहती हो. आप अपने मनमें ऊनता मत मानो. आपके लिये सुख और सुहाग दिन दिन दूना होगा ॥ ४ ॥

जो राउर अस अनभल ताका ॥ सो पाइहि यह फलपरिपाका ॥ ५ ॥ ❋
जबते कुमति सुना मैं स्वामिनि ॥ भूंख न बासर नींद न यामिनि ॥ ६ ॥

जिसने आपका बुरा करना चाहा है, उसीको यह महा कठिन दुःखरूप फल मिलेगा ॥ ५ ॥ हे स्वामिनी ! जबसे मैंने ये बुरे समाचार सुने हैं तबसे मुझे दिनमें तो भूख नहीं लगती और रातमें नींद नहीं आती ॥ ६ ॥

पूंछा गुणिन्ह रेख तिन खांची ॥ भरत भुआल होब यह सांची ॥ ७ ॥ ❋
भामिनि करहु तौ कहौं उपाऊ ॥ हैं तुम्हरे सेवाबश राऊ ॥ ८ ॥ ❋

और मैंने ज्योतिषी व सामुद्रिक जाननेवाले गुणी पुरुषोंको पूछा था, तब उन्होंने लीक खींचकर कहा था कि "भरत राजा होगा, यह हम सच कहते है. इसमें फर्क नहीं पड़ेगा" ॥ ७ ॥ सो हे रानी! जो तू उपाय करे तब तो मैं तुझे कहूं इसमें कुछ संदेह नहीं; क्योंकि राजा बराबर आपकी सेवाके आधीन है ॥ ८ ॥

दोहा–परौं कूप तव बचनलगि, सकौं पूत पति त्यागि ॥ ❀
कहसि मोर दुख देखि बड़ी, कस न करब हितलागि ॥ २३ ॥ ❀

कुबरीके ऐसे कुटिल बचन सुन, पतिआइ कर कैकेयीने कुबरीसे कहा कि–तू यह क्या कहती है? जो तू करै तौ मैं कहूं? यदि तू कहै तौ तेरे बचनके वास्ते मैं कुएमें जाकर पड़ जाऊं और अपने पति और पुत्रको छोड़ देऊं. तू जो कहती है सो मेरे भारी दुःखको देखकर कहती है, सो जिससे मेरा भला होवे वो तेरा कहना मैं कैसे नहीं करूंगी? यदि तू कोई बुरा काम कहै तौ वह भी मैं करती हूं तो जिसमें मेरा भला है वो मैं कैसे नहीं करूंगी? ॥ २३ ॥

कुबरी करी कुबलि कैकेयी ॥ कपटछुरी उर पाहन टेयी ॥ १ ॥ ❀
लखै न रानि निकट दुख कैसे ॥ चरै हरित तृण बलिपशु जैसे ॥ २ ॥ ❀

कुबरीने कैकेयीको बलिका पशु बना लिया है और उसके हृदयरूप पाषाणपर कपटरूपी छूरी टेई है ॥ १ ॥ परंतु उस समीपके दुःखको वो रानी कैसे नहीं समझती है कि–जैसे हरी घास चरता हुआ बलिका पशु समीपमें पड़े हुए खड्गको नहीं देखता ॥ २ ॥

सुनत बात मृदु अंत कठोरी ॥ देति मनहुँ मधु माहुर घोरी ॥ ३ ॥ ❀
कहै चेरि सुधि अहै कि नाहीं ॥ स्वामिनि कहेहु कथा मोहिँ पाहीं ॥ ४ ॥

उस कूबरीकी वाणी सुनते तौ बहुत कोमल लगती है; परंतु अंतरमें वो बहुतही कठोर यानी दारुण है. मानों मधुमें मिलाकर जहर देती है. मधुके समान तौ उसकी मधुर वाणी है और जहरके समान उसका आशय है ॥ ३ ॥ चेरी (मंथरा) ने कहा कि–हे स्वामिनी! आपने मुझसे जो कथा कही थी, वो आपको याद है वा नहीं? ॥ ४ ॥

दुइ बरदान भूपसन थाती ॥ माँगहु आजु जुडावहु छाती ॥ ५ ॥ ❀
सुतहिँ राज रामहिँ बनबासू ॥ देहु लेहु सब सवतिहुलासू ॥ ६ ॥ ❀

तूने देवासुरसंग्राममें[१] दशरथजीको मदद दी थी जिससे दशरथजीने प्रसन्न होकर दो बरदान दिये थे. वे बरदान इनामत ज्योंके त्यों दशरथजीने धरोहरकी भांति धरे हुए है, सो अब आज वे बरदान मांगकर तू अपने हृदयको शीतल कर ॥ ५ ॥ तिनमें एक बरदानसे तौ भरतको राज्य और दूसरे बरदानसे रामचन्द्रजीको बनवास ये दो बरदान लेकर तू सब सवतियोंको आनन्दित कर ॥ ६ ॥

---

[१] एक समय देवता और दैत्योंका संग्राम हुआ. देवताओंने राक्षसोंको मारनेके लिये दशरथजीसे मदद मांगी. तब दशरथजी संग्राममें गये तहां दशरथजीका सारथी मारा गया, तब कैकेयीने घोड़ोंको हाँका और दशरथजीको अनेक शस्त्र अस्त्रोंसे बचाया जिससे प्रसन्न हो दशरथजीने दो बरदान दिये, वे कैकेयीने धरोहरकी भांति दशरथजीमें छोड़ रक्खे और कहा कि–जब मुझे चाहियेंगे तब वे बरदान मैं आपसे लेऊंगी.

भूपति रामशपथ जब करई ॥ तब माँगेहु जेहिँ बचन न टरई ॥ ७ ॥ ❃
होइ अकाज आजु निशि बीते ॥ वचन मोर प्रिय मानहुँ जीते ॥ ८ ॥ ❃

पर ये वरदान कब मांगने चाहिये कि, जब दशरथजी रामचन्द्रजीकी सौगन्द करलें. क्योंकि रामचन्द्रजीको शपथ किये पीछे तेरा वचन पीछा नहीं फिरेगा ॥ ७ ॥ सो अब तू जल्दी कर. जो आजकी रात बीत गयी तो पीछे तेरा अकाज हो जायगा. इसलिये मेरे वचनको तू अपने दिलसे प्यारा और हितकारी जान ॥ ८ ॥

दोहा–बड़ कुघात करि पातकिनि, कहेसि कोपगृह जाहु ॥ ❃
काज सँवारहु सजग सब, सहसा जनि पतियाहु ॥ २४ ॥ ❃

वह महापापिनी बड़ी खोटी घातकी बात बोली कि–अब तू कोपघरमें जा. देखियो सावधान रहकर अपना काम सुधार लीजियो. एकाएक भरोसा मत कर लीजियो ॥ २४ ॥

कुबरिहिँ रानि प्राणसम जानी ॥ बार बार बड़ि बुद्धि बखानी ॥ १ ॥ ❃
तुहिँ सम हित न मोर संसारा ॥ बहे जातकर भयसि अधारा ॥ २ ॥ ❃

रानीने कुबरीको प्राणोंके जैसी प्यारी समझके उसकी बुद्धिकी बड़ी प्रशंसा करी ॥ १ ॥ और कहा कि–संसारमें मेरे तेरे जैसा भला चाहनेवाला दूसरा कोई नहीं है. मैं तो इस जलमें बही जाती थी; पर तू मेरी आधार हुई है यानी तेरे प्रतापसे मेरा बचाव हुआ है ॥ २ ॥

जो विधि पुरव मनोरथ काली ॥ करौं तोहिँ चखपूतरि आली ॥ ३ ॥ ❃
बहुबिधि चेरिहिँ आदर देयी ॥ कोपभवन गवनी कैकेयी ॥ ४ ॥ ❃

यदि विधाता कल मेरा मनोरथ पूर्ण करेगा तो हे सखि ! मैं तुझे मेरी आंखकी पुतरी करूंगी ॥ ३ ॥ ऐसे अनेक प्रकारसे कूबरीको आदर दे, कैकेयी कोपभवनको चली ॥ ४ ॥

विपतिबीज वर्षाऋतु चेरी ॥ भुँइ भइ कुमति केकयीकेरी ॥ ५ ॥ ❃
पाइ कपट जल अंकुर जामा ॥ बर दोउ दल फल दुख परिणामा ॥ ६ ॥

यह विपतका बीज बोया गया तहां कुबरी तो वर्षाऋतु हुई और कैकेयीकी कुबुद्धि जमीन हुई ॥ ५ ॥ कपटरूप जलको पाकर अंकुर निकला, जिसके वरदानरूप दो पत्ते थे और परिणाममें जो दुःख हुआ वही फल था ॥ ६ ॥

कोपसमाज साजि सजि सोई ॥ राज करत तेहिँ कुमति बिगोई ॥ ७ ॥ ❃
राउर नगर कोलाहल होई ॥ यह कुचाल कछु जान न कोई ॥ ८ ॥ ❃

वह कैकेयी कोपकी सामा सजकर तैयार हुई, क्योंकि राज करती हुई कैकेयीको कुबुद्धिने भ्रमा दिया था ॥ ७ ॥ राजाकी नगरीमें महोत्सवका भारी कोलाहल हो रहा है. तहां इस कुचालको कोईभी नहीं जानता है ॥ ८ ॥

दोहा–प्रमुदित पुर नर नारि सब, साजि सुमंगलचार ॥ ❃
यक प्रविशहिँ यक निकसहीं, भीर भूपदरबार ॥ २५ ॥ ❃

नगरके सब नरनारी आनंदित होकर मंगलचार सज रहे हैं. राजद्वारमें एक घुसता है और एक निकसता है, राजाके दरबारमें भारी भीड़ हो रही है ॥ २५ ॥

बाल सखा सुनि हिय हरषाहीं ॥ मिलि दशपांच रामपहँ जाहीं ॥ १ ॥ ❀
प्रभु आदरहिँ प्रेम पहिँचानी ॥ पूछहिँ कुशल क्षेम मृदु बानी ॥ २ ॥ ❀

राजतिलकके समाचार सुन प्रभुके बालमित्र मनमें प्रसन्न होते है और दश दश पांच पांच मिल मिलकर प्रभुके पास जाते है ॥ १ ॥ प्रभु उनकी प्रीतिको पहिचाँनकर आदर करते है और सुकोमल वाणीसे उन्हें क्षेम कुशल पूंछते है ॥ २ ॥

फिरहिँ भवन प्रभु आयसु पाई ॥ करत परस्पर राम बड़ाई ॥ ३ ॥ ❀
को रघुबीरसरिस संसारा ॥ शील सनेह निबाहनहारा ॥ ४ ॥ ❀

प्रभुकी आज्ञा पाकर वे लोग घरमें इधरके उधर घूमते है और परस्पर रामचन्द्रजीकी बड़ाई करते है ॥ ३ ॥ और कहते है कि–रामचन्द्रजीके बराबर शील और स्नेहको निबाहनेवाला संसारमें दूसरा कौन है ? कोई नहीं ॥ ४ ॥

जेहि जेहि योनि कर्मवश भ्रमहीं ॥ तहँ तहँ ईश देहिँ यह हमहीं ॥ ५ ॥ ❀
सेवक हम स्वामी सियनाहू ॥ होउ नाथ यह ओर निबाहू ॥ ६ ॥ ❀

इसलिये हम कर्मबश होकर जिस जिस योनिमें भ्रमण करैं वहां वहां प्रभु हमको यही स्वामी देवें ॥ ५ ॥ हम तो सेवक और सीतापति श्रीरामचन्द्रजी हमारे स्वामी होवें. हे नाथ ! कृपा करके आप इस तर्फका निबाह करो ॥ ६ ॥

अस अभिलाष नगर सबकाहू ॥ केकयसुता हृदय अति दाहू ॥ ७ ॥ ❀
को न कुसंगति पाइ नशाई ॥ रहै न नीचमते गरुआई ॥ ८ ॥ ❀
अतिहिँ सुशील केकयी रानी ॥ दुष्टसंगते मति बौरानी ॥ ९ ॥ ❀

सब नगरके लोगोंकी तो यह इच्छा है और कैकेयीके हृदयमे बड़ा संताप है ॥ ७ ॥ कवि कहता है कि–बुरी संगती पाकर किसका नाश नहीं हुआ है ? नीच पुरुषका मता माननेंसे कभी गौरव नहीं रहता ॥ ८ ॥ देखिये; कैकेयी रानी कैसी सुशील और सुबुद्धि थी पर उसकी भी बुद्धि दुष्टकी संगतिसे भ्रष्ट होगयी ॥ ९ ॥

दोहा–सांझ समय सानन्द नृप, गये केकयीगेह ॥ ❀
गमन निठुरता निपट किय, जनु धरि देह सनेह ॥ २६ ॥ ❀

संध्याके समय राजा दशरथ बड़े आनंदके साथ कैकेयीके महल पधारे. सो उस समय उनका जाना कैसा मालूम होता था कि, मानों निठुरताके पास स्नेह शरीर धारण कर जा रहा है ॥ २६ ॥

कोपभवन सुनि सकुचे राऊ ॥ भयबश आगे परै न पाऊ ॥ १ ॥ ❀
सुरपति बसै बाहुबल जाके ॥ नरपति रहहिँ सकल रुख ताके ॥ २ ॥ ❀

'कैकेयी कोपभवनमें है' ये समाचार सुन राजा सकुच गया. डरके मारे आगे पांव नहीं पड़ते ॥ १ ॥ कवि कहता है कि–जिनके भुजबलके आधीन इंद्र रहता है और तमाम राजालोग जिनकी रुख देखते रहते हैं ॥ २ ॥

सो सुनि तिय रिस गये सुखाई ॥ देखहु काम प्रताप बड़ाई ॥ ३ ॥ ❀
शूल कुलिश असि अंगनिहारे ॥ ते रतिनाथ सुमनशर मारे ॥ ४ ॥ ❀

वे दशरथजी स्त्रीका क्रोध सुनकर सुखाई गये, अहह ! कामदेवका प्रताप और बड़ाई देखो ॥ ३ ॥ जो त्रिशूल, वज्र और खड्ग आदि शस्त्रोंके घावोंको सहता है उस महाबली राजाको कामदेवने पुष्पोंके बाणोंसे मार लिया ॥ ४ ॥

सभय नरेश प्रियापहँ गयऊ ॥ देखि दशा दुख दारुण भयऊ ॥ ५ ॥ ❋
भूमिशयन पट मोट पुराना ॥ दिये डारि तनु भूषण नाना ॥ ६ ॥ ❋

राजा डरते डरते अपनी प्यारीके पास गये. उसकी दशा देखतेही मनमें महादारुण दुःख हुआ ॥ ५ ॥ दशरथजी देखते क्या है ? कि, कैकेयी पृथ्वीपर विना आसन पड़ी है. मोटा और पुराना वस्त्र पहिरे है, शरीरके तमाम आभूषण डाल दिये है ॥ ६ ॥

कुमतिहिँ कस कुबेषता फाबी ॥ अनहित बात सूच जनु भावी ॥ ७ ॥ ❋
जाइ निकट नृप कह मृदु बानी ॥ प्राणप्रिया केहि हेतु रिसानी ॥ ८ ॥ ❋

कवि कहता है कि-उस कुबुद्धि कैकेयीको वह कुबेष कैसा फबा था कि, मानों भावीने बुरी बात (विधवापन) को पहलेहीसे सूचित कर दिया था ॥ ७ ॥ राजाने उसके समीप जाकर कोमल वाणीसे कहा कि,हे प्राणप्रिया ! तू गुस्से क्यों हुई है ? ॥ ८ ॥

छंद-केहि हेतु रानि रिसानि परसत पाणि पतिहिँ निवारई ॥ ❋
मानहुँ सरोष भुअंगभामिनि विषम भाँति निहारई ॥ ❋
दोउ बासना रसना दशन बर मर्म ठाहर देखई ॥ ❋
तुलसी नृपति भवितव्यतावश कामकौतुक लेखई ॥ १ ॥ ❋

हे रानी ! तू क्यों रिसानी है ? ऐसे कह, राजाने उसका हाथसे स्पर्श किया, तब उसने पतिको हाथ पीछा हटा दिया. और उस रानीने राजाकी कैसे टेढ़ी तरहसे देखा कि, मानों रोषभरी सर्पिणी देखती है. सर्पिणीके दो जीभें और दो दांत होते है सो उसके जो दो वरदान मांगनेकी वासना हैं सोही तो दो जीभें हैं. और दो वरदान है सो ही दांत हैं. डँसनेके लिये मर्मकी जगह देखती है. तुलसीदासजी कहते हैं कि-ऐसी कठिन विपत् आनेपरभी राजाने तो भावीके वश होनेसे वह सब कामदेवका कौतुक जाना अर्थात् प्रणयकोप जाना ॥ १ ॥

सोरठा-बार बार कह राउ, सुमुखि सुलोचनि पिकबचनी ॥ ❋
कारण मोहिँ सुनाउ, गजगामिनि निजकोपकर ॥ १ ॥ ❋

राजा दशरथ वारंवार कैकेयीको कहते हैं कि-हे सुमुखी ! हे सुलोचनी ! हे पिकबयनी ! कोकिलाकीसी मधुर वचन बोलनेहारी ! हे गजगामिनी! तेरे कोप करनेका कारण क्या है सो मुझे सुनाव१॥

अनहित तोर प्रिया केहिँ कीन्हा ॥ केहिँ दुइ शिर केहिँ यम चह लीन्हा ॥ १ ॥
कहु केहि रंकहिँ करौं नरेशू ॥ कहु केहि नृपहिँ निकारौं देशू ॥ २ ॥ ❋

हे प्रिया ! तेरा अप्रिय किसने किया ? किसके दो शिर हैं और किसको यमराज लेना चाहता है? अर्थात् जिसने तेरा अप्रिय किया है उसे तू बता दे, सो उसे मैं प्राणांत दंड दूंगा ॥ १ ॥ हे प्रिया ! तू कहती क्यों नहीं ? कह. किस रंक (गरीब) को राजा बनाऊं और किस राजाको देशसे निकालूं ? ॥ २ ॥

सकौं तोर अरि अमरहिँ मारी ॥ कहा कीट बपुरे नर नारी ॥ ३ ॥ ❀
जानसि मोर स्वभाव बरोरू ॥ तव मुख मम दृग चन्द्र चकोरू ॥ ४ ॥ ❀

जो तेरा वैरी देवता हो तौ मैं उसे भी मार सकता हूं सो बिचारे कीड़ाके जैसे स्त्रीपुरुषोंका तौ क्या ?॥ ३ ॥ हे बरोरू ! तू मेरे स्वभावको तौ जानती ही है कि,तेरा मुखचन्द्र निहारनेके लिये मेरे नेत्र चकोररूप है ॥ ४ ॥

प्रिया प्राणवश सर्वस मोरे ॥ परिजन प्रजा सकल शत तोरे ॥ ५ ॥ ❀
जो कछु कहौं कपट करि तोहीं ॥ भामिनि रामशपथ शत मोहीं ॥ ६ ॥ ❀

हे प्रिया ! मेरे जो प्राण और सर्वस्व है सो सब तेरे आधीन है. फिर कुटुंबके लोग व प्रजा आदि जो कुछ हैं सो वह सब तू तेरे आधीन जान ॥ ५ ॥ हे प्यारी ! जो मैं इसमें कुछ कपट रखकर कहता होऊं, तौ मुझे रामकी सौ शपथ (सौगंद) है ॥ ६ ॥

बिहँसि मांगु मन भावति बाता ॥ भूषण साजु मनोहर गाता ॥ ७ ॥ ❀
घरी कुघरी समुझि जिय देषू ॥ बेगि प्रिया परिहरहु कुबेषू ॥ ८ ॥ ❀

हे प्रिया ! तू हँसकर अपने मनभावती बात क्यों नहीं मांगती ? जो तेरी इच्छा हो सो मांग और सुन्दर शरीरपर गहने सज ॥ ७ ॥ हे प्यारी ! अपने जीमें समय कुसमय विचार कर इस कुवेषको शीघ्र त्याग दे ॥ ८ ॥

दोहा–यह सुनि मन गुणि शपथ बड़ि, बिहँसि उठी मतिमन्द ॥ ❀
भूषण सजति बिलोकि मृग, मनहुँ किरातिनि फन्द ॥ २७ ॥ ❀

दशरथजीके ये बचन सुन, सौगंदको मनमें बहुत बहुत बड़ी जानकर, वह मंदबुद्धि कैकेयी हँसकर उठी और अपने गहनोंको ऐसे सजने लगी कि, मानों भिल्लिनी हरिणको देखकर फंद सँवार रही है ॥ २७ ॥

पुनि कह राउ सुहृद जिय जानी ॥ प्रेम पुलकि मृदु मंजुलबानी ॥ १ ॥ ❀
भामिनि भयउ तोर मन भावा ॥ घर घर नगर अनन्द बधावा ॥ २ ॥ ❀

राजा अपने मनमें कैकेयीको अपनी सुहृद जान, प्रेमसे पुलकित शरीर हो, कोमल और मधुर बाणीसे फिर कैकेयीसे कहा कि– ॥ १ ॥ हे रानी ! तेरा मनचीता कारज हो गया है. नगरमे घर घर आनंद और बधाई लगी है ॥ २ ॥

रामहिँ देउँ काल्हि युवराजू ॥ सजहु सुलोचनि मंगलसाजू ॥ ३ ॥ ❀
दलकि उठी सुनि बचन कठोरा ॥ जनु छुइ गयउ पाक बर तोरा ॥ ४ ॥ ❀

हे सुलोचनी ! कल मैं रामको युवराजपद दूंगा सो तू अब शीघ्र मंगलका साज सज ॥ ३ ॥ ये कठोर बचन सुनकर वह कैकेयी हृदयमें ऐसे धधक उठी कि, मानों पका हुआ बरतोरा (एक किस्मका फोड़ा जिसे रूंतोड़ कहते हैं) किसीसे छू गया है ॥ ४ ॥

ऐसी पीर बिँहसि उर गोई ॥ चोर नारि जिमि प्रगट न रोई ॥ ५ ॥ ❀
लखी न भूप कपट चतुराई ॥ कोटि कुटिल गुण गुरू पढ़ाई ॥ ६ ॥ ❀

यद्यपि उसके मनमें तौ वो ऐसी भारी पीड़ा हुई थी पर उसने हँसकर छिपाली. जैसे कि, चोरकी स्त्री प्रगटसे नहीं रो सकती, ऐसे वो भी अपनी कुवासना प्रगट नहीं कर सकी ॥ ५ ॥ राजाके यह कपटकी चतुराई बिलकुल लक्ष्यमें नहीं आयी, क्योंकि मंथराकी पढ़ाई करोड़ों कुटिल गुणोंकी भी गुरु थीं ॥ ६ ॥

यद्यपि नीतिनिपुण नरनाहू ॥ नारिचरित जलनिधिअवगाहू ॥ ७ ॥ ❋
कपटसनेह बढ़ाइ बहोरी ॥ बोली बिहँसि नयन मुख मोरी ॥ ८ ॥ ❋

यद्यपि राजा दशरथ नीतिमें बड़े विचक्षण है, तथापि स्त्रीचरित्र तौ समुद्रकी नाई परम अगाध है ॥ ७ ॥ फिर वह कपटभरा स्नेह बढ़ा कर नेत्र और मुख मोरकर हँसकर बोली ॥ ८ ॥

दोहा–मांगु मांगु पै कहहु पिय, कबहूँ देहु न लेहु ॥ ❋
देन कहेउ बरदान दुइ, तेउ पावत सन्देहु ॥ २८ ॥ ❋

कि–हे प्रिय ! आप हमेशा " मांग मांग " तौ कहते हो, पर कभी देते हो न लेते हो. आपने देवासुर संग्राममें दो वरदान देने कहे थे, सो मुझे तौ वे पानेमें भी संदेहही है ॥ २८ ॥

जानेउँ मर्म राउ हँसि कहई ॥ तुमहिँ कोहाब परम प्रिय अहई ॥ १ ॥ ❋
थाती राखि न माँगेउ काऊ ॥ बिसरि गयो मम भोर सुभाऊ ॥ २ ॥ ❋

प्रियाका भेद जान, राजाने हँसकर कैकेयीसे कहा कि–तुझे रूठना बहुत प्रिय लगता है ॥ १ ॥ मेरे पास धरोहर अवश्य रही, पर किसीने मांगा भी तौ न था. मेरा तौ सूधा स्वभाव है. मैं तो यह बात बिलकुल भूल गया था ॥ २ ॥

झूंठहु दोष हमहिँ जनि देहू ॥ दुइके चारि माँगि किन लेहू ॥ ३ ॥ ❋
रघुकुलरीति सदा चलि आई ॥ प्राण जाहिँ बरु वचन न जाई ॥ ४ ॥ ❋

इसलिये हमें झूंठ झूंठ दोष मत लगाओ. दोके चारक्यों न मांग लेती हो ? ॥ ३ ॥ रघुवंशियोंकी यह रीति परंपरासे चली आती है कि, चाहे प्राण चले जांय, परंतु वचन नहीं जाता ॥ ४ ॥

नहिँ असत्यसम पातक पुंजा ॥ गिरिसम होहिँ कि कोटिक गुंजा ॥५॥ ❋
सत्यमूल सब सुकृत सुहाई ॥ बेद पुराण बिदित मुनि गाई ॥ ६ ॥ ❋

असत्यके जैसा कोई पापका पुंज नहीं है. क्या करोड़ घूंगची (गुंजा) पर्वतके बराबर हो सकती है ? कदापि नहीं. ऐसेही दूसरे पाप झूंठके बराबर नहीं हो सकते. झूंठका पाप पर्वतके समान है और दूसरे पाप गुंजाके बराबर है ॥ ५ ॥ सत्य सब सुकृतोंका मूल है. यह बात वेद और पुराणोंमें प्रसिद्ध है. तथा मुनिलोगभी यही बात कहते हैं ॥ ६ ॥

तेहि पर रामशपथ करि आई ॥ सुकृत सनेह अवधि रघुराई ॥ ७ ॥ ❋
बात दृढाइ कुमति हँसि बोली ॥ कुमति बिहंग कुलह जनु खोली ॥८॥ ❋

और तिसपरभी मैं रामकी शपथ खाता हूं कि, जो रघुवीर सुकृत और स्नेहकी सीमा हैं ॥ ७ ॥ ऐसे बातको पक्की कर, वो कुमति हँसकर बोली; मानों कुबुद्धि पक्षी यानी बाजकी कुलह (आंखपर लगानेकी चमडेकी टोपी) खोली है ॥ ८ ॥

दोहा–भूपमनोरथ सुभग बन, सुख सुविहंगसमाज ॥
भिल्लिनि जनु छांड़न चहत, बचन भयंकर बाज ॥ २९ ॥

राजा दशरथके जो मनोरथ है सोही तौ सुन्दर बाग है, और जो सुख है सोही पक्षियोंका झुंड है. तहां कैकेयी जो है सोही भिल्लिनी है सो वह मानों भयंकर बचनरूपी बाजको छोड़ना चाहती है ॥ २९ ॥

सुनहु प्राणपति भावत जीका ॥ देहु एक बर भरतहिं टीका ॥ १ ॥
दूसर बर मांगौं कर जोरी ॥ नाथ मनोरथ पुरवहु मोरी ॥ २ ॥

कैकेयीने दशरथजीसे कहा कि–हे प्राणपति ! मेरी मनभावती बात सुनो, एक बरदानसे तौ भरतको राज्यतिलक दो ॥ १ ॥ और दूसरा बरदान हाथ जोड़के जो मैं मांगती हूं सो हे नाथ ! मुझे दे, मेरा मनोरथ पूर्ण करो ॥ २ ॥

तापसबेष बिशेष उदासी ॥ चौदह बर्ष राम बनवासी ॥ ३ ॥
सुनि तियबचन भूपउर शोकू ॥ शशिकर छुवत बिकल जिमि कोकू ॥ ४ ॥

दूसरा बरदान यह मांगती हूं कि– रामचन्द्र तपस्वीका वेष बनाय, अति उदास हो चौदह वर्षलों बनबास करे ॥ ३ ॥ कैकेयीके बचन सुनतेही राजाके मनमें कैसे शोक व्यापा कि, जैसे चंद्रमाकी किरणको छूतेही चक्रवाक बिकल हो जाता है ॥ ४ ॥

गये सहमि कछु कहि नहिं आवा ॥ जनु शचान बन झपटेउ लावा ॥ ५ ॥
बिबरण भयउ निपट महिपालू ॥ दामिनि हनेउँ मनहु तरुतालू ॥ ६ ॥

दशरथजी सहमि गये. कुछ बोल न आया. मानों बाजने बनके अंदर बटेरको झपट लिया है वो दशा हो गई ॥ ५ ॥ राजा निपट विवर्ण और विकल हो गया.मानों बिजलीने तालके वृक्षको विध्वंस कर दिया है ॥ ६ ॥

माथे हाथ मूंदि दोउ लोचन ॥ तनु धरि शोच लाग जनु शोचन ॥ ७ ॥
मोर मनोरथ सुरतरुफूला ॥ फरत करिणि जनु हतेउ समूला ॥ ८ ॥

दशरथजी दोनों हाथ शिरपर धर दोनों नेत्र मूंदि ऐसे शोच करने लगे कि, मानों शोचही शरीर धरकर बैठा है ॥ ७ ॥ ऐसे शोकाकुल दशरथजी मनही मनमें कहने लगे कि, देखो मेरे फूलते और फलते मनोरथरूप कल्पवृक्षको कैकेयीने कैसे समूल नाश कर दिया है कि जैसे हाथिनी पेंड़को मूलसमेत उखार डालती है ॥ ८ ॥

अवध उजारि कीन्ह कैकेयी ॥ दीन्हेसि अचल बिपतिके नेयी ॥ १ ॥

कैकेयीने आज अवधको उजार दिया है और आपदाकी पक्की नेईं दे दी है ॥ १ ॥

दोहा–कवने अवसर का भयउ, गयउ नारिविश्वास ॥
योगसिद्ध फल समय जिमि, यतिहिं अविद्या नास ॥ ३० ॥

हाय ! आज मुझे यह किस समय क्या हो गया ? जो मैंने स्त्रीका विश्वास कर लिया; आदमीके लिये स्त्रीका विश्वास करना बहुत बुरा है. यह स्त्री विश्वास करनेसे मनुष्यको कैसे मिट्टीमें मिला देती है कि, जैसे योगसिद्ध योगिराजको फलके समय अविद्या नाश कर देती है ॥ ३० ॥

इहि विधि राउ मनहिँ मन दहई ॥ देखि कुभांति कुमति अस कहई ॥१॥ ❋
भरत कि राउर पूत न होहीं ॥ आनेहु मोल बेसाहि कि मोहीं ॥ २ ॥ ❋

इसतरह मनही मनमें जलता है तिसे देख वो कुमति राजा दशरथजीसे ऐसे कहती है ॥ १ ॥ क्या भरत आपका पुत्र नहीं है ? क्या मुझे आप मोल खरीदके लाये हो ॥ २ ॥

जो सुनि शरसम लाग तुम्हारे ॥ काहे न बोलहु बचन सँभारे ॥ ३ ॥ ❋
देहु उतर अस कहहु कि नाहीं ॥ सत्यसिन्धु तुम रघुकुलमाहीं ॥ ४ ॥ ❋

जो अब मेरे बचन आपको बाणके जैसे बुरे लगते है. तो पहलेही सँभालके क्यों नहीं कहा ? ॥ ३ ॥ उत्तर क्यों नहीं देते ? हां या ना कह दो. तुम रघुकुलके भीतर सत्यवादी कहलाते हो ॥ ४ ॥

देन कहेउ बर अब जनि देहू ॥ तजहु सत्य जग अपयश लेहू ॥ ५ ॥ ❋
सत्य सराहि कहेउ बर देना ॥ जानेहु लेइहि मांगि चबेना ॥ ६ ॥ ❋

और मुझे आपने बरदान देनेको कहा है सो भले अब मत देओ. अपने सत्यको त्यागकर जगत्में भले अपयश लेओ ॥ ५ ॥ तुमने सत्यकी सराहना करके बर देनेको कहा था, सो उस वक्त आपने अपने मनमें क्या यह समझ लिया था कि, यह कोई चबेना मांग लेगी ॥ ६ ॥

शिबि दधीचि बलि जो कछु भाषा ॥ तन धन तजेउ बचन प्रण राषा ॥ ७ ॥ ❋
अति कटु बचन कहति कैकेयी ॥ मानहुँ लोन जरेपर देयी ॥ ८ ॥ ❋

देखो. राजा शिबि, महामुनि दधीचि और दैत्यराज बलि कि, जिन्होने अपना तन और धन गँवा दिया, पर अपना बचन नहीं गँवाया. राजा शिबिने अपने शरीरका मांस काटकर कबूतरको बचानेके लिये बाजको दिया. दधीचिने वृत्रासुरके बधके लिये अपना शरीर दिया और बलिने सर्वस्व और शरीर दिया ॥ ७ ॥ कैकेयी राजाको ऐसे कडु बचन कहती है कि, मानों जलेपर लोन देती है ॥ ८ ॥

दोहा—धर्मधुरन्धर धीर धरि, नयन उघारे राउ ॥ ❋
शिर धुनि लीन्ह उसास अति, मारेसि मोहिँ कुठांउ ॥ ३१ ॥ ❋

धर्मधुरंधर राजा दशरथने धीरज धर, आंख खोली और शिर धुन, लम्बी सांस ले, यह बचन कहा कि—अरे पापिनी ! मुझे बुरी ठौर मारा ॥ ३१ ॥

आगे देखि बरति रिसि भारी ॥ मनहुँ रोषतरवारि उघारी ॥ १ ॥ ❋
मूठ कुबुद्धि धार निठुराई ॥ धरि कुबरी जनु सान बनाई ॥ २ ॥ ❋

आंख खोल, राजाने देखा तो सामने रिससे जलती हुई कैकेयी बैठी है. सो वह उसे कैसी मालूम हुई कि, मानों नंगी तलवार सोंही खड़ी है ॥ १ ॥ और जो कुबुद्धि है सोही मूठ है. निठुरपन है सोही तीक्ष्ण धार है और कुबरीरूपी सानपै चढ़ायके पैनाई है ॥ २ ॥

लखेउ महीप कराल कठोरा ॥ सत्य कि जीवन लेइहि मोरा ॥ ३ ॥ ❋

बोले राउ कठिन करि छाती ॥ बाणी बिनय न ताहि सोहाती ॥ ४ ॥ ❀

ऐसे महाकराल और कठोर कैकेयीको देख, राजाने अपने मनमें जाना कि–यह मेरा सत्य या प्राण जरूर लेयगी ॥ ३ ॥ तौभी छाती कड़ी करके राजा दशरथजीने बड़ी नम्रबाणीसे कैकयीको कहा कि, जो उसे सुहाती नहीं थी ॥ ४ ॥

मोरे भरत राम दोउ आँखी ॥ सत्य कहौं करि शंकर साखी ॥ ५ ॥ ❀
प्रिया बचन कस कहसि कुभाँती ॥ रीति प्रतीति प्रीति करि घाती ॥ ६ ॥ ❀

राजाने कहा कि–मेरे तौ भरत और राम दोनों बराबर है. मैं महादेवजीको साक्षी रखकर कहता हूं कि–भरत और राम ये दोनों मेरी आंखें है ॥ ५ ॥ हे प्रिया ! तू प्रतीति (भरोसा) और प्रीतिकी रीतिका नाश करके ये बचन बुरी तरह कैसे कहती है ? ॥ ६ ॥

अवशि दूत मैं पठउब प्राता ॥ ऐहैं बेगि सुनत दोउ भ्राता ॥ ७ ॥ ❀
सुदिन साधि सब साजि सजाई ॥ देहौं भरतहिँ राज बजाई ॥ ८ ॥ ❀

मैं भोर होतेही यहांसे जरूर दूत भेज दूंगा, सो वे दोनों भाई सुनतेही यहां चले आवेंगे ॥ ७ ॥ जो तेरी इच्छा है तौ अच्छा दिन देख, सब सामा सजकर, गाजों बाजोंके साथ भरतको राज देवेंगे ॥ ८ ॥

दोहा–लोभ न रामहिँ राजकर, बहुत भरतपर प्रीति ॥ ❀
मैं बड़ छोट बिचार करि, करत रहेउँ नृपनीति ॥ ३२ ॥ ❀

प्रिया ! रामको राजका रंचहू लोभ नहीं है. उसकी भरतपर बड़ी प्रीति है. यह तौ मैंनेही बड़े छोटेका विचार करके राजनीतिके अनुसार करना चाहा है ॥ ३२ ॥

रामशपथ सत कहौं सुभाऊ ॥ राममातु मोहिँ कहा न काऊ ॥ १ ॥ ❀
मैं सब कीन्ह तोहिँ बिनु पूँछे ॥ ताते परेउँ मनोरथ छूँछे ॥ २ ॥ ❀

मैं सत्य स्वभावसे रामकी शपथ (सौगंद) खाके कहता हूं कि–इस विषयमें रामकी माताने मुझे कुछभी नहीं कहा था ॥ १ ॥ मैंने जो यह सब तुझको बिना पूंछे किया तिससे यह मेरा मनोरथ छूंछा हो गया है ॥ २ ॥

रिसि परिहरि अब मंगल साजू ॥ कछु दिन गये भरतयुवराजू ॥ ३ ॥ ❀
एकहि बात मोहिँ दुख लागा ॥ बर दूसर असमंजस माँगा ॥ ४ ॥ ❀

अब तू क्रोधको त्यागकर, मंगलके साज सज, कुछ दिन बीतनेके बाद भरत भी युवराज हो जायगा ॥ ३ ॥ पहला बरदान तौ मुझे कुछ कठिन नहीं लगता. मुझे तौ एक बातका दुख लगता है कि, दूसरा बरदान तूने बहुत बेढब मांगा ॥ ४ ॥

अजहूँ हृदय दहत तेहि आंचा ॥ रिसि परिहास कि सांचहु सांचा ॥५॥ ❀
कहु तजि रोष रामअपराधू ॥ सबकोउ कहत राम सुठि साधू ॥ ६ ॥ ❀

मेरा हृदय अबतक उसी अग्निसे जल रहा है, इसलिये मैं तुझसे पूंछता हूं कि–क्या तूने यह

प्रणयकोपसे हँसीभ कहा है, कै सांचही साच है ? ॥ ५ ॥ तू रिसको तजकर कह. रामने तेरा क्या अपराध किया है ? सब लोग तौ कहते हैं कि–राम बहुत नेक और साधु पुरुष है ॥ ६ ॥

तेंहु सराहसि करसि सनेहू ॥ अब सुनि मोहिं परम सन्देहू ॥ ७ ॥ ❋
जासु स्वभाव अरिहु अनुकूला ॥ सो किमि करहि मातुप्रतिकूला ॥८॥ ❋

और तूभी रामकी सराहना करती थी और प्यार करती थी. अब तेरे ये वचन सुन, मुझे बड़ा संदेह होता है कि–यह क्या ? ॥ ७ ॥ जिसका स्वभाव शत्रुसे भी सदा अनुकूल है वो मातासे प्रतिकूल काम कैसे करे ? सो मुझे सच कह यह क्या बात है ? ॥ ८ ॥

दोहा–प्रिया हास्य रिसि परिहरहु, मांगु बिचारि बिबेक ॥ ❋
जेहिं देखौं अब नयन भरि, भरतराजअभिषेक ॥ ३३ ॥ ❋

हे प्रिया ! जो हास्य या रोष हो उसे तजकर विवेकसे विचार कर वर मांग कि, जिससे मैं अपनी आंखोंसे भरतका राजतिलक देखूं ॥ ३३ ॥

जियै मीन बरु बारिबिहीना ॥ मणि बिनु फणिक जियै दुख दीना॥ १ ॥❋
कहौं स्वभाव न छल मनमाहीं ॥ जीवन मोर राम बिनु नाहीं ॥ २ ॥ ❋

चाहे जलबिना मछली जी जाय, चाहे मणिबिना सांप दुखी और दीन होके जी जाय ॥ १ ॥ परंतु रामके बिना मेरा जीना तौ नहीं होसकता. सो यह बात मैं मनमें कपट रखकर नहीं कहता किंतु सत्य स्वभावसे कहता हूं ॥ २ ॥

समुझि देखु तैं प्रिया प्रबीना ॥ जीवन दशरथ राम अधीना ॥ ३ ॥ ❋
सुनि मृदु बचनकुमति अति जरई ॥ मनहुँ अनल आहुति घृत परई ॥४॥❋

हे प्रवीण प्रिया ! तू मनमें समझकर, देख. दशरथका जीवन रामके आधीन है ॥ ३ ॥ दशरथजीके ऐसे कोमल वचन सुन, वो मंदमति ऐसी जल उठी कि, मानों जलती हुई आगके भीतर घृतकी आहुति पड़ी ॥ ४ ॥

कहहु करहु किन कोटि उपाया ॥ इहाँ न लागिहि राउरमाया ॥ ५ ॥ ❋
देहु कि लेहु अयश करि नाहीं ॥ मोहिँ न बहु परपंच सुहाहीं ॥ ६ ॥ ❋

और बोली कि–चाहे आप करोड़ों उपाय क्यों न कहो और करो परंतु यहां आपकी एक भी माया चल न सकेगी ॥ ५ ॥ या तौ वर देओ या नाहीं करके अपयश लेओ. मुझे बहुतसा प्रपंच नहीं सुहाता ॥ ६ ॥

राम साधु तुम साधु सुजाना ॥ राममातु तुम भलि पहिचाँना ॥ ७ ॥ ❋
जस कोशला मोर भल ताका ॥ तस फल देउँ उहौ करि शाका ॥ ८ ॥ ❋

हे सुजान ! राम भला, आप भले और रामकी माता भली यह मैं अच्छीतरह जानलियाहै ॥ ७ ॥ परंतु कौसल्याने जैसा मेरा भला विचारा है वैसा फल मैं उसे रार करके जरूर देऊंगी ॥ ८ ॥

दोहा–होत प्रात मुनिबेष धरि, जो न राम बन जाहिँ ॥ ❋
मोर मरण राउर अयश, नृप समुझहु मनमाहिँ ॥ ३४ ॥ ❋

जो भोर होतेही राम मुनिवेष धारण कर वनमे न जायगे तो हे राजा ! आप मनमें पक्को समझलो कि–मेरा तो मरण और आपका अपयश अवश्य होवेगा ॥ ३४ ॥

अस कहि कुटिल भई उठि ठाढ़ी ॥ मानहुँ रोषतरंगिनि बाढ़ी ॥ १ ॥ ❋
पाप पहार प्रगट भइ सोई ॥ भरी क्रोध जल जाइ न जोई ॥ २ ॥ ❋

ऐसे कहकर वो कुटिल उठ खड़ी हुई सो कैसे दीखने लगी कि– मानों क्रोधकी नदी ही बढ़ी है ॥ १ ॥ नदी पहाड़से निकलती है सो यहां पाप है सो ही पहाड़ है, क्रोध है सो ही अथाह जल भरा है जिसकी तर्फ देखा नहीं जाता ॥ २ ॥

दोउ बर कूल कठिन हठ धारा ॥ भँवर कूबरी बचन प्रचारा ॥ ३ ॥ ❋
ढाहति भूपरूप तरुमूला ॥ चली बिपति बारिधि अनुकूला ॥ ४ ॥ ❋

दो वरदान है सो ही दो तट है. कठिन हठ है सो ही धारा है और मंथराके वचनोंका प्रचार है सो ही गहरी भँवर है ॥ ३ ॥ नदी वृक्षको गिराती है सो यह राजारूपी रूखकी जड़को ढहाती है. वह नदी समुद्रमे जाती है और यह आपदारूपी समुद्रमें जाती है ॥ ४ ॥

लखी नरेश बात सब साँची ॥ तियमिसु मीचु शीशपर नाची ॥ ५ ॥ ❋
गहि पद बिनय कीन्ह बैठारी ॥ जनि दिनकरकुल होसि कुठारी ॥ ६ ॥ ❋

जब कैकेयी उठ खड़ी हुई, तब राजाने मनमें जान लिया कि, यह हँसि नहीं है यह बात सब सच्ची है. कवि कहता है कि–कैकेयी क्या नाचती है मानों स्त्रीके मिषसे राजाके शिरपर मौत नाचती है ॥ ५ ॥ राजाने कैकेयीके चरण धर उसे नीचे बिठाई. विनती करी और कहा कि– हे कैकेयी ! तू सूर्यवंशकी कुठारी मत हो ॥ ६ ॥

माँगु माथ अबहीं देउँ तोहीं ॥ राम बिरह जनि मारसि मोहीं ॥ ७ ॥ ❋
राखु राम कहँ जेहिं तेहिं भांती ॥ नाहित जरिहि जन्म भरि छाती ॥ ८ ॥

तू मेरा शिर मांग ले मैं तुझे अभी देदूंगा; परंतु रामचन्द्रके विरहसे मुझे मत मार ॥ ७ ॥ जिस तिस तरहसे तो तू रामको रखदे, नहीं तो जन्म भर छाती जलती रहेगी ॥ ८ ॥

दोहा–देखी ब्याधि असाध्य नृप, परेउ धरणि धुनि माथ ॥ ❋
कहत परम आरत बचन, राम राम रघुनाथ ॥ ३५ ॥ ❋

राजा उस असाध्य व्याधिको देख, शिर धुन, राम ! राम !! रघुनाथ !!! ऐसे आर्त वचन कहता पृथ्वीपर पड़ा ॥ ३५ ॥

ब्याकुल राउ शिथिल सब गाता ॥ करिणि कल्पतरु मनहुँ निपाता ॥ १ ॥
कण्ठ सूख मुख आव न बानी ॥ जिमि पाठीन दीन बिनु पानी ॥ २ ॥ ❋

राजाके व्याकुल होनेसे सब अंग ऐसे शिथिल हो गये कि, मानों हथिनीने कल्पवृक्षको गिरा दिया है ॥ १ ॥ राजाका कंठ सूखता है, मुहसे बचन नहीं निकलता. राजाकी ऐसी दीनदशा हो गई कि, जैसे जलबिन मछली दीन हो जाती है ॥ २ ॥

पुनि कह कटु कठोर कैकेयी ॥ मर्म पाछि जनु माहुर देयी ॥ ३ ॥ ❋
जो अन्तहु अस करतब रहेऊ ॥ मांगुमांगु तुम केहिबल कहेऊ ॥ ४ ॥ ❋

उस काल कैकेयीने फिर जो कठोर और कडु बचन कहे सो तौ वचन क्या थे मानों मर्मको पोंछके उसमें जहर दिया ॥ ३ ॥ कैकेयी बोली कि—महाराज ! जो अपने अंतमें भी ऐसाही करना विचारा था, तो फिर मांग मांग ऐसे किसके बल कहा था ? ॥ ४ ॥

दुइ कि होंइ यकसंग भुआलू ॥ हँसब ठठाइ फुलाउब गालू ॥ ५ ॥ ❋
दानि कहाउब अरु कृपणाई ॥ चाहिय क्षेम कुशल रौताई ॥ ६ ॥ ❋

हे राजा ! क्या ये दोनों बातें एक संग हो सकती है ? कि—ठट्ठा हँसी करना और गाल फुलाना ॥ ५ ॥ दानी कहलाना और कृपणता (कंजूसी) रखना.ऐसेही क्षेम कुशल चाहना और रोना ॥ ६ ॥

छांड़हु बचन कि धीरज धरहू ॥ जनि अबला इव करुणा करहू ॥ ७ ॥ ❋
तन तिय तनय धाम धन धरणी ॥ सत्यासिंधु कहँ तृणसम बरणी ॥ ८ ॥ ❋

इसलिये अब आप या तौ अपने वचनको तजो या मनमें धीरज धरो. हे राजा ! स्त्रीकी भांति करुणा मत करो ॥७॥ बड़े पुरुष ऐसे कहते है कि—जो सत्यवादी है उनके लिये अपना शरीर,स्त्री,पुत्र, घर धन और धरती ये सब तृणके बराबर है ॥ ८ ॥

दोहा— मर्म बचन सुनि राउ कह, कछुक दोष नहिँ तोर ॥ ❋
लागेउ तोहिँ पिशाच जनु, काल कहावत मोर ॥ ३६ ॥ ❋

ऐसे मर्मके वचन सुन, राजाने कैकेयीसे कहा कि—हे कैकेयी ! यह तेरा दोष नहीं है. मुझे ऐसा मालूम होता है कि—या तौ तुझे भूत लगगया है या मेरी मौत तुझसे ऐसे कहलावती है ॥ ३६ ॥

चहत न भरत भूपपद भोरे ॥ बिधिबश कुमति बसी उर तोरे ॥ १ ॥ ❋
सो सब मोर पाप परिणामू ॥ कछु न बसाइ भयो बिधि बामू ॥ २ ॥ ❋

हे कैकेयी ! भरत भूलके भी राजतिलक नहीं चाहता. होनहारसे तेरे मनमें यह बात जँचगयी है ॥ १ ॥ सो यह सब मेरे पापोंका फल है. जब विधाता ही प्रतिकूल हो गया तौ जोरही क्या ?॥ २ ॥

सुबस बसिहि पुनि अवध सुहाई ॥ सबगुण धाम राम प्रभुताई ॥ ३ ॥ ❋
करिहैं भाइ सकल सेवकाई ॥ होइहि तिहँपुर राम बडाई ॥ ४ ॥ ❋

रामके जानेसे एकबार अवध उजाड़ होनेपरभी रामके प्रतापसे पीछी अच्छीतरह आबाद और सब गुणोंकी धाम भी हो जायगी ॥३॥ और सब भाइ उसकी सेवाभी करेंगे और त्रिलोकीमें सुख्यातिभी होगी ॥ ४ ॥

तोर कलंक मोर पछिताऊ ॥ मुयउ न मेटि न जाइहि काऊ ॥ ५ ॥ ❋
अब तोहिँ नीक लागु कर सोई ॥ लोचन ओट बैठु मुख गोई ॥ ६ ॥ ❋

ये सब बातें हो जायंगी पर तेरा कलंक और मेरे मनका पछतावा ये दो बातें तौ मरनेपर भी किसी तरह न मिट सकेंगी ॥ ५ ॥ अब तुझे जो अच्छा लगे सो कर. तू अपना मुंह छिपाके मेरी आंखोंसे बचके बैठ जा ॥ ६ ॥

जबलगि जियौं कहौं कर जोरी ॥ तबलगि जनि कछु कहसि बहोरी ॥ ७ ॥ ❋
फिरि पछितैहसि अन्त अभागी ॥ मारेसि गाय नाहरू लागी ॥ ८ ॥ ❋

मैं हाथ जोड़के प्रार्थना करता हूं कि-मैं जबलों जीता रहूं तबलों मुझे फिर कुछ मत कहना ॥ ७ ॥ अरे अभागिनी ! तू नाहरू (चमड़ेकी दोरी) के लिये गाय मारनेके जैसा काम करने लगी है, पर आखिर पछतावेगी ॥ ८ ॥

दोहा-परेउ राउ कहि कोटिविधि, काहे करसि निदान ॥
कपट चतुर नहिँ कहति कछु, जागति मनहु मसान ॥ ३७ ॥

अरे पापिनी ! कुलका नाश क्यों करती है ? ऐसे कइ करोड़ों प्रकारसे समझाया; पर वो न मानी. तब राजा पृथ्वीपर गिर पड़ा. उस काल छलबल करनेमें चतुर कैकेयी कुछ न बोली, पर वो कैसी डरावनी दीखती थी कि मानों मसान जगाती है ॥ ३७ ॥

राम राम रटि बिकल भुआलू ॥ जनु बिनपंख बिहंग बिहालू ॥ १ ॥
हृदय मनाव भोर जनि होई ॥ रामहिँ जाइ कहै जनि कोई ॥ २ ॥

राजा विकल हो बारंबार 'राम राम' ऐसे रट रहा है. उसका हाल बिना पंखके पक्षीकासा बेहाल हो रहा है ॥ १ ॥ राजा मनमें देवताओंको मनाता है कि-प्रभात न होवे और कोई जाकर रामको यह समाचार न कहे ॥ २ ॥

उदय करहु जनि रबिकुल पूरा ॥ अवध बिलोकि शूल होइ ऊरा ॥ ३ ॥
भूप प्रीति कैकयि निठुराई ॥ उभय अवधि बिधि रची बनाई ॥ ४ ॥

राजा मनमें कहता है कि-सूर्योदय मत होवे; क्योंकि सूर्योदय होनेपर अवधको देखकर मेरे मनमें महादुःख होगा ॥ ३ ॥ कवि कहता है कि-राजाकी प्रीति और कैकेयीकी निठुराई ये दोनों विधाताने प्रीति और निठुरताकी सींव ही रची थी ॥ ४ ॥

बिलपत नृपहिँ भयउ भिनुसारा ॥ बीणा बेणु शंख धुनि द्वारा ॥ ५ ॥
पढ़हिँ भाट गुण गावहिँ गायक ॥ सुनत नृपहिँ लागत जनु सायक ॥ ६ ॥

राजाके विलाप करते करते प्रभात हो गया. चिड़िया चुह चुहायीं. अंबरमें अरुणाई छाई. द्वारपर बीणा, वेणु और शंखध्वनि होने लगीं ॥ ५ ॥ भाट गुण पढ़ने लगे. गायक प्रभुके हरियश गाने लगे. जो सुनकर राजाके बाणसे लगते थे ॥ ६ ॥

मंगल कलश सोहाइँ न कैसे ॥ सहगामिनी बिभूषण जैसे ॥ ७ ॥
तेहि निशि नींद परी नहिँ काहू ॥ राम दरश लालसा उछाहू ॥ ८ ॥

और मंगलके कलश राजाको कैसे नहीं सुहाते थे कि, जैसे पतिके साथ जलनेवाली स्त्रीको आभूषण नहीं सुहाते ॥ ७ ॥ उस रात रामचन्द्र आनन्दकन्दके दर्शनकी अभिलाषाके उत्साहसे किसीको नींद नहीं आई थी ॥ ८ ॥

दोहा-द्वार भीर सेवक सचिव, कहहिँ उदय रबि देषि ॥
जागे अजहुँ न अवधपति, कारण कवन विशेषि ॥ ३८ ॥

सूर्य उदय हो गया. द्वारपर मंत्री और नौकरोंके ठठके ठठ लग गये; तब भी राजा बाहिर न आया. तब लोग कहने लगे कि- यह क्या ? आज दशरथजी जागे क्यों नहीं ? इसका कारण क्या है ?॥ ३८ ॥

पछिले पहर भूप नित जागा ॥ आजु हमहिँ बड़ अचरज लागा ॥ १ ॥ ❋
जाहु सुमन्त जगावहु जाई ॥ कीजिय काज रजायसु पाई ॥ २ ॥ ❋

राजा हमेशा पिछले प्रहरमें जाग जाते थे. आज यह क्या हुआ? हमैं आज इस बातसे बड़ा आश्चर्य होता है ॥ १ ॥ ऐसे परस्पर कह मंत्री लोगोंने सुमंत्रसे कहा कि, हे सुमंत्र! तू जा. राजाको जगाव और उनकी आज्ञा पाकर काम कर ॥ २ ॥

गे सुमन्त नृपमंदिर पाहीं ॥ देखि भयानक जात डराहीं ॥ ३ ॥ ❋
धाइ खाइ जनु जात न हेरा ॥ मानहुँ बिपति बिषाद बसेरा ॥ ४ ॥ ❋

मंत्रियोंका कहना मान सुमंत्र राजाके महलके पास गया, पर वो भयंकररूप देख मनमें डरने लगा ॥ ३ ॥ सुमंत्रने महलकी ओर देखा तौ मानों वो उसे दौड़कर खानेको आता हो ऐसा मालूम हुआ और मानों विपत् और विषादका घरही दीखने लगा ॥ ४ ॥

पूंछत कोउ न उतर कछु देई ॥ गे जेहि भवन भूप कैकेयी ॥ ५ ॥ ❋
कहि जय जीव बैठि शिर नाई ॥ देखि भूपगति गयउ सुखाई ॥ ६ ॥ ❋

सुमंत्रने पूंछा तौ किसीने कुछभी उत्तर न दिया. तब तौ वह जहां कैकेयी और राजा थे वहां चला गया ॥ ५ ॥ और जय जीव कह, शिर नवाय बैठ गया. तहां राजाकी दशा देख सुमंत्र सुखाई गया ॥ ६ ॥

शोकविकल बिबरण महि परेऊ ॥ मानहुँ कमलमूल परिहरेऊ ॥ ७ ॥ ❋
सचिव सभीत सकहि नहिँ पूंछी ॥ बोली अशुभ भरी शुभ छूंछी ॥ ८ ॥ ❋

राजा शोकसे विकल हो तनछीन मुखमलीन पृथ्वीपर पड़ा कैसा दीखता है कि, मानों कमल जड़से उखड़ कुम्हला गया है ॥ ७ ॥ सुमंत्र तौ उस समय भयके मारे कुछ पूंछ न सका. तब मंगलकी नाश करनहारी अमंगलमूर्ति कैकेयी बोली ॥ ८ ॥

दोहा—परी न राजहिँ नींद निशि, मर्म्म जानु जगदीश ॥ ❋
राम राम रटि भोर किय, हेतु न कहेउ महीश ॥ ३९ ॥ ❋

कि—हे सुमंत्र! रातमें राजाको नींद बिलकुल न आई इसका कारण क्या है सो तौ परमेश्वर जाने. 'राम राम' ऐसे रटते रटते राजाने प्रभात कर दिया है इसका सबब क्या है सो हमें तो राजाने कहा नहीं ॥ ३९ ॥

आनहु रामहिँ बेगि बुलाई ॥ समाचार तब पूंछहु आई ॥ १ ॥ ❋
चले सुमन्त राउ रुख जानी ॥ लखी कुचाल कीन्ह कछु रानी ॥ २ ॥ ❋

इसलिये एकबेर तू शीघ्र रामको बुला लाव. फिर पीछा आकर समाचार पूंछ लेना ॥ १ ॥ कैकेयीके ये बचन सुन राजाकी रुख जान सुमंत्र वहांसे चला; पर उसने मनमें समझ लिया कि—रानीने कुछ कुचाल की है ॥ २ ॥

शोच बिबश महि परै न पाऊ ॥ रामहिँ बोलि कहहिँ का राऊ ॥ ३ ॥ ❋
उर धरि धीरज गयेउ दुआरे ॥ पूँछहिं सकल देखि मनमारे ॥ ४ ॥ ❋

सुमंत्रके हृदयमें शोच छागया जिससे उसके पांव पृथ्वीपर नहीं पड़ते, वो मनमें कहने लगा कि– रामको बुलाकर राजा उनको क्या कहेंगे ? ॥ ३ ॥ ऐसे मनमें शोचता हुआ हृदयमें धीरज धर सुमंत्र द्वारपर आया. तब उसे उदास देख सब लोग पूंछने लगे ॥ ४ ॥

समाधान मन कर सबहीका ॥ गये जहां दिनकरकुलटीका ॥ ५ ॥ ❀
राम सुमंतहिँ आवत देखा ॥ आदर कीन्ह पितासम लेखा ॥ ६ ॥ ❀

सुमंत्र सबके मनका समाधान कर रामचन्द्रजीके पास गया ॥ ५ ॥ रघुनाथजीने सुमंत्रको आता देख बड़ा आदर सत्कार दिया और उसे पिताके बराबर माना ॥ ६ ॥

निरखि बदन कहि भूप रजाई ॥ रघुकुलदीपहिँ चले लिवाई ॥ ७ ॥ ❀
राम कुभाँति सचिव सँग जाहीं ॥ देखि लोग जहँ तहँ बिलखाहीं ॥ ८ ॥ ❀

सुमंत्र प्रभुका मुखकमल निरख राजाकी आज्ञा सुनाय, रामचन्द आनन्दकन्दको राजाके पास लिवाई ले चला ॥ ७ ॥ रामचन्द्रजीको सुमंत्रके संग बुरी तरह जाते देख सब लोग जहां तहां विलख गये ॥ ८ ॥

दोहा–जाइ दीख रघुबंशमणि, नरपति निपट कुसाज ॥ ❀
सहमि परेउ लखि सिंहनिहिँ, मनहुँ वृद्ध गजराज ॥ ४० ॥ ❀

रामचन्द्रजीने जाकर राजाको देखा तौ उनकी अत्यंतही दुर्दशा देख, प्रभुको ऐसा प्रतीत हुआ कि, मानों वृद्ध गजराज सिंहनीको देखकर सहमि कर पृथ्वीपर पड़ा है ॥ ४० ॥

सूखे अधर जरे सब अंगा ॥ मनहुँ दीन मणिहीन भुजंगा ॥ १ ॥ ❀
सरुष समीप देखि कैकेयी ॥ मानहुँ मृत्यु घरी गनि लेयी ॥ २ ॥ ❀

राजाके अधर सूख रहे है. सब अंग जल रहे हैं. राजा शोचसे ऐसा दीन हो रहा है कि, मानों साप मणिबिन तडप रहा है ॥ १ ॥ और उनके पास प्रभुने कोपायमान कैकेयीको देखा तौ वह कैसी मालूम होती है कि, मानों मूर्तिमान् मृत्युही घड़ी गिन रही है ॥ २ ॥

करुणामय रघुनाथ सुभाऊ ॥ प्रथम दीन दुख सुना न काऊ ॥ ३ ॥ ❀
तदपि धीर धरि समय बिचारी ॥ पूँछा मधुर बचन महतारी ॥ ४ ॥ ❀

हे पार्वती ! प्रभुका स्वभाव परम कारुणिक है और दुःखके नाम प्रभुने प्रथमही प्रथम यही देखा था. पहले तौ कभी किसी दुःखका नाम तक नहीं सुना था ॥ ३ ॥ तौभी मनमें धीरज धर, समय विचार कर, प्रभुने मातासे मधुर बचन कहकर पूंछा कि– ॥ ४ ॥

मोहिँ कहु मातु तातदुखकारण ॥ करिय यत्न जेहिँ होइ निबारण ॥ ५ ॥ ❀
सुनहु राम सब कारण एहू ॥ राजहिँ तुमपर बहुत सनेहू ॥ ६ ॥ ❀

हे माता ! पिताके दुःखका कारण क्या है सो मुझे कहो. जिसतरह वो मिटै वो उपाय किया जाय ॥ ५ ॥ तब कैकेयीने कहा कि–हे राम ! सुनो. इसका कारण यही है कि–राजाकी तुम्हारे ऊपर प्रीति बहुत है ॥ ६ ॥

देन कहेउ मोहिँ दुइ बरदाना ॥ माँगेउँ जो कछु मोहिँ सुहाना ॥ ७ ॥ ❀

सो सुनि भयउ भूपउर शोचू ॥ छाँड़ि न सकहिँ तुम्हार सँकोचू ॥ ८ ॥ ❀

राजाने मुझे दो बरदान देने कहे थे. सो मुझे जो सुहाय वो मैंने मांगलिये ॥ ७ ॥ वो सुनकर अब राजाके मनमें बड़ा शोच हुआ है. करैं क्या ? तुम्हारे संकोचसे दे नहीं सकते ॥ ८ ॥

दोहा–सुतसनेह इत बचन उत, संकट परेउ नरेश ॥ ❀
सकहु तो आयसु शीशधरि, मेटहु कठिन कलेश ॥ ४१ ॥ ❀

इधर तो पुत्रका स्नेह और उधर बचन, इस संकटमें राजा पड़े हुए है. सो जो तेरी सामर्थ्य हो तो आज्ञाको शिरपर धरकर इस महासंकटको मिटादे ॥ ४१ ॥

निधरक बैठि कहति कटु बानी ॥ सुनत कठिनता अति अकुलानी ॥ १ ॥ ❀
जीभ कमान बचन शर जाना ॥ मनहुँ भूप मृदु लक्ष्यसमाना ॥ २ ॥ ❀

कैकेयी निधरक बैठके जो कटु बाणी कहती है तिसे देख, स्वयं कठिनताभी अति अकुला गई है ॥ १ ॥ कैकेयीकी जो जीभ है सोई कमान है. बचन है सोही बाण है. राजा है सोही कोमल निशान है ॥ २ ॥

जनु कठोरपन धरे शरीरा ॥ सिखै धनुषविद्या वर वीरा ॥ ३ ॥ ❀
सब प्रसंग रघुपतिहिँ सुनाई ॥ बैठी जनु तनु धरि निठुराई ॥ ४ ॥ ❀

कैकेयी बोलती क्या है ? मानों प्रबल वीर कठोरपन ही शरीर धारण करके धनुषविद्या सीख रहा है ॥ ३ ॥ कैकेयी प्रभुको सब प्रसंग सुनाके बैठी तिस समय वह ऐसी मालूम होनेलगी कि, मानों निठुरताही शरीर धरे बैठ रही है ॥ ४ ॥

मन मुसकाहिँ भानुकुलभानू ॥ राम सहज आनन्दनिधानू ॥ ५ ॥ ❀
बोले बचन बिगत सब दूषण ॥ मृदु मंजुल जनु बागबिभूषण ॥ ६ ॥ ❀

कैकेयीके बचन सुन श्रीरामचन्द्रजी आनन्दकन्दने मन ही मनमें मुसुकराके ॥ ५ ॥ ऐसे कोमल और मनोहर बचन कहे कि, जो सर्व प्रकारसे निर्दूषण और मानों वाणीके अलंकारही थे. प्रभु बोले कि– ॥ ६ ॥

सुनु जननी सोइ सुत बड़भागी ॥ जो पितुमातुबचनअनुरागी ॥ ७ ॥ ❀
तनय मातु पितु पोषणहारा ॥ दुर्लभ जननि सकल संसारा ॥ ८ ॥ ❀

हे माता ! सुनो. पुत्र वोही बड़भाग्य कहलाता है कि, जो मातापिताके बचनपर प्रीति रखता है ॥ ७ ॥ हे माता ! माता पिताको पोषनेवाला पुत्र सारे संसारमेंभी दुर्लभ है ॥ ८ ॥

दोहा–मुनिगण मिलन बिशेष वन, सबहिँ भांति भल मोर ॥ ❀
तेहिँ महँ पितुआयसु बहुरि, संमत जननी तोर ॥ ४२ ॥ ❀

हे माता ! आपने जो बात कही उसमें तो मेरा सब प्रकारसे भला है. प्रथम तो वनमें जानेसे बड़े २ मुनिराजोंसे मिलाप होगा. और उसमेंभी फिर पिताकी आज्ञा. तीसरा फिर हे माता ! आपकी संमति ॥ ४२ ॥

भरत प्राणप्रिय पावहिँ राजू ॥ बिधि सबबिधि मोहिँ सन्मुख आजू ॥ १ ॥ ❀

जो न जाउँ बन ऐसेहु काजा ॥ प्रथम गणिय मोहिँ मूढ़समाजा ॥ २ ॥ ❀

चौथा प्राणोंसे प्यारे भाई भरतको राज्यका लाभ. इसलिये मैं जानता हूं कि, विधाता आज मुझपर सब प्रकारसे अनुकूल है ॥ १ ॥ जो ऐसे अवसरको पाकर मैं बनमें न जाऊं तो मुझे मूर्खोंकी समाजके भीतर प्रथम गिनना चाहिये ॥ २ ॥

(क्षेपक) मूढ़ सो सत्रह बिधिके जानो ॥ कहे पूर्व मनु तैस बखानो ॥१॥ ❀

प्रभु बोले कि–हे माता! स्वायंभुव मनुने सत्रह प्रकारके मूर्ख कहे है, वो मैं गिनता हूं सो सुनो ॥ १ ॥

छंद–कहैं इमपि पूरब मनु स्वयंभू मूढ़ सत्रह होत जू ॥ ❀
जन जो अशिष्यहिँ करत शिक्षा तौन पहिले पोत जू ॥ ❀
है जौन सेवत दारिदिहिँ धन देत दूजो तौन जू ॥ ❀
करि तौन तो जो रक्षि शत्रुहिँ कुशल चाहत जौन जू ॥ १ ॥ ❀

स्वायंभुव मनु यही कहते है कि–मूर्ख सत्रह प्रकारके होते है. तिनमें पहला मूर्ख तो, वह है कि, जो गुरुभाव न माननेवाले अशिष्यको शिक्षा करता है१, दूसरा वो है जो दरिद्रीको पाकर धन नहीं देता२, तीसरा वो है जो शत्रुको बचाकर अपना कुशल चाहता है ३, ॥ १ ॥

है सो चतुर्थ जो कथत निजमुख कर्म कारज पूर्वजू ॥ ❀
जो बैर ठानत प्रबलसों व्है निबल पंचम मूर्ख जू ॥ ❀
मूढ़ छठवों करत कुत्सित कर्म जो गुरुज्ञान जू ॥ ❀
गुण कहत श्रद्धा हो न सो मूरुख सातवों ख्यात जू ॥ २ ॥ ❀

चौथा वो है जो कार्य करनेसे पहले अपने मुह बड़ाई मारता है ४, पांचवाँ वो है जो आप निर्बल होकर प्रबल पुरुषसे बैर रखता है ५, छठा वो है जो गुरुसे ज्ञान पाकर निंद्यकर्म करता है ६, सातवाँ वो है जो गुणकी बात कहते उसपर श्रद्धा नहीं रखता ७, ॥ २ ॥

गुरुगोत्रत्रियसों करत निन्दित कर्म अठवों तौन जू ॥ ❀
जो पुत्र तियगति मान चाहत नौम सो अघभौन जू ॥ ❀
निजबीज जो परखेत डारै दशम मूरुख खेद जू ॥ ❀
है सो एकादश मूर्ख तियसों कहत जो निजमंत्र जू ॥ ३ ॥ ❀

आठवां वो है जो गुरुस्त्री और गोत्रकी स्त्रीसे बुराकाम करता है ८, नवां वो है जो पापपुंज पुरुष स्त्रीकी शिक्षा मानकर प्रतिष्ठा और मान चाहता है ९, दशवां वो है जो अपना बीज दूसरेके खेतमें डालता है १०, ग्यारहवां वो है जो भेदकी बात स्त्रीसे कह देता है ११ ॥ ३ ॥

अरु देन कहि नाहिँ देत जो सो मूर्ख द्वादश गंथ जू ॥ ❀
जो भेद जाने बिना जल्पत तौन तेरहो अन्य जू ॥ ❀
है चतुर्दशवों मूढ़ गुणत न कर्मको फल पाय जू ॥ ❀
अरु पंचदश जो याचकनसों कहत कटु रिस छाय जू ॥ ४ ॥ ❀

बारहवां वो है जो देनेको कह कर फिर नहीं देता १२, तेरहवां वो है जो विना भेद जाने बीचमें बोल उठता है १३, चौदहवां वो है जो कर्म कर उसका फल चाहता है अर्थात् निष्काम कर्म नहीं करता १४, पंद्रहवां वो है जो याचक और भिखारियोंके वचन सुन, कटुवचन बोलता है और क्रोधमें आ जाता है १५ ॥ ४ ॥

जो दान भोग न करत सोरहों मूढ़ सो धनवान जू ॥ ❋
निजवन्धुभागहिँ हरण चाहत सप्तदश मन दान जू ॥ ❋
जो लखत लोक प्रलोक नहिँ सो मूढ़ सबमें श्रेष्ठ जू ॥ ❋
सोउ पाइ ऐसो समय तज बन भजब है असपष्ट जू ॥ ५ ॥ ❋

सोलहवां वो है जो धनाढ्य होकर दान व भोग नहीं करता. १६, सत्रहवां मूर्ख वो है जो अपने कुटुम्बके लोगोंका हिस्सा हरना चाहता है १७, और हे माता ! जिसे इस लोक और परलोकका ज्ञान नहीं मूर्ख इन वो सबका शिरोमणि है. उसके बराबर दूसरा मूढ कोई नहीं है. सो मैं ऐसा अवसर फिर कहां पाऊंगा ? इसलिये मैं अवश्य बनमें जाऊंगा ॥ ५ ॥ ॥ ॥ इति ॥

सेवहिँ रण्ड कल्पतरु त्यागी ॥ परिहरि अमिय लेहिँ बिष मांगी ॥ ३ ॥ ❋
तेउ न पाइ अस समय चुकाहीं ॥ देख बिचारि मातु मनमाहीं ॥ ४ ॥ ❋

हे माता ! तुम अपने मनमें विचार करके देखो कि, जो मूर्खलोग कल्पवृक्षको त्यागकर एरंडको सेवते हैं और अमृतको त्यागकर जहर मांग लेते हैं, वेभी ऐसा समय पाकर नहीं चूकते ॥ ३ ॥ ४ ॥

अम्ब एक दुख मोहिँ बिशेषी ॥ निपट बिकल नरनायक देषी ॥ ५ ॥ ❋
थोरिहिँ बात पितहिँ दुख भारी ॥ होत प्रतीति न मोहिँ महतारी ॥ ६ ॥ ❋

हे माता ! मैं राजाको जो निपटही व्याकुल देखता हूं यह एक मुझे बहुत भारी दुःख है ॥ ५ ॥ इस छोटीसी बातके वास्ते पिताको इतना भारी दुःख होवे. हे माता ! इस बातकी मुझे प्रतीति नहीं आती ॥ ६

राउ धीर गुणउदधि अगाधू ॥ भा मोते कछु बडु अपराधू ॥ ७ ॥ ❋
ताते मोहिँ न कहत कछु राऊ ॥ मोर शपथ तोहिँ कहु सति भाऊ ॥ ८ ॥ ❋

राजा दशरथ धीरजके अथाह समुद्र है इससे मुझे शंका होती है कि, मुझसे कोई भारी अपराध हो गया दीखे है ॥ ७ ॥ सो उसीसे राजा मुझसे कुछ नहीं कहते. हे माता ! तुझे मेरी शपथ है जो हो सो तू सत्यभावसे कह ॥ ८ ॥

दोहा—सहज सरल रघुबर बचन, कुमति कुटिल करि जान ॥ ❋
चलै जोंक जिमि बक्रगति, यद्यपि सलिलसमान ॥ ४३ ॥ ❋

यद्यपि प्रभुके बचन स्वभावहीसे सरल और निर्मल हैं तौभी उस कुमतिने उनको अतिकुटिल करके जाना. कवि कहता है कि, यह बात सत्य है कि, यद्यपि जल सदा बराबर रहता है तौभी जोंक तो सदा सर्वदा टेढ़ी ही चलती है ॥ ४३ ॥

रहसी रानि राम रुख पाई ॥ बोली कपटसनेह जनाई ॥ १ ॥ ❋
शपथ तुम्हार भरतके आना ॥ हेतु न दूसर मैं कछु जाना ॥ २ ॥ ❋

रामचन्द्रजीकी वनमें जानेकी रुख देखकर, रानी मनमें प्रसन्न हुई. और कपटसे स्नेह जनाकर बोली कि—॥ १ ॥ हे राम ! मुझे तुम्हारी शपथ है और भरतकी दोहाई है कि, मैं तो राजाके दुःखका कारण दूसरा नहीं जानती ॥ २ ॥

तुम अपराधयोग नहिँ ताता ॥ जननीजनकबन्धुसुखदाता ॥ ३ ॥ ❀
राम सत्य तुम जो कछु कहहू ॥ तुम पितुमातुबचनरत अहहू ॥ ४ ॥ ❀

हे तात ! आप अपराध करो जैसे नहीं हो. तुम तो माता पिता और बांधवोंको अतिशय सुख देनेवाले हो ॥ ३ ॥ हे राम ! तुमने जो कुछ कहा है वो सब सत्य है. तुम्हारी माता पिताके बचनमें परम प्रीति है ॥ ४ ॥

पितहिँ बुझाइ कहौ बलि सोई ॥ चौथेपन जेहिँ अयश न होई ॥ ५ ॥ ❀
तुमसम सुवन सुकृत जेहिँ दीन्हे ॥ उचित न तासु निरादर कीन्हे ॥ ६ ॥

अब तुम पिताको समझाकर वो कह दो कि, जिससे बुढ़ापेमें उनका अपयश न होवे ॥ ५ ॥ राजाके जिस पुण्यके प्रतापसे तुम्हारे जैसे पुत्र हुए हैं उस पुण्यको निरादर करना योग्य नहीं है ॥ ६ ॥

लागहिँ कुमुखिबचन शुभ कैसे ॥ मगह गयादिक तीरथ जैसे ॥ ७ ॥ ❀
रामहिँ मातुबचन सब भाये ॥ जिमि सुरसरिगत सलिल सुहाये ॥ ८ ॥

कवि कहता है कि—उस कुमुखीके बचन बुरे होनेपरभी प्रभुके विषे कैसे अच्छे लगते है कि, जैसे मागधदेशके बीच गया आदि तीर्थ शोभायमान है ॥ ७ ॥ माता कैकेयीके सारे बचन प्रभुको कैसे अच्छे लगे है कि, जैसे कर्मनाशा आदि महा अपवित्र नदियोंका जल गंगामें मिलकर सुहावना हो जाता है ॥ ८ ॥

दोहा–गै मूर्छा रामहिँ सुमिरि, नृप फिरि करँवट लीन्ह ॥ ❀
सचिव रामआगमन कहि, बिनय समयसम कीन्ह ॥ ४४ ॥ ❀

जब दशरथजीकी मूर्छा गई और प्रभुका स्मरण कर, दशरथजीने फिर करँवट लिया, तब सुमंत्रने रामचन्द्रजीका आगमन कह समयके अनुसार विनय किया ॥ ४४ ॥

जब नृप अकनि राम पगु धारे ॥ धरि धीरज तब नयन उघारे ॥ १ ॥ ❀
सचिव सँभारि राउ बैठारे ॥ चरण परत नृप राम निहारे ॥ २ ॥ ❀

जब राजाने सुना कि, राम पधारे है. तब धीरज धर, आंख खोली ॥ १ ॥ सुमंत्रने सँभालके राजाको बिठाया और प्रभुको पैरोंमें पड़ते देखा ॥ २ ॥

लिये सनेहबिकल उर लाई ॥ गै मणि फणिक बहुरि जिमि पाई ॥ ३ ॥ ❀
रामहिँ चितै रहे नरनाहू ॥ चला बिलोचन बारिप्रबाहू ॥ ४ ॥ ❀

तब स्नेहसे विकल हो राजाने उन्हें छातीसे लगा लिया और प्रभुके मिलनेसे दशरथजीका चित्त कैसा संतुष्ट हुआ कि, मानों सांपने गई हुई मणि पीछी पा लीहै ॥ ३ ॥ राजा रामचन्द्रजीको देखते रहे, इतनेमें नेत्रोंमेंसे जलका प्रवाह बहने लगा ॥ ४ ॥

शोकविकल कछु कहै न पारा ॥ हृदय लगावत बारहिं बारा ॥ ५ ॥ ❋
विधिहिं मनाव राउ मनमाहीं ॥ जेहिं रघुनाथ न कानन जाहीं ॥ ६॥ ❋

राजा शोकसे विव्हल होनेके कारण कुछ कह न सके. बारंबार प्रभुको छातीसे लगाते रहे ॥ ५ ॥ राजा अपने मनमें विधाताको मनाते है कि, जिसतरह राम बनमें न जाँय ॥ ६ ॥

सुमिरि महेशहिं कहहिं निहोरी ॥ बिनती सुनहु सदाशिव मोरी ॥ ७॥ ❋
आशुतोष तुम औघडदानी ॥ आरत हरहु दीन जन जानी ॥ ८ ॥ ❋

महादेवजीका स्मरण करके राजा निहोरा कर कहते है कि—हे सदाशिव शंभु ! मेरी एक विनती सुनो॥७॥ हे पार्वतीपति ! आप भक्तोंपर बहुत शीघ्र प्रसन्न होते है और अघटमान दानके देनहारे हो, सो मुझेभी अपना दीन दास जानके मेरा संकट काटो ॥ ८ ॥

दोहा—तुम प्रेरक सबके हृदय, सो मति रामहिं देहु ॥ ❋
बचन मोर तजि रहहिं घर, परिहरि शील सनेहु ॥ ४५ ॥ ❋

हे शंभु ! आप सबके अंतःकरणके प्रेरक हो,सो आप रामको ऐसी बुद्धि दो कि, वो अपने स्वाभाविक स्नेहको त्यागकर मेरे बचनको न मानें और घरमें रह जांय ॥ ४५ ॥

अयश होहु बरु सुयश नशाऊ ॥ नरक परौं बरु सुरपुर जाँऊ ॥ १ ॥ ❋
सब दुख दुसह सहावहु मोहीं ॥ लोचन ओट राम जनि होहीं ॥ २ ॥ ❋

राजा कहता है कि—मेरा अपयश होता हो तौ भले होवे, और सुयश नाश होता हो तौ भले होवे चाहे मैं नरकमें पडूं, चाहे स्वर्गमें जाऊं ॥ १ ॥ चाहे सारे दुसह दुख सहूं. पर किसी तरह राम नेत्रोंके सामनेसे न हटें ॥ २ ॥

अस मन गुनत राउ नहिं बोला ॥ पीपरपातसरिस मन डोला ॥ ३ ॥ ❋
रघुपति पितहिं प्रेमबश जानी ॥ पुनि कछु कहेउ मातु अनुमानी ॥ ४॥ ❋

राजा मनमें इस तरहका विचार करते है. मुँहसे कुछ नहीं कहते है. उनका मन पीपरके पत्तेके समान डोल रहा है ॥ ३ ॥ प्रभु पिताको प्रेमबश जान, माताका अभिप्राय समझ फिर कुछ बोले ॥ ४ ॥

देश काल अवसर अनुसारी ॥ बोले बचन बिनीत बिचारी ॥ ५ ॥ ❋
तात कहौं कछु करौं ढिठाई ॥ अनुचित क्षमब जानि लरिकाई ॥ ६ ॥ ❋

देश कालको विचार अवसरका अनुमान कर, प्रभु समयानुसार विनीत बचन बोले ॥ ५ ॥ प्रभुने कहा कि, हे तात ! मैं कुछ कहता हूं और ढिठाई करता हूं सो जो कुछ अनुचित होवे सो लड़कपन जानकर माफ करना ॥ ६ ॥

अति लघु बात लागि दुख पावा ॥ काहे न मोहिं कहि प्रथम जनावा ॥७॥ ❋
देखि गुसाइहिं पूछेउँ माता ॥ सुनि प्रसंग भा शीतल गाता ॥ ८ ❋

महाराज ! आप इतनी छोटीसी बातके वास्ते इतना दुख पाये सो पहलेही मुझे कहकर जता क्यों न दिया ? ॥ ७ ॥ आपको देख, मातासे पूंछा. जब माताने सारे समाचार कहे और प्रसंग सुना तब मेरा शरीर शीतल हुआ ॥ ८ ॥

दोहा-मंगलसमय सनेहबश, शोच परिहरिय तात ॥ ❀
आयसु देइय हर्षि हिय, कहि पुलके प्रभु गात ॥ ४६ ॥ ❀

हे तात ! अभी मंगलका समय है सो स्नेहबश होकर आप शोचको तज दो और मनमें प्रसन्न होकर, मुझे आज्ञा देओ. ऐसे कहकर प्रभु पुलकितशरीर हुए और बोले ॥ ४६ ॥

धन्य जन्म जगतीतल तासू ॥ पितहिँ प्रमोद चरित सुन जासू ॥ १ ॥ ❀
चारि पदारथ करतल ताके ॥ प्रिय पितु मातु प्राणसम जाके ॥ २ ॥ ❀

कि-हे तात ! इस भूमंडलमें जन्म उसीका धन्य है कि, जिसका चरित्र सुन, पिताको प्रमोद होवे ॥ १ ॥ और चारों पदार्थ (धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष) उसीके हाथमें है कि, जिसको माता पिता प्राणके समान प्रिय लगते हैं ॥ २ ॥

आयसु पालि जन्मफल पाई ॥ ऐहौं बेगिहिँ होहु रजाई ॥ ३ ॥ ❀
बिदा मातुसन आवौं माँगी ॥ चलि हौं बनहिँ बहुरि पग लागी ॥ ४ ॥ ❀

सो मैं आपकी आज्ञाको पाल, जन्मका फल पाय, पीछा जलदी आजाऊंगा. अभी मुझको आज्ञा होवे ॥३॥ मैं मातासे आज्ञा मांगकर आता हूं. फिर आपके पाँवोंमे लगकर बनमें चला जाऊंगा ॥४॥

अस कहि राम गवन तब कीन्हा ॥ भूप शोकबश उतर न दीन्हा ॥ ५ ॥
नगर व्यापि गइ बात सुतीछी ॥ छुवत चढ़ी जनु सबतन बीछी ॥ ६ ॥ ❀

ऐसे कहकर प्रभु पधारे. राजा शोचके बश होनेसे पीछा कुछभी उत्तर न दे सके ॥ ५ ॥ इतनेमें यह महाक्रूर बात सारे नगरमें फैलगई; जिसको सुनते ही मानों सबके शरीरमें बीछीकासा जहर चढ़गया ॥ ६ ॥

सुनि भये बिकल सकल नर नारी ॥ बेलि बिटप जनु लागु दवारी ॥ ७ ॥ ❀
जो जहँ सुनै धुनै शिर सोई ॥ बड़ बिषाद नहिँ धीरज होई ॥ ८ ॥ ❀

यह बात सुनकर नगरके सारे नर नारी कैसे बिकल होगये कि, मानों बेलि और वृक्षोंमें दावानल लग गई है ॥ ७ ॥ जहां जो इस बातको सुनता है वो ही शिर धुनता है. लोगोंको इस बातसे बड़ा बिषाद हुआ. कोई धीरज नहीं धर सका ॥ ८ ॥

दोहा-मुख सूखहिँ लोचन श्रवहिँ, शोक न हृदय समाय ॥ ❀
मानहुँ करुणारसकटक, उतरा अवध बजाय ॥ ४७ ॥ ❀

सबका मुख सूखता है. आंखोंमेंसे आंसू बहते है. हृदयमें शोच नहीं समाता; मानों करुणारसही कटकको साज, धौंसा दे, अवधपर आ उतरा है ॥ ४७ ॥

भलि बनाइ बिधि बात बिगारी ॥ जहँ तहँ देहिँ कैकयिहिँ गारी ॥ १ ॥ ❀
यहि पापिनिहिँ बूझि का परेऊ ॥ छाय भवनपर पावक धरेऊ ॥ २ ॥ ❀

बिधातानि बातको बनाके अच्छी बिगारी. जहां तहां लोग ऐसे कहते हैं और कैकेयीको गालियां देते है ॥ १ ॥ कि-इस पापिनीके यह क्या मनमें आगई ? कि, छायेहुए घरपर आग रख दी ॥ २ ॥

निजकर नयन काढ़ि चह दीखा ॥ डारि सुधा बिष चाहत चीखा ॥ ३ ॥
कुटिल कठोर कुबुद्धि अभागी ॥ भइ रघुबंशबेणुबन आगी ॥ ४ ॥ ❀

यह बड़ी मूर्ख है. जो अपने हाथोंसे आंखको निकाल कर देखना चाहती है और अमृतको डालकर विष चाखना चाहती है ॥ ३ ॥ यह अभागिन बड़ी कुटिल और कठोर है. यह कुमति आज रघुकुलके लिये बासोंके बनकी आगि बन गई है ॥ ४ ॥

पल्लव बैठि पेड़ यहिँ काटा ॥ सुखमहँ शोकठाट यहिँ ठाटा ॥ ५ ॥ ❀
सदा राम यहिँ प्राणसमाना ॥ कारण कवन कुटिलपन ठाना ॥ ६ ॥ ❀

हाय ! इस कुबुद्धिने डारपै बैठके पेड़को काटा.अहहह !! इस सुखसमुद्रके बीच इसने यह कैसा शोकका ठाट ठाटा है ॥ ५ ॥ अहो ! इसको तौ राम सदा प्राणोंसे प्यारा लगता था. फिर इसने यह कुटिलपन क्यो विचारा ? ॥ ६ ॥

सत्य कहहिँ कबि नारिसुभाऊ ॥ सब बिधि अगम अगाध दुराऊ ॥ ७ ॥
निजप्रतिबिम्ब मुकुर गहि जाई ॥ जानि न जाइ नारिगति भाई ॥ ८ ॥ ❀

कबिलोग यह बात सत्य कहते है कि, स्त्रीका स्वभाव सब प्रकारसे अगाध, अगम और गुप्त होता है. कहा है कि–स्त्रीके चरित और पुरुषका भाग्य देवताओंकेभी जाननेमें नहीं आता ॥ ७ ॥ दर्पणगत अपना प्रतिबिंब किसी तरह लिया नहीं जाता, सो चाहे वो भले ग्रहण किया जाय, परंतु हे भाई ! स्त्रीका चरित्र जाननेमें नहीं आ सकता ॥ ८ ॥

दोहा–काह न पावक जरि सकै, का न समुद्र समाइ ॥ ❀
का न करै अबला प्रबल, केहि जग काल न खाइ ॥ ४८ ॥ ❀

अग्नि किसको नहीं जल सकता ? समुद्रमें क्या नहीं समा जाता ? जिसका नाम तौ अबला है परंतु वस्तुतः महाप्रबल स्त्री क्या नहीं कर सकती ? और काल जगतके भीतर किसको नहीं खा जाता ? अर्थात् ये सब सबकुछ कर सकते है ॥ ४८ ॥

का सुनाइ बिधि काह सुनावा ॥ का दिखाइ चह काह दिखावा ॥ १ ॥ ❀
एक कहैं भल भूप न कीन्हा ॥ बर बिचारि नहिँ कुमतिहिँ दीन्हा ॥ २ ॥ ❀

हाय ! विधाताने क्या सुनाकर, क्या सुनाया. और हाय ! क्या दिखाकर,क्या दिखाया? ॥ १ ॥ कितनेएक लोग कहते हैं कि–राजाने यह अच्छा नहीं किया;क्योंकि कुबुद्धि रानी कैकेयीको जो वरदान दिया वो बिचारके नहीं दिया ॥ २ ॥

जो हठि भयउ सकलदुख भाजन ॥ अबला बिबश ज्ञान गुण गाजन ॥ ३ ॥
एक धर्म परमिति पहिँचाने ॥ नृपाहिँ दोष नहिँ देहिँ सयाने ॥ ४ ॥ ❀

जिस वरदानके प्रतापसे सकल सुखोंके भंडार दशरथजी बलात्कारसे सब दुःखोंके पात्र हुएहै,यह बात सत्य है कि, स्त्रीके बश होनेसे बिबेक और गुण सब नाश हो जाते हैं ॥३॥ कितनेएक सुजानलोग ऐसे कहते हैं कि–राजा दशरथजी धर्मके ज्ञाता हैं. इसलिये इन्होंने यह ठीक किया है. इसमें राजाका दोष नहीं है ॥ ४ ॥

शिबि दधीचि हरिचन्द कहानी ॥ एक एकसन कहहिँ बखानी ॥ ५ ॥ ❀
एक भरतकर सम्मत कहहीं ॥ एक उदास भाव सुनि रहहीं ॥ ६ ॥ ❀

सब लोग यूथके यूथ मिल रहे है और परस्पर राजा शिबि दधीचि और हरिश्चंद्रकी कथा कहते है ॥ ५ ॥ कई कहते है कि—यह बात भरतकी सलाहसे हुई है और कई सुनकर उदास भाव रहते है ॥ ६ ॥

कान मूंदिकर रद गहि जीहा ॥ एक कहहिँ यह बात अलीहा ॥ ७ ॥ ❀
सुकृत जाइ अस कहत तुम्हारे ॥ भरत रामकहँ प्राणपियारे ॥ ८ ॥ ❀

और कितनेएक हाथोंसे कान मूंदि दांतोंके बीच जीभको ले, ऐसे कहते है, कि—यह बात निरी झूंठी है ॥ ७ ॥ अहह ! तुम अपनी वाणीसे ऐसी बात कहते हो, जो तुम ऐसे कहोगे तौ तुम्हारा सब पुण्य नाश होजायगा. क्योंकि भरत रामको प्राणोंसे प्यारा है ॥ ८ ॥

दोहा—चन्द्र श्रवै बरु अनलकण, सुधा होइ बिपतूल ॥ ❀
सपनेहुँ कबहुँ न करहिँ कछु, भरत रामप्रतिकूल ॥ ४९ ॥ ❀

चाहे चंद्रमामेंसे अग्निके कण चूने लगजांय, और अमृत विषके बराबर हो जाय, परंतु भरत तौ स्वप्नमेंभी कभी कुछभी रामके प्रतिकूल नहीं कर सकता ॥ ४९ ॥

---

१ राजा हरिश्चंद्र सूर्यवंशी था. यह राजा बड़ा सत्यवादी था. एक समय इंद्रके सामने विश्वामित्रजीके बैठे वसिष्ठजीने यह कहा कि—सूर्यवंशमें राजा हरिश्चंद्र आज दिन बड़ा सत्यवादी है, वैसा दूसरा जगत्में कोई नहीं है यह बात सुन, राजाकी परीक्षा लेनेको विश्वामित्रजीने आय, राजासे कहा कि—महाराज! हमैं कन्याका विवाह करना है सो द्रव्य देओ. तब राजाने विश्वामित्रजीको सब द्रव्य देदिया, तौ विश्वामित्रजी बोले कि—इससे तौ मेरा पूरा नहीं पड़ेगा. कुछ और दे, नहीं तौ तुमसे दानीके पास याचना कर फिर दूसरेको याचना पड़ेगा तब राजा अपनी रानी पुत्रको साथ लेकर चला सो बनारसमें आया वहां एक ब्राह्मणको धनाढ्य देख, राजाने कहा कि—महाराज! हम सब आपके दास रहते हैं. आप इस ब्राह्मणको धन देवो, तब उस ब्राह्मणने कहा कि—मेरेपास इतना द्रव्य तौ है नहीं, आधा द्रव्य मैं दे दूंगा, तुम अपनी रानी और लड़का हमारे गिरो रख दो. राजा यह बात स्वीकार कर, रानी और लडकेको बेंच श्वपचके घर गया. उससे दास हरनेको राजाने कहा, तब राजासे श्वपचने कहा कि महाराज ! हमारी टहल बहुत नीच है. जो मुर्दा आता है उसका कर लेना पड़ता है, सो तुम्हें स्वीकार हो तो करो. मैं इस ब्राह्मणको धन दे दूंगा. राजाने वह बात स्वीकार करी विश्वामित्रजी धन ले चल दिये. राजा चांडालकी नौकरी करने लगा. जो कोई मुर्दा फूंकने आवे उससे कर लेलिया करै और मरघटमें सदा रहा करै. ऐसे कई दिन बीत गये. एक दिन राजा हरिश्चंद्रका पुत्र रोहिताश्व फूल लेनेको बनमें गया, तहां धूपसे थककर वो एक काठपर बैठा, तहां सांपने आकर उसे डसा और वो मरगया. लड़कोंने आकर उसकी मातासे कहा, तब उसने ब्राह्मणसे प्रार्थना करी कि—महाराज ! मेरा लड़का सांपके काटनेसे मरगया है. आज्ञा होवे तौ जाकर फूंक आऊं. तब ब्राह्मणने कहा अभी घरमें काम बहुत है निपट चुके तब जाना. बिचारी बैठ रही. आखिर ब्राह्मणने आज्ञा दी तब वो बनमें गई. मरे लडकेको उठाय, मरघटमें लाई. फूकने लगी तौ राजाने कहा हमारा कर लाव, नहीं तौ हम फूंकने न देंगे. रानीने बहुत कुछ समझाया पर वो न माना. तब रानीने कहा मेरे पहिरनेको जो वस्त्र है उसके सिवाय मेरे पास और कुछ नहीं है. जो तू कहै तौ यह दे दू. राजाने कहा मैं नहीं जानता. मुझे तौ कर लेनेसे प्रयोजन है. कर दिये विना फूंकने न पाओगी. राजाका यह वचन सुन, रानीने ज्योंही अंचल उतारनेको अंचलपर हाथ डाला, त्योंही तीनों देव आ उपस्थित हुए. और राजासे कहा कि—वर मांग फिर राजकुमार रोहिताश्वको जिलाय, राजाको अनेक प्रकारके वरदान दिये. फूलोंकी वर्षा हुई और दुंदुभि बजे. और जय जय ध्वनि हुई, और देवता स्तुति करने लगे कि—हे राजा ! आपसा सत्यवादी दूसरा कोई नहीं है. आप धन्य हो आप धन्यहो. आप अपने नगरमें जाय, राज करो और प्रजाका पालन करो. और सबको सुख देवो, फिर राजाने धर्मराज किया. राजा प्रजा सुख चैनसे रहने लगे.

एक बिधातहिँ दूषण देहीं ॥ सुधा दिखाइ दीन्ह विष जेहीं ॥ १ ॥ ❋
खरभर नगर शोच सबकाहू ॥ दुसह दाह उर मिटा उछाहू ॥ २ ॥ ❋

कईलोग विधाताको दूषण देते है, कि जिसने अमृतको दिखाकर, जहर दे दिया ॥ १ ॥ नगरके भीतर बड़ी खरभर मच रही है. सब लोग शोच करते है, सबके हृदयमें दुसह दाह भभक रहा है. उछाहका कहीं नामतक न रहा है ॥ २ ॥

बिप्रबधू कुलमान जठेरी ॥ जे प्रिय परम केकयीकेरी ॥ ३ ॥ ❋
लगीं देन सिख शील सराही ॥ बचन बाणसम लागहिँ ताही ॥ ४ ॥ ❋

जो वृद्ध और बड़ी कुलवान् ब्राह्मणोंकी स्त्रियां कैकेयीको अतिशय प्यारी है ॥ ३ ॥ वे कैकेयीके शीलको सराह सराहकर शिक्षा देती है, सो उनके बचन कैकेयीको बाणके समान अति तीक्ष्ण लगते है ॥ ४ ॥

भरत न प्रिय मोहिँ रामसमाना ॥ सदा कहहु यह सब जग जाना ॥ ५ ॥
करहु रामपर सहजसनेहू ॥ केहि अपराध आजु बन देहू ॥ ६ ॥ ❋

विप्रपत्नियां कहती है कि—हे कैकेयी ! तू हमेशा कह कहती थी कि, मुझे रामके जैसा भरत प्रिय नहीं है, सो इस बातको सारा संसार जानता है ॥ ५ ॥ सो अब तू रामपर अपना स्वाभाविक स्नेह प्रगट कर. आज तू उसे बनबास क्यों देती है ? उसका क्या अपराध है ? सो हमे कह तौ सही ॥ ६ ॥

कबहुँ न कीन्ह सवति अवरेशू ॥ प्रीति प्रतीति जान सब देशू ॥ ७ ॥ ❋
कौसल्या अब कहा बिगारा ॥ तुम जेहिँ लागि बज्र पुर पारा ॥ ८ ॥ ❋

तूने आजलो किसी सवतिसे ईर्षाभाव नहीं किया, सो तेरी प्रीतिकी प्रतीति सब देश और मुल्कोंमें प्रसिद्धहै ॥ ७ ॥ हे रानी ! अब कौसल्याने तेरा क्या बिगाड़ा है. कि, जिसके लिये तूने वज्रका प्रहार कर, सारे नगरका नाश कर डाला ? ॥ ८ ॥

दोहा--सीय कि पियसँग परिहरिहि, लषण कि रहिहहिँ धाम ॥ ❋
भरत कि भूभुज राजपुर, नृप कि जियहिँ बिनु राम ॥ ५० ॥ ❋

क्या सीता प्रभुका संग तज देगी ? लक्ष्मण रामचन्द्रबिन घरमें रहेगा ? क्या भरत राम विन नगरका राज करेगा ? क्या राजा रघुनाथबिना जीते रहेंगे ? ॥ ५० ॥

अस बिचारि जिय छांड़हु कोहू ॥ शोक कलंक कोटि जनि होहू ॥ १ ॥ ❋
भरतहिँ अवशि देहु युवराजू ॥ कानन कौन रामकर काजू ॥ २ ॥ ❋

ऐसे बिचार कर हे कैकेयी ! अंतःकरणके क्रोधको तज दे. शोच और कलंकका प्रकार मत बनै ॥ १ ॥ भरतको तू भले राज दे. पर रामको बनबास देनेका प्रयोजन क्या है ? ॥ २ ॥

नाहिन राम राजकर भूँखे ॥ धर्मधुरीण विषयरस रूखे ॥ ३ ॥ ❋
गुरुगृह बसहिँ राम तजि गेहू ॥ नृपसन अस बर दूसर लेहू ॥ ४ ॥ ❋

रामचन्द्र राजके भूँखे नहीं है; क्योंकि वे तौ धर्मधुरंधर और विषयानंदसे बिलकुल विरक्त

है ॥ ३ ॥ अब तू राजासे दूसरा ऐसा बरदान लेले कि, रामचन्द्र आनन्दकन्द घरको छोड़कर, गुरुके घर जा बसें ॥ ४ ॥

रामसरिस सुत काननयोगू ॥ कहा कहहिँ सुनि तुमकहँ लोगू ॥ ५ ॥ ❀
जो न मानिहौ कहे हमारे ॥ नहिँ लागिहि कछु हाथ तुम्हारे ॥ ६ ॥ ❀

हे कैकेयी ! तू क्या कहती है ? रामचन्द्रजीकेसे पुत्र बनवासके योग्य है ? यह बात सुनकर लोग तुम्हें क्या कहेंगे ? ॥ ५ ॥ जो तुम हमारा कहना न मानोगी, तौ तुम्हारे हाथ तो कुछभी नहीं लगेगा ॥ ६ ॥

जो परिहास कीन कछु होई ॥ तौ कहि प्रगट जनावहु सोई ॥ ७ ॥ ❀
उठहु बेगि सोइ करहु उपाई ॥ जेहि बिधि शोक कलंक नसाई ॥ ८ ॥ ❀

जो कुछ तुमने हँसी की हो तो प्रगट करके जना दो ॥ ७ ॥ हे कैकेयी ! अब तुम उठकर जल्दी वो उपाय करो कि, जिसतरह शोच और कलंक दोनों मिट जाँय ॥ ८ ॥

छंद–जेहि भांति शोककलंक जाइ उपाइ करि कुल पालहू ॥
हठि फेरु रामहिँ जात बन जनि बात दूसरि चालहू ॥
जिमि भानु बिनु दिन प्राण बिनु तन चंद बिनु जिमि यामिनी ॥ ❀
तिमि अवध तुलसीदास प्रभुबिनु समुझिये मन भामिनी ॥ २ ॥ ❀

जिस तरह शोच और कलंक मिटजाय वो उपाय करके कुलकी रक्षा करो. रामचन्द्रजी जो बनमें जाते है उन्हें पकड़कर, हठकर पीछा फेरो. हे रानी ! दूसरी चाल मत चलो. जैसे सूरजबिन दिन, प्राणबिन तन, और चंद्रबिन रैन शोभा नहीं पाती, ऐसे प्रभुबिन अयोध्या शोभा न पावेगी, सो इस बातको आप अपने मनमें शोच समझ लो ॥ २ ॥

सोरठा–सखिन सिखावन दीन्ह, सुनत मधुर परिणाम हित ॥ ❀
तेहि कछु कान न कीन्ह, कुटिल प्रबोधी कूबरी ॥ २ ॥ ❀

यद्यपि सखियोंने कैकेयीको बहुत शिक्षा दी, कि, जो सुननेमें तौ मधुर और परिणाममें हितकारी थी, परंतु उसने कानमें नहीं की; क्योंकि ओ कुटिल कूबरोकी बहँकाई हुई थी ॥ २ ॥

उतर न देइ दुसह रिस रूखी ॥ मृगिहिँ चितव जनु बाघिनि भूखी ॥ १ ॥ ❀
ब्याधि असाधि जानि तिन त्यागी ॥ चलीं कहत मतिमन्द अभागी ॥ २ ॥ ❀

प्रचंड कोपसे रुखी रुख दिखाकर, कैकेयीने कुछ जबाब नहीं दिया. किंतु जैसे भूँखी बाघिनी हरिणीकी ओर देखती है ऐसे उनकी तर्फ देखा ॥ १ ॥ तब उस रोगको असाध्य जान, कैकेयीका पिंड छोड़ ऐसे कहती हुई वे सखियां चलीं गयीं, कि–यह मूर्ख बड़ी अभागिन है ॥ २ ॥

राज करत इहिँ दैव बिगोई ॥ कीन्हेसि अस जस करै न कोई ॥ ३ ॥ ❀
यहि बिधि बिलपहिँ पुरनरनारी ॥ देहिँ कुचालिहिँ कोटिक गारी ॥ ४ ॥ ❀

राज करती हुई इस मंदभागिनको दैवने विनाश कर दिया है. इसने आज ऐसा काम किया है कि, जैसा कोई भी न करै ॥ ३ ॥ नगरके सब नर नारी इसतरह बिलाप करते हैं और कुचाल कैकेयीको करोड़ों गालियां देते हैं ॥ ४ ॥

जरहिँ विषम ज्वर लेहिँ उसासा ॥ कवन रामबिनु जीवनआसा ॥ ५ ॥ ❋
विकल वियोग प्रजा अकुलानी ॥ जिमि जलचरगण सूखत पानी ॥ ६ ॥ ❋

सब प्रजा विषमज्वरकी भांति भीतरसे धकधका रही है और उसास ले लेकर कहती है कि-रामके बिना जीनेकी आशा कैसी ? ॥ ५ ॥ प्रभुके बियोगसे प्रजा कैसी बिकल हो रही है कि, मानों पानी के सूखनेसे जलजंतुओंकी दशा हो जाती है ॥ ६ ॥

अति बिषादवश लोग लुगाई ॥ गये मातुपहँ राम गुसाँई ॥ ७ ॥ ❋
मुख प्रसन्न चित चौगुण चाऊ ॥ यहै शोच जनि राखहिँ राऊ ॥ ८ ॥ ❋

सब स्त्री पुरुष विषम विषादके बश हो रहे है. उसकाल प्रभु रामचन्द्रजी माताके पास पधारे ॥ ७ ॥ राज्याभिषेकके बीच विघ्न होनेसे लोगोंकी यह दशा हो रही है, तौभी प्रभुका मुखकमल अति प्रसन्न है. चित्तमें पहले करते चौगुना चाव है.प्रभुके मनमें यही शोच हो रहा है कि, ऐसा न होजावे कि राजा किसी भांति रख न लेवें ॥ ८ ॥

दोहा--नव गयन्द रघुवंशमणि, राज अलानसमान ॥ ❋
छूटि जान बन गवन सुनि,उर अनँद अधिकान ॥ ५१ ॥ ❋

रघुकुलमणि श्रीरामचन्द्रजी तौ नवीन गजराज है और राज है सोही हाथीको बांधनेका अलान कहे बंधन है. और बनमें जाना है सोही अलानसे छूट जाना है. सो उसे सुन प्रभुके मनमें अति आनंद बढ़ रहा है ॥ ५१ ॥

रघुकुलतिलक जोरि दोउ हाथा ॥ मुदित मातुपद नायउ माथा ॥ १ ॥ ❋
दीन्ह अशीश लाइ उर लीन्हे ॥ भूषण बसन निछावरि कीन्हे ॥ २ ॥ ❋

प्रभुने माता कौसल्याके पास जाय, दोनों हाथ जोड़, आनंदके साथ चरणोंमें शिर नवाया ॥ १ ॥ तब माताने आशिष दे, उठाय, छातीसे लगाया. और वस्त्र व आभूषण न्योछावर किये ॥ २ ॥

बार बार मुख चूंबति माता ॥ नयन नेहजल पुलकित गाता ॥ ३ ॥ ❋
गोद राखि पुनि हृदय लगाये ॥ स्रवत प्रेमरस पयद सुहाये ॥ ४ ॥ ❋

माताने बारंबार मुख चुंबा. स्नेहसे नेत्रोंमें जल भर आया और शरीर पुलकित होगया ॥ ३ ॥ प्रभुको गोदीमें बिठाय, फिर छातीसे लगाया, तब प्रेमरस और करुणासे उसके स्तन झरने लगे ॥ ४ ॥

प्रेम प्रमोद न कछु कहि जाई ॥ रंक धनदपदवी जनु पाई ॥ ५ ॥ ❋
सादर सुन्दर बदन निहारी ॥ बोली मधुर बचन महतारी ॥ ६ ॥ ❋

उस समयका प्रेमानंद कुछ कहा नहीं जाता. मानों जन्मदरिद्रीने कुबेरका पद पालिया है ॥ ५ ॥ माता कौसल्या आदरके साथ प्रभुके सुन्दर मुखारविंदकी ओर देख मधुर बचन बोली कि- ॥ ६ ॥

कहहु तात जननी बलिहारी ॥ कबहिँ लगन मुदमंगलकारी ॥ ७ ॥ ❋
सुकृतशीलसुखसींव सुहाई ॥ जन्मलाभ लहि अवध अघाई ॥ ८ ॥ ❋

हे तात ! माता बलिहारी जाती है. कहो; आनंद और मंगलकारी राजतिलकका लग्न कब है ? ॥ ७ ॥ जिस पुण्य, शील और सुखकी सींव सुहावने लग्नमें अवधके लोगोंको अपने जन्मका पूर्ण फल मिलेगा ॥ ८ ॥

दोहा–जेहि चाहत नर नारि सब, अति आरत यहि भांति ॥ ❀
जिमि चातकि चातक तृषित, वृष्टि शरद ऋतु स्वाति ॥ ५२ ॥ ❀

जिस लग्नको ये सब स्त्रीपुरुष अति आतुर होके ऐसे चाहते है कि, जैसे प्यासी चातकी और चातक शरदऋतुमें स्वातिकी बूंदको चाहते है ॥ ५२ ॥

तात जाउँ बलि बेगि नहाहू ॥ जो मन भाव मधुर कछु खाहू ॥ १ ॥ ❀
पितुसमीप तब जायहु भैया ॥ प्रेमबिबश सादर कहि मैया ॥ २ ॥ ❀

हे तात ! बलि जाऊं तुम जल्दी जाकर नहाओ, और जो कुछ मन चाहे वो मिठाई खाकर फिर ॥ १ ॥ हे भैया ! पिताके पास जाओ. जब माताने प्रेमवश होकर आदरके साथ बारंबार ऐसे बचन कहे तब ॥ २ ॥

मातुबचन सुनि अति अनुकूला ॥ जनु सनेह सुरतरुके फूला ॥ ३ ॥ ❀
सुख मकरन्द भरे श्रीमूला ॥ निरखि राममन भँवर न भूला ॥ ४ ॥ ❀

माताके अति अनुकूल बचन सुन, प्रभु परम प्रसन्न हुए. हे पार्वती ! माताके बचन क्या है मानों स्नेहरूपी कल्पवृक्षके फूल झड़ रहे है ॥ ३ ॥ पुष्पोंमें पराग भरा होता है, सो यहां लक्ष्मीके कारण सुख है सोही पुष्परस है. पुष्परसको देखकर भ्रमर लुभायमान हो जाता है; परंतु प्रभुका मनरूप भ्रमर राजलक्ष्मीके सुखरूप परागको देखकर मोहित नहीं हुआ है ॥ ४ ॥

धर्मधुरीण धर्मगति जानी ॥ कहेउ मातुसन अति मृदु बानी ॥ ५ ॥ ❀
पिता दीन्ह मोहिँ कानन राजू ॥ जहँ सब भांति मोर बड़ काजू ॥ ६ ॥ ❀

क्योंकि प्रभु धर्मधुरंधर है; सो धर्मकी गतिको जानकर प्रभुने अतिशय कोमल वाणीसे मातासे कहा कि– ॥ ५ ॥ हे माता ! मुझे पिताने बनका राज दिया है, जहां जानेसे मेरी सर्वप्रकारसे बड़ी कार्यसिद्धि होगी ॥ ६ ॥

आयसु देहु मुदित मन माता ॥ जेहिँ मुद मंगल कानन जाता ॥ ७ ॥ ❀
जनि सनेहबश डरपसि भोरे ॥ आनँदमातु अनुग्रह तोरे ॥ ८ ॥ ❀

हे माता ! पिताकी आज्ञा हो चुकी है. सो अब आपभी प्रसन्नचित्त होकर मुझे आज्ञा देओ. जिससे जंगलमें जाते मेरे आनंद मंगल बना रहे ॥ ७ ॥ हे माता ! आप स्नेहवश होकर भोले भी मत डरियो. आपकी कृपासे मेरे सब प्रकारका आनंद होगा ॥ ८ ॥

दोहा–बर्ष चारिदश बिपिन बसि, करि पितुबचन प्रमान ॥ ❀
आय पाँय पुनि देखिहौं, मन जनि करसि मलान ॥ ५३ ॥ ❀

चौदह वर्षलों बनमें निवास कर, पिताके बचनको प्रमाण कर, फिर पीछा आकर, मैं आपके चरणोंका दर्शन करूंगा. हे मैया ! आप मनमें किसी बातका खेद मत करो ॥ ५३ ॥

बचन बिनीत मधुर रघुबरके ॥ शरसम लगे मातुउर करके ॥ १ ॥ ❀
सहमि सुखी सुनि शीतल बानी ॥ जिमि जवासपर पावसपानी ॥ २ ॥ ❀

प्रभुके बिनीत और मधुर बचन माताके हृदयमें बाणसे लगे और उसका हृदय कांप उठा ॥ १ ॥

प्रभुकी शीतल वाणी सुनकर कौसल्या सहमकर, कैसे सूख गई कि, जैसे जवासा (एक प्रकारका पौधा) वर्षाके शीतल जलसे सुख जाता है ॥ २ ॥

कहि नजाय कछु हृदय विषादू ॥ जनु सहमेउ करि केहरिनादू ॥ ३ ॥ ❀
नयन सलिल तन थरथर काँपी ॥ माँजा मनहुँ मीनकहँ व्यापी ॥ ४ ॥ ❀

कौसल्याके हृदयकी ग्लानि कुछ कहनेमें नहीं आती. मानों सिंहकी गर्जना सुन, हथिनी सहमि गई है ॥ ३ ॥ कौसल्याके नेत्रोंसे नीर बह रहा है. शरीर थरथर कांपता है. मानों नवीन बर्षाके जलका मलीन फेन मीनको व्याप गया है ॥ ४ ॥

धरि धीरज सुतबदन निहारी ॥ गदगद बचन कहति महतारी ॥ ५ ॥ ❀
तात पितहिँ तुम प्राणपियारे ॥ देखि मुदित चित चरित तुम्हारे ॥ ६ ॥ ❀

हे पार्वती ! फिर वो मैया कौसल्या धीरज धर, पुत्रके मुखकमलको देख, गद्गद कंठ हो कहने लगी ॥ ५ ॥ हे तात ! तुम पिताको प्राणोंसे प्यारे हो, तुम्हारे चरित्र देख देखकर राजा सदा प्रसन्न होते है ॥ ६ ॥

राज देनकहँ शुभदिन साधा ॥ कहेउ जान बन केहि अपराधा ॥ ७ ॥ ❀
तात सुनावहु मोहिँ निदानू ॥ को दिनकरकुल भयउ कृशानू ॥ ८ ॥ ❀

और तुमको राजतिलक देनेको शुभ मुहूर्त भी ठहरा लिया था. फिर बनमें जानेके लिये किस अपराधसे कहा है ॥ ७ ॥ हे तात ! इसका जो कारण हो सो मुझे सच सच कहो. आज इस सूर्यवंशको जलानेके लिये अग्नि कौन हुआ है ? ॥ ८ ॥

दोहा–निरखि रामरुख सचिवसुत, कारण कहे बुझाइ ॥ ❀
सुनि प्रसंग रहि मूक जिमि, दशा बर्णि नहिँ जाइ ॥ ५४ ॥ ❀

प्रभुकी रुख देखकर, मंत्रीके पुत्रने उसका कारण समझाकर कौसल्यासे कहा. सो प्रसंग सुनते ही कौसल्या गूंगेकी तरह चुप रहगई. उसकी दशा कुछ कही नहीं जाती ॥ ५४ ॥

राखि न सकहिँ न कहिसक जाहू ॥ दूहूं भांति उर दारुण दाहू ॥ १ ॥ ❀
लिखत सुधाकर लिखिगा राहू ॥ बिधिगति बाम सदा सबकाहू ॥ २ ॥ ❀

बनगमनके समाचार सुन, कौसल्या न तो प्रभुको रख सकती है और न जानेको कह सकती है. दोनों तरहसे उसके हृदयमें अति दारुण दाह धधक रही है ॥ १ ॥ हे पार्वती ! विधाताकी गति जानी नहीं जाती; क्योंकि चन्द्रमाको लिखते राहुको लिख दिया. मैं जानता हूं कि, बिधाताकी गति सब किसीके लिये हमेशा टेढ़ीही रहती है ॥ २ ॥

धर्म सनेह उभय मति घेरी ॥ भइ गति सांप छुछूंदरिकेरी ॥ ३ ॥ ❀
राखौं सुतहिँ होइ अनुरोधू ॥ धर्म जाइ अरु बन्धुबिरोधू ॥ ४ ॥ ❀

कौसल्याकी बुद्धिको धर्म और स्नेह दोनोंने घेरलिया, सो उसकी सांप और छुछूंदरिकीसी गती होगई ॥ ३ ॥ कौसल्या विचार करती है कि–जो मैं पुत्रको राखूं तो मेरे अनुकूल है, पर इसमें धर्म जाता है और बंधुओंसे बिरोध होता है ॥ ४ ॥

कहौं जान बन तौ बड़ि हानी ॥ संकट शोच विकल भइ रानी ॥ ५ ॥ ❋
बहुरि समुझि तियधर्म सयानी ॥ राम भरत दोउ सुतसम जानी ॥ ६ ॥ ❋

और जो बनमें जानेको कहूं तौ उसमें बड़ी हानि है. अब क्या करूं? और किधर जाऊं? ऐसे रानी संकट और शोचसे विकल होगई ॥ ५ ॥ फिर वो सयानी कौसल्या स्त्रीधर्मको समझ, राम और भरत दोनों पुत्रोंको बराबर जान ॥ ६ ॥

सरल स्वभाव राममहतारी ॥ बोली बचन धीर धरि भारी ॥ ७ ॥ ❋
तात जाउँ बलि कीन्हेउ नीका ॥ पितुआयसु सब धर्मकरटीका ॥ ८ ॥ ❋

कौशल्या धीरज धर सरल स्वभावसे मधुर बचन बोली ॥ ७ ॥ कि, हे तात! बलि जाऊं, तुम भले जाओ. तुमने यह बहुत अच्छा किया, क्योंकि पिताकी आज्ञा पालना यह सब धर्मोंमें मुख्य है ॥ ८ ॥

दोहा–राज देन कह दीन्ह बन, मोहिँ न शोच लवलेश ॥ ❋
तुमबिन भरतहिँ भूपतिहिँ, प्रजहिँ प्रचण्ड कलेश ॥ ५५ ॥ ❋

पिताने तुम्हे राज देनेको कहकर जो बनबास दिया, उसका मेरे मनमें रंचभी शोच नहीं है. मुझे तौ इस बातका शोच है कि, तुम्हारे विना भरतको, राजाको और सब प्रजाको महादारुण दुःख होगा. उसे कौन मिटावेगा? ॥ ५५ ॥

जो केवल पितुआयसु ताता ॥ तौ जनि जाहु जाइ बलि माता ॥ १ ॥ ❋
जो पितु मातु कहैं बन जाना ॥ तौ कानन शत अवधसमाना ॥ २ ॥ ❋

हे तात! मैं बलिजाऊं. जो केवल पिताकी आज्ञा हो तौ तुम बनमें मत जाना ॥ १ ॥ और जो माता पिता दोनोंकी आज्ञा हो तौ तुम्हारे लिये बन सौ १०० अयोध्याके बराबर है अर्थात् बनमें जरूर जाना चाहिये ॥ २ ॥

पितु बनदेव मातु बनदेवी ॥ खग मृग चरणसरोरुहसेवी ॥ ३ ॥ ❋
अन्तहु उचित नृपहिँ बनबासू ॥ बय बिलोकि हिय होत हिरासू ॥ ४ ॥ ❋

तुम बनमें जाओ, वहां बनके देवताओंको तौ पिता समझो और बनदेवियोंको माता समझो और पशु पक्षियोंको अपने चरणकमलोंके सेवक समझो ॥ ३ ॥ राजाको अंतमें तौ बनमें जाना ही चाहिये, सो अंतमें न गये और अभी गये परंतु तुम्हारी अवस्था देखके मेरे मनमें संकोच होता है ॥ ४ ॥

बड़भागी बन अवध अभागी ॥ जो रघुवंशतिलक तुम त्यागी ॥ ५ ॥ ❋
जो सुत कहौं संग मोहिँ लेहू ॥ तुम्हरे हृदय होइ संदेहू ॥ ६ ॥ ❋

अहो! आज बन बड़ा बड़भागी है और अवध अभागी है कि, जिसको तुमने आज त्याग दिया ॥ ५ ॥ हे पुत्र! जो मैं तुमको कहूं कि, मुझे अपने साथ ले चलो, तौ इससे तुम्हारे मनमें अवश्य संदेह होगा ॥ ६ ॥

पुत्र परम प्रिय तुम सबहीके ॥ प्राण प्राणके जीवन जीके ॥ ७ ॥ ❋
ते तुम कहहु मातु बन जाऊँ ॥ मैं सुनि बचन बैठि पछिताऊँ ॥ ८ ॥ ❋

परंतु हे पुत्र! तुम एक मुझकोही प्रिय लगते हो ऐसे नहीं है; किंतु तुम सबको अतिशय

प्रिय लगते हो. तुम प्राणोंके प्राण और जीके जीवन हो ॥ ७ ॥ वे तुम मुझे कहते हो कि–हे माता! मैं बनमें जाऊं? और मैं वो बचन सुनकर, बैठी पछताया करूं. यह झूठा स्नेह नहीं है तो क्या है? ॥ ८ ॥

दोहा–यह बिचारि नहिँ करउँ हठ, झूँठ सनेह बढ़ाइ ॥ ❋
मानि मातुके नात बलि, सुरति बिसरि जनि जाइ ॥ ५६ ॥ ❋

इस बातको बिचार कर, झूठा स्नेह बढ़ाके मैं तुमसे कुछ हठ नहीं करती; परंतु बलि जाऊं माताके नातेको जानकर मेरी सुरति मत बिसर जाना ॥ ५६ ॥

देव पितर सब तुमहिँ गोसाँई ॥ राखहिँ पलक नयनकी नाँई ॥ १ ॥ ❋
अवधि अम्बु प्रिय परिजन मीना ॥ तुम करुणाकर धर्मधुरीना ॥ २ ॥ ❋

हे पुत्र! देवता और पित्रीश्वर सब, पलक जैसे नेत्रोंकी रक्षा करती है, ऐसे तेरी रक्षा करे ॥ १ ॥ हे धर्मधुरंधर राम! तुम दयाकी खानि हो, और यह चौदह बर्ष बनबासकी जो अवधि है सोही जल है और जो प्रिय परिवार है सोही मीन है ॥ २ ॥

अस बिचारि सोइ करहु उपाई ॥ सबहिँ जियत जेहिँ भेंटहु आई ॥ ३ ॥ ❋
जाहु सुखेन बनहिँ बलि जाऊं ॥ करि अनाथ जन परिजन गाऊं ॥ ४ ॥ ❋

इस बातको बिचार कर तुम वोही उपाय करना कि, जिसतरह तुम सबके जीते सबसे पीछे आ मिलो. जो तुम चौदह बर्षके उपरांत एक क्षणभी निकालोगे तो जैसे जलबिन मछली तड़पके मर जाती है ऐसे सब कुटुंब तड़पके मर जायगा. सो इस बातका विचार रखना ॥ ३ ॥ हे पुत्र! बलि जाऊं तुम जन, परिजन और नगरको अनाथ करके बनको आनंदसे जाओ. हम तुमसे कुछ नहीं कहती ॥ ४ ॥

सबकर आजु सुकृतफल बीता ॥ भयो कराल काल बिपरीता ॥ ५ ॥ ❋
बहुबिधि बिलपि चरण लपटानी ॥ परम अभागिनि आपुहिँ जानी ॥ ६ ॥

हायरे! दैव! आज सबके पुण्यका फल नाश हो गया है. आज काल बड़ा कराल और बिपरीत होगया है ॥ ५ ॥ इसतरह अनेक भांति बिलाप करके कौसल्या अपनेको महामंदभागिन समझ प्रभुके चरणोंमें लिपट गई ॥ ६ ॥

दारुण दुसह दाह उर ब्यापा ॥ बरणि न जाय बिलापकलापा ॥ ७ ॥ ❋
राम उठाय मातु उर लावा ॥ कहि मृदु बचन बहुत समुझावा ॥ ८ ॥ ❋

कौसल्याके हृदयमें ऐसा दुसह दारुण दुख ब्याप गया कि, उसके बिलापका कलाप कुछ कहनेमें नहीं आता ॥ ७ ॥ प्रभुने माताको उठाकर छातीसे लगाया और कोमल बचन कहकर उसे बहुत प्रकारसे समझाया ॥ ८ ॥

दोहा–समाचार तेहि समय सुनि, सीय उठी अकुलाय ॥ ❋
जाइ सासुपदकमल युग, बन्दि बैठ शिर नाय ॥ ५७ ॥ ❋

उस समय सीता बनबासके समाचार सुन, अकुलाकर उठी. और सास (कौसल्या) के निकट जाय, उसके चरणकमलयुगुलको प्रणाम कर, शिर झुकाके उसके समीप बैठ गई ॥ ५७ ॥

दीन्ह अशीश सासु मृदु बानी ॥ अति सुकुमारि देखि अकुलानी ॥ १ ॥ ❀
बैठि नमित मुख शोचति सीता ॥ रूपराशि पतिप्रेम पुनीता ॥ २ ॥ ❀

कौसल्याने उसे कोमल बाणीसे आशीर्वाद दिया. फिर उसकी अति सुकुमारता देखकर कौसल्या मनमें अकुलानी ॥ १ ॥ तहां मुख नीचा किये सीता शोच करती सासके पास बैठी है कि, जो रूपकी निधान और पतिके प्रेमसे परम पवित्र है ॥ २ ॥

चलन चहत बन जीवननाथा ॥ कवन सुकृतसन होइहि साथा ॥ ३ ॥ ❀
की तनु प्राण कि केवल प्राणा ॥ बिधिकरतब कछु जात न जाना ॥ ४ ॥ ❀

सीताजी मनमें विचार करती है कि–प्राणनाथ तौ मनमें जाना चाहते है. अब किस पुण्यके प्रतापसे प्रभुके साथ चलना होवे ॥ ३ ॥ क्या शरीर और प्राण दोनों प्रभुके साथ जायंगे ? वा इकट्ठा प्राणही जायगा ? तात्पर्य–यह है कि, जो साथ लेजायगे तब तौ जीता रहनेसे शरीर और प्राण दोनों जा सकते है और जो न लेजाँय तौ शरीर पड़ जानेसे केवल प्राणही जा सकते है. विधाताकी करनी कुछ जानी नहीं जाती ॥ ४ ॥

चारु चरण नख लेखति धरणी ॥ नूपुर मुखर मधुर कबि बरणी ॥ ५ ॥ ❀
मनहुँ प्रेमबश बिनती करहीं ॥ हमहिँ सीयपद जनि परिहरहीं ॥ ६ ॥ ❀

सीताजी मनोहर चरण नखोंसे धरती लिखती है तहां जो चरणोके नूपुर मधुर ध्वनि करते है, तिस विषयमें कबिलोग बर्णन करते है कि– ॥ ५ ॥ नूपुर शब्द क्या करते है मानों प्रेमबश होकर बिनती करते है कि–सीताके चरणकमल हमारा परित्याग न करैं, बनमें जानेके समय कदाचित् आभूषण त्यागें तौ नूपुरभी तज दिये जांय ॥ ६ ॥

मंजु बिलोचन मोचति बारी ॥ बोली देखि राममहतारी ॥ ७ ॥ ❀
तात सुनहु सिय अति सुकुमारी ॥ सासु ससुर परिजनहिँ पियारी ॥ ८ ॥ ❀

और सुन्दर नेत्रकमलोंसे जल छांड़ती है तिसे देख, कैसल्याने कहा कि– ॥ ७ ॥ हे तात! सुनो. सीता अतिशय सुकुमार है. सास, ससुर और परिजनको घनी प्यारी है ॥ ८ ॥

दोहा–पिता जनक भूपालमणि, ससुर भानुकुलभानु ॥ ❀
पति रबिकुलकैरवबिपिन, बिधु गुणरूपनिधानु ॥ ५८ ॥ ❀

राजाओंमें रत्नरूप राजा जनक तौ इसका पिता है. सूर्यकुलके सूरज श्रीदशरथजी ससुर हैं. सूर्यवंशरूप कुमुदबनको प्रफुल्लित करनेके लिये साक्षात् चंद्ररूप गुण व रूपके निधान आप इसके पति हो ॥ ५८ ॥

मैं पुनि पुत्रबधू प्रिय पाई ॥ रूपराशि गुण शील सुहाई ॥ १ ॥ ❀
नयनपुतरि इव प्रीति बढ़ाई ॥ राखहुँ प्राण जानकिहिँ लाई ॥ २ ॥ ❀

और रूपनिधान, गुणशीलकी खानि सुहावनी प्रिय पुत्रबधूको पाकर ॥ १ ॥ मैं फिर प्रीतिबढ़ाकर इसे कैसे रखती हूं कि, जैसे आंखकी पुतली. हे तात ! इस सीताको छातीसे लगाकर मैं अपने प्राणोंकी नाईं रखती हूं ॥ २ ॥

कल्पवेलि जिमि बहुविधि लाली ॥ सींचि सनेह सलिल प्रतिपाली ॥ ३ ॥ ❋
फूलत फलत भयो विधि बामा ॥ जानि न जाइ काह परिणामा ॥ ४ ॥ ❋

मैंने कल्पलताकी भांति अनेक प्रकारसे इसका लालन किया है और स्नेहरूपी जल सींचके अच्छीतरह पालन किया है ॥ ३ ॥ इसके फूलने और फलनेका समय आया तब विधाता प्रतिकूल होगया है.सो जाना नहीं जाता कि, इसका परिणाम क्या होनेवाला है ॥ ४ ॥

पलँग पीठ तजि गोद हिँडोरा ॥ सिय न दीन पगु अवनि कठोरा ॥ ५ ॥ ❋
जीवनमूरि जिमि जुगवति रहेऊ ॥ दीपबाति नहिँ टारन कहेऊँ ॥ ६ ॥ ❋

इसने पलंग और पीढ़ेको छोड़कर कभी धरतीपर पांव नहीं धरा है. यह यातो सखियोंकी गोदमें या हिंडोर, खाटमें रही है. इसके कभी कठिन भूमिपर पांव रखनेका काम नहीं पड़ा है ॥ ५ ॥ और मैं इसे जीवनजड़ीकी भांति सदा देखती रहती हू मैंने इसे आजलों दीपककी बत्ती टालनेको भी नहीं कहा है ॥ ६ ॥

सो सिय चहति चलन बन साथा ॥ आयसु कहा होइ रघुनाथा ॥ ७ ॥ ❋
चन्द्रकिरणरसरसिक चकोरी ॥ रबिरुख नयन सकै किमि जोरी ॥ ८ ॥ ❋

वह सीता आज तुम्हारे साथ बनमें चलनेको चाहती है. सो हे रघुनाथ ! इसे क्या आज्ञा है ? ॥ ७ ॥ हे तात ! चन्द्रमाके किरणोंके रसकी रसिक चकोरी सूर्यकी ओर अपने नेत्रोंको किस तरह लगा सकती है अर्थात् अतिसुकुमार सीता बनमें कैसे चल सकेगी ? सीता तो चकोरी है. घरके सुख है सोही चंद्रकिरणका अमृत है. बनके क्लेश सूर्यरूप है ॥ ८ ॥

दोहा--करि केहरि निशिचर चरहिँ, दुष्ट जन्तु बन भूरि ॥ ❋
बिषबाटिका कि सोह सुत, सुभग सजीवन मूरि ॥ ५९ ॥ ❋

हे तात ! बनके भीतर कई हाथी, शेर, राक्षस और दुष्ट हिंसक जानवर फिरते रहते है. इस लिये मैं कहती हूं कि, सीता बनमें चलनेके योग्य नहीं है. हे तात ! विषकी बाड़ीके बीच क्या सुन्दर सुहावनी सजीवन जरी शोभा देती है ? कदापि नहीं ॥ ५९ ॥

बनहित कोल किरात किशोरी ॥ रची बिरंचि विषयरस भोरी ॥ १ ॥ ❋
पाहन कृमि जिमि कठिन स्वभाऊ ॥ तिनहिँ कलेश न कानन काऊ ॥ २ ॥

हे तात ! बनके वास्ते तो बिधाताने कोल्ह और किरातोंकी स्त्रियोंको रचा है कि, जो बिलकुल विषयरससे अनजान है ॥ १ ॥ जैसे पत्थरके कृमि सांप, बिच्छु आदिको अतिकठिन होनेसे जंगलमें किसीतरहका दुख नहीं होता, ऐसे कोल्ह किरातोंको भी कोई क्लेश नहीं होता; पर सीता तो अति सुकुमार है सो इससे वो क्लेश सहा नहीं जायगा ॥ २ ॥

कै तापसतियकाननयोगू ॥ जिन तप हेतु तजा सब भोगू ॥ ३ ॥ ❋
सिय बन बसिहि तात केहि भांती ॥ चित्रलिखित कपि देखि डराती ॥ ४ ॥

हे तात ! कै तो कोल्ह किरातोंकी स्त्रियां बनके योग्य हैं. कै तपस्वियोंकी स्त्रियां बनके योग्य है कि, जिन्होंने तपस्याके हेतु सब भोग तज दिये हैं ॥ ३ ॥ हे तात ! सीता बनमें किसतरह रहेगी ? कि, जो चित्रमें लिखे हुए बानरको देखके डर जाती है ॥ ४ ॥

सुरसरि सुभग बनज बनचारी ॥ डाबर योग कि हंसकुमारी ॥ ५ ॥ ❀
अस बिचारि जस आयसु होई ॥ मैं सिख देउँ जानकिहिँ सोई ॥ ६ ॥ ❀

हे तात ! क्या गंगाजीके सुन्दर कमलबनमें बिहार करनेवाली राजहंसकी कन्या गँदले जलवाले छोटे तलावके योग्य हो सकती है ? कभी नहीं ॥ ५ ॥ सो इस बातका विचार करके मुझे कहो सो जैसी तुम्हारी आज्ञा हो वैसीहो मैं सीताको शिक्षा देऊं ॥ ६ ॥

जो सिय भवन रहे कह अम्बा ॥ मोकहँ होइ प्राणअवलम्बा ॥ ७ ॥ ❀
सुनि रघुवीर मातु प्रिय बानी ॥ शील सनेह सुधा जनु सानी ॥ ८ ॥ ❀

माता कौसल्या कहती है कि–हे तात ! जो सीता घरमें रहे तौ मुझको प्राणधारणके लिये इसका बड़ा अवलम्ब रहेगा ॥ ७ ॥ माताकी शील और स्नेहसंयुक्त मानों अमृतभरी हो ऐसी प्रिय बाणी सुनकर प्रभु बोले ॥ ८ ॥

दोहा–कहि प्रिय बचन बिबेकमय, कीन्ह मातुपरितोष ॥ ❀
लगे प्रबोधन जानकिहिँ, प्रगट बिपिन गुण दोष ॥ ६० ॥ ❀

प्रभु विवेकके साथ प्रिय बचन कह माताको संतुष्ट कर, फिर बनके गुण अवगुणोंको प्रगट बखान कर, सीताको समझाने लगे ॥ ६० ॥

मातुसमीप कहत सकुचाहीं ॥ बोले राम समुझि मनमाहीं ॥ १ ॥ ❀
राजकुमारि सिखावन सुनहू ॥ आन भांति जिय जनि कछु धरहू ॥२॥ ❀

यद्यपि प्रभु माताके समीपमें कहते सकुचाते है तौभी मनमें समझकर, प्रभु कहते है कि– ॥ १ ॥ हे राजकुमारी ! जो हम कहते हैं सो हमारी शिक्षा सुनो. और सुनकर मनमें कुछ औरतरह मत जानो ॥ २ ॥

आपन मोर नीक जो चहहू ॥ बचन हमार मानि घर रहहू ॥ ३ ॥ ❀
आयसु मोर सासुसेवकाई ॥ सब बिधि भामिनि भवन भलाई ॥ ४ ॥ ❀

जो तुम अपना और मेरा भला चाहती हो, तो हमारा कहना मानकर मनमें रखलो मेरा कहना तो यह है कि–तुम घरमें रहकर सासकी सेवा करो. सो हे भामिनी ! इसमें तुम्हारा सब प्रकारसे भला है ॥ ३ ॥ ४ ॥

यहिते अधिक धर्म नहिँ दूजा ॥ सादर सासुससुरपदपूजा ॥ ५ ॥ ❀
जब जब मातु करिहिँ सुधि मोरी ॥ होइहि प्रेमबिकल मति भोरी ॥ ६ ॥ ❀

आदरके साथ सास ससुरके चरणकमलकी सेवा करना इससे बढ़कर दूसरा कोई धर्म नहीं है ॥ ५ ॥ हे भामिनी ! जब जब माता मेरी सुध करै और प्रेमसे बिकल होकर सुध बिसर जाय ॥ ६ ॥

तब तब तुम कहि कथा पुरानी ॥ सुन्दरि समुझायहु मृदु बानी ॥ ७ ॥ ❀
कहौं स्वभाव शपथ शत मोहीं ॥ सुमुखि मातुहित राखौं तोहीं ॥ ८ ॥ ❀

हे सुंदरी ! तब तब तुम पुरानी कथा कहकह कर, कोमल बाणीसे समझाना और माताको संतुष्ट करना ॥ ७ ॥ प्रभु कहते हैं कि–हे सुमुखि ! मैं यह बात बनाके नहीं कहता. किंतु स्वभावसे कहता

हूं और मुझे सौ शपथ है कि, मैं तुझे यहां केवल माताके लिये रखना चाहता हूं ॥ ८ ॥

दोहा–गुरु श्रुति सम्मत धर्म फल, पाइय बिनहिं कलेश ॥ ❋
हठवश सब संकट सहे, गालव नहुष नरेश ॥ ६१ ॥ ❋

जो तू मेरा कहना मान, घरमें रह, सास ससुरकी सेवा करेगी तौ विना परिश्रम गुरु और वेदके संमत धर्मका फल पावेगी और जो हठ करेगी तौ गालवऋषि और नहुष राजाकी भांति दुसह दुख पावेगी ॥ ६१ ॥

(क्षेपक)

दोहा–गालव कौशिककेर शिबि, कह्यो दक्षिणा लेहु ॥ ❋
सेवाते संतुष्ट हम, हमैं तुष्ट नहिँ येहु ॥ १ ॥ ❋

गालवऋषि विश्वामित्रजीसे विद्या पढ़ता था, सो जब पढ़कर जाने लगा, तब उसने गुरु विश्वामित्रजीसे कहा कि–हे गुरु ! कुछ गुरुदक्षिणा लीजिये. तब गुरुने कहा कि–हे पुत्र ! हम तेरी सेवासे संतुष्ट हैं सो हम सेवामें गुरुदक्षिणा पा चुके. तब गालवने कहा कि–आप तौ सेवासे संतुष्ट हो पर मेरा मन इतनेसे संतुष्ट नहीं है, इसलिये कुछ गुरुदक्षिणा मांगो ॥ १ ॥

श्यामकरण हय आठ शत, हठ लखि बोले लाउ ॥ ❋
सुनि मुनि गयउ ययाति नृप, निकट बिचारि न भाउ ॥ २ ॥ ❋

ऐसे गालवने गुरुको तंग कर दिया, तब गुरुने क्रोधमें आकर कहा कि– जो तू गुरुदक्षिणा देना चाहता है तौ आठ सौ ८०० श्यामकर्ण घोड़े लाव. गुरुके वचन सुन उनके अभिप्रायको न सोचकर गालव ययाति राजाके पास गया ॥ २ ॥

पूंछि प्रयोजन तिन दई, कन्या सो लै बिप्र ॥ ❋
नृप हरश्वते कह्यो यह, लेहु देहु हय क्षिप्र ॥ ३ ॥ ❋

ययाति राजाने गालवसे पूंछा आप क्यों आये हैं ? जो प्रयोजन हो सो कहो. तब उसने राजासे अपना मनोरथ कहा. राजाके पास श्यामकर्ण घोड़े नहीं थे, इसलिये उसने अपनी एक कन्या दी, उसे ले गालव चला सो राजा हर्यश्वके पास गया और उससे कहा कि, यह कन्या ले और हमें ८०० आठसौ श्यामकर्ण घोड़े दे ॥ ३ ॥

एक सुवन जनमाइ तिन, दीन्हे दुइशत बाज ॥ ❋
तिमि काशीश उशीर्णपति, अर्प्यो अर्भककाज ॥ ४ ॥ ❋

उसने कहा हमारे पास दोसौ २०० घोड़े हैं सो जो आप इसमें एक पुत्ररत्न पैदा करने देओ तौ हम दो सौ २०० घोड़े दे देवैं. गालवने वो बात स्वीकार करी. राजा हर्यश्वने उसमें एक पुत्र पैदा करके दोसौ घोड़े दे दिये. फिर गालव काशीके राजाके पास गया. उसने उसी रीतिसे दो सौ २०० घोड़े दिये. फिर मुनि उशीर्ण देशके पास गया, उसनेभी एक पुत्रके हेतु दो सौ घोड़े दिये ॥ ४ ॥

दुइशत मिले न तेहुँ पर, तब मुनि मानि गिलानि ॥ ❋
रोये विश्वामित्रढिग, अस है हठ दुखदानि ॥ ५ ॥ ❋

ऐसे करनेपरभी गालवको छःसौ ६०० घोड़े तौ मिले पर बाकीके दोसौ २०० घोड़े तौ मिलेही नहीं. तब गालवके मनमें बड़ा संताप हुआ. सो दुखी हो, विश्वामित्रजीके पास आय रोने लगा. इसलिये मैं कहता हूं कि, हठ करना महा दुखदायी और बहुत बुरा है ॥ ५ ॥ ॥ इति ॥

मैं पुनि करि प्रमाण पितुबानी ॥ बेगि फिरब सुनु सुमुखि सयानी ॥ १ ॥ ❋
दिवस जात नहिँ लागिहि बारा ॥ सुन्दर सिखवन सुनहु हमारा ॥ २ ॥ ❋

हे सुमुखि ! सुन. मैं पिताके वचनको प्रमाण करके पीछा तुरंत लौट आऊंगा ॥ १ ॥ हे सयानी ! दिन जाते कुछ देरी नहीं लगती. हे सुमुखि ! तू हमारा कहना सुन ॥ २ ॥

जो हठ करहु प्रेमबश बामा ॥ तौ तुम दुख पाउब परिणामा ॥ ३ ॥ ❋
कानन कठिन भयंकर भारी ॥ घोर घाम हिम बारि बयारी ॥ ४ ॥ ❋

हे भामिनी ! जो तू प्रेमवश होकर हठ करेगी, तौ आखिर दुख पावेगी ॥ ३ ॥ हे सुलोचनी ! जंगल बड़ा भयंकर और कठिन होता है; क्योंकि वनके भीतर धूप बड़ी तेज होती है और जाड़ेमे पानी बड़ा ठंढा रहता है और हवा बड़ी कड़ी चलती है ॥ ४ ॥

कुश कंटक मग कंकर नाना ॥ चलब पयादेहिँ बिनु पदत्राना ॥ ५ ॥ ❋
चरणकमल मृदु मंजु तुम्हारे ॥ मारग अगम भूमिधर भारे ॥ ६ ॥ ❋

मार्गमें दाभकी पैनी अनी, कांटे व कंकर बहुत है. जहां बिना पनहीके नंगेपैर चलना पड़ता है ॥ ५ ॥ हे सुमुखी ! तुम्हारे चरणकमल अति सुकुमार और सुन्दर है और मारग बड़ा बिकट है. वनमें कई बड़े २ पहाड़ है ॥ ६ ॥

कन्दर खोह नदी नद नारे ॥ अगम अगाध न जाहिँ निहारे ॥ ७ ॥ ❋
भालु बाघ वृक केहरि नागा ॥ करहिँ नाद सुनि धीरज भागा ॥ ८ ॥ ❋

जिनमे कई बड़ी चौंड़ी अंधियारी कंदरा और खोहे है. नदियां और नाले बह रहे हैं. कई बड़े विस्तीर्ण नद है. ऐसे दुर्गम और गहन है कि, आंखोंसे देखे नहीं जाते ॥ ७ ॥ वनके भीतर जहां तहां रीछ, बाघ, भेड़िये, नाहर, सिंह और हाथी गरजना करते है कि, जिसे सुन धीरज चला जाता है ॥ ८ ॥

दोहा–भूमि शयन बलकल बसन, अशन कन्द फल मूल ॥ ❋
ते कि सदा सब दिन मिलहिँ, समय समय अनुकूल ॥ ६२ ॥ ❋

हे भामिनी ! वहां पृथ्वीपै सोना पड़ता है. बलकल पहिरनेको मिलते हैं. कंद, मूल, फल, खाने पड़ते है. सो वेभी क्या हमेशा हरवक्त मिलते है ? समय समयके अनुसार मिलते हैं अर्थात् कभी किसी वक्त मिलते हैं कभी मिलतेही नहीं. और कभी कैसेही मिलते है ॥ ६२ ॥

नरअहार रजनीचर करहीं ॥ कपटबेष बन कोटिन धरहीं ॥ १ ॥ ❋
लागै अति पहारकै पानी ॥ बिपिन बिपति नहिँ जात बखानी ॥ २ ॥ ❋

बनमें कई तरहके कपटके वेष बनाके राक्षस फिरते रहते है. सो समय पाकर आदमीको खा-

जाते है ॥ १ ॥ और पहाड़ोंके कई तरहके पानी पीने पड़ते है, सो वे लग जाते है. वनकी आपदा कुछ कहनेमें नहीं आती ॥ २ ॥

व्यालकराल विहँग बन घोरा ॥ निशिचर निकर नारिनर चोरा ॥ ३ ॥ ❀
डरपहिँ धीर गहन सुधि आये ॥ मृगलोचनि तुम भीरु सुहाये ॥ ४ ॥ ❀

वनमें कईतरहके कराल सांप और घोर पक्षी है. तथा राक्षसलोग स्त्री पुरुषोंको चुराके ले जाते है ॥ ३ ॥ गहन वनकी सुध आनेसे बड़े २ धीर पुरुषभी डर जाते है. सो हे मृगनयनी ! तुम तो स्वभावहीसे डरपोंक हो, सो तुम्हारी कौन गति ? ॥ ४ ॥

हंसगमनि तुम नहिँ बन योगू ॥ सुनि अपयश देहहिँ मोहिँ लोगू ॥५॥ ❀
मानस सलिल सुधा प्रतिपाली ॥ जियइ कि लवणपयोधि मराली ॥६॥ ❀

हे हंसगमनी ! तुम वनके योग्य नहीं हो. जो तुम मेरे साथ वनमें चलोगी तो यह बात सुनकर लोग मुझे अपयश देंगे ॥ ५ ॥ जो राजहंसी मानससरोवरके अमृत जैसे मधुर जलसे पाली हुई है वो क्षार समुद्रके जलको पाकर कैसे जी सकती है ? ॥ ६ ॥

नव रसाल बनबिहरण शीला ॥ सोह कि कोकिल बिपिनकरीला ॥ ७ ॥ ❀
रहहु भवन अस हृदय बिचारी ॥ चन्द्रबदनि दुख कानन भारी ॥ ८ ॥ ❀

जो कोकिला नवीन आम्रवनमें विहार करनेवाली है वो करीलके वनमे कैसे शोभा पावेंगी ? ॥७॥ तुम मनमें ऐसा विचार करके घर रहो. हे चंद्रमुखी ! वनमें बड़े बड़े भारी संकट है ॥ ८ ॥

दोहा–सहज सुहृद गुरु स्वामि शिख, जो न करे हितमानि ॥ ❀
सो पछिताइ अघाइ उर, अवशि होइ हित हानि ॥ ६३ ॥ ❀

जो मनुष्य गुरु, स्वामी और सहज मित्रका कहना हित समझकर नहीं करता, वो पीछे मनमें अघाकर पछताता है और उसके हितकी हानि अवश्य होती है ॥ ६३ ॥

सुनि मृदुबचन मनोहर पियके ॥ लोचन नलिन भरे जल सियके ॥१॥ ❀
शीतल सिख दाहक भइ कैसे ॥ चकइहिँ शरद चांदनी जैसे ॥ २ ॥ ❀

प्रीतमके कोमल मनोहर बचन सुन, सीताके नेत्रकमलोंमे जल भर आया ॥ १ ॥ यद्यपि प्रभुने सीताको बड़ी शीतल शिक्षा दी; परंतु वो उसके लिये कैसी दाहकारक हुई कि, जैसे चकवाकीको शरदऋतु चांदकी चांदनी होती है ॥ २ ॥

उतर न आव बिकल बैदेही ॥ तजनचहत मोहिँ परमसनेही ॥ ३ ॥ ❀
बरबस रोंकि बिलोचन बारी ॥ धरि धीरज उर अवनिकुमारी ॥ ४ ॥ ❀

प्रभुके वचन सुन, सीता विह्वल होगई. मुखसे कुछ उत्तर नहीं आया; क्योंकि उसके मनमें यह भास गई कि, प्राणप्यारे प्रभु मुझे छोंड़ना चाहते है ॥ ३ ॥ फिर सीताजी मनमें धीरज धर, बलात्कारसे नेत्रोंके जलको रोंक ॥ ४ ॥

लागि सासुपद कह कर जोरी ॥ क्षमब मातु बड़ अविनय मोरी ॥ ५ ॥ ❀
दीन प्राणपति मोहिँ सिख सोई ॥ जेहिविधि मोर परमहित होई ॥ ६ ॥ ❀

सासके चरणोंमें लग, हाथ जोड़ कहनेलगी कि–हे माता ! जो मेरा बड़ा अविनय है सो क्षमा करना ॥ ५ ॥ हे माता ! प्राणपतिने मुझे वोही शिक्षा दी है कि, जिसतरह मेरा अत्यंत भला होवे ॥ ६ ॥

मैं पुनि समुझि दीख मन माहीं ॥ प्रियबियोग सम दुख जग नाहीं ॥ ७ ॥
यहि विधि सिय सासुहिँ समुझाई ॥ कहति पतिहिँ वर विनय सुनाई ॥ ८ ॥

परंतु मैंने जो फिर मनमें विचार कर देखा तौ मुझे ऐसा दीख पड़ा कि, पतिके वियोगके जैसा दुख संसारमें कोई नहीं है ॥ ७ ॥ सीता सासको इस तरह समझाकर फिर बड़े विनयके साथ पतिसे कहने लगी ॥ ८ ॥

दोहा–प्राणनाथ करुणायतन, सुन्दर सुखद सुजान ॥ *
तुमबिनु रघुकुलकुमुद बिधु, सुरपुर नरकसमान ॥ ६४ ॥ *

हे प्राणनाथ ! हे करुणानिधान ! हे सुन्दर ! हे सुखदेनहारे सुजान प्रभु ! हे रघुकुलकुमुदचंद ! आपके विना मेरे स्वर्गभी नरकके समान है ॥ ६४ ॥

मातु पिता भगिनी प्रिय भाई ॥ प्रिय परिवार सुहृद समुदाई ॥ १ ॥ *
सासु ससुर गुरु सुजन सुहाई ॥ सुठि सुन्दर सुशील सुखदाई ॥ २ ॥ *

हे कांत ! माता, पिता, बहिन, प्यारे भाई, प्रिय परिवार, मित्रगण, ॥ १ ॥ सास, ससुर, गुरु और स्वजन ये सब तबतक अच्छे सुन्दर, सुशील, सुखदायी और सुहावने है कि–॥ २ ॥

जहँ लगि नाथ नेह अरु नाते ॥ प्रिय बिनु तियहिँ तरणिते ताते ॥ ३ ॥ *
तन धन धाम धरणि पुर राजू ॥ पतिबिहीन सब शोकसमाजू ॥ ४ ॥ *

जबतक स्वामीका स्नेह और संबंध बना हुआ है. नहीं तौ स्त्रीके लिये सब ग्रीष्मकालके प्रचंड सूर्यसे तेज होजाते है ॥ ३ ॥ तन, धन, घर, पृथ्वी, पुर और राज ये सब पतिके विना शोकके समाज बन जाते है ॥ ४ ॥

भोग रोगसम भूषण भारू ॥ यमयातनासरिस संसारू ॥ ५ ॥ *
प्राणनाथ तुमबिनु जगमाहीं ॥ मो कहँ सुखद कतहुँ कोउ नाहीं ॥ ६ ॥ *

कंतकेविना स्त्रीके लिये भोग तौ रोगके समान हो जाते है. गहने भाररूप हो जाते है. तथा संसार यमराजकी यातनाके बराबर हो जाता है ॥ ५ ॥ हे प्राणनाथ ! आपकेविना जगत्‌में मुझे कोई कहीं सुख देनेवाला नहीं है ॥ ६ ॥

जियबिनु देह नदी बिनुबारी ॥ तैसहिँ नाथ पुरुषबिनु नारी ॥ ७ ॥ *
नाथ सकल सुख साथ तुम्हारे ॥ शरदबिमलबिधुबदन निहारे ॥ ८ ॥ *

हे प्रिय ! जैसे जीवविना शरीर और जलविना नदी शोभा नहीं पाती, ऐसे कंतविन कामिनी शोभा नहीं देती ॥ ७ ॥ हे नाथ ! शरदऋतुके निर्मल चन्द्रमाके सदृश आपका मुख निहारनेके कारण आपके संगमें मुझे सब सुख है; अन्यथा नहीं ॥ ८ ॥

दोहा–खगमृग परिजन नगर बन, बलकलबसन दुकूल ॥ *
नाथ साथ सुरसदनसम, पर्णशाल सुखमूल ॥ ६५ ॥ *

हे नाथ ! आपके साथ रहनेमें मैं पक्षी और पशुओंको तौ प्रिय परिवार समझूंगी. वनको नगर जा-

नूंगी. बलकलके वस्त्रोंको पाटंबर गिनूंगी. और पर्णशालाको सुखकी कारण स्वर्गके समान समझूंगी ॥ ६५ ॥

वनदेवी वनदेव उदारा ॥ करि हैं सासु ससुरसम सारा ॥ १ ॥ ❋
कुश किशलय साथरी सुहाई ॥ प्रभुसँग मंजु मनोजतुराई ॥ २ ॥ ❋

बड़ेउदार वनके देवता और वनदेवियां जो है सो सास ससुरकी नांई मेरी सार संभार करेंगी ॥१॥ वनके भीतर दाभके पत्तोंकी जो सुहावनी साथरी मिलेगी, उसे मैं आपके साथ रहनेसे सुन्दर कामदेवकी शय्याके समान समझूंगी ॥ २ ॥

कन्द मूल फल अमिय अहारू ॥ अवध सहस सुखसरिस पहारू ॥ ३ ॥ ❋
क्षण क्षण प्रभुपदकमल बिलोकी ॥ रहिहौं मुदित दिवस जिमि कोकी ॥४॥

जो कंद, मूल, फल मिलेंगे उस आहारको मैं अमृतके समान गिनूंगी. पहाड़ोंमें रहना मुझे हजार अवधकी अपेक्षा अधिक सुखकारी लगेगा ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! आपके चरणकमलोंका बारंबार क्षण क्षणमें दर्शन करके मैं सदा ऐसे प्रसन्न रहूंगी कि, जैसे चकई सूर्यको देखकर दिनमें आनंदित रहती है ॥ ४ ॥

वनदुख नाथ कहेउ बहुतेरे ॥ भय बिषाद परिताप घनेरे ॥ ५ ॥ ❋
प्रभु बियोग लवलेश समाना ॥ सब मिलि होहिँ न कृपानिधाना ॥ ६ ॥❋

हे नाथ ! आपने बनके भीतर कई दुःख बताये है. वास्तवमें वनमें भय, विषाद व संताप वगैरः हैंभी बहुत ॥ ५ ॥ परंतु हे कृपानिधि ! प्रभु ! वे सब मिलकर, आपके वियोगके दुःखके लवलेशके बराबरभी नहीं हो सकते ॥ ६ ॥

अस जिय जानि सुजान शिरोमनि ॥ लेइय संग मोहिँ छांड़िय जनि ॥ ७ ॥
बिनती बहुत करौं का स्वामी ॥ करुणामय उर अन्तर्यामी ॥ ८ ॥ ❋

हे सुज्ञ पुरुषोंके मुकुटमणि ! प्रभु ! आप अपने मनमें ऐसे जानकर, मुझे संग लेओ. हे प्रभु ! ऐसा न होवे कि, आप मुझे छोड़के चले जाओ. मुझे कभी छोड़ना मत ॥ ७ ॥ हे स्वामी ! मैं अधिक बिनती क्या करौं ? आप करुणाके सागर और अन्तर्यामी हो, सो जनके मनकी सब जानते हो ॥ ८ ॥

दोहा--राखिय अवध जो अवधि लगि, रहत जानिये प्रान ॥ ❋
दीनबन्धु सुन्दर सुखद, शीलसनेहनिधान ॥ ६६ ॥ ❋

हे प्रभु ! जो आप मेरी प्राणोंको अवधि समाप्त हो तबतक रहते जानो तौ भले मुझे अयोध्यामें छोड़ जाओ. हे दीनबंधु ! हे कृपासिंधु ! हे सुख देनहारे ! हे शील और स्नेहके निधि ! प्रभु ! ॥ ६६ ॥

मोहिँ मग चलत न होइहि हारी ॥ क्षण क्षण चरणसरोज निहारी ॥१॥❋
सबहिँ भाति पियसेवा करिहौं ॥ मारगजनित सकल श्रम हरिहौं॥ २ ॥❋

मुझे मार्गमें चलते आपके चरणकमलोंके क्षण क्षणमें दर्शन करनेसे कुछभी हार न होगी ॥ १ ॥ हे प्रिय ! मै सब प्रकारसे आपकी सेवा करूंगी और मार्गके सब श्रमको मिटाऊंगी ॥ २ ॥

पाँव पखारि बैठि तरु छाहीं ॥ करिहौं वायु मुदित मनमाहीं ॥ ३ ॥ ❀
श्रमकणसहित श्यामतनु देखे ॥ का दुख समय प्राणपति पेखे ॥ ४ ॥ ❀

हे प्रभु ! आपके चरण पखार, पेड़के तले बैठ, मनमें प्रसन्न हो, आपको बयार करूंगी ॥ ३ ॥ परिश्रमके कारण जिसकी सलोनी श्याम सुन्दर मूर्तिपर स्वेदकण मोतियोंकेसे शोभ रहे है, उस प्राणपतिके दर्शन करनेपर फिर दुखका समय कौन ? ॥ ४ ॥

सम महि तृण तरु पल्लव डासी ॥ पांय पलोटिहि सब निशि दासी ॥ ५ ॥ ❀
बार बार मृदु मूरति जोही ॥ लागिहि ताप बयारि न मोही ॥ ६ ॥ ❀

हे नाथ ! यह आपके चरणोंकी दासी बनमें समभूमिमें घास और वृक्षोंके नवीन कोमल पल्लव बिछाके सारी रात चरण चापेगी ॥ ५ ॥ हे प्रभु ! आपकी इस सलोनी कोमल मूर्तिको बारंबार देखनेसे मुझे धूप और हवा कुछभी नहीं लगगी ॥ ६ ॥

को प्रभुसँग मोहिँ चितवनहारा ॥ सिंहबधुहिँ जिमि शशक सियारा ॥ ७ ॥
मैं सुकुमारि नाथ वनयोगू ॥ तुमहिँ उचित तप मोकहँ भोगू ॥ ८ ॥ ❀

हे प्रभु ! जैसे सिंहिनीकी ओर सियार और ससे नहीं देख सकते, ऐसे आपके साथमें मुझको देखनेवाला कौन है ? ॥ ७ ॥ हे नाथ ! आप जो फरमाते हो कि तू वनके योग्य नहीं है; क्योंकि तू सुकुमारी है सो यह आपका कहना कैसा ? हे नाथ ! मैं तो सुकुमारी, और आप वनके योग्य है ? आपको तो तपस्या करनी उचित है ? और मुझे भोग भोगने योग्य है ? हे नाथ ! आप यह क्या फरमाते हो ॥ ८ ॥

दोहा–ऐसेहु बचन कठोर सुनि, जो न हृदय बिलगान ॥ ❀
तौ प्रभु बिषम बियोगदुख, सहिहैं पामर प्रान ॥ ६७ ॥ ❀

सीता कहती है कि–हे प्रभु ! जो ऐसा वज्रपातसा कठोर बचन सुननेपरभी मेरा हृदय विदीर्ण न हुआ, तो यह मेरा पामर (तुच्छ) प्राणभी आपके वियोगके विषम दुखको अवश्य सहेगा ॥ ६७ ॥

अस कहि सीय बिकल भइ भारी ॥ बचन बियोग न सकी सँभारी ॥ १ ॥ ❀
देखि दशा रघुपति जिय जाना ॥ हठि राखे राखिहि नहिँ प्राना ॥ २ ॥ ❀

ऐसे कहकर सीता अत्यंत विव्हल हो गई. बाणी बंद हो गयी. शरीरको संभाल न सकी ॥ १ ॥ सीताकी यह दशा देख, प्रभुने अपने मनमें जानलिया कि– जो मैं इसे हठ करके यहां रक्खूंगा तो यह कभी प्राणोंको न राखेगी ॥ २ ॥

कहेउ कृपालु भानुकुलनाथा ॥ परिहरि शोच चलहु बन साथा ॥ ३ ॥ ❀
नहिँ बिषादकर अवसर आजू ॥ बेगि करहु बनगमनसमाजू ॥ ४ ॥ ❀

ऐसे जान, सूर्यकुलके स्वामी दयालु प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने सीतासे कहा कि–हे प्रिये ! शोचको तजकर, हमारे साथ चल ॥ ३ ॥ आज कोई दुःख करनेका समय नहीं है. बनमें चलनेका साज जल्दी सजो ॥ ४ ॥

कहि प्रिय बचन प्रियहिँ समुझाई ॥ लगे मातुपद आशिष पाई ॥ ५ ॥ ❋
बेगि प्रजादुख मेटब आई ॥ जननी निठुर बिसरि जनि जाई ॥ ६ ॥ ❋

ऐसे प्रिय वचन कह, सीताको समझाय, प्रभुने माताके चरणोंमे लग, असीस पाई ॥ ५ ॥ माता कौसल्याने प्रभुसे कहा कि—हे तात ! पीछा शीघ्र आके प्रजाका दुःख मिटाना. हे पुत्र ! इस निठुर माताको भूल मत जाना ॥ ६ ॥

फिरिहि दशा बिधि बहुरि कि मोरी ॥ देखिहौं नयन मनोहर जोरी ॥ ७ ॥ ❋
सुदिन सुघरी तात कब होई ॥ जननी जियत बदनबिधु जोई ॥ ८ ॥ ❋

हे विधाता ! क्या मेरीभी दशा फिर फिरेगी ? क्या मनोहर जोरीको मैं मेरे नेत्रोंसे देखूंगी ॥ ७ ॥ हे तात ! वो सुदिन और अच्छी घड़ी कब होगी कि, माता जीतेजी लालका मुखचंद देखेगी ॥ ८ ॥

दोहा— बहुरि बच्छ कहि लाल कहि, रघुपति रघुबर तात ॥ ❋
कबहुँ बुलाय लगाइ उर, हरषि निरखिहौं गात ॥ ६८ ॥ ❋

माता कौसल्या कहती है कि—मैं भी कभी फिर हे वत्स ! हे लाल ! हे रघुपति ! हे रघुवर ! हे तात ! ऐसे कह, तुमको बुलाय, छातीसे लगाय, प्रसन्न होकर, तुम्हारा सुन्दर शरीर देखूंगी ? ॥ ६८ ॥

लखि सनेहकातरि महतारी ॥ बचन न आव बिकल भइ भारी ॥ १ ॥ ❋
राम प्रबोध कीन्ह बिधि नाना ॥ समय सनेह न जाइ बखाना ॥ २ ॥ ❋

माता कौसल्या स्नेहसे ऐसी कायर होकर, विव्हल होगई कि—मुंहसे बचन निकलने न पाया. उस दशाको देख ॥ १ ॥ प्रभुने उसे अनेक प्रकारसे समझाया. उस समयका स्नेह कहा नहीं जाता ॥ २ ॥

तब जानकी सासुपग लागी ॥ सुनिय मातु मैं परम अभागी ॥ ३ ॥ ❋
सेवा समय दैव बन दीन्हा ॥ मोर मनोरथ सुफल न कीन्हा ॥ ४ ॥ ❋

उस अवसरमें सीता सासके पाँवोंमे लगी और बोली कि, हे माता ! सुनिये. मैं बड़ी अभागिनी हूं ॥ ३ ॥ क्योंकि जब सेवा करनेका समय आया, तब विधाताने बनबासका ठाट ठाटा. मेरा जो मनोरथ था वो सफल नहीं किया ॥ ४ ॥

तजब क्षोभ जनि छाँड़ब छोहू ॥ कर्म कठिन कछु दोष न मोहू ॥ ५ ॥ ❋
सुनि सियबचन सासु अकुलानी ॥ दशा कवन बिधि कहौं बखानी ॥ ६ ॥ ❋

हे माता ! अब आप क्षोभको तज दो. मुझपर जो दयाभाव है उसे मत त्यागना. हे माता ! कर्मकी गति बड़ी बलवान् है. इसमें मेरा कुछ दोष नहीं है ॥ ५ ॥ हे पार्वती ! सीताके सरल बचन सुन कौसल्या बहुत घबराई. जिस दशाको बखान कर मैं किस प्रकार कहूं ? मेरी सामर्थ्य नहीं जो उसकी दशाको वर्णन करसकूं ॥ ६ ॥

बारहिँ बार लाइ उर लीन्हीं ॥ धरि धीरज सिख आशिष दीन्हीं ॥ ७ ॥ ❋

अचल होउ अहिवात तुम्हारा ॥ जबलगि गंगयमुनजलधारा ॥ ८ ॥ ❀

कौसल्याने सीताको बारंबार छातीसे लगाया और धीरज धरकर उसे शिक्षा दे, असीस दी ॥ ७ ॥ कि, हे पुत्री! जबलों गंगा और यमुनाके जलका प्रवाह रहे, तबलों तेरा सौभाग्य सदा अविचल रहो ॥ ८ ॥

दोहा–सीतहिँ सासु अशीष सिख, दीन्ह अनेक प्रकार ॥ ❀
चली नाइ पदपद्म शिर, अतिहित बारहिँ बार ॥ ६९ ॥ ❀

माता कौसल्याने सीताको अनेक प्रकारकी शिक्षा दे आशीर्वाद दिये. तब सीता बड़ी प्रीतिके साथ बारंबार सासके चरणकमलोंमें शिर नवाके चली ॥ ६९ ॥

समाचार जब लक्ष्मण पाये ॥ व्याकुल बिलखि बदन उठिआये ॥ १ ॥ ❀
कम्प पुलक तनु नयन सनीरा ॥ गहे चरण अतिप्रेम अधीरा ॥ २ ॥ ❀

जब लक्ष्मणको ये समाचार मिले तो वह व्याकुल व बिलखबदन हो, उठकर दौड़ता प्रभुके पास आया ॥ १ ॥ जिसका शरीर कांप रहा है, रोमांचित हो रहा है, नेत्रोंमें नीर भर रहा है, ऐसे लक्ष्मणने अधीर हो, अति प्रीतिके साथ प्रभुके पैर आ पकड़े ॥ २ ॥

कहि न सकत कछु चितवत ठाढ़े ॥ मीन दीन जनु जलते काढ़े ॥ ३ ॥ ❀
शोच हृदय बिधि का होनहारा ॥ सब सुख सुकृत सिरान हमारा ॥४ ॥ ❀

लक्ष्मण कुछ कह नहीं सकता है, केवल प्रभुको देखता खड़ा है; उस समय उसकी यह दीनदशा हो रही थी कि, मानों मच्छीको जलसे बाहिर काढ़ लिया है ॥ ३ ॥ लक्ष्मण मनमें शोच करते हैं कि, हे विधाता! अब क्या होनहार है? हमारे सारे सुख और सुकृत बीत चुके हैं ॥ ४ ॥

मोकहँ कहा कहब रघुनाथा ॥ रखिहैं भवन कि लेहैं साथा ॥ ५ ॥ ❀
राम बिलोकि बन्धु कर जोरे ॥ देह गेह सब तृणसम तोरे ॥ ६ ॥ ❀

मुझे प्रभु क्या कहेंगे? क्या मुझे घरमें रक्खेंगे? या साथ लेंगे? ॥ ५ ॥ प्रभुके दर्शन कर लक्ष्मणने हाथ जोड़े और देह व घर आदि सबका सम्बन्ध तृणके समान तोड़ दिया ॥ ६ ॥

बोले बचन राम नव नागर ॥ शील सनेह सरल सुखसागर ॥ ७ ॥ ❀
तात प्रेमबश जनि कदराहू ॥ समुझि हृदय परिणाम उछाहू ॥ ८ ॥ ❀

तिसे देख, सरल स्वभाव स्नेह और सुखके सागर, नव नागर प्रभुरामचन्द्रजीने लक्ष्मणसे कहा कि, ॥ ७ ॥ हे तात! तू प्रेमबश होकर, कायरता मत करै; क्योंकि हृदयमें शोच समझकर देखो, परिणाममे इससे बड़ा आनंद होगा ॥ ८ ॥

दोहा–मातु पिता गुरु स्वामि शिख, शिर धरि करहि सुभाय ॥ ❀
लहेउ लाभ तिन जन्मके, नतरु जन्म जग जाय ॥ ७० ॥ ❀

जो लोग माता पिता गुरु और स्वामीकी शिक्षाको शिरपर चढ़ाके अच्छी तरह धारण करते हैं, वेही अपने जन्मका फल पाते हैं. नहीं तो जगतमें जन्म बिगड़ जाता है ॥ ७० ॥

अस जिय जानि सुनहु सिख भाई ॥ करौ मातुपितुपदसेवकाई ॥ १ ॥ ❀
भवन भरत रिपुसूदन नाहीं ॥ राउ वृद्ध मम दुख मनमाहीं ॥ २ ॥ ❀

हे भाई! मनमें ऐसे जानकर जो मैं शिक्षा देता हूं उसे सुनो. हे भाई! माता पिताके चरणकमलोंकी सेवा करो ॥ १ ॥ हे भाई! घरमें भरत और शत्रुघ्न नहीं है. राजाकी यह वृद्धअवस्था है और मनमें मेरे विरहका दारुण दुःख है ॥ २ ॥

मैं बन जाउँ तुमहिं लै साथा ॥ होइ सबहि बिधि अवध अनाथा ॥ ३ ॥ ❋
गुरु पितु मातु प्रजा परिवारा ॥ सबकहँ परै दुसह दुखभारा ॥ ४ ॥ ❋

सो जो मैं तुम्हें साथ लेकर बनमें चला जाऊं, तौ अयोध्या सब प्रकारसे अनाथ हो जावे ॥ ३ ॥ और गुरु माता पिता प्रजा व परिवार सबको महा दुसह बिकट दुख पड़जावे ॥ ४ ॥

रहहु करहु सब करि परितोषू ॥ नतरु तात होइहि बड़ दोषू ॥ ५ ॥ ❋
जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी ॥ सो नृप अवशि नरकअधिकारी ॥ ६ ॥ ❋

इसलिये तुम यहां रहकर सबको प्रसन्न करो. नहीं तो हे तात! बड़ा अपराध होता है ॥ ५ ॥ हे तात! जिसके राजमें प्रिय प्रजा दुखी रहती है, वो राजा अवश्य नरकका अधिकारी होता है ॥ ६ ॥

रहहु तात अस नीति बिचारी ॥ सुनत लषण भये ब्याकुल भारी ॥ ७ ॥ ❋
सियरे बदन सूखि गै कैसे ॥ परसत तुहिन तामरस जैसे ॥ ८ ॥ ❋

हे तात! इस नीतिको विचार कर तुम घरपर रहो. प्रभुके बचन सुन, लक्ष्मण अति व्याकुल हुआ ॥ ७ ॥ कवि कहता है कि, प्रभुके शीतल बचनोंसे लक्ष्मणका मुख कैसे सूख गया. जैसे पालेको परसते ही कमल कुम्हला जाता है ॥ ८ ॥

दोहा–उतर न आवत प्रेमवश, गहे चरण अकुलाइ ॥ ❋
नाथ दास मैं स्वामि तुम, तजहु तौ कहा बसाइ ॥ ७१ ॥ ❋

लक्ष्मणको कुछ उत्तर नहीं आया. तब प्रेमबश हो, अकुलाके उसने प्रभुके चरण गहे और कहा कि, हे नाथ! आप तौ स्वामी हो, और मैं सेवक हूं. सो जो आप छोंड़ही देओगे तौ मेरा सबही क्या है? ॥ ७१ ॥

दीन्ह मोहिँ सिख नीक गुसांई ॥ लागत अगम अपनि कदराई ॥ १ ॥ ❋
नर बर धीर धर्मधुरधारी ॥ निगम नीति केते अधिकारी ॥ २ ॥ ❋

हे नाथ! आपने मुझे बहुतही अच्छी शिक्षा दी है; परंतु मुझे वो अपनी कायरतासे दुसह लगती है ॥ १ ॥ हे प्रभु! आप तौ मनुष्योंमें श्रेष्ठ धर्मधुरंधर और धीरजधारी हो, परंतु दूसरे आपके जैसे वेदकी रीतिके अनुसार चलनेवाले अधिकारी कितने है ॥ २ ॥

मैं शिशु प्रभु सनेह प्रतिपाला ॥ मन्दर मेरु कि लेइ मराला ॥ ३ ॥ ❋
गुरु पितु मातु न जानौं काहू ॥ कहौं सुभाव नाथ पतियाहू ॥ ४ ॥ ❋

हे प्रभु! मैं तौ बालक हूं. आपने स्नेहके साथ मेरा पालन किया है, सो मैं इस भारको कैसे उठा सकूं? क्या राजहंस भी मंदराचल और सुमेरुगिरिको उठा सकता है? ॥ ३ ॥ हे नाथ! मैं आपके सिवा माता, पिता और गुरु किसीको नहीं जानता. हे नाथ! मैं यह सत्यभावसे कहता हूं सो इस बातपर भरोसा करो ॥ ४ ॥

जहँलगि जगत सनेह सगाई ॥ प्रीति प्रतीति निगम निज गाई ॥ ५ ॥ ❀
मोरे सबै एक तुम स्वामी ॥ दीनबन्धु उर अन्तरयामी ॥ ६ ॥ ❀

हे प्रभु ! स्वयं वेद ऐसे कहते है कि, जगतमें जबलों स्नेहका संबंध रहता है, तबलों प्रीतिकी प्रतीति रहती है ॥ ५ ॥ परंतु हे स्वामी ! मेरे तौ जो कुछ है सो सब आपही हो. हे दीनबंधु ! आप अंतर्यामी हो. सबके घट घटकी जानते हो ॥ ६ ॥

धर्म नीति उपदेशिय ताही ॥ कीरति भूति सुगति प्रिय जाही ॥ ७ ॥ ❀
मन क्रम बचन चरणरति होई ॥ कृपासिन्धु परिहरिय कि सोई ॥ ८ ॥ ❀

हे प्रभु ! धर्म और नीतिका उपदेश तौ उसे करना चाहिये कि, जिसे कीर्ति, ऐश्वर्य और भली गति अच्छी लगती हो ॥ ७ ॥ हे कृपासिंधु ! जिसकी मन बचन कर्मसे चरणोंमें प्रीति होवे क्या उसका त्याग करना उचित है ? ॥ ८ ॥

दोहा– करुणासिन्धु सुबंधुके, सुनि मृदु बचन बिनीत ॥ ❀
समुझाये उर लाइ प्रभु, जानि सनेह सभीत ॥ ७२ ॥ ❀

करुणासिंधु प्रभुने भाई लक्ष्मणके कोमल और बिनीत बचन सुन, उसे स्नेहसे भयभीत जान, छातीसे लगाके समझाया ॥ ७२ ॥

माँगहु बिदा मातुसन जाई ॥ आवहु बेगि चलहु बन भाई ॥ १ ॥ ❀
मुदित भये सुनि रघुबरबानी ॥ भयउ लाभ बड़ मिटी गलानी ॥ २ ॥ ❀

और कहा कि–हे भाई ! तुम जाकर पहले मातासे बिदा माँगि आओ. फिर शीघ्र वनको चलो ॥ १ ॥ प्रभुके बचन सुन, लक्ष्मणजी प्रसन्न हुए. उन्हें बड़ा लाभ मिला. मनकी ग्लानि मिटगई ॥ २ ॥

हर्षित हृदय मातुपहँ आये ॥ मनहुँ अन्ध फिरि लोचन पाये ॥ ३ ॥ ❀
जाइ जननिपद नायउ माथा ॥ मन रघुनन्दन जानकि साथा ॥ ४ ॥ ❀

लक्ष्मण प्रसन्नचित्त हो माता सुमित्राके पास आये. तब उनके मनमें ऐसा आनंद हुआ कि, मानों अंधेने गये हुए नेत्र पीछे पालिये हैं ॥ ३ ॥ जिनका मन सीतारामके साथ है, उन लक्ष्मणने माताके निकट जाय, चरणोंमें शिर नवाया ॥ ४ ॥

पूंछेहु मातु मलिन मन देषी ॥ लषण कहे सब कथा बिशेषी ॥ ५ ॥ ❀
गई सहमि सुनि बचन कठोरा ॥ मृगी देखि जनु दव चहुँ ओरा ॥ ६ ॥ ❀

तब उसे मन मलीन देख, सुमित्राने पूंछा कि, हे पुत्र ! तुम उदास क्यों हो ? तब उसने मातासे सब ब्यौरा कह सुनाया ॥ ५ ॥ कठोर बचन सुनतेही सुमित्रा कैसे सहम गई कि मानों मृगी चारों ओर दवानलको लहकी देख सहम जाती है ॥ ६ ॥

लषण लखेउ भा अनरथ आजू ॥ यह सनेह बश करब अकाजू ॥ ७ ॥ ❀
माँगत बिदा समय सकुचाहीं ॥ जान संग बिधि कहहिँ कि नाहीं ॥ ८ ॥ ❀

उस काल लक्ष्मणजीने मनमें जाना कि, आज अनर्थ हुआ इसमें संदेह नहीं; क्योंकि यह

स्नेहके वश होकर जरूर कुछ न कुछ अकाज करेगी ॥ ७ ॥ लक्ष्मण विदा मांगते समय मनमें सकुचाते है कि, प्रभुके संग जानेके लिये माता आज्ञा दे वा नहीं ॥ ८ ॥

दोहा—समुझि सुमित्रा राम सिय, रूप सुशील सुभाव ॥ ❀
नृपसनेह लखि धुनेउ शिर, पापिनि कीन्ह कुदाव ॥ ७३ ॥ ❀

लक्ष्मणके मुखसे बनबासके समाचार सुन, सीता रामके शील स्नेह और स्वभावको समझ राजाके स्नेहको लख, सुमित्राने शिर धुना और कहा कि, पापिनीने बहुत बुरा दांव किया ॥ ७३ ॥

धीरज धरेउ कुअवसर जानी ॥ सहज सुहृद बोली मृदु बानी ॥ १ ॥ ❀
तात तुम्हार मातु बैदेही ॥ पिता राम सब भांति सनेही ॥ २ ॥ ❀

सुमित्रा कुसमय समझ, मनमें धीरज धर, स्वभावसे हितकारी मधुर बाणी बोली ॥ १ ॥ कि—हे तात ! सब प्रकारसे स्नेह रखनेवाली सीता तौ तुम्हारी माता है और रामचन्द्र आनन्द कन्द पिता है ॥ २ ॥

अवध तहाँ जहँ रामनिवासू ॥ तहां दिवस जहँ भानुप्रकाशू ॥ ३ ॥ ❀
जोपै राम सीय बन जाहीं ॥ अवध तुम्हार काज कछु नाहीं ॥ ४ ॥ ❀

जहां राम रहै वही अयोध्या है. देखो, जहां सूर्यका प्रकाश होता है वहीं दिन होता है ॥ ३ ॥ यदि सीता और राम बनमें जाते हों, तौ तुम्हारा अवधमें रहनेका कुछ काम नहीं ॥ ४ ॥

गुरु पितु मातु बन्धु सुर सांई ॥ सेइय सकल प्राणकी नांई ॥ ५ ॥ ❀
राम प्राणप्रिय जीवन जीके ॥ स्वारथसहित सखा सबहीके ॥ ६ ॥ ❀

कहा है कि, गुरु, माता, पिता, बंधु, देवता और स्वामी इन सबको प्राणके समान प्रिय समझ इनकी सेवा करनी चाहिये ॥ ५ ॥ सो राम प्राणोंसे प्यारे, और जीके जीवन है, इनके कोई स्वार्थ नहीं है. सब प्राणीमात्रके मित्र है ॥ ६ ॥

पूजनीय प्रिय परम जहांते ॥ मानहिँ सकल रामके नाते ॥ ७ ॥ ❀
अस जिय जानि संग बन जाहू ॥ लेहु तात जग जीवनलाहू ॥ ८ ॥ ❀

सबके पूजनीय और परम प्रिय है और जहां तहां रामके संबंधहीसे सबकोई मानते जानते हैं ॥ ७ ॥ सो हे तात ! इस बातको मनमें अच्छीतरह सोच समझकर तुम रामके साथ बनमें जाओ और जगतमें जीनेका लाभ लेओ ॥ ८ ॥

दोहा—भूरि भागभाजनभयउ, मोहिँ समेत बलिजाउँ ॥ ❀
जो तुम्हरे मन छांड़ि छल, कीन्ह रामपद ठाउँ ॥ ७४ ॥ ❀

हे तात ! बलिजाऊं. तुम मेरे साथ आज बड़े बड़भाग्य हुए हो. क्योंकि आज तुम्हारे मनमें छलको तज, रामके चरणकी शरण ली है ॥ ७४ ॥

पुत्रवती युवती जग सोई ॥ रघुबरभक्त जासु सुत होई ॥ १ ॥ ❀
नतरु बांझ भलि बादि बियानी ॥ रामबिमुख सुतते बड़ि हानी ॥ २ ॥ ❀

हे तात ! जगतमें पुत्रवती स्त्री वो ही है कि, जिसका पुत्र रामका परम भक्त है ॥ १ ॥ नहीं तौ

बियानेकी अपेक्षा बांझ रहना अच्छा है. अतएव मैं कहती हूं कि, जिसका पुत्र रामभक्त नहीं उसका बियाना वृथा है. पुत्र रामचन्द्रजीसे विमुख होवे इससे बढ़कर हानि क्या होगी ? ॥ २ ॥

तुम्हरे भाग राम बन जाहीं ॥ दूसर हेतु तात कछु नाहीं ॥ ३ ॥
सकल सुकृतकर फल सुत येहू ॥ रामसीयपद सहजसनेहू ॥ ४ ॥

हे तात ! मैं तो जानती हूं कि, राम केवल तुम्हारे भाग्यके बलसे बनमें जाते है. दूसरा कोई भी कारण नहीं है ॥ ३ ॥ हे पुत्र ! सब सुकृतका फल ही यही है कि, सीतारामके चरणोंमे सहज प्रीति बनी रहै ॥ ४ ॥

राग रोष ईर्षा मद मोहू ॥ जनि सपनेहुँ इनके वश होहू ॥ ॥ ५ ॥
सकल प्रकार विकार बिहाई ॥ मन क्रम बचन करहु सेवकाई ॥ ६ ॥

हे तात ! तुम कभी राग, रोष, ईर्षा, मद और मोह इनके स्वप्नमें भी वश मत होना ॥ ५ ॥ तुम सब प्रकारके विकारोंको तजकर, मन, क्रम, बचनसे सीतारामकी सेवा करो ॥ ६ ॥

तुमकहँ बन सब भांति सुपासू ॥ सँग पितु मातु राम सिय जासू ॥ ७ ॥
जेहिँ न राम बन लहहिँ कलेशू ॥ सुत सोइ करेहु मोर उपदेशू ॥ ८ ॥

तुम्हारे लिये बनवासमें सब प्रकारसे सुभीता रहेगा; क्योंकि माता पिता सीताराम तुम्हारे साथ रहेंगे ॥ ७ ॥ हे पुत्र ! जिस तरह राम बनमें दुःख न पावें वही काम करना. मेरा बारंबार तुम्हारे तईं यही उपदेश है ॥ ८ ॥

छंद–उपदेश यहि जेहि तात तुमते राम सिय सुख पावहीं ॥
पितु मातु प्रिय परिवार पुर सुख सुरति बन बिसरावहीं ॥
तुलसी सुतहिँ सिख देइ आयसु देइ पुनि आशिष दई ॥
रति होउ अविरल अमल सिय रघुबीरपद नित नित नई ॥ २ ॥

हे तात ! तुम्हारे तईं मैं बारंबार यही भलामन और उपदेश देती हूं कि, सीताराम जिस तरह सुख पावें वो करना. बनमें जाओ. तहां माता, पिता, प्रिय परिवार, नगर और सुख इनकी सुरति बिसर जाना; तुलसीदासजी कहते है कि, सुमित्राने ऐसे पुत्रको शिक्षा दे बनमें जानेकी आज्ञा दे, फिर असीसें दी और कहा कि, हे पुत्र ! तेरी सीतारामके चरणकमलोंमें नित २ नयी निर्मल प्रीति होओ ॥ २ ॥

सोरठा–मातुचरण शिर नाइ, चले तुरत शंकित हृदय ॥
बागुर विषम तुराइ, मनहुँ भाग मृग भागवश ॥ ३ ॥

लक्ष्मण माताके चरणोंमें शिर झुकाय, मनमें शंकित हो वहांसे ऐसे शीघ्र चले कि, मानों हरिण भाग्यवशसे विषम मृगबन्धनकी रस्सीको तुड़ाके भाग चला है ॥ ३ ॥

गये लषण जहँ जानकिनाथा ॥ भे मन मुदित आइ प्रियसाथा ॥ १ ॥
बन्दि रामसियचरण सुहाये ॥ चले संग नृप मन्दिर आये ॥ २ ॥

लक्ष्मण सुमित्रासे बिदा ले सीधा वहां आये कि, जहां प्रभु विराजते थे. प्रभुका साथ हो

जानेसे लक्ष्मण मनमें बहुत प्रसन्न हुए ॥ १ ॥ और सीतारामके सुन्दर चरणोंको प्रणाम कर साथ साथ चले चले राजभवनमें आये ॥ २ ॥

कहहिं परस्पर पुरनरनारी ॥ भलि बनाइ बिधि बात बिगारी ॥ ३ ॥ ❋
तनु कृश मन दुख बदन मलीना ॥ विकल मनहुँ माखी मधु छीना॥४॥ ❋

उस काल नगरके नर नारी परस्पर कहते है कि-विधाताने बातको बनाके भली बिगाड़ी॥३॥ सब लोग तनछीन मनमलीन बिषण्णमुख ऐसे विकल हो रहे है कि मानों मक्खी शहद छीन जानेसे हो जाती है ॥ ४ ॥

कर मींजहिं शिर धुनि पछिताहीं ॥ जनु बिनुपंख बिहँग अकुलाहीं ॥ ५ ॥ ❋
भइ बड़ि भीर भूपदरबारा ॥ वरणि न जाइ विषाद अपारा ॥ ६ ॥ ❋

सब हाथ मलते है और शिर धुन धुनके पछताते है, मानों पंखबिन पक्षी व्याकुल हो रहे हैं ॥ ५ ॥ राजाके दरबारमें भारी भीड़ हो रही है. और ऐसा अपार विषाद छा रहा है कि, कुछ कहा नहीं जाता ॥ ६ ॥

सचिव उठाइ राउ बैठारे ॥ कहि प्रिय बचन राम पगु धारे ॥ ७ ॥ ❋
सियसमेत दोउ तनय निहारी ॥ व्याकुल भये भूमिपति भारी ॥ ८ ॥ ❋

जब सुमंत्रने दशरथजीको उठाके बैठाया, तब प्रिय बचन कहकर, प्रभु पिताके पास गये ॥ ७ ॥ राजा दशरथ सीताके साथ दोनों पुत्रोंको देख अत्यंत व्याकुल हुए ॥ ८ ॥

दोहा-सीयसहित सुत सुभग दोउ, देखि देखि अकुलाइ ॥ ❋
बारहिं बार सनेह बश, राउ लिये उर लाइ ॥ ७५ ॥ ❋

सीताके साथ दोनों सुन्दर पुत्रोंको देख देखकर राजा घबराते है और स्नेहबश होकर, वारंवार उन्हें छातीसे लगाते है ॥ ७५ ॥

सकै न बोलि बिकल नरनाहू ॥ शोकबिकल उर दारुण दाहू ॥ १ ॥ ❋
नाइ शीश पद अति अनुरागा ॥ उठि रघुनाथ बिदा तब मांगा ॥ २ ॥ ❋

राजा अतिविकल होनेके कारण कुछ कह नहीं सकते है; परंतु हृदयमें अतिदारुण दाह होनेसे वारंवार शोचसे बिहबल हो रहे है ॥ १ ॥ तब रघुनाथजीने अतिप्रीतिके साथ उठ, चरणोंमें शिर नवाके राजासे बिदा मांगी ॥ २ ॥

पितु अशीश आयसु मोहिं दीजै ॥ हर्षसमय बिस्मय कत कीजै ॥ ३ ॥ ❋
तात किये प्रिय प्रेम प्रमादू ॥ यश जग जाइ होइ अपवादू ॥ ४ ॥ ❋

और कहा कि-हे तात ! मुझे आज्ञा और असीस दीजियेगा, आप आनंदके समय विस्मय क्यों करते हो ? ॥ ३ ॥ हे तात ! प्रमादसे प्यारेका प्रेम करनेसे जगत्‌में अपयश होता है और सुख्याति नाश हो जाती है ॥ ४ ॥

सुनि सनेहबश उठि नरनाहू ॥ बैठारे रघुपति गहि बाहू ॥ ५ ॥ ❋

सुनहु तात तुमकहँ मुनि कहहीं ॥ राम चराचरनायक अहहीं ॥ ६ ॥ ❋

प्रभुके वचन सुन, उठ स्नेहवश हो राजाने बांह पकड़के प्रभुको अपने पास बिठाया ॥ ५ ॥ और कहा कि–हे तात ! सुनो. तुम्हारे विषयमें मुनि वसिष्ठजी कहते है कि–राम चराचर जीवजन्तुके स्वामी हैं ॥ ६ ॥

शुभ अरु अशुभ कर्म अनुहारी ॥ ईश देइ फल हृदय बिचारी ॥ ७ ॥ ❋
करै जो कर्म पाव फल सोई ॥ निगम नीति अस कह सब कोई ॥ ८ ॥ ❋

सो जिसका जैसा शुभ अशुभ कर्म देखते है, उसे कर्मके अनुसार हृदयमें बिचारके फल देते हैं ॥ ७ ॥ अर्थात् जो आदमी जैसा कर्म करता है उसे वैसाही फल देते है. यह बात सब कोई जानते मानते हैं और वेदभी कहते है कि–जो करता है वो पाता है ॥ ८ ॥

दोहा–और करै अपराध कोइ, और पाव फलभोग ॥ ❋
अति बिचित्र भगवन्तगति, को जग जानै योग ॥ ७६ ॥ ❋

परंतु हे तात ! आज मैंने बड़ा आश्चर्य देखा कि–अपराध करै तो कोई.और भुगते कोई.परमेश्वरकी गति बड़ी विचित्र है ! वो किसीके ध्यानमें नहीं आ सकती ॥ ७६ ॥

राउर राम लषण हित लागी ॥ बहुत उपाय कीन्ह छल त्यागी ॥ १ ॥ ❋
लखे राम रुख रहत न जाने ॥ धर्म धुरंधर धीर सयाने ॥ २ ॥ ❋

राजा दशरथने लक्ष्मण रामके रखनेके लिये निष्कपट होकर कई उपाय किये ॥ १ ॥ परंतु रामकी रुख रहनेकी न पाई; क्योंकि प्रभु बड़े धर्मधुरंधर, धीर और सुजान है ॥ २ ॥

तब नृप सीय लाइ उर लीनी ॥ अतिहित बहुत भांति सिख दीनी ॥ ३ ॥ ❋
कहि बनके दुख दुसह सुनाये ॥ सासु ससुर पितु सुख समुझाये ॥ ४ ॥ ❋

तब दशरथजीने सीताको छातीसे लगाया और बड़ी प्रीतिसे अनेक प्रकारकी हितकारी शिक्षा दी ॥ ३ ॥ बनसंबंधी अनेक दुःसह दुःख कह कहकर सुनाये और घरमें सास ससुर पिता संबंधी कई सुख सोचाये ॥ ४ ॥

सिय मन रामचरणअनुरागा ॥ घर न सुगम बन अगम न लागा ॥ ५ ॥ ❋
औरौ सबहिँ सीय समुझाई ॥ कहि कहि बिपिन बिपति अधिकाई ॥ ६ ॥ ❋

परंतु सीताका मन प्रभुके चरणोंका अनुरागी था, इसलिये उसे घर तो सुगम नहीं दीखा और बन कठिण नहीं लगा ॥ ५ ॥ दूसरेभी सब लोगोंने बनकी बहुत भारी आपदा कह कहकर सीताको समझाया ॥ ६ ॥

सचिवनारि गुरुनारि सयानी ॥ सहित सनेह कहहिँ मृदु बानी ॥ ७ ॥ ❋
तुमकहँ तौ न दीन्ह बनबासू ॥ करहु जो कहहिँ ससुर गुरु सासू ॥ ८ ॥ ❋

और मंत्रियोंकी स्त्रियाँ व सयानी गुरुपत्नियोंने बड़े स्नेहके साथ कोमल वाणीसे कहा कि– ॥ ७ ॥ हे सीता ! राजाने तुझको तो बनवास नहीं दिया है. फिर तू हठ क्यों करती है ? जो सास, ससुर और गुरु कहैं वो कर ॥ ८ ॥

दोहा--शिष शीतल हित मधुर मृदु, सुनि सीतहिँ न सुहानि ॥ ❋
शरदचन्द्रचाँदनि लगत, जनु चकई अकुलानि ॥ ७७ ॥ ❋

यद्यपि सब लोगोंने सीताको शिक्षा बहुत कोमल, शीतल, मधुर और हितकारक दी; परंतु उसे वो न सुहाई. अतएव उस शिक्षाको सुनकर, वो कैसी घबराई, कि मानों शरदके चांदकी चांदनी लगनेसे चकई व्याकुल हो जाती है ॥ ७७ ॥

सीय सकुचबश उतर न देई ॥ सो सुनि तमकि उठी कैकेई ॥ १ ॥ ❋
मुनिपट भूषण भाजन आनी ॥ आगे धरि बोली मृदु बानी ॥ २ ॥ ❋

सीता संकोचके कारण कुछ उत्तर नहीं देती;तिसे देख, लोगोंके बचन सुन, कैकेयी क्रोधमें हो,उठी ॥ १ ॥ सो झट मुनिवस्त्र व आभूषण और पात्र लाय, प्रभुके आगे धर कोमल बाणीसे बोली ॥ २॥

नृपहिं प्राणप्रिय तुम रघुबीरा ॥ शील सनेह न छोड़हिँ भीरा ॥ ३ ॥ ❋
सुकृत सुयश परलोक नशाऊ ॥ तुमहिँ जान बन कहहिँ न राऊ ॥ ४ ॥ ❋

कि–हे राम ! तुम राजाको प्राणोंसे प्यारे हो. अतएव हे धीर ! ये अपने स्वाभाविक स्नेहको छोंड़ नहीं सकते ॥ ३ ॥ चाहो इनका सुकृत, सुयश और परलोक सब बिगड़ जाँय; परंतु ये तुमको बनमें जानेके लिये कभी नहीं कहेंगे ॥ ४ ॥

अस विचारि सोइ करौ जो भावा ॥ राम जननिशिख सुनि सुख पावा ॥५॥
भूपहिँ बचन बाणसम लागे ॥ करहिँ न प्राण पयान अभागे ॥ ६ ॥ ❋

इस बातका विचार करके जो तुम्हारे मनमें जँचे सो करो. प्रभु माताकी शिक्षा सुनकर बहुत प्रसन्न हुए ॥ ५ ॥ और राजाको वे बचन बाणके समान लगे. तिससे राजाने अपने मनमें कहा कि–देखो, अबभी ये अभागे प्राण देहको छोंड़कर रवाने नहीं होते अर्थात् निकस नहीं जाते ॥ ६ ॥

शोकबिकल मूर्छित नरनाहू ॥ कहा करिय कछु सूझ न काहू ॥ ७ ॥ ❋
राम तुरत मुनिबेष बनाई ॥ चले जनक जननी शिर नाई ॥ ८ ॥ ❋

क्या करें किसीको कुछ नहीं सूझता.ऐसे कहकर राजा शोचसे बिकल हो, गये ॥ ७ ॥ प्रभु तुरंत मुनिवेष धारण कर माता पिताको शिर नवाय, वहांसे रवाने हुए ॥ ८ ॥

दोहा--सज बनसाज समाज प्रभु, बनिताबन्धुसमेत ॥ ❋
बन्दि बिप्रगुरुचरण प्रभु, चले करि सबहिँ अचेत ॥ ७८ ॥ ❋

प्रभु, सीता और लक्ष्मणके साथ बनके साजका समाज सज, गुरु और ब्राह्मणोंके चरणोंको प्रणाम कर, सबको अचेत करके अयोध्यासे चले ॥ ७८ ॥

(क्षे०–रामरक्षा)

बहुरि राम जननीढिग आये ॥ सीताअनुजसहित सचुपाये ॥ १ ॥ ❋
सज बनसाज देखि सुख ठाढ़े ॥ रहा न धीर्य मोह अति बाढ़े ॥ २ ॥ ❋

अथ रामरक्षाप्रारंभः ॥ फिर प्रभु सीता और लक्ष्मणके साथ चोपसहित माताके समीप आये ॥१॥ तिन्हें बनके साज सजे खड़े देख कौसल्याको धीरज न रहा. अत्यंत ही मोह बढ़ गया ॥ २ ॥

जात बिपिन मम बालक बारे ॥ देखि न निकसत प्राण हमारे ॥ ३ ॥ ❀
अस कहि अवनि गिरी मुरझाई ॥ प्रभु जननी बहुबिधि समुझाई ॥ ४ ॥ ❀
पुनि धरि धीर भाषि सुत बच्छा ॥ लागि करन अंगनकी रक्षा ॥ ५ ॥ ❀

तिससे वो व्याकुल हो रुदन करने लगी कि, हाय ! मेरे बालक बच्चे बनमें जाते है, उन्हें देखकेभी मेरे प्राण निकस नहीं जाते है. मोसी मंदभागिन और कौन होगी ? ॥ ३ ॥ ऐसे कहकर माता मुर्झा-कर भूमिपर गिरगई; तब प्रभुने उसे धरतीसे उठाय, अनेक प्रकारसे समझाया ॥ ४ ॥ तब फिर धीरज धर, हे पुत्र ! हे तात ! हे वत्स ! ऐसे कह प्रभुकी अंगरक्षा करने लगी ॥ ५ ॥

छंद– नमो विष्णुपद पातु जानु तिर्बिक्रम बीरा ॥ ❀
कटिहिं रक्ष गोबिन्द नाभि अच्युत रणधीरा ॥ ❀
गुल्फ पातु पद्माक्ष उदर उर हरि श्रीनाथा ॥ ❀
भुज मधुसूदन पातु कुक्षि पृथ्वीधर साथा ॥ १ ॥ ❀

कौसल्या कहती हैं कि–हे तात ! विष्णुभगवान् तेरे चरणोंकी रक्षा करें. त्रिविक्रम भगवान् घुटनों-की रक्षा करें. गोविंद भगवान् तेरी कटि (मकर) की रक्षा करें. रणधीर अच्युत भगवान् तेरे नाभिकी रक्षा करें. पद्माक्ष (कमलनयन) भगवान् तेरी गांठीकी रक्षा करें. हरि भगवान् तेरे उदर (पेट) की रक्षा करें. लक्ष्मीपति भगवान् तेरे हृदयकी रक्षा करें. मधुसूदन भगवान् तेरे भुजाकी रक्षा करें. अनंत भगवान् तेरी कोखकी रक्षा करें ॥ १ ॥

कंठ जनार्दन पातु कृष्ण मुख मंडल सोहै ॥ ❀
करणमूल बाराह घ्राण दामोदर जोहै ॥ ❀
नेत्र निरंजन पातु भाल लक्ष्मी नारायण ॥ ❀
केशव पातु कपोल सर्बतन चक्रधरायण ॥ २ ॥ ❀

जनार्दन भगवान् तेरे कंठकी रक्षा करें. मंडलपति कृष्ण भगवान् तेरे मुखकी रक्षा करें. वराह भग-वान् तेरे कर्णमूलकी रक्षा करें. दामोदर भगवान् घ्राण (नाक) की रक्षा करें. निरंजन भगवान् तेरे नेत्रोंकी रक्षा करें. लक्ष्मी नारायण लिलारकी रक्षा करें. केशव भगवान् कपोल (गाल) की रक्षा करें. चक्रधर भगवान् सब शरीरकी रक्षा करें ॥ २ ॥

पूर्व पातु पुरुषोत्तम सदाग्नेय गरुड़ध्वज ॥ ❀
दक्षिण दिशि नरसिंह पातु नैर्ऋत्य चतुर्भुज ॥ ❀
वासुदेव बारुण्य पातु बायव्य विश्वंभर ॥ ❀
राम रक्ष कौ बीर्य शंख ईशान गदाधर ॥ ३ ॥ ❀

पुरुषोत्तम भगवान् पूर्व दिशामें रक्षा करें. गरुड़ध्वज अग्निकोणमें हमेशा रक्षा करें. नृसिंह भगवान् दक्षिण दिशामें रक्षा करें. चतुर्भुज भगवान् नैर्ऋत्यकोणमें रक्षा करें. वासुदेव भगवान् पश्चिम दिशामें रक्षा करें और विश्वंभर भगवान् वायव्यकोणमें रक्षा करें. शंखधर भगवान् उत्तरमें तेरी रक्षा करें. गदाधर भगवान् ईशानकोणमें रक्षा करें ॥ ३ ॥

कमलनाभि अध ऊर्ध्व पातु जल गिरिवर बामन ॥ ❋
व्याघ्र सिंहते पातु सदा शंकर मनभावन ॥ ❋
भूत प्रेत बैताल ब्रह्मराक्षस छलकारी ॥ ❋
अग्नि चोर विष बीछ सर्पते पातु मुरारी ॥ ४ ॥ ❋

कमलनाभ भगवान् ऊपर और तले तेरी रक्षा करें. वामन भगवान् जल और पहाड़ोंमें तेरी रक्षा करें. महादेवजीके मनरंजन हरि तेरी बाघ और सिंहसे सदा रक्षा करें. मुरारि भगवान् भूत प्रेत बैताळ, छलकारी ब्रह्मराक्षस, अग्नि, चोर, विष, बीछी और सर्प, इनसे सदा रक्षा करो ॥ ४ ॥

परविद्या उध यंत्र मंत्र परतंत्र जहांलौं ॥ ❋
माधव सकल निवारु मारु रुज शूल तहांलौं ॥ ❋
यहि बिधि रक्षा कीन दीन पुनि सुखद अशीसा ॥ ❋
सहित लषण सिय चले नाइ जननीपद शीसा ॥ ५ ॥ ❋

जगत्में जहांतक पराविद्यासे बढ़े हुए जो उत्तम यंत्र, मंत्र और तंत्र है उन सबको निबारकर,माधव भगवान् तेरे सब शूल और रोगोंका नाश करे. इस तरह रक्षा कर, फिर माताने प्रभुको सुखकारी असीस दी. तब प्रभु माताके चरणोंमें शिर नवाय, लक्ष्मण और सीताको संग ले बनको चले ॥ ५ ॥

दोहा–अनुजसहित बलकल पहिरी, करि पितुमातुप्रणाम ॥ ❋
कृष्णपक्ष बैशाख दिन, छटे चले बन राम ॥ १ ॥ ❋

प्रभुने लक्ष्मणके साथ बलकल पहन, माता पिताको प्रणाम कर, बैशाख बदी छठके दिन बनको प्रस्थान किया ॥ १ ॥ ॥ इति ॥

निकसि बसिष्ठ द्वार भये ठाढ़े ॥ देखे लोग बिरह दव दाढ़े ॥ १ ॥ ❋
कहि प्रिय बचन सबहिँ समुझाये ॥ बिप्रबृन्द रघुबीर बुलाये ॥ २ ॥ ❋

बसिष्ठजी बाहिर आ, द्वारपर खड़े हो, लोगोंकी ओर देखने लगे, तो उस समय लोगोंकी यह दशा दीख पड़ी कि, मानों सब लोग दावानलसे दाझ रहे है ॥ १ ॥ वसिष्ठजीने प्रिय वचन कहकर सबको समझाया. इस बीच प्रभुने ब्राह्मणवृन्दको बुलाय ॥ २ ॥

गुरुसन कहि बर शासन दीन्हे ॥ आदर दान बिनय बहु कीन्हे ॥ ३ ॥ ❋
याचक दान मान सन्तोषे ॥ नीत पुनीत प्रेम परितोषे ॥ ४ ॥ ❋

गुरु बसिष्ठजीको कह, उन्हे चौदह वर्षकी वर्षौंधी दिला दी और आदरके साथ औरभी अनेक दान दिये. और बहुतसा विनय किया ॥ ३ ॥ फिर याचकोंको दानमानसे संतुष्ट कर, पवित्र प्रीति और नीतिसे सबको राजी किया ॥ ४ ॥

दासी दास बुलाइ बहोरी ॥ गुरुहिँ सौंपि बोले कर जोरी ॥ ५ ॥ ❋
सबकर सार सँभारि गुसांई ॥ करब जनक जननीकी नाँई ॥ ६ ॥ ❋

फिर दास और दासियोंको बुलाके गुरुको सौंप दिया और हाथ जोड़के गुरुसे कहा कि– ॥५॥ हे स्वामी ! जैसे माता पिता संतानकी सार अपनी संभार करते है, ऐसे इनकी सार संभार करना ॥ ६ ॥

बारहिँ बार जोरि युग पानी ॥ कहत राम सबसन मृदु बानी ॥ ७ ॥ ❋
सोइ सब भांति मोर हितकारी ॥ जेहिते रहैं भुआल सुखारी ॥ ८ ॥ ❋

प्रभु बारंबार दोनों हाथ जोड़, सबसे कोमलवाणीसे कहते है कि– ॥ ७ ॥ हे भाइयो ! मेरा वोही सब प्रकारसे हितकारी है कि, जिससे राजा सुखो रहेंगे ॥ ८ ॥

दोहा–मातु सकल मोरे बिरह, जेहिँ न होहिँ दुखदीन ॥ ❋
सोइ उपाय तुम करब सब, पुरजन परम प्रवीन ॥ ७९ ॥ ❋

हे प्रवीण पुरके लोगो ! तुम सब मिलके वही उपाय करना कि, जिस तरह मेरे बिरहसे व्याकुल मातायें दीन और दुखी न हो जावें ॥ ७९ ॥

यहि विधि राम सबहिँ समुझावा ॥ गुरुपदपद्म हरषि शिर नावा ॥ १ ॥ ❋
गणपति गौरि गिरीश मनाई ॥ चले अशीश पाइ रघुराई ॥ २ ॥ ❋

इसतरह सबको समझाकर,प्रभुने प्रसन्न हो, फिर गुरुके चरणकमलोंको वंदन किया ॥ १ ॥ प्रभु गणपति, गौरी और महादेवजीको मनाय, असीस पाय, चले ॥ २ ॥

राम चलत अति भयो बिषादू ॥ सुनि न जाइ पुर आरत नादू ॥ ३ ॥ ❋
कुशकुन लंक अवध अति शोकू ॥ हर्षबिषादबिबश सुरलोकू ॥ ४ ॥ ❋

सो प्रभुके प्रस्थान करतेसमय ऐसा भारी दुःख छागया कि,नगरके लोगोंका आर्तनाद सुना नहीं जा सका ॥ ३ ॥ जिस समय प्रभु बनको रवाने हुए, तब लंकामें अति अशुभ सकुन हुए. अयोध्यामें भारी शोच हुआ और देवतालोग हर्ष और शोचके बश व्हे गये ॥ ४ ॥

गै मूर्छा तब भूपति जागे ॥ बोलि सुमन्त कहन अस लागे ॥ ५ ॥ ❋
राम चले बन प्राण न जाहीं ॥ केहि सुखलागि रहे तनुमाहीं ॥ ६ ॥ ❋

इस बीच दशरथजीकी मूर्छा खुली. राजा सचेत हो, सुमंत्रको बुलाय, ऐसे कहने लगे कि– ॥ ५ ॥ हे सुमंत्र ! रामके बनमें जानेपरभी ये प्राण नहीं निकसते. सो अब ये किस सुखके वास्ते मेरे शरीरमें रहते हैं ? ॥ ६ ॥

यहिते कवन व्यथा बलवाना ॥ जो दुख पाइ तजहिँ तनु प्राना ॥ ७ ॥ ❋
पुनि धरि धीर कहहिँ नरनाहू ॥ लै रथ संग सखा तुम जाहू ॥ ८ ॥ ❋

हे सुमंत्र ! इससे बढ़कर दूसरा दुख कौन है कि, जिसको पाकर ये प्राण शरीरको छोड़ेंगे ॥ ७ ॥ फिर धीरज धरके राजाने कहा कि–हे सखा ! तुम रथ लेकर रामके साथ जाओ ॥ ८ ॥

दोहा–सुठि सुकुमार कुमार दोउ, जनक सुता सुकुमारि ॥ ❋
रथ चढ़ाइ दिखराइ बन, फिरहु गये दिन चारि ॥ ८० ॥ ❋

राम और लक्ष्मण दोनों कुँवर बहुत सुकुमार हैं और सीता अतिही सुकुमारी है, इसलिये तुम रथ ले जाय; रथपर चढ़ाय, बनको दिखाय, दो चार दिन बनमें फिराके फिर पीछे आओ ॥ ८० ॥

जो नहिँ फिरहिँ धीर दोउ भाई ॥ सत्यासिन्धु दृढ़व्रत रघुराई ॥ १ ॥ *
तौ तुम विनय करहु कर जोरी ॥ फेरिय प्रभु मिथिलेशकिशोरी ॥ २ ॥ *

हे सुमंत्र ! राम सत्यके सागर और दृढ़प्रतिज्ञ है, सो जो कदाचित् दोनों भाई धीरज धरकर पीछे न फिरै तौ ॥ १ ॥ तुम हाथ जोड़कर बिनती करना और ज्यों त्यों कर सीताको पीछी लौटा ले आना. राम सीताको पीछी जरूर फेर देंगे ॥ २ ॥

जब सिय कानन देखि डराई ॥ कहेउ मोर सिख अवसर पाई ॥ ३ ॥ *
सासु ससुर अस कहेउ सँदेशू ॥ पुत्रि फिरिय बन बहुत कलेशू ॥ ४ ॥ *

परंतु यह बिनती कब करोगे कि,,जब सीता बनको देखके डर जावे. तब अवसर पाकर मेरी सीखकी बात कहना ॥ ३ ॥ तुम सीतासे कहना कि—तुम्हारी सास और ससुरने ऐसा संदेशा कहलाया है कि—हे पुत्री ! तुम पीछी फिर आओ. बनमें क्लेश बहुत हैं ॥ ४ ॥

पितुगृह कबहुँ कबहुँ ससुरारी ॥ रहेउ जहां रुचि होइ तुम्हारी ॥ ५ ॥ *
यहि बिधि करेहु उपायकदंबा ॥ फिरै तो होइ प्राण अवलंबा ॥ ६ ॥ *

हे सीता ! कभी पिताके घर और कभी ससुरालमें रहना.तुम्हारी जैसी इच्छा हो वैसे करना और जहां मन लगे वहां रहना ॥ ५ ॥ हे सुमंत्र ! इस तरहके अनेक उपाय करना. सो जो सीता पीछी लौट आवे, तौ मेरे प्राणोंको अवलंबन मिल जाय ॥ ६ ॥

नहिँ तो मोर मरण परिणामा ॥ कछु न बसाइ भये बिधि बामा ॥ ७ ॥ *
अस कहि मूर्छि परेउ महि राऊ ॥ राम लषण सिय आनि दिखाऊ ॥ ८ ॥ *

नहीं तौ इसका परिणाम यही है कि—मैं मर जाऊंगा. हे मित्र ! क्या करैं ? कुछ बश नहीं चलता; क्योकि बिधाता कोप गया है ॥ ७ ॥ हे सखा ! सीता राम लक्ष्मणको मुझे ला दिखाव,ऐसे कह मूर्छित हो, राजा पृथ्वीपर गिर पड़े ॥ ८ ॥

दोहा—पाय रजायसु नाइ शिर, रथ अति बेगि बनाइ ॥ *
गये जहां बाहर नगर, सीयसहित दोउ भाइ ॥ ८१ ॥ *

राजाकी आज्ञा पाय, शिर नवाय, बड़े बेगवाला रथ तैयार कर, सुमंत्र वहां गये. जहां नगरके बाहर सीताके साथ दोनों भाई बिराजे थे ॥ ८१ ॥

तब सुमन्त नृपबचन सुनाये ॥ करि बिनती रथ राम चढ़ाये ॥ १ ॥ *
चढ़ि रथ सीयसहित दोउ भाई ॥ चले हर्ष अवधहिँ शिर नाई ॥ २ ॥ *

सुमंत्रने प्रभुके निकट जाय,राजाके बचन सुनाये और बिनती करके रथपर चढ़ाये ॥ १ ॥ सीताके साथ दोनों भाई रथपर चढ़, अवधको प्रणाम कर, हर्षित हो चले ॥ २ ॥

चलत राम लखि अवध अनाथा ॥ बिकल लोग लागे सब साथा ॥ ३ ॥ *
कृपासिन्धु बहुबिधि समुझावहिँ ॥ फिरहिँ प्रेमबश पुनि फिरि आवहिँ ॥ ४ ॥

प्रभुके जाते अयोध्याको अनाथ जान,सब लोग विकल हो, प्रभुके संग हो लिये ॥ ३ ॥ कृपासिंधु प्रभु उन्हें अनेक प्रकारसे समझाते हैं, सो प्रभुके समझानेसे वे पीछे फिरते भी हैं पर प्रेमबश हो, पीछे दौड़ आते हैं ॥ ४ ॥

लागत अवध भयानक भारी ॥ मानहुँ कालराति अँधियारी ॥ ५ ॥ ❋
घोर जन्तु सब पुरनरनारी ॥ डरपहिँ एकहिँ एक निहारी ॥ ६ ॥ ❋

उसकाल अयोध्या कैसी भारी भयंकर लगती थी कि, मानों मूर्तिमान् अँधियारी कालरात्रिही विद्यमान है ॥ ५ ॥ पुरीके भीतर जो नर नारी हैं, सोही मानों भयानक जीवजन्तु हैं. जो आपसमें एकको एक देखकर डरते है ॥ ६ ॥

घर मसान परिजन जनु भूता ॥ सुत हित मीत मनहुँ यमदूता ॥ ७ ॥ ❋
बागन बिटप बेलि कुम्हिलाहीं ॥ सरित सरोवर देखि न जाहीं ॥ ८ ॥ ❋

घर मसानके समान, परिजन भूतोंके समान, और पुत्र, हितू व मित्र मानों यमराजके दूतोंके समान दीखते हैं ॥ ७ ॥ बागोंमें पेड़ लता कुम्हला रही है. नदियां और तालावोंकी ओर तो देखा ही नहीं जाता ॥ ८ ॥

दोहा--हय गज कोटिन केलिमृग, पुर पशु चातक मोर ॥ ❋
पिक रथांग शुक सारिका, सारस हंस चकोर ॥ ८२ ॥ ❋

हाथी, घोड़े, करोड़ों क्रीड़ामृग, पुरके पशु, चातक, मोर, कोकिला, चक्रवाक, तोता, मैना, सारस, हंस और चकोर ॥ ८२ ॥

रामबियोग बिकल सब ठाढ़े ॥ जहँ तहँ मनहुँ चित्र लिखि काढ़े ॥ १ ॥ ❋
नगर सकल बन गहवर भारी ॥ खग मृग बिकल सकल नर नारी ॥ २ ॥ ❋

ये सब रामके बियोगसे बिकल हो, मानों लिखकर चित्रके काढ़े हों ऐसे जहां तहां खड़े हैं ॥ १ ॥ सारा नगर भारी गहन बन बनगया है. पशु पक्षी और नगरके नरनारी सब बिकल हो रहे हैं ॥ २ ॥

बिधि केकई किरातिनि कीनी ॥ जेहिँ दव दुसह दशहुँ दिशि दीनी ॥३॥ ❋
सहि न सकेउ रघुबरविरहागी ॥ चले लोग सब व्याकुल भागी ॥ ४ ॥ ❋

विधाताने कैकेयीको भीलनी बनाय, नगरके चारों ओर उसके हाथ दुसह दावानल लगाई है ॥ ३ ॥ प्रभुके वियोगकी विरहानलको कोई सह नहीं सकता. जिससे सब लोग व्याकुल हो होकर भागे चले जाते है ॥ ४ ॥

सबहिँ बिचार कीन्ह मनमाहीं ॥ राम लषण सिय बिनु सुख नाहीं ॥५॥ ❋
जहां राम तहँ सकल समाजू ॥ बिनु रघुबीर अवध केहि काजू ॥ ६ ॥ ❋

सब लोगोंने मनमें बिचार किया कि, सीताराम और लक्ष्मणबिना कहीं सुख नहीं है ॥ ५ ॥ जहां राम है वहीं सब सुखका समाज है. फिर प्रभुके बिना अवध किस कामकी ? ॥ ६ ॥

चले साथ अस मंत्र दृढ़ाई ॥ सुर दुर्लभ सुखसदन बिहाई ॥ ७ ॥ ❋
रामचरणपंकज प्रिय जिनहीं ॥ बिषयभोग वश करै कि तिनहीं ॥ ८ ॥ ❋

ऐसी सलाह ठान, जो सुख देवताओंको दुर्लभ है ऐसे सुखधाम घरोंको तज, सब प्रभुके साथ चले ॥ ७ ॥ हे पार्वती ! जिनकी प्रभुके चरणकमलोंमें प्रीति है, उनको विषयभोग क्या बशकर सकते हैं ? ॥ ८ ॥

दोहा-बालक वृद्ध बिहाय गृह, लगे लोग सब साथ ॥ ❋
तमसातीर निवास किय, प्रथम दिवस रघुनाथ ॥ ८३ ॥ ❋

सब लोग बालक और बूढ़ोंको छोंड़ प्रभुके साथ लगे, सो उनके साथ साथ पहले दिन प्रभुने तमसा नदीके तटपर विश्राम किया ॥ ८३ ॥

रघुपति प्रजा प्रेमवश देषी ॥ सदय हृदय दुख भयउ बिशेषी ॥ १ ॥ ❋
करुणामय रघुनाथ गुसाँई ॥ बेगि पाइये पीर पराई ॥ २ ॥ ❋

जब प्रभुने प्रजाको प्रेमबश देखा, तो करुणहृदय प्रभुके मनमें बड़ा दुःख हुआ ॥ १ ॥ गोसांई रामचन्द्र करुणासिंधु है वे पराई पीर बहुत शीघ्र लखते है ॥ २ ॥

कहि सप्रेम मृदु बचन सुहाये ॥ बहुबिधि राम लोग समुझाये ॥ ३ ॥ ❋
किये धर्म उपदेश घनेरे ॥ लोग प्रेमबश फिरहिँ न फेरे ॥ ४ ॥ ❋

अतएव प्रभुने प्रेमसहित कोमल सुहावने बचन कहकर, लोगोंको अनेक प्रकारसे समझाया ॥ ३ ॥ और बहुतसा धर्मोपदेश किया, परंतु वे लोग प्रेमबश होनेके कारण फेरनेपरभी पीछे न फिरे ॥ ४ ॥

शील सनेह छांड़ि नहिँ जाई ॥ असमंजसबश भे रघुराई ॥ ५ ॥ ❋
लोग शोकश्रमबश गये सोई ॥ कछुक देवमाया मति मोई ॥ ६ ॥ ❋

प्रभु अपने स्वाभाविक स्नेहको तज नहीं सकते, अतएव श्रीरघुनाथजी भारी दुबिधाके बश हुए. लोगोंको छोड़के जावें सो तो लोगोंने पीछा न छोंड़ा और साथ चलनेसे लोग दुख पाते है सो प्रभुसे देखा नहीं जाता ॥ ५ ॥ निदान जब सब लोग शोच और श्रमके बश हो सोगये और कुछ देवमायाने उनकी बुद्धिको मोहित कर लिया ॥ ६ ॥

जबहिँ याम युग यामिनि बीती ॥ राम सचिवसन कहेउ सप्रीती ॥७॥ ❋
खोज मारि रथ हाँकहु ताता ॥ आन उपाय बनहिँ नहिँ बाता ॥ ८ ॥ ❋

और दो प्रहर रात बीतगई, तब प्रभुने सुमंत्रसे प्रीतिके साथ कहा कि- ॥ ७ ॥ हे तात ! अब खोज मारके रथको चलाओ, नहीं तो और किसी उपायसे बात बननेकी नहीं है ॥ ८ ॥

दोहा-राम लषण सिय यान चढ़ि, शंभुचरण शिर नाइ ॥ ❋
सचिव चलायउ तुरत रथ, इत उत खोज दुराइ ॥ ८४ ॥ ❋

प्रभुकी आज्ञा होतेही ज्यों सुमंत्रने रथ साजके ला उपस्थित किया, त्यों राम लक्ष्मण और सीता शिवजीके चरणकमलोंको प्रणाम कर रथपर चढ़े. तब सुमन्त्रने इधर उधर खोज छिपाके रथको शीघ्र हाक दिया ॥ ८४ ॥

जागे सकल लोग भये भोरू ॥ गये रघुबीर भयो अति शोरू ॥ १ ॥ ❋
रथकर खोज कतहुँ नहिँ पावहिँ ॥ राम राम कहि चहुँ दिशि धावहिँ ॥२॥ ❋

भोर होतेही सब लोग जागे, प्रभुको न देखकर, "अहह ! प्रभु चले गये" ऐसा बड़ा भारी शोर हुआ ॥ १ ॥ लोगोंने रथके खोज बहुत ढूंढे, पर कहीं पता न लगा. तब "राम राम" ऐसे कहकर चारों दिशाओंमें दौड़ने लगे ॥ २ ॥

मनहुँ बारिनिधि बूड़ जहाजू ॥ भयउ बिकल जनु बणिकसमाजू ॥ ३ ॥ ❋
एकहिँ एक देहिँ उपदेशू ॥ तजेउ राम हम जानि कलेशू ॥ ४ ॥ ❋

प्रभुका पत्ता न लगनेसे सब लोग ऐसे व्याकुल हुए कि, मानों समुद्रके बीच जहाज बूड़ते समय बनियोंका साथ बिकल हो जाता है ॥ ३ ॥ वहां एक एकको उपदेश करते है कि,प्रभुने हमें क्लेश समझकर तज दिया है ॥ ४ ॥

निन्दहिँ आपु सराहहिँ मीना ॥ धृग जीवन रघुबीरबिहीना ॥ ५ ॥ ❋
जो पै प्रियबियोग बिधि कीन्हा ॥ तौ कस मरण न माँगे दीन्हा ॥ ६ ॥ ❋

सब लोग अपनेको धिक्कारते है और मछलीकी सराह करते है. तथा कहते है कि–रामके विना हमारे जीवनको धिक्कार है ॥ ५ ॥ जो विधाताने प्रियबंधुका वियोग कर दिया, तौ मांगनेपर मौत क्यों न दी ? ॥ ६ ॥

यहि बिधि करत प्रलापकलापा ॥ आये अवध भरे परितापा ॥ ७ ॥ ❋
बिषम बियोग न जाइ बखाना ॥ अवधिआश राखहिँ सब प्राना ॥ ८ ॥ ❋

इसतरह प्रलाप करते सब लोग भारी संतापसे संतप्त हो अवधमें आये ॥ ७ ॥ हे पार्वती ! उनका विकट वियोग कुछ कहा नहीं जाता. केवल अवधिकी आशासे सबोंने अपने प्राण राखे कि, प्रभु चौदह वर्ष बीते पीछे पधारेंगे ॥ ८ ॥

दोहा–रामदर्शहित नेम ब्रत, लगे करन नर नारि ॥ ❋
मनहुँ कोक कोकी कमल, दीन बिहीन तमारि ॥ ८५ ॥ ❋

प्रभुके विरहसे विकल हुए नगरके सब नर नारी प्रभुके दर्शनके निमित्त नियम और व्रत करने लगे हैं और कैसे दीन होगये है कि,मानों सूरजके वियोगसे चकवाक, चक्रवाकी और कमल कुम्हला जाते है ॥ ८५ ॥

सीता सचिवसहित दोउ भाई ॥ शृंगवेरपुर पहुँचे जाई ॥ १ ॥ ❋
उतरे राम देवसरि देखी ॥ कीन्ह दण्डवत हर्ष बिशेषी ॥ २ ॥ ❋

इधर अवधकी तौ यह दशा है. उधर सीता और सुमंत्रके साथ दोनों भाई शृंगवेरपुर जा पहुंचे ॥ १ ॥ गंगाजीको देख, रथसे उतर, बड़े आनंदके साथ प्रभुने प्रणाम किया ॥ २ ॥

लषण सचिव सिय कीन्ह प्रणामा ॥ सबहिँ सहित सुख पायउ रामा ॥ ३ ॥
गंग सकल मुदमंगलमूला ॥ सब सुखकरणि हरणि सब शूला ॥ ४ ॥ ❋

फिर लक्ष्मण, सीता और सुमन्त्रने दंडवत् किया. गंगाके तटपर आ, प्रभु सबके साथ बहुत सुख पाये ॥ ३ ॥ हे पार्वती ! गंगाजी समस्त आनंद और मंगलकी मूल है. तथा सर्व सुखकारी व सर्व दुःखहारी है ॥ ४ ॥

कहि कहि कोटिक कथाप्रसंगा ॥ राम बिलोकत गंगतरंगा ॥ ५ ॥ ❋
सचिवहिँ अनुजहिँ प्रियहिँ सुनाई ॥ बिबुधनदीमहिमा अधिकाई ॥ ६ ॥ ❋

प्रभु गंगाजीके विषयमें कई कथाप्रसंग कह कहकर, उनकी लहरोंको देखते है ॥ ५ ॥ सुमंत्र, लक्ष्मण और सीताको सुना सुनाकर, प्रभुने गंगाजीका माहात्म्य बहुत बढ़ाया ॥ ६ ॥

मज्जन कीन्ह पन्थश्रम गयऊ॥ शुचि जल पियत मुदित मन यभऊ॥ ७॥ ❋
सुमिरत जाहि मिटहिँ भवभारू॥ तेहिश्रम यह लौकिक व्यवहारू॥ ८॥ ❋

उसमें नहातेही मार्गका श्रम मिट गया और पवित्र जल पीतेही मन प्रसन्न हो गया ॥ ७ ॥ हे भवानी ! जिन (राम) का स्मरण करतेही संसारका भार मिट जाता है, उनको परिश्रम होना यह लौकिक व्यवहार है. वास्तवमें प्रभुको कोई श्रम नहीं है ॥ ८ ॥

दोहा-शुद्ध सच्चिदानन्दमय, राम भानुकुलकेतु ॥ ❋
चरित करत नर अनुहरत, संसृतिसागरसेतु ॥ ८६ ॥ ❋

जो शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप और संसारसमुद्रके सेतु व सूरज वंशके ध्वजारूप राम है, वे लोगोंको दिखानेके लिये मनुष्योंकीसी चेष्टा करते हैं. वस्तुतः प्रभु स्वतंत्र और शक्तिमान् है ॥ ८६ ॥

यह सुधि गुह निषाद जब पाई ॥ मुदित लिये प्रिय बंधु बुलाई ॥ १ ॥ ❋
लै फल मूल भेंट भरि भारा ॥ मिलन चल्यो हिय हर्ष अपारा ॥ २ ॥ ❋

जब गुह भीलको यह खबर मिली कि, प्रभु पधारे है; तब वह प्रसन्न हो अपने प्रिय बांधवोंको बुलाय ॥ १ ॥ फल, मूल, कंद ले, भेंटका भार भर, मनमें हुलाश करता प्रभुसे मिलनेको चला ॥ २ ॥

करि दण्डवत भेंट धरि आगे ॥ प्रभुहिँ बिलोकत अति अनुरागे ॥ ३ ॥ ❋
सहजसनेहबिबश रघुराई ॥ पूंछेउ कुशल निकट बैठाई ॥ ४ ॥ ❋

प्रभुको दूरसे देखतेही भेंट आगे धरी और दंडवत प्रणाम कर, बड़ी प्रीतिसे प्रभुको निहारने लगा ॥ ३ ॥ तब रामचन्द्र आनन्दकन्दने स्वाभाविक स्नेहके वश हो उसे अपने पास बिठाय कुशल क्षेम पूंछा ॥ ४ ॥

नाथ कुशल पदपंकज देखे ॥ भयउँ भाग्यभाजन जन लेखे ॥ ५ ॥ ❋
देव धरणि धन धाम तुम्हारा ॥ मैं जन नीच सहित परिवारा ॥ ६ ॥ ❋

तब उसने कहा कि-हे नाथ ! आपके चरणकमलोंके दर्शन करनेसे आज मुझे सब प्रकारसे कुशल है और आज मैं भाग्यशाली पुरुषोंकी गिनतीमें आया हूं ॥ ५ ॥ हे देव ! यह पृथ्वी, धन; घर सब आपकेही हैं और परिवारके साथ मैं नीच जनभी आपकाही हूं ॥ ६ ॥

कृपा करिय पुर धारिय पाऊ ॥ थापिय जन सब लोग सिहाऊ ॥ ७ ॥ ❋
कहेउ सत्य सब सखा सुजाना ॥ मोहिँ दीन्ह पितु आयसु आना ॥ ८ ॥

सो कृपा करके पुरमें पधारियेगा और मुझे अपना जन जान थापियेगा कि- जिससे सब लोग सिहावें ॥ ७ ॥ गुहके प्रेमभरे वचन सुन, प्रभुने कहा कि-हे सुजान सखा ! तूने सच कहा है, परंतु मुझे पिताने कुछ आज्ञा औरही दी है ॥ ८ ॥

दोहा–वर्ष चारि दश बास बन, मुनिव्रत बेष अहार ॥ ❋
ग्रामबास नहिँ उचित सुनि, गुहहिँ भयो दुखभार ॥ ८७ ॥ ❋

पिताने यह आज्ञा दी है कि, चौदह बर्षलों मुनिव्रत धारण कर, मुनिबेष पहिन, मुनि अन्न खाय, वनमें रहना. इसलिये अब हमको गांवमें रहना उचित नहीं. यह सुन, गुहको बड़ा भारी दुःख हुआ ॥ ८७ ॥

रामलषनसियरूप निहारी ॥ कहहिँ सप्रेम नगरनरनारी ॥ १ ॥ ❋
ते पितु मातु कहहु सखि कैसे ॥ जिन पठये बन बालक ऐसे ॥ २ ॥ ❋

राम लक्ष्मण और सीताके स्वरूपको देख, नगरके नर नारी प्रीतिपूर्वक कहने लगे कि, ॥ १ ॥ हे सखी ! कहो; वे माता पिता कैसे हैं कि, जिन्होंने ऐसे सुकुमार बालकोंको वनवास दे दिया ॥ २ ॥

एक कहहिँ भूपति भल कीन्हा ॥ लोचनलाहु हमहिँ जिन दीन्हा ॥ ३ ॥ ❋
तब निषादपति उर अनुमाना ॥ तरु शिंशपा मनोहर जाना ॥ ४ ॥ ❋

एकने कहा कि, हे सखी ! राजाने यह बहुत अच्छा काम किया है; क्योंकि उन्हींकी कृपासे अपनेको नेत्रोंको लाभ मिला है ॥ ३ ॥ उस समय प्रभुकी इच्छा बाहिर विराजनेकी जान, शिंशपाका वृक्ष अति सुन्दर अनुमान ॥ ४ ॥

ले रघुनाथहिँ ठौर बतावा ॥ कहेउ राम सबभांति सुहावा ॥ ५ ॥ ❋
पुरजन करि जुहारि गृह आये ॥ रघुबर सन्ध्या करन सिधाये ॥ ६ ॥ ❋

प्रभुको साथ ले जाय, गुहने जगह बताई. तब प्रभुने कहा कि–बस, यह जगह सब प्रकारसे अच्छी है हम यहीं ठहरेंगे ॥ ५ ॥ ऐसे कह प्रभु संध्या करने पधारे और नगरके लोग जुहार २ कर अपने २ घर आये ॥ ६ ॥

गुह सँवारि साथरी बनाई ॥ कुश किसलय मृदु परम सुहाई ॥ ७ ॥ ❋
शुचि फल मूल मृदुल मधु जानी ॥ दोना भरि भरि राखेसि आनी ॥ ८ ॥ ❋

गुहने संवारकर साथरी तैयार करी. उसमें बहुत कोमल दाभकी नर्म नर्म पत्ती बिछाई; जो बहुत सुहावनी थीं ॥ ७ ॥ फिर अच्छे पवित्र कोमल फल मूल मीठे मीठे जानके लाया, और दोना भर भरके आगे रख दिया ॥ ८ ॥

दोहा–सिय सुमंत भ्राता सहित, कन्द मूल फल खाइ ॥ ❋
शयन कीन्ह रघुबंशमणि, पांय पलोटत भाइ ॥ ८८ ॥ ❋

रघुबंशमणि रामचन्द्रजीने सीता सुमन्त्र और लक्ष्मणके साथ फल मूल कन्द खाकर शयन किया, तब लक्ष्मण पांव चापने लगे ॥ ८८ ॥

उठे लखण प्रभु सोवत जानी ॥ कहि सचिवहिँ सोवन मृदु बानी ॥ १ ॥ ❋
कछुक दूरि सजि बाण शरासन ॥ जागन लगे बैठि बीरासन ॥ २ ॥ ❋

प्रभुको पौढ़े जान लक्ष्मणने उठ, सुमन्त्रको कोमलवाणीसे सोनेको कहा ॥ १ ॥ और आप कुछ दूर जाय, धनुष बाणको सज, बीरासनसे बैठकर, जागने लगे ॥ २ ॥

गुह बुलाइ पाहरू प्रतीती ॥ ठांव ठांव राखे अति प्रीती ॥ ३ ॥ ❋
आप लखणपहँ बैठेउ जाई ॥ कटि भाथा शर चाप चढ़ाई ॥ ४ ॥ ❋

गुहनेभी अपने भरोसेवाले पहरादारोंको बुलाकर, प्रीतिपूर्वक ठौर ठौर पै बिठा दिया ॥ ३ ॥ फिर गुह आप कमरमें तरकस कस, धनुष चढ़ाय लक्ष्मणके पास जा बैठा ॥ ४ ॥

सोवत प्रभुहिँ निहारि निषादा ॥ भयउ प्रेमबश हृदय बिषादा ॥ ५ ॥ ❋
तन पुलकित लोचन जल बहई ॥ बचन सप्रेम लषणसन कहई ॥ ६ ॥ ❋

निषादराज प्रभुको पौढ़े देख, अत्यंत प्रेमके बश हो गया और उसका हृदय खिन्न होगया ॥ ५ ॥ शरीर रोमांचित हो गया. नेत्रोंमेसे आंसू बहने लगे. ऐसे प्रेममगन हो गुह लक्ष्मणसे कहने लगा कि- ॥ ६ ॥

भूपतिभवन सुभायसुहावा ॥ सुरपतिसदन न पटुतर आवा ॥ ७ ॥ ❋
मणिमय रचित चारु चौबारे ॥ जनु रतिपति निजहाथ सँवारे ॥ ८ ॥ ❋

हे लक्ष्मण ! राजभवन सब प्रकारसे अच्छा और सुहावना है. जिसकी बराबरी इंद्रका भवनभी किसी कदर कर नहीं सकता ॥ ७ ॥ जिसमें रत्नोंके बने हुए सुन्दर चौंबारे है कि, जो मानों कामदेवनेही अपने हाथसे संवारके बनाये है ॥ ८ ॥

दोहा-शुचि सुबिचित्र सुभोगमय, सुमन सुगन्ध सुबास ॥ ❋
पलँग मंजु मणिदीप जहँ, सब बिधि सकल सुपास ॥ ८९ ॥ ❋

जहां परम पवित्र अति विचित्र सुन्दर भोगसे भरे सुथरे पलंग ढरे है. सुगंधि और सुबास फूलोंकी माला टंगी है. मणिमय मनोहर दीपक जगमगा रहे है और सब प्रकारसे सब सुभीता है ॥ ८९ ॥

बिबिध बसन उपधान सुहाई ॥ क्षीर फेन मृदु बिशन बनाई ॥ १ ॥ ❋
तहँ सिय राम शयन निशि करहीं ॥ निजछबि रति मनोज मद हरहीं ॥ २ ॥

अनेक प्रकारसे वस्त्रोंके सुन्दर उपधान बने हैं, जो दूधके फेनके समान, अति विशद (श्वेत) और सुकोमल है ॥ १ ॥ वहां जो सीताराम रात्रिके समय पौढ़ते है कि, जो अपनी सुषमासे रती (कामदेवकी स्त्री) और कामदेवका गर्व गंजन करते है ॥ २ ॥

ते सिय राम साथरी सोये ॥ श्रमित बसन बिन जाहिँ न जोये ॥ ३ ॥ ❋
मातु पिता परिजन पुरबासी ॥ सखा सुशील दास अरु दासी ॥ ४ ॥ ❋

वे प्रभु सीताराम थककर विना वस्त्र साथरीपर पौढ़े है. हाय ! मुझसे तो देखा नहीं जाता ॥ ३ ॥ जिन्हें माता, पिता, प्रिय परिवार, पुरवासी, सखा और सुशील दास व दासियां ॥ ४ ॥

जुगवहिँ जिनहिँ प्राणकी नाई ॥ महि सोवत सो राम गुसाँई ॥ ५ ॥ ❋
पिता जनक जगबिदित प्रभाऊ ॥ ससुर सुरेशसखा रघुराऊ ॥ ६ ॥ ❋

प्राणकी नाईं देखती है. हाय ! वे प्रभु राम धरतीपर पौढ़े हैं ॥ ५ ॥ जिस (सीता) का पिता तो जनक कि, जिसका जस प्रताप सारे संसारमें प्रख्यात है; और श्वसुर दशरथजी कि, जो इंद्रके परम मित्र हैं ॥ ६ ॥

रामचन्द्र पति सो बैदेही ॥ महि सोवति बिधि बाम न केही ॥ ७ ॥ ❋
सिय रघुबीर कि कानननयोगू ॥ कर्म प्रधान सत्य कह लोगू ॥ ८ ॥ ❋

और पति रामचन्द्र कि,जो त्रिलोकीनाथ है वह सीता पृथ्वीपर पौढ़ी है. हाय ! विधाता टेढ़ा किसीको नहीं है ? ॥ ७ ॥ क्या सीता और राम वनके योग्य है ? कदापि नहीं. अतएव लोग जो कहते है कि "विधना काहु विध नाहीं टरै" सो सत्य है ॥ ८ ॥

दोहा—केकयनंदिनि मंदमति, कठिन कुटिलपन कीन्ह ॥ ❋
जेहिँ रघुनन्दन जानकिहिँ, सुखअवसरदुख दीन्ह ॥ ९० ॥ ❋

मंदमति कैकेयीने बड़ी कठिण कुटिलता करी कि, जिसने सीता और रामको सुख भोगके समय वनवासका दुख दिया ॥ ९० ॥

भइ दिनकरकुलबिटपकुठारी ॥ कुमति कीन्ह अब बिश्वदुखारी ॥ १ ॥ ❋
भयेउ बिषाद निषादहिँ भारी ॥ राम सीय महि शयन निहारी ॥ २ ॥ ❋

इस कुमति कैकेयीने सूर्यवंशरूपी वृक्षके लिये कुल्हाड़ी बन अब सब विश्वको दुखित कर दिया है ॥ १ ॥ सीतारामको पृथ्वीपर पौढ़े देख, निषाद गुहके मनमें बड़ा भारी विषाद (रंज) हुआ ॥ २ ॥

बोले लषण मधुर मृदु बानी ॥ ज्ञान बिराग भक्ति रस सानी ॥ ३ ॥ ❋
कौन काहु दुख सुखकर दाता ॥ निजकृत कर्म भोग सब भ्राता ॥ ४ ॥ ❋

उस समय ज्ञान वैराग्य और भक्तिरससे भरी मधुर कोमल वाणीसे लक्ष्मणने कहा कि- ॥ ३ ॥ हे सखा ! कौन किसीका सुख दुख देनेवाला है ? हे भाई ! सब लोग अपने २ कर्मोंके किये फल भोगते है ॥ ४ ॥

योग बियोगभोगभल मन्दा ॥ हित अनहित मध्यम भ्रम फंदा ॥ ५ ॥ ❋
जनम मरण जहँ लगि जग जालू ॥ संपति बिपति कर्म अरु कालू ॥ ६ ॥ ❋

हे भाई ! जगत्में जहांलों योग, बियोग, भोग, अच्छा, बुरा, हित, अनहित, मध्यम ॥ ५ जन्म, मरण, संपदा, आपदा, कर्म, काल ॥ ६ ॥

धरणि धाम धन पुर परिवारू ॥ स्वर्ग नरक जहँलगि व्यवहारू ॥ ७ ॥ ❋
देखिय सुनिय गुनिय मनमाहीं ॥ मोहमूल परमारथ नाहीं ॥ ८ ॥ ❋

पृथ्वी, घर, धन, परिवार, स्वर्ग, नरक और जितना व्यवहार ॥ ७ ॥ देखने सुनने और मनसे चिंतवन करनेमें आता है, वो सब मोहका कारण है. परमार्थ सत्य नहीं है ॥ ८ ॥

दोहा—सपने होइ भिखारि नृप, रंक नाकपति होइ ॥ ❋
जागे लाभ न हानि कछु, तिमि प्रपंच जिय जोइ ॥ ९१ ॥ ❋

हे भाई ! जैसे कोई भिखारी स्वप्नमें राजा बन जाय, रंक (दरिद्री) इंद्र बन जाय, और राजा रंक बन जाय व इंद्र दरिद्री हो जाय; परंतु वो परमार्थ नहीं है; क्योंकि जागनेपर हानि और लाभ कुछ नहीं है. इस प्रपंचकोभी अपने मनमें ऐसे ही जानो ॥ ९१ ॥

अस बिचारि नहिँ कीजिय रोषू ॥ बादि काहु नहिँ दीजिय दोषू ॥ १ ॥ ❋

मोह निशा सब सोवनिहारा ॥ देखहिँ स्वप्न अनेक प्रकारा ॥ २ ॥ ❃

ऐसे विचार कर, तुम किसीपर कोप मत करो और किसीको झूंठा कलंक मत लगाओ ॥ १ ॥ क्योंकि जो लोग मोहरूप रात्रिमें सोनेवाले है, वे अनेक प्रकारके स्वप्न देखतेही है ॥ २ ॥

यहि जगयामिनि जागहिँ योगी ॥ परमारथपरपंचबियोगी ॥ ३ ॥ ❃
जानिय तबहिँ जीव जग जागा ॥ जब सब बिषयबिलासबिरागा ॥ ४ ॥ ❃

और जो योगीलोग इस जगत्‌रूप रात्रिमें जागते है, वे प्रपंचरहित होकर परमार्थ (परब्रह्म) को जानते है ॥ ३ ॥ हे भाई ! जब यह जीव सर्व विषयभोगसे विरक्त हो जाता है, तभी इस जीवको जागा समझना चाहिये ॥ ४ ॥

होइ बिबेक मोह भ्रम भागा ॥ तब रघुबीरचरणअनुरागा ॥ ५ ॥ ❃
सखा परम परमारथ एहू ॥ मन क्रम बचन रामपदनेहू ॥ ६ ॥ ❃

हे सखा ! जब विवेक हो जाता है और मोह व भ्रम मिट जाता है, तभी प्रभुके चरणोंमें प्रीति होती है ॥ ५ ॥ हे सखा ! हम तो परम परमार्थ इसीको समझते है कि–प्रभुके चरणोंमें मन कम वचनसे दृढ़ स्नेह बंध जाय ॥ ६ ॥

राम ब्रह्म परमारथरूपा ॥ अबिगत अलख अनादि अनूपा ॥ ७ ॥ ❃
सकलबिकाररहित गतभेदा ॥ कहि नित नेति निरूपहिँ बेदा ॥ ८ ॥ ❃

हे भाई ! रामचन्द्र आनन्दकन्द साक्षात् परब्रह्म और परमार्थस्वरूप हैं. प्रभुकी गति किसीके जानने और लखनेमें नहीं आती. प्रभु अनादि और अनुपम स्वरूप है ॥ ७ ॥ प्रभुमें कोई तरहका विकार और भेद भाव नहीं है. वेद भी प्रभुके स्वरूपको नेति नेति कहकर निरूपण करते है,पर साक्षात् नहीं ॥ ८ ॥

दोहा--भक्ति भूमि भूसुर सुरभि, सुरहित लागि कृपाल ॥ ❃
करत चरित धरि मनुजतन, सुनत मिटे जगजाल ॥ ९२ ॥ ❃

दयालु प्रभु पृथ्वी, गौ, ब्राह्मण, देवता और भक्तिके हितके कारण मनुष्यदेह धरकर अनेक प्रकारके चरित्र करते है. जिन्हे सुनतेही संसारके संपूर्ण जालमात्र कट जाते है ॥ ९२ ॥

सखा समुझि अस परिहरि मोहू ॥ सियरघुबीरचरणरति होहू ॥ १ ॥ ❃
कहत रामगुण भा भिनुसारा ॥ जागे जगमंगलदातारा ॥ २ ॥ ❃

हे सखा ! ऐसे समझकर अज्ञानको तजो और सीतारामके चरणोंमें पूर्ण प्रीति करो ॥१॥ हे पार्वती! प्रभुका गुणानुवाद करते २ प्रभात हो गया.तब जगत्‌को मंगल देनहारे प्रभु जागे ॥ २ ॥

सकल शौच करि राम अन्हाये ॥ शुचि सुजान बटक्षीर मंगाये ॥ ३ ॥ ❃
अनुजसहित शिर जटा बनाये ॥ देखि सुमन्त नयन जल छाये ॥ ४ ॥ ❃

प्रभुने सब शौच कर स्नान किया, फिर सुजान प्रभुने पवित्र बटका दूध मंगाया ॥ ३ ॥ उससे लक्ष्मणके साथ जटा बनाई, जिन्हें देख सुमंत्रके नेत्रोंमें जल भर आया ॥ ४ ॥

हृदय दाह अति बदन मलीना ॥ कह कर जोरि बचन अति दीना ॥५॥ ❃

नाथ कहेउ अस कोशलनाथा ॥ लै रथ जाहु रामके साथा ॥ ६ ॥ ❋

जिसकी छाती भीतरसे जल रही है और मुख अत्यंत मलिन हो रहा है, उस सुमंत्रने हाथ जोड़ अत्यंत दीन हो ये बचन कहे ॥ ५ ॥ सुमंत्र बोला कि–हे नाथ ! मुझे दशरथजीने यह आज्ञा दी है कि "तू रथ लेकर रामके साथ जा" ॥ ६ ॥

बन दिखाइ सुरसरि अन्हवाई ॥ आनेहुँ बेगि फेरि दोउ भाई ॥ ७ ॥ ❋
लषण राम सिय आनेहुँ फेरी ॥ संशय सकल सकोच निबेरी ॥ ८ ॥ ❋

"सो उन्हें वनकी बहार दिखाय, गंगाजीमें न्हिलाय, फिर पीछे दोनों भाइयोंको यहां शीघ्र फेर लाइयो ॥ ७ ॥ राम लक्ष्मण और सीताको पीछा ले आइयो. इसमें बिलकुल संकोच और संदेह मत करियो" ॥ ८ ॥

दोहा–नृप अस कहेउ गुसाईं जस, कहिय करौं बलि सोइ ॥ ❋
करि बिनती पाँयन परेउ, दीन बास जिमि रोइ ॥ ९३ ॥ ❋

हे प्रभु ! राजाने ऐसे कहा है सो अब मै क्या करूं ? बलि जाऊं. अब मुझे जैसा फरमावें वैसाही करूं. हे पार्वती ! सुमंत्र ऐसे विनती कर, दीन बालककी नाई रुदन करके प्रभुके चरणोंमें गिर पड़ा ॥ ९३ ॥

तात कृपा करि कीजिय सोई ॥ जाते अवध अनाथ न होई ॥ १ ॥ ❋
मंत्रिहिं राम उठाइ प्रबोधा ॥ तात धर्ममारग तुम शोधा ॥ २ ॥ ❋

फिर सुमंत्रने कहा कि, हे तात ! कृपा करके आप वोही उपाय कीजिये कि, जिस तरह अयोध्या अनाथ न हो जावे ॥ १ ॥ सुमंत्रके बचन सुन, प्रभुने उसे उठाके समझाया और कहा कि–हे तात ! आपने धर्मका मार्ग अच्छा ढूंढ़ा है ॥ २ ॥

शिबि दधीचि हरिचन्द नरेशा ॥ सहे धर्महित कोटि कलेशा ॥ ३ ॥ ❋
रन्तिदेव बलि भूप सुजाना ॥ धर्म धरेउ सहि संकट नाना ॥ ४ ॥ ❋

देखो राजा शिबि, महर्षि दधीचि, और राजा हरिचंदने धर्मके लिये कितने करोड़ों संकट सहे हैं ॥ ३ ॥ फिर राजा रन्तिदेव, दैत्यराज बलि और दूसरेभी कई सुज्ञ राजाओंने अनेक प्रकारके संकट सहकर धर्मको धारण किया है ॥ ४ ॥

धर्म न दूसर सत्यसमाना ॥ आगम निगम पुराण बखाना ॥ ५ ॥ ❋
मैं सोइ धर्म्म सुलभ करि पावा ॥ तजे तिहूं पुर अपयश छावा ॥ ६ ॥ ❋

हे तात ! सत्यके समान दूसरा एकभी धर्म नहीं है,सो यह बात वेद पुराण और शास्त्र सबमें सिद्धांत की गई है ॥ ५ ॥ वो परम धर्म मैंने बड़ी सुलभ रीतिसे पा लिया है. सो जो अब मैं इसे तज दूं तो त्रिलोकीमें मेरा अपयश छा जाय ॥ ६ ॥

संभावितकहँ अपयशलाहू ॥ मरणकोटिसम दारुण दाहू ॥ ७ ॥ ❋
तुमसन तात बहुत का कहऊं ॥ दिये उतर फिरि पातक लहऊं ॥ ८ ॥ ❋

हे तात ! प्रतिष्ठित पुरुषके लिये अपयशका होना करोड़ मरणकी अपेक्षाभी अधिक दारुण

दाहकारी होताहै ॥ ७ ॥ हे तात ! मै आपसे अधिक क्या कहूं ? जो मै आपको पीछा उत्तर देऊं, तो पापका भागी होता हूं ॥ ८ ॥

दोहा–पितुपद गहि कहि कोटि बिधि, बिनय करब कर जोरि ॥ ❋
चिन्ता कवनिहुँ बातकी, तात करिय जनि मोरि ॥ ९४ ॥ ❋

अब आप पिताके निकट जाय, उनके चरण धर, करोड़ों प्रकारसे मेरी ओरसे विनय कर, हाथ जोड़ ऐसे कहना कि, हे तात ! मेरी तर्फकी आप किसी बातकी चिंता मत करो ॥ ९४ ॥

तुम पुनि पितुसमान हित मोरे ॥ बिनती करौं तात कर जोरे ॥ १ ॥ ❋
सब बिधि सोइ करतव्य तुम्हारे ॥ दुख न पाव नृप शोच हमारे ॥ २ ॥ ❋

हे तात ! सुमंत्र ! आप फिर मेरे पिताके समान हित करनेवाले हो, इसलिये मैं हाथ जोड़कर आपसे प्रार्थना करता हूं कि– ॥ १ ॥ अब आपके सब प्रकारसे कर्तव्य यही है कि, राजा दशरथ हमारे बिरहके शोचसे दुख न पावें ॥ २ ॥

सुनि रघुनाथसचिवसंबादू ॥ भयउ सपरिजन बिकल निषादू ॥ ३ ॥ ❋
पुनि कछु लषण कहेउ कटु बानी ॥ प्रभु बरजेउ बड़ अनुचित जानी ॥४॥

रामचन्द्रजी और सुमंत्रका संवाद सुन, कुटुंबके साथ गुह बिहबल होगया ॥ ३ ॥ तब लक्ष्मण फिर कुछ कटु बचन कहने लगे, तो प्रभुने अनुचित समझके उसे बरज दिया ॥ ४ ॥

सकुचि राम निजशपथ दिवाई ॥ लषणसँदेश कहब जनि जाई ॥ ५ ॥ ❋
कह सुमन्त पुनि भूपसँदेशू ॥ सहि न सकहि सिय बिपिन कलेशू ॥ ६ ॥ ❋

रामचन्द्र आनन्दकन्दने सकुचके अपनी सौगंद दिला दी. और कहा कि–आप राजाके आगे लक्ष्मणका शंदेशा भूलकेभी मत कहना ॥ ५ ॥ तब सुमन्त्रने प्रभुसे फिर दशरथजीका संदेशा कहा कि–हे प्रभु ! सीता अतिसुकुमार है, सो यह वनके विकट क्लेश न सह सकेगी ॥ ६ ॥

जेहि बिधि अवध आव फिरि सीया ॥ सोइ रघुनाथ तुमहिँ करणीया ॥ ७ ॥
नतरु निपट अवलंबबिहीना ॥ मैं न जियब जिमि जल बिनु मीना ॥ ८ ॥

इसलिये हे राम ! आप ऐसा उपाय करो कि–जिसतरह सीता पीछी अवधको लौट आये. आपकी यह अवश्य करना चाहिये ॥ ७ ॥ और जो सीता पीछी न फिरेगी, तो मैं बिलकुल आश्रयरहित होकर कभी जीता न रहूंगा. जैसे मछली जलविन तड़फके मर जाती है, ऐसे मर जाऊंगा ॥ ८ ॥

दोहा–मैके ससुरे सकल सुख, जबहिँ जहां मन मान ॥ ❋
तब तहँ रहब सुखेन सिय, जबलगि बिपतिबिहान ॥ ९५ ॥ ❋

हे राम ! सीताके मैयाके घर अर्थात् नैहरमें और ससुरालमें सब प्रकारके सुख है, सो जबलों विपतको विहान होगा अर्थात् संकटका नाश होगा तबलों जब जहां इसका मन लगेगा तब वहां आनंदसे रहा करेगी ॥ ९५ ॥

बिनती कीन्ह भूप जेहि भांती ॥ आरति प्रीति न सो कहि जाती ॥ १ ॥ ❋
पितुसँदेश सुनि कृपानिधाना ॥ सियहिँ दीन्ह शिष कोटिबिधाना ॥ २ ॥ ❋

राजा दशरथजीने जिस प्रकार विनती करी थी, वो आर्ति और प्रीति किसी प्रकार कहनेमें नहीं आसकती ॥ १ ॥ हे पार्वती ! पिताका संदेशा सुन,कृपासिंधु प्रभुने सीताको करोड़ों तरहकी शिक्षा दी ॥ २ ॥

सासु ससुर गुरु प्रिय परिवारू ॥ फिरहु तो सबकर मिटै खँभारू ॥ ३ ॥ ❋
सुनि पतिबचन कहति बैदेही ॥ सुनहु प्राणपति परम सनेही ॥ ४ ॥ ❋

और कहा कि–हे भामिनी ! जो तुम पीछी जाओगी तौ सास, श्वशुर, गुरुजन और प्रिय परिवार इन सबका संकट कट जायगा. सो तुम सुमन्त्रके साथ पीछी लौट जाओ ॥ ३ ॥ प्रभुके वचन सुन, सीताने कहा कि–हे परम प्रिय ! प्राणपति ! सुनो ॥ ४ ॥

प्रभु करुणामय परम बिबेकी ॥ तनु तजि छांह रहत किमि छेकी ॥ ५ ॥ ❋
प्रभा जाइ कहँ भानु बिहाई ॥ कहँ चन्द्रिका चन्द्र तजि जाई ॥ ६ ॥ ❋

हे प्रभु ! आप परम दयालु और बड़े विवेकी हो, सो आप ऐसे कैसे फरमाते हो ? भला, शरीरको तजकर छाया किसतरह रह सकती है ? ॥ ५ ॥ भला, सूर्यको छोड़कर प्रभा (दीप्ति) कहां जाय ? कहो चंद्रमाको त्यागकर चांदनी कहां जाय ? ॥ ६ ॥

पतिहिँ प्रेममय बिनय सुनाई ॥ कहत सचिवसन गिरा सुहाई ॥ ७ ॥ ❋
तुम पितु ससुर सरिस हितकारी ॥ उतर देउँ फिरि अनुचित भारी ॥ ८ ॥

हे पार्वती ! पति श्रीरामचन्द्रजीको ऐसे प्रेमरस पागे विनय वचन सुनाके फिर सुमन्त्रसे सुहावने वचन कहने लगी ॥ ७ ॥ कि–हे तात ! तुम हमारे पिता और ससुरके समान हित करनेवाले हो, इसलिये मेरा जो उत्तर देना है वो बड़ाही अनुचित है ॥ ८ ॥

दोहा–आरतबश सन्मुख भइउँ, बिलग न मानब तात ॥ ❋
आरयसुतपदकमल बिनु, बादि जहां लग नात ॥ ९६ ॥ ❋

परंतु हे तात ! मैं आर्तिके वश हो आपके सन्मुख ठाढ़ी हुई हूं, सो आप औरतरह मत मानियो. हे तात! सुनो. आर्यपुत्र श्रीरामचंद्रजीके चरणकमल विना मेरे दूसरे जितने नाते कहे सम्बन्ध हैं वे सब वृथा हैं ॥ ९६ ॥

पितुहिँ बिभव बिलास मैं दीठा ॥ नृपमणिमुकुट मिलत पद पीठा ॥ १ ॥ ❋
सुखनिधान अस पितु गृह मोरे ॥ पतिबिहीन मन भाव न भोरे ॥ २ ॥ ❋

यद्यपि मैंने मेरे पिताके घरकाभी वैभवका विलास खूब अच्छीतरह देखा है कि, जहां बड़े २ राजाओंके मणिजटित मुकुट चरणपीठमें लुठते हैं ॥ १ ॥ हे तात ! मेरे पिताका घर ऐसा सुखका भंडार है; परंतु प्रभुके विना मेरे मनको वो भोरेभी नहीं सुहाता ॥ २ ॥

ससुर चक्रवै कोशलराऊ ॥ भुवन चारिदश प्रकट प्रभाऊ ॥ ३ ॥ ❋
आगे होइ जेहिँ सुरपति लेई ॥ अर्ध सिहाँसन आसन देई ॥ ४ ॥ ❋

और मेरे श्वसुर राजा दशरथजी चक्रवर्ती हैं कि, जिनका प्रभाव चौदहों लोकोंमें प्रसिद्ध है ॥ ३ ॥ और इंद्रभी जिनको उठकर आगेसे लेता है, तथा अपने सिंहासनका आधा आसन देता है ॥ ४ ॥

ससुर एतादृश अवध निबासू ॥ प्रिय परिवार मातुसम सासू ॥ ५ ॥ ❋
बिनु रघुपतिपदपद्मपरागा ॥ मोहिँ कोउ सपनेहुँ सुखद न लागा ॥ ६ ॥ ❋

ऐसे तो ससुर है, अयोध्या रजधानी है, सब परिवार मुझसे बहुत राजी है और सब सास माताके समान प्यार करती है ॥ ५ ॥ तथापि प्रभुके चरणकमलकी रज विना मुझे एकभी स्वप्नमेंभी सुखदायी नहीं लगता ॥ ६ ॥

अगम पन्थ बन भूमि पहारा ॥ करि केहरि सर सरित अपारा ॥ ७ ॥ ❋
कोल्ह किरात कुरंग बिहंगा ॥ मोहिँ सब सुखद प्राणपतिसंगा ॥ ८ ॥ ❋

यद्यपि वनभूमिका मार्ग अतिगहन है; ठौर ठौर पहाड़ दृष्टि आते है. वहां कई सिंह,शार्दूल, हाथी, तालाव, नदियां ॥ ७ ॥ कोल्ह, किरात, हरिण और पक्षी विचरते है, तथापि प्राणपतिके संगमें मुझे वे सब सुखदायी हैं ॥ ८ ॥

दोहा–सासु ससुर सन मोरि हुति, बिनय करब परि पाँय ॥ ❋
मोर शोच जनि करिय कछु, मैं बन सुखी सुभाय ॥ ९७ ॥ ❋

सीता कहती है कि–हे सुमन्त्र ! सास और ससुरके पांवोंमे पड़कर मेरी ओरसे विनती करियो और कहियो कि, मेरी तर्फका रंचहूं शोच मत करियो; क्योंकि मै वनमें सुखी और राजी हूं ॥ ९७ ॥

प्राणनाथ प्रिय देवर साथा ॥ बीर धुरीण धरे धनु भाथा ॥ १ ॥ ❋
नहिँ मगु श्रम भ्रम दुख मन मोरे ॥ मोहिँ लगि शोच करिय जनि भोरे ॥ २

बीर पुरुषोंमे अग्रणी प्राणपति श्रीरामचन्द्रजी और प्यारे देवर लक्ष्मण ये दोनों धनुष बाण लिये मेरे साथ है ॥ १ ॥ इसलिये मेरे मनमें किसी बातका दुख, भ्रम के मार्गका श्रम कुछभी नहीं है. अतएव मेरे वास्ते आप भोले भी शोच मत करियो ॥ २ ॥

सुनि सुमन्त सिय शीतल बानी ॥ भये बिकल जनु फणि मणिहानी ॥ ३ ॥
नयन न सूझ सुनै लहिँ काना ॥ कहि न सकै कछु अति अकुलाना ॥ ४ ॥

सीताकी ऐसी शीतल वाणी सुनकर, सुमन्त्र ऐसा व्याकुल हुआ कि मानों,सर्पकी मणि जाती रही है ॥ ३ ॥ सुमंत्रकी यह दशा हुइ कि, नेत्रोंसे सूझना बंद हो गया. कानोंसे सुनायीदेना बंद हो गया और जबानसे कुछ कह न सका ॥ ४ ॥

राम प्रबोध कीन्ह बहु भाँती ॥ तदपि होइ नहिँ शीतल छाती ॥ ५ ॥ ❋
यत्न अनेक साथहित कीन्हा ॥ उचित उतर रघुनन्दन दीन्हा ॥ ६ ॥ ❋

यद्यपि प्रभुने उसे अनेक प्रकारसे समझाया तोभी उसका हृदय शांत नहीं हुआ ॥ ५ ॥ तब प्रभुने अनेक उपायोंके साथ उसका हित किया और उस समयके योग्य उत्तर दिया ॥ ६ ॥

मेटि जाय नहिँ रामरजाई ॥ कठिन कर्मगति कछु न बसाई ॥ ७ ॥ ❋
राम लषण सिय पद शिर नाई ॥ फिरेउ बणिक जिमि मूल गँवाई ॥ ८ ॥ ❋

हे पार्वती ! प्रभुकी आज्ञा लोपी नहीं जा सकती. इससे उसने अपने मनमें जाना कि, कर्मोंकी गति बड़ी कड़ी है. उसके आगे कुछ वश नहीं चलता ॥ ७ ॥ ऐसे शोच विचार, सीता राम

लक्ष्मणके चरणोंमें शिर झुकाय, जैसे बनिया पूँजी गँवाके पीछा फिरता है, ऐसे अछताय पछताय रुदन करता पीछा फिरा ॥ ८ ॥

दोहा-रथ हाँके हय राम तन, हेरि हेरि हिहनाहिँ ॥ ❋
देखि निषाद बिषादबश, शिर धुनि धुनि पछिताहिँ ॥ ९८ ॥ ❋

जब सुमंत्रने रथको हांका तब रथके घोड़े प्रभुके स्वरूपको निहार निहार कर हिहनाने लगे. तिन्हें देख, निषादराज गुह अत्यंत खेदके वश हो, शिर धुन धुन कर पछताने लगा ॥ ९८ ॥

जासु बियोग बिकल पशु ऐसे ॥ प्रजा मातु पितु जीवहिँ कैसे ॥ १ ॥ ❋
बरबस राम सुमंत पठाये ॥ सुरसरितीर आपु चलि आये ॥ २ ॥ ❋

महादेवजी कहते है कि--हे पार्वती ! जिसके वियोगसे पशुभी ऐसे विव्हल हो गये, तौ प्रजा और मातापिताका तो जीना कैसे संभवे ? ॥ १ ॥ प्रभुने सुमंत्रको बलात्कारसे पीछा लौटाया और आप चले चले गंगाजीके तटपर आये ॥ २ ॥

माँगी नाव न केवट आना ॥ कहै तुम्हार मरम मैं जाना ॥ ३ ॥ ❋
चरणकमलरजकहँ सब कहई ॥ मानुषकरणि मुरी कछु अहई ॥ ४ ॥ ❋

प्रभुने आतेही केवटसे नाव मांगी. पर वह न लाया और बोला कि--हे प्रभु ! मैं आपका सब भेद जानता हूं ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! आपके चरणकमलकी रजके विषयमें सब कोई ऐसे कहते हैं कि--प्रभुके चरणकमलोंकी रज मनुष्य बनानेके लिये एक अनोखी जड़ी है ॥ ४ ॥

छुअत शिला भइ नारि सुहाई ॥ पाहनते न काठ कठिनाई ॥ ५ ॥ ❋
तरणिउ मुनिघरणी होइ जाई ॥ बाट परे मोरि नाव उड़ाई ॥ ६ ॥ ❋

और यह बात सत्य है; क्योंकि आपके चरणकमलोंकी धूलिको छूतेही शिला सुन्दर स्त्री (अहल्या) बन गई है.सो हे प्रभु ! काठ कुछ पत्थरसे कड़ा थोड़ाही है ? जब पत्थरकी स्त्री बन गई तौ काठको स्त्री होते कितनी देरी लगेगी ? ॥५॥ हे नाथ ! जो यह मेरी नाव ऋषिपत्नी होजावे और रस्ते चलते मेरी नाव उड़जाय तौ पीछे क्या करूं ? ॥ ६ ॥

यह प्रतिपालै सब परिवारू ॥ नहिँ जानौं कछु और कबारू ॥ ७ ॥ ❋
जो प्रभु अवशि पार गा चहहू ॥ तौ पदपद्म पखारन कहहू ॥ ८ ॥ ❋

हे प्रभु ! मेरे तौ सारे कुटुम्बको यही पालती पोषती है. मैं तौ इसके सिवाय दूसरा एक भी धंधा नहीं जानता ॥ ७ ॥ इसलिये मुझ अनाथपर कृपा रखिये. और जो आप जरूरही पार जाना चाहते हैं, तौ मुझे चरणकमल धोनेके लिये आज्ञा दीजिये कि, चरणमें रज लगी न रहजाय कि, जिसके स्पर्शसे शिला स्त्री हुई, ऐसे मेरी नावभी कहीं स्त्री न बन जाय. फिर जो आप आज्ञा देंगे सो करूंगा ॥ ८ ॥

"तुम केवट भवसागरकेरे ॥ नदी नारके हम बहुतेरे ॥ ९ ॥ ❋
हमरी तुमरी कसि उतराई ॥ नापित नापितकी बनवाई" ॥ १० ॥ ❋

"हे प्रभु ! आप तौ संसारसागरके केवट हो और हम तौ बहुतसे नदी और नारोंके केवट हैं ॥ ९ ॥

हे प्रभु ! हमारी और आपकी कैसी उतराई यानी मजदूरी ? नाऊ नाऊकी हजामत बनाता है तो मजदूरी नही लेता. ऐसे मैं आपसे मजदूरी लेना नहीं चाहता" ॥ १० ॥

छंद--पदपद्म धोइ चढ़ाइ नाव न नाथ उतराई चहौं ॥ ❋
मोहिँ राम राउरि आनि दशरथशपथ सब सांची कहौं ॥ ❋
बरु तीर मारहिँ लषण पै जबलगि न पांव पखारिहौं ॥ ❋
तबलगि न तुलसीदास नाथ कृपालु पार उतारिहौं ॥ ४ ॥ ❋

हे नाथ ! मैं आपके चरणमकल धोयकर नावपै चढ़ाऊंगा. हे प्रभु ! मै आपसे मजदूरी नहीं चाहता. हे प्रभु ! मुझे आपकी शपथ है और राजा दशरथजीकी सौगंध है. मैं यह सब सच कहता हूं. तुलसीदासजी कहते हैं—केवटने कहा कि—चाहै लक्ष्मण हमपै भले बाण चलावैं पर जबलों मैं राउरे पांव न पखारूंगा, तबलों हे करुणानिधि प्रभु ! आपको पार नहीं उतारूंगा ॥ ४ ॥

सोरठा—सुनि केवटके बयन, प्रेम लपेटे अटपटे ॥ ❋
बिहँसे करुणाअयन, चितै जानकीलषणतन ॥ ४ ॥ ❋

केवटके प्रेमसे लपेटे और अटपटे बचन सुनकर, करुणासिंधु प्रभु हँसे और लक्ष्मण व सीताके शरीरकी ओर देखने लगे ॥ ४ ॥

कृपासिन्धु बोले मुसुकाई ॥ सोइ करहु जेहि नाव न जाई ॥ १ ॥ ❋
बेगि आनि जल पांव पखारू ॥ होत विलम्ब उतारहु पारू ॥ २ ॥ ❋

प्रभु मुसकुराकर बोले कि—तुम वोही उपाय करो कि, जिसतरह नाव चली न जाय ॥ १ ॥ शीघ्र जल लाय, पांव धो, हमें विलम्ब होता है सो शीघ्र पार उतार ॥ २ ॥

जासु नाम सुमिरत यकबारा ॥ उतरहिँ नर भवसिन्धु अपारा ॥ ३ ॥ ❋
सो कृपाल केवटहिँ निहोरा ॥ जे किय जग तिहुँ पगते थोरा ॥ ४ ॥ ❋

हे पार्वती ! जिस प्रभुका एकबार नाम स्मरण करतेही यह भवी जीव इस अपार भवसागरसे तुरंत पार उतर जाता है ॥ ३ ॥ वेही दयालु प्रभु केवटको निहोरते है कि, जिन्होंने बलिसे त्रिलोकीका राज लेते समय सब अंडकटाहको तीन पैंडसे कम कर दिया था ॥ ४ ॥

पदनख निरखि देवसरि हरषी ॥ सुनि प्रभुबचन मोहमति करषी ॥ ५ ॥ ❋
केवट रामरजायसु पावा ॥ पानि कठवताभरि लै आवा ॥ ६ ॥ ❋

गंगाजी अपनी उत्पत्तिभूमि प्रभुके चरणनखको निरख बहुत प्रसन्न हुई. परंतु प्रभुके मोहनी वचन सुन, मोहसे उसकी बुद्धि खींच गई ॥ ५ ॥ केवट प्रभुकी आज्ञा पाय, जलसे कठवता भर ले आया ॥ ६ ॥

अति आनन्द उमँगि अनुरागा ॥ चरणसरोज पखारन लागा ॥ ७ ॥ ❋
बर्षि सुमन सुर सकल सिहाहीं ॥ यहि सम पुण्यपुंज कोउ नाहीं ॥ ८ ॥ ❋

वह बड़े आनन्द उमंग और प्रीतिके साथ प्रभुके चरणकमल पखारने लगा, तब ॥ ७ ॥ सब देवता फूल बरसाय २ सिहाने लगे कि, इसके समान दूसरा कोईभी सुकृतकी राशि नहीं है ॥ ८ ॥

केवट रामचंद्रजीको गंगाजीसे पार उतर रहा है

दोहा-पद पखारि जलपान करि, आपु सहित परिवार ॥
पितर पार करि प्रभुहिँ पुनि, मुदित गयउ लै पार ॥ ९९ ॥

केवट अपने परिवारके साथ प्रभुके चरण पखार, जलपान कर, अपने पित्रीश्वरोंको पार उतार, प्रसन्न हो, फिर प्रभुको गंगाके पार ले गया ॥ ९९ ॥

उतरि ठाढ़ भये सुरसरिरेता ॥ सीय राम गुह लषण समेता ॥ १ ॥
केवट उतरि दण्डवत कीन्हा ॥ प्रभु सकुचे कछु यहिँ नहिँ दीन्हा॥२॥

प्रभु नावसे उतर गंगाकी रेणुपर सीता लक्ष्मण और गुहके साथ खड़े रहे ॥ १ ॥ तब केवटने उतरके प्रभुको दंडवत् किया. उसकाल प्रभु मनमें सकुचे कि, इसको इस समय कुछ न कुछ जरूर देना था, पर कुछ न दिया. खैर देखा जायगा ॥ २ ॥

पियहियकी सिय जाननहारी ॥ मणिमुँदरी मन मुदित उतारी ॥ ३ ॥ ❃
कहेउ कृपालु लेहु उतराई ॥ केवट चरण गहेउ अकुलाई ॥ ४ ॥ ❃

प्रभुके मनकी बात जाननेवाली सीताने प्रसन्नमन हो, अपने हाथकी रत्नजटित मुंदरी उतारी ॥ ३ ॥ और कहा कि-हे दयालु प्रभु ! यह उतराई देनेको लीजिये. उस समय केवट अकुलाके पावोंमें पड़ा ॥ ४ ॥

नाथ आजु हम काह न पावा ॥ मिटे दोष दुख दारिद दावा ॥ ५ ॥ ❃
अमित काल मैं कीन्ह मँजूरी ॥ आजु दीन्ह बिधि सब भरिपूरी ॥ ६ ॥ ❃

और बोला कि-हे नाथ ! आज हमको क्या नहीं मिला है ? आज हमारे सब दोष मिट गये हैं और दुख, दरिद्र व संताप शान्त हो गया है ॥ ५ ॥ हे नाथ ! मैंने कई वर्षोंतक मँजुरी की है, पर विधाताने आज मेरी वो सब मँजुरी भर दिनी है ॥ ६ ॥

अब कछु नाथ न चाहिय मोरे ॥ दीनदयालु अनुग्रह तोरे ॥ ७ ॥ ❃
फिरतिबार जो कछु मोहिँ देवा ॥ सो प्रसाद मैं शिर धरि लेवा ॥ ८ ॥ ❃

हे नाथ ! दीनबन्धु प्रभु ! अब आपकी कृपासे मुझको कुछ नहीं चाहिये ॥ ७ ॥ हे नाथ ! आप पीछे आओगे उस समय आप मुझे जो कुछ देओगे वो सब प्रसाद मैं शिर चढ़ाके ग्रहण करूंगा ॥ ८ ॥

दोहा–बहुत कीन्ह हठ लषण प्रभु, नहिँ कछु केवट लेइ ॥ ❀
बिदा कीन्ह करुणायतन, भक्ति बिमल बर देइ ॥ १०० ॥ ❀

लक्ष्मण और प्रभुने उसे देनेको बहुत हठ किया, परंतु उसने कुछ भी नहीं लिया, तब कृपानिधान प्रभुने उसे निर्मल भक्तिरूप वरदान दे वहांसे बिदा किया ॥ १०० ॥

तब मज्जन करि रघुकुलनाथा ॥ पूजि पारथी नायउ माथा ॥ १ ॥ ❀
सिय सुरसरिहिँ कहा कर जोरी ॥ मातु मनोरथ पुरवहु मोरी ॥ २ ॥ ❀

तब प्रभुने गंगामें स्नान कर, पार्थिवेश्वरकी पूजा कर, उन्हें शिर नवाया ॥ १ ॥ उसकाल सीताने हाथ जोड़कर, गंगाजीसे कहा कि–हे माता ! मेरा मनोरथ पूर्ण करना ॥ २ ॥

पति देवर सँग कुशल बहोरी ॥ आइ करौं जेहिँ पूजा तोरी ॥ ३ ॥ ❀
सुनि सियबिनय प्रेमरससानी ॥ भइ तब बिमल बारि बर बानी ॥ ४ ॥ ❀

जिसतरह मैं पति और देवरके साथ पीछो कुशल क्षेमसे घर आजाऊं और आपकी पूजा करूं वैसा उपाय करना ॥ ३ ॥ प्रीति विनती और प्रेमरससे पगी सीताकी वाणी सुन निर्मल जलमेंसे श्रेष्ठ शुभ वाणी हुई ॥ ४ ॥

सुनु रघुबीरप्रिया बैदेही ॥ तव प्रभाव जग विदित न केही ॥ ५ ॥ ❀
लोकप होहिँ बिलोकत तोरे ॥ तोहिँ सेवहिँ सब सिधि कर जोरे ॥ ६ ॥ ❀

कि–हे रामचन्द्रकी प्यारी सीताजी ! सुनो. आपके प्रभावको जगत्में कौन नहीं जानता ? अर्थात् सब जानते है ॥ ५ ॥ हे मैया ! आपकी कृपादृष्टि होतेही साधारण पुरुषभी लोकपाल हो जाते है. हे देवी ! सब सिद्धियोंके समूह आपकी सेवा करते है ॥ ६ ॥

तुम जो हमहिँ बड़ि बिनय सुनाई ॥ कृपा कीन्ह मोहिँ दीन्ह बड़ाई ॥ ७ ॥
तदपि देवि मैं देब अशीशा ॥ सुफल होन हित निज बागीशा ॥ ८ ॥ ❀

तुमने जो हमें बड़े बिनयके वचन सुनाये सो हमपै बड़ी कृपा करी और बड़ाई दी ॥ ७ ॥ यद्यपि हे देवि ! आप सर्वपूज्य हो, तथापि मैं अपनी वाणीको सुफल करनेके लिये आपको असीस देती हूं ॥ ८ ॥

दोहा–प्राणनाथ देवरसहित, कुशल कोशला आइ ॥ ❀
पूरिहि सब मनकामना, सुयश रहहि जग छाइ ॥ १०१ ॥ ❀

हे देवि ! तुम प्राणपति प्रभु और देवर लक्ष्मणके साथ कुशल क्षेमसे कोसलदेशमें आओगे. तुम्हारी सर्व मनोकामना पूर्ण होवेंगी. जगत्में तुम्हारा सुयश छाय रहेगा ॥ १०१ ॥

गंगबचन सुनि मंगलमूला ॥ मुदित सीय सुरसरि अनुकूला ॥ १ ॥ ❀
तब प्रभु गुहहिँ कहा घर जाहू ॥ सुनत सुख मुख भा उर दाहू ॥ २ ॥ ❀

मंगलके मूल गंगाके वचन सुन गंगाको अनुकूल समझ, सीता मनमें बहुत प्रसन्न हुई ॥ १ ॥ उस काल प्रभुने गुहसे कहा कि–हे सखा ! अब तुम घर जाओ. ऐसा वचन सुनतेही उसका मुख सूख गया और हृदयमें बड़ा संताप हुआ ॥ २ ॥

दीन बचन गुह कह कर जोरी ॥ बिनय सुनिय रघुकुलमणि मोरी ॥ ३ ॥ ❋
नाथसाथ रहि पंथ दिखाई ॥ करि दिन चारि चरणसेवकाई ॥ ४ ॥ ❋

गुहने हाथ जोड़, दीन वचन कहे कि–हे रघुकुलमणि ! मेरी विनती सुनिये ॥ ३ ॥ हे नाथ ! मैं आपके साथ रह, आपको वनका मार्ग दिखाय, चार दिन आपके चरणोंकी सेवा करूंगा ॥ ४ ॥

जेहि बन जाइ रहब रघुराई ॥ पर्णकुटी मैं करब सुहाई ॥ ५ ॥ ❋
तब मोकहँ जस देब रजाई ॥ सो करिहौं रघुबीरदुहाई ॥ ६ ॥ ❋

फिर आप जिस वनमें जा रहोगे, वहां मैं सुन्दर सुहावनी पर्णकुटी बनाऊंगा ॥ ५ ॥ हे नाथ ! उस समय आप मुझे जैसी आज्ञा करोगे मैं तब वैसेही करूंगा. मैं आपकी शपथ खाकर कहता हूं कि–इसमें कुछ फर्क न आवेगा ॥ ६ ॥

सहजसनेह राम लखि तासू ॥ संग लीन्ह गुह हृदय हुलासू ॥ ७ ॥ ❋
पुनि गुह ज्ञाति बोलि सब लीन्हे ॥ करि परितोष बिदा सब कीन्हे ॥ ८ ॥ ❋

प्रभुने उसका स्वाभाविक स्नेह देख, अपने संग ले लिया. तिससे उसके मनमें बड़ा हुलास हुआ ॥ ७ ॥ फिर गुहने अपने सब जातवालोंको बुलाय, प्रसन्न कर, सबको बिदा किया ॥ ८ ॥

दोहा–तब गणपति शिव सुमिरि प्रभु, नाइ सुरसरिहिँ माथ ॥ ❋
सखा अनुज सिय सहित बन, गमन कीन्ह रघुनाथ ॥ १०२ ॥ ❋

हे पार्वती ! प्रभु उस काल गणपति और महादेवजीका स्मरण कर, गंगाजीको प्रणाम कर, सखा (गुह)लक्ष्मण और सीताके साथ वनको चले ॥ १०२ ॥

तेहि दिन भयउ बिटपतर बासू ॥ लषण सखा सब कीन्ह सुपासू ॥ १ ॥ ❋
प्रात प्रातकृत करि रघुराई ॥ तीरथराज दीख प्रभु जाई ॥ २ ॥ ❋

उस दिन प्रभुका निवास एक पेड़के तले हुआ. जहां लक्ष्मण और गुहने सब तरह सुभीता कर दिया था ॥ १ ॥ दूसरे दिन भोर होतेही प्रभु प्रातकृत्यसे पहुंच रवाना हुए, सो प्रयागराजके दर्शन जा किये ॥ २ ॥

सचिव सत्य श्रद्धा प्रिय नारी ॥ माधवसरिस मीत हितकारी ॥ ३ ॥ ❋
चारि पदारथ भरा भँडारू ॥ पुण्य प्रदेश देश अतिचारू ॥ ४ ॥ ❋

प्रयागराज तीर्थराज है और राजाओंके पास मंत्री आदि सब परिकर होता है, सो यहां क्या है सो सब रूपकालंकार करके दिखाते हैं. तीर्थराजके पास जो सत्य है सोही मंत्री है. श्रद्धा है सोही प्यारी रानी है. माधव भगवान् हैं सोही परम हितकारी मित्र हैं ॥ ३ ॥ धर्म, अर्थ, काम, मोक्षके भंडार भरे हैं. जो पवित्र प्रदेश है सोही सुन्दर रमणीय देश है ॥ ४ ॥

क्षेत्र अगम गढ़ गाढ़ सुहावा ॥ सपनेहुँ जिन्ह प्रतिपक्ष न पावा ॥ ५ ॥ ❋
सेन सकल तीरथ बर बीरा ॥ कलुषअनीकदलन रणधीरा ॥ ६ ॥ ❋

जो अतिदुर्गम क्षेत्र है सोही बड़ा कठिन और दुर्गम सुहावना गढ़ है कि, जिसे स्वप्नमेंभी कोई शत्रु नहीं पा सका है ॥ ५ ॥ सब तीर्थ है सोही अच्छे २ वीर पुरुषोंकी सेना है. जो रणधीर क्षणभरमें पाप-रूप कटकको काट देती है ॥ ६ ॥

संगम सिंहासन सुठि सोहा ॥ छत्र अक्षयबट मुनिमन मोहा ॥ ७ ॥ ❋
चमर यमुनजलगंगतरंगा ॥ देखि होहिँ दुखदारिदभंगा ॥ ८ ॥ ❋

जो त्रिवेणीका संगम है सोही सुन्दर सुहावना सिंहासन है, जिसको देखकर मुनिलोगोंके मन मोहित हो जाते है. ऐसा जो अक्षय वट है सोही सुन्दर छत्र है ॥ ७ ॥ गंगा और यमुनाके जलकी तरंग है, सोही चारु चमर है. जिसे देखतेही दुख और दारिद्रका नाश हो जाता है ॥ ८ ॥

दोहा–सेवहिँ सुकृती साधु शुचि, पावहिँ सब मनकाम ॥ ❋
बन्दी बेद पुराणगण, कहहिँ बिमल गुणग्राम ॥ १०३ ॥ ❋

जो पवित्र पुण्यात्मा साधुलोग है, वे इसकी सेवा करते है और सब मनवांछित फल पाते है. वेद और पुराणसमुदाय है सोही बंदिगण हैं. जो इसके पवित्र गुणग्रामको गाते है ॥ १०३ ॥

को कहि सकै प्रयागप्रभाऊ ॥ कलुषपुंजकुंजर मृगराऊ ॥ १ ॥ ❋
अस तीरथपति देखि सुहावा ॥ सुखसागर रघुबर सुख पावा ॥ २ ॥ ❋

हे पार्वती ! प्रयागराजके प्रभावको कौन कह सकता है ? जो पाप- पुंजरूपी हाथियोंके लिये सिंहरूप है ॥ १ ॥ ऐसे सुहावने तीर्थराजको देखकर, सुखके सागर श्रीरामचन्द्रजीने बड़ा सुख पाया ॥ २ ॥

कहि सियअनुजहिँ सखहिँ सुनाई ॥ श्रीमुख तीरथराजबड़ाई ॥ ३ ॥ ❋
करि प्रणाम देखत बन बागा ॥ कहत महातम अति अनुरागा ॥ ४ ॥ ❋

प्रभुने प्रयागराजके दर्शन कर अपने श्रीमुखसे उसकी बड़ाई सीता, सखा और लक्ष्मणको कह सुनाई ॥ ३ ॥ प्रभु प्रणाम कर, वहांके वन और बागको देखते है और अतिशय प्रीतिके साथ उसकी प्रशंसा करते है ॥ ४ ॥

यहि बिधि आइ बिलोकेउ बेनी ॥ सुमिरत सकलसुमंगलदेनी ॥ ५ ॥ ❋
"नौमीदिन तीरथपति गयऊ ॥ तिरबेनीजल मज्जन भयऊ" ॥ ६ ॥ ❋

इसतरह प्रभुने आकर बेनी (प्रयागराज) का दर्शन किया कि, जो स्मरण करतेही सब सुमंगल देती है ॥ ५ ॥ "प्रभु नवमीके दिन प्रयागराज पहुंचे सो वहां जाय त्रिवेणीके जलमें प्रसन्नतापूर्वक नहाये" ॥ ६ ॥

मुदित अन्हाइ कीन्ह शिवसेवा ॥ पूजि यथाबिधि तीरथ देवा ॥ ७ ॥ ❋
तब प्रभु भरद्वाजपहँ आये ॥ करत दण्डवत मुनि उर लाये ॥ ८ ॥ ❋

प्रभुने प्रसन्न हो स्नान कर शिवजीकी सेवा करी. फिर विधिपूर्वक प्रयागराजकी पूजा करी ॥ ७ ॥ फिर प्रभुने भरद्वाज मुनिके पास आय, दंडवत् करी. तब मुनिने उठाके छातीसे लगाये ॥ ८ ॥

मुनिमनमोह न कछु कहि जाई ॥ ब्रह्मानन्दराशि जनु पाई ॥ ९ ॥ ❋

उस समय मुनिका मन ऐसा मोहित हो गया था कि, कुछ कहा नहीं जाता. मानों मुनिने ब्रह्मानन्दही पालिया है ॥ ९ ॥

दोहा–दीन्ह अशीश मुनीश उर, अति आनँद अस जानि ॥ ❋
लोचनगोचर सुकृतफल, मनहुँ किये बिधि आनि ॥ १०४ ॥ ❋

मुनि भरद्वाजने अतिआनंदित हो, मनमें ऐसे जानकर,असीस दी कि, मानों विधाताने सुकृतका फल मेरे नेत्रोंके सामने ला दिया है ॥ १०४ ॥

कुशल प्रश्न करि आसन दीन्हा ॥ पूजि प्रेमपरिपूरण कीन्हा ॥ १ ॥ ❋
कन्द मूल फल अंकुर नीके ॥ दिये आनि मुनि मनहुँ अमीके ॥ २ ॥ ❋

मुनिने कुशल क्षेम पूंछ, आसन दिया और प्रीतिपूर्वक पूजा करके अपना मनोरथ पूर्ण किया ॥ १ ॥ फिर सुन्दर कंद, मूल, फल व अंकुर ला दिये, जो मानों अमृतकेही कुञ्जे थे ॥ २ ॥

सीय लषण जनसहित सुहाये ॥ अति रुचि राम मूल फल खाये ॥ ३ ॥ ❋
भये बिगतश्रम राम सुखारे ॥ भरद्वाज मृदु बचन उचारे ॥ ४ ॥ ❋

प्रभुने वे सुस्वादु कंद, मूल, फल, सीता गुह और लक्ष्मणके साथ बड़ी प्रीतिके साथ खाये ॥ ३ ॥ जब प्रभुका श्रम मिटगया और आराम आगया, तब भरद्वाजने मधुरवाणीसे कहा कि– ॥ ४ ॥

आजु सफल तप तीरथ यागू ॥ आजु सफल जप योग बिरागू ॥ ५ ॥ ❋
सुफल सकल शुभ साधन साजू ॥ राम तुमहिँ अवलोकत आजू ॥ ६ ॥ ❋

हे प्रभु ! जप, तप, तीर्थ, याग, यज्ञ, योग और विराग ये सब आज मेरे सफल हुए है ॥ ५ ॥ हे नाथ ! आज आपके दर्शन करनेसे मेरे सब सुकृतके साधनके साज सफल हुए है ॥ ६ ॥

लाभ अवध सुख अवधि न दूजी ॥ तुम्हरे दरश आश सब पूजी ॥ ७ ॥ ❋
अब करि कृपा देहु बर एहू ॥ निजपद सरसिज सहजसनेहू ॥ ८ ॥ ❋

हे प्रभु ! संसारमें आपके दर्शनोंके सिवाय लाभ और सुखकी अवधि दूसरी कोई नहीं है, सो वो मेरी आशा आज सब पूर्ण हुई है ॥ ७ ॥ हे प्रभु ! अब कृपा करके मुझे यही वरदान दीजिये कि, सदा सर्वदा आपके चरणकमलोंमें मेरा स्वाभाविक स्नेह बना रहे ॥ ८ ॥

दोहा–कर्म बचन मन छांड़ि छल, जबलगि जन न तुम्हार ॥ ❋
तबलगि सुख सपनेहुँ नहीं, कीये कोटि उपचार ॥ १०५ ॥ ❋

हे प्रभु ! यह जन जबलों मन कर्म बचनसे छल छांड़िके आपका नहीं हो जाता, तबलों यह चाहे करोड़ों उपाय क्यों न करै, पर स्वप्नमें भी सुख नहीं पाता ॥ १०५ ॥

सुनि मुनिबचन राम सकुचाने ॥ भाव भक्ति आनन्द अघाने ॥ १ ॥ ❋
तब रघुबर मुनिसुयश सुहावा ॥ कोटि भांति कहि सबहिँ सुनावा ॥ २ ॥

मुनिके बचन सुन प्रभु सकुचाये और उनकी भाव भक्ति देख आप आनंदसे तृप्त हो गये ॥ १ ॥ तब प्रभुने मुनिका सुहावना सुयश करोड़ों प्रकारसे बखानकर सबको सुनाया ॥ २ ॥

सो बड़ सो सब गुणगणगेहू ॥ जेहि मुनीश तुम आदर देहू ॥ ३ ॥ ❋
मुनि रघुबीर परस्पर नवहीं ॥ बचन अगोचर सुख अनुभवहीं ॥ ४ ॥ ❋

प्रभुने कहा कि–हे मुनीश ! आप जिसको आदर सन्मान देते हो, वो सब प्रकारसे बड़ा और सर्व गुणगणका धाम हो जाता है ॥ ३ ॥ मुनि भरद्वाज और प्रभु दोनों आपसमें नमते हैं और वाणीके अगोचर सुखका अनुभव करते है ॥ ४ ॥

यह सुधि पाइ प्रयागनिवासी ॥ बटु तापस मुनि सिद्ध उदासी ॥ ५ ॥ ❋

भरद्वाज आश्रम सब आये ॥ देखन दशरथसुवन सुहाये ॥ ६ ॥ ❋

जब प्रयागके रहनेवालोंको यह खबर मिली कि—प्रभु आये हैं और भरद्वाजके आश्रममें टिके हैं तब ब्रह्मचारी, मुनि, सिद्ध और उदासी ॥ ५ ॥ ये सब दशरथनंदनकी सांवरी मूर्तिका दर्शन करनेको भरद्वाज मुनिके आश्रममें आये ॥ ६ ॥

राम प्रणाम कीन्ह सबकाहू ॥ मुदित भये लहि लोचनलाहू ॥ ७ ॥ ❋
देहिँ अशीस परम सुख पाई ॥ फिरे सराहत सुन्दरताई ॥ ८ ॥ ❋

प्रभुने सब किसीको प्रणाम किया,तहां ये लोग अपने नेत्रोंका लाभ पाकर परम प्रसन्न हुए ॥ ७ ॥ प्रभुके दर्शन कर, परमानंदको पाकर सब कोई असीस देते प्रभुकी सुंदरताको सराहते पीछे फिरे ॥ ८ ॥

दोहा–राम कीन्ह विश्राम निशि, प्रात प्रयाग नहाइ ॥ ❋
चले सहितसिय लषण जन, मुदित मुनिहिँ शिर नाइ ॥ १०६ ॥ ❋

प्रभुने रातको प्रयागमें विश्राम किया. जब प्रात हुआ तब प्रयागमें नहाय, सीता लक्ष्मण और गुहको साथ ले, मुनिको शिर नवाय, हर्षित हो वहांसे चले ॥ १०६ ॥

राम सप्रेम कह्यो मुनि पाहीं ॥ नाथ कहहु हम केहि मग जाहीं ॥ १ ॥ ❋
सुनि मुनि बिहँसि रामसन कहहीं ॥ सुगम सकलमग तुम कहँ अहहीं ॥ २

तब प्रभुने प्रीतिके साथ मुनिसे पूंछा कि—हे नाथ ! फरमावें, हम किस मार्ग होकर जांय ॥ १ ॥ यह बचन सुन, मुनिने हंसकर प्रभुसे कहा कि—हे राम ! आपके वास्ते सब मार्ग सुगम है ॥२॥

साथलागि मुनि शीष बुलाये ॥ सुनि मन मुदित पचासकधाये ॥ ३ ॥ ❋
सबहिँ रामपद प्रेम अपारा ॥ सबहिँ कहहिँ मग दीख हमारा ॥ ४ ॥ ❋

मुनिने प्रभुके साथ भेजनेके लिये शिष्योंको बुलाया, तब मुनिकी आज्ञा सुनतेही मनमें प्रसन्न हो पचासक शिष्य दौड़ आये ॥ ३ ॥ सब शिष्योंकी प्रभुके चरणोंमें अतिशय प्रीति है अतएव सभी कहते है कि, यह मार्ग हमारा देखा हुआ है ॥ ४ ॥

मुनि बटु चारि संग तब दीन्हे ॥ जिन्ह बहुजन्म सुकृत बड़कीन्हे ॥ ५ ॥ ❋
करि प्रणाम मुनि आयसु पाई ॥ प्रमुदित हृदय चले रघुराई ॥ ६ ॥ ❋

तब मुनिने चार बटु प्रभुके संग दिये कि, जिन्होंने पूर्व जन्ममें कई जन्मलों बड़े भारी पुण्य किये है ॥ ५ ॥ प्रभु मुनिको प्रणाम कर, उनसे आज्ञा ले मनमें आल्हादित हो वहांसे चले ॥ ६ ॥

ग्राम निकट जब निसरहिँ जाई ॥ देखहिँ दरश नारिनर धाई ॥ ७ ॥ ❋
होहिँ सनाथ जन्म फल पाई ॥ फिरहिँ दुखित मन संग पठाई ॥ ८ ॥ ❋

प्रभु जहां जिस गांवके समीप हो निकलते हैं, तहां गांवके नर नारी दौड़के दर्शनको आते हैं ॥ ७ ॥ और प्रभुके दर्शन कर अपने जन्मका फल पाय, सनाथ हो जाते हैं. और मनको प्रभुके संग भेजकर आप दुखी होकर, पीछे घरको फिरते है ॥ ८ ॥

दोहा–बिदा कीन्ह बहु बिनय करि, फिरे पाइ मनकाम ॥ ❋
उतरि नहाये यमुनजल, जो शरीरसमश्याम ॥ १०७ ॥ ❋

प्रभु बहुत बिनय करके सबको पीछा फिरनेको कहते हैं तब वे लोग मनवांछित फल पाके पीछे बड़ी कठिनतासे फिरते है. जब लोग पीछे लौट गये, तब प्रभु यमुनाजीके जलमें नहाये कि, जो अपने शरीरके समान श्याम वर्ण था ॥ १०७ ॥

सुनत तीरबासी नर नारी ॥ धाये निज निज काज बिसारी ॥ १ ॥ ❋
लषण राम सिय सुन्दरताई ॥ देखि करहिँ निज भाग्य बड़ाई ॥ २ ॥ ❋

नदीके तटपर रहनेवाले स्त्रीपुरुष प्रभु पधारे है ये समाचार सुन, अपने २ काम छोड़ दौड़ प्रभुके निकट आये हैं ॥ १ ॥ सब लोग राम लक्ष्मण और सीताकी सुन्दरताको देखकर, अपने भाग्यकी बड़ाई करते है ॥ २ ॥

अति लालसा सबहिँ मनमाहीं ॥ नाम ग्राम पूंछत सकुचाहीं ॥ ३ ॥ ❋
जे तिन्हमहँ वयवृद्ध सयाने ॥ तिन्ह करि युक्ति राम पहिंचाने ॥ ४ ॥ ❋

सब लोगोंके मनमें प्रभुके दरशकी बड़ी चाह लग रही है. पर प्रभुके प्रतापके आगे नाम और गांव पूँछते सकुचते है ॥ ३ ॥ उनमें जो वयोवृद्ध (बूढ़े) और समझदार थे, उन्होंने युक्ति करके प्रभुको पहिंचाना ॥ ४ ॥

सकल कथा कहि तिनहिँ सुनाई ॥ बनहिँ चले पितुआय सुपाई ॥ ५ ॥ ❋
सुनि सबिषाद सकल पछिताहीं ॥ रानी राय कीन्ह भल नाहीं ॥ ६ ॥ ❋

फिर उन्होंने पूंछा तब प्रभुने उन्हें सब कथा कहकर सुनाई कि– हम पिताकी आज्ञा पाय, वनको चले है ॥ ५ ॥ प्रभुके बचन सुन, सब लोग विषण्ण हो, अछताय पछताय कहने लगे कि– राजा और रानीने यह अच्छा नहीं किया ॥ ६ ॥

राम लषण सिय रूप निहारी ॥ शोच सनेह बिकल नर नारी ॥ ७ ॥ ❋
ते पितु मातु कहौ सखि कैसे ॥ जिन पठये बन बालक ऐसे ॥ ८ ॥ ❋

राम लक्ष्मण और सीताका स्वरूप देख, सब नरनारी शोच और स्नेहसे विकल हो कहते हैं कि–॥ ७ ॥ हे सखी ! कहो, वे माता पिता कैसे कि, जिन्होंने ऐसे सुकुमार बालकोंको वनमें भेज दिया ॥ ८ ॥

दोहा–तब रघुबीर अनेक बिधि, सखहिँ सिखावन दीन्ह ॥ ❋
रामरजायसु शीस धरि, गवन भवन तेहिँ कीन्ह ॥ १०८ ॥ ❋

प्रभुने सखा गुहको अनेक प्रकारसे शिक्षा दी तब गुह भी प्रभुकी आज्ञा शिरपर धर, घरको चला आया ॥ १०८ ॥

पुनि सिय राम लषण कर जोरी ॥ यमुनहिँ कीन्ह प्रणाम बहोरी ॥ १ ॥ ❋
गवने सीय सहित दोउ भाई ॥ रबितनयाकी करत बड़ाई ॥ २ ॥ ❋

फिर राम लक्ष्मण और सीताने हाथ जोड़, यमुनाजीको प्रणाम किया ॥ १ ॥ सीताको संग लिये, यमुनाकी बड़ाई करते दोनों भाई जाते हैं ॥ २ ॥

पथिक अनेक मिलहिँ मगु जाता ॥ कहहिँ सप्रेम देखि दोउ भ्राता ॥ ३ ॥

राम लषण सब अंग तुम्हारे ॥ देखि शोच हिय होत हमारे ॥ ४ ॥ ❋

तहां मार्ग जाते हुए जो अनेक मुसाफिर मिलते है, वे दोनों भाइयोंको देखकर प्रीतिके साथ कहते है कि- ॥ ३ ॥ हे राम ! हे लक्ष्मण ! हम तुम्हारे सब अंगोंको देखते है, तौ हमारे हृदयमें बड़ा शोच होता है ॥ ४ ॥

मारग चलहु पयादेहिँ पाये ॥ ज्योतिष झूंठ हमारेहि भाये ॥ ५ ॥ ❋

अगम पन्थ गिरि कानन भारी ॥ तेहिँ महँ साथ नारि सुकुमारी ॥ ६ ॥ ❋

हे प्रभु ! आप जो मार्गमे पयादे चलते हो तिन्हें देख, हमारी समझमें ज्योतिष बिलकुल झूंठा दीख पड़ता है ॥ ५ ॥ हे प्रभु ! यह मार्ग बड़ा कठिन है. बड़े २ पहाड़ और जंगल पड़े हैं. तिसमें फिर सुकुमारी स्त्री (सीता) आपके साथ है ॥ ६ ॥

करि केहरि बन जाहिँ न जोई ॥ हम सँग चलहिँ जो आयसु होई ॥७॥ ❋

जाव जहां लगि तहँ पहुँचाई ॥ फिरब बहोरि तुमहिँ शिर नाई ॥ ८ ॥ ❋

हे प्रभु ! वनके भीतर ऐसे हाथी और सिंह वगैरः भयंकर जानवर हैं कि, जिनके सोहीं देखा नहीं जाता. सो जो हमें आज्ञा हो जाय तौ हम आपके साथ चलें ॥ ७ ॥ हे प्रभु ! आप जहांलों पधारोगे तहांलों हम आपको पहुंचावन चलेंगे. और फिर आपको शिर नवाकर, पीछे लौट आवेंगे ॥ ८ ॥

दोहा-यहि बिधि बूझहिँ प्रेमबश, पुलक गात जलनैन ॥ ❋

कृपासिंधु फेरहिँ तिनहिं, करि बिनती मृदुबैन ॥ १०९ ॥ ❋

मार्गके भीतर सब लोग प्रेमवश हो ऐसे विनती करते है और स्नेहसे रोमांचित हो नेत्रोंमें जल भरते है. तब कृपासिंधु प्रभु उन्हें कोमल बचन कह, विनती कर पीछे फेरते है ॥ १०९ ॥

जे पुर ग्राम सबहिँ मग्गु माहीं ॥ तिनहिँ नाग सुर नगर सिहाहीं ॥ १ ॥ ❋

केहिँ सुकृती केहिँ घरी बसाये ॥ धन्य पुण्यमय परम सुहाये ॥ २ ॥ ❋

प्रभु मार्गमें जिन नगर और गांवोंमें रहते है उनको नाग लोगोंकी नगरी भोगवती और देवताओंकी नगरी अमरावती सिहाती है ॥ १ ॥ ये धन्य और पुण्यमय परम सुहावने नगर और गांव किस सुकृतीने किस घड़ीमें बनाये हैं कि, जिनमें प्रभु पधारे हैं ॥ २ ॥

जहँ जहँ रामचरण चलिजाहीं ॥ तेहिँ समान अमरावति नाहीं ॥ ३ ॥ ❋

पुण्यपुंज मग्गु निकट निवासी ॥ तिनहिँ सराहहिँ सुरपुरबासी ॥ ४ ॥ ❋

प्रभुके चरण जहां जहां चलके जाते है, उस स्थलकी बराबरी अमरावती पुरीभी नहीं कर सकती ॥ ३ ॥ जो पुण्यके पुंज प्रभुके मार्गके समीप रहते हैं, उनकी स्वयं देवता प्रशंसा करते हैं ॥ ४ ॥

जो भरि नयन बिलोकहिँ रामहिँ ॥ सीतालषणसहित घनश्यामहिँ ॥५॥ ❋

जेहिँ सरसरित राम अवगाहहिँ ॥ तिनहिँ देवसर सरितसराहहिँ ॥ ६ ॥ ❋

जो लोग नेत्र भरके सीता और लक्ष्मण सहित सघन घनसी सांवरी मूर्तिको निहारते हैं उनको देवता सराहते हैं ॥ ५ ॥ जिस नदी और तालावमें प्रभु नहाते हैं, उसकी देवताओंके सर और नदियां श्लाघा करती हैं ॥ ६ ॥

जेहि तरु तर प्रभु बैठहिँ जाई ॥ करहिँ कल्पतरु तासु बड़ाई ॥ ७ ॥ ❀
परसि रामपदपद्मपरागा ॥ मानति भूमि भूरि निज भागा ॥ ८ ॥ ❀

प्रभु जिस पेड़के तले जाकर विराजते हैं उसकी कल्पवृक्ष आप बड़ाई करते हैं ॥ ७ ॥ और पृथ्वी प्रभुके चरणकमलकी रजको परस कर अपने तईं बड़भागिन मानती है ॥ ८ ॥

दोहा—छांह कराहिँ घन बिबुधगण, बर्षहिँ सुमन सिहाहिँ ॥ ❀
देखत गिरि बन बिहंग मृग, राम चले मग जाहिँ ॥ ११० ॥ ❀

मेघ प्रभुके ऊपर छांह करते है. देवता फूल बरसाते हैं और सिहाते हैं. प्रभु वनके पशु पक्षी और पहाड़ोको देखते देखते मार्ग मार्ग जा रहे है ॥ ११० ॥

सीतालषण सहित रघुराई ॥ गांवनिकट जब निकरहिँ जाई ॥ १ ॥ ❀
सुनि सब बाल वृद्ध नरनारी ॥ चलहिँ तुरत गृहकाज बिसारी ॥ २ ॥ ❀

सीता और लक्ष्मणके साथ प्रभु जब गांवके समीप जा निकलते हैं ॥ १ ॥ तब गांवके सब स्त्री, पुरुष, बाल, वृद्ध प्रभुका पधारना सुन, तुरंत अपने घरका धंधा छोंड़ प्रभुके दर्शनको जाते है ॥ २ ॥

राम लषण सिय रूप निहारी ॥ पाइ नयन फल होहिँ सुखारी ॥ ३ ॥ ❀
सजलनयन अति पुलकशरीरा ॥ सब भे मगन देखि दोउ बीरा ॥ ४ ॥ ❀

तहां राम लक्ष्मण और सीताका स्वरूप देख, नेत्रोंका फल पाय, परमानन्द मगन होते है ॥ ३ ॥ नत्रोंमें जल भर आता है. शरीर पुलकित होजाता है. सब लोग दोनों भाइयोंको देख, आनंदमगन हो जाते हैं ॥ ४ ॥

बरणि न जाय दशा तिन्हकेरी ॥ लही रंक जनु सुरमणिढेरी ॥ ५ ॥ ❀
एकहिँ एक बोलि सिख देहीं ॥ लोचन लाहु लेहु क्षणएहीं ॥ ६ ॥ ❀

हे पार्वती ! उनकी दशा कुछ कहनेमें नहीं आसकती. मानों रंक (जन्म दरिद्री) ने चिंतामणि रत्नका ढेर पा लिया है ॥ ५ ॥ वहां एक एकको बुलाके शिक्षा देते हैं कि–हे भैया ! नेत्रोंका लाभ क्यों नहीं लेते ? ऐसा अवसर फिर नहीं मिलेगा ऐसा समय यही है ॥ ६ ॥

रामहिँ देखि एक अनुरागे ॥ चितवत चले जात सँगलागे ॥ ७ ॥ ❀
एक नयन मग छबि उर आनी ॥ होहिँ सिथिल तन मानसबानी ॥ ८ ॥ ❀

कई लोग प्रभुके दर्शन कर अनुरक्त हो, प्रभुको निहारते प्रभुके संग संग चले जाते है ॥ ७ ॥ कई लोग प्रभुकी छबिको नेत्र मार्ग द्वारा हृदयमें लाकर, मन वचन कर्मसे शिथिल हो जाते है ॥ ८ ॥

दोहा—एक देखि बट छांह भलि, डारि मृदुल तृण गात ॥ ❀
कहहिँ गँवाइय क्षणक श्रम, गवनब अबहिँ कि प्रात ॥ १११ ॥ ❀

तहां कोई एक वटकी अच्छी सुन्दर छांह देख, कोमल तृण और पल्लव बिछाके वटके तले बैठ गये हैं और कहते हैं कि–हे प्रभु ! क्षणभर तो यहां भी विराजकर श्रमको निवारिये. क्या आप अबहीं जाइयेगा ? या प्रातसमै प्रस्थान करेंगे ॥ १११ ॥

एक कलश भरि आनहिँ पानी ॥ अँचइय नाथ कहहिँ मृदुबानी ॥ १ ॥ ❀

सुनि प्रियबचन प्रीति अति देषी ॥ राम कृपालु सुशील बिशेषी ॥ २ ॥ ❋

कोई कलश भर पानी लाये है. और मधुर वाणीसे कहते हैं कि–हे नाथ ! अँचइयेगा ॥ १ ॥ उनके प्रिय वचन सुन, अतिशय प्रीतिको देख, परम दयालु और अति सुशील प्रभुने ॥ २ ॥

जानी सीय श्रमित मनमाहीं ॥ घरिक बिलम्ब कीन्ह बट छाहीं ॥ ३ ॥ ❋
मुदित नारि नर देखहिँ शोभा ॥ रूप अनूप देखि मन लोभा ॥ ४ ॥ ❋

सीताको अपने मनमें थकी समझ घरीक वटकी छांहमें विश्राम किया ॥ ३ ॥ तब सब स्त्रीपुरुष आनंदित हो प्रभुकी छबि देखते है. वे लोग जो प्रभुकी छबि निहारते है, तौ उनका मन लुभायमान होता है ॥ ४ ॥

यकटक सब सोहहिँ चहुँ ओरा ॥ रामचन्द्र मुखचन्द्र चकोरा ॥ ५ ॥ ❋
तरुणतमालबरण तन सोहा ॥ देखत कामकोटिमनमोहा ॥ ६ ॥ ❋

जैसे चकोर पक्षी चंद्रको यकटक देखते है, ऐसे सब लोग प्रभुके चारों तर्फ शोभा देते हैं और रामचन्द्रजीके मुखचंद्रको यकटक देखते हैं ॥ ५ ॥ नवीन तमालके वृक्षके समान श्याम बरन शरीर शोभायमान है, जिसे देखकर करोड़ो कामदेवोंके मन मोहित होते है ॥ ६ ॥

दामिनि बरण लषण सुठि नीके ॥ नख शिख सुभग भावते जीके ॥ ७ ॥ ❋
मुनिपट कठिन कसे तूणीरा ॥ सोहत कर कमलन धनु तीरा ॥ ८ ॥ ❋

प्रभुका शरीर तौ सघन घनके समान है और लक्ष्मणका शरीर सुन्दर गौरवर्ण है. जिसकी दमक दामिनीसी है. नखसे ले शिखातक बहुत सुन्दर सुहावना शरीर है, जिसको सब किसीका मन देखने चाहता है ॥ ७ ॥ मुनिवस्त्रसे कमरमें तरकस कसे है और हस्तकमलमें धनुषबाण धरे हैं ॥ ८ ॥

दोहा–जटामुकुट शीशन सुभग, उर भुज नयन विशाल ॥ ❋
शरदपर्व बिधुबदन बर, लसत स्वेदकण जाल ॥ ११२ ॥ ❋

शिरपर सुन्दर सुहावना जटामुकुट है. विशालवक्षःस्थल भुजा और नेत्र है शरदऋतुकी पुन्योंके चंद्रमाके सदृश सुन्दर मुखारविंद है. जिसपर पसीनेके जलबिंदु मोतीके समान शोभा देते है ॥ ११२ ॥

बरणि न जाइ मनोहरजोरी ॥ शोभा अमित मोरि मति थोरी ॥ १ ॥ ❋
राम लषण सिय सुंदरताई ॥ सब चितवहिँ मन बुधि चित लाई ॥ २ ॥ ❋

हे पार्वती ! वो मनोहर जोड़ी वर्णन करनेमें नहीं आती; क्योंकि शोभा तौ बहुत अधिक है और मेरी बुद्धि बहुत कम है ॥ १ ॥ उस समय वहांके सब लोग लुगाई मन बुद्धि और चित्त लगाके राम लक्ष्मण और सीताकी सुन्दरता देखते देखते रह गये ॥ २ ॥

थके नारि नर प्रेम पियासे ॥ मनहुँ मृगी मृग देखि दिवासे ॥ ३ ॥ ❋
सीय समीप ग्राम तिय जाहीं ॥ पूंछत अति सनेह सकुचाहीं ॥ ४ ॥ ❋

प्रेमके प्यासे सब स्त्री पुरुष कैसे थकित हो रहे हैं कि, मानों मृग और मृगी दिवास कहे

मृगतृष्णाके जलको देखकर, उसके पीछे दौड़ते २ थक गये है. ऐसे भ्रममें प्रेम रखनेवाले लोग पीछे दौड़२कर थक गये है ॥ ३ ॥ सीताके पास गांवकी स्त्रियां जाती हैं; परंतु पूँछनेके समय अतिशय स्नेहके कारण पीछी सकुचा जाती है ॥ ४ ॥

बार बार सब लागहिँ पाँये ॥ कहहिँ बचन मृदु सरल सुहाये ॥ ५ ॥ ❋
राजकुमारि बिनय हम करहीं ॥ तिय सुभाव कछु पूंछत डरहीं ॥ ६ ॥ ❋

सब स्त्रियां बारंबार सीताके पावोंमें लगती है और कोमल व सरल सुहावने बचन कहती हैं ॥ ५ ॥ स्त्रियां कहती है कि–हे राजकुमारी ! हम आपसे विनती करती है; परंतु स्त्रीस्वभावसे पुंछती हुई कुछ डरती है ॥ ६ ॥

स्वामिनि अबिनय क्षमब हमारी ॥ बिलग न मानब जानि गँवारी ॥ ७ ॥
राजकुँवर दोउ सहज सलोने ॥ इतने लहि द्युति मरकत सोने ॥ ८ ॥ ❋

सो हे स्वामिनी ! जो हमारा अपराध हो सो क्षमा करना. हमें गंवार जानकर, हमारे कहनेका बुरा मत मानना ॥ ७ ॥ हे स्वामिनी ! ये दोनों राजकुमार स्वभावसे बहुत सुन्दर हैं और मरकतमणि व सुवर्णने इन्हींसे कांति पाई है ॥ ८ ॥

दोहा--श्यामल गौर किशोरबर, सुंदर सुखमा ऐन ॥ ❋
शरद शर्बरीनाथमुख, शरद सरोरुहनैन ॥ ११३ ॥ ❋

इनका श्याम और गौर वर्ण है. सुन्दर किशोर अवस्था है. इनका स्वरूप बहुत सुन्दर है. ये सुखके धाम है. शरदऋतुके पूर्णचंद्रमाके सदृश इनका मुख है और शरद ऋतुके कमलकेसे सुन्दर नेत्र है ॥ ११३ ॥

कोटि मनोज लजावनिहारे ॥ सुमुखि कहहु को अहहिँ तुम्हारे ॥ १ ॥ ❋
सुनि सनेहमय मंजुल बानी ॥ सकुचि सीय मनमहँ मुसुकानी ॥ २ ॥ ❋

इनको देखकर करोड़ों कामदेव लजाते है. सो हे सुमुखी ! हम तुमसे पुंछती है कि–ये तुम्हारे कौन हैं ? ॥ १ ॥ गँवारनियोंकी ऐसी स्नेहभरी मधुर मनोहर वाणी सुनके सीता संकोचके कारण मनही-मनमें मुसकुरायी ॥ २ ॥

तिनहिँ बिलोकि बिलोकत धरणी॥ दुहुँ सकोच सकुचति बर बरणी ॥ ३ ॥
सकुचि सप्रेम बालमृगनयनी ॥ बोली मधुरबचन पिकबयनी ॥ ४ ॥ ❋

सीता उन स्त्रियोंकी तर्फ देख, फिर पृथ्वीकी ओर देखने लगी;क्योंकि वो बरबरणी उत्तरके देने और न देने दोनों तरहके संकोचमें सकुचा गई ॥३॥ फिर वो हरिणके बच्चेके समान नेत्रोंवाली पिकबयनी (सीता) मधुर वाणीसे संकोच और प्रेमके साथ बोली ॥ ४ ॥

सहज सुभाव सुभग तनगोरे ॥ नामलषण लघुदेवर मोरे ॥ ५ ॥ ❋
श्यामबरण बिशाल भुज नैना ॥ अतिसुंदर बोलनि मृदुबैना ॥ ६ ॥ ❋

कि–हे सखियो ! जो ये सहज स्वभावसे सुन्दर गौर शरीर हैं, इनका लक्ष्मण नाम है. ये

मेरे देवर है ॥ ५ ॥ "और जिनका श्यामवर्ण, विशाल भुजा व नेत्र, कोमल वचन और अति सुहावनी वाणी है" इतना कह ॥ ६ ॥

बहुरि बदनबिधु अंचलढांकी ॥ पियतन चितै दृष्टिकरि बांकी ॥ ७ ॥ ❋
खंजनमंजुनिरीक्षणनयनी ॥ निजपति कहेउ तिनहिँ सियसयनी ॥ ८ ॥ ❋
भईं मुदित सब ग्रामबधूटी ॥ रंकन्ह रतनराशि जनु लूटी ॥ ९ ॥ ❋

फिर उसने अपना मुखचंद्र अंचलकी ओटमें छिप लिया और टेढ़ी दृष्टि करिके प्रीतमके शरीरकी ओर देखने लगी ॥ ७ ॥ जिसके खंजन (खँड़रैचा) पक्षीके सदृश मंजु मनोहर नेत्र है, उस मृगनयनीने सैनहीमें उनको अपने पतिको जता दिया ॥ ८ ॥ सीताकी इस चतुराईको देख, गांवकी सब स्त्रियां बहुत प्रसन्न हुईं. मानों रंक (जन्मदरिद्री) जनोंने रत्नका ढेर लूट लिया है ॥ ९ ॥

दोहा--अति सप्रेम सिय पाँयपरि, बहु बिधि देहिँ अशीस ॥ ❋
सदा सुहागिनि रहहु तुम, जबलगि महि अहिशीस ॥ ११४ ॥ ❋

गांवकी स्त्रियाँ सीताकी चतुराईको देख, बहुत प्रसन्न हो, प्रीतिपूर्वक पांवोंमे पड़, अनेक प्रकारकी असीस देती है और कहती है कि-हे स्वामिनी ! तुम जबलों शेषजीके शिरपर पृथ्वी रहै, तबलों सदा सुहागिन रहो ॥ ११४ ॥

पारबतीसम पतिप्रिय होहू ॥ देवि न हमपर छाँड़ब छोहू ॥ १ ॥ ❋
पुनि पुनि बिनय करहिँ कर जोरी ॥ जो यहि मारग फिरिय बहोरी ॥ २ ॥

हे स्वामिनी ! तुम पार्वतीके समान पतिको प्रिय होओ. हे देवी ! हमपर जो आपकी कृपा है सो कभी त्याग मत करियो ॥ १ ॥ स्त्रियाँ हाथ जोड़ सीतासे बारंबार विनती करती हैं कि-हे देवी ! जो आप पीछी इस मार्ग आओ तो ॥ २ ॥

दशरन देव जानि निजदासी ॥ लखी सीय सब प्रेमपियासी ॥ ३ ॥ ❋
मधुरबचन कहि कहि परितोषी ॥ जनु कुमुदिनीकौमुदी पोषी ॥ ४ ॥ ❋

हमें अपनी दासी जानकर अवश्य दर्शन देना. ऐसे वचन सुन, सबको प्रेमकी प्यासी जान, ॥ ३ ॥ सीताने मधुरवचन कहकर ऐसे प्रसन्न करीं कि मानों चांदनीने रात्रिविकाशी कमलकोही पोषण कर, विकसित कर दिया है ॥ ४ ॥

तबहिँ लषण रघुबर रुख जानी ॥ पूंछेउ मग्ग लोगन मृदुबानी ॥ ५ ॥ ❋
सुनत नारि नर भये दुखारी ॥ पुलकित अंग बिलोचन बारी ॥ ६ ॥ ❋

उस समय लक्ष्मणजीने प्रभुकी रुख जान, लोगोंको कोमलवाणीसे मार्ग पूंछा ॥ ५ ॥ लक्ष्मणके वचन सुनतेही प्रभुके जानेका विचार जान, गांवके सब लोग लुगाई दुःखी हो गये. शरीर पुलकित हो गया और नेत्रोंमें जल भर आया ॥ ६ ॥

मिटा मोद मन भये मलीने ॥ बिधि निधि दीन्ह लीन्ह जनु छीने ॥ ७ ॥
समुझि कर्मगति धीरज कीन्हा ॥ शोधि सुगम मग्ग तिन्ह कहि दीन्हा ॥ ८ ॥

सबका मनका मोद मिट गया. मन मलीन हो गये. लोगोंकी यह दशा हुई कि, मानों विधाताने निधि देकर पीछी छीन ली ॥ ७ ॥ फिर कर्मगति समझकर मनमें धीरजधर और अच्छा सुगम मार्ग शोधकर, प्रभुको बताया ॥ ८ ॥

दोहा–लषण जानकीसहित बन, गमन कीन्ह रघुनाथ ॥ ❀
फेरे सब प्रियबचन कहि, लिये लाइ मनसाथ ॥ ११५ ॥ ❀

लक्ष्मण और सीताके साथ प्रभुने वनको प्रस्थान किया, तब लोगोंके मन तो प्रभुने अपने साथ ले लिये और लोगोंको प्रियबचन कहकर पीछा फेर दिया ॥ ११५ ॥

फिरत नारि नर अति पछिताहीं ॥ दैवहिँ दोष देहिँ मनमाहीं ॥ १ ॥ ❀
सहितबिषाद परस्पर कहहीं ॥ बिधिकरतब सब उलटै अहहीं ॥ २ ॥ ❀

पीछे लौटतेहुए नर नारी बहुत पछताते है और मनही मनमें दैवको दोष लगाते है ॥ १ ॥ सब लोग विषादके साथ आपसमें कहते हैं कि–अहह ! विधाताके कर्तव्य सब उलटे है ॥ २ ॥

निपटनिरंकुश निठुर निशंकू ॥ जेहिँ शशि कीन्ह सरुज सकलंकू ॥ ३ ॥
रूख कल्पतरु सागरखारा ॥ तेहिँ पठये बन राजकुमारा ॥ ४ ॥ ❀

हाय ! विधाता बड़ा निठुर और निपट ही निरंकुश व निशंक है कि, जिससे चंद्रमाको रोगी और कलंक सहित किया है ॥ ३ ॥ हायरे ! हाय ! बिधाता बड़ा अज्ञ है; क्योंकि उसने कल्पवृक्षको तो पेंड़ और समुद्रको खारा किया है तो यह कामभी उसीका है. जरूर इन राजकुमारोंको उसीने वनमें पठाया है ॥ ४ ॥

जोपै इनहिँ दीन्ह बनबासू ॥ कीन्ह बादि बिधि भोग बिलासू ॥ ५ ॥ ❀
ए बिचरहिँ मग बिनु पदत्राना ॥ रचे बादि बिधि बाहन नाना ॥ ६ ॥ ❀

जब बिधाताने इनको वनवास दिया तो फिर उसने भोग विलास क्यों बनाये ? ॥ ५ ॥ जब ये रस्तेमें विना जूते नंगे पांव फिरते है, तो फिर नाना प्रकारकी सवारियां क्यों बनाईं ? ॥ ६ ॥

ए महि परहिँ डासि कुश पाता ॥ सुभग सेज कत कीन्ह बिधाता ॥ ७ ॥
तरुतर बास इनहिँ बिधि दीन्हा ॥ धवल धाम रचि कत श्रमकीन्हा ॥ ८ ॥

जब ये डाभकी पत्ती बिछाके जमीनपर पड़ते है तो फिर उसने सुन्दर शय्या क्यों रची ? ॥ ७ ॥ जब विधाताने इन्हें वृक्षके तले निवास दिया तो फिर उज्वल महल बनाके वृथा परिश्रम क्यों किया ? ॥ ८ ॥

दोहा–जो ये मुनिपट धर जटिल, सुन्दर सुठि सुकुमार ॥ ❀
बिबिधभाँति भूषण बसन, बादि किये करतार ॥ ११६ ॥ ❀

जब ये सुन्दर सुकुमार श्रेष्ठ राजकुमार शिरपर जटाधर, मुनिवेष धारण करते हैं, तो फिर विधाताने जो नानाप्रकारके वस्त्र और आभूषण आदि बनाये हैं वे सब वृथा हैं ॥ ११६ ॥

जो ये कंद मूल फल खाहीं ॥ बाधि सुधादि अशन जगमाहीं ॥ १ ॥ ❀
एक कहहिँ यह सहज सुहाये ॥ आपु प्रकट भे बिधि न बनाये ॥ २ ॥ ❀

जब ये कंद मूल फल खाकर निर्वाह करते है, तौ जगत्में अमृत आदि जो खानेके पदार्थ हैं वे सब वृथा है ॥ १ ॥ कई कहते है कि—ये स्वभावसे सुन्दर राजकुमार आप ही प्रगट हुए है इनको विधाताने नहीं रचा है ॥ २ ॥

जहँ लगि बेद कहेहु बिधि करणी ॥ श्रवण नयन मन गोचर बरणी ॥ ३ ॥
देखहु खोदि भुवन दशचारी ॥ कहँ अस पुरुष कहां असि नारी ॥ ४ ॥ ❋

क्योंकि विधाताकी करतूती वेदमें जहांलों कही है और जो देखने सुनने और सोचनेमें आता है ॥ ३ ॥ उस सबको चौदहो भुवनोंमे हेरकर देखलो. कहीं ऐसा पुरुष और ऐसी स्त्री देखनेमें आई है ? ॥ ४ ॥

इनहिँ देखि बिधि मन अनुरागा ॥ पटुतर योग बनावन लागा ॥ ५ ॥ ❋
कीन्ह बहुतश्रम एक न आये ॥ तेहि ईर्षा बन आनि दुराये ॥ ६ ॥ ❋

भैयो ! ये वनमें क्यों आये है इसका कारण तौ सुनो. इनको देखकर विधाता मनमें प्रसन्न हो इनके समान स्त्री पुरुष बनाने लगा ॥ ५ ॥ सो उसने परिश्रम तौ बहुत किया; परंतु एकभी इनके अनुहार बन न सका, तब उस ईर्षाके मारे विधाताने इन्हें वनमें ला छिपा दिया है ॥ ६ ॥

एक कहहिँ हम बहुत न जानहिँ ॥ आपुहिँ परमधन्य करि मानहिँ ॥ ७ ॥
ते पुनि पुण्यपुँज हम लेखे ॥ जे देखे देखहिँ जिन्ह देखे ॥ ८ ॥ ❋

कई बोले कि—हम ज्यादा तौ नहीं जानते, पर इनके दर्शन करनेसे हम हमारेतई अत्यंत धन्य-करके मानते है ॥ ७ ॥ और हम फिर उनको पुण्यकी राशि समझते हैं कि, जिन्होंने इनका दर्शन किया है, करते है और करेंगे ॥ ८ ॥

दोहा—यहिबिधि कहि कहि बचन प्रिय, लेहिँ नयन भरि नीर ॥ ❋
किमि चलिहैं मारग अगम, सुठि सुकुमार शरीर ॥ ११७ ॥ ❋

इसप्रकार प्रिय वचन कह कहकर, लोग नेत्रोंमे जल भरते है और कहते है कि—ये सुकुमारदेह सुन्दर राजकुमार दुर्गम मार्गमें कैसे चले है ? ॥ ११७ ॥

नारि सनेह बिकल सब होहीं ॥ चकई सांझ समय जिमि सोहीं ॥ १ ॥ ❋
मृदु पदकमल कठिनकर जानी ॥ गहबरि हृदय कहहिँ मृदुबानी ॥ २ ॥ ❋

गांवकी सब स्त्रियां स्नेहके कारण कैसी विकल हो रही है, कि, मानों संध्याके समय चकई दुखित हो सोभ रही है ॥ १ ॥ उनके चरणकमलोंको अतिशय कोमल और गहन वनको अतिशय कठिण जानकर, वे स्त्रियां अपने मनमें मधुर वाणीसे कहती है कि— ॥ २ ॥

परसत मृदुलचरण अरुणारे ॥ सकुचति महि जिमि हृदय हमारे ॥ ३ ॥ ❋
जो जगदीश इनहिँ बन दीन्हा ॥ कस न सुमनमय मारग कीन्हा ॥ ४ ॥ ❋

इन अरुणबरण कोमलचरणोंको छूते ही पृथ्वी कैसे द्रवती है कि, जैसे हमारे हृदय द्रवीभूत होते हैं ॥ ३ ॥ यदि परमेश्वरने इनको वनवास दिया तौ फिर मार्गको पुष्पमय क्यों नहीं बनाया ? ॥ ४ ॥

जो माँगे पाइय बिधि पाई ॥ राखिय सखि इन्ह आँखिन्हमाहीं ॥ ५ ॥ ❋
जे नर नारि न अँवसर आये ॥ ते सिय राम न देखन पाये ॥ ६ ॥ ❋

जो विधाताके पास मांगनेसे मिल सकता हो, तब तो हे सखी ! इन्हे हम हमारी आंखोंमें रख ले अर्थात् यहांसे दूसरी जगह जाने न दें. हमेशा दर्शन किया करें ॥ ५ ॥ हे पार्वती! जो स्त्री पुरुष उस अवसरमे वहां हाजिर नहीं थे, उनको सीतारामका दर्शन होने न पाया ॥ ६ ॥

सुनि स्वरूप पूंछहिँ अकुलाई ॥ अबलगि गये कहांलगि भाई ॥ ७ ॥ ❋
समरथ धाइ बिलोकहिँ जाई ॥ प्रमुदित फिरहिँ नयनफ लपाई ॥ ८ ॥ ❋

परंतु दर्शन करनेवालोंने प्रभुके स्वरूपका वर्णन किया तिसे सुन, अकुलाके वे लोग पूंछने लगे कि-हे भैया ! कहो, अबलों प्रभु कहांलों गये है ? ॥ ७ ॥ तिनमे जो समर्थ थे उन्होंने तो दौड़कर प्रभुके दर्शन जा किये. दर्शन होतेही नेत्रोंका फल मिल जानेसे मन प्रसन्न हो गया. तिससे हर्षित हो वे लोग पीछे घर आये ॥ ८ ॥

दोहा-अबला बालक वृद्ध जन, कर मींजहिँ पछिताहिँ ॥ ❋
होहिँ प्रेमबश लोग इमि, राम जहाँ जहँ जाहिँ ॥ ११८ ॥ ❋

वहां जो स्त्रियां, बालक व वृद्ध थे वे अछता पछताके हाथ मलते थे. हे पार्वती ! प्रभु जहां पधारते है, वहां वहां सब लोग इसप्रकार प्रेमबश होते हैं ॥ ११८ ॥

गाँवगाँव अस होहि अनन्दा ॥ देखि भानुकुलकैरवचन्दा ॥ १ ॥ ❋
जे कछु समाचार सुनि पावहिँ ॥ ते नृप रानिहिँ दोष लगावहिँ ॥ २ ॥ ❋

सूरजवंशरूप कैरव (रात्रिविकाशी कमल) को प्रफुल्लित करनेके लिये चंद्ररूप श्रीरामचन्द्र जहां जहां पधारते हैं, वहां वहां गांव गांवमें प्रभुके दर्शनसे इसप्रकार आनन्द होता है ॥ १ ॥ और उनमें जो कोई वनवासके समाचार सुन लेते है; वे राजा और रानीको दोष लगाते है ॥ २ ॥

कहहिँ एक अतिभल नरनाहू ॥ दीन्ह हमहिँ जिन्ह लोचनलाहू ॥ ३ ॥ ❋
कहहिँ परस्पर लोग लुगाई ॥ बातैं सरल सनेह सुहाई ॥ ४ ॥ ❋

कितनेएक यों कहते हैं कि-राजाने यह बहुत अच्छा काम किया; जिन्होंने हमें यह नेत्रोंका लाभ दिया ॥ ३ ॥ सब स्त्री पुरुष आपसमें स्नेहभरी सुहावनी सरल बातें करते है ॥ ४ ॥

ते पितु मातु धन्य जे जाये ॥ धन्य सो नगर जहांते आये ॥ ५ ॥ ❋
धन्य सो शैल देश बन गाऊँ ॥ जहँ जहँ जाहिँ धन्य सो ठाऊँ ॥ ६ ॥ ❋

कि-वे माता पिता धन्य है कि, जिनके ये पुत्र हैं और वो नगर धन्य है कि, जहांसे ये आये हैं ॥ ५ ॥ और वो पर्वत, देश, वन, गांव व स्थान धन्य है कि, जहां जहां ये जाते है ॥ ६ ॥

सुख पायो बिरंचि रचि तेही ॥ ये जिन्हके सब भांति सनेही ॥ ७ ॥ ❋
राम लषण सिय कथा सुहाई ॥ रही सकल मग कानन छाई ॥ ८ ॥ ❋

भैया ! जिनके ये सब भांति परम स्नेही हैं उन्हें रचकर विधाता अतिशय सुख पाया है ॥ ७ ॥ हे पार्वती ! इसप्रकार राम लक्ष्मण और सीताकी सुन्दर कथा सारे मार्ग और जंगलमें छा गई है ॥ ८ ॥

दोहा- यहिबिधि रघुकुलकमलरबि, मग लोगन सुख देत ॥ ❋
जाहिँ चले देखत बिपिन, सिय सौमित्रि समेत ॥ ११९ ॥ ❋

रघुकुलरूपी कमलोंका विकाश करनेके लिये सूर्यरूप श्रीरामचन्द्र मार्गमे इसप्रकार लोगोंको सुख देते सीता और लक्ष्मणके साथ वनको देखते चले जाते है ॥ ११९ ॥

आगे राम लषण पुनि पाछे ॥ तापसबेष बिराजत काछे ॥ १ ॥ ❋
उभयमध्य सिय शोभति कैसी ॥ ब्रह्म जीव बिच माया जैसी ॥ २ ॥ ❋

आगे तो तपस्वीका वेष बनाये रामचन्द्रजी शोभा दे रहे है और पीछे फिर लक्ष्मणजी चल रहे हैं ॥ १ ॥ और दोनोंके बीच सीता जा रही है, सो वह कैसी शोभा देती है कि, मानों ब्रह्म और जीवके बीचही माया विराज रही है ॥ २ ॥

बहुरि कहौं छबि जस मन बसई ॥ जनु मधु मदन मध्य रति लसई ॥ ३ ॥ ❋
उपमा बहुरि कहौं जिय जोही ॥ जनु बुध बिधु बिच रोहिणि सोही ॥ ४ ॥ ❋

कवि कहता है कि–फिरभी उस छबिके विषयमें जैसा मेरे मनमें है वैसा कहता हूं. जैसे बसन्त और कामदेवके मध्य रति शोभा देती है, ऐसे वो दोनों राजकुमारोंके बीच शोभा देती है ॥ ३ ॥ मनमें सोच कर, मैं फिर उपमा देता हूं कि, जैसे बुध और चन्द्रमाके बीच रोहिणी शोभा देती है, ऐसे वह सीता दोनोंके मध्य शोभा देने लगी ॥ ४ ॥

प्रभुपदरेख बीचबिच सीता ॥ धरहि चरण मग चलहि सभीता ॥ ५ ॥ ❋
सीय रामपद अंक बराये ॥ लषण चलहिँ मग दाहिन बाँये ॥ ६ ॥ ❋

सीता मार्गमे चलती है, तहां प्रभुके चरणकमलकी रेखके बीचोबीच अपना पांव रखती है और भयभीत होकर चलती है ॥ ५ ॥ लक्ष्मण, सीता और राम दोनोंके चरणचिन्हको बचाकर बाएं दहिने पांव रखते है और मार्गमे चलते है ॥ ६ ॥

राम लषण सिय प्रीति सुहाई ॥ बचन अगोचर किमि कहिजाई ॥ ७ ॥ ❋
खग मृग मगन देखि छबि होंही ॥ लिये चोर चित रामबटोही ॥ ८ ॥ ❋

हे भवानी ! राम, लक्ष्मण और सीताकी प्रीति वाणीके अगोचर है, अतएव वो किसी कदर कहनेमें नहीं आ सकती ॥ ७ ॥ पशु पक्षीभी प्रभुकी छबि निरख, मगन हो जाते है. ऐसे राम बटोहीने सबके चित्त चुरा लिये है ॥ ८ ॥

दोहा–जिन्ह जिन्ह देखे पथिक प्रिय, सीय सहित दोउभाइ ॥ ❋
भव मग अगम अनन्दते, बिनुश्रम रहे सिराइ ॥ १२० ॥ ❋

प्रिय पांथ राम लक्ष्मणको सीताके साथ जिन जिनने देखा है, उन्होंने विना परिश्रम आनंदके साथ इस गहन भवाटवीको सिरा दिया है ॥ १२० ॥

अजहुँ जासु उर सपनेहुँ काऊ ॥ बसहिँ राम सिय लषण बटाऊ ॥ १ ॥ ❋
रामधामपथ जाइहि सोई ॥ जो पथ पाव कबहु मुनि कोई ॥ २ ॥ ❋

आजभी जिस किसीके मनमें स्वप्नमेंभी राम लक्ष्मण और सीतारूप बटोही जा सते हैं ॥ १ ॥ वे तुरंत प्रभुके परम पद और उस मार्गको प्राप्त हो जाते हैं कि, जिस मार्गको विरले मुनि कभी किसी समय पाते हैं ॥ २ ॥

तब रघुबीर श्रमित सिय जानी ॥ देखि निकट बट शीतलपानी ॥ ३ ॥ ❋

तहँ बसि कन्द मूल फल खाई ॥ प्रात अन्हाइ चले रघुराई ॥ ४ ॥ ❋

चलते चलतेही सीताको थकी जान,पास ही बटकी छांह और शीतल जलको देख, प्रभुने डेरा कर दिया ॥ ३ ॥ वहां कुछ ठहर, कंद मूल, फल, खाय दूसरे दिन प्रात होतेही स्नानकर प्रभु वहांसे चलदिये ॥ ४ ॥

देखत बन सर शैल सुहाये ॥ बालमीकि आश्रम प्रभु आये ॥ ५ ॥ ❋
राम देखि मुनिबास सुहावन ॥ सुंदरगिरि कानन जलपावन ॥ ६ ॥ ❋

बनके भीतर सुन्दर सरोवर और पर्वतोंकी सैर करते२ मुनि वाल्मीकिके आश्रममें आये ॥ ५ ॥ प्रभुने उस सुहावने मुनिके आश्रमको देखा, तो कहीं सुन्दर पर्वत और बनकी बहार दृष्टि आती है. कहीं पवित्र निर्मल जल बहता है ॥ ६ ॥

सरन सरोज बिटप बन फूले ॥ गुंजत मंजु मधुप रसभूले ॥ ७ ॥ ❋
खग मृग बिपुल कुलाहल करहीं ॥ रहितबैर प्रमुदितमन चरहीं ॥ ८ ॥ ❋

कहीं तालावोंमें कमल डहडहा रहे हैं. कहीं वृक्षोंका वन फूल रहा है. कहीं मकरन्दसे मत्त भये हुए भौंरोंके झुंड मधुर गुंज रहे है ॥ ७ ॥ कहीं पक्षी और पशु भारी कोलाहल करते है और स्वाभाविक वैरभावको तजकर प्रसन्न मन हो विचरेते है ॥ ८ ॥

दोहा—शुचि सुंदर आश्रम निरखि, हर्षे राजिवनैन ॥ ❋
सुनि रघुबर आगमन मुनि, आगे आये लैन ॥ १२१ ॥ ❋

कमलनयन प्रभु परमपवित्र रमणीय आश्रमको देख मनमें बहुत प्रसन्न हुए हैं. इतनेमें प्रभुके पधारनेकी खबर सुन मुनि वाल्मीकि प्रभुकी अगोनी कर लेने आये है ॥ १२१ ॥

मुनिकहँ राम दण्डवत कीन्हा ॥ आशिरबाद बिप्रबर दीन्हा ॥ १ ॥ ❋
देखि रामछबि नयन जुड़ाने ॥ करि सनमान आश्रमहिँ आने ॥ २ ॥ ❋

प्रभुने मुनिको साष्टांग दण्डवत् करी, तब मुनिने प्रभुको आशीर्वाद दिया ॥ १ ॥ प्रभुकी छबि निरख मुनिके नेत्र शीतल होगये. तिससे मुनि प्रभुका आदर सत्कार कर, अपने आश्रममें ले आये ॥ २ ॥

तब मुनि आसन दिये सुहाये ॥ मुनिबर अतिथि प्राणप्रिय पाये ॥ ३ ॥ ❋
कन्द मूल फल मधुर मँगाये ॥ सिय सौमित्रि राम फल खाये ॥ ४ ॥ ❋

मुनि वाल्मीकिने प्राणोंसे प्यारे श्रीरामचन्द्रजी जैसे अतिथिको पाय, अपने आश्रममें लाय अच्छा सुन्दर आसन दिया ॥ ३ ॥ फिर मीठे स्वादिष्ट कंद,मूल, फल, मंगाय प्रभुको दिये सो प्रभुने लक्ष्मण और सीताके साथ परम प्रीतिके साथ खाये ॥ ४ ॥

बालमीकिमन आनँद भारी ॥ मंगलमूरति नयन निहारी ॥ ५ ॥ ❋
तब करकमल जोरि रघुराई ॥ बाले बचन श्रवणसुखदाई ॥ ६ ॥ ❋

मुनि वाल्मीकि मंगलमूर्ति श्रीरामचन्द्रजीको नेत्रोंसे निरखकर, ऐसे आनंद मगन हो गये हैं कि, फूले अंग नहीं समाते ॥ ५ ॥ तब प्रभुने हस्तकमल जोड़कर ऐसे वचन कहे कि जिसे सुनतेही कानोंको अलौकिक सुख प्राप्त हो जावे ॥ ६ ॥

तुम त्रिकालदरशी मुनिनाथा ॥ बिश्व बदरजिमि तुम्हरे हाथा ॥ ७ ॥ ❋
अस कहि सब प्रभुकथा बखानी ॥ जेहिँ जेहिँ भांति दीन्ह बन रानी ॥८॥

प्रभुने कहा कि–हे मुनिराज ! आप त्रिकालज्ञ हो, आप भूत भविष्य वर्तमानकी सब जानते हो. यह सब जगत आपकी दृष्टिमें हाथमेंके बेरकी भांति प्रत्यक्ष है ॥ ७ ॥ हे भवानी ! ऐसे कहकर प्रभुने पिछली सब कथा कही कि, जिसतरह रानी कैकेयीने वनवास दिया था ॥ ८ ॥

दोहा–तातबचन पुनि मातुमत, भाइ भरत अस राउ ॥ ❋
मोकहँ दरश तुम्हार प्रभु, सब मम पुण्यप्रभाउ ॥ १२२ ॥ ❋

प्रभुने कहा कि–महाराज ! मुझको तौ वनमें आनेसे लाभही है; क्योंकि मेरे वनमें आनेसे इतनी बातें बनीं कि, प्रथम तौ पिताका बचन निबहा. दूसरा फिर माताका मनोरथ पूर्ण हुआ. तीसरा भरत जैसे भाईको राज मिला. चौथा मुझको आपके दर्शन मिले. सो हे प्रभु ! मैं तौ इस बनवासको मेरे पुण्यके प्रतापसे हुआही समझता हूं ॥ १२२ ॥

देखि पाँय मुनिराय तुम्हारे ॥ भये सुकृत सब सुफल हमारे ॥ १ ॥ ❋
अब जहँ राउर आयसु होई ॥ मुनि उद्वेग न पावहिँ कोई ॥ २ ॥ ❋

हे मुनिराज ! आपके चरणकमलोंके दर्शन होनेसे आज मेरे सब सुकृत सफल हुए है ॥ १ ॥ हे मुनि ! अब हम आपकी जहां आज्ञा हो वहीं रहै; परंतु और जहां रहनेसे किसी मुनिको दुख न होवे ऐसी जगह बताओ ॥ २ ॥

मुनि तापस जिनते दुख लहहीं ॥ ते नरेश बिनुपावक दहहीं ॥ ३ ॥ ❋
मंगल मूल बिप्र परितोषू ॥ दहै कोटि कुल भूसुररोषू ॥ ४ ॥ ❋

क्योंकि कहा है कि–जिनसे मुनि और तपस्वी दुःख पाते है, वे राजालोग विना अग्नि भस्म हो जाते है ॥ ३ ॥ ब्राह्मणोंको राजी रखना यह मंगलका मूल कारण है. जिस पर ब्राह्मण कोप जाते है, उसके करोड़ ही कुलका नाश हो जाता है ॥ ४ ॥

अस जिय जानि कहिय सोइ ठाऊँ ॥ सिय सौमित्रि सहित तहँ जाऊँ ॥५॥
तहँ रचि रुचिर पर्णतृण शाला ॥ बास करौं कछु काल कृपाला ॥ ६ ॥ ❋

महाराज ! इस बातको मनमें विचारकर, हमें आप ऐसी जगह बताओ कि, जहां मैं सीता और लक्ष्मणके साथ जाकर आनंदपूर्वक रहूं ॥ ५ ॥ हे दयालु प्रभु ! मुझे कुछ काल वनमें रहना है सो मैं वहां जाय, सुन्दर पर्णशाला बनाय, घासफूलसे छायछू, वनमें निवास करूं ॥ ६ ॥

सहज सरल सुनि रघुबर बानी ॥ साधु साधु बोले मुनिज्ञानी ॥ ७ ॥ ❋
कस न कहहु अस रघुकुलकेतू ॥ तुम पालक संततश्रुतिसेतू ॥ ८ ॥ ❋

प्रभुकी सहज सरल बाणी सुनकर, ज्ञानी मुनि (वाल्मीकि) बोले कि–हे राम ! बहुत ठीक है. आपने बहुत अच्छा कहा है ॥ ७ ॥ हे रघुकुलकेतु ! आप ही जो ऐसा न कहोगे, तौ फिर कहेगा ही कौन ? हे प्रभु ! आप ऐसा कैसे न कहो ? क्योंकि आप अनादिसिद्ध वेदमार्गकी मर्यादाके पालक हो ॥ ८ ॥

छंद–श्रुतिसेतुपालक राम तुम जगदीशमाया जानकी ॥ ❋
जो सृजति जग पालति हरति रुख पाइ कृपानिधानकी ॥ ❋
जो सहसशीस अहीस महिधर लखन सचराचरधनी ॥ ❋
सुरकाज धरि नरराजतनु चले दलन खल निशिचरअनी ॥ ५ ॥ ❋

हे राम ! आप तौ वेदकी मर्यादाके पालनेवाले जगत्के पति हो, और सीता मायास्वरूप है कि, जो करुणानिधि श्रीरामचन्द्रजीकी रुख पाकर, इस सब जगत्को रचती पालती और लीन करती है. और जो ये लक्ष्मणजी है सो शेषका अवतार है. जो सब चराचर जीवजंतुके स्वामी है और अपने हजार शिरोंमेंसे एक शिरपर इस पृथ्वीको धारण करते हैं. हे प्रभु ! आप देवताओंके वास्ते दुष्ट राक्षसोंकी सेनाको संहार करनेके लिये राजाका शरीर धारण करके प्रगट हुए हो ॥ ५ ॥

सोरठा–राम स्वरूप तुम्हार, बचन अगोचर बुद्धिबर ॥ ❋
अबिगत अकथ अपार, नेति नेति नित निगम कह ॥ ५ ॥ ❋

हे राम ! आपका स्वरूप बड़े बड़े बुद्धिमानोंके वचनके भी अगोचर है. हे प्रभु ! आपका स्वरूप न तो जाननेमें आता है, न कहनेमें आता है और न उसका पारावार पा सकते है. हे स्वामी ! आपके विषे दूसरोंकी तौ कौन चली ? स्वयं वेदभी हमेशा नेतिनेति कहकर निरूपण करते हैं ॥ ५ ॥

जग पेखन तुम देखनहारे ॥ बिधि हरि शंभु नचावनहारे ॥ १ ॥ ❋
तेउ न जानहिँ मर्म तुम्हारा ॥ और तुमहिँ को जाननहारा ॥ २ ॥ ❋

हे प्रभु ! जगत् दृश्य है और आप देखनेवाले हो. हे नाथ ! आप ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इन सबको नचाते हो ॥ १ ॥ हे ईश ! जब वे भी आपका भेद नहीं जान सकते, तब दूसरा तौ आपको जाननेवाला कौन है ? ॥ २ ॥

सो जानै जेहिँ देहु जनाई ॥ जानत तुम्हैं तुमहिँ ह्वै जाई ॥ ३ ॥ ❋
तुम्हरी कृपा तुमहिँ रघुनंदन ॥ जानत भक्त भक्तउर चंदन ॥ ४ ॥ ❋

हे प्रभु ! आपका मर्म तौ वही जानता है कि, जिसपर कृपा करके आप जना देते हो. हे राम ! जो आपको जान लेता है, वह आपरूपही हो जाता है. अर्थात् ब्रह्मरूप हो जाता है ॥ ३ ॥ भक्तजनोंके हृदयको शीतल करनेके लिये चन्दनरूप हे रघुवीर ! ये भक्तलोग आपके स्वरूपको तबहीं जान सक्ते है. जब आप कृपा करते हो ॥ ४ ॥

चिदानंदमय देह तुम्हारी ॥ बिगत बिकार जान अधिकारी ॥ ५ ॥ ❋
नरतनु धरेहु सन्तसुरकाजा ॥ कहहु करहु जस प्राकृत राजा ॥ ६ ॥ ❋

हे प्रभु ! आपका स्वरूप चिदानन्दरूप है. आपके स्वरूपमें किसी तरहका विकार नहीं है. सो यह बात वे जानते हैं कि जो इसके अधिकारी हैं ॥ ५ ॥ हे नाथ ! यद्यपि आप सच्चिदानंदस्वरूप हो तौ भी आपने यह मनुष्यदेह साधु और देवताओंके लिये धारण करी है; इसलिये साधारण राजाओंकी नाईं सब कुछ कहते हो और करते हो ॥ ६ ॥

राम देखि सुनि चरित तुम्हारे ॥ जड़ मोहहिँ बुध होहिँ सुखारे ॥ ७ ॥ ❋

तुम जो कहहु करहु सब साचा ॥ जस काछिय तस चाहिय नाचा ॥ ८ ॥ ❋

हे राम ! आपके चरित्रोंको देख सुनकर मूर्खलोग तौ मोहित होते है और विद्वानलोग सुखी होते है ॥ ७ ॥ हे स्वामी ! आप जो कुछ कहते हो और करते हो, सो सब सच्चा है; क्योंकि जैसा स्वांग वैसा ही नाच नाचना चाहिये ॥ ८ ॥

दोहा–पूँछेहु मोहिँ कि रहौं कहँ, मैं कहते सकुचाउँ ॥ ❋
जहँ न होहु तहँ देहुँ कहि, तुमहिँ दिखावौं ठाउँ ॥ १२३ ॥ ❋

हे राम ! आपने जो मुझसे पूंछा कि, मैं कहां रहूं ? सो मैं तो पीछा उत्तर देते सकुचता हूं; क्योंकि आप जहां न होओ वह स्थल आपको बताना चाहिये सो मुझे तौ ऐसा स्थल दीखता नहीं; इसलिये आपही वो स्थल बता देओ कि, जहां आप नहीं हो ॥ १२३ ॥

सुनि मुनिबचन प्रेमरससाने ॥ सकुचि राम मनमहँ मुसुकाने ॥ १ ॥ ❋
बालमीकि हँसि कहहिँ बहोरी ॥ बाणी मधुर अमिय रसबोरी ॥ २ ॥ ❋

ऐसे प्रेमरस भरे मुनिके वचन सुन, प्रभु सकुच कर मनमें मुसुक्याये ॥ १ ॥ तब वाल्मीकि मुनिने फिर अमृत रसभरी मधुर वाणीसे हँसके कहा कि– ॥ २ ॥

सुनहु राम अब कहौं निकेता ॥ बसहु जहां सिय लषण समेता ॥ ३ ॥ ❋
जिनके श्रवण समुद्र समाना ॥ कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना ॥ ४ ॥ ❋

हे राम ! आप सीता और लक्ष्मणके साथ जिस ठौर विराजते हो वह स्थल अब मैं कहता हूं सो सुनो ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! जिनके कान तौ समुद्रके समान है और आपकी जो कथा हैं, सो ही सुहावनी अनेक नदियां है ॥ ४ ॥

भरहिँ निरन्तर होहिँ न पूरे ॥ तिनके हिये सदन तव रूरे ॥ ५ ॥ ❋
लोचन चातक जिन करि राखे ॥ रहहिँ दरश जलधर अभिलाखे ॥ ६ ॥ ❋

जैसे नदियोंका प्रवाह सदा अविच्छिन्न समुद्रमें जाता रहता है; परंतु वो उनसे भर नहीं जाता ऐसे जिनके कानोंमें भगवत्कथाकी धारा अविच्छिन्न पड़ती रहै पर भर न जाँय, उन पुरुषोंके हृदयमें आप अच्छीतरह विराजा करते हो ॥ ५ ॥ जैसे चातक (पपीहा) मेघकी अभिलाषा किये उसको देखता रहता है. ऐसे जो पुरुष अपने नेत्रोंको चातकरूप बनाय आपकी अभिलाषा किये आपका दर्शन करते रहते हैं ॥ ६ ॥

निदरहिँ सिंधु सरित सर बारी ॥ रूपबिन्दु लहि होहिँ सुखारी ॥ ७ ॥ ❋
तिनके हृदयसदन सुखदायक ॥ बसहु लषण सियसह रघुनायक ॥ ८ ॥ ❋

जैसे पपीहा समुद्र नदी और तालावोंके जलको तज मेघकी बूंदको पाय सुखी होता है ऐसे जो पुरुष अनेक बखेड़ोंको तजकर, आपके स्वरूपरूपी बिन्दुको पाय सदा सुखी रहते है ॥ ७ ॥ उनके हृदयके भीतर आपका सुखदाई स्थान है. अतएव हे प्रभु ! आप वहीं लक्ष्मण और सीताके साथ सदा विराजे रहते हो ॥ ८ ॥

दोहा– यश तुम्हार मानस बिमल, हंसिनि जीहा जासु ॥ ❋
मुक्ताहल गुणगण चुनहिँ, बसहु राम हिय तासु ॥ १२४ ॥ ❋

हे राम ! आपका जस है सोही निर्मल मानसरोवर है. भक्तजनोंकी जीभ है सोही हंसिनी है. आपके गुणगण है सोही मोती है. तात्पर्य यह कि-जैसे हंसिनी मानसरोवरमें मोती चुनती है, ऐसे जिसकी जीभ आपके चरित्र संबंधी गुणगणोंको ग्रहण करती है, उसके हृदयमें आप निवास करते हो ॥ १२४ ॥

प्रभुप्रसाद शुचि सुभग प्रकासा ॥ सादर जासु लहै नित नासा ॥ १ ॥ ❋
तुमहिँ निबेदित भोजन करहीं ॥ प्रभु प्रसाद पट भूषण धरहीं ॥ २ ॥ ❋

हे प्रभु ! जिसकी नाक सदा सर्वदा आपके प्रसादीपदार्थकी पवित्र सुन्दर सुबासको आदरके साथ लेती है ॥ १ ॥ जो आपका महाप्रसाद नित्य खाते हैं. जो आपके प्रसादीवस्त्र और आभूषण धारण करते हैं ॥ २ ॥

शीश नवहिँ सुर गुरु द्विज देखी ॥ प्रीतिसहित करि बिनय बिशेखी ॥ ३ ॥
कर नित करहिँ रामपदपूजा ॥ रामभरोस हृदय नहिँ दूजा ॥ ४ ॥ ❋

जो गुरु ब्राह्मण और देवताओंको देखकर शिर नवाते हैं और प्रीतिके साथ उनसे भली भांति विनय करते हैं ॥ ३ ॥ जो हाथोंसे हमेश आपके चरणकमलोंकी पूजा करते हैं. जिनके हृदयमें आपके चरणोंके सिवाय दूसरे किसीका भरोसा नहीं है ॥ ४ ॥

चरण राम तीरथ चलि जाहीं ॥ राम बसहु तिनके मनमाहीं ॥ ५ ॥ ❋
मंत्रराज नित जपहिँ तुम्हारा ॥ पूजहिँ तुमहिँ सहित परिवारा ॥ ६ ॥ ❋

हे प्रभु ! जिनके चरण तीर्थयात्राको चलकर जाते है. हे राम ! उनके हृदयके भीतर आप सदा निवास करते हो ॥ ५ ॥ जो प्रतिदिन मंत्रराज (राममंत्र) को जपते रहते है और परिवारके साथ आपकी सेवा करते है ॥ ६ ॥

तर्पण होम करहिँ बिधि नाना ॥ बिप्र जेंवाइ देहिँ बहुदाना ॥ ७ ॥ ❋
तुमते अधिक गुरुहिँ जिय मानी ॥ सकल भाव सेवहिँ सनमानी ॥ ८ ॥ ❋

जो नाना प्रकारसे तर्पण होम आदि सत्कर्म करते हैं, जो ब्राह्मण भोजन कराय बहुतसे दान देते हैं ॥ ७ ॥ जो अपने जीमें गुरुको आपकी अपेक्षा अधिक जानकर, सर्व भावसे सन्मान करके सेवा करते हैं ॥ ८ ॥

दोहा-सब कर मांगहिँ एक फल, रामचरण रति होउ ॥ ❋
तिनके मनमन्दिर बसहु, सिय रघुनन्दन दोउ ॥ १२५ ॥ ❋

और जो कुछ सत्कर्म करते है, उस सबका केवल एक यही फल मांगते हैं कि-हमारी प्रभुके चरणोमें प्रीति होवे. हे प्रभु ! उन लोगोंके हृदयमें सीता और आप दोनों विराजते हो ॥ १२५ ॥

काम क्रोध मद मान न मोहा ॥ लोभ न क्षोभ न राग न द्रोहा ॥ १ ॥ ❋
जिनके कपट दम्भ नहिँ माया ॥ तिनके हृदय बसहु रघुराया ॥ २ ॥ ❋

हे राम ! जिनके काम, क्रोध, मद, मान, लोभ, क्षोभ, राग, द्वेष ॥ १ ॥ मोह, माया, कपट, और दम्भ कुछभी नहीं है उनके हृदयमें आप निवास करते हो ॥ २ ॥

सबके प्रिय सबके हितकारी ॥ दुख सुखसरिस प्रशंसा गारी ॥ ३ ॥ ❋
कहहिँ सत्य प्रिय बचन बिचारी ॥ जागत सोवत शरण तुम्हारी ॥ ४ ॥ ❋

हे रघुवीर ! जो सब लोगोंके प्यारे और सबके हितकारी हैं और जिनके भाये सुख, दुख, स्तुति और निन्दा सब बराबर है ॥ ३ ॥ जो हमेशा विचार कर प्रिय और सत्य वचन कहते है. जो जागते और सोते सदा आपके शरण हैं ॥ ४ ॥

तुमहिँ छांड़ि गति दूसरि नाहीं ॥ राम बसहु तिनके मनमाहीं ॥ ५ ॥ ❋
जननी सम जानहिँ परनारी ॥ धन पराय बिषते बिष भारी ॥ ६ ॥ ❋

जिनके आपको तजकर, दूसरी कोई गति नहीं है. हे राम ! उनके हृदयमें आप सदा विराजे रहते हो ॥ ५ ॥ जो परस्त्रीको माताके समान जानते हैं और पराये धनको जहरसे भी महा कराल हालाहल समझते हैं ॥ ६ ॥

जे हर्षहिँ परसम्पति देखी ॥ दुखित होहिँ परबिपति बिशेखी ॥ ७ ॥ ❋
जिनहिँ राम तुम प्राणपियारे ॥ तिनके मन शुभ सदन तुम्हारे ॥ ८ ॥ ❋

जो पराई संपदा देखकर, प्रसन्न होते है और पराया संकट देखकर दुखी होते हैं ॥ ७ ॥ हे राम ! जिनको आप प्राणोंसे प्यारे हो उनके हृदयमें आपका अच्छा शुभ घर है ॥ ८ ॥

दोहा–स्वामि सखा पितु मातु गुरु, जिनके सब तुम तात ॥ ❋
तिनके मनमन्दिर बसहु, सीय सहित दोउ भ्रात ॥ १२६ ॥ ❋

हे राम ! जिनके माता, पिता, स्वामी, सखा, और गुरु, सब आपही हो. हे तात ! उनके हृदय रूप घरमें सीताके साथ आप दोनों भाई विराजे रहते हो ॥ १२६ ॥

अवगुण तजि सबके गुण गहहीं ॥ बिप्र धेनु हित संकट सहहीं ॥ १ ॥ ❋
नीति निपुण जिनकी जग लीका ॥ घर तुम्हार तिनके मन नीका ॥ २ ॥ ❋

जो अवगुणको छांड़कर सबके गुण लेते है. जो ब्राह्मण और गौके कारण संकट सहते हैं ॥ १ ॥ जिनकी नीति निपुण पुरुषोंके बीच जगतमें पहली लीक है अर्थात् नाम है, हे प्रभु ! उनका मन आपका अच्छा रमणीय घर है ॥ २ ॥

गुण तुम्हार समुझहिँ निज दोसू ॥ जेहिँ सब भांति तुम्हार भरोसू ॥ ३ ॥ ❋
रामभक्त प्रिय लागहिँ जेही ॥ तेहिँ उर सबहु सहितबैदेही ॥ ४ ॥ ❋

हे प्रभु ! जो आपके गुणोंको और अपने दोषोंको समझते हैं और जिन्हें आपका सब भांति पक्का भरोसा है ॥ ३ ॥ जिन्हें आपके भक्तजन प्रिय लगते है, उनके हृदयके भीतर आप सीताके साथ बिराजते हो ॥ ४ ॥

जाति पाँति धन धर्म बड़ाई ॥ प्रिय परिवार सदन समुदाई ॥ ५ ॥ ❋
सब तजि तुमहिँ रहै लव लाई ॥ ताके हृदय सबहु रघुराई ॥ ६ ॥ ❋

जो जाति, पांति, धन, धर्म, बड़ाई, प्रिय परिवार, घर और गिरोह (इष्ट) इन सबको छांड़कर ॥ ५ ॥ आपमें लव लगाये रहता है. हे रघुराज ! उसके हृदयके भीतर आप हमेशा विराजते हो ॥ ६ ॥

स्वर्ग नरक अपवर्ग समाना ॥ जहँ तहँ दीख धरे धनुबाना ॥ ७ ॥ ✻
कर्म बचन मन राउर चेरा ॥ राम करहु ताके उर डेरा ॥ ८ ॥ ✻

जो स्वर्ग, नरक और मोक्ष इन सबको समान जानता है. जो धनुष बाण धरे आपको जहां तहां यानी सर्वत्र देखता है ॥ ७ ॥ जो मन कर्म वचनसे आपका चेरा है. हे राम ! उसके हृदयके भीतर आप निवास करो ॥ ८ ॥

दोहा–जाहि न चाहिय कबहुँ कछु, तुम सन सहजसनेह ॥ ✻
बसहु निरंतर तासु उर, सो राउर निज गेह ॥ १२७ ॥ ✻

जिसको कभी कुछभी नहीं चाहिये अर्थात् जिसके किसी बातकी अभिलाषा नहीं है और जिसका आपके साथ सहज स्नेह है. हे प्रभु ! आप उसके हृदयके भीतर निवास करो; क्योंकि वो आपका निजघर है ॥ १२७ ॥

यहि बिधि मुनिवर ठाम दिखाए ॥ बचन सप्रेम राम मनभाए ॥ १ ॥ ✻
कह मुनि सुनहुँ भानुकुलनायक ॥ आश्रम कहौं समयसुखदायक ॥२॥ ✻

इसतरह मुनि वाल्मीकिने प्रभुके रहनेके स्थल बताये. सो मुनिके प्रेमभरे वचन प्रभुके मनको बहुत अच्छे लगे ॥ १ ॥ फिर मुनि वाल्मीकिने कहा कि–हे सूर्यवंशके स्वामी ! सबकाल सुखदेनहारा आश्रम जो मैं कहता हूं सो सुनो ॥ २ ॥

चित्रकूट गिरि करहु निवासू ॥ तहँ तुम्हार सब भांति सुपासू ॥ ३ ॥ ✻
शैल सुहावन कानन चारू ॥ करि केहरि मृग बिहँग बिहारू ॥ ४ ॥ ✻

हे राम ! आप चित्रकूट पर्वतपर निवास करो. वहां आपको सब प्रकार सुभीता रहेगा ॥ ३ ॥ क्योंकि वो पहाड़भी बहुत सुहावना है और वनकी शोभाभी बहुत रमणीय है. वहां कई सिंह, शार्दूल हाथी, हरिण और पक्षी कलोलें करते हैं ॥ ४ ॥

नदी पुनीत पुराण बखानी ॥ अत्रि प्रिया निज तप बल आनी ॥ ५ ॥ ✻
सुरसरि धार नाम मन्दाकिनि ॥ जो सब पातक पोतक डाकिनि ॥६॥ ✻

वहां एक नदी अति पवित्र है. जिसकी प्रशंसा पुराणोंमें ठौर ठौर गाई है. और अत्रिऋषिकी स्त्री अनसूया तपस्याके बल उसे इस वनमें लाई है ॥ ५ ॥ वो गंगाकी धारा है. उसका नाम मंदाकिनी है. जो पापरूप बालकोंका भक्षण करनेके लिये डाकिनही है ॥ ६ ॥

अत्रि आदि मुनिबर तहँ बसहीं ॥ करहिँ योग जप तप तनु कसहीं ॥ ७ ॥
चलहु सुफल श्रम सबकर करहू ॥ राम देहु गौरव गिरिबरहू ॥ ८ ॥

वहां अत्रि आदि मुनीश्वर रहते हैं और जप, तप, योग साधकर शरीरको कृश करते हैं ॥ ७ ॥ हे राम ! अब आप वहां पधारो और उन सबका परिश्रम सफल करो. हे नाथ ! उस पर्वतराजको चलकर बड़ाई देओ ॥ ८ ॥

दोहा–चित्रकूटमहिमा अमित, कही महामुनि गाय ॥ ✻
आइ अन्हाने सरित बर, सिय समेत दोउ भाय ॥ १२८ ॥ ✻

महामुनिने चित्रकूटकी अति अपार महिमा वर्णन कर कही तब दोनों भाई सीताके साथ चित्रकूट पर्वतपर आय नदीमें नहाये ॥ १२८ ॥

"हरिदिन कामद गिरि प्रभु आये ॥ समाचार सुर संतन पाये" ॥ १ ॥ ❋
रघुबर कह्यउ लषण भल घाटू ॥ करहु कतहु अब ठाहर ठाटू ॥ २ ॥ ❋

"प्रभु एकादशीके दिन चित्रकूटपर्वत आये और देवता व संतजनोंको प्रभुके आनेके समाचार मिले ॥ १ ॥" उसकाल प्रभुने लक्ष्मणसे कहा कि–हे भाई लक्ष्मण ! यह घाट बहुत अच्छा है. सो अब कहीं ठहरनेका ठाट रचो ॥ २ ॥

लषण दीख तब उतर करारा ॥ चहु दिशि फिरेउ धनुष जिमि नारा ॥ ३ ॥
नदी पनचशर शम दम दाना ॥ सकल कलुष कलिसाउज नाना ॥ ४ ॥ ❋

प्रभुके वचन सुन, लक्ष्मणने जाकर घाटका उत्तर करार देखा, उसके चारों ओर जो नारा फिरा है सो तौ धनुषके जैसा दीख पड़ता है ॥ ३ ॥ नदी है सो पनचसी धनुकी डोरी दिखती है. मुनिलोग जो शम दम दान करते हैं सोही बाण है. कलियुगके जो कलुष है सोही तरह तरहके जानवर है ॥ ४ ॥

चित्रकूट जनु अचल अहेरी ॥ चूक न घात मारु मुठभेरी ॥ ५ ॥ ❋
अस कहि लषण ठाव दिखरावा ॥ थल बिलोकि रघुपति सुख पावा ॥ ६ ॥

हे प्रभु ! चित्रकूट पर्वत है सो ही मानों अहेरी है. जो मुठभेरी कहे घात पाकर मारता है अतएव घात करनेमें चूकता नहीं है ॥ ५ ॥ ऐसे कहकर लक्ष्मणने एक बहुत रमणीय स्थल दिखाया. तिसे देख प्रभुने बहुत सुख पाया ॥ ६ ॥

रमेउ राममन देवन जाना ॥ चले सहित सुरपति परधाना ॥ ७ ॥ ❋
कोल्ह किरात वेष धरि आये ॥ रच्यो पर्ण तृण सदन सुहाये ॥ ८ ॥ ❋
बरणि न जाइँ मंजु दुइ शाला ॥ एक ललित लघु एक बिशाला ॥ ९ ॥ ❋

जब देवताओंने जाना कि–प्रभुका मन बनमें लग गया है, तब अपने प्रधान २ देवताओंको साथ ले इंद्र प्रभुके पास आया ॥ ७ ॥ देवताओंने कोल्ह और किरातोंका वेष बनाय प्रभुके पास आय घास और पत्तोंके बहुत सुन्दर झोंपड़े बनाये ॥ ८॥ कवि कहता है कि–जो पर्णशाला देवताओंने कोल्ह और किरातोंका वेष बनाय अपने हाथोंसे रचीं थीं. वे दोनों पर्णशाला ऐसी सुन्दर थीं कि, जिनका कोई वर्णन नहीं कर सकता; तिनमें एक तौ बड़ी थी और एक कुछ छोटी थी ॥ ९ ॥

दोहा–लषण जानकीसहित प्रभु, राजत पर्णनिकेत ॥ ❋
सोह मदन मुनिबेष जनु, रतिऋतुराजसमेत ॥ १२९ ॥ ❋

प्रभु लक्ष्मण और सीताके साथ पर्णशालामें विराजे कैसे शोभा देते हैं कि, मानों कामदेवही मुनिका बेष बनाय रति और वसंतके साथ शोभा दे रहा है ॥ १२९ ॥

अमर नाग किन्नर दिगपाला ॥ चित्रकूट आये तेहिं काला ॥ १ ॥ ❋
राम प्रणाम कीन्ह सबकाहू ॥ मुदित देव लहि लोचन लाहू ॥ २ ॥ ❋

उस काल देवता, नाग, किन्नर और दिक्पाल सब चित्रकूट पर्वतपर आये ॥ १ ॥ तब प्रभुने सबको प्रणाम किया. देवता प्रभुका दर्शन कर अपने नेत्रोंका लाभ पाय बड़े प्रसन्न हुए ॥ २ ॥

बर्षि सुमन कह देवसमाजू ॥ नाथ सनाथ भये हम आजू ॥ ३ ॥ ❋
करि बिनती दुख दुसह सुनाये ॥ हर्षित निज निज गेह सिधाये ॥ ४ ॥ ❋

देवताओंने फूल बरसा कर कहा कि, हे नाथ ! आज हम सनाथ हुए हैं ॥ ३ ॥ देवता विनती कर अपना दुसह दुःख सुनाय प्रसन्न हो अपने घरको रवाना हुए ॥ ४ ॥

चित्रकूट रघुनन्दन छाये ॥ समाचार सुनि सुनि मुनि आये ॥ ५ ॥ ❋
आवत देखि मुदित मुनिवृन्दा ॥ कीन्ह दण्डवत रघुकुलचन्दा ॥ ६ ॥ ❋

प्रभुने चित्रकूटमें डेरा कर दिया है, ये समाचार सुन मुनिलोग प्रभुके पास आये ॥ ५ ॥ मुनिवृन्दोंको आते देख, रघुकुलचंद्र श्रीरामचन्द्रजीने अह्लादित हो, मुनिराजोंको दंडवत् प्रणाम किया ॥ ६ ॥

मुनि रघुबरहिँ लाइ उर लेहीं ॥ सुफल होन हित आशिष देहीं ॥ ७ ॥ ❋
सिय सौमित्रि राम छबि देखहिँ ॥ साधन सकलसुफल करि लेखहिँ ॥ ८ ॥

मुनिलोग प्रभुको छातीसे लगाते हैं और सुफल होनेके लिये असीस देते हैं ॥ ७ ॥ सीता, राम और लक्ष्मण इनकी छबि देखते हैं और अपने सब साधनोंको सुफल करके मानते हैं ॥ ८ ॥

दोहा–यथायोग्य सनमानि प्रभु, बिदा किये मुनिवृन्द ॥ ❋
करहिँ योग जप यज्ञ तप, निज आश्रम स्वच्छन्द ॥ १३० ॥ ❋

प्रभुने यथायोग्य सत्कार करके मुनिराजोंको बिदा किया, तब वे अपने २ आश्रमोंमें जाय स्वच्छंद रीतिसे जप, तप, योग, यज्ञ, याग आदि करने लगे ॥ १३० ॥

यह सुधि कोल्ह किरातन पाई ॥ हर्षे जनु नवनिधि घरआई ॥ १ ॥ ❋
कन्द मूल फल भरि भरि दोना ॥ चले रङ्क जनु लूटन सोना ॥ २ ॥ ❋

जब कोल्ह और किरातोंको यह खबर मिली कि–प्रभु पधारे. तब वे ऐसे प्रसन्न हुए कि, मानों नौही निधि घरपर चलीं आईं है ॥ १ ॥ सब भील लोग कन्द, मूल और फलके दोने भर भरकर कैसे चले है कि, मानों दरिद्री आदमी सोना लूटने चले हैं ॥ २ ॥

तिन्हमहँ जिन्ह देखे दोउ भ्राता ॥ और तिनहिँ पूंछहिँ मगु जाता ॥ ३ ॥ ❋
कहत सुनत रघुबीर निकाई ॥ आय सबन देखे रघुराई ॥ ४ ॥ ❋

उनमेंसे जिन्होंने दोनों भाइयोंको देखा है, उनको रस्ते चलते लोग आ आकर पूँछते हैं ॥ ३ ॥ सब लोग प्रभुकी सुन्दरताके विषयमें कहते हैं और सुनते हैं और आ आकर दर्शन करते हैं ॥ ४ ॥

करहिँ जोहारि भेंट धरि आगे ॥ प्रभुहिँ बिलोकत अति अनुरागे ॥ ५ ॥ ❋

चित्र लिखे जनु जहँ तहँ ठाढ़े ॥ पुलक शरीर नयन जल बाढ़े ॥ ६ ॥ ❋

प्रभुके आगे भेंटें धरधर कर जुहारते हैं और प्रभुके दर्शन कर अतिशय प्रीति करते है ॥ ५ ॥ सब लोग जहां तहां चित्र कढ़ेसे खड़े हैं. शरीरमें पुलकावली छा रही है और नेत्रोंमें जल बढ़ रहा है ॥ ६ ॥

राम सनेह मगन सब जाने ॥ कहि प्रिय बचन सकल सनमाने ॥ ७ ॥ ❋
प्रभुहि जोहारि बहोरि बहोरी ॥ बचन बिनीत कहहिँ कर जोरी ॥ ८ ॥ ❋

ज्यों प्रभु सबको स्नेहमग्न जान, प्रिय वचन कह कह कर सबका सत्कार करते हैं ॥ ७ ॥ त्यों वे लोग हाथ जोड़, प्रभुको बारंबार जुहार जुहार कर, विनीत वचन कहते हैं ॥ ८ ॥

दोहा--अब हम नाथ सनाथ सब, भये देखि प्रभुपाँय ॥ ❋
भाग्य हमारे आगमन, राउर कोशलराय ॥ १३१ ॥ ❋

हे प्रभु ! आपके चरणकमलोंका दर्शन पाकर आज हम सनाथ हुये है. हे कोसलराज ! आपका वनमें आना केवल हमारे भाग्यसे हुआ है ॥ १३१ ॥

धन्य भूमि बन पन्थ पहारा ॥ जहँ जहँ नाथ पांव तुम धारा ॥ १ ॥ ❋
धन्य बिहँग मृग काननचारी ॥ सुफल जन्म भये तुमहिँ निहारी ॥ २ ॥ ❋

हे प्रभु ! आपने जहां जहां पांव धरा है, वो पृथ्वी, वन और पहाड़ सब धन्य है ॥ १ ॥ हे प्रभु ! आपके दर्शन करके आज वनमें विचरनेवाले पशु और पक्षी बड़े बड़भागी हुए हैं, और उनका जन्म सफल हुआ है ॥ २ ॥

हम सब धन्य सहितपरिवारा ॥ देखि नयनभरि दरश तुम्हारा ॥ ३ ॥ ❋
कीन्ह बास भलठांव बिचारी ॥ इहां सकल ऋतु रहब सुखारी ॥ ४ ॥ ❋

हे नाथ ! आपके नेत्रभर दर्शन करके आज हम सब परिवारके साथ धन्य हुए है ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! आपने जो यहां निवास किया है, सो बहुत अच्छी जगह विचारके किया है; क्योंकि यहां सब ऋतु सुखकारी रहेंगी ॥ ४ ॥

हम सबभांति करब सेवकाई ॥ करि केहरि अहि बाघ बराई ॥ ५ ॥ ❋
बन बेहड़ गिरिकन्दर खोहा ॥ सब हमार प्रभु पग पग जोहा ॥ ६ ॥ ❋

हम आपकी सब भांति सेवा करेंगे और सिंह, शार्दूल, हाथी, सांप और वाघ इनको मार हटावेंगे ॥ ५ ॥ हे प्रभु ! बन बेहड़, पर्वत, कंदरा और खोह ये सब पग पग हमारे देखे हुए हैं ॥ ६ ॥

तहँ तहँ तुमहिँ अहेर खेलाउब ॥ सर निर्झर सब ठांव दिखाउब ॥ ७ ॥ ❋
हम सेवक परिवारसमेता ॥ नाथ न सकुचब आयसु देता ॥ ८ ॥ ❋

हम आपको जहां तहां शिकार खिलावेंगे और तालाव व झरने वगैरः सब स्थल दिखावेंगे ॥ ७ ॥ हे नाथ ! हम परिवारके साथ आपके सेवक हैं, सो आप आज्ञा देते कभी किसी बातका संकोच मत करना ॥ ८ ॥

दोहा-वेदवचन मुनिमन अगम, ते प्रभु करुणाऐन ॥
बचन किरातनके सुनत, जिमि पितु बालकबैन ॥ १३२ ॥ ❋

जो प्रभु देवताओंके अगोचर और मुनीश्वरोंके मनके अविषय हैं, वे करुणानिधान प्रभु किरात लोगोंके वचन कैसे सुनते हैं कि, जैसे पिता बालकके वचन सुना करता है ॥ १३२ ॥

रामहिँ केवल प्रेम पियारा ॥ जानि लेहु जो जाननिहारा ॥ १ ॥ ❋
राम सकल बनचर परितोषे ॥ कहि मृदुबचन प्रेमपरितोषे ॥ २ ॥ ❋

कवि कहता है कि-रामको केवल प्रेमही प्यारा है जो सो जाननेवाले हैं वे इस बातको अच्छीतरह जानलेंगे ॥ १ ॥ प्रभुने कोमल वचन कहकर सबको प्रसन्न किया और प्रेमको परिपुष्ट किया ॥ २ ॥

बिदाकिये शिर नाय सिधाये ॥ प्रभुगुण कहत सुनत घर आये ॥ ३ ॥ ❋
यहि बिधि सीय सहित दौ भाई ॥ बसहिँ बिपिन सुरमुनिसुखदाई ॥ ४ ॥ ❋

और बिदा किया तब प्रभुको शिर नवाय सिधाये, सो प्रभुके गुण गाते और सुनते पाछे घर आये ॥ ३ ॥ इसतरह दोनों भाई सीताके साथ वनमें रहते हैं और देवता व मुनिलोगोंको सुख देते हैं ॥ ४ ॥

जबते आइ रहे रघुनायक ॥ तबते भौ बन मंगलदाय ॥ ५ ॥ ❋
फूलहिँ फलहिँ बिटप बिधि नाना ॥ मंजु ललित बर बेलि बिताना ॥ ६ ॥ ❋

जबसे प्रभु बनमें आ रहे, तबसे वह मंगलकारी होगया ॥ ५ ॥ अनेक प्रकारके वृक्ष फूलते हैं और फलते हैं और नाना प्रकारकी मनोहर सुन्दर लता वितान छा रहे है ॥ ६ ॥

सुरतरुसरिस सुभाव सुहाये ॥ मनहुँ बिबुधबन परिहरि आये ॥ ७ ॥ ❋
गुंजत मंजुल मधुकर श्रेनी ॥ त्रिबिध बयारि बहै सुखदेनी ॥ ८ ॥ ❋

जिनका स्वभाव कल्पवृक्षके समान अति सुहावना है. मानों नंदनवनको छोंड़करही आये हैं ॥ ७ ॥ भौंरोंकी पांति मधुर गुंज रही है और सुखदायी तीन प्रकारकी बयार बह रही है ॥ ८ ॥

दोहा--नीलकण्ठ कलकण्ठ शुक, चातक चक्र चकोर ॥ ❋
भांति भांति बोलहिँ बिहँग, श्रवणसुखद चितचोर ॥ १३३ ॥ ❋

मोर, कोकिला, तोता, पपीहा, चकवाक और चकोर आदि भांति भांतिके पक्षी कानोंको सुख देनेवाली और चित्तको चुरानेवाली मधुर वाणी बोल रहे हैं ॥ १३३ ॥

करि केहरि कपि कोल कुरङ्ग ॥ बिगत बैर बिहरहिँ यकसङ्गा ॥ १ ॥ ❋
फिरत अहेर राम छबि देखी ॥ होहिँ मुदित मृगवृन्द बिशेखी ॥ २ ॥ ❋

हाथी, सिंह, बन्दर, शूकर और हरिण ये सब बैर छांड़कर एकसाथ विहार करते हैं ॥ १ ॥ सिकार करते फिरते प्रभुकी छबि देख, हरिणोंके झुंड बहुत आनंदित होते हैं ॥ २ ॥

बिबुध बिपिन जहँ लग जगमाहीं ॥ देखि राम बन सकल सिहाहीं ॥ ३ ॥ ❋
सुरसरि सरस्वति दिनकरकन्या ॥ मेकलसुता गोदावरि धन्या ॥ ४ ॥ ❋

जगत्में जहांलों देवताओंके वन है, वेभी प्रभुके विराजनेसे वनको देख देखकर, सिहाते हैं ॥ ३ ॥ जगत्में गंगा, सरस्वती, यमुना, नर्मदा, गोदावरी आदि महा धन्य नदियां हैं ॥ ४ ॥

सब सरि सिन्धु नदी नद नाना ॥ मन्दाकिनि कर करहिँ बखाना ॥ ५ ॥
उदय अस्त गिरि अरु कैलासू ॥ मन्दर मेरु सकल सुरबासू ॥ ६ ॥ ❋

और जो तलाव, समुद्र और नाना प्रकारके नद और नदियां है, वे सब मंदाकिनी नदीकी प्रशंसा करते है ॥ ५ ॥ उदयाचल, अस्ताचल कैलास, मंदराचल और सुमेरगिरि कि, जहां सब देवता वास करते है ॥ ६ ॥

शैल हिमाचल आदिक जेते ॥ चित्रकूट यश गावहिँ तेते ॥ ७ ॥ ❋
बिन्ध्य मुदित मनसुख न समाई ॥ बिनुश्रम बिपुल बड़ाई पाई ॥ ८ ॥ ❋

तथा हिमालय आदि जितने पर्वत हैं, वे सब चित्रकूटका यश गाते हैं ॥ ७ ॥ और विन्ध्य पर्वतको ऐसा आनंद हुआ है कि, उसके हृदयमें समाता नहीं है; क्योंकि उसने विना परिश्रम किये बड़ा भारी यश पा लिया है ॥ ८ ॥

दोहा--चित्रकूटके बिहगँमृग, बेलि बिटप तृण जाति ॥ ❋
पुण्यपुंज सब धन्य अस, कहहिँ देव दिनराति ॥ १३४ ॥ ❋

देवतालोग रातदिन ऐसे कहते है कि--चित्रकूटके पक्षी, पशु, बेल बूटे, वृक्ष, घास, पात ये सब बड़े बड़भागी और पुण्यके पुंज हैं ॥ १३४ ॥

नयनवन्त रघुपतिहिँ बिलोकी ॥ पाइ जन्मफल होहिँ बिशोकी ॥ १ ॥ ❋
परसि चरणरज अचर सुखारी ॥ भये परम पदके अधिकारी ॥ २ ॥ ❋

जो नेत्रवाले हैं वे प्रभुको निरख, अपने जन्मका फल पाय, शोकरहित होते है ॥ १ ॥ प्रभुके चरणरजको परसकर चेतनभी मोक्षगामी हों जिसमें तो क्या ? जो जड़ जीव है वेभी प्रभुके चरण रजको छूकर, सुखी हो परम पदके अधिकारी हुए हैं ॥ २ ॥

सो बन शैल सुभाय सुहावन ॥ मंगलमय अतिपावनपावन ॥ ३ ॥ ❋
महिमा कहौं कवन बिधि तासू ॥ सुखसागर जहँ कीन्ह निबासू ॥ ४ ॥ ❋

वो वन और पर्वत बहुत सुन्दर और सुहावने हैं और ऐसे पवित्र और मंगलमय हैं कि, जिनसे पवित्र पदार्थभी पवित्र हो जाते हैं ॥ ३ ॥ कवि कहता है कि--उनकी महिमा किसप्रकार कही जाय? कि, जहां सुखसागर श्रीरामचन्द्रने निवास कर दिया है ॥ ४ ॥

पयपयोधि तजि अवध बिहाई ॥ जहँ सिय राम लषण रहे आई ॥ ५ ॥ ❋
कहि न सकहिँ सुख भा जस कानन ॥ जो शतसहस होहिँ सहसानन ॥ ६ ॥

उस वनकी शोभा कोई किस प्रकार कहे ? कि, जहां राम, लक्ष्मण और सीताने क्षीरसमुद्रको छोड़, अवधको तज, आकर थाना डाल दिया है ॥ ५ ॥ कवि कहता है कि--उसकाल वनके भीतर जो आनंद और सुख हुआ उसे दूसरा तो क्या कहे ? जो करोड़ों शेषनाग हो जांय तौभी कह नहीं सकते ॥ ६ ॥

सो मैं बरणि कहौं बिधि केहीं ॥ डाबर कमठ कि मन्दर लेहीं ॥ ७ ॥ ❀
सेवहिँ लषण कर्म मन बानी ॥ जाइ न शील सनेह बखानी ॥ ८ ॥ ❀

सो मैं उसे वर्णन कर कैसे कह सकूं ? क्या डाबर (पानीका छोटा खड्डा) का कछुआ मंदर पर्वतको उठा सकता है ? ॥ ७ ॥ लक्ष्मण जिस भांति मन कर्म वाणीसे प्रभुकी सेवा करता है, वो शील और स्नेह कहनेमें नहीं आसकता ॥ ८ ॥

दोहा—क्षण क्षण सिय लखि रामपद, जानि आपुपर नेह ॥ ❀
करत लषण सपने न चित, बन्धु मातु पितु गेह ॥ १३५ ॥ ❀

बारंबार प्रभु और सीताके चरणकमलोंके दर्शन कर, अपने ऊपर उनका परम स्नेह जान, लक्ष्मण स्वप्नमेंभी अपने अंतःकरणमें माता, पिता, बंधु और घरकी सुध नहीं करता है ॥ १३५ ॥

राम संग सिय रहहिँ सुखारी ॥ पुर परिजन गृह सुरति बिसारी ॥ १ ॥ ❀
क्षण क्षण पियबिधुवदन निहारी ॥ प्रमुदित मनहुँ चकोर कुमारी ॥ २ ॥ ❀

सीता रघुनाथके साथ आनंदमें रहती है. पुर, परिवार, और घरकी सुरति भूल रही है ॥ १ ॥ बारंबार प्रीतमके मुखचंद्रको देख, ऐसी आनंदित होती है कि, मानों चकोरीने चंद्रका दर्शन पालिया है ॥ २ ॥

नाह नेह नित बढ़त बिलोकी ॥ हर्षित रहति दिवस जिमि कोकी ॥ ३ ॥ ❀
सिय मन रामचरण अनुरागा ॥ अवध सहस सम बन प्रिय लागा ॥ ४ ॥ ❀

अपने प्रीतमका स्नेह नित नया बढ़ता देखकर, वो रात दिन कैसी प्रसन्न रहती है कि, जैसे दिवसमें चक्रवाकी आनंदित रहती है ॥ ३ ॥ सीताका मन रामचन्द्रजीके चरणोंमें अति अनुरक्त है, जिससे उसे बनकी बहार हजार अयोध्याके समान प्रिय लगती है ॥ ४ ॥

पर्णकुटी प्रिय प्रीतम संगा ॥ प्रिय परिवार कुरंग बिहंगा ॥ ५ ॥ ❀
सासुससुर सम मुनितिय मुनिवर ॥ असन अमिय सम कन्द मूलफर ॥ ६ ॥ ❀

प्रीतमके संगमें पर्णकुटी महलसे प्रिय लगती है. प्यारे परिवारकी जगह बनके पशु और पक्षी है ॥ ५ ॥ जो मुनीश्वर और उनकी स्त्रियां है, सो सास और ससुरकी ठौर हैं. कंद, मूल, व फलका आहार जो है, सो अमृत भक्षणके बराबर है ॥ ६ ॥

नाथ साथ साथरी सुहाई ॥ मयनशयन शत सम सुखदाई ॥ ७ ॥ ❀
लोकप होहिँ बिलोकत जासू ॥ तेहिँ किमि मोहैं बिषयबिलासू ॥ ८ ॥ ❀

जो प्रभुके साथ सुहावनी साथरी है, सो सैकड़ों कामशय्याके समान सुख देनेवाली है ॥ ७ ॥ हे पार्वती ! जिसकी कृपादृष्टि होतेही साधारण मनुष्य लोकपाल हो जाते हैं, उसे ये विषयभोग किस प्रकार मोहित कर सकते है ? ॥ ८ ॥

दोहा—सुमिरत रामहिँ तजहिँ जन, तृणसम बिषयबिलासु ॥ ❀
रामप्रिया जगजननि सिय, कछु न आचरज तासु ॥ १३६ ॥ ❀

यह प्राकृत जनभी जिस रामका स्मरण करतेही विषयबिलासको तृणके समान तज देता

है, उस प्रभुकी प्रिया जगत्‌जननी श्रीसीता विषयवासनाका त्याग करे, उसमें कुछ आश्चर्यकी बात नहीं है ॥ १३६ ॥

सीय लषण जेहिबिधि सुख लहहीं ॥ सोइ रघुनाथ करैं जोइ कहहीं ॥१॥ ❋
कहहिँ पुरातनकथा कहानी ॥ सुनहिँ लषणसिय अतिसुख मानी ॥२॥ ❋

लक्ष्मण और सीता जिसप्रकार सुख पाते है और जो कहते है, प्रभु उसीतरह वही करते है ॥ १ ॥ प्रभुजी बहलानेके लिये जो पुरातन इतिहास व कथा कहानी कहते हैं, वह वे दोनों बड़ी प्रीतिके साथ सुख मानके सुनते है ॥ २ ॥

जब जब राम अवध सुधि करहीं ॥ तब तब बारि बिलोचन भरहीं ॥३॥ ❋
सुमिरि मातु पितु परिजन भाई ॥ भरत सनेह शील सेवकाई ॥ ४ ॥ ❋

प्रभु जब जब अयोध्याकी सुध करते है, तब नेत्रोंमें जल भर आता है ॥ ३ ॥ माता, पिता, परिजन, भाई और भरतका स्नेह, शील व दासभाव इनको स्मरण कर कर ॥ ४ ॥

कृपासिन्धु प्रभु होहिँ दुखारी ॥ धीरज धरहिँ कुसमय विचारी ॥ ५ ॥ ❋
लखि सिय लषण बिकल ह्वै जाहीं ॥ जिमि पुरुषहिँ अनुसर परिछाहीं ॥६॥

कृपासिंधु प्रभु दुखी होते है और कुअवसर जानकर पीछी धीरज धरते है ॥ ५ ॥ प्रभुका बिलखपन देख, सीता और लक्ष्मण कैसे विकल हो जाते है कि, जैसे परछांही आदमीका अनुकरण करती है. अर्थात् जब प्रभु बिलखे होते है, तब येभी परछांईकी नांई बिलखे हो जाते है ॥ ६ ॥

प्रिया-बंधु-गति लखि रघुनन्दन ॥ धीर कृपालु भक्तउरचन्दन ॥७॥ ❋
लगे कहन कछु कथा पुनीता ॥ सुनि सुख लहहिँ लषण अरु सीता ॥८॥ ❋

सीता और लक्ष्मणकी यह दशा देख, दयालु प्रभु श्रीरामचन्द्र धीरज धर उन्हें ढाढ़स (हिम्मत) बंधाते है, क्योंकि आप भक्तजनोंका हृदय शीतल करनेके लिये साक्षात् चंदनही हैं ॥ ७ ॥ और कुछ पवित्र कथा कहते है कि, जिसे सुन लक्ष्मण और सीता उस दुखको सुखसे सहन कर लेते है ॥ ८ ॥

दोहा–राम लषण सीतासहित, सोहत पर्णनिकेत ॥ ❋
जिमि बासव बस अमरपुर, शची जयन्त समेत ॥ १३७ ॥ ❋

सीता और लक्ष्मणके साथ प्रभु बनके भीतर पर्णशालामें बिराजे कैसी शोभा देते है कि, मानों इंद्राणी और जयंतके साथ इंद्र अमरावतीमें निवास कर रहा है ॥ १३७ ॥

जुगवहिँ प्रभु सिय अनुजहिँ कैसे ॥ पलक बिलोचन गोलक जैसे ॥१॥ ❋
सेवहिँ लषण सीय रघुबीरहिँ ॥ जिमि अविवेकी पुरुष शरीरहिँ ॥ २ ॥ ❋

प्रभु सीता और लक्ष्मणकी कैसे रक्षा करते हैं कि, जैसे पलक चक्षुइंद्रिय और नेत्रगोलकको जोगवते है ॥ १ ॥ सीता व लक्ष्मण प्रभुकी सेवा कैसे करते हैं कि, जैसे अज्ञानी पुरुष अपने शरीरको सेवता है ॥ २ ॥

यहिबिधि प्रभु बन बसहिँ सुखारी ॥ खग मृग सुर तापस हितकारी ॥ ३ ॥ ❋
कहेउँ राम बनगबन सुहावा ॥ सुनहु सुमन्त अवध जिमि आवा ॥ ४ ॥ ❋

प्रभु इसप्रकार वनमें आनंदसे विराजते है और पशु, पक्षी व देवता तथा मुनीश्वरोंका हित करते है ॥ ३॥ महादेवजी कहते है कि–हे पार्वती ! प्रभु जैसे वनमें गये वो वनगमनकी कथा तौ मैंने कही. अब सुमंत्र पीछा अयोध्यामें आया वो कथा कहता हूं सो सुनो ॥ ४ ॥

फिरेउ निषाद प्रभुहिं पहुँचाई ॥ सचिवसहित रथ देखेउ आई ॥ ५ ॥ ❀
मंत्री विकल बिलोकि निषादू॥ कहि न सकहिँ जस भयउ बिषादू ॥६॥ ❀

निषाद गुह प्रभुको पहुंचाकर पीछा फिरा, तब उसने सुमन्त्रके साथ राजाका रथ देखा ॥ ५ ॥ निषादको आता देख मंत्रीको ऐसा विषाद व खेद हुआ कि, कुछ कह नहीं सकते ॥ ६ ॥

राम राम सिय लषण पुकारी ॥ परेउ धरणितल व्याकुल भारी ॥ ७ ॥ ❀
देखि दक्षिण दिशि हय हिहिनाहीं ॥ जिमि बिनुपंख बिहँग अकुलाहीं ॥८॥

सुमंत्र गुहको देख, राम ! राम !! हे सीता ! हे लक्ष्मण ! ऐसे पुकार २ विव्हल हो जमीनपर गिर-पड़ा ॥ ७ ॥ सुमन्त्रकी तौ यह दशा है और घोड़े दक्षिणदिशाको देखकर हिहिनाते हैं और परवि नाके पखेरूकी नाईं घबराते है ॥ ८ ॥

दोहा–नहिँ तृण चरहिँ न पियहिँ जल, मोचत लोचन बारि ॥ ❀
व्याकुल भयउ निषादगण, रघुबरबाजि निहारि ॥ १३८ ॥ ❀

न तौ वे जल पीते हैं, न घास चरते हैं, न दाना खाते हैं; नैनोंसे जलकी धारा बहाते हैं. प्रभुके घोड़ोंकी यह दशा देख, निषादोंका झुंड़भी घबरा गया है ॥ १३८ ॥

धरि धीरज तब कहहि निषादू ॥ अब सुमन्त परिहरहु बिषादू ॥ १ ॥ ❀
तुम पंडित परमारथ ज्ञाता ॥ धरहु धीर लखि बाम बिधाता ॥ २ ॥ ❀

तब धीरज धर कर, निषादने कहा कि–हे सुमन्त्र ! अब विषाद मत करो ॥ १ ॥ हे भाई ! तुम विद्वान् और परमार्थके जाननेवाले हो, सो विधाताको प्रतिकूल हुआ जानकर, मनमें धीरज धरो ॥ २ ॥

बिबिध कथा कहि कहि मृदु बानी ॥ रथ बैठारेउ बरबस आनी ॥ ३ ॥ ❀
शोक शिथिल रथ सकहि न हाँकी ॥ रघुबर बिरह पीर उर बाँकी ॥ ४ ॥❀

गुहने मधुर वाणीसे अनेक प्रकारके इतिहास और बातें कहीं और लाकर जबर्दस्ती रथपर बिठा दिया ॥ ३ ॥ परंतु उस समय उसके सब अंग शोकसे ऐसे शिथिल हो रहे थे कि, उससे रथ हांका नहीं जाता था. महादेवजी कहते हैं कि–हे पार्वती ! प्रभुके विरहकी पीर हृदयको ऐसीही बांकी और दुसह लगती है ॥ ४ ॥

तरफराहिँ मग चलहिँ न घोरे॥ बन मृग मनहुँ आनि रथ जोरे ॥ ५ ॥ ❀
अटकि पराहिँ फिरि हेरहिँ पीछे॥ राम बियोग बिकल दुख तीछे ॥ ६ ॥ ❀

घोड़ेभी खड़े खड़े तड़फड़ाते हैं, पर मार्गमें एक कदम नहीं धरते हैं. घोड़े क्या हैं मानों जंगली जानवरही लाकर रथमें जोड़ दिये हैं ॥ ५ ॥ सुमंत्र जो उन्हें हांकता है, तौ वे अटक अटक जाते हैं और पीछा फिर फिरकर देखते हैं. प्रभुके वियोगसे विकल होगये हैं कि, उनका तीक्ष्ण दुःख कुछ कहा नहीं जाता ॥ ६ ॥

जो कह राम लषण बैदेही ॥ हिँकरि हिँकरि हय हेरहिँ तेही ॥ ७ ॥ ❋
बाजिविरह गति किमि कहि जाती॥बिनुमणि फणी विकल जेहिभांती॥८॥❋

जो कोई राम लक्ष्मण और सीताका नाम लेता है, उसकी ओर वे घोड़े हिकर हिकर कर हेरते है ॥ ७ ॥ कवि कहता है कि–घोड़ोंके विरहकी दशा कहो किसप्रकार कही जाय? जैसे मणिबिन सर्प विव्हल हो जाता है, ऐसे घोड़े विकल हो गये है ॥ ८ ॥

दोहा–भये निषाद विषादवश, देखत सचिव तुरंत ॥ ❋
बोलि सुसेवक चारि तब, दिये सारथी संग ॥ १३९ ॥ ❋

सुमन्त्र और घोड़ोंकी ऐसी विकल दशा देख, निषाद गुहने विषादके वश हो, अपने चार स्वामिधर्मी नौकरोंको बुलाय, सारथी सुमन्त्रके साथ भेजे ॥ १३९ ॥

गुह सारथिहिँ फिरेउ पहुँचाई ॥ बिरह बिषाद बरणि नहिँ जाई ॥ १ ॥ ❋
चले अवध लै रथहिँ निषादा ॥ होहिँ क्षणहि क्षण मग्न बिषादा ॥ २ ॥ ❋

गुह सुमन्त्रको पहुँचाकर पीछा लौटा, उस समय उसे जो विरहका दुसह दुःख हुआ वो बरणा नहीं जाता ॥ १ ॥ गुहके नौकर निषाद लोग रथको ले अवधको चले है, सो क्षण क्षणमें दुख और विषादके भीतर मग्न होते है ॥ २ ॥

शोच सुमन्त विकल दुख दीन्हा ॥ धिक जीवन रघुबीरबिहीना ॥ ३ ॥ ❋
रहहि न अन्तहु अधमशरीरू ॥ यश न लहेउ बिछुरत रघुबीरू ॥ ४ ॥ ❋

सुमन्त्र शोचके मारे अतिशय विकल हो, दुःखसे दीन हो रहा है और कहता है कि–रामचन्द्रके विना जीना धिक्कार है ॥ ३ ॥ हाय! यह अधम शरीर अंतमेंभी तो नहीं रहेगा. फिर प्रभुके विछुरते इस शरीरको त्यागकर मैंने यश न लिया यह बहुत बुरा किया ॥ ४ ॥

भये अयश अघभाजनप्राना ॥ कौन हेतु नहिँ करत पयाना ॥ ५ ॥ ❋
अहह मन्दमति अँवसर चूका ॥ अजहूँ न हृदय होत दुइटूका ॥ ६ ॥ ❋

अहह!! पापके ठांव ये प्राण ऐसे अजसके भागी हुए तो अबभी निकस क्यों नहीं जाते? ॥ ५ ॥ अहह! यह मन्दबुद्धि हृदय कैसा अवसर चूक गया है? अरे! अबभी तू दो टूक क्यों नहीं होता? ॥ ६ ॥

मींजि हाथ शिर धुनि पछिताई ॥ मनहुँ कृपण धनराशि गँवाई ॥ ७ ॥ ❋
बिरद बाँधि बर बीर कहाई ॥ चले समर जनु सुभट पराई ॥ ८ ॥ ❋

सुमन्त्र बारंबार हाथ मींजता है और शिर धुन २ कर पछताता है, मानों कृपण (कंजूस) ने धनका ढेर गँवा दिया है ॥ ७ ॥ अथवा कोई बीर पुरुष बिरद बांध अच्छा शूरबीर कहाकर युद्धके भीतरसे भाग चला है वो दशा सुमंत्रकी हुई है ॥ ८ ॥

दोहा–विप्र बिबेकी बेदविद, सम्मत साधु सुजाति ॥ ❋
जिमि धोखे मदपान कर, सचिव शोच तेहिँ भांति ॥ १४० ॥ ❋

जैसे कोई विवेकी वेदवेत्ता श्रोत्रिय पुरुष कि– जो साधुपुरुषोंके संमत और सुजाति है, वो धोखेमें आकर मदपान करके दुःखी हो जाता है ऐसे सुमन्त्र प्रभुके विरहसे शोचवश हो रहा है ॥ १४० ॥

जिमि कुलीन तिय साधुसयानी ॥ पतिदेवता कर्ममनबानी ॥ १ ॥ ❋
रहे कर्मबश परिहरि नाहू ॥ सचिव हृदय तिमि दारुण दाहू ॥ २ ॥ ❋

जैसे कोई कुलवती पतिव्रता सयानी स्त्री कि–जो मन वचन कर्मसे पतिको परमेश्वर मान पतिकी सेवा करती है ॥ १ ॥ वो भाग्यवशसे अपने स्वामीको त्यागकर दुखी होती है. ऐसे सुमन्त्रके हृदयके भीतर महाकठिन दारुण दाह हो रहा है ॥ २ ॥

लोचन सजल दृष्टि भइ थोरी ॥ सुनै न श्रवण बिकल मतिभोरी ॥ ३ ॥ ❋
सूखहिँ अधर लागि मुँहलाटी ॥ जिय न जाइ उर अवधिकपाटी ॥ ४ ॥ ❋

नेत्रोंमे जल भर आनेसे दृष्टि बहुत कम हो गई है और बुद्धि विकल हो जानेसे कानोंसे कुछ सुनता नहीं है और कुछ चेतभी नहीं है ॥ ३ ॥ उसके अधर सूखते है. मुखमें लाटी लगी है, अर्थात् तालु सूखता है, परंतु चौदह वर्षकी अवधिरूप जो किवार लगे हुए है, तिससे उसके हृदयमेंसे प्राण निकस नहीं सकते है ॥ ४ ॥

बिबरण भयउ न जाइ निहारी ॥ मारिसि मनहुँ पिता महतारी ॥ ५ ॥ ❋
हानि गलानि बिपुल मन व्यापी ॥ यमपुर पन्थ शोच जिमि पापी ॥ ६ ॥ ❋

सुमन्त्रका मुख ऐसा विवर्ण हो गया है कि, उसके सोहीं देखा नहीं जाता. मानों माता पिताकी हत्या करकेही आया है ॥ ५ ॥ उसके मनमें हानि और ग्लानि पूरी पूरी व्याप रही है. जैसे पापीको यमलोकके मार्गका शोच पड़ जाता है, वो दशा सुमन्त्रकी हुई है ॥ ६ ॥

बचन न आव हृदय पछिताई ॥ अवध कहा मैं देखब जाई ॥ ७ ॥ ❋
रामरहित रथ देखिहि जोई ॥ सकुचहिं मोहिँ बिलोकत सोई ॥ ८ ॥ ❋

मुहँसे वचन नहीं निकलता है और हृदयमें पछताता है कि, अब मैं जाकर अवधको क्या देखूंगा ? ॥ ७ ॥ जो कोई इस रथको रामके विना देखेगा, वोही मुझे देखते ही सकुचा जायगा ॥ ८ ॥

दोहा–धाइ पूछिहहिँ मोहिँ जब, बिकल नगर नर नारि ॥ ❋
उतर देब मैं सबहिँ तब, हृदय बज्र बैठारि ॥ १४१ ॥ ❋

जब नगरके नरनारी विकल हो, दौड़कर मेरे पास आवेंगे और मुझसे पूँछेंगे, तब मैं उन सबको हृदयमें वज्र बैठाकर क्या उत्तर देऊंगा ? ॥ १४१ ॥

पूछिहहिँ दीन दुखित सब माता ॥ कहब कहा मैं तिनहिँ बिधाता ॥ १ ॥ ❋
पूछिहहिँ जबहिँ लषण महतारी ॥ कहिहौं कौन सँदेश सुखारी ॥ २ ॥ ❋

हे विधाता ! जब सब मातायें दीन व दुखी होकर मुझे पूँछेंगी, तब मैं उन्हें क्या कहूंगा ? ॥ १ ॥ जब लक्ष्मणकी माता (सुमित्रा) पूंछेगी, तब कौन सुखकारी संदेशा कहूंगा ? ॥ २ ॥

रामजननि जब आइहि धाई ॥ सुमिरि बच्छ जिमि धेनु लवाई ॥ ३ ॥ ❋
पूंछत उतर देब मैं तेही ॥ गे बन राम लषण बैदेही ॥ ४ ॥ ❋

जब रामकी माता (कौसल्या) अपने पुत्रका स्मरण करके जैसे तुरंत ब्याई हुई गौ बछरेकी

ओर लपक कर आती है ऐसे दौड़कर आवेगी ॥ ३ ॥ और पूंछेगी तब मैं उसे क्या उत्तर देऊंगा ? क्या मैं उसे यह कह सकता हूं कि– राम लक्ष्मण और सीता वनको गये ॥ ४ ॥

जेइ पूंछिहि तेहिँ उत्तर देवा ॥ जाइ अवध अब यह सुख लेवा ॥ ५ ॥ ❋
पूंछिहिँ जबहिँ राउ दुख दीना ॥ जीवन जासु रामआधीना ॥ ६ ॥ ❋

अहह ! जो पूंछेगा उसे मुझे यही उत्तर देना पड़ेगा. हाय ! अवधमें जाकर अब मैं यही सुख लेऊंगा ॥ ५ ॥ अहह ! जब राजा दशरथ दुःखित और दीन होकर मुझे पूंछेंगे कि, जिनका जीनाही रामके आधीन है ॥ ६ ॥

देहौं उतर कवन मुँह लाई ॥ आयउँ कुशल कुँवर पहुँचाई ॥ ७ ॥ ❋
सुनत लषण सिय राम सँदेशू ॥ तृण इव तन परिहरब नरेशू ॥ ८ ॥ ❋

तब उन्हे मैं कौन मुंह लगाके उत्तर देऊंगा ? क्या मैं उन्हें यह कहूंगा ? कि आपके कुवरोंको मैं कुशल क्षेमसे पहुंचाय आया हूं ॥ ७ ॥ हाय ! जब राजा राम लक्ष्मण और सीताका संदेशा सुनेंगे, तब उसे सुनतेही वे अपने शरीरको तृणके समान त्याग देंगे ॥ ८ ॥

दोहा–हृदय न बिदरत पङ्क जिमि, बिछुरत प्रीतम नीर ॥ ❋
जानत हौं मोहिँ दीन्ह बिधि, यह यातना शरीर ॥ १४२ ॥ ❋

जैसे प्रियतम जलके बिछुरनेसे कीचड़ फट जाता है, ऐसे प्रियतम श्रीरामचन्द्रके बिछुरते जो मेरा हृदय न फटा तो इससे मैं जानता हूं कि, विधाताने मुझे यह यातनाशरीर दिया है. तात्पर्य यह है कि– यातनाशरीर यमलोकमें है, उसे चाहे जितनी पीडा क्यों न होवे और तिल तिल जितने टूकड़े क्यों न होजावें, पर वो शरीर मरता नहीं. ऐसे मेरा यह शरीर भी इस महादारुण दुःखसे न पड़ा तो यातना शरीरसे कुछ कम नहीं है ॥ १४२ ॥

यहि बिधि करत पन्थ पछितावा ॥ तमसा तीर तुरत रथ आवा ॥ १ ॥ ❋
बिदा किये करि बिनय निषादू ॥ फिरे पाँय परि बिकल बिषादू ॥ २ ॥ ❋

इस तरह मार्गमें पछतावा करते २ रथ तुरंत तमसा नदीके तीरपर चला आया ॥१॥ तब सुमन्त्रने विनय करके निषादोंको पीछा बिदा किया. निषादभी विषादसे अति विकल हो, सुमन्त्रके पांव पकड़, दंडवत् कर पीछे फिरे ॥ २ ॥

"हरिदिन पहुँचे अवध सुमंता ॥ देखि नगर दुख भयो तुरंता" ॥ ३ ॥ ❋
पैठत नगर सचिव सकुचाई ॥ जनु मारसि गुरु ब्राह्मण गाई ॥ ४ ॥ ❋

" सुमन्त्र एकादशीके दिन अवध पहुंचा, तब उसे देख नगरमें महाभारी दुःख हुआ " ॥ ३ ॥ नगरीमें प्रवेश करते सुमन्त्रके मनमें ऐसा संकोच हुआ कि, मानों गुरु, गौ, ब्राह्मणको मारकेही आया है ॥ ४ ॥

बैठि बिटपतरु दिवस गँवावा ॥ साँझ समय तेइँ अँवसर आवा ॥ ५ ॥ ❋
अवध प्रवेश कीन्ह अँधियारे ॥ पैठु भवन रथ राखि दुआरे ॥ ६ ॥ ❋

सुमन्त्र अवध आया तब कुछ पिछला दिन था इसलिये वो एक पेंड़के तले बैठगया. सो

दिन बीत गया और सांझ हो गई ॥ ५ ॥ तब सुमन्त्रने अंधकारके समय अवधमें प्रवेश किया और जातेही रथको तो राजद्वारपर छोड़ दिया और आप तुरंत घरके भीतर घुसगया ॥ ६ ॥

जिन्ह जिन्ह समाचार सुनि पाये ॥ भूपद्वार रथ देखन आये ॥ ७ ॥ ❋
रथ पहिंचानि बिकल लखि घोरे ॥ गरहिँ गात जिमि आतप ओरे ॥८॥ ❋
नगर नारि नर ब्याकुल कैसे ॥ निघटत नीर मीनगण जैसे ॥ ९ ॥ ❋

उस काल जिन जिन लोगोंने समाचार सुन पाये, वे दौड़ दौड़कर, राजद्वार पै रथ देखनेको आये ॥ ७ ॥ रथको पहिंचान, घोड़ोंको विलखवदन देख उनके शरीर ऐसे गलने लगे कि, जैसे धूपसे ओले यानी बर्फ गलजाता है ॥ ८ ॥ और नगरीके तमाम स्त्री पुरुष कैसे व्याकुल होने लगे है कि, जैसे जलके घटनेसे मछलियां तड़फड़ातीं है ॥ ९ ॥

दोहा--सचिव आगमन सुनत सब, बिकल भई रनिवास ॥ ❋
भवन भयंकर लाग तेहिँ, मानहुँ प्रेतनिवास ॥ १४३ ॥ ❋

सुमन्त्रका आना सुनतेही तमाम रनिवास ऐसा विह्वल हुआ कि–कुछ कहनेकी बात नहीं और उस काल राजभवन ऐसा भयंकर लगने लगा कि मानों कोई प्रेतोंका निवास श्मशान ही तो नहीं है ॥ १४३ ॥

अति आरत सब पूँछहिँ रानी ॥ उतर न आव बिकल भइ बानी ॥ १॥ ❋
सुनै न श्रवण नयन नहिँ सूझा ॥ कहहु कहाँ नृप जेहिँ तेहिँ बूझा ॥२॥ ❋

रानियां सब अतिशय आर्त हो होकर पूँछतीं है, पर उसको उत्तर देना नहीं आता, क्योंकि उसकी वाणी तो बिलकुल विकल होगई थी ॥ १ ॥ और कानोंसे सुनाई नहीं देता था. और आंखोंसे दीखना बंद होगया था. अतएव वो जिस तिससे बूझने लगा कि, कहो, राजा कहां है ? ॥ २ ॥

दासिन्ह दीख सचिव बिकलाई ॥ कौशल्यागृह गईं लिवाई ॥ ३ ॥ ❋
जाइ सुमन्त दीख कस राजा ॥ अमियरहित जनु चन्द्र बिराजा ॥ ४ ॥ ❋

दासियां सुमन्त्रकी ऐसी विकलता देख,उसे कौसल्याके घर लिवाले चलीं ॥ ३ ॥ सुमन्त्रने जाकर राजाको कैसा देखा मानों अमृतसे हीन चंद्रही विराज रहा है ॥ ४ ॥

अशन न शयन बिभूषणहीना ॥ परेउ भूमितल निपट मलीना ॥ ५ ॥ ❋
लेइ उसास शोच यहिभांती ॥ सुरपुरते जनु खस्यो ययाती ॥ ६ ॥ ❋

न तो भोजन है न शय्या है. और न कोई गहना है. ऐसा राजा अत्यंत मलीन होकर पृथ्वीपर पड़ा है ॥ ५ ॥ और शोचवश होकर इसप्रकार ऊँचे ऊँचे श्वास लेता है कि मानो स्वर्गसे ययाति[1] राजाही खसक पड़ा है ॥ ६ ॥

---

१ ययाति राजाने अनेक यज्ञ, दान, पुण्य किये थे, तिससे वो स्वर्गमें गया; तब इन्द्र उसे लेनेको सामने आया और सत्कार कर स्वर्गमें लेगया. फिर आसनपर बिठाय उससे पूंछा कि –हे राजा ! कहो आपने कौन धर्म किये हैं ? तब राजाने अभिमानके मारे अपने धर्म कहने शुरू किये. और बड़ाई करने लगा सो बड़ाई करते करते जब सब पुण्य क्षीण हो गये, तब देवताओंने इन्द्रकी आज्ञानुसार स्वर्गसे पीछा ढकेल दिया.

लेत शोचभरि क्षण क्षण छाती ॥ जनु जरि पंख परेउ सम्पाती ॥ ७ ॥ ❋
राम राम कहि रामसनेही ॥ पुनि कह राम लषण बैदेही ॥ ८ ॥ ❋

शोचसे जो लम्बी सांस लेते है, तिससे बारबार छाती भर आती है. मानों पर जलनेसे संपातीही पृथ्वीपर आ पड़ा है ॥ ७ ॥ प्रभुके परम स्नेही राजा दशरथजीने 'राम राम' ऐसा कहकर फिर 'हे राम! हे लक्ष्मण! हे सीता!' ऐसा कहा ॥ ८ ॥

दोहा–देखि सचिव जय जीव कहि, कीन्हसि दण्डप्रणाम ॥ ❋
सुनत उठे ब्याकुल नृपति, कहु सुमंत कहँ राम ॥ १४४ ॥ ❋

सुमन्त्रने राजाको देख,जयजीव कह साष्टांग प्रणाम किया. सुमन्त्रका वचन सुनतेही राजा व्याकुल हो उठे और बोले कि– हे सुमन्त्र! कहो, राम कहां है? ॥ १४४ ॥

भूप सुमन्त लीन्ह उर लाई ॥ बूड़त कछु अधार जनु पाई ॥ १ ॥ ❋
सहित सनेह निकट बैठारी ॥ पूंछत राउ नयन भरि बारी ॥ २ ॥ ❋

राजाने सुमन्त्रको छातीसे लगाया, तब सुमन्त्रने क्या पाया है मानों बूड़तेहुएने कुछ आधार पालिया है ॥ १ ॥ बड़े प्यार व स्नेहके साथ सुमन्त्रको अपने पास बिठाय,नेत्रोंमें जल भरके राजा दशरथजीने सुमन्त्रसे पूंछा कि– ॥ २ ॥

राम कुशल कहु सखा सनेही ॥ कहँ रघुनाथ लषण बैदेही ॥ ३ ॥ ❋
आनेहु फेरि कि बनहिँ सिधाये ॥ सुनत सचिव लोचन जलछाये ॥ ४ ॥ ❋

हे सखा! कहो, मेरा परमस्नेही राम कुशल तौ है? हे भैया! कहो, राम लक्ष्मण और सीता कहां है? ॥ ३ ॥ हे सुमन्त्र! कहो, क्या तुम उन्हें पीछा फेर लाये या वे वनकोही सिधारे? राजाके वचन सुन, सुमन्त्रके नेत्रोंमे जल भर आया ॥ ४ ॥

शोकबिकल पुनि पूँछ नरेशू ॥ कहु सिय राम लषण संदेशू ॥ ५ ॥ ❋
राम रूप गुण शील सुभाऊ ॥ सुमिरि सुमिरि उर शोचत राऊ ॥ ६ ॥ ❋

राजाने शोचसे विकल होकर फिर पूंछा कि– हे भैया! राम लक्ष्मण और सीताका संदेशा कहो. उनका क्या संदेशा लाये हो? ॥ ५ ॥ कवि कहता है कि–ज्यों ज्यों राजा रामचन्द्रजूके रूप गुण शील और स्वभावको सुमरते है त्योंत्यों उनके हृदयमें शोच अधिक अधिक बढ़ता जाता है ॥ ६ ॥

राज सुनाइ दीन बनबासू ॥ सुनि मन भयउ न हर्ष हरासू ॥ ७ ॥ ❋
सो सुत बिछुरत गये न प्राना ॥ को पापी बड़ मोहिँ समाना ॥ ८ ॥ ❋

राजा कहता है कि– देखो, मैंने राज देनेके समाचार सुनाकर वनवास दिया तौभी

---

१ सम्पाती और जटायु ये दोनों भाई थे. एक समय इन्होंने विचार किया कि, सूर्यके साथ आपन चल सकते हैं या नहीं? ऐसा विचार कर ये दोनों ऊपरको चले, सो इतने ऊपरको चले गये कि–दूरीके कारण नदियां सूतके जैसे बारीक और हिमालय व विंध्यपर्वत ढोलके समान, और दूसरे पर्वत पत्थरके टुकडोंके जितने और शहर व नगर पहिये जितने दीखने लगे और सूर्य बहुत बडा दिखाई दिया. फिर सूर्यकी किरणोंसे इनका शरीर जलने लगा और जटायु घबरा गया, तब सम्पातीने अपनी परोंसे उसे ढंक लिया. तिससे जटायुकी परें तौ बच गईं और सम्पातीकी जल गईं. सो वह निशाकर मुनिके आश्रममें विंध्यपर्वतपर पड़ा और जटायु दण्डकारण्य वनमें गिरा.

जिसके मनमें राज पानेके समाचार सुनकर हर्ष नहीं हुआ और वनवासके समाचार सुन शोच नहीं हुआ ॥ ७ ॥ उस पुत्रके बिछुरते मेरे प्राण निकस न गये. इसलिये मैं कहता हूं कि, मेरे जैसा महापापी जगतमें कौन है ? कोईभी नहीं ॥ ८ ॥

दोहा–सखा राम सिय लषण जहँ, तहां मोहिँ पहुँचाउ ॥ ❁
नाहिँत चाहत चलन अब, प्राण कहौं सतभाऊ ॥ १४५ ॥ ❁

हे सुमंत्र ! जहां राम लक्ष्मण और सीता हैं, वहां तू मुझेभी पहुंचा दे. नहीं तो अब मेरे प्राण जाने चाहते है. मैं यह सत्यभावसे कहता हूं सो बिलम्ब मत करे ॥ १४५ ॥

पुनि पुनि पूंछत मंत्रिहिँ राऊ ॥ प्रीतम सुवन सँदेश सुनाऊ ॥ १ ॥ ❁
सुनहु सखा सोइ करिय उपाऊ ॥ राम लषण सिय बेगि दिखाऊ ॥ २ ॥ ❁

राजा बारंबार सुमन्त्रको पूँछते है कि–हे सखा ! मुझे प्रियतम पुत्रोंका संदेशा सुनाव ॥ १ ॥ हे सखा ! सुनु, और बेग वही उपाय कर, जैसे बने वैसे मुझे राम लक्ष्मण और सीताको बेग बता दे ॥२॥

सचिव धीर धरि कहि मृदुबानी ॥ महाराज तुम पण्डित ज्ञानी ॥ ३ ॥ ❁
बीर सुधीर धुरन्धर देवा ॥ साधु समाज सदा तुम सेवा ॥ ४ ॥ ❁

राजाके वचन सुन, मनमें धीरजधर, सुमन्त्रने मधुर बाणीसे राजासे कहा कि–हे महाराज ! आप बड़े विद्वान् और विवेकी हो ॥ ३ ॥ हे देव ! आप बड़े धीर और धीरज धरनेवालोंमे अग्रणी हो. सत्पुरुषोंकी समाज और संतजनोंकी सदा सेवा करते हो ॥ ४ ॥

जन्म मरण सब दुख सुख भोगा ॥ हानि लाभ प्रिय मिलन बियोगा ॥ ५ ॥
कालकर्मबश होहिँ गुसाईं ॥ परबश राति दिवसकी नाईं ॥ ६ ॥ ❁

हे महाराज ! संसारमें जन्म, मरण, सुख, दुख, भोग, विलास, हानि, लाभ, प्रियका बियोग व संयोग ॥ ५ ॥ जो कुछ है वो सब काल व कर्मके बश होता रहता है. हे स्वामी ! यह बात परवश है. इसमें किसीका बश नहीं चलता. जैसे रात और दिन बदलतेही रहते हैं, ऐसे सुख दुःख आदि सब बदलतेही रहते हैं. यह आदमीके हाथकी बात नहीं है ॥ ६ ॥

सुख हर्षहिँ जड़ दुख बिलखाहीं ॥ दोउ सम धीर धरहिँ मनमाहीं ॥ ७ ॥
धीरज धरहु विवेक बिचारी ॥ छांड़िय सोच सकल हितकारी ॥ ८ ॥ ❁

हे महाराज ! सुखमें राजी होना और दुखमें घबराना यह मूर्खोंका काम है. जो धीरपुरुष हैं वे दोनों बातको अपने मनमें बराबर समझते हैं ॥ ७ ॥ इसलिये हे राजा ! विवेक विचार कर मनमें धीरज धरो और शोचको तजो कि, जिससे सबका भला होवे ॥ ८ ॥

दोहा–प्रथम बास तमसा भयउ, दूसर सुरसरितीर ॥ ❁
न्हायरहे जलपान करि, सियसमेत दोउ बीर ॥ १४६ ॥ ❁

हे महाराज ! यहांसे राम चले सो पहला डेरा तो तमसानदीके तटपर हुआ और दूसरा गंगाजाके तीरपर हुआ. उस दिन उन्होंने स्नान करके केवल जल मात्र पिया था. राम लक्ष्मण और सीता उन्होंने जलके सिवा कुछ नहीं लिया था ॥ १४६ ॥

केवट कीन्ह बहुत सेवकाई ॥ सो यामिनि शृंगबेर गँवाई ॥ १ ॥ ❋
होत प्रात बटक्षीर मँगावा ॥ जटामुकुट निज शीश बनावा ॥ २ ॥ ❋

गुह नाम केवटने वहां प्रभुकी बड़ी चाकरी करी और उस रात प्रभु गुहके शृंगबेर पुरमें रहे ॥ १ ॥ भोर होतेही बटका दूध मंगाये. दोनों भाइयोंने अपने सिरपर जटा मुकुट बनाया ॥ २ ॥

रामसखा तब नाव मँगाई ॥ प्रिया चढ़ाइ चले रघुराई ॥ ३ ॥ ❋
लषण धरे धनु बाण बनाई ॥ आपु चढ़े प्रभुआयसु पाई ॥ ४ ॥ ❋

फिर नाव मंगाय, उसपर सीताको चढ़ाय, प्रभु वहांसे रवाने हुए ॥ ३ ॥ लक्ष्मणने उस काल धनुषबाण चढ़ाय हाथमें लिये थे. सो वोभी प्रभुकी आज्ञा पाय, नावपर चढ़े ॥ ४ ॥

विकल विलोकि मोहिँ रघुबीरा ॥ बोले मधुर बचन धरि धीरा ॥ ५ ॥ ❋
तात प्रणाम तातसन कहेऊ ॥ बारबार पदपंकज गहेऊ ॥ ६ ॥ ❋

हे महाराज ! उस काल मैं विरहसे अति विह्वल हो रहा था. तिसे देख, मनमें धीरजधर, प्रभुने मुझको मधुर वाणीसे कहा कि– ॥ ५ ॥ हे तात ! पिताजीसे हमारा प्रणाम कहना और बारंबार हमारी ओरसे उनके चरणकमल गहना ॥ ६ ॥

करब पाँय परि विनय वहोरी ॥ तात करिय जनि चिंता मोरी ॥ ७ ॥ ❋
बनमग मंगल कुशल हमारे ॥ कृपा अनुग्रह पुण्य तुम्हारे ॥ ८ ॥ ❋

और पांव पकड़ कर फिर विनती करना कि–हे तात ! मेरी आप किसी बातकी चिंता मत करियो ॥ ७ ॥ क्योंकि आपकी कृपासे और आपके पुण्यप्रतापसे वनके मार्गमें हमारे सब प्रकारके मंगल और कुशल है ॥ ८ ॥

छंद–तुम्हरे अनुग्रह तात कानन, जात सब सुख पाइहौं ॥ ❋
प्रतिपालि आयसु कुशल देखन, पाय पुनि फिरि आइहौं ॥ ❋
जननी सकल परितोष करि, परि पाँय करि बिनती घनी ॥ ❋
तुलसी करेहु सोइ यत्न जेहि विधि, कुशल रह कोशलधनी ॥ ६ ॥ ❋

हे तात ! आपके अनुग्रहसे मैं वनमें जाता हुआ सब सुख पाऊंगा. और आपकी आज्ञाको पालकर, आपके चरणकमलोंके दर्शन करनेको फिर पीछा कुशल क्षेमसे आऊंगा. महाराज ! आपके ऐसे प्रार्थना कर, फिर कहा कि–मेरी सब माताओंको प्रसन्न कर, उनके पावोंमें पड़कर मेरी ओरसे घनी विनती करियो. तुलसीदासजी कहते हैं कि–प्रभुने मुझसे यह कहा कि–तुम वही उपाय करना कि, जिस तरह अवधके पति श्रीदशरथजी कुशल रहैं ॥ ६ ॥

सोरठा–गुरुसन कहब सँदेश, बार बार पदपद्म गहि ॥ ❋
करब सोइ उपदेश, जेहि न शोच मोहिँ अवधपति ॥ ६ ॥ ❋

गुरु वसिष्ठजीके चरणकमल धरकर यह संदेशा कहलाया है कि–आप वोही उपदेश करना कि, जिस तरह अयोध्यानाथ दशरथ मेरा शोच न करैं ॥ ६ ॥

पुरजन परिजन सकल निहोरी ॥ तात सुनावहु बिनती मोरी ॥ १ ॥ ❋

सोइ सब भांति मोर हितकारी ॥ जाते रह नरनाह सुखारी ॥ २ ॥ ❀

फिर मुझसे कहा कि–हे तात! तुम पुरके और परिवारके सब लोगोंको निहोर कर, मेरी ओरसे यही विनती कर सबको सुनाइयो कि–॥ १ ॥ मेरा हित करनेवाला मैं उसीको समझूंगा कि, जिससे राजा सब प्रकारसे सुखी रहेंगे ॥ २ ॥

कहब सँदेश भरतके आये ॥ नीति न तजब राजपद पाये ॥ ३ ॥ ❀
पालहु प्रजहिँ कर्ममनबानी ॥ सेयहु मातु सकल सम जानी ॥ ४ ॥ ❀

और भरत आजावें तब भरतको यह संदेशा कहना कि–हे भाई! तुम राजपदको पाकर नीतिको मत छोंड़ियो ॥ ३ ॥ मन क्रम वचनसे प्रजाका पालन करना और सब माताओंको बराबर जानकर सबकी बराबर सेवा करना. किसीसे दुर्भाव मत रखना ॥ ४ ॥

और निबाहब भायप भाई ॥ करि पितु मातु सुजन सेवकाई ॥ ५ ॥ ❀
तात भांति तेहिँ राखब राऊ ॥ शोच मोर जेहिँ करहिँ न काऊ॥ ६ ॥ ❀

हे भाई! और ज्यों बनें त्यों भायप निबाहना और माता पिता व स्वजन इनकी सेवा करना ॥ ५ ॥ हे भाई! राजाको तुम उसी तरह रखना कि, जिस तरह राजा मेरेतईं किसी प्रकारका शोच न करैं ॥ ६ ॥

लषण कहेउ कछु बचन कठोरा ॥ बरजि राम पुनि मोहिँ निहोरा ॥७॥ ❀
बार बार निज शपथ दिवाई ॥ कहब न तात लक्षण लरिकाई ॥ ८ ॥ ❀

उस बक्त लक्ष्मणने कुछ कठोर बचन कहे, पर रामने उसे बरज दिया और फिर मुझको निहोर कर कहा ॥ ७ ॥ और मुझे अपनी शपथ दिलाकर, कहा कि–हे तात! लक्ष्मणका लड़कपन पिताके आगे मत कहियो ॥ ८ ॥

दोहा–कहि प्रणाम कछु कहन लिय, सिय भइ शिथिल सनेह ॥ ❀
थकित बचन लोचनसजल, पुलक पल्लवित देह ॥ १४७ ॥ ❀

सीताभी प्रणाम कर कुछ कहनेके लिये तैयार हुई, पर स्नेहसे उसके सब अंग शिथिल होगये. वाणी थक गई. नेत्रोंमें जल भर आया और शरीर पुलकावलीसे व्याप्त होगया ॥ १४७ ॥

तेहिँ अँवसर रघुबर रुख पाई ॥ केवट पारहिँ नाव चलाई ॥ १ ॥ ❀
रघुकुलतिलक चले यहि भांती ॥ देखेउँ ठाढ़ कुलिश धरि छाती ॥ २ ॥ ❀

उस समय प्रभुकी रुख पाकर केवटने नावको वहांसे चला दी, सो वह परले तट पहुंची ॥ १ ॥ सुमंत्र कहता है कि इस तरह रघुकुलतिलक श्रीरामचंद्र चले, तिन्हें मैं वज्रकी छाती करके देखता खड़ा रहा ॥ २ ॥

मैं आपन किमि कहब कलेशू ॥ जिअत फिरेउँ लै रामसँदेशू ॥ ३ ॥ ❀
अस कहि सचिव बचन रहि गयऊ ॥ हानिगलानि सोचबश भयऊ ॥ ४ ॥

हे महाराज! मैं अपना क्लेश किस तरह कहूं? कि, जो मैं जीता हुआ रामका संदेशा ले पीछा फिर आया हूं ॥ ३ ॥ ऐसे कहकर सुमंत्र चुप रह गया. मुहंसे वचन निकलना बंद हो गया. वो हानि व ग्लानिसे ऐसा शोच बश होगया कि उसे कुछभी सुध न रही ॥ ४ ॥

सुनत सुमंत बचन नरनाहू ॥ परेउ धरणि उर दारुण दाहू ॥ ५ ॥ ❋
तलफत बिषम मोह मन मापा ॥ माजा मनहुँ मीन कहुँ व्यापा ॥ ६ ॥ ❋

सुमंत्रके वचन सुन राजाभी हृदयके भीतर महाकठिण दाहकी दारुणज्वाला उठनेसे जमीनपर गिर पड़े ॥ ५ ॥ राजा कठिन संतापके मारे तड़फते है और उनका मन विषम मोहके भीतर ऐसा पूर्ण हो गया है कि, मानों नये जलका फेन मछलीके मुंहमें भर गया है ॥ ६ ॥

करि बिलाप सब रोवहिँ रानी ॥ महा बिपति किमि जाइ बखानी ॥७॥❋
सुनि बिलाप दुखहू दुख लागा ॥ धीरजहू कर धीरज भागा ॥ ८ ॥ ❋

रानियां सब विलाप विलाप कर रोती है और ऐसी कठिण विपत् छा गई है कि, कुछ कह नहीं सकते ॥ ७ ॥ हे भवानी ! उस काल वहां ऐसा दुख छा गया था कि, जिसे देख, दुख भी दुखी होता था और धीरजकी भी धीरज नाश होगयी थी ॥ ८ ॥

दोहा–भयउ कोलाहल अवध अति, सुनि नृपराउर शोर ॥ ❋
बिपुल बिहँग बन परेउ निशि, मानहुँ कुलिश कठोर ॥ १४८ ॥ ❋

राजाके अन्तःपुर (जनाने) का शोर सुनकर सारी अयोध्याके भीतर ऐसा कुहरा पड़गया कि, मानों किसी वनके भीतर बहुतसे पक्षी रहते हो और उनके ऊपर रात्रिके समय कठोर वज्रपात हुआ हो. वो दशा अयोध्याकी हो गयी ॥ १४८ ॥

प्राण कण्ठगत भयउ भुआलू ॥ मणिबिहीनजिमि ब्याकुल व्यालू ॥ १ ॥
इन्द्रिय सकल बिकल भईं भारी ॥ जनु सर सरसिजबन बिनुबारी ॥२ ॥❋

राजाके प्राण कंठमें चले आये है. मानों सांप मणि बिना व्याकुल हो तड़फड़ा रहा है ॥ १ ॥ और राजाकी सब इन्द्रियां कैसी भारी विकल होगई है कि, मानों जल बिना तालावमेंके कमलोंका बन सूख रहा है ॥ २ ॥

कौसल्या नृप दीख मलीना ॥ रबिकुलरबि अथये जनु दीना ॥ ३ ॥ ❋
उर धरि धीर राममहतारी ॥ बोली बचन समय अनुहारी ॥ ४ ॥ ❋

कौसल्याने राजा दशरथकी मलीन दशा देखकर, मनमें जाना कि–अब सूर्यवंशके सूर्य (दशरथजी) अस्त होना चाहते है ॥ ३ ॥ ऐसे जान, रामकी माता कौसल्या मनमें धीरज धर, समयके अनुसार यह बचन बोली ॥ ४ ॥

नाथ समुझि मन करिय बिचारू ॥ रामबियोगपयोधि अपारू ॥ ५ ॥ ❋
कर्णधार तुम अवधि जहाजू ॥ चढ़ेउ सकल प्रिय बणिक समाजू ॥ ६ ॥ ❋

कि–हे नाथ ! समझ कर मनमें विचार करो कि, रामचन्द्रके वियोगरूप समुद्रका पारावार नहीं है ॥ ५ ॥ सो इस अथाह समुद्रके भीतर आप तो कर्णधार (केवट) हो और चौदह वर्षकी अवधि है सोही जहाज है. तिसपर जो प्रियबंधु है सोही बनियोंके समूहके समान साथ बनाके चढ़ा है ॥ ६ ॥

धीरज धरिय तो पाइय पारू ॥ नाहिँत बूड़हि सब परिवारू ॥ ७ ॥ ❋

जो जिय धरिय बिनय पिय मोरी ॥ राम लषण सिय मिलब बहोरी ॥ ८ ॥

अब जो आप यहां धीरज धरोगे, तब तौ पार पाजावेंगे और नहीं तौ सब परिवार बूड़ जायगा ॥ ७ ॥ हे प्रभु ! जो आप मेरी बिनती हृदयमें धरोगे तौ राम लक्ष्मण और सीता पीछे अवश्य मिल जायंगे ॥ ८ ॥

दोहा--प्रिया बचन मृदु सुनत नृप, चितयउ आंखि उघारि ॥ ❋
तलफत मीन मलीन जनु, सींचत शीतल बारि ॥ १४९ ॥ ❋

राजा दशरथने प्रिया कौसल्याके कोमल वचन सुन, आंख उघारके देखा, कौसल्याके वचन क्या हैं ? मानों तलफतेहुए दुःखी मीनपर शीतल जल सींचा है ॥ १४९ ॥

धरि धीरज उठि बैठु भुआलू ॥ कहु सुमन्त कहँ राम कृपालू ॥ १ ॥ ❋
कहाँ लषण कहँ राम सनेही ॥ कहँ प्रियपुत्रबधू बैदेही ॥ २ ॥ ❋

राजा दशरथ मनमें धीरज धर उठ बैठे और बोले कि--हे सुमंत ! कह, राम कहां है ? ॥ १ ॥ हे भैया ! कहो, लक्ष्मण कहां है ? और प्यारा राम कहां है ? और प्रिय पुत्र रामकी बधू सीता कहां है ? ॥ २ ॥

बिलपत राउ बिकल बहुभांती ॥ भइ युग सरिस सिराति न राती ॥ ३ ॥ ❋
तापस अन्ध शाप सुधि आई ॥ कौशल्यहिँ सब कथा सुनाई ॥ ४ ॥ ❋

इस तरह राजा अनेक प्रकारसे विलाप करता है. रात्रि युगके समान होगई. किसीकदर पूरी होती दीखती नहीं है ॥ ३ ॥ उस समय दशरथजीको अंध तपस्वीके श्रापकी सुध आई. तब वो सब कथा विस्तारपूर्वक कौसल्यासे कही ॥ ४ ॥

---

१ दशरथजीने कौसल्यासे कहा है कि--हे प्रिये ! जब तेरा पाणिग्रहण नहीं हुआ था, तब मैं शिकार करने सरयूके तीरपर गया था मैं शब्दवेधी था यानी जहांसे शब्द आता वहीं बाण लगाता सो वह सीधा वहीं जाकर लगता. एक दिन श्रावण अपने अंधे माता पिताको आश्रममें प्यासे छांड़, जल भरने नदीपर आया. उसने ज्योंही घड़ा भरना शुरू किया,त्योंही उसके भरते ऐसा शब्द हुआ कि मानों हाथो जल पीता है.उसी भ्रमसे मैंने तीर मारा जिससे वो श्रावण धरतीपर गिर पड़ा उसने गिरते२ऐसे कहा कि--मुझ निरपराधी तपस्वीको इसने क्यों मारा है ? मुझसे वो क्या चाहता है ? सिवाय हत्याके और उसको हमारे मारनेसे कुछ न मिलना है. और मुझको जितना माता पिताका शोच है इतना मेरा नहीं है; क्योंकि वे विचारे अंधे मेरे विना अपना निर्वाह किस प्रकार करेंगे ? अब उन प्यासोंको जल लेजाकर कौन पिलावेगा ? ऐसी मनुष्यवाणी सुन मैं उसके पास गया, तब उसने कहा कि--हे राजा ! मैं ब्राह्मण नहीं हूं सो तू ब्रह्महत्याके पातकसे मत डरे; परंतु मेरे माता पिता प्यासे बैठे मेरी राह देखते हैं अब तू यह पानीका घड़ा ले इस पगडंडीसे उनके पास जा और उन्हें जल प्याव नहीं तौ वे तुझे श्राप देंगे. श्रावणके वचन सुन मैं उनके पास गया, तब वे दोनो बोले कि--हे बेटा ! हमने कुछ अपराध किया हो तौ तुझे क्षमा करना चाहिये. तू इतनी देरी लगाके क्यों आया ? हमारे तौ केवल तेराही आधार है. हम प्यासे मरते हैं. उनके ये वचन सुन मैंने उनके पास जाके कहा कि--मैं आपका पुत्र नहीं हूं, मैं राजा दशरथ हूं. मुझसे यह महाघोर अपराध बनि आया है, सो क्षमा कीजिये. मेरे ऐसे वज्रपातके समान निठुर वचन सुन वे दोनों बहुत विलाप कर कर रोये और बोले कि--जैसे तूने हमे पुत्रका वियोग कराय मारा है, ऐसे तेराभी मरण पुत्रके वियोगसे होगा क्योंकि जो करता है उसे उसका फल अवश्य भोगना पड़ता है. और तूने आकर जो सच कह दिया इससे तेरे शिरके सो टुकड़े नहीं हुए. जो तू यहां आकर नहीं कहता तौ तेरे शिरके टुकड़े टुकड़े होजाते. अब तू हमें हमारे पुत्रके पास ले चल जहां तूने मारा है. दशरथजो कहते हैं कि--हे कौसल्या ! फिर मैं उन्हें उठाय श्रावणके पास लाया तब वे उससे आलिंगन कर शरीरको तज स्वर्गको प्राप्त हुए. हे प्रिये ! मैंने जो कर्म किया था, उसका फल अब लगा है. लोकमें जो कहते हैं कि--जो हँस हँस कर करते हैं वो रो रो कर भुगतना पड़ता है सो सत्य है.

उभय बिकल बरणत इतिहासा ॥ रामरहित धिक जीवन आसा ॥ ५ ॥ ❃
सो तनु राखि करब मैं काहा ॥ जेहिँ न प्रेम पन मोर निबाहा ॥ ६ ॥ ❃

राजा श्रावणकी कथा कहते २ विकल हो ऐसे कहने लगे कि–रामके बिना जीवनकी आशाको ही धिक्कार है ॥ ५ ॥ राजा मनमें कहते है कि–उस शरीरको मेरे रखकरही क्या करना है? कि, जिसने मेरे प्रेमका पनही नहीं निबाहा ॥ ६ ॥

हा रघुनन्दन प्राणपिरीते ॥ तुम बिनु जिअत बहुत दिन बीते ॥ ७ ॥ ❃
हा जानकी लषण हा रघुबर ॥ हा पितुहित चित चातक जलधर ॥ ८ ॥ ❃

हा प्राणप्रिय राम! हा रघुनन्दन! अब तो मुझे तुम्हारे विना जीते बहुत दिन हो गये है ॥ ७ ॥ हा सीता! हा लक्ष्मण! हा रघुबर! तुम मेरे हितकारी चित्तरूप चातकको संतुष्ट करनेके लिये मेघरूप हो. सो मेरे इस असह्य क्लेशको शांत करो ॥ ८ ॥

दोहा–राम राम कहि राम कहि, राम राम कहि राम ॥ ❃
तनु परिहरि रघुबरबिरह, राउ गये सुरधाम ॥ १५० ॥ ❃

राजा दशरथजी राम! राम!! ऐसे कह, राम! ऐसे कह, राम! राम!! राम!!! ऐसे कह, प्रभुके विरहसे शरीरको तज कर, स्वर्गलोकको सिधारे ॥ १५० ॥

जियन मरणफल दशरथ पावा ॥ अण्ड अनेक अमल यश छावा ॥ १ ॥ ❃
जिअत राम बिधुबदन निहारी ॥ राम बिरह मरि मरण सँवारी ॥ २ ॥ ❃

हे भवानी! जीने और मरनेका फल तो सच्चा राजा दशरथनेही पाया कि, जिसका यश सारे संसार और अनेक ब्रह्मांडोंमें छा रहा है ॥ १ ॥ उन्होंने अपना जीना तो रामचन्द्रजीके मुखकमलको निरखकर सुधारा. और प्रभुके विरहसे मरकरभी अपना मरण सुधार लिया ॥ २ ॥

शोकबिकल सब रोवहिँ रानी ॥ रूप शील बल तेज बखानी ॥ ३ ॥ ❃
करहिँ बिलाप अनेक प्रकारा ॥ परहिँ भूमि तल बारहिँ बारा ॥ ४ ॥ ❃

रानियां सब शोकसे विह्वल हो बिसूर बिसूर रोतीं हैं और राजा व रामके रूप, शील, बल व तेजको बखानतीं है ॥ ३ ॥ अनेक प्रकारसे विलाप करतीं हैं और बारबार मूर्छित हो धरतीपर पड़तीं हैं ॥ ४ ॥

बिलपहिँ बिकल दास अरु दासी ॥ घर घर रुदन करहिँ पुरबासी ॥ ५ ॥
अथयउ आजु भानुकुल भानू ॥ धर्म अवधि गुणरूप निधानू ॥ ६ ॥ ❃

दास और दासियां विकल हो होकर विलाप करतीं है. और घर घरमें नगरके नरनारी रुदन कर रहे हैं ॥ ५ ॥ लोग इसप्रकार कहते हैं और रुदन करते हैं कि, आज सूर्यकुलका सूर्य अस्त हो गया. कि, जो धर्मकी अवधि और गुण व रूपका भंडार था ॥ ६ ॥

गारी सकल केकइहिँ देहीं ॥ नयनबिहीन कीन्ह जग जेहीं ॥ ७ ॥ ❃
यहिबिधि बिलपत रैन बिहानी ॥ आये सकल महामुनि ज्ञानी ॥ ८ ॥ ❃

सब लोग कैकयीको गालियां देते हैं कि, जिसने सब विश्वको नेत्रहीन कर दिया है ॥ ७ ॥

इस तरह विलाप करते करते सारी रात बीत गई और भोर हुआ, तब सब ज्ञानी महामुनि आये ॥ ८ ॥

दोहा–तब बसिष्ठ मुनि समय सम, कहि अनेक इतिहास ॥ ❀
शोक निबारेउ सकल कर, निज बिज्ञान प्रकास ॥ १५१ ॥ ❀

वसिष्ठजीने आतेही अनेक प्रकारके समयानुसार इतिहास कहकर अपने ज्ञानके प्रभावसे सब लोगोंका शोच मिटाया ॥ १५१ ॥

(क्षेपक) कह बशिष्ठ मन धीरज धरहू ॥ धर्म बिचार शोच परिहरहू ॥ १ ॥ ❀
जो जनमत सो मरत बिशेषी ॥ देह दशा यह अघटित देखी ॥ २ ॥ ❀

वसिष्ठ मुनि कहते है कि– आप लोग मनमें धीरज धरो. और धर्मका विचार करके शोकको तज दो ॥ १ ॥ हे भैया ! जो जन्मेगा वो अवश्य मरेगा. यह जो देहकी अघटित दशा है, जिसे सब कोई देखते हैं और जानते हैं ॥ २ ॥

कनककशिपु हिरण्याक्ष सरीखे ॥ गुणिनकेर गुण गुणियत लीखे ॥ ३ ॥ ❀
सगर सहसभुज आदि नरेशा ॥ सुमिरन मात्र रहे अतुलेशा ॥ ४ ॥ ❀

देखो, हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष जैसे बड़े बली योधा हुए, उनकेभी केवल गुणमात्र गुणी पुरुषोंने गुणग्राही पुरुषोंके बीच लिखे है. वे आज दिन स्थिर नहीं है ॥ ३ ॥ फिर सगर और सहस्रार्जुन आदि बड़े २ बली राजा हुए, वेभी आज केवल स्मरणमात्रको रह गये हैं ॥ ४ ॥

जिनके रथपहियनते सागर ॥ भयो सो भये कालबश नागर ॥ ५ ॥ ❀
पूर्व कर्म अनुसार जहाना ॥ हरत मौत करि बिबिधि बहाना ॥ ६ ॥ ❀

देखो जिस (प्रियव्रत) के रथके पहियोंसे ये सात समुद्र और सात द्वीप हुए, वो प्रियव्रत राजाभी कालका कवल हो गया है ॥ ५ ॥ इस सारे संसारको मृत्यु पूर्वकर्मके अनुसार अनेक प्रकारके बहाने करके हरही लेती है ॥ ६ ॥

प्रथम सृष्टि जब रची बिधाता ॥ लहै न तहँ कोइ जीव निपाता ॥ ७ ॥ ❀
तब रचि मौत बधायसु दीन्हा ॥ अयस समुझि त्यहिँ रोदन कीन्हा ॥ ८ ॥ ❀

जब विधाताने प्रथमही प्रथम सृष्टि रची तो उसमें कोई जीव मरता नहीं था ॥ ७ ॥ तब उसने मृत्युको रचकर आज्ञा दी कि–तू तब संसारका बध किया कर, मृत्युने इस कामसे अपना अपयश समझकर विधाताके पास रुदन किया कि,मैं तो यह काम नहीं करूंगी; क्योंकि इसमें मेरा अपयश बहुत है ॥ ८ ॥

आंसुनते भे रोग घनेरे ॥ कह बिधि ए सब संचर तेरे ॥ ९ ॥ ❀
इनके ओट हरौ तुम प्रानी ॥ करत सोइ बिधि आज्ञा मानी ॥ १० ॥ ❀

तहां जो मृत्युके आंसू बहे तिनसे अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न हुए; तिन्हें देख ब्रह्माने मृत्युसे कहा कि– हे मृत्यु ! ये सब तेरे चेरे है ॥ ९ ॥ सो अब तू इनकी ओट लेकर सब प्राणीमात्रका संहार कर. तेरा अपयश नहीं होगा. तबसे यह मृत्यु विधाताकी आज्ञा मानकर, उसी तरह कुछ बहाना लेकर अपना काम निकालती है ॥ १० ॥

दोहा-मेदिनि मेरु अजादि सुर, सो यकदिन नशि जात ॥ ❀
गज श्रुति सम नरआयु चर, ताकी कौन बिसात ॥ १ ॥ ❀

जहां पृथ्वी, सुमेरगिरि, व ब्रह्मादिक देवता येभी एक रात दिनमें नाश हो जाते है, तहां जिसकी आयु हाथीके कानके समान चंचल है, उस मनुष्यकी कौन बिसात है ? ॥ १ ॥

लही बड़ाई भूपबर, हरिहित परिहरि देह ॥ ❀
षट बिकार परते परे, आतम आनँद गेह ॥ २ ॥ ❀

राजा दशरथने हरि भगवानके लिये अपना शरीर त्यागकर बड़ी भारी बड़ाई पाई है. अतएव वे अस्ति जायते, वर्द्धते, क्षीयते आदि छओं विकारोंसे रहित, और परसेभी पर तथा आत्मानंदके धाम हो गये है ॥ २ ॥

छेदि सकै नहिँ शस्त्र ज्यहिँ, पावक सकै न जारि ॥ ❀
मारुत सकै न शोक यहि, बोरि सकै नहिँ बारि ॥ ३ ॥ ❀

हे भैया ! सुनो, उस आत्माको शस्त्र तौ काट नहीं सकते है और आग जला नहीं सकती है. और वायु सुखा नहीं सकती है. तथा जल डुबाय नहीं सकता है ॥ ३ ॥

जिमि बिहाय जीरण बसन, धारत मनुज नवीन ॥ ❀
तिमि देही तनु जीर्ण तजि, नूतन गहत प्रबीन ॥ ४ ॥ ❀

जैसे मनुष्य पुराने कपड़े उतार कर नवीन वस्त्र धारण करता है, ऐसे आत्मा जीर्ण शरीरको तजकर, नया शरीर धारण करता है ॥ ४ ॥

आदि अंत अव्यक्त है, मध्य जासु कछु व्यक्त ॥ ❀
त्यहि आतमके हेतुकी, करहु कल्पना त्यक्त ॥ ५ ॥ ❀

जिसका आदि अंत और मध्य कुछभी प्रगट नहीं है और कुछ प्रगटभी है, उस आत्माके हेतुकी जो तुम अपने मनमें कल्पना करते हो उसे छोड़ दो ॥ ५ ॥

रोये जो मिलि जाय त्यहि, रोवै भलै पुकारि ॥ ❀
जो न मिलै रघुनाथ तौ, धीरज धरै बिचारि ॥ ६ ॥ ❀

जो रोनेसे मिल जाय तब तौ उसके लिये पुकारकर रोना ही ठीक है, परंतु जो रोनेपरभी न मिले तौ उसके लिये तौ विचार कर धीरज धरनाही अच्छा है ॥ ६ ॥

सज्जनके संसर्गसे, करय न मानस ताप ॥ ❀
मिटी मिटित मिटिहै न सुनि, त्यागो सबन कलाप ॥ ७ ॥ ❀

सत्पुरुषोंकी संगतिका फल यही है कि, आदमी मनमें किसी प्रकारका संताप न करे, बाकी यह तौ तुम निश्चय करके जानो कि, जो होना है वह तौ होगा ही. वह न तौ किसीका मिटा है, न मिटता है और न मिटैगा. इस बातको सुनकर, तुम सब शोच कलापको तजो ॥ ७ ॥ ॥ इति ॥

तेल नाव भरि नृपतनु राखा ॥ दूत बुलाइ बहुरि अस भाखा ॥ १ ॥ ❀
धावहु बेगि भरतपहँ जाहू ॥ नृप सुधि कतहुँ कहहु जनि काहू ॥ २ ॥ ❀

मुनि वसिष्ठजीने नाव बनवाय, उसमें तेल भर, उसके भीतर दशरथजीका शरीर रख, फिर दूतोंको बुलाकर ऐसे कहा कि– ॥ १ ॥ तुम दौड़कर जल्दी भरतके पास जाओ; परंतु वहां किसीको राजाके मरणके समाचार मत कहियो ॥ २ ॥

इतनै कहेउ भरतसन जाई ॥ गुरु बुलाइ पठये दोउ भाई ॥ ३ ॥ ❋
सुनि मुनिआयसु धावन धाये ॥ चले बेगि बर बाजि लजाये ॥ ४ ॥ ❋

भरतके पास जाकर तुम केवल इतनाही कहियो कि–'आप दोनों भाइयोंको गुरु वसिष्ठजीने बुला भेजा है' ॥ ३ ॥ मुनिकी आज्ञा सुन, दूत दौड़तेहुए अयोध्यासे चले. तिनके बेगको देख अच्छे अच्छे घोड़े लजाते थे ॥ ४ ॥

अनरथ अवध अरंभेउ जबते ॥ कुशकुन होहिँ भरत कहँ तबते ॥ ५ ॥❋
देखहिँ रात भयानक सपना ॥ जागि करहिँ बहु कोटि कल्पना ॥ ६ ॥❋

हे भवानी ! जबसे अयोध्याके भीतर अनर्थका आरंभ हुआ, तबसे भरतको बुरे कुशकुन होने लगे ॥ ५ ॥ जो भरत रातमें भयंकर स्वप्न देखते हैं, तो जागकर मनमें अनेक प्रकारकी करोड़ों कल्पना करते हैं ॥ ६ ॥

बिप्र जेंवाइ देहिँ बहु दाना ॥ शिव अभिषेक करहिँ बिधि नाना ॥ ७ ॥❋
माँगहिँ हृदय महेश मनाई ॥ कुशल मातु पितु परिजन भाई ॥ ८ ॥ ❋

और उसके दोषपरिहारार्थ ब्राह्मणभोजन कराके उन्हें अनेक प्रकारके दान देते हैं. और अनेक प्रकारसे महादेवजीका अभिषेक करते हैं ॥ ७ ॥ और महादेवजीसे मनही मन मनाय, प्रार्थना करता है कि, मेरे माता पिता और परिजन व भाई कुशल रहैं ॥ ८ ॥

दोहा–यहिविधि शोचत भरत मन, धावन पहुँचे जाइ ॥ ❋
गुरु अनुशासन श्रवण सुनि, चले गणेश मनाइ ॥ १५२ ॥ ❋

भरत इसप्रकार मनमें शोच करता था, इतनेमें धावन (दूत) भरतके पास जा पहुंचे. भरतजी गुरुकी आज्ञा सुनतेही गणेशजीको मनाकर, वहांसे चल दिये ॥ १५२ ॥

"भूतादिन तहँ पहुँचे जाई ॥ गुरुनिदेश सुनि दोनहुँ भाई ॥ १ ॥ ❋
चपल बाजि चढ़ि तुरत सिधाये ॥ कुहूदिवस निज नगरहिँ आये" ॥२ ❋

"अयोध्याके दूत भरतके पास चतुर्दशीको जा पहुंचे. सो उनके मुखसे गुरुकी आज्ञा सुन, दोनों भाई ॥ १ ॥ तुरंत तेज घोड़ोंपर चढ़, रवाना हुए, सो अमावास्याके दिन अपने नगरमें आ पहुंचे" ॥ २ ॥

चले समीर बेग हय हाँके ॥ लाँघत सरित शैल बन बाँके ॥ ३ ॥ ❋
हृदय शोच बड़ कछु न सोहाई ॥ अस जानहिँ जिय जांउ उड़ाई ॥ ४॥ ❋

जिनका बेग वायुसेभी अति प्रबल हैं, घोड़ोंको जो दबाकर हांका तिससे वे नदियां, पहाड़ और बांके वनोंको लांघतेहुए ऐसे चले कि, पवनभी क्या जायगा ? ॥ ३ ॥ भरतके मनमें जो भार शोच है तिससे उसे कुछ नहीं सुहाता है और मनमें ऐसे जानते हैं कि, मैं उड़कर चला जाऊं ॥ ४ ॥

एकनिमेष बर्षसम जाई ॥ यहि बिधि भरत नगर नियराई ॥ ५ ॥ ❋

अशकुन होहिँ नगरपैठारा ॥ रटहिँ कुभांति कुखेत करारा ॥ ६ ॥ ❋

भरतका एक एक क्षण वर्षके समान बीतता है, इसतरह भरतने अयोध्याको नियराय लिया ॥ ५ ॥ नगरमें प्रवेश करते समय भरतके अनेक प्रकारके कुशकुन होते है और कुखेतके भीतर बुरी तरह कराल जन्तु बुरे शब्द करते है ॥ ६ ॥

खर शृगाल बोलहिँ प्रतिकूला ॥ सुनि सुनि होहिँ भरत उर शूला ॥ ७ ॥

श्रीहत सर सरिता बन बागा ॥ नगर बिशेष भयावन लागा ॥ ८ ॥ ❋

गधे व सियार बहुत बुरे प्रतिकूल बोलते हैं. जिनका शब्द सुन सुनकर, भरतके हृदयमें महादुःख होता है ॥ ७ ॥ तालाव, नदियां, बाग, बगीचे, वन और नगर सब छबिछीन हो गये है. अतएव उन्हें देखकर मनमें डर लगता है ॥ ८ ॥

खग मृग हय गज जाहिँ न जोये ॥ रामबियोग कुयोग बिगोये ॥ ९ ॥ ❋

नगर नारि नर निपट दुखारी ॥ मनहुँ सबनि सब सम्पति हारी ॥ १० ॥ ❋

पशु, पक्षी, हाथी, घोड़े आदि कोईभी देखे नहीं जाते. मानों रामचन्द्रजीके बियोगरूपी कुयोगने उन्हें बिगोय लिया है ॥ ९ ॥ नगरके सारे नर नारी महा दुःखी है. मानों सबके सब अपनी सब संपदा हार गये है ॥ १० ॥

दोहा-पुरजन मिलहिँ न कहहिं कछु, गवहिँ जोहारहिँ जाहिँ ॥ ❋

भरत कुशल पूंछि न सकहिँ, भयबिषाद मनमाहिँ ॥ १५३ ॥ ❋

यद्यपि पुरके लोग भरतको बहुतसे मिलते है, पर कोईभी कुछभी नहीं कहता है. जो मिलता है वह जोहारकर चला जाता है. और भरतभी मनमें भय और विषाद होनेके कारण उन्हें कुशल पूँछ नहीं सकते है ॥ १५३ ॥

हाट बाट नहिँ जाइ निहारी ॥ जनु पुर दश दिशि लागि दवारी ॥ १ ॥ ❋

आवत सुत सुनि केकय नन्दिनि ॥ हरषी रबिकुल जलरुह चंदिनि ॥ २ ॥ ❋

भरत जो इधर उधर देखते है सो उससे हाट और बाटकी तर्फ कैसे देखा नहीं जाता कि, मानों पुरीके चारों ओर दवानलही लग गई है ॥ १ ॥ भरत आते हैं ये समाचार सुन, कैकेयी बहुत प्रसन्न हुई. कि,जो सूर्यकुलरूपी कमलवनके लिये साक्षात् चन्द्रमाकी चांदनी ही है ॥ २ ॥

सजि आरती मुदित उठि धाई ॥ द्वारहिँ भेंटि भवन लै आई ॥ ३ ॥ ❋

भरत दुखित परिवार निहारी ॥ मानहुँ तुहिन बनज बन मारी ॥ ४ ॥ ❋

कैकेयी आरती सज प्रसन्न चित्त हो, उठकर दौड़ी. सो भरतसे द्वारपरही भेंटकर, उसे अपने घरमें ले आई ॥ ३ ॥ अपने परिवारको दुःखी देखकर, भरतकी यह दशा हो रही है कि, मानों पालेने कमलवनको मार, छिन्न भिन्न कर दिया है ॥ ४ ॥

कैकेयी हर्षित यहि भांती ॥ मनहुँ मुदित दव लाइ किराती ॥ ५ ॥ ❋

सुतहिँ सशोच देखि मन मारे ॥ पूंछति नैहर कुशल हमारे ॥ ६ ॥ ❋

और कैकेयी उस समय इसतरह प्रसन्न है कि मानों किरातनी वनके चारों ओर दवानल लगाकर आनंदित हुई है ॥ ५ ॥ अपने पुत्र भरतको शोच सहित और मनमारे देखकर कैकयीने भरतसे पूंछा कि-हे तात ! हमारे पिताके घर कुशल तो है ? ॥ ६ ॥

सकल कुशल कह भरत सुनाई॥ पूंछी निज कुल कुशल भलाई॥ ७॥ ❋
कहु कहँ तात कहां सब माता॥ कहँ सिय राम लषण प्रिय भ्राता॥ ८॥ ❋

भरतने वहांका कुशल कह, सारे समाचार सुनाये, फिर अपने कुलके कुशल व भलाईके विषयमें पूंछा॥ ७॥ भरतने कहा कि–हे माता! कहो, हमारे पिता दशरथजी कहां है? और सब मातायें कहां हैं? और मेरे प्यारे भाई राम लक्ष्मण और सीता कहां हैं?॥ ८॥

दोहा–सुनि सुतबचन सनेहमय, कपट नीर भरि नैन॥ ❋
भरत श्रवण मन शूलसम, पापिनि बोली बैन॥ १५४॥ ❋

पुत्रके ऐसे स्नेहमय वचन सुन, नेत्रोंमें कपटसे जल भर, वो पापिनी ये बचन बोली कि, जो भरतके मन व कानोंको शूलके समान अतिशय दारुण लगे॥ १५४॥

तात बात मैं सकल सवाँरी॥ भइ मन्थरा सहाय बिचारी॥ १॥ ❋
कछुक काज बिधि बीच बिगारेउ॥ भूपति सुरपतिपुर पगु धारेउ॥ २॥ ❋

कैकेयीने कहा कि–हे तात! बात तो सब बिगड़ गयी थी, पर मैंने पीछी ज्यों त्यों करके सारी सुधार ली है. बिचारी इस मन्थराने उस काममें बड़ी सहायता दी है॥ १॥ उसके बीच विधाताने कुछ थोड़ासा काम बिगाड़ दिया कि, राजा दशरथजी स्वर्गको पधार गये॥ २॥

सुनत भरत भये बिबिश बिषादा॥ जनु सहमेउ करि केहरि नादा॥ ३॥ ❋
तात तात हा तात पुकारी॥ परेउ भूमितल ब्याकुल भारी॥ ४॥ ❋

कैकेयीके ये वचन सुनकर भरत ऐसे विषाद दुःखवश हो गये कि, मानों सिंहकी गर्जना सुनकर हाथी सहम गया (दुःखी हो गया) है॥ ३॥ हा तात! हा तात!! हा तात!!! ऐसे पुकारकर अति व्याकुल भरत मूर्छित होकर पृथ्वीपर गिर गये॥ ४॥

चलत न देखन पायउँ तोहीं॥ तात न रामहिँ सौंपेउ मोहीं॥ ५॥ ❋
बहुरि धीर धरि उठे सँभारी॥ कहु पितुमरण हेतु महतारी॥ ६॥ ❋

हाय! मै बड़ा मंदभागी हूं. मैं आपको स्वर्गलोक सिधारतेभी न देखने पाया. हा तात! आपने यह क्या किया कि, मुझे रामचन्द्रजीको नहीं सौंपा?॥ ५॥ ऐसे रुदनकर फिर मनमें धीरज धर सँभारकर भरत उठ बैठा और मातासे पूंछने लगा कि–हे माता! कहो, पिता किस सबबसे मेरे॥ ६॥

सुनि सुतबचन कहति कैकेई॥ मर्म पाछि जनु माहुर देई॥ ७॥ ❋
आदिहिँते सब अपनि करणी॥ कुटिल कठोर मुदित मन बरणी॥ ८॥ ❋

तब पुत्रके वचन सुन कैकेयीने ऐसे वचन कहे कि, मानों कोई मर्मको पाछि कर उसमें विष भरता है॥ ७॥ कैकेयीने प्रसन्नचित्तसे आदिसे आखीरतककी अपनी सब करनी कही कि, जो महा कुटिल और कठोर थी॥ ८॥

दोहा–भरतहिँ बिसरेउ पितुमरण, सुनत रामबनगौन॥ ❋
हेतु अपन पुनि जानि जिय, थकित रहे धरि मौन॥ १५५॥ ❋

जब भरतने रामचन्द्रजीके वनवासके समाचार सुने, तो वे पिताके मरणको तो भूल गये.

और प्रभुके वनमें जानेका कारण अपनेको समझकर वो मनही मनमें थकित हो मौन धर रह गया ॥ १५५ ॥

विकल बिलोकि सुतहिँ समुझावति ॥ मनहुँ जरेपर लोन लगावति ॥ १ ॥ ❋
तात राउ नहिँ शोचन योगू ॥ बड़ेउ सुकृत यश कीन्हेउ भोगू ॥ २ ॥ ❋

तब पुत्रको विकल हुआ देख, वो उसे समझाने क्या लगी कि, मानों जलेपर लोन लगाने लगी ॥ १ ॥ कैकेयीने कहा कि–हे तात ! राजा शोच करनेके योग्य नहीं है, क्योंकि उन्होने तौ अपने हाथोंसे बड़े २ सुकृत (पुण्य) और जस किये है और अनेक प्रकारके भोग भोगे है ॥ २ ॥

जीवत सकल जन्म फल पाये ॥ अन्त अमरपति सदन सिधाये ॥ ३ ॥ ❋
अस अनुमानि शोच परिहरहू ॥ महित समाज राज पुर करहू ॥ ४ ॥ ❋

उन्होंने अपने जन्मके सब फल जीतेजी पालिये है और आखिरमें इंद्रके घर यानी स्वर्गको सिधारे है ॥ ३ ॥ हे तात ! मनमें ऐसा विचार कर शोचको त्याग दो और राजसमाजके साथ अयोध्यापुरीका राज करो ॥ ४ ॥

सुनि सुठि सहमेउ राजकुमारा ॥ पाके क्षत जनु लागु अँगारा ॥ ५ ॥ ❋
धीरज धरि भरि लेहिँ उसाशा ॥ पापिनि सबहिँ भांति कुलनाशा ॥ ६ ॥

कैकेयीके ये वचन सुनकर भरत अत्यंत दुखित हो गये. मानों पकेहुए घावपर अंगार लगा ॥ ५ ॥ फिर वो धीरज धर लंबे २ निसासे डालकर बोला कि–हे पापिनी ! तूने हमारे कुलका सब प्रकारसे नाश कर डाला ॥ ६ ॥

जो पै कुरुचि रही असि तोहीं ॥ जनमत काहे न मारेसि मोहीं ॥ ७ ॥ ❋
पेड काटि तैं पल्लव सींचा ॥ मीन जियन हित बारि उलीचा ॥ ८ ॥ ❋

जो मुझपर तेरी ऐसी अप्रीति थी तो तूने मुझे जनमतेही क्यों नहीं मार डाला ? ॥ ७ ॥ जैसे कोई पेड़को काटकर पल्लव (पत्ता) को सींचा और मछलीके जीवनका कारण जल उलीच लेवे ऐसा काम तूने यह किया है ॥ ८ ॥

दोहा–हंस बंश दशरथ जनक, राम लषणसे भाइ ॥ ❋
जननी तू जननी भई, बिधिते कहा बसाइ ॥ १५६ ॥ ❋

भरत कहते हैं हे पापिनी ! क्या कहूं ? विधाताके आगे कुछ चल नहीं सकता. बाकी मैं कि, जिसका परम पवित्र सूर्यवंश है. दशरथजी जैसे पिता हैं और राम लक्ष्मण जैसे भाई हैं तिसके तेरे जैसी माता क्यों ? कि–जो तू तेरी माताके जैसी महा निर्दयी और पतिका प्राण लेनेवाली हुई है ॥ १५६ ॥

कैकेयीका पिता कैकय राजाको एकऋषिने वरदान दिया था जिससे वो "सर्वरुतज्ञ" हो गया था, यानी सब प्राणीमात्रकी भाषा समझ जाता था. एक दिन तेरी माता और राजा कैयय सोये थे, तहां एक गिरगिट बोला तिसका शब्द सुनकर राजा हंस दिया तब तेरी माताने राजासे कहा कि मुझे सच कहदो. तुम क्यों हँसे? तब राजाने कहा कि–मैं योंही हँसा हूं कोई सबब नहीं है. तब रानीने बड़ा हठ किया. आखिर राजाने कहा कि–तू यह हठ छोंड दे, क्योंकि जो मैं तुझे यह बात कहूंगा तौ मेरे प्राण पड़ जांयगे. क्योंकि–मुझे मुनिका कहा हुआ है कि–जो तू किसीको कहेगा तो मर जायगा. इसलिये तू हठ मत कर. राजाके ऐसे कहनेपरभी रानी न मानी, तब राजा रानीको साथ ले काशीमें गया. वहां वो बात कहतेही राजाका शरीर पड़ गया.

जबते कुमति कुमत मन ठयऊ ॥ खंड खंड होइ हृदय न गयऊ ॥ १ ॥ ❋
बर मांगत मन भइ नहिँ पीरा ॥ जरि न जीह मुँह परेउ न कीरा ॥ २ ॥ ❋

भरतने कहा कि–हे कुबुद्धि ! जबसे तूने यह कुमति विचारी है, तबसे तेरे हृदयके टूक टूक क्यों नहीं हो गये ? ॥ १ ॥ हाय ! यह बर मांगते तेरे मनमें दुख नहीं हुआ ? हाय ! तेरी जीभ जल न गयी ? हाय ! तेरे मुंहमें कीड़े नहीं पड़ गये ? ॥ २ ॥

भूप प्रतीति तोरि किमि कीन्ही ॥ मरणकाल बिधि मति हरि लीन्ही ॥ ३ ॥ ❋
बिधिहु न नारि हृदय गति जानी ॥ सकल कपट अघ अवगुण खानी ॥ ४ ॥ ❋

हाय ! राजाके मनमें तेरा भरोसा कैसे आ गया ? अथवा अंतसमयमें विधाताने राजाकी बुद्धि हर लीनी होगी ॥ ३ ॥ स्त्रियोंके मनकी गति खुद विधातासेभी जानी नहीं जाती, क्योंकि वे सब प्रकारके कपट (छल) पाप और अवगुणोंकी खान होती है ॥ ४ ॥

सरल सुशील धर्मरत राऊ ॥ सो किमि जानहिँ तीयसुभाऊ ॥ ५ ॥ ❋
अस को जीवजन्तु जगमाहीं ॥ जेहिँ रघुनाथ प्राणप्रिय नाहीं ॥ ६ ॥ ❋

जब विधाताकाभी पता नहीं है तब बिचारे सरल सुभाव, सुशील और धर्मात्मा राजा स्त्रीके स्वभावको कैसे जान सकैं ? ॥ ५ ॥ हाय ! जगत्में ऐसा कौन जीव जन्तु है कि, जिसे रामचन्द्रजी प्राणोंसे प्यारे नहीं लगते ? ॥ ६ ॥

भे अति अहित राम तेउ तोहीं ॥ को तू अहसि सत्य कहु मोहीं ॥ ७ ॥ ❋
जोहसि सोहसि मुहँ मसि लाई ॥ आँखि ओट उठि बैठहु जाई ॥ ८ ॥ ❋

अरे पापिनी ! वे रामचन्द्रजी तुझको अति अप्रिय लगे, इसवास्ते मैं तुझसे पूछता हूं कि, तू कौन है ? सो मुझे सच २ कह दे ॥ ७ ॥ भरत कहते है कि–तू जो हो, सो हो. अब तू अपने मुंहके कारिख लगाकर यहांसे उठकर जाकर मेरी आंखसे बचकर बैठ जा ॥ ८ ॥

दोहा–रामबिरोधी हृदयते, प्रगट कीन्ह बिधि मोहिँ ॥ ❋
मो समान को पातकी, बादि कहौं कछु तोहिँ ॥ १५७ ॥ ❋

रामचन्द्रजीसे विरोध करनेवाली जो तू है, तिसके हृदयसे विधाताने मुझको प्रगट किया; इसलिये इस जगत्में मेरे जैसा पापी कोई नहीं है. मैं तुझसे जो कुछ कहता हूं वो सब वृथा है ॥ १५७ ॥

सुनि शत्रुघ्न मातुकुटिलाई ॥ जरहिँ गात रिस कछु न बसाई ॥ १ ॥ ❋
तेहिँ अँवसर कुबरी तहँ आई ॥ बसन बिभूषण बिबिध बनाई ॥ २ ॥ ❋

हे पार्वती ! माता कैकेयीकी कुटिलता सुनकर रिसके मारे शत्रुघ्नका शरीर जल रहा है, पर कुछ बश नहीं आता ॥ १ ॥ उस समय वो कुबरी अनेक प्रकारके वस्त्र और आभूषण सजकर वहां आई कि, जहां बैठे ये दुख पा रहे थे ॥ २ ॥

लखि रिसभरेउ लषणलघुभाई ॥ बरत अनल घृत आहुति पाई ॥ ३ ॥ ❋
हुमकि लात तकि कूबर मारा ॥ परि मुह भरि महि करत पुकारा ॥ ४ ॥ ❋

कुबरीको देखतेही लक्ष्मणके छुट भैया शत्रुघ्नके मनमें ऐसा क्रोध भर गया कि, मानों जलती हुई आगमें घृतकी आहुति पड़ी ॥ ३ ॥ शत्रुघ्नने हुमककर और तककर कूबरपर ऐसी लात मारी कि, जिससे वो मुहभर पुकारती हुई जमीनपर गिरगयी ॥ ४ ॥

कूबर टूटेउ फूट कपारू ॥ दलित दसन मुख रुधिर प्रचारू ॥ ५ ॥ ❋
आहि दइय मैं काह नशावा ॥ करत नीक फल अनइस पावा ॥ ६ ॥ ❋

लातसे उसका कूबर टूट गया और जमीनसे कपाल फूट गया. दांत गिरगये. मुंहमेंसे लोहू निकलने लगा ॥ ५ ॥ कूबरी पुकारी कि-हे देव ! मैंने क्या बिगाडा ? अच्छा करते अन्याईके जैसे बुरा फल पाया ॥ ६ ॥

पुनि रिपुहन लखि नख शिख खोटी ॥ लगे घसीटन धरि धरि झोंटी ॥ ७ ॥ ❋
भरत दयानिधि दीन्ह छुड़ाई ॥ कौसल्या पहँ गे दोउ भाई ॥ ८ ॥ ❋

फिर उसे नखसे शिखातक खोटी जानकर, उसकी झोटी (चोटी) धरकर शत्रुघ्न घसीटने लगा ॥ ७ ॥ तब दयाके भंडार भरतने उसे छुडा दी. तब वहांसे उठ दोनों भाई कौसल्याके पास गये ॥ ८ ॥

दोहा-मलिन बसन बिबरन बिकल, कृश शरीर दुख भार ॥ ❋
कनक कमल बर बेलि बन, मानहुँ हनी तुषार ॥ १५८ ॥ ❋

मैया कौसल्याकी उस समय क्या दशा है ? कि, मैले कपडे, मुख मलीन, व्याकुल चित्त, और कृश (क्षीण) शरीर है और दुःखका भार उसपर इतना बढ़ रहा है कि, कुछ कहा नहीं जाता. मानों वनमें सुवर्णकमलकी अच्छी बेलिको तुषार (पाला) ने मार डारा है ॥ १५८ ॥

भरतहिं देखि मातु उठिधाई ॥ मूर्छित अवनि परी अकुलाई ॥ १ ॥ ❋
देखत भरत बिकल भये भारी ॥ परे चरण तनदशा बिसारी ॥ २ ॥ ❋

भरतको देखतेही माता कौसल्या उठकर दौडी, पर भरततक पहुंचने न पाई इतनेमें मूर्छित हो घबराकर पृथ्वीपर गिर गई ॥ १ ॥ माताको ऐसी व्याकुल देखकर, भरत बहुतही व्याकुल हुए. और वेभी अपने शरीरकी सुध विसार कर उसके चरणोंमें गिर गये ॥ २ ॥

मातु तात कहँ देहु दिखाई ॥ कहँ सिय रामलषण दोउ भाई ॥ ३ ॥ ❋
केकयि कत जनमी जग मांझा ॥ जो जनमी तो भइ कि न बांझा ॥ ४ ॥ ❋

और मातासे कहने लगे कि-हे जननी ! पिताजी कहां हैं ? मुझे शीघ्र दिखाव. राम लक्ष्मण दोनों भाई कहां है ? और सीता कहां है ॥ ३ ॥ जगतमें कैकेयी क्यों पैदा हुई ? और जो वह जनमी तो बंध्या क्यों न रह गई ? ॥ ४ ॥

कुलकलंक जेहिँ जनमेउँ मोंही ॥ अपयशभाजन प्रियजनद्रोही ॥ ५ ॥ ❋
को त्रिभुवन मोहिँ सरिस अभागी ॥ गति असि तोरि मातु जेहिँ लागी ॥ ६ ॥

जिसके कुलको कलंक लगानेवाला, अपजसका पात्र, और प्यारे लोगोंसे द्रोह करनेवाला मैं पुत्र पैदा हुआ ? ॥ ५ ॥ मेरे जैसा त्रिलोकीमें अभागा कौन है कि जिसके निमित्त हे माता ! आपकी तो यह दशा हुई है ? ॥ ६ ॥

पितु सुरपुर बन रघुकुलकेतू ॥ मैं केवल सब अनरथ हेतू ॥ ७ ॥ ❋
धिक मोहिँ भयउँ वेणुबन आगी ॥ दुसह दाह दुख दूषण भागी ॥ ८ ॥ ❋

पिता परलोकको सिधारे है और रघुकुलमणि श्रीरामचन्द्रजी वनमें गये है. भरत कहते हैं कि–इस तमाम अनर्थका मूल केवल मैं हूं ॥ ७ ॥ धिक्कार है मुझको कि–जो मैं वंशको भस्म करनेके लिये बांसके वनकी अग्निके जैसा महादारुण और दुःख व दूषणोंका भागी हुआ ॥ ८ ॥

दोहा–मातु भरतके बचन मृदु, सुनि पुनि उठी सँभारि ॥
लिये उठाइ लगाइ उर, लोचन मोचति बारि ॥ १५९ ॥ ❋

मैया कौसल्या भरतके ऐसे कोमल वचन सुन संभारकर, फिर पीछी उठ खड़ी हुई और भरतको उठाके छातीसे लगाया. नेत्रोंमेंसे आंसूकी धारा बहाने लगी ॥ १५९ ॥

सरल सुभाय मातु उर लाये ॥ अति हित मनहुँ राम फिरि आये ॥ १ ॥ ❋
भेंटेउ बहुरि लषण लघुभाई ॥ शोक सनेह हृदय न समाई ॥ २ ॥ ❋

माता कौशल्याने सरल स्वभावसे भरतको छातीसे लगाया. सो ऐसे बड़े हितसे कि, मानों रामही पीछे लौट आये है ॥ १ ॥ फिर वो लक्ष्मणके छुटभैया शत्रुघ्नसे मिली. उस समय उसके हृदयमें शोच और स्नेह समाता नहीं था ॥ २ ॥

देखि सुभाव कहत सबकोई, राममातु अस काहे न होई ॥ ३ ॥ ❋
माता भरत गोद बैठारे ॥ आँसु पोंछि मृदुबचन उचारे ॥ ४ ॥ ❋

रामचन्द्रजीकी माता कौसल्याका स्वभाव देखकर सब कोई यह बात कहते हैं कि–रामकी माता ऐसी क्यों न होवे ? ॥ ३ ॥ माताने भरतको गोदमें बिठाय आंसू पोंछकर फिर कोमल वचन कहे ॥ ४ ॥

अजहुँ बच्छ बलि धीरज धरहू ॥ कुसमय समुझि शोक परिहरहू ॥ ५ ॥ ❋
जनि मानहुँ जिय हानि गलानी ॥ काल कर्मगति अघटित जानी ॥ ६ ॥ ❋

हे वत्स ! बलिहारी जाऊं. अबभी धीरज धरो और कुअवसर जानकर शोचको त्याग दो ॥ ५ ॥ मनमें किसी बातकी हानि और ग्लानि मत मानो; क्योंकि काल और कर्मोंकी गति बडी अघटित है, सो तुम जानतेही हो ॥ ६ ॥

काहुहिँ दोष देहु जनि ताता ॥ भा मोहिँ सब बिधि बाम बिधाता ॥ ७ ॥ ❋
जो ऐसेहु बिधि मोहिँ जियावा ॥ आजहुँ को जानै का भावा ॥ ८ ॥ ❋

हे पुत्र ! तुम किसीको दोष मत दो; क्योंकि विधाताही सब प्रकारसे मेरे लिये प्रतिकूल हो गया है ॥ ७ ॥ जो इतना दुख होनेपरभी विधाता मुझको जियावता है, तौ कौन जाने अबभी उसकी क्या इच्छा है ? ॥ ८ ॥

दोहा–पितुआयसु भूषण बसन, तात तजे रघुबीर ॥ ❋
बिस्मय हर्ष न हृदय कछु, पहिरे बल्कल चीर ॥ १६० ॥ ❋

कौसल्या कहती है कि–हे तात ! पिताकी आज्ञासे रामने वस्त्र व आभूषण उतारकर वल्कल वस्त्र पहिर लिये हैं. उसके हृदयमें इस बातसे विस्मय और हर्ष कुछभी नहीं हुआ था ॥ १६० ॥

मुख प्रसन्न मन राग न रोषू ॥ सब करसब विधि करि परितोषू ॥ १ ॥ ❋
चले बिपिन सुनि सिय सँग लागी ॥ रही न रामचरण अनुरागी ॥ २॥ ❋

उसका मुख अति प्रसन्न था. मनमें किसी बातका राग द्वेष नहीं था. लोगोंको सर्व भांति प्रसन्न करके ॥ १ ॥ राम वनको चला, तब सीता यह बात सुनकर उसके पीछे लगी. हम लोगोंने उसे बहुत समझाया, पर वो किसी तरह नहीं रही; क्योंकि उसकी रामचन्द्रके चरणोंमें बड़ी प्रीति है ॥ २ ॥

सुनतहिँ लषण चले लगि साथा ॥ रहे न यतन किये रघुनाथा ॥ ३ ॥ ❋
तब रघुपति सबहीं शिर नाई ॥ चले संग सिय अरु लघु भाई ॥ ४ ॥ ❋

'राम जाते हैं' ये समाचार सुनतेही लक्ष्मण उसके साथ हो लिये. रामचन्द्रने बहुत कुछ यत्न किया; पर वो किसी कदर न रहा ॥ ३ ॥ तब राम सबको प्रणाम कर सीता और छुटभैया लक्ष्मणको साथ ले वनको रवाने हुआ ॥ ४ ॥

राम लषण सिय बनहिँ निधाये ॥ गई न संग न प्राण पठाये ॥ ५ ॥ ❋
यह सब भा इन आँखिन आगे॥ तउ न तजत तन जीव अभागे ॥ ६ ॥ ❋

राम लक्ष्मण और सीता वनको सिधारे, तब न तौ मैं उनके साथ गई और न मैंने अपने प्राणोंको उनके साथ भेजा अर्थात् न मर गई ॥ ५ ॥ यह सब वृत्तांत इन आंखोंके सामने हुआ है तौभी यह अभागा जीव शरीरको नहीं तजता. अबलों जी रहा है ॥ ६ ॥

मोहिँ न लाज निज नेह निहारी ॥ रामसरिस सुत मैं महतारी ॥ ७ ॥ ❋
जिये मरे भल भूपति जाना ॥ मोर हृदय शतकुलिशसमाना ॥ ८ ॥ ❋

कौसल्या कहती है कि–मुझे अपना स्नेह देखकर लाजभी नहीं आती कि, राम जैसा तौ पुत्र और मेरे जैसी माता ॥ ७ ॥ हे भरत ! जीना और मरना तौ राजाने अच्छीतरह जाना कि, यह समय जीनेका है और यह समय मरनेका है. हे तात ! मेरा हृदय तौ सौ वज्रके जैसा कठोर है ॥ ८ ॥

दोहा–कौसल्याके बचन सुनि, भरतसहित रनिवास ॥ ❋
व्याकुल बिलपत राजगृह, मानहुँ शोक निबास ॥ १६१ ॥ ❋

कौसल्याके ऐसे वचन सुन भरतके साथ सारा रनिवास व्याकुल हो विलाप करने लग गया. जिससे वो राजभवन ऐसा मालूम होने लगा कि, मानों शोकनेही आकर उसमें निवास कर दिया है ॥ १६१ ॥

बिलपहिँ बिकल भरत दोउ भाई॥ कौसल्या लिय हृदय लगाई ॥ १ ॥ ❋
भांति अनेक भरत समुझाये ॥ कहि बिवेक वर वचन सुनाये ॥ २ ॥ ❋

भरत और शत्रुघ्न दोनों भाई विकल होकर विलाप करते हैं. तिन्हें कौसल्याने अपनी छातीसे लगा लिये हैं ॥ १ ॥ कौसल्याने भरतको अनेकप्रकारसे समझाया और अनेक अच्छे विवेकके बचन कह सुनाये ॥ २ ॥

भरतहु मातु सकल समुझाई ॥ कहि पुराण श्रुति कथा सुहाई ॥ ३ ॥ ❋
छलविहीन शुचि सरल सुबानी ॥ बोले भरत जोरि युग पानी ॥ ४ ॥ ❋

तब भरतनेही अपनी सब माताओंको वेद और पुराणोंकी कई अच्छी २ कथा कह कर समझाया ॥ ३ ॥ भरतने दोनों हाथ जोड़, कपटको तज साफ और सरल अच्छी कोमल वाणीसे कहा कि–॥ ४ ॥

जे अघ मातु पिता गुरु मारे ॥ गाइ गोठ महिसुर पुर जारे ॥ ५ ॥ ❋
जे अघ तिय बालक बध कीन्हे ॥ मीत महीपति माहुर दीन्हे ॥ ६ ॥ ❋

हे माता ! जो यह बात मेरी सलाहसे हुई हो तौ माता पिता और गुरुको मारनेसे और गौ-वनका गोठ व ब्राह्मणोंकी पुरी जलानेसे ॥ ५ ॥ तथा स्त्रीहत्या व बालहत्या करनेसे और मित्र व राजाको जहर देनेसे जो पाप होता है ॥ ६ ॥

जे पातक उपपातक अहहीं ॥ कर्म बचन मन भव कबि कहहीं ॥ ७ ॥ ❋
ते पातक मोहिँ होउ बिधाता ॥ जो यह होइ मोर मत माता ॥ ८ ॥ ❋

तथा औरभी जो मन वचन कायकृत पातक व उपपातक कवि (ज्ञानी) लोग कहते हैं ॥ ७ ॥ वे सबके सब पाप विधाता मुझको लगा देवे ॥ ८ ॥

दोहा–जे परिहरि हरिहरचरण, भजहिँ भूतगण घोर ॥ ❋
तिन्हकी गति मोहिँ देहु बिधि, जो जननी मत मोर ॥ १६२ ॥ ❋

जो मूर्ख हरि भगवान् और महादेवजीके चरणोंको तजकर भूत प्रेत आदि महाघोर गणोंको भजते हैं, उनकी जो गति होती है, हे माता ! जो इस बातमें मेरा मत हो तौ वो गति विधाता मुझे देवे ॥१६२॥

बेंचहिँ बेद धर्म दुहि लेहीं ॥ पिशुन पराय पाप कहि देहीं ॥ १ ॥ ❋
कपटी कुटिल कलह प्रिय क्रोधी ॥ बेदबिदूषक बिश्व बिरोधी ॥ २ ॥ ❋

जो वेदको बेंचते है अर्थात् द्रव्य लेकर पढ़ाते हैं और जो धर्मको दोह लेते है अर्थात् धर्मका फल मांगलेते है किंतु परमेश्वरार्पण नहीं करते. चुगुल हैं और पराये पापको कह देते है अर्थात् चुगुली करते है ॥ १ ॥ जो कपटी, कुटिल, कलह करनेसे राजी और क्रोधी हैं, तथा जो वेदकी निंदा करते है, और सारे जगतसे विरोध रखते है ॥ २ ॥

लोभी लम्पट लोल लबारा ॥ जे ताकहिँ परधन परदारा ॥ ३ ॥ ❋
पावउँ मैं तिनकी गति घोरा ॥ जो जननी यह सम्मत मोरा ॥ ४ ॥ ❋

तथा जो लोभी, लम्पट, लबार, लालची और चपल हैं और जो पराये धन और पराई स्त्रीकी ओर ताकते हैं ॥ ३ ॥ हे माता ! इनकी जो गति होती है, वो महाघोर गति मैं पाऊं. जो यह बात मेरे संमतसे होवे ॥ ४ ॥

जे नहिँ साधु संग अनुरागे ॥ परमारथ पथ बिमुख अभागे ॥ ५ ॥ ❋
जे न भजहिँ हरि नरतनु पाई ॥ जिनहिँ न हरि हर सुयश सुहाई ॥ ६ ॥

जो लोग सत्पुरुषोंकी संगतीमें प्रीति नहीं रखते, जो मंदभागी परमारथ पथ यानी मोक्ष मार्गसे

विमुख हैं ॥ ५ ॥ जो मनुष्य शरीर पाकर हरि भगवान्‌का भजन नहीं करते. जिनको हरि और सदाशिवका सुयश नहीं सुहाता ॥ ६ ॥

तजि श्रुतिपन्थ बामपथ चलहीं ॥ बंचक बिरचि बेष जग छलहीं ॥ ७ ॥ ❋
गति तिन्हकी शंकर मोहिँ देऊ ॥ जननी जो यह जानौं भेऊ ॥ ८ ॥ ❋

जो वेदमार्गको छाँड़कर वाममार्ग यानी कौलपंथसे चलते है. जो ठग भव्य बेष बनाके जगत्‌को ठगते है ॥ ७ ॥ हे माता ! जो यह बात मेरे संमत होवे और जो मैं इस भेदको जानता होऊं तो महादेवजी मुझे इन पाखंडियोंकी गति देवे ॥ ८ ॥

छंद–"मन बचन कर्म कृपायतन कर दास मैं सुनु मातुरी ॥ ❋
उर बसत राम सुजान जानत प्रीति अरु छल चातुरी ॥ ❋
अस कहत लोचन बहत जल तन पुलक नख लेखत मही ॥ ❋
हिय लाय लिये बहोरि जननी जानि प्रभुपदरत सही" ॥ ७ ॥ ❋

हे माता ! सुनो, मै मन वचन व कायासे कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजीका सब भांति दास हूं सो सुजान श्रीरामचन्द्रजी प्रीति और कपटकी चतुरताको अच्छीतरह जानते है; क्योंकि वे सबके हृदयमें विराजते है और घटघटकी जानते है. ऐसे कहतेही भरतके नेत्रोंमेसे अश्रुकी धारा बहने लगी, प्रेमसे शरीर पुलकित हो गया और नखोंसे पृथ्वी खुतरने लगे. तब उसे सच्चा प्रभुके चरणोंका दास समझकर कौसल्याने फिर छातीसे लगाया ॥ ७ ॥

दोहा–मातु भरतके बचन सुनि, सांचे सरल सुभाय ॥ ❋
कहत राम प्रिय तात तुम, सदा बचन मन काय ॥ १६३ ॥ ❋

माता कौसल्याने भरतके सच्चे बचन सुन और सरल स्वभाव देखकर भरतसे कहा कि–हे तात ! तुम्हें मन वचन कायासे रामचन्द्र सदा प्रिय है ॥ १६३ ॥

राम प्राणते प्राण तुम्हारे ॥ तुम रघुपतिहिँ प्राणते प्यारे ॥ १ ॥ ❋
बिधु बिष चुवै श्रवै हिम आगी ॥ होइ बारिचर बारि बिरागी ॥ २ ॥ ❋

रामचन्द्र तुमको प्राणोंसें प्रिय लगते है और तुम रामको प्राणोंसे प्यारे हो ॥ १ ॥ चाहे चंद्रमामेंसे जहर चूकर बहना शुरू हो जावे, चाहे हिम (पाला) मेंसे आग झरनी शुरू हो जावे, चाहे जलजन्तु जलसे विरक्त हो जावें ॥ २ ॥

भये ज्ञान बरु मिटै न मोहू ॥ तुम रामहिँ प्रतिकूल न होहू ॥ ३ ॥ ❋
मत तुम्हार अस जो जग कहहीं ॥ सो सपनेहुँ सुख सुगति न लहहीं ॥ ४ ॥

चाहे ज्ञान प्राप्त होनेपर मोह (अज्ञान) भी न मिटे,पर तुम तो रामसे प्रतिकूल कभी नहीं होसकते ॥ ३ ॥ हे भरत ! जो कोई जगतमें ऐसा कहैं कि–यह वनवास भरतकी सलाहसे हुआ है तो वे प्राणी स्वप्नमेंभी सुख और अच्छी गतिको नहीं पासकते ॥ ४ ॥

अस कहि मातु भरत हिय लाये ॥ थनपय श्रवहिँ नयन जलछाये ॥ ५ ॥
करत बिलाप बिपुल यहिभांती ॥ बैठे बीति गई सब राती ॥ ६ ॥ ❋

ऐसे कहकर कौसल्याने भरतको फिर छातीसे लगाया, तब उसके स्तनोंमेंसे दूध झरने लगा और नेत्रोंमें आंसू छागये ॥ ५ ॥ इसतरह अत्यंत विलाप करते बैठे २ सारी रात बीत गई ॥ ६ ॥

वामदेव वसिष्ठ मुनि आये ॥ सचिव महाजन सकल बुलाये ॥ ७ ॥ ❋
मुनि बहुभांति भरत उपदेशे ॥ कहि परमारथ बचन सुदेशे ॥ ८ ॥ ❋

भोर होतेही वसिष्ठजी और वामदेव ऋषि आये. उन्होंने तमाम मंत्री और शहरके महाजनोंको बुलाया ॥ ७ ॥ वसिष्ठजी और वामदेव मुनिने भरतको सब प्रकारसे उपदेश दिया और अच्छे अच्छे परमार्थ यानी सत्य बचन कहे ॥ ८ ॥

दोहा—तात हृदय धीरज धरहु, करहु जो अवसर आजु ॥ ❋
उठे भरत गुरुबचन सुनि, करन कहेउ सब काजु ॥ १६४ ॥ ❋

मुनिने कहा कि—हे तात! अब आप मनमें धीरज धरो.आजका जो अवसर (मौका) है वो करो. गुरुका वचन सुन भरतने उठकर सब लोगोंसे अपना अपना काम करनेको कहा ॥ १६४ ॥

नृपतन वेदविहित अन्हवावा ॥ परम बिचित्र बिमान बनावा ॥ १ ॥ ❋
गहि पद भरत मातु सब राषी ॥ रहा रामदरशन अभिलाषी ॥ २ ॥ ❋

फिर राजाके शरीरको वेदकी विधिसे न्हिलाया और बहुत सुन्दर और विचित्र एक विमान (वैकुंठी) बनवाया ॥ १ ॥ भरतने सब माताओंके चरण धर धरकर उनको रोते राख दिया और आपभी प्रभुके दर्शनकी अभिलाषासे रह गये ॥ २ ॥

चन्दन अगर भार बहु आये ॥ अमित अनेक सुगन्ध सुहाये ॥ ३ ॥ ❋
सरयु तीर रचि चिता बनाई ॥ जनु सुरपुर सोपान सुहाई ॥ ४ ॥ ❋

बहुतसे चन्दन और अगरके काठके भारे आये. और अनेक प्रकारकी अच्छी २ अपार सुगन्धि चीजें आईं ॥ ३ ॥ सरयू नदीके तटपर जो रचकर सुन्दर चिता बनाई गई, वो ऐसी मालूम होती थी कि, स्वर्गको चढ़नेके लिये सुन्दर सीढ़ीही बनी है ॥ ४ ॥

या बिधि दाह क्रिया सब कीन्हा ॥ बिधिवत न्हाय तिलांजलि दीन्हा ॥ ५ ॥
शोधि सुमृति सब बेद पुराना ॥ कीन्ह भरत दशगात्रबिधाना ॥ ६ ॥ ❋

इसतरह सब दाहक्रिया कर फिर स्नान करके सबोंने विधिपूर्वक तिलांजलि दीनी ॥ ५ ॥ तत्पश्चात् सारे वेद पुराण और स्मृतियोंको शोधकर भरतने दशगात्रविधि यानी दश दिनका प्रेतकृत्य किया ॥ ६ ॥

"गौरपक्ष ग्यारसि दिन जाना ॥ कीन भरत दशगात्रबिधाना ॥ ७ ॥ ❋
द्विजहिँ दान दीन्हेउ बहु भांती ॥ तिसरे दिन भइ त्यरहीं शांती" ॥ ८ ॥ ❋

शुक्लपक्षमें एकादशीके दिन दशगात्र विधि करके भरतने ब्राह्मणोंको अनेक प्रकारके दान दिये ॥ ७ ॥ और दशगात्र विधिके अनन्तर तीसरे दिन अर्थात् तेरहवें दिन तेरहवेंकी शांति हुई ॥ ८ ॥

जहँ जस मुनिबर आयसु दीन्ही ॥ तहँ तस सहस भांति सब कीन्ही ॥ ९ ॥ ❋
भये बिशुद्ध दिये सब दाना ॥ धेनु बाजि गज बाहन नाना ॥ १० ॥ ❋

वसिष्ठजीने जहां जैसी आज्ञा दीथी, वहां उसने उस आज्ञाकी अपेक्षा हजार गुन और हजार तरहसे वो सब काम किया ॥ ९ ॥ फिर शुद्ध हो यानी सपिंडी श्राद्ध करके गौ, घोड़ा, हाथी और अनेक प्रकारके वाहन, तथा औरभी सब सबतरहके दान दिये ॥ १० ॥

दोहा-सिंहासन भूषण बसन, अन्न धरणि धन धाम ॥ ❋
दिये भरत लहि भूमिसुर, भे परिपूरणकाम ॥ १६५ ॥ ❋

भरतने अच्छे सत्पात्र ब्राह्मणोंको पाकर, उनको सिंहासन, वस्त्र, आभूषण, अनाज, जमीन, घर और धन आदि अनेक दान दिये. जिससे उनकी कामना पूर्ण हो गई ॥ १६५ ॥

पितुहित भरत कीन्ह जस करणी ॥ सो मुखलाख जाइ नहिँ बरणी ॥ १ ॥ ❋
सुदिन शोधि मुनिबर तहँ आये ॥ सकल महाजन सचिव बुलाये ॥ २ ॥ ❋

पिताके वास्ते भरतने जैसी क्रिया की, वो लाख १००००० मुखसेभी बरनी नहीं जाती ॥ १ ॥ फिर अच्छा शुभ दिन देखकर वसिष्ठजी वहां आये. सब मंत्री और महाजनोंको बुलाया ॥ २ ॥

बैठे राजसभा सब जाई ॥ पठये बोलि भरत दोउ भाई ॥ ३ ॥ ❋
भरत बसिष्ठ निकट बैठारे ॥ नीति धर्ममय बचन उचारे ॥ ४ ॥ ❋

सब लोग जाकर राजदरबारमें बैठे. तब वसिष्ठजीने भरत और शत्रुघ्न दोनों भाइयोंको बुलाय भेजा ॥ ३ ॥ भरत आया तब वसिष्ठजीने उसे अपने पास बिठाया और मुनिने नीति और धर्मके वचन कहे ॥ ४ ॥

प्रथम कथा सब मुनिवर बरणी ॥ केकयि कठिन कीन्ह जस करणी ॥ ५ ॥
भूप धर्म ब्रत सत्य सराहा ॥ जेहिँ तनु परिहरि प्रेम निबाहा ॥ ६ ॥ ❋

प्रथम तो वसिष्ठजीने वो सारी कथा कही जैसी कुछ महाकठोर करनी कैकेयीने की थी ॥ ५ ॥ फिर राजाके धर्म, व्रत और सत्यकी प्रशंसा करी कि, जिसने अपने शरीरको त्यागकर अपना पक्का प्रेम निबाहा ॥ ६ ॥

कहत रामगुण शील सुभाऊ ॥ सजल नयन पुलके मुनिराऊ ॥ ७ ॥ ❋
बहुरि लषण सिय प्रीति बखानी ॥ शोक सनेह मगन मुनि ज्ञानी ॥ ८ ॥ ❋

फिर जिस समय वसिष्ठजी रामचन्द्रजीके गुण, शील और स्वभावका वर्णन करने लगे, तब उनके नेत्रोंमें जल छागया और शरीर रोमांचित होगया ॥ ७ ॥ फिर मुनिने लक्ष्मण और सीताके स्नेहका वर्णन किया. जिसका बर्णन करते २ ज्ञानी मुनि शोक और स्नेहमें मगन होगये ॥ ८ ॥

दोहा-सुनहु भरत भावी प्रबल, बिलखि कहेउ मुनिनाथ ॥ ❋
हानि लाभ जीवन मरण, यश अपयश बिधिहाथ ॥ १६६ ॥ ❋

फिर बहुत विलख वदन होकर वसिष्ठजीने भरतसे कहा कि-हे भरत ! सुनो, भावी बड़ा प्रबल है. इसके आगे किसीका वश नहीं चलता. देखो, हानि और लाभ जीना और मरना, जस अपजस ये तो विधाताकेही हाथ हैं ॥ १६६ ॥

अस बिचारि केहि दीजिय दोषू ॥ व्यर्थ काहिपर कीजिय रोषू ॥ १ ॥ ❋
तात विचार करहु मनमाहीं ॥ शोचयोग दशरथ नृप नाहीं ॥ २ ॥ ❋

ऐसा विचार रखकर, किसीको दोष नहीं देना चाहिये. जब सब बात विधाताके हाथ है, तब वृथा किसीके ऊपर क्रोध क्यों करना ? ॥ १ ॥ हे तात ! आप मनमें विचार करो कि, क्या दशरथ-जी शोच करनेके योग्य है ? कभी नहीं ॥ २ ॥

शोचिय विप्र जो वेद विहीना ॥ तजि निजधर्म विषय लव लीना ॥ ३ ॥ ❋
शोचिय नृपति जो नीति न जाना ॥ जेहि न प्रजा प्रिय प्राणसमाना ॥४॥ ❋

ब्राह्मण वो शोच करनेके योग्य है कि, जो वेदसे विमुख है और अपने शम आदि धर्मको त्यागकर विषयोंमें लयलीन रहता है ॥ ३ ॥ राजा वो शोच करनेके योग्य होता है कि, जो नीति नहीं जानता और जिसको अपनी प्रजा प्राणोंसे प्यारी नहीं लगती ॥ ४ ॥

शोचिय वैश्य कृपण धनवानू ॥ जो न अतिथि शिवभक्ति सुजानू ॥५॥ ❋
शोचिय शूद्र विप्र अपमानी ॥ मुखर मान प्रिय ज्ञान गुमानी ॥ ६ ॥ ❋

और वैश्य वो शोच करनेके योग्य है कि, जो धनाढ्य होकर कृपण (कंजूस) होता है और महा-देवजीकी भक्ति और अतिथिका सत्कार नहीं करता ॥ ५ ॥ तथा शूद्र वो शोच करनेके योग्य है कि, जो ब्राह्मणका अपमान करता है और वाचाल, मानी और ज्ञानका घमंड रखता है ॥ ६ ॥

शोचिय पुनि पतिबंचक नारी ॥ कुटिल कलहप्रिय इच्छाचारी ॥ ७ ॥ ❋
शोचिय बटु निज ब्रत परिहरई ॥ जो नहिँ गुरु आयसु अनुसरई ॥ ८ ॥ ❋

और स्त्री वो शोचनेके लाइक है कि, जो पतिको ठगनेवाली, कुटिल, कलहप्रिया और स्वैरिणी (अपनी इच्छानुसार चलनेवाली) है ॥ ७ ॥ और ब्रह्मचारी वो शोच करनेके योग्य है कि, जो अपने ब्रह्मचर्य ब्रतको त्याग देता है और गुरुकी आज्ञाको नहीं मानता ॥ ८ ॥

दोहा–शोचिय गृही जो मोहबश, करै धर्मपथ त्याग ॥ ❋
शोचिय यती प्रपंचरत, बिगत बिबेक बिराग ॥ १६७ ॥ ❋

गृहस्थी वो शोच करनेके योग्य है कि, जो मोह (अज्ञान) बश होकर धर्मके मार्गको त्याग देता है. संन्यासी वो शोच करनेके योग्य है कि, जो प्रपंची और ज्ञान व वैराग्यसे हीन है ॥ १६७ ॥

बैखानस सोइ शोचन योगू ॥ तप विहाय जेहि भावै भोगू ॥ १ ॥ ❋
शोचिय पिशुन अकारण क्रोधी ॥ जननि जनक गुरु बंधु बिरोधी ॥ २ ॥ ❋

वानप्रस्थ वो शोचनेके योग्य है कि, जो तपस्या छोंड़कर भोग भोगना चाहता है ॥ १ ॥ और इनके सिवाय चुगुल, बिना सबब क्रोध करनेवाला, माता, पिता, गुरु और बांधवोंसे बैर रख-नेवाला येभी शोच करनेके योग्य हैं ॥ २ ॥

शोचिय लोभनिरत अति कामी ॥ सुर श्रुति निंदक परधन स्वामी ॥३॥ ❋
सब बिधि शोचिय पर अपकारी ॥ निज तन पोषक निर्दय भारी ॥ ४ ॥ ❋

जो लोभी व लालची हैं, जो बिलकुल कामके चेले हैं, जो देव और बेदकी निन्दा करते हैं और जो पराये धनके मालिक बन बैठते हैं, वे सर्वथा शोच करनेके योग्य हैं ॥ ३ ॥ जो दूसरेका बुरा करते हैं, और अपने शरीरको पोषते हैं और जो महा निर्दयी हैं, वे सब तरहसे शोच करनेके योग्य हैं ॥ ४ ॥

शोचनीय सबही बिधि सोई ॥ जो न छांड़ि छल हरिजन होई ॥ ५ ॥ ❋
शोचनीय नहिँ कोसलराऊ ॥ भुवन चारिदश प्रगट प्रभाऊ ॥ ६ ॥ ❋

हे तात ! सब प्रकारसे शोच करनेके योग्य वोही है कि, जो छल छाँड़कर हरिभगवान्‌का भक्त नहीं है ॥ ५ ॥ हे भरत ! महाराज दशरथ किसीतरह शोच करनेके लायक नहीं हैं; क्योंकि उनका प्रभाव चौदहों लोकोंमें प्रसिद्ध है ॥ ६ ॥

भयउ न अहै न होनिउ हारा ॥ भूप भरत जस पिता तुम्हारा ॥ ७ ॥ ❋
बिधि हरि हर सुरपति दिशिनाथा ॥ बरणहिँ सब दशरथगुणगाथा ॥ ८ ॥
तीनि काल त्रिभुवन जगमाहीं ॥ भूरिभाग्य दशरथसम नाहीं ॥ ९ ॥ ❋

हे भरत ! तुम्हारे पिताके जैसा बड़भागी प्राणी न तो कोई आजतक हुआ है, न है, और न कोई होनेवाला है ॥ ७ ॥ देखो, दशरथजीके गुणोंकी कथा स्वयं ब्रह्माजी, विष्णु भगवान्, महादेवजी, इंद्र और लोकपाल ये सब देवताभी वर्णन करते है ॥ ८ ॥ कि, तीनों कालमें और तीनों लोकोंमें दशरथजीके जैसा बड़भाग्य जगत्‌में कोई नहीं है ॥ ९ ॥

दोहा–कहहु तात केहि भांति कोउ, करिहि बड़ाई तासु ॥ ❋
राम लषण तुम शत्रुहन, सरिस सुवन सुत जासु ॥ १६८ ॥ ❋

वसिष्ठजी कहते है कि–हे तात ! कहो, जब देवताभी उनके गुणगणको कह नहीं सकते, तब दूसरा कोई आदमी उनकी बड़ाईको किसतरह कर सके ? हे तात ! जिनके राम, लक्ष्मण, तुम (भरत) और शत्रुघ्न जैसे चार पुत्र हैं ॥ १६८ ॥

सब प्रकार भूपति बड़भागी ॥ बादि बिषाद करिय तेहिँ लागी ॥ १ ॥ ❋
यह सुनि समुझि सोच परिहरहू ॥ शिर धरि राज रजायसु करहू ॥ २ ॥ ❋

वे राजा दशरथ सब प्रकारसे बड़भागी है, इसलिये हे भरत ! तुम उनके वास्ते वृथा विषाद (रंज) मत करो ॥ १ ॥ वसिष्ठजी कहते हैं कि–हे तात ! यह बात सुन, मनमें समझकर तुम शोचको त्याग दो, और राजाकी आज्ञाको शिर चढ़ाकर उनकी आज्ञाका पालन करो ॥ २ ॥

राव राजपद तुम कहँ दीन्हा ॥ पिता बचन फुर चाहिय कीन्हा ॥ ३ ॥ ❋
तजेउ राम जेहिँ बचनहिँ लागी ॥ तनु परिहरेउ राम बिरहागी ॥ ४ ॥ ❋

राजाने यह राजपद तुमको दिया है, सो अब वो राजाका वचन तुमको सत्य करना चाहिये ॥ ३ ॥ जिन्होंने अपने बचनके वास्ते रामको त्याग दिया है कि, जिस रामके वियोगानलसे उनका शरीर पड़ गया है ॥ ४ ॥

नृपहिँ बचन प्रिय नहिँ प्रिय प्राणा ॥ करहु तात पितु बचन प्रमाणा ॥ ५ ॥
करहु शीश धरि भूपरजाई ॥ हैं तुमकहँ सब भांति भलाई ॥ ६ ॥ ❋

उन राजा दशरथको जैसा अपना वचन निबाहना प्यारा है, वैसे प्राण प्यारे नहीं है. इस लिये हे तात ! मैं तुमसे कहता हूं कि, तुम पिताके वचनको प्रमाण करो ॥ ५ ॥ राजाकी आज्ञा शिर चढ़ाकर उसे पालो, सो इसमें तुम्हारे तईं सब प्रकारसे भलाई है ॥ ६ ॥

परशुराम पितु आज्ञा राखी ॥ मारी मातु लोक सब साखी ॥ ७ ॥ ❀
तनय ययातिहिँ यौवन दयऊ ॥ पितु आज्ञा अघ अयश न भयऊ ॥ ८ ॥

देखो. परशुरामजीने अपने पिताकी आज्ञा मानकर माताका बध किया, सो यह बात सारा संसार जानता है ॥ ७ ॥ ययाति राजाके पुत्र पुरुने अपनी यौवन अवस्था अपने पिताको दी, सो यह काम अनुचित था; तथापि पिताकी आज्ञासे किया, इसलिये वह पाप और अपयशका भागी नहीं हुआ ॥ ८ ॥

दोहा-अनुचित उचित बिचार तजि, जे पालहिँ पितु बैन ॥ ❀
ते भाजन सुख सुजसके, बसहिँ अमरपति ऐन ॥ १६९ ॥ ❀

जो पुत्र उचित अनुचितका विचार छोड़कर पिताकी आज्ञा मानते हैं, वेही सुख और सुजसके पात्र होते हैं. और इंद्रके घर (स्वर्ग) में निवास करते हैं ॥ १६९ ॥

१ एक समय परशुरामजीकी माता रेणुका जमदग्निके नित्यकृत्य करते समय नदीपर जल भरने गई, तहां एक चित्ररथ नाम गंधर्व स्त्रियोंके साथ क्रीड़ा कर रहा था; उसे देख, वह लुभायमान हो, वहां कुछ ठहर गई. जिससे कुछ विलम्ब हो गया, तब मुनिने रेणुकाका अपराध समझकर अपने पुत्रोंसे कहा कि--इस दुराचारिणी तुम्हारी माताको मार डालो. उन्होंने उस कर्मको निंदित समझकर मातापर हाथ नहीं उठाया. तब जमदग्निने सबसे छोटे पुत्र परशुरामजीसे कहा कि--तेरे भाइयोके साथ माताको मार डाल. पिताकी आज्ञा होतेही उन्होंने सबको मार डाला. तब प्रसन्न होकर मुनिने कहा कि -वर मांग. ये वचन सुन परशुरामजीने वर मांगा कि -मेरे भाई और माता पीछे जी जावें और इनको यह बात स्मरण न रहै. मुनिने कृपा करके सबको पीछा जिला दिया. परशुरामजीसे प्रसन्न रहे.

२ ययाति राजाके देवयानी और शर्मिष्ठा दो रानियां थीं. देवयानीके दो पुत्र थे, यदु और तुर्वसु. और शर्मिष्ठाके तीन पुत्र थ, तिनमें सबसे छोटे पुत्रका नाम पुरु था. शुक्राचार्यजीकी कन्या देवयानीसे ययातिके विवाह होनेका कारण यह था कि, बृहस्पतिका पुत्र कच शुक्राचार्यजीके पास "मृतसंजीविनी" विद्या पढने आया था. शुक्राचार्यजीने उसे वो विद्या पढ़ा दी. एक दिन देवयानी उस तरुण पुरुष कचको देख, मोहित हो, कचसे कहने लगी कि-मैं तुझे वरना चाहती हूं. ये समाचार सुन कचने कहा कि-तू गुरुकन्या है सो तेरा यह विचार ठीक नहीं है. मैं यह अधर्म नहीं कर सकता. तब देवयानीने अपनी इच्छा भंग होनेसे कचको श्राप दिया कि-तेरी विद्या सफल न होगी. तब कचनेभी क्रोध करके श्राप दिया कि-तुझे ब्राह्मण वर नहीं मिलेगा. कई दिनोंके बाद एक समय शर्मिष्ठा और देवयानी कई सखियोंको साथ ले खेलनेको बागमें गई, सो अपने २ कपडे तो उतारकर तलावके तीरपर रख दिये और जलमें खेलने लगीं; तहां महादेवजो आ निकले. तिन्हें देख सब कन्याओंने अपने २ कपड़े पहिर लिये. तहां शर्मिष्ठाने भूलसे देवयानीके कपड़े पहिर लिये. तिसे देख देवयानीने क्रोधमें आकर शर्मिष्ठासे कहा कि-अरी। तूने यह क्या किया? हमारे कपडे पहिर लिये? और बहुतसे कटु वचन कहे. तब शर्मिष्ठाने कटु वचन कहकर उसे कुवेमें डाल दी. आप घर चली आई. दैव इच्छासे राजा ययाति शिकार करता २ वहां चला आया. प्यास लग रही थी, सो उसने कुएंकी तर्फ आकर देखा कि, जिसमें देवयानी पड़ी थी. देवयानीके पहिरनेको कोई वस्त्र नहीं था, इसलिये राजाने उसे अपना कपड़ा पहिरनेको दिया और हाथ पकड़के बाहिर निकाली. तब देवयानीने राजासे प्रार्थना करी कि-मेरा पाणिग्रहण आप कर चुके हो सो अब मेरा पाणिग्रहण दूसरेके हाथ नहीं होना चाहिये. राजाने अपने मनमें इस बातको अनुचित समझी, पर उसकी ओर मन लगा देख स्वीकार कर चला गया. देवयानी रोती२ पिताके पास आई. तब शुक्राचार्यजी अपनी कन्याको साथ ले पुरोहित-गीरीकी अपेक्षा शिलोंछ वृत्तिको उत्तम मानते हुए वनको रवाने हुए. इस बातकी खबर होतेही वृषपर्वा राजा गुरुके पांवोंमें पड़ा और बहुत प्रार्थना करी, तब शुक्राचार्यजीने कहा कि-देवयानीको राजी करनेसे हम रहेंगे, नहीं तो नहीं. तब राजाने वो बात स्वीकार करी. देवयानीने वृषपर्वासे कहा कि-जहां मैं जाऊं वहां शर्मिष्ठा मेरी दासी बनके रहे, तो मैं राजी होऊं. वृषपर्वाने वैसाही किया. शुक्राचार्यजीने ययातिको देवयानी दी. तब कह दिया कि-तुम कभी शर्मिष्ठाके साथ बात चीत मत करना. राजा ययातिने स्वीकार किया. एक दिन ऋतु समयमें शर्मिष्ठाने राजासे ऋतुदानके लिये प्रार्थना करी. राजाने ऋतुदान दिया. उसके पुत्र हुआ. तब देवयानी गुस्से हो पिताके घर चली आई. तब शुक्राचार्यजीने उसे श्राप दिया कि "तू बुढ्ढा हो जा" शुक्राचार्यजीके श्रापसे जराके आजानेसे राजाकी सामर्थ्य घट गई;

अवशि नरेश वचन फुर करहू ॥ पालहु प्रजा शोक परिहरहू ॥ १ ॥ ❋
सुरपुर नृप पाइहि परितोषू ॥ तुम कहँ सुकृत सुयश नहिँ दोषू ॥ २ ॥ ❋

राजाने जो वचन कहा है, वो तुमको जरूर सत्य करना चाहिये. इसलिये तुम उनके वचनको मान प्रजाकी पालना करो और शोचको त्याग दो ॥ १ ॥ इस बातसे राजा स्वर्गमें बैठे हुए प्रसन्न होवेंगे और तुम्हारा जगतमें सुयश और सुकृत बढ़ेगा. आपको दोष नहीं होगा ॥ २ ॥

वेदविहित संमत सबहीका ॥ जेहि पितु देइ सो पावै टीका ॥ ३ ॥ ❋
करहु राज परिहरहु गलानी ॥ मानहुँ मोर बचन हित जानी ॥ ४ ॥ ❋

यह बात वेदविहित है और सब कोई इसको संमत करते है कि, पिता जिसको टीका देता है, वही राजतिलकको पाता है ॥ ३ ॥ इसलिये हे भरत ! तुम राज करो. मनमें जो ग्लानि है उसे छोड़ दो. मेरे वचनको अपना हितकारी सझकर मान लो ॥ ४ ॥

सुनि सुख लहब राम बैदेही ॥ अनुचित कहब न पंडित केही ॥ ५ ॥ ❋
कौशल्यादि सकल महतारी ॥ तेउ प्रजासुख होहिँ सुखारी ॥ ६ ॥ ❋

मेरा कहना मानोंगे तो ये समाचार सुन राम और सीता सुख पावेंगे और कोईभी पंडित इस बातको अयोग्य नहीं कहेगा ॥ ५ ॥ फिर कौसल्या आदि जो तुम्हारी मातायें है, येभी प्रजाको सुखी देखकर सुखी होवेंगी ॥ ६ ॥

मर्म तुम्हार राम सब जानहिँ ॥ सो सब बिधि तुमसन भल मानहिँ ॥७॥
सौंपेहु राज्य रामके आये ॥ सेवा करेहु सनेह सुहाये ॥ ८ ॥ ❋

और ये सब मातायें तुम्हारे और रामके मर्म यानी अंतःकरणको अच्छीतरह जानतीं है. इसलिये येभी तुम्हारे साथ सब तरह भला मानेंगीं ॥ ७ ॥ और जब राम पीछे आवें, तब यह राज उनको पीछा सौंप देना. और अपने स्वाभाविक सुहावने स्नेहसे पूर्ववत् उनकी सेवा करना ॥ ८ ॥

दोहा—कीजिय गुरु आयसु अवशि, कहहिँ सचिव कर जोरि ॥ ❋
रघुपति आये उचित जस, तब तस करब बहोरि ॥ १७० ॥ ❋

मंत्री लोगोंने हाथ जोड़कर भरतसे कहा कि—अभी तो आप जरूर गुरुकी आज्ञाके अनुसार कीजियेगा और जब रामचन्द्रजी पीछे आवें, तब फिर जैसा उचित हो वैसा करना ॥ १७० ॥

कौसल्या धरि धीरज कहई ॥ पूत पिता गुरु आयसु अहई ॥ १ ॥ ❋
सो आदरिय करिय हित मानी ॥ तजिय बिषाद कालगति जानी ॥ २ ॥❋

पर ममता नहीं मरी. तब राजाने शुक्राचार्यजीसे प्रार्थना करी कि, मेरा मन विषयवासनासे तृप्त नहीं हुआ है, सो मेरे ऊपर कृपा करो और सामर्थ्य दो. तब शुक्राचार्यजीने कहा कि—तेरे पुत्रोंकी अवस्थासे तू अवस्थाको बदल ले. तब राजाने यदुसे कहा, तौ वो नाहीं कर गया. आखिर चारोंके नटनेके बाद पांचवें पुरुने राजासे कहा कि—पिताकी आज्ञाके सिवाय दूसरा क्या है? जो आप आज्ञा करेंगे वो करनेको मैं तैयार हूं.कहा है कि—जो पिताके मनमें विचारतेही काम कर डाले वह तौ उत्तम पुत्र और जो कहनेसे करै वो मध्यम, और जो कहनेपरभी सुस्तीके साथ श्रद्धाविना करै वह अधम, और जो पिताकी आज्ञा नहीं माने वह पुत्र नहीं है, किंतु वो उसकी विष्ठा है. सो आपकी आज्ञा मेरे शिरपर है. तब राजाने उसकी आयु ले कुछ बरसोंतक भोग भोगे, फिर सब पृथ्वीका चक्रवर्तीराज पुरुको दे राजा ययाति वैराग्यको प्राप्त हो अनेक प्रकारसे अपनी रानी देवयानीको उपदेश कर वनमें जा भगवद्धामको प्राप्त हुआ. और राजा पुरु पिताकी आज्ञा पालनेसे चक्रवर्ती राजा हुआ.

फिर कौसल्याने धीरज धरकर कहा कि–हे तात ! पिता और गुरुकी आज्ञा परम पवित्र है ॥ १ ॥ सो हितकारी मानकर इसको आदरपूर्वक करियेगा और भावीको जानकर शोच त्याग दीजियेगा ॥ २ ॥

वन रघुपति सुरपुर नरनाहू ॥ तुम यहि भाँति तात कदराहू ॥ ३ ॥ ❋
परिजन प्रजा सचिव कह अंबा ॥ तुमही सुत सब कर अवलंबा ॥ ४ ॥ ❋

माता कौसल्या कहती है कि–हे तात ! रामचन्द्र तौ वनमें, राजा दशरथजी स्वर्गमें और तुम फिर इसतरह कायरता लाते हो ॥ ३ ॥ सो इसतरह कुटुम्बके लोग, प्रजा और मंत्री लोगोंका निबाह कैसे होगा ? क्योंकि हे पुत्र ! इन सबके केवल एक आपकाही सहारा है, सो जब तुमही कदराओगे तब इनकी क्या दशा होगी ? ॥ ४ ॥

लखि विधि बाम काल कठिनाई ॥ धीरज धरहु मातु बलिजाई ॥ ५ ॥ ❋
शिर धरि गुरु आयसु अनुसरहू ॥ प्रजा पालि पुरजन दुख हरहू ॥ ६ ॥ ❋

माता कौसल्या कहती है कि–हे तात ! बलि जाऊं, तुम विधाताके प्रतिकूल होनेसे कालकी कठिनताको सोचकर मनमें धीरज धरो ॥ ५ ॥ गुरुकी आज्ञा शिर चढ़ाके उसके अनुसार चलो और प्रजाका पालन करके पुरके सब लोगोंके दुःख दूर करो ॥ ६ ॥

गुरुके बचन सचिव अभिनंदन ॥ सुनत भरत हिय जलरुहचंदन ॥ ७ ॥ ❋
सुनी बहोरि मातु मृदु बानी ॥ शील सनेह सरल रस सानी ॥ ८ ॥ ❋

कवि कहता है कि–गुरुकी आज्ञा और मंत्रियोंका सराहना भरतके हृदयको सुनकर कमल और चंदनके समान शीतल लगे ॥ ७ ॥ उसके अनंतर भरतने जो माताकी कोमल सरल वाणी सुनी, वो शील, स्नेह और प्रेमरससे पूर्ण पगी हुई थी ॥ ८ ॥

छंद–सानी सरल रस मातु बानी सुनि भरत व्याकुल भये ॥ ❋
लोचन सरोरुह श्रवण सींचत बिरह उर अंकुर नये ॥ ❋
सो दशा देखत समय तेहिँ बिसरी सबहिँ सुधि देहकी ॥ ❋
तुलसी सराहत सकल सादर सींव सहज सनेहकी ॥ ८ ॥ ❋

तुलसीदासजी कहते हैं कि–रसभरी और सरल माता कौसल्याकी वाणी सुनकर भरतजी व्याकुल हो गये. उनके नेत्रकमलोंमेंसे अश्रु टपक टपककर जो हृदय सींचा गया तिससे उनके हृदयमें विरहका अंकुर और ताजा हो गया. भरतकी यह दशा देखकर उस समय सब लोग अपने शरीरकी सुध विसर गये और आदरके साथ स्नेहकी सहज सीमारूप भरतको सराहने लगे ॥ ८ ॥

सोरठा–भरत कमल कर जोरि, धर्मधुरन्धर धीर धरि ॥ ❋
बचन अमिय जनु बोरि, देत उचित उत्तर सबहिँ ॥ ७ ॥ ❋

धर्ममें मुखिया भरतजी दोनों हस्तकमल जोड़ धीरज धर मानों अमृतमें बोरे हुए हों ऐसे मधुर वचनसे सबको यथायोग्य उत्तर देने लगे ॥ ७ ॥

मोहिँ उपदेश दीन्ह गुरु नीका ॥ प्रजा सचिव सम्मत सबहीका ॥ १ ॥ ❃
मातु उचित पुनि आयसु दीन्हा ॥ अवशि शीस धरि चाहिय कीन्हा ॥२॥ ❃

भरत बोले कि–गुरु वसिष्ठजीने मुझको बहुत अच्छा उपदेश दिया है. जो प्रजा व मंत्री, सबके संमत है ॥ १ ॥ और माता कौसल्याने जो आज्ञा की है, वोभी बहुत उचित है. सो उसे शिर धरकर मुझे अवश्य करनीही चाहिये ॥ २ ॥

गुरु पितु मातु स्वामि हितबानी ॥ सुनि मन मुदित करिय भलजानी ॥३॥
उचित कि अनुचित किये बिचारू ॥ धर्म जाइ शिर पातक भारू ॥ ४ ॥ ❃

गुरु, माता पिता और स्वामीकी हितवाणी सुनतेही उसे अपनी हितकारी समझ, मनमें प्रसन्न हो अवश्य करनी चाहिये ॥ ३ ॥ जो कोई इनकी वाणीको सुनकर उचित अनुचितका स्वयं विचार करता है, तो उससे उसका धर्म नाश होता है और शिरपर पापका भार बंधता है. इसलिये विना विचारे इनकी आज्ञानुसार करना यही मुख्य सिद्धान्त है ॥ ४ ॥

तुम तौ देहु सरल सिख सोई ॥ जो आचरत मोर हित होई ॥ ५ ॥ ❃
यद्यपि यह समुझत हौं नीके ॥ तदपि होत परितोष न जीके ॥ ६ ॥ ❃

तुम तौ मुझको वो ही सीधी सरल शिक्षा देते हो कि–जिसका आचरण करनेसे मेरा भला होवे ॥ ५ ॥ यद्यपि इस बातको मैं अच्छीतरह समझता हूं, तौभी मेरे मनको संतोष नहीं होता ॥ ६ ॥

अब तुम विनय मोरि सुनि लेहू ॥ मोहिँ अनुहरत सिखावन देहू ॥७॥ ❃
उत्तर देउँ क्षमब अपराधू ॥ दुखित दोष गुण गणहिँ न साधू ॥ ८ ॥ ❃

सो अब तुम एक बेर मेरी विनती सुन लो, और फिर मेरी विनतीके अनुसार मुझे शिक्षा दो ॥ ७ ॥ मैं आपको उत्तर देता हूं सो मेरा अपराध क्षमा करना; क्योंकि बड़े लोग दुःखी आदमीके गुण अवगुणको नहीं गिनते ॥ ८ ॥

दोहा–पितु सुरपुर सिय राम बन, करन कहहु मोहिँ राज ॥ ❃
यहिते जानहुँ मोर हित, कै आपन बड़ काज ॥ १७१ ॥ ❃

पिता तौ देवलोकमें विराजे हैं और रामचन्द्रजी व सीता वनमें है और मुझको आप राज करनेके लिये कहते हो, सो इससे मैं आपके कहनेको मेरा हितकारी समझूं, या आप लोगोंका विशेष मतलब निकालना समझूं? ॥ १७१ ॥

हित हमार सियपति सेवकाई ॥ सो हरि लीन्ह मातु कुटिलाई ॥ १ ॥ ❃
मैं अनुमानि दीख मनमाहीं ॥ आन उपाय मोर हित नाहीं ॥ २ ॥ ❃

हमारे लिये हितकारी तौ रामचन्द्रजीकी सेवा है, सो उसे तौ मेरी माता कैकेयीकी कुटिलताने हरि लीनी ॥ १ ॥ मैं तो मेरे मनमें अनुमान करके देख लिया है कि– दूसरे उपायोंसे मेरा हित होना नहीं है ॥ २ ॥

शोक समाज राज केहि लेखे ॥ लषण राम सिय पद बिनु देखे ॥ ३ ॥ ❃
बादि बसन बिनु भूषण भारू ॥ बादि बिरति बिनु ब्रह्मबिचारू ॥ ४ ॥ ❃

जब दूसरे बड़े २ साधनोंसे राम लक्ष्मण और सीताके चरणारविंदोंका दर्शन किये विना भला नहीं है, तौ बिचारा यह शोकका आगर राज किस लेखेमें ? ॥ ३ ॥ जैसे वस्त्र बिन गहनोंका भार वृथा है और वैराग्य बिन ब्रह्मका विवेचन करना वृथा है ॥ ४ ॥

सरुज शरीर बादि सब भोगा ॥ बिनु हरिभक्ति जाप जप योगा ॥ ५ ॥ ❀
जाय देहँ बिनु जीव सुखाई ॥ बादि मोर सब बिनु रघुराई ॥ ६ ॥ ❀

रोगीशरीरके लिये सब भोग वृथा है और हरि भगवान्‌की भक्ति विना जप जाप और योग वृथा हैं ॥ ५ ॥ जैसे जीव बिना देह सूख जाता है यानी वृथा है, ऐसे रामचन्द्रजीके बिना मेरे सब वृथा है ॥ ६ ॥

जाउँ रामपहँ आयसु देहू ॥ एकहि अंक मोर हित येहू ॥ ७ ॥ ❀
मोहिँ नृप करि आपन भल चहहू ॥ सो सनेह जड़ता बश कहहू ॥ ८ ॥ ❀

इसलिये मैं रामके पास जाता हूं,सो मुझे आज्ञा देओ. मेरे तो ये एकही अक्षर है.मेरा भला तो इससे है, अन्यसे नहीं ॥ ७ ॥ जो आप मुझे राजा बनाकर मेरा भला चाहते हो, सो आपका कहना स्नेह और जड़ताके कारण है; बुद्धिपूर्वक नहीं ॥ ८ ॥

दोहा—कैकेयीसुत कुटिल मति, राम विमुख गत लाज ॥ ❀
तुम चाहत सुख मोहबश, मोहिँसे अधमके राज ॥ १७२ ॥ ❀

कैकेयीका तौ मैं पुत्र, कुटिल जिसकी बुद्धि, और रामसे विमुख व निर्लज्ज, तिस मेरे जैसे महानीच अधमके राजमें जो आप सुख चाहते हो, सो यह आपकी भूल है ॥ १७२ ॥

कहौं सांच सब सुनि पतियाहू ॥ चाहिय धर्मशील नरनाहू ॥ १ ॥ ❀
मोहिँ राज हठि देहहु जबहीं ॥ रसा रसातल जाइहि तबहीं ॥ २ ॥ ❀

जो मैं सत्य कहता हूं सो सुनो और उसका मनमें भरोसा रक्खो. देखो,राजा धर्मशील होना चाहिये ॥ १ ॥ आप लोगोंने हठ करके मुझे राज दिया नहीं, और पृथ्वी पातालमें गयी नहीं अर्थात् मुझे राज देतेही अधर्मसे दबकर जमीन पातालमें चली जायगी ॥ २ ॥

मोहिँ समान को पापनिबासी ॥ जेहि लगि सीय राम बनबासी ॥ ३ ॥ ❀
राव राम कहँ कानन दीन्हा ॥ बिछुरत गमन अमरपुर कीन्हा ॥ ४ ॥ ❀

अरे ! मेरे जैसे पापका भंडार कौन है ? जिसके लिये सीता और रामको वनवास हुआ ॥ ३ ॥ राजा दशरथजीने तौ रामको वनवास दिया, उनके बिछुरते ही प्राणोंको त्यागकर वे देवलोकको सिधारे ॥ ४ ॥

मैं शठ सब अनरथ कर हेतू ॥ बैठि बात सब सुनउँ सुचेतू ॥ ५ ॥ ❀
बिनु रघुवीर बिलोकिय बासू ॥ रहे प्राण सहि जग उपहासू ॥ ६ ॥ ❀

पर इस सारे अनर्थका मूल शठ मैं तौ बैठे २ सचेत रहकर यही सारी शोचकी बातें सुनता हूं ॥ ५ ॥ और रामचन्द्रजीको घरमें देखे विना प्राण धारण करता हूं और जगत्‌में जो उपहास होता है उसे सहता हूं ॥ ६ ॥

राम पुनीत विषय रस रूखे ॥ लोलुप भूप भोगके भूखे ॥ ७ ॥ ❋
कहँलगि कहउँ हृदय कठिनाई ॥ निदरि कुलिश जेहिँ लही बड़ाई ॥८॥ ❋

रामचन्द्रजी तौ परम पवित्र है और विषयवासनाके रससे बिलकुल विरक्त हैं. राजसुख और भोगके भूखे तौ वो राजा होते है कि, जो लोलुप और लालची होते है ॥ ७ ॥ भरतजी कहते है कि—मैं मेरे हृदयकी कठोरता कहांलों कहूं कि, जिसने वज्रकोभी मात करके बड़ाई पाई है ? ॥ ८ ॥

दोहा—कारणते कारज कठिन, होय दोष नहिँ मोर ॥ ❋
कुलिश अस्थिते उपलते, लोह कराल कठोर ॥ १७३ ॥ ❋

भरत कहते है कि—कारण करते कार्य कठिन होता है, इसलिये मेरेमें यह दोष नहीं है. क्योंकि जब कैकेयी कठोर है तौ उसकी अपेक्षा मैं कठिन होऊं इसमें कुछ आश्चर्यकी बात नहीं. देखिये, हड्डीसे वज्र पैदा हुआ है और पत्थरसे लोह पैदा होता है, वो उनके कारणोंकी अपेक्षा कितने कठोर है ? ॥ १७३ ॥

कैकेयीभव तन अनुरागे ॥ पामर प्राण अघाइ अभागे ॥ १ ॥ ❋
जो प्रियबिरह प्राणप्रिय लागे ॥ देखब सुनब बहुत अब आगे ॥ २ ॥ ❋

कैकेयीके शरीरसे पैदा भयेहुए इस मेरे शरीरमें ये महानीच मेरे प्राण अति प्रीति रखते है, इसलिये ये अत्यंतही अभागे है ॥ १ ॥ जो इन अभागे प्राणोंको प्यारेका विरह प्रिय लगा है,तौ ये अब आगेको बहुत कुछ सुनेंगे और देखेंगे ॥ २ ॥

लषण राम सिय कहँ बन दीन्हा ॥ पठय अमरपुर पतिहित कीन्हा ॥३॥ ❋
लीन्ह बिधवपन अपयश आपू ॥ दीन्हेउ प्रजहिँ शोक सन्तापू ॥ ४ ॥ ❋

इस कैकेयीने राम, लक्ष्मण व सीताको तौ वनवास दिया और अपने पति देवलोकमें भेजकर उनका भला किया ॥ ३ ॥ और आपने विधवापन और अपजस लिया, तथा प्रजाको शोक व संताप दिया ॥ ४ ॥

मोहिँ दीन्ह सुख सुयश सुराजू ॥ कीन्ह कैकयी सब कर काजू ॥ ५ ॥ ❋
यहिते मोर कहा अब नीका ॥ तेहि पर देन कहहु तुम टीका ॥ ६ ॥ ❋

मुझको सुख, सुजस और अच्छा राज दिया. इसतरह कैकेयीने सबका काम बना दिया है ॥ ५ ॥ सो इससे बढ़कर अब मेरा भला क्या होगा ? तिसपर फिर आप मुझे राजतिलक करनेको कहते हो ॥ ६ ॥

कैकयिजठर जन्मि जगमाहीं ॥ यह मोहिँ कहँ कछु अनुचित नाहीं ॥ ७ ॥
मोरि बात सब बिधिहिँ बनाई ॥ प्रजा पाँच कत करहु सहाई ॥ ८ ॥ ❋

भरत कहते हैं कि—मैं कैकेयीके उदरसे पैदा हुआ हूं. इसलिये मेरे लिये आप जो कुछ कहते हो, सो सब उचित है. जगतमें मेरे लिये कुछभी अनुचित नहीं है ॥ ७ ॥ मेरे लिये तौ यह सब बात विधाताने स्वयं बना दी है. अब इसमें प्रजावर्ग और सभासद लोग फिर क्यों सहाय करते हैं ? ॥ ८ ॥

दोहा-ग्रहग्रहीत पुनि बात बश, तेहिं पुनि बीछी मार ॥ ❋
ताहि पियाइय बारुणी, कहहु कवन उपचार ॥१७४॥ ❋

जैसे किसीके शरीरमें पिशाचका आवेश हो गया हो और वह फिर सन्निपातमे आजावे और उसे फिर बीछी मार (लड़) जावे, और उसे फिर वारुणी (शराब) पिला) दी जावे तौ कहो, फिर उसका क्या उपाय है ? कुछभी नहीं; सो यह बात यहां है ॥ १७४ ॥

कैकयिसुवन योग जग जोई ॥ चतुर बिरंचि रचेउ मोहिँ सोई ॥ १ ॥ ❋
दशरथतनय रामलघुभाई ॥ दीन्ह मोहिँ बिधि बादि बड़ाई ॥ २ ॥ ❋

भरत कहते है कि-जगतमें जितने जीव है, उन सब जीवोंमेसे जो जीव कैकेयीका पुत्र होनेके योग्य था, वोही जीव विचक्षण बिधातासे मैं रचा गया हूं ॥ १ ॥ परंतु उस महा अधम मुझको विधाताने दशरथजीका पुत्र और रामचन्द्रजीका छोटा भाई बनाके जो बड़ाई दी है, वो तौ बिलकुल वृथा है ॥ २ ॥

तुम सब कहहु कढ़ावन टीका ॥ राय राज सबहीकहँ नीका ॥ ३ ॥ ❋
उतर देउँ केहिबिधि केहि केही ॥ कहहु सुखेन यथारुचि जेही ॥ ४ ॥ ❋

अब तुम सब मिलकर मुझे तिलक कढ़ानेको कहते हो, सो ठीक है; परंतु तुम अपने मनमें समझो कि, राजपद किसको अच्छा नहीं लगता ? किंतु वो सबको अच्छा लगता है फिर मैं जो स्वीकार नहीं करता उसका कुछ कारण होगा. बिना समझे तौ मैंभी नहीं कहता होऊंगा ॥ ३ ॥ अब मैं किस किसको उत्तर देऊं और कौन कौन रीतिसे देऊं ? सो जैसी जिसकी रुचि होवे वो वैसे सुखेन कहे जाओ ॥ ४ ॥

मोहिँ कुमातु समेत बिहाई ॥ कहहु कहहि को कीन्ह भलाई ॥ ५ ॥ ❋
मोहिँ बिन को सचराचरमाहीं ॥ जेहिँ सियराम प्राणप्रिय नाहीं ॥ ६ ॥ ❋

कहो, जो ये सब कहते है, इनमेंसे किसने मेरी कुमाताके साथ मुझको छोड़कर किसके साथ भलाई की है ? अर्थात् मेरी और कैकेयीकी भलाईकी बात तौ जरूर कही है और दूसरेकी भलाईकी बात तौ किसीने नहीं कही ॥ ५ ॥ इस सारे चराचर संसारमें मेरे विना दूसरा ऐसा कौन है ? जिसे रामचन्द्रजी और सीता प्राणोंसे प्यारे नहीं लगते ॥ ६ ॥

परम हानि सबकहँ बड़ लाहू ॥ अदिन मोर नहिं दूषण काहू ॥ ७ ॥ ❋
संशय शील प्रेमबश अहहू ॥ सबै उचित सब जो कछु कहहू ॥ ८ ॥ ❋

जिसमें मेरी बड़ी हानि है उस बातको सब कोई मेरे लिये बड़ा लाभ बतलाते हैं; सो इसमें किसीका दोष नहीं है. यह मेरे खोटे दिनका प्रताप है ॥ ७ ॥ आप सब लोग संशय, शील, और प्रेमके वश हो; इसलिये आप सब लोग जो कुछ कहते हो सो आप लोगोंका कहना सब उचितही है ॥ ८ ॥

दोहा-राम मातु सुठि सरल चित, मोपर प्रेम बिशेषि ॥ ❋
कहहिं सुभाव सनेहबश, मोरि दीनता देषि ॥ १७५ ॥ ❋

और रामचन्द्रजीकी माता कौसल्या बड़ी सरल हृदय और अति उत्तम है. तथा मुझपर

उसकी प्रीति अतिविशेष है. इसलिये वह मेरी दीनता देखकर, अपने स्वाभाविक स्नेहके वश होकर यह बात कहती है ॥ १७५ ॥

गुरु बिबेकसागर जग जाना ॥ जिनहिँ बिश्व कर बदरसमाना ॥ १ ॥ ❀
मोकहँ तिलक साजि सज सोऊ ॥ भा बिधि बिमुख बिमुख सबकोऊ ॥२॥

और गुरु वसिष्ठजी ज्ञानके समुद्र है, सो इस बातको सारा संसार जानता है, जिनके यह सब जगत् हाथमेंके बेरकी भांति है ॥ १ ॥ वेभी जो मेरे लिये राज्याभिषेककी तैयारी करनेको कहते है, इससे जाना जाता है कि, मुझसे दैव विमुख हो गया और उसीसे सब कोई विमुख होगये है ॥ २ ॥

परिहरि राम सीय जगमाहीं ॥ कोउ न कहहि मोर मत नाहीं ॥ ३ ॥ ❀
सो मैं सुनब सहब सुख मानी ॥ अन्तहु कीच तहां जहँ पानी ॥ ४ ॥ ❀

अतएव मैं जानता हूं कि–सीतारामको छोड़कर जगत्में कोई आदमी ऐसे नहीं कहेगा कि, इसमें मेरी संमति नहीं है; किंतु सब हांमें हां मिला देंगे ॥ ३ ॥ सो सब सुख मानकर मै सुनूंगा और सहूंगाभी, क्योंकि जहां जल होता है वहां अन्तमे कीचभी हुआही करता है. अर्थात् हमने जो उनकी प्रीतिसे सुख पाया है तौ दुखभी सहनाही पड़ेगा ॥ ४ ॥

डर न मोहिँ जग कहिहि कि पोचू ॥ परलोकहुकर नाहिंन शोचू ॥ ५ ॥❀
एकै बड़ उर दुसह दवारी ॥ मोहिँ लगि भे सिय राम दुखारी ॥ ६ ॥ ❀

भरत कहते है कि–जगतमें कोई मुझको पोचा (नीच) कहे तौ न तौ मुझे उसका डर है और न परलोकका डर है ॥ ५ ॥ मेरे हृदयमें तौ एक यही बड़ी भारी दावानल धधक रही है कि, मेरे निमित्त सीता और रामचन्द्र दुखी हुए ॥ ६ ॥

जीवनलाहु लषण भल पावा ॥ सब तजि रामचरण मन लावा ॥ ७ ॥ ❀
मोर जन्म रघुवरबनलागी ॥ झूठ काह पछिताउँ अभागी ॥ ८ ॥ ❀

जीनेका लाभ तौ लक्ष्मणने बहुत अच्छा पाया है कि, जो सबको त्यागकर उसने प्रभुके चरणोंमें मन लगाया है ॥ ७ ॥ और जब मुझ मंदभागीका जन्मही रघुनाथजीके वनवासके लिये हुआ है, तौ फिर झूंठा पछताताही क्या ? ॥ ८ ॥

दोहा–आपनि दारुण दीनता, सबहिँ कह्यउँ समुझाय ॥ ❀
देखे बिन रघुवीरपद, जियकी जरनि न जाय ॥ १७६ ॥ ❀

मैंने अपने मनकी अतिदारुण दीनता सबको समझाके कहदी है, तौभी प्रभुके चरणकमलोंके दर्शन किये विना मनकी जलन मिट नहीं सकती ॥ १७६ ॥

आन उपाय मोहिँ नहिँ सूझा ॥ को जियकी रघुवर बिनु बूझा ॥ १ ॥ ❀
एकहि आंक इहै मनमाहीं ॥ प्रात काल चलिहौं प्रभुपाहीं ॥ २ ॥ ❀

मुझे प्रभुके दर्शन विना दूसरा एकही उपाय नहीं दीखता; क्योंकि प्रभु विना मनकी बात कौन जान सकता है ? ॥ १ ॥ इसलिये अब मेरे मनमें एक यही जंच गई है कि, कल भोर होतेही यहांसे प्रभुके पास चलेंगे ॥ २ ॥

यद्यपि मैं अनभल अपराधी ॥ भइ मोहिँ कारण सकल उपाधी ॥ ३ ॥❋
तदपि शरणसन्मुख मोहिँ देषी ॥ क्षमि सब करिहहिँ कृपा विशेषी ॥ ४ ॥ ❋

यद्यपि मैं बड़ा भारी अपराधी और बहुत बुरा हूं तथा सारा उपद्रव मेरे कारण हुआ है ॥ ३ ॥ तौभी प्रभु मुझे अपने सन्मुख शरण आया देख, घनी कृपा करके मेरे सारे अपराध क्षमा करेंगे ॥ ४ ॥

शील सकुच सुठि सरल सुभाऊ ॥ कृपासनेहसदन रघुराऊ ॥ ५ ॥ ❋
अरिहुक अनभल कीन्ह न रामा ॥ मैं शिशु सेवक यद्यपि बामा ॥ ६ ॥❋

क्योंकि प्रभु परम सुशील, संकोचयुत, अतिसुन्दर और सरल स्वभाव, तथा कृपाके सागर और स्नेहके धाम हैं ॥ ५ ॥ प्रभुने आजलों बैरियोंकाभी बुरा नहीं किया है, सो यद्यपि मैं प्रभुसे प्रतिकूल हूं तथापि प्रभु मुझे अपना बालक और सेवक समझकर अवश्य कृपा करेंगे ॥ ६ ॥

तुम पै पांच मोर भल मानी ॥ आयसु आशिष देहु सुबानी ॥ ७ ॥ ❋
जेहि सुनि बिनय मोहिँ जन जानी ॥ आवहिँ बहुरि राम रजधानी ॥ ८ ॥ ❋

आप सभासद् पंच लोग कृपा करके मुझे अपनी अच्छी वाणीसे आशिष देकर आज्ञा देओ ॥ ७ ॥ कि, जिससे प्रभु मेरी विनतीको सुन, मुझे अपना जन जान, राजधानी अयोध्याको पीछे लौट आवें ॥ ८ ॥

दोहा–यद्यपि जन्म कुमातुते, मैं शठ सदा सदोष ॥
आपन जानि न त्यागिहैं ॥ मोहिँ रघुबीरभरोस ॥ १७७ ॥ ❋

यद्यपि मेरा जन्म इस कुमातासे हुआ है और मैं महानीच और दूषणसहित हूं, तौभी मुझे प्रभुका पक्का भरोसा है कि, प्रभु मुझे अपना जन जानके कभी मेरा त्याग नहीं करेंगे ॥ १७७ ॥

भरतबचन सबकहँ प्रिय लागे ॥ राम सनेहसुधासम पागे ॥ १ ॥ ❋
लोग वियोग विषम दुख दागे ॥ मंत्र सबीज सुनत जनु जागे ॥ २ ॥ ❋

भरतके बचन सब लोगोंको बहुत प्रिय लगे; क्योंकि वे अमृतके समान प्रभुके स्नेहसे मिले हुए थे ॥ १ ॥ अयोध्याके सब लोग प्रभुके वियोगरूप विषम विषसे अचेत हो रहे थे, सो भरतके वचनरूप सबीज गारुड़ मंत्रको सुनकर, मानों पीछे सचेत होगये ॥ २ ॥

मातु सचिव गुरु पुर नर नारी ॥ सकल सनेहबिकल भय भारी ॥ ३ ॥ ❋
भरतहिँ कहहिँ सराहि सराही ॥ राम प्रेम मूरति तनु आही ॥ ४ ॥ ❋

माता, मंत्री, गुरु और नगरके सारे नर नारी उस समय स्नेहसे ऐसे विहवल होगये कि, कुछ कहा नहीं जाता ॥ ३ ॥ सब लोग भरतकी सराहना करते है और कहते हैं कि, यह तौ साक्षात् प्रभुके प्रेमकी विद्यमान् मूर्तिही हैं ॥ ४ ॥

तात भरत अस काहे न कहहू ॥ प्राणसमान राम प्रिय अहहू ॥ ५ ॥ ❋
जो पामर आपनि जडताई ॥ तुमहिँ सुगाइ मातुकुटिलाई ॥ ६ ॥ ❋

हे तात ! भरत ! जो तू कहता है ऐसा आजलों किसीने नहीं कहा. तू रामचन्द्रजीको प्राणोंके समान प्यारा है ॥ ५ ॥ हे तात ! जो तुच्छ लोग अपनी मूर्खतासे तेरी माताकी कुटिलताको विचार कर तेरी निंदा करेंगे ॥ ६ ॥

सो शठ कोटिक पुरुषसमेता ॥ बसहिं कल्प शत नरकनिकेता ॥ ७ ॥ ❋
अहि अघ अवगुण मणि नहिँ गहई ॥ हरै गरलदुख दारिद दहई ॥ ८ ॥ ❋

वे शठ और नीच पुरुष अपने करोड़ों पुरुषोंके साथ सौ कल्पलों नरकमें निवास करेंगे ॥ ७ ॥ यह कोई बात नहीं है कि, जो जिससे पैदा होता है, उसमें उसका अवगुण अवश्य रहता है. देखो, सांपकी मणि सांपमें रहती है; परंतु वो उसका अवगुण और पाप नहीं लेती, किंतु उलटा सांपके विषको मिटाती है और दुख और दारिन्द्यको हरती है ॥ ८ ॥

दोहा—अवशि चलिय बन रामपहँ, भरत मंत्र भल कीन्ह ॥ ❋
शोकसिन्धु बूडत सबहिँ, तुम अवलम्बन दीन्ह ॥ १७८ ॥ ❋

हे पार्वती ! उस काल सब लोग कहने लगे कि—रामके पास अवश्य चलना चाहिये. हे भरत ! आपने यह सलाह बहुत अच्छी विचारी है. आपने चलनेको क्या कहा है मानों शोचरूप समुद्रमें बूड़ते हुए लोगोंको अवलम्बन दिया है ॥ १७८ ॥

भा सबके मन मोद न थोरा ॥ जनु घनधुनि सुनि चातक मोरा ॥ १ ॥ ❋
चलत प्रात लखि निर्णय नीके ॥ भरत प्राणप्रिय भे सबहीके ॥ २ ॥ ❋

भरतके वचन सुन सब लोगोंको मनमें आनंद कुछ कम नहीं हुआ. मानों मेघकी गरज सुन, चातक और मोर नाचने लगे ॥ १ ॥ प्रातःकालमें प्रयाण होगा, यह पक्का ठहराव जानकर, भरत सब लोगोंको प्राणोंसेभी प्रिय लगा ॥ २ ॥

मुनिहिँ बन्दि भरतहिँ शिर नाई ॥ चले सकल घर बिदा कराई ॥ ३ ॥ ❋
धन्य भरत जीवन जगमाहीं ॥ शील सनेह सराहत जाहीं ॥ ४ ॥ ❋

फिर सब लोग गुरु वसिष्ठजीको वंदन कर, भरतको शिर नवाय, बिदा हो अपने अपने घरोंको चले ॥ ३ ॥ तब मारगमें जाते भरतके शील और स्वभावकी प्रशंसा करते जाते हैं कि, जगतमें केवल एक भरतका जीनाही धन्य है. बाकी सब वृथा है ॥ ४ ॥

कहहिँ परस्पर भा बड़ काजू ॥ सकल चलैकर साजहिँ साजू ॥ ५ ॥ ❋
जेहिँ राखहिँ घर रहु रखवारी ॥ सो जानै जनु गरदन मारी ॥ ६ ॥ ❋

लोग सब आपसमें कहते जाते है कि—आज बड़ा भारी काम हुआ. ऐसे कहते कहते अपने २ घरोंमें जाय, सब चलनेका साज सजने लगे ॥ ५ ॥ और जिनको घरमें रखवारीके लिये रहनेको कहा, उन्होंने तो यही जाना कि, मानों गरदनही मारी ॥ ६ ॥

कोउ कह रहन कहिय नहिँ काहू ॥ को न चहै जग जीवनलाहू ॥ ७ ॥ ❋
केहि न भाव सिय लक्ष्मण रामू, सबकहँ प्रिय हिय सदा सकामू ॥ ८ ॥ ❋

किसीने कहा कि—रहनेके लिये किसीको कहनेकी कोई जरूर नहीं है; क्योंकि जगतमें अपने जीवनका लाभ लेना कौन नहीं चाहता ? ॥ ७ ॥ राम लक्ष्मण और सीता किसको अच्छे नहीं लगते ? वे सबको प्रिय लगते हैं और सब लोग उनका दर्शन करना चाहते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—जरै सुसम्पति सदनसुख, सुहृद मातु पितु भाइ ॥ ❋
सन्मुख होत जो रामपद, करै न सहजसहाइ ॥ १७९ ॥ ❋

वो संपदा और घरका सुख जल जाओ. और वे बंधु, माता, पिता और भाई भस्म हो जाओ कि, जो प्रभुके चरणकमलोंके सन्मुख होनेमें सहायता न करैं ॥ १७९ ॥

घर घर बाहन साजहिँ नाना ॥ हर्षहिँ हृदय प्रभात पयाना ॥ १ ॥ ❋
भरत जाइ घर कीन्ह बिचारू ॥ नगर बाजि गज भवन भँडारू ॥ २ ॥❋

घर घरमें नाना प्रकारके वाहन सजते है और 'प्रभात चलना होगा', इस बातको विचार कर लोग मनमें आनंदित होते है ॥ १ ॥ भरतने घरमें जाकर विचार किया कि, नगर, घोड़े, हाथी, घर भंडार ॥ २ ॥

सम्पति सब रघुपतिके आही ॥ जोबिनु यतन चलौं तजि ताही ॥ ३ ॥ ❋
तौ परिणाम न मोरि भलाई ॥ पापशिरोमणि साँइदोहाई ॥ ४ ॥ ❋

और सारी संपदा ये सब प्रभुके है, सो जो मैं इनका बंदोबस्त बिना किये छोड़कर चला जाऊं ॥ ३ ॥ तौ परिणाममें मेरा भला न होगा और पापी पुरुषोंमें शिरोमणि गिना जाऊंगा. सेवकका धर्म क्या है कि, स्वामीकी आज्ञा पालन करना ॥ ४ ॥

करहि स्वामिहित सेवक सोई ॥ दूषण कोटि देइ किन कोई ॥ ५ ॥ ❋
अस बिचारि शुचि सेवक बोले ॥ जो सपनेहुँ निजधर्म न डोले ॥ ६ ॥ ❋

कहा है कि—जो स्वामीका हित करता है वही सेवक कहलाता है. चाहे कोई इसमें करोड़ों दूषण क्यों न लगावे ? ॥ ५ ॥ ऐसे मनमें विचार कर भरतने स्वामिधर्मी सेवकोंको बुलाया कि, जो स्वप्नमें-भी अपने धर्मसे चलायमान न होवें ॥ ६ ॥

कहि सब मर्म धर्म सब भाषा ॥ जो जेहि लायक सो तहँ राषा ॥ ७ ॥ ❋
कहि सब यतन राखि रखवारे ॥ राममातुपहँ भरत सिधारे ॥ ८ ॥ ❋

उन्हें बुलाय, सारी मर्मकी बातें कह सबको सब प्रकारके धर्म कहे और जो जिस कामके योग्य था उसे वह काम सौंपा ॥ ७ ॥ भरतने जिन रखवारोंको रखवारीके लिये नियत किया था, उन्हें पकी पकी भलामन दे भरत कौसल्याके पास गये ॥ ८ ॥

दोहा—आरत जननी जानि सब, भरत सनेह सुजान ॥ ❋
कहेउ सजावन पालकी,सुखद सुखासन यान ॥ १८० ॥ ❋

स्नेहकी रीतिको जाननेवाले सुजान भरतने सब माताओंको आरत जानकर सबके लिये पालकी, सुखपाल और सुखकारी सवारियां सजानेके लिये आज्ञा दी ॥ १८० ॥

चक चकई इव पुरनरनारी ॥ चहत प्रात उर आनँद भारी ॥ १ ॥ ❋
जागत सब निशि भयउ बिहाना ॥ भरत बुलाये सचिव सुजाना ॥ २ ॥❋

नगरके सारे नर नारी चकवा चकईकी भांति अति आरत हो विहान होना चाहते हैं ॥ १ ॥ सो सबके जागतेही जागते रात बीत गई और प्रात होगया, तब सुजान भरतने अपने मंत्रियोंको बुलाया ॥ २ ॥

कहेउ लेहु सब तिलकसमाजू ॥ बनहिँ देवमुनि रामहिँ राजू ॥ ३ ॥ ❋
बेगि चलहु सुनि सचिव जोहारे ॥ तुरत तुरँग रथ नाग सँवारे ॥ ४ ॥ ❋

और कहा कि–राजतिलककी सारी सामा साथ ले लो, क्योंकि गुरु वसिष्ठजी वनमेंही रामचन्द्रजीको राज देवेंगे ॥ ३ ॥ इसलिये शीघ्र चलो. भरतके ये वचन सुन, सब सचिव जुहार कर अपने घर आ हाथी, घोड़े और रथ वगैरः सवारियां सजने लगे ॥ ४ ॥

अरुन्धती अरु अग्निसमाजू ॥ रथ चढ़ि चले प्रथम मुनिराजू ॥ ५ ॥ ❋
बिप्रवृन्द चढ़ि बाहन नाना ॥ चले सकल तपतेजनिधाना ॥ ६ ॥ ❋

तब मुनि वसिष्ठजी अरुंधती और अग्निका परिकर साथ ले रथपर चढ़ सबसे आगे रवाने हुए ॥ ५ ॥ तब उनके पीछे ब्राह्मणोंके झुंड नाना प्रकारके बाहनोंपर चढ़ रवाने हुए कि, जो तप और तेजके पुंज थे ॥ ६ ॥

नगर लोग सब सजि सजि याना ॥ चित्रकूटकहँ कीन्ह पयाना ॥ ७ ॥ ❋
शिबिका सुभग न जाइ बखानी ॥ चढ़ि चढ़ि चलत भईं सबरानी ॥ ८ ॥ ❋

फिर नगरके सब लोग अपनी अपनी सवारियां तैयार कर चित्रकूटको रवाने हुए ॥ ७ ॥ उनके पीछे रानियां भांति भांतिकी पालकियोंमे बैठ चित्रकूटको चलीं ॥ ८ ॥

दोहा– सौंपि नगर शुचि सेवकन्ह, सादर सबहिँ चलाई ॥ ❋
सुमिरि रामसियचरण तब, चले भरत दोउ भाई ॥ १८१ ॥ ❋

तब स्वामिधर्मी सेवकोंको नगर सौंप सबको आगे रवाने कर सीतारामके चरणकमलोंका स्मरण कर भरत और शत्रुघ्न दोनों रवाने हुए ॥ १८१ ॥

रामदरशहित सब नर नारी ॥ जनु करि करिणि चले तकि बारी ॥ १ ॥ ❋
बन सिय राम समुझि मनमाहीं ॥ सानुज भरत पयादेहिँ जाहीं ॥ २ ॥ ❋

प्रभुके दर्शनोंके वास्ते नगरके सब नर नारी कैसे चले कि, जैसे पानीको देखकर हाथिनी और हाथियोंका झुंड जाता है ॥ १ ॥ प्रभुको वनमें विराजे जान भरत और शत्रुघ्न दोनों पांवन पांवन जाने लगे ॥ २ ॥

देखि सनेह लोग अनुरागे ॥ उतरि चले हय गज रथ त्यागे ॥ ३ ॥ ❋
जाइ समीप राखि निजडोली ॥ राममातु मृदु बाणी बोली ॥ ४ ॥ ❋

सो भाइयोंका स्नेह देखकर लोग बहुत प्रसन्न हुए और अपने घोड़े हाथी और रथोंसे उतर उनको तज भरतके साथ पांवन पांवन चलने लगे ॥ ३ ॥ तब कौशल्याने भरतके निकट जाय, अपनी पालकीको नीचे धरवाय, मधुर वाणीसे भरतसे कहा कि– ॥ ४ ॥

तात चढ़हु रथ बलि महतारी ॥ होइहि प्रिय परिवार दुखारी ॥ ५ ॥ ❋
तुम्हरे चलत चलहिं सब लोगू ॥ सकलशोककृश नहिँ मगयोगू ॥ ६ ॥ ❋

हे तात ! बलिहारी जाऊँ, तुम रथपर चढ़कर चलो, नहीं तो यह सारा प्रिय परिवार दुखी होजायगा ॥ ५ ॥ जो तुम पांवन चलोगे तो ये सब लोग तुम्हारे साथ पांवन चलेंगे और वे तो पांवन चलनेको समर्थ नहीं हैं; क्योंकि सब शोचके मारे दुर्बल हो रहे हैं ॥ ६ ॥

शिर धरि बचन चरण शिर नाई ॥ रथ चढ़ि चलत भये दोउ भाई ॥ ७ ॥ ❋
तमसा प्रथम दिवस करि बासू ॥ दूसर गोमतितीर निबासू ॥ ८ ॥ ❋

माता कौसल्याके वचन शिरपर चढ़ाय, उसके चरणोंमें शिर नवाय, दोनों भाई रथपर चढ़कर चले ॥७॥ पहले दिन तमसा नदीके तटपर डेरे हुए और दूसरे दिन गोमती नदीके तीरपर रहे ॥ ८ ॥

दोहा–पय अहार फल अशन इक, निशि भोजन सब लोग ॥ ❋
करत रामहित नेम व्रत, परिहरि भूषण भोग ॥ १८२ ॥ ❋

उस दिन सब लोगोंने रातको भोजन किया, सो कितनेहीने तौ केवल दूध पिया और कितनेएकने फलाहार किया. सबोंने रामके निमित्त व्रत और नियम धारण कर लिये थे और भूषण और भोग त्याग दिये थे ॥ १८२ ॥

सईतीर बसि चले बिहाने ॥ शृंगबेर पुर सब नियराने ॥ १ ॥ ❋
"ज्येष्ठकृष्ण चतुरथ दिन माना ॥ पहुँचे भरत निषादहु जाना" ॥ २ ॥❋

तीसरे दिन सई नाम नदीके तीरपर रहकर चौथे दिन भोर होतेही चले, सो शृंगबेरपुरके निकट पहुंचे ॥ १ ॥ " जेठ वदि ४ के दिन भरतजी गुह भीलके नगरमे चौथे दिन पहुंचे " ॥ २ ॥

समाचार सब सुने निषादा ॥ हृदय बिचार करै सविषादा ॥ ३ ॥ ❋
कारण कवन भरत बन जाहीं ॥ है कछु कपटभाव मनमाहीं ॥ ४ ॥ ❋

गुह भीलने भरतके कटकके साथ अनेक समाचार सुन, मनमें बड़े विषादके साथ बिचार किया ॥ ३ ॥ कि, भरत वनमें क्यों जाता है ? भरतके मनमें कुछ कपट जरूर है ॥ ४ ॥

जो पै जिय न होत कुटिलाई ॥ तौ कस लीन्ह संग कटकाई ॥ ५ ॥ ❋
जानहिँ सानुज रामहिँ मारी ॥ करौं अकण्टक राज सुखारी ॥ ६ ॥ ❋

जो इसके मनमें किसी तरहकी कुटिलता न होती तौ कटकको साथ क्यों लाता ? ॥ ५ ॥ भरत अपने मनमे यों जानता है कि–जो लक्ष्मणके साथ राम मारा जाय तौ फिर मैं सुखी होकर निष्कंटक राज करूं ॥ ६ ॥

भरत न राजनीति उर आनी ॥ तब कलंक अब जीवनहानी ॥ ७ ॥ ❋
सकल सुरासुर जुरहिँ जुझारा ॥ रामहिँ समर न जीतनहारा ॥ ८ ॥ ❋
का आश्चर्य भरत अस करहीं ॥ नहिँ बिषबेलि अमिय फल फरहीं ॥ ९ ॥❋

पर पहले तौ भरतने राजनीति हृदयमें न रक्खी, जिससे केवल कलंकही लगा था; परंतु अब बिलकुल माराही जायगा ॥ ७ ॥ क्योंकि, जो तमाम देवता और दैत्योंके सुभट सिमट कर आजांय तौभी रामको रणमें जीतनेवाला कोई नहीं है ॥ ८ ॥ और भरत जो ऐसी बात करे इसमें कुछ आश्चर्यकी बात नहीं है; क्योंकि विषकी बेलिको कभी अमृतफल नहीं लगता ॥ ९ ॥

दोहा–अस बिचारि गुह ज्ञाति सन, कहेउ सजग सब होहु ॥ ❋
हथबांसहु बोरहु तरणि, कीजिय घाटारोहु ॥ १८३ ॥ ❋

ऐसा विचार कर, गुहने अपने जातिवालोंसे कहा कि–तुम सब सचेत हो जाओ.और हथवासोंके साथ नावोंको जलमें डुबा दो और घाटोंको रोक दो ॥ १८३ ॥

होइ सजग सब रोकहु घाटा ॥ ठाटहु सकल मरणके ठाटा ॥ १ ॥ ❋
सन्मुख लोह भरतसन लेहू ॥ जियत न सुरसरि उतरण देहू ॥ २ ॥ ❋

सब सावधान होकर घाटोंको रोक लो और मरनेके ठाट सजलो ॥ १॥ और भरतके सोंही जाकर, लोह यानी शस्त्र लेओ. किसी कदर अपने जीतेजी भरतको गंगासे पार मत उतरने दो ॥ २ ॥

समर मरण पुनि सुरसरितीरा ॥ रामकाज क्षणभंगु शरीरा ॥ ३ ॥ ❋
भरत भाइ नृप मैं जन नीचू ॥ बड़े भाग अस पाइय मीचू ॥ ४ ॥ ❋

अहहह ! क्या अच्छा अवसर मिला है, प्रथम तौ रणमें मरणा, दूसरा गंगाजीके तटपर, तीसरा फिर रामके लिये. अरे भाइयो ! यह शरीर बिलकुल क्षणभंगुर है, इसलिये इस अवसरको मत चूको ॥ ३ ॥ भरत तौ राजाका भाई और मैं नीच मनुष्य. सो जो मुझे ऐसी मौत मिले, तौ फिर मेरे जैसा बड़भागी कौन होगा ? ॥ ४ ॥

स्वामि काजु करिहौं रण रारी ॥ लेइहौं सुयश भुवन दशचारी ॥ ५ ॥ ❋
तजहुँ प्राण रघुनाथनिहोरे ॥ दुहूँ हाथ मुद मोदक मोरे ॥ ६ ॥ ❋

मैं स्वामीके लिये रणभूमिमें जूझूंगा और चौदह लोकामें मेरा सुयश करूंगा ॥ ५ ॥ जो मैं जीत जाऊंगा तौ स्वामीका काज सधा और मर जाऊंगा तौ प्रभुके निमित्त. मेरे तौ दोनों हाथोंमें आनंदकारी मोदक है ॥ ६ ॥

साधुसमाज न जाकर लेखा ॥ रामभक्तमहँ जासु न रेखा ॥ ७ ॥ ❋
जाय जियत जग सो महिभारू ॥ जननीयौवनबिटपकुठारू ॥ ८ ॥ ❋

जिसकी सत्पुरुषोंमें गिनती नहीं है और प्रभुके भक्तजनोंमें जिसका नाम नहीं है ॥ ७ ॥ वो मनुष्य पृथ्वीको भार देनेके लिये और माताकी यौवनअवस्थारूप वृक्षको काटनेके लिये कुठारकी भांति जन्मा है ॥ ८ ॥

दोहा–बिगत बिषाद निषादपति, सबहिँ बढ़ाय उछाह ॥ ❋
सुमिरि राम मांगेउ तुरत, तरकस धनुष सनाह ॥ १८४ ॥ ❋

भीलोंके राजा गुहने निडर हो सबको ढाढ़स (हिम्मत) बंधाय उछाह बढ़ाय प्रभुका स्मरण कर अपने धनुषबाण और बखतर मांगे ॥ १८४ ॥

बेगहि भाइ सजहु संजोऊ ॥ सुनि रजाय कदराय न कोऊ ॥ १ ॥ ❋
भले नाथ सब कहहिँ सहर्षा ॥ एकहिँ एक बढ़ावहिँ कर्षा ॥ २ ॥ ❋

और भीलोंसे कहा कि–हे भाइयो ! अपने अपने साज बेग सजो. मेरी आज्ञा सुनकर मनमें कायरता मत लाना ॥ १ ॥ गुहके वचनसुन सब भील आनन्दके साथ 'हे नाथ ! बहुत अच्छा' ऐसे कह एकसे एक अमर्ष बढ़ाने लगे ॥ २ ॥

चले निषाद जुहारि जुहारी ॥ शूर सकल रण रुचै न रारी ॥ ३ ॥ ❋
सुमिरि रामपदपंकजपनहीं ॥ माथा बांधि चढ़ावहिँ धनुहीं ॥ ४ ॥ ❋

फिर वे रणधीर शूरवीर जुहार जुहार कर अपने स्वामीकी आज्ञा पालन करनेको चले. उनके बीच कोई भील ऐसा न था कि, जिसे रणमें राड़ करनी अच्छी न लगे ॥ ३ ॥ सब भील प्रभुके चरणकमलोंकी पनहियों (जूतों) का स्मरण कर माथे बांधते हैं और धनुष चढ़ाते है ॥ ४ ॥

अँगुरी पहिरि कुंडि शिर धरहीं ॥ फरसा बांस शेलसम करहीं ॥ ५ ॥ ❋
एक कुशल अति ओड़न खाँड़े ॥ कूदहिँ गगन मनहुँ क्षिति छांड़े ॥ ६ ॥ ❋

अंगुरियोंमें चमड़ेके मोजे पहिर, झिलम लगाया. सिरपर लोहेके टोप धरते है. फरसा, भाला, और शेल इत्यादि शस्त्र धारण करते है ॥ ५ ॥ और जो पटेमें प्रवीण है. वे ढाल, तलवार ले ऐसे कूदते है कि, मानों पृथ्वीको छोंड़कर आकाशमें उड़कर जाते है ॥ ६ ॥

निज निज साज समाज बनाई ॥ गुहरावतहिँ जुहारहिँ जाई ॥ ७ ॥ ❋
देखि सुभट सब लायक जाने ॥ लै लै नाम सकल सनमाने ॥ ८ ॥ ❋

अपने २ साज और समाजको सजकर सब जा जाकर गुह राजाको जुहार करते है ॥ ७ ॥ सुभटों-को देख, सबको लायक समझ, गुहने सबका नाम ले लेकर सत्कार किया ॥ ८ ॥

दोहा—भाइहु लावहु धोख जनि, आजु काज बड़ मोहु ॥ ❋
सुनि सरोष बोले सुभट, बीर अधीर न होहु ॥ १८५ ॥ ❋

और कहा कि– हे भाइयो ! आज मेरा बड़ा काम है, सो मुझे धोखा मत देना. गुहके ऐसे वचन सुन, सारे सुभट बोले कि–हे बीर ! आप अधीर मत होओ ॥ १८५ ॥

रामप्रताप नाथ बल तोरे ॥ करहिँ कटक बिनुभट बिनुघोरे ॥ १ ॥ ❋
जियत पांव नहिँ पीछे धरहीं ॥ रुण्ड मुण्डमय मेदिनि करहीं ॥ २ ॥ ❋

हे नाथ ! प्रभुके प्रतापसे और आपके बलसे हम कटकको मार, भट और घोड़ों बिन कर देंगे ॥ १ ॥ जीतेहुए तो कभी पीछा पांव नहीं धरेंगे. सारी पृथ्वीको रुंड मुंडमय कर देंगे ॥ २ ॥

दीख निषाद नाथ भल टोलू ॥ कहेउ बजाउ जुझाऊ ढोलू ॥ ३ ॥ ❋
यतना कहत छींक भइ बाँये ॥ कहेउ शकुनियन्ह खेत सुहाये ॥ ४ ॥ ❋

भीलोंके ऐसे शूरवीरताके वचन सुन, अपने गिरोहको सजा हुआ देख, गुहने कहा कि– जुझाऊ ढोल बजाओ ॥ ३ ॥ इतना कहतेही तो बांई ओर छींक हुई. तब कितनेएक शकुन जाननेवालोंने कहा कि–रणखेतके लिये यह शकुन बहुत अच्छा हुआ ॥ ४ ॥

बूढ़ एक कह शकुन बिचारी ॥ भरतहिँ मिलिय न होइहि रारी ॥ ५ ॥ ❋
रामहिँ भरत मनावन जाहीं ॥ शकुन कहै अस बिग्रह नाहीं ॥ ६ ॥ ❋

इतनेमें एक बूढ़ा आदमी शकुन विचारके बोला कि–तुम भरतसे जाकर मिलो. तुम्हारे युद्ध नहीं होगा ॥ ५ ॥ भरत रामको मनानेको जाता है. यह शकुन ऐसा कहता है कि तुम्हारे भरतके साथ युद्ध नहीं होगा ॥ ६ ॥

सुनि गुह कहै नीक कह बूढ़ा ॥ सहसा करि पछिताहिँ बिमूढ़ा ॥ ७ ॥ ❋
भरत स्वभाव शील बिनबूझे ॥ बड़ि हित हानि जानि बिनुजूझे ॥ ८ ॥ ❋

बूढ़ेके वचन सुन, गुहने कहा कि–यह बूढ़ा बहुत नेक कहता है; क्योंकि जो आदमी बिना बिचारे हरेक काम सहसा कर डालता है, वो मूर्ख पाछे पछताता है ॥ ७ ॥ भरतके शील स्वभावको विना जाने, जो रारकर बैठें तो इसमें अपने हितकी बड़ी हानि हो जाय है ॥ ८ ॥

दोहा-गहहु घाट भट सिमिटि सब, लेउ मर्म मिलि जाइ ॥ ❋
बूझि मित्र अरि मध्य गति, तब तस करब उपाइ ॥ १८६ ॥ ❋

इसलिये तुम तो जाकर, इकट्ठे होकर, घाटको रोंको और मैं भरतका भेद लेने जाता हूं सो उसकी गति देख लेता हूं कि-वो प्रभुसे मित्रभाव रखता है वा शत्रुभाव अथवा उदासी है सो इनका निश्चय करलें, फिर जैसा करना चाहिये वैसा उपाय करेंगे ॥ १८६ ॥

लखब सनेह सुभाय सुभाये ॥ बैर प्रीति नहिँ दुरत दुराये ॥ १ ॥ ❋
अस कहि भेंट सजोवन लागे ॥ कन्द मूल फल खग मृग मांगे ॥ २ ॥ ❋

भरतके स्नेह और स्वभावको अच्छीतरह जानलेंगे तब कुछ करेंगे. अरे भाइयो ! वैर और प्रीति छिपानेपरभी नहीं छिपती ॥ १ ॥ ऐसे कहकर भेंट तैयार करने लगे. तब कंद, मूल, फल, पक्षी और हरिण मंगाये ॥ २ ॥

मीन पीन पाठीन पुराने ॥ भरि भरि भार कहारन आने ॥ ३ ❋
सकल साज सजि मिलन सिधाये ॥ मंगलमूल शकुन शुभ पाये ॥ ४ ॥ ❋

तथा मोटे ताजे मच्छ और पुरानी मछलियां कांवरी भर भरके कहार लोग लाये ॥ ३ ॥ सब प्रकारकी तैयारी करके गुह मिलनेको चला, तब मंगलकारी अच्छे शकुन हुए ॥ ४ ॥

देखि दूरिते कहि निज नामू ॥ कीन्ह मुनीशहिँ दण्डप्रणामू ॥ ५ ॥ ❋
जानि रामप्रिय दीन्ह अशीशा ॥ भरतहिँ कहेउ बुझाइ मुनीशा ॥ ६ ॥ ❋

गुहने वसिष्ठजीको दूरसे देख, अपना नाम कहकर दंडवत् प्रणाम किया ॥ ५ ॥ गुरु वसिष्ठजीने रामचन्द्रजीका प्रिय भक्त जान, आशीर्वाद दिया, और भरतसेभी कहा कि-यह रामका परम प्रिय सखा है ॥ ६ ॥

रामसखा सुनि स्यन्दन त्यागा ॥ चले उतरि उमँगत अनुरागा ॥ ७ ॥ ❋
गाँव जाति गुह नाँव सुनाई ॥ कीन्ह जुहारि माथ महिलाई ॥ ८ ॥ ❋

प्रभुका मित्र है ये समाचार सुन, तुरंत रथसे उतर, प्रेमके उमँगते भरत रथको तजकर गुहके सन्मुख चला ॥ ७ ॥ तब गुहने अपना गांव, नांव, और जाति सुनाय, धरतीपर शिर टेककर जुहार किया ॥ ८ ॥

दोहा-करत दण्डवत देखि तेहि, भरत लीन्ह उर लाइ ॥ ❋
मनहु लषण सन भेंट भइ, प्रेम न हृदय समाइ ॥ १८७ ॥ ❋

गुहको दंडवत् करते देख, भरतने उठाकर छातीसे लगाया. मानों लक्ष्मणसे मिलाप हुआ है. ऐसे उसके हृदयमें प्रीति नहीं समायी ॥ १८७ ॥

भेंटे भरत ताहि अति प्रीती ॥ लोग सिहाहिँ प्रेमकै रीती ॥ १ ॥ ❋
धन्य धन्य धुनि मंगलमूला ॥ सुर सराहि तेहिँ बर्षहिँ फूला ॥ २ ॥ ❋

भरत गुहसे बडी प्रीतिके साथ मिला तिसे देख, लोग प्रीतिकी रीतिको सिहाने लगे ॥ १ ॥ और देवतालोगभी भरतकी प्रीति देख मंगलमूल धन्य धन्य ध्वनिकर भरतको सराह सराह फूल बरसाने लगे ॥ २ ॥

लोक बेद सब भांतिहि नीचा ॥ जासु छांह छुइ लेइय सींचा ॥ ३ ॥ *
तेहि भरि अंक राम लघुभ्राता ॥ मिलत पुलक परिपूरित गाता ॥ ४ ॥ *

देवता कहते हैं कि-जो लोग और वेद यानी सब प्रकारसे नीचा है और जिसकी छाया छूनेसे स्नान करना पडता है ॥ ३ ॥ उससे भरत बांह पसार, छातीमें लगाकर मिला और भेंटतेही सारा शरीर रोमांचित होगया ॥ ४ ॥

राम राम कहि जे जमुहाहीं ॥ तिनहिँ न पापपुंज समुहाहीं ॥ ५ ॥ *
यहि तौ राम लाय उर लीन्हा ॥ कुल समेत जग पावन कीन्हा ॥ ६ ॥ *

जो लोग जमुहाते हुए रामराम कहते हैं, उनकोभी जब पापके पुंज नहीं समुहा सकते ॥ ५ ॥ तब इसके पाप नाश होवें जिसमें तो कहनाही क्या है? क्योंकि, इसको तो स्वयं प्रभुने अपनी छातीसे लगाया और जगतमें कुल समेत पवित्र किया ॥ ६ ॥

करमनाश जल सुरसरि परई ॥ तेहि को कहहु शीश नहिँ धरई ॥ ७ ॥ *
उलटा नाम जपत जग जाना ॥ बालमीकि भे ब्रह्मसमाना ॥ ८ ॥ *

कहो, कर्मनाशा नदीका जल जब गंगाजीमें मिल जाता है, तब उसको कौन शिरपर नहीं चढ़ाता है? ॥ ७ ॥ यह बात सारा संसार जानता है कि-वाल्मीकि ऋषि उलटा नाम जपते २ ब्रह्माजीके समान बड़े महात्मा हुए हैं ॥ ८ ॥

दोहा-श्वपच शबर खल यवन जड़, पामर कोल्ह किरात ॥ *
राम कहत पावन परम, होत भुवन विख्यात ॥ १८८ ॥ *

यह बात जगत जाहिर है कि-चांडाल, शाबर, खल, यवन, जड़, पामर और कोल्ह, किरातभी क्यों न हो, राम नाम कहनेसे सब पवित्र हो जाते हैं ॥ १८८ ॥

नहिँ अचरज युग युग चलि आई ॥ केहिँ न दीन्ह रघुबीर बड़ाई ॥१॥ *
रामनाममहिमा सुर कहहीं ॥ सुनि सुनि अवध लोग सुख लहहीं ॥२॥ *

इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है. यह युगानुयुगसे चली आती है. प्रभुने किसको बड़ाई न दी? ॥ १ ॥ ज्योंज्यों देवता लोग रामनामकी महिमा कहते हैं, त्योंत्यों सुन सुनकर अवधके लोग सुख पाते हैं ॥ २ ॥

रामसखहिँ मिलि भरत सप्रेमा ॥ पूँछहिँ कुशल सुमंगल क्षेमा ॥ ३ ॥ *
देखि भरत कर शील सनेहू ॥ भा निषाद तेहि समय बिदेहू ॥ ४ ॥ *

भरत प्रभुके सखासे मिल प्रेमसहित बारंबार कुशल क्षेम पूंछते हैं ॥ ३ ॥ गुह भरतके शील और स्वभावको देख, उस समय शरीरकी सुध भूल गया ॥ ४ ॥

सकुच सनेह मोद मन बाढ़ा ॥ भरतहिँ चितवत यकटक ठाढ़ा ॥ ५ ॥ *
धरि धीरज पद बन्दि बहोरी ॥ बिनय सप्रेम करत कर जोरी ॥ ६ ॥ *

गुहके मनमें संकोच, स्नेह और आनंद ऐसा बढ़ा कि, खड़ा हो यकटक भरतको निहारने लगा ॥ ५ ॥ फिर मनमें धीरज धर, चरणोंमें प्रणाम कर हाथ जोड़, प्रीतिके साथ विनय किया ॥ ६ ॥

कुशलमूल पदपंकज पेखी ॥ मैं तिहुँकाल कुशल निज देखी ॥ ७ ॥ ❋
अब प्रभु परम अनुग्रह तोरे ॥ सहित कोटि कुल मंगल मोरे ॥ ८ ॥ ❋

और कहा कि–महाराज ! कुशलके कारण आपके चरणकमलोंका दर्शन करनेसे मेरे तीनों कालमें कुशल है ॥ ७ ॥ हे प्रभु ! आपकी कृपासे अब मेरे सारे कुटुंबके साथ करोड़ों मंगल है ॥ ८ ॥

दोहा–समुझि मोरि करतूति कुल, प्रभुमहिमा जिय जोइ ॥ ❋
जो न भजै रघुवीरपद, जग बिधिबंचित सोइ ॥ १८९ ॥ ❋

मेरी करतूति और कुलको समझ और प्रभुकी महिमाको मनमें देखकर, जो आदमी प्रभुके चरण-कमलोंको नहीं भजता, उसे जगतके भीतर दैवसे ठगाया समझना चाहिये ॥ १८९ ॥

कपटी कायर कुमति कुजाती ॥ लोक वेद बाहिर सब भांती ॥ १ ॥ ❋
राम कीन्ह आपन जबहींते ॥ भयउँ भुवन भूषण तबहींते ॥ २ ॥ ❋

गुह कहता है कि–मैं महा कपटी, कायर, कुटिल कुजाति और सब प्रकारसे लोक और वेदसे बाह्य हूं ॥ १ ॥ तौभी जबसे प्रभुने मुझे अपनाय लिया है, तबसे मैं जगतमें शिरोमणि हो गया हूं ॥ २ ॥

देखि प्रीति सुनि बिनय सुहाई ॥ मिले बहोरि लषणलघु भाई ॥ ३ ॥ ❋
कहि निषाद निजनाम सुबानी ॥ सादर सकल जुहारी रानी ॥ ४ ॥ ❋

गुहकी प्रीति देख, विनय सुन,भरतजी गुहसे फिर मिले और फिर शत्रुघ्नभी मिले ॥ ३ ॥ तब गुहने रानियोंके पास जाय, मधुर वाणीसे अपना नाम कह, आदरपूर्वक सब रानियोंसे जुहार किया ॥ ४ ॥

जानि लषण सम देहिँ अशीशा ॥ जियहु सुखी सौ लाख बरीशा ॥ ५ ॥ ❋
निरखि निषाद नगर नर नारी ॥ भये सुखी जनु लषण निहारी ॥ ६ ॥ ❋

उन्होनेभी लक्ष्मणके जैसा जानकर, उसे आशिष दी कि–हे गुह ! तू सौ लाख यानी करोड़ वर्षलों सुखपूर्वक जीता रह ॥ ५ ॥ गुहको देखकर नगरके सब स्त्री पुरुष ऐसे प्रसन्न हुए कि, मानों लक्ष्मणको ही देख लिया है ॥ ६ ॥

कहहिँ लहेउ यह जीवन लाहू ॥ भेंटउ रामभाइ भरि बाहू ॥ ७ ॥ ❋
सुनि निषाद निज भाग्य बड़ाई ॥ प्रमुदित मन लै चलेउ लिवाई ॥ ८ ॥ ❋

सब लोग कहने लगे कि–जीवनका लाभ तौ इसने लिया है; क्यौंकि, भरत बांह पसारके मिला ॥ ७ ॥ ऐसे लोगोंके मुहँसे अपनी बड़ाई सुन, अपने भाग्यको सराहता हुआ गुह प्रसन्न चित्त हो भरतको लिवा ले चला ॥ ८ ॥

दोहा–सनकारे सेवत सकल, चले स्वामिरुख पाइ ॥ ❋
घर तरुतर सर बाग बन, बास बनायउ जाइ ॥ १९० ॥ ❋

गुहने अपने सारे सेवकोंको सैन करके बुलाया. तब स्वामीकी रुख पाकर सब चले आये. और उन्होंने जाकर घर, सरोवर, बाग और वनके अंदर तथा पेड़ोंके तले सबके डेरे करवाये ॥ १९० ॥

शृंगबेरपुर भरत दीख जब ॥ भे सनेहबश अंग शिथिल तब ॥ १ ॥ ❋

सोहत दिये निषादहिं लागू ॥ जनु तनु धरे बिनय अनुरागू ॥ २ ॥ ❋

जब भरतने श्रृंगबेर पुर देखा, तब उसके अंग स्नेहके वश हो शिथिल होगये ॥ १ ॥ भरत गुहके साथ कैसी शोभा देते हैं ? कि मानो विनय और अनुराग दोनों मूर्तिमान् संग विराज रहे है ॥ २ ॥

यहि बिधि भरत सेन सब संगा ॥ दीख जाइ जगपावनि गंगा ॥ ३ ॥ ❋
रामघाट कहँ कीन्ह प्रणामा ॥ भा मन मगन मिले जनु रामा ॥ ४ ॥ ❋

इसीतरह सेनाके साथ लिये भरतने जाकर जगपावनी गंगाजीका दर्शन किया ॥ ३ ॥ और रामघाटके दर्शन होतेही प्रणाम कर, ऐसा आनन्दमगन हुआ कि, मानों रामही मिल गये है ॥ ४ ॥

करहिं प्रणाम नगर नर नारी ॥ मुदित ब्रह्ममय बारि निहारी ॥ ५ ॥ ❋
करि मज्जन माँगहिं कर जोरी ॥ रामचंद्र पद प्रीति न थोरी ॥ ६ ॥ ❋

साक्षात् ब्रह्मरूप जलको देखकर नगरके सारे स्त्री पुरुष आनंदित हो, वंदन करते हैं ॥ ५ ॥ और स्नानकर, हाथ जोड़ प्रभुके चरणकमलोंमें अतिशय प्रीतिकी प्रार्थना करते है ॥ ६ ॥

भरत कहेउ सुरसरि तव रेनू ॥ सकल सुखद सेवक सुरधेनू ॥ ७ ॥ ❋
जोरि पाणि बर माँगौं एहू ॥ सीयरामपद सहज सनेहू ॥ ८ ॥ ❋

भरतने गंगाजीसे विनती करी कि–हे माता ! तेरी रज सब सुख देनहारी और भक्तजनोके मनोरथ पूर्ण करनेके लिये कामधेनु है ॥ ७ ॥ सो मैं हाथ जोड़के आपसे यह वर मांगता हूं कि, सीता और रामचन्द्रजीके चरणोंमें मेरा स्वाभाविक स्नेह बना रहे ॥ ८ ॥

दोहा–यहि बिधि मज्जन भरत करि, गुरुअनुशासन पाइ ॥ ❋
मातु नहानी जानि सब, डेरा चले लिवाइ ॥ १९१ ॥ ❋

इसतरह स्नान कर, गुरुकी आज्ञा पाय, अपनी माताओंको नहानेसे निपटी देख, भरत सबको डेरोंमें लिवा ले चला ॥ १९१ ॥

जहँ तहँ लोगन्ह डेरा कीन्हा ॥ भरत शोध सबहीकर लीन्हा ॥ १ ॥ ❋
गुरु सेवा करि आयसु पाई ॥ राम मातुपहँ गे दोउ भाई ॥ २ ॥ ❋

लोगोंनें जहां तहां डेरे किये, तब भरतने सब किसीकी खबर ली कि, किसीके कोई तरहकी अर्चन तो नहीं है ? ॥ १ ॥ फिर गुरुकी सेवा कर, उनकी आज्ञा पाय, दोनों भाई कौसल्याके पास गये ॥ २ ॥

चरण चापि कहि कहि मृदु बानी ॥ जननी सकल भरत सनमानी ॥३॥ ❋
भाइहि सौंपि मातु सेवकाई ॥ आप निषादहिं लीन्ह बुलाई ॥ ४ ॥ ❋

तहां माताओंके चरण चापि, मधुर वाणी कही कहकर, भरतने सबका सत्कार किया ॥ ३ ॥ फिर माताओंकी सेवा शत्रुघ्नको सौंप, आपने गुहको बुलाया ॥ ४ ॥

चले सखा करसों कर जोरे ॥ शिथिल शरीर सनेह न थोरे ॥ ५ ॥ ❋
पूंछत सखहिं सो ठाँव देखाऊ ॥ नेकु नयन मन जरनि जुड़ाऊ ॥ ६ ॥ ❋

और सखाका हाथसे हाथ पकड़, अतियश प्रेमसे शिथिलशरीर हो उसके साथ साथ चला ॥ ५ ॥ और उससे पूंछा कि—हे प्रिय ! मुझे वो स्थल बतावो कि, जिसे देखकर मैं मेरे मन और नेत्रोंके संतापको कुछ शीतल करूं ॥ ६ ॥

जहँ सिय राम लषण निशि सोये ॥ कहत भरे जल लोचन कोये ॥७॥ ❋
भरत बचन सुनि भयउ बिषादू ॥ तुरत तहाँ लै गयउ निषादू ॥ ८ ॥ ❋

जहां राम, सीता और लक्ष्मण रातमें सोये थे, ऐसे कहतेही भरतके नेत्रोंके कोये जलसे भरगये ॥ ७ ॥ भरतके वचन सुन, निषादको बड़ा विषाद (रंज) हुआ. तब वह तुरंत भरतको वहां लेगया ॥ ८ ॥

दोहा—जहँ शिंशुपा पुनीत तरु, रघुबर किय बिश्राम ॥ ❋
अति सनेह सादर भरत, कीन्हेउ दंडप्रणाम ॥ १९२ ❋

जहां शिंशपाके अति पवित्र पेड़के तले रघुनाथजीने विश्राम किया था, वहां जाय, भरतने बड़े आदर और स्नेहके साथ दंडवत् प्रणाम किया ॥ १९२ ॥

कुश साथरी निहारि सुहाई ॥ कीन्ह प्रणाम प्रदक्षिण लाई ॥ १ ॥ ❋
चरणरेखरज आँखिन लाई ॥ बनै न कहत प्रीति अधिकाई ॥ २ ॥ ❋

प्रभुके पौढ़नेकी दाभकी सुन्दर साथरी (बिछौना) देख, भरतने प्रदक्षिणा करके उसे प्रणाम किया ॥ १ ॥ और चरणोंकी रेखकी रज आंखोंमें लगाई. भरतकी प्रीतिकी रीति कुछ कही नहीं जाती ॥ २ ॥

कनक बिन्दु दुइ चारिक देखे ॥ राखे शीश सीय सम लेखे ॥ ३ ॥ ❋
सजल बिलोचन हृदय गलानी ॥ कहत सखा सन बचन सुबानी ॥ ४ ॥❋

वहां दो चार सोनेके बिंदु देखे, उन्हें सीताके समान समझ भरतने अपने शिरपर चढ़ाये ॥ ३ ॥ भरतके नेत्रोंमें जल छा रहा है, हृदयमें ग्लानि व्याप रही है और सखासे मधुर वाणी बोलकर ये वचन कहता है ॥ ४ ॥

श्रीहत सीय बिरह द्युतिहीना ॥ यथा अवध नर नारि मलीना ॥ ५ ॥ ❋
पिता जनक देउँ पटुतर केही ॥ करतल भोग योग जग जेही ॥ ६ ॥ ❋

हे गुह ! ये कनकके बिंदु सीताके विरहसे कैसे कांतिहीन हो गये हैं कि, जैसे अवधके लोग ॥ ५ ॥ जिस सीताका पिता तो जनक कि, जिसके हाथमें योग और भोग दोनों हैं ॥ ६ ॥

ससुर भानुकुलभानु भुआलू ॥ जेहि सिहात अमरावतिपालू ॥७॥ ❋
प्राणनाथ रघुनाथ गुसाँई ॥ जो बड़ होत सो राम बड़ाई ॥ ८ ॥ ❋

और जिसका ससुर सूर्यवंशमें सूर्यरूप राजा दशरथजी कि, जिसको साक्षात् इंद्र सिहाता है ॥७॥ और जिसके पति श्रीरामचन्द्रजी कि जिनकी बड़ाई करनेसे सब कोई बड़े हो जाते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—पतिदेवता सुतीयमणि, सीय साथरी देखि ॥ ❋
बिदरत हृदय न हहरि मम, पबिते कठिन बिशेखि ॥ १९३ ॥ ❋

उस पतिको परमेश्वर माननेवाली स्त्रीरत्न सीताकी साथरीको देखकर, अहहह ! मेरा हृदय चिर नहीं जाता. हाय ! यह हृदय वज्रसेभी बहुत कठोर है ॥ १९३ ॥

लालन योग लषण लघु लोने ॥ भे न भाइ अस अहहिँ न होने ॥ १ ॥ ❋
पुरजन प्रिय पितु मातु दुलारे ॥ सिय रघुबीरहिँ प्राण पियारे ॥ २ ॥ ❋

लालन करनेके योग्य लक्ष्मण जैसे सलोने छोटे भाई न तो हुए है और न होवेंगे ॥ १ ॥ जो पुरके लोगोंका बड़ा प्यारा है और माता पिताके प्रीतिका पात्र है, तथा सीतारामको प्राणोंसे प्यारा है ॥ २ ॥

मृदु मूरति सकुमार सुभाऊ ॥ ताति बायु तन लागि न काऊ ॥ ३ ॥ ❋
ते बन बसहिँ बिपति सब भांती ॥ निदरे कोटि कुलिश यह छाती ॥ ४ ॥ ❋

सकुमार शरीर है और अति मृदुल स्वभाव है. कभी आजलों शरीरमें गर्म हवा लगनेकाभी काम नहीं पड़ा था ॥ ३ ॥ वो वनके भीतर रहता है कि, जहां सब प्रकारकी आपदाका निवास है, तिसपरभी यह हृदय नहीं फटता. जिससे मैं कहता हूं कि, यह छाती करोड़ों वज्रोंकोभी मात करती है ॥ ४ ॥

रामजननि जग कीन्ह उजागर ॥ रूपशील सुख सब गुणसागर ॥ ५ ॥ ❋
पुरजन परिजन गुरु पितु माता ॥ राम सुभाव सबहिँ सुखदाता ॥ ६ ॥ ❋

रूप, शील, सुख और सर्व गुणोंके सिंधु श्रीरामचंद्रजीने जन्म लेकर जगत्को बड़ा शोभायमान किया है ॥ ५ ॥ प्रभु सहज स्वभावहीसे पुरके लोग, कुटुंब, गुरु और माता, पिता इन सबोंको सुख देनेवाले है ॥ ६ ॥

बैरिउ राम बड़ाई करहिँ ॥ बोलनि मिलनि बिनय मन हरहीं ॥ ७ ॥ ❋
शारद कोटि कोटिशत शेशा ॥ कहि न सकहिँ प्रभुगुणलवलेशा ॥ ८ ॥ ❋

दूसरे लोग तो प्रभुकी बड़ाई करैं जिसमें क्या ? शत्रुभी प्रभुकी प्रशंसा करते हैं; क्योंकि आप बोलनेसे मिलनेसे और विनयसे सबका मन हर लेते है ॥ ७ ॥ प्रभुके गुण गानेमें दूसरोंकी तो कौन चली ? करोड़ों शारदा, और सौ करोड़ शेष नाग, येभी प्रभुके गुणका लवलेश नहीं कह सकते ॥ ८ ॥

दोहा—सुखस्वरूप रघुबंशमणि, मंगलमोदनिधान ॥ ❋
ते सोवत कुश डासि महि, बिधिगति अति बलवान ॥ १९४ ॥ ❋

रघुवंशमें रत्नरूप श्रीरामचंद्रजी कि, जो सुखस्वरूप, और मंगल व मोदके निधि हैं, वे पृथ्वीपर दाभ बिछाके सोते हैं. अहो ! विधाताकी गति बड़ी बलवान् है ॥ १९४ ॥

राम सुना दुख कान न काऊ ॥ जीवन तरु जिमि जुगवत राऊ ॥ १ ॥ ❋
पलक नयन फणि मणि जेहिँ भांती ॥ जुगवहिँ जननि सकल दिनराती ॥ २ ॥

जिन रामचन्द्र आनन्दकन्दके कभी दुखका नामतक अपने कानोंसे नहीं सुना था. जिन्हें राजा दशरथजी संजीवनी जरीकी भांति देखा करते थे ॥ १ ॥ और माता सब रात दिन जैसे आंख पलकको और सांप मणिको देखता रहता है ऐसे देखतीं थीं ॥ २ ॥

ते अब फिरत बिपिन पदचारी ॥ कन्द मूल फल फूल अहारी ॥ ३ ॥ ❋
धिक कैकयी अमंगलमूला ॥ भइसि प्राणप्रियतम प्रतिकूला ॥ ४ ॥ ❋

वे प्रभु अब वनके भीतर पयादे फिरते है और कंद मूल फल व फूल खाते है ॥ ३ ॥ हे कैकेयी ! तुझे धिकार है. तू अमंगलकी मूल है; क्योंकि तू प्राणप्रिय प्रभुके प्रतिकूल हुई है ॥ ४ ॥

मैं धिकधिक अघउदधि अभागी ॥ सब उतपात भयउ जेहि लागी ॥ ५ ॥ ❋
कुलकलंक करि सृजेउ विधाता ॥ साइँद्रोह मोहिँ कीन्ह कुमाता ॥ ६ ॥ ❋

पापसिंधु और अभागे मुझको बारंबार धिकार है कि, जिसके निमित्त यह सारा उपद्रव हुआ है ॥ ५ ॥ विधाताने मुझे कुलमें कलंकरूप बनाके रचा है. अहह ! इस कुमाताने मुझे स्वामिद्रोही कर दिया ॥ ६ ॥

सुनि सप्रेम समुझाव निषादू ॥ नाथ करिय कत बादि बिषादू ॥ ७ ॥ ❋
राम तुमहिँ प्रिय तुम प्रिय रामहिँ ॥ यह निरदोष दोष बिधि बामहिँ ॥ ८ ॥ ❋

ऐसे प्रीति सहित वचन सुन, गुहने भरतको समझाया कि, हे नाथ ! वृथा विषाद क्यौं करते हो ? ॥ ७ ॥ राम तुमको प्यारा है और तुम रामको प्यारे हो. इसलिये तुम्हारेमें कोई दोष नहीं है. यह दोष तो विधातामें है ॥ ८ ॥

छंद–बिधि बामकी करणी कठिन जेहि मातु कीन्ही बावरी ॥ ❋
तेहिँ राति पुनि पुनि करहिँ प्रभु सादर सराहन रावरी ॥ ❋
तुलसी न तुमसौं राम प्रीतम कहत हौं सौंहौं किये ॥ ❋
परिणाम मंगल जानि अपने अनिये धीरज हिये ॥ ९ ॥ ❋

यह कठिन करनी तो बिधाताकी है कि, जिसने माता कैकेयीको बाउली बनादी. हे भरत ! प्रभु जिस रात यहां रहे थे, तिस रात प्रभु आपकी बारंबार बड़े आदरके साथ सराहना करते थे. तुलसीदासजी कहते है कि–गुहने भरतसे कहा कि–हे नाथ ! प्रभुको तुमसे अधिक प्यारा कोईभी नहीं है, यह मैं आपको शपथ खाकर कहता हूं सो इस बातसे परिणाममें मंगल जानकर, अपने हृदयमें धीरज धरो ॥ ९ ॥

सोरठा–अन्तरयामी राम, सकुच सप्रेम कृपायतन ॥ ❋
चलिय करिय बिश्राम, यह बिचार दृढ़ आनि मन ॥ ८ ॥ ❋

संकोच व प्रेमके पूरे कृपानिधान प्रभु अंतर्यामी है, वे सबके घट घटकी जानते हैं. सो इस बातका विचार मनमें पका लाकर चलिये और विश्राम कीजिये ॥ ८ ॥

सखा बचन सुनि उर धरि धीरा ॥ बास चले सुमिरत रघुबीरा ॥ १ ॥ ❋
यह सुधि पाइ नगर नर नारी ॥ चले बिलोकन आरत भारी ॥ २ ॥ ❋

सखाके वचन सुन, मनमें धीरज धर, प्रभुका स्मरण करते भरतजी डेरोंको चले ॥ १ ॥ जब नगरके लोगोंको यह खबर मिली तब वेभी बड़े आर्त होकर प्रभुकी साथरी देखने चले ॥ २ ॥

परदक्षिण करि करहिँ प्रणामा ॥ देहिँ कैकयिहिँ खोरि निकामा ॥ ३ ॥ ❋
भरि भरि बारि बिलोचन लेहीं ॥ बाम बिधातहिँ दूषण देहीं ॥ ४ ॥ ❋

वहां जाय, साथरी देख, प्रदक्षिणा कर, प्रणाम कर कैकेयीको वृथा खोर देने लगे ॥ ३ ॥ सब स्त्री पुरुष नेत्रोंमें जल भरते है और प्रतिकूल विधाताको दूषण देते हैं ॥ ४ ॥

एक सराहहिँ भरतसनेहू ॥ कोउ कह नृपति निबाहेउ नेहू ॥ ५ ॥ ❋
"निन्दहिँ आपु सराह निषादहिँ ॥ को कहिसकै बिमोहबिषादहिँ "॥६॥❋

कितनेएक तो भरतके स्नेहको सराहते है और कितनेएक कहते हैं कि–राजाने अपना स्नेह अच्छा निबाह लिया ॥ ५ ॥ " भरत अपनी निंदा करता है और गुहकी सराहना करता है, उस समयके मोह और विषादको कौन कह सकता है ?" ॥ ६ ॥

यहि बिधि राति लोग सब जागा ॥ भा भिनुसार उतारा लागा ॥ ७ ॥ ❋
गुरुहिँ सुनाव चढ़ाय सुहाई ॥ नई नाव सब मातु चढ़ाई ॥ ८ ॥ ❋
दण्ड चारिमहँ भा सब पारा ॥ उतरि भरत तब सबहिँ सँभारा ॥९॥ ❋

साथके सब लोग रातभर इसतरह जागे और प्रात हुआ तब गंगासे पार उतरने लगे ॥ ७ ॥ गुरु वसिष्ठजीको एक अच्छीसी नावपर चढ़ाया और माताओंके लिये बिलकुल नई नाव लाई गई ॥ ८ ॥ चार घड़ीमें सब लोग पार उतर चुके तब भरतने उतर कर सबको संभाला ॥ ९ ॥

दोहा–प्रातक्रिया करि मातुपद, बन्दि गुरुहिँ शिर नाइ ॥ ❋
आगे किये निषादगण, दीन्हेउ कटक चलाइ ॥ १९५ ॥ ❋

भरत प्रातकृत्यसे पहुंचे, माताओंको दंडवत् कर, गुरुको सिर नवाया, और भीलोंके गणको अगुवा-कर कटकको लेकर चले ॥ १९५ ॥

किये निषादनाथ अगुआई ॥ मातु पालकी सकल चलाई ॥ १ ॥ ❋
साथ बुलाइ भाइ लघु दीन्हा ॥ बिप्रनसहित गवन गुरु कीन्हा ॥ २ ॥ ❋

गुहको अगुवा करके माताओंकी सब पालकियां रवाने करीं ॥ १ ॥ और साथमें शत्रुघ्नको बुला-कर भेजा. गुरु वसिष्ठजीभी ब्राह्मणोंके साथ रवाने हुए ॥ २ ॥

आपु सुरसरिहिँ कीन्ह प्रणामू ॥ सुमिरे लषणसहित सियरामू ॥ ३ ॥ ❋
गवने भरत पयादेहिं पाये ॥ कोतल संग जाहिँ डोरिआये ॥ ४ ॥ ❋

तब भरतने गंगाको प्रणाम किया और लक्ष्मणके साथ सीतारामका स्मरण किया ॥ ३ ॥ प्रभुका स्मरण करनेसे आर्द्रचित्त हो, भरत पयादेही पांयन चले. और घोड़े बागमें पकड़े साथ २ कोतलजाने लगे ॥ ४ ॥

कहहिँ सुसेवक बारहिँ बारा ॥ होइय नाथ अश्व असवारा ॥ ५ ॥ ❋
राम पयादेहिं पांव सिधाये ॥ हमकहँ रथ गज बाजि बनाये ॥ ६ ॥ ❋

नौकर बारंबार प्रार्थना करते है कि, हे नाथ ! घोड़ेपर सवार हो जाइये ॥ ५ ॥ तब भरतने उनको पीछा जबाब दिया कि–प्रभु तो पयादे पांवन पधारे हैं. और हमारे लिये घोड़े रथ और हाथी बनाये गये हैं ? ॥ ६ ॥

शिरभे जाउँ उचित अस मोरा ॥ सबते सेवकधर्म्म कठोरा ॥ ७ ॥ ॥ ❋
देखि भरतगति सुनि मृदु बानी ॥ सब सेवकगण करहिँ गलानी ॥ ८ ॥❋

मुझको उचित तो यह है कि-प्रभु यहांसे पयादे पधारे हैं,तो मैं यहांसे जमीनपर सिर टेककर जाऊं, पर हो नहीं सकता; क्योंकि सेवकका धर्म बड़ा कठिन है ॥ ७ ॥ भरतकी यह गति देख कोमल वाणी सुन, सब सेवकलोग मनमें ग्लानि करने लगे ॥ ८ ॥

दोहा-भरत तीसरे पहर कहँ, कीन्ह प्रवेश प्रयाग ॥ ❋
कहत राम सिय राम सिय, उमँगि उमँगि अनुराग ॥ १९६ ॥ ❋

भरत अतिशय प्रेमके उमंगनेसे 'सीताराम सीताराम' कहते तीसरे प्रहरको प्रयाग पहुंचे ॥ १९६ ॥

झलका झलकत पाँयन कैसे ॥ पंकजकोश ओसकण जैसे ॥ १ ॥ ❋
भरत पयादेहिँ आये आजू ॥ भयउ दुखित सुनि सकल समाजू ॥ २ ॥ ❋

भरत प्रयाग पहुंचे तब उसके पैरोंमें पयादे चलनेसे जो झलके (छाले) हो गये, वो कैसे झलकने लगे कि, मानों कमलकोशके भीतर ओसके कण शोभा दे रहे है ॥ १ ॥ भरतजी श्रृंगवेर पुरसे यहांलों पयादेही आये है, ये समाचार सुन सारी समाज बड़ी दुःखी हुई ॥ २ ॥

खबरि लीन्ह सब लोग अन्हाये ॥ कीन्ह प्रणाम त्रिवेणी आये ॥ ३ ॥ ❋
सबिधि सितासित नीर अन्हाने ॥ दिये दान महिसुर सनमाने ॥ ४ ॥ ❋

भरतने सबकी खबर ली. सब लोग त्रिवेणीमें नहाने.तब भरतजी प्रणाम कर त्रिवेणीपर आये ॥३॥ विधिपूर्वक श्याम और सुफेद जल यानी यमुना और गंगाजीके संगममें नहाय, ब्राह्मणोंको अनेक प्रकारके दान दे, उनका सत्कार किया ॥ ४ ॥

देखत श्यामल धवल हिलोरे ॥ पुलक शरीर भरत कर जोरे ॥ ५ ॥ ❋
सकलकामप्रद तीरथ राऊ ॥ वेदविदित जग प्रगट प्रभाऊ ॥ ६ ॥ ❋

श्याम और सुफेद लहरें आती देख, रोमांचित हो, भरतने हाथ जोड़े ॥ ५ ॥ और कहा कि-हे तीर्थराज ! आप सब कामनाओंके पूर्ण करनहारे हो. आपका प्रभाव सारे संसारमें विख्यात है ॥ ६ ॥

माँगौं भीख त्यागि निजधरमू ॥ आरत काह न करहि कुकरमू ॥ ७ ॥ ❋
अस जिय जानि सुजानि सुदानि ॥ सफल करौ जग याचकबानी ॥ ८ ॥ ❋

मैं मेरा क्षत्रियपनका धर्म त्यागकर आपके पास भीख मांगता हूं. कहा है कि-दुखी क्या कुकर्म नहीं करता ? ॥ ७ ॥ अपने जीमें ऐसे जान, हे सुजान ! हे उदार ! अपने याचककी वाणीको सफल करो ॥ ८ ॥

दोहा-अर्थ न धर्म न काम रुचि, गति न चहौं निर्बान ॥ ❋
जन्म जन्म रति रामपद, यह बरदान न आन ॥ १९७ ॥ ❋

मैं न तो धन चाहता हूं और न मेरे धर्म,काम व मोक्षकी इच्छा है.मैं आपसे और कुछ नहीं मांगता केवल यही बरदान मांगता हूं कि, जन्म जन्ममें प्रभुके चरणोंमें प्रीति बनी रहै ॥ १९७ ॥

जानहिँ राम कुटिल करि मोही ॥ लोग कहैं गुरुसाहबद्रोही ॥ १ ॥ ❋
सीतारामचरण रति मोरे ॥ अनुदिन बढ़ै अनुग्रह तोरे ॥ २ ॥ ❋

चाहे रामचन्द्रजी मुझे कुटिलकरके क्यों न जानें ? और सब लोग गुरुद्रोही व स्वामिद्रोही क्यों न कहें ॥ १॥ परंतु मैं तो यही मांगता हूं कि—आपकी कृपासे मेरी सीतारामके चरणोंमें प्रतिदिन प्रीति बढ़ती रहे ॥ २ ॥

जलद जन्म भरि सुरति बिसारे ॥ याचत जल पवि पाहन डारे ॥ ३ ॥ ❋
चातकरटनि घटे घटि जाई ॥ बढ़े प्रेम सब भांति भलाई ॥ ४ ॥ ❋

चाहे बादल जन्मभर चातकको भूल जाय, और जल मांगनेपर, वज्र और ओलेभी मारे ॥ ३ ॥ परंतु चातक अपनी रटन न घटावे; क्योंकि घटनेसे उसकी अनन्यता घट जाती है. उसकी भलाई तो दिनपर दिन प्रेम बढ़नेमेंही है ॥ ४ ॥

कनकहिँ बान चढ़े जिमि दाहे ॥ तिमि प्रीतमपदनेम निबाहे ॥ ५ ॥ ❋
भरत बचन सुनि मांझ त्रिबेनी ॥ भै मृदु बाणि सुमंगलदेनी ॥ ६ ॥ ❋

जैसे सुवर्णको जलानेसे उसपर रंग चढ़ता है, ऐसेही भगवदासक्त पुरुषोंकी प्रशंसा स्वामिकी रुखाईपरभी प्यारेके प्रेमके निबाहनेमेंही है ॥ ५ ॥ भरतके वचन सुन, त्रिवेणीके भीतर मंगलकारी कोमल वाणी हुई कि—॥ ६ ॥

तात भरत तुम सब बिधि साधू ॥ रामचरणअनुराग अगाधू ॥ ७ ॥ ❋
बादि गलानि करहु मनमाहीं ॥ तुमसम रामहिँ प्रिय कोउ नाहीं ॥ ८ ॥

हे तात भरत ! तुम सब प्रकारसे सत्पुरुष हो. तुम्हारा प्रभुके चरणोंमें अपार प्रेम है ॥ ७ ॥ तुम मनमें वृथा क्यों ग्लानि करते हो ? तुम्हारे जैसा प्रभुको प्यारा दूसरा कोई नहीं है ॥ ८ ॥

दोहा—तनु पुलके हिय हर्षि सुनि, बेणिबचन अनुकूल ॥ ❋
भरत धन्य कहि धन्य कहि, नभ सुर बर्षहिँ फूल ॥ १९८ ❋

त्रिवेणीके अनुकूल वचन सुनकर, भरत रोमांचित हुए और मनमें प्रसन्न हुए. तब देवता लोग हे भरत ! "तू धन्य है," यह कह कहकर आकाशमेंसे फूल बरसाने लगे ॥ १९८ ॥

प्रमुदित तीरथराजनिबासी ॥ बैखानस बटु गृही निबासी ॥ १ ॥ ❋
कहहिं परस्पर मिलि दशपाँचा ॥ भरतसनेह शील शुचि साँचा ॥ २ ॥ ❋

प्रयागराजमें रहनेवाले, वानप्रस्थ, ब्रह्मचारी और गृहस्थी सब बड़े आनंदमें है ॥ १ ॥ और पांच दश मिलकर, आपसमें कहते हैं कि—भरतका स्नेह और शील साफ और सच्चा है ॥ २ ॥

सुनत रामगुण गान सुहाये ॥ भरद्वाज मुनिबरपहँ आये ॥ ३ ॥ ❋
दण्डप्रणाम करत मुनि देखे ॥ मूरतिवन्त भाग निज लेखे ॥ ४ ॥ ❋

भरत प्रभुके सुहावने गुणोंका गान सुनता सुनता भरद्वाज मुनिके पास आया ॥ ३ ॥ मुनिने भरतको दंडवत् प्रणाम करते देखा, तब मनमें ऐसे समझे कि, मानों मूर्तिमान् अपना भाग्यही आया है ॥ ४ ॥

धाइ उठाइ लाइ उर लीन्हे ॥ दीन्ह अशीश कृतारथ कीन्हे ॥ ५ ॥ ❋
आसन दीन्ह नाइ शिर बैठे ॥ चलत सकुचि गृह जनु भजि पैठे ॥ ६ ॥ ❋

ऐसे समझ, दौड़, उसके सन्मुख जाय, उठाय, छातीसे लगाया. आशीर्वाद दिया और कृतार्थ किया ॥ ५ ॥ मुनिने आसन दिया तिसपर भरत शिर नीचा करके कैसा बैठा कि, मानों संकोचके घरमेंही भागकर जा घुसा है ॥ ६ ॥

मुनि पूंछब कछु यह बड़ शोचू ॥ बोले ऋषि लखि शील सँकोचू ॥ ७ ॥ ❋
सुनहु भरत हम सब सुधि पाई ॥ बिधि करतब पर कछु न बसाई ॥८॥ ❋

भरतके मनमें इस बातका बड़ा शोच था कि, जो अभी मुनि पूंछेंगे तौ मैं क्या उत्तर देऊंगा ? सो भरतके मनोगत संकोच व शीलको लखकर, मुनिने कहा कि—॥ ७ ॥ हे भरत ! सुनो. हमें सब समाचार मिल गये है. विधाताकी करनीपर किसीका कुछ बस नहीं चलता ॥ ८ ॥

दोहा—तुम गलानि जिय जनि करहु, समुझि मातु करतूति ॥ ❋
तात केकयी दोष नहिँ, गई गिरा मति धूति ॥ १९९ ॥ ❋

अपनी माताकी करनी समझके तुम अपने मनमे रंचहू ग्लानि मत करो. हे तात ! इसमें कैकेयीका कुछ दोष नहीं है. सरस्वती इसकी वाणीको ठगके फिरा गई थी ॥ १९९ ॥

यहउ कहत भल कहहिँ न कोऊ ॥ लोक वेद बुध सम्मत दोऊ ॥ १ ॥ ❋
तात तुम्हार बिमल यश गाई ॥ पाइहि लोकहु बेद बड़ाई ॥ २ ॥ ❋

कदाचित् कहै कि— यह सरस्वतीका दोष है तौ यह कहते भी कोई भला नहीं कहेगा; क्योंकि सुजान प्रभुको लोक और वेद दोनोंका मत संमत है. लोकके मतमें तौ कैकेयीका दोष और वेदके मतमे सरस्वतीका दोष. सो ये दोनों मत प्रभुको संमत है, यानी यह प्रभुकी इच्छासे हुआ है. इसमे किसीका दोष नहीं है ॥ १ ॥ हे तात ! आपका निर्मल यश गाकर लोक और वेद दोनों बड़ाई पावेंगे ॥ २ ॥

लोक बेद सम्मत सब कहई ॥ जेहिँ पितु राज देइ सो लहई ॥ ३ ॥ ❋
राउ सत्य ब्रत तुमहिँ बुलाई ॥ देत राज सुख धर्म बड़ाई ॥ ४ ॥ ❋

क्योंकि, यह बात लोक और वेद दोनोंको संमत है और सब कोई कहते हैं कि—पिता जिसको देता है वही राजतिलक पाता है ॥ ३ ॥ जो सत्यसंध राजा तुमको बुलाके राज देते तौ उसमें सबको सुख चैन रहता और धर्म व बड़ाई बनी रहती ॥ ४ ॥

राम गमन बन अनरथमूला ॥ जो सुनि सकल विश्व भइ शूला ॥ ५ ॥ ❋
सो भावीबश रानि अयानी ॥ करि कुचालि अन्तहु पछितानी ॥ ६ ॥ ❋

परंतु होनहारके आगे किसीका बस नहीं. नहीं तो रामचन्द्रजीका बनवास कि, जो अनर्थका मूल और जिसे सुनकर सारे संसारको भारी दुःख हुआ है, वो क्यों होवे ? ॥ ५ ॥ विवेकशून्य रानी कैकेयीने जो कुचाल करी तौ क्या ? अंतमें पछतातीही है ॥ ६ ॥

तहउँ तुम्हार अल्प अपराधू ॥ कहै सो अधम अयान असाधू ॥ ७ ॥ ❋
करतेहु राज तुमहिँ नहिँ दोषू ॥ रामहिँ होत सुनत सन्तोषू ॥ ८ ॥ ❋

ऐसे होनेपरभी जो कोई आदमी तुम्हारा रंचहू अपराध कहै, तौ उसके समान अधम, मूर्ख,

और खल कोई नहीं है ॥ ७ ॥ राजाकी आज्ञासे यदि तुम राज करतेभी तो उसमें तुमको बिलकुल दोष नहीं था. रामचन्द्रजी सुनते तो इस बातसे प्रसन्न होते ॥ ८ ॥

दोहा–अब अति कीन्हेउ भरत भल, तुमहिँ उचित मत एहु ॥ ❀
सकल सुमंगलमूल जग, रघुबरचरण सनेहु ॥ २०० ॥ ❀

पर अब तुमने यह बहुतही अच्छा किया है. तुमको यही करना उचित है; क्योंकि प्रभुके चरणोंका स्नेह जगत्के संपूर्ण मंगलका कारण है ॥ २०० ॥

सो तुम्हार धन जीवन प्राना ॥ भूरिभाग्य को तुमहिँ समाना ॥ १ ॥ ❀
यह तुम्हार अचरज नहिँ ताता ॥ दशरथसुवन रामलघुभ्राता ॥ २ ॥ ❀

वो तुम्हारे है. तुम तन, मन, धनसे प्रभुके भक्त हो. तुम्हारे जैसा बड़भाग्य दूसरा कौन है? ॥ १ ॥ हे तात! आपको देखते यह कोई अचरजकी बात नहीं है, क्योंकि तुम दशरथजीके पुत्र और रामके छुटभैया हो ॥ २ ॥

सुनहु भरत रघुपति मन माहीं ॥ प्रेमपात्र तुमसम कोउ नाहीं ॥ ३ ॥ ❀
लषण राम सीतहिँ अति प्रीती ॥ निशि सब तुमहिँ सराहत बीती ॥ ४ ॥

हे भरत! सुनो. प्रभुके मनमें तुम्हारे जैसा प्रीतिपात्र दूसरा कोई नहीं है ॥ ३ ॥ राम लक्ष्मण और सीता इन तीनोंकी तुमपर बड़ी प्रीति है. उनकी तमाम रात तुम्हारी सराहना करते २ बीत गई थी ॥ ४ ॥

जाना मर्म अन्हात प्रयागा ॥ गमन होहिँ तुम्हरे अनुरागा ॥ ५ ॥ ❀
तुमपर अस सनेह रघुबरके ॥ सुख जीवन जग जस जड़ नरके ॥ ६ ॥ ❀

हमने तो प्रभुके प्रयागमें नहाते समय तुम्हारे ऊपर प्रभुकी प्रीति कैसी है वो मर्म अच्छी तरह जान लिया है, क्योंकि नहाते समय तुम्हारे नामका संकल्प करतेहो प्रभु तुम्हारे प्रेमसे मगन हो गये ॥ ५ ॥ तुम्हारे ऊपर प्रभुका ऐसा स्नेह है कि, जैसा संसारमें आसक्त जड़ जीवका स्नेह सुख चैनसे जीनेमें होता है ॥ ६ ॥

यह न अधिक रघुबीर बड़ाई ॥ प्रणतकुटुम्बपाल रघुराई ॥ ७ ॥ ❀
तुम तो भरत मोर मत एहू ॥ धरे देह जनु राम सनेहू ॥ ८ ॥ ❀

तुमपर ऐसा स्नेह रखना इसमें कुछ प्रभुकी बड़ाई थोड़ीही है; क्योंकि प्रभु शरणागत भक्तजनोंके पालक है ॥ ७ ॥ हे भरत! तुमको देखकर मेरे मनमें ऐसा आता है कि, तुम प्रभुका मूर्तिमान् स्नेहही हो ॥ ८ ॥

दोहा–तुमकहँ भरत कलंक यह, हम सब कहँ उपदेश ॥ ❀
रामभक्तिरस सिद्धहित, भा यहि समय गणेश ॥ २०१ ॥ ❀

हे भरत! तुमको जो यह कलंक लगा है सो हमारे लिये तो बड़ा भारी उपदेश हुआ है. तात्पर्य यह है कि–जो तुमको यह कलंक नहीं लगता तो हमको यह प्रीतिकी रीति कौन सिखाता! अभीका जो यह समय है सो प्रभुकी भक्तिरसरूप सिद्धिके लिये गणेशरूप हुआ है. जैसे सिद्धि अपने पति गणेशजीके मिलनेसे आनंदित रहती है, ऐसे इस समयके पानेसे रामका भक्तिरस शोभायमान हुआ है ॥ २०१ ॥

नव विधु बिमल तात यश तोरा ॥ रघुबर किंकर कुमुद चकोरा ॥ १ ॥ ❋
उदय सदा अथइय कबहूं ना ॥ घटिहि न जग नभ दिनदिन दूना ॥२॥ ❋

हे तात ! तुम्हारा यश नये चांदके जैसा है. और प्रभुके जो भक्तजन हैं सो रात्रिविकाशि कमल और चकोरके सदृश है. जैसे चन्द्रमाको देख, कुमुद और चकोर प्रसन्न होते हैं, ऐसे तुम्हारे यशको देख रामभक्त प्रसन्न होते है ॥ १ ॥ और उस चंद्रमासे यह चन्द्र अति अलौकिक है; क्योंकि वो चन्द्रमा उगता है और अस्त होता है. यह सदा उदय रहता है, कभी अस्त नहीं होता. नित घटता है और बढ़ता है. यह कभी घटता नहीं है. प्रत्युत दिन दिन दूना दूना बढ़ता रहता है ॥ २ ॥

कोक बिलोक प्रीति अति करहीं ॥ प्रभु प्रताप रबि छबिहिँ न हरहीं ॥३॥ ❋
निशिदिन सुखद सदा सबकाहू ॥ ग्रसिहि न कैकयि करतबराहू ॥ ४ ॥ ❋

उस चंद्रमाको देख, चक्रवाक वियोगसे दुःखी हो जाता है और तुम्हारे यशको देख, त्रिलोकी प्रसन्न होती है. वो सूर्यकी कांतिसे छबिहीन हो जाता है. यह प्रभुके प्रतापरूप सूर्यकी कांति पाय, अधिक तेजवान् होता है ॥ ३ ॥ वो केवल रातको सुख देता है, सोभी सबको नहीं; क्योंकि वियोगी उसे देख दुखी हो जाते है, और यह रात दिन सदा सर्वदा सबको सुख देता रहता है. उसे राहु ग्रस लेता है और यह कैकेयीके कर्तव्यरूप राहुसे नहीं ग्रसा गया है ॥ ४ ॥

पूरण राम सुप्रेम पियूषा ॥ गुरु अपमान दोष नहिँ दूषा ॥ ५ ॥ ❋
रामभक्ति अब अमिय अघाहू ॥ कीन्हेउ सुलभ सुधा बसुधाहू ॥ ६ ॥ ❋

उसमें अमृत है सो यहां रामचन्द्रजीका जो प्रेम है.सोही अमृत है.वो अमृत घटता बढ़ता है और यह सदा पूर्ण रहता है. उसमें कलंक है. और इसमें गुरुका अपमानरूप दोष नहीं है ॥ ५ ॥ उसका अमृत सबको सुलभ नहीं है, केवल देवता और पित्रीश्वरोंको मिलता है. और रामभक्तिरूप अमृत अब आपके यशरूप चंद्रमाके प्रतापसे पृथ्वीपर सबको सुलभ हो गया है ॥ ६ ॥

भूप भगीरथ सुरसरि आनी ॥ सुमिरत सकल सुमंगल खानी ॥ ७ ॥ ❋
दशरथ गुणगण बरणि न जाहीं ॥ अधिक काह जेहिसम जगमाहीं ॥८॥ ❋

तुम ऐसा उपकार करो जिसमें कुछ बड़ी बात नहीं है; क्योंकि तुम्हारा पूर्वज राजा भगीरथ जगपावनी श्रीगंगाजीको ब्रह्मलोकसे लाया है कि, जो स्मरण करनेसे सुमंगलकी खान है ॥ ७ ॥ तुम्हारे पिता दशरथजीभी कैसे थे कि, जिनके गुणगण कहनेमें नहीं आ सकते. उनसे अधिक होना तौ दूर रहा, जगतमें कोई बराबरीकाभी नहीं है ॥ ८ ॥

दोहा–जासु सनेह सकोच बश, राम प्रगट भे आय ॥ ❋
जे हरहिय नयनन्ह कबहुँ, निरखे नाहिँ अघाय ॥ २०२ ॥ ❋

जिनके स्नेहके संकोचके वश हो रामचन्द्रजी आकर, प्रगट हुए हैं कि, जिन रघुनाथजीको महादेवजीनेभी हृदयके नेत्रोंसे कभी तृप्त होके नहीं देखा है अर्थात् उनकोभी कभी २ दर्शन होते हैं. अतएव तृप्ति नहीं होती ॥ २०२ ॥

कीरतिविधु तुम कीन्ह अनूपा ॥ जहँ बस राम प्रेम मृगरूपा ॥ १ ॥ ❋
तात गलानि करहु जिय जाये ॥ डरहु दरिद्रहिँ पारस पाये ॥ २ ॥ ❋

हे भरत ! तुमने यशरूप चंद्रमा बहुत अच्छा बनाया है कि, जिसके भीतर रामचन्द्रजीका प्रेम मृगरूपसे रहता है ॥ १ ॥ हे तात ! तुम मनमें किसी बातकी ग्लानि मत करो, क्योंकि कोई पारस पानेपरभी दरिद्रसे डरता है ? ॥ २ ॥

सुनहु भरत हम झूंठ न कहहीं ॥ उदासीन तापस बन रहहीं ॥ ३ ॥ ❋
सब साधन कर सुफल सुहावा ॥ लषण राम सिय दरशन पावा ॥ ४ ॥ ❋

हे भरत ! सुनो,हम झूंठ नहीं कहते. वनके भीतर जो उदासी तपस्वी रहते हैं ॥ ३ ॥ उन्होंने राम, लक्ष्मण और सीताका दर्शन पाय, अपने सारे साधनोंका सुहावना फल पा लिया था ॥ ४ ॥

तेहि फल कर फल दरश तुम्हारा ॥ सहित प्रयाग सुभाग हमारा ॥ ५ ॥ ❋
भरत धन्य तुम जग यश लयऊ ॥ कहि अस प्रेम मगन मुनि भयऊ ॥ ६ ॥

परंतु आपका दर्शन करके तो उनके दर्शनके फलकाभी फल पाया है. हम जानते हैं कि, आज हमारा प्रयागराजके साथ बड़ा भाग्य है. जो आपका दर्शन हुआ ॥ ५ ॥ हे भरत ! तुम बड़े धन्य हो. तुमने जगतमें जस बटोरा है. ऐसे कहकर मुनि भरद्वाज प्रेममगन हो गये ॥ ६ ॥

सुनि मुनिबचन सभासद हर्षे ॥ साधु सराहि सुमन सुर बर्षे ॥ ७ ॥ ❋
धन्य धन्य धुनि गगन प्रयागा ॥ सुनि सुनि भरत मगन अनुरागा ॥ ७ ॥

मुनिके वचन सुन, सभासद बहुत प्रसन्न हुए. देवता 'साधु साधु' कह,सराह सराहकर फूल बरसाने लगे ॥ ७ ॥ आकाश और प्रयागके भीतर धन्य धन्यकी ध्वनि छा गई, जिसे सुन सुनकर भरत प्रेममगन हो गया ॥ ८ ॥

दोहा-पुलक गात हिय राम सिय, सजल सरोरुह नैन ॥ ❋
करि प्रणाम मुनिमंडलिहिँ, बोले गदगद बैन ॥ २०३ ॥ ❋

जिसके शरीरमें पुलकावली छा रही है, हृदयमें सीताराम बस रहे है, नेत्रकमलोंमे जल भर रहा है, वह भरत मुनिसमाजको प्रणाम कर, गद्गद कंठ हो बोला ॥ २०३ ॥

मुनिसमाज अरु तीरथराजू ॥ सांचेहु शपथ अघाइ अकाजू ॥ १ ॥ ❋
यहि थल जो कछु कहिय बनाई ॥ यहि सम नहिँ कछु अघ अधमाई ॥ २ ॥ ❋

कि- प्रथम तो यहां मुनिलोगोंकी मंडली, दूसरा प्रयागराज, सो जो कोई सच्चीभी सौगंद खाय, तो उसका पूरा पूरा अकाज हो जाय ॥ १ ॥ इस स्थलमें जो कुछ झूंठी सांची बनाके कहे, तो उसके बराबर दूसरा कुछभी पाप और अधमता नहीं है ॥ २ ॥

तुम सरबज्ञ कहौं सतिभाऊ ॥ उर अन्तर्यामी रघुराऊ ॥ ३ ॥ ❋
मोहिँ न मातु करतब कर शोचू ॥ नहिँ दुख जिय जग जानहिँ पोचू ॥ ४ ॥ ❋

हे मुनि ! आप सब जानते हो, और श्रीरामचन्द्रजी सबके अंतर्यामी है, सो मैं जो सत्यभावसे

कहता हूं वो सुनो ॥ ३ ॥ भरत कहते है कि-मुझे न तो माताके कर्तव्यका शोच है. और न मेरे मनमें लोग मुझे नीच जाने जिसका दुःख है ॥ ४ ॥

नाहिँन डर बिगरहि परलोकू ॥ पितहु मरे कर नाहिँन शोकू ॥ ५ ॥ ❋
सुकृत सुयश भरि भुवन सुहाये ॥ लक्ष्मण राम सरिस सुत पाये ॥ ६ ॥ ❋

और न परलोक बिगड़नेका डर है. न पिताके मरनेका फिकर है ॥ ५ ॥ क्योंकि उन्होंने अच्छे २ सुकृत कर, अपना सुयश फैलाय, सब लोगोंको भर दिया है और राम लक्ष्मण जैसे पुत्र पा लिये है ॥ ६ ॥

रामविरह तजि तन क्षणभंगू ॥ भूप शोच कर कवन प्रसंगू ॥ ७ ॥ ❋
राम लषण सिय बिनुपग पनहीं ॥ करि मुनिबेष फिरहिँ बनबनहीं ॥ ८ ॥ ❋

फिर इस क्षणभंगुर शरीरको रामचन्द्रजीके विरहसे त्यागा है, इसलिये राजाके विषयमें शोच करनेका प्रसंगही कौन ? ॥ ७ ॥ परंतु राम, लक्ष्मण और सीताके ये पांवोंमें पनहीं (जूता) पहिरे विना मुनिवेष बनाके जो वन वनमें डोलते फिरते है ॥ ८ ॥

दोहा-अजिन बसन फल अशन महि, शयन डासि कुश पात ॥ ❋
बसि तरुतर नित सहत दुख, हिम तप बरषा बात ॥ २०४ ॥ ❋

और मृगछाला पहिन, फल खाय, डाभकी पत्ती बिछाय, धरतीपर सोते है और पेडके तले रह, जाड़ा, धूप, बारिस और कठोर वायु संबंधी नित महाकठिन दुःख सहते है ॥ २०४ ॥

यह दुख दाह दहै नित छाती ॥ भूख न बासर नींद न राती ॥ १ ॥ ❋
यहि कुरोग कर औषधि नाहीं ॥ शोधेउँ सकल विश्व मनमाहीं ॥ २ ॥ ❋

इस दुःखानलसे मेरी छाती अत्यंत जल रही है. रात दिन न तो भूख लगती है और न नींद आती है ॥ १ ॥ हे महाराज ! मैंने सारा संसार ढूंढ़ लिया, पर इस कुरोगका औषध कहीं नहीं मिला ॥ २ ॥

मातु कुमति बढ़ई अघमूला ॥ तेहिँ हमार हित कीन्ह बसूला ॥ ३ ॥ ❋
कलि कुकाठ कर कीन्ह कुयंत्रू ॥ गाड़ि अवधि पढ़ कठिन कुमंत्रू ॥ ४ ॥ ❋

हे मुनीश ! यह रोग मिटना बड़ा असमंजस है; क्योंकि माताकी कुबुद्धि तो पापका मूल बढ़ई (खाती) है. उसने मेरा जो राज्याभिषेकरूप हित विचारा है, सोही बसूला किया है ॥ ३ ॥ और कलहरूप कुकाठका कुयंत्र कहे शनैश्वरकी मूर्ति बनाई है. वरदानरूप मंत्र पढ़के उसे अवधके भीतर गाड़ी है ॥ ४ ॥

मोहिँ लगि यह कुठाट तेहिँ ठाटा ॥ घालिसि सब जग बारह बाटा ॥ ५ ॥ ❋
मिटै कुयोग राम फिरि आये ॥ बसहिँ अवध नहिँ आन उपाये ॥ ६ ॥ ❋

मेरेवास्ते उसने यह कुठाट सजा है सो जबलों यह कुयोग नहीं मिटेगा, तबलों सबका नाश हो जायगा और सारा जगत् बारह बाट यानी तितर बितर हो जायगा ॥ ५ ॥ यह कुयोग तो तब मिटे जब कि, रामचन्द्रजी पीछे आ जायँ. दूसरे तो किसी उपायसे अवध नहीं बस सकती ॥ ६ ॥

भरतबचन सुनि मुनि सुख पाई ॥ सबहिँ कीन्ह बहु भांति बड़ाई ॥ ७ ॥ ❋
तात करहु जनि शोच बिशेखी ॥ सब दुख मिटहिँ रामपद देखी ॥ ८ ॥ ❋

भरतके वचन सुन, मुनिको बड़ा आनंद हुआ और सब लोगोंने भरतकी प्रशंसा करी ॥ ७ ॥ मुनिने कहा कि–हे तात ! तुम विशेष शोच मत करो, क्योंकि प्रभुके चरणकमलोंके दर्शन होतेही सब दुःख मिट जायंगे ॥ ८ ॥

दोहा–करि प्रबोध मुनिबर कहेउ, अतिथि प्राणप्रिय होहु ॥ ❀
कन्द मूल फल फूल हम, देहिँ लेहु करि छोहु ॥ २०५ ॥ ❀

मुनिवरने समझाकर, भरतसे कहा कि–हे तात ! तुम हमारे प्राणोंसे प्यारे हो. हम आपका आतिथ्य करना चाहते है, सो हमारा अतिथिसत्कार स्वीकार करो. हम जो कंद, मूल, फल, फूल दें, वो कृपा करके लेओ ॥ २०५ ॥

सुनि मुनिबचन भरतहिय शोचू ॥ भयउ कुअवसर कठिन सँकोचू ॥१॥ ❀
जानि गरुअ गुरु गिरा बहोरी ॥ चरण बन्दि बोले कर जोरी ॥ २ ॥ ❀

मुनिके वचन सुन, कुअवसर जान, अतिशय संकोचके कारण भरतके मनमें बड़ा शोच हुआ, कि, अब क्या करना चाहिये ? प्रथम तो तीर्थराज, दूसरा मुनिका अन्न और न मानें तो मुनि अप्रसन्न होते है ॥ १ ॥ निदान बड़ोंकी आज्ञाको गरुई समझ, उनके चरणोंमें प्रणाम कर, हाथ जोड़, भरत बोले कि–॥ २ ॥

शिर धरि आयसु करिय तुम्हारा ॥ परम धर्म यह नाथ हमारा ॥ ३ ॥ ❀
भरतबचन मुनिवरमन भाये ॥ शुचि सेवक शिष निकट बुलाये ॥ ४ ॥ ❀

हे महाराज ! हमारा यह परम धर्म है कि, आपकी आज्ञा शिर चढ़ाके करनी चाहिये ॥ ३ ॥ भरतके वचन मुनिको बहुत अच्छे लगे सो उन्होंने अपने पवित्र टहलुए और शिष्योंको बुलाया ॥ ४ ॥

चाहिय कीन्ह भरतपहुनाई ॥ कन्द मूल फल आनहु जाई ॥ ५ ॥ ❀
भले नाथ कहि तिन्ह शिर नाये ॥ प्रमुदित निजनिज काज सिधाये ॥६॥ ❀

और कहा कि–भरतका पाहुनचार करना है, इसलिये जाकर कन्द मूल फल फूल लाओ ॥ ५ ॥ वे "हे नाथ ! बहुत अच्छा" ऐसे कह, चरणोंमें सिर नवाय, प्रसन्न हो अपने अपने कामको चले ॥ ६ ॥

मुनिहिँ शोच पाहुन बड़ नेवता ॥ तस पूजा चाहिय जस देवता ॥७॥ ❀
सुनि ऋधि सिधि अणिमादिक आई ॥ आयसु होय सो करैं गुसाँई ॥८॥ ❀

मुनिके मनमें उस समय भारी चिंता हुई कि, आपनने बड़ा पाहुना नेवता है. सो जैसा अतिथि है, वैसाही सत्कार होना चाहिये ॥ ७ ॥ ऐसा विचार कर, मुनिने ऋद्धि सिद्धिको बुलाया, सो मुनिकी आज्ञा सुनतेही अणिमादिक सिद्धि और ऋद्धि सब चली आईं और बोलीं कि–हे स्वामी ! जो आज्ञा हो सो करैं ॥ ८ ॥

दोहा–रामबिरहब्याकुल भरत, सानुज सकल समाज ॥ ❀
पहुनाई करि हरहु श्रम, कहेउ मुदित मुनिराज ॥ २०६ ॥ ❀

तब मुनिने प्रसन्न होकर उनसे कहा कि–भरत छुटभैया शत्रुघ्न और सारे समाजके साथ रामके विरहसे विव्हल है, सो तुम जाकर उनकी पहुनाई करो और उनका श्रम दूर करो ॥ २०६ ॥

ऋधि सिधि शिर धरि मुनिबरबानी ॥ बड़भागिनि आपुहिँ अनुमानी ॥ १ ॥
कहहिँ परस्पर सिधिसमुदाई ॥ अतुलित अतिथि रामलघुभाई ॥ २ ॥ ❋

मुनिराजकी सुन्दर वाणी सुन, सिर चढ़ाय, अपनेको बड़भागिन समझ, सारी ऋधि और सिधियोंका समुदाय ॥ १ ॥ परस्पर कहने लगा कि—रामचन्द्रजीका छुट भाई भरत अनुपम अतिथि है ॥ २ ॥

मुनिपद बन्दि करिय सोइ आजू ॥ होइ सुखी सब राजसमाजू ॥ ३ ॥ ❋
अस कहि रुचिर रचे गृह नाना ॥ जे बिलोकि बिलखाहिँ बिमाना ॥ ४ ॥

सो आज आपन मुनिराजके चरणोंको वंदन कर वही तजबीज करैं कि, सारा राजसमाज सुखी हो जाय ॥ ३ ॥ ऐसे सलाह कर, उन्होने नाना प्रकारके विचित्र घर बनाये; जिन्हें देख, विमानभी बिलखा गये ॥ ४ ॥

भोग विभूति भूरि भरि राषे ॥ देखत जिनहिँ अमर अभिलाषे ॥ ५ ॥ ❋
दासी दास साज सब लीन्हे ॥ जुगवत रहहिँ मनहिँ मन दीन्हे ॥ ६ ॥ ❋

उनके भीतर भोग और विभूति ऐसी भर राखी कि जिसे देख, देवतानका मनभी चलायमान हो गया ॥ ५ ॥ दासियां और दास सब प्रकारके साज लिये खड़े देखते हैं, सो जिस समय जिस पदार्थकी इच्छा होती है, उसी समय वो पदार्थ मनमें चाहतेही ला देते हैं ॥ ६ ॥

सब समाज सजि सिधि पलमाहीं ॥ जे सुख सपनेहुँ सुरपुर नाहीं ॥ ७ ॥ ❋
प्रथमहिँ बास दिये सबकेही ॥ सुन्दर सुखद यथारुचि जेही ॥ ८ ॥ ❋

सिधियोंने एक पलभरके भीतर सारा सामान ऐसा साजा कि, जो सुख स्वर्गमेंभी स्वप्नमेंभी कहां है ? ॥ ७ ॥ प्रथम तो उनकी रुचिके अनुसार सब लोगोंको रहनेको जगह दी. जो सब प्रकारसे सुखदायी और सुन्दर थी ॥ ८ ॥

दोहा—बहुरि सपरिजन भरतकहँ, ऋषि आयसु अस दीन्ह ॥ ❋
बिधिबिस्मयदायक बिभव, मुनिबर तपबल कीन्ह ॥ २०७ ॥ ❋

फिर मुनिने परिजनसहित भरतको आज्ञा दी कि, जाओ आराम करो. हे भवानी! मुनिने अपने तपोबलसे ऐसा कौतुक रचा कि, जिस वैभवको देखकर, ब्रह्माजीभी चकित रह गये ॥ २०७ ॥

मुनिप्रभाव जब भरत बिलोका ॥ सब लघु लगे लोकपतिलोका ॥ १ ॥ ❋
सुखसमाज नहिँ जाइ बखानी ॥ देखत बिरति बिसारहिँ ज्ञानी ॥ २ ॥ ❋

जब भरतने मुनिका प्रभाव देखा, तब सारे लोकपालोंके लोक तुच्छ दीखने लगे ॥ १ ॥ हे पार्वती! उस सुखके समाजको हम कह नहीं सकते; क्योंकि ज्ञानी मुनिभी उसे देख, वैराग्यकी दशा भूल गये थे ॥ २ ॥

आसन शयन सुबसन बिताना ॥ बन बाटिका बिहँग मृग नाना ॥ ३ ॥
सुरभि फूल फल अमियसमाना ॥ बिमल जलाशय बिबिध बिधाना ॥ ४ ॥

अनेक प्रकारके आसन, शय्या, अच्छे सुन्दर वस्त्र, चँदवे, बाग, बगीचे और भांति भांतिके पक्षी व हरिण ॥ ३ ॥ तथा सुगंधी पुष्प और अमृतके समान मीठे फल और नाना प्रकारके निर्मल जलाशय ॥ ४ ॥

अशन पान शुचि अमित अमीसे ॥ देखि लोग सकुचात जमीसे ॥ ५ ॥ ❋
सुर सुरभी सुरतरु सबहीके ॥ लखि अभिलाष सुरेश शचीके ॥ ६ ॥ ❋

खान पान परमस्वादु कि, जो अमृतकोभी मात करैं, उन्हें देख अवधके लोग संयमवाले पुरुषकी नांई मनमें सकुचाने लगे ॥ ५ ॥ जितने भरतके साथ थे, उन सबोंके पास एक एक कामधेनु और एक एक कल्पवृक्ष था. जिसे देख, इन्द्र और इंद्राणीकाभी मन डिग गया था ॥ ६ ॥

ऋतु वसन्त बह त्रिबिध बयारी ॥ सबकहँ सुलभ पदारथ चारी ॥ ७ ॥ ❋
स्रक चन्दन बनितादिक भोगा ॥ देखि हर्ष विस्मय सब लोगा ॥ ८ ॥ ❋

महादेवजी कहते है कि—हे भवानी ! वसन्त ऋतु अपना सौभाग्य दिखा रही है. शीतल सुगंध मंद त्रिबिध बयार चल रही है. सबलोगोंको धर्म अर्थ काम मोक्ष चारों पुरुषार्थ सुलभ होगये हैं ॥ ७ ॥ माला, चंदन और सुन्दर रमणी आदि अनेक प्रकारके भोगोंको देख, सब लोग चकित रह गये है ॥ ८ ॥

दोहा—सम्पति चकई भरत चक, मुनिआयसु खेलवार ॥ ❋
तेहि निशि आश्रम पींजरा, राखे भा भिनुसार ॥ २०८ ॥ ❋

ब्रह्माजीकी सृष्टिकी रीतिके अनुसार चक्रवाक और चकई रात्रिमें एक ठौर नहीं रह सकते है. परंतु मुनिकी आज्ञारूपी खिलारीने संपदारूपी चकई और भरतरूपी चक्रवाकको आश्रमरूपी पिंजरेमें बंद करके उस रात्रिमें संयुक्त करके राखा और विना दुःखके प्रातःकाल हो गया ॥ २०८ ॥

कीन्ह निमज्जन तीरथराजा ॥ नाइ मुनिहिँ शिर सहित समाजा ॥ १ ॥ ❋
ऋषिआयसु अशीस शिर राखी ॥ करि दण्डवत बिनय बहु भाखी ॥ २ ॥ ❋

मुनिका प्रभाव देख, आतिथ्य स्वीकार कर, अपनी समाजके साथ प्रयागराजमें स्नान कर मुनिको वंदन कर ॥ १ ॥ उनकी आज्ञाको सिर चढ़ाय, आशिष ले, दंडवत प्रणाम कर, बहुतसे विनयके वचन कह ॥ २ ॥

पथगतकुशल साथ सब लीन्हे ॥ चले चित्रकूटहिँ चित दीन्हे ॥ ३ ॥ ❋
रामसखाकर दीन्हे लागू ॥ चलत देह धरि जनु अनुरागू ॥ ४ ॥ ❋

वनके मार्गके भेदी चतुर पुरुषोंको साथ ले, चित्रकूट पर्वत चलनेको चित्त दिया ॥ ३ ॥ भरत रवाने होते समय, गुहको साथले जले, सो भरतके पास गुह कैसा मालूम होता है कि, मानों प्रेमही शरीर धारण करके चलाता है ॥ ४ ॥

नहिँ पदत्राण शीस नहिँ छाया ॥ प्रेम नेम व्रत धर्म अमाया ॥ ५ ॥ ❋
लषण राम सिय पन्थ कहानी ॥ पूंछत सखहिँ कहत मृदु बानी ॥ ६ ॥ ❋

न तो भरतके पैरोंमें जूता है और न शिरपर छाया है. केवल निष्कपट प्रेम, नेम, व्रत और धर्मको धारण करता है ॥ ५ ॥ मार्गमें चलते राम लक्ष्मण और सीताकी प्रिय बातें पूछते जाते हैं और गुह कोमल वाणीसे कहता है ॥ ६ ॥

रामबासथल बिटप बिलोके ॥ उर अनुराग रहत नहिँ रोंके ॥ ७ ॥ ❋
देखि दशा सुर बर्षहिँ फूला ॥ भइ मृदु महि मगु मंगलमूला ॥ ८ ॥ ❋

जब वो रामचन्द्रजीके ठहरनेके वृक्षको देखते हैं तब उसका हृदयगत प्रेम रोंकनेपरभी नहीं रुकता है. तुरंत उमंगि आता है ॥ ७ ॥ भरतकी यह दशा देख, देवता फूल बरसाते है और मार्गकी भूमिभी भरतकी दृढ़ता देख, सुकुमार और मंगलकी कारण हो गयी है ॥ ८ ॥

दोहा–किये जाहिँ छाया जलद, सुखद बहत बर बात ॥ ❋
तस मगु भयउ न रामकहँ, जस भा भरतहिँ जात ॥ २०९ ॥ ❋

भरतके शिरपर बादल छाया करते जाते है और सुखकारी शीतल सुगंध मंद बयार बहती है. ऐसा पंथ प्रभुके लियेभी नहीं हुआ था. जैसा कि, भरतके लिये हुआ ॥ २०९ ॥

जड़ चेतन जग जीव घनेरे ॥ जे चितये प्रभु जिन्ह प्रभु हेरे ॥ १ ॥ ❋
ते सब भये परम पद योगू ॥ भरत दरश मेटा सब रोगू ॥ २ ॥ ❋

जगत्मे जो जड़ और चेतन बहुतसे जीव है, उनमेंसे जिन्होंने प्रभुको देखा था अथवा जिनको प्रभुने देखा था ॥ १ ॥ वे सब परम पदके योग्य हो गये थे, परंतु भरतके दर्शनने तौ उनका सारा रोगही काट दिया. यानी आवागवनसे छुड़ा दिया ॥ २ ॥

यह बड़ि बात भरतकी नाहीं ॥ सुमिरत जिनहिँ राम मनमाहीं ॥ ३ ॥ ❋
बारक राम कहत जग जेऊ ॥ होत तरण तारण नर तेऊ ॥ ४ ॥ ❋

भरतके लिये यह कोई बड़ी बात नहीं है; क्योंकि प्रभु आप अपने मनमें उनका सदा स्मरण करते रहते है ॥ ३ ॥ जगत्के भीतर जो एकबेरभी रामका नाम लेता है, वो नर तरणतारण हो जाता है ॥ ४ ॥

भरत रामप्रिय पुनि लघु भ्राता ॥ कस न होइ मगु मंगलदाता ॥ ५ ॥ ❋
सिद्ध साधु मुनिबर अस कहहीं ॥ भरतहिँ निरखि हर्ष हिय लहहीं ॥६॥ ❋

सो भरत तौ प्रभुका परम प्यारा और छुटभाई है, सो उसके लिये मार्ग मंगलकारी कैसे न होवे? ॥ ५ ॥ सिद्ध, साधु और मुनीश्वर लोग इस उक्त रीतिसे कहते है और भरतको निरख मनमें प्रसन्न होते हैं ॥ ६ ॥

देखि प्रभाव सुरेशहिँ शोचू ॥ जग भल भलहिँ पोच कह पोचू ॥ ७ ॥ ❋
गुरु सन कहेउ करहु प्रभु सोई ॥ रामहिँ भरतहिँ भेंट न होई ॥ ८ ॥ ❋

भरतका प्रभाव देख, इंद्रके मनमें बड़ा शोच हुआ. कवि कहता है कि– यह बात सत्य है कि, आप भला तौ जग भला और आप बुरा तौ जगभी बुरा ॥ ७ ॥ इसने गुरु बृहस्पतिसे कहा कि–हे नाथ! आप वो उपाय कीजे कि, राम और भरतकी भेंट न होवे ॥ ८ ॥

दोहा–राम सँकोची प्रेमबश, भरत सप्रेम पयोधि ॥ ❋
बनी बात बिगरन चहत, करिय यतन छल शोधि ॥ २१० ॥ ❋

हे गुरु! राम तौ संकोची और प्रेमके बश हैं और भरत प्रेमका सागर है. बनी हुई बात बिगरने चाहती है, सो अब कुछ हेर कर यत्न करना चाहिये ॥ २१० ॥

बचन सुनत सुरगुरु मुसकाने ॥ सहसनयन बिनु लोचन जाने ॥ १ ॥ ❋
यह गुरु बादि क्षोभ छल छाँडू ॥ इहां कपट करि होइय भाँडू ॥ २ ॥ ❋

इंद्रके वचन सुन बृहस्पति हंसे और जाना कि—इंद्रकी तौ हजारहौं आंख फूट गई दीखे ॥ १ ॥ गुरु बृहस्पतिने कहा कि—हे महाराज ! आप क्षोभ क्यों करते हो ? यहां आप छलका नामभी मत लो; क्योंकि यहां कपटसे कुछ न सधेगा और उपहास होगा ॥ २ ॥

मायापति सेवकसन माया ॥ करियत उलटि परै सुरराया ॥ ३ ॥ ❋
तब कछु कीन्ह राम रुख जानी ॥ अब कुचाल करि होइहि हानी ॥ ४ ॥ ❋

हे सुरराज ! जो भगवत्भक्तके पास छल करता है, उसकी माया उसीपै उलटी आपड़ती है ॥ ३ ॥ और उस समय जो कुछ किया था, सो प्रभुकी रुख जानके किया था. अब जो कुचाल करोगे तौ आपकी बड़ी हानि होगी ॥ ४ ॥

सुनु सुरेश रघुनाथ सुभाऊ ॥ निज अपराध रिसाहिँ न काऊ ॥ ५ ॥ ❋
जो अपराध भक्तकर करई ॥ रामरोषपावक सो जरई ॥ ६ ॥ ❋

हे सुरेश ! सुनो. प्रभुका ऐसा स्वभाव है कि—जो कोई स्वयं प्रभुका अपराध करता है, उसपै तौ वे क्रोध नहीं करते ॥ ५ ॥ परंतु जो भक्तजनका अपराध करता है, वो प्रभुकी कोपाग्निसे तुरंत भस्म हो जाता है ॥ ६ ॥

लोकहु बेदबिदित इतिहासा ॥ यह महिमा जानहिँ दुरबासा ॥ ७ ॥ ❋
भरतसरिस को रामसनेही ॥ जग जपु राम राम जपु जेही ॥ ८ ॥ ❋

इस विषयमें दुर्वासाका इतिहास लोग और वेद दोनोंमेंभी प्रसिद्ध है. इस प्रभावको दुर्वासा ऋषि अच्छीतरह जानते हैं ॥ ७ ॥ हे इंद्र ! भरतके जैसा प्रभुका भक्त कौन है ? देखो जगत् तौ रामको जपता है और राम भरतका नाम लेते हैं ॥ ८ ॥

अंबरीष राजा प्रभुका परम भक्त था. राजाने एकादशीका व्रत किया था. दूसरे दिन द्वादशी कम थी, जिससे शीघ्र२ ब्राह्मणोंको बुलाय, उन्हें भोजन करवाय, आप भोजन करनेको बैठता था, कि, इतनेमें दुर्वास ऋषि आ निकले. तब उसने अर्घ्य पाद्य आदि अर्पण कर, भावभक्तिसे पूजा कर, भोजनके लिये कहा, तौ दुर्वासाने कहा हमारे कुछ नित्य-कृत्य अवशेष रह गया है, सो यमुनाजीमें जा, अभी कर आते हैं. दुर्वासा यमुनाजीपै गये. राजा उनकी राह देखता रहा. निदान द्वादशी बहुत कम रह गई और मुनि आये नहीं. उसे पारण द्वादशीमें करना था. राजाने ब्राह्मणोंको बुलाके कहा—अब क्या करना चाहिये? तब ब्राह्मणोंने कहा कि— आप जलपान कर लीजिये. इसमें दोनों सध जायंगे. अतिथिका अनादरभी न होगा और पारणभी सध जायगा; क्योंकि जलपान खाने और न खाने दोनोंमें गिना जाता है. ब्राह्मणोंके वचनसे राजाने वैसाही किया. इतनेमें दुर्वासा आये. राजाका सब वृत्तांत जान, कुपित हो, कहा कि—तू बड़ा नीच है. हमको भोजनका निमंत्रण दे, हमें भोजन कराये विना तूने भोजन किया. तू बड़ा पाखंडी है. तुझे अभी इसका फल देता हूं ऐसे कह कृत्या प्रगट करी. कृत्या राजाकी ओर चली, तिसे देख, भगवान्का धरा हुआ सुदर्शन-चक्र अपनी ठौरसे उठा. आतेही कृत्याको भस्म कर डाला. फिर मुनिके पीछे लगा. तब उसके तेजसे जलता हुआ मुनि भागा, सो प्रथम तौ ब्रह्माजीके पास गया. उन्होंने साफ जबाब दे दिया कि—हमारा इसमें कुछ वश नहीं चलता. यह प्रभुका चक्र है, हमभी प्रभुकी एक निमेषमें नाश हो जाते हैं. तब दुर्वासा महादेवजीके पास गये. उन्होंनेभी वही उत्तर दिया और कहा कि—यह भगवान्का शस्त्र है सो वेही बचावें तौ बच सक्ते हो. यहां दूसरा उपाय नहीं लगेगा. तब दुर्वासा हार खाय वैकुंठमें गया और त्राहि त्राहि कर पुकारने लगा. तब भगवान्ने कहा कि—मैं तौ भक्तोंके परा-धीन हूं. उनकी इच्छाके प्रतिकूल मैं कुछ नहीं कर सकता. जैसे पतिव्रता स्त्री अपने पतिको अपने वशकर लेती है, ऐसे भक्तलोग मुझे अपने वश कर लेते हैं, सो भक्तोंके आगे मेरा कुछ बस नहीं और यहभी है कि—जो धन मन तन सब मेरे

दोहा–मनहुँ न आनिय अमरपति, रघुपति भक्त अकाज ॥ ❃
अयश लोक परलोक दुख, दिन दिन शोकसमाज ॥ २११ ॥ ❃

हे सुरराज ! प्रभुके भक्तजनोंका अकाज तौ मनमेंही नहीं लाना चाहिये; क्योंकि उससे इस लोकमें तौ अपयश और परलोकमें दुःख होता है और दिनपर दिन शोचका समाज होता है ॥ २११ ॥

सुनु सुरेश उपदेश हमारा ॥ रामहिँ सेवक परम पियारा ॥ १ ॥ ❃
मानत सुख सेवक सेवकाई ॥ सेवक बैर बैर अधिकाई ॥ २ ॥ ❃

बृहस्पति कहते है कि–हे इंद्र ! हमारा उपदेश सुन. प्रभुको अपने भक्त बहुत प्यारे हैं ॥ १ ॥ प्रभु भक्तकी टहल करनेसे अपनी टहल मानते है और भक्तसे बैर करनेसे ज्यादाकर बैर मानते हैं ॥ २ ॥

यद्यपि सम नहिँ राग न रोषू ॥ गहहिँ न पाप पुण्य गुण दोषू ॥ ३ ॥ ❃
कर्म प्रधान बिश्व करि राखा ॥ जो जस करै सो तस फल चाखा ॥ ४ ॥ ❃

यद्यपि प्रभुके सब बराबर है, आपके राग द्वेष कुछ नहीं है और पाप, पुण्य, गुण, दोष, किसीको नहीं ग्रहण करते ॥ ३ ॥ प्रभुने इस जगतको कर्मप्रधान कर रक्खा है अर्थात् जो जैसा कर्म करता है वो वैसाही फल पाता है ॥ ४ ॥

तदपि करहिँ सम बिषम बिहारा ॥ भक्त अभक्त हृदय अनुसारा ॥ ५ ॥ ❃
अगुण अलेख अमान एक रस ॥ राम सगुण भे भक्त प्रेम बस ॥ ६ ॥ ❃

तौभी प्रभुको भक्त और अभक्तके मनके अनुसार सम विषम लीला करनीही पड़ती है ॥ ५ ॥ यद्यपि प्रभु निर्गुण, अलक्ष, मानरहित और एकरस है, तौभी भक्त लोगोंके प्रेमके वश हो प्रभु सगुण हुए है ॥ ६ ॥

राम सदा सेवक रुचि राखी ॥ वेद पुराण साधु सुर साखी ॥ ७ ॥ ❃
अस जिय जानि तजहु कुटिलाई ॥ करहु भरतपदप्रीति सुहाई ॥ ८ ॥ ❃

रामचन्द्रजी सदा अपने भक्तजनोंकी रुख रखते हैं, यह बात मैं बनाके नहीं कहता; किंतु वेद पुराण, साधु और देवता ये सब इसमें साक्षी हैं ॥ ७ ॥ हे इंद्र ! मनमें ऐसा समझकर कुटिलताको तज दो और भरतके चरणोंमे प्रीति रक्खो ॥ ८ ॥

दोहा–रामभक्त परहित निरत, परदुखदुखी दयाल ॥ ❃
भक्तशिरोमणि भरतते, जनि डरपहु सुरपाल ॥ २१२ ॥ ❃

अर्पण कर देते हैं और मेरे सिवा दूसरेको कुछ नहीं जानते, ऐसे अनन्य भक्तोंकी रक्षा करना और उनके वश रहना हमको सर्वथा योग्य है. सो तुम अब वहीं जाओ. जहांसे आपके पीछे यह उपद्रव लगा है. प्रभुके ऐसे वचन सुन, निराश हो, दुर्वासा पीछा अंबरीषके पास आया और पैरोंमें गिरने लगा. तब अंबरीषने मुनिको थांभा और सुदर्शन चक्रकी स्तुति करी और कहा कि–जो हम ब्राह्मणोंके सच्चे भक्त हैं तौ इस ब्राह्मणका संताप मिट जावे. राजाके कहतेही दुर्वासाका दुःख मिट गया. अंबरीष राजाने दुर्वासाको भावभक्तिसे भोजन कराया और सत्कार किया. तब दुर्वासाने राजाको आशिष देकर कहा कि– तू परमेश्वरका पूरा भक्त है. तेरा यह यश प्रलय पर्यंत जगत्में प्रसिद्ध रहेगा. हमने तुम्हारा अपराध किया था, परंतु तुह्मारा बड़ा बड़प्पन रहा ऐसे कह दुर्वासा गया. तब अंबरीषने भोजन किया. दुर्वासा पीछा आया जितनेमें बारह महीने बीत गये थे. इतने रोज राजा पावोंपर खड़ा रहा. इति ॥

हे इंद्र ! प्रभुके सेवक पराया भला करनेमें बड़े तत्पर होते हैं. पराये दुखसे दुखी हो जाते है और बड़े दयालु होते हैं, सो भरत तो भक्तोंमें शिरोमणि है, इसलिये तुम रंचहू मत डरो ॥ २१२ ॥

सत्यसिन्धु प्रभु सुरहितकारी ॥ भरत रामआयसु अनुसारी ॥ १ ॥ ❀
स्वारथ बिबश बिकल तुम होहू ॥ भरतदोष नहिँ राउर मोहू ॥ २ ॥ ❀

सत्यके समुद्र प्रभु देवताओंके हितकारी है और भरत प्रभुका आज्ञाकारी है ॥१ ॥ तुम स्वार्थके बश होकर विकल मत होओ. भरतमें कोई तरहका दोष नहीं है. यह आपको मोह वृथा हुआ है ॥ २ ॥

सुनि सुरबर सुरगुरु बर बानी ॥ भा प्रबोध मन मिटी गलानी ॥ ३ ॥ ❀
बर्षि प्रसून हर्षि सुरराऊ ॥ लगे सराहन भरतसुभाऊ ॥ ४ ॥ ❀

बृहस्पतिके वचन सुन, इंद्रको बोध होगया और मनकी ग्लानि मिट गई ॥ ३ ॥ तब इंद्रने प्रसन्न हो फूल बरसाये और भरतके स्वभावकी सराहना करी ॥ ४ ॥

यहिबिधि भरत चले मग्र जाहीं ॥ दशा देखि मुनि सिद्ध सिहाहीं ॥ ५ ॥❀
जबहिँ राम कहि लेहिँ उसासा ॥ उमँगत प्रेम मनहुँ चहुँ पासा ॥ ६ ॥ ❀

इसप्रकार भरत मार्गमें जाता था, तिसकी दशा देख, मुनि और सिद्ध लोग सिहाते हैं ॥ ५ ॥ जब "राम" ऐसा कहकर भरत उसांस लेता है, उस समय मानों चारों ओरसे प्रेम उमँग आता है ॥ ६ ॥

द्रवहिँ बचन सुनि कुलिश पषाना ॥ पुरजन प्रेम न जाइ बखाना ॥ ७ ॥
बीच बास करि यमुनहिँ आये ॥ निरखि नीर लोचन जल छाये ॥ ८ ॥❀

भरतके प्रेमके वचन सुन वज्र और पत्थरभी पिघल जाते है. तहां पुरजनोंके प्रेमकी तो कहैं ही क्या ? ॥ ७ ॥ जब बीचमें एक बास करके जमुनाजी पै आये तब जमुनाजीका जल देख भरतके नेत्रोंमें जल भर आया ॥ ८ ॥

दोहा–रघुबर बर्ण बिलोकि बर, बारि समेत समाज ॥ ❀
होत बिरह बारिधि मगन, चढ़े बिबेक जहाज ॥ २१३ ॥ ❀

प्रभुके वर्णके समान श्यामवर्ण निर्मल जल देखकर समाजके साथ भरतजी विरहरूप समुद्रमें मग्न होते होते ज्ञानरूप जहाजपर चढ़ि गये ॥ २१३ ॥

यमुनतीर तेहिदिन कर बासू ॥ भयेउ समय सम सबहिँ सुपासू ॥ १ ॥ ❀
रातिहिँ घाट घाटकी तरणी ॥ आईं अगणित जाइँ न बरणी ॥ २ ॥ ❀

उस दिन सब लोग जमुनाजीके तटपरही रहे. समयके अनुसार उस बासमें सबको सुबीता रहा ॥ १ ॥ रातोंरात घाट घाटकी सब नावें आगईं. जिनकी इतनी संख्या थी कि, गिन नहीं सकते ॥ २ ॥

प्रात पार भे एकहि खेवा ॥ तोषे रामसखा करि सेवा ॥ ३ ॥ ❀
चले अन्हाइ नदिहिँ शिर नाई ॥ साथ निषाद नाथ लघु भाई ॥ ४ ॥ ❀

भोर होतेही सब लोग एकही खेवेमें पार हो गये. तहां सेवा करके रामचन्द्रजीके सखा गुहने

सबको प्रसन्न किया ॥ ३ ॥ यमुनाजीमें स्नान कर, उसे शिर नवाय, गुह और शत्रुघ्नको साथ ले भरत चले ॥ ४ ॥

आगे मुनिबर बाहन आछे ॥ राज समाज जाइ सब पाछे ॥ ५ ॥ ❋
तेहि पाछे दोउ बन्धु पयादे ॥ भूषण बसन बेष सुठि सादे ॥ ६ ॥ ❋

सबके आगे तो अच्छीसी सवारीपर चढ़ेहुए गुरु वसिष्ठजी जा रहे हैं और उनके पीछे पीछे सारा राजसमाज जा रहा है ॥ ५ ॥ उसके पीछे दोनों भाई पयादे जा रहे हैं; जिनके वस्त्र,आभूषण और वेष अच्छे सादे धरेहुए हैं ॥ ६ ॥

सेवक सुहृद सचिव सब साथा ॥ सुमिरत लषण सीय रघुनाथा ॥ ७ ॥ ❋
जहँ जहँ रामबास विश्रामा ॥ तहँ तहँ करहिँ सप्रेम प्रणामा ॥ ८ ॥ ❋

नौकर, मित्र और मंत्री सब साथ है. राम, लक्ष्मण और सीताका सब कोई स्मरण करते है ॥ ७ ॥ जहांजहां प्रभुका विश्रामस्थान देखते है, वहीं प्रेमके साथ प्रणाम करते हैं ॥ ८ ॥

दोहा-मगु बासी नर नारि सुनि, धाम काम तजि धाइ ॥ ❋
देखि स्वरूप सनेहबश, मुदित जन्मफल पाइ ॥ २१४ ॥ ❋

'भरतजी आते है' ये समाचार सुन, पंथके लोग अपने घरका धंधा छोंड़, दौड़कर आते हैं और भरतके स्वरूपको देख, स्नेहके वश हो, जन्मका फल पाय, मगन हो जाते है ॥ २१४ ॥

कहहिँ सप्रेम एक इक पाहीं ॥ राम लषण सखि होहिँ कि नाहीं ॥ १ ॥ ❋
बय बपु बसनरूप सोइ आली ॥ शील सनेह सरिस सम चाली ॥ २ ॥ ❋

भरत और शत्रुघ्नको देखकर,स्त्रियां एक एकसे कहतीं है कि-अरी आली ! क्या ये राम लक्ष्मण तो नहीं है ? ॥ १ ॥ अरी सखी ! इनकी अवस्था, शरीर, वस्त्र, रूप, शील व बराबरका स्नेह तथा सरीसी चाल तो वही है ॥ २ ॥

बेष न सो सखि सीय न संगा ॥ आगे अनी चली चतुरंगा ॥ ३ ॥ ❋
नहिँ प्रसन्न मुख मानस खेदा ॥ सखि सन्देह होत इहि भेदा ॥ ४ ॥ ❋

हे सखी ! एक तो वेष वो नहीं है. दूसरा सीता साथमें नहीं है. तीसरा चतुरंगिनी फौज आगे चलती है ॥ ३ ॥ चौथा मुख प्रसन्न नहीं है और मन मलीन है. हे सखी ! इस अंतरको देखकर, मनमें संदेह होता है ॥ ४ ॥

तासु तर्क तियगण मन मानी ॥ कहहिं सकल तोहिँसम न सयानी ॥५॥ ❋
तेहिँ सराहिं बाणी फुर पूजी ॥ बोली मधुर बचन तिय दूजी ॥ ६ ॥ ❋

यह सुन,उस सखीका विचार सब स्त्रियोंने अपने मनमें माना और कहा कि-अरी सखी ! तेरे जैसी समझदार हममें एकभी नहीं है ॥ ५ ॥ हे पार्वती ! उसकी प्रशंसा कर, "तेरी वाणी सत्य होवे," ऐसे कह, फिर दूसरी स्त्री मधुर वाणीसे बोली ॥ ६ ॥

कहि सप्रेम सब कथाप्रसंगू ॥ जेहिँ बिधि रामराज रसभंगू ॥ ७ ॥ ❋
भरतहिँ बहुरि सराहन लागीं ॥ शील सनेह सुभाव सुभागीं ॥ ८ ॥ ❋

उसने प्रीतिके साथ सारा कथाप्रसंग कहा कि जिसतरह रामचन्द्रजीके राज्याभिषेकके रसमें अनरस हुआ था ॥ ७ ॥ फिर वो भरतकी सराहना करने लगी. भरतका शील, स्नेह और स्वभाव सब प्रकारसे धन्य है. ऐसा बड़भागी जगतमें दूसरा कोई नहीं है ॥ ८ ॥

दोहा–चलत पयादे खात फल, पिता दीन्ह तजि राज ॥ ❃
जात मनावन रघुबरहिं, भरतसरिस को आज ॥ २१५ ॥ ❃

देखो, ये पयादे जाते है, फल खाते है और पिताने जो राज दिया है वो तज दिया है. प्रभुको मनानेको जाते है. इससे मै कहती हूं कि, भरतके जैसा बड़भाग्य जगतमें कौन है ? ॥ २१५ ॥

भायप भक्ति भरत आचरणू ॥ कहत सुनत दुख दूषण हरणू ॥ १ ॥ ❃
जो कछु कहिय थोर सखि सोई ॥ रामबन्धु अस काहे न होई ॥ २ ॥ ❃

भरतकी भायप, भक्ति और आचरण ऐसे हैं कि जिनको कहते और सुनते सब दोष और दुःख टल जाते है ॥ १ ॥ हे सखी ! भरतके विषयमें जो कुछ कहैं सो सब थोड़ा है; क्योंकि रामका भाई ऐसा क्यों न होगा ? ॥ २ ॥

हम सब सानुज भरतहिं देखे ॥ भये धन्य युवती जन लेखे ॥ ३ ॥ ❃
सुनि गुण देखि दशा पछिताहीं ॥ केकयि जननि वियोग सुत नाहीं ॥ ४ ॥ ❃

आज हम सबोंने जो शत्रुघ्नसहित भरतको देखा है तिससे स्त्रियोंके भीतर धन्य गिननेके योग्य हुई है ॥ ३ ॥ इनके गुणोंको सुन, इनकी दशा देख, हमें पछतावा आता है. ये कैकेयीके पुत्र होनेके योग्य नहीं है ॥ ४ ॥

कोउ कह दूषण रानिहुँ नाहिन ॥ बिधि सब भांति हमहिं जो दाहिन ॥ ५ ॥
कहँ हम लोग बेदबिधि हीना ॥ लघुकुल तिय करतूति मलीना ॥ ६ ॥ ❃

किसीनें कहा कि– रानीका इसमें कुछ दोष नहीं है ये तो हमारा विधाता सब प्रकारसे अनुकूल था तिससे हुआ है; क्योंकि जो हमारा दैव अनुकूल नहीं होता तौ हमें दर्शन नहीं होते. परंतु दैवने इन्हें यहां बुलाय हमें दर्शन दिया है ॥ ५ ॥ वेदविधिसे बाह्य, और नीच कुल, हम स्त्री जाति तौ कहां ? कि जिनकी करनी महामलीन है ॥ ६ ॥

बसहिं कुदेश कुगांव कुठामा ॥ कहँ यश दरश पुण्य परिणामा ॥ ७ ॥ ❃
अस अनन्द अचरज प्रतिग्रामा ॥ जनु मरुभूमि कल्पतरु जामा ॥ ८ ॥ ❃

जो कुदेश, कुगांव और कुठौर रहतीं हैं, और कहां पुण्यका फलरूप रघुवंशी राम लक्ष्मण भरत और शत्रुघ्नका दर्शन ? कि जिसके लिये योगीजन ध्यान लगाया करते है. पर होना अति कठिन है ॥ ७ ॥ महादेवजी कहते हैं कि–हे पार्वती ! हर गांवमें इसतरह आनंद और आश्चर्य होता है. मानों मरुभूमि (मारवाड़के रेगिस्तान) में कल्पवृक्षही जाम गया है ॥ ८ ॥

दोहा–भरत दरश देखत खुलेहु, मगु लोगन्ह कर भाग ॥ ❃
जनु सिंहल बासिन्ह भयउ, बिधिबश सुलभ प्रयाग ॥ २१६ ॥ ❃

भरतके दर्शन करतेही लोगोंके भाग खुलगये हैं मानों सिंहलद्वीप (सिलोन) के रहनेवाले लोगोंको दैववशसे प्रयागराज सुलभ होगया है ॥ २१६ ॥

निज गुण सहित राम गुण गाथा ॥ सुनत जाहिँ सुमिरत रघुनाथा ॥१॥❋
तीरथ मुनि आश्रम सुरधामा ॥ निरखि निमज्जहिँ करहिँ प्रणामा ॥२॥❋

भरत अपने गुणोंके साथ प्रभुके गुणोंकी गाथा सुनता रघुनाथजीका स्मरण करता चला जाता है ॥ १ ॥ सो जहां वो हरेक तीर्थ मुनिका आश्रम तथा देव मंदिर देखता है वहां नहाय दंडवत् कर ॥ २ ॥

मनहीं मन मांगहिँ बर येहू ॥ सीयरामपदपद्म सनेहू ॥ ३ ॥ ❋
मिलहिँ किरात कोल्ह बनवासी ॥ बैखानस बटु यती उदासी ॥ ४ ॥ ❋

मनही मनमें यह वरदान मांगते है कि–सीता रामके चरणकमलोंमें सदा स्नेह बना रहे ॥ ३ ॥ मार्गमें जो कोई किरात, कोल्ह, वनवासी, वानप्रस्थ, ब्रह्मचारी, संन्यासी और उदासी मिलते है ॥ ४ ॥

करि प्रणाम पूँछहिँ जेहि तेहि ॥ केहि बन लषण राम बैदेही ॥ ५ ॥ ❋
ते प्रभु समाचार सब कहहीं ॥ भरतहिँ देखि जन्मफल लहहीं ॥ ६ ॥ ❋

उन्हींको प्रणाम कर पूंछते हैं कि रामलक्ष्मण और सीता किस वनमें हैं ? ॥ ५ ॥ वे लोग प्रभुके सब समाचार कहते हैं और भरतका दर्शन कर, अपने जन्मका फल पाते है ॥ ६ ॥

जे जन कहहिँ कुशल हम देखे ॥ ते प्रिय राम लषण सम लेखे ॥ ७ ॥ ❋
यहि बिधि बूझत सबहिँ सुबानी ॥ सुनत राम बनबास कहानी ॥ ८ ॥ ❋

जो लोग भरतको ये समाचार सुनाते है कि हमने प्रभुको कुशल क्षेमसे देखा. उन्हें वो राम लक्ष्मणके समान अतिशय प्यारे समझता है ॥ ७ ॥ इसतरह भरत अपनी मधुर वाणीसे सबको पूंछते हैं और प्रभुके वनवासकी बातें सुनते है ॥ ८ ॥

दोहा–तेहि बासर बस प्रातही, चले सुमिरि रघुनाथ ॥ ❋
रामदरशकी लालसा, भरत सरिस सब साथ ॥ २१७ ॥ ❋

उस दिन वहीं रह, दूसरे दिन प्रात होतेही प्रभुका स्मरणकर भरत चले तिनके साथ जो सारा साथ था उसकेभी भरतकीसी प्रभुके दर्शनोंकी भारी लालसा लग रही थी ॥ २१७ ॥

मंगल शकुन होहिँ सब काहू ॥ फरकहिँ सुखद बिलोचन बाहू ॥ १ ॥ ❋
भरतहिँ सहितसमाज उछाहू ॥ मिलिहहिँ राम मिटहिँ दुखदाहू ॥२॥ ❋

सब किसीको मंगलकारी शुभ शकुन होते हैं. सुखदायी नेत्र भुजा फरकतीं हैं ॥ १ ॥ तिससे भरतके साथ सारी समाजको यह उछाह लग रहा है कि प्रभु मिलेंगे और हमारा दुःख व दाह शांत हो जायगा ॥ २ ॥

करत मनोरथ जस जिय जाके ॥ जाहिँ सनेहसुरा सब छाके ॥ ३ ॥ ❋
शिथिल अंग मग पग डगडोलहिँ ॥ बिहबल बचन प्रेमबश बोलहिँ ॥४॥ ❋

जिसका जैसा मन है वैसे मनोरथ करते जाते है. और स्नेहरूपी मदिरासे सब मदमत्त हो रहे हैं ॥ ३ ॥ जैसे मद्य पीनेसे मनुष्यके सब अंग शिथिल हो जाते है और भूमिपर डगमगाते पांव पड़ते है तथा जबान लड़खड़ाने लगती है ऐसे स्नेहके कारण सबके अंग शिथिल हो गये है और मार्गके भीतर पांव डगमगाते पड़ते है. तथा प्रेमके बश विह्वल वचन बोलते है ॥ ४ ॥

रामसखा तेहि समय देखावा ॥ शैलशिरोमणि सहज सुहावा ॥ ५ ॥ ❋
जासु समीप सरिस पयतीरा ॥ सीय समेत बसहिँ दोउ बीरा ॥ ६ ॥

उस समय गुहने वो सहज सुन्दर उत्तम पर्वत दिखाया ॥ ५ ॥ कि जिसके समीप पयस्वती नाम नदी बहती है कि जिसके तटपर सीताके साथ दोनों भाई (राम लक्ष्मण) बसते है ॥ ६ ॥

देखि करहिँ सब दण्डप्रणामा ॥ कहि जय जानकिजीवन रामा ॥ ७ ॥ ❋
प्रेममगन अस राजसमाजू ॥ जनु फिरि अवध चले रघुराजू ॥ ८ ॥ ❋

पर्वतको देख, सब लोगोंने दंडवत् प्रणाम किया और कहा कि–हे जानकीजीवन राम ! आपकी जय होवे ॥ ७ ॥ उस समय सारा राजसमाज ऐसा प्रेममगन हुआ कि, मानों रामचन्द्रजी अवधको पीछे लौट आये हैं ॥ ८ ॥

दोहा–भरतप्रेम तेहि समय जस, तस कहि सकै न शेषु ॥ ❋
कबिहिँ अगम जिमि ब्रह्मसुख, अह मम मलिन जनेषु ॥ २१८ ॥ ❋

उस काल भरतका जैसा प्रेम था वैसा तो स्वयं शेषजीभी कह नहीं सकते. तब कविकी कौन चली ? जैसे अहंता ममतासे मलिन मनवाला मनुष्य ब्रह्मानंदको नहीं पा सकता ऐसे कविलोग भरतके प्रेमको नहीं कह सकते हैं ॥ २१८ ॥

सकल सनेह शिथिल रघुबरके ॥ गये कोस दुइ दिनकर ढरके ॥ १ ॥ ❋
जल थल देखि बसे निशि बीते ॥ कीन्ह गवन रघुनाथ पिरीते ॥ २ ॥ ❋

प्रभुके स्नेहसे शिथिल सब लोग दो कोस गये इतनेमें दिन ढँक गया.यानी पिछला दिन रह गया ॥ १ ॥ तब जलका स्थल देख, सब टिक गये. रात बीती तब भोर होतेही प्रभुकी प्रीतिसे चले ॥ २ ॥

उमा राम रजनी अवशेषा ॥ जागे सीय सपन अस देषा ॥ ३ ॥ ❋
सहितसमाज भरत जनु आये ॥ नाथ वियोग ताप तनताये ॥ ४ ॥ ❋

हे पार्वती ! कुछ रात्रि बाकी रही, तब प्रभु जागे. तब सीताको रात्रिमें जो स्वप्न आया था वो उसने प्रभुसे कह सुनाया ॥ ३ ॥ सीताने कहा कि–हे प्रभु ! मैंने रातमें स्वप्नमें ऐसा देखा है कि, मानों भरत सारे समाजके साथ यहां आये हैं. उनका शरीर आपके वियोगके संतापसे तपायमान हो रहा है ॥ ४ ॥

सकल मलिनमन दीन्ह दुखारी ॥ देखी सासु आन अनुहारी ॥ ५ ॥ ❋
सुनि सियसपन भरे जल लोचन ॥ भये शोचबश शोकबिमोचन ॥ ६ ॥ ❋

सब लोग मनमलिन, दीन और दुःखी हो रहे हैं. और सासुओंका वेष मैंने दूसरी तर-

हका देखा है (जैसा कि विधवाओंका हुआ करता है) ॥ ५ ॥ सीताका स्वप्न सुन प्रभुके नेत्रोंमें जल भर आया. जिनका नाम लेनेसे शोच मिट जाता है वे प्रभु आप शोचके बश हो गये है ॥ ६ ॥

लषण सपन यह नीक न होई ॥ कठिन कुचाह सुनाइहि कोई ॥ ७ ॥ ❋
अस कहि बन्धु समेत अन्हाने ॥ पूजि पुरारि साधु सनमाने ॥ ८ ॥ ❋

और लक्ष्मणसे कहते है कि—हे लक्ष्मण! यह स्वप्न अच्छा नहीं है. इससे कुछ न कुछ कठिण कुचाह सुननेमें आवेगी ॥ ७ ॥ ऐसे कहकर प्रभु लक्ष्मणके साथ नहाये, महादेवजीकी पूजाकर साधुपुरुषोंका सन्मान किया ॥ ८ ॥

छंद–सनमानि सुर मुनि बन्दि बैठे उतर दिशि देखत भये ॥ ❋
नभ धूरि खग मृग भूरि भागे बिकल प्रभु आश्रम गये ॥ ❋
तुलसी उठे अवलोकि कारण काह चित चक्रित रहे ॥ ❋
सब समाचार किरात कोल्हन आइ तेहि अँवसर कहे ॥ ९ ॥ ❋

देवता और मुनिलोगोंका सत्कार कर उन्हें प्रणाम कर आसनपर बिराज, प्रभु उत्तर दिशाको ओर देखते है इस बीच आकाशमें धूल उड़ती नजर आई. और पक्षी व हरिणोंके झुंड विह्वल हो भागतेहुए प्रभुके आश्रममें गये. तुलसीदासजी कहते हैं कि—यह उपद्रव देख प्रभु उठे और सोचने लगे कि इसका कारण क्या है? ये सब भागते क्यों है? ऐसे प्रभु चित्तमें चकित हो रहे थे. इतनेमें किरात और कोल्होंने प्रभुके पास आकर सब समाचार कहे ॥ ९ ॥

सोरठा–सुनत सुमंगल बैन, मन प्रमोद तनु पुलकभर ॥ ❋
शरदसरोरुहनैन, तुलसी भरे सनेह जल ॥ ९ ॥ ❋

भरतके आनेके शुभसमाचार सुनतेही प्रभुका शरीर पुलकावलिसे भरगया. और शरद ऋतुके कमलकेसे नेत्रोंमें स्नेहसे जल भर आया ॥ ९ ॥

बहुरि शोचबश भे सियरमनू ॥ कारण कवन भरत आगमनू ॥ १ ॥ ❋
एक आइ अस कहा बहोरी ॥ सेन संग चतुरंग न थोरी ॥ २ ॥ ❋

प्रभु फिर शोचके बश हुए कि, भरत वनमें क्यों आया है? ॥ १ ॥ इतनेमें एकने आकर फिर ऐसा कहा कि, उसके साथ बड़ी भारी चतुरंगिनी सेना है ॥ २ ॥

सो सुनि रामहिँ भा अतिशोचू ॥ इत पितु बच उत बन्धु सकोचू ॥ ३ ॥ ❋
भरत सुभाव समुझि मनमाहीं ॥ प्रभुचित हित थिति पावत नाहीं ॥ ४ ॥ ❋

यह सुन, प्रभुके मनमें बड़ाही शोच हुआ; क्योंकि इधर तो पिताका वचन और उधर भाईका संकोच ॥ ३ ॥ प्रभु अपने मनमें भरतका स्वभाव समझ कर, अपने हित (वनगमन) की दृढ़ता नहीं पाते. प्रभुके मनमें ऐसा शोच हुआ कि, ऐसा न होवे कि, वो मुझे पीछा लौटा न लेजावे ॥ ४ ॥

समाधान तब भा यह जाने ॥ भरत कहे महँ साधु सयाने ॥ ५ ॥ ❋
लषण लखेउ प्रभुहृदय खँभारू ॥ कहत समयसम नीतिबिचारू ॥ ६ ॥ ❋

फिर इस बातको जानकर प्रभुके मनमें धीरज आगया कि, भरत बहुत साधु और समझदार है तथा मेरे कहेनेमें है सो मेरा प्रण भंग न होगा ॥ ५ ॥ प्रभुके मनमें क्षोभ हुआ देख, लक्ष्मणने नीतिको विचार कर समयानुसार वे वचन कहे ॥ ६ ॥

बिन पूंछे कछु कहउँ गुसाँई ॥ सेवक समय न ढीठ ढिठाई ॥ ७ ॥ ❋
तुम सर्वज्ञ शिरोमणि स्वामी ॥ आपुनि समुझि कहौं अनुगामी ॥ ८ ॥ ❋

लक्ष्मण बोला कि–हे प्रभु ! मैं बिना पूंछे कुछ कहता हूं सो अपराध क्षमा करना. कहा है कि, काल पाकर सेवक जो ढिठाई करता है वो ढीठ नहीं कहलाता ॥ ७ ॥ हे स्वामी ! आप सर्वज्ञोंके मुकुटमणि हो सो आपको कहनेकी कोई जरूर नहीं है; परंतु मैं मेरी समझके अनुसार कहता हूं सो सुनिये ॥ ८ ॥

दोहा–नाथ सुहृद सुठि सरल चित, शील सनेह निधान ॥ ❋
सबपर प्रीति प्रतीति जिय, जानिय आपु समान ॥ २१९ ॥ ❋

हे नाथ ! आप साफदिल, सरलस्वभाव और शील व स्नेहके भंडार हो इससे आप तो यों जानते हो कि जैसी प्रीति और प्रतीति मेरे मनमें है वैसीही सबके है, परंतु सबका स्वभाव आपके जैसा नहीं है ॥ २१९ ॥

विषयी जीव पाइ प्रभुताई ॥ मूढ़ मोहबश होहिँ जनाई ॥ १ ॥ ❋
भरत नीतिरत साधु सुजाना ॥ प्रभुपदप्रेम सकल जगजाना ॥ २ ॥ ❋

हे नाथ ! जो विषयी जीव है वे अज्ञानी प्रभुताको पाकर, मोहके बश होजाते हैं, इसमें कुछ संदेह नहीं है ॥ १ ॥ हे प्रभु ! यद्यपि भरत नीतिपरायण, साधु और सुजन है और सारा संसार जानता है कि, उसकी आपके चरणोंमें परमप्रीति है ॥ २ ॥

तेऊ आज राजपद पाई ॥ चले धर्म मर्याद मिटाई ॥ ३ ॥ ❋
कुटिल कुबन्धु कुअँवसर ताकी ॥ जानि राम बनवास इकाकी ॥ ४ ॥ ❋

वोभी आज राजपदको पाकर, धर्मकी मर्यादको तज, चलि आया है ॥ ३ ॥ यह कुटिल कुबुद्धि बंधु कुसमय देख, आपको इकले वनवासमें रहे जान ॥ ४ ॥

करि कुमंत्र मन साजि समाजू ॥ आये करण अकण्टक राजू ॥ ५ ॥ ❋
कोटि प्रकार कलपि कुटिलाई ॥ आये दल बटोरि दोउ भाई ॥ ६ ॥ ❋

मनमें बुरी सलाह विचार, समाजको सज निष्कंटक राज करनेको आया है ॥ ५ ॥ मनमें करोड़ों तरहकी कुकल्पना कलप, दलको इकठा कर, दोनों भाई चढ़ि आये है ॥ ६ ॥

जो जिय होति न कपट कुचाली ॥ केहि सोहाति रथ बाजि गजाली ॥ ७ ॥
भरतहिँ दोष देइ को जाये ॥ जग बैराइ राजपद पाये ॥ ८ ॥ ❋

जो इसके मनमें कपट और कुचाल न होती तो इसे रथ, घोड़े और हाथियोंकी पंक्ति कैसे सुहाती ? ॥ ७ ॥ और इसमें भरतको कौन दोष देता है ? क्योंकि राजपदही ऐसा है कि, जिसको पानेसे सारा जगत् बावला बन जाता है ॥ ८ ॥

दोहा–शशि गुरुतियगामी नहुष, चढ़े भूमिसुर यान ॥ ❋
लोक बेदते बिमुख भा, अधम को बेनुसमान ॥ २२० ॥ ❋

देखिये. चंद्रमा राजको पाकर गुरुस्त्रीगामी हुआ. और नहुषराजा ब्राह्मणोंको कहार बनाय, पालकीपर चढ़ा और बेनराजा राजको पाय, लोक व वेदसे विमुख हुआ कि, जिसके बराबर दूसरा कोईभी अधम और नीच नहीं है ॥ २२० ॥

सहसबाहु सुरनाथ त्रिशंकू ॥ केहिँ न राजमद दीन्ह कलंकू ॥ १ ॥ ❋
भरत कीन्ह यह उचित उपाऊ ॥ रिपु ऋण रंच न राखब काऊ ॥ २ ॥ ❋

---

१ जब ब्रह्माजीने चन्द्रमाको प्रजापति बनाया तब उसने राजसूययज्ञ किया. और अभिमानके मारे उसने बृहस्पतिजीकी स्त्री ताराको घरमें डाल लिया. उसके गर्भ रह गया. जब पुत्र हुआ तब चन्द्रमाने कहा यह मेरा पुत्र है और गुरुजीने कहा मेरा है. देवताओंने ताराको बहुत समझाया कि, तू सच कह दे यह किसका है ? पर वह कुछ न बोली तब ब्रह्माजीने आय, तारासे पूंछ, निश्चय कर कहा कि–यह चन्द्रमाका वीर्यज और बृहस्पतिका क्षेत्रज पुत्र है; परंतु जो जिसके वीर्यसे पैदा हुआ हो वह उसीका पुत्र होता है; क्योंकि माता तौ भस्त्रा यानी थैलीके समान केवल धारण करनेवाली है पुत्र उसीका है जिसका वीर्य है. ऐसा निश्चय कर, पुत्र चंद्रमाको दिया, जिसका नाम बुध हुआ. यह अधर्म केवल राज पानेके कारण हुआ था. २ दूसरा–राजा नहुष बड़ा बली था उसको स्वर्गका राज मिलगया था. जब कि इन्द्रने वृत्रासुरको मारा और उसकी हत्यासे पापी हो इन्द्र तौ ईशानकोणमें कमलवनमें जा छिपाथा तब स्वर्गमें किसी राजाके न होनेसे बृहस्पतिने नहुषको ले जाय, स्वर्गका राजा बनाया. कुछ दिन बीतनेके बाद राजमद पाय नहुषने इन्द्राणीसे कहला भेजा कि मैं अभी इन्द्र हूं तू मेरे पास आ. तब इन्द्राणीने दुखी हो बृहस्पतिको बुलाय, नहुषके समाचार कहे सो सुन, गुरुने कहा कि तू नहुषसे कहला दे कि जो ब्राह्मणोंको कहार बनाय पालकीमें बैठ, मेरे पास आवे तौ मैं तुझे स्वीकार करूं उसने राजके मदसे मदांध हो वैसाही किया. नहुषने जल्दीके मारे चलनेपरभी अगस्त्यमुनिसे ताकीद करी और कहा कि " सर्प सर्प " तब अगस्त्यजीने क्रोध कर श्राप दिया कि तू सर्प हो. ऐसे नहुष स्वर्गसे भ्रष्ट हुआ. तब देवता इंद्रको स्वर्गमें ले गये. नहुषकी जो बुद्धि बिगड़ी सोभी राज पानेसे बिगड़ी, नहीं तो वो राजा बड़ा धर्मात्मा और सुशील था. ३ राजा बेन सूर्यवंशी अंगराजाका पुत्र था. इसकी माता मृत्युकी कन्या सुनीथा थी. बेन बचपनसे नानेके घर रहा. तिसकी संगतिसे वह महाअधर्मी होगया. जब कहीं खेलनेको जाता तौ बालकोंको मार डालता. तब लोग दुखी हो लोगोंने राजा अंगसे कहा. राजा अंगने उसे बहुत समझाया, पर उसने न माना. तब राजा अंग सुनीथाको निद्रामें सोयी छोड़ वनमें चला गया. पुरोहित प्रभृति राजपुरुषोंने बहुत ढूंढ़ा पर पता न लगा. तब बेनको राज्यासनपर बिठाया. इसने राज पातेही सब यज्ञ होम आदि बंद करवा दिये और डौंड़ी पिटवा दी कि कोई यज्ञ, होम आदि करने न पावे तब ऋषियोंने क्रोधको गुप्त रख, बेनके पास जाकर, कहा कि हे महाराज ! धर्मसे सब कुछ होता है.धर्मसे राज और प्रजा बढ़ती है सो आप विष्णु भगवान्का आराधन और यज्ञ याग आदि बंद मत करो. ऋषियोंके वचन सुन कुपित हो, बेनने कहा कि–तुम बड़े मूर्ख हो. जो सर्व दैवतरूप मुझको छोंड़कर विष्णुका आराधन करना चाहते हो. राजाके शरीरमें सब देवता रहते हैं इसलिये यज्ञयाग आदि सब मेरे निमित्त करो, और कुलटा स्त्रीकी भांति विष्णुकी भक्तिको तज मेरी सेवा करो. जिससे तुम्हारा भला होगा. बेनके ये वचन सुन मुनियोंने क्रोध कर उसे मारडाला. बेनके मरने पर चोरोंका पीछा भारी उपद्रव मचा तब ऋषियोंने विचार किया कि अब क्या करना चाहिये? निदान सबोंने सलाह कर, सुनीथाको बुलाय, बेनका शरीर मंगाय, उसकी जांघ मथी तिसमेंसे एक काले रंगका पुरुष पैदा हुआ. उसने हाथ जोड़ ऋषियोंसे प्रार्थना करी कि मुझे क्या आज्ञा है ? तब ऋषियोंनें कहा कि निषीद (बैठजा) सो वो निषाद जाति हुआ. उसके वंशके निषाद कहलाते हैं. बन और पर्वतोंमें रहते हैं. फिर बेनकी भुजा मथी जिसमेंसे एक मिथुन पैदा हुआ. जो लक्ष्मीनारायणका अवतार था. तहां लक्ष्मीके अंशसे अर्चि नाम रानी और नारायणके अंशसे पृथु नाम राजा हुआ.जिसने पृथ्वीको दोहकर सारे जगत्को मनवांछित फल दे सुखी किया. और गांव नगर आदि रहनेके स्थान बनाये. पृथुके पहेले गाम शहर वगैरः नहीं बसते थे. जो जहां चाहता था, वह वहीं रहता था. देखिये बेनका विध्वंस राजमदसे हुआ.

सहस्रार्जुन[1], इंद्र[2] और त्रिशंकु[3] येभी, राजके मदसे नाश हुए है कहो राजके मदने किसको कलंक नहीं लगाया है ? ॥ १ ॥ भरतने यह उपाय उचितही किया है; क्योंकि शत्रु और ऋणको जराभी बाकी नहीं रखना चाहिये ॥ २ ॥

एक कीन्ह नहिँ भरत भलाई ॥ निदरे राम जानि असहाई ॥ ३ ॥ ❋
समुझि परिहि सो आज बिशेखी ॥ समर सरोष रामरुख देखी ॥ ४ ॥ ❋

परंतु एक बात भरतने ठीक नहीं करी कि जो आपको असहाय जानकर, आपका अनादर किया ॥ ३ ॥ सो इसका फल रणके बीच रोषसहित मुख देखकर आज अच्छीतरह समझ जायगा ॥ ४ ॥

इतना कहत नीतिरस भूला ॥ रणरस बिटप पुलक जिमि फूला ॥ ५ ॥ ❋
प्रभुपद बन्दि शीश रज राखी ॥ बोले सत्य सहज बल भाखी ॥ ६ ॥ ❋

इतना कहतेही लक्ष्मण नीतिरसको भूल, पुलकित शरीर हुआ तब वो ऐसा दीखने लगा कि, मानों बीररसका वृक्षही फूला है ॥ ५ ॥ फिर प्रभुके चरणोंको वंदन कर, शिरपर चरणरज चढ़ाय अपने स्वाभाविक सत्य और बलको भाख कर, लक्ष्मणने कहा कि– ॥ ६ ॥

अनुचित नाथ न मानब मोरा ॥ भरत हमहिँ उपचार न थोरा ॥ ७ ॥ ❋
कहँ लगि सहिय रहिय मन मारे ॥ नाथ साथ धनु हाथ हमारे ॥ ८ ॥ ❋

---

१ सहस्रार्जुन हैहयवंशी क्षत्रिय कृतवीर्यका पुत्र था. इसको दत्तात्रेयजीकी कृपासे योगकी सिधियां और चक्रवर्ती राज मिला था. एक दिन सहस्रार्जुन मृगयाको वनमें गया. तहां बहुतसे पशुओंको मार दुपहरीके समय थककर पीछा लौटा. सो मुनि जमदग्निके आश्रममें चला आया. मुनिने राजाका शिष्टाचार कर भोजनको निमंत्रण किया. राजाने निमंत्रण स्वीकार किया तब मुनिने अपनी शबला गौको बुलाया, आज्ञा करी कि आज हमने राजाको नेवता है सो इसका अतिथिसत्कार करो. मुनिकी आज्ञा होतेही शवलाने एक पलभरमें भोजनकी सब तैयारी करदी. भातके पहाड लग गये. दूधदहीकी नदियां बहने लगीं. नाना प्रकारके व्यंजन और पक्वान्न तैयार हो गये. राजाने सेनाके साथ तृप्तिसे भोजन कर, लोभके मारे गौको लेना चाहा सो प्रथम तौ मुनिसे कहा कि, हम आपको कहो इतनी गायें घोड़े और हाथी देवें पर हमें यह गौ देदो. मुनिने राजाका कहना किसीतरह नहीं माना तब राजा गौको जबर्दस्ती ले चला. थोडी देरके बाद परशुरामजी आश्रममें आये. उन्होंने पितासे पूंछा कि, गौ कहा है? पिताने कहा कि-सहस्रार्जुन हमारे नाहीं २ करते बलात्कारसे लेगया. यह सुन परशुरामजीने सहस्रार्जुनको मार पृथ्वीको इक्कीसवार निक्षत्री करी और अंतमें यज्ञ कर, कश्यपजीको पृथ्वी दे आप समुद्रके बीच महेंद्रपर्वतपर जा विराजे. यह सहस्रार्जुन वो था कि जिसने रावणको पकड़ कैद कर दिया था. तिसकी राजके मदसे यह दशा हुई. २ इंद्रने राजमदसे गौतमकी स्त्री अहल्याके पास जाय कुकर्म किया सो यह कथा पहिले लिख आये हैं. ३ त्रिशंकुराजा इक्ष्वाकु वंशी था. इसको राजमदसे यह इच्छा हुई कि मैं सदेह स्वर्ग जाऊं. ऐसा विचार कर, गुरु वसिष्ठजीके पास आ, उससे अपना मनोरथ कहा. तब वसिष्ठजीने कहा कि यह वात असंभव है. तुम ऐसा विचार मत करो. राजाको गुरुके कहनेसे संतोष न हुआ सो वह गुरुजीके पुत्रोंके पास आया और बोला कि आपके पिताने तौ मुझे सदेह जानेकी नाहीं करी है सो यातौ आप मुझे कुछ साधन बताके सदेह स्वर्ग पहुंचाओ नहीं तौ मैं दूसरे गुरुकी शरण लेता हूं. राजाके वचन सुन गुरुपुत्रोंने कहा कि तू हमारे और पितामें बीच वैर डालना चाहता है सो जा तू, चांडाल होजा. गुरुपुत्रोंके शापसे उसकी वही दशा हुई. तब वो भटकता२ दक्षिण दिशामें विश्वामित्रके पास पहुंचा. और उनसे सब वृत्तान्त कह सुनाया. सो सुन विश्वामित्रजीने अपने शिष्योंको भेज सब ऋषियोंको बुलाया, यज्ञकी वेदी रची. जब यज्ञके भीतर कोई देवता न आया. तब अपने तपके प्रभावसे नये तारे और देवतानको रच, त्रिशंकूको अपने श्रुवेपर बिठाय, तपके प्रभावसे स्वर्गको भेज दिया. इंद्रने त्रिशंकूका चंडाल शरीर देख, स्वर्गमें रहनेके अयोग्य समझ, पीछा गिरादिया. तब विश्वामित्रजीने "ठहर ठहर" कहा जिससे वो वहीं अधबीच उलट शिर लटकता रह गया. यहभी प्रताप राजमदकाही है.

हे नाथ! मेरे कहनेको अयोग्य न मानियेगा. हे प्रभु! भरतने हमारे लिये कुछ थोड़ा उपाय नहीं किया है ॥ ७ ॥ सो अब कहांलों मनमारे सहते रहें ? हे नाथ! जब कि हमारे साथ हमारे हाथमें धनुष है तौ हम किसी कदर भरतका अपराध नहीं सह सकते ॥ ८ ॥

दोहा-क्षत्रि जाति रघुकुलजनम, रामअनुज जग जान ॥ ❋
लातहु मारे चढ़त शिर, नीच को धूरिसमान ॥ २२१ ॥ ❋

प्रथम तौ हम जातिके क्षत्रिय, दूसरा रघुकुलमें जन्म, तीसरा रामका छुटभाई कि, जिसे यह सारा संसार जानता है· सो मैं तो ऐसा अपराध नहीं सह सकता. हे प्रभु! देखिये, सबसे नीच और हलकी तौ धूलि है पर वोभी लात मारनेपर शिरपर चढ़ जाती है सो हम तौ बड़े कुलीन क्षत्रिय हैं. हमसे यह अपराध कैसे सहा जाय ? ॥ २२१ ॥

उठि कर जोरि रजायसु मांगा ॥ मनहुँ बीररस सोवत जागा ॥ १ ॥ ❋
बांधि जटा शिर कसि कटि भाथा ॥ साजि शरासन सायक हाथा ॥ २ ॥ ❋

फिर लक्ष्मणने उठ, हाथ जोड़, आज्ञा मांगी, उस समय ऐसा दीखने लगा कि, मानों बीर-रसही सोता हुआ जाग उठा है ॥ १ ॥ लक्ष्मणने शिरकी जटा बांध, कमरमें तरकस कस, धनुषकी पनच चढ़ाय, हाथमें बाण ले ॥ २ ॥

आजु राम सेवक यश लेऊँ ॥ भरतहिँ समर सिखावन देऊँ ॥ ३ ॥ ❋
राम निरादर कर फल पाई ॥ सोवहु समर सेज दोउ भाई ॥ ४ ॥ ❋

ये वचन कहे कि, मैं प्रभुकी सेवकाइका यश पाऊंगा और भरतको संग्रामके बीच पक्की शिक्षा देऊंगा ॥ ३ ॥ आज ये दोनों भाई प्रभुको अनादर करनेका फल पाय, रणखेतके बीच समर सेजमें सोवेंगे ॥ ४ ॥

आइ बना भल सकल समाजू ॥ प्रगट करौं रिस पाछिलि आजू ॥ ५ ॥ ❋
जिमि करि निकर दलै मृगराजू ॥ लेइ लपेटि लवा जिमि बाजू ॥ ६ ॥ ❋

आज सब संयोग बहुत अच्छे बने हैं, सो आज पिछली सारी रिस प्रगट करूंगा ॥ ५ ॥ जैसे सिंह हाथियोंके झुंडको छिन्न भिन्न कर देता है, और बाज पक्षी लवाको झपट लेता है ॥ ६ ॥

तैसहि भरतहिँ सेन समेता ॥ सानुज निदरि निपातौं खेता ॥ ७ ॥ ❋
जो सहाय कर शङ्कर आई ॥ तदपि हतौं रण राम दुहाई ॥ ८ ॥ ❋

ऐसेही आज मैं छुटभैया शत्रुघ्न और सेनाके साथ भरतको निदर कर खेतके बीच गिराऊँगा ॥ ७ ॥ जो महादेवभी इसकी मदद कर चढ़ि आवेंगे, तौभी मैं आज इसे रणमें मारडालूंगा, यह मैं प्रभुकी शपथ खाकर कहता हूं ॥ ८ ॥

दोहा-अति सरोष भाषे लषण, लखि सुनि शपथ प्रमाण ॥ ❋
समय बिलोकत लोकपति, चाहत भभरि भगान ॥ २२२ ॥ ❋

अतिशय क्रोधभरे लक्ष्मणके वचन सुन, लक्ष्मणको कुपित देख, प्रभुकी सत्य शपथको सुन, सब लोकपाल भयभीत लक्ष्मणकी ओर देखते रह गये और भभरि कर भागनेका विचार करने लगे ॥ २२२ ॥

जग भयमगन गगन भइ बानी ॥ लषणबाहुबल बिपुल बखानी ॥ १ ॥ ❀
तात प्रताप प्रभाव तुम्हारा ॥ को कहि सक को जाननिहारा ॥ २ ॥ ❀

सारा जगत् भयभीत हो गया तिसे देख, लक्ष्मणके विपुल भुजबलकी प्रशंसा करती हुई आकाशवाणी हुई कि—॥ १ ॥ हे तात! आपका तेज प्रताप ऐसाही है, आपके तेजप्रतापको कौन कह सक्ता है और जान सक्ता है? ॥ २ ॥

अनुचित उचित काज कछु होई ॥ समुझि करिय भल कह सब कोई ॥ ३ ॥
सहसा करि पाछे पछिताहीं ॥ कहहिँ बेद बुध ते बुध नाहीं ॥ ४ ॥ ❀

परंतु जो कुज अनुचित वा उचित काम करना वो समझ कर करना चाहिये; क्योंकि उसमें उसको सब कोई भला कहते है ॥ ३ ॥ और जो लोग विना विचारे हरएक काम यकायक कर डालते है और पीछे पछताते है, उनको वेद और विद्वान् कोईभी समझदार नहीं कहेगा ॥ ४ ॥

सुनि सुरबचन लषण सकुचाने ॥ राम सीय सादर सनमाने ॥ ५ ॥ ❀
कही तात तुम नीति सुहाई ॥ सबते कठिन राजमद भाई ॥ ६ ॥ ❀

देवतानके ऐसे वचन सुन, लक्ष्मण सकुचाया. तब सीतारामने लक्ष्मणका आदरके साथ सत्कार किया ॥ ५ ॥ प्रभुने कहा कि-हे तात! तुमने जो नीतिकी बात कही सो सब सत्य है. हे भाई! राजमद ऐसाही है. इससे बढ़कर कठिन और कुछ नहीं है ॥ ६ ॥

जो अँचवैं नृप माते तेई ॥ नाहिँ न साधुसभा जिन्ह सेई ॥ ७ ॥ ❀
सुनहु लषण भल भरत सरीखा ॥ बिधिप्रपंचमहँ सुना न दीखा ॥ ८ ॥ ❀

परंतु इस मदको पीकर कौन राजा मदमत्त होते है कि, जिन्होंने सत्पुरुषोंकी सभाकी सेवा नहीं करी है ॥ ७ ॥ हे लक्ष्मण! सुनो. हमने तौ ब्रह्माजीकी तमाम सृष्टिमेंभी भरतके जैसा भला आदमी न तौ सुना है और न देखा है ॥ ८ ॥

दोहा—भरतहिँ होइ न राजमद, बिधि हरि हर पद पाइ ॥ ❀
कबहुँ कि कांजी सीकरन्हि, क्षीर सिंधु बिनशाइ ॥ २२३ ॥ ❀

हे भाई! अयोध्याका राज तौ कितना है? जो ब्रह्मा, विष्णु, महेश इन तीनों देवतानके पद मिलजांय तौभी भरतको राजमद नहीं हो सकता. क्या कभी खटाईकी बूंदसे क्षीरसमुद्र फट सकता है? कदापि नहीं ॥ २२३ ॥

तिमिरतरुण तरणिहि सक गिलई ॥ गगनमगन मगु मेघहिँ मिलई ॥ १ ॥
गोपदजल बूड़हिँ घटयोनी ॥ सहज क्षमा बरु छाँड़हिँ क्षोनी ॥ २ ॥ ❀

चाहे अंधकार मध्यान्हके सूर्यको ग्रस जाय, चाहे मेघ आकाशमें मग्न होकर सटजांय ॥ १ ॥ चाहे गौके खुर जितने जलमें अगस्त्यजी बूड़ जांय, चाहे पृथ्वी अपनी स्वाभाविक क्षमाको त्याग दे ॥ २ ॥

मशकफूंक बरु मेरु उड़ाई ॥ होइ न नृपमद भरतहिँ भाई ॥ ३ ॥ ❀
लषण तुम्हार शपथ पितु आना ॥ शुचि सुबंधु नहिँ भरतसमाना ॥ ४ ॥

चाहे मच्छड़की फूंकसे मेरु पर्वत उड़जाय जो बिलकुल असंभव है. परंतु हे भाई ! भरतको राजमद किसी प्रकारसे नहीं हो सकता ॥ ३ ॥ हे लक्ष्मण ! मुझे तुम्हारी शपथ है और पिताकी आन है. सुनो, भाई भरतके जैसा साफ और सुन्दर भाई संसारमें नहीं है ॥ ४ ॥

सगुण क्षीर अवगुण जल ताता ॥ मिले रचे परपंच बिधाता ॥ ५ ॥ ❋
भरत हंस रबिबंश तड़ागा ॥ जनमि कीन्ह गुण दोष बिभागा ॥ ६ ॥ ❋

जैसे हंस दूध और पानीको अलग २ कर देता है, ऐसे भरत गुण अवगुणका विभाग करने वाला है, सो कहते है. जो श्रेष्ठ गुण हैं सोही दूध है और जो अवगुण है, सोही जल है. विधाताने सर्व प्रपंच गुण अवगुणसे मिला हुआ रचा है ॥ ५ ॥ जैसे दूध और पानी. जगत्में दूध और पानीका विभाग हंस करता है. ऐसे सूर्यवंशरूप तालावमें जन्म लेकर भरतने गुण दोषका विभाग किया है ॥ ६ ॥

गहि गुण पय तजि अवगुण बारी ॥ निजयश जगत कीन्ह उजियारी ॥ ७ ॥
कहत भरत गुण शील सुभाऊ ॥ प्रेमपयोधि मगन रघुराऊ ॥ ८ ॥ ❋

जैसे हंस दूध दूध ले लेताहै, पानीको तज देता है, ऐसे भरतने अवगुणोंको तज गुण ग्रहण कर अपने उज्वल यशसे सारे संसारको प्रकाशमान किया है ॥ ७ ॥ भरतके गुण, शील और स्वभावको कहते २ प्रभु प्रेमरूप समुद्रमें मगन होगये ॥ ८ ॥

दोहा—सुनि रघुबरबाणी बिबुध, देखि भरतपर हेतु ॥ ❋
लगे सराहन सहसमुख, प्रभु को कृपानिकेतु ॥ २२४ ॥ ❋

देवता लोग प्रभुकी वाणी सुन, भरतपर प्रेम देख, हजारों मुखोंसे बारंवार प्रभुको सराहने लगे कि, प्रभुके जैसा दूसरा कृपानिधि कौन है ? ॥ २२४ ॥

जो न होत जग जन्म भरतको ॥ सकल धरमधुर धरणि धरत को ॥ १ ॥ ❋
कबिकुल अगम भरतगुणगाथा ॥ को जानै तुमबिन रघुनाथा ॥ २ ॥ ❋

जो जगत्में भरतका जन्म न होता तौ सर्व धर्मकी धुरको और पृथ्वीको धारण कौन करता ? ॥ १ ॥ भरतके गुणोंकी गाथा कविकुलके अगोचर है. सो हे प्रभु ! आप बिना दूसरा कौन जाने ? ॥ २ ॥

लषण राम सिय सुनि सुरबानी ॥ अतिसुख लहेउ न जाइ बखानी ॥ ३ ॥ ❋
इहाँ भरत सब सहित सुहाये ॥ मंदाकिनी पुनीत अन्हाये ॥ ४ ॥ ❋

देवतानकी ऐसी सुप्रिय वाणी सुन, राम लक्ष्मण और सीता ऐसे अतिशय सुख पाते हैं कि, कुछ कहा नहीं जाता ॥ ३ ॥ यहां भरतजी सब लोगोंके साथ मंदाकिनी नदीके पवित्र और निर्मल जलमें नहाये ॥ ४ ॥

सरितसमीप राखि सब लोगा ॥ मांगि मातु गुरु सचिव नियोगा ॥ ५ ॥ ❋
चले भरत जहँ सिय रघुराई ॥ साथ निषादनाथ लघु भाई ॥ ६ ॥ ❋

फिर नदीके तटपर सब लोगोंको रख, माता, गुरु और मंत्रियोंसे आज्ञा मांग ॥ ५ ॥ भरतजी भाई और गुहको साथ ले वहां चले कि, जहां सीता राम विराजते थे ॥ ६ ॥

समुझि मातुकरतब सकुचाहीं ॥ करत कुतर्क कोटि मनमहीं ॥ ७ ॥ ❀
राम लषण सिय सुनि मम नाऊँ ॥ उठि जनि अनत जाहिँ तजि ठाऊँ॥८॥

भरतजी माताका कर्तव्य समझ,सकुचाते हैं और मनमें करोडों प्रकारकी कुतर्कना करते है ॥ ७ ॥ भरतजी मनमें शोच करते है कि, ऐसा न होवे कि, राम लक्ष्मण और सीता मेरा नाम सुनकर उठकर, अपने स्थानको तजकर दूसरी ठौर न चले जावें ॥ ८ ॥

दोहा–मातुमतेमहँ जानि मोहिँ, जो कछु करहिँ सो थोर ॥ ❀
अघ अवगुण तजि आदरहिँ, समुझि आपनी ओर ॥ २२५ ॥ ❀

मुझको माताकी राहमे जानकर, प्रभु जो कुछ करेंगे सो थोड़ा है. मैं भरोसा रखता हूं कि, प्रभु मेरे अपराध और अवगुणको तज अपनी ओर निहारकर, मेरा आदर करेंगे ॥ २२५ ॥

जो परिहरहिँ मलिन मन जानी ॥ जो सनमानहिँ सेवक मानी ॥ १ ॥❀
मोरे शरण रामकी पनहीं ॥ राम सुस्वामि दोष सब जनहीं ॥ २ ॥ ❀

यदि मुझे मलिनमन जानकर तज देगें अथवा अपना सेवक मानकर सन्मान करेंगे, तौ ॥ १ ॥ मेरे तौ सब प्रकारसे रामकी पनहीं (जूता) काही शरण है. प्रभु सर्वोत्तम स्वामी है. जो कुछ दोष है सो तौ दासकाही है ॥ २ ॥

जग यशभाजन चातक मीना ॥ नेम प्रेम निज निपुण नबीना ॥ ३ ॥ ❀
अस मन गुणत चले मग जाता ॥ सकुचि सनेहशिथिल सब गाता ॥४॥❀

देखिये,चातक और मीन अपने प्रेमके नेममें प्रवीण रहनेसे जगतमें कैसे जसके पात्र हुए हैं.चातकका यह नियम है कि, मेघकी बुंद बिन जल नहीं पीता. और मछलीका नियम है कि है जल विना नहीं जीती. सो प्रभु निबाहतेही हैं ॥ ३ ॥ मार्गमें ऐसे मनमें विचार करताहुआ भरत चला जाता है.संको-च और स्नेहके कारण उसके सब अंग शिथिल हो रहे हैं ॥ ४ ॥

फेरति मनहुँ मातुकृत खोरी ॥ चलत भक्तिबल धीरज धोरी ॥ ५ ॥ ❀
जब समुझाहिँ रघुनाथसुभाऊ ॥ तब पथ परत उतावल पाऊ ॥ ६ ॥ ❀

मानों माता कैकेयीकी खोर तौ भरतको पीछा फेरती है; परंतु धीरपुरुषोंमे अग्रणी भक्तिके बल आगे बढ़ते चले जाते हैं ॥ ५ ॥ जब वो प्रभुकी प्रकृतिको समझते हैं, तब उनके पांव मार्गमें जल्दीजल्दी पड़ते हैं ॥६॥

भरतदशा तेहि अवसर कैसी ॥ जल प्रबाह जल अलिगण जैसी ॥ ७ ॥ ❀
देखि भरतकर शोच सनेहू ॥ भा निषाद तेहि समय बिदेहू ॥ ८ ॥ ❀

उस समय भरतकी दशा पीछे हटने और आगे बढ़नेसे कैसी होगयी है कि, जैसी जलके प्रवाहके बीच जलके भ्रमरकी होती ॥ ७॥ उसकाल भरतका शोच और स्नेह देखकर,निषादराज गुह शरी-रकी सुध भूल गया है ॥ ८ ॥

दोहा–लगे होन मंगल शकुन, सुनि गुणि कहत निषाद ॥ ❀
मिटिहि शोच होइहि हरष, पुनि परिणाम बिषाद ॥ २२६॥ ❀

---

१ पैरकुवा.

जब मंगलकारी शुभ शकुन होने लगे तब भरतके गुण सुन, गुहने कहा कि–हे भरत! सुनो. आपका शोच मिट जायगा. आनंद होगा. पर परिणाममें विषाद (रंज) होगा ॥ २२६ ॥

सेवकबचन सत्य सब जाने ॥ आश्रमनिकट जाय नियराने ॥ १ ॥ ❋
भरत दीख बन शैल समाजू ॥ मुदित क्षुधित जनु पाइ सुराजू ॥ २ ॥ ❋

भरतने गुहके बचन सब सत्य जाने. बातें करतेर भरतजी आश्रमके निकट पहुंचे ॥१॥ और वन व पर्वतका समाज देखा, तौ उनको ऐसा आनंद हुआ कि, मानों भूखे आदमीने राज पालिया है ॥ २ ॥

ईति भीति जनु प्रजा दुखारी ॥ त्रिबिध तापपीड़ित ग्रह भारी ॥ ३ ॥ ❋
पाइ सुराज सुदेश सुखारी ॥ भई भरत गति तेहि अनुहारी ॥ ४ ॥ ❋

छःप्रकारकी ईतियों [अतिवृष्टि १ अनावृष्टि २ चूहा ३ टीड़ी ४ शुक ५ समीपवर्ती राजा ६] से दुःखी, तीन प्रकारके तापोंसे तपीहुई, और दुष्ट ग्रहोंसे पीड़ित प्रजा, ॥ ३ ॥ सुखकारी सुराज और सुन्दर देशको पाकर, जैसे सुखी होजाती है, ऐसे भरतजी अत्यंत सुखी हो गये. उनकी दशा सुखी प्रजाकीसी होगई ॥ ४ ॥

राम बास बन सम्पति भ्राजा ॥ सुखी प्रजा जनु पाइ सुराजा ॥ ५ ॥ ❋
सचिव बिराग बिबेक नरेशू ॥ बिपिन सुहावन पावन देशू ॥ ६ ॥ ❋

रामचन्द्रजीके रहनेसे बन, सुख और संपदासे कैसा शोभायमान हो रहा है कि मानों सुराजाको पाकर प्रजा सुखी है ॥ ५ ॥ जहां विवेक तो राजा है. वैराग्य मंत्री है. बनही सुहावना पवित्र देश है ॥ ६ ॥

भट यम नेम शैल रजधानी ॥ शांति सुमति शुचि सुन्दर रानी ॥ ७ ॥ ❋
सकल अंग संपन्न सुराऊ ॥ रामचरण आश्रित चित चाऊ ॥ ८ ॥ ❋

यम नियमरूप सुभट है. शांति, सुमति और पवित्रता सुन्दर रानियां है ॥ ७ ॥ सब यानी सातों अंगोंसे वो राज सब भांति सम्पन्न है और प्रभुके चरणोंके आश्रित रहनेसे चित्तमें सदा चाउ लगा है ॥ ८ ॥

दोहा–जीति मोहमहिपालदल, सहितबिबेक भुआल ॥ ❋
करत अकण्टक राजपुर, सुख सम्पदा सुकाल ॥ २२७ ॥ ❋

विवेकरूप राजा काम क्रोध आदि कटकसहित मोहरूप राजाको जीतकर, नगरके भीतर निष्कंटक राज करता है, तिससे सर्वत्र सुख संपदा छारही है. तथा सुकाल बर्तताहै ॥ २२७ ॥

बन प्रदेश मुनिबास घनेरे ॥ जनु पुर नगर गाँव गण खेरे ॥ १ ॥ ❋
बिपुल बिचित्र बिहँग मृग नाना ॥ प्रजासमाज न जाइ बखाना ॥ २ ॥ ❋

वनके भीतर जो मुनि लोगोंके बहुतसे आश्रम हैं, सोही मानों नानाप्रकारके नगर, शहर, गांव और खेड़े बशते हैं ॥ १ ॥ और नानाप्रकारके जो बहुतसे पक्षी और पशु हैं सोही सुखी प्रजाकी समाज है. जिसके विषयमें हम कुछ कह नहीं सकते ॥ २ ॥

खरहा करि हरिबाघ बराहा ॥ देखि महिष वृक साज सराहा ॥ ३ ॥ ❋
बैर बिहाइ चरहिँ यक संगा ॥ जहँ तहँ मनहुँ सेन चतुरंगा ॥ ४ ॥ ❋

हाथी, खरहा, सिंह, बाघ, शूकर, आरने, भैंसे और भेडिया इनकी सजावट बड़ी सराहनेके योग्य दीख पड़ती है ॥ ३ ॥ ये सब बैर छांड़िके जो एकसाथ चरते है, सोही मानों चतुरंगिनी सेना सजी हुई है ॥ ४ ॥

झरना झरहिँ मत्त गज गाजहिँ ॥ मनहुँ निशान बिबिधबिधि बाजहिँ ॥ ५ ॥
चक चकोर चातक शुक पिक गन ॥ कूजत मंजु मराल मुदित मन ॥ ६ ॥

जो झरने झरते है और मस्त हाथी गरजते है सोही मानों नानाप्रकारके बाजे बाज रहे है ॥ ५ ॥ चक्रवाक, चकोर, चातक (पपीहा), राजहंस, शुक और कोकिलका गण, जो वनके भीतर प्रसन्न चित्त हो मधुरस्वरसे कूजते हैं ॥ ६ ॥

अलिगण गावत नाचत मोरा ॥ जनु सुराज मंगल चहुँ ओरा ॥ ७ ॥ ❋
बेलि बिपट तृण सफल सफूला ॥ सब समाज मुदमंगलमूला ॥ ८ ॥ ❋

भौंरे गुंजते है. मयूर नृत्य करते है सो ऐसा दीख पड़ता है कि, मानों सुराजके प्रभावसे चारों ओर मंगल छा रहा है ॥ ७ ॥ बेल, वृक्ष, घास ये सब फूले फले सोहते है. सब समाज, आनंद और मंगलका मूल बन रहा है ॥ ८ ॥

दोहा–रामशैलशोभा निरखि, भरतहृदय अतिप्रेम ॥ ❋
तापस तपफल पाइ जिमि, सुखी सिराने नेम ॥ २२८ ॥ ❋

प्रभुके बिराजनेके पर्वतकी शोभाको देखकर, भरतके हृदयमें कैसी अतिशय प्रीति बढ़ रही है कि, मानों नेम समाप्त होनेपर तपस्वी तपस्याका फल पाकर सुखी हुआ है ॥ २२८ ॥

तब केवट ऊँचे चढ़िजाई ॥ कहा भरतसन भुजा उठाई ॥ १ ॥ ❋
नाथ देख यह बिटप बिशाला ॥ पाकर जम्बु रसाल तमाला ॥ २ ॥ ❋

तब केवटने ऊंचे चढ़, कुछ दूर जाय, भुजा उठायके भरतसे कहा कि– ॥ १ ॥ हे नाथ ! देखिये. जो ये बड़े बड़े पाकर, जामन, आम और तमालके पेड़ दीख पड़ते है ॥ २ ॥

तिन तरुवरन्हमध्य बट सोहा ॥ मंजु बिशाल देखि मन मोहा ॥ ३ ॥ ❋
नील सघन पल्लव फल लाला ॥ अविचल छाँह सुखद सब काला ॥ ४ ॥ ❋

इनके बीचमें जो एक बहुत सुन्दर बड़ा भारी बटका वृक्ष है कि, जिसे देखकर मन मोहित होता है ॥ ३ ॥ जिसके सघन श्याम पत्ते हैं. लाल लाल फल है और सबकालमें सुख देनेवाली अखंड छाया है ॥ ४ ॥

मानहुँ तिमिर अरुणमय राशी ॥ बिरची बिधि सकेलि सुषमाशी ॥ ५ ॥ ❋
तेहि तरु सरितसमीप गुसाँई ॥ रघुबरपर्णकुटी जहँ छाई ॥ ६ ॥ ❋

यह पेड़ क्या है ? मानों विधाताने अंधकार और लालीकी शोभाको इकट्ठी करके एक ढेर लगा दिया है ॥ ५ ॥ हे स्वामी ! उस पेड़के समीप एक बहुत सुन्दर नदी है. जिसके तटपर प्रभुकी पर्णकुटी छाई हुई है ॥ ६ ॥

तुलसी तरुबर बिबिध सुहाये ॥ कहुँ सियपिय कहुँ लषण लगाये ॥ ७ ॥ ❋
बटछाया बेदिका बनाई ॥ सिय निजपाणिसरोज सुहाई ॥ ८ ॥ ❋

तुलसीदासजी कहते हैं कि–वहां अनेक प्रकारके सुन्दर वृक्ष हैं, जिनमें कितने एक तौ प्रभुके हाथके लगाये हुए है और कितनेएक लक्ष्मणके लगाये हुए है ॥ ७ ॥ और बटके वृक्षकी छायामें जो सुन्दर वेदी (चबूतरी) बन रही है सो सीताजीने अपने करकमलसे बनाई है ॥ ८ ॥

दोहा–जहँ बैठे मुनिगणसहित , नित सिय राम सुजान ॥ ❋
सुनहिँ कथा इतिहास सब, आगम निगम पुरान ॥ २२९ ॥ ❋

जिसपर बैठकर, सुजान राम और सीता मुनीश्वरोंके साथ नानाप्रकारके इतिहास, वेद, शास्त्र और पुराणोंकी कथा सुनते है और धर्मचर्चा करते है ॥ २२९ ॥

सखाबचन सुनि बिटप निहारी ॥ उमँगेउ भरत बिलोचन बारी ॥ १ ॥ ❋
करत प्रणाम चले दोउ भाई ॥ कहत प्रीति शारद सकुचाई ॥ २ ॥ ❋

गुहके बचन सुन, बटका वृक्ष देख, भरतके नेत्रोंमें जल भर आया ॥ १ ॥ उसकाल भरत और शत्रुघ्न दोनों भाई प्रणाम करते चले. तिनकी प्रीतिकी रीतिको कहती शारदाभी सकुचाती है ॥२॥

हर्षहिँ निरखि रामपद अंका ॥ मानहुँ पारस पायहु रंका ॥ ३ ॥ ❋
रज शिर धरि हिय नयन लगावहिँ ॥ रघुबरमिलन सरिस सुख पावहिँ ॥४॥

प्रभुके चरणचिन्होंको देखकर, वे ऐसे प्रसन्न होते है कि मानों दरिद्री आदमी पारस पा गया है ॥ ३ ॥ प्रभुकी चरणरजको शिरपर चढ़ाय नेत्रोंमें लगाते है और प्रभुसे मिलनेके समान सुख पाते है ॥ ४ ॥

देखि भरतगति अकथ अतीवा ॥ प्रेममगन मृग खग जड़ जीवा ॥ ५ ॥ ❋
सखहिँ सनेहबिबश मग भूला ॥ कहि सुपंथ सुर बर्षहिँ फूला ॥ ६ ॥ ❋

भरतकी अलौकिक और अकथनीय दशा देखकर, मनुष्य तौ क्या ? पशु, पक्षी और जड़ जीवभी प्रेममगन होगये हैं ॥ ५ ॥ सखा गुहभी स्नेहके वश हो मार्ग भूल गया, तब देवता फूल बरसाय बरसाय मार्ग दिखाने लगे ॥ ६ ॥

निरखि सिद्ध साधक अनुरागे ॥ सहजसनेह सराहन लागे ॥ ७ ॥ ❋
होत न भूतलभाव भरतको ॥ अचर सचर चर अचर करत को ॥ ८ ॥ ❋

भरतकी दशा देख, सिद्ध और साधक प्रेममगन हो भरतके स्वाभाविक स्नेहकी श्लाघा करने लगे ॥ ७ ॥ और बोले कि–जो पृथ्वीके विषे भरतका भाव न होता तौ जड़को चेतन और चेतनको जड़ कौन करता ? भरतके प्रेमको देख जड़ जो पर्वत आदि हैं तिनमें जो जल प्रगट हुआ सोही मानों आंसू प्रगट हुए हैं, और आंसू चेतन बिना आवें नहीं तासों जड़को चेतन कहा. और चेतन जो पशु पक्षी आदि हैं, वे शरीरकी सुध भूल कर चित्रकेसे कढ़े खड़े रह गये. तासों चेतनको जड़ कहा ॥ ८ ॥

दोहा-प्रेम अमिय मंदर बिरह, भरत पयोधि गँभीर ॥ ❋
मथि प्रगटे सुर साधु हित, कृपासिंधु रघुबीर ॥ २३० ॥ ❋

भरतका जो प्रेम है सो अमृतरूप है, तहां भरत है सोही क्षीरसमुद्र है, प्रभुका विरह है सोही मंदराचल पर्वत है, और कृपासिंधु प्रभु मथनेवाले है. देवता और साधु पुरुषोंके लिये मथकर प्रगट किया है ॥ २३० ॥

सखासमेत मनोहर जोटा ॥ लखेउ न लषण सघन बन ओटा ॥ १ ॥ ❋
भरत दीख प्रभुआश्रम पावन ॥ सकल सुमंगल सदनसुहावन ॥ २ ॥ ❋

यद्यपि भरत आश्रमके निकट पहुंच गया है, तौभी सघन बनकी ओट आ जानेसे लक्ष्मणने सखाके साथ आतेहुए सुन्दर जोटेको नहीं देखा ॥ १ ॥ भरतने प्रभुका परम पवित्र आश्रम देखा कि, जो मंगलका धाम और अति सुहावना है ॥ २ ॥

करत प्रवेश मिटा दुख दावा ॥ जनु योगी परमारथ पावा ॥ ३ ॥ ❋
देखे लषण भरत प्रभु आगे ॥ पूंछत बचन कहत अनुरागे ॥ ४ ॥ ❋

आश्रममें जातेही भरतका सब दुःख द्वंद्व कट गया. ताप शांत हो गया. मानो योगीश्वरने परमार्थ यानी मोक्षपद पालिया है ॥ ३ ॥ भरत देखता है कि लक्ष्मणजी प्रभुके आगे बैठे हैं. प्रभु पूंछते है और लक्ष्मण प्रीतिके साथ पीछा उत्तर देता है ॥ ४ ॥

शीश जटा कटि मुनिपट बाँधे ॥ तूण कसे कर शर धनु काँधे ॥ ५ ॥ ❋
बेदीपर मुनिसाधुसमाजू ॥ सीयसहित राजत रघुराजू ॥ ६ ॥ ❋

शिरपर जटा शोभायमान है. बलकल पहिरे है. कमरमें तरकस कसे है. हाथमें तीर है. धनुष कंधेपर पड़ा है ॥ ५ ॥ वेदीके ऊपर साधु और मुनिलोगोंकी समाजके साथ सीताराम विराज रहे हैं ॥ ६ ॥

बलकलबसन जटिल तनु श्यामा ॥ जनु मुनिवेष कीन्ह रतिकामा ॥ ७ ॥
करकमल धनु सायक फेरत ॥ जीकी जरनि हरत हँसि हेरत ॥ ८ ॥ ❋

जिनके बलकलके वस्त्र है. शिरपर जटा है. श्याम शरीर है. मानों रति और कामदेवही मुनिका वेष बनाये बैठे है ॥ ७ ॥ अपने हस्तकमलसे धनुष और बाणको फेरते हैं और अपने हँसनेके साथ भक्तजनोंके मनके संतापको दूर कर रहे है ॥ ८ ॥

दोहा-लसत मंजु मुनि मण्डली, मध्य सीय रघुचंद ॥ ❋
ज्ञानसभा जनु तनु धरे, भक्ति सच्चिदानंद ॥ २३१ ॥ ❋

मुनीश्वरोंकी मनोहर मंडलीके बीच सीताराम कैसे शोभायमान लगते हैं? कि मानों ज्ञानकी सभाके बीच भक्ति और सच्चिदानन्द स्वरूप श्रीपरब्रह्मही स्वरूप धर विराज रहे हैं ॥ २३१ ॥

सानुज सखासमेत मगन मन ॥ बिसरे हर्ष शोक सुख दुख गन ॥ १ ॥ ❋
पाहि नाथ कहि पाहि गुसाईं ॥ भूतल परे लकुटकी नाईं ॥ २ ॥ ❋

प्रभुके दर्शन कर, भरत शत्रुघ्न और गुहके साथ मगन मन हो, हर्ष, शोक, सुख, दुःख, सब

भूल गया है ॥ १ ॥ हे नाथ ! हे स्वामी ! " पाहि पाहि " ऐसे कहकर भरत लकुट यानी दंडकी नांई भूमिपर गिरगया है ॥ २ ॥

बचन सप्रेम लषण पहिँचाने ॥ करत प्रणाम भरत जिय जाने ॥ ३ ॥ ❋
बंधु सनेह सरस यहि ओरा ॥ उत साहेब सेवा बरजोरा ॥ ४ ॥ ❋

तब प्रेमसहित वचन सुन, लक्ष्मणने भरतको पहिंचान लिया और मनमें जाना कि–भरतजी प्रणाम करते है ॥ ३ ॥ उसकाल इधर तौ अति उत्कट भाईका प्रेम, और उधर अति प्रबल स्वामीकी सेवा ॥ ४ ॥

मिलि न जाइ नहिँ गुदरत बनई ॥ सुकवि लषण मनकी गति भनई ॥५॥ ❋
रहे राखि सेवापर भारू ॥ चढ़ी चंग जनु खैंच खिलारू ॥ ६ ॥ ❋

तिससे न तौ मिलते बनता है और न छोड़ते. तहां सुकविलोग लक्ष्मणके मनकी गतिके विषयमें ऐसे वर्णन करते है ॥ ५ ॥ कि–लक्ष्मण मिलनेका भार सेवा पर रख कर, कैसे रह गया कि, जैसे खिलारी चढ़ी हुई चंग (पतंग) को खैंचकर रह जाता है ॥ ६ ॥

कहत सप्रेम नाइ महि माथा ॥ भरत प्रणाम करत रघुनाथा ॥ ७ ॥ ❋
उठे राम सुनि प्रेम अधीरा ॥ कहुँ पट कहुँ निषंग धनु तीरा ॥ ८ ॥ ❋

महादेवजी कहते है कि–हे भवानी ! लक्ष्मणने प्रेमसहित प्रभुसे निवेदन किया कि–महाराज ! भाई भरत पृथ्वीपर शिर नवाकर प्रणाम करता है ॥७॥ लक्ष्मणके वचन सुन,प्रेमसे धीरजको तज, प्रभु उठे, सो कहीं तौ वस्त्र रह गया है और कहीं भाथे रह गये है और कहीं धनुष बाण रह गये है ॥ ८ ॥

दोहा–बरबस लिये उठाय उर, लाये कृपानिधान ॥ ❋
भरतरामकी मिलन लखि, बिसरे सबहिँ अपान ॥ २३२ ॥ ❋

कृपासिंधु प्रभुने बलात्कारसे भरतको उठाय छातीसे लगाया, तब भरत और रामका मिलाप देख, सब लोग अपनपौ भूल गये ॥ २३२ ॥

मिलन प्रीति किमि जाहि बखानी ॥ कबिकुल अगम कर्म मन बानी ॥१॥ ❋
परम प्रेम पूरण दोउ भाई ॥ मन बुधि चित अहमिति बिसराई ॥ २ ॥ ❋

हे पार्वती ! मिलनेकी प्रीति कैसे कही जाय ? क्योंकि वो कविलोगोंके मन, बचन, कर्मके अगोचर और अगम्य है ॥ १ ॥ दोनों भाई परमानन्दमगन हो प्रेमपूरण हो रहे हैं. मन, बुद्धि, चित्त और अहंकारकी सुध भूल गये है ॥ २ ॥

कहहु सुप्रेम प्रकट को करई ॥ केहि छाया कबि मति अनुसरई ॥ ३ ॥ ❋
कबिहिँ अर्थ अखरबल साँचा ॥ अनुहर तालगतिहिँ नट नाँचा ॥ ४ ॥ ❋

हे पार्वती ! कहो. उस अतिउत्कट प्रेमको कौन प्रगट कर सकता है ? कवि उस प्रेमको वर्णन करने बैठे तो अपनी बुद्धिमें किसकी छायाका अनुसरण करे ? अर्थात् किसकी छाया लेकर उसका वर्णन करे?॥३॥ कविको तौ केवल अर्थ और शब्दका बल है. सो वह तौ जैसे नट तालकी गतिको अनुसरकर नाचता है ऐसे शब्द और अर्थके अनुसार वर्णन करता है ॥ ४ ॥

अगम सनेह भरत रघुबरको ॥ जहँ न जाइ मन बिधि हरि हरको ॥ ५ ॥
सो मैं बरणि कहौं केहि भांती ॥ बाजु सुराग कि गाँड़रि ताँती ॥ ६ ॥ ❋

भरत और रामचन्द्रजीका स्नेह अथाह है, जहां ब्रह्मा, विष्णु, महेशका मनभी पहुंच नहीं सकता ॥ ५ ॥ तुलसीदासजी कहते है कि–उसे मैं कैसे वर्णन करूं ? क्या गाँड़र (एक जातिके तृणका मूल) की तांतिसे अच्छा राग बज सकती है ? कदापि नहीं ॥ ६ ॥

मिलनि बिलोकि भरत रघुबरकी ॥ सुरगण सभय धुकधुकी धरकी ॥ ७ ॥
समुझाये सुरगुरु जड़ जागे ॥ बरषि प्रसून प्रशंसन लागे ॥ ८ ॥ ❋

भरत और रामचन्द्रजीका मिलाप देख, देवता डर गये और उनकी धुकधुकी धरकने लगी कि–रामचन्द्रजी पीछे लौट चुके इसमें शक नहीं ॥ ७ ॥ तब अज्ञानी देवतानको बृहस्पतिने समझाया, तब सचेत हो फूल बरसाय प्रभुकी प्रशंसा करी ॥ ८ ॥

दोहा–मिलि सप्रेम रिपुसूदनहिँ, केवट भेंटेउ राम ॥ ❋
भूरि भाग्य भेंटे भरत, लक्ष्मण करत प्रणाम ॥ २३३ ॥ ❋

प्रभु भरतसे मिल फिर प्रीतिके साथ शत्रुघ्नसे मिले. तदनन्तर गुह निषादसे मिले. फिर भाग्यशाली भरत लक्ष्मणसे मिला, तब लक्ष्मणने भरतको प्रणाम किया ॥ २३३ ॥

भेंटेउ लषण ललकि लघु भाई ॥ बहुरि निषाद लीन्ह उर लाई ॥ १ ॥ ❋
पुनि मुनिगण दोउ भाइन बन्दे ॥ अभिमत आशिष पाइ अनन्दे ॥ २ ॥

फिर लक्ष्मण ललक कर छुट भाई शत्रुघ्नसे मिल गुहको छातीसे लगाया ॥ १ ॥ फिर भरत और शत्रुघ्न दोनों भाई मुनीश्वरोंको नमस्कार कर मनवांछित आशीर्वाद पाय आनन्दित हुए ॥ २ ॥

सानुज भरत उमँगि अनुरागा ॥ धरि शिर सियपदपद्मपरागा ॥ ३ ॥ ❋
पुनि पुनि करत प्रणाम उठाये ॥ सिय करकमल परसि बैठाये ॥ ४ ॥ ❋

फिर प्रेममगन हो, भरत और शत्रुघ्नने सीताके चरणकमलोंकी रज शिरपर धारण करी ॥ ३ ॥ सीताजीने बारंबार प्रणाम करतेहुए दोनों भाइयोंको उठाया और अपने करकमलसे परसकर, अपने निकट बैठाया ॥ ४ ॥

सीय अशीस दीन्ह मनमाहीं ॥ मगन सनेह देहसुधि नाहीं ॥ ५ ॥ ❋
सब बिधि सानुकूल लखि सीता ॥ भे अशोच उर अपडर बीता ॥ ६ ॥ ❋

सीताजी आशीर्वाद दे, मनमें मगन हुई और स्नेहसे देहकी सुध बिसर गई ॥ ५ ॥ सीताको सब प्रकारसे सानुकूल देखकर, भरतके अंतःकरणका डर मिटा और मिथ्या कलंककी खुटक मिटगई ॥ ६ ॥

कोउ कछु कहै न कोउ कछु पूँछा ॥ प्रेमभरा मन निजगति छूंछा ॥ ७ ॥ ❋
तेहि अँवसर केवट धीरज धरि ॥ जोरि पाणि बिनवत प्रणाम करि ॥ ८ ॥ ❋

उसकाल सबके सब प्रेममगन हो, अपनी २ सुध भूल गये हैं. न तो कोई किसीको पूंछता है और न कोई किसीको कहता है ॥ ७ ॥ उससमय गुह निषादने धीरज धर, हाथ जोड़, दंडवत् कर, बिनती करी ॥ ८ ॥

दोहा–नाथ साथ मुनिनाथके, मातु सकल पुरलोग ॥ ❋
सेवक सेनप सचिव सब, आये बिकल बियोग ॥ २३४ ॥ ❋

कि–हे नाथ ! भरत तो यहां आगये हैं. और पाछे गुरु वसिष्ठजीके साथ माता और सारे नगरके लोग, तथा नौकर, सेनापति और मंत्री आदि सब आपके विरहसे विह्वल होकर आये है सो मंदाकिनीके तटपर खड़े है ॥ २३४ ॥

शीलसिन्धु सुनि गुरु आगमनू ॥ सीयसमीप राखि रिपुदमनू ॥ १ ॥ ❋
चले सबेग राम तेहिँ काला ॥ धीर धर्मधुर दीन दयाला ॥ २ ॥ ❋

शीलके सागर श्रीरामचन्द्र गुरु वसिष्ठजूका आगमन सुन, सीताके पास शत्रुघ्नको रख, ॥ १ ॥ बड़ी त्वरासे चले, सो उसीक्षण गुरुके पास आये. धर्मकी धुर धारण करनहारे, धीरजके भंडार, दीनदयाल ॥ २ ॥

गुरुहिँ देखि सानुज अनुरागे ॥ दण्डप्रणाम करन प्रभु लागे ॥ ३ ॥ ❋
मुनिबर धाइ लिये उर लाई ॥ प्रेम उमँगि भेंटे दोउ भाई ॥ ४ ॥ ❋

प्रभु लक्ष्मणके साथ गुरुचरणोंके दर्शन कर अति प्रसन्न हो, दंडवत् प्रणाम करने लगे ॥ ३ ॥ तब मुनीश्वर श्रीवसिष्ठजीने दौड़कर, उनको छातीसे लगा लिया. ये दोनों भाई प्रेम-मगन हो गुरुसे मिले ॥ ४ ॥

प्रेम पुलकि केवट कहि नामू ॥ कीन्ह दूरिते दण्डप्रणामू ॥ ५ ॥ ❋
रामसखा ऋषि बरबस भेंटे ॥ जनु महि लुटत सनेह समेटे ॥ ६ ॥ ❋

इस बीच गुहने प्रेमसे पुलकित शरीर हो, अपना नाम कहकर, दूरसे दंडवत् प्रणाम किया ॥ ५ ॥ तब वसिष्ठजी प्रभुके प्यारे सखा गुहके निकट जाय, उसको जबर्दस्ती कैसे मिले कि, मानों पृथ्वीपर पड़ेहुए स्नेहको इकट्ठा करके उठा लिया है ॥ ६ ॥

रघुपतिभक्ति सुमंगलमूला ॥ नभ सराहि सुर बर्षाहिँ फूला ॥ ७ ॥ ❋
यहिसम निपट नीच कोउ नाहीं ॥ बड़ बसिष्ठसम को जगमाहीं ॥ ८ ॥ ❋

उसकाल देवता मंगलकी मूल श्रीरामचन्द्रजीकी भक्तिको सराह सराहकर आकाशमेंसे फूल बरसाने लगे ॥ ७ ॥ देवता कहते है कि–अहो ! प्रभुकी भक्तिका प्रभाव देखो, इसके जैसा तो कोई महा अधम नहीं है और वसिष्ठजीके जैसा जगत्में कोई बड़ा नहीं है ॥ ८ ॥

दोहा–जेहि लखि लषणहुँते अधिक, मिले मुदित मुनिराउ ॥ ❋
सो सीतापतिभजनको, प्रगट प्रतापप्रभाउ ॥ २३५ ॥ ❋

सो वे वसिष्ठजी इस नीच जातिको दूरसे देखकर, लक्ष्मणसे अधिक प्यार करके छातीसे लगाय मिले और प्रसन्न हुए. सो यह प्रभुके चरणकमलोंकी सेवाका प्रभाव प्रगट दीखता है ॥ २३५ ॥

आरत लोग राम सब जाना ॥ करुणाकर सुजान भगवाना ॥ १ ॥ ❋
जो जेहिभांति रहा अभिलाखी ॥ तेहितेहिकी तैसी रुचि राखी ॥ २ ॥ ❋

महादेवजी कहते हैं कि–हे पार्वति ! करुणानिधान, सुजान, भगवान् श्रीरामचन्द्रजीने

सब लोगोंको आर्तहुए जानकर ॥ १ ॥ जिसके मनमें जिस तरहकी अभिलाषा थी, उसकी इच्छा प्रभुने वही उसी तरहसे पूर्ण करी ॥ २ ॥

सानुज मिलि पलमहँ सबकाहू ॥ कीन्ह दूरि दुख दारुण दाहू ॥ ३ ॥ ❋
यह बड़ि बात रामकै नाहीं ॥ जिमि घट कोटि एक रबि छाहीं ॥ ४ ॥ ❋

प्रभुने लक्ष्मणके साथ सब लोगोंसे मिल भेंटके, एक क्षणभरमें सब लोगोंके दुख और दारुण दाहको शांत कर दिया ॥ ३ ॥ प्रभुने जो यह किया, इसमें कुछ बड़ाईकी बात नहीं है; क्योंकि प्रभुके सब बराबर है, जैसे सूर्यका प्रतिबिंब करोड़ जलभरे घड़ोंमेंभी एकसाही रहता है, कहीं न्यूनाधिक भावसे नहीं रहता. ऐसे प्रभु समदृष्टि है, सो प्रभु किसीमे ऊंच नीच नहीं देखते ॥ ४ ॥

मिलि केवटहिँ उमँगि अनुरागा ॥ पुरजन सकल सराहहिँ भागा ॥५॥ ❋
देखी राम दुखित महतारी ॥ जनु सुबेलिअवली हिम मारी ॥ ६ ॥ ❋

गुहके मिलनेसे पुरके सब लोगोंके मनमें प्रेम उमंग रहा है, जिससे वारंवार गुहको सराह २ कर उसके भाग्यकी प्रशंसा करते है ॥ ५ ॥ प्रभुने माताओंको देखा, तौ वो कैसी दुखी है कि,मानों सुन्दर लताओंकी पांती हिम (बर्फ) के मारे मुर्झा गई है ॥ ६ ॥

प्रथम राम भैंटे कैकेयी ॥ सरल स्वभाव भक्ति मति भेयी ॥ ७ ॥ ❋
पग परि कीन्ह प्रबोध बहोरी ॥ कालकर्म बिधि शिर धरि खोरी ॥ ८ ॥ ❋

तहां सबसे पहले प्रभु कैकेयीसे मिले. प्रभुके सरल स्वभाव और भक्तिने उसकी बुद्धिको तर कर दिया ॥ ७ ॥ प्रभुने उसके पैरोंमें पड़कर, फिर समझाया और कहा कि– हे माता ! यह तुम्हारा दोष नहीं है. यह खोरि तौ काल, कर्म और विधाताके शिर है; क्योंकि आदमी तौ जो कुछ करता है, सो इनकी प्रेरणासे करता है. इसलिये यह इन्होंका दोष है आपका नहीं ॥ ८ ॥

दोहा–भैंटे रघुबर मातु सब, करि प्रबोध परितोष ॥ ❋
अम्ब ईश आधीन जग, काहु न देइय दोष ॥ २३६ ॥ ❋

फिर प्रभु सब माताओंसे मिले, समझाकर, सबको संतोष दिलाया और कहा कि– हे माताओ ! यह सब जगत् परमेश्वरके आधीन है सो जो वह चाहता है सो करता है, आदमीका किया कुछ नहीं होता, इसलिये किसीको वृथा कलंक नहीं लगाना चाहिये ॥ २३६ ॥

गुरुतियपद बन्दे दोउ भाई ॥ सहित बिप्रतिय जे संग आई ॥ १ ॥ ❋
गंग गौरिसम सब सनमानी ॥ देहिँ अशीस मुदित मृदु बानी ॥ २ ॥ ❋

फिर दोनों भाइयोंने अरुंधतीको प्रणाम कर और सब विप्रपत्नियोंको प्रणाम किया कि, जो अरुंधतीके साथ आई थीं ॥ १ ॥ प्रभुने गंगा और पार्वतीके समान सब विप्रपत्नियोंका सत्कार किया. तब उन्होंने प्रसन्न हो मधुर वाणीसे आशीर्वाद दिया ॥ २ ॥

गहि पद लगे सुमित्राअंका ॥ जनु भैंटी सम्पति अतिरंका ॥ ३ ॥ ❋
पुनि जननीचरणन दोउ भ्राता ॥ परे प्रेमव्याकुल सब गाता ॥ ४ ॥ ❋

फिर प्रभु सुमित्राके पांवन लगे, तब कैसी शोभा बनी कि, मानों अतिदीन दरिद्री पुरुष

सम्पदाको जा भेटा है ॥ ३ ॥ फिर दोनों भाई प्रेमसे विह्वल हो माता कौसल्याके चरणोंमें गिरे, तब उनके सब अंग शिथिल हो गये ॥ ४ ॥

अति अनुराग अम्ब उर लाये ॥ नयन सनेह सलिल अन्हवाये ॥ ५ ॥ ❋
तेहिँ अँवसरकर हर्ष बिषादू ॥ किमि कबि कहै मूक जिमि स्वादू ॥ ६ ॥ ❋

माता कौसल्याने उनको अति प्रीतिके साथ छातीसे लगाया और स्नेहसे बहतेहुए शीतल नयन नीरसे न्हिलाया ॥ ५ ॥ तुलसीदासजी कहते है कि–उस समयका हर्ष और शोक कवि किसी कदर कह नहीं सकते. जैसे मूक यानी गूंगा आदमी स्वादको नहीं कह सकता ॥ ६ ॥

मिलि जननिहिँ सानुज रघुराऊ ॥ गुरुसन कहेउ कि धारिय पाऊ ॥ ७ ॥ ❋
पुरजन पाइ मुनीशनियोगू ॥ जल थल तकि तकि उतरे लोगू ॥ ८ ॥ ❋

माताओंसे मिल, प्रभुने लक्ष्मणके साथ गुरुसे प्रार्थना करी कि, हे महाराज ! आश्रमको पधारिये ॥ ७ ॥ तब पुरके लोग वसिष्ठजीकी आज्ञा पाय, जल और स्थलका सुबीता देखकर उतर गये ॥ ८ ॥

दोहा–महिसुर मंत्री मातु गुरु, घने लोग ले साथ ॥ ❋
पावन आश्रम गमन किय, भरत लषण रघुनाथ ॥ २३७ ॥ ❋

भरत लक्ष्मण और रामचंद्र आनन्दकन्द प्रभु ब्राह्मण, मंत्री, माता, गुरु, और बहुतसे लोगोंको साथ ले, अपने पवित्र आश्रमको चले ॥ २३७ ॥

सीय आइ मुनिबर पग लागी ॥ उचित अशीस लही मन माँगी ॥ १ ॥ ❋
गुरुपत्निहिँ मुनितियन्हसमेता ॥ मिलि सप्रेम कहिजाइ न जेता ॥ २ ॥ ❋

सीताजी आकर मुनिराजके चरणोंमें लगी. तब गुरु वसिष्ठजीने उसे मनवांछित योग्य आशिष दी ॥ १ ॥ फिर गुरुपत्नीको प्रणाम कर मुनीश्वरोंकी स्त्रियोंसे मिली, तब ऐसा प्रेम बढ़ा कि, कुछ कहनेमें नहीं आता ॥ २ ॥

बन्दि बन्दि पद सिय सबहीके ॥ आशिष बचन लहे प्रिय जीके ॥ ३ ॥ ❋
सासु सकल जब सीय निहारी ॥ मूंदेउ नयन सहमि सुकुमारी ॥ ४ ॥ ❋

सीताने सबके चरणोंको वंद वंद कर मनवांछित अति उत्तम आशीर्वाद पाये ॥ ३ ॥ जब सास वर्गने सीताकी ओर देखा, तब उनके नेत्र मूंदि गये और सब सुकुमारी उसकी दशा देख, सहम गईं ॥ ४ ॥

परी बधिकबश मनहुँ मराली ॥ काह कीन्ह करतार कुचाली ॥ ५ ॥ ❋
तिन सिय निरखि निपट दुख पावा ॥ सो सब सहिय जो दैव सहावा ॥ ६ ॥

और बोली कि–मानों हंसनी बहेलियाके बश पड़ी है ऐसी इसकी दशा हो रही है, सो विधाताने यह कुचाल क्या करी ? ॥ ५ ॥ कवि कहता है कि–सीताको देखकर, उन्होंने जो दारुण दुःख पाया वो कहनेमें नहीं आता; परंतु करैं क्या ? विधाता जो संकट सहाता है, वो सब सहनाही पड़ता है ॥ ६ ॥

जनकसुता तब उर धरि धीरा ॥ नील मलिन लोचन भरि नीरा ॥ ७ ॥ ❋

मिली सकल सासुन्ह शिर नाई ॥ तेहिँ अँवसर करुणा महि छाई ॥८॥ ❋

तब सीता मनमें धीरज धर, श्याम कमलके सदृश नेत्रोंमें नीर भर ॥ ७ ॥ सब सासगणको सिर नवाय सबसे मिली. कवि कहता है कि, उस समय सारी पृथ्वीपर करुणारस छा गया था ॥ ८ ॥

दोहा–लागि लागि पग सबनि सिय, भेंटति अति अनुराग ॥ ❋
हृदय अशीसहिँ प्रेमबश, रहिहौ भरी सुहाग ॥ २३८ ॥ ❋

जो सीता सबके पांवन लग लगकर बड़े प्रेमके साथ भेंटती है, तो वे सब प्रेमबश होकर मनसे उसे आशिष देतीं हैं कि, तू सुहागभरी रह ॥ २३८ ॥

बिकल सनेह सीय सब रानी ॥ बैठन सबहिँ कहेउ गुरु ज्ञानी ॥ १ ॥ ❋
प्रथम कही जगगति मुनिनाथा ॥ कहे कछुक परमारथगाथा ॥ २ ॥ ❋

सीताके स्नेहसे सब रानियां विकल हो रही हैं. तिन्हें ज्ञानी गरु वसिष्ठजीने बैठनेको कहा ॥ १ ॥ पहले तो वसिष्ठजीने कुछ जगत्की गति कही और पाछे कुछ परमार्थकी बात कही ॥ २ ॥

नृपकर सुरपुरगमन सुनावा ॥ सुनि रघुनाथ दुसह दुख पावा ॥ ३ ॥ ❋
मरणहेतु निजनेह बिचारी ॥ भे अति बिकल धीरधुरधारी ॥ ४ ॥ ❋

फिर राजा दशरथके स्वर्ग जानेके समाचार कहे, सो सुन, प्रभुने महाघोर दुःख पाया ॥ ३ ॥ प्रभु पिताके मरणका कारण अपने स्नेहको समझ, यद्यपि आप धीर पुरुषोंमें अग्रणी है, तौभी मोहसे विकल हो गये ॥ ४ ॥

कुलिशकठोर सुनत कटु बानी ॥ बिलपत लषण सीय सब रानी ॥ ५ ॥ ❋
शोकबिकल अति सकल समाजू ॥ मानहुँ राज अकाजेउ आजू ॥ ६ ॥ ❋

वज्रकोभी मात करनेवाला महाकठोर कटु वचन सुनतेही लक्ष्मण, सीता और रानियां सब रोने लग गये ॥ ५ ॥ और सारा समाज शोकसे ऐसा विकल हुआ कि, मानों राजा दशरथ आजही मरे हैं ॥ ६ ॥

मुनिबर बहुरि राम समुझाये ॥ युत समाज सुरसरित अन्हाये ॥ ७ ॥ ❋
व्रत निरम्बु तेहि दिन प्रभु कीन्हा ॥ मुनिहुँ कहे जल काहु न लीन्हा ॥८॥ ❋

गुरु वसिष्ठजीने प्रभुको समझाया और समाजके साथ गंगाजीमें नहाये ॥ ७ ॥ प्रभुने उस दिन जलभी नहीं पिया. यद्यपि वसिष्ठजीने बहुत कुछ कहा, पर उस दिन तो किसीने जल नहीं लिया ॥ ८ ॥

दोहा–भोर भये रघुनन्दनहिँ, जो मुनि आयसु दीन्ह ॥ ❋
श्रद्धा भक्ति समेत प्रभु, सो सब सादर कीन्ह ॥ २३९ ॥ ❋

दूसरे दिन, प्रभात होतेही गुरुने जो कुछ आज्ञा करी, प्रभुने वो सब श्रद्धा और भक्तिके साथ बड़े आदरपूर्वक किया ॥ २३९ ॥

करि पितुक्रिया बेद जस बरणी ॥ भे पुनीत पातकतमतरणी ॥ १ ॥ ❋
जासु नाम पावक अघतूला ॥ सुमिरत सकल सुमंगलमूला ॥ २ ॥ ❋

पापरूप अंधकारको मिटानेके लिये सूर्यरूप श्रीरामचन्द्रजी वेदविहित पिताकी क्रिया करके पवित्र हुए ॥ १ ॥ जिनका नाम पापरूप तूल (रुई) को भस्म करनेके लिये अग्निरूप है और जिनका स्मरण करतेही सब अमंगल निर्मूल हो जाते हैं ॥ २ ॥

शुद्ध सो भये साधुसम्मत अस ॥ तीरथआवाहन सुरसरि जस ॥ ३ ॥ ❋
शुद्ध भये दुइ बासर बीते ॥ बोले गुरुसन राम पिरीते ॥ ४ ॥ ❋

वे प्रभु शुद्ध हुए ऐसा जो कहना है, सो सत्पुरुषोंको परम मान्य है. जैसे कि, गंगाके भीतर अन्य तीर्थका आवाहन करना ॥ ३ ॥ शुद्ध हुए दो दिन बीत गये, तब प्रभुने प्रीतिके साथ गुरु वसिष्ठजीसे कहा ॥ ४ ॥

नाथ लोग सब निपट दुखारी ॥ कन्द मूल फल अम्बु अहारी ॥ ५ ॥ ❋
सानुज भरत सचिव सब माता ॥ देखि मोहिं पल जिमि युग जाता ॥ ६ ॥

कि–हे नाथ ! सब लोग महादुःखी है, क्योंकि यहां कंद, मूल, फल व जलके सिवाय खानेको कुछ नहीं है ॥ ५ ॥ छुटे भाई शत्रुघ्नके साथ भरत, मंत्री और सब माताओंको देखकर, मेरा एक एक क्षण युगके समान व्यतीत होता है ॥ ६ ॥

सबसमेत पुर धारिय पाऊ ॥ आपु इहां अमरावति राऊ ॥ ७ ॥ ❋
बहुत कहेहुँ सब कियहुँ ढिठाई ॥ उचित होउ तस करिय गुसाँई ॥ ८ ॥ ❋

इसलिये अब आप सबको साथ ले, अयोध्याको पधारिये. आप तो यहां और राजा स्वर्गलोकमें. फिर पुरीका कौन हवाल ? ॥ ७ ॥ मैं ज्यादे क्या कहूं ? मैंने जो कुछ किया है सो सब ढिठाईका काम किया है. हे स्वामी ! अब जैसा उचित हो वैसा करिये ॥ ८ ॥

दोहा–धर्महेतु करुणायतन, कस न कहहु अस राम ॥ ॥ ❋
लोग दुखित दिन दुइ दरश, देखि लहहिं विश्राम ॥ २४० ॥ ❋

प्रभुके ऐसे करुण वचन सुन, वसिष्ठजीने रामचन्द्रजीसे कहा कि–हे करुणानिधि प्रभु ! आपका अवतार धर्मकी रक्षाके लिये है, सो आप ऐसे कैसे न कहोगे ? परंतु ये लोग आपके विरहके दुःखसे दुखी हैं. सो दो दिन यहां रह , आपके दर्शनका लाभ ले, विश्राम पावेंगे ॥ २४० ॥

रामबचन सुनि सभय समाजू ॥ जनु जलनिधिमहँ बिकल जहाजू ॥ १ ॥ ❋
सुनि मुनिगिरा सुमंगलमूला ॥ भयउ मनहुँ मारुत अनुकूला ॥ २ ॥ ❋

प्रभुके वचन सुन, सब समाज ऐसी भयभीत हुई कि, मानों समुद्रके बीच जहाजकी दुर्दशा हो गई है ॥ १ ॥ परंतु मंगलकी मूल जो मुनिकी वाणी है, सोही मानों वहां अनुकूल बयार बहने लगी है ॥ २ ॥

पावन पय तिहुँ काल अन्हाहीं ॥ जेहिं बिलोकि अघओघ नशाहीं ॥ ३ ॥ ❋
मंगलमूरति लोचन भरि भरि ॥ निरखहिँ हर्षि दण्डवत करि करि ॥ ४ ॥ ❋

सब लोग पवित्र मंदाकिनीके जलमें तीनों काल स्नान करते हैं कि, जिस पवित्र जलका दर्शन करतेही पापपुंज नाश हो जाते हैं ॥ ३ ॥ साष्टांग दंडवत् प्रणाम कर, आनंदपूर्वक प्रभुकी मंगलकारी मूर्तिको नेत्र भर देखते हैं ॥ ४ ॥

राम शैल बन देखन जाहीं ॥ जहँ सुख सकल सकल दुख नाहीं ॥ ५ ॥ ❋
झरना झरहिं सुधासम बारी ॥ त्रिविध ताप हर त्रिविध बयारी ॥ ६ ॥ ❋

प्रभुके विराजनेके वन और पर्वतोंमें देखने जाते हैं कि, जहां सब प्रकारके सुख छारहे हैं. किसी प्रकारके दुखका नामतक नहीं है ॥ ५ ॥ अमृतसा मधुर जल झरनोंसे झरता है. तीनों प्रकारके तापकी मिटानेवाली त्रिविध वायु यानी शीतल सुगंध मन्द बहती है ॥ ६ ॥

विपट बेलि तृण अगणित जाती ॥ फल प्रसून पल्लव बहुभाँती ॥ ७ ॥ ❋
सुन्दर शिला सुखद तरुछाहीं ॥ जाइ बर्राण छबि बन केहि पाहीं ॥ ८ ॥ ❋

वहां पर्वतके भीतर कई तरह तरहके पेड, बेल बूटे और तृण छारहे हैं. जिनमें अनेक प्रकारके फल, फूल व पल्लवकी बहार बनी है ॥ ७ ॥ बैठनेको अच्छी चट्टाने है. वृक्षोंकी सघन छाया बनी हुई है. कवि कहता है कि–उस बनकी शोभा किसीसे बरनी नहीं जाती ॥ ८ ॥

दोहा–सरित सरोरुह जलविहँग, कूजत गुंजत भृंग ॥ ❋
बैर बिगत बिहरत विपिन, मृग बिहंग बहुरंग ॥ २४१ ॥ ❋

नदियां और तालावोंके तीरपर जलपक्षी कलोलें करते हैं और कूजते हैं. और भौंरे गुंजते हैं. रंग-रंगके पशु और पक्षी बैरको छोड़कर वनके भीतर क्रीड़ा करते है ॥ २४१ ॥

कोल्ह किरात भिल्ल बनबासी ॥ मधु शुचि सुन्दर स्वादु सुधासी ॥ १ ॥ ❋
भरि भरि पर्णकुटी रचि रूरी ॥ कन्द मूल फल अंकुर जूरी ॥ २ ॥ ❋

कोल्ह, किरात व भीलआदि वनचर लोग पवित्र, सुन्दर व अमृतसी स्वादिष्ठ शहद ॥ १ ॥ कूपे भरभर लाते हैं. और अच्छी सुन्दर पत्तोंकी पातल बनाय, उसमें कन्द, मूल, फल व अंकुर आदि स्वादिष्ठ भक्ष्य पदार्थ रखकर लाते हैं ॥ २ ॥

सबहिँ देहिँ करि बिनय प्रणामा ॥ कहि कहि स्वाद भेद गुण नामा ॥ ३ ॥
देहिँ लोग बहु मोल न लेहीं ॥ फेरत राम दोहाई देहीं ॥ ४ ॥ ❋

और उनके जुदे २ नाम गुण व स्वाद कहकहकर विनयके साथ प्रणाम करके अयोध्यावासी लोगोंको देते है ॥ ३ ॥ अपार कंद, मूल फल देते है. पर उनका मूल्य नहीं लेते. और जो पीछा फेरते है, तो रामचन्द्रजीकी दोहाई देते है ॥ ४ ॥

कहहिँ सनेहमगन मृदुबानी ॥ मानत साधु प्रेम पहिँचानी ॥ ५ ॥ ❋
तुम सुकृती हम नीच निषादा ॥ पावा दरशन रामप्रसादा ॥ ६ ॥ ❋

और स्नेहमगन होकर मधुर वाणीसे ऐसे कहते हैं कि–जो सत्पुरुष होते हैं, वे प्रेमको पहिचान कर रीझते हैं अर्थात् हम जो स्नेहसे लाये है, तो हमारी प्रीतिकी ओर ध्यान देना चाहिये. मूल्यकी ओर नहीं ॥ ५ ॥ आपलोग तो परम सुकृती हो और हम महानीच निषाद है. आज हमारा धन्य भाग्य है कि, प्रभुकी कृपासे आज हमें आपके दर्शन मिले ॥ ६ ॥

हमहिँ अगम अति दरश तुम्हारा ॥ जस मरुधरणि देवसरिधारा ॥ ७ ॥ ❋
राम कृपाल निषाद नेवाजा ॥ परिजन प्रजा चलिय जस राजा ॥ ८ ॥ ❋

हे महाराज ! हमें आपका दर्शन अतिदुर्लभ है. जैसे मरुभूमि (मारवाड़) में गंगाजीकी धाराका होना अशक्य है, ऐसे आपका दर्शन हमें अशक्य है ॥ ७ ॥ जब परम दयालु प्रभुने हम निषादोंपर निवाज कर हमें अपना लिया है, तो आपकोभी हमारे कंद मूल फल लेने चाहिये, क्योंकि यह लोकरीति है कि, राजा जिस मार्गसे चले, उस रस्तेसे उसके परिजन और प्रजाको चलनाही चाहिये ॥ ८ ॥

दोहा–यह जिय जानि सकोच तजि, करिय छोह लखि नेहु ॥ ❋
हमहिँ कृतारथ करनलगि, फल तृण अंकुर लेहु ॥ २४२ ॥ ❋

अब आप लोग अपने जीमे इस बातको जान, संकोचको तज, हमारे स्नेहकी ओर देख, हमपर कृपा करो. हमें कृतार्थ करनेके लिये ये कंद मूल फल तृण व अंकुर आदि पदार्थ लेओ ॥ ४२ ॥

तुम प्रिय पाहुन बन पगु धारे ॥ सेवायोग न भाग हमारे ॥ १ ॥ ❋
देव कहा हम तुमहिँ गुसाँई ॥ ईंधन पात किरातमिताई ॥ २ ॥ ❋

आप बड़े बड़े भाग प्यारे पाहुने वनमें पधारे, सो हमारे भाग्य तो आपकी सेवा करनेके योग्य नहीं है ॥ १ ॥ क्योंकि, हे स्वामी ! हम आपको क्या देवे ? किरातोंकी मित्रतामें ईंधन और पत्तोंका लाभ है ॥ २ ॥

यह हमार अति बड़ सेवकाई ॥ लेहिँ न बासन बसन चुराई ॥ ३ ॥ ❋
हम जड़ जीव जीवगणघाती ॥ कुटिल कुचाली कुमति कुजाती ॥ ४ ॥ ❋

हमारी तो यही एक बड़ी भारी सेवा है कि–हम आपके बासन और वस्त्र सब न ले जावें ॥ ३ ॥ हम तो महाजड़ जीव हैं. सदा जीवहिंसा करते हैं. कुटिल कुजाती कुचाली और कुमति जो कुछ कहैं सो सब हम हैं ॥ ४ ॥

पाप करत निशि बासर जाहीं ॥ नहिँ पट कटि नहिँ पेट अघाहीं ॥ ५ ॥
सपनेहुँ धर्मबुद्धि कस काऊ ॥ यह रघुनन्दनदर्शप्रभाऊ ॥ ६ ॥ ❋

हमारे रात और दिन पाप करतेही जाते है. तौभी पहिरनेको तो हमें वस्त्र नहीं मिलता और खानेको पेटभर रोटी नहीं मिलती ॥ ५ ॥ हममेंसे किसीकेभी स्वप्नमेंभी धर्ममें बुद्धि क्या कैसी ? अर्थात् हमारे और धर्मके संबंधही क्या ? परंतु जो हमें इतनी सुशीलता प्राप्त भई यह सब प्रभुके दर्शनका प्रभाव है ॥ ६ ॥

जबते प्रभुपदपद्म निहारे ॥ मिटे दुसह दुख दोष हमारे ॥ ७ ॥ ❋
बचन सुनत पुरजन अनुरागे ॥ तिन्हके भाग सराहन लागे ॥ ८ ॥ ❋

जबसे हमने प्रभुके चरणकमलोंका दर्शन किया है, तबसे हमारे दुसह दुःख और दोष निवृत्त हो गये है ॥ ७ ॥ निषाद लोगोंके ऐसे प्रेमभरे बचन सुन, पुरके लोग बहुत प्रसन्न हुए और उनके भाग्यको सराहने लगे ॥ ८ ॥

छंद–लागे सराहन भाग सब अनुराग बचन सुनावहीं ॥ ❋
बोलनि मिलनि सियरामचरणसनेह लखि सुख पावहीं ॥ ❋
नर नारि निदरहिँ नेह निज सुनि कोल्ह भिल्लनकी गिरा ॥ ❋
तुलसी कृपा रघुबंशमणिकी लोह लै नौका तरा ॥ ११ ॥ ❋

सब लोग निषाद लोगोंके भाग्यकी श्लाघा करते हैं और प्रीतिके वचन सुनाते हैं. और उनको बोली, मिलनी व सीतारामके चरणकमलसम्बन्धी स्नेह इन्हें देखकर सुख पाते हैं. और कोल्ह व भीलोंकी भक्तिरसभरी मधुर वाणी सुनके अपने स्नेहकी नगरके सब नरनारी निंदा करते हैं. तुलसीदासजी कहते है कि–यह कोई आश्चर्यकी बात नहीं है; क्योकि प्रभुकी कृपा ऐसीही है. देखो, नावके संयोगसे लोहा पानीके भीतर अच्छीतरह तिर जाता है ॥ ११ ॥

सोरठा–विहरहिँ बन चहुँ ओर, प्रतिदिन प्रमुदित लोग सब ॥ ❋
जल ज्यों दादुर मोर, भये पीन पावसप्रथम ॥ १० ॥ ❋

सब लोग हमेशा प्रसन्न हो वनमें चारों ओर फिरते है. और ऐसे आनंदित होते हैं कि, जैसे मेंड़क और मोर पावसके प्रथम जलको पाकर पुष्ट हो हर्ष पाते हैं ॥ १० ॥

पुरजन नारि मगन अति प्रीती ॥ बासर जाहिँ पलक सम बीती ॥ १ ॥ ❋
सीय सासु प्रतिबेष बनाई ॥ सादर करहिँ सरिस सेवकाई ॥ २ ॥ ❋

नगरके सब नर नारी अतिशय आनंदमगन हैं. रात दिन क्षणके समान व्यतीत होते है ॥ १ ॥ प्रभुकी योगमाया सीताजी जितनी सास हैं, उतने स्वरूप बनाके आदरके साथ यथायोग्य सेवा करतीं है ॥ २ ॥

लखा न मर्म राम बिनु काहू ॥ माया सब सिय मायानाहू ॥ ३ ॥ ❋
सीय सासु सेवाबश कीन्ही ॥ तिन्ह लहि सुख सिख आशिष दीन्ही ॥ ४ ॥

सो यह भेद एक प्रभुने तो जरूर जान लिया. बाकी दूसरे किसीने नहीं जाना; क्योंकि जगत्में जितनी माया है, वो सब सीतारूपही है और प्रभु श्रीरामचन्द्रजी मायाके पति है; इसलिये प्रभुके शिवाय और दूसरे किसीने यह भेद नहीं पाया ॥ ३ ॥ सीताजीने सेवा करके माताओंको बश कर लिया है. तब उन्होंने सुख पाकर उसे शिक्षा और असीस दी है ॥ ४ ॥

लखि सिय सहित सरल दोउ भाई ॥ कुटिलरानि पछिताइ अघाई ॥ ५ ॥ ❋
अब जियमहिँ याचति कैकेयी ॥ महि न बीच बिधि मीचु न देई ॥ ६ ॥ ❋

सीताके साथ दोनों भाइयोंको अति सरल सुभाव देखकर कुटिल रानी कैकेयी अघाके पछताती है ॥ ५ ॥ और अपने जीमें ऐसी प्रार्थना करती है कि–हे विधाता ! मुझे यह पृथ्वी बीच क्यों नहीं देती, यानी फट क्यों नहीं जाती ? और तू मुझे मृत्यु क्यों नहीं देता ? ॥ ६ ॥

लोकहु बेद बिदित कबि कहहीं ॥ राम बिमुख खल नरक न लहहीं ॥ ७ ॥ ❋
यह संशय सबके मनमाहीं ॥ राम गवन बिधि अवध कि नाहीं ॥ ८ ॥ ❋

कविलोग कहते हैं कि–यह बात लोक और वेद दोनोंमें प्रसिद्ध है कि, जो जन रामचन्द्रजीसे विमुख हैं, उन दुष्टोंके लिये नरकमेंभी जगह नहीं है ॥ ७ ॥ सबलोगोंके मनमें इस बातका संदेह है कि–हे विधाता ! प्रभु अयोध्या पधारेंगे, या नहीं ? ॥ ८ ॥

दोहा–निशि न नींद नहिँ भूँख दिन, भरत बिकल सुठि शोच ॥ ❋
नीच कीच बिच मगन जस, मीनहिँ सलिल सकोच ॥ २४३ ॥ ❋

भरतको मारे शोचके रातमें नींद नहीं आती और दिनमें भूँख नहीं लगती. भरत शोचके

मारे ऐसा विकल हो गया है कि, मानों जलके संकोचके मारे कीचके बीच घुस जानेसे नीच मीनकी महाविकल दशा हो रही है ॥ २४३ ॥

कीन्ह मातु मिसु काल कुचाली ॥ ईतिभीति जस पाकत शाली ॥ १ ॥ ❋
केहि बिधि होइ राम अभिषेकू ॥ मोहिँ अब करत उपाय न एकू ॥ २ ॥

भरत अपने मनमें शोच करते हैं कि–देखो, माताके मिससे इस नीच कालने कैसी कुचाल करी है कि, मानों पकतेहुए धानको ईतिका भय दे दिया है. जब धान पकता है, तब धानके छः ईतियां यानी विघ्न करनेवाले पैदा होते है. जैसे ज्यादा मेह बरसना, पानी न बरसना, टिड्डी, शुक, चूहे और बहुत समीपवर्ती राजाकी कटक ॥ १ ॥ भरत अपने मनमें कहते हैं कि–अब रामचन्द्रजीका अभिषेक किस प्रकार होवे ? मुझे तो अब एकभी उपाय नहीं सूझता ॥ २ ॥

अवशि फिरहिँ गुरु आयसु मानी ॥ मुनि पुनि कहब राम रुचि जानी ॥ ३ ॥
मातु कहेँ बहुरहिँ रघुराऊ ॥ रामजननि हठ करब कि काऊ ॥ ४ ॥ ❋

जो यदि गुरु वसिष्ठजी कहैं तौ गुरुकी आज्ञा मानकर, प्रभु पीछे अवश्य लौटे जायँ; पर मुनिभी प्रभुकी रुख देख, उनकी रुचि जानकर कहेंगे ॥ ३ ॥ और माताके कहनेसेभी प्रभु पीछे फिर जायँ पर, माताभी क्या वैसा हठ करेगी ? कभी नहीं ॥ ४ ॥

मोहिँ अनुचर कर केतिक बाता ॥ तेहिँ महँ कुसमय बाम बिधाता ॥ ५ ॥
जो हठ करौं तौ निपट कुकरमू ॥ हरगिरिते गुरु सेवक धरमू ॥ ६ ॥ ❋

और जो मैं अनुचर हूं तिसकी तौ बातही कितनी ? तिसपरभी फिर यह खोटा समय और प्रतिकूल दैव सो मुझसे होनाही क्या है ? ॥ ५ ॥ भरत कहते हैं कि–जो मैं यहांपै हठ करूं तौ अत्यंतही कुकर्म हो जाय; क्योंकि स्वामी और सेवकका जो धर्म है सो महादेवजीके पर्वत (कैलास) के समान स्वच्छ है. सो जो उसमे थोड़ाभी धक्का लग जाय तौ उसकी सब शोभा नाश हो जाय ॥ ६ ॥

एकौ युक्ति न मन ठहरानी ॥ शोचत भरतहिँ रैन सिरानी ॥ ७ ॥ ❋
प्रात अन्हाइ प्रभुहिँ शिर नाई ॥ बैठत पठये ऋषय बुलाई ॥ ८ ॥ ❋

भरतने अनेक उपाय बिचारे पर एकभी युक्ति मनमें न ठहरी. उसके शोच करते २ सारी रैन बीत गई ॥ ७ ॥ भोर होतेही मंदाकिनीमें नहाय, प्रभुको प्रणाम कर भरत बैठते थे. इतनेमें मुनि वसिष्ठजीने बुला भेजा ॥ ८ ॥

दोहा–गुरुपदकमल प्रणाम करि, बैठे आयसु पाइ ॥ ❋
बिप्र महाजन सचिव सब, जुरे सभासद आइ ॥ २४४ ॥ ❋

भरतने गुरुके पास जा प्रणाम किया. फिर गुरुकी आज्ञा पाय आसनपर बैठे. उसकाल ब्राह्मण, मंत्री और महाजन सब सभासद उस सभामें आ जुडे ॥ २४४ ॥

बोले मुनिबर समय समाना ॥ सुनहु सभासद भरत सुजाना ॥ १ ॥ ❋
धर्मधुरीण भानुकुलभानू ॥ राजा राम स्वबश भगवानू ॥ २ ॥ ❋

तब अवसरको विचार, समयके अनुसार गुरु वसिष्ठजीने कहा कि–हे सभासदो ! हे सुजान भरत ! सुनो ॥ १ ॥ रविकुलके सूर्य श्रीराजा रामचन्द्र धर्ममें अग्रणी स्वतंत्र परमैश्वर्यसंपन्न भगवान् हैं ॥ २ ॥

सत्यासिंधु पालक श्रुतिसेतू ॥ राम जन्म जग मंगलहेतू ॥ ३ ॥ ❋
गुरु पितु मातु बचन अनुसारी ॥ खलदलदलन देवहितकारी ॥ ४ ॥ ❋

ये श्रीरामचन्द्र सत्यके सागर और वेदकी मर्यादाके पालनेवाले हैं. इनका जन्म जगत्के मंगलका मूलकारण है ॥ ३ ॥ ये माता, पिता और गुरुकी आज्ञामें चलनेवाले, दुष्ट जनोंके दलका विनाश करनेवाले और देवताओंका हितकरनेवाले हैं ॥ ४ ॥

नीति प्रीति परमारथ स्वारथ ॥ कोउ न राम समजान यथारथ ॥ ५ ॥ ❋
बिधि हरि हर शशि रबि दिशपाला ॥ माया जीव करम कुलिकाला ॥ ६ ॥ ❋

इनकी नीतिपर बड़ी प्रीति है. इनके बराबर परमार्थ और स्वार्थको यथार्थ कोई नहीं जानता ॥ ५ ॥ जगत्में ब्रह्मा, विष्णु, महेश, सूर्य, चांद, दिक्पाल, माया, जीव, कर्म, वर्ष, मास आदि कुल यानी सब समय ॥ ६ ॥

अहिप महिप जहँलगि प्रभुताई ॥ योगसिद्ध निगमागम गाई ॥ ७ ॥ ❋
करि बिचार जिय देखहु नीके ॥ राम रजाय शीश सबहीके ॥ ८ ॥ ❋

तथा शेषनाग, राजा, योग, अणिमा आदि सिद्धियां व हरएक तरहकी प्रभुता कि जिनका वेद, शास्त्र, पुराणोंमें जहांलों वर्णन है ॥ ७ ॥ उन सबको मनमें भली भांति विचार करके देखो कि, सबके शिरपर प्रभुकी आज्ञा है अर्थात् सब रामकी आज्ञानुसार चलते हैं ॥ ८ ॥

दोहा–राखे राय रजाय रुख, हम सबकर हित होइ ॥ ❋
समुझि सयाने करहु अब, सब मिलि सम्मत सोइ ॥ २४५ ॥ ❋

हम सब लोग रामकी आज्ञा और रुखको राखेंगे तो इसमें हम सबोंका भला है. सो हे सुजान लोगो ! इस बातको समझकर अब आप सब लोग वही सलाह करो कि, जिससे सबका भला होवे. मुनिके कहनेका तात्पर्य–यह है कि, हम तुम सबको जैसा राम कहैं, वैसा करना उचित है ॥ २४५ ॥

सब कहँ सुखद रामअभिषेकू ॥ मंगलमूल मोद मग येकू ॥ १ ॥ ❋
केहिबिधि अवध चलहिँ रघुराई ॥ कहहु समुझि सोइ करैं उपाई ॥ २ ॥ ❋

हे भाइयो ! सुनो. रामका अभिषेक सबको सुख देनेवाला, मंगलका मूलकारण और आनंदका एक मार्ग है ॥ १ ॥ परंतु अब राम किस प्रकार अवधको चलैं ? सो इस बातको सोच समझकर हमैं कहो सो हम वही उपाय करैं ॥ २ ॥

सब सादर मुनिबर सुनि बानी ॥ नय परमारथ स्वारथ सानी ॥ ३ ॥ ❋
उतर न आव लोग भे भोरे ॥ तब शिर नाय भरत कर जोरे ॥ ४ ॥ ❋

नीती, परमार्थ और स्वार्थ भरी मुनिकी आदर सहित वाणी सुनकर सब लोग चकित रह गये ॥ ३ ॥ किसीको उत्तर नहीं आया. सब लोगोंको बुद्धिभ्रम हो गया और भूल छा गई. तब शिर नवाकर भरतने हाथ जोड़े ॥ ४ ॥

भानुबंश भे भूप घनेरे ॥ अधिक एकते एक बड़ेरे ॥ ५ ॥ ❋

जन्महेतु सबकहँ पितु माता ॥ करम शुभाशुभ देइ बिधाता ॥ ६ ॥ ❋

और कहा कि–हे महाराज ! सूर्यवंशमें कई राजा हुए है, जो एकसे एक अधिक और बहुत बड़े है ॥ ५ ॥ हे महाराज ! माता, पिता तौ सबके जन्मके कारण हैं और विधाता सबको अपने २ कर्मानुसार शुभ अशुभ फल देता है ॥ ६ ॥

दलि दुख सजै सकल कल्याना ॥ अस अशीस राउर जग जाना ॥ ७ ॥ ❋
सो गुसाइँ बिधिगति जेंइ छेंकी ॥ सकै को टारि टेंक जो टेंकी ॥ ८ ॥ ❋

तहां आपका आशीर्वाद ऐसा है कि–रघुवंशियोंके दुःखोंका नाश करके सब प्रकारके कल्याणोंको देता है, सो यह बात सब जगत् जानता है ॥ ७ ॥ हे स्वामी ! आप विधाताकी गतिको छेंक (तोंड़) सकते हो सो आप जिस टेंक (बात) को टेंकते हो अर्थात दृढ़ करते हो, उसे कौन टाल सकता है ? अर्थात् आपका निश्चय किया हुआ सिद्धान्त कभी फिर नहीं सकता ॥ ८ ॥

दोहा–बूझिय मोहिँ उपाय अब, सो सब मोर अभाग ॥ ❋
सुनि सनेहमय बचन गुरु, उर उपजा अनुराग ॥ २४६ ॥ ❋

अब आप जो मुझे उपाय पूँछते हो,सो यह सब मेरे अभाग्यकी बात है.भरतके स्नेहभरे वचन सुन, गुरुके हृदयमें परमप्रीति उत्पन्न हुइ ॥ २४६ ॥

तात बात फुर राम कृपाहीं ॥ रामबिमुख सुख सपनेहुँ नाहीं ॥ १ ॥ ❋
सकुचौं तात कहत यकबाता ॥ अरध तजहिँ बुध सरबस जाता ॥ २ ॥ ❋

और गुरु बोले कि–हे तात ! तू जो कहता है कि " मैं दैवकी गति टाल सकता हूं" सो सत्य है; क्योंकि प्रभुकी कृपासे मैं ऐसेही कर सकता हूं. हे तात ! जो प्रभुसे विमुख है, उन्हें स्वप्नमेंभी सुख नहीं है ॥ १ ॥ हे तात ! मैं एक बात कहता सकुचता हूं; परंतु जो विद्वान् लोग हैं, सो सर्वस्व जाता देखकर आधा धन त्याग (बांट) देते है ॥ २ ॥

तुम कानन गवनहु दोउ भाई ॥ फिरिहहिँ लषण सीय रघुराई ॥ ३ ॥ ❋
सुनि शुभ बचन हर्ष दोउ भ्राता ॥ भे प्रमोद परिपूरण गाता ॥ ४ ॥ ❋

हे तात! तुम दोनों भाई वनमें चले जाओ. फिर सीता और राम लक्ष्मण अयोध्याको लौट जायंगे ॥ ३ ॥ गुरुके ऐसे शुभ वचन सुन, दोनों भाई बहुत प्रसन्न हुए. आनंदके हेतु फूले अंग नहीं समाते ॥ ४ ॥

मन प्रसन्न तन तेज बिराजा ॥ जनु जिय राउ राम भे राजा ॥ ५ ॥ ❋
बहुत लाभ लोगन्ह लघु हानी ॥ सम दुख सुख सब रोवहिँ रानी ॥ ६ ॥ ❋

उनका मन ऐसा प्रसन्न हो गया और शरीर तेजसे ऐसा चमकने लगा कि,मानों राजा दशरथजी पीछे जीगये हैं और श्रीरामचन्द्रजी राजा हो गये हैं ॥ ५ ॥ लोगोंने इस बातसे बड़ा लाभ माना और हानि बहुत कम समझी और रानियां सब सुख दुःखको समान मानकर, लगीं जोर जोरसे रोने ॥ ६ ॥

कहहिँ भरत मुनि कहा सो कीन्हे ॥ फल जग जीवन अभिमत दीन्हे ॥ ७ ॥

कानन करउँ जन्म भरि बासू ॥ इहिते अधिक न मोर सुपासू ॥ ८ ॥ ❀

भरत गुरु वसिष्ठजीसे कहते है. कि—हे स्वामी ! आपने जो कहा है वो मैं अवश्य करूंगा; क्योंकि इससे तौ आपने मुझे जगत्में जीनेका मनबांछित फल दिया है ॥ ७ ॥ हे तात ! मैं जन्मभर वनमें रहूंगा; क्योंकि इससे बढ़कर मेरा और सुभीता एकहू नहीं है ॥ ८ ॥

दोहा—अन्तर्यामी राम सिय, तुम सर्वज्ञ सुजान ॥ ❀

जो फुर कहहुँ तो नाथ निज, कीजिय बचन प्रमान ॥ २४७ ॥ ❀

हे नाथ ! राम और सीता तौ अंतर्यामी है और आप सर्वज्ञ व सुजान हो. सो हे स्वामी! जो मैं सत्य कहता हूं तौ आप अपना वचन प्रणाम (सत्य) करो ॥ २४७ ॥

भरत बचन सुनि देखि सनेहू ॥ सभासहित मुनि भयउ बिदेहू ॥ १ ॥ ❀

भरत महा महिमा जलरासी ॥ मुनि मति ठाढ़ि तीर अबलासी ॥ २ ॥ ❀

भरतके वचन सुन, उसका स्नेह देखकर, मुनि वसिष्ठजी सभासदोंके साथ अपने शरीरकी सुध भूल गये ॥ १ ॥ भरतकी जो अपार महिमा है, सोही अथाह समुद्र है और मुनिकी जो बुद्धि है सोही एक स्त्री है. जैसे स्त्री समुद्रका थाह न लगनेसे उसकी तीरपर खड़ी रहती, ऐसे मुनिकी बुद्धि उसके किनारे खड़ी है ॥ २ ॥

गा चह पार यतन बहु हेरा ॥ पावति नाव न बोहित बेरा ॥ ३ ॥ ❀

और करहिँ को भरत बड़ाई ॥ सर सरि सीप कि सिन्धु समाई ॥ ४ ॥ ❀

यद्यपि वो उसके पार जाना चाहती है और उसके लिये अनेक उपायभी हेरती है; परंतु नाव बोहित और बेराके जैसा कोई कर्म नहीं पाती कि, जिससे वो उसको पार कर जाय ॥ ३ ॥ जहां मुनिवर वसिष्ठजीकी बुद्धिकीभी यह दशा है, तहां दूसरा कौन भरतकी बड़ाई कर सके ? क्या तलाव और नदियोंकी सीपमें समुद्र समा सकता है ? कदापि नहीं ॥ ४ ॥

भरत मुनिहिँ मन भीतर पाये ॥ सहित समाज रामपहँ आये ॥ ५ ॥ ❀

प्रभु प्रणाम करि दीन्ह सुआसन ॥ बैठे सब मुनि सुनि अनुशासन ॥ ६ ॥

मुनिके मनके भीतरके आशयको पाकर भरतजी समाजके साथ रामचन्द्रके पास आये ॥ ५ ॥ प्रभुने प्रणाम करके सबको सुन्दर आसन दिये. तब सब लोग मुनि वसिष्ठजीकी आज्ञा पाकर अपने अपने आसनोंपर बैठे ॥ ६ ॥

बोले मुनिबर बचन बिचारी ॥ देश काल अँवसर अनुहारी ॥ ७ ॥ ❀

सुनहु राम सरबज्ञ सुजाना ॥ धर्म नीति गुण ज्ञान निधाना ॥ ८ ॥ ❀

उस समय देश कालको विचार अवसरके अनुहार मुनि वसिष्ठजी यह वचन बोले ॥ ७ ॥ वसिष्ठजीने कहा कि—हे सर्वज्ञ ! हे सुजान ! हे राम ! आप धर्म, नीति, गुण और ज्ञानके निधान हो. सो जो मैं कहताहूं सो सुनो ॥ ८ ॥

दोहा—सबके उर अंतर बसहु, जानहुँ भाव कुभाव ॥ ❀

पुरजन जननी भरतहित, होइ सो करिय उपाव ॥ २४८ ॥ ❀

हे तात ! आप सबके हृदयके भीतर विराजते हो, इसलिये सबके घटघटके भाव और ज्ञानके

कुभावको भलीभाँति जानते हो. हे राम ! अब जिसतरह पुरके लोग, माता और भरत इनका भला होवे ऐसा उपाय करो ॥ २४८ ॥

आरत कहहिँ बिचारि न काऊ ॥ सूझ जुआरिहिँ आपन दाऊ ॥ १ ॥ ❋
सुनि मुनि बचन कहत रघुराऊ ॥ नाथ तुम्हारेहिँ हाथ उपाऊ ॥ २ ॥ ❋

हे तात ! दुखी आदमी कभी कुछभी विचार कर नहीं कहते है; क्योंकि जैसे जुआरीको अपनाही दाव दीखता है, पर दूसरेका नहीं. ऐसे आर्तको पराई पीर नहीं सूझती ॥ १ ॥ मुनि बसिष्ठजीके वचन सुन, प्रभुने कहा कि–हे नाथ ! इसका उपाय तौ आपकेही हाथ है ॥ २ ॥

सबकर हित रुख राउर राखे ॥ आयसु दिये मुदित पुर भाखे ॥ ३ ॥ ❋
प्रथम जो आयसु मोकहँ होई ॥ माथे मानि करौं सिख सोई ॥ ४ ॥ ❋

हे तात ! आपकी रुख रखनेसे सबका भला है; यह मैं सत्य कहता हूं, सो आप आनंदपूर्वक आज्ञा दीजिये ॥ ३ ॥ प्रथम तौ मुझे जो आज्ञा होवे वो फरमावें कि, उसी शिक्षाको माथेपर चढ़ाय, मानकर करूं ॥ ४ ॥

पुनि जेहि कहँ जस होइ रजाई ॥ सो सब भांति करिहि सेवकाई ॥ ५ ॥ ❋
कह मुनि राम सत्य तुम भाखा ॥ भरत सनेह बिचार न राखा ॥ ६ ॥ ❋

फिर जिसको जैसी आज्ञा होगी, वे सब उसी तरह करेंगे ॥ ५ ॥ प्रभुके बचन सुन, वसिष्ठजीने कहा कि– हे राम ! आपने सत्य कहा. वास्तवमें भरतने स्नेहके कारण कुछ विचार नहीं रक्खा ॥ ६ ॥

तेहिते कहौं बहोरि बहोरी ॥ भरत भक्ति बश भै मति भोरी ॥ ७ ॥ ❋
मोरे जान भरत रुचि राखी ॥ जो कीजिय सो शुभ शिव साखी ॥ ८ ॥ ❋

इसीसे मैं आपसे वारंवार कहता हूं कि–भरतकी भक्तिके कारण मेरी बुद्धि भोली हो गई है ॥ ७ ॥ सो मेरी जानमें तो भरतकी रुचि रखनी चाहिये. फिर जो अच्छा हो वो कीजिये यह मैं शिवजीको साक्षी रख कर कहता हूं ॥ ८ ॥

दोहा–भरतबिनय सादर सुनिय, करिय बिचार बहोरि ॥ ❋
करब साधुमत लोकमत, नृपनय निगम निचोरि ॥ २४९ ॥ ❋

प्रथम तौ भरतकी विनती आदरपूर्वक सुनिये. फिर विचार कर कीजिये. हे राम! सत्पुरुषोंके मतको और लोकके मतको विचार व राजनीति और वेदके सिद्धांतको निचोर कर करिये ॥ २४९ ॥

गुरु अनुराग भरतपर देखी ॥ राम हृदय आनन्द बिशेखी ॥ १ ॥ ❋
भरतहिँ धर्मधुरन्धर जानी ॥ निज सेवक तन मानस बानी ॥ २ ॥ ❋

भरतके ऊपर गुरु वसिष्ठजीका अतिशय प्रेम देख, रामचन्द्रजीके मनमें अति विशेष आनंद हुआ ॥ १ ॥ और भरतको धर्ममें अग्रणी व तन मन वचनसे अपना निज सेवक जानकर ॥ २ ॥

बोले गुरुआयसु अनुकूला ॥ बचन मंजु मृदु मंगलमूला ॥ ३ ॥ ❋
नाथ शपथ पितुचरण दुहाई ॥ भयउ न भुवन भरतसम भाई ॥ ४ ॥ ❋

प्रभु गुरुकी आज्ञाके अनुकूल मनोहर कोमल मंगलके मूल वचन बोले ॥ ३ ॥ रामने कहा कि–हे नाथ ! मुझे आपकी शपथ है और पिताके चरणोंकी दुहाई है कि, भरतके जैसा भाई आजलों जगत्में पैदा नहीं हुआ है ॥ ४ ॥

जे गुरुपद अम्बुज अनुरागी ॥ ते लोकहु बेदहु बड़भागी ॥ ५ ॥ ❋
राउर जापर अस अनुरागू ॥ को कहिसकै भरतसम भागू ॥ ६ ॥ ❋

महाराज ! जिनकी गुरुके चरणकमलोंमें प्रीति है, वे वेद और लोक दोनोंमें बड़भागी हैं ॥ ५ ॥ सो जिस भरतपर आपकी ऐसी कृपा है, उस भरतके बराबर भाग्य कौन किसका कह सकता है ? ॥ ६ ॥

लखि लघु बंधु बुद्धि लकुचाई ॥ करत बदनपर भरत बड़ाई ॥ ७ ॥ ❋
भरत कहहिँ सो किये भलाई ॥ अस कहिराम रहे अरगाई ॥ ८ ॥ ❋

भरतको छोटा भाई समझके उसके मुंहपर बड़ाई करते मेरी बुद्धि सकुचती है ॥ ७ ॥ पर वास्तवमें बात यह है कि-जो भरत कहता है वह करनेसे सबकी भलाई है. इसमें कुछ संदेह नहीं. ऐसे कहकर प्रभु चुप रह गये ॥ ८ ॥

दोहा-तब मुनि बोले भरतसन, सब सँकोच तजि तात ॥ ❋
कृपासिंधु प्रिय बन्धुसन, कहहु हृदयकी बात ॥ २५० ॥ ❋

तब बसिष्ठजीने भरतसे कहा कि-हे तात ! अब आप सब संकोच तज कर, अपने प्रियबंधु कृपासिंधु श्रीरामचन्द्रसे जो मनकी बात हो सो कहो ॥ २५० ॥

सुनि मुनिबचन राम रुख पाई ॥ गुरु साहेब अनुकूल अघाई ॥ १ ॥ ❋
लखि अपने शिर सब छरभारू ॥ कहि न सकै कछु करै बिचारू ॥ २ ॥ ❋

हे पार्वती ! मुनि वसिष्ठजीके वचन सुन, प्रभुकी रुख पाय भरतने गुरु महाराजको पूर्ण रीतिसे अपने अनुकूल समझे ॥ १ ॥ परंतु सब व्यवहारका भार अपने शिर समझकर, कुछ कह नहीं सका, किंतु मनमें विचार करने लगा ॥ २ ॥

पुलक शरीर सभा भै ठाढ़े ॥ नीरज नयन नेह जल बाढ़े ॥ ३ ॥ ❋
कहब मोर मुनिनाथ निबाहा ॥ यहिते अधिक कहौं मैं काहा ॥ ४ ॥ ❋

भरतका स्नेहके कारण शरीर पुलकित हो गया और नेत्रकमलोंमें जल भर आया. उस समय वह सभाके बीच खड़ा होकर बोला कि-॥ ३ ॥ मेरे जो कहना था वो तौ सब मुनिराज श्रीवसिष्ठजीने निवाह दिया है. सो इससे बढ़कर ज्यादा मैं क्या कहूंगा ? ॥ ४ ॥

मैं जानौं निजनाथ सुभाऊ ॥ अपराधिहुँ पर कोह न काऊ ॥ ५ ॥ ❋
मोपर कृपा सनेह बिशेखी ॥ खेलत खुनस कबहुँ नहिँ देखी ॥ ६ ॥ ❋

मैं मेरे स्वामीके स्वभावको खूब अच्छीतरह जानता हूं कि, वे किसी अपराध करनेवालेपरभी क्रोध नहीं करते ॥ ५ ॥ सो मुझपर तौ प्रभुकी कृपा और स्नेह अति विशेष है; क्योंकि खेल खेलते समय कभी मुझपर रिस करते नहीं देखे है ॥ ६ ॥

शिशुपनते परिहरेउँ न संगू ॥ कबहुँ न कीन्ह मोर मनभंगू ॥ ७ ॥ ❋
मैं प्रभुकृपारीति जिय जोही ॥ हारेहु खेलि जितावहीं मोहीं ॥ ८ ॥ ❋

बचपनसेही मैंने प्रभुका संग कभी नहीं छोड़ा है और प्रभुने कभी मेरा मनभंग नहीं किया है ॥ ७ ॥ प्रभुकी कृपाकी रीति मैं मनमें भलीभांति जान गया हूं; क्योंकि जब मैं खेलमें हार जाता, तौ प्रभु मुझे पीछा जिता देते. तात्पर्य यह कि-कभी मेरा मनभंग नहीं करते ॥ ८ ॥

दोहा–महूँ सनेह सकोचबश, सनमुख कहे न बैन ॥ ❋
दरशन तृप्ति न आजु लगि, प्रेम पियासे नैन ॥ २५१ ॥ ❋

और मैनेभी स्नेह और संकोचके कारण कभी सन्मुख होकर बचन नहीं कहे है और प्रेमके प्यासे मेरे नेत्र आजलों प्रभुके दर्शन कर तृप्त नहीं हुए है ॥ २५१ ॥

बिधि न सकेउ सहि मोर दुलारा ॥ नीच बीच जननी मिसु पारा ॥ १ ॥ ❋
इहौ कहत मोहिँ आजु न शोभा ॥ आपुन समुझि साधु शुचि कोभा ॥ २ ॥

अहह ! श्रीरामचन्द्रजी जो मुझे दुलारते हैं, वह प्यार विधातासे सहा न गया. अतएव उसने माताके मिषसे यह नीच बीच पटक दिया है ॥ १ ॥ और आजके दिन तौ मैं यह कहतेभी शोभा नहीं देता; क्योंकि अपनीही समझसे साधु और पवित्र कौन हुआ है ? ॥ २ ॥

मातु मन्द मैं साधु सुचाली ॥ उर अस आनत कोटि कुचाली ॥ ३ ॥ ❋
फरैं कि कोदव बालि सुशाली ॥ मुकता श्रवै कि शम्बुक ताली ॥ ४ ॥ ❋

जो मैं मेरे मनमें ऐसे लाता हूं कि–माता तौ महा मंदभागिन और मूर्ख है और मैं साधु व अच्छी चाल चलनेवाला हूं, तौ इसमें करोड़ों तरहकी कुचालें होती हैं ॥ ३ ॥ क्योंकि कोदोंकी बाली (खेत) में क्या कभी अच्छे चाँवल फल सकते है ? या घोंघेवाले तालावमें क्या मोती उपज सकते हैं ? तौ फिर कुचाली मातासे सुचाल पुत्रका होनाभी असंभवही है ॥ ४ ॥

सपनेहुँ दोष कलेश न काहू ॥ मोर अभाग उदधि अवगाहू ॥ ५ ॥ ❋
बिनु समुझे निज अघ परिपाकू ॥ जानेउँ जाइ जननि कह काकू ॥ ६ ॥ ❋

भरत कहते हैं कि–इसमें किसीका कुछभी दोष व क्लेश स्वप्नमेंभी नहीं है. किंतु यह तौ मेराही अथाह अभाग्य समुद्र है कि, जिसका पार पाना अति अशक्य है ॥ ५ ॥ मै किसीको जो कुछ कहता हूं सो मेरे पापके परिणामको विना सोचे कहता हूं; क्योंकि मैंही जो इस बातको जानता तौ माताको टेढ़े वचन कहकर वृथा क्यों जलाता ? वास्तवमें जो कुछ हुआ है, सो सब मेरे पापका फल है पर मैं इस बातको नहीं समझा ॥ ६ ॥

हृदय हेरि हारेउँ सब ओरा ॥ एकहि भांति भलिहि भल मोरा ॥ ७ ॥ ❋
गुरु गुसाँई साहिब सिय रामू ॥ लागत मोहिँ नीक परिणामू ॥ ८ ॥ ❋

अब मैं सब ओरसे मनमें हेर विचार करके सब प्रकारसे हार गया हूं, सो अब तौ मेरा भला एकही तरहसे तौ भलेही हो जावे. बाकी दूसरा तौ एकहू उपाय नहीं है ॥ ७ ॥ आप जैसे तौ महाराज गुरु, और सीता राम जैसे स्वामी, सो इस बातसे तौ मुझे परिणाममें अच्छा होता भलेही लगता है और कुछ नहीं दीखता ॥ ८ ॥

दोहा–साधु सभा प्रभु गुरु निकट, कहौं सुथल सति भाउ ॥ ❋
प्रेम प्रपंच कि झूठ फुर, जानहिँ मुनि रघुराउ ॥ २५२ ॥ ❋

महाराज ! यहां सत्पुरुषोंका तौ समाज है और प्रभु और गुरु पास बैठे हैं और पवित्र सुन्दर क्षेत्र है; सो मैं यहां या तौ सत्यभावसे कहता हूं या प्रेमसे कहता हूं. या प्रपंचकी

रचना रचकर कहता हूं, या झूंठ वा सच कहता हूं, सो तौ मुनि और प्रभु जानतेही हैं; क्योंकि ये अन्तर्यामी है, सबके घट २ की जानते है ॥ २५२ ॥

भूपति मरण प्रेमप्रण राखी ॥ जननी कुमति जगत सब साखी ॥ १ ॥ ❋
देखि न जाहिँ बिकल महतारी ॥ जरहिँ दुसह ज्वर पुर नर नारी ॥ २ ॥ ❋

ऐसे अपने अंतःकरणकी शुद्धता दिखाकर भरतने कहा कि–हे प्रभु ! राजाने मरकर अपने प्रेमका प्रण निबाह लिया और मेरी माता कैकेयीने कुबुद्धि करके कुचाल करी, इस बातको सब संसार जानता है ॥ १ ॥ उस दुःखसे दुखी जो ये मातायें विकल हो रहीं है, वो दुःख मुझसे देखा नहीं जाता. दूसरा नगरके नरनारी सब दुसह दुखसे जूदेही जल रहे हैं ॥ २ ॥

महीं सकल अनरथकर मूला ॥ सो सुनि समुझि सहौं सब शूला ॥ ३ ॥ ❋
सुनि बन गमन कीन्ह रघुनाथा ॥ करि मुनिबेष लषण सिय साथा ॥ ४ ॥ ❋

हे नाथ ! इस सब अनर्थका मूल मैंही हूं. सो सुन व समझकर सब दुःख सहताही हूं ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! जब मैंने यह वज्रघातसा कठोर बचन सुना कि, प्रभु मुनिवेष बनाकर, लक्ष्मण और सीताके साथ वनमें पधारे हैं ॥ ४ ॥

बिनु पनहीं अरु प्यादेहि पाये ॥ शंकर साखि रह्यो इहि धाये ॥ ५ ॥ ❋
बहुरि निहारि निषादसनेहू ॥ कुलिश कठिन उर भयउ न बेहू ॥ ६ ॥ ❋

तहां न तौ पावोंमें पनहीं है और न कोई चढ़नेको सवारी है किंतु पांवन पयादे जाते हैं. तब यह घाव जो मैंने सहा है, सो शंकरही साक्षी हैं. मैं क्या कहूं ? ॥ ५ ॥ फिर निषाद गुहका स्नेह देखकर, जो यह वज्रसा कठोर मेरा हृदय न फट गया ॥ ६ ॥

अब सब आँखिन्ह देखेउँ आई ॥ जियत जीव जड़ सबै सहाई ॥ ७ ॥ ❋
जिनहिँ निरखि मग्ु सांपिनि बीछी ॥ तजहिँ विषम विष तामसतीछी ॥ ८ ॥

सो अब सब अपनी आंखोंसे आकर देखता हूं और यह जड़जीव जीतेजी सब कुछ सहता हूं ॥ ७ ॥ अहह ! जिन रामचन्द्रको देखकर सांप और बीछी कि, जो तमोगुणी और महाक्रूर हैं, वेभी अपने विषम विषको तजकर मार्ग दे देते हैं ॥ ८ ॥

दोहा–ते रघुनन्दन लषण सिय, अनहित लागे जाहि ॥ ❋
तासु तनय तजि दुसह दुख, दैव सहावे काहि ॥ २५३ ॥ ❋

वे राम लक्ष्मण और सीता जिसको अप्रिय लगते हैं, उसके पुत्र (मुझ) को छोंड़के यह विधाता दूसरे किसको दुसह दुख सहावेगा ? ॥ २५३ ॥

सुनि अति बिकल भरत बर बानी ॥ आरतप्रीति बिनय नय सानी ॥ १ ॥ ❋
शोकमगन सब सभा खँभारू ॥ मनहुँ कमलबन पर्‌यो तुषारू ॥ २ ॥ ❋

आर्ति, प्रीति, विनय और नीति भरी विकल भरतकी उत्तम वाणी सुनकर, ॥ १ ॥ सब सभाके लोग शोकाकुल हो ऐसे शोकमग्न होगये कि, मानों कमलवनके ऊपर पालाही पड़ा ॥ २ ॥

कहि अनेक बिधि कथा पुरानी ॥ भरत प्रबोध कीन्ह मुनि ज्ञानी ॥ ३ ॥ ❋
बोलेउ उचित बचन रघुनन्दू ॥ दिनकरकुलकैरव वनचन्दू ॥ ४ ॥ ❋

तब महामुनि ज्ञानी वसिष्ठजीने अनेक प्रकारकी पुरानी कथा कहकर भरतको प्रबोध किया ॥३॥ उस अवसरमें सूर्यवंशरूप कुमुदवनका विकास करनेके लिये चन्द्ररूप श्रीरामचन्द्र आनंदकंदने ये योग्य वचन कहे ॥ ४ ॥

तात जीय जनि करहु गलानी ॥ ईश अधीन जीवगति जानी ॥ ५ ॥ ❋
तीन काल त्रिभुवन मत मोरे ॥ पुण्यश्लोक तात कर तोरे ॥ ६ ॥ ❋

कि–हे तात ! तुम अपने जीमें ग्लानि मत करो; क्योंकि जीवकी गति ईश्वरके आधीन है. इसमें प्राणीका कुछ बश नहीं. इस बातको समझो ॥ ५ ॥ हे भाई ! मेरी रायमें तौ तीनों काल व तीनों लोकोंमें पुण्यश्लोक भगवान् जो विष्णु हैं, सो तुम्हारे हस्तगत हैं ॥ ६ ॥

उर आनत तुमपर कुटिलाई ॥ जाइ लोक परलोक नशाई ॥ ७ ॥ ❋
दोष देहिँ जननिहिँ जड तेई ॥ जिन्ह गुरु साधु सभा नहिँ सेई ॥ ८ ॥ ❋

इसलिये जो कोई तुमपर कुटिलभाव लाता है, उसका यह लोक तौ बिगड़ेही. पर परलोकभी बिगड़ जाता है ॥ ७ ॥ और माताको दोष वे मूर्ख लगाते हैं कि, जिन्होंने गुरु और सत्पुरुषोंकी सभाकी सेवा नहीं करी है ॥ ८ ॥

दोहा–मिटहिँ पाप परपंच सब, अखिल अमंगल भार ॥ ❋
लोक सुयश परलोक सुख, सुमिरत नाम तुम्हार ॥ २५४ ॥ ❋

भैया ! जो कोई तुम्हारे नामका स्मरण करता है, उसके समस्त पाप और प्रपंच मिट जाते हैं. सब अमंगलका भार उतर जाता है. इस लोकमें बड़ाई होती है और परलोकमें सुख होता है ॥ २५४ ॥

कहौं सुभाव सत्य शिव साखी ॥ भरत भूमि रह राउर राखी ॥ १ ॥ ❋
तात कुतर्क करहु जिय जाये ॥ बैर प्रेम नहिँ दुरै दुराये ॥ २ ॥ ❋

हे भरत ! मैं यह बात स्वभावसे सत्य कहता हूं इसमें महादेवजी साक्षी है कि, यह पृथ्वी भरतकी रक्षासे रही हुई है ॥ १ ॥ हे तात ! कभी तुम अपने मनमें वृथा कुतर्क मत करो क्योंकि बैर और प्रीति छिपाये नहीं छिपते ॥ २ ॥

मुनिगण निकट बिहँग मृग जाहीं ॥ बाधक बधिक बिलोकि पराहीं ॥३॥ ❋
हित अनहित पशु पक्षिउ जाना ॥ मानुष तन गुण ज्ञान निधाना ॥४॥ ❋

देखो, पक्षी और हरिण मुनिराजोंके निकट तौ अपने आप चले जाते हैं और मारनेवाले बधिकको देखकर दूर भग जाते हैं ॥ ३ ॥ अपना भला बुरा तौ पशु पक्षीभी जानते हैं. तहां मनुष्यशरीर तौ गुण और ज्ञानका भंडारही है ॥ ४ ॥

तात तुमहिँ मैं जानौं नीके ॥ करौं कहा असमंजस जीके ॥ ५ ॥ ❋
राखेउ राउ सत्य मोहिँ त्यागी ॥ तन परिहरेउ प्रेमपण लागी ॥ ६ ॥ ❋

हे तात ! मैं तुमको भलीभांति जानता हूं; पर क्या करूं ? जीमें बड़ी दुविधा लग रही है ॥ ५ ॥ जिस राजाने मुझेभी त्याग दिया पर अपना सत्य निबाह लिया. और फिर प्रेमका प्रण रखनेके लिये शरीरभी त्याग दिया ॥ ६ ॥

तासु बचन मेटत मन शोचू ॥ तेहिते अधिक तुम्हार सँकोचू ॥ ७ ॥ ❋

तापर गुरु मोहिँ आयसु दीन्हा ॥ अवशि जो कहहु चहौं सो कीन्हा ॥ ८॥
हे तात ! जितना उनके वचन लोपते, मेरे मनमें शोच होता है, उससे ज्यादा संकोच मुझे तुम्हारा है ॥ ७ ॥ और उसपरभी फिर गुरुने मुझे आज्ञा दी है, सो हे भरत ! तुम जो कहोगे वह मैं अवश्य करना चाहूंगा ॥ ८ ॥

दोहा—मन प्रसन्न करि सकुच तजि, कहउ करौं सो आज ॥ ❋
सत्यसिन्धु रघुबर बचन, सुनि भा सुखी समाज ॥ २५५ ॥ ❋
हे भैया ! तुम मनको प्रसन्न कर, संकोचको तजकर, आज जो कुछ कहोगे, सो मैं अवश्य करूंगा. सत्यसिंधु कृपासिंधु श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुन, सब सभासद लोग प्रसन्न हुए ॥ २५५ ॥

सुरगण सहित सभय सुरराजू ॥ शोचहिँ चाहत होन अकाजू ॥ १ ॥ ❋
करत बिचार बनत कछु नाहीं ॥ राम शरण सबके मनमाहीं ॥ २ ॥ ❋
परंतु देवगणके साथ इंद्रके मनमें भारी भय उपजा; अतएव, मनमें शोच करने लगा कि, अब तो अकाज होना चाहता है ॥ १ ॥ देवतालोग अनेक प्रकारके विचार करते हैं, पर कुछ बनता नहीं दीखता. अतएव सब अपने २ मनमें प्रभुका शरण लेते हैं ॥ २ ॥

बहुरि बिचार परस्पर कहहीं ॥ रघुबर भक्तभक्तिवश अहहीं ॥ ३ ॥ ❋
सुधि करि अम्बरीष दुर्बासा ॥ भे सुर सुरपति निपट निरासा ॥ ४ ॥ ❋
और फिर आपसमें विचार कर, कहते हैं कि—प्रभु भक्तजनकी भक्तिके आधीन हैं ॥ ३ ॥ जब देवता और इंद्रको अंबरीष और दुर्वासाकी कथा याद आगई, तब तो वे बिलकूलही निराश हो गये ॥ ४ ॥

सहे सुरन्ह बहुकाल विषादा ॥ नरहरि किये प्रगट प्रहलादा ॥ ५ ॥ ❋
लगि लगि कान कहहिँ धुनि माथा ॥ अब सुरकाज भरतके हाथा ॥ ६ ॥
देवता कहते हैं कि—देखो, आपनने हिरण्यकशिपुसे कितने कालतक दुख पाया और सहा, परंतु आखिर नृसिंह भगवानको प्रगट तो भक्त प्रल्हादनेही किया ॥ ५ ॥ देवता कानोंमें लग लगके कहते है और अछता पछताके शिर धुन धुनकर कहते हैं कि—अब तो अपना काम भरतके हाथ है ॥ ६ ॥

आन उपाय न देखिय देवा ॥ मानत राम सुसेवक सेवा ॥ ७ ॥ ❋
हियसप्रेम सेवहिँ सब भरताहिँ ॥ निज गुण शील राम बश करताहिँ ॥८॥
हे देवो ! अब तो यहां दूसरा एकहू उपाय नहीं दीखता; क्योंकि प्रभु अपने सुसेवककी सेवाकोही मुख्य मानते हैं ॥ ७ ॥ सो अब तो प्रीतिके साथ हृदयके भीतर भरतकी सेवा करो. कि, जिसने अपने गुण व शीलसे रामको अपने आधीन कर लिया है ॥ ८ ॥

दोहा—सुनि सुरमत सुरगुरु कहेउ, भल तुम्हर बड़ भाग ॥ ❋
सकल सुमंगल मूल जग, भरतचरण अनुराग ॥ २५६ ॥ ❋
देवताओंकी ऐसी अच्छी सलाह सुनकर बृहस्पतिने देवताओंसे कहा कि—हे देवो ! तुम बड़े

भाग्यशाली हो, तुम्हारा भाग्य बहुत अच्छा है; क्योंकि जगत्के सब सुमंगलके मूलकारण भरतके चरणकमलोंमें तुम्हारी पूर्ण प्रीति हुई ॥ २५६ ॥

सीतापतिसेवकसेवकाई ॥ कामधेनु शत सरिस सुहाई ॥ १ ॥ ❋
भरतभक्ति तुम्हरे मन आई ॥ तजहु शोच बिधि बात बनाई ॥ २ ॥ ❋

हे देवो ! प्रभुके भक्तजनोंकी सेवा सौ कामधेनुके समान सुहावनी है ॥ १ ॥ तुम्हारे मनमें भरतकी भक्ति आ गई है. अब तुम शोच क्यों करते हो ? शोचको तज दो. विधाताने बात बना दी ॥ २ ॥

देखि देवपति भरतप्रभाऊ ॥ सहज सुभाव बिबश रघुराऊ ॥ ३ ॥ ❋
मन थिर करहु देव डर नाहीं ॥ भरतहिँ जानि राम परिछाहीं ॥ ४ ॥ ❋

हे इंद्र ! भरतका प्रभाव देखकर, मत डरो; क्योंकि प्रभु उसके सहज स्वभावसे अधीन है ॥ ३ ॥ हे देवो ! तुम अपने मनको स्थिर करो. यहां किसी बातका भय नहीं है; क्योंकि भरतको तुम प्रभुकी परछाहींही जानो ॥ ४ ॥

सुनि सुरगुरु सुरसम्मत शोचू ॥ अन्तर्यामी प्रभुहिँ सँकोचू ॥ ५ ॥ ❋
निजशिर भार भरत जिय जानी ॥ करत कोटिबिधि उर अनुमानी ॥ ६ ॥

देवताओंकी सलाहको सुन बृहस्पति मनमें शोच करते हैं और सकुचाते है कि– प्रभु अंतर्यामी हैं, सो यह न जानें कि, बृहस्पति देवताओंको नहीं समझता ॥ ५ ॥ भरतने सब भार अपने जीमें अपने शिर समझकर, मनमें करोडों प्रकारसे अनुमान किया ॥ ६ ॥

करि बिचार मन दीन्ह्यो टीका ॥ रामरजायसु आपनि नीका ॥ ७ ॥ ❋
निज प्रण तजि राखेउ प्रण मोरा ॥ छोह सनेह कीन्ह नहिँ थोरा ॥ ८ ॥

पर आखिर विचार करके मनमें यह निश्चय कर लिया कि, जो प्रभुकी आज्ञा है उसीमें अपना भला है ॥ ७ ॥ क्योंकि प्रभुने अपना प्रण त्यागकर मेरा प्रण राखा है. और करुणा कृपा व स्नेह कुछ कम नहीं किया है ॥ ८ ॥

दोहा–कीन्ह अनुग्रह अमित अति, सब बिधि सीतानाथ ॥ ❋
करि प्रणाम बोले भरत, जोरि जलज युग हाथ ॥ २५७ ॥ ❋

सीतापति श्रीरामचन्द्रजीने सब प्रकारसे मुझपर अपार अनुग्रह किया है, इसलिये मुझे प्रभुकी आज्ञानुसार करना चाहिये. ऐसा विचार कर दोनों हस्तकमल जोड़, प्रणाम करके भरतने कहा कि– ॥ २५७ ॥

कहउँ कहावउँ का अब स्वामी ॥ कृपाअम्बुनिधि अंतर्यामी ॥ १ ॥ ❋
गुरु प्रसन्न साहिब अनुकूला ॥ मिटि मलिन मन कलपित शूला ॥ २ ॥ ❋

हे कृपासिंधु ! स्वामी ! अब मैं क्या कहूं ? और क्या कहलाऊं ? क्योंकि आप अंतर्यामी हो. सबके घट घटकी जानते हो ॥ १ ॥ मुझपर गुरु प्रसन्न हैं और स्वामी अनुकूल हैं, इससे मेरे मनकी सब मलिन कल्पना और शूल मिट गये हैं ॥ २ ॥

अपडर डरउँ न शोच समूले ॥ रबिहिँ न दोष देव दिशि भूले ॥ ३ ॥ ❋
मोर अभाग मातु कुटिलाई ॥ बिधिगति बिषम काल कठिनाई ॥ ४ ॥ ❋

हे प्रभु ! मैं वृथाही डरता हूं. बाकी शोच तौ समूल नष्ट हो गया है. हे प्रभु ! जो कोई आदमी दिशा भूल जाय और सूर्यका उदय पश्चिममें कहे तौ उसमें सूर्यका कुछ अपराध नहीं. किंतु वह दोष उसीका है कि, जो दिशाको भूलगया है. ऐसे यहां मेराही अपराध है. आपका कुछ दोष नहीं ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! अद्यपि मेरा अभाग्य, माताकी कुटिलता, बिधाताकी विषम गति और कालकी कठिनता ॥ ४ ॥

पांव रोपि सब मिलि मोहिँ घाला ॥ प्रणतपाल प्रण आपन पाला॥ ५ ॥ ❋
यह नइ रीति न राउरि होई ॥ लोकहु बेद बिदित नहिँ गोई ॥ ६ ॥ ❋

इन सबोंने मिल व पांव रोप कर, मुझे अच्छीतरह घायल किया है; तथापि हे प्रणतपाल ! आपने अपना प्रण निबाहके मुझे पाला है ॥ ५ ॥ हे प्रभु ! यह आपकी रीति कोई नई नहीं है; क्योंकि लोक और वेद सबमें प्रसिद्ध है. कहीं छिपी नहीं है ॥ ६ ॥

जग अनभल भल एक गुसांई ॥ कहिय होइ भल कासु भलाई ॥ ७ ॥ ❋
देव देवतरु सरिस सुभाऊ ॥ सनमुख बिमुख न काहुहि काऊ ॥ ८ ॥ ❋

हे प्रभु ! यह सब जगत् बुरा है. भले तौ एक आपही हो. सो अब किसतरह सबका भला होवे ? सो वह आप कहो ॥ ७ ॥ हे देव ! आपका स्वभाव कल्पवृक्षके समान है, सो आप किसीके कभी सन्मुख और विमुख नहीं रहते हो ॥ ८ ॥

दोहा–जाइ निकट पहिँचान तरु, छांह शमन सब शोच ॥ ❋
मांगत अभिमत पाव फल, राउ रंक भल पोच ॥ २५८ ॥ ❋

हे प्रभु ! जैसे कल्पवृक्ष कि, जिसकी छायामें जानेसे सब शोच शांत हो जाते हैं. उस कल्पवृक्षको पहिंचान कर, जो उसके पास जाता है और मनवांछित फल मांगता है तौ वह उससे अवश्य पाता है. चाहे वह माँगनेवाला राजा हो वा रंक; या भला हो वा पोच (बुरा) हो. ऐसे जो आपके शरण आता है, उसे अपने मनवांछित फल अवश्य मिल जाते हैं ॥ २५८ ॥

लखि सबबिधि गुरुस्वामि सनेहू ॥ मिटेउ क्षोभ नहिँ मन संदेहू ॥१॥ ❋
अब करुणाकर कीजिय सोई ॥ जनहित प्रभु चित क्षोभ न होई ॥ २ ॥ ❋

हे पार्वती ! गुरु वसिष्ठजी और स्वामी रामचन्द्रजीका सब प्रकारसे पूर्णप्रेम व स्नेह देखकर, भरतके मनका क्षोभ मिट गया और मनका संदेह जाता रहा ॥ १ ॥ तब भरतने प्रभुसे कहा कि– हे करुणानिधि ! प्रभु ! अब आप वही उपाय कीजिये कि, जिससे भक्तजनका भला होवे, और उसके मनमें किसी प्रकारका क्षोभ न होवे ॥ २ ॥

जो सेवक साहिब संकोची ॥ निजहित चहै तासु मति पोची ॥ ३ ॥ ❋
सेवकहित साहिब सेवकाई ॥ करै सकल सुख लोभ बिहाई ॥ ४ ॥ ❋

जो नौकर स्वामीसे संकोच रखकर, अपना भला चाहता है, उसकी बुद्धि अत्यंत पोची यानी

नीच समझनी चाहिये ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! नौकरका भला तो इसीमें है कि, सब सुखके लोभको तज-कर अपने स्वामीकी निष्कपटभावसे सेवा करे ॥ ४ ॥

स्वारथ नाथ फिरे सबहीका ॥ किये रजाइ कोटिबिधि नीका ॥ ५ ॥ ❋
यह स्वारथ परमारथ सारू॥ सकल सुकृत फल सुगति सिंगारू ॥ ६ ॥ ❋

हे नाथ ! आपके अवधको पीछा लौटनेमें सबका भला है और आपकी आज्ञा माननेमें करोड़ों प्रकारसे अच्छा है ॥ ५ ॥ तात ! यही स्वार्थ और परमार्थका सार है और समस्त सुकृतका फल व सुगति कहे मुक्तिका शृंगार है ॥ ६ ॥

देव एक बिनती सुनि मोरी ॥ उचित होइ तस करब बहोरी ॥ ७ ॥ ❋
तिलक समाज साजि सब आना ॥ करिय सुफल प्रभु जो मन माना॥८॥ ❋

हे देव ! मेरी एक बिनती है सो सुनिये. फिर उसे बिचारके जैसा उचित हो वैसा करिये ॥ ७ ॥ हे प्रभु ! हम सब राज्याभिषेककी सामग्रीका साज लाये है, सो जो आपके मनमें जँचे तो उसे सुफल करिये ॥ ८ ॥

दोहा–सानुज पठइय मोहिँ बन, कीजिय सबहिँ सनाथ ॥ ❋
नातरु फेरिय बन्धु दोउ, नाथ चलौं मैं साथ ॥ २५९ ॥ ❋

हे नाथ ! या तो शत्रुघ्नके साथ मुझको वनमें भेज कर, हम सबको सनाथ करिये. नहीं तो शत्रुघ्न और लक्ष्मणको अवध भेज दीजिये कि, जिससे हे नाथ ! मैं आपके साथ वनमें चलूं ॥ २५९ ॥

नतरु जाहिँ बन तीनिउँ भाई ॥ बहुरिय सीय सहित रघुराई ॥ १ ॥ ❋
जेहिबिधि प्रभु प्रसन्न मन होई ॥ करुणासागर कीजिय सोई ॥ २ ॥ ❋

और नहीं तो हम तोनों भाई वनमें जायंगे आप सीताके साथ अयोध्याको लौटियेगा ॥ १ ॥ हे कृपासिंधु ! प्रभु ! जिसप्रकार आपका मन प्रसन्न हो ऐसेही करिये ॥ २ ॥

देव दीन्ह सब मोपर भारू ॥ मोरे नीति न धर्म बिचारू ॥ ३ ॥ ❋
कहौं बचन सब स्वारथ हेतू ॥ रहत न आरतके चित चेतू ॥ ४ ॥ ❋

हे देव ! आपने तो सब भार मेरे शिर दे दिया है और मेरे नीति और धर्मके विचारका लेशभी नहीं है ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! मैं जो कहता हूं ये सब बचन अपने मतलबकेलिये कहता हूं; क्योंकि आर्त पुरुषके चित्तमें किसी प्रकारका चेतू कहे ज्ञान नहीं रहता ॥ ४ ॥

उतर देइ बिनु स्वामि रजाई ॥ सो सेवक लखि लाजि लजाई ॥ ५ ॥ ❋
अस मैं अवगुणउदधि अगाधू ॥ स्वामि सनेह सराहत साधू ॥ ६ ॥ ❋

जो नौकर मालिककी आज्ञा विना उत्तर देता है, उस सेवकको देखकर लज्जाभी लजाती है ॥ ५ ॥ हे प्रभु ! यदपि मैं तो ऐसा अवगुणोंका अथाह समुद्र हूं तथापि साधु लोग स्वामीके स्नेहकी प्रशंसा किया करते हैं ॥ ६ ॥

अब कृपाल मोहिँ सो मत भावा ॥ सकुच स्वामि मन जाइ न पावा ॥ ७ ॥
प्रभुपद शपथ कहौं सति भाऊ ॥ जग मंगल हित एक उपाऊ ॥ ८ ॥ ❋

हे दयालु प्रभु ! अब मुझको तौ वही मत अच्छा लगता है कि, स्वामी किसी तरह मनमें संकोच न पावें ॥ ७ ॥ मुझे राउरे चरणोंकी शपथ है और मैं यह सत्यभावसे कहता हूं कि–जगत्के मंगलके लिये तौ केवल एक यही उपाय है ॥ ८ ॥

दोहा–प्रभु प्रसन्नमन सकुच तजि, जो जेहिं आयसु देव॥ ❀
सो शिर धरि धरि कराहिँ सब, मिटिहिँ अनट अवरेव ॥२६०॥ ❀

हे प्रभु ! आप प्रसन्नचित्त हो, संकोचको तज, जिसे जो आज्ञा देवेंगे वह आज्ञा शिर चढ़ा चढ़ाकर, सब करेंगे. हे प्रभु ! इसीसे कैकेयीके वरदानका क्लेश मिटेगा ॥ २६० ॥

भरतबचन शुचि सुनि सुर हरषे ॥ साधु सराहि सुमन सुर बरषे ॥ १ ॥ ❀
असमंजसबश अवधनिबासी ॥ प्रमुदित मन तापस बनबासी ॥ २ ॥ ❀

भरतके ऐसे शुद्ध सरल वचन सुन देवता प्रसन्न हुए और साधु साधु कह सराह सराह कर, फूल बरसाने लगे ॥ १ ॥ उसकाल अयोध्यावासी सब दुविधामें पड़ गये है. तपस्वी और वनवासी मनमें बड़े प्रसन्न हुए हैं ॥ २ ॥

चुप रहिगे रघुनाथ सँकोची ॥ प्रभुगति देखि सभा सब शोची ॥ ३ ॥ ❀
जनकदूत तेहिँ अवसर आये ॥ मुनि बशिष्ठ सुनि बेगि बुलाये ॥ ४ ॥ ❀

प्रभु संकोचके मारे चुप लगा गये है. प्रभुकी गति देख, सब सभाके लोग शोचबश होगये हैं ॥ ३ ॥ उसकाल जनकराजाके यहांसे दूत आये. सो समाचार सुन, वसिष्ठ मुनिने तुरंत अपने पास बुलाये ॥ ४ ॥

करि प्रणाम तिन्ह राम निहारे ॥ वेष देखि भये निपट दुखारे ॥ ५ ॥ ❀
दूतहिँ मुनिबर पूछी बाता ॥ कहहु बिदेह भूप कुशलाता ॥ ६ ॥ ❀

उन्होंने साष्टांग प्रणाम कर प्रभुका दर्शन किया. तौ प्रभुका मुनिकासा वेष देख, अत्यंत दुखित हुए ॥ ५ ॥ तहां मुनि वसिष्ठजीने दूतोंसे यह बात पूँछी कि–कहो, राजा जनक प्रसन्न हैं ? ॥ ६ ॥

सुनि सकुचाइ नाइ महि माथा ॥ बोले चर बर जोरे हाथा ॥ ७ ॥ ❀
बूझब राउर सादर साँई ॥ कुशलहेतु सो भयउ गुसाँई ॥ ८ ॥ ❀

वसिष्ठजीके वचन सुन, मनमें सकुचाय, धरतीकी ओर शिर झुकाय, हाथ जोड़कर दूत बोले ॥ ७ ॥ कि–हे नाथ ! आपका जो आदरके साथ पूजना है, वही कुशल व क्षेमका कारण है ॥ ८ ॥

दोहा–नाहित कोशलनाथके, साथ कुशल गइ नाथ ॥ ❀
मिथिला अवध विशेषते, जग सब भयउ अनाथ ॥ २६१ ॥

नहीं तौ मिथिला व अवधका जो कुशल है, वह तौ कोशलदेशके पति श्रीदशरथजीके साथही गया. और हे नाथ ! सब जगत् तौ अनाथ हुआही है; पर मिथिला और अयोध्या विशेष करके अनाथ हुई हैं ॥ २६१ ॥

कोशलपतिगति सुनि जनकौरा ॥ भे सब लोग शोचबश बौरा ॥ १ ॥ ❀
जेहिँ देखा तेहिँ समय बिदेहू ॥ नाम सत्य अस लाग न केहू ॥ २ ॥ ❀

कोशलनाथका यह हाल सुनकर, जनक तौ बाउला हुआही है; पर उसके साथ वहांके सब लोग शोचवश हो बाउले हो गये हैं ॥ १ ॥ जिस समय राजाने ये समाचार सुने थे उसकाल जिसने राजा जनक विदेहको देखा था, उस किस पुरुषको राजा जनकका "विदेह" यह नाम सत्य नहीं मालूम होता था? अर्थात् विदेहका अर्थ अचेतन है. सो सुध भूल जानेसे राजाका " विदेह " यह नाम " यथा नाम तथा गुणाः " इस कहावतके अनुसार यथार्थ हो गया था ॥ २ ॥

नारि कुचालि सुनत महिपाले ॥ सूझ न कुछ जस मणि बिनुब्याले ॥ ३ ॥
भरत राज रघुबर बनबासू ॥ भा मिथिलेशहिँ हृदय हरासू ॥ ४ ॥ ❋

रानी कैकेयीके कुचालके समाचार सुनतेही राजा ऐसा बिहबल हो गया कि, उसे कुछभी नहीं सूझा. जो दशा मणि विना सांपकी होती है, वह दशा राजाकी हो गयी ॥ ३ ॥ भरतको राज्याभिषेक, और रामचन्द्र आनंदकन्दको वनवास, ये समाचार सुन, राजा जनकके मनमें ऐसा क्लेश हुआ है कि, कुछ कहा नहीं जाता ॥ ४ ॥

नृप बूझे बुध सचिव समाजू ॥ कहहु बिचारि उचित का आजू ॥ ५ ॥ ❋
समुझि अवध असमंजस दोऊ ॥ चलिय कि रहिय न कह कछु कोऊ ॥ ६ ॥

राजा जनकने अपने अच्छे सयाने पंडित मंत्रियोंको सभामे बुलाकर पूँछा कि—तुम सब विचार कर कहो कि, आज अब आपनको क्या करना उचित है ? ॥ ५ ॥ राजाके वचन सुन, अयोध्यासंबंधी दोनो दुबिधाको समझकर, उनमेंसे कोईभी चलने वा ठहरनेके लिये कुछभी नहीं कह सका अर्थात् कुछभी निर्णय नहीं हुआ ॥ ६ ॥

नृपति धीर धरि हृदय बिचारी ॥ पठये अवध चतुर चर चारी ॥ ७ ॥ ❋
बूझि भरतगति भाउ कुभाऊ ॥ आयहु बेगि न होइ लखाऊ ॥ ८ ॥ ❋

तब राजा जनकने मनमें धीरज धर, बहुत प्रकारका विचार करके हम चार चतुर चारों (दूतों) को पठाया ॥ ७ ॥ और कहा कि—तुम जाओ, और भरतके भाव व कुभावकी निश्चय करके पीछे बेग आओ. पर इस बातका भरतको लखाऊ न पड़ना चाहिये ॥ ८ ॥

दोहा—गये अवध चर भरतगति, बूझे देखि करतूति ॥ ❋
चले चित्रकूटहिँ भरत, चार चले तिरहूति ॥ २६२ ॥ ❋

ये वचन सुन, जनक राजाके भेजेहुए दूत अयोध्या गये. तहां भरतका व्यौहार लख, करनी देख, भरतजीने जब चित्रकूटको पयान किया, तब वे तिरहुत (जनकका देश) को सिधारे ॥ २६२ ॥

दूतन आइ भरतकी करणी ॥ जनक समाज यथामति बरणी ॥ १ ॥ ❋
सुनि गुरु पुरजन सचिव महीपति ॥ भे सब शोच सनेह बिकल मति ॥ २ ॥

दूतोंने पीछा मिथिलापुरीमें आकर, जनक राजाकी सभामें अपनी बुद्धिके अनुसार भरतकी सब करनी कही ॥ १ ॥ सो सुन, गुरु, नगरके नर नारी, मंत्री और राजा ये सब शोच व स्नेहके कारण अत्यंत विकलबुद्धि हुए ॥ २ ॥

धरि धीरज करि भरत बड़ाई ॥ लिये सुभट साहनी बुलाई ॥ ३ ॥ ❋

१ एक तौ रामका चौदह वर्षतक वनवास, दूसरा भरतका राज्याभिषेक.

घर पुर देश राखि रखवारे ॥ हय गज रथ बहु यान सँवारे ॥ ४ ॥ ❋

निदान राजा जनकने मनमें धीरज धर, भरतकी बड़ाई कर अपने सुभट सेनापतियोंको बुलाय ॥ ३ ॥ घर, नगर और देशकी रक्षाकेलिये रखवारे रख, बहुतसे हाथी, घोड़े, रथ और अनेक प्रकारकी सवारियां सज ॥ ४ ॥

दुघड़ी साधि चले ततकाला ॥ किय बिश्राम न मग्ग महिपाला ॥ ५ ॥ ❋
भोरहि आजु नहाइ प्रयागा ॥ चले यमुन उतरन सब लागा ॥ ६ ॥ ❋

तत्काल दुघटिकी साधकर, पयानकर दिया है. महाराज ! राजा जनक लगातार चले आते है. उन्होंने मार्गमें कहीं विश्राम नहीं किया है ॥ ५ ॥ आज प्रातःकालमें सब लोग प्रयागराजमें नहाये हैं और चले चले यमुनाजीके तट आ, जमुनाजीको पार उतरने लगे हैं ॥ ६ ॥

खबरि लेन हम पठये नाथा ॥ तिन्ह कहि अस महि नायउ माथा ॥ ७ ॥
साथ किरात छ सातक दीन्हें ॥ मुनिबर तुरत बिदा चर कीन्हें ॥ ८ ॥ ❋

हे नाथ ! हमें आपकी खबर लेनेको भेजा है. हे पार्वती ! ऐसे कहकर, उन्होंने पृथ्वीकी ओर शिर झुका लिया ॥ ७ ॥ तब गुरु वसिष्ठजीने उनके साथ छः सात किरात दे, उन दूतोंको पीछा तुरंत बिदा कर दिया ॥ ८ ॥

दोहा–सुनत जनक आगमन सब, हर्षेउ अवधसमाज ॥ ❋
रघुनन्दनहिं सँकोच बड़, शोच बिबश सुरराज ॥ २६३ ॥ ❋

'राजा जनक आते हैं' ये समाचार सुन, अयोध्याके सब लोग अति आनंदित हुए, प्रभुको बड़ा संकोच हुआ और इंद्र शोचग्रस्त हो गया ॥ २६३ ॥

गरइ गलानि कुटिल कैकेई ॥ काहि कहै केहि दूषण देई ॥ १ ॥ ❋
अस मन आनि मुदित नरनारी ॥ भयउ बहोरि रहब दिन चारी ॥ २ ॥ ❋

कुटिल कैकेयी जनक राजाका आना सुनकर, मारे ग्लानिके लगी गलने. हे पार्वती ! अब वो किससे क्या कहे ? और किसे दूषण देवे ? कुछ बनि नहीं आता ॥ १ ॥ नगरके नर नारी मनमें ऐसा लाके बहुत आनंदित हुए हैं कि "अब तो दो चार दिन हमारा यहां रहना फिर जरूर होगा" ॥ २ ॥

यहि प्रकार गत बासर सोऊ ॥ प्रात अन्हान लगे सब कोऊ ॥ ३ ॥ ❋
कहि मज्जन पूजहिं नरनारी ॥ गणपति गौरि पुरारि तमारि ॥ ४ ॥ ❋

सो वह दिन उनका उसी प्रकारसे आनंदही आनंदमें व्यतीत हुआ है. फिर दूसरे दिन भोर होते ही सब लोग नहाने लगे हैं ॥ ३ ॥ सब नरनारी नहा नहा कर, गणेश, गौरी, महादेवजी और सूरजको पूजते हैं ॥ ४ ॥

रमारमण पद बन्दि बहोरी ॥ बिनवहिं अंचल अंजुलि जोरि ॥ ५ ॥ ❋
राजा राम जानकी रानी ॥ आनँद अवधि अवध रजधानी ॥ ६ ॥ ❋

और विष्णु भगवान्के चरणकमलोंको वंदन कर, हाथ जोड़, अंचल फैलाकर, बारंबार बिनती

करते हैं ॥ ५ ॥ कि–प्रभुकी कृपासे राम राजा और माता सीता पटरानी बनें और अयोध्या आनंदकी अवधि राजधानी होवे ॥ ६ ॥

सुबस बसौं फिर सहित समाजा ॥ भरतहिँ राम करैं युवराजा ॥ ७ ॥ ❋
यहि सुख सुधा सींचि सबकाहू ॥ देव देहु जग जीवनलाहू ॥ ८ ॥ ❋

और हम सब लोग फिर पीछे समाजके साथ सुबस नगरके भीतर बसें और रामचन्द्र आनन्दकन्द भरतको युवराज करैं ॥ ७ ॥ हे प्रभु ! इस सुखरूप अमृतको सींचकर, हम सब किसीको जगतमें जीनेका लाभ दो ॥ ८ ॥

दोहा–गुरु समाज भाइन सहित, रामराज पुर होउ ॥ ❋
अछत राम राजा अवध, मरण माँगु सबकोउ ॥ २६४ ॥ ❋

गुरु, राजसमाज और भाइयोंके साथ श्रीरामचन्द्रजी अयोध्यापुरीके राजा होवें और राम राजाके अवधमें विराजमान रहते हम सबकिसीका मरण होवे. प्रभुसे हम यह प्रार्थना करते है ॥ २६४ ॥

सुनि सनेहमय पुरजन बानी ॥ निंदहिं योग बिरति मुनि ज्ञानी ॥ १ ॥ ❋
यहि बिधि नित्यकर्म करि पुरजन ॥ रामहिँ करहिँ प्रणाम पुलकितन ॥ २ ॥

अयोध्यावासी लोगोंकी ऐसी स्नेहरसभरी प्रिय वाणी सुनके ज्ञानी मुनिलोग योग और वैराग्यकी निंदा करते है कि– हम कुछ नहीं है, हमारा योग और वैराग्य कुछ नहीं है. हमसे ये बहुत उत्तम है; क्योंकि इनका प्रभुमें अतिशय प्रेम है. योग और वैराग्य करकेभी प्रभुमें प्रेम प्रगट करना है, सो इनका पहलेही स्वाभाविक बना हुआ है, और हमारे स्वाभाविक प्रेम नहीं है, इससे हमारा योग और वैराग्य वृथा है ॥ १ ॥ इसप्रकार पुरवासी लोग नित्य अपने नित्यकर्म करते हैं. और प्रभुको प्रणाम कर फूले अंग नहीं समाते ॥ २ ॥

ऊँच नीच मध्यम नर नारी ॥ लहैं दरश निज निज अनुहारी ॥ ३ ॥ ❋
सावधान सबहीं सनमानहिँ ॥ सकल सराहत कृपानिधानहिँ ॥ ४ ॥ ❋

वहां जितने स्त्रीपुरुष हैं, वे सब ऊंचे नीचे और मझले दर्जेके अपनी अपनी रुचिके अनुसार दर्शन पाते हैं ॥ ३ ॥ और प्रभु बड़ी सावधानीके साथ सबोंका शिष्टाचार करते हैं. तिससे सब लोग हर्षित हो कृपासिंधु प्रभुकी प्रशंसा करते हैं ॥ ४ ॥

लरकाईते रघुबर बानी ॥ पालत नीति प्रीति पहिँचानी ॥ ५ ॥ ❋
शील सँकोचसिन्धु रघुराऊ ॥ सुमुख सुलोचन सरल सुभाऊ ॥ ६ ॥ ❋

कि–प्रभु बचपनहीसे प्रीतिको पहिंचानकर, अपनी वाणीसे नीतिका पालन करते हैं ॥ ५ ॥ रघुकुलमणि श्रीरामचन्द्र शील व संकोचके सागर हैं, इनका मुख और नेत्र अतिसुन्दर हैं और स्वभाव बहुतही सरल है ॥ ६ ॥

कहत राम गुणगण अनुरागे ॥ सब निजभाग सराहन लागे ॥ ७ ॥ ❋
हम सब पुण्यपुंज जग थोरे ॥ जिनहिँ राम जानत करि मोरे ॥ ८ ॥ ❋

सब लोग प्रभुके गुणगण गाते हैं और प्रीतिसे अपने भाग्यको सराहते हैं ॥ ७ ॥ और कहते हैं कि–हम सबोंके जैसे पुण्यपुंज पुरुष जगतमें थोड़े हैं कि–जिन्हें प्रभु अपने करके जानते हैं ॥ ८ ॥

दोहा-प्रेममगन तेहि समय सब, सुनि आवत मिथिलेश ॥ ❁
सहित सभा संभ्रम उठे, रविकुलकमलदिनेश ॥ २६५ ॥ ❁

हे पार्वती ! राजाजनकके आनेके समाचार सुन, उसकाल सब लोग प्रेममग्न हुए हैं. और सूर्यवंशरूपी कमलवनके लिये सूरजरूप श्रीरामचन्द्रजी सभाके साथ अपने आसनसे बड़े संभ्रमके साथ उठे हैं ॥ २६५ ॥

आगे गवन कीन्ह रघुनाथा ॥ भाइ सचिव गुरु पुरजन साथा ॥ १ ॥ ❁
गिरिबर दीख जनक नृप जबहीं ॥ करि प्रणाम रथ त्यागेउ तबहीं ॥ २ ॥

और भाई, मंत्री, गुरु व पुरवासी लोगोंके साथ प्रभु अगोनी करनेको आगे चले हैं ॥ १ ॥ इधर ज्योंही जनक राजाने गिरिबर चित्रकूटको देखा, त्योंही उसे प्रणाम कर रथको त्याग दिया ॥ २ ॥

राम दरश लालसा उछाहू ॥ पथ श्रम लेश कलेश न काहू ॥ ३ ॥ ❁
मन तहँ जहँ रघुबर बैदेहीं ॥ बिनु मन तनु दुख सुख सुधि केहीं ॥ ४ ॥ ❁

सब लोगोंके मनमें प्रभुके दर्शनकी बड़ी लालसा लगी है, जिससे किसीको मार्गसंबंधी श्रमके क्लेशका लवलेशभी नहीं है ॥ ३ ॥ और उसकाल किसीको किसी तरहकी सुध बुध नहीं रही, क्योंकि उनका मन तो वहां कि, जहां आनन्दकन्द श्रीरामचन्द्र हैं. फिर बिना मन शरीरके भीतर सुख दुःखका भान किसप्रकार होवे ? ॥ ४ ॥

आवत जनक चले यहि भाँती ॥ सहित सनेह प्रेम मति माँती ॥ ५ ॥ ❁
आये निकट देखि अनुरागे ॥ सादर मिलन परस्पर लागे ॥ ६ ॥ ❁

इसप्रकार राजा जनक चित्रकूटको चले आते हैं और सबकी बुद्धि व प्रेम स्वाभाविक स्नेहके कारण अतिशय छकी है ॥ ५ ॥ जब बहुत समीप आगये और दीदार मिले, तब प्रेमका समुद्र बढ़ा और आदरपूर्वक आपसमें मिलने लगे ॥ ६ ॥

लगे जनक मुनिगणपदबंदन ॥ ऋषिन्ह प्रणाम कीन्ह रघुनन्दन ॥ ७ ॥ ❁
भाइन सहित राम मिलि राजहिं ॥ चले लेवाइ समेत समाजहिं ॥ ८ ॥ ❁

फिर जनक राजाने मुनिवृन्दके चरणकमलोंको प्रणाम किया. तब प्रभुनेभी ऋषिलोगोंको वंदन प्रणाम किया ॥ ७ ॥ फिर भाइयोंके साथ प्रभु जनक राजासे मिल, सब समाजके साथ राजा जनकको आश्रमको लिवाले चले ॥ ८ ॥

दोहा-आश्रम सागर शांतरस, पूरन पावन पाथ ॥ ❁
सेन मनहुँ करुणा सरित, लिये जात रघुनाथ ॥ २६६ ॥ ❁

आश्रमको समुद्रके रूपकसे वर्णन करते हैं. आश्रम है सोही तो सागर है. जो शांतरस है, सोही पवित्र जल भरा है. और प्रभुके विरहसे करुणावाली जो सेना है, सोही मानों नदी है. तिसे प्रभु अपने आश्रमको कैसे लिये जाते हैं कि-जैसे भगीरथ भागीरथीको समुद्रमें ले गया था ॥ २६६ ॥

बोरति ज्ञान बिराग करारे ॥ बचन सशोक मिलत नदि नारे ॥ १ ॥ ❁
सोच उसास समीर तरंगा ॥ धीरज तट तरुवर कर भंगा ॥ २ ॥ ❁

ज्ञान और वैराग्यरूपी कँगारोंको वो करुणारसरूप नदी बोरती यानी ढहाती चली जाती है. तिसमे शोकसहित जो वचन है सोही मानों नदी और नारे आ मिले है ॥ १ ॥ शोच जो है सोही बयार है और शोचसे जो ऊँचे ऊँचे उसास लेते है, सोही मानों तरंग हैं. धीरज है सोही तीर है. जो दृढ़ता है सोही पेड़ है. तिन्हैं वो उखेड़ती चली जाती है ॥ २ ॥

बिषम बिषाद तुरावति धारा ॥ भय भ्रम भँवरावर्त अपारा ॥ ३ ॥ ❋
केवट बुध विद्या बड़ि नावा ॥ सकहिँ न खेइ एक नहिँ आवा ॥ ४ ॥ ❋

जो विकट विषाद (रंज) है सोही मानों वेगवाली धारा है, सो वह तुराती चली जाती है. जो भय है कि, प्रभु क्या करेंगे? सोही यहां भंवर है. और जो भ्रम है कि, प्रभु पीछे फिरैं या नहीं? सोही मानों अगाध अपार आंवर्त है ॥ ३ ॥ जो विद्वान् लोग हैं सोही मानों केवट हैं और विद्या है सोही बड़ी भारी नाव है; परंतु कोई उसे खेइ नहीं सकता अर्थात् किसीकी विद्या चलती नहीं है. और न एकभी युक्ति बनिआती है ॥ ४ ॥

बनचर कोल्ह किरात बिचारे ॥ थके बिलोकि पथिक हित हारे ॥ ५ ॥ ❋
आश्रम उदधि मिली जब जाई ॥ मनहुँ उठेउ अंबुधि अकुलाई ॥ ६ ॥ ❋

जैसे नदी पूर आती है, तब तटपर रहनेवाले बिचारे बनचर कोल्ह और किरात पथिक लोग हृदयमें हार मान देखके थकित रह जाते है, ऐसे सब थकित हो खड़े है ॥ ५ ॥ जब भारी नदी समुद्रमें जाकर मिलती है तब जैसे समुद्र क्षोभित हो जाता है, ऐसे जब यह करुणावाली सेनारूप नदी आश्रमरूप समुद्रमें जाकर मिली यानी सेना आश्रममें पहुची, तब आश्रम ऐसा अकुला गया कि, मानों समुद्रही क्षोभित हो उठा है ॥ ६ ॥

शोक बिकल दोउ राजसमाजा ॥ रहा न ज्ञान न धीरज लाजा ॥ ७ ॥ ❋
भूप रूप गुण शील सराही ॥ शोचहिँ शोक सिन्धु अवगाही ॥ ८ ॥ ❋

दोनों राजाओंकी समाज शोकसे अत्यंत विकल हो रही हैं. उसकाल किसीको धीरज, लाज और ज्ञानकी सुध नहीं रही है ॥ ७ ॥ राजा जनक प्रभुके गुण, शील और स्वरूपको सराह सराहकर शोच करता है और शोचरूपी समुद्रमें मग्न होता है ॥ ८ ॥

छंद–अवगाहि शोकसमुद्र शोचहिँ नारि नर ब्याकुल महा ॥ ❋
दै दोष सकल सरोष बोलहिँ बाम बिधि कीन्हो कहा ॥ ❋
सुर सिद्ध तापस योगिजन मुनि दशा देखि बिदेहकी ॥ ❋
तुलसी न समरथ कोउ जो तरि सकै सरित सनेहकी ॥ १२ ॥ ❋

सब नरनारी शोचरूपी समुद्रमें मग्न हो शोच करते हैं और अत्यंत विह्वल होते हैं. और विधाताको दोष देकर, क्रोधसहित सबके सब यों कहते हैं कि "इस अभागे विधाताने यह प्रतिकूल क्या किया?" तुलसीदासजी कहते हैं कि–जितने देवता, सिद्ध, तपस्वी, योगी और मुनिजन हैं वे सब विदेह (जनक) राजाका बेहाल हाल देखकर, ऐसे शिथिल होगये हैं कि, उनमेंसे कोईभी समर्थ न रहा कि, जो स्नेहकी नदीको पार उतर सके? ॥ १२ ॥

[1] आवर्त उसे कहते हैं कि, जो खोहके भीतर जल घूमता रहता है.

सोरठा-किये अमित उपदेश, जहँतहँ लोगन मुनिबरन ॥ ❋
धीरज धरिय नरेश, कहेउ बशिष्ठ बिदेहसन ॥ ११ ॥ ❋

यद्यपि मुनिलोगोंने जहां तहां लोगोंको बहुत उपदेश दिया; परंतु कुछ असर नहीं हुआ तब वसिष्ठजीने जनक राजासे कहा कि-हे राजा ! अब आप धीरज धरिये ॥ ११ ॥

जासु ज्ञान रवि भवनिशि नाशा ॥ वचन किरण मन कमल बिकाशा ॥१॥
तेहि कि मोह ममता नियराई ॥ यह सिय राम सनेह बड़ाई ॥ २ ॥ ❋

जिसके ज्ञानरूपी सूर्यसे संसाररूपी रात्रिका नाश हो जाता है और जिसके वचनरूप किरणजालसे मनरूपी कमल सदा विकसित रहता है ॥ १ ॥ क्या उसके समीप मोह और ममता व्याप सकतीहै ? नहीं. पर 'महायोगी जनक राजाको मोह व्याप जाना' यह सीतारामके स्नेहकी बड़ाई है अर्थात् इनका स्नेह ऐसा है कि, योगीजनोंके मनभी चलायमान हो जाते है ॥ २ ॥

विषयी साधक सिद्ध सयाने ॥ त्रिविध जीव जग वेद बखाने ॥ ३ ॥ ❋
रामसनेह सरस मन जासू ॥ साधुसभा बड़ आदर तासू ॥ ४ ॥ ❋

वेदमें जगतके भीतर तीन प्रकारके जीव कहेहैं. तिनमें पहले विषयी, (जो विषयभोगमें आसक्त हैं) दूसरे साधक कहे मुमुक्षु (जो मोक्षके अर्थ योग आदि साधन साधते हैं) और तीसरे सिद्ध कहे जीवन्मुक्त ॥ ३ ॥ यद्यपि विषयी जीवकी अपेक्षा मुमुक्षु मुख्य है और उनसेभी जीवन्मुक्त सर्वोपरि हैं, तौभी साधु पुरुषोंकी सभाके अन्दर तौ उसीका भारो आदर सत्कार होता है कि, जिसके मनमें प्रीतिपूर्वक प्रभुका स्नेह है ॥ ४ ॥

सोह न राम प्रेम बिनु ज्ञाना ॥ कर्णधार बिनु जिमि जलयाना ॥ ५ ॥ ❋
मुनि बहुबिधि बिदेह समुझाये ॥ रामघाट सबलोग अन्हाये ॥ ६ ॥ ❋

प्रभुके प्रेम बिना ज्ञान कैसे शोभा नहीं देता ? कि, जैसे केवटके बिना नाव शोभा नहीं देती. और खेईभी नहीं जाती ॥ ५ ॥ मुनिलोगोंने राजा जनकको अनेकप्रकारसे समझाया, तब सब लोगोंके साथ राजा रामघाटमें नहाये ॥ ६ ॥

सकल शोच संकुल नर नारी ॥ सो बासर बीतेउ बिनु बारी ॥ ७ ॥ ❋
पशु खग मृगन्ह न कीन्ह अहारा ॥ प्रियपरिजनकर कवन बिचारा ॥ ८ ॥

हे पार्वती ! वहां जितने स्त्री पुरुष थे वे सब शोचसे व्याकुल हो रहे थे. उस दिन तौ किसीने जलभी नहीं पिया ॥ ७ ॥ उस दिन पशु, पक्षी और चौपायोंनेभी कुछ आहार नहीं किया तौ फिर प्रियबंधु और परिजनकी तौ बातही कौन ? ॥ ८ ॥

दोहा-दोउ समाज निमिराज रघु, राज नहाने प्रात ॥ ❋
बैठे सब बटबिटप तर, मन मलीन कृश गात ॥ २६७ ॥ ❋

दोनों ओरकी समाज और राजा जनकजी व रामचन्द्रजी ये सब प्रातःकालमें स्नानकर, एक वटके पेड़के तले बिराजे. उसकाल सबके मन मलीन और तन छीन हो रहे थे ॥ २६७ ॥

जे महिसुर दशरथ पुरबासी ॥ जे मिथिलापति नगर निबासी ॥ १ ॥ ❋
हंसबंश गुरु जनक पुरोधा ॥ जिन्ह जग मग परमारथ शोधा ॥ २ ॥ ❋

तहां जो अयोध्याके रहनेवाले ब्राह्मण थे, वे और जो मिथिलापुरी (दरभंगा) के पति जनक राजाके नगरमें रहनेवाले ब्राह्मण थे, वे सब ॥ १ ॥ और सूर्यवंशके गुरु वसिष्ठजी और जनकके पुरोहित शतानन्द कि, जिन्होंने जगत्में परमार्थका मार्ग शोध लिया है ॥ २ ॥

लगे कहन उपदेश अनेका ॥ सहित धर्म नय बिरति बिबेका ॥ ३ ॥ ❋
कौशिक कहि कहि कथा पुरानी ॥ समझाये सब सभा सुबानी ॥ ४ ॥ ❋

वे सब धर्म, न्याय, वैराग्य और विवेकके साथ अनेक प्रकारके उपदेश करने लगे है ॥ ३ ॥ विश्वामित्रजीने पुरानी अनेक कथायें कह कहकर, सब सभाको अपनी मधुर वाणीसे समझाया है ॥ ४ ॥

तब रघुनाथ कौशिकहिँ कहेऊ ॥ नाथ कालिह बिनु जल सब रहेऊ ॥ ५ ॥
मुनि कह उचित कहत रघुराई ॥ गयउ बीति दिन पहर अढाई ॥ ६ ॥ ❋

तब प्रभुने विश्वामित्रजीसे कहा कि—हे नाथ ! कलभी सब लोग बिना जल रहे है सो अब कुछ आहारकी तदबीज अवश्य होनी चाहिये ॥ ५ ॥ प्रभुके वचन सुन, मुनि विश्वामित्रजीने कहा कि,यह बात रामचन्द्रजी ठीक कहते हैं; क्योंकि आजभी अढ़ाई पहर दिन बीतनेको आया है ॥ ६ ॥

ऋषि रुख लखि कह तिरहुतिराजू ॥ इहाँ उचित नहिँ अशन अनाजू ॥७॥
कहा भूप भल सबहिँ सुहाना ॥ पाइ रजायसु चले नहाना ॥ ८ ॥ ❋

विश्वामित्रजीकी रुख देखकर जनक राजाने कहा कि—यहां अनाज खाना तो योग्य नहीं है, इसलिये फल मूलहीसे गुजारा करना ठीक है ॥ ७ ॥ राजाके वचन सुन सब लोगोंने कहा कि—राजाने यह बात बहुत अच्छी कही है. यह सबको अच्छी लगी है. ऐसे कह, आज्ञा पाय, सब लोग नहाने चले है ॥ ८ ॥

दोहा—तेहिं अवसर फल फूल दल, मूल अनेक प्रकार ॥ ❋
लै आये बनचर बिपुल, भरि भरि काँवरि भार ॥ २६८ ॥ ❋

उसकाल बनचर लोग भारके भार कांवरी भर भरकर अनेक प्रकारके फल, फूल, मूल और दल बहुत ले आये हैं ॥ २६८ ॥

कामद भे गिरि रामप्रसादा ॥ अवलोकत अपहरत बिषादा ॥ १ ॥ ❋
सर सरिता बन भूमि बिभागा ॥ जनु उमँगत आनँद अनुरागा ॥ २ ॥ ❋

प्रभुकी कृपासे उसवक्त वह पर्वतभी मनवांछित कामना पूरनेवाला हो गया था कि, जिसे देखतेही मनका विषाद मिट जाता था ॥ १ ॥ तालाव, नदियां और वन व भूमिके प्रदेश कि, जिनमें मानों आनंद और अनुराग (प्रेम) उमंगने लगा था ॥ २ ॥

बेलि बिटप सब सफल सफूला ॥ बोलत खग मृग अति अनुकूला ॥ ३ ॥ ❋
तेहिं अवसर बन अधिक उछाहू ॥ त्रिविध समीर सुखद सबकाहू ॥ ४ ॥ ❋

वहां जितने बेल बूटे और पेड़ थे, वे सब फूल और फलोंसे लदालूम (युक्त) हो गये. तिनपर पक्षी मनोहर अनुकूल मधुर वाणी बोल रहे हैं. भौंरे गुंज रहे हैं. और चौपाये कलोलें कर रहे

हैं ॥ ३ ॥ उसकाल वनके भीतर बड़ा भारी उछाह होने लगा, और शीतल सुगंध मंद तीन प्रकारकी सुखकारी बयार सबको सुखदेनी बहने लगी ॥ ४ ॥

जाइ न बरणि मनोहरताई ॥ जनु महि करति जनक पहुनाई ॥ ५ ॥ ❀
तब सब लोग नहाइ नहाई ॥ रामजनकमुनिआयसु पाई ॥ ६ ॥ ❀

उस समयकी सुन्दरता कुछ कहनेमें नहीं आती. मानों पृथ्वीही जनक राजाकी पहुनाई करने लगी थी ॥ ५ ॥ तब सब लोग नहा नहा कर रामचन्द्र, जनक और मुनिवसिष्ठकी आज्ञा पा पाकर ॥६॥

देखि देखि तरुबर अनुरागे ॥ जहँ तहँ पुरजन उतरन लागे ॥ ७ ॥ ❀
दल फल मूल कन्द बिधि नाना ॥ पावन सुन्दर सुधासमाना ॥ ८ ॥ ❀

सुन्दर वृक्षोंको देख देखकर, प्रसन्न होने लगे हैं और नगरके लोग जहाँ तहाँ उतरने लगे हैं ॥ ७ ॥ जब सबके डेरे होचुके, तब अनेक प्रकारके कन्द मूल फल और दल कि, जो अति पवित्र, देखनेमें बहुत सुन्दर और खानेमें अमृतसे मधुर थे ॥ ८ ॥

दोहा—सादर सबकहँ रामगुरु, पठये भरि भरि भार ॥ ❀
पूजि पितर सुर अतिथि गुरु, लगे करन फलहार ॥ २६९ ॥ ❀

वे भारके भार कांवरी भर भरकर वसिष्ठजीने सबके यहां आदरके साथ भेज दिये हैं. सबलोग पित्रीश्वर, देवता, अतिथि और गुरुको पूजकर फलाहार करने लगे ॥ २६९ ॥

यहि बिधि बासर बीते चारी ॥ राम निरखि नर नारि सुखारी ॥ १ ॥ ❀
दुहुँ समाज अस रुचि मनमाहीं ॥ बिनु सिय राम फिरब भल नाहीं ॥२॥ ❀

इसप्रकार चार दिन बीते तहां प्रभुको देख देखकर सब नरनारी अति सुख मानते हैं ॥ १ ॥ और दोनों ओरकी समाजके मनमें ऐसी अभिलाषा है कि, सीतारामके बिना पीछा फिरना अच्छा नहीं है ॥ २ ॥

सीताराम संग बन बासू ॥ कोटि अमरपुरसरिस सुपासू ॥ ३ ॥ ❀
परिहरि लषण राम बैदेही ॥ जेहि घर भाव बाम बिधि तेही ॥ ४ ॥ ❀

क्योंकि सीतारामके साथ जो वनमें रहना है, सो करोड़ स्वर्गके समान सुपासु कहे सुखकारी है ॥ ३ ॥ राम, लक्ष्मण और सीताको त्यागकर जिसका मन घरकी ओर लगा है, तो समझो कि उससे विधाता प्रतिकूल है ॥ ४ ॥

दाहिन दैव होइ जब सबहीं ॥ राम समीप बसिय बन तबहीं ॥ ५ ॥ ❀
मन्दाकिनि मज्जन तिहुँकाला ॥ राम दरश मुदमंगलमाला ॥ ६ ॥ ❀

जो सबके लिये विधाता अनुकूल होगा, तो बनके भीतर रामके पास रहना होगा ॥ ५ ॥ जो हमारा यहां रहना होवे तो इससे उत्तम हमारे लिये क्या है ? क्योंकि तीनों काल मंदाकिनीका तो स्नान और आनंद व मंगलका पुंज रामका दर्शन ॥ ६ ॥

अटन रामगिरि बन तापस थल ॥ अशन अमिय सम कन्द मूल फल॥७॥
सुख समेत संबत दुइ साता ॥ पलसम होहिँ न जानिय जाता ॥ ८ ॥ ❀

रामगिरि (चित्रकूट) के वनके अन्दर घूमते कि-जो तपस्वीलोगोंकी वासभूमि है और अमृतके समान मिष्ट फल मूल कन्द खाना ॥ ७ ॥ जो हमारा यहां रहना हो जावे, तो चौदह वर्ष ऐसे सुखसे बीत जांय, कि, एक क्षणके समान हो जांय. जाते मालूमभी न होवे कि, कब बीत गये ॥ ८ ॥

दोहा-यहि सुख योग न लोग सब, कहहिं कहां अस भाग ॥ ❋
सहज सुभाव समाज दुहुँ, रामचरण अनुराग ॥ २७० ॥ ❋

हे पार्वती ! सब लोग ऐसे कहते है कि-इस सुखका योग हमारे कहां ? हमारे ऐसे भाग्य कहां ? कि, ऐसे सुख मिलें. इसप्रकार दोनों समाज प्रभुके चरणोंमे स्वाभाविक स्नेह व प्रेमके कारण अत्यंत मग्न हैं ॥ २७० ॥

यहि बिधि सकल मनोरथ करहीं ॥ बचन सप्रेम सुनत मन हरहीं ॥ १ ❋
सीय मातु तेहि समय पठाई ॥ दासी देखि सुअवसर आई ॥ २ ॥ ❋
सावकाश सुनि सब सियसासू ॥ आयउ जनकराज रनिवासू ॥ ३ ॥ ❋

और सब लोग इस पूर्वोक्त रीतिसे मनमें मनोरथ करते है कि, जिनके प्रेमभरे वचन सुन मन हरा जाता है ॥ १ ॥ उस समय सीताकी माताने एक दासी भेजी. सो वह अच्छा अवसर देखकर वहां पीछी आई ॥ २ ॥ और बोली कि-अभी वहां अच्छा अवसर है, ये समाचार सुन जनक राजाकी रानी सुनयना सीताजीकी सास (कौसल्या) के पास आई ॥ ३ ॥

"दोहा-ज्येष्ठशुक्ल जिष्णुगदिवस, जनकराजरनिवास ॥ ❋
आयहु सुनि सवकाश तहँ, जहँ सियकी सब सास" ॥ ❋

"ज्येष्ठ शुदी एकादशीके दिन जनक राजाकी रानी सावकाशके समाचार सुन कौसल्याके पास आई."

कौसल्या सादर सनमानी ॥ आसन दीन्ह समय सम आनी ॥ ४ ॥ ❋

कौसल्याने उसका बड़े आदरके साथ सन्मान किया और समयके जैसा आसन ला दिया ॥ ४ ॥

शील सनेह सरस दुहुँ ओरा ॥ द्रवहिं देखि सुनि कुलिश कठोरा ॥ ५ ॥ ❋
पुलक शिथिल तनु बारि बिलोचन ॥ महि नख लिखन लगीं सब शोचन ६

दोनों तर्फका शील और स्नेह ऐसा सरस है कि जिसको देख व सुन, कठोर वज्रभी द्रवीभूत हो जाता है ॥ ५ ॥ अंग सब शिथिल हो रहे है. शरीरमें पुलकावली छा रही है. नेत्रोंमें जल भरा आता है. नखोंसे धरतीको लिखतीं हैं. सब रनिवास इसप्रकार दुखित हो शोच करतीं हैं ॥ ६ ॥

सब सिय राम प्रेमकी मूरति ॥ जनु करुणा बहुबेष बिसूरति ॥ ७ ॥ ❋
सीयमातु कह बिधिबुधि बाँकी ॥ जिमि पयफेनु फोरि पवि टाँकी ॥ ८ ॥ ❋

सीतारामके प्रेमकी विद्यमान मूर्ति सब रानियां कैसी दीख पड़ती हैं, कि, मानों करुणारसही बहुतसे वेष बनाके शोच करता है ॥ ७ ॥ उसकाल सीताकी माता सुनयनाने कहा कि-अहह ! विधाताकी बुद्धि बड़ी बांकी है. जो कोमल दूधके फेनको वज्रकी टांकीसे फाड़ना चाहता है अर्थात् सीतारामको दुख देना चाहता है ॥ ८ ॥

दोहा-सुनिय सुधा देखिय गरल, सब करतूति कराल ॥ ❋
जहँ तहँ काक उलूक बक, मानस सुकृत मराल ॥ २७१ ॥ ❋

रानी कहती है कि–हाय ! सुननेमें तो अमृत आया अर्थात् रामचन्द्रजीका राज्याभिषेक और देखनेमें यह जहर दीख पड़ता है अर्थात् नववास. इसलिये मैं कहती हूं कि–विधाताकी करनी बड़ी कठोर कराल है. जगत्में जो यह बात कहते है कि–काक, उल्लू और बगुले तो जहां तहां मिलते है, पर हंस तो मानससरोवरमेंही रहते है,सो सत्य है अर्थात् खुद मतलबी छली आदमी तो हरकहीं मिलते हैं,परंतु दीनदयालु सज्जन पुरुष जगत्में बहुत कम है. यहां काकके समान देवता उल्लूके समान मंथरा और बकके समान कैकेयी और हंसके समान गुरु वसिष्ठ आदि हैं ॥ २७१ ॥

सुनि सशोच कह देवि सुमित्रा ॥ बिधिगति अतिबिपरीत बिचित्रा ॥१॥ ❋
जो सृजि पालै हरै बहोरी ॥ बालकेलि सम बिधिमति भोरी ॥ २ ॥ ❋

सुनयनाके शोच सहित वचन सुन सुमित्राने कहा कि–हे हे देवी ! विधाताकी गति बड़ी विपरीत और विचित्र है ॥ १ ॥ देखो, पहले तो वो जगत्को रचता है, फिर पालता है और आखिर संहार करता है इसलिये विधाताकी गति बालकके खेलके समान होनेसे हम तो उसकी बुद्धिको बिलकुल भोली यानी अयान समझती है ॥ २ ॥

कौशल्या कह दोष न काहू ॥ कर्मबिबश दुख सुख क्षति लाहू ॥ ३ ॥ ❋
कठिण कर्मगति जान बिधाता ॥ सो शुभ अशुभ कर्मफलदाता ॥ ४ ॥ ❋

ये वचन सुन कौसल्याने कहा कि–इसमें किसीका दोष नहीं है; क्योंकि सुख दुख हानि और लाभ ये सब कर्माधीन है ॥ ३ ॥ और कर्मोंकी जो कठिन गति है,उसे विधाताही जानता है और वही उस कर्मके अनुसार शुभ अशुभ फल देता है ॥ ४ ॥

ईश रजाय शीस सबहीके ॥ उतपति थिति लय बिषहु अमीके ॥ ५ ॥ ❋
देबि मोहबश शोचिय बादी ॥ बिधि प्रपंच अस अचल अनादी ॥ ६ ॥ ❋

और वास्तवमें तो यह बात है कि–परमेश्वरकी आज्ञा सबके शिरपर है; क्योंकि वही तो ब्रह्माद्वारा सृष्टिको उत्पन्न करता है, विष्णुद्वारा पालता है, शंभुद्वारा संहार करता है और जहर व अमृत सब उसीने पैदा किये है ॥ ५ ॥ इसलिये हे देवी ! तुम वृथा शोच मत करो और मोहबश मत होवो; क्योंकि विधाताका प्रपंच तो अनादि कालसे ऐसाही अविचल चला आता है ॥ ६ ॥

भूपति जियब मरब उर आनी ॥ शोचिय सखि लखि निज हित हानी ॥७॥
सीयमातु कह सत्य सुबानी ॥ सुकृती अवधि अवधपति रानी ॥ ८ ॥ ❋

हे सखी ! राजाके जीने और मरने अपनेको मनमें लाकर जो शोच करना है, सो केवल लाभ व हानिको लखकर है. नहीं तो सब अपने २ कर्मानुसार फल पाते हैं. फिर शोच करना क्यों ?॥७॥ कौसल्याके वचन सुन, सुनयनाने कहा कि–हे रानी ! तुम्हारा कहना सब सत्य है; क्योंकि सुकृती पुरुषोंके परमावधि महाराज दशरथजीकी तुम पटरानी हो ॥ ८ ॥

दोहा–लषण राम सिय जाहिँ बन, भल परिणाम न पोच ॥ ❋
गहबर हिय कह कौशिला, मोहिँ भरतकर शोच ॥ २७२ ॥ ❋

सुनयनाके वचन सुन गद्गदहृदय होकर कौसल्या बोली कि–राम लक्ष्मण और सीताके

वनमें जानेसे आगे अच्छाही होगा. इसका फल कोई बुरा नहीं है. तथापि मुझे भरतकी ओरकी बड़ी चिन्ता है ॥ २७२ ॥

ईश प्रसाद अशीश तुम्हारी ॥ सुत सुतबधू देवसरि बारी ॥ १ ॥ ❀
रामशपथ मैं कीन्ह न काऊ ॥ सो करि सखी कहौं सतिभाऊ ॥ २ ॥ ❀

फिर कौसल्या कहती है कि–हे रानी ! परमेश्वरकी कृपासे और तुम्हारी कृपासे मेरे चारों पुत्र और चारों बहू गंगाजलके समान निर्मल है ॥ १ ॥ हे रानी ! मैंने आजलों कभी किसीके सोंही रामकी शपथ नहीं की है, सो वह करके यानी रामकी शपथ खाकर मैं सत्यभावसे तुमसे कहती हूं ॥ २ ॥

भरत शील गुण बिनय बड़ाई ॥ भायप भक्ति भरोस भलाई ॥ ३ ॥ ❀
कहत शारदहु कइ मति हीची ॥ सागर सीप कि जाहि उलीची ॥ ४ ॥ ❀

कि–भरतके शील, गुण, नम्रता, बड़पन, भायप, भक्ति, भरोसा और भलाई ॥ ३ ॥ इत्यादि गुणोंको कहते खुद सरस्वतीकी बुद्धिभी हिचि कहे रुंक जाती है, तौ दूसरेकी बातही कौन ? कहीं समुद्रभी सीपसे उलचा जाता है ? जैसे सीपसे समुद्र नहीं उलचा जाता, ऐसे भरतके गुण शारदासे नहीं कहे जाते ॥ ४ ॥

जानो सदा भरत कुलदीपा ॥ बारबार मोहिँ कहेउ महीपा ॥ ५ ॥ ❀
कसे कनक मणि पारिख पाये ॥ पुरुष परखिये समय सुभाये ॥ ६ ॥ ❀

और राजा दशरथनेभी मुझे कईबेर ऐसे कहा रहा है कि–भरतको सदा कुलदीपक जानना ॥ ५॥ सो मैंने खूब अच्छीतरह परख लिया है जैसे सोना कसोटीपर कसनेसे और मणि (रत्न) पारखीके मिलनेसे परखा जाता है ऐसे आदमीका स्वभाव अवसर पड़नेसे जाना जाता है ॥ ६ ॥

अनुचित आजु कहब अस मोरा ॥ शोक सनेह सयानप थोरा ॥ ७ ॥ ❀
सुनि सुरसरि सम पावनि बानी ॥ भईं सनेह बिकल सब रानी ॥ ८ ॥ ❀

यद्यपि मेरा यह कहना यथार्थ है, परंतु आज ऐसे कहना ठीक नहीं है; क्योंकि इससे मेरा स्नेह सयानप और शोक कम हो जाता है. तात्पर्य यह कि–लोग यह जानेंगे कि, भरत राजा हुए इससे कौशल्या खुशामद करती है ॥ ७ ॥ कौसल्याको गंगाजलके समान पवित्र वाणी सुनकर सब रानियां स्नेहसे विह्वल हो गईं हैं ॥ ८ ॥

दोहा–कौसल्या कह धीर धरि, सुनहु देबि मिथिलेशि ॥ ❀
को बिबेकनिधि बल्लभहिँ, तुमहिँ सकै उपदेशि ॥ २७३ ॥ ❀

उसकाल कौसल्याने फिर सुनयनासे कहा कि–हे रानी ! धीरज धरो और जो मैं कहती हूं सो सुनो. हे रानी ! तुम ज्ञानके भंडार जनक राजाकी रानी हो सो, तुम्हें उपदेश करसके ऐसा कौन है ? ॥ २७३ ॥

रानि राय सन अवसर पाई ॥ आपनि भाँति कहब समुझाई ॥ १ ॥ ❀
राखिय लषण भरत गवनहिँ बन ॥ जो यहमत मानै महीप मन ॥ २ ॥ ❀

हे रानी ! तुम अवसर पाकर अपनी ओरसे राजाको समझाकर यह कहना कि– ॥ १ ॥ लक्ष्मण तो यहां रह जायँ यानी अयोध्याको पीछा लौट जायँ और भरत रामके संग वनमें चले जायँ ॥ २ ॥

तौ भल यतन करब सुबिचारी ॥ मोरे शोच भरतकर भारी ॥ ३ ॥ ❋
गूढ़ सनेह भरत मनमाहीं ॥ रहे नीक मोहिँ लागत नाहीं ॥ ४ ॥ ❋

यदि यह सलाह राजाके मनमें जंच जाय, तौ इसमें सबका भला है सो हे रानी! तुम विचार कर यही यत्न करना; क्योंकि मेरे मनमें भरतकी ओरका बड़ा भारी शोच है ॥ ३ ॥ हे रानी! भरतके मनमें रामचन्द्रके विषे अति गूढ़ प्रेम है, इसलिये उसके यहां रहनेमें मुझे ठीक नहीं दीख पड़ता ॥ ४ ॥

लखि सुभाव सुनि सरलसुबानी ॥ सब भइँ मगन करुणरस सानी ॥ ५ ॥ ❋
नभ प्रसून झरि धन्यधन्य धुनि ॥ शिथिल सनेह सिद्धयोगी मुनि ॥ ६ ॥ ❋

हे पार्वती! कौसल्याका सरल स्वभाव देख अति पवित्र सरल सुन्दर वाणी सुनकर सब रानियां करुणारसमें मग्न हो गई ॥ ५ ॥ आकाशमें फूलोंकी वृष्टि होने लगी. और सिद्ध, योगी व मुनि स्नेहसे शिथिल "धन्य धन्य" ध्वनि करने लगे ॥ ६ ॥

सब रनिवास थकित लखि रहेऊ ॥ तब धरि धीर सुमित्रा कहेऊ ॥ ७ ॥ ❋
देवि दण्ड युग यामिनि बीती ॥ राम मातु सुनि उठी सप्रीती ॥ ८ ॥ ❋

सब रनिवास यह आश्चर्य देखके थकित रह गई हैं तब धीरज धरकर सुमित्राने कौसल्यासे कहा कि—॥ ७ ॥ हे देवी! चारघड़ी रात्रि आ गई है. यह वचन सुन कौसल्या प्रीतिके साथ वहांसे उठी ॥ ८ ॥

दोहा—बेगि पांय धारिय थलहिं, कह सनेह सतिभाय ॥ ❋
हमरे तौ अब ईशगति, कै मिथिलेश सहाय ॥ २७४ ॥ ❋

और बोली कि—हे रानी! अब तुम अपने डेरे जाइयेगा. हे रानी! मैं यह स्नेह व सत्यभावसे कहती हूं कि, अब कैतौ हमारे परमेश्वरका शरण है, कै जनक राजा सहायक हैं ॥ २७४ ॥

लखि सनेह सुनि बचन बिनीता ॥ जनक प्रिया गहि पांव पुनिता ॥ १ ॥ ❋
देवि उचित अस बिनय तुम्हारी ॥ दशरथघरनि राममहतारी ॥ २ ॥ ❋

कौसल्याका स्नेह देख, विनयवाले वचन सुन, उसके पवित्र चरण धरकर, सुनयना बोली कि—॥ १ ॥ हे देवी! तुम्हारा ऐसे विनय करना सब प्रकारसे योग्य है; क्योंकि तुम महाराज दशरथजीकी रानी और रामचन्द्र आनन्दकन्दकी माता हो ॥ २ ॥

प्रभु अपने नीचहु आदरहीं ॥ अग्नि धूम गिरि शिर तृण धरहीं ॥ ३ ॥ ❋
सेवक राउ कर्म मन बानी ॥ सदा सहाय महेश भवानी ॥ ४ ॥ ❋

हे रानी! जो प्रभु यानी बड़े होते हैं, वे अपने नीचकोभी बहुत आदर देते हैं; देखो. अग्नि धूमको और पहाड़ तृणको शिरपर धारण करते हैं ॥ ३ ॥ हे रानी! राजा जनक मन, वच, कर्मसे आपके सेवक हैं और भवानी शंकर आपके सदा सहायक है ॥ ४ ॥

रौरे अंग योग जग कोहै ॥ दीप सहाय कि दिनकर सोहै ॥ ५ ॥ ❋
राम जाइँ बन करि सुरकाजू ॥ अचल अवधपुर करिहहिँ राजू ॥ ६ ॥ ❋

हे रानी ! तुम्हारे अंग यानी शरीरके योग्य जगत्में कौन है ? क्या सूर्य दीपककी सहायतासे शोभा पाता है ? ॥ ५ ॥ हे रानी ! रामचन्द्र वनमें जांय, देवतानका कार्य सिद्ध करके पीछे आवेंगे, और अयोध्यामें अखंड राज्य करेंगे ॥ ६ ॥

अमर नाग नर राम बाहुबल ॥ सुख बसिहहिं अपने अपने थल ॥ ७ ॥ ❋
यह सब याज्ञवल्क्य कहि राखा ॥ देवि न होइ मृषा मुनिभाखा ॥ ८ ॥ ❋

हे रानी ! रामके भुजबलसे देवता, नाग और मनुष्य ये सब अपने २ स्थल यानी स्वर्ग, पाताल और पृथ्वीमें सुखपूर्वक रहेंगे ॥ ७ ॥ यह सब कथा याज्ञवल्क्य मुनिने मुझे कह रक्खी है, सो मुनिका वचन कभी झूंठा नहीं होता ॥ ८ ॥

दोहा–अस कहि पग परि प्रेम अति, सियहित बिनय सुनाइ ॥ ❋
सिय समेत सियमातु तब, चली सुआयसु पाइ ॥ २७५ ॥ ❋

हे पार्वती ! ऐसे कह, अतिशय प्रेमसे कौसल्याके चरण धर, सीताके निमित्त विनय सुनाकर, सुनयना सीताको संगले, आज्ञा पाय, वहांसे चली, सो अपने डेरे आई ॥ २७५ ॥

प्रिय परिजनहिँ मिली बैदेही ॥ जो जेहि योग भांति तस तेही ॥ १ ॥ ❋
तापस वेष जानकिहिँ देखी ॥ भे सब बिकल बिषाद बिशेखी ॥ २ ॥ ❋

सीता अपने सब प्रिय परिवारसे मिली. जो जिस तरह मिलनेके योग्य था, उससे उसी भांति मिली ॥ १ ॥ जब जनकके लोगोंने सीताको तापसके वेषमे देखा, तब वे सब महाघोर विषाद कर विकल हो गये ॥ २ ॥

जनक राम गुरु आयसु पाई ॥ चले थलहिँ सिय देखी आई ॥ ३ ॥ ❋
लीन्ह लाइ उर जनक जानकी ॥ पाहुनि पावनि प्रेम प्राणकी ॥ ४ ॥ ❋

इधर राजा जनक, गुरु वसिष्ठजी और रामचन्द्रजीकी आज्ञा पाय, अपने डेरेको चले, सो वहां आये और सीताको देखा ॥ ३ ॥ सीताको देखतेही राजा जनकने उसे प्रेम व प्राणोंकी पवित्र पाहुनी सीताको छातीसे लगाया ॥ ४ ॥

उर उमँगेउ अम्बुधि अनुरागू ॥ भयउ भूपमन मनहुँ प्रयागू ॥ ५ ॥ ❋
सिय सनेह बहु बाढ़त जोहा ॥ तापस राम प्रेम शिशु सोहा ॥ ६ ॥ ❋

तब उसके हृदयके भीतर प्रेमरूप सागर उमँग उठा, तिससे राजाका मन मानों प्रयागराज बनगया ॥ ५ ॥ ज्यों प्रलयकालमें समुद्र बढ़ता है, त्यों अक्षयवटभी उसके साथ बढ़ता जाता है, सो यहां ज्यों राजाका अनुरागरूप समुद्र बढ़ा है, त्योंहि तिसके साथ सीताका स्नेहरूपी अक्षयवट बढ़ने लगा है और वटके पल्लवमें श्रीविष्णु भगवान् पौढ़े है, सो यहां रामचन्द्रजीका जो प्रेम है वही बालकरूपसे शोभा देता है. राजा जनकका प्रेम है सोही प्रलयकालका समुद्र है. उसका मन है सोही प्रयागराज है. सीताका स्नेह है सोही अक्षयवट है. रामचन्द्रजीका प्रेम है सोही बालरूप विष्णु हैं ॥ ६ ॥

चिरजीवी मुनि ज्ञान बिकल जनु ॥ बूड़त लहेउ बाल अवलम्बनु ॥ ७ ॥ ❋
मोहमगन मति नहिँ बिदेहकी ॥ महिमा सिय रघुबर सनेहकी ॥ ८ ॥ ❋

वहां चिरंजीवी मुनिमार्कण्डेय बूड़ने लगे हैं तब उन्हें वटपत्रमें पौढ़े बालरूप विष्णु भगवान्का

अवलम्बन मिला है. ऐसे यहां जनक राजाका ज्ञान है सोही चिरंजीवी मुनि मार्कंडेय है, वह ज्ञान बूड़ने लगा है तब उसे रामचन्द्रजीका प्रेमरूपी बालक अवलम्बन मिला है ॥ ७ ॥ हे पार्वती ! राजा जनककी बुद्धि कभी मोहमें मग्न नहीं होती; परंतु यह तो सीतारामके स्नेहकी महिमाका प्रताप है कि, जो महाज्ञानी जनककी बुद्धि विकल हो गई ॥ ८ ॥

दोहा–सिय पितु मातु सनेहबश, बिकल न सकी सँभारि ॥ *
धरणिसुता धीरज धरेउ, समय सुधर्म बिचारि ॥ २७६ ॥ *

यद्यपि सीताजीकी माता तो स्नेहके वश विकल होनेके कारण अपनेको संभाल नहीं सकी, तथापि सीताजीने तो स्वधर्म और समयको विचार कर धीरज धरही लीनी ॥ २७६ ॥

तापस बेष जनक सिय देखी ॥ भयउ प्रेम परितोष बिशेखी ॥ १ ॥ *
पुत्रि पवित्र किये कुल दोऊ ॥ सुयश धवल जग कह सबकोऊ ॥ २ ॥ *

सीताको तपस्वीके वेषमें देख, जनकराजाके मनमें भारी प्रेम और परितोष पैदा हुआ ॥ १ ॥ और कहा कि–हे पुत्री ! तूने पिता और श्वशुर दोनों कुलोंको परम पवित्र किया है. तुम्हारे उज्वल जसको जगत्में सबकोई गाया करेंगे ॥ २ ॥

जिमि सुरसरिकीरति सरि तोरी ॥ गवन कीन्ह बिधि अण्ड करोरी ॥ ३ ॥
गंग अवनि थल तीनि बड़ेरे ॥ यहिँ किय साधुसमाज घनेरे ॥ ४ ॥ *

हे पुत्री ! जैसी गंगाजी है वैसोही तुम्हारी कीर्तिरूप नदी है. तहां गंगाजी तो केवल एक इसी ब्रह्मांडमें व्यापके रही है और तुम्हारी कीर्ति करोड़ों ब्रह्मांडोंमें छाई जायगी ॥ ३ ॥ गंगाजीके तो पृथ्वीपर तीनही स्थल बड़े बड़े है और इसने कई साधु पुरुषोंके समाजविषे निवास किया है ॥ ४ ॥

पितु कह सत्य सनेह सुबानी ॥ सीय सकुच गृह मनहुँ समानी ॥ ५ ॥ *
पुनि पितु मातु लीन्ह उर लाई ॥ सिख आशिष हित दीन्ह सुहाई ॥ ६ ॥ *

पिता जनक ज्यों ज्यों स्नेहभरी सत्य सुन्दरवाणी कहता है, त्यों त्यों सीताजी मानों संकोचरूप घरविषे समाती जाती हैं ॥ ५ ॥ फिर सीताको छातीसे लगाकर, माता पिता दोनोंने हितकारी सीख देकर, सुन्दर आशीर्वाद दिया है ॥ ६ ॥

कहति न सीय सकुच मनमाहीं ॥ इहां बसब रजनी भल नाहीं ॥ ७ ॥ *
लखि रुख रानि जनायउ राऊ ॥ हृदय सराहत शील सुभाऊ ॥ ८ ॥ *

यद्यपि सीताजी संकोचके मारे कुछ कहती नहीं हैं; परंतु मनमें यों चाहती हैं कि, रातको यहां रहना ठीक नहीं है ॥ ७ ॥ सीताकी रुख देख उसके शील व स्वभावकी हृदयमें सराह करती रानीने वह बात राजाको जनादी ॥ ८ ॥

दोहा–बारबार मिलि भैंटि सिय, बिदा कीन्ह सनमानि ॥ *
कही भरतगति समयसम, रानि सुबानि सयानि ॥ २७७ ॥ *

तब राजा रानीने सीताको बारंबार मिल भेंटकर आदरके साथ वहांसे बिदा कर दीनी. सीताके जानेके अनन्तर रानी सुनयनाने अवसर पाकर मधुर वाणीसे कौसल्याकी कही भरतसम्बंधी सब बात राजासे इसप्रकार कही कि, कौसल्याकी ओरका लखाउ न परिसके ॥ २७७ ॥

सुनि भूपाल भरतब्यवहारू ॥ सोन सुगन्ध सुधा शशि सारू ॥ १ ॥ ❋
मूंदे सजल नयन पुलके तन ॥ सुयश सराहन लगे मुदित मन ॥ २ ॥ ❋

रानीकी बात सुनकर, भरतका व्यवहार राजाको ऐसा दीख पड़ा कि, मानों सोना और सुगंध, साक्षात् अमृत और चन्द्रमाका सारांश ॥ १ ॥ भरतका प्रेम देख, राजाके नेत्र मूंदि गये. आंसुओंकी धारा बहने लगी. शरीर रोमांचित हो गया. तब प्रसन्नचित्त हो भरतका सुयश सराहने लगे ॥ २ ॥

सावधान सुनु सुमुखि सुलोचनि ॥ भरतकथा भवबन्धविमोचनि ॥ ३ ॥ ❋
धर्म राजनय ब्रह्मविचारू ॥ यहां यथामति मोर प्रचारू ॥ ४ ॥ ❋

राजा जनकने कहा कि–हे सुमुखी ! हे सुलोचनी ! तू एकाग्रचित्त होकर, सुन कि, भरतकी कथा संसारके बंधनकी काटनेहारी है ॥ ३ ॥ हे भद्रे ! धर्मशास्त्र, राजनीति और ब्रह्मविचार इनमें मेरी बुद्धिका यथाकथंचित् प्रचार है ॥ ४ ॥

सो मति मोरि भरतमहिमाहीं ॥ कहौं काह छलि छुअति न छाहीं ॥५॥ ❋
बिधि गणपति अहिपति शिव शारद ॥ कबि कोबिद बुध बुद्धिबिशारद ॥६॥

परंतु वोभी मेरी बुद्धि भरतकी महिमाके विषयमे क्या कहे ? छल करभी छायाकोभी छूने नहीं पाती ॥ ५ ॥ मैं तौ एक ओर रहा. ब्रह्मा, गणपति, शेष, शारदा, महादेव तथा और बड़े विशाल-बुद्धि कवि, पंडित और विद्वान्लोगभी उसके विषयमें कुछ कह नहीं सकते ॥ ६ ॥

भरतचरित कीरति करतूती ॥ धर्म शील गुण बिमल बिभूती ॥ ७ ॥ ❋
समुझत सुनत सुखद सबकाहू ॥ शुचि सुरसरि रुचि निदरि सुधाहू ॥ ८ ॥

हे प्रिये ! भरतका चरित्र, कीर्ति, करनी, धर्मशीलता, निर्मलता और ऐश्वर्य आदि जो गुण है ॥ ७ ॥ वे समझने व सुननेसे सब किसीको सुख देनेवाले गंगाजीके समान पावन और रुचिमें अमृतकोभी निदरनेवाले है ॥ ८ ॥

दोहा–निरवधि गुण निरुपम पुरुष, भरत भरतसम जानि ॥ ❋
कही सुमेरु कि सेरसम, कबिकुलमति सकुचानि ॥ २७८ ॥ ❋

भरतके गुण मर्यादरहित यानी असंख्यात हैं. भरतको उपमा देवें ऐसा पुरुष जगत्में कोई नहीं है. जगत्में भरतके समान भरतही है, अतएव कविलोगोंकी बुद्धि भरतको उपमा देते सकुचाती है. वास्तवमें कविलोगोंकी बुद्धिका सकुचाना यथार्थ है; क्योंकि क्या सुमेरुगिरि सेर (चार पाव) के बराबर हो सकता है ? ॥ २७८ ॥

अगम सबहिँ बरणत बरबरणी ॥ जिमि जलहीन मीनगण धरणी ॥ १ ॥
भरत अमित महिमा सुनु रानी ॥ जानहिँ राम न सकहिँ बखानी ॥ २ ॥

हे वरवर्णी ! जैसे जलबिना मच्छी सब प्रकारसे असमर्थ रहनेसे कुछ कर नहीं सक्ती और नाव पृथ्वीपर रही हुई थकित हो रहती है कुछ कर नहीं सकती. ऐसे भरतकी करनी सब लोगोंके लिये वर्णन करनेको अतिअशक्य है अर्थात् कोईभी भरतका चरित्र वर्णन नहीं कर सक्ता ॥ १ ॥ हे रानी ! सुन. भरतकी महिमाका पारावार नहीं है. अतएव रामचन्द्रजीभी सर्वज्ञ हैं, इसलिये जानते तौ हैं पर कह नहीं सकते ॥ २ ॥

बरणि सप्रेम भरतअनुभाऊ ॥ तियजियकी रुचि लखि कह राऊ ॥ ३ ॥❋
बहुरहिँ लषण भरत बन जाहीं ॥ सबकर भल सबके मनमाहीं ॥ ४ ॥ ❋

हे पार्वती ! भरतके प्रेम और अनुभवको वर्णन कर, रानी सुनयनाकी मनकी अभिलाषाको लख-कर, राजा जनकने फिर रानीसे कहा कि— ॥ ३ ॥ हे रानी ! यद्यपि लक्ष्मण अयोध्याको पीछे लौटें और भरत वनको जांय, इसमें सबका भला है और सबके मनमें यही है ॥ ४ ॥

देवि परन्तु भरत रघुबरकी ॥ प्रीति प्रतीति जाइ नहिँ तरकी ॥ ५ ॥ ❋
भरत सनेह अवधि ममताके ॥ यद्यपि राम सींव समताके ॥ ६ ॥ ❋

परंतु हे देवी ! भरत और रामचन्द्रजी परस्परकी प्रीतिकी प्रतीति अतर्क्य है. वह किसीके तर्कना करनेमे नहीं आ सकती ॥ ५ ॥ यद्यपि रामचन्द्रजी समताकी साव कहे मर्याद हैं. यानी प्रभुके सब बराबर हैं किसमे भेदभाव नहीं है तथापि भरतका स्नेह ममताकी अवधि कहे मर्याद है. निष्कर्ष यह है कि—यद्यपि प्रभु सबको समदृष्टिसे देखते है तौभी भरतके स्नेहके आगे सबकी ममताको छोड़कर भरतके मनमें जो होगा सो प्रभु अवश्यही करेंगे और प्रभुके मनमें होगा सो भरत अवश्य करेंगे ॥ ६ ॥

परमारथ स्वारथ सुख सारे ॥ भरत न सपनेहुँ मनहुँ निहारे ॥ ७ ॥ ❋
साधन सिद्धि रामपद नेहू ॥ मोहिँ लखि परत भरतमत येहू ॥ ८ ॥ ❋

हे रानी ! इस लोकका स्वार्थसुख और परलोकका परमार्थसुख जितने भर सुख हैं उन सबोंको भरतजी कभी स्वप्नमेंभी मनसेभी नहीं देखते; किंतु रामचन्द्रके आज्ञानुकूल रहते है ॥ ७ ॥ जितने मोक्षके साधन हैं, उन सबनका फल 'रामचन्द्रके चरणविषे स्नेह होना' यही भरतका सिद्धान्त मुझे दीख पड़ता है ॥ ८ ॥

दोहा—भोरेहु भरत न पेलिहहिँ, मनसहुँ रामरजाइ ॥ ❋
करिय न शोच सनेहबश, कहेउ भूप बिलखाइ ॥ २७९ ॥ ❋

राजा जनकने विलखवदन हो, रानीसे कहा कि—हे भद्रे ! भरत रामकी आज्ञाको स्वप्नमेंभी भूल करभी कभी पीछो न देगा; इसलिये स्नेहवश होकर, शोच न करना चाहिये ॥ २७९ ॥

राम भरत गुण कहत सप्रीती ॥ निशि दम्पतिहिँ पलकसम बीती ॥ १ ॥❋
राजसमाज प्रात युग जागे ॥ न्हाइ न्हाइ सुर पूजन लागे ॥ २ ॥ ❋

हे पार्वती ! प्रीतिके साथ राम और भरतके गुण कहते २ राजा रानीकी सारी रैन पलककी भांति बीत गई ॥ १ ॥ प्रातःकाल दोनों ओरके राजसमाज जागे और नहा नहाकर, देवताओंको पूजने लगे ॥ २ ॥

गे नहाइ गुरुपहँ रघुराई ॥ बन्दि चरण बोले रुख पाई ॥ ३ ॥ ❋
नाथ भरत पुरजन महतारी ॥ शोचबिकल बनबासदुखारी ॥ ४ ॥ ❋

प्रभु स्नान कर, प्रातकृत्यसे निपट, गुरुके पास गये और चरणोंमें दंडवत् कर रुख पाकर बोले कि— ॥ ३ ॥ हे नाथ ! भरत, नगरके लोग और मातायें ये सब शोचसे विकल और वनवासके कारण महादुखी हैं ॥ ४ ॥

सहित समाज राउ मिथिलेशू ॥ बहुत दिवस भे सहत कलेशू ॥ ५ ॥ ❋
उचित होय सो कीजिय नाथा ॥ हित सबहीकर रौरे हाथा ॥ ६ ॥ ❋

और राजा जनककोभी समाजके साथ कष्ट सहते बहुत दिन हो गये ॥ ५ ॥ इसलिये महाराज! अब जैसा उचित हो वैसा कीजिये; क्योंकि सब लोगोंका भला आपके हाथ है ॥ ६ ॥

अस कहि अति सकुचे रघुराऊ ॥ मुनि पुलके लखि शील सुभाऊ ॥ ७ ॥ ❋
तुम बिनु राम सकल सुख साजा ॥ नरक सरिस दुहुँ राजसमाजा ॥ ८ ॥

ऐसे कहकर प्रभु बहुत सकुचे. तब मुनि प्रभुका शील और स्वभाव लख, पुलकितगात्र हुए ॥ ७ ॥ और बोले कि-हे राम! तुम्हारे विना दोनों राजसमाजको सब प्रकारके सुखके साधन नरकके समान लगते हैं ॥ ८ ॥

दोहा-प्राण प्राणके जीवके, जिय सुखके सुख राम ॥ ❋
तुम तजि तात सोहात गृह, जिनहिँ तिनहिँ बिधि बाम ॥ २८० ॥

क्योंकि हे राम! तुम प्राणके तौ प्राण, जीवके जीव और सुखके सुखरूप हो. हे तात! जिनको तुम्हारे विना घर अच्छा लगता है, उनसे विधाताको प्रतिकूल समझना चाहिये ॥ २८० ॥

सो सुख कर्म धर्म जरि जाऊ ॥ जहँ न राम पदपंकज भाऊ ॥ १ ॥ ❋
योग कुयोग ज्ञान अज्ञानू ॥ जहां न राम प्रेम परधानू ॥ २ ॥ ❋

मुनि वसिष्ठजी कहते हैं कि-वह सुख, कर्म और धर्म जल जावे कि, जहां रामचन्द्रके चरणकमल विषे भाव और प्रीति नहीं है ॥ १ ॥ और वह अष्टांग (यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा और समाधि) योग कुयोग तथा वह ज्ञान अज्ञान है कि, जहां प्रभुके विषे असाधारण प्रीति नहीं है ॥ २ ॥

तुम बिन दुखी सुखी तुमतेही ॥ तुम जानहुँ जिय तौ जेहिकेही ॥ ३ ॥ ❋
राउर आयसु शिर सबहीके ॥ बिदित कृपालहिँ गति सब नीके ॥ ४ ॥ ❋

हे राम! तुम्हारे विना जो दुखी हैं वेही आपसे सुखी है. हे राम! जिस किसीके मनमें जो कुछ है वो सब तुम जानतेही हो ॥ ३ ॥ हे तात! तुम्हारी आज्ञा सबके शिरपर है; क्योंकि तुम दयालु होनेके कारण सबकी गति भलीभांति जानते हो ॥ ४ ॥

आपु आश्रमहिँ धारिय पाँऊ ॥ भये सनेहशिथिल मुनिराऊ ॥ ५ ॥ ❋
करि प्रणाम तब राम सिधाये ॥ ऋषि धरि धीर जनकपहँ आये ॥ ६ ॥ ❋

हे राम! अब तुम आश्रमको जाओ, ऐसे कह मुनिराज वसिष्ठजी स्नेहसे शिथिल होगये ॥ ५ ॥ तब रामचन्द्र आनन्दकन्द तौ मुनिको प्रणाम कर, आश्रमको सिधारे, और वसिष्ठजी धीरज धर, जनकके पास आये ॥ ६ ॥

रामवचन गुरु नृपहिँ सुनाये ॥ शील सनेह सुभाव सुहाये ॥ ७ ॥ ❋
महाराज अब कीजिय सोई ॥ सबकर धर्म सहित हित होई ॥ ८ ॥ ❋

वसिष्ठमुनिने राजा जनकको रामचन्द्रजीके वचन कह सुनाये, और उसका शील, स्नेह, सुन्दर

स्वभावभी कह सुनाया ॥ ७ ॥ और कहा कि—महाराज ! अब वही करना चाहिये कि, जिससे सबका भला होवे, और धर्म बना रहै ॥ ८ ॥

दोहा—ज्ञाननिधान सुजान शुचि, धर्म धीर नरपाल ॥ ❁
तुमबिनु असमंजसशमन, को समर्थ यहिकाल ॥ २८१ ॥ ❁

हे राजा ! तुम ज्ञानके भंडार, परम सुजान, शुद्धस्वरूप और धर्ममें अग्रणी हो, सो यदि तुम इस दुविधाको मिटाओगे जब तौ मिट जायगा, नहीं तौ तुम्हारे बिना इस असमंजसको मिटावे ऐसा इस समयमें समर्थ कौन है ? अर्थात् इस दुविधाको मिटानेमें समर्थ आपही हो ॥ २८१ ॥

सुनि मुनिबचन जनक अनुरागे ॥ लखि गति ज्ञान बिराग बिरागे ॥ १ ॥ ❁
शिथिल सनेह गुणत मनमाहीं ॥ आये इहां कीन्ह भल नाहीं ॥ २ ॥ ❁

मुनिके वचन सुन जनक राजा बहुत प्रसन्न हुआ और वहांका हाल देख राजाका ज्ञान व वैराग्य जाता रहा ॥ १ ॥ राजा स्नेहसे शिथिल हो मनहीमनमें विचार करने लगा कि—आपन जो यहां आये सो ठीक नहीं किया ॥ २ ॥

रामहिँ राय कहेउ बन जाना ॥ कीन्ह आपु प्रिय प्रेमसमाना ॥ ३ ॥ ❁
हम अब बनते बनहिँ पठाई ॥ प्रमुदित फिरब बिबेक बढ़ाई ॥ ४ ॥ ❁

देखिये, राजा दशरथने रामको वन जानेको कह तौ दिया; परंतु अपने प्रिय संबंधी प्रेमको प्रमाण कर दिया. यानी रामके बिछुरतेही प्राणको तज अपना प्रेम निबाह दिया ॥ ३ ॥ और हम अब यदि रामको वनसे वनमेंही भेजकर ज्ञान बढ़ाकर आनन्दके साथ पीछे लौट जायंगे तौ इसमें हमारा अपयश होगा और ज्ञानको बट्टा लगेगा ॥ ४ ॥

तापस मुनि महिसुर गति देखी ॥ भये प्रेमबश बिकल बिशेखी ॥ ५ ॥ ❁
समय समुझि धरि धीरज राजा ॥ चले भरतपहँ सहित समाजा ॥ ६ ॥ ❁

हे पार्वती ! राजा जनककी यह दशा देख, तपस्वी, मुनि और ब्राह्मण प्रेमबश हो और विशेष विकल हुए ॥ ५ ॥ उसकाल समयको सोच, मनमें धीरज धर, राजा वहांसे चला सो सीधा समाजके साथ भरतके पास आया ॥ ६ ॥

भरत आय आगे है लीन्हा ॥ अँवसर सरिस सुआसन दीन्हा ॥ ७ ॥ ❁
तात भरत कह तिरहुतिराऊ ॥ तुमहिँ बिदित रघुबीरसुभाऊ ॥ ८ ॥ ❁

तब भरतने अगोनीकर राजाके सन्मुख आय, आगे हो बढ़ाकर लिया और समयके जैसा सुन्दर आसन दिया ॥ ७ ॥ तब जनक राजाने भरतसे कहा कि—हे तात ! हे भरत ! तुम रामचन्द्रके स्वभावको अच्छीतरह जानते हो ॥ ८ ॥

दोहा—राम सत्यव्रत धर्मरत, सबकर शील सनेहु ॥ ❁
संकट सहत सँकोच बश, कहिय जो आयसु देहु ॥ २८२ ॥ ❁

हे तात ! रामचन्द्र सत्यसंध और धर्मपरायण हैं, अतएव सबके शील व स्नेहके कारण संकोच बश संकटको सहते हैं. सो अब जो आज्ञा देओ सो किया जाय ॥ २८२ ॥

सुनि तन पुलकि नयन भरि बारी ॥ बोले भरत धीर धरि भारी ॥ १ ॥ ❁

प्रभु प्रिय पूज्य पितासम आपू ॥ कुलगुरु सम हित माय न बापू ॥ २ ॥❋

राजा जनकके वचन सुन, पुलकित गात भरत नेत्रोंमे जल भर, भारी धीरज धर, यह वचन बोला ॥ १ ॥ कि–हे तात ! आप हमारे मालिक, प्रिय, पूज्य व पिताकी बराबर हो, सो आपका पूँछना संभवे नहीं. दूसरा कुलगुरु वसिष्ठजी विराजमान है कि, जिनके बराबर हित करनेमें माता और पिता एकहू नहीं है ॥ २ ॥

कौशिकादि मुनि सहित समाजू ॥ ज्ञान अम्बुनिधि आपुन आजू ॥ ३ ॥ ❋
शिशु सेवक आयसु अनुगामी ॥ जानि मोहिं शिख देइय स्वामी ॥ ४ ॥❋

फिर विश्वामित्र आदि महामुनि जो समाजके साथ विराजमान है और आजके दिन तौ ज्ञानके सागर खुद आपभी विराजमान हो; इसलिये मेरे तईं पूंछनेका कौन समय ? ॥ ३ ॥ हे महाराज ! मुझे अपना सेवक, बालक और आज्ञाकारी समझकर, आपको शिक्षा देनी चाहिये ॥ ४ ॥

यहि समाज थल बूझब राउर ॥ मन मलीन मैं बोलब बाउर ॥ ५ ॥ ❋
छोटे बदन कहौं बड़ि बाता ॥ क्षमब तात लखि बाम बिधाता ॥ ६ ॥ ❋

इस समाजके बीचमें आप पूंछें और मन मलीन बाउला मैं उत्तर देऊं, क्या यह कभी हो सक्ता है ? कदापि नहीं ॥ ५ ॥ हे तात ! छोटे मुंह जो मैं बड़ी बात कहता हूं, सो दैवको प्रतिकूल जानकर क्षमा करना ॥ ६ ॥

आगम निगम प्रसिद्ध पुराना ॥ सेवाधर्म कठिन जग जाना ॥ ७ ॥ ❋
स्वामिधर्म स्वारथहिँ बिरोधू ॥ बधिर अन्ध प्रेमहिँ न प्रबोधू ॥ ८ ॥ ❋

यह बात सारा संसार जानता है और वेद, शास्त्र व पुराणोंमेंभी प्रसिद्ध है कि, सेवाका धर्म यानी नौकरी बड़ी कठिन है. इस विषयमे भर्तृहरिने लिखा है "सेवाधर्मः परमगहनो योगिनामप्यगम्यः" ॥ ७ ॥ स्वामीके धर्ममे और स्वार्थमे बड़ा भारी विरोध है. जैसे बहिरे और अंधेके प्रेममें विवेक न होनेसे विरोध रहता है. बहिरा आदमी कहीं नाटक देखनेको गया तौ उसने आकर यह कहा कि–वहां स्वांग तौ बहुत अच्छे बने थे और नाचभी अच्छा था; परंतु गाना बजाना कुछ नहीं था. और अंधेने आकर कहा कि–गाना बजाना तौ बहुत अच्छा था; परंतु नाच वगैरः कुछ नहीं था. हकीकतमें दोनों अच्छे थे; परंतु एकएकको एकएकका बोध न होनेसे उनके कहनेमें विरोध रहा, वास्तवमें दोनोंका कहना सत्य था. ऐसे लोकदृष्टिसे स्वामिधर्म और स्वार्थमें विरोध दीख पड़ता है, पर वास्तवमें नहीं ॥ ८ ॥

दोहा–राखि रामरुख धर्मव्रत, पराधीन मोहिँ जान ॥ ❋
सबके सम्मत सर्बहित, करिय प्रेम पहिँचान ॥ २८३ ॥ ❋

हे महाराज ! अब धर्मधारी रामचन्द्रकी रुखको जान मुझे उनका दास समझ, प्रेमको पहिचानकर, ऐसा कीजिये कि, जो संमत और सबके लिये हितकारक होवे ॥ २८३ ॥

भरतबचन सुनि देखि सुभाऊ ॥ सहित समाज सराहत राऊ ॥ १ ॥ ❋
सुगम अगम मृदु मंजु कठोरा ॥ अर्थ अमित अति आखर थोरा ॥ २ ॥ ❋

भरतके ऐसे प्रेम नीति व धर्म भरे वचन सुन, उसका स्वभाव देख, राजा जनकने समाजके

साथ भरतकी प्रशंसा कही ॥ १ ॥ महादेवजी कहते हैं कि—हे पार्वती! भरतकी वाणी दीखनेमें तौ बहुत सुगम है; परंतु कहनेमें बहुत अशक्य है. ऊपरसे तौ वह बहुत कोमल और सुन्दर दीखती है, परंतु पालनेमें बहुत कठिन पड़ती है; क्योंकि उसमें स्वार्थ परमार्थ सुख दुःख सबको छोंड़कर स्वामीकी इच्छानुसार रहना पड़ता है; यद्यपि अक्षर बहुत कम है, परंतु मतलब बहुत भरा है ॥ २ ॥

जो मुख मुकुर मुकुर निज पाणी ॥ गहि न जाय अस अद्भुत बाणी ॥३॥ ❀
भूप भरत मुनि साधु समाजू ॥ गे जहँ बिबुध कुमुद द्विजराजू ॥ ४ ॥ ❀

भरतकी वह वाणी ऐसी अद्भुत है कि—जो किसीके ग्रहण करनेमें नहीं आती. जैसे अपने हाथमें दर्पण है और दर्पणमें मुह दिखता है; परंतु वह किसीसे किसी प्रकार लिया नहीं जाता, ऐसे भरतका आशय किसीकी समझमें नहीं आता ॥ ३ ॥ हे पार्वती! फिर राजा जनक, भरत, मुनि, सत्पुरुष और समाज ये सब वहां गये कि, जहां देवतारूपी कुमुदवनके चंद्र श्रीरामचन्द्रजी विराजे थे ॥ ४ ॥

सुनि सुधि शोच बिकल सब लोगा ॥ मनहुँ मीनगण नव जल योगा ॥ ५ ॥ ❀
देव प्रथम कुलगुरु गति देखी ॥ निरखि बिदेह सनेह बिशेखी ॥ ६ ॥ ❀

बिदा होनेकी खबर सुन, सब लोग शोचसे ऐसे विह्वल हुए कि, मानों मछलियोंके समूहको नये जलका संयोग बन गया है ॥ ५ ॥ उसकाल देवता लोगोंने कुलगुरु वसिष्ठजीकी पहली दशा देख, राजा जनकका विशेष स्नेह निरख, ॥ ६ ॥

राम भक्तिमय भरत निहारे ॥ सुर स्वारथी हहरि हियहारे ॥ ७ ॥ ❀
सबकहँ राम प्रेममय पेखा ॥ भये अलेख शोचबश लेखा ॥ ८ ॥ ❀

भरतको रामचन्द्रका परमभक्त निहार, अपने स्वार्थके कारण हहरि कहे हाय हाय कर, हृदयमें हार मानली ॥ ७ ॥ सब लोगोंको रामचन्द्रजीके प्रेममें मग्न देखा, तब देवतालोग ऐसे शोचबश हुए कि, जिसका लेखा नहीं लग सक्ता ॥ ८ ॥

दोहा—रामसनेह सकोचबश, कहे सशोच सुरराज ॥ ❀
रचहु प्रपंचहि पंच मिलि, नाहित भयउ अकाज ॥ २८४ ॥ ❀

हे पार्वती! इंद्रने शोचके साथ अपने पंच लोगोंसे कहा कि—रामचन्द्र तौ स्नेह और संकोचके बश हो गये हैं, सो या तौ आप लोग मिलकर कुछ प्रपंच रचो. नहीं तौ अपना अकाज हो जायगा ॥ २८४ ॥

सुरन सुमिरि शारदा सराही ॥ देवि देहु शरणागत पाही ॥ १ ॥ ❀
फेरि भरतमति करि निजमाया ॥ पाल बिबुधकुल करि छलछाया ॥ २ ॥ ❀

इंद्रके वचन सुन, देवताननें सराहकर शारदाका स्मरण किया और प्रार्थना करी कि—हे देवी! हमें शरण देओ और हम शरणागतोंकी रक्षा करो ॥ १ ॥ हे मात! अपनी माया फैलाकर भरतकी बुद्धिको फेरो और छल करके देवकुलका पालन करो ॥ २ ॥

बिबुधबिनय सुनि देवि सयानी ॥ बोली सुर स्वारथ जड़ जानी ॥ ३ ॥ ❀
मोसन कहहु भरत मति फेरू ॥ लोचन सहस न सूझ सुमेरू ॥ ४ ॥ ❀

हे पार्वती! देवताओंकी विनती सुन, मूर्ख देवताओंको स्वार्थी जानकर, बुद्धिमती महारानी

सरस्वतीने कहा कि—॥ ३ ॥ तुम मुझसे यह कहते हो कि "तू भरतकी बुद्धि फेर" भला यह कभी हो सक्ता है ? तुम्हारा यह कहना ऐसा है कि, जैसे हजार नेत्रवालेको सुमेरुगिरि न सूझे ॥ ४ ॥

बिधि हरि हर माया बड़ि भारी ॥ सो न भरत मति रकै निहारी ॥ ५ ॥ ❋
सो मति मोहिँ कहत करु भोरी ॥ चन्दिनि करु कि चन्द करि चोरी ॥ ६ ॥

तुम जानते हो कि—ब्रह्मा विष्णु महेशकी माया अति प्रबल है, सो वह तौ भरतकी बुद्धिकी ओर देखही नहीं सकती ॥ ५ ॥ उस बुद्धिको भ्रमानेके लिये जो आप मुझसे कहते हो, सो यह कभी हो सक्ता है ? क्या कभी चांदनी चंद्रमाकी चोरी कर सकती है ? कभी नहीं ॥ ६ ॥

भरत हृदय सियराम निबासू ॥ तहँ कि तिमिर जहँ तरणिप्रकासू ॥ ७ ॥ ❋
अस कहि शारद गइ बिधिलोका ॥ बिबुध बिकल निशि मानहुँ कोका ॥ ८ ॥

भरतके हृदयविषे सदा सीताराम बसते हैं, इसलिये वहां अपना छलबल कुछ चल नहीं सकता. देखो, जहां सूर्यका प्रकाश होता है क्या वहां अंधकार रह सकता है ? ॥ ७ ॥ हे पार्वती ! सरस्वती ऐसे कहकर ब्रह्मलोकको चली गई, तब देवतालोग ऐसे घबराये कि, मानों रातको चक्रवाककी दशा हो जाती है ॥ ८ ॥

दोहा—सुर स्वारथी मलीनमन, कीन्ह कुमंत्र कुठाट ॥ ❋
रचि प्रपंच माया प्रबल, भय भ्रम अरत उचाट ॥ २८५ ॥ ❋

स्वार्थी और मलीन चित्त देवताओंने कई प्रकारसे बुरी सलाहका बुरा ठाट ठट, और डरके मारे प्रबल प्रपंच व छल बल रचकर, भ्रम, आर्ति और उच्चाटनका सिद्धान्त किया ॥ २८५ ॥

करि कुचाल सोचत सुरराजू ॥ भरतहाथ सबकाज अकाजू ॥ १ ॥ ❋
गये जनक रघुनाथ समीपा ॥ सनमाने सब रघुकुलदीपा ॥ २ ॥ ❋

हे पार्वती ! इसप्रकारकी कुचाल कर, निदान इंद्र अपने मनमें सोचने लगा कि—अब तौ अपना काज और अकाज सब भरतके हाथ है ॥ १ ॥ ऐसे इंद्र सब प्रकारसे निराश हो गया था. इस अवसरमें जनक राजा प्रभुके पास पहुँचे, तब प्रभुने राजा जनक और सब लोगोंका सन्मान किया ॥ २ ॥

समय समाज धर्म अविरोधा ॥ बोले तब रघुबंश पुरोधा ॥ ३ ॥ ❋
जनक भरत सम्बाद सुनाई ॥ भरत कहावति कही सुहाई ॥ ४ ॥ ❋

उसकाल समयको सोच समाज व धर्ममें विरोध न आवे ऐसे वचन गुरु वसिष्ठजीने कहे ॥ ३ ॥ हे पार्वती ! वसिष्ठजीने जनक और भरतका सारा सम्बाद प्रभुको सुनाया और भरतकी सुहावनी सारी कहानी कही ॥ ४ ॥

तात राम जस आयसु देहू ॥ सो सब करै मोर मत येहू ॥ ५ ॥ ❋
सुनि रघुनाथ जोरि युग पाणी ॥ बोले सत्य सरल मृदु बाणी ॥ ६ ॥ ❋

तदनन्तर वसिष्ठजीने अपनी ओरसे कहा कि—हे तात ! हे राम ! ये सब लोग वैसेही करेंगे कि, जैसे आप आज्ञा देवेंगे अर्थात् मेरा सिद्धान्त तौ यहां यही है कि, आपकी आज्ञानुसार सबको करना उचित है ॥ ५ ॥ गुरुके वचन सुन, दोनों हाथ जोड़, प्रभु सत्य, सरल व कोमल वाणी बोले कि— ॥ ६ ॥

विद्यमान आपुन मिथिलेशू ॥ मोर कहा सबभांति भदेशू ॥ ७ ॥ ❋
राउर राय रजायसु होई ॥ राउरि शपथ रही शिर सोई ॥ ८ ॥ ❋

हे महाराज ! कुलगुरु आप और राजा जनकके विद्यमान छते मेरा कहना सब प्रकारसे शोभा नहीं देता ॥ ७ ॥ मैं यह आपकी शपथ खाकर कहता हूं कि–आपकी और जनक राजाको जो आज्ञा होगी, सो मेरे शिरपर है. उसे मैं सही मानूंगा ॥ ८ ॥

दोहा–रामशपथ सुनि मुनि जनक, सकुचे सभा समेत ॥ ❋
सकल बिलोकहिँ भरतमुख, बनै न उत्तर देत ॥ २८६ ॥ ❋

प्रभुकी शपथ (सौगंध) सुनकर गुरु वसिष्ठ और राजा जनक दोनों सभाके साथ अति सकुचे, और सब लोग भरतके मुखकी ओर देखने लगे; क्योंकि वहां किसीको उत्तर देते नहीं बन आया ॥ २८६ ॥

सभा सकुचबश भरत निहारी ॥ राम बन्धु धरि धीरज भारी ॥ १ ॥ ❋
कुसमय देखि सनेह सँभारा ॥ बढत बिन्ध्यजिमि घटज निबारा ॥२॥ ❋

सब सभाको संकोच बश हुई देख रामचन्द्रजीके भाई भरतने भारी धीरज धरा ॥१॥ और कुसमय बिचार कर स्नेहको ऐसे रोंका कि, जैसे अगस्त्यमुनिने[1] बढ़ते हुए विन्ध्याचलको रोंका था ॥ २ ॥

शोक कनकलोचन मति क्षोनी ॥ हरी बिमल गुणगण जगयोनी॥ ३ ॥ ❋
भरत बिबेक बराह बिशाला ॥ अनायास उघरे तेहि काला ॥ ४ ॥ ❋

जैसे हिरण्याक्ष नाम दैत्य जगतजननी पृथ्वीको हर लेगया था, तब प्रभुने विशाल वराहरूप धर उसे मार, बिना परिश्रम पृथ्वीका उद्धार किया. ऐसे जब जनक आदि सब लोगोंकी निर्मल गुणगणवाली बुद्धि शोकसे हरी गई, तब शोकको मिटाय भरतके विवेकने उसका उद्धार किया ॥ ३ ॥ अर्थात् जैसे पृथ्वीके उद्धारके लिये वराहावतार हुआ, ऐसे सब लोगोंकी बुद्धिके उद्धारके लिये भरतका विवेक हुआ ॥ ४ ॥

करि प्रणाम सबकहँ कर जोरी ॥ राम राउ गुरु साधु निहोरी ॥ ५ ॥ ❋
क्षमब आजु अतिअनुचितमोरा ॥ कहउँ बदन मृदु बचन कठोरा ॥६॥ ❋

हाथ जोड़ सब लोगोंसे प्रणाम कर रामचन्द्र, राजा जनक, गुरु और सत्पुरुषोंको निहोर कर भरतने कहा कि– ॥ ५ ॥ मैं मेरे कोमल मुखसे जो कठोर वचन कहता हूं, सो यह मेरा कहना बहुत अयोग्य है; परंतु आजके लिये क्षमा करियेगा ॥ ६ ॥

---

१ एक दिवस नारदजी विन्ध्याचलके यहां आये. उसने उसका बड़ा शिष्टाचार किया, तब विंध्याचलने कहा कि– हे महाराज ! आज आप उदास क्यों हो ? तब नारदजीने उसास लेकर कहा कि–क्या कहूं ? जो विभुति आज दिन सुमेरुगिरिके घरमें है, वह और कहीं नहीं है. तब अभिमानी विंध्याचल क्रोधकर बढ़ने लगा, सो सूर्यके पास जा पहुंचा. तब सूर्यने उसकी घास पास सब जला दी. तब वह इतना ऊंचा बढ़ा, कि– सूर्यभी रह गया. सूर्य १ लाख योजन ऊंचा है और वह दो २ लाख योजन ऊंचा बढ़ा तब सब जगत्में सूर्यका मार्ग रुंकनेसे महा कष्ट फैल गया और दुखी होकर लोगोंने अगस्त्यजीसे प्रार्थना करी कि–आप कृपाकर इस संकटको मिटाइये. तब जो अगस्त्यजी विंध्यके समीप होकर निकले तो उसने दंडवत् प्रणाम किया. तब अगस्त्यजीने आशीर्वाद दे विंध्याचलसे यह कहा कि–हम जबलों पीछे आवें तबलों तू ऐसेही रहियो. ऐसे कह मुनि चलधरे. सो न तो वे उसके पास पीछे आये और न वह उठने पाया, सो अबलों वह वैसेही पड़ा है.

हृदय सुमिरि शारदा सुहाई ॥ मानसते मुखपंकज आई ॥ ७ ॥ ❋
बिमल बिबेक धर्म नय शाली ॥ भरत भारती मंजु मराली ॥ ८ ॥ ❋

महादेवजी कहते है कि-हे पार्वती ! जब भरतने अपने अंतःकरणसे सर्वोत्तम शारदाका स्मरण किया, तब जैसे हंसनी मानसरोवरको त्यागके कमलपैं आ बैठती है, ऐसे सरस्वती भरतका मन त्यागके मुखकमलपै आ बैठी अर्थात् जो बात मनमें थी, वह मुखपै आई ॥ ७ ॥ भरतकी बुद्धिविषे जो विनय, विवेक, धर्म और नीति है, सो ही शाली कही मुक्ताफल है. जैसे हंसनी मोती चुनचुनके ग्रहण करती है. ऐसे भरतकी सुन्दर सरस्वती विनय, विवेक, धर्म व न्यायरूप मोतिनको ग्रहण करती है. अतएव वह हंसनी कही गई है ॥ ८ ॥

दोहा-निरखि बिबेक बिलोचनहिँ, शिथिल सनेह समाज ॥ ❋
करि प्रणाम बोले भरत, सुमिरि सीय रघुराज ॥ २८७ ॥ ❋

ज्ञानदृष्टिसे सब समाजको स्नेहसे शिथिल देख, दंडवत् प्रणाम कर, सीतारामका स्मरण कर भरत बोले कि- ॥ २८७ ॥

प्रभु पितु मातु सुहृद गुरु स्वामी ॥ पूज्य परमहित अन्तरयामी ॥ १ ॥ ❋
सरल सुसाहिब शील निधानू ॥ प्रणतपाल सर्वज्ञ सुजानू ॥ २ ॥ ❋

हे प्रभु ! मेरे तौ माता, पिता, सुहृद्, गुरु, स्वामी, पूज्य व परम हितकारी जो कुछ कहूं सो सब आपही हो. सो आप जानतेही हो कि, आप अंतर्यामी हो. सबके घट घटकी जानते हो ॥ १ ॥ हे प्रभु ! आपके जैसे सरलस्वभाव, सुसाहिब, शीलके निधान, शरणागतोंके पालक सर्वजान और सुजान आपही हो ॥ २ ॥

समरथ शरणागत हितकारी ॥ गुणग्राहक अवगुण अघहारी ॥ ३ ॥ ❋
स्वामि गुसाइँहिँ सदृश गुसाँई ॥ मोहिँ समान मैं स्वामि दुहाई ॥ ४ ॥ ❋

हे प्रभु ! आप सब प्रकारसे समर्थ हो, शरणागत पुरुषोंका हित करते हो, आप गुण ग्रहण करते हो, और अवगुण व पापका नाश करते हो ॥ ३ ॥ हे स्वामी ! आप ऐसे हो कि- जैसा स्वामी होना चाहिये अर्थात् आपके जैसे आपही हो, और मेरे जैसा मैंही हूं. मेरे नीचपनमें कमी नहीं है और आपके बड़प्पनमें कसर नहीं है. मैं यह आपकी दुहाई करके कहता हूं ॥ ४ ॥

प्रभु पितुबचन मोहबश पेली ॥ आयउँ इहां समाज सकेली ॥ ५ ॥ ❋
जग भल पोच ऊंच अरु नीचू ॥ अमी सजीवन माहुर मीचू ॥ ६ ॥ ❋

देखिये, मेरा नीचपन. हे प्रभु ! मैं अज्ञानवश हो, पिताके वचनको न मानकर इस सब समाजको इकठी करके यहां जो आया हूं, सो क्या अच्छा काम किया है ? ॥ ५ ॥ परंतु जगतमें भले, बुरे, ऊंचे, नीचे, सब है. जैसे अमृत और जहर, अमरपद और मृत्यु ॥ ६ ॥

राम रजाइ मेटि मनमाहीं ॥ देखा सुना कतहुँ कोउ नाहीं ॥ ७ ॥ ❋
सो मैं सबबिधि कीन्ह ढिठाई ॥ प्रभु मानी सनेह सेवकाई ॥ ८ ॥ ❋

यह तौ मनमें खूब अच्छीतरह शोच समझ लेना चाहिये कि-प्रभुकी आज्ञा तौ मिटही नहीं सकती; क्योंकि प्रभुकी आज्ञाको मेटे ऐसा तौ कोई कहीं. न तौ देखनेमें आया है, और न

सुननेमें आया है ॥ ७ ॥ मैंने तो जैसे बना तैसे सब प्रकारसे ढीठपनही किया है; परंतु प्रभुने स्नेहवश हो उसे अपनी सेवाही मानी है ॥ ८ ॥

दोहा–कृपा भलाई आपनी, नाथ कीन्ह भल मोर ॥ ❋
दूषण भे भूषण सरिस, सुयश चारु चहुँओर ॥ २८८ ॥ ❋

हे नाथ ! आपने तो अपनी कृपाकी भलाईसे मेरा सब प्रकार भलाही भला किया है कि, जिससे मेरे दूषण तो भूषणके समान हुए है और चहुँ दिशा सुन्दर सुयश हुआ है ॥ २८८ ॥

राउर रीति सुबाणि बड़ाई ॥ जगतविदित निगमागम गाई ॥ १ ॥ ❋
क्रूर कुटिल खल कुमति कलंकी ॥ नीच निशील निरीश निशंकी ॥ २ ॥

हे प्रभु ! आपकी रीति और सुन्दर वाणीकी बड़ाई सारे संसारमें प्रसिद्ध है और वेद व शास्त्रमेंभी गाई हुई है ॥ १ ॥ हे प्रभु ! जो महा निर्दयी, कुटिल, खल, कुबुद्धी, दोषी, नीच, दुःशील, नास्तिक और निर्लज्ज हैं ॥ २ ॥

तेउ सुनि चरण सामुहे आये ॥ सकृत प्रमाण किये अपनाये ॥ ३ ॥ ❋
देखि दोष कबहुँ न उर आने ॥ सुनि गुण साधु समाज बखाने ॥ ४ ॥ ❋

वेभी यदि एकवारभी आपके सन्मुख आकर, आपको दंडवत् करते है और आपका शरण लेते हैं उन्हें आप अपना करलेते हो, यह हमने जाबजा सुना है ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! यदि कभी आप अपने भक्तको अपराध आंखन देखभी लेते हो तौभी उसकेभी हृदयपै नहीं लाते. अतएव आपके गुणको सुनकर, संतलोग समाजविषे आपकी प्रशंसा करते है ॥ ४ ॥

को साहब सेवकहिं निवाजी ॥ आपु समान साज सब साजी ॥ ५ ॥ ❋
निज करतूति न समुझिय सपने ॥ सेवक सकुच शोच उर अपने ॥ ६ ॥

हे प्रभु ! आपके जैसा दासको सर्वस्व देनहारा साहिब जगतमें दूसरा कौन है ? क्योंकि आप अपने भक्तको सब साज सज देते हो, अर्थात् अपना चतुर्भुज स्वरूपभी देदेते हो. सो यहबात दूसरेसे नहीं बनती ॥ ५ ॥ हे प्रभु ! आप आपनी करतूतिको तो कभी स्वप्नमेंभी मन पर नहीं लाते, और भक्तजनोंके संकोचका शोच अपने हृदयमें सदा सर्वदा रखते हो ॥ ६ ॥

सो गुसाइँ नहिं दूसर कोपी ॥ भुजा उठाइ कहौं पण रोपी ॥ ७ ॥ ❋
पशु नाचत शुक पाठ प्रबीना ॥ गुण गति नट पाठक आधीना ॥ ८ ॥ ❋

इसलिये हे स्वामी ! मैं भुजा उठाकर, और प्रण ठानकर, कहता हूं कि–आपके जैसा दूसरा कोईभी नहीं है ॥ ७ ॥ जैसे पशु कहे बन्दर नचानेवाले नटके आधीन नाचता है, और तोता व मैना पढ़ानेवालेके आधीन पढ़कर प्रवीण होता है, तथा नट अपने सिखलानेवाले शिक्षककी गुणकी गतिके आधीन सब कलाकौशल सीखता है, ऐसे सब जगत् आपकी आज्ञाके आधीन है ॥ ८ ॥

दोहा–सो सुधारि सनमानि जन, किये साधु शिरमोर ॥ ❋
को कृपालु बिनु पालि हैं, बिरदावलि बर जोर ॥ २८९ ॥ ❋

यद्यपि मैंने बहुत अवज्ञा की; परंतु आपने उस सबको सुधार व सन्मान करके, मुझे अपने संतजनोंके शिरका मुकुट बना दिया है. सो यह बात दयालु प्रभु आपके विना दूसरा कौन कर सकता है ? हे प्रभु ! आपके विना बलात्कारसे बिरदावलीको पालनेवाला कौन है ? ॥ २८९ ॥

शोक सनेह कि बाल सुभाये ॥ आयसु लाइ रजायसु बाँये ॥ १ ॥ *
तबहुँ कृपाल हेरि निज ओरा ॥ सबहिँ भांति भल मानेहुँ मोरा ॥ २ ॥ *

यद्यपि मैं चाहे शोकसे, चाहे स्नेहसे, चाहे बालस्वभावसे राजाकी आज्ञाको बांये कहे न मानकर, यहां आयाहूं ॥ १ ॥ तौभी दयालु प्रभुने अपनी ओर देखकर, मेरी तर्फका सब प्रकारसे भला मान लिया है ॥ २ ॥

देखेउँ पाइँ सुमंगल मूला ॥ जानेउँ स्वामि सहज अनुकूला ॥ ३ ॥ *
बड़े समाज बिलोकेउँ भागू ॥ बड़ी चूक साहिब अनुरागू ॥ ॥ ४ ॥ *

सो यह निश्चय कैसे हुआ कि, परम मंगलके मूल आपके चरणकमलोंके दर्शन हुए और इसीसे मैंने जानलिया है कि, प्रभु मुझपर स्वभावसे अनुकूल हैं ॥ ३ ॥ इस बड़ी भारी समाजके बीच मैंने मेरे भाग्यको भली भांति देख लिया है कि—मेरे जैसा भाग्यवान् जगत्में कोई नहीं है; क्योंकि इतना भारी अपराध करनेपरभी प्रभुकी प्रीति यह बिना भाग्य नहीं बन सकता ॥ ४ ॥

कृपा अनुग्रह अंग अघाई ॥ कीन्ह कृपानिधि सब अधिकाई ॥ ५ ॥ *
राखा मोर दुलार गुसाँई ॥ अपने शील स्वभाव भलाई ॥ ६ ॥ *

कृपानिधान प्रभुने मेरी सब लोगोंसे जो अधिकता करी, इस कृपा व अनुग्रहसे मेरे सब अंग अघायगये है यानो संतुष्ट हो गये है ॥ ५ ॥ हे प्रभु ! आपने जो मेरा प्यार राखा सो केवल अपने शील स्वभाव और भलापनसे रक्खा है. मेरेमें उसके योग्य कोई गुण नहीं है ॥ ६ ॥

नाथ निपट मैं कीन्ह ढिठाई ॥ स्वामि समाज सँकोच बिहाई ॥ ७ ॥ *
अबिनय बिनय यथारुचि बानी ॥ क्षमिय देव अति आरति जानी ॥ ८ ॥ *

हे नाथ ! मैंने तौ स्वामी और समाजका लिहाज छोंड़कर बड़ीही धृष्टता करी है ॥ ७ ॥ और अपनी इच्छानुसार विनय और अविनय भरी वाणी कही है; परंतु हे स्वामी ! मुझे आर्त समझकर, मेरा अपराध क्षमा करिये ॥ ८ ॥

दोहा—सुहृद सुजान सुसाहिबहिँ, बहुत कहत बड़ि खोरि ॥ *
आयसु देइय देव अब, समय सुधारिय मोरि ॥ २९० ॥ *

सुहृद, सुजान और अच्छे स्वामीको ज्यादा कहना बड़ी भारी खोड़ समझी जाती है. इसलिये हे देव ! अब मुझे आज्ञा देओ और मेरा सब सुधारो ॥ २९० ॥

प्रभुपदपद्मपराग दुहाई ॥ सत्य सुकृत सुख सींव सुहाई ॥ १ ॥ *
सो करि कहौं हिये अपनेकी ॥ रुचि जागत सोवत सपनेकी ॥ २ ॥ *

हे प्रभु ! आपके चरणकमलके रजकी दुहाई सब प्रकारसे सुहावनी और सच्चे सुकृत (पुण्य) व सुखकी सींव है ॥ १ ॥ उस दुहाईको करके मैं अपने जीकी बात कहता हूं कि, जिस दुहाईपर मेरी जागते, सोते और स्वप्नमें सब अवस्थाओंमें प्रीति है ॥ २ ॥

सहज सनेह स्वामि सेवकाई ॥ स्वारथ छल फल चारि बिहाई ॥ ३ ॥ *
आज्ञा सम न सुसाहिब सेवा ॥ सो प्रसाद जन पावै देवा ॥ ४ ॥ *

हे प्रभु ! मैं तौ इसी बातको सब प्रकारसे उत्तम समझता हूं कि, स्वार्थ और चारों पुरुषा

थोंको तज, निष्कपट हो, सहज स्नेहसे स्वामीकी सेवा करना ॥ ३ ॥ स्वामीकी आज्ञा पालन करना, इसके बराबर दूसरी स्वामीकी सेवा एकहू नहीं है. हे प्रभु ! यह दास उस अनुग्रह (सेवा) का पात्र होवे ऐसी कृपा कीजिये ॥ ४ ॥

अस कहि प्रेमबिबश भे भारी ॥ पुलक शरीर बिलोचन बारी ॥ ५ ॥ ❀
प्रभुपदकमल गहे अकुलाई ॥ समय सनेह न सो कहि जाई ॥ ६ ॥ ❀

ऐसे कहकर, भरतजी ऐसे भारी प्रेमके बिबश हुए कि-शरीरमें पुलकावली छा गई और नेत्रोंमें जल भर आया ॥ ५ ॥ और अकुलाके प्रभुके चरणकमल धरे. कवि कहता है कि- उस समयका स्नेह किसीसे कहा नहीं जाता ॥ ६ ॥

कृपासिन्धु सनमानि सुबाणी ॥ बैठाये समीप गहि पाणी ॥ ७ ॥ ❀
भरतबिनय सुनि देखि सुभाऊ ॥ शिथिल सनेह सभा रघुराऊ ॥ ८ ॥ ❀

भरतकी ऐसी प्रीतिकी रीति देख कृपासिंधु प्रभुने मधुर वाणीसे सन्मान कर, हाथ पकड़ अपने निकट बिठाया ॥ ७ ॥ महादेवजी कहते हैं कि-हे पार्वती ! भरतका विनय सुन, और स्वभाव देख, सभाके लोग और खुद रामचन्द्र स्नेहसे शिथिल हो गये ॥ ८ ॥

छंद-रघुराउ शिथिल सनेह साधुसमाज मुनि मिथिलाधनी ॥ ❀
मनमहँ सराहत भरत भायप भक्तिकी महिमा घनी ॥ ❀
भरतहिं प्रशंसत बिबुध बरषत सुमन मानस मलिनसे ॥ ❀
तुलसी बिकल सबलोग सुनि सकुचे निशागम नलिनसे ॥ १३ ॥ ❀

रामचन्द्र आनन्दकन्द, संतलोग, सभा, मुनि और राजा जनक ये सब स्नेहसे शिथिल हो, भरतकी भायप और भक्तिकी अतिउत्कट महिमा देखकर, मनमें सराह सराहकर, भरतकी प्रशंसा करते है और मलिनचित्त देवताभी फूल बरसाते है. तुलसीदासजी कहते है कि-भरतकी वाणी सुन, सब लोग कैसे विकल होगये हैं कि, मानों रात्रिमें कमल मुरझा गये है ॥ १३ ॥

सोरठा-देखि दुखारी दीन, दुहुँ समाज नर नारि सब ॥ ❀
मघवा महामलीन, मुये मारि मंगल चहत ॥ १२ ॥ ❀

दोनों समाजके सब स्त्री पुरुषोंको अतिशय दीन और दुखी देखकरभी महामलीन इंद्रने दुःखसे मरेहुओंकोभी फिर मारकर मंगल चाहा ॥ १२ ॥

कपट कुचालि सींव सुरराजू ॥ प्रिय अकाज प्रिय आपन काजू ॥ १ ॥ ❀
काकसमान पाकरिपुरीती ॥ छली मलिन कतहुँ न परतीती ॥ २ ॥ ❀

हे पार्वती ! इंद्र कपट और कुचालकी तो सीमाही है. इसे पराया बिगाड़ और अपना सुधार बहुत प्रिय है ॥ १ ॥ इंद्रकी चाल कव्वेकीसी है. यह महा छली और मन मैला है, इसे कहीं किसीका भरोसा नहीं है ॥ २ ॥

प्रथम कुमति करि कपट सकेला ॥ सो उचाट सबके शिर मेला ॥ ३ ॥ ❀
सुरमाया सबलोग बिमोहे ॥ रामप्रेम अतिशय न बिछोहे ॥ ४ ॥ ❀

इसने पहले कुबुद्धि करके जो कपट समेट लिया था वह उच्चाट फिर पीछा सबके शिरपर डाल

दिया ॥ ३ ॥ हे पार्वती ! इंद्रकी मायासे सब लोग मोहित हो गये; परंतु प्रभुके प्रेमसे बिलकुल बिछुर न गये ॥ ४ ॥

भय उचाट सब मन थिर नाहीं ॥ क्षण बन रुचि क्षण सदन सुहाहीं ॥ ५ ॥
दुबिध मनोगति प्रजा दुखारी ॥ सरित सिंधु संगम जिमि बारी ॥ ६ ॥ ❀

अतएव उन सब लोगोंका मन चल विचल हो गया; किसीका मन स्थिर न रहा. कारण यह कि-इधर तो प्रभुका प्रेम और उधर इंद्रका किया उचाट; जिससे क्षणमें तो उनका मन वनमें रहनेको चाहता है और क्षणमें घर सुहाते हैं ॥ ५ ॥ मनमें दुविधा होनेसे प्रजा ऐसी दुखी हो गई है कि, कुछ कहा नहीं जाता. जैसे समुद्र और नदीके संगमका जल समुद्रके घटने बढ़ने (जुहार भाठे) के कारण स्थिर नहीं रहता. ऐसे सबके मन चल विचल हो गये ॥ ६ ॥

दुचित कतहुँ परितोष न लहहीं ॥ एक एक सन मर्म न कहहीं ॥ ७ ॥ ❀
लखि हिय हँसि कह कृपानिधानू ॥ सरिस श्वान मघवा निजबानू ॥ ८ ॥ ❀

मनमें दुविधा होनेसे न तो कहीं संतोष पाते हैं और न एक एकसे अपने मर्मकी बात कहते है ॥ ७ ॥ इंद्रकी इस चालको लख, मनहीमन हँस, कृपानिधि प्रभुने अपने मनमें कहा कि-इंद्रकी टेव कुत्तेके समान है ॥ ८ ॥

दोहा-भरत जनक मुनिगण सचिव, साधु सचेत बिहाइ ॥ ❀
लगी देवमाया सबहिं, यथायोग जन पाइ ॥ २९१ ॥ ❀

हे पार्वती ! देवताओंकी माया भरत, जनक, मुनिगण, मंत्री और सावधान संत जनोंको छोड़कर बाकी सब लोगोंको यथायोग्य लग गई ॥ २९१ ॥

कृपासिंधु लखि लोग दुखारे ॥ निजसनेह सुरपतिछल भारे ॥ १ ॥ ❀
सभा राउ गुरु महिसुर मंत्री ॥ भरत भक्ति सबकी मति यंत्री ॥ २ ॥ ❀

कृपासिंधु प्रभु देखते हैं कि-सब लोग अपने स्नेहसे और इन्द्रकी महामायासे दुविधामें पड़, दुःख पा रहे है ॥ १ ॥ सभाके लोग, राजा जनक, गुरु वसिष्ठजी, ब्राह्मण और मंत्री इन सबकी बुद्धि भरतकी भक्तिके वश हो रही है ॥ २ ॥

रामहिं चितवत चित्र लिखेसे ॥ सकुचत बोलत बचन सिखेसे ॥ ३ ॥ ❀
भरतप्रीति नित बिनय बड़ाई ॥ सुनत सुखद बर्णत कठिनाई ॥ ४ ॥ ❀

सबलोग चित्रकढ़ेसे खड़े प्रभुकी ओर देख रहे है और जो कुछ वचन बोलते हैं, वे सिखे हुएसे होनेसे बोलते मनमें सकुचाते हैं ॥ ३ ॥ भरतकी प्रीति, नीति, विनय और बढ़ाई सुनते बहुत सुखकारी लगती है; परंतु कहते भारी कठिनता पड़ती है ॥ ४ ॥

जासु बिलोकि भक्तिलवलेशू ॥ प्रेममगन मुनिगण मिथिलेशू ॥ ५ ॥ ❀
महिमा तासु कहै किमि तुलसी ॥ भक्तिप्रभाव सुमति हिय हुलसी ॥ ६ ॥ ❀

साक्षात् योगिराज जनक और मुनीश्वरभी जिसकी भक्तिका लवलेश मात्र देख कर, प्रेममगन हो जाते हैं ॥ ५ ॥ उस बड़भाग भरतकी महिमाको मंदमति तुलसीदास किसप्रकार कहे ? ॥ ६ ॥

आपु छोट महिमा बड़ि जानी ॥ कबिकुल कानि मानि सकुचानी ॥ ७ ॥ ❀

कहि न सकत गुण रुचि अधिकाई॥ मति गति बाल बचनकी नाई॥ ८॥

यद्यपि कविलोगोंकी सुबुद्धि भक्तिके प्रभावसे वर्णन करनेको हृदयमें बहुत हुलसती है, तथापि वह अपनेको छोटी और महिमाको बड़ी जान, लज्जा मान कर, मनमें सकुचा जाती है॥ ७॥ भरतके गुण कहनेको कवियोंकी अभिलाषा बहुत अधिक रहती है, परंतु कह नहीं सकते; क्योंकि भरतके गुण कहनेमें उनकी बुद्धिकी गति बालकके वचनकीसी हो जाती है॥ ८॥

दोहा–भरत बिमल यश बिमल बिधु, सुमति चकोर कुमारि॥ ❋
उदित बिमल जनहृदय नभ, यकटक रही निहारि॥ २९२॥ ❋

भरतका जो विमल यश है सोही मानों निर्मल चंद्र है और संतजनोंकी जो सुबुद्धि है, सोही मानो चकोरकुमारी है. चंद्रमा स्वच्छ आकाशमे उदय होता है, ऐसे यशरूप चंद्र संतजनोंके अमल हृदयरूप आकाशमें उदय हुआ है. जैसे चकोरकुमारी आकाशमें उदय हुए चंद्रमाको यकटक देखती रहती है. ऐसे संतजनोंकी सुबुद्धि उनके हृदयगत भरतके यशको यकटक देख रही है॥ २९२॥

भरत स्वभा न सुगम निगमहू॥ लघुमति चापलता कबि क्षमहू॥ १॥ ❋
कहत सुनत सतिभाव भरतको॥ सीय रामपद होइ न रत को॥ २॥ ❋

जब भरतजीके स्वभावका वर्णन वेदकोभी सुगम नहीं है तो तुच्छबुद्धि मैं क्या पदार्थ? कविलोग मेरी चपलताविषे क्षमा करेंगे॥ १॥ जगत्में ऐसा कौन मनुष्य है? कि, जो भरतके सत्यभावको कहता और सुनता, सीतारामके चरणविषे आसक्त न होवे?॥ २॥

सुमिरत भरतहिँ प्रेम रामको॥ जेहिँ न सुलभ तेहिँ सरस बाम को॥ ३॥
देखि दयालु दशा सबहीकी॥ राम सुजान जानि जन जीकी॥ ४॥ ❋

भरतका स्मरण करते जिसको रामकेविषे प्रीति सुलभ नहीं है, उसके समान जगत्में कुटिल यानी अभागा कौन है?॥ ३॥ परम सुजान दयालु प्रभु रामने सब लोगोंकी ऐसी प्रेममय दशा देख, उनके जीकी बात जान॥ ४॥

धर्मधुरीण धीर नयनागर॥ सत्य सनेह शील सुखसागर॥ ५॥ ❋
देश काल लखि समय समाजू॥ नीति प्रीति पालक रघुराजू॥ ६॥ ❋

धर्मधुरंधर, धीर, नीतिपुण, सत्य, स्नेह, शील व सुखके सागर॥ ५॥ और नीति व प्रीतिके प्रतिपालक श्रीरघुनाथजीने देशकालको विचार, समय और समाजको देखकर॥ ६॥

बोले बचन बाणि सरबससे॥ हित परिणाम सुनत शशिरससे॥ ७॥ ❋
तात भरत तुम धर्मधुरीणा॥ लोक बेदबिधि परम प्रबीणा॥ ८॥ ❋

ये वचन कहे कि–जो मानों वाणीके सर्वस्वके समान परिणाममें हितकारी और सुनते समय अमृतके समान मधुर लगते थे॥ ७॥ प्रभुने कहा कि–हे तात! तुम धर्ममें मुखिया हो और लोक व वेदकी रीतिमें परम प्रवीण हो॥ ८॥

दोहा–कर्म बचन मानस बिमल, तुमसमान तुम तात॥ ❋
गुरुसमाज लघुबन्धुगुण, कुसमय किमि कहि जात॥ २९३॥ ❋

हे तात ! मन क्रम वचनसे तुम्हारे जैसे शुद्धान्तःकरण तुमही हो; परंतु इस महापुरुषोंको समाजमें छोटेभाईके गुणोंका वर्णन करना अनुचित समझ, इस समयको कुसमय जानकर मैं तुम्हारे गुण कह नहीं सकता; क्योंकि गुरुसमाजके बीच छोटे भाईके गुण कैसे कहे जाँय ? ॥ २९३ ॥

जानहु तात तरणिकुलरीती ॥ सत्यसिंधु पितु कीरति प्रीती ॥ १ ॥ ❋
समय समाज लाज गुरुजनकी ॥ उदासीन हित अनहित मनकी ॥२॥ ❋

हे तात ! तुम सूर्यवंशकी रीतिको और सत्यके समुद्र पिता दशरथजीकी कीर्तिपर जो प्रीति रही उसको तथा समय, समाज, गुरुजनकी लाज व उदासीन मित्र और शत्रुके मनकी बात इन सबोंको अच्छीतरह जानते हो ॥ १ ॥ २ ॥

तुमहिँ बिदित सबहीकर मरमू ॥ आपन मोर परम हित धरमू ॥ ३ ॥ ❋
मोहिँ सबभांति भरोस तुम्हारा ॥ तदपि कहौं अवसर अनुसारा ॥४॥ ❋

हे भाई ! तुमको सब किसीका मर्म भलीभांति ज्ञात है. तुम मेरे और अपने दोनों उत्तम हितकारी धर्मोंको जानते हो ॥ ३ ॥ हे भाई ! मुझे सब प्रकारसे तुम्हारा भरोसा है, तौभी समयके अनुसार जो कुछ मैं कहता हूं सो सुनो ॥ ४ ॥

तात तात बिन बात हमारी ॥ केवल कुलगुरुकृपा सिधारी ॥ ५ ॥ ❋
नतरु प्रजा पुरजन परिवारू ॥ हमहिँ सहित सब होत दुखारू ॥ ६ ॥ ❋

हे तात ! पिता दशरथजीके बिना अपनी सब बात केवल कुलगुरु वसिष्ठजीकी कृपाने सम्हाल रक्खी है ॥ ५ ॥ यदि गुरु न सम्हालते तौ प्रजा, पुरवासी और परिवार ये सब हमारे साथ महादुखी हो जाते ॥ ६ ॥

जो बिनु अँवसर अथव दिनेशू ॥ जग केहि कहौं न होय कलेशू ॥ ७ ॥❋
तस उत्पात तात बिधि कीन्हा ॥ मुनि मिथिलेश राखि सब लीन्हा ॥८॥❋

बेवक्त सूर्य अस्त हो जायँ तौ कहो जगत्में किसको क्लेश और कष्ट नहीं होता ? ॥ ७ ॥ हे तात ! विधाताने ऐसाही उत्पात रच दिया था; परंतु गुरु और जनक राजाने वह सब रख लिया है. यानी उपद्रव मिटा दिया है ॥ ८ ॥

दोहा—राजकाज सब लाज पति, धर्म धरणि धन धाम ॥ ❋
गुरुप्रभाव पालिहि सबहिँ, भल होइहि परिणाम ॥ २९४ ॥ ❋

हे भाई ! तुम्हारे सारे राजकाज, लाज, पति [इज्जत], धर्म, धरती, धन और घर इन सबको गुरुका प्रताप पालेगा और अंतमें भला होगा. इसलिये तुम किसी बातकी चिंता मत करो ॥ २९४ ॥

सहित समाज तुम्हार हमारा ॥ घर बन गुरुप्रसाद रखवारा ॥ १ ॥ ❋
मातु पिता गुरु स्वामि निदेशू ॥ सकल धर्म धरणीधर शेशू ॥ २ ॥ ❋

हे भाई ! घरमें तौ समाजके साथ तुम्हारी और वनमें हमारी सब ठौर गुरुकृपाही रक्षा करेगी ॥ १ ॥ हे तात ! माता, पिता, गुरु और स्वामीकी जो आज्ञा है सो मानों सर्व धर्मरूप धरतीका धारण करनेवाला शेषनागही है. जैसे शेष पृथ्वीको धारण करता है. ऐसे माता, पिता और गुरुकी आज्ञा धर्मको धारण करती है ॥ २ ॥

सो तुम करहु करावहु मोहू ॥ तात तरणिकुलपालक होहू ॥ ३ ॥ ❀
साधक एक सकल सिधि देनी ॥ कीरति सुगति भूतिमय बेनी ॥ ४ ॥ ❀

हे तात ! अब तुम उसे (आज्ञाको) धारण करो और हमें धारण कराओ. हे भाई ! तुम सूर्यवंशके प्रतिपालक होओ ॥ ३ ॥ हे भाई ! यहां एक यही साधना सब सिद्धियोंकी देनेवाली है. जैसे वेनीमें अनेक नदियां मिलकर इकट्ठी रहती हैं, ऐसेही यह साधना कीर्ति, सुगति और संपदाकी मानों एक वेणी है, अर्थात् इसमें कीर्ति आदि सब मिश्रित रहती है ॥ ४ ॥

सो बिचारि सहि संकट भारी ॥ करहु प्रजा परिवार सुखारी ॥ ५ ॥ ❀
बांटि बिपति सबही मिलि भाई ॥ तुमहिँ अवधिभरि अतिकठिनाई ॥ ६ ॥

सो इस बातको विचार कर, भारी संकटको सह, प्रजा और परिवारको सुखी करो ॥ ५ ॥ हे भाई ! अब इस विपतको आपन सब भाइयोंको मिलकर बांट लेना चाहिये. यद्यपि इसमें तुमको चौदह वर्षतक बडी भारी कठिनता है पर क्या करें ? ॥ ६ ॥

जानि तुमहिँ मृदु कहौं कठोरा ॥ कुसमय तात न अनुचित मोरा ॥ ७ ॥
होहिँ कुठाँव कुबन्धु सहाये ॥ ओढ़िय हाथ असिनिके घाये ॥ ८ ॥ ❀

हे भाई ! यद्यपि मैं यह जानता हूं कि, तुम बहुत कोमल हो. कठोर वचन कहनेके योग्य नहीं हो; परंतु क्या करूं ? मुझे कहनाही पड़ता है. हे तात ! यह कालही ऐसा बुरा है इसमें हमारी चूक नहीं है ॥ ७ ॥ हे भाई ! जहां कुठाउं संकट पड़ता है, तहां अच्छे बन्धुलोगही सहायक होते हैं. देखिये, जब तलवार शिरपर आती है, तब हाथही आड़े आते है ॥ ८ ॥

दोहा–सेवक कर पद नयनसे, मुख सो साहिब होइ ॥ ❀
तुलसी प्रीतिकी रीति सुनि, सुकबि सराहहिँ सोइ ॥ २९५ ॥ ❀

हे तात ! नौकरको तो हाथ पांव और आँखके समान होना चाहिये और मालिकको मुखके समान होना चाहिये. तात्पर्य यह है कि–जैसे नेत्र हाथ पांव कार्य करके मुखके लिये खानेके पदार्थ हाजिर करते हैं और आप नहीं खाते. ऐसे नौकरको चाहिये कि, जो कुछ करे सो स्वामीके लिये करै, अपने तई नहीं करै और मुख हाथ आदिके लाये हुए पदार्थ खाकर हाथ पांव नेत्र आदि सब अंगोंको पोषता है. ऐसे मालिकको चाहिये कि अपने साथ अपने सब नौकरोंको पोषता रहे. तुलसीदासजी कहते हैं कि–प्रभुके श्रीमुखसे प्रीतिकी रीतिको सुन सुकवि लोग बारंबार उसीको सराहते हैं ॥ २९५ ॥

सभा सकल सुनि रघुवरबानी ॥ प्रेम पयोधि अमिय जनु सानी ॥ १ ॥ ❀
शिथिल समाज सनेह समाधी ॥ देखि दशा चुप शारद साधी ॥ २ ॥ ❀

हे पार्वती ! प्रभुकी नीतिभरी गूढार्थ वाणी सुन कर, सब सभा कैसी प्रसन्न हुई है कि मानों प्रेमरूपी सुधासमुद्रमें मग्न हो गई है ॥ १ ॥ प्रभुकी अमृतभरी मधुर वाणी सुन, सभा स्नेहसे ऐसी शिथिल होगई है कि, मानों समाधिही लग गई हैं, उस दशाको देख, शारदाने चुप साध लीनी है ॥ २ ॥

भरतहिँ भयउ परम संतोषू ॥ सनमुख स्वामि बिमुख दुख दोषू ॥ ३ ॥ ❀
मुख प्रसन्न मन मिटा बिषादू ॥ भा जनु गूंगहिँ गिरा प्रसादू ॥ ४ ॥ ❀

उसकाल भरतको भारी संतोष हुआ है और स्वामीको अनुकूल जानकर, दुःख और दोष निवृत्त हो गये है ॥ ३ ॥ भरतजीका मुख प्रसन्न हो गया है. मनका विषाद मिट गया है. मानों गूंगे आदमीको सरस्वतीकी कृपासे बाणीका लाभ हो गया है ॥ ४ ॥

कीन्ह सप्रेम प्रणाम बहोरी ॥ बोले पाणिपंकरुह जोरी ॥ ५ ॥ ❋
नाथ भयो सुख साथ गयेको ॥ लहेउँ लाभ जग जन्म भयेको ॥ ६ ॥ ❋

भरतजीने प्रीतिपूर्वक फिर प्रणाम कर, हस्तकमल जोड़कर यह वचन कहा ॥ ५ ॥ कि–हे नाथ! अब मुझे आपके संग चलने जितना सुख प्राप्त हो गया है. मैंने जगत्में जन्म लेनेका फल पालिया है ॥ ६ ॥

अब कृपालु जस आयसु होई ॥ करौं शीस धरि सादर सोई ॥ ७ ॥ ❋
सो अवलंब देव मोहिं देई ॥ अवधिपार पावउँ जेहिं सेई ॥ ८ ॥ ❋

हे दयालु प्रभु! अब मुझे आप जैसी आज्ञा फरमावेंगे वही मैं बड़े आदरके साथ सिर चढ़ाकर करूंगा ॥ ७ ॥ परंतु हे प्रभु! मुझे एक ऐसा अवलम्ब देओ कि, जिसका सेवन करके मैं अवधि (चौदह वर्षकी) को पार हो जाऊं ॥ ८ ॥

दोहा–देवदेव अभिषेकहित, गुरुअनुशासन पाइ ॥ ❋
आनेउँ सब तीरथसलिल, तेहिकहँ काह रजाइ ॥ २९६ ॥ ❋

हे देवनके देव ! आपके अभिषेकके वास्ते गुरुकी आज्ञा पाकर मैं जो सब तीर्थोंका जल लाया हूं, उसके लिये क्या आज्ञा है ? ॥ २९६ ॥

एक मनोरथ बड़ मनमाहीं ॥ सभय सँकोच जात कहि नाहीं ॥ १ ॥ ❋
कहहु तात प्रभुआयसु पाई ॥ बोले बाणि सनेह सुहाई ॥ २ ॥ ❋

हे प्रभु! मेरे मनमें एक बड़ा भारी मनोरथ है, परंतु डर व संकोचके मोरे मैं कह नहीं सकता ॥ १ ॥ तब रामने कहा कि– हे तात! कहो. ऐसे प्रभुकी आज्ञा पाकर, स्नेहभरी मधुर वाणीसे भरतने कहा कि– ॥ २ ॥

चित्रकूट मुनिथल तीरथ बन ॥ खग मृग सर सरि निर्झर गिरिगन ॥ ३ ॥
प्रभुपदअंकित अवनि विशेखी ॥ आयसु होय तो आवौं देखी ॥ ४ ॥ ❋

हे नाथ! चित्रकूटपर्वतमें जो मुनिलोगोंके आश्रम, तीर्थ और वन हैं, तथा पशु पक्षी तालाव नदियां निझरने और पर्वतोंका समूह है ॥ ३ ॥ और उसमेंभी विशेष करके आपके चरण चिन्होंसे चिन्हित जो पृथ्वी है, उन सबको मैं देखना चाहता हूं सो जो आज्ञा होवे तौ मैं देखि आऊं ॥ ४ ॥

अवशि अत्रि आयसु शिर धरहू ॥ तात बिगत भय कानन चरहू ॥ ५ ॥ ❋
मुनिप्रसाद वन मंगलदाता ॥ पावन परम सुहावन भ्राता ॥ ६ ॥ ❋

भरतके वचन सुन प्रभुने कहा कि–हे तात! जो तुम्हारी इच्छा है तौ भले वनमें जाओ और निर्भय रीतिसे बनमें विचरो; परंतु अत्रिऋषि जो आज्ञा करैं उसे अवश्य शिर चढ़ाइयो ॥ ५ ॥ हे भाई! मुनिकी कृपासेही यह वन मंगलकारी, परम पवित्र और परम रम्य बन रहा है ॥ ६ ॥

ऋषिनायक जहँ आयसु देहीं ॥ राखेहु तीरथ जल थल तेहीं ॥ ७ ॥ ❋

सुनि प्रभुबचन भरत सुख पावा ॥ मुनिपदकमल मुदित शिर नावा ॥ ८ ॥

सो तुम उनके निकट अवश्य जाना और वे जहांके लिये आज्ञा करैं उसी स्थलमें यह तीर्थोंका जल रख देना ॥ ७ ॥ प्रभुके वचन सुन भरतजीने महासुख पाया और प्रसन्न हो, मुनिके चरणकमलोंमें सिर नवाया ॥ ८ ॥

दोहा–भरतरामसम्बाद सुनि, सकलसुमंगलमूल ॥ ❋

सुर स्वारथी सराहि कुल, हर्षित बर्षहिं फूल ॥ २९७ ॥ ❋

सर्व प्रकारके मंगलका कारण भरत और रामका सम्वाद सुन सबके सब स्वार्थी देवता प्रभुको सराह सराह, आनंदित हो, फूल बरसाते हैं ॥ २९७ ॥

धन्य भरत जय राम गुसाँई ॥ कहत देव हर्षत बरि आई ॥ १ ॥ ❋

सुनि मिथिलेश सभा सबकाहू ॥ भरतबचन सुनि भयउ उछाहू ॥ २ ॥ ❋

और बरियाई हर्षित होकर देवता लोग कहते हैं कि–हे राम गुसाई ! आपकी जय होवे. जैसे आप हो वैसे भरतभी बड़े धन्य है ॥ १ ॥ महादेवजी कहते हैं कि–हे पार्वती ! भरतका वचन सुन, मुनि जनक और सभाके लोग सब किसीको बड़ा उछाह हुआ ॥ २ ॥

भरत रामगुणग्राम सनेहू ॥ पुलकि प्रशंसत राउ बिदेहू ॥ ३ ॥ ❋

सेवक स्वामिसुभाव सुहावन ॥ नेम प्रेम अतिपावन पावन ॥ ४ ॥ ❋

उसकाल भरत और रामके गुणसमुदाय और परस्परकी प्रीतिको देखकर, राजा जनक पुलकित शरीर हो दोनोंकी प्रशंसा करने लगे ॥ ३ ॥ कि सेवक (भरत) और स्वामी (राम) का जो स्वभाव है, वह बहुतही सुन्दर है, इन दोनोंकी परस्परकी प्रीतिका नियम पवित्रसेभी अति पवित्र है ॥ ४ ॥

मतिअनुसार सराहन लागे ॥ सचिव सभासद सब अनुरागे ॥ ५ ॥ ❋

सुनि सुर रामभरतसम्बादू ॥ दुहुँ समाज हिय हर्ष बिषादू ॥ ६ ॥ ❋

जब राजाने प्रशंसा करी तौ मंत्री और सभाके लोगभी सब प्रसन्न हो अपनी अपनी बुद्धिके अनुसार सराहने लगे ॥ ५ ॥ राम और भरतका सम्बाद सुनकर दोनों समाजोंके हृदयमें सुख और दुःख दोनों व्यापे. सुख तौ रामचन्द्रजीकी आज्ञानुकूल कार्य होनेसे और दुःख प्रभुके वनगमनसे ॥ ६ ॥

राममातु दुख सुख सम जानी ॥ कहि गुण दोष प्रबोधी रानी ॥ ७ ॥ ❋

एक करहिं रघुबीरबड़ाई ॥ एक सराहत भरतभलाई ॥ ८ ॥ ❋

रामचन्द्रजीकी माता कौसल्याने सुख दुःखको समान समझ दोनों बातोंमें गुण दोष कह कह कर सब रानियोंको समझाया ॥ ७ ॥ तहां कितनीएक तौ प्रभुकी प्रशंसा करती हैं और कितनीएक भरतकी भलाइको सराहती हैं ॥ ८ ॥

दोहा–अत्रि कहेउ तब भरतसन, शैलसमीप सुकूप ॥ ❋

राखिय तीरथतोय तहँ, पावन अमल अनूप ॥ २९८ ॥ ❋

तब अत्रि मुनिने भरतसे कहा कि–हे तात ! इस पर्वतके निकटमेंही एक सुन्दर कुआ है सो इस अनुपम पवित्र निर्मल तीर्थजलको उस कुएमें रख दो ॥ २९८ ॥

भरत अत्रिअनुशासन पाई ॥ जलभाजन सब दिये चलाई ॥ १ ॥ ❋
सानुज आपु अत्रिमुनि साधू ॥ सहित गये जहँ कूप अगाधू ॥ २ ॥ ❋

अत्रि मुनिकी आज्ञा पाकर भरतजीने सब तीर्थजलके कलश आगे भेज दिये ॥ १ ॥ और आप (भरत) शत्रुघ्नके साथ महात्मा अत्रिमुनिके संग वहां गये कि, जहां वह अगाध कूप था ॥ २ ॥

पावन पाथ पुण्य थल राखा ॥ प्रमुदित प्रेम अत्रि अस भाखा ॥ ३ ॥ ❋
तात अनादिसिद्ध थल येहू ॥ लोपेउ काल बिदित नहिँ केहू ॥ ४ ॥ ❋

जब वह पवित्र तीर्थोंका जल पुण्यभूमिमें रक्खा गया, तब अत्रिमुनिने आनंदित हो, प्रीतिसे ऐसा कहा कि–॥ ३ ॥ हे तात ! यह स्थल अनादिसिद्ध है. कालके बलसे यह बिलकुल लुप्त हो गया है. अब इसे कोई नहीं जानता है ॥ ४ ॥

तव सेवकन्ह सरस थल देखा ॥ कीन्ह सुजलहित कूप बिशेखा ॥ ५ ॥ ❋
बिधिबश भयउ बिश्वउपकारू ॥ सुगम अगम अति धर्मबिचारू ॥ ६ ॥

हे भरत आपके नौकरोंने यह अच्छा स्थल देखकर जलके लिये एक कूपविशेष बनालिया है, सो अब यह जल इसमें छोड़ दो ॥ ५ ॥ हे भरत ! दैवयोगसे जो जगतका उपकार होना था, सो हो गया है. हे तात ! धर्मका विचार अतिगहन है; कहीं सुगमका अमग हो जाता है और कहीं अगमका सुगम हो जाता है ॥ ६ ॥

भरतकूप अब कहिहहिं लोगा ॥ अतिपावन तीरथ जल योगा ॥ ७ ॥ ❋
प्रेमसमेत निमज्जहिँ प्राणी ॥ होइहहिँ बिमल कर्म मन बाणी ॥ ८ ॥ ❋

हे तात ! अब सब लोग इसे भरतकूप कहेंगे और तीर्थोंके जलके संयोगसे यह परमपवित्र होगा ॥ ७ ॥ जो प्राणी प्रीतिपूर्वक इसमें स्नान करेंगे, वे मन वच कर्मसे शुद्ध हो जायंगे ॥ ८ ॥

दोहा–कहत कूपमहिमा सकल, गये जहां रघुराउ ॥ ❋
अत्रि सुनायउ रघुवरहिँ, तीरथपुण्यप्रभाउ ॥ २९९ ॥ ❋

ऐसे कुएकी महिमा कहते हुए सब लोग वहां गये कि, जहां प्रभु विराजे थे. उस समय अत्रिमुनिने प्रभुको उस तीर्थके पुण्यका सब प्रभाव कह कर सुनाया ॥ २९९ ॥

कहत धर्म इतिहास सप्रीती ॥ भयउ भोरनिशि सो सुख बीती ॥ १ ॥ ❋
नित्य निबाहि भरत दोउ भाई ॥ राम अत्रि गुरु आयसु पाई ॥ २ ॥ ❋

हे पार्वती ! प्रीतिपूर्वक धर्मसम्बन्धी इतिहास कहते २ वह सारी रैन सुखसे बीत गई और प्रभात हो गया ॥ १ ॥ तब भरत और शत्रुघ्न दोनों भाई नित्यकृत्यसे पहुंच, प्रभुके पास आये. प्रभु अत्रिमुनि और वसिष्ठजीसे आज्ञा पाय ॥ २ ॥

सहित समाज साज सब सादे ॥ चले रामबन अटन पयादे ॥ ३ ॥ ❋
कोमल चरण चलत बिनु पनहीं ॥ भै मृदु भूमि सकुचि मन मनहीं ॥ ४ ॥

अपनी समाजको साथ ले सब सादेसाज सज, नंगे पांव रामचन्द्रजीके वनमें घूमनेको चले ॥ ३ ॥ जब दोनों भाई कोमल चरणोंसे बिना जूते वनमें विचरने लगे. तब वह वनकी ककरेली पृथ्वी मनही मन सकुच कर अति कोमल हो गई ॥ ४ ॥

कुश कंटक कांकरी कुराई ॥ कटुक कठोर कुवस्तु दुराई ॥ ५ ॥ ❃
महि मंजुल मृदु मारग कीन्हें ॥ बहत समीर त्रिविधि सुख लीन्हें ॥ ६ ॥ ❃

और वनमें दाभ, कांटे, कंकर, कुराई कहे गड्वा खंदक वगैरः जो कडुई व कठोर कुवस्तु थी वह सब छिपा ली ॥ ५ ॥ पृथ्वीने सब मारग सुन्दर और कोमल बना दिये. सुखकेलिये तीनप्रकारकी शीतल सुगन्ध मंद बयार बहने लगी ॥ ६ ॥

सुमन बर्षि सुर घन करि छाहीं ॥ बिटप फूलि फल दल मृदुताहीं ॥ ७ ॥ ❃
मृग बिलोकि खग बोलि सुबानी ॥ सेवहिं सकल राम प्रिय जानी ॥ ८ ॥ ❃

देवता लोग फूल बरसाते है, बादल छाया करते हैं, वृक्ष नानाप्रकारके फल फूल देते है, पत्ते कोमलताको लिये बिछुरते हैं ॥ ७ ॥ हरिण चकित होकर देखते है, पक्षी मधुर वाणीसे बोलते है, भरतको रामचन्द्रजीका प्रिय भक्त जानके सब लोग इस प्रकार उसकी सेवा करते है ॥ ८ ॥

दोहा–सुलभ सिद्धि सब प्राकृतहुँ, राम कहत जमुहात ॥ ❃
राम प्राणप्रिय भरत कहँ, यह न होइ बड़ि बात ॥ ३०० ॥ ❃

यदि साधारण मनुष्यभी जमुहाता हुआभी राम नाम कहे तो उसके लिये सब सिद्धियां सुलभ हो जाती है तो प्रभुके प्राणोंसे प्यारे भरतके लिये यह होना कोई बड़ी बात नहीं है ॥ ३०० ॥

यहिबिधि भरत फिरत बनमाहीं ॥ नेम प्रेम लखि मुनि सकुचाहीं ॥ १ ॥
पुण्य जलाशय भूमि बिभागा ॥ खग मृग तरु तृण गिरि बन बागा ॥ २ ॥

इसप्रकार भरतजी वनमें विचरते है; जिनके नेम और प्रेमको देख कर मुनि लोगभी सकुचते हैं ॥ १ ॥ पवित्र जलाशय, पृथ्वीके प्रदेश, पशु, पक्षी, वृक्ष, घास, पर्वत, वन और बाग बगीचे ॥ २ ॥

चारु बिचित्र पवित्र बिशेखी ॥ बूझत भरत दिव्य सब देखी ॥ ३ ॥ ❃
सुनि मन मुदित कहत ऋषिराऊ ॥ हेतु नाम गुण पुण्य प्रभाऊ ॥ ४ ॥ ❃

जो कुछ रमणी और विचित्र पदार्थ देखते हैं. उन सब दिव्य पदार्थोंके विषयमें भरत अत्रिमुनिसे पूछते हैं कि, जो विशेष करके पवित्र है ॥ ३ ॥ तब मुनिराज श्रीअत्रिजी भरतका वचन सुन मनमें प्रसन्न हो, उन सब पदार्थोंके कारण, नाम, गुण और पुण्यका प्रभाव सब कुछ कहते हैं ॥ ४ ॥

कतहुँ निमज्जन कतहुँ प्रणामा ॥ कतहुँ बिलोकत मन अभिरामा ॥ ५ ॥ ❃
कतहुँ बैठि मुनि आयसु पाई ॥ सुमिरत सीय सहित दोउ भाई ॥ ६ ॥ ❃

मुनिके वचन सुन भरतजी कहीं तो प्रणाम करते हैं, कहीं स्नान करते हैं और कहीं मन मुदित हो दर्शन करते हैं ॥ ५ ॥ कहीं तीर्थपर बैठकर मुनिकी आज्ञा पाके सीता सहित दोनों भाइयों (राम लक्ष्मण) का स्मरण करते हैं ॥ ६ ॥

देखि सुभाव सनेह सुसेवा ॥ देहिँ अशीस मुदित मन देवा ॥ ७ ॥ ❋
फिरहिँ गये दिन पहर अढ़ाई ॥ प्रभुपदकमल बिलोकहिँ आई ॥ ८ ॥ ❋

इसप्रकार भरतजीके स्वाभाविक स्नेह और सुन्दर सेवाको देखकर देवता मनमें हर्षित होकर अनेक आशीर्वाद देते है ॥ ७ ॥ इसतरह भरतजी ढाई प्रहर दिन व्यतीत हो जाय तबलों वनमें विचरते है और फिर आकर प्रभुके चरणकमलोंका दर्शन करते है ॥ ८ ॥

दोहा–देखे थल तीरथ सकल, भरत पाँचदिन माँझ ॥ ❋
कहत सुनत हरिहर सुयश, गयउ दिवस भइ साँझ ॥ ३०१ ॥ ❋

पांच दिनोंके अंदर भरतजीने घूमकर सब स्थल और तीर्थ देख लिये और वह दिनभी हरिहरके गुणानुवाद और सुजसको गाते सुनते तुरंत चला गया और सांझ पड़गई ॥ ३०१ ॥

भोर न्हाइ सब जुरा समाजू ॥ भरत भूमिसुर तिरहुतिराजू ॥ १ ॥ ❋
भल दिन आजु जानि मनमाहीं ॥ राम कृपाल कहत सकुचाहीं ॥ २ ॥

प्रभात होतेही सब लोग नहाये और सब समाज इकठ्ठी हुई. तहां भरत, राजा जनक और ब्राह्मण लोग येभी सब आये ॥ १ ॥ समाज जुरी देख प्रभुने अपने मनमें जाना कि आजका दिन बिदा होनेके लिये बहुत अच्छा है; परंतु आप कहते बहुत सकुचाते है; क्योंकि प्रभु परम दयालु है ॥ २ ॥

गुरु नृप भरत सभा अवलोकी ॥ सकुचि राम फिरि अवनि बिलोकी॥३॥
शील सराहि सभा सब शोची॥ कहुँ न राम सम स्वामि सँकोची ॥ ४ ॥ ❋

एक बेर तौ प्रभुने कहनेका विचार करके वसिष्ठजी, जनक, भरत और सभाकी तर्फ देखा, परंतु संकोचके मारे आपसे कुछ कहा न गया, जिससे फिर पृथ्वीकी ओर देखने लगे ॥ ३ ॥ तब सब सभा प्रभुकी प्रशंसा कर, शोचवश हो, कहने लगी कि–रामचन्द्रजीके जैसा संकोचवाला मालिक तौ कहीं नहीं है. प्रभुके जैसे लिहाजवाले तौ प्रभुही है ॥ ४ ॥

भरत सुजान रामरुख देखी ॥ उठि सप्रेम धरि धीर बिशेखी ॥ ५ ॥ ❋
करि दंडवत कहत कर जोरी ॥ राखी नाथ सकल रुचि मोरी ॥ ६ ॥ ❋

उसकाल प्रभुकी रुख देख आसनसे उठ धीरज धर कर सुजान भरतने ॥ ५ ॥ दंडवत् कर हाथ जोड़कर, यह वचन कहा कि–हे नाथ ! आपने मेरी सब रुचि राखी है ॥ ६ ॥

मोहिँ लगि सबहिँ सहेउ सन्तापू ॥ बहुत भांति दुख पावा आपू ॥ ७ ॥ ❋
अब गुसाँइ मोहिँ देहु रजाई ॥ सेवौं अवध अवधी लगि जाई ॥ ८ ॥ ❋

मेरे वास्ते आपने सब भांतिके संताप सहे हैं और अनेक प्रकारके दुःख पाये हैं ॥ ७ ॥ सो हे स्वामी ! अब मुझे आज्ञा देओ कि मैं अयोध्याको जाकर, चौदह वर्षलों अयोध्याकी सेवा करूं ॥ ८ ॥

दोहा–जेहि उपाय पुनि पांय जन, देखैं दीनदयालु ॥ ❋
सो शिख देय अवधि लगि ॥ कोशलपाल कृपालु ॥ ३०२ ॥ ❋

हे कोशलदेशके पालनहारे दयालु प्रभु ! हे दीनदयालु ! यह आपका दासजन (मैं) जिस

उपायसे फिर पीछा आपके चरणकमलोंका दर्शन करें, ऐसी शिक्षा दीजिये कि, जिससे अवधि-तक जीता रह कर, आपके पीछे पधारनेपर आपके चरणकमलोंका दर्शन करें ॥ ३०२ ॥

पुरजन परिजन प्रजा गुसाँई ॥ सब शुचि सरस सनेह सगाई ॥ १ ॥ ❀
राउर बदि भल भवदुख दाहू ॥ प्रभु बिनु बादि परमपद लाहू ॥ २ ॥ ❀

हे स्वामी ! स्नेहके संबंधमें चाहे पुरवासी, परिजन, और प्रजा ये सब परमपवित्र और अत्यंत सरस है तौभी ॥ १ ॥ मैं तो आपकी कहनेमेंही मेरा भला समझता हूं; चाहे उसमें मेरे तई संसार संबंधी दुःख और दाह क्यों न होवे ? हे नाथ ! आपके बिना परमपद (मोक्ष) का लाभभी वृथा है ॥ २ ॥

स्वामि सुजान जानि सबहीकी ॥ रुचि लालसा रहनि जन जीकी ॥ ३ ॥ ❀
प्रणतपाल पालहिँ सबकाहू ॥ देव दुहूँ दिशि ओर निबाहू ॥ ४ ॥ ❀

हे स्वामी ! आप परमसुजान हो, सबके घट घटकी जानते हो, सो दासके जीकी रुचि, लालसा और रहनीको जानो; जिसमे संदेहही क्या ? ॥ ३ ॥ हे प्रणतपाल ! आप सब किसीको पालते हो; इसलिये हे देव ! दोनों दिशाओंकी ओर यानी घर और वनमें मेरा निबाह आपकेही हाथ है ॥ ४ ॥

अस मोहिँ सबबिधि भूरि भरोसो ॥ किये बिचार न शोच खरोसो ॥ ५ ॥ ❀
आरति मोरि नाथ कर छोहू ॥ दुहुँ मिलि कीन्ह ढीठ हठि मोहू ॥ ६ ॥ ❀

हे प्रभु ! मुझे इस बातका सब प्रकारसे पक्का भरोसा है, इसलिये मैं तृणके बराबर शोच और विचार नहीं करता ॥ ५ ॥ हे नाथ ! एक तो मेरा आर्ति (दुःख) और दूसरी आपकी कृपा इन दोनोंने मिलके मुझे हठकर ढीठ बना दिया है ॥ ६ ॥

यह बड़ दोष दूरि करि स्वामी ॥ तजि सँकोच सिखइय अनुगामी ॥ ७ ॥ ❀
भरत बिनय सुनि सबहिँ प्रशंसा ॥ क्षीर नीर बिबरण गति हंसा ॥ ८ ॥ ❀

सो हे स्वामी ! मेरे इस ढीठपनरूप महाभारी दोषको दूर कर, संकोचको तज, मुझ आज्ञाकारीको जैसी चाहिये वैसी यथार्थ शिक्षा करो ॥ ७ ॥ भरतकी विनती सुनकर सब लोगोंने भरतकी प्रशंसा करी और कहा कि-गुण अवगुणका विवेचन करनेके लिये भरतजीकी चाल हंसके समान है. जैसे हंस दूध और जलको अलग अलग कर देता है. ऐसे भरत गुण अवगुणको पहिंचान कर अलग २ कर देते है ॥ ८ ॥

दोहा-दीनबन्धु सुनि बन्धुके, बचन दीन छलहीन ॥ ❀
देश काल अँवसर सरिस, बोले राम प्रबीन ॥ ३०३ ॥ ❀

गरीबनिवाज और परमप्रवीण प्रभु रामचन्द्रजी भाईके छलहीन दीन वचन सुन, देश-कालको विचार, अवसरके अनुसार ये वचन बोले ॥ ३०३ ॥

तात तुम्हारि मोरि परिजनकी ॥ चिन्ता गुरुहिँ नृपहिँ घर बनकी ॥ १ ॥ ❀
माथेपर गुरु मुनि मिथिलेशू ॥ हमहिँ तुमहिँ सपनेहु न कलेशू ॥ २ ॥ ❀

कि-हे तात ! तुम चिंता क्यों करते हो ? क्योंकि मेरी तुम्हारी, परिजन वन और घर इन सबकी चिंता गुरु और राजाको है ॥ १ ॥ हे भाई ! अपने शिरपर गुरु वसिष्ठजी और जनक महाराज विराजे हैं, इसलिये हमको और तुमको स्वप्नमेंभी क्लेश न होगा ॥ २ ॥

मोर तुम्हार परम पुरुषारथ ॥ स्वारथ सुयश धर्म परमारथ ॥ ३ ॥ ❋
पितु आयसु पालिय दुई भाई ॥ लोक बेद भल भूप भलाई ॥ ४ ॥ ❋

हे भाई ! मेरा और तुम्हारा परम पुरुषार्थ, स्वार्थ, सुजस, धर्म और मोक्ष ये सब ॥ ३ ॥ पिताकी आज्ञा पालनेमें है. इसलिये आपन दोनों भाइयोंको पिताकी आज्ञा पालनी चाहिये; क्योंकि इससे लोक और वेद दोनोंमें राजाकी भली भांति बड़ाई है ॥ ४ ॥

गुरुपितुमातुस्वामिसिख पाले ॥ चलत सुमगु पग परत न खाले ॥ ५ ॥ ❋
अस बिचारि सब शोच बिहाई ॥ पालहु अवध अवधि भरि जाई ॥ ६ ॥ ❋

जो मनुष्य माता पिता गुरु और स्वामीकी शिक्षाको पालता सुमार्गमे चालता है, उसका पाँव कभी खाले (कुमार्ग) में नहीं पड़ता ॥ ५ ॥ हे भाई ! ऐसे विचार, सब शोचको त्याग, जाकर चौदह वर्षलों अयोध्याका पालन करो ॥ ६ ॥

देश कोश पुरजन परिवारू ॥ गुरुपदरजहि लाग छरभारू ॥ ७ ॥ ❋
तुम मुनि मातु सचिव सिख मानी ॥ पालहु पुहुमि प्रजा रजधानी ॥ ८ ॥

हे भाई ! देश, खजाना, पुरवासी और परिवार इन सबका जो छरभारू कहे व्यवहार है, सो गुरुके चरणकमलकी रजको लग जायगा, यानी सब काम गुरु सम्हाल लेंगे ॥ ७ ॥ हे तात ! माता, मंत्री, और गुरुनकी शिक्षाको मानकर तुम पृथ्वी, प्रजा और राजधानीकी रक्षा करो ॥ ८ ॥

दोहा–मुखिया मुख सो चाहिये, खानपानको एक ॥ ❋
पालै पोषै सकल अँग, तुलसी सहित विवेक ॥ ३०४ ॥ ❋

हे भाई ! खाने पीनेके लिये अर्थात भोग भोगनेके लिये मुखके समान मुखिया एकही होना चाहिये कि, जो विवेकपूर्वक हाथ पांव आदि सब अंगोंका पालन पोषण किया करे ॥ ३०४ ॥

राजधर्म सरबस इतनोई ॥ जिमि मनमाँह मनोरथ गोई ॥ १ ॥ ❋
बन्धु प्रबोध कीन्ह बहुभांती ॥ बिनु अधार मन तोष न शांती ॥ २ ॥ ❋

हे तात ! राजधर्मका सारांश और सर्वस्व इतनाही है कि मंत्र (सलाह) को मनमें छिपाकर रखना जैसे मनोरथको मनुष्य मनमें छिपा कर रखते हैं. ऐसे हरेक राजकाजको मनमें छिपा कर रखना; किसीके आगे प्रगट न करना; कामकी खबर तभी पड़नी चाहिये कि, जब काम होगया. यह नहीं कि, इधर तौ विचार किया और उधर जगतमें प्रसिद्ध हो गया ॥ १ ॥ यद्यपि प्रभुने भरतको अनेक प्रकारसे समझाया, परंतु आधार न मिलनेसे उनके मनमें न तो संतोष हुआ और न शांति मिली ॥ २ ॥

भरत शील गुरु सचिव समाजू ॥ सकुच सनेह बिवश रघुराजू ॥ ३ ॥ ❋
प्रभु करि कृपा पाँवरी दीन्ही ॥ सादर भरत शीश धरि लीन्ही ॥ ४ ॥ ❋

उसकाल प्रभु भरतके शीलसे और गुरु मंत्री व समाजके संकोचसे निपटही स्नेह विवश हुए ॥ ३ ॥ तिससे प्रभुने कृपा करके अपनी खराऊं भरतको दी, जिन्हें लेकर भरतने आदरके साथ अपने शिरपर धर ली ॥ ४ ॥

चरणपीठ करुणानिधानके ॥ जनु युग यामिनि प्रजा प्रानके ॥ ५ ॥ ❋

सम्पुट भरत सनेह रतनके ॥ आखर युग जनु जीव जतनके ॥ ६ ॥ ❋

वो खराऊं कैसी हैं सो कहते है. प्रभुकी खराऊं क्या हैं मानों प्रजाके प्राणोंकी रक्षाके हेतु दो पहरावाले विद्यमान हैं ॥ ५ ॥ मानों भरतजीके स्नेहरूपी रत्नका डब्बाही है; मानों जीवोंका संसारसे उद्धार करनेके लिये दो अक्षर यानी रामनामरूप हैं ॥ ६ ॥

कुल कपाट कर कुशल करमके ॥ बिमल नयन सेवा सुधरमके ॥ ७ ॥ ❋
भरत मुदित अवलम्ब लहेते ॥ अस सुख जस सियराम रहेते ॥ ८ ॥ ❋

मानों रघुकुलकी रक्षाके कारण दो कपाट हैं. मानों कुशल कर्म (सुकृत) के दो हाथ है. मानों सेवा सुधर्मके साक्षात् निर्मल नेत्र हैं ॥ ७ ॥ हे पार्वती ! खराऊंका सहारा पाकर भरतजी बहुत प्रसन्न हुए और उनको ऐसा सुख हुआ कि, जैसा सीता रामके वहां रहनेसे होवे ॥ ८ ॥

दोहा—मांगेउ बिदा प्रणाम करि, राम लिये उर लाय ॥ ❋
लोग उचाटे अमरपति, कुटिल कुअँवसर पाय ॥ ३०५ ॥ ❋

भरतने प्रणाम कर, प्रभुसे बिदा मांगी, तब प्रभुने उसे छातीसे लगाया. उसकाल कुअवसर पाकर कुटिल कुचाली इन्द्रने सब लोगोंको उचाट दिया ॥ ३०५ ॥

सो कुचालि सबकहँ भइ नीकी ॥ अवधि आश सब जीवन जीकी ॥ १ ॥ ❋
नतरु लषण सिय राम बियोगा ॥ हहरि मरत सब लोग कुरोगा ॥ २ ॥

यद्यपि इन्द्रने तो अपनी ओरसे कुचालही करी, परंतु वह कुचाल सब लोगोंके लिये बहुतही अच्छी हुई; क्योंकि उस कुचालसे चौदह वर्षरूप अवधिकी आशासे सबके जीका जीवन होगया ॥ १ ॥ नहीं तो लक्ष्मण और सीता रामके वियोगरूप कुरोगसे सब लोग हाय ! हाय ! कर मर जाते ॥ २ ॥

रामकृपा अवरेव सुधारी ॥ बिबुधधार भइ गुणद गुहारी ॥ ३ ॥ ❋
भेंटत भुज भरि भाइ भरतसों ॥ रामप्रेम रस कहि न परत सों ॥ ४ ॥ ❋

रामचन्द्रजीकी कृपासे वह अवरेव कैसी सुधर गई है ? कि, इन्द्रकी विचारी हुई कुचाल उलटी गुणकारी और सहायक होगई है ॥ ३ ॥ जिससमय प्रभु भाई भरतसे बांह भरके मिले हैं उस समय रामचन्द्रका प्रेमरस कुछ कहा नहीं जाता ॥ ४ ॥

तन मन बचन उमँगि अनुरागा ॥ धीर धुरन्धर धीरज त्यागा ॥ ५ ॥ ❋
बारिज लोचन मोचत बारी ॥ देखि दशा सुरसभा दुखारी ॥ ६ ॥ ❋

प्रभुके तन मन और वचनमें ऐसी प्रीति उमँग गई कि, प्रभुके जैसे धीर धुरंधरकी धीरजभी छूट गई ॥ ५ ॥ कमलसे नेत्रोंसे जल बहने लगा, जिस दशाको देख देवता और सभाके लोग सब दुःखी होगये ॥ ६ ॥

मुनिगण गुरुजन धीर जनकसे ॥ ज्ञान अनल मन कसे कनकसे ॥ ७ ॥ ❋
जे बिरंचि निर्लेप उपाये ॥ पद्मपत्र जिमि जग जलजाये ॥ ८ ॥ ❋

बड़े २ मुनीश्वर, गुरु वसिष्ठजी और जनक जैसे महाधीर पुरुष कि, जिन्होंने अपने मनको ज्ञानानलसे तपाकर कंचनके समान स्वच्छ करलिया है ॥ ७ ॥ और विधाताने जिनको रचते समय लेपर

हितही पैदा किया है और जो जगतरूप जलमें उपजनेपरभी कमलके पत्रके समान सदा अलगके अलगही रहते है; जैसे कमलका पत्ता जलमें रहनेपरभी जलसे जूदाका जूदाही रहता है; ऐसे जो संसारमें रहनेपरभी संसारसे बिलकुल अलहदे रहते हैं ॥ ८ ॥

दोहा–तेउ बिलोकि रघुबर भरत, प्रीति अनूप अपार ॥ ❋
भये मगन तन मन बचन, सहित बिराग बिचार ॥ ३०६ ॥ ❋

वेभी राम और भरतकी अनुपम और अपार प्रीतिको देखकर, तनमन बचनसे मगन हो गये और उनका वैराग्य और विचार ज्योंका त्यों रह गया ॥ ३०६ ॥

जहां जनक गुरु गति मति भोरी ॥ प्राकृत प्रीति कहत बड़ खोरी ॥ १ ॥ ❋
बरणत रघुबर भरत बियोगू ॥ सुनि कठोर कवि जानिहिं लोगू ॥ २ ॥ ❋

तुलसीदासजी कहते है कि जहां जनक राजा और वसिष्ठजीकी बुद्धिकी गतिभी भ्रमित हो जाती है, तहां प्राकृत पुरुषोंकी प्रीतिकी उपमा देके वर्णन करना बड़ा भारी दोष है ॥ १ ॥ जो कोई कवि भरत और रामके वियोगको वर्णन करना चाहता है तो यह सुनकर, लोग उसे कठोर कवि जानते है क्योंकि वह वियोग ऐसा है कि वज्रहृदयका हृदयभी द्रवीभूत हो जाता है ॥ २ ॥

सो सकोचबश अकथ सुबानी ॥ समय सनेह सुमिरि सकुचानी ॥ ३ ॥ ❋
भेंटि भरत रघुबर समुझाये ॥ पुनि रिपुदमन हर्षि हिय लाये ॥ ४ ॥ ❋

उसी संकोचके वश होकर मैं कहता हूं कि उस समयका स्नेह सुन्दर वाणीसे कहाजाय ऐसा नहीं है क्योंकि यह अकथनीय है. और उसीको स्मरण करके मेरी वाणी उसका वर्णन करते सकुचती है ॥ ३ ॥ प्रभुने भेंट कर भरतको समझाया, फिर आनंदित होकर शत्रुघ्नको छातीसे लगाया ॥ ४ ॥

सेवक सचिव भरतरुख पाई ॥ निज निज काज लगे सब जाई ॥ ५ ॥ ❋
सुनि दारुण दुख दुहूं समाजा ॥ लगे चलनके साजन साजा ॥ ६ ॥ ❋

तब नौकर मंत्री भरतको रुख पाय, डेरे जाकर, अपना २ काम करने लगे ॥ ५ ॥ ये समाचार सुन दोनों ओरकी समाजके लोग महाघोर दुःखको पाकर चलनेका साज सजने लगे ॥ ६ ॥

प्रभुपदपद्म बन्दि दोउ भाई ॥ चले शीश धरि राम रजाई ॥ ७ ॥ ❋
मुनि तापस बनदेव निहोरी ॥ सब सनमानि बहोरि बहोरी ॥ ८ ॥ ❋

फिर भरत शत्रुघ्न दोनों भाई प्रभुके चरणकमलोंको वंदन कर, प्रभुकी आज्ञा शिर चढ़ाय, वहांसे रवाना हुए ॥ ७ ॥ तब मुनि, तपस्वी और वनदेवताका दर्शन कर, उन उनका उन्होंने बारंबार आदर सत्कार किया ॥ ८ ॥

दोहा–लषणहिं भेंटि प्रणाम करि, शिर धरि सिय पद धूरि ॥ ❋
चले सप्रेम आशीस सुनि, सकल सुमंगलमूरि ॥ ३०७ ॥ ❋

लक्ष्मणसे मिल, प्रणाम कर, सीताके चरणकमलकी रजको शिरपर चढ़ाय, मंगलकी मूल सब सुन्दर असीस सुन दोनों भाई प्रेमके साथ वहांसे चले ॥ ३०७ ॥

सानुज राम नृपहिँ शिर नाई ॥ कीन्ही बहुविधि बिनय बड़ाई ॥ १ ॥ ❋
देव दयावश बड़ दुख पायहु ॥ सहित समाज काननहिँ आयहु ॥ २ ॥ ❋

अपने छोटे भाइयोंके साथ श्रीरामचन्द्रजीने जनक राजाको दंडवत् करके, अनेक प्रकारसे विनती कर बड़ाई करी ॥१॥ कि–हे महाराज ! आप अपनी समाजको साथ लेकर जो वनमें आये हो, इससे आपने दयाके वश होकर हमारे वास्ते बड़ा भारी दुःख पाया है ॥ २ ॥

पुर पगु धारिय देइ अशीशा ॥ कीन्ह धीर धरि गमन महीशा ॥ ३ ॥ ❋
मुनि महिदेव साधु सनमाने ॥ बिदा किये हरिहरसम जाने ॥ ४ ॥ ❋

हे देव ! हमें असीस देकर अपने नगरको पधारिये. महादेवजी कहते हैं कि–हे पार्वती ! प्रभुके वचन सुन, धीरज धर, राजा जनकने वहांसे प्रयाण किया ॥ ३ ॥ फिर प्रभुने मुनि, ब्राह्मण और साधु पुरुषोंका सत्कार कर, उन्हें हरिहरके समान जान, सबको बिदा किया ॥ ४ ॥

सासु समीप गये दोउ भाई ॥ फिरे बन्दि पद आशिष पाई ॥ ५ ॥ ❋
कौशिक वामदेव जाबाली ॥ परिजन पुरजन सचिव सुचाली ॥ ६ ॥ ❋

फिर दोनों भाई अपनी सास सुनयनाके पास गये; उसके चरणोंको वंदन कर, अशीश पाय वहांसे पीछे फिरे ॥ ५ ॥ तदनंतर विश्वामित्र, वामदेव, जाबालि, परिजन, पुरवासी और अच्छे नीतिमार्ग चलनेवाले मंत्री ॥ ६ ॥

यथायोग्य करि बिनय प्रणामा ॥ बिदा किये सब सानुज रामा ॥ ७ ॥ ❋
नारि पुरुष लघु मध्य बड़ेरे ॥ सब सनमानि कृपानिधि फेरे ॥ ८ ॥ ❋

इन सबको यथायोग्य विनय व प्रणाम करके, प्रभुने छोटे भाइयोंके साथ सबको बिदा कर दिया ॥ ७ ॥ उन समाजोंके भीतर जितने स्त्रीपुरुष छोटे बड़े और मझले दर्जेके थे, उन सबोंका सत्कार करके कृपानिधि प्रभुने सबको पीछा लौटा दिया ॥ ८ ॥

दोहा–भरतमातुपद बन्दि दोउ, शुचि सनेह मिलि भेंट ॥ ❋
बिदा कीन्ह सजि पालकी, सकुचि शोच सब मेंट ॥ ३०८ ॥ ❋

फिर माता कैकेयीके चरणकमलोंको वंदन कर, शुद्धस्नेहसे मिल भेंटे, उसका सब संकोच और शोच मिटाय, पालकीको सज, उसपर बिठाकर, बिदा करी ॥ ३०८ ॥

परिजन मातु पितुहिँ मिलि सीता ॥ फिरी प्राणप्रिय प्रेम पुनीता ॥ १ ॥ ❋
करि प्रणाम भेंटी सब सासू ॥ प्रीति कहत कबि हिय न हुलासू ॥ २ ॥ ❋

सीता अपने माता पिता और प्रिय परिजनसे मिल, अपने प्राणप्यारेके प्रेमसे परमपवित्र होनेके कारण वहांसे पीछी प्रभुके निकट लौट आई ॥ १ ॥ फिर सब सासुनसे मिली, और उन्हें प्रणाम किया. कवि कहता है कि–सीताकी प्रीतिकी रीति ऐसी है कि, जिसको कहनेके लिये कवि कभी अपने मनमें हुलासही नहीं लासकता कि, मैं उस प्रीतिको वर्णन करता कहूं ॥ २ ॥

सुनि सिख अभिमत आशिष पाई ॥ रही सीय दुहुँ प्रीति समाई ॥ ३ ॥ ❋
रघुपति पटु पालकी मँगाई ॥ करि प्रबोध सब मातु चढ़ाई ॥ ४ ॥ ❋

वहां सासुनके मुखसे स्त्रीशिक्षा सुन, मनवांछित आशिष पाय, सीता दोनों ओर सास और

माताकी प्रीतिमें समा रही ॥ ३ ॥ उसकाल प्रभुने मनोहर पालकियां मंगाईं और सब माताओंको समझाकर उनपर चढ़ाया ॥ ४ ॥

बार बार हिलिमिलि दोउ भाई ॥ सम सनेह जननी पहुँचाई ॥ ५ ॥ ❋
साजि वाजि गज बाहन नाना ॥ भूप भरत दल कीन्ह पयाना ॥ ६ ॥ ❋

उसकाल दोनों भाइयोंने बारंबार हिल मिलकर, एकसा स्नेह रखकर, सब माताओंको दूरतक पहुंचाया ॥ ५ ॥ तब जनक और भरतके दलमेंभी हाथी घोड़े और नानाप्रकारकी सवारियाँ सज कर, वहांसे कुच किया ॥ ६ ॥

हृदय राम सिय लषण समेता ॥ चले जाहिँ सबलोग अचेता ॥ ७ ॥ ❋
बसह बाजि गज पशु हियहारे ॥ चले जाहिँ परबश मनमारे ॥ ८ ॥ ❋

हृदयमें सीताके साथ राम लक्ष्मणको धारण करते सब लोग चले जाते है. किसीको अपनेकी सुध नहीं है ॥ ७ ॥ बैल, घोड़े, हाथी और पशु सब हृदयमें हार मान, परवश हो, मनमारे चले जाते है ॥ ८ ॥

दोहा–गुरु गुरुतिय पद बन्दि प्रभु, सीता लषण समेत ॥ ❋
फिरे हर्ष बिस्मय सहित, आये पर्णनिकेत ॥ ३०९ ॥ ❋

ऐसे सबको पहुंचाय, गुरु और गुरुस्त्रीके चरणोंको वंदन कर, लक्ष्मण और सीताके साथ प्रभु हर्ष और आश्चर्यके साथ पीछे पर्णकुटीको लौट आये ॥ ३०९ ॥

बिदा कीन्ह सनमानि निषादू ॥ चलेउ हृदय बड़ बिरह बिषादू ॥ १ ॥ ❋
कोल्ह किरात भिल्ल बनचारी ॥ फिरे जोहारि जोहारि जोहारी ॥ २ ॥ ❋

फिर प्रभुने सत्कार करके गुह निषादको बिदा किया, सो वहभी हृदयमें विरहका बड़ा विषाद मानता प्रभुकी आज्ञा पाय, वहांसे चला ॥ १ ॥ उसके साथ जो दूसरे वनचर कोल्ह किरात और भील थे, वेभी जुहार २ कर पीछे लौट गये ॥ २ ॥

प्रभु सिय लषण बैठि बटछाहीं ॥ प्रिया परिजन बियोग बिलखाहीं ॥३॥ ❋
भरत सनेह सुभाव सुबानी ॥ प्रिया अनुजसन कहत बखानी ॥ ४ ॥ ❋

उसकाल प्रभु सीता और लक्ष्मणके साथ बटकी छाहमें विराजे हैं और प्रिय परिजनके वियोगसे मनमें बड़े उदास होते हैं ॥ ३ ॥ और भरतका स्नेह स्वभाव और सुन्दर वाणी सीता और लक्ष्मणके आगे बखान बखान कर कहते हैं ॥ ४ ॥

प्रीति प्रतीति बचन मन करणी ॥ श्रीमुख राम प्रेमबश बरणी ॥ ५ ॥ ❋
तेहिँ अँवसर खग मृग जल मीना ॥ चित्रकूट चर अचर मलीना ॥ ६॥ ❋

भरतकी प्रीति प्रतीति (भरोसा) और मनवचनकी करनी प्रभुने प्रेमवश होकर अपने श्रीमुखसे कही ॥ ५ ॥ उससमय चित्रकूटके भीतर जितने पशु पक्षी जलजन्तु आदि चराचर जीव थे वे सब महा मलीन होगये ॥ ६ ॥

बिबुध बिलोकि दशा रघुबरकी ॥ बर्षि सुमन कहि गति घर घरकी ॥ ७ ॥
प्रभु प्रणाम करि दीन्ह भरोसो ॥ चले मुदित मन डर न खरोसो ॥८॥ ❋

प्रभुने सबको पीछा बिदा कर दिया है; आप इकट्ठे विराजे है; सो प्रभुकी यह दशा देखकर देवता फूल बरसाते हैं और अपने घरघरका हवाल करते है ॥ ७ ॥ इतना होनेपरभी देवताओंको भरोसा न आया, सो जानकर प्रभुने उन्हें प्रणाम किया और श्रीमुखसे फरमा कर भरोसा दिया कि " तुम अपने मनमें तृणमात्रभी मत डरो " तब वे हर्षित होकर चले ॥ ८ ॥

दोहा–सानुज सीयसमेत प्रभु, राजत पर्णकुटीर ॥ *
भक्ति ज्ञान बैराग्य जनु, सोहत धरे शरीर ॥ ३१० ॥ *

सीता और लक्ष्मणके साथ पर्णकुटीमें विराजमान प्रभु कैसी शोभा देते है कि, मानों भक्ति और वैराग्यके साथ साक्षात् ज्ञानही शरीर धरे विराज रहा है ॥ ३१० ॥

मुनि महिसुर गुरु भरत भुआलू ॥ राम बिरह सबसाज बिहालू ॥ १ ॥ *
प्रभुगुणग्राम गुणत मनमाहीं ॥ सब चुपचाप चले मगु जाहीं ॥ २ ॥ *

भरतके गये पीछे रामचन्द्रजी कैसे रहे सो कहकर अब पीछा भरतजीकी समाजका वर्णन करते है कि–मुनि, ब्राह्मण, गुरु, भरत और राजा जनक ये सब साजके साथ प्रभुके विरहसे बेहाल रहे हो है ॥ १ ॥ और मनमें प्रभुके गुणसमूहका चिंतवन करते सब मार्गके भीतर चुपचाप चले जाते हैं ॥ २ ॥

यमुना उतरि पार सब भयऊ ॥ सो बासर बिनु भोजन गयऊ ॥ ३ ॥ *
उतरि देवसरि दूसर बासू ॥ रामसखा सब कीन्ह सुपासू ॥ ४ ॥ *

उसीदिन वे लोग जमुनाजीको पार उतर गये. उसदिन किसीने भोजन नहीं किया. वो दिन सबका भोजन बिना गया ॥ ३ ॥ दूसरे दिन गंगाके पार उतरे. तहां निषादने सब प्रकारका सुबीता कर दिया ॥ ४ ॥

सई उतरि गोमती नहाये ॥ चौथे दिवस अवधपुर आये ॥ ५ ॥ *
जनक रहे पुरबासर चारी ॥ राजकाज सबराज सँभारी ॥ ६ ॥ *

तीसरे दिन सईको पार कर गोमतीमें नहाये. चौथे दिन अयोध्यापुरीमें आये ॥ ५ ॥ जनक राजा अयोध्यापुरीमें चार दिन रहा. वहांके राजका काम सम्हाला और सब साज सम्हाले ॥ ६ ॥

सौंपि सचिव गुरु भरतहिँ राजू ॥ तिरहुत चले साजि सब साजू ॥ ७ ॥ *
नगर नारि नर गुरु सिख मानी ॥ बसे सुखेन राम रजधानी ॥ ८ ॥ *

राजा जनकने अयोध्याका राज भरतको सौंपा, और भरतको मंत्री और गुरुके हवाले कर दिया. फिर आप सब साज सजकर तिरहुतको चले ॥ ७ ॥ और नगरके नर नारी वसिष्ठजीकी शिक्षा मानके सुखपूर्वक रामकी राजधानी (अयोध्या) में रहने लगे ॥ ८ ॥

दोहा–राम दरश हित लोग सब, करत नेम उपवास ॥ *
तजि तजि भूषण भोग सुख, जिअत अवधिकी आस ॥ ३११ ॥ *

रामचन्द्रजीके दर्शनके हेतु लोग अनेक प्रकारके नियम और व्रत करते हैं. तथा गहने व भोगसुखको त्याग त्याग कर, केवल अवधिकी आशासे प्राण धारण करते हैं ॥ ३११ ॥

सचिव सुसेवक भरत प्रबोधे ॥ निज निज काज पाइ सिख सोधे ॥ १ ॥ *

पुनि सिख दीन्ह बोलि लघुभाई ॥ सौंपी सकल मातु सेवकाई ॥ २ ॥ ❋

जब भरतजीने अपने तमाम मंत्री और नौकरोंको सब प्रकारसे प्रबोध दिया, तब वे उत्तम शुद्ध शिक्षाको पाकर, अपना अपना काम करने लगे ॥ १ ॥ फिर छुटभैया शत्रुघ्नको बुलाकर शिक्षा दीनी और सब माताओंकी सेवा उसके सुपुर्द कर दीनी ॥ २ ॥

भूसुर बोलि भरत कर जोरे ॥ करि प्रणाम बर बिनय निहोरे ॥ ३ ॥ ❋
ऊँच नीच कारज भल पोचू ॥ आयसु देव न करब सकोचू ॥ ४ ॥ ❋

फिर ब्राह्मणोंको बुलाय, हाथ जोड़, दंडवत् कर, भरतजीने बड़े विनयके साथ प्रार्थना करी कि– ॥ ३ ॥ हे महाराज ! ऊंच, नीच, अच्छा, बुरा जो कुछ काम होवे, उसके लिये निःशंक आज्ञा दीजिये. किसी बातका संकोच न करियेगा ॥ ४ ॥

परिजन पुरजन प्रजा बुलाये ॥ समाधान करि सुबश बसाये ॥ ५ ॥ ❋
सानुज गे गुरुगेह बहोरी ॥ करि दण्डवत कहत कर जोरी ॥ ६ ॥ ❋

फिर परिजन, पुरजन और प्रजाको बुलाके उनका समाधान किया और उनको सुबश बसाया ॥ ५ ॥ फिर शत्रुघ्नके साथ वसिष्ठजीके घर जाय, दंडवत् कर, हाथ जोड़ भरतने अर्ज करी कि–॥६॥

आयसु होइ तौ रहौं सनेमा ॥ बोले मुनि तब पुलकि सप्रेमा ॥ ७ ॥ ❋
समुझब कहब करब तुम सोई ॥ धर्म सार जग होइहि जोई ॥ ८ ॥ ❋

हे स्वामी ! जो आज्ञा होवे तौ मैं नियमके साथ रहूं. यह सुन, प्रेमसे पुलकित गात हो वसिष्ठजीने कहा कि– ॥ ७ ॥ हे तात ! तुम वही समझोगे, वही करोगे कि, जो जगतके अंदर धर्मका सार होगा, अर्थात तुम्हारा समझना कहना और करना धर्मसे बाहिर न होगा ॥ ८ ॥

दोहा–मुनिसिख पाइ अशीष बड़ि, गणक बोलि दिन साधि ॥ ❋
सिंहासन प्रभुपादुका, बैठारी निरुपाधि ॥ ३१२ ॥ ❋

इसप्रकार मुनिकी शिक्षा और बड़ी अशीष पाय ज्योतिषियोंको बुलाय, उनसे शुभ दिन लग्न ठैराय, भरतने बे खटके प्रभुकी खराऊंको सिंहासनपर विराजमान कर दिया ॥ ३१२ ॥

राममातु गुरुपद शिर नाई ॥ प्रभुपदपीटि रजायसु पाई ॥ १ ॥ ❋
नंदिग्राम करि पर्णकुठीरा ॥ कीन्ह निबास धर्मधुर धीरा ॥ २ ॥ ❋

फिर कौसल्या और वसिष्ठजीके चरणकमलोंमें शिर नवाय, प्रभुके चरणपीठिका (पादुका) की आज्ञा पाय ॥ १ ॥ नंदिग्राममें पर्णकुटी बनाकर, धर्मधुरंधर धीर भरत वहीं नियमोंको धारण कर रहने लगा ॥ २ ॥

जटाजूट शिर मुनिपट धारी ॥ महि खनि कुशसाथरी सँवारी ॥ ३ ॥ ❋
अशन बसन बासन ब्रत नेमा ॥ करत कठिण ऋषिधर्म सप्रेमा ॥ ४ ॥ ❋

भरतजीने कौन कौन नियम धारण किये हैं सो कहते हैं कि–शिरपर तौ जटाजूट बनाया है. मुनिवस्त्र [बलकल] धारण किये हैं. पृथ्वीको खोदकर गढ़ेमें दाभका आसन बिछाया है ॥३॥ भोजन वस्त्र और बासनका नियम धारण कर लिया है, कृच्छ्र चांद्रायण आदि व्रत करते हैं. भरतजी प्रेमके साथ वह कठिन धर्म पालते हैं कि, जो ऋषिलोगोंके पालनेका है ॥ ४ ॥

भूषण बसन भोग सुख भूरी ॥ मन तन बचन तजे तृण तूरी ॥ ५ ॥ ❀
अवधराज सुरराज सिहाहीं ॥ दशरथ धन लखि धनद लजाहीं ॥ ६ ॥ ❀

राजाओंके धारण करनेके जो वस्त्र आभूषण आदि है तथा जो नाना प्रकारके अतिशय भोग और सुख है, वे सब भरतजीने मन कर्म वचनसे तृणके समान त्याग दिये हैं ॥ ५ ॥ अयोध्याका राज ऐसा है कि, जिसको देखकर इंद्रभी सिहाता है और दशरथजीका धन देखकर कुबेरभी लजाता है ॥ ६ ॥

तेहिँ पुर बसत भरत बिनु रागा ॥ चंचरीक जिमि चम्पकबागा ॥ ७ ॥ ❀
रमा बिलास राम अनुरागी ॥ तजत भवन जिमि नर बड़भागी ॥ ८ ॥ ❀

उसी पुरीके बीच भरतजी रागरहित होकर कैसे रहते है कि जैसे भौंरा चंपेके बागमें रागरहित रहा करता है ॥ ७ ॥ हे भवानी ! जिन मनुष्योंकी प्रभुके चरणोंमें परम प्रीति है, वे बड़भागी मनुष्य लक्ष्मीके विलासको यानी सांसारिक सुखको वमनके समान त्याग देते है ॥ ८ ॥

दोहा–रामप्रेमभाजन भरत, बड़ी न यह करतूति ॥ ❀
चातक हंस सराहियत, टेक बिबेक बिभूति ॥ ३१३ ॥ ❀

भरतजी रामचन्द्रजीके प्रेमपात्र है. सो उनकी यह करतूति कोई बड़ी नहीं है. देखिये, पक्षियोंके अंदर दो पक्षी सराहे जाते है. एक तो चातक और दूसरा हंस.तिनमें चातककी प्रशंसा तो टेक राखनेसे है और हंसकी वैभवसे है. सो भरतजीके भीतर ये दोनों बात परम दृढ़ है ॥ ३१३ ॥

देह दिनहिँ दिन दूबरि होई ॥ घट न तेज बल मुख छबि सोई ॥ १ ॥ ❀
नित नव रामप्रेम प्रण पीना ॥ बढ़त धर्मदल मन न मलीना ॥ २ ॥ ❀

भरतजीका शरीर दिन पर दिन दुबला होता जाता है, तौभी तेज और बल नहीं घटते हैं और मुखकी कांतिभी वोकी वोही है ॥ १ ॥ प्रभुके नितनये प्रेमसे उनका प्रण पुष्टही होता जाता है. धर्म अंकुर नित नये बढ़ते जाते है. अतएव उनका मन सदा प्रसन्न रहता है. कभी उदास नहीं रहता ॥ २ ॥

जिमि जल निघटत शरद प्रकाशे ॥ बिलसत बेतस बनज बिकाशे ॥ ३ ॥
शम दम संयम नेम उपासा ॥ नखत भरत हिय बिमल अकासा ॥ ४ ॥ ❀

जैसे शरदऋतुके आगममें जल घटनेसे सुन्दर बेत लता शोभा देती है और कमल प्रफुल्लित हो शोभा देते है, ऐसे शरीर क्षीण होनेपरभी तेज अधिक २ बढ़ता जाता है ॥ ३ ॥ जैसे निर्मल आकाशमें नक्षत्र प्रकाशते हैं, ऐसे भरतके निर्मल अंतःकरणमें शम (मन बुद्धि चित्त और अहंकारको जीतना) दम (ज्ञानेंद्रियोंके शब्दस्पर्शादि विषयोंमें न फँसना) संयम (हिंसा चोरी आदि न करना) नियम (हवन तपस्या आदि करना) और एकादशी आदि उपवास ये सब प्रकाशने लगे ॥ ४ ॥

ध्रुव बिश्वास अवधि राकासी ॥ स्वामि सुरति सुरबीथि बिकासी ॥ ५ ॥ ❀
राम प्रेम बिधु अचल अदोखा ॥ सहित समाज सोह नित चोखा ॥ ६ ॥

प्रभुका अवधिकी समाप्तिपर आनेका जो दृढ़ विश्वास है, सोही ध्रुव है. चौदह वर्षकी अवधि है

सोही मानों पूर्णिमा है. स्वामीके चरणकमल विषे जो सुरति है, सोही उज्वल सुरवीथी (कुंवारके महीने आकाशमें जो सुफेद सड़कसी दीखती है वह) है ॥ ५ ॥ प्रभुके विषे जो अविचल प्रेम है, सोही निष्कलंक चन्द्रमा है; जो अपनी समाजके साथ नित प्रति अच्छे सोहता रहता है ॥ ६ ॥

भरत रहनि समुझनि करतूती ॥ भक्ति बिरति गुण बिमल बिभूती ॥ ७ ॥
बरणत सकल सुकवि सकुचाहीं ॥ शेष गणेश गिरा गम नाहीं ॥ ८ ॥ ❋

भरतकी रहनी, समझनी, करतूति, भक्ति, वैराग्य और निर्मल गुणोंका वैभव ॥ ७ ॥ वर्णन करते सब सुकवि लोग सकुचे जिसमें तो क्या ? साक्षात् शेष शारदा और गणेश इनका भी कुछ पत्ता नहीं लगता है ॥ ८ ॥

दोहा–नित पूजन प्रभु पांवरी, प्रीति न हृदय समाति ॥ ❋
मांगि मांगि आयसु करत, राजकाज बहुभाति ॥ ३१४ ॥ ❋

भरतजी प्रतिदिन प्रीतिके साथ प्रभुकी पादुकाकी पूजा करते है. हृदयमें प्रीति समाती नहीं है. जो कुछ राजकाज करते है, वह पादुकासे बहु भांति आज्ञा मांग मांगके करते हैं ॥ ३१४

पुलक गात हिय सिय रघुबीरू ॥ जीह नाम जपु लोचन नीरू ॥ १ ॥ ❋
लषण रामसिय कानन बसहीं ॥ भरत भवन बसि तप तनु कसहीं ॥ २ ॥

भरतजीके शरीरमें पुलकावली छा रही है. हृदयमें सीता राम विराजमान है. जीभसे रामनामका जप करते है. नेत्रोंमें जलकी धारा बह चलीहै ॥ १ ॥ उधर सीता राम लक्ष्मण तो वनमें बसते हैं और इधर भरतजी घरमें रहकर तपस्यासे शरीरको कृश करते है ॥ २ ॥

दुहुँ दिशि समुझि कहत सब लोगू ॥ सब बिधि भरत सराहन योगू ॥ ३ ॥
सुनि व्रत नेम साधु सकुचाहीं ॥ देखि दशा मुनिराज लजाहीं ॥ ४ ॥ ❋

दोनों ओरकी बातको समझ, सब लोग ऐसे कहते हैं कि–भरतजी सब प्रकारसे सराहनेके योग्य है ॥ ३ ॥ हे पार्वती ! भरतके व्रत और नियमोंको देखकर साधु पुरुष सकुचाते है और मुनि राज उनकी दशा देखकर मनमें लजाते है ॥ ४ ॥

परम पुनीत भरत आचरणू ॥ मधुर मंजु मृदुमंगलकरणू ॥ ५ ॥ ❋
हरण कठिन कलिकलुष कलेशू ॥ महामोहनिशि दलन दिनेशू ॥ ६ ॥ ❋

भरतजीका आचरण सब प्रकारसे मधुर, मनोहर, कोमल, मंगलकारी और परमपवित्र है ॥ ५ ॥ इसका स्मरण करनेसे कलिकालके कराल क्लेश और कठिन पाप नाश हो जाते हैं. यह महामोहरूप रात्रिका नाश करनेके लिये साक्षात सूर्यरूप है ॥ ६ ॥

पापपुंज कुंजर मृगराजू ॥ शमन सकल सन्ताप समाजू ॥ ७ ॥ ❋
जन रंजन भंजन भव भारू ॥ राम सनेह सुधाकर सारू ॥ ८ ॥ ❋

पापसमूहरूप गजयूथको भगानेके लिये सिंहरूप है और संतापकी जो समग्र समाज है तिसको शांत कर देता है ॥ ७ ॥ यह जनरंजन भरतजीका चरित्र संसारके भारको तोड़नेवाला और प्रभुके प्रेमरूप पूर्ण चंद्रमाका सारही है ॥ ८ ॥

छंद–सिय राम प्रेम पियूषपूरण होत जन्म न भरतको ॥ ❋

मुनि मन अगम यम नियम शम दम बिषम ब्रत आचरत को ॥❀
दुख दाह दारिद दम्भ दूषण सुयश मिस अपहरत को ॥ ❀
कलिकाल तुलसी से शठहिं हांठ राम सन्मुख करत को ॥ १४ ॥❀

अगर सीतारामके प्रेमरूप अमृतसे पूर्ण भरतजीका जन्म न होता तौ मुनिलोगोंके मनको महाकठिन लगें ऐसे यम, नियम, शम, दम और विषम व्रतका आचरण कौन करता ? और अपने सुयशके मिससे अधर्मी जीवोंके दुःख, संताप, दारिद्र दंभ और दूषणोंको नाश कौन करता ? तुलसी दासजी कहते हैं कि–इस कराल कलिकालमें मेरे जैसे शठपुरुषोंको बलात्कारसे प्रभुके सन्मुख कौन करता ? ॥ १४ ॥

सोरठा–भरतचरित करि नेम, तुलसी जे सादर सुनहिँ ॥ ❀
सीयरामपदप्रेम, अवशि होइ भवरसबिरती ॥ १३ ॥ ❀

तुलसीदासजी कहते है कि–जो मनुष्य भरतके पवित्र चरित्रको नियमपूर्वक आदरके साथ सुनते हैं उनका सीतारामके चरणकमलोंविषे अनन्य प्रेम और संसारके विषयोंसे वैराग्य हो जाता है ॥ १३ ॥

इति श्रीरामचरित्रमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमलविज्ञान-वैराग्यसन्तोषसम्पादनो नाम श्रीगोस्वामितुलसीदासजी-कृतअयोध्याकांडः द्वितीयः सोपानः समाप्तः ॥ २ ॥

इति श्रीरामचरित्रमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमलविज्ञानवैराग्यसंतोषसम्पादन-नामकस्य श्रीगोस्वामितुलसीदासकृतायोध्याकांडस्य रामश्याम-विरचितभाषायां द्वितीयः सोपानः समाप्तः ॥ २ ॥

सोरठा–अमित पापकर पुंज, शमित होहिं जाकहँ जपत ॥
तासु छांड़ि कत आन, भजसि मनुज पाखंडरत ॥ १ ॥
दोहा–संवत नव श्रुति अंक विधु १८४९, ज्येष्ठमास शुभपक्ष ॥
पून्योंका पूरण भयो, कांड अयोध्या लक्ष ॥ २ ॥
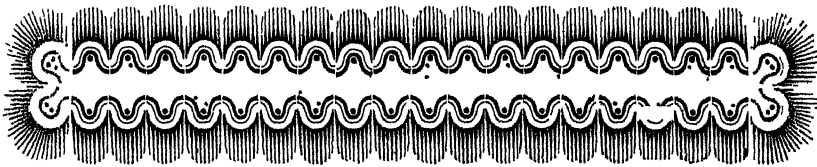
इदं पुस्तकं भगीरथात्मजहरिप्रसादशर्मणा
मोहमयीराजधान्यां"गणपत कृष्णाजी" इत्याख्ये
मुद्रणालये मुद्रापितम्।

मुंबई

॥ इति ॥

श्रीयुत-गोस्वामि-तुलसीदासकृत-

रामायण-अयोध्याकाण्डं

पण्डित-रामश्यामविरचित-

तत्त्वदीपिकाटीकासमेतं

समाप्तम् ।

हरिप्रसाद भगीरथजीका

पुस्तकालय-कालकादेवीरोड़

रामवाडी. मुम्बई.

॥श्रीः॥

श्रीरमारमणो विजयते।

अथ

श्रीयुतगोस्वामितुलसीदासकृत-

रामायणम्।

आरण्यकांड

पण्डित-रामश्यामविरचित

तत्त्वदीपिकाटीकासहित।

जिसे

पण्डित-रामभद्रजीने शुद्ध किया.

वही

गौड़ब्राह्मण हरिप्रसाद भगीरथजीने

बम्बईमें

"गणपत कृष्णाजी" छापखानेमें छपवायकर प्रसिद्ध किया.

शके १८२६. संवत् १९६०. सन १९०४.

श्रीरामपञ्चायतन.

॥ आरण्यकाण्डम् ॥

अत्रि ऋषिके आश्रममें सीता अनसूया मिलन ।

दोहा—रामनाम कलि कल्पतरु, सकल सुमंगल कंद ॥
सुमिरत करतल सिद्धि सब, पदपद परमानंद ॥ १ ॥

चौपाई— नहिं कलिकाल न साधन दूजा । जोग यज्ञ जप तप व्रत पूजा ॥
रामहिं सुमिरिय गाइय रामहिं । सन्तत सुनिय रामगुणग्रामहिं ॥ १ ॥

हरिप्रसादभगीरथजीका, संस्कृत और भाषा पुस्तकालय
ठिकाना—कालकादेवीरोड रामवाडी—मुंबई.

॥ श्रीगजानन ॥

श्रीतुलसीदासकृतरामायणम्

॥ ❋ आरण्यकाण्डप्रारम्भः ❋ ॥

दोहा–हनि बिराध बन शुचि करण, शूर्पणखाअँगभंग ॥
दलि खरादि दल सिय हरण, काण्ड अरण्यप्रसंग ॥ १ ॥

मूलं धर्मतरोर्विवेकजलधेः पूर्णेंदुमानंददं वैराग्यांबुजभास्करं ह्यघघनध्वांतापहं तापहम् ॥ मोहांभोदरपूगपाटनविधौ खेसंभवं शंकरं वंदे ब्रह्मकुलं कलंकशमनं श्रीरामभूपप्रियम् ॥ १ ॥ सांद्रानंदपयोदसौभगतनुं पीतांबरं सुंदरं पाणौ बाणशरासनं कटिलसत्तूणीरभारंवरम् ॥ राजीवायतलोचनं धृतजटाजूटेन संशोभितं सीतालक्ष्मणसंयुतं पथि गतं रामाभिरामं भजे ॥ २ ॥

श्रीरामचन्द्रजीके परमप्रिय श्रीमहादेवजीको अपने इष्ट समझकर गुसांईजी श्रीशिवजीको अरण्यकांडके आरंभमें मंगलके लिये प्रणाम करते हैं कि–मैं श्रीशंकरको वंदे कहिये प्रणाम करता हूं कैसे है वे महादेवजी कि, जो धर्मरूप वृक्षके मूल करण है विवेक यानी प्रकृति पुरुषके ज्ञानरूप समुद्रकी वृद्धिके लिये साक्षात् पूर्ण चद्रस्वरूप है. चंद्ररूप कहनेसे यह सिद्ध हुआ कि जैसे चन्द्रमा सब जगत्को आनंदित करता है ऐसे महादेवजी सब जगत्को आनन्द देते है. और चंद्रमा जैसे धूप आदिक तापको दूर करता है ऐसे ये प्रभु अध्यात्म, अधिभूत और अधिदैविक इन तीनों तापोंका नाश करते हैं. तथा वैराग्यरूप कमलवनको प्रफुल्लित करनेके लिये साक्षात् सूरजरूप है अतएव जैसे सूरज गाढ़ अंधकारको हटावे है ऐसे ये प्रभु पापरूप सघन अंधकार यानी अज्ञानका नाश करते है. फिर वे कैसे हैं कि जो मोह यानी देहाभिमानरूप मेघपटलका विदारण करनेमें साक्षात् वायुरूप हैं तथा सर्व प्रकारके कलंकोंके मेटनहारे व ब्रह्मकुलके पालक है ऐसे श्रीराजा रामचंद्रजूके प्यारे अथवा राजा रामन्चद्रजी जिनके प्यारे हैं उन श्रीशिवजीको मैं वंदन करता हूं ॥ १ ॥ शिवजीको वंदन करके अब श्री गुसांईजी अपने इष्टदेव रामचन्द्रजीको प्रणाम करते हैं कि सकल भुवनमध्ये मनोहर मूर्ति श्री रामचंद्रजीको मैं भजता हूं. कैसे हैं श्री रामचन्द्रजी कि जिनके सघनानंदमय और मेघसे श्यामल सुन्दर नवल शरीरपर पीले पीतांबर बिजुलीसे लसे हैं. करकमलसे सुन्दर धनुषबाण धारण करे हैं. कमरमें सुन्दर तीरोंके तरकस बंधे हैं. कमलकेसे विशाल नेत्र देदीप्यमान हैं. शिरपर जटाजूट शोभायमान हैं. तथा लक्ष्मण अरु सीता ये दोनों जिनके संग हैं, केवल लक्ष्मण अरु सीता संग कहनेसे रामचन्द्रजीका वनवास प्रतीत होवे है और वनवास विपदा मूल है अरु विपदके समय सेवा करनी अत्यावश्यक है. तासों श्री गुसांईजी कहते हैं कि मार्गगत तिन श्री रामचन्द्रजूको मैं भजता हूं ॥ २ ॥

सोरठा-उमा रामगुण गूढ, पण्डित मुनि पावहिँ बिरति ॥ ❋
पावहिँ मोह बिमूढ, जे हरिविमुख न धर्मरति ॥ १ ॥ ❋

श्रीमहादेवजी पार्वतीजीसे कहते हैं कि,हे पार्वती ! रामचन्द्रजीके गुण अति गूढार्थ है सो जो पंडित मुनिलोग हैं वे तो उनको सुन व पढ़ कर बैराग्यको प्राप्त हो जाते हैं और जो लोग हरिभगवान्से विमुख व जिनकी धर्ममें रति यानी प्रीति नहीं है अर्थात् जो आसुरी जीव हैं. मूर्ख लोग रामके गुणोंको सुनकर मोहित हो जाते है अर्थात् उनका कुछभी आशय उनकी समझमें नहीं आता. सो भागवतमें लिखा है कि"अमलदृशोःसवितृप्रकाशः" ॥ १ ॥

पूरण भरतप्रीति मैं गाई ॥ मति अनुरूप अनूप सुहाई ॥ १ ॥ ❋
अब प्रभुचरित सुनो अति पावन ॥ करत जो बन सुर नर मुनि भावन ॥ २

महादेवजी कहते है कि हे पार्वती ! रामचन्द्रजीमें भरतकी जैसी पूर्ण प्रीति थी वैसी मैंने मेरी बुद्धिके अनुसार तुमसे कही कि जिस सुहावनी प्रीतिके लिये हम उपमा नहीं दे सकते ॥ १ ॥ अब रामचन्द्रजीके परमपवित्र वे चरित्र सुनो कि जो प्रभुने दंडकारण्य वनमें किये थे कि जो देवता मनुष्य और मुनिलोगोंके मन भावते थे ॥ २ ॥

एकबार चुनि कुसुम सुहाये ॥ निजकर भूषण राम बनाये ॥ ३ ॥ ❋
सीतहिँ पहिराये प्रभु सादर ॥ बैठे फटिकशिला परमादर ॥ ४ ॥ ❋

एकबेर रामचन्द्रजीने अपने हस्तकमलसे सुंदर फूल बिनकर अपने करकमलसे फूलोंके आभूषण बनाकर ॥ ३ ॥ आदरके साथ सीताजीको पहराये और परम आदरसे फटिक यानी बिलोरी पत्थरकी शिलापर बैठे ॥ ४ ॥

(क्षेपक) कराहिँ प्रकाश पास मणिझारी॥रही छिटक पूनो उजियारी ॥ १ ॥
तेहि निशि नारि जयन्ता केरी ॥ आई तहँ लै सुमुखि घनेरी ॥ २ ॥

वहां पूनोंकी चांदनीके कारण मणिनके समुदाय प्रकाश कर रहेथे ॥ १ ॥ उस रात जयंतकी स्त्री बहुत अप्सराओंको लेकर वहां आयी ॥ २ ॥

रघुपतिरूप बिलोकि जुडानी ॥ नृत्य गान कीन्ह्यो कल बानी ॥ ३ ॥ ❋
मन भावन बर मांगि सिधाई ॥ सो सुधि कतहु जयन्तहिँ पाई ॥ ४ ॥ ❋

सो श्रीरामचंद्रजीका रूप देखकर शीतल होगयी और मनोहर बानीसे गानके साथ नृत्य किया ॥ ३ ॥ फिर श्रीरामचंद्रजीसे मनमाना वरदान लेकर स्वर्गको चली गयी. वह बात कहीं जयंतकोभी मिल गयी ॥ ४ ॥ ॥ इति ॥

सुरपतिसुत धरि वायसबेखा ॥ शठ चाहत रघुपतिबल देखा ॥ ५ ॥ ❋
जिमि पिपीलिका सागरथाहा ॥ महामन्दमति पावन चाहा ॥ ६ ॥ ❋

तब जयंत कव्वेका रूप धरकर श्रीरामचंद्रजीके पास आया. मूर्ख जयंतने श्रीरामचंद्रजीका बल देखना चाहा ॥ ५ ॥ जैसे कि चींटी समुद्रका थाह लेना चाहे. महामंदमति जयंत श्रीरामचंद्रजीके बलकी परीक्षा करनेके लिये ॥ ६ ॥

सीताचरण चोंच हति भागा ॥ मूढ़ मंदमति कारण कागा ॥ ७ ॥ ❋

चला रुधिर रघुनायक जाना ॥ सींक धनुष सायक सन्धाना ॥ ८ ॥ ❀

सीताजीके चरणपर चोंच मारकर उड़गया जो कि मंदबुद्धि कपटसे कव्वा बना था ॥७॥ जब पांवमेंसे रुधिर (लोहू) चला तबश्रीरामचंद्रजीने जाना और धनुष्यपर दर्भहीका बाण चढ़ाया ॥ ८ ॥

दोहा–अतिकृपालु रघुनायक, सदा दीनपर नेह ॥ ❀
तासन आई कीन्ह छल, मूरख अवगुण गेह ॥ १ ॥ ❀

जिन परमदयालु श्री रामचन्द्रजीका दीनजनोंपर सदा स्नेह रहता है, उनसे मूर्ख और अवगुणके घर जयंतने आकर छल किया ॥ १ ॥

बिनापराध प्रभु हतैं न काहू ॥ अँवसर परे ग्रसै शशि राहू ॥ १ ॥ ❀
जब प्रभु लीन्ह धनुष सिक बाना ॥ क्रोध जानि भा अनल समाना ॥ २ ॥

प्रभु विना अपराध किसीको नहीं मारते. राहू अवसर पाकर चंद्रका ग्रास करता है सो वहभी अपने पूर्व अपराधका स्मरण करके करता है ॥ १ ॥ जब श्रीरामचंद्रजीने धनुषपर सींकका बाण चढ़ाया उस समय बाण प्रभुको क्रोधयुक्त जानकर अग्निके समान होगया ॥ २ ॥

प्रेरित अस्त्र ब्रह्मशर धावा ॥ चला भाजि बायस भय पावा ॥ ३ ॥ ❀
धरि निजरूप गयउ पितु पाहीं ॥ रामबिमुख राखा तिन नाहीं ॥ ४ ॥ ❀

अस्त्रके चलातेही ब्रह्मशर दौड़ा उसको देखकर बायस भयभीत होकर भागचला ॥ ३ ॥ फिर अपना रूप धरकर पिताके पास गया; परंतु श्रीरामचंद्रजीसे विमुख पुत्रको इन्द्रनेभी नहीं रक्खा ॥ ४ ॥

भा निराश उपजी हिय त्रासा ॥ यथा चक्रभय ऋषि दुर्वासा ॥ ५ ॥ ❀
ब्रह्मधाम शिवपुर सबलोका ॥ फिरा भ्रमित ब्याकुल भय शोका ॥ ६ ॥ ❀

जब अपने पिता इन्द्रनेभी अनादर कर दिया तब तौ जयंत निराश होकर ऐसा घबराया कि जैसे सुदर्शन चक्रके भयसे दुर्वासा ऋषि घबराये थे ॥ ५ ॥ फिर शोक और भयसे व्याकुल होकर ब्रह्मधाम शिवधाम आदि सब लोकनमें भ्रमता फिरा ॥ ६ ॥

काहूँ बैठन कहा न ओही ॥ राखि को सकै रामकर द्रोही ॥ ७ ॥ ❀
मातु मृत्यु पितु शमन समाना ॥ सुधा होइ विष सुनु हरियाना ॥ ८ ॥ ❀

पर किसीने यह नहीं कहा कि आओ बेठो; क्योंकि श्रीरामचन्द्रजीके अपराधीको कौन राख सकता है ? ॥ ७ ॥ जो नर श्रीरामचंद्रजीका द्रोही हो हे गरुड़ ! उसके लिये माता मृत्युके समान पिता कालके समान और अमृतभी विषके समान हो जाता है ॥ ८ ॥

मित्र करै शत रिपुकै करणी ॥ ताकहँ बिबुधनदी बैतरणी ॥ ९ ॥ ❀
सब जग ताहि अनलते ताता ॥ जो रघुबीर बिमुख सुनु भ्राता ॥ १० ॥ ❀

श्रीरामचंद्रजीके द्रोहीपर मित्र शत्रुके समान काम करै और उसके लिये श्रीगंगाजी भी वैतरणीके समान है ॥ ९ ॥ हे भाई ! जो कोई श्रीरामचंद्रजीसे विमुख है उसके लिये सब जगत् आगसेभी गरम है ॥ १० ॥

---

१ इसवक्त रामचन्द्रजी सोयेथे ऐसा मालूम होता होता है. २ सींकका.

दोहा–जिमि जिमि भाजत शक्रसुत, ब्याकुल अति दुख दीन ॥ ❋
तिमि तिमि धावत रामशर, पाछे परम प्रवीन ॥ २ ॥ ❋

जयंत व्याकुल और दुःखसे दीन होकर ज्यों ज्यों भागता है त्यों त्यों परमप्रवीण श्रीरामचंद्रजीका बाण पीछे दौड़ता है ॥ २ ॥

बचहिँ उरग बरु ग्रसै खगेशा ॥ रघुपति शर छुटि बचन अँदेशा ॥ १ ॥ ❋
नारद देखा बिकल जयन्ता ॥ लागि दया कोमल चित सन्ता ॥ २ ॥ ❋

गरुड़से पकड़ा हुआ सांप भले छूटिसके पर श्रीरामचंद्रजीके बाणसे छूटनेका तो जयंतको अंदेशाही रहा ॥ १ ॥ तब नारदजीने जयंतको अति व्याकुल देखकर मनमें दया लाये; क्योंकि संत लोग स्वभावसे कोमलहृदय होते हैं ॥ २ ॥

दूरिहिते कहि प्रभु प्रभुताई ॥ भजे जात बहुबिधि समुझाई ॥ ३ ॥ ❋
पठवा तुरत रामपहँ ताही ॥ कहसि पुकारि प्रणतहित पाही ॥ ४ ॥ ❋

सो भगे जाते हुए जयंतको श्री रामचन्द्रजीकी बड़ाई कह अनेक भांति समुझाकर ॥ ३ ॥ तुरंत श्रीरामचन्द्रजीके पास भेजा और कहा कि–हे जयंत ! वहां जाकर ऐसे कहना कि, "हे शरणागत वत्सल प्रभु ! रक्षा करो, रक्षा करो" ॥ ४ ॥

सुनि मुनिबचन नाइ पद माथा ॥ आवा जहँ कृपाल रघुनाथा ॥ ५ ॥ ❋
आतुर सभय गहेसि पद जाई ॥ त्राहि त्राहि दयालु रघुराई ॥ ६ ॥ ❋

जयंत नारदजीके वचन सुन, चरणोंमें शिर नमाकर जहां श्रीरामचन्द्रजी थे वहां गया ॥ ५ ॥ आतुर और भययुत जयंतने जाकर श्री रामचन्द्रजीके पांव पकड़ लिये और बोला कि–हे दयाल ! रघुराई ! रक्षा करो, रक्षा करो ॥ ६ ॥

अतुलित बल अतुलित प्रभुताई ॥ मैं मतिमन्द जानि नहिँ पाई ॥ ७ ॥ ❋
निजकृत कर्मजनित फल पायउँ ॥ अब प्रभु पाहि शरण तकि आयउँ ॥ ८ ॥
सुनि कृपाल अति आरत बानी ॥ एक नयन करि तजा भवानी ॥ ९ ॥ ❋

आपका अपरिमित बल है त्योंही अपरिमित आपकी बड़ाई है, हे महाराज ! मैं मंदबुद्धि आपकी बड़ाईको जानने नहीं पाया ॥ ७ ॥ मैंने मेरे किये कर्मोंका फल पाया अब आप मेरी रक्षा करें शरण जानकर आया हूं ॥ ८ ॥ श्रीमहादेवजी कहते हैं कि– हे भवानी ! कृपाल श्रीरामचन्द्रजीने जयंतके अति आरत बचन सुन जयंतको एक नेत्रवाला करके छोड़ दिया ॥ ९ ॥

सोरठा–कीन्ह मोहवश द्रोह, यद्यपि तेहिकर बध उचित ॥ ❋
प्रभु छांड़ेउ करि छोह, को कृपाल रघुबीर सम ॥ २ ॥ ❋

जयंतने मोहके बससे द्रोह किया उससे यद्यपि जयंतका मारना उचित था तबभी श्री रामचन्द्रजीने कृपा करके छोड़ दिया; क्योंकि श्रीरामचंद्रजीके समान दयालु कौन है ? ॥ २ ॥

रघुपति चित्रकूट बसि नाना ॥ चरित करत अति सुधा समाना ॥ १ ॥ ❋
"यहि प्रकार प्रभु सहित सुपासा ॥ शास्त्रमास तहँ कीन्ह्यो बासा ॥ २ ॥ ❋

श्रीरामचन्द्रजीने चित्रकूटमें रहकर अमृतके समान अनेक चरित्र किये ॥ १ ॥ " इसतरह प्रभुजी सुभीतेसे ६ महिना तक चित्रकूटपर रहे ॥ २ ॥

अवधलोग तहँ भरे रहावैं ॥ बीसक जाइँ पचीसक आवैं ॥ ३ ॥ ❋
बहुरि राम अस मन अनुमाना ॥ होइहि भीर सबहिँ मोहिँ जाना ॥ ४ ॥
सकल मुनिन सन बिदा कराई ॥ सीता सहित चले दोउ भाई ॥ ५ ॥ ❋

वहां अयोध्याके लोग भरे रहै. बीस जांय और पचीस आवैं" ॥ ३ ॥ फिर श्रीरामचन्द्रजीने ऐसा विचार किया कि यहां मुझको सबने जानलिया ॥ ४ ॥ इसलिये भीर होती है. ऐसे विचार सब मुनियोंसे विदा करके सीताके साथ दोनों भाई आगे चले ॥ ५ ॥

दोहा–"दशमीतिथि सब ऋषिनते, क्वार मास कहि जान ॥ ❋
सहित लषण सिय राम दिशि, दक्षिण कीन पयान " ॥ ३ ॥ ❋

"क्वारमासकी दशमीके दिन ऋषियोंसे कहकर लक्ष्मण और सीताके साथ श्रीरामचन्द्रजीने दक्षिण दिशाको पयान किया" ॥ ३ ॥

अत्रिके आश्रम प्रभु गयऊ ॥ सुनत महामुनि हर्षित भयऊ ॥ १ ॥ ❋
पुलकित गात अत्रि उठि धाये ॥ देखि राम आतुर चलि आये ॥ २ ॥ ❋

अत्रि ऋषिके आश्रम प्रभु पधारे यह सुनतेही महामुनि अत्रि बहुत हर्षित हुए ॥ १ ॥ परमहर्षसे रोमांचित होआये और श्रीरामके दर्शन करनेके लिये उठकर दौड़े श्रीरामके दर्शन करतेही आतुर चले आये ॥ २ ॥

करत दण्डवत मुनि उर लाये ॥ प्रेम बारि दोउ जन अन्हवाये ॥ ३ ॥ ❋
देखि रामछबि नयन जुड़ाने ॥ सादर निज आश्रम तब आने ॥ ४ ॥ ❋
करि पूजा कहि बचन सुहाये ॥ दिये मूल फल प्रभु मन भाये ॥ ५ ॥ ❋

दोनों भाइयोंने मुनिके चरणोंमें दंडवत् किया तब मुनिने उठाकर छातीसे लगाये और प्रेमके पानीसे दोनोंको न्हवा दिये ॥ ३ ॥ श्रीरामचन्द्रजीकी छबि देखकर ऋषिके नेत्र शीतल होगये फिर आदरके साथ अपने आश्रममें लाकर बिठाये ॥ ४ ॥ और अतिथि पूजा कर सुहावने वचन कहकर प्रभुके मनभावते मूल फल दिये ॥ ५ ॥

सोरठा–प्रभु आसन आसीन, भरि लोचन शोभा निरखि ॥ ❋
मुनिबर परम प्रबीन, जोरि पाणि अस्तुति करत ॥ ३ ॥ ❋

परम प्रवीन अत्रि ऋषि आसनपर बैठे श्रीरामचन्द्रजीकी शोभाको लोचन भर निरख हाथ जोड़कर स्तुति करने लगे ॥ ३ ॥

न०छंद–नमामि भक्तवत्सलं कृपालुशील कोमलं ॥ ❋
भजामि ते पदाम्बुजं अकामिनां स्वधामदं ॥ ❋
निकामश्यामसुन्दरं भवाम्बु नाथ मन्दरं ॥ ❋
प्रफुल्लकंजलोचनं मदादिदोषमोचनं ॥ १ ॥ ❋

भक्तवत्सल दयालु और कोमल स्वभाववाले श्रीरामचन्द्रजीको मैं प्रणाम करता हूं और निष्काम पुरुषोंको अपने धाम (स्थान) के देनेवाले आपके चरणकमलोंका मैं भजन करता हूं,हे नाथ ! अत्यंत शामसुंदर संसाररूप समुद्रके मथनमें मंदराचलरूप विकसित कमलके समान नेत्रवाले और मद मोह आदि दोषोंके निवृत्त करनेवाले आपको मै वंदन करता हूं ॥ १ ॥

प्रलम्ब बाहु विक्रमं प्रभोऽप्रमेयवैभवं ॥ ❋
निषंग चापसायकं धरं त्रिलोकनायकं ॥ ❋
दिनेशवंशमण्डनं महेशचापखण्डनं ॥ ❋
मुनीन्द्रसन्तरंजनं सुरारिवृंदभंजनं ॥ २ ॥ ❋

हे प्रभो ! बड़ी भुजावाले, बड़े बलवाले अप्रमाण वैभववाले, धनुष्यबाण धारण किये, तीन लोकके अधिपति, सूर्यवंशके भूषण, महादेवजीके धनुषको तोड़नेवाले, बड़े बड़े मुनि और संतलोगोंको राजी प्रसन्न करनेवाले और दैत्योंके नाश करनेवाले आपको मैं प्रणाम करता हूं ॥ २ ॥

मनोजवैरिवन्दितं अजादिदेवसेवितं ॥ ❋
विशुद्धबोधविग्रहं समस्तदुःखतापहं ॥ ❋
नमामि इन्दिरापतिं सुखाकरं सतांगतिं ॥ ❋
भजे सशक्तिसानुजं शचीपतिप्रियानुजं ॥ ३ ॥ ❋

कामदेवके वैरी यानी महादेवजीसे वंदित, ब्रह्मा आदि देवोंसे सेवित, विशुद्ध विज्ञानमय शरीरवाले और सकल दुःख तापके नाश करनेवाले आपको मैं प्रणाम करता हूं. लक्ष्मीपति सुखकी खानि सत्पुरुषोंकी गति इन्द्रके प्यारे छुट भाई वामनरूप, सीता और लक्ष्मणके सहित आपको मैं भजता हूं ॥ ३ ॥

त्वदंघ्रिमेव ये नरा भजंति हीनमत्सराः ॥ ❋
पतंति नो भवार्णवे वितर्कवीचिसंकुले ॥ ❋
विविक्तवासना सदा भजंति मुक्तिदं मुदा ॥ ❋
निरस्य इन्द्रियादिकं प्रयांति ते गतिं स्वकां ॥ ४ ॥ ❋

हे नाथ ! जो पुरुष निर्मत्सर, होकर आपके चरणहीका भजन करते हैं वे पुरुष अतर्क लहरोंसे व्याप्त इस संसारमें नहीं पड़ते. हे कृष्णनाथ ! जो नर विषयवासना छोड़कर मोद करके मुक्तिके देनेवाले आपको सदा भजते हैं वे नर इंद्रियादिकनको छोड़ कर आपकी गतिको प्राप्त होते हैं ॥ ४ ॥

त्वमेकमद्भुतं प्रभुं निरीहमीश्वरं विभुं ॥ ❋
जगद्गुरुं च शाश्वतं तुरीयमेव केवलं ॥ ❋
भजामि भाववल्लभं कुयोगिनां सुदुर्लभं ॥ ❋
स्वभक्तकल्पपादपं समस्तसेव्यमन्महं ॥ ५ ॥ ❋

एक अद्भुत समर्थ चेष्टारहित ईश्वर व्यापक जगत्के गुरु शाश्वत यानी सनातन और जाग्रत

स्वप्न सुषुप्ति इन तीनोंअवस्थानसे अतिरिक्त तुरीय यानी चौथी अवस्थावाले और केवल ऐसे आपका मैं भजन करता हूं. भक्तिके प्यारे कुयोगियोंको बहुत मुस्किलसे प्राप्त होनेवाले अपने भक्तोंके कल्पवृक्षरूप नित्य सबके सेवन करने योग्य आपको मैं प्रणाम करता हूं ॥ ५ ॥

अनूपरूपभूपतिं नतोऽहमूर्विजापतिं ॥ ❋
प्रसीद मे नमामि ते पदाब्जभक्ति देहि मे ॥ ❋
पठन्ति ये स्तवं त्विदं नरादरेण ते पदं ॥ ❋
व्रजंति नात्र संशयं त्वदीय भक्तिसंयुतं ॥ ६ ॥ ❋

और अनुपम रूपके राजा सीताके पति हे दयानिधे ! मैं आपको नमस्कार करता हूं आप मोपर प्रसन्न होकर मुझे आपके चरणोंमें भक्ति दें और हे भगवन् ! जो कोई नर आदरके साथ इस स्तोत्रका पाठ करें वे नर निश्चय आपकी भक्तियुत आपके पदको प्राप्त होवें ॥ ६ ॥

दोहा–विनती करि मुनि नाइ शिर, कह कर जोरि बहोरि ॥ ❋
चरण सरोरुह नाथ जनि, कबहुँ तजै मति मोरि ॥ ३ ॥ ❋

तुलसीदासजी कहते हैं कि–अत्रिऋषिने ऐसे प्रभुकी बिनती कर मस्तक नमाय फिर हाथ जोडकर कहा कि–हे नाथ ! आपके चरणकमलोंको मेरी मति [बुद्धि] कभी नहीं छोडे ऐसी कृपा आप मोपर करें ॥ ३ ॥

जन्म जन्म तव पद सुखकन्दा ॥ बढ़ौ प्रेम चकोर जिमिचन्दा ॥ १ ॥ ❋
देखि राम मुनिबिनय प्रणामा ॥ बिबिधि भाँति पायउँ विश्रामा ॥ २॥ ❋

और जैसे कि, चंद्रको देखकर चकोरको प्रेम होता है ऐसे सुखके कंद आपके चरणारविंदमें जन्म जन्म मेरा प्रेम बढ़तारहै ॥१॥ श्रीरामचन्द्रजीने मुनिका विनय देखके अनेकभांति विश्रामकिया ॥२॥

अनसूयाके पद गहि सीता ॥ मिली बहोरि सुशील बिनीता ॥ ३ ॥ ❋
जो सिय सकल लोक सुखदाता ॥ अखिल लोक ब्रह्माण्डकि माता॥४॥ ❋

सुशील और विनीत श्रीसीताजी अत्रिऋषिकी स्त्री अनसूयाके पांव पकड़कर फिर मिली ॥ ३ ॥ सब लोगोंको सुखकी देनेवाली और सर्व लोक ब्रह्मांडनकी माता श्री सीताजीसे मिलकर ॥ ४ ॥

ते पाई सिय मुनिबर भामिनि ॥ सुखी भई कुमुदिनि ज्यों भामिनि॥ ५॥
ऋषिपत्नी मन सुख अधिकाई ॥ आशिष देइ निकट बैठाई ॥ ६ ॥ ❋

अनुसूया ऐसी प्रसन्न हुई कि जैसे रातमें कुमुदिनी फुलती है ॥ ५ ॥ ऋषिपत्नी अनुसूया सीतासे मिल कर मनमें बहुत सुख पायी सो सीताको आशीर्वाद देकर अपने पास बिठायी ॥ ६ ॥

दिव्य बसन भूषण पहिराये ॥ ते नित नूतन अमल सुहाये ॥ ७॥ ❋
जाहि निरखि दुख दूरि पराहीं ॥ गरुड जानि जिमि पन्नग जाहीं ॥८॥ ❋

और जो अपने घरमें नवीन निर्मल सुहावने दिव्य वस्त्र व आभूषण थे वे श्रीसीताजीको पहनाये ॥७॥जिन वस्त्र आभूषणोंको देखतेही दुःख दूर चले जांय. जैसे गरुडको देख कर सर्प चले जांय ॥८॥

दोहा-ऐसे बसन विचित्र सुठि, दिये सीय कहँ आनि ॥ ❋
सनमानी प्रिय बचन कहि, प्रीति न जाइ बखानि ॥ ४ ॥ ❋

ऐसे सुन्दर विचित्र वस्त्र सीताको लाकर दिये और मीठे वचन कहकर सन्मान किया कि, उस प्रीतिका वर्णन नहीं कर सकें ॥ ४ ॥

कह ऋषिबधू सरल मृदु बानी ॥ नारिधर्म कछु ब्याज बखानी ॥ १ ॥ ❋
मात पिता भ्राता हितकारी ॥ मित सुखप्रद सुनु राजकुमारी ॥ २ ॥ ❋

अनुसूयाने स्त्रियोंके स्वभावके अनुसार पहले कुछ ठट्ठेकी बातें बनाकर फिर सरल कोमल वाणीसे श्रीसीताजीको अनुसूया कहने लगी ॥ १ ॥ कि-हे राजकुमारी ! सुनो, माता पिता ये भाई सब हितके करनेवाले है पर परिमित सुख देनेवाले है ॥ २ ॥

अमित दान भर्त्ता बैदेही ॥ अधम नारि जो सेव न तेही ॥ ३ ॥ ❋
धीरज धर्म मित्र अरु नारी ॥ आपदकाल परखिये चारी ॥ ४ ॥ ❋

और हे सीते ! भर्तार अप्रमाण सुखका देनेवाला है, इसलिये सब छोड़कर भर्तारकी सेवा करनी यह पतिव्रताका परम धर्म है और जो स्त्री भर्तारकी सेवा नहीं करती वह स्त्री अधम है ॥ ३ ॥ धीरज, धर्म, मित्र और स्त्री इन चारोंकी परीक्षा आपदकालमें होती है ॥ ४ ॥

वृद्ध रोगबश जड़ धनहीना ॥ अन्ध बधिर क्रोधी अतिहीना ॥ ५ ॥ ❋
ऐसेहु पतिकर किय अपमाना ॥ नारि पाव यमपुर दुख नाना ॥ ६ ॥ ❋

जो कोई स्त्री, वृद्ध, रोगी, मूर्ख, दरिद्री, अन्धा, बहरा, क्रोधी अति गरीब ॥ ५ ॥ ऐसेभी पतिका अपमान करे तो वह स्त्री यमपुरके अनेक दुःखोंको पावे ॥ ६ ॥

एकै धर्म एक व्रत नेमा ॥ काय वचन मन पतिपद प्रेमा ॥ ७ ॥ ❋
जग पतिव्रता चारिबिधि अहहीं ॥ वेद पुराण सन्त अस कहहीं ॥ ८ ॥ ❋

स्त्रीके लिये यही तो एक धर्म है यही एक व्रत है और यही एक नियम है कि मन वचन और कर्मसे अपने पतिमें प्रेम करना ॥ ७ ॥ वेद पुराण और संत ऐसे कहते है कि-जगतमें चार प्रकारकी पतिव्रता हैं ॥ ८ ॥

दोहा-उत्तम मध्यम नीच लघु, सकल कहौं समुझाइ ॥ ❋
आगे सुनहिं ते भव तरहिँ, सुनहु सीय चित लाई ॥ ५ ॥ ❋

उत्तम मध्यम अधम और एक उसीसे हलके दरजेकी जो स्त्री पतिव्रताओंके धर्म सुने वह संसारको तरजावे. वे पतिव्रताओंके धर्म, मैं तोसूं कहूं सो हे सीते ! तुम चित्त लगाकर सुनो ॥ ५ ॥

उत्तमके अस बस मन माहीं ॥ सपनेहु आन पुरुष जग नाहीं ॥ १ ॥ ❋
मध्यम परपति देखहिँ कैसे ॥ भ्राता पिता पुत्र निज जैसे ॥ २ ॥ ❋

उत्तम पतिव्रताके मनमें ऐसे रहता है कि स्वप्नमेंभी जगतमें और कोई पुरुष हैही नहीं ॥ १ ॥ मध्यम पतिव्रता परपतिको अपने भाई पिता और पुत्रके समान देखे ॥ २ ॥

धर्म बिचारि समुझि कुल रहहीं ॥ सो निकृष्ट तिय श्रुति अस कहहीं ॥ ३ ॥
बिनु अवसर भयते रह जोई ॥ जानेहु अधम नारि जग सोई ॥ ४ ॥ ❋

वेद कहते है कि, अधम पतिव्रता धर्म और अपने कुलकी मर्यादको समझकर रहती हैं॥ ३ ॥ और जो स्त्री अवसर न पानेसे व भयसे रह जाती उसे सबसे अधम पतिव्रता जानना चाहिये ॥ ४ ॥

पतिबंचक परपति रति करई ॥ रौरव नरक कल्पशत परई ॥ ५ ॥ ❋

क्षण सुख लागि जन्म शतकोटी ॥ दुखन समझ तेहिँ सम को खोटी ॥६॥

पतिसे छल करनेवाली और परपतिसे रति करनेवाली स्त्री तौ सौकल्पतक रौरव नरकमें पड़ी रहती है॥ ५ ॥ एक क्षण सुखके लिये सौ करोड़ जन्मतकके दुःखको नहीं समझते तौ फिर उसके समान मूर्ख कौन होगा ? ॥ ६ ॥

बिनु श्रम नारि परमगति लहई ॥ पतिव्रतधर्म छांड़ि छल गहई ॥ ७ ॥ ❋

पतिप्रतिकूल जनमि जहँ जाई ॥ विधवा होइ पाइ तरुणाई ॥ ८ ॥ ❋

पतिव्रता धर्मसे स्त्री विनाश्रम परमगतिको प्राप्त होती है और जो स्त्री पतिव्रत धर्मको छोड़ कर पतिसे कपट रक्खे ॥ ७ ॥ व विरुद्ध बर्ताव रक्खे है वह स्त्री जहां जाकर जन्म लेती है वहीं जवान होतेही विधवा हो जाती है ॥ ८ ॥

सोरठा–सहज अपावनि नारि, पति सेवत शुभगति लहहिँ ॥ ❋

यश गावत श्रुति चारि, अजहूँ तुलसी हरिहिँ प्रिय ॥ ४ ॥ ❋

स्त्रीजाति स्वभावसे अपवित्र है; परंतु पतिकी सेवा करनेसे शुभ गतिको प्राप्त हो जाती है. हे जानकी ! अपने पति जलंधरकी भक्ति करके वृंदा तुलसी हो गयी. जिसका यश ४ वेद गाते हैं और आजतक तुलसी भगवानको प्यारी है ॥ ४ ॥

सो०–सुनु सीता तव नाम, सुमिरि नारि पतिव्रत करहिँ ॥ ❋

तोहिँ प्राणप्रिय राम, कहेउँ कथा संसारहित ॥ ५ ॥ ❋

हे सीता ! सुन, तुम्हारा नाम सुमिरनेहीसे स्त्री पतिव्रता होजाती है ऐसी तुम पतिव्रता हो और श्रीरामचन्द्रजी तुमको प्राणोंसेभी अधिक प्यारे हैं और मैंने ये पतिव्रतधर्मकी कथा कही है सो जगतके लिये कहीजाऊं ॥ ५ ॥

सुनि जानकी परम सुख पावा ॥ सादर तासु चरण शिर नावा ॥ १ ॥ ❋

तब मुनिसन कह कृपानिधाना ॥ आयसु होइ जाउँ बन आना ॥ २ ॥❋

श्रीजानकीजी अनुसूयाजीके वचन सुन परमसुखको प्राप्त भई और परम आदरसे अनुसूयाके चरणोंमें शिर नमाया ॥ १ ॥ और कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजीने ऋषिसे कहा कि, आज्ञा हो तो और वनको जाऊं ॥ २ ॥

सन्तत मोपर कृपा करेहू ॥ सेवक जानि तजेहु जनि नेहू ॥ ३ ॥ ❋

धर्मधुरन्धर प्रभुकी बानी ॥ सुनि सप्रेम बोले मुनि ज्ञानी ॥ ४ ॥ ❋

सदा मोपर कृपा करते रहेंगे और सेवक जानकर स्नेह बना रक्खेंगे ॥ ३ ॥ धर्मधुरंधर प्रभुकी बानी सुनकर ज्ञानी मुनि बोले कि– ॥ ४ ॥

जासु कृपा अज शिव सनकादी ॥ चहत सकल परमारथ बादी ॥ ५ ॥ ❋

ते तुम राम अकाम पियारे ॥ दीनबन्धु मृदु वचन उचारे ॥ ६ ॥ ❋

हे राम ! जिनकी कृपाको ब्रह्मा शिव सनकादिक आदि परमार्थके कहनेवाले सब लोग चाहते हैं ॥ ५ ॥ उन निष्काम जनोंके प्यारे और दीनजनोंके बंधु आपने कोमल वचन कहे है ॥ ६ ॥

अब जानी मैं श्री चतुराई ॥ भजिय तुमहिँ सब देव बिदाई ॥ ७ ॥ ❋
जेहि समान अतिशय नहिँ कोई ॥ ताकर शील कस न अस होई ॥८॥ ❋

हे नाथ ! अब मैंने आपकी चतुराई जानी; सब देवोंको छोड़कर केवल आपहीका भजन करूंगा ॥ ७ ॥ जिनके समान अधिक अन्य कोई नहीं है तौ उनका स्वभाव ऐसा कैसे न हो ? ॥ ८ ॥

केहि बिधि कहौं जाहु अब स्वामी ॥ कहहु नाथ तुम अन्तरयामी ॥ ९ ❋
अस कहि प्रभु बिलोकि मुनि धीरा ॥ लोचन जल बह पुलक शरीरा १० ❋

हे नाथ ! आप अंतर्यामी है. हे स्वामिन् ! मैं कैसे कहूं ? कि आप पधारें ॥ ९ ॥ ऐसे कह कर प्रभुको निरखते निरखते धीर मुनि अत्रिके नेत्रोंमेंसे जल बहने लगा और शरीरमें रोमांच हो गये ॥ १० ॥

छंद–तन पुलक निर्भर प्रेमपूरण नयन मुख पंकज दिये ॥ ❋
मन ज्ञान गुण गोतीत प्रभु मैं दीख जप तप का किये ॥ ❋
जप योग धर्म समूह ते नर भक्ति अनुपम पावई ॥ ❋
रघुबीर चरित पुनीत निशिदिन दास तुलसी गावई ॥ ७ ॥ ❋

अत्रि ऋषिने नेत्र तौ श्रीरामचन्द्रजीके मुखकमलकी ओर लगादिये और शरीर पुलकित हो गया और प्रेममें ऐसे मग्न हुए कि कछु सुध हू नहीं रही. और मुनिने मनमें कहा कि, मैंने ऐसा क्या जप व तप किया ? कि जिससे मन ज्ञान गुण और इंद्रियोंके अगोचर अर्थात् इनसे प्राप्त नहीं हो सके ऐसे प्रभुके मैंने प्रत्यक्ष दर्शन किये. तुलसीदासजी कहते है कि, मैं जिन श्रीरामचन्द्रजीकी अनुपम भक्तिको मनुष्य जप योग आदि धर्मके समूहसे प्राप्त होता है उन श्रीरामचन्द्रजीके यशका गान करताहूं ॥ ७ ॥

दोहा–मुनिहुकि अस्तुति कीन्ह प्रभु, दीन्ह सुभग बरदान ॥ ❋
सुमन वृष्टि नभ संकुल जय, जय कृपानिधान ॥ ६ ॥ ❋

श्रीरामचन्द्रजीने मुनिकी स्तुति करी और सुभग वरदान दिये तब आकाशमेंसे पुष्पोंकी वृष्टि भयी और देवनके विमानोंसे आकाश व्याप्त होगया और हे कृपानिधान ! आपका जय हो जय हो ऐसा शब्द हुआ ॥ ६ ॥

मुनिपदकमल नाइ करि शीशा ॥ चले बनहिँ सुर नर मुनि ईशा ॥ १ ❋
आगे राम अनुज पुनि पाछे ॥ मुनिबर बेष बने अति आछे ॥ २ ॥ ❋

फिर सुर मुनियोंके ईश्वर श्रीरामचन्द्रजी मुनिके चरणोंमें शीस नमाकर वनको चले ॥ १ ॥ सुंदर मुनिका वेष धारण किये चले जारहे हैं आगे श्रीरामचन्द्रजी हैं और पीछे लक्ष्मण हैं ॥ २ ॥

सरिता बन गिरि अवघट घाटा ॥ पति पहिँचानि देहिँ बर बाटा ॥३॥ ❋
जहँ जहँ जाहिँ देव रघुराया ॥ करहिँ मेघ नभ तहँ तहँ छाया ॥ ४ ॥ ❋

नदियां वन पहाड़ और अवघट घाट ये सब श्रीरामचन्द्रजीको चीन्ह २ कर सुंदरमार्ग देते हैं ॥ ३ ॥ और देव श्रीरघुराई जहां २ जाते हैं वहां २ मेघ आकाशमें आकर छाया करते हैं ॥ ४ ॥

आश्रम बिपुल दीख बन माहीं ॥ देवसदन तेहि पटुतर नाहीं ॥ ५ ॥ ❋
बहु तडाग सुन्दर अमराई ॥ भांति भांति सब मुनिन लगाई ॥ ६ ॥ ❋

वनमें आश्रम ऐसे सुंदर देखनेमें आते है कि, देवताओंके घरभी वैसे सुन्दर नहीं हैं ॥ ५ ॥ और मार्गमें अनेक तलावोंपर सब मुनियोंने तरहके बगीचे लगाये हैं ॥ ६ ॥

दिव्य बिटप बन चहुँदिशि सोहैं ॥ देखत सकल सुरन मन मोहैं ॥ ७ ॥ ❋
तेहि दिन तहँ प्रभु कीन्ह निबासा ॥ सकल मुनिन मिलि कीन्ह सुपासा ॥ ८ ॥

वनमें चारों ओर सुंदर वृक्ष ऐसे सोह रहे हैं कि जिनको देखकर देवनकेभी मन मोहित हो जांय ॥ ७ ॥ उस दिन प्रभुने वहीं निवास किया जहां कि तलाव बगीचे मुनिआश्रम सुन्दर वृक्ष इनसे वन शोभित था और वहां मुनि लोगनने मिलकर प्रभुके लिये सुन्दर सुपास कर दिया ॥ ८ ॥

दोहा-निज निज आश्रम बेदिका, तिहिपर तुलसि बिराज ॥ ❋
अनुज जानकीसहित तहँ, राजत भे रघुराज ॥ ७ ॥ ❋
आन सुआश्रम मुदित मन, पूजि पहुनई कीन्ह ॥ ❋
कन्द मूल फल अमिय सम, आनि राम कहँ दीन्ह ॥ ८ ॥ ❋

सब मुनियोंने अपनी २ चोतरीपर तुलसी लगा रक्खी थी. वहां तुलसीके पास चोंतरीपर लक्ष्मण और सीतासहित श्रीरामचन्द्र ऐसे शोभा दे रहे थे ॥ ७ ॥ उस समय सब मुनियोंने आकर प्रभुका पहुनचार किया और अमृतके समान मीठे कंद मूल फल श्रीरामचन्द्रजीको लाकर दिये ॥ ८ ॥

अनुज सीयसह भोजन कीन्हा ॥ जो जिमि भाव सुभग बर दीन्हा ॥ १ ॥
होत प्रभात मुनिन्ह शिर नावा ॥ आशीर्बाद सबहिं सन पावा ॥ २ ॥ ❋

तब श्रीरामचन्द्रजीने लक्ष्मण और सीताके साथ भोजन किया और जिसने जो वर मांगा वही वर उसको दिया ॥ १ ॥ श्रीमहादेवजी कहते हैं कि-हे पार्वती ! प्रात समय होतेही सब मुनियोंको नमस्कार कर उन सबसे आशीर्वाद लेकर ॥ २ ॥

सुमिरि उमा सुर सिद्ध गणेशा ॥ पुनि प्रभु चले सुनहु बिहगेशा ॥ ३ ॥ ❋
बन अनेक सुन्दर गिरि नाना ॥ लाँघत चले जाहिँ भगवाना ॥ ४ ॥ ❋

सिद्ध गणेश मनाकर आगे चले, काकभुशुंडी गरुड़से कहते है कि-हे गरुड़ ! फिर प्रभु आगे चले हैं वह कथा मैं तुमसे कहता हूं सो सुनो ॥ ३ ॥ श्रीरामचन्द्रजी अनेक प्रकारके सुंदर वन पहाड़ लांघते चले जा रहे हैं ॥ ४ ॥

मिला असुर बिराध मग जाता ॥ गरजत घोर कठोर रिसाता ॥ ५ ॥ ❋
रूप भयंकर मानहुँ काला ॥ बेगवन्त धायउ जिमि व्याला ॥ ६ ॥ ❋

इतनेमें मार्गमें क्रोधसे घोर कठोर गर्जना करता हुआ विराध नाम राक्षस मिला ॥ ५ ॥ कालके समान भयंकर रूपवाला वह राक्षस इन तीनोंको देखकर बड़े बेगसे सर्पके समान श्रीरामके सामने दौड़ा ॥ ६ ॥

गगन देव मुनि किन्नर नाना ॥ तेहिँ क्षण हृदय हारि भय माना ॥ ७ ॥ ❋
तुरतहिँ सो सीतहिँ लै गयऊ ॥ रामहृदय कछु बिस्मय भयऊ ॥ ८ ॥ ❋

उसको दौड़ते देखकर आकाशमें देवता मुनि किन्नर इन सबने उसवक्त मनमें हार खागये और भयभीत होगये ॥७॥ इतनेहीमें तुरत सीताको उठाकर लेगया तब तो श्रीरामचन्द्रजीके मनमें कछुक विस्मय हुआ कि यह क्या ? ॥ ८ ॥

समुझा हृदय केकयी करणी ॥ कहा अनुजसन बहुविधि बरणी ॥ ९ ॥ ❋
बहुरि लषण रघुबरहिं प्रबोधा ॥ पाँचबाण छाँड़े करि क्रोधा ॥ १० ॥ ❋

और कैकेयीकी करणीको समझकर सब बात लक्ष्मणसे बहुत प्रकार वर्णन करके कही ॥ ९ ॥ फिर लक्ष्मणने श्रीरामचन्द्रजीको समझाये और क्रोध करके उस विराधपर ५ बाण छोंड़े ॥ १० ॥

छंद–भये क्रोध लषण सँधानि धनु शर मारि तेहि ब्याकुल कियो ॥ ❋
पुनि उठि निशाचर राखि सीतहिँ शूल लै धावत भयो ॥ ❋
जनु कालदण्ड कराल धावा बिकल सब खग मृग भये ॥ ❋
धनु तानि श्रीरघुबंशमणि पुनि काटि तेहि रजसम किये ॥ ८ ॥ ❋

लछमनजीने क्रोधकर धनुष बाण चढ़ाकर उसे व्याकुल करदिया फिर उठकर उसने सीताको तो बिठा दिया और त्रिशूल लेकर लछमनके सामने दौड़ा जैसे कराल काल दंड लेकर दौड़े ऐसे दौड़ता देखकर खग (पक्षी) मृग सब व्याकुल होगये. लछमनजीने धनुष तानकर ऐसे बाण लगाये कि, त्रिशूलको काटकर रेतीके समान कर दिया ॥ ८ ॥

दोहा–बहुरि एक शर मारेउ, परा धरणि धुनि माथ ॥ ❋
उठा प्रबल पुनि गर्जेउ, चला जहां रघुनाथ ॥ ९ ॥ ❋

फिर एक बाण मारा जिससे माथा धुनकर पृथ्वीपर गिरगया फिर उठकर गर्जना करके जहां श्रीरामचंद्रजी थे वहांपर चला ॥ ९ ॥

ऐसे कहत निशाचर धावा ॥ अब नहिँ बचहु तुमहिँ मैं खावा ॥ १ ॥ ❋
तासु तेज शत मरुत समाना ॥ टूटहिँ तरु बहु उड़हिँ पखाना ॥ २ ॥ ❋

और ऐसे कहकर दौड़ा कि अब नहीं बचोगे मैं तुमको खागया ऐसे समझो ॥ १ ॥ विराध दौड़ा तो उसका वेग पवनसे सौगुना है जिससे मार्गमें जो वृक्ष थे वे टूट टूट कर गिर रहे है पावोंसे पत्थर उड़ रहे हैं ॥ २ ॥

जीव जन्तु जहँ लगि रहे जे ते ॥ ब्याकुल भाजि चले सब ते ते ॥ ३ ॥ ❋
आव प्रबल इहिविधि जनु भूधर ॥ होइहि काह कहहिँ ब्याकुल सुर ॥ ४ ॥

जो कोई जीव जन्तु थे वे सब भयसे व्याकुल होकर भाग गये ॥ ३ ॥ यह विराध राक्षस कैसा आ रहा है ? मानो कोई पहाड़ चला आ रहा है. और इसको आते देख देवता व्याकुल होकर कहने लगे कि अब क्या होगा ? ॥ ४ ॥

उरग समान जोरि शर साता ॥ आवतही रघुबीर निपाता ॥ ५ ॥ ❋
तुरतहिँ रुचिर रूप तेहिँ पावा ॥ देखि दुखी निजधाम पठावा ॥ ६ ॥ ❋

सर्पके समान सात बाण जोड़कर आतेहीको श्रीरामचन्द्रजीने गिरा दिया ॥ ५ ॥ फिर

श्रीरामचन्द्रजीके दर्शनके प्रभावसे विराध सुंदर रूपको प्राप्त हुआ और प्रभुने उसको दुःखित देखकर अपने धामको भेज दिया ॥ ६ ॥

तासु अस्थि गाड़ेउ प्रभु धरणी ॥ देव मुदित मन लखि प्रभुकरणी ॥ ७ ॥
सीता आइ चरण लपटानी ॥ अनुज सहित तब चले भवानी ॥ ८ ॥ ❋

और उसके हाड़ प्रभुने पृथ्वीमें गाड़ दिये. इस करणीको देवताओंने खुश होकर देखी ॥ ७ ॥ विराधके मरतेही तुरंत सीता आकर श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें लिपट गयी. हे पार्वती ! फिर प्रभु लछमनको संग लेकर आगे चले ॥ ८ ॥

उहां शक्र जहँ मुनि शरभंगा ॥ आये सकल देव निज संगा ॥ ९ ॥ ❋
गये कहन प्रभु देन सिखावन ॥ दिशिबलभेद बसत जहँ रावन ॥ १० ॥ ❋

जहां शरभंगमुनि थे वहां इंद्र सब देवनको संग लिये आया ॥ ९ ॥ रावण दक्षिण दिशामें रहता है और दक्षिण दिशाका यह भेद इस बातकी प्रभुको सीख दिवानेके लिये शरभंगमुनिको कहनेके लिये इंद्र गया ॥ १० ॥

दोहा–सुरपति संशय तमस सम, रघुपति तेज दिनेश ॥ ❋
रावण जीतन निशा सम, बीते छुटहिँ कलेश ॥ १० ॥ ❋

इंद्रका संशय तमके समान है और श्रीरामचन्द्रजीका तेज सूर्यके समान है और रावण रात्रीके समान है सो रावणरूप रात्रीका अंत (नाश) होतेही अंधेरा यानी इंद्रका संशय मिटे और क्लेश मिटे ॥ १० ॥

सुनासीर प्रभु तिहि क्षण देखा ॥ तेजनिधान शुभ्र अतिबेषा ॥ १ ॥ ❋
तुरँग चारि बल मरुत समाना ॥ रथ रबिसम नहिँ जाय बखाना ॥ २ ॥

उसीक्षण श्रीरामचन्द्रजीने इंद्रको देखा. तेजका पुंज सुपेद सुंदर वस्त्र पहने ॥ १ ॥ पवनके समान वेगवाले ४ घोड़ोंका रथ सूर्यके समान प्रकाशमान कि जिसकी शोभाको कहांतक कहे ? ॥ २ ॥

क्षिति न परस अन्तरहित रहई ॥ श्वेतछत्र चामर शिर ढरई ॥ ३ ॥ ❋
अनुजहि प्रियहि कहा समुझाई ॥ सुरपति महिमा गुण प्रभुताई ॥ ४ ॥ ❋

वह रथ पृथ्वीका स्पर्श नहीं करे अर्थात् पृथ्वीसे कुछ उंचा आकाशमें रहे सुपेद छत्र हो रहा है, चमर हो रहे हैं ॥ ३ ॥ ऐसे इंद्रको देखकर श्रीरामचन्द्रजीने इंद्रके गुण और बड़ाई अपने प्यारे लछमनको समझाकर कही ॥ ४ ॥

जिहि कारण बासव तहँ आये ॥ सो कछु बचन कहन नहिँ पाये ॥ ५ ॥ ❋
बीचहिँ सुनि आवन प्रभु केरा ॥ कहि सारथी तुरत रथ फेरा ॥ ६ ॥ ❋

जिस कामके लिये इंद्र वहां आया था वह बात कहनेका इंद्रको अवसरभी नहीं मिला ॥ ५ ॥ बीचमेंही प्रभुका आगमन सुन सारथीको कहकर तुरंत रथ फेर दिया ॥ ६ ॥

दूरिहिते कहि प्रभुहि प्रणामा ॥ हरषि सुरेश गयउ निजधामा ॥ ७ ॥ ❋
प्रभु आये जहँ मुनि शरभंगा ॥ सुन्दर अनुज जानकी संगा ॥ ८ ॥ ❋

दूरहीसे प्रभुको प्रणाम कर प्रसन्न होकर अपने धाम मानो इंद्रलोकको चला गया ॥ ७ ॥ जहां शरभंगमुनि थे वहां लछमन और सीताको संग लिये श्रीप्रभु पधारे ॥ ८ ॥

दोहा–देखि राममुख पंकजहिं, मुनिबर लोचन भृंग ॥ ❀
सादर पान करत अति, धन्य धन्य शरभंग ॥ ११ ॥ ❀

श्रीतुलसीदासजी कहते हैं कि–श्रीरामचन्द्रजीके मुखकमलको देखकर जिन शरभंगमुनिके नेत्ररूप भ्रमर पान करने लगे वे शरभंगमुनि धन्य है, धन्य है ॥ ११ ॥

कह मुनि सुनु रघुबीर कृपाला ॥ शंकर मानसराजमराला ॥ १ ॥ ❀
जात रहेउँ बिरंचिके धामा ॥ सुनेउँ श्रवण बन आवत रामा ॥ २ ॥ ❀

शरभंगमुनि श्रीरामचन्द्रजीके मुखकमलको निरखकर बोले कि–हे रघुवीर ! हे कृपाल ! हे शिवजीके मनके राजहंस ! सुनिये ॥ १ ॥ मैं ब्रह्माके लोकको जा रहा था, इतनेहीमें सुना कि, "श्रीरामचन्द्रजी वनमें पधारते है" ॥ २ ॥

चितवत पन्थ रहेउँ दिनराती ॥ अब प्रभु देखि जुड़ानी छाती ॥ ३ ॥ ❀
नाथ सकल साधन मैं हीना ॥ कीन्ही कृपा जानि जन दीना ॥ ४ ॥ ❀

तबसे दिन रात मैं आपकी बाट (राह) देखता था सो हे प्रभो ! अब आपके दर्शन करिके मेरी छाती थंढी हुई है ॥ ३ ॥ हे नाथ ! मैं तो सब साधनोंसे हीन था पर आपने दीनजन जानकर दया करी ॥ ४ ॥

सो कछु देत न मोर निहोरा ॥ निजप्रण राखेउ जन मन चोरा ॥ ५ ॥ ❀
तबलगि रहहुदीन हित लगी ॥ जबलगि मिलौं तुम्हैं तन त्यागी ॥ ६ ॥ ❀

हे प्रभु ! मैंने तो आपके निहोरेभी नहीं किये आपनेही अपना प्रण राखकर मुझे दर्शन दिये है ॥ ५ ॥ हे नाथ ! अब जबतक मैं शरीरको छोड़कर आपमें मिलजाऊं तबतक आप दीन मोपर दया करिके यहीं रहै ॥ ६ ॥

योग यज्ञ जप तप व्रत कीन्हा ॥ प्रभु कहँ देइ भक्ति बरलीन्हा ॥ ७ ॥ ❀
इहि बिधि सर रचि मुनिशरभंगा ॥ बैठे हृदय छाँडि सब संगा ॥ ८ ॥ ❀

हे प्रभो ! मैंने योग, यज्ञ, जप, तप, व्रत, जो कुछ किया है वह सब आपके अर्पण करिके भक्तिरूप वर मांगताहूं ॥ ७ ॥ इसतरह शरभंग मुनि सब छोड़कर श्रीरामचन्द्रजीको हृदयमें लाय चिता बना कर चितामें बैठे ॥ ८ ॥

दोहा–सीता अनुज समेत प्रभु, नीलजलद तन श्याम ॥ ❀
मम हिय बसहु निरन्तर ॥ सगुण रूप श्रीराम ॥ १२ ॥ ❀

और बोले कि– सीता और लछमन सहित नील मेघके समान श्यामसुंदर सगुणरूप श्रीरामचन्द्रजी निरंतर मेरे हृदयमें बसो ॥ १२ ॥

अस कहि योग अग्नि तनु जारा ॥ रामकृपा बैकुण्ठ सिधारा ॥ १ ॥ ❀
तातें मुनि हरिलीन न भयऊ ॥ प्रथमहिँ भेट भक्ति बर लयऊ ॥ २ ॥ ❀

ऐसे कहकर शरभंगमुनिने योगाग्निसे शरीरको जलादिया और श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे

वैकुंठको सिधागया ॥ १ ॥ इसलिये मुनि श्रीरामचन्द्रजीमें लीन नहीं हुए कि, पहिलेसे मुनिने जप तपादिक प्रभुके अर्पण करिके भक्तिका वरदान लेलिया था ॥ २ ॥

ऋषिनिकाय मुनिबरगति देखी ॥ सुखी भये निजहृदय बिशेखी ॥ ३ ॥*
अस्तुति करहिँ सकल मुनिवृंदा ॥ जयति प्रणतहितकरुणाकंदा ॥ ४ ॥*

सब मुनियोंका समुदाय शरभंगमुनिकी इस गतिको देखकर मनमें परम प्रसन्न हुआ ॥ ३ ॥ और सब ऋषियोंके समूह मिलकर स्तुति करने लगे कि, हे शरणागत वत्सल! हे करुणाकंद! आपकी जय होओ ॥ ४ ॥

पुनि रघुनाथ चले बन आगे ॥ मुनिबर वृन्द पुलकि संग लागे ॥ ५ ॥ *
अस्थिसमूह देखि रघुराया ॥ पूंछा मुनिन्ह लागि अतिदाया ॥ ६ ॥ *

फिर श्रीरामचन्द्रजी बनमें आगे चले तब सब मुनियोंके समूह हर्षित होकर संग हो गये ॥ ५ ॥ मार्गमें हाडोंके समूह यानी ढेर देखकर प्रभुको अत्यंत दया आगयी और मुनियोसे पूँछा कि यह क्या है? ॥ ६ ॥

जानत हौ का पूंछहु स्वामी ॥ समदर्शी सब अन्तरयामी ॥ ७ ॥ *
निशिचरनिकर सकलमुनि खाये ॥ मुनि रघुनाथ नयन जल छाये ॥८॥

तब ऋषियोंने कहा कि—हे नाथ! आप समदर्शी सबके अंतर्यामी है सो सब जानते है; क्या पूछते हो? ॥ ७ ॥ राक्षसोने सब मुनियोंको खा २ कर हाड़ोंका ढेर किया है, इस बातको सुनतेही करुणानिधान श्रीरामचन्द्रजीके नेत्रोंमें पानी भर आया यानी जलसे नेत्र डब २ गये ॥ ८ ॥

दोहा—निशिचरहीन करौं महि, भुज उठाइ प्रण कीन्ह ॥
सकल मुनिन्हके आश्रमन्ह, जाइ जाइ सुख दीन्ह ॥ १३ ॥ *

श्रीरामचन्द्रजीने भुजा उठाकर प्रण किया कि पृथ्वीको राक्षसोंसे रहित करूंगा. ऐसा प्रण करके फिर श्रीरामचन्द्रजीने मुनियोंके आश्रमोंमें जाजाकर अभयदान दिया ॥ १३ ॥

मुनि अगस्त्य कर शिष्य सुजाना ॥ नाम सुतीक्षण रत भगवाना ॥ १ ॥*
मन क्रम बचन रामपद सेवक ॥ सपनेहुँ आन भरोस न देवक ॥ २ ॥*

अगस्त्य मुनिका सुतीक्षण नाम शिष्य जो कि परम सुजान भगवान्में प्रीतिवाला ॥ १ ॥ मन, कर्म, वचनसे श्रीरामके चरणोंका सेवक (दास) और जिसको श्रीरामचन्द्रजी सिवाय स्वप्नमेंभी और देवका भरोसा नहीं ॥ २ ॥

प्रभु आगमन श्रवण सुनि पावा ॥ करत मनोरथ आतुर धावा ॥ ३ ॥ *
हे बिधि दीनबन्धु रघुराया ॥ मोंसे शठपर करिहहिँ दाया ॥ ४ ॥ *

वह सुतीक्षण श्रीरामचन्द्रजीका आगमन सुनकर मनोरथ करता हुआ आतुर दौड़ा ॥ ३ ॥ और मार्गमें चलता मनमें मनोरथ कर रहा है कि हे देव! दीनबंधु श्रीरामचन्द्रजी मोंसे शठपरभी क्या कृपा करेंगे? ॥ ४ ॥

सहित अनुज मोहिँ राम गुसाईं ॥ मिलहहिँ निज सेवककी नाईं ॥ ५ ॥*
मोरे जिय भरोस दृढ़ नाहीं ॥ भक्ति न बिरति ज्ञान मन माहीं ॥ ६ ॥ *

और लछमनसहित प्रभु श्रीराम अपने सेवककी भांति क्या मोसूं मिलेंगे ? ॥ ५ ॥ मेरे मनमें पक्का भरोसा नहीं है क्योंकि न तो मेरे मनमें भक्ति है; न वैराग्य है; न ज्ञान है ॥ ६ ॥

नहिँ सतसंग योग जप यागा ॥ नहिँ दृढ़ चरण कमल अनुरागा ॥ ७ ॥ *
एक बानि करुणानिधानकी ॥ सो प्रिय जाके गति न आनकी ॥ ८ ॥ *

न सतसंग है; न योग है; न जप है; न यज्ञ है और न कोई प्रभुके चरणकमलोंमे दृढ़ प्रेम है ॥ ७ ॥ केवल एक प्रभुका अति सुंदर स्वभाव है कि जिसके और कोई गति नहीं हो वही ईश्वरको परमप्रिय है अर्थात् अनन्य भक्त ईश्वरको परम प्रिय होते हैं ॥ ८ ॥

छंद–सोउ परम प्रिय अति पातकी जिन्ह कबहुँ प्रभु सुमिरण कर्‌यो ॥ *
ते आजु मैं निज नयन देखौं पूरि पुलकित हिय भर्‌यो ॥ *
जे पदसरोज अनेक मुनि करि ध्यान कबहु न आवहीं ॥ *
ते राम श्रीरघुबंशमणि प्रभु प्रेमते सुख पावहीं ॥ ९ ॥ *

जिसने कभी प्रभुका स्मरण किया हो वही प्रभुका परमप्यारा है. चाहे वह अति पापी होवे. ऐसे श्रीरामचन्द्रजीको आज मैं मेरे नेत्रोंसे देखूंगा ऐसे कहकर सुतीक्ष्णका हिया भर गया और शरीर पुलकित होगया. जिन श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंका अनेक मुनि ध्यान करते है पर कभी ध्यानमें नहीं आते वे रघुवंशमणि श्रीरामचन्द्रजी प्रेम करनेवालेको सुखसे प्राप्त हो जाते है ॥ ९ ॥

दोहा–पन्नगारि सुनु प्रेमसम, भजन न दूसर आन ॥ *
यह विचारि पुनि पुनि मुनि, करत रामगुण गान ॥ १४ ॥ *

काकभुशुंडी कहते हैं कि–हे गरुड़ ! सुनो. प्रेमके समान और कोई भजन नहीं है ऐसे विचार कर मुनि लोग अहर्निशि श्रीरामचन्द्रजीके गुण गान करते है ॥ १४ ॥

होइहहिँ सफल आजु मम लोचन ॥ देखि बदनपंकज भवमोचन ॥ १ ॥ *
निर्भर प्रेममगन मुनि ज्ञानी ॥ कहि न जाइ सो दशा भवानी ॥ २ ॥ *

महादेवजी कहते है कि–हे पार्वती ! सुतीक्ष्ण मुनि मनमें कह रहा है कि संसारके निवृत्त करनेवाले श्रीरामचन्द्रजीके मुखकमलके दर्शन करके आज मेरे नेत्र सफल होवेंगे ॥ १ ॥ ज्ञानी मुनि सुतीक्ष्ण प्रेमके निर्भर ऐसा मग्न हुआ कि हे भवानी ! उस दशाका वर्णन नहीं कर सके ॥ २ ॥

दिशि अरु बिदिशि पंथ नहिँ सूझा ॥ को मैं कहां चलौं नहिँ बूझा ॥ ३ ॥
कबहुक फिरि पाछे पुनि जाई ॥ कबहुक नृत्य करै गुण गाई ॥ ४ ॥ *

दिशा और बिदिशाकीभी मालूम नहीं रही मार्गभी नहीं सूझा; मैं कौन हूं और कहां जाताहूं इतनीभी समझ नहीं रही ॥ ३ ॥ कभी तो चलता २ पीछा फिरजाय और कभी गुण गान करता २ नाचने लगा ॥ ४ ॥

अबिरल प्रेम भक्ति मुनि पाई ॥ प्रभु देखहिँ तरुओट लुकाई ॥ ५ ॥ *
अतिशय प्रीति देख रघुबीरा ॥ प्रकटे हृदय हरण भवभीरा ॥ ६ ॥ *

अनपायिनी प्रेमभक्ति मुनिको प्राप्त होगयी उसे प्रभु स्वयं वृक्ष ओट छिपकर देखते रहे ॥ ५ ॥ मुनिकी अतिशय प्रीति देखकर संसारका दुःख रहनेवाले श्रीराम हृदयमें प्रगट हुए ॥ ६ ॥

मुनि मन माँझ अचल होइ बैसा ॥ पुलक शरीर पनस फल जैसा ॥ ७॥ ❋
तब रघुनाथ निकट चलि आये ॥ देखि दशा निज जन मन भाये ॥ ८ ॥

श्रीरामचन्द्रजीके प्रगट होतेही मुनि मनमें निश्चल होकर बैठ गया और पनसके फलके समान शरीर पुलकित होगया ॥ ७ ॥ तब श्रीरामचन्द्रजी समीप चले आये और अपने दासकी दशा देखकर मनमें प्रसन्न हुए ॥ ८ ॥

सोरठा–राम सुसहज सुभाव, सेवक दुख दारिद दमन ॥ ❋
मुनिसन कह प्रभु आव, उठ उठ द्विज मम प्राणसम ॥ ९ ॥ ❋

सहज स्वभाव दासके दुःख दारिद्र्य दूर करनहारे श्रीरामचन्द्रजीने आज्ञा किया कि–हे ब्राह्मण ! तू मेरे प्राणोंके समान है उठ उठ यहां आव ॥ ९ ॥

मुनिहिँ राम बहु भांति जगावा ॥ जाग न ध्यानजनित सुख पावा ॥ १ ॥
भूपरूप तब राम दुरावा ॥ हृदय चतुर्भुज रूप दिखावा ॥ २ ॥ ❋

मुनिको श्रीरामचन्द्रजीने अनेक तरहसे जगाया पर मुनि तौ ध्यानके सुखमें मग्न हो गया इसलिये नहीं जागा ॥ १ ॥ तब श्रीरामचन्द्रजीने मुनिके हृदयमें राजाका रूप छिपा कर चतुर्भुज रूप दिखाया ॥ २ ॥

मुनि अकुलाइ उठा तब कैसे ॥ बिकल हीन फणि मणि बिनु जैसे ॥ ३॥ ❋
आगे देखि राम तनु श्यामा ॥ सीता अनुज सहित सुखधामा ॥ ४ ॥ ❋

तब तौ मुनि अकुलाकर ऐसा उठा कि जैसे सर्प मणिबिना विकल होता है ॥ ३ ॥ सीता और लछमन सहित सुखधाम श्यामसुंदर श्रीरामचन्द्रजीको आगे देखकर ॥ ४ ॥

परेउ लकुट इव चरणन्ह लागी ॥ प्रेममगन मुनिबर बड़भागी ॥ ५ ॥ ❋
भुज बिशाल गहि लिये उठाई ॥ प्रेम प्रीति राखेउ उर लाई ॥ ६ ॥ ❋

दंडके समान चरणोंमें गिर पड़ा और बड़भागी मुनि सुतीक्ष्ण प्रेममें मग्न हो गया ॥ ५ ॥ तब श्रीरामचन्द्रजीने अपने मोटे भुजावोंसे मुनिको पकड़कर उठाया और प्रेम लाकर छातीसे लगाया ॥ ६ ॥

मुनिहिँ मिलत अस सोह कृपाला ॥ कनक तरुहिँ जनु भेंट तमाला ॥ ७ ॥
रामबदन बिलोकि मुनि ठाढ़ा ॥ मानहुँ चित्रमांझ लिखि काढ़ा ॥ ८ ॥ ❋

मुनिसे मिलते कृपाल श्रीरामचन्द्रजी ऐसे शोभा देने लगे जैसे सुवर्णके वृक्षको तमालका वृक्ष भेंटता हो ॥ ७ ॥ श्रीरामचन्द्रजीके मुखको निरखकर मुनि ऐसा ठाढ़ा हुआ कि, जैसे चित्रमें लिखा हो ॥ ८ ॥

दोहा–तब मुनि हृदय धीर धरि, गहि पद बारहिँ बार ॥ ❋
निज आश्रम प्रभु आनि करि, पूजा बिबिध प्रकार ॥ १५ ॥ ❋

फिर मुनि धीरज धर कर बेर बेर चरणोंमें गिरा और प्रभुको अपने आश्रममें आनकर विविध भांति पूजा करता भया ॥ १५ ॥

कह मुनि प्रभु सुन बिनती मोरी ॥ अस्तुति करौं कवन बिधि तोरी ॥ १ ॥

महिमा अमित मोरि मति थोरी ॥ रबि सन्मुख खद्योतउजोरी ॥ २ ॥ ❀
सुतीक्ष्ण मुनि बोला कि—हे प्रभो ! मेरी विनती सुनिये. मैं आपकी स्तुति कैसे करूं ॥१॥ क्योंकि आपकी महिमा तो अपार और मेरी बुद्धि अल्प है. जैसे सूर्यके सामने खद्योतका उजियार ॥ २ ॥

श्यामतामरस दाम शरीरं ॥ जटा मुकुट परिधन मुनिचीरं ॥ ३ ॥ ❀
पाणि चाप शर कबि तूणीरं ॥ नौमि निरन्तर श्रीरघुबीरं ॥ ४ ॥ ❀
श्यामकमलोंकी मालाके समान सुन्दर शरीर जटाका मुकुट बनाये वल्कल धारण किये ॥ ३ ॥ हाथमें धनुष और कमरमें बाणोंका भाथा लगाये ऐसे आपको मैं निरंतर नमन करता हूं ॥ ४ ॥

मोहबिपिनघनदहन कृशानू ॥ सन्तसरोरुहकाननभानू ॥ ५ ॥ ❀
निशिचर करि बरूथ मृगराजं ॥ त्रातु सदा नो भवखगबाजं ॥ ६ ॥ ❀
मोहरूप सघन वनको दहन करनेमें अग्निके समान, संतरूप कमलवनको प्रफुल्लित करनेमें सूर्यके समान ॥ ५ ॥ राक्षसरूप हाथियोंके झुंडके लिये सिंहरूप और संसाररूप पक्षीके लिये बाजरूप ऐसे आप मेरी सदा रक्षा करो ॥ ६ ॥

अरुणनयन राजीव सुबेशं ॥ सीतानयनचकोरनिशेशं ॥ ७ ॥ ❀
हरहृदमानसराजमरालं ॥ नौमि रामउरबाहुबिशालं ॥ ८ ॥ ❀
कमलके समान अरुण नयन सुंदर वेष धारण किये सीताके नेत्ररूप चकोरको आनंद देनेमें चंद्र समान ॥ ७ ॥ और हे श्रीराम ! महादेवजीके मनरूप मानसरोवरके राजहंस ऐसे बिशाल बाहू आपको नमन करता हूं ॥ ८ ॥

संशय सर्प ग्रसन उरगादं ॥ शमन सकल सन्ताप बिषादं ॥ ९ ॥ ❀
भयभंजन रंजन सुरयूथं ॥ त्रातु सदा नो कृपावरूथं ॥ १० ॥ ❀
संशयरूप सर्पको ग्रसन करनेमें गरुड़के समान, सब क्लेश दुःखके शांत करनहारे ॥ ९ ॥ भयके तोड़नहारे और देवताओंको राजी करनहारे ऐसे कृपानिधान आप हमारा पालन करो ॥ १० ॥

निर्गुण सगुण बिषम समरूपं ॥ ज्ञानगिरागोतीत अनूपं ॥ ११ ॥ ❀
अमल अखिल अनवद्यमपारं ॥ नौमि राम भजनमहिभारं ॥ १२ ॥ ❀

हे कृपानाथ ! आप सतोगुण रजोगुण और तमोगुण इनसे अतीत हो इसलिये निर्गुण हो; और सर्व गुणसंपन्न हो इसलिये सगुण हो. सत् और असत् जीवोंके अधिकार भेदसे समविषमरूप हो. जीवोंके मन वाणी और इंद्रिय इनके अगोचर ॥ ११ ॥ निर्मलरूप सर्वरूप निर्दोष अपार और पृथ्वीके भारको तोड़नहारे आपको मैं नमन करताहूं ॥ १२ ॥

भक्त कल्प पादप आरामं ॥ तर्जन क्रोध लोभ मद कामं ॥ १३ ॥ ❀
अति नागर भवसागरसेतुं ॥ त्रातु सदा दिनकर कुलकेतुं ॥ १४ ॥ ❀
भक्तरूप कल्पवृक्षके बगीचे, क्रोध, लोभ मद काम इनके नाश करनहारे ॥ १३ ॥ चतुरशिरोमणि, संसार सागरके सेतु (पार उतारनहारे) सूर्यवंशमें ध्वजारूप ऐसे आप हमारा सदा पालन करो ॥१४॥

अतुलित भुजप्रताप बलधामं ॥ कलिमल बिपुल बिभंजन नामं ॥ १५ ॥ ❀

धर्म वर्म नर्मद गुणग्रामं ॥ सन्तत सन्तनोतु मम कामं ॥ १६ ॥ ❀

हे भगवन्! आपकी भुजाका प्रताप अतोल है और बलके धाम कलियुगके अनेक अपराधोंके नाश करनेहारे जिनके नाम ॥ १५ ॥ धर्मके कवच, सुखके देनहारे जिनके गुणसमूह ऐसे आप निरंतर मेरे सुख करो ॥ १६ ॥

यदपि बिरज व्यापक अबिनाशी ॥ सबके हृदय निरंतरबासी ॥ १७ ॥ ❀
तदपि अनुज सिय सहित खरारी ॥ बसहु मनसि ममकानन चारी ॥ १८ ॥

हे भगवान्! यदपि आप निर्मल व्यापक अविनाशी और सबके अन्तर्यामी है ॥ १७ ॥ तौभी लक्ष्मण और सीताके साथ विराजमान है और वनमें विचरते है इसलिये मेरे मनमें भी वास करें ॥ १८ ॥

जे जानहिँ ते जानहुँ स्वामी ॥ सगुण अगुण उर अन्तरयामी ॥ १९ ॥ ❀
जो कोशलपति राजिवनयना ॥ करौ सो राम हृदय मम अयना ॥ २० ॥

हे स्वामिन्! आपको सगुण निर्गुण और अन्तर्यामी जो जानते है वे जानो ॥ १९ ॥ मेरे हृदयमें तो कोसल देशके राजा कमलनयन श्रीराम आपही निवास करो ॥ २० ॥

सोरठा—मायाबश जिमि जीव, रहहिँ सदा सन्तत मगन ॥ ❀
तिमि लागहु मोहिँ पीव, करुणाकर सुन्दर सुखद ॥ ७ ॥ ❀

जीव जैसे मायाके वश होकर सदा मगन है. हे नाथ ! ऐसे करुणाके सागर और सुंदर सुखके देनेवाले आप मुझे लगंत हो ॥ ७ ॥

अस अभिमान जाय जनि मोरे ॥ मैं सेवक रघुपति पति मोरे ॥ १ ॥ ❀
रामभक्ति तजि चह कल्याना ॥ सो नर अधम शृगाल समाना ॥ २ ॥ ❀

मैं सेवक हूं और आप श्रीरामचन्द्रजी मेरे भर्ता हा यह मेरा अभिमान कभी नहीं जायगा ॥ १ ॥ जो पुरुष श्रीरामचन्द्रजीकी भक्तिको छोड़कर कल्याण चाहे उस पुरुषको सियारके समान अधम जानना चाहिये ॥ २ ॥

सुनि मुनिबचन राम मन भाये ॥ बहुरि हर्षि मुनिबर उर लाये ॥ ३ ॥ ❀
परम प्रसन्न जानि मुनि मोहीं ॥ जो बर मांगु देउं मैं तोहीं ॥ ४ ॥ ❀

मुनि सुतीक्ष्णके वचन सुनकर श्रीरामचन्द्रजीने अति हर्षसे मुनिको हृदयसे लगाया ॥ ३ ॥ और बोले कि—हे मुनि! मुझे तू परम प्रसन्न जान, जो वरदान मांगे वही मैं तुझे देऊं ॥ ४ ॥

मुनि कह मैं बर कबहुँ न यांचा ॥ समुझि न परै झूठ का सांचा ॥ ५ ॥ ❀
तुमहिँ नीक लागै रघुराई ॥ सो मोहिँ देहु दाससुखदाई ॥ ६ ॥ ❀

ये श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर मुनि बोला कि—हे भगवन्! मैं वरदान मांगना नहीं चाहता; क्योंकि समझमें नहीं आता कि क्या तौ झूंठ है और क्या सांच है? ॥ ५ ॥ इसलिये हे रघुराई! जो आपको अच्छा लगै वही दासकेलिये सुखदायी है; वही आप दें ॥ ६ ॥

अबिरल भक्ति बिरति विज्ञाना ॥ होहु सकल गुण ज्ञाननिधाना ॥ ७ ॥ ❀
प्रभु जो दीन्ह सो बर मैं पावा ॥ अब सो देहु मोहिँ जो भावा ॥ ८ ॥ ❀

तब श्रीरामचन्द्रजीने सुतीक्ष्ण मुनिको निरंतर भक्ति ज्ञान और वैराग्य वर देकर कहा कि-हे मुनि ! तुम सब गुण और ज्ञानका निधि होओ ॥ ७ ॥ यह वरदान पाकर मुनि बोला कि-हे प्रभु ! आपने जो वरदान दिया वह तौ मैंने पाया अब जो मैं मांगूं सो वर दें ॥ ८ ॥

दोहा-अनुज जानकी सहित प्रभु, चाप बाण धरि राम ॥ ❋
मम हियगगन इन्दु इव, बसहु सदा निष्काम ॥ १६ ॥ ❋

हे प्रभु ! लछमन और श्रीसीताजीके साथ धनुषबाण लेकर सदा आप मेरे हृदयमें बसो जैसे कि, आकाशमें चंद्र विराजमान है ॥ १६ ॥

एवमस्तु कहि रमानिवासा ॥ हर्षि चले कुंभजऋषिपासा ॥ १ ॥ ❋
मुनि प्रणाम करि युगकर जोरी ॥ सुनहु नाथ कछु बिनती मोरी ॥ २ ॥ ❋

लक्ष्मीपति श्रीरामचन्द्रजी एवमस्तु (ऐसे होगा) कह प्रसन्न हो, अगस्त्यमुनिके पास चले ॥ १ ॥ तब मुनि दोनों हाथ जोड़, प्रणाम कर कहने लगा कि-हे नाथ ! कछुक मेरी विनती सुनिये ॥ २ ॥

बहुत दिवस गुरु दरशन पाये ॥ भये मोहिँ यहि आश्रम आये ॥ ३ ॥ ❋
अब प्रभुसंग जाउँ गुरुपाहीं ॥ तुम कहँ नाथ निहोरा नाहीं ॥ ४ ॥ ❋

मुझको गुरुके दर्शन किये बहुत दिन हुए है और इस आश्रममें आये मुझे मुद्दत हो गई है ॥ ३ ॥ अब मैं आपके संग गुरुके दर्शन करने चलूंगा. हे नाथ ! इसमें आपको कोई निहोरा नहीं है ॥ ४ ॥

चले जात मग तव पदकंजा ॥ देखिहौं जो बिराधमदगंजा ॥ ५ ॥ ❋
देखि कृपानिधि मुनि चतुराई ॥ लिये संग बिहँसि दोउ भाई ॥ ६ ॥ ❋

हे विराध राक्षसके मदका नाश करनहारे ! प्रभु ! मैं आपके साथ चलूंगा और मार्गमें जाते आपके चरणकमलोंका दर्शन करूंगा ॥ ५ ॥ मुनिकी चतुराई देख, कृपानिधि दोनों भाइयोंने हँस कर, संग ले लिये ॥ ६ ॥

पन्थ कहत निजभक्ति अनूपा ॥ मुनि आश्रम पहुँचे सुरभूपा ॥ ७ ॥ ❋
आश्रम देखि महाशुचि सुन्दर ॥ सरित सरोवर कानन भूधर ॥ ८ ॥ ❋
जलचर थलचर जीव जहीते ॥ बैर न करहिँ प्रीति सबहीते ॥ ९ ॥ ❋

देवदेव श्रीरामचन्द्रजी मार्गमें अपनी अनुपम भक्तिको वर्णन करते मुनिके आश्रममें जा पहुंचे ॥ ७ ॥ प्रभुने जाकर आश्रम देखा तौ वह आश्रम परमपवित्र, और अतिसुंदर है. जहां नदियां, सरोवर, पर्वत और बनकी बहार बनी है ॥ ८ ॥ और जलचर व स्थलचर जीवमात्र वैरभावको तज-कर जहां सदा सबके साथ प्रीति करते हैं ॥ ९ ॥

दोहा-तरु बहु बिबिध बिहंग मृग, बोलत बिबिध प्रकार ॥ ❋
बसहिँ सिद्ध मुनि तप करहिँ, महिमा गुण आगार ॥ १७ ॥ ❋

अनेक प्रकारके वृक्ष हैं. तिनमें भांति भांतिके पक्षी और चौपाये अनेक तरहके शब्द कर रहे हैं सिद्ध और मुनिलोग निवास करते हैं और तपस्या करते हैं कि जो महिमा व गुणके धाम हैं ॥ १७ ॥

तुरत सुतीक्षण गुरुपहँ गयऊ ॥ करि दण्डवत कहत अस भयऊ ॥ १ ॥ ❋
नाथ कोशलाधीश कुमारा ॥ आये मिलन जगत आधारा ॥ २ ॥ ❋

सुतीक्ष्ण मुनिने तुरत गुरु अगस्त्यजीके निकट जाय, दंडवत् कर, ऐसे कहा कि– ॥ १ ॥ हे नाथ! कोशलराज (दशरथ) के कुमार (राम लक्ष्मण) कि जो जगत्के आधार हैं वे आपसे मिलनेको आये है ॥ २ ॥

राम अनुज समेत बैदेही ॥ निशि दिन देव जपत हौ जेही ॥ ३ ॥ ❀
सुनत अगस्त्य तुरत उठिधाये ॥ हरि बिलोकि लोचन जलछाये ॥ ४ ॥ ❀

हे नाथ! आप रात दिन जिनका जप करते हो वे राम लक्ष्मण सीताके साथ पधारे हैं ॥ ३ ॥ यह सुनतेही अगस्त्यजी तुरंत उठकर दौड़े. प्रभुके दर्शन करतेही नेत्रोंमे जल भर आया ॥ ४ ॥

मुनिपदकमल परे दोउ भाई ॥ ऋषि अतिप्रीति लिये उर लाई ॥ ५ ॥ ❀
सादर कुशल पूंछि मुनि ज्ञानी ॥ आसन पर बैठारे आनी ॥ ६ ॥ ❀

तब दोनों भाई मुनिके चरणकमलोंमें पड़े. अगस्त्यजीने उठकर, अत्यंत प्रीतिके साथ छातीसे लगा लिये ॥ ५ ॥ फिर ज्ञानी मुनि अगस्त्यजीने आदर सहित कुशल पूंछ कर, लाकर दोनों भाइयोंको आसनपर बिठाया ॥ ६ ॥

पुनि करि बहु प्रकार प्रभुपूजा ॥ मोहिँ सम भाग्यवन्त नहिँ दूजा ॥ ७ ॥
जहँ लगि रहे अपर मुनिवृन्दा ॥ हर्षे सब बिलोकि सुखकन्दा ॥ ८ ॥ ❀

फिर अनेक प्रकारसे प्रभुकी पूजा करके अगस्त्यजीने कहा कि– हे प्रभु! मेरे जैसा भाग्यवान् जगत्में दूसरा कोई नहीं है ॥ ७ ॥ वहां दूसरे जितने मुनिवृंद थे वे सब आनन्दकन्द रामचन्द्र और लक्ष्मणको निरख आनंदित हुए ॥ ८ ॥

दोहा–मुनि समूहमहँ बैठ प्रभु, सन्मुख सबकी ओर ॥ ❀
शरदइन्दु जनु चितवत, मानहुँ निकर चकोर ॥ १८ ॥ ❀

मुनिवृंदके भीतर प्रभु सबकी ओर सन्मुख विराजे है. तिन्हें मुनिलोग कैसे देख रहे हैं कि, मानों शरदऋतुके पूर्ण चंद्रको चकोरसमूह देख रहा है ॥ १८ ॥

पाइ सुथल जल हर्षित मीना ॥ पारस पाइ सुखी जिमि दीना ॥ १ ॥ ❀
प्रभुहिँ निरखि सुख भा यहिभांती ॥ चातक जिमि पाई जलस्वाती ॥ २ ॥ ❀

हे पार्वती! जैसे अच्छे स्थलमें जल पाकर, मछली प्रसन्न रहती हैं. जैसे दरिद्री मनुष्य पारसको पाकर सुखी होता है ॥ १ ॥ और जैसे चातक (पपीहा) स्वाति नक्षत्रके जलको पाकर, आनंदित होता है, ऐसे प्रभुके दर्शन कर सब ऋषियोंको सुख हुआ ॥ २ ॥

तब रघुवीर कहा मुनि पाहीं ॥ तुम सन प्रभु दुराव कछु नाहीं ॥ ३ ॥ ❀
तुम जानहु जेहि कारण आयउँ ॥ ताते तात न कहि समुझायउँ ॥ ४ ॥ ❀

तब प्रभुने अगस्त्यजीसे कहा कि–हे प्रभु! आपसे कुछ छिपा नहीं है ॥ ३ ॥ हे प्रभु! मैं जिस कारण यहां आया हूं सो आप जानते हो. अतएव मैंने वह कारण समझा कर नहीं कहा है ॥ ४ ॥

अब सो मंत्र देहु प्रभु मोहीं ॥ जेहि प्रकार मारौं मुनिद्रोही ॥ ५ ॥ ❀
द्विजद्रोही न बचहिँ मुनिराई ॥ जिमि पंकज बन हिमऋतु पाई ॥ ६ ॥ ❀

परंतु हे मुनि! अब आप मुझे वह मंत्र देओ कि, जिसतरह मैं मुनि लोगोंके बैरी राक्षसोंको मारूं ॥ ५ ॥

हे मुनिराज ! जो ब्रह्मद्रोह करते हैं वे कभी नहीं बचते. जैसे कि, कमलवन हिमऋतु पाकर बचने नहीं पाता ॥ ६ ॥

मुनि मुसकाने सुनि प्रभु बानी ॥ पूंछहु नाथ मोहिं का जानी ॥ ७ ॥ ❋
तुम्हरे भजन प्रभाव अघारी ॥ जानों महिमा कछुक तुम्हारी ॥ ८ ॥ ❋

प्रभुकी ऐसी वाणी सुन मुनि मुसकाये और बोले कि–हे नाथ ! आपने मुझको क्या समझकर पूंछा है ? ॥ ७ ॥ हे पापोंका नाश करनहारे प्रभु ! आपके प्रभावको कोई नहीं जानता पर मैं आपके भजनके प्रभावसे कुछ थोड़ी बहुत आपकी महिमा जानता हूं ॥ ८ ॥

सोरठा–भृकुटी निरखत नाथ, रहत सदा पदकमल रत ॥ ❋
जिन डारे निज हाथ, बिबिध बिधाता सिद्ध हर ॥ ८ ॥ ❋

हे प्रभु ! आपकी टेढ़ी भृकुटीको देखतेही सब लोग सदा आपके चरणकमलोंमें प्रीतियुक्त रहते हैं, क्योंकि अपने हाथोंसे कई अनेक ब्रह्मा, सिद्ध और महादेव डाल दिये हैं यानी बिलाय दिये हैं ॥ ८ ॥

अतिकराल सबपर जग जाना ॥ औरौ कहौं सुनिय भगवाना ॥ १ ॥ ❋
ऊमरितरु बिशाल तव माया ॥ फल ब्रह्माण्ड अनेक निकाया ॥ २ ॥ ❋

इस बातको सारा जगत जानता है कि, आपकी भृकुटी सबपर बड़ी विकराल है. हे प्रभु ! अब एक औरभी कहता हूं सो सुनो ॥ १ ॥ हे नाथ ! आपकी माया है सो तो मानों बड़ा विशाल गूलरका पेड़ है; जो अनेक ब्रह्मांडसमूह है सोही मानों फल हैं ॥ २ ॥

जीव चराचर जन्तु समाना ॥ भीतर बसहिं न जानहिं आना ॥ ३ ॥ ❋
ते फल भक्षक कठिन कराला ॥ तव भय डरत सदा सो काला ॥ ४ ॥ ❋

ब्रह्मांडके भीतर जो चराचर जीव है सोही मानों फलके भीतरके जन्तु है. वे उसके अंदरही तो रहते है पर बाहिरकी नहीं जानते ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! उन ब्रह्मांडरूप फलोंका खानेवाला जो कराल काल है वह कालभी आपके भयसे सदा डरता रहता है ॥ ४ ॥

ते तुम सकल लोकपति साँई ॥ पूछेहु मोहिं मनुजकी नाई ॥ ५ ॥ ❋
यह बर माँगो कृपानिकेता ॥ बसहु हृदय सिय अनुज समेता ॥ ६ ॥ ❋

हे स्वामी ! वे आप सब लोगोंके पति मुझको मनुष्यकी तरह पूंछते हो यह बड़ी आश्चर्यकी बात है. हे प्रभु ! आपकी लीला जानी नहीं जाती ॥ ५ ॥ हे कृपानिधान ! अब मैं आपसे यह वर मांगता हूं कि, सीता लक्ष्मणके साथ आप मेरे हृदयमें विराजो ॥ ६ ॥

अबिरल भक्ति बिरति सतसंगा ॥ चरण सरोरुह प्रीति अभंगा ॥ ७ ॥ ❋
यद्यपि ब्रह्म अखण्ड अनन्ता ॥ अनुभव गम्य भजहिं जेहि संता ॥ ८ ॥
अस तव रूप बखानो जानौं ॥ फिरि फिरि सगुण ब्रह्मरति मानौं ॥ ९ ॥ ❋

और आपकी निरंतर भक्ति, वैराग्य, सत्संग और चरणकमलोंमें अखंडभक्ति देओ ॥ ७ ॥ हे प्रभु ! यद्यपि आप अनुभव करके जाननेके योग्य अनन्त और अखंड ब्रह्म हो कि जिन्हें

संतलोग सदा भजते हैं ॥ ८ ॥ हे नाथ ! आपके ऐसे स्वरूपको मैं जानताभी हूं और बखानताभी हूं तोभी फिर फिर प्रीति तौ सगुण ब्रह्ममेंही मानता हूं ॥ ९ ॥

दोहा—"जेहि जीवपर तव कृपा, संतत रहत हुलास ॥ ❀
तिनकी महिमा को कहै, जे अनन्य प्रियदास" ॥ १९ ॥ ❀

"हे स्वामी ! जिन जीवोंपर आपकी कृपा और हुलास सदा बना रहता है तथा जो आपके अनन्य प्रियभक्त हैं उनकी महिमाभी कौन कह सक्ता है ? तब आपकी महिमाकी तौ बातही कौन ?" ॥ १९ ॥

सन्तत दासन्ह देहु बड़ाई ॥ ताते मोहिँ पूंछेहु रघुराई ॥ १ ॥ ❀
है प्रभु परम मनोहर ठाऊं ॥ पावन पंचवटी तेहि नाऊं ॥ २ ॥ ❀

हे रघुराज ! आप अपने दासजनोंको निरंतर बड़ाई देते हो इसीसे मुझे पूछे हो ॥ १ ॥ हे प्रभु ! आपके विराजनेके योग्य एक परम रम्य पवित्र स्थान है जिसका पंचवटी नाम है ॥ २ ॥

दोहा—"पंचवटी गुणगणजटी, टटनिटटी गुणरास ॥ ❀
अघटघटी दुखसुखपटी, कुटी करौ तहँ बास" ॥ ❀

"हे प्रभु ! पंचवटी नाम जो स्थान है वह गुणगणकी मूल है. टटनिकी टटी और गुणकी राशि है. अघटघटी और सुखदुःखकी पटी है. सो वहां जाय, कुटी बना कर, बास करो."

गोदावरी नदी तहँ बहई ॥ चारिहु युग प्रसिद्ध सो अहई ॥ ३ ॥ ❀
दंडकवन पुनीत प्रभु करहू ॥ उग्र शाप मुनिबर कर हरहू ॥ ४ ॥ ❀

हे प्रभु ! वहां गोदावरी नाम नदी बहती है जो चारों युगोंमें परम प्रसिद्ध है ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! अब आप दंडक वनको पवित्र करो और मुनिराजके उग्र शापको शांत करो ॥ ४ ॥

सोरठा—"दंडकनृप मुनि जात, भोगी सुनि दिय शाप तिन ॥ ❀
गिरि वालू दिन सात, जरेउ देश सो स्वक्षिये" ॥ ९ ॥ ❀

"दंडकारण्य वनकी उत्पत्ति कहते है कि—दंडकराजाने शुक्राचार्यजीकी कन्यासे भोग किया, सो सुन शुक्राचार्यजीने श्राप दिया. और उनके श्रापसे सात दिनतक बालू गिरी तिससे वह सब अच्छी तरह आबाद देश जलबल नाश हो गया" ॥ ९ ॥

---

१ इक्ष्वाकुके सौ १०० पुत्र थे उनमें सबसे छोटा जो पुत्र था वह कुछ जानता नहीं था इसलिये इक्ष्वाकुने कहा कि—इसपर दंड होगा और उसीसे उसका दंडक नाम प्रसिद्ध हुआ. फिर शुक्राचार्यजीको गुरु कर इस दंडकने भली भांति राज किया. एक दिन शुक्राचार्यजीकी कन्याको भोग किया तब कन्याने पितासे कहा तौ शुक्राचार्यजीने श्राप दिया कि सात दिनमें धूलिकी वर्षा होकर यह सब देश नाश हो जायगा. और मुनि लोगोंसे और कन्यासे कह दिया कि तुम यहांसे चले जाओ नहीं तौ धूलिमें दब जाओगे. तब ऋषिलोग जहां जा बसे वह तौ जनस्थान नामसे प्रसिद्ध हुआ और राजा दंडकका देश दंडकारण्य नामसे प्रसिद्ध हुआ. दूसरा इस वनके नाश होनेका कारण यह था कि गौतम ऋषिने तपोबलसे अकालपीड़ित प्रजा और मुनि लोगोंको बचाया. जब अकाल मिट गया और मुनि जाने लगे तब गौतमजीने उनको रोक रक्खा तौ वे गौतमजीको गोहत्याका पाप लगाय चले गये. तब गौतमजीने इस देशको श्राप दिया कि इस देशका नाश हो जाओ तबसे दंडकवनकी यह दिशा है.

बास करहु तहँ रघुकुलराया ॥ कीजे सकल मुनिनपर दाया ॥ ५ ॥ ❋
चले राम मुनि आयसु पाई ॥ तुरतहि पंचवटी नियराई ॥ ६ ॥ ❋

हे रघुराज ! आप वहां रहो और सब मुनिलोगोंपर दया करो ॥ ५ ॥ मुनि अगस्त्यजीकी आज्ञा पाय, प्रभु चले सो तुरंत पंचवटीके निकट जा पहुंचे ॥ ६ ॥

दिव्य लता द्रुम प्रभु मन भाये ॥ निरखि राम ते भये सुहाये ॥ ७ ॥ ❋
लषण राम सिय चरण निहारी ॥ कानन अघ गा भा सुखकारी ॥ ८ ॥ ❋

वहां दिव्य लता और वृक्ष देखकर, प्रभुके मनको बहुत प्रिय लगे और प्रभुको देखकर, वेभी अति सुन्दर होगये ॥ ७ ॥ राम लक्ष्मण और सीताके चरणोंको देखकर, वनका पाप जाता रहा और सब प्रकारसे सुखकारी होगया ॥ ८ ॥

दोहा–गृध्रराजसों भेंट भइ, बहुविधि प्रीति दृढ़ाइ ॥ ❋
गोदावरी समीप प्रभु, रहे पर्णगृह छाइ ॥ २० ॥ ❋

फिर गृध्रराज [जटायु] से भेंट हुई तब उसके साथ अनेक प्रकारसे प्रीतिको दृढ़ कर गोदावरीके निकट पर्णशाला बनाकर प्रभु विराजे ॥ २० ॥

जबते राम कीन्ह तहँ बासा ॥ सुखी भये मुनि बीती त्रासा ॥ १ ॥ ❋
गिरि बन नदी ताल छबि छाये ॥ दिन दिन प्रति अति होत सुहाये ॥ २ ॥ ❋

प्रभु जबसे दंडक वनमें जा विराजे तबसे सब मुनि सुखी होगये और उनकी त्रास जाती रही ॥ १ ॥ पर्वत, वन, नदी और तालावोंपर छबि छा गयी और दिनपर दिन अति मनोहर होने लगे ॥ २ ॥

खग मृग वृन्द अन्दित रहहीं ॥ मधुप मधुर गुंजत छबि लहहीं ॥ ३ ॥ ❋
सो बन बरणि न सक अहिराजा ॥ जहां प्रगट रघुबीर बिराजा ॥ ४ ॥ ❋

पक्षी और पशुओंके झुंड बड़े आनंदित रहते है और भौंरे मधुर गुंजाहट करते शोभाको पाते है ॥ ३ ॥ हे पार्वती ! उस बनको स्वयं शेषजीभी बखान नहीं सकते है कि जहां प्रत्यक्ष शरीर धरे श्रीरामचन्द्रजो विराजते हैं ॥ ४ ॥

एकबार प्रभु सुख आसीना ॥ लक्ष्मण बचन कहे छलहीना ॥ ५ ॥ ❋
सुर नर मुनि सचराचर साँई ॥ मैं पूछौं निजप्राणकि नाँई ॥ ६ ॥ ❋

एकवेर प्रभु सुखसे विराजे थे तब लक्ष्मणने निष्कपट वचन कहे कि– ॥ ५ ॥ हे प्रभु ! यदपि आप देवता, मनुष्य मुनि और चराचर सारे संसारके स्वामी हो तौभी आपको अपने प्राणकी तरह समझकर पूंछता हूं ॥ ६ ॥

मोहिं समुझाइ कहो सोइ देवा ॥ सब तजि करौं चरणरजसेवा ॥ ७ ॥ ❋
कहहु ज्ञान बिराग अरु माया ॥ कहहु सो भक्त करहु जेहि दाया ॥ ८ ॥ ❋

हे देव ! इसलिये मुझे समझाकर वही कहो कि जिसतरह मैं सब छोड़ कर, आपके चरणरजकी सेवा करूं ॥ ७ ॥ हे प्रभु ! मुझे ज्ञान, वैराग्य और मायाका स्वरूप कहो. तथा अपनी वह भक्ति कहो कि, जिससे आप भक्तपर दया करते हो ॥ ८ ॥

दोहा–ईश्वर जीवहि भेद प्रभु, सकल कहहु समुझाइ ॥ ❋
जाते होई चरणरति, शोक मोह भ्रम जाइ ॥ २१ ॥ ❋

हे प्रभु ! ईश्वर और जीवके क्या भेद है ? सो सब मुझे समझाकर कहो कि, जिससे आपके चरणोंमें प्रीति होजाय और शोक मोह व भ्रम निवृत्त हो जाय ॥ २१ ॥

थोरे महँ सब कहौ बुझाई ॥ सुनहु तात मति मन चित लाई ॥ १ ॥ ❋
मैं अरु मोर तोर तैं माया ॥ जेहिँ बश कीन्हे जीवनिकाया ॥ २ ॥ ❋

हे प्रभु ! मुझे यह सब थोडेमें समझाकर कहो. हे पार्वती ! लक्ष्मणके वचन सुन, प्रभुने कहा कि–हे तात ! मैं जो कहता हूं सो मन और बुद्धि लगाके सुनो ॥ १ ॥ हे भाई ! " मैं और मेरा, तू और तेरा " यही माया है कि जिसने सब जीवसमूहको अपने वश कर रक्खा है ॥ २ ॥

गोगोचर जहँलगि मन जाई ॥ सो सब माया जानेहुँ भाई ॥ ३ ॥ ❋
तेहिकर भेद सुनहु तुम सोउ ॥ विद्या अपार अविद्या दोऊ ॥ ४ ॥ ❋

हे भाई ! जो इंद्रियगोचर पदार्थ है और जहांतक मन पहुंचता है वह सब तुम मायाही माया जानों ॥ ३ ॥ उस मायाके जो भेद हैं वे मैं तुमसे कहता हूं सो सुनो. हे भाई ! मायाके दो भेद हैं एक तो विद्या १ और दूसरा अविद्या २ ॥ ४ ॥

एक दुष्ट अतिशय दुखरूपा ॥ जा बश जीव परा भवकूपा ॥ ५ ॥ ❋
एक रचै जग गुणबश जाके ॥ प्रभु प्रेरित नहिँ निजबल ताके ॥ ६ ॥ ❋

तिनमें एक (अविद्या) तो महादुष्ट और अत्यंत दुःखरूप है. हे भाई ! यह जीव जिसके वश हो संसारकूपमें पड़ता है ॥ ५ ॥ एक (विद्या) जो है सो जगत्को रचती है कि जिसके सत्व रज तम ये तीनों गुण वशीभूत हैं. हे भाई ! वह जगत्को रचती है सो प्रभुकी प्रेरणासे रचती है अपने बलसे नहीं रच सकती ॥ ६ ॥

ज्ञान मान जहँ एकौ नाहीं ॥ देखत ब्रह्मरूप सब माहीं ॥ ७ ॥ ❋
कहिय तात सो परम बिरागी ॥ तृणसम सिद्धि तीनिगुण त्यागी ॥ ८ ॥ ❋

और ज्ञान उसे कहते है कि जिसमें एकभी प्रकारका मान नहीं है और सबमें ब्रह्मरूप देखते हैं ॥७॥ हे तात! परम वैरागी उसे कहना चाहिये कि जो सब सिद्धियोंको और तीनों गुणोंको तृण समान जान त्याग देता है ॥ ८ ॥

दोहा–माया ईश न आपु कहँ, जानि कहै सो जीव ॥ ❋
बन्ध मोक्षप्रद सर्बपर, मायाप्रेरक शीव ॥ २२ ॥ ❋

और जीव वह कहा जाता है कि जो अपनेको मायाका स्वामी नहीं जानता है और ईश्वरको बन्ध मोक्षका देनेवाला, सबसे पर, और मायाको प्रेरणेवाला तथा सबकी सींव व मायाका ईश जानता है ॥ २२ ॥

धर्मते बिरति योगते ज्ञाना ॥ ज्ञान मोक्षप्रद बेद बखाना ॥ १ ॥ ❋
जाते बेगि द्रवौं मैं भाई ॥ सो मम भक्ति भक्त सुखदाई ॥ २ ॥ ❋

हे भाई ! धर्मसे वैराग्य और योगसे ज्ञान होता है और ज्ञानविषयमें वेद कहते हैं कि, ज्ञान

मोक्षका देनेवाला है ॥ १ ॥ हे भाई ! जिससे मैं जल्दी द्रवता हूं वही मेरी भक्ति है कि जो भक्तोंको सुख देती है ॥ २ ॥

सो स्वतंत्र अवलंब न आना ॥ जेहि आधीन ज्ञान विज्ञाना ॥ ३ ॥ ❋
भक्ति तात अनुपम सुखमूला ॥ मिलहिँ जो सन्त होय अनुकूला ॥ ४ ॥ ❋

वह मेरी भक्ति स्वतंत्र है उसके दूसरे किसी अवलंब यानी साधनकी आकांक्षा नहीं है कि, जिसके आधीन ज्ञान और विज्ञान दोनों है ॥ ३ ॥ हे तात ! भक्तिके बराबर दूसरा कुछभी नहीं है यह सुखकी मूल है; परंतु यह मिलती तभी है कि जब संतलोग अनुकूल होते है ॥ ४ ॥

भक्तिके साधन कहौं बखानी ॥ सुगम पन्थ मोहिँ पावहिँ प्रानी ॥ ५ ॥ ❋
प्रथमहिँ विप्रचरण अतिप्रीती ॥ निजनिज कर्म निरत श्रुतिनीती ॥ ६ ॥ ❋

हे भाई ! अब मैं भक्तिके साधन बखान कर कहता हूं सो सुनो कि जिस सुगम रस्तेसे प्राणी मुझे प्राप्त हो जाते हैं ॥ ५ ॥ प्रथमही तो भक्तिका साधन यह है कि ब्राह्मणोंके चरणोंमें अतिशय प्रीति रखनी. दूसरा वेदकी विधिके अनुसार अपने अपने कर्ममें तत्पर रहना ॥ ६ ॥

यहिकर फल मन विषय बिरागा ॥ तब मम चरण उपजु अनुरागा ॥ ७ ॥
श्रवणादिक नव भक्ति दृढ़ाहीं ॥ मम लीलारति अति मनमाहीं ॥ ८ ॥ ❋

हे भाई ! मनमें जो विषयोंकी ओर वैराग्य उत्पन्न होना यह इसीका फल है और जब वैराग्य उत्पन्न होता है तब मेरे चरणोंमें प्रीति उत्पन्न होती है ॥ ७ ॥ हे तात ! जब मेरे चरणोंमें प्रीति उत्पन्न होती है तब श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन, अर्चन, वन्दन, सख्य, दास्य, और आत्मनिवेदन यह नवधा भक्ति दृढ़ हो जाती है और मनमें मेरी लीला विषे अतिशय रुचि बढ़ जाती है ॥ ८ ॥

सन्तचरण पङ्कज अतिप्रेमा ॥ मन क्रम बचन भजन दृढ़नेमा ॥ ९ ॥ ❋
गुरु पितु मातु बन्धु पति देवा ॥ सब मोहिँ कहँ जाने दृढसेवा ॥ १० ॥ ❋

हे भाई ! संत लोगोंके चरणकमलमें अतिशय प्रेम रखना. मन क्रम वचनसे मेरे भजनका दृढ़ नियम रखना ॥ ९ ॥ गुरु, पिता, माता, बंधु, पति और देवता, इन सबको मेरा स्वरूप जान, इनकी दृढ़ सेवा करना ॥ १० ॥

मम गुण गावत पुलक शरीरा ॥ गद्गदगिरा नयन बह नीरा ॥ ११ ॥ ❋
काम आदि मद दम्भ न जाके ॥ तात निरन्तर बश मैं ताके ॥ १२ ॥ ❋

मेरे गुण गाते शरीर रोमांचित होय, वाणी गद्गद हो जाय, और नेत्रोंमें जल बहने लग जाय ॥ ११ ॥ हे तात ! जिसकी यह दशा होवे और जिसके काम क्रोध मद दंभ आदि न होवें उनके मैं हमेशा वश रहता हूं ॥ १२ ॥

दोहा—बचन कर्म मन मोरि गति, भजन करै निष्काम ॥ ❋
तिनके हृदयकमल महँ, करौं सदा बिश्राम ॥ ३३ ॥ ❋

हे भाई ! जिनके मन वचन कर्मसे मेराही शरण है. और जो निष्काम होकर मेरा भजन करते हैं; उनके हृदयसरोजके विषे मैं सदा विश्राम करता हूं ॥ ३३ ॥

भक्ति योग सुनि अति सुख पावा ॥ लक्ष्मण प्रभुचरणन्ह शिर नावा ॥ १ ॥ ❋
नाथ सुने गत मन संदेहा ॥ भयउ ज्ञान उपजेउ नव नेहा ॥ २ ॥ ❋
अनुज बचन सुनि प्रभु मन भाये ॥ हर्षि राम निज हृदय लगाये ॥ ३ ॥ ❋

हे पार्वती ! भक्तियोग सुनकर, लक्ष्मणने बहुत सुख पाया और प्रभुके चरणोंमें सिर नवाया ॥ १ ॥ और कहा कि—हे नाथ ! आपके वचन सुन मेरे संदेह निवृत्त हो गये हैं. ज्ञान उपज गया है और नवीन स्नेह पैदा हो गया है ॥ २ ॥ लक्ष्मणके ऐसे प्रेमभरे वचन सुन, प्रभुके मनको अत्यंत प्रिय लगे, जिससे प्रभुने आनंदित हो लक्ष्मणको छातीसे लगाया ॥ ३ ॥

प्रश्नोत्तर–

(क्षेपक) नाथ बात सबविधि तुम जानो ॥ मैं पूछौं संक्षेप बखानो ॥ १ ॥ ❋
जगसमुद्र मधि को आधारा ॥ गुरु कृपाल पद पोत निहारा ॥ २ ॥ ❋

लक्ष्मण बोला कि—हे नाथ ! आप सब बात सब प्रकार जानते हो सो मैं जो पूंछता हूं सो संक्षेपसे कहो ॥ १ ॥ यहाँ लक्ष्मणका एक प्रश्न है और प्रभुका एक एक प्रश्नका अलग अलग उत्तर है. प्रश्न—हे प्रभु ! इस संसारसमुद्रमें आधार क्या है ? उत्तर—दयालु गुरुके चरणकमलको नौका करके देखो ॥ २ ॥

गुरु को जो देवै हित बोधा ॥ शिष्य कौन जो सुनै प्रबोधा ॥ ३ ॥ ❋
बेधित को विषया अनुरागी ॥ को वा मुक्त बिषय जिन त्यागी ॥ ४ ॥ ❋

प्रश्न—गुरु कौन है ? उत्तर—जो हितका उपदेश करै. प्रश्न—शिष्य कौन है ? उत्तर—जो उपदेश सुनै ॥ ३ ॥ प्रश्न—बिंधा हुआ कौन है ? उत्तर—जो विषयोंमें आसक्त है. प्रश्न—मुक्त कौन है ? उत्तर—जिसने विषयोंका त्याग कर दिया है ॥ ४ ॥

नर्क सो कौन घोर निज देही ॥ तृष्णा त्यागि स्वर्गसुख येही ॥ ५ ॥ ❋
तमोद्वार किं किंकर नारी ॥ मोक्षमार्ग सतसंग बिचारी ॥ ६ ॥ ❋

प्रश्न—घोर नरक कौन है? उत्तर—अपना शरीर. प्रश्न—स्वर्गका सुख क्या है? उत्तर—तृष्णाका तजना ॥ ५ ॥ प्रश्न—नरकका द्वार क्या है ? उत्तर—स्त्री. प्रश्न—मोक्षका मार्ग क्या है? उत्तर—सत्संगती ॥ ६ ॥

सोवत को जग रहे जे टेकी ॥ जागत को सत असत बिबेकी ॥ ७ ॥ ❋
को वा शत्रु निजेन्द्रिय मीता ॥ सोई सुहृद तिन्हैं जिन जीता ॥ ८ ॥ ❋

प्रश्न—जगत्‌में सोया कौन है ? उत्तर—जो आसक्त होके रहता है. प्रश्न—जागता कौन है ? उत्तर—जो सत् असत्‌को जानता है ॥ ७ ॥ प्रश्न—शत्रु कौन है ? उत्तर—जिसने अपनी इंद्रियां नहीं जीती है. प्रश्न—मित्र कौन है ? उत्तर—जिसने अपनी इंद्रियां जीत लीनी हैं ॥ ८ ॥

रंक कौन ज्यहि तृष्णा चोषी ॥ धनी सो को सबविधि संतोषी ॥ ९ ॥ ❋
महाअंध को जो मदनातुर ॥ निज भल करै सोइ बड़ चातुर ॥ १० ॥ ❋

प्रश्न—रंक कौन है ? उत्तर—जिसकी तृष्णा चोष गई है. प्रश्न—धनवान् कौन है ? उत्तर—जो सब प्रकारसे संतोषी है ॥ ९ ॥ प्रश्न—महाअंध कौन है ? उत्तर—जो कामातुर है. प्रश्न—चतुर कौन है ? उत्तर—जो अपना भला कर लेता है ॥ १० ॥

क्षमावंत को त्यहि श्रुति कहई ॥ परुष बचन सुनि जो नहिं दहई ॥ ११ ॥
मृतक कौन ज्यहि कीरति नाहीं ॥ जीवत जासु सुयश जगमाहीं ॥ १२ ॥
दीरघ रुज किं यह संसारा ॥ औषधि तासु अनूप बिचारा ॥ १३ ॥ ❋

प्रश्न–वेद क्षमावंत किसको कहता है ? उत्तर–जो कठोर वचन सुनकर संताप नहीं करता है ॥ ११ ॥ प्रश्न–मृतक मुर्दा कौन है ? उत्तर–जिसकी जगत्में कीर्ति नहीं है. प्रश्न–जीता कौन है ? उत्तर–जिसका जगत्में सुजस है ॥ १२ ॥ प्रश्न मोटा रोग कौन है ? उत्तर–यह संसार. प्रश्न–उसकी अनुपम औषधि क्या है ? उत्तर–विचार ॥ १३ ॥

दोहा–को हौं आयों कहाते, कित जैहौं का सार ॥ ❋
को मैं जननी को पिता, याको कहिय बिचार ॥ १ ॥ ❋

मै कौन हूं ? कहांसे आया हूं ? कहां जाऊंगा ? यहां सार क्या है ? मेरे माता पिता कौन है? इसका बिचार कहिये ॥ १ ॥

किं अनीति जहँ वेदविरुद्धा ॥ परम तीर्थ किं निजमन शुद्धा ॥ १ ॥ ❋
बिन प्रतीति को कंचन कांता ॥ सेवा करन योग को शांता ॥ २ ॥ ❋

प्रश्न–अन्याय क्या है ? उत्तर–वेदसे विरुद्ध. प्रश्न–परम तीर्थ क्या है ? उत्तर–अपना शुद्ध मन ॥ १ ॥ प्रश्न–बिना भरोसेका क्या है ? उत्तर–कनक और कामिनी. प्रश्न–सेवा करनेके योग्य क्या है ? उत्तर–शांत पुरुष ॥ २ ॥

किं ज्वर चिंता चितकी जानौ ॥ शठ को जो बिनधर्म पिछानौ ॥ ३ ॥ ❋
लाभ कौन बड़ि भक्ति हमारी ॥ हानि न भज्यो मोहिं तनुधारी ॥ ४ ॥ ❋

प्रश्न–ज्वर क्या है ? उत्तर–चित्तकी चिंता. प्रश्न–शठ कौन है ? उत्तर–धर्महीन ॥ ३ ॥ प्रश्न–लाभ क्या है ? उत्तर–हमारी दृढ़ भक्ति. प्रश्न–हानि क्या है ? उत्तर–मनुष्यदेह पाकर मेरा भजन नहीं करना ॥ ४ ॥

को वा शूर सुभावै जीतै ॥ भूषण किं जो शील न रीतै ॥ ५ ॥ ❋
बिद्या किं जो भेद मिटाई ॥ भेद अबिद्या है दुखदाई ॥ ६ ॥ ❋

प्रश्न–शूरवीर कौन है ? उत्तर–जिसने स्वभावको जीत लिया है. प्रश्न–गहना क्या है ? उत्तर–शील ॥ ५ ॥ प्रश्न–विद्या क्या है ? उत्तर–जिससे भेदभाव मिटै. प्रश्न–दुखदायी अविद्या क्या है? उत्तर–भेद ॥ ६ ॥

लज्जा किं नहिं करें बिकारा ॥ महाबीर जिन मनहि प्रहारा ॥ ७ ॥ ❋
धीरवंत बली अति को बा ॥ सुमुखि कटाक्ष न मोहै जो बा ॥ ८ ॥ ❋

प्रश्न–लज्जा क्या है ? उत्तर–जिससे विकार नहीं होता. प्रश्न–महावीर कौन है ? उत्तर–जिन्होंने मनको जीत लिया है ॥ ७ ॥ प्रश्न–धीरवन्त और अत्यंत बलवान् कौन है ? उत्तर जिसे सुमुखीके कटाक्ष मोहित नहीं करते ॥ ८ ॥

दुख किं अनित्य बस्तुमें नेहा ॥ सुखप्रसाद को मम चरणसनेहा ॥ ९ ॥ ❋
पातकमूल लोभ लखि परई ॥ पठन सुनत किं कुपथ बिसरई ॥ १० ॥ ❋

प्र० दुःख क्या है ? उ० अनित्य वस्तुमें स्नेह करना. प्र० सुखदायी कौन है ? उ० मेरे चरणोंमें स्नेह ॥ ९ ॥ प्र० पापका मूल क्या है ? उ० लोभ. प्र० पढ़ना और सुनना क्या है ? उ० कुमार्गको भूल जाना १० ॥

त्यागी को जो मन बच काया ॥ करि सतकर्म भजे फल पाया ॥ ११ ॥
सत्य बचन किं जो म्वहिँ लीन्हे ॥ पंडित किं बिकार तजि दीन्हे ॥ १२ ॥

प्र० त्यागी कौन है ? उ० जो मन वचन कायसे सत्कर्म करता है और प्राप्त फलको भजता है ॥ ११ ॥ प्र० सत्यवचन क्या है ? उ० मेरेको लेना. प्र० पंडित कौन है ? उ० जिसने विकार तज दिये है ॥ १२ ॥

मम स्वरूप जानै सोइ ज्ञानी ॥ मूरख को स्वदेह अभिमानी ॥ १३ ॥ ❋
पंथ कवनि जामें म्वहिँ पावै ॥ दानी जो मम भक्ति बतावै ॥ १४ ॥ ❋

प्र० ज्ञानी कौन है ? उ० जो मेरे स्वरूपको जाने. प्र० मूर्ख कौन है ? उ० जो अपने देहमें अभिमान रखता है ॥ १३ ॥ प्र० मार्ग कौन है ? उ० जिसमे मुझको पा जावे. प्र० दानी कौन है? उ० जो मेरी भक्ति बतावे ॥ १४ ॥

महापतित को हिंसाचारी ॥ धन्य कवन जो परउपकारी ॥ १५ ॥ ❋
को वा श्रेष्ठ निरत हरि कर्मा ॥ नीच कौन जो करै कुकर्मा ॥ १६ ॥ ❋

प्र० महापतित कौन है ? उ० हिंसाचारी. प्र० धन्य पुरुष कौन है ? परोपकारी॥१५॥ प्र० श्रेष्ठ कौन है ? उ० हरिभगवानके कर्म करनेमें परायण. प्र० नीच कौन है ? उ० कुकर्म करनेवाला

संग्रह योग कहा गुण मेरे ॥ ॥ जाइ न कितै कुसंगति नेरे ॥ १७ ॥ ❋
तप किं बिषयभोग परिहरई ॥ दया को भूतद्रोह नहिँ करई ॥ १८ ॥ ❋

प्र० संग्रह करनेके योग्य क्या है ? उ० मेरे गुण. प्र० किधर नहीं जाना चाहिये ? उ० कुसंगतिके समीप ॥ १७ ॥ प्र० तपस्या क्या है ? उ० विषयभोगका त्याग. प्र० दया क्या है ? उ०भूतद्रोह न करना ॥ १८ ॥

किं यमजाल सुतामस मोहा ॥ प्रेम कहां जहँ नहिँ तन छोहा ॥ १९ ॥ ❋
साधु कौन जाके उर दाया ॥ हरिते बिमुख करै सोइ माया ॥ २० ॥ ❋
दुख सुख सम सबकाल तितीक्षा ॥ किं विज्ञान बिबेक परीक्षा ॥ २१ ॥ ❋

प्र० यमराजका जाल क्या है ? उ० अतिशय तमोगुण और मोह. प्र० प्रेम क्या है ? उ० शरीरमें क्षोभ न होना ॥ १९ ॥ प्र० साधु कौन है ? उ० जिसके हृदयमें दया है. प्र० माया क्या है ? उ० जो हरिसे विमुख करै ॥ २० ॥ प्र० तितिक्षा क्या है ? उ० सदा सर्वदा सुख दुःखमें समभावसे रहना. प्र० विज्ञान और विवेककी परीक्षा क्या है ? ॥ २१ ॥

दोहा–हौं नहिँ तन मन बचन बुधि, जाति बरण कुल एक ॥ ❋
मैं हौं चेतन सबनमें, याको कहत बिबेक ॥ २ ॥ ❋

उ० मैं शरीर, मन, वचन, बुद्धि, जाति, वर्ण और कुल एकभी नहीं हूं. किंतु मैं सबमे एक चैतन्यरूप हूं, ऐसा जो ज्ञान उसे विवेक कहते हैं ॥ २ ॥

थावर जंगम सबनमें, जहँतक जीव जहान ॥ ❋
एकरूप निश्चय भयो, सोई अनन्य विज्ञान ॥ ३ ॥ ❋
जीव ईशमें भेद किं, यतनोइ अहै सदीव ॥ ❋
बद्धदशामें जीव कहि, मोक्षदशामें शीव ॥ ४ ॥ ❋

सब चराचर प्राणीमात्रमें कि जहांतक जगतमें जीव है उन सबनमें जो एकरूप अर्थात् अद्वैतका निश्चय हो जाना यही अनन्य विज्ञान है ॥ ३ ॥ प्र० जीव और ईश्वरमें भेद क्या है ? उ० हे भाई ! जीव और ईश्वरमें हमेशा इतनाही भेद रहता है कि जो बद्धदशामें है वह तो जीव और जो मोक्षदशामें है वह ईश्वर ॥ ४ ॥

जैसे महदाकाशते, घटाकाशको भेद ॥ ❋
तैसे मिटे उपाधिके, जीव ब्रह्म निरभेद ॥ ५ ॥ ❋

हे तात ! जैसे व्यापक महाकाशसे घटमें रहेहुए आकाशका भेद है सो जबलों घट उपाधि विद्यमान है तबलों वह भेद है और जब वह उपाधि मिट जाती है तब महाकाश और घटाकाशमें कोई भेद नहीं है किंतु वे दोनों एकही है ऐसेही जबलों स्थूल सूक्ष्म शरीररूप उपाधि है तबलों जीव ब्रह्ममें भेद है और जब वह उपाधि मिटी तब वह भेद मिटकर जीव ब्रह्म एक प्रतीत होने लगते है ॥ ५ ॥

पुरुष अयोगिहि ब्रह्म न दरशै ॥ बिन बिराग जिमि ज्ञान न सरशै ॥ १ ॥
बिरति कहा बिधिलोक प्रयंता ॥ काकबिष्ठसम समझै अंता ॥ २ ॥ ❋

हे भाई ! जैसे ज्ञान बिन वैराग्य दृढ़ नहीं होता ऐसे योग बिन ब्रह्मका दर्शन यानी अनुभव नहीं होता ॥ १ ॥ प्र० वैराग्य क्या है ? उ० ब्रह्मलोक पर्यंत सब नाशवान् विषयोंको काककी बिष्ठाके समान जानना ॥ २ ॥

भूत कहा भय धीरज धामा ॥ परम जाप किं जो मम नामा ॥ ३ ॥ ❋
चुगुल कौन पर अवगुण खोलै ॥ मौनी बचन युक्तिते बोलै ॥ ४ ॥ ❋

प्र० भूत क्या है ? उ० भय और धीरजका वास. प्र० सर्वोत्तम जप क्या है ? उ० मेरा नाम ॥ ३ ॥ प्र० चुगल कौन है ? उ० पराये अवगुण प्रगट करनेवाला. प्र० मौनवाला कौन है ? उ० युक्तिसे वचन बोलनेवाला ॥ ४ ॥

पिता बिबेक सुमति सोइ माता ॥ हरिजन मिलन मोक्ष सुख दाता ॥ ५ ॥
दुस्तर किं सब जननि दुरासा ॥ रारिमूल किं केवल हाँसा ॥ ६ ॥ ❋

प्र० पिता कौन है ? उ० विवेक. प्र० माता कौन है ? उ० सुमति. प्र० मोक्षसुखका देनेवाला कौन है ? उ० हरिभक्तोंका मिलाप ॥ ५ ॥ प्र० दुस्तर क्या है ? उ० खोटी खाटी आशा. प्र० कलहका मूल क्या है ? उ० हँसना ॥ ६ ॥

पशु को जो बिन सुकृत रहावै ॥ बंधु विपतिमें काम जो आवै ॥ ७ ॥ ❋
श्रद्धा किं जो मुदित अनालस ॥ क्रिया बिषे दुख सहै परालस ॥ ८ ॥ ❋

प्र० पशु कौन है ? उ० विना पुण्य रहनेवाला. प्र० बंधु कौन है ? जो आपदामें काम आवै ॥ ७ ॥ प्र० श्रद्धा क्या है ? उ० आलस छोड़कर प्रसन्न रहना. प्र० व्यापार विषै दुख कौन सहता है ? उ० आलसी ॥ ८ ॥

कि विश्वास गनै श्रुति साँची ॥ तोष कौन निष्काम अयाँची ॥ ९ ॥ ❋
निष्ठा किं करिये जहँ प्रीती ॥ लखि न अभाव होइ विपरीती ॥ १० ॥ ❋

प्र० विश्वास क्या है ? उ० वेदको सत्य मानना. प्र० संतोष क्या है ? उ० कामनाका त्याग और याचना न करना ॥ ९ ॥ प्र० निष्ठा (भाव) क्या है ? उ० प्रीति करना. प्र० नास्तिकता क्या है ? उ० भाव न होना ॥ १० ॥

रुचि किं रहित शोच सुख पाये ॥ भाव क्षमादि सकल गुण आये ॥ ११ ॥ ❋
आसक्ती किं प्रिय विन देखे ॥ रुचत न कछु तन धनके लेखे ॥ १२ ॥ ❋

प्र० रुचि क्या है ? उ० शोचका अभाव और सुखकी प्राप्ति. प्र० गुण क्या है ? उ० भक्ति और क्षमा आदी ॥ ११ ॥ प्र० आसक्ति क्या है ? उ० प्रियका न दीखना कि जिसके छते कुछ रुचता नहीं है. यह शरीर और धनभी कौन गिनतीमें है ? ॥ १२ ॥

भोजन किं जग तीनि प्रकारा ॥ उत्तम मध्यम नीच निहारा ॥ ॥ १३ ॥ ❋
मधुर मंजु मृदु सात्विक जानौ ॥ तिक्त तात रजगुणी पिछानौ ॥ १४ ॥ ❋

प्र० जगतमें तीन प्रकारके भोजन यानी उत्तम मध्यम और नीच कौन कौन है ? ॥ १३ ॥ उ० मधुर, सुन्दर और कोमल भोजन सात्विक, तीखा आदि राजस ॥ १४ ॥

भक्ष्याभक्ष्य तामसिन केरे ॥ तिमि त्रैबिधिके मनुज निबेरे ॥ १५ ॥ ❋
पूजा तीनि भांतिकी हेरी ॥ प्रतिमा वैष्णव आतम केरी ॥ १६ ॥ ❋

भक्ष्य अभक्ष्य तामस है. ऐसे मनुष्यभी तीन प्रकारके है ॥ १५ ॥ हे भाई ! पूजाकेभी तीन भेद हैं. प्रतिमा पूजा, वैष्णवपूजा और आतमपूजा ॥ १६ ॥

उत्तम आतम मध्यम साधू ॥ कछु कनिष्ठ प्रतिमा अवराधू ॥ १७ ॥ ❋
शांति सो कौन बिकार बिहीना ॥ निरअभिमान ज्ञान किं दीना ॥ १८ ॥

तहां आतमपूजा उत्तम, वैष्णवपूजा मध्यम और प्रतिमापूजा कनिष्ठ है ॥ १७ ॥ शांति क्या है ? विकार न होना. ज्ञान क्या है ? अभिमानका न होना ॥ १८ ॥

वशीकरण किं कोमल बाणी ॥ मारण मंत्र क्षमा बड़ जानी ॥ १९ ॥ ❋
जीव उभय किं बंधु बिमोक्षा ॥ सहित रहिय वासना असोक्षा ॥ २० ॥ ❋

वशीकरण क्या है ? कोमल वचन. मारण मंत्र क्या है ? क्षमा ॥ १९ ॥ जीवका बंध क्या है ? वासनाके साथ रहना. जीवका मोक्ष क्या है ? वासनाकी उपेक्षा ॥ २० ॥

भाग्य सुबाम कुमति पर केरी ॥ जगत मान्यता आशाबेरी ॥ २१ ॥ ❋
परिमल किं प्रण धन किं धर्मा ॥ करणी बिन बादै बेशर्मा ॥ २२ ॥ ❋

बहुत टेढ़ा क्या है ? दैव. कुबुद्धि क्या है ? पराई बुद्धि. जगतमें बेरी क्या है ? मान्यपनकी आ-

शा ॥ २१ ॥ परिमली (सुवासना) क्या है ? प्रण. धन क्या है ? धर्म. ऐश्वर्य कौन है ? करणी बिनाका मनुष्य ॥ २२ ॥

ईश्वर सब पर प्रकृति नियंता ॥ बहुबिधि कह्यो जानकीकंता ॥ २३ ॥ ❀
सुनि प्रभुबचन लषण हरषाने ॥ बैठे पुनि निज जाइ ठिकाने ॥ २४ ॥ ❀

ईश्वर कौन है ? सबसे पर और प्रकृतिके प्रेरक. हे पार्वती ! प्रभुने इसप्रकार लक्ष्मणके प्रश्नोंके उत्तर दिये ॥ २३ ॥ सो सुन लक्ष्मण बहुत आनंदित हुआ और पीछा अपनी ठौर जा बैठा ॥ २४ ॥ (इति) ॥ ॥ ॥ ॥

यहिबिधि गये कछुक दिन बीती ॥ कहत बिराग ज्ञान गुण नीती ॥ ४ ॥ ❀

इस प्रकार ज्ञान, वैराग्य, गुण और नीतिका प्रकरण कहते कुछ दिन बीत गये ॥ ४ ॥

शूर्पणखा रावणकी बहिनी ॥ दुष्टहृदय दारुण जिमि अहिनी ॥ ५ ॥ ❀
पंचवटी सो गै यकबारा ॥ देखि बिकल भइ युगुल कुमारा ॥ ६ ॥ ❀

हे पार्वती ! साँपनीके समान दुष्ट अंतःकरणवाली महादारुण रावणकी बहिन शूर्पणखा दंडक वनमें रहती थी ॥ ५ ॥ सो वह एकबेर पंचवटीमें गई. वहां दोनों राजकुमारोंको देखकर विकल हो गई ॥ ६ ॥

भ्राता पिता पुत्र उरगारी ॥ पुरुष मनोहर निरखत नारी ॥ ७ ॥ ❀
होइबिकलसकमननहिँरोकी ॥ जिमिरबिमणिद्रव रबिहि बिलोकी ॥८॥ ❀

हे गरुड़ ! स्त्रीकी यह रीति है कि चाहे भाई हो, चाहे पिता हो, चाहे पुत्र हो, सुन्दर पुरुषको देखतेही ॥ ७ ॥ तुरंत विकल हो जाती है; मनको रोक सकती नहीं है. जैसे सूर्यको देखकर सूर्यकांत मणि द्रवीभूत हो जाती है ऐसे स्त्री मनोहर पुरुषको देख द्रव जाती है ॥ ८ ॥

दोहा–अधम निशाचरि कुटिल अति, चली करन उपहास ॥ ❀
सुनु खगेश भावी प्रबल, भा चह निशिचरनास ॥ २४ ॥ ❀

हे गरुड़ ! सुनो. भावी बड़ा प्रबल है. वह राक्षसोंका नाश करना चाहता था, तिससे वह कुटिल अधम राक्षसी प्रभुसे उपहास करने चली ॥ २४ ॥

रुचिर रूप धरि प्रभुपहँ आई ॥ बोली बचन मधुर मुसुकाई ॥ १ ॥ ❀
तुमसम पुरुष न मोसम नारी ॥ यह संयोग विधि रचा बिचारी ॥ २ ॥ ❀

सुन्दर स्वरूप धर कर प्रभुके पास आय, मुसकुराकर मधुर बाणीसे बोली ॥ १ ॥ कि–तुम्हारे जैसा तो कोई पुरुष नहीं है और मेरे जैसी कोई स्त्री नहीं है. यह संयोग विधाताने विचारके रचा है ॥ २ ॥

मम अनुरूप पुरुष जग नाहीं ॥ देखेउँ खोजि लोक तिहुँ माहीं ॥ ३ ॥ ❀
ताते अबलगि रही कुमारी ॥ मनमाना कछु तुमहिँ निहारी ॥ ४ ॥ ❀

जगतमें मेरे योग्य कोई पुरुष नहीं है. मैंने तमाम त्रिलोकी ढूंढ मारी है ॥ ३ ॥ और इसीसे मैं अबलों कारी रही हूं; अब मेरे मनमाने कुछ तुमको देखती हूं ॥ ४ ॥

सीतहिँ चितइ कही प्रभु बाता ॥ अहै कुमार मोर लघु भ्राता ॥ ५ ॥ ❀
गइ लक्ष्मण रिपुभगिनी जानी ॥ प्रभु बिलोकि बोले मृदु बानी ॥ ६ ॥ ❀

यह सुन, सीताकी ओर देखकर, प्रभुने कहा कि–मुझसे छोटा भाई जो है वह कुमार है. वास्तवमें कुमारका अर्थ यहां यह है कि कु कहे कुत्सित यानी निंद्य है मार कहे कामदेव जिससे अर्थात् कामदेवको लजानेवाला. सो तू उसके पास जा ॥ ५ ॥ प्रभुके वचन सुन शूर्पणखा लक्ष्मणके पास गई. तिसे देख, शत्रुकी बहिन जान, लक्ष्मणने कोमल वाणीसे कहा कि– ॥ ६ ॥

सुन्दरि सुनु मैं उन्हकर दासा ॥ पराधीन नहिँ तोर सुपासा ॥ ७ ॥ ❀
प्रभु समरथ कोशलपुरराजा ॥ जो कछु करहिँ उन्हैं सब छाजा ॥ ८ ॥ ❀

हे सुंदरी ! सुन; मैं तो रामचन्द्रका दास हूं और मुझको पराधीन रहनेमें सुबीता न रहेगा ॥ ७ ॥ अयोध्यानाथ श्रीरामचन्द्र प्रभु हैं. समर्थ है. वे जो कुछ करैं सो सब उनको छाजता है ॥ ८ ॥

दोहा–"केसरिसम नहिँ करिहिँ बल, लवा कि बाजसमान ॥ ❀
प्रभु सेवक इमि जानहु, मानहुँ बचन प्रमान" ॥ २५ ॥ ❀

देख, हाथीका बल सिंहके समान नहीं होता है. और लवा क्या बाजके बराबर हो सकता है ? सो तू प्रभु और सेवकके बीच इतना फर्क जानकर, मेरा वचन प्रमाण मान ॥ २५ ॥

सेवक सुख चह मान भिखारी ॥ व्यसनी धन सुभक्त व्यभिचारी ॥ १ ॥ ❀
लोभी यश चह चार गुमानी ॥ नभ दुहि दूध चहत कोउ प्रानी ॥ २ ॥ ❀

हे सुंदरी ! जो सेवक होकर सुख चाहे, भिखारी होकर मान चाहे, व्यसनी होकर धन चाहे, व्यभिचारी होकर सुन्दर भक्ति चाहे ॥ १ ॥ लोभी होकर यश चाहे, दूत होकर गुमान (गर्व) चाहे, उनका चाहना ऐसा है कि, जैसे कोई आदमी आकाशको दूहकर दूध चाहे ॥ २ ॥

पुनि फिरि राम निकट सो आई ॥ प्रभु लक्ष्मण पहँ बहुरि पठाई ॥ ३ ॥ ❀
लक्ष्मण कहा तोहिँ सो बरई ॥ जो तृण तोरि लाज परिहरई ॥ ४ ॥ ❀

यह सुन वह फिर पीछी रामके पास आई. तब प्रभुने उसे पीछी लक्ष्मणके पास भेज दी ॥ ३ ॥ उसकाल लक्ष्मणने शूर्पणखासे कहा कि–तुझे वह बरेगा कि जो तृण तोड़कर लाजको तज देगा ॥ ४ ॥

तब खिसिआनि रामपहँ जाई ॥ रूप भयंकर प्रगटि दिखाई ॥ ५ ॥ ❀
बिथुरेकेश रदन बिकराला ॥ भृकुटी कुटिल करण लगि गाला ॥ ६ ॥ ❀

तब झुंझलाकर रामके पास जाकर, उसने बड़ा भयंकररूप प्रगट करके दिखाया ॥ ५ ॥ कैसा है वह रूप ? कि जिसके केश बिथुरे हुए हैं. बड़े विकराल दांत हैं. भ्रुकुटि बड़ी टेढी है. गाल कानोंतक पहुंचे हुए हैं ॥ ६ ॥

सीतहिँ सभय देखि रघुराई ॥ कहा अनुज सन सैन बुझाई ॥ ७ ॥ ❀
अनुज राममनकी गति जानी ॥ उठे रिसाइ सो सुनहु भवानी ॥ ८ ॥ ❀

तिसे देख, सीता डरी; तिसे निहार, प्रभुने लक्ष्मणसे सैनमें समझाकर कहा ॥ ७ ॥ हे पार्वती ! लक्ष्मण प्रभुके मनकी गतिको जान कोपकर उठा सो सुनो ॥ ८ ॥

दोहा-लक्ष्मण अतिलाघव तेहिँ, नाक कान बिनु कीन्ह ॥ ❀
ताके कर रावण कहँ, मनहुँ चुनौती दीन्ह ॥ २६ ॥ ❀

लक्ष्मणने बड़ी फुर्तीके साथ उसके नाक काट विरूप कर दी.कवि कहता है कि-शूर्पणखाके नाक कान नहीं काटे हैं किंतु उसके हाथ मानों रावणको संग्रामके लिये चुनौती ही दी है ॥ २६ ॥

नाक कान बिनु भइ बिकराला ॥ जनु श्रव शैल गेरुकै धारा ॥ १ ॥ ❀
खर दूषण पहँ गइ बिलखाता ॥ धिक् धिक् तव पौरुप बल भ्राता ॥ २ ॥

हे भवानी ! नाक कान विना वह राक्षसी अति विकराल व्है गई है. जो रुधिर झरता है वह ऐसा दीखता है कि, मानों पर्वतमेंसे गेरूकी धाराही बह चली है ॥ १ ॥ तब वह रोती बिलापती विलखाती खरदूषणके पास गई और बोली कि-हे भाई तेरे पुरुषार्थ और बलको धिकार है; धिकार है ॥ २ ॥

तेंइ पूछा सब कहेसि बुझाई ॥ यातुधान सुनि सैन बुलाई ॥ ३ ॥ ❀
चौदह सहस सुभट संग लीन्हे ॥ जिन्ह सपनेहुँ रण पीठ न दीन्हे ॥४॥ ❀

उसने पूंछा कि यह क्या है ? तब उसने सब समाचार कहे सो सुन उसने अपनी राक्षसोंकी सेना बुलाई ॥३॥ चौदह हजार राक्षस सुभट संग लिये कि, जिन्होंने स्वप्नमेंभी रणमें पीठ नहीं दी है ॥ ४ ॥

धाये निशिचर निकर वरूथा ॥ जनु सपक्ष कज्जल गिरियूथा ॥ ५ ॥ ❀
नाना बाहन नानाकारा ॥ नाना आयुध घोर अपारा ॥ ६ ॥ ❀

हे गरुड़ ! वे राक्षसोंके यूथ कैसे दौड़ चले हैं कि, मानों पंखोंवाले काले पर्वतोंके झुंडही उड़े है ॥ ५ ॥ अनेक प्रकारके वाहन है. अनेक प्रकारके आकार है. अनेक प्रकारके अपार घोर शस्त्र अस्त्र हैं ॥ ६ ॥

श्यामघटा देखत नभकेरी ॥ तहँ बासव धनु मनहुँ उयेरी ॥ ७ ॥ ❀
शूर्पणखहिँ आगे कर लीन्ही ॥ अशुभरूप श्रुति नासा हीनी ॥ ८ ॥ ❀

काले काले राक्षसोंके झुंड ऐसे दीखते है कि, मानो आकाशमें श्याम घटा चढ़ आई है. और शूर्पणखा इन्द्रधनुषके समान प्रतीत होती है ॥ ७ ॥ राक्षसोंने शूर्पणखाको आगे किया कि जो नाक कान हीन होनेसे अशुभरूप है ॥ ८ ॥

दोहा-निज निज बल सब मिलि कहहिँ, एकहिँ एक सुनाई ॥ ❀
बाजन बजै जुझावने, हर्ष न हृदय समाई ॥ २७ ॥ ❀

सब मिल मिलकर एक एकको एक एक अपना बल कहकहकर सुनाते है. जुझावने बाजे बाजते हैं. हृदयमें आनंद समाता नहीं है ॥ २७ ॥

अशकुन अमित होहिँ भयकारी ॥ गनहिँ न मृत्यु बिवश भयेझारी ॥ १ ॥
गर्जहिँ तर्जहिँ गगन उड़ाहीँ ॥ देखि कटक भट अतिहरषाहीँ ॥ २ ॥ ❀

अनेक प्रकारके भयंकर असंख्यात अशुभ शकुन होते हैं; परंतु वे सब राक्षसवृंद कालवश होकर उन्हें गिनते नहीं हैं ॥ १ ॥ गरजते हैं, तरजते हैं, आकाशमें उड़ते हैं, और सेनाको देखकर, सुभट अति आनंदित होते हैं ॥ २ ॥

कोउ कह जियत धरहु दोउ भाई ॥ धरि मारहु तिय लेहु छुड़ाई ॥ ३ ॥ ❋
कोउ कह सुनौ सत्य हम कहहीं ॥ कानन फिरहिँ बीर कोउ अहहीं ॥४॥

कोई तो कहता है कि, उन दोनों भाइयोंको जीते पकड़ लो. कोई कहता है कि, उनको तो पकड़ कर मार डालो और स्त्रीको छुड़ालो ॥ ३ ॥ कोई कहते है कि सुनो. हम सत्य कहते है. वनमें फिरते है सो कोई वीर हैं ॥ ४ ॥

एकै कहा मुष्ट व्है रहहू ॥ खरके आगे अस जनि कहहू ॥ ५ ॥ ❋
यहि बिधि कहत बचन रणधीरा ॥ आये सकल जहाँ रघुबीरा ॥ ६ ॥ ❋

तब किसीने कहा कि–चुप रहो, खरके आगे कभी ऐसे मत कहना ॥ ५ ॥ इसप्रकार वचन बोलतेहुए वे सब रणधीर राक्षस जहां प्रभु थे वहां आये ॥ ६ ॥

धूरि पूरि नभमण्डल रहेऊ ॥ राम बुलाइ अनुज सन कहेऊ ॥ ७ ॥ ❋
लै जानकिहिँ जाहु गिरिकन्दर ॥ आवा निशिचर कटक भयंकर ॥ ८ ॥

और आकाशमंडल धूलिसे छा गया. तब प्रभुने बुलाकर लक्ष्मणसे कहा कि ॥ ७ ॥ तुम सीताको लेकर पर्वतकी गुफामें चले जाओ; क्योंकि राक्षसोंकी बड़ी भयंकर सेना आगई है ॥ ८ ॥

रहेहु सजग सुनि प्रभुकै बाणी ॥ चले सहित सिय शर धनु पाणी ॥ ९ ॥ ❋
देखि राम रिपुदल चलि आवा ॥ बिहँसि कठिन कोदण्ड चढ़ावा ॥१०॥

सो सचेत रहना. प्रभुकी ऐसी वाणी सुन, सीताको साथ ले, लक्ष्मण हाथमें धनुषबाण लिये चला ॥ ९ ॥ हे गरुड़ ! शत्रुओंकी सेनाको चलीआयी देखकर प्रभुने हंसकर अपना धनुष चढ़ाया ॥१०॥

छंद–कोदण्ड कठिन चढ़ाइ प्रभु शिर जटा बाँधत सोहि क्यों ॥ ❋
मरकत शैलपर लसत दामिनि कोटि सजग भुजंग ज्यों ॥ ❋
कटि कसि निषंग बिशाल भुज गहि चाप बिशिख सुधारिकै ॥ ❋
चितवत मनहुँ मृगराज प्रभु गजराज घटा निहारिकै ॥ १० ॥ ❋

कठोर धनुषको चढ़ाय, शिरपर जटा बांधतेहुए प्रभु कैसी शोभा देते है ? कि मानों मरकत (नील) मणिके पर्वतपर करोड़ों दामिनी दमकती है तिनमें दो सांप लिपटे शोभायमान होते हैं. प्रभुका शरीर है सो तो पर्वतस्थानीय है, जटा बिजुली है, और दो हाथ दो सांप है, कमरमे तरकस कसे है, विशाल भुजामें धनुष और सुधारके बाण लिये हैं. और राक्षसोंकी ओर कैसे देखते है कि मानों मृगराजही गजराजकी घटाको देख रहा है ॥ १० ॥

सोरठा–आय गये बगमेल, धरहु धरहु धाये सुभट ॥ ❋
यथा बिलोकि अकेल, बालरबिहिँ घेरत दनुज ॥ ९ ॥ ❋

सब राक्षस सुभट बगमेल कही घोड़ों आदिकी बागको ढीली छोड़, तुरंग गये है. और 'पकड़ो पकड़ो ऐसे कह कहकर दौड़ते हैं. हे पार्वती ! उसकाल राक्षसोंने प्रभुको कैसे घेर लिया है कि जैसे उदय होते सूर्यको अकेला देखकर, दैत्य घेर लेते हैं ॥ ९ ॥

---

१ मंदेहा नाम दैत्य प्रभातमें सूर्यको घेर लेते हैं वे फिर ब्राह्मणोंके मंत्रोंसे मंत्रित जलसे (अर्घ्यसे) सूर्यको छोड़ देते हैं यह कथा वेदमें प्रसिद्ध है.

घेरि रहे निशिचर समुदाई ॥ दण्डक मृग खग चले पराई ॥ १ ॥ ❋
प्रभु बिलोकि शर सकहिँ न डारी ॥ थकित भये रजनीचर छारी ॥ २ ॥ ❋
राक्षससमुदाय प्रभुको घेर रहे है. दंडक वनके सब पक्षी और पशु पलायमान हो गये है ॥ १ ॥
प्रभुको देखकर कोई राक्षस बाण डाल नहीं सकता है, सब राक्षसवृन्द थकित हो गये है ॥ २ ॥
सचिव बोलि बोले खरदूषण ॥ यह कोउ नृपबालक नरभूषण ॥ ३ ॥ ❋
सुर नर नाग असुर मुनि जेते ॥ देखे सुने हते हम केते ॥ ४ ॥ ❋
तब खर दूषणने अपने मंत्रीको बुलाकर कहा कि–मनुष्योंमे अलंकाररूप यह पुरुष कोई राजपुत्र मालूम होता है ॥ ३ ॥ जगत्मे जितने देवता, मनुष्य, नाग, दैत्य और मुनि है वे सब हमने कितनेही देखे है. सुने हैं, और मारे है ॥ ४ ॥

हम भरि जन्म सुनहु सब भाई ॥ देखी नहिँ असि सुन्दरताई ॥ ५ ॥ ❋
यद्यपि भगिनिहिँ कीन्ह कुरूपा ॥ बधलायक नहिँ पुरुष अनूपा ॥ ६ ॥ ❋
हे सब भाई ! सुनो. हमने जन्मभरमें ऐसी सुन्दरता तो कहीं नहीं देखी है ॥ ५ ॥ यदपि इसने मेरी बहिनको विरूप किया है तोभी यह अनुपम पुरुष मरनेके योग्य नहीं है ॥ ६ ॥
देहु तुरत निजनारि दुराई ॥ जीवत भवन जाहु दोउ भाई ॥ ७ ॥ ❋
मोर कहा तुम ताहि सुनावहु ॥ तासु बचन सुनि आतुर आवहु ॥ ८ ॥ ❋
सो तुम इसके पास जाकर ऐसे कहो कि–तुमने जो अपनी स्त्री छिपाई है सो हमें दे दो और तुम दोनों जीते अपने घर चले जाओ ॥ ७ ॥ मेरे कहे समाचार उनको सुनाओ और उसके वचन सुनाकर पीछे तुरत मेरे पास आओ ॥ ८ ॥

दोहा–भये कालबश मूढ़ सब, जानहिँ नाहिँ रघुबीर ॥ ❋
मशक फूंक किमि मेरु उड़, सुनहु गरुड़ मतिधीर ॥ २८ ॥ ❋
हे धीरबुद्धि गरुड़ ! सुनो. वे सब मूर्ख कालके वश हो गये थे. प्रभुको नहीं जानते थे. अतएव उनका ऐसा विचार था, परंतु यह कभी होना है ? क्या मच्छरकी फूंकसे सुमेरु गिरि उड़ सकता है ? ॥ २८ ॥
दूतन कहा रामसन जाई ॥ सुनत राम बोले मुसुकाई ॥ १ ॥ ❋
आजु भयो बड़भाग हमारा ॥ तुम्हरे प्रभु अस कीन्ह बिचारा ॥ २ ॥ ❋
हे गरुड़ ! दूतोंने जाकर प्रभुसे कहा सो सुन. प्रभुने मुसुकराकर कहा कि– ॥ १ ॥ आज हमारा बड़ा भाग्य हुआ कि जो तुम्हारे मालिकने ऐसा विचार किया ॥ २ ॥

हम क्षत्री मृगया बन करहीं ॥ तुमसे खल मृग खोजत फिरहीं ॥ ३ ॥ ❋
रिपु बलवन्त देखि नहिँ डरहीं ॥ एकबार कालहु सन लरहीं ॥ ४ ॥ ❋
हम जातिके क्षत्रिय हैं. वनमें शिकार करते हैं. और तुम्हारे जैसे दुष्ट पशुओंको ढूंढते फिरते है ॥ ३ ॥ जो बलवान् शत्रुको देखते है तोभी डरते नहीं है. एकबेर तो कालसेभी लड़ते हैं ॥ ४ ॥

यद्यपि मनुज दनुजकुलघातक ॥ मुनिपालक खलशालक बालक ॥ ५ ॥ ❋
जो न होइ बल घर फिरि जाहू ॥ समर बिमुख मैं हतौं न काहू ॥ ६ ॥ ❋

यदपि हम मनुष्य है तथापि राक्षसोंके कुलके नाश करनेवाले, दुष्टोंके शासनेवाले और मुनिलोगोंके पालनेवाले बालक हैं ॥ ५ ॥ अब तुम अपने स्वामीसे जाकर कह दो कि, जो उसमें पराक्रम न होवे तो अपने घरको पीछा लौट जाय; क्योंकि मैं युद्धसे विमुख किसी पुरुषको नहीं मारता ॥ ६ ॥

रण चढ़ि करिय कपट चतुराई ॥ रिपुपर कृपा परम कदराई ॥ ७ ॥ ❀
दूतन जाइ तुरत सब कहेऊ ॥ सुनि खरदूषण उर अति दहेऊ ॥ ८ ॥ ❀

देखो युद्धकी रीति क्या है कि संग्राममें चढ़कर, कपट और चतुराई करनी चाहिये. शत्रुपर जो कृपा करनी है सो तो कायरताई है ॥ ७ ॥ हे गरुड़ ! दूतोंने जाकर तुरंत ये सब समाचार कहे सो सुन, खर दूषण हृदयमें अतिशय जल उठे ॥ ८ ॥

छंद–उर दहेउ कहेउ कि धरहु धावहु, बिकट भट रजनीचरा ॥ ❀
शर चाप तोमर शक्ति शूल, कृपाण परिघ परशूधरा ॥ ❀
प्रभु कीन्ह धनुष टँकोर प्रथम, कठोर घोर भयो महा ॥ ❀
भये बधिर ब्याकुल यातुधान न ज्ञान तेहिँ अँवसर रहा ॥ ११ ॥ ❀

हृदयमें प्रज्वलित होकर उन्होंने राक्षसोंसे कहा कि–हे विकट राक्षसोंके सुभटो ! जाओ, जल्दी पकड़ो और मारो. ऐसे कहतेही तो तीर, धनुष, भाला, शक्ति, त्रिशूल, तलवार, परिघ और परशु धरे हुए राक्षस चले. तब प्रभुने प्रथम धनुषका टंकार शब्द किया. जिस कठोर घोर शब्दसे सब राक्षस बहिरे और व्याकुल हो गये. उसकाल उनको कुछभी सुध न रही ॥ ११ ॥

दोहा–सावधान होय धाये, जानि सबल आराति ॥ ❀
लागे बरषन रामपर, अस्त्र शस्त्र बहुभांति ॥ २९ ॥ ❀

तब शत्रुको सबल जानकर, सब सावधान हो दौड़े और प्रभुपर अनेक प्रकारके शस्त्र अस्त्र बरसाने लगे ॥ २९ ॥

तिन्हके आयुध तृणसम, करि काटे रघुबीर ॥ ❀
तानि शरासन श्रवणलगि, पुनि छांड़े निज तीर ॥ ३० ॥ ❀

प्रभुने उनके शस्त्र तृणके समान काट गिराये और फिर कानलों धनुषको तान अपने बाण चलाये ॥ ३० ॥

तोमरछंद–तब चले बाण कराल, फुंकरत जनु बहु ब्याल ॥ ❀
कोपेउ समर श्रीराम, चले बिशिख निशित निकाम ॥ ❀
अवलोकि खरतर तीर, मुरि चले निशिचर बीर ॥ ❀
एक एक कहँ न संभार, कर तात मातु पुकार ॥ १२ ॥ ❀

तब विकराल बाण ऐसे चले कि मानो फुंकारतेहुए बहुतसे सांप ही चले हैं. श्रीरामचन्द्रजीने समरके बीच कोप किया और अतिशय तीक्ष्ण बाण चले तिन अति कठोर बाणोंको देखकर, राक्षसबीर संग्राममेंसे पीछे मुरकर भाग चले हैं. एक एकको सम्हालता नहीं है. हे तात ! हे मात ! ऐसे पुकारते हैं ॥ १२ ॥

कोउ कहै खर कह कीन्ह, जो युद्ध इनसन लीन्ह ॥ ❋
ये बाण अतिहि कराल, ग्रसे आइ मानहुँ काल ॥ ❋
भये क्रुद्ध तीनों भाइ, जो भागि रणते जाइ ॥ ❋
तेहि बधब हम निज पानि, फिरे मरण मन महँ ठानि ॥ १३ ॥

कोई कहता है कि–खरने यह क्या किया ? जो इसन युद्ध लिया. ये बाण ऐसे अतिप्रचंड है कि, मानों कालकोभी आकर कवल करते है. यह सुन, खर दूषण और त्रिशिरा ये तीनों भाई अति क्रोधकर बोले कि, जो रणसे भाग जायगा उसे हम अपने हाथसे मारडालेंगे यह सुन, मनमें मरण विचार सब पीछे फिरे ॥ १३ ॥

दोहा–उमा एक निज प्रभुहि बश, पुनि इनके बड़भाग ॥ ❋
तरण चहहिं प्रभु शर लगे, बिना योग जप याग ॥ ३१ ॥ ❋

हे पार्वती ! एक तो अपने प्रभु (खर) की आज्ञा और दूसरा इनका बड़ा भाग्य तिससे वे राक्षस योग, जप और यज्ञ विना किये प्रभुके बाण लगनेसे तिरना चाहते है ॥ ३१ ॥

तोमरछंद–आयुध अनेक प्रकार, सन्मुख ते कराहिं प्रहार ॥ ❋
रिपु परम कोपे जानि, प्रभु धनुष शर संधानि ॥ ❋
छाँड़े बिपुल नाराच, लगे कटन बिकट पिशाच ॥ ❋
उर शीश कर भुज चरण, जहँ तहँ लगे महि परन ॥ १४ ॥ ❋

अनेक प्रकारके शस्त्र ले सन्मुख आ, वे प्रहार करते है तिन्हे देख, शत्रुओंको कुपित जान, प्रभुने धनुषमें शरसंधान कर, असंख्यात बाण चलाये. जिनसे वे विकट पिशाच कटने लगे है और छाती, शिर, हाथ भुजा और पांव जहां तहां पृथ्वीपर पड़ने लगे है ॥ १४ ॥

चिक्करत लागत बाण, धर परत कुधर समान ॥ ❋
भट कटत तन शतखंड, पुनि उठत करि पाखंड ॥ ❋
नभ उड़त बहु भुज मुंड, बिनु मौलि धावत रुण्ड ॥ ❋
खग कंक काक शृगाल, कटकटाहिं कठिन कराल ॥ १५ ॥ ❋

बाण लगतेही राक्षस चिक्करते है और पेड़की भांति धरतीपर गिरते है. सुभटोंके शरीर कट कटकर सौ सौ टुकड़े होते हैं तौभी वे फिर पाखंड करके उठते है. बहुतसी भुजा और मुंड आकाशमें उड़ते हैं. विना मुंड रुंड इधर उधर दौड़ते है. लोथोंपर बैठे पक्षी, कंक, काक, और सियार बड़ी कठिन रीतिसे भयावने कटकटाते हैं ॥ १५ ॥

छंद–कटकटाहिं जम्बुक भूत प्रेत, पिशाच खप्पर साजहीं ॥ ❋
बैताल बीर कपाल ताल, बजाइ योगिनि नाचहीं ॥ ❋
रघुबीर बाण प्रचण्ड खण्डहि, भटनके उर भुज शिरा ॥ ❋
जहँ तहँ परहिं उठि लरहिं, धरु धरु करहिं सकल भयंकरा ॥ १६ ॥ ❋

स्यार कटकटाते है. भूत, प्रेत और पिशाच ये खप्पर तयार करते है, बैताल बीर खप्परके ताल बजाते है, योगिनियां नाचती है और प्रभुके प्रचंड बाण सुभटोंके वक्षःस्थल भुजा और सिर खंड खंड करते है जहां तहां राक्षस पडते है. उठते है. लडते हैं. 'पकड़ो पकड़ो' शब्द करते है ॥ १६ ॥

अंत्रावली गहि उड़हिँ गृध्र पिशाच कर गहि धावहीं॥ ❃
संग्राम पुरबासी मनहुँ बहु बाल गुड़ि उड़ावहीं ॥ ❃
मारे पछारे उर बिदारे बिपुल भट घुर्मित परे॥ ❃
अवलोकि निजदल बिकल भट त्रिशिरादि खर दूषण फिरे ॥ १७ ॥ ❃

गिद्ध अंत्रावलिको धरकर उड़ते है, पिशाच हाथ पकड़के दौड़ते है. हे गरुड़ ! संग्राम क्या हुआ है? मानो पुरवासी बहुतसे बालक पतंगही उड़ाते है. राक्षसोंको पकड़ पकड़के पिशाच मारते है. पछाड़ते है. वक्षःस्थल विदारते है और बहुतसे घूर्मित हो पृथ्वीपर पड़े है. ऐसे अपनी सेनाको विकल हुई देख, त्रिशिरा आदि सुभट और खर दूषण युद्धभूमिकी ओर फिरे ॥ १७ ॥

शर शक्ति तोमर परशु शूल कृपाण एकहिँ बारहीं ॥ ❃
करि कोप श्रीरघुबीर पर अगणित निशाचर डारहीं ॥ ❃
प्रभु निमिषमहँ रिपुशर निवारि प्रचारि डारे सायका ॥ ❃
दश दश बिशिख उरमांझ मारे सकल निशिचर नायका ॥ १८ ॥ ❃

राक्षस कोपकर प्रभुके ऊपर एक साथ बाण, शक्ति, भाला, परशु, शूल और तलवार आदि असंख्यात शस्त्र डालते है. प्रभुने एक क्षणभरमें प्रचार कर शत्रुओंके सब शस्त्र और बाण निवार दिये हैं और सब राक्षस यूथपतियोंके हृदयमें दश दश बाण लगाये है ॥ १८ ॥

महि परत उठि भट फिरत पुनि पुनि करत माया अतिघनी ॥ ❃
सुर डरत चौदह सहस निशिचर एक श्रीरघुकुलमनी ॥ ❃
सुर मुनि सभय प्रभु देखि मायानाथ अतिकौतुक करे ॥ ❃
देखत परस्पर राम करि संग्राम रिपुदल लरि मरे ॥ १९ ॥ ❃

बाणोंके प्रहारसे राक्षस पृथ्वीपर पड़ते हैं; उठते है और फिर फिरकर अनेक माया करते है. देवता उधर तो चौदह हजार राक्षस और इधर श्रीरामचन्द्रजीको इकले देख मनमें डरपते है. देवता और मुनि लोगोंको भयभीत देख, मायापति प्रभुने बड़ा कौतुक किया जिससे सब राक्षस परस्परमें रामको देखने लगे अर्थात् वे जिस राक्षसको देखते है उसीको रामरूप देखते हैं और उनसे संग्राम करते है ऐसे सब शत्रुकी सेना आपसमें लड़कर मर गई ॥ १९ ॥

दोहा-राम राम करि तन तजहिं, पावहिँ पद निर्बान ॥ ❃
करि उपाय रिपु मारेउ, क्षणमहँ कृपानिधान ॥ ३२ ॥ ❃

हे गरुड़ ! वे जिसको देखते हैं उसीको 'यही राम है, यही राम है' ऐसे कर करके राक्षस शरीरको त्यागते हैं और मोक्षको पाते हैं. ऐसे उपाय कर कृपानिधि प्रभुने एक क्षणभरमें सब शत्रुओंक संहार कर डाला ॥ ३२ ॥

हर्षित बर्षहिँ सुमन सुर, बाजहिँ गगन निशान ॥ ❃

अस्तुति करि करि सब चले, शोभित विविध बिमान ॥ ३३ ॥ ❋

देवता हर्षित हो फूल बरसाते हैं. आकाशमें बाजे बाजते हैं और सब देवता भांति भांतिके विमानोंमें बैठ स्तुति कर करके शोभा देते चाले जाते हैं ॥ ३३ ॥

जब रघुनाथ समर रिपु जीते ॥ सुर नर मुनि सबके दुख बीते ॥ १ ॥ ❋
तब लक्ष्मण सीतहिं लै आये ॥ प्रभुपद परत हर्ष हिय लाये ॥ २ ॥ ❋

जब प्रभुने संग्राममें राक्षसोंको जीते तब देवता मुनि और मनुष्य इन सबके दुःख बीत गये ॥१॥ और लक्ष्मण सीताको ले गुफासे बाहिर आया और पावोंमें पड़ा. प्रभुने उठाकर आनंदके साथ छातीसे लगाया ॥ २ ॥

सीता निरखि शाम मृदु गाता ॥ परम प्रेम लोचन न अघाता ॥ ३ ॥ ❋
पंचबटी बसि श्रीरघुनायक ॥ करत चरित सुर मुनि सुखदायक ॥ ४ ॥ ❋

सीता प्रभुके कोमल श्याम सुन्दर स्वरूपको निरख, बड़ी प्रसन्न हुई उसके नेत्र दर्शन करते तृप्त नहीं हुए ॥ ३ ॥ हे गरुड़ ! प्रभु पंचवटीमें विराजते है और देवता व मुनिलोगोंको सुख हो ऐसे चरित्र करते हैं ॥ ४ ॥

धुआं देखि खर दूषण केरा ॥ शूर्पणखा तब रावण प्रेरा ॥ ५ ॥ ❋
बोली बचन क्रोध करि भारी ॥ देश कोशकी सुरति बिसारी ॥ ६ ॥ ❋

हे पार्वती ! खर दूषणका विध्वंस हुआ देख, शूर्पणखाने जाकर रावणको प्रेरणा करी ॥ ५ ॥ भारी क्रोध करके वह राक्षसी बोली कि, तू तो देश व कोष (खजाने) की सुध भूलकर ॥ ६ ॥

करसि पान सोवसि दिनराती ॥ सुधि न तोहिं शिरपर आराती ॥ ७ ॥ ❋
राजनीति बिनु धन बिनु धर्मा ॥ हरिहिं समर्पे बिनु सतकर्मा ॥ ८ ॥ ❋

मजेमें मदिरा पीता है और रात दिन सोया रहता है. तुझे शिरपर शत्रु आगया है जिसकी भी खबर नहीं है ॥ ७ ॥ हे राजा ! हमने नीतिमें ऐसा सुना है कि, नीति विना राज नहीं रहता. धन विना धर्म नहीं हो सकता. हरिको अर्पण किये विना सत्कर्म नहीं हो सकते ॥ ८ ॥

विद्या बिनु बिवेक उपजाये ॥ श्रमफल पढ़े किये अरु पाये ॥ ९ ॥ ❋
संगते यती कुमन्त्रते राजा ॥ मानते ज्ञान पानते लाजा ॥ १० ॥ ❋
प्रीति प्रणय बिनु मदते गुनी ॥ नाशहिं बेगि नीति अस सुनी ॥ ११ ॥ ❋

विद्याविन विवेक नहीं होता और गाकर पाठ करनेसे पाठका फल केवल श्रमही है ॥ ९ ॥ हे राजा ! संगसे संन्यासी, कुमंत्र यानी खोटी सलाहसे राजा, मानसे ज्ञान, मद्यपानसे लाज ॥ १० ॥ प्रणयबिना प्रीति, और मद (अभिमान) से गुणी ये तुरंत नाश हो जाते हैं ॥ ११ ॥

सोरठा–रिपु रुज पावक पाप, प्रभु इन्ह गणिय न छोट करि ॥ ❋
अस कहि बिबिध बिलाप, करि लागी रोदन करन ॥ १० ॥ ❋

हे राजा ! शत्रु, रोग, अग्नि और पाप इनको छोटा करके नहीं समझना चाहिये. ऐसे कह, वह राक्षसी अनेक प्रकारसे विलाप कर, रुदन करने लगी ॥ १० ॥

दोहा–सभा मांझ व्याकुल परी, बहु प्रकार कह रोई ॥ ❀
तोहिं जियत दशकन्धर, मोरि कि अस गति होई ॥ ३४ ॥ ❀

और व्याकुल हो सभाके बीच गिर पड़ी; तथा बहुत प्रकारसे रोरोकर कहने लगी कि–हे रावण! तेरे जीतेजी क्या मेरी ऐसी दशा होवे ? ॥ ३४ ॥

सुनत सभासद उठे अकुलाई ॥ समुझाई गहि बांह बिठाई ॥ १ ॥ ❀
कह लंकेश कहसि निजबाता ॥ केइ तव नासा कान निपाता ॥ २ ॥ ❀

यह सुनतेही तौ सभासदोंने अकुलाके उठ, समझाकर बांह पकड़के बिठाई ॥ १ ॥ तब रावणने शूर्पणखासे कहा कि–तू अपनी बात कह कि, तेरे नाक कान किसने काटे ? ॥ २ ॥

अवध नृपति दशरथके जाये ॥ पुरुषसिंह बन खेलन आये ॥ ३ ॥ ❀
समुझि परी मोहिं उनकी करणी ॥ रहित निशाचर करिहैं धरणी ॥ ४ ॥ ❀

तब शूर्पणखाने कहा कि–हे राजा ! अयोध्याके राजा दशरथके पुत्र वनमें खेलनको आये हैं, जो पुरुषोंमें सिंहरूप हैं ॥ ३ ॥ मुझे उनका कर्तव्य ऐसा दीखता है कि, वे पृथ्वीको राक्षसरहित कर डालेंगे ॥ ४ ॥

जिनकर भुजबल पाइ दशानन ॥ अभय भये मुनि बिचरहिं कानन ॥ ५ ॥
देखत बालक कालसमाना ॥ परम धीर धन्वी गुण नाना ॥ ६ ॥ ❀

हे रावण ! जिनके भुजबलको पाकर, मुनिलोग निर्भय हो, वनमें विचरते है ॥ ५ ॥ वे देखते तौ बालक दीखते है, परंतु है कालके समान. हे राजा ! वे बड़े धीर है. धनुष धारण किये है. उनमें अनेक गुण विद्यमान है ॥ ६ ॥

अतुलित बलप्रताप दोउ भ्राता ॥ खल बध रत सुर मुनि सुखदाता ॥ ७ ॥
शोभा धाम राम अस नामा ॥ तिन्हके सँग इक नारि ललामा ॥ ८ ॥ ❀

दोनोंही भाइयोंका बल और प्रताप अतोल है. वे दुष्टोंका संहार करनेमें परायण है. देवता और मुनिलोगोंके सुख देनेवाले है ॥ ७ ॥ शोभाके धाम है. 'राम' ऐसा नाम है. उनके संग एक सुन्दर रूपवती स्त्री है ॥ ८ ॥

सोरठा–अति सुकुमारि पियारि, पटतर योग न आहि कोउ ॥ ❀
मैं मन दीख बिचारि, जहँ रह तेहिसम आन नहीं ॥ ११ ॥ ❀

वह सुकुमारी रामको अति प्रिय है. उसको उपमा देनेके योग्य जगतमें कुछभी नहीं है. हे राजा ! मैंने उसे देखकर मनमें विचार किया कि, जिसके पास यह स्त्रीरत्न है उसके समान जगतमें दूसरा कोई नहीं है ॥ ११ ॥

रूपराशि विधि नारि सँवारी ॥ रति शतकोटि तासु बलिहारी ॥ १ ॥ ❀
अजहुं जाय देखब तुम जबहीं ॥ होइहौ बिकल तासु बश तबहीं ॥ २ ॥ ❀

विधाताने वह स्त्री मानों रूपकी ढेरही सँवारके बनाई है. शतकोटी रति (कामदेवकी स्त्री) उसकी न्यौछावर है ॥ १ ॥ अबभी तुम जाकर जब उसे देखोगे तौ उसीक्षण विकल होकर उसके वश हो जाओगे ॥ २ ॥

जीवन मुक्ति लोक बश ताके ॥ दशमुख सुनु सुन्दरि अस जाके ॥ ३ ॥ ❀
तासु अनुज काटी श्रुति नासा ॥ सुनि तब भगिनीकर परिहासा ॥ ४ ॥ ❀

हे रावण ! सुनो, जिसके ऐसी कामिनी है उसके जीवन्मुक्ति और सब लोग आधीन हैं ॥ ३ ॥ उसके एक छोटा भाई है. जिसने मेरे नाक कान काटे हैं. तेरी बहन सुनकर, उन्होंने यह उपहास किया है ॥ ४ ॥

बिन अपराध अस हास हमारी ॥ अपराधी किमि बचहिँ सुरारी ॥ ५ ॥ ❀
खर दूषण सुनि लगे पुकारा ॥ क्षणमहँ सकल कटक उन मारा ॥ ६ ॥ ❀

हे देवतानके वैरी ! बिना अपराध जब हमारी ऐसी हांसी करी है तौ अपराधी उनके हाथसे कैसे बच सकते हैं ? ॥ ५ ॥ खर दूषण मेरी बात सुन पुकार करने लगे तौ एक क्षणभरमें सब कटकको मार गिराया ॥ ६ ॥

खर दूषण त्रिशिराकर घाता ॥ सुनि दशशीश जरे सब गाता ॥ ७ ॥ ❀
भयो शोचबश नहिँ बिश्रामा ॥ बीतहिँ पल मानहुँ शतयामा ॥ ८ ॥ ❀

हे गरुड़ ! खर दूषण और त्रिशिराका मरण सुन, रावणके सब अंग जलने लगे ॥ ७ ॥ रावण शोचके वश हो गया, विश्राम जाता रहा और एक एक पल मानों सौ सौ प्रहरके समान बीतने लगा ॥ ८ ॥

दोहा–शूर्पणखहिं समुझाइ करि, बल बोलेसि बहु भांति ॥ ❀
भवन गयउ अति शोचबश, नींद परी नहिँ राति ॥ ३५ ॥ ❀

हे पार्वती ! वह खल रावण शूर्पणखाको समझाय, बहुत प्रकारसे अपने बलका वृत्तांत कह, घरमें गया; परंतु शोचबश होनेसे उसको रातमें नींद नहीं आई ॥ ३५ ॥

सुर नर असुर नाग जगमाहीं ॥ मोरे अनुचरसम कोउ नाहीं ॥ १ ॥ ❀
खर दूषण मोसम बलवंता ॥ तिन्हैं को मारै बिनु भगवन्ता ॥ २ ॥ ❀

रावण मनमें विचार करता है कि–देवता, दैत्य, मनुष्य और नाग जो जगतमें हैं उनमेंसे कोईभी मेरे नौकरोंके बराबरभी नहीं है ॥ १ ॥ और खर दूषण तौ मेरे जैसे बड़े बलवान् हैं. उनको परमेश्वरके विना दूसरा मारनेवाला कौन है? ॥ २ ॥

सुररंजन भंजन महिभारा ॥ जो जगदीश लीन्ह अवतारा ॥ ३ ॥ ❀
तौ मैं जाइ बैर हठ करिहौं ॥ प्रभुशरते भवसागर तरिहौं ॥ ४ ॥ ❀

यदि देवताओंको आनंद देनेवाले, भूमिका भार उतारनेवाले, परमेश्वरनेही अवतार लेलिया है ॥ ३ ॥ तब तौ मैं जाकर, उनसे हठात् बैर करूंगा; क्योंकि प्रभुके बाणसे भवसागरसे पार उतरूंगा ॥ ४ ॥

होइ भजन नहिँ तामसदेहा ॥ मन क्रम बचन मन्त्र दृढ़ एहा ॥ ५ ॥ ❀
जो नररूप भूपसुत कोऊ ॥ हरिहौं नारि जीति रण दोऊ ॥ ६ ॥ ❀

इस तामसशरीरसे भजन तौ बन नहीं सकता इसलिये मन वचन कर्मसे यही सलाह पक्की है ॥ ५ ॥ और यदि कोई मनुष्यरूप राजकुमार है तौ उसकी स्त्रीको तौ हर लूंगा और उसे युद्धमें जीत लूंगा. इसमें दोनों बातें बन जायंगी ॥ ६ ॥

चला अकेल यान चढ़ि ताहां ॥ बस मारीच सिंधुतट जाहां ॥ ७ ॥ ❋
रथ अनूप जोरे खर चारी ॥ बेगवन्त इमि जिमि उरगारी ॥ ८ ॥ ❋

ऐसा विचार कर रावण इकला रथपर चढ़, समुद्रके तटपर वहां गया कि, जहां मारीच रहता था ॥ ७ ॥ हे गरुड़ ! रावणने रथके चार अत्युत्तम गधे जोरे है. जिनका बेग गरुड़के समान है ॥ ८ ॥

छंद—उरगारि सम अतिबेग बरणत जाय नहिँ उपमा कही ॥ ❋
शिर छत्र शोभित श्याम घन जनु चमर श्वेत विराजही ॥ ❋
यहि भांति नांघत सरित शैल अनेक बापी सोहहीं ॥ ❋
बन बाग उपवन बाटिका शुचि नगर मुनिमन मोहहीं ॥ २० ॥ ❋

हे पार्वती ! गरुड़के जैसा गधोंका अति तीव्र बेग है जिनकी उपमा कहनेमें नहीं आती है. रावण-का श्याम घटाकासा काला बरन है, शिरपर छत्र और श्वेत चँवर शोभायमान लगते है. इस प्रकार अनेक नदियां, पर्वत, बावलियां, वन, बाग, बगीचे, वारी और पवित्र नगरोंको लांघता रावण जाता शोभा देता है; जिन स्थलोंको देखकर, मुनिलोगोंके मन मोहित होते है ॥ २० ॥

दोहा—बहु तडाग शुचि विहँग मृग, बोलत बिबिध प्रकार ॥ ❋
यहिबिधि आयउ सिंधुतट, शतयोजन बिस्तार ॥ ३६ ॥ ❋

तालावोंपर अनेक पवित्र पक्षी और पशु अनेक प्रकारसे बोल रहे है. ऐसे आकाशमेंसे सब पदार्थों-को देखता वह राक्षस सौ योजन विस्तारवाले समुद्रके तटपर आया ॥ ३६ ॥

सुन्दर जीव बिबिधि बिधि जाती ॥ करहिँ कुलाहल दिन अरु राती ॥ १ ॥
कूदहिँ ते गरजहिँ घननाई ॥ महाबली बल बरणि न जाई ॥ २ ॥ ❋

जहां जाति जातिके मनोहर जीव जन्तु रातदिन कोलाहल कर रहे है ॥ १ ॥ कूदते हैं, गरजते है और घननाते है. बड़े बलवान् हैं. जिनका बल वर्णन करनेमें नहीं आता है ॥ २ ॥

कनक बालु सुन्दर सुखदाई ॥ बैठहिँ सकल जन्तु तहँ आई ॥ ३ ॥ ❋
तिहिँ पर दिव्य लता तरु लागे ॥ जिहिँ देखत मुनिमन अनुरागे ॥ ४ ॥❋

तटपर सोनेकी सुन्दर सुखदायी बारू बिछी है; तिसपर आ आकर, सब जीव जन्तु बैठते हैं ॥ ३ ॥ वहां अच्छे दिव्य वृक्ष और लता लगी हुई हैं. जिन्हें देख मुनि जनोंके मन मोहित होते हैं ॥ ४ ॥

गुहा बिबिधि बिधि रहहिँ बनाई ॥ बरणत शारद मन सकुचाई ॥ ५ ॥ ❋
चाहिय जहां ऋषिनकर बासा ॥ तहां निशाचर करहिँ निवासा ॥ ६ ॥❋

अनेक प्रकारकी गुफायें बन रही हैं जिनका वर्णन करते शारदाका मन सकुचाता है ॥ ५ ॥ हे पार्वती ! जहां मुनिलोगोंका निवास होना चाहिये वहां राक्षस लोक रहते हैं ॥ ६ ॥

दशमुख देखि सकल सकुचाने ॥ जे जडजीव सजीव पराने ॥ ७ ॥ ❋
इहां राम जसि युक्ति बनाई ॥ सुनहु उमा सो कथा सुहाई ॥ ८ ॥ ❋

हे भवानी ! रावणको देखतेही सब जीव सकुचा गये और जितने जड़ चेतन जीव थे वे सब भाग गये ॥ ७ ॥ हे पार्वती ! इहां रामचन्द्रने जो सुन्दर युक्ति बनाई वह मैं कहता हूं सो सुनो ॥ ८ ॥

दोहा–लक्ष्मण गये बनहिं जब, लेन मूल फल कन्द ॥ ❀
जनकसुता सन बोलेऊ, बिहँसि कृपासुखकन्द ॥ ३७ ॥ ❀

जब लक्ष्मण कंद मूल फल लेने गया तब कृपाके सागर आनन्दकन्द रामचंद्र हंसकर सीतासे बोले कि– ॥ ३७ ॥

सुनहु प्रिया व्रत रुचिर सुशीला ॥ मैं कछु करब ललित नरलीला ॥ १ ॥❀
तुम पावकमहँ करहु निवासा ॥ जब लगि करौं निशाचर नासा ॥ २ ॥❀

हे सुंदर व्रतवाली ! सुशील प्रिया ! सुनो. मैं कुछ मनोहर मनुष्यलीला करूंगा ॥ १ ॥ इसलिये तुम जबलों मैं राक्षस (रावण) का नाश करूं तबलों अग्निमें निवास करो ॥ २ ॥

जबहिं राम सब कहेउ बखानी ॥ प्रभुपद धरि हिय अनलसमानी ॥ ३ ॥
निज प्रतिबिम्ब राखि तहँ सीता ॥ तैसेइ शील स्वरूप बिनीता ॥ ४ ॥ ❀

जब प्रभुने सारी कथा बखानकर कही तो सीता प्रभुके चरणकमल हृदयमें धर अग्निमें समा गई ॥ ३ ॥ और अपना प्रतिबिंब वहां आश्रममें रख छोड़ा जो स्वरूप वैसाही शीलवान् और विनीत था ॥ ४ ॥

लक्ष्मणहूँ यह मर्म न जाना ॥ जो कछु चरित रचा भगवाना ॥ ५ ॥ ❀
दशमुख गयउ जहां मारीचा ॥ नाइ माथ स्वारथरत नीचा ॥ ६ ॥ ❀

हे पार्वती ! प्रभुने जो कुछ चरित्र किया उसका भेद लक्ष्मणनेभी न पाया ॥ ५ ॥ हे पार्वती ! महानीच और स्वार्थपरायण रावणने मारीचके पास जाकर प्रणाम किया ॥ ६ ॥

नवनि नीचकी अति दुखदाई ॥ जिमि अंकुश धनु उरग बिलाई ॥ ७ ॥❀
भयदायक खलकी प्रियबानी ॥ जिमि अकाशके कुसुम भवानी ॥ ८ ॥❀

कवि कहता है कि–नीचका नमना बड़ा दुखदाई होता है. देखिये– जैसे अंकुश, धनुष्य, सांप और बिलाई ये सब अपना नवकर निकालते है कि जिससे दूसरेको दुःख होता है ॥ ७ ॥ हे पार्वती ! खल पुरुषकी प्रिय बानीभी भयकारकही होती है. जैसे कि आकाशके फूल यानी तारानका टूटना ॥ ८ ॥

दोहा–करि पूजा मारीच तब, सादर पूंछी बात ॥ ❀
कवनहेतु मन व्यग्र अति, अकसर आयउ तात ॥ ३८ ॥ ❀

जब रावण आश्रममें आया तो मारीचने आदरके साथ सत्कार व पूजा कर बात पूंछी कि–हे तात ! आपका मन अति व्याकुल दीखता है सो कहो आप अकेले क्यों आये हो ? ॥ ३८ ॥

दशमुख सकलकथा तेहि आगे ॥ कही सहित अभिमान अभागे ॥ १ ॥
होहु कपटमृग तुम छलकारी ॥ जेहि बिधि हरि आनौं नृपनारी ॥ २ ॥❀

तब हतभाग्य रावणने अभिमानके साथ सब कथा मारीचके आगे कही ॥ १ ॥ और फिर बोला कि–हे मारीच ! तुम बड़े छली हो सो मायामृग बनो कि, जिस प्रकार मैं राजा रामकी रानीको हर ले आऊं ॥ २ ॥

तेहि पुनि कहा सुनहु दशशीशा ॥ ते नररूप चराचर ईशा ॥ ३ ॥ ❋
तासों तात बैर नहिँ कीजै ॥ मारे मरिय जियाये जीजै ॥ ४ ॥ ❋

यह सुन मारीचने रावणसे कहा कि–हे रावण ! सुन, जिसको तू मनुष्य मानता है वह साक्षात् चराचरका स्वामी है ॥ ३ ॥ इसलिये हे तात ! तू उससे बैर मत कर; क्योंकि, उसके मारनेसे तो यह सारा संसार मरता है और जिवानेसे जीवता है ॥ ४ ॥

मुनिमख राखन गयउ कुमारा ॥ बिनफर शर रघुपति मोहिँ मारा ॥५॥ ❋
शतयोजन आयउँ क्षणमाहीं ॥ तिन्हसन बैर किये भल नाहीं ॥ ६ ॥ ❋

हे तात ! जब राम कुमारअवस्थाके थे तब विश्वामित्रजीके यज्ञकी रक्षाके लिये पधारे थे, वहां रामने मेरे विनाफलका बाण मारा था ॥ ५ ॥ जिस बाणके लगतेही मैं एकक्षणमें सौ योजनपर जाय पड़ा उनसे बैर करनेपर हे रावण ! अच्छा नहीं होगा ॥ ६ ॥

भइ मति कीटभृङ्गकी नाई ॥ जहँ तहँ मैं देखौं दोउ भाई ॥ ७ ॥ ❋
जो नर तात तदपि अतिशूरा ॥ तिनहिँ बिरोध न पाइहि पूरा ॥ ८ ॥ ❋

मेरे जबसे बाण लगा है तबसे मेरी बुद्धि कीटभृंगकीसी हो गई है. कीटभृंगकी यह रीति है कि भ्रमर कीटको पकड़ अपने बिलमें ला रख देता है.फिर उसके द्वारपर बैठकर गुंजता है तब उस कीटको अष्ट प्रहर चौंसठ घड़ी वो भ्रमरही भ्रमर दीखता है सो दशा मेरी हो गई है. मैं जहां देखता हूं वहां मुझे वे दोनों भाईही दीखते है ॥ ७ ॥ हे तात ! जो तुम इनको मनुष्य करके मानते हो तौभी ये बड़े शूरवीर है इनसे विरोध करके पार नहीं पड़ोगे ॥ ८ ॥

दोहा–जेहि ताड़का सुबाहु अति, खण्डेउ हरकोदण्ड ॥ ❋
खर दूषण त्रिशिरा वधेउ, मनुज कि अस बरवण्ड ॥ ३९ ॥ ❋

हे तात ! जिन्होंने ताड़का और सुबाहुको मार महादेवजीका धनुष तोड़ खर दूषण व त्रिशिराको मारा है. क्या ऐसा बरबंड कोई मनुष्य हो सकता है ? ॥ ३९ ॥

"रा अस नाम सुनत दशकन्धर॥ हरत प्राण नहिँ मम उर अंतर"॥१॥ ❋
जाहु भवन कुलकुशल बिचारी ॥ सुनत जरा दीन्हेसि बहुगारी ॥ २ ॥ ❋

"हे रावण ! " रा " ऐसा नाम सुनतेही मेरे हृदयमें प्राण रह नहीं सकते. " ॥ १ ॥ इसलिये तुम अपने कुलका कुशल विचार कर अपने घर जाओ. मारीचके ये वचन सुन, रावण जल उठा और बहुतसी गालियां दीं ॥ २ ॥

गुरु जिमि मूढ़ करसि मम बोधा ॥ कहु जग मोहिँ समान को योधा ॥ ३ ॥
तब मारीच हृदय अनुमाना ॥ येहिँ बिरोधे नहिँ कल्याना ॥ ४ ॥ ❋

और बोला कि–तू मुझे गुरुकी भांति उपदेश तो करता है पर कह, जगत्में मेरे समानका सुभट कौन है ? ॥ ३ ॥ तब मारीचने अपने मनमें विचार किया कि–इससे विरोध करनेमें अपना कल्याण नहीं है ॥ ४ ॥

शस्त्री मर्मी प्रभु शठ धनी ॥ बैद्य बन्दि कबि कोबिद गुनी ॥ ५ ॥ ❋
उभय भांति देखा निजमरणा ॥ तब ताके रघुनायक शरणा ॥ ६ ॥ ❋

क्योंकि इतने आदियोंसे विरोध कभी नहीं करना चाहिये. शस्त्रधारी, भेदियो, स्वामी, शठ, धनवान्, वैद्य, बन्दी कहे भाट, कवि, पंडित और गुनी ॥ ५ ॥ जब मारीचने दोनों ओरसे अपना मरण जान लिया तब प्रभुकी शरण लेनेको ताका ॥ ६ ॥

उतर देत मोहिँ बधिहि अभागी ॥ कस न मरौं रघुपतिशर लागी ॥ ७ ॥ *
अस जिय जानि दशानन संगा ॥ चला रामपद प्रेम अभंगा ॥ ८ ॥ *
मन अतिहर्ष जनाव न तेही ॥ आजु देखिहौं परम सनेही ॥ ९ ॥ *

मारीचने विचार किया कि–जो मैं इसे उत्तर देऊंगा तो यह अभागा मुझे अवश्य मारेगा तो फिर प्रभुका बाण लगकेही क्यों न मरूं ? ॥ ७ ॥ हे पार्वती ! ऐसे जीमें जान, प्रभुके चरणोंमें अखंड प्रीति रखता रावणके संग संग चला ॥ ८ ॥ यदपि मारीचके मनमें बड़ा हर्ष है पर उसे वह प्रगट नहीं जनाता है. उसके मनमें हर्ष इस बातका है कि, आज मैं मेरे परमस्नेहीके दर्शन करूंगा ॥ ९ ॥

छंद–निज परम प्रीतम देखि लोचन सुफल करि सुख पाइहौं ॥ *
श्रीसहित अनुजसमेत कृपानिकेतपद मन लाइहौं ॥ *
निर्वाणदायक क्रोध जाकर भक्त ऐसहि बश करी ॥ *
निजपाणिशर संधानि सो मोहिँ बधहिँ सुखसागर हरी ॥ २१ ॥ *

आज मैं मेरे परम प्रीतमको निहारकर, मेरे नेत्र सफल कर, परमानंदको प्राप्त होऊंगा. और सीता लक्ष्मणसहित कृपानिधि प्रभुके चरणोंमें मन लगाऊंगा. मारीच कहता है कि–जिन प्रभुका क्रोध मोक्षका देनेवाला है तथा भक्तलोग जिन्हें ऐसही ऐसमें वश कर लेते है, वे सुखसिंधु प्रभु अपने हाथसे बाण संधान करके मुझे मारेंगे ॥ २१ ॥

दोहा–मम पाछे धर धाइहैं, धरे शरासन बान ॥ *
फिरि फिरि प्रभुहिँ बिलोकिहौं, धन्य न मोसन आन ॥ ४० ॥ *

प्रभु धनुषबाण धारण किये मेरे पीछे पृथ्वीपर दौड़ेंगे, और मैं फिरकर प्रभुको निरखूंगा. अहो ! मुझसे बढ़कर दूसरा बड़भाग्य कौन है ? कोई नहीं ॥ ४० ॥

"सीतालषणसहित रघुराई ॥ जेहि बन बसहिँ मुनिन्ह सुखदाई" ॥ १ ॥ *
तेहि बन निकट दशानन गयऊ ॥ तब मारीच कपटमृग भयऊ ॥ २ ॥ *

"सीता और लक्ष्मणके साथ मुनिलोगोंके सुखदायी प्रभु जिस वनमें विराजते हैं" ॥ १ ॥ उस वनके समीप रावण गया. तब मारीच मायासे मृगरूप बना ॥ २ ॥

अति बिचित्र कछु बरणि न जाई ॥ कनकदेहँ मणि रचित बनाई ॥ ३ ॥ *
सीता परम रुचिर मृग देषा ॥ अंग अंग सुमनोहर बेषा ॥ ४ ॥ *

हे पार्वती ! वह हरिण बड़ा विचित्र है. कुछ बरना नहीं जाता है. सुवर्णका शरीर है जिसमें रत्न जड़े हुए हैं ॥ ३ ॥ सीताने उस अति अद्भुत हरिणको देखा कि, जिसका एक एक अंग अति सुन्दर सजा हुआ था ॥ ४ ॥

सुनहु देव रघुबीर कृपाला ॥ येहि मृगकर अति सुन्दर छाला ॥ ५ ॥ *

सत्यसिंधु प्रभु बध करि एही ॥ आनहु चर्म कहति बैदेही ॥ ६ ॥ ❀

हरिणको देख, सीताने प्रभुसे कहा कि—हे दयालु प्रभु ! इस हरिणकी छाला बहुत सुन्दर है इसलिये हे सत्यसिंधु ! प्रभु ! इसको मारकर मुझे इसकी छाला लादेओ ॥ ६ ॥

तब रघुपति जाना सबकारण ॥ उठे हर्षि सुरकाज सँवारण ॥ ७ ॥ ❀
मृग बिलोकि कटि परकर बाँधा ॥ करतल चाप रुचिर शर साँधा ॥८॥ ❀

तब प्रभु उसके सब कारणोंको जान देवताओंका काम संवारनेके लिये प्रीतिपूर्वक उठ खड़े हुए ॥ ७ ॥ हरिणको देखकर प्रभुने कमर कसी और हाथमें धनुष ले, सुन्दर बाणका संधान कर ॥ ८ ॥

प्रभु लक्ष्मणहिँ कहा समुझाई ॥ फिरत बिपिन निशिचर बहु भाई ॥९॥ ❀
सीताकेरि करेहु रखवारी ॥ बुधि बिबेक बल समय बिचारी ॥ १० ॥ ❀

लक्ष्मणसे समझाकर कहा कि—हे भाई ! बनमें कई राक्षस फिरते है ॥ ९ ॥ सो तुम बुद्धि, विवेक, बल और समयको विचार कर, सीताकी रक्षा करना ॥ १० ॥

दोहा—अस कहि चले तहां प्रभु, जहां कपटमृग नीच ॥ ❀
देव हर्ष बिस्मय बिबश, चातक बर्षा बीच ॥ ४१ ॥ ❀

ऐसे कहकर प्रभु वहां चले कि, जहां वह नीच मायामृग था. उस हरिणको देखकर प्रभु कैसे विस्मित और हर्षयुक्त होते है ? कि, जैसे वर्षाऋतुमें पपीहा आनंदयुक्त होता है ॥ ४१ ॥

प्रभुहिँ बिलोकि चला मृग भाजी ॥ धाये राम शरासन साजी ॥ १ ॥ ❀
निगम नेति शिव ध्यान न पावा ॥ मायामृग पाछै सो धावा ॥ २ ॥ ❀

प्रभुको देखकर, हरिण भागचला. तब प्रभु धनुषको सज उसके पीछे दौड़े ॥ १ ॥ जिसे वेद तो नेति नेति कहकर पुकारते है, और महादेवजीको जिनका ध्यान प्राप्त नहीं हुआ है वे प्रभु माया मृगके पीछे दौड़े हैं ॥ २ ॥

कबहुँ निकट पुनि दूरि पराई ॥ कबहुँक प्रगटै कबहुँ दुराई ॥ ३ ॥ ❀
प्रगट छपत करत छल भूरी ॥ यहिबिधि प्रभुहिँ गयो लै दूरी ॥ ४ ॥ ❀

कभी तो वह निकट आजाता है. कभी दूर भाग जाता है. कभी प्रगट हो जाता है और कभी छिप जाता है ॥ ३ ॥ कभी प्रगट होता है और छिपता है. अनेक छल करता है. इसतरह वह प्रभुको बहुत दूर ले गया ॥ ४ ॥

तब तकि राम कठिण शर मारा ॥ धरणि परेउ करि घोर पुकारा ॥ ५ ॥ ❀
लक्ष्मण कर प्रथमहिँ लै नामा ॥ पाछे सुमिरेसि मनमहँ रामा ॥ ६ ॥ ❀

तब प्रभुने ताक कर उसके कठिन बाण लगाया जिससे वह राक्षस घोर पुकार २ कर पृथ्वीपर गिर गया ॥ ५ ॥ गिरते गिरते पहले तो रामकीसी बोली बनाय लक्ष्मणका नाम लिया. फिर पीछे मनमें रामका स्मरण किया ॥ ६ ॥

प्राण तजत प्रगटेसि निजदेही ॥ सुमिरेसि राम सहित बैदेही ॥ ७ ॥ ❀
अन्तर प्रेम तासु पहिँचाना ॥ मुनि दुर्लभ गति दीन्ह सुजाना ॥ ८ ॥ ❀

हे पार्वती ! प्राण त्यागते समय उसने अपना शरीर प्रगट कर लिया; और सीतासहित

रामका स्मरण किया ॥ ७ ॥ सुजान प्रभुने उसके अंतरंग प्रेमको पहिंचानकर, मुनिलोगोंको दुर्लभ ऐसी गति दीनी ॥ ८ ॥

दोहा-बिपुल सुमन सुर बर्षहिं, गावहिं प्रभुगुण गाथ ॥ ❋
निजपद दीन्हें असुर कहँ, दीनबन्धु रघुनाथ ॥ ४२ ॥ ❋

देवता घने फूल बरसाते हैं और प्रभुकी गुणगाथा गाते हैं कि देखो, दीनबन्धु प्रभुने दैत्यको अपना साक्षात् मोक्षपद दिया ॥ ४२ ॥

खल बधि तुरत फिरे रघुबीरा ॥ सोह चाप कर कटि तूणीरा ॥ १ ॥ ❋
आरत गिरा सुनी जब सीता ॥ कह लक्ष्मणसन परम सभीता ॥ २ ॥ ❋

हे पार्वती ! दुष्टको मार प्रभु तुरंत पीछे फिरे कि, जिनके हाथमें धनुष और कमरमें तरकस शोभा देते हैं ॥ १ ॥ हे गरुड़ ! जब सीताने आर्त वाणी सुनी तो उसने अति भयभीत होकर लक्ष्मणसे कहा कि- ॥ २ ॥

जाहु बेगि संकट तव भ्राता ॥ लक्ष्मण बिहँसि कहा सुनु माता ॥ ३ ॥ ❋
भृकुटि बिलास सृष्टि लय होई ॥ सपनेहुँ संकट परै कि सोई ॥ ४ ॥ ❋

हे लक्ष्मण ! तुम जल्दी जाओ, तुम्हारे भाई संकटमें पड़े है. यह सुन, हंसकर लक्ष्मणने कहा कि-हे माता ! सुनो ॥ ३ ॥ जिनके भृकुटिबिलाससे सृष्टि और प्रलय होते हैं क्या वे स्वप्न मेंभी संकटमें पड़ सकते हैं ? ॥ ४ ॥

सौंपि गये मोहिं रघुपति थाती ॥ जो तजि जाउँ तोष नहिं छाती ॥ ५ ॥
यह जिय जानि सुनहु मम माता ॥ पूंछत कहत कवन मैं बाता ॥ ६ ॥ ❋

मुझे प्रभु तुझरूप थाती (धरोहर) सौंप गये हैं अब मैं तुझको छोड़कर जाऊं सो मेरे मनको तसल्ली नहीं आती ॥ ५ ॥ "हे माता ! मनमें इस बातको विचार कर सुनो, प्रभु पूंछे तब इस बातका मैं क्या उत्तर देऊं ? " ॥ ६ ॥

मर्म बचन सीता जब बोली ॥ हरिप्रेरित लक्ष्मण मति डोली ॥ ७ ॥ ❋
चहुँ दिशि रेखा खींच अहीशा ॥ बार बार नावा पद शीशा ॥ ८ ॥ ❋

तब सीता मर्मके वचन बोली कि, जिससे प्रभुकी प्रेरणासे उसकी बुद्धि चलायमान हो गई ॥ ७ ॥ तब लक्ष्मण सीताके चारों ओर रेखा खींच बारंबार चरणोंमें शिर नवाय ॥ ८ ॥

बन दिशि देव सौंपि सब काहू ॥ चले जहां रावण शशिराहू ॥ ९ ॥ ❋
"चितवहिं लषण सियहिं फिरि कैसे ॥ तजत बच्छ निज मातहिं जैसे" १०

वनदेवता और दिक्देवता इन सबनको सीताको सौंप, जहां रावणरूप चन्द्रमाको ग्रसनेके लिये राहुरूप श्रीरामचन्द्र थे वहां लक्ष्मण गया ॥ ९ ॥ "हे पार्वती ! उसकाल लक्ष्मण पीछा फिर फिरकर सीताको कैसे देखता है कि जैसे माताको तजता हुआ बछरा अपनी माताको फिर फिरकर देखता है" ॥ १० ॥

भिक्षु रावणकरके जगज्जननी सीताजीका हरण।

दोहा—एक डरत डर रामके, दूजे सीय अकेलि ॥ ❀
लषण तेज तन हत भये, जिमि डाढ़ी दव बेलि ॥ ४३ ॥ ❀

लक्ष्मण एक तौ प्रभुके डरसे डरता है, दूजा सीता अकेली रह गई जिसका डर है. लक्ष्मणका शरीर उस समय कैसा तेजहीन हो गया कि, जैसे बेली दावानलसे दाझ रही है ॥ ४३ ॥

शून्य भवन दशकन्धर देखा ॥ आवा निकट यतीके बेखा ॥ १ ॥ ❀
जाके डर सुर असुर डेराहीं ॥ निशि न नींद दिन अन्न न खाहीं ॥ २ ❀

जब रावणने पर्णशाला सुनी दीखी तब वह संन्यासीका वेष बनाय सीताके समीप आया ॥ १ ॥ हे गरुड़ ! जिसके डरसे देवता और दैत्य ऐसे डरते हैं कि, रातको तौ नींद नहीं लेते और दिनमें अन्न नहीं खाते ॥ २ ॥

सो दशशीश श्वानकी नाँई ॥ इत उत चितै चला भँडिहाई ॥ ३ ॥ ❀
जिमि कुपन्थ पग देत खगेशा ॥ रह न तेज बल बुधि लवलेशा ॥ ४ ॥ ❀

वह रावण कुत्तेकी तरह इधर उधर देखता भड़िहाई करता चला जाता है ॥ ३ ॥ हे गरुड़ ! जैसे कुमार्गमें पांव रखतेही तेज, बुद्धि और बलका लवलेश नहीं रहता. वो दशा रावणकी हो गई है ॥ ४ ॥

करि अनेक बिधि छल चतुराई ॥ मागेउ भीख दशानन जाइ ॥ ५ ॥ ❀
अतिथि जानि सिय कन्दमूलफल ॥ देन लगी तेइ कीन्ह बहुरिछल ॥ ६ ॥

फिर रावणने अनेक प्रकारके छल व चतुराई कर सीताके समीप जाय, भिक्षा मांगी ॥ ५ ॥ हे पार्वती ! उसे अतिथि जानकर, सीता कंद मूल फल देने लगी तौ उसने फिर छल किया ॥ ६ ॥

कह दशमुख सुन सुन्दरि बानी ॥ बाँधी भीख न लेउँ सयानी ॥ ७ ॥ ❀
बिधिगति बामकाल कठिनाई ॥ रेख नाँघि सिय बाहर आई ॥ ॥ ८ ॥ ❀

रावणने कहा कि-हे सुंदरी ! मेरी वाणी सुनो. हे सयानी ! मैं बांधीहुई भिक्षा नहीं लेता ॥ ७ ॥ महादेवजी कहते है कि-विधाताकी गति बड़ी टेढ़ी है और कालकी गति बड़ी प्रबल है. सीता उसके कहनेसे लक्ष्मणकी खैंची हुई रेखाको उल्लंघकर बाहिर आई ॥ ८ ॥

दोहा-विश्वभरनि अघदलदलनि, करणि सकल सुरकाज ॥ ❋
जाना नहिँ दशशीश तेहिँ, मूढ़ कपटके साज ॥ ४४ ॥ ❋

हे पार्वती ! कपटका वेष बनानेवाले उस मूर्ख रावणने जगतका भरण पोषण करनेवाली पापपुंज-का नाश करनेवाली, देवताओंके सर्व कारज करनेवाली श्रीसीता मैयाको नहीं पहिचाना ॥ ४४ ॥

नाना बिधि कहि कथा सुहाई ॥ राजनीति भय प्रीति दिखाई ॥ १ ॥ ❋
कह सीता सुनु यती गुसांई ॥ बोलसि बचन दुष्टकी नांई ॥ २ ॥ ❋

तिससे अनेक प्रकारकी सुहावनी कथा कही और राजनीतिके अनुसार भय और प्रीति दिखाई ॥ १ ॥ सीताने कहा कि-हे गुसांई ! सुनो. तुम दीखते तौ संन्यासीसे और वचन दुष्टकेसे बोलते हो ॥ २ ॥

तब रावण निजरूप दिखावा ॥ भइ सभीत जब नाम सुनावा ॥ ३ ॥ ❋
कह सीता धरि धीरज गाढा ॥ आवत प्रभु रे खल रहु ठाढ़ा ॥ ४ ॥ ❋

सीताके ये बचन सुन, रावणने अपना स्वरूप दिखाया और अपना नाम कहा तब सीता डरी ॥ ३ ॥ तौभी गाढ़ी धीरज धरकर, सीताने कहा कि-अरे खल ! प्रभु आते है तू रंच खड़ा रह ॥ ४ ॥

जिमि हरिबधुहिं क्षुद्रशश चाहा ॥ भयेसि कालवश निशिचरनाहा ॥५॥ ❋
बायस कर चह खगपति समता ॥ सिंधुसमान होइ किमि सरिता ॥ ६ ॥

हे राक्षसराज ! जैसे तुच्छ खरहा सिंहवधूको चाहे वह दशा तेरी कालके वशसे हो गई है अर्थात् तू तो खरहाके समान है. प्रभु सिंहके समान और मैं सिंहनीके सदृश हूं ॥ ५ ॥ जैसे कौवा गरुडकी बराबरी करना चाहे और नदी समुद्रकी बराबरी चाहे तौ क्या यह हो सकता है ? कदापि नहीं ॥ ६ ॥

खरि कि होइ सुरधेनुसमाना ॥ जाहु भवन निज सुनु अज्ञाना ॥ ७ ॥ ❋
सुनत बचन दशशीश लजाना ॥ मनमहँ चरण बन्दि सुख माना ॥ ८ ॥

क्या गधी कामधेनुके बराबर हो सकती है ? सो हे अज्ञान ! सुन, तू अपने घर चला जा ॥ ७ ॥ सीताके ये वचन सुन रावण लजाना. और मनमें चरणोंको वंदन कर परम सुख माना ॥ ८ ॥

दोहा-क्रोधवन्त तब रावण, लीन्हेसि रथ बैठाय ॥ ❋
चलेउ गगनपथ आतुर, भयवश हांकि न जाय ॥ ४५ ॥ ❋

तब रावणने क्रोध कर, सीताको रथमें बैठा लिया. और आतुर हो आकाशमार्ग चला परंतु डरके मारे रथ हांका नहीं जाता ॥ ४५ ॥

हा जगदीश देव रघुराया ॥ केहि अपराध बिसारेउ दाया ॥ १ ॥ ❀
आरतहरण शरण सुखदायक ॥ हा रघुकुल सरोज दिननायक ॥ २ ॥ ❀

उस समय सीता इसप्रकार पुकारने लगी कि– हा जगदीश ! हा देव ! हा रघुराज ! आप किस अपराधसे मेरे ऊपरकी दयाको बिसर गये ! ॥ १ ॥ हा आर्तिहरण ! हे शरणागतोंके सुख देनहारे ! हा रघुकुलरूप कमलके लिये सूर्यरूप ॥ २ ॥

हा लक्ष्मण तुम्हार नहिँ दोषा ॥ सो फल पायउँ किन्हेउं रोषा ॥ ३ ॥ ❀
कैकेयी मन जो कछु रहेऊ ॥ सो बिधि आजु मोहिँ दुख दयऊ ॥ ४ ॥ ❀

हा लक्ष्मण ! इसमें तुम्हारा दोष नहीं है. हाय ! मैंने जो रोष किया उसका फल मैं पाई हूं ॥ ३ ॥ हाय ! कैकयीके मनमें जो कुछ रहा था वह दुःख विधाताने आज मुझे दिया है ॥ ४ ॥

पंचबटीके खग मृग जाती ॥ दुखी भये बनचर बहु भांती ॥ ५ ॥ ❀
बिबिध बिलाप करत बैदेही ॥ भूरिकृपा प्रभु पूरि सनेही ॥ ६ ॥ ❀

हे पार्वती ! इसप्रकार विलापती हुई सीताको देख, पंचवटीके सब पशु, पक्षी और वनचर जीव जन्तु दुखी हो गये है ॥ ५ ॥ सीता अनेक प्रकारसे विलाप करती है और कहती है कि–हे प्रभु ! मेरे ऊपर तो आपकी पूर्ण कृपा और स्नेह है. आप दूर क्यों हुए हो ? ॥ ६ ॥

बिपति मोरि को प्रभुहिँ सुनावा ॥ पुरोडाश चह रासभ खावा ॥ ७ ॥ ❀
सीताकर बिलाप सुनि भारी ॥ भये चराचर जीव दुखारी ॥ ८ ॥ ❀

हायरे ! मेरी यह आपदा प्रभुको कौन सुनावेगा ? अहहह ! ! ! गधा पुरोडाश (यज्ञभाग) खाना चाहता है ॥ ७ ॥ सीताका ऐसा बड़ा भारी विलाप सुनकर, सब चराचर जीव दुखी हो गये ॥ ८ ॥

दोहा–बहु बिधि करत बिलाप नभ, लिये जात दशशीश ॥ ❀
रडत न खल बर पाइ भल, जो दीन्हीँ अज ईश ॥ ४६ ॥ ❀

सीता अनेक प्रकारसे विलाप करती है. रावण उसे आकाशमें लिये जाता है. महादेव और ब्रह्माजीने जो अत्युत्तम वरदान दिये है. उनको पानेसे वह खल बिलकुल डरता नहीं है ॥ ४६ ॥

गृध्रराज सुनि आरत बानी ॥ रघुकुलतिलकनारि पहिंचानी ॥ १ ॥ ❀
अधम निशाचर लीन्हें जाई ॥ जिमि मलेच्छ बश कपिलागाई ॥ २ ॥ ❀

गिद्धराज जटायुने आर्तबानी सुन रघुकुलतिलक श्रीरामचन्द्रजीकी स्त्री सीताको पहिंचाना ॥ १ ॥ हे पार्वती ! वह राक्षस जो सीताको लिये जाता है सो कैसी घटना बनी है कि मानों कपिलागौ म्लेछके वश पड़ी है ॥ २ ॥

अहह प्रथम बल मम तनु नाहीं ॥ तदपि जाइ देखौं बल ताहीं ॥ ३ ॥ ❀
सीता पुत्रि करसि जनि त्रासा ॥ करिहौं यातुधानकर नासा ॥ ४ ॥ ❀

सीताकी वह दशा देख, जटायूने अपने मनमें कहा कि– अहहह ! ! ! मेरे शरीरमें पहलेकेसा पराक्रम नहीं है; तौभी जाकर इसका बल देखूं तो सही ॥ ३ ॥ ऐसा विचार कर जटायूने सीतासे कहा कि–हे पुत्री ! तू त्रास मत करे, मैं अभी इस राक्षसका नाश कर डालूंगा ॥ ४ ॥

धावा क्रोधवन्त खग कैसे ॥ छूटै पवि पर्वतपहँ जैसे ॥ ५ ॥ ❋
रे रे दुष्ट ठाढ़ कि न होहीं ॥ निर्भय चलसि न जानसि मोहीं ॥ ६ ॥ ❋

हे गरुड़ ! ऐसे कह पक्षी क्रोधकर कैसे धाया कि, मानों पर्वतपर इन्द्रके हाथमेंसे वज्रही छूटा ॥ ५ ॥ जटायूने रावणसे कहा कि–अरे ! रे दुष्ट ! खडा क्यों नहीं रहता ? अरे शठ ! निर्भय चला जाता है. सो तू मुझे जानता नहीं ? ॥ ६ ॥

आवत देखि कृतान्तसमाना ॥ फिरि दशकंध करत अनुमाना ॥ ७ ॥ ❋
कि मैनाक कि खगपति होई ॥ मम बल जानि सहितपति सोई ॥ ८ ॥ ❋
जाना जरठ जटायू येहा ॥ मम कर तीरथ छांड़हि देहा ॥ ९ ॥ ❋

कालके समान जटायूको आता देख, रावणने पीछा फिरकर विचार किया कि ॥ ७ ॥ क्या यह मैनाकपर्वत है ? या गरुड़ है ? मेरे बलको तो वहभी अपने स्वामीके साथ जानता है ॥ ८ ॥ फिर उसने जाना कि, यह तो जरठ जटायु है. मेरे हाथरूप तीर्थमें यह अपना शरीर त्यागेगा ॥ ९ ॥

दोहा–मम भुजबल नहिँ जानत, आवत तपिन्ह सहाइ ॥ ❋
समर चढै तौ इहि हतौं, जियत न निजथल जाइ ॥ ४७ ॥ ❋

यह मेरा भुजबल नहीं जानता. तपस्वियो (राम लक्ष्मण) की सहाय करने आता है. यदि यह युद्ध करनेको चढ़ि आवे तौ इसे मारडालनाही चाहिये; क्योंकि यह जीता अपने स्थलको नहीं जायगा ॥ ४७ ॥

सुनत गृध्र क्रोधातुर धावा ॥ कह सुन रावण मोर सिखावा ॥ १ ॥ ❋
तजि जानकिहिं कुशल गृह जाहू ॥ नाहित सत्य सुनहु बहुबाहू ॥ २ ॥ ❋

यह सुनतेही तौ जटायु क्रोधातुर हो, रावणकी ओर दौड़ा और बोला कि–हे रावण ! मेरी सीख सुन ॥ १ ॥ तू सीताको तजकर, अपने घर कुशल क्षेमसे चला जा. नहीं तौ हे घने हाथोंवाले रावण ! मैं यथार्थ कहताहूं सो सुन ॥ २ ॥

रामरोषपावक अतिघोरा ॥ होइहि सकल शलभ कुल तोरा ॥ ३ ॥ ❋
उतर न देत दशानन योधा ॥ तबहिं गृध्र धावा करि क्रोधा ॥ ४ ॥ ❋

अरे शठ ! प्रभुका क्रोध महाप्रचंड अग्निके समान है सो तेरा सब कुल उसमें पतंगके समान पड़कर भस्म हो जायगा ॥ ३ ॥ जब रावणने पीछा उत्तरही नहीं दिया तब जटायु क्रोधकर चला ॥ ४ ॥

धरि कच विरथ कीन्ह महि गिरा ॥ सीतहिं राखि गृध्र पुनि फिरा ॥५॥ ❋
दशमुख उठि कृत शरसन्धाना ॥ गृध्र आइ काटेउ धनुबाना ॥ ६ ॥ ❋
चोचन्ह मारि बिदारेसि देही ॥ दण्ड एक भइ मूर्छा तेही ॥ ७ ॥ ❋

सो जातेही केश पकड़, विरथ कर, भूमिपर गिरा दिया और सीताको रखकर जटायु पीछा फिरा ॥ ५ ॥ इतनेमें रावणने उठ जो धनुषमें बाण संधान किया तौ गिद्धने आकर धनुषबाणको तोड़ गिराया ॥ ६ ॥ और चोंचसे मारकर सारा शरीर विदीर्ण कर दिया. तिससे रावण एक घडीलों मूर्छित रहा ॥ ७ ॥

दोहा—जेइ रावण निजबश किये, मुनिगण सिद्ध सुरेश ॥ ❋
तेई रावण सन समर अति, धीर बीर गृध्रेश ॥ ४८ ॥ ❋

हे पार्वती ! जिस रावणने मुनिगण, सिद्ध और लोकपालोंको अपने वश किया था उसी रावणके साथ धीर वीर जटायूने भारी युद्ध किया ॥ ४८ ॥

स्वस्थ भये सो पुनि उठिधावा ॥ मारे गृध्र न सन्मुख आवा ॥ १ ॥ ❋
कीन्हेसि बहु जब युद्ध खगेशा ॥ थकित भयो तब जरठ गिधेशा ॥ २ ॥

जब रावणकी मूर्छा खुली और स्वस्थ हुआ तो उठकर फिर दौड़ा उसकाल गिद्धने ऐसा मारा कि वह सन्मुख होने न पाया ॥ १ ॥ हे गरुड़ ! जब जटायूने खूब युद्ध किया तो वह थक गया; क्योंकि वह बहुत बूढ़ा था ॥ २ ॥

तब सक्रोध निशिचर खिसियाना ॥ काढ़ेसि परम कराल कृपाना ॥ ३ ॥
काटेसि पंख परा खग धरणी ॥ सुमिरि रामकी अद्भुत करणी ॥ ४ ॥ ❋

जब जटायु थक गया तब रावणने क्रोधकर खीझके अति कराल तीक्ष्ण खड्ग निकाला ॥ ३ ॥ और उसकी परें काट डालीं जिससे वह पक्षहीन हो प्रभुकी अद्भुत करनीको सुमिरकर धरतीपर गिर पड़ा ॥ ४ ॥

मनमहँ गृध्र परम सुख माना ॥ रामकाज मम लागेउ प्राना ॥ ५ ॥ ❋
सीतहिं यान चढ़ाइ बहोरी ॥ चला उताइल त्रास न थोरी ॥ ६ ॥ ❋

हे पार्वती ! जटायूने इस बातसे अपने मनमें बड़ा सुख माना कि—मेरे प्राण प्रभुके काम लगे ॥ ५ ॥ फिर वह रावण सीताको रथपर चढ़ाय, मनमें भारी त्रास मानता जल्दीसे चला ॥ ६ ॥

करति बिलाप जाति नभ सीता ॥ व्याध बिबिश जनु मृगी सभीता ॥ ७ ॥
गिरिपर बैठे कपिन्ह निहारी ॥ कहि हरिनाम दीन्ह पट डारी ॥ ८ ॥ ❋
यहि बिधि सीतहिँ सो लै गयउ ॥ बन अशोकमहँ राखत भयऊ ॥ ९ ॥ ❋

हे पार्वती ! रावणके वश पड़ी आकाशमार्ग जाती हुई सीता ऐसे विलाप करती है कि, मानों भयभीत हरिणी व्याधके वश पड़ी है ॥ ७ ॥ आकाशमार्ग जाती हुई सीताने पर्वतपर बैठे वानरोंको देख, प्रभुका नाम ले अपना वस्त्र डाल दिया ॥ ८ ॥ इसप्रकार रावण सीताको हरले गया और लंकामें अशोकवनके भीतर रख छोड़ी ॥ ९ ॥

दोहा—"हारि परा खल बहुत बिधि, भय अरु प्रीति दिखाइ ॥ ❋
तब अशोक पादप तरे, राखेसि यतन कराइ" ॥ ४९ ॥ ❋

"सीताको विश्वास आनेके लिये अनेक उपाय कर, भय और प्रीति दिखाकर रावण थकगया, तब उसे अशोकवृक्षके तले यत्नपूर्वक रख दी ॥ ४९ ॥ "

उहां बिधाता मन अनुमाना ॥ सुरपति बोलि मंत्र अस ठाना ॥ १ ॥ ❋
तात जनकतनयापहँ जाहू ॥ सुधि न पाव जिहि निशिचरनाहू ॥ २ ॥ ❋

उधर स्वर्गलोकमें ब्रह्माजीने मनमें विचार कर, इन्द्रको बुलाय, सलाह विचार ऐसा निश्चय किया कि ॥ १ ॥ हे तात ! तुम सीताके पास जाओ; परंतु रावणको तुम्हारे जानेकी खबर पड़ने न पावे ॥ २ ॥

अस कहि बिधि सुन्दर हबि आनी ॥ सौंपि बहुरि बोले मृदुबानी ॥ ३॥ ❋
यह भक्षण कृत क्षुधा न प्यासा ॥ वर्ष सहस दश संशय नासा ॥ ४ ॥ ❋

ऐसे कह सुन्दर हवि (खीर) लाकर, इन्द्रको सौंप दीनी और ब्रह्माजीने फिर मधुर वाणीसे कहा कि–॥ ३ ॥ हे इन्द्र ! इसके खानेपर दश हजार वर्षलों भूक के प्यास कुछभी न लगेगी इसमें कुछ संदेह नहीं है ॥ ४ ॥

सो प्रसाद लै आयसु पाई ॥ चलेउ हृदय सुमिरत रघुराई ॥ ५॥ ❋
कछु बासव माया निज गोई ॥ रक्षक रहे गये तहँ सोई ॥ ६ ॥ ❋

सो तुम लेकर सीताके पास जाओ. ऐसी आज्ञा पाय, वह खीर ले, मनमें प्रभुका स्मरण करता इन्द्र वहांसे चला सो चला चला लंकामें आया ॥ ५ ॥ लंकामें आकर इन्द्रने अपनी कुछ माया फैलाई तिससे पहरादारोंको नींद आगई ॥ ६ ॥

तदपि डरत सीतापहँ आयउ ॥ करि प्रणाम निजनाम सुनायउ ॥ ७ ॥
निश्चय जानि सुरेश सुजाना ॥ पिता जनक दशरथसम माना ॥ ८ ॥ ❋
करि परितोष दूरकर शोका ॥ हव्य खवाय गये निजलोका ॥ ९ ॥ ❋

तौभी इन्द्रने डरते २ सीताके पास आय, प्रणाम कर, अपना नाम सुनाया ॥ ७ ॥ हे गरुड़ ! जब सीताने उसे निश्चित जान लिया कि, यह इन्द्र है तब उसने अपने पिता जनक और श्वशुर दशरथके समान सत्कार किया ॥ ८ ॥ इन्द्रभी उसे प्रसन्न कर, शोच मिटाय, खीर खवाय, अपने स्वर्गलोकको सिधारा ॥ ९ ॥

दोहा–जेहि बिधि कपट कुरंग सँग, धाय चले श्रीराम ॥ ❋
सो छबि सीता राखि उर, रटति रहति हरिनाम ॥ ५० ॥ ❋

हे पार्वती ! प्रभु कपटमृगके पीछे जिस भांति दौड़े चले थे उसी छविको हृदयमें रखकर रामनाम रटती सीता वहां रहने लगी ॥ ५० ॥

रघुपति अनुजहिँ आवत देखी ॥ मन बहुचिंता कीन्ह बिशेखी ॥ १ ॥ ❋
जनकसुता परिहरेउ अकेली ॥ आयहु तात बचन मम पेली ॥ २ ॥ ❋

वहां लक्ष्मणको आता देखकर प्रभुके मनमें बड़ी भारी चिंता प्रगट हुई ॥ १ ॥ और कहा कि–हे तात ! सीताको अकेली छोड़, मेरे वचनको न मानकर, तू चला आया वह अच्छा नहीं किया ॥ २ ॥

निशिचरनिकर फिरहिँ बनमाहीं ॥ मम मन सीता आश्रम नाहीं ॥ ३ ॥
अहह तात भल कीन्हेउ नाहीं ॥ सिय बिहीन ममजीवन काहीं ॥ ४ ॥ ❋

हे भाई ! वनमें राक्षसोंके झुंडके झुंड फिरते हैं सो मेरा मन हामी भरता है कि सीता आश्रममें नहीं है ॥ ३ ॥ अहहह ! हे भाई ! तूने यह अच्छा नहीं किया. सीताके विना मेरा जीवन कहां ? ॥ ४ ॥

यहिंते कवन बिपति बड़ भाई ॥ खोयहु सीय काननहिं आई ॥ ५ ॥ ❋
गहि पदकमल अनुज कर जोरी ॥ कहेउ नाथ कछु मोरि न खोरी ॥ ६ ॥

हे भाई ! इससे बढ़कर ज्यादे आपदा क्या होगी ? कि जो वनमें आकर सीताको खो दिया ॥ ५ ॥ प्रभुके वचन सुन, चरणकमल धर, हाथ जोड़कर लक्ष्मणने कहा कि– हे नाथ ! इसमें मेरी गलती नहीं है ॥ ६ ॥

अनुजसमेत गयउ प्रभु तहवाँ ॥ गोदावरितट आश्रम जहवाँ ॥ ७ ॥ ❀
आश्रम देखि जानकी हीना ॥ भये बिकल जस प्राकृत दीना ॥ ८ ॥ ❀

तब लक्ष्मणके साथ साथ प्रभु गोदावरीके तटपर आये कि, जहां अपना आश्रम था ॥ ७ ॥ हे पार्वती ! आश्रमको सीतारहित देखतेही प्रभु ऐसे विकल होगये कि, जैसे प्राकृत मनुष्य दीन हो जाता है ॥ ८ ॥

दोहा–कानन रहेउ तड़ाग इव, चक चकई सियराम ॥ ❀
रावण निशि बिछुरन किये, दुख बीते चहुँयाम ॥ ५१ ॥ ❀

हे पार्वती ! वन तो मानो तलावके समान है और सीताराम चकवा चकईके समान है. चकवा चकईके रात्रि बियोग कर देती है सो यहां रावणरूप रात्रिने वियोग कर दिया है, जिससे चारों प्रहर दुखसे व्यतीत होते है ॥ ५१ ॥

परदुखहरण शोक दुख नाहीं ॥ भा बिषाद तिनके मनमाहीं ॥ १ ॥ ❀
हा गुणखानि जानकी सीता ॥ रूपशील व्रत नेम पुनीता ॥ २ ॥ ❀

हे भवानी ! जो पराया दुःख हरण करते हैं, जिनके शोक व दुःख कुछ नहीं है, उन प्रभुके, मनमें भारी विषाद उत्पन्न हुआ है ॥ १ ॥ और पुकारते हैं कि– हा गुणखानी ! हा जनककन्या ! हा सीता ! हा रूप शील व्रत व नियमसे पवित्र ! तू कहां गई ? ॥ २ ॥

लक्ष्मण समुझाये बहुभांती ॥ पूंछत चले लता तरु पाती ॥ ३ ॥ ❀
हे खग मृग हे मधुकरश्रेनी ॥ तुम देखी सीता मृगनैनी ॥ ४ ॥ ❀

यद्पि लक्ष्मण बहुत तरहसे समझाता है तोभी प्रभु वृक्ष व लताओंकी पांतीको पूछते चले जाते हैं ॥ ३ ॥ प्रभु कहते है कि–हे पशु ! हे पक्षी ! हे भ्रमरपंक्ति ! तुमने कहीं मृगलोचनी सीताको देखा है ? ॥ ४ ॥

खंजन शुक कपोत मृग मीना ॥ मधुपनिकर कोकिला प्रबीना ॥ ५ ॥ ❀
कुन्दकली हे दाड़िम दामिनि ॥ हेहे कमल शरद शशि भामिनि ॥ ६ ॥ ❀

यहां सर्वत्र लुप्तोपमेयालंकार है तासों उपमान तो कहे हैं और उपमेय नहीं कहे हैं. सो हमने कंसमें दिखा दिये है. हे खंजन (नयनी) ! हे शुक (नासिके) ! हे कपोत (ग्रीवा) ! हे मृग (नयनी) ! हे मीन (वत् चंचल नयनी) ! हे भ्रमरवृन्द (वत् अलकावली) ! हे प्रवीणकोकिला(बयनी) ! ॥५॥ हे कुन्दकली और दाड़िमके (बीजवत् दांत पांतीवाली) ! हे दामिनी (की द्युति हरनेवाली) ! हे कमल (मुखी) ! हे शारदचंद्र (वदनी) ! हे भामिनी ! ॥ ६ ॥

बरुणपाश मनोजधनु हंसा ॥ गज केहरी नित सुनत प्रशंसा ॥ ७ ॥ ❀
श्रीफल कमल कदलि हरषाहीं ॥ नेकु न शंक सकुच मनमाहीं ॥ ८ ॥ ❀

हे वरुणपाश (वत् नाभीवाली) ! हे कामदेवके धनुष (वत् भ्रुकुटिवाली) ! हे हंस (गमनी) ! हे

गज (गामिनी) ! हे केसरी (कटि) ! सब कोई तुम्हारी नित्य प्रशंसा सुनते है ॥ ७ ॥ हे बिल्व (स्तनी) ! हे कंचन (बरनी) ! हे कदली (जंघ) ! ये सब तुम्हारे जानेसे प्रसन्न होते है. इनके मनमें जराभी शंका और संकोच नहीं है ॥ ८ ॥

सुन जानकी तोहिँ बिन आजू ॥ हर्षे सकल पाइ जनु राजू ॥ ९ ॥ ❋ ❋
किमि सहि जात अनख तोहिँ पाहीं ॥ प्रिया बेगि प्रगटसि कस नाहीं ॥ १० ॥
यहि बिधि बिलपत खोजत स्वामी ॥ मनो महा बिरही अति कामी ॥ ११ ॥ ❋

हे सीता ! सुन. आज तुम्हारे बिना ये सब ऐसे प्रसन्न हुए हैं कि–मानो राजही पा लिया है ॥ ९ ॥ हे सीता ! तुझसे यह ईर्षा कैसे सही जाती है ? हे प्रिया ! तू जल्दी प्रगट क्यों नहीं होती ? ॥ १० ॥ इसप्रकार विलाप करते सीताको हेरते प्रभु ऐसे मालूम होते है कि–मानों अतिशय कामी पुरुष भारी विरहमें मगन हो रहा है ॥ ११ ॥

दोहा–फणि मणिहीन दीन जिमि, मीन हीन जिमि बारि ॥ ❋
तिमि व्याकुल भये लषण तहँ, रघुबरदशा निहारि ॥ ५२ ॥ ❋

हे पार्वती ! प्रभुकी यह दशा देख, लक्ष्मण ऐसा व्याकुल हो गया कि, जैसा सांप मणिबिन दीन हो जाता है और मछली जलबिन तडफने लगती है ॥ ५२ ॥

धरि उर धीर बुझावहिँ रामहिँ ॥ तजहिँ न शोक अधिक सुखधामहिँ ॥ १ ॥
पूरणकाम राम सुखराशी ॥ मनुजचरित कर अज अविनाशी ॥ २ ॥ ❋

लक्ष्मण मनमें धीरज धर, प्रभुको समझाता है तौभी वे सुखधाम शोचको तजते नहीं है अधिक अधिक करते हैं ॥ १ ॥ हे पार्वती ! जो प्रभु पूर्णकाम, सुखधाम है वे अविनाशी अजन्म प्रभु लीला करते है ॥ २ ॥

सरबर अमित नदी गिरि खोहा ॥ बहुबिधि राम लषण तहँ जोहा ॥ ३ ॥ ❋
शोच हृदय कछु कहि नहिँ आवा ॥ टूट धनुष शर आगे पावा ॥ ४ ॥ ❋

हे गरुड़ ! वनमें जितने तालाव, नदी, पर्वत और गुफायें थीं वहां सब ठौर राम लक्ष्मणने अच्छी तरह हेर लिया ॥ ३ ॥ हृदयमें शोच बन रहा है मुंहसे कुछ कहा नहीं जाता है. आगे आकर देखते हैं तो धनुष बाण टूटे पड़े हैं ॥ ४ ॥

कहुँ कहुँ शोणित देखिय कैसे ॥ श्रावण जल भा डाबर जैसे ॥ ५ ॥ ❋
कहत राम लक्ष्मणहिँ बुझाई ॥ काहू कीन्ह युद्ध इहिँ ठाई ॥ ६ ॥ ❋
आगे परा गृध्रपति देखा ॥ सुमिरत रामचरणकी रेखा ॥ ७ ॥ ❋

कहीं कहीं लोहू कैसे दिखाई देता है कि, मानों श्रावणके महीनेमें गदला जल भरा है ॥ ५ ॥ तिसे देख, प्रभु लक्ष्मणसे समझाकर कहते हैं कि, इस ठौर किसीने भारी युद्ध किया है ॥ ६ ॥ आगे जाकर देखते हैं तो जटायु पड़ा है जो प्रभुके चरणकी रेखाका स्मरण करता है ॥ ७ ॥

दोहा–कर सरोज शिर परसेउ, कृपासिन्धु रघुबीर ॥ ❋
निरखि राम छबिधाम मुख, बिगत भई सब पीर ॥ ५३ ॥ ❋

उसे देखतेही कृपासिंधु प्रभुने अपने करकमलसे उसका शिर परसा; जो गिद्धने आंख खोल, सुखधाम श्रीरामकी छबि निरखी तौ उसकी सब पीड़ा जाती रही ॥ ५३ ॥

तब कह गृध्र बचन धरि धीरा ॥ सुनहु राम भंजन भवभीरा ॥ १ ॥ ❋
नाश दशानन यह गति कीन्ही ॥ तेहिँ खल जनकसुता हरि लीन्ही ॥ २ ॥

तब जटायूने धीरज धरकर कहा कि–हे संसारका संकट मिटानेहारे प्रभु! सुनिये ॥ १ ॥ हे नाथ! रावणने मेरी यह गति करी है. वही खल सीताको हर ले गया है ॥ २ ॥

लै दक्षिण दिशि गयेउ गुसाँई ॥ बिलपत अति कुररीकी नाँई ॥ ३ ॥ ❋
दरश लागि प्रभु राखेउँ प्राणा ॥ चलन चहत अब कृपानिधाना ॥ ४ ॥ ❋

हे स्वामी! वह कुररी (टटोड़ी) की भांति विलाप करती सीताको लेकर दक्षिणदिशामें गया है ॥ ३ ॥ हे कृपानिधान! आपके दर्शनके लिये मैंने प्राण रख छोड़े थे, अब ये जाना चाहते हैं॥४॥

राम कहा तनु राखहु ताता ॥ मुख मुसुकाइ कही तेइं बाता ॥ ५ ॥ ❋
जाकर नाम मरत मुख आवा ॥ अधमौ मुक्त होइ श्रुति गावा ॥ ६ ॥ ❋

तब प्रभुने कहा कि–हे तात! मैं तुम्हारा शरीर रख देऊं? यह सुन मुसकराकर, जटायूने कहा कि ॥ ५ ॥ हे नाथ! अंतकालमें जिनका नाम मुखपर आ जानेसे महा अधम पुरुषभी मोक्षको प्राप्त हो जाता है, ऐसे वेद कहते है ॥ ६ ॥

सो मम लोचन गोचर आगे ॥ राखौं देह नाथ केहि लागे ॥ ७ ॥ ❋
जल भरि नयन कहा रघुराई ॥ तात कर्म निजते गति पाई ॥ ८ ॥ ❋

वही परमेश्वर मेरे नेत्रोंके आगे प्रत्यक्ष आ गया है अब मैं मेरे शरीरको किसवास्ते राखूं? ॥ ७ ॥ जटायूके वचन सुन, नेत्रोंमें जल भर प्रभुने कहा कि–हे तात! आप अपने कर्मोंसे उत्तम गति पाये हो ॥ ८ ॥

परहित बश जिनके मनमाहीं ॥ तिन्हकहँ जग दुर्लभ कछु नाहीं ॥ ९ ॥ ❋
तन तजि तात जाहु मम धामा ॥ देउँ कहा तुम पूरणकामा ॥ १० ॥ ❋

हे तात! जिनके मनमें परोपकारका अंकुर है उनको जगत्में कुछभी दुर्लभ नहीं है ॥ ९ ॥ हे तात! अब तुम शरीरको त्यागकर, मेरे धामको जाओ.तुम पूर्णकाम हो सो मैं तुम्हें क्या देऊं?॥१०॥

दोहा–सीताहरण तात जनि, कहहु पितासन जाइ ॥ ❋
जो मैं राम तौ कुलसहित, कहहि दशानन आइ ॥ ५४ ॥ ❋

"हे तात! तुम पिता दशरथजीसे जाकर सीताहरणके समाचार मत कहना. जो मैं राम हूं तौ रावणही कुलसहित आकर ये समाचार कहेगा अर्थात् मैं उसे मार डालूंगा ॥ ५४ ॥"

गृध्रदेह तजि धरि हरिरूपा ॥ भूषण बहु पटपीत अनूपा ॥ १ ॥ ❋
श्याम गात बिशाल भुज चारी ॥ अस्तुति करत नयन भरिबारी ॥ २ ॥ ❋

हे पार्वती! जटायु गिद्ध शरीरको तज विष्णु भगवानकासा स्वरूप धारणकर, प्रभुकी स्तुती

करने लगा. कैसा है स्वरूप ? कि जो अमूल्य अनेक आभूषण धरे है, पात पट ओढ़े है. उपमा रहित ॥ १ ॥ सुन्दर श्याम शरीर और विशाल चार भुजा धारण किये है. जटायु नेत्रोंमें जल भरके भगवान्की स्तुती करता है ॥ २ ॥

छंद–जय रामरूप अनूप निर्गुण सगुण गुणप्रेरक सही ॥ ❋
दशशीश बाहु प्रचण्ड खण्डन चण्डशर मण्डन मही ॥ ❋
पाथोदगात सरोजमुख राजीव आयत लोचनं ॥ ❋
नित नौमि राम कृपाल बाहु बिशाल भवभयमोचनं ॥ २२ ॥ ❋

हे राम ! आपकी जय हो. आपका स्वरूप अनूप कहे उपमारहित है, सगुण व निर्गुण है. और गुणोंका प्रेरक है. हे दयालु प्रभु ! आपको मैं नित्य नमस्कार करता हूं कि जिन्होंने अपने तीक्ष्ण बाणोंसे रावणकी प्रचंड भुजाओंका खंडन किया है. जो पृथ्वीके अलंकाररूप हैं तथा जो सघनघनके समान श्यामबरन कमल मुख और अरविंदके समान आयत नेत्र है और जो अपनी भुजाओंसे संसारका भय मिटा देते हैं ॥ २२ ॥

बलमप्रमेयमनादिमजमव्यक्तमेकमगोचरं ॥ ❋
गोविन्द गोपरद्वन्द्वहरि बिज्ञानघन धरणीधरं ॥ ❋
ये राममंत्र जपन्त सन्त अनन्त जनमनरंजनं ॥ ❋
नित नौमि रामअकामप्रियकामादिखलगंजनं ॥ २३ ॥ ❋

हे राम ! मैं आपको नित्य प्रणाम करता हूं कि, जो प्रणाम करनेको अशक्य ऐसे बलके भंडार हैं. जिनका कोई आदि नहीं है. अतएव अजन्मा अव्यक्त स्वरूप अद्वितीय और मन व इन्द्रियोंके विषय नहीं है. जो गो कहे वाणी यानी वेदको विन्द कहे प्राप्त करनेवाले, अथवा योगोंके पति और इन्द्रियोंसे पर, तथा सुख दुःख आदि द्वंद्वके हरनेवाले, विज्ञानघन, पृथ्वीको धारण करनेवाले व संतलोग जिनके रामनामको सदा जपते रहते हैं ऐसे अंतरहित और भक्तजनोंके मनको राजी करनेवाले व कामनारहित पुरुषोंके प्यारे तथा काम क्रोध आदि दुष्ट दलका नाश करनेवाले हैं ॥ २३ ॥

जेहि श्रुति निरंतर ब्रह्म व्यापक बिरज अज कहि गावहीं ॥ ❋
करि ज्ञान ध्यान बिराग योग अनेक मुनि जेहिं पावहीं ॥ ❋
सो प्रगट करुणाकन्द शोभा वृन्द अग जग मोहई ॥ ❋
मम हृदयपंकजभृंग अंग अनंग बहु छबि सोहई ॥ २४ ॥ ❋

जिन्हें वेद व्यापक, निरंजन और अजन्मा ऐसे कहकर निरंतर गाते हैं. और मुनिलोग अनेक ज्ञान, ध्यान, योग, वैराग्य धारण करके पाते हैं. वेही करुणानिधान शोभानिदान श्रीरामचन्द्र प्रभु प्रगट हुए हैं कि, जो सारे चराचर जगतको मोहित करते हैं. और जिनके अंग अंग विषे अनेक कामदेवोंकी छबि छारही है और जो मेरे मानसकमलके साक्षात् भ्रमर हैं ॥ २४ ॥

जो अगम सुगम स्वभाव निर्मल असम सम शीतल सदा ॥ ❀
पश्यन्ति यं योगी यतन करि करत मन गो बश सदा ॥ ❀
सो राम रमानिवास संतत दासबश त्रिभुवनधनी ॥ ❀
मम उर बसहु सो शमनसंसृति जासु कीरति पावनी ॥ २५ ॥ ❀

जो प्रभु ! भक्ति करि सदा सुगम, अन्य और साधनोंसे अगम हैं, जिनका निर्मल स्वभाव है, जो सम व विषमरूप हैं. तथा सदा शीतल मूर्ति हैं. जिन्हें योगीजन मन और इन्द्रियोंको वश करके उपाय करि सदा देखते है, जो त्रिलोकी पति होकरभी दासजनोंके वश हैं, वे लक्ष्मीनिवास राम निरंतर मेरे हृदयमें निवास करो कि, जिनकी पवित्र कीर्ति संसारका नाश कर देती है ॥ २५ ॥

दोहा—अविरल भक्ति मांगि बर, गृध्र गयउ हरिधाम ॥ ❀
तेहिकी क्रिया यथोचित, निजकर कीन्ही राम ॥ ५५ ॥ ❀

हे पार्वती ! जटायु अविच्छिन्न भक्ति वरदान मांगकर वैकुंठपदको प्राप्त हुवा. तब प्रभुने उसकी दाहक्रिया शास्त्ररीतिके अनुसार अपने हाथोंसे करी ॥ ५५ ॥

कोमल चित अति दीनदयाला ॥ कारण बिनु रघुनाथ कृपाला ॥ १ ॥ ❀
गृध्र अधम खग आमिष भोगी ॥ गति दीन्ही जो याचत योगी ॥ २ ॥ ❀

दीन दयालु प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका चित्त अतिकोमल है. वे विना कारण हरएकपर कृपा करते हैं ॥ १ ॥ हे पार्वती ! गिद्ध पक्षी बड़ा अधम होता है; क्योंकि वह मांसाहारी होता है. परंतु प्रभुने उसेभी ऐसी गति दीनी कि जिसे योगीजन जाचा करते है ॥ २ ॥

सुनहु उमा ते लोग अभागी ॥ हरि तजि होहिँ विषयअनुरागी ॥ ३ ॥ ❀
पुनि सीतहिं खोजत दोउ भाई ॥ चले बिलोकत बन बहुताई ॥ ४ ॥ ❀

हे पार्वती ! सुनो, वे लोग बड़े अभागे है कि, जो प्रभुको तज विषयासक्त हो जाते हैं ॥ ३ ॥ फिर वे दोनों भाई सीताको ढूंढ़ते बनकी बहुताय देखते चले ॥ ४ ॥

संकुल लता बिपट घन कानन ॥ बहु खग मृग तहँ गज पंचानन ॥ ५ ॥
आवत पन्थ कबन्ध निपाता ॥ तेहिँ सब कही शापकी बाता ॥ ६ ॥ ❀

हे पार्वती ! वह सघन वन बेलबूटे और वृक्षोंसे गंभीर हो रहा है. उसमें अनेक पशु पक्षी और हाथी व सिंह विचरते हैं ॥ ५ ॥ प्रभुने कबंधको आता देख, उसे मारा तब उसने अपने पूर्वजन्मकी सारी श्रापकी कथा कही ॥ ६ ॥

---

१ यह कबंध पूर्वजन्ममें गंधर्व था. इसने दुर्वासाके पास जाकर गान किया; परंतु दुर्वासा इसका गाना सुन प्रसन्न नहीं हुए. तब यह मुनिको हंसा. जिससे मुनिने क्रोध कर शाप दिया कि, जा तू राक्षस हो जा. यह राक्षस बड़ा बलवान् हुआ. इसने जगत्में उपद्रव करना प्रारंभ किया, तब इंद्रने इसको वज्रसे मारा जिससे इसका सिर पेटमें घुस गया तबसे इसका नाम कबंध पड़ा इसके योजन योजन भर लंबे हाथ थे जिससे यह सब वनचर जीव जन्तु प्राणियोंको—कि जो एक योजनके भीतर होते उन्हें इकठाकर खा खा जाता. एक दिन उसकी झटपटमें ये दोनों भाई आ गये. उन्होंने इसको मार स्वर्गको भेजा. उसने कहा कि, आप मतंग ऋषिके आश्रममें जाय, शबरीसे मिलना. वहां जानेसें आपको सीताका पत्ता मिल जायगा.

दुर्वासा मोहिँ दीन्हीं शापा ॥ प्रभुपद देखि मिटा सो पापा ॥ ७ ॥ ❀
सुनु गन्धर्व कहौं मैं तोही ॥ मोहिँ न सुहाइ ब्रह्मकुलद्रोही ॥ ८ ॥ ❀

कबंधने कहा कि–हे प्रभु ! मुझे दुर्वासा ऋषिने श्राप दिया रहा सो आपके दर्शन करनेसे वह पाप आज निवृत्त हुआ है ॥ ७ ॥ यह सुन, प्रभुने कहा कि–हे गंधर्व ! मैं जो तुझसे कहता हूं सो सुन. मेरा मुख्य यही नियम है कि, मुझे ब्राह्मणकुलसे द्रोह करनेवाला नहीं सुहाता ॥ ८ ॥

दोहा–मन क्रम बचन कपट तजि, जो कर भूसुर सेव ॥ ❀
मोहिँ समेत बिरंचि शिव, वश ताके सब देव ॥ ५६ ॥ ❀

जो मनुष्य निष्कपट होकर मन वचन कायसे ब्राह्मणोंकी सेवा करता है उसके आधीन मेरे साथ ब्रह्माजी और महादेवजी आदि सब देवता हो जाते है ॥ ५६ ॥

शापत ताड़त परुष कहंता ॥ बिप्र पूज्य अस गावहिं संता ॥ १ ॥ ❀
पूजिय बिप्र शीलगुणहीना ॥ शूद्र न गुणगणज्ञानप्रबीना ॥ २ ॥ ❀

हे गंधर्व ! संतलोक यों कहते हैं कि, ब्राह्मण चाहे श्राप देवे, ताड़ना देवे और कठोर वचन कहे, परंतु ब्राह्मणको तौ पूजनाही चाहिये ॥ १ ॥ चाहे ब्राह्मण शील व गुणकरी हीन होवो तौभी उसे पूजना चाहिये और शूद्र गुणी और ज्ञानमें प्रवीण होवो तौभी उसे नहीं पूजना चाहिये ॥ २ ॥

कहि निजधर्म ताहि समुझावा ॥ निजपदप्रीति देखि मनभावा ॥ ३ ॥ ❀
रघुपति चरणकमल शिर नाई ॥ गयउ गगन आपनि गति पाई ॥ ४ ॥

प्रभुने अपना धर्म कहकर उसे समझाया; क्योंकि उसकी अपने चरणोंमें प्रीति दीखनेसे वह प्रभुके चित्त चढ़ा गया ॥ ३ ॥ हे पार्वती ! वह गंधर्व अपनी गतिको पाय, प्रभुके चरणकमलोंमें शिर नवाय, आकाश मार्ग हो स्वर्गको गया ॥ ४ ॥

ताहि देइ गति राम उदारा ॥ शबरीके आश्रम पगु धारा ॥ ५ ॥ ❀
शबरी दीख राम गृह आये ॥ मुनिके बचन समुझि जिय भाये ॥ ६ ॥ ❀

परम उदास प्रभु उसे अपनी गति दे, फिर शबरीके आश्रम पधारे ॥ ५ ॥ जब शबरीने जाना कि, प्रभु घरपर आये हैं तौ मुनि मतंगके वचन समझ, वह मनमें प्रसन्न हुई ॥ ६ ॥

सरसिजलोचन बाहु बिशाला ॥ जटा मुकुट शिर उर बनमाला ॥ ७ ॥
श्याम गौर सुंदर दोउ भाई ॥ शबरी परी चरण लपटाई ॥ ८ ॥ ❀

---

१ शबरी ऋषिके आश्रममें पंपासरोवरके निकट रहती थी. ऋषिकी इसपर पूर्ण कृपा थी; जब ऋषि परमधाम जाने लगे तब इसनेभी साथ चलनेकी प्रार्थना करी, तब मुनिने कहा कि–यहां आश्रममें त्रिलोकीनाथ श्रीरामचन्द्र पधारनेवाले हैं इसलिये तू यहीं रह. जब सुखधाम श्रीराम आ जाँय तब उनका सत्कार कर फिर तू स्वर्गमें आ जाइयो. ऐसे कह मुनि तो परमधाम चले गये. शबरी रामचन्द्र आनन्दकन्दकी राह देखे आश्रममें रहनेलगी. हमेशा फल फूल आदि लाय, पर्णकुटीमें रख छोड़े और प्रभुकी राह देखा करे. जब सांझ हो जाय और प्रभुको आते न देखे तब निराश हो फल खाय सो रहा करे. ऐसे करते दश हजार वर्ष बीत गये, जब प्रभु पधारे तब प्रभुका सत्कार कर मुनिकी आज्ञानुसार देहको त्याग शबरी परमपदको प्राप्त हुई.

कैसे है ? कि, जो कमलनयन, विशाल बाहु, शिरपर जटा मुकुट धारण किये, वक्षःस्थल विषे वनमाला पहिरे ॥ ७ ॥ श्याम और श्वेत बरन, ऐसे सुंदर दोनों भाइयोंके दर्शन कर, शबरी चरणोंमे पड़ लपट गई ॥ ८ ॥

प्रेममगन मुख बचन न आवा ॥ पुनि पुनि पदसरोज शिर नावा ॥ ९ ॥
सादर जल लै चरण पखारे ॥ पुनि सुन्दर आसन बैठारे ॥ १० ॥ ❋

हे पार्वती ! वह प्रेममगन हो गयी है. मुहंसे वचन नहीं आता है. बारंबार चरणकमलोंमें शिर नवाती है ॥ ९ ॥ फिर उसने जल ले आदरसहित पांव पखारे और सुन्दर आसनपर बिठाये ॥ १० ॥

दोहा–कन्द मूल फल सरस अति, दिये रामकहँ आनि ॥ ❋
प्रेमसहित प्रभु खायउ, बारहिँ बार बखानि ॥ ५७ ॥ ❋

और अति सरस कंद मूल फल प्रभुको ला दिये. जो प्रभुने प्रीतिके साथ बारंबार बखान कर खाये ॥ ५७ ॥

पाणि जोरि आगे भइ ठाढ़ी ॥ प्रभुहिँ बिलोकि प्रीति अतिबाढ़ी ॥ १ ॥ ❋
केहिविधि अस्तुति करौं तुम्हारी ॥ अधमजाति मैं जड़मति भारी ॥ २ ॥

हे पार्वती ! वह हाथ जोड़, साम्हने खड़ी रही. तब प्रभुके दर्शन कर, उसके मनमें अतिशय प्रीति बढ़ी ॥ १ ॥ शबरी कहती है कि–हे प्रभु ! मैं आपकी स्तुति किसप्रकार करूं ? क्योंकि मैं तो महा अधम जाति और महामंदबुद्धि स्त्री हूं ॥ २ ॥

अधमते अधम अधम अतिनारी ॥ तिनमहँ मैं अतिमंद गँवारी ॥ ३ ॥ ❋
कह रघुपति सुनु भामिनि बाता ॥ मानौं एक भक्तिकर नाता ॥ ४ ॥ ❋

प्रथम तो स्त्री जातिही ऐसी है कि, जो अधमसेभी अधम है. तिस करतेभी अतिअधम है और मैं तो फिर उनमेभी महामन्द गंवारन हूं ॥ ३ ॥ शबरीकी यह बात सुन, प्रभुने कहा कि–हे भामिनी ! सुन, मैं केवल एक भक्तिका संबंधही मानता हूं दूसरा मानताही नहीं ॥ ४ ॥

जाति पांति कुलधर्म बड़ाई ॥ धन बल परिजन गुण चतुराई ॥ ५ ॥ ❋
भक्तिहीन नर सोहैं कैसे ॥ बिनुजल बारिद देखिय जैसे ॥ ६ ॥ ❋

हे शबरी ! जिस पुरुषमें जाति, पांति, कुल, धर्म, बड़ाई, धन, बल, परिवार, गुण और चतुराई आदि ॥ ५ ॥ सब हैं और मेरी भक्ति नहीं है तो वह मनुष्य कैसा है ? कि, जैसे जलहीन बादलका दीखना ॥ ६ ॥

"नवधा भक्ति कहौं तोहिँ पाहीं ॥ सावधान सुनु धरु मनमाहीं ॥ ७ ॥ ❋
प्रथम भक्ति सन्तन कर संगा ॥ दूसरि रति मम कथाप्रसंगा ॥ ८ ॥ ❋

हे शबरी ! अब मैं तुझसे नवप्रकारकी भक्ति कहता हूं सो तू मन लगाय सावधान होकर सुन ॥ ७ ॥ संतलोगोंका सत्संग करना यह प्रथम भक्ति है. मेरी कथाप्रसंगमें प्रीति करना यह दूसरी भक्ति है ॥ ८ ॥

दोहा–गुरुपदपंकज सेवा, तीसरि भक्ति प्रमाण ॥ ❋
चौथी भक्ति मम गुणगण, करै कपट तजि गान ॥ ५८ ॥ ❋

गुरुके चरणकमलकी सेवा करनी यह तीसरी भक्ति है. कपटको तजकर मेरे गुणगण गाना यह चौथी भक्ति है ॥ ५८ ॥

मंत्र जाप मम दृढ़ विश्वासा ॥ पंचम भजन सो वेद प्रकाशा ॥ १ ॥ ❋
षट दम शील बिरत बहुकर्मा ॥ निरत निरन्तर सज्जन धर्मा ॥ २ ॥ ❋

मेरेमें दृढ़ विश्वास रखकर, मंत्र जपना और मेरा भजन करना यह पांचवीं भक्ति वेदमें कही है ॥ १ ॥ मनोनिग्रह, सुशीलता, वैराग्य, वर्णाश्रमधर्म और सत्पुरुष होके धर्ममे सदा तत्पर रहना यह छठी भक्ति है ॥ २ ॥

सतईं सब मोहिँमय जग देखै ॥ मोते सन्त अधिक करि लेखै ॥ ३ ॥ ❋
अठईं यथालाभ सन्तोषा ॥ सपनेहुँ नहिँ देखै परदोषा ॥ ४ ॥ ❋

सब जगत्को मद्रूप करके देखना और सत्पुरुषोंको मुझसेभी अधिक करके मानना यह सातवीं भक्ति है ॥ ३ ॥ जो मिले उतनेमें संतोष रखना और स्वप्नमेंभी पराया दोष न देखना यह आठवीं भक्ति है ॥ ४ ॥

नवमसरल सबसों छलहीना ॥ मम भरोस हिय हर्ष न दीना ॥ ५ ॥ ❋
नवमहँ एको जिन्हके होई ॥ नारि पुरुष सचराचर कोई ॥ ६ ॥ ❋

सबके साथ सरल रीतिसे वर्तना, कपट न करना, मेरा भरोसा रखना, मनमें हुलास रखना, दीनता न रखनी, यह नवमी भक्ति है ॥ ५ ॥ हे भामिनी ! जिनके नवधा भक्तिमेंसे एक प्रकारकीभी भक्ति होवे वह स्त्री पुरुष वा हरएक चराचर जीव जन्तु ॥ ६ ॥

सो अतिशय प्रिय भामिनी मोरे ॥ सकल प्रकार भक्ति दृढ तोरे ॥ ७ ॥ ❋
योगिवृन्द दुर्लभ गति जोई ॥ तोकहँ आजु सुलभ भइ सोई ॥ ८ ॥ ❋
मम दर्शन फल परम अनूपा ॥ जीव पाव निज सहज स्वरूपा ॥ ९ ॥ ❋

मुझे बहुत प्रिय लगता है. सो वह भक्ति तेरे सब प्रकारसे दृढ़ है ॥ ७ ॥ हे शबरी ! जो गति योगीजनोंको दुर्लभ है वह गति आज तेरे लिये सुलभ हो गई है ॥ ८ ॥ हे भामिनी ! मेरे दर्शनका सर्वोत्तम फल यही है कि, जीव अपने सहज स्वरूपको प्राप्त हो जावे ॥ ९ ॥

दोहा–सब प्रकार तव भक्ति दृढ़, मम चरणन्ह अनुराग ॥ ❋
तव महिमा जेहिँ उर बसिहि, तासु परम बड़ भाग ॥ ५९ ॥ ❋

हे शबरी ! तेरी भक्ति सब प्रकारसे दृढ़ है और मेरे चरणोंमें तेरी पूर्ण प्रीति है. सो तेरी महिमा जिसके मनमें बसेगी उसका बड़ा भाग समझना चाहिये ॥ ५९ ॥

सुनि शुभ बचन हर्ष कहँ पाई ॥ पुनि बोले प्रभु गिरा सुहाई ॥ १ ॥ ❋
जनकसुताके सुधिहै भामिनि ॥ जानिहुँ तौ कहु करिबरगामिनि ॥ २ ॥ ❋

प्रभुके शुभ वचन सुन, शबरी आनंदको प्राप्त हुई. तब प्रभु फिर मधुर वाणीसे बोले ॥ १ ॥ हे भामिनी ! जो तुझे सीताकी खबर होवे और तू जानती होवे तौ हे गजगामिसी ! कह ॥ २ ॥

पंपासरहिँ जाहु रघुराई ॥ मुनिबर बिपुल रहे जहँ छाई ॥ ३ ॥ ❋
ऋषि मतंग महिमा गुण भारी ॥ जीव चराचर रहत सुखारी ॥ ४ ॥ ❋

यह सुन, शबरीने कहा कि–हे रघुराज ! आप पंपासरोवर पधारो कि, जहां बहुतसे मुनिलोग छा रहे है ॥ ३ ॥ महाराज ! मतंग ऋषिकी महिमा और गुण बड़े भारी है. उनके प्रतापसे सब चराचर जीव सुखी रहते है ॥ ४ ॥

बैर न कर काहूसन कोई ॥ जासन बैर प्रीति करु सोई ॥ ५ ॥ ❋
शिखर सुहावन कानन फूले ॥ खग मृग जीव जंतु अनुकूले ॥ ६ ॥ ❋

कोई किसीके साथ विरोध नहीं करता है. जो परस्पर विरोधी हैं उन्होंनेभी वैरभाव त्याग दिया है ॥ ५ ॥ पर्वतके शिखरपर सुन्दर वन फूल रहे है. पशु पक्षी जीवजन्तु सब अनुकूल हैं ॥ ६ ॥

करहु सफल श्रम सबकर जाई ॥ तहाँ होइ सुग्रीव मिताई ॥ ७ ॥ ❋
सो सब कहिहि देव रघुबीरा ॥ जानतहूँ पूंछत मतिधीरा ॥ ८ ॥ ❋
बार बार प्रभुपद शिर नाई ॥ प्रेमसहित सब कथा सुनाई ॥ ९ ॥ ❋

सो हे प्रभु ! आप वहां पधार कर, सबका श्रम सफल करो. वहां आपकी सुग्रीवके साथ मित्रता हो जायगी ॥ ७ ॥ हे देव ! वह आपको समाचार कहेगा. हे धीरबुद्धि हे नाथ ! आप सब जानते हो मुझे क्या पूंछते हो ? ॥ ८ ॥ शबरीने बारंबार प्रभुके चरणोंमे शिर नवायके प्रेमके साथ सब कथा कही ॥ ९ ॥

छंद–कहि कथा सकल बिलोकि हरिमुख हृदय पदपंकज धरे ॥ ❋
तजि योग पावक देह हरिपदलीन भइ जहँ नहिँ फिरे ॥ ❋
नर बिबिध कर्म अधर्म बहुमत शोकप्रद सब त्यागहू ॥ ❋
बिश्वास करि कह दास तुलसी रामपद अनुरागहू ॥ २६ ॥ ❋

हे पार्वती ! शबरी सब कथा कह, प्रभुके मुखारविंदको निरख उसे हृदयकमलके मध्य स्थापित कर, योगाग्निसे शरीरको तज, प्रभुके पदमें लीन व्है गई; कि, जहां गये पीछे फिर पीछा यह प्राणी फिरता नहीं है. तुलसीदासजी कहते है कि, हे मनुष्यो ! तुम अनेक प्रकारके कर्म धर्म अधर्म और बहुमत कि जो शोकके देनेवाले है उन सबको त्यागकर, प्रभुका भरोसा रक्खो और प्रभुके चरणोंमें प्रीति करो ॥ २६ ॥

दोहा–जातिहीन अघजन्ममय, मुक्त कीन्ह अस नारि ॥ ❋
महामन्द मन सुख चहसि, ऐसे प्रभुहिं बिसारि ॥ ६० ॥ ❋

देखो यह स्त्री (शबरी) नीच जाति और पापरूप जन्मवाली थी परंतु प्रभुने ऐसी स्त्रीकाभी मोक्ष कर दिया. अरे महामंद मन ! ऐसे दीन दयालु पतित पावन प्रभुको तजकर तूं सुख चाहता है. धिक्कार है तुझे ॥ ६० ॥

चले राम त्यागा बन सोऊ ॥ अतुलित बल नरकेहरि दोऊ ॥ १ ॥ ❋
बिरही इव प्रभु करत बिषादा ॥ कहत कथा अनेक सम्बादा ॥ २ ॥ ❋

प्रभु उस वनकोभी छोड़कर आगे चले हैं. हे पार्वती ! वे दोनों भाई पुरुषसिंह हैं. उनके बलका कुछ पारावार नहीं है ॥ १ ॥ जैसे विरहानलसे तपा हुआ पुरुष विषाद करता है ऐसे प्रभु विषाद करते हैं और अनेक कथा संवाद कहते हैं ॥ २ ॥

लक्ष्मण देखहु कानन शोभा ॥ देखत केहिकर मन नहिँ क्षोभा ॥ ३ ॥ ❋
नारि सहित सब खग मृग वृन्दा ॥ मानहुँ मोरि करतहैं निन्दा ॥ ४ ॥ ❋

प्रभु कहते है कि–हे लक्ष्मण ! इस बनकी शोभा देख, इसको देखकर किसका मन चलायमान नहीं होता? ॥ ३ ॥ ये सब पशु पक्षियोंके झुंड अपनी २ स्त्रियोंके साथ बैठे हुए मानों मेरी निंदा कर रहे है ॥ ४ ॥

हमहिँ देखि मृगनिकर पराहीं ॥ मृगी कहहिँ तुमकहँ भय नाहीं ॥ ५ ॥ ❋
तुम आनन्द करहु मृग जाये ॥ कंचनमृग खोजन ये आये ॥ ६ ॥ ❋

हमें देखकर हरिणोंका झुंड तो भागता है और हरिणी उसे समझाती है कि तुम क्यों भागते हो ? तुम्हें कुछ डर नहीं है॥५॥हे मृगकुमारो ! तुम खूब आनंद करो ये तो सुवर्णका हरिण ढूंढ़ने आये हे॥६॥

संग लाइ करिणी करि लेहीं ॥ मानहु मोहिँ सिखावन देहीं ॥ ७ ॥ ❋
शास्त्र सुचिन्तित पुनि पुनि देखिय ॥ भूप सुसेवित बस नहिँ लेखिय ॥८॥

देखो, हाथी हथिनीको अपने संगमें लिये है. सो मानो मुझे शिक्षा देता है कि तुमने सीताका परित्याग क्यों किया ? ॥ ७ ॥ हे भाई ! यह नीति है कि, शास्त्रको बारंबार विचारते रहना चाहिये, और राजाको भलीभांति सेवनेपरभी अपने वश नहीं जानना चाहिये ॥ ८ ॥

राखिय नारि यदपि उरमाहीं ॥ युवती शास्त्र नृपति बस नाहीं ॥ ९ ॥ ❋
देखहु तात बसन्त सुहावा ॥ प्रियाहीन मोहिँ भय उपजावा ॥ १० ॥ ❋

ऐसेही स्त्रीको चाहे छातीमें लगाये रखते है तौभी एकवार छूटि तो गई; क्योंकि तरुण स्त्री, शास्त्र और राजा, ये काबूमें नहीं रहते ॥ ९ ॥ हे तात ! देख तो सही. यह सुहावना वसंतराजभी आज मुझे प्रियासे बिछुरा देख भय उपजाता है ॥ १० ॥

दोहा–बिरहबिकल बलहीन मोहिँ, जानेसि निपट अकेल ॥ ❋
सहित बिपिन मधुकर खगन्ह, मदन कीन्ह बगमेल ॥ ६१ ॥ ❋

मुझे निपटही विरहसे व्याकुल व बलहीन और अकेला समझकर, कामदेवनेभी वन, भ्रमर और पक्षीगणोंके साथ बगमेल चढ़ाई कर दीनी है ॥ ६१ ॥

देखि गये भ्रातासहित, तासु दूत निजबात ॥ ❋
डेरे दीन्हेउ मनहुँ तिन्ह, कटक हटकि नहिँ जात ॥ ६२ ॥ ❋

हे तात ! उस कामदेवका खास दूत बयार तुम्हारे साथ मुझे देख गया है और उसने जाकर कामदेवसे कहा है कि– रामकेसाथ उनका भाई बड़ा बलवान् है, मानों यह सुनके कामदेवने अपने डेरे डाल दिये हैं; क्योंकि उसकी कटकसे तुम हटके नहीं जाते हो ॥ ६२ ॥

बिपट बिशाल लता अरुझानी ॥ बिबिधबितान दिये जनु तानी ॥ १ ॥ ❋
कदलि ताल बर ध्वजा पताका ॥ देखि न मोह धीर मन जाका ॥ २ ॥ ❋

हे भाई ! विशाल वृक्षोंके अंदर जो लतायें अरुझ रहीं हैं और छत्राकार बन रहीं हैं सोही तो मानों अनेक प्रकारके खीमे तंबू और वितान तान रक्खे हैं ॥ १ ॥ ताल हैं सोही ध्वजा हैं.केलेके पेड़ हैं सोही पताका हैं.हे भाई! उनको देखकर वही मनुष्य मोहित नहीं होता है कि जिसका मनधीरजवाला है॥२॥

बिबिध भांति फूले तरु नाना ॥ जनु बानैत बने बहु बाना ॥ ३ ॥ ❋

कहुँ कहुँ सुन्दर बिटप सुहाये ॥ जनु भट बिलग बिलग होइ छाये ॥ ४ ॥ ❀

जो अनेक प्रकारके वृक्ष फूल रहे है सोही मानों सुन्दर बानैत खड़े हैं. डगाली है सोही धनुष है. फूल है सोही बहुतसे बाण हैं ॥ ३ ॥ कहीं कहीं जो जुदे जुदे पेड़ खड़े है सो ऐसे मालूम होते हैं कि, मानों सुभट लोक अलग अलग डेरा करके छा रहे हैं ॥ ४ ॥

कूजत पिक मानहुँ गज माते ॥ ढेक महोख ऊँट बिषराते ॥ ५ ॥ ❀

मोर चकोर कीर बर बाजी ॥ पारावत मराल सब ताजी ॥ ६ ॥ ❀

जो मधुर स्वर कोकिला कूजती हैं सोही मानों मस्त हाथी बोलते हैं. जो ढेक पक्षी हैं सोही ऊंटोकी तरह है. महोक पक्षी है सोही खच्चर हैं ॥ ५ ॥ मोर, चकोर और सुआ जो हैं सोही मानों जाति जातिके घोड़े हैं. कबूतर और हंस जो हैं सोही मानों ताजी जातके घोड़े हैं ॥ ६ ॥

तीतर लावा पदचर यूथा ॥ बरणि न जाइ मनोज बरूथा ॥ ७ ॥ ❀

रथ गिरि शिला दुन्दुभी झरना ॥ चातक बन्दी गुणगण बरना ॥ ८ ॥ ❀

तीतर और लावा (बटेर) पक्षी जो हैं सोही मानों पयादोंका झुंड है. हे भाई ! कामदेवकी सेना ऐसी बनी है कि, कुछ बरनी नहीं जाती ॥ ७ ॥ पर्वतोंकी शिला हैं सोही रथ हैं. झरने है सोही नगारे हैं. पपीहे है सोही गुणगण गानेवाले बन्दीजन है ॥ ८ ॥

मधुकर मुखर भेरि सहनाई ॥ त्रिबिध बयारि बसीठी आई ॥ ९ ॥ ❀

चतुरंगिनी सेन सब लीन्हे ॥ बिचरत सबहिँ चुनौती दीन्हे ॥ १० ॥ ❀

भौंरे जो गुंजारव कर रहे हैं सोही भेरी और सहनाई हैं शीतल सुगंध मंद तीन प्रकारकी बयार आती है सोही मानो कामदेवका दूत है ॥ ९ ॥ इसप्रकार कामदेवने चतुरंगिणी सब सेना लीनी है और सबको चुनौती देता यानी जो सुभट हो सो हमारे सोंही आवे ऐसे प्रचारता विचारता है॥ १० ॥

लक्ष्मण देखहु काम अनीका ॥ रहहिँ धीर तिन्हकै जग लीका ॥ ११ ॥ ❀

यहिके एक परम बल नारी ॥ तेहिते उबर सुभट सोइ भारी ॥ १२ ॥ ❀

हे लक्ष्मण ! कामदेवकी सेनाको देख,जो धीर पुरुष इससे बचकर रहते है उनकी जगत्में धीर पुरुषोंमे लीक यानी नाम गिना जाता है ॥ ११ ॥ हे भाई ! इसके एक स्त्री बड़ा भारी बल है उससे जो बच जाता है वह बड़ा भारी सुभट कहलाता है ॥ १२ ॥

दोहा–तात तीनि अतिप्रबल खल, काम क्रोध अरु लोभ ॥ ❀

मुनि बिज्ञान धाम मन, करहिँ निमिषमहँ क्षोभ ॥ ६३ ॥ ❀

लोभके इच्छा दम्भ बल, कामके केवल नारि ॥ ❀

क्रोधके पुरुष बचन बल, मुनिबर कहहिँ बिचारि ॥ ६४ ॥ ❀

हे तात ! काम क्रोध और लोभ ये तीन खल बड़े प्रबल हैं. ये जो मुनि विज्ञानके भंडार हैं उनके मनकोभी एक क्षणभरमें क्षोभित कर देते हैं ॥ ६३ ॥ हे भाई ! मुनिलोग विचारकर ऐसे कहते हैं कि–लोभके इच्छा और दम्भका बड़ा भारी बल है कामके स्त्रीका अद्वितीय बल है और क्रोधके कठोर वचनका मुख्य बल है ॥ ६४ ॥

गुणातीत सचराचर स्वामी ॥ राम उमा सब अन्तरयामी ॥ १ ॥ ❀

कामिनकी दीनता दिखाई ॥ धीरनके मन बिरति दृढाई ॥ २ ॥ ❀

महादेवजी कहते है कि, हे पार्वती ! प्रभु [illegible] पर है. सब चराचर जगत्के स्वामी है और सबके अंतर्यामी है ॥ १ ॥ प्रभुका जो यह चरित्र है सो कामी पुरुषोंकी दीनता दिखानेके वास्ते और धीर पुरुषोंका वैराग्य दृढ़ करनेके वास्ते है ॥ २ ॥

क्रोध मनोज लोभ मद माया ॥ छूटहिँ सकल रामकी दाया ॥ ३ ॥ *
सो नर इन्द्रजाल नहिँ भूला ॥ जापर होइ सो नट अनुकूला ॥ ४ ॥ *

हे भवानी ! काम, क्रोध, लोभ, मद और माया ये सब जब प्रभुकी कृपा होती है तब छूट जाते है ॥ ३ ॥ हे पार्वती ! जिस नटने इंद्रजाल बनाया है और वही नट जिस आदमीपर अनुकूल है, क्या वह आदमी इंद्रजालमें भूला पड़ जायगा ? कभी नहीं ॥ ४ ॥

उमा कहौं मैं अनुभव अपना ॥ हरिको भजन सत्य जग सपना ॥ ५ ॥
पुनि प्रभु गये सरोवर तीरा ॥ पंपा नाम शुभग गम्भीरा ॥ ६ ॥ *

हे पार्वती ! अब मैं अपना अनुभव कहता हूं सो सुन. यहां प्रभुका भजनही तो सत्य है बाकी सब जगत सुपनके समान है ॥ ५ ॥ हे पार्वती ! फिर प्रभु पंपासरोवरके तटपर पधारे कि जो बहुत सुन्दर अतिशय गंभीर है ॥ ६ ॥

सन्त हृदय जस निर्मल बारी ॥ बांधे घाट मनोहर चारी ॥ ७ ॥ *
जहँ तहँ पियहिं बिबिध मृग नीरा ॥ जनु उदार गृह याचक भीरा ॥ ८ ॥

जिसमें सत्पुरुषोंके मनके जैसा स्वच्छ जल भरा है और चारों ओर सुन्दर घाट बंधे हुए है ॥ ७ ॥ जहां तहां अनेक प्रकारके हरिण जल पी रहे है. सो कैसे मालूम होते है कि, मानौं दाता पुरुषके घर-पर याचक लोगोंकी भीड़ हो रही है ॥ ८ ॥

दोहा–पुरइनि सघन ओट जल, बेगि न पाइय मर्म ॥ *
मायाछन्न न देखिये, जैसे निर्गुण ब्रह्म ॥ ६५ ॥ *

सघन पुरइन छा रही तिसकी ओटमें जलका भेद तुर्त कैसे जाननेमें नहीं आता है कि जैसे मायासे आच्छादित निर्गुण ब्रह्म तुरंत देखनेमें नहीं आता है ॥ ६५ ॥

सुखी मीन सब एकरस, अति अगाध जलमाहिँ ॥ *
यथा धर्म शीलान्हके, दिन सुखसंयुत जाहिँ ॥ ६६ ॥ *

अत्यंत गहरे जलके भीतर सब मछलियां कैसे एकरस सुखी है कि, जैसे धर्मशील पुरुषोंके दिन सदा सुखसहित व्यतीत होते हैं ॥ ६६ ॥

बिकसे सरसिज नाना रंगा ॥ मधुर सुखद गुंजत बहु भृंगा ॥ १ ॥ *
बोलत जलकुक्कुट कलहंसा ॥ प्रभु बिलोकि जनु करत प्रशंसा ॥ २ ॥ *

रंग रंगके कमल विकस रहे हैं. तिनमें बहुतसे भौंरे सुखदायी मधुर स्वरसे गुंज रहे हैं ॥ १ ॥ जलकुक्कुट और राजहंस बोलते ऐसे प्रतीत होते हैं कि मानों प्रभुके दर्शन कर प्रभुकी प्रशंसाही करते हैं॥२॥

चक्रबाक बक खग समुदाई ॥ देखत बनै बरणि नाहिँ जाई ॥ ३ ॥ *
सुन्दर खगगणगिरा सुहाई ॥ जात पथिक जनु लेत बुलाई ॥ ४ ॥ *

चक्रवाक और बगुलोंके झुंड ऐसे सुन्दर दीखते हैं कि, जो देखेही बनि आवे,बरने नहीं जाते ॥३॥ पक्षीगण सुन्दर सुहावनी वाणी क्या बोलत हैं ? मानों रस्ते जाते बटोहियोंको बुला लेते हैं ॥ ४ ॥

ताल समीप मुनिन्ह गृह छाये ॥ चहुँदिशि कानन बिपट सुहाये ॥ ५ ॥ ❀
चम्पक बकुल कदम्ब तमाला ॥ पाटल पनस पलास रसाला ॥ ६ ॥ ❀

तालवृक्षोंके समीप मुनि लोगोंकी कुटियां बन रही है. चारों ओर सुन्दर वृक्षोंका वन आगया है ॥ ५ ॥ चंपा, बकुल, कदंब, तमाल, गुलाब, पनस, पलास, आम ॥ ६ ॥

नवपलव कुसुमित तरु नाना ॥ चंचरीक पटली कर गाना ॥ ७ ॥ ❀
शीतल मन्द सुगन्ध सुभाऊ ॥ सन्तत बहै मनोहर बाऊ ॥ ८ ॥ ❀
कुहू कुहू कोकिल धुनि करहीं ॥ सुनि रव सरस ध्यान मुनि टरहीं ॥ ९ ॥

आदि नाना प्रकारके वृक्ष नवीन पल्लव और फूलोंसे शोभायमान हो रहे है. भौंरोंका झुंड मधुर गान कर रहा है ॥ ७ ॥ स्वभावसे शीतल सुगंध मंद त्रिविध बयार निरंतर बह रही है ॥ ८ ॥ कोकिला "कुहू कुहू" ऐसे ध्वनि करती है जिस सरसशब्दको सुन, मुनिलोगोंके ध्यान छूटजाते है ॥ ९ ॥

दोहा—फूले फले बिटप सब, रहे भूमि नियराइ ॥ ❀
पर उपकारी पुरुष जिमि, नवहिँ सुसंपति पाइ ॥ ६७ ॥ ❀

फूले और फल हुए सब वृक्ष पृथ्वीको कैसे नियराय रहे है और नव रहे है कि, जैसे परोपकारी पुरुष अच्छी संपदाको पाकर नवा करते है ॥ ६७ ॥

देखि राम अति रुचिर तलावा ॥ मज्जन कीन्ह परम सुख पावा ॥ १ ॥ ❀
देखी सुन्दर तरुवर छाया ॥ बैठे अनुजसहित रघुराया ॥ २ ॥ ❀

हे पार्वती ! प्रभुने अति सुन्दर तालावको देखकर, उसमें स्नान किया और परम आनन्द पाया ॥ १ ॥ फिर सुन्दर वृक्षकी अच्छी छाया देखकर, प्रभु लक्ष्मणके साथ पेड़के तले विराजे ॥ २ ॥

तहँ पुनि सकल देव मुनि आये ॥ अस्तुति करि निजधाम सिधाये ॥ ३ ॥
बैठे परम प्रसन्न कृपाला ॥ कहत अनुज सन कथा रसाला ॥ ४ ॥ ❀

वहां सब देवता और मुनि आये और प्रभुकी स्तुति कर पीछे अपने अपने लोकको चले गये ॥ ३ ॥ दयालु प्रभु अतिशय प्रसन्नताके साथ विराजे है और भाईसे रसीली सुन्दर कथा कहते हैं ॥ ४ ॥

बिरहवन्त भगवन्तहिँ देखी ॥ नारद मन भा शोच बिशेखी ॥ ५ ॥ ❀
मोर शाप करि अंगीकारा ॥ सहत राम नाना दुखभारा ॥ ६ ॥ ❀

हे पार्वती ! प्रभुको विरहसे व्याकुल देख, नारदजीके मनमें बड़ा भारी शोच हुआ कि ॥ ५ ॥ मेरे श्रापको अंगीकार करके प्रभु अनेक प्रकारके दुःखका भार सहते हैं ॥ ६ ॥

ऐसे प्रभुहिँ बिलोकौं जाई ॥ पुनि न बनहि अस अँवसर आई ॥ ७ ॥ ❀
यह बिचारि नारद करवीना ॥ गये जहां प्रभु सुख आसीना ॥ ८ ॥ ❀

ऐसे प्रभुको जाकर अवश्य देखना चाहिये; क्योंकि ऐसा अवसर फिर बननेका नहीं है ॥ ७ ॥ ऐसा विचार कर, हाथमें वीणा ले, नारदजी वहां गये कि जहां प्रभु सुखसे विराजे थे ॥ ८ ॥

गावत रामचरित मृदु बानी ॥ प्रेमसहित बहु भांति बखानी ॥ ९ ॥ ❀
करत दण्डवत लिये उठाई ॥ राखे बड़ी बार उर लाई ॥ १० ॥ ❀
स्वागत पूंछि निकट बैठारे ॥ लक्ष्मण सादर चरण पखारे ॥ ११ ॥ ❀

नारदजी मधुर व कोमल वाणीसे रामचरित्रको गाते है और प्रेमके साथ अनेक प्रकारसे बखानते है ॥९॥ऐसे प्रभुके समीप जा, नारदजीने दंडवत किया तब प्रभुने उठाकर उनको छातीसे लगाया और बड़ी बेरतक छातीसे लगाये रक्खा ॥ १० ॥ फिर स्वागत पूंछकर अपने पास बिठाय और लक्ष्मणने आदरके साथ चरण धोये ॥ ११ ॥

दोहा—नाना बिधि बिनता करि, प्रभु प्रसन्न जिय जानि ॥ ❋
नारद बोले बचन तब, जोरि सरोरुह पानि ॥ ६८ ॥

अनेक प्रकारसे विनती कर, मनमें प्रभुको प्रसन्न जान, करकमल जोड़कर, नारदजी बोले कि—॥६८॥

सुनहु उदार परम रघुनायक ॥ सुन्दर अगम सुगम बरदायक ॥ १ ॥ ❋
देहु एक बर मागौं स्वामी ॥ यद्यपि जानहुँ अन्तरयामी ॥ २ ॥ ❋

हे परम उदार प्रभु ! सुनो- हे नाथ ! आप सुगमभी हो और अगमभी हो. हे सुन्दर ! आप वर देनेवालोंमें श्रेष्ठ हो ॥ १ ॥ हे स्वामी ! आप अंतर्यामी हो सो सब जानतेहो तौभी मैं एक वरदान मांगता हूं सो मुझे देओ ॥ २ ॥

जानहुँ मुनि तुम मोर सुभाऊ ॥ जन सन कबहुँ कि करौं दुराऊ ॥ ३ ॥ ❋
कवन वस्तु अस प्रिय मोहिँ लागी ॥ जो मुनिवर न सकहु तुम माँगी ॥४॥

नारदजीका वचन सुन प्रभुने कहा कि—हे नारदजी ! आप मेरे स्वभावको भली भांति जानते हो कि, मैं भक्तके पास कभी कपट नहीं करता हूं ॥ ३ ॥ हे मुनि ! मुझे ऐसी कौन वस्तु प्यारी है ? कि हे मुनिवर ! जिसे तुम मांग नहीं सकते हो ॥ ४ ॥

जन कहँ कछु अदेय नहिँ मोरे ॥ अस बिश्वास तजहु जनि भोरे ॥ ५ ॥ ❋
तब नारद बोले हरषाई ॥ अस बर मागौं करौं ढिठाई ॥ ६ ॥ ❋

मेरे भक्तजनोंको न देनेलायक कोई चीज नहीं है. सो ऐसे विश्वासको आप कभी भूलकरभी मत छोड़ो ॥ ५ ॥ प्रभुके वचन सुन, आनंदित हो नारदजी बोले कि, हे प्रभु ! मैं ढिठाई करके ऐसा वर मांगता हूं सो देओ ॥ ६ ॥

यद्यपि प्रभुके नाम अनेका ॥ श्रुति कह अधिक एकते एका ॥ ७ ॥ ❋
राम सकल नामन्हते अधिका ॥ होहु नाथ अघखगगण बधिका ॥ ८ ॥ ❋

हे प्रभु ! यदपि आपके नाम अनेक हैं और वेदभी ऐसे कहता है कि वे नाम एकसे एक अधिक हैं ॥ ७ ॥ तौभी राम नाम सब नामोंकरते अधिक हो जाय कि, जो पापरूप पक्षियोंका नाश करनेके लिये साक्षात् बहेलियारूप है ॥ ८ ॥

दोहा—राका रजनी भक्ति तव, रामनाम सोइ सोम ॥ ❋
अपर नाम उडुगण बिमल, बसहु भक्ति उरव्योम ॥ ६९ ॥ ❋

हे प्रभु ! आपकी भक्ति है सोही तो पूर्णचंद्रमावाली पूर्णिमासीकी रात्रि है. रामनाम है सोही चंद्रमा है. और दूसरे नाम हैं सो निर्मल तारे हैं और भक्तका जो हृदय है सोही आकाश है. सो हे प्रभु! कृपा कर उन सबके साथ आप उसमें सदा विराजो ॥ ६९ ॥

एवमस्तु मुनिसन कहेउ, कृपासिंधु रघुनाथ ॥ ❋
तब नारद मन हर्ष अति, प्रभुपद नायउ माथ ॥ ७० ॥ ❋

नारदजीके वचन सुन, कृपासिंधु प्रभुने नारदजीसे "एवमस्तु" कहा, तब नारदजी मनमें बड़े प्रसन्न हुए और प्रभुके चरणोंमें शिर नवाया ॥ ७० ॥

अति प्रसन्न रघुनाथहिँ जानी ॥ पुनि नारद बोले मृदुबानी ॥ १ ॥ ❋
राम जबहिँ प्रेरहु निजमाया ॥ मोहेहु मोहिँ सुनहु रघुराया ॥ २ ॥ ❋

हे पार्वती ! प्रभुको अत्यंत प्रसन्न जानकर, नारदजीने फिर कोमल वाणीसे कहा ॥ १ ॥ कि—हे प्रभु ! सुनो. जब आपने अपनी माया प्रेरी और मुझे मोहित कर लिया ॥ २ ॥

तब बिवाह चाहौं मैं कीन्हा ॥ प्रभु कहि कारण करै न दीन्हा ॥ ३ ॥ ❋
सुनु मुनि तोहिँ कहौं सह रोसा ॥ भजहिँ मोहिँ तजि सकल भरोसा॥४॥❋

हे प्रभु ! उससमय मैं हरभांति विवाह करना चाहता था पर आपने किसी कदर मुझे व्याह नहीं करने दिया. सो आपकी भक्तवत्सलताको कहांलों कहैं ? ॥ ३ ॥ यह सुन प्रभुने नारदजीसे कहा कि—हे मुनि ! जो मैं तुमको सत्यसंकल्पतासे कहता हूं सो सुनो. जो मनुष्य सब प्रकारके भरोसांको त्यागकर मुझे भजते है ॥ ४ ॥

करौं सदा तिन्हकी रखवारी ॥ जिमि बालकहिँ राख महतारी ॥ ५ ॥ ❋
गहि शिशु बच्छ अनल अहि धाई ॥ तहँ राखै जननी अरगाई ॥ ६ ॥ ❋

हे नारद ! उनकी मैं सदा ऐसे रक्षा करता हूं कि, जैसे माता बालककी रक्षा करती है ॥ ५ ॥ जैसे बहुत छोटा बालक अग्नि और सांपको पकड़ने दौड़ता है तब माता अपने हजारों कामोंको छोड़कर, उसे पकड़कर बचा लेती है और उसकी निरंतर रक्षा करती है ॥ ६ ॥

प्रौढ़ भये तेहि सुतपर माता ॥ प्रीति करै नहिँ पाछिल बाता ॥ ७ ॥ ❋
मोरे प्रौढ़ तनयसम ज्ञानी ॥ बालक सुतसम दास अमानी ॥ ८ ॥ ❋

और जब वही बालक बड़ा हो जाता है और उसे अग्नि सर्प आदिका ज्ञान हो जाता है तब माता पुत्रपर प्रीति तौ रखती है पर पिछली बात यानी सर्प अग्नि आदिसे बचानेकी चेष्टा छोड़ देती है ॥ ७ ॥ हे नारद ! ज्ञानी है सो तौ मेरे प्रौढ़ पुत्रोंके समान है. और मानरहित जो दास है वे बालक पुत्रके समान है. जैसे माता बालक पुत्रकी अग्नि सर्प आदिसे करोड़ों काम छोड़ रक्षा करती है ऐसे मैं अमानी दासकी सर्वभांति रक्षा करता हूं. और प्रौढ़ पुत्रपर माता प्रीति करती है परंतु रक्षाकी कोई अवश्यकता नहीं ऐसे ज्ञानी मुझको प्रिय है परंतु उसकी रक्षा करनेकलिये मुझे चेष्टाकरनीनहीं पड़तीहै॥८॥

जिनहिँ मोर बल निजबल ताहीं ॥ दुहुँ कहँ काम क्रोध रिपु आहीं ॥९॥❋
यह बिचारि पंडित मोहिँ भजहीं ॥ पायहु ज्ञान भक्ति नहिँ तजहीं ॥१०॥

हे नारद ! काम और क्रोध दोनोंके शत्रु हैं. क्या तौ अमानी दासनके और क्या ज्ञानी जनोंके ? तहां अमानी दासोंके काम क्रोध तौ मेरे बलसे मिटते है यानी उनके काम क्रोध मैं बचा देता हूं. और ज्ञानीलोग काम क्रोध आदि शत्रुओंसे अपने आप अपने बलसे बचते हैं ॥ ९ ॥ हे नारद ! यह विचार कर पंडितलोग मुझे भजते हैं और ज्ञान पाने परभी भक्तिको नहीं तजते हैं ॥ १० ॥

दोहा—काम क्रोध लोभादिमद, प्रबल मोहकी धारि ॥ ❋
तिनमहँ अति दारुणदुखद, मायारूपी नारि ॥ ७१ ॥ ❋

हे नारद ! काम, क्रोध लोभ, मद आदि मोहकी बड़ी भारी सेना है और उनमेंभी फिर मायारूपी जो स्त्री है वह अत्यंत दारुण दुःखकी देनेवाली है ॥ ७१ ॥

१ गीता—ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम् । तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते ॥

सुनु मुनि कह पुराण श्रुति सन्ता ॥ मोह बिपिन कहँ नारि बसन्ता ॥ १ ॥
जप तप नेम जलाशय झारी ॥ होइ ग्रीष्म शोषै सब नारी ॥ २ ॥ ❀

प्रभु कहते हैं कि–हे नारद ! सुन.वेद, पुराण, और संतलोग ऐसे कहते है कि–मोहरूपी बनको प्र फुल्लित करनेको स्त्री है सो तौ वसंत है ॥ १ ॥ जप, तप, और नेम है सोही जलाशयका समुदाय है. तिसे सुखानेके लिये स्त्री ग्रीष्मऋतुके समान है ॥ २ ॥

काम क्रोध मद मत्सर भेका ॥ इनहिँ हर्षप्रद बरषा एका ॥ ३ ॥ ❀
दुर्बासना कुमुद समुदायी ॥ तिनकहँ शरद सदा सुखदायी ॥ ४ ॥ ❀

काम, क्रोध, मद और मत्सर (परायेका उत्कर्ष न सहना) ये है सोही मेंड़क है इनको आनंदित करनेके लिये स्त्री एक अलौकिक पावसरूप है ॥ ३ ॥ जो दुर्वासनाका समुदाय है सोही कुमुद (रात्रिविकासि कमल) है. तिनको सुख देनेके लिये स्त्री साक्षात शरदऋतुके समान है ॥ ४ ॥

धर्म सकल सरसीरुह वृन्दा ॥ होइ हिम तिन्हहिँ देति दुख मन्दा ॥ ५ ॥ ❀
पुनि ममता जवास बहुताई ॥ पलुहै नारि शिशिरऋतु पाई ॥ ६ ॥ ❀

जो सर्व प्रकारके धर्म है सोही कमलवन है. उसको मुर्झानेके लिये और दुख देनेके लिये मानों स्त्री हिमऋतुही है ॥ ५ ॥ हे नारद ! ममतारूपी जो जवासेकी बहुतायत है उसको पालनेके लिये स्त्री मानों शिशिरऋतुके समान है ॥ ६ ॥

पाप उलूक निकर सुखकारी ॥ नारि निबिड़ रजनी अँधियारी ॥ ७ ॥ ❀
बुधि बल शील सत्य सब मीना ॥ बंशी सम त्रिय कहहिँ प्रवीना ॥ ८ ॥

पापरूपी जो उलूक समुदाय है तिसको सुख देनेके लिये स्त्री मानो गाढ अँधियारी अमावसकी रात्रिके समान है ॥ ७ ॥ हे नारद ! बुद्धि बल, शील, और सत्य ये तौ सब मानों मीन है और उनका नाश करनेके लिये स्त्रीको प्रवीण लोग वंशी (मछली पकड़नेका काटा या सुइ) के समान कहते है ॥ ८ ॥

दोहा–अवगुणमूल शूलप्रद, प्रमदा सब दुखखानि ॥ ❀
तातें कीन्ह निबारण, मुनि मैं यह जिय जानि ॥ ७२ ॥ ❀

हे नारद ! स्त्री अवगुणोंकी मूल, पीड़ा देनेवाली और सर्व प्रकारके दुःखोंकी खान है. हे मुनि ! इस बातको मनमें विचार कर, मैंने तुमको स्त्रीसे बचाया है ॥ ७२ ॥

सुनि रघुपतिके बचन सुहाये ॥ मुनि तन पुलकि नयन भरि आये ॥ १ ॥
कहहु कवन प्रभुकी अस रीती ॥ सेवकपर ममता अति प्रीती ॥ २ ॥ ❀

हे पार्वती ! प्रभुके सुहावने वचन सुन, नारदजीका शरीर रोमांचित होगया. नेत्रोंमे जल भर आया ॥ १ ॥ महादेवजी कहते हैं कि–हे पार्वती ! कहो, ऐसी रीति कौनसे स्वामीकी है ? कि जो सेवकके ऊपर ऐसी ममता और प्रीति होनी ॥ २ ॥

जे न भजहिँ अस प्रभु भ्रम त्यागी ॥ ज्ञानरंक मतिमन्द अभागी ॥ ३ ॥ ❀
पुनि सादर बोले मुनि नारद ॥ सुनहु राम बिज्ञानबिशारद ॥ ४ ॥ ❀

जो मनुष्य ऐसे प्रभुको भ्रमको तजकर नहीं भजते उन्हें ज्ञानदरिद्री, मंदबुद्धि, और हतभाग्य सम-

रना चाहिये ॥ ३ ॥ हे पार्वती ! फिर नारदमुनिने आदरके साथ प्रभुसे कहा कि–हे विज्ञानविचक्षण राम ! सुनिये ॥ ४ ॥

सन्तन्हके लक्षण रघुबीरा ॥ कहहु राम भंजन भवभीरा ॥ ५ ॥ ❀
सुनु मुनि सन्तनके गुण कहऊँ ॥ जेहिते मैं उनके बश रहऊँ ॥ ६ ॥ ❀

हे संसारकी पीड़ा मिटानेहारे रघुवीर ! हे राम ! मुझे कृपा कर संत लोगोंके लक्षण कहो ॥ ५ ॥ नारदजीके वचन सुन प्रभुने कहा कि–हे नारद ! अब मैं संतजनोंके लक्षण कहता हूं सो सुनो कि, जिन गुणोंसे मैं उनके आधीन रहता हूं ॥ ६ ॥

षटविकार तजि अनघ अकामा ॥ सकल अकिंचन शुचि सखधामा॥७॥
अमित बोध परमारथ भोगी ॥ सत्वसार कबि कोबिद योगी ॥ ८ ॥ ❀
सावधान मदमानबिहीना ॥ धीर भक्त गति परम प्रबीना ॥ ९ ॥ ❀

हे नारद ! संतलोगोंके काम, क्रोध, लोभ,मोह,मद,और मत्सर ये छः विकार नहीं होते है. उनके पापका लवलेशभी नहीं होता है. किसी तरहकी कामना नहीं होती है.सर्व प्रकारका संग्रह नहीं करते है. शुद्धांतःकरण और सुखके घर होते है ॥ ७ ॥ उनके ज्ञानका कुछ प्रमाण नहीं हो सकता है.परमार्थ यानी मोक्षपदके भोक्ता होते है. सत्वगुणमे परायण, कवि कहे त्रिकालज्ञ और कोबिद ज्ञानी और अष्टांग योगके साधनवाले होते है ॥ ८ ॥ हे नारद ! संतलोग बड़े सचेत रहते है. उनके मद और मान नहीं होता है, बड़े धैर्यवाले, मेरे परमभक्त और परमगतिमें बड़े प्रवीण होते है ॥ ९ ॥

दोहा–गुणागार संसारदुख, रहित बिगत सन्देह ॥ ❀
तजि मम चरणसरोज प्रिय, तिन्हकहँ देह न गेह ॥ ७३ ॥ ❀

गुणोंके धाम और संसारके दुखसे रहित होते है. उनके कोई संदेह नहीं होता है. और मेरे चरणकमलको छोड़कर उनको अपना शरीर और घर कुछ प्रिय नहीं लगता है अर्थात् मेरे चरणोंमे उनकी दृढ़ प्रीति होती है ॥ ७३ ॥

निजगुण सुनत श्रवण सकुचाहीं ॥ परगुण सुनत अधिक हर्षाहीं ॥ १ ॥❀
सम शीतल नहिँ त्यागहिँ नीती ॥ सरल सुभाव सबहिँ सन प्रीती ॥ २ ॥

अपने गुणोंको तो कानोंसे सुनतेही सकुचा जाते है और पराये गुण सुनते हैं तब बड़े प्रसन्न होते है ॥ १ ॥ सदा समान व शीतल रहते है. कभी नीतिको नहीं त्यागते है. सरल स्वभाव होते है. सबोंके साथ प्रीति रखते है ॥ २ ॥

जप तप व्रत दम संयम नेमा ॥ गुरु गोविंद बिप्रपद प्रेमा ॥ ३ ॥ ❀
श्रद्धा क्षमा मइत्री दाया ॥ मुदिता ममपदप्रीति अमाया ॥ ४ ॥ ❀

जप, तप, व्रत, दम, संयम और नियम करते है. गुरु, गोविंद और ब्राह्मणके चरणमें प्रीति रखते है ॥ ३ ॥ श्रद्धा, क्षमा, मैत्री और दया इनसे आनंदित रहते हैं. और मेरे चरणोंमें निष्कपट प्रीति करते है ॥ ४ ॥

बिरति बिबेक बिनय बिज्ञाना ॥ बोध यथारथ बेद पुराना ॥ ५ ॥ ❀
दम्भ मान मद करहिँ न काऊ ॥ भूलि न देहिँ कुमारग पाऊ ॥ ६ ॥ ❀

वैराग्य, विवेक, विनय और विज्ञानको धारण करते हैं. तथा वेद व पुराणोंका अर्थ यथार्थ जानते हैं ॥ ५ ॥ दंभ (पाखंड), मान और मद कभी नहीं करते हैं. और कभी भूलकरभी कुमार्गमें पांव नहीं देते हैं ॥ ६ ॥

गावहिँ सुनहिँ सदा मम लीला ॥ हेतुरहित परहित रत शीला ॥ ७ ॥
सुनु मुनि साधुन्हके गुण जेते ॥ कहि न सकहिँ शारद श्रुति तेते ॥ ८ ॥

हमेशा मेरी लीलाओंको गाते हैं और सुनते है और निष्कारण परोपकार करनेमें उनका स्वभाव सदा परायण रहता है ॥ ७ ॥ हे नारद ! सुनो. सत्पुरुषोंके जितने गुण है उन सबको तो वेद और शारदाभी कह नहीं सकते ॥ ८ ॥

छंद–कहि सक न शारद शेष नारद सुनत पदपंकज गहे ॥
अस दीनबन्धु कृपालु अपने भक्तगुण निजमुख कहे ॥
शिर नाइ बारहिँ बार चरणन्ह ब्रह्मपुर नारद गये ॥
ते धन्य तुलसीदास आश बिहाइ जे हरि रँग रये ॥ २७ ॥

हे नारद ! सत्पुरुषोंके गुण शेष और शारदाभी कह नहीं सकते. प्रभुका यह वचन सुन, नारदजीने प्रभुके चरणकमल धरे और कहा कि–ऐसा दयालु और दीनबंधु कौन है कि, जो अपने भक्तोंके गुण अपने मुखसे कहै. महादेवजी कहते है कि–हे पार्वती ! प्रभुके चरणोंमे बारंबार शिर नवाय, नारदजी ब्रह्मलोकको गये. तुलसीदासजी कहते है कि–वे मनुष्य जगतमें बड़भाग्य है कि, जो सब आशाको छोड़कर प्रभुमें रंग रहे है ॥ २७ ॥

दोहा–रावणारियश पावन, गावहिँ सुनहिँ जे लोग ॥
रामभक्ति दृढ़ पावहीं, बिनु बिराग जप योग ॥ ७४ ॥

कवि कहता है कि–जो लोग सुखधाम श्रीरामका पावन यश गाते है और सुनते है. वे वैराग्य, जप और योग साधे विना प्रभुकी दृढ़ भक्ति पाते है ॥ ७४ ॥

दीपशिखासम युवतिजन, मन जनि होसि पतंग ॥
भजहिँ राम तजि काम मद, करहु सदा सतसंग ॥ ७५ ॥

हे मन ! स्त्रीजन दीपककी शिखाके समान है सो तू पतंग मत हो. जैसे पतंग दीपककी शिखाको देख, रूपसे मोहित हो, उसमें पड़कर मर जाता है ऐसे तू स्त्रीको निरख, उसके रूपसे मोहित होकर, नाशको प्राप्त मत हो. कवि कहता है कि–जो लोग काम और मदको तजकर सदा सत्संग करते है, वे प्रभुको निरंतर भजते है ॥ ७५ ॥

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमलविज्ञान-वैराग्यसन्तोषसम्पादनो नाम श्रीगोस्वामितुलसीदासजीकृत आरण्यकाण्डः तृतीयः सोपानः समाप्तः ॥ ३ ॥

इति श्रीरामचरित्रमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमलविज्ञानवैराग्यसंतोषसम्पादननामकस्य श्रीगोस्वामितुलसीदासकृतस्यारण्यकांडस्यरामश्यामविरचितभाषायां तृतीयः सोपनः समाप्तः॥३॥

दोहा–कारण सब ब्रह्मांडकर, वारण दुख जंजाल ॥
धारण श्रुतिमर्यादकर, टारण भज कंकाल ॥ १ ॥
दीनदयालु कृपालुजू, नारायण जगदीश ॥
जो उधरो नहिँ दीनको, काल करब मम खीश ॥ २ ॥

॥ श्रीः ॥

श्रीरमारमणो विजयते ।

अथ

श्रीयुतगोस्वामितुलसीदासकृत-

रामायणम् ।

किष्किन्धाकाण्ड ।

पण्डित-रामश्यामविरचित

तत्त्वदीपिकाटीकासहित ।

जिसे

पण्डित-रामभद्रजीने शुद्ध किया.

वही

गौड़ब्राह्मण हरिप्रसाद भगीरथजीने

बम्बईमें

" गणपतकृष्णाजी " छापखानेमें छपवायकर प्रसिद्ध किया.

शके १८२६, संवत् १९६०, सन १९०४.

श्रीरामपञ्चायतन.

॥ किष्किन्धाकाण्डम् ॥

रामसुग्रीवमित्रता और वालिवध ।

दोहा–रामायण अमृतकथा, लेत न ताको स्वाद ॥
तिनको निश्चय जानिये, है पूरे मनुजाद ॥ १ ॥

चौपाई–रामायण सुरधेनुसमाना । दायक अभिमतफल कल्याना ॥ १ ॥
गुणसमूह कवि सकै कौन गणि । जासु प्रभाव सरिस चिंतामणि ॥ २ ॥

हरिप्रसादभगीरथजीका, संस्कृत और भाषा पुस्तकालय
ठिकाना–कालकादेवीरोड़ रामवाडी–मुंबई.

॥ श्रीगजानन ॥

श्रीतुलसीदासकृतरामायणे

॥ ❀ किष्किन्धाकाण्डप्रारम्भः ❀ ॥

दोहा–मिलन पवनसुत दुखहरण, राम सुकण्ठ सुसङ्ग ॥
दलन इन्द्रसुत हरिभ्रमण, किष्किंधा सुप्रसङ्ग ॥ ४ ॥

कुंदेंदीवरसुंदरावतिबलौ विज्ञानधामावुभौ शोभाढ्यौ वरधन्विनौ श्रुतिनुतौ गोविप्रवृंदप्रियौ॥मायामानुषरूपिणौ रघुवरौ सद्धर्मवन्तौ हितौ सीतान्वेषणतत्परौ पथिगतौ भक्तिप्रदौ तौ हि नः ॥ १ ॥ ब्रह्मांभोधिसमुद्भवं कलिमलप्रध्वंसनं चाव्ययं श्रीमच्छंभुमुखेंदुसुंदरवरे संशोभितं सर्वदा॥संसारामयभेषजं सुमधुरं श्रीजानकीजीवनं धन्यास्ते कृतिनः पिबंति सततं श्रीरामनामामृतं ॥ २ ॥

जो रामलक्ष्मण श्यामल और मोगरेके पुष्पके समान मनोहर है; बडे पराक्रमी, अनुभवज्ञानके घर, सुंदरतासे भरे उत्तम धनुषधारी है और जिनकी वेद प्रशंसा करते है गौ और ब्राह्मणोंके प्यारे, लीलासे नरशरीर धारण किये, श्रेष्ठ धर्मवाले, सब जगतके हितरूप और सीताके शोधनमें तत्पर होकर मार्गमें चलते है ऐसे वे दोनों आपनको भक्तिके देनेवाले है॥ १ ॥ धन्य हैं वे सुकृती कि, जो रामचन्द्रजीके नामरूप अमृतका पान करते है, जो अमृत वेदरूप समुद्रमेंसे प्रगट हुआ है, कलियुगके दोषोंका नाश करनेवाला है, आप कभी नष्ट नहीं होता और सुन्दर श्रीशिवजीके मुखारविंदमें हमेशा सुन्दर शोभाको प्राप्त हुआ करता है, संसारके रोगोंका औषधरूप व बहुत मीठा, और श्रीसीताजीका जीवनही है ॥ २ ॥

सोरठा–मुक्तिजन्म महि जानि, ज्ञानखानि अघहानिकर ॥ ❀
जहँ वश शंभुभवानि, सो काशी सेइय कस न ॥ १ ॥ ❀
जरत सकल सुरवृन्द, विषम गरल जेहि पान किय ॥ ❀
तेहि न भजसि मतिमन्द, को कृपालु शंकरसरिस ॥ २ ॥ ❀

जिस काशीको मोक्षकी जन्मभूमि, ज्ञानकी खान और पापोंको नाश करनेवाली जानकर जहां पार्वतीसहित महादेवजी वास करते हैं उस काशीका सेवन कैसे नहीं करे ? ॥ १ ॥ जिस ईश्वरने देवताओंके समूहको जलता देखकर उनको बचानेके लिये दया करिके विकट विषका पान किया उस दीनदयालु देवको हे मंदबुद्धि मन ! तू क्यों नहीं भजता ? शंकरके समान ऐसा और कौन दयालु है ? ॥ २ ॥

आगे चले बहुरि रघुराई ॥ ऋष्यमूकपर्वत नियराई ॥ १ ॥ ❀
तहँ रह सचिवसहित सुग्रीवा ॥ आवत देखि अतुल बल सीवा ॥ २ ॥ ❀

फिर नारदमुनि गये पीछे श्रीरामचन्द्रजी पंपासरोवरसे आगे चले सो ऋष्यमूकपर्वतको नजीक किया ॥ १ ॥ वहां मंत्रियोंके साथ सुग्रीव रहता था. उसने आतेहुए अपार पराक्रमनिधि श्रीरामचन्द्रजीको आते देखा ॥ २ ॥

अति सभीत कह सुनु हनुमाना ॥ पुरुष युगुल बलरूपनिधाना ॥ ३ ॥ ❋
धरि बटुरूप देख तुम जाई ॥ कहेसि मोहिं जिय सैन बुझाई ॥ ४ ॥ ❋

और बहुत भययुक्त होकर हनुमान्से कहा कि— हे हनुमान् ! सुन. पराक्रम और रूपके भंडार धीरवीर ये दो पुरुष कौन आ रहे हैं ? ॥ ३ ॥ तू ब्रह्मचारीका रूप धरकर इन्हें जाकर देख और मुझसे सैनसे समझाकर कह कि ये कौन हैं ॥ ४ ॥

पठवा बालि होइ मन मैला ॥ भागौं तुरत तजौं यह शैला ॥ ५ ॥ ❋
बिप्ररूप धरि कपि तहँ गयऊ ॥ माथ नाय पूँछत अस भयऊ ॥ ६ ॥ ❋

जो ये बालिके भेजेहुए कपटी हों तब तो तुरंत इस पहाड़को छोड़कर भाग चलें ॥ ५ ॥ हनुमान् इस बातको सुनकर तुरंत ब्राह्मणका रूप धरकर रामचन्द्रजीके पास पहुँचा और दंडवत् करके ऐसे पूँछा ॥ ६ ॥

को तुम श्यामल गौर शरीरा ॥ क्षत्रीरूप फिरहु बन बीरा ॥ ७ ॥ ❋
कठिन भूमि कोमलपद गामी ॥ कवन हेतु बन बिचरहु स्वामी ॥ ८ ॥ ❋

कि—श्यामशरीर और गौरशरीर आप दोनों कौन हैं ? कि जो शूरवीर आप क्षत्रियके रूपसे वनमें फिरते हैं ॥ ७ ॥ हे महाराज ! यह वनकी पृथ्वी बहुत कठिन है और आपके चरणकमल बहुत कोमल हैं सो हे स्वामिन् ! आपने वनमें विचरना किसलिये स्वीकार किया है ? ॥ ८ ॥

मृदुल मनोहर सुन्दर गाता ॥ सहत दुसह बन आतप बाता ॥ ९ ॥ ❋
की तुम तीनि देव महँ कोऊ ॥ नर नारायण की तुम दोऊ ॥ १० ॥ ❋

आपके अंग बहुत कोमल ललित और सुरूप हैं और आप वनकी असह्य धूप और हवाको सहन करते हो ॥ ९ ॥ या तो आप ब्रह्मा विष्णु और महेश इनमेंसे कोई हो ? या आप दोनों नर नारायण हो ? ॥ १० ॥

दोहा—जगकारण तारण भवहिँ, भंजन धरणीभार ॥ ❋
की तुम अखिल भुवनपति, लीन्ह मनुजअवतार ॥ १ ॥ ❋

या सब लोकोंके अधिपति और जगतके कारण आपने जगत्का उद्धार करनेके लिये और पृथ्वीका भार उतारनेके लिये मनुष्यअवतार लिया है ॥ १ ॥

सुनि बोले रघुबंशकुमारा ॥ बिधिकर लिखा को मेटनहारा ॥ १ ॥ ❋
कोशलेश दशरथके जाये ॥ हम पितुबचन मानि बन आये ॥ २ ॥ ❋

ये हनुमान्के वचन सुनकर श्रीरघुनंदन बोले कि—विधाताका लिखा कौन मेट सकता है ॥ १ ॥ हम कोशल देशके राजा दशरथके पुत्र हैं और पिताका वचन मानकर वनमें आये हैं ॥ २ ॥

नाम राम लक्ष्मण दोउ भाई ॥ संग नारि सुकुमारि सुहाई ॥ ३ ॥ ❋
यहां हरी निशिचर बैदेही ॥ खोजत बिप्र फिरहिँ हम तेही ॥ ४ ॥ ❋

राम और लक्ष्मण हमारा नाम है और हम दोनों भाई हैं. हमारे साथ सुंदर सुहावनी मेरी स्त्री थी ॥ ३ ॥ यहां वनमें उस विदेह राजाकी पुत्रीको कोई राक्षस हरकर लेगया है सो हे ब्राह्मण ! हम उसे खोजते फिरते हैं ॥ ४ ॥

आपन चरित कहा हम गाई ॥ कहहु बिप्र निजकथा बुझाई ॥ ५ ॥ ❋
प्रभु पहिँचानि परे गहि चरणा ॥ सो सुख उमा जाहि नहिँ बरणा ॥ ६ ॥

हे ब्राह्मण ! हमने अपना हाल तुझसे कहा. अब तुम तुम्हारा हाल हमको समझाकर कहो ॥ ५ ॥ महादेवजी पार्वतीसे कहते हैं कि–हे भवानी ! हनूमान् अपने स्वामीको पहिचानिकर चरणोंमें गिर-पड़ा सो हे पार्वती ! वह सुख मुझसे कहा नहीं जाता ॥ ६ ॥

पुलकित तन मुख आव न बचना ॥ देखत रुचिर बेषकी रचना ॥ ७ ॥❋
पुनि धीरज धरि अस्तुति कीन्हा ॥ हर्ष हृदय निजनाथहिँ चीन्हा ॥ ८ ॥

और प्रभुके सुन्दर वेषकी रचना देख उसका तन रोमांचित होगया और मुखसे बचन नहीं निकला ॥ ७ ॥ फिर हनुमानने धीरज धरकर स्तुति करी और अपने प्रभुको पहिंचानकर हृदयमें बहुत हर्षित हुआ ॥ ८ ॥

मैं अजान होइ पूछौं साईं ॥ तुम कस पूँछहु नरकी नाईं ॥ ९ ॥ ❋
तव माया वश फिरौं भुलाना ॥ ताते प्रभुपद नहिँ पहिँचाना ॥ १० ॥ ❋

और बोला कि–हे स्वामी ! मैं तौ अनजान हूं इसलिये आपसे पूंछता हूं पर आप मनुष्यकी तरह अनजान होकर कैसे पूंछते हो ? ॥ ९ ॥ हे भगवन् ! मैं आपकी मायासे मोहित होकर भटकता हूं इसीलिये आपको मैंने नहीं पहचाना ॥ १० ॥

दोहा–एक मन्द मैं मोहबश, कीश हृदय अज्ञान ॥ ❋
पुनि प्रभु मोहिँ बिसारेहु, दीनबन्धु भगवान ॥ २ ॥ ❋

हे भगवन् ! हे दीनबंधु ! मै तौ पहलेही मंद और आपकी मायासे मोहित हूं और जातका वानर; इसलिये स्वभावसे मेरे हृदयमें अज्ञान है और फिर आप मुझे विसार दें तब तौ मेरा जीवना कैसे होवे ? ॥ २ ॥

यद्यपि नाथ अवगुण बहु मोरे ॥ सेवक प्रभुहिँ परै जनु भोरे ॥ १ ॥ ❋
नाथ जीव तव माया मोहू ॥ सो निस्तरै तुम्हारे छोहू ॥ २ ॥ ❋

हे स्वामिन् ! यदपि मेरे अवगुण तौ बहुत हैं परंतु आप सब दोषोंको नहीं गिनकर दासका त्याग नहीं करते ॥ १ ॥ हे स्वामिन् ! जीव तौ आपकी मायासे मोहित हैं जिसपर आपकी कृपा हो वहही आपकी मायाको तरता है ॥ २ ॥

तापर मैं रघुवीर दुहाई ॥ जानौं नहिँ कछु भजन उपाई ॥ ३ ॥ ❋
सेवक सुत पितु मातु भरोसे ॥ रहै अशोच बनै प्रभु पोसे ॥ ४ ॥ ❋

मैं आपकी दुहाई खाकर कहता हूं कि–मैं उसको तरनेके लिये भजन या अन्य उपाय कुछभी नहीं जानता ॥ ३ ॥ केवल आपके भरोसे निश्चिंत रहता हूं जैसे कि पुत्र माता पिताके भरोसे रहता है और आपही पालन करते हो ॥ ४ ॥

अस कहि चरण परे अकुलाई ॥ निजतन प्रगट प्रीति उर छाई ॥ ५ ॥ ❀
तब रघुपति उठाइ उर लावा ॥ निज लोचन जल सींचि जुड़ावा ॥ ६ ॥ ❀

ऐसे कहकर अकुलाकर चरणोंमे गिरपड़ा और ब्रह्मचारीके रूपको छोडकर अपने रूपको प्रगट किया और हृदयमे प्रेम भरआया ॥ ५ ॥ तब श्रीरामचन्द्रजीने उठाकर छातीसे लगाया और शीतल अपने नेत्रोंके जलसे सींचकर अपने प्यारेको ठंढा किया ॥ ६ ॥

सुनु कपि जिय जनि मानसि ऊना ॥ तैं मम प्रिय लक्ष्मणते दूना ॥ ७ ॥ ❀
समदरशी मोहिँ कह सब कोई ॥ सेवक प्रिय अनन्यगति सोई ॥ ८ ॥ ❀

और बोले कि–हे हनुमान्! सुन. तू मनमें ऐसे मत मानियो कि मेरेपर प्रीति कम है तू तो मेरे लक्ष्मणसेभी अधिक प्यारा है ॥ ७ ॥ हे हनुमान्! मुझे सब कोई समदर्शी कहते है पर जो मेरा अनन्य भक्त है वह मुझे बहुतही प्यारा है ॥ ८ ॥

दोहा– सो अनन्य अस जाहिकी, मति न टरै हनुमन्त ॥ ❀
मैं सेवक सचराचर, रूपराशि भगवन्त ॥ ३ ॥ ❀

हे हनुमंत! अनन्य भक्त उसे कहते है कि, जिसकी बुद्धि सदा ऐसी रहे कि, मैं तो दास हूं चराचर जगतके अधिष्ठाता भगवान् मेरे स्वामी है और यह जगत है सो सब इन्हींका अंश है मेरे धनीके शिवाय और कोई पदार्थ हैही नहीं ॥ ३ ॥

देखि पवनसुत अति अनुकूला ॥ हृदय हर्ष बीते सब शूला ॥ १ ॥ ❀
नाथ शैलपर कपिपति रहई ॥ सो सुग्रीव दास तव अहई ॥ २ ॥ ❀

पवनपुत्र अपने पतिको प्रसन्न समझकर बहुत प्रसन्न हुआ और हृदयमें जो परिताप था वह निवृत्त हो गया ॥ १ ॥ और बोला कि–हे स्वामिन्! इस पहाड़पर वानरोंका राजा सुग्रीव रहता है और वह आपका दास है ॥ २ ॥

तासन नाथ मइत्री कीजे ॥ दीन जानि तेहि अभय करीजे ॥ ३ ॥ ❀
सो सीताकर खोज कराइहि ॥ जहँ तहँ मरकट कोटि पठाइहि ॥ ४ ॥ ❀

सो हे स्वामिन्! आप उसके साथ मैत्री करैं और दीन जानकर उसे आप अभयदान दें ॥ ३ ॥ वह जहां तहां करोड़ों वानर भेजकर सीताकी खोज करावेगा ॥ ४ ॥

यहिविधि सकल कथा समुझाई ॥ लिये दोउ जन पीठि चढ़ाई ॥ ५ ॥ ❀
जब सुग्रीव रामकहँ देखा ॥ अतिशय धन्य जन्म करि लेखा ॥ ६ ॥ ❀

इसतरह हनूमान्ने सब कथा रामचन्द्रजीको समुझाई और दोनों जनोंको अपनी पीठपर चढ़ाकर ले आया ॥ ५ ॥ जब सुग्रीवने रामचन्द्रजीको देखा उसी समय सुग्रीवने अपने जन्मको अत्यंत धन्य करिके माना ॥ ६ ॥

सादर मिलेउ नाइ पद माथा ॥ भेंटे अनुज सहित रघुनाथा ॥ ७ ॥ ❀
कपिके मन बिचार यह नीती ॥ करिहहिँ बिधि मोसन ए प्रीती ॥ ८ ॥ ❀

और दंडवत् करिके बड़े आदरके साथ लक्ष्मणसहित रामचन्द्रजीसे मिला ॥ ७ ॥ सुग्रीवके मनमें यह विचार आया कि, ये तो राजा दशरथजीके पुत्र हैं और मैं वानर हूं सो हे दैव! क्या ये मेरे साथ प्रीति करेंगे! ये तो उत्तम हैं और मैं नीच हूं यह प्रीति कैसे होगी? ॥ ८ ॥

दोहा–तहँ हनुमन्त उभय दिशि, कहि सब कथा बुझाइ ॥ *
पावक साखी देइ करि, जोरी प्रीति दृढ़ाइ ॥ ४ ॥ *

तब हनुमानने दोनों तरफकी कथा दोनोंको समझाकर कही और अग्निको साक्षी देकर दृढप्रीति जोड़ दी ॥ ४ ॥

कीन्ह प्रीति कछु बीच न राषा ॥ लक्ष्मण रामचरित सब भाषा ॥ १ ॥ *
कह सुग्रीव नयन भरि बारी ॥ मिलिहि नाथ मिथिलेश कुमारी ॥ २ ॥ *

जब हनूमानने दोनोंके बीच परस्पर ऐसी प्रीति कर दी कि कुछ अंतर नहीं रहा तब लक्ष्मणने रामचन्द्रजीका सब चरित्र सुग्रीवसे कहा ॥ १ ॥ सुग्रीवने लक्ष्मणसे रामचन्द्रजीकी कथा सुनकर नेत्रोंमें जल भरके कहा कि–हे स्वामिन्! मैथिल राजाकी कुंवारी मुझे मिली थी ॥ २ ॥

मंत्रिनसहित यहाँ इकबारा ॥ बैठि रहउँ कछु करत बिचारा ॥ ३ ॥ *
गगनपन्थ देखी मैं जाता ॥ परवश परी बहुत बिलखाता ॥ ४ ॥ *

एक समय यहां मैं मंत्रियोंके साथ बैठ कुछ विचार कर रहा था ॥ ३ ॥ तब आकाशमार्गमें जाती देखी परवश पड़ी थी और बहुत बिलखा रही थी ॥ ४ ॥

राम राम हा राम पुकारी ॥ मम दिशि देखि दीन पट डारी ॥ ५ ॥ *
माँगा राम तुरत सो दीन्हा ॥ पट उर लाइ शोच अति कीन्हा ॥ ६ ॥ *

और राम! राम!! हे राम!!! ऐसे पुकार रही थी और मेरी तरफ देखकर उसने वस्त्र डारदिया ॥ ५ ॥ वस्त्र डारनेकी बात सुनतेही रामचन्द्रजीने वस्त्र मांगा, तब सुग्रीवने तुरत ला दिया. रामचन्द्रजीने वस्त्र छातीमें लगाकर बहुत फिकर किया ॥ ६ ॥

कह सुग्रीव सुनहु रघुबीरा ॥ तजहु शोक मन आनहु धीरा ॥ ७ ॥ *
सब प्रकार करिहौं सेवकाई ॥ जेहिविधि मिलहिं जानकी आई ॥ ८ ॥ *

रामचन्द्रजीको खिन्न देखकर सुग्रीवने कहा कि–हे रघुबीर! सुनिये. आप शोक छोड़ दो और मनमें धीरज धरो ॥ ७ ॥ मैं सब तरहसे आपकी बंदगी करूंगा. जिसतरह सीता आकर मिले ॥ ८ ॥

दोहा–सखा बचन सुनि हरषे, रघुपति करुणासीव ॥ *
कारण कवन बसहु बन, मोसन कहु सुग्रीव ॥ ५ ॥ *

सखाके वचन सुनकर दयानिधि श्रीरामचन्द्रजी बहुत प्रसन्न हुए और बोले कि–हे सुग्रीव! तुम वनमें किस कारण रहते हो सो मुझसे कहो ॥ ५ ॥

(क्षेपक) पूंछहिं प्रभु हँसि जानहिं ताही ॥ महाबीर मरकट कुलमाहीं ॥ १ ॥
तव अस्थान प्रथम केहि ठामा ॥ कहु निज मात पिताकर नामा ॥ २ ॥

श्रीरामचन्द्रजीने जाननेपरभी सुग्रीवसे हँसकर पूँछा कि–हे वानर कुलमें महाबीर! ॥ १ ॥ पहले तुम्हारा स्थान कहां वह कहो और तुम्हारे माता पिताका नाम कहो ॥ २ ॥

कह सुग्रीव सुनहु रघुराई ॥ कहहु आदिते उतपति गाई ॥ ३ ॥ *
ब्रह्म नयन निज कीच निकारा ॥ धरि अंगुरी महिऊपर डारा ॥ ४ ॥ *

तब सुग्रीवने कहा कि-हे रघुनंदन ! मैं मेरी उत्पत्ति प्रथमसे वर्णन करता हूं सो आप सुनिये ॥३॥ ब्रह्माजीने अपने नैनोंमेंसे मैल निकालकर अंगुलीपर धरकर पृथ्वीपर डारदिया ॥ ४ ॥

बानर एक प्रकट तहँ होई ॥ चंचल बुधि बिरंचि बल सोई ॥ ५ ॥ ❋
तेहिका नाम धरा बिधि जानी ॥ रिच्छराज यतिसम सो ज्ञानी ॥ ६ ॥ ❋

वहां एक वानर उत्पन्न हुआ वह बड़ा चपलमति और ब्रह्माके समान पराक्रमी हुवा ॥ ५ ॥ ब्रह्माने उसका रिच्छराज नाम रक्खा और वह संन्यासी समान ज्ञानी था ॥ ६ ॥

बिधि पै नाई शीश कपि कहई ॥ आयसु काह मोहिँ प्रभु अहई ॥ ७ ॥ ❋
बिचरहु बन गिरि बन फल खावहु ॥मारेहु निशिचर जे जहँ पावहु ॥ ८ ॥
सो ब्रह्माकी आज्ञा पाई ॥ दक्षिण दिशिहिं गयो रघुराई ॥ ९ ॥ ❋

उसने ब्रह्मासे शीस नवाकर कहा कि-हे स्वामिन् ! मुझे क्या आज्ञा है ? ॥ ७ ॥ तब ब्रह्माने कहा कि-तू वन और पहाड़ोंमें फिरता रहै और वनके फल खाकर गुजरान कर और यह तेरे लिये काम है कि जो कोई राक्षस जहां कहीं मिलि आवे उसे मारना॥८॥सुग्रीव कहता है कि हे स्वामिन्! रिच्छराज ब्रह्माकी यह आज्ञा पाकर दक्षिण दिशामें चला ॥ ९ ॥

दोहा-रिच्छराज तहँ बिचरई, महावीर बलवान ॥ ❋
निश्चर मिले ते सब हते, लय लय बड़े पषान ॥ ६ ॥ ❋

महा पराक्रमी रिच्छराज वहां फिरने लगा और बड़े २ पत्थर लेकर जो राक्षस मिले उन सबको मारडाला ॥ ६ ॥

फिरत दीख यक कूप अनूपा ॥ जल परिछाँह दीख निजरूपा ॥ १ ॥ ❋
तब कपि शोच करत मनमाहीं ॥ केहि बिधि रिपु रहै यहिमाहीं ॥ २ ॥ ❋

फिरते २ उसने एक अनुपम कूआ देखा कि, जिसके जलकी परछाहीमें उसको अपना रूप दिख पड़ा ॥ १ ॥ तब उस वानरने मनमें बड़ा फिकर किया कि, यह मेरा शत्रु इसमें किस तरह रहता है ? ॥ २ ॥

ताहि देखि कोपा कपिबीरा ॥ सबदिशि फिरा कूपके तीरा ॥ ३ ॥ ❋
जो जो चरित कीन कपि जैसा ॥ सो सो चरित दीख तहँ तैसा ॥ ४ ॥ ❋

और उसको देखकर रिच्छराज बहुत कुपित हुआ और कूवेके इरद गिरद फिरने लगा ॥ ३ ॥ रिच्छराजने जो जो चेष्टायें जैसे २ करीं वैसेही वेही चेष्टायें उसने कूएमें देखीं ॥ ४ ॥

गर्जा कीश झाँइ सो बोला ॥ कूदिपरा जलमाहीं जोरा ॥ ५ ॥ ❋
सो तन पलटि भई सो नारी ॥ अति अनूप गुणरूप अगारी ॥ ६ ॥ ❋

तब तो वानरने गर्जना करी त्योंही कूएमेंसे वैसीही आवाज आई तब वह क्रोध करके जोरके साथ जलमें कूद पड़ा ॥ ५ ॥ फिर उस शरीरको छोडकर वह वानर, अति अनुपम गुण और रूपकी खान स्त्री हो गया ॥ ६ ॥

सुनहु उमा अस कौतुक होई ॥ आइ बहोरि ठाढ़ि भइ सोई ॥ ७ ॥ ❋
सुरपति दृष्टि परी तेहि काला ॥ तेहिकर बिन्दु परा शिरबाला ॥ ८ ॥ ❋
मोहे भानु देखि छबिसीवा ॥ खसा सुबिन्दु परा तेहि ग्रीवा ॥ ९ ॥ ❋

महादेवजी कहते है कि–हे पार्वती ! ऐसा अचरज हुआ कि, ज्योंही वह स्त्री फिर बाहर आकर खड़ी हुई ॥ ७ ॥ त्योंही उस स्त्रीपर इंद्रकी नजर पड़ी और उसपर नजर पड़तेही वह मोहित होगया और इंद्रका वीर्य उस स्त्रीके शिरके बालोंमें गिरा ॥ ८ ॥ फिर रूपकी निधान उस स्त्रीको देखकर सूर्य मोहित होगया सो उसका वीर्य स्खलित होकर उसकी ग्रीवा (कंठ) पर पड़ा ॥ ९ ॥

दोहा–इन्द्रअंशते बालि भा, महाबीर बलधाम ॥ ❀
दिनकरसुत दूसर भयो, तेहि सुग्रीव सुनाम ॥ ७ ॥ ❀

इंद्रके अंशसे तो बलका निधि महाशूर वीर वालि हुवा और सूर्यके अंशसे सुग्रीव हुवा. इंद्रका वीर्य बालोंमें पड़ाथा इसलिये उसका नाम वालि हुवा और सूर्यका वीर्य ग्रीवापर पड़ा इसलिये दूसरेका नाम सुग्रीव हुआ ॥ ७ ॥

पुनि ततकाल सुनहु रघुबीरा ॥ नारी पलटि भयो सो बीरा ॥ १ ॥ ❀
तब रिछराज प्रीत मन भयऊ ॥ हमहिँ सङ्ग लय बिधिपहँ गयऊ ॥ २ ॥ ❀

सुग्रीव कहता है कि–हे रघुवीर ! सुनिये. फिर वह तुरंत स्त्रीका रूप छोड़कर पीछा वानर होगया ॥ १ ॥ तब रिच्छराज मनमें बहुत प्रसन्न हुवा और हम दोनोंको संग लेकर ब्रह्माजीके पास गया ॥ २ ॥

करि प्रणाम सब चरित बखाना ॥ कह ब्रह्मा हरिइछ बलवाना ॥ ३ ॥ ❀
तब बिधि हमहिँ कहा समुझाई ॥ दक्षिण दिशा जाउ द्वौ भाई ॥ ४ ॥ ❀

और दंडवत करके यह सब चरित्र कहा तब ब्रह्माजीने कहा कि–ईश्वरकी इच्छा बलवान् है ॥ ३ ॥ फिर ब्रह्माजीने हम दोनों भाइयोंसे समझाकर कहा कि–तुम दोनों भाई दक्षिण दिशामें जावो ॥ ४ ॥

किष्किंधा तुम करहू थाना ॥ रंग भोग बहुविधि सुख नाना ॥ ५ ॥ ❀
जो प्रभु लोक चराचर स्वामी ॥ सो अवतरिहिं नाथ बहु नामी ॥ ६ ॥ ❀
रघुकुलमणि दशरथ सुत होई ॥ पितु आज्ञा बिचरिहिं बन सोई ॥ ७ ॥ ❀
नरलीला करिहहिं बिधि नाना ॥ पैहौं दर्श होइ कल्याना ॥ ८ ॥ ❀

और किष्किंधामे अपना स्थान करके रहा कि–जहां अनेक तरहके रंग भोग और सुख हैं ॥ ५ ॥ जो चराचर लोकोंके स्वामी है और अनंत जिनके नाम है वे परमेश्वर, रघुवंशमें मणिरूप राजा दशरथके घर अवतार धारण करेंगे और पिताकी आज्ञासे वनमें विचरेंगे ॥ ६ ॥ ७ ॥ और अनेक तरहसे मनुष्य नाट्य करेंगे उनका जो कोई दर्शन करेगा वह कल्याणको प्राप्त होगा ॥ ८ ॥

दोहा–तब हर्षे हम बंधु दोउ, सुनिकै बिधिके बैन ॥ ❀
तप जप योग न पावहीं, सो हम देखिहिँ नैन ॥ ८ ॥ ❀

ये ब्रह्माजीके वचन सुनकर हम दोनों भाई बहुत खुश हुए कि, जो परमात्मा तप जप और योग साधनोंसेभी नहीं प्राप्त होता उस परमेश्वरको हम नेत्रोंसे प्रत्यक्ष देखेंगे ॥ ८ ॥

बिधिपद बंदि चले दोउ भाई ॥ किष्किंधा तब आय गुसाँई ॥ १ ॥ ❀
बाली राज कीन सुरत्राता ॥ बन बसि दैत्य हन्यो द्वौ भ्राता ॥ २ ॥ ❀

फिर ब्रह्माजीको दंडवत् करके दोनो भाई चले सो हे स्वामिन्! किष्किंधामें आये ॥ १ ॥ ऋक्षरक्षक बालिने वहांका राज किया फिर वनमें रहते २ हम दोनों भाइयोंने दुंदुभीनाम दैत्यको मारा॥२॥

मयदानवके सुत द्वौ बीरा ॥मायाबी दुंदुभि रणधीरा ॥ ३ ॥
कह सुग्रीव सुनहु रघुराई ॥ बिधिगति अलख जानि नहिँ जाई ॥ ४ ॥

मयनाम दैत्यके दो पुत्र थे. मायावी और दुंदुभी. और ये दोनों बड़े शूरवीर और रणधीर थे ॥ ३ ॥ सुग्रीव कहता है कि–हे रामचन्द्रजी! विधाताकी गति बड़ी अलक्ष है ॥ ४ ॥ ॥ इति ॥

नाथ बालि अरु मैं दोउ भाई ॥ प्रीति रही कछु बरणि न जाई ॥ १ ॥
मयसुत मायावी तेहि नाऊं ॥ आवा सो प्रभु हमरे गाऊं ॥ २ ॥

हे स्वामिन्! मैं और बालि हम दोनों भाई हैं. हमारे परस्पर ऐसा प्रेम रहा सो वर्णन नहीं किया जाता ॥ १ ॥ मयदैत्यका लड़का मायावी नाम दैत्य हमारे गाममें आया ॥ २ ॥

अर्धरात्रि पुरद्वार पुकारा ॥ बालिह्नु रिपुबल सहै न पारा ॥ ३ ॥
धावा बालि देखि सो भागा ॥ मैं पुनि गयउँ बन्धुसंग लागा ॥ ४ ॥

सो वह आधी रातके समय पुरके दरवाजेपर आकर पुकारने लगा उसकी आवाज सुनतेही बालिसे शत्रुका बल सहा नहीं गया ॥ ३ ॥ सो उसपर दौड़ा और वहभी इसको देखकर भाग निकला फिर मैंभी भाईके पीछे २ गया ॥ ४ ॥

गिरिवर गुहा पैठि सो भागा ॥ मैं पुनि गयउँ बन्धुसंग लागा ॥ ५ ॥
परखेउ मोहिँ एक पखवारा ॥ नहिँ आवौं तौ जानेहु मारा ॥ ६ ॥

मायावी जाकर एक गुफामें पैठ गया तब बालिने मुझे समझाकर कहा ॥ ५ ॥ कि–तू १ पखवारातक मेरी राह देखियो फिर नहीं आऊं तौ ऐसे समझना कि बालि मारा गया ॥ ६ ॥

मास दिवस तहँ रहेउँ खरारी ॥ निसरी रुधिरधार तहँ भारी ॥ ७ ॥
तब मैं निजमन कीन्ह बिचारा ॥ जाना असुर बन्धुकहँ मारा ॥ ८ ॥

ऐसे कहकर बालि शत्रुके पीछे गुफामें पैठ उसके अनंतर हे रघुराई! एक महीनातक मैंभी वहीं रहा फिर उस कंदरामेंसे लोहूकी बहुत जबर धार निकली ॥ ७ ॥ तब मैंने मेरे मनमें विचार किया और जाना कि, दैत्यने भाईको तौ मार लिया है ॥ ८ ॥

बालि हतेसि मोहिँ मारिहि आई ॥ शिला द्वार दै चलेउँ पराई ॥ ९ ॥
मंत्रिन पुर देखा बिनु सांई ॥ दीन्हेउ राज मोहिँ बरि आई ॥ १० ॥

और अब मुझेभी आकर मारेगा ऐसे विचार उस कंदराके द्वारपर शिला देकर चल पड़ा ॥ ९ ॥ सो किष्किंधामें आता ठहरा. मंत्रियोंने पुरको राजारहित देखकर बलात्कारसे मुझे राज दे दिया ॥ १० ॥

बालिह्नु ताहि मारि गृह आवा ॥ देखि मोहिँ जिय भेद बढ़ावा ॥ ११ ॥
रिपुसमान मोहिँ मारेसि भारी ॥ हरि लीन्हेसि सर्बसु अरु नारी ॥ १२ ॥

इतनेमें बालिभी मायावीको मारकर घरपर आया और मुझको राज्यासनपर बैठा देखकर

चित्तमें दुर्भाव आया ॥ ११ ॥ और शत्रुके समान मुझे बहुत पीडा और मेरा सर्वस्व हरलिया, और स्त्रीभी छीन ली ॥ १२ ॥

ताके भय रघुबीर कृपाला ॥ सकल भुवन मैं फिरेउँ बिहाला ॥ १३ ॥ ❋
यहां शापबश आवत नाहीं ॥ तदपि सभीत रहौं मनमाहीं ॥ १४ ॥ ❋
सुनि सेवक दुख दीनदयाला ॥ फरकि उठे दोउ भुजा बिशाला ॥ १५ ॥ ❋

हे दयाल रघुवीर! उसके भयसे मैं सब लोकोंमें बेहाल फिरता हूं ॥ १३ ॥ यदपि वह यहां शापके बससे नहीं आता है तोभी मैं मनमें सभय रहता हूं ॥ १४ ॥ ऐसे दासका दुःख सुनकर दीनदयालु श्रीरामचंद्रजीकी दोनों भुजा फरकने लगीं ॥ १५ ॥

(क्षेपक)

दोहा—सुनत बचन बोले प्रभू, कहहु शापकी बात ॥ ❋
दुंदुभि दैत्य सुकवनबिधि, बालि हन्यो तिहि तात ॥ १ ॥ ❋
समदर्शी शीतल सदा, मुनिवर परम प्रबीन ॥ ❋
मोहिं बुझाइ कहहु सब, शाप कवन हित दीन ॥ २ ॥ ❋

सुग्रीवके ये वचन सुनकर श्रीरामचंद्रजी बोले कि—हे सुग्रीव! यह शापकी बात मुझे समझाकर कहो और दुंदुभी दैत्यको कैसे मारा वहभी कहो ॥ १ ॥ परम प्रवीण सदा शीतल और समदर्शी मतंग मुनिने बालिको शाप किस कारण दिया सो समझाकर कहो ॥ २ ॥

पुनि पूंछत भे कृपानिकेता ॥ बालिहिं शाप भयो किहि हेता ॥ १ ॥ ❋
बोले तब कपीश मन लाई ॥ दुंदुभि दैत्य महाबल भाई ॥ २ ॥ ❋

फिर दयानिधि रामचंद्रजीने पूछा कि—बालिको शाप किस लिये हुआ? ॥ १ ॥ तब सुग्रीव मन लाकर बोला कि—हे महाराज! दुंदुभि दैत्य बड़ा पराक्रमी था ॥ २ ॥

मल्लयुद्धकी गति सब जानै ॥ अवर बलीको नाहिँ न मानै ॥ ३ ॥ ❋
एकबार जलनिधितट आयो ॥ जाइकै जलनिधि मांझ थहायो ॥ ४ ॥ ❋

और वह मल्लयुद्धकी सब चालें जानता था और वह किसी बलवानको कुछभी नहीं मानता था ॥ ३ ॥ एक समय वह दैत्य समुद्रके तीरपर आया और समुद्रके भीतर घुसकर उसने जलका प्रमाण किया ॥ ४ ॥

सबहि कटिप्रमाण जल भयऊ ॥ करि अभिमान मथत सो भयऊ ॥ ५ ॥
मथत सिंधु ब्याकुल सब गाता ॥ जीव जन्तु सब भये निपाता ॥ ६ ॥ ❋

तौ समुद्रका जल उसके कमरतक रहा तब दुंदुभिने अभिमान करके समुद्रको मथ डाला ॥ ५ ॥ मथनेसे समुद्र व्याकुल हो गया और भीतर जो मगर वगैरः जीव जंतु थे वेभी कितनेएक पड़ गये और कितनेएक भाग गये ॥ ६ ॥

तब अकुलाय सिंधु तहँ आवा ॥ बचन बिचारिहि ताहि सुनावा ॥ ७ ॥ ❋
तुम बल सरवर और न कोऊ ॥ बचन बिचारि कहौं मैं सोऊ ॥ ८ ॥ ❋

तब समुद्रभी आकुल होकर उसके पास आया और सोच विचारकर उससे कहने लगा

कि– ॥ ७ ॥ आप तौ बड़े बलवान् हो. आपके समान और कोई नहीं है तथापि एक बात मैं आपसे कहता हूं ॥ ८ ॥

हिमगिरि बल बरणो ना जाई ॥ त्यहि जीतन कर करहु उपाई ॥ ९ ॥ ❋
बचन सुनत ताहीं चलि आयो ॥ देखि हिमाचल अति मन भायो ॥१०॥

कि, हिमाचल नाम पर्वत बड़ा बलवान् है उसका बल वर्णन नहीं किया जाता उसको जीतनेका आप उपाय करें ॥ ९ ॥ समुद्रके वचन सुनतेही तुरंत हिमाचलके पास आया और इसे देखकर बहुत प्रसन्न हुआ और बोला कि–है तौ समुद्र कहता था वैसाही ॥ १० ॥

ताल ठोंकि गिरि लीन उठाई ॥ तब हिमगिरि बहु बिनती लाई ॥ ११ ॥ ❋
तुम्हरे बल सरवर हम नाहीं ॥ ताते करौं न मान तुम्हाहीं ॥ १२ ॥ ❋

फिर दुंदुभिने बांह ठोंककर हिमालयको उठालिया. तब हिमाचलने विनती करी ॥ ११ ॥ कि–हे भाई! हम तुम्हारे समान बलवान् नहीं है इसलिये आपके साथ हम अभिमान नहीं करते ॥ १२ ॥

पंपापुर तुम्हहीं चलि जाहू ॥ बालि महाबलनिधि अवगाहू ॥ १३ ॥ ❋
सुनत बचन तबहीं चलि आवा ॥ बालिबालि कहिकै गोहरावा ॥ १४ ॥ ❋

अब तुम पंपापुरमे चले जाओ वहां बलका निधि बालि नाम वानर रहता है वह आपका अभिमान तोड़ेगा ॥ १३ ॥ ये हिमालयके वचन सुनतेही वह पंपापुरमे आकर 'बालिबालि' ऐसे कहकर पुकारने लगा ॥ १४ ॥

दोहा–वेष किये सो महिषकर, गर्व बहुत मनमाहिँ ॥ ❋
आयो निकट सो गर्जिकर, मनहिँ तनिकु भय नाहिँ ॥ ३ ॥ ❋

जिसके मनमें भयका लेशभी नहीं है ऐसा वह दुंदुभि नाम राक्षस भैंसेका रूप बनाय मनमें बड़ा घमंड करके बालिके पास आकर गरजने लगा ॥ ३ ॥

महि मर्दी द्रुम करहि निपाता ॥ गरज्यो घोर गिरा जनु घाता ॥ १ ॥ ❋
ठोंक्यो ताल वज्र जनु परेऊ ॥ तेहिकर मर्म जानि सब डरेऊ ॥ २ ॥ ❋

और वहां आकर पृथ्वीका मर्दन करने लगा और वृक्षोंको उखेड़नेलगा. गर्जना ऐसी करी कि मानों बिजुलीका शब्द ॥ १ ॥ और खंम ठोकनेका शब्द ऐसा हुआ कि मानों वज्रपातका होना. उसके अभिप्रायको समझकर सब लोग डर गये ॥ २ ॥

पंपापुर ब्याकुल सबकाहू ॥ चन्द्र ग्रसन आयो जनु राहू ॥ ३ ॥ ❋
सुनत बालि धावा ततकाला ॥ देखि असुर भुजदण्ड कराला ॥ ४ ॥ ❋

और सब पंपापुर व्याकुल होगया. यह बालिपर ऐसे आया कि, मानों चंद्रको निगलनेको राहुही चला है ॥ ३ ॥ बाली इसकी गरजना सुनकर दौडकर तुरंत इसके पास आया. दैत्यनेभी कराल भुजवाले बालिको देखा ॥ ४ ॥

भिरे युगुल करिवरसम आई ॥ मल्लयुद्ध कछु बरणि न जाई ॥ ५ ॥ ❋
चारि याम अस कौतुक भयऊ ॥ मुष्टिप्रहार तासु कपि दयऊ ॥ ६ ॥ ❋

दोनों जन मत्त हाथीके समान आकर भिड़े और मल्लयुद्ध शुरू हुवा. वह मल्लयुद्ध ऐसा हुआ कि, जिसका वर्णन नहीं करसकें ॥ ५ ॥ चार प्रहरतक ऐसा अचरज हुआ फिर बालिने उसके एक मुष्टिका प्रहार किया ॥ ६ ॥

गिरा अवनि तब शैलसमाना ॥ जीव नशे तरु टूटे नाना ॥ ७ ॥ ❀
पुनि तिहिँ बालि युगल करि डारा ॥ उत्तर दक्षिण दिशि कीन प्रहारा ॥ ८ ॥

तब पहाड़के समान पृथ्वीपर गिरगया. गिरते गिरते उसकी लाससे कितनेएक वृक्ष टूट गये ॥ ७ ॥ फिर बालिने उसे दो टुकड़े कर दोनों हाथोंसे चारो तरफ बहुत मार दी जिससे वह दुंदुभी बहुत घायल होकर मरणको प्राप्त हुआ ॥ ८ ॥

तेहि गिरिपर मुनि कुटी सुहाई ॥ रुधिरप्रवाह गयो तहँ धाई ॥ ९ ॥ ❀
ऋषि मतंगकर तहां निवासा ॥ गये सो ऋषि मंजन सुखरासा ॥ १० ॥ ❀

और उसके शरीरसे लोहू बहकर चला सो उस पहाड़पर मतंग मुनिका सुहावना आश्रम था वहांतक पहुंचा ॥ ९ ॥ तहां सुखके धाम मतंत ऋषि रहतेथे पर उसवक्त वे न्हानेको गये थे ॥ १० ॥

मज्जन करि मतंग ऋषि आये ॥ देखि कुटी अति क्रोध बढ़ाये ॥ ११ ॥ ❀
तबहिँ बिचार करत मनमाहीं ॥ यक्ष एक चलि आवा ताहीं ॥ १२ ॥ ❀
तिनहीं सकल कहा इतिहासा ॥ सुनि मतंग भे क्रोध निवासा ॥ १३ ॥ ❀

सो न्हाकर पीछे आये तब अपनी कुटीको लोहूसे घिरी हुई देखकर बहुत क्रोध बढ़ाया ॥ ११ ॥ और मनमें विचार करने लगे इतनेहीमें एक यक्ष वहां चला आया ॥ १२ ॥ उसने यह बालि और दुंदुभीकी बात समझाकर मतंग मुनिसे कही. सुनतेही मुनिने बड़ा क्रोध किया ॥ १३ ॥

दोहा—दीन शाप तब क्रोध करि, नहिँ मन कीन्ह बिचार ॥ ❀
बालि नाश गिरि देखतहिँ, होइ जाय तनु छार ॥ ४ ॥ ❀

क्रोध करके बिना विचारे बालिको शाप दे दिया कि, जो बालि इस पर्वतको देखभी लेगा तौ देखतेही उसका नाश हो जायगा और जल बलकर भस्म हो जायगा ॥ ४ ॥

तेहि भयते बाली नहिँ आवत ॥ ऋषिके बचन समुझि भय पावत ॥ १ ॥ ❀
त्यहि भरोस यहि गिरिपर रहऊँ ॥ बालि त्रास नहिँ बिचरत कहऊँ ॥ २ ॥ ❀

उस भयसे बालि यहां नहीं आता; क्योंकि ऋषिके वचनोंका मनमें खयाल करता है ॥ १ ॥ हे महाराज ! मैं इस भरोसेसे यहां पर्वतपर रहता हूं और बालिके भयसे और कहीं मैं नहीं जाता ॥ २ ॥

इहि दुखते प्रभु दिन अरु राती ॥ चिंता बहुत जरति अति छाती ॥ ३ ॥ ❀
सुनि सुकंठके बचन सुहाये ॥ बोले राम लषण मुसुकाये ॥ ४ ॥ ❀

हे नाथ ! इस दुःख शोचसे रात दिन मेरी छाती जलती है ॥ ३ ॥ वे सुग्रीवके सुहावने वचन सुनकर श्रीरामचन्द्रजीने लक्ष्मणके सामने मुसकुराकर सुग्रीवसे कहने लगे ॥ ४ ॥ ॥ इति ॥

दोहा—सुनु सुग्रीव मैं मारिहौं, बालिहिं एकहि बाण ॥ ❀
ब्रह्म रुद्र शरणागतहुँ, गये न उबरहिँ प्राण ॥ ५ ॥ ❀

हे सुग्रीव ! सुन. मैं बालिको एकही बाणसे मारूंगा. चांह वह ब्रह्मा और रुद्रका शरण क्यों न ले ? अब वह नहीं बचेगा ॥ ९ ॥

जे न मित्र दुख होहिँ दुखारी ॥ तिन्हैं बिलोकत पातक भारी ॥ १ ॥ ❋
निजदुख गिरिसम रजकर जाना ॥ मित्रदुःखरज मेरुसमाना ॥ २ ॥ ❋

हे सुग्रीव ! जो पुरुष अपने मित्रका दुःख देखकर दुःखी न होंवे उनको देखनेहीमें बड़ा भारी पाप प्राप्त होता है ॥ १ ॥ मित्र उन्हें समझना चाहिये कि, जो अपने पहाड़के समान दुःखको रेतीके कणके समान समझें और मित्रके रजकणके समान दुःखको मेरुके समान समझें ॥ २ ॥

जिनके अस मति सहज न आई ॥ ते शठ हठ कत करत मिताई ॥ ३ ॥ ❋
कुपथ निबारि सुपन्थ चलावा ॥ गुण प्रगटै अवगुणहिँ दुरावा ॥ ४ ॥ ❋

और जिनके स्वभावसे ऐसी बुद्धि नहीं है तो वे मूर्ख हठ करके मित्रता करते है वह असिल मित्रता नहीं है ॥ ३ ॥ वेदमें कहा कि-मित्रोंके सच्चे गुण तो ये हैं कि, मित्रको कुरास्ता छुड़ाकर अच्छे मार्गमें चलाना, मित्रके गुण प्रगट करने अवगुण छिपाने ॥ ४ ॥

देत लेत मन शंक न भरहीं ॥ बल अनुमान सदा हित करहीं ॥ ५ ॥ ❋
बिपतिकाल कर शतगुण नेहा ॥ श्रुति कह सत्यमित्र गुण एहा ॥ ६ ॥ ❋

देते लेते मनमें बिलकुल शंका नहीं रक्खे, अपने बलके अनुमान हमेशा हित करता रहे ॥ ५ ॥ और मित्रमें कोई तरहकी आपदा आपड़े तो उसवक्त पूर्व स्नेह हो उससे शतगुण करे. श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि-हे सुग्रीव ! मित्रोंके ये धर्म है ॥ ६ ॥

आगे कह मृदु बचन बनाई ॥ पाछे अनहित मन कुटिलाई ॥ ७ ॥ ❋
जाकर चित अहिगतिसम भाई ॥ अस कुमित्र परिहरे भलाई ॥ ८ ॥ ❋

ऐसे कहकर फिर श्रीरामचन्द्रजीने सुग्रीवसे कोमल वचनोंसे कहा कि-आगे तो मीठे बचन और पीछे कुटिल मन हो अनहित करना ॥ ७ ॥ और जिसका मन सर्पकी गतिके समान है हे भाई ! ऐसे कुमित्र तो दूरही भले ॥ ८ ॥

दोहा-"मित्र मित्रसों प्रीति करि, हृदय आन मुख आन ॥ ❋
जाके मन बच प्रेम नहिँ, दुरे दुराये जान" ॥ १० ॥ ❋

मित्र मित्रसे प्रीति करके फिर ऐसे रक्खे कि-मनमें तो और, और मुखपर और; और जिनके मन वाणीमें प्रेम न हो उन्हें मित्र नहीं जानने किंतु कपटी (ठग) जानने ॥ १० ॥

सेवक शठ नृप कृपण कुनारी ॥ कपटी मित्र शूलसम चारी ॥ १ ॥ ❋
सखा शोच त्यागहु बल मोरे ॥ सबबिधि करब काज मैं तोरे ॥ २ ॥ ❋
कह सुग्रीव सुनौ रघुबीरा ॥ बालि महाबल अति रणधीरा ॥ ३ ॥ ❋

मूर्ख नोकर १ लोभी राजा २ खराब स्त्री ३ और कपटी मित्र ४ हे सुग्रीव ! इन चारोंको शूलके समान जान ॥ १ ॥ हे मित्र ! तू मेरे बलके भरोसे शोच फिकर छोड़ दे. अब मैं सब तरहसे

तेरा काम करूंगा ॥ २ ॥ ऐसे रामचन्द्रजीने दिलासा दी तौभी सुग्रीवके मनमें पूर्ण श्रद्धा नहीं हुई इसलिये बोला कि–हे महाराज ! सुनो, बालि बड़ा पराक्रमी है और बड़ा रणधीर है ॥ ३ ॥

(क्षेपक) प्रथम अस्थि दुंदुभी समूहा ॥ महाकठिन लागे दश धूहा ॥ १ ॥ ❋
तिन्हे एकशर बेधे जोई ॥ मुनिबर बालिहि मारै सोई ॥ २ ॥ ❋

हे मुनिवर ! प्रथम तौ यह दुंदुभीकी महाकठिन हड्डियोंके दश समूह पड़े है ॥ १ ॥ इन्हें जो पुरुष एक बाणसे बेधै वह बालिको मार सकै ॥ २ ॥

दूसर बर बासव कर साधा ॥ रिपुबल सन्मुख पावत आधा ॥ ३ ॥ ❋
तीसर सप्त ताल भगवाना ॥ बेधै सकल एकही बाना ॥ ४ ॥ ❋

और दूसरा इसको इन्द्रका वर है कि–जो शत्रु तेरे सन्मुख आवेगा उसका बल आधा हो जायगा ॥ ३ ॥ हे भगवन् ! तीसरी बात यह है कि–सात तालके वृक्षोंको एक बाणसे वेधे ॥ ४ ॥

चन्द्रमण्डलाकार सुहाई ॥ परै एक बाणै महि आई ॥ ५ ॥ ❋
ताके कर बाली प्रभु मरई ॥ नातरु श्रम मिथ्या को करई ॥ ६ ॥ ❋

अर्थात् चंद्रमंडलके आकारसे रहे ये सुहावने ताल तरु जिसके एकही बाणसे पृथ्वीपर पड़ैं ॥ ५ ॥ हे नाथ ! उसके हाथसे बालि मरे, अन्यथा तौ श्रम करना वृथा है ॥ ६ ॥

यहिते बालिबधनके माहीं ॥ आवत म्वहिँ प्रतीति प्रभु नाहीं ॥ ७ ॥ ❋
सुनि बोले प्रभु शीतल बानी ॥ कपि चतुरई तोरि मैं जानी ॥ ८ ॥ ❋

हे नाथ ! इसीलिये मुझे बालिके वधमें विश्वास नहीं होता ॥ ७ ॥ ये सुग्रीवके वचन सुनकर श्रीरामचन्द्रजी शीतल बानीसे बोले कि–हे सुग्रीव ! मैंने तेरी चतुराई जानी ॥ ८ ॥

यहि बिधि बलका करहु परेपू ॥ कहहु तालकर चरित बिशेपू ॥ ९ ॥ ❋
सुनि सुग्रीव हिये हरषाना ॥ तालवृक्ष कर चरित बखाना ॥ १० ॥ ❋
एक दिवस कपीश बन गयऊ ॥ वृक्ष फूल फल देखत भयऊ ॥ ११ ॥ ❋

इसीतरहसे क्या तू बलकी परीक्षा करना चाहता है तौ तालवृक्षोंका चरित्र मुझसे कह ॥ ९ ॥ इस बातको सुनकर सुग्रीव हृदयमें बहुत प्रसन्न हुआ और ताल वृक्षोंका हाल श्रीरामचन्द्रजीसे कहा ॥ १० ॥ एक दिन बालि वनमें गया और वहां वृक्ष फूल फल आदि देखे ॥ ११ ॥

दोहा–तेहिदिन दुन्दुभि निधन, सुनि इन्द्र तालफल सात ॥ ❋
पठये होइहैं सत्यकरि, अजर अमर इन खात ॥ १ ॥ ❋
नारद आई बालि कहँ, दीन्हे गहन मँझार ॥ ❋
महि धरि लगे नहान सो, करिगा भुजँग आहार ॥ २ ॥ ❋

उसी दिन दुंदुभीका मरन सुन प्रसन्न होकर इन्द्रने बालिके लिये सात तालके फल भेजे कि जो इन फलोंको खावै वह निश्चय अजर अमर हो जावे ॥ १ ॥ नारदजीने वनमें आकर बालिको वे फल दिये बालि उन फलोंको पृथ्वीपर धरकर न्हाने लगा इतनेहीमें एक सर्प आकर सातोंही फल खागया ॥ २ ॥

राखे फल जेहिं थल करि दर्पा ॥ तेहिं थलपर बैठा इक सर्पा ॥ १ ॥
शशिमंडलसमान फण काढी ॥ देखि कपीश महारिस बाढी ॥ २ ॥

बालिने अभिमान करके जिस जगह वे फल रक्खे थे कि मेरे कौन फल खाय? ॥ १ ॥ उस जगह चन्द्रमंडलके समान फण करके एक सर्प बैठा पाया उसको देखकर बालिको बहुत क्रोध आया ॥२॥

क्रोध अनल तन लेत उसासू ॥ आतुर चलो गयो तेहि पासू ॥ ३ ॥
अरे दुष्ट भख मोर नशावा ॥ यमपुर बास आज तुहिं छावा ॥ ४ ॥

क्रोधरूप अग्निसे शरीर जल रहा है ऊंचे उसांस ले रहा है और आतुर होकर सांपके पास गया ॥३॥ और बोला कि-अरे दुष्ट! तू मेरा भख नशाया इसलिये मैं तुझे आज यमपुर पहुँचा दूंगा ॥ ४ ॥

नाहिंत शाप लेहु शिर मोरा ॥ वृक्ष फूटि निकसै तनु तोरा ॥ ५ ॥
जहां जायकर बैठा वेदी ॥ निकसे सप्त ताल तनु छेदी ॥ ६ ॥
क्रोध निबारि बालि गृह आवा ॥ समाचार यह तक्षक पावा ॥ ७ ॥

नहींतर तू मेरा शाप ले, वह है कि-तेरे शरीरके छेदकर सात तालके वृक्ष निकसैं ॥ ५ ॥ फिर जहां वह सर्प बैठा वहां उसकी देह छेदके सात तालवृक्ष निकले ॥ ६ ॥ यह शाप दे क्रोध दूर करके बाली घरको आया. ये शापके समाचार तक्षकको मिले ॥ ७ ॥

दोहा-पुत्रशाप सुनि क्रोध करि, मन दुख भयो अपार ॥
निश्चय मारी बालिही, जोइ बेधै ए तार ॥ ३ ॥

तब पुत्रको शाप हुवा सुनकर तक्षकके मनमें बहुत दुःख हुआ और तक्षकने बालिको शाप दिया कि जो इन तालोंको बेधेगा वह निश्चय बालिको मारेगा ॥ ३ ॥

सो सब समाचार मैं जानब ॥ अस तव कहब नाथ मन मानब ॥ १ ॥
चौदह भुवन जो इकरस ज्ञाना ॥ व्यापि रहा सबजीवसमाना ॥ २ ॥
सो प्रभु सुनत दासकी बानी ॥ निरखि बदन बोले धनु पानी ॥ ३ ॥

हे प्रभु! वे सब समाचार मैं जानता हूं सो सब मेरे मन माने मैंने कहे अब आपके मनमें आवे सो करो ॥ १ ॥ जो परमेश्वर चौदह लोकमें एकरस है और सब जीवोंमें समान व्यापक है ॥ २ ॥ वे प्रभु श्रीरामचन्द्रजी अपने दासकी बानी सुनतेही दासके मुखकी ओर निहार कर बोले ॥ ३ ॥

दोहा-हँसि बोले भगवान तब, चलो दिखावो मोहिं ॥
बेधि गिरावौं सुशर ज्यौंहिं, निश्चय आवै तोहिं ॥ ४ ॥

और हंसकर बोले कि-चलो दिखावो उन्हें बेधकर गिरा देऊं जिससे तुम्हारे हृदयको निश्चय हो जावे ॥ ४ ॥

भले नाथ कहि प्रभु हरि बामन ॥ अस्थि ताल देखउ मन भावन ॥ १ ॥

यह बात सुनकर सुग्रीव बोला कि-हे नाथ! भले आपकीइच्छा होतौ आप दुंदुभिके हाड़ और ताल देखें ॥ १ ॥ ॥ इति ॥

दुन्दुभि अस्थि ताल दिखराये ॥ बिनु प्रयास रघुनाथ ढहाये ॥ १ ॥ ❀
देखि अमित बल बाढ़ी प्रीती ॥ बालि बधन कर भइ परतीती ॥ २ ॥ ❀

ऐसे कहकर सुग्रीवने दुंदुभिके हाड़ और ताल दिखाये वैसेही रामचन्द्रजीने विनाश्रम उनको गिरादिये ॥ १ ॥ इनके ढहानेसे रामचन्द्रजीका अतुल बल देखकर सुग्रीवके मनमें रामचन्द्रजीपर बहुत स्नेह बढ़ा. और बालिको मारलेनेका विश्वास होगया ॥ २ ॥

बाराहिँ बार नाय पद शीशा ॥ प्रभुहिँ जानि मन हर्ष कपीशा ॥ ३ ॥ ❀
उपजा ज्ञान बचन तब बोला ॥ नाथकृपा मन भयउ अडोला ॥ ४ ॥ ❀

घड़ीघड़ी रामचन्द्रजीके चरणोंमें शीस नमाने लगा और ईश्वर जानकर मनमें बहुत ही प्रसन्न हो ॥ ३ ॥ सुग्रीवको ज्ञान हो गया तब श्रीरामचन्द्रजीसे कहने लगा कि–हे कृपानाथ ! अब मेरा मन स्थिर हो गया है ॥ ४ ॥

सुख सम्पति परिवार बड़ाई ॥ सब परिहरि करिहौं सेवकाई ॥ ५ ॥ ❀
ये सब रामभक्तिके बाधक ॥ कहहिँ सन्त तव पदआराधक ॥ ६ ॥ ❀

इसलिये सुख संपदा परिवार और बड़ापन ये सब छोड़कर मैं आपकी बंदगी करूंगा ॥ ५ ॥ क्योंकि ये सब रामकी भक्तिके बाधक है ऐसे आपके चरणोंकी सेवा करनहारे संतलोग कहते है ॥ ६ ॥

शत्रु मित्र दुख सुख जगमाहीं ॥ मायाकृत परमारथ नाहीं ॥ ७ ॥ ❀
बालि परमहित जासु प्रसादा ॥ मिलेहु राम तुम शमन बिषादा ॥ ८ ॥ ❀

हे महाराज ! जगतमें जो शत्रु और मित्र, दुःख और सुख ये है सो तौ मायाके किये हुए है वस्तुतः (असिलमें) कुछ नहीं है ॥ ७ ॥ हे प्रभो ! बालि तौ मेरा परमहित है क्योंकि उसीकी कृपासे दुःखके दूर करनहारे आप मिले हो. जो मैं बालिके भयसे अलग पड़कर ऋष्यमूक पर्वतपर नहीं बैठता तो आप कहांसे मिलते ? ॥ ८ ॥

सपने जेहिसन होइ लराइ ॥ जागे समुझत मन सकुचाई ॥ ९ ॥ ❀
अब प्रभु कृपा करहु यहि भांती ॥ सब तजि भजन करौं दिनराती ॥ १० ॥

हे महाराज ! बालि ऐसा बलवान् है कि उसके साथ स्वप्नमेंभी लडाई हो जाय तौ जागकर समझ लें कि यह तौ स्वप्नकी बात है तौभी मनमें संकोच रहता है ॥ ९ ॥ इसलिये ये नाथ ! अब तौ आप ऐसी कृपा करो कि सब छोड़कर दिनरात भजन किया करूं ॥ १० ॥

सुनि बिराग संयुत कपिबाणी ॥ बोले बिहँसि राम धनुपाणी ॥ ११ ॥ ❀
जो कछु कहेउँ सत्य सब सोई ॥ सखा बचन मम मृषा न होई ॥ १२ ॥ ❀

यह वैराग्ययुक्त सुग्रीवकी बानी सुनकर धनुष हाथमें लिये श्रीरामचन्द्रजी हंसकर बोले ॥ ११ ॥ कि–हे सुग्रीव ! तू जो कुछ कहता है वह सब सच है; परंतु हे मित्र ! मेरी प्रतिज्ञा झूठी नहीं होवे ॥ १२ ॥

नट मरकट इव सबहिँ नचावत ॥ राम खगेश बेद अस गावत ॥ १३ ॥ ❀
लै सुग्रीव संग रघुनाथा ॥ चले चाप सायक गहि हाथा ॥ १४ ॥ ❀

काकभुशुंडजी कहते हैं कि-हे गरुड़ ! जैसे नट वानरको नचावे ऐसे श्रीरामचन्द्रजी सब जगत्को नचाते है ऐसे वेद गाता है ॥ १३ ॥ श्रीरामचन्द्रजी सुग्रीवको संग ले हाथमें धनुषबाण लेकर चले ॥ १४ ॥

तब रघुपति सुग्रीव पठावा ॥ गर्जेसि जाइ निकट बल पावा ॥ १५ ॥ ❋
सुनत बालि क्रोधातुर धावा ॥ गहि कर चरण नारि समुझावा ॥ १६ ॥ ❋

और किष्किंधामें जाकर सुग्रीवको भेजा और सुग्रीव बल पाकर बालिके पास जाकर गर्जा ॥ १५ ॥ सुग्रीवकी आवाज सुनतेही बालि क्रोध करके दौड़ने लगा. तब ताराने बालिको हाथ पांव पकड़कर समझाया ॥ १६ ॥

सुनु पति जिनहिँ मिला सुग्रीवा ॥ ते दोउ बन्धु तेजबलसीवा ॥ १७ ॥ ❋
कोशलेश सुत लक्ष्मण रामा ॥ कालहु जीति सकहिँ संग्रामा ॥ १८ ॥ ❋
"सोइ रघुबीर हृदय महँ आनहु ॥ छांडहु मोह कहा मम मानहु" ॥ १९ ॥ ❋

कि हे पति ! सुनिये. जिनसे सुग्रीव मिला है वे दोनों भाई तेज और बलकी सीमा है ॥ १७ ॥ वे कोशल देशके राजा दशरथके पुत्र राम और लक्ष्मण है. उनको संग्राममें कालभी नहीं जीत सकता ॥ १८ ॥ "उन रामचन्द्रजीको मनमें लाकर मोह छोड़ देओ और मेरा कहना मानो" ॥ १९ ॥

दोहा-कहा बालि सुनु भीरु प्रिय, समदरशी रघुनाथ ॥ ❋
जो कदापि मोहिँ मारिहैं, तौ पुनि होब सनाथ ॥ ११ ॥ ❋

तब बालिने कहा कि-हे डरपोक ! हे प्यारे ! श्रीरामचन्द्रजी समदर्शी है वे बिना अपराध कांइको नहीं मारें और जो कदाचित् मुझे मारेंगे तो फिर मैं सनाथ होजाऊंगा ॥ ११ ॥

अस कहि चला महा अभिमानी ॥ तृणसमान सुग्रीवहिँ जानी ॥ १ ॥ ❋
"बालि देखि सुग्रीवहिँ ठाढ़ा ॥ हृदय क्रोध पुनि बहुबिधि बाढ़ा" ॥ २ ॥ ❋

ऐसे कहकर और सुग्रीवको तृणसमान जानकर महा अभिमानी बालि चला ॥ १ ॥ "फिर सुग्रीवको सामने खड़ा देखकर हृदयमें बहुत क्रोध भरि आया" ॥ २ ॥

भिरेउ युगुल बालि अति तर्जा ॥ मुष्टिक मारि महाधुनि गर्जा ॥ ३ ॥ ❋
तब सुग्रीव बिकल होइ भागा ॥ मुष्टिप्रहार बज्रसम लागा ॥ ४ ॥ ❋

और दोनों जन भिरे. बालिने सुग्रीवको बहुत पीटा और मुट्ठीकी मार मारकर बहुत भारी गर्जना किया ॥ ३ ॥ बालिकी मुट्ठीकी चोट वज्रके समान लगी, जिससे सुग्रीव विकल होकर भाग गया ॥ ४ ॥

मैं जो कहा रघुबीर कृपाला ॥ बन्धु न होइ मोर यह काला ॥ ५ ॥ ❋
एकरूप तुम भ्राता दोऊ ॥ तेहि भ्रमते नहिँ मारेऊ सोऊ ॥ ६ ॥ ❋

और रामचन्द्रजीसे आकर बोला कि, हे दयालु ! मैंने आपसे पहलेही कहा था कि यह मेरा भाई नहीं है काल है ॥ ५ ॥ तब श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि-तुम दोनों भाई एकरूप हो सो मालूम नहीं रहा कि बालि कौन है और सुग्रीव कौन है ? इसी भ्रमसे मैंने नहीं मारा ॥ ६ ॥

कर परशा सुग्रीव शरीरा ॥ तनु भा कुलिश गई सब पीरा ॥ ७ ॥ ❋
मेली कण्ठ सुमनकी माला ॥ पठवा पुनि बल देइ बिशाला ॥ ८ ॥ ❋

फिर श्रीरामचन्द्रजीने सुग्रीवपर हाथ फेरा तो हाथ फेरतेही सुग्रीवका शरीर वज्रके समान दृढ हो गया और बालिके प्रहारकी पीड़ा चली गयी ॥ ७ ॥ सुग्रीवके गलेमें पुष्पोंकी माला डाल दी और बल देकर फिर बालिके पास भेजा ॥ ८ ॥

"चैत्र चतुर्दसि सित चितचाँड़े ॥ भिरे भभकि दोउ पुनि पुर डाँड़े" ॥९॥ ❋
पुनि नाना बिधि भई लराई ॥ बिटप ओट देखहिं रघुराई ॥ १० ॥ ❋

" उदार चित्त दोनों भाई फिर पुरके द्वारपर चैत्र सुदी चतुर्दशीके दिन भिरे " ॥ ९ ॥ फिर अनेक तरहँसे लड़ाई होती रही और श्रीरामचन्द्रजी वृक्षकी ओटसे देखते रहे ॥ १० ॥

दोहा–बहु छल बल सुग्रीव करि, हृदय हारि भय मानि ॥ ❋
मारा बालिहिं राम तब, हियेमांझ शर तानि ॥ १२ ॥ ❋

सुग्रीवने कुछ बल तो बहुत किये परंतु अंतमें भय मानकर हृदयमें हार गया, तब श्रीरामचन्द्रजीने तानकर बालिके हृदयमें बाण मारा ॥ १२ ॥

परा बिकल महि शरके लागे ॥ पुनि उठि बैठ देखि प्रभु आगे ॥ १॥ ❋
श्यामगात शिर जटा बनाये ॥ अरुणनयन शर चाप चढ़ाये ॥ २ ॥ ❋

बाणके लगतेही बालि पृथ्वीपर गिर गया, फिर उठकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको सामने खड़े देखा ॥ १ ॥ सुंदर श्याम शरीर है शिरपर जटाका जूट शोभा दे रहा है, लाल नेत्र और धनुषबाण चढ़ाये हुए है ॥ २ ॥

पुनि पुनि चितै चरण चित दीन्हे ॥ सुफल जन्म माना प्रभु चीन्हे ॥ ३ ॥
हृदय प्रीति मुख वचन कठोरा ॥ बोला चितै रामकी ओरा ॥ ४ ॥ ❋

श्रीरामचन्द्रजीको देखकर बारंबार बालि प्रभुकी ओर निहारने लगा औरा श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें चित्त लगा दिया और अपने प्रभुको चीन्ह कर बालिने माना कि, आज मेरा जन्म सफल है ॥ ३ ॥ बालिके हृदयमें तो प्रीति है और मुखमें वचन कठोर है सो रामचन्द्रजीकी तरफ देखकर बोला कि– ॥ ४ ॥

धर्महेतु अवतरेहु गुसाईं ॥ मारेहु मोहिं व्याधकी नाईं ॥ ५ ॥ ❋
मैं वैरी सुग्रीव पियारा ॥ कारण कवन नाथ मोहिं मारा ॥ ६ ॥ ❋

हे स्वामी ! आपने अवतार तो धर्मके अर्थ लिया और मुझे व्याधकी तरह मारा इसका कारण क्या है ? ॥ ५ ॥ फिर मैं तो बैरी और सुग्रीव प्यारा इसका कारण क्या है ? और मुझे बिना कसूर मारा इसकाभी कारण क्या है ? सो आप कहैं ॥ ६ ॥

अनुजबधू भगिनी सुतनारी ॥ सुनु शठ ये कन्यासम चारी ॥ ७ ॥ ❋
इन्हैं कुदृष्टि बिलोकै जोई ॥ ताहि बधे कछु पाप न होई ॥ ८ ॥ ❋

तब श्रीरामचन्द्रजी बोले कि–हे मूर्ख ! सुन. छोटे भाईकी स्त्री, बहन, पुत्रकी स्त्री, और कन्या ये चारों एक समान है ॥ ७ ॥ इनको जो कोई कुदृष्टिसे देखै तो उसको मारनेमें कुछभी पाप नहीं है ॥ ८ ॥

मूढ़ तोहिं अतिशय अभिमाना ॥ नारि सिखावन करसि न काना ॥९॥ ❋

मम भुज बल आश्रित तेहिं जानी ॥ मारा चहसि अधम अभिमानी॥१०॥

रे मूर्ख ! तेरे मनमें तौ बहुत अभिमान था जिससे तैंने अपनी स्त्री ताराका कहना कानपर नहीं आना ॥ ९ ॥ रे अधम ! अरे अभिमानी ! सुग्रीवको मेरे भुजके आश्रित जानकर फिरभी तैंने मारना चाहा ॥ १० ॥

दोहा–सुनहु राम स्वामी सुभग, चलन चातुरी मोरि ॥ ❋
प्रभु अजहूं मैं पातकी, अन्तकाल गति तोरि ॥ १३ ॥ ❋

ये श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर बालि बोला कि–हे नाथ ! हे राम ! आप मेरी अच्छी चाल और चतुराई तौ देखें. हे प्रभु ! अंतसमयमें मुझे आपकी गति प्राप्त हो गयी. क्या अबभी मैं पापीही रहा ? ॥ १३ ॥

सुनत राम अति कोमल बाणी ॥ बालि शीश परशा निजपाणी ॥१॥ ❋
अचल करौं तनु राखहुँ प्राना ॥ बालि कहा सुनु कृपानिधाना ॥ २ ॥ ❋

श्रीरामचन्द्रजीने बालिकी इस कोमल वाणीको सुनतेही बालिके शिरपर अपना हाथ फेरा ॥ १ ॥ और कहा कि–मैं तुझे अचल कर देऊं और तेरे प्राण राख देऊं. तब बालिने कहा कि–हे कृपानाथ ! सुनो ॥ २ ॥

जन्म जन्म मुनि यतन कराहीं ॥ अन्त राम कहि आवत नाहीं ॥ ३ ॥ ❋
जासु नाम बल शंकर काशी ॥ देत सबहिं समगति अविनाशी ॥ ४ ॥ ❋
मम लोचन गोचर सोइ आवा ॥ बहुरि कि अस प्रभु बनहि बनावा ॥५॥ ❋

मुनिलोग अनेक जन्मोंतक यत्न करते है परंतु अंतसमयमें रामको प्राप्त नहीं होते ॥ ३ ॥ और जिस रामनामके बलसे अविनाशी श्रीमहादेवजी काशीजीमें सबको समान गति देते हे ॥ ४ ॥ वे आप मेरे नेत्रोंके सामने आकर खड़े हो सो हे प्रभु ! फिर क्या ऐसा बनाव बननेका है ? ॥ ५ ॥

छंद–सो नयनगोचर जासु गुण नेति नेति कहि श्रुति गावहीं ॥ ❋
जित पवन मन गोनिरस करि मुनि ध्यान कबहुँक पावहीं ॥ ❋
मोहिं जानि अति अभिमानबश प्रभु कहेउ राखु शरीरहीं ॥ ❋
अस कवन शठ हठ काटि सुरतरु बारि कराहि करीरहीं ॥ १ ॥ ❋

जिस परमेश्वरके गुणोंको बेद नेति २ कहकर गाते है वे परमेश्वर मेरे नेत्रोंके सन्मुख ठाढ़े हैं. जिस परमेश्वरको मुनिलोग प्राण मन और इंद्रियोंको जीतकर कोई एक समय ध्यानमें पाते हैं उस परमेश्वरका मैं प्रत्यक्ष दर्शन करताहूं. हे नाथ ! आप मुझें बहुत अभिमानके बश जानकर आज्ञा करते हैं कि, तेरा शरीर राख दें. सो ऐसा तौ मूर्ख कौन होवे ? कि जो हठ करके कल्पवृक्षको काटकर करीरकी बारी लगावे ॥ १ ॥

अब नाथ करि करुणा बिलोकहु देहु यह बर मागऊं ॥ ❋
जेहि योनि जन्मौं कर्मवश तहँ रामपद अनुरागउँ ॥ ❋
यह तनय ममसम बिनय बल कल्याणपद प्रभु दीजिये ॥ ❋
गहि बाहँ सुर नर नाह अंगद दास आपन कीजिये ॥ २ ॥ ❋

हे नाथ! अब तौ मुझे आप दयादृष्टिसे देखें और जो मैं वर मांगूं सो दें. कर्मोंके बस होकर जिस योनिमें मैं जन्म लेऊं वहीं आपके चरणोंमे मेरी प्रीति रहे ॥ १ ॥ हे नाथ! यह मेरा पुत्र बल और विनयमें मेरेही समान है सो आप इसे कल्याणपद दें. हे सुरनरनाथ! इस अंगदको बांह पकरिके अपना दास करके रक्खें ॥ २ ॥

दोहा–रामचरण दृढ़ प्रीति करि, बालि कीन्ह तनु त्याग ॥ ❋
सुमनमाल जिमि कण्ठते, गिरत न जानै नाग ॥ १४ ॥ ❋

बालिने इतना कह श्रीरामचंद्रजीके चरणोंमे दृढ़ प्रेम कर देहकात्याग किया, जैसे कि, कंठसे गिरती हुई फूलोंकी मालाको हाथी नहीं लखे ऐसे बालिने प्राणोंकी तरफ ध्यानही नहीं दिया कि मेरे प्राण जाते है. क्योंकि उसका ध्यान तौ ईश्वरमे लगगया. जिसका ध्यान अंतसमयमें ईश्वरमें लग जाता है उसका प्राणत्यागकी पीड़ाकी ओर ध्यान नहीं रहता ॥ १४ ॥

राम बालि निजधाम पठावा ॥ नगरलोग सब व्याकुल धावा ॥ १ ॥ ❋
नाना विधि बिलाप कर तारा ॥ छूटे केश न देहँ सँभारा ॥ २ ॥ ❋

श्रीरामचंद्रजीने बालिको अपने धामको प्राप्त किया. बालिके मरनेके समाचार पाकर नगरके सब लोग व्याकुल होकर दौड़े ॥ १ ॥ और तारा अनेक तरहसे विलाप करने लगी. शिरके बार छूट गये और देहका संभारनकीभी सुध नहीं रही ॥ २ ॥

पुनि पुनि तासु शीश उर धरई ॥ बदन बिलोकि हृदयमहँ हतई ॥ ३ ॥ ❋
मैं पति तुमहिँ बहुत समुझावा ॥ काल बिबश पिय मनहिँ न आवा ॥ ४ ॥ ❋

बारंवार पतिको शिर अपने हृदयमें धरकर और पतिके वदनकी ओर देखकर हृदयमें जलगयी ॥ ३ ॥ और बोलि कि–हे पति! मैंने आपको बहुत समुझाया परंतु कालके बशसे हे प्रिय! मेरे वचन आपके मनहीमें नहीं आये ॥ ४ ॥

अंगद कहँ कछु कहन न पायहु ॥ बीचहि सुरपुर प्राण पठायहु ॥ ५ ॥ ❋
तारा बिकल देखि रघुराया ॥ दीन्ह ज्ञान हरि लीन्ही माया ॥ ६ ॥ ❋

हे प्रिय! अंगदको आप कुछ कहभी नहीं सके और बीचहीमें स्वर्गको सिधार गये ॥ ५ ॥ श्रीरामचन्द्रजीने ताराको व्याकुल देखकर ज्ञान दिया और अज्ञान हर लिया ॥ ६ ॥

क्षिति जल पावक गगन समीरा ॥ पंच रचित यह अधम शरीरा ॥ ७ ॥ ❋
प्रगट सो तनु तव आगे सोवा ॥ जीव नित्य तुम केहि लगि रोवा ॥ ८ ॥ ❋

हे तारा! पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश और वायु इन पांच तत्वोंका बनाहुआ यह अधम शरीर है ॥ ७ ॥ सो तौ तेरे आगे सोया है और जो जीव है सो नित्य है फिर तू किसलिये रोवे है? ॥ ८ ॥

उपजा ज्ञान चरण तब लागी ॥ लीन्हेसि परम भक्ति बर माँगी ॥ ९ ॥ ❋
उमा दारुयोषितकी नाँई ॥ सबहिँ नचावत राम गुसाँई ॥ १० ॥ ❋

श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर ताराको ज्ञान उपज आया सो श्रीरामचन्द्रजीके पांव परी और श्रीरामचन्द्रजीमें परमभक्ति यह वर मांग लिया ॥ ९ ॥ श्रीमहादेवजी कहते हैं कि–हे पार्वती! अपने स्वामी श्रीरामचन्द्रजी सब जगतको काठकी पुतलीकी तरह नचाते हैं ॥ १० ॥

तब सुग्रीवहिँ आयसु दीन्हा ॥ मृतककरम बिधिवत सब कीन्हा ॥११॥ ❋
राम कहा अनुजहिँ समुझाई ॥ राज देहु सुग्रीवहिँ जाई ॥ १२ ॥ ❋
रघुपतिचरण नाइ करि माथा ॥ चले सकल प्रेरित रघुनाथा ॥ १३ ॥ ❋

फिर श्रीरामचन्द्रजीने सुग्रीवको आज्ञा किया कि बालिका मृतककर्म करो तब सुग्रीवने सब मृतककर्म विधिपूर्वक किया ॥ ११ ॥ यह सब कार्य होनेके अनंतर श्रीरामचन्द्रजीने लक्ष्मणजीसे समुझाकर कहा कि–सुग्रीवको जाकर राज देओ ॥ १२ ॥ लक्ष्मणने श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमे शीस नमाकर सुग्रीवको राज देनेके लिये चले वैसेही और सब लोग श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञासे चले ॥ १३ ॥

दोहा–लक्ष्मण तुरत बुलायउ, पुरजन विप्र समाज ॥ ❋
राज दीन्ह सुग्रीव कहँ, अंगद कहँ युवराज ॥ १५ ॥ ❋

लक्ष्मणजीने जाकर तुरंत पुरके लोगोंको और ब्राह्मणोंकी सभाको बुलाकर सुग्रीवको तौ राज दिया और अंगदको युवराज दिया ॥ १५ ॥

उमा रामसम हित जगमाहीं ॥ सुत पितु मातु बन्धु कोउ नाहीं ॥ १ ॥ ❋
सुर नर मुनि सबकी यह रीती ॥ स्वारथ लागि करैं सब प्रीती ॥ २ ॥ ❋

श्रीमहादेवजी कहते है कि–हे पार्वती ! इस जगतमें श्रीरामचन्द्रजीके समान न पुत्र न पिता न माता न भाइ कोई नहीं है ॥१॥ क्योंकि क्या देव क्या मनुष्य और क्या मुनि सबकी यही रीति है कि, मतलबके लिये प्रीति करते है. श्रीरामचन्द्रजी तौ विनाही स्वार्थ सबका भला करते है ॥ २ ॥

बालित्रास व्याकुल दिनराती ॥ तन बिबरण चिंता जरु छाती ॥ ३ ॥ ❋
सो सुग्रीव कीन्ह कपिराऊ ॥ अति कोमल रघुबीर सुभाऊ ॥ ४ ॥ ❋

जो सुग्रीव बालिके भयसे रात दिन व्याकुल रहता था जिस सुग्रीवका बानिक बिगड़ गया और चिंतासे छाती जल गयी ॥ ३ ॥ उस सुग्रीवको वानरोंका राजा कर दिया; क्योंकि श्रीरामचन्द्रजी अतिही कोमल स्वभाववारे हैं ॥ ४ ॥

ऐसे प्रभुकहँ जो परिहरहीं ॥ काहे न बिपतिजाल नर परहीं ॥ ५ ॥ ❋
पुनि सुग्रीवहिं लीन्ह बुलाई ॥ बहु प्रकार नृपनीति सिखाई ॥ ६ ॥ ❋

ऐसे प्रभुका जो नर त्याग करते हैं तौ उनपर विपद् जाल परे बिना कैसे रहे ? ॥ ५ ॥ फिर सुग्रीवको श्रीमहाराजने बुलाया और बहुत तरहसे सुग्रीवको राजनीति सिखाया ॥ ६ ॥

कह प्रभु सुनु सुग्रीव हरीशा ॥ पुर न जाउँ दशचारि बरीशा ॥ ७ ॥ ❋
गत ग्रीषम बरषा ऋतु आई ॥ रहिहौं निकट शैलपर छाई ॥ ८ ॥ ❋

और कहा कि–हे वानरेश ! सुन, मैं १४ चौदह वर्षतक पुर नहीं जाऊंगा ॥ ७ ॥ अब ग्रीष्म ऋतु तौ चला गया है और वर्षाऋतु आगया है इसलिये ४ चार महिना तेरे पासही इस पर्वतपर पर्णकुटी बनाकर रहूंगा ॥ ८ ॥

अंगदसहित करहु तुम राजू ॥ सन्तत हृदय राखि मम काजू ॥ ९ ॥ ❋

तब सुग्रीव भवन फिरि आये ॥ राम प्रवर्षण गिरिपर छाये ॥ १० ॥ ❀

अब तुम अंगदके साथ राज करो परंतु मेरा काम निरंतर हृदयमें रखना ॥ ९ ॥ सुग्रीव श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा पाकर अपने घर आया और रामचन्द्रजी प्रवर्षण पर्वतपर पर्णशाला बनाकर रहने लगे ॥ १० ॥

दोहा–प्रथमहिँ देवन गिरिगुहा, राखी रुचिर बनाइ ॥ ❀
राम कृपानिधि कछुक दिन, बास करहिँ गे आइ ॥ १६ ॥ ❀

देवताओंने पहलेहीसे उस पर्वतकी गुफाको सुन्दर बनाकर रक्खा था कि, कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजी यहां आकर कुछ दिन बास करेंगे ॥ १६ ॥

सुन्दर बन कुसुमित तरु शोभा ॥ गुंजत चंचरीक मधु लोभा ॥ १ ॥ ❀
कन्द मूल फल अतिहि सुहाये ॥ भये बहुत जबते प्रभु आये ॥ २ ॥ ❀

वह ऐसा सुन्दर वन है कि, जहां फूलेहुए वृक्ष शोभा दे रहे है. पुष्पोंके सुगंधके लोभसे भँवरे गुंज रहे है ॥ १ ॥ और जबसे श्रीरामचन्द्रजी पधारे तबसे अति सुहावने कंद मूल फल बहुत हो गये ॥ २ ॥

देखि मनोहर शैल अनूपा ॥ रहि तहँ अनुजसहित सुरभूपा ॥ ३ ॥ ❀
मंगलरूप भयो बन तबते ॥ कीन्ह निबास रमापति जबते ॥ ४ ॥ ❀

ऐसे मनोहर अनुपम पहाड़को देखकर देवराज श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजीसहित रहने लगे ॥ ३ ॥ जबसे श्रीपतिने निवास किया तबसे वह वन मंगलरूप होगया ॥ ४ ॥

मधुकर खग मृग तन धरि देवा ॥ करहिँ सिद्ध मुनि प्रभुकी सेवा ॥ ५ ॥
फटिक शिला अति शुभ्र सुहाई ॥ सुख आसीन तहाँ दोउ भाई ॥ ६ ॥ ❀

देवलोग सिद्धलोग और मुनिलोग भंवरे पक्षी और हरिण इनके रूप धर धरके प्रभुकी सेवा करने लगे ॥ ५ ॥ एक समय अति सुपेद और सुहावनी फटिक मणि (बिलोरी) की शिलापर दोनों भाई सुखसे बैठे थे ॥ ६ ॥

कहत अनुज सन कथा अनेका ॥ भक्ति बिरति नृप नीति बिबेका ॥ ७ ॥
बर्षाकाल मेघ नभ छाये ॥ गरजत लागत परम सुहाये ॥ ८ ॥ ❀

उसवक्त श्रीरामचन्द्रजी भक्ति, वैराग्य, राजनीति और ज्ञान इन संबंधी अनेक बातें लक्ष्मणजीसे कहने लगे ॥ ७ ॥ इतनेमें वर्षाकालके कारण बादल आकाशमें छागये और परम,सुहावनी गरजना करने लगे ॥ ८ ॥

दोहा–लक्ष्मण देखहु मोरगण, नाचत बारिद पेखि ॥ ❀
गृही बिरतिरत हर्षयुत, विष्णुभक्त कहँ देखि ॥ १७ ॥ ❀

तब श्रीरामचन्द्रजी बोले कि–हे लक्ष्मण ! देख, मोरगण मेघको देखदेखकर कैसे नाचते हैं जैसे कि वैराग्यवान् गृहस्थी विष्णुभक्तको देखकर प्रसन्न होते हैं ॥ १७ ॥

घन घमण्ड नभ गरजत घोरा ॥ प्रियाहीन डरपत मन मोरा ॥ १ ॥ ❀
दामिनि दमकि रही घनमाहीं ॥ खलकी प्रीति यथा थिर नाहीं ॥ २ ॥ ❀

हे लक्ष्मण ! जो मेघ आकाशमें घमंडसे घोर गर्जना करता है तो सीता बिना मेरा मन डरता है ॥ १ ॥ अरे भाई ! देख तो सही. बादलमें बिजुली कैसी चंचल चमकि रही है जैसे कि, नीचकी प्रीति स्थिर नहीं रहती ॥ २ ॥

बर्षहिं जलद भूमि नियराये ॥ यथा नवहिँ बुध विद्या पाये ॥ ३ ॥ ❀
बुंद निघात सहैं गिरि कैसे ॥ खलके बचन सन्त सहैं जैसे ॥ ४ ॥ ❀

हे भाई ! बादल बरसते बरसते पृथ्वीपर कैसे नम्र आये है जैसे पंडितलोग विद्या पाकर नम्र हो जाते है ॥ ३ ॥ बूंदोंका प्रहार पहाड़ कैसे सहन करते है जैसे संतलोग दुष्टोंके वचनोंका सहन करते है ॥ ४ ॥

क्षुद्रनदी भरि चलि उतराई ॥ जस थोर धन खल बौराई ॥ ५ ॥ ❀
भूमि परत भा डाबर पानी ॥जिमि जीवहि माया लपटानी ॥ ६ ॥ ❀

छोटी नदियां मर्याद छोड़ भर २ कर कैसी चली है जैसे नीच आदमी थोरेही धनहीसे बावला बन अपनी मर्याद छोड़ देता है ॥ ५ ॥ पृथ्वीपर पड़तेही जल कैसा गदला हो रहा है जैसे जन्म होतेही जीव मायाके लिपट जानेसे मलिन हो जाता है ॥ ६ ॥

सिमिटि सिमिटि जल भरे तलावा ॥ जिमि सद्गुण सज्जन पहँ आवा॥७॥
सरिता जल जलनिधि महँ जाई ॥ होइ अचल जिमि जन हरि पाई ॥ ८॥

जल सिमिट सिमिटकर तलाव कैसे भरे जाते है जैसे अच्छे गुण अपने आप सज्जनोंके पास चले आते है ॥ ७ ॥ नदियोंका जल यद्यपि बहुत चंचल है तथापि वह समुद्रमें जाकर कैसे स्थिर हो जाता है जैसे भगवानके भक्त हरिको पाकर स्थिर हो जाते है ॥ ८ ॥

दोहा–हरित भूमि तृण संकुल, समुझि परै नहिँ पन्थ ॥ ❀
जिमि पाखण्ड विवादते, लुप्त भये सद्ग्रन्थ ॥ १८ ॥ ❀

हरे घाससे पृथ्वी हरी होगयी. और घास ऐसा छागया कि, जिससे मार्ग छिप गये जैसे पाखंडियोंके वादसे वेदादिक सद्ग्रंथ लुप्त हो जाते है ॥ १८ ॥

दादुर धुनि चहुँ ओर सुहाये ॥ बेद पढ़ैं जनु बटुसमुदाये ॥ १ ॥ ❀
नवपल्लव भे बिटप अनेका ॥ साधुके मन जस होइ बिबेका ॥ २ ॥ ❀

मेंढ़कोंकी सुहावनी धुनि चारों तरफसे कैसी हो रही है कि, मानों ब्रह्मचारियोंकी मंडली वेदही पढ़ रही है ॥ १ ॥ अनेक वृक्ष नवीन पल्लव आनेसे कैसे शोभा देते है कि, जैसे ज्ञान प्राप्त होनेसे साधुओंके मन प्रसन्न होते हैं ॥ २ ॥

अर्क जवास पातु बिनु भयऊ ॥ जिमि सुराज्य खल उद्यम गयऊ ॥ ३ ॥
खोजत पन्थ मिलै नहिँ धूरी ॥ करै क्रोध जिमि धर्महिँ दूरी ॥ ४ ॥ ❀

आक और जवासके वृक्षोंके पान कैसे झर गये हैं कि, जैसे अच्छा राज होनेसे दुष्टोंका-उद्यम बूड़ जाता है ॥ ३ ॥ मार्गमें ढूंढ़नेसेभी धूर नहीं मिलती है जैसे धर्म, क्रोध करनेवालेके पास नहीं रहता ॥ ४ ॥

शशि सम्पन्न सोह महि कैसे ॥ उपकारीकी सम्पति जैसे ॥ ५ ॥ ❀
निशि तमघन खद्योत बिराजा ॥ जनु दंभिनकर जुरा समाजा ॥ ६ ॥ ❀

चंद्र व धान्यकी संपत्तिसे पृथ्वी कैसी शोभा देती है जैसे उपकारी पुरुषकी संपदा ॥ ५ ॥ हे लक्ष्मण ! रात्रिके गहरे अंधियारेमें खद्योत (आगिये) कैसे मालूम होते है मानों धूर्तलोगोंकी सभाही जुरी है ॥ ६ ॥

महावृष्टि चलि फूटि कियारी ॥ जिमि स्वतंत्र होइ बिगरहिँ नारी ॥ ७ ॥ ❀
कृषी निराबहिँ चतुर किशाना ॥ जिमि बुध तजहिँ मोह मदमाना ॥ ८ ॥ ❀

महावृष्टि होनेसे कियारियां फूट २ कर कैसी चलीं हैं जैसे स्वतंत्रतासे स्त्रियां बिगड़तीं हैं ॥ ७ ॥ चतुर किसान खेतीको कैसी साफ करते हैं जैसे ज्ञानी अनेक मोह मद आदिका त्याग करता है ॥ ८ ॥

देखहिँ चक्रबाक खग नाहीं ॥ कलिहि पाइ जिमि धर्म पराहीं ॥ ९ ॥ ❀
ऊपर बरषैं तृण नहिँ जामा ॥ सन्तहृदय जस उपज न कामा ॥ १० ॥ ❀

चकवा जातका पक्षी कहीं देखनेहीमें नहीं आता जैसे कलियुगमें धर्म नहीं रहता ॥ ९ ॥ हे लक्ष्मण ! ऊपर भूमिमें वर्षा होनेसेभी तृण कैसे नहीं ऊगता है जैसे संतोंके हृदयमें काम नहीं उपजता है ॥ १० ॥

बिबिधि जन्तु संकुल महि भ्राजा ॥ बढ़ै प्रजा जिमि पाइ सुराजा ॥ ११ ॥ ❀
जहँ तहँ पथिक रहे थकि नाना ॥ जिमि इन्द्रियगण उपजे ज्ञाना ॥ १२ ॥ ❀

हे लक्ष्मण ! अनेक प्रकारके जीवोंसे संकुलित पृथ्वी कैसी शोभा दे रही है जैसे अच्छा राज पाकर प्रजा बढ़ती है ॥ ११ ॥ जहां तहां अनेक रस्तागीर कैसे थक रहे है जैसे ज्ञान प्राप्त होनेपर इन्द्रियोंका गण थकित (शांत) हो जाता है ॥ १२ ॥

दोहा—कबहुँ प्रबल चल मारुत, जहँ तहँ मेघ बिलाहिँ ॥ ❀
जिमि कुपूत कुल उपजे, सम्पति धर्म नशाहिँ ॥ १९ ॥ ❀

हे लक्ष्मण ! कभी कभी प्रबल पवनके चलनेसे मेघ कैसे जहां तहां बिलाते है जैसे कुलमें कुपूत प्रगटनेसे संपदा जहांकी तहां बिला जाती है और धर्म नाशको प्राप्त हो जाता है ॥ १९ ॥

कबहुँ दिवसमहँ निबिड़ तम, कबहुँक प्रगट पतंग ॥ ❀
उपजै बिनशै ज्ञान जिमि, पाइ सुसंग कुसंग ॥ २० ॥ ❀

हे भाई ! दिनमें कभी तो गाढ़ा अंधेरा हो जाता है और अभी सूर्य निकल आता है जैसे कुसंग पानेसे ज्ञान नष्ट होकर मोह हो जाता है और सुसंग पानेसे ज्ञान प्राप्त हो जाता है ॥ २० ॥

बरषा बिगत शरदऋतु आई ॥ देखहु लक्ष्मण परम सुहाई ॥ १ ॥ ❀
फूले कास सकल महि छाई ॥ जनु वर्षाऋतु प्रगट बुढ़ाई ॥ २ ॥ ❀

हे लक्ष्मण ! देख, वर्षाऋतु चली गई और अब तो सुहावनी शरदऋतु आगई है ॥ १ ॥ जिससे फूलेहुए कास नामके घास सब पृथ्वीपर छागये हैं. सो मानों वर्षा ऋतुके बुढ़ापनहीको प्रगट कर रहे हैं ॥ २ ॥

उदित अगस्ति पंथ जल सोषा ॥ जिमि लोभहिं शोषै सन्तोषा ॥ ३ ॥ ❀

सरिता सर जल निर्मल सोहा ॥ सन्तहृदय जस गत मद मोहा ॥ ४ ॥ ❋

अगस्त्यके उगतेही मार्गके जल सूख गये जैसे लोभके प्रगट होतेही संतोष चला जाता है ॥ ३ ॥ और हे लक्ष्मण ! नदियां और तलावोंका जल कैसे निर्मल हो गया है कि जैसे मद और मोह जानेसे सन्तोंका हृदय निर्मल हो जाता है ॥ ४ ॥

रस रस शोष सरित सर पानी ॥ ममता त्यागि करहिँ जिमि ज्ञानी ॥ ५ ॥ ❋

जानि शरदऋतु खंजन आये ॥ पाइ समय जिमि सुकृत सुहाये ॥ ६ ॥ ❋

हे लक्ष्मण ! नदियां और सरोवरोंके पानी कैसे धीरे २ सूखते जाते है जैसे ज्ञानी पुरुष धीरे २ ममताका त्याग करते हैं ॥ ५ ॥ शरदऋतु जानिकर खंजन पक्षी कैसे आये हैं कि जैसे समय पाकर सुहावने सुकृत आते हैं अर्थात् अपना किया हुआ सुकृत वक्तपर उत्तम फल देता है ॥ ६ ॥

पंक न रेणु सोह अस धरणी ॥ नीतिनिपुण नृपकी जस करणी ॥ ७ ॥ ❋

जल संकोच बिकल भय मीना ॥ अबुध कुटुम्बी जिमि धनहीना ॥ ८ ॥ ❋

कीचड़के न होनेसे भूमि कैसी शोभा देती है कि जैसे राजनीतिमें निपुण राजाका काम शोभा देता है ॥ ७ ॥ जल कम होनेके भयसे मीन कैसे विकल दीन व्है गये है कि, जैसे अज्ञानी कुटुम्बी दरिद्र होनेसे दुःखी हो जाते है ॥ ८ ॥

बिनु घन निर्मल सोह अकाशा ॥ जिमि हरिजन परिहर सब आशा ॥ ९ ॥

कहुँ कहुँ वृष्टि शारदी थोरी ॥ कोउ इक पाव भक्ति जिमि मोरी ॥ १० ॥ ❋

बादलके न होनेसे आकाश कैसा निर्मल शोभित हो रहा है. जैसे भक्तजन सब आशाको छोड़कर निर्मल हो जाते है ॥ ९ ॥ शरदऋतुमें कहीं कहीं थोरी वृष्टी होती है जैसे कोई एक हरिजनहीको मेरी भक्ति प्राप्त होती है ॥ १० ॥

दोहा—चले हर्ष तजि नगर नृप, तापस बणिक भिखारि ॥ ❋
जिमि हरिभक्ति पाइ जन, तजहिँ आश्रमी चारि ॥ २१ ॥ ❋

हे लक्ष्मण ! राजा तपस्वी वैश्य और भिखारी ये सब लोग नगरको छोड़ आनंदित होकर कैसे चले जाते हैं जैसे चारों आश्रमी अर्थात् ब्रह्मचारी, गृहस्थी, वानप्रस्थी और संन्यासी हरिभक्तिको पाकर इस लोकका त्याग कर देते है अर्थात् इधरकी सुध भूलकर भक्तिहीमें लीन हो जाते हैं ॥ २१ ॥

सुखी मीन जहँ नीर अगाधा ॥ जिमि हरिशरण न एको बाधा ॥ १ ॥ ❋

फूले कमल सोह सर कैसे ॥ निर्गुण ब्रह्म सगुण भय जैसे ॥ २ ॥ ❋

जहां अगाध पानी है वहां मछलियें कैसी सुखी हैं जैसे हरिभगवानके शरण गयेको एकभी बाधा नहीं रहती ॥ १ ॥ हे लक्ष्मण ! फूलेहुए कमलोंसे सरोवर कैसी शोभा दे रहा है जैसे निर्गुण ब्रह्म सगुण होकर शोभा देते हैं अर्थात् परमेश्वर सत्त्व, रज, तम इन गुणोंसे अलग हैं परंतु आप माया करिके अनेक अवतार धारण कर और अनेक प्रकारके मायाके गुण धारण करिके शोभा देते हैं ॥ २ ॥

गुंजत मधुकरनिकर अनूपा ॥ सुन्दर खगरव नाना रूपा ॥ ३ ॥ ❋

चक्रवाक मन दुख निशि पेखी ॥ जिमि दुर्जन परसम्पति देखी ॥ ४ ॥ ❋

अनुपम भंवरोंके समूह गुंज रहे है. अनेकतरहके सुंदर पक्षी बोल रहे है ॥ ३ ॥ और रात देखकर कंवल चकवेहीका मन दुःखि होता है जैसे पराई संपदा देखकर दुष्टका मन जलै ॥ ४ ॥

चातक रटत तृषा अति वोही ॥ जिमि सुख लहै न शंकरद्रोही ॥ ५ ॥ ❋
शरदातप निशि शशि अपहरई ॥ सन्त दरश जिमि पातक टरई ॥ ६ ॥ ❋

शरदऋतुके घामसे तृषित होकर पपैया कैसा पुकारता है जैसे श्रीशिवजीके द्रोहीको कहीं सुख नहीं होता ॥ ५ ॥ रातमें शरदके घामको चंद्र कैसे हठाता है जैसे संतोंके दर्शन होतेही पाप दूर हो जॉय ॥ ६ ॥

देखहिँ बिधु चकोर समुदाई ॥ चितवहिँ हरिजन हरि जिमि पाई ॥ ७ ॥
मशक दंश बीते हिमत्रासा ॥ जिमि द्विजद्रोह किये कुलनाशा ॥ ८ ॥ ❋

चकोरोंका समूह चंद्रमाकी तरफ कैसे देखते हैं. जैसे मानों भक्तजन भगवान्को प्राप्तहोकर भगवान्की ओर निहारै ॥ ७ ॥ शरदीके भयसे मच्छर और दंश कैसे चले गये है जैसे ब्रह्मद्रोहसे कुलका नाश हो जाता है ॥८॥

दोहा-भूमि जीव संकुल रहे, गये शरदऋतु पाइ ॥ ❋
सतगुरु मिलेते जाहिँ जिमि, संशय भ्रम समुदाइ ॥ २२ ॥ ❋

पृथ्वीपर जीव संकुलित हो रहे थे वे शरदऋतुके आनेसेकैसे गये जैसे कि सतगुरुके मिलनेसे संशयों ओर भ्रमके समूहका नाश होता है ॥ २२ ॥

वर्षागत निर्मल ऋतु आई ॥ सुधि न तात सीताकी पाई ॥ १ ॥ ❋
एकबार कैसेउ सुधि पावों ॥ कालहु जीति निमिषमहँ ल्यावों ॥ २ ॥ ❋

हे भाई ! वर्षाऋतु जाकर शरद आगयी तौभी अभीतक सीताकी सुध नहीं मिली ॥ १ ॥ एक वक्त कैसेभी मुझे सीताकी राह तो मिली आवे तब तौ मैं कालकोभी जीतकर एक क्षणमें उसे ले आऊं ॥ २ ॥

कतहुँ रही जो जीवति होई ॥ तात यतन करि आनौं सोई ॥ ३ ॥ ❋
सुग्रीवहुँ सुधि मोरि बिसारी ॥ पावा राज कोश पुर नारी ॥ ४ ॥ ❋

हे भाई ! वह कहीं रहो पर जो वह जीति हो तब तौ यत्न करके उसे अवश्य लाऊंगा ॥ ३ ॥ सुग्रीवनेभी मेरी याद विसार दी; क्योंकि उसको राज खजाना पुर और स्त्री ये सब मिल गये फिर वह मुझे क्यों याद रक्खे ? ॥ ४ ॥

जेहि सायक मैं मारा बाली ॥ तेहि शर हतौं मूढ़कहँ काली ॥ ५ ॥ ❋
जासु कृपा छूटै मद मोहा ॥ ताकहँ उमा कि सपनेहु कोहा ॥ ६ ॥ ❋

पर मैंने जिस बाणसे बालिको मारा है उसी बाणसे कल इस मूर्ख सुग्रीवको मारूंगा ॥ ५ ॥ महादेवजी कहते हैं कि-हे पार्वती ! जिन श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे मद और मोह छूट जाते हैं उन श्रीरामचन्द्रजीको क्या स्वप्नमेंभी क्रोध होवे ? ॥ ६ ॥

जानहिँ यह चरित्र मुनि ज्ञानी ॥ जिन रघुबीरचरणरति मानी ॥ ७ ॥ ❀
लक्ष्मण क्रोधवन्त प्रभु जाना ॥ धनुष चढ़ाइ गहे कर बाना ॥ ८ ॥ ❀

यह चरित्र कौन जानते है कि, जिन ज्ञानी मुनियोंकी श्रीरामचन्द्रजीके चरणमें प्रीति है वे जानते है ॥ ७ ॥ लक्ष्मणने श्रीरामचन्द्रजीको क्रोधमें समुझकर धनुषबाण चढ़ाकर हाथमें लिया ॥ ८ ॥

दोहा–तब अनुजहिँ समुझायहू, रघुपति करुणासीव ॥ ❀
भय देखाय लै आवहू, तात सखा सुग्रीव ॥ २३ ॥ ❀

करुणासींव तब श्रीरामचन्द्रजीने लक्ष्मणसे समझाकर कहा कि–हे भाई ! सुग्रीव अपना सखा है इसलिये इसे केवल भय दिखाकर ले आओ ॥ २३॥

यहाँ पवनसुत हृदय बिचारा ॥ रामकाज सुग्रीव बिसारा ॥ १॥ ❀
निकट जाइ चरणन शिर नावा ॥ चारिहुबिधि तेहिँ कहि समुझावा ॥ २ ॥

और इधर हनुमानने हृदयमें बिचार किया कि, सुग्रीव रामचन्द्रजीके कामको भूल गया ॥ १ ॥ इसलिये इसे याद दिवाना चाहिये. हनुमान् ऐसे शोच कर सुग्रीवके पास आया और सुग्रीवके समीप जाकर चरणोंमें शिर नवाया फिर हनुमानने साम, दाम, भेद और दंड ये चारों बातें कहकर सुग्रीवको समझाया ॥ २ ॥

सुनि सुग्रीव परम भय माना ॥ विषय मोर हरि लीन्हेउँ ज्ञाना ॥ ३ ॥ ❀
अब मारुतसुत दूत समूहा ॥ पठवहु जहँ तहँ बानरयूहा ॥ ४ ॥ ❀

हनुमानकी बातें सुनतेही सुग्रीव मनमें बहुत भय लाकर बोला कि–हे हनुमान् ! विषयभोगोंने मेरा ज्ञान हर लिया ॥ ३ ॥ हे हनुमान् ! अब मैं जहां तहां दूतोंके समुदाय और वानरोंके झुंड भेजूंगा ॥ ४ ॥

(क्षेपक)

सोरठा–कह अंगद यह काम, हनुमानैते होइ है ॥ ❀
नाहित दूरि मुकाम, चले तुरत सुनि पवनसुत ॥ १ ॥ ❀

तब अंगदने कहा कि–यह काम तो हनुमानसेही होगा;नहीं तर वानरोंके मुकाम बहुत दूर है इसलिये और कोई नहीं पहुंच सकेगा. इस बातको सुनकर तुरंतही पवनपुत्र चला ॥ १ ॥

पूरुब दिशि प्रथमैं सो गयऊ ॥ गव गवाक्षते भाषत भयऊ ॥१॥ ❀
रामकाजलगि मर्कटनाहू ॥ बोल्यो बेगिसहित बल जाहू ॥ २ ॥ ❀

सो पहले तो पूर्व दिशामें जाकर गव और गवाक्ष इन दोनों बंदरोंसे बोला कि– ॥ १ ॥ हे भाइयो ! राजा सुग्रीवने यह हुक्म फरमाया है कि, श्रीरामचन्द्रजीके लिये तुम सबलोग अपनी अपनी सेनाके साथ जलदी चलो ॥ २ ॥

सुनि कपि असी शंकु शत साता ॥ लै सँग चले सुभट हर्षाता ॥ ३ ॥ ❀
पुनि रेवत कदलीबन आये ॥ दुर्धर गजते बचन सुनाये ॥ ४ ॥ ❀
सात पद्म कपि असी करोरी ॥ लै दोउ चले तुरत हरि ओरी ॥ ५ ॥ ❀

इस बातको सुनतेही गव गवाक्ष दोनों जन अस्सी सौ शंकु वानरोंको लेकर बड़े बेगसे चले ॥३॥ फिर हनूमान् रेवत पर्वतके पास कदलीवनमें आकर दुर्धर और गज इन दोनोंको वही हुक्म सुनाया ॥ ४ ॥ तब ये दोनों जन सात पद्म और अस्सी करोड़ वानर लेकर तुरंत श्रीरामचन्द्रजीकी ओर चले ॥ ५ ॥

दोहा-पुनि पहुचे बलवीरके, सुनि कपि तेइस लाख ॥ ❋
साठि सहस शत संग लै, चले करत अभिलाख ॥ १ ॥ ❋

फिर बलबीरके पास पहुँचे तौ वह सुनकर तेवीस लाख साठ हजार एक सौ बंदर संग लेकर अभिलाष करता हुआ चला ॥ १ ॥

धुंधुमाल गिरि पुनि गये, मिले शिखंडी नाम ॥ ❋
सुनि कपि छप्पन कोटि लै, चले कहत जयराम ॥ २ ॥ ❋

फिर धुंधुमाल पर्वतपर जाकर शिखंडीको कहा तौ वहभी छप्पन करोड़ बंदर साथ लेकर रामचन्द्रजीकी जय बोलता हुआ चला ॥ २ ॥

पुनि पहुँचे अर्जुनीगिरि, कुमुदै दीन हुकुम्म ॥ ❋
कपि सत्तासी लाख लै गवन्यो चारि पदुम्म ॥ ३ ॥ ❋

फिर अर्जुनीपर्वतपर पहुंचकर कुमुदको हुक्म सुनाया तौ यह चार पद्म और सत्तावीश लाख बंदर लेकर चला ॥ ३ ॥

पुनि चलि आयो तावगिरि, मिले नील बलवन्त ॥ ❋
सुनि कपि षोड़श खर्व लै चलेबहुरि हनुमन्त ॥ ४ ॥ ❋

फिर तावपर्वतपर आये सो नील वानरसे मिले. यह सोलह खर्व वानर लेकर चला ॥ ४ ॥

सोरठा-बद्रीपर्वत जाय, गन्धमादनते सब कह्यो ॥ ❋
सुनत चले हरपाय, लै सँग गेरा अर्ब कपि ॥ २ ॥ ❋

फिर हनुमान् बद्रीपर्वतपर जाकर गंधमादनसे सब हाल कहा यह सुनतेही वो गेरा अर्ब वानर लेकर बड़ी खुशीसे चला ॥ २ ॥

पुनि पहुँचे अर्जुनगिरि जाई ॥ ताराबखत चले सुधि पाई ॥ १ ॥ ❋
नब्बे लाख सतासी कोटी ॥ संग सकल मर्कट मति मोटी ॥ २ ॥ ❋

फिर अर्जुनपर्वतपर जाकर ताराबखतनाम वानरको खबर दी ॥ १ ॥ इतनेहीमें वह बड़े बुद्धिमान् सत्यासी करोड़ और नब्बे लाख वानर लेकर चला ॥ २ ॥

पुनि सुमेरु पर्वत पगु धारा ॥ मिले केशरिहिं हालु उचारा ॥ ३ ॥ ❋
सुनि दशकोटि लाख नव कीशा ॥ लै संग चले सहस षटबीशा ॥ ४ ॥ ❋

फिर हनुमान् सुमेरुपर्वतपर आये और केसरी वानरसे मिलकर सब हाल सुनाया ॥ ३ ॥ यहभी सुनतेही तुरंत दश करोड़ नव लाख और छबीश हजार वानर संग लेकर चला ॥ ४ ॥

पुनि कैलास पुलिन्दे कहेउ ॥ जय अरु बिजय अण्ड सुधि लहेऊ ॥ ५ ॥

सत्रह शंकु कोटि यक कोरी ॥ चय कपि चले चाह नहिँ थोरी ॥ ६ ॥ ❋

फिर कैलास जाकर पुलिंद जय विजय और अंड इन सबसे कहा ॥ ५ ॥ तब येभी सत्रह शंकु और एक करोड़ वानरोंको संग लेकर श्रीरामचन्द्रजीकी चाहना करते चले ॥ ६ ॥

पुनि विन्ध्याचल भूधर आयो ॥ बाण बसन्त सुनत सुख पायो ॥ ७ ॥ ❋
हरि हरकोटि सहस शत लैके ॥ चले चपल चित चंचल कैके ॥ ८ ॥ ❋

फिर विन्ध्याचलपर आकर बाण और वसंतसे कहा तौ इनने श्रीरामचन्द्रजीकी सेवा पाई ऐसे जानकर परम सुख माना ॥ ७ ॥ और ग्यारह करोड़ और एक लाख बंदर लेकर चले ॥ ८ ॥

तड़पेउ बहुरि विजय गिरि गयऊ ॥ मिलि रतिमुखते भाषण भयऊ ॥ ९ ॥
आठ पदुम नौसे इक्यासी ॥ लै कपि चले सहित सरमासी ॥ १० ॥ ❋

हनुमान् फिर विजय गिरि आया और रतिमुखसे मिलकर यह बात कही ॥ ९ ॥ तब रतिमुख आठ पद्म नव सौ इक्यासी वानर साथ लेकर चला ॥ १० ॥

कूदे बहुरि कासगिरि पावा ॥ मुद मयंदते हाल सुनावा ॥ ११ ॥ ❋
तिन कपि पदुम कोटियक लीन्हे ॥ चले सपदि प्रभुपदचित दीन्हे ॥ १२ ॥

फिर हनुमान् कूदकर कास पर्वतपर आये और मुद और मयंद इन दोनोंसे यह हाल कहा ॥ ११ ॥ तब येभी एक पद्म बंदर ले प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें चित्त लगाकर चले ॥ १२ ॥

जामवन्त भूधर पुनि गयऊ ॥ जाम्बवान साँगत अस भयऊ ॥ १३ ॥ ❋
धूम्रकेतु निज सोदर तेरे ॥ बाण वृन्द बसु शंकु सुडेरे ॥ १४ ॥ ❋

फिर जामवंत पर्वतपर जाकर जांबवान्से ऐसेही कहा ॥ १३ ॥ कि, अपने भाई धूमकेतुको लेकर श्रीरामचन्द्रजीके कार्यके लिये चलो ॥ १४ ॥

छप्पन कोटि अपर मरु लाखा ॥ लै सँग चले भालु करि माखा ॥ १५ ॥
पुनि धवलागिरि आइ बिधाता ॥ बरणी सकल द्विविदते बाता ॥१६॥ ❋

तब जांबवान् अपने भाईके साथ पांच वृंद आठशंकु छप्पन करोड़ और उंचास लाख रीछ लेकर बड़ा क्रोध करके चला ॥ १५ ॥ फिर धवलपर्वतपर आकर द्विविदसे सब बात कही ॥ १६ ॥

एक कोटि कपि लाख पचीसा ॥ गवने संग सूम लै तीसा ॥ १७ ॥ ❋
पुनि उदयाचल पनसहिँ लहेऊ ॥ सर्व असर्व शल्यते कहेऊ ॥ १८ ॥ ❋

तब यहभी एक करोड़ पचीस लाख और तीस हजार वानर लेकर गया ॥ १७ ॥ फिर उदयाचलपर जाकर पनस सर्व असर्व और शल्य इनसे कहा ॥ १८ ॥

अर्बुद आठ पदुम सुनि लैकै ॥ मर्कट चले चहूं चित दैकै ॥ १९ ॥ ❋
याहिबिधि सबै बुलाइ कपीशा ॥ आइ सुकंठै नायो शीशा ॥ २० ॥ ❋

तब येभी आठ अरब और १ पद्म बंदर लेकर चले ॥ १९ ॥ इसतरह हनुमान् सब वानरोंको बुलाकर आके सुग्रीवको शीस नमाया ॥ २० ॥ ॥ इति ॥

कहहु पक्षमहँ आव न जोई ॥ मोरे कर ताकर बध होई ॥ ५ ॥ ❋

तब हनुमन्त बुलाये दूता ॥ सबकर करि सनमान बहूता ॥ ६ ॥ ❋

सुग्रीवने कहा कि–जो वानर पन्दरह दिनोंमें आकर हाजिर नहीं होगा उसकी मृत्यु मेरे हाथसे होगी ॥ ५ ॥ तब हनुमान्‌ने दूत बुलवाये और उनको बहुत मान देकर ॥ ६ ॥

भय अरु प्रीति नीति दिखराई ॥ चले सकल चरणन शिर नाई ॥ ७ ॥ ❋
तेहिँ अँवसर लक्ष्मण पुर आये ॥ क्रोध देखि जहँ तहँ कपि धाये ॥ ८ ॥ ❋

भय प्रेम और राजनीति ये तीनों बातें बताकर दूतोंको भेज दिया अर्थात् दूतोंसे यह कहा कि तुम वानरोंको जलदी ले आओगे तौ तुम्हें इनाम मिलेगा और राजा प्रसन्न होगा और देरी करोगे तौ दंड होगा और राजा अप्रसन्न होगा यह बात सुनकर सब दूत सुग्रीवके चरणोंमें शीश नमा नमाकर चले ॥ ७ ॥ इतनेहीमे यानी वाही समय लक्ष्मणजी पुरमें पधारे सो इनको क्रोधमें देखकर वानर जहां तहां दौड़ने लगे ॥ ८ ॥

दोहा–धनुष चढ़ाइ कहा तबहिँ, जारि करौं पुर क्षार ॥ ❋
व्याकुल नगर देखि तब, आवा बालिकुमार ॥ २४ ॥ ❋

लक्ष्मणजीने आतेही धनुष चढ़ाकर कहा कि–इस पुरको जला खाख करूंगा. लक्ष्मणजीके ये वचन सुनकर व्याकुल हो गया तब अंगद आया ॥ २४ ॥

चरण नाइ शिर बिनती कीन्ही ॥ लक्ष्मण अभय बाहँ तेहिँ दीन्ही ॥ १ ॥
क्रोधवन्त लक्ष्मण सुनि काना ॥ कह कपीश अतिशय अकुलाना ॥ २ ॥ ❋

अंगदने आकर चरणोंमे शीस नमाकर विनय किया तब तौ लक्ष्मणजीने अंगदको हाथसे अभयदान दिया ॥ १ ॥ सुग्रीव लक्ष्मणको क्रोध सुनकर बहुत अकुलाया और हनुमान्‌से कहने लगा कि– ॥ २ ॥

तुम हनुमन्त संग लै तारा ॥ करि बिनती समुझाउ कुमारा ॥ ३ ॥ ❋
तारासहित जाइ हनुमाना ॥ चरण बन्दि प्रभु सुयश बखाना ॥ ४ ॥ ❋

हे हनुमान्! तू तारा और अंगदको साथ लेकर जा और समझाकर लक्ष्मणसे विनती कर ॥ ३ ॥ तब हनुमान् ताराको साथ लेकर लक्ष्मणके पास गया और लक्ष्मणजीके चरणोंमें वंदन करके स्तुति करी ॥ ४ ॥

करि बिनती मन्दिर लै आये ॥ चरण पखारि पलँग बैठाये ॥ ५ ॥ ❋
तब कपीश चरणन शिर नावा ॥ गहि भुज लक्ष्मण कण्ठ लगावा ॥ ६ ॥

और विनती करके घरमें लेआये और चरण धोकर आसनपर विठाये ॥ ५ ॥ तब सुग्रीवने आकर लक्ष्मणजीके चरणोंमें शिर नमाया वैसेही लक्ष्मणजीने भुजा पकड़कर सुग्रीवको कंठके लगा लिया ॥ ६ ॥

नाथ विषयसम मद कछु नाहीं ॥ मुनिमन मोह करै क्षण नाहीं ॥ ७ ॥ ❋
सुनत बिनीत बचन सुख पावा ॥ लक्ष्मण तेहिँ बहुबिधि समुझावा ॥ ८ ॥
पवनतनय सब कथा सुनाई ॥ जेहि बिधि गये दूत समुदाई ॥ ९ ॥ ❋

सुग्रीव बोला कि-हे नाथ ! इस जगतमें विषयोंके समान और कोई मद नहीं है; क्योंकि विषय क्षणभरमें मुनियोंके मनको मोहित कर देते है ॥ ७ ॥ ये सुग्रीवके नम्र वचन सुनतेही लक्ष्मणजी परम प्रसन्न हुए और सुग्रीवको कई एक तरहसे समझाने लगे ॥ ८ ॥ तब हनुमानने जिस तरहसे दूत भेजे थे वह कथा समझाकर लक्ष्मणजीसे कही ॥ ९ ॥

दोहा-हर्षि चले सुग्रीव तब, अंगदादि कपिसाथ ॥ ❋
रामअनुज आगे किये, आये जहँ रघुनाथ ॥ २५ ॥ ❋

सुग्रीव प्रसन्न होकर अंगद आदिको साथ लिये और लक्ष्मणजीको आगे लेकर जहां श्रीरामचन्द्रजी थे वहां आया ॥ २५ ॥

नाय चरण शिर कह कर जोरी ॥ नाथ मोरि कछु नाहिन खोरी ॥ १ ॥ ❋
अतिशय प्रबल देव तव माया ॥ छूटै तबहिँ करहु जब दाया ॥ २ ॥ ❋

और श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें शीस नमाया और हाथ जोड़कर बोला कि-हे नाथ ! मेरी कुछ खोरी नहीं है ॥ १ ॥ क्योंकि, आपकी माया बहुत प्रबल है और वह माया तो तब छूटे कि, जब आप दया करो ॥ २ ॥

विषयविबश सुरनर मुनि स्वामी ॥ मैं पामर पशु कपि अतिकामी ॥ ३ ॥ ❋
नारिनयनशर जाहि न लागा ॥ महाघोर निशि सोवत जागा ॥ ४ ॥ ❋

हे देव ! हे स्वामी ! आपकी मायासे तो देव मनुष्य और मुनि ये सब विषयोंमे फँस रहे है तब मेरी कहा चलाई ! मैं तो पामर पशु अति कामीहूं ॥ ३ ॥ जिसके स्त्रीके नेत्ररूप बाण न लगे वह महा घोर रात्रीमें सोता हुआभी जागता है ॥ ४ ॥

लोभ पाश जेहिँ गर न बधाया ॥ सो नर तुमसमान रघुराया ॥ ५ ॥ ❋
यह गुण साधनते नहिँ होई ॥ तुम्हरी कृपा पाव कोइ कोई ॥ ६ ॥ ❋

और लोभरूप पाशसे जिसका कंठ नहीं पकड़ा गया है अर्थात् जो पुरुष काम और लोभके बश नहीं है वह तो आपके समान जानने योग्य है ॥ ५ ॥ हे कृपानाथ ! ये गुण साधन करनेसे नहीं आते जिसपर आपकी कृपा होती है वही कोई एक इन गुणोंको पाता है अर्थात् काम, क्रोध, लोभ मोह आदिको छोड़ सकता है ॥ ६ ॥

तब रघुपति बोले मुसुकाई ॥ तुम प्रिय मोहिँ भरत जिमि भाई ॥ ७ ॥ ❋
अब सोइ यतन करहु मन लाई ॥ जेहिविधि सीताकी सुधि पाई ॥ ८ ॥ ❋

सुग्रीवके ये वचन सुनकर श्रीरामचन्द्रजी बोले कि-हे भाई ! तू तो मेरे भरतके समान प्यारा है ॥ ७ ॥ अब मन लगाकर ऐसा उपाय करना चाहिये कि,जैसे सीताकी सुध पावैं ॥ ८ ॥

दोहा-यहिविधि होत बतकही, आये बानरयूथ ॥ ❋
नानाबरण अतुल बल, देखिय कीशबरूथ ॥ २६ ॥ ❋

ऐसे श्रीरामचन्द्रजी और सुग्रीव बातें कर रहे थे इतनेहीमें बड़े २ बलवंत अनेक जातके वानरोंके झुंड आकर खड़े हुए उन्हें श्रीरामचन्द्र देखने लगे ॥ २६ ॥

(क्षेपक)

दोहा–श्माम लाल धूमर धवल, हरित पीत सब बर्ण ॥ ❋
हाथ जोरि ठाढ़े भये, शीश नाइ सब चर्ण ॥ १ ॥ ❋

श्याम लाल धुवेंके रंगके, धोले, हरे और पीले सब रंगके बंदरोंने आकर श्रीरामचन्द्रजीके और सुग्रीवके चरणोमे शीस नमाया और हाथ जोड़ जोड़कर खड़े होगये ॥ १ ॥

यूथ यूथ सब आय तुलाने ॥ देखत राम हिये हरषाने ॥ १ ॥ ❋
कह लक्ष्मण सुनु करुणासींवा ॥ बन्धु बलिष्ठ अहैं सुग्रीवा ॥ २ ॥ ❋

वानरोंके सब यूथ आकर नंबरवार खड़े रहे उन्हें देखकर रामचन्द्रजी बहुत प्रसन्न भये ॥ १ ॥ तब लक्ष्मणने कहा कि–हे कृपानिधान ! अपना बंधु सुग्रीव बलवान् है ॥ २ ॥

तब कपीश सब यूथ बुलावा ॥ सुनि आज्ञा सबहिन शिर नावा ॥ ३ ॥ ❋
तुम सब कपि दशहू दिशि धावहु ॥ जनकसुता सुधि आतुर लावहु ॥ ४ ॥

तब सुग्रीवने सब वानर यूथोंको बुलाया और उन्होंने आकर सुग्रीवके चरणोमें शीस नमाया ॥ ३ ॥ तब सुग्रीवने सब बंदरनको आज्ञा दिया कि तुम सब बन्दर दशही दिशाओंमें जावो और जलदी सीताकी खबर लावो ॥ ४ ॥

रामकृपा चिंता जनि धरेऊ ॥ लता बिशाल फूल बन फिरेऊ ॥ ५ ॥ ❋
सारस हंस चकोर सुबागा ॥ रम्य सरित मन हर्षि तड़ागा ॥ ६ ॥ ❋

अपने ऊपर श्रीरामजीकी कृपा है इसलिये तुम लोग कोई तरहकी चिंता मत करो और जिनमे बड़ी २ लतायें फूल रही है तिन वनोंमे फिरो ॥ ५ ॥ जहां सुंदर बागोंमें सारस, हंस, चकोर बोल रहे है, रमणीय नदियां बह रहीं है, सुन्दर तालाव शोभ रहे हैं कि जिनको देखतेही मन प्रसन्न हो जाय ॥ ६ ॥

सप्तरंग अतिबृन्द सुहावन ॥ सदा काल धनपति मनभावन ॥ ७ ॥ ❋
पुष्पभार भरि बिटप सुहाये ॥ परशत भूमि हरित शुभ भाये ॥ ८ ॥ ❋

जहां सुहावने गिरगटों (किरकांटिया) के झुंड़ रहते हैं जो कि हमेशा कुंबेरके मनको प्रसन्न

---

१ एक समय राजा मरुत्के यज्ञमें रावण दिग्विजय करता २ आ निकला तौ उसको देखकर सब देवता भाग गये. सो कोई किसीका रूप बनाकर निकला. कोई किसीका रूप बनाकर निकला. इंद्र मयूरके रूपसे निकल गया. यमराज कव्वा होकर निकल गिया. वरुण हंसका रूप धरके निकला और कुबेर गिरगटके रूपको धरकर निकला. जब ये सब देव और लोकपाल रावणसे बच गये तब उन्होंने इनको वरदान दिया है जो जिसके रूपसे निकल आया. जैसे इंद्रने मयूरको यह वरदान दिया कि तुझे सर्पसे भय नहीं होगा और दूसरा वर यह दिया कि तेरी परोंमें जो मेरे हजार नेत्र हैं वे हो जा-यँगे नहीं तर पहले मोर काले होते थे फिर इंद्रके वरदानसे ऐसे होने लगे और तीसरा वर यह दिया कि जब मेह बर्षेगा तब तू बहुत प्रसन्न रहेगा. और यमराजने कव्वेको यह वरदान दिया कि जो कोई श्राद्ध करेगा वह तुझे बलि देगा. और तुझको बलि देनेसे मेरे लोकमें रहनेवाले तृप्त होवेंगे और दूसरा वर यह दिया कि तू कोईके मारे विना मरेगा नहीं और तुझे रोग नहीं होगा और वरुणने हंसको यह वरदान दिया कि तू परोंपर काला है सो कालापन निवृत्त होकर स्वच्छ हो जा, और कुबेरने गिरगटको यह वर दिया कि तेरा वर्ण सोनेके समान हो जायगा और तेरे शिरमें धन रहेगा.

करनेवाले है ॥ ७ ॥ जहां पुष्पोंके भारसे भरेहुए सुहावने वृक्ष हैं जो कि जमीनके लग रहे हैं और खूब हरे हैं ॥ ८ ॥

श्रम निवारि कछु करब निहारी ॥ हिय धरि राम भक्तभयहारी ॥ ९ ॥ ❋
चढ़हु शैल सीताकहँ हेरी ॥ गंधमाद सब थान सुहेरी ॥ १० ॥ ❋

वहां कुछ विश्राम ले लेकर फिर सीताको ढूंढना और भक्तोंके भयके दूर करनेवाले श्री-रामचन्द्रजीको हृदयमें धरकर ॥ ९ ॥ फिर गंधमादन पर्वतपर चढ़ना सो वहांके स्थान गुफा आदि सब भागोंमें सीताको ढूंढना ॥ १० ॥

दोहा-ऋषि तपसिन कहँ पूंछि पुनि, करहु बलिष्ठ पयान ॥ ❋
श्वेत भूमि उत्तर दिशा, अंत धराको जान ॥ २ ॥ ❋

जब तुम लंबा पयान (पैंड़ा) करो तब ऋषि तपस्वी इनको पूछकर करना और उत्तर दिशामें सुपेद जमीन आजावे तब जानलेना कि अब पृथ्वीका छेड़ा आगया ॥ २ ॥

शिखर सुमेरु हेरि कैलाशू ॥ काग भुशुंडी केर निवासू ॥ १ ॥ ❋
कुंड एक तहँ मोती चूरा ॥ पानी अमृतक सुन्दर पूरा ॥ २ ॥ ❋

मेरुके शिखर ढूंढ़ कैलास ढूंढ़ और कागभुसुंडका आश्रम ढूंढ़कर ॥ १ ॥ फिर आगे जाना वहां एक मोतीचूर नाम कुंड है, वह अमृतके समान पानीसे भरा है ॥ २ ॥

जम्बु वृक्ष है ताही ठाऊं ॥ जम्बुद्वीप यहीते नाऊं ॥ ३ ॥ ❋
गज प्रमाण लागत फल ताहीं ॥ अमित रसन कहि निगमसिराहीं ॥ ४ ॥

वहां जामुनका वृक्ष है उसीसे जंबुद्वीप कहते है ॥ ३ ॥ जामुनके रससे भरे हाथीके समान बड़े फल लगते है कि जिनकी वेद प्रशंसा करते है ॥ ४ ॥

पाके फल धरणीपर परहीं ॥ तिनके सात कुंड महि भरहीं ॥ ५ ॥ ❋
दिव्यरूप चढ़ि देव विमाना ॥ हर्षित आइ कराहिँ अस्नाना ॥ ६ ॥ ❋

पके हुए फल पृथ्वीपर गिरते है उनके ७ सात कुंड भरते है ॥ ५ ॥ जहां देव और अप्सरालोग विमानोंमें बेठ २ कर स्नान करनेके लिये आते है ॥ ६ ॥

वही सरित सरयू यह बहई ॥ अवधसमीप प्रसिद्ध सुअहई ॥ ७ ॥ ❋
जेहि मज्जन कीन्हेते बीरा ॥ सकल पाप दुख हरत शरीरा ॥ ८ ॥ ❋

उन कुंडोंमेंसे जो नदी निकली है वह यह सरयू है सो अयोध्याके समीप प्रसिद्ध है ॥ ७ ॥ हे शूरवीरो ! उस शरयूमें जो कोई स्नान करते हैं उनके सब पाप और दुःख तुरंत नाश हो जाते हैं ॥ ८ ॥

फलभोजन जलपान सुकरहू ॥ रामकाज हिय हिम्मत धरहू ॥ ९ ॥ ❋
सुरसेनप मंडप है जाहीं ॥ सुमिरि राम पुजि जायहु ताहीं ॥ १० ॥ ❋
लोमश ऋषिकर दरश करेहू ॥ पुनि शांडिलपुर अनुसरेहू ॥ ११ ॥ ❋

हे भाइयो ! फल खाओ, सुन्दर पानी पीओ और श्रीरामचन्द्रजीके लिये हृदयमें हिम्मत

धरो ॥ ९ ॥ जहां देवताओंकी सेनाके पालनेवाले कार्तिकेय स्वामीका मंडप (स्थान) है वहां श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण और पूजन करके जाना ॥ १० ॥ वहां लोमश ऋषिके दर्शन करना फिर शांडिल्य ऋषिके आश्रमको जाना ॥ ११ ॥

दोहा–यहिबिधि बहु कहि बात जब, आये बानर यूथ ॥ ❀
नाना बरण सकल दिशि, भालु कीश बारूथ ॥ ३ ॥ ❀

जब सुग्रीव इस तरहसे अनेक बातें कह रहा था इतनेमें सब दिशाओंमेंसे अनेक वर्णवाले वानर और रीछोंके झुंड आकर हाजिर हुये ॥ ३ ॥

तब कपीश दुइ दूत बुलाये ॥ गज गवाक्ष आतुर चलि आये ॥ १ ॥ ❀
करि प्रणाम धीरज धरि ठाढ़े ॥ सीय शोध हित हिय सुख बाढ़े ॥ २ ॥ ❀

तब सुग्रीवने दो दूत बुलाये तौ तुरंत गज और गवाक्ष दोनों आकर ॥ १ ॥ सुग्रीवको प्रणाम किया और धीरज धरकर साम्हने खड़े रहे और इनके मनमें ऐसा उत्साह कि हमको सीताके शोध करनेके लिये आज्ञा दें तौ अच्छा ॥ २ ॥

मन बुधि निगम केरि मति जानी ॥ बोल कपीश सुधासम बानी ॥ ३ ॥ ❀
सीय खोज पूरब दिशि जावहु ॥ रामकाज कहुँ बिलम न लावहु ॥ ४ ॥ ❀

सुग्रीव गज और गवाक्षको मन बुद्धि और शास्त्र सब तरहसे मतिमान् समझकर अमृतके समान वाणीसे बोला ॥ ३ ॥ कि–हे भाईयो ! तुम सीताका खोज करनेके लिये पूर्व दिशामें जावो परंतु यह रामचन्द्रजीका काम है इसमें देरी नहीं करना ॥ ४ ॥

उदधि गिरि सरिता क्षिति झरना ॥ ब्रह्मपुरी कामावति बरना ॥ ५ ॥ ❀
सर बापी कंदर गिरि जेते ॥ देवनगर ऋषिथान समेते ॥ ६ ॥ ❀
जो कोउ तुम्हें मिलै मगमाहीं ॥ सीतासुधि पूंछहु तिन पाहीं ॥ ७ ॥ ❀

समुद्र पहाड़ नदियां पृथ्वी झरने ब्रह्मपुरी कामावती ॥ ५ ॥ सरोवर बावड़िये गुफा पर्वत देवनगर ऋषियोंके स्थान आदि ॥ ६ ॥ जो कुछ तुमको मार्गमें मिलें वहां सब जगह सीताकी खोज करना और सबसे पूछना कि सीता कहां है ? तुमने सीताको देखा ? ॥ ७ ॥

दोहा–रामचरण परणाम करि, उर धरि युगुल स्वरूप ॥ ❀
सात पद्म बानर बली, चले प्राचि दिशि भूप ॥ ४ ॥ ❀

सात पद्म बलवान् वानर तौ श्रीरामचन्द्रजीको प्रणाम कर और दोनों भाइयोंका स्वरूप हृदयमें धरकर पूर्व दिशाको चले ॥ ४ ॥

पुनि सुग्रीव सुषेण बुलावा ॥ करि सन्मान निकट बैठावा ॥ १ ॥ ❀
सुनहु बीर प्राणन हितकारी ॥ रामकाज हिय धरहु सँभारी ॥ २ ॥ ❀

फिर सुग्रीवने सुषेणको बुलाया और सन्मान करके अपने पास बिठाया ॥ १ ॥ और कहा कि, हे प्राणप्रिय वीर ! सुनो. श्रीरामचन्द्रजीके कार्यको हृदयमें धर संभार कर ॥ २ ॥

ताराबखत सुषेण मयंदा ॥ कह्यो जाहु उत्तर सह नन्दा ॥ ३ ॥ ❀
गेरा पदुम कीश लै साथा ॥ खोजत चले बिपिनि गिरि पाथा ॥ ४ ॥ ❀

तारावखत मयंद और तुम खुद उत्तर दिशामें जाकर सीताका खोज करो ॥ ३ ॥ तब ये तीनों जन ग्यारह पद्म बंदर संग लेकर वन पहाड़ रास्ता ढूंढ़ते हुए उत्तर दिशाको चले ॥ ४ ॥

पुनि बसंत शतबीर बुलाये ॥ कह्यो जाहु पश्चिमहिं सिधाये ॥ ५ ॥ ❋
सोरह कोटि कीश लै भारी ॥ उठे तमकि जयराम पुकारी ॥ ६ ॥ ❋

फिर वसंत और शतवीरको बुलाकर कहा कि–तुम पश्चिम दिशामें जावो ॥ ५ ॥ तब ये दोनों सोलह करोड़ बंदर ले श्रीरामचन्द्रजीकी जय बोलकर पश्चिम दिशाको जानेके लिये तमककर उठे ॥ ६ ॥

दोहा–पश्चिम दिशि हेरब सकल, जहां धराको अंत ॥ ❋
एक मास में सुधिलई, फिरहु बेगि बलवंत ॥ ५ ॥ ❋

तब सुग्रीवने कहा कि–हे बलवंत ! पृथ्वीके अंततक सब पश्चिम दिशाको ढूंढ़ सीताकी सुधि लेकर एक महीनेमें जलदी पीछे लौट आना ॥ ५ ॥

चरण कमल सबकरि परणामा ॥ पश्चिम दिशा चले बलधामा ॥ १ ॥ ❋
सोरह कोटि हरिहर बोलत ॥ चले जात सब पर्वत तोलत ॥ २ ॥ ❋

तब सब बंदर सुग्रीवके चरणोंमें शिर नमाकर पश्चिम दिशाको चले ॥ १ ॥ सो सोलह करोड़ही बंदर 'हरी हर' बोलते और पहाड़ोंको तोलते चले ॥ २ ॥ ॥ इति ॥

बानरकटक उमा मैं देखा ॥ सो मूरख जो किय चह लेखा ॥ १ ॥ ❋
आय रामपद नावहिं माथा ॥ निरखि बदन सब होहिं सनाथा ॥ २ ॥ ❋

महादेवजी कहते हैं कि–हे पार्वती ! वानरोंकी सेना मैंने देखी सो असंख्य थी मूर्ख हो वह उस सेनाका गिनना चाहे ॥ १ ॥ वे असंख्य बन्दर आ आकर श्रीरामचन्द्रजीको शिर नमावें और श्रीरामचन्द्रजीके मुखकमलको निहार कर सनाथ हो जावे ॥ २ ॥

अस कपि एक न सेनामाहीं ॥ राम कुशल पूछी जेहि नाहीं ॥ ३ ॥ ❋
यह नहिं कछु प्रभुकी अधिकाई ॥ बिश्वरूप व्यापक रघुराई ॥ ४ ॥ ❋

इतनी बड़ी सेना थी पर उस सेनामें ऐसा तो वानर एक नहीं था कि जिसकी श्रीरामचन्द्रजीने कुशल न पूछी हो ॥ ३ ॥ यह प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी कुछ बड़ाई नहीं है; क्योंकि वे तो सब जगत-रूप आपही हैं क्योंकि व्यापक हैं ॥ ४ ॥

ठाढ़े जहँ तहँ आयसु पाई ॥ कहि सुग्रीव सबहिं समुझाई ॥ ५ ॥ ❋
रामकाज अरु मोर निहोरा ॥ बानरयूथ जाहु चहुँ ओरा ॥ ६ ॥ ❋

श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा पाकर जहांके तहां खड़े होगये; तब सुग्रीवने सबको समझाकर कहा कि–॥ ५ ॥ हे भाइयो ! श्रीरामचन्द्रजीका तो काम है और मेरा कहना है सो तुम सब वानर समुदाय चहूं ओर जाकर ॥ ६ ॥

जनकसुता कहँ खोजहु जाई ॥ मास दिवस महँ आयहु भाई ॥ ७ ॥ ❋
अवधि मेटि जो बिनु सुधि पाये ॥ अवशि मरिहि सो मम कर आये ॥ ८ ॥

श्रीजानकी माईका खोज करो हे भाइयो ! एक महीनेमें पीछे यहां चले आना ॥ ७ ॥ जो कोई सीताकी सुध पाये बिना एक महीनाके भीतर नहीं आवेगा तो वह अवश्य मेरे हाथसे मरेगा अर्थात् जो सुध लेकर आवे उसके तो महीनेसे जियादे दिन निकल जांय तौभी हरज नहीं ॥ ८ ॥

दोहा-बचन सुनत सब बानर, जहँ तहँ चले तुरन्त ॥ ❀
तब सुग्रीव बुलायेऊ, अंगदादि हनुमन्त ॥ २७॥ ❀

सुग्रीवके वचन सुनतेही सब बंदरोंने तुरंत जहां तहां चल दिया. तब सुग्रीवने अंगद हनुमान् वगैरःको बुलाकर ॥ २७ ॥

सुनहु नील अंगद हनुमाना ॥ जामवन्त मतिधीर सुजाना ॥ १ ॥ ❀
सकल सुभट मिलि दक्षिण जाहू ॥ सीतासुधि पूंछहु सब काहू ॥ २ ॥ ❀

कहा कि-हे नील ! हे हनुमान् ! हे अंगद ! हे मतिधीर सुजान जामवंत ! सुनो ॥ १ ॥ तुम सब सुभट मिलकर दक्षिण दिशाको जाओ और सब कोईको सीताकी सुध पूछो ॥ २ ॥

मन बच क्रमसों यतन बिचारेहु ॥ रामचन्द्र कर काज संवारेहु ॥ ३ ॥ ❀
भानु पीठ सेइय उर आगी ॥ स्वामी सेइय सब छल त्यागी ॥ ४ ॥ ❀

और मन वाणी क्रमसे सीताकी सुध मिले ऐसा विचार करो और रामचन्द्रजीका काज सुधारो ॥ ७ ॥ सूरजका पीठसे सेवन करना और अग्निका सेवन सामनेसे करना और मालिकका सेवन सब छल छोड़कर करना ॥ ४ ॥

तजि माया सेइय परलोका ॥ मिटहिँ सकल भव संभव शोका ॥ ५ ॥
देह धरे कर यह फल भाई ॥ भजिय राम सब काम बिहाई ॥ ६ ॥ ❀

और कपट छोड़कर परलोकका सेवन करना जिससे संसारके सब शोक मिट जांय ॥ ५ ॥ हे भाइयो ! देह धरनेका यही फल है कि सब काम छोड़कर श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंकी अनुचर्या (सेवा) करनी ॥ ६ ॥

सोइ गुणज्ञ सोई बड़भागी ॥ जो रघुवीरचरणअनुरागी ॥ ७ ॥ ❀
आयसु माँगि चरण शिर नाई ॥ चले सकल सुमिरत रघुराई ॥ ८ ॥ ❀

इस जगत्में वही तो गुणज्ञ है और वही बड़भागी है कि, जिसका रामचन्द्रजीके चरणोंमें स्नेह है ॥ ७ ॥ ये सुग्रीवके वचन सुन आज्ञा मांग चरणोंमें शिर नमाकर सब बंदर श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण करतेहुए वहांसे चले ॥ ८ ॥

"दश करोरि बानर सँग लैकै ॥ चले सकल प्रभुपद चित दैकै" ॥ ९ ॥ ❀
पाछे पवनतनय शिर नावा ॥ जानि काज प्रभु निकट बुलावा ॥ १० ॥ ❀

" सो दश करोड़ बंदर संग लेकर अंगद आदि सब जन प्रभुके चरणोंमे चित्त देकर चले " ॥ ९ ॥ जब सब लोग प्रणामादि कर चुके तब सबके पीछे हनूमान्ने जाकर प्रभुके चरणोंमें प्रणाम किया ॥ १० ॥

परसा शीश सरोरुह पानी ॥ कर मुद्रिका दीन्ह जन जानी ॥ ११ ॥ ❀
बहुप्रकार सीतहिँ समुझायहु ॥ कहि बल बीर बेगि तुम आयहु ॥ १२ ॥ ❀

त्योंही श्रीरामचन्द्रजी इसको कामका करनेवाला जानकर नजीक बुलाया और हनुमान्का शिर अपने कोमल हस्तकमलसे परसा और अपना जन(सेवक) जानकर अपने हाथकी मुंदरी हनुमान्को देकर कहा कि-॥११॥ हे हनुमान् ! यह मुद्रिका सीताको देना और उसको अनेकप्रकारसे समझाकर उसके मनका संतोष हो ऐसे खातिर कर अपना पराक्रम कहकर तुम जलदी आना ॥ १२ ॥

हनुमत जन्म सुफल करि जाना ॥ चले हृदय धरि कृपानिधाना ॥ १३ ॥ ❋
यद्यपि प्रभु जानत सब बाता ॥ राजनीति राखत सुरत्राता ॥ १४ ॥ ❋

हनुमान्ने तौ श्रीरामचन्द्रजीका वचन सुनतेही अपने जन्मको सफल समझा और कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजीको हृदयमें धरकर चला ॥ १३ ॥ यद्यपि देवपालक भगवान् सब बात जानते है तौभी राजनीति रखते हैं इसलिये इतना कहना किया ॥ १४ ॥

दोहा-चले सकल बन खोजत, सरिता सर गिरि खोह ॥ ❋
रामकाज लवलीन मन, बिसरा तनकर छोह ॥ २८ ॥ ❋

अब तौ अंगद हनुमान् जाम्बवान् वगैरः सबजन चले सो वन नदियां तालाव पहाड़ पहाड़ोंकी खोंहें इनमें सीताको ढूंढते २ श्रीरामचन्द्रजीके काममें ऐसे लवलीन हो गये सो शरीरकी सुधभी भूल गये ॥ २८ ॥

कतहुँ होइ निशिचर सन भेंटा ॥ प्राण लेहिँ इक एक चपेटा ॥ १ ॥ ❋

कहीं रास्तेमें कोई राक्षस मिलि आवे तौ उसके तौ एक २ चपेटहीमें प्राण लैं ॥ १ ॥

(क्षेपक) वज्रदंत राक्षस यक आवा ॥ देखत कपिन महाभय पावा ॥ १ ॥
गगन शीश पुनि पाद पताला ॥ रक्तनेत्र धावा जनु काला ॥ २ ॥ ❋

एक वज्रदंत नाम राक्षस आया उसको देखकर वानरोंके मनमें बड़ा भय उपजा ॥ १ ॥ उस राक्षसके पातालमें तौ पांव लग रहे थे और आकाशमें शिर लग रहा था और लाल नेत्र वह राक्षस कालके समान दौड़ा ॥ २ ॥

देखि ताहि कोपे युवराजा ॥ सन्मुख जाय ताहि सन बाजा ॥ ३ ॥ ❋
मल्लयुद्ध बहु भयो अपारा ॥ सब बानर मिलि करत बिचारा ॥ ४ ॥ ❋

उसको देखकर युवराज अंगद क्रोध करके उसके सन्मुख जा खड़ा हुआ ॥ ३ ॥ और इन दोनोंके परस्पर अपार मल्लयुद्ध होने लगा उसको देखकर सब बन्दर विचार करने लगे ॥ ४ ॥

प्रथम पयान काल चलि आवा ॥ सीय खबरि नाहिँ प्रभुहिँ सुनावा ॥ ५ ॥
बालि सुवन तब हृदय बिचारा ॥ मुष्टिक एक तासु शिर मारा ॥ ६ ॥ ❋

कि आपनने अभीतक सीताकी खबर तौ श्रीरामचन्द्रजीको दिथाही नहीं और पहिलेही यह काल आया ॥ ५ ॥ तब अंगदने मनमें विचार करके उसके शिरमें १ मुष्टीकी चोट मारी ॥ ६ ॥

रामस्वरूप हृदयमहँ आनी ॥ अर्ध अर्ध धरि चीर भवानी ॥ ७ ॥ ❋
जय जय शब्द सबन तब गावा ॥ मारुतसुत तब हृदय लगावा ॥ ८ ॥ ❋

और श्रीरामचन्द्रजीके स्वरूपका ध्यान करके हे भवानी ! अंगदने उस राक्षसको आधा

आधा चीर दिया ॥ ७ ॥ तब सब बंदरोंने जय! जय!! शब्द किया और हनुमानने अंगदको छातीसे लगाया ॥ ८ ॥ ॥ इति ॥

बहुप्रकार गिरि कानन हेरहिं ॥ कोउ मुनि मिलै ताहि सब घेरहिं ॥ २ ॥ ❋

बहु तरहसे वन पहाड़ ढूंढ़ते फिरते है और कोई मुनि मिलिआवे तो उसको सीताकी सुध पूछनेके लिये सब बंदर घेर लें और पूछें कि—महाराज आपने कहीं सीताको देखा है? ॥ २ ॥

लागि तृषा अतिशय अकुलाने ॥ मिलै न जल घन गहन भुलाने ॥३॥ ❋
तब हनुमान कीन्ह अनुमाना ॥ मरण चहत सब बिन जलपाना ॥ ४ ॥ ❋

फिरते २ प्यास लगी उससे सब बंदर व्याकुल होगये और गहन बनमें भूले पड़गये. जल मिला नहीं ॥ ३ ॥ तब हनुमानने विचार किया कि, सब बंदर जल बिना प्यासके मारे मरते है इसलिये कुछ उपाय करना चाहिये ऐसे विचार कर ॥ ४ ॥

चढ़ि गिरिशिखर चहूँदिशि देखा ॥ भूमि बिबर यक कौतुक पेखा ॥५॥ ❋
चक्रबाक बक हंस उड़ाहीं ॥ बहुते खग प्रबिशहिं तेहिं माहीं ॥ ६ ॥ ❋

पहाड़पर चढ़कर चारों ओर देखा तब एक आश्चर्य (अचरज कारक) बिल देखा ॥ ५ ॥ जिसपर चकवे, बगले, हंस उड़ रहे है और कितने एक पक्षी उसके भीतर घुस रहे है उस बिलको देख ॥ ६ ॥

गिरिते उतरि पवनसुत आवा ॥ सबकहँ ले सो बिबर दिखावा ॥ ७ ॥ ❋
आगे करि हनुमन्तहिं लीन्हा ॥ पैठे बिबर बिलम्ब न कीन्हा ॥ ८ ॥ ❋

पहाड़से उतरकर हनुमान् नीचे आया फिर सबको लेजाकर वह बिल दिखाया ॥ ७ ॥ तब सब सुन्दर हनुमानको आगे लेकर तुरंत बिलमें घुस गये ॥ ८ ॥

दोहा—दीख जाइ उपबन शुभग, सर बिकसे बहु कंज ॥ ❋
मन्दिर एक रुचिर तहँ, बैठि नारि तपपुंज ॥ २९ ॥ ❋

वहां जाकर एक सुन्दर बगीचा देखा. वहां सुन्दर सरोवर देखा कि—जिसमें बहुत कमल खिल रहे थे फिर वहां एक मनोहर मंदिर देखा कि जिसमें तपकी पुंज एक स्त्री बैठी थी ॥ २९ ॥

दूरिहिंते तेहिं सब शिर नावा ॥ पूंछेसि निज वृत्तांत सुनावा ॥ १ ॥ ❋
तब तेइ कहा करहु जलपाना ॥ खाहु सरस सुन्दर फल नाना ॥ २ ॥ ❋
मज्जन कीन्ह मधुर फल खाये ॥ तासु निकट पुनि सब चलिआये ॥ ३ ॥

उस स्त्रीको देखकर सब वानरोंने दूरहीसे प्रणाम किया तब उस नारीने पूछा कि—तुम कौन हो? और कहांसे आये हो? तब इनने अपना सब वृत्तांत कहा ॥ १ ॥ वह सुनकर उसने वानरोंसे कहा कि—तुम बहुत देरके प्यासे हो सो जलपान करो और सुन्दर रसभरे मीठे फल इस बगीचेमेंसे खाओ ॥ २ ॥ उस स्त्रीकी आज्ञा पाय सब बंदरोंने सरोवरमें स्नान किया और मीठे फल खाकर फिर उसके पास सब जन चले आये ॥ ३ ॥

(क्षेपक) देखि कपिन कहँ बोली बाला ॥ बिपिन बसन कर चरित बिशाला ॥ १ ॥
हेमा रहि अप्सरा ललामा ॥ जाहि रूप मोहित भा कामा ॥ २ ॥ ❋

वानरोंको देखकर आपने वनके वसनेका विचित्र हाल वह बाला बोली कि—॥ १ ॥ एक सुंदर हेमा नाम अप्सरा थी जिसके रूपसे कामदेवभी मोहित हो गया था ॥ २ ॥

हरि आन्यो मय दानव ताही ॥ गयो दुराय राखि यहि ठाँही ॥ ३ ॥ ❋
ताकी सखी मोहिँ तुम जानौ ॥ स्वयंप्रभा मम नाम बखानौ ॥ ४ ॥ ❋

उसको मयदैत्य ले आया और यहां छिपाकर चला गया ॥ ३ ॥ हे भाइयो ! उसकी सखी तुम मुझे जानो. स्वयंप्रभा मेरा नाम है ॥ ४ ॥

यह सुनि त्यहि लै गये सुरेशा ॥ मैं रहि गई सुमिरि अवधेशा ॥ ५ ॥ ❋
पुनि मैं कठिन उग्र तप कीन्हा ॥ आय स्वयंभू अस बर दीन्हा ॥ ६ ॥ ❋

इस बातको सुनकर उस हेमाको तौ इंद्र ले गया और मैं श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण करके यहीं रह गयी ॥ ५ ॥ फिर मैंने बहुत भारी भयंकर तप किया, तब ब्रह्माजीने आकर ऐसा वर दिया ॥६॥

बसु यहि बिबर त्यागि मनकर दुख ॥ रामकथा सुनिहहि बानरमुख ॥७॥
पुनि तुम दरश रामका करिहौ ॥ दरश पाय हरिधाम सिधरिहौ ॥ ८ ॥ ❋

कि तू मनका दुःख छोड़कर यहीं रहो यहां तू वानरोंके मुखसे श्रीरामचन्द्रजीकी कथा सुनेगी ॥ ७ ॥ फिर श्रीरामचन्द्रजीका दर्शन करेगी और दर्शन करके श्रीरामचन्द्रजीके धामको प्राप्त होएगी ॥ ८ ॥ ॥ इति ॥

तेइ सब आपनि कथा सुनाई ॥ मैं अब जाब जहाँ रघुराई ॥ ४ ॥ ❋

ऐसे उस स्त्रीने अपनी सब कथा वानरोंको सुनाय फिर उसने कहा कि—अब मैं वहां जाती हूं जहां श्रीरामचन्द्रजी विराजे हैं ॥ ४ ॥

मूंदहु नयन बिबर तजि जाहू ॥ पैहहु सीतहिं जनि कदराहू ॥ ५ ॥ ❋
नयन मूंदि तब देखहिँ बीरा ॥ ठाढ़े सकल सिन्धुके तीरा ॥ ६ ॥ ❋

तुम सब नेत्र मूंद लेओ सो इस बिलमेंसे निकल जाओगे और सीताको पाओगे घबराओ मत ॥ ५ ॥ वानरोंने नेत्र मूंदकर देखा तौ सबके सब समुद्रके तीरपर आ खड़े भये ॥ ६ ॥

सो पुनि गई जहाँ रघुनाथा ॥ जाइ कमलपद नायसि माथा ॥ ७ ॥ ❋
नाना भांति बिनय तेंइ कीन्ही ॥ अनपावनी भक्ति प्रभु दीन्ही ॥ ८ ॥ ❋

और वह स्त्री तौ जहां श्रीरामचन्द्रजी थे वहां गयी और श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंमें शिर नमाया ॥ ७ ॥ और अनेक प्रकार प्रभुके आगे विनय किया तब श्रीरामचन्द्रजीने उसको अनपायिनी अर्थात् हमेशा बनी रहे ऐसी भक्ति दिया ॥ ८ ॥

दोहा—बदरीबन कहँ सो गई, प्रभु आज्ञा धरि शीश ॥ ❋
उर धरि रामचरण युग, जो बंदत अज ईश ॥ ३० ॥ ❋

वह स्त्री जिन रामचन्द्रजीको शिव ब्रह्मादिक वंदन करते हैं उन श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा पाय और उनके चरणकमल हृदयमें धरकर बद्रिकाश्रमको चली गयी ॥ ३० ॥

इहां बिचारहिँ कपि मनमाहीं ॥ बीती अवधि काज कछु नाहीं ॥ १ ॥ ❋

सब मिलि कहहिं परस्पर बाता ॥ बिनु सुधि लिये करब का भ्राता ॥ २ ॥

यहां बंदरोंने मनमें विचार किया कि, अपने पीछे लौटनेकी अवधि तो पूरी हो गयी और काम कुछभी नहीं हुआ ॥ १ ॥ सब जन आपसमें मिल मिलकर बातें कहने लगे कि–हे भाई ! सीताकी सुध लिये विना क्या करेंगे ? ॥ २ ॥

कह अङ्गद लोचन भरि बारी ॥ दुहुँ प्रकार भइ मृत्यु हमारी ॥ ३ ॥ ❋
इहां न सुधि सीताकर पाई ॥ वहां गये मारिहि कपिराई ॥ ४ ॥ ❋

इतनेहीमें युवराज अंगदने नेत्रोंमें पानी भरकर कहा कि–अब दोनों तरहसे हमारी मृत्यु (मौत) है ॥ ३ ॥ क्योंकि यहां तो सीताकी खबर नहीं मिली और वहां जांय तो सुग्रीव मारें ॥ ४ ॥

पिता बधे पर मारत मोहीं ॥ राखा राम निहोरा वोहीं ॥ ५ ॥ ❋
पुनि पुनि अङ्गद कह सब पाहीं ॥ मरण भयो कछु संशय नाहीं ॥ ६ ॥ ❋

सुग्रीव तो मेरे पिताके मरतेही मुझे मार देता पर श्रीरामचन्द्रजीने निहोरा करके बचाया ॥ ५ ॥ बारंबार सबके पास अंगद कहने लगा कि–मरण हुआ इसमें संदेह नहीं ॥ ६ ॥

अंगदबचन सुनत कपिबीरा ॥ बोल न सकहिं नयन बह नीरा ॥ ७ ॥ ❋
क्षण यक शोक मगन ह्वै गये ॥ पुनि अस बचन कहत सब भये ॥ ८ ॥ ❋

अंगदके वचन सुनकर कोई बोल तो सके नहीं और सबके नेत्रोंमे जल बहने लगा ॥ ७ ॥ एक क्षणभर तो सब बंदर शोचमें मगन होगये फिर सब जन बोले ॥ ८ ॥

हम सीताकी बिन सुधि लीन्हे ॥ फिरब न सुनु युवराज प्रबीने ॥ ९ ॥ ❋
अस कहि लवणसिन्धुतट जाई ॥ बैठे कपि सब दर्भ डसाई ॥ १० ॥ ❋

कि–हे प्रवीन युवराज ! हम सब सीताकी सुध लिये बिना पीछे नहीं लौटेंगे ॥ ९ ॥ ऐसे कह सब बंदर समुद्रके तटपर दर्भ बिछा बिछाकर बैठ गये ॥ १० ॥

जाम्बवन्त अङ्गद दुख देखी ॥ कही कथा उपदेश बिशेषी ॥ ११ ॥ ❋
तात रामकहँ नर जनि जानहु ॥ निर्गुण ब्रह्म अजित अज मानहु ॥१२॥
हम सब सेवक अति बड़भागी ॥ सन्तत सगुण ब्रह्म अनुरागी ॥ १३ ॥ ❋

जांबवान् अंगदका दुःख देखकर विशेष उपदेशके साथ कथा कहने लगा कि– ॥ ११ ॥ हे भाई ! रामचन्द्रजीको आप मनुष्य नहीं जानना. वे निर्गुण ब्रह्म अजित अजन्मा भगवान् हैं ॥ १२ ॥ हम सब सेवक बड़े बड़भागी हैं जो कि, सगुण ब्रह्म श्रीरामचन्द्रजीमें प्रेम करते हैं ॥ १३ ॥

दोहा–निज इच्छा अवतरेउ प्रभु, सुर द्विज गो महि लागि ॥ ❋
सगुण उपासक रहहिं सब, मोक्ष सकल सुख त्यागि ॥ ३१ ॥ ❋

देव ब्राह्मण गो और पृथ्वीके लिये श्रीरामचन्द्रजीने अपनी इच्छासे अवतार लिया है. सगुण उपासक हम लोग सबमोक्ष आदि सब सुख छोड़कर प्रभुमें प्रेम करके रहते हैं ॥ ३१ ॥

यहि बिधि कहत कथा बहुभांती ॥ गिरिकन्दरा सुना सम्पाती ॥ १ ॥ ❋
बाहर होइ देखे सब कीशा ॥ मोहिं अहार दीन्ह जगदीशा ॥ २ ॥ ❋

इसतरह बहुत प्रकार कथा कहते पर्वतकी खोहमे संपातीने सुन ॥ १ ॥ बाहिर आकर देखा तौ सब बंदर बैठे है और बोला कि–आज मुझे ईश्वरने आहार दिया है ॥ २ ॥

आजु सबन कहँ भक्षण करऊं ॥ दिन बहु गे अहार बिनु मरऊं ॥ ३ ॥ ❋
कबहुँ न मिलि भरि उदर अहारा ॥ आजु दीन्ह बिधि एकहि बारा ॥ ४ ॥

सो आज इन सबको खाऊंगा मुझे अहार बिना मरते बहुत दिन हो गये है ॥ ३ ॥ पेट भरके अहार कभी नहीं मिलाथा सो आज दैवने एकही बेर भेज दिया ॥ ४ ॥

डरपे गृध्रबचन सुनि काना ॥ अब भा मरण सत्य हम जाना ॥ ५ ॥ ❋
कपि सब उठे गृध्र कहँ देखी ॥ जामवन्त मन शोच बिशेषी ॥ ६ ॥ ❋

वे गीधके वचन सुनकर सब वानर डरपे और बोले कि–अब निश्चय मृत्यु आयी यह सत्य हमने जाना ॥ ५ ॥ गीधको देखकर सब बंदर उठ गये और जाम्बवानके मनमें बहुत फिकर हुआ कि, अब इनको कैसे बचावें ? ॥ ६ ॥

कह बिचारि अंगद मनमाहीं ॥ धन्य जटायुसरिस कोउ नाहीं ॥ ७ ॥ ❋
रामकाज कारण तन त्यागी ॥ हरिपुर गयउ परम बड़भागी ॥ ८ ॥ ❋

इतनेहीमें अंगदने मनमें शोच विचार कर कहा कि–जटायुके समान धन्य कोई नहीं है ॥ ७ ॥ क्योंकि श्रीरामचन्द्रजीके लिये शरीर छोड़कर परम बड़भागी जटायु विष्णुपदको प्राप्त हुआ ॥ ८ ॥

जो रघुबीरचरण चित लावै ॥ तिहिसम धन्य न आन कहावै ॥ ९ ॥ ❋
सुनि खग हर्ष शोकयुतबानी ॥ आवा निकट कपिन भय मानी ॥ १० ॥ ❋

जो जीव श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमे चित्त लगाता है, तौ उसके समान धन्य और कोई नहीं है ॥ ९ ॥ हर्ष और शोकयुक्त अंगदके बचन सुनकर संपाती नजीक आया; तब बंदरोंने जाना कि, हमको खानेके लिये आता है ॥ १० ॥

ताहि देखि सब चले पराई ॥ ठाढ़ कीन्ह त्यहिँ शपथ दिवाई ॥ ११ ॥ ❋
तिन्हैं अभय करि पूंछेसि जाई ॥ कथा सकल तिन ताहि सुनाई ॥ १२ ❋
सुनि सम्पाति बन्धुकी करणी ॥ रघुपति महिमा बहुबिधि बरणी ॥ १३ ॥

सो इसे आता देख भयभीत होकर सब बंदर भाग चले. तब संपातीने शपथ (सोगंद) दिवाकर ठाढ़े रक्खे ॥ ११ ॥ और उनको अभयदान देकर जाकर जटायुकी सब वार्ता पूंछी कि–तुम जानते हो सो कहो. तब वानरोंने जटायुकी सब कथा संपातीसे कही ॥ १२ ॥ संपातीने अपने भाई जटायुकी करणी सुनकर अनेक प्रकार श्रीरामचन्द्रजीकी महिमाका वर्णन किया ॥ १३ ॥

दोहा–मोहिँ लै चलहु सिन्धुतट, देउँ तिलांजलि ताहि ॥ ❋
बचन सहाय करब मैं, पैहहु खोजहु जाहि ॥ ३२ ॥ ❋

संपातीने कहा कि–हे भाइयो ! मुझे तुम समुद्रके तीरपर ले चलो सो मैं मेरे भाईको तिलांजली देऊं फिर वचनसे तुम्हारीभी मदद करूंगा जिससे अर्थात् मेरे कहे प्रमाण जाकर तुम सीताकी खोज करना सो अवश्यही सीताको पाओगे ॥ ३२ ॥

अनुजक्रिया करि सागरतीरा ॥ कह निजकथा सुनहु कपि बीरा ॥ १ ॥ ❋
हम दोउ बंधु प्रथम तरुणाई ॥ गगन गये रविनिकट उड़ाई ॥ २ ॥ ❋

संपाती समुद्रके तीरपर अपने छुटभाईकी क्रिया करके वानरोंसे अपनी कथा कहने लगा कि-हे वानर शूरवीरो ! सुनो ॥ १ ॥ पहले युवा अवस्थामें हम दोनों भाई आकाशमें उड़कर सूर्यके समीप गयेथे ॥ २ ॥

तेज न सहिसक सो फिरि आवा ॥ मैं अभिमानी रवि नियरावा ॥ ३ ॥ ❋
जरे पंख रवितेज अपारा ॥ परेउ भूमि करि घोर चिकारा ॥ ४ ॥ ❋

सो सूर्यका तेज सह नहीं सका इसलिये जटायु तो पीछा लौट गया और मैं तो अभिमानका पुतला सूर्यके समीप पहुंचा ॥ ३ ॥ परंतु सूर्यके अपार तेजसे मेरी पांखें जलगयीं तब घोर चिल्ला करके पृथ्वीपर गिरगया ॥ ४ ॥

मुनि यक नाम चन्द्रमा ओही ॥ लागी दया देखि करि मोही ॥ ५ ॥ ❋
बहुप्रकार तिन्ह ज्ञान सिखावा ॥ देहजनित अभिमान छुड़ावा ॥ ६ ॥ ❋

तब एक चंद्रमा नाम मुनिने मुझे ऐसा दुःखी देखकर उनको दया आगयी ॥ ५ ॥ सो उनने अनेक प्रकारके ज्ञानका मुझे उपदेश किया और मुझे इस देहका बड़ा अभिमान था वहभी चंद्रमा मुनिने छुड़ाया, और मुझे यह आज्ञा किया ॥ ६ ॥

त्रेता ब्रह्म मनुजतनु धरि हैं ॥ तासु नारि निशिचरपति हरिहैं ॥ ७ ॥ ❋
तासु खोज पठउब प्रभु दूता ॥ तिन्हैं मिले तुम होब पुनीता ॥ ८ ॥ ❋

कि-त्रेतायुगमें साक्षात् परब्रह्म परमात्मा मनुष्यअवतार धारण करेंगे और रावण उनकी भार्याका हरण करेगा ॥ ७ ॥ और उसको ढूंढ़नेकेलिये श्रीरामचंद्रजी दूत भेजेंगे सो हे संपाती ! उनसे मिलकर तू पवित्र हो जायगा ॥ ८ ॥

जमिहहिँ पंख करसि जनि चिंता ॥ तिन्हैं देखाई देब तैं सीता ॥ ९ ॥ ❋
यह कहि मुनि निज आश्रम गयऊ ॥ तेहि क्षण हृदय ज्ञान कछु भयऊ ॥ १० ॥

फिकर मत कर-जब तू उन्हें सीताको बतावेगा तब तेरे पांखें पीछी आजावेंगी ॥ ९ ॥ ऐसे कहकर मुनि अपने आश्रमको चलेगये और उसीक्षणसे मेरे हृदयमेंभी कुछ ज्ञान होगया ॥ १० ॥

(क्षेपक) पुनि संपाती बचन उचारी ॥ सुनहु गिरा मम तुम हितकारी ॥ १ ॥
पुत्र मोर सुपरण तेहि नाऊँ ॥ सवत मोहिँ सदा यहि ठाऊँ ॥ २ ॥ ❋

फिर संपातीने कहा कि-हे भाइयो ! तुम हितकारी मेरी बात सुनो ॥ १ ॥ सुपर्णनाम मेरा पुत्र है वह इसी जगह आहार पानीसे सदा मेरी सेवा करता है ॥ २ ॥

दोहा-क्षुधावन्त यकदिन भयउँ, कहेउं पुत्रसन बात ॥ ❋
बेगि भक्ष्य ले आवहु, नतरु प्राण मम जात ॥ १ ॥ ❋

एक दिन मैं बहुत भूखा हो गया था सो मेरे पुत्रसे बोला कि-हे पुत्र ! मुझे बहुत भूख लगी है सो जलदी अहार लेकर आव नहीं तो मेरे प्राण पड़ जायेंगे ॥ १ ॥

ले आज्ञा सुत शीश सिधावा ॥ मोहिँ धीरज दे अति समुझावा ॥ १ ॥ ❋
गगनमार्ग ह्वइ महबन गयऊ ॥ गज मृग सिंह हनत बहु भयऊ ॥ २ ॥ ❋

तब मेरा पुत्र 'अभी आहार लाता हूं' ऐसे मुझे धीरज दे आज्ञा मांगकर चला ॥ १ ॥ सो आकाशमार्ग होकर महावनमें गया वहां हाथी हरिण सिंह आदि अनेक जीव मारकर ॥ २ ॥

अस्त पतंग भये घर आवा ॥ क्षुधा बिबश मैं क्रोध बढ़ावा ॥ ३ ॥ ❋
ज्ञानरंक अज्ञान अभागा ॥ सुतकहँ शाप देन तब लागा ॥ ४ ॥ ❋

सूर्य अस्त होनेपर घर आया तब भूखके वश होकर मैंने बहुत क्रोध किया ॥ ३ ॥ और मतिहीन अभागी अज्ञानी मैं पुत्रको शाप देने लगा ॥ ४ ॥

गहि मम बाहु कहा समुझाई ॥ सुनहु तात मम बचन सुहाई ॥ ५ ॥ ❋
जब मैं गयउँ बिपिनमहँ ताता ॥ तहँ तब एक भयो उतपाता ॥ ६ ॥ ❋

तब उसने मेरी बांह पकड़ समझाकर कहा कि,हे पिता! पहले आप मेरी बात तो सुनो देरी किस कारण भयी है ॥ ५ ॥ हे पिताजी! जब मैं वनमें गया तो वहां एक ऐसा उत्पात हुआ ॥ ६ ॥

बीशभुजा दशमस्तक जाहीं ॥ आतुर चला जात मगमाहीं ॥ ७ ॥ ❋
संग नारि यक देवि अनूपा ॥ बरणि न सकहिँ शेष तेहि रूपा ॥ ८ ॥ ❋

कि जिसके दश माथे और बीश हाथ ऐसा एक विलक्षण जीव मार्गमे दौड़ा चला जाता था ॥ ७ ॥ उसके साथ एक अनुपम देवी यानी स्त्री थी कि शेषभी जिसके रूपका वर्णन नहीं करसकें ॥ ८ ॥

कोटि सुधाकर नख बलिहारी ॥ तेजराशि अति रति छबिहारी ॥ ९ ॥ ❋
शची सती सावित्रि न तोला ॥ रंभा रमा न कामकलोला ॥ १० ॥ ❋

करोड़ चंद्रमाके समान तो उसके नख चमक रहे थे, तेजकी राशी वह देवी कामकी स्त्री रतिकी भी छबी यानी शोभाको हरनेवाली थी ॥ ९ ॥ इन्द्राणी पार्वती सावित्री और कामदेवकी कलोलें रंभा और लक्ष्मीभी उसकी बराबरी न कर सकें ऐसी स्त्री उसके पास थी ॥ १० ॥

जंतु जानि तेहि धरा प्रचारी ॥ दीन्हेउँ छाँड़ि देखि तेहिँ नारी ॥ ११ ॥ ❋
करि मोहिँ बिनय दछिनदिशि गयऊ ॥ यहिकारण बिलम्ब मोहिँ भयऊ १२

उसको जानवर समझकर ललकारके मैंने पकड़ा फिर उसके पास स्त्री देखकर मैंने छोड़ दिया ॥ ११ ॥ वह मुझसे विनय करके दक्षिण दिशाकी तरफ चला गया. हे पिताजी! इस कारण मुझे बिलंब हुआ ॥ १२ ॥

सुनत बचन मोहिँ लाग अँगारा ॥ आपनि गति देखत हिय हारा ॥ १३ ॥
अब मैं पंखहीन का करऊँ ॥ नाहित जाय निमिषमहँ हरऊँ ॥ १४ ॥ ❋

संपाती बोला कि–हे वानरो! यह बात सुनतेही मेरे शरीरमें अंगारे लग गये परंतु अपनी गति देख हार खाकर बैठ रहा ॥ १३ ॥ क्योंकि, पांखें विना अब मैं क्या कर सकूं? नहीं तर एक क्षणमें जाकर सीताको लेआऊं ॥ १४ ॥

दोहा–पंखहीन अँवसर गयउ, सुतबल कीन धिकारि ॥ ❋
गहि मम निकट न लायहू, रही रामकी नारि ॥ २ ॥ ❋

मैने मेरे पुत्रके बलको धिक्कार देकर कहा कि-रे पुत्र ! तैंने अवसर चुका दिया. मैं पंखहीन हूं. तू उसको पकड़कर यहां नहीं मेरे पास ले आया. उसके पास श्रीरामचन्द्रजी महाराजकी स्त्री सीता थी॥२॥

तब मुनिबचन सुरति मैं कीन्हा ॥ बहु बिधि धीरज जियकहँ दीन्हा ॥ १ ॥
यहि छल राम जो दूत पठावहिँ ॥ सिय सुधिलेन अरण्यहिँ आवहिँ ॥ २ ॥
देखत दरश होब बड़भागी ॥ तुव मग देखहु मन अनुरागी ॥ ३ ॥ ❋

मेरे पुत्रसे इतना कहकर मैने मुनि चंद्रके वचन याद किये और जीवको अनेक प्रकार धीरज दिया ॥ १ ॥ कि, इस मिससे जब श्रीरामचन्द्रजी दूत भेजेंगे और सीताकी सुध लेनेके लिये वानर वनमें आवेंगे ॥ २ ॥ और उनको देखूंगा तब मेरा कष्ट निवृत्त होगा और मैं बड़भागी होऊंगा. ऐसे प्रेमसे आप लोगोंकी राह निहारता था ॥ ३ ॥ ॥ इति ॥

सदा रामकर सुमिरण करऊँ ॥ निशिदिन मग जोवत दिन भरऊँ ॥ १ ॥
मुनिकी गिरा सत्य भइ आजू ॥ सुनि मम बचन करहु प्रभुकाजू ॥ २ ॥

हमेशा श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण करता हूं और रात दिन आपकी बाट देखता हुआ दिनभर रहा हूं ॥ १ ॥ आज चन्द्रमुनिकी वाणी सत्य भयी है. इसलिये आप लोग मेरे वचन सुनकर अपने स्वामीका काम करो ॥ २ ॥

गिरि त्रिकूट ऊपर बस लंका ॥ तहँ रह रावण सहज अशंका ॥ ३ ॥ ❋
तहां अशोक बाटिका अहई ॥ सिय बैठी तहँ शोचति रहई ॥ ४ ॥ ❋

त्रिकुट पर्वतके ऊपर लंका नाम पुरी वसती है वहां सहज निशंक रावण रहता है ॥ ३ ॥ वहां एक अशोकवृक्षोंकी बाड़ी है वहां सीता बैठी शोच कर रही है ॥ ४ ॥

(क्षेपक) सुनिसंपाति बचन सब बनचर ॥ अतिहिचकितचित भे भ्रमतत्पर १
ठाढ़ भये लंगूरउठाई ॥ भ्रुकुटीपर युगहाथ लगाई ॥ २ ॥ ❋

ये संपातीके वचन सुनकर सब बंदर चकित हो गये ॥ १ ॥ और पूंछें उठा उठाकर खड़े हो माथेपर दोनों हाथ लगाया ॥ २ ॥

दक्षिण दिशि देखत यकचीता ॥ तिन्हहिँ न नजर परी कहुँ सीता ॥ ३ ॥ ❋
गीधहिँ सब पूंछत अनुरागे ॥ हमहिँ दिखाउ सीय बड़भागे ॥ ४ ॥ ❋
सुनि संपाति बिहँसि अस कहही ॥ दूर दृष्टि कपि मनुज न लहही ॥ ५ ॥ ❋

एक चित्त होकर दक्षिण दिशाकी तरफ देखने लगे पर उनकी नजरमें सीता नहीं आई ॥ ३ ॥ तब सब बंदर बड़े प्रेमके साथ संपातिसे पूछने लगे कि, हे बड़भागी ! हमेंभी सीताके दर्शन कराओ ॥ ४ ॥ वे वानरोंके वचन सुनकर संपाती हंसकर बोला कि-हे भाइयो ! वानर और मनुष्य दूरसे नहीं देख सकते ॥ ५ ॥ ॥ इति ॥

दोहा-मैं देखौं तुम ताहि नहिँ, गृध्रहिँ दृष्टि अपार ॥ ❋
बूढ़ भयौं नतु करतेउँ, कछुक सहाय तुम्हार ॥ ३३ ॥ ❋

फिर संपाती बोला कि-मैं सीताको देखता हूं और तुम नहीं देखते इसका कारण यह है कि,

गीधकी नजर अपार यानी बहुत लंबी होती है. करूं क्या ? वृद्ध हो गया नहीं तर मैं तुम्हारी कुछ सहाय करता ॥ ३३ ॥

जो लांघे शतयोजन सागर ॥ करै सो रामकाज अति आगर ॥ १ ॥ ❋
जो कोइ करै रामकर काजू ॥ तेहि सम धन्य आन नहिँ आजू ॥ २ ॥ ❋

तुममेंसे जो सौ योजन यानी चारसौ कोश समुद्र लांघे वह श्रीरामचन्द्रजीके कार्यको करे ॥ १ ॥ जो कोई श्रीरामके कामको करे उसके समान धन्य आज कोई नहीं है ॥ २ ॥

मोहिँ बिलोकि धरहु मन धीरा ॥ रामकृपा कस भयउ शरीरा ॥ ३ ॥ ❋
पापिउ जाकर नाम सुमिरहीं ॥ अति अपार भवसागर तरहीं ॥ ४ ॥ ❋

मुझको देखकर तुम मनमें धीरज धरो कि श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे मेरा शरीर कैसा हो गया है अर्थात् मैं अंध था पांखें जलीं हुई और शरीर जला हुआ था वह सब व्याधि मिटकर शरीर कंचनसमान हो गया और नेत्रोंसे दीखने लगा ॥ ३ ॥ पापीभी जिन श्रीरामचन्द्रजीके नामका स्मरण करे तौ अपार संसारसागरको तर जाय ॥ ४ ॥

तासु दूत तुम तजि कदराई ॥ रामहृदय धरि करहु उपाई ॥ ५ ॥ ❋
अस कहि उमा गृध्र जब गयऊ ॥ सबके मन अति बिस्मय भयऊ ॥ ६ ॥
निज निज बल सबकाहूँ भाखा ॥ पार जानकर संशय राखा ॥ ७ ॥ ❋

तुम उन श्रीरामचन्द्रजीके दूत हो इसलिये कायरताको छोड़ श्रीरामचन्द्रजीका मनमें ध्यान धरकर उपाय करो जिससे सीता मिले ॥ ५ ॥ श्रीमहादेवजी कहते है कि—हे पार्वती ! जब संपाती ऐसे कहकर चला गया, तब सब बंदरोंके मनमें बड़ा विस्मय हुआ ॥ ६ ॥ और सबननें अपना अपना बल बखाना कि मैं इतना लांघ सकता हूं. पर पार जानेका सबके मनमे संदेहही रहा ॥ ७ ॥

(क्षेपक देखि समुद्र कि बाढ़ अपारा ॥ यूथपतिन मिलि कीन बिचारा ॥ १ ॥
को अस वीर जो लांघ पयोधी ॥ आपनि मृत्यु आप अस शोधी ॥ २ ॥ ❋

समुद्रकी अपार चढ़ाई देखकर यूथपति यानी सेनापति वानरोंने विचार किया ॥ १ ॥ ऐसा वीर कौन है कि, जो इस समुद्रको लांघे. ऐसे अपनी २ मृत्यु अपने आप मनमें शोची ॥ २ ॥

उमँग समुद्र गँगन लघ ताका ॥ जिहिँ बिधि फिरै कुम्हर कर चाका ॥ ३ ॥
जाय पताल उदधि बहु बाढ़ा ॥ सात समुद्र भये जनु ठाढ़ा ॥ ४ ॥ ❋

और बोले कि—समुद्र उमंग उमंगकर आकाशको कैसा ताक रहा है जैसे कुम्हारका चाक फिरता हो ॥ ३ ॥ और गंभीर यानी चौड़ा पातालतक कैसा चला गया है जैसे सात समुद्र सामिल होकर अपनी गहराई दिखलाते हों ॥ ४ ॥

तरल तरंगै लपकत कैसे ॥ प्रलयकालके जलधर जैसे ॥ ५ ॥ ❋
लख उतंग शतयोजन सेती ॥ दुर्गम दीर्घ देखियत रेती ॥ ६ ॥ ❋

चंचल तरंगें कैसी लपकती हैं जैसे प्रलयकालके मेघ ॥ ५ ॥ ऊंची तरंगें उठनेके कारण तरंगेही दिखायी देती हैं सो योजनसे रेती तौ दीखनेमेंभी बहुत दुर्गम और दीर्घ यानी लंबी मालूम पड़ती है ॥ ६ ॥

कच्छ मच्छ भरि जीव अपारा ॥ शैलसमान देहँ बिस्तारा ॥ ७ ॥ ❋
लहरि घहरि धरि धावत पानी ॥ तर्षहिं नयन मूंदि मुख बानी ॥ ८ ॥ ❋
जिमि बिनु प्राण चित्रकी पुतरी ॥ तिमि बिथकित भे सब बुधि बिसरी ।९।

और पहाड़ोंके समान अपार मच्छ मगर और कच्छप पड़े है ॥ ७ ॥ गहरी तरंगोंसे पानी चलता है जिससे जीव कैसे तड़फड़ाते है कि न देख सकते और न बोल सकते ॥ ८ ॥ ऐसे समुद्रको देखकर सब बंदर शिथिल होकर चित्रकी पुतलीके समान रह गये और सब ज्ञान भूल गये ॥ ९ ॥

दोहा–घेरि अंगदहिँ सब कहे, अब कछु करहु उपाय ॥ ❋
है कोउ सुभट प्रबीण अस, उदधि उलंघि जो जाय ॥ १ ॥ ❋

सब बंदरोंने अंगदको घेर लिया और बोले कि–हे युवराज ! अब कुछ उपाय करना चाहिये, ऐसा कोई प्रवीण सुभट है कि, जो समुद्रको लांघे. समुद्र लांघनेसे श्रीरामचन्द्रजीका कार्य होगा. यह बात कहकर सब बंदर अपना २ बल कहने लगे ॥ १ ॥

बोले बिकट सुनहु युवराजू ॥ योजन बीश उलंघहुँ आजू ॥ १ ॥ ❋
नील कहा चालिस मैं जाऊँ ॥ आगे परत मोर नहिँ पाऊँ ॥ २ ॥ ❋

बिकट नाम बंदर बोला कि–हे युवराज ! सुनिये. मैं आज वीस २० योजन लांघ सकता हूं ॥ १ ॥ तब नील बंदर बोला कि–मैं ४० योजन लांघ सकता हूं पर आगे नहीं जासकूं ॥ २ ॥

नीलबचन सुनि दुर्धर कहई ॥ योजन पचास मोर बल अहई ॥ ३ ॥ ❋
बोले नल दोउ भुजा उठाई ॥ योजन साठि मोरि गति भाई ॥ ४ ॥ ❋

नीलके वचन सुनकर दुर्द्धर बोला कि–मेरा बल ५० योजनका है ॥ ३ ॥ तब नल बंदरने दोनों भुजा उठाकर कहा कि–हे भाइयों ! मेरी तो गति ६० योजनकी है ॥ ४ ॥

दधिमुख कह अस्सी उपरंता ॥ योजन सात जाउं बलवंता ॥ ५ ॥ ❋
सुनहुँ बचन मम सुभट प्रबीना ॥ आगे होय मोर बल हीना ॥ ६ ॥ ❋

तब दधिमुख बोला कि–हे प्रवीण सुभटो ! मेरी बात सुनो. मैं ८७ योजन तो चला जाऊं पीछे मेरा बल क्षीण हो जावे ॥ ५ ॥ ६ ॥

सुनि सब बचन बोल युवराजू ॥ यहि बल होय न प्रभुकर काजू ॥ ७ ॥ ❋
बहुदुख कृश सब अंगद देखी ॥ जामवन्त तब कहा बिशेषी ॥ ८ ॥ ❋

सबके वचन सुनकर युवराज अंगद बोला कि–हे भाइयो ! इस बलसे तो स्वामीका काम नहीं बने ॥ ७ ॥ बहुत दुःखसे दुबले होते हुए अंगदको देखकर जाम्बवान् बोला ॥ ८ ॥

तरुण रहेउं बल ऐसा भाई ॥ नांघत पलमैं जलधिहिँ धाई ॥ ९ ॥ ❋
सुनहुँ कहत मैं कथा पुरानी ॥ मन बच कर्म सत्य मम बानी ॥ १० ॥ ❋

कि–हे भाई ! जब मैं जवान था तब तो मेरा बल ऐसा था कि एक क्षणमें दौड़कर समुद्रको लांघ जाता. पर अब तो मैं बुढ्ढा हो गया ॥ ९ ॥ सत्य वचनसे मैं मेरी पुरानी कथा कहता हूं सो सुनो ॥ १० ॥

यकदिन, बद्रिकआश्रम गयऊं ॥ बिपिनि बिलोकि महासुख भयऊं ॥ ११ ॥
भक्षण करि फल पीन्हेउ पानी ॥ बैठेउँ एक शिला सुख मानी ॥ १२ ॥ ❋

कि एक दिन मैं बद्रिकाश्रम गया, वनको देखकर मैंने परम सुख पाया ॥ ११ ॥ फिर फल खा, पानी पीकर, एक शिलापर सुख मानकर बैठ गया ॥ १२ ॥

ब्रह्मज्ञानि यक बिप्र सुजाना ॥ बैठि अराधत श्रीभगवाना ॥ १३ ॥ ❋
ताहि बधन यक दानव आवा ॥ देखत नयन क्रोध मोहिँ छावा ॥१४॥

वहां एक ब्रह्मज्ञानी सुजन ब्राह्मण बैठा भगवान्का आराधन कर रहा था ॥ १३ ॥ उस ब्राह्मणको मारनेके लिये एक दानव आया उस दानवको देखतेही मेरे नेत्रोंमे क्रोध छा गया ॥ १४ ॥

मुनि भय देखि गयउँ त्यहिँ सामू॥तेहिँ द्रुततर अस कीन्हा कामू॥ १५॥
तीसक योजन शैल उठाई ॥ मारेसि मोहिँ गोड़में आई ॥ १६ ॥ ❋

और मुनिको भययुत देखकर उसके सामने गया उस दैत्यने अति शीघ्र ऐसा काम किया ॥१५॥ कि तुरंत एक तीस योजनका पहाड़ उठाकर मेरे पावोंमे मारा ॥ १६ ॥

लागत गिरि तनु सहा प्रहारा ॥ भयो क्रोध तेहिँ धरणि पछारा ॥ १७ ॥
चिरेउँ दोउ चरण करि रीसा ॥ सुख पायो ऋषि दीन असीसा ॥ १८ ॥

मेरे शरीरमें उस पहाड़की चोट तौ लगी पर मैं उसको सहन कर गया. फिर मैंने क्रोध करके उसको पृथ्वीपर पछाड़ा ॥ १७ ॥ और रिस करके दोनों टांगोंमेसे चीरकर फेंक दिया. तब उस ऋषिके जीवमें परम सुख हो गया. इसलिये मुझे आशीर्वाद दिया ॥ १८ ॥

सो बल नहिँ अब तुम्हहिँ बखानू ॥ सुनत बात अचरज सब मानू ॥१९॥
सुनत रिच्छपति मुखकी बानी ॥ होइहि रामकाज जिय जानी ॥२०॥❋

सो हे भाइयो! वह बल तौ मैं तुमसे नहीं कहता; क्योंकि उस बातको सुनकर तुम सब अचरज मानोंगे ॥ १९ ॥ जांबवान्के मुखकी बात सुनकर सब बंदरोंने मनमें जाना कि, श्रीरामचन्द्रजीका काम जरूर होगा ॥ २० ॥

यहिसम नाहिन कोउ समर्था ॥ पूजहि आजु सबन कर अर्था ॥ २१ ॥
बानरयूथ अनन्दित भारी ॥ बहुरि रिच्छपति गिरा उचारी ॥ २२ ॥ ❋
तदपि अपन बल तुम्हहिँ सुनाऊं ॥ चौदह योजन अबहूँ जाऊँ॥ २३ ॥❋

क्योंकि इसके समान समर्थ कौन नहीं है आज सबका प्रयोजन (मतलब) पूरा होगा ॥ २१ ॥ ऐसे मनमें कह कहकर वानरोंके झुंड बहुत प्रसन्न हुए. फिर जाम्बवान्ने कहा कि-॥२२॥ मैं वृद्ध हो गया हूं तबभी अपना बल कहता हूं वह तुम सुनो. अब मैं १४ योजन जा सकता हूं ॥ २३ ॥

जरठ भयों अब कहेउँ ऋछेशा ॥ नहिँ तनु रहा प्रथमबललेशा ॥ १ ॥ ❋
जबहिँ त्रिबिक्रम भये खरारी ॥ तब मैं तरुण रहा बलभारी ॥ २ ॥ ❋

ऋच्छराज बोला कि-हे भाइयो! अब मैं वृद्ध हो गया पहले जो पराक्रम मुझमें था उसमेंसे एक लेशभी नहीं रहा ॥ १ ॥ जब वामन भगवान्ने अवतार लिया था, तब महाबलवान् मैं तरुण यानी जवानअवस्थामें था ॥ २ ॥

दोहा—बलि बधांत प्रभु बाढ़िउ, सो तनु बरणि न जाइ ॥ ❋
उभय घरीमहँ दीन्ह मैं, सात प्रदक्षिण धाइ ॥ ३४ ॥ ❋

बलिके बंधन समयमें वामन भगवान् जिस शरीर यानी विराटरूपको धारण करके बढ़े थे उस शरीरका वर्णन नहीं कर सकते. उस शरीरकी सात ७ प्रदक्षिणा मैंने दौड़कर दोघड़ीमें करी थीं ॥ ३४ ॥

अंगद कहा जाउँ मैं पारा ॥ जिय संशय कछु फिरती बारा ॥ १ ॥ ❋
जामवंत कह तुम सबलायक ॥ किमि पठवौं सबहीकर नायक ॥ २ ॥ ❋

जाम्बवान्के वचन सुनकर अंगदने कहा कि—मैं समुद्रके पार चला तौ जाऊं पर पीछा लौटकर आनेके समय जीवमें संशय रहता है ॥ १ ॥ तब जाम्बवान्ने कहा कि— आप तौ सबलायक है परंतु आप हम सबके मालिक है सो आपको कैसे भेजें ? ॥ २ ॥

कहा ऋच्छपति सुनु हनुमाना ॥ का चुप साधि रहा बलवाना ॥ ३ ॥ ❋
पवनतनय बल पवनसमाना ॥ बुधि बिबेक बिज्ञाननिधाना ॥ ४ ॥ ❋
कौन सो काज कठिन जगमाहीं ॥ जो नहिँ तात होहि तुम पाहीं ॥५॥ ❋

फिर जाम्बवान्ने हनुमान्से कहा कि—हे बलवान् ! हनुमान् तुम चुप होकर कैसे बैठे हो ?॥३॥ हे पवनपुत्र ! तुम्हारा बल पवनके समान है. तुम बुद्धि विवेक और ज्ञानकी खान हो ॥ ४ ॥ हे भाई ! जगत्में ऐसा कठिन काम कोनसा है; जिसको तुम नहीं कर सकते ? ॥ ५ ॥

(क्षेपक) रामकाजते राजी देवा ॥ सियसुधि देहु करहु प्रभुसेवा ॥ १ ॥ ❋
तव उतपति अब कहहुँ सहेता ॥ सुनहु सकल बैठे यहिरेता ॥ २ ॥ ❋

हे देव ! तुम श्रीरामचन्द्रजीका कार्य करनेमें प्रसन्न हो, इसलिये श्रीरामचन्द्रजीको सीताकी सुध देओ और प्रभुकी सेवा करो ॥ १ ॥ फिर जाम्बवान् बोला कि—हे हनुमान् ! मैं तेरे जन्मकी कथा प्रेमसे कहता हूं सो ये सब बंदर रेतमें बैठे सुनें ॥ २ ॥

हिमचल पर्बतके इक पासा ॥ कश्यप ऋषि तव तेज प्रकासा ॥ ३ ॥ ❋
दिग्गज यक ऐरावतकी सम ॥ आयो ऋषिसन्मुख दुर्धर यम ॥ ४ ॥ ❋

हिमाचल पर्वतके पास तप तेजके पुंज कश्यपऋषि रहते थे ॥ ३॥ वहां ऐरावतके समान एक यमके समान दुर्द्धर दिग्गज हाथी ऋषिके सन्मुख चला आया ॥ ४ ॥

निरखि ताहि ऋषि सकल सकाने ॥ चलैं न चरण शिथिल भयमाने ॥ ५ ॥
तात तोर तेहि बनकर राजा ॥ केसरि नाम तेज बल छाजा ॥ ६ ॥ ❋

उसको देखकर सब ऋषि सकुचाये और भयसे भागभी नहीं सकें ॥ ५ ॥ हे हनुमान् ! तेजबलका निधि तेरा पिता केसरी नाम वानर उस बनका राजा था ॥ ६ ॥

सो द्विप देखि मुनीश निहोरा ॥ हे कपि सकल शरण हैं तोरा ॥ ७ ॥ ❋
ऋषिदुख देखि दया मनमाहीं ॥ धावा तुरत तात बल बाहीं ॥ ८ ॥ ❋

इसलिये ऋषियोंने उस हाथीको देखकर तेरे पितासे कहा कि— हे वानरोंके राजा ! हम तेरी

शरण हैं ॥ ७ ॥ ऋषियोंका दुःख देखकर तेरे पिताके मनमें दया आय गयी सो तुरंत दौड़कर उसके साह्मने आकर भिड़ा ॥ ८ ॥

भिर्यो ताहि यक मुष्टिक मारा ॥ दोउ दशन गहि भूमि पछारा ॥ ९ ॥ ❋
पर्‍यो धरणि करि घोर चिकारा ॥ तब मुनि होय प्रसन्न बिचारा ॥ १० ॥

और भिड़तेही एक मुठीकी मार दोनों दांत पकड़कर पृथ्वीपर पछाड़ा ॥ ९ ॥ उस पछाड़से घोर चिला करके वह हाथी पृथ्वीपर गिर गया, तब वे मुनि बहुत प्रसन्न भये ॥ १० ॥

दोहा—पितुबल देख बिशेष पुनि, मुनिबर दीन अशीस ॥ ❋
मांगु मांगु बर भाव मन, हे द्विजपाल कपीश ॥ १ ॥ ❋

और तेरे पिताका विशेष बल देखकर मुनियोंने आशीर्वाद दिया और कहा कि—हे द्विजपाल ! हे कपीश ! तेरे मनमें भावे सो वर मांग वर मांग ॥ १ ॥

सानुकूल तपसी कहँ जानी ॥ बोला तात जोरि युगपानी ॥ १ ॥ ❋
जो प्रसन्न मोपर भगवाना ॥ पुत्र देहु बल मरुतसमाना ॥ २ ॥ ❋

केसरी मुनियोंको सानुकूल जान हाथ जोड़कर बोला कि— ॥ १ ॥ हे भगवन् ! जो आप मोपर प्रसन्न भये हो तो मुझे पवनके समान पराक्रमी पुत्र देओ ॥ २ ॥

एवमस्तु कहि ऋषि तब गयऊ ॥ आगिल चरित सुनहु जो भयऊ ॥ ३ ॥
मातु तोरि पतिबर्ता भारी ॥ नाम अंजनी छबि अधिकारी ॥ ४ ॥ ❋

एवमस्तु [ऐसेही होगा] ऐसे कहकर ऋषि चले गये. आगे जो चरित्र हुआ वह कहूं सो सुनो ॥ ३ ॥ हे हनुमान् ! अंजनी नाम तेरी माता परम पतिव्रता और रूपकी निधी थी ॥ ४ ॥

नवसत साजि शिँगार बनाई ॥ बैठी शैल शिखरपर जाई ॥ ५ ॥ ❋
त्रिबिध समीर बहै सुखदाई ॥ निरखत बन शोभा अधिकाई ॥ ६ ॥ ❋

सो एक दिन सोलह श्रृंगार सजकर पर्वतके शिखरपर जाकर बैठी ॥ ५ ॥ वहां वनकी शोभाको देखताहुआ त्रिबिध यानी शीतल सुगंध मंद पवन चल रहा था ॥ ६ ॥

चीर उड़ाय पवन सुख सर्सा ॥ भुजा दीर्घ करि चाहत पर्सा ॥ ७ ॥ ❋
बपु धरि तनस्पर्श सो कीन्हा ॥ लखि सो चही शाप कटु दीन्हा ॥ ८ ॥ ❋

सो तेरी माताका चीर (ओढ़ना) उड़ाकर सुंदर शरीरका स्पर्श किया फिर पवनने शरीरधर बांह पसार मिलना चाहा ॥ ७ ॥ और शरीर धारण कर पवन बरियाईसे मिला तब अंजनीने इसे देखकर विचार किया कि—अभी यहां कोई नहीं था और यकायक शरीर धरकर मुझसे मिला है इसलिये यह कोई देव होगा ऐसे विचार कर फिर अंजनीने पवनको कटु शाप देना चाहा ॥ ८ ॥

बोले तब नभसुत सुनु प्यारी ॥ मम अस्पर्श सकल तनुधारी ॥ ९ ॥ ❋
तेहिते मोहिँ शाप जनि देहू ॥ हम जो कहत बचन सुनि लेहू ॥ १० ॥ ❋

तब पवनने कहा कि—हे प्यारी ! तू मेरी बात सुन. मैं पवन हूं. मेरा स्पर्श तो सब देहधारियोंको है ॥ ९ ॥ इसलिये मुझे तू शाप मत दे. मैं जो कहूं वह बात सुन ले ॥ १० ॥

तव पति ऋषिसन सुत बर मागा ॥ तातें परशि अंग तब लागा ॥ ११॥ ❋
होई तुम्हरे सुत बलवाना ॥ रामभक्त गुणरूपनिधाना ॥ १२ ॥ ❋

तेरे पतिने ऋषिसे वर मांगा है कि-मेरे पवनके समान पराक्रमी पुत्र होवे इसलिये मैंने तेरे अंगका स्पर्श किया है ॥ ११ ॥ तेरे बड़ा बलवान् श्रीरामचन्द्रजीका भक्त और गुणरूपका निधान पुत्र होगा ॥ १२ ॥

अस कहि अनिल अदर्शित भयऊ॥सुख युत कछुककाल चलिगयऊ॥ १३
सो तव माता पति सन कह्यऊ ॥ सुनि केशरिहिँ परम सुख भयऊ॥१४॥ ❋

ऐसे कहकर वायु अदर्शित हो गया उस सुखमें कुछ काल चला गया ॥ १३ ॥ फिर तेरी माताने यह समाचार अपने पतिसे कहे. केसरीके यह बात सुनकर परम आनंद हुआ कि अब मेरे पवनसमान पराक्रमी पुत्र होगा ॥ १४ ॥

अब तव जन्म कहब सुख मानी ॥ सुनहु सकल कुलदीपक जानी ॥ १५॥
शुभ नक्षत्र शुभघरी सुहाई ॥ जन्मत भयो देव बल पाई ॥ १६ ॥ ❋
कार्तिकबदी चतुर्दशि बारा ॥ शनिके दिन भा प्रगट कुमारा ॥ १७ ॥ ❋
पुनि बरदान पवन कर दर्शा ॥ बीरज तोहिँ पिता कर पर्शा ॥ १८ ॥ ❋

हे हनुमान् ! अब तेरा जन्म कहता हूं सो सबलोग कुलदीपक समझके सुनो ॥ १५ ॥ कार्तिक वदि १४ चतुर्दशी शनिवारके दिन सुहावने शुभ नक्षत्र और शुभ घरी आई उसवक्त अंजनीके कुमार प्रकट हुआ ॥ १६ ॥ १७ ॥ फिर पवनने आकर तेरे अंगपर कर (हाथ) स्पर्श करके बरदान दिया कि तू मेरे जैसा बलवान् होगा ॥ १८ ॥

लखि पितु मातु कीन उत्साहा ॥ लागे सुत सेवन जस चाहा ॥ १९ ॥ ❋
उदित भये दंपति हरषाने ॥ करहिँ केलि बनमहँ सुख माने ॥ २० ॥ ❋

तेरे माता पिताने यह बात देखकर बड़ा उत्साह किया और जैसा चाहिये तैसा तेरा सेवन करने लगे ॥ १९ ॥ तेरे जन्मसे दंपति यानी स्त्री भर्तार परम हर्षित होकर वनमें केलि करने लगे और सुखपूर्वक परम चैनसे रहने लगे ॥ २० ॥

एक दिवस माताकी गोदा ॥ करत रहेउ पयपान बिनोदा ॥ २१ ॥ ❋
प्रात अरुण रबि निरखि फलंगा ॥ ग्रसत भयो फलसरिस पतंगा ॥२२॥ ❋
झपटि बज्र मारा सुरराई ॥ चिबुक मध्य तेहिँ मूर्छा आई ॥ २३ ॥ ❋

हे हनुमान् ! एक दिन तुम माताकी गोदीमें बैठे बड़े विनोदके साथ स्तनपान कर रहे थे ॥ २१ ॥ सो प्रातःकालके अरुण यानी लाल सूर्यको देख फलके समान समझकर फलंगा सो जाकर सूरजको पकड़ लिया ॥ २२ ॥ तब इंद्रने झपट कर तेरे ऐसा वज्र मारा कि जिससे तुमको मूर्छा आगयी ॥ २३ ॥

दोहा-सहि प्रहार मन क्रोध करि, धाय पतंगहि लीन ॥ ❋
बालअवस्था व्यसनते, सूरजका भख कीन ॥ २॥ ❋

वज्रका प्रहार सह मनमें क्रोधकर फिर सूरजको जालिया सो बालअवस्थाके व्यसनसे सूरजका भक्षण कर गया यानी मुखमें लेलिया (पकड़ लिया) ॥ २ ॥

अंधकार चारिउ दिशि भयऊ ॥ जप तप दान धर्म रहि गयऊ ॥ १ ॥ ❋
देखि पवन सुत लीन उठाई ॥ राखी रोंकि समीर रिसाई ॥ २ ॥ ❋

सूरजके ग्रसनेसे यानी पकड़नेसे चारों दिशामें अंधकार छागया और जप, तप, दान, धर्म सब बंद होगये ॥ १ ॥ इस बातको देखकर पवनने अपने पुत्रको उठालिया और इन्द्रने वज्रको मारा था इसलिये क्रोध करके पवनने अपना वेग रोंक लिया ॥ २ ॥

चढ़े उदर सब देवनकेरे ॥ आये तब शंकरके नेरे ॥ ३ ॥ ❋
अस्तुति सुरन कीन निजहेता ॥ बोले शिव गुण ज्ञान निकेता ॥ ४ ॥ ❋

जब पवनके बंद होनेसे सब देवोंके पेट फूलगये तब सब देवता मिलकर श्रीशिवजीके पास आये ॥ ३ ॥ और स्तुति किया. तब गुण और ज्ञानके धाम श्रीमहादेवजी बोले ॥ ४ ॥

धरहु धीर जनि होउ उदासा ॥ सब मिलि चलहु केशरी पासा ॥ ५ ॥ ❋
शिव बिरंचि सुर इन्द्र समेता ॥ आये सकल केशरी निकेता ॥ ६ ॥ ❋

कि–हे देवो ! जरा धीरज धरो. उदास क्यों होते हो ? आपन सब मिलकर हनुमानके पिता केसरीके पास चलो ॥ ५ ॥ ऐसे कहकर इन्द्रसहित शिव ब्रह्मादिक सब देव केशरीके घरपर आये ॥ ६ ॥

कह सुत तोर सूर्य गहि लीन्हा ॥ श्वास समीर रोंकि दुख दीन्हा ॥ ७ ॥ ❋
तजहु भानु रहे प्राण भलाई ॥ तुमकहँ सुयश होय जग माई ॥ ८ ॥ ❋

और बोले कि–हे केशरी ! तेरे पुत्रने सूर्यको पकड़ लिया है और पवनने श्वास रोंककर सबको दुःख दिया है ॥ ७ ॥ सो तुम तुम्हारे पुत्रसे कहो कि, वह सूर्यको छोड़ दे तो हमारे प्राण रहै और इससे तुम्हारा जगतमें यश होगा ॥ ८ ॥

जो मनभाव सु लेहु बरदाना ॥ तजहु पतंग होय कल्याना ॥ ९ ॥ ❋
देवगिरा सुनि सुन्दर बानी ॥ कह तब तात जोरि युगपानी ॥ १० ॥ ❋

हे केसरी ! जो तुम्हारे मन भावे वह वरदान लेओ पर सूरजको छोड़ो जिससे हमारा कल्याण होवे ॥ ९ ॥ देवताओंकी यह बानी सुन तेरे पिताने हाथ जोड़कर कहा ॥ १० ॥

अमर अजीत सकल बलसागर ॥ सुतहिँ देउ वर देवन नागर ॥ ११ ॥ ❋
रामभक्त अरु निकट निवासी ॥ यह बरदान देहु बलरासी ॥ १२ ॥ ❋

कि–हे सर्व देवो ! मेरे पुत्रको ऐसा वर देओ कि यह अमर, अजीत, सब पराक्रमका सागर श्रीरामचन्द्रजीका भक्त और उनके पास रहनेवाला हो ॥ ११ ॥ १२ ॥

एवमस्तु सब देवन कीन्हा ॥ सूर्य समीर छोंड़ि तब दीन्हा ॥ १३ ॥ ❋
करि बिनती सुर सकल सुजाना ॥ लागे देन सुतहिँ बरदाना ॥ १४ ॥ ❋

तब सब देवोंने कहा कि–एवमस्तु यानी ऐसाही होगा. हे हनुमान ! ऐसे देवताओंने तुझे वरदान दिये तब सूरजको छोड़ दिया और पवननेभी अपना वेग छोड़ दिया; क्योंकि पवन

तुझे वर दिवानेके लियेही लेकर बैठ गया था ॥ १३ ॥ जब सूरज और पवन मुक्त होगये तब सब देव प्रसन्न होकर केसरीके पुत्र हनुमानको वर देने लगे ॥ ४ ॥

कह ब्रह्मा होई बजरंगी ॥ लगी न मम शर शक्ति अभंगी ॥ १५ ॥ ❋
बोले बृहद जरी नहिँ आगी ॥ इन्द्र कह्यो मम कुलिश न लागी ॥ १६ ॥ ❋

ब्रह्माजीने कहा कि—यह तेरा पुत्र बजरंगी यानी वज्रके समान कठिन अंगवाला होगा. और मेरी अमोघ शक्ति इसके नहीं लगेगी ॥ १५ ॥ अग्निने कहा कि—यह आगमें नहीं जलेगा. इंद्रने कहा कि—इसके मेरा वज्र नहीं लगेगा ॥ १६ ॥

हर त्रिशूल यम दंड सुनावा ॥ बारि न बूड़े बरुण बतावा ॥ १७ ॥ ❋
बोली शक्ति भक्ति लखि नेकी ॥ बचन मोर यहि सकै न छेकी ॥ १८ ॥ ❋

महादेवजीने कहा—इसके मेरा त्रिशूल नहीं लगे. यमने कहा—मेरा दंड नहीं लगे और वरुणने कहा कि—यह जलमें नहीं बूड़े ॥ १७ ॥ इसकी सुंदर भक्ति और नेकी देखकर देवी बोली कि—इसको मेरे वचन नहीं लगेंगे ॥ १८ ॥

दोहा—यहि बिधि सब बिबुधन दये, बर बरदान निहोरि ॥ ❋
सुनि प्रसन्न भे पवन तब, छूटी पवन बहोरि ॥ ३ ॥ ❋

इस प्रकार देवताओंने हनुमानको उत्तम वरदान दिये. यह सुनकर पवन परम प्रसन्न हुआ. फिर अच्छीतरह पवन चलना शुरू हुआ ॥ ३ ॥

प्राणदान देवन जब पाये ॥ महाबीर कहि भवन सिधाये ॥ १ ॥ ❋
दे बरदान देव जब गयऊ ॥ बिचरेउ बनहिँ महासुख भयऊ ॥ २ ॥ ❋

सब देवता पवनके छूटनेंसे प्राण दान पाय हनुमानको महावीर कहकर अपने २ घरको चले गये ॥ १ ॥ जब सब देव वर देकर घर चले गये तबसे हनुमान परम सुखको प्राप्त होकर वनमें विचरने लगा ॥ २ ॥

तात मातके प्राणसमाना ॥ इन्द्र जु हनी नाम हनुमाना ॥ ३ ॥ ❋
जब तब जाइँ मुनिनके तीरा ॥ डारैं फोरि कमण्डलु नीरा ॥ ४ ॥ ❋

माता पिताके प्राणोंके समान प्यारे तेरी हनु यानी चिबुक जब इंद्रने तोड़ी तबसे तेरा नाम हनुमान हुआ ॥ ३ ॥ देवोंके वरदान होनेके बाद हनुमान जब तब मुनियोंके निकट जाकर उनके कमण्डलु फोरि कर जल बहा देवे ॥ ४ ॥

बिटप तोरि गिरि शिखर ढहावैं ॥ बल अति भूरि अंग धुनिहावैं ॥ ५ ॥ ❋
ऋषिन शाप तब दीन बिचारी ॥ भूलि जाहु निजपौरुष भारी ॥ ६ ॥ ❋

कहीं वृक्ष तोर डारै. कहीं पर्वतोंके शिखर ढहा दे. कभी मुनियोंके अंग पकड़कर हलावे ॥ ५ ॥ ऐसे अति बलवान हनुमानने अनीति करना शुरू किया तब ऋषियोंने शाप दिया कि—हे हनुमान! तू तेरे बलको बिसरिजा ॥ ६ ॥

जब जब कोऊ सुरति कराई ॥ तब तब तुम्हरे बल व्है आई ॥ ७ ॥ ❋
सोइ सूचन कीन्हेउ मैं आजू ॥ होइहि सिद्ध रामकर काजू ॥ ८ ॥ ❋

जब कोई तुझे याद दिवावेगा तब तेरा बल तुझे याद आवेगा ॥ ७ ॥ जाम्बवान् कहता है कि–वही सूचन मैंने आज किया है. अब निश्चय श्रीरामचन्द्रजीका कार्य सिद्ध होगा ॥ ८ ॥

तजहु शोक मन आनहु धीरा ॥ म्वहिँ निश्चय सेवक रघुबीरा ॥ ९ ॥ ❋
हनुमत बचन सुनत सब काना ॥ जय जय जय सब करहिँ बखाना ॥ १० ॥

इतनी बातके सुनतेही हनुमान् बोला कि–तुम सब शोक छोड़कर मनमें धीरज धरो. मैं श्रीरामचन्द्रजीका सेवक हूं निश्चय रघुवीरका काम करूंगा ॥ ९ ॥ ये हनुमान्के वचन सुनकर सब बंदर जय! जय!! जय!!! शब्द पुकारने लगे ॥ १० ॥

नाचहिँ एक एक गहि बाहीं ॥ परमानन्द भये मनमाहीं ॥ ११ ॥ ❋
होइहि सिद्ध रामकर काजा ॥ अति सुख लह्यउ हिये युवराजा ॥ १२ ॥ ❋

और एक एककी बांह एक एकजन पकड़कर नाचने लगे और सब बंदर परम आनंदमें मग्न हो गये ॥ ११ ॥ और बोलने लगे कि–अब श्रीरामका काम निश्चयही सिद्ध होगा और अंगदको मनमें बहुतही सुख उपजा कि, अब श्रीरामका काम होगा ॥ १२ ॥

जाम्बवन्त औरौ नल नीला ॥ अंगद आदि सुभट बल शीला ॥ १३ ॥ ❋
मिलहिँ सकल हनुमंतहि धाई ॥ रामकाज करि आवहु भाई ॥ १४ ॥ ❋

और जाम्बवान्, नल, नील, अंगद आदि सब बलवान् सुभट ॥ १३ ॥ दौड़ दौड़कर हनुमान्से मिले और कहै कि–हे भाई! तुम श्रीरामचन्द्रजीका काम करके आओ ॥ १४ ॥

बोले पवनतनय शुभ बानी ॥ धरहु धीर कारज भल जानी ॥ १५ ॥ ❋
कह हनुमंत सिन्धुतन देखी ॥ रामरूप उर आनि विशेखी ॥ १६ ॥ ❋
तब ऋक्षेश अस बचन उचारा ॥ सादर सुनहु समीरकुमारा ॥ १७ ॥ ❋

इसतरह सब लोगोंको प्रसन्न देखकर हनुमान्ने कहा कि–आप लोग जरा धीरज धरो. काम अच्छाही होगा ॥ १५ ॥ फिर हनुमान् समुद्रको किंचित् मात्र यानी जरासा देख श्रीरामचन्द्रजीको मनमें लाकर कुछ कहने लगा ॥ १६ ॥ इतनेहीमें जाम्बवान् बोला कि–हे पवनपुत्र! मैं कहूं सो बात सुनो ॥ १७ ॥

इति ॥

रामकाज लगि तव अवतारा ॥ सुनि कपि भयउ पर्बताकारा ॥ १ ॥ ❋
कनकबरण तन तेज बिराजा ॥ मानहुँ अपर गिरिन्हकर राजा ॥ २ ॥ ❋

हे हनुमान्! तुम्हारा अवतार श्रीरामचन्द्रजीके कार्यके लियेही है. यह जाम्बवान्के वचन सुनतेही हनुमान् पर्वतआकार यानी आनंदसे फूलकर पर्वतके समान बड़ा हो गया ॥ १ ॥ सुवर्णके समान तेजवान् हनुमान् कैसा शोभा दे रहा है मानों दूसरा पर्वतराज यानी मेरुही सोह रहा है ॥ २ ॥

सिंहनाद करि बारहिँ बारा ॥ लीलहिँ लाघौं जलनिधि खारा ॥ ३ ॥ ❋
सहित सहाय रावणहिँ मारी ॥ आनौं इहाँ त्रिकूट उपारी ॥ ४ ॥ ❋

और बारंबार सिंहनाद कर २ के बोला कि–इस क्षार समुद्रको तो खेल करता लांघ जाऊंगा ॥ ३ ॥ सहायके साथ रावणको मारकर लंकासहित त्रिकूट पर्वतको कहो यहीं ले आऊं ॥ ४ ॥

जामवन्त मैं पूछौं तोहीं ॥ उचित सिखावन दीजै मोहीं ॥ ५ ॥ ❋
यतना करहु तात तुम जाई ॥ सीतहिँ देखि कहौ सुधि आई ॥ ६ ॥ ❋
तब निज भुजबल राजिवनयना ॥ कौतुक लागि संग कपिसयना ॥ ७ ॥

फिर हनुमान् बोला कि हे जाम्बवंत ! मैं आपसे पूंछता हूं इसलिये आप मुझे योग्य सिखावन दें ॥ ५ ॥ तब जाम्बवान् बोला कि–हे भाई ! वहां जाकर शिर्फ़ इतना काम करना कि सीताको देख यहां आकर खबर देना ॥ ६ ॥ तब कमलनयन रामचन्द्र यद्यपि स्वयं बलवान् है वे आपनेही भुजदंडोंके बलसे सीताको लावेंगे तथापि सिर्फ़ संग्रामकी शोभा अथवा लीलानिमित्त वानरोंकी सेनाभी संगमें लावेंगे ॥ ७ ॥

छंद–कपिसेन संग सँहारि निशिचर राम सीतहिँ आनि हैं ॥ ❋
त्रयलोक पावन सुयश सुर मुनि नारदादि बखानि हैं ॥ ❋
जो सुनत गावत कहत समुझत परमपद नर पावहीं ॥ ❋
रघुबीरपदपाथोज मधुकर दास तुलसी गावहीं ॥ २ ॥ ❋

श्रीरामचन्द्रजी वानरोंकी सेना संग ले राक्षसोंका संहार करके सीताको लावेंगे यह श्रीरामचन्द्रजीको इस त्रिलोकीको पवित्र करनहारे परम पवित्र यशको देव और नारदादिक मुनि बखानेंगे श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलके भ्रमर तुलसीदासजी कहते है कि–जो कोई श्रीरामचन्द्रजीके यशको सुनै गावै कहै या समझै तौ वह नर परमपदको प्राप्त होवै ॥ २ ॥

दोहा–भवभेषज रघुनाथ यश, सुनै जो नर अरु नारि ॥ ❋
तिनकर सकल मनोरथ, सिद्ध करहिँ त्रिपुरारि ॥ ३५ ॥ ❋

संसारके औषधरूप श्रीरामचन्द्रजीके यश कोई नर व नारी सुनैं तौ उनके सर्व मनोरथ त्रिपुरारि (श्रीमहादेवजी) सिद्ध करैं ॥ ३५ ॥

सोरठा–नीलोत्पल तन श्याम, काम कोटि शोभा अधिक ॥ ❋
सुनिय तासु गुणग्राम, जासु नाम अघखग बधिक ॥ ३ ॥ ❋

जो परमेश्वर श्रीरामचन्द्रजी नील कमलके समान श्याम है जिनकी करोड़ कामदेवसेभी अधिक शोभा है और जिनका नाम लेतेही पापरूप पच्छीका नाश होजाता है उन श्रीरामचन्द्रजीके गुणसमूहका श्रवण करो ॥ ३ ॥

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमलविज्ञान-वैराग्यसन्तोषसम्पादनोनाम श्रीगोस्वामीतुलसिदासजी कृतकिष्किंधाकांडःचतुर्थःसोपानःसमाप्तः ॥ ४ ॥

॥ इति श्रीरामचरित्रमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमलविज्ञानवैराग्यसंतोष सम्पादननामकस्य श्रीगोस्वामितुलसीदासकृतकिष्किंधाकांडस्य रामश्यामविरचितभाषायां चतुर्थः सोपानः समाप्तः ॥ ४ ॥

दोहा-श्रीदशरथ नन्दन युगल, निरखि विप्र धरि रूप ॥
पवनपुत्र पूछत भयउ, कौन देश कर भूप ॥ १ ॥
सुनि ताके प्रिय वचन प्रभु, दृढ़ करि मित्र सुग्रीव ॥
बालिहिं वधि किष्किंध कर, राज्य दियो सुखसीव ॥ २ ॥

इदं पुस्तकं भगीरथात्मजहरिप्रसादशर्मणा
मोहमयीराजधान्यां "गणपत कृष्णाजी" इत्याख्ये
मुद्रणालये मुद्रापितम्।

[मुंबई]

श्रीरमारमणो विजयते।

अथ

श्रीयुतगोस्वामितुलसीदासकृत-

रामायणम् ।

सुन्दरकाण्ड ।

पण्डित-रामश्यामविरचित

तत्त्वदीपिकाटीकासहित ।

जिसे

पण्डित-रामभद्रजीने शुद्ध किया.

वही

गौड़ब्राह्मण हरिप्रसाद भगीरथजीने

बम्बईमें

" गणपत कृष्णाजी " छापखानेमें छपवायकर प्रसिद्ध किया.

शके १८२६. सवत् १९६०. सन १९०४.

श्रीरामपञ्चायतन.

॥ सुन्दरकाण्डम् ॥

हनुमान् कृत मुद्रिकादान और अशोकवन विध्वंस ।

दोहा–रामचन्द्रके भजनबिनु, जो चह पद निर्वाण ॥
ज्ञानवन्तहू सो मनुज, पशु बिन पूंछ विषाण ॥ १ ॥

सो०–भाववश्य भगवान, सुखनिधान करुणाभवन ॥
तजि ममता मद मान, भजिय सदा सीतारमण ॥ १ ॥

हरिप्रसाद भगीरथजीका, संस्कृत और भाषा पुस्तकालय
ठिकाना–कालकादेवीरोड़ रामवाडी–मुंबई.

॥ श्रीगजानन ॥

श्रीतुलसीदासकृतरामायण

॥ ❀ सुन्दरकाण्डप्रारम्भः ❀ ॥

दोहा—अक्षयबध लंकादहन, मेघनादसँगजंग ॥
लहि सियसुध पुनि प्रभुगमन, सुन्दरकाण्डप्रसंग ॥

शांतं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाणशांतिप्रदं ब्रह्माशंभुफणींद्रसेव्यमनिशं वेदांतवेद्यं विभुम् ॥ रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं मायामनुष्यं हरिं वंदेऽहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूडामणिम् ॥ १ ॥ नान्या स्पृहा रघुपते हृदये मदीये सत्यं वदामि च भवानखिलांतरात्मा ॥ भक्तिं प्रयच्छ रघुपुंगव निर्भरां मे कामादिदोषरहितं कुरु मानसं च ॥ २ ॥ अतुलितबलधामं स्वर्णशैलाभदेहं दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम् ॥ सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं रघुपतिवरदूतं वातजातं नमामि ॥ ३ ॥

श्रीसुन्दरकांडके प्रारम्भमें रामचन्द्रजीके परब्रह्मरूप स्वरूपको दिखातेहुए गुसाँईजी वंदना करते है कि— मैं रामनाम हरिभगवान्को प्रणाम करता हूं. कैसे है? जो शान्त कहे शुद्धसत्वात्मक स्वरूप, सनातन कहे आदि-अन्त रहित, अप्रमेय कहे अप्रमाण अगोचर, अनघ कहे सर्व पातक रहित अथवा सर्व पापोंके नाश करनहारे, निर्वाण कहे मोक्ष और शांति कहे विषयजनित क्षोभका अभाव तिनके देनहारे, ब्रह्मा शिव और शेष करि सेवन किये जाते, वेदान्तवेद्य कहे उपनिषद् और व्याससूत्र (शारीरकसूत्र) आदि शास्त्रजनित विचारगम्य, विभु कहे व्यापक, सुरगुरु कहे देवताओंके परमपूज्य और जगदीश्वरस्वरूप छतेभी करुणानिधान होनेके कारण मायासे मनुष्यमूर्ति धारण करनहारे राजाओंके मुकुटमणि श्रीरघुवर मूर्ति भये है ॥ १ ॥ अब तुलसीदासजी भगवान्से प्रार्थना करते है. हे रघुपति! मैं यह सच कहता हूं कि— मेरे हृदयमें आपकी भक्तिके शिवाय और दूसरी किसी प्रकारकी वांछा नहीं है, सो आप जानतेही हो; क्योंकि आप सर्व जगत्के अंतर्यामी हो सो हे रघुपुङ्गव! कृपा करके मुझे पूर्ण प्रेमलक्षणा भक्ति देओ और मेरे मनके काम क्रोध लोभ मोह आदि सर्व कल्मषोंको दूर करो ॥ २ ॥ रामचंद्रजीसे प्रार्थना करके अब हनूमान्को प्रणाम करते है जो अतुल बलके निधान हैं, सुवर्णके पर्वतसा देदीप्यमान और बड़ा जिनका शरीर है, जो दैत्यवनके दाहके लिये अग्निरूप हैं, जो ज्ञानिजनोंकी गिनतीमें प्रथम गिने जाते हैं, जो सर्वगुणोंके भंडार हैं ऐसे रामचंद्रजूके वरदूत वानराधिपति श्रीहनूमान्जीको मैं प्रणाम करताहूं ॥ ३ ॥

जामवन्तके बचन सुहाये ॥ सुनि हनुमान हृदय अतिभाये ॥ १ ॥ ❀
तंबलगि मोहिँ परखेहु भाई ॥ सहि दुख कन्द मूल फल खाई ॥ २ ॥ ❀

जाम्बवान्के सुहावने वचन सुनकर हनूमान्को अपने मनमें वे बहुत अच्छे लगे ॥ १ ॥ और हनुमान्ने कहा कि–हे भाइयो ! तबलों आपलोग कन्द मूल व फल खा, दुःख सह कर मेरी राह देखना ॥ २ ॥

जब लगि आवौं सीतहिँ देखी ॥ होइँ काज मन हर्ष बिशेखी ॥ ३ ॥
अस कहि नाइ सबन कहँ माथा ॥ चले हर्षि हिय धरि रघुनाथा ॥ ४ ॥

जबलों मैं सीताको देखकर पीछा आऊं; क्योंकि कार्य सिद्ध होनेपर मनको बड़ा हर्ष होगा ॥ ३ ॥ ऐसे कह, सबनको नमस्कार करके, रामचंद्रजीका हृदयमें ध्यान धर कर प्रसन्न हो कर रवाने हुआ ॥ ४ ॥

सिन्धुतीर यक सुन्दर भूधर ॥ कौतुककूदि चढ़े तेहि ऊपर ॥ ५ ॥
बार बार रघुबीर सँभारी ॥ तरकेउ पवनतनय बल भारी ॥ ६ ॥

समुद्रके तीरपर एक सुन्दर पहाड़ था, उसपर कूद कर हनुमान् कौतुकहीसे चढ़ गया ॥ ५ ॥ फिर बारंबार रामचन्द्रजीका स्मरण करके बड़े पराक्रमके साथ हनुमान्ने गर्जना करी ॥ ६ ॥

जेहि गिरि चरण दिये हनुमन्ता ॥ सो चलि जाय पताल तुरंता ॥ ७ ॥
जिमि अमोघ रघुपतिके बाना ॥ ताही भांति चला हनुमाना ॥ ८ ॥
जलनिधि रघुपति दूत बिचारी ॥ कह मैनाक होहु श्रमभारी ॥ ९ ॥

जिस पहाड़पर हनुमान्ने पांव रक्खे थे वह पहाड़ तुरंत पातालके अन्दर चला गया ॥ ७ ॥ और जैसे रामचन्द्रजीका अमोघ बाण जाता है ऐसे हनुमान् वहांसे चला ॥ ८ ॥ समुद्रने हनुमानजीको रामचन्द्रजीका दूत जान कर मैनाक पर्वतसे कहा कि–हे मैनाक ! तू जा और इसको ठहरा कर श्रम मिटानेवाला हो ॥ ९ ॥

सोरठा–सिन्धु बचन सुनि कान, तुरत उठेउ मैनाक तब ॥
कपिकहँ कीन्ह प्रणाम, बार बार कर जोरिके ॥ १ ॥

समुद्रके वचन कानोंमें पड़तेही मैनाकपर्वत वहांसे तुरंत उठा. हनुमानके पास आकर बारंबार हाथ जोड़कर उसने हनूमान्को प्रणाम किया ॥ १ ॥

दोहा–हनूमान तेहि परसि करि, पुनि तेहि कीन्ह प्रणाम ॥
रामकाज कीन्हे बिना, मोहिँ कहा बिश्राम ॥ १ ॥

हनुमान्ने उसको अपने हाथसे छूकर फिर उसको प्रणाम किया और कहा कि–श्रीरामचन्द्रजीका कार्य किये विना मुझको विश्राम लेना कहां है ? ॥ १ ॥

जात पवनसुत देवन देषा ॥ जाना चह बल बुद्धि बिशेषा ॥ १ ॥
सुरसा नाम अहिनकी माता ॥ पठयउ आइ कही तेहिँ बाता ॥ २ ॥

हनुमान्को जाते देखकर उसके बल और बुद्धिके वैभवको जानना चाहते हुए देवताओंने ॥ १ ॥ नागमाता सुरसा नाम देवीको भेजा उस नागमाताने आकर हनुमान्से यह बात कही ॥ २ ॥

आज सुरन मोहिँ दीन्ह अहारा ॥ सुनि हँसि बोला पवनकुमारा ॥ ३ ॥

रामकाज करि फिरि मैं आवौं ॥ सीताकर सुधि प्रभुहिँ सुनावौं ॥ ४ ॥ ❋

कि आज तौ मुझको देवताओंने यह अच्छा आहार दिया. यह बात सुनकर, हंस कर हनुमान् बोला ॥ ३ ॥ कि–मैं रामचन्द्रजीका काम करके पीछा लौट आऊं और सीताकी खबर रामचन्द्रजीको सुना दूं ॥ ४ ॥

तब तव बदन पैठिहौं आई ॥ सत्य कहौं मोहिँ जानदे माई ॥ ५ ॥ ❋
कवनिहुँ यतन देहि नहिँ जाना ॥ ग्रससि न मोहिँ कहा हनुमाना ॥ ६ ॥

फिर हे माता ! मैं आकर आपके मुँहमें प्रवेश करूंगा पर अभी तू मुझे जाने दे, इसमें कुछभी फर्क नहीं पड़ेगा. यह मैं तुझे सत्य कहता हूं ॥ ५ ॥ जब उसने किसी उपायसे उसको जाने नहीं दिया तब हनुमान्ने कहा कि–तू क्यों देरी करती है ? तू मुझको नहीं खा सक्ती ॥ ६ ॥

योजन भरि तेहिँ बदन पसारा ॥ कपि तन कीन्ह दुगुण बिस्तारा ॥ ७ ॥
सोरह योजन मुख तेहिँ ठयऊ ॥ तुरत पवनसुत बत्तिस भयऊ ॥ ८ ॥ ❋

जब सुरसाने अपना मुंह एक योजन भरमें फैलाया तब हनुमान्ने अपना शरीर दो योजन विस्तारवाला किया ॥ ७ ॥ सुरसाने अपना मुंह सोलह १६ योजनमें फैलाया तौ हनुमान्ने अपना शरीर तुरंत बत्तीस ३२ योजन बड़ा किया ॥ ८ ॥

जस जस सुरसा बदन बढ़ावा ॥ तासु दुगुण कपि रूप दिखावा ॥ ९ ॥ ❋
शत योजन तेहिँ आनन कीन्हा ॥ अतिलघुरूप पवनसुत लीन्हा ॥ १० ॥

सुरसाने जैसा जैसा मुंह फैलाया हनुमान्ने वैसेही अपना स्वरूप उससे दुगुन दिखाया ॥ ९ ॥ जब सुरसाने अपना मुंह सौ १०० योजनमें फैलाया तब हनुमान् तुरंत बहुत छोटा स्वरूप धारण करा ॥ १० ॥

बदन पैठि पुनि बाहिर आवा ॥ माँगी बिदा ताही शिर नावा ॥ ११ ॥ ❋
मोहिँ सुरन्ह जेहि लागि पठावा ॥ बुधि बल मर्म तोर मैं पावा ॥ १२ ॥ ❋

उसके मुंहमें पैठ कर झट बाहिर चला आया. फिर सुरसासे बिदा मांग कर हनुमान्ने प्रणाम किया ॥ ११ ॥ उसवक्त सुरसाने हनुमान्से कहा कि–हे हनुमान् ! देवताओंने मुझको जिसवास्ते पठाया रहा वह तेरा बल और बुद्धिका भेद मैंने अच्छीतरह पालिया है ॥ १२ ॥

दोहा–रामकाज सब करिहहु, तुम बल बुद्धि निधान ॥ ❋
आशिष दै सुरसा चली, हर्षि चले हनुमान ॥ २ ॥ ❋

तुम बल और बुद्धिके भंडार हो सो रामचन्द्रजीके सब कार्य सिद्ध करोगे. ऐसे आशीर्वाद देकर सुरसा तौ अपने घरको चली और हनुमान् प्रसन्न होकर लंकाकी ओर चला ॥ २ ॥

निशिचर एक सिन्धुमहँ रहई ॥ करि माया नभके खग गहई ॥ १ ॥ ❋
जीव जंतु जे गगन उड़ाहीं ॥ जल बिलोकि तिनकी परिछाहीं ॥ २ ॥ ❋

समुद्रके अंदर एक राक्षस रहता था सो वह माया करके आकाशचारी पक्षी और जंतुओंको पकड़ लिया करता था ॥ १ ॥ जो जीवजन्तु आकाशमें उड़कर जाता उसकी परछाहीं जलमें देख कर ॥ २ ॥

गहै छाँह सक सो न उड़ाई ॥ यहि बिधि सदा गगनचर खाई ॥ ३ ॥ ❋
सोइ छल हनूमान सन कीन्हा ॥ तासु कपट कपि तुरतहिँ चीन्हा ॥ ४ ॥

उसकी परछाहींको जलमें पकड़ लेता जिससे वह जीव जन्तु फिर वहांसे सरक नहीं सकता इस तरह वह हमेशा आकाशचारी जीव जन्तुओंको खाया करता था ॥ ३ ॥ उसने वही कपट हनुमान्से किया, तौ हनुमान्ने उसका वह छल तुरत पहचान लिया ॥ ४ ॥

ताहि मारि मारुतसुत बीरा ॥ बारिधिपार गयउ मतिधीरा ॥ ५ ॥ ❋
जहां जाइ देखी बनशोभा ॥ गुंजत चंचरीक मधुलोभा ॥ ६ ॥ ❋

यह धीर बुद्धिवाला वीर हनुमान् उसे मारकर समुद्रके पार उतर गया ॥ ५ ॥ वहां जाकर हनुमान् वनकी शोभा देखता है कि भ्रमर मकरन्दके लोभसे गुंजाहट कर रहे है ॥ ६ ॥

नाना तरु फल फूल सुहाये ॥ खग मृग बृंद देखि मन भाये ॥ ७ ॥ ❋
शैल बिशाल देखि यक आगे ॥ तापर कूदि चढ़ेउ भय त्यागे ॥ ८ ॥ ❋

अनेक प्रकारके वृक्ष फल और फूलोंसे शोभायमान हो रहे है. पक्षी और हरिणोंका झुंड देखकर मन मोहित हुआ जाता है ॥ ७ ॥ वहां साम्हने हनुमान् एक बड़ा विशाल पर्वत देखकर निर्भय होकर उस पहाड़पर कूदकर चढ़ बैठा ॥ ८ ॥

उमा न कछु कपिकी अधिकाई ॥ प्रभुप्रताप जो कालहि खाई ॥ ९ ॥ ❋
गिरिपर चढ़ि लंका तेहिँ देखी ॥ कहि न जाइ अतिदुर्ग बिशेखी ॥ १० ॥
अति उतंग जलनिधि चहुँ पासा ॥ कनककोट कर परम प्रकासा ॥ ११ ॥

महादेवजी कहते है कि–हे पार्वती ! इसमें हनुमान्की कुछभी अधिकता नहीं है यह तौ केवल एक रामचन्द्रजीकाही प्रतापका प्रभाव है कि, जो कालकोभी खा जाता है ॥ ९ ॥ पर्वतपर चढ़कर हनुमान्ने लंकाको देखा तौ वह ऐसी बड़ी कड़ी दुर्गम है कि जिसके विषयमे कुछ कहा नहीं जा सकता ॥ १० ॥ अव्वल तौ वह पुरी आप बहुत ऊंची, फिर उसके चारों ओर समुद्रकी खाई, तिस परभी सुवर्णके कोटका महाप्रकाश कि, जिससे नेत्र चकाचौंध हो जायें ॥ ११ ॥

छंद–कनककोट बिचित्र मणिकृत सुन्दरायत अतिघना ॥ ❋
चौहट्ट हाट सुघट्ट बीथि चारु पुर बहुबिधि बना ॥ ❋
गज बाजि खच्चर निकर पदचर रथ बरूथनि को गनै ॥ ❋
बहुरूप निशिचर यूथ अतिबल सेन बरणत नहिँ बनै ॥ १ ॥ ❋

उस नगरीका रत्नोंसे जड़ा हुआ सुवर्णका कोट अतीव सुन्दर बना हुआ है. चौहटे, दुकानें, व सुंदर गलियोंकी बहार उस सुन्दर नगरीके अन्दर बनी है. जहां हाथी, घोडे, खच्चर, प्यादल व रथोंके झुंडोंकी गिनती कोई नहीं कर सकता. और जहां महाबली अद्भुत रूपवाले राक्षसोंकी सेनाके झुंड इतने हैं कि जिनका वर्णन किया नहीं जा सकता ॥ १ ॥

बन बाग उपवन बाटिका सर कूप बापी सोहहीं ॥ ❋
नर नाग सुर गन्धर्व कन्या रूप मुनिमन मोहहीं ॥ ❋

कहुँ मल्ल देह बिशाल शैलसमान अतिबल तर्जहीं ॥ ❋
नाना अखारन्ह भिरहिँ बहुबिधि एक एकन गर्जहीं ॥ २ ॥ ❋

जहां बन, बाग, बगीचे, बाड़ियां, तालाव, कूद, बावलियां शोभायमान हो रही है. जहां मनुष्य-कन्या, नागकन्या देवकन्या और गंधर्वकन्यायें विराजमान हो रही है कि, जिनका रूप देखकर मुनिलोगोंका मन मोहित हुआ जाता है. कहीं पर्वतकेसे बड़े विशाल देहवाले महाबलिष्ठ मल्ल गर्जना करते हैं और अनेक अखारोंमें अनेक प्रकारसे भिड़ रहे है और एक एकको आपसमें पटक २ गर्जना कर रहे है ॥ २ ॥

करिमत्त भट कोटिन्ह बिकट तनु नगर चहुँ दिशि रक्षहीं ॥ ❋
कहँ महिष मानुष धेनु खर अज खग निशाचर भक्षहीं ॥ ❋
यहि लागि तुलसीदास इनकी कथा संक्षेपहि कही ॥ ❋
रघुबीर शरतीरथ सरित तनु त्यागि गति पैहै सही ॥ ३ ॥ ❋

जहां कहीं हाथिनकेसे मदोन्मत्त और बिकट शरीरवाले करोड़ों भट चारों तर्फसे नगरीकी रक्षा करते है और कहीं वे राक्षस लाग भैंसे, मनुष्य, गौ, गधे, बकरे और पक्षियोंको खा रहे हैं. राक्षस लोगोंका आचरण बहुत बुरा है इसीवास्ते तुलसीदासजी कहते है कि, मैंने इनकी कथा बहुत संक्षेपसे कही है. चाहो ये महादुष्ट है परंतु रामचन्द्रजीके बाणरूप पवित्र तीर्थ नदीके अन्दर अपना शरीर त्यागकर गति यानी मोक्षको प्राप्त होवेंगे इसमें कुछभी फर्क नहीं है ॥ ३ ॥

दोहा–पुर रखवारे देखि बहु, कपि मन कीन्ह बिचार ॥ ❋
अति लघुरूप धरौं निशि, नगर करौं पैसार ॥ ३ ॥ ❋

हनुमानने पुरीके बहुतसे पहरायतोंको देखकर मनमें विचार किया कि, मैं यहां बहुत छोटा स्वरूप धारण करके रात्रिमें नगरीके अन्दर प्रवेश करूंगा ॥ ३ ॥

मशकसमान रूप कपि धरी ॥ लंका चले सुमिरि नरहरी ॥ १ ॥ ❋
नाम लंकिनी एक निशिचरी ॥ सो कह चलेसि मोहिँ निन्दरी ॥ २ ॥ ❋

हनुमान् मच्छडके समान छोटासा स्वरूप धारण कर रामचन्द्रजीका स्मरण करके लंकाकी ओर चला ॥ १ ॥ उसवक्त एक लंकिनी नाम राक्षसीने आकर हनुमानसे कहा कि–अरे! मेरा अनादर करके यानी मुझको विना पूछे तू कहां जाता है? ॥ २ ॥

जानसि नाहिँ मर्म शठ मोरा ॥ मोर अहार जहां लगि चोरा ॥ ३ ॥ ❋
मुष्टिक एक ताहि कपि हनी ॥ रुधिर बमन धरणी ठनमनी ॥ ४ ॥ ❋

रे शठ! तू मेरा भेद नहीं जानता कि जो चोर होता है उससे मैं मेरा आहार करती हूं ॥ ३ ॥ ये वचन सुनतेही हनुमानने उसके एक मुष्टी मारी जिससे उसके मुंहमेंसे रुधिर बहने लगा पृथ्वी डिगमगाने लगी ॥ ४ ॥

पुनि संभारि उठी सो लंका ॥ जोरि पाणि कर बिनय सशंका ॥ ५ ॥ ❋
जब रावणहिँ ब्रह्म बर दीन्हा ॥ चलत बिरंचि कहा मोहिँ चीन्हा ॥ ६ ॥

फिर सचेत होकर लंका खड़ी हुई और उसने हाथ जोड़कर भयके साथ हनुमान्से विनती करी कि —॥ ५ ॥ हे हनुमान् ! जब ब्रह्माजीने रावणको वरदान दिया था, तब जाते समय ब्रह्माजी मुझको यह लक्षण बतलाया था ॥ ६ ॥

बिकल होसि जब कपिके मारे ॥ तब जानेसि निशिचर संहारे ॥ ७ ॥ ❋
तात मोर अति पुण्य बहूता ॥ देखेउँ नयन रामकर दूता ॥ ८ ॥ ❋

कि हे लंका ! जब तू बंदरके मारनेसे व्याकुल होवे तब तू जान लेना कि, अब राक्षसोंका संहार होवेगा ॥ ७ ॥ लंका कहती है कि—हे प्यारा ! आज मेरा बड़ा पुण्य उदय हुआ है जिससे रामचन्द्रजीके दूत तुझको मैं मेरे नेत्रोंसे देखती हूं ॥ ८ ॥

दोहा—तात स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिय तुला यक अंग ॥ ❋
तुलै न ताहि सकल मिलि, जो सुखलव सतसंग ॥ ४ ॥ ❋

हे प्यारा ! सत्संगको और स्वर्ग व मोक्षके सुखको तराजूमें एक तर्फ धरकर तोले तो ये सब मिलकर सत्संगके क्षणमात्रके सुखके बराबरभी नहीं हो सकते फिर अधिककी तो बातही कहां ? ॥ ४ ॥

प्रबिशि नगर कीजे सब काजा ॥ हृदय राखि कोशलपुर राजा ॥ १ ॥ ❋
गरल सुधा रिपु करै मिताई ॥ गोपद सिंधु अनल शितलाई ॥ २ ॥ ❋

हे हनुमान् ! अब तू नगरीमें जा और रामचन्द्रजीको हृदयमें रखकर सब काम कर ॥ १ ॥ उसके जहर अमृत हो जाता है. शत्रु मित्रता करता है. समुद्र गौके खुरके गढ़के समान हो जाता है. अग्नि शीतल हो जाता है ॥ २ ॥

गुरुअ सुमेरु रेणुसम ताही ॥ रामकृपा करि चितवहिँ जाही ॥ ३ ॥ ❋
अति लघुरूप धरेउ हनुमाना ॥ पैठा नगर सुमिरि भगवाना ॥ ४ ॥ ❋

और भारी सुमेरु पर्वत रजके कणके समान हलुआ हो जाता है; हे हनुमान् ! रामचन्द्रजी जिसको कृपादृष्टि करके देखते है ॥ ३ ॥ हनुमान्ने बहुत छोटा स्वरूप धारण करके भगवान्का स्मरण कर नगरीके अंदर प्रवेश किया ॥ ४ ॥

मन्दिर मन्दिर प्रति करि शोधा ॥ देखे जहँ तहँ अगणित योधा ॥ ५ ॥ ❋
गयउ दशानन मन्दिरमाहीं ॥ अति बिचित्र कहि जात सो नाहीं ॥ ६ ॥ ❋
शयन किये देखा कपि तेही ॥ मन्दिरमहँ न दीख बैदेही ॥ ७ ॥ ❋

और घर घर ढूंढ़ मारा और जहां तहां असंख्यात सुभट लोगोंको देखा ॥ ५ ॥ फिर ढूंढ़ता २ रावणके घरमें गया. वह घर ऐसा विचित्र था कि कुछ कह नहीं सकते ॥ ६ ॥ वहां हनुमान्ने रावणको तो सोता हुआ देखा परंतु सीता कहीं नजर नहीं आयी ॥ ७ ॥

(क्षेपक) निरखत मन्दिर आयउ तहँवाँ ॥ कुम्भकरण सोवत रह जहँवाँ ॥ १ ॥
अति अकारतनु चितै न जाई ॥ चौंतिस योजनकी चकलाई ॥ २ ॥ ❋

फिर ढूंढ़ता ढूंढ़ता जहां कुम्भकरण सोया पड़ा था, उस घरमें आया ॥ १ ॥ हनुमान्ने

उसका शरीर देखा तौ उसका डीलडोल इतना बड़ा था कि, दूसरा कहीं देखनेमें नहीं आया था चौतीस योजनका तौ उसके शरीरका घेरा था ॥ ४ ॥

योजन तीनि तीनिके काना ॥ बाइस योजन बाहु अजाना ॥ ३ ॥ ❋
सत्रह योजन जांघ लँबाई ॥ शत योजन तनु बरणि न जाई ॥ ४ ॥ ❋
दुइ योजनकै नाक जो बाढ़ी ॥ योजन एक मूछ रहै ठाढ़ी ॥ ५ ॥ ❋

तीन तीन योजनके कान थे. बाईस बाईस योजन जांघ घुटनोंतक पहुंची हुई भुजायें थीं ॥ ३ ॥ सत्रह सत्रह योजन लम्बी जांघें थीं सौ योजन बड़ा शरीर था कि जिसको वर्णन नहीं कर सकते ॥ ४ ॥ दो योजन लम्बी नाक थी. और एक योजन लम्बी खड़ी मूंछ रहतीथी ॥ ५ ॥

दोहा-षट मासकै नींद तेहिँ, सोवत भीतर लंक॥ ❋
बाजत ढोल जुझाउ शिर, जानत नहीं अशंक ॥ १ ॥ ❋

वह छः ६ महीनेतक नींद लिया करता था. सोया रहता उसवक्त लंकाके अन्दर चाहो ढोल और जुझाऊ बाजे उसके सिरपर बाजते रहें पर वह कभी नहीं जागता उसे बाजोंकी आवाजकी खबरभी नहीं पड़ती ॥ १ ॥

सोचै लाग कहां मैं जाऊँ ॥ कहां दरश सीताकर पाऊं ॥ १ ॥ ❋
बिन देखे जो सीतहिँ जाऊँ ॥ कैसे बदन प्रभुहिँ दरशाऊं ॥ २ ॥ ❋

हनुमान् विचार करने लगा कि-अब मैं कहां जाऊं ? अब मुझको सीताके दर्शन कहां होवेंगे ? ॥ १ ॥ जो मैं सीताको विना देखे यहांसे चला जाऊं तौ रामचन्द्रजीको मैं मेरा मुख कैसे दिखलाऊं ? अर्थात् सीताको विना देखे मैं रामचन्द्रजीको मुख नहीं दिखा सक्ता ॥ २ ॥

कपि सब करें मोर उपहासा ॥ लछिमन मोहिँ देखावहिँ त्रासा ॥ ३ ॥ ❋
जाम्बवंत पूंछहिँ कुशलाता ॥ नीके अहहिँ जानकी माता ॥ ४ ॥ ❋

जो मैं ऐसेही चला जाऊं तौ बंदर तौ मेरी हँसी करेंगे और लक्ष्मणजी मुझको भय दिखावेंगे ॥ ३ ॥ और जब जाम्बवान् मुझसे कुशल पूछेगा कि-हे हनुमान् ! माता जानकी अच्छी हैं ? ॥ ४ ॥

कवन उतर देहौं तिन जाई ॥ पवनतनय मनमहँ पछिताई ॥ ५ ॥ ❋
निश्चर घोर भयंकर रहहीं ॥ कोउ न सीताकी सुधि कहहीं ॥ ६ ॥ ❋
पूंछौं काहि कहौं केहि जाई ॥ जनकसुता सो देइ बताई ॥ ७ ॥ ❋

तब मैं जाकर उनको क्या उत्तर दूंगा ? इसतरह हनुमान् अपने मनमें पछताने लगा और सोचने लगा कि अब क्या करूं ? ॥ ५ ॥ जो घोर राक्षस इस नगरीमें रहते हैं वो तौ कोईभी सीताकी खबर कहते नहीं ॥ ६ ॥ अब मैं किसको पूछूं ? और किसको जाकर कहूं कि जो मुझको सीताको बतला देवें ? ॥ ७ ॥ (इति)

भवन एक पुनि दीख सुहावा ॥ हरिमन्दिर तहँ भिन्न बनावा ॥ १ ॥ ❋
रामनाम अंकित गृह सोहा ॥ बरणि न जाइ देखि मन मोहा ॥ २ ॥ ❋

फिर हनुमान्ने एक घर देखा कि जिसके अन्दर जुदा एक भगवानका मन्दिर बना

हुआ है ॥ १ ॥ उस घरके अन्दर रामनामके चिन्ह बने हुएथे और उस घरकी शोभा ऐसी सुन्दर मनमोहिनी थी कि, वर्णन नहीं की जासक्ती ॥ २ ॥

दोहा–रामनाम अंकित गृह, शोभा बरणि न जाय ॥ ❋
नव तुलसीके वृन्द बहु, देखि हर्ष कपिराय ॥ ५ ॥ ❋

जिस घरके अंदर रामनामके जिन्ह थे उसकी शोभा ऐसी थी कि कुछ कहनेमें नहीं आसक्ती उस घरके अन्दर तुलसीके नये बहुतसे पेड़ देखकर हनुमानके मनमें बड़ा आनंद हुआ ॥ ५ ॥

लंका निशिचरनिकरनिबासा ॥ यहां कहां सज्जन कर बासा ॥ १ ॥ ❋
मनमहँ तर्क करन कपि लागे ॥ ताही समय बिभीषण जागे ॥ २ ॥ ❋

और उसने सोचा कि, यह लंकानगरी तौ राक्षसोंके कुलकी निवासभूमि है यहां सत्पुरुषोंके रहनेका क्या काम ? ॥ १ ॥ इसतरह हनुमान् मनही मनमें तर्कना करने लगा इतनेमें बिभीषणकी आंख खुली ॥ २ ॥

राम राम तेहिँ सुमिरण कीन्हा ॥ हृदय हर्ष कपि सज्जन चीन्हा ॥ ३ ॥ ❋
यहि सन हठि करिहौं पहिँचानी ॥ साधुते होइ न कारज हानी ॥ ४ ॥ ❋

और जागतेही उसने 'राम राम !' ऐसा स्मरण किया तौ हनुमानने जाना कि यह कोई सत्पुरुष है इस बातसे हनुमान्को बड़ा आनंद हुआ ॥ ३ ॥ हनुमानने विचार किया कि, इससे जरूर पहिचान करना चाहिये क्योंकि; सत्पुरुषके हाथसे कभी कार्यकी हानि नहीं होती ॥ ४ ॥

बिप्ररूप धरि बचन सुनावा ॥ सुनत बिभीषण उठि तहँ आवा ॥ ५ ॥ ❋
करि प्रणाम पूछी कुशलाई ॥ बिप्र कहहु निजकथा बुझाई ॥ ६ ॥ ❋

फिर हनुमानने ब्राह्मणका रूप धर कर वचन सुनाया तौ वह वचन सुनतेही बिभीषण उठकर उसके पास आया ॥ ५ ॥ और प्रणाम करके कुशल पूछा कि–हे विप्र ! जो आपकी बात चीत हो सो हमें समझाकर कहो ॥ ६ ॥

की तुम हरिदासन महँ कोई ॥ मोरे हृदय प्रीति अति होई ॥ ७ ॥ ❋
की तुम दीनबंधु अनुरागी ॥ आयहु मोहिँ करन बड़भागी ॥ ८ ॥ ❋

बिभीषणने कहा कि–शायद आप कोई भगवद्भक्तोंमेंसे तौ नहीं हो ? क्योंकि मेरे मनमें आपकी ओर बहुत प्रीति बढ़ती जाती है ॥ ७ ॥ अथवा मुझको बड़भागी करनेके वास्ते भक्तोंपर अनुराग रखनेवाले आप साक्षात् दीनबन्धुही तौ नहीं पधार गये हो ? ॥ ८ ॥

दोहा–तब हनुमन्त कही सब, रामकथा निजनाम ॥ ❋
सुनत युगल तन पुलक अति, मगन सुमिरि गुणग्राम ॥ ६ ॥ ❋

बिभीषणके ये वचन सुनकर हनुमानने रामचन्द्रजीकी सब कथा बिभीषणसे कही और अपना नाम बताया. परस्परकी बातें सुनतेही दोनोंके शरीर रोमांचित हो गये और रामचन्द्रजीका स्मरण आ जानेसे दोनों आनंदमग्न व्है गये ॥ ६ ॥

सुनहु पवनसुत रहनि हमारी ॥ जिमि दशनन्ह महँ जीभ बिचारी ॥ १ ॥ ❋

तात कबहुँ मोहिँ जानि अनाथा ॥ करिहहिँ कृपा भानुकुलनाथा ॥ २ ॥

बिभीषण कहता है कि—हे हनुमान्! हमारी रहनी हम कहते हैं सो सुनो. जैसे दांतोंके बीचमें बिचारी जीभ रहती है ऐसे हम इन राक्षसोंके बीचमें रहते है ॥ १ ॥ हे प्यारा! वे रघुनाथजी मुझको अनाथ जानकर कभी कृपा करेंगे? ॥ २ ॥

तामस तन कछु साधन नाहीं ॥ प्रीति न पदसरोज मनमाहीं ॥ ३ ॥ ❋

अब मोहिँ भा भरोस हनुमन्ता ॥ बिनु हरिकृपा मिलहिँ नहिँ संता ॥ ४ ॥

जिससे प्रभु कृपा करें ऐसा साधन तौ मेरे है नहीं; क्योंकि मेरा शरीर तौ तमोगुणी राक्षस है और न कोई प्रभुके चरणकमलोंमे मेरे मनकी प्रीति है ॥ ३ ॥ परंतु हे हनुमान्! अब मुझको इस बातका पक्का भरोसा हो गया है कि भगवान् मुझपर अवश्य कृपा करेंगे; क्योंकि भगवान्की कृपा विना सत्पुरुषोंका मिलाप नहीं होता ॥ ४ ॥

जो रघुबीर अनुग्रह कीन्हा ॥ तौ तुम मोहिँ दरश हठ दीन्हा ॥ ५ ॥ ❋

सुनहु बिभीषण प्रभुकी रीती ॥ करहिँ सदा सेवकपर प्रीती ॥ ६ ॥ ❋

रामचन्द्रजीने मुझपर कृपा करी है इसीसे आपने आकर मुझको बलात्कारसे दर्शन दिया है ॥ ५ ॥ बिभीषणके ये वचन सुनकर हनुमान्ने कहा कि—हे बिभीषण! सुनो; प्रभुकी यह रीतिही है कि आप सेवकपर सदा परम प्रीति किया करते हैं ॥ ६ ॥

कहहु कवन मैं परम कुलीना ॥ कपि चंचल सबही बिधि हीना ॥ ७ ॥ ❋

प्रात लेइ जो नाम हमारा ॥ तादिन ताहि न मिलै अहारा ॥ ८ ॥ ❋

हनुमान् कहता है कि—कहो, मैं कौनसा कुलीन पुरुष हूं? हमारी जाति देखो तब तौ बंदर, कि जो महाचंचल और सब प्रकारसे हीन गिनी जाती है ॥ ७ ॥ जो कोई पुरुष प्रातःकाल हमारा नाम ले लेवे तौ उस उस दिन खानेको भोजन नहीं मिलता ॥ ८ ॥

दोहा—अस मैं अधम सखा सुनु, मोहूँपर रघुबीर ॥ ❋

कीन्ही कृपा सुमिरि गुण, भरे बिलोचन नीर ॥ ७ ॥ ❋

हे सखा! सुनो; मैं ऐसा अधम नीच हूं जिसपरभी रघुवीरने कृपा कर दीनी तौ आप तौ सब प्रकारसे उत्तम हो. आप पर कृपा करें जिसमें क्या बड़ी बात है? ऐसे रामचन्द्रजीके गुणोंका स्मरण करनेसे दोनोंके नेत्रोंमें आंसू भर आये ॥ ७ ॥

जानत हूं अस स्वामि बिसारी ॥ फिर ते काहे न होहिँ दुखारी ॥ १ ॥ ❋

यहिबिधि कहत रामगुणग्रामा ॥ पावन श्रवण सुखद बिश्रामा ॥ २ ॥ ❋

जो मनुष्य जानते बूझते ऐसे स्वामीको छोड़कर फिरते हैं वे दुखी क्यों न होवेंगे? ॥ १ ॥ इसतरह रामचंद्रजीके परम पवित्र व कानोंको सुख देनेवाले गुणग्रामको बिभीषणके कहते कहते हनुमान्ने विश्राम पाया ॥ २ ॥

पुनि सब कथा बिभीषण कही ॥ जेहिबिधि जनकसुता जहँ रही ॥ ३ ॥ ❋

तब हनुमन्त कहा सुनु भ्राता ॥ देखा चहौं जानकी माता ॥ ४ ॥ ❋

फिर बिभीषणने हनुमान्से वो सब कथा कही, कि सीताजी जिस जगह जिस तरह रहती थी ॥ ३ ॥ तब हनुमान्ने बिभीषणसे कहा कि—हे भाई! सुनो, मैं सीता माताको देखना चाहता हूं ॥ ४ ॥

युक्ति बिभीषण सकल सुनाई ॥ चलेउ पवनसुत बिदा कराई ॥ ५ ॥
धरि सोइ रूप गयउ पुनि तहँवाँ ॥ बन अशोक सीता रहँ जहँवाँ ॥ ६ ॥

सो मुझे तजबीज बताओ. हनुमानके ये वचन सुनकर बिभीषणने वहांकी सब तजबीज सुनायी तब हनुमान्‌भी बिभीषणसे बिदा लेकर वहांसे चला ॥ ५ ॥ फिर वैसाही छोटासा स्वरूप धर कर हनुमान् वहां गया कि, जहां अशोकवनमें सीताजी रहा करती थीं ॥ ६ ॥

देखा मनहिँ मन कीन्ह प्रणामा ॥ बैठे बीति गई निशियामा ॥ ७ ॥
कृश तनु शीश जटा इक बेणी ॥ जपति हृदय रघुपतिगुणश्रेणी ॥ ८ ॥

हनुमानने सीताजीका दर्शन करके उनको मनही मनमें प्रणाम किया और बैठ इतनेमें एक प्रहर रात्री बीत गयी ॥ ७ ॥ हनुमानजी सीताजीको देखते है सो उनका शरीर तो बहुत दुबला हो रहा है, शिरपर जटाओंकी एक वेणी बंधी हुई है और अपने मनमें रामचन्द्रजीके गुणग्रामका जप कर रही हैं ॥ ८ ॥

दोहा–निज पद नयन दिये मन, रामचरण महँ लीन ॥
परम दुखी भा पवनसुत, निरखि जानकी दीन ॥ ८ ॥

और अपने पैरोंमें दृष्टि लगा रक्खी है. मन रामचन्द्रजीके चरणोंमें लीन हो रहा है. सीताजीकी यह दीन दशा देख कर हनुमानको बड़ा दुःख हुआ ॥ ८ ॥

तरुपल्लवमहँ रहा लुकाई ॥ करौं विचार करौं का भाई ॥ १ ॥
तेहि अँवसर रावण तहँ आवा ॥ संग नारि बहु किये बनावा ॥ २ ॥

वह हनुमान वृक्षोंके पत्तोंकी ओटमें छिपा हुआ मनमे विचार करने लगा कि–हे भाई! अब मैं क्या करूं ?॥१॥ उस अवसरमें बहुतसी स्त्रियोंको संग लिये रावण वहां आया. जो स्त्रियां रावणके संग थीं वे बहुत प्रकारके बनावोंसे बनी ठनी थीं ॥ २ ॥

बहुविधि खल सीतहिँ समुझावा ॥ साम दाम भय भेद दिखावा ॥ ३ ॥
कह रावण सुनु सुमुखि सयानी ॥ मंदोदरी आदि सब रानी ॥ ४ ॥
तब अनुचरी करौं पन मोरा ॥ एकबार बिलोकु मम ओरा ॥ ५ ॥
तृण धरि ओट कहति बैदेही ॥ सुमिरि अवधपति परम सनेही ॥ ६ ॥

उस दुष्टने सीताको अनेक प्रकारसे समझाया. साम दाम भय और भेद अनेक प्रकारसे दिखाया ॥ ३ ॥ रावणने सीतासे कहा कि–हे सुमुखी! जो तू एकबेरभी मेरी तर्फ देख ले तो हे सयानी! जो ये मेरी मंदोदरी आदि रानियां हैं इन सबको मैं तेरी दासियां बनाढूं यह मेरा प्रण जान ॥ ४ ॥ ५ ॥ रावणका वचन सुन, बीचमें तृण रख, परम प्यारे रामचन्द्रजीका स्मरण करके सीताजीने रावणसे कहा ॥ ६ ॥

सुनु दशमुख खद्योत प्रकाशा ॥ कबहुँ कि नलिनी करहिँ प्रकाशा ॥ ७ ॥
अस मन समुझत कहति जानकी ॥ खल सुधि नहिँ रघुबीर बाणकी ॥ ८ ॥
शठ सूने हरि आनेसि मोहीं ॥ अधम निलज्ज लाज नहिँ तोहीं ॥ ९ ॥

कि–हे रावण! सुन खद्योत यानी आगियेके प्रकाशसे कमलिनी कदापि प्रफुल्लित नहीं होती

किंतु कमलिनी सूर्यके प्रकाशसेही प्रफुल्लित होती है. अर्थात् तू खद्योतके समान है, और रामचन्द्रजी सूर्यके समान है ॥ ७ ॥ सीताजीने अपने मनमें ऐसे समझकर रावणसे कहा कि–रे दुष्ट ! रामचन्द्रजीके बाणको अबहीं भूल गया ? क्यों वो रामचन्द्रजीका बाण[1] याद नहीं है ? अरे निर्लज्ज ! अरे अधम ! अरे शठ ! रामचन्द्रजीके सूने तू मुझको ले आया. तुझे शर्म नहीं आती ? ॥ ९ ॥

दोहा–आपहिँ सुनि खद्योत सम, रामहिँ भानुसमान ॥ ❋
पुरुष बचन सुनि काढ़ि असि, बोला अति रिसि आन ॥ ९ ॥ ❋

सीताके मुखसे कठोर वचन यानी अपनेको खद्योतके तुल्य और रामचन्द्रजीको सूर्यके समान सुनकर रावणको बड़ा क्रोध हुआ जिससे उसने तलवार निकाल कर ये वचन कहे ॥ ९ ॥

सीता तैं मम कृत अपमाना ॥ काटौं तव शिर कठिन कृपाना ॥ १ ॥ ❋
नाहित सपदि मानु मम बानी ॥ सुमुखि होत नतु जीवन हानी ॥ २ ॥ ❋

हे सीता ! तूने मेरा मानभंग कर दिया है इसवास्ते इस कठोर खड्गसे मैं तेरा शिर उड़ा दूंगा ॥ १ ॥ हे सुमुखी ! या तो तू जल्दी मेरा कहना मान ले नहीं तो तेरा जी जाता है ॥ २ ॥

श्याम सरोज दामसम सुन्दर ॥ प्रभुभुज करिकर सम दशकंदर ॥ ३ ॥ ❋
सो भुज कंठ कि तव असि घोरा ॥ सुनु शठ अस प्रमाण पण मोरा ॥ ४ ॥

रावणके ये वचन सुनकर सीताने कहा कि–हे शठ रावण ! सुन, मेराभी तो ऐसा पक्का प्रण है कि, या तो इस कंठपर श्यामकमलोंकी मालाके समान सुन्दर और हाथीकी सूंड़के समान सुढार रामचन्द्रजीकी भुजा रहेंगी या तेरा यह महाघोर खड्ग रहेगा अर्थात् रामचन्द्रजीके विना मुझे मरना मंजूर है पर अन्यका स्पर्श नहीं करूंगी ॥ ३ ॥ ४ ॥

चन्द्रहास हरु मम परितापा ॥ रघुपतिबिरहअनलसंतापा ॥ ५ ॥ ❋
शीतल निशि तव असि बर धारा ॥ कह सीता हरु मम दुख भारा ॥ ६ ॥

सीता उस तलवारसे प्रार्थना करती है कि–हे तलवार ! तू मेरा शिर उड़ा कर मेरे संतापको दूर कर क्योंकि मै रामचन्द्रजीके विरहरूप अग्निसे संतप्त हो रही हूं ॥ ५ ॥ सीताजी कहती है कि–हे असिवर ! तेरी धाररूप शीतल रात्रिसे मेरे भारी दुःखको दूर कर ॥ ६ ॥

सुनत बचन पुनि मारण धावा ॥ मयतनया कहि नीति बुझावा ॥ ७ ॥ ❋
कहेसि सकल निशिचरी बुलाई ॥ सीतहिँ त्रास देखावहु जाई ॥ ८ ॥ ❋
मास दिवस महँ कहा न माना ॥ तौ मैं मारब काढ़ि कृपाना ॥ ९ ॥ ❋

सीताजीके ये वचन सुनकर रावण फिर सीताजीको मारनेको दौड़ा तब मयदैत्यकी कन्या मंदोदरीने नीतिके वचन कहकर उसको समझाया ॥ ७ ॥ फिर रावणने सीताजीकी रखवारी सब राक्षसियोंको बुलाकर कहा कि–तुम जाकर सीताको अनेक प्रकारसे त्रास दिखाओ ॥ ८ ॥ यदि वह एक महीनेके भीतर मेरा कहना मेरा कहना नहीं मानेगी तो मैं तलवार निकालकर उसे मार डालूंगा ॥ ९ ॥

---

१ मारीचने जो तुझसे कहा था वह, अथवा शूर्पणखाने खर दूषणसे कहा था वह, अथवा रावण पक्षीरूप हो अयोध्यामें गया तब रामचन्द्रजीने विना फलका बाण मारा जिससे वह लंकामें आपड़ा. सात दिनसे मूर्छा खुली; वह बाण.

दोहा-भवन गयउ दशकन्ध तब, इहां निशाचरवृन्द ॥ ❃
सीतहिँ त्रास दिखावहिँ, धरहिँ रूप बहु मन्द ॥ १० ॥ ❃

उधर तौ रावण अपने भवनके भीतर गया, इधर वे नीच राक्षसियोंके झुंडके झुंड अनेक प्रकारके रूप धारण करके सीताजीको भय दिखाने लगे ॥ १० ॥

त्रिजटा नाम राक्षसी एका ॥ रामचरण रत निपुण बिबेका ॥ १ ॥ ❃
सबहिँ बुलाइ सुनायसि सपना ॥ सीतहिँ सेइ करौ हित अपना ॥ २ ॥ ❃

उनमें एक त्रिजटा नाम जो राक्षसी थी वह रामचन्द्रजीके चरणोंकी परमभक्त, और बड़ी निपुण और विवेकवान् थी ॥ १ ॥ उसने सब राक्षसियोंको अपने पास बुलाकर जो उसको सुपना आया था वह सबको सुनाया और उसने उनसे कहा कि-आपन सबोंको सीताजीकी सेवा करके अपना हित कर लेना चाहिये ॥ २ ॥

सपने बानर लंका जारी ॥ यातुधान सेना सब मारी ॥ ॥ ३ ॥ ❃
खर आरूढ नगन दशदीशा ॥ मुण्डित शिर खंडित भुज बीशा ॥ ४ ॥ ❃

क्योंकि मैंने सुपनमें ऐसा देखा है कि, एक वानरने लंकापुरीको जलाकर राक्ससोंकी सारी सेनाको मार डाला ॥ ३ ॥ और रावणको गधेपर सवार होकर दक्षिण दिशामें जाता हुआ मैंने स्वप्नमें देखा है वोभी कैसा कि नग्न शिर शरीर मूंड़ा हुआ, और बीस भुजाये टूटी हुई ॥ ४ ॥

यहिबिधि सो दक्षिण दिशि जाई ॥ लंका मनहुँ बिभीषण पाई ॥ ५ ॥ ❃
नगर फिरी रघुबीर दोहाई ॥ तब प्रभु सीतहिँ बोलि पठाई ॥ ६ ॥ ❃

और मैंने यहभी देखा है कि-मानो लंकाका राज बिभीषणको मिल गया है ॥ ५ ॥ और नगरीके अन्दर रामचन्द्रजीकी दुहाई फिर गयी है तब रामचन्द्रजीने सीताको बुलानेके लिये बुलावा भेजा है ॥ ६ ॥

यह सपना मैं कहौं बिचारी ॥ होइहि सत्य गये दिनचारीं[1] ॥ ७ ॥ ❃
तासु बचन सुनिकै सब डरीं ॥ जनकसुताके चरणन परी ॥ ८ ॥ ❃

त्रिजटा कहती है कि-मैं आपसे यह बात खूब सोच कर कहती हूं कि यह स्वप्न चार दिन बीतनेके बाद सत्य हो जायगा ॥ ७ ॥ त्रिजटाके ये वचन सुनकर सब राक्षसियां डरीं सो डरके मारे सब राक्षसियां सीताजीके चरणोंमे गिरीं ॥ ८ ॥

दोहा-जहँ तहँ गईं सकल मिलि, सीताके मन शोच ॥ ❃
मास दिवस बीते मोहिँ, मारिहि निशिचर पोच ॥ ११ ॥ ❃

फिर सब राक्षसियां मिलकर जहां तहां चली गयीं तब सीताजी अपने मनमें सोच करने लगीं कि एक महीना बीतनेके बाद यह नीच राक्षस मुझे मार डालेगा ॥ ११ ॥

त्रिजटा सन बोलि कर जोरी ॥ मातु बिपति संगिनि तैं मोरी ॥ १ ॥ ❃
तजौं देहँ करु बेगि उपाई ॥ दुसह बिरह अब सहा न जाई ॥ २ ॥ ❃

---

१ यहां दिनचारी अर्थात् दिनमें फिरनेवाला वानर यानी हनुमान्‌के गये पीछे होगा ऐसाभी अर्थ करते हैं परंतु कविका तात्पर्य तौ थोड़े दिन बीतनेके बाद होगा ऐसा दीख पड़ता है.

फिर त्रिजटाके पास हाथ जोड़कर सीताजीने कहा कि–हे माता ! तू मेरी सच्ची विपतिकी साथिन है ॥ १ ॥ सीताजी कहती है कि–या तौ जल्दी उपाय कर नहीं तौ मैं मेरा देह तजती हूं; क्योंकि अब मुझसे अति दुसह विरहका दुख सहा नहीं जाता ॥ २ ॥

आनि काठ रचि चिता बनाई ॥ मातु अनल तुम देहु लगाई ॥ ३ ॥ ❋
सत्य करहु मम प्रीति सयानी ॥ सुनि सो श्रवण शूलसम बानी ॥ ४ ॥ ❋

हे माता ! अब तू जल्दी काठ ला और चिता बनाकर मुझको जलानेके वास्ते जल्दी उसमें आग लगा दे ॥ ३ ॥ हे सयानी ! तू मेरी प्रीति सत्य कर. सीताजीके ऐसे शूलके समान महाभयानक वचन सुनकर ॥ ४ ॥

सुनत वचन पद गहि समुझावा ॥ प्रभु प्रताप बल सुयश सुनावा ॥ ५ ॥❋
निशि न अनल मिलु राजकुमारी ॥ अस कहि सो निजभवन सिधारी ॥ ६ ॥

त्रिजटाने तुरंत सीताजीके चरणकमल गहे और सीताजीको समुझाया और रामचंद्रजीका प्रताप बल और उनका सुयश सुनाया ॥ ५ ॥ और सीताजीसे कहा कि–हे राजपुत्री ! अभी रात्रि है इस-वास्ते अभी अग्नि नहीं मिल सक्ती. ऐसे कहकर वह अपने घरको चली गयी ॥ ६ ॥

कह सीता विधि भा प्रतिकूला ॥ मिलै न पावक मिटै न शूला ॥ ७ ॥ ❋
देखियत प्रगट गगन अंगारा ॥ अवनि न आवत एकौ तारा ॥ ८ ॥ ❋

तब इकली बैठी २ सीताजी कहने लगी–क्या करूं ? दैवही प्रतिकूल होगया. अब न तौ अग्नि मिले और न मेरा दुख कोईतरहसे मिटसके ॥ ७ ॥ ऐसे कह तारानको देखकर सीता कहती है कि–ये आकाशके भीतर तौ बहुतसे अंगारे प्रगट दीखते है; परंतु पृथ्वीपर तौ इनमेंसे एकभी तारा नहीं आता ॥ ८ ॥

पावकमय शशि श्रवत न आगी ॥ मानहुँ मोहिँ जानि हतभागी ॥ ९ ॥❋
सुनहु बिनय मम बिटप अशोका ॥ सत्य नाम करु हरु मम शोका ॥१०॥

चन्द्रकिरणसे विरहानल भभक उठता है सो सीताजी चन्द्रमाको देखकर कहती है कि यह चन्द्र-माका स्वरूप साक्षात् अग्निमय दीख पड़ता है पर यहभी मानों मुझको मंदभागिन जानकर आगको नहीं बरसता ॥ ९ ॥ अशोकके वृक्षको देखकर उससे प्रार्थना करती है कि–हे अशोक वृक्ष ! मेरी विनती सुनकर तू तेरा नाम सत्य कर अर्थात् मुझे अशोक यानी शोकरहित कर; मेरे शोकको दूर कर ॥ १० ॥

नूतन किसलय अनलसमाना ॥ देहु अगिनि मम करहु निदाना ॥ ११ ॥
देखि परम बिरहाकुल सीता ॥ सो क्षण कपिहिँ कल्पसम बीता ॥ १२ ॥❋

हे अग्निके समान रक्तवर्ण नवीन कोंपलें ! तुम मुझको अग्नि देकर मुझको शांत करो ॥ ११ ॥ इसप्रकार सीताजीको विरहसे अत्यंत व्याकुल देखकर हनुमानजीका वह एक क्षण कल्पके स-मान बीतता था ॥ १२ ॥

सोरठा–कपि करि हृदय बिचार, दीन्ह मुद्रिका डारि तब ॥ ❋
जनु अशोक अंगार, दीन्ह हर्ष उठि कर गहेउ ॥ १२ ॥ ❋

उससमय हनुमान्‌ने अपने मनमेंसे विचार करके अपने हाथमेंसे मुद्रिका डार दीनी सो सीताजीको वह मुद्रिका उससमय कैसी दीख पड़ी कि मानों अशोकके अंगारने प्रगट होकर आपको आनंद दिया है. सो सीताजीने तुरंत उठकर वह मुद्रिका अपने हाथमें लेली ॥ १२ ॥

तब देखी मुद्रिका मनोहर ॥ रामनामअंकित अति सुन्दर ॥ १ ॥ ❀
चकित चितै मुद्रिक पहिँचानी ॥ हर्ष बिषाद हृदय अकुलानी ॥ २ ॥ ❀

फिर सीताजीने उस मुद्रिकाको देखा तो वह सुन्दर मुद्रिका रामचन्द्रजीके मनोहर नामसे अंकित हो रही थी यानी उसपर रामचन्द्रका नाम खुदा हुआ था ॥ १ ॥ उस मुद्रिकाको देखतेही सीताजी चकित होकर देखने लगीं आखिर उस मुद्रिकाको पहिचान कर हृदयमें अत्यंत हर्ष और विषादको प्राप्त हुईं और बहुत अकुलायीं ॥ २ ॥

जीति को सकै अजय रघुराई ॥ मायाते अस रची न जाई ॥ ३ ॥ ❀
सीता मन बिचार कर नाना ॥ मधुर बचन बोले हनुमाना ॥ ४ ॥ ❀

यह क्या हुआ ? यह रामचन्द्रजीकी नामांकित मुद्रिका यहां कैसे आयी ? या तो जीतनेसे आ- सकती है सो उन अजय रामचन्द्रजीको जीतसके ऐसा तो जगतमें कौन है ? अर्थात् उनको जीतने- वाला जगतमें हैही नहीं· और जो कहें कि यह राक्षसोंने मायासे बनाली है सो यहभी नहीं हो सकता, क्योंकि मायासे ऐसी बन नहीं सकती ॥ ३ ॥ इसप्रकार सीताजी अपने मनमें अनेक प्रकारसे विचार कर रही थीं इतनेमें ऊपरसे हनुमान्‌ने मधुर वचन कहे ॥ ४ ॥

रामचन्द्र गुण बरणन लागे ॥ सुनतहिँ सीताकर दुख भागे ॥ ५ ॥ ❀
लागी सुनै श्रवण मन लाई ॥ आदि हिते सब कथा सुनाई ॥ ६ ॥ ❀

यानी हनुमान् रामचन्द्रजीके गुणोंका वर्णन करने लगा, उनको सुनतेही सीताका सब दुःख निवृत्त हो गया ॥ ५ ॥ और वह मन और कान लगा कर सुनने लगी. हनुमान्‌नेभी आरंभसे लेकर सब कथा सीताको सुनायी ॥ ६ ॥

(क्षेपक) तब हनुमत बोले सह चाऊ ॥ मातु भानुकुल दशरथ राऊ ॥ १ ॥ ❀
तिनके सुवन लषण रघुनाथा ॥ आये बन बैदेही साथा ॥ २ ॥ ❀

तब हनुमान्‌ने बड़ी चाहके साथ सीताजीसे कहा कि—हे माता ! सूर्यवंशके अंदर महाराज दशरथ हुए थे ॥ १ ॥ उनके पुत्र राम लक्ष्मण सीताजीके संग लेकर दंडकारण्य वनमें पधारे थे ॥ २ ॥

महिजै तहँ हरि लैगा कोऊ ॥ ढूंढ़त फिरैं बिपिन महँ दोऊ ॥ ३ ॥ ❀
गीधराजते सुधि जब पाई ॥ तबते अधिक उठे अकुलाई ॥ ४ ॥ ❀

वहां कोई एक राक्षस सीताजीको हर ले गया सो वे दोनों भाई सीताजीको ढूंढ़ते हुए जंगलमें बहुत फिरे परंतु कहीं पता नहीं लगा ॥ ३ ॥ आखिर जब गृध्रराज जटायूसे उनको सीताजीकी खबर मिली तबसे वे बहुत अकुलाकर उठे ॥ ४ ॥

बहुरि सखा सुग्रीवहिँ कीन्ह्यो ॥ अंबर पाय थाहसी लीन्ह्यो ॥ ५ ॥ ❀
बरषा समुझि रहे गम खाई ॥ अब कपि अगणित बटुरे आई ॥ ६ ॥ ❀

सो वे फिरते फिरते सुग्रीवके पास आये फिर सुग्रीवको अपना मित्र बनाया और वहां सीताजीका वस्त्र पानेसे उनको कुछ थाहसी मिल गयी ॥ ५ ॥ परंतु चातुर्मास्य आगया था

इसवास्ते वे चार महिना गम खाकर रहे. अब वर्षाऋतु बीततेही रामचन्द्रजीकी सहायताके वास्ते बहुतसे असंख्यात बानर इकठे होगये है ॥ ६ ॥

पठये चहुँदिशि चाहन भूरी ॥ मोते कहिनि नयन जलपूरी ॥ ७ ॥ ❁
लै मुद्रिका जाहु तुम ताता ॥ सीतहिँ देखि कहौ कुशलाता ॥ ८ ॥ ❁

और उनको सीताजीको तलाश करनेके वास्ते चारों दिशाओंमें भेज भी दिये है तिनमें रामचन्द्रजीने नेत्रोंमे जल लाकर मुझसे यह कहा ॥ ७ ॥ कि–हे हनुमान्! तू यह मुद्रिका लेकर और जहां सीता हो वहां जाकर उसको देखकर उसको कुशलके समाचार कह ॥ ८ ॥

काल्हि मातु मैं लंकहिँ आयों ॥ खोजत आजु दरश तव पायों ॥ ९ ॥ ❁
चित्रकूटकी कथा बखानी ॥ जो कछु किहिसि जयन्ता मानी ॥ १० ॥ ❁
रामचरित यहि बिधि सुनि सीता ॥ भई मुदित दुख दारुण बीता ॥ ११ ॥

सो हे माता! मैं यहां लंकामें कल आया था परंतु ढूंढ़ते ढूंढ़ते मुझको आपके दर्शन आज हुए है ॥ ९ ॥ फिर हनुमान्ने सीताजीको विश्वास दिलानेकेवास्ते चित्रकूटकी तमाम कथा कही जो कुछ अभिमानी जयन्तने की थी ॥ १० ॥ इस प्रकार हनुमान्के मुखसे रामचन्द्रजीका चरित्र सुनकर सीताजी परम प्रसन्न हुई और उनका महादारुण दुख बीत गया ॥ ११ ॥ ॥ इति ॥

श्रवणामृत जिन कथा सुनाई ॥ कहि सो प्रगट होत किन भाई ॥ ७ ॥ ❁
तब हनुमन्त निकट चलि गयउ ॥ फिरि बैठी मन बिस्मय भयऊ ॥ ८ ॥

हनुमान्के मुखसे रामचन्द्रजीका चरितामृत सुनकर सीताजीने कहा कि–जिसने मुझको यह कानोंको अमृतसी मधुर लगनेवाली कथा सुनाई है वह मेरे साम्हने आकर प्रगट क्यों नहीं होता? ॥ ७ ॥ सीताजीके ये वचन सुनकर हनुमान् चलकर उनके समीप गया तो हनुमान्का वानररूप देखकर सीताजीको मनमें बड़ा विस्मय हुआ यह क्या? सो वह कपट समझकर हनुमान्को पीठ देकर बैठ गयी ॥ ८ ॥

रामदूत मैं मातु जानकी ॥ सत्य शपथ करुणा निधानकी ॥ ९ ॥ ❁
यह मुद्रिका मातु मैं आनी ॥ दीन्ह राम तुम कहँ सहि जानी ॥ १० ॥ ❁
नर बानरहिँ संग कहु कैसे ॥ कही कथा संगति भइ जैसे ॥ ११ ॥ ❁

तब हनुमान्ने सीताजीसे कहा कि–हे माता! सीता! मैं रामचन्द्रजीका दूत हूं. मैं रामचन्द्रजीकी शपथ खाकर कहता हूं कि इसमें फर्क नहीं है ॥ ९ ॥ और रामचन्द्रजीने आपकेवास्ते जो निशानी दी थी वह यह मुद्रिका है माता! मैंने लाकर आपको दी है ॥ १० ॥ तब सीताजीने कहा कि–हे हनुमान्! नर और वानरोंके बीच आपसमें प्रीति कैसे हुई? वह मुझे कह. तब उनके परस्परमें जैसे प्रीति हुई थी वे सब समाचार हनुमान्ने सीताजीसे कह ॥ ११ ॥

दोहा–कपि कर बचन सप्रेम सुनि, उपजा मन बिश्वास ॥ ❁
जाना मन क्रम बचन यह, कृपासिन्धु कर दास ॥ १३ ॥ ❁

हनुमान्के प्रेमसहित वचन सुनकर सीताजीके मनमें पका भरोसा आगया. और उन्होंने जान लिया कि यह मन वचन और कायासे कृपासिंधु श्रीरामचन्द्रजीका निज दास है ॥ १३ ॥

हरिजन जानि प्रीति अति बाढ़ी ॥ सजल नयन पुलकावलि ठाढ़ी ॥ १ ॥
बूड़त बिरहजलधि हनुमाना ॥ भयउ तात मोकहँ जलयाना ॥ २ ॥ ❀

हनुमान्को हरिभक्त जानकर सीताजीके मनमें अत्यंत प्रीति बढ़ी,नेत्रोंमें जल भर आया,और राम खड़े हो गये ॥ १ ॥ ऐसे प्रेममग्न होकर सीताजीने हनुमान्से कहा कि-हे हनुमान्! मै विरहरूप समुद्रमें बूड़ती थी सो हे तात! मेरेको तिरानेके लिये तू नौका हुआ है? ॥ २ ॥

अब कहु कुशल जाउँ बलिहारी ॥ अनुजसहित सुखभवन खरारी ॥ ३ ॥
कोमल चित कृपाल रघुराई ॥ कपि केहि हेतु धरी निठुराई ॥ ४ ॥ ❀

मैं तेरी बलिहारी जाऊं अब तू मुझे कह कि, सुखधाम श्रीराम लक्ष्मणसहित कुशल तो है? ॥ ३ ॥ हे हनुमान्! रामचन्द्रजी तो बड़े दयालु और बड़े कोमल चित्त है फिर यह कठोरता आपने क्यों धारण की है? ॥ ४ ॥

सहज बानि सेवक सुखदायक ॥ कबहुँक सुरति करत रघुनायक ॥ ५ ॥
कबहुँ नयन मम शीतल ताता ॥ होइहि निरखि श्याम मृदु गाता ॥ ६ ॥

यह तो उनका सहज स्वभावही है कि जो उनकी सेवा करता है उसको वे सदा सुख देते रहते है. सो हे हनुमान्! वे रामचन्द्रजी कभी मुझकोभी याद करते है? ॥ ५ ॥ हे प्यारा! कभी मेरेभी नेत्र रामचन्द्रजीके कोमल श्याम शरीरको देखकर शीतल होवेंगे? ॥ ६ ॥

बच न आव नयन भरि बारी ॥ अहो नाथ मोहिं निपट बिसारी ॥ ७ ॥ ❀
देखि बिरह व्याकुल अति सीता ॥ बोलेउ कपि मृदु बचन बिनीता ॥ ८ ॥

सीताजीकी उस समय यह दशा हो गयी कि मुखसे वचन निकलने बंद होगये और नेत्रोमें जल भर आया इस दशाको प्राप्त होकर सीताजीने प्रार्थना करी कि-हे नाथ! मुझको आप बिलकुलही भूल गये ॥ ७ ॥ सीताजीको विरहसे अत्यंत व्याकुल देखकर हनुमान्जी बड़े विनयके साथ कोमल वचन बोले ॥ ८ ॥

मातु कुशल प्रभु अनुजसमेता ॥ तव दुख दुखी सो कृपानिकेता ॥ ९ ॥ ❀
जननि जनि मानहु मन ऊना ॥ तुमते प्रेम रामकहँ दूना ॥ १० ॥ ❀

कि-हे माता! लक्ष्मणसहित रामचन्द्रजी सब प्रकारसे प्रसन्न हैं. केवल एक आपके दुखसे तो वो कृपानिधान अवश्य दुःखी हैं बाकी उनको कुछभी दुख नहीं है ॥ ९ ॥ हे माता! आप अपने मनको किसी तरह ऊन मत मानो यानी रंज मत करो; क्योंकि रामचन्द्रजीका प्यार आपकी ओर आपसेभी दुगुन है ॥ १० ॥

दोहा-रघुपतिके सन्देश अब, सुनु जननी धरि धीर ॥ ❀
अस कहि कपि गदगद भये, भरे बिलोचन नीर ॥ १४ ॥ ❀

हे माता! अब मैं आपको जो रामचन्द्रजीका संदेशा सुनाता हूं सो आप धीरज धारण करके उसे. सुनो ऐसे कहतेही हनुमान् गद्गद कंठ हो गया और नेत्रोंमें जल भर आया ॥ १४ ॥

रामबियोग कहा सुनु सीता ॥ मो कहँ सकल भयउ बिपरीता ॥ १ ॥ ❀
नूतन किसलय मनहुँ कृशानू ॥ कालनिशासम निशि शशिभानू ॥ २ ॥

हनुमानने सीताजीसे कहा कि–हे सीताजी! रामचन्द्रजीने जो संदेशा पठाया है वह सुनो. रामचन्द्रजीने कहा है कि–तेरे वियोगके मारे मेरे सब बात विपरीत हो गयी है ॥ १ ॥ नवीन कोंपल तो मानों अग्निरूप हो गये है. रात्रि मानों कालरात्रि बन गयी है. चंद्रमा सूरजके समान दीख पड़ता है ॥ २ ॥

कुवलय बिपिन कुन्तबन सरिसा ॥ बारिद तप्त तेल जनु बरिसा ॥ ३ ॥ ❋
जेहि तरु रहौं करत सो पीरा ॥ उरग श्वास सम त्रिबिध समीरा ॥ ४ ॥ ❋

कमलोंका वन मानों भालोंके समूहके समान होगया है. मेघकी वृष्टि मानों तपेहुए तेलके समान लगाती है ॥ ३ ॥ मैं जिस वृक्षके तले बैठता हूं वही वृक्ष मुझको पीड़ा देता है. और यह शीतल सुगंध मन्द त्रिविध पवन मुझको सांपके श्वासके समान प्रतीत होता है ॥ ४ ॥

कहते नहिँ दुख घटि कछु होई ॥ काहि कहौं यह जान न कोई ॥ ५ ॥ ❋
तत्व प्रेमकर मम अरु तोरा ॥ जानत प्रिया एक मन मोरा ॥ ६ ॥ ❋

और अधिक क्या कहूं? क्योंकि कहनेसे कोई दुख घट थोड़ाही जाता है; परंतु यह बात किसको कहूं? कोई नहीं जानता ॥ ५ ॥ हे प्यारी! मेरे और आपके प्रेमके तत्वको कौन जानता है? कोई नहीं जानता. केवल एक मेरा मन तो उसको भलेही पहिचानता है ॥ ६ ॥

सो मन रहत सदा तोहि पाहीं ॥ जानु प्रीतिबश यतने माहीं ॥ ७ ॥ ❋
प्रभुसन्देश सुनत बैदेही ॥ मगन प्रेम तनु सुधि नहिँ तेही ॥ ८ ॥ ❋

पर वह मनभी सदा आपके पास रहता है. सो हे प्यारी! इतनेहीमें जान लेना कि, राम किस कदर प्रेमके वश हैं ॥ ७ ॥ रामचन्द्रजीके संदेश सुनतेही सीताजी ऐसी प्रेममें मग्न होगयी कि उन्हें अपने शरीरकीभी सुध न रही ॥ ८ ॥

कह कपि हृदय धीर धरु माता ॥ सुमिरि राम सेवक सुखदाता ॥ ९ ॥ ❋
उर आनहु रघुपतिप्रभुताई ॥ सुनि मम बचन तजहु बिकलाई ॥ १ ॥ ❋

उस समय हनुमानने सीताजीसे कहा कि–हे माता! आप सेवकजनोंके सुख देनेवाले श्रीरामचन्द्रजीको याद करके मनमें धीरज धरो ॥ ९ ॥ श्रीरामचन्द्रजीकी प्रभुताको हृदयमें आनकर मेरे वचनोंको सुनकर विकलताको तज दो ॥ १० ॥

दोहा–निशिचर निकर पतंगसम, रघुपतिबाण कृशानु ॥ ❋
जननि हृदय निज धीर धरु, जरे निशाचर जानु ॥ १५ ॥ ❋

हे माता! रामचन्द्रजीके बाणरूप अग्निके आगे इस राक्षससमूहको आप पतंगके समान जानो. और इन सब राक्षसोंको जलेहुए जानकर मनमें धीरज धरो ॥ १५ ॥

जो रघुबीर होत सुधि पाई ॥ करते नहिँ बिलम्ब रघुराई ॥ १ ॥ ❋
रामबाण रबिउदय जानकी ॥ तमबरूथ कहँ यातुधानकी ॥ २ ॥ ❋

हे माता! जो रामचन्द्रजीको आपकी खबर मिल जाती तो प्रभु कदापि विलम्ब नहीं करते ॥ १ ॥ क्योंकि रामचन्द्रजीके बाणरूप सूर्यके उदय भये पीछे हे सीताजी! राक्षससमूहरूप अंधकार पटलका पता कहां है? ॥ २ ॥

अबहिँ मातु मैं जाउँ लिवाई ॥ प्रभु आयसु नहिँ रामदुहाई ॥ ३ ॥
कछुक दिवस जननी धरु धीरा ॥ कपिन्हसहित ऐहैं रघुबीरा ॥ ४ ॥

हनुमान्‌जी कहते है कि–हे माता ! मैं आपको अबभी लेजाऊं परंतु करूं क्या ? मुझे रामचन्द्रजीकी आपको ले जानेकी आज्ञा नहीं है. इसवास्ते मैं कुछ कर नहीं सकता. यह बात मैं रामचन्द्रजीकी शपथ खाकर कहताहूं ॥ ३ ॥ इसवास्ते हे माता ! आप कुछ दिन धीरज धरो. रामचन्द्रजी वानरोके साथ यहां आवेंगे ॥ ४ ॥

निशिचर मारि तुमहिँ लै जैहैं ॥ तिहुँपुर नारदादि यश गैहैं ॥ ५ ॥
हैं सुत कपि सब तुम्हैं समाना ॥ यातुधान भट अति बलवाना ॥ ६ ॥

और राक्षसोको मारकर आपको ले जावेंगे तब रामचन्द्रजीका यह सुजस तीनों लोकोंमें नारदादि मुनि गावेंगे ॥ ५ ॥ हनुमान्‌की यह बात सुनकर सीताजी बोली कि–हे पुत्र ! तमाम वानर तो तेरे सरीखे है और राक्षस बड़े भट और बली है. फिर यह बात कैसे बनेगी ? ॥ ६ ॥

मोरे हृदय परम सन्देहा ॥ सुनि कपि प्रगट कीन्ह निजदेहा ॥ ७ ॥
कनक भूधराकार शरीरा ॥ समर भयंकर अति रणधीरा ॥ ८ ॥
सीतामन भरोसा तब भयऊ ॥ पुनि लघुरूप पवनसुत लयऊ ॥ ९ ॥

इसका मेरे मनमें बड़ा संदेह है. सीताजीका यह वचन सुनकर हनुमान्‌ने अपना शरीर प्रगट किया ॥ ७ ॥ कि–जो शरीर सुवर्णके पर्वतके समान विशाल युद्धके बीच बड़ा विकराल और रणके बीच बड़ा धीरजवाला था ॥ ८ ॥ हनुमान्‌के उस शरीरको देखकर सीताजीके मनमें पक्का भरोसा आगया, तब हनुमान्‌ने पीछा अपना छोटा स्वरूप धर लिया ॥ ९ ॥

दोहा–सुनि माता शाखामृगहिँ, बल बुद्धि विशाल ॥
प्रभुप्रतापते गरुड़ही, खाइ परम लघु ब्याल ॥ १६ ॥

हनुमान्‌ने कहा कि–हे माता ! सुनो. वानरोंमें कोई विशाल बुद्धि वा बल नहीं है, परंतु प्रभुका प्रताप ऐसे है कि उसके बलसे छोटासा सांप गरुड़को खाजाता है ॥ १६ ॥

मन सन्तोष सुनत कपि बानी ॥ तन अति पुलक नयन ढरु पानी ॥ १ ॥
भक्ति प्रताप तेज बल सानी ॥ आशिष दीन्ह रामप्रिय जानी ॥ २ ॥

भक्ति, प्रताप, तेज और बलसे मिली हुई हनुमान्‌की वाणी सुनकर सीताजीके मनमें बड़ा संतोष हुआ. शरीर पुलकावलीसे भर गया. और नेत्रोंमें नीर ढरकने लगा ॥ १ ॥ फिर सीताजीने हनुमान्‌को रामचन्द्रजीका प्यारा जानकर आशीर्वाद दिया ॥ २ ॥

अजर अमर गुणनिधि सुत होहू ॥ करहु सदा रघुनायक छोहू ॥ ३ ॥
कराहिँ कृपा प्रभु अससुनि काना ॥ निर्भर प्रेममगन हनुमाना ॥ ४ ॥

कि–हे पुत्र ! तू अजर (जरारहित) अमर (मरणरहित) और गुणोंका भंडार हो और रामचन्द्रजी तुझपर सदा कृपा करो ॥ ३ ॥ रामचन्द्रजी कृपा करेंगे ऐसे सीताजीके मुखके वचन कानोंसे सुनकर हनुमान् प्रेमानन्दमें अत्यंत मग्न हुआ ॥ ४ ॥

बार बार नायउ पद शीशा ॥ बोले बचन जोरि कर कीशा ॥ ५ ॥

अब कृतकृत्य भयउँ मैं माता ॥ आशिष तव अमोघ बिख्याता ॥ ६ ॥ ❀

और वारंवार सीताजीके चरणोंमें सीस नवाय हाथ जोड़कर यह वचन बोला ॥ ५ ॥ कि—हे माता! अब कृतार्थ हुआ हूं, क्योंकि आपका आशीर्वाद सफलही होता है. यह बात जगत्प्रसिद्ध है ॥ ६ ॥

सुनिय मातु मोहिँ अतिशय भूखा ॥ लागि देखि सुन्दर फल रूखा ॥ ७ ॥

सुनु सुत करैं बिपिनरखवारी ॥ परम सुभट रजनीचर झारी ॥ ८ ॥ ❀

तिनकर भय माता मोहिँ नाहीं ॥ जो तुम सुख मानहु मनमाहीं ॥ ९ ॥

हे माता! सुनो. वृक्षोंके सुन्दर फल लगे देखकर मुझे अत्यंत भूख लग गयी है, सो मुझे आज्ञा दो ॥ ७ ॥ तब सीताजीने कहा कि—हे पुत्र! सुन, इस वनकी बड़े बड़े भारी जोधा राक्षस रक्षा करते है ॥ ८ ॥ तब हनुमान्‌ने कहा कि—हे माता! जो आप मनमें सुख मान लेवोगी तो मुझको उनका कुछ डर नहीं है ॥ ९ ॥

दोहा—देखि बुद्धि बल निपुण कपि, कहेउ जानकी जाहु ॥ ❀
रघुपतिचरण हृदय धरि, तात मधुर फल खाहु ॥ १७ ॥ ❀

तुलसीदासजी कहते है कि—उस हनुमान् विचक्षण वानरका बुद्धिबल देखकर जानकीजीने कहा कि—हे पुत्र! जाओ. रामचन्द्रजीके चरणोंको हृदयमें रखकर मधुर २ फल खावो ॥ १७ ॥

चला नाइ शिर पैठेउ बागा ॥ फल खाये तरु तोरन लागा ॥ १ ॥ ❀

रहे तहाँ बहु भट रखवारे ॥ कछु मारे कछु जाइ पुकारे ॥ २ ॥ ❀

सीताजीके वचन सुनकर उनको प्रणाम करके वह बागके अन्दर घुसा. फल फल तो सब खागया और वृक्षोंको तोड़ मरोड़ दिया ॥ १ ॥ जो वहां बहुतसे रक्षाके लिये सुभट रहते थे, उनमेंसे कितनेएक तो मारेगये और कितनेएक जाकर रावणसे पुकारे ॥ २ ॥

नाथ एक आवा कपि भारी ॥ तेइँ अशोक बाटिका उजारी ॥ ३ ॥ ❀

खायेसि फल अरु बिटप उपारे ॥ जहँ तहँ पटकि पटकि भट मारे ॥ ४ ॥

कि—हे नाथ! एक बड़ा भारी वानर आया है, उसने तमाम अशोकवनका सत्यानाश कर दिया है ॥ ३ ॥ उसने फल तो सारे खा लिये है और वृक्षोंको उपाड़ दिया है और रखवारे राक्षसोंको पटक पटक कर मार गिराया है ॥ ४ ॥

सुनि रावण पठये भट नाना ॥ तिनहिँ देखि गर्जा हनुमाना ॥ ५ ॥ ❀

सब रजनीचर कपि संहारे ॥ गये पुकारत कछु अधमारे ॥ ६ ॥ ❀

यह बात सुनकर रावणने बहुत सुभट पठाये, उनको देखकर युद्धके उत्साहसे हनुमान्‌ने भारी गरजना करी ॥ ५ ॥ हनुमान्‌ने उसी क्षण तमाम राक्षसोंको मार डाला जो कुछ अधमरे रह गये थे वे वहां पुकारतेहुए भागकर गये ॥ ६ ॥

(क्षेपक) तुरत बोलि मंत्रीसुत लीन्हा ॥ लखि किन्नर कहँ आयसु दीन्हा ॥ १ ॥

असी सहस्र सुभट सँग लैकै ॥ आवा निकट दुंदुभी दैकै ॥ २ ॥ ❀

रावणने तुरंत मंत्रीके पुत्र किन्नरको बुलाया और उसे देखकर आज्ञा दी ॥ १ ॥ तब वह अस्सी हजार ८०००० सुभट सँग लेकर धौंसा देकर हनुमान्‌के पास आया ॥ २ ॥

हरषे हरिसुत सैन निहारी ॥ बोले जय रघुनाथ खरारी ॥ ३ ॥ ❋
जय लक्ष्मण सुग्रीव कपीशा ॥ लखि किन्नर मारे शर बीशा ॥ ४ ॥ ❋

हनुमान् सेनाको आती देखकर बहुत प्रसन्न हुआ और बोला कि–खरके बैरी रामचन्द्रजीकी जय हो ॥ ३ ॥ लक्ष्मणकी जय हो और वानरराज सुग्रीवकी जय हो. ये वचन सुन हनुमान्को देखकर किन्नरने बीस २० बाण लगाये ॥ ४ ॥

तब हनुमत हँसि तरु यक लीन्हेउ ॥ तेहिँ यक बिशिख खंड त्रै कीन्हेउ ॥ ५ ॥
कपि योजनकी शिला उपाटी ॥ लक्ष बाण करि किन्नर काटी ॥ ६ ॥ ❋

तब हनुमान्ने हंसकर एक वृक्ष लेकर उस पर चलाया उसने एक बाणसे उस वृक्षके तीन टुकड़े कर डाले ॥ ५ ॥ तब हनुमान्ने एक योजनकी लम्बी बड़ी शिला उठायी उसकोभी उसने लाख बाण मार कर काट गिरायी ॥ ६ ॥

तब बजरंग रोष करि धायो ॥ पटकि पाणि शिर मारि गिरायो ॥ ७ ॥ ❋
पाछे अपर निशाचर मारे ॥ भागि बचे ते जाइ पुकारे ॥ ८ ॥ ❋

तब हनुमान् क्रोध करके ऊपर चला सो उसके शिरपर हाथ पटक उसे मार कर गिरा दिया ॥ ७ ॥ किन्नरको मारकर फिर दूसरे राक्षसोंको मारने लगा, तब जो भागकर बच थे वे रावणके पास जाकर पुकारे ॥ ८ ॥ ॥ इति ॥

पुनि पठवा तेंइ अक्षकुमारा ॥ चला संग लै सुभट अपारा ॥ ७ ॥ ❋
आवत देखि विटप गहि तर्जा ॥ ताहि निपाति महाधुनि गर्जा ॥ ८ ॥ ❋

फिर रावणने मंदोदरीके पुत्र अक्षकुमारको पठाया. वहभी बेसुमार राक्षस जोधाओंको संग लेकर चला ॥ ७ ॥ उसको आते देखतेही हनुमान्ने हाथमें वृक्ष लेकर उसपर प्रहार किया और उसे मारकर फिर बड़े भारी शब्दसे गरजना करी ॥ ८ ॥

दोहा–कछु मारेसि कछु मर्देसि, कछुक मिलायसि धूरि ॥ ❋
कछु पुनि जाइ पुकारेउ, प्रभु मर्कट बलभूरि ॥ १८ ॥ ❋

हनुमान्ने कितने एक राक्षसोंको मारा और कितनेएकको कुचल डाला, और कितनेएकको धूलमें मिला दिया और जो कितनेएक बच गये थे वे जाकर रावणके आगे पुकारे कि–हे नाथ ! बानर बड़ा बलवान् है; उसने अक्षकुमारको मारकर सारे राक्षसोंका संहार कर डाला है ॥ १८ ॥

सुनि सुतबध लंकेश रिसाना ॥ पठवा मेघनाद बलवाना ॥ १ ॥ ❋
मारेसि जनि सुत बांधेसि ताही ॥ देखौं कीश कहांकर आही ॥ २ ॥ ❋

रावण राक्षसोंके मुखसे अपने पुत्रका वध सुनकर बड़ा गुस्से हुआ और महाबली मेघनादको पठाया ॥ १ ॥ और मेघनादसे कहा कि–हे पुत्र ! उसे मारना मत किंतु बांधकर पकड़ ले आना; क्योंकि मैंभी उसे देखूं तो सही कि वह वानर कहांका है ? ॥ २ ॥

चला इन्द्रजित अतुलित योधा ॥ बन्धुवधन सुनि उपजा क्रोधा ॥ ३ ॥ ❋
कपि देखा दारुण भट आवा ॥ कटकटाइ गरजा अरु धावा ॥ ४ ॥ ❋

इन्द्रजित असंख्यात जोधानको संग लेकर रवाने हुआ. वहां भाईके वधके समाचार सुनकर

उसको बड़ा गुस्सा आया ॥ ३ ॥ हनुमान्‌ने उसे देखकर यह कोई दारुण भट आता है, ऐसे जानकर कटकटाके महाघोर गरजना करी और लपका ॥ ४ ॥

अति बिशाल तरु एक उपारा ॥ बिरथ कीन्ह लंकेशकुमारा ॥ ५ ॥ ❋
रहे महाभट ताके संगा ॥ गहि गहि कपि मर्देसि निज अंगा ॥ ६ ॥ ❋

एक बड़ा भारी वृक्ष उपाड़कर उससे मेघनादको बिरथ यानी रथहीन कर दिया ॥ ५ ॥ उसके साथ जो बड़े २ महाबली योधा थे उन सबोंको पकड़ २ कर हनुमान्‌ने अपने अंगोंसे मलि डारे ॥ ६ ॥

तिन्हैं निपाति ताहिसन बाजा ॥ भिरे युगुल मानहुँ गजराजा ॥ ७ ॥ ❋
मुष्टिक मारि चढ़ा तरु जाई ॥ ताहि एक क्षण मूर्छा आई ॥ ८ ॥ ❋
उठि बहोरि कीन्हेसि बहु माया॥ जीति न जाइ प्रभंजन जाया ॥ ९ ॥ ❋

ऐसे उन राक्षसोंको मारकर हनुमान् मेघनादके पास पहुंचा. फिर वे दोनों ऐसे भिरे कि, मानों दो गजराज आपसमें भिड़ रहे है ॥ ७ ॥ हनुमान् मेघनादको एक मुक्की मारकर वृक्षपर जा चढ़ा और मेघनादको उस प्रहारसे एक क्षणभर मूर्छा आगयी यानी वह बेचेत होगया ॥ ८ ॥ फिर इन्द्रजितने सचेत होकर अनेक मायायें फैलायीं, पर हनुमान् किसी कदर जीता नहीं गया ॥ ९ ॥

दोहा-ब्रह्म अस्त्र तेहिँ साधेउ, कपि मन कीन्ह विचार ॥ ❋
जो न ब्रह्मशर मानउँ, महिमा मिटै अपार ॥ १९ ॥ ❋

मेघनाद अनेक अस्त्र चलाकर थक गया, तब उसने ब्रह्मास्त्र चलाया उसे देखकर हनुमान्‌ने मनमें विचार किया कि, अब इससे बंध जानाही ठीक है; क्योंकि जो मैं इस ब्रह्मास्त्रको नहीं मानूंगा तो इसमें इस अस्त्रकी अद्भुत महिमा घट जायगी ॥ १९ ॥

ब्रह्मबाण तेहिँ कपिकहँ मारा ॥ परतिहुँ बार कटक संहारा ॥ १ ॥ ❋
तेहिँ जाना कपि मूर्छित भयऊ ॥ नागफास बांधेसि लै गयऊ ॥ २ ॥ ❋

इंद्रजितने हनुमान्‌पर ब्रह्मास्त्र चलाया उस ब्रह्मास्त्रसे हनुमान् गिरने लगा तो गिरते समयभी उसने अपने शरीरसे कितनीही सेनाका संहार कर डाला ॥ १ ॥ जब इंद्रजितने जान लिया कि, यह अचेत हो गया है, तब वह उसे नागपाशसे बांधकर लंकामें ले गया ॥ २ ॥

जासु नाम जपि सुनहु भवानी ॥ भवबंधन काटहिँ नर ज्ञानी ॥ ३ ॥ ❋
तासु दूत बंधन तर आवा ॥ प्रभुकारज लगि आपु बँधावा ॥ ४ ॥ ❋

महादेवजी कहते हैं कि-हे पार्वती ! सुनो, जिनके नामका जप करनेसे ज्ञानीलोग भवबंधनको काट देते हैं ॥ ३ ॥ उन प्रभुनका दूत [हनुमान्] भला बंधनमें कैसे आ सकता है ? परंतु अपने प्रभुके कार्यकेलिये उसने अपनेको बंधा दिया ॥ ४ ॥

कपि बंधन सुनि निशिचर धाये ॥ कौतुक लागि सभा लै आये ॥ ५ ॥ ❋
दशमुख सभा दीख कपि जाई ॥ कहि न जाय कछु अति प्रभुताई ॥ ६ ॥

हनुमान्‌को बंधाहुआ सुनकर सब राक्षस देखनेको दौड़े और कौतुकके लिये उसे सभामें ले आये ॥ ५ ॥ हनुमान्‌ने जाकर रावणकी सभा देखी तो उसकी प्रभुता किसी कदर कही जाय ऐसी नहीं थी ॥ ६ ॥

कर जोरे सुरदिशिप बिनीता ॥ भृकुटि बिलोकहिं सकल सभीता ॥ ७ ॥ ❀
देखि प्रताप न कपि मन शंका ॥ जिमि अहिगणमहँ गरुड़ अशंका ॥ ८ ॥

कारण यह कि–दिशाओंके स्वामी तमाम इन्द्रादि देवता बड़े विनयके साथ हाथ जोड़े सामने खड़े२ उसको भ्रुकुटीकी ओर भय सहित देख रहे है ॥ ७ ॥ यद्यपि हनुमान्‌ने उसका ऐसा प्रताप देखा परंतु उसके मनमें बिलकुल शंका (डर) नहीं थी. हनुमान् उस सभामें राक्षसोंके बीच कैसे निडर खड़ा था कि, जैसे गरुड़ सर्पोंके बीच निडर रहा करता है ॥ ८ ॥

दोहा–कपिहिँ बिलोकि दशानन, बिहँसि कहेसि दुर्बाद ॥ ❀
सुतबध सुरति कीन्ह पुनि, उपजा हृदय बिषाद ॥ २० ॥ ❀

रावण हनुमान्‌की ओर देखकर हँसा और कुछ दुर्वचनभी कहे; परंतु फिर पुत्रका मरण याद आजानेसे उसके हृदयमें बड़ा संताप पैदा हुआ ॥ २० ॥

कह लंकेश कवन तैं कीशा ॥ केहिके बल घालेसि बन खीशा ॥ १ ॥ ❀
कीधौं श्रवण सुनेसि नहिँ मोहीं ॥ देखौं अति अशंक शठ तोहीं ॥ २ ॥

रावणने हनुमान्‌से कहा कि–हे वानर ! तू कहांसे आया है ? और तूने किसके बलसे मेरे वनका विध्वंस कर दिया है ? ॥ १ ॥ हे शठ ! मैं तुझको बिलकुल निडर हो ऐसे देखता हूं सो क्या तूने मेरा नाम अपने कानोंसे नहीं सुना दीखे है ? ॥ २ ॥

मारेसि निशिचर केहि अपराधा ॥ कहु शठ तोहिँ न प्राणकी बाधा ॥ ३ ॥
सुनु रावण ब्रह्माण्डनिकाया ॥ पाइ जासु बल बिरचति माया ॥ ४ ॥ ❀

हे शठ ! तुझको हम जीते नहीं मारेंगे परंतु सच कह दे कि, तूने हमारे राक्षसोंको किस अपराधके लिये मारा है ? ॥ ३ ॥ रावणके ये वचन सुनकर हनुमान्‌ने रावणसे कहा कि–हे रावण ! सुन, यह माया (प्रकृति) जिस परमात्माके बल (चैतन्यशक्ति) को पाकर अनेक ब्रह्मांडसमूह रचती है ॥ ४ ॥

जाके बल बिरंचि हरि ईशा ॥ पालत हरत सृजत दशशीशा ॥ ५ ॥ ❀
जा बल शीश धरे सहसानन ॥ अंडकोश समेत गिरि कानन ॥ ६ ॥ ❀

हे रावण ! जिसके बलसे ब्रह्मा विष्णु महेश ये तीनों देव जगत्‌को रचते हैं पालते हैं और संहार करते हैं ॥ ५ ॥ और जिनकी सामर्थ्यसे शेषजी अपने शिरसे वन और पर्वतोंसहित इस सारे ब्रह्मांडको धारण करते हैं ॥ ६ ॥

धरे जो बिबिध देहँ सुरत्राता ॥ तुमसे शठन सिखावन दाता ॥ ७ ॥ ❀
हरकोदण्ड कठिन जेइ भंजा ॥ तोहिँ समेत नृपदलमदगंजा ॥ ८ ॥ ❀
खर दूषण बिराध अरु बाली ॥ बधे सकल अतुलित बलशाली ॥ ९ ॥ ❀

और जो देवताओंके रक्षाके लिये और तुम्हारे जैसे दुष्टोंको दंड देनेके लिये अनेक शरीर (अवतार) धारण करते हैं ॥ ७ ॥ जिसने महादेवजीके अति कठिन धनुषको तोड़कर तेरे साथ तमाम राजसमूहके मदको गंजन किया है ॥ ८ ॥ और जिसने खर दूषण, विराध और बालि जैसे बड़े अप्रबल बलवाले जोधाओंको मारा है ॥ ९ ॥

दोहा–जाके बल लव लेशते, जितेउ चराचर झारि ॥ ❋
तासु दूत हौं जाहिकी, हरि आनेहु प्रिय नारि ॥ २१ ॥ ❋

और हे रावण ! सुन, जिसके बलके लवलेश यानी किंचिन्मात्र अंशसे तूने ढूंढ़ २ कर तमाम चराचर जगत्को जीता है, उस परमात्माका मैं दूत हूं, कि जिसकी प्यारी नारी [सीता] को तू हरि ले आया है ॥ २१ ॥

जानौं मैं तुम्हारि प्रभुताई ॥ सहसबाहु सन परी लड़ाई ॥ १ ॥ ❋
समर बालिसन करि यश पावा ॥ सुनि कपि बचन बिहँसि बहलावा॥२॥

हे रावण ! आपकी प्रभुता तो मैंने तभीसे जानली है कि, जब आपको सहस्रार्जुनके साथ युद्ध करनेका काम पड़ा था ॥ १ ॥ और मुझको वो बातभी याद है कि,आप बालिसे लड़कर जो जस पाये थे. हनुमानके ये वचन सुनकर उसने हंसीमेंही उड़ा दिये ॥ २ ॥

खायउँ फल मोहिँ लागी भूखा ॥ कपिस्वभावते तोरेउँ रूखा ॥ ३ ॥ ❋
सबके देह परम प्रिय स्वामी ॥ मारहिँ मोहिँ कुमारगगामी ॥ ४ ॥ ❋

तब फिर हनुमानने कहा कि–हे रावण ! मुझको भूक लगगयीथी इसवास्ते तो मैंने आपके बागके फल खाये है और जो वृक्षोंको तोड़ा है सो तो केवल मैंने मेरे वानरसुभावकी चपलतासे तोड़ डारे है ॥ ३ ॥ और जो मैंने आपके राक्षसोंको मारा उसका कारण तो यह है कि, हे स्वामि रावण ! यह अपना देह सबको बहुत प्यारा लगता है, सो ये खोटे रास्ते चलनेवाले राक्षस मुझको मारने लगे ॥ ४ ॥

जिन्ह मोहिँ मारा तेहिँ मैं मारा ॥ तेहिपर बांधेउ तनय तुम्हारा ॥ ५ ॥❋
मोहिँ न कछु बाँधे कर लाजा ॥ कीन्ह चहौं निजप्रभुकर काजा ॥ ६॥❋

तब मैंने अपने प्यारे शरीरकी रक्षा करनेके वास्ते जिन्होने मुझको मारा था उनको मैंने पीछा मारा. इसपर आपके पुत्र (इन्द्रजित) ने मुझको बांध लिया है ॥ ५ ॥ हनुमान् कहता है कि–मुझको बंध जानेसे कुछभी शर्म नहीं आती; क्योंकि मैं अपने स्वामीका कार्य करना चाहता हूं ॥ ६ ॥

बिनती करौं जोरि कर रावण ॥ सुनहु मान तजि मोर सिखावन ॥ ७ ॥❋
देखहु तुम निज हृदय बिचारी ॥ भ्रम तजि भजहु भक्तभयहारी ॥ ८ ॥❋

हे रावण ! मैं हाथ जोड़कर आपसे प्रार्थना करता हूं सो अभिमान छोड़कर मेरी शिक्षा सुनो ॥७॥ और अपने मनमें विचार करके तुम अपने आप खूब अच्छीतरह देख लो और सोचनेके बाद भ्रम छोड़कर भक्तजनोंके भय मिटानेवाले प्रभुकी सेवा करो ॥ ८ ॥

जाके डर अति काल डराई ॥ जो सुर असुर चराचर खाई ॥ ९ ॥ ❋
तासों वैर कबहुँ नहिँ कीजै ॥ मोरे कहे जानकी दीजै ॥ १० ॥ ❋

हे रावण ! काल कि जो देवता, दैत्य और सारे चराचरको खा जाता है, वहभी जिसके सामने अत्यंत भयभीत रहता है ॥ ९ ॥ उस परमात्मासे कभी वैर नहीं करना चाहिये. इसवास्ते जो तू मेरा कहना माने तो यह सीता रामचन्द्रजीको दे दे ॥ १० ॥

दोहा-प्रणतपाल रघुबंशमणि, करुणासिन्धु खरारि ॥
गये शरण प्रभु राखिहैं, तव अपराध बिसारि ॥ २२ ॥

हे रावण ! खरके मारनेवाले रघुवंशमणि रामचन्द्रजी भक्तपालक और करुणाके सागर है, इसवास्ते यदि तू उनके शरण चला जायगा तौ वे प्रभु तेरे अपराधको माफ करके तेरी रक्षा करेंगे ॥ २२ ॥

रामचरणपंकज उर धरहू ॥ लंका अचल राज तुम करहू ॥ १ ॥
ऋषि पुलस्त्य यश बिमल मयंका ॥ तेहि कुलमहँ जनि होसि कलंका ॥२॥

इसवास्ते तू रामचन्द्रजीके चरणकमलोंको हृदयमें धारण कर और उनकी कृपासे लंकामें अविचल राज कर ॥ १ ॥ महामुनि पुलस्त्यजीका यश निर्मल चंद्रमाके समान परम उज्ज्वल है; इसवास्ते तू उस कुलके बीचमें कलंकके समान मत हो ॥ २ ॥

रामनाम बिनु गिरा न सोहा ॥ देखु बिचारि त्यागि मद मोहा ॥ ३ ॥
बसनहीन नहिँ सोह सुरारी ॥ सब भूषण भूषित बर नारी ॥ ४ ॥

हे रावण ! तू अपने मनमें विचार करके मद और मोहको त्यागकर अच्छी तरह जांच ले कि, रामके नाम विना वाणी कभी शोभा नहीं देती ॥ ३ ॥ हे रावण ! चाहो स्त्री सब अलंकारोंसे अलंकृत और सुन्दर क्यों न होवे परंतु वस्त्रके विना वह कभी शोभायमान नहीं होवेगी. ऐसेही रामनाम विना वाणी शोभायमान नहीं होती ॥ ४ ॥

रामबिमुख सम्पति प्रभुताई ॥ गई रही पाई बिनुपाई ॥ ५ ॥
सजल मूल जेहिँ सरिता नाहीं ॥ बरषि गये पुनि तबहिं सुखाहीं ॥ ६ ॥

हे रावण ! जो पुरुष रामचन्द्रजीसे विमुख है, उसकी संपदा और प्रभुता पानेपरभी न पानेके बराबर है; क्योंकि वह स्थिर नहीं रहती. किंतु तुर्त चली जाती है ॥ ५ ॥ देखो, जहां सजल सोतेवाली नदी नहीं है, वहां बरसा हो चुकनेके बाद फिर सब जल सूखही जाता है. कहीं नहीं रहती ॥ ६ ॥

सुनु दशकण्ठ कहौं प्रण रोपी ॥ रामबिमुख त्राता नहिँ कोपी ॥ ७ ॥
शंकर सहस विष्णु अज तोहीं ॥ सकहिँ न राखि रामकर द्रोही ॥ ८ ॥

हे रावण ! सुन, मैं प्रतिज्ञा कर कहताहूं कि-रामचन्द्रसे विमुख पुरुषका रखवारा कोईभी नहीं है ॥ ७ ॥ हे रामचन्द्रजीसे द्रोह करनेवाले तुझको यकायक ब्रह्मा, विष्णु और महादेवभी बचा नहीं सकते ॥ ८ ॥

दोहा-मोहमूल बहु शूलप्रद, त्यागहु मति अभिमान ॥
भजहु राम रघुनायकहिँ, कृपासिंधु भगवान ॥ २३ ॥

हे रावण ! मोहकी मूल कारण और अत्यंत दुख देनेवाली अभिमानकी बुद्धिको छोड़कर कृपाके सागर भगवान् श्रीरघुकुलनायक रामचन्द्रजीकी सेवा कर ॥ २३ ॥

यद्यपि कहि कपि अति हित बानी ॥ भक्ति बिबेक धर्ममय सानी ॥ १ ॥
बोला बिहँसि अधम अभिमानी ॥ मिला हमहिँ कपि गुरु बड़ ज्ञानी ॥२॥

यद्यपि हनुमान्‌ने रावणको अति हितकारी और भक्ति ज्ञान व धर्मामृतसे भरी वानी कही; परंतु उस अभिमानी अधमको उसका कुछभी असर नहीं हुआ ॥ १ ॥ इससे हँसकर बोला कि—हे वानर! आज तौ हमको तू बड़ा ज्ञानी गुरु मिला ॥ २ ॥

मृत्यु निकट आई खल तोहीं ॥ लागेसि अधम सिखावन मोहीं ॥ ३ ॥ ❋
उलटा होइ कहा हनुमाना ॥ मतिभ्रम तोरि प्रगट मैं जाना ॥ ४ ॥ ❋

हे नीच! तू मुझको शिक्षा देने लगा है, सो हे दुष्ट! कहीं तेरी मौत तौ निकट नहीं आगयी है? ॥ ३ ॥ रावणके ये वचन सुन पीछा फिरकर हनुमान्‌ने कहा कि—हे रावण! अब मैंने तेरा बुद्धिभ्रम स्पष्ट रीतिसे जान लिया है ॥ ४ ॥

सुनि कपिबचन बहुत रिसिआना ॥ बेगि हरहु मूढ़कर प्राना ॥ ५ ॥ ❋
सुनत निशाचर मारण धाये ॥ सचिवन सहित बिभीषण आये ॥ ६ ॥ ❋

हनुमान्‌के वचन सुनकर रावणको बड़ा क्रोध आया, जिससे रावणने राक्षसोंको कहा कि—हे राक्षसो! इस मूर्खके प्राण जल्दी लेलो यानी इसे तुरंत मार डालो ॥ ५ ॥ इसप्रकार रावणके वचन सुनतेही राक्षस मारनेको दौड़े तबहीं अपने मंत्रियोंके साथ बिभीषण वहां आया ॥ ६ ॥

नाइ शीश करि बिनय बहूता ॥ नीति बिरोध न मारिय दूता ॥ ७ ॥ ❋
आन दण्ड कछु करिय गुसांई ॥ सबही कहा मंत्र भल भाई ॥ ८ ॥ ❋
सुनत बिहँसि बोला दशकंधर ॥ अंग भंग करि पठवहु बन्दर ॥ ९ ॥ ❋

बड़े विनयके साथ रावणको प्रणाम करके बिभीषणने कहा कि—यह दूत (वकील) है; इसवास्ते इसे मारना न चाहिये; क्योंकि यह बात नीतिसे विरुद्ध है ॥ ७ ॥ हे स्वामी! इसे आप और हरएक दंड देदीजिये पर मारें मत. बिभीषणकी यह बात सुनकर सब राक्षसोंने कहा कि—हे भाइयो! यह सलाह तौ बहुत अच्छी है॥८॥ रावण इस बातको सुनकर बोला कि—जो इसको मारना ठीक नहीं तो इस बंदरका कोई अंग भंग करके इसे भेजदो ॥ ९ ॥

दोहा—कपिकर ममता पूंछपर, सबहिं कहा समुझाइ ॥ ❋
तेल बोरि पट बाँधि पुनि, पावक देहु लगाइ ॥ २४ ॥ ❋

सब लोगोंने समझाकर रावणसे कहा कि—वानरका ममत्व पुच्छपर बहुत होता है, इसवास्ते इसकी पूछको तेलसे भिगे हुए गदमूदड़ लपेटकर आग लगा दो ॥ २४ ॥

पुच्छहीन बन्दर जब जाइहि ॥ तब शठ निज नाथहिं लै आइहि ॥ १ ॥ ❋
जिनकी कीन्हेसि अमित बड़ाई ॥ देखौं धौं तिन्हकी प्रभुताई ॥ २ ॥ ❋

जब यह शठ पूंछहीन होकर अपने मालिकके पास जायगा, तब अपने स्वामीको यहां ले आवेगा ॥ १ ॥ इस वानरने जिसकी अतुलित बड़ाई की है भला उसकी प्रभुताको मैं देखूं तौ सही कि वह कैसा है ॥ २ ॥

बचन सुनत कपि मन मुसुकाना ॥ भइ सहाय शारद मैं जाना ॥ ३ ॥ ❋
यातुधान सुनि रावणबचना ॥ लागे रचन मूढ सोइ रचना ॥ ४ ॥ ❋

रावणके ये वचन सुनकर हनुमान् मनमें मुसुकाया और मनमें सोचने लगा कि–मैंने जान लिया है कि इससमय सरस्वती सहाय हुई है; क्योंकि इसके मुंहसे रामचन्द्रजीके समाचार स्वयं निकस गये ॥ ३ ॥ तुलसीदासजी कहते है कि–वे मूर्ख राक्षसलोक रावणके वचन सुनकर वोही रचना करने लगे यानी तेलसे भिगो भिगोकर उसकी पूंछके गड़गूदड़ कपड़े लपेटने लगे ॥ ४ ॥

रहा न नगर बसन घृत तेला ॥ बाढ़ी पूछ कीन्ह कपि खेला ॥ ५ ॥ ❋
कौतुक कहँ आये पुरवासी ॥ मारहिँ चरण करहिँ बहु हाँसी ॥ ६ ॥ ❋

उस समय हनुमानने ऐसा तमाशा किया कि, अपनी पूंछ उतनी लंबी बढ़ा दी जिसको लपेटनेके वास्ते नगरीमें कपड़ा, घी व तेल कुछभी बाकी न रहा ॥ ५ ॥ नगरके जो लोग तमाशा देखनेको वहां आये थे, वे सब लातें मार मारकर खूब हंसते थे ॥ ६ ॥

बाजहिँ ढोल देहिँ सब तारी ॥ नगर फेरि पुनि पूंछ प्रजारी ॥ ७ ॥ ❋
पावक जरत दीख हनुमंता ॥ भयउ परम लघुरूप तुरंता ॥ ८ ॥ ❋
निबुकि चढ़ेउ पुनि कनक अटारी ॥ भई सभीत निशाचरनारी ॥ ९ ॥ ❋

अनेक ढोल बाज रहेहैं. सब लोग ताली दे रहे है. इसतरह हनुमानको नगरीमे सर्वत्र फिराकर फिर उसकी पूंछको आग लगा दी ॥ ७ ॥ हनुमानने जब पूंछमें आग जलती देखी तब उसने तुरंत पीछा बहुत छोटा स्वरूप धारण कर लिया ॥ ८ ॥ और फलांग मारकर फिर पीछा सुवर्णकी अटारियोंपर चढ़ गया जिसको देखतेही तमाम राक्षसोंकी स्त्रियां भयभीत हो गयीं ॥ ९ ॥

दोहा–हरिप्रेरित तेहिँ अवँसर, बही पवन उञ्चाश ॥ ❋
अट्टहास करि गर्जही, कपि बढ़ि लाग अकाश ॥ २५ ॥ ❋

उस समय भगवानकी प्रेरणासे उनचासही पवन बहने लगीं और हनुमानने अपना स्वरूप ऐसा बढ़ाया कि, वह आकाशमें जा लगा. फिर अट्टहास करके बड़े जोरसे गरजा ॥ २५ ॥

(क्षेपक)

छंद–चल्यो फलांगि धाम लूम लामको उठायऊ ॥ ❋
मनो अकाशतें नदी कृशानुकी बहायऊ ॥ ❋
किलंक लील नेक काल जौहसी पसारेहू ॥ ❋
किधौं अनीक अयफशूर सयफसी निकारेहू ॥ १ ॥ ❋

हनुमान जलते हुए लूमलाम यानी पूंछके बंधे हुए गड़गूदड़को उठाकर कूदकर घरके ऊपर चढ़ा. उसवक्त ऐसा मालूम होता था कि मानों वह आकाशसे अग्निकी नदी बहा रही है. और वहां वह अग्निभी ऐसा दिखाई देता था कि मानों लंकाको निगल जानेके लिये कालनेही तो कौतुकसे कुछ थोडीसी अपनी जीभ नहीं फैलायी है ? मानों कोई वानैत बाना, पटा, बनैटीके हाथहीसे निकाल रहा है ॥ १ ॥

लंकादहन।

किधौं सुरेश चापकी कलाप दामिनी महैं॥ बिलोकि यातुधान ते परात भे जहैं तहैं ॥ फिराय लाय २ अयन मयनसे लगे बरै॥ गयंद छोरि बाजि छोरि ऊंट छोरिये खरै ॥ २ ॥

या इंद्रधनुषके मंडलके बीचमें दामिन तौ नहीं दमक रही है ? उस अग्निको देखकर राक्षस लोक जहां तहां भागने लगे. हनुमान् जलती हुई अपनी पूंछको इधर उधर फिराकर कामदेवके जैसे राक्षसोंके घरोंको जलाने लगा, उसवक्त गजराज सांकलें तुड़ातुड़ाकर भागने लगे. घोड़े ऊंट और गधे सब बंधन तुड़ातुड़ाकर भागने लगे ॥ २ ॥

अनेक बाल बालकी सुतात मात बोलहीं ॥ बचाय लीजिये हमै समय समान डोलहीं ॥ अनेक नारि मारि रिंभ डिंभ काढ़ि लावहीं॥ अनेक डारि डारि बस्तु बारि लेन धावहीं ॥ ३ ॥

कई बच्ची बच्चे तौ "हे तात ! हे माता !" इसतरह पुकार रहे हैं 'कि हमको बचालो' और कितनेएक उस समयके अनुसार इधर उधर डोल रहे है और कितनीएक स्त्रियां पुकार पुकारकर बच्चोंको काढ़कर लाती है और कितनीएक चीजें डाल डालकर जल लानेको दौड़ रहीं हैं ॥ ३ ॥

अनेक कंत बीरते पुकारि बैन यों कहैं ॥ ❋
उठाय लेहु लाल माल जालदे परोतहैं ॥ ❋
बिलोकि देव यों कहैं कपीश यज्ञसी ठनी ॥ ❋
सुरारि सोऽज लंककुंड हाँक स्वाहसी भनी ॥ ४ ॥ ❋

कितनीएक स्त्रियां अपने शूरवीर पतियोंको पुकारकर वचन कहता हैं कि जो माल पड़ा है इसे भले जलने दो पर लाल (बच्चे) को उठा लो. देवता लोग लंकाको जलती देखकर इस तरह कहते हैं कि हनुमान्ने तौ यह यज्ञकासा काम करना प्रारंभ कर दिया है; क्योंकि इसमें जो राक्षस हैं वे तो अज (बकरे) हैं. लंका कुंड है और हनुमानकी हांक स्वाहाके समान सुन पड़ती है ॥ ४ ॥

किधौं बिराटके सुरारि राजयोग जानिजू ॥ ❋
निमित्त तासु वेद ज्यों रभृङ्गकानि ठानिजू ॥ ❋

मथंति मंदराजका मनोज फागु खेलई ॥
बिराग धृत्य बोधको बिमोहबंधु ठेलई ॥ ५ ॥

या अग्नि क्या लहकी है ? मानों राक्षसरूपी विराटशरीरके राजयोग यानी क्षयरोग होगया है और अग्निको शान्त करनेके लिये जो जलपात्र खाली किये जाते है सो मानों वेद यानी वैद्यसे दृष्टि आते हैं. हनुमान् राक्षसोंका मथन करता ऐसा दीख पड़ता है कि मानों मंदराचल समुद्रका मथन कर रहा है. या कामदेव फाग खेल रहा है. या विमोहका बन्धु (लोभ) वैराग्य, धीरज और ज्ञानको ठेल रहा है ॥ ५ ॥

गिरैं कंगूर दूरतैं तबै कहै मँदोदरी ॥
बिहाय लोकलाज कानि भागती न क्यों अरी ॥
अरे अकंपनातिकाय कंटकी महोदरं ॥
लेवाइ लेउ अद्धगाति पूत नाति सोदरं ॥ ६ ॥

जब दूरसे कोटके कांगरे गिरने लगे तब मंदोदरीने कहा कि—अरी ! तुम लोकलाज और कानिको छोड़कर भागती क्यों नहीं हो ? मंदोदरी कहती है कि—अरे अकंपन ! हे अतिकाय ! हे कंटकी ! हे महोदर ! इन अध जले बेटे नाति और भाइयोंको क्यों नहीं लेलेते हो ? इनको भीतर लिवालो ॥ ६ ॥

अनेक बार मैं कही बुझायहू बिभीषणं ॥
न मानि दाढ़िजारने कुठार बंश तीक्षणं ॥
निकेत द्वार अट्ट उच्च हाट बाट मैं जहां ॥
लुकात जाय नीर कीश तीर देखिये तहां ॥ ७ ॥

कई बेर मैंने समझाकर कहा था, और बिभीषणनेभी कहा था परंतु कुलका संहार करनेके लिये तीक्ष्ण कुठाररूप इस दाढ़िजारने किसीका कहना नहीं माना. मैं जहां, घर, बार, ऊंची अटारी, हाट बाट और जलकी तीरपै जाकर छिपती हूं वहीं बन्दर दिखाई देता है ॥ ७ ॥

घने स्वबक्षजातके निशात स्वस्ति पावहीं ॥
बोलाय शेष राघवेश जानकी कहावहीं ॥
बधू जु कुम्भकर्णकी पसारि पाणि भाखिये ॥
दोहाइ रामचन्द केरि मोर कंत राखिये ॥ ८ ॥

अब तो ये मेरे पुत्र राक्षस राम, लक्ष्मण और सीताको बुलाकर कहैं अर्थात् उनका शरण लें तो कल्याणको पावें अर्थात् इनका भला होवे, नहीं तो नहीं. उस समय कुंभकर्णकी स्त्रीने बाह पसारके यह कहा कि— तुझे रामचन्द्रजीकी शपथ है मेरे पतिकी सर्वथा रक्षा करना ॥ ८ ॥

अनेक धाय धाय जाय रावणैं सुनायहू ॥
बिचारि बीर मेघनादसे बली पठायहू ॥

अनेक शस्त्र शस्त्र लाय आय मारने लगे ॥ ❀
घुमाय दीन बालधी पुकारि क्रूरसे भगे ॥ ९ ॥ ❀

कई राक्षस दौड़ दौड़कर रावणके पास जाकर ये समाचार सुनाते है कि—हे रावण ! अब आप विचार करके मेघनादके जैसे महाबली वीर राक्षसोंको भेजो. रावणकी आज्ञासे असंख्यात राक्षस शस्त्र अस्त्र बांधकर हनुमानके पास आकर मारने लगे. उसवक्त हनुमानने अपनी पूछ घुमा दी जिससे पुकार २ कर बहुत क्रूर राक्षस भागगये ॥ ९ ॥

सुमंत्र जाय यों कही बड़ो बलाय कीश है ॥ ❀
निशंक बंकहू बड़ो सुनो न ऐस दीश है ॥ ❀
बिशाल ज्वाल जानि कोपि मेघ बोलि यों कही ॥ ❀
बुताइ देहु आगिरे बहाइ जन्तु को सही ॥ १० ॥ ❀

फिर सुमंत्र नाम राक्षसने जाकर रावणसे यों कही कि, यह वानर बड़ा बलाय है, यह तौ ऐसा बड़ा बंका और बेधड़क है कि हमने तो आजतक ऐसा वानर न तौ सुना है और न देखा है. रावणने ज्वालाको बहुत बड़ी जानकर कोपके साथ मेघको बुलवाकर ऐसे कहा कि—हे मेघो ! तुम इस आगको तौ बुता दो और इस जन्तुको बहा दो ॥ १० ॥

भले सुनाय मेघ आय पुंज पाथ छांड़िऊ ॥ ❀
यथा सनेह पाय चौगुनी कृशानु बाढ़िऊ ॥ ❀
लगी जु अंग बाण प्राण लै भगे सबै ॥ ❀
निहारि रीति माल्यवान स्यान बोलियो तबै ॥ ११ ॥ ❀

मेघोने 'रावणकी जो आज्ञा' ऐसे वचन सुनाकर हनुमानके पास आकर जलसमूह बरसना शुरू किया, तौ उस जलसे वह अग्नि तेलको पाकर जैसे बढ़ता है ऐसे चौगुना बढ़ गया. और वह बरसा सब राक्षसोंके अंग अंगमें ऐसी लगी मानों बाण, जिससे राक्षस प्राण ले लेकर भाग निकले. इस दशाको देखकर बुद्धिमान् माल्यवान् नाम राक्षसने कहा ॥ ११ ॥

न आहि याहि अग्नि आहि ईशकी सुबामता ॥ ❀
समीर सीयश्वासकी जु रामरोष मामता ॥ ❀
बिड़ौज ब्रह्म विष्णु रुद्र आदि देव जौन हैं ॥ ❀
डेरात मोहिँ सर्व बंग ईश और कौन हैं ॥ १२ ॥ ❀

कि यह अग्नि नहीं है किंतु यह तौ परमेश्वरका प्रतिकूलपन है. अथवा मेरी तौ बुद्धिमें यह आता है कि यह जो आग लहक रहीहै सो आग नहीं है; किंतु सीताके श्वासकी बयार है. अथवा रामचन्द्रजीका मूर्तिमान् रोष (क्रोध) है. माल्यवानके ये वचन सुनकर रावणने कहा कि— हे माल्यवान् ! इन्द्र, ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र आदि जो देवता हैं, वे सब मुझसे सर्व प्रकारसे डरते हैं. फिर इनके शिवाय दूसरा परमेश्वर कौन है ? ॥ १२ ॥

बुलाय कालते कह्यो लँगूर लाउ मारिकै ॥ ❀
बटोरि भूत प्रेत यक्ष दण्ड चण्ड धारिकै ॥ ❀

बिलोकि बातजात घात कीनि सयन तासुको ॥
उठाय गालमें धर्‌यो पर्‌यो खँभार जासुको ॥ १३ ॥

रावणने ऐसे कहकर कालको बुलाकर कालसे कहा कि– हे काल ! तू जा, लँगूरको मारकर लेआ. रावणकी आज्ञा पाकर काल, भूत, प्रेत और यक्षोंको इकठा कर प्रचंड दंड हाथमें ले हनुमानके निकट गया, वहां हनुमानको देखकर उसने प्रहार किया; परंतु हनुमानने उसको उठाकर अपने गालके बीचमें रख लिया. जिससे उसको महादुःख हुआ ॥ १३ ॥

समेत शंभु भास रामदास पास आयहू ॥
सभीत पंकजासनादि बीनती सुनायहू ॥ १४ ॥

यमराजको गालके अंदर बंधे पड़े देखकर महादेवजी और सूर्यनारायणके साथ ब्रह्माजी वगैरः सब देवता रामचन्द्रजीके दासानुदास श्रीहनुमानके पास आये और उन्होने भयसहित हनुमानसे विनती करी ॥ १४ ॥

दोहा–देहु छांडि यमराज कहँ, यह विनती यक मोरि ॥
परवश आयो लरन सुनि, दीन गालते छोरि ॥ २ ॥

कि–हे हनुमान ! यमराजको छोड़ दो, हमारी यही आपसे विनती है और जो यह लड़नेको आया सो तौ बिचारा परवश था, इसवास्ते लड़नेको चला आया, अब आप इसको छोड़ दीजिये. ब्रह्मादिकोंकी यह विनती सुनकर हनुमानने उसे गालमेसे छोंड़ दिया ॥ १ ॥ ॥इति॥

देह बिशाल परम हरुआई ॥ मन्दिरते मन्दिर चढ़ि जाई ॥ १ ॥
जरा नगर भे लोग बिहाला ॥ लपट झपट बहु कोट कराला ॥ २ ॥

यदपि हनुमानका शिर बड़ा था, परंतु शरीरमें बड़ी फुरती थी जिससे वह एक घरसे दूसरे घरपर चढ़ा चला जाता था ॥ १ ॥ जिससे तमाम नगर जल गया. लोक सब बेहाल हो गये और लपट झपट कर बहुतसे विकराल कोटपर चढ़ गये ॥ २ ॥

तात मातु सब करहिँ पुकारा ॥ यहि अँवसर को हमहिँ उबारा ॥ ३ ॥
हम जो कहा यह कपि नहिँ होई ॥ बानररूप धरे सुर कोई ॥ ४ ॥

और सबलोग पुकारने लगे कि– हे तात ! हे माता ! अब इस समयमें हमें कौन बचावेगा ? ॥ ३ ॥ हमने जो कहा था कि, यह वानर नहीं है तो कोई देवता वानरका रूप धरकर आया है. सो देख लीजिये यह बात ऐसीही है ॥ ४ ॥

साधु अवज्ञा कर फल ऐसा ॥ जरै नगर अनाथ कर जैसा ॥ ५ ॥
जारा नगर निमिष यक माहीं ॥ एक बिभीषणको गृह नाहीं ॥ ६ ॥

और यह नगर जो अनाथके नगरके समान जला है, तो साधुपुरुषोंका अपमान करनेका फल ऐसाही हुआ करता है ॥ ५ ॥ गुसाँईजी कहते हैं कि– हनुमानने एक क्षणभरमें तमाम नगरको जला दिया, केवल एक बिभीषणके घरको नहीं जलाया ॥ ६ ॥

जाकर भक्त अनल जेइ सिरजा ॥ जरा न सो तेहि कारण गिरिजा ॥ ७ ॥
उलटि पलटि लंका कपि जारी ॥ कूदि परा तब सिंधु मझारी ॥ ८ ॥

महादेवजी कहते हैं कि– हे पार्वती ! जिसने इस अग्निको पैदा किया है, उस परमेश्वरका बिभीषण भक्त था, इसप्रकारसे उसका घर नहीं जला ॥ ७ ॥ हनुमान् उलट पलटकर तमाम लंकाको जलाकर फिर समुद्रके अंदर पड़ा ॥ ८ ॥

दोहा–पूंछ बुझाइ खोय श्रम, धरि लघुरूप बहोरि ॥ ❋
जनकसुताके आगे, ठाढ़ भयउ कर जोरि ॥ २६ ॥ ❋

अपनी पूंछको बुझाय, श्रमको मिटाकर, फिर पीछे छोटा स्वरूप धारण करके हनुमान्‌जी हाथ जोड़कर सीताजीके आगे आ खड़े हुए ॥ २६ ॥

मातु मोहिँ दीजै कछु चीन्हा ॥ जैसे रघुनायक मोहिँ दीन्हा ॥ १ ॥ ❋
चूड़ामणि उतारि तब दीन्हा ॥ हर्ष समेत पवन सुत लीन्हा ॥ २ ॥ ❋

और बोला कि–हे माता ! जैसे रामचन्द्रजीने मुझको पहिंचानकेवास्ते मुद्रिकाका निशान दिया था· वैसे तूभी मुझको कुछ चिन्ह दे ॥ १ ॥ तब सीताने अपने सिरसे उतार कर चूड़ामणि दिया. हनुमान्‌ने बड़े आनंदके साथ वह ले लिया ॥ २ ॥

कहेहु तात अस मोर प्रणामा ॥ सब प्रकार प्रभु पूरणकामा ॥ ३ ॥ ❋
दीनदयाल बिरद सम्भारी ॥ हरहु नाथ मम संकट भारी ॥ ४ ॥ ❋

सीताजीने हनुमान्‌से कहा कि–हे पुत्र ! मेरे प्रणाम कहकर प्रभुसे ऐसे कहियो कि–हे प्रभु ! यदपि आप सर्व प्रकारसे पूर्णकाम हो ॥ ३ ॥ तथापि हे नाथ ! आप दीनदयालु हो, इसलिये अपने बिरदको संभालकर मेरे इस महा संकटको दूर करो ॥ ४ ॥

तात शक्रसुत कथा सुनायहु ॥ बाण प्रताप प्रभुहिँ समुझायहु ॥ ५ ॥ ❋
मास दिवसमहँ नाथ न आवहिँ ॥ तौ पुनि मोहिँ जियत नहिँ पावहिँ ॥६॥

हे पुत्र ! फिर इन्द्रके पुत्र जयंतकी कथा सुनाकर प्रभुको बाणोंका प्रताप समझाकर याद दिलाइयो ॥ ५ ॥ और कह दीजियो कि, हे नाथ ! जो आप एक महीनेके अन्दर नहीं पधारोगे तौ फिर आप मुझको जीती नहीं पावोगे ॥ ६ ॥

कहु कपि केहि विधि राखौं प्राना ॥ तुमहूं तात कहत अब जाना ॥ ७ ॥
तुमहिँ देखि शीतल भइ छाती ॥ पुनि मोकहँ सोइ दिन सोइ राती ॥ ८ ॥

हे तात ! कह, अब मैं मेरे प्राणोंको किस प्रकार रक्खूं ? क्योंकि तूभी अब जानेको कहता है ॥ ७ ॥ तुमको देखकर मेरी छाती ठंढी हुई थी, परंतु अब तौ फिर मेरे वास्ते वही तौ दिन है और वही रातें हैं ॥ ८ ॥

दोहा–जनकसुतहिँ समुझाइ करि, बहु बिधि धीरज दीन्ह ॥ ❋
चरणकमल शिर नाइ करि, गमन रामपहँ कीन्ह ॥ २७ ॥ ❋

हनुमान्‌ने सीताजीको अनेक प्रकारसे समझाकर कई तरहसे धीरज दिया और फिर उनके चरणकमलोंमें शिर नवाकर वहांसे पीछा रामचन्द्रजीके पास रवाना हुआ ॥ २७ ॥

चलत महाधुनि गरजेउ भारी ॥ गर्भ स्रवेउ सुनि निशिचर नारी ॥ १ ॥
लांघि सिंधु यहि पारहिँ आवा ॥ शब्द किल किला कपिन्ह सुनावा ॥ २ ॥

जाते समय हनुमान्‌ने ऐसी भारी गरजना करी कि, जिसको सुनकर राक्षसियोंके गर्भ गिर गये ॥ १ ॥ समुद्रको उल्लंघकर हनुमान् पीछा समुद्रके इस पार आया उस समय उसने किलकिला शब्द सब बन्दरोंको सुनाया ॥ २ ॥

"राका दिन पहुँचेउ हनुमन्ता ॥ धाय धाय कपि मिले तुरन्ता" ॥ ३ ॥
हर्षे सब बिलोकि हनुमाना ॥ नूतन जन्म कपिन तब जाना ॥ ४ ॥

"हनुमान् लंकासे पीछे कार्तिककी पूर्णिमाके दिन वहां पहुंचा, उस समय दौड़ दौड़कर वानर बडी त्वराके साथ हनुमान्‌से मिले" ॥ ३ ॥ हनुमान्‌को देखकर सब वानर बहुत प्रसन्न हुए और उस समय वानरोंने अपना नया जन्म समझा ॥ ४ ॥

मुखप्रसन्न तनु तेज बिराजा ॥ किन्हेसि रामचन्द्र कर काजा ॥ ५ ॥
मिले सकल अति भये सुखारी ॥ तलफत मीन पाव जनुबारी ॥ ६ ॥

हनुमान्‌का मुख अति प्रसन्न और शरीर तेजसे अत्यंत देदीप्यमान देखकर वानरोंने जान लिया कि हनुमान् रामचन्द्रजीका कार्य करके आया है ॥ ५ ॥ और इसीसे सब वानर परम प्रेमके साथ हनुमान्‌से मिले और अत्यन्त प्रसन्न हुए. वे कैसे प्रसन्न हुए सो कहते है कि, मानों तल-फती हुई मछलीको पानी मिला ॥ ६ ॥

चले हर्षि रघुनायक पासा ॥ पूंछत कहत नवल इतिहासा ॥ ७ ॥
तब मधुबन भीतर सब आये ॥ अंगद सहित मधुर फल खाये ॥ ८ ॥

फिर वे सब सुन्दर इतिहास पूंछते हुए और कहतेहुए आनंदके साथ रामचन्द्रजीके पास चले ॥ ७ ॥ फिर उन सबोंने मधुवनके अन्दर आकर युवराज अंगदके साथ वहां मीठे फल खाये ॥ ८ ॥

रखवारे जब बरजन लागे ॥ मुष्टिप्रहार करत सब भागे ॥ ९ ॥
"मार्ग पंचमी अरु भृगुबारा ॥ मधुबनके रक्षक संहारा" ॥ १० ॥

जब वहांके पहरादार बरजने लगे, तब उनको मुक्कोंसे ऐसा मारा कि वे सब वहांसे भाग गये ॥ ९ ॥ "मगसिर वदी ५ शुक्रवारके दिन अंगद आदि वानरोंने मधुवनके वानरोंका संहार किया" ॥ १० ॥

दोहा—जाइ पुकारे सकलते, बन उजार युवराज ॥
सुनि सुग्रीवहिं हर्ष अति, करि आये प्रभुकाज ॥ २८ ॥

वहांसे जो वानर भागकर बचे थे उन सबोंने जाकर राजा सुग्रीवसे अर्ज करी कि—हे राजा ! युव-राज अंगदने वनको सत्यानाशकर दिया है. यह समाचार सुनकर सुग्रीवको बड़ा आनंद हुआ कि वे लोग प्रभुका काम करके आये हैं ॥ २८ ॥

जो न होत सीता सुधि पाई ॥ मधुबनके फल को सक खाई ॥ १ ॥
यहि बिधि मन बिचारकर राजा ॥ आयगये कपि सहित समाजा ॥ २ ॥

सुग्रीवको आनंद क्यों हुआ ? उसका कारण कहते हैं. सुग्रीवने मनमें विचार किया कि जो उनको सीताकी खबर नहीं मिली होती तो वे लोग मधुवनके फल कदापि नहीं खाते; क्योंकि विना बन्दगी पहुंचे ऐसा अपराध कौन कर सक्ता है ? ॥ १ ॥ राजा सुग्रीव इसतरह मनमें विचार कर रहा था. इतनेमें समाजके साथ वे तमाम वानर वहां चले आये ॥ २ ॥

आइ सबहिँ नावा पद शीशा ॥ मिले सबन्हि अति प्रेम कपीशा ॥ ३ ॥ ❋
पूंछेउ कुशल कुशलपद देखी ॥ रामकृपा भा काज बिशेखी ॥ ४ ॥ ❋

और आकर उन्होंने सबको नमस्कार किया. तब बड़े प्यारके साथ सुग्रीव उन सबसे मिला ॥ ३ ॥ सुग्रीवने सबोंसे कुशल पूंछा तब उन सबोंने कहा कि–हे नाथ ! आपके चरण कुशल देखकर हम सब कुशल है और जो यह काम बना है सो केवल रामचन्द्रजीकी कृपासे बना है ॥ ४ ॥

नाथ काज कीन्हेउ हनुमाना ॥ राखे सकल कपिन्ह कर प्राना ॥ ५ ॥ ❋
सुनि सुग्रीव बहुरि उठि मिलेऊ ॥ कपिन्ह सहित रघुपतिपै चलेऊ ॥ ६ ॥

हे नाथ ! यह काम हनुमानने किया है. यह काम क्या किया है मानों सब वानरोंका इसने प्राण बचा दिये है ॥ ५ ॥ यह बात सुनकर सुग्रीव उठकर फिर हनुमानसे मिला और वानरोंके साथ रामचन्द्रजी पास आया ॥ ६ ॥

राम कपिन्ह कहँ आवत देखा ॥ किये काज उर हर्ष बिशेखा ॥ ७ ॥ ❋
फटिकशिला बैठ दोउ भाई ॥ परे सकल कपि चरणन जाई ॥ ८ ॥ ❋

वानरोंको आते देखकर रामचन्द्रजीके मनमें बड़ा आनन्द हुआ कि, ये लोग काम सिद्ध करके आये है ॥ ७ ॥ राम और लक्ष्मण ये दोनों भाई स्फटिकमणिकी शिळापर बैठे हुए थे, वहां जाकर सब वानर दोनों भाइयोंके चरणोंमें गिरे ॥ ८ ॥

दोहा–"षष्ठी दिन कपिपतिहिँ मिलि, मुदित कहा सब हाल ॥ ❋
सप्तमि दिन आये सकल, जहँ रघुनाथ कृपाल" ॥ ❋

" छठंके दिन तो सुग्रीवसे मिलकर उन्होंने सब हाल सुग्रीवसे कहा था और सप्तमीके दिन वे लोग वहां आये कि, जहां दयालु श्रीरामचन्द्रजी विराजे थे. "

दोहा–प्रीति सहित भेंटे सकल, रघुपति करुणापुंज ॥ ❋
पूंछेउ कुशल नाथ अब, कुशल देखि पदकंज ॥ २९ ॥ ❋

करुणानिधान श्रीरामचन्द्रजी प्रीतिपूर्वक सब वानरोंसे मिले और आपने उनसे कुशल पूंछा, तब उन्होंने पीछा कहा कि–हे नाथ ! आपके चरणकमलोंको कुशल देखकर अब हम कुशल है ॥ २९ ॥

जामवन्त कह सुनु रघुराया ॥ जापर नाथ करहु तुम दाया ॥ १ ॥ ❋
ताहि सदा शुभ कुशल निरंतर ॥ सुर नर मुनि प्रसन्न तेहि ऊपर ॥ २ ॥ ❋

उस समय जाम्बवान्‌ने रामचन्द्रजीसे कहा कि–हे नाथ ! सुनो. आप जिसपर दया करते हो ॥ १ ॥ उसके सदा सर्वदा शुभ और कुशल निरंतर रहते है. तथा देवता, मनुष्य और मुनि येभी उसपर सदा प्रसन्न रहते हैं ॥ २ ॥

सो बिजयी बिनयी गुणसागर ॥ तासु सुयश तिहुँलोक उजागर ॥ ३ ॥ ❋
प्रभुकी कृपा भयउ सब काजू ॥ जन्म हमार सुफल भा आजू ॥ ४ ॥ ❋

और वही विजय करनेवाला, विनयवाला और गुणोंका समुद्र होता है और उसकी सुख्याति तीनों लोकोंमें प्रसिद्ध रहती है ॥ ३ ॥ यह सब काम आपकी कृपासे सिद्ध हुआ है और हमारा जन्मभी आजही सफल हुआ है ॥ ४ ॥

नाथ पवनसुत कीन्ह जो करणी ॥ सो मुख लाखहु जाइ न बरणी ॥ ५ ॥
पवनतनयके बचन सुहाये ॥ जामवन्त रघुपतिहिँ सुनाये ॥ ६ ॥

हे नाथ ! हनुमान‌ने जो काम किया है वह कोई आदमी जो लाख मुखोंसे कहना चाहे तौभी वह कहा नहीं जा सक्ता ॥ ५ ॥ हनुमानकी प्रशंसाके वचन जाम्बवान‌ने रामचन्द्रजीको सुनाये ॥ ६ ॥

सुनि कृपाल उठि हृदय लगाये ॥ जानि सुभट रघुपति मन भाये ॥ ७ ॥
कहहु तात केहि भांति जानकी ॥ रहति करति रक्षा स्वप्राणकी ॥ ८ ॥

उन वचनोंको सुनकर दयालु श्रीरामचन्द्रजीने उठकर हनुमानजीको अपनी छातीसे लगाया और उसको सुभट जानकर रघुनाथजीके मनमें बहुत अच्छे लगे ॥ ७ ॥ और रामचन्द्रजीने हनुमानसे पूंछा कि–हे तात ! कहो सीता किसतरह तौ रहती है और अपने प्राणोंकी रक्षा वह किस तरह करती है ? ॥ ८ ॥

(क्षेपक)

छंद–किमि तात लायहु सीय सुधि सुनि पवनसुत पद गहि कहा ॥
प्रभुपासते जब चलेन ढूंढ़त दूरि यक सागर चहा ॥
शतयोजन कर तेहिँ नांघि चालिस कोशतक आराम है ॥
पुनि हेमके त्रेकूट लंक सुबेल सुन्दर नाम है ॥ १ ॥

रामचन्द्रजीने कहा कि–हे तात ! सीताकी सुध कैसे लाये हो ? सो कहो. यह सुनकर हनुमानने पांव पकड़कर अरज करी कि–हे प्रभु ! आपके पाससे जब हम सीताको ढूंढ़ते २ दूर चले गये; तब हमने एक समुद्र देखा. वह समुद्र सौ योजनका है, उसे लांघकर मैं आगे बढ़ा तौ आगे मैंने चालीस ४० कोसका एक बाग देखा, फिर आगे जाकर मैंने देखा तौ सुन्दर सुवर्णमय त्रेकूट नाम पर्वत कि जिसका दूसरा नाम सुवेल है वह नजर आया ॥ १ ॥

तँह पांचलाख पषाणके गृह दारुके नवलक्ष हैं ॥
पुनि ताम्रके मुनिकोटि घर श्रुतिकोटि रजके स्वक्ष हैं ॥
ततनेहिँ कंचनकेरि केवल कोटिशत पङ्कजरागके ॥
षटकोटि तृणके बंशछदके कोटिशत बहुभागके ॥ २ ॥

और उसके ऊपर लंकानाम नगरी दीख पड़ी कि जिसके अन्दर पांच लाख तौ पत्थरके मकान हैं. नव लाख काठके है और ताम्रके सात करोड़, चांदीके स्वच्छ चार करोड़, सुवर्णके चार करोड़, माणिकके एक करोड़, घासके झोंपड़े छः करोड़, बांसकी छालके सौ करोड़ ॥ २ ॥

स्फटिकके नवकोटि मेचक दाम कोटि सहस्रसै॥
मैं दीख यतने निलय लंका दुर्ग शतयोजन बसै ॥
दशशीश ताको ईश जाके कोपते त्रिभुवन कँपै ॥
उपबाग तामें जानकी तव बिरह पावकमें तपै ॥ ३ ॥

स्फटिकमणिके नौ करोड़ और नीलमणिके हजार करोड़ इतने घर लंकापुरीके भीतर मैंने देखे और वह लंकागढ़ सौ योजनमें बसा हुआ है. और उसका स्वामी राजा रावण है, उसके दश शिर हैं और उसके कोपसे त्रिलोकी थरांती है, उस पुरीके भीतर एक अशोक बन है, उसमें बैठीहुई

सीताजी आपके विरहानलसे तपायमान हो रहीं है ॥ ३ ॥ ॥ इति ॥

दोहा—नाम पाहरु दिवसनिशि, ध्यान तुम्हार कपाट ॥ ❋
लोचन निजपद यंत्रिका, प्राण जाहिँ क्यहि बाट ॥ ३० ॥ ❋

हे नाथ! यद्यपि सीताको कष्ट तौ इतना है कि, उसके प्राण एक क्षणभर न रहें परंतु सीताजीने आपके दर्शनके लिये प्राणोंको ऐसा बंदोबस्त करके रक्खा है कि, रात दिन अखंड पहरा देनेकेवास्ते आपके नामको तौ उसने शिपाही बनारक्खा है. और आपके ध्यानको कपाट बनाया है. और अपने नीचे किये हुए नेत्रोंसे जो अपने चरणोंकी ओर निहारती है, वो यंत्रिका यानी ताला है. अब उसके प्राण किस रास्ते बाहिर निकलें? ॥ ३० ॥

चलती बार कह्यो मोहिँ टेरी ॥ सुरति कराय शक्रसुतकेरी ॥ १ ॥ ❋
चलत मोहिँ चूड़ामणि दीन्ही ॥ रघुपति हृदय लाइ तेहिँ लीन्ही ॥ २ ॥ ❋

चलते समय सीताजीने मुझको बुलाकर कहा था कि—हे हनुमान्! प्रभुको जयन्तकी सुध दिलाना ॥ १ ॥ और चलते समय मुझको यह चूड़ामणि दिया है. ऐसे कहकर हनुमान्ने वह चूड़ामणि रामचन्द्रजीको देदिया. तब रामचन्द्रजीने उस रत्नको लेकर अपनी छातीसे लगाया ॥ २ ॥

नाथ युगुल लोचन भरी बारी ॥ बचन कह्यो कछु जनक कुमारी ॥ ३ ॥ ❋
अनुजसमेत गहेहु प्रभुचरणा ॥ दीनबन्धु प्रणतारतिहरणा ॥ ४ ॥ ❋

तब हनुमान्ने कहा कि—हे नाथ! दोनों हाथ जोड़कर नेत्रोंमें जल लाकर सीताजीने कुछ वचनभी कहे हैं सो सुनिये ॥ ३ ॥ सीताजीने कहा है कि—"लक्ष्मणजीके साथ प्रभुके चरण धरकर मेरी ओरसे ऐसी प्रार्थना करियो कि—हे नाथ! आप तौ दीनबंधु और शरणागतोंके संकटके मिटानेवाले हो ॥ ४ ॥

मन क्रम बचन चरण अनुरागी ॥ क्यहि अपराध नाथ मोहिँ त्यागी ॥ ५ ॥
अवगुण एक मोर मैं जाना ॥ बिछुरत प्राण न कीन्ह पयाना ॥ ६ ॥ ❋

फिर मन, बचन और क्रमसे चरणोंमें प्रीति रखनेवाली मुझ दासीको आपने किस अपराधसे त्याग दिया है? ॥ ५ ॥ हां, मेरा एक अपराध पक्का है और वह मैंने जानभी लिया है कि आपसे बिछुरतेही मेरे प्राण नहीं निकस गये ॥ ६ ॥

नाथ सो नयननकर अपराधा ॥ निसरत प्राण करहिँ हठि बाधा ॥ ७ ॥ ❋
बिरह अनल तन तूल समीरा ॥ श्वास जरे क्षणमाहँ शरीरा ॥ ८ ॥ ❋

परंतु हे नाथ! वह अपराध मेरा नहीं है, किन्तु नेत्रोंका है; क्योंकि जिस समय प्राण निकलने लगते हैं उस समय ये नेत्र हठकर उसमें बाधा कर देते हैं अर्थात् केवल आपके दर्शनके लोभसे मेरे प्राण बने रहे हैं ॥ ७ ॥ हे प्रभु! आपका बिरह तौ अग्नि है. मेरा शरीर तूल (रुई) है. श्वासा प्रबल वायु है. अब इस सामग्रीके छते शरीर क्षणभरमें जल जाय, इसमें कोई आश्चर्य नहीं ॥ ८ ॥

नयन श्रवैं जल निजहित लागी ॥ जरै न पाव देह बिरहागी ॥ ९ ॥ ❋
सीताकी अति विपति बिशाला ॥ विना कहे भल दीनदयाला ॥ १० ॥ ❋

परंतु नेत्र अपने हितके वास्ते यानी दर्शनके वास्ते जल बहा २ कर उस विरहानलको शांत करते रहते हैं, जिससे यह विरहानल मेरे शरीरको जला नहीं सकता ॥ ९ ॥ हनुमान्ने कहा कि—हे दीनदयाल ! सीताकी विपत ऐसी भारी है कि, उसको न कहना भी अच्छा है ॥ १० ॥

दोहा—निमिष निमिष करुणायतन, जाहिँ कल्पशत बीति ॥ ❋
बेगि चलिय प्रभु आनिये, भुजबल खलदल जीति ॥ ३१ ॥ ❋

हे करुणानिधान ! हे प्रभु ! सीताजीके एक एक क्षण सौ सौ कल्पके समान व्यतीत होते हैं, इसवास्ते जलदी चलकर और अपने बाहुबलसे दुष्टोंके दलको, जीतकर उसको पीछी जल्दी लेआओ उसमें ठीक है ॥ ३१ ॥

सुनि सीतादुख प्रभु सुखअयना ॥ भरि आये दोउ राजिवनयना ॥ १ ॥
बचन काय मन मम गति जाही ॥ स्वप्नेहुँ बिपति कि चाहिय ताही ॥ २ ॥

सुखके धाम श्रीरामचन्द्रजी सीताजीके समाचार सुन अति खिन्न हुए और उनके कमलसे दोनों नेत्रोंमें जल भर आया ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीने कहा कि—जिसने मन बचन व कर्मसे मेरा शरण लिया है, क्या स्वप्नमेंभी उसको विपत होनी चाहिये ? कदापि नहीं ॥ २ ॥

कह हनुमान बिपति प्रभु सोई ॥ जब तव सुमिरण भजन न होई ॥ ३ ॥ ❋
कितिक बात प्रभु यातुधानकी ॥ रिपुहिँ जीति आनिये जानकी ॥ ४ ॥ ❋

हनुमान्ने अरज करी कि—हे प्रभु ! आदमीके यह विपत कबलों रहती है कि, जबतक यह मनुष्य आपका भजन स्मरण नहीं करता ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! इस राक्षसकी कितनीसी बात है ? आप शत्रुको जीतकर सीताजीको ले आइये ॥ ४ ॥

सुनु कपि तोहिँ समान उपकारी ॥ नहिँ कोउ सुर नर मुनि तनधारी ॥ ५ ॥
प्रति उपकार करौं का तोरा ॥ सनमुख होइ न सकत मन मोरा ॥ ६ ॥ ❋

रामचन्द्रजीने कहा कि—हे हनुमान् ! सुन, तेरे बराबर मेरे उपकार करनेवाला देवता मनुष्य और मुनि कोईभी देहधारी नहीं है ॥ ५ ॥ हे हनुमान् ! मैं तेरा पीछा क्या प्रत्युपकार करूं ? क्योंकि मेरा मन बदला देनेके वास्ते सन्मुखही नहीं हो सकता ॥ ६ ॥

सुनु कपि तोहिँ उऋण मैं नाहीं ॥ देखेउँ करि बिचार मन माहीं ॥ ७ ॥
पुनि पुनि कपिहिँ चितव सुरत्राता ॥ लोचन नीर पुलकि अतिगाता ॥ ८ ॥

हे हनुमान् ! सुन, मैंने मेरे मनमें विचार करके देख लिया है कि, मैं तुझसे उऋण नहीं हो सक्ता ॥ ७ ॥ रामचन्द्रजी ज्यों २ बारंबार हनुमान्की ओर देखते है, त्यों त्यों उनके नेत्रोंमें जलभर आता है और शरीर पुलकित हो जाता है ॥ ८ ॥

दोहा—सुनि प्रभुबचन बिलोकि मुख, हृदय हर्ष हनुमंत ॥ ❋
चरण परेउ परमाकुल, त्राहि त्राहि भगवन्त ॥ ३२ ॥ ❋

हनुमान् प्रभुके वचन सुनकर और प्रभुके मुखकी ओर देखकर मनमें परम आल्हादित हुआ और बहुत व्याकुल होकर हे भगवन् ! 'रक्षा करो; रक्षा करो;' ऐसे कहता हुआ चरणोंमें गिर पड़ा ॥ ३२ ॥

बार बार प्रभु चहत उठावा ॥ प्रेममगन तेहिं उठत न भावा ॥ १ ॥ ❋
प्रभुपदपंकज कपिकर शीशा ॥ सुमिरि सो दशा मगन गौरीशा ॥ २ ॥ ❋

यदपि प्रभुने उसको चरणोंमेंसे उठानेके वास्ते बारंबार चाहा, परंतु हनुमान् प्रेममें ऐसा मग्न हो गया था कि, वह उठना नहीं चाहता था ॥ १ ॥ कवि कहता है कि-रामचन्द्रजीके चरणकमलोंके बीच हनुमान्ने शिर धरा है, इस बातको स्मरण करके महादेवकीभी वही दशा होगयी और प्रेममें मग्न होगये, क्योंकि हनुमान् रुद्रका अंशावतार है ॥ २ ॥

सावधान मन कर पुनि शंकर ॥ लागे कहन कथा अति सुन्दर ॥ ३ ॥ ❋
कपि उठाय प्रभु हृदय लगावा ॥ कर गहि परम निकट बैठावा ॥ ४ ॥ ❋

फिर महादेवजी अपने मनको सावधान करके अति मनोहर कथा कहने लगे ॥ ३ ॥ महादेवजी कहते है कि-हे पार्वती ! प्रभुने हनुमान्को उठाकर छातीसे लगाया और हाथ पकड़कर अपने बहुत नजदीक बिठाया ॥ ४ ॥

कहु कपि रावण पालित लंका ॥ केहि बिधि दहेउ दुर्ग अति बंका ॥ ५ ॥
प्रभु प्रसन्न जाना हनुमाना ॥ बोले बचन बिगतअभिमाना ॥ ६ ॥ ❋

और हनुमान्से कहा कि-हे हनुमान् ! कहो, वो रावणकी पाली हुई लंकापुरी कि जो बड़ा बंका किला है उसको तुमने कैसे जलाया ? ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजीकी यह बात सुन उनको प्रसन्न जानकर हनुमान्ने अभिमानरहित होकर यह वचन कहा कि- ॥ ६ ॥

शाखामृगकी अति मनुसाई ॥ शाखाते शाखापर जाई ॥ ७ ॥ ❋
लांघि सिंधु हाटक पुर जारा ॥ निशिचरगण बधि बिपिन उजारा ॥ ८ ॥
सो सब तव प्रताप रघुराई ॥ नाथ न कछुक मोरि प्रभुताई ॥ ९ ॥ ❋

हे प्रभु ! बानरका तौ स्वभावही है कि, वृक्षकी एक डारसे दूसरी डारपर कूदाही करता है ॥ ७ ॥ उसीसे मैं समुद्रको उल्लंघकर लंकामें चला गया और वहां जाकर लंकाको जला दिया और बहुतसे राक्षसोंको मारकर अशोक बनको उजाड़ दिया ॥ ८ ॥ हे प्रभु ! यह सब आपका प्रताप है. हे नाथ ! इसमें मेरी प्रभुता कुछ नहीं है ॥ ९ ॥

दोहा-ताकहँ प्रभु कछु अगम नहिँ, जापर तुम अनुकूल ॥ ❋
तव प्रताप वड़वानलहिँ, जारि सकै खलु तूल ॥ ३३ ॥ ❋

हे प्रभु ! तुम जिसपर अनुकूल हो उसको कुछभी असाध्य नहीं; क्योंकि आपके प्रतापसे निश्चय रुई कहीं वड़वानलको जला सक्ती है ? ॥ ३३ ॥

सुनतबचन प्रभु बहु सुख माना ॥ मन क्रम बचन दास निज जाना ॥ १ ॥
मांगु बचन सुत बर अनुकूला ॥ देउँ आजु तुम कहँ सुखमूला ॥ २ ॥ ❋

हनुमान्के ये वचन सुनकर प्रभुने बड़ा सुख माना और हनुमान्को मन वचन क्रमसे अपना पक्का दास जाना ॥ १ ॥ और प्रभुने कहा कि-हे पुत्र ! तेरे जो अनुकूल हो वही वर मांग. आज तौ तू जो वर मांगेगा वही सुखका मूलरूप वर मैं तुझे देऊंगा ॥ २ ॥

नाथ भक्ति तव सौख्यप्रदाइनि ॥ देहु कृपाकरि शिव अनपायिनि ॥ ३ ॥
सुनि प्रभु परम सरल कपिबानी ॥ एवमस्तु तब कहेउ भवानी ॥ ४ ॥ ❋

रामचन्द्रजीके ये वचन सुनकर हनुमानने कहा कि—हे नाथ ! मुझे तौ कृपा करके आपकी अनपायिनी (जिसमें कभी विच्छेद नहीं पड़े ऐसी) कल्याणकारी और सुखदायी भक्ति देओ ॥ ३ ॥ महादेवजीने कहा कि—हे पार्वती ! हनुमान्की ऐसी परमसरल वाणी सुनकर प्रभुने कहा कि—हे हनुमान् ! एवमस्तु यानी ऐसाही हो अर्थात् तुमको हमारी भक्ति प्राप्त होओ ॥ ४ ॥

उमा राम सुभाव जिन्ह जाना ॥ ताहि भजन तजि भाव न आना ॥ ५ ॥
यह संवाद जासु उर आवा ॥ रघुपतिचरण भक्ति तेइं पावा ॥ ६ ॥ ❋

हे पार्वती ! जिन्होंने रामचन्द्रजीके परम दयालु स्वभावको जान लिया है, उनको रामचन्द्रजीकी भक्तिको छोड़कर दूसरा कुछभी अच्छा नहीं लगता ॥ ५ ॥ यह हनुमान् और रामचन्द्रजीका संवाद जिसके हृदयमें दृढ़ रीतिसे आजाता है, वह श्रीरामचन्द्रजीकी भक्तिको अवश्य पाजाता है ॥ ६ ॥

सुनि प्रभुबचन कहैं कपिवृन्दा ॥ जय जय जय कृपालु सुखकन्दा ॥ ७ ॥
तब रघुपति कपिपतिहिं बुलावा ॥ कहा चलैकर करहु बनावा ॥ ८ ॥ ❋

प्रभुके ऐसे वचन सुनकर तमाम वानरवृन्दने पुकारकर कहा कि—हे दयालु ! हे सुखके मूलकारण प्रभु ! आपकी जय हो जय हो जय हो ॥ ७ ॥ उस समय प्रभुने सुग्रीवको बुलाकर कहा कि—हे सुग्रीव ! अब चलनेकी तैयारी करो ॥ ८ ॥

अब बिलम्ब केहि कारण कीजै ॥ तुरत कपिन कहँ आयसु दीजै ॥ ९ ॥ ❋
कौतुक देखि सुमन बहु बर्षे ॥ नभते भवन चले सुर हर्षे ॥ १० ॥ ❋

अब विलम्ब क्यों किया जाता है ? अब तुम वानरोंको तुरंत आज्ञा क्यों नहीं देते हो ? ॥ ९ ॥ इस कौतुकको देखकर देवताननेे आकाशसे बहुतसे फूल बरसाये और फिर वे आनंदित होकर अपने अपने घरोंको चल दिये ॥ १० ॥

दोहा—कपिपति बेगि बुलायेउ, आये यूथपयूथ ॥ ❋
नाना बरण अतुल बल, बानर भालु बरूथ ॥ ३४ ॥ ❋

रामचन्द्रजीकी आज्ञा होतेही सुग्रीवने वानरोंके यूथपतियोंके यूथ बुलाये और सुग्रीवकी आज्ञाके साथही वानर और रीछोंके यूथ कि, जिनके अनेक प्रकारके वर्ण हैं और अतुलित बल हैं वे वहां आये ॥ ३४ ॥

प्रभुपदपंकज नावहिं शीशा ॥ गरजहिं भालु महाबल कीशा ॥ १ ॥ ❋
देखी राम सकल कपिसैना ॥ चितव कृपा करि राजिव नैना ॥ २ ॥ ❋

महाबली वानर और रीछ वहां आआकर गरजना करते हैं और रामचन्द्रजीके चरणकमलोंको शिर झुकाकर प्रणाम करते हैं ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीने तमाम वानरोंकी सेनाको देखकर कमलनयन प्रभुने कृपादृष्टिसे उनकी ओर देखा ॥ २ ॥

रामकृपाबल पाइ कपिन्दा ॥ भये पक्षयुत मनहुँ गिरिन्दा ॥ ३ ॥ ❋
"मार्गकृष्ण बसुतिथि जब आई ॥ अरु उत्तर फाल्गुणी सोहाई ॥ ४ ॥ ❋

प्रभुकी कृपादृष्टि पड़तेही तमाम वानर रघुनाथजीके कृपाबलको पाकर ऐसे बली और बड़े

हो गये कि, मानों पक्षसहित पहाड़ही तो नहीं है ? ॥ ३ ॥ जब मगसिर वदी अष्टमी और सुन्दर उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रका योग बना ॥ ४ ॥

जब अपयोग एक न नहिँ आनू ॥ शुचि शुभ योग मध्यदिन भानू ॥५॥
हर्षि राम तब कीन्ह पयाना ॥ शकुन भये सुन्दर शुभ नाना ॥ ६ ॥ ❋

और किसी तरहका एकभी कुयोगका संभव न रहा और निर्मल शुभ व मध्यान्हका समय आया ॥ ५ ॥ उस समय रामचन्द्रजीने आनंदित होकर प्रयाण किया. तब नानाप्रकारके अच्छे और सुन्दर शकुनभी होने लगे ॥ ६ ॥

जासु सकल मंगलमय नीती ॥ तासु पयान शकुन यह रीती ॥ ७ ॥ ❋
प्रभु पयान जाना बैदेही ॥ फरके बाम अंग शुभ तेही ॥ ८ ॥ ❋

यह दस्तूर है कि, जिसके सब मंगलमय होना होता है उसके प्रयाणके समय शकुनभी अच्छे होते हैं ॥ ७ ॥ प्रभुने प्रयाण किया उसकी खबर सीताजीकोभी हो गयी, क्योंकि जिस समय प्रभुने प्रयाण किया उसीवक्त सीताजीके शुभसूचक बाएं अंग फरकने लगे ॥ ८ ॥

जो जो शकुन जानकिहिँ होई ॥ अशकुन भयउ रावणहिँ सोई ॥ ९ ॥❋
चला कटक को बरणै पारा ॥ गरजहिँ बानर भालु अपारा ॥ १० ॥ ❋

और जो शकुन सीताजीके अच्छे हुए वे सब रावणके बुरे शकुन हुए ॥ ९ ॥ इसप्रकार रामचन्द्रजीकी सेना रवाने हुई, कि जिसके अन्दर असंख्यात वानर और रीछ गरज रहे हैं. उस सेनाका वर्णन करके कौन आदमी पार पा सकता है ? ॥ १० ॥

नखआयुध गिरिपादपधारी ॥ चले गगनमहँ इच्छाचारी ॥ ११ ॥ ❋
केहरिनाद भालु कपि करहीं ॥ डगमगाहिँ दिग्गज चिक्करहीं ॥ १२ ॥ ❋

जिनके नखही तो शस्त्र है. पर्वत व वृक्ष हाथोंमें है, वे इच्छाचारी वानर और रीछ आकाशमें कूदतेहुए आकाशमार्ग होकर सेनाके बीच जा रहे हैं ॥ ११ ॥ वानर व रीछ मार्गमे जातेहुए सिंहनाद कर रहे है. जिससे दिग्गज हाथी डगमगाते है और चीत्कार करते है ॥ १२ ॥

छंद-चिक्करहिँ दिग्गज डोल महि गिरि लोल सागर खरभरे ॥ ❋
मन हरप दिनकर सोम सुर मुनि नाग किन्नर दुख टरे ॥ ❋
कटकटहिँ मरकट बिकट भट बहु कोटि कोटिन धावहीं ॥ ❋
जय राम प्रबल प्रताप कोशलनाथ गुणगण गावहीं ॥ ४ ॥ ❋

जब रामचन्द्रजीने प्रयाण किया तब दिग्गज चिंघाड़ने लगे. पृथ्वी डगमगाने लगी. पर्वत कांपने लगे. समुद्र खड़भड़ गये. सूर्य आनंदित हुआ कि हमारे वंशमें दुष्टोंको दंड देनेवाला पैदा हुआ. चंद्रमा राजी हुआ कि हमारे वंशमें यह पैदा होवेगा और देवता, मुनि, नाग व किन्नर ये सब दुःखसे छूटे. वानर विकट रीतिसे कटकटा रहे हैं. कोट्यानकोटी बहुतसे भट इधर उधर दौड़ रहे हैं और रामचन्द्रजीसे गुणगणको गा रहे हैं कि-हे प्रबल प्रतापवाले राम ! आपकी जय हो ॥४॥

सकं सहि न भार अपार अहिपति बार बार बिमोहई ॥ ❋
गहि दशन पुनि पुनि कमठपीठ कठोर सो किमि सोहई ॥ ❋

रघुबीर रुचिर पयान प्रस्थित जानि परम सुहावनी ॥
जनु कमठ खप्पर सर्पराज सो लिखत अबिचल पावनी ॥ ५ ॥

उस सेनाके अपार भारको शेषजी स्वयं सह नहीं सकते, जिससे बारंबार मूर्छित होते हैं और अपने दांतोंसे बारंबार कमठकी कठोर पीठको पकड़े रहते हैं. सो वह शोभा कैसी मालूम होती है कि, मानों रामचन्द्रजीके सुन्दर प्रयाणको प्रस्थिति यानी संवत् मितीको परम रम्य जानकर शेषजी कमठकी पीठरूप खप्परपर अपने दांतोंसे लिख रहे हैं कि जिससे वह प्रस्थानका पवित्र संवत् व मिती सदा स्थिर बना रहे. जैसे कुएं बावली मंदिर आदि बनानेवाले उसपर पत्थरमें प्रशस्ति खुदवाकर लगा देते हैं, ऐसे शेषजी मानों कमठकी पीठपर प्रशस्तिही खोद रहे थे ॥ ५ ॥

(क्षेपक)

छंद–प्रभु कीन लंक पयान जब तब धनुष निज टंकोरेहू ॥
सुनि शब्द घोर कठोर चौंके शंभु बिधि मुख मोरेहू ॥
भयो काम सकल निकाम शिरसे गंगधारा बहि चली ॥
धरि धीर हृदय बिचारि निजनिजकाज लागे बिधि भली ॥ १ ॥
भयबिकल सब दिग्पाल चौदह भुवनके बासी डरे ॥
दशमौलि सभय बिहाल पुरजन गर्भ तिनके गिरिपरे ॥
कपिमाल ठोंकहिँ ताल अतिबिकराल रद कटकट करैं ॥
बदि बाद कूदहिँ नाद करि हरि सपथ उपरापर परैं ॥ २ ॥
अति पीन परमबिशाल कर गिरि बिटपधृत चंचल महैं ॥
मुख बिकट लोचन पिंग जिन्हैं बिलोकि भय कालहु लहैं ॥
धरु मारु भुजा उपारु अरिदल डारु सागर तोपई ॥
तेहि दोष देखब ताहि जो तेहिहेत तनको कांपई ॥ ३ ॥
यहि भांति मर्कटकटक बोलत चलत मरु पंगुल भये ॥
शशि भानु लोपे यान नभ थल धूरि भर सरपटि गये ॥
अनिमेष चहत निमेष मातलि सहसदृग अकुलानेहूं ॥
सुनि हांक श्रीहनुमानकी पर अपन कोउ न जानेहूं ॥ ४ ॥
बलखात दिग्गज कोल कूरम शेषशिर हालत मही ॥
मुख मुद्गर मुद्गरामर्षि कर्षत गई तन कर्कस सही ॥
श्रीराम राजत पवनपर जिमि उदयगिरि रबि लसै ॥
सौमित्रि अंगद कंध मानहुँ अग्निघर चन्दा बसै ॥ ५ ॥
कसमसत इमि मग चलत बिशयें दिवश दधितट आयहू ॥
उतरे निरखि जलराशि फल दल फूल सबहिन खायहू ॥ ६ ॥

जब प्रभुने लंकाकी ओर प्रयाण किया तब अपने धनुषका टंकोरशब्द किया जिस घोर व कठोर टंकोरशब्दको सुनकर महादेवजी और ब्रह्माजी चौंक पड़े और उन्होंने मुख फिराया कि- यह क्या हुआ ? ब्रह्माजीका जो काम था वह सब निकाम हो गया और महादेवजीके शिरसे भयके मारे गंगाजीकी धार बह चली ऐसे घबराहट होनेपरभी वे धीरज रख मनमें विचार कर भलीभांति अपने २ काममें लगे ॥ १ ॥ दिक्पाल भयसे बिकल होगये और चौदहही लोकोंके रहनेवाले प्राणी डरने लगे. रावण भयभीत हो गया और उसके पुरके लोक बेहाल हो गये और नगरीकी स्त्रियोंके गर्भ गिर पड़े. इधर बानरोंके यूथ ताल ठोंकते है और बड़ी बिकराल रीतिसे दातोंको कटकटा रहे है. बाद बद बदकर कूदते है. सिंहनाद करते है और शपथ खा खाकर उप- रोपर पड़ते है ॥ २ ॥ और अति पुष्ट व बड़े विशाल हाथोंसे पर्वत व वृक्षोंको उठा उठाकर कूद रहे है व चंचलता कर रहे है. बड़ा बिकट उनका मुख है और पिंगलवर्ण उनके नेत्र है कि जि- नको देखकर स्वयं कालभी भय मानता है और वे वानर कहते है कि–अरे ! शत्रुओंकी सेनाको पकड़ो मारो और उसकी भुजा उखार डारो. उसको समुद्रके अन्दर डारकर गारद कर दो; क्योंकि जिसके वास्ते जिस आदमीके शरीरमे कोप उत्पन्न होवे, उस आदमीको चाहिये कि उसको न देखे क्योंकि उसको देखनेसे दोष (बुरा) होगा ॥ ३ ॥ वह बानरोंकी फौज ऐसे कहती हुई जा रही थी कि जिसकी सघनताके कारण पवन पंगु हो गयी यानी हवा बंद होगयी और उन बानरोंके जमीनमें सरपट जानेसे रजसे आकाशमें विमान छा गये. सूर्य और चंद्रमा दीखने बंद हो गये. मातलि सारथी अनिमिषको निमेष चाहता है और इंद्र घबरा रहा है, उस समय हनुमानकी हांक सुनकर कि- सीको यह चेत न रहा कि, पराया कौन है और अपना कौन ? ॥ ४ ॥ दिग्गज हाथी, वराह अवतार कूर्मावतार और शेषजी घबराने लगे और पृथ्वी शेषजीके शिरपर धरीही डगमगाने लगी. ये सब अमर्षके मारे बारंबार मुँहको खींचते है और इनकी शरीरकी कठोरता जो थी, वह तो कहींकी कहीं चली गयी. ऐसे सेना जा रही थी जिसके बीच श्रीरामचन्द्रजी तो हनुमानके ऊपर सवार थे सो कैसे मालूम होते थे कि मानों उदयाचलपर सूर्य प्रकाशमान हो रहा है और लक्ष्मण अंग- दके कंधेपर चढ़ा था, सो वह ऐसा शोभायमान लगता था कि मानों अग्निके घर चंद्रमा विराजमान है ॥ ५ ॥ ऐसे धीरे धीरे चलते हुए और मार्गमें डेरा करते हुए बीस दिनोंमें वे समुद्रकी तीर पहुंचे. फिर समुद्रको देखकर वहां सब उतर पड़े और सबोंने फल, पत्ते व फूल वगैरः खाये ॥ ६ ॥ ॥ इति ॥

दोहा–यहि बिधि जाइ कृपानिधि, उतरे सागरतीर ॥ ❀
जहँ तहँ लागे खान फल, भालु बिपुल कपि बीर ॥ ३५ ॥ ❀

कृपाके भंडार श्रीरामचन्द्रजी इसतरह जाकर समुद्रकी तीरपर उतरे, तब बीर रीछ और बानर जहां तहां बहुतसे फल खाने लगे ॥ ३५ ॥

जहां निशाचर रहहिं सशंका ॥ जबते जारि गयउ कपि लंका ॥ १ ॥ ❀
निज निज गृह सब करैं बिचारा ॥ नहिँ निशिचरकुलकेर उबारा ॥ २ ॥

जबसे हनुमान लंकाको जलाकर चला गया, तबसे वहां राक्षसलोग शंकासहित रहने लगे ॥ १ ॥ और अपने २ घरमें सब बिचार करने लगे कि, अब राक्षसकुल बचनेका नहीं है ॥ २ ॥

जासु दूत बल बरणि न जाई ॥ तेहि आये पुर कवन भलाई ॥ ३ ॥
अति सभीत सुनि पुरजनबानी ॥ मन्दोदरी हृदय अकुलानी ॥ ४ ॥

हम लोग जिसके दूतके बलकोभी कह नहीं सकते, तब उसके आनेपर तौ फिर पुरका भला कैसा हो सकेगा ॥ ३ ॥ नगरके लोगोंकी ऐसी अति भयसहित वाणी सुनकर मन्दोदरी अपने मनमें बहुत घबरायी ? ॥ ४ ॥

रहसि जोरि कर पतिपद लागी ॥ बोली बचन नीतिरस पागी ॥ ५ ॥
कन्त कर्ष हरिसन परिहरहू ॥ मोर कहा अतिहित चित धरहू ॥ ६ ॥

और एकान्तमें आकर हाथ जोड़कर पतिके चरणोंमे गिरकर नीतिके रससे भरे हुए ये बचन बोली ॥ ५ ॥ कि—हे कान्त ! हरि भगवानसे जो आपके वैरभाव है, उसे छोड़ दो. मैं जो आपसे कहती हूं वह आपको अत्यंत हितकारी है सो उसको अपने चित्तमे धारण करो ॥ ६ ॥

समुझत जासु दूतकी करनी ॥ श्रवहिं गर्भ रजनीचर घरनी ॥ ७ ॥
तासु नारि निज सचिव बुलाई ॥ पठवहु कन्त जो चहहु भलाई ॥ ८ ॥

भला, अब उसके दूतके कामको तो देखो कि, जिसका नाम लेनेसे राक्षसियोंके गर्भ गिर जाते हैं ॥ ७ ॥ इसवास्ते हे कान्त ! मेरा कहना तौ यह है कि—जो आप अपना भला चाहो तो अपने मंत्रियोंको बुलाकर उसकी स्त्रीको पीछी भेज दो ॥ ८ ॥

तव कुलकमलबिपिन दुखदाई ॥ सीता शीतनिशासम आई ॥ ९ ॥
सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हे ॥ हित न तुम्हार शंभु अज कीन्हे ॥ १० ॥

जैसे शीतऋतु यानी शिशिरऋतुकी रात्रि आनेसे कमलोंके वनका नाश हो जाताहै, एसे तुम्हारे कुलरूप कमलवनका संहार करनेके लिये यह सीता शिशिरऋतुकी रात्रिके समान आयी है ॥ ९ ॥ हे नाथ ! सुनो. सीताको विना देनेके तौ चाहे महादेवजी और ब्रह्माजी भले कुछ उपाय क्यों न करें, पर उससे आपका हित नहीं होगा ॥ १० ॥

दोहा—रामबाण अहिगणसरिस, निकर निशाचर भेक ॥
जौंलगि ग्रसत न तबहिंलगि, यतन करहु तजि टेक ॥ ३६ ॥

हे नाथ ! रामचन्द्रजीके बाण तौ सर्पोंके गणके समान है और राक्षससमूह मेंड़कके झुंडके समान हैं सो जबलों वे इनका संहार नहीं करते, तिससे पहले आप यत्न करो और जिस बातका प्रण पकड़ रक्खा है, उसकी टेक छोड़ दो ॥ ३६ ॥

श्रवण सुनत शठ ताकी बानी ॥ बिहँसा जगत बिदित अभिमानी ॥ १ ॥
सभय सुभाव नारिकर साँचा ॥ मंगलमाहिँ अमंगल रांचा ॥ २ ॥

कवि कहता है कि—वो शठ मन्दोदरीकी यह वाणी सुनकर हँसा; क्योंकि उसके अभिमानको तमाम संसार जानता है ॥ १ ॥ और बोला कि—जगतमें यह बात कही जाती है कि स्त्रीका स्वभाव डरपोंक होता है सो यह बात सच्ची है. और उसीसे तेरा मन मंगलकी बातमें अमंगल समझता है ॥ २ ॥

जो आवै मरकट कटकाई ॥ जियहिँ बिचारे निशिचर खाई ॥ ३ ॥
कंपहिँ लोकप जाके त्रासा ॥ तासु नारि भय करि बडि हासा ॥ ४ ॥

क्योंकि जो वानरोंकी सेना यहां आवेगी तो क्या बिचारी वह जीती रह सकेगी ? क्योंकि राक्षस उसको आंतही खा जायंगे ॥ ३ ॥ जिसकी त्रासके मारे लोकपाल कांपते है, उसकी स्त्रीका भय होना यह तो एक बड़ी हंसीकी बात है ॥ ४ ॥

अस कहि बिहँसि ताहि उर लाई ॥ चलेउ सभा ममता अधिकाई ॥ ५ ॥
मन्दोदरी हृदय करि चीता ॥ भयो कन्तपर बिधि बिपरीता ॥ ६ ॥ ❋

वह दुष्ट मन्दोदरीको ऐसे कह, हँसकर, उसको छातीमें लगाकर मनमें बड़ी ममता रखता हुआ सभामें गया ॥ ५ ॥ परन्तु मन्दोदरीने उसवक्त समझ लिया कि, अब इस कान्तपर दैव प्रतिकूल होगया है ॥ ६ ॥

बैठउ सभा खबरि अस पाई ॥ सिन्धुपार सेना सब आई ॥ ७ ॥ ❋
बूझसि सचिव उचित मत कहहू ॥ ते सब हँसे मौन करि रहहू ॥ ८ ॥ ❋
जितेहु सुरासुर तव श्रम नाहीं ॥ नर बानर केहि लेखे माहीं ॥ ९ ॥ ❋

रावण सभामें जाकर बैठा वहां ऐसी खबर आयी कि, सब सेना समुद्रके परले पार आगयी है ॥ ७ ॥ तब रावणने सब मंत्रियोंसे पूछा कि—तुम अपना २ जो योग्य मत हो वह कहो तब वे सब मंत्रि हंसे और चुप लगाकर रह गये ॥ ८ ॥ फिर बोले कि—हे नाथ ! जब आपने देवता और दैत्योंको जीता उसमेभी आपको श्रम नहीं हुआ तो मनुष्य और बानर तो कौन गिनतीमें है ? ॥ ९ ॥

दोहा—सचिव वैद्य गुरु तीनि जो, प्रिय बोलहिँ भय आश ॥ ❋
राजधर्म तन तीन कर, होइ बेगही नाश ॥ ३७ ॥ ❋

जो मंत्रि भय वा लोभसे राजाके सुहाती बात कहता है, तो उसके राजाका तुरंत नाश हो जाता है और जो वैद्य रोगीके सुहाती बात कहता है तो रोगीका बेगही नाश हो जाता है तथा गुरु जो शिष्यके सुहाती बात कहता है, तो उसके धर्मका शीघ्रही नाश हो जाता है ॥ ३७ ॥

सोइ रावण कहँ बनी सहाई ॥ अस्तुति करहिँ सुनाइ सुनाई ॥ १ ॥
अवसर जानि बिभीषण आवा ॥ भ्राता चरण शीश तेहिँ नावा ॥ २ ॥ ❋

सो रावणके यहां वैसीही सहाय बन गयी यानी सब मंत्रि सुना सुनाकर रावणकी स्तुति करने लगे ॥ १ ॥ उस अवसरको जानकर बिभीषण वहाँ आया और बड़ेभाईके चरणोंमें उसने शिर नवाया २

पुनि शिर नाइ बैठि निज आसन ॥ बोला बचन पाइ अनुशासन ॥ ३ ॥
जो कृपालु पूछहु मोहिँ बाता ॥ मति अनुरूप कहव मैं ताता ॥ ४ ॥ ❋

फिर प्रणाम करके वह अपने आसनपर जा बैठा ॥ ३ ॥ और रावणकी आज्ञा पाकर यह वचन बोला कि—हे कृपालु ! आप मुझसे जो बात पूछते हो सो हे तात ! मैंभी मेरी बुद्धिके अनुसार कहूंहीगा ॥ ४ ॥

जो आपन चाहो कल्याना ॥ सुयश सुमति शुभगति सुख नाना ॥ ५ ॥
तौ परनारि लिलार गुसाईं ॥ तजौ चौथि चंदाकी नाईं ॥ ६ ॥ ❋

हे तात ! जो आप अपना कल्याण, सुजस, सुमति, शुभगति और नाना प्रकारका सुख चाहते हो ॥ ५ ॥ तब तौ हे स्वामी ! परस्त्रीके लिलारको चौथके चांदकी नांई त्याग दो ॥ ६ ॥

चौदह भुवन एक पति होई ॥ भूतद्रोह तिष्ठै नहिँ सोई ॥ ७ ॥ ❋
गुणसागर नागर नर जोऊ ॥ अल्प लोभ भल कहै न कोऊ ॥ ८ ॥ ❋

चाहो कोई एकही आदमी चौदहही लोकोंका पति होजावे, परंतु जो प्राणिमात्रसे द्रोह रखता है वह स्थिर नहीं रहता. अर्थात् तुरंत नष्ट हो जाता है ॥ ७ ॥ जो आदमी गुणोंका सागर और चतुर है, परंतु वह यदि थोड़ाभी लोभ कर जाय तौ उसे कोईभी अच्छा नहीं कहता ॥ ८ ॥

दोहा—काम क्रोध मद लोभ सब, नाथ नरक कर पन्थ ॥
सब परिहरि रघुबीरपद, भजहु कहहिँ सदग्रंथ ॥ ३८ ॥

हे नाथ ! ये सदग्रंथ यानी वेदआदि शास्त्र ऐसे कहते है कि काम, क्रोध, मद और लोभ ये सब नरकके मार्ग है. इसवास्ते इन्हें छोंड़कर रामचन्द्रजीके चरणोंकी सेवा करो ॥ ३८ ॥

तात राम नहिँ नर भूपाला ॥ भुवनेश्वर कालहुके काला ॥ १ ॥ ❋
ब्रह्म अनामय अज भगवन्ता ॥ ब्यापक अजित अनादि अनंता ॥ २ ॥

हे तात ! राम मनुष्य और राजा नहीं है, किंतु वे साक्षात् त्रिलोकीनाथ और कालकेभी काल है ॥१॥ जो साक्षात् परब्रह्म, निर्विकार, अजन्मा, सर्वव्यापक, अजेय आदि और अंतरहित भगवान् है ॥ २ ॥

गो द्विज धेनु देव हितकारी ॥ कृपासिन्धु मानुपतनुधारी ॥ ३ ॥ ❋
जनरंजन भंजन खल भ्राता ॥ वेदधर्मरक्षक सुरत्राता ॥ ४ ॥ ❋

वे कृपासिंधु गौ ब्राह्मण देवता और पृथ्वीका हित करनेके लिये, लोगोंको राजी करनेके लिये, दुष्टोंके दलका संहार करनेके लिये, वेद और धर्मकी रक्षा करनेके लिये तथा देवताओंको त्राण करनेके लिये प्रगट हुए है ॥ ३ ॥ ४ ॥

ताहि बैर तजि नाइय माथा ॥ प्रणतारतिभंजन रघुनाथा ॥ ५ ॥ ❋
देहु नाथ प्रभुकहँ बैदेही ॥ भजहु राम बिनु काम सनेही ॥ ६ ॥ ❋

सो शरणागतोंके संकट मिटानेवाले उन रामचन्द्रजीको बैर छोंड़कर प्रणाम करो ॥ ५ ॥ हे नाथ ! रामचन्द्रजीको सीता दे दो और कामना छोड़कर स्नेह रखनेवाले रामका भजन करो ॥ ६ ॥

शरण गये प्रभु ताहु न त्यागा ॥ विश्वद्रोह कृत अघ जेहिँ लागा ॥ ७ ॥ ❋
जासु नाम त्रयताप नशावन ॥ सोइ प्रभु प्रगट समुझु जिय रावण ॥ ८ ॥

हे नाथ ! वे शरण जानेपर ऐसे अधर्मीकोभी नहीं त्यागते कि जिसको विश्वद्रोह करनेका पाप लगा हो ॥ ७ ॥ हे रावण ! आप अपने मनमें निश्चय समझो कि जिनका नाम लेनेसे तीनों प्रकारके ताप निवृत्त हो जाते हैं, वेही प्रभु आज पृथ्वीपर प्रगट हुए हैं ॥ ८ ॥

दोहा—बार बार पद लागऊं, बिनय करौं दशशीश ॥ ❋
परिहरि मान मोह मद, भजहु कोशलाधीश ॥ ३९ ॥ ❋

हे रावण ! मैं आपसे बारंबार पावोंमें पड़कर बिनती करता हूं, सो मेरी बिनती सुनकर आप मान मोह और मदको छोंड़कर श्रीरामचन्द्रजीकी सेवा करो ॥ ३९ ॥

" मुनि पुलस्त्य निज शिष्य सन, कहि पठई यह बात ॥ ❋
तुरत सो मैं तुमनस कही, पाय सुअँवसर तात' ॥ ४० ॥ ❋

"पुलस्त्यऋषिने अपने शिष्यको भेजकर यह बात कहला भेजीथी, सो अँवसर पाकर यह बात हे रावण ! मैंने आपसे कही है ॥ ४० ॥"

माल्यवंत अति सचिव सयाना ॥ तासु बचन सुनि अति सुख माना ॥ १ ॥
तात अनुज तव नीति विभूषण ॥ सोइ उर धरहु जो कहत बिभीषण ॥ २ ॥

वहां माल्यवान नाम एक सुबुद्धि मंत्री बैठा हुआ था. वह बिभीषणके वचन सुनकर अतिप्रसन्न हुआ ॥ १ ॥ और उसने रावणसे कहा कि—हे तात ! आपका छोटा भाई बड़ा नीति जाननेवाला है, इसवास्ते बिभीषण जो बात कहता है उसी बातको आप अपने मनमें धारण करो ॥ २ ॥

रिपु उतकर्ष कहत शठ दोऊ ॥ दूर न करहु इहाँते कोऊ ॥ ३ ॥ ❋
माल्यवंत गृह गयउ बहोरी ॥ कहइ बिभीषण पुनि कर जोरी ॥ ४ ॥ ❋

माल्यवानकी यह बात सुनकर रावणने कहा कि—हे राक्षसो ! ये दोनों नीच शत्रुकी बड़ाई करते हैं, तिनको तुममेंसे कोइभी यहांसे निकाल नहीं देते यह क्या बात है ? ॥ ३ ॥ तब माल्यवान तो उठकर अपने घरको चला गया और बिभीषणने हाथ जोड़कर फिर अरज करी ॥ ४ ॥

सुमति कुमति सबके उर रहई ॥ नाथ पुराण निगम अस कहई ॥ ५ ॥ ❋
जहां सुमति तहँ संपति माना ॥ जहां कुमति तहँ बिपति निदाना ॥ ६ ॥ ❋

कि—हे नाथ ! वेद और पुराणमें ऐसा कहा है कि—सुबुद्धि और कुबुद्धि सबके मनमें रहती है ॥ ५ ॥ जहां सुमति है वहीं संपदा है और जहां कुबुद्धि है वहां बिपत्ति है ॥ ६ ॥

तव उर कुमति बसी बिपरीती ॥ हित अनहित मानत रिपुप्रीती ॥ ७ ॥ ❋
कालरात्रि निशिचरकुलकेरी ॥ तेहि सीतापर प्रीति घनेरी ॥ ८ ॥ ❋

हे रावण ! आपके हृदयमें कुबुद्धि आ बसी है, इसीसे आप हित और अहितको विपरीत मानते हो कि जिसमें शत्रुकी प्रीति होती है ॥ ७ ॥ जो राक्षसोंके कुलकी कालरात्रि है, उस सीतापर आपकी बहुत प्रीति है. यह कुबुद्धि नहीं तो और क्या है ? ॥ ८ ॥

दोहा—तात चरण गहि मांगउँ, राखहु मोर दुलार ॥ ❋
सीता देहु रामकहँ, अति हित होइ तुम्हार ॥ ४१ ॥ ❋

हे तात ! मैं चरण पकरकर आपसे प्रार्थना करता हूं सो मेरी प्रार्थना अंगीकार करो. आप सीता रामचंद्रजीको दे दो, जिससे आपका बहुत भला होगा ॥ ४१ ॥

बुध-पुराण-श्रुति-संमत बानी ॥ कही बिभीषण नीति बखानी ॥ १ ॥ ❋
सुनत दशानन उठा रिसाई ॥ खल तोहिँ मृत्यु निकट चलिआई ॥ २ ॥

सयाने बिभीषणने नीतिको कहकर वेद और पुराणके संमत वाणी कही ॥ १ ॥ जिसको सुनकर रावण गुस्सा होकर उठ खड़ा हुआ और बोला कि—हे दुष्ट ! तेरी मृत्यु निकट आगयी दीखती है ॥ २ ॥

जिअसि सदा शठ मोर जिआवा ॥ रिपुकर पक्ष सदा तोहिँ भावा ॥ ३ ॥

कहसि न खल अस को जगमाहीं ॥ भुजबल जेहिँ जीते हम नाहीं ॥ ४ ॥

हे नीच! सदा तू जीविका तो मेरी पाता है और शत्रुका पक्ष तुझको सदा अच्छा लगता है? ॥ ३ ॥ हे दुष्ट! तू यह नहीं कहता कि जिसको हमने हमारे भुजबलसे नहीं जीता ऐसा जगत्में कौन है? ॥ ४ ॥

ममपुर बसि तपसीसन प्रीती ॥ शठ मिलु जाहि ताहि कह नीती ॥ ५ ॥

अस कहि कीन्हेसि चरणप्रहारा ॥ अनुज गहे पद बारहिँ बारा ॥ ६ ॥

हे शठ! मेरी नगरीमे रहकर जो तू तपस्वीसे प्रीति करता है, तो हे नीच! उससे जा मील और उसीसे नीतिका उपदेश कर ॥ ५ ॥ ऐसे कहकर रावणने लातका प्रहार किया; परंतु बिभीषणने तो इतनेपरभी बारंबार पैरही पकडे ॥ ६ ॥

उमा संतकी यही बड़ाई ॥ मंद करत जो करै भलाई ॥ ७ ॥

तुम पितुसरिस भले मोहिँ मारा ॥ राम भजे हित होइ तुम्हारा ॥ ८ ॥

सचिव संग लै नभपथ गयऊ ॥ सबहिँ सुनाइ कहत अस भयऊ ॥ ९ ॥

हे पार्वती! सत्पुरुषोंकी यही तो बड़ाई है कि, बुराकरनेपरभी वे तो पीछी उसकी भलाईही करते है ॥ ७ ॥ बिभीषणने कहा कि–हे रावण! आप मेरे पिताके बराबर हो, इसवास्ते आपने जो मुझको मारा वह ठीकठीक है. परंतु आपका भला तो रामचन्द्रजीके भजनसेही होगा ॥ ८ ॥ ऐसे कहकर बिभीषण अपने मंत्रियोंको संग लेकर आकाशमार्ग गया और जातेसमय सबको सुनाकर ऐसे कहता भया ॥ ९ ॥

दोहा–राम सत्यसंकल्प प्रभु, सभा कालबश तोरि ॥
मैं रघुनायक शरण अब, जाउँ देहु जनि खोरि ॥ ४२ ॥

कि–हे रावण! प्रभु-रामचन्द्रजी सत्यप्रतिज्ञ है और तेरी सभा कालके आधीन है. और मैं अब रामचन्द्रजीके शरण जाता हूं, सो मुझको अपराध मत लगाना ॥ ४१ ॥

अस कहि चला बिभीषण जबहीं ॥ आयुहीन भे निशिचर तबहीं ॥ १ ॥

साधु अवज्ञा तुरत भवानी ॥ कर कल्याण अखिल कर हानी ॥ २ ॥

जिस वक्त बिभीषण ऐसे कहकर लंकासे चला, उसीसमय तमाम राक्षस आयुहीन हो गये ॥ १ ॥ महादेवजीने कहा कि–हे पार्वती! साधु पुरुषोंकी अवज्ञा करनी ऐसीही बुरी है कि, वह तुरंत तमाम कल्याणको नाश कर देती है ॥ २ ॥

रावण जबहिँ बिभीषण त्यागा ॥ भयो बिभव बिनु तबहिँ अभागा ॥ ३ ॥

चलेउ हर्षि रघुनायक पाहीं ॥ करत मनोरथ बहु मनमाहीं ॥ ४ ॥

रावणने जिस समय बिभीषणका परित्याग किया, उसीक्षण वह मंदभागी विभवहीन हो गया ॥ ३ ॥ बिभीषण मनमें अनेक प्रकारके मनोरथ करता हुआ आनंदके साथ रामचन्द्रजीके पास चला ॥ ४ ॥

देखिहौं जाइ चरणजलजाता ॥ अरुण मृदुल सेवक सुखदाता ॥ ५ ॥

जे पद परसि तरी ऋषिनारी ॥ दण्डक कानन पावनकारी ॥ ६ ॥

बिभीषण मनमें विचार करने लगा कि, आज जाकर मैं रघुनाथजीके भक्तलोगोंके सुखदायी

अरुण और सुकोमल चरणकमलोंके दर्शन करूंगा ॥५॥ कैसे हैं चरणकमल कि, जिनको परसकर गौतमऋषिकी स्त्री (अहल्या) ऋषिके शापसे पार उतरी. जिनसे दंडकबन पवित्र हुआ है ॥६॥

जे पद जनकसुता उर लाये ॥ कपट कुरंग संग धरि धाये ॥ ७ ॥ ❋
हर उर सर सरोज पद जोई ॥ अहो भाग्य मैं देखब सोई ॥ ८ ॥ ❋

जिनको सीताजी अपने हृदयमें सदा लगाये रहतीं है जो कपटी हरिण (मारीच राक्षस) के पीछे दौरे ॥ ७ ॥ जो महादेवजीके हृदयरूप तड़ागके भीतर कमलरूप हैं. उन चरणोंको जाकर मैं देखूंगा. अहो मेरा बड़ा भाग्य है ॥ ८ ॥

दोहा-जिन पाँयन कर पादुका, भरत रहे मन लाइ ॥ ❋
ते पद आजु बिलोकिहौं, इह नयनन अब जाइ ॥ ४३ ॥ ❋

जिन चरणोंकी पादुकावोंमे भरतजीने रातदिन मन लगाये हैं. आज मैं जाकर इन्हीं नेत्रोंसे उन चरणोंको देखूंगा ॥ ४३ ॥

यहिविधि करन सप्रेम बिचारा ॥ आयेउ सपदि सिन्धुके पारा ॥ १ ॥ ❋
कपिन्ह बिभीषण आवत देखा ॥ जानेउ कोउ रिपुदूत विशेखा ॥ २ ॥ ❋

बिभीषण इस प्रकार प्रेमसहित अनेक प्रकारके विचार करताहुआ तुरंत समुद्रके परले पार आया ॥ १ ॥ बानरोंने बिभीषणको आता देखकर जाना कि, यह कोई शत्रुका दूत (वकील) है ॥ २ ॥

ताहि राखि कपिपति पहँ आये ॥ समाचार सब जाइ सुनाये ॥ ३ ॥ ❋
कह सुग्रीव सुनिय रघुराई ॥ आवा मिलन दशानन भाई ॥ ४ ॥ ❋

बानर उसको वहीं रखकर सुग्रीवके पास आये और जाकर उसके सब समाचार सुग्रीवको सुनाये ॥ ३ ॥ तब सुग्रीवने जाकर रामचन्द्रजीसे कहा कि-हे प्रभु ! रावणका भाई आपसे मिलनेको आया है ॥ ४ ॥

कह प्रभु सखा बूझिये काहा ॥ कहै कपीश सुनहु नरनाहा ॥ ५ ॥ ❋
जानि न जाय निशाचरमाया ॥ कामरूप केहि कारण आया ॥ ६ ॥ ❋

तब रामचन्द्रजीने कहा कि-हे सखा ! मुझको क्यों पूंछते हो ? तब सुग्रीवने रामचन्द्रजीसे कहा कि-हे नरनाथ ! सुनो ॥ ५ ॥ राक्षसोंकी माया जाननेमें नहीं आ सकती. इसीवास्ते यह नहीं कह सक्ते कि, यह मनवांछित रूप धरकर यहां क्यों आया है ॥ ६ ॥

भेद हमार लेन शठ आवा ॥ राखिय बाँधि मोहिँ अस भावा ॥ ७ ॥ ❋
सखा नीति तुम नीकि बिचारी ॥ मम प्रण शरणागत भयहारी ॥ ८ ॥ ❋
सुनि प्रभुबचन हर्ष हनुमाना ॥ शरणागतवत्सल भगवाना ॥ ९ ॥ ❋

मेरे मनमें तो यह जँचता है कि, यह शठ हमारा भेद लेनेको आया है. इसवास्ते इसको बांधकर रख देना चाहिये ॥ ७ ॥ तब रामचन्द्रजीने कहा कि-हे सखा ! तुमने यह नीति बहुत अच्छी विचारी परंतु मेरा प्रण शरणागतोंका. भय मिटानेका है ॥ ८ ॥ रामचन्द्रजीके ये वचन सुनकर हनुमानको बड़ा आनंद हुआ कि, भगवान सच्चे शरणागतवत्सल हैं ॥ ९ ॥

दोहा–शरणागत कहँ जे तजहिँ, निज अनहित अनुमानि ॥
ते नर पामर पापमय, तिनहिँ बिलोकत हानि ॥ ४४ ॥

कहा है कि–जो आदमी अपने अहितको बिचारकर शरणागतको त्याग देते हैं, उन आदमियों को पामर (पागल) और पापरूप जानना चाहिये, क्योंकि उनको देखनेहीमें हानि होती है ॥ ४४ ॥

कोटि बिप्रबध लागहिँ जाहू ॥ आये शरण तजौं नहिँ ताहू ॥ १ ॥
सन्मुख होइ जीव मोहिँ जबहीं ॥ जन्म कोटि अघ नाशौं तबहीं ॥ २ ॥

प्रभुने कहा कि–चाहे कोई महापापी होवे यानी जिसको करोड़ ब्रह्महत्याका पाप लगा हुआ होवे और वहभी यदि मेरे शरण चलाआवे तौ मैं उसको किसी कदर छोड़ नहीं सकता ॥ १ ॥ यह जीव जब मेरे सन्मुख हो जाता है, तब मैं उसको करोड़ जन्मोंके पापोंका नाश कर देता हूं ॥ २ ॥

पापवन्त कर सहज सुभाऊ ॥ भजन मोर तेहि भाव न काऊ ॥ ३ ॥
जो पै दुष्ट हृदय सो होई ॥ मोरे सन्मुख आव कि सोई ॥ ४ ॥

पापी पुरुषोंका यह सहज स्वभाव है कि, उनको किसी प्रकारसे मेरा भजन अच्छा नहीं लगता ॥ ३ ॥ हे सुग्रीव ! जो पुरुष दुष्टहृदय होगा क्या वह मेरे सन्मुख आ सकेगा ? कदापि नहीं ॥ ४ ॥

निर्मल मन जन सो मोहिँ पावा ॥ मोहिँ कपट छल छिद्र न भावा ॥ ५ ॥
भेद लेन पठवा दशशीशा ॥ तबहुँ न कछु भय हानि कपीशा ॥ ६ ॥

हे सुग्रीव ! जो आदमी निर्मल अंतःकरणवाला होगा वही मुझको पावेगा, क्योंकि मुझको छल छिद्र और कपट कुछभी अच्छा नहीं लगता ॥ ५ ॥ कदाचित् रावणने इसको भेद लेनेके वास्ते भेजा होगा तौभी हे सुग्रीव ! हमको उसका न तौ कुछ भय है और न किसी प्रकारकी हानि है ॥ ६ ॥

जगमहँ सखा निशाचर जेते ॥ लक्ष्मण हनहिँ निमिषमहँ तेते ॥ ७ ॥
जो सभीत आवा शरणाई ॥ रखिहौं ताहि प्राणकी नाई ॥ ८ ॥

क्योंकि जगतमें जितने राक्षस है उन सबोंको लक्ष्मण एक क्षणभरमें मार डालेगा ॥ ७ ॥ और उनमेंसे भयभीत होकर जो मेरे शरण आजायगा उसको तौ मैं मेरे प्राणके बराबर राखूंगा ॥ ८ ॥

दोहा–उभय भांति लै आवहू, हँसि कह कृपानिधान ॥
जय कृपालु कहि कपि चले, अंगदादि हनुमान ॥ ४५ ॥

हँसकर कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि–हे सुग्रीव ! चाहो वह शुद्ध मनसे आया हो, अथवा भेदबुद्धि विचारकर आया हो; दोनोंही तरहसे इसको यहां ले आओ. रामचन्द्रजीके ये बचन सुनकर अंगद और हनुमान् आदि सब बानर "हे कृपालु ! आपकी जय हो" ऐसे कहकर चले ॥ ४५ ॥

दोहा–" पूसबदी भूता दिवस, लाये करि सनमान ॥
कीन्हि दंडवत त्राहि कहि, प्रभुछबि देखि जुड़ान " ॥ ४६ ॥

पौष वदी १४ चतुर्दशीके दिन बानर सन्मानपूर्वक बिभीषणको रामचन्द्रजीके पास लाये. उस समय बिभीषणने 'त्राहिमां' ऐसे कहकर दंडवत् प्रणाम किया और प्रभुकी छबिको देखकर शीतल हो गया ॥ ४६ ॥

सादर तेहिँ आगे करि बानर ॥ चले जहां रघुपति करुणाकर ॥ १ ॥

दूरिहिं ते देखे दोउ भ्राता ॥ नयनानन्ददानके दाता ॥ २ ॥ ❀

वे वानर आदरसहित विभीषणको अपने आगे लेकर उस स्थानको चले कि, जहां करुणाकी खानि श्रीरघुनाथजी विराजमान थे ॥ १ ॥ विभीषणने नेत्रोंको आनन्द देनेवाले उन दोनों भाइयोंको दूरहीसे देखा ॥ २ ॥

बहुरि राम छबिधाम बिलोकी ॥ रहा सो ठाढ़ एक पग रोकी ॥ ३ ॥ ❀
भुज प्रलंब कंजारुण लोचन ॥ श्यामल गात प्रणत भयमोचन ॥ ४ ॥

फिर वह छबिके धाम श्रीरामचन्द्रजीको देखकर निमेषको रोकके एकटक देखता हुआ खड़ा रहा ॥ ३ ॥ श्रीरघुनाथजीका स्वरूप कैसा है ? जिसमें लंबी भुजा है. कमलसे लाल नेत्र है. मेघसा सघन श्याम शरीर है, जो शरणागतोंके भयके मिटानेवाला है ॥ ४ ॥

सिंहकन्ध आयत उर सोहा ॥ आनन अमित मदन छबि मोहा ॥ ५ ॥ ❀
नयन नीर पुलकित अति गाता ॥ मन धरि धीर कही मृदु बाता ॥ ६ ॥

जिसमें सिंहकेसे कंधे हैं. विशाल वक्षःस्थल शोभायमान है. मुखकमल ऐसे है कि जिसकी छबिको देखकर असंख्यात कामदेव मोहित हो जाते है ॥ ५ ॥ उस स्वरूपका दर्शन होतेही बिभीषणके नेत्रोंमें जल आगया. शरीर पुलकावलीसे व्याप्त होगया. तथापि उसने मनमें धीरज धरकर ये सुकोमल वचन कहे ॥ ६ ॥

निशिचरवंश जनम सुरत्राता ॥ नाथ दशानन कर मैं भ्राता ॥ ७ ॥ ❀
सहज पापप्रिय तामस देहा ॥ यथा उलूकहिं तमपर नेहा ॥ ८ ॥ ❀

कि- हे देवताओंके मालक ! मेरा राक्षसोंके वंशमें तो जन्म है और हे नाथ ! मैं रावणका भाई हूं ॥ ७ ॥ स्वभावसेही पाप मुझको प्रिय लगता है और यह मेरा तामस शरीर है, सो यह बात ऐसी है कि जैसे उलूकका अंधकारपर सदा स्नेह रहता है, ऐसे मेरा पापपर प्यार है ॥ ८ ॥

दोहा-श्रवण सुयश सुनि आयउँ, प्रभु भंजन भय भीर ॥ ❀
त्राहि त्राहि आरत हरण, शरणसुखद रघुबीर ॥ ४७ ॥ ❀

तथापि हे प्रभु ! हे भय और संकटके मिटानिहारे ! कानोंसे आपका सुजस सुनकर आपके शरण आया हूं सो हे आर्ति (दुःख) हरणहार ! हे शरणागतोंके सुख देनहारे प्रभु ! मेरी रक्षा करो, रक्षा करो ॥ ४७ ॥

अस कहि करत दण्डवत देखा ॥ तुरत उठे प्रभु हर्ष बिशेखा ॥ १ ॥ ❀
दीन बचन सुनि प्रभु मन भावा ॥ भुज विशाल गहि हृदय लगावा ॥ २ ॥

ऐसे कहतेहुए बिभीषणको दंडवत् करते देखकर प्रभु बड़े आल्हादके साथ तुरत उठ खड़े हुए ॥ १ ॥ और बिभीषणके दीन बचन सुनकर प्रभुके मनमें वह बहुत भावा और उसीसे प्रभुसे अपनी विशाल भुजासे उसको उठाकर अपनी छातीसे लगाया ॥ २ ॥

अनुज सहित मिलि ढिग बैठारी ॥ बोले बचन भक्तहितकारी ॥ ३ ॥ ❀
कहु लंकेश सहित परिवारा ॥ कुशल कुठाहर बास तुम्हारा ॥ ४ ॥ ❀

लक्ष्मणसहित प्रभुने उससे मिलकर उसको अपने पास बिठाया. फिर भक्तोंके हित करनेवाले

प्रभुने ये बचन कहे ॥ ३ ॥ कि–हे लंकेश विभीषण ! आपके परिवारसहित कुशल तो है ? क्योंकि आपका रहना कुमार्गियोंके बीचमें है ॥ ४ ॥

खलमण्डली बसहु दिनराती ॥ सखा धर्म निबहै केहिभांती ॥ ५ ॥
मैं जानी तुम्हारि सब रीती ॥ अतिशय निपुण न भाव अनीती ॥ ६ ॥

रात दिन दुष्टोंकी मंडलीके बीच रहते हो इससे हे सखा ! आपका धर्म कैसे निबहता होगा ? ॥ ५ ॥ मैंने तुम्हारी सब गति जानली है. तुम बड़े विचक्षण हो और तुम्हारा अभिप्राय अन्यायपर नहीं है ॥ ६ ॥

बरु भल बास नरक कर ताता ॥ दुष्टसंग जनि देहि बिधाता ॥ ७ ॥
अब पद देखि कुशल रघुराया ॥ जो तुम्ह कीन्ह जानि जन दाया ॥ ८ ॥

रामचन्द्रजीके ये बचन सुनकर बिभीषणने कहा कि–हे प्रभु ! चाहे नरकमें रहना अच्छा है, परंतु दुष्टकी संगति अच्छी नहीं. इसलिये हे बिधाता ! कभी दुष्टकी संगति मत देओ ॥ ७ ॥ हे रघुनाथजी ! आपने अपना जन जानकर जो मुझकर दया करी जिससे आपके दर्शन हुए सो हे प्रभु ! अब मैं आपके चरणोंका दर्शन करनेसे कुशल हूं ॥ ८ ॥

दोहा–तब लगि कुशल न जीव कहँ, सपनेहुँ मन बिश्राम ॥
जब लगि भजन न रामके, शोक धाम तजि काम ॥ ४८ ॥

हे प्रभु ! यह मनुष्य जबलों शोकके धामरूप काम अर्थात लालसाको छोड़कर श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंकी सेवा नहीं करता तबलों इस जीवको स्वप्नमेंभी न तो कुशल है और न कहीं मनको बिश्राम है ॥ ४८ ॥

तब लगि हृदय बसत खल नाना ॥ लोभ मोह मत्सर मद माना ॥ १ ॥
जब लगि उर न बसत रघुनाथा ॥ धरे चाप सायक कटि भाथा ॥ २ ॥

जबलों धनुषबाण धारण किये और कमरमें तरकस कसे हुए श्रीरामचन्द्रजी हृदयमें आकर नहीं बिराजते तबलों लोभ, मोह मत्सर, मद और मान ये अनेक दुष्ट हृदयके भीतर निवास कर सकते हैं और जब आप आकर हृदयमें बिराजते हो, तब ये सब भाग जाते है ॥ १ ॥ २ ॥

ममता तिमिर तरुण अँधियारी ॥ राग द्वेष उलूक सुखारी ॥ ३ ॥
तब लगि बसत जीव उर माहीं ॥ जब लगि प्रभु प्रताप रवि नाहीं ॥ ४ ॥

जबलों जीवके हृदयमें प्रभुका प्रतापरूप सूर्य उदय नहीं होता, तबलों रागद्वेषरूप उलूकको सुख देनेवाली ममतारूप सघन अंधकारमय अँधियारी रात्रि रहा करती है ॥ ३ ॥ ४ ॥

अब मैं कुशल मिटे भय भारे ॥ देखि राम पदकमल तुम्हारे ॥ ५ ॥
तुम कृपालु जापर अनुकूला ॥ ताहि न व्याप त्रिविध भय शूला ॥ ६ ॥

हे राम ! अब मैंने आपके चरणकमलोंका दर्शन कर लिया है इससे अब मैं कुशल हूं और मेरा बिकट भयभी निवृत्त हो गया है ॥ ५ ॥ हे प्रभु ! हे दयालु ! आप जिसपर अनुकूल रहते हो उसको तीनही प्रकारसे भय और दुःख कभी नहीं व्यापते ॥ ६ ॥

मैं निशिचर अति अधम सुभाऊ ॥ शुभआचरण कीन्ह नहिं काऊ ॥ ७ ॥

जो स्वरूप मुनि ध्यान न पावा ॥ सो प्रभु हर्षि हृदय मोहिँ लावा ॥ ८ ॥

हे प्रभु ! मैं जातिका राक्षस हूं. मेरा स्वभाव अति अधम है. मैंने कोईभी शुभ आचरण नहीं किया है ॥ ७ ॥ तिसपरभी प्रभुने कृपा करके आनंदसे मुझको छातीसे लगाया कि, जिस प्रभुके स्वरूपको ध्यान पाना मुनिलोगोंको कठिन है ॥ ८ ॥

दोहा–अहो भाग्य मम अमित अति, रामकृपा सुखपुंज ॥ ❋
देखेउँ नयन बिरंचि शिव, सेव्य युगुल पदकंज ॥ ४९ ॥ ❋

सुखकी राशि श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे अहो ! आज मेरा भाग्य बड़ा अमित और अपार है; क्योंकि ब्रह्माजी और महादेवजी जिस चरणारविन्दयुगुलकी सेवा करते है, उस चरणकमलका मैंने मेरे नेत्रोंसे दर्शन किया ॥ ४९ ॥

सुनहु सखा निज कहहुँ सुभाऊ ॥ जान भुशुंडि शंभु गिरिजाऊ ॥ १ ॥ ❋
जो नर होइ चराचरद्रोही ॥ आवै सभय शरण तकि मोही ॥ २ ॥ ❋

बिभीषणकी भक्ति देखकर रामचंद्रजीने कहा कि–हे सखा ! मैं मेरा स्वभाव कहता हूं सो तू सुन. मेरे स्वभावको या तो काकभुशुंडी जाने है या महादेवजी जाने है या पार्वती जाने है. इनके शिवाय दूसरा कोइ नहीं जानता ॥ १ ॥ प्रभु कहते है कि–जो मनुष्य चराचरसे द्रोह रखता होवे और वहभी जो भयभीत होके मेरे शरण आजाय तो ॥ २ ॥

तजि मद मोह कपट छल नाना ॥ करौं सखा तेहि साधु समाना॥ ३ ॥❋
जननी जनक बंधु सुत दारा ॥ तन धन भवन सुहृद परिवारा ॥ ४ ॥ ❋

मद, मोह, कपट और नानाप्रकारके छलको छोड़कर हे सखा ! मैं उसको साधु पुरुषके समान कर लेता हूं ॥ ३ ॥ देखो. माता, पिता, बंधु, पुत्र, स्त्री, तन, धन, घर, सुहृद और कुटुम्ब ॥ ४ ॥

सबके ममता ताग बटोरी ॥ ममपद मनहिँ बांधि बटि डोरी ॥ ५ ॥ ❋
समदरशी इच्छा कछु नाहीं ॥ हर्ष शोक भय नहिँ मनमाहीं ॥ ६ ॥ ❋

इन सबके ममतारूप तागोंको इकठा करके एक सुन्दर डोरी बट और उससे अपने मनको मेरे चरणोंमे बांध दे अर्थात् सबमेंसे ममता छोंड़कर केवल मेरेमें ममता रक्खे जैसे " त्वमेव मातासि पिता त्वमेव त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ॥ त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव त्वमेव सर्वं मम देव देव " ॥ ५ ॥ जो भक्त समदर्शी है और जिसके किसी प्रकारकी इच्छा नहीं है तथा जिसके मनमें हर्ष, शोक और भय नहीं है ॥ ६ ॥

अस सज्जन मम उर बस कैसे ॥ लोभी हृदय बसत धन जैसे ॥ ७ ॥ ❋
तुम सारिखे संत प्रिय मोरे ॥ धरौं देह नहिँ आन निहोरे ॥ ८ ॥ ❋

ऐसे सत्पुरुष मेरे हृदयमें कैसे रहते है कि, जैसे लोभी आदमीके मनमें धन सदा बसा रहता है ॥ ७ ॥ हे बिभीषण ! तुम्हारे जैसे जो प्यारे सन्त भक्त हैं, उन्हीके अर्थ मैं देह धारण करता हूं और दूसरा मेरा कुछभी प्रयोजन नहीं है ॥ ८ ॥

दोहा–सगुण उपासक परमहित, निरत नीति दृढ़ नेम ॥ ❋
ते नर प्राणसमान मोहिँ, जिनके द्विजपद प्रेम ॥ ५० ॥ ❋

जो लोग सगुण उपासना करते है, बड़े हितकारी है, नीतिमें निरत है; नियमें दृढ़ है और जिनकी ब्राह्मणोंके चरणकमलोंमें प्रीति है, वे मनुष्य मुझको प्राणके समान प्यार लगते है ॥ ५० ॥

सुनु लंकेश सकल गुण तोरे ॥ तातें तुम अतिशय प्रिय मोरे ॥ १ ॥
रामबचन सुनि बानरयूथा ॥ सकल कहहिं जय कृपावरूथा ॥ २ ॥

हे लंकेश ! सुनो, आपमे सब गुण हे और उसीसे आप मुझको अतिशय प्यार लगते हो ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीके ये बचन सुनकर तमाम बानरोंके यूथ कहने लगे कि–हे कृपाके पुंज ! आपकी जय हो ॥ २ ॥

सुनत बिभीषण प्रभुकर बानी ॥ नहिँ अघात श्रवणामृत जानी ॥ ३ ॥
पद अम्बुज गहि बारहिँ बारा ॥ हृदय समात न प्रेम अपारा ॥ ४ ॥

और बिभीषणभी प्रभुकी बाणीको सुनता हुआ उसको कर्णामृतरूप जानकर तृप्त नहीं होता था ॥ ३ ॥ और बारंबार रामचन्द्रजीके चरणकमल धरकर ऐसा आल्हादित हुआ कि, वह अपार प्रेम हृदयके अंदर नहीं समाया ॥ ४ ॥

सुनहु देव सचराचर स्वामी ॥ प्रणतपाल उर अन्तरयामी ॥ ५ ॥
उर कछु प्रथम बासना रहेऊ ॥ प्रभुपद प्रीति सरित सो बहेऊ ॥ ६ ॥

इस दशाको शोधकर (पहुंचकर) बिभीषणने कहा कि–हे देव ! चराचरसहित संसारके स्वामी ! हे शरणागतोंके पालक ! हे हृदयके अंतर्यामी ! सुनो ॥ ५ ॥ पहले मेरे जो कुछ बासना थी, वहभी आपके चरणकमलोंकी प्रीतिरूप नदीसे बह गयी ॥ ६ ॥

अब कृपालु निजभक्ति पावनी ॥ देहु दया करि शंभुभावनी ॥ ७ ॥
एवमस्तु कहि प्रभु रणधीरा ॥ माँगा तुरत सिन्धुकर नीरा ॥ ८ ॥

हे कृपालु ! अब आप दया करके मुझको आपकी वो पावन करनहारी भक्ति देओ कि, जिसको महादेवजी सदा धारण किया करते है ॥ ७ ॥ रणधीर रामचन्द्रजीने 'एवमस्तु' ऐसे कहकर तुरत समुद्रका जल मँगवाया ॥ ८ ॥

यदपि सखा तोहिँ इच्छा नाहीं ॥ मम दर्शन अमोघ जगमाहीं ॥ ९ ॥
अस कहि राम तिलक तेहिँ सारा ॥ सुमनवृष्टि नभ भयउ अपारा ॥ १० ॥

और कहा कि–हे सखा ! यदपि तेरे किसी बातकी इच्छा नहीं है, तथापि जगतमें मेरा दर्शन अमोघ है यानी निष्फल नहीं है ॥ ९ ॥ ऐसे कहकर प्रभुने बिभीषणको राजतिलक करदिया. उस समय आकाशमेंसे अपार पुष्पोंकी वर्षा हुई ॥ १० ॥

दोहा–रावणक्रोधानलसरिस, श्वाससमीरप्रचण्ड ॥
जरत बिभीषण राखेउ, दीन्हेउ राज अखण्ड ॥ ५१ ॥

रावणका क्रोध तो अग्निके समान है और उसका श्वास प्रचंड पवनके तुल्य है, उससे जलतेहुए बिभीषणको बचाकर प्रभुने उसको अखंड राज दिया ॥ ५१ ॥

जो सम्पति शिव रावणहिँ, दीन्ह दिये दशमाथ ॥
सो संपदा बिभीषणहिँ, सकुचि दीन्ह रघुनाथ ॥ ५२ ॥

महादेवजीने दश माथे देनेपर रावणको जो संपदा दी थी वह संपदा कम समझकर रामचन्द्रजीने बिभीषणको संकोचके साथ दी ॥ ५२ ॥

अस प्रभु छाँड़ि भजहिं जे आना ॥ ते नर पशु बिनु पूंछ बिषाना ॥ १ ॥
निज जन जानि ताहि अपनावा ॥ प्रभु स्वभाव कपिकुल मनभावा ॥ २ ॥

ऐसे प्रभुको छोड़कर जो आदमी दूसरेको भजते है, वे मनुष्य बिना सींग पूंछके पशु हैं ॥ १ ॥ प्रभुने बिभीषणको अपना भक्त जानकर जो अपनाया यह प्रभुका स्वभाव सब वानरोंको अच्छा लगा ॥२॥

पुनि सर्वज्ञ सर्वउरबासी ॥ सर्वरूप सबरहित उदासी ॥ ३ ॥ ❋
"प्रात पंचमी दिवस खरारी ॥ सचिवन लियो बुलाय पुकारी" ॥ ४ ॥ ❋

यद्यपि प्रभु भक्तका इतना पक्षपात करते है तथापि फिर प्रभु तो सदा सर्वज्ञ सबके घटमें रहनेवाले, सर्वरूप, सर्वरहित और सदा उदासीनही है ॥ ३ ॥ "पंचमीके दिन प्रातःकालमें प्रभुने सब मंत्रियोंको पुकारकर बुलाया" ॥ ४ ॥

बोले वचन नीति प्रतिपालक ॥ कारणमनुज दनुजकुलघालक ॥ ५ ॥ ❋
सुनु कपीश लंकापति बीरा ॥ केहि बिधि उतरिय जलधि गँभीरा ॥ ६ ॥ ❋

और राक्षसकुलके संहार करनेवाले, नीतिको पालनेवाले, मायासे मनुष्यमूर्ति श्रीरामचन्द्रजीने सब मंत्रियोंसे कहा ॥ ७ ॥ कि—हे लंकेश ! हे बानरराज ! हे बीरपुरुषो ! सुनो, अब इस गंभीर समुद्रको पार कैसे उतरें वो युक्ति निकालो ? ॥ ६ ॥

संकुल उरग मकर झषजाती ॥ अति अगाध दुस्तर सब भाँती ॥ ७ ॥ ❋
कह लंकेश सुनहु रघुनायक ॥ कोटि सिन्धु शोषत तव सायक ॥ ८ ॥ ❋
यद्यपि तदपि नीति अस गाई ॥ बिनय करिय सागरपहँ जाई ॥ ९ ॥ ❋

क्योंकि यह समुद्र सर्प, मगर और अनेक जातिकी मछलियोंसे व्याप्त हो रहा है, बड़ा अथाह है इसीसे सब प्रकारसे मुझको तो दुस्तर मालूम होता है ॥ ७ ॥ उसवक्त लंकेश यानी बिभीषणने कहा कि—हे रघुनाथ ! सुनो, आपके बाण ऐसे है कि, जिनसे करोड़ों समुद्र सुख जांय. तब इस समुद्रका क्या भार है ? ॥ ८ ॥ यद्यपि पराक्रमकी राहसे देखे तब तो यह बात है तथापि नीतिमें ऐसा कहा है कि—पहले साम बचनोंसे काम लेना चाहिये इसवास्ते समुद्रके पास पधारकर आप बिनती करो ॥ ९ ॥

दोहा—प्रभु तुम्हार कुलगुरु जलधि, कहहिं उपाय बिचारि ॥ ❋
बिनुप्रयास सागर तरहिं, सकल भालु कपि धारि ॥ ५३ ॥ ❋

बिभीषण कहता है कि—हे प्रभु ! यह समुद्र आपका कुलगुरु है सो बिचारकर अवश्य उपाय कहेगा और उपायको धरकर ये बानर और रीछ बिनाही परिश्रम समुद्रके पार हो जांयगे ॥ ५३ ॥

सखा कह्यो तुम नीक उपाई ॥ करब दैव जो होइ सहाई ॥ १ ॥ ❋
मंत्र न यह लक्ष्मण मन भावा ॥ राम बचन सुनि अति दुख पावा ॥ २ ॥

बिभीषणकी यह बात सुनकर रामचन्द्रजीने कहा कि—हे सखा ! तुमने यह उपाय तो बहुत अच्छा बतलाया और हम इस उपायको करेंगेभी; परंतु यदि दैव सहाय होगा तो सफल होगा ॥ १ ॥

यह सलाह लक्ष्मणके मनको अच्छी नहीं लगी अतएव रामचन्द्रजीके बचन सुनकर लक्ष्मणने बड़ा दुख पाया ॥ २ ॥

नाथ दैवकर कवन भरोसा ॥ शोषिय सिन्धु करिय मन रोसा ॥ ३ ॥ ❀
कादर मनकर एक अधारा ॥ दैव दैव आलसी पुकारा ॥ ४ ॥ ❀

और लक्ष्मणने कहा कि–हे नाथ! दैवका क्या भरोसा है? आप तौ मनमें क्रोध लाकर समुद्रको सुखा दीजिये ॥ ३ ॥ दैवपर भरोसा रखना यह तौ कायर पुरुषोंके मनका एक आधार है; क्योंकि वेही आलसी लोग 'दैव करेगा सो होगा' ऐसा विचार कर दैव दैव करके पुकारते रहते हैं ॥ ४ ॥

सुनत बिहँसि बोले रघुबीरा ॥ ऐसेइ करब धरहु मन धीरा ॥ ५ ॥ ❀
अस कहि प्रभु अनुजहिँ समुझाई ॥ सिन्धु समीप गये रघुराई ॥ ६ ॥ ❀

लक्ष्मणके ये बचन सुनकर प्रभुने हँसकर कहा कि–हे भाई! मैं ऐसेही करूंगा, पर तू मनमें कुछ धीरज धर ॥ ५ ॥ प्रभु लक्ष्मणको ऐसे कह समझाय बुझाय समुद्रके निकट पधारे ॥ ६ ॥

प्रथम प्रणाम कीन्ह प्रभु जाई ॥ बैठे तट पुनि दर्भ डसाई ॥ ७ ॥ ❀
जबहिँ बिभीषण प्रभुपहँ आये ॥ पाछे रावण दूत पठाये ॥ ८ ॥ ❀

और प्रथमही प्रभुने जाकर समुद्रको प्रणाम किया और फिर दाभ बिछाकर उसके तटपर बिराजे ॥ ७ ॥ जब बिभीषण रामचन्द्रजीके पास चला आया, तब पीछेसे रावणने अपना दूत शुक भेजा॥ ८ ॥

दोहा–सकल चरित उन्ह देखेउ, धरे कपट कपिदेह ॥ ❀
प्रभुगुण हृदय सराहि अति, शरणागतपर नेह ॥ ५४ ॥ ❀

उस दूतने कपटसे वानरका रूप धरकर वहांका तमाम हाल देखा. तहां प्रभुका शरणागतोंपर अतिशय स्नेह देखकर उन्होंने अपने मनमें प्रभुके गुणोंकी बड़ी सराहना की ॥ ५४ ॥

प्रकट बखानत राम सुभाऊ ॥ अति सप्रेम गा बिसरि दुराऊ ॥ १ ॥ ❀
रिपुका दूत कपिन्ह जब जाना ॥ ताहि बांधि कपिपति पहँ आना ॥ २ ॥

और देखते २ प्रेम ऐसा बढ़ गया कि, वह छिपाना भूलकर रामचन्द्रजीके स्वभावकी प्रगटमें प्रशंसा करने लगा ॥ १ ॥ जब बानरोंने जाना कि, यह शत्रुका दूत है, तब उसे बांधकर सुग्रीवके पास लाये ॥ २ ॥

कह सुग्रीव सुनहु सह बनचर ॥ अंग भंग करि पठवहु निशिचर ॥ ३ ॥ ❀
सुनि सुग्रीव बचन कपि धाये ॥ बांधि कटक चहुँपास फिराये ॥ ४ ॥ ❀

सुग्रीवने देखकर कहा कि–हे वानरो! सुनो, इस दुष्ट राक्षसको अंग भंग करके पीछा पठा दो ॥ ३ ॥ सुग्रीवके ये वचन सुनकर सब वानर दौड़े फिर उसको बांधकर कटक (सेना) में चारों ओर फिराया ॥ ४ ॥

बहु प्रकार मारन कपि लागे ॥ दीन पुकारत तदपि न त्यागे ॥ ५ ॥ ❀
जो हमार हर नासा काना ॥ तेहि कोशलाधीश कर आना ॥ ६ ॥ ❀

जब बानर उसको अनेक प्रकारसे मारने लगे और वह अनेक प्रकारसे दीनकी भांति पुकारने

लगा तथापि बानरोंने उसको नहीं छोड़ा ॥ ५ ॥ तब उसने पुकार कर कहा कि–जो हमारी नाक कान काटते हैं उनको श्रीरामचन्द्रजीकी शपथ है ॥ ६ ॥

सुनि लक्ष्मण तेहिँ निकट बुलाई ॥ दया लागि हँसि दीन छुड़ाई ॥ ७ ॥ ❀
रावण कर दीन्हेउ यह पाती ॥ लक्ष्मणबचन बाचु कुलघाती ॥ ८ ॥ ❀

सेनामें खरभर सुनकर लक्ष्मणने उसको अपने पास बुलाया और दया आ जानेसे हँसकर लक्ष्मणने उसको छुड़ा दिया ॥ ७ ॥ एक पत्री लिखकर लक्ष्मणने उसको दी और कहा कि–यह पत्री रावणको देना और उस कुलघातीको कहना कि–ये लक्ष्मणके हितबचन बांचो ॥ ८ ॥

दोहा–कहेउ मुखागर मूढ़सन, मम सन्देश उदार ॥ ❀
सीता देहु मिलहु न तो, आवा काल तुम्हार ॥ ५५ ॥ ❀

और उस मूर्खसे मेरा बड़ा उदार सन्देशा मुंहसेभी कह देना कि या तो तू सीताको देदे और हमारे शरण आ जा, नहीं तो तेरा काल आया समझ ॥ ५५ ॥

तुरत नाइ लक्ष्मणपद माथा ॥ चला दूत बरणत गुणगाथा ॥ १ ॥ ❀
कहत रामयश लंका आवा ॥ रावणचरण शीश तिन्ह नावा ॥ २ ॥ ❀

लक्ष्मणके ये बचन सुन तुरंत लक्ष्मणके चरणोंमें शिर झुकाकर रामचन्द्रजीके गुणोंकी प्रशंसा करता हुआ वह वहांसे चला ॥ १ ॥ सो वह रामचन्द्रजीके जसको गाता हुआ लंकामें आया. रावणके पास जाकर उसने चरणोंमे प्रणाम किया ॥ २ ॥

बिहँसि दशानन पूंछेसि बाता ॥ कहसि न शुक आपनि कुशलाता ॥ ३ ॥
पुनि कहु कुशल बिभीषणकेरी ॥ जासु मृत्यु आई अति नेरी ॥ ४ ॥ ❀

उस समय रावणने हँसकर उससे पूंछा कि–हे शुक ! अपनी कुशलकी बात कहो ॥ ३ ॥ और फिर बिभीषणकी कुशल कहो, कि जिसकी मौत बहुत निकट आगयी है ॥ ४ ॥

करत राज लंका शठ त्यागा ॥ होइहि यवकर कीट अभागा ॥ ५ ॥ ❀
पुनि कहु भालु कीश कटकाई ॥ कठिन काल प्रेरित चलि आई ॥ ६ ॥ ❀

उस शठने लंकाको राज करते २ छोड़ दिया सो अब उस अभागेकी यवके घुनके समान दशा होगी अर्थात् जैसे जव पीसनेके साथ उसमेंका घुनभी पीस जाता है, ऐसे रामके साथ वहभी मारा जायगा ॥ ५ ॥ फिर कहो कि–रीछ और वानरोंकी सेना कैसी और कितनी है ? कि जो कठिन कालकी प्रेरणासे इधरको चली आती है ॥ ६ ॥

तिन्हके जीवन कर रखवारा ॥ भयउ मृदुल चित सिंधु बिचारा ॥ ७ ॥ ❀
कहु तपसिन्हकर बात बहोरी ॥ जिन्हके हृदय त्रास बड़ मोरी ॥ ८ ॥ ❀

हे शुक ! अभी उनके जीवकी रक्षा करनेवाला बिचारा कोमलहृदय समुद्र हुआ है सो कहो इससे कितने दिन बचेंगे ? ॥ ७ ॥ और फिर उन तपस्वियोंकी बात कहो कि, जिनके हृदयमें मेरी बड़ी त्रास बैठ रही है ॥ ८ ॥

दोहा–भई भेंट की फिरिगये, श्रवण सुयश सुनि मोर ॥ ❀
कहसि न रिपुदल तेजबल, कस चकित चित तोर ॥ ५६ ॥ ❀

हे शुक ! क्या तेरे उनसे भेंट हुई वा वे मेरी सुख्याति कानोंसे सुनकर पीछे लौट गये ? हे शुक ! तू शत्रुके दलका तेज और बल क्यों नहीं कहता ? तेरा चित्त चकितसा कैसे हो रहा है ? ॥ ५६ ॥

नाथ कृपा करि पूंछेहु जैसे ॥ मानहुँ बचन क्रोध तजि तैसे ॥ १ ॥ ❋
मिला जाइ जब अनुज तुम्हारा ॥ जातहिं राम तिलक तेहिं सारा ॥ २ ॥

रावणके ये वचन सुनकर शुकने कहा कि—हे नाथ ! जैसे आप कृपा करके पूंछते हो ऐसेही क्रोधको त्यागकर जो वचन मैं कहूं उसको मानो ॥ १ ॥ हे नाथ ! जिसवक्त आपका भाई रामसे जाकर मिला, उसीक्षण रामने उसके राजतिलक कर दिया है ॥ २ ॥

रावणदूत हमहिं सुनि काना ॥ कपिन्ह बाँधि दीन्हे दुख नाना ॥ ३ ॥ ❋
श्रवण नासिक काटन लागे ॥ रामशपथ दीन्हीं तब त्यागे ॥ ४ ॥ ❋

मैं वानरका रूप धरकर सेनाके भीतर घुसा सो फिरते २ वानरोंने जब मुझको आपका दूत जान लिया, तब उन्होंने मुझको बांधकर अनेक प्रकारका दुःख दिया ॥ ३ ॥ और मेरी नाक कान काटने लगे, जब मैंने उनको रामकी शपथ दी, तब उन्होंने मुझको छोड़ दिया ॥ ४ ॥

पूंछहु नाथ कीश कटकाई ॥ बदन कोटिशत बरणि न जाई ॥ ५ ॥ ❋
नाना बरण भालु कपि धारी ॥ बिकटानन बिशाल भयकारी ॥ ६ ॥ ❋

हे नाथ ! आप मुझको वानरोंकी सेनाके समाचार पूछते हो, सो वे सौ करोड़ मुखोंसे तौ कहेही नहीं जा सकते ॥ ५ ॥ हे रावण ! रीछ और वानर अनेक रंग धारण किये बड़े डरावने दीखते हैं, बड़े बिकट उनके मुख हैं और बड़े विशाल उनके शरीर है ॥ ६ ॥

जेइँ पुर दहेउ बधेउ सुत तोरा ॥ सकल कपिन्ह महँ तेहिं बल थोरा ॥ ७ ॥
अमित नाम भट कठिन कराला ॥ बिपुल बरण तन तेज बिशाला ॥ ८ ॥

हे रावण ! जिसने इस लंकाको जलाया था और आपके पुत्र अक्षकुमारको मारा था, वह वानर तौ उन सब वानरोंके बीच बड़ाही निर्बल है ॥ ७ ॥ उनके बीच कई नामी भट पड़े है कि जो बड़े भयानक और बड़े कठोर हैं. जिनके नाना वर्णवाले और विशाल व तेजस्वी शरीर है ॥ ८ ॥

दोहा—द्विविद मयन्द नील नल, अंगदादि बिकटासि ॥ ❋
दधिमुख केहरि कुमुद गव, जामवन्त बलरासि ॥ ५७ ॥ ❋

उनमें जो बड़े २ जोधा है उनमेंसे कछुक नाम कहता हूं सो सुनो. द्विविद, मयन्द, नील, नल, अंगद वगैरे, विकटास्य, दधिमुख, केहरि, कुमुद, गव, और बलका पुंज जाम्बवान् ॥ ५७ ॥

ये कपि सब सुग्रीवसमाना ॥ इन्हसम कोटि गणै को आना ॥ १ ॥ ❋
रामकृपा अतुलित बल तिनहीं ॥ तृण समान त्रयलोकहिं गिनहीं ॥ २ ॥

ये सब वानर सुग्रीवके समान बलवान् है इनके बराबर दूसरे करोड़ोंभी वानर हैं जिन्हें कौन गिन सकता है ? ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीकी कृपासे उनके बलकी कुछ तुलना नहीं है. वे उसके प्रभावसे त्रिलोकीको तृणके समान समझते हैं ॥ २ ॥

अस मैं श्रवण सुना दशकंधर ॥ पद्म अठारहु यूथप बन्दर ॥ ३ ॥ ❋
नाथ कटक महँ सो कपि नाहीं ॥ जो न तुम्हैं जीतहि रणमाहीं ॥ ४ ॥ ❋

हे रावण! वहां मैं गिन तो नहीं सका; परंतु कानोंसे ऐसा सुना था कि, अठारह पद्म यूथपति बन्दर है ॥ ३ ॥ हे नाथ! उस कटकमे ऐसा बानर एकभी नहीं है कि जो रणमें आपको जीत न सके ॥ ४ ॥

परम क्रोध मींजहिँ सब हाथा ॥ आयसु पै न देहिँ रघुनाथा ॥ ५ ॥ ❋
शोषहिँ सिन्धु सरित झष ब्याला ॥ फारहिँ नखधरि कुधर बिशाला ॥६॥

सब वानर बड़ा क्रोध करके हाथ मींजते है; परंतु विचारे करें क्या? रामचन्द्रजी उनको आज्ञा नहीं देते ॥ ५ ॥ वे ऐसे बली हैं कि, मछलियां और सर्पोंके साथ समुद्रको सुखा सकते है और नखोंसे विशाल पर्वतको चीर सकते है ॥ ६ ॥

मर्दि गर्द मिलवहिँ दशशीशा ॥ ऐसे बचन कहहिँ सब कीशा ॥ ७ ॥ ❋
गर्जहिँ तर्जहिँ सहज अशंका ॥ मानहुँ ग्रसन चहत अब लंका ॥ ८॥ ❋

और सब बानर ऐसे वचन कहते है कि–हम जाकर रावणको मारकर उसी क्षण मिट्टीमें मिला देंगे ॥ ७ ॥ वे स्वभावसेही निशंक है, सो बेधड़क गरजते है और तर्जते है. मानों वे अभी लंकाको ग्रसना चाहते है ॥ ८ ॥

दोहा–सहज शूर कपि भालु सब, पुनि शिरपर श्रीराम ॥ ❋
रावण कोटिन काल कहँ, जीति सकहिँ संग्राम ॥ ५८ ॥ ❋

हे रावण! वे रीछ और वानर अव्वल तो स्वभावहीसे शूरवीर हैं और तिसपर फिर श्रीरामचन्द्रजी शिरपर है इसवास्ते हे रावण! वे करोड़ों कालोंकोभी संग्राममें जीत सकते हैं ॥ ५८ ॥

राम तेज बल बुधि बिपुलाई ॥ शेष सहस शत सकहिँ न गाई ॥ १ ॥ ❋
सक शर एक शोषि शत सागर ॥ तव भ्रातहिँ पूंछेउ नयनागर ॥ २ ॥ ❋

रामचन्द्रजीके तेज, बल और बुद्धिकी बड़ाईको करोड़ों शेषजीभी गा नहीं सकते, तब औरकी तो बातही कौन? ॥ १ ॥ यदपि वे एक बाणसे सौ समुद्रोंको सुखा सकते हैं, तथापि आपका भाई बिभीषण नीतिमे परम निपुण है इसवास्ते समुद्रको पार उतरनेके वास्ते आपके भाई बिभीषणसे पूंछा ॥ २ ॥

तासु बचन सुनि सागरपाहीं ॥ माँगत पन्थ कृपा मनमाहीं ॥ ३ ॥ ❋
सुनत बचन बिहँसा दशशीशा ॥ जो अस मति सहाय कृत कीशा ॥ ४ ॥

तब उसने सलाह दी कि–पहले तो नर्मीसे काम निकालना चाहिये और जो नर्मीसे काम नहीं निकले तो पीछे तेजी करनी चाहिये. बिभीषणके ये बचन सुनकर अभी आप मनमें दया रखकर समुद्रके पास मार्ग मांगते हैं ॥ ३ ॥ शुकके ये वचन सुनकर रावण हँसा और बोला कि, जिसकी ऐसी बुद्धि है कि वानरोंको तो सहाय बनाया है ॥ ४ ॥

सहज भीरु कर बचन दृढ़ाई ॥ सागर सन ठानी मचलाई ॥ ५ ॥ ❋
मूढ़ मृषा का करसि बड़ाई ॥ रिपु बल बुद्धि थाह मैं पाई ॥ ६ ॥ ❋

और स्वभावसे डरपोंकके बचनोंपर दृढ़ता बांधी है तथा समुद्रसे अबोध बालककी नांई मचलाई करनी ठानी है ॥ ५ ॥ हे मूर्ख! उसकी झुंठी बड़ाई तू क्यों करता है? मैंने तो शत्रुके बल और बुद्धिका थाह पा लिया ॥ ६ ॥

सचिव सभीत बिभीषण जाके ॥ बिजय बिभूति कहा लगि ताके ॥ ७ ॥ ❃
सुनि खल बचन दूत रिसि बाढ़ी ॥ समय बिचारि पत्रिका काढ़ी ॥ ८ ॥ ❃

जिसके डरपोंक बिभीषणसे मंत्री है उसके विजय और विभूति कहां की ? ॥ ७ ॥ खल रावणके ये बचन सुनकर शुकको बड़ा क्रोध आया, जिससे उसने अवसर जानकर लक्ष्मणके हाथकी पत्री निकाली ॥ ८ ॥

राम अनुज दीन्ही यह पाती ॥ नाथ बँचाइ जुड़ावहु छाती ॥ ९ ॥ ❃
बिहँसि बामकर लीन्हेसि रावण ॥ सचिव बोलि शठ लागु बँचावन ॥ १० ॥

और कहा कि—यह पत्रिका रामके छोटे भाई लक्ष्मणजीन दी है, सो हे नाथ ! इसको पढ़कर अपनी छातीको शीतल करो ॥ ९ ॥ रावणने हंसकर वह पत्रिका बाएं हाथमें ली और वह शठ अपने मंत्रियोको बुलाकर पत्री पढ़ाने लगा ॥ १० ॥

दोहा—बातन मनहिँ रिझाव शठ, जनि घालसि कुल खीश ॥ ❃
रामबिरोध न उबरिहहु, शरण बिष्णु अज ईश ॥ ५९ ॥ ❃

हे शठ ! तू बातोंसे मनको भले रिझा ले. हे कुलांतके ! अपने कुलका नाश मत कर, रामचन्द्रजीसे विरोध करके विष्णु ब्रह्मा और महेशके शरण जानेपरभी तू बच नहीं सकेगा ॥ ५९ ॥

होउ मान तजि अनुज इव, प्रभुपद पंकजभृंग ॥ ❃
होहु रामशर अनल खल, जलि कुलसहित पतंग ॥ ६० ॥ ❃

तू अभिमान छोड़कर तेरे छोटे भाईके जैसे प्रभुके चरणकमलोका भ्रमर हो जा, यानी रामचन्द्रजीके चरणोंका चेरा होजा. अरे खल ! रामचन्द्रजीके बाणरूप आगमें तू कुलसहित पतंग मत हो, जैसे पतंग आगिमें पड़कर जल जाता है ऐसे तू रामचन्द्रजीके बाणसे मरे मत ॥ ६० ॥

सुनत सभय मनमहँ मुसुकाई ॥ कहत दशानन सबहिँ सुनाई ॥ १ ॥ ❃
भूमि परा कर गहत अकाशा ॥ लघु तापस कर बागबिलासा ॥ २ ॥ ❃

ये अक्षर सुनकर रावण मनमें तौ कुछ डरा, परंतु ऊपरसे हँसकर सबको सुनाके रावणने कहा ॥ १ ॥ कि—इस छोटे तपस्वीकी वाणीका विलास तौ ऐसा है कि मानों पृथ्वीपर पड़ा हुआ आकाशको हाथसे पकड़ लेता है ॥ २ ॥

कह शुक नाथ सत्य सब बानी ॥ समुझहु छाँड़ि प्रकृति अभिमानी ॥ ३ ॥
सुनहु बचन मम परिहरि क्रोधा ॥ नाथ रामसन तजहु बिरोधा ॥ ४ ॥ ❃

उस समय शुकने कहा कि—हे नाथ ! यह वाणी सब सत्य है सो आप स्वाभाविक अभिमानको छोड़कर समझलो ॥ ३ ॥ हे नाथ ! आप क्रोध तजकर मेरे बचन सुनो, और रामसे जो विरोध बांध रक्खा है उसे छोड़ दो ॥ ४ ॥

अति कोमल रघुबीर सुभाऊ ॥ यद्यपि अखिल लोककर राऊ ॥ ५ ॥ ❃
मिलत कृपा प्रभु तुमपर करिहैं ॥ उर अपराध न एकौ धरिहैं ॥ ६ ॥ ❃

यदपि वे राम सब लोकोंके स्वामी हैं, तौभी उनका स्वभाव बड़ाही कोमल है ॥ ५ ॥

आप जाकर उनसे मिलोगे तो मिलतेही वे आपपर कृपा करेंगे; आपके एकभी अपराधको वे दिलमें नहीं रक्खेंगे ॥ ६ ॥

जनकसुता रघुनाथहिँ दीजै ॥ इतना कहा मोर प्रभु कीजै ॥ ७ ॥ *
जब तेइँ देन कहेउ वैदेही ॥ चरणप्रहार कीन्ह शठ तेही ॥ ८ ॥ *

हे प्रभु! एक इतना कहना तो मेराभी मानो कि सीताको आप रामचन्द्रको देदो ॥ ७ ॥ शुकने कई बातें कहीं परंतु रावण कुछ नहीं बोला; परंतु जिसवक्त सीताको देनेकी बात कही उसी-क्षण उस दुष्टने शुकको लात मारी ॥ ८ ॥

चरण नाइ चला सो ताहाँ ॥ कृपासिंधु रघुनायक जाहां ॥ ९ ॥ *
करि प्रणाम निजकथा सुनाई ॥ रामकृपा आपनि गति पाई ॥ १० ॥ *

तब वहभी रावणने चरणोंमें शिर नवाकर वहांको चला कि जहां कृपाके सिंधु श्रीरामचन्द्रजी विराजे थे ॥ ९ ॥ रामचन्द्रजीको प्रणाम करके उसने वहांकी सब बात कही. तदनंतर वह राक्षस रामचन्द्रजीकी कृपासे अपनी गति यानी मुनिशरीरको प्राप्त हुआ ॥ १० ॥

ऋषि अगस्त्य कर शाप भवानी ॥ राक्षस भयेउ रहा मुनि ज्ञानी ॥ ११ ॥
बन्दि रामपद बारहिँ बारा ॥ पुनि निज आश्रम कहँ पगुधारा ॥ १२ ॥ *

महादेवजी कहते है कि-हे पार्वती! यह पूर्वजन्ममें बड़ा ज्ञानी मुनि था. सो अगस्त्यऋषिके श्रापसे राक्षस हुआ था ॥ ११ ॥ सो यहां रामचन्द्रजीके चरणोंको वारंवार नमस्कार करके फिर अपने आश्रमको गया ॥ १२ ॥

दोहा-बिनय न मानत जलधि जड़, गये तीनि दिन बीति ॥ *
बोले राम सकोप तब, भय बिनु होय न प्रीति ॥ ६१ ॥ *

जब जड़ समुद्रने विनयसे नहीं माना यानी रामचन्द्रजीको दर्भासनपर बैठे तीन दिन बीत गये, तब रामचन्द्रजीने क्रोध करके कहा कि-भय विना प्रीति नहीं होगी ॥ ६१ ॥

लक्ष्मण बाण शरासन आनू ॥ शोषै बारिधि बिशिख कृशानू ॥ १ ॥ *
शठसन बिनय कुटिलसन प्रीती ॥ सहज कृपणसन सुन्दर नीती ॥ २ ॥

हे लक्ष्मण! धनुषबाण लाओ; क्योंकि अब इस समुद्रको बाणकी आगसे सुखाना होगा ॥ १ ॥ देखो, इतनी बातें सब निष्फल हो जाती हैं. शठके पास विनय करना, कुटिल आदमीसे प्रीति रखना, स्वाभाविक कंजुस आदमीके पास सुन्दर नीतिका कहना ॥ २ ॥

ममतारत सन ज्ञान कहानी ॥ अतिलोभीसन बिरति बखानी ॥ ३ ॥ *
क्रोधिहिँ शम कामिहिँ हरिकथा ॥ ऊषर बीज बये फल यथा ॥ ४ ॥ *

ममतासे भरेहुए जनके पास ज्ञानकी बात कहना. अतिलोभीके पास वैराग्यका पास चलाना, ॥ ३ ॥ क्रोधीके पास शांतिताका उपदेश करना, कामी (लंपटी) के पास भगवान्की कथाका प्रसंग चलना और ऊसरभूमिमें बीज बोना ये सब बराबर हैं ॥ ४ ॥

अस कहि रघुपति चाप चढ़ावा ॥ यह मत लक्ष्मणके मन भावा ॥ ५ ॥
सन्धानेउ धनु बिशिख कराला ॥ उठी उदधि उर अन्तर ज्वाला ॥ ६ ॥

ऐसे कहकर रामचन्द्रजीने अपना धनुष चढ़ाया. यह रामचन्द्रजीका मत लक्ष्मणके मतको बहुत अच्छा लगा ॥ ५ ॥ प्रभुने इधर तौ धनुषमें विकराल बाणका सन्धान किया और उधर समुद्रके हृदयके बीच संतापकी ज्वाला उठी ॥ ६ ॥

मकर उरग झषगण अकुलाने ॥ जरत जन्तु जलनिधि जब जाने ॥ ७ ॥
कनकथार भरि मणिगण नाना ॥ विप्ररूप आयउ तजि माना ॥ ८ ॥ ❋

मगर, सांप और मछलियां घबरायीं और समुद्रने जाना कि, अब तौ जलजन्तु जलते है ॥ ७ ॥ तब वह मानको तज, ब्राह्मणका स्वरूप धर, हाथमें अनेक मणियोंसे भरा हुआ कंचनका थार ले बाहिर आया ॥ ८ ॥

दोहा–काटेपै कदली फरै, कोटि यतन करि सींच ॥ ❋
विनय न मान खगेश सुन, डाटेहिँ पै नव नीच ॥ ६२ ॥ ❋

काकभुशुंडीने कहा कि–हे गरुड़ ! देखो, केला काटनेसेही फलता है चाहो दूसरे करोड़ उपाय करलो और खूब सींचलो परंतु विना काटे नहीं फलता. ऐसेही नीच आदमी विनय करनेसे नहीं मानता किंतु डाटनेहीसे नवता है ॥ ६२ ॥

सभय सिन्धु गहि पद प्रभुकेरे ॥ क्षमहु नाथ सब अवगुण मेरे ॥ १ ॥ ❋
गगन समीर अनल जल धरणी ॥ इनकी नाथ सहज जड़ करणी ॥ २ ॥

समुद्रने भयभीत होकर प्रभुके चरण पकड़े और प्रभुसे प्रार्थना करी कि–हे प्रभु ! मेरे सर्व अपराध आप क्षमा करो ॥ १ ॥ हे नाथ ! आकाश, पवन, अग्नि जल और पृथ्वी इनकी करणी स्वभावहीसे जड़ है ॥ २ ॥

तव प्रेरिय माया उपजाये ॥ सृष्टिहेतु सब ग्रन्थन गाये ॥ ३ ॥ ❋
प्रभु आयसु जेहिकहँ जस अहही ॥ सो तेहि भांति रहै सुख लहही ॥ ४ ॥

और सृष्टिके निमित्त आपकीही प्रेरणासे मायासे प्रगट ये हुए है सो यह बात सब ग्रंथोंमें प्रसिद्ध है ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! जिसको स्वामीकी जैसी आज्ञा होती है, वह उसीतरह रहता है तौ सुख पाता है ॥ ४ ॥

प्रभु भल कीन्ह मोहिँ सिख दीन्हीं ॥ मर्यादा सब तुम्हरी कीन्हीं ॥ ५ ॥
ढोल गँवार शूद्र पशु नारी ॥ ये सब ताड़नके अधिकारी ॥ ६ ॥ ❋

हे प्रभु ! मैं आपके जो मुझको शिक्षा दी यह बहुत अच्छा किया; परंतु मर्यादा तौ सब आपकीही बांधी हुई हैं ॥ ५ ॥ ढोल, गँवार, शूद्र, पशु और स्त्री ये तौ सब ताड़नकेही अधिकारी है ॥ ६ ॥

प्रभु प्रताप मैं जाब सुखाई ॥ उतरिहि कटक न मोरि बड़ाई ॥ ७ ॥ ❋
प्रभु आज्ञा अपेलि श्रुतिगाई ॥ करहु बेगि जो तुमहिँ सोहाई ॥ ८ ॥ ❋

हे प्रभु ! मैं आपके प्रतापसे सुख जाऊंगा और उससे कटकभी पार उतर जायगा परंतु इसमें मेरी महिमा घट जायगी ॥ ७ ॥ और प्रभुकी आज्ञा अनुल्लंघननीय है सो यह बात वेदमें ठौर ठौर गायी है. अब जो आपको जँचे वही आज्ञा देवैं सो मैं उसके अनुसार शीघ्र करूं ॥ ८ ॥

दोहा—सुनत बिनीत बचन अति, कह कृपालु मुसुकाय ॥ ❀
जेहिविधि उतरै कपि कटक, तात सो करहु उपाय ॥ ६३ ॥ ❀

समुद्रके ऐसे अति विनीत वचन सुनकर मुसुकराकर प्रभुने कहा कि—हे तात ! जैसे यह हमारा वानरोका कटक पार उतर जाय वैसा उपाय करो ॥ ६३ ॥

नाथ नील नल कपि दोउ भाई ॥ लरिकाई ऋषि आशिष पाई ॥ १ ॥ ❀
तिनके परस किये गिरि भारे ॥ तरिहहिँ जलधि प्रताप तुम्हारे ॥ २ ॥

रामचन्द्रजीके ये वचन सुनकर समुद्रने कहा कि—हे नाथ ! नील और नल ये दोनों भाई हैं. नलको बचपनमें ऋषियोंसे आशीर्वाद मिला हुआ है ॥ १ ॥ इस कारण हे प्रभु ! नलका छुआहुआ भारी पर्वतभी आपके प्रतापसे समुद्रपर तिर जायगा ॥ २ ॥

मैं पुनि उर धरि प्रभु प्रभुताई ॥ करिहौं बल अनुमान सहाई ॥ ३ ॥ ❀
यहिविधि नाथ पयोधि बँधाइय ॥ जिहिँ अस सुयश लोक तिहुँ गाइय ॥४॥

हे प्रभु ! मुझसे जो कुछ बनसकेगा वो मेरे बलके अनुसार आपकी प्रभुताको हृदयमें रखकर मैंभी सहाय करूंगा ॥ ३ ॥ हे नाथ ! इसतरह आप समुद्रमें सेतु बांध दीजिये कि जिसको विद्यमान देखकर त्रिलोकीमे लोक आपके सुयशको गाते रहेंगे ॥ ४ ॥

यहि शर मम उत्तरतटबासी ॥ हतहु नाथ खलगण अघरासी ॥ ५ ॥ ❀
सुनि कृपालु सागर मनपीरा ॥ तुरतहिँ हरी राम रणधीरा ॥ ६ ॥ ❀

हे नाथ ! इसी बाणसे आप मेरे उत्तर तटपर रहनेवाले पापके पुंज दुष्टोंका संहार करो ॥ ५ ॥ ऐसे दयालु रणधीर श्रीरामचन्द्रजीने सागरके मनकी पीड़ाको जानकर उसको पीछी तुरंत हरली ॥ ६ ॥

देखि रामबल अतुलित भारी ॥ हर्षि पयोनिधि भयो सुखारी ॥ ७ ॥ ❀
सकल चरित कहि प्रभुहिँ सुनावा ॥ चरण बन्दि पाथोधि सिधावा ॥ ८ ॥

समुद्र रामचन्द्रजीके अपरिमित अपार बलको देखकर आनंदपूर्वक सुखी हुआ ॥ ७ ॥ समुद्रने सारा हाल रामचन्द्रजीको कह सुनाया. फिर चरणोंको प्रणाम कर अपने धामको सिधारा ॥ ८ ॥

छंद—निज भवन गवनेउ सिन्धु श्रीरघुबीर यह मत भायऊ ॥ ❀
यह चरित कलिमलहरण जसमति दास तुलसी गायऊ ॥ ❀
सुखभवन संशयदमन शमन बिषाद रघुपतिगुण गना ॥ ❀
तजि आश सकल भरोस गावहिँ सुनहिँ सज्जनशुचिमना ॥ ६ ॥

समुद्र तो ऐसे प्रार्थना करके अपने घरको गया. रामचन्द्रजीकेभी मनमें यह समुद्रकी सलाह आगयी. तुलसीदासजी कहते हैं कि—कलियुगके मलका हरनेवाला यह रामचन्द्रजीका चरित मेरी जैसी बुद्धि है वैसा मैंने गाया है; क्योंकि रामचन्द्रजीके गुणगण ऐसे हैं कि, वे सुखके

नील और नल ये दोनों बचपनमें खेला करते थे, सो ऋषियोंके आश्रमोंमें जाकर जिस समय मुनिलोग शालिग्रामजीकी पूजा कर आंख मूंदि ध्यानमें बैठते थे तब ये शालिग्रामजीको लेकर समुद्रमें फेंक देते थे. तब ऋषियोंने श्राप दिया कि नलका डालाहुआ पत्थर नहीं डूबेगा सो वही श्राप इसके वास्ते आशीर्वादात्मक हुआ.

तौ घर हैं; संशयके मिटानेवाले हैं. और विषाद (रंज) को शांत करनेवाले है, सो जिनका मन पवित्र है और जो सज्जन पुरुष है उन चरित्रोंको सब आशा और सब भरोसोंको छोड़कर गाते हैं और सुनते हैं ॥ ६ ॥

दोहा–सकल सुमंगल दायक, रघुनायक गुणगान ॥ ❋
सादर सुनहिँ ते तरहिँ भव, सिन्धु बिना जलयान ॥ ६४ ॥ ❋

सर्व प्रकारके सुमंगल देनेवाले रामचन्द्रजीके गुणोंका जो मनुष्य गान करते हैं और आदर सहित सुनते हैं वे लोग संसारसमुद्रको विना नाव पार उतर जाते है ॥ ६४ ॥

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमलविज्ञान-वैराग्यसन्तोषसम्पादनो नाम श्रीगोस्वामितुलसिदासजी-कृतसुंदरकाण्डः पंचमः सोपानः
समाप्तः ॥ ५ ॥

इति श्रीरामचरित्रमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमलविज्ञानवैराग्य-संतोषसम्पादननामकस्य श्रीगोस्वामितुलसीदासकृतसुंदरकांडस्य रामश्यामविरचितभाषायां पंचमः सोपानः
समाप्तः ॥ ५ ॥

॥ कुंडलिया ॥

आयसु लहि निजस्वामिकी जाय बारिनिधिपार ॥ ❋
मिलि सीता वनभंग करि पुरमहँ आगि अपार ॥ ❋
पुरमहँ आगि अपार विथुर पुनि मारु अक्षकहँ ॥ ❋
सुंदरि सुंदरि देय रत्न ले गयो राम पहँ ॥ ❋
कह पंडित बलदेवतनुज बुध रामकर्ण यह ॥ ❋
भज श्री सीताराम नाम जप हरिप्रसाद लह ॥ १ ॥ ❋

इदं पुस्तकं भगीरथात्मजहरिप्रसादशर्मणा
मोहमयीराजधान्यां“गणपत कृष्णाजी” इत्याख्ये
मुद्रणालये मुद्रापितम्।

[मुंबई]

॥ श्रीः ॥

श्रीरमारमणो विजयते।

अथ

श्रीयुतगोस्वामितुलसीदासकृत-

रामायणम्।

लंकाकाण्डम्।

पण्डित-रामश्यामविरचित

तत्त्वदीपिकाटीकासहित।

जिसे

पण्डित-रामभद्रजीने शुद्ध किया.

वही

गौड़ब्राह्मण हरिप्रसाद भगीरथजीने

बम्बईमें

"गणपत कृष्णाजी" छापखानेमें छपवायकर प्रसिद्ध किया.

शके १८२६, संवत् १९६०, सन १९०४.

श्रीरामपञ्चायतन.

लंकाकाण्डम्।

सेतु बंधन तथा रामेश्वरलिंगस्थापना।

चौपाई—रामअनय रामायण आही॥ बर्णि पार पावै को ताही॥ १॥
रामायण अद्भुत फुलवारी॥ रामभ्रमरभूषित रुचि भारी॥ २॥

दोहा—रामनाम नरकेसरी, कनककशिपु कलिकाल॥
जापकजन प्रल्हाद जिमि, पालहिं दलि सुरसाल॥ १॥

हरिप्रसादभगीरथजीका, संस्कृत और भाषा पुस्तकालय
ठिकाना—कालकादेवीरोड़ रामवाडी—मुंबई.

॥ श्रीगजानन ॥

श्रीतुलसीदासकृतरामायणे

॥ ❀ लंकाकाण्डप्रारम्भः ❀ ॥

दोहा–रावणि रावण अनुज बध, रावणके शिरभंग॥
रावणारि आगम अवध, लंकाकाण्ड प्रसंग॥ ६॥

रामं कामारिसेव्यं भवभयहरणं कालमत्तेभसिंहं योगीन्द्रज्ञानगम्यं गुणनिधिमजितं निर्गुणं निर्विकारम्॥ मायातीतं सुरेशं खलवधनिरतं ब्रह्मवृन्दैकदेवं वन्दे कुन्दावदातं सरसिजनयनं देवमुर्वीशरूपम्॥ १॥ शंखेन्द्वाभमतीवसुन्दरतनुं शार्दूलचर्माम्बरं कालव्यालकरालभूषणधरं गङ्गाशशाङ्कप्रियम्॥ काशीशं कलिकल्मषौघशमनं कल्याणकल्पद्रुमं नौमीड्यं गिरिजापतिं गुणनिधिं श्रीशंकरं कामहम॥ २॥ यो ददाति सतां शम्भुः कैवल्यमपि दुर्लभम्॥ खलानां दण्डकृद्योऽसौ शंकरः शंतनोतु मे॥ ३॥

लंकाकांडमें राम रावणके युद्धका वर्णन है, सो उसके प्रारंभमें गोसाइजी श्रीरघुनाथजीका वंदन करते है. तुलसीदासजी कहते है कि–मैं श्रीरामचन्द्र आनन्दकन्दको प्रणाम करता हूं. कैसे है प्रभु? कि कामदेवके बैरी महादेव जिनकी सेवा करते है, जिनका नाम लेनेसे संसारका भय मिट जाता है. जो कालरूप मदमत्त हाथीके लिये सिंहरूप है, जिनके स्वरूपको योगिराज ज्ञानसे प्राप्त होते है. जिन्हें कोई जीत नहीं सकता और जो खलसमुदायका संहार कर ब्राह्मणकुलकी सदा रक्षा करते है और ब्राह्मणोंके एक दैवतरूप है, जिनके कमलदलकेसे विशाल नयन हैं तथा कुंदके समान उज्ज्वल स्वरूप है; जो देवताओंके स्वामी है, उन गुणोंके भंडार होनेपरभी निर्गुण और निर्विकार व मायासे पर राजारूप देवाधिदेव रामको प्रणाम करता हूं॥ १॥ अपने इष्टदेव श्रीरामचन्द्रको प्रणाम कर अब अपने गुरुदेव श्रीशंकरको प्रणाम करते हैं. मैं श्रीशंकरको वन्दन करता हूं. कैसे हैं शंभु? कि जिनका शंख और चंद्रमाके सदृश उज्ज्वल और श्वेत बरन है; अति सुन्दर शरीर है, बाघांबर पहिरे हैं; विकराल काले सर्पोंके आभूषण धरे है; जिनके लिलारमें चंद्र, और जटामें गंगा विराजमान है; जो काशीमें विराज कर कलिकालके संपूर्ण पापपुंजका नाश करते हैं; जो कल्याण करनेके लिये कल्पवृक्षरूप हैं और जिन्होंने कामदेवको भस्म कर पार्वती व्याही है, उन गुणोंके निधान सर्ववंद्य पार्वतीपति श्रीशंकरको प्रणाम करता हूं॥ २॥ जो प्रभु सत्पुरुषोंको तो अति दुर्लभ मोक्षभी दे देते है; परंतु दुष्टोंको तो सदा दंडही दिया करते हैं, वे सबके सुखकारी शिव मेरे सदा सर्वदा सुख करो॥ ३॥

दोहा–लव निमेष परमाणु युग, बर्ष कल्प शर चण्ड॥ ❀
भजसि न मन तेहिं रामकहँ, काल जासु कोदण्ड॥ १॥ ❀

तुलसीदासजी कहते है कि–हे मन ! सब जगतका संहार करनेवाला यह काल तौ जिसका धनुष है और लव, निमेष, परमाणु, युग, वर्ष और कल्प ये जिसके प्रचंड बाण है कि, जिनसे वो आयुको क्षीण करता है, उस रामको तू क्यों नहीं भजता ? अर्थात् जो तू अपना जन्म सफल्ल करना चाहे, तौ प्रभुका भजन कर ॥ १ ॥

सोरठा–सिंधुबचन सुनि राम, सचिव बोलि प्रभु अस कहेउ ॥
अब बिलम्ब केहि काम, रचहु सेतु उतरै कटक ॥ १ ॥
सुनहु भानुकुलकेतु, जामवन्त कर जोरि कह ॥
नाथ नाम तव सेतु, नर चढ़ि भवसागर तरहिँ ॥ २ ॥

समुद्रके सेतु बांधनेके समाचार सुन, अपने मंत्रियोंको बुलाके प्रभुने ऐसे कहा कि, अब देरी क्यों करते हो ? सेतु क्यों नहीं बांधते ? जल्दी सेतु बांधो जिससे सारी सेना पार उतर जाय ॥ १ ॥ तब जाम्बवान्ने हाथ जोड़कर कहा कि–हे नाथ ! सुनिये, आपका तौ नामही बड़ा भारी सेतु है, जिसपर चढ़कर अर्थात् जिसका स्मरण करके संसारी लोग भवसागरसे पार उतर जाते है ॥ २ ॥

यह लघु जलधि तरत कत बारा ॥ अस सुनि पुनि कह पवनकुमारा ॥ १ ॥
प्रभुप्रताप बड़वानल भारी ॥ शोषेउ प्रथम पयोनिधि बारी ॥ २ ॥

सो हे प्रभु ! इस छोटेसे समुद्रको तिरनेमें कितनी बेर लगेगी ? आपकी आज्ञा होतेही सब कुछ हो जायगा. जाम्बवान्के ये बचन सुन, हनुमान्ने प्रभुको प्रसन्न करनेके लिये कहा ॥ १ ॥ कि–हे प्रभु ! इसको पार उतरनेमें क्या कठिन है ? क्योंकि जिस दिन आपने लंकाको प्रयाण किया, उस दिन आपके प्रतापरूप बड़वानलसे इस समुद्रका जल सूख गया था. सो अब तो स्वयं आप पधार हो. अब इसको पार उतरनेमें क्या विचार है ? ॥ २ ॥

तव रिपुनारि रुदन जलधारा ॥ भर्‌यो बहोरि भयो तेहिँ खारा ॥ ३ ॥
सुनि अस उक्ति पवनसुतकेरी ॥ बिहँसे रघुपति कपितन हेरी ॥ ४ ॥

हे प्रभु ! यह समुद्रमें जो जल भरा है सो समुद्रका जलभी नहीं है किंतु समुद्रको सूना जान अपने पतियोंका नाश समझ आपके शत्रुओंकी स्त्रियोंने रो रोकर जो आंसू बहाय तिस जलसे यह पोला भर गया है और इसीसे इसका जल खारा है ॥ ३ ॥ हनुमान्के ये अत्युक्तिके बचन सुन, उसकी ओर निहार, वानररूप देख, प्रभु हँसे ॥ ४ ॥

जामवन्त बोले दोउ भाई ॥ नलनीलहिँ सब कथा सुनाई ॥ ५ ॥
रामप्रताप सुमिरि उरमाहीं ॥ करहु सेतु प्रयास कछु नाहीं ॥ ६ ॥

तब जाम्बवान्ने नल और नील दोनों भाइयोंको बुलाय, सेतुके सब समाचार कहे ॥ ५ ॥ और कहा कि–अब तुम प्रभुके प्रतापका मनमें स्मरण करके सेतु बनाओ, सो इससे तुमको कुछ परिश्रम न होगा ॥ ६ ॥

बोलि लिये कपिनिकर बहोरी ॥ सकल सुनहु बिनती यक मोरी ॥ ७ ॥
रामचरणपंकज उर धरहू ॥ कौतुक एक भालु कपि करहू ॥ ८ ॥

ऐसे नल नीलको सेतु बनानेका काम सौंप, फिर सब बानरोंको बुलाकर जाम्बवान्ने कहा

कि, आप सबलोग मेरी एक बिनती है, सो सुनो ॥ ७ ॥ हे वानर और रीछो ! आपलोग प्रभुके चरणकमलोंको अपने हृदयमें रख, मैं जो एक कौतुककी बात कहता हूं सो करो ॥ ८ ॥

धावहु मर्कट बिकट बरूथा ॥ आनहु बिटप गिरिनके यूथा ॥ ९ ॥ ❋
सुनि कपि भालु चले करि हूहा ॥ जय रघुबीर प्रतापसमूहा ॥ १० ॥ ❋
"अस कहि नौमीदिन सो गयऊ ॥ परारंभ दशमीते भयऊ" ॥ ११ ॥ ❋

वानरोंके बड़े विकट यूथके यूथ वहां जाओ और वृक्ष व पर्वतोंके झुंडके झुंड यहां उठा लावो ॥ ९ ॥ जाम्बवान्के बचन सुन, वानर और रीछ हूहा कर, हे प्रतापके पुंज रघुबीर ! आपकी जय हो. ऐसे कहतेहैं ॥ १० ॥ "नवमीके दिन वहांसे पर्वत और वृक्ष लेने गये, और दशमीके दिनसे काम शुरू हुआ" ॥ ११ ॥

दोहा–अतिउतंग तरु शैल गण, लीलहिँ लेहिँ उठाइ ॥ ❋
आनि देहिँ नलनीलकहँ, बिरचहिँ सेतु बनाइ ॥ २ ॥ ❋

वानर और रीछ बड़े २ ऊंच पेड़ और पर्वतोंको खेलही खेलमें उठाकर लेते हैं और नल नीलको देते हैं और नल नील उनसे समुद्रमें सेतु रचते हैं ॥ २ ॥

शैल बिशाल आनि कपि देहीं ॥ कन्दुक इव नलनील सो लेहीं ॥ १ ॥ ❋

वानर बड़े २ पहाड़ लाकर, देते हैं और नल नील दड़ी (गेंद) की भांति उन्हें हाथमें ले सेतुका काम करते हैं ॥ १ ॥

(क्षेपक) युग युग सृजे जहां थलमाहीं ॥ खोजत पर्वत कतहूँ नाहीं ॥ १ ॥ ❋
कहहु बिचार करा यक भाई ॥ हर्षित सब कपि उत्तर जाई ॥ २ ॥ ❋

यदपि ब्रह्माजीने पृथ्वीके अंदर युग युगमें कई पर्वत रचे है, परंतु वानर सब पर्वत उठालाये जिससे ढूंढनेपरभी पर्वतोंका कहीं पत्ता नहीं लगता था ॥ १ ॥ तब वानरोंने कहा कि, यहां तो कहीं पहाड़ नहीं है, अब क्या करना चाहिये. तब जाम्बवान्ने कहा कि–तुम सब प्रसन्नमन हो, उत्तर दिशामें जाओ. सो वहां तुमको बहुतसे पर्वत मिलेंगे ॥ २ ॥

लेहिँ महाभट गिरी उचारी ॥ मारुत बेग चलत बनचारी ॥ ३ ॥ ❋
कहँ कहँ एकहि एक प्रचारी ॥ तौलहिं निकटकेहि गिरि भारी ॥ ४ ॥ ❋

जाम्बवान्के बचन सुन, वे महाभट पर्वत लेनेको उत्तरमें चले. वहां जा पर्वतोंको उखाड़ जलदी चले. उनका वेग पवनसे कुछ कम नहीं था ॥ ३ ॥ कहीं कहीं तो एक एक वानरने एक एक पर्वत उठाया है और कहीं पर्वत भारी आगया है तो उसके निकट जाय, उसे तौलते हैं और शामिल हो उठाते हैं ॥ ४ ॥

सेतु विषम कतहूँ नहिँ होई ॥ रचा नील नल दूनँव सोई ॥ ५ ॥ ❋
घटि एक नाहिँ गयउ सेराई ॥ बसु गृह जोजनकी चकलाई ॥ ६ ॥ ❋

यदपि उस सेतुका बनना बड़ा कठिन काम था, किसी कदर उसका होना नहीं संभवता था पर नल और नील इन दोनोंने मिलके तैयार कर लिया, जो कि कोई जगहमें सम विषम नहीं था याने ऊंचा नीचा नहीं ॥ ५ ॥ एक घड़ीभी बीतने न पाई इतनेमें अट्ठानवे ९८ योजन चौड़ा सेतु तैयार किया गया ॥ ६ ॥

योजन एक ऊंच परमाना ॥ भयउ सेतु निरधना भगवान ॥ ७ ॥ ❃
नीति बेद बिधि तुरत कराए ॥ रिच्छ कपीश बिभूषण पाए ॥ ८ ॥ ❃

और एक योजन ऊचा था. ऐसा समुद्रके बीच सेतु तैयार हुवा देख ॥ ७ ॥ प्रभुने वेदकी विधिसे नीतिके अनुसार उसकी प्रतिष्ठा कराई और रीछ व वानरोंको अनेक प्रकारके पारितोषिक अलंकार दिये ॥ ८ ॥

दोहा–कपिपति अरु लंकापति, जामवंत चितु लाय ॥ ❃
सुनि मन बचन सेतु कहँ, तुरतहिँ नापहु जाय ॥ ६ ॥ ❃

और प्रभुने सुग्रीव, बिभीषण और जाम्बवानसे कहा कि–तुम मन लगाके मेरा वचन सुनो और जाकर शीघ्र सेतूको मापो ॥ ६ ॥

प्रभुआज्ञा धरि पद शिर नाई ॥ नापा तुरत सेतु तिन जाई ॥ १ ॥ ❃
शतयोजन योजन यक ऊँचा ॥ इतना कोश सेतु भयो सूँचा ॥ २ ॥ ❃

प्रभुकी आज्ञा शिर चढ़ाय प्रभुके चरणोंमे शिर नवाय, उन सबोंने जाकर, सेतुको मापा ॥ १ ॥ जो सौ योजन लम्बा और एक योजन ऊंचा था. उन्होंने प्रभुके पास जाकर सेतुकी सब लम्बाई और गहराई आदिका माप कह सुनाया ॥ २ ॥

आइ तुरत तिन प्रभुहिँ सुनाई ॥ सुनि रघुपति अस कहा बुझाई ॥ ३ ॥ ❃
आनि मोरि अस कहहु पुकारी ॥ जो जहँ होइ तहाँ गिरि डारी ॥ ४ ॥ ❃

जिसे सुन, प्रभुने समझाकर, सुग्रीव आदि यूथपति वानरोंसे कहा ॥ ३ ॥ कि तुम जाकर पुकार कर मेरी आन दिलाकर, सबको ऐसा कह दो कि जो जहां खड़ा है वो वहीं उस पर्वतको पटक देवे ॥ ४ ॥

आवहु बेगि चलिय अब पारा ॥ शंभु कीन सिध काजु हमारा ॥ ५ ॥ ❃
राम रजायसु जो कछु दीन्हा ॥ हरषि कपीश तुरत सो कीन्हा ॥ ६ ॥ ❃

और दौड़कर जलदी हमारे पास चले आवो; क्योंकि अब हम समुद्रके पार उतरेंगे. महादेवने अब हमारा काम सिद्ध कर दिया है ॥ ५ ॥ रामचन्द्रजीने वानरोंको जो कुछ आज्ञा दी, सो सुग्रीवने आनंदित हो तुरंत वैसाही किया ॥ ६ ॥

रामआनि सुग्रीव धरावा ॥ जहँ तहँ कपिन श्रवण सुनि पावा ॥ ७ ॥ ❃
जहँ तहँ डारि दिये पाषाणा ॥ भे सो सुंदर पर्वत नाना ॥ ८ ॥ ❃

सुग्रीवने रामचन्द्रजीकी आज्ञा सब सेनामें प्रगट कर दी, सो जहां वानरोंने कानोंसे सुनी ॥ ७ ॥ वहीं अपने पासके पत्थर डाल दिये सो उन्हीं पत्थरोंके ढेरसे ये बड़े बड़े कई पहाड़ बन गये हैं ॥ ८ ॥

दोहा–एक चरित अति रुचिर अब, चित धरि सुनहु खगेश ॥ ❃
गए पवनसुत उत्तरहिँ, जेहि गिरि बसहिँ धनेश ॥ ७ ॥ ❃

काकभुशुंडि ऋषि कहते हैं कि–हे गरुड़! अब एक परमरम्य और अद्भुत चरित्र कहता हूं सो मन लगाके सुनो. हनुमान् पर्वत लेनेको उत्तर दिशामें गये, जहां पर्वतोंके बीच कुबेर आनंदसे निवास करते है ॥ ७ ॥

नाम गोवर्धन रुचिर पहारा ॥ योजन षष्टि तासु बिस्तारा ॥ १ ॥ ❃

शृंग सुमेरुकेर अति पावन ॥ लगे पवनसुत ताहि उठावन ॥ २ ॥ ❀

हनुमान्‌ने जाकर गोवर्द्धन नाम पर्वतको उठाना चाहा जो साठ योजन लम्बा चौड़ा था ॥ १ ॥ वो सुमेरुगिरिका एक सुन्दर शिखर था, सो हनुमान् उसे उठाने लगा ॥ २ ॥

बिबिध उपाय कीन बलवाना ॥ छांड़ न भूमि सो इमि गरुआना ॥ ३ ॥ ❀

सुनु मुनि पवनतनय इमि करहीं ॥ सागर बसुधा करतल धरहीं ॥ ४ ॥ ❀

महाबली हनुमान्‌ने उसको उठानेकेलिये कई उपाय किये; पर जमीन छूटने न पाई. ऐसा वो पर्वत भारी वजन हो गया ॥ ३ ॥ याज्ञवल्क्य कहते हैं कि—हे भरद्वाज! सुनो, हनुमान् कि जो सातों समुद्रोंके साथ पृथ्वीको अपने हाथपर धारण कर सक्ता है ॥ ४ ॥

तिनकहँ यह लघुगिरि गरुआना ॥ कौतुक कीन चहहिँ भगवाना ॥ ५ ॥

जानि कठिन कपि क्रोध बढ़ावा ॥ रामहिँ सुमिरि लँगूर उठावा ॥ ६ ॥ ❀

उसके पास यह छोटासा पहाड़ इतना गरू लगा, यहभी एक प्रभुने कौतुक करना चाहा था, प्रभुकी इच्छाविना क्या हो सकता है? ॥ ५ ॥ सो उस पर्वतको अति कठिण जान, हनुमान्‌ने उसपर क्रोध किया और प्रभुका स्मरण करके उसको मारनेकेलिये पूंछ उठाई ॥ ६ ॥

उठत लँगूर गोबरधन देषा ॥ सो डरि भयो बिप्रको वेषा ॥ ७ ॥ ❀

पवनतनय तोहिँ रामदोहाई ॥ मोहिँ न हनो लंगूर भँवाई ॥ ८ ॥ ❀

हनुमान्‌को पूंछ उठाते देख, गोवर्द्धन पर्वतने डरकर तुरंत ब्राह्मणका भेष बना लिया ॥ ७ ॥ और कहा कि, हे हनुमान्! तुझे प्रभुकी दोहाई (शपथ) है. भँवाकर मेरेऊपर पूंछका प्रहार मतकरे ॥ ८ ॥

दोहा—रामशपथ सुनि तुरतहीं, शीतल भे हनुमंत ॥ ❀

बहुरि कहा अस तेहिँ सुनु,चलसि जहां भगवंत ॥ ८ ॥ ❀

प्रभुकी शपथ (सौगंद) सुनतेही हनुमान् तुरंत शान्त हो गया और गोवर्द्धन पर्वतसे बोला कि—हे पर्वत! सुन, मैं तुझे प्रभुके पास लेजानेको आया हूं, सो या तौ जहां प्रभु वहां चल नहीं तौ मैं तुझे बिन मारे नहीं छोडूंगा ॥ ८ ॥

सुनि कपिबचन गोवर्द्धन बोला ॥ प्रभु यह बचन कह्यो अनमोला ॥ १ ॥ ❀

जो तुम रामदरश मोहिँ देहू ॥ तौ लै चलहु अचल यश लेहू ॥ २ ॥ ❀

हनुमान्‌के ये वचन सुन, गोवर्द्धन बोला कि—हे हनुमान्! यह बचन तौ तूने बहुतही अच्छे और अनमोल कहे है ॥ १ ॥ जो तू मुझे प्रभुका दर्शन देता है तौ मुझे सुखेन ले चल. इससे तुझकोभी बड़ा भारी यश मिलेगा. और मेरा जन्मभी कृतार्थ हो जायगा ॥ २ ॥

सेतु हेतु तुम कहँ लय जाऊँ ॥ दरश देषाइ धरहुँ शुभ ठाऊँ ॥ ३ ॥ ❀

अस कहि हनुमत तेहिँ बर दीन्हा ॥ बिनु श्रम धरि लँगूरमा लीन्हा ॥ ४ ॥

तब हनुमान्‌ने कहा कि—मैं तुमको सेतुके वास्ते लिये जाताहूं सो प्रभुके दर्शन कराके तुम्हें अच्छी ठौर रख दूंगा ॥ ३ ॥ ऐसे कह, उसे वरदान दे, हनुमान्‌ने उसे श्रमरहित हो अपनी पूंछसे पकड़ उठाया ॥ ४ ॥

राम सुमिरि हँसि कीन पयाना ॥ कानन वृंदावननियराना ॥ ५ ॥ ❀

श्रवण सुना तब शपथ भवानी ॥ ठाढ़ भये करि मनहिँ गलानी ॥ ६ ॥ ❋

और प्रभुका स्मरण कर, हँस, पयान किया. हनुमान् वृंदावनके निकट पहुंचे ॥ ५ ॥ इतनेमें हे पार्वती ! प्रभुकी शपथ सुनी, सो सुनतेही मनमें ग्लानि मान, हनुमान् खड़े रह गये ॥ ६ ॥

प्रभुकी शपथ मेटि नहिँ जाई ॥ और मेरु नाहिँ सकहिँ छुड़ाई ॥ ७ ॥ ❋
असमंजसमाँ छिन यक गयऊ ॥ पुनि अस गिरिहि बुझावत भयऊ ॥ ८ ॥

इधर न तौ प्रभुकी शपथ मिटाई जा सकती और न मेरुके शिखर (गोवर्द्धन) को छोड़ सकते है ॥ ७ ॥ हनुमानके मनमें यह भारी दुबिधा खड़ी हुई है. एक क्षणभी बीतने न पाया, इतनेमें अपने मनमें विचार करके, हनुमानने गोवर्द्धन पर्वतसे कहा कि- ॥ ८ ॥

दोहा-गोबरधन इत रहहु तुम, मैं गवनब प्रभुपास ॥ ❋
कछु संशय नहिँ करहु चित, पुरहुँ सकल तुम आस ॥ ९ ॥ ❋

हे गोवर्द्धन ! तुम यहीं रहो, मैं प्रभुके पास जाता हूं. तुम किसी बातकी चिंता मत करना. मैं तुम्हारा मनोरथ पूर्ण कर दूंगा ॥ ९ ॥

बेद पुराण संत अस भाषा ॥ संतत राम दास पण राषा ॥ १ ॥ ❋
सो रघुबर रखिहहिँ पण मोरा ॥ करिहहिँ पूर्ण मनोरथ तोरा ॥ २ ॥ ❋

हनुमान् कहते है कि-हे पर्वतराज ! वेद,पुराण और संतलोग ऐसे कहते है कि, प्रभु अपने भक्तोंका प्रण निवाहते है ॥ १ ॥ इसलिये मुझे प्रभुका पक्का भरोसा है कि प्रभु करुणाकर, मेरा प्रण अवश्य राखेंगे और तेरा मनोरथ पूर्ण करेंगे ॥ २ ॥

तेहिँ प्रबोधि कपि बिदा कराई ॥ आए तुरत जहां रघुराई ॥ ३ ॥ ❋
पद गहि ठाढ़ भये हनुमाना ॥ प्रभु अंतरयामी सब जाना ॥ ४ ॥ ❋

ऐसे गोवर्द्धनको समझाय, उससे बिदा मांग, हनुमान् चले, सो सीधे प्रभुके पास आये ॥ ३ ॥ चरण धरकर हनुमान् खड़े रहे. तब प्रभुने उनके मनकी सब बात जान लीनी; क्योंकि प्रभु अंतर्यामी हैं ॥ ४ ॥

कछु न हेतु हनुमान सुनावा ॥ प्रभु आपहिँ सब प्रगट सुनावा ॥ ५ ॥ ❋
गोबर्धनका तुम बर दीन्हा ॥ तात सो काज नीक अति कीन्हा ॥ ६ ॥ ❋

हनुमानने प्रभुसे कुछभी नहीं कहा तौ प्रभुने अपने आप प्रगट करके कहा ॥ ५ ॥ कि-हे हनुमान् ! तुमने गोवर्द्धन पर्वतको वरदान दिया है, सो यह बहुतही अच्छा काम किया ॥ ६ ॥

बचन तुम्हार सत्य हनुमाना ॥ करहूं द्वापर सुनहु सुजाना ॥ ७ ॥ ❋
गोकुल जन्म लेब हम जबहीं ॥ चरित पुनीत करब हम तबहीं ॥ ८ ॥ ❋

हे सुजान हनुमान् ! सुनो; तुमने जो वचन कहा है, वो तुम्हारा वचन हम द्वापरयुगमें सत्य करेंगे ॥ ७ ॥ हम जब गोकुलमें जन्म लेवेंगे, तब हम परम पावन चरित्र करेंगे ॥ ८ ॥

दोहा-तुम्हरे बचनहिँ हेतु तेहिँ, तात सुनहु चितु लाइ ॥ ❋
षटपंचास जाम तेहिँ, राखब सीस चढ़ाइ ॥ १० ॥ ❋

हे तात! तुम मन लगाके सुनो, हम केवल तुम्हारे बचनके वास्ते वहां जावेंगे और छप्पन प्रहर अर्थात् सात दिन उस पर्वतको शिरपर चढ़ाकर रक्खेंगे ॥ १० ॥

अंगुलिपर तेहिँ छत्रसमाना ॥ रखिहहुँ अवसि सुनहु हनुमाना ॥ १॥ ❋
गिरिहिँ बुझाइ राखि तेहिँ ठाऊं ॥ आवहु बेगि तात बलि जाऊं ॥ २ ॥ ❋

हे हनुमान्! सुनो, हम अवश्य उसे अपनी अंगूलीके ऊपर छत्रके समान धारण करेंगे ॥ १ ॥ प्रभु कहते है कि—हे तात! अब तुम शीघ्र उस पर्वतके पास जाओ और उसे समझाकर पीछे जल्दी आवो ॥ २ ॥

दूसर प्रभु नहिँ रामसमाना ॥ जे राखहिँ जनकर परमाना ॥ ३ ॥ ❋
नयन नीर भरि पवनकुमारा ॥ बहुरिहु ताहि गिरिहिँ पगु धारा ॥ ४ ॥ ❋

कवि कहता है कि—अपने दासका जो वचन प्रमाण करते है अर्थात् उसका वचन प्रमाण राखते है उनमें रामचन्द्र आनन्दकन्दके जैसा दूसरा स्वामी जगत्में कोई नहीं है ॥ ३ ॥ हनुमान् प्रभुको बड़ाई देख, नेत्रोंमें जलभर, फिर पीछा उस पर्वतके पास चला ॥ ४ ॥

कहि वृत्तांत करि तासु प्रतोषा ॥ फिरि प्रभुपद आये अतिचोषा ॥ ५ ॥ ❋
बैनतेय यह युक्ति न जोरी ॥ एहि प्रगट पर कहौं बहोरी ॥ ६ ॥ ❋

वहां जाय, प्रभुके कहे सब समाचार कह उसे राजी कर, फिर बहुत जल्दी प्रभुके पास आया ॥ ५ ॥ हे गरुड़! यह बात हमने अपनी युक्तिसे जोड़कर नहीं कही है; किंतु यह बात सारा संसार जानता है, सो हमने प्रसंगसे कही है ॥ ६ ॥

अग जग प्रगट कथा यह साँची ॥ कीरति बिमल रही युग माँची ॥ ७ ॥
व्रजपर जबहिँ सुरेस रिसाना ॥ बड़ी वृष्टि भय प्रलयसमाना ॥ ८ ॥ ❋

सब चराचर जीव जानते है कि यह बात सत्य है, क्योंकि हनुमान्की निर्मल कीर्ति सारे जगत्में और सब युगोंमें फैली हुई है ॥ ७ ॥ जब इन्द्रने व्रजपर कोप किया और प्रलयके समान मूसलधार बर्षा हुई ॥ ८ ॥

छंद—जलवृष्टि भय अति प्रलयसम हरि बिकल जब व्रज जानेऊ ॥ ❋
हरि लीन तब कर छत्र इव गिरि सुजस निगम बखानेऊ ॥ ❋
मुनि द्विगुण कृत पुनि बेद गुनि सो याम जबहिँ सिरानेऊ ॥ ❋
व्रजपर न शीकर परेउ जब भय मानि जलद परानेऊ ॥ १ ॥ ❋

और उस बर्षासे सब व्रजवासी दुखी और विकल होगये, तब उन्हें अति आर्त देख, प्रभुने उस पर्वत (गोवर्द्धन) को छत्रके जैसे उठाया. और सब व्रजवासियोंको कहा कि तुम सब इनके तले चले आओ; तुम्हारी मैं रक्षा करूंगा. ऐसे कह प्रभुने सात दिनतक उस पर्वतको अपनी एक अंगुलीसे शिरपर चढ़ाय, धारण किया और व्रजवासियोंकी रक्षा करी. जब इन्द्रको मूसल धार बरसते सात ७ के दुगुने चौदह १४ उसके चौगुने छप्पन ५६ प्रहर अर्थात् सात दिन बीत गये और व्रजवासियोंके ऊपर एक बूंदभी पड़ने न पाया; तब भय खाय मेघोंको हटाय, पलायमान हुआ. सो यह कथा वेद और पुराणोंमें प्रसिद्ध है ॥ १ ॥

दोहा-मान मरदि सुरराज कर, व्रज कहँ लीन उधारी ॥ ❋
सो यह आगे चरित अस, होइ बीते बहु बारि ॥ ११ ॥ ❋

प्रभुने इंद्रका गर्व गंजन कर, व्रजका उद्धार किया सो ऐसे ऐसे चरित्र तो यहां आगे बहुत दिन बीतनेके बाद होंगे ॥ ११ ॥

॥ इति ॥

अस चरित्र करिहहिं रघुनाथा ॥ सुनहु भरद्वाज गुणगाथा ॥ १ ॥ ❋
देखि सेतु अति सुन्दर रचना ॥ बिहँसि कृपानिधि बोले बचना ॥ २ ॥ ❋

याज्ञवल्क्य मुनि कहते है कि-हे भरद्वाज! प्रभुने जो अद्भुत चरित्र किये है वे मैं कहता हूं सो सुनो ॥ १ ॥ सेतुकी बड़ी विचित्र और सुन्दर रचना देखकर, कृपासिंधु प्रभु हँसकर बोले ॥ २ ॥

"कह्यो महातम चिर जगहेतू ॥ तेरसि दिवस सिद्ध भा सेतू ॥ ३ ॥ ❋
परम रम्य सुन्दर यह धरणी ॥ महिमा अमित जाइ नहिँ बरणी ॥ ४ ॥ ❋

सेतु तेरसके दिन तैयार हुआ था, उसे देख, जगतके कल्याणके अर्थ प्रभुने उस सेतुकी महिमा कह सुनायी ॥ ३ ॥ प्रभु बोले कि-यह पृथ्वी परम पवित्र और सुन्दर है. इसकी महिमा किसीसे बरनी नहीं जाती ॥ ४ ॥

करिहौं इहां शम्भु थापना ॥ मोरे हृदय परम कल्पना ॥ ५ ॥
सुनि कपीश बहु दूत पठाये ॥ मुनिबर निकर बोलि लै आये ॥ ६ ॥ ❋

मैं यहां महादेवको स्थापन करूंगा. मेरे मनमें इस बातकी पूरी पूरी कल्पना है ॥ ५ ॥ प्रभुके वचन सुन, सुग्रीवने अपने बहुतसे दूत भेजे सो वे मुनिराजोंका वृन्द ले आये ॥ ६ ॥

लिंग थापि बिधिवत करि पूजा ॥ शिवसमान प्रिय मोहिँ न दूजा ॥ ७ ॥
शिवद्रोही मम दास कहावै ॥ सो नर स्वप्नेहुँ मोहिँ न भावै ॥ ८ ॥ ❋
शंकर बिमुख भक्ति चह मोरी ॥ सो नर मूढ़ मंद मति थोरी ॥ ९ ॥ ❋

तब वेदविधिसे महादेवजीका लिंग स्थापन कर, उसकी पूजा कर, प्रभुने कहा कि-मुझको महादेवजीके जैसा प्यारा दूसरा कोईभी नहीं है ॥ ७ ॥ प्रभु कहते है कि-जो मेरा दास कहा कर महादेवसे द्रोह रखता है, वो मुझे स्वप्नेमेंभी अच्छा नहीं लगता ॥ ८ ॥ जो मनुष्य महादेवसे विमुख हो मेरी भक्ति चाहते है, उन्हें कुछ कम मंदबुद्धि समझना चाहिये; क्योंकि इनके जैसा मंदमति और मूर्ख जगतमें दूसरा कोई नहीं है ॥ ९ ॥

दोहा-शंकरप्रिय मम द्रोही, शिवद्रोही मम दास ॥ ❋
ते नर करहिँ कल्प भरि, घोर नरकमहँ बास ॥ ३ ॥ ❋

जो महादेवके भक्त मेरेसे द्रोह रखते हैं और जो मेरे भक्त महादेवसे द्रोह रखते हैं, वे मनुष्य कल्प-भर महाघोर दारुण नरकमें निवास करते हैं ॥ ३ ॥

जो रामेश्वर दरशन करिहैं ॥ सो तनु तजि मम धाम सिधरिहैं ॥ १ ॥ ❋
जो गंगाजल आनि चढ़ाइहि ॥ सो सायुज्य मुक्ति नर पाइहि ॥ २ ॥ ❋
होइ अकाम जो छल तजि सेइहि ॥ भक्ति मोरि तिंहि शंकर देइहि ॥ ३ ॥

जो लोक रामेश्वरका दर्शन करेंगे, वे शरीरको त्यागनेपर मेरे धामको प्राप्त होवेंगे ॥ १ ॥ जो यहां आके शंभुपर गंगाजल चढ़ावेंगे, वे मनुष्य सायुज्य मुक्तिको पावेंगे ॥ २ ॥ और जो निष्काम भक्त फलानुसंधानको छोड़ छलको तज, शंकरकी सेवा करेंगे, उन्हें शंभु कृपा करके मेरी भक्ति देवेंगे ॥ ३ ॥

(क्षेपक) सपनेहुँ मा आइहि यहि धामा ॥ करि अस्नान जपी शिवनामा ॥ १ ॥
पशुपतिमुख निहारि दृग जाही ॥ तेहिकर बरणि को आही ॥ २ ॥ ❋

जो मनुष्य स्वप्नमेंभी इस धामको आवेगा और स्नान करके शिवजीके नामका जप करेगा ॥ १ ॥ और अपने नेत्रोंसे महादेवजीके मुखका दर्शन करेगा, उसके भाग्यको वर्णन करै ऐसा जगतमें कौन है ? अर्थात् कोई नहीं ॥ २ ॥

वचन जो कहहिँ आई नहिँ शकही ॥ अंतकाल सो शिवपुर बसही ॥ ३ ॥
रामेश्वरकी कीर्ति जो गाई ॥ तासु निकट नहिँ पातक जाई ॥ ४ ॥ ❋

और जो लोग यहां नहीं आसकेंगे किंतु घर बैठेही महादेवकी स्तुति करेंगे और मुँहसे कहेंगे वे नर अंतकाल होनेपर शिवपुरमें बास करेंगे ॥ ३ ॥ जो लोग रामेश्वरकी कीर्तिको गावेंगे उनके निकट पाप कभी जाने न पावेगा ॥ ४ ॥

छंद-स्वभाव कर्म कालके जँजाल जीव जालके, कुचाल काम ❋
हालके, जे भेद बेद हैं कहे ॥ संताप शोक सीमके, भवाब्धि ❋
ब्याधि भीमके, अघौघ जे सदीमके, कृपालके कृपा दहे ॥ ❋
अनन्द कन्द ध्यावते, गुणानुवाद गावते, पदाब्ज शीश ❋
नावते, जे नाम नेहमें नहे ॥ स्वयम्भु अम्बिकासमेत, चित्त- ❋
वृत्तिके निकेत, शोध औध बोध हेत, त्र्यम्बकं यजामहे ॥ १ ॥ ❋

जिस महादेवके आराधन करनेसे जीवसमूहके स्वभाव, कर्म और कालकृत सब जंजाल मिट जाते है और कामानलकी सब कुचालें निवृत्त हो जाती है और किस दयालुकी कृपासे वेदमें कहे हुए संसारसागरके संताप और शोक आदि महा भयंकर रोग और अनादि पापोंका पुंज, भस्म हो जाता है; जिस आनन्दकन्दके गुणानुवादका ध्यान करते, गाते, चरणकमलोंमें शिर नवाते और स्नेहसे नाम लेते चित्तकी वृत्ति शुद्ध हो जाती है, उस ज्ञानके कारण सबके अवधिरूप, स्वयंभू त्रिनयनं पार्वतीके साथ विराजमान महादेवका हम यजन करते हैं; कि जो शंभु सबके घट घटमें विराजते हैं ॥ १ ॥

दोहा-शिवपूजाकर अमित फल, जानहिँ सकल सुरेश ॥ ❋
अस कहि कीन्ही दण्डवत, अनुजसमेत रमेश ॥ १ ॥ ❋

महादेवके आराधनका अमित प्रभाव सब देवता जानते हैं, यह छुपा थोड़ाही. ऐसे कह प्रभुने लक्ष्मणके साथ दंडवत् प्रणाम किया ॥ १ ॥

करि दण्डवत राम अस भाखा ॥ सुनहु सकल मुनि अरु मृगशाखा ॥ १ ॥
तुम्हरी कृपा पाय त्रिपुरारी ॥ हतब निशाचर सुररिपु भारी ॥ २ ॥ ❋

प्रभुने फिर शंकरको दंडवत् करके कहा कि–हे वानर और मुनिराजो ! आप लोग सुनिये ॥ १ ॥ मैं आपकी कृपासे महादेवजीका कृपापात्र हुआ हूं, सो अब शंकरकी कृपासे सब राक्षसोंका संहार करूंगा ॥ २ ॥

अनुज जानकी सैन्य समेता ॥ बहुरि पूजि पुनि जाब निकेता ॥ ३ ॥

ऐसे कह, प्रभुने लक्ष्मण और सेनाके साथ दंडवत् कर विनती करी कि–हे नाथ ! मैं शत्रुओंको मार पीछा आऊंगा, तब सीता लक्ष्मण और सेनाके साथ आपकी पूजा कर फिर घर जाऊंगा ॥ ३ ॥ ॥ इति ॥

मम कृत सेतु जो दरशन करिहैं ॥ बिनु श्रम भवसागर सो तरिहैं ॥ ४ ॥
रामबचन सबके मन भाये ॥ मुनिबर निज निज आश्रम आये ॥ ५ ॥

रामचन्द्रजी कहते है कि–जो मनुष्य मेरे स्थापन कियेहुए महादेवके तथा सेतुके दर्शन करेंगे, वे विना परिश्रम संसारको पार हो जायंगे ॥ ४ ॥ प्रभुके वचन सबको बहुत प्रिय लगे और मुनि लोग पीछे अपने अपने आश्रमोंको सिधारे ॥ ५ ॥

गिरिजा रघुपतिकी यह रीती ॥ सन्तत करहिँ प्रणतपर प्रीती ॥ ६ ॥
बाँधेउ सेतु नील नल नागर ॥ रामकृपा यश भयउ उजागर ॥ ७ ॥

महादेव कहते है कि–हे भवानी ! प्रभुकी यह रीति है कि वे प्रणत पुरुषोंपर बड़ी प्रीति रखते है ॥ ६ ॥ प्रभुकी कृपासे परम चतुर नल और नीलने जो सेतु बांधा तिससे जगतमें उनकी बड़ी उदार कीर्ति हुई ॥ ७ ॥

बूड़हिँ आनहिँ बोरहिँ जेई ॥ भये प्रबल बोहित सम तेई ॥ ८ ॥
महिमा यह न जलधिकी बरणी ॥ पाहन गुण न कपिनकी करणी ॥ ९ ॥

सेतु बांधते समय जो पर्वत आप बुड़नेवाले और दूसरोंकेभी बोरनेवाले थे, वे सब अति सुंदर नौकाके समान हो गये थे ॥ ८ ॥ कवि कहता है कि–पर्वतोंका न बूड़ना यह न तो समुद्रकी महिमा कह सकते है और न पत्थरका गुण कह सकते है और न वानरोंका प्रभाव कह सकते किंतु प्रभुका प्रतापही कहेंगे ॥ ९ ॥

दोहा–श्रीरघुबीरप्रतापते, सिन्धु तरे पाषाण ॥
ते मतिमन्द जो राम तजि, भजहिँ जाय प्रभु आन ॥ ४ ॥

तुलसीदासजी कहते है कि–जिस रघुवीरके प्रभावसे पत्थर समुद्रमें तरे है, उस आनन्दकन्द रामचन्द्रजीको छोड़कर जो मतिमन्द दूसरे देवताका आराधन करते हैं, उनसे बढ़कर अभागा जगत्में कोई न होगा ॥ ४ ॥

बांधि सेतु अति सुदृढ़ बनावा ॥ देखि कृपानिधिके मन भावा ॥ १ ॥
चली सेन कछु बरणि न जाई ॥ गरजहिँ मरकट भट समुदाई ॥ २ ॥

सेतुका बड़ा मजबूत और दृढ़बंध देख, प्रभुके मनको वो बहुत अच्छा लगा ॥ १ ॥ प्रभुने सेतुको पार उतरने योग्य दृढ़ देख, आज्ञा करी. तब सारी सेना सेतुके द्वारा समुद्रमें चली, जिसका कुछ वर्णन नहीं कर सकते. वानर भट अति आनंदित हो गर्जना करते हैं ॥ २ ॥

सेतुबंध ढिग चढ़ि रघुराई ॥ चितव कृपालु सिंधु बहुताई ॥ ३ ॥ ❋
देखन कहँ प्रभु करुणाकन्दा ॥ प्रगट भये सब जलचरवृन्दा ॥ ४ ॥ ❋

जब दयालु प्रभु सेतुपर चढ़ समुद्रकी गहराई देखने लगे ॥ ३ ॥ तब समुद्रके जलजंतु प्रभुका दर्शन करनेको बाहिर आय, प्रगट हो प्रभुका मुखचन्द्र निहारने लगे है ॥ ४ ॥

नाना मकर नक्र झष ब्याला ॥ शतयोजन तनु परम बिशाला ॥ ५ ॥ ❋
ऐसे एक तिनहिं धरि खाहीं ॥ एकनके डर एक पराहीं ॥ ६ ॥ ❋

समुद्रके भीतर मगर, नक्र, मच्छ और सर्प आदि ऐसे विशालशरीर है कि, कुछ कहा नहीं जाता. कितनेएक मच्छोंके शरीर तो सौ योजन लंबे है ॥ ५ ॥ और कई इतने बडे है कि, जो उनकोभी पकड़कर खाजाते है अतएव एक एकके डरसे एक एक भागते जाते है ॥ ६ ॥

प्रभुहिं बिलोकहिं टरहिं न टारे ॥ मन हर्षित सब भये सुखारे ॥ ७ ॥ ❋
तिनकी ओट न देखिय वारी ॥ मगन भये हरिरूप निहारी ॥ ८ ॥ ❋
चला कटक कछु बरणि न जाई ॥ को कहिसक कपिदल बिपुलाई ॥ ९ ॥

यदपि मच्छ डरके मारे इकठे नहीं रहते तौभी प्रभुके दर्शन करते समय सब इकठे होगये है. हटानेपरभी नहीं हटते है. मनमें बडे प्रसन्न और सुखी है ॥ ७ ॥ उनको जलके ऊपर छा जानेसे जल दीखना बन्द हो गया है. वे प्रभुका स्वरूप निहार ऐसे मगन होगये है कि शरीरको सुध बुध भूल गये हैं ॥ ८ ॥ वानरोंका जो कटक चला वो कुछ बरना नहीं जाता था. ऐसा कवि कौन है ? जो कपिदलको वर्णन कर पार पासके ॥ ९ ॥

दोहा—सेतुबन्ध भइ भीर अति, कपि नभपन्थ उड़ाहिँ ॥ ❋
अपर जलचरनि उपर चढ़ि, बिनुश्रम पारहिँ जाहिँ ॥ ५ ॥ ❋

सेतुबन्धपर बड़ी भारी भीड़ हो रहीहै. कई वानर तो आकाश मार्गसे उड़ उड़कर जा रहे है. कई जलजंतुओंकी पीठपर चढ़ विनाश्रम सागरको पार होते है ॥ ५ ॥

यह कौतुक बिलोकि दोउ भाई ॥ बिहँसि चले कृपालु रघुराई ॥ १ ॥ ❋
सेन सहित उतरे रघुबीरा ॥ कहि न जात कछु यूथप भीरा ॥ २ ॥ ❋

ऐसे वानरोंके बडे विचित्र और अद्भुत चरित्र देख, दोनों भाई दयालु रघुबीर हँसते चले जाते है ॥ १ ॥ अपनी फौजके साथ प्रभु समुद्रको पार उतर रहे है, तहां जो यूथपतियोंकी भीड़ हुई है वोकहनेमें नहीं आती है ॥ २ ॥

"इमि उतरत निशिदिन इकधारा ॥ द्वितियादिवस भये सब पारा" ॥ ३ ॥
सिन्धुपार प्रभु डेरा कीन्हा ॥ सकल कपिन कहँ आयसु दीन्हा ॥ ४ ॥ ❋

"इसतरह इकधार रातदिन सेना चली सो द्वितीयाके दिन समुद्रके पार पहुंची" ॥ ३ ॥ समुद्रके परले पार डेरा करके प्रभुने सब वानरोंको आज्ञा दी ॥ ४ ॥

खाहु जाइ फल मूल सुहाये ॥ सुनत भालुकपि जहँ तहँ धाये ॥ ५ ॥ ❋
"पाय रजाय निकट फल खाये ॥ तृतियादिन सुबेल गिरि आये" ॥ ६ ॥

फल मूल भावे सो खाओ. प्रभुकी आज्ञा पाय, सब इधर उधर चले ॥ ५ ॥ सो खूब अच्छीतरह फल मूल कंद खाय, तृप्त हो, तृतीयाके दिन सुबेल गिरि पर्वतपर आये ॥ ६ ॥

सब तरु फले राम हित लागी ॥ ऋतु अनऋतुहिँ कालगति त्यागी ॥ ७ ॥
खाहिँ मधुर फल बिटप हिलावहिँ ॥ लङ्कासन्मुख शिखर चलावहिँ ॥ ८ ॥

प्रभु सुबेल गिरिपर पधारे तब प्रभुके हितकेवास्ते सब पेड़ फलोंसे लटालूम हो गये. फलनेकी ऋतु और विना ऋतुका विचार त्याग दिया अर्थात् जिनकी फलनेकी ऋतु थी वेभी फले और जिनकी फलनेकी ऋतु नहीं थी वेभी फले ॥ ७ ॥ वानर और रीछ मीठे फल खाते है. पेड़ोंको हिलाते है और लंकाके सन्मुख पर्वतोंके शिखर चलाते है ॥ ८ ॥

जहँ कहँ फिरत निशाचर पावहिँ ॥ घेरि सकल मिलि नाच नचावहिँ ॥९॥
दशनन काटि नासिका काना ॥ कहि प्रभु सुयश देहिँ तब जाना ॥ १० ॥

और जहां कहीं राक्षस फिरता मिलजाता है, उसे पकड़कर घेरलेते है और सब मिल नाच नचाते है ॥ ९ ॥ और दांतोंसे उसके नाक कान काट, प्रभुका सुयश सुनाय, फिर जाने देते है ॥ १० ॥

जिनकर नासा कान निपाता ॥ तिन रावणहिँ कही सब बाता ॥ ११ ॥
सुनत श्रवण बारिधिबन्धाना ॥ दशमुख बोलि उठा अकुलाना ॥ १२ ॥

जिनके वानरोंने नाक कान काटे उन्होंने जाकर, रावणसे सब बातें कहीं कि,आप तो यहां निचिंत बैठे हो और शत्रु द्वारपर आ पहुँचा है ॥ ११ ॥ समुद्रमें सेतु बांध, शत्रु निकट आगया. ये समाचार कानोंसे सुन रावण व्याकुल होकर, दशों मुखोंसे बोल उठा कि-॥ १२ ॥

दोहा-बाँधेउ जलनिधि नीरनिधि, जलधि सिन्धु वारीश ॥ ❋
सत्य तोयनिधि पंकनिधि, उदधि पयोधि नदीश ॥ ६ ॥ ❋

क्या जलनिधि, नीरनिधि, जलधि, सिंधु, वारीश, तोयनिधि, पंकनिधि, उदधि, पयोधि और नदीशको सच मुच बांध लिया है ? ॥ ६ ॥

व्याकुलता निज समुझि बहोरी ॥ बिहँसि चला गृह करि मतिभोरी ॥ १ ॥
मंदोदरी सुना प्रभु आये ॥ कौतुकही पाथोधि बँधाये ॥ २ ॥ ❋

रावण अपनी व्याकुलताको समझ, हँस,बिना समझे बोला हो ऐसे बुद्धिको भोली, बनाकर घरको चला॥१॥मंदोदरीने जब ये समाचार सुने कि, प्रभु समुद्रमें सेतु बांध सुबेलगिरिपर्वत पर आगये हैं॥२॥

कर गहि पतिहिँ भवन निज आनी ॥ बोली परम मनोहर बानी ॥ ३॥ ❋
चरण नाइ शिर अंचल रोपा ॥ सुनहु बचन पिय परिहरि कोपा ॥ ४ ॥ ❋

तब अपने पति (रावण) को घरमें बुलाय, उनका हाथ पकड़,बड़ी मनोहर मधुर वाणीसे बोली ॥ ३ ॥ कि-हे कान्त ! मैं आपके चरणोंमें शिर नवाय, अंचल पसारकर प्रार्थना करती हूं सो कोपको तजकर मेरा बचन सुनो ॥ ४ ॥

नाथ बैर कीजय ताहीसों ॥ बुधि बल जीति सकहिँ जाहीसों ॥ ५ ॥ ❋
तुमहिँ रघुपतिहिँ अन्तर कैसा ॥ खलु खद्योत दिवाकर जैसा ॥ ६ ॥ ❋

हे प्रिय ! वैर उससे करना चाहिये कि, जिसको हम बुद्धि और बलसे जीत सकें ॥ ५ ॥ हे नाथ ! आपके और रामके बीच कितना अंतर है कि, जितना बीच खद्योत (जुगुनू) और सूर्यके है ॥ ६ ॥

अतिबल मधुकैटभ जिन मारा ॥ महाबीर दितिसुत संहारा ॥ ७ ॥ ❋
जेहिँ बलि बांधि सहसभुज मारा ॥ सोइ अवतरेउ हरण महिभारा ॥ ८ ॥
तासु बिरोध न कीजिय नाथा ॥ काल कर्म गुण जिनके हाथा ॥ ९ ॥ ❋

जिन्होंने महाबली मधु और कैटभ दैत्यको मार, अनेक दैत्योंका संसार किया है ॥ ७ ॥ जिन्होंने बलिराजको बांधा है, और परशुरामरूप धर सहस्रबाहुको मारा है, वेही प्रभु पृथ्वीका भार उतारनेको प्रगट हुए है ॥ ८ ॥ हे नाथ ! इसलिये मैं कहती हूं कि–जिनके हाथ काल कर्म और गुण सब है, उनसे विरोध नहीं करना चाहिये ॥ ९ ॥

दोहा–रामहिँ सौंपहु जानकी, नाइ कमलपद साथ ॥ ❋
सुतकहँ राज देइ बन, जाइ भजहु रघुनाथ ॥ ७ ॥ ❋

हे स्वामी ! इसलिये आप रामचन्द्र आनन्दकन्दके चरणकमलोंमें शिर नवाय सीता सौंप दो और पुत्रको राज दे, वनमें जाय, श्रीरघुनाथजीका भजन करो ॥ ७ ॥

नाथ दीनदयाल रघुराई ॥ बाघौ सन्मुख गये न खाई ॥ १ ॥ ❋
चहिय करन सो सब करि बीते ॥ तुम सुर असुर चराचर जीते ॥ २ ॥ ❋

हे नाथ ! रघुराज परम दीनदयालु है. सो शरण जानेपर आपको कभी नहीं मारेंगे. बाघ कि जो हिंस पशु है वोभी सन्मुख जानेपर नहीं खाता. सो प्रभु तौ दीनदयालु है तहां डरही क्या है ? ॥ १ ॥ आदमीको जो काम करना चाहिये वो सब तुम कर चुके; क्योंकि आपने देवता और दैत्य सब चराचर प्राणीमात्रको जीत, अपना विजय कर, भोग भोग लिये है ॥ २ ॥

बेद कहहिँ अस नीति दशानन ॥ चौथेपनहिँ जाइ नृप कानन ॥ ३ ॥ ❋
तासु भजन कीजिय तहँ भर्त्ता ॥ जो कर्त्ता पालक संहर्ता ॥ ४ ॥ ❋

सो हे दशानन ! वेदमें ऐसी नीति कही है कि, जब चौथापन आजाय तब अर्थात् वृद्धावस्थामें राजाको वनमें जाय तपस्या करनी चाहिये ॥ ३ ॥ और जो इस जगत्का कर्ता हर्ता और पालनेवाला है. हे स्वामी ! उसका भजन करना चाहिये ॥ ४ ॥

सोइ रघुवीर प्रणत अनुरागी ॥ भजहु नाथ ममता मद त्यागी ॥ ५ ॥ ❋
मुनिबर यतन करहिँ जेहि लागी ॥ भूप राज तजि होहिँ बिरागी ॥ ६ ॥

हे नाथ ! ये रघुवीर प्रभु वेही जगत्के हर्ता कर्ता मनुष्य देह धरकर पृथ्वीपर प्रगट हुए हैं. और प्रभु शरणागतोंपर बड़ी प्रीति रखते है. सो आप ममता और मदको त्याग, प्रभुका भजन करो ॥ ५ ॥ मुनिलोग जिसके वास्ते अनेक उपाय करते है और राजालोग जिसके लिये राजाको तज बैरागी हो जाते हैं ॥ ६ ॥

सोइ कोशलाधीश रघुराया ॥ आये करन तोहिँपर दाया ॥ ७ ॥ ❋
जो पिय मानहुँ मोर सिखावन ॥ होइहि सुयश तिहुँपुर पावन ॥ ८ ॥ ❋

वेही अयोध्यापति प्रभु रामचन्द्र तुमपर दया करने यहां आगये हैं ॥ ७ ॥ हे प्रिय ! जो आप मेरा कहा मानोगे तौ त्रिलोकीमें आपका बड़ा सुयश होगा ॥ ८ ॥

दोहा–अस कहि लोचन बारि भरि, गहि पद कंपित गात ॥ ❀
नाथ भजहु रघुनाथ पद, मम अहिवात न जात ॥ ८ ॥ ❀

ऐसे कह, नेत्रोंमे जल भर, चरण धर, थर थर कांपती हुई मंदोदरीने रावणसे कहा कि–हे नाथ! आप रामचन्द्रजीके चरणोंका भजन करो, जिससे मेरा सौभाग्य बना रहे ॥ ८ ॥

तब रावण मयसुता उठाई ॥ कहै लाग खल निज प्रभुताई ॥ १ ॥ ❀
सुनु तैं प्रिया मृषा भय माना ॥ जग योधा को मोहिं समाना ॥ २ ॥ ❀

तब दुष्ट रावण मंदोदरीको उठाय, अपनी प्रभुताकी बड़ाई करने लगा ॥ १ ॥ रावण बोला कि–हे प्रिया! सुन, तू वृथा डरती है. जगतमें मेरे बराबरका सुभट कौन है? ॥ २ ॥

बरुण कुबेर पवन यम काला ॥ भुजबल जिते सकल दिगपाला ॥ ३ ॥ ❀
देव दनुज नर सब बश मोरे ॥ कवन हेतु भय उपजा तोरे ॥ ४ ॥ ❀

मैंने अपने भुजबलसे वरुण, कुबेर, पवन, यमराज और काल सब लोकपालोंको जीत लिया है ॥ ३ ॥ देवता, दैत्य और मनुज सब मेरे वशवर्ती है. फिर हे प्रिया! तेरे मनमें यह भय क्यों उपजा? ॥ ४ ॥

नाना बिधि कहि तेहिं समुझाई ॥ सभा बहोरि बैठ सो जाई ॥ ५ ॥ ❀
मन्दोदरी हृदय अस जाना ॥ कालबिबश उपजा अभिमाना ॥ ६ ॥ ❀

ऐसे मंदोदरीको अनेक प्रकारसे समझाय, झूंठी सांची बातें कह, फिर पीछा सभामें आ बैठा ॥ ५ ॥ तब मंदोदरीने अपने मनमें ऐसा जाना कि, कालके वश होनेसे इसे अभिमान आगया है. खैर जो प्रभुकी इच्छा होगी वो होगा ॥ ६ ॥

सभा जाइ मंत्रिनसों बूझा ॥ करिय कवन बिधि रिपुसन जूझा ॥ ७ ॥ ❀
कहहिं सचिव सुनि निशिचर नाहा ॥ बार बार प्रभु पूंछत काहा ॥ ८ ॥ ❀
कहहु कवन भय करिय बिचारा ॥ नर कपि भालु अहार हमारा ॥ ९ ॥ ❀

रावणने सभामें जाकर, मंत्रियोंसे पूंछा कि–कहो, शत्रुओंके साथ युद्ध कैसे करना चाहिये? ॥ ७ ॥ तब मंत्री बोले कि–महाराज! आप बारंबार क्या पूंछते हो? ॥ ८ ॥ कहो, कौनसा डर है? कि जिसका हम बिचार करैं; वानर रीछ और मनुष्य कि जो चढ़के आये हैं, सो तौ हमारा आहारही हैं. इनको मारनेका क्या बिचार? ॥ ९ ॥

दोहा–बचन सबनके श्रवण सुनि, कह प्रहस्त कर जोरि ॥ ❀
नीति बिरोध न करिय प्रभु, मंत्रिन मति अति थोरि ॥ ९ ॥ ❀

सब राक्षसोंके ऐसे गर्वभरे वचन सुन, हाथ जोड़, प्रहस्तने कहा कि–हे नाथ! नीतिसे विरुद्ध कुछभी काम न करना चाहिये और जो बात ये मंत्री कहते हैं इनकी भूल है ॥ ९ ॥

कहहिं सचिव सब ठकुरसुहाती ॥ नाथ न भल होइहि यहि भांती ॥ १ ॥ ❀
बारिधि लांघि एक कपि आवा ॥ तासु चरित मनमहँ बस गावा ॥ २ ॥ ❀

हे प्रभु! जो ये राक्षस ठाकुर सुहाती बात कहते हैं, सो इसतरह कभी भला न होगा ॥ १ ॥

आपको स्मरण है कि, एक वानर समुद्रको लांघकर, यहां आयाथा; उसके चरित्रको सब कोई अपने मनमें जानते है ॥ २ ॥

क्षुधा न रही तुमहिँ सबकाहू ॥ जारत नगर न कस धरि खाहू ॥ ३ ॥ *
सुनत नीक आगे दुख पावा ॥ सचिवन्ह अस मत प्रभुहिँ सुनावा ॥ ४ ॥

क्या उसवक्त तुम सबोंको भूंख नहीं लगी थी ? कि जिससे तमाम पुरीको जलानेपरभी उसको पकड़कर नहीं खाया ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! इस समय मंत्रियोंने प्रभुको सलाह दी है वो ऐसी है कि, सुनते तौ बहुत अच्छी. परंतु भविष्यत्‌में इसका फल बुरा है ॥ ४ ॥

जो बारीश बँधायेउ हेला ॥ उतरे कपिदल सहित सुबेला ॥ ५ ॥ *
सो जनु मनुज खाब हम भाई ॥ बचन कहहु सब गाल फुलाई ॥ ६ ॥ *

जो कौतुकहीसे समुद्रमें सेतु बांध, कपिदलको साथ ले, समुद्रको पार उतर, सुबेलतक चले आये है ॥ ५ ॥ क्या वे मनुष्य हमसे खाय जांयगे ? अरे भाई ! तुम सब गाल फुलाकर कहते हो, पर जरा इसका विचार करना चाहिये ॥ ६ ॥

सुनि मम बचन तात अति आदर ॥ निज मन गुनहु मोहिँ कहि कादर ॥७॥
प्रिय बाणी जे सुनहिँ जे कहहीं ॥ ऐसे जग निकाय नर अहहीं ॥ ८ ॥ *

हे तात ! मेरे वचनोंको बड़े आदरके साथ सुनो, चाहे कोई मुझको कायर कहे और अपने मनमें वैसाही जानै पर सच्चीबात कहनी सेवकका धर्म है ॥ ७ ॥ हे तात ! प्रिय वचन कहने और सुननेवाले आदमी तौ जगत्‌में बहुत है ॥ ८ ॥

बचन परम हित सुनत कठोरे ॥ कहहिँ सुनहिं ते नर प्रभु थोरे ॥ ९ ॥ *
प्रथम बसीठ पठव सुन नीती ॥ सीतहिँ देइ करिय पुनि प्रीती ॥ १० ॥ *

पर हे प्रभु ! हितकारी और कठोर वचन कहने और सुननेवाले आदमी बहुत विरले हैं ॥ ९ ॥ हे राजा ! जो मैं नीतिकी बात कहता हूं सो सुनो. प्रथम दूतको भेज, सीताको दे, रामके साथ प्रीति कर लेनी यह सबके अच्छो बात है ॥ १० ॥

दोहा—नारि पाइ फिरि जाहिँ जो, तौ न बढ़ाइय रार ॥ *
नाहिँ तो सन्मुख समरमहँ, नाथ करिय हठ मार ॥ १० ॥ *

जो सीताको पाकर पीछे लौट जांय तब तौ आपनको बिलकुल लड़ाई न बढ़ानी चाहिये और जो सीताको देनेपरभी न मानें तौ पीछे उनके सोहीं जाय, संग्रामके बीच उन्हें हठकर मारना चाहिये ॥ १० ॥

यह मत जो मानहु प्रभु मोरा ॥ उभय प्रकार सुयश जग तोरा ॥ १ ॥ *
सुतसन कह दशकंध रिसाई ॥ अस मत तोहिँ शठ कवन सिखाई ॥ २ ॥

हे प्रभु ! जो आप मेरी यह सलाह मानोंगे तौ दोनों प्रकारसे जगत्‌में आपका सुजस होगा ॥ ॥ १ ॥ प्रहस्तके ऐसे नीतिके वचन सुन, रावणने क्रोध करके उससे पीछा कहा कि–रे शठ ! तुझे यह शिक्षा किसने दी है ? ॥ २ ॥

अबहीं ते उर संशय होई ॥ बेणुबंश सुत भयसि घमोई ॥ ३ ॥ *

सुनि पितुगिरा परुष अति घोरा ॥ चला भवन कहि वचन कठोरा ॥ ४ ॥

अरे! शत्रुके पक्षके वचन सुन, तेरे मनमें अभीसे संदेह होता है तो क्या तू बांसोंके वनमें घमिराही तो नहीं पैदा हुआ है? ॥ ३ ॥ रावणके अति दारुण कठोर वचन सुन, प्रहस्त अति परुष वचन सुनाय, घरको चला ॥ ४ ॥

हित मत तोहिँ न लागत कैसे ॥ कालबिबश कहँ भेषज जैसे ॥ ५ ॥ ❀

संध्यासमय जानि दशशीशा ॥ भवन चला निरखत भुजबीशा ॥ ६ ॥ ❀

प्रहस्तने कहा कि–हे तात! आपको मेरे ये पथ्य वचन जैसे कालके वशवर्ती पुरुषको औषध अच्छी नहीं लगती ऐसे अच्छे नहीं लगते; परंतु इसका फल देख लेओगे ॥ ५ ॥ जब सांझ हुई तब रावण अपने बीसों २० भुजाओंको देखता घरको चला ॥ ६ ॥

लंकाशिखर रुचिर आगारा ॥ अति विचित्र तहँ होय अखारा ॥ ७ ॥ ❀

बैठ जाइ तेहिँ मन्दिर रावण ॥ लागे किन्नर गुणगण गावन ॥ ८ ॥ ❀

लंकाके बीच रावणका घर बहुत सुन्दर और सबसे ऊंचा शिखरके समान शोभायमान था, उसमें एक विचित्र अखारा था ॥ ७ ॥ वहां महलके भीतर जाके रावण बैठा है. किन्नरलोग उसके गुणगण गा रहे है ॥ ८ ॥

बाजै ताल पखावज बीणा ॥ नृत्य करहिँ अप्सरा प्रबीणा ॥ ९ ॥ ❀

ताल, पखावज और वीणा आदि वाद्य बाज रहे है. नृत्यकालमें प्रवीण अप्सरा नांचती है ॥ ९ ॥

दोहा–सुनासीर शत सरिस सो, सन्तत करै बिलास ॥ ❀

परम प्रबल रिपु शीशपर, तदपि न कछु मनत्रास ॥ ११ ॥ ❀

हमेशा वो सौ इंद्रोंके समान भोगविलास करता है. यदपि उसके शिरपर महा प्रबल शत्रु चढ़ आया है. तौभी मनमें कुछ डर नहीं है ॥ ११ ॥

इहां सुबेल शैल रघुबीरा ॥ उतरे सेनसहित अति भीरा ॥ १ ॥ ❀

शैल शृंग इक सुन्दर देखी ॥ अति उतंग सम सुभग बिशेखी ॥ २ ॥ ❀

इधर प्रभु सागरके पार उतरकर, सुवेल पर्वतके ऊपर सेनाके साथ विराजते है. बड़ी भीड़ हो रही है ॥ १ ॥ सुबेल पर्वतके शिखरोंमें एक शिखर बहुत सुन्दर, अति ऊंचा और परम रमणीय था. उसकी भूमि सम थी ॥ २ ॥

तहँ तरु किसलय सुमन सुहाये ॥ लक्ष्मण रचि निज हाथ डसाये ॥ ३ ॥ ❀

तापर रुचिर मृदुल मृगछाला ॥ तेहि आसन आसीन कृपाला ॥ ४ ॥ ❀

वहां लक्ष्मणने वृक्षोंके फूल, पल्लव, और कोमल पत्ते बिछाय, अपने हाथोंसे शय्या तैयार करी ॥ ३ ॥ उसपर सुन्दर कोमल मृगछाला बिछाई. उस आसनपर दयालु प्रभु विराजे ॥ ४ ॥

प्रभुकृत शीश कपीश उछँगा ॥ बाम दहिन दिशि चाप निषंगा ॥ ५ ॥ ❀

दुहुँ कर कमल सुधारत बाना ॥ कह लंकेश मंत्र लगि काना ॥ ६ ॥ ❀

प्रभु सुग्रीवकी गोदीमें शिरटेक पौढ़े हैं. बांई और दाहिनी ओर दो बाणोंके तरकस बंधे हैं ॥ ५ ॥ दोनों हस्तकमलोंसे प्रभु बाण सुधार रहे हैं और बिभीषण कानमें सलाहकी बातें कह रहा है ॥ ६ ॥

बड़भागी अंगद हनुमाना ॥ चरणकमल चापत बिधि नाना ॥ ७ ॥ ❋
प्रभु पाछे लक्ष्मण बीरासन ॥ कटि निषंग कर बाण शरासन ॥ ८ ॥ ❋

बड़भागी हनुमान् और अंगद अनेक प्रकारसे पांव चाप रहे है, ॥ ७ ॥ प्रभुके पीछे कमरमें तरकस कसे हाथमें धनुषबाण लिये वीरासनसे लक्ष्मण बैठा है ॥ ८ ॥

दोहा-यहिबिधि करुणाशील गुण, धाम राम आसीन ॥ ❋
धन्य सो नर यहि ध्यान रत, रहत सदा लवलीन ॥ १२॥ ❋

तुलसीदासजी कहते हैं कि-ऐसे आसनपर विराजमान करुणानिधि, गुणोंके आगर सुशील सुख धाम रामका जो ध्यान करते है और सदा लवलीन रहते है वे मनुष्य जगतमें बड़े बड़भागी है ॥ १२॥

पूरब दिशा बिलोकि प्रभु, देखा उदित मयंक ॥ ❋
कह्यो सबहिं देखहु शशिहिं, मृगपतिसरिस अशंक ॥ १३ ॥ ❋

पूर्वदिशाकी ओर देख, उसमें चन्द्रमाको उदय होता देख, प्रभुने सब सेनापतियोंसे कहा कि-देखो, चन्द्रमा कैसा निडर सिंहके समान दीख पड़ता है,? ॥ १३ ॥

पूरबदिशि गिरिगुहा निबासी ॥ परम प्रताप तेज बलरासी ॥ १ ॥ ❋
मत्त नाग तम कुम्भ बिदारी ॥ शशि केसरी गगन बनचारी ॥ २ ॥ ❋

सिंह पर्वतकी गुफामे रहता है सो यहां जो पूर्वदिशा है सोही पर्वतकी गुफा है. तेज, प्रताप और बलका भंडार है ॥ १ ॥ सिंह हाथीका कुंभस्थल विदारता है सो यहां अंधकार है सोही मदमत्त हाथी है, तिसे विदारकर चन्द्ररूप सिंह आकाशरूप वनमें विचरता है ॥ २ ॥

बिथुरे नभ मुक्ताहल तारा ॥ निशि सुन्दरीकेर शृङ्गारा ॥ ३ ॥ ❋
कह प्रभु शशिमहँ मेचकताई ॥ कहहु कहा निजनिजमति भाई ॥ ४ ॥ ❋

जैसे सिंह हाथीको मारता है तब उसके कुंभस्थलके मोती वनमें विथुर जाते है. तिन्हें स्त्रियां अपना आभूषण बनाती हैं सो यहां आकाशमें जो तारागण है सोही मोती विथुरे हैं, जो रात्रि-रूप सुन्दरीके सुन्दर आभूषण है ॥ ३ ॥ ऐसे चन्द्रमाका वर्णन कर, प्रभुने सबसे कहा कि-अब तुम सब अपनी २ उक्तिसे चन्द्रमाकी श्यामताके विषयमें अपनी २ बुद्धिके अनुसार कहो कि यह क्या है ? ॥ ४ ॥

कह सुग्रीव सुनहु रघुराया ॥ शशि महँ प्रकट भूमिकी छाया ॥ ५ ॥ ❋
मारे राहु शशिहिं कह कोई ॥ उरमहँ परी श्यामता सोई ॥ ६ ॥ ❋

तब सुग्रीवने कहा कि-हे रघुराज ! सुनिये. चन्द्रमाके मध्य जो श्यामता दीखती है उसके विषय मेरी जानमें तो यह आता है कि चन्द्रमामें जो पृथ्वीकी परछाईं पड़ती है वोही श्यामरूप दीख पड़ती है ॥ ५ ॥ किसीने कहा कि-राहुने चन्द्रमाके हृदयमें जो बाण लगाया तिसकी चोटसे श्यामता पड़गई है ॥ ६ ॥

कोउ कह जब बिधि रतिमुख कीन्हा ॥ सार भाग शशिकर हरि लीन्हा ॥ ७ ॥
छिद्र सो प्रगट इन्दुउरमाहीं ॥ तेहि मग देखिय नभपरिछाहीं ॥ ८ ॥ ❋

किसीने कहा कि-विधाताने जब रतिको मुख बनाया तब चंद्रमाका सार भाग ले लिया

॥ ७ ॥ सो चन्द्रमाके वक्षःस्थलके बीच जो छिद्र पड़ गया, उसके भीतर होकर जो आकाशकी परछांई दीख पड़ती है वोही यह श्यामता है ॥ ८ ॥

कह प्रभु गरल बन्धु शशिकेरा ॥ अति प्रीतम उर दीन्ह बसेरा ॥ ९ ॥ ❋
विष संयुत कर निकर पसारी ॥ जारत बिरहवन्त नर नारी ॥ १० ॥ ❋

किसीने कहा कि—हे प्रभु ! जहर चन्द्रमाका भाई है सो उस प्यारे भाईको चन्द्रमाने अपनी छातीके लगा रक्खा है, वोही यह श्यामता दीख पड़ती है ॥ ९ ॥ चंद्रमामें जो श्यामता दीखती है वो जहरकी है. इसमें कोई संदेह नहीं; क्योंकि चंद्रमा अपनी विष भरी किरणोंके जालको फैलाकर बिचारे विरही स्त्री पुरुषोंको जला रहा है ॥ १० ॥

दोहा—कह मारुतसुत सुनहु प्रभु, शशि तुम्हार प्रिय दास ॥ ❋
तव मूरति तेहि उर बसति, सोइ श्यामता भास ॥ १४ ॥ ❋

ऐसे अपनी २ उक्तिके अनुसार सब कह रहे थे. तहां प्रेमरस भरी मधुर वाणीसे हनुमानने कहा कि—हे प्रभु ! चंद्रमा आपका प्रियदास है, सो उसके हृदयमें जो आपकी सांवरी मूर्ति बसती है वोही यह श्यामता दीख पड़ती है ॥ १४ ॥

पवनतनयके बचन सुनि, बिहँसे राम सुजान ॥ ❋
दक्षिण दिशा बिलोकि पुनि, बोले कृपानिधान ॥ १५ ॥ ❋

हनुमानके वचन सुन, सुजान प्रभु हंसे और फिर दक्षिण दिशाकी तर्फ देखकर, कृपासिंधु बोले ॥ १५ ॥

देखु बिभीषण दक्षिण आसा ॥ घन घमण्ड दामिनी बिलासा ॥ १ ॥ ❋
मधुर मधुर गर्जत घन घोरा ॥ होइ वृष्टि जनु उपल कठोरा ॥ २ ॥ ❋

कि—हे विभीषण ! दक्षिण दिशाकी ओर देखो. श्याम घटा कैसी छा रही है ? जिसमें दामन दमक रही है ॥ १ ॥ घन घोर बादल मधुर मधुर गरज रहे है और मानों कठोर पत्थर बरसते हों ऐसे वर्षा हो रही है ॥ २ ॥

कहत बिभीषण सुनहु कृपाला ॥ होइ न तड़ित न बारिदमाला ॥ ३ ॥ ❋
लंकाशिखर रुचिर आगारा ॥ तहँ दशकन्धर केर अखारा ॥ ४ ॥ ❋

प्रभुके वचन सुन विभीषणने कहा कि—हे दयालु प्रभु ! सुनिये. जो यह दीखता है सो न तो बादल है और न बिजुली चमकती है ॥ ३ ॥ किंतु लंकाके शिखरपर एक बहुत ऊंचा घर है, वहां रावणका बहुत सुन्दर अखाड़ (सभा) है ॥ ४ ॥

छत्र मेघ डम्बर शिर धारी ॥ सो जनु जलद घटा अतिकारी ॥ ५ ॥ ❋
मन्दोदरी श्रवण ताटंका ॥ सोइ प्रभु जनु दामिनी दमंका ॥ ६ ॥ ❋

तिसमें रावण बैठा हुआ है सो जो उसके शिरपरका छत्र है वो तो मेघाडम्बरसा दीख पड़ता है. मानों अति सघन श्यामघटा छा रही है ॥ ५ ॥ हे प्रभु ! मंदोदरीके जो, ताटंक (कर्णफूल) चमक रहे हैं सोही मानों दामिन दमक रही है ॥ ६ ॥

बाजहिँ ताल मृदंग अनूपा ॥ सोइ रवसरस सुनहु सुरभूपा ॥ ७ ॥ ❋

प्रभु मुसुकान देखि अभिमाना ॥ चाप चढ़ाइ बाण सन्धाना ॥ ८ ॥ ❋

और ताल मृदंग आदि जो अनेक प्रकारसे बाजोंकी ध्वनि होती है सोही मानों मेघ गरज रहा है ॥ ७ ॥ ऐसे रावणका अभिमान देख, प्रभु मुसकराये और धनुष चढ़ाकर बाण साधा ॥ ८ ॥

(क्षेपक)

छंद–संधानि बाण कराल सहजहिं बिहँसि प्रभु छाँड़त भये ॥ ❋
फुंकरत अति जनु नाग बेगिहिं धाय जहँ रावण रये ॥ ❋
तेहिं शंकरहित निशंक अति आनन्द नाच नचावहीं ॥ ❋
जेहि समय टूटी तान तब तहँ राम ख्याल दिखावहीं ॥ १ ॥ ❋

प्रभुने महाभयंकर शर साध, हंसकर सहज स्वभावसे बाणको छोड़ा सो वह सांपके जैसे फुंकारता हुआ दौड़कर रावणके पास गया, रावणके यहां निशंक आनंदसे नाच होताथा, सो जिसवक्त तान टूटी उसकाल प्रभुने अपना ख्याल दिखाया ॥ १ ॥ ॥ इति ॥

दोहा–छत्र मुकुट ताटंक सब, हते एकही बान ॥ ❋
सबके देखत महि गिरे, मर्म न काहू जान ॥ १६ ॥ ❋

प्रभुने एकही बाणसे रावणके छत्र मुकुट और कर्णफूल आदि सब तोड़ दिये, वे सब लोगोंके देखते देखते पृथ्वीपर गिर पड़े, पर इसका भेद किसीने नहीं जाना ॥ १६ ॥

यह कौतुक करि रामशर, प्रविश्यो आइ निषंग ॥ ❋
रावण सभा सशंक सब, देखि महारस भंग ॥ १७ ॥ ❋

प्रभुका बाण यह कौतुक कर पीछा आय प्रभुके तरकसमें आ घुसा. रावणकी सभा उस अखंड रसके बीच भंग हुआ देख मनमें डरी ॥ १७ ॥

कम्प न भूमि न मरुत बिशेषा ॥ अस्त्र शस्त्र कोउ नयन न देषा ॥ १ ॥ ❋
शोचहिं सब निज हृदय बिचारी ॥ अशकुन भयउ भयंकर भारी ॥ २ ॥

सब लोग मनमें विचार करने लगे कि–न तौ भूंचाल हुआ, न हवा जोरसे चली, और न कोई अस्त्र या शस्त्र नजर आया. फिर यह क्या बात हुई ? ॥ १ ॥ यह तौ कोई बड़ा भारी अशकुन हुआ है इसमें फर्क नहीं ॥ २ ॥

रावण दीख सभा भय पाई ॥ बिहँसि बचन कह युक्ति बनाई ॥ ३ ॥ ❋
शिरो गिरे सन्तत शुभ जाही ॥ मुकुट गिरे कस अशकुन ताही ॥ ४ ॥ ❋

असकुन देख, सभाको भयभीत लख, हँसकर, युक्ति बनाके रावणने कहा ॥ ३ ॥ कि–जिसके शिर गिरनेपरभी सदा अविचल शुभ और सुख रहता है, उसके मुकुट गिरनेसे अशकुन कैसे होगा ? ॥ ४ ॥

शयन करहु निज निज गृह जाई ॥ गवने भवन सकल शिर नाई ॥ ५ ॥ ❋
मन्दोदरी शोच उर बसेऊ ॥ जबते श्रवणफूल महि खसेऊ ॥ ६ ॥ ❋

इसलिये इस बातकी चिंताको तज, अपने अपने घर जाय, निश्चिन्त हो, शयन करो. रावणका

आज्ञा पाय, शिर नवाय, सब अपने अपने घरोको सिधारे ॥ ५ ॥ हे पार्वती ! जबसे मंदोदरीका कर्णफूल पृथ्वीपर पड़ा, तबसे उसके मनमें सोच बस गया ॥ ६ ॥

सजल नयन कह युगकर जोरी ॥ सुनहु प्राणपति बिनती मोरी ॥ ७ ॥ ❋
रामबिरोध कन्त परिहरहू ॥ जानि मनुज जनि हठ उर धरहू ॥ ८ ॥ ❋

नेत्रोंमें जल भर आया अतएव दोनों हाथ जोड़कर बोली कि–हे प्राणपति ! मैं जो विनती करती हूं सो आप ध्यान देकर सुनो ॥ ७ ॥ हे कन्त ! आप रामसे विरोध छोंड़ दो. उनको मनुष्य जान, मनमें हठ मत करो ॥ ८ ॥

दोहा–बिश्वरूप रघुबंशमणि, करहु बचन बिश्वास ॥ ❋
लोक कल्पना बेद कह, अंग अंगप्रति जास ॥ १८ ॥ ❋

हे प्रभु ! रामचन्द्रजी विराट् स्वरूप है. उनके अंग अंग विषे सब लोक कल्पित है. ऐसे वेद कहते है, सो आप मेरे वचनपर भरोसा लाय, मेरा कहना मानो ॥ १८ ॥

पद पाताल शीश अजधामा ॥ अपर लोक अंगन्ह विश्रामा ॥ १ ॥ ❋
भृकुटिबिलास भयंकर काला ॥ नयन दिवाकर कच घनमाला ॥ २ ॥ ❋

पाताल उनके चरण है. ब्रह्मलोक शिर है.ऐसे दूसरे लोक उनके जुदे जुदे अंगोंमें रहे है ॥ १ ॥ भृकुटिविलास भयंकर काल है. सूरज नेत्र हैं. मेघमाला केश है ॥ २ ॥

जासु घ्राण अश्विनीकुमारा ॥ निशि अरु दिवस निमेष अपारा ॥ ३ ॥ ❋
श्रवण दिशा दश बेद बखानी ॥ मारुत श्वास निगम निज बानी ॥ ४ ॥ ❋

अश्विनीकुमार घ्राण (नासिका) है. रात और दिन अपार पलकें है ॥ ३ ॥ दिशा श्रवण (कान) हैं. पवन श्वास है. वेद वाणी है ॥ ४ ॥

अधर लोभ यम दशन कराला ॥ माया हास बाहु दिगपाला ॥ ५ ॥ ❋
आनन अनल अम्बुपति जीहा ॥ उतपति पालन प्रलय समीहा ॥ ६ ॥ ❋

लोभ नीचेका होंठ है. यमराज भयंकर दाढ़ें और दांत हैं. माया हंसना है. दिक्पाल भुजा हैं ॥ ५ ॥ अग्नि मुख है. वरुण जीभ है. संसारकी उत्पत्ति स्थिति और संहार है, सो उसकी चेष्टा (काम धंधा) है ॥ ६ ॥

रोमावलि अष्टादश भारा ॥ अस्थि शैल सरिता नसजारा ॥ ७ ॥ ❋
उदर उदधि अधगो कुजातना ॥ जगमय प्रभुकी बहुत कल्पना ॥ ८ ॥ ❋

अठारह भार वनस्पति रोमावलि हैं. पर्वत हड्डियां हैं. नदियां नाड़ियोंका समूह है ॥ ७ ॥ समुद्र उदर (पेट) है. अधो इंद्रिय (गुदा) नरक हैं. विराट्रूप प्रभु सर्व जगतरूप हैं. उन्हींके स्वरूपसे सब प्रपंचकी कल्पना हुई है ॥ ८ ॥

दोहा–अहंकार शिव बुद्धि अज, मन शशि चित्त महान ॥ ❋
मनुज बास चर अचरमय, रूपराशि भगवान ॥ १९ ॥ ❋

शिव अहंकार हैं. ब्रह्मा बुद्धि हैं. चंद्रमा मन है. महत्तत्त्व चित्त है. चराचर प्राणी और मनुष्य सब उसीमें रहते हैं. प्रभु सर्व रूपराशि हैं ॥ १९ ॥

अस बिचारि सुनु प्राणपति, प्रभुसन बैर बिहाइ ॥ ❋
प्रीति करहु रघुबीरपद, मम अहिवात न जाइ ॥ २० ॥ ❋

मंदोदरी कहती है कि–हे प्राणपति ! सुनो; आप ऐसे जान, प्रभुसे बिरोध तज उनके चरणोंमें प्रीति करो कि जिससे मेरा अहिवात (सौभाग्य) न जाय ॥ २० ॥

विहँसा नारिबचन सुनि काना ॥ अहो मोहमहिमा बलवाना ॥ १ ॥ ❋
नारिस्वभाव सत्य कवि कहईं ॥ अवगुण आठ सदा उर रहईं ॥ २ ॥ ❋

मंदोदरीके वचन सुन, रावण हंसा और बोला कि–अहो ! मोहकी महिमा कैसी बड़ी बलवान् है ? ॥ १ ॥ कविलोग कहते है कि–स्त्रीका यही स्वभाव है कि, उसके हृदयमें आठ अवगुण सदा सर्वदा रहते है सो यह बात सत्य है ॥ २ ॥

साहस अनृत चपलता माया ॥ भय अविवेक अशौच अदाया ॥ ३ ॥ ❋
रिपुकर रूप सकल तैं गावा ॥ अति बिशाल भय मोहिँ सुनावा ॥ ४ ॥ ❋

कौन कौनसे अवगुण रहते है सो कहता है. साहस १, झूंठ २, चंचलता ३, माया (छल) ४, भय ५, अविवेक ६, अपवित्रता ७, और निर्दयता ८ ॥ ३ ॥ तूने शत्रुका सारा रूप कहकर सुनाया, और मुझे बड़ा भारी डर दिखाया ॥ ४ ॥

सो सब प्रिया सहज बश मोरे ॥ समुझि परा प्रभाव अब तोरे ॥ ५ ॥ ❋
जानेउँ प्रिया तोरि चतुराई ॥ यहि मिसि कहेउ मोरि प्रभुताई ॥ ६ ॥ ❋

सो हे प्यारी ! जिनका नाम ले ले तू मुझे डराना चाहती है, वे सब मेरे वशवर्ती है. अब मेरा प्रभाव तेरी समझमें आया ॥ ५ ॥ हां, हे प्यारी ! मैंने तेरी चतुराई समझ ली. इसी बहाने तूने मेरी प्रभुताई कही है ॥ ६ ॥

तव बतकही गूढ़ मृगलोचनि ॥ समुझत सुखद सुनत भयमोचनि ॥ ७ ॥
मन्दोदरी मनमहँ यह ठयऊ ॥ पियहिँ कालबश मति भ्रम भयऊ ॥ ८ ॥

हे मृगनयनी ! तेरो बात चीत बड़ी गूढ़ार्थ रहती है; जब, उसको सुनकर समझते हैं, तब बड़ी सुखदायी और भय मिटानेवाली मालूम होती है ॥ ७ ॥ रावणके ये वचन सुन, मंदोदरीने मनमें निश्चय करके जान लिया कि, पतिको कालके वश होनेसे मतिभ्रम हो गया है ॥ ८ ॥

दोहा–बहुविधि जल्पेसि सकल निशि, प्रात भये दशकन्ध ॥ ❋
सहज अशंक सो लंकपति, सभा गयो मदअन्ध ॥ २१ ॥ ❋

रातभर रावण कई बातें करता रहा. जब प्रभात हुआ तब वो लंकाका पति रावण सभामें आया. जो स्वभावसे निशंक और मदसे अंधा था ॥ २१ ॥

सोरठा–फूलै फलै न वेत, यदपि सुधा वर्षाहिँ जलद ॥ ❋
मूरख हृदय न चेत, जो गुरु मिलहिँ बिरंचिसम ॥ ३ ॥ ❋

कवि कहता है कि–चाहे बादल अमृत वर्षे तौभी बेतकी लता न तो फूलेगी और न फलेगी ऐसे चाहे ब्रह्माजीके जैसा गुरु मिल जाय तौभी अबुदग्ध मूर्खके हृदयमें बोध नहीं होगा ॥ ३ ॥

(क्षेपक)

दोहा–मंत्रिनसहित दशानन, चढ़ेउ धवरहर जाय ॥ ❋
सारन कह तब राजसन, देखहु कहिसमुदाय ॥ १ ॥ ❋

रावण मंत्रियोंके साथ ऊंचे महलपर चढ़ा. तब सारण नाम राक्षसने रावणसे कहा कि–महाराज ! अब वानरोंका कटक देखिये ॥ १ ॥

ये जो सिंहनाद किलकरहीं ॥ सप्तताल उन्नत संचरहीं ॥ १ ॥ ❋
सहस कोटि अतुलित बलवाना ॥ इन्हके सँग बानर परिमाना ॥ २ ॥ ❋

नलनीलकी ओर देखकर सारण कहता है कि–जो ये वानर सिंहनाद करते है और किलकारते है, तथा सात ताल ऊंचे जिनके शरीर है ॥ १ ॥ इनके कटकमे एक हजार करोड़ बानर है ॥ २ ॥

रण अजीत ये सहज अशंका ॥ नाद सुने काँपै गढ़लंका ॥ ३ ॥ ❋
नभ निरखहु इनके लंगूरे ॥ जनु ऋतु पावस युग धनु पूरे ॥ ४ ॥ ❋

जो सबके सब अतुलबल, रणमें अजय, सहज निशंक है. और जिनके सिंहनादसे लंका गढ़ थर्रा रहा है ॥ ३ ॥ इनके पूंछ जो आकाशमें दीख रहे है तिन्हे देखो. पूंछें क्या है ? मानों वर्षा ऋतुके पूरे दो धनुष शोभायमान हो रहे है ॥ ४ ॥

बिसकर्माके सुत गुणखानी ॥ इन्ह परसे पय शिल उतरानी ॥ ५ ॥ ❋
बसहिँ ताम्रगिरि कंदरमाहीं ॥ गोदावरी बिमल जल पाहीं ॥ ६ ॥ ❋

ये दोनों यूथपति विश्वकर्माके पुत्र है. गुणोंके भंडार है. इनके हाथके स्पर्शसे पत्थर समुद्रमें तिर हैं ॥ ५ ॥ ये ताम्रगिरि पर्वतकी गुफामें रहते हैं. गोदावरीका अमल जल पीते है ॥ ६ ॥

अतिबल आगे धावहिँ बीरा ॥ इन्हपर कृपा करहिँ रघुबीरा ॥ ७ ॥ ❋
करहिँ यमहु कर संगर ढीला ॥ कज्जल बरण नाम नल नीला ॥ ८ ॥ ❋

ये वीर बड़े बलवान् है सेनाके आगे अर्थात् मुहानेपर रहते है. इनपर रामचन्द्रको पूर्ण कृपा है ॥ ७ ॥ ये संग्रामके भीतर यमराजकोभी शिथिल करनेको समर्थ है. काजलकासा श्याम बरन है, नल और नील इनका नाम है ॥ ८ ॥

दोहा–पद्म अठारह कपिकटक, चल इनकी भुजछाँह ॥ ❋
निजकर सुरभि सफूल लै, रघुपति पूजी बाँह ॥ २ ॥ ❋

अंगदको बताकर कहता है कि–इसकी भुजाकी छाया तले अठारहपद्म सेना रहती है. इसकी भुजा स्वयं रामचन्द्रजीने सुगंधित फूल ले, अपने हाथसे पूजी है ॥ २ ॥

यह जो आवत अचलसमाना ॥ चौदह ताड़ ऊंच परिमाना ॥ १ ॥ ❋
बास पुलिन्दके तट करई ॥ अम्बुर निकर निरखि कर धरई ॥ २ ॥ ❋

यह जो पर्वतके समान सौंही चला आता है. इसकी उँचाई चौदह तालकी है ॥ १ ॥ यह पुलिंदा नदीके तटपर रहता है. बादलको देख, दौडकर, हाथसे पकड़ लेता है ॥ २ ॥

रक्तकमलदलसम सब देहा ॥ जनु बिकसेउ संध्याकर मेहा ॥ ३ ॥ ❋
हतै मेदिनी पूंछ भँवाई ॥ लंका सौंह चितव जनु खाई ॥ ४ ॥ ❋

इसका शरीर लाल कमलदलके समान अरुण है. मानों संध्याकालका मेघ फूला है ॥ ३ ॥ यह अपनी पूंछको भँवाकर पृथ्वीको ताड़ित करता है और लंकाकी ओर इसतरह देखता है कि, मानों इसे यह खा जायगा ॥ ४ ॥

तारासुवन बालिको जायो ॥ अति जुझार रघुपति मनभायो ॥ ५ ॥ ❋
हृदय गगन यहिके प्रभु भानू ॥ पंच पदुम कपि निकर पयानू ॥ ६ ॥ ❋

ताराका पुत्र है. बालि इसका पिता था. यह बड़ा जोद्धार है. रामचन्द्रजीका अति प्यारा है ॥ ५ ॥ इसके हृदयरूप आकाशमें प्रभु सूर्यके समान शोभा देते है. यह जहां कहीं जाता है तब पांच पद्म बन्दर इसके साथ रहते है ॥ ६ ॥

करै बज्र बासवकर भंगा ॥ उदयाचल कहँ लेइ उछंगा ॥ ७ ॥ ❋
परम चतुर सेनप इहि लागी ॥ रघुपति कृपा परम बड़भागी ॥ ८ ॥ ❋

यह इंद्रके वज्रको तोड़ सकता है. उदयाचल पर्वतको उठा सकता है ॥ ७ ॥ यह बड़ा विचक्षण और सेनाका मांझी है. इसपर प्रभुकी परम कृपा है. अतएव इसे बड़ा बड़भागी समझना चाहिये ॥ ८ ॥

दोहा—पाउँ धरा धरि चापै, पन्नग होइ अकाज ॥ ❋
सेन अग्रसर देखहु, यह अंगद युवराज ॥ ३ ॥ ❋

जब यह पांव रखकर जमीनको दबाता है तब शेषजीका अकाज हो जाता है. हे रावण ! इस युवराज अंगदको देखिये कि, जो सेनामें सबके आगे रहता है ॥ ३ ॥

यह जो श्वेतबरण तन रेखा ॥ मनहुँ रजतगिरि शृंग बिशेखा ॥ १ ॥ ❋
दीर्घ केश दारुण भुजदण्डा ॥ चपल चलत बल बुद्धि प्रचण्डा ॥ २ ॥ ❋

कुमुदकी ओर देखकर कहता है कि—यह वानर जिसके शरीरपर श्वेत रेखा शोभायमान है. मानों रजताचल (चांदीका पर्वत) का कोई शिखरही तो नहीं है ? ॥ १ ॥ इसके लंबे २ केश है. बड़े दारुण भयावने भुजदंड है. स्वभावसे बड़ा चपल और बल व बुद्धिमें बड़ा प्रचंड है ॥ २ ॥

बास करै जलनिधिके तीरा ॥ पान करै गोमती सुनीरा ॥ ३ ॥ ❋
नृप सुग्रीवकेर अधिकारी ॥ सकल व्यूह यह रचै सँवारी ॥ ४ ॥ ❋

यह समुद्रके किनारे रहता है. गोमतीका जल पीता है ॥ ३ ॥ राजा सुग्रीवका अधिकारी है. सब कटककी व्यूह रचना सँवार कर यही किया करता है ॥ ४ ॥

जनमत चन्द्रहिँ ग्रसन उड़ाना ॥ इहिकर पुरुषारथ जग जाना ॥ ५ ॥ ❋
निरखि गगन राका शशि सोहा ॥ शिशु अजान तेहि लगि मन मोहा॥६॥
धरणी धसकि धरन जब उड़ेउ ॥ सत्तरि योजनते पुनि फिरेउ ॥ ७ ॥ ❋

यह जन्मताही चंद्रमाको ग्रसनेको उड़ाथा. इसके पुरुषार्थको सब जगत् जानता है ॥ ५ ॥ पूर्णिमासीके दिन रात्रिमें आकाशके अंदर पूर्ण चंद्रमंडलको शोभायमान देख, इसका मन मोहित हो गया. यह अनसमझ भोला बच्चा था, सो विचार तो नहीं किया ॥ ६ ॥ और धरतीको धसका कर, चंद्रमाको पकड़नेको उड़ा सो सत्तर योजन अधर अस्मानमें चला गया. फिर चंद्रमाको हाथ आता न देख, वहांसे पीछा लौट आया ॥ ७ ॥

दोहा–कोटि पंचशत मर्कट, रहइँ सर्वदा साथ ॥
काल्हुते रण लरि सकै, कुमुद नाम कपिनाथ ॥ ४ ॥

इसके साथ पांचसौ करोड़ वानर सदासर्वदा रहते हैं, यह कालसेभी युद्ध कर सकता है. इस कपिराजका कुमुद नाम है ॥ ४ ॥

ये देखहु जे चहुँ दिशि घुमड़े ॥ मनहुँ लंक सावन घन उमड़े ॥ १ ॥
आगू पीछू दशदिशि धावहिँ ॥ शिला संग तरु तोरत आवहिँ ॥ २ ॥

धूमकेतु और जाम्बवानको दिखलाकर कहता है कि–उमड़े हुए सावनके सघन घनके समान लंकाके चारों ओर घुमड़े हुए जिन वानर और रीछोंको देखते हो ॥ १ ॥ जो आगे और पीछे दशोंदिशाओंमें दौड़ते है और जो शिला, पर्वतके शिखरोंको उठाये, तथा पेड़ोंको उखाड़ते हुए आते है ॥ २ ॥

सहस नागबल सबहिँ समाना ॥ सप्त पदुम इनकर परिमाना ॥ ३ ॥
काशीपुरी बास इन्हकेरी ॥ समर कतहुँ जिन पीठि न फेरी ॥ ४

जिनका हजार हाथियोंके बराबर बल है, इनकी संख्या सात पद्म है ॥ ३ ॥ ये लोग काशीमें रहते हैं. काम पड़नेपर इन्होंने आजतक संग्रामके भीतर कहीं पीठ नहीं फेरी है अर्थात् रणभूमिमेंसे भागे नहीं हैं ॥ ४ ॥

तीक्षणदन्त नखायुध धारी ॥ द्वन्द्वयुद्ध ये जानहिँ भारी ॥ ५ ॥
धूमकेतु यूथप इन्हकेरा ॥ लंकानिकट कीन्ह जेहिँ डेरा ॥ ६ ॥

इनके पास तीक्ष्ण दांत और नखही शस्त्र है. ये लोग द्वंद्वयुद्ध करना खूब जानते है ॥ ५ ॥ इनके यूथपतिका नाम धूम्रकेतु है; जिसने लंकाके बहुत समीप डेरा किया है ॥ ६ ॥

इहिँकर जेठ बन्धु जमवन्ता ॥ तेहिंके बलकर पाव को अन्ता ॥ ७ ॥
देव दनुज को जूझै ताही ॥ धरा होइ कर कंबुक जाही ॥ ८ ॥
बसै अशंक नर्मदातीरा ॥ अशनिसमान अभेद शरीरा ॥ ९ ॥

इसके बड़े भाईका नाम जाम्बवान् है. उसके बलका पार तो कोई पाही नहीं सकता ॥ ७ ॥ देवता और दैत्योंके भीतर ऐसा कोईभी नहीं है जो इससे युद्ध करै. जो पृथ्वीको हाथपर शंखके जैसे उठा सकता है. कंदुक ऐसा पाठ हो तो गेंदके जैसे उठा सकता है ॥ ८ ॥ यह निशंक होकर नर्मदाके तटपर रहता है. उसका शरीर वज्रके समान अभेद्य है ॥ ९ ॥

दोहा–सचिव सुकण्ठ राजकर, रघुबर कर प्रियदास ॥
सो जड़ मन्द जो याहि रण, चह जीतनकी आश ॥ ५ ॥

सुग्रीवका यह मुख्य मंत्री है, और रामचन्द्रजीका प्रिय सेवक है. हे रावण! जो रणमें इसे प्रचार कर, जीनेकी आशा रखता है उसे मंद और मूर्ख समझना चाहिये ॥ ५ ॥

अब देखहु यह यूथ अपारा ॥ पीतबरण होइ गयउ पहारा ॥ १ ॥
बालारुण मरीचि जस फूटी ॥ निशिचर निकर तमी चह छूटी ॥ २ ॥

केसरीकी ओर देखकर कहता है. अब इस अपार यूथकी तर्फ देखिये. मानों पीछे रंगका

पहाड़ खड़ा हुआ है ॥ १ ॥ ये पीतवर्णके वानर क्या है ? मानों बालसूर्यकी अरुण बरण किरने फूटी है, जिससे राक्षसोंके झुंड़रूप रात्रि छूटना नाश होना चाहती है. जैसे सूर्यकी किरणोंसे रात्रिका नाश होजाता है ऐसे इनसे राक्षसोंका नाश हो जायगा ॥ २ ॥

चौबिस अर्बुद इनकर यूहा ॥ सहस वृन्दसम कोटि समूहा ॥ ३ ॥ ❋
शिला शैल जे आगे परहीं ॥ पायन मर्दि गर्दसम करहीं ॥ ४ ॥ ❋

इनके यूथमें चोबीस अर्बुद वानर है. जो हजारों वृन्द और करोड़ों समूहोंके समान हैं ॥ ३ ॥ इनके आगे जो शिला और पर्वत पड़े होते हैं वोभी पांवोंसे चूर्ण होकर, रजकी बराबर होजाते हैं ॥ ४ ॥

कंचनगिरिकन्दरके बासी ॥ इनकर यूथ नाथ अबिनाशी ॥ ५ ॥ ❋
अतिबल बासवकर हितकारी ॥ सखा सुकण्ठकेर सुखकारी ॥ ६ ॥ ❋

ये लोग सुमेरुगिरिकी गुफामें रहते है. हे नाथ ! इनके यूथका कभी नाश नहीं होता ॥ ५ ॥ यह वानर बड़ा बली है. इसने कई वेर इंद्रका हित किया है. यह सुग्रीवका परम मित्र है ॥ ६ ॥

पान करै गंगाकर नीरा ॥ पर्वतशृंगसमान शरीरा ॥ ७ ॥ ❋
छिन छिन सिंहनाद जो होई ॥ गर्जत आवत है कपि सोई ॥ ८ ॥ ❋

नित्य गंगा जल पान करता है. पर्वतके शिखरके समान बड़ा जंगी है ॥ ७ ॥ जो यह बारंबार सिंहनाद होता है सो वही वानर गरजता हुआ चला आता है ॥ ८ ॥

दोहा–यश तिहुँ मण्डल गलित गज, बलकर नाहिन अंत ॥ ❋
यह कपि राजा केशरी, सुवन जासु हनुमन्त ॥ ६ ॥ ❋

इसका यश त्रिलोकीमें विख्यात है. इसने कई हाथी मारे हैं. इसके बलका पारावार नहीं है. यह केसरी नाम वानर है. जिसके हनुमान् नाम पुत्र है ॥ ६ ॥

उत्तर दिशि देखहु रजधानी ॥ जनु दुकाल लगि शलभ उडानी ॥ १ ॥ ❋
मरकट निकर बिकल बल टूटे ॥ आवत उदधि कूल जनु छूटे ॥ २ ॥ ❋

गवय और गवाक्षको दिखलाकर कहता है कि–महाराज ! राजधानीकी उत्तर दिशाकी तर्फ देखो, वानर क्या आये है ? मानों अकाल पटकनेके लिये टीड़ीदल आकर छा गया है ॥ १ ॥ ये वानरोंके झुंड़ बड़ा बल करतेहुए टूट टूटके कैसे आते हैं कि मानों समुद्र अपनी मर्यादाको छोड़कर चला आता है ॥ २ ॥

यहि दल यूथनाथ जो अहई ॥ अतिबलवंत राजसँग रहई ॥ ३ ॥ ❋
कपिके रूप अनल अबिनाशी ॥ ए द्वौ पारियात्रके बासी ॥ ४ ॥ ❋

हे नाथ ! इस दलके जो यूथपति हैं, वे बड़े बलवान् हैं और सदा राजा (सुग्रीव) के साथ रहते हैं. ॥ ३ ॥ उनका तेज अग्निके समान है. शरीर नाशरहित है. ये पारियात्र नाम पर्वतमें रहते हैं ॥ ४ ॥

अति सुन्दर अरु समर बिपक्षा ॥ महाबली द्वौ गवय गवक्षा ॥ ५ ॥ ❋
ये द्वौ गर्जत अति रणधीरा ॥ पीवहिं तुंगभद्र कर नीरा ॥ ६ ॥ ❋

बड़े सुन्दर स्वरूप हैं. रणमें बड़े बँके हैं. गज और गवय इनके नाम हैं. ये महाबली

रणधीर जिस समय रणमें गर्जना करते है, तब शत्रुओंके छक्के छूट जाते है. ये तुंगभद्रा नदीका जल पीते है ॥ ५ ॥ ६ ॥

सत्तरि सहस नागबल जाही ॥ इनमहँ एक कहौं मैं ताही ॥ ७ ॥
अपर बली गँधमादन नामा ॥ रणअजेय पुनि सबगुणधामा ॥ ८ ॥

गंधमादनकी ओर देखकर कहता है. इनके पास जो यह एक वानर खड़ा है इसमें सत्तर ७० हजार हाथियोंका बल है ॥ ७ ॥ गंधमादन नाम है. रणमें अजेय है. सब गुणनिधान हैं ॥ ८ ॥

दोहा–बासव बिबुधवृन्दमहँ, तेजनमहँ जस भानु ॥
पनस नाम यह बानर, अतिबल नीतिनिधानु ॥ ७ ॥

पनसकी ओर देखकर कहता है कि–जैसे देवगणमें इन्द्र, और तेजवालोंमें सूरज है. ऐसही वानरोंमें यह पनस नाम वानर बलका भंडार और नीतिका निधान है ॥ ७ ॥

यह जो कुमुदपत्रसम देहा ॥ जस कैलाश शरदकर मेहा ॥ १ ॥
लोचन मधु पिंगल अति लोने ॥ कामरूप चितवत चहुँ कोने ॥ २ ॥

सुषेणको दिखलाकर कहता है यह जो वानर है, जिसका शरीर कुमुददल, कैलास, और शरदके मेघके समान उज्वल है ॥ १ ॥ अति सलोने मधु पिंगल नैन है जो मनवांछित रूप धरकर चारों ओर देखता है ॥ २ ॥

लंका सौंह लँगूर फिराई ॥ गर्जत प्रलयमेघकी नाई ॥ ३ ॥
सुरपति साथ युद्धकहँ गयऊ ॥ तबसे कामरूप यह भयऊ ॥ ४ ॥

जो लंकाके सन्मुख देख, पूंछको भंवाय, प्रलयकालके मेघके समान गरजना करता है ॥ ३ ॥ यह इन्द्रके साथ युद्ध करनेको गया था, तबसे कामरूप (इच्छानुसार रूप धरनेवाला) हुआ है ॥ ४ ॥

मघवा इहिसन कीन्ह मिताई ॥ करै सदा यह देवसहाई ॥ ५ ॥
सहस कोटि कपि इहिके संगा ॥ राजत पीत श्वेत बहुरंगा ॥ ६ ॥

इन्द्रने इसके साथ मित्रता की है. यह हमेशा देवताओंकी सहाय करता है ॥ ५ ॥ इसके साथ हजार करोड़ वानर हैं; जो पीले, सुपेद और रंग बिरंगके होनेसे अतिशोभा देते है ॥ ६ ॥

बचन मृषा मम प्रभु यह नाहीं ॥ अपर बालि जान मनमाहीं ॥ ७ ॥
दर्दुर शैल सदन इहिकेरा ॥ मन बच कर्म रामकर चेरा ॥ ८ ॥

हे प्रभु ! मेरा यह वचन झूंठा नहीं है. तुम इसे अपने मनमें दूसरा बालि समझो ॥ ७ ॥ यह दर्दुर नाम पर्वतमें रहता है. यह मन वचन कर्मसे रामका पक्का चेरा है ॥ ८ ॥

दोहा–गिरि बर लांघत आवत, चलत उड़ावत रेणु ॥
तरणितेज तन रूंधेउ, तारातात सुषेणु ॥ ८ ॥

यह बड़े बड़े पर्वतोंको लांघता और रेणु उड़ाता चला आता है, इसके शरीरके तेजके आगे सूर्य छिप जाता है. हे नाथ ! यह ताराका पिता सुषेण नाम वानर है ॥ ८ ॥

यह कहि लसत मनहुँ गिरि गेरू ॥ दिनमुख छबि जस लहत सुमेरू ॥ १ ॥
सोइ करि प्रथम लंक जेहिँ जारी ॥ प्रभु केहि लगि आवत इहि बारी ॥ २ ॥

हनुमानको दिखलाकर कहता है. यह वानर कि, जो सुन्दर गेरूके पर्वतके समान शोभा देता है और जिसकी छबि प्रातसमयके सुमेरु गिरिकी छबिको छीनती है ॥ १ ॥ यह वोही वानर है जिसने पहले लंकाको जलाय भस्म कर दिया था. महाराज! अब न मालूम किस-लिये आता है! ॥ २ ॥

अंजनिगर्भ जन्म जब भयऊ ॥ क्षुधित जननिसन अरतस ठयऊ ॥ ३ ॥
तेंइ कह सुपक अरुण फल खाहू ॥ सुनत चितव इत उत चित चाहू ॥ ४ ॥

जब यह अंजनीके गर्भसे पैदा हुआ था, तब जन्मतेही भूँख लगनेके कारण, अपनी मातासे कहा कि मुझे भूँख लगी है सो बतलाव, मैं क्या खाऊं? ॥ ३ ॥ तब अंजनीने कहा कि—अच्छे पकेहुए लाल लाल फल खाव; माताका वचन सुन. इसने इधर उधर फलके लिये निगाह दौड़ायी ॥ ४ ॥

बाल अरुण लखि गवन उड़ाना ॥ ग्रसेसि तरणि बासव तब जाना ॥ ५ ॥
मारेउ बज्र चिबुक भइ टेढ़ी ॥ कोपेउ पवन समीर सब बेढ़ी ॥ ६ ॥ ❀

सो उदय होताहुआ लाल लाल सूरज दृष्टि आया. तिसे देख, फल समझ, हनुमान् आ-काशमें उड़ा, सो जाकर, सूरजको मुंहमें पकड़ लिया ॥ ५ ॥ तब इन्द्रने वज्रका प्रहार किया, तिससे इसकी चिबुक (डाढ़ी) टेढ़ी हो गयी. तब पवन कुपित हो, सबकी सास बंदकर गु-फामें जा बैठा ॥ ६ ॥

देव विकल होइ अस्तुति कीन्हा ॥ कुलिश होउ तन अस बर दीन्हा ॥ ७ ॥
विद्या पढ़त भानुके पाहीं ॥ उलटी गति रबि आगे जाहीं ॥ ८ ॥ ❀

तब सब देवताओंने मिल, वायुकी स्तुति की और वरदान दिया कि, इसका शरीर वज्रके समान दृढ़ हो जायगा ॥ ७ ॥ इसने विद्या सूरजके पास पढ़ी थी. सूरजके आगे उलटे पांव चलते सब विद्यायें सीखीं थी ॥ ८ ॥

बारिधि लांघेउ गोपद जैसे ॥ यहि कपीश सन जूझब कैसे ॥ ९ ॥ ❀

समुद्रको जो गौके खुरके खड्डेकी भांति लांघ सकता है. हे राजा! इस वानरके आगे कोई किस प्रकार जूझे? ॥ ९ ॥

दोहा—अंबक पीत बाल रबि, बदन तेज अति राज ॥ ❀
पवनते बेग अधिक जनु, अनल नितंब सुभ्राज ॥ ९ ॥ ❀

जिसके पीले पिशंग नेत्र, मुखकी कांति बाल सूर्यके समान अति प्रचंड, पवनसे अति अधिक वेग और अग्निके समान लाल नितंब हैं, उस कपिकी बराबरी करनेवाला कौन है? ॥ ९ ॥

अतसीकुसुमबरणतनु रेखा ॥ पुरुष पुराण धरे नरबेषा ॥ १ ॥ ❀
मत्त गजेंद्रशुण्डभुजदण्डा ॥ धनुष बाण असि धरे प्रचण्डा ॥ २ ॥ ❀

रामचन्द्रजीकी तर्फ देखकर कहता है. जिनका अलसीके पुष्पके समान श्याम बरन है जो कि स्वयं पुराण पुरुष (नारायण) नरवेष धारण किये हैं ॥ १ ॥ मत्त गयंदकी शुंडके सदृश चूरीदार भुजदंड हैं. हाथमें तीक्ष्ण खड्ग और धनुष बाण धरे हैं ॥ २ ॥

उर बिशाल अति उन्नत कंधर ॥ कम्बु कण्ठ रेखा प्रसन्न बर ॥ ३ ॥ ❀

मुखछबिकी उपमा कबि जोहै ॥ शशि सरोज सम कहै न सोहै ॥ ४ ॥ ❋

विशाल वक्षःस्थल, अति ऊंची गर्दन, व शंखके जैसा सुन्दर कंठ है; जिसमें शंखके जैसी तीन रेखा शोभायमान हो रही है ॥ ३ ॥ कविलोग मुखकी कांतिको निहार, उसकी उपमा ढूंढ़ते ढूंढ़ते आखिर चंद्रमा और कमलकी उपमा देते है, पर वो उपमा शोभा नहीं देती, क्योंकि कहां तो प्रभुके निष्कलंक मुखकी छबि और कहां सकलंक चंद्र और कमल ? ॥ ४ ॥

दशनपांतिकी कांति कहै को ॥ ललकत मन पटतरहिँ लहै को ॥ ५ ॥ ❋
देखत अधरनकी अरुणाई ॥ बिम्बाफल बन्धूक लजाई ॥ ६ ॥ ❋

प्रभुके दांतोंकी पंक्तीकी कांतिको देख, कविलोगोंका मन घनाही ललकता है, पर ऐसा कौन पदार्थ है कि, जो उसकी बराबरी करे ? ॥ ५ ॥ अधरकी लाली देखतेही कुंदुरू और बंधुपुष्प लजाते है ॥ ६ ॥

शुकतुण्डहि नासिका लजावे ॥ थके सुकबि नहिं पटतर आवे ॥ ७ ॥ ❋
शीश जटाके मुकुट बनाये ॥ भाल बिशाल तिलक अति भाये ॥ ८ ॥ ❋
दक्षिण दिशि लक्ष्मण बलबीरा ॥ रामबाहुसम अतिरण धीरा ॥ ९ ॥ ❋

नासिकाको देख, तोतेकी चोंच लजाती है; जिसका वर्णन करनेके लिये कविलोग प्रयत्न कर कर थक गये; पर किसीकी उपमा न देसके ॥ ७ ॥ शिरपर जटाजूटका मुकुट बना है. विशाल भालमें अति सुन्दर तिलक झलक रहा है ॥ ८ ॥ दाहिनी ओर बलवीर लक्ष्मण विराजमान है जो प्रभुकी दाहिनी बांह और बड़ा रणधीर है ॥ ९ ॥

दोहा—बामे भाग बिभीषण, शिर अभिषेका राज ॥ ❋
बीजमंत्र सब जानहिँ, अकसर करहिँ सुकाज ॥ १० ॥ ❋

बाईं ओर राज्याभिषेक कियाहुआ बिभीषण खड़ा है, जो सारी सलाहका बीज जानता है, हे नाथ ! हमें तो प्रायः इनका काम बन पड़ता दीखे है ॥ १० ॥

अब देखहु यह सेन सुहाई ॥ भादों मेघ घटा जनु छाई ॥ १ ॥ ❋
कन्या एक ब्रह्म उपजाई ॥ नयन भूरि अरु रूप लुनाई ॥ २ ॥ ❋

सुग्रीवकी ओर देखकर सारण कहता है कि—अब इस सुहावनी सेनाकी तर्फ देखो. मानों भादोंमासकी सघन श्यामघटा छा रही है ॥ १ ॥ हे नाथ ! सुनो. ब्रह्माजीने एक कन्या उत्पन्न करी, वो अति सुन्दर और मन मोहिनी थी ॥ २ ॥

बालभाव दिनकर बल दीन्हा ॥ ऋतु जानी बासव रति कीन्हा ॥ ३ ॥ ❋
जातक यमल बीर द्वौ जाये ॥ देवअंश बानर तनु पाये ॥ ४ ॥ ❋

उसकी बालअवस्था देख, सूर्यने उसे सामर्थ्य दी, तिससे वह तरुण हुई. जब वो ऋतुमती हुई तब इंद्रने उसमें गर्भाधान किया ॥ ३ ॥ तिससे बालि प्रगट हुआ और सूर्यने गर्भाधान किया तिससे सुग्रीव प्रगट हुआ. ऐसे ये दो बानर देवअंशसे प्रगट हुए ॥ ४ ॥

किष्किन्धा पर इनकर थाना ॥ देवसरिस मधुबन उद्याना ॥ ५ ॥ ❋
ऋष्यमूक इनकर बिश्रामा ॥ चातुर्मास बसे जहँ रामा ॥ ६ ॥ ❋

इनका किष्किंधा नगरीमें स्थान है, और मधुवन एक बाग है. जो देवताओंके नंदनबनसे कुछ कम नहीं है ॥ ५ ॥ ये ऋष्यमूक पर्वतपर रहते है. जहां राम चातुर्मास्यमें रहे थे ॥ ६ ॥

बाली ज्येष्ठ राम रण मारा ॥ यहिकहँ राजतिलक प्रभु सारा ॥ ७ ॥ ❋
तारा तासु भई पटरानी ॥ जेहिकर सुत अंगद अति ज्ञानी ॥ ८ ॥ ❋

इसके बड़े भाई वालिको रणमें मार, रामचंद्रजीने इसे राज्य दिया है ॥ ७ ॥ बालिकी पटरानी जो तारा थी वो अब इसकी पटरानी हो गयी है जिसका बड़ा विवेकी अंगद नाम पुत्र है ॥ ८ ॥

सहस शँकु कर अरबुद एका ॥ अरबुद सहस कि बिन्दु बिवेका ॥ ९ ॥ ❋
सहस बिन्दु गणकन गणि माना ॥ महापद्म तेहिँ कर परिमाना ॥ १० ॥

हे प्रभु ! सुनो. हजार शंकुका एक अर्बुद, और हजार अर्बुदका एक वृन्द ॥ ९ ॥ और हजार वृन्दका एक पद्म होता है. सो यह बात गणित विद्यावाले सब जानते है ॥ १० ॥

ऐसे पद्म अठारह साजा ॥ बिग्रह बढ़ेउ रामके काजा ॥ ११ ॥ ❋
बीरवेष अरु नयन बिशाला ॥ कम्बु कण्ठ मोतिनकी माला ॥ १२ ॥ ❋

ऐसे ऐसे अठारह पद्म बानर लेकर रामके वास्ते सुग्रीव चढ़कर आया है; सो इस बातको विचार लीजिये ॥ ११ ॥ इसका वेष देखतेही वीरता मालुम होती है. बड़े विशाल नेत्र है. शंखकासा कंठ है. गलेमें मोतियोंकी माला पहिरे है ॥ १२ ॥

दोहा–हस्ती साठि सहस्र बल, सदा धर्मकी सींव ॥ ❋
श्वेत छत्र शिर शोभित, यह राजा सुग्रीव ॥ ११ ॥ ❋

इसमें साठ हजार हाथियोंका बल है, यह धर्मकी सींव यानी हद्द है, जिसके शिरपर श्वेतछत्र विराजमान है, वो वानरोंका राजा सुग्रीव है ॥ ११ ॥

यहिबिधि सकल दिखाये, सारण कपिदल यूह ॥ ❋
गनै न रावण कालवश, अतिशय गर्वसमूह ॥ १२ ॥ ❋

इसतरह सारणने रावणको सब वानरोंके यूथ दिखाये; परंतु अभिमानी रावणने कालवश होनेके कारण कुछ नहीं गिना ॥ १२ ॥

॥ इति ॥

इहाँ प्रात जागे रघुराई ॥ पूँछा मत सब सचिव बुलाई ॥ १ ॥ ❋
कहहु बेगि का करिय उपाई ॥ जामवन्त कह पद शिर नाई ॥ २ ॥ ❋

इहां भोर होतेही प्रभु जागे और सब मंत्रियोंको बुलाके सलाह पूंछी ॥ १ ॥ प्रभुने कहा कि–कहो, अब क्या उपाय करना चाहिये ? तब जाम्बवानने शिर नवाके कहा ॥ २ ॥

सुनु सर्वज्ञ सकल उरबासी ॥ सर्वरूप सब रहित उदासी ॥ ३ ॥ ❋
मंत्र कहब निजमति अनुसारा ॥ दूत पठाइय बालिकुमारा ॥ ४ ॥ ❋

कि–हे प्रभु ! आप सर्वज्ञ हो, सब प्राणीमात्रके घटघटमें विराजते हो. आप सर्वरूप हो और सबसे रहित तथा उदासीनभी हो ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! मैं मेरी बुद्धिके अनुसार जो सलाह कहता हूं सो सुनो. प्रथम तो अंगदको बुलाकर बसीठी भेजना. मेरेको तुले है सो जो प्रभुको जँचे तो ऐसा करें ॥ ४ ॥

नीक मंत्र सबके मनमाना ॥ अंगद सन कह कृपानिधाना ॥ ५ ॥ ❋

"आजु माघ परिवादिन प्राता ॥ अंगद सुनहु मोरि यक बाता" ॥ ६ ॥ ❀

जाम्बवानकी राय सबके मनमें भाय गई. तब प्रभुने अंगदसे कहा ॥ ५ ॥ कि—" हे अंगद ! आज माघमासकी परीवा है सो मैं एक बात कहता हूं वो सुनो " ॥ ६ ॥

बालितनय बुधिबलगुणधामा ॥ लंका जाहु तात मम कामा ॥ ७ ॥ ❀

बहुत बुझाइ तुमहिँ का कहऊँ ॥ परम चतुर मैं जानत अहऊँ ॥ ८ ॥ ❀

काज हमार तासु हित होई ॥ रिपुसन करेहु बतकही सोई ॥ ९ ॥ ❀

हे बुद्धि बल और गुणधाम अंगद ! हे तात ! तुम मेरे कामके वास्ते लंकामे जाओ ॥ ७ ॥ तुम्हें ज्यादे समझाकर क्या कहूं ? मैं जानता हूं कि, तुम बड़े विचक्षण और निपुण हो ॥ ८ ॥ हे तात ! जिसतरह हमारा काम सुधरे वैसा बतकहाव तुम शत्रुके पास जाकर करो ॥ ९ ॥

सोरठा—प्रभु आज्ञा धरि शीश, चरण बन्दि अंगद कहेउ ॥ ❀

सोइ गुणसागर ईश, रामकृपा जापर करहु ॥ ४ ॥ ❀

प्रभुकी आज्ञा शिर चढ़ाय, चरणरजको वंदन कर अंगदने कहा कि—हे प्रभु ! हे स्वामी ! जिसपर आप कृपा करते हो वोही गुणोंका सागर हो जाता है ॥ ४ ॥

स्वयं सिद्धि सब काज, नाथ मोहिँ आदर दयेउ ॥ ❀

अस बिचारि युवराज, तन पुलकित हर्षित भयेउ ॥ ५ ॥ ❀

अंगदने मनमें विचार किया कि, प्रभुके कारज तो सब स्वयं सिद्ध होते है; परंतु मुझे बुलाकर जो कहा है सो तो केवल मेरा मान बढ़ानेके लिये आदर दिया है. तिसे विचारकर, युवराज अंगद बहुत प्रसन्न हुआ, आनंदसे उसका शरीर पुलकित होगया ॥ ५ ॥

बन्दि चरण उर धरि प्रभुताई ॥ अंगद चलेउ सबहिँ शिर नाई ॥ १ ॥ ❀

प्रभुप्रताप उर सहज अशंका ॥ रण बांकुरा बालिसुत बंका ॥ २ ॥ ❀

फिर अंगद प्रभुके चरणोंको प्रणामकर, प्रभुकी प्रभुताको हृदयमें रख, सबको शिर नवाय लंका-को चला ॥ १ ॥ प्रभुके प्रतापसे उसके मनमें किसी बातकी शंका नहीं थी. वह रणबांकुरा बालि-का पुत्र बंका अंगद लंकापुरीके भीतर पैठा ॥ २ ॥

पुर बैठत रावणकर बेटा ॥ खेलत रहा सो होइगइ भेंटा ॥ ३ ॥ ❀

बातहिँ बात कर्ष बढ़ि आई ॥ युगुल अतुल बल पुनि तरुणाई ॥ ४ ॥ ❀

उससमय द्वारपर रावणका पुत्र खेल रहा था, सो उसकी और अंगदकी भेंट होगयी ॥ ३ ॥ और बातही बातमें अमर्ष बढ़ आया; क्योंकि दोनों ऐसेही तो अतुलबल,और दूसरी तरुण अवस्था ॥ ४ ॥

तेहिँ अंगद कहँ लात उठाई ॥ गहि पद पटकेउ भूमि भ्रमाई ॥ ५ ॥ ❀

निशिचर निकर देखि भट भारी ॥ जहँ तहँ चले न सकहिँ पुकारी ॥ ६ ॥

सो उसने अंगदपर लात उठाई तब अंगदने उसका पांव पकड़, घुमाकर, पृथ्वीपर पटका ॥ ५ ॥ राक्षसगण ऐसे महाबल भारी सुभटको देखकर, जहां तहां चल धरे. कोई पुकारभी नहीं कर सकता ॥ ६ ॥

एक एक सन मर्म न कहहीं ॥ समुझि तासु बल चुप होइ रहहीं ॥ ७ ॥ ❀

भयउ कोलाहल नगरमँझारी ॥ आवा कपि लंका जेइं जारी ॥ ८ ॥ ❋

एक एकको असली भेद नहीं कहते हैं. उसके बलको समझकर सब चुप रह गये हैं ॥ ७ ॥ सारी नगरीके बीच बड़ा भारी कोलाहल मच गया है कि, वो बन्दर पीछा आगया है कि, जिसने नगरीको जलाया था ॥ ८ ॥

अबधौं कहा करिहि करतारा ॥ अति सभीत सब करहिँ बिचारा ॥ ९ ॥ ❋
बिनु पूंछे मगु देहिँ बताई ॥ जेहि बिलोकि सोइ जाहि सुखाई ॥ १० ॥ ❋

सब लोग भयभीत होकर ऐसा विचार करते हैं कि कौन जाने ? अब कर्तारको क्या करना है ? ॥ ९ ॥ अंगदके डरके मारे नगरीके लोगोंकी यह दशा होगयी कि, विना पूंछे मारग बता देते है और जिसकी ओर अंगद देखता है, वो तौ डरके मारे सूख जाता है कि मौत आई ॥ १० ॥

दोहा– गयो सभा दरबार रिपु, सुमिरि रामपदकंज ॥ ❋
सिंह ठवनि इत उत चितै, धीर बीर बलपुंज ॥ २२ ॥ ❋

ऐसे सबको सभीत कर, प्रभुके चरणकमलोंका स्मरण कर, अंगद शत्रुके दरबारमें बीच गया. उसकी सिंहकीसी चाल है. इधर उधर देखता है. बड़ा धीरबीर और बलका पुंज है ॥ २२ ॥

तुरत निशाचर एक पठावा ॥ समाचार रावणहिँ सुनावा ॥ १ ॥ ❋
सुनत बचन बोलेउ दशशीशा ॥ आनहुँ बोलि कहाँकर कीशा ॥ २ ॥ ❋

अंगदने जातेही तुरंत एक राक्षसको भेजा और रावणको इत्तिला करवाई ॥ १ ॥ द्वारपालके वचन सुनतेही रावणने कहा कि–अच्छा, उसे ले आओ; वो बन्दर कहांका है ? ॥ २ ॥

आयसु पाइ दूत बहु धाये ॥ कपिकुंजरहिं बोलि लै आये ॥ ३ ॥ ❋
अंगद दीख दशानन बैसा ॥ सहितप्राण कज्जलगिरि जैसा ॥ ४ ॥ ❋

रावणकी आज्ञा पातेही बहुतसे दूत दौड़े, और अंगदको बुलाय, रावणके पास ले आये ॥ ३ ॥ अंगदने रावणको देखा तौ वो उसे कैसा दीख पड़ा कि मानों, प्राणवाला [सचेतन] अंजनगिरिही खड़ा है ॥ ४ ॥

भुजा बिटप शिर शृंगसमाना ॥ रोमावली लता तरु नाना ॥ ५ ॥ ❋
मुख नासिका नयन अरु काना ॥ गिरि कन्दरा खोह अनुमाना ॥ ६ ॥

जो उसकी बीस भुजा है वे तौ वृक्ष स्थानीय है और जो शिर हैं वे शिखरकी जगह हे. रोमावली हैं सोही अनेक प्रकारकी लतायें और बेल बूटे हैं ॥ ५ ॥ मुख, नासिका, नेत्र और कानोंके छेद हैं, सो पर्वतकी गुफाओंकी बराबरी करते हैं ॥ ६ ॥

गयउ सभा मन नेकु न मुरा ॥ बालितनय अति बल बांकुरा ॥ ७ ॥ ❋
उठे सभासद कपि कहँ देखी ॥ रावण उर भा क्रोध बिशेखी ॥ ८ ॥ ❋

यद्यपि रावणकी देह और तेज बड़ा प्रबल था तौभी अतिबलबंका बालिका पुत्र अंगद मनमें नेकहू न डरा, तुरंत सभामें चला गया ॥ ७ ॥ अंगदको देख, सभासद उठ खड़े हुए तब रावणके मनमें बड़ा भारी क्रोध उपजा ॥ ८ ॥

(क्षेपक)

छंद–पढ़े न क्यों बिधि बिनय शम्भु कत दरश न देवे ॥ ❋

जीव करै कत शोर धर्म क्यों चरण न सेवै
रहै न दूरि दिनेश देवऋषि स्वर लै गावै ॥
यक्षन सहित कुबेर बेर करि क्यों नित आवै ॥
चन्द न बोले मन्दमति मातलि सभा न यह अहै ॥
बैठि जाहु रे बैठि सब तब रावण कपिते कहै ॥ १ ॥

जिस समय अंगद सभामें आया तब सब उठ खड़े हुए तिन्हें देख, रावणने कहा कि—अरे विधाता! तू अपने स्तुतिवाक्य क्यों नहीं पढ़ता? अरे शंभु! तू हमेशा आकर दर्शन क्यों नहीं देते? अरे बृहस्पति! शोर क्यों करता है? अरे धर्मराज! चरण क्यों नहीं पखारता? अरे सूर्य! यहांसे दूर क्यों नहीं रहता? अरे नारद! वीणा लेके मधुर स्वरसे गान क्यों नहीं करता? अरे कुबेर! हमेशा यक्षोंके साथ विलम्ब करके क्यों आता है? अरे मंदबुद्धि चंद्र! बोलता क्यों नहीं? अरे मातलि! यह इंद्रकी सभा नहीं है? बस; सब बैठ जाओ. ऐसे सबोंसे कहकर रावणने अंगदसे कहा ॥ १ ॥

बैठारेउ पुनि दूतक जानी ॥ अंगद कौतुक कीन भवानी ॥ १ ॥
योजन फाटिक शिला सुहाई ॥ जहँ रावणकी सभा रचाई ॥ २ ॥

अंगदको दूत जानकर रावणने सबको विठाय अंगदको बैठने कहा, तब हे पार्वती! अंगदने ऐसा कौतुक किया ॥ १ ॥ कि जिस एक योजन स्फटिकमणिकी शिलापर रावणकी सभा जुड़ी हुई थी ॥ २ ॥

अंगद कीन्हेउ चरण प्रहारा ॥ कुम्हर चक्र इव फिरेउ अपारा ॥ ३ ॥
दशमुख देखि महाभय खावा ॥ सकल सभा मन बिस्मय पावा ॥ ४ ॥

उस शिलाके अंगदने लात मारी जिससे वो योजन लम्बी चौड़ी शिला कुम्हारके चाककी नांई चक्कर खाने लगी ॥ ३ ॥ तिसे देख रावण त्रास खा गया और सारी सभा मनमें विस्मित रह गई ॥ ४ ॥

॥ इति ॥

दोहा—यथा मत्त गजयूथमहँ, पंचानन चल जाय ॥
रामप्रताप सँभारि उर, बैठ सबहिँ शिर नाय ॥ २३ ॥

जैसे मत्त हाथियोंके झुंडमें मृगराज निशंक चला जाता है, ऐसे प्रभुके प्रतापको मनमें स्मरण कर, सभामें जाय, सबोंको शिर नवाय, सभाके बीच जा बैठा ॥ २३ ॥

कह दशकन्ध कवन तैं बन्दर ॥ मैं रघुबीर दूत दशकन्धर ॥ १ ॥
मम जनकहिँ तोहिँ रही मिताई ॥ तव हित कारण आयउँ भाई ॥ २ ॥

तब रावणने अंगदसे पूंछा कि—हे बन्दर! तू कौन है? तब अंगदने कहा कि—हे रावण! मैं रामचन्द्रजीका दूत हूं ॥ १ ॥ मेरे पिताकी और तेरी परस्पर प्रीति थी, इसलिये हे भाई! तेरे भलेके वास्ते मैं आया हूं ॥ २ ॥

उत्तम कुल पुलस्त्यकर नाती ॥ शिव बिरंचि पूजेहु बहुभांती ॥ ३ ॥
बर पायउ कीन्हेउ सब काजा ॥ जीतेहु लोकपाल सुरराजा ॥ ४ ॥

तेरा उत्तम ब्राह्मणकुल है. पुलस्त्यऋषिका तू नाती (पौत्र) है. ब्रह्मा और महादेवकी तूने अनेक प्रकारसे पूजा करी है ॥ ३ ॥ तूने वरदान पाके, सब कार्य किये हैं. लोकपाल और इंद्रको जीता है ॥ ४ ॥

नृप अभिमान मोहबश किम्बा ॥ हरि आनेहु सीता जगदम्बा ॥ ५ ॥ ❀
अब शुभ कहा करहु तुम मोरा ॥ सब अपराध क्षमहिँ प्रभु तोरा ॥ ६ ॥ ❀

हे रावण ! तू जगतजननी श्रीसीताजीको जो हर ले आया है, सो क्या राजापनके अभिमानसे लाया है अथवा मोहके वश होकर लाया है ? ॥ ५ ॥ अब मैं तुझे जो शुभ समाचार कहता हूं सो सुन, और मैं कहूं वैसे कर कि, जिससे प्रभु तेरे सारे अपराध माफ करैं ॥ ६ ॥

दशन गहहु तृण कण्ठ कुठारी ॥ पुरजन संग सहित निज नारी ॥ ७ ॥ ❀
सादर जनकसुता करि आगे ॥ इहिबिधि चलहु सकल भय त्यागे ॥ ८ ॥

हे रावण ! दांतोंमें तृण ले, कंठमें कुठार बांध, अपनी स्त्री और नगरके लोगोंको साथ ले, ॥ ७ ॥ सीताको आगे कर, इसतरह आदरके साथ भय त्याग कर, प्रभुके पास चल ॥ ८ ॥

दोहा–प्रणतपाल रघुवंशमणि, त्राहि त्राहि अब मोहिँ ॥ ❀
सुनतहिँ आरतबचन प्रभु, अभय करहिंगे तोहिँ ॥ २४ ॥ ❀

और ऐसे प्रार्थना कर कि–हे प्रणतपाल ! हे शरणागतवत्सल ! हे रघुवंशमणि ! अब मुझे त्राहि त्राहि (बचाओ). प्रभु ये आर्तवचन सुनतेही तुरंत तुझको अभय करेंगे ॥ २४ ॥

रे कपि पोच बोल संभारी ॥ मूढ़ न जानसि मोहिँ सुरारी ॥ १ ॥ ❀
कहु निज नाम जनककर भाई ॥ केहि नाते मानिये मिताई ॥ २ ॥ ❀

अंगदके ऐसे वचन सुन, रावणने कहा कि–अरे नीच बन्दर ! संभालके बोल. अरे मूर्ख ! तू देवताओंको दंड देनेवाले मुझको जानता नहीं है ? ॥ १ ॥ अरे बन्दर ! तू अपना और पिताका नाम बताव, जिससे तेरे पिताके साथ हमारे मित्रता किस संबंधसे थी वो माननेमें आये ॥ २ ॥

अंगद नाम बालिकर बेटा ॥ तोसों कबहुं भई होइ भेटा ॥ ३ ॥ ❀
अंगदवचन सुनत सकुचाना ॥ रहा बालि बानर मैं जाना ॥ ४ ॥ ❀

रावणके ये वचन सुन, अंगदने कहा कि–हे राक्षस ! अंगद हमारा नाम है. मैं बालिका पुत्र हूं. तेरी और उसकी अवश्य भेंट हुई होगी ॥ ३ ॥ अंगदके वचन सुन, रावणने डरकर कहा कि–हां, मैं जानता हूं; बालिनाम एक बन्दर था ॥ ४ ॥

अंगद तुहीं बालिकर बालक ॥ उपजे बंशअनल कुलघालक ॥ ५ ॥ ❀
गर्भ न गयउ बृथा तुम जाये ॥ निज मुख तापस दूत कहाये ॥ ६ ॥ ❀

अरे अंगद ! क्या तू उस बालिका बेटा है ? अरे कुलघातक ! तू तो तेरे वंशमे बांसोंकी अग्निके जैसे अपने वंशको नाश करनेवाला पैदा हुआ है ॥ ५ ॥ तू पैदाहुवा इससे तो गर्भ पड़ा जाता तो अच्छा होता; क्योंकि उस बालिका पुत्र होके, तू अपने तईं तपस्वीका दूत कहाता है ॥ ६ ॥

अब कहु कुशल बालिकहँ अहई ॥ बिहँसि बचन अंगद अस कहई ॥ ७ ॥
दिन दश गये बालिपहँ जाई ॥ पूंछेहु कुशल सखा उर लाई ॥ ८ ॥ ❀

अब कहो, बालि कुशल क्षेम है ? रावणके ये वचन सुन, अंगदने हंसकर कहा कि- ॥ ७ ॥ हे रावण ! दशदिन बीतनेके बाद तुम बालिके पास जाय, छातीसे लगाय अपने मित्रको कुशल क्षेम पूंछना ॥ ८ ॥

रामबिरोध कुशल जस होई ॥ सो सब तुमहिँ सुनाइहि सोई ॥ ९ ॥ ❋
सुनु शठ भेद होइ मन ताके ॥ श्रीरघुबीर हृदय नहिँ जाके ॥ १० ॥ ❋

सो रामचन्द्रजीसे विरोध करनेसे जैसा कुशल होता है वे सब समाचार तुम्हें वो भलीभांति सुनावेगा ॥ ९ ॥ अरे शठ ! सुन. भेदकी बात कहनेसे भेद उसके मनमें हुआ करता है कि जिसके हृदयमें श्रीरामचन्द्र आनन्दकन्द नहीं विराजते ॥ १० ॥

दोहा–हम कुलघालक सत्य तुम, कुलपालक दशशीश ॥ ❋
अन्धउ बधिर न कहहिँ अस, श्रवण नयन तव बीश ॥ २५ ॥ ❋

हे रावण ! हमको कुलघालक और अपने तंई तू कुलपालक कहता है सो सत्य है, पर ऐसी बात अंधा और बहिराभी न कहेगा. जैसी कि तूने बीस बीस कान और आंखोंके विद्य मान छते कही है. अर्थात् तेरे कान और आंखे वृथा है ॥ २५ ॥

शिव बिरंचि सुर मुनि समुदाई ॥ चाहत जासु चरणसेवकाई ॥ १ ॥ ❋
तासु दूत होइ हम कुल बोरा ॥ ऐसी मति उर बिदर न तोरा ॥ २ ॥

अरे नीच ! महादेवजी, ब्रह्माजी, देवता, और मुनिलोगोंके समुदाय, जिनके चरणकमलोंकी सेवा करना चाहते हैं ॥ १ ॥ उनका दूत होकर मैंने अपने कुलका नाश किया. तेरे मनमें एस आनेपर तेरी छाती न फट गई, यह बड़ी आश्चर्यकी बात है ॥ २ ॥

सुनि कठोर बाणी कपिकेरी ॥ कहत दशानन नयन तरेरी ॥ ३ ॥ ❋
खल तव बचन कठिन मैं सहऊं ॥ नीति धर्म सब जानत अहऊं ॥ ४ ॥ ❋

अंगदकी ऐसी कठोर वाणी सुनकर, रावण नैन तरेरके बोला ॥ ३ ॥ कि–अरे खल ! मैं जो तेरे कठिन वचन सहता हूं, मैं सो नीति धर्मको जानता हूं, इसलिये मुझ सहन पड़ते है ॥ ४ ॥

कह कपि धर्मशीलता तोरी ॥ हमहुँ सुना कृत परतिय चोरी ॥ ५ ॥ ❋
देखेउँ नयन दूत रखवारी ॥ बूडि न मरहु धर्मव्रतधारी ॥ ६ ॥ ❋

रावणके वचन सुन अंगदने कहा कि–तेरी धर्मशीलता हमनेभी सुनी है. तूने परस्त्रीकी चोरी करी थी ॥ ५ ॥ और जो तू मनमें यह जानता हो कि, मैं तुझे दूत जानकर नहीं मारता सो तो हमने अपनी आंखोंसे दूतकी रक्षा देखी है, कि जब कुबेरने दूत भेजा था उसे तूनेही मारा था. ऐसे धर्मव्रतधारीको धिक्कार है कि, बस न चले तब ऐसी बातें बनाना; अरे नीच ! इस करते तो बूड़ मरना अच्छा है ॥ ६ ॥

नाककानबिन भगिनि निहारी ॥ क्षमा कीन्ह तुम धर्म बिचारी ॥ ७ ॥ ❋
धर्मशीलता तव जग जागी ॥ पावा दरश हमहुँ बड़भागी ॥ ८ ॥ ❋

हां, बहिनके नाक कान कटेहुए देख, जो तूने क्षमा की थी, सो धर्म विचारकेही की थी ॥ ७ ॥ तेरी धर्मशीलता सारे जगतमें प्रसिद्ध है. आज हमारेभी बड़े भाग्य हैं, जो हमको आपके दर्शन मिले ॥ ८ ॥

दोहा–जनि जल्पसि जड़ जन्तु कपि, शठ बिलोकु मम बाहु ॥ ❀
लोकपाल बल बिपुल शशि, ग्रसनहेतु जिमि राहु ॥ २६ ॥ ❀

अंगदके ऐसे मानभंगकारक वचन सुन, रावण बोला कि–अरे ! जड़जीव ! शठ बन्दर ! अब बकवाद मतकरे ? मेरी भुजाओंकी ओर देख. जो लोकपालोंके अतुलबलरूप चन्द्रमाको ग्रसनेके लिये राहुके समान है. जैसे राहु चंद्रमाको ग्रस जाता है, ऐसे मेरी भुजा लोकपालोंके बलका नाश कर देती है ॥ २६ ॥

पुनि नभ सर मम कर निकर, कर कमलन पर बास ॥ ❀
शोभित भयो मराल इव, शम्भुसहित कैलास ॥ २७ ॥ ❀

मैंने अपनी इन भुजाओंसे महादेव सहित कैलास पर्वत उठाया था, उससमय कैसी शोभा बनी थी सो सुन. जैसे तालावके बीच कमलवनमें हंस शोभा पाता है. आकाशरूप तालावमें मेरे हाथरूप कमलोंके बीच महादेवजीसहित कैलास पर्वत हंसके जैसे शोभित हुआ था ॥ २७ ॥

तुम्हरे कटकमाहिँ सुन अंगद ॥ मोसन भिरहि कौन योधा बद ॥ १ ॥ ❀
तव प्रभु नारिबिरह बलहीना ॥ अनुज तासु दुख दुखित मलीना ॥ २ ॥ ❀

रावण कहता है कि–हे अंगद ! सुन, तुम्हारे कटकमें ऐसा योधा कौन है ? जो मेरे साथ भिडेगा ॥ १ ॥ जो तुम्हारे स्वामी है सो तो स्त्रीके विरहसे व्याकुल होनेके कारण तनछीन मनमलीन बलहीन हो रहे है. उनका छुटभाई उनके दुखसे अति दुखी है ॥ २ ॥

तुम सुग्रीव कुलद्रुम दोऊ ॥ बन्धु हमार भीरु अति सोऊ ॥ ३ ॥ ❀
जामवन्त मंत्री अति बूढ़ा ॥ सो किमि होइ समर आरूढ़ा ॥ ४ ॥ ❀

सुग्रीव और तू ये दोनों मेरे सोंही आतेही नदीके किनारेके वृक्षके जैसे हो जाओगे, अर्थात् मारे जाओगे और जो हमारा भाई (बिभीषण) है, सो वो डरपोंक बहुत है ॥ ३ ॥ जाम्बवान् मंत्री है सो वो बहुत बूढ़ा है. उसकी तो युद्धमें आनेकी सामर्थ्यही क्या ? ॥ ४ ॥

शिल्पकर्म जानत नल नीला ॥ है कपि एक महाबल शीला ॥ ५ ॥ ❀
आवा प्रथम नगर जेहि जारा ॥ सुनि हँसि बोलेउ बालिकुमारा ॥ ६ ॥ ❀

नल और नील है सो वे शिल्पविद्या जानते है, उनके युद्धसे वार्ताही क्या ? हां, एक वानर तुम्हारे कटकमें बलवान् जरूर है ॥ ५ ॥ जो पहले यहां आया था. और नगरीको जला गया था. रावणके ऐसे वचन सुन, हंसकर अंगदने कहा ॥ ६ ॥

सत्य बचन कह निशिचर नाहा ॥ सांचहुँ कीश कीन्ह पुर दाहा ॥ ७ ॥ ❀
रावण नगर अल्प कपि दहई ॥ को अस झूंठ कहै को सुनई ॥ ८ ॥ ❀

कि–महाराज ! सत्य कहो, क्या सांचेहू बन्दर आपकी पुरीको जला गया था ? ॥ ७ ॥ एक छोटासा बन्दर रावणकी पुरीको जला गया. ऐसे झूंठे वचनको कौन कहै और कौन सुनै ? ॥ ८ ॥

जो अतिसुभट सराहेहु रावण ॥ सो सुग्रीवकेर लघु धावन ॥ ९ ॥ ❀
चलै बहुत सो बीर न होई ॥ पठवा खबरि लेन हम सोई ॥ १० ॥ ❀

हे रावण ! जिसे आप सुभट कहकर सराहते हो वो तो सुग्रीवका एक छोटे दर्जेका हलकारा है ॥९॥

हे रावण ! जो बहुत चलता है वो वीर नहीं कहलाता. इसलिये उसको तो हमने केवल खबर लेनेके लिये भेजा था ॥ १० ॥

दोहा—अब जाना पुर दहेउ कपि, बिनु प्रभु आयसु पाइ ॥ ❋
गयउ न फिर निजनाथपहँ, तेहिभय रहेउ लुकाइ ॥ २८ ॥ ❋

हमको तो पुरी जलानेकी खबर अब मिली है. हां पुरी जलानेकी बात जो तुम कहते हो सो सच्ची मालूम होती है, क्योंकि प्रभुकी आज्ञा पाये विना पुरी जलाई, अतएव वो पीछे प्रभुके पास नहीं आया. उसी डरसे वो कहीं छिपके बैठ गया है ॥ २८ ॥

सत्य कहसि दशकण्ठ तैं, मोहि न सुनि कछु कोह ॥ ❋
कोउ न हमरे कटक अस, तुम सन लरत जो सोह ॥ २९ ॥ ❋

हे रावण तूने जो कहा—हमारी सेनामें ऐसा कोई नहीं है कि जो तुमसे युद्ध करते शोभे सो यह सत्य है. इस बातको सुनकर, मुझे रंचभी क्रोध नहीं आता ॥ २९ ॥

प्रीति बिरोध समान सन, करिय नीति अस आहि ॥ ❋
जो मृगपति बध मेंडुकही, भलो कहै को ताहि ॥ ३० ॥ ❋

क्योंकि यह नीति है कि, प्रीति और विरोध बराबर केसे करना चाहिये ? जो वनका राजा सिंह कदाचित किसी मेंडकको मार डाले तो उसे कौन भला कहेगा ? ॥ ३० ॥

यद्यपि लघुता राम कहँ, तोहिँ बधे बड़ दोप ॥ ॥ ❋
तदपि कठिन दशकण्ठ सुनु, क्षत्रिजातिकर रोप ॥ ३१ ॥ ❋

हे रावण ! जोभी मुझको मारनेमें रामचन्द्रजी बड़ी हलकी होगी और महा अपराध होगा, तौभी हे रावण ! सुन, क्षत्रिय जातिका क्रोध बड़ा कठिन होता है ॥ ३१ ॥

हँसि बोलेउ दशमौलि तब, कपिकर बड़ गुण एक ॥ ❋
जो प्रतिपालै तासु हित, करै उपाय अनेक ॥ ३२ ॥ ❋

अंगदके वचन सुन, हंसकर रावणने कहा कि—बन्दरोंमे एक यह बड़ा भारी गुण होता है कि, जो उसे पालता है उसका वो अनेक उपाय और प्रयत्न करके भला करता है ॥ ३२ ॥

धन्य कीश जो निज प्रभुकाजा ॥ जहँ तहँ नाचहिँ परिहरि लाजा ॥ १ ॥
नाचि कूदि करि लोग रिझाई ॥ पतिहित करत कर्म निपुणाई ॥ २ ॥ ❋

अहो ! वानर बड़े धन्य है. जो अपने स्वामीके लिये लाज छोड़कर जहाँ तहां नाचते हैं ॥ १ ॥ ये अपने मालिकके लिये नाचते हैं, कूदते है, और लोगोंको रिझाते हैं. ज्यों बने त्यों अनेक चतुराई करके अपने पतिका काम करते हैं ॥ २ ॥

अंगद स्वामिभक्त तव जाती ॥ प्रभुगुण कस न कहसि यहिभांती॥ ३ ॥ ❋
मैं गुणगाहक परम सुजाना ॥ तव कटु बचन करौं नहिँ काना ॥ ४ ॥ ❋

हे अंगद ! तेरी जाति बड़ी स्वामिभक्त होती हैं, सो तू इसतरह अपने प्रभुके गुण कैसे नहीं कहेगा ? ॥ ३ ॥ रावण कहता है कि—हे सुजान ! मैं बड़ा गुणग्राही हूं. तेरे एकभी कटु वचनको कानमें नहीं लाता ॥ ४ ॥

कह कपि तव गुण गाहकताई ॥ सत्य पवनसुत मोहिँ सुनाई ॥ ५ ॥ ❋
बन विध्वंसि सुत बधि पुर जारा ॥ तदपि न तेइँ कृत कछु अपकारा ॥ ६ ॥

तब अंगदने रावणसे कहा कि–हे रावण ! तेरी गुणग्राहकताके सच्चे समाचार हमको हनुमाननेभी कहे थे ॥ ५ ॥ हनुमानने कहा था कि–मैंने रावणके बनको विध्वंस कर, अक्षकुमार नाम पुत्रको मार, लंकाको जलाया तौभी उसने मेरा पीछा कुछभी तिरस्कार नहीं किया ॥ ६ ॥

सोइ बिचारि तव प्रकृति सुहाई ॥ दशकन्धर मैं कीन्ह ढिठाई ॥ ७ ॥ ❋
देखेउँ आइ जो कछु कपि भाषा ॥ तुम्हरे लाज न रोष न भाषा ॥ ८ ॥ ❋

हे रावण ! तुम्हारी वोही सुहावनी प्रकृति समझके, मैंने यह ढिठाई की है ॥ ७ ॥ हनुमानने जैसा कुछ कहा था सो मैंने आकर देखा तौ सब वोही बात दीख पड़ी.तुम्हारे तो लाज,रोष कै अमर्ष किसीका लेशभी नहीं है ॥ ८ ॥

दोहा–वक्र उक्ति धनु बचन शर, हृदय दह्यो रिपु कीश ॥ ❋
प्रतिउत्तर गर्जेसि मनो, काटत भट दशशीश ॥ ३३ ॥ ❋

अंगदने वक्रोक्तिरूप धनुषमें वचनरूप बाण चढाय, शत्रुके हृदयको बहुतही विदीर्ण किया तब रावण गर्जकर प्रत्युत्तररूप खड्गसे उन्हे काटने लगा ॥ ३३ ॥

जो अस मति पितु खायहु कीशा ॥ कहि अस बचन हँसा दशशीशा ॥ १ ॥
पितहिँ खाइ खातेउँ अब तोहीं ॥ अबहीं समुझि परा कछु मोहीं ॥ २ ॥ ❋

रावण बोला कि–अरे बन्दर ! तेरी ऐसी तुच्छ बुद्धि है, इसीसे तौ तूने अपने पिताको खा लिया है. ऐसे कहकर रावण हंसा ॥ १ ॥ तब अंगद बोला कि–हे राक्षस ! पिताको खाकर, अभी मैं तुझेभी खाजाता, परंतु अभी तुझे एक बात याद आगई है. इससे गम खाता हूं ॥ २ ॥

वालि बिमल यश भाजन जानी ॥ हतौं न तोहिँ अधम अभिमानी ॥ ३ ॥
कहु रावण रावण जग केते ॥ मैं निज श्रवण सुने सुन ते ते ॥ ४ ॥ ❋

अरे अधम ! अभिमानी ! मैं तुझे बालिके निर्मल सुयशका पात्र समझकर, नहीं मारता हूं ॥ ३ ॥ अंगद कहता है कि–हे रावण ! कह, जगत्में तमाम रावण कितने है ? मैंने अपने कानोंसे जितने रावण सुने हैं उन्हें कहता हूं सो सुन ॥ ४ ॥

बलि जीतन यक गयउ पताला ॥ राखा बांधि शिशुन हयशाला ॥ ५ ॥ ❋
खेलहिँ बालक मारहिँ जाई ॥ दया लागि बलि दीन्ह छुड़ाई ॥ ६ ॥ ❋

एक रावण तौ बलिको जीतनेके लिये पातालमें गया था. वहां बालकोंने उसे पकड़ ले जाकर, घुड़शालमें बांध दिया था ॥ ५ ॥ फिर वे बालक लगे उससे खेल खेलने और मारने. तब दया लाके बलिने छुडा दिया था ॥ ६ ॥

एक बहोरि सहसभुज देखा ॥ धाइ धरा जनु जन्तु बिशेखा ॥ ७ ॥ ❋
कौतुक लागि भवन लै आवा ॥ सो पुलस्त्य मुनि जाइ छुड़ावा ॥ ८ ॥ ❋

फिर दूसरा रावण एक और था जिसे देख, एक अजूबा जानवर समझ, दौड़कर, सहस्रबाहुने

पकड़ लिया था ॥ ७ ॥ वो कौतुकके लिये पकड़ घर ले आया. सो कुछ दिन वहां बंधा रहा. फिर पुलस्त्य ऋषिने जाकर उसे छुड़ाया था ॥ ८ ॥

दोहा-एक कहत मोहिँ सकुच अति, रहा बालिकी काख ॥
तिन महँ रावण कवनतैं, सत्य कहहु तजि माख ॥ ३४ ॥

और एक तीसरा रावण और था, जिसकी बात कहते मुझे बड़ा संकोच होता है. बालिकी कांखमें दबा रहा था. सो हे रावण! तू उनमेसे कौनसा रावण है? सो अमर्ष छोड़कर, सत्य कह ॥ ३४ ॥

सुनु शठ सोइ रावण बलशीला ॥ हरगिरि जान जासु भुजलीला ॥ १ ॥
जानु उमापति जासु सुराई ॥ पूजे जेहिँ शिर सुमन चढ़ाई ॥ २ ॥

अंगदके ऐसे कटु और सत्य वचन सुन रावण बोला कि-रे शठ! सुन, मैं वोही बलशाली रावण हूं कि जिसके भुजबलको कैलास पर्वत जानता है ॥ १ ॥ मैं वो रावण हूं जिसकी शूरवीरताको महादेवजी अच्छीतरह जानते है. जिसने महादेवको पुष्पकी जगह अपने मस्तक चढ़ाके कमल पूजा करी ॥ २ ॥

शिर सरोज निज करन्ह उतारी ॥ पूजे अमित बार त्रिपुरारी ॥ ३ ॥
भुजविक्रम जानहिँ दिगपाला ॥ शठ अजहूं जिनके उर शाला ॥ ४ ॥

अपने हाथोंसे अपने शिर सरोज (कमल) को उतारकर, जिसने कईबर महादेवकी घनी पूजा करी है ॥ ३ ॥ वो रावण मैं हूं. रे शठ! जिसकी भुजाके पराक्रमको दिग्गज हाथी भली भांति जानते है. अबलों उनके मनमें शाल बना है ॥ ४ ॥

जानहिँ दिग्गज उर कठिनाई ॥ जब जब भिरेउँ जाइ बरिआई ॥ ५ ॥
जिनके दशन कराल न फूटे ॥ उर लागत मूलक इव टूटे ॥ ६ ॥

जिसके उरकी कठिनता दिग्गज जानते है. जब जब जाकर, मैं उनसे जबर्दस्ती भिड़ा हूं ॥ ५ ॥ तब उन्होंने मेरी छातीमें बड़े जोरसे दंताघात किया है, पर मेरी छातीकी चमड़ीभी न फूटी और उनके दांत मूलेके जैसे टूटके गिर गये है ॥ ६ ॥

जासु चलत डोलत इमि धरणी ॥ चढ़त मत्त गज जिमि लघुतरणी ॥ ७ ॥
सोइ रावण जगबिदित प्रतापी ॥ सुने न श्रवण अलीक प्रलापी ॥ ८ ॥

जिसके चलते और डोलते यह पृथ्वी मस्त हाथोके चढ़ते छोटी नावके समान डोलती है ॥ ७ ॥ वोही रावण मैं हूं कि जिसका प्रताप सारे संसारमें विख्यात है. और झूंठ बकवाजी तूंने जिसको अबलों कानोंसे नहीं सुना है ॥ ८ ॥

दोहा-तेहि रावणकहँ लघु कहसि, नरकर करसि बखान ॥
रे कपि बर्बर खर्ब खल, अब जाना तव ज्ञान ॥ ३५ ॥

अरे बर्बर बेमर्याद! खर्व कहे तुच्छ! खल! उस रावणको तो तू तुच्छ कहता है और मनुष्यका बखान करता है सो अब तेरा ज्ञान हमने जान लिया ॥ ३५ ॥

सुनि अंगद सकोप कह बानी ॥ बोल सँभारि अधम अभिमानी ॥ १ ॥
सहसबाहु भुज गहन अपारा ॥ दहन अनलसम जासु कुठारा ॥ २ ॥

रावणके वचन सुन, कोप कर अंगदने कहा कि–अरे अभिमानी नीच! संभालकर बोल; सुन ॥ १ ॥ परशुरामजी कि जिनका कुठार सहस्रार्जुनकी भुजारूप गहन वनको भस्म करनेके लिये अग्निरूप था ॥ २ ॥

जासु परशु सागर खर धारा ॥ बूड़े नृप अगणित बहु बारा ॥ ३ ॥ ❀
तासु गर्व जेहिं देखत भागा ॥ सो नर किमि दशकण्ठ अभागा ॥ ४ ॥ ❀

और जिनके परशुरूप समुद्रकी तेज धाररूप धारामें कईबेर असंख्यात राजालोग बूड़े है ॥ ३ ॥ उनका गर्व जिनका देखतेही भाग गया था, तिन प्रभुको हे अभागा रावण! तू कैसे मनुष्य कहता है? ॥ ४ ॥

राम मनुज कस रे शठ बंगा ॥ धन्वी काम नदी पुनि गंगा ॥ ५ ॥ ❀
पशु सुरधेनु कल्पतरु रूखा ॥ अन्न दान पुनि रस पीयूखा ॥ ६ ॥ ❀

अरे सर्व विरोधी शठ! कह, रामचन्द्र आनन्दकन्द मनुष्य किसतरह है? क्या कामदेवको हम धनुषधारीकी गिनतीमें गिनेगे? कि जो पुष्पके धनुषसे सारे संसारको अपने वश कर लेता है और गंगाको क्या नदी कहेगें? ॥ ५ ॥ क्या कामधेनु पशु है? क्या कल्पवृक्ष पेड़ है? अन्नदान क्या साधारण दान है? अमृत क्या रस है? ॥ ६ ॥

वैनतेय खग अहि सहसानन ॥ चिन्तामणि की उपल दशानन ॥ ७ ॥ ❀
सुनु मतिमन्द लोक वैकुण्ठा ॥ लाभ कि रघुपतिभक्ति अकुण्ठा ॥ ८ ॥ ❀

गरुड़ क्या पक्षी है? क्या शेष सर्प है? चिंतामणिरत्न क्या पत्थर है? ॥ ७ ॥ रे मूर्ख! सुन, वैकुंठ धामको क्या साधारण लोकोंमे गिनेगे? क्या प्रभुकी फलानुसंधानरहित विशद भक्तिकी साधारण लाभोंमें गिनेंगे? ॥ ८ ॥

दोहा–सेन सहित तव नाम मथि, बन उजारि पुर जारि ॥ ❀
कस रे शठ हनुमान कपि, गयउ जो तव सुत मारि ॥ ३६ ॥ ❀

अरे मूढ! जिन प्रभुके दासानुदास हनुमानने, सेनाके साथ तेरे नामको मथनकर, बनका विध्वंस कर, पुरीको जलाय, तेरे पुत्रको मार, अक्षत चला गया वह क्या बन्दर है? ॥ ३६ ॥

सुनु रावण परिहरि चतुराई ॥ भजसि न कृपासिन्धु रघुराई ॥ १ ॥ ❀
जो खल भयसि रामकर द्रोही ॥ ब्रह्म रुद्र सक राखि न तोही ॥ २ ॥ ❀

अरे रावण! सुन अब तू चतुराईको तज, कृपासिन्धु श्रीरामचन्द्रजीको क्यों नहीं भजता? ॥ १ ॥ अरे खल! जो तू रामचन्द्रजीका विद्रोही बनेगा तौ ब्रह्मा और महादेवजीभी तुझे बचा न सकेंगे ॥ २ ॥

मूढ़ मृषा जनि मारसि गाला ॥ रामबर होइहि अस हाला ॥ ३ ॥ ❀
तव शिर निकर कपिनके आगे ॥ परिहैं धरणि रामशर लागे ॥ ४ ॥ ❀

अरे मूर्ख! तू वृथा गाल मत बजावे. रामचन्द्र आनन्दकन्दके साथ बैर करेगा तौ तेरा ऐसा हाल होगा. जो मैं तुझे कहता हूं ॥ ३ ॥ प्रभुके बाणोंसे कटकर तेरे शिर बानरोंके आगे धरतीपर पड़ेंगे ॥ ४ ॥

ते तव शिर कन्दुक इव नाना ॥ खेलहिँ भालु कीश चौगाना ॥ ५ ॥ ❀
जबहिँ समर कोपहिँ रघुनायक ॥ छुटिहहिँ अतिकराल बहु सायक ॥ ६ ॥

उन तेरे शिरोंको चौगानके बीच गेंदकी भांति उछाल उछालकर बानर और रीछ खेलेंगे ॥ ५ ॥ अरे नीच ! जब प्रभु कोपेंगे और रणके बीच महा भयंकर बहुतसे बाण छूटेंगे ॥ ६ ॥

तब कि चलिहि अस गाल तुम्हारा ॥ अस बिचारि भजु राम उदारा ॥ ७ ॥
सुनत बचन रावण उर जरा ॥ बरत अनलमहँ जनु घृत परा ॥ ८ ॥

तब क्या तू ऐसे गाल बजा सकेगा ? इससे मैं कहता हूं कि, रे मूर्ख ! मनमें बिचार करके परमोदार प्रभुको भज ॥ ७ ॥ अंगदके ऐसे बचन सुन, रावण हृदयके भीतर ऐसा जला कि, मानों जलती हुई आगमें घीकी आहुति पड़ी ॥ ८ ॥

दोहा–कुम्भकर्ण सम बन्धु मम, सुत प्रसिद्ध शक्रारि ॥
मोर पराक्रम सुनेसि नहिँ, जितेउँ चराचर झारि ॥ ३७ ॥

रावण क्रोध करके बोला कि–अरे मूर्ख ! कुंभकर्ण जैसा तौ मेरे भाई है और इंद्रजित जैसा महाबली महाशूर पुत्र है और मैंने सारे चराचर जगतको जीत, अपने बश किया है. तूंने मेरा पराक्रम सुना नहीं दीखे ? ॥ ३७ ॥

शठ शाखामृग जोरि सहाई ॥ बाँधा सिन्धु इहै प्रभुताई ॥ १ ॥
लाँघहिँ खग अनेक बारीशा ॥ शूर न होहिँ सुनहु जड़ कीशा ॥ २ ॥

अरे शठ ! बानरको सहाय ले, समुद्रमें सेतु बांध दी, क्या इसीसे प्रभुता पा ली ? ॥ १ ॥ और जड़ बन्दर ! सुन. इस समुद्रको कई पक्षी लांघते है, पर केवल समुद्रको लांघ जानेसे वे शूरवीर नहीं हो सकते इस समुद्रको लांघ लिया तौ क्या हुआ ? ॥ २ ॥

मम भुज सागर बल जल पूरा ॥ जहँ बूड़े सुर नर बर शूरा ॥ ३ ॥
बीस पयोधि अगाध अपारा ॥ को अस बीर जो पावहिँ पारा ॥ ४ ॥

अभी तौ बलरूप जलसे भरपूर मेरी भुजारूप बीस सागर बाकीही है, कि जिनके अन्दर कई शूरवीर देवता, दैत्य और मनुष्य बूड़ गये है ॥ ३ ॥ मेरे इन बीस भुजारूप अथाह समुद्रोंका पार पा जावे, ऐसा बीर जगतमें कौन है ? अर्थात् नहीं ॥ ४ ॥

दिगपालन मैं नीर भरावा ॥ भूप सुयश खल मोहिँ सुनावा ॥ ५ ॥
जो पै समरसुभट तव नाथा ॥ पुनि पुनि कहसि जासु गुणनाथा ॥ ६ ॥

अरे खल ! मैंने लोकपालोंके पास पानी भरवाया है. तू मुझे एक तुच्छ राजाका सुयश क्या सुनाता है ? ॥ ५ ॥ यदि तेरा धनी रणगाढ़ा और बंका है कि जिसके गुणगण तू मुझे बारंबार सुनता है ॥ ६ ॥

तौ बसीठ पठवा केही काजा ॥ रिपुसन प्रीति करत नहिँ लाजा ॥ ७ ॥
हरगिरिमथन निरखि ममबाहू ॥ पुनि शठ कपि निजस्वामि सराहू ॥ ८ ॥

तौ उसने मेरे पास दूत क्यों भेजा ? शत्रुसे संधि करते उसे लाज नहीं आती ? ॥ ७ ॥ महादेवके कैलास पर्वतको मथन करनेवाली मेरी भुजाको देखकर, रे शठ ! जबभी तू तेरे स्वामीकी सरहना करता है ? ॥ ८ ॥

दोहा–शूर कवन रावण सरिस, निजकर काटे शीश ॥
हुनेउँ अनलमहँ बार बहु, हर्षित साखि गिरीश ॥ ३८ ॥

अरे मूर्ख ! रावणके बराबर शूरवीर कौन है ? कि जिसने अपने हाथन अपने शिर काटे और आनंदित हो कईबेर अग्निमें होमे इस बातमें महादेव साक्षी हैं ॥ ३८ ॥

जरत बिलोकेउँ जबहिं कपाला ॥ बिधिके लिखे अंग निजभाला ॥ १ ॥
नरके कर आपन बध बाची ॥ हँसेउँ जानि बिधिगिरा असाँची ॥ २ ॥

रावण कहता है कि-मैंने जब अग्निके कुंडमें जलते हुए अपने शिर देखे, तब उन कपालोंमें विधाताके लिखे अंक पढ़े ॥ १ ॥ सो उनमें विधाताने लिखा था कि, इसका मरण मनुष्यके हाथ होगा, तिसे पढ़ ब्रह्माजीकी बाणीको झूंठी समझकर मैं हंसा ॥ २ ॥

सो मन समझि त्रास नहिं मोरे ॥ लिखा बिरंचि जरठ मति भोरे ॥ ३ ॥
आन बीर को शठ मम आगे ॥ पुनि पुनि कहसि लाज परित्यागे ॥ ४ ॥

उस बातको समझकर, मेरे मनमें बिलकुल डर नहीं है; क्योंकि विधाताने वृद्ध होनेके कारण वो बात भूलसे लिख दी है ॥ ३ ॥ अरे शठ ! मेरे साम्हने खड़ा रहे ऐसा दूसरा शूर वीर कौन है ? तू निलज होकर, मेरे आगे बारंबार मनुष्यका नाम लेता है ? ॥ ४ ॥

कह अंगद सलज्ज जगमाहीं ॥ रावण तोहिं समान कोउ नाहीं ॥ ५ ॥
लाजवन्त तव सहज सुभाऊ ॥ निजगुण निजमुख कहसि न काऊ ॥ ६ ॥

रावणके ऐसे गर्विष्ट वचन सुन, अंगदने कहा कि हे रावण ! जगतमें तेरे जैसा लाजवन्त कौन है ? कोई नहीं है ॥ ५ ॥ तू तो स्वभावसे बड़ा लाजवंत है तूने अपने गुण अपने मुंहसे किसीके आगे नहीं कहे है ॥ ६ ॥

शिर अरु शैल कथा चित रही ॥ ताते बार बीस तैं कही ॥ ७ ॥ ❀
सो भुजबल राखेउ उर घाली ॥ जितेउ न सहसबाहु बलि बाली ॥ ८ ॥ ❀

केवल शिर काटने और कैलास उठानेकी दो बातें तेरे चित्त चढ़ रही है, सो तू अपने मुंहसे बीसबार कह चुका है ॥ ७ ॥ हम जानते हैं कि, जिस बलसे तूने कैलास पर्वत उठाया था, वो बल बालि और सहस्रार्जुनसे युद्ध करते समय अपने हृदयके भीतर रख छोड़ा था; इसीसे सहस्रार्जुन और महाबली बालीको नहीं जीता था ॥ ८ ॥

सुन मतिमन्द देह अब पूरा ॥ काटे शीश न होइय शूरा ॥ ९ ॥ ❀
बाजीगर कहँ कहिय न बीरा ॥ काटे निजकर सकल शरीरा ॥ १० ॥ ❀

अरे मूर्ख ! सुन, कोई शिर काटनेसे शूरबीर नहीं हो जाता ॥ ९ ॥ देख, बाजीगर अपना पूरा शरीर अपने हाथ काट डालता है पर उससे वो शूरवीर थोड़ाही कहावेगा ॥ १० ॥

दोहा-जरहिं पतंग बिमोह बश, भार बहहिं खर वृन्द ॥ ❀
ते नहिं शूर कहावहीं, समुझ देखु मतिमन्द ॥ ३९ ॥ ❀

जलनेकी कहे तब तो पतंग दीपकके रूपको देख, मोहित हो उसके भीतर पड़, कई जलते हैं और भार उठानेकी कहे तो गधा सबसे ज्यादा भार उठाता है, पर वे शूरवीर थोड़ेही कहलाते हैं. हे मूर्ख ! इस बातको मनमें विचार कर देख ॥ ३९ ॥

अंज जनि बत बढ़ाव खलकरही ॥ सुन मम बचन मान परिहरही ॥ १ ॥

दशमुख मैं न बसीठी आयउँ ॥ अस बिचारि रघुवीर पठायउँ ॥ २ ॥

अब वृथा बकबाद मत कर; जो मैं कहता हूं सो मानको तज कर, सुन ॥ १ ॥ अरे दशमुख ! मैं दूत होकर नहीं आया हूं. प्रभुने ऐसा विचार करके मुझको भेजा है ॥ २ ॥

बार बार इमि कहेउ कृपाला ॥ नहिँ गजारि यश बधे शृगाला ॥ ३ ॥
मनमहँ समुझि बचन प्रभुकेरे ॥ सहेउँ कठोर बचन शठ तेरे ॥ ४ ॥

कि हम रावणको न मारें तौ ठीक. दयालु प्रभु बारंबार ऐसे कहते रहे कि सियारको मारनेसे सिंहका सुयश नहीं होता ॥ ३ ॥ सो प्रभुके वचन समझके रे शठ ! मैंने तेरे ये परुष (कठोर) वचन सहे हैं ॥ ४ ॥

नाहित करि मुखभंजन तोरा ॥ लै जातेउँ सीतहिँ बरजोरा ॥ ५ ॥
जानेउँ तब बल अधम सुरारी ॥ सूने हरि आनी परनारी ॥ ६ ॥

नहीं तौ तेरे मुख भंगकर, मैं जबर्दस्ती सीताको ले जाता ॥ ५ ॥ अरे अधम राक्षस ! मैं तेरे बलको अच्छीतरह जानता हूं. तू वोही है जिसने सूने स्थानमें जाय, परस्त्रीहरण किया ॥ ६ ॥

तैं निशिचरपति गर्व बहूता ॥ मैं रघुपतिसेवक कर दूता ॥ ७ ॥
जो न राम अपमानहिँ डरऊँ ॥ तव देखत अस कौतुक करऊँ ॥ ८ ॥

हे रावण ! तेरे मनमें गर्व बहुत है पर मैंभी रामचन्द्रजीके सेवक सुग्रीवका दूत हूं ॥ ७ ॥ जो मुझे रामचन्द्रजीका अपमान होनेका डर न होवे तौ मैं तेरे देखते ऐसा कौतुक करूं ॥ ८ ॥

दोहा–तोहिँ पटकि महि सेन हति, चौपट करतेउँ गाउँ ॥
मन्दोदरी समेत शठ, जनकसुतहिँ लै जाउँ ॥ ४० ॥

कि तुझे पृथ्वीपर पटक, सेनाको मार, गांवको उजार, हे शठ ! मंदोदरीके साथ सीताको उठा ले जाऊं ॥ ४० ॥

जो अस करउँ न तदपि बड़ाई ॥ मुये बधे कछु नहिँ मनुसाई ॥ १ ॥
कौल कामबश कृपण बिमूढ़ा ॥ अति दरिद्र अयशी अतिबूढ़ा ॥ २ ॥

अंगद कहता हैकि–जो मैं करभी डालूं तौभी इसमें बड़ाईकी बात क्या है ? मेरे हुएको मारनेमें कुछ आदमीपन थोड़ाही है ॥ १ ॥ रे शठ ! सुन, ये चौदह प्राणी जीते मुर्दे हैं. एक तो कौलपंथी कि जिनके मदिराही इष्ट देव है. दूसरा कामका चेरा, तीसरा कृपण (कंजूस), चौथा वह कि जिसको सत्य असत्यका विवेक नहीं है, पांचवाँ जन्म दरिद्री, छठा वह जिसका संसारमें अपयश फैला हुआ है. सातवां बहुत बूढ़ा॥ २ ॥

सदा रोगबश सन्तत क्रोधी ॥ रामबिमुख श्रुति सन्त बिरोधी ॥ ३ ॥
तनपोषक निन्दक अघखानी ॥ अनजीवत सम चौदह प्रानी ॥ ४ ॥

आठवां रोगग्रस्त, नवां निरन्तर क्रोध करनेवाला, दशवां रामचन्द्रजीसे विमुख, ग्यारवां वेद और सत्पुरुषोंसे विरोध रखनेवाला ॥ ३ ॥ बारहवां उदरंभरी, तेरहवां निंदा करनेवाला और चौदहवां महापापी ॥ ४ ॥

अस बिचारि खल बधौं न तोहीं ॥ जनि रिस उपजावसि मोहीं ॥ ५ ॥

पुनि सकोप कह निशिचरनाथा ॥ अधर दशन गहि मींजत हाथा ॥ ६ ॥
ऐसे तुझको मरा जानके हे खल ! मैं नहीं मारता. अब तू मुझपै क्रोध मत कराइयो ॥ ५ ॥ अंगदके बचन सुन, क्रोध कर, दांतोंसे होंठ चाब, हाथ मल, रावणने अंगदसे कहा कि– ॥ ६ ॥

रे कपि पोच मरण अब चहसी ॥ छोटे बदन बात बड़ि कहसी ॥ ७ ॥ *
कटु जल्पसि जड़ कपि बल जाके ॥ बुधि बल तेज प्रताप न ताके ॥ ८ ॥ *
रे नीच बानर ! अब तू मरना चाहता है, क्योंकि छोटे मुंह बड़ी बात कहता है ॥ ७ ॥ रे जड़ बन्दर ! जिसके बल तू कड़ु बचन कहता है, उसमें बुद्धि, बल, तेज और प्रतापका लेश नहीं है ॥ ८ ॥

दोहा–अगुण अमान बिचारि तेहिँ, दीन्ह पिता बनबास ॥ *
सो दुख अरु युवतीबिरह, पुनि निशिदिन मम त्रास ॥ ४१ ॥ *
जब राजा दशरथने उसे निर्गुण और निर्मर्याद समझा तभी तो वनवास दिया है. सो अव्वल तो उसके वो वनवासका दुःख, दूसरा स्त्रीका वियोग, तीसरा फिर रातदिन मेरा डर ॥ ४१ ॥

जिनके बलकर गर्ब तोहिँ, ऐसे मनुज अनेक ॥ *
खाहिँ निशाचर दिवस निशि, मूढ़ समुझ तजि टेक ॥ ४२ ॥ *
अरे मूर्ख ! जिसके बलका तुझे इतना गर्व है, ऐसे कई मनुष्योंको राक्षस लोग रातदिन खाते रहते है. इस बातका विचारकर हे मूर्ख ! तू अपनी टेक छोड़ दे ॥ ४२ ॥

जब तेहिँ कीन्ह रामकी निन्दा ॥ क्रोधवन्त तब भयउ कपिन्दा ॥ १ ॥ *
हरि हर निंदा सुनहिँ जे काना ॥ होय पाप गोघातसमाना ॥ २ ॥ *
कवि कहता है कि–जब रावणने रामचन्द्रजीकी निंदा करी. तब अंगदको बड़ा क्रोध उपजा ॥ १ ॥ जो लोग महादेव और विष्णु भगवान्की निंदा कानोंसे सुनते है, उन्हें गोहत्याके समान पाप लागता है ॥ २ ॥

कटकटाइ कपिकुंजर भारी ॥ दोउ भुजदण्ड तमकि महि मारी ॥ ३ ॥ *
डोलत धरणि सभासद खसे ॥ चले भागि भय मारुत ग्रसे ॥ ४ ॥ *
अंगदने कटकटाके, दोनों भुजदंड उठाके रिस खाके पृथ्वीपर प्रहार किया ॥ ३ ॥ तिससे पृथ्वी डोलने लगी और सभासद भयरूपी पवनसे ग्रसित हो खसककर भाग चले ॥ ४ ॥

गिरत दशानन उठा सँभारी ॥ भूलत परेउ मुकुट षट्चारी ॥ ५ ॥ *
कछु निज कर लै शिरन सँभारे ॥ कछु अंगद प्रभुपास पँवारे ॥ ६ ॥ *
रावण गिरता गिरता सँभालकर उठ खड़ा हुआ और उसके दशों मुकुट पड़े ॥ ५ ॥ कुछ मुकुट तो रावणने सँवारकर अपने शिरपर रखलिये और कुछ अंगदने प्रभुके पास फेंक दिये ॥ ६ ॥

आवत मुकुट देखि कपि भागे ॥ दिनहिँ लूक परनबिधि लागे ॥ ७ ॥ *
कै रावण करि कोप चलाये ॥ कुलिश चारि आवत अति धाये ॥ ८ ॥ *
मुकुटोंको आते देखकर बन्दर भगे और कहते हैं कि–हे विधाता ! दिनकोही लूक परने लगे ॥ ७ ॥ बानरोंने मुकुटोंको देख मनमें ऐसा जाना कि रावणने क्रोध करके चार वज्र चलाये दिखे हैं ? सो वे बड़े वेगसे दौड़े चले आते हैं. ऐसे विचारकर बन्दर भागने लगे ॥ ८ ॥

कह प्रभु हँसि जनि हृदय डराहू ॥ लूक न अशनि केतु नहिँ राहू ॥ ९ ॥ ❋
ए किरीट दशकन्धरकेरे ॥ आवत बालितनयके प्रेरे ॥ १० ॥ ❋

तिन्हें देख, प्रभुने हँसकर कहा कि—तुम डरो मत. ये न तो उल्कापात है; न राहु है, न केतु है, न वज्र है ॥ ९ ॥ ये रावणके मुकुट है. अंगदने चलाये है सो चले आते है ॥ १० ॥

दोहा—कूदि गहे कर पवनसुत, आनि धरे प्रभुपास ॥ ❋
कौतुक देखहिँ भालु कपि, दिनकर सरिस प्रकास ॥ ४३ ॥ ❋

प्रभुके वचन सुन, निडर हो, कूदकर, हनुमानने लाकर वे मुकुट प्रभुके पास लाय धरे. वानर और रीछ उस कौतुकको देख चकित रहगये; क्योंकि उनका प्रकाश सूर्यसे कुछ कम नहीं था ॥ ४३ ॥

उहाँ कहत दशकन्ध रिसाई ॥ धरि मारहु कपि भागि न जाई ॥ १ ॥ ❋
इहि बिधि बेगि सुभट सब धावहु ॥ खाहु भालु कपि जहँ तहँ पावहु ॥ २ ॥

लंकाके अंदर रावण क्रोध करके राक्षसोंसे कहता है कि—इस वानरको पकड़कर मार डालो. ऐसा न हो कि यह भाग न जावे ॥ १ ॥ इसतरह तुम सब दौड़कर पकड़लो और जहां कहीं इसके सिवाय दूसरेभी वानर और रीछोंको देखो और पाओ उन्हें धरकर खा जाओ ॥ २ ॥

महि अकीश करि फेरि दोहाई ॥ जिअत धरहु तपसी दोउ भाई ॥ ३ ॥ ❋
पुनि सकोप बोलेउ युवराजा ॥ गाल बजावत तोहिँ न लाजा ॥ ४ ॥ ❋

पृथ्वीको वानर विहीन कर, मेरी दोहाई फेर, दोनों तपस्वी भाइयोंको जीते पकड़ लाओ ॥३॥ रावणके ऐसे वचन सुन, क्रोध कर अंगदने फिर कहा कि तुझे गाल बजाते लाज नहीं आती?॥४॥

मरु गलकाटि निलज कुलघाती ॥ बल बिलोकि बिदरत नहिँ छाती ॥ ५ ॥
रे तियचोर कुमारगगामी ॥ खल मलराशि मन्दमति कामी ॥ ६ ॥ ❋

रे निलज्ज कुलघाती ! तू अपना गला काटके मर क्यों नहीं जाता ? प्रभुके बलको देखकर तेरी छाती नहीं फटती ? ॥ ५ ॥ ए स्त्रीचोर ! कुपंथ चलनेवाला ! अरे खल ! अरे पापके पुंज ! मन्दमति ! रे कामके चेरा ! ॥ ६ ॥

संनिपात जल्पसि दुर्बादा ॥ भयसि कालबश शठ मनुजादा ॥ ७ ॥ ❋
याको फल पावहुगे आगे ॥ बानर भालु चपेटन लागे ॥ ८ ॥ ❋

तू संनिपातमें आगया है, इसीसे दुर्वचन बोलता है. अरे शठ राक्षस ! तू कालके वश हो गया है ॥ ७ ॥ सो इसका फल तुझको आगे मिलेगा जब कि तेरे बन्दर और रीछोंके हाथकी चपेटें लगेंगी ॥ ८ ॥

राममनुज बोलत अस बानी ॥ गिरहि न तब रसना अभिमानी ॥ ९ ॥
गिरिहै रसना संशय नाहीं ॥ शिरन समेत समर महि माहीं ॥ १० ॥ ❋

अरे अभिमानी ! रामचन्द्र आनन्दकन्द मनुष्य हैं, ऐसी वाणी बोलते तेरी जीभ गिर न पड़ी इसका हमको बड़ा आश्चर्य होता है ॥ ९ ॥ तेरी जीभ पड़नेमें कुछ संदेह नहीं है; पर वे रणके बीच तेरे शिरोंके साथ पडेंगी ॥ १० ॥

सोरठा—सो नर क्यों दशकन्ध, बालि बधेउ जेहिँ एक शर ॥ ❋
बीसहु लोचन अन्ध, धृक तव जन्म कुजाति जड़ ॥ ६ ॥ ❋

अरे रावण ! क्या वे मनुष्य है कि जिन्होंने एकही बाणसे बालिका वध किया. अरे बीसही आंखोंसे अंधे कुजाति जड़ तेरे जन्मको धिक्कार है ॥ ६ ॥

तव शोणितकी प्यास, तृषित रामसायकनिकर ॥ ❋
तजेउँ तोहिँ तेहिआश, कटुजलपसि निशिचर अधम ॥ ७ ॥ ❋

और मैंने जो तुझको छोंड़ा है, इसका कारण तो यह कि रामचन्द्रजीके बाणोंके समुदाय तेरे लोहूके प्यासे है, सो उनकी आशकी निराश करना मैं नहीं चाहता और उसीसे रे नीच ! तूने इतने कटु वचन कह लिये है ॥ ७ ॥

मैं तव दशन तोरिबे लायक ॥ आयसु पै न दीन्ह रघुनायक ॥ १ ॥ ❋
अस रिसि होत दशौ मुख तोरौं ॥ लंका गहि समुद्रमहँ बोरौं ॥ २ ॥ ❋

अंगद कहता है कि—मैही तेरे दांत तोड़नेके लाइक हूं, पर प्रभुने मुझे आज्ञा नहीं दी है ॥ १ ॥ मुझे रिस तो ऐसी आती है कि तेरे दशोंमुख तोड़ डालूं और लंकाको लेकर समुद्रमें बुड़ा दूं ॥ २ ॥

गूलर फलसमान तव लंका ॥ बसहिँ मध्यजनु जन्तु अशंका ॥ ३ ॥ ❋
मैं बानर फल खात न बारा ॥ आयसु दीन्ह न राम उदारा ॥ ४ ॥ ❋

अरे नीच रावण ! यह तेरी लंका गूलरके फलके जैसी है. जिसमें जंतुओंके जैसे राक्षस भरे हुए है ॥ ३ ॥ मैं बन्दर हूं मेरा फलही अहार है, इसलिये फल खाते मुझे क्या देरी लगे ? पर करूं क्या ? मुझे प्रभुने आज्ञा नहीं दी ॥ ४ ॥

युक्ति सुनत रावण मुसुकाई ॥ मूढ़ सिखेसि कहँ अधिक झुँठाई ॥ ५ ॥ ❋
बालि कबहुँ अस गाल न मारा ॥ मिलि तपसिन तैं भयसि लबारा ॥ ६ ॥

अंगदकी इस युक्तिको सुन रावण मुसुकाया. और बोला कि—अरे मूर्ख ! ऐसा झूंठ बोलना तूने कहां सीखा ? ॥ ५ ॥ बालिने तो ऐसी गप्पें कभी न मारी थीं. तू तपस्वियोंसे मिलके लबार होगया दीखे ॥ ६ ॥

साँचेहु मैं लबार भुजबीहा ॥ जो न उपारौं तव दश जीहा ॥ ७ ॥ ❋
रामप्रताप सुमिरि कपि कोपा ॥ सभामांझ प्रण करि पद रोपा ॥ ८ ॥ ❋

रावणके वचन सुन, अंगदने कहा कि—हे रावण ! मैं सचमुच लबार हूं जब कि तेरी दशों जीभोंको तालवेमेंसे न निकाल लूं ॥ ७ ॥ ऐसे कह, प्रभुके प्रतापका स्मरणकर, कोपित हो, अंगदने सभाके बीच अपना पांव रोपा ॥ ८ ॥

जो मम चरण सकहि शठ टारी ॥ फिरहिँ राम सीता मैं हारी ॥ ९ ॥ ❋
सुनहु सुभट सब कह दशशीशा ॥ पद गहि धरणि पछारहु कीशा ॥ १० ॥

और कहा कि—रे शठ ! जो तू मेरा पांव यहांसे हटा सके तो चल मैं सीताको हारा. रघुनाथजी पीछे लौट जायंगे ॥ ९ ॥ अंगदके वचन सुन, रावणने अपने सारे सुभटोंसे कहा कि इस बन्दरको पांव पकड़ धरतीपर पछाड़ मारो ॥ १० ॥

इन्द्रजीत आदिक बलवाना ॥ हरषि उठे जहँ तहँ भट नाना ॥ ११ ॥ ❋

झपटहिँ करि बल बिपुल उपाई ॥ पद न टरै बैठहिँ शिर नाई ॥ १२ ॥ ❋

रावणका वचन सुन, इन्द्रजीत आदि महाबली योधा प्रसन्न हो जहां तहां उठे ॥ ११ ॥ और बड़ा प्रयत्न और बल करके झपटे पर अंगदका पांव बिलकुल हिलभी न सका. तब शिर नीचा करके बैठ गये ॥ १२ ॥

पुनि उठि झपटहिँ सुरआराती ॥ टरै न कीश चरण यहि भाँती ॥१३॥ ❋
पुरुष कुयोगी जिमि उरगारी॥ मोह बिटप नहिँ सकहिँ उपारी॥ १४॥ ❋

फिर दूसरे राक्षस उठकर झपटे पर अंगदका चरण किसीसे न हटा ॥ १३ ॥ हे गरुड़ ! जैसे कुयोगी पुरुष मोहरूपी वृक्षको उपाड़ नहीं सकते ऐसे वे राक्षस अंगदके चरणको उठा न सके ॥ १४ ॥

दोहा–भूमि न छांड़ै कपिचरण, देखत रिपुमद भाग ॥ ❋
कोटि बिघ्न जिमि सन्तकहँ, तदपि नीति नहिँ त्याग ॥ ४४ ॥ ❋

अंगदका चरण भूमिसे तिलभरभी न हटा तिसे देख, रावणका मद शांत हो गया. अंगदका चरण राक्षसोंके करोडों उपायोंसे कैसे न टला सो कहते है कि जैसे करोड़ों विघ्न होंनपरभी सत्पुरुष लोग अपनी नीतिको नहीं त्यागते ॥ ४४ ॥

कपिबल देखि सकल हिय हारे ॥ उठा आप कपिके परचारे ॥ १ ॥ ❋
गहत चरण कह बालिकुमारा ॥ मम पद गहे न तोर उबारा ॥ २ ॥ ❋

अंगदका पराक्रम देखकर सब राक्षसोंने मनमें हार मानली. तब प्रचारकर आप रावण उठा ॥ १ ॥ और अंगदका पांव पकड़ने लगा, तब अंगदने कहा कि–मेरे चरण पकड़नेसे तेरा बचाव नहीं हो सकता ॥ २ ॥

गहसि न रामचरण शठ जाई ॥ सुनत फिरा मन अतिसकुचाई ॥ ३ ॥ ❋
भयउ तेज हत श्री सब गई ॥ मध्य दिवस जिमि शशि सोहई ॥ ४ ॥ ❋

अरे शठ ! जो तू बचना चाहता है तो रामचन्द्रजीके चरणोंको जाकर क्यो नहीं पकड़ता ? अंगदके वचन सुन, रावण मनमें अति सकुचाकर पीछा फिरा ॥ ३ ॥ कुछ न बोला, रावणकी सारी शोभा जाती रही और ऐसा तेजहीन हो गया कि जैसे दोपहरके समय चंद्रमा कांतिहीन हो जाता है ॥ ४ ॥

सिंहासन बैठा शिर नाई ॥ मानहुँ सम्पति सकल गँवाई ॥ ५ ॥ ❋
जगदाधार प्राणपति रामा ॥ तासु बिमुख किमि लह बिश्रामा ॥ ६ ॥ ❋

शिर नीचा करके सिंहासनपर जा बैठा. उस समय वो कैसा मालूम होता था कि मानों सब संपदा गँवाकर बैठा है ॥५॥ कवि कहता है कि–रावणकी ऐसी दशा होनी योग्य है; क्योंकि जगतके आधार और प्राणपति श्रीरामचन्द्रजीसे जो विमुख हैं, वे किसी भांति विश्राम और सुख नहीं पा सकते ॥ ६ ॥

उमा रामकर भृकुटि बिलासा ॥ होइ विश्व पुनि पावै नाशा ॥ ७ ॥ ❋
तृणते कुलिश कुलिश तृण करहीं ॥ तासु दूत पद कहु किमि टरहीं ॥ ८ ॥

महादेवजी कहते हैं कि–हे पार्वती ! यह सारा जगत् प्रभुकी भृकुटि बिलाससे तो प्रगट

होता है और उसीसे पीछा लीन हो जाता है ॥ ७ ॥ जो प्रभु तृणको कुलिश (वज्र) और वज्रको तृण कर देते है उन प्रभुके दूतका पांव कहो किस प्रकार हटै ? ॥ ८ ॥

पुनि कपि कही नीति बिधिनाना ॥ मानत नाहिँ काल नियराना ॥ ९ ॥
रिपुमद मथि प्रभु सुयश सुनाये ॥ अस कहि चले बालि नृप जाये ॥१० ॥

फिर अंगदने उसे अनेक नीतिके वचन कहे परंतु उसने कुछ न माना; कारण उसका काल निकट आ गया था ॥ ९ ॥ अंगद शत्रुका गर्व गंजन कर, प्रभुका सुयश सुनाय, ऐसे कटु वचन कह वहांसे पीछा लौटा ॥ १० ॥

अबने मुख का करौं बढ़ाई ॥ हतिहौं तोहिँ खेलाइ खेलाई ॥ ११ ॥ ❋
प्रथमहिँ तासुतनय कपि मारा ॥ सो सुनि रावण भयो दुखारा ॥ १२ ॥
यातुधान अंगदबल देखी ॥ भै व्याकुल अति हृदय बिशेखी ॥ १३ ॥ ❋

अंगदने कहा कि—मैं अभी अपने मुंहसे अपनी बड़ाई क्या करूं ? परंतु तुझे मैं खिलाय खिलायके मारूंगा ॥ ११ ॥ अंगदने पहले आतेही रावणके पुत्रको मारा था सो समाचार सुन, रावण अति दुखी हुआ ॥ १२ ॥ रावण अंगदका बल देख, मनमें अत्यंत व्याकुल हुआ और घबराया ॥ १३ ॥

दोहा—रिपुबल धर्षि हर्षि हिय, बालितनय बलपुंज ॥ ❋
सजल नयन तन पुलकि मन, गहे रामपदकंज ॥ ४५ ॥ ❋

बलका पुंज बालिका पुत्र अंगद शत्रुकी सेनाको हटाय, मनमें प्रसन्न हो, वहांसे चला सो प्रभुके पास आया. उससमय उसके नेत्र प्रीतिके अश्रुसे भर रहे थे, शरीर रोमांचित हो रहा था, मन मगन था; ऐसा प्रफुल्लित हो प्रभुके पास आय, अंगदने प्रभुके चरण धरे ॥ ४५ ॥

(क्षेपक)

दोहा—इहां दशानन अभय निशि, निवशित उर धा खार ॥ ❋
लागे निरतन निर्तकी, कौतुक करैं अपार ॥ १ ॥ ❋
राम लषण कपि भालु सब, हँसे समुझि अभिमान ॥ ❋
सहि न सके सुग्रीव बिन, पूंछे कीन पयान ॥ २ ॥ ❋

इहां लंकामें रावण रात्रिके समय निश्चिंत और निडर रहता है, मनमें किसी तरहकी चिंता नहीं है. नट और नर्तकियां नृत्य कर रही हैं और अनेक प्रकारके कौतुक करती हैं ॥ १ ॥ रावणका इसतरहका अभिमान देखकर, राम लक्ष्मण और सारे बन्दर और रीछ हंसे. रावणकी यह बात सुग्रीवसे सही न गई, इससे वो प्रभुको विना पूंछे वहांसे कूदा ॥ २ ॥

दश योजनकर बीच तहँ पहुँचे एक कुलांच ॥ ❋
सिंहासनतें अवनि पर, पटक्यो मारि तमाच ॥ ३ ॥ ❋
गिरा न बीचै सँभरिकै, भिरा क्रोध करि सोउ ॥ ❋
कर पद मुष्टिक पचैं शिर, निज निज मारे दोउ ॥ ४ ॥ ❋

सो एक कुलांचमें रावणके पास जा पहुंचा. वो दश योजनका फासिला था. सुग्रीवने जातेही

तमाच मारकर रावणको सिंहासनसे पृथ्वीपर पटका ॥ ३ ॥ पर वो गिरा नहीं तिससे पहलेही संभाल गया और क्रोध करके सुग्रीवसे भिड़ा. वहां राक्षसराज और बानरराज दोनों हाथ पांव और मुष्टिका प्रहार करते हैं और पेंच कर करके एक दूसरेके शिरको टक्कर लगा रहे है ॥ ४ ॥

यहिबिधि बाजे याम भरि, पर कोउ सका न हारि ॥ ❋
लाग्यो माया करन तब, कपिपति चले बिचारि ॥ ५ ॥ ❋

इसतरह युद्ध होते होते एक प्रहर हो गया, पर कोई हार न सका, तब जो रावण अपनी राक्षसी माया फैलाने लगा. तो सुग्रीव विचार कर पीछा चला आया ॥ ५ ॥

इहां न प्रभु सुग्रीवै देखा ॥ भये शोचबश शोधि बिशेखा ॥ १ ॥ ❋
इतनेमें सो पहुँचो आई ॥ बूझेते सब बात जनाई ॥ २ ॥ ❋

इहां प्रभुने सुग्रीवको न देखा तब प्रभुके मनमें बड़ा शोच हुआ और उसके लिये बड़ी तलाश करी ॥ १ ॥ इतनेमें सुग्रीव आ पहुंचा, तब प्रभुने उससे पूंछा कि—तुम कहां गये थे ? तब सुग्रीवने सारे समाचार कहे ॥ २ ॥

कह प्रभु अस अधिपै नहिँ चाही ॥ सो कछु होत रहा गहि काही ॥ ३ ॥ ❋
हम सिय लै करतेन का ताता ॥ देते न त्यागि तुरत निज गाता ॥ ४ ॥ ❋

सुग्रीवके वचन सुन प्रभुने कहा कि—हे सुग्रीव ! मालिकको ऐसा करना न चाहिये. यदि कुछ औरका और होजाता तो हम क्या करते ? ॥ ३ ॥ और हम सीताको लेकर क्या करते ? क्या हम हमारा शरीर नहीं त्याग देते ? ॥ ४ ॥

सुनि नाशत सब कुटुम्ब हमारा ॥ नाथ कृपा को मारनहारा ॥ ५ ॥ ❋
अस कहि पाय रजायसु सोये ॥ उठि प्रभात पुनि हरिपद जोये ॥ ६ ॥ ❋

और हमारा मरण सुन हमारा सब कुटुंब नाश नहीं हो जाता ? प्रभुके वचन सुन सुग्रीवने कहा कि—हे नाथ ! आपकी कृपा छते मारनेवाला कौन है ? ॥ ५ ॥ ऐसे कह प्रभुकी आज्ञा पाय, सो रहे. प्रभात समय उठ फिर प्रभुके चरणोंके दर्शन किये ॥ ६ ॥ ॥ इति ॥

दोहा—सांझ जानि दशकण्ठ तब, भवन गयो बिलखाइ ॥ ❋
मन्दोदरी अनेक बिधि, बहुरि कहा समुझाइ ॥ ४६ ॥ ❋

संध्या समय हुआ जान, रावण विलख वदन हो घरमें गया, तब मंदोदरीने उसे फिर अनेक प्रकारसे समझाया ॥ ४६ ॥

कान्त समुझि मन तजहु कुमतिहीं ॥ सोह न समर तुमहिँ रघुपतिहीं ॥ १ ॥
रामअनुज धनुरेख खँचाई ॥ सो नहिँ लांघेहु अस मनुसाई ॥ २ ॥ ❋

मंदोदरी बोली कि—हे कान्त ! आप मनमें समझके कुबुद्धिको तज दो. आपका और रघुनाथजीका युद्ध शोभा नहीं देता ॥ १ ॥ रामके छुटभाई लक्ष्मणने जो धनुषकी रेखा खींच दी थी वो तो आपसे लांघीही नहीं गई. ऐसा तो आपका पुरुषार्थ है ॥ २ ॥

पिय तेहिते जीतब संग्रामा ॥ जाके दूतनके अस कामा ॥ ३ ॥ ❋
कौतुकसिंधु लांघि तब लंका ॥ आयउ कपि केहरी अशंका ॥ ४ ॥ ❋

हे प्रिय ! जिनके दूतोंके ऐसे २ काम हैं क्या आप उनको रणमें जीत सकोगे ? देखिये, रामके दूतने कैसे कैसे काम किये हैं ॥ ३ ॥ समुद्रको कौतुकहीसे लांघ, आपकी लंकामें आय ॥ ४ ॥

रखवारे हति बिपिन उजारा ॥ देखत तुमहिँ अक्ष जिन्ह मारा ॥ ५ ॥ ❋
जारि नगर जेइ कीन्हेसि क्षारा ॥ कहा रहा बल गर्ब तुम्हारा ॥ ६ ॥ ❋

आपके रखवारे दूतोंको मार, बागको विध्वंस कर आपके देखते अक्षकुमारको मार ॥ ५ ॥ जिस निशंक बानरसिंहने आपके नगरको जलाय, खाख कर दिया, उस दूतके आगे आपका बल व गर्व कहां रहा ? ॥ ६ ॥

अब पति मृषा गाल जनि मारहु ॥ मोर कहा कछु हृदय बिचारहु ॥ ७ ॥
पति रघुपतिहिँ मनुज जनि जानहु ॥ अग जग नाथ अतुल बल मानहु ॥ ८ ॥

हे नाथ ! अब वृथा आप गाल मत बजाओ. जो मैने कहा है उसका मनमें कुछ विचार करो ॥ ७ ॥ आप रामचन्द्रजीको मनुष्य मत मानों. उन्हें चराचरके पति और अतुल बल जानो ॥ ८ ॥

बाणप्रताप जान मारीचा ॥ तासु कहा नहिँ मानेहु नीचा ॥ ९ ॥ ❋
जनकसभा अगणित महिपाला ॥ रहेउ तहां तुम गर्ब बिशाला ॥ १० ॥ ❋

रामके बाणका प्रताप मारीच जानता था, सो उसने आपको कहाभो; पर आपने अपने राक्षसपनके नीच स्वभावसे उसका कहना न माना ॥ ९ ॥ और जनक राजाकी सभामे जहां असंख्यात राजा इकंठ हुए थे, वहां महागर्विष्ठ तुम क्या नहीं थे ? ॥ १० ॥

भंजि धनुष जानकी बिबाहीं ॥ तब संग्राम जितेहु नहिँ ताहीं ॥ ११ ॥ ❋
सुरपतिसुत जाना बल थोरा ॥ राखा जिवत आंखि इक फोरा ॥ १२ ॥ ❋
सूर्पनखाकी गति तुम देखी ॥ तदपि हृदय नहिँ लाज बिशेखी ॥ १३ ॥

जब रामने धनुषको तोड़, सीता व्याही, तब तुमने युद्ध करके उन्हें क्यों न जीत लिया था ? ॥ ११ ॥ इंद्रके पुत्र जयंतको प्रभुने दुर्बल जान, एक आंख फोड़के जीता रख दिया है ॥ १२ ॥ फिर शूर्पणखाकी आपने वो दशा देखी है, तौभी आपके मनमे लाज नहीं आती ? ॥ १३ ॥

दोहा—बधि बिराध खर दूषणहिँ, लीला हतेउ कबन्ध ॥ ❋
बालि एक शर मारेउ, तेहिँ नर कह दशकन्ध ॥ ४७ ॥ ❋

जिन्होंने विराध, खर, दूषण और कबन्ध इन राक्षसोंको एक एक बाणसे मारा है. हे रावण ! उन्हें तुम मनुष्य कहते हो ? ॥ ४७ ॥

जेहिँ जलनाथ बँधायो हेला ॥ उतरेउ कपिदलसहित सुबेला ॥ १ ॥ ❋
कारुणीक दिनकर कुलकेतू ॥ दूत पठायउ तव हित हेतू ॥ २ ॥ ❋

जो लीलासे समुद्रमें सेतु बांध, बानरोंके दलको साथ ले सुवेल पर्वतपर आ उतरे हैं ॥ १ ॥ उन करुणानिधि सूर्यवंशके ध्वजारूप प्रभुने तुम्हारे भलेके वास्ते अपने दूतभी भेज दिये हैं ॥ २ ॥

सभामांझ जेइँ तव बल मथा ॥ करिबरूथमहँ मृगपति बथा ॥ ३ ॥ ❋
अंगद हनुमत अनुचर जाके ॥ रणबांकुरे बीर अति बांके ॥ ४ ॥ ❋

कि जिन दूतोंने सभाके बीच, जैसे सिंह गयंदोंके यूथपर टूटे ऐसे, तुम्हारे बलको मथ डाला है ॥ ३ ॥ ऐसे ऐसे महाबली रणबंके और टेढ़े अंगद और हनुमान् जैसे जिनके बीर अनुचर है ॥ ४ ॥

तेहिँ कहँ पिय पुनि पुनि नर कहहू ॥ मृषा मान ममता मद गहहू ॥ ५ ॥
अहह कान्त कृत रामबिरोधा ॥ काल बिबश मन होइ न बोधा ॥ ६ ॥

हे प्रिय ! उन प्रभुको तुम बारंबार मनुष्य कहते हो सो ठीक नहीं है, क्योंकि मान, ममता और मदको लिये जो आपका यह कहना है सो बिलकुल झूंठा है ॥ ५ ॥ अहह ! हे कान्त ! आपने रामसे विरोध किया यह बहुत बुरा किया, पर कालके वश होनेसे आपके मनमें अबलों बोध नहीं होता ॥ ६ ॥

कालदण्ड गहि काहु न मारा ॥ हरै धर्म बल बुद्धि बिचारा ॥ ७ ॥
निकट काल जेहिँ आवत साईं ॥ तेहिँ भ्रम होइ तुम्हारिहिँ नाईं ॥ ८ ॥

अरे प्रिय ! काल हाथमें दंड लेके किसीको नहीं मारता. जिसे वो मारना चाहता है उसका धर्म, बल, बुद्धि और विचारको हर लेता है ॥ ७ ॥ हे स्वामी ! जिसका काल निकट आजाता है, उसे आपकी नाईं भ्रम हो जाता है ॥ ८ ॥

दोहा—दुइ सुत मारेउ दहेउ पुर, अजहुँ पीय सिय देहु ॥
कृपासिंधु रघुबीर भजि, नाथ बिमल यश लेहु ॥ ४८ ॥

हे प्रिय ! आपके दो पुत्र मारे गये है और पुरी जल गई है, सो अबभी सीताको दे, कृपासिन्धु श्रीरामचन्द्रजीका भजन कर, निर्मल यश लेओ ॥ ४८ ॥

नारिबचन सुनि बिशिखसमाना ॥ सभा गयउ उठि होत बिहाना ॥ १ ॥
बैठा जाइ सिंहासन फूली ॥ अति अभिमान त्रास सब भूली ॥ २ ॥

बाणकेसे तीक्ष्ण मंदोदरीके वचन सुन, रावण भोर होतेही उठकर सभामें गया ॥ १ ॥ जाकर फूलके सिंहासनपर बैठा, तब मारे अभिमानके सब त्रास भूल गया ॥ २ ॥

उहां राम अंगदहिँ बुलावा ॥ आइ चरणपंकज शिर नावा ॥ ३ ॥
अति आदर समीप बैठारी ॥ बोले बिहँसि कृपालु खरारी ॥ ४ ॥

लंकाकी कथा कह अब रामचन्द्रजीके पास अंगदके पीछे आनेकी कथा कहते हैं इधर रामचन्द्रजीने अंगदको बुलाया. उसने आके चरणकमलमें शिर नवाया ॥ ३ ॥ दयालु प्रभुने बड़े आदरके साथ अपने पास बिठाया और हंसकर कहा ॥ ४ ॥

बालितनय अति कौतुक मोहीं ॥ तात सत्य कहु पूंछौं तोहीं ॥ ५ ॥
रावण यातुधान कुल टीका ॥ भुजबल अतुल जासु जगलीका ॥ ६ ॥

कि—हे तात ! मुझे लंकाका वृत्तान्त सुननेका बड़ा कौतुक है, सो मैं जो पूंछूं वो सच सच कहना ॥ ५ ॥ मैंने सुना है कि, राक्षसोंका राजा रावण बड़ा बलवान है; जिसका अतुल भुजाबल सारे संसारमें विख्यात है ॥ ६ ॥

तासु मुकुट तुम चारि चलाये ॥ कहहु तात कवनी बिधि पाये ॥ ७ ॥
कहा बालिसुत सुनहु खरारी ॥ मुकुट न होइँ भूपगुण चारी ॥ ८ ॥

उसके मस्तकके चार मुकुट तुमने चलाये रहे सो हे तात ! कहो वे मुकुट तुमको कैसे मिले ? ॥ ७ ॥ तब अंगदने कहा कि–हे प्रभु ! सुनिये, आपके पास जो आये थे वे मुकुट नहीं थे किंतु राजाके चार गुण थे ॥ ८ ॥

साम दाम अरु दण्ड बिभेदा ॥ नृप उर बसहिँ नाथ कह बेदा ॥ ९ ॥ ❋
नीति धर्मके चरण सुहाये ॥ अस सिय जानि नाथपहँ आये ॥ १० ॥ ❋

हे नाथ ! वेद ऐसे कहता है कि–साम, दाम, भेद और दंड ये चार गुण राजाके हृदयमें रहते है ॥ ९ ॥ और चारों नीतिधर्मके पक्के पाये है. हे नाथ ! वे अपने मनमें ऐसा विचार करके प्रभुके पास आये थे ॥ १० ॥

दोहा–धर्महीन प्रभुपदबिमुख, कालबिबश दशशीश ॥ ❋
आये गुण तजि रावणहिँ, सुनहु कोशलाधीश ॥ ४९ ॥ ❋

गुणोंने विचार किया कि, यह रावण तो धर्महीन, प्रभुके चरणोंसे विमुख और कालके वश है, इसलिये अब यहां रहना ठीक नहीं ऐसा विचार कर, रावणको तज, हे प्रभु ! वे आपके पास आये थे ॥ ४९ ॥

परम चतुरता श्रवण सुनि, बिहँसे राम उदार ॥ ❋
समाचार तब सब कहे, गढ़के बालिकुमार ॥ ५० ॥ ❋

अंगदकी चातुरी कानोंसे सुन उदार प्रभु हंसे, तब अंगदने लंकागढ़के सब समाचार कहे ॥ ५० ॥

रिपुके समाचार जब पाये ॥ राम सचिव तब निकट बुलाये ॥ १ ॥ ❋

जब प्रभुको शत्रुके पक्के समाचार मिले तब प्रभुने मंत्रियोंको अपने पास बुलाया ॥ १ ॥

(क्षेपक) रिच्छ कपीश निशाचर राई ॥ हर्षित गहे रामपद आई ॥ १ ॥ ❋
अंगद मारुततनय सुहाये ॥ सानँद राम पास चलि आये ॥ २ ॥ ❋

रीछ, जाम्बवान्, सुग्रीव और बिभीषण प्रभुकी आज्ञा पातेही आनंदित हो आये. प्रभुके चरणोंको धर प्रणाम किया ॥ १ ॥ हनुमान् और अंगदभी आनंदके साथ उस समय वहां आये ॥ २ ॥

अति उतंग यक शृंग निहारी ॥ बिहँसि तेहि पर गये खरारी ॥ ३ ॥ ❋
उदय होय रबि शशि जहँ आई ॥ तेहिते योजन चारि उँचाई ॥ ४ ॥ ❋

प्रभु एक बहुत ऊंचा पर्वतका शिखर देख हँसकर उसपर चढ़े ॥ ३ ॥ जिसकी ऊंचाई उदयाचल और अस्ताचलसे चार योजन ज्यादा थी ॥ ४ ॥

तेहि गिरिपर चढ़ि राम उदारा ॥ लगे बिलोकन गढ़ बिस्तारा ॥ ५ ॥ ❋
जहँ तहँ जिन कर भवन सुहावा ॥ व्यक्त व्यक्त हनुमन्त दिखावा ॥ ६ ॥ ❋
जेहि कृपाल सृष्टि उपजावा ॥ तेहि का कौतुक कीश देखावा ॥ ७ ॥ ❋

उस पर्वतपर चढ़, उदारचित्त प्रभु गढ़का विस्तार देखने लगे ॥ ५ ॥ लंकामें जहां जहां जिस जिस राक्षसका घर था. वे हनुमान्ने अलग अलग सब घर दिखाये ॥ ६ ॥ जिन दयालु प्रभुने सृष्टिको रचा है, उन प्रभुको हनुमान्ने लंकाके सब कौतुक दिखाये ॥ ७ ॥

दोहा–अस कहि पुलकि पुरारि पुनि, नाइ रामपद शीश ॥ ❋
गढ़ उतपति लागे कहन, मुदित सुनहु खगईश ॥ १ ॥ ❋

ऐसे कह, पुलकित शरीर हो, प्रभुके चरणोंको शिर नवाय, महादेव प्रसन्न हो लंकागढ़की उत्पत्तिकी कथा कहने लगे वो कहता हूं सो हे गरुड़ ! सुनो ॥ १ ॥

गढ़ लंकाकी उतपति भारी ॥ चित थिर करि तुम सुन उरगारी ॥ १ ॥ ❋
कछुक हास कद्रू जब कीना ॥ करि छल बिनतहिँ अति दुखदीना ॥ २ ॥ ❋

हे पक्षीराज ! लंका गढ़की उत्पत्ति बड़ी भारी है सो तुम मन लगाके सुनो ॥ १ ॥ सर्पोंकी माता कद्रूने कुछ ठेठही ठेठेमें छलबल करके विनताको भारी दुःख दिया ॥ २ ॥

सो छल कहहुँ सुनहु मुनिराई ॥ रहि द्वौ भगिनि सवति भईं आई ॥ ३ ॥ ❋
कछु दिन गे तब ऋषि बन जाई ॥ करन लगे तप अति हरषाई ॥ ४ ॥ ❋

वो कथा कहता हूं सो हे भरद्वाज ! मन लगाके सुनो. कद्रू और विनता ये दोनो बहिन थीं, कश्यप ऋषिसे व्याही गई थीं इसलिये वे आपसमें सवती भयीं ॥ ३ ॥ एक समय कश्यपऋषि वनमें जाय, बड़े आनंदके साथ तपस्या करने लगे ॥ ४ ॥

कस्यप ऋषि घर ऐसे भयऊ ॥ बिनता सन कद्रू अस कह्यऊ ॥ ५ ॥ ❋
दिनकर रथ हय कहु बहु कैसा ॥ बिनता कहा श्वेत हय ऐसा ॥ ६ ॥ ❋

तब कश्यपजीके घर ऐसा चरित्र हुआ कि एक दिन कद्रूने विनतासे कहा ॥ ५ ॥ कि–हे विनता ! कह सूर्यके घोड़ोंका रंग कैसा है ? तब विनताने कहा कि सूर्यके घोडोंका रंग श्वेत है ॥ ६ ॥

कद्रू कह नाहिँ अबलख बाजी ॥ कहत कहत लागी अस बाजी ॥ ७ ॥ ❋
जो झूँठी सो दासि कहाई ॥ करी सदा तिनकी सेवकाई ॥ ८ ॥ ❋

तब कद्रूने कहा कि–नहीं, सूर्यके घोडोंका रंग अबलख है. ऐसे कहते कहते पैज लग गई ॥ ७ ॥ कि जो झूंठी होवे वो दासी बनकर रहे और सदा उसकी सेवा करे ॥ ८ ॥

अस कहि पुनि निज निज गृह रहहीं ॥ उरगमातु उरगन अस कहहीं ॥ ९ ॥
कहौ तात दिनकर हय कैसे ॥ शुक्ल बरण माता शुचि जैसे ॥ १० ॥ ❋

ऐसे कहकर फिर अपने अपने घर आ बैठीं. तहां कद्रूने अपने पुत्र सर्पोंसे पूंछा ॥ ९ ॥ कि–हे तात ! कहो, सूर्यके घोड़े कैसे हैं ? तब सर्पोंने कहा कि–हे माता ! सूर्यके घोड़ोंका बरन चंद्रमाके जैसा श्वेत शुभ्र है ॥ १० ॥

तुरतहिँ रुदन करन जब लागी ॥ जननि कवन दुख कहु भय त्यागी ॥ ११ ॥
कह्यउ सकल सम्बाद जो भयऊ ॥ तुरत अकाशहिँ पन्नग गयऊ ॥ १२ ॥ ❋

कद्रू यह बचन सुन, रोने लगी; तब सर्पोंने पूंछा कि–हे जननी ! तू रोती क्यों है ? तेरे जो दुःख हो सो भयको त्यागकर कह ॥ ११ ॥ तब कद्रूने विनताके साथ जो बात हुई वो सारा संवाद कहा; तब उसीक्षण सर्प आकाशमें गये ॥ १२ ॥

पन्नग रबिहय गे लपटाई ॥ तब लै बिनतहिँ कद्रु दिखाई ॥ १३ ॥ ❋
कहा कौनि दासी अब होई ॥ बिनता कहा सत्य मैं सोई ॥ १४ ॥ ❋

और सूर्यके घोड़ोंके लिपट गये. तब कद्रूने विनताको सूर्यके घोड़ोंका रंग दिखाया ॥ १३ ॥ और कहा कि-कहु, अब कौन दासी होगी ? तब विनताने कहा कि-इसमें क्या फर्क है ? मैं दासी होऊंगी ॥ १४ ॥

रबिबाहन पर बाजि लगाई ॥ जीती कद्रू सुनु मुनिराई ॥ १५ ॥ ❁
तासु बिबश भइ बिनता जबहीं ॥ सहि अपमान सकी नहिँ तबहीं ॥ १६ ॥

याज्ञवल्क्य ऋषि भरद्वाज मुनिसे कहते हैं कि-हे मुनिराज ! सुनो, जब सूर्यके घोड़ोंके सर्प लिपट जानेसे कद्रू जीत गई ॥१५॥ और विनता उसके वश हो गई, तब वो उसकी दासी बनके रही; पर उससे वो अपमान सहा न गया ॥ १६ ॥

दोहा-बिनता चली सबेग तब, जहँ कश्यप तप हेतु ॥ ❁
ठाढ़ि भई कर जोरिकै, कहत कथा वृषकेतु ॥ २ ॥ ❁

महादेवजी कहते हैं कि-हे पार्वती ! विनता तब त्वराके साथ जहां कश्यपजी तपस्या करते थे वहां जाय, हाथ जोड़, उनके सन्मुख खड़ी हुई ॥ २ ॥

सुनहु अपर इक कथा भवानी ॥ शुभ इतिहास सत्य मम बानी ॥ १ ॥ ❁
षष्टि सहस ब्रह्माके पूता ॥ बसत तहां भा काल बहूता ॥ २ ॥ ❁

हे भवानी ! एक दूसरा और परम पवित्र और सत्य इतिहास कहता हूं सो सुनो ॥ १ ॥ ब्रह्माजीके साठ हजार पुत्र हैं. उनका वहां रहते बहुत काल हो गया था ॥ २ ॥

तन अंगुष्ठ प्रमाण है जिनका ॥ नाम सुबालखिल्य यक तिनका ॥ ३ ॥ ❁
उतपति इनकी नाहिँ बखानौं ॥ बढ़िहै कथा यदपि मैं जानौं ॥ ४ ॥ ❁

और अँगूठेके अग्रभाग भरके हैं शरीर जिन्होंके और सुन्दर एक वालखिल्य है नाम जिनका ॥३॥ यदपि मैं इनकी उत्पत्तिकी कथा जानता हूं; परंतु ग्रंथगौरवके भयसे अभी मैं नहीं कहता॥४॥

एक समय मघवा असवारी ॥ आइ निकट जहँ ए मुनि झारी ॥ ५ ॥ ❁
ऐरावत पर आप सुहाये ॥ द्विप पिलाय तिहिँ नजरि न आये ॥ ६ ॥ ❁

एकवेर ऐरावत हाथीपर इंद्रने असवारी करी सो वह इन मुनिराजोंके निकट चला आया ॥ ५ ॥ ऐसे ऐरावतपर सवार इंद्रकी इनपर दृष्टि न पड़ी अतएव हाथी आगे बढ़ा दिया ॥ ६ ॥

मर्म न जान इन्द्र चलि गयऊ ॥ वालखिल्य मन अस रिस भयऊ ॥ ७ ॥
कहहिँ परस्पर इन्द्र न डरही ॥ देहु शाप सुरराज सुपरही ॥ ८ ॥ ❁

जिससे वे हाथीके पांवतले आगये. इंद्रको इस बातकी कुछ खबर न रही सो वह तौ अपने आनंदसे चला गया. इधर वालखिल्य ऋषियोंको बड़ा क्रोध हुआ ॥ ७ ॥ सो क्रोध करके वे मुनिराज आपसमें कहने लगे कि-इंद्रको हमारा बिलकुल डर नहीं है, सो इसे अवश्य श्राप देना चाहिये ॥ ८ ॥

एक कहहिँ वासव मद आवा ॥ सहस नयन देखन नहिँ पावा ॥ ९ ॥ ❁
मदआधर बिधि करै न काहू ॥ को अस मद ब्यापा नहिँ जाहू ॥ १० ॥ ❁
क्रोधते कवन जरा नहिँ भाई ॥ लोभ न सुयश नशावा काई ॥ ११ ॥ ❁

एक ऋषि बोला कि-इंद्रको राजका मद आगया है, इसीसे हजार नेत्र होनेपरभी हम दृष्टिमें न आये ॥ ९ ॥ ऋषि कहते हैं कि-प्रभु किसीको मदांध न करे, परंतु जगतमें ऐसा कौन आदमी है ? कि जो लक्ष्मीको पाकर मदोन्मत्त नहीं हुआ है ॥ १० ॥ हे भाई ! क्रोधसे कौन भस्म नहीं हुआ है ? और लोभसे किसके सुयशमें लीक नहीं लगी है ? ॥ ११ ॥

दोहा-अस बिचारि मन धीर धरि, सुरपति करिये आन ॥ ❋
सबहिँ कहा मत नीक यह, तेज हरहु करि ध्यान ॥ ३ ॥ ❋

ऐसा विचार कर, मनमें धीरज धर, अब इंद्र दूसरा कर देना चाहिये. ये वचन सुन, सब ऋषियोंने कहा कि कह नेक सलाह है, सो अब ध्यान करके इंद्रके तेजका नाश करो ॥ ३ ॥

अस कहि तेज हरन जब लागे ॥ सुरपति करन असुर भय लागे ॥ १ ॥ ❋
दिन प्रति देव छिन्न बल होई ॥ बूझि परस्पर जान न कोई ॥ २ ॥ ❋

ऐसे कह, बालखिल्य ऋषि जब इंद्रका तेज हरने लगे, तब दैत्य बढ़े और इंद्र उनसे भग खाने लगा ॥१॥ दिन पर दिन देवताओंका बल क्षीण होने लगा. इस बातका भेद किसीने न पाया ॥ २ ॥

वासव तबहिँ ब्रह्म पहँ आये ॥ निज वृत्तान्त कहा शिर नाये ॥ ३ ॥ ❋
तब कमलज धरि ध्यान बिलोका ॥ पाय मर्म जेहिलगि सुरशोका ॥ ४ ॥

तब इंद्रने ब्रह्माजीके पास आय, शिर नवाय, अपना सब हाल कहा ॥ ३ ॥ ब्रह्माजी ध्यान धर, उसका सारा वृत्तान्त जान, इंद्रके शोचका मर्म समझ ॥ ४ ॥

पुनि ब्रह्मा सुर सहित सहेता ॥ बालखिल्यके गये निकेता ॥ ५ ॥ ❋
पितहिँ बिलोकि चरण सब लागे ॥ कह पुनि बचन प्रेमरसपागे ॥ ६ ॥ ❋

सब देवताओंको साथ ले बालखिल्य ऋषियोंके पास आये ॥ ५ ॥ ब्रह्माजीको आश्रममें आते देख, बालखिल्य उठकर, पिताके सोहीं आये. फिर चरण धर कर, प्रेमरससे भर मधुर वचन बोले ॥ ६ ॥

आये कवन हेतु कहँ स्वामी ॥ कहँ अज सुत तुम अन्तरजामी ॥ ७ ॥ ❋
जो सुरनाथ तेज तुम हारा ॥ कहहु कहा सो कीन्ह विचारा ॥ ८ ॥ ❋

कि-हे पिता ! आज आपका पधारना यहां कैसे हुआ ? तब ब्रह्माजी बोले कि-हे पुत्रो ! तुम अंतर्यामी हो. सबके मनकी जानते हो ॥ ७ ॥ मैं पूंछता हूं कि तुमने जो इंद्रका तेज क्षीण किया सो कहो तुमने क्या विचारा है ? ॥ ८ ॥

दोहा-बालखिल्य कह सुनहु पितु, इन्द्र करब हम और ॥ ❋
इहि मघवहि कहुँ टारिये, बैठ रहहि इक ठौर ॥ ४ ॥ ❋

ब्रह्माजीके वचन सुन बालखिल्यने कहा कि-अब हम इंद्र दूसरा करेंगे. इस इंद्रको इंद्रासनसे उतार देंगे; सो कहीं अपना एक ठौर पड़ा रहेगा ॥ ४ ॥

कह ब्रह्मा अस करहु न भाई ॥ मम कृत इन्द्र न अब उठि जाई ॥ १ ॥ ❋
पितु अपमान करत घट कैसे ॥ तमरिपु उदय घटत तम जैसे ॥ २ ॥ ❋

बालखिल्योंके वचन सुन, ब्रह्माजीने कहा कि-हे तात ! तुम ऐसे मत करो. मेरा बनाया

हुआ इन्द्र अभी उठना न चाहिये ॥ १ ॥ और जो तुम इंद्रको अभी उठा दोगे तो मेरा अपमान होगा और पिताका अपमान करनेसे पुत्रका तेज ऐसे घट जाता है कि जैसे सूर्यके उदय होनेसे अंधकारका नाश हो जाता है, इसलिये अब तुम मेरा कहना मानो और इंद्रका पीछा छोड़ो ऐसे ऋषियोंको समझाय बुझाय ॥ २ ॥

कश्यप करहिँ तपस्या साँची ॥ तिनते तेज लेहु सुर याँची ॥ ३ ॥ ❋
अस कहि ब्रह्मलोक बिधि गयऊ ॥ तेज लेन सुनासीर सुअयऊ ॥ ४ ॥ ❋

ब्रह्माजीने इंद्रसे कहा कि–कश्यपजी सच्ची तपस्या करते है, सो तुम उनके पास जाकर, अपने तईं तेज मांगलो ॥ ३ ॥ ऐसे कहकर ब्रह्माजी ब्रह्मलोकको सिधारे और इंद्र तेज लेनेको कश्यपजीके पास आया ॥ ४ ॥

निज वृतान्त कश्यपहिँ सुनावा ॥ तेज पाय निजलोक सिधावा ॥ ५ ॥ ❋
ह्यां बिनता तप कर मन लाई ॥ पतिदेवता पतिहिँ मन भाई ॥ ६ ॥ ❋

और अपना सब हाल कह सुनाया. तब कश्यपजीने जो तेज दिया तब अपने स्वर्गलोकको सिधारा ॥ ५ ॥ इहां विनता पतिको परमेश्वर जान, उनके चरणोंमें चित्त लगाय, तपस्या करने लगी ॥ ६ ॥

अयुत अब्द बीते पति आगे ॥ तदपि रही सप्रेम अनुरागे ॥ ७ ॥ ❋
बरं ब्रूहि जब कह्यो कृपाला ॥ तब माँग्यो करि बिनय बिशाला ॥ ८ ॥ ❋

इसके तपस्या करते करते दश हजार बरस बीत गये तौभी पतिके प्रेममें कुछ अंतर न पड़ा ॥ ७ ॥ तब दयालु कश्यप मुनिने विनतासे कहा कि–वर मांग. तब विनताने बहुत विनय करके कहा कि– ॥ ८ ॥

कृपासिन्धु मुहिँ सो बर दीजिय ॥ तुरतहिँ सवति बैर मैं लीजिय ॥ ९ ॥ ❋
अजर अमर सुत देहु गोसाँई ॥ अस कहि परी चरण शिर नाई ॥ १० ॥ ❋

हे कृपासिन्धु ! मुझे वो वरदान दीजिये कि जिससे मैं सवतका बैर लूं ॥ ९ ॥ हे स्वामी ! मुझे अजर और अमर पुत्र देओ ऐसे कह, शिर नवाय चरणोंमें पड़ी ॥ १० ॥

दोहा–एवमस्तु कहि कृपानिधि, युगुल पात्र शुचि आनि ॥
बीर्य डारि करि मंत्र तब, दीन परम प्रिय जानि ॥ ५ ॥ ❋

कृपानिधि कश्यपजी एवमस्तु कह, पवित्र दो पात्र लाय, उन्हें मंत्रोंसे मंत्र, अपना तेज डाल, परम प्रिय जानके कश्यपजीने वे दोनों पात्र विनताको दिये ॥ ५ ॥

पात्र दियो लय समय सब, बिनतहिँ कह्यो बुझाई ॥ ❋
देखेउ तबहिँ उघारि जब, बर्ष पंचशत जाइ ॥ ६ ॥ ❋

और पात्र हाथमें देते समय मुनिने समझाकर विनतासे कहा कि–जब पांच सौ वर्ष हो जांय तब इन पात्रोंको उघारकर देखियो; पहले मत उघारियो ॥ ६ ॥

सेवहि युगुल पात्र सो कैसे ॥ जुगवहिँ अण्ड परावत जैसे ॥ १ ॥ ❋
अब्द वेद शत और अठासी ॥ जब चलि गई सुनहु सुखरासी ॥ २ ॥ ❋

मुनिके वचन सुन, वो विनता उन पात्रोंको जैसे कबूतर अंडेको सेता है ऐसे सेने लगी ॥ १ ॥ सो होते होते चार सौ अठासी बरस बीते, तब हे सुखराशी भरद्वाज ! सुनो ॥ २ ॥

तब विनता यक पात्र उघारी ॥ देखेउ चित्त बिबेक बिचारी ॥ ३ ॥ ❋

बिधिबश आतुर नारि सुभाऊ ॥ अवर न मन कछु कपट दुराऊ ॥ ४ ॥ ❋

तब विनताने अपने ज्ञानसे विचार, एक पात्रको उघारकर, देखा ॥ ३ ॥ उसके मनमें किसी तरहका कपट और छल नहीं था. केवल स्त्रीस्वभावसे भावीवश होकर उसके मनमें ऐसा विचार आगया कि देखें, इतने वर्ष हो गये है. सो इसका क्या हाल है ? ऐसा विचार कर खोल कर देखा तौ ॥ ४ ॥

बिनुकर पद सुत सुभग निहारी ॥ बिनता हृदय भयो दुखभारी ॥ ५ ॥ ❋

तनयसहित पतिपद शिर नाई ॥ बिनय विनय बिनता बिलखाई ॥ ६ ॥ ❋

नाथ मोर अपराध बिसारी ॥ कृपा करहु यहि सुतपर भारी ॥ ७ ॥ ❋

उसके भीतर एक सुंदर बालक नजर आया जिसके न तौ हाथ है और न पैर है. तिसे देख विनताके मनमें बड़ा दुख हुआ ॥ ५ ॥ उस पुत्रको साथ ले पतिके पास जाय, विलख वदन हो, विनताने विनयपूर्वक कहा कि— ॥ ६ ॥ हे नाथ ! मेरे अपराधको माफ कर, इस पुत्रपर भारी कृपा करें ॥ ७ ॥

दोहा—आरत बचन श्रवण मुनि, कह कश्यप हरषाय ॥ ❋
बिनता मुदित होउ अब, सकल शोच बिसराय ॥ ७ ॥ ❋

विनताके आर्त बचन सुन, कश्यपजीने प्रसन्न होकर कहा कि—हे प्रिया ! तू खुश रह किसी बातकी चिंता मतकर ॥ ७ ॥

सोरठा—अजर अमर बलभूरि, नाम अरुण इनकर शुभग ॥ ❋
रहहि सकल सुख पूरि, होहि सारथी सूर्यकर ॥ १ ॥ ❋

यह तेरा पुत्र अजर और अमर होगा. इसका सुन्दर अरुण नाम होगा. यह सूर्यका सारथी होगा और सदा आनंदमगन रहेगा ॥ १ ॥

अवर सुनहु बिनता यक बाता ॥ होइ तुम्हरे दूसर ताता ॥ १ ॥ ❋

महाबली अरु पक्षिशरीरा ॥ सपनेहुँ तिहिँ न होय कछु पीरा ॥ २ ॥ ❋

हे विनता ! दूसरी बात मैं एक और कहता हूं सो सुन. तेरे और एक पुत्र होगा ॥ १ ॥ सो यह तेरा दूसरा पुत्र महाबलवान् पक्षिराज होगा. इसे स्वप्नमेंभी दुःख न होगा ॥ २ ॥

श्रीपतिकर बाहन सो होई ॥ बांछित तुमकहँ सुख दे सोई ॥ ३ ॥ ❋

तासु सुयश बढ़िहै संसारा ॥ कद्रुसुतनको करी अहारा ॥ ४ ॥ ❋

यह श्रीविष्णुभगवान्का वाहन होगा. यह सदा तुमको मनवांछित सुख देगा ॥ ३ ॥ जगत्में इसकी बड़ी सुख्याति होगी. कद्रुके पुत्र सर्पोंको यह खाया करेगा ॥ ४ ॥

नाम गरुड़ हरिभक्त सयाना ॥ सकल धर्मरत शीलनिधाना ॥ ५ ॥ ❋

प्रिया कहब मैं बचन प्रमाना ॥ भा न होय जग गरुडसमाना ॥ ६ ॥ ❋

इसका नाम गरुड होगा. हरिभगवान्का परम भक्त होगा और धर्मरत, शीलवान् और बड़ा

विवेकी होगा ॥ ५ ॥ हे प्रिया! मैंने जो बचन कहा है वो प्रमाण होगा. जगत्में गरुड़के समान न तौ कोई हुआ और न होगा ॥ ६ ॥

तव सुत शुचि सुन्दर खगरूपा ॥ होइ सकल बिहगनकर भूपा ॥ ७ ॥ ❀
द्वादश बर्ष बीति जब जाई ॥ अण्डजपति तब बाहर आई ॥ ८ ॥ ❀

तेरा यह पुत्र परम पवित्र पक्षिशरीर धारण करके पक्षियोंका राजा होगा ॥ ७ ॥ जब बारह बर्ष बीत जायँगे तब गरुड़ आपही बाहिर निकल आवेगा ॥ ८ ॥

दोहा-आपुहि प्रगट होइ सो, पात्र कपाट उघारि ॥ ❀
पन्नगारि पूरण करिहि, जो रुचि अहहि तुम्हारि ॥ ८ ॥ ❀

हे प्रिया! यह बारह बरसके बाद पात्रकी कपाट उघारकर आपही प्रगट हो जायगा और तेरी सर्व कामना पूर्ण करेगा ॥ ८ ॥

सुनि पतिबचन मानि विश्वासा ॥ पुनि बिनता किय निजगृह बासा ॥ १ ॥
अरुणकेरि उतपति मैं गावा ॥ सुनहु गरुड़कर जन्म सुहावा ॥ २ ॥ ❀

पति कश्यपजीके बचन सुन, उनका विश्वास मान, विनता पीछी अपने घरमें वास करने लगी ॥ १ ॥ महादेवजी कहते है कि-हे पार्वती! अरुणकी जन्मकथा तौ कही. अब गरुड़के जन्म-को कथा कहता हूं सो सुनो ॥ २ ॥

द्वादश बर्ष बीति जब गयो ॥ अर्ध सहस पूरण तब भयो ॥ ३ ॥ ❀
मेष शुक्ल तेरसि बुधबारा ॥ तेहि दिन लीन गरुड़ अवतारा ॥ ४ ॥ ❀

जब बारह वर्ष बीत गये और पांच सौ ५०० वर्ष समाप्त होगये ॥ ३ ॥ तब मेष संक्रांति (वैशा-खके महीने) में शुदी १३ बुधवारके दिन गरुड़जीका अवतार हुआ ॥ ४ ॥

पात्र उघारि मातुपहँ आये ॥ चरण लागि बर आशिष पाये ॥ ५ ॥ ❀
विष्णुभक्त उत्तम जगपावन ॥ अजर अमर कद्रूसुतदावन ॥ ६ ॥ ❀
अस असीस बिनता जब दयऊ ॥ परमानन्द गरुड़ तब भयऊ ॥ ७ ॥ ❀

पात्रको उघारकर गरुड़ने माताके पास आय, दंडवत् करी तब विनताने उसे आशीर्वाद दिया कि ॥ ५ ॥ हे पुत्र! तू विष्णुभगवानका परम भक्त, जगत्को पावन करनेवाला, अजर, अमर और सर्पोंको खानेवाला सर्वोत्तम हो ॥ ६ ॥ जब विनताने ऐसा आशीर्वाद दिया, तब गरुड़ परम आनंदित हुआ ॥ ७ ॥

दोहा-मातु अशीस उचित अति, सुनि हर्षे खगराय ॥ ❀
गद्गदगिरा मँगन मन, पुनि बोले शिर नाय ॥ ९ ॥ ❀

माताकी उचित आशिष सुन, अति प्रसन्न और मन मगन हो, शिर नवाय, लड़खड़ाती मधुर वाणीसे फिर बोले ॥ ९ ॥

आज्ञा-मातु देहु अब जोई ॥ शिर धरि सब करिहौं मैं सोई ॥ १ ॥ ❀
तब बिनतैं सब कहा बुझाई ॥ चले शिर नाय कद्रुपहँ जाई ॥ २ ॥ ❀

कि-हे माता! अब आप जो आज्ञा देओगी वो सब मैं शिर चढ़ाके करूंगा ॥ १ ॥

गरुड़के वचन सुन, विनताने पिछला सब वृत्तान्त कहा सो सुन, दंडवत् प्रणाम कर, गरुड़ कद्रूके पास गया ॥ २ ॥

बहुत दिवस अहिमाता सेई ॥ बिनता दासि मिटी केहि तेई ॥ ३ ॥ ❋
महापराक्रमी जानि सशंका ॥ अब नहिँ उचित चेरि सुत बंका ॥ ४ ॥ ❋

और बोला कि–हे कद्रू! विनताने तुम्हारी बहुत दिनलों सेवा करी है, वो सो कहो कैसे दासी-भावसे छूटेगी? जैसे वो दासीपनसे छूटे वोही मैं करूं. गरुड़के वचन सुन, ॥ ३ ॥ उसे महाबली समझ, मनमें शंक मान, कद्रूने विचार किया कि, अब विनताको दासी रखना उचित नहीं; क्योंकि अब इसके महा रणबंका पुत्र हो गया है ॥ ४ ॥

अस बिचारि देखा मनमाहीं ॥ पुत्र अमर पीछे भय नाहीं ॥ ५ ॥ ❋
यह मन आनि गरुड़सन शासी ॥ अमृत लाव नहिँ बिनता दासी ॥ ६ ॥

सो यदि मेरे पुत्र अमर हो जांय तौ पीछे किसी बातका डर नहीं ॥ ५ ॥ ऐसा मनमें सोच विचारके कद्रूने गरुड़से कहा कि–जो तू अमृत ले आये तौ विनता दासीभावसे छुट सकती है ॥ ६ ॥

सुनि अस बचन धाय खगराया ॥ उड़ेउ सबेग इन्द्रपहँ आया ॥ ७ ॥ ❋
माँगा अमृत इन्द्र नहिँ दयऊ ॥ तब उरगारि युद्ध मन ठयऊ ॥ ८ ॥ ❋

कद्रूके ये वचन सुन, गरुड़ धाया सो बड़े वेगसे उड़कर इन्द्रके पास गया ॥ ७ ॥ वहां जाय, गरुड़ने इन्द्रसे अमृत माँगा, इन्द्रने नहीं दिया तब गरुड़ने मनमें युद्ध करनेका निश्चय किया ॥ ८ ॥

करि संग्राम देवबल घर्षी ॥ चले कुंभ लै मन अति हर्षी ॥ ९ ॥ ❋
पुनि सुरसहित सुरपती धाये ॥ चितवा गरुड़ देव सब आये ॥ १० ॥ ❋

फिर गरुड़ और देवताओंको महाघोर युद्ध हुआ. तिसमे सब देवतानकी सेनाको हटाय अति प्रसन्न हो, गरुड़ अमृतका घड़ा ले आया ॥ ९ ॥ देवतानकी सेनाका संहार होता देख, इन्द्र दौड़कर आया, जब गरुड़ने देखा कि सब देवता चढ़ आये है ॥ १० ॥

कलशहिँ राखि मही पुनि धायउ ॥ पंख मारि सुरछय उपजायउ ॥ ११ ॥ ❋
भे बिसंज्ञ बासव मतिमाना ॥ चले अमृत लै तब हरियाना ॥ १२ ॥ ❋

तब अमृतका घड़ा पृथ्वीपर धर पीछा चला सो पांखोंसे मार कर सब देवताओंको छिन्न भिन्न कर दिया ॥ ११ ॥ और इन्द्रभी अचेत हो गया, तब बुद्धिवान् गरुड़ अमृतका कलश ले वहांसे चला ॥ १२ ॥

जब सुरपतिकी मूर्छा गयऊ ॥ तब सक्रोध पवि मारत भयऊ ॥ १३ ॥ ❋
आवत वज्र देखि उरगारी ॥ जो न मानु मिटि महिमा भारी ॥ १४ ॥ ❋
अस बिचारि यक बर्ह चलावा ॥ ताहि काटि पवि सुरपर आवा ॥ १५ ॥ ❋

इतनेमें इन्द्रने सचेत हो गरुड़को जाते देख, क्रोध कर वज्र चलाया ॥ १३ ॥ वज्रको आता देख, गरुड़ने विचार किया कि इंद्रने वज्र चला दिया है, सो इसको न मानूंगा तब इसकी महिमा घट जायगी; इसलिये इसे मानना जरूर चाहिये ॥ १४ ॥ ऐसा विचार कर गरुड़ने अपनी एक पर चलाई. उसे काट कर इन्द्रका वज्र पीछा स्वर्गको चला गया ॥ १५ ॥

छंद-स्वर गयउ पवि पुनि उरगअरि जहँ कद्रु तहँ आवत भये ॥ ❋
आई तेहिका दीन अमृत अति हरष कद्रू हिये ॥ ❋
तव मात तात न दासि अब सब कहत चलि कद्रू तहाँ ॥ ❋
बहु यतन करि धरि कलश महि चितवा बनित सुरह जहाँ ॥१॥ ❋

जब वज्र पीछा स्वर्गको चला तब गरुड़जी अमृतका कलश ले कद्रूके पास आये और अमृतका घड़ा दिया तिसे देख कद्रू अति आनंदित हुई और बोली कि-हे गरुड़ ! अब तेरी माता दासीभावसे छूटी. ऐसे कह, अमृतका कलश ले, कद्रूने विचार किया कि, अब इस कलशको कहीं यत्नके साथ साथ रखना चाहिये कि, जहां देवतानका जोर न लगे ॥ १ ॥

अति सघन बिपिन कराल कुश कद्रू खलित उरझत परी ॥ ❋
एका चतुर ठहिँ जानि मन महि गाढ़ खनि राखत करी ॥ २ ॥ ❋

ऐसा विचार कर, वो एक सघन वनमें गई वहां दाभके गुहवोंके अंदर उरझ पड़ी तब वहीं धरतीको खोद, उसमें अमृतका कलश रख, वहांसे लौट आई ॥ २ ॥

उरगारि अतिलघु रूप धरि सँग आव सो जानत नहीं ॥ ❋
जब गाड़ि गइ तब काढ़ि महिसे फोरि चल ग्रह रीझहीं ॥ ❋
सुत लाय देखहिँ अमृत नाहीं कुंभ टुक टुक हैं परे ॥ ❋
लागे चटन जब तबहिँ जिह दुइ भई कुशगण करे ॥ ३ ॥ ❋

कद्रू अमृतका कलश रखने गई तब गरुड़ छोटासा स्वरूप धर, कद्रूके साथ चला गया, जब वह पीछी लौटी तब अमृतका कलश जमीनमेंसे निकाल, अमृत पी, घड़ेको फोड़ माताके पास चला आया. कद्रू घरपर आ, पुत्रोंको साथ ले, पीछी वहां गई और जाकर देखा तो अमृतका कलश टूक टूक हुआ पड़ा है, तिसे देख सर्प जीभसे अमृत चाटने लगे तो दाभसे चिरकर सांपोंके जीभें दो दो हो गई ॥ ३ ॥

दोहा-नाग गये निज गेह तब, आई कद्रू गेह ॥ ❋
गरुड़ तहाँ जहँ बीनता, मा मुहिँ आयसु पेह ॥ १० ॥ ❋

सांप अमृतका कुछ स्वाद ले घरपै आये, और कद्रू अपने घर आयी; तब गरुड़ने अपनी माता विनतासे कहा कि-हे माता ! मुझे आज्ञा दे ॥ १० ॥

सोरठा-मातु मोहिँ अति भूँख, सुनत बचन बिनता कहेउ ॥ ❋
तात हयो बहु दूख, जा अघाय भोजन करहु ॥ २ ॥ ❋

हे मात ! मुझे भूख लग रही है. गरुड़के वचन सुन विनताने कहा कि-हे तात ! तूने मेरे सब संकट काटे. अब तू जा और तृप्त होके भोजन कर ॥ २ ॥

दोहा-मातुचरण शिर नाय करि, गरुड़ महाबल वीर ॥ ❋
सुमिरत श्रीपति पदकमल, गये सुजलनिधि तीर ॥ ११ ॥ ❋

हे पार्वती ! माताकी आज्ञा पाय, शिर नवाय प्रभुके चरणकमलोंका स्मरण कर गरुड़ चला सो समुद्रके तटपर आया ॥ ११ ॥

जलधितीर यह ग्राह कराला ॥ शतयोजन तनु तासु बिशाला ॥ १ ॥ ❀
ताहि देखि खगपति हरषाना ॥ बाम चरण गहि गगन उड़ाना ॥ २ ॥ ❀

वहां समुद्रके अंदर बड़ा भारी एक मगर कि जिसका शरीर सौ योजन विशाल था ॥ १ ॥ उसे देख, गरुड़ प्रसन्न हुआ और बांए पंजेमें ले, आकाशमें उड़ गया ॥ २ ॥

गये गरुड़ ऊरधगिरि जाहाँ ॥ रह बिशाल तरु पाकरि ताहाँ ॥ ३ ॥ ❀
तेहिपर बैठ गरुड़ बलवाना ॥ भार न सो सहिसक भौंराना ॥ ४ ॥ ❀

सो चला चला उरध नाम पर्वतपै आया. वहां एक बड़ा भारी पाकरका पेड़ था ॥ ३ ॥ उसकी डालपर महाबली गरुड़ आकर बैठा पर गरुड़का भार न सहकर उसकी डार चक्कर खागई ॥ ४ ॥

बृक्ष परत बिनतासुत जाना ॥ अधो देखि तपसी मुनि नाना ॥ ५ ॥ ❀
उहउ ताहि कर गहा उड़ाना ॥ महाबली बिक्रम बलवाना ॥ ६ ॥ ❀

उस पेड़के तले मुनि लोगोंको तपस्या करते देख और डार पड़ती जान, ॥ ५ ॥ महा वेगवान् आत्मशक्तिमान्, महापराक्रमी गरुड़ उस डारको पड़ते २ हाथमें ले वहांसे उड़ा ॥ ६ ॥

पुनि सुमेरु गिरि शृंगहिं गयऊ ॥ राम सुमिरि तहँ बैठत भयऊ ॥ ७ ॥ ❀
योग त्रिगुण तिहुँलोक मिलाई ॥ तितने योजनकी चकलाई ॥ ८ ॥ ❀
ऊँच कोश शत ऊपर माना ॥ रहा सुमेरु शृंग जग जाना ॥ ९ ॥ ❀

फिर सो सुमेरु पर्वतपर आया. प्रभुका स्मरण कर उसके एक शिखरपर बैठने लगा ॥ ७ ॥ जिसकी चकलाई योग कहे अट्ठाईसके तिगुने यानी चौरासी ८४ योजनकी ॥ ८ ॥ और उंचाई सौ योजनकी थी ऐसा जगतप्रख्यात एक सुमेरु गिरिका शिखर था ॥ ९ ॥

दोहा—खगनायकके पग धरत, सोउ परा भहराय ॥ ❀
गिरन न पायो लीन गहि, सुनहु उमा चित लाय ॥ १२ ॥ ❀

हे पार्वती ! चित्त लगाके सुनो कि—वो सुमेरुगिरिका शिखर गरुड़के पांव रखतेही गिरने लगा तिसे देख, वो पड़ने न पाया तिससे पहले उसे हाथमें ले ॥ १२ ॥

ग्रह तरु गिरी बामकर लीन्हा ॥ चले गरुड़ हरिपद चित दीन्हा ॥ १ ॥ ❀
नभ उड़ात पहुँचे रबिपासा ॥ करि प्रणाम मन बहुत हुलासा ॥ २ ॥ ❀

प्रभुके चरणोंमें चित्त दे, गरुड़ ग्राह, डार और शिखर तीनोंको बायें हाथमें लिये ॥ १ ॥ आकाशमें उड़ता २ सूर्यके पास पहुंचा. गरुड़ने सूर्यके दर्शन कर बड़े हुलाससे प्रणाम किया ॥ २ ॥

बिधि इच्छा प्रेरक मुनिराऊ ॥ कहा अरुण कहु हम सत भाऊ ॥ ३ ॥ ❀
खगनायक कत फिरहु उदासा ॥ कहेउ गरुड़ अहार मम पासा ॥ ४ ॥ ❀

याज्ञवल्क्य मुनि भरद्वाजसे कहते हैं कि—दैवी इच्छा बड़ी प्रबल होती है जिससे अरुणने गरुड़से पूंछा कि—हे गरुड़ ! सत्यभावसे कहो क्यों आये हो ? ॥ ३ ॥ आज तुम उदास क्यों फिरते हो ? अरुणके वचन सुन गरुड़ने कहा कि मेरे पास खानेको आहार तौ है ॥ ४ ॥

ठौर न मिलत जो भोजन करहूँ ॥ तेहिकारण उड़ात नभ फिरहूँ ॥ ५ ॥ ❀
सुनत अरुण तब भुजा पसारी ॥ बैठहु गरुड़ न टूटनहारी ॥ ६ ॥ ❀

पर जहां बैठकर मैं आहार करूं ऐसी जगह नहीं मिलती इससे आकाशमें उड़ता फिरता हूं ॥ ५ ॥ ये वचन सुन, अरुणने अपनी बांह पसारके गरुड़से कहा कि-इसपर बैठ जा; यह टूटनेवाली नहीं ॥ ६ ॥

रबि सारथि पुनि कहेउ बुझाई ॥ बैठसि कस न भुजा पर आई ॥ ७ ॥ ❀
तब सकोप बैठेउ खगनाहू ॥ झुमकेउ हलि न अरुणकी बाहू ॥ ८ ॥ ❀

फेर अरुणने समुझाके गरुड़से कहा कि-तू मेरी भुजापर क्यों नहीं बैठता ? ॥ ७ ॥ तब गरुड़ क्रोध कर बड़े जोरसे उसपर बैठा, पर अरुणकी भुजा लचकभी न खाई ॥ ८ ॥

दोहा-खगनायक अति हरषि करि, कीन अशन सुख पाय ॥ ❀
अस्थि वृक्षशाखा सुगिरि, तबहिँ जो दीन गिराय ॥ १३ ॥ ❀

गरुड़ने उसपर बैठ, आनंदसे भोजन कर, मगरकी हड्डी, पाकरकी डार, और सुमेरु गिरका शिखर जो नीचेको गिरा दिये ॥ १३ ॥

पऱ्यउ सो जाय समुद्रमँझारी ॥ जग जानत यह कौतुक भारी ॥ १ ॥ ❀
-यहि बिधि कछुक काल चलि गयऊ ॥ आगिल चरित सुनहु जसभयऊ ॥ २ ॥

सो वे समुद्रमें जाकर पड़े, यह कौतुक सारा संसार जानता है ॥ १ ॥ ऐसे कुछ काल बीतनेके बाद आगे जो कुछ चरित्र हुआ वो मैं कहता हूं सो सुनो ॥ २ ॥

एक समय शिव आज्ञा पाई ॥ बिश्वकर्म मन हर्षित जाई ॥ ३ ॥ ❀
तुरतहिँ रचि गढ़ गये बनाई ॥ परम बिचित्र बिशद रुचिराई ॥ ४ ॥ ❀

एक समय विश्वकर्मा महादेवजीकी आज्ञा पाय, मनमें मगन हो, तुरंत समुद्रके बीच गया ॥ ३ ॥ वहां सुमेरगिरका शिखर पड़ा देख, उसने उसपर एक बहुत सुन्दर और सुढब गढ़ बनाया. जो अति विचित्र, उज्वल और अति रमणीय है ॥ ४ ॥

कनक रचित रुचि चारु प्रकारू ॥ चारि द्वार चिर चमक बजारू ॥ ५ ॥ ❀
मणिमय रचित बिचित्र अँटारी ॥ बिबिध भवन लघु बिशद सँभारी ॥ ६ ॥
रचि सुठि कनक कँगूरा नाना ॥ नहिँ शारदपहिँ जाय बखाना ॥ ७ ॥ ❀

कंचनका सुन्दर कोट है. चार दरवाजे है. बहुत बड़ा और विशाल बाजार है ॥ ५ ॥ मणियोंकी बनी हुई अटारियां देदीप्यमान हो रही है. छोटे और बड़े कई तरहके मकान बने है ॥ ६ ॥ कोटके ऊपर कंचनके कांगरे शोभायमान हो रहे हैं. जिसकी शोभा शारदा पै कही नहीं जाती ॥ ७ ॥

दोहा-हाटक कलश बिशाल बहु, देखत अमर लुभाइ ॥ ❀
चहुँदिशि जलधि उतंग अति, दुर्ग बिशाल बनाई ॥ १४ ॥ ❀

कनकके बड़े २ कलश चढ़े हैं जिन्हें देख देवताओंका मन लुभायमान होता है. चारोंतर्फ गनह समुद्रकी खांई आगयी है. इसलिये उस किलेकी उंचाई और कठिनता बहुतही बढ़ गई है ॥ १४ ॥

रचि गढ़ रुचिर बिचित्र बनावा ॥ देखि मनोहर हरमन भावा ॥ १ ॥ ❀
कहा महेश दुर्ग अति बंका ॥ ताते नाम धरा यहि लंका ॥ २ ॥ ❀

विश्वकर्माने जो किला रचा तिसे देख, महादेवजी मनमें बहुत प्रसन्न हुए ॥ १ ॥ और बोले कि-यह गढ़ बहुत बंका है, इसलिये इसका नाम लंका हम धरते है ॥ २ ॥

अतिउतंग अम्बुधि दिशि चारी ॥ चारु अगार बिशाल सँवारी ॥ ३ ॥
राखे धनद यक्ष रखवारी ॥ बहुरि गये कैलाश पुरारी ॥ ४ ॥

यह गढ अति ऊंचा और सुन्दर घरोंसे शोभायमान है, तथा इसके चारों ओर समुद्र है, इसलिये यहां किसीको रखवारीके लिये अवश्य रखना चाहिये ऐसे बिचार कर ॥ ३ ॥ महादेवजी कुबेरको वहां रखवारीके लिये रख, आप पीछे कैलास पधार गये ॥ ४ ॥

शिव कैलास बसे सुख मानी ॥ अपर चरित अब कहहुँ भवानी ॥ ५ ॥
ज्यहिबिधि लंक दशानन पावा ॥ सो चरित हम प्रथमहिँ गावा ॥ ६ ॥

महादेवजी लंकाको देख, प्रसन्न हो, पीछे कैलासको पधारे. अब दूसरा चरित्र कहता हूं सो सुनो ॥५॥ रावणको जिसतरह लंकाका राज्य मिला वो कथा मैं पहले कह आया हूं, सो तुम जानतेही हो ॥६॥

गिरिते उतरे राजिवनयना ॥ आये त्वरित जहां कपिसयना ॥ ७ ॥
खड़े सचिव जोरे युग हाथा ॥ बोले सादर तब रघुनाथा ॥ ८ ॥

प्रभु पर्वतसे नीचे उतर तुरंत वहां पधारे जहां वानरोंकी सेना डेरा किये थी ॥ ७ ॥ प्रभुको आते देख सब मंत्री हाथ जोड़ आगे खड़े रहे तब प्रभु बोले ॥ ८ ॥ ॥ इति ॥

लंका बंका चारि दुआरा ॥ केहि बिधि लागिय करहु बिचारा ॥ १ ॥
तब कपीश ऋक्षेश बिभीषण ॥ सुमिरि हृदय दिनकरकुलभूषण ॥ २ ॥

कि यह लंका गढ़ बहुत बंका है और चार दरवाजे है सो विचार कर कहो अब कैसा करना चाहिये? ॥१॥ प्रभुके वचन सुन सुग्रीव जाम्बवान् और बिभीषणने मनमें प्रभुका स्मरण कर ॥ २ ॥

करि बिचार तिन मन्त्र दृढ़ावा ॥ चारि अनी कपिकटक बनावा ॥ ३ ॥
यथायोग्य सेनापति कीन्हे ॥ यूथप सकल बोलि तिन्ह लीन्हे ॥ ४ ॥

पक्का विचार कर सलाह जमाके वानरोंकी सेनाके चार विभाग किये ॥ ३ ॥ और उनके यथायोग्य सेनापति नियत किये, उन्होंने सब यूथपतियोंको बुला लिया ॥ ४ ॥

प्रभुप्रताप सब कहि समुझाये ॥ सिंहनाद करि सब कपि धाये ॥ ५ ॥
हर्षित रामचरण शिर नावैं ॥ गहि गिरि शिखर भालु कपि धावैं ॥ ६ ॥

यूथपतियोंने सब वानरोंको कहकर समझाया, तब सबके सब सिंहनाद करके दौड़े ॥ ५ ॥ वानर प्रसन्न हो प्रभुके चरणोंको शिर नवाते है और हाथोंमें वृक्ष और पर्वत ले लंकाके सोहीं दौड़ते है ॥ ६ ॥

गर्जहिँ तर्जहिँ भालुकपीशा ॥ जय रघुबीर कोशलाधीशा ॥ ७ ॥
जारत परम दुर्ग गढ़ लंका ॥ प्रभुप्रताप कपि चले अशंका ॥८॥
घटाटोप करि चहुँदिशि घेरी ॥ मुखहिँ निशान बजावहिँ भेरी ॥ ९ ॥

वानर और रीछ गरज गरज कर 'कोसलपुरपति रामकी जय हो' ऐसे कहते है और तरजते हैं ॥ ७ ॥ अति विषम लंका गढ़को जलाते हैं और प्रभुके प्रतापसे निशंक हो, आगे बढ़ते चले जाते हैं ॥ ८ ॥ वानर और रीछ घटाटोप कर मुखसे, नाना प्रकारके निशान और भेरी बजाते हैं और लंकाको चारों ओरसे घेरते हैं ॥ ९ ॥

(क्षेपक) पूरबदिशि नल नील बिराजा ॥ दक्षिण सेनसहित युवराजा ॥१॥ ❋
पश्चिम पवनपुत्र बलधामा ॥ उत्तर रहे अनुज युत रामा ॥ २ ॥ ❋
मध्य सुकण्ठ सोह सँग योधा ॥ चहुँदिशि लेत बिभीषण शोधा ॥ ३ ॥ ❋

पूर्व दिशाके द्वारपर नल और नील तथा दक्षिणद्वारपै युवराज अंगद ॥ १ ॥ पश्चिम द्वारपर हनुमान् तथा उत्तर द्वारपर राम और लक्ष्मण नियत हुए है ॥ २ ॥ सेनाके मध्यमें बड़े बड़े योधाओंके संग सुग्रीव नियत हुआ है और बिभीषण सेनाकी चारों ओरसे सँभाल रखता है ॥ ३ ॥

॥ इति ॥

दोहा–जयति राम भ्रातासहित, जय कपीश सुग्रीव ॥ ❋
गर्जे केहरि नाद कपि, भालु महाबल सींव ॥ ५१ ॥ ❋

वे महाबली वानर और रीछ सिंहनाद करते है और 'राम लक्ष्मण व सुग्रीवकी जय हो' ऐसे घोर रवसे आकाशको व्याप्त कर रहे है ॥ ५१ ॥

लंका भयउ कोलाहल भारी ॥ सुनेउ दशानन अतिहिँ हँकारी ॥ १ ॥ ❋
देखहु बनचरन्हकेरि ढिठाई ॥ बिहँसि निशाचर सेन बुलाई ॥ २ ॥ ❋

इसतरह लंका घिर गई तब लंकाके भीतर भारी कोलाहल हुआ, सो सुन रावणने तुरंत अपने सेनापतियोंको बुलाया ॥ १ ॥ और कहा कि–देखो, इन वानरोंकी ढिठाई तो देखो, ऐसे कह अपनी सेनाको बुलाया ॥ २ ॥

आये कीश कालके प्रेरे ॥ क्षुधावन्त रजनीचर मेरे ॥ ३ ॥ ❋
अस कहि अट्टहास शठ कीन्हा ॥ गृह बैठे अहार बिधि दीन्हा ॥ ४ ॥ ❋
सुभट सकल चारिहु दिशि जाहू ॥ धरि धरि भालु कीश सब खाहू ॥ ५ ॥

और कहा कि–हे राक्षसो ! ये वानर कालके प्रेरेहुए यहां चले आये हैं, जो राक्षसोंका चारा है ॥ ३ ॥ विधाताने अपने ऊपर बड़ी कृपा की है, जो घर बैठे लाकर भोजन दिया है. ऐसे कह अट्टहास कर ॥ ४ ॥ महा नीच रावणने राक्षसोंसे कहा कि– तुम सब सुभट लोग चारों दिशाओंमें जाओ और वानर रीछोंको पकड़ पकड़कर खाओ ॥ ५ ॥

(क्षेपक) प्राची दिशा प्रहस्त पठावा ॥ याम्या द्वार महोदर आवा ॥ १ ॥
मेघनाद दिशि गयो प्रतीचा ॥ रहा दशानन द्वार उदीचा ॥ २ ॥

रावणने पूर्व दिशाके द्वारपर प्रहस्तको भेजा और दक्षिणद्वार पै महोदर ॥ १ ॥ पश्चिम द्वारपै इंद्रजीत और उत्तर द्वारपै खुद रावण आया कि, जहां लक्ष्मणसहित प्रभु चढ़ आये थे ॥ २ ॥

विरूपाक्ष तिष्ठा मधिदेशा ॥ और बहुत चहुँ ओर प्रवेशा ॥ ३ ॥ ❋

सेनाके मध्यमें विरूपाक्ष रहा और दूसरे योधा सेनाकी रखवारीको चारों ओर फिरते रहे ॥ ३ ॥

॥ इति ॥

उमा रावणहिँ अस अभिमाना ॥ जिमि टिटीभगण सूत उताना ॥ ६ ॥
चले निशाचर आयसु मांगी ॥ गहि कर भिंदिपाल बर सांगी ॥ ७ ॥ ❋
तोमर मुद्गर परिघ प्रचण्डा ॥ शूल कृपाण परशु गिरिखण्डा ॥ ८ ॥ ❋

महादेवजी कहते हैं कि–हे पार्वती ! रावणको उस समय कैसे अभिमान था कि जैसे टिट्टिभ (टिटिहिरी) गण आसमान पड़ न जावे ऐसे भयसे उताने होके सोता है अर्थात् यदि आसमान पडेगा तो मैं आपने पावोंसे रोक अपना आत्मा बचालूंगा ॥ ६ ॥ राक्षसलोग रावणसे आज्ञा मांग हाथोंमें, गोफन, सांग, भाला, मुद्गर, परिघ, त्रिशूल, खड्ग, परशु, और पर्वतोंके शिखर ले ॥ ७ ॥ ८ ॥

जिमि अरुणोपल निकर निहारी ॥ धाये खग शठ मांस अहारी ॥ ९ ॥ ❀
चोंचभंग दुख तिनहिँ न सूझा ॥ तिमि धाये मनुजाद अबूझा ॥ १० ॥ ❀

लाल लाल वानरोंकी सेनाको देखके, कैसे चले है कि जैसे लाल २ पत्थरोंको देख, उन्हें मांसके खंड समझ अपना आहार मान, हिंसक पक्षी जाते है ॥ ९ ॥ जैसे वहां जानेपर पक्षियोंको मांस मिलना तो दूर रहा, प्रत्युत चोंच टूट जाती है और महा दुःख होता है. ऐसे राक्षस विना जाने बानरोंपर चढ़ आये है ॥ १० ॥

दोहा–नानायुध शर चाप धरि, यातुधान बलबीर ॥ ❀
कोट कँगूरन चढ़िगये, कोटि कोटि रणधीर ॥ ५२ ॥ ❀

करोड़ों महाबली राक्षस हाथोंमें अनेक प्रकारके शस्त्र ले, धनुष बाण धर, कोटके कांगरे कांगरे पर चढ़ गये है ॥ ५२ ॥

कोट कँगूरन सोहहिँ कैसे ॥ मेरु शृंग पर जनु घन जैसे ॥ १ ॥ ❀
बाजहिं ढोल निशान जुझाऊ ॥ सुनि सुनि सुभटनके मन चाऊ ॥ २ ॥ ❀

कंचनके कोटके कांगरोंपर काले काले राक्षस कैसे मालूम होते है कि मानों सुमेर गिरिके शिखरपर सावनकी काली घटा चढ़ आई है ॥ १ ॥ नानाप्रकारके ढोल वगैरः जुझाऊ बाजे बाज रहे है, जिन्हे सुन सुनकर सुभट लोगोंके मनमें उत्साह बढ़ रहा है ॥ २ ॥

बाजहिँ भेरि नफीरि अपारा ॥ सुनि कादर उर होइ दरारा ॥ ३ ॥ ❀
देखि न जाइँ कपिनके ठट्टा ॥ अति बिशाल तनु भालु सुभट्टा ॥ ४ ॥ ❀

जो असंख्यात जुझाऊ भेरी बाजती है, तिन्हें सुन कायर लोगोंके हृदय विदीर्ण हुए जाते हैं ॥ ३ ॥ वानरोंके ठट्ट ऐसे जुड़े है कि, उनकी ओर देखा नहीं जाता. उनके शरीर क्या है ? मानों पर्वतके पर्वत ला धरे हैं ॥ ४ ॥

धावहिँ गनहिँ न औघट घाटा ॥ पर्वत फोरि करहिँ गहि बाटा ॥ ५ ॥
कटकटाइ कोटिन भट गर्जहिँ ॥ दशनन ओठ काटि अति तर्जहिँ ॥ ६ ॥

वे वानर और रीछ इधर उधर दौड़ते हैं, औघट घाटको बिलकुल नहीं गिनते हैं, पर्वतोंको फोड़ फोड़कर मार्ग करते हैं. और उनके शिखर हाथोंमें उठाते हैं ॥ ५ ॥ कटकटाके करोड़ों भट गर्जना करते हैं और दांतोंसे होंठ चबाके भारी तरजना करते हैं ॥ ६ ॥

उत रावण इत राम दोहाई ॥ जयति जयति कहि परी लराई ॥ ७ ॥ ❀
निशिचर शिखरसमूह ढहावहिँ ॥ कूदि धरहिँ कपि फेरि चलावहिँ ॥ ८ ॥ ❀

उधर रावणकी, और इधर रामचन्द्रजीकी दोहाई फिरती है. जय जय शब्द हो रहे हैं. ऐसे

होते होते संग्राम शुरू हुआ ॥ ७ ॥ तब राक्षस अपने शस्त्रोंसे पर्वतोंके शिखरोंको चूर्ण करने लगे और वानर कूद कूदकर, राक्षसोंको धर धरकर, फिरा फिरा कर चलाने लगे ॥ ८ ॥

छंद–धरि कुधर खण्ड प्रचण्ड मर्कट भालु गढ़पर डारहीं ॥ ❋
झपटैं चरण गहि पटकि महि भजि चलत बहुरि प्रचारहीं ॥ ❋
अति तरल तरुण प्रताप तर्जहिँ तमकि गढ़पर चढ़ि गये ॥ ❋
कपि भालु चढ़ि मन्दिरन जहँ तहँ रामयश गावत भये ॥ १ ॥ ❋

वानर और रीछ पर्वतोंके शिखर ले, लंकागढ़पर डालते है और राक्षसोंको देख, झपट उनका चरण धर, पृथ्वीपर पटक, भाग चलते है. और फिर युद्ध करनेको प्रचारते है. ऐसे वे अति चंचल और तरुण वानर क्रोधकर गढ़पर चढ़, तरजते है और घरोंपै चढ़ चढ़कर प्रभुका यश गाते हैं ॥ १ ॥

दोहा–एक एक गहि रजनिचर, पुनि कपि चले पराइ ॥ ❋
ऊपर आपुन तर असुर, गिरहिँ धरणीपर आइ ॥ ५३ ॥ ❋

वानर और रीछ एक एक राक्षसको धर धरकर भागते है और राक्षसको तले पटक, ऊपर आप पड़ते है और उनको चूर्ण करते है ॥ ५३ ॥

रामप्रताप प्रबल कपियूथा ॥ मर्दहिँ निशिचरनिकरबरूथा ॥ १ ॥ ❋
चढ़ दुर्ग पुनि जहँ तहँ बानर ॥ जय रघुबीर प्रतापदिवाकर ॥ २ ॥ ❋

प्रभुके प्रतापसे वानरयूथ राक्षससमूहका संहार करते हैं ॥ १ ॥ गढ़पर चढ़ते है और सूर्यके जैसा जिनका प्रताप है ऐसे रघुवीरकी जय हो ऐसा शब्द करते है ॥ २ ॥

चले तमीचरनिकर पराई ॥ प्रबल पवन जिमि घनसमुदाई ॥ ३ ॥ ❋
हाहाकार भयो पुर भारी ॥ रोवहिँ आरत बालक नारी ॥ ४ ॥ ❋

तिसे सुन, राक्षस कैसे भागे चले जाते है कि जैसे प्रचंड वायुके आगे मेघडंबर भग जाता है ॥ ३ ॥ पुरीके भीतर बड़ा भारी हाहाकार मच गया है; स्त्रियां और बालक दुखी हो रुदन कर रहे है ॥ ४ ॥

सब मिलि देहिँ रावणहिँ गारी ॥ राज्य करत जेहिँ मृत्यु हँकारी ॥ ५ ॥ ❋
निजदल बिचल सुन जब काना ॥ फिरे सुभट लंकेश रिसाना ॥ ६ ॥ ❋

सब लोग मिलके रावणको गाली देते है; क्योंकि वो राज्य करता कालको बुला लाया है ॥ ५ ॥ जब रावणने अपने कानोंसे यह बात सुनी कि सेना सब तित्तर बित्तर होगई है और सुभट पीछे मुड़ गये हैं तब रावणने क्रोध करके कहा कि– ॥ ६ ॥

जो रणविमुख फिरा मैं जाना ॥ तेहि मारिहौं कराल कृपाना ॥ ७ ॥ ❋
सर्बस खाइ भोग करि नाना ॥ समरभूमि भा दुर्लभ प्राना ॥ ८ ॥ ❋

जो रणसे पीछा हटि आवेगा उसे खबर होतेही मैं मेरे घोर खड्गसे मार डालूंगा ॥ ७ ॥ तुमने मेरा सर्वस्व खाया है, और नाना प्रकारके भोग भोगे हैं अब युद्धका काम पड़ा तब तुम्हें तुम्हारे प्राण प्यारे हो गये हैं सो या तो सन्मुख जाकर लड़ो नहीं तो मैं मार डालूंगा ॥ ८ ॥

उग्र बचन सुनि सकल डराने ॥ फिरे क्रोध करि सुभट लजाने ॥ ९ ॥ ❋

सन्मुख मरण बीरकी शोभा ॥ तब तिन तजा प्राणकर लोभा ॥ १० ॥

रावणके ऐसे उग्र बचन सुन, सब सुभट डरे, और लज्जायमान होकर, क्रोध करके पीछे फिरे ॥९॥ रावणके हाथसे मरना इससे तो युद्धमें मरना अच्छा है, क्योकि रणभूमिमें सन्मुख खड़ा होकर मरनेमें शूरबीरकी शोभा होती है ऐसा विचार कर उन्होने अपने प्राणोका लोभ तजदिया ॥ १० ॥

दोहा-बहु आयुध धरि सुभट सब, भिरहिँ प्रचारि प्रचारि ॥
कीन्हे ब्याकुल भालु कपि, परिघ प्रचण्डनि मारि ॥ ५४ ॥

और अनेक प्रकारके शस्त्र चलाय, भिड़ भिड़ प्रचार प्रचार, प्रचंड परिघोसे मार मार बानर और रीछोंको व्याकुल कर दिया ॥ ५४ ॥

भय आतुर कपि भागन लागे ॥ यद्यपि उमा जीतिहैँ आगे ॥ १ ॥
कोउ कह कहँ अंगद हनुमन्ता ॥ कहँ नल नील द्विविद बलवन्ता ॥ २ ॥

हे पार्वती ! जोभी बानरोकी आगे जीत होगी तौभी उसकाल तो वे भयातुर हो जी लेले भागने लगे ॥ १ ॥ कोई कहता है, अंगद कहां है ? कोई कहता है, हनुमान कहां है ? कोई कहता है नल नील और द्विविद कहां है ? ॥ २ ॥

निजदल बिचल सुना हनुमाना ॥ पश्चिमद्वार रहा बलवाना ॥ ३ ॥
मेघनाद तहँ करै लराई ॥ टूट न द्वार परम कठिनाई ॥ ४ ॥

हनुमान् पश्चिम दरवाजेपर था सो उसने जब अपनी सेनाको भागते सुना तब उसने बड़ा पराक्रम किया ॥ ३ ॥ पर द्वार टूटा नहीं; कारण वह द्वार बड़ा बिकट था, और वहांपे मेघनाद युद्ध कर रहा था ॥ ४ ॥

पवनतनय मन भा अति क्रोधा ॥ गर्जेउ प्रलयकालसम योधा ॥ ५ ॥
कूदि लंक गढ़ ऊपर आवा ॥ गहि गिरि मेघनाद पर धावा ॥ ६ ॥

तब तो हनुमानको बड़ा क्रोध हुआ, प्रलय कालके मेघके समान गरजा ॥ ५ ॥ और कूदके लंकापर चढ़, पर्वतका शिखर ले मेघनादपर चला ॥ ६ ॥

भंजउ रथ सारथी निपाता ॥ तासु हृदय महँ मारेउ लाता ॥ ७ ॥
दूसर सूत बिकल तेहिँ जाना ॥ स्यन्दन घालि तुरत घर आना ॥ ८ ॥

जातेही उसके रथ और सारथीको मार, छातीमे लात मारी ॥ ७ ॥ दूसरा सारथी मेघनादको अचेत हुआ जान दूसरे रथमे घाल तुरंत घर ले आया ॥ ८ ॥

दोहा-अंगद सुनेउ कि पवनसुत, गढ़पर गयउ अकेल ॥
समर बाँकुरा बालिसुत, तर्कि चलेउ करि खेल ॥ ५५ ॥

जब अंगदको खबर हुई कि हनुमान अकेला लंकापर चढ़ा है तब रणबंका बालिका पुत्रभी खेल कर, तरजके लंकापर चला ॥ ५५ ॥

युद्ध बिरुद्ध क्रुद्ध दोउ बन्दर ॥ रामप्रताप सुमिरि उर अन्तर ॥ १ ॥
रावण भवन चढ़े दोउ धाई ॥ करहिँ कोशलाधीश दुहाई ॥ २ ॥

हनुमान् और अंगद दोनों बंदर क्रोध कर, प्रभुके प्रतापका मनमें स्मरण कर ॥ १ ॥ दौड़कर रावणके महलपर चढ़े और वहां रामचन्द्रजीकी दोहाई फेरने लगे ॥ २ ॥

कलशसहित सब भवन ढहावहिँ ॥ देखि निशाचर अति भय पावहिँ ॥ ३ ॥
नारिवृन्द करि पीटहिँ छाती ॥ अब दोउ कपि आये उतपाती ॥ ४ ॥ ❀

महलपै चढ़े है, तहां कलशसहित सारे भवनको ढहाते है; तिसे देख राक्षस अत्यंत भयभीत होते है ॥ ३ ॥ और स्त्रियां छाती कूटती है और कहती है कि, अब मरें; क्योंकि अब ये दोनों उत्पाती बन्दर आ गये है ॥ ४ ॥

कपि लीला करि सबहिँ डरावहिँ ॥ रामचन्द्रकर सुयश सुनावहिँ ॥ ५ ॥
पुनि कर गहि कंचनके खम्भा ॥ करन लगे उतपात अरम्भा ॥ ६ ॥ ❀

ये वहां वानरकी लीला कर सबको डराते है और प्रभुका सुयश सुनाते है ॥ ५ ॥ फिर एक एक सोनेका खंभा हाथमें ले, एक नयाही उपद्रव करने लगे है ॥ ६ ॥

कूदि परे रिपु कटकमँझारी ॥ लागे मर्दन भुजबल भारी ॥ ७ ॥ ❀
काहू लात चपेटन केहू ॥ भजेहु न रामहिँ सो फल लेहू ॥ ८ ॥ ❀

दोनों जन खंभ हाथोंमें लिये सेनाके बीच कूद पड़े और वहां उस सेनाका संहार करने लगे ॥ ७ ॥ किसीके लात और किसीके चपेट मारते है और कहते है कि–जो तुमने प्रभुका भजन नहीं किया तिसका यह फल लेओ ॥ ८ ॥

दोहा–एक एक सन मर्दि करि, तोरि चलावहिँ मुण्ड ॥ ❀
रावण आगे परहिँ ते, जनु फूटहिँ दधिकुण्ड ॥ ५६ ॥ ❀

एक एकको मर्दन कर, मूंड़ तोड़, जो चलाते है सो रावणके आगे जा, कैसे पड़ते है कि, मानों दहीके कुंडही फूटे है ॥ ५६ ॥

महा महा मुखिया जे पावहिँ ॥ ते पद गहि प्रभुपास चलावहिँ ॥ १ ॥ ❀
कहहिँ बिभीषण तिनके नामा ॥ देहिँ राम ताकहँ निजधामा ॥ २ ॥ ❀

और जो बड़े बड़े मुखिया है तिन्हें पांव धर प्रभुके पास चलाते हैं ॥ १ ॥ बिभीषण उनके नाम कहता है और प्रभु उन्हें निजधामको पहुंचाते हैं ॥ २ ॥

खल मनुजाद जे आमिष भोगी ॥ पावहिँ गति जो याँचत योगी ॥ ३ ॥ ❀
उमा राम मृदुचित करुणाकर ॥ बैरभाव मोहिँ सुमिरत निशिचर ॥ ४ ॥ ❀

जो मांसाहारी दुष्ट राक्षस हैं वेभी उस गतिको पाते हैं कि जिस गतिको योगीजन मांगते हैं ॥ ३ ॥ महादेवजी कहते हैं कि–हे पार्वती ! प्रभु कोमल चित्त और करुणाके आगर हैं इसलिये राक्षस मुझे बैरभावसे भजते हैं सो इन्हें परम गति मिलनी चाहिये ॥ ४ ॥

देहिँ परमगति अस जिय जानी ॥ को कृपालु अस अहै भवानी ॥ ५ ॥ ❀
जे अस प्रभु न भजहिँ भ्रम त्यागी ॥ ते मतिमन्द सो परमअभागी ॥ ६ ॥

ऐसा मनमें विचार कर उन्हें परम गति देते हैं. हे पार्वती ! जगतमें ऐसा दूसरा कोई दयालु

है? कदापि नहीं ॥ ५ ॥ सो ऐसे दयालु प्रभुको जो भ्रम त्यागकर नहीं भजते उन्हें महामंदमति और अभागे समझने चाहिये ॥ ६ ॥

अंगद अरु हनुमन्त प्रवेशा ॥ कीन्ह दुर्ग अस कह अवधेशा ॥ ७ ॥
लंकामहँ कपि सोहहिं कैसे ॥ मथहिं सिन्धु दुइ मन्दर जैसे ॥ ८ ॥

महादेवजी कहते है कि–हे पार्वती! राक्षसोंको पैरोंमे पड़ते देख प्रभुने कहा कि–कहीं हनुमान् और अंगद लंकामें गये दीखे? ॥ ७ ॥ हे भवानी! लंकाके बीच वे दोनों बीर कैसे शोभा देते है कि मानों दो मंदराचल पर्वत समुद्रको मथनकर रहे है ॥ ८ ॥

दोहा–भुजबल रिपुदल दलि मलेउ, देखि दिवसकर अन्त ॥
कूदे युगुल प्रयासबिनु, आये जहँ भगवन्त ॥ ५७ ॥

वे दोनों बीर शत्रुदलको अपने भुजबलसे विध्वंस कर सांझ होती देख, कूद सो विना परिश्रम प्रभुके पास आ पहुंचे ॥ ५७ ॥

प्रभुपदकमल शीश तिन नाये ॥ देखि सुभट रघुपति मन भाये ॥ १ ॥
राम कृपा करि युगुल निहारे ॥ भये बिगत श्रम परम सुखारे ॥ २ ॥

उन्होंने आकर प्रभुके चरणकमलोंमे दंडवत किया. तब प्रभु उन्हें देख बहुत प्रसन्न हुए ॥ १ ॥ प्रभुने जों कृपादृष्टि करके देखा तों उनका परिश्रम मिट गया और सुखी हो गये ॥ २ ॥

गये जानि अंगद हनुमाना ॥ फिरे भालु मर्कट भट नाना ॥ ३ ॥
यातुधान प्रदोष बल पाई ॥ धाये करि दशशीश दुहाई ॥ ४ ॥

अंगद और हनुमानको पीछे गये जान बन्दर और रीछ पीछे फिरे ॥ ३ ॥ तिन्हें देख संध्याकालका बल पाय, राक्षस रावणकी दोहाई कह, दौड़ कर आये ॥ ४ ॥

निशिचर अनी देखि कपि फिरे ॥ कटकटाइ जहँ तहँ भट भिरे ॥ ५ ॥
दोउ दल भिरहिं प्रचारि प्रचारी ॥ लरहिं सुभट नहिं मानहिं हारी ॥ ६ ॥

तिन्हें देख वानर और रीछभी कटकटाके सन्मुख हुए और जहां तहां राक्षसोंसे भिड़े ॥ ५ ॥ दोनों दल प्रचार प्रचारके भिड़ते हैं और लड़ते है. कोई सुभट मनमें हार नहीं मानता है ॥ ६ ॥

बीर तमीचर सब अतिकारे ॥ नाना बरण बलीमुख भारे ॥ ७ ॥
सबल युगुल दलसम अति योधा ॥ बिबिधि प्रकार लरहिं करि क्रोधा ॥ ८ ॥

राक्षसोंके जितने सुभट हैं वे सबके सब अत्यंतही काले रंगके हैं और बानरोंके भट चित्र विचित्र बरणके हैं ॥ ७ ॥ दोनों दलोंके योधा बड़े बलवान् और बराबरके हैं. क्रोध कर करके नानाप्रकारकी लड़ाइयां लड़ते हैं ॥ ८ ॥

प्रावृट शरद पयोद घनेरे ॥ लरत मनहुँ मारुतके प्रेरे ॥ ९ ॥
अवनि अकंपन अरु अतिकाया ॥ बिचरत सेन करी तिन माया ॥ १० ॥

राक्षस और वानरोंकी सेना लड़ती कैसी शोभा देती है? कि मानों प्रावृट ऋतु (सांवन भादों) की श्याम घटा और शरदऋतुके विचित्र वर्णके बादल पवनकी प्रेरणासे आपसमें लड़ रहे हैं ॥ ९ ॥ तहां रणभूमिके अंदर अकंपन और अतिकायने कटकके बीच बिचरते समय माया करके ॥ १० ॥

भयउ निमिषमहँ अति अँधियारा ॥ काहु न सूझे अपन परारा ॥ ११ ॥ ❀
मारु खाहु सब करहिँ पुकारा ॥ वृष्टि होइ रुधिरोपलक्षारा ॥ १२ ॥ ❀

एक पलभरमे ऐसा अंधकार फैला दिया कि अपना और पराया किसीको सूझने न पाया ॥ ११ ॥ सबके सब 'मारो मारो, खाओ खाओ,' ऐसे पुकारते है और लोहू पत्थर और खाककी वृष्टि होती है ॥ १२ ॥

दोहा—देखि निबिड़ तम दशहु दिशि, कपिदल भयउ खँभार ॥ ❀
एकहि एक न देखहीं, जहँ तहँ करहिँ पुकार ॥ ५८ ॥ ❀

दशों दिशामें घोर अंधकार व्याप जानेसे बानरोंका कटक अति व्याकुल हो एकको एक न देखकर जहां तहां पुकारने लगा है ॥ ५८ ॥

सकल मर्म रघुनायक जाना ॥ लिये बोलि अंगद हनुमाना ॥ १ ॥ ❀
समाचार सब कहि समुझाये ॥ सुनत कोपि कपि कुंजर धाये ॥ २ ॥ ❀

प्रभुने उस सारे भेदको जान अंगद और हनुमानको बुलाय ॥ १ ॥ समझाके सब समाचार कहे, तब वे दोनों बीर क्रोध कर राक्षसोंके कटककी ओर चले ॥ २ ॥

पुनि कृपालु हँसि चाप चढ़ावा ॥ पावक सायक सपदि चलावा ॥ ३ ॥ ❀
भयउ प्रकाश कतहुँ तम नाहीं ॥ ज्ञान उदय जिमि संशय नाहीं ॥ ४ ॥ ❀

फिर प्रभुने हंसकर, तुरंत धनुष हाथमें लिया और उसमें अग्निका बाण साधकर, चलाया ॥ ३ ॥ तिससे सर्वत्र प्रकाश हो गया· कहीं अंधकारका लेशभी न रहा. जैसे ज्ञानके उदय होनेसे सब संशय मिट जाते हैं ऐसे तमका विध्वंस हो गया ॥ ४ ॥

भालु वलीमुख पाइ प्रकाशा ॥ धाये कोपि बिगत श्रम त्राशा ॥ ५ ॥ ❀
हनूमान अंगद रण गाजे ॥ हांक सुनत रजनीचर भाजे ॥ ६ ॥ ❀

तिसे देख, बानर और रीछ त्रासको तज, परिश्रम रहित हो, क्रोध करके चले जों हनुमान् और अंगदने प्रकाश होतेही गरजना करी तों राक्षस जी ले २ भाग गये ॥ ५ ॥ ६ ॥

भागत भट पटकहिँ गहि धरणी ॥ करहिँ भालु कपि अद्भुतकरणी ॥ ७ ॥ ❀
गहि पद डारहिँ सागरमाहीं ॥ मकर उरग झष धरि धरि खाहीं ॥ ८ ॥

तहां बानर और रीछ भागतेहुए राक्षसोंको पकड़ २ कर पृथ्वीपर पटकते है और अद्भुत २ चरित करते हैं ॥ ७ ॥ बानर तो राक्षसोंको पकड़ पकड़ कर समुद्रमें डालते हैं, और मगर, मच्छ और सांप उन्हे धर धर खाते हैं ॥ ८ ॥

दोहा—कछु घायल कछु रण परे, कछु गढ चले पराइ ॥ ❀
गर्जेउ मर्कट भालु भट, रिपुदल बल बिचलाइ ॥ ५९ ॥ ❀

रणखेतके बीच कछुक घायल झूमते हैं, कछुक पृथ्वीपर पड़े हैं, कछुक भागकर लंकाको चले हैं ऐसे -राक्षसोंकी सेनाको चलायमान हुई देखकर बानर और रीछ बड़े जोरसे गर्जना करने लगे हैं ॥ ५९ ॥

निशा जानि कपि चारिउ अनी ॥ आये सब जहँ कोशलधनी ॥ १ ॥ ❀

राम कृपा करि चितवा जबहीं ॥ भये बिगत श्रम बानर तबहीं ॥ २ ॥ ❋

रात्रि हुई जान, बानरोंकी चारों ओरकी सेना सिमटकर प्रभुके पास आई है ॥ १ ॥ तब ज्योंही प्रभुने उनकी ओर कृपादृष्टिसे देखा त्योंही उन सबोंका परिश्रम मिट गया और सुखी हो गये ॥ २ ॥

उहाँ दशानन सचिव हँकारे ॥ सबसन कहेसि सुभट जे मारे ॥ ३ ॥ ❋

आधा कटक कपिन्ह संहारा ॥ कहहु बेगि का करिय बिचारा ॥ ४ ॥ ❋

उहां रावणने अपने मंत्रियोंको बुलाके जो योधा मारे गये थे उनके नाम कहकर कहा कि ॥ ३ ॥ बानरोंने अपनी आधी सेनाके अंदाज मार डाली है, सो शीघ्र कहो अब क्या विचार करना चाहिये ? ॥ ४ ॥

माल्यवन्त यक जरठ निशाचर ॥ रावण मातपिता मंत्रीबर ॥ ५ ॥ ❋

बोला बचन नीति अतिपावन ॥ तात सुनहु कछु मोर सिखावन ॥ ६ ॥ ❋

रावणके वचन सुन एक माल्यवान् नाम राक्षस कि जो अति बूढ़ा और रावणकी माताके पिता यानी नाना था और सलाहका पूरा था ॥ ५ ॥ उसने अति पवित्र नीतिके वचन कहे. माल्यवान् बोला कि–हे तात ! कुछ मेराभी कहना सुनो और मानो ॥ ६ ॥

जबते तुम सीता हरि आनी ॥ अशकुन होहिँ न जात बखानी ॥ ७ ॥ ❋

बेद पुराण जासु यश गावा ॥ तासु बिमुख सुख काहु न पावा ॥ ८ ॥ ❋

हे रावण ! जबसे आप सीताको हर ले आये हो तबसे अपने यहां इतने उत्पात होते है कि जिनको मैं कह नहीं सकता ॥ ७ ॥ हे तात ! सुनो, वेद पुराण और शास्त्र जिसका यश गाते है उसके विमुख होकर आजलों किसीने सुख नहीं पाया है ॥ ८ ॥

दोहा–हिरण्याक्ष भ्रातासहित, मधु कैटभ बलवान ॥ ❋

जेहिँ मारेउ सोइ अवतरेउ, कृपासिन्धु भगवान ॥ ६० ॥ ❋

देखो, हिरण्याक्ष और हिरण्यकशिपु तथा मधु और कैटभ कि जो महाबलवान् और सब प्रकारसे अजेय थे वेभी जिसके हाथ मारे गये उसी कृपासिन्धु प्रभुने अभी पृथ्वीपर अवतार लिया है ॥ ६० ॥

कालरूप खल बल दहन, गुणागार घन बोध ॥ ❋

जेहिँ सेवहिँ शिव कमलभव, तिहिँ सन कौन बिरोध ॥ ६१ ॥ ❋

सो यह राम वही है जिसे लोग कालरूप, दुष्टोंके बलको नाश करनेवाला, गुणोंकी खान तथा आनंदस्वरूप, व सर्वज्ञ कहते हैं. तथा महादेवजी और ब्रह्माजी जिसकी सदा सेवा करते हैं सो उस परब्रह्म परमेश्वरके साथ कौनसा विरोध ? अर्थात् परमेश्वरसे आपनको विरोध नहीं करना चाहिये ॥ ६१ ॥

परिहरि बैर देहु बैदेही ॥ भजहु कृपानिधि परम सनेही ॥ १ ॥ ❋

ताके बचन बाणसम लागे ॥ करिया मुख करि जाहु अभागे ॥ २ ॥ ❋

इसलिये हे रावण ! आप वैरभाव छोड़कर सीताको दे दो और बड़े स्नेहके साथ कृपानिधान प्रभुका भजन करो ॥ १ ॥ हे पार्वती ! माल्यवान्के वचन रावणको ऐसे लगे कि, मानों

बाणही है, तिससे उसने क्रोध करके अपने नाना माल्यवान्को कहा कि-अरे अभागा! तू काला मुंह करके चला जा ॥ २ ॥

बूढ भयसि नतु मरतेउँ तोहीं ॥ अब जनि बदन देखावसि मोहीं ॥ ३ ॥ ❋
तेहिँ अपने मन अस अनुमाना ॥ बध्यो चहत यहि कृपानिधाना ॥ ४ ॥ ❋

तू बूढ़ा है इसलिये छोड़ता हूं, नहीं तौ मारही देता; खैर, अब यहांसे चला जा. फिर मुझे कभी मुंह मत दिखाना ॥ ३ ॥ रावणके ऐसे वचन सुन माल्यवान्ने अपने मनमें विचार किया कि, प्रभु इस मारना चाहते है, इसलिये इसको हित बचन नहीं सुहाते है ॥ ४ ॥

सो उठि गयउ कहत दुर्बादा ॥ तब सकोप बोलेउ घननादा ॥ ५ ॥ ❋
कौतुक प्रात देखियहु मोरा ॥ करिहौं बहुत कहत हौं थोरा ॥ ६ ॥ ❋

ऐसे मनमें विचार, रावणको कटु बचन कहता माल्यवान् वहांसे निकला, सो अपने घर चला आया. तब मेघनादने क्रोध करके कहा कि-॥ ५ ॥ अब कल प्रात होतेही मेरा कौतुक देखना. मैं कहता हूं तो बहुत कम, पर करूंगा बहुत ज्यादा ॥ ६ ॥

सुनि सुतबचन भरोसा आवा ॥ प्रीतिसमेत निकट बैठावा ॥ ७ ॥ ❋
करत विचार भयउ भिनुसारा ॥ लगे भालु कपि चारिहु द्वारा ॥ ८ ॥ ❋

पुत्रके ऐसे बचन सुन, रावणके मनमें प्रतीति आगई. उसे बड़ी प्रीतिके साथ अपने पास बिठाया ॥ ७ ॥ और सलाह करने लगे सो विचार करते करते प्रभात हो गया और बानर और रीछ चारो दरवाजों पै चढ़ अये ॥ ८ ॥

कोपि कपिन दुर्गम गढ़ घेरा ॥ नगर कोलाहल भयउ घनेरा ॥ ९ ॥ ❋
बिबिध अस्त्र गहि निशिचर धाये ॥ गढ़ते पर्वत शिखर ढहाये ॥ १० ॥ ❋

और क्रोध करके बानरोंने चारों ओरसे गढ़को घेर लिया, तब नगरीके भीतर बड़ा भारी कोलाहल हुआ ॥ ९ ॥ और राक्षसभी नाना प्रकारके शस्त्र ले, दौड़कर चले और गढ़से पर्वतोंके शिखर चलाने लगे ॥ १० ॥

छंद-ढाये महीधर शिखर कोटिन बिबिध बिधि गोला चले ॥ ❋
घहरात जिमि पबिपात गर्जत प्रलयके जनु बादले ॥ ❋
मर्कट बिकट भट जुटत कटत न लरत तन जर्जर भये ॥ ❋
गहि शैलते गढपर चलावहिँ जहँ सो तहँ निशिचर हये ॥ १ ॥ ❋

गढ़के भीतरसे करोड़ों पर्वतोंके शिखर लगे ढहाने और गोले चलने. तब वज्रपात हुआ हो ऐसे घरोटह होने लगी. और प्रलयकालके बादलके समान गर्जना होने लगी. बानर और राक्षस भट परस्पर जुटते हैं और लड़ते हैं, शरीर कटकटकर लोहुकी नदियां बहती हैं और शरीर जर्जर होते हैं. और बानर पर्वतोंके शिखर उठाय, गढ़पर चलाते हैं, तिससे जहां तहां राक्षसोंके ढेरके ढेर हुए जाते हैं ॥ १ ॥

दोहा-मेघनाद सुनि श्रवण अस, गढ़ पुनि छेंका आइ ॥ ❋
उतरि दुर्गते बीर बर, सन्मुख चला बजाइ ॥ ६२ ॥ ❋

वानरोंने गढ़ छेंक (घेर) डाला ये समाचार सुन, मेघनाद गढ़से नीचे उतर धौंसा दे तुरंत वानरोंके सन्मुख आ उपस्थित हुआ ॥ ६२ ॥

कहँ कोशलाधीश दोउ भ्राता ॥ धन्वी सकल लोक विख्याता ॥ १ ॥ ❀
कहँ नल नील द्विविद सुग्रीवा ॥ कहँ हनुमत अंगद बलसींवा ॥ २ ॥ ❀

और बोला कि–कहां तौ रामलक्ष्मण कि जिन्हें लोग सुभट और धनुषधारी कहते है ? ॥१॥ और कहां नल, नील, द्विविद, सुग्रीव, हनुमान और अंगद ? ॥ २ ॥

कहां बिभीषण भ्राता द्रोही ॥ आजु शठहिँ हठि मारउँ ओही ॥ ३ ॥ ❀
अस कहि कठिन बाण संधाने ॥ अतिशय कोपि श्रवण लगि ताने ॥ ४ ॥

और कहां बिभीषण कि जो भाईसे द्रोह करनेवाला है, सो मैं आज इन सबोंको मार सबका संकट दूर करूंगा ॥ ३ ॥ ऐसे कह मेघनादने शर साध, अत्यंत कोपकर, धनुषको कानलों तान ॥ ४ ॥

शरसमूह सो छाँड़न लागा ॥ जनु सपक्ष धावैं बहु नागा ॥ ५ ॥ ❀
जहँतहँ परत देखि अहि बानर ॥ सन्मुख होइ न सकत तेहिँ अँवसर ॥ ६ ॥

बाण चलाये सो वे बाण कैसे चले कि मानों पक्षवाले सांप आकाशमें उड़ने लगे है ॥ ५ ॥ बानर और रीछ जहां देखते हैं तहां सांपके रूपसे बाणही बाण नजर आते हैं, तिससे एकभी बानर और रीछ उस समय उसके सन्मुख नहीं हो सकता है ॥ ६ ॥

भागे भय व्याकुल कपि ऋच्छा ॥ बिसरी सबहिँ युद्धकी इच्छा ॥ ७ ॥ ❀
सो कपि भालु न रणमें देषा ॥ कीन्हेसि जेहिँ न प्राण अवशेषा ॥ ८ ॥ ❀

सब बानर और रीछ युद्धकी अभिलाषा छोड़, भयसे विव्हल हो, जी ले भागते है ॥ ७ ॥ उससमय रणभूमिके भीतर ऐसा एकभी रीछ और बानर न रहा कि जिसके केवल प्राण मात्र शेष न रहे हैं ॥ ८ ॥

दोहा–मारेसि दश दश बिशिख उर, परे भूमि सब बीर ॥ ❀
सिंदनाद करि गर्ज तब, मेघनाद रणधीर ॥ ६३ ॥ ❀

मेघनादने एक एक बीरके दशदश बाण लगाये, तिससे सब बीर धरतीपर गिरगये; तब रणधीर मेघनादने सिंहनाद करके गरजना करी ॥ ६३ ॥

देखि पवनसुत कटक बिहाला ॥ क्रोधवन्त धावा जनु काला ॥ १ ॥ ❀
महा महीधर तमकि उपारा ॥ अति रिस मेघनादपर डारा ॥ २ ॥ ❀

सेनाको विव्हल देखकर, हनुमानको बड़ा क्रोध हुआ. वह मानों मूर्तिमान काल हो ॥ १ ॥ ऐसे एक पर्वत उठाय, रिसमें आय मेघनाद पै चला और पर्वत मेघनाद पै गिरा दिया ॥ २ ॥

आवत देखि गयउ नभ सोई ॥ रथ सारथी तुरँग सब खोई ॥ ३ ॥ ❀
बार बार प्रचार हनुमाना ॥ निकट न आव मरम जो जाना ॥ ४ ॥ ❀

पर्वतको आता देख, मेघनाद रथको त्याग, आकाशमें चला गया. और रथ सारथी व घोड़ोंका पर्वत पड़तेही चूर्ण हो गया ॥ ३ ॥ यदपि हनुमानने मेघनादको कईबेर प्रचारा पर वो उसके पास नहीं आया. कारण उसने भीतरका भेद जान लिया था ॥ ४ ॥

रामसमीप गयो घननादा ॥ नाना भांति कहत दुर्बादा ॥ ५ ॥ *
अस्त्र शस्त्र बहु आयुध डारे ॥ कौतुकही प्रभु काटि निवारे ॥ ६ ॥ *

फिर मेघनाद हनुमानको छोड़ प्रभुके पास गया और अनेक प्रकारके कटु वचन कहे ॥ ५ ॥ प्रभुपै नाना प्रकारके अस्त्र शस्त्र चलाये, परंतु प्रभुने वे सब कौतुकहीसे काट गिराये ॥ ६ ॥

देखि प्रभाव मूढ खिसियाना ॥ करै लाग माया बिधि नाना ॥ ७ ॥ *
जिमि कोउ करै गरुड़सन खेला ॥ डरपावहिँ अहि स्वल्प सपेला ॥ ८ ॥

प्रभुका प्रताप देख वो मूर्ख मनमें कुछ लज्जित हुआ सो मोहित करनेके लिये अनेकप्रकारकी माया करने लगा ॥ ७ ॥ प्रभुके पास मेघनादकी माया कैसी मालूम होती है कि मानों कोई छोटासा सांपका बच्चा गरुड़से खेल खेलता गरुड़को डराता है ॥ ८ ॥

दोहा-जासु प्रबलमाया विवश, शिव बिरंचि बड़ छोट ॥ *
ताहि देखावै रजनिचर, निजमाया मति खोट ॥ ६४ ॥ *

हे मुनि ! ब्रह्मा महादेव आदि सब छोटे बड़े, जिस प्रभुकी मायाके वशवर्ती है, उस प्रभुके आगे वो मंदमति राक्षस अपनी माया दिखाने लगा ॥ ६४ ॥

नभ चढ़ि बरषे बिपुल अँगारा ॥ महिते प्रगट होइ जलधारा ॥ १ ॥ *
नानाभांति पिशाच पिशाची ॥ मारु काटु धुनि बोलहिं नाची ॥ २ ॥ *

आकाशमेंसे बड़ी भारी अंगारोकी वर्षा होने लगी और पृथ्वीमेंसे जलकी धारायें प्रगट होने लगीं ॥ १ ॥ अनेक प्रकारकी पिशाचनियां और पिशाच 'मारो मारो, काटो' काटो, ऐसे कह कहकर नांचने लगे ॥ २ ॥

कीन्हेसि वृष्टि रुधिर कच हाड़ा ॥ बर्षै कबहुँ उपल बहु छाड़ा ॥ ३ ॥ *
बर्षि धूरि कीन्हेसि अँधियारा ॥ सूझ न आपन हाथ पसारा ॥ ४ ॥ *

आकाशमेंसे रुधिर, हाड़ और केश बरसने लगे तथा कभी कभी पत्थरोंकी वर्षा होने लगी ॥ ३ ॥ धूल ऐसी बरसी कि जिससे घोर अंधकार छा गया. जिसमें अपना हाथभी दृष्टि नहीं आता था ॥ ४ ॥

अकुलाने कपि माया देखे ॥ सबकर मरण बना इहि लेखे ॥ ५ ॥ *
कौतुक देखि राम मुसुकाने ॥ भये सभीत सकल कपि जाने ॥ ६ ॥ *

मेघनादकी इस मायाको देखकर सब बानर घबरा गये और मनमें जान लिया कि अब मर जायंगे इसमें कुछ संदेह नहीं ॥ ५ ॥ प्रभुने इस कौतुकको देख, सारी सेनाको भयभीत जान ॥ ६ ॥

एकहि बाण काटि सब माया ॥ जिमि दिनकर हर तिमिर निकाया ॥ ७ ॥
कृपादृष्टि कपि भालु बिलोके ॥ भये प्रबल रण रहहिँ न रोके ॥ ८ ॥ *

एक बाण चलाया जिससे सारी माया ऐसे बिलाय गई कि जैसे सूर्यके उदय होतेही अंधकारका पटल बिलाय जाता है ॥ ७ ॥ प्रभुने जो बानरोंकी ओर कृपादृष्टि करके देखा तो वे ऐसे प्रबल होगये कि, रणमें किसीके रोकनेपरभी न रुके ॥ ८ ॥

दोहा-आयसु माँगि रामपहँ, अंगदादि कपि साथ ॥ *
लक्ष्मण चले सकोप तब, बाण शरासन हाथ ॥ ६६ ॥ *

इसबीच लक्ष्मणजी, अंगद आदि बानरोंको साथ ले, प्रभुसे आज्ञा मांग हाथमें धनुष बाण ले, कोपकर मेघनादपै चले ॥ ६५ ॥

जलजनयन उरबाहु बिशाला ॥ हिमगिरि बरण कछुक इकलाला ॥ १ ॥ ❋
उहां दशानन सुभट पठाये ॥ नाना अस्त्र शस्त्र गहि धाये ॥ २ ॥ ❋

कैसे हैं लक्ष्मण कि जिनके कमलकेसे सुंदर नेत्र हैं. बड़ी विशाल भुजा और वक्षःस्थल है. हिमाचलके समान शुभ्रवर्ण है. तिसमें कुछ लाली ललक रही है ॥ १ ॥ उधर रावणने सुभट भेजे. वेभी शस्त्र अस्त्र ले दौड़के रणभूमिमें आये ॥ २ ॥

भूधर बिटपायुध धरि भारी ॥ धाये कपि जय राम पुकारी ॥ ३ ॥ ❋
भिरे सकल जोरी सन जोरी ॥ इत उत जय इच्छा नहिँ थोरी ॥ ४ ॥ ❋

इधर बानरोंका दल पेड़ और पर्वतोंके शिखर उठाय, रामचन्द्रजो जय पुकारते चले ॥ ३ ॥ दोनों ओरके सुभट मनमें जीतकी इच्छा रखते अपनी अपनी जोडी देख देख, खब आपसमें भिड़े ॥ ४ ॥

मुष्टिन लातन दांतन काटहिँ ॥ कपि गिरि शिला मारि पुनि डाटहिँ ॥ ५ ॥
मारु मारु धरु धरु धरु मारू ॥ शीश तोरि गहि भुजा उपारू ॥ ६ ॥ ❋

तहां बानर और रीछ मुट्ठी और लातोंसे मारते है, दांतोंसे काटते है और पर्वत व पेड़ चलाकर राक्षसोंको डाटते हैं ॥ ५ ॥ और पुकारते है कि—मारो मारो. पकड़ो पकड़ो. शिर तोड़ डालो, भुजावोंको उखाड़ लो ॥ ६ ॥

अस धुनि पूरि रही नवखण्डा ॥ धावहिँ जहँ तहँ रुण्ड प्रचण्डा ॥ ७ ॥ ❋
देखहिँ कौतुक नभ सुरवृन्दा ॥ कबहुँक विस्मय कबहुँ अनन्दा ॥ ८ ॥ ❋

ऐसी ध्वनि नौ खंडोंमें छा रही है. प्रचंड रुंड इधर उधर दौड़ने लगे है ॥ ७ ॥ देवगण आकाशमें खड़े कौतुक देखते है. कभी तो विस्मित हो जाते है और आनंदमगन हो जाते है ॥ ८ ॥

दोहा—जमेउ गाढ़ भरि भरि रुधिर, ऊपर धूर उड़ाइ ॥ ❋
जिमि अङ्गारनराशिपर, मृतक छार रहि छाइ ॥ ६६ ॥ ❋

रुधिर बह बहकर जो रक्तके कुंड भरगये है, तिनके ऊपर जो धूल उठती है, वह ऐसी मालूम होती है कि, मानों अंगारोंके ढेरपर मृतककी भस्म छा रही है ॥ ६६ ॥

घायल बीर बिराजहिँ कैसे ॥ कुसुमित किंशुकके तरु जैसे ॥ १ ॥ ❋
लक्ष्मण मेघनाद दोउ योधा ॥ भिरहिँ परस्पर करि अतिक्रोधा ॥ २ ॥ ❋

घायल जोधा कैसे शोभायमान हो रहे हैं कि मानों फूले हुए किंशुक (ढाक) के पेड़ही खड़े हैं ॥ १ ॥ उसकाल लक्ष्मण और मेघनाद दोनों बीर महाक्रोध कर परस्पर भिड़े है ॥ २ ॥

एकहिँ एक सकैं नहिँ जीती ॥ निशिचर छल बल करै अनीती ॥ ३ ॥ ❋
क्रोधवन्त तब भयउ अनन्ता ॥ भंजेउ रथ सारथी तुरन्ता ॥ ४ ॥ ❋

पर एकको एक जीत नहीं सकता. जब मेघनादने कई प्रकारके छल बल किये और-अनीति करी ॥ ३ ॥ तब लक्ष्मणको क्रोध आया. तुरंत उसका रथ तोड़ सारथीको मार दिया ॥ ४ ॥

नाना बिधि प्रहार करि शेषा ॥ राक्षस भयउ प्राण अवशेषा ॥ ५ ॥ ❋

रावणसुत निजमन अनुमाना ॥ संकट भये हरिहि मम प्राना ॥ ६ ॥ ❋

और ऐसे बाण लगाये कि, मेघनाद प्राणावशेष रह गया ॥ ५ ॥ तिससमय मेघनादने मनमें जाना कि अब मैं महासंकटमे पड़ा हूं, सो अब यह अवश्य मेरे प्राण हर लेगा ॥ ६ ॥

बीरघातिनी छाँड़ेसि साँगी ॥ तेजपुंज लक्ष्मण उर लागी ॥ ७ ॥ ❋
मूर्च्छा भई शक्तिके लागे ॥ तब चलि गयउ निकट भय त्यागे ॥ ८ ॥ ❋

सो अब तौ शक्ति चलाये विना काम चल नहीं सकता; ऐसा विचार कर उसने वीरघातिनी नाम शक्ति चलाई. वह तेजकी राशि आकर लक्ष्मणके वक्षःस्थलमें लगी ॥ ७ ॥ शक्तिके लगतेही लक्ष्मणको मूर्छा आगई; तब मेघनाद निर्भय हो लक्ष्मणके पास गया ॥ ८ ॥

दोहा–मेघनाद सम कोटिशत, योधा रहे उठाय ॥ ❋
जगदाधार अनन्त सो, उठहिँ न चला खिसाय ॥ ६७ ॥ ❋

मेघनादके जैसे सौ करोड़ योधा लक्ष्मणको ले जानेके लिये उठाने लगे; परंतु वे जगत्‌का आधार शेषका अवतार लक्ष्मणको उठा न सके. आखिर लज्जित हो २ चलदिये ॥ ६७ ॥

सुनु गिरिजा क्रोधानल जासू ॥ जारै भुवन चारिदश आसू ॥ १ ॥ ❋
सक संग्राम जीति को ताही ॥ सेवहिं सुर नर अग जग जाही ॥ २ ॥ ❋

हे पार्वती ! सुनो. जो प्रलयके समय क्रोधानलसे चौदह लोकोंको एक पलभरमें भस्म करता है ॥ १ ॥ और देवता मनुष्य और चराचर सब जगत् जिसकी सेवा करते है, उसको संग्रामके अंदर कौन जीत सकता ? ॥ २ ॥

यह कौतुक जानहिँ जन सोई ॥ जेहिपर कृपा रामकी होई ॥ ३ ॥ ❋
सन्ध्या भई फिरीं दोउ अनी ॥ लगे सँभारन निज निज सेनी ॥ ४ ॥ ❋

इस कौतुकको तो वही जन जान सकता है कि, जिसपर प्रभुकी कृपा है ॥ ३ ॥ जब सांझ हुई और सेना पीछी फिरी तब सब लोग अपनी सेना संभारने लगे ॥ ४ ॥

व्यापक ब्रह्म अजित भुवनेश्वर ॥ लक्ष्मण कहँ पूंछा करुणाकर ॥ ५ ॥ ❋
तौ लगि लै आये हनुमाना ॥ अनुज देखि प्रभु अति दुख माना ॥ ६ ॥ ❋

तहां सर्वव्यापक परब्रह्म, अजित, त्रिलोकीनाथ करुणाके आगर प्रभुने लक्ष्मणके लिये पूंछा ॥ ५ ॥ इतनेमें हनुमान् लक्ष्मणको उठा ले आया. भाईको मूर्छित देख, प्रभुको बड़ा दुःख हुआ ॥ ६ ॥

जामवन्त कह बैद्य सुषेना ॥ लंका रह पठइय कोउ लेना ॥ ७ ॥ ❋
धरि लघुरूप गये हनुमन्ता ॥ आनेउ भवन समेत तुरन्ता ॥ ८ ॥ ❋

तब जाम्बवान्‌ने कहा कि–लंकाके भीतर एक सुषेण नाम वैद्य रहता है, उसे लेनेको किसीको भेजना चाहिये ॥ ७ ॥ जाम्बवान्‌के वचन सुन, प्रभुकी आज्ञा पाय, हनुमान् छोटासा स्वरूप धारण कर, लंकामें गया और उसे घर समेत ज्योंका त्यों उठा लाया ॥ ८ ॥

दोहा–रघुपतिचरणसरोज शिर, नायउ आय सुषेन ॥ ❋
कहा नाम जिमि औषधी, जाहु पवनसुत लेन ॥ ६८ ॥ ❋

सुषेणने आतेही प्रभुके चरणकमलोंमें शिर नवाया, और पर्वत औषधिका नाम बताकर कहा कि-लेनेको हनुमान् जाना चाहिये ॥ ६८ ॥

रामचरण सरसिज उर राखी ॥ चलेउ प्रभंजनसुत बल भाखी ॥ १ ॥ ❀
उहाँ दूत यक मरम जनावा ॥ रावण कालनेमि गृह आवा ॥ २ ॥ ❀

तब सुषेणका वचन सुन प्रभुकी आज्ञा पाय, प्रभुके चरणकमल हृदयमें धारण कर हनुमान् प्रभुका नाम ले चला ॥ १ ॥ उसकाल एक रावणके दूतने जाकर यह खबर रावणको सुनाई तब रावण कालनेमिके घर गया ॥ २ ॥

दशमुख कहा मरम तेहिँ सुना ॥ पुनि पुनि कालनेमि शिर धुना ॥ ३ ॥ ❀
देखत तुमहिँ नगर जेहिँ जारा ॥ तासु पन्थ को रोंकनिहारा ॥ ४ ॥ ❀

रावणने सब समाचार कहे सो सुन, कालनेमि बारंबार अपना शिर पीटने लगा ॥ ३ ॥ और बोला कि-हे रावण ! जिसने तुम्हारे देखते देखते लंकाको जलाय भस्म कर दिया; भला कहो, उसके मार्गको रोंकनेवाला कौन है ? ॥ ४ ॥

भजि रघुपतिहिँ करहु हित अपना ॥ तजौ नाथ अब मृषा कलपना ॥ ५ ॥
नील कंज तन सुंदर श्यामा ॥ हृदय राखु लोचन अभिरामा ॥ ६ ॥ ❀

इसलिये रामचन्द्र आनन्दकन्दको भजो और अपना हित करो. हे नाथ ! अब झूंठी कल्पना छोड़ दो ॥ ५ ॥ नीलोत्पलके सदृश सुन्दर श्यामल शरीर कि जिनका दर्शन करनेसे नेत्रोंको आनंद मिलता है उनको हृदयमें राखो ॥ ६ ॥

अहंकार ममता मद त्यागहु ॥ महामोह निशि सोवत जागहु ॥ ७ ॥ ❀
काल ब्याल कर भक्षक जोई ॥ सपनेहुँ समर कि जीतै कोई ॥ ८ ॥ ❀

और अहंकार, ममता और मदको तज दो. आप महामोहरूप रात्रिमें इतने दिन सोय पड़ रहे सो ठीक, पर अब उससे जाग जाओ ॥ ७ ॥ हे नाथ ! जो कालरूप सांपको खानेवाला है; भला, उसे कोई स्वप्नमेंभी रणमें जीत सकता है ? कदापि नहीं ॥ ८ ॥

दोहा-सुनि दशकंध रिसान तब, तेइँ मन कीन्ह बिचार ॥ ❀
रामदूतकर मरण भल, यह खल नतु मोहिँ मार ॥ ६९ ॥ ❀

कालनेमिके वचन सुन, रावणने क्रोध किया. तब उसने मनमें विचार किया कि अब तो रामके दूतके हाथसेही मरना अच्छा है. नहीं तौ यह दुष्ट मुझे मारही डालेगा. फिर यह अवसर चूकना क्यों ? ॥ ६९ ॥

अस कहि चला रची मग माया ॥ सर मंदिर बर बाग बनाया ॥ १ ॥ ❀
मारुतसुत देखा शुभ आश्रम ॥ मुनिहिँ बूझि जल पियौं जाइ श्रम ॥ २ ॥

ऐसे कह, कालनेमि चला. उसने मार्गमें माया रची. रस्तेमें मायासे सुन्दर बाग, तालाव और घर बनाये ॥ १ ॥ हनुमानने बहुत अच्छा आश्रम देख, मनमें विचार किया कि इनिको पूंछकर जल पीलेवें तौ कुछ श्रम मिट जाय ॥ २ ॥

राक्षस कपटबेष तहँ सोहा ॥ मायापति दूतहिँ चह मोहा ॥ ३ ॥ ❀

तुरत पवनसुत नायउ माथा ॥ लागा कहन रामगुणगाथा ॥ ४ ॥ ❋

हे पार्वती ! बागके अंदर जो मुनि बैठा था वह मुनि नहीं था; किंतु राक्षस (कालनेमि) ही कपटसे मुनिका वेष बनाय, शोभा देता था. वह मायापति राक्षस रामदूतको मोहित करना चाहता था ॥ ३ ॥ हनुमान्‌ने उसके समीप जा, तुरंत शिर नवाया. तब वह मुनि प्रभुके गुणोंकी गाथा कहने लगा ॥ ४ ॥

होत महारण राम रावणहिँ ॥ जीतहिँ राम न संशय यामहिँ ॥ ५ ॥ ❋
इहाँ भये मैं देखौं भाई ॥ ज्ञानदृष्टि बल मोहिँ अधिकाई ॥ ६ ॥ ❋

और बोला कि–हे वानर ! राम और रावणका भारी संग्राम होता है. तहां राम जीतेंगे, इसमें संदेह नहीं है ॥ ५ ॥ हे भाई ! मैं यहां बैठा सब देखता हूं; क्योंकि मेरेको ज्ञान (दिव्य) दृष्टिका बल बहुत विशेष है ॥ ६ ॥

माँगा जल तेहिँ दीन्ह कमण्डल ॥ कपि कह नहिँ अघाउँ थोरे जल ॥ ७ ॥
सर मज्जन करि आतुर आवहुँ ॥ दीक्षा देउ ज्ञान जेहि पावहुँ ॥ ८ ॥ ❋

हनुमान्‌ने ऐसी मोहिनी वाणी सुन, जल मांगा तो उसने कमण्डलु दिया, तब हनुमान्‌ने कहा कि थोड़े जलसे मैं तृप्त न होऊंगा ॥ ७ ॥ इसलिये मुझे आज्ञा देओ सो सरोवरमें स्नान कर, जल्दी पीछा आजाऊं फिर आप मुझे दीक्षा देओ कि मैं जिस भांति ज्ञानको प्राप्त हो जाऊं ॥ ८ ॥

दोहा–सर पैठत कपिपद गहेउ, मकरी अति अकुलान ॥ ❋
मकरी सो धरि दिव्य तन, चली गगन चढ़ि यान ॥ ७० ॥ ❋

हनुमान् ज्योंही सरोवरमें घुसा त्योंही मगरकी मादीने बड़ी आतुरतासे हनुमानका पांव पकड़ा. हे पार्वती ! वह मकरकी मादी तो तुरंत दिव्य देह धारण कर विमानपर चढ़ आकाशमें चली गई ॥ ७० ॥

कपि तव दरश भइउँ निष्पापा ॥ मिटा तात मुनिवर कर शापा ॥ १ ॥ ❋
मुनि न होइ यह निशिचर घोरा ॥ मानहु सत्य बचन कपि मोरा ॥ २ ॥ ❋

मकरीने आकाशमें जाकर हनुमान्‌से कहा कि, हे तात ! हे हनुमान् ! आपके दर्शन करनेसे मैं निष्पाप हुई हूं. मेरा दुर्वासाका दिया श्राप निवृत्त हुआ है ॥ १ ॥ हे वानर ! यह जो मुनि बन बैठा है सो मुनि नहीं है. यह महा दारुण राक्षस है. मेरा यह बचन सत्य करके मानो ॥ २ ॥

अस कहि गई अप्सरा जबहीं ॥ निशिचर निकट गयउ कपि तबहीं ॥ ३ ॥
कह कपि मुनि गुरुदक्षिण लेहू ॥ पाछे हमहिँ मंत्र तुम दे[illegible]

ऐसे कहकर, जब अप्सरा चली गई ,तब हनुमान् उस राक्षसके [illegible]
हे मुनि ! पहले गुरुदक्षिणा लेओ. फिर हमें तुम मंत्र[illegible]

शिर लंगूर लपेट पछारा ॥ निज [illegible]

---

१ एक समय दुर्वासा ऋषि इंद्रकी सभामें गये. [illegible]
करतीं थीं, तहां एक गंधर्व और अप्सरा हंसी. तब [illegible]
पड़, प्रार्थना करने लगे कि–हे प्रभु ! त्राहि त्राहि. तब [illegible]
तब हनुमान्‌के द्वारा तुम्हारा उद्धार होगा. फिर वे दोनं[illegible]
और अप्सरा मकरी हुई. ऐसे वे दोनों हनुमान्‌की कृपा[illegible]

राम राम कहि छांड़ेसि प्राना ॥ सुनि मन हर्षि चले हनुमाना ॥ ६ ॥ ❋

ऐसे कह, शिरको लँगूरसे लपेट पृथ्वीपर पछाड़ा. तब मरते वक्त उसने अपना स्वरूप प्रगट किया ॥ ५ ॥ और "राम ! राम !!" कहकर प्राण त्याग दिये. सो सुन, मनमें मुदित हो, हनुमान् चला ॥ ६ ॥

देखा शैल न औषधि चीन्हा ॥ सहसा कपि उपारि गिरि लीन्हा ॥ ७ ॥ ❋
गहि गिरि निशि नभ धावत भयऊ ॥ अवधपुरी ऊपर कपि गयऊ ॥ ८ ॥

हनुमानने जाकर, पर्वतको देखा, परंतु औषधी पहिंचानी न गई. तब तुरंत उस पर्वतको ज्योंका त्यों औषधियों समेत उठा लिया ॥ ७ ॥ पर्वतको लेकर हनुमान् रातमें आकाशमार्गसे दौड़ा सो दौड़ा २ अयोध्याके ऊपर गया ॥ ८ ॥

दोहा—देखा भरत बिशाल अति, निशिचर मन अनुमानि ॥ ❋
बिनु फर सायक मारेऊ, चाप श्रवण लगि तानि ॥ ७१ ॥ ❋

तब भरतने उसके अति विशाल रूपको देख, मनमें राक्षस समझ, धनुषको कान लगि तानकर एक विना फर (लोहेका तीखा अग्रभाग) का बाण मारा ॥ ७१ ॥

परेउ मूर्छि महि लागत सायक ॥ सुमिरत राम राम रघुनायक ॥ १ ॥ ❋
सुनि प्रिय बचन भरत उठि धाये ॥ कपिसमीप अति आतुर आये ॥ २ ॥

बाणके गलतेही 'हे राम ! राम !! हे रघुनाथ !' ऐसे स्मरण करता वह हनुमान् मूर्छित हो, धरतीपर गिर पड़ा ॥ १ ॥ भरत "रामराम" ऐसे प्रिय बचन सुन, उठकर धाया और अति आतुर हो हनुमानके निकट आया ॥ २ ॥

बिकल बिलोकि कीश उर लावा ॥ जागत नहिँ बहु भांति जगावा ॥ ३ ॥
मुख मलीन मन भयउ दुखारी ॥ कहत बचन भरि लोचन बारी ॥ ४ ॥ ❋

हनुमानको विव्हल हुआ देख, छातीसे लगाया और अनेक प्रकारसे जगाया पर सचेत नहीं हुआ ॥ ३ ॥ तब भरतका मुख मलीन और मन दुखी होगया और नेत्रोंमे जल भरकर कहा कि— ॥ ४ ॥

जेहिँ बिधि रामबिमुख मोहिँ कीन्हा ॥ तेहिँ पुनि यह दारुण दुख दीन्हा ॥ ५ ॥
जो मोरे मन बच अरु काया ॥ प्रीति रामपदकमल अमाया ॥ ६ ॥ ❋

जिस बिधाताने मुझे रामचन्द्रसे विमुख किया है, उसीने फिर आज यह दुःसह दारुण [illegible] । भरतजी कहते हैं कि—जो मन, बचन, कायसे रामचन्द्रजीके चरण कम- [illegible] है ॥ ६ ॥

[illegible] ॥ जो मोपर रघुपति अनुकूला ॥ ७ ॥ ❋
[illegible] जय जसति कोशलाधीशा ॥ ८ ॥ ❋

[illegible] श्रम और दुःख दूर हो जाओ ॥ ७ ॥ भरतके [illegible] हकर, हनुमान् तुरंत उठ खड़ा हुआ ॥ ८ ॥

[illegible] गात लोचन सजल ॥ ❋
[illegible] राम रघुकुलतिलक ॥ ८ ॥ ❋

रघुकुलमणि श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण कर, भरतने हनुमानको छातीसे लगा लिया. शरीर रोमांचित हो गया. नेत्रोंमें जल भर आया और प्रेमका पुंज ऐसा बढ़ा कि हृदयमें समा न सका ॥ ८ ॥

तात कुशल कहु सुखनिधानकी ॥ सहित अनुज अरु मातु जानकी ॥ १ ॥ ❋
कपि सब चरित संक्षेप बखाने ॥ भये दुखित मन महँ पछिताने ॥ २ ॥ ❋

भरतने हनुमानसे कहा कि—हे तात! लक्ष्मणसहित सुखके सागर श्रीरामचन्द्रकी और माता सीताकी कुशल कहो ॥ १ ॥ तब हनुमानने वहांका सब हाल संक्षेपसे कहा तिसे सुन, भरत दुःखी हुआ और मनमें पछताने लगा ॥ २ ॥

अहह दैव मैं कत जग जायौं ॥ प्रभुके एकौ काज न आयौं ॥ ३ ॥ ❋
जानि कुअँवसर मन धरि धीरा ॥ पुनि कपिसन बोलेउ बलवीरा ॥ ४ ॥ ❋

अहह! हा दैव! मैं जगत्में क्यों पैदा हुआ? जो प्रभुके एकभी काम न आया ॥ ३ ॥ हे पार्वती! उसकाल कुसमय जान मनमें धीरज धर, महाबली वीर भरतने हनुमानसे कहा कि ॥ ४ ॥

तात गहरु होइ है तुहिँ जाता ॥ काज नशाइहि होइ प्रभाता ॥ ५ ॥ ❋
चढ़ मम सायक शैलसमेता ॥ पठवौं तोहिँ जहँ कृपानिकेता ॥ ६ ॥ ❋

हे तात! तुम्हारे जाते देरी हो जायगी और प्रभात होनेपर काम बिगड़ जायगा ॥ ५ ॥ इसलिये तुम पर्वत समेत मेरे तीरपर चढ़कर चले जाओ. जहां कृपानिधि प्रभु है, वहां मैं तुमको भेज दूंगा ॥ ६ ॥

सुनि कपि मन उपजा अभिमाना ॥ मोरे भार चलहि किमि बाना ॥ ७ ॥ ❋
रामप्रताप बिचारि बहोरी ॥ बन्दि चरण बोलेउ कर जोरी ॥ ८ ॥ ❋

यह सुन, हनुमानके मनमें अभिमान आया कि मेरे भारसे बाण किस प्रकार जा सकेगा? ॥ ७ ॥ फिर प्रभुका प्रभाव विचार, चरणोंमे दंडवत् कर, हाथ जोड़कर हनुमान् बोला कि— ॥ ८ ॥

तव प्रताप उर राखि गुसाईं ॥ जैहौं नाथ बानकी नाईं ॥ ९ ॥ ❋
हर्षि भरत तब आयसु दीन्हा ॥ पद शिर नाइ गमन कपि कीन्हा ॥ १० ॥ ❋

हे स्वामी! आपके प्रतापको हृदयमें रखकर, मैं आपके बाणकी नाईं चला जाऊंगा ॥ ९ ॥ तब भरतने प्रसन्न हो आज्ञा दी. हनुमानने चरणोंमें शिर नवाय, वहांसे पयान किया ॥ १० ॥

दोहा—तव प्रताप उर राखि प्रभु, जैहौं नाथ तुरन्त ॥
अस कहि आयसु पाय पद, बंदि चले हनुमंत ॥

! आपके प्रतापको हृदयमें रखकर, मैं तुरंत चला जाऊं
नुमान् रवाने हुआ ॥ ७२ ॥

रु शील गुण.

अर्धराति गइ कपि नहिँ आवा ॥ राम उठाइ अनुज उर लावा ॥ २ ॥ ❀

वहां समरांगणमें लक्ष्मणको देखकर, मनुष्योंकासा अनुकरण करके प्रभु ये वचन बोले ॥ १ ॥ कि आधी रात बीत गई है और अबलों हनुमान् नहीं आया. यह क्या बात है? ऐसे कह, लक्ष्मणको उठाय छातीसे लगाय प्रभुने कहा कि- ॥ २ ॥

सकहु न दुखित देखि मोहिँ काऊ ॥ बन्धुसदा तव मृदुल सुभाऊ ॥ ३ ॥ ❀

मम हित लागि तजेउ पितु माता ॥ सहेउ बिपिन हिम आतप बाता ॥ ४ ॥ ❀

हे भाई! तू मुझे कदापि दुखी नहीं देख सकता है. तेरा स्वभाव सदासे अत्यंत कोमल है ॥ ३ ॥ तूने मेरे हितके लिये माता पिताको त्याग दिया है. और वनमें सर्दी गर्मी और हवा सही है ॥ ४ ॥

सो अनुराग कहाँ अब भाई ॥ उठहु बिलोकि मोरि बिकलाई ॥ ५ ॥ ❀

जो जनत्यों बन बंधु बिछोहू ॥ पिता बचन नहिँ मनतेउँ वोहू ॥ ६ ॥ ❀

हे भाई! अब वह तेरा प्रेम कहां है? हे भाई! मेरी विकलताको देखकर, उठ ॥ ५ ॥ जो मैं यह बात जानता कि वनमें मेरे भाईका बिछोह हो जायगा तो मैं पिताका वचन नहीं मानता अथवा पिताका बचन मानता और "नहीं वोहू" अर्थात् कैकईका बचन न मानता ॥ ६ ॥

सुत बित नारि भवन परिवारा ॥ होहिँ जाहिँ जग बारहिँ बारा ॥ ७ ॥ ❀

अस बिचारि जिय जागहु ताता ॥ मिलहिँ न जगत सहोदर भ्राता ॥ ८ ॥

हे भाई! जगतमें पुत्र, धन, स्त्री, घर और परिवार ये तो बारंबार हो जाते हैं ॥ ७ ॥ परंतु सहोदर भाई जगतमें मिल नहीं सकता. ऐसे जानकर, हे भाई! मनमें सचेत होओ ॥ ८ ॥

यथा पंखबिनु खगपति दीना ॥ मणि बिनु फणि करिवर करहीना ॥ ९ ॥

अस मम जीवन बंधु बिनु तोहीं ॥ जो जड़ दैव जियावै मोहीं ॥ १० ॥ ❀

हे भाई! जैसे पर बिन पक्षी, मणि बिन सर्प और सूँड़ बिन हाथी दीन और दुखी हो जाता है ॥ ९ ॥ ऐसे अज्ञानी दैव जो मुझको तेरे बिना जियावे तो हे भाई! मेरा जीना दुखरूप और वृथा है ॥ १० ॥

जैहौं अवध कवन मुहुँ लाई ॥ नारिहेतु प्रिय बन्धु गँवाई ॥ ११ ॥ ❀

बरु अपयश सहतेउँ जगमाहीं ॥ नारिहानि बिशेष क्षति नाहीं ॥ १२ ॥ ❀

प्यारे भाईको गँवाकर, कौन मुंह लगाके अयोध्याको जाऊंगा? ॥ ११ ॥ [illegible] भयेहुए जगत्के अपयशको सह लेता तो वह मेरेलिये अ[illegible] था; [illegible] नहीं है ॥ १२ ॥

कठोर निठुर उर [illegible]

पु तुम [illegible]